Fatawa Razawiyya With Citations and Translation of Arabic Passages Imam Ahmad Raza Barelvi (May his secret be sanctified) 17 Raza Foundation Jamia Nizamia Razavia Inside Lohari Gate Lahore, 8 Pakistan (54000)

फ़तावा रज़विया अरबी इबारतों के तख़रीज और तर्जुमे के साथ इमाम अहमद रज़ा बरेलवी (क़ुद्दिस सिर्रहु) १७ रज़ा फाउंडेशन जामिया निज़ामिया रज़विया अंदरून लोहारी दरवाज़ा लाहौर, ८ पाकिस्तान (५४०००)

فتاویٰ رضویہ مع تخریج و ترجمہ عربی عبارات امام احمد رضا بریلوی قدس سرہ ۱۷ رضا

فاؤنڈیشن جامعہ نظامیہ رضویہ اندرون لوہاری دروازہ لاہور، ۸ پاکستان (۵۴۰۰۰)

Fatawa Razawiyya Volume Seventeen (17)

Rejection of Foolishness ..... 506 Rejection of Illusion ..... 520 Chapter on Entitlement ..... 561 (Explanation of Entitlement) ..... 561 Chapter on Advance Purchase Sale (Bay' al-Salam) ..... 569 (Explanation of Bay' al-Salam) ..... 569 Chapter on Manufacturing Sale (Bay' al-Istisna') ..... 597 (Explanation of Bay' al-Istisna') ..... 597 Chapter on Currency Exchange (Explanation of Bay' al-Sarf) ..... 601 Chapter on Fictitious Sale (Bay' al-Taljiah) ..... 639 (Explanation of Fictitious Sale) ..... 639 Chapter on Sale with Right of Redemption (Explanation of Bay' al-Wafa) 643 Chapter on Miscellaneous Sales (Miscellaneous Rules of Sale) ..... 649 Book of Suretyship (Explanation of being a guarantor) ..... 653 Book of Transfer of Debt (Explanation of Hawalah) 703

www.dawateislami.net I.T. Majlis of Dawateislami Page 2 of 717

फतावा रजविया जिल्द सत्रहवीं (17)

मूर्खता का खंडन (रद-ए-सफ़ाहत) ..... 506 भ्रम का खंडन (रद-ए-वहम) ..... 520 अधिकार का अध्याय (बाब अल-इस्तहक़ाक़) ..... 561 (इस्तहक़ाक़ का वर्णन) ..... 561 अग्रिम खरीद बिक्री का अध्याय (बाब अल-बय अल-सलम) ..... 569 (बय अल-सलम का वर्णन) ..... 569 विनिर्माण बिक्री का अध्याय (बाब अल-इस्तिस्ना) ..... 597 (बय इस्तिस्ना का वर्णन) ..... 597 मुद्रा विनिमय का अध्याय (बय सर्फ़ का वर्णन) ..... 601 दिखावटी बिक्री का अध्याय (बाब बय अल-तलजिया) ..... 639 (दिखावटी बिक्री का वर्णन) ..... 639 पुनर्खरीद के अधिकार वाली बिक्री का अध्याय (बय वफ़ा का वर्णन) ..... 643 बिक्री के विविध विषय (बिक्री के फुटकर अहकाम) ..... 649 ज़मानत की किताब (कफ़ाला - ज़ामिन बनने का वर्णन) ..... 653 ऋण हस्तांतरण की किताब (हवाला का वर्णन) 703

فتاوٰی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

رَدُّ سَفاہَت ..... 506 رَدُّ

وَہْم ..... 520 بابُ

الْاِسْتِحْقاق ..... 561 (استحقاق کا

بیان) ..... 561 بابُ الْبیعِ

السَّلم ..... 569 (بیع سلم کا

بیان) ..... 569 بابُ

الْاِسْتِصْناع ..... 597 (بیع استصناع کا

بیان) ..... 597 بابُ الصَّرْف (بیع صرف کا

بیان) ..... 601 بابُ بیعِ

التَّلْجِیَہ ..... 639 (دکھلاوے کی بیع کا

بیان) ..... 639 بابُ بیعِ الْوَفاء (بیع وفاء کا

بیان) ..... 643 باب متفرقات البیع (بیع کے متفرق

احکام) ..... 649 کتاب الکفالہ (ضامن بننے کا

بیان) ..... 653 کتاب الحوالہ (حوالہ کا

بیان) 703

Volume Seventeen (17) Fatawa Rizvia

Fatawa Rizvia With verification and translation of Arabic excerpts

Imam Ahmed Raza Barelvi (May his secret be sanctified) Raza Foundation Jamia Nizamia Razvia

www.dawateislami.net Inside Lohari Gate Lahore 8, Pakistan (54000) I.T. Majlis of DawateIslami

Page 1 of 715

जिल्द सत्रहवीं (17) फ़तावा रज़विया

फ़तावा रज़विया मअ तख़रीज व तर्जुमा अरबी इबारात

इमाम अहमद रज़ा बरेलवी क़ुद्दिसा सिर्रुहु रज़ा फाउंडेशन जामिया निज़ामिया रज़विया

www.dawateislami.net अंदरून लोहारी दरवाज़ा लाहौर 8, पाकिस्तान (54000) I.T. मजलिस-ए-दावत-ए-इस्लामी

पेज 1 का 715

جلد ہفدہم (۱۷) فتاوٰی رضویہ

فتاوٰی رضویہ مع تخریج و ترجمہ عربی عبارات

امام احمد رضا بریلوی قدس سرہ رضا فاؤنڈیشن جامعہ نظامیہ رضویہ

www.dawateislami.net اندرون لوہاری دروازہ لاہور ۸، پاکستان (۵۴۰۰۰) آئی ٹی مجلسِ دعوتِ اسلامی

صفحہ 1 از 715

Fatawa Razawiyya Volume Seventeen (17)

“Whomever Allah intends good for, He grants him understanding in religion.” (Hadith)

Al-Ataya al-Nabawiyya fi al-Fatawa al-Razawiyya With referencing and translation of Arabic passages

Volume Seventeen (17)

A grand jurisprudential encyclopedia of the 14th century, containing rare research.

Imam Ahmad Raza Bareilly (may his secret be sanctified) 1272 AH ———— 1340 AH 1856 AD ———— 1921 AD

Raza Foundation, Jamia Nizamia Razawiyya Inside Lohari Gate, Lahore-8, Pakistan (54000) Phone: 7657312

फ़तावा रज़विया जिल्द सत्रहवीं (17)

“जिसके साथ अल्लाह भलाई का इरादा करता है, उसे दीन की समझ अता फरमाता है।” (हदीस)

अल-अताया अल-नबविया फिल फ़तावा अल-रज़विया अरबी इबारतों के तख़रीज और तर्जुमे के साथ

जिल्द सत्रहवीं (17)

दुर्लभ शोधों पर आधारित चौदहवीं शताब्दी का भव्य न्यायशास्त्र (फिक्ह) का विश्वकोश।

इमाम अहमद रज़ा बरेलवी (कुद्दिस सिर्रहु अल-अज़ीज़) 1272 हिजरी ——————— 1340 हिजरी 1856 ईस्वी ——————— 1921 ईस्वी

रज़ा फाउंडेशन, जामिया निज़ामिया रज़विया अंदरून लोहारी दरवाज़ा, लाहौर-8, पाकिस्तान (54000) फ़ोन: 7657312

पेज 2 of 715

فتاویٰ رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

مَنْ یُّرِدِ اللّٰہُ بِہٖ خَیْرًا یُّفَقِّہْہُ فِی الدِّیْنِ (الحدیث)

اَلْعَطَایَا النَّبَوِیَّۃُ فِی الْفَتَاوَی الرَّضَوِیَّۃ مع تخریج و ترجمہ عربی عبارات

جلد ہفدہم (۱۷)

تحقیقاتِ نادرہ پر مشتمل چودہویں صدی کا عظیم الشان فقہی انسائیکلوپیڈیا

امام احمد رضا بریلوی قدس سرہ العزیز ۱۲۷۲ھ ——— ۱۳۴۰ھ ۱۸۵۶ء ——— ۱۹۲۱ء

رضا فاؤنڈیشن، جامعہ نظامیہ رضویہ اندرون لوہاری دروازہ، لاہور-۸، پاکستان (۵۴۰۰۰) فون: ۷۶۵۷۳۱۲

Fatawa-e-Razvia Volume 17 (17)

All rights reserved for the publisher

Book Name: Fatawa Rizwia Volume 17 Author: Sheikh-ul-Islam Imam Ahmad Raza Qadri Barelvi (May Allah have mercy on him) Translation of Arabic Phrases: Hafiz Abdul Sattar Saeedi, Director of Education, Jamia Nizamia Razvia, Lahore Foreword: Hafiz Abdul Sattar Saeedi, Director of Education, Jamia Nizamia Razvia, Lahore Arrangement of Contents: Hafiz Abdul Sattar Saeedi, Director of Education, Jamia Nizamia Razvia, Lahore Referencing and Correction: Maulana Nazeer Ahmed Saeedi, Maulana Muhammad Akram Ullah Butt Under the Supervision and Patronage of: Maulana Mufti Muhammad Abdul Qayyum Hazarvi, Secretary General Tanzeem-ul-Madaris Ahle Sunnat, Pakistan Calligraphy: Muhammad Sharif Gul, Karial Kalan (Gujranwala) Pasting: Maulana Muhammad Mansha Tabish Qasuri, Teacher of Persian Department, Jamia Nizamia Lahore Pages: 715 Publication: Dhul-Qa'dah 1420 AH / February 2000 AD Printer: __ **Publisher: Raza Foundation, Jamia Nizamia Razvia, Inside Lohari Gate, Lahore Price: __**

Addresses to Get the Book: * Jamia Nizamia Razvia, Inside Lohari Gate, Lahore * Maktaba Tanzeem-ul-Madaris, Jamia Nizamia Razvia, Inside Lohari Gate, Lahore * Maktaba Zia-iya, Bohr Bazar, Rawalpindi * Zia-ul-Quran Publications, Ganj Bakhsh Road, Lahore

Page 3 of 715

फतावा-ए-रजविया जिल्द 17 (17)

सभी अधिकार प्रकाशक के पास सुरक्षित हैं

पुस्तक का नाम: फतावा रजविया जिल्द 17 लेखक: शेख-उल-इस्लाम इमाम अहमद रज़ा कादरी बरेलवी (रहमतुल्लाह अलैह) अरबी वाक्यांशों का अनुवाद: हाफिज अब्दुल सत्तार सईदी, शिक्षा निदेशक, जामिया निज़ामिया रजविया, लाहौर प्रस्तावना: हाफिज अब्दुल सत्तार सईदी, शिक्षा निदेशक, जामिया निज़ामिया रजविया, लाहौर विषय सूची व्यवस्था: हाफिज अब्दुल सत्तार सईदी, शिक्षा निदेशक, जामिया निज़ामिया रजविया, लाहौर संदर्भ और सुधार: मौलाना नज़ीर अहमद सईदी, मौलाना मुहम्मद अकरम उल्लाह बट पर्यवेक्षण और संरक्षण के तहत: मौलाना मुफ्ती मुहम्मद अब्दुल कय्यूम हजारवी, महासचिव तंजीम-उल-मदारिस अहले सुन्नत, पाकिस्तान कैलीग्राफी: मुहम्मद शरीफ गुल, करियाल कलां (गुजरानवाला) पेस्टिंग: मौलाना मुहम्मद मंशा ताबिश कसूरी, फारसी विभाग के शिक्षक, जामिया निज़ामिया लाहौर पृष्ठ: 715 प्रकाशन: जुल-कादह 1420 हिजरी / फरवरी 2000 ईस्वी मुद्रक: __ **प्रकाशक: रज़ा फाउंडेशन, जामिया निज़ामिया रजविया, अंदरूनी लोहारी दरवाजा, लाहौर कीमत:** __

मिलने के पते: * जामिया निज़ामिया रजविया, अंदरूनी लोहारी दरवाजा, लाहौर * मकतबा तंजीम-उल-मदारिस, जामिया निज़ामिया रजविया, अंदरूनी लोहारी दरवाजा, लाहौर * मकतबा ज़ियाइया, बोहड़ बाज़ार, रावलपिंडी * ज़िया-उल-कुरान पब्लिकेशन्स, गंज बख्श रोड, लाहौर

पृष्ठ 715 में से 3

فتاویٰ رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

جملہ حقوق بحق ناشر محفوظ

نام کتاب: فتاویٰ رضویہ جلد ۱۷ تصنیف: شیخ الاسلام امام احمد رضا قادری بریلوی رحمتہ اللہ تعالٰی علیہ ترجمہ عربی عبارات: حافظ عبدالستار سعیدی، ناظم تعلیمات جامعہ نظامیہ رضویہ، لاہور پیش لفظ: حافظ عبدالستار سعیدی، ناظم تعلیمات جامعہ نظامیہ رضویہ، لاہور ترتیب فہرست: حافظ عبدالستار سعیدی، ناظم تعلیمات جامعہ نظامیہ رضویہ، لاہور تخریج و تصحیح: مولانا نظیر احمد سعیدی، مولانا محمد اکرم اللہ بٹ باہتمام و سرپرستی: مولانا مفتی محمد عبدالقیوم ہزاروی ناظم اعلیٰ تنظیم المدارس اہلسنت، پاکستان کتابت: محمد شریف گل، کڑیال کلاں (گوجرانوالا) پیسٹنگ: مولانا محمد منشا تابش قصوری معلم شعبہ فارسی جامعہ نظامیہ لاہور صفحات: ۷۱۵ اشاعت: ذیقعدہ ۱۴۲۰ھ / فروری ۲۰۰۰ء مطبع: __ **ناشر: رضا فاؤنڈیشن جامعہ نظامیہ رضویہ، اندرون لوہاری دروازہ، لاہور قیمت:** __

ملنے کے پتے: * جامعہ نظامیہ رضویہ، اندرون لوہاری دروازہ، لاہور * مکتبہ تنظیم المدارس، جامعہ نظامیہ رضویہ، اندرون لوہاری دروازہ، لاہور * مکتبہ ضیائیہ، بوہڑ بازار، راولپنڈی * ضیاء القرآن پبلیکیشنز گنج بخش روڈ، لاہور

Fatawa Razviya Volume Seventeen (17)

Brief Table of Contents

Foreword ---------- 6 O Book of Sales (Kitab al-Buyu') ---------- 81 O Chapter on Void and Invalid Sale ---------- 121 O Chapter on Disliked Sale ---------- 189 O Chapter on Sale by an Unauthorized Person (Fuduli) ------- 193 O Chapter on Rescission (Iqala) ---------- 217 O Chapter on Cost-plus Sale (Murabaha) ---------- 219 O Chapter on Disposal of Subject Matter and Price --------- 243 O Chapter on Loan (Qard) ---------- 269 O Chapter on Usury (Riba) ---------- 291 O Chapter on Claims/Entitlement (Istihqaq) ---------- 561 O Chapter on Forward Sale (Salam) ---------- 569 O Chapter on Manufacturing Contracts (Istisna) ---------- 597 O Chapter on Currency Exchange (Sarf) ---------- 601 O Chapter on Coerced/ Simulated Sale (Talji'ah) ---------- 639 O Chapter on Sale with the Right of Redemption (Wafa) ---- 643

फतावा रज़विया जिल्द सत्रह (17)

संक्षिप्त विषय-सूची

प्रस्तावना ---------- 6 O खरीद और बिक्री की पुस्तक (किताबुल बुयू) ---------- 81 O शून्य और अमान्य बिक्री का अध्याय ---------- 121 O नापसंद बिक्री का अध्याय ---------- 189 O अनधिकृत व्यक्ति द्वारा बिक्री का अध्याय ---------- 193 O अनुबंध रद्द करने का अध्याय (इक़ाला) ---------- 217 O लागत-प्लस लाभ बिक्री का अध्याय (मुराबाहा) ---------- 219 O बेची गई वस्तु और कीमत के निपटान का अध्याय ---------- 243 O ऋण का अध्याय (क़र्ज़) ---------- 269 O ब्याज का अध्याय (रिबा) ---------- 291 O हक़दारी का अध्याय (इस्तिहक़ाक़) ---------- 561 O अग्रिम भुगतान बिक्री का अध्याय (सलम) ---------- 569 O निर्माण अनुबंधों का अध्याय (इस्तिस्ना) ---------- 597 O मुद्रा विनिमय का अध्याय (सर्फ़) ---------- 601 O जबरन या दिखावटी बिक्री का अध्याय (तलजिअह) ---------- 639 O मोचन के अधिकार के साथ बिक्री का अध्याय (वफ़ा) ---------- 643

पृष्ठ 715 का 4

فتاوی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

اجمالی فہرست

پیش لفظ ---------- ۶ O کتاب البیوع

---------- ۸۱ O باب بیع الباطل والفاسد

---------- ۱۲۱ O باب البیع المکروہ ----------

۱۸۹ O باب بیع الفضولی ---------- ۱۹۳ O باب الاقالة

---------- ۲۱۷ O باب المرابحة

---------- ۲۱۹ O باب التصرف في المبیع والثمن

---------- ۲۴۳ O باب القرض ----------

۲۶۹ O باب الربا ---------- ۲۹۱ O باب الاستحقاق

---------- ۵۶۱ O باب بیع السلم

---------- ۵۶۹ O باب الاستصناع

---------- ۵۹۷ O باب الصرف

---------- ۶۰۱ O باب بیع التلجئة

---------- ۶۳۹ O باب بیع الوفاء

---------- ۶۴۳

Fatawa Rizvia Volume 17

649 ..... Chapter on Miscellaneous Sale Matters 653 ..... Book of Suretyship (Al-Kafalah) 703 ..... Book of Debt Transfer (Al-Hawalah)

List of Treatises 395 ..... Kifl al-Faqih al-Fahim (The Guarantee for the Understanding Jurist)
505 ..... Kasir al-Faqih al-Wahim (The Refutation of the Illusionary Jurist)

Page 5 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

649 ..... बाब मुतफ़र्रिकात अल-बय' (बिक्री के विविध विषयों का अध्याय)
653 ..... किताब अल-कफ़ालत (ज़मानत की किताब) 703 ..... किताब अल-हवालात (कर्ज़ हस्तांतरण की किताब)

पत्रिकाओं की सूची (फ़ेहरिस्त रसाईल)

395 ..... किफ़्लुल फ़क़ीहिल फ़ाहेम (समझदार फ़क़ीह की ज़मानत)
505 ..... कासिरुल फ़क़ीहिल वाहेम (भ्रमित फ़क़ीह का खंडन करने वाला)

पृष्ठ 5 ऑफ़ 715

فتاوی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

۶۴۹ ..... باب متفرقات البیع

۶۵۳ ..... کتاب الکفالہ

۷۰۳ ..... کتاب الحوالہ

فہرست رسائل ۳۹۵ ..... کفل الفقیہ

الفاہم ۵۰۵ ..... کاسر الفقیہ الواہم

Page 5 of 715

Fatwa Razaviya Volume 17

In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful

PREFACE

Alhamdulillah! To bring the scientific treasures and jurisprudential stores of AlaHazrat Imam-ul-Muslimeen Maulana Shah Ahmed Raza Khan Fazil Barelvi (may Allah have mercy on him) to light in a modern way and in line with the requirements of the present era, the institution named Raza Foundation was established in March 1988 at Darul Uloom Jamia Nizamia Razvia, Lahore. It is moving towards its goal by successfully and rapidly passing through the developmental stages of the proposed project. So far, this institution has published several works of Imam Ahmed Raza, but the greatest achievement of this institution is the publication of 'Al-Ataya al-Nabawiyyah fi al-Fatawa al-Ridawiyyah', known as Fatawa Razaviya, in an excellent and beautiful style along with citation and translation. The publication of the mentioned Fatawa began in Shaban-ul-Muazzam 1410 AH (March 1990 AD). By the grace of Allah Almighty and the kindness of His Noble Messenger, the seventeenth volume is in your hands in a short period of about ten years. Before this, sixteen volumes containing Kitab al-Taharah (Book of Purification), Kitab al-Salah (Book of Prayer), Kitab al-Janaiz (Book of Funerals), Kitab al-Zakah (Book of Alms-giving), Kitab al-Sawm (Book of Fasting), Kitab al-Hajj (Book of Pilgrimage), Kitab al-Nikah (Book of Marriage), Kitab al-Talaq (Book of Divorce), Kitab al-Iman (Book of Faith), Kitab al-Hudud wa al-Ta'zir (Book of Limits and Penalties), Kitab al-Siyar (Book of Biographies), Kitab al-Shirkah (Book of Partnership), and Kitab al-Waqf (Book of Endowment) have been published. Their details in terms of years, contents, total pages, and number of booklets included are as follows:

फ़तावा रज़विया जिल्द सत्रहवीं (17)

बिस्मिल्लाह हिर्रहमान निर्रहीम

पेश लफ्ज़ (प्रस्तावना)

अलहम्दुलिल्लाह! आलाहज़रत इमामुल मुस्लिमीन मौलाना शाह अहमद रज़ा खान फ़ाज़िल बरेलवी (रहमतुल्लाह अलैह) के इल्मी खज़ानों और फ़िक़्ही ज़ख़ीरों को आधुनिक अंदाज़ में मौजूदा दौर के तक़ाज़ों के मुताबिक़ मंज़र-ए-आम पर लाने के लिए दारुल उलूम जामिया निज़ामिया रज़विया लाहौर में रज़ा फाउंडेशन के नाम से जो संस्था मार्च 1988 में कायम हुई थी, वह इंतिहाई कामयाबी और तेज़ी से प्रस्तावित योजना के विकासात्मक चरणों को तय करते हुए अपने लक्ष्य की तरफ बढ़ रही है। अब तक यह संस्था इमाम अहमद रज़ा की कई रचनाएँ प्रकाशित कर चुकी है, मगर इस संस्था का सबसे बड़ा कारनामा 'अल-अताया-अन-नबविया फिल-फ़तावा-अर-रज़विया', जो 'फ़तावा रज़विया' के नाम से मशहूर है, की संदर्भों (तख़रीज) और अनुवाद के साथ उम्दा और खूबसूरत अंदाज़ में प्रकाशन है। उक्त फ़तावा का प्रकाशन शाबान-उल-मुअज़्ज़म 1410 हिजरी (मार्च 1990 ईस्वी) में शुरू हुआ था। अल्लाह तआला के फ़ज़ल और उनके रसूल-ए-करीम की कृपा से लगभग दस साल की संक्षिप्त अवधि में सत्रहवीं जिल्द आपके हाथों में है। इससे पहले पवित्रता की पुस्तक, प्रार्थना की पुस्तक, अंत्येष्टि की पुस्तक, दान की पुस्तक, उपवास की पुस्तक, तीर्थयात्रा की पुस्तक, विवाह की पुस्तक, तलाक की पुस्तक, विश्वास की पुस्तक, दंड और सीमाओं की पुस्तक, जीवनियों की पुस्तक, भागीदारी की पुस्तक और वक्फ़ की पुस्तक पर आधारित सोलह जिल्दें प्रकाशित हो चुकी हैं, जिनका विवरण वर्ष, विषय-वस्तु, कुल पृष्ठों और उनमें शामिल पुस्तिकाओं की संख्या के अनुसार नीचे दिया गया है:

पृष्ठ 715 का 6

فتاویٰ رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

بسم اللہ الرحمن الرحیم

پیش لفظ

الحمد للہ! اعلیحضرت امام المسلمین مولانا شاہ احمد رضا خاں فاضل بریلوی رحمۃ اللہ علیہ کے خزائنِ علمیہ اور ذخائر فقہیہ کو جدید انداز میں عہدِ حاضر کے تقاضوں کے عین مطابق منظرِ عام پر لانے کے لئے دارالعلوم جامعہ نظامیہ رضویہ لاہور میں رضا فاؤنڈیشن کے نام سے جو ادارہ ماہ مارچ ۱۹۸۸ء میں قائم ہوا تھا وہ انتہائی کامیابی اور برق رفتاری سے مجوزہ منصوبہ کے ارتقائی مراحل کو طے کرتے ہوئے اپنے ہدف کی طرف بڑھ رہا ہے، اب تک یہ ادارہ امام احمد رضا کی متعدد تصانیف شائع کر چکا ہے مگر اس ادارے کا عظیم ترین کارنامہ العطایا النبویہ فی الفتاویٰ الرضویہ المعروف بہ فتاویٰ رضویہ کی تخریج و ترجمہ کے ساتھ عمدہ خوبصورت انداز میں اشاعت ہے۔ فتاویٰ مذکورہ کی اشاعت کا آغاز شعبان المعظم ۱۴۱۰ھ مارچ ۱۹۹۰ء میں ہوا تھا اور بفضلہ تعالیٰ جل مجدہ وبعنایت رسولہ الکریم تقریباً دس سال کے مختصر عرصہ میں سترہویں جلد آپ کے ہاتھوں میں ہے۔ اس سے قبل کتاب الطہارۃ، کتاب الصلوۃ، کتاب الجنائز، کتاب الزکوۃ، کتاب الصوم، کتاب الحج، کتاب النکاح، کتاب الطلاق، کتاب الایمان، کتاب الحدود والتعزیر، کتاب السیر، کتاب الشرکت اور کتاب الوقف پر مشتمل سولہ جلدیں شائع ہو چکی ہیں جن کی تفصیل سنین، مشمولات، مجموعی صفحات اور ان میں شامل رسائل کی تعداد کے اعتبار سے حسبِ ذیل ہے:

Fatawa Razawiya (Volume 17)

Volume	Title	Answers / Questions	Number of Treatises	Years of Publication	Pages
1	Kitab al-Taharah	22	11	Sha'ban al-Mu'azzam 1210 AH, March 1990 AD	848
2	Kitab al-Taharah	33	7	Rabi' al-Thani 1412 AH, November 1991 AD	710
3	Kitab al-Taharah	59	6	Sha'ban al-Mu'azzam 1412 AH, February 1992 AD	756
4	Kitab al-Taharah	132	5	Rajab al-Murajjab 1413 AH, January 1993 AD	760
5	Kitab al-Salat	120	6	Rabi' al-Awwal 1414 AH, September 1993 AD	692
6	Kitab al-Salat	457	4	Rabi' al-Awwal 1415 AH, August 1994 AD	736
7	Kitab al-Salat	269	7	Rajab al-Murajjab 1415 AH, December 1994 AD	720
8	Kitab al-Salat	337	6	Muharram al-Haram 1416 AH, June 1995 AD	664
9	Kitab al-Jana'iz	273	13	Dhul-Qi'dah 1416 AH, April 1996 AD	946
10	Kitab Zakat, Fasting, Hajj	316	16	Rabi' al-Awwal 1417 AH, August 1996 AD	832
11	Kitab al-Nikah	459	6	Muharram al-Haram 1418 AH, May 1997 AD	736

Volume	Title	Answers / Questions	Number of Treatises	Years of Publication	Pages
12	Kitab Nikah, Divorce	328	3	Rajab al-Murajjab 1418 AH, November 1997 AD	688
13	Kitab Divorce, Faith and Limits & Punishments	293	2	Dhul-Qi'dah 1418 AH, March 1998 AD	688
14	Kitab al-Siyar (1)	339	7	Jumada al-Ukhra 1419 AH, September 1998 AD	712
15	Kitab al-Siyar (B)	81	15	Muharram al-Haram 1420 AH, April 1999 AD	744
16	Kitab al-Shirkah, Kitab al-Waqf	432	3	Jumada al-Ula 1420 AH, September 1999 AD	632

Seventeenth Volume This volume contains answers to 298 questions from the beginning to page 290 of the old Fatawa Razawiya, Volume 7, published by Sunni Dar-ul-Isha'at, Mubarakpur, Azamgarh, India. In addition to the treatise "Kifl al-Faqih al-Faham fi Ahkam Qirtas al-Dirham", the Arabic and Persian passages in this volume have been translated by the writer of these lines. Prior to this, volumes 11, 12, 13, and 16 have also been published with the translation of the writer. Meanwhile, the very magnificent and powerful translation of "Kifl al-Faqih al-Faham fi Ahkam Qirtas al-Dirham" is by the noble son of the author (mercy be upon him), Hujjat al-Islam Hazrat Allama Maulana Muhammad Hamid Raza Khan Barelvi (may Allah enlighten his resting place).

फ़तावा रज़विया (खण्ड 17)

खण्ड	विषय	उत्तर / प्रश्न	शोध ग्रंथों की संख्या	प्रकाशन वर्ष	पृष्ठ
1	किताब-उत-तहारत	22	11	शाबान अल-मुअज़्ज़म 1210 हिजरी, मार्च 1990 ई.	848
2	किताब-उत-तहारत	33	7	रबी-उल-सानी 1412 हिजरी, नवंबर 1991 ई.	710
3	किताब-उत-तहारत	59	6	शाबान अल-मुअज़्ज़म 1412 हिजरी, फरवरी 1992 ई.	756
4	किताब-उत-तहारत	132	5	रजब अल-मुरज्जब 1413 हिजरी, जनवरी 1993 ई.	760
5	किताब-उस-सलात	120	6	रबी-उल-अव्वल 1414 हिजरी, सितंबर 1993 ई.	692
6	किताब-उस-सलात	457	4	रबी-उल-अव्वल 1415 हिजरी, अगस्त 1994 ई.	736
7	किताब-उस-सलात	269	7	रजब अल-मुरज्जब 1415 हिजरी, दिसंबर 1994 ई.	720
8	किताब-उस-सलात	337	6	मुहर्रम अल-हराम 1416 हिजरी, जून 1995 ई.	664
9	किताब-उल-जनाइज़	273	13	ज़ीकादह 1416 हिजरी, अप्रैल 1996 ई.	946
10	किताब ज़कात, रोज़ा, हज	316	16	रबी-उल-अव्वल 1417 हिजरी, अगस्त 1996 ई.	832
11	किताब-उन-निकाह	459	6	मुहर्रम अल-हराम 1418 हिजरी, मई 1997 ई.	736
12	किताब निकाह, तलाक़	328	3		688

खण्ड	विषय	उत्तर / प्रश्न	शोध ग्रंथों की संख्या	प्रकाशन वर्ष	पृष्ठ
				रजब अल-मुरज्जब 1418 हिजरी, नवंबर 1997 ई.	
13	किताब तलाक़, ईमान और हुदूद-ओ-ताज़ीर	293	2	ज़ीकादह 1418 हिजरी, मार्च 1998 ई.	688
14	किताब-उस-सियर (1)	339	7	जमादी-उल-उखरा 1419 हिजरी, सितंबर 1998 ई.	712
15	किताब-उस-सियर (ब)	81	15	मुहर्रम अल-हराम 1420 हिजरी, अप्रैल 1999 ई.	744
16	किताब-उश-शिरकत, किताब-उल-वक़्फ़	432	3	जमादी-उल-उला 1420 हिजरी, सितंबर 1999 ई.	632

सत्रहवाँ खण्ड यह खण्ड पुरानी फ़तावा रज़विया खण्ड सात के प्रारंभ से पृष्ठ 290 तक 298 प्रश्नों के उत्तरों पर आधारित है, जिसे सुन्नी दारुल इशाअत, मुबारकपुर, आज़मगढ़, भारत द्वारा प्रकाशित किया गया है। शोध ग्रंथ "किफ़्लुल फ़कीह अल-फ़ाहिम फ़ी अहकाम-ए-क़िर्तास अद-दराहिम" के अतिरिक्त इस खण्ड के अरबी और फ़ारसी अंशों का अनुवाद लेखक द्वारा किया गया है। इससे पूर्व 11वें, 12वें, 13वें और 16वें खण्ड भी लेखक के अनुवाद के साथ प्रकाशित हो चुके हैं। जबकि "किफ़्लुल फ़कीह अल-फ़ाहिम फ़ी अहकाम-ए-क़िर्तास अद-दराहिम" का अत्यंत शानदार और सशक्त अनुवाद लेखक (जिन पर अल्लाह की रहमत हो) के सुपुत्र हुज्जतुल इस्लाम हज़रत अल्लामा मौलाना मुहम्मद हामिद रज़ा खान बरेलवी (अल्लाह उनकी कब्र को नूर से भर दे) का है।

पृष्ठ 715 का 7

فتاوی رضویہ (جلد ہفدہم (۱۷))

جلد	عنوان	جوابات / اسئلہ	تعداد رسائل	سنین اشاعت	صفحات
۱	کتاب الطہارۃ	۲۲	۱۱	شعبان المعظم ۱۲۱۰ھ، مارچ ۱۹۹۰ء	۸۴۸
۲	کتاب الطہارۃ	۳۳	۷	ربیع الثانی ۱۴۱۲ھ، نومبر ۱۹۹۱ء	۷۱۰
۳	کتاب الطہارۃ	۵۹	۶	شعبان المعظم ۱۴۱۲ھ، فروری ۱۹۹۲ء	۷۵۶
۴	کتاب الطہارۃ	۱۳۲	۵	رجب المرجب ۱۴۱۳ھ، جنوری ۱۹۹۳ء	۷۶۰
۵	کتاب الصلوۃ	۱۲۰	۶	ربیع الاول ۱۴۱۴ھ، ستمبر ۱۹۹۳ء	۶۹۲
۶	کتاب الصلوۃ	۴۵۷	۴	ربیع الاول ۱۴۱۵ھ، اگست ۱۹۹۴ء	۷۳۶
۷	کتاب الصلوۃ	۲۶۹	۷	رجب المرجب ۱۴۱۵ھ، دسمبر ۱۹۹۴ء	۷۲۰
۸	کتاب الصلوۃ	۳۳۷	۶		۶۶۴

جلد	عنوان	جوابات / اسئلہ	تعداد رسائل	سنین اشاعت	صفحات
				محرم الحرام ۱۴۱۶ھ، جون ۱۹۹۵ء	
۹	کتاب الجنائز	۲۷۳	۱۳	ذیقعدہ ۱۴۱۶ھ، اپریل ۱۹۹۶ء	۹۴۶
۱۰	کتاب زکوۃ ،صوم ،حج	۳۱۶	۱۶	ربیع الاول ۱۴۱۷ھ، اگست ۱۹۹۶ء	۸۳۲
۱۱	کتاب النکاح	۴۵۹	۶	محرم الحرام ۱۴۱۸ھ، مئی ۱۹۹۷ء	۷۳۶
۱۲	کتاب نکاح ، طلاق	۳۲۸	۳	رجب المرجب ۱۴۱۸ھ، نومبر ۱۹۹۷ء	۶۸۸
۱۳	کتاب طلاق ،ایمان اور حدود و تعزیر	۲۹۳	۲	ذیقعدہ ۱۴۱۸ھ، مارچ ۱۹۹۸ء	۶۸۸
۱۴	کتاب السیر (۱)	۳۳۹	۷	جمادی الاخریٰ ۱۴۱۹ھ، ستمبر ۱۹۹۸ء	۷۱۲
۱۵	کتاب السیر (ب)	۸۱	۱۵	محرم الحرام ۱۴۲۰ھ، اپریل ۱۹۹۹ء	۷۴۴
۱۶	کتاب الشرکۃ ، کتاب الوقف	۴۳۲	۳	جمادی الاولیٰ ۱۴۲۰ھ، ستمبر ۱۹۹۹ء	۶۳۲

سترہویں جلد یہ جلد فتاویٰ رضویہ قدیم جلد ہفتم مطبوعہ سنی دار الاشاعت مبارکپور اعظم گڑھ بھارت کے شروع سے صفحہ ۲۹۰ تک ۲۹۸ سوالوں کے جوابات پر مشتمل ہے۔ رسالہ "کفل الفقیہ الفاھم فی احکام قرطاس الدراھم" کے علاوہ اس جلد کی عربی وفارسی عبارات کا ترجمہ راقم الحروف نے کیا ہے اس سے قبل گیارہویں ، بارھویں ، تیرھویں اور سولہویں جلد بھی راقم کے ترجمہ کے ساتھ شائع ہو چکی ہیں جبکہ "کفل الفقیہ الفاھم فی احکام قرطاس الدراھم" کا نہایت شاندار اور زوردار ترجمہ مصنف علیہ الرحمہ کے فرزند ارجمند حجتہ الاسلام حضرت علامہ مولانا محمد حامد رضا خان بریلوی نور اللہ مرقدہ کا ہے۔

صفحہ ۷ از ۷۱۵

Fatawa Razawiya Volume 17 (17)

Remember that the blessed treatise "Kifl al-Faqih al-Fahim", which encompasses all issues related to paper currency (notes), was written by the author (may mercy be upon him) in Makkah al-Mukarramah in just one day and a few hours in response to twelve questions presented by the scholars of Makkah. Upon seeing the research and investigations mentioned in the treatise, the scholars of Makkah were very pleased and delighted and presented a tribute of praise to the author (may mercy be upon him) in extremely grand words. After the composition of the said treatise, when you returned to your homeland from the Two Holy Sanctuaries (Haramain Sharifain), the fatwas regarding paper notes by Maulvi Rashid Ahmad Gangohi and Maulvi Abdul Hayy Lakhnawi came to your notice. In refutation of these, the author (may mercy be upon him) wrote the treatise "Kasar al-Safi al-Wahim fi Abdal Qirtas al-Dirham", chronologically titled "Al-Dhayl al-Manut li-Risalat al-Nut". This volume primarily consists of the noble discussions of the Book of Sales (Kitab al-Buyu'), the Book of Suretyship (Kitab al-Kafalah), and the Book of Transfer of Debt (Kitab al-Hawalah). However, issues from various chapters of jurisprudence and theology etc. have also come under discussion incidentally. In addition to a detailed list of main issues and treatises, a separate list of incidental issues has also been prepared for the convenience of the readers. The following two treatises, consisting of extremely weighty and valuable research and investigations, also grace this volume:

(1) Kifl al-Faqih al-Fahim fi Ahkam Qirtas al-Dirham (1324 AH) A research-based answer to twelve questions from the scholars of Makkah al-Mukarramah regarding paper notes.

(2) Kasar al-Safi al-Wahim fi Abdal Qirtas al-Dirham, chronologically titled Al-Dhayl al-Manut li-Risalat al-Nut (1324 AH) A detailed refutation of the fatwas of Maulvi Rashid Ahmad Gangohi and Maulana Abdul Hayy Lakhnawi regarding paper notes.

Shawwal al-Mukarram 1420 AH Hafiz Muhammad Abdul Sattar Saeedi January 2000 AD Controller of Education, Jamia Nizamia Razawiya, Lahore

Page 8 of 715

फतावा रजविया जिल्द 17 (१७)

याद रहे कि मुबारिक रिसाला "कफ़लुल फ़कीह अल-फ़ाहिम" जो नोटों से संबंधित सभी मसलों पर आधारित है, उसे मुसन्निफ (रहमतुल्लाह अलैहि) ने मक्का मुकर्रमा में एक दिन और कुछ ही घंटों में मक्का के उलेमा द्वारा पेश किए गए बारह सवालों के जवाब में लिखा था। रिसाले में मौजूद शोध और जांच को देखकर मक्का के उलेमा बहुत प्रसन्न और प्रफुल्लित हुए और मुसन्निफ (रहमतुल्लाह अलैहि) को बहुत शानदार शब्दों में श्रद्धांजलि अर्पित की। उक्त रिसाले की रचना के बाद जब आप हरमैन शरीफ़ैन से वतन वापस लौटे, तो मौलवी रशीद अहमद गंगोही और मौलवी अब्दुल हई लखनवी साहब के नोट से संबंधित फतवे नज़र से गुज़रे। इनके खंडन में मुसन्निफ (रहमतुल्लाह अलैहि) ने रिसाला "कासिरुस सफ़ीह अल-वाहिम फ़ी अब्दाल क़िर्तास अद-दिरहम" जिसका ऐतिहासिक नाम "अज़-ज़ैलुल मनूत लि-रिसालत इन-नूत" है, लिखा। प्रस्तुत जिल्द मुख्य रूप से किताबुल बुयूह (बिक्री की किताब), किताबुल कफ़ालाह (ज़मानत की किताब) और किताबुल हवालाह (ऋण हस्तांतरण की किताब) की महत्वपूर्ण चर्चाओं पर आधारित है। हालांकि, न्यायशास्त्र और धर्मशास्त्र आदि के विभिन्न अध्यायों के मसलों पर भी प्रसंगवश चर्चा की गई है। मसलों और रिसालों की विस्तृत सूची के अलावा, पाठकों की सुविधा के लिए गौण मसलों की एक अलग सूची भी तैयार की गई है। अत्यंत महत्वपूर्ण और बहुमूल्य शोध एवं जांच पर आधारित निम्नलिखित दो रिसाले भी इस जिल्द की शोभा हैं:

(१) कफ़लुल फ़कीह अल-फ़ाहिम फ़ी अहकाम क़िर्तास अद-दिरहम (१३२४ हि.) कागज़ी नोटों के बारे में मक्का मुकर्रमा के उलेमा के बारह सवालों का शोधपूर्ण जवाब।

(२) कासिरुस सफ़ीह अल-वाहिम फ़ी अब्दाल क़िर्तास अद-दिरहम जिसका ऐतिहासिक नाम अज़-ज़ैलुल मनूत लि-रिसालत इन-नूत (१३२४ हि.) है। कागज़ी नोटों से संबंधित मौलवी रशीद अहमद गंगोही और मौलाना अब्दुल हई लखनवी के फतवों का विस्तृत खंडन।

शव्वाल अल-मुकर्रम १४२० हि. हाफिज़ मोहम्मद अब्दुल सत्तार सईदी जनवरी २००० ई. नाज़िम तालीमात, जामिया निज़ामिया रजविया, लाहौर

पेज 8 का 715

یاد رہے کہ رسالہ مبارکہ "کفل الفقیہ الفاھم" جو نوٹ سے متعلقہ تمام مسائل پر محیط ہے مصنف علیہ الرحمہ نے مکہ مکرمہ میں ایک دن اور چند گھنٹوں میں علماء مکہ کی طرف سے پیش کردہ بارہ سوالات کے جواب میں تحریر فرمایا۔ رسالہ میں مذکور تحقیقات وتدقیقات کو دیکھ کر علماء مکہ بہت مسرور و محظوظ ہوئے اور مصنف علیہ الرحمہ کو انتہائی شاندار الفاظ میں خراج تحسین پیش فرمایا، رسالہ مذکورہ کی تصنیف کے بعد جب آپ حرمین شریفین سے وطن واپس تشریف لائے تو مولوی رشید احمد گنگوہی اور مولوی عبدالحی لکھنوی صاحب کے نوٹ سے متعلق فتوے نظر سے گزرے جن کے رد میں مصنف علیہ الرحمہ نے رسالہ "کاسر السفیہ الواھم فی ابدال قرطاس الدراھم" ملقب بلقب تاریخی "الذیل المنوط لرسالۃ النوط" تحریر فرمایا پیش نظر جلد بنیادی طور پر کتاب البیوع، کتاب الکفالہ اور کتاب الحوالہ کے مباحث جلیلہ پر مشتمل ہے تاہم متعدد ابواب فقیہ و کلامیہ وغیرہ کے مسائل ضمناً زیر بحث آئے ہیں، مسائل و رسائل کی مفصل فہرست کے علاوہ مسائل ضمنیہ کی الگ فہرست بھی قارئین کرام کی سہولت کے لئے تیار کر دی گئی ہے۔ انتہائی وقیع اور گرانقدر تحقیقات وتدقیقات پر مشتمل مندرجہ ذیل دو رسالے بھی اس جلد کی زینت ہیں:

(۱) کفل الفقیہ الفاھم فی احکام قرطاس الدراھم (۱۳۲۴ھ) کاغذی نوٹ کے بارے علماء مکہ مکرمہ کے بارہ سوالوں کا تحقیقی جواب

(۲) کاسر السفیہ الواھم فی ابدال قرطاس الدراھم ملقب بلقب تاریخی الذیل المنوط لرسالۃ النوط (۱۳۲۴ھ) کاغذی نوٹ سے متعلق مولوی رشید احمد گنگوہی اور مولانا عبدالحی لکھنوی کے فتووں کا تفصیلی رد۔

شوال المکرم ۱۴۲۰ھ حافظ محمد عبد الستار سعیدی جنوری ۲۰۰۰ء ناظم تعلیمات جامعہ نظامیہ رضویہ لاہور

Fatawa-e-Razviya - Volume 17 (17)

Detailed Table of Contents

Book of Sales (Kitab-ul-Buyoo')

- In Sharia, the past tense form is required for offer and acceptance (Ijab-o-Qubool). [Page 81]
- Ruling on selling a misappropriated (maghsoob) item to someone other than the misappropriator (ghasib). [Page 82]
- The situation where a sale becomes complete even without formal offer and acceptance. [Page 81]
- If legal witnesses testify to the ownership of something, possession will be deemed legally established. [Page 82]
- In these contracts, the intended meaning is what matters, not the literal word. [Page 81]
- For the validity of a sale, it is sufficient for the item to be legally capable of delivery (Maqdur-ut-Tasleem). [Page 82]
- The primary basis in a sale is the mutual consent of both parties, whether expressed verbally or through action. [Page 81]
- According to no authority is it necessary for the sold item (Mabee') to be physically deliverable at the present moment. [Page 82]
- Mutual conduct (Ta'ati), like offer and acceptance, is a cause for the binding nature of a sale. [Page 81]
- The sale of a slave whom the owner sent for some work is valid even while he is away. [Page 82]
- In a hand-to-hand (Ta'ati) sale, offer and acceptance are expressed through action. [Page 81]
- In rulings based on custom and habit ('Urf-o-'Adat), rational possibilities of contradiction are not taken into account. [Page 82]
- Selling someone else's house to another person by falsely claiming ownership and giving possession to the buyer is misappropriation (Ghasb). [Page 82]
- The sale of trained pigeons that return in the evening is valid while they are away. [Page 82]

फतावा-ए-रजविया - खंड 17 (17)

विस्तृत विषय-सूची

विक्रय की पुस्तक (किताबुल बुयूअ)

- शरीयत में प्रस्ताव और स्वीकृति (इजाब-ओ-क़ुबूल) के लिए भूतकाल के शब्दों की आवश्यकता होती है। [पृष्ठ 81]
- अपहरणकर्ता (ग़ासिब) के अलावा किसी और को अपहरण की गई वस्तु (मग़सूब) बेचने का आदेश। [पृष्ठ 82]
- वह स्थिति जिसमें प्रस्ताव और स्वीकृति के बिना भी विक्रय पूर्ण हो जाता है। [पृष्ठ 81]
- यदि किसी वस्तु के स्वामित्व के लिए कानूनी गवाह मौजूद हों, तो उसे कानूनी रूप से कब्जे में माना जाएगा। [पृष्ठ 82]
- इन अनुबंधों में शब्दों के बजाय उनके उद्देश्यपूर्ण अर्थ का महत्व है। [पृष्ठ 81]
- विक्रय की वैधता के लिए, वस्तु का कानूनी रूप से वितरण योग्य (मक़दूर-उत-तसलीम) होना पर्याप्त है। [पृष्ठ 82]
- विक्रय में मुख्य आधार दोनों पक्षों की आपसी सहमति है, चाहे वह शब्दों से हो या क्रिया से। [पृष्ठ 81]
- किसी के अनुसार वर्तमान समय में विक्रय वस्तु (मबीअ) का भौतिक रूप से वितरण योग्य होना आवश्यक नहीं है। [पृष्ठ 82]
- आपसी व्यवहार (ताती) प्रस्ताव और स्वीकृति के समान विक्रय की बाध्यता का कारण बनता है। [पृष्ठ 81]
- जिस गुलाम को मालिक ने किसी काम से भेजा हो, उसकी अनुपस्थिति में भी उसकी बिक्री वैध है। [पृष्ठ 82]
- 'ताती' विक्रय में प्रस्ताव और स्वीकृति क्रिया के रूप में होती है। [पृष्ठ 81]
- रीति-रिवाजों और प्रथाओं (उर्फ़ओ-आदत) के नियमों में, विरोध की तर्कसंगत संभावनाओं पर विचार नहीं किया जाता है। [पृष्ठ 82]
- किसी दूसरे के घर को अपना बताकर किसी को बेचना और खरीदार को कब्जा दिलाना अपहरण (ग़सब) है। [पृष्ठ 82]

• पालतू कबूतर जो शाम को वापस आ जाते हैं, उनकी अनुपस्थिति में बिक्री वैध है। [पृष्ठ 82]

पृष्ठ 9/715

فتاویٰ رضویہ - جلد ہفدہم (۱۷)

فہرست مضامین مفصل

کتاب البیوع

- شرع میں ایجاب وقبول کے لئے ماضی کا صیغہ درکار ہے۔ [۸۱]
- مغصوب کو غاصب کے علاوہ کسی دوسرے کے ہاتھ بیچنے کا حکم۔ [۸۲]
- وہ صورت کہ ایجاب وقبول کے بغیر بھی بیع تام ہو جائے۔ [۸۱]
- کسی شئی کی ملکیت کے شرعی گواہ گزریں تو قبضہ حکماً قرار دیا جائے گا۔ [۸۲]
- ان عقود میں مقصود معنی ہے نہ کہ لفظ۔ [۸۱]
- صحتِ بیع کے لئے بیع کا حکماً مقدور التسلیم ہونا کافی ہے۔ [۸۲]
- بیع میں اصل مدار تراضی طرفین ہے قولاً ظاہر ہو خواہ فعلاً۔ [۸۱]
- حقیقۃً فی الحال مبیع کا مقدور التسلیم ہونا کسی کے نزدیک ضروری نہیں۔ [۸۲]
- تعاطی مثلِ ایجاب وقبول لزومِ بیع کا سبب ہوتی ہے۔ [۸۱]
- غلام جس کو مالک نے کسی کام سے بھیجا حالتِ غیبت میں اس کی بیع صحیح ہے۔ [۸۲]
- بیع تعاطی میں ایجاب وقبول فعل ہوتا ہے۔ [۸۱]
- احکام عرف وعادت میں خلاف کے احتمالات عقلیہ کا لحاظ نہیں ہوتا۔ [۸۲]
- کسی دوسرے کے مکان کو اپنی ملکیت ظاہر کر کے کسی کے ہاتھ بیچنا اور مشتری کو قبضہ دلا دینا غصب ہے۔ [۸۲]
- ہلے ہوئے کبوتر جو شام کو واپس آ جاتے ہیں حالت غیبت میں ان کی بیع صحیح ہے۔ [۸۲]

Fatawa Razawiya Volume 17

- If the usurper acknowledges the owner's ownership, the sale of the usurped item is valid. (82)
- Acknowledgment is a stronger proof than evidence. (82)
- A runaway slave and a blue pigeon are deemed impossible to deliver. (83)
- Some Imams consider the power of delivery a condition for the conclusion of a sale, while others consider it a condition for its validity; both views are strong. According to the first view, the sale is void (Batil), and according to the second, it is irregular (Fasid). (83)
- The sale of a usurped item that is impossible to deliver is irregular (Fasid) according to the second view, and it is also suspended (Mauqoof). (83)
- A complete stranger has no authority to bring a claim. (83)
- In an irregular sale, the buyer does not become the owner without possession. (83)
- In an irregular sale, the removal of the factor that makes it irregular makes the sale valid. (83)
- In such a case, for the validity of the sale, the buyer's possession or the usurper's acknowledgment or reliable witnesses for the seller are necessary. (83)
- In the sale of items that are constructively deliverable, if the item is destroyed before possession, the sale is rescinded. (83)
- Texts of specific cases from books of jurisprudence on the above matters. (83)

Offer and Acceptance - If the market price of the sold item increases after offer and acceptance, the seller will be forced to provide the goods at the agreed rate. (87) - After offer and acceptance, the sale is complete; neither the buyer nor the seller has the right to revoke it unilaterally. (87) - Even after the completion of the sale, the option of inspection (Khiyar al-Ru'yah) and the option of defect (Khiyar al-Ayb) remain available. (87) - If the goods do not match the sample and no sign of consent is shown by the buyer after inspection, he can return the goods. (88) - After offer and acceptance, the sold item enters the buyer's ownership whether he pays the price or not. (89) - If the buyer takes possession of the sold item without paying all or part of the price, the profits from the item are lawful for him. (89) - The seller can withhold the sold item to collect the price. (89) - Interest (Usury) is absolutely forbidden; if someone took interest and then some amount from the taker comes to the giver, he can offset it against the interest paid. (89)

Option of Condition - Selling a house for two years with an option of condition, then the seller renting the same house, is a usurious transaction. (89) - This transaction is in reality a mortgage (Rahn), and a mortgage without possession is void. (90) - An owner cannot rent his own property from a non-owner. (90) - Ownership obtained through interest is malicious (Khabith). (90) - Gaining money through a void lease (Ijarah Batilah) is usurpation (Ghasb). (90) - It is necessary to return the entire amount. (90)

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

- यदि अपहर्ता (ग़ासिब) स्वामी के स्वामित्व को स्वीकार कर ले, तो अपहृत वस्तु की बिक्री वैध है। (82)
- स्वीकृति साक्ष्य से अधिक प्रबल प्रमाण है। (82)
- भागा हुआ गुलाम और नीला कबूतर सुपुर्दगी के दायरे से बाहर (ग़ैर मक़दूरुत्तस्लीम) माने जाते हैं। (83)
- कुछ इमामों ने सुपुर्दगी की क्षमता को बिक्री के संपन्न होने की शर्त माना है और कुछ ने बिक्री की वैधता की शर्त; दोनों विचार सशक्त हैं। पहले विचार के अनुसार बिक्री शून्य (बातिल) होगी और दूसरे के अनुसार अनियमित (फ़ासिद)। (83)
- अपहृत वस्तु की बिक्री, जिसकी सुपुर्दगी संभव न हो, दूसरे विचार के अनुसार अनियमित (फ़ासिद) है और यह स्थगित (मौक़ूफ़) भी है। (83)
- किसी अपरिचित व्यक्ति को दावा करने का अधिकार नहीं होता। (83)
- अनियमित बिक्री (बय-ए-फ़ासिद) में खरीदार बिना क़ब्ज़े के मालिक नहीं बनता। (83)
- अनियमित बिक्री में अनियमितता पैदा करने वाले कारक को दूर करने से बिक्री वैध हो जाती है। (83)
- ऐसी स्थिति में बिक्री की वैधता के लिए खरीदार का क़ब्ज़ा या अपहर्ता की स्वीकृति या विक्रेता के विश्वसनीय गवाह आवश्यक हैं। (83)
- कानूनी रूप से सुपुर्दगी योग्य वस्तुओं की बिक्री में, यदि वस्तु क़ब्ज़े से पहले नष्ट हो जाए, तो बिक्री रद्द हो जाती है। (83)
- उपरोक्त मामलों पर न्यायशास्त्र की पुस्तकों से विशिष्ट उदाहरणों के पाठ। (83)

प्रस्ताव और स्वीकृति (इजाब-ओ-क़ुबूल) - प्रस्ताव और स्वीकृति के बाद यदि बेची गई वस्तु का बाजार भाव बढ़ जाए, तो विक्रेता को तय दर पर माल देने के लिए मजबूर किया जाएगा। (87) - प्रस्ताव और स्वीकृति के बाद बिक्री पूरी हो जाती है; विक्रेता या खरीदार में से किसी को भी एकतरफ़ा तौर पर इसे रद्द करने का अधिकार नहीं है। (87) - बिक्री पूरी होने के बाद भी देखने का विकल्प (खियार-ए-रुयत) और दोष का विकल्प (खियार-ए-ऐब) बना रहता है। (87) - यदि माल नमूने के अनुसार न हो और देखने के बाद खरीदार की ओर से सहमति का कोई संकेत न मिले, तो वह माल वापस कर सकता है। (88) - प्रस्ताव और स्वीकृति के बाद बेची गई वस्तु खरीदार के स्वामित्व में आ जाती है, चाहे वह

कीमत चुकाए या नहीं। (89) - यदि खरीदार ने पूरी या आंशिक कीमत चुकाए बिना बेची गई वस्तु पर क़ब्ज़ा कर लिया, तो उस वस्तु से होने वाला लाभ उसके लिए वैध है। (89) - विक्रेता कीमत वसूलने के लिए बेची गई वस्तु को रोक सकता है। (89) - ब्याज पूर्णतः वर्जित है; यदि किसी ने ब्याज लिया और फिर लेने वाले की कोई राशि देने वाले को मिली, तो वह उसे दिए गए ब्याज में समायोजित कर सकता है। (89)

शर्त का विकल्प (खियार-ए-शर्त) - किसी घर को दो साल के लिए शर्त के विकल्प पर बेचना, फिर विक्रेता का उसी घर को किराए पर लेना ब्याज का कारोबार है। (89) - यह मामला वास्तव में गिरवी (रहन) का है और बिना क़ब्ज़े के गिरवी शून्य है। (90) - स्वामी अपनी संपत्ति को किसी गैर-स्वामी से किराए पर नहीं ले सकता। (90) - ब्याज से प्राप्त स्वामित्व दूषित (खबीस) है। (90) - शून्य पट्टे (इजारा-ए-बातिला) के माध्यम से धन प्राप्त करना अपहरण (ग़सब) है। (90) - पूरी राशि वापस करना अनिवार्य है। (90)

पृष्ठ 10 / 715

۸۲ - غاصب مالک کی ملکیت کا اقرار کرے تو مغصوب کو بیع صحیح ہے۔ ۸۲ - اقرار بینہ سے قوی حجت ہے۔ ۸۳ - بھاگا ہوا غلام اور نیلا کبوتر غیر مقدور التسلیم ہے۔ ۸۳ - قدرت علی التسلیم کو بعض ائمہ نے شرط انعقاد بیع قرار دیا اور بعض نے شرط صحت بیع، اور دونوں قول باقوت ہیں، قول اول پر بیع باطل اور ثانی پر فاسد ہوگی۔ ۸۳ - بیع مغصوب غیر مقدور التسلیم قول ثانی پر بیع فاسد ہے اور یہی موقوف بھی ہے۔ ۸۳ - اجنبی محض کو دعویٰ کا اختیار نہیں ہوتا۔ ۸۳ - بیع فاسد میں مشتری بے قبضہ مالک نہیں ہوتا۔ ۸۳ - بیع فاسد میں ارتفاع مفسد بیع کو صحیح کر دیتا ہے۔ ۸۳ - ایسی صورت میں صحت بیع کے لئے قبضہ مشتری یا اقرار غاصب یا بائع کے گواہان عادل ضروری ہے۔ ۸۳ - مقدور التسلیم حکما کی بیع میں قبضہ سے پہلے مبیع ہلاک ہو جائے تو بیع فسخ ہو جاتی ہے۔ ۸۳ - کتب فقہ سے مسائل مذکورہ بالا کے جزئیات کے نصوص۔

ایجاب و قبول ۸۷ - ایجاب و قبول کے بعد مبیع کا بازار بھاؤ بڑھ گیا، بائع کو طے شدہ نرخ پر مال دینے پر مجبور کیا جائے گا، ۸۷ - ایجاب و قبول کے بعد بیع تمام ہو جاتی ہے بائع و مشتری سے کسی کو ایک طرفہ کرنے کا حق نہیں۔ ۸۷ - تمامیت بیع کے بعد بھی خیار رؤیت اور خیار عیب حاصل رہتا ہے۔ ۸۸ - مال نمونہ کے موافق نہ ہو اور رؤیت کے بعد مشتری سے کوئی امر رضا مندی کا صادر نہ ہو تو مال واپسی کر سکتا ہے۔ ۸۹ - ایجاب و قبول کے بعد مبیع مشتری کی ملک میں داخل ہو جاتی ہے قیمت ادا کرے یا نہ کرے۔ ۸۹ - مشتری نے کل یا جز قیمت ادا کئے بغیر مبیع پر قبضہ کر دیا تو مبیع کا منافع اس کے لئے حلال ہے۔ ۸۹ - بائع قیمت وصول کرنے کے لئے مبیع روک سکتا ہے۔ ۸۹ - سود حرام قطعی ہے کسی سے سود لیا پھر لینے والے کی کوئی رقم دینے والے کو ملی تو اس کو دئے ہوئے سود میں مجرا کر سکتا ہے۔

خیار شرط ۸۹ - کسی مکان کو دو سال کے لئے خیار شرط پر بیع کرنا، پھر بائع کا اسی مکان کو کرایہ پر حاصل کرنا سودی کاروبار ہے۔ ۹۰ - یہ معاملہ حقیقۃً رہن کا ہے اور رہن بے قبضہ باطل ہے۔ ۹۰ - مالک اپنی ملک غیر مالک سے کرایہ پر نہیں لے سکتا۔ ۹۰ - سود کی ملک خبیث ہے۔ ۹۰ - اجارہ باطلہ کے ذریعہ رقم حاصل ہو غصب ہے۔ ۹۰ - پوری رقم واپس کرنا ضروری ہے۔

Fatawa Rizvia, Volume 17

- An inquiry consisting of eleven questions. 90
- Absolute Sale (Bai' Mutlaq)
- Definition of 'Option of Condition' (Khiyar-e-Shart). 91
- Actions taken during a terminal illness (Marz-ul-Maut) are not effective. 93
- Statement of the minimum and maximum duration for the 'Option of Condition'. 91
- After the sale becomes binding, heirs do not have the right to revoke it. 93
- Within the period of 'Option of Condition', the one who has the option has the right to revoke the sale, and after the period expires, the sale becomes mandatory. 91
- The 'Option of Sight' (Khiyar-e-Ruyat) belongs only to the buyer. 93
- Definition of 'Sale with a promise of redemption' (Bai-bil-Wafa). 91
- The seller also has the 'Option of Defect' (Khiyar-e-Aib), but the seller cannot revoke the sale due to a defect; they can replace a bad currency with a good one. Imam's older opinion on 'Option of Sight'. 93
- 'Bai-bil-Wafa' is essentially a mortgage (Rahn). 91
- The sold item is the essence in a sale; the sale is revoked by its return, but returning the price does not revoke it. 94
- If the mortgagee does not take possession of the mortgaged item from the mortgagor, the mortgage is void; and even after possession, it is forbidden (haram) to benefit from the mortgaged item. 91
- Withholding the earnest money (earnest) when no sale occurs is oppression, even if the fault lies with the buyer. 94
- An example of the Hadith: "Every loan that draws a benefit is interest (Riba/ Haram)". 91
- The consent of both parties is necessary to terminate a sale. 94
- Even if a deadline is set for the repayment of a simple loan, it is not binding; the creditor can collect the loan whenever they wish. 92
- In case of no sale, the earnest money shall be returned to the buyer. 95
- If 'Bai-bil-Wafa' is not truly a sale, then even after the period expires, the ownership of the buyer will not be established. 92
- The past tense is necessary for offer (Ijab) and acceptance (Qabul); a promise is not a contract. 95
- Various Shariah-compliant ways to terminate 'Bai-bil-Wafa'. 92

- Fulfilling a promise cannot be coerced. 95
- The sale of a mortgaged item is dependent on the permission of the mortgagee. 92
- The repayment of debt from the deceased's estate takes precedence over distribution. 95
- 'Option of Determination' (Khiyar-e-Ta'yin)
- The contract of sale is completed by verbal offer and acceptance; registration is not necessary. Similarly, after a written sale deed, verbal offer and acceptance are not necessary. 96
- If an item taken for trial (Maqbuz 'Ala Saum al-Shira) is destroyed, compensation can be recovered from the possessor. 93
- After the completion of the sale, the seller cannot sell the sold item to someone else without the buyer's permission. 96

फ़तावा रिज़विया, जिल्द १७

- ग्यारह सवालों पर आधारित एक इस्तफ़्ता। ९०
- बैअ मुतलक़ (निरपेक्ष बिक्री)
- खियार-ए-शर्त की परिभाषा। ९१
- मरज़-उल-मौत के दौरान किए गए कार्य प्रभावी नहीं होते। ९३
- खियार-ए-शर्त की न्यूनतम और अधिकतम अवधि का विवरण। ९१
- बिक्री अनिवार्य होने के बाद, वारिसों को उसे रद्द करने का अधिकार नहीं है। ९३
- खियार-ए-शर्त की अवधि के भीतर, जिसे विकल्प प्राप्त है उसे बिक्री रद्द करने का अधिकार है और अवधि बीत जाने के बाद बिक्री अनिवार्य हो जाती है। ९१
- खियार-ए-रुयत का अधिकार केवल खरीदार को है। ९३
- बैअ-बिल-वफ़ा की परिभाषा। ९१
- विक्रेता को भी खियार-ए-ऐब प्राप्त है, लेकिन विक्रेता दोष के कारण बिक्री रद्द नहीं कर सकता; वह खराब मुद्रा को अच्छी मुद्रा से बदल सकता है। खियार-ए-रुयत में इमाम साहब का पुराना मत। ९३
- बैअ-बिल-वफ़ा वास्तव में रहन (गिरवी) है। ९१
- बिक्री में 'मबीअ' (बेची गई वस्तु) ही मूल है, उसके वापस होने से बिक्री रद्द हो जाएगी, कीमत वापस होने से रद्द नहीं होगी। ९४
- यदि गिरवी रखने वाला गिरवी रखी गई वस्तु पर कब्जा न करे तो रहन बातिल (शून्य) है, और कब्जा करने के बाद भी गिरवी रखी वस्तु से लाभ उठाना हराम है। ९१
- बिक्री न होने की स्थिति में बयाना रोक लेना ज़ुल्म है, चाहे गलती खरीदार की ही क्यों न हो। ९४
- हदीस "हर वह कर्ज़ जो मुनाफा दे वह हराम है" का एक उदाहरण। ९१
- बिक्री रद्द करने के लिए दोनों पक्षों की सहमति आवश्यक है। ९४
- साधारण कर्ज की अदायगी के लिए कोई मियाद तय की जाए तब भी उसका पालन अनिवार्य नहीं है, लेनदार जब चाहे कर्ज वसूल कर सकता है। ९२
- बिक्री न होने की स्थिति में बयाना खरीदार को वापस मिलेगा। ९५

- यदि बैअ-बिल-वफ़ा वास्तव में बिक्री नहीं है, तो अवधि समाप्त होने के बाद भी खरीदार का स्वामित्व सिद्ध नहीं होगा। ९२
- ईजाब और कुबूल के लिए भूतकाल की क्रिया का प्रयोग आवश्यक है; वादा कोई अनुबंध नहीं है। ९५
- बैअ-बिल-वफ़ा को समाप्त करने के विभिन्न शरीयत अनुकूल तरीके। ९२
- वादा निभाने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता। ९५
- गिरवी रखी वस्तु की बिक्री गिरवी रखने वाले की अनुमति पर निर्भर है। ९२
- मृतक की संपत्ति से कर्ज की अदायगी बंटवारे से पहले की जाएगी। ९५
- खियार-ए-ताईन
- बिक्री का अनुबंध मौखिक ईजाब और कुबूल से पूरा हो जाता है, रजिस्ट्री अनिवार्य नहीं है। इसी तरह, लिखित बिक्री विलेख के बाद मौखिक ईजाब और कुबूल आवश्यक नहीं है। ९६
- यदि परीक्षण के लिए ली गई वस्तु (मक़्बूज़ अला सौम अल-शिरा) नष्ट हो जाए, तो कब्जा करने वाले से हर्जाना वसूल किया जा सकता है। ९३
- बिक्री पूरी होने के बाद, विक्रेता खरीदार की अनुमति के बिना बेची गई वस्तु को किसी और को नहीं बेच सकता। ९६

- گیارہ سوالوں پر مشتمل ایک استفتاء۔ ۹۰
- بیع مطلق
- خیار شرط کی تعریف۔ ۹۱
- مرض موت کے تصرفات غیر نافذ ہیں۔ ۹۳
- خیار شرط کی کم سے کم اور زائد سے زائد مقدار کا بیان۔ ۹۱
- لزوم بیع کے بعد ورثہ کو فسخ کا اختیار نہیں۔ ۹۳
- خیار شرط کی مدت کے اندر مخیر کو فسخ بیع کا حق حاصل ہے اور انقضائے مدت کے بعد بیع لازم ہو جاتی ہے۔ ۹۱
- خیار رؤیت کا حق صرف مشتری کو ہے۔ ۹۳
- بیع بالوفاء کی تعریف۔ ۹۱
- خیار عیب بائع کو بھی حاصل ہے لیکن بائع خیار عیب کی وجہ سے بیع فسخ نہیں کرسکتا، ثمن ردی کو جید سے بدل سکتا ہے خیار رؤیت میں امام صاحب کا قول قدیم۔ ۹۳
- بیع بالوفاء حقیقۃً رہن ہے۔ ۹۱
- بیع میں مبیع اصل ہے، اس کے رد سے بیع فسخ ہو جائے گی ثمن کے رد سے فسخ نہ ہوگی۔ ۹٤
- راہن سے شے مرہونہ پر قبضہ نہ کرے تو رہن باطل ہے، اور قبضہ تو تب بھی شئی مرہونہ سے انتفاع حرام ہے۔ ۹۱
- بیع نہ ہونے کی شکل میں بیعانہ روک لینا ظلم ہے چاہے زیادتی مشتری کی ہی کیوں نہ ہو۔ ۹٤

- حدیث کل قرض جر نفعا فہو حرام کی ایک مثال۔ ۹۱
- بیع توڑنے کے لئے طرفین کی رضا ضروری ہے۔ ۹٤
- سادہ قرض کی ادائیگی کے لئے کوئی میعاد ٹھہرائی تب بھی اس کی پابندی لازم نہیں دائن جب چاہے قرض وصول کرسکتا ہے۔ ۹۲
- عدم بیع کی صورت میں بیعانہ مشتری کو واپس ملے گا، ۹۵
- بیع بالوفاء حقیقۃً بیع نہیں تو انقضائے مدت کے بعد بھی مشتری کی ملک ثابت نہ ہوگی۔ ۹۲
- ایجاب و قبول کے لئے ماضی کا صیغہ ضروری ہے وعدہ کوئی عقد نہیں۔ ۹۵
- بیع بالوفاء کو ختم کرنے کی مختلف شرعی صورتیں۔ ۹۲
- وفائے وعدہ پر جبر نہیں کیا جاسکتا۔ ۹۵
- بیع مرہون مرتہن کی اجازت پر موقوف ہے۔ ۹۲
- میت کے ترکہ سے قرض کی ادائیگی تقسیم پر مقدم ہوگی۔ ۹۵
- خیار تعین
- عقد بیع زبانی ایجاب و قبول سے مکمل ہو جاتا ہے رجسٹری کچھ ضروری نہیں، اسی طرح تحری بیعنامہ کے بعد لفظی ایجاب و قبول ضروری نہیں۔ ۹٦
- مقبوض علی سوم الشراء ہلاک ہو جائے تو قابض سے تاوان وصول کرسکتے ہیں۔ ۹۳
- تکمیل بیع کے بعد بائع مشتری کی اجازت کے بغیر مبیع کو کسی دوسرے کے ہاتھ فروخت نہیں کرسکتا۔ ۹٦

Fatawa Rizvia (Volume 17)

Rulings	Ref	Page
Every transaction made by a person in their property before their death-illness (marad al-mawt) will be effective.	96	102
If a wife sold joint property as the owner and other heirs, all of whom were adults, liked it upon hearing of the sale and took a share of the price, no one now has the right to deny this sale.	97	102
The composition of a part of 'Bahr' and 'Durr'.	97	102
The difference in price between cash and credit is not haram (forbidden) or impermissible.	97	102
If some heirs of joint property are minors or not satisfied with the sale, the sale of their share will not be effective; in such a sale, the buyer will have the option to either reject the entire sale or take back the price of the unsold portion and keep the rest of the sale valid. Second answer is in detail.	98	103
	99	103
	99	103

Rulings	Page
There is no liability on a trustee without transgression or negligence in safekeeping.	102
In an unauthorized sale (bay' al-fuduli), the seller's possession of the price is a trust possession.	102
In an unauthorized sale, the owner gifting or giving as charity the purchase price to the buyer constitutes consent.	102
Remaining silent by the owner after hearing news of the sale is not sharia-compliant permission.	102
Sharia-based determination and detail of the shares of heirs of a property.	103
In an unauthorized sale of joint property, the buyer has the option to reject the entire sale or keep it to the extent of the share.	103
	103

Rulings	Ref	Page
The father has the guardianship for the circumcision of a minor boy and for the buying and selling of his property; the uncle and mother do not have this, they only have the right to protect the property and accept gifts.		
One partner will be considered unauthorized (fuduli) regarding another partner's share.	99	104
If there is no one to authorize at the time of the contract in an unauthorized sale, for example, if the sold item belongs to a minor, the contract will be void.	99	104
If an unauthorized person sells another's property as their own, this sale is void according to the weak view, but according to 'Zahir al-Riwayah', this sale is suspended (mawqūf).	100	105
In an unauthorized sale, if the owner demands the price from the buyer or says to the seller "you did bad" or "you did well," it will be considered permission.	102	

Rulings	Page
A question regarding a specific form of auction.	
The auctions commonly held in courts nowadays are under the ruling of sale by a usurper (bay' al-ghasib), which depends on the owner's permission.	104
A judge's forced sale of a debtor's property in case of denial, and the sale of a coerced person is 'fasid' (voidable).	104
If the buyer in an unauthorized sale sells the item to someone else, this will also be an unauthorized sale and will depend on the original owner's permission.	105

फतावा रज़विया (जिल्द १७)

रुलिंग्स	Ref	Page
मर्ज़-उल-मौत से पहले आदमी का अपनी मिल्कियत में हर तसर्रुफ़ नाफ़िज़ होगा।	९६	१०२
बीवी ने मुश्तरका (साझा) जायदाद मालिक बन कर बेच दी, अन्य वारिस जो सब बालिग थे, बिक्री की सूचना पाकर उसे पसंद किया और क़ीमत में से हिस्सा लिया, अब किसी को इस बिक्री से इनकार करने का हक़ नहीं है।	९७	१०२
'बहर' और 'दुर्र' के एक हिस्से की तसनीफ़।	९७	१०२
नक़द और उधार के भाव में अंतर हराम और नाजायज़ नहीं है।	९७	१०२
अगर मुश्तरका जायदाद के कुछ वारिस नाबालिग हों या बिक्री पर राज़ी न हों, तो उनके हिस्से की बिक्री नाफ़िज़ नहीं होगी; ऐसी बिक्री में खरीदार को अधिकार होगा कि पूरी बिक्री रद्द कर दे या जो हिस्सा नहीं बिका उसकी क़ीमत वापस ले ले और शेष बिक्री जायज़ रखे। दूसरा जवाब विस्तार से है।	९८	१०३

रुलिंग्स	Page
अमीन (अमानतदार) पर बग़ैर ज्यादती और हिफ़ाज़त में कोताही के ज़मान (हर्जाना) नहीं है।	१०२
बैअ-ए-फ़ुज़ूली (अनधिकृत बिक्री) में क़ीमत पर विक्रेता का कब्ज़ा अमानत का कब्ज़ा है।	१०२
बैअ-ए-फ़ुज़ूली में मालिक का खरीदार को क़ीमत हिबा (उपहार) करना या सदक़ा करना उसकी रज़ामंदी है।	१०२
बिक्री की खबर सुनकर मालिक का खामोश रहना शरीयत की दृष्टि से अनुमति नहीं है।	१०२
एक जायदाद के वारिसों के हिस्सों का शरई निर्धारण और विवरण।	१०३

रुलिंग्स	Ref	Page
बाप को नाबालिग लड़के के खतना और उसके माल की खरीद-बिक्री का अधिकार (विलायत) प्राप्त है; चाचा और माँ को नहीं, उन्हें सिर्फ माल की हिफ़ाज़त और हिबा स्वीकार करने का हक़ है।	९९	१०३
एक साझीदार दूसरे साझीदार के हिस्से के मामले में 'फ़ुज़ूली' (अनधिकृत) माना जाएगा।	९९	१०४
बैअ-ए-फ़ुज़ूली में अनुबंध के समय यदि कोई अनुमति देने वाला न हो, उदाहरण के लिए बिकी हुई चीज़ नाबालिग की हो, तो अनुबंध शून्य (बातिल) होगा।	९९	१०४
अगर कोई अनधिकृत व्यक्ति दूसरे की मिल्कियत को अपनी बताकर बेचे तो कमज़ोर मत के अनुसार यह बिक्री बातिल है, और 'ज़ाहिर-उर-रिवाया' के अनुसार यह बिक्री निलंबित (मौक़ूफ़) है।	१००	१०५
मुश्तरका जायदाद की फ़ुज़ूली बिक्री में खरीदार को पूरी बिक्री रद्द करने या हिस्से के बराबर रखने का अधिकार होता है।	९९	१०३
नीलामी की एक विशेष स्थिति से संबंधित प्रश्न।	९९	१०३
आजकल कचहरियों में जो आम तौर पर नीलामी होती है, वह 'बैअ-ए-ग़ासिब' (ग़ासिब द्वारा बिक्री) के हुक्म में है जो मालिक की अनुमति पर निर्भर होगी।	९९	१०४
मना करने की स्थिति में क़ाज़ी का ऋणी के माल को ज़बरदस्ती बेचना, और मजबूर व्यक्ति की बिक्री फ़ासिद (दूषित) है।	९९	१०४
बैअ-ए-फ़ुज़ूली के खरीदार ने चीज़ किसी दूसरे को बेच दी, यह भी बैअ-ए-फ़ुज़ूली हुई और असली मालिक की अनुमति पर निर्भर रहेगी।	१००	१०५

रुलिंग्स	Ref Page रुलिंग्स	Page
बैअ-ए-फ़ुज़ूली में मालिक का खरीदार से क़ीमत मांगना या विक्रेता से यह कहना कि तुमने बुरा किया या अच्छा किया, अनुमति समझी जाएगी।		

رولنگز	Page Ref	رولنگز	Page
مرض الموت سے قبل آدمی کا اس کی ملک میں ہر تصرف نافذ ہوگا۔	۹۶ ۱۰۲	امین پر بلاتعدی و تقصیر فی الحفظ ضمان نہیں۔	۱۰۲
زوجہ نے جائداد مشترکہ مالک بن کر بیچ دی دیگر ورثہ کل بالغ تھے بیع کی اطلاع پاکر اسے پسند کیا اور قیمت میں سے حصہ لیا اب کسی کو اس بیع سے انکار کا حق نہیں۔	۹۷ ۱۰۲	بیع فضولی میں قیمت پر بائع کا قبضہ قبضہ امانت ہے۔	۱۰۲
بحر اور درر کے ایک جزئے کی تصنیف۔	۹۷ ۱۰۲	بیع فضولی میں مالک کا مشتری کو زرثمن ہبہ کرنا یا صدقہ کرنا رضا ہے۔	۱۰۲
نقد اور ادھار کے بھاؤ میں تفاوت حرام اور ناجائز نہیں۔	۹۷ ۱۰۲	خبر بیع سن کر مالک کا خاموش رہنا شرعاً اجازت نہیں ہے۔	۱۰۲
جائداد مشترکہ کے کچھ ورثہ نابالغ ہوں یا بیع پر راضی نہ ہوں تو ان کے حصہ کی بیع نافذ نہ ہوگی، ایسی بیع میں مشتری کو اختیار ہوگا کہ پوری بیع رد کردے یا حصہ غیر مبیع کی	۹۸ ۱۰۳	ایک جائداد کے وارثوں کے حصص کی شرعی تعیین اور تفصیل۔	۱۰۳

رولنگز Page Ref			رولنگز Page	
		قیمت واپس لے بقیہ بیع جائز رکھے۔ جواب ثانی بالتفصیل ہے۔		
۹۹	۱۰۳		جائداد مشترکہ مبیع فضولی میں مشتری کو پوری بیع کے رد کرنے یا بقدر حصہ باقی رکھنے کا اختیار ہوتا ہے۔	۱۰۳
۹۹	۱۰۳	باپ کو نابالغ لڑکے کی ختنہ اور اس کے مال کے بیچ و شراء کی ولایت حاصل ہے چچا اور ماں کو نہیں صرف مال کی حفاظت اور قبول ہبہ کا حق حاصل ہے۔	نیلام کی ایاک خاص صورت سے متعلق سوال۔	۱۰۳
۹۹	۱۰۴	ایک شریک دوسرے شریک کے حصہ میں فضولی قرار پائے گا۔	آج کل کچہریوں میں عام طور سے جو نیلام ہوتا ہے بیع غاصب کے حکم میں ہے جو مالک کی اجازت پر موقوف ہوگی۔	۱۰۴
۹۹	۱۰۴	بیع فضولی میں وقت عقد کوئی مجیز نہ ہو، مثلاً مبیع نابالغ کی ملک ہو تو عقد باطل ہوگا۔	قاضی کمدیون کے مال کو انکار کی صورت میں زبردستی بیچنا اور مکروہ کی بیع فاسد ہے۔	۱۰۴

رولنگز Page Ref		رولنگز Page
فضولی غیر کی ملک اپنی بنا کر بیچے تو		بیع فضولی کے مشتری نے
مذہب ضعیف پر یہ بیع باطل ہے، اور ظاہر	۱۰۰	مبیع کسی دوسرے کے ہاتھ
الروایہ یہ ہے کہ یہ بیع موقوف ہے۔	۱۰۵	بیچ دی، یہ بھی بیع فضولی
		ہوئی اور اصل مالک کی
		اجازت پر موقوف رہے گی۔
بیع فضولی میں مالک کا مشتری سے قیمت		
طلب کرنا یا بائع سے کہنا تو نے بُرا کیا یا	۱۰۲	
اچھا کیا، اجازت منصور ہوگا۔		

Fatawa-e-Razvia | Volume 17

105 | If there are multiple unauthorized (fuduli) sales of an item, only the specific contract authorized by the original owner will be valid. | 108 106 | In an unauthorized sale, any increase that occurs in the object of sale, even if before authorization, will belong to the buyer after authorization. | 109 106 | In the sale of usurped property, the original owner (the one from whom it was usurped) will be the owner of all growth/increase occurred prior to the sale. | 109 106 | Gifting a debt to the debtor is permissible, but to a third party is impermissible; however, gifting it to a third party as possession is permissible. | 109 106 | Renouncing the right to revoke a gift is not valid; however, if the renunciation is in exchange for something, it will be considered a gift with return (Hiba bi-al-'Iwad). | 109 107 | A government auction of public property with the owner's permission (prior or subsequent) is valid. | 109 107 | A form of subsequent permission. | 109 107 | An auction without permission is an unauthorized contract (aqd fuduli) and a suspended contract (aqd mawquf). | 110 107 | In a suspended contract, the buyer's disposal (of the item) before authorization is not lawful. | 110 107 | The sale of a minor's property by an unauthorized person is void. | 111 108 | When an item is purchased through a valid Islamic legal contract, the sin of the adult seller spending the price on sinful acts does not fall on the buyer, nor does it affect the validity of the sale. | 111

105 | Yes, if it was purchased with the intention of assisting in that sin, the burden of this evil intention will certainly be on the buyer. | 108 106 | Auctioning property in a decree without the owner's consent is an unauthorized sale (bay' fuduli). | 109 106 | If there is no one to authorize (mujiz), it is void; if the authorizer is present at the time of the contract, it is valid. | 109 106 | A form of permission. | 109 106 | If a husband wrote to creditors, "If I cannot pay, it should be collected from my property," and then transferred his property to his wife as her dowry (mahr) during his lifetime, the creditors cannot collect their debt from that property. | 109 107 | Abstract rights are not eligible for transfer of ownership or exchange. | 109 107 | When a contract is executed between competent parties in a proper subject with sound elements, there is no doubt about its non-invalidity, and it will surely be fruitful after possession. | 109 107 | If a husband gave property to his wife in exchange for dowry, this contract can be interpreted in three ways: (1) Settlement of dowry, (2) Gift with return (hiba bi-al-'iwad) from either the husband or the wife, (3) Gift on condition of a return (hiba bi-shart al-'iwad). | 110 107 | If the contractor combined a physical asset ('ain) and a right in a single contract, then in the case of a gift on condition of a return, it is

initially a gift, and combining a right with the asset will not invalidate the gift. In the other two cases, it signifies a sale, and the ruling for sale is valid and accepted according to the preferred school of thought. | 110 107 | Regarding the sale of rights, there are two legal opinions: validity and invalidity, and both are substantial. | 111 108 | Rights that are established originally (such as the right of a legatee to service, the right of retribution, the right of marriage, the right of slavery), it is permissible to take compensation for them. | 111

फ़तावा रिज़विया | जिल्द सत्रह (१७)

१०५ | किसी वस्तु की कई बार अनधिकृत बिक्री (बय'ए फ़ुज़ूली) हो तो मूल मालिक जिस अनुबंध की अनुमति देगा, केवल वही मान्य होगा। | १०८ १०६ | अनधिकृत बिक्री में बिक्री की वस्तु में जो वृद्धि होगी, चाहे वह अनुमति से पहले की हो, अनुमति के बाद उन सब का मालिक खरीदार होगा। | १०९ १०६ | छीनी हुई संपत्ति की बिक्री में, बिक्री से पहले की सारी वृद्धि का मालिक वह होगा जिससे संपत्ति छीनी गई थी। | १०९ १०६ | ऋणी को ऋण का उपहार देना जायज़ है और किसी अन्य को नाजायज़, हालांकि कब्ज़े के तौर पर किसी अन्य को उपहार देना जायज़ है। | १०९ १०६ | उपहार में वापसी के अधिकार का त्याग करना सही नहीं है, हाँ यदि कुछ लेकर त्याग किया जाए तो इसे स-प्रतिफल उपहार (हिबा बिल-इवज़) माना जाएगा। | १०९ १०७ | जनता की संपत्ति की सरकारी नीलामी मालिक की अनुमति से (पहले या बाद में) हो तो जायज़ है। | १०९ १०७ | बाद में मिलने वाली अनुमति का एक रूप। | १०९ १०७ | बिना अनुमति के नीलामी अनधिकृत अनुबंध (अक़्द फ़ुज़ूली) और निलंबित अनुबंध (अक़्द मौक़ूफ़) है। | ११० १०७ | निलंबित अनुबंध में अनुमति से पहले खरीदार द्वारा वस्तु का उपयोग हलाल नहीं है। | ११० १०७ | नाबालिग की संपत्ति की अनधिकृत बिक्री अमान्य (बातिल) हो गई। | १११ १०८ | जब कोई चीज़ सही शरिया अनुबंध से खरीदी गई हो, तो वयस्क विक्रेता द्वारा मूल्य को पाप के कार्यों में खर्च करने का बोझ खरीदार पर नहीं होगा, और न ही बिक्री में कोई बाधा आएगी। | १११

१०५ | हाँ, यदि इसे पाप में सहायता करने की नीयत से खरीदा गया हो, तो इस बुरी नीयत का बोझ खरीदार पर अवश्य होगा। | १०८ १०६ | डिक्री में मालिक की सहमति के बिना संपत्ति की नीलामी अनधिकृत बिक्री (बय'ए फ़ुज़ूली) है। | १०९ १०६ | यदि अनुमति देने वाला (मुजीज़) न हो तो अमान्य है, अनुबंध के समय अनुमति देने वाला हो तो जायज़ है। | १०९ १०६ | अनुमति का एक रूप। | १०९ १०६ | पति ने लेनदारों को लिखित में दिया कि "यदि मैं भुगतान न कर सकूँ तो मेरी संपत्ति से वसूला जाए" और अपने जीवनकाल में अपनी संपत्ति पत्नी के महर के बदले लिख दी, तो लेनदार उस संपत्ति से अपना कर्ज वसूल नहीं कर सकते। | १०९ १०७ | अमूर्त अधिकार (हुक़ूक़-ए-मुजर्रदह) स्वामित्व हस्तांतरण और विनिमय के योग्य नहीं हैं। | १०९ १०७ | जब अनुबंध सक्षम पक्षों के बीच उपयुक्त विषय में सही तत्वों के साथ संपन्न होता है, तो इसके अमान्य न होने में कोई संदेह नहीं है और कब्ज़े के बाद यह निश्चित रूप से फलदायी होगा। | १०९ १०७ | पति ने पत्नी को महर के बदले संपत्ति दी, इस अनुबंध की व्याख्या तीन तरह से की जा सकती है: (१) महर का समझौता, (२) पति या पत्नी की

ओर से स-प्रतिफल उपहार (हिबा बिल-इवज़), (३) प्रतिफल की शर्त पर उपहार (हिबा ब-शर्त अल-इवज़)। | ११० १०७ | यदि अनुबंधकर्ता ने एक ही अनुबंध में एक भौतिक संपत्ति (ऐन) और एक अधिकार को जोड़ा, तो प्रतिफल की शर्त पर उपहार के मामले में यह शुरू में उपहार है, और संपत्ति के साथ अधिकार जोड़ने से उपहार अमान्य नहीं होगा। अन्य दो मामलों में इसका अर्थ बिक्री होगा और बिक्री का नियम चयनित पंथ (मज़हब-ए-मुख़्तार) पर वैधता और स्वीकृति है। | ११० १०७ | अधिकारों की बिक्री में दो मत हैं, वैधता और अवैधता, और दोनों ही प्रबल हैं। | १११ १०८ | जो अधिकार मूल रूप से स्थापित हैं (जैसे सेवा का वसीयतदार का अधिकार, प्रतिशोध का अधिकार, विवाह का अधिकार, दासता का अधिकार), उनका प्रतिफल लेना जायज़ है। | १११

पृष्ठ ७१५ का १३

۱۰۵ | کسی شے کی چند در چند بیع فضولی ہو تو اصل مالک جس عقد کی اجازت دے گا صرف وہی جائز ہوگا۔ | ۱۰۸ ۱۰۶ | بیع فضولی میں مبیع کے اندر جو اضافہ ہوگا اگرچہ قبل اجازت کا ہو، بعد اجازت سب کا مالک مشتری ہوگا۔ | ۱۰۹ ۱۰۶ | بیع مغصوب میں بیع سے قبل کی ساری توقیر کا مغصوب منہ مالک ہوگا۔ | ۱۰۹ ۱۰۶ | مدیون کو دین کا ہبہ جائز اور غیر کو ناجائز ، البتہ بطور قبضہ غیر کو ہبہ جائز ہے۔ | ۱۰۹ ۱۰۶ | ہبہ میں رجوع کے حق سے دست برادری صحیح نہیں ، ہاں کچھ لے کر دست برداری ہو تو یہ ہبہ بالعوض قرار دیا جائے گا۔ | ۱۰۹ ۱۰۷ | عوام کی جائیداد کا سرکاری نیلام مالک کی اجازت سے (سابقہ یالاحقہ) ہو تو جائز۔ | ۱۰۹ ۱۰۷ | اجازت لاحق کی ایک صورت۔ | ۱۰۹ ۱۰۷ | نیلام بے اجازت عقد فضولی اور عقد موقوف ہے۔ | ۱۱۰ ۱۰۷ | عقد موقوف میں اجازت سے قبل بیع میں مشتری کا تصرف حلال نہیں۔ | ۱۱۰ ۱۰۷ | نابالغ کی ملک فضولی نے بیچ دی بیع باطل ہو گئی۔ | ۱۱۱ ۱۰۸ | کوئی چیز جب عقد صحیح شرعی سے خریدی گئی تو بالغ کا ثمن کو کار معصیت میں خرچ کرنے کا وبال مشتری پر نہیں، نہ بیع میں کوئی خلل واقع ہوگا۔ | ۱۱۱

۱۰۵ | ہاں اس معصیت میں اعانت کی نیت سے خریدا تو اس بُری نیت کا وبال ضرور مشتری پر ہوگا۔ | ۱۰۸ ۱۰۶ | ڈگری میں بے رضا کے مالک جائداد کا نیلام بیع فضولی ہے۔ | ۱۰۹ ۱۰۶ | مجیز نہ ہو تو باطل وقت عقد مجیز ہو تو جائز۔ | ۱۰۹ ۱۰۶ | اجازت کی ایک صورت۔ | ۱۰۹ ۱۰۶ | شوہر نے قرض خواہوں کو تحریری کہ میں ادانہ کرسکوں تو میری جائیداد سے وصول کیا جائے اور اپنی جائیداد اپنی زندگی میں زوجہ کی مہر کے عوض لکھ دیا تو قرضخواہ اس جائیداد سے اپنا قرض وصول نہیں کرسکتا۔ | ۱۰۹ ۱۰۷ | حقوق مجردہ صالح تملیک ومعاوضہ نہیں۔ |

۱۰۹ ۱۰۷ | عقد جب اہل سے محل میں بسلامت ارکان واقع ہو تو اس کے عدم بطلان میں کوئی شبہ نہیں اور اپنے ثمرات کو اگرچہ بعد القبض بالیقین مثمر ہوگا۔ | ۱۰۹ ۱۰۷ | شوہر نے زوجہ کو مہر کے بدلہ جائداد دی یہ عقد تعبیر کے اعتبار سے تین طرح ہوسکتا ہے: (۱)صلح عن المہر (۲)زوج یا زوجہ کی طرف سے ہبہ بالعوض (۳)ہبہ بشرط العوض۔ | ۱۱۰ ۱۰۷ | عاقد نے عین اور حق ایک ہی عقد میں جمع کیا تو یہ ہبہ بشرط العوض کی صورت میں ابتداءً ہبہ ہے اور عین کے ساتھ حق جمع کر دینے میں ہبہ باطل نہ ہوگا۔ اور بقیہ دونوں صورتوں میں معنی بیع ہوگا اور بیع کا حکم مذہب مختار پر صحت و قبول ہے۔ | ۱۱۰ ۱۰۷ | حقوق کی بیع میں دو مذہب ہیں، صحت وفساد، اور دونوں باقوت ہیں۔ | ۱۱۱ ۱۰۸ | جو حقوق اصالۃً ثابت ہوں (جیسے حق موسی لہ بالخدمتہ حق قصاص، حق نکاح، حق غلامی) ان کا عوض لینا جائز ہے۔ | ۱۱۱

- Rights that are not established originally (like rights of pre-emption, the wife's turn, and option of marriage) cannot be exchanged for a compensation. (111) | Possession is not a condition in a sale as it is in a gift. (117)
- Many things are valid indirectly but not directly. (112) | If property was sold to an heir during a state of health, the sale is valid; other heirs have no right in the property. Yes, if there was no acknowledgement of receiving or waiving the price, the remaining heirs can claim the price. Proof of non-payment of price will not be established through circumstantial evidence. (117)
- The sale of right of way, right of water, right of attachment, etc., is not permissible originally. (112) | Payment of price is neither among the conditions for the validity of a sale nor among the conditions for its enforcement. (118)
- Those according to whom the sale of rights is not permissible also do not consider the invalidity to extend to the entire object joined to it. (112) | After the completion of the contract, the seller can waive the entire price; there will be no defect in the sale. (118)
- If a free person or a dead animal is sold along with a slave, the sale is invalid (fasid), but not void (batil). (112) | A person is bound by his own confession. (118)
- Differences in scholars' expressions regarding this matter and their reconciliation. (112) | Wealth is something that comes and goes. (118)
- The object of an invalid sale becomes owned after possession. (115) | In the sale of cultivated land, the buyer will be the owner of the crops. (119)
- The object of an invalid sale becomes lawful for the second buyer. (115) | Detailed explanation of when crops follow the acquisition of land in a sale and when they do not. (119)
- Difference of opinion among scholars regarding the sale of Falsa branches; the argument of those who permit it is custom or the exact knowledge of the cutting point. (116) | In cases where the crops belong to the seller, the buyer can demand the seller to vacate the land, and if kept with the buyer's permission, the buyer can take rent according to custom. (120)
- If the object of sale is destroyed before possession by the buyer, the sale is void and returning the price is obligatory. (116) | A predecessor designated his heir's portion (which he would receive after the predecessor's death) as dower for a woman who is not yet married to the heir; what is the ruling? (120)

- Even if the seller usurps the object of sale, the sale is valid and the buyer's ownership is established. (117) | Giving property as dower is a sale from start to finish. (121)
- A form of usurpation. (117) | Sale is the name for the exchange of property for property. (121)
- Usurpation of immovable property is not universally agreed upon. (117) | Dower before marriage is neither a specific object ('ayn) nor a debt (dayn), so it is not property at all. (121)

शीर्षक बाएँ जिल्द हफ़दहम (17) शीर्षक दाएँ फतावा रज़विया

- जो अधिकार मूल रूप से स्थापित न हों (जैसे शुफ़ा के अधिकार, पत्नी की बारी और विवाह में विकल्प का अधिकार) उनके बदले मुआवज़ा लेना जायज़ नहीं है। (111) | बिक्री में दान की तरह कब्ज़ा शर्त नहीं है। (117)
- कितने ही ऐसे मामले हैं जो अप्रत्यक्ष रूप से मान्य हैं लेकिन प्रत्यक्ष रूप से नहीं। (112) | स्वास्थ्य की स्थिति में किसी वारिस के हाथ संपत्ति बेच दी तो बिक्री सही हो गई, दूसरे वारिसों का संपत्ति में कोई अधिकार नहीं। हाँ, यदि मूल्य पाने या माफ़ करने का इकरार न किया हो तो शेष वारिस मूल्य का दावा कर सकते हैं। मूल्य का भुगतान न होने का प्रमाण परिस्थितियों से नहीं होगा। (117)
- रास्ता निकालने का अधिकार, पानी का अधिकार, जुड़ाव का अधिकार आदि की बिक्री मूल रूप से जायज़ नहीं है। (112) | मूल्य का भुगतान न तो बिक्री की वैधता की शर्तों में शामिल है और न ही बिक्री के लागू होने की शर्तों में। (118)
- जिनके निकट अधिकारों की बिक्री जायज़ नहीं है, वे भी इस अमान्यता को उस वस्तु तक सीमित मानते हैं जिससे इसे जोड़ा गया है, न कि पूरी बिक्री को शून्य। (112) | अनुबंध पूरा होने के बाद विक्रेता पूरा मूल्य माफ़ कर सकता है, बिक्री में कोई दोष नहीं आएगा। (118)
- यदि एक स्वतंत्र व्यक्ति या मृत जानवर को एक गुलाम के साथ मिलाकर बेचा जाए, तो भी बिक्री फ़ासिद (दूषित) होती है, बातिल (शून्य) नहीं। (112) | व्यक्ति अपने इक़रार (स्वीकृति) के लिए उत्तरदायी है। (118)
- इस मसले में विद्वानों की शब्दावली में अंतर और उनमें समन्वय। (112) | माल आने-जाने वाली चीज़ है। (118)
- दूषित बिक्री की वस्तु कब्ज़े के बाद स्वामित्व में आ जाती है। (115) | खेती वाली ज़मीन की बिक्री में खरीदार फसलों का मालिक होगा। (119)
- दूषित बिक्री की वस्तु दूसरे खरीदार के लिए हलाल हो जाती है। (115) | इस बात का विस्तृत विवरण कि बिक्री में कब फसल ज़मीन के अधिग्रहण के अधीन होती है और कब नहीं। (119)
- फालसा की टहनियों की बिक्री में विद्वानों का मतभेद है; अनुमति देने वालों का तर्क प्रथा या कटाई के स्थान का ठीक-ठीक पता होना है। (116) | जिन स्थितियों में फसल विक्रेता की है,

खरीदार चाहे तो विक्रेता को ज़मीन खाली करनी होगी, और खरीदार की अनुमति से बाकी रखी तो खरीदार प्रथा के अनुसार किराया ले सकता है। (120)

- यदि बिक्री की वस्तु खरीदार के कब्ज़े से पहले नष्ट हो जाए तो बिक्री शून्य है और कीमत वापस करना अनिवार्य है। (116) | एक पूर्वज ने अपने वारिस के हिस्से को (जो उसे मृत्यु के बाद मिलता), एक ऐसी महिला के महर के बदले में लिख दिया जिसका निकाह अभी वारिस से नहीं हुआ, तो क्या हुक्म है। (120)
- यदि विक्रेता बिक्री की वस्तु को हड़प ले, तब भी बिक्री सही है और खरीदार का स्वामित्व सिद्ध है। (117) | महर के बदले संपत्ति देना शुरुआत से अंत तक बिक्री ही है। (121)
- हड़पने का एक रूप। (117) | बिक्री माल के बदले माल के विनिमय का नाम है। (121)
- अचल संपत्ति को हड़पने पर सहमति नहीं है। (117) | निकाह से पहले महर न तो कोई वस्तु (ऐन) है और न ही ऋण (दैन), तो यह माल ही नहीं है। (121)

फुटर: पेज 14 of 715

- جو حقوق اصالۃً ثابت نہ ہوں (جیسے حقوق شفعہ و قسم زوجہ و خیار مخیرہ فی النکاح) ان کا عوض نا جائز ہے۔ (۱۱۱) | بیع میں ہبہ کی طرح قبضہ شرط نہیں ہے۔ (۱۱۷)
- کم من یصح ضمنا ولا یصح قصدا۔ (۱۱۲) | حالت صحت میں کسی وارث کے ہاتھ جائداد بیع کردی بیع صحیح ہوگئی دوسرے وارثوں کا جائداد میں کوئی حق نہیں، ہاں زرثمن پانے یا معاف کرنے کا اقرار نہ کیا ہو تو بقیہ ورثاء زرثمن کا دعویٰ کر سکتے ہیں زرثمن کی عدم ادائیگی کا ثبوت قرائن سے نہ ہوگا۔ (۱۱۷)
- حق مرور، حق شرب، حق تعلق وغیرہ کی بیع اصالۃً جائز نہیں۔ (۱۱۲) | ادائے ثمن نہ تو شرائط صحت بیع میں داخل ہے نہ شرائط نفاذ بیع میں۔ (۱۱۸)
- جن کے نزدیک حقوق کی بیع جائز نہیں وہ بھی بطلان کو مضموم الیہ تک ساری نہیں مانتے۔ (۱۱۲) | تکمیل عقد کے بعد بائع کل زرثمن معاف کر سکتا ہے بیع میں خلل نہ ہوگا۔ (۱۱۸)
- حرو میتہ کو عبد اور غلام کے ساتھ ملایا تو بھی بیع فاسد ہوتی ہے باطل نہیں۔ (۱۱۲) | المرء مواخذ باقرارہ۔ (۱۱۸)
- اس مسئلہ میں تعبیرات علماء کا اختلاف اور ان میں تطبیق۔ (۱۱۲) | مال آنے جانے والی چیز ہے۔ (۱۱۸)
- بیع فاسد کی مبیع قبضہ کے بعد مملوک ہو جاتی ہے۔ (۱۱۵) | مزروعہ زمین کی بیع میں زراعت کا مالک مشتری ہوگا۔ (۱۱۹)
- بیع فاسد کی مبیع مشتری ثانی کے لئے حلال ہو جاتی ہے۔ (۱۱۵) | اس امر کا تفصیل بیان کہ بیع میں کسب زمین کے تابع کھیتی ہے اور کب نہیں۔ (۱۱۹)

- فالسہ کی ٹہنیوں کی بیع میں علماء کا اختلاف ہے اہل جواز کا متدل تعامل یا مقام قطع کا ٹھیک ٹھیک معلوم ہونا ہے۔ (۱۱۶) | جن صورتوں میں میں زراعت بائع کی ہے مشتری چاہے تو بائع کو زمین خالی کرنا ہو گی، اور مشتری کی اجازت سے باقی رکھی تو مشتری حسب عرف کرایہ لے سکتا ہے۔ (۱۲۰)
- مبیع قبضہ مشتری سے پہلے ہلاک ہو جائے تو بیع باطل ہے اور قیمت واپس کرنی واجب ہوتی ہے۔ (۱۱۶) | مورث نے اپنے وارث کے حصہ کو جو مورث کی موت کے بعد اسے ملے گا، ایک ایسی عورت کے مہر کے بدلہ میں لکھا جس کا نکاح ابھی وارث سے نہیں تو کیا حکم ہے۔ (۱۲۰)
- مبیع کو بائع نے غصب کرلیا تب بھی بیع صحیح ہے اور مشتری کی ملک ثابت ہے۔ (۱۱۷) | مہر کے عوض جائداد دینا ابتداء و انتہاء بیع ہے۔ (۱۲۱)
- غصب کی ایک صورت۔ (۱۱۷) | بیع مبادلہ مال بمال کا نام ہے۔ (۱۲۱)
- عقار کا غصب متفق نہیں۔ (۱۱۷) | مہر قبل از نکاح نہ عین ہے نہ دین، تو یہ مال ہی نہیں۔ (۱۲۱)

Fatawa-e-Razvia Volume (17)

121: The seller of a sold land tract claims that a portion of it was excluded from the sale. However, if he remained silent for years while witnessing the buyer's possession and use of the sold land, the seller's claim will be declared null and void. 122: Collecting goods in a commission shop and taking their price in advance from the commission agent on the condition that the account will be settled when the goods are sold is prohibited (haram). However, a loan can be taken with the commission agent's consent. 122: If a sale is conducted today but the sale deed states that it will take effect from a certain future date, the sale will be invalid (fasid). 122: It is mandatory for the contracting parties to terminate an invalid (fasid) sale. 123: In an invalid (fasid) sale, if the buyer, with the seller's consent, makes any disposition such as sale, gift, debt, endowment, or bequest, the sale will become effective, but the buyer will be considered a sinner. 123: If something was bought through an invalid sale and then sold to another person for 500, but its market rate is only 400, then only 400 should be paid for it. 124: If an absolute sale was made and an invalid condition was subsequently added, the condition will be null and void, and the sale will be valid without that condition. 124: Bargaining at the time of buying and selling is a Sunnah, except for items purchased for the Hajj journey. 125: In Sharia, the discourse (verbal agreement) of buying and selling is reliable. 125: Land was verbally bought for oneself but the names of sons were written in the sale deed, excluding the daughters. The sale deed will be regarded as a gift, and because the property is undivided (musha'), the gift will be void. 126: If a portion of land was sold on a per-yard rate, then determining its direction and orientation at the time of the contract or during the contract session is necessary. If it is determined and possession is given after the session, it will be considered a new sale by mutual delivery (bay' al-ta'ati).

126: Blood, carrion, and soil are objects of disrespect, but they are not considered property (maal). 126: It is not permissible to prioritize the ruling (hukm) over the cause (sabab). 127: It is not permissible to take a mortgage (rahn) against a non-existent debt. 127: Doubt regarding the payment of dower (mahr) before marriage and its answer. 127: If future salary or a gift of office is given as dower, it is inherently non-existent and void; therefore, both its gifting and sale are void. 127: The boundaries (chauhaddi) specified in a land sale deed belong entirely to the buyer. If another person's owned land is mistakenly included within those boundaries, that portion will be returned after the original owners seek legal recourse. 127: In a boundary description, if a discrepancy is recorded regarding the overall

measurement of the land, the boundary description itself will not be relied upon. 128: If along with the overall measurement, it is also specified as 'so much per yard', then the measurement, not the boundary description, will be the basis of reliance. 128: If a verbal sale occurred in one way and the written deed is contrary to it, the verbal offer and acceptance (ijab-o-qabul) shall be the basis of reliance. 128: If the specific portion of the land sold is not determined, the sale will be invalid (fasid) due to uncertainty (jahalah).

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द (17)

121: बेची गई भूमि का विक्रेता दावा करता है कि उसका एक हिस्सा बिक्री से बाहर था। लेकिन यदि वह खरीदार को कई वर्षों तक उस भूमि पर कब्ज़ा और उपभोग करते हुए देखकर चुप रहा, तो विक्रेता का दावा अमान्य (बातिल) घोषित किया जाएगा। 122: आढ़त (कमीशन की दुकान) में माल जमा करना और आढ़ती से उसकी अग्रिम कीमत इस शर्त पर लेना कि माल बिकने पर हिसाब होगा, हराम है। हाँ, आढ़ती की मर्जी से ऋण लिया जा सकता है। 122: आज बिक्री की गई और बिक्रीनामे में लिखा गया कि यह अमुक तिथि से प्रभावी होगी, तो ऐसी बिक्री अमान्य (फ़ासिद) होगी। 122: अनुबंध करने वाले पक्षों के लिए अमान्य (फ़ासिद) बिक्री को रद्द करना अनिवार्य (वाजिब) है। 123: अमान्य बिक्री में यदि खरीदार, विक्रेता की अनुमति से कोई हस्तांतरण जैसे बिक्री, उपहार, ऋण, वक्फ या वसीयत करता है, तो बिक्री प्रभावी हो जाएगी, लेकिन खरीदार पापी होगा। 123: जिस वस्तु को अमान्य बिक्री के माध्यम से खरीदा गया और फिर उसे दूसरे व्यक्ति को 500 में बेचा गया, जबकि बाज़ार में उसका भाव केवल 400 है, तो उसे 400 ही दिए जाने चाहिए। 124: यदि बिना किसी शर्त के बिक्री हुई और बाद में कोई अमान्य शर्त लगा दी गई, तो शर्त शून्य हो जाएगी और बिक्री बिना शर्त के सही मानी जाएगी। 124: खरीद-बिक्री के समय मोल-भाव करना सुन्नत है, हज यात्रा के लिए खरीदी जाने वाली वस्तुओं का अपवाद है। 125: शरीयत में खरीद-बिक्री की बातचीत (मौखिक समझौते) विश्वसनीय है। 125: भूमि मौखिक रूप से अपने लिए खरीदी लेकिन बिक्रीनामे में बेटों के नाम लिखवाए और बेटियों के नहीं। हालांकि बिक्रीनामा उपहार (हिबा) माना जाएगा और साझा (मुशा'अ) संपत्ति होने के कारण उपहार अमान्य होगा। 126: यदि भूमि का एक हिस्सा प्रति गज की दर से बेचा गया, तो अनुबंध के समय या अनुबंध की सभा के दौरान उसकी दिशा और स्थान का निर्धारण करना आवश्यक है। यदि अनुबंध सभा के बाद इसे निर्धारित करके कब्ज़ा दिया गया, तो इसे नई 'बय-ए-ताती' (पारस्परिक सुपुर्दगी द्वारा बिक्री) माना जाएगा।

126: रक्त, शव और मिट्टी अपमानजनक वस्तुएं हैं लेकिन वे संपत्ति (माल) नहीं हैं। 126: निर्णय (हुक्म) को कारण (सबब) पर प्राथमिकता देना जायज़ नहीं है। 127: अस्तित्वहीन ऋण के बदले बंधक (रहन) लेना जायज़ नहीं है। 127: विवाह से पहले मेहर के भुगतान से संबंधित संदेह और उसका उत्तर। 127: यदि भविष्य में मिलने वाले वेतन या पद के उपहार को मेहर के रूप में दिया जाता है, तो यह स्वयं अस्तित्वहीन और शून्य है; इसलिए इसका उपहार और बिक्री दोनों अमान्य हैं। 127: भूमि के बिक्रीनामे में जो सीमाएँ(चौहद्दी) लिखी गईं, वे पूरी तरह से खरीदार की हुईं। यदि

अनजाने में किसी अन्य व्यक्ति की स्वामित्व वाली भूमि उन सीमाओं के भीतर आ गई है, तो मूल मालिकों द्वारा कानूनी कार्रवाई करने के बाद वह हिस्सा वापस कर दिया जाएगा। 127: यदि सीमाओं के विवरण में भूमि की कुल माप में भिन्नता लिखी गई हो, तो सीमाओं पर भरोसा नहीं किया जाएगा। 128: यदि कुल माप के साथ-साथ यह भी लिखा हो कि 'प्रति गज की दर इतनी है', तो अब सीमाओं का नहीं बल्कि माप का आधार लिया जाएगा। 128: यदि मौखिक बिक्री एक तरीके से हुई और लिखित दस्तावेज़ उसके विरुद्ध हो, तो मौखिक प्रस्ताव और स्वीकृति (ईजाब-ओ-क़ुबूल) का आधार लिया जाएगा। 128: यदि बेची गई भूमि का विशिष्ट भाग निर्धारित नहीं है, तो अनिश्चितता (जहालत) के कारण बिक्री अमान्य (फ़ासिद) होगी।

۱۲۱: بائع ارض مبیعہ کے جز حصہ کو بیع سے خارج ہونے کا مدعی ہے۔ لیکن سالہا سال سے ارض مبیعہ پر مشتری کا تصرف دیکھ کر خاموش رہا تو بائع کا دعویٰ باطل قرار دیا جائے گا۔ ۱۲۲: آڑھت میں مال جمع کر کے اس کی قیمت پیشگی آڑھت دار سے لینا کہ جب مال بکے گا حساب ہوگا حرام ہے، البتہ قرض آڑھت دار کی مرضی سے لے سکتا ہے۔ ۱۲۲: بیع آج کی اور بیعنامہ میں لکھا کہ اس کا نفاذ فلاں تاریخ سے ہوگا بیع فاسد ہو گی۔ ۱۲۲: متعاقدین پر بیع فاسد کا توڑ دینا واجب ہے۔ ۱۲۳: بیع فاسد میں مشتری رضا سے بائع سے کوئی تصرف از قسم بیع، ہبہ، دین، وقف، وصیت کرے تو بیع نافذ ہو جائے گی مگر مشتری گنہگار ہوگا۔ ۱۲۳: جس چیز کو بیع فاسد سے خریدا اور اسی کو دوسرے کے ہاتھ پانچ سو میں بیچا اور اس کا بازار میں چار سو ہی بھاؤ ہے تو اس کو چار سو ہی دئے جائیں۔ ۱۲۴: بیع مطلق ہوئی اور شرط فاسد بعد میں لگائی تو شرط کالعدم ہو گی اور بیع بلا شرط صحیح ہو گی۔ ۱۲۴: بیع و شراء کے وقت بھاؤ تاؤ کرنا سنت ہے، سفر حج کے لئے خریدی جانے والی چیز کا استثناء ہے۔ ۱۲۵: شرع میں خرید وفروخت کی گفتگو کا اعتبار ہے۔ ۱۲۵: زمین زبانی اپنے لئے خریدی بیع نامہ لڑکوں کا نام لکھایا، لڑکیوں کی نہ ہوئی، البتہ بیع نامہ ہبہ قرار دیا جائے گا اور مشاع ہونے کی وجہ سے ہبہ باطل ہو گا۔ ۱۲۶: زمین کا جز حصہ فی گز کے حساب سے فروخت کیا تو اس کی جہت اور سمت کا تعین بھی وقت عقد یا مجلس عقد میں ضروری ہے، اور مجلس عقد کے بعد متعین کر کے قبضہ دیا تو یہ نئی بیع تعاطی قرار دی جائے گی۔

۱۲۶: خون، مردار اور مٹی اشیاء توہین مگر مال نہیں ہے۔ ۱۲۶: حکم کو سبب پر مقدم کرنا جائز نہیں۔ ۱۲۷: دین معدوم کے بدلے رہن لینا جائز نہیں۔ ۱۲۷: قبل از نکاح مہر کی ادائیگی سے شبہ

اور اس کا جواب۔ ۱۲۷: آئندہ ملنے والی تنخواہ یا عطیہ منصب کو مہر کے عوض کیا تو یہ خود معدوم اور باطل ہے لہذا اس کا ہبہ اور بیع دونوں باطل ہے۔ ۱۲۷: اراضی کے بیعنامہ میں جو چوہدی لکھائی گئی کل مشتری کی ہوئی، اگر چوہدی میں غلطی سے کسی دوسرے کی مملوکہ زمین آگئی تو اصل مالکوں کی چارہ جوئی کے بعد وہ حصہ واگزار کر دیا جائے گا۔ ۱۲۷: چوہدی میں اگر زمین کی مکسر پیمائش میں اختلاف تحریر ہوا تو بھی چوہدی کا اعتبار نہ ہوگا۔ ۱۲۸: مکسر پیمائش کے ساتھ ساتھ اگر یہ بھی تحریر ہو کہ فی گز اتنا تو اب چوہدی کا نہیں پیمائش کا اعتبار ہو گا۔ ۱۲۸: زبانی بیع اور طرح ہوئی اور تحریر اس کے خلاف ہو تو اعتبار زبانی ایجاب و قبول کا ہوگا۔ ۱۲۸: زمین کا جز مبیعہ متعین نہ ہو تو بسبب جہالت بیع فاسد ہو گی۔

Fatawa Razawiya | Volume 17 (17)

Page	Topic	Page	Topic
128	If any of the boys sold this land to another, the sale will be effective with the father's consent.	132	Giving a sale deed after bargaining without offer and acceptance is not a sale but rather the document that will be written as a sale deed; in it, "I bought, I sold" is written, if he himself got the writing done, the sale became complete and effective; if another got it written, it became dependent on his permission; explanation of the details of the matter from various books of jurisprudence.
128	If purchased for boys both verbally and in writing, the father should accept on behalf of the minor, and the adult should accept for himself.	133	Earnest money sale (Bay' al-Urban) is prohibited.
128	If an adult sold his share, he will remain the owner of the share of the remaining part, and the minor will be of his full share.	133	Meaning of offer and acceptance.
129	Bought something with illicit (haram) money; if both the contract and the cash were from illicit money, then the purchased object is impure (khabith), otherwise not.	134	Verbal offer and acceptance are considered; writing is not considered.
129	Immovable property can be sold without taking possession.	135	The Written is like the Spoken (Al-Kitab kal-Khitab).
130	Something was bought in a fixed quantity, weight	136	

Page	Topic	Page	Topic
	turned out to be less, then the buyer should deduct as much price as the weight was less.		To increase the income of the mosque, someone's land cannot be forcibly purchased for the mosque.
130	Buying grain in the harvest season with the intention of selling it when prices rise is permissible.	137	Zaid made a person an agent to buy goods; after taking possession, it is permissible for Zaid to sell those goods to that same agent on Murabaha (profit-mark-up).
130	In Murabaha sale, ordinary expenses customarily added by merchants to goods will be taken from the buyer along with the profit, and if there is a custom of placing the loss on him as well, it will be taken from the buyer.	137	One partner bought the property of another partner at a low price after division; if there is mutual consent of both parties, it is permissible.
131	Explanation of various forms of purchasing property in the name of a joint family and its ruling.	138	The property which the ancestor purchased with his own money will be declared his property.
132	Two explanations of a multi-faceted issue.	138	Purchased with another's money, even if it be the wife, and the sale contract was made for oneself, even then the property will be declared for oneself.
132	First explanation.	138	And in this case if the other person had made him the owner of the money, then the compensation for that money is not upon the ancestor, and if the other gave a loan or took the money from him by force, then the compensation for that money will be upon the ancestor.
132	Purchasing is of three types.		
138	Zaid bought property with his wife's dower (Mahr); its two...	144	Quran and Hadith on taking someone's wealth without their consent...

पृष्ठ	विषय
128	लड़कों में से किसी ने इस ज़मीन को दूसरे के हाथ बेचा तो बाप की रज़ा से बैअ (बिक्री) प्रभावी होगी।
128	मौखिक और लिखित दोनों में लड़कों के लिए खरीदा तो नाबालिग की ओर से पिता स्वीकार करे और बालिग अपनी ओर से स्वयं स्वीकार करे।
128	बालिग ने अपना हिस्सा बेच दिया तो शेष भाग के हिस्से का मालिक रहेगा और नाबालिग अपने पूरे हिस्से का।
129	हराम धन से कोई चीज़ खरीदी, यदि अनुबंध और नक़द दोनों हराम धन से थे तो बिकी हुई चीज़ अशुद्ध है अन्यथा नहीं।
129	अचल संपत्ति बिना कब्ज़ा किए बेची जा सकती है।
130	

पृष्ठ	विषय
132	ईजाब-ओ-क़ुबूल (प्रस्ताव और स्वीकृति) के बिना भाव-ताव करके बैअ-नामा दे दिया, यह बैअ नहीं बल्कि वह तहरीर होगी जो बैअ-नामा के नाम से लिखी जाएगी, इसी में 'ख़रीदम फ़रोख़्तम' तहरीर होता है, उसी ने तहरीर लिखवाई तो बैअ पूर्ण और प्रभावी हो गई, दूसरे ने लिखवाया तो उसकी इजाज़त पर निर्भर हो गई, विभिन्न न्यायशास्त्र की किताबों से मसले के विवरण का वर्णन।
133	बैअ उरबान (बयाना देकर सौदा करना) वर्जित है।
133	ईजाब-ओ-क़ुबूल का अर्थ।
134	मौखिक ईजाब-ओ-क़ुबूल का विचार है, लिखित का नहीं।
135	अल-किताब काल-ख़िताब (लेखन प्रत्यक्ष संबोधन के समान है)।
136	

पृष्ठ	विषय
	कोई चीज़ एक निश्चित मात्रा में खरीदी, वजन कम निकला, तो जितना कम निकला उतनी कीमत खरीदार घटाए।
130	फ़सल के समय इस इरादे से अनाज खरीदना कि जब भाव बढ़ेगा बेचूँगा, जायज़ है।
130	बैअ-ए-मुराबहा में सामान्य खर्च जो व्यापारियों की आदत में माल पर डाला जाता है, लाभ के साथ वह खर्च भी खरीदार से लिया जाएगा, और यदि नुकसान भी उस पर डालने का रिवाज हो तो वह खरीदार से लिया जाएगा।
131	एक संयुक्त परिवार के नाम पर संपत्ति की खरीद के विभिन्न रूपों और उसके आदेश का विवरण।
132	एक बहु-आयामी समस्या के दो विवरण।
132	प्रथम विवरण।
132	खरीदारी तीन प्रकार की होती है।
	मस्जिद की आमदनी बढ़ाने के लिए किसी की ज़मीन ज़बरदस्ती मस्जिद के लिए नहीं खरीदी जा सकती।
137	ज़ैद ने सामान खरीदने के लिए एक व्यक्ति को वकील (एजेंट) बनाया, उस पर कब्ज़ा करने के बाद ज़ैद का उस सामान को उसी वकील के हाथ मुनाफ़े(मुराबहा) पर बेचना जायज़ है।
137	एक साझेदार ने बँटवारे के बाद दूसरे साझेदार की संपत्ति कम कीमतों पर खरीदी; यदि दोनों पक्षों की आपसी सहमति हो तो जायज़ है।
138	पूर्वज ने जो संपत्ति अपने धन से खरीदी, वह उसी का स्वामित्व मानी जाएगी।
138	दूसरे के धन से खरीदी चाहे वह पत्नी ही क्यों न हो, और बिक्री का अनुबंध अपने लिए किया, तब भी संपत्ति अपने लिए ही मानी जाएगी।
138	और इस स्थिति में यदि दूसरे व्यक्ति ने उसे धन का स्वामी बना दिया था, तो उस धन का मुआवज़ा पूर्वज पर नहीं है, और यदि दूसरे ने ऋण दिया था या उससे ज़बरदस्ती धन लिया गया था, तो उस धन का मुआवज़ा पूर्वज पर होगा।

पृष्ठ	विषय
138	ज़ैद ने अपनी पत्नी के महर के ऋण से संपत्ति खरीदी, इसकी दो...
144	किसी की संपत्ति उसकी सहमति के बिना लेने पर कुरान और हदीस की...

صفحہ	عنوان	صفحہ	عنوان
			ایجاب و قبول کے بغیر باؤ تاؤ کرکے بیعنامہ دے دیا یہ بیع نہیں بلکہ بیچ وہ تحریر ہوگی جو بیع نامہ کے نام سے لکھی جائے گی، اسی میں خریدم فروختم تحریر ہوتا ہے، اسی نے تحریر لکھوائی تو بیع تام و نافذ ہوگئی، دوسرے نے لکھوایا تو اس کی اجازت پر موقوف ہوگئی، مختلف کتب فقہ سے مسئلہ کی جزئیات کا بیان۔
۱۲۸	لڑکوں میں سے کسی نے اس زمین کو دوسرے کے ہاتھ بیچا تو باپ کی رضا سے بیع نافذ ہوگی۔	۱۳۲	
۱۲۸	زبانی اور تحریر دونوں میں لڑکوں کے لئے خریدا تو قبول نابالغ کی طرف سے باپ کرے اور بالغ اپنی طرف سے خود قبول کرے۔	۱۳۳	بیع عربان ممنوع ہے۔
۱۲۸	بالغ نے اپنا حصہ بیچ دیا تو بقیہ جز کے حصہ کا مالک رہے گا اور نابالغ اپنے پورے حصہ کا۔	۱۳۳	ایجاب و قبول کا معنی۔
۱۲۹	حرام مال سے کوئی چیز خریدی، اگر عقد و نقد دونوں حرام مال	۱۳۴	ایجاب و قبول زبانی کا اعتبار ہے تحریر کا اعتبار نہیں۔

صفحہ	عنوان	صفحہ	عنوان
	سے ہوئے تو مبیع خبیث ہے ورنہ نہیں۔		
۱۲۹	جائداد غیر منقولہ بغیر قبضہ کئے ہوئے بیچی جا سکتی ہے۔	۱۳۵	الکتاب کالخطاب
۱۳۰	کوئی چیز ایک معین مقدار میں خریدی، وزن کم نکلا، تو جتنا کم نکلا اتنی قیمت مشتری وضع کرے۔	۱۳۶	مسجد کی آمدنی بڑھانے کے لئے کسی کی زمین زبردستی مسجد پر خریدی نہیں جا سکتی۔
۱۳۰	فصل میں اس نیت سے غلہ خریدنا کہ جب بھاؤ چڑھ جائے گا بیچوں گا جائز ہے۔	۱۳۷	زید نے مال خریدنے کے لئے ایک شخص کو وکیل بنایا، اس پر قبضہ کرنے کے بعد زید کا اس مال کو اسی وکیل کے ہاتھ مرابحہ بیچنا جائز ہے۔
۱۳۰	بیع مرابحہ میں معمولی خرچ جو عادت تجار میں مال پر ڈالا جاتا ہے منافع کے ساتھ یہ خرچ بھی مشتری سے لیا جائے گا، اور نقصان کو بھی اسی پر ڈالنے کا رواج ہو تو وہ مشتری سے لیا جائے گا۔	۱۳۷	ایک شریک نے تقسیم کے بعد دوسرے شریک کا مال کم داموں پر خرید اتراضی طرفین ہو تو جائز ہے۔
۱۳۱		۱۳۸	

صفحہ	عنوان	صفحہ	عنوان
	ایک مشترکہ خاندان کے نام پر جائیداد کی خریداری کی مختلف صورتوں کا بیان اور اس کا حکم۔		مورث نے جو جائیداد اپنے روپے سے خریدی وہ اسی کی ملک قرار پائے گی۔
۱۳۲	ایک کثیر الاشکال مسئلہ کے دو بیان۔	۱۳۸	دوسرے کے روپے سے خریدی خواہ بیوی ہی کیوں نہ ہو، اور عقد بیع اپنے لئے کیا تب بھی جائیداد اپنے لئے قرار دی جائے گی۔
۱۳۲	بیان اول۔	۱۳۸	اور اس صورت میں دوسرے نے اس کو روپیہ کا مالک بنا دیا تھا تو اس روپے کا تاوان بھی مورث پر نہیں، اور دوسرے نے قرض دیا ہو یا جبراً اس سے روپیہ لے لیا ہو تو اس روپے کا تاوان مورث پر ہوگا۔
۱۳۲	خریداری تین طرح ہوتی ہے۔		
۱۳۸	زید نے اپنی بیوی کے دین مہر سے جائیداد خریدی اس کی دو	۱۴۴	کسی کا مال بے اس کی رضا کے لینے پر قرآن و حدیث کی

Fatawa Rizvia | Volume 17 (17)

Page	Topic / Ruling	Ref	Topic / Ruling	Page
			Warnings.	
	Situations: (1) A woman took possession of her dower (Mahr), then the husband bought property with that money. In this case, the rulings for buying property with someone else's money will apply. (2) The woman did not take possession of the dower. The husband himself said or the woman requested to buy property in exchange for the dower. In this case, the property will belong to the woman.			
145	The wife said, "Buy property in exchange for my dower that is due from you," then the property will belong to the husband and the demand for money from the husband will also lapse.	138	There is a difference between choice (Ikhtiyar) and consent (Raza) in terms of general and specific.	
146	In the aforementioned case, the gift (Hiba) of dower will be established by implication (Iqtida).	138	The opposite of choice is compulsion (Jabr) and the opposite of consent is dislike (Karahat).	146
146	If another person asks to invest their money in trade and does not transfer ownership of the money, it will be considered a partnership or a loan, and compensation will be necessary.	138	Contracts such as buying, selling, and gifting, just as they become invalid (fasid) due to lack of choice, also become invalid due to lack of consent.	146
146	It is permissible to state a higher price and then reduce it or take double the price, provided one does not lie.	139	A person buys a stamp by their own choice but is not pleased/consenting to it.	146
				147

Page	Topic / Ruling	Ref	Topic / Ruling	Page
	Chapter on Invalid and Defective Sales		Description of the state of worldly people in injustice and oppression.	
147	There are three types of impermissible sales: Invalid (Batil), Defective (Fasid), and Prohibitively Disliked (Makruh Tahrimi).	141	By becoming habitual in a disliked matter, it will not come into the circle of consent.	147
147	Definition and example of an invalid sale (Bay' Batil).	142	Ruling on the government setting prices for goods.	147
148	Explanation of the relationship between a defect in the contract and a defect in the subject matter, and the author's research.	142	Some permissible ways of purchasing stamps.	148
149	Definition and example of a defective sale (Bay' Fasid).	143	A frequently occurring situation where there is no compulsion, but it is also prohibited due to other reasons of sin. Assisting in sin is a sin and prohibited, like selling weapons to people of mischief. The trade of artificial ghee is permissible as long as the buyer is fully aware of its nature.	149
	Ruling on the sale of government stamps.	144	Ruling on market milk.	150

पृष्ठ	विषय / हुक्म	संदर्भ	विषय / हुक्म	पृष्ठ
			चेतावनियाँ।	
	स्थितियाँ: (१) औरत ने मेहर पर कब्ज़ा कर लिया था फिर शौहर ने उस रुपय से जायदाद खरीदी, इस स्थिति में दूसरे के रुपय से जायदाद खरीदने वाली शक्ल के अहकाम जारी होंगे। (२) मेहर पर औरत ने कब्ज़ा नहीं किया था। खुद शौहर ने कहा या औरत ने फरमाइश की कि मेहर के बदले जायदाद खरीद दो, इस स्थिति में जायदाद औरत की होगी।			
१४५	बीवी ने कहा, "मेरा मेहर जो तुम पर है उसके बदले जायदाद खरीद लो," तो जायदाद शौहर की होगी और शौहर से रुपय का मुतालबा भी साकित होगा।	१३८	इख़्तियार (इच्छा) और रज़ा (सहमति) में आम और ख़ास का अंतर है।	
१४६	उपर्युक्त स्थिति में इक़्तिज़ा-ए-मेहर का हिबा (उपहार) साबित होगा।	१३८	इख़्तियार का विलोम जब्र (ज़बरदस्ती) है और रज़ा का विलोम करारहत (नापसंदगी) है।	१४६
१४६	दूसरे ने अपना रुपया तिजारत (व्यापार) में लगाने के लिए कहा और रुपयों का स्वामित्व हस्तांतरित नहीं किया तो शिरकत (साझेदारी) या कर्ज़ माना जाएगा और मुआवज़ा अनिवार्य होगा।	१३८	अनुबंध जैसे खरीद-ओ-फ़रोख्त और हिबा जिस तरह इख़्तियार न होने से फ़ासिद (दूषित) होते हैं, रज़ा न होने से भी फ़ासिद होते हैं।	१४६
१४६	झूठ न बोले तो ज़्यादा दाम कहकर घटाना या दुगनी क़ीमत लेना जायज़ है।	१३९	आदमी स्टांप अपनी मर्जी से खरीदता है मगर उस पर राज़ी नहीं होता।	१४६

पृष्ठ	विषय / हुक्म	संदर्भ	विषय / हुक्म	पृष्ठ
	बाबुल बैअ अल-बातिल वल-फ़ासिद (बातिल और फ़ासिद क्रय-विक्रय का अध्याय)		ज़ुल्म और अत्याचार में दुनिया वालों के हाल का बयान।	१४७
१४७	नाजायज़ बिक्री की तीन किस्में हैं: बातिल (अमान्य), फ़ासिद (दोषपूर्ण), मकरूह तहरीमी (वर्जित)।	१४१	किसी मकरूह (नापसंदीदा) काम के आदी होने से वह रजामंदी के दायरे में नहीं आएगा।	१४७
१४७	बैअ-ए-बातिल की परिभाषा और उसका उदाहरण।	१४२	सरकार द्वारा वस्तुओं के दाम तय करने का हुक्म।	१४७
१४८	अनुबंध में दोष और विषय वस्तु में दोष के संबंध का वर्णन और लेखक का शोध।	१४२	स्टांप खरीदने की कुछ जायज़ सूरतें।	१४८
१४९	बैअ-ए-फ़ासिद की परिभाषा और उदाहरण।	१४३	एक बहुत होने वाली सूरत जिसमें मजबूरी नहीं है, लेकिन गुनाह के अन्य कारणों से वह भी मना है। गुनाह पर मदद करना भी गुनाह और वर्जित है, जैसे फ़साद फैलाने वालों को हथियार बेचना। मिलावटी घी का व्यापार जायज़ है जब ग्राहक इसकी असलियत से पूरी तरह वाकिफ़ हो।	१४९
	सरकारी स्टांप बेचने का हुक्म।	१४४	बाज़ारी दूध का हुक्म।	१५०

पृष्ठ ७१५ का १७

صفحہ	عنوان / حکم	نمبر	عنوان / حکم	صفحہ
	وعیدیں۔			
۱۴۵	صورتیں: (۱) عورت نے دین مہر پر قبضہ کرلیا تھا پھر شوہر نے اس روپیہ سے جائداد خریدی، اس صورت میں دوسرے کے روپیہ سے جائداد خریدنے والی شکل کے احکام جاری ہوں گے۔ (۲) مہر پر عورت نے قبضہ نہیں کیا تھا۔ خود شوہر نے کہایا عورت نے فرمائش کی مہر کے بدلے جائداد خرید دو، اس صورت میں جائداد عورت کی ہوگی۔ بیوی نے کہا میرا مہر جو تم پر ہے اس کے بدلے جائداد خرید لو، تو جائداد شوہر کی ہوگی اور شوہر سے روپیہ کا مطالبہ بھی ساقط ہوگا۔	۱۳۸	اختیار اور رضا میں عام خاص کا فرق ہے۔	۱۴۵
۱۴۶	مذکورہ بالا صورت میں اقتضاء مہر کا ہبہ ثابت ہوگا۔	۱۳۸	اختیار کا مقابل جبر ہے اور رضا کا مقابل کراہتہ۔	۱۴۶

صفحہ	عنوان / حکم	نمبر
	دوسرے نے اپنا روپیہ تجارت میں لگانے	
۱۴۶	کے لئے کہا اور روپوں کی تملیک نہ کی تو شرکت یا قرض قرار دیا جائے گا اور عوض لازم ہوگا۔	۱۳۸
۱۴۶	جھوٹ نہ بولے تو زیادہ دام کہہ کر گھٹانا یا دُگنی قیمت لینا جائز ہے۔	۱۳۹
	باب البیع الباطل والفاسد	
۱۴۷	ناجائز بیع کی تین قسمیں ہیں: باطل، فاسد، مکروہ تحریمی۔	۱۴۱
۱۴۷	بیع باطل کی تعریف اور اس کی مثال۔	۱۴۲
۱۴۸	خلل عقد و خلل محل میں نسبت کا بیان اور مصنف کی تحقیق۔	۱۴۲
۱۴۹	بیع فاسد کی تعریف اور مثال۔	۱۴۳

صفحہ	عنوان / حکم
۱۴۶	عقود مثلاً بیع و شراء و ہبہ جس طرح عدم اختیار سے فاسد ہوتے ہیں عدم رضا سے بھی فاسد ہوتے ہیں۔
۱۴۶	اسٹامپ آدمی اپنے اختیار سے خریدتا ہے مگر اس پر راضی نہیں ہوتا۔
۱۴۷	ظلم و جور میں اہل دنیا کے حال کا بیان۔
۱۴۷	کسی امر مکروہ کے عادی ہونے سے وہ دائرہ رضامندی میں نہ آئیگا۔
۱۴۷	گورنمنٹ کے اشیاء کا نرخ مقرر کرنے کا حکم۔
۱۴۸	اسٹامپ کی خریداری کی کچھ جائز صورتیں۔
۱۴۹	ایک کثیر الوقوع صورت جس میں عدم اکراہ ہے، لیکن دیگر وجوہ معصیت کی وجہ سے وہ بھی

صفحہ	عنوان / حکم نمبر	عنوان / حکم صفحہ
		ممنوع ہے گناہ پر مدد گناہ و
		ممنوع ہے جیسے اہل فتنہ کے
		ہاتھ ہتھیار کی بیع مصنوعی گھی
		کی تجارت جائز ہے جبکہ مشتری
		اس سے کماحقہ واقف ہو۔
	سرکاری اسٹامپ کی بیع کا حکم۔ ۱۴۴	بازاری دودھ کا حکم۔ ۱۵۰

Fatawa Rizwia (Volume 17)

Description	Page	Description	Page
Knowledge of adulteration in a sale occurs in three ways: manifest on its own, like vetch (khesari) appearing in wheat or chickpeas, or water in milk.	151	Sale of a small quantity like a handful of dust is not permissible, but sale of a large quantity is.	157
The seller himself states that this item is adulterated.	151	Explanation of a passage from 'Durr' and citation from 'Shami'.	157
If a fornicator is not the guardian of an illegitimate child, he also has no right to accept a sale as a guardian.	151	A form of selling a non-existent thing and its ruling.	157
Mother, brother, uncle do not have financial guardianship over a minor.	151	Except for 'Salam', the sale of a non-existent thing is void.	157
An offer made by someone absent from the gathering is not dependent on acceptance but becomes void.	152	Ruling on selling the juice of standing sugarcane in a field by estimation.	159
If an unauthorized person (fuzuli) from both sides or one side makes an offer and the one to accept is not present, the sale becomes void.	152	Ruling on setting a condition that if the quantity turns out to be less than estimated, the buyer shall return profit per maund.	160
A tree was bought; the responsibility for cutting it lies with the buyer. If a condition was set for the seller, the sale became corrupt (fasid).	153	Definition of 'Riba' (interest/usury).	160
Annulment of a corrupt sale is mandatory for the contracting parties. Whichever of them annuls it, it will be done. If the parties do not annul it themselves, the ruler shall annul it by force.	153	Ruling on another form of corrupt sale.	160
Sale of a non-existent thing is unlawful.	155		160

Description	Page	Description	Page
		A condition that benefits one of the contracting parties is a corrupt condition.	
Amr bargained with Zaid for 100 bottles at the rate of ten annas per hundred and paid six rupees for eight hundred. The bottles were not with Zaid; he bought them from elsewhere and kept them in his shop. 100 bottles were found broken; the loss belongs to Zaid.	155	Every corrupt condition invalidates the sale.	160
Selling fruit by 'pathool' is forbidden; repentance and withdrawal from such a sale is mandatory for the parties.	155	Every corrupt sale is forbidden and mandatory to annul.	160
If a verbal sale contract is free from a corrupt condition, but it is mentioned in the sale deed, the sale will not be corrupt.	156	If the parties do not annul a corrupt sale, the judge (Qadi) shall annul it by force.	160
Definition of property (Mal).	157	Description of a form of gambling (Qimar) and its prohibition.	161
		The agreement that whichever party violates the contract will pay a penalty; this condition is unlawful.	161

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

विवरण	पृष्ठ
बीय (बिक्री) में मिलावट का ज्ञान तीन प्रकार से होता है: अपने आप प्रकट हो जाना, जैसे गेहूँ या चने में केसरी का होना, या दूध में पानी।	151
विक्रेता स्वयं बताए कि यह चीज़ मिलावटी है।	151
यदि व्यभिचारी अवैध संतान का संरक्षक नहीं है, तो वह संरक्षक बनकर बिक्री स्वीकार करने का भी अधिकार नहीं रखता।	151
माता, भाई, चाचा को नाबालिग पर वित्तीय संरक्षकता प्राप्त नहीं है।	151
सभा से अनुपस्थित व्यक्ति द्वारा दिया गया प्रस्ताव स्वीकृति पर निर्भर नहीं होता बल्कि शून्य हो जाता है।	152
दोनों पक्षों या एक पक्ष की ओर से कोई अनाधिकृत व्यक्ति (फ़ुज़ुली) प्रस्ताव करे और स्वीकार करने वाला मौजूद न हो, तो बिक्री शून्य हो जाती है।	152
वृक्ष खरीदा गया, उसे कटवाने की ज़िम्मेदारी क्रेता की है; यदि विक्रेता के लिए शर्त लगाई गई तो बिक्री फ़ासिद (दूषित) हो गई।	153
दूषित बिक्री को रद्द करना अनुबंध करने वालों पर अनिवार्य है। उनमें से जो भी रद्द करेगा, हो जाएगा; यदि वे स्वयं न करें तो शासक ज़बरदस्ती रद्द कर दे।	153
मअदूम की बिक्री नाजायज़ है।	155
थोड़ी सी चीज़ जैसे एक मुट्ठी धूल की बिक्री जायज़ नहीं, और अधिक की जायज़ है।	157
'दुर्र' के एक उद्धरण की व्याख्या और 'शामी' से साक्ष्य।	157
मअदूम (ग़ैर-मौजूद चीज़) की बिक्री का एक रूप और उसका नियम।	157
'सल्लम' के अलावा मअदूम की बिक्री बातिल (शून्य) है।	157
खेत में खड़े गन्ने के रस की अनुमानित बिक्री का नियम।	159
यदि अनुमान से कम हुआ तो क्रेता प्रति मन के हिसाब से लाभ वापस करेगा, ऐसी शर्त लगाने का नियम।	160
रिबा (ब्याज) की परिभाषा।	160
दूषित बिक्री के एक और रूप का नियम।	160
	160

विवरण	पृष्ठ
ज़ैद से अम्र ने सौ बोतलों की बात दस आना सैकड़ा के हिसाब से की और आठ सौ के छह रुपये दे दिए, बोतलें ज़ैद के पास नहीं थीं, दूसरी जगह से खरीदकर अपनी दुकान पर रख दीं, उनमें सौ बोतलें टूटी निकलीं, नुकसान ज़ैद का हुआ।	155
फलों का 'पठोल' बेचना हराम है; अनुबंध करने वालों पर ऐसी बिक्री से तौबा और उससे हटना अनिवार्य है।	155
मौखिक बिक्री अनुबंध दूषित शर्त से मुक्त हो और बिक्री विलेख (बैय-नामा) में उसका उल्लेख हो, तो बिक्री फ़ासिद नहीं होगी।	156
'माल' की परिभाषा।	157
जिस शर्त में अनुबंध करने वाले पक्षों में से किसी एक का लाभ हो, वह शर्त फ़ासिद है।	
हर फ़ासिद शर्त बिक्री को बिगाड़ देती है।	160
हर दूषित बिक्री हराम है और उसे रद्द करना अनिवार्य है।	160
यदि अनुबंध करने वाले दूषित बिक्री को रद्द न करें, तो क़ाज़ी (न्यायाधीश) बलपूर्वक उसे रद्द कर दे।	160
जुए (क़िमार) का एक रूप और उसकी मनाही का वर्णन।	161
यह तय हुआ कि अनुबंध के पक्षों में से जो उल्लंघन करेगा वह हर्जाना देगा; यह शर्त नाजायज़ है।	161

पृष्ठ 18 कुल 715

تفصیل	صفحہ
بیع میں ملاوٹ کا علم تین طرح ہوتا ہے خود بخود ظاہر ہو جیسے گیہوں چنے میں کھساری عرف بن گیا ہو جیسے دودھ میں پانی	۱۵۱
بائع خود بتائے یہ چیز ملاوٹ کی ہے۔	۱۵۱
زانی ولد الزنا کا ولی نہیں تو اس کا ولی بن کر بیع کے قبول کرنے کا بھی حق نہیں رکھتا۔	۱۵۱
ماں، بھائی، چچا کو نابالغ پر ولایت مالیہ نہیں۔	۱۵۱
ایجاب غائب عن المجلس کے قبول پر موقوف نہیں ہوتا بلکہ باطل ہو جاتا ہے۔	۱۵۲
جانبین یا ایک جانب کا فضولی ایجاب کرے اور قبول کرنے والا موجود نہ ہو تو بیع باطل ہو جاتی ہے۔	۱۵۲
تھوڑی سی چیز جیسے ایک مشت خاک کی بیع جائز نہیں، اور کثیر کی جائز ہے۔	۱۵۷
درر کی ایک عبارت کی توضیح اور شامی سے استشہاد۔	۱۵۷
معدوم کی بیع کی ایک صورت اور اس کا حکم۔	۱۵۷
سوائے سلم کے معدوم کی بیع باطل ہے۔	۱۵۷
کھیت میں کھڑے گنے کے رس کی اندازاً بیع کا حکم۔	۱۵۹
اندازہ سے کم ہوا تو وہ پیسہ فی من کے حساب سے سو کا منافع مشتری واپس کرے گا، ایسی شرط لگانے کا حکم۔	۱۶۰

تفصیل	صفحہ
درخت خرید اس کے کٹوانے کی ذمہ داری مشتری کی ہے بائع کے لئے شرط لگائی تو بیع فاسد ہو گئی۔	۱۵۳
بیع فاسد کا فسخ کرنا متعاقدین پر واجب ہے۔ ان میں جو فسخ کر دے گا ہو جائے گی متعاقدین خود فسخ نہ کریں تو حاکم جبراً فسخ کر دے۔	۱۵۳
معدوم کی بیع ناجائز ہے۔	۱۵۵
زید سے عمرو نے سو شیشوں کی بات دس آنہ سیکڑہ کے حساب سے کی اور آٹھ سو کے چھ روپے دے دئے، شیشیاں زید کے پاس نہ تھیں دوسری جگہ سے خرید کر اپنی دکان پر رکھ دیں اس میں سو شیشیاں ٹوٹی نکلیں نقصان زید کا ہوا۔	۱۵۵
پھل کا پٹھول بیچنا حرام ہے عاقدین پر ایسی بیع سے توبہ اور دست کشی لازم ہے۔	۱۵۵
زبانی عقد بیع شرط فاسد سے پاک ہو اور بیع نامہ میں اس کا ذکر ہو تو بیع فاسد نہ ہوگی۔	۱۵۶
ربوا کی تعریف۔	۱۶۰
بیع فاسد کی ایک اور صورت کا حکم	۱۶۰
جس شرط میں احد المتعاقدین کا فائدہ ہو وہ شرط فاسد ہے۔	۱۶۰
ہر شرط فاسد مفسد بیع ہے۔	۱۶۰
ہر بیع فاسد حرام و واجب الفسخ ہے۔	۱۶۰
اگر عاقدین بیع فاسد کو فسخ نہ کریں تو قاضی جبراً فسخ کر دے۔	۱۶۰

تفصیل	صفحہ	تفصیل	صفحہ
مال کی تعریف۔	۱۵۷	قمار کی ایک صورت اور اس کی حرمت کا بیان۔	۱۶۱
		یہ ٹھہرا کہ معاہدہ کی طرفین میں سے جو خلاف ورزی کرے گا ہرجانہ دے گا یہ شرط ناجائز ہے۔	۱۶۱

161 | Another form of sale of a non-existent thing and its ruling. | That which is based on falsehood is false. | 163 161 | If the seller delivered less goods than the quantity sold, he must make up the deficit now. | Falsehood has no legal ruling. | 163 161 | If the seller sold the goods to someone else, he committed a grave sin; if the goods are with the second buyer, the first buyer should take them back, and if not present, the first buyer should collect compensation from the seller at the current market rate. | A house obtained through a gift in exchange for dowry based on a corrupt condition was usurped by someone; the husband filed a lawsuit and took possession, then the contract of dowry in exchange for the specified amount became void and the husband became its owner. | 163 161 | Selling the skin of a carcass after tanning or drying is permissible, otherwise it is forbidden. | If the husband gives it to the wife through a new gift, the wife will become the owner and her dowry will also remain the husband's responsibility, but if returned under the previous contract, the wife will not be the owner. | 164 161 | If there is no fat on the bone, its sale is permissible. | Dry wood falling from a mosque tree for which a potter gives a pot in exchange - this contract is invalid due to ignorance of the quantity of the two items; both must be specified. | 165 162 | Selling pig skin or bone is not permissible under any circumstances. | Purchasing stolen property knowingly is forbidden. | 165 162 | Buying meat of a live animal with the exception of its skin is invalid. | Buying it in ignorance is [also] invalid. | 165 163 | Giving compensation for the debt of dowry is 'Hiba-bi-al-iwad' (gift with exchange), which is in reality a sale, and possession is not necessary for the validity of the sale. | If one learns it is stolen after purchasing, its use is forbidden; it must be returned to the owner. If the owner cannot be found, it should be spent on the poor. | 165 163 | If a condition was set to give property to be created in the future as compensation for the same dowry debt, this condition is void, and because of it, the first contract of sale also became corrupt (fasid). | One should avoid taking money by having someone else work in their place as a servant. | 165 163 | Even if possession of future property was given to the wife based on this same corrupt condition, she would still not become its owner. | The government never returns money from promissory notes; this is a 'dead debt'. | 166 163 | If the buyer sold an item obtained through a corrupt sale, then this second sale is valid, but the agreed-upon price will not be awarded; instead, the market rate will apply. | The sale of a debt is forbidden and corrupt without giving the buyer control over the debtor for possession. | 166

फ़तावा रज़विया | जिल्द सत्रहवीं (17)

161 | गैर-मौजूद चीज़ की बिक्री का एक और रूप और उसका हुक्म। | जो झूठ पर आधारित है, वह झूठ है। | 163 161 | विक्रेता ने जितने माल की बिक्री की थी, अगर उससे कम दिया तो अब उसे पूरा करे। | असत्य का कोई कानूनी प्रभाव नहीं होता। | 163 161 | अगर विक्रेता ने बेचे गए माल को किसी दूसरे के हाथ बेच दिया, तो वह बड़ा गुनहगार हुआ; यदि माल दूसरे खरीदार के पास मौजूद है, तो पहला खरीदार उसे वापस ले ले, और यदि मौजूद नहीं है, तो पहला खरीदार उस समय के बाज़ार भाव के अनुसार विक्रेता से हर्जाना वसूल करे। | मेहर के बदले हिबा (उपहार) के ज़रिए प्राप्त मकान, जो एक भ्रष्ट शर्त पर आधारित था, किसी ने हड़प लिया; पति ने मुक़दमा करके उस पर कब्ज़ा कर लिया, तो वह मेहर के बदले वाला अनुबंध शून्य हो गया और पति उसका मालिक बन गया। | 163 161 | मुर्दार (मरे हुए जानवर) की खाल को पकाकर या सुखाकर बेचना जायज़ है, अन्यथा हराम है। | पति यदि नए उपहार (हिबा) के ज़रिए पत्नी को दे, तो पत्नी मालिक हो जाएगी और उसका मेहर भी पति के ज़िम्मे रहेगा, लेकिन अगर पहले वाले अनुबंध के तहत लौटाया जाए, तो पत्नी मालिक नहीं होगी। | 164 161 | हड्डी पर चर्बी न हो तो उसकी बिक्री जायज़ है। | मस्जिद के पेड़ से जो सूखी लकड़ी गिरे, उसके बदले कुम्हार लोटा देता है - यह अनुबंध दोनों चीज़ों की मात्रा अज्ञात होने के कारण नाजायज़ है, दोनों का निर्धारण होना चाहिए। | 165 162 | सूअर की खाल या हड्डी की बिक्री किसी भी हाल में जायज़ नहीं है। | चोरी के माल को जानकर खरीदना हराम है। | 165 162 | ज़िंदा जानवर का मांस खरीदना और खाल को अलग रखना (बेचने में शामिल न करना) नाजायज़ है। | अनजाने में खरीदना भी नाजायज़ है। | 165 163 | मेहर के क़र्ज़ के बदले कुछ देना 'हिबा बिल ऐवज़' (बदले वाला उपहार) है, जो वास्तव में बिक्री है, और बिक्री की वैधता के लिए कब्ज़ा ज़रूरी नहीं है। | खरीदने के बाद चोरी का होने का पता चले तो उसका उपयोग हराम है, मालिक को लौटाया जाए। अगर मालिक का पता न चले तो उसे गरीबों पर खर्च किया जाए। | 165 163 | भविष्य में पैदा होने वाली संपत्ति को उसी मेहर के बदले देने की शर्त लगाई गई, तो यह शर्त शून्य है, और इसके कारण पहला बिक्री अनुबंध भी भ्रष्ट (फ़ासिद) हो गया। | अपनी जगह किसी दूसरे को नौकर रखवा कर उसका पैसा लेने से बचना चाहिए। | 165 163 | भविष्य की संपत्ति पर उसी भ्रष्ट शर्त के आधार पर पत्नी का कब्ज़ा करा दिया गया तब भी वह उसकी मालिक नहीं होगी। | प्रॉमिसरी नोट का रुपया सरकार कभी वापस नहीं करती, यह 'मुर्दा ऋण' है। | 166 163 | भ्रष्ट बिक्री के माध्यम से प्राप्त चीज़ को खरीदार ने बेच दिया, तो यह दूसरी बिक्री सही है, लेकिन आपस में तय की

गई कीमत नहीं दी जाएगी, बल्कि बाज़ार का भाव लगेगा। | ऋण की बिक्री खरीदार को कब्ज़ा दिलाने के लिए ऋणी पर अधिकार दिए बिना हराम और भ्रष्ट है। | 166

पृष्ठ 19 / 715

۱۶۱ | بیع معدوم کی ایک اور شکل اور اس کا حکم۔ | المبنی علی الباطل باطل۔ | ۱۶۳ ۱۶۱ | جتنے کا مال کی بیع ہوئی بائع نے اس سے کم دیا تو اب پورا کرے۔ | الباطل لاحکم لہ۔ | ۱۶۳ ۱۶۱ | بائع نے اگر مال مبیعہ کو دوسرے کے ہاتھ بیچ دیا تو سخت گنہگار ہوا، مال دوسرے مشتری کے پاس موجود ہو تو مشتری واپس لے اور موجود نہ ہو تو اتنے کا تاوان اس وقت کے بازار کے بھاؤ سے مشتری بائع سے وصول کرے۔ | ہبہ بعوض مہر مشروط بشرط الفاسد سے حاصل ہونے والے مکان کو کسی نے غصب کر لیا شوہر نے نالش کرکے اس پر قبضہ کر لیا تو مہر بعوض المسمی والا عقد باطل ہو گیا اور شوہر اس کا مالک ہو گیا۔ | ۱۶۳ ۱۶۱ | مردار کی کھال پکا کر یا سکھا کر بیچنا جائز ہے ورنہ حرام ہے۔ | شوہر ہبہ جدید کے ذریعہ عورت کو دے تو عورت مالک ہو جائے گی اور اس کا مہر بھی شوہر کے ذمہ رہے گا اور پہلے والے عقد کے تحت لوٹائے تو عورت مالک نہ ہوگی۔ | ۱۶۴ ۱۶۱ | ہڈی پر چکنائی نہ ہو تو اس کی بیچ جائز ہے۔ | مسجد کے درخت سے جو سوکھی لکڑی گرے اس کے بدلے کمہار لوٹا دیتا ہے یہ عقد جہالت مقدار بدلین کی وجہ سے ناجائز ہے، دونوں کی تعیین ہونی چاہیے۔ | ۱۶۵ ۱۶۲ | سور کی کھال یا ہڈی کی کسی حال میں بیچ جائز نہیں۔ | مال مسروقہ کو جان کر خریدنا حرام ہے۔ | ۱۶۵ ۱۶۲ | زندہ جانور کا گوشت خریدنا اور کھال کا استثناء ہو یہ ناجائز ہے۔ | لاعلمی میں خریدنا تو ناجائز ہے۔ | ۱۶۵ ۱۶۳ | دین مہر کا عوض دینا ہبہ بالعوض ہے، جو فی الحقیقت بیع ہے اور صحت بیع کے لئے قبضہ ضروری نہیں۔ | خریدنے کے بعد مسروقہ ہونے کا علم ہو تو اس کا استعمال حرام مالک کو دیا جائے اس کا پتہ نہ چلے تو فقراء پر صرف کیا جائے۔ | ۱۶۵ ۱۶۳ | آئندہ بھی جو جائداد پیدا ہو اسی دین مہر کے بدلہ میں دینے کی شرط لگائی تو یہ شرط باطل ہے،

اور اس کی وجہ سے پہلا عقد بیع بھی فاسد ہو گیا۔ | اپنی جگہ کسی دوسرے کو نوکر رکھوا کر اس کا پیسہ لینے سے بچنا چاہئے۔ | ۱۶۵ ۱۶۳ | آئندہ پیدا ہونے والی جائداد پر اسی شرط فاسد کی بنیاد پر بیوی کا قبضہ کرا دیا تب بھی وہ اس کی مالک نہ ہوگی۔ | پرامیسری نوٹ کا روپیہ گورنمنٹ کبھی واپس نہیں کرتی یہ قرض مردہ ہے۔ | ۱۶۶ ۱۶۳ | بیع فاسد کے ذریعہ حاصل ہونے والی چیز کو مشتری نے بیچ دیا، تو یہ بیع ثانی صحیح ہے لیکن باہم ملے شدہ دام نہیں دلایا جائے گا بلکہ بازار کا بھاؤ۔ | قرض کی بیع خریدار کو قبضہ کے لئے مدیون پر مسلط کئے بغیر حرام و فاسد ہے۔ | ۱۶۶

Fatawa Razawiyya Volume (17)

Page No.	Topic	Page No.	Topic
167	Definition of debt of a deceased person.	171	Explanation of the punishment in the hereafter for those who illegally occupy land.
167	Explanation of a modern form of a void sale.	172	Telling an agent a fixed price for an item and saying, 'sell it for more or less as you wish, we will only take the fixed price and give you 2% commission' - such a transaction is impermissible for both the agent and the client.
167	In this sale, the cloth given by the committee after ticket sales is not compensation but a prize, so taking it is permissible, and prayer with it is valid.	172	If one does not know that a specific item was earned through forbidden means, they can consume it.
168	There is no harm in buying 'Nuzul' land from the government.	173	If a corrupt condition is not part of the contract, nor was it agreed upon beforehand such that the contract is based on it, the sale is valid.
168	It is permissible to sell wood to those who cremate the dead, provided there is no intention of assisting in that act.	174	Explanation of the statement of Al-Shami (Ibn Abidin).
168	Selling cannabis to those who consume it for intoxication is impermissible, but its sale for medicinal purposes is permissible.	174	Rulings based on piety.
169	Marital rights are wealth and can be made the price of something,	175	Buying a standing crop is permissible only if the crop is ready and is harvested

Page No.	Topic	Page No.	Topic
	provided the rights are established and known.		immediately; otherwise, it is impermissible.
169	If future obligatory maintenance is made the price, the sale will be invalid.	175	Legal stratagem for buying unripe crops.
170	In a 'Salam' sale, if a condition is set that if the goods are not delivered at the promised time, the seller will return money according to the market rate at that time, it is forbidden and invalid.	175	Selling a crop based on seeds or flowers is impermissible.
170	There is a difference between legal validity and permissibility; it is possible for something to be legally sound but still forbidden.	175	Selling fruit once it is edible is permissible, but a condition that it remains on the tree until fully ripe makes the sale invalid.
170	Selling opium for external medicinal use is permissible, but for consumption it is forbidden.	176	In the sale of a crop, a condition regarding the branch is void.
171	Selling carrion is forbidden.	176	Strategy for the permissibility of these types of sales.
171	Selling a graveyard is forbidden; it is forbidden for the seller to take the price and it must be returned; it is forbidden for the buyer to benefit from the graveyard and it must be returned to Muslim control, whether the seller returns the money or not.	177	For a sale to be valid, both exchange values must be known and specified.
		177	Sale becomes invalid due to uncertainty, and removal of uncertainty after the contract session is not beneficial.

फ़तावा रज़विया जिल्द (17)

पृष्ठ संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या	विषय
१६७	मृतक के ऋण की परिभाषा।	१७१	ज़मीन पर नाजायज़ कब्ज़ा करने वालों की आख़िरत की सज़ा का बयान।
१६७	बै-ए-बातिल (शून्य बिक्री) के एक आधुनिक रूप का बयान।	१७२	वकील को चीज़ के तय दाम बता कर कहना कि इससे कम या ज़्यादा बेचो तो तुम जानो, हम वही तय दाम लेंगे और तुम्हें इसमें से दो प्रतिशत दलाली देंगे, ऐसा मामला वकील और मुवक्किल दोनों के लिए नाजायज़ है।
१६७	इस बिक्री में टिकट बेचने के बाद कमेटी जो कपड़ा देती है वह मुआवज़ा नहीं बल्कि इनाम होता है, इसलिए उसे लेना जायज़ है, और उससे नमाज़ सही है।	१७२	यदि किसी विशिष्ट चीज़ के हराम कमाई से होने का ज्ञान न हो, तो उसे खा सकते हैं।
१६८	सरकार से नज़ूल की ज़मीन खरीदने में कोई हर्ज नहीं है।	१७३	यदि अमान्य (फ़ासिद) शर्त अनुबंध में न हो, और न ही पहले से कोई समझौता हो जिसके अनुसार अनुबंध किया गया हो, तो बिक्री जायज़ है।
१६८	शवदाह करने वालों को लकड़ी बेचना जायज़ है, बशर्ते इस काम में उनकी मदद करने की नीयत न हो।	१७४	शामी (इब्न आबिदीन) के कथन का स्पष्टीकरण।
१६८	भांग पीने वालों को इसे बेचना नाजायज़ है, हालांकि दवा के रूप में इसकी बिक्री जायज़ है।	१७४	दियानत (धार्मिक अन्तःकरण) का हुक्म।
१६९		१७५	

पृष्ठ संख्या	विषय
	वैवाहिक अधिकार माल (धन) हैं और उन्हें किसी चीज़ की कीमत के रूप में निर्धारित करना जायज़ है, बशर्ते कि अधिकार स्थापित और ज्ञात हों।
१६९	यदि भविष्य में होने वाले भरण-पोषण (नफ़क़ा) को कीमत बना दिया जाए, तो बिक्री अमान्य (फ़ासिद) होगी।
१७०	बै-ए-सल्लम में यह शर्त लगाना कि यदि वादा किए गए समय पर वस्तु नहीं दी गई, तो विक्रेता उस समय के बाज़ार भाव के अनुसार पैसा वापस करेगा, हराम और अमान्य है।
१७०	वैधता और अनुमति (जवाज़) में अंतर है; यह संभव है कि कोई चीज़ (कानूनी रूप से) सही हो लेकिन (धार्मिक रूप से) हराम हो।
१७०	बाहरी औषधीय उपयोग के लिए अफीम की बिक्री जायज़ है और खाने के लिए हराम है।
१७१	मुरदार (मृत पशु) की बिक्री हराम है।
१७१	कब्रिस्तान की बिक्री हराम है; विक्रेता के लिए कीमत लेना हराम है और उसे वापस करना ज़रूरी है; खरीदार के लिए कब्रिस्तान से लाभ उठाना हराम है और उस पर मुसलमानों का कब्ज़ा दिलाना
१७५	खड़ी फ़सल खरीदना तभी जायज़ होगा जब फ़सल तैयार हो और तुरंत काट ली जाए, अन्यथा यह नाजायज़ है।
१७५	कच्ची फ़सल खरीदने का कानूनी उपाय (हीला)।
१७५	बीज या फूल पर फ़सल की बिक्री नाजायज़ है।
१७५	जब फल खाने लायक हो जाएँ तो बिक्री जायज़ है, लेकिन पकने तक पेड़ पर रहने की शर्त से बिक्री अमान्य (फ़ासिद) हो जाती है।
१७६	फ़सल की बिक्री में डाली (टहनी) की शर्त अमान्य (फ़ासिद) है।
१७६	इन बिक्रियों की अनुमति के लिए उपाय।
१७७	बिक्री की वैधता के लिए दोनों विनिमय वस्तुओं (क़ीमत और माल) का ज्ञात और निश्चित होना ज़रूरी है।

पृष्ठ संख्या	विषय
	ज़रूरी है, चाहे विक्रेता से पैसा वापस मिले या न मिले।
१७७	अनिश्चितता (जहालत) से बिक्री अमान्य (फ़ासिद) हो जाती है और अनुबंध सभा के बाद अनिश्चितता का दूर होना लाभदायक नहीं है।

صفحہ نمبر	مضمون
۱۶۷	قرض مردہ کی تعریف۔
۱۶۷	بیع باطل کی ایک جدید شکل کا بیان۔
۱۶۷	اس بیع میں ٹکٹ بیچنے کے بعد کمیٹی جو کپڑا دیتی ہے وہ معاوضہ نہیں بلکہ انعام ہوتا ہے تو اس کا لینا جائز ہے، اور اس سے نماز درست ہے۔
۱۶۸	نزول کی زمین کو سرکار سے خریدنے میں کوئی حرج نہیں ہے۔
۱۷۱	زمین پر ناجائز قبضہ کرنے والوں کی اخروی سزا کا بیان۔
۱۷۲	وکیل کو چیز کے متعین دام بتا کر کہنا اس سے کم زیادہ بیچو تو تم جانو ہم وہی متعینہ دام لیں گے اور تمہیں اس میں سے دو فیصدی تمھیں دلالی دیں گے، ایسا معاملہ وکیل اور موکل دونوں کے لئے ناجائز ہے۔
۱۷۲	معین چیز کے کسب حرام ہونے کا علم نہ ہو تو اسے کھا سکتے ہیں۔
۱۷۳	شرط فاسد عقد میں نہ ہو، نہ پہلے سے قرار داد کر کے اسی کے موافق عقد ہو تو بیع جائز ہے۔

صفحہ نمبر	مضمون
	مردہ پھونکنے والوں کے ہاتھ لکڑی
۱۶۸	بیچنا جائز ہے اس کام میں اس کی اعانت کی نیت نہ کرے۔
	بھنگ پینے والوں کے ہاتھ اس کی بیع
۱۶۸	ناجائز ہے البتہ دوا کے طور پر اس کی بیع جائز ہے۔
	حقوق زوجیت مال ہے اور اس کو کسی
۱۶۹	چیز کا ثمن قرار دینا جائز ہے جبکہ حقوق ثابت اور معلوم ہوں۔
۱۶۹	آئندہ جو نفقہ واجب ہوگا اس کو ثمن قرار دیا تو بیع فاسد ہوگی۔
	بیع سلم میں یہ شرط لگائی کہ وقتِ موعود پر مبیع ادا نہ کیا تو اس وقت
۱۷۰	مبیع کا جو بازار بھاؤ ہوگا اس حساب سے بائع روپیہ واپس کرے گا حرام و فاسد ہے۔
۱۷۰	

صفحہ نمبر	مضمون
۱۷۴	شامی کے قول کی توضیح
۱۷۴	حکم دیانت
	کھڑا کھیت خریدنا اس وقت جائز ہوگا کہ
۱۷۵	کھیتی تیار ہو اور فوراً کاٹ لی جائے ورنہ نا جائز ہے۔
۱۷۵	کچی کھیتی خریدنے کا حیلہ۔
۱۷۵	بیج یا پھول پر فصل کی بیع نا جائز ہے۔
۱۷۵	

صفحہ نمبر	مضمون
	صحت اور جواز میں فرق ہے ممکن ہے ایک چیز صحیح تو ہو لیکن حرام ہو۔
۱۷۰	افیون کی بیع دواءً خارجی استعمال کے لئے جائز ہے اور کھانے کے لئے حرام ہے۔
۱۷۱	مردار کی بیع حرام ہے۔
	قبرستان کی بیع حرام بائع کو قیمت لینا حرام، واپس کرنا ضروری، اور مشتری
۱۷۱	کو قبرستان سے انتفاع حرام اور اس پر مسلمانوں کا قبضہ دلانا ضروری، بائع سے قیمت واپس ملے یا نہ ملے
۱۷۶	پھل کھانے کے لائق ہو جائیں تو جائز لیکن پکنے تک درخت پر رہنے کی شرط سے بیع فاسد ہے۔
۱۷۶	فصل کی بیع میں ڈالی کی شرط فاسد ہے۔
۱۷۶	ان بیوع کے جواز کی تدبیر۔
۱۷۷	بیع کی صحت کے لئے بدلین کا معلوم معین ہونا ضروری ہے۔
۱۷۷	جہالت سے بیع فاسد ہو جاتی ہے اور مجلس عقد کے بعد جہالت زائل ہونا کچھ مفید نہیں۔

Fatawa Razawiya (Volume 17)

Page	Description	Page	Description
188	Difference in the sale of fixed and unfixed beams of a roof.	179	Explanation of the text of 'Fath' and critique on 'Shami'.
181	**Chapter on Disliked (Makruh) Sales**	181	Second critique on 'Shami'.
182	Definition and ruling of hoarding (Ihtikar).	182	Third critique on 'Shami'.
189	It is permissible to withhold grain while waiting for prices to rise, provided it doesn't harm consumers.	183	Selling one rupee for two and dropping one rupee before separation; such a sale is still not permissible.
189	Waiting for a price hike to sell grain.	183	If there's corruption in the core of the contract or the condition for conclusion is missing, rectification during the session is not valid.
190	Registration is not necessary after the completion of an oral contract.	184	The author's finding that the absence of a condition for conclusion invalidates the contract and ignorance of values corrupts it.
191	An oral sale of a house was finalized and the buyer took possession; the person with the right of pre-emption (shufa) had refused to buy, so he loses his right.	184	If the corruption is strong, removing it within the session validates the contract; otherwise, it becomes established and later removal is ineffective.
191	It is now prohibited to evict the buyer from such a house.	184	If a weak corruption is removed even after the session, the contract becomes valid.
191	Condemnation of injustice against neighbors.	184	In any case, after corruption is established, there is no choice but to rescind the contract.
191	Ruling on increasing price over a brother's bid.	184	Statement on the difference in delaying the arrival of pilgrims and the blowing of winds.

Page	Description
191	Buying grain at harvest and selling at market price is permissible; anyone calling it 'haram' is audacious against Sharia.
191	Statement on hoarding (Ihtikar).
192	Statement on some forms of disliked (makruh) sales.
192	**Chapter on Unauthorized (Fuzuli) Sales**
193	If a husband sells his wife's parental jewelry or dowry without permission, it's an unauthorized sale; if she disagrees, the buyer must return it.
185	Specific details of the above-mentioned rulings.
185	Among the conditions for a valid sale is that the item must be deliverable without harm to the seller.
186	In a corrupted sale due to inability to deliver, if the seller gives possession before the buyer rescinds, the sale becomes valid and binding.
187	Statement on the difference in corruption between natural and accidental connections.
187	Statement on another difference.

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

पृष्ठ	विवरण
188	छत की निश्चित और अनिश्चित कड़ियों (शहतीर) की बिक्री में अंतर।
181	**नापसंद (मक़रूह) बिक्री का अध्याय**
182	जमाखोरी (एहतिकार) की परिभाषा और उसका हुक्म।
189	भाव बढ़ने के इंतज़ार में अनाज रोककर बेचना जायज़ है, बशर्ते कि इससे उपभोक्ताओं को नुकसान न हो।
189	अनाज बेचने के लिए भाव बढ़ने का इंतज़ार करना।
190	जुिबानी अनुबंध के पूरा होने के बाद रजिस्ट्री की आवश्यकता नहीं है।
191	मकान की जुिबानी बिक्री हुई और खरीदार का कब्ज़ा हो गया; जिस व्यक्ति को प्री-एम्प्शन (शफ़ा) का अधिकार था उसने मना कर दिया था, अब उसे कोई अधिकार नहीं।
191	अब खरीदार को ऐसे मकान से बेदखल करना हराम है।
191	पड़ोसी पर अत्याचार की निंदा।
179	'फ़तह' की इबारत की व्याख्या और 'शामी' पर आलोचना।
181	'शामी' पर दूसरी आलोचना।
182	'शामी' पर तीसरी आलोचना।
183	एक रुपया दो रुपये में बेचना और अलग होने से पहले एक रुपया कम कर देना; फिर भी यह बिक्री जायज़ नहीं।
183	यदि अनुबंध के मूल में दोष हो या अनुबंध की शर्त का अभाव हो, तो सभा में सुधार वैधता के लिए प्रभावी नहीं है।
184	लेखक का शोध कि अनुबंध की शर्त की अनुपस्थिति अनुबंध को अमान्य करती है और विनिमय के प्रति अज्ञानता इसे दूषित करती है।
184	यदि दोष (फ़साद) गंभीर है, तो सभा के दौरान इसे दूर करने से अनुबंध वैध हो जाएगा; अन्यथा यह स्थायी हो जाएगा और बाद में हटाना प्रभावी नहीं होगा।
184	यदि कोई मामूली दोष अनुबंध की सभा के बाद भी दूर हो जाए, तो अनुबंध वैध हो जाएगा।
184	

पृष्ठ	विवरण
191	भाई के भाव पर भाव बढ़ाने का हुक्म।
191	फसल पर अनाज खरीदकर या बाज़ार भाव पर बेचना जायज़ है; इसे 'हराम' कहने वाला शरीयत पर धृष्टता कर रहा है।
191	जमाखोरी (एहतिकार) का वर्णन।
192	नापसंद (मक़रूह) बिक्री के कुछ रूपों का वर्णन।
192	**अनधिकृत (फ़ुज़ूली) बिक्री का अध्याय**
193	यदि पति पत्नी के मायके के गहने या दहेज का सामान अनुमति के बिना बेचे, तो यह अनधिकृत बिक्री है; असहमति पर खरीदार को इसे लौटाना होगा।
पृष्ठ	विवरण
	किसी भी स्थिति में, दोष स्थापित होने के बाद, अनुबंध रद्द करने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचता।
184	हज यात्रियों के आगमन और हवा चलने में देरी के अंतर का वर्णन।
185	उपरोक्त आदेशों के विशेष विवरण।
185	वैध बिक्री की शर्तों में से एक यह है कि बेची गई वस्तु विक्रेता को नुकसान पहुँचाए बिना सुपुर्दगी योग्य हो।
186	सुपुर्दगी की अक्षमता के कारण दूषित बिक्री में, यदि विक्रेता खरीदार के रद्द करने से पहले कब्ज़ा दे दे, तो बिक्री वैध और बाध्यकारी हो जाएगी।
187	प्राकृतिक और आकस्मिक जुड़ाव के बीच दोष के अंतर का वर्णन।
187	एक और अंतर का वर्णन।

صفحہ	عبارت	صفحہ	عبارت
۱۸۸	چھت کی معین شہتیر اور غیر معین شہتیر کی بیع کا فرق۔	۱۷۹	عبارت فتح کی توجیہ اور شامی پر تطفل۔
۱۸۱	**باب البیع المکروہ**	۱۸۱	شامی پر دوسرا تطفل۔
۱۸۲	احتکار کی تعریف اور اس کا حکم۔	۱۸۲	شامی پر تیسرا تطفل۔
۱۸۹	بھاؤ چڑھنے کے انتظار میں غلہ روک کر بیچنا جائز ہے بشرطیکہ صارفین کو اس سے ضرر نہ ہو۔	۱۸۳	ایک روپیہ دو روپے کو بیچے اور قبل افتراق ایک روپیہ ساقط کردے تب بھی یہ بیع جائز نہیں۔
۱۸۹	غلہ بیچنے کے لئے بھاؤ چڑھنے کا انتظار۔	۱۸۳	صلب عقد میں فساد ہو یا شرط انعقاد معدوم ہو دونوں صورتوں میں مجلس عقد میں اصلاح مفید صحت نہیں۔
۱۹۰	زبانی عقد کی تمامیت کے بعد رجسٹری ضروری نہیں۔	۱۸۴	مصنف کی تحقیق کہ شرط انعقاد کا عدم مبطل عقد ہے اور جہالت بدلین مفسد ہے۔
۱۹۱	مکان کی زبانی بیع ہو گئی اور اس پر قبضہ مشتری ہو گیا جس کو حق شفعہ تھا، وہ اس مکان کی خریداری	۱۸۴	فساد قوی ہو تو مجلس عقد کے اندر اس کے ازالہ سے عقد صحیح ہو جائے گا بعد مجلس فساد متقرر ہو جائے گا اور ازالہ سے عقد صحیح نہ ہوگا۔

صفحہ	عبارت	صفحہ	عبارت
	سے انکار کر چکا تھا اب اس کو حق شفعہ نہیں۔		
۱۹۱	مشتری کو ایسے مکان سے اب بے دخل کرنا حرام ہے۔	۱۸۴	فساد ضعیف بعد مجلس عقد بھی زائل ہو جائے تو عقد صحیح ہو جائے گا۔
۱۹۱	ہمسایہ پر ظلم کی مذمت۔	۱۸۴	بہر صورت فساد مستقر ہو جانے کے بعد فسخ عقد کے سوا کوئی چارہ نہیں۔
۱۹۱	بھائی کے بھاؤ پر بھاؤ بڑھانے کا حکم۔	۱۸۴	قدوم حجاج اور ہبوب ریاح کی تا جیل میں فرق کا بیان۔
۱۹۱	فصل پر غلہ خرید کر بیچنا یا مناسب موقعہ پر بازار بھاؤ بیچنا جائز ہے، ایسی بیع کو حرام کہنے والا شرع پر جرات کر رہا ہے۔	۱۸۵	مذکورہ بالا احکام کے جزئیات۔
۱۹۱	احتکار کا بیان۔	۱۸۵	صحت بیع کی شرائط میں مبیع کا بائع کو ضرر دئے بغیر مقدور التسلیم ہونا ہے۔
۱۹۲	بیع مکروہ کی چند صورتوں کا بیان۔	۱۸۶	غیر مقدور التسلیم ہونے کی وجہ سے جو بیع فاسد ہوئی اس میں مشتری کے بیع فسخ کرنے سے پہلے بائع جب بھی قبضہ دلا دے گا بیع صحیح ہو جائیگی اور مشتری کو بیع قبول کرنے پر مجبور کیا جائے گا۔

صفحہ	عبارت	صفحہ	عبارت
۱۹۲	**باب بیع الفضولی**	۱۸۷	خلقی اتصال اور عارضی میں فساد کے فرق کا بیان۔
۱۹۳	میکے کے زیور اور جہیز کا سامان عورت کی اجازت کے بغیر شوہر بیچے تو بیع فضولی ہوئی، عورت راضی نہ ہو تو مشتری پر اس کا پھیرنا واجب ہے۔	۱۸۷	ایک اور فرق کا بیان۔

Vol. 17 Fatawa Razawiyya

194 | Selling goods at a low price during terminal illness is not valid, and it's not valid even at a fair price to an heir. | 194 | If Zaid paid the price of this house on his own without Khalid's permission, Zaid is a volunteer (donor) and cannot take anything from Khalid. | 206 194 | Description of the flaws in an incorrect fatwa and the correct ruling on the matter. | 196 | If Amr also contributed to the price on his own, he is also a volunteer. If Zaid asked for it, Amr's claim will be against Zaid, not Khalid. | 207 197 | If a person is forced to pay someone else's debt and pays it even without permission, the payer will not be considered a volunteer for this act. | 197 | If Zaid took his own name at the time of the contract (even if Khalid's name was entered in the sale deed), then the house belongs to Zaid. | 207 200 | Zaid made a contract while buying a house saying 'I am buying this for others'. This became an unauthorized (fuzuli) sale. If he died before permission, the sale became void. | 200 | Even if Amr's money was used for the price, it will not be Amr's property; as before, it will be either a donation or a debt on Zaid. | 207 201 | If a judge makes a wrong decision, another judge can overturn it. | 201 | If both Amr and Zaid's names were taken at the time of the contract, then both are equal partners, even if Amr did not pay any money. | 208 201 | If an unauthorized person sold the sale item to someone else through mutual delivery, this second sale is also unauthorized. | 201 | In this case, the gift that Zaid gave to Khalid is void. | 208 201 | If an unauthorized person did not specify for whom he was buying at the time of purchase, or said 'I am buying for myself', then the unauthorized person will be the owner of the sold item. | 201 | Sale of property to an heir during terminal illness without the permission of other heirs is void; it will not be effective for a third or any portion. | 209 201 | If Zaid bought something and acknowledged that it belongs to so-and-so, then it will belong to so-and-so, and the price of that thing will be obligatory upon so-and-so. | 201 | A sale contract can neither be declared as a share nor as an endowment (waqf). | 209 205 | Zaid bought a house with his own money for his brother Khalid and gave him possession. After ten years, Zaid's other brother Amr claimed that his money was invested in it. | 205 | Ruling on the purchase of animals for a livestock pen. | 210 205 | If the sale contract was in Khalid's name, it's an unauthorized contract (fuzuli), and after possession, it is entirely Khalid's property. | 205 | A sale made to an heir during terminal illness has the status of a will and is void without the permission of other heirs. | 211

जिल्द 17 फ़तावा रज़विया

194 | मरज़ुल मौत (प्राणांतक बीमारी) में कम कीमत पर सामान बेचा तो बैअ (बिक्री) जायज़ नहीं और वारिस के हाथ तो बराबर कीमत पर भी जायज़ नहीं। | 194 | इस मकान की कीमत ज़ैद ने अपनी ओर से ख़ालिद की इजाज़त के बिना अदा कर दी, तो ज़ैद मुतबर्रअ (दानकर्ता) हुआ और वह ख़ालिद से कुछ नहीं ले सकता। | 206 194 | एक गलत फतवे के दोषों का वर्णन और मसले का सही हुक्म। | 196 | अम्र ने भी अपनी ओर से कीमत में शिरकत की तो वह भी मुतबर्रअ है। और अगर ज़ैद ने माँगा हो तो अम्र का मुतालबा ज़ैद से होगा न कि ख़ालिद से। | 207 197 | जिस दूसरे के क़र्ज़ को अदा करने पर आदमी मजबूर हो, बिना उसकी इजाज़त के भी अदा कर दिया तो अदा करने वाला अपने इस काम पर मुतबर्रअ नहीं माना जाएगा। | 197 | अगर अक़्द (अनुबंध) के समय ज़ैद ने अपना नाम लिया हो (चाहे बैअ-नामा में ख़ालिद का नाम दर्ज कराया हो) तो मकान ज़ैद का हुआ। | 207 200 | ज़ैद ने एक मकान खरीदने के समय ऐसा अक़्द किया कि 'इसे मैं दूसरों के लिए खरीदता हूँ', तो यह बैअ-ए-फ़ुज़ूली हुई। और इजाज़त से पहले वह मर गया तो बैअ बातिल (अमान्य) हो गई। | 200 | अम्र का पैसा कीमत में लगा हो तब भी वह अम्र की मिल्कियत न होगा; पहले की तरह या तो वह दान होगा या ज़ैद पर क़र्ज़ होगा। | 207 201 | काज़ी ने गलत फैसला किया तो दूसरा काज़ी उसे रद्द कर सकता है। | 201 | अक़्द के समय अम्र और ज़ैद दोनों का नाम लिया हो तो दोनों बराबर के हिस्सेदार हुए, चाहे अम्र ने कुछ पैसा न दिया हो। | 208 201 | फ़ुज़ूली (अनधिकृत व्यक्ति) ने बैअ को 'तआती' (हाथों हाथ लेन-देन) के तौर पर किसी दूसरे के हाथ बेच दिया, तो यह दूसरी बैअ भी फ़ुज़ूली हुई। | 201 | इस सूरत में ज़ैद ने ख़ालिद को जो हिबा (उपहार) किया, वह बातिल है। | 208 201 | फ़ुज़ूली ने खरीदते समय यह स्पष्ट नहीं किया कि किसके लिए खरीद रहा हूँ या यह कहा कि अपने लिए खरीद रहा हूँ, तो बेची गई चीज़ का मालिक फ़ुज़ूली होगा। | 201 | मरज़ुल मौत में वारिस के हाथ जायदाद की बैअ अन्य वारिसों की इजाज़त के बिना बातिल है, यह तिहाई (एक-तिहाई) या किसी हिस्से में प्रभावी नहीं होगी। | 209 201 | ज़ैद ने कोई चीज़ खरीदी और उसके बारे में यह इक़रार किया कि यह फ़लां की है, तो वह फ़लां की होगी, और उस चीज़ की कीमत फ़लां पर वाजिब हो गई। | 201 | बैअ के अक़्द को न हिस्सा करार दिया जा सकता है न वक़्फ़। | 209 205 | ज़ैद ने अपने रुपयों से एक मकान अपने भाई ख़ालिद के लिए खरीदा और ख़ालिद का कब्ज़ा करा दिया। दस साल के बाद ज़ैद का दूसरा भाई अम्र दावेदार हुआ कि इसमें मेरा पैसा लगा था। | 205 | मवेशी खाने के जानवरों की खरीदारी का हुक्म। | 210 205 |

अक़्द-ए-बैअ ख़ालिद के नाम हुआ तो अक़्द फ़ुज़ूली है और कब्ज़े के बाद वह पूरी तरह ख़ालिद की मिल्कियत है। | 205 | जो बैअ मरज़ुल मौत में किसी वारिस के नाम की गई, वह वसीयत के हुक्म में है और अन्य वारिसों की इजाज़त के बिना बातिल है। | 211

पृष्ठ 22 / 715

۱۹۴ | مرض الموت میں کم قیمت پر سامان بیچا تو بیع جائز نہیں اور وارث کے ہاتھ تو برابر پر جائز نہیں۔ | ۱۹۴ | اس مکان کی قیمت بطورِ خود بے اذنِ خالد ادا کر دی تو زید متبرع ہوا اور خالد سے کچھ نہیں لے سکتا۔ | ۲۰۶ ۱۹۴ | ایک غلط فتوے کے وجوہِ خلل کا بیان اور مسئلہ کا صحیح حکم۔ | ۱۹۶ | عمرو نے بھی قیمت میں بطورِ خود شرکت کی تو وہ بھی متبرع ہے اور زید نے مانگا ہو تو عمرو کا مطالبہ زید سے ہو گا نہ کہ خالد سے۔ | ۲۰۷ ۱۹۷ | غیر کے جس دین کو ادا کرنے پر آدمی مجبور ہو بے اس کی اجازت کے بھی ادا کر دیا تو ادا کنندہ اپنے اس فعل پر متبرع نہیں قرار دیا جائے گا۔ | ۱۹۷ | اگر عقد کے وقت زید نے اپنا نام لیا ہو (اگرچہ بیع نامہ میں خالد کا نام درج کرایا ہو) تو مکان زید کا ہوا۔ | ۲۰۷ ۲۰۰ | زید نے ایک مکان خریدنے کے وقت یوں عقد کیا کہ اس کو میں دوسروں کے لئے خریدتا ہوں یہ بیع فضولی ہوئی اور اجازت سے قبل مر گیا تو بیع باطل ہو گئی۔ | ۲۰۰ | عمرو کا پیسہ قیمت میں لگا ہو تب بھی عمرو کی ملک نہ ہو گا، حسبِ سابق یا تو تبرع یا زید پر قرض ہو گا۔ | ۲۰۷ ۲۰۱ | قاضی نے غلط فیصلہ کیا تو دوسرا قاضی اس کو رد کر سکتا ہے۔ | ۲۰۱ | عقد کے وقت عمرو زید دونوں کا نام لیا ہو تو برابر کے دونوں حصہ دار ہوئے اگرچہ عمرو نے کچھ پیسہ نہ دیا ہو۔ | ۲۰۸ ۲۰۱ | فضولی نے بیع کو بطورِ تعاطی کسی دوسرے کے ہاتھ بیچا یہ دوسری بیع بھی فضولی ہوئی۔ | ۲۰۱ | اس صورت میں زید نے خالد کو جو ہبہ کیا وہ باطل ہے۔ | ۲۰۸ ۲۰۱ | فضولی نے خریدتے وقت یہ تشریح نہیں کی کہ کس کے لئے خرید رہا ہوں یا یہ کہا کہ اپنے لئے خرید رہا ہوں، تو مبیع کا فضولی مالک ہو گا۔ | ۲۰۱ | مرض الموت میں وارث کے ہاتھ جائداد کی بیع بے اجازتِ دیگر وارثان باطل ہے ثلث یا کسی حصہ میں نافذ نہ ہوگی۔ | ۲۰۹ ۲۰۱ | زید نے کوئی چیز خریدی

اور اس کے بارے میں یہ اقرار کیا کہ یہ فلاں کی ہے تو وہ فلاں کی ہو گی، اور اس چیز کی قیمت فلاں پر واجب ہو گئی۔ | ۲۰۱ | عقد بیع نہ حصہ قرار دیا جا سکتا ہے نہ وقف۔ | ۲۰۹ ۲۰۵ | زید نے اپنے روپے سے ایک مکان اپنے بھائی خالد کے لئے خریدا اور خالد کا قبضہ کرا دیا، دس سال کے بعد زید کا دوسرا بھائی عمرو مدعی ہوا کہ اس میں میرا پیسہ لگا تھا۔ | ۲۰۵ | مویشی خانہ کے جانوروں کی خریداری کا حکم۔ | ۲۱۰ ۲۰۵ | عقد بیع خالد کے نام ہوا تو عقد فضولی ہے اور قبضہ کے بعد وہ تمام و کمال خالد کی ملک ہے۔ | ۲۰۵ | جو بیع مرض الموت میں کسی وارث کے نام کی گئی وصیت کے حکم میں ہے اور بے اجازتِ دیگر ورثہ باطل ہے۔ | ۲۱۱

Fatawa Rizvia Volume 17

- The time for the permission of other heirs is contiguous with the death of the ancestor, neither before nor after. [Page 212] | Collecting money from both parties for the decision of arbitrators is void, and giving the money of both to one is further oppression, and it is haram for one party to take this money from the other. [Page 218]
- If the ancestor's wife is pregnant at the time of his sale, there is no way for permission to be realized. [Page 212] | The insistence of arbitrators for someone's work is not a Sharia-compliant compulsion; in the event of such compulsion, if the buyer breaks the sale and the seller accepts, the sale is rescinded (Iqalah). [Page 218]
- No one has guardianship over a fetus except Allah Almighty. [Page 213] | Returning the earnest money is also a form of rescission (Iqalah). [Page 218]
- Proof from Verse and Hadith on the guardianship of the Messenger of Allah, peace and blessings of Allah be upon him. (Footnote) [Page 213] | **Chapter: Al-Murabaha** [Page 213]
- Nothing related to a fetus can be gifted. [Page 213] | A Murabaha contract can also be on credit, however, increasing the price due to a loan is not commendable. [Page 219]
- A fetus is definitely a believer. [Page 213] | The definition of a Murabaha contract as mentioned in the texts. [Page 220]
- If there is no authorizer (mujeez) for a spontaneous contract (aqd-e-fuzuli) at the time of the contract, the contract is void. [Page 214] | Objection by commentators on the phrase 'aqd thaman' (price contract) in the mentioned definition for not being comprehensive and exclusive. [Page 220]
- If there is a dispute over the validity or invalidity of a sale, the claimant of validity should present witnesses. If there are no witnesses, the statement of the claimant of invalidity will be reliable with an oath. When there is a dispute between health and illness, the statement of the claimant of illness with the mentioned detail will be reliable under oath. If the one who is supposed to take the oath refuses, the right of the opponent will be established. [Page 215] | The definition in 'Durar' in which the use of these two words is avoided, but this too is not free from flaws. [Page 220]

- An heir's sale of their share will be valid even if it is not in the heir's hand. [Page 215] | Allama Bahr attempted a comprehensive and exclusive definition, but even that is not sound. [Page 220]
- Distribution of heirs' shares in an inheritance. [Page 216] | The author's research regarding the correction of the phrase 'bima yata'ayyan' in Allama Bahr's definition. [Page 222]
- | Critical notes (Tafful) on Kifaya, Inaya, Saadi Effendi, Jami-ur-Rumuz, and Durr-e-Mukhtar. [Page 223]
- **Chapter: Al-Iqalah** |
- An agent (Wakil) commissioned to buy a specific item at a specific price cannot buy it for himself or for someone else; however, if he buys it contrary to the client's request, it will be the property of the agent. [Page 218]

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

- अन्य वारिसों की अनुमति का समय पूर्वज की मृत्यु के समय से जुड़ा हुआ है, न पहले और न बाद में। [पृष्ठ 212] | पंचों के फैसले के लिए दोनों पक्षों से पैसा जमा कराना बातिल है और दोनों का पैसा किसी एक को दे देना और भी बड़ा ज़ुल्म है, और एक पक्ष का दूसरे का यह पैसा लेना हराम है। [पृष्ठ 218]
- पूर्वज की बिक्री के समय यदि उसकी पत्नी गर्भवती हो, तो अनुमति प्राप्त होने की कोई सूरत नहीं है। [पृष्ठ 212] | किसी के काम के लिए पंचों का दबाव शरीयत के अनुसार मजबूरी (इकराह) नहीं है; ऐसी मजबूरी की स्थिति में यदि खरीदार ने सौदा रद्द कर दिया और विक्रेता ने स्वीकार कर लिया, तो सौदे का इक़ाला (निरस्तीकरण) हो गया। [पृष्ठ 218]
- अल्लाह तआला के अलावा किसी और का भ्रूण पर कोई अधिकार (विलायत) नहीं है। [पृष्ठ 213] | बयाना (अग्रिम राशि) वापस करना भी इक़ाला का एक रूप है। [पृष्ठ 218]
- रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की विलायत पर आयत और हदीस से प्रमाण। (हाशिया) [पृष्ठ 213] | **अध्याय: अल-मुराबहा** [पृष्ठ 213]
- गर्भ की कोई भी चीज़ उपहार (हिबा) नहीं दी जा सकती। [पृष्ठ 213] | मुराबहा का सौदा उधार भी हो सकता है, हालाँकि कर्ज के कारण कीमत में वृद्धि करना अच्छा नहीं माना गया है। [पृष्ठ 219]
- भ्रूण निश्चित रूप से एक मोमिन (आस्तिक) है। [पृष्ठ 213] | मुराबहा अनुबंध की वह परिभाषा जो मूल ग्रंथों में दी गई है। [पृष्ठ 220]
- यदि अनुबंध के समय अनधिकृत अनुबंध (अक़्द-ए-फ़ुज़ूली) के लिए कोई अनुमति देने वाला न हो, तो अनुबंध बातिल हो जाता है। [पृष्ठ 214] | उल्लिखित परिभाषा में 'अक़्द-ए-समन' (मूल्य अनुबंध) शब्द पर टीकाकारों की आपत्ति कि यह परिभाषा व्यापक और अनन्य (जामे व माने) नहीं है। [पृष्ठ 220]
- बिक्री की वैधता या अमान्यता में विवाद होने पर, वैधता का दावा करने वाला गवाह पेश करे। यदि गवाह न हों, तो शपथ के साथ अमान्यता के दावेदार का कथन विश्वसनीय होगा। जब स्वास्थ्य और बीमारी में विवाद हो, तो उल्लिखित विवरण के साथ शपथ के साथ बीमारी के दावेदार का कथन विश्वसनीय होगा। जिस पर शपथ है, यदि वह शपथ लेने से मना करता है, तो

विरोधी का अधिकार सिद्ध हो जाएगा। [पृष्ठ 215] | 'दुरर' में दी गई परिभाषा, जिसमें इन दोनों शब्दों के उपयोग से बचा गया है, लेकिन यह भी दोषमुक्त नहीं है। [पृष्ठ 220]

- वारिस की अपने हिस्से की बिक्री वैध होगी, भले ही वह वारिस के हाथ में न हो। [पृष्ठ 215] | अल्लामा बहर ने एक व्यापक और अनन्य परिभाषा का प्रयास किया, लेकिन वह भी दोषमुक्त नहीं है। [पृष्ठ 220]
- एक विरासत में वारिसों के हिस्सों का बँटवारा। [पृष्ठ 216] | अल्लामा बहर की परिभाषा में 'बिमा यतअय्यन' शब्द के सुधार के संबंध में लेखक का शोध। [पृष्ठ 222]
- | किफ़ाया, इनाया, सादी अफ़ंदी, जामे-उर-रुमुज़ और दुर्रे मुख्तार पर आलोचनात्मक टिप्पणियाँ (तफ़्फ़ुल)। [पृष्ठ 223]
- **अध्याय: अल-इक़ाला** |
- किसी निश्चित वस्तु को निश्चित मूल्य पर खरीदने का नियुक्त प्रतिनिधि (वकील) उस सौदे को न तो अपने लिए खरीद सकता है और न ही किसी और के लिए; हाँ, यदि उसने मुवक्किल के अनुरोध के विरुद्ध खरीदा, तो वह वकील की संपत्ति होगी। [पृष्ठ 218]

- دیگر ورثہ کی اجازت کا وقت مورث کی وفات سے متصل ہے نہ قبل نہ بعد۔ [۲۱۲] | پنچوں کے فیصلہ کے لئے طرفین سے رقم جمع کرانا باطل اور دونوں کی رقم کسی ایک کو دے دینا مزید ظلم اور ایک فریق کو دوسرے کا یہ پیسہ لینا حرام۔ [۲۱۸]
- مورث کی بیع کے وقت اس کی عورت حاملہ ہو تو اجازت متحقق ہونے کی کوئی صورت نہیں۔ [۲۱۲] | کسی کے کام کے لئے پنچوں کا اصرار اکراہ شرعی نہیں، ایسے اکراہ کی صورت میں مشتری نے بیع توڑ دی اور بائع نے قبول کی تو بیع کا اقالہ ہوگیا۔ [۲۱۸]
- جنین پر اللہ تعالیٰ کے علاوہ کسی کی ولایت نہیں۔ [۲۱۳] | بیعانہ کا واپس کرنا بھی اقالہ کی ایک صورت ہے۔ [۲۱۸]
- رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی ولایت پر آیت وحدیث سے سند۔ (حاشیہ) [۲۱۳] | **باب المرابحہ** [۲۱۳]
- حمل کی کوئی چیز ہبہ نہیں کی جاسکتی۔ [۲۱۳] | عقدِ مرابحہ ادھار بھی ہوسکتا ہے البتہ فرض کی وجہ سے دام میں اضافہ مستحسن نہیں۔ [۲۱۹]
- جنین ضرور مومن ہے۔ [۲۱۳] | عقدِ مرابحہ کی وہ تعریف جو متون میں مذکور ہے۔ [۲۲۰]
- عقدِ فضولی کا عقد کے وقت کوئی مجیز نہ ہو تو عقد باطل ہوتا ہے۔ [۲۱۴] | تعریف مذکور میں لفظ عقدِ ثمن پر شراح کا تعریف کے جامع و مانع نہ ہونے سے اعتراض۔ [۲۲۰]
- بیع کے انعقاد و بطلان میں اختلاف ہو تو مدعی انعقاد گواہ پیش کرے۔ گواہ نہ ہو تو مدعی بطلان کا قول قسم کے ساتھ معتبر ہوگا جب صحت و مرض میں اختلاف ہو تو مدعی مرض کا قول مذکورہ تفصیل کے ساتھ بقسم معتبر ہوگا جس پر قسم ہے وہ حلف سے انکار کرے تو

خصم کا حق ثابت ہوگا۔ [۲۱۵] | درر کی تعریف جس میں ان دونوں لفظوں کے استعمال سے احتراز کیا گیا ہے لیکن یہ بھی نقص سے خالی نہیں۔ [۲۲۰]

- وارث کی بیع اپنے حصہ میں صحیح ہوگی جبکہ وارث کے ہاتھ نہ ہو۔ [۲۱۵] | علامہ بحر نے ایک جامع اور مانع تعریف کی کوشش کی لیکن وہ بھی سالم نہیں۔ [۲۲۰]
- ایک ترکہ میں وارثوں کے حصوں کی تقسیم۔ [۲۱۶] | علامہ بحر کی تعریف میں لفظ بما یتعین کی تصحیح سے متعلق مصنف کی تحقیق۔ [۲۲۲]
- | کفایہ، عنایہ، سعدی آفندی، جامع الرموز اور در مختار پر تطفل۔ [۲۲۳]
- **باب الاقالہ** |
- شیئِ معین کے معین قیمت پر خریدنے کا وکیل بیع کو نہ تو اپنے لئے خرید سکتا ہے نہ دوسرے کے لئے، ہاں موکل کی فرمائش کے خلاف خریدا تو وکیل کی ملک ہوگا۔ [۲۱۸]

Fatawa Razawiya Volume 17

- The author's research regarding the item of sale (Mabi') in Murabaha and reconciliation in the statements of the Imams. [Page 224]
- In both of the subsequent cases, state whatever compensation had to be paid and then apply profit on it; and in the first four cases, apply profit on the market rate. [Page 235]
- Two essential conditions for Murabaha: first, the item of sale must be specified; second, it should not be ribawi property taken in exchange for its own kind. [Page 225]
- If a note is purchased via Bay' Salam, take as much profit as it was bought for. [Page 235]
- Inayah's objection to the definition in Hidayah and the author's response to this objection. [Page 228]
- If purchased by specifying the note, then its Murabaha is also possible. [Page 236]
- In Murabaha, it is necessary for the second price to be of the same genus as the first; however, profit can be in any genus. [Page 230]
- The way notes are generally sold, they are not specified, so their Murabaha will also not be permissible. [Page 238]
- Dinar and Dirham are of the same genus in the chapter of Murabaha. [Page 230]
- The price in Mahr (dower) is not specified. [Page 238]
- In Bahr al-Raiq, after the phrase "mimma yuta'ayyan" (what is specified), there was a need to add "non-ribawi before its own kind". [Page 233]
- Prices (athman) are not specified in exchanges (mu'awadat). [Page 238]
- Answer to an objection by Hasan Shurunbulali. [Page 233]
- Amanat (trusts) and tabarru'at (donations) become specified after delivery; they are not specified in vows (nadhr). [Page 238]
- A note is not ribawi property. [Page 234]
- The sale of a note can initially be for more or less. [Page 240]
- A note is not price (thaman) in itself, but price-hood is accidental to it through reform. [Page 234]
- In the case of Murabaha, the buyer should know both the price of the note and the profit, otherwise, after the session, the sale contract will be invalid (fasid) and prohibited (haram). [Page 240]

- **Chapter on Disposal of the Sold Item and the Price** [Page 242]
- In Murabaha, it is necessary for the item of sale to be specified both at the time of initial ownership and at the time of the Murabaha sale. [Page 234]
- It is permissible for some dowry to be cash, some in exchange for land and house, and some in installments. [Page 243]
- Technical price's price-hood is invalidated by the contracting parties invalidating it, and that thing becomes specified. [Page 234]
- In a deferred debt, it is the right of the debtor; if he wants to pay the debt before the time, the creditor will be forced to accept. [Page 244]
- Selling a note as Murabaha is proof of the fact that by ending its price-hood, they are making it a specified item of sale. [Page 234]
- Price obtained through gift, bequest, inheritance, compensation for usurpation, or compensation after trust also becomes specified; so a note will be specified even more so, and its Murabaha sale will be permissible. [Page 235]

फतावा रज़विया जिल्द 17

- मुराबहा में मबीअ (बिक्री की वस्तु) से संबंधित लेखक का शोध और इमामों के कथनों में सामंजस्य। [पृष्ठ 224]
- बाद वाली दोनों स्थितियों में, जो भी हर्जाना देना पड़ा हो उसे बताकर उस पर लाभ लगाएँ और पहली चार स्थितियों में बाज़ार भाव पर लाभ लगाएँ। [पृष्ठ 235]
- मुराबहा की दो अनिवार्य शर्तें: पहली, मबीअ का निश्चित होना; दूसरी, ऐसी रिबवी संपत्ति न हो जो अपनी ही नस्ल के बदले ली गई हो। [पृष्ठ 225]
- बै' सलम के माध्यम से नोट खरीदा तो जितने में लिया उतने पर अतिरिक्त लाभ ले। [पृष्ठ 235]
- हिदाया की परिभाषा पर इनाया की आपत्ति और इस आपत्ति पर लेखक की पकड़। [पृष्ठ 228]
- नोट को निश्चित करके खरीदा तो उसका मुराबहा भी हो सकता है। [पृष्ठ 236]
- मुराबहा में दूसरा मूल्य पहले के सजातीय होना आवश्यक है; लाभ किसी भी जाति से हो सकता है। [पृष्ठ 230]
- नोट की आम तौर पर जिस तरह बिक्री होती है वह निश्चित नहीं होता, तो उसका मुराबहा भी जायज़ न होगा। [पृष्ठ 238]
- दीनार और दिरहम मुराबहा के अध्याय में एक ही जाति से हैं। [पृष्ठ 230]
- महर में मूल्य निश्चित नहीं होता। [पृष्ठ 238]
- बहर-उर-राईक में शब्द "मिम्मा युतअय्यन" के बाद गैर-रिबवी "क़ब्ल बिजिंसिही" जोड़ने की आवश्यकता थी। [पृष्ठ 233]
- विनिमय (मुआवज़ात) में मूल्य (अस्मान) निश्चित नहीं होते। [पृष्ठ 238]
- हसन शुरुनबुलाली की एक आपत्ति का उत्तर। [पृष्ठ 233]
- अमानत और तबर्रुआत (दान) सुपुर्दगी के बाद निश्चित होते हैं, मन्नत (नज़्र) में निश्चित नहीं होते। [पृष्ठ 238]
- नोट रिबवी माल नहीं है। [पृष्ठ 234]
- नोट की बिक्री शुरुआत में कम या ज्यादा पर हो सकती है। [पृष्ठ 240]
- नोट स्वयं में मूल्य नहीं है लेकिन सुधार के माध्यम से उसमें मूल्य की स्थिति आ गई है। [पृष्ठ 234]

- मुराबहा की स्थिति में खरीदार को नोट की कीमत और लाभ दोनों पता होने चाहिए, अन्यथा मजलिस (बैठक) के बाद बिक्री का अनुबंध अमान्य (फासिद) और हराम होगा। [पृष्ठ 240]
- **मबीअ (बिक्री की वस्तु) और समन (मूल्य) के निपटान का अध्याय** [पृष्ठ 242]
- मुराबहा में मबीअ का पहले स्वामित्व के समय और मुराबहा बिक्री के समय, दोनों समय निश्चित होना आवश्यक है। [पृष्ठ 234]
- कुछ महर नकद, कुछ के बदले ज़मीन व मकान और कुछ की किस्तों में अदायगी जायज़ है। [पृष्ठ 243]
- पारिभाषिक मूल्य की मूल्यवत्ता संविदाकारों द्वारा रद्द करने से रद्द हो जाती है और वह चीज़ निश्चित हो जाती है। [पृष्ठ 234]
- उधार ऋण में यह देनदार का अधिकार है; यदि वह समय से पहले ऋण चुकाना चाहता है तो लेनदार को स्वीकार करने के लिए मजबूर किया जाएगा। [पृष्ठ 244]
- नोट को मुराबहा बेचना इस बात का प्रमाण है कि मूल्यवत्ता समाप्त करके वे इसे एक निश्चित मबीअ बना रहे हैं। [पृष्ठ 234]
- उपहार, वसीयत, विरासत, जबरन कब्ज़े का हर्जाना, अमानत के बाद हर्जाने के माध्यम से प्राप्त होने वाला प्राकृतिक मूल्य भी निश्चित हो जाता है, तो नोट प्राथमिकता के आधार पर निश्चित होगा और उसकी मुराबहा बिक्री जायज़ होगी। [पृष्ठ 235]

- مرابحہ میں مبیع سے متعلق مصنف کی تحقیق اور کلام ائمہ میں تطبیق۔ [۲۲۴]
- بعد والی دونوں صورتوں میں جو کچھ تاوان دینا پڑا ہو وہ بتا کر اس پر نفع لگائیں اور پہلی چار صورتوں میں بازار بھاؤ پر نفع لگائیں۔ [۲۳۵]
- مرابحہ کی دولازم شرطیں، اول مبیع کا متعین ہونا دوسری شرط ایسا ربوی مال نہ ہو جو اپنی جنس کے بدلے لیا گیا ہو۔ [۲۲۵]
- بیع سلم کے ذریعے نوٹ خریدا تو جتنے میں لیا اتنے پر منافع زائد لے۔ [۲۳۵]
- ہدایہ کی تعریف پر عنایہ کا اعتراض اور اس اعتراض پر مصنف کی گرفت۔ [۲۲۸]
- نوٹ کو متعین کرکے خریدا تو اس کا مرابحہ بھی ہو سکتا ہے۔ [۲۳۶]
- مرابحہ میں ثمن ثانی اول کے ہم جنس ہونا ضروری ہے ربح تو کسی جنس سے بھی ہو سکتا ہے۔ [۲۳۰]
- نوٹ کی عام طور پر جس طرح بیع ہوتی ہے وہ متعین نہیں ہوتا، تو اس کا مرابحہ بھی جائز نہ ہوگا۔ [۲۳۸]
- دینار و درہم باب مرابحہ میں جنس واحد سے ہے۔ [۲۳۰]
- ثمن مہر میں متعین نہیں ہوتا۔ [۲۳۸]
- بحر الرائق میں لفظ "مما یتعین" کے بعد غیر ربوی "قبل بجنسہ" کے اضافہ کی ضرورت تھی۔ [۲۳۳]
- اثمان معاوضات میں متعین نہیں ہوتے۔ [۲۳۸]
- حسن شرنبلالی کے ایک اعتراض کا جواب۔ [۲۳۳]

- امانات و تبرعات بعد تسلیم میں متعین ہوتے ہیں نذر میں متعین نہیں ہوتے۔ [۲۳۸]
- نوٹ مال ربوی نہیں۔ [۲۳۴]
- نوٹ کی بیع ابتداءً کم و بیش پر ہو سکتی ہے۔ [۲۴۰]
- نوٹ بذاتہ ثمن نہیں مگر بذریعہ اصلاح اس کو ثمنیت عارض ہے۔ [۲۳۴]
- مرابحہ کی صورت میں مشتری کو نوٹ کا دام اور منافع دونوں معلوم ہونا چاہے ورنہ بعد جلسہ بیع عقد فاسد و حرام ہوگا۔ [۲۴۰]
- **باب التصرف فی المبیع والثمن** [۲۴۲]
- مرابحہ میں مبیع کا ملک اول کے وقت اور بیع مرابحہ کے وقت دونوں وقت متعین ہونا ضروری ہے۔ [۲۳۴]
- بعض مہر نقد بعض کے بدلے میں زمین و مکان اور بعض کی قسط بندی جائز ہے۔ [۲۴۳]
- ثمن اصطلاحی کی ثمنیت متعاقدین کے باطل کر دینے سے باطل ہو جاتی ہے اور وہ شے متعین ہو جاتی ہے۔ [۲۳۴]
- قرض مؤجل میں مدیون کا حق ہوتا ہے وہ وقت سے پہلے قرض ادا کرنا چاہے تو دائن قبول کرنے پر مجبور کیا جائیگا۔ [۲۴۴]
- نوٹ کو مرابحہ بیچنا اس امر کی دلیل ہے کہ ثمنیت ختم کرکے اس کو مبیع متعین کر رہے ہیں۔ [۲۳۴]
- ہبہ، وصیت، ترکہ غصب کا تاوان امانت کے بعد تاوان کے ذریعہ حاصل ہونے والا ثمن خلقی بھی متعین ہو جاتا ہے تو نوٹ بدرجہ اولیٰ متعین ہوگا اور اس کی بیع مرابحہ جائز ہوگی۔ [۲۳۵]

Fatawa Razvia (Volume 17)

243 | The settlement of debt is that the very thing demanded should be paid, but except for Salam and Sarf, compensation can be made with something else through mutual agreement. | 243 | If marriage is contracted for two days and the time limit is mentioned in the contract, it is void; if it's only in the heart, it is valid. | 248

244 | An immediate debt can be made deferred, and a non-gradual debt can be made gradual. | 244 | Out of fear of a pre-emptor, the house owner gifted his house to someone, and that person gifted the price (thaman) back to the owner; Sharia considers this a gift, and pre-emption (Shufa) will not apply. | 248

245 | When giving a house as dowry (mahr) based on market rates, knowing the market rate is necessary. | 245 | If someone wants to gift joint property (musha), they should sell it to the recipient and then waive the price. | 249

245 | A sale becomes irregular (fasid) due to ignorance of the price. | 245 | Explanation of a passage from Durr-e-Mukhtar and endorsement by Allama Shami. | 249

245 | In an irregular sale, the contracting parties are sinful due to engaging in an irregular contract. | 245 | If a part of the price is waived, it will be considered that the sale occurred for the remaining price; if the entire price is waived, the sale is valid for the full price and the price will be waived separately. | 250

245 | Annulment of an irregular sale is obligatory. | 245 | Citation from various books of jurisprudence regarding specific details; description of the authoritative status of these books and the rank of their authors. | 251

245 | If the cause of irregularity is removed in the session of the contract, i.e., ignorance of the price is eliminated, the sale becomes valid. | 245 | Great scholars, past and present, have relied on the author of Durr-e-Mukhtar. | 251

245 | Ignorance of the price such that it leads to dispute prevents the validity of the sale. | 245 | 'Zakhira' is an excellent and authentic collection of fatwas. | 251

245 | Knowledge of the price is among the conditions for the validity of a sale. | 245 | 'Bada'i' is a magnificent book authored by Imam Abu Bakr bin Mas'ud bin Ahmad Kashani. | 251

246 | The seller can waive the price to the buyer in the same session or another; the sold item does not become a gift by the waiver of the price. | 246 | The reliability of 'Muheet' is as clear as the midday sun. | 251

246 | The word 'thaman' (price) implies the realization of a sale. | 246 | Endorsement and verification by Allama Shami. | 253

247 | Citing the 'Hadith of the Camel' narrated by Hadrat Jabir (may Allah be pleased with him) on this issue. | 247 | It is not permissible to give a fatwa from Durr-e-Mukhtar without its annotations. | 253

248 | In the purified Sharia, matters depend on the meanings of the words used by the contracting parties. | | |

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

243 | क़ज़ाय-ए-दीन (ऋण निपटान) यही है कि जिसकी मांग है वही चीज़ अदा की जाए, लेकिन 'सलाम' और 'सर्फ़ के सिवा आपसी रज़ामंदी से दूसरी चीज़ से भी मुआवज़ा (बदला) हो सकता है। | 243 | दो दिन के लिए निकाह किया, अगर समय की शर्त निक़ाह के अनुबंध (अक़्द) में है तो निकाह बातिल (अमान्य) है और अगर दिल में है तो जायज़ है। | 248

244 | तुरंत देय ऋण (दीन-ए-मुअज्जल) को मुअज्जल (बाद में देय), और गैर-किस्तवार को किस्तवार कर सकते हैं। | 244 | शफी (पूर्वक्रयाधिकार रखने वाले) के डर से मकान मालिक ने अपना मकान किसी को हिबा (दान) किया, और उस व्यक्ति ने मकान की कीमत मालिक को हिबा कर दी, शरीअत के अनुसार यह हिबा हुआ, शुफ़ा (पूर्वक्रयाधिकार) लागू नहीं होगा। | 248

245 | बाज़ार के भाव से मेहर के बदले मकान देते समय बाज़ार का भाव मालूम होना ज़रूरी है। | 245 | अगर कोई व्यक्ति किसी को मुशाअ (साझा संपत्ति) हिबा करना चाहे, तो उसे प्राप्तकर्ता के हाथ बेच दे और कीमत माफ़ कर दे। | 249

245 | क़ीमत (समन) की अनभिज्ञता के कारण 'बय' (बिक्री) फ़ासिद (अनियमित) हो जाती है। | 245 | दुर्र-ए-मुख़्तार की एक इबारत का स्पष्टीकरण और अल्लामा शामी का समर्थन। | 249

245 | 'बय-ए-फ़ासिद' में अनुबंध करने वाले पक्ष फ़ासिद अनुबंध करने के कारण गुनाहगार होते हैं। | 245 | अगर क़ीमत का एक हिस्सा माफ़ कर दिया जाए, तो यह समझा जाएगा कि बिक्री शेष क़ीमत पर हुई, और अगर पूरी क़ीमत माफ़ कर दी गई, तो बिक्री पूरी क़ीमत पर सही हुई और क़ीमत अलग से माफ़ होगी। | 250

245 | 'बय-ए-फ़ासिद' को निरस्त करना अनिवार्य (वाजिब) है। | 245 | विशेष मुद्दों पर विभिन्न फ़िक़ही (इस्लामी न्यायशास्त्रीय) किताबों से प्रमाण; इन किताबों की प्रमाणिकता और उनके लेखकों के स्तर का विवरण। | 251

245 | यदि अनुबंध की बैठक (मजलिस-ए-अक़्द) में अनियमितता दूर हो जाए, यानी क़ीमत की अनभिज्ञता समाप्त हो जाए, तो बिक्री सही हो जाती है। | 245 | दुर्र-ए-मुख़्तार के लेखक पर पूर्ववर्ती और बाद के महान विद्वान भरोसा करते आए हैं। | 251

245 | क़ीमत का इस तरह अज्ञात होना कि वह विवाद का कारण बने, बिक्री की वैधता में बाधक है। | 245 | 'ज़खीरा' एक बेहतरीन और प्रामाणिक फ़तावा संग्रह है। | 251

245 | क़ीमत की जानकारी बिक्री की वैधता की शर्तों में से है। | 245 | 'बदाइ' इमाम अबू बक्र बिन मसूद बिन अहमद काशानी द्वारा रचित एक महान पुस्तक है। | 251

246 | विक्रेता उसी बैठक में या दूसरी बैठक में खरीदार को क़ीमत माफ़ कर सकता है; क़ीमत की माफ़ी से बेची गई वस्तु हिबा (दान) नहीं बन जाएगी। | 246 | 'मुहीत' की विश्वसनीयता दोपहर के सूरज की तरह स्पष्ट है। | 251

246 | शब्द 'समन' (क़ीमत) बिक्री के सिद्ध होने की माँग करता है। | 246 | अल्लामा शामी द्वारा समर्थन और पुष्टि। | 253

247 | इस मसले पर हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु की 'हदीस-ए-जमल' से प्रमाण देना। | 247 | बिना हाशिए (व्याख्या) के दुर्र-ए-मुख़्तार से फ़तवा देना जायज़ नहीं है। | 253

248 | पवित्र शरीअत में, अनुबंध करने वालों के शब्दों के अर्थों पर कार्य का दारोमदार होता है। | | |

۲۴۳ | قضائے دین تو یہی ہے کہ جس کا مطالبہ ہے وہی چیز ادا کرے لیکن سلم اور صرف کے سوا باہمی تراضی سے دوسری چیز سے بھی معاوضہ ہو سکتا ہے۔ | ۲۴۳ | دو دن کے لئے نکاح کیا وقت کی قید عقد میں ہے تو نکاح باطل اور دل میں ہے تو جائز ہے۔ | ۲۴۸

۲۴۴ | دینِ معجل کو مؤجل، غیر منجم کو منجم کر سکتے ہیں۔ | ۲۴۴ | شفیع کے ڈر سے صاحب مکان نے اپنا مکان کسی کو ہبہ کیا، اور اس کا زرِ ثمن اس شخص نے صاحب مکان کو ہبہ کر دیا شرعاً یہ ہبہ ہوا شفعہ نہیں چل سکے گا۔ | ۲۴۸

۲۴۵ | بازار کے بھاؤ سے مہر کے بدلے مکان دیتے وقت بازار بھاؤ معلوم ہونا ضروری ہے۔ | ۲۴۵ | اگر کوئی شخص کسی کو مشاع ہبہ کرنا چاہے تو موہوب لہ کے ہاتھ بیع کردے اور ثمن معاف کردے۔ | ۲۴۹

۲۴۵ | بوجہ جہالتِ ثمن بیع فاسد ہوتی ہے۔ | ۲۴۵ | درمختار کی ایک عبارت کی توضیح اور علامہ شامی کی تائید۔ | ۲۴۹

۲۴۵ | بیع فاسد میں عاقدین بسبب ارتکابِ عقدِ فاسد گنہ گار ہوتے ہیں۔ | ۲۴۵ | ثمن کا جزئی حصہ معاف کیا تو یہ سمجھا جائے گا کہ بقیہ ثمن پر بیع ہوئی اور کل ثمن معاف کر دیا تو بیع پورے ثمن پر صحیح ہوئی اور ثمن علیحدہ معاف ہوگا۔ | ۲۵۰

۲۴۵ | بیع فاسد کا فسخ واجب ہے۔ | ۲۴۵ | جزئیے پر مختلف کتب فقہیہ سے استناد ان کتابوں کی سندی حیثیت اور مصنفین کے مرتبہ کا بیان۔ | ۲۵۱

۲۴۵ | مجلسِ عقد میں فساد کا ازالہ ہو جائے یعنی جہالتِ ثمن دور ہو جائے تو بیع صحیح ہو جاتی ہے۔ | ۲۴۵ | صاحبِ در مختار سے علماء کبار سلفا خلفا استناد کرتے آئے ہیں۔ | ۲۵۱

۲۴۵ | ثمن کا اس طرح مجہول ہونا کہ وہ جہالت مفضی الی المنازعہ ہو صحتِ بیع سے مانع ہے۔ | ۲۴۵ | ذخیرہ ایک عمدہ اور مستند فتاویٰ ہے۔ | ۲۵۱

۲۴۵ | معلومیتِ ثمن شرائطِ صحتِ بیع میں سے ہے۔ | ۲۴۵ | بدائع تصنیفِ امام ابوبکر بن مسعود بن احمد کاشانی جلیل الشان کتاب ہے۔ | ۲۵۱

۲۴۶ | بائع مشتری سے اسی مجلس میں یا دوسری مجلس میں ثمن معاف کر سکتا ہے ثمن کے ابراء سے مبیع ہبہ نہیں ہوگا۔ | ۲۴۶ | محیط کا اعتبار آفتابِ نیمروز ہے۔ | ۲۵۱

۲۴۶ | لفظِ ثمن تحققِ بیع کا مقتضی ہے۔ | ۲۴۶ | علامہ شامی کی تائید و توثیق۔ | ۲۵۳

۲۴۷ | اس مسئلہ پر حضرت جابر رضی اللہ تعالیٰ عنہ کی حدیثِ جمل سے استشہاد۔ | ۲۴۷ | بے حواشی کے درمختار سے فتویٰ دینا جائز نہیں۔ | ۲۵۳

۲۴۸ | شرع مطہر میں عاقدین کے الفاظ کے معانی پر مدار کار ہے۔ | | |

Fatawa Razawiyya (17) Volume Seventeen

253 A Mufti will issue a fatwa based on the reality, while a Judge will rule based on appearances.

253 If the contracting parties disagree over the validity or invalidity of a contract, the statement of the one claiming validity will be accepted.

253 If the seller claims invalidity and the buyer claims validity, then the buyer's statement with an oath will be reliable, as a contradictory claim is not acceptable.

253 If after the completion of a sale but before taking possession of the price, the seller waives the price, it stands waived.

253 If the seller, of his own accord, adds something to the sold item, it is permissible to take it.

256 If an adult is a disbeliever, a Muslim should not ask for more, lest they consider it a favor.

256 Deduction in a state of displeasure is forbidden.

256 It is impermissible to sell goods to a merchant by stating a price higher than what they cost.

256

259 If the seller waives the price before the acceptance of a sale, the contract is not valid; this issue in Alamgiri is a matter of disagreement.

259 Qazi Khan (may Allah have mercy on him) has preferred the validity of such a sale.

259 Qazi Khan (may Allah Almighty have mercy on him) restricting himself to a particular opinion is evidence of the strength of that opinion.

261 For Qazi Khan to provide a reason for any opinion is evidence of its strength.

261 Qazi Khan held the rank of Ijtihad.

262 If the price was gifted before the acceptance of the sale, the sale is valid and the gift is void.

263 Regarding a recent event, the general rule is that it will be attributed to the nearest time.

263 A Christian wife of a Muslim claimed she converted to Islam before her husband's death, while the heirs said it was after; the heirs' word is reliable as it is the nearest time.

263

If the buyer requests extra time for the payment of the price, an increase in price is valid though disliked.

257 A merchant did not record fifty rupees in the account; after two years, he gave that amount on the condition to give it in charity. If it is unknown if the money is his own, using it for personal expenses is forbidden. If certain, he can use it, but breaking a promise of charity causes sin.

258 Court-prescribed wording according to necessity.

258 If there is a debate over the validity or invalidity of a contract, invalidity will not be established without clear evidence; actions will be based on validity.

If there is a dispute regarding the gifting of the price before or after acceptance of the sale, the statement of those claiming it was after will be reliable.

264 If there is a dispute regarding a corrupt condition in a contract, the statement of those denying the condition will be trusted.

265 If the condition to waive the price is within the contract itself and in the past tense, the sale will not be void; invalidity arises from future tense words.

253 मुफ्ती हकीकत पर फतवा देगा, जबकि काज़ी ज़ाहिर (दिखावे) पर फैसला करेगा।

253 यदि अनुबंध करने वाले पक्ष अनुबंध की वैधता या अवैधता पर असहमत हों, तो वैधता का दावा करने वाले का कथन स्वीकार किया जाएगा।

253 यदि विक्रेता अवैधता का दावा करे और खरीदार वैधता का, तो शपथ के साथ खरीदार का कथन विश्वसनीय होगा, क्योंकि विरोधाभासी दावा स्वीकार्य नहीं है।

253 बिक्री पूरी होने के बाद लेकिन कीमत पर कब्जा करने से पहले अगर विक्रेता कीमत माफ कर देता है, तो वह माफ हो गई।

253 यदि विक्रेता अपनी मर्जी से बेची गई वस्तु में कुछ वृद्धि कर दे, तो उसे लेना जायज़ है।

256 यदि वयस्क काफ़िर हो, तो मुसलमान को और अधिक नहीं मांगना चाहिए ताकि वह इसे उपकार न समझे।

256 नाराज़गी की स्थिति में कटौती करना हराम है।

256 व्यापारी को माल की वास्तविक लागत से अधिक बताकर बेचना नाजायज़ है।

259 यदि विक्रेता बिक्री की स्वीकृति से पहले कीमत माफ कर दे, तो अनुबंध वैध नहीं है; आलमगीरी में यह मसला विवादास्पद है।

259 काज़ी ख़ान (रहमतुल्लाह अलैहि) ने ऐसी बिक्री की वैधता को प्राथमिकता दी है।

259 काज़ी ख़ान (रहमतुल्लाह तआला अलैहि) का किसी एक बात तक सीमित रहना उस बात की मजबूती का प्रमाण है।

261 काज़ी ख़ान द्वारा किसी राय की दलील देना उसकी मजबूती का प्रमाण है।

261 काज़ी ख़ान को इज्तिहाद का दर्जा प्राप्त था।

262 बिक्री की स्वीकृति से पहले कीमत का हिबा (उपहार) किया गया तो बिक्री सही है और हिबा बातिल (शून्य) है।

263 नई घटना में सामान्य नियम यह है कि इसे निकटतम समय की ओर माना जाएगा।

263 एक मुस्लिम की ईसाई पत्नी ने दावा किया कि उसने अपने पति की मृत्यु

से पहले इस्लाम स्वीकार कर लिया था, जबकि वारिसों ने कहा कि बाद में; वारिसों की बात विश्वसनीय होगी क्योंकि यह निकटतम समय है।

256 यदि खरीदार भुगतान के लिए समय मांगता है, तो कीमत में वृद्धि करना नापसंदगी (मक़रूह) के साथ सही है।

263 यदि बिक्री की स्वीकृति से पहले या बाद में कीमत के हिबा के बारे में मतभेद हो, तो बाद वालों की बात विश्वसनीय होगी।

257 व्यापारी ने खाते में पचास रुपये जमा नहीं किए; दो साल बाद उसने वह राशि इस शर्त पर दी कि इसे दान कर दिया जाए। यदि यह ज्ञात नहीं है कि पैसा उसका है, तो इसे निजी खर्च में लाना हराम है। यदि विश्वास हो, तो निजी खर्च में ला सकते हैं, लेकिन दान का वादा करके मुकर जाना गुनाह का कारण है।

264 यदि अनुबंध में भ्रष्ट शर्त के बारे में मतभेद हो, तो शर्त से इनकार करने वालों की बात मानी जाएगी।

258 आवश्यकतानुसार अदालत द्वारा निर्धारित शब्दावली।

265 यदि कीमत माफ करने की शर्त अनुबंध के भीतर हो और भूतकाल के शब्द में हो, तो बिक्री भ्रष्ट नहीं होगी; भ्रष्टाचार भविष्य काल के शब्द से होता है।

258 यदि अनुबंध की वैधता या अवैधता पर बहस हो, तो स्पष्ट प्रमाण के बिना भ्रष्टाचार सिद्ध नहीं होगा; कार्य वैधता पर आधारित होगा।

पृष्ठ 26/715

مفتی حقیقت پر فتویٰ دے گا قاضی ظاہر پر حکم کرے گا۔	۲۵۳	۲۵۹	بیع کے قبول سے قبل بائع زرثمن معاف کردے تو عقد صحیح نہیں، عالمگیری کا یہ مسئلہ مختلف فیہ ہے۔
عاقدین کے صحت وفساد عقد میں اختلاف ہو تو قول مدعی صحت کا تسلیم ہوگا۔	۲۵۳	۲۵۹	قاضی خاں رحمہ اللہ علیہ نے ایسی بیع کے جواز کو ترجیح دی ہے۔
بائع فساد کا دعویٰ کرے اور مشتری صحت کا، تو قسم کے ساتھ مشتری کا قول معتبر ہوگا تا نقض دعویٰ قابل تسلیم نہیں۔	۲۵۳	۲۵۹	قاضی خاں رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ کا کسی قول پر اقتصار کرنا اس قول کے قوت کی دلیل ہے۔
تکمیل بیع کے بعد زرثمن پر قبضہ سے قبل بائع نے زرثمن معاف کر دیا تو معاف ہو گیا۔	۲۵۳	۲۶۱	قاضی خاں کا کسی قول کی دلیل دینا اس کی قوت کی دلیل ہے۔
بائع اپنی مرضی سے مبیع پر کچھ اضافہ کردے تو لینا جائز ہے۔	۲۵۳	۲۶۱	قاضی خاں کو رتبہ اجتہاد حاصل تھا۔
بالغ کافر ہو تو مسلمان کو زائد کا سوال نہ چاہئے کہ وہ احسان تصور کرے گا۔	۲۵۶	۲۶۲	قبول بیع سے پہلے زرثمن ہبہ کیا تو بیع صحیح اور ہبہ باطل ہے۔
کٹوتی ناراضگی کی حالت میں حرام ہے۔	۲۵۶	۲۶۳	

امر حادث میں قاعدہ کلیہ یہ ہے کہ اقرب وقت کی طرف منسوب ہوگا۔

ایک مسلمان کی نصرانیہ عورت نے دعویٰ کیا میں اپنے شوہر کی موت سے پہلے اسلام لائی اور وارثوں نے کہا بعد موت، تو وارثوں کا قول معتبر ہے کہ یہ اقرب وقت ہے۔

ہبہ زرثمن قبل قبول بیع اور بعد قبول بیع میں اختلاف ہو تو بعد والوں کا قول معتبر ہوگا۔

عقد میں شرط فاسد کے بارے میں اختلاف ہو تو منکرین شرط کے قول کا اعتبار ہوگا۔

ثمن کے معافی کی شرط نفس عقد بیع میں ہو اور ماضی کے لفظ

مال جتنے کو پڑا بیوپاری کو اس سے زائد بتا کر بیچنا ناجائز ہے۔	۲۶۳		۲۵۶
مشتری ثمن کی ادائیگی کے لئے مدت کا طالب ہو تو ثمن میں زیادتی بکراہت درست ہے۔	۲۶۳		۲۵۶
بیوپاری کو مال پچاس کی رقم کھاتہ میں جمع نہ کی دو سال کے بعد وہ رقم بیوپاری نے اس شرط پر دی کہ اسے خیرات کردو اس رقم کا اپنی ہونا معلوم نہیں تو اس کا اپنے صرف میں لانا حرام ہے اور یقین ہو تو اپنے صرف میں لاسکتے ہیں لیکن خیرات کا وعدہ کر کے پھر نا وبال کا سبب ہے۔	۲۶۴		۲۵۷
عبارت تجویز عدالت بقدر ضرورت۔	۲۶۵		۲۵۸

سے تو بیع فاسد نہ ہوگی، فساد

مستقبل کے لفظ سے ہوتا ہے۔

عقد کی صحت اور عدم صحت سے بحث ہو تو

۲۵۸ روشن دلیل کے بغیر فساد ثابت نہ ہوگا، عمل صحت

پر ہوگا۔

صفحہ 26 از 715

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

Page	Content (Index entries)
265	Even if the condition of a fixed term for payment of the price is in the original contract, it does not invalidate the contract.
265	The condition to pay within a year is a condition of a fixed term; a year and a month are fixed terms.
266	Explanation in Urdu of a passage unrelated to the issue from Fatawa Khayriyyah: 'within a year' and 'up to a year' mean the same thing.
267	If a seller gives his goods on credit at a price higher than the market rate, it is not interest. It is permissible with the buyer's consent, though it is better avoided.
	Chapter on Loans
269	Setting a condition of twenty-five rupees extra annually on
271	A loan is initially a voluntary act (tabarru'), and proxy/agency is not permissible in it.
271	In the aforementioned case, when the loan was in the servant's name, if the servant gave this money to the owner, it would be a new contract, and the owner would become a debtor to the servant.
272	A servant brought money from a moneylender saying, "Give my master fifty rupees as a loan." The master gave the servant fifty rupees to pay back the moneylender. The servant spent that money himself. The master should recover fifty rupees from the servant and pay fifty to the moneylender.
273	If the servant personally took a loan for the master and the aforementioned situation occurred, then the moneylender should recover from the servant; the master has already paid his due.
273	Returning grain for fifty rupees worth of grain on credit at the market rate or at harvest time; if a condition was set at the time of the contract, it is impermissible, otherwise it is permissible.
273	Lending a thousand-rupee note and agreeing to take money over a

Page	Content (Index entries)	Page	Content (Index entries)
	five hundred rupees is actual interest.		thousand is forbidden (haram) and is interest.
269	Making a person who takes interest an Imam is a sin; if prayer is offered behind him, repeat it.	273	If a thousand-rupee note was sold for eleven hundred rupees with a promise to pay the price in ten months, and when the promise date came, the seller demanded the price from the buyer, who said, "I don't have rupees, take eleven hundred-rupee notes in exchange for the price," and the seller accepted, then it is permissible.
270	The owner asked the servant to bring a loan from someone. He took a loan from a moneylender and wrote the receipt himself. If, at the time of asking for the loan, he said, "Give a loan to my master," then the loan is on the master. If he asked for himself, it is on the servant.	274	The issue of purchasing a debt from the borrower.
271	Appointing a proxy for taking a loan (borrowing) is not permissible.	274	Ruling on a practice of borrowing grain.
271	Appointing a proxy for giving a loan (lending) is permissible.	274	If along with a loan, something of low value is sold to the debtor as a condition, it is forbidden.

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

पृष्ठ	सामग्री (अनुक्रमणिका प्रविष्टियाँ)
२६५	कीमत के भुगतान के लिए मूल अनुबंध में एक निश्चित अवधि की शर्त हो, तब भी अनुबंध अमान्य नहीं होता।
२६५	एक वर्ष के भीतर भुगतान करने की शर्त एक निश्चित अवधि की शर्त है; वर्ष और महीना निश्चित अवधियाँ हैं।
२६६	फतावा खैरिया से मुद्दे से असंबंधित एक अंश का उर्दू में स्पष्टीकरण: 'एक वर्ष के भीतर' और 'एक वर्ष तक' दोनों का अर्थ एक ही है।
२६७	यदि कोई विक्रेता अपनी वस्तुएँ बाज़ार भाव से अधिक कीमत पर उधार देता है, तो यह ब्याज नहीं है। खरीदार की सहमति से यह जायज़ है, हालाँकि यह बेहतर होगा कि इससे बचा जाए।
	ऋण का अध्याय
२६१	

पृष्ठ	सामग्री (अनुक्रमणिका प्रविष्टियाँ)
२७१	ऋण प्रारंभ में एक स्वैच्छिक कार्य (तबर्रु) है और इसमें [illegible] (नियाबत) जायज़ नहीं है।
२७१	उपर्युक्त मामले में, जब ऋण नौकर के नाम पर था, यदि नौकर ने यह रुपया मालिक को दे दिया होता, तो यह एक नया अनुबंध होता, और मालिक नौकर का ऋणी हो जाता।
२७२	एक नौकर साहूकार से यह कहकर रुपया लाया कि "मेरे मालिक को पचास रुपये ऋण दे दो।" मालिक ने नौकर को साहूकार को वापस करने के लिए पचास रुपये दिए। नौकर ने वह रुपया स्वयं खर्च कर दिया। मालिक को नौकर से पचास रुपये वसूल करने चाहिए और साहूकार को पचास रुपये देने चाहिए।
२७३	यदि नौकर ने स्वयं मालिक के लिए ऋण लिया और उपर्युक्त स्थिति उत्पन्न हुई, तो साहूकार नौकर से वसूली करेगा; मालिक ने अपना हिस्सा चुका दिया है।
२७३	बाज़ार भाव पर या फसल के समय पचास रुपये के अनाज के बदले अनाज उधार वापस करना; यदि अनुबंध के समय इसकी शर्त लगाई गई थी, तो यह नाजायज़ है, अन्यथा जायज़ है।
२७३	

पृष्ठ	सामग्री (अनुक्रमणिका प्रविष्टियाँ)
	पाँच सौ रुपये पर सालाना पच्चीस रुपये अतिरिक्त लेने की शर्त लगाना वास्तविक ब्याज है।
२६१	ब्याज लेने वाले व्यक्ति को इमाम बनाना पाप है; यदि उसके पीछे नमाज़ पढ़ी गई हो, तो उसे दोहराएँ।
२७०	मालिक ने नौकर से किसी से ऋण लाने को कहा। उसने एक साहूकार से ऋण लिया और रसीद स्वयं लिखी। यदि ऋण माँगते समय उसने कहा था, "मेरे मालिक को ऋण दें," तो ऋण मालिक पर है। यदि उसने स्वयं के लिए माँगा, तो यह नौकर पर है।
२७१	ऋण लेने (borrowing) के लिए प्रतिनिधि नियुक्त करना जायज़ नहीं है।
२७१	ऋण देने (lending) के लिए प्रतिनिधि नियुक्त करना जायज़ है।
	एक हज़ार रुपये का नोट ऋण के रूप में देना और एक हज़ार से अधिक राशि लेने पर सहमति होना हराम है और ब्याज है।
२७३	यदि एक हज़ार रुपये का नोट ग्यारह सौ रुपये में बेचा गया और कीमत दस महीने में चुकाने का वादा किया गया, और जब वादे का दिन आया, तो विक्रेता ने खरीदार से कीमत माँगी, जिसने कहा, "मेरे पास रुपये नहीं हैं, कीमत के बदले ग्यारह सौ-रुपये के नोट ले लो," और विक्रेता ने स्वीकार कर लिया, तो यह जायज़ है।
२७४	उधारकर्ता से ऋण खरीदने का मसला।
२७४	अनाज ऋण लेने की एक प्रथा का हुक्म।
२७४	यदि ऋण के साथ ऋणदाता द्वारा ऋणी को कम मूल्य की कोई चीज़ शर्त के रूप में बेची जाती है, तो यह हराम है।

صفحہ	مضمون (فہرست کی عبارتیں)
۲۶۵	ادائے ثمن کے لئے اجل معین کی شرط اصل عقد میں ہو تب بھی مفسد عقد نہیں۔ ۲۷۱
۲۶۵	سال کے اندر ادا کرنے کی شرط اجل معین کی شرط ہے، سال اور مہینہ اجل معین ہیں۔ ۲۷۱
۲۶۶	فتاوی خیریہ کی مسئلہ سے غیر متعلق تحریر کی توضیح اردو میں سال کے اندر اور سال تک دونوں کا حاصل ایک ہے۔ ۲۷۲
	قرض ابتدا تبرع ہے اور اس میں نیابت جائز نہیں۔
	مذکورہ بالا صورت میں جب قرض نوکر پر ہوا اگر نوکر یہ روپیہ مالک کو دے دیتا تو یہ عقد جدید ہوا، اور مالک نوکر کا قرضدار ہو گا۔
	نوکر یہ کہہ کر مہاجن سے روپیہ لایا کہ میرے مالک کو پچاس روپیہ قرض دے دو، مالک نے نوکر کو پچاس روپے مہاجن کو دینے کے لئے دئے، اس نے وہ روپیہ خود خرچ کردیا مالک نوکر سے پچاس روپے وصول کر کے مہاجن کو پچاس ادا کرے۔

صفحہ	مضمون (فہرست کی عبارتیں)
۲۶۷	بائع اپنا سودا ادھار بازار بھاؤ سے زائد دے تو سود نہیں مشتری کی رضا سے جائز ہے، ہاں خلاف اولیٰ ہے۔
۲۷۳	**باب القرض**
۲۶۹	پانچسو روپے پچیس روپے سالانہ زائد شرط لگانا حقیقی سود ہے۔
۲۶۹	سود خور شخص کا امام بنانا گناہ، اس کے پیچھے نماز پڑھ لی تو دہرائیں۔
۲۷۰	مالک نے نوکر سے کسی سے قرض لانے کے لئے کہا اس نے کسی مہاجن سے قرض لے کر رسید خود لکھ دی،

صفحہ	مضمون (فہرست کی عبارتیں)
۲۷۳	نوکر مالک کے واسطے خود قرض کر کے لایا اور صورت مذکورہ بالا ہوئی تو مہاجن نوکر سے وصول کرے، مالک نے اپنا ادا کردیا۔
۲۷۳	بازار بھاؤ اناج ادھار یا فصل کے وقت پچاس روپیہ کا اناج واپس کیا اگر عقد کے وقت اس کی شرط لگانا ناجائز ہوتا ورنہ جائز۔
۲۷۳	ہزار روپے کا نوٹ قرض دیا اور پیسہ اوپر ہزار لینا ٹھہرا تو حرام ہے اور سود ہے۔
۲۷۳	اگر ہزار روپے کا نوٹ گیارہ سو روپے کو بیچا اور ادائے ثمن کا وعدہ دس ماہ کا قرار پایا جب وعدہ کا دن آیا بائع نے زر ثمن کا مشتری سے مطالبہ کیا اس نے کہا میرے پاس روپے نہیں گیارہ سو روپے کے نوٹ زر ثمن کے بدلے لے لو بائع نے قبول کیا تو یہ جائز ہے۔
۲۷۴	مسئلہ شراء القرض من المستقرض۔

صفحہ	مضمون (فہرست کی عبارتیں)
	اگر قرض مانگتے وقت یہ کہا تھا میرے مالک کو قرض دے تو قرض مالک پر ہوا اور اپنے لئے مانگا تو نوکر پر ہوا۔
۲۷۱	استقراض کا وکیل بنانا جائز نہیں۔
۲۷۱	اقراض کا وکیل بنانا جائز ہے۔
۲۷۴	غلہ قرض لینے کے ایک تعامل کا حکم۔
۲۷۴	قرض کے ساتھ کوئی چیز کم قیمت کی بطور شرط قرض دار کے ہاتھ بیچی گئی تو حرام۔

Fatawa Rizvia (Volume 17)

[Table Content with Page Numbers] Page 275: Whatever is customary is like a condition; if a sale is not conditional within the contract along with a loan, some scholars deem it permissible and some forbidden. This is the preferred view. Page 279: Some permissible and impermissible forms of excess over a loan. Page 275: Difference between a sale on condition of a loan and a loan on condition of a sale. Page 279: The buyer of a sold item can be one, and those buying for him can be several. Page 275: Any loan through which the lender obtains a benefit is impermissible. Page 280: Despite paying the price from joint property, the sold item can belong to only one person. Page 275: Currency notes can be sold for more or less. Page 282: Statement of rulings on various cases where an heir buys a property from the debtor in exchange for the deceased's debt. Page 275: It is disliked (Makruh) to buy something at an increased price due to a loan. Page 282: If the two exchanged items are property, then each is considered the sold item in one respect and the price in another. Page 276: If a farmer mortgages a field, the mortgage will not be valid. Page 283: Buying something by making someone else's property the price will result in a completed sale. Page 276: Mortgage and lease are mutually exclusive; they cannot be combined. Page 284: In a joint debt with a common cause, if one party collects their share from the debtor, the other party has the choice to either collect their full share from the debtor or take a proportional share from what the first party collected and collect the rest from the debtor. Page 276: If the mortgagee of a field pays the land tax after asking the landlord, the produce will be halal for him. Page 284: Nowadays, many orphans do not have a perfect guardian. Page 277: Giving bad grain on credit with the condition of receiving good crop in return is haram. Page 286: Ruling on an unauthorized contract (Aqad-e-Fuzooli). Page 277: Giving money to receive crops in return is a 'Salam' sale, which is permissible with its conditions. Page 286: Ruling on disagreement between offer and acceptance. Page 277: In case the sold item (crop) is not received, taking more than the capital amount is haram. Page 287: Ruling on the separation of the bargain (Tafriq-e-Safqah) before completion of sale. Page 278: A condition to return more at the time of lending is interest (Riba), but for the debtor to voluntarily pay more at the time of repayment is permissible and an act of kindness. Page 287: References to several jurisprudential texts. Page 278: Hadiths regarding the warnings against interest.

फ़तावा रिज़विया (खंड 17)

[पृष्ठ संख्या के ساتھ तालिका सामग्री] पृष्ठ 275: जो कुछ भी प्रथागत है वह एक शर्त लगाने की तरह है; यदि बिक्री अनुबंध के भीतर ऋण के साथ सशर्त नहीं है, तो कुछ विद्वान इसे जायज़ मानते हैं और कुछ हराम। यही पसंदीदा मत है। पृष्ठ 279: ऋण पर अधिकता के कुछ जायज़ और नाजायज़ रूप। पृष्ठ 275: ऋण की शर्त पर बिक्री और बिक्री की शर्त पर ऋण के बीच अंतर। पृष्ठ 279: बेची गई वस्तु का खरीदार एक हो सकता है, और जिनके लिए खरीदा जा रहा है वे कई हो सकते हैं। पृष्ठ 275: कोई भी ऋण जिसके माध्यम से ऋणदाता लाभ प्राप्त करता है, वह नाजायज़ है। पृष्ठ 280: संयुक्त संपत्ति से कीमत चुकाने के बावजूद, बेची गई वस्तु केवल एक व्यक्ति की हो सकती है। पृष्ठ 275: नोट (मुद्रा) को कम या ज्यादा पर बेचा जा सकता है। पृष्ठ 282: उस स्थिति के विभिन्न मामलों पर नियमों का वर्णन जिसमें एक उत्तराधिकारी मृतक के ऋण के बदले ऋणी से संपत्ति खरीदता है। पृष्ठ 275: ऋण के कारण किसी वस्तु को बढ़ी हुई कीमत पर खरीदना मकरूह है। पृष्ठ 282: यदि दो विनिमय की गई वस्तुएं संपत्ति हैं, तो प्रत्येक एक दृष्टि से बेची गई वस्तु है और दूसरी दृष्टि से कीमत है। पृष्ठ 276: यदि किसान खेत गिरवी रखता है, तो गिरवी मान्य नहीं होगी। पृष्ठ 283: किसी और की संपत्ति को कीमत बनाकर कुछ खरीदना बिक्री को पूर्ण कर देगा। पृष्ठ 276: गिरवी और पट्टा परस्पर विरोधी हैं; वे एक साथ नहीं हो सकते। पृष्ठ 284: एक सामान्य कारण वाले संयुक्त ऋण में, यदि एक पक्ष ऋणी से अपना हिस्सा वसूल करता है, तो दूसरे पक्ष के पास विकल्प होता है कि वह या तो ऋणी से अपना पूरा हिस्सा वसूल करे या पहले पक्ष द्वारा वसूली गई राशि से आनुपातिक हिस्सा ले और शेष ऋणी से वसूल करे। पृष्ठ 276: यदि खेत का गिरवीदार ज़मींदार से पूछकर लगान अदा करता है, तो पैदावार उसके लिए हलाल होगी। पृष्ठ 284: आजकल, कई अनाथों का कोई पूर्ण संरक्षक नहीं होता। पृष्ठ 277: इस शर्त पर खराब अनाज उधार देना कि बदले में अच्छी फसल अधिक मात्रा में लूंगा, हराम है। पृष्ठ 286: अनधिकृत अनुबंध (अक़द-ए-फ़ुज़ूली) पर नियम। पृष्ठ 277: बदले में फसल प्राप्त करने के लिए पैसा देना 'बै-ए-सल्लम' है, जो अपनी शर्तों के साथ जायज़ है। पृष्ठ 286: प्रस्ताव और स्वीकृति के बीच असहमति पर नियम। पृष्ठ 277: बेची गई वस्तु (फसल) प्राप्त न होने की स्थिति में, मूल पूंजी से अधिक लेना हराम है। पृष्ठ 287: बिक्री पूरी होने से पहले सौदे के पृथक्करण (तफ़रीक़-ए-सफ़क़ा) पर नियम। पृष्ठ 278: ऋण देते समय अधिक लौटाने की शर्त सूद (ब्याज) है, लेकिन ऋणी द्वारा पुनर्भुगतान के समय स्वेच्छा से अधिक भुगतान करना जायज़ और उपकार है। पृष्ठ 287: कई न्यायशास्त्रीय ग्रंथों के संदर्भ। पृष्ठ 278: सूद (ब्याज) के खिलाफ चेतावनियों के संबंध में हदीसें।

पृष्ठ 28/715

۲۷۵ | جو چیز عرفاً طے شدہ ہو وہ شرط لگانے کی طرح ہے قرض کے ساتھ بیع عقد میں مشروط نہ ہو تو بعض علماء اسے حلال اور بعض حرام فرماتے ہیں راجح قول یہی ہے۔ | ۲۷۹ | قرض سے زائد کی کچھ جائز اور ناجائز صورتیں۔ ۲۷۵ | بیع بشرط القرض اور قرض بشرط البیع میں فرق۔ | ۲۷۹ | کسی مبیع کا مشتری ایک اور مشتری لہ چند ہو سکتے ہیں۔ ۲۷۵ | جس قرض کے ذریعے قرض دینے والا کوئی منفعت حاصل کرے وہ ناجائز ہے۔ | ۲۸۰ | مشترک مال سے ثمن ادا کرنے کے باوجود مبیع صرف ایک شخص کے لئے ہو سکتی ہے۔ ۲۷۵ | نوٹ کو کم و بیش پر بیچا جا سکتا ہے۔ | ۲۸۲ | مورث کے دین کے بدلہ میں کسی ایک وراثت نے مدیون کی کوئی جائداد خریدی اس کی چند صورتوں کے احکام کا بیان۔ ۲۷۵ | قرض کی وجہ سے کسی چیز کو زائد قیمت پر خرید نا مکروہ۔ | ۲۸۲ | اگر بدلین مال ہوں تو ہر ایک من وجہ مبیع اور من وجہ ثمن ہے۔ ۲۷۶ | کاشتکار نے کھیت رہن رکھا تو رہن نہ ہوگا۔ | ۲۸۳ | کسی غیر کی جائداد کو ثمن قرار دے کر کوئی چیز خریدی بیع تام ہو جائیگی۔ ۲۷۶ | رہن اور اجارہ آپس میں متنافی ہیں جمع نہیں ہو سکتے۔ | ۲۸۴ | مشترکہ دین جس کا سبب مشترک ہو ایک فریق نے مدیون سے اپنا حصہ وصول کر لیا تو دوسرے فریق کو اختیار ہے چاہے مدیون سے اپنا پورا حصہ وصول کرے یا دوسرے فریق کے وصول کردہ سے حصہ رسدی لے اور بقیہ مدیون سے وصول کرے۔ ۲۷۶ | ایسے کھیت کا مرتہن زمیندار سے کہہ کر لگان ادا کرے پیداوار اس کے لئے حلال ہوگی۔ | ۲۸۴ | آج کل بہت سے یتیموں کا ولی کامل نہیں ہوتا۔ ۲۷۷ | خراب اناج اس شرط پر ادھار دینا کہ اس کے بدلہ اچھا زیادہ فصل پر لوں گا حرام ہے۔ | ۲۸۶ | عقد فضولی کا حکم۔ ۲۷۷ | روپیہ دے کر اس کے بدلے فصل پر اناج لینا بیع سلم ہے جو اپنے شرائط کے ساتھ جائز ہے۔ | ۲۸۶ |

اختلاف ایجاب و قبول کا حکم۔ ۲۷۷ | فصل پر مبیع وصول نہ ہونے کی صورت میں راس المال سے زیادہ لینا حرام ہے۔ | ۲۸۷ | تفریق صفقہ قبل تمام بیع کا حکم۔ ۲۷۸ | قرض دینے کے وقت زائد لوٹانے کی شرط سود ہے اور قرضدار کا ادائیگی کے وقت از خود زائد ادا کرنا جائز و احسان۔ | ۲۸۷ | چند فقہی عبارتوں کے حوالے ۔ ۲۷۸ | سود کی وعیدوں کے بیان کی احادیث۔ | |

Fatawa Razawiya, Volume 17.

- In a forward sale (Bai' Salam), if the seller cannot deliver the goods, it is forbidden for the buyer to take more than the principal amount. (Page 292)
- In the exchange of different types of goods with the same measure/quantity, it is necessary for both items to be known and determined; physical possession at the time is not necessary. (Page 292)
- Chapter on Usury (Riba).
- The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) declared four items as measured by volume (Kaili) and two currencies (gold and silver) as measured by weight (Wazni), so they will remain so forever. (Page 292)
- The Shariah standard in the chapter of Riba is measurement by volume and weight. (Page 291)
- For other items, local custom (Urf) will determine whether they are measured by volume or weight. (Page 293)
- Explanation of the general rule of lawfulness and prohibition in four cases. (Page 291)
- Three Hadiths regarding usury being thirty-three times worse than adultery. (Page 293)
- First Case. (Page 291)
- Three Hadiths on the theme that one Dirham of usury is equal to the sin of committing adultery thirty-six times. (Page 293)
- In the case of same quantity and same type, any increase or decrease and credit is usury. (Page 291)
- Ten Hadiths stating that usury has more than seventy levels of sin, the least of which is equal to committing adultery with one's mother. (Page 294)
- Explanation of various cases of inequality. (Page 291)
- Curse upon four types of people related to usury. (Page 298)
- Second Case. (Page 292)
- Explanation of Shariah necessity and details of some artificial necessities. (Page 299)
- If the type is the same but the quantity is different, whether it is outside the standard measure or within it, then increase/decrease is permissible but credit is impermissible. (Page 292)
- When is it permissible to take an interest-bearing loan for debt repayment? (Page 299)

- Third Case. (Page 292)
- Self-preservation, gaining strength, and protection from humiliation and criticism constitute Shariah necessity. (Page 300)
- If quantity is the same but type is different, then excess (Tafadhul) is permissible but credit is forbidden, except for gold and silver. (Page 292)
- It is permissible to give a bribe to satirical poets to save one's honor. (Page 300)
- Fourth Case. (Page 292)
- Which money given to a poet is a bribe and which is a reward? (Page 300)
- In the case of difference in both quantity and type, both excess and credit are permissible. (Page 292)
- If a bankrupt person does not face pressure from a creditor, it is forbidden to take an interest-bearing loan merely out of fear of accountability in the Hereafter. (Page 301)
- Possession is necessary in the exchange of the two currencies (gold and silver). (Page 292)
- If one tried their best to repay a debt but could not until death, there is hope for forgiveness. (Page 301)

फ़तावा रज़विया, खंड 17.

- बै' सलाम (अग्रिम बिक्री) में यदि विक्रेता सामान नहीं दे पाता है, तो खरीदार के लिए मूल धन से अधिक लेना हराम है। (पृष्ठ 292)
- अलग-अलग प्रकार की लेकिन समान मात्रा वाली वस्तुओं के विनिमय में दोनों वस्तुओं का ज्ञात और निश्चित होना आवश्यक है; उस समय कब्ज़ा आवश्यक नहीं है। (पृष्ठ 292)
- सूद (ब्याज) का अध्याय।
- अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने चार चीज़ों को मापने वाली (कैली) और दो मुद्राओं (सोना-चांदी) को तोलने वाली (वज़नी) घोषित किया, तो वे हमेशा ऐसी ही रहेंगी। (पृष्ठ 292)
- सूद के अध्याय में शरीयत का पैमाना माप और तौल है। (पृष्ठ 291)
- अन्य वस्तुओं के मापने या तोलने वाली होने में स्थानीय प्रथा (उर्फ़) का अधिकार होगा। (पृष्ठ 293)
- हलाल और हराम के सामान्य नियम का चार स्थितियों में वर्णन। (पृष्ठ 291)
- सूद के व्यभिचार से 33 गुना बदतर होने की तीन हदीसें। (पृष्ठ 293)
- पहली स्थिति। (पृष्ठ 291)
- इस विषय की तीन हदीसें कि सूद का एक दिरहम 36 बार व्यभिचार के पाप के बराबर है। (पृष्ठ 293)
- समान मात्रा और समान प्रकार की स्थिति में कमी-बेशी और उधार सूद है। (पृष्ठ 291)
- दस हदीसें कि सूद के सत्तर से अधिक पाप हैं जिनमें सबसे छोटा पाप माँ के साथ व्यभिचार के बराबर है। (पृष्ठ 294)
- असमानता की विभिन्न स्थितियों का वर्णन। (पृष्ठ 291)
- सूद से संबंधित चार व्यक्तियों पर लानत। (पृष्ठ 298)
- दूसरी स्थिति। (पृष्ठ 292)
- शरीयत की ज़रूरत का बयान और कुछ कृत्रिम ज़रूरतों का विवरण। (पृष्ठ 299)
- यदि प्रकार एक हो और मात्रा अलग हो, चाहे वह मानक माप से बाहर हो या उसमें शामिल हो, तो कमी-बेशी जायज़ है और उधार नाजायज़। (पृष्ठ 292)
- ऋण चुकाने के लिए कब सूदी ऋण लेना जायज़ है? (पृष्ठ 299)

- तीसरी स्थिति। (पृष्ठ 292)
- आत्म-संरक्षण, शक्ति प्राप्त करना, और अपमान व आलोचना से बचाव शरीयत की ज़रूरत है। (पृष्ठ 300)
- यदि मात्रा समान हो लेकिन प्रकार अलग हो, तो अधिकता (तफ़ाज़ुल) जायज़ है, उधार मना है, अलबत्ता सोने-चांदी का अपवाद है। (पृष्ठ 292)
- अपनी इज़्ज़त बचाने के लिए व्यंग्य करने वाले कवियों को रिश्वत देना जायज़ है। (पृष्ठ 300)
- चौथी स्थिति। (पृष्ठ 292)
- कवि को दिया गया कौन सा रुपया रिश्वत है और कौन सा इनाम है? (पृष्ठ 300)
- मात्रा और प्रकार दोनों में भिन्नता की स्थिति में अधिकता और उधार दोनों जायज़ हैं। (पृष्ठ 292)
- यदि किसी कंगाल व्यक्ति को लेनदार की ओर से तकाज़े का डर न हो, तो केवल आख़िरत में जवाबदेही के डर से सूदी ऋण लेना हराम है। (पृष्ठ 301)
- दो मुद्राओं (सोना-चांदी) के विनिमय में कब्ज़ा आवश्यक है। (पृष्ठ 292)
- ऋण चुकाने के लिए अपनी जैसी कोशिश की और अदा न हो सका यहाँ तक कि कर्जदार मर गया, तो माफ़ी की उम्मीद है। (पृष्ठ 301)

पृष्ठ 715 का 29

بیع سلم میں بائع مبیع نہ ادا کر سکے تو مشتری کو راس المال سے زائد لینا حرام ہے۔ ۲۹۲ دیگر مختلف الجنس متحد القدر اشیاء کے تبادلہ میں بدلین کا معلوم و متعین ہونا ضروری ہے قبضہ ضروری نہیں۔ ۲۹۲ باب الربو رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے چار چیزوں کو کیلی اور نقدین کو وزنی قرار دیا تو یہ ہمیشہ ایسی ہی رہیں گی۔ ۲۹۲ باب ربو میں اندازہ شرعی کیل وزن ہے۔ ۲۹۱ دیگر اشیاء کے کیلی یا وزنی ہونے میں عرف کا اختیار ہوگا۔ ۲۹۳ حلت و حرمت کے قاعدہ کلیہ کا بیان چار صورتوں میں۔ ۲۹۱ سود کے زنا سے ۳۳ درجہ بدتر ہونے کی تین حدیثیں۔ ۲۹۳ صورت اولٰی۔ ۲۹۱ اس مضمون کی تین حدیثیں کہ سود کا ایک درم ۳۶ بار زنا کے گناہ کے برابر۔ ۲۹۳ اتحاد قدر و جنس کی صورت میں کم و بیش اور ادھار سود ہے۔ ۲۹۱ دس حدیثیں کہ سود کے ستر سے زیادہ گناہ جن میں ادنٰی گناہ ماں سے زنا کے برابر۔ ۲۹۴ عدم برابری کی متعدد صورتوں کا بیان۔ ۲۹۱ سود سے متعلق چار آدمیوں پر لعنت۔ ۲۹۸ صورت ثانیہ۔ ۲۹۲ ضرورت شرعی کا بیان اور چند مصنوعی ضرورتوں کی تفصیل۔ ۲۹۹ جنس متحد ہو اور قدر متحد نہ ہو خواہ قدر معہود سے خارج ہو یا ان میں داخل ہو تو کمی بیشی جائز اور ادھار ناجائز۔ ۲۹۲ قرض کی ادائیگی کے لئے کب سودی قرض لینا جائز ہے۔ ۲۹۹ صورت ثالثہ۔ ۲۹۲ حفظ نفس، تحصیل قوت، تحفظ عن الذلۃ والطعن ضرورت شرعیہ ہے۔ ۳۰۰ قدر متحد ہو مگر جنس مختلف تو تفاضل جائز ادھار منع البتہ سونے چاندی کا استثناء ہے۔ ۲۹۲ اپنی آبرو بچانے کے لئے ہجو گو شاعروں کو رشوت دینا جائز ہے۔ ۳۰۰ صورت رابعہ۔ ۲۹۲ شاعر کو دیا ہوا کون سا روپیہ رشوت ہے اور کون سا انعام ہے۔ ۳۰۰ اختلاف قدر و جنس کی صورت میں تفاضل اور ادھار دونوں جائز ہے۔ ۲۹۲ مفلس کو قرض خواہ کی طرف سے تقاضا کا خطرہ نہ ہو تو صرف مواخذہ آخرت کے خیال

سے سودی قرض لینا حرام ہے۔ ۳۰۱ نقدین کے تبادلہ میں قبضہ ضروری ہے۔ ۲۹۲ ادائیگی قرض کے لئے اپنی جیسی کوشش کی اور ادا نہ ہوسکا تا آنکہ قرضدار مرگیا تو امید مغفرت ہے۔ ۳۰۱

Fatawa Rizwia Volume 17 (17)

- Multiple Hadiths on this subject. (302)
- Spending prohibited money even in an Islamic Madrasa is forbidden. (307)
- Warning on having relations with a woman who does not pray and the ruling on divorcing her. (303)
- Taking interest is not permissible from anyone. (308)
- It is better to die being a debtor of her mahr (dowry) than to live with a woman who does not pray. (303)
- Realistically, taking interest or intending to take interest is haram and a sin. (309)
- Assisting in interest-based business is also a sin. (304)
- Drinking syrup while thinking of it as wine is also haram. (309)
- The correct way to repent for interest is to have regret and a resolve not to take it in the future, along with returning what has been taken. (304)
- One who is unable to collect their right can collect it through voidable contracts (uqud fasidah), though correction of intention is necessary. (309)
- One who repents for a sin is like one who never committed the sin. (304)
- There is no interest between a master and a slave. (309)
- An inquiry consisting of six questions regarding interest. (305)
- There is no interest between partners in Sharakat-e-Muawazah and Sharakat-e-Inaan as well. (309)
- The ancestor gave interest money; it is haram for the heir to take interest. (306)
- Permissible wealth can be taken through voidable contracts with the consent of the owner. (310)
- Allah the Almighty declared taking even the interest prior to the revelation of the verse of interest prohibition as haram. (306)
- Argumentation from the action of Hazrat Siddique (may Allah be pleased with him) in the circle of the issue. (310)
- Even on a decree of an interest-based loan, the interest rate is fixed by the government, so collecting both types of interest is haram. (306)
- The actual ruling is based on facts, not on words. (310)
- It is also haram to collect interest on promissory notes because the government will spend it on an allocated purpose. (307)
- Definition of Riba (interest). (311)

- Permissible wealth or one's own right can also be collected through voidable contracts. (307)
- If someone considered a lawful matter as unlawful and practiced it believing it to be unlawful, then he is a criminal in the sight of Allah Almighty. (311)
- Selling promissory notes to another person is not permissible. (307)
- Looking at a piece of clothing from afar thinking it's a strange woman with an evil eye makes one a sinner. (311)

फतावा रज़विया जिल्द 17 (17)

- इस विषय पर कई हदीसें। (302)
- प्रतिबंधित धन को इस्लामी मदरसे में भी खर्च करना वर्जित है। (307)
- नमाज़ न पढ़ने वाली महिला के साथ संभोग करने पर चेतावनी और उसे तलाक देने का हुक्म। (303)
- किसी से भी ब्याज लेना जायज़ नहीं है। (308)
- नमाज़ न पढ़ने वाली महिला के साथ रहने से बेहतर है कि उसके महर का कर्जदार होकर मरना। (303)
- वास्तव में ब्याज लेना या ब्याज लेने का इरादा करना हराम और गुनाह है। (309)
- ब्याज आधारित व्यवसाय में सहायता करना भी गुनाह है। (304)
- शरबत को भी शराब समझकर पीना हराम है। (309)
- ब्याज से तौबा करने का सही तरीका यह है कि पछतावे और भविष्य में न लेने के संकल्प के साथ जो लिया है उसे वापस कर दे। (304)
- वह व्यक्ति जो अपना हक वसूल करने में सक्षम न हो, दूषित अनुबंधों (उकूद फासिदह) के माध्यम से उसे प्राप्त कर सकता है, हालांकि नियत (इरादे) को सही करना आवश्यक है। (309)
- पाप से पश्चाताप करने वाला वैसा ही है जैसे उसने पाप किया ही न हो। (304)
- मालिक और गुलाम के बीच ब्याज नहीं होता। (309)
- ब्याज के बारे में छह प्रश्नों पर आधारित एक इस्तफ़्ता। (305)
- शराकत-ए-मुआज़ह और शराकत-ए-इनान के भागीदारों के बीच भी ब्याज नहीं होता। (309)
- पूर्वज ने ब्याज का रुपया दिया, उत्तराधिकारी के लिए ब्याज लेना हराम है। (306)
- मालिक की सहमति से दूषित अनुबंधों के माध्यम से वैध धन लिया जा सकता है। (310)
- अल्लाह तआला ने ब्याज की निषेध वाली आयत उतरने से पहले के ब्याज को भी वसूल करना हराम ठहराया। (306)
- इस मसले के संदर्भ में हज़रत सिद्दीक़ (रज़ियल्लाहु अन्हु) के अमल से दलील। (310)
- ब्याज वाले ऋण की डिक्री पर भी ब्याज की दर सरकार द्वारा निर्धारित होती है, तो दोनों ही प्रकार का ब्याज वसूल करना हराम है। (306)

- वास्तविक हुक्म तथ्यों पर आधारित है, शब्दों पर नहीं। (310)
- प्रॉमिसरी नोटों का ब्याज वसूल करना इसलिए भी हराम है कि सरकार उसे किसी निर्धारित काम में खर्च करेगी। (307)
- रिबा (ब्याज) की परिभाषा। (311)
- वैध धन या अपना हक दूषित अनुबंधों के माध्यम से भी वसूल किया जा सकता है। (307)
- यदि किसी ने किसी हलाल मामले को हराम समझा और उसे हराम मानकर ही किया, तो वह अल्लाह तआला का अपराधी हुआ। (311)
- प्रॉमिसरी नोटों को दूसरे के हाथ बेचना जायज़ नहीं है। (307)
- दूर से किसी कपड़े को पराई स्त्री समझकर उसे बुरी नज़र से देखने वाला गुनाहगार हुआ। (311)

पेज 30/715

فتاوی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

- اس موضوع پر متعدد حدیثیں۔ ۳۰۲
- ممنوعہ رقم مدرسہ اسلامیہ میں بھی صرف کرنا منع ہے۔ ۳۰۷
- بے نمازی عورت سے صحبت پر وعید اور اس کو طلاق دینے کا حکم۔ ۳۰۳
- سود لینا کسی سے بھی جائز نہیں۔ ۳۰۸
- بے نمازی عورت کے ساتھ رہنے سے اس کے مہر کا قرضدار ہو کر مرنا بہتر ہے۔ ۳۰۳
- حقیقۃً سود لینا یا سود لینے کا قصد کرنا حرام و گناہ ہے۔ ۳۰۹
- سودی کاروبار میں معاونت کرنا بھی گناہ ہے۔ ۳۰۴
- شربت بھی شراب سمجھ کر پینا حرام ہے۔ ۳۰۹
- سود سے توبہ کا صحیح طریقہ یہ ہے کہ ندامت اور آئندہ نہ لینے کے عزم کے ساتھ ساتھ جو لیا ہے وہ واپس کرے۔ ۳۰۴
- اپنا حق جس کے وصولی پر قادر نہ ہو عقود فاسدہ کے ذریعہ وصول کر سکتا ہے تصحیح نیت البتہ ضروری ہے۔ ۳۰۹
- گناہ سے توبہ کرنے والا ایسا ہی ہے جیسے اس نے گناہ کیا ہی نہ ہو۔ ۳۰۴
- مالک اور غلام کے درمیان سود نہیں۔ ۳۰۹
- سود کے بارے میں چھ سوالات پر مشتمل ایک استفتاء۔ ۳۰۵
- شرکت معاوضہ اور شرکت عنان کے شرکاء کے درمیان بھی سود نہیں۔ ۳۰۹
- مورث نے سود روپیہ دیا، وارث کو سود لینا حرام ہے۔ ۳۰۶
- مباح مال صاحب مال کی رضامندی سے عقود فاسدہ کے ذریعہ لے سکتا ہے۔ ۳۱۰

- اللہ تعالیٰ نے تحریم سود کی آیت اترنے سے پہلے کے سود کو بھی وصول کرنا حرام ٹھہرایا، ۳۰۶
- مسئلہ دائرہ میں حضرت صدیق رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے عمل سے استدلال۔ ۳۱۰
- سودی قرض کی ڈگری پر بھی شرح سود گورنمنٹ کی طرف سے مقرر ہوتی ہے، تو دونوں ہی طرح کا سود وصول کرنا حرام ہے۔ ۳۰۶
- اصل حکم حقائق پر ہے الفاظ پر نہیں۔ ۳۱۰
- پرامیسری نوٹوں کا سود اس لئے بھی وصول کرنا حرام ہے کہ اس کو گورنمنٹ مقرر کردہ کسی مصرف میں صرف کریگی۔ ۳۰۷
- ربوٰ کی تعریف۔ ۳۱۱
- مال مباح یا اپنا حق عقود فاسدہ کے ذریعہ بھی وصول کر سکتے ہیں۔ ۳۰۷
- کسی حلال معاملہ کو کسی نے حرام یقین کیا اور حرام سمجھ کر ہی اسے برتا تو وہ اللہ تعالیٰ کا مجرم ہوا۔ ۳۱۱
- پرامیسری نوٹوں کو دوسرے کے ہاتھ بیچنا جائز نہیں۔ ۳۰۷
- دور سے کسی کپڑے کو اجنبی عورت سمجھ کر اس کو نظر بد سے دیکھا گنہگار ہوا۔ ۳۱۱

Volume 17, Fatawa Rizvia

- It is disliked (Makruh) to name a lawful thing as unlawful without any valid reason. (311)
- Treachery and interest are unanimously prohibited in Dar al-Harb. (317)
- Calling a wife mother or daughter is not 'Zihar'. (312)
- Sharia has prescribed a specific method for the lawfulness of private parts (marriage). (317)
- Calling a wife sister for a Shari purpose is evidenced by the action of Prophet Ibrahim (peace be upon him). (312)
- Wealth is lawful with the consent of its owner. (317)
- Achieving any permissible (Mubah) matter is also included in Shari purpose. (313)
- Interest is prohibited from a Muslim who went to Dar al-Harb, but lawful from a non-migrant Muslim. (318)
- The issue of absence of interest in matters of master and slave or partners in joint venture etc., does not depend on the source being Harbi or the place being Dar al-Harb. However, the absence of actual Riba and the absence of intention for Riba is necessary. (313)
- Judicial rulings are not enforceable in Dar al-Harb and Dar al-Bagha' (land of rebellion) where there is no judicial authority. (318)
- The restriction of Dar al-Harb in the condition of absence of Riba in the wealth of a Harbi is for the purpose of removing a Mustamin (one seeking safety); the wealth of a Harbi Mustamin is lawful even in Dar al-Islam. (314)
- Give Zakat money to a debtor and then ask for repayment of your loan; if they do not give it, they can be forcibly deprived of it. (319)
- The reality of Riba is realized in prohibited assets, and the wealth of creditors and victims to the extent of debts and wrongs is not prohibited. (314)
- Usurpation and theft of permissible (Mubah) wealth is allowed (under specific contexts mentioned). (319)
- The preferred fatwa is that a rightful person can take their right in any case. If the owner of that right has died and has no heir, it can be spent on one's own or others' needs. (315)
- Difference between invalid contracts and usurpation/theft. (319)
- Attributing the statement of permissibility of Riba to our Imams is a fabrication by the Ghair-Muqallids. (316)

- If there is no condition to give extra at the time of lending, neither verbally nor by custom, then giving extra is permissible. (320)
- The prohibition of Riba in Dar al-Islam is not due to the honor of the land; complete research on the issue. (316)
- Inference from the Hadith of Jabir (may Allah be pleased with him) regarding giving more than the loan amount. (320)
- Nothing changes from unlawful to lawful due to a change of territory. (316)
- Inference from the Hadiths of Abu Huraira (may Allah be pleased with him). (320)
- In the reliable school of thought, non-believers are addressed by subsidiary rulings (Furu'). (317)
- If the extra amount is divisible, it should be given separately; if it remains mixed, the gift (Hiba) will not be valid. (321)

जिल्द 17, फतावा रिज़विया

- बिना किसी तर्कसंगत कारण के किसी हलाल चीज़ का नाम हराम रखना मकरूह है। (311)
- दारुल हरब में गद्दारी और रिबा (ब्याज) सर्वसम्मति से हराम हैं। (317)
- पत्नी को माँ या बेटी कहना 'ज़िहार' नहीं है। (312)
- शर्मगाह के हलाल होने (निकाह) का शरीयत ने एक विशेष तरीका बताया है। (317)
- शरीयत के उद्देश्य से पत्नी को बहन कहने का प्रमाण हज़रत इब्राहिम अलैहिस्सलाम के कार्य से मिलता है। (312)
- मालिक की रजामंदी से माल हलाल होता है। (317)
- किसी जायज़ (मुबाह) काम को हासिल करना भी शरीयत के उद्देश्य में शामिल है। (313)
- मुसलमान जो दारुल हरब गया, उससे ब्याज हराम है, लेकिन गैर-मुहाजिर मुस्लिम से हलाल है। (318)
- मालिक और गुलाम या साझीदारों आदि के बीच ब्याज न होने का मामला इस बात पर निर्भर नहीं करता कि सामने वाला हरबी है या स्थान दारुल हरब है। हाँ, वास्तविक रिबा का न होना और रिबा का इरादा न होना ज़रूरी है। (313)
- अदालती आदेश दारुल हरब और दारुल बग़ा (विद्रोह की भूमि) में प्रभावी नहीं होते जहाँ अदालती अधिकार क्षेत्र नहीं है। (318)
- हरबी के माल में रिबा न होने की शर्त में दारुल हरब की पाबंदी मुस्तअमिन (शरणार्थी) को बाहर निकालने के लिए है; हरबी मुस्तअमिन का माल दारुल इस्लाम में भी हलाल है। (314)
- कर्जदार को ज़कात का माल देकर अपना कर्ज मांगें; यदि वह न दे तो ज़बरदस्ती छीन सकते हैं। (319)
- रिबा की असलियत वर्जित संपत्ति में पाई जाती है, और कर्जदारों और पीड़ितों का माल कर्ज और ज़ुल्म की सीमा तक वर्जित नहीं है। (314)
- मुबाह (अनुमेय) माल का गसब और चोरी जायज़ है। (319)
- सही फतवा यह है कि हक़दार अपना हक़ हर हाल में ले सकता है। यदि उस हक़ का मालिक मर गया है और कोई वारिस नहीं है, तो उसे अपनी या दूसरों की ज़रूरतों पर खर्च किया जा सकता है। (315)
- अक़्द-ए-फासिद (अमान्य अनुबंध) और गसब/चोरी के बीच अंतर। (319)

- हमारे इमामों पर रिबा की अनुमति का कथन थोपना गैर-मुक़ल्लिदीन का झूठ है। (316)
- कर्ज देते समय अतिरिक्त देने की शर्त न हो, न ज़ुबानी और न ही रिवाज के तौर पर, तो अतिरिक्त देना जायज़ है। (320)
- दारुल इस्लाम में रिबा की मनाही भूमि के सम्मान के कारण नहीं है; इस मसले पर पूर्ण शोध। (316)
- कर्ज से अधिक देने पर हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु की हदीस से प्रमाण। (320)
- देश बदलने से कोई हराम चीज़ हलाल नहीं हो जाती। (316)
- हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु की हदीसों से प्रमाण। (320)
- विश्वसनीय मत के अनुसार, काफिरों को भी धर्म के उप-नियमों (फुरू) का पालन करने के लिए कहा गया है। (317)
- यदि अतिरिक्त राशि विभाज्य है, तो उसे अलग से दिया जाना चाहिए; यदि वह मिली हुई रहेगी तो हिबा (दान) मान्य नहीं होगा। (321)

पृष्ठ 31 का 715

- بغیر کسی مصلحت کے کسی حلال چیز کا حرام نام رکھنا مکروہ ہے۔ (۳۱۱)
- دار الحرب میں غدر اور رہا بالا تفاق حرام ہیں (۳۱۷)
- عورت کو ماں، بیٹی کہنا ظہار نہیں۔ (۳۱۲)
- شرمگاہ حلال ہونے کا شرع نے ایک مخصوص طریقہ بتایا ہے۔ (۳۱۷)
- مصلحت شرعی سے بیوی کو بہن کہنے کی حضرت ابراہیم علیہ السلام کے فعل سے سند۔ (۳۱۲)
- مال صاحب مال کی رضا سے حلال ہے۔ (۳۱۷)
- کسی امر مباح کا حصول بھی مصلحت شرعی میں داخل ہے۔ (۳۱۳)
- مسلمان جو دار الحرب میں گیا اس سے سود حرام ہے مسلم غیر مہاجر سے حلال ہے۔ (۳۱۸)
- مسائل مولیٰ والعبد و شرکائے عنان وغیرہ میں سود نہ ہونے کا معاملہ ماخوذ منہ کے حربی اور محل کا دار الحرب ہونے پر موقوف نہیں۔ ہاں حقیقی رہا کا منتفی ہونا اور قصد رہا کا نہ ہونا ضروری ہے۔ (۳۱۳)
- احکام قضاء دارالحرب اور دارالبغاۃ میں نافذ نہیں جہاں حکم قضاء نہیں۔ (۳۱۸)
- حربی کے مال میں رہا نہ ہونے کی شرط میں دار الحرب کی قید مستامن کے نکالنے کے لئے ہے، حربی مستامن کا مال دار الاسلام میں بھی حلال ہے۔ (۳۱۴)
- قرضدار کو مال زکوۃ دے کر اپنا قرض مانگیں، نہ دے تو زبردستی چھین سکتے ہیں۔ (۳۱۹)
- حقیقت رہا اموال محظورہ میں متحقق ہوتی ہے اور مال اصحاب دیون و مظالم بقدر دیون و مظالم محظور نہیں۔ (۳۱۴)

- مال مباح کا غصب و سرقہ جائز ہے۔ (۳۱۹)
- مفتی بہ یہ ہے کہ مستحق اپنا حق بہرحال لے سکتا ہے جس حق کا مالک فوت ہو گیا اور کوئی وارث نہیں تو اس کو اپنی یا دوسرے کی ضروریات میں صرف کر سکتے ہیں۔ (۳۱۵)
- عقود فاسدہ اور غصب و سرقہ کا فرق۔ (۳۱۹)
- ہمارے ائمہ پر جواز رہا کا قول غیر مقلدوں کا افتراء ہے۔ (۳۱۶)
- قرض دیتے وقت زائد دینے کی شرط نہ ہو نہ لفظانہ عرفا، تو زائد دینا جائز ہے۔ (۳۲۰)
- دار الاسلام میں رہا کی حرمت شرف دار کی وجہ سے نہیں، مسئلہ کی مکمل تحقیق۔ (۳۱۶)
- قرض سے زائد دینے پر حدیث جابر رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے استدلال۔ (۳۲۰)
- اختلاف دار سے کوئی شے حرام سے حلال نہیں ہوتی۔ (۳۱۶)
- حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ کی حدیثوں سے استدلال۔ (۳۲۰)
- مذہب معتمد میں کفار مخاطب بالفروع ہیں۔ (۳۱۷)
- زائد قابل تقسیم ہو تو اس کو علیحدہ سے دینا چاہئے مخلوط رہے گا تو ہبہ صحیح نہ ہو گا۔ (۳۲۱)

Volume 17 (17) --- Fatawa Razawiya

322 | Sadaqah-e-Musha' (jointly owned charity) is permissible. 324 | In cases of equality of quantity and genus, where inequality and delay are prohibited, even an equal exchange is not without benefit; here are some examples. 322 | Generally, interest is prohibited, but it is permissible at a time of Sharia necessity. 324 | The pure Sharia has not made immediate equal-quantity exchange mandatory, but merely declared it permissible. 322 | Interest is not permissible with anyone. 325 | Taking something after stipulating it as interest is prohibited. 322 | Recording interest in a document is prohibited even if there is no intention of taking it. 325 | It is permissible to take money given voluntarily by a non-Muslim (who is not a Dhimmi or Mustamin) without any deception under the name of 'invalid contracts' (uqud-e-fasidah). 323 | Grain was sold on credit and the price fixed; later, more grain was taken for that price than the market rate. If the excess was given voluntarily without coercion, it's lawful, otherwise prohibited. 325 | Every person's intention is valid for themselves, not for others. 323 | Interest is prohibited with everyone; taking one's right through a valid Sharia stratagem is a different matter. 325 | Just as it is necessary to avoid bad deeds, it is also necessary to avoid a bad reputation. 323 | In the prohibition of writing interest, Allah has not specified any distinction—that taking it from someone is lawful and from another prohibited—but prohibited it absolutely, whether from a disbeliever or a Muslim. 326 | Mutual consent will not make the prohibited lawful. 323 | Ruling on taking bank profits while considering them interest. 326 | Definition and ruling of interest. 324 | Arranging ten rupees worth of goods for someone and stipulating to take back eleven; this becomes interest. 326 | Lending money to a betel leaf seller and continuing to consume betel leaves as profit is interest. 324 | Lending is a transaction separate from selling, which the noble Sharia ordained due to people's needs. 327 | Buying and selling currency notes at a difference (above or below face value) is permissible with both Hindus and Muslims. 324 | Borrowing money is permissible. 327 | If it is agreed to take back more after lending notes, it is prohibited with a Muslim and permissible with a Hindu; however, it is not interest, and taking it while considering it interest is prohibited. 324 | Borrowing grain is permissible and proven by authentic hadith. 327 | Interest-bearing loans can be taken in cases of Sharia necessity. 324 | In ribawi goods (subject to interest rules), the consideration of quality is disregarded. 327 | Someone asked for a ten-rupee loan; instead of rupees, they were given that much worth of wheat. Collecting more than that amount now is interest.

जिल्द सत्रह (17) --- फतावा रज़विया

322 | मुशाअ (संयुक्त) सदक़ा जायज़ है। 324 | मात्रा और वस्तु की समानता की स्थिति में असमानता और विलम्ब (नसीया) के हराम होने पर, बराबर का विनिमय भी लाभ से खाली नहीं है, इसके कुछ उदाहरण। 322 | सामान्य स्थिति में सूद (ब्याज) नाजायज़ है, शरई ज़रूरत के समय जायज़ है। 324 | शरीयत-ए-मुतह्हरा ने हाथों-हाथ बराबर-बराबर बिक्री करना वाजिब नहीं किया बल्कि केवल जायज़ करार दिया है। 322 | सूद किसी के साथ जायज़ नहीं। 325 | सूद तय करके किसी से लेना हराम है। 322 | दस्तावेज़ में सूद की तहरीर (लेखन) नाजायज़ है, भले ही लेने की नीयत न हो। 325 | गैर-मुस्लिम जो ज़िम्मी और मुस्तामिन न हो, अपनी इच्छा से बिना किसी धोखे के 'अक़ूद-ए-फ़ासिदा' (दोषपूर्ण अनुबंधों) के नाम पर जो राशि दे, उसका लेना जायज़ है। 323 | बिक्री के समय अनाज उधार दिया और कीमत तय कर दी, बाद में उस कीमत का अनाज बाज़ार भाव से अधिक लिया; अगर अधिक स्वेच्छा से बिना किसी दबाव के दिया तो हलाल है वरना हराम। 325 | हर व्यक्ति की नीयत खुद उसके लिए मान्य है, दूसरे के लिए नहीं। 323 | सूद हर एक से हराम है, अपना कोई हक़ किसी जायज़ शरई हीले (तरीके) से लेना अलग बात है। 325 | जिस तरह बुरे काम से बचना ज़रूरी है, वैसे ही बुरे नाम (बदनामी) से बचना भी ज़रूरी है। 323 | सूद लिखने के निषेध में अल्लाह तआला ने कोई विशेषता नहीं बताई कि फलाँ से लेना हलाल और फलाँ से हराम, बल्कि इसे पूर्णतः हराम ठहराया है, चाहे वह काफ़िर से हो या मुस्लिम से। 326 | आपसी सहमति से हराम, हलाल नहीं हो जाएगा। 323 | बैंक के मुनाफ़े को सूद समझकर लेने का हुक्म। 326 | सूद की परिभाषा और हुक्म। 324 | दस रुपये का माल किसी को दिलवा दिया और ग्यारह लेने की शर्त लगा दी, यह सूद हुआ। 326 | पनवाड़ी को कर्ज़ देकर मुनाफ़े के तौर पर पान खाते रहना सूद है। 324 | कर्ज़ बिक्री से अलग एक मामला है जिसे शरीयत-ए-शरीफ़ ने लोगों की ज़रूरतों के लिए जायज़ किया है। 327 | कम या ज़्यादा कीमत पर नोटों की ख़रीद-ओ-फ़रोख़्त हिंदू और मुसलमान दोनों से जायज़ है। 324 | रुपया कर्ज़ लेना जायज़ है। 327 | नोट कर्ज़ देकर ज़्यादा वापस लेना तय हुआ तो मुसलमान से मना और हिंदू से जायज़ है, लेकिन वह सूद नहीं है और उसे सूद समझकर लेना मना है। 324 | अनाज कर्ज़ लेना जायज़ है और सही हदीस से साबित है। 327 | शरई मजबूरी पर सूदी कर्ज़ ले सकते हैं। 324 | रिबवी वस्तुओं (जिन पर सूद लागू होता है) में गुणवत्ता का विचार समाप्त है। 327 | किसी ने दस रुपये कर्ज़ माँगे, उसने रुपये के बजाय उतने मूल्य के गेहूँ दे दिए; अब उससे ज़्यादा मूल्य वसूल करना सूद है।

۳۲۲ | صدقہ مشاع جائز ہے۔ ۳۲۴ | اتحاد قدر و جنس کی صورت میں تفاضل اور نسیئہ حرام ہونے پر مبیع متساوی بھی فائدہ سے خالی نہیں اس کی چند مثالیں۔ ۳۲۲ | عام حالت میں سود ناجائز ضرورت شرعی کے وقت جائز ہے۔ ۳۲۴ | شرع مطہر نے دست بدست برابر برابر بیع کرنا واجب نہیں کیا بلکہ محض جائز قرار دیا ہے۔ ۳۲۲ | سود کسی کے ساتھ جائز نہیں ۳۲۵ | سود قرار دے کر کسی سے لینا حرام ہے۔ ۳۲۲ | دستاویز میں سود کی تحریر ناجائز اگرچہ نیت لینے کی نہ ہو۔ ۳۲۵ | غیر مسلم جو ذمی اور مستامن نہ ہو اپنی رضا سے کسی غدر کے بغیر عقود فاسدہ کے نام سے جو رقم دے اس کا لینا جائز ہے۔ ۳۲۳ | بیع کے وقت غلہ ادھار دیا اور ثمن متعین کر دیا، بعد میں اس ثمن کا غلہ بازار بھاؤ سے زائد لیا، اگر زائد رضا سے بلا کسی جبر کے دیا تو حلال ورنہ حرام۔ ۳۲۵ | ہر شخص کی نیت خود اس کے لئے معتبر ہے نہ کہ دوسرے کے لئے۔ ۳۲۳ | سود ہر ایک سے حرام، اپنا کوئی حق کسی جائز حیلہ شرعی سے لینا اور بات ہے۔ ۳۲۵ | جس طرح برے کام سے بچنا ضروری ہے، برے نام سے بچنا بھی ضروری ہے۔ ۳۲۳ | سود کی تحریر میں اللہ تعالیٰ نے کوئی تخصیص نہیں فرمائی کہ فلاں سے لینا حلال اور فلاں سے حرام بلکہ مطلقاً حرام فرمایا اور وہ مطلقاً حرام ہے چاہے کافر سے ہو یا مسلم سے۔ ۳۲۶ | باہمی رضا مندی سے حرام حلال نہ ہو جائے گا۔ ۳۲۳ | بینک کے منافع کو سود سمجھ کر لینے کا حکم۔ ۳۲۶ | سود کی تعریف اور حکم۔ ۳۲۴ | دس روپے کا مال کسی کو دلوا دیا اور گیارہ لینے کی شرط لگا دی، سود ہوا۔ ۳۲۶ | پنواڑی کو قرض دے کر منافع میں پان کھاتے رہنا سود ہے۔ ۳۲۴ | قرض بیع سے علیحدہ ایک معاملہ ہے جس کو شرع شریف نے لوگوں کو احتیاج کی حکومت سے مشروع فرمایا۔ ۳۲۷ | کم و بیش پر نوٹ کی بیع ہندو و مسلمان سب سے جائز ہے۔

۳۲۴ | روپیہ قرض لینا جائز ہے۔ ۳۲۷ | نوٹ قرض دے کر زیادہ لینا قرار پایا تو مسلمان سے منع اور ہندو سے جائز، مگر وہ سود نہیں اور اس کو سود سمجھ کر لینا منع ہے۔ ۳۲۴ | غلہ قرض لینا جائز اور حدیث صحیح سے ثابت ہے۔ ۳۲۷ | شرعی مجبوری پر سودی قرض لے سکتے ہیں۔ ۳۲۴ | اموال ربویہ میں وصف کا اعتبار ساقط ہے۔ ۳۲۷ | کسی نے دس روپے قرض مانگے اس نے روپے کے بجائے اتنے کے گیہوں دے دئیے اب اس سے زائد وصول کرنا سود ہے۔

Fatawa-e-Razviya Volume 17 (17)

[Table of Contents]

333: The condition of repayment in the form of grain after giving a cash loan is void. | 327: It is forbidden to have a condition attached to the item sold (Mabi'). 333: Is the transaction of buying grain by giving money considered 'Salam'? | 327: Giving a void transaction the name of honesty is forbidden. 334: A detailed description of a new form of gambling and its Sharia ruling. | 329: Selling goods through a lottery (chit system) is gambling. 334: Copy of an advertisement related to a form of gambling. | 329: The extra money received on the amount deposited in a bank is a form of interest (Riba). It is forbidden to take it knowing it is interest; however, if one considers it as their right or permissible wealth, then receiving it in that manner is allowed. 334: Translation of the relevant ticket. | 329: The condition of receiving grain in exchange for a cash loan is void. 334: Definition of gambling (Jua). | 330: If given in advance as 'Bai' Salam' (forward sale), it is permissible with conditions. 335: An announcement such as "we will send five tickets for one rupee; sell these tickets for five rupees and send us the money, then we will give you such and such goods" is a promise, not a sale (Bai'). | 330: Taking half of the profit as 'Jabbar' after giving a cash loan is interest, but this transaction is permissible as 'Mudaraba' (profit-sharing partnership). 335: There is a big difference between a contract of sale (Aqd-e-Bai') and a promise. | 330: Warnings from the Quran and Hadith regarding interest-based business. 335: Scholars have given this identification of a child without discernment (Sabiy-e-La-Yaqil) that they take the item sold and also ask for the money back. | 330: This business is forbidden even with the intention of improving one's condition. 335: Fear and greed motivate human beings to struggle. | 330: Statement on the destruction of religion and the world in interest-based dealings. 336: Details on consuming illicit wealth (Akl-e-Maal-e-Batil) and causing harm or reciprocal harm (Darar-o-Dirar). | 331: Concessions in any rental transaction as a gesture of goodwill to the creditor are permissible. 337: A lottery (chit) is also a form of gambling. | 331: Excess (Tafadul) is permissible in the case of difference in genus, and if it is as 'Bai' Salam', then delay (Ajal) is also permissible with conditions. 337: Gambling involves deception (Ghash) and harm (Darar). | 331: It is permissible to sell on credit at a price lower than the market rate. 337: Hadiths and warnings against ill-will towards a Muslim and causing them harm. | 332: Giving interest the name of 'increase' (Izafa) will not save it from being forbidden. 338: Definition of wealth (Maal). | 332: Keeping a part or the whole amount on credit in the dealing of gold and silver is forbidden.

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द १७ (१७)

[विषय सूची]

333: नकद ऋण देकर अनाज के रूप में अदायगी की शर्त बातिल (अमान्य) है। | 327: बेची गई वस्तु (मबी) के साथ शर्त लगाना हराम है। 333: क्या पैसा देकर अनाज खरीदने का मामला 'सलम' हुआ? | 327: बातिल सौदे को ईमानदारी का नाम देना हराम है। 334: जुए के एक नए रूप का विस्तृत विवरण और उसका शरीयत के अनुसार हुक्म। | 329: चिट्ठी (लॉटरी) के ज़रिए माल की बिक्री जुआ है। 334: जुए से संबंधित विज्ञापन की प्रति। | 329: बैंक में जमा राशि पर मिलने वाला अतिरिक्त पैसा सूद (ब्याज) का एक रूप है। इसे सूद जानकर लेना हराम है; हाँ, यदि कोई इसे अपना अधिकार या जायज़ धन समझे, तो इस तरह वसूल करना अनुमत है। 334: संबंधित टिकट का अनुवाद। | 329: नकद ऋण देकर उसका अनाज वसूल करने की शर्त बातिल है। 334: जुए की परिभाषा। | 330: यदि 'बै सलम' (अग्रिम बिक्री) के रूप में अग्रिम दिया जाए, तो शर्तों के साथ जायज़ है। 335: इस तरह का एलान कि "हम एक रुपये में पाँच टिकट भेजेंगे; इन टिकटों को पाँच रुपये में बेचकर हमें पैसा भेज दें, तो हम आपको फलाँ सामान देंगे", यह एक वादा है, बिक्री (बै) नहीं। | 330: नकद ऋण देकर मुनाफ़े में से आधा हिस्सा खाना सूद है, लेकिन 'मुज़ारबत' (लाभ-साझाकरण साझेदारी) के रूप में यह मामला जायज़ है। 335: बिक्री के अनुबंध (अक़्द-ए-बै) और वादे में बड़ा अंतर है। | 330: सूदी कारोबार (ब्याज आधारित व्यवसाय) पर कुरान और हदीस की चेतावनियाँ। 335: उलेमा ने नासमझ बच्चे (सबी-ए-ला-याक़िल) की यह पहचान बताई है कि वह बेची गई वस्तु ले और पैसा भी वापस माँगे। | 330: हालत सुधारने की नीयत से भी यह कारोबार हराम है। 335: भय और लालच मनुष्य को संघर्ष के लिए प्रेरित करते हैं। | 330: सूदी लेन-देन में दीन और दुनिया की बर्बादी का बयान। 336: बातिल तरीके से माल खाने (अक्ल-ए-माल-ए-बातिल) और नुकसान पहुँचाने (दरर-ओ-दिरार) का विवरण। | 331: ऋणदाता के साथ सद्भावना के रूप में किसी किराये के मामले में रियायत जायज़ है। 337: चिट्ठी (लॉटरी) भी जुए का एक रूप है। | 331: नस्ल (प्रजाति) में भिन्नता के मामले में अधिकता (तफ़ाज़ुल) जायज़ है, और यदि यह 'बै सलम' के रूप में हो, तो शर्तों के साथ देरी (अजल) भी जायज़ है। 337: जुए में धोखाधड़ी (ग़श) और नुकसान (दरर) होता है। | 331: बाज़ार दर से कम पर उधार बेचना जायज़ है। 337: मुसलमान के प्रति द्वेष रखने और उन्हें नुकसान पहुँचाने पर हदीस और चेतावनी। | 332: सूद को 'इज़ाफ़ा' (वृद्धि) का नाम देने से

वह हराम होने से नहीं बचेगा। 338: माल (धन) की परिभाषा। | 332: सोने-चाँदी के लेन-देन में आंशिक या पूरी राशि उधार रखना हराम है।

पृष्ठ 33 का 715

۳۳۳: روپیہ قرض دے کر غلہ کی صورت میں ادائیگی کی شرط باطل ہے۔ | ۳۲۷: مبیع اور اس کے ساتھ شرط حرام ہے۔ ۳۳۳: روپیہ دے کر غلہ کی خریداری کا معاملہ کیا یہ سلم ہوئی؟ | ۳۲۷: معاملہ باطل کو ایمانداری کا نام دینا حرام ہے۔ ۳۳۴: جوئے کی ایک نئی صورت کا تفصیلی بیان اور اس کا شرعی حکم۔ | ۳۲۹: چٹھی کے ذریعہ مال کی فروخت جوا ہے۔ ۳۳۴: نقل اشتہار متعلقہ صورتِ جوا۔ | ۳۲۹: بنک میں جمع کی ہوئی رقم پر جو زائد پیسے ملتے ہیں اس کی صورت سود کی ہے، اس کو سود جان کر لینا حرام ہے، ہاں اپنا کوئی حق یا مال مباح سمجھے تو اس طرح وصول کرنا جائز ہے۔ ۳۳۴: ترجمہ متعلقہ ٹکٹ۔ | ۳۲۹: نقد قرض دے کر اس کا غلہ وصول کرنے کی شرط باطل ہے۔ ۳۳۴: جوئے کی تعریف۔ | ۳۳۰: بیع سلم کے طور پر پیشگی دے تو شرائط کے ساتھ جائز ہے۔ ۳۳۵: اس قسم کا اعلان کہ ایک روپیہ میں ہم پانچ ٹکٹ بھیجیں گے ان ٹکٹوں کو پانچ روپے میں بیچ کر روپیہ ہم کو بھیج دو تو ہم فلاں سامان دیں گے، وعدہ ہے بیع نہیں ہے۔ | ۳۳۰: روپیہ قرض دے کر منافع میں آدھا سا جبار کھانا سود ہے اور بطور مضاربت یہ معاملہ جائز ہے۔ ۳۳۵: عقد بیع اور وعدہ میں بڑا فرق ہے۔ | ۳۳۰: سودی کاروبار پر قرآن و حدیث کی وعیدیں۔ ۳۳۵: علماء نے صبی لایعقل کی یہ پہچان بتائی کہ مبیع لے کر پیسہ بھی واپس مانگے۔ | ۳۳۰: حالت سدھارنے کی نیت سے بھی یہ کاروبار حرام ہے۔ ۳۳۵: خوف اور طمع انسان کو جد و جہد پر ابھارتے ہیں۔ | ۳۳۰: سودی لین دین میں دین و دنیا کی بربادی کا بیان۔ ۳۳۶: اکل مالِ باطل اور ضرر و ضرار کی تفصیل | ۳۳۱: قرض خواہ کے ساتھ بطور بروصلہ کسی کرایہ کے معاملہ میں رعایت جائز ہے۔ ۳۳۷: چٹھی بھی قمار کی ایک صورت ہے۔ | ۳۳۱: اختلافِ جنس کی صورت میں تفاضل جائز ہے اور بطور بیع سلم ہو تو شرائط کے ساتھ اجل بھی

جائز ہے۔ ۳۳۷: قمار میں غش و ضرار ہوتا ہے۔ | ۳۳۱: نرخ بازار سے کم پر ادھار بیچنا جائز ہے۔ ۳۳۷: مسلمان کی بدخواہی اور ضرر رسانی پر احادیث و وعید۔ | ۳۳۲: سود کو اضافہ کا نام دے دینے سے حرام ہونے سے نہ بچے گا۔ ۳۳۸: مال کی تعریف۔ | ۳۳۲: سونے چاندی کے معاملہ میں جز یا کل رقم ادھار رکھنا حرام ہے۔

Fatawa Rizvia | Volume 17 (17)

338 | In dealings of rupees and coins, possession from one side is sufficient. | 342 338 | Deceiving a non-believer (Kafir) is not permissible. | 343 338 | If Zaid asks for two 4-anna coins and eight 1-anna coins for one rupee, credit is forbidden (Haram). | 343 338 | The interest-based business of a Muslim cooperative bank is forbidden, and becoming a member of such a bank is assistance in sin. | 343 338 | In the matter of changing money, if there are silver 8-anna coins, immediate payment by both parties is necessary. | 343 338 | Taking and giving interest are certainly equal (in sin), but there is no harm in giving it at a time of Shariah necessity. | 343 339 | There is no harm in taking the additional amount labeled as interest on the amount deducted in the Provident Fund from non-Muslims, considering it permissible wealth (Mal-e-Mubah). | 344 339 | Taking authority from the actions of the masses is ignorance. | 344 340 | Money taken at a monthly profit of five rupees, with a house kept as collateral for the money; if this deal is with a Muslim, it is impermissible and forbidden, as calling it interest makes it reality interest, and calling it rent for the collateralized house is also forbidden because one cannot rent their own house from a non-owner. If a non-Muslim gives such profit, it is permissible to take. | 344 340 | Such a person is not worthy of leading prayers (Imamat). | 344 340 | Creating a cooperative bank and running it on interest is forbidden. | 344 340 | Taking interest from any community is not permissible, however, obtaining permissible wealth through invalid contracts (Uqood-e-Fasida) is permissible. | 344 340 | Interest cannot become lawful even for a single moment or an instant. | 344 340 | An excess amount cannot be collected from a Muslim bank for oneself or for any association. | 344 340 | Divine commands cannot be changed by anyone's amendment. | 344 340 | A deal involving only profit without responsibility for loss is not permissible. | 344 341 | The Hadith curses those who consume interest, provide it, record it, and stand witness to it. | 344 341 | This transaction is forbidden even with a single individual. | 344 341 | If an interest payer is also an interest taker, they are doubly cursed. | 345 341 | Description of various forms of interest. | 345 341 | Taking or giving interest knowing it is forbidden is transgression and immorality (fisq-o-fujoor), and doing so considering it lawful is disbelief and apostasy (kufr-o-irtidad). | 345 341 | The meaning of a jurisprudential (fiqhi) statement. | 345 341 | Taking interest from someone while considering it interest is forbidden. | 345 341 | If a seller measures or weighs measurable or weighable goods in front of the buyer or their representative, there is no need to measure or weigh again. | 345 341 | Permissible wealth obtained

through an invalid contract without deception is lawful. | 346 341 | It is forbidden for a Muslim landlord's Hindu agents to collect interest on land revenue from Muslim farmers, and the landlord's silence despite knowing is a sin. | 346

फतावा रिज़विया | जिल्द हफदहम (17)

338 | रुपये और पैसों के मामले में एक तरफ से कब्ज़ा काफी है। | 342 338 | काफिर को धोखा देना जायज़ नहीं। | 343 338 | जैद ने एक रुपये की दो चवनियाँ और आठ आने पैसे माँगे तो उधार हराम है। | 343 338 | मुसलमानों के को-ऑपरेटिव बैंक का सूदी कारोबार हराम है और ऐसे बैंक का मेम्बर बनना गुनाह में मदद करना (ऐआनत अलल इसम) है। | 343 338 | रुपया भनाने के मामले में अगर चाँदी की अठन्नियाँ हों तो दोनों पक्षों का तुरंत भुगतान ज़रूरी है। | 343 338 | सूद लेना और देना यकीनन बराबर है, लेकिन शरीयत की ज़रूरत के समय देने में कोई हर्ज नहीं। | 343 339 | प्रोविडेंट फंड में कटी हुई रक़म पर सूद के नाम से मिलने वाली अतिरिक्त रक़म को गैर-मुस्लिमों से माल-ए-मुबाह समझकर लेने में कोई हर्ज नहीं। | 344 339 | आम लोगों के कामों को दलील बनाना अज्ञानता है। | 344 340 | पाँच रुपये मासिक मुनाफ़े पर कोई रक़म ली, रक़म के बदले मकान गिरवी रखा; यह मामला अगर मुसलमान से हो तो नाजायज़ और हराम है क्योंकि सूद लिखना भी वास्तव में सूद है, और इस रक़म को गिरवी रखे मकान का किराया समझना भी हराम है क्योंकि कोई अपने ही मकान को गैर-मालिक से किराये पर नहीं ले सकता। अगर गैर-मुस्लिम ऐसा मुनाफ़ा दे तो लेना जायज़ है। | 344 340 | ऐसा व्यक्ति इमामत (नमाज़ का नेतृत्व) के लायक नहीं। | 344 340 | को-ऑपरेटिव बैंक बनाकर सूद पर चलाना हराम है। | 344 340 | किसी भी कौम से सूद लेना जायज़ नहीं, अलबत्ता फासिद अनुबंधों (उकूद-ए-फासिदा) के माध्यम से माल-ए-मुबाह हासिल करना जायज़ है। | 344 340 | सूद एक पल या एक क्षण के लिए भी हलाल नहीं हो सकता। | 344 340 | मुस्लिम बैंक से अतिरिक्त रक़म न अपने लिए वसूल कर सकते हैं और न किसी संस्था के लिए। | 344 340 | ईश्वरीय आदेश (अहकाम-ए-इलाहिया) किसी के संशोधन से बदल नहीं सकते। | 344 340 | वह सौदा जिसमें सिर्फ मुनाफ़े से सरोकार रहे और नुक़सान की ज़िम्मेदारी न हो, जायज़ नहीं। | 344 341 | सूद खाने वाले, खिलाने वाले, लिखने वाले और उस पर गवाही देने वाले पर हदीस में लानत आई है। | 344 341 | किसी एक व्यक्ति से भी यह मामला हराम है। | 344 341 | यदि सूद देने वाला सूद लेने वाला भी हो तो वह दोगुना लानती है। | 345 341 | सूद के विभिन्न रूपों का विवरण। | 345 341 | हराम जानकर सूद लेना-देना फिस्क़ व फुजूर (अवज्ञा और अनैतिकता) है और हलाल जानकर ऐसा करना कुफ्र और इर्तिदाद (धर्मत्याग) है। | 345 341 | एक फ़िक़्ही (न्यायशास्त्रीय) इबारत का अर्थ। | 345 341 | सूद को सूद समझकर किसी से लेना हराम हुआ। | 345 341 | अगर बेचने वाले ने तोलने या मापने वाली चीज़ को खरीदार या उसके वकील

के सामने माप या तोल दिया हो, तो दोबारा मापने या तोलने की ज़रूरत नहीं। | 345 341 | माल-ए-मुबाह जो बिना धोखे के फासिद अनुबंध के माध्यम से प्राप्त हुआ, हलाल है। | 346 341 | मुसलमान ज़मींदार के हिंदू कारिंदों का मुसलमान काश्तकारों से लगान का सूद वसूल करना हराम है, और ज़मींदार का जानकारी होने के बावजूद इस पर चुप रहना गुनाह है। | 346

۳۳۸ | روپیہ اور پیسوں کے معاملہ میں ایک طرف سے قبضہ کافی ہے۔ | ۳۴۲ ۳۳۸ | کافر کو دھوکا دینا جائز نہیں۔ | ۳۴۳ ۳۳۸ | زید نے ایک روپے کی دو چونیاں اور آٹھ آنے پیسے مانگے تو ادھار حرام ہے۔ | ۳۴۳ ۳۳۸ | مسلمانوں کے کو آپریٹو بینک کا سودی کاروبار حرام ہے اور ایسے بینک کا ممبر بننا اعانت علی الاثم ہے۔ | ۳۴۳ ۳۳۸ | روپیہ بھنانے کے معاملہ میں چاندی کی اٹھنیاں ہوں تو طرفین کی فوری ادائیگی ضروری ہے۔ | ۳۴۳ ۳۳۸ | سود لینا دینا ضرور برابر ہے لیکن ضرورت شرعیہ کے وقت دینے میں حرج نہیں۔ | ۳۴۳ ۳۳۹ | پراویڈنٹ فنڈ میں کٹی ہوئی رقم پر جو زائد رقم بنام سود ملتی ہے غیر مسلم لوگوں سے مالِ مباح سمجھ کر لینے میں حرج نہیں۔ | ۳۴۴ ۳۳۹ | عوام کے افعال سے سند جہالت ہے۔ | ۳۴۴ ۳۴۰ | پانچ روپے ماہوار منافع پر کوئی رقم لی، رقم کے بدلے مکان رہن رکھا، یہ معاملہ مسلمان سے ہو تو ناجائز و حرام ہے کہ سود لکھا تب بھی حقیقت سود ہے، اور اس رقم کو مکان کفولہ کا کرایہ سمجھا تب بھی حرام کہ ایک مکان غیر مالک سے اپنا مکان کرایہ پر نہیں لے سکتا غیر مسلم ایسا منافع دے تو لینا جائز ہے۔ | ۳۴۴ ۳۴۰ | ایسا شخص امامت کے لائق نہیں۔ | ۳۴۴ ۳۴۰ | کو آپریٹو بینک بنا کر سود پر چلانا حرام ہے۔ | ۳۴۴ ۳۴۰ | سود کسی قوم سے لینا جائز نہیں، البتہ مالِ مباح عقود فاسدہ سے حاصل کرنا جائز ہے۔ | ۳۴۴ ۳۴۰ | سود ایک لمحہ ایک آن کو حلال نہیں ہو سکتا۔ | ۳۴۴ ۳۴۰ | مسلم بینک سے زائد رقم نہ اپنے لئے وصول کر سکتے ہیں نہ کسی انجمن کے لئے۔ | ۳۴۴ ۳۴۰ | احکام الٰہیہ کسی کی ترمیم سے بدل نہیں سکتے۔ | ۳۴۴ ۳۴۰ | جس میں صرف منافع سے واسطہ رہے نقصان کی ذمہ داری نہ ہو جائز نہیں۔ | ۳۴۴ ۳۴۱ | سود کھانے والے، کھلانے والے، لکھنے والے، اور اس پر گواہی دینے والے پر حدیث میں لعنت آئی ہے۔ | ۳۴۴

۳۴۱ | کسی فردِ واحد سے بھی یہ معاملہ حرام ہے۔ | ۳۴۴ ۳۴۱ | سود دہندہ سود گیرندہ بھی ہو تو ڈبل ملعون ہے۔ | ۳۴۵ ۳۴۱ | سود کی متعدد صورتوں کا بیان۔ | ۳۴۵ ۳۴۱ | حرام جان کر سود لینا دینا فسق و فجور اور حلال جان کر ایسا کرنا کفر و ارتداد ہے۔ | ۳۴۵ ۳۴۱ | ایک فقہی عبارت کا مطلب۔ | ۳۴۵ ۳۴۱ | سود کو سود سمجھ کر کسی سے لیا حرام ہوا۔ | ۳۴۵ ۳۴۱ | کیلی یا وزنی مبیع کو بائع نے مشتری یا اس کے وکیل کے سامنے ناپ تول دی تو دوبارہ ناپنے یا تولنے کی ضرورت نہیں۔ | ۳۴۵ ۳۴۱ | مالِ مباح جو بلا غدر عقدِ فاسد کے ذریعہ حاصل ہوا حلال ہے۔ | ۳۴۶ ۳۴۱ | مسلمان زمیندار کے ہندو کارندوں کو مسلمان کاشتکاروں سے مالگزاری کا سود وصول کرنا حرام اور زمیندار کا علم کے باوجود اس پر خاموش رہنا گناہ۔ | ۳۴۶

Fatawa Razawiyya | Volume 17 (17)

349 | Such a transaction can be made with Hindu subjects whether the landlord does it himself or his agents, but not by considering it interest, rather considering it permissible wealth. | 346 | Rulings on invalid contracts (uqud fasida) with apostates and Harbis (those at war with Muslims). 349 | Zaid took an interest-based loan for his daughter's wedding or his wife's Fateha. Amr helped Zaid by giving him jewelry to pawn. Khalid knowingly accompanied Zaid for this task. This transaction became forbidden in the state of ignorance (for Bahr), and all except Bahr became sinners. After gaining knowledge, if Bahr did not separate himself, he too becomes a sinner. | 347 | If there is a fear of ill-repute in acquiring permissible wealth through an invalid contract, such that the ignorant public will label them as interest-takers, then it should be avoided. 349 | Selling wheat, barley, and chickpeas with potatoes, sweet potatoes, and fruits with variation in quantity is permissible. | 347 | One should avoid both bad deeds and a bad name. 350 | The values of wheat and barley also differ from the rest of the genus. | 347 | A few more forms of invalid contracts with a Harbi. 350 | Trading wheat for wheat or barley for barley with excess or on credit is forbidden. If the genus is different, excess is permissible but credit is forbidden. | 348 | Selling currency notes with excess or on credit is permissible from everyone in every way. 350 | Two forms of an invalid (fasid) transaction. | 348 | If the note sold by the seller is returned by the buyer as the exact same note in price, the sale will not be valid. 351 | Bohras and Rafidis are apostates. | 348 | Interest is strictly forbidden; its income is forbidden and pure filth. 351 | Every apostate is an infidel, in fact, the worst kind of infidels. | 348 | Allah the Almighty is Pure and accepts only what is pure. 351 | Indian infidels are not Dhimmis or Musta'mins. | 348 | Riba (usury/ interest) is worse and more ignorant than adultery. 351 | Definition of Dhimmi and Musta'min. | 348 | Riba is a collection of seventy-three (73) sins, the least of which is like a man committing incest with his mother. 352 | In which situation it is permissible for a Muslim to take the property of which infidel. | 348 | If a poor person knows that forbidden (haram) wealth has been given to him, and he prays for the giver, and the giver says 'Amen', both must renew their Islam and their marriage. 352 | Treachery and breach of promise are absolutely forbidden even with any infidel. | 348 | If one takes interest while believing in its prohibition, it will still be forbidden.

३४९ | हिंदू असामियों के साथ ऐसा मामला किया जा सकता है, चाहे ज़मींदार स्वयं करे या उसका कारिंदा, लेकिन इसे ब्याज समझकर नहीं, बल्कि मुबाह (जायज़) माल समझकर। | ३४६ | मुर्तद और हर्बी (युद्धरत काफ़िर) के साथ दोषपूर्ण अनुबंधों (उकूद फासिदा) का हुक्म। ३४९ | ज़ैद ने अपनी बेटी की शादी या पत्नी के फातिहा के लिए ब्याजी ऋण लिया। उम्र ने ज़ैद को गिरवी रखने के लिए ज़ेवर देकर मदद की। खालिद जानबूझकर इस काम के लिए ज़ैद के साथ गया। अज्ञानता की स्थिति में बहर के लिए यह मामला हराम हुआ, और बहर के अलावा बाकी सब गुनहगार हुए। ज्ञान होने के बाद यदि बहर अलग नहीं हुआ, तो वह भी गुनहगार हुआ। | ३४७ | दोषपूर्ण अनुबंध के माध्यम से मुबाह (जायज़) माल प्राप्त करने में यदि बदनामी का डर हो कि अज्ञानी जनता उन्हें सूदखोर (ब्याजखोर) के रूप में प्रसिद्ध करेगी, तो इससे बचना चाहिए। ३४९ | गेहूं, जौ, चने के साथ आलू, शकरकंद और फलों की बिक्री कमी-बेशी के साथ जायज़ है। | ३४७ | बुरे काम और बुरे नाम दोनों से बचना चाहिए। ३५० | गेहूं और जौ के साथ बाकी जींस के मूल्य भी अलग-अलग हैं। | ३४७ | हर्बी के साथ दोषपूर्ण अनुबंधों की कुछ और सूरतें। ३५० | गेहूं को गेहूं के साथ और जौ को जौ के साथ घटा-बढ़ाकर या उधार बेचना हराम है। और अगर जींस अलग हो, तो घटा-बढ़ाकर बेचना जायज़ है लेकिन उधार हराम है। | ३४८ | नोट (मुद्रा) की बिक्री घटा-बढ़ाकर या उधार हर तरह से और हर किसी से जायज़ है। ३५० | फासिद (दोषपूर्ण) सौदे की दो सूरतें। | ३४८ | जो नोट विक्रेता ने बेचा, यदि खरीदार ने कीमत के रूप में वही नोट वापस कर दिया, तो बिक्री नहीं होगी। ३५१ | बोहरे और राफ़ज़ी मुर्तद (धर्मत्यागी) हैं। | ३४८ | ब्याज निश्चित रूप से हराम है; इसकी आय हराम और पूरी तरह से नापाक (खबीस) है। ३५१ | हर मुर्तद काफ़िर है, बल्कि काफ़िरों की सबसे बुरी किस्म है। | ३४८ | अल्लाह तआला पाक है और वह पाक ही को स्वीकार करता है। ३५१ | भारतीय काफ़िर ज़िम्मी और मुस्तअमिन नहीं हैं। | ३४८ | रिबा (ब्याज) व्यभिचार (ज़िना) से भी बुरा और जाहिलाना है। ३५१ | ज़िम्मी और मुस्तअमिन की परिभाषा। | ३४८ | रिबा तिहत्तर (७३) गुनाहों का संग्रह है, जिनमें से सबसे छोटा यह है कि आदमी अपनी माँ के साथ व्यभिचार करे। ३५२ | किस काफ़िर का माल किस सूरत में मुसलमान के लिए लेना जायज़ है। | ३४८ | यदि किसी फकीर को पता चले कि उसे हराम माल दिया गया है, फिर वह देने वाले के लिए दुआ करे और देने वाला 'आमीन' कहे, तो दोनों को अपने इस्लाम और निकाह का नवीनीकरण (तजदीद) करना चाहिए। ३५२

| विश्वासघात और वादाख़िलाफ़ी हर काफ़िर के साथ भी हराम है। | ३४८ | ब्याज की हरामियत को मानते हुए भी यदि ब्याज लिया, तो वह हराम ही होगा।

पृष्ठ ३५ / ७१५

۳۴۹ | ہندو آسامیوں سے ایسا معاملہ کیا جاسکتا ہے خواہ زمیندار خود کرے یا اس کے کارندے لیکن سود جان کر نہیں، مال مباح جان کر۔ | ۳۴۶ | مرتد اور حربی سے عقود فاسدہ کا حکم۔ ۳۴۹ | زید نے لڑکی کی شادی یا بیوی کی فاتحہ کے لئے سودی قرض لیا، عمرو نے گروی رکھنے کے لئے زید کو زیور دے کر مدد کی، خالد جان بوجھ کر اس کام کے لئے زید کے ساتھ ہوا، بحر لاعلمی میں یہ معاملہ حرام ہوا، اور بحر کے علاوہ سب گنہ گار ہوئے، اور علم کے بعد بحر الگ نہ ہوا تو وہ بھی گنہ گار۔ | ۳۴۷ | مال مباح کو عقد فاسد سے حاصل کرنے میں اگر بدنامی کا ڈر ہو کہ جاہل عوام سود خور مشہور کریں گے تو اس سے بچنا چاہئے۔ ۳۴۹ | گیہوں، جو، چنا سے آلو، شکر قند اور میووں کی بیع کمی بیشی کے ساتھ جائز ہے۔ | ۳۴۷ | برے کام اور بُرے نام دونوں سے بچنا چاہئے۔ ۳۵۰ | گیہوں اور جو سے بقیہ کی جنس کے ساتھ قدر بھی مختلف ہیں۔ | ۳۴۷ | عقود فاسدہ مع الحربی کی مزید چند صورتیں۔ ۳۵۰ | گیہوں گیہوں، جو جو میں تفاضل اور ادھار دونوں حرام، اور جنس میں اختلاف ہو تو تفاضل حلال اور ادھار حرام۔ | ۳۴۸ | نوٹ کی بیع تفاضل و نسیہ ہر طرح ہر ایک سے جائز ہے۔ ۳۵۰ | معاملہ فاسدہ کی دو صورتیں۔ | ۳۴۸ | جو نوٹ بائع نے فروخت کیا اگر مشتری نے بعینہ وہی نوٹ قیمت میں لوٹا دیا تو بیع نہ ہو گی۔ ۳۵۱ | بوہرے رافضی مرتد ہیں۔ | ۳۴۸ | سود حرام قطعی ہے اس کی آمدنی حرام اور خبیث محض ہے۔ ۳۵۱ | ہر مرتد کافر بلکہ کافروں کی بدتر قسم ہے۔ | ۳۴۸ | اللہ تعالیٰ پاک ہے اور پاک ہی کو قبول فرماتا ہے۔ ۳۵۱ | کفار ہندی ذمی و مستامن نہیں۔ | ۳۴۸ | ربا زنا سے بدتر و جاہلتر ہے۔ ۳۵۱ | ذمی اور مستامن کی تعریف۔ | ۳۴۸ | ربا تہتر ۷۳ گناہوں کا مجموعہ ہے جن میں سے کمتر یہ ہے کہ آدمی اپنی ماں سے زنا کرے۔ ۳۵۲ | کس کس کافر کا مال کس کس

صورت میں مسلمان کو لینا جائز ہے۔ | ۳۴۸ | فقیر کو معلوم ہو کہ اس کو مال حرام دیا گیا پھر وہ دینے والے کے لئے دعا کرے اور دینے والا آمین کہے دونوں تجدید اسلام اور تجدید نکاح کریں۔

۳۵۲ | غدر اور بدعہدی مطلقاً ہر کافر سے بھی حرام ہے۔ | ۳۴۸ | بیاج کی حرمت کا قائل ہوتے ہوئے بیاج لیا تو حرام ہی ہو گا۔

Fatawa Razawiya - Volume 17

Rulings / Contents	Page No.	Rulings / Contents	Page No.
It is forbidden to use interest income for the mosque.	352	Caution should be exercised with non-Muslims even in bills of exchange (Hundi).	356
To hope for reward after giving forbidden wealth (maal-e-haram) to a poor person is disbelief (kufr).	352	Lending money with a condition of excess is interest; this was prevalent at the time of the Quran's revelation.	356
If a poor person, knowing the wealth was forbidden, prayed for the giver, they too must renew their Islam.	352	Selling a ten-rupee note for a hundred is not interest.	356
The ruling on forbidden wealth is that it must be returned to the original owner; if they cannot be found, give it to a poor person as repentance, not as a favor.	352	A question regarding the common affliction of interest.	357
The ruling on wealth changes with a change in ownership/ territory.	352	No one has the right to question the reasons behind divine commands.	358
Taking extra after lending money is interest.	353	Today, subjects do not dare to criticize national laws.	359
Selling a rupee for 7 annas and taking payment later is permissible if the rupee is handed over in the same sitting.	353	Taking interest is absolutely a major sin (Gunah-e-Kabira).	359
'Bai Salam' (forward sale) is not for less than one month.	353	It is permissible to take interest under Shariah necessity.	359
	353	One should not eat at the homes of interest-takers, but it is not forbidden	359

Rulings / Contents	Page No.	Rulings / Contents	Page No.
Giving money today and receiving the purchased item later is 'Bai Salam'.		unless it is known that the food itself is from interest.	
Ruling on a complex form of interest.	355	In today's unrestrained commerce, only those will be caught who are heedless of the concern for the Day of Resurrection.	360
Consuming each other's wealth without a Shariah-compliant reason is forbidden according to the Quran.	355	Muslims were already commanded not to look towards the comforts of disbelievers.	360
Whatever extra is taken on a loan is interest.	355	Anything whose source as forbidden wealth is not specifically known can be accepted as a donation.	360
Proclaiming interest as one's right necessitates repentance, renewal of Islam, and renewal of marriage.	355	Paying more out of goodwill when repaying a loan is not interest.	361
There is no harm in buying grain during harvest to sell it when prices rise.	356	Obtaining permissible wealth from non-Muslims through invalid contracts is permissible here.	362
Hoarding that causes hardship for city dwellers is forbidden.	356	Ruling on the sale and purchase of company shares.	362
India is Dar-ul-Islam, however, the non-Muslims here are 'Harbi' (hostile), and it is permissible to gain profit from them.	356	Shares are not considered a 'thing' in Shariah; the money deposited in a company belongs to the depositor, and the sale of such money is 'Bai Sarf' (currency exchange) where hand-to-hand exchange is necessary and any increase or decrease is forbidden.	362

फ़तावा रज़विया - जिल्द 17

विषय / फ़तावा	पृष्ठ संख्या	विषय / फ़तावा	पृष्ठ संख्या
ब्याज की आमदनी मस्जिद में लगाना मना है।	३५२	हुंडी में गैर-मुस्लिमों से भी एहतियात बरती जाए।	३५६
हराम माल फ़क़ीर को देकर सवाब की उम्मीद रखना कुफ़्र है।	३५२	रुपया उधार देकर अधिक की शर्त रखना ब्याज है; कुरान के अवतरण के समय यही प्रचलित था।	३५६
फ़क़ीर ने यह जानते हुए कि उसने हराम माल दिया, उसके लिए दुआ की तो वह भी तजदीद-ए-इस्लाम करे।	३५२	दस का नोट सौ में बेचना ब्याज नहीं।	३५६
हराम माल का हुक्म यह है कि असल मालिक को वापस हो, वह न मिले तो फ़क़ीर को दे दे बतोर तौबा, न कि बतोर एहसान।	३५२	ब्याज की आम समस्या से संबंधित एक सवाल।	३५७
क्षेत्र बदलने से माल का हुक्म बदल जाता है।	३५२	ईश्वरीय आदेशों के कारणों को पूछने का किसी को अधिकार नहीं है।	३५८
रुपया उधार देकर अधिक लेना ब्याज है।	३५३	प्रजा आज राष्ट्रीय कानून की आलोचना करने का साहस नहीं करती।	३५९
रुपये को ७ आने में बेचना और मूल्य बाद में लेना उस स्थिति में जायज़ है जब रुपया उसी मजलिस में दे दिया गया हो।	३५३	ब्याज लेना पूर्णतः गुनाह-ए-कबीरा है।	३५९
एक महीने से कम के लिए 'बैय-ए-सलम' नहीं है।	३५३	शरीयत की ज़रूरत के अनुसार ब्याज लेना जायज़ है।	३५९
	३५३		३५९

विषय / फ़तावा	पृष्ठ संख्या
आज रुपया देकर बाद में वस्तु प्राप्त करना 'बैय-ए-सलम' है।	
ब्याज के एक जटिल मामले का हुक्म।	३५७
बिना किसी शरीयत के कारण एक-दूसरे का माल खाना कुरान के अनुसार मना है।	३५७
ऋण पर जो कुछ अतिरिक्त लिया जाए वह ब्याज है।	३५७
ब्याज को अपना अधिकार बताने से तौबा, तजदीद-ए-इस्लाम और तजदीद-ए-निकाह अनिवार्य है।	३५७
फसल के समय अनाज खरीदना ताकि महंगा होने पर बेचा जाए, इसमें कोई बुराई नहीं।	३५९
जिस जमाखोरी से शहरवासियों को تنگی हो वह वर्जित है।	३५९
हिंदुस्तान दारुल इस्लाम है, अलबत्ता यहाँ के गैर-मुस्लिम 'हर्बी' हैं, उनसे लाभ प्राप्त करना जायज़ है।	३५९
सूदखोरों के यहाँ खाना नहीं खाना चाहिए, लेकिन तब तक हराम नहीं जब तक यह मालूम न हो कि यह खाना वास्तव में ब्याज ही है।	
आज के बेरोकटोक व्यापार में वही फंसेगा जो कल कयामत की चिंता से बेपरवाह होगा।	३६०
मुसलमानों को पहले ही काफिरों के सुख-सुविधाओं की ओर न देखने का आदेश दिया गया है।	३९०
जिस चीज़ का स्पष्ट रूप से हराम माल होना ज्ञात न हो, उसे चंदा के रूप में लिया जा सकता है।	३६०
ऋण चुकाते समय अपनी ओर से सद्भावना के रूप में अधिक भुगतान करना ब्याज नहीं है।	३६१
यहाँ गैर-मुस्लिमों से वैध माल अवैध अनुबंधों के माध्यम से प्राप्त करना जायज़ है।	३९२
कंपनी के शेयरों की खरीद-फरोख्त का हुक्म।	३६२
शरीयत में शेयरों की कोई वस्तुगत हैसियत नहीं है; कंपनी में जमा किया गया रुपया जमाकर्ता का ही होता है, और ऐसे रुपयों की बिक्री 'बैय-ए-सर्फ़' है जिसमें हाथों-हाथ विनिमय आवश्यक है और कमी-बेशी हराम है।	३९२

موضوعات / مضامین	صفحہ نمبر
بیاج کی آمدنی مسجد میں لگانا منع ہے۔	۳۵۲
مال حرام فقیر کو دے کر ثواب کی امید رکھنا کفر ہے۔	۳۵۲
فقیر نے یہ معلوم ہوتے ہوئے کہ اس نے مال حرام دیا اس کے لئے دعا کی تو وہ بھی تجدید اسلام کرے۔	۳۵۲
مال حرام کا حکم یہ ہے کہ اصل مالک کو واپس ہو، وہ نہ ملے تو فقیر کو دے دے بطور توبہ نہ بطور احسان۔	۳۵۲
ملک بدلنے سے مال کا حکم بدل جاتا ہے۔	۳۵۲
	۳۵۳
ہنڈی میں غیر مسلموں سے بھی احتیاط برتی جائے۔	۳۵۶
روپیہ قرض دے کر زائد کی شرط کی یہ سود ہے، نزول قرآن کے وقت یہی رائج تھا۔	۳۵۶
دس کا نوٹ سو کو بیچنا سود نہیں۔	۳۵۶
سود کے ابتلائے عام سے متعلق ایک سوال۔	۳۵۷
احکام الٰہی کی وجہ دریافت کرنے کا کسی کو حق نہیں۔	۳۵۸
	۳۵۹

موضوعات / مضامین	صفحہ نمبر
روپیہ قرض دے کر زائد لینا سود ہے۔	۳۵۳
روپیہ کو ۷آنے میں بیچنا اور دام بعد میں لینا اس صورت میں جائز ہے کہ روپیہ اسی مجلس میں دے دیا ہو۔	۳۵۳
ایک مہینہ سے کم کے لئے بیع سلم نہیں۔	۳۵۳
آج روپیہ دے کر بعد میں مبیع لینا بیع سلم ہے۔	۳۵۳
سود کی ایک الجھی ہوئی صورت کا حکم۔	۳۵۵
بلاوجہ شرعی آپس میں ایک دوسرے کا مال کھانا ازروئے قرآن ممنوع ہے۔	۳۵۵
قرض پر جو کچھ زیادہ لیا جائے وہ سود ہے۔	۳۵۵
رعایا آج ملکی قانون پر حرف گیری کی جرات نہیں کرتے۔	
سود لینا مطلقاً گناہ کبیرہ ہے۔	۳۵۹
بضرورت شرعی سود لینا جائز ہے۔	۳۵۹
سود خوروں کے یہاں کھانا نہ کھانا چاہئے، لیکن حرام اس وقت تک نہیں جب تک یہ معلوم نہ ہو کہ یہ کھانا بعینہ سود ہے۔	۳۵۹
آج کل کی بے قید تجارت میں وہی گرفتار ہوگا جو کل قیامت کی فکر سے بے نیاز ہوگا۔	۳۶۰
مسلمانوں کو کافروں کی آسائش کی طرف نگاہ نہ اٹھانے کا پہلے ہی حکم دیا گیا ہے۔	۳۶۰
جس چیز کا بعینہ مال حرام ہونا معلوم نہ ہو چندہ میں لیا جاسکتا ہے۔	۳۶۰

موضوعات / مضامین	صفحہ نمبر
سود کو اپنا حق بتانے سے توبہ تجدید اسلام و تجدید نکاح لازم ہے۔	۳۵۵
فصل پر غلہ خرید ا کہ بیچ کر گراں بکے گا اس میں کوئی حرج نہیں۔	۳۵۶
جس روکنے سے شہر والوں پر تنگی ہو وہ منع ہے۔	۳۵۶
ہندوستان دارالاسلام ہے البتہ یہاں کے غیر مسلم حربی ہیں ان سے نفع حاصل کرنا جائز ہے۔	۳۵۶
قرض ادا کرتے وقت اپنی طرف سے بروصلہ کے طور پر زائد ادا کرنا سود نہیں ہے۔	۳۶۱
یہاں غیر مسلموں سے مال مباح عقود فاسدہ سے حاصل کرنا جائز ہے۔	۳۶۲
کمپنی کے حصص کی بیع شراء کا حکم۔	۳۶۲
حصص شرعاً کوئی چیز نہیں، کمپنی میں جتنا روپیہ جمع کیا وہ جمع کرنے والے کی ملک میں ہیں اور ایسے روپوں کی بیع بیع صرف ہے جس میں تقابض بدلین ضروری ہے اور کمی بیشی حرام ہے۔	۳۶۲

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

Page	Topic (Right Column)	Page	Topic (Left Column)
362	India is Dar al-Islam.	368	Interest on the profits of shares is forbidden (haram).
362	Taking anything from someone in the name of interest is forbidden.	368	Zakat is obligatory on the amount of money deposited in a company or its assets.
363	The wealth of enemies at war (Harbis) is not protected.	368	Warnings regarding the prohibition of interest.
363	It is not bad to acquire permissible (mubah) wealth through irregular contracts.	368	There is a curse on four types of people involved in interest-based business.
363	The wealth of a disbeliever who believed in Dar al-Harb but did not migrate to Dar al-Islam is also not protected.	368	It is forbidden not to return interest taken from someone to prevent them from extravagance and wasteful spending.
363	The wealth of a protected person (Musta'min) is secure, even if he is a disbeliever.	369	Interest-based business is forbidden even for the purpose of helping the poor.
364	In Dar al-Islam, the wealth of a Harbi who is not a protected person is insecure.	369	A question regarding insurance, which consists of four types of insurance.
365	Confirmation of the issue by the action of [Abu Bakr] as-Siddiq (may Allah be pleased with him); one should avoid suspicious places.	369	Insurance is not a legal Shar'i contract; it is gambling. This transaction with a non-Muslim company is conditioned on the absence of non-Shar'i constraints and achieving profit in every way.
366	Some of the permissible scenarios are legally a crime.	369	Selling grain as a loan at less than market price with mutual consent is permissible, provided the rate, price, and promise of payment are all determined at the time of sale.
366	These should also be avoided.	369	Would the above-mentioned sale in exchange for grain not be permissible?

Page	Topic (Right Column)	Page	Topic (Left Column)
366	Looking at clothes while imagining them as a woman with an evil eye is a sin.	370	If a loan was not mentioned at the time of sale, and it was decided after the contract that grain would be taken instead of the price owed by the buyer, this is permissible.
367	Question regarding shares of an insurance company, railway, and mills.	370	Definition of Dar al-Islam.
367	Detailed statement of the evils of such dealings.	371	Interest is not lawful (halal) from anyone; the usurer, the bond writer, and the broker are all sinners.
367	Four scenarios are possible for investing money in such dealings.	371	If both contract and cash do not combine on forbidden (haram) wealth, it is lawful.
368	Mingling with wrongdoers is inappropriate.		

फ़तवा रज़विया (जिल्द 17)

पृष्ठ	विषय (दायाँ कॉलम)
362	हिंदुस्तान दारुल इस्लाम है।
362	सूद के नाम से किसी से कुछ लेना हराम है।
363	युद्धरत शत्रुओं (अहले हरब) का माल सुरक्षित नहीं है।
363	दोषपूर्ण अनुबंधों (अक़ूद-ए-फासिदा) के माध्यम से मुबाह (अनुमेय) माल प्राप्त करना बुरा नहीं है।
363	वह काफिर जो दारुल हर्ब में ईमान लाया और दारुल इस्लाम की ओर हिजरत नहीं की, उसका माल भी असुरक्षित है।
363	शरण प्राप्त (मुस्तामिन) काफिर का माल सुरक्षित है, चाहे वह काफिर ही क्यों न हो।
364	दारुल इस्लाम में भी गैर-शरण प्राप्त हर्बी का माल असुरक्षित है।
365	सिद्दीक-ए-अकबर (रजी अल्लाहु अन्हु) के अमल से मसले की पुष्टि; संदेह के स्थानों से बचना चाहिए।
366	अनुमेय स्थितियों में से कुछ कानूनी रूप से अपराध हैं।

पृष्ठ	विषय (बायाँ कॉलम)
368	शेयरों के मुनाफे पर ब्याज हराम है।
368	कंपनी में जमा किए गए पैसे या उसकी संपत्ति पर ज़कात फ़र्ज़ है।
368	सूद की हुरमत (निषेध) के संबंध में चेतावनियाँ।
368	सूद के कारोबार में शामिल चार प्रकार के व्यक्तियों पर लानत है।
368	किसी को फिजूलखर्ची से रोकने के लिए उससे लिया गया सूद वापस न करना हराम है।
369	गरीबों की मदद के लिए भी सूदी कारोबार हराम है।
369	बीमा से संबंधित प्रश्न जिसमें बीमा की चार सूरतें शामिल हैं।
369	बीमा शरई अनुबंध नहीं है, यह जुआ है। गैर-मुस्लिम कंपनी के साथ यह सौदा इस शर्त के साथ सीमित है कि कोई गैर-शरई पाबंदी न हो और हर तरह से लाभ हो।
369	आपसी सहमति से बाजार भाव से कम दर पर अनाज कर्ज के रूप में बेचना जायज है, बशर्ते कि

पृष्ठ	विषय (दायाँ कॉलम)	पृष्ठ	विषय (बायाँ कॉलम)
			दर, कीमत और भुगतान का वादा बिक्री के समय ही तय हो जाए।
366	इनसे भी बचना चाहिए।	369	क्या अनाज के बदले उपरोक्त बिक्री जायज नहीं होगी?
366	कपड़े को औरत समझकर बुरी नजर से देखना गुनाह है।	370	बिक्री के समय ऋण का जिक्र नहीं हुआ था, और अनुबंध के बाद यह तय हुआ कि खरीदार पर बकाया कीमत के बदले अनाज लिया जाएगा, यह जायज है।
367	बीमा कंपनी या रेलवे और मिलों के शेयरों से संबंधित प्रश्न।	370	दारुल इस्लाम की परिभाषा।
367	ऐसे लेनदेन की बुराइयों का विस्तृत विवरण।	371	सूद किसी से भी हलाल नहीं है; सूदखोर, दस्तावेज़ लेखक और दलाल सभी गुनहगार हैं।
367	ऐसे लेनदेन में पैसा लगाने की चार संभावित स्थितियाँ।	371	यदि हराम धन पर अनुबंध और नकद दोनों जमा न हों, तो वह हलाल है।
368	गलत काम करने वालों के साथ मेल-जोल अनुपयुक्त है।		

صفحہ	موضوع (دایاں کالم)
۳۶۲	ہندوستان دارالاسلام ہے۔
۳۶۲	سود کے نام سے کسی سے کچھ لینا حرام ہے۔
۳۶۳	اہل حرب کا مال غیر معصوم ہے۔
۳۶۳	مال مباح کا عقود فاسدہ کے ذریعہ حاصل کرنا برانہیں ہے۔
۳۶۳	جو کافر دارالحرب میں ایمان لایا اور دارالاسلام کی طرف ہجرت نہ کی اس کا مال بھی غیر معصوم ہے۔
۳۶۳	مستامن کافر ہی کیوں نہ ہو اس کا مال محفوظ ہے۔
۳۶۴	دارالاسلام میں بھی حربی غیر مستامن کا مال غیر محفوظ ہے۔
۳۶۵	

صفحہ	موضوع (بایاں کالم)
۳۶۸	حصص کے منافع کا سود حرام ہے۔
۳۶۸	جتنا روپیہ کمپنی میں جمع کیا یا اس کا جو مال ہو اس پر زکوٰۃ فرض ہے۔
۳۶۸	حرمت سود کی وعیدیں۔
۳۶۸	سود کے کاروبار میں شریک چار قسم کے آدمیوں پر لعنت ہے۔
۳۶۸	کسی کو اسراف اور فضول خرچی سے روکنے کے لئے اس سے لیا ہوا سود واپس نہ کرنا حرام ہے۔
۳۶۹	غریبوں کی مدد کی خاطر بھی سودی کاروبار حرام ہے۔
۳۶۹	بیمہ سے متعلق سوال جو بیمہ کی چار صورتوں پر مشتمل ہے۔
۳۶۹	بیمہ عقد شرعی نہیں ، یہ جوا ہے۔ غیر مسلم کمپنی سے یہ معاملہ اس شرط کے ساتھ مقید ہے

صفحہ موضوع (دایاں کالم)

مسئلہ کی تصدیق عمل صدیق رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے تہمت کی جگہوں سے بچنا چاہئے۔

۳۶۶ مباح صورتوں میں سے کچھ صورتیں قانوناً جرم ہیں۔

۳۶۶ ان سے بھی بچنا چاہئے۔

۳۶۶ کپڑے کو عورت سمجھ کر نظر بد سے دیکھنا گناہ ہے۔

۳۶۷ بیمہ کمپنی یا ریلوے اور ملوں کے حصہ سے سوال۔

۳۶۷ ایسے معاملات کے قبائح کا تفصیلی بیان۔

۳۶۷ ایسے معاملات میں روپیہ لگانے کی چار صورتیں ممکن ہیں۔

صفحہ موضوع (بایاں کالم)

کہ کوئی غیر شرعی پابندی نہ ہو اور ہر طرح اپنا نفع ہو۔

غلہ بطور قرض بازار بھاؤ سے کم باہمی

۳۶۹ تراضی کے ساتھ بیچنا جائز ہے جبکہ نرخ و قیمت و وعدہ ادائے قیمت سب وقت بیع متعین کردئیے جائیں۔

۳۶۹ مذکورہ بالا بیع غلہ کے بدلہ کیا جائز نہ ہوگی۔ بیع کے وقت قرض کا ذکر نہ ہوا، اور جو دام

۳۷۰ مشتری کے ذمہ آیا اس کے لئے عقد کے بعد یہ طے ہوا کہ زرِ ثمن کے بدلہ غلہ لے لیں گے، یہ جائز ہے۔

۳۷۰ دارالاسلام کی تعریف۔

۳۷۱ سود کسی سے حلال نہیں ، سود خور، اس کا تمسک لکھنے والا ، اس کی دلالی کرنے والا سب گنہگار ہے۔

۳۷۱ حرام مال پر عقد و نقد دونوں جمع نہ ہوں تو حلال۔

صفحہ موضوع (دایاں کالم)	صفحہ موضوع (بایاں کالم)
۳۶۸	غلط کاروں سے خلاء ملاء نامناسب ہے۔

Fatawa Rizwia Volume 17 (17)

Topic	Page	Topic	Page
Loan (Qarz) and borrowing (Aariyat) both have the same ruling; real profit on them is interest (Riba).	371	Ruling on social interaction with negligent Muslims who engage in invalid contracts (uqud fasida) with non-Muslims here.	381
According to Sharia, participation in both profit and loss is necessary in a partnership, whereas in these transactions, there is participation only in profit.	371	Boycott of usurers (those who deal in interest).	382
An impossible form of gift (Hiba).	372	A form of deriving benefit from a borrower (Mustaqriz).	382
Ruling on excess money from a bank.	375	Mortgage (Rahn) and lease (Ijarah) are contradictory contracts.	382
Ruling on excess money from a savings bank.	376	Two different types of possession on a single object at a single time is impossible.	382
Ruling on a bank transaction.	377	If a borrower (Mustaqriz) wants to benefit a lender (Muqriz) from any of their properties, let them hire the lender as an employee and pay more than the usual compensation.	383
If a Muslim is a partner in a bank, receiving excess money is prohibited.	378	Some Sharia-compliant forms of deriving benefit from a borrower.	383
Took a loan from the bank multiple times, and it charged interest; now if the bank gives excess money, one can take it considering it as recovery of their right.	378	Some permissible forms of deriving benefit from a borrower.	384
	379	Someone sold a hundred-rupee note for one hundred and twenty-five for one year;	384

Topic	Page	Topic	Page
Wealth obtained from interest is impure property (Milk-e-Khabees).		the contract became valid. If the price is paid after six months, one can only take twelve and a half. The excess will be forbidden (haram).	
Impure property must be returned to its original owner, and if they aren't available, given to the poor; it is forbidden for oneself to consume.	379	For things other than notes, if something is sold above market rate due to credit, and the buyer pays the price early, taking more than the amount for elapsed days is forbidden.	385
If heirs know specifically that certain property is impure, they should do the same; if it's unknown or all is mixed, it is permissible for the heirs.	379	A borrower leaves something as trust with the creditor and fixes a monthly amount for its protection and supervision, but care should be taken that the wage should not exceed the price of that thing. This is also a form of benefiting from the borrower.	385
One should boycott open usurers.	380	Temporary mortgage is interest. Methods to avoid interest.	386
Prohibitions of marriage and life insurance.	381	Taking interest is forbidden, and giving it is excused in case of Sharia-defined necessity.	387

फ़तावा रज़विया जिल्द 17 (१७)

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
ऋण (क़र्ज़) और उधार (आर्यत) दोनों का एक ही हुक्म है; उन पर वास्तविक लाभ ब्याज (सूद) है।	३७१	यहाँ गैर-मुस्लिमों के साथ अमान्य अनुबंध (उक़ूद-ए-फ़ासिदा) का व्यवहार करने वाले लापरवाह मुसलमानों से सामाजिक व्यवहार का हुक्म।	३८१
शरीयत के अनुसार साझेदारी (शिर्कत) में लाभ और हानि दोनों में भागीदारी आवश्यक है, जबकि इन लेन-देन में केवल लाभ में भागीदारी होती है।	३७१	सूदखोरों (ब्याज लेने वालों) का सामाजिक बहिष्कार (मुक़ातअ)।	३८२
हिबा (उपहार) का एक असंभव रूप।	३७२	उधार लेने वाले (मुस्तक़रिज़) से लाभ उठाने का एक रूप।	३८२
बैंक से प्राप्त अतिरिक्त राशि का हुक्म।	३७५	गिरवी (रहन) और पट्टा (इजारा) दोनों परस्पर विरोधी अनुबंध हैं।	३८२
सेविंग बैंक की अतिरिक्त राशि का हुक्म।	३७६	एक ही समय में एक ही वस्तु पर दो अलग-अलग प्रकार के कब्जे असंभव हैं।	३८२
बैंक के एक लेन-देन का हुक्म।	३७७	यदि उधार लेने वाला (मुस्तक़रिज़) अपनी किसी संपत्ति से ऋणदाता (मुक़रिज़) को लाभ पहुँचाना चाहता है, तो ऋणदाता को नौकर रख ले और सामान्य से अधिक मुआवजा दे।	३८३
यदि बैंक में कोई मुसलमान भागीदार है, तो अतिरिक्त राशि प्राप्त करना मना है।	३७८	उधार लेने वाले से लाभ उठाने के कुछ शरीयत सम्मत तरीके।	३८३
बैंक से कई बार ऋण लिया, उसने ब्याज वसूला; अब यदि वह	३७८	उधार लेने वाले से लाभ उठाने के कुछ वैध तरीके।	३८४

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
अतिरिक्त राशि दे, तो उसे अपने अधिकार की वसूली समझकर लिया जा सकता है।			
ब्याज का धन अशुद्ध संपत्ति (मिल्क-ए-ख़बीस) है।	३७९	किसी ने सौ रुपये का नोट एक साल के लिए सवा सौ में बेचा; अनुबंध वैध हो गया। छह महीने बाद कीमत चुका दी जाए, तो केवल साढ़े बारह ही ले सकता है। अतिरिक्त हराम होगा।	३८४
अशुद्ध संपत्ति को उसके असली मालिक को देना चाहिए, और यदि वह न हो तो गरीब को देना अनिवार्य है; स्वयं खाना हराम है।	३७९	नोट के अलावा कोई और चीज़, जिसे उधार के कारण बाजार भाव से अधिक पर बेचा गया हो, यदि खरीदार समय से पहले दाम चुका दे, तो बीते हुए दिनों की मात्रा से अधिक हराम है।	३८५
यदि वारिसों को निश्चित धन के बारे में पता हो कि वह अशुद्ध है, तो वे भी वही करें; और यदि पता न हो या सब मिला हुआ हो, तो वारिसों के लिए वैध है।	३७९	कर्जदार लेनदार के पास अपनी कोई चीज़ अमानत के तौर पर रखे और उसकी सुरक्षा व निगरानी का मासिक शुल्क तय कर दे, लेकिन ध्यान रहे कि मजदूरी उस चीज़ की कीमत से अधिक नहीं होनी चाहिए। यह भी उधार लेने वाले से लाभ उठाने का एक रूप है।	३८५
खुलेआम सूदखोरी करने वालों का बहिष्कार करना चाहिए।	३८०	अस्थायी गिरवी (वक़्‌फ़ رهن रहन) ब्याज है। ब्याज से बचने के तरीके।	३८६
विवाह और जीवन बीमा की वर्जना (हुरमत)।	३८१	ब्याज लेना हराम है और शरीयत की आवश्यकता के समय देना माफ है।	३८७

فتاوی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

موضوع	صفحہ
قرض وعاریت ان دونوں کا ایک حکم ہے ان پر نفع حقیقی سود ہے۔	۳۷۱
بطور شرکت شرعاً اس میں نفع اور نقصان دونوں میں شرکت ضروری ہے، اور ان معاملات میں صرف نفع میں شرکت ہوتی ہے۔	۳۷۱
ہبہ کی ایک ناممکن صورت۔	۳۷۲
بینک کی زائد رقم کا حکم۔	۳۷۵
سیونگ بینک کی زائد رقم کا حکم۔	۳۷۶
بینک کے ایک معاملہ کا حکم۔	۳۷۷
	۳۷۸
کاہلی مسلمان جو یہاں غیر مسلموں سے عقود فاسدہ کا معاملہ کرتے ہیں ان سے معاشرتی برتاؤ کا حکم۔	۳۸۱
سود خوروں سے مقاطعہ۔	۳۸۲
مستقرض سے انتفاع کی ایک صورت	۳۸۲
رہن اور اجارہ دونوں عقد منافی ہیں۔	۳۸۲
شے واحد پر وقت واحد میں دو مختلف قبضے محال ہے۔	۳۸۲
مستقرض اپنی کسی جائداد سے مقرض کو فائدہ پہنچانا چاہے تو مقرض کو نوکر رکھے لے اور معمول سے زیادہ معاوضہ دے۔	۳۸۳
مستقرض سے انتفاع کی چند شرعی صورتیں۔	۳۸۳

موضوع	صفحہ
بینک میں کوئی مسلمان شریک ہو تو زائد رقم وصول کرنا منع ہے۔	
بینک سے کئی بار قرض لیا، اس نے سود وصول کیا اب وہ زائد رقم دے تو اپنے حق کی وصولی سمجھ کر لے سکتا ہے۔	۳۷۸
سود کا مال ملک خبیث ہے۔	۳۷۹
ملک خبیث اس کے اصل مالک کو وہ نہ ہو تو فقیر کو دینا ضروری ہے خود کھانا حرام ہے۔	۳۷۹
ورثاء کو مال متعین کے بارے میں ملک خبیث ہونا معلوم ہو تو وہ بھی وہی کریں اور معلوم نہ	۳۷۹
مستقرض سے انتفاع کی چند جائز صورتیں۔	۳۸۴
کسی نے سو روپے کا نوٹ سوا سو میں ایک سال کے لئے بیچا عقد جائز ہوا چھ مہینہ بعد قیمت دے دے تو صرف ساڑھے بارہ لے سکتا ہے۔ زائد حرام ہوگا۔	۳۸۴
نوٹ کے علاوہ کوئی چیز جس کو ادھار کی وجہ سے بازار بھاؤ سے زائد پر بیچا مشتری وقت سے پہلے دام ادا کر دے تو گزشتہ ایام کی مقدار سے زائد حرام ہے۔	۳۸۵
قرض خواہ کے پاس قرضدار اپنی کوئی چیز امانت رکھے اور اس کی حفاظت و نگرانی کا ماہانہ کچھ مقرر کر دے، مگر یہ خیال رہے کہ	۳۸۵

موضوع	صفحہ
ہو یا سب مخلوط ہوں تو ورثہ کے لئے جائز ہے۔	
علانیہ سود خوروں کا مقاطعہ کرنا چاہئے۔	۳۸۰
شادی اور زندگی کے بیمہ کی حرمت۔	۳۸۱
اجرت اس چیز کی قیمت سے زائد نہ ہو نا چاہئے	
مستقرض سے انتفاع کی یہ بھی ایک صورت ہے۔	
وقتی رہن سود ہے۔ سود سے بچنے کے طریقے ۔	۳۸۶
سود لینا حرام اور ضرورت شرعیہ کے وقت دینا معاف۔	۳۸۷

- Way to avoid interest. (387) | Meaning of wealth. (398)
- It is not permissible to take profits on government loans, considering them interest. (388) | Evaluation entails value. (398)
- People of piety should abstain from it so that the ignorant do not accuse them. (389) | The detail of notes in the speech of the Imams. (399)
- A deal for chickpeas at harvest time with extra quantity; money given, now it's not permissible to take extra money instead of chickpeas. (389) | Rebuttal of Gangohi Sahab. (399)
- Legally, no loan can be given without interest; if principal and interest are collected through a lawsuit, the Shariah ruling is that the creditor should take his principal amount and return the rest to the debtor. (390) | Mention of the heavy prices of notes. (402)
- Deobandi answer. (390) | Written letters have no value. (403)
- Rebuttal of a Deobandi fatwa regarding the deduction of interest equal to the expenses of a lawsuit. (390) | Four types of wealth and jurisprudential discussions on them. (404)
- Warnings on taking interest. (391) | First type. (404)
- Zaid's money was owed by someone; Amr took guarantee. Amr refused Zaid's demand, Zaid filed a case in court. Now Amr asked for time, Zaid gave time on condition that Amr pays for the court expenses incurred by Zaid. Amr paid, then also paid the original debt. Now, is Amr entitled to recover the court expenses from Zaid? (391) | Second type. (405)
- Ruling on purchasing promissory notes with mosque funds. (393) | Submission to Ali Al-Shahi. (405)
- Kifl-ul-Faqeeh-il-Fahem fi Ahkam Qirtas-id-Dirham (395) | Third type. (406)
- (Research-based answer to twelve questions from the scholars of Makkah al-Mukarramah regarding banknotes)
- Explanation of the reality of the note and that it is wealth in itself, not a bond of wealth. (398) | Supplement to Tanveer-ul-Absar. (406)
- Inquiry containing twelve questions. (398) | Fourth type. (408)
- Reality of the note. (398) | A note is a commodity, i.e., wealth, not a certificate because it is a piece of paper. (408)
- A note is a piece of paper. (398) | In terminology, a note is a price because it is treated like one. (408)

- Paper is valuable wealth. (398)

Page 39 of 715

- सूद से बचने का तरीका। (३८७) | माल का अर्थ। (३९८)
- सरकारी ऋण पर मिलने वाले लाभ को सूद समझकर लेना जायज़ नहीं है। (३८८) | मूल्यांकन में मूल्य शामिल है। (३९८)
- परहेज़गार लोगों को इससे भी बचना चाहिए ताकि अज्ञानी उन पर आरोप न लगाएँ। (३८९) | इमामों के प्रवचन में नोट का ज़िक्र। (३९९)
- फसल पर बाज़ार भाव से अधिक दर से चने का सौदा हुआ, रुपया दिया गया, अब चने के बजाय अतिरिक्त रुपया लेना जायज़ नहीं। (३८९) | गंगोही साहब का खंडन। (३९९)
- कानूनी तौर पर कोई ऋण बिना ब्याज के नहीं दिया जा सकता; यदि मुक़दमे से मूल और ब्याज वसूल हुआ, तो शरीयत का हुक्म है कि ऋणदाता अपना मूल ले और शेष वापस कर दे। (३९०) | नोटों की भारी कीमतों का वर्णन। (४०२)
- देवबंदी का उत्तर। (३९०) | लिखित पत्रों का कोई मूल्य नहीं है। (४०३)
- मुक़दमे के खर्च के बराबर सूद घटाने के देवबंदी फ़तवे का खंडन। (३९०) | माल की चार किस्में और उन पर फ़िक़ही चर्चा। (४०४)
- सूद लेने पर चेतावनियाँ। (३९१) | पहली किस्म। (४०४)
- ऋण गारंटी और अदालत के खर्चों से संबंधित एक मामला। (३९१) | दूसरी किस्म। (४०५)
- मस्जिद की रक़म से प्रॉमिसरी नोट खरीदने का हुक्म। (३९३) | अली अल-शाही की सेवा में निवेदन। (४०५)
- किफ़्ल-उल-फ़क़ीह-इल-फ़ाहम फ़ी अहकाम क़िर्तास-इद-दिरहम (३९५) | तीसरी किस्म। (४०६)
- (नोट के बारे में मक्का मुकर्रमा के विद्वानों के बारह सवालों का शोधपूर्ण उत्तर)
- नोट की वास्तविकता का वर्णन और यह कि वह स्वयं माल है न कि माल का प्रमाण। (३९८) | तनवीर-उल-अब्सार पर पूरक टिप्पणी। (४०६)
- बारह प्रश्नों पर आधारित इस्तेफ़्ता। (३९८) | चौथी किस्म। (४०८)
- नोट की हक़ीक़त। (३९८) | नोट एक सामग्री यानी माल है, सनद नहीं क्योंकि यह कागज़ का टुकड़ा है। (४०८)

- नोट कागज़ का एक टुकड़ा है। (३९८) | शब्दावली में नोट 'थमन' (मूल्य) है क्योंकि इसके साथ थमन जैसा व्यवहार होता है। (४०८)
- कागज़ मूल्यवान माल है। (३९८)

पृष्ठ ३९/७१५

- سود سے بچنے کی سبیل۔ (۳۸۷) | مال کا معنی۔ (۳۹۸)
- گورنمنٹ قرض پر جو منافع دے سود سمجھ کر لینا جائز نہیں۔ (۳۸۸) | تقویم مالیت کو مستلزم ہے۔ (۳۹۸)
- اہل تقویٰ کو اس سے بھی احتراز چاہئے کہ جاہل متہم نہ کریں۔ (۳۸۹) | کلام ائمہ میں نوٹ کا جزئیہ۔ (۳۹۹)
- فصل پر بازار بھاؤ سے تین سیر زائد فی روپیہ کے حساب سے چنے کا معاملہ ہوا، روپیہ دے دیا، اب چنے کے بجائے زائد روپیہ لینا جائز نہیں۔ (۳۸۹) | گنگوہی صاحب کا رد۔ (۳۹۹)
- قانوناً کوئی قرض بے سود نہیں دیا جا سکتا نالش کے ذریعہ اصل مع سود وصول ہوا تو حکم شرعی یہ ہے کہ قرض خواہ اپنی اصل رقم لے کر باقی قرضدار کو واپس کرے۔ (۳۹۰) | نوٹ کی بھاری قیمتوں کا بیان۔ (۴۰۲)
- جواب دیوبندی۔ (۳۹۰) | مکتوب کی مالیت نہیں ہے۔ (۴۰۳)
- نالش کے اخراجات کے برابر سود سے وضع کرنے کے ایک دیوبندی فتوے کی تردید۔ (۳۹۰) | مال کی چار قسمیں اور ان میں فقہی مباحث۔ (۴۰۴)
- سود لینے پر وعیدیں۔ (۳۹۱) | قسم اول۔ (۴۰۴)
- زید کا روپیہ کسی پر باقی تھا عمرو نے ضمانت لی، زید کے مطالبہ پر عمرو نے انکار کیا، زید نے قاضی کے یہاں دعویٰ کیا اب عمرو نے مہلت چاہی اس نے اس شرط پر مہلت دی کہ کچہری کی دوڑ دھوپ میں میرا جو خرچ ہوا عمر و ادا کرے اس نے ادا کر دیا، پھر اصل

قرض بھی دے دیا تو اب عمرو زید سے کچہری کی دوڑ دھوپ والا تاوان پانے کا حقدار ہے۔ (۳۹۱) | قسم دوم۔ (۴۰۵)

- مسجد کی رقم سے پر امیسری نوٹوں کی خریداری کا حکم۔ (۳۹۳) | معروضہ علی الشاھی۔ (۴۰۵)
- کفل الفقیه الفاهم فی احکام قرطاس الدراهم۔ (۳۹۵) | قسم سوم۔ (۴۰۶)
- (کاغذ نوٹ کے بارے میں علماء مکہ مکرمہ کے بارہ سوالوں کا تحقیقی جواب)
- حقیقت نوٹ کا بیان اور یہ کہ وہ خود مال ہے نہ کہ مال کا تمسک ہے۔ (۳۹۸) | تطفل علی تنویر الابصار۔ (۴۰۶)
- بارہ سوالات پر مشتمل استفتاء۔ (۳۹۸) | قسم چہارم۔ (۴۰۸)
- نوٹ کی حقیقت۔ (۳۹۸) | نوٹ ایک متاع یعنی مال ہے سند نہیں کیونکہ ایک پرچہ کاغذ ہے۔ (۴۰۸)
- نوٹ کاغذ کا ایک ٹکڑا ہے۔ (۳۹۸) | نوٹ اصطلاح میں ثمن ہے کیونکہ اس کے ساتھ ثمن جیسا معاملہ کیا جاتا ہے۔ (۴۰۸)
- کاغذ مال متقوم ہے۔ (۳۹۸)

Fatawa-e-Razviya Volume 17 (17)

Page No.	Title	Title	Page No.
409	Answer to first question.	If 'Qunyah' opposes famous books, it will not be acceptable.	415
409	Answer to second question.	If 'Qunyah' opposes rules, it will not be acceptable unless some other reliable transmission is found in its support.	415
409	Zakat on (currency) notes.	Credit is given to the original source, not the transmitter.	415
410	Answer to third question.	The oddity of a problem is not removed by the multiplicity of transmissions when a single original source is the ultimate origin of all of them.	416
410	A note can be 'Mahr' (Dower).	The benefit of using the letter 'ta' of oneness (wahdat) in the word 'kaghadat' in the phrases of jurists.	417
410	Answer to fourth question.	Refutation of a branch of 'Qunyah' through textual evidence (naqli).	417
410	The ruler of Islam will cut off the hand for stealing a note.	Refutation of a branch of 'Qunyah' through rational evidence (aqli).	417
410	Answer to fifth question.	The vastness of the country of India and the limits of its length and breadth.	418
410	Compensation for a note will be given in notes.	Abandoning a habit is to cause enmity with one's own self.	420
411	Answer to sixth question.	Begging is a disgrace and haram (forbidden).	420
411	Selling notes for cash is permissible.	Snatching others' property carries severe wrath and punishment.	420
411			421

Page No.	Title	Title	Page No.
	Excellent jurisprudential issues, discussions, and investigations.	In the legislation of trade (bay'), the objective is the survival of the needy persons and fulfilling their needs with excellent management.	
412	The author's research is that for the validity of trade, it is not necessary to have a price of at least one paisa.	Value (maliyat) is also established by some people making it property.	422
412	In 'taqawwum' (monetary value), the current state of a thing is considered, not its original state.	An explanation of an issue from 'Qunyah'.	422
413	For value (maliyat), it is not necessary that a thing be considered property everywhere.	Answer to seventh question.	424
415	Excellence over Tanwir.	Exchanging a note for goods is absolute.	424
415	Some benefits of the etiquettes of a Mufti.	Answer to eighth question.	424
415	It is well known that the narrations of 'Qunyah' are often weak.		

फतावा-ए-रज़विया जिल्द हफ़्तदहुम (17)

पृष्ठ संख्या	शीर्षक	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
409	प्रथम प्रश्न का उत्तर।	जब 'कुन्याह' प्रसिद्ध पुस्तकों का विरोध करे तो स्वीकार्य नहीं होगी।	415
409	द्वितीय प्रश्न का उत्तर।	जब 'कुन्याह' नियमों का विरोध करे तो स्वीकार्य नहीं होगी जब तक कि इसके समर्थन में कोई अन्य विश्वसनीय उल्लेख न मिल जाए।	415
409	नोट पर ज़कात।	एतबार मूल स्रोत का होता है, न कि नकल करने वाले का।	415
410	तृतीय प्रश्न का उत्तर।	उल्लेखों की अधिकता से मसले की विचित्रता दूर नहीं होती, जब उन सबका अंतिम स्रोत एक ही व्यक्ति हो।	416
410	नोट मेहर (स्त्रीधन) हो सकता है।	फ़ुक़हा (न्यायविदों) की इबारतों में 'काग़ज़त' शब्द में 'ता-ए-वहदत' (एकवचन प्रत्यय) लाने का लाभ।	417
410	चतुर्थ प्रश्न का उत्तर।	नक़्ली (प्रमाणित) दलील से 'कुन्याह' की एक उपशाखा का खंडन।	417
410	नोट की चोरी पर इस्लामी शासक हाथ काटेगा।	अक़्ली (तार्किक) दलील से 'कुन्याह' की एक उपशाखा का खंडन।	417
410	पंचम प्रश्न का उत्तर।	मुल्के हिंद (भारत देश) की विशालता और इसकी लंबाई-चौड़ाई की सीमाएँ।	418
410	नोट का हर्जाना नोट ही दिया जाएगा।	आदत छोड़ना स्वयं के साथ शत्रुता करना है।	420
411	षष्ठ प्रश्न का उत्तर।	भीख माँगना अपमानजनक और हराम है।	420

पृष्ठ संख्या	शीर्षक	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
411	नोट को पैसों से बेचना जायज़ है।	दूसरों का माल छीनने में सख्त प्रकोप और सज़ा है।	420
411	उत्कृष्ट फ़िक़ही मसले, चर्चाएँ और शोध।	क्रय-विक्रय (बय) के विधान में उत्तरदायी ज़रूरतमंदों का अस्तित्व और उत्तम व्यवस्था के साथ उनकी ज़रूरतों को पूरा करना है।	421
412	लेखक का शोध कि व्यापार की वैधता के लिए कम से कम एक पैसे की कीमत होना अनिवार्य नहीं है।	मालियत (मूल्य) कुछ लोगों द्वारा माल बनाने से भी सिद्ध हो जाती है।	422
412	तक़व्वुम (मौद्रिक मूल्य) में वस्तु की वर्तमान स्थिति देखी जाती है, यह नहीं देखा जाता कि मूल रूप में क्या था।	मसला-ए-कुन्याह की एक व्याख्या।	422
413	मालियत (मूल्य) के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह वस्तु हर जगह माल समझी जाए।	सप्तम प्रश्न का उत्तर।	424
415	तनवीर पर अनुग्रह।	नोट को सामान से बदलना पूर्ण (मुतलक़) है।	424
415	मुफ्ती के शिष्टाचार के कुछ लाभ।	अष्टम प्रश्न का उत्तर।	424
415	कुन्याह प्रसिद्ध है कि इसके वर्णन प्रायः कमज़ोर होते हैं।		

صفحہ نمبر	عنوان	صفحہ نمبر	عنوان
۴۰۹	جواب سوال اول۔	۴۱۵	قنیہ جب مشہور کتابوں کی مخالفت کرے تو مقبول نہ ہو گی۔
۴۰۹	جواب سوال دوم۔	۴۱۵	قنیہ جب قواعد کی مخالفت کرے تو مقبول نہ ہوگی جب تک اس کی تائید میں کوئی اور نقل معتمد نہ پائی جائے۔
۴۰۹	نوٹ پر زکوۃ	۴۱۵	اعتبار منقول عنہ کا ہوتا ہے نہ کہ ناقل کا۔ نقلوں کی کثرت سے مسئلہ کی غرابت دفع
۴۱۰	جواب سوال سوم۔	۴۱۶	نہیں ہوتی جبکہ ایک ہی منقول عنہ ان سب کا منتہی ہو۔
۴۱۰	نوٹ مہر ہو سکتا ہے۔	۴۱۷	عبارات فقہاء میں لفظ کاغذۃ میں تاء وحدت لانے کا فائدہ۔
۴۱۰	جواب سوال چہارم۔	۴۱۷	دلیل نقلی سے فرع قنیہ کارد۔
۴۱۰	نوٹ کی چوری پر حاکم اسلام ہاتھ کاٹے گا۔	۴۱۷	فرع قنیہ کا دلیل عقلی سے رد۔
۴۱۰	جواب سوال پنجم۔	۴۱۸	

صفحہ نمبر	عنوان	صفحہ نمبر	عنوان
			ملک ہند کی وسعت اور اس کے طول و عرض کی حدیں۔
۴۱۰	نوٹ کا تاوان نوٹ دیا جائے گا۔	۴۲۰	عادت کا چھوڑنا خود اپنے ساتھ عداوت کرنا ہے۔
۴۱۱	جواب سوال ششم۔	۴۲۰	بھیک مانگنا ذلت و حرام ہے۔
۴۱۱	نوٹ داموں سے بیچنا جائز ہے۔	۴۲۰	دوسروں کا مال چھیننے میں سخت غضب اور سزا ہے۔
۴۱۱	عمدہ فقہی مسائل و مباحث و تنقیحات۔	۴۲۱	بیع کی مشروعیت میں مکلف محتاجوں کی بقا اور عمدہ انتظام کے ساتھ ان کی حاجتوں کو پورا کرنا ہے۔
۴۱۲	مصنف کی تحقیق کہ صحت بیع کے لئے کم سے کم ایک پیسہ کی قیمت ہونا کچھ ضرور نہیں۔	۴۲۲	مالیت بعض کے مال بنانے سے بھی ثابت ہو جاتی ہے۔
۴۱۲	تقوم میں شیئ کی موجودہ حالت دیکھی جاتی ہے، یہ نہیں دیکھا جاتا کہ اصل میں کیا تھا۔	۴۲۲	مسئلہ قنیہ کی ایک توجیہ۔
۴۱۳		۴۲۴	جواب سوال ہفتم۔

صفحہ نمبر	عنوان	صفحہ نمبر	عنوان
	مالیت کے لئے ضروری نہیں کہ وہ چیز ہر جگہ مال سمجھی جائے۔		
۴۱۵	تنویر پر تفضل۔	۴۲۴	نوٹ کو متاع سے بدلنا مطلق ہے۔
۴۱۵	آداب مفتی کے بعض فوائد۔	۴۲۴	جواب سوال ہشتم۔
۴۱۵	قنیہ مشہور ہے کہ اس کی روایتیں ضعیف ہوا کرتی ہیں۔		

445 | It is permissible to give currency notes as a loan. | 424 | 423 | A general rule on which all matters of the chapter on usury (Riba) depend. | 423 446 | Answer to the ninth question. | 425 | 425 | The habit of Maulana Abdul Hayy Lucknawi. | 425 446 | It is permissible to sell a note for a loan in exchange for rupees. | 425 | 425 | Refutation of Maulana Lucknawi 1. | 425 447 | Selling notes for rupees is not a currency exchange contract (Bai' Sarf) such that mutual possession by both parties is a condition. | 425 | 425 | Refutation of Maulana Lucknawi 2. | 425 447 | Definition of currency exchange (Bai' Sarf). | 425 | 425 | Refutation of Maulana Lucknawi 3. | 425 447 | Being a medium of exchange (Thaman) in notes and coins occurred due to terminology/convention. | 425 | 425 | Refutation of Maulana Lucknawi 4. | 425 448 | Selling debt for debt is prohibited. | 425 | 425 | Inequality in the value of usurious goods is permissible. | 425 448 | Investigation into the matter that exchanging copper coins (fulus) for gold/silver (naqdayn) when one is on credit is permissible; and the research on the issue by Qari al-Hidaya (R.A). | 429 | 429 | Three answers to the doubt of the Lucknawi gentleman. | 429 449 | Weakening of the meaning that scholars understood from the texts of Jami' al-Saghir, and Allama Shami's support of Qari al-Hidaya from it, and critiques (tatafful) on al-Dhakhira, al-Bahr, etc. | 430 | 430 | One dirham can be sold for 112 ashrafis, rather even for a thousand ashrafis. | 430 449 | Critique 2. | 437 | 437 | Statement of a doubt. | 437 449 | Critique 3. | 438 | 438 | Exchanging a usurious item for its own kind when the lesser quantity is accompanied by cash or something else is the 'last issue'. | 438 450 | Presentation to Allama Shami 1. | 441 | 441 | Inequality in value is mildly disliked (Makruh Tanzihi). | 441 452 | Presentation to Allama Shami 2. | 441 | 441 | First answer. | 441 452 | Critiques on Allama Qari al-Hidaya. | 441 | 441 | Second answer. | 441 453 | Answer to the tenth question. | 441 | 441 | Third answer. | 441 455 | Advance payment contract (Salam) is permissible for notes. | 441 | 441 | The fatwa is absolutely based on the Imam's opinion. | 441 455 | Investigation of this issue and clarification of Imam Muhammad's (R.A) statement. | 441 | 441 | Fourth answer. | 441 457 | Critique on 'Fath al-Qadir'. | 442 | 442 | Different applications of the term 'disliked' (Karahat). | 442 459 | Answer to the eleventh question. | 445 | 445 | Proofs that inequality in value is not prohibitively disliked (Makruh Tahrimi). | 445 - | Selling notes for more or less than face value is permissible. | 445 | 445 | - | 445

जिल्द 17 | फ़तावा रज़विया

445 | नोट कर्ज देना जायज़ है। | 424 | 423 | एक सामान्य नियम जिस पर ब्याज (रिबा) के अध्याय के सभी मसले आधारित हैं। | 423 446 | सवाल नंबर नौ का जवाब। | 425 | 425 | मौलवी अब्दुल हई लखनवी साहब की आदत। | 425 446 | रुपये के बदले में नोट कर्ज बेचना जायज़ है। | 425 | 425 | मौलाना लखनवी का खंडन 1 | 425 447 | रुपयों के बदले नोट बेचना 'बैअ् सर्फ़ नहीं कि दोनों पक्षों का कब्ज़ा (तकाबुज़-ए-तरफ़ैन) शर्त हो। | 425 | 425 | मौलाना लखनवी का खंडन 2 | 425 447 | बैअ् सर्फ़ की परिभाषा। | 425 | 425 | मौलाना लखनवी का खंडन 3 | 425 447 | नोट और पैसों में मूल्य (समन) होना शब्दावली के कारण आकस्मिक हुआ। | 425 | 425 | मौलाना लखनवी का खंडन 4 | 425 448 | कर्ज को कर्ज के बदले बेचना वर्जित है। | 425 | 425 | ब्याज वाली संपत्तियों (अमवाल-ए-रिबविया) में मूल्य की कमी-बेशी जायज़ है। | 425 448 | इस विषय की जाँच कि पैसों (फुलूस) को स्वर्ण/चांदी (नक़दैन) से बदलना जबकि एक उधार हो, जायज़ है। और क़ारी अल-हिदाया (र.अ.) के मसले की व्याख्या। | 429 | 429 | लखनवी साहब की शंका के तीन उत्तर। | 429 449 | उस अर्थ की कमज़ोरी जो विद्वानों ने 'जामिअ् सग़ीर' के शब्दों से समझा और अ़ल्लामा शामी ने क़ारी अल-हिदाया की उससे पुष्टि की, और ज़खीरा व बहर आदि पर आलोचना (ततफ़्फ़ुल)। | 430 | 430 | एक दिरहम को 112 अशरफ़ी बल्कि हज़ार अशरफ़ी के बदले बेच सकते हैं। | 430 449 | आलोचना (ततफ़्फ़ुल) 2. | 437 | 437 | एक शंका का वर्णन। | 437 449 | आलोचना (ततफ़्फ़ुल) 3. | 438 | 438 | ब्याज वाली चीज़ का अपनी प्रजाति से बदलना जब कम मात्रा वाले नकद के साथ और कोई चीज़ हो, यह आख़िरी मसला है। | 438 450 | अ़ल्लामा शामी की सेवा में निवेदन 1. | 441 | 441 | मूल्य में अंतर के साथ 'मकरूह-ए-तन्ज़ीही' (नापसंदीदा) है। | 441 452 | अ़ल्लामा शामी की सेवा में निवेदन 2. | 441 | 441 | पहला जवाब। | 441 452 | अ़ल्लामा क़ारी अल-हिदाया पर आलोचनाएँ। | 441 | 441 | दूसरा जवाब। | 441 453 | सवाल नंबर दस का जवाब। | 441 | 441 | तीसरा जवाब। | 441 455 | नोट में सलम (अग्रिम सौदा) जायज़ है। | 441 | 441 | फ़तवा पूर्णतः इमाम के कथन पर है। | 441 455 | इस मसले की जाँच और इमाम मुहम्मद (र.अ.) के कथन का स्पष्टीकरण। | 441 | 441 | चौथा जवाब। | 441 457 | फ़तह अल-क़दीर पर आलोचना। | 442 | 442 | 'मकरूह' (नापसंद) शब्द के विभिन्न प्रयोग। | 442 459 | सवाल नंबर ग्यारह का जवाब। | 445 | 445 |

इस बात के प्रमाण कि मूल्य में अंतर 'मकरूह-ए-तहरीमी' (कड़ाई से वर्जित) नहीं है। | 445 - | नोट को कम और ज़्यादा दाम पर बेचना जायज़ है। | 445 | 445 | - | 445

पेज 41 ऑफ़ 715

۴۴۵ | نوٹ قرض دینا جائز ہے۔ | ۴۲۴ | ۴۲۳ | ایک عام قاعدہ جس پر باب ربا کے تمام مسائل کا مدار ہے۔ | ۴۲۳ ۴۴۶ | جواب سوال نہم۔ | ۴۲۵ | ۴۲۵ | مولوی عبدالحہ لکھنوی صاحب کی عادت۔ | ۴۲۵ ۴۴۶ | روپیہ کے بدلے میں نوٹ قرض بیچنا جائز ہے۔ | ۴۲۵ | ۴۲۵ | مولانا لکھنوی کا رد ۱ | ۴۲۵ ۴۴۷ | روپیوں کے بدلے نوٹ بیچنا بیع صرف نہیں کہ تقابض طرفین شرط ہو۔ | ۴۲۵ | ۴۲۵ | مولانا لکھنوی کا رد ۲ | ۴۲۵ ۴۴۷ | بیع صرف کی تعریف | ۴۲۵ | ۴۲۵ | مولانا لکھنوی کا رد ۳ | ۴۲۵ ۴۴۷ | نوٹ اور پیسوں میں ثمن ہونا اصطلاح کے سبب سے عارض ہوا۔ | ۴۲۵ | ۴۲۵ | مولانا لکھنوی کا رد ۴ | ۴۲۵ ۴۴۸ | دین کو دین سے بیچنا ممنوع ہے۔ | ۴۲۵ | ۴۲۵ | اموال ربویہ میں مالیت کی کمی بیشی جائز ہے۔ | ۴۲۵ ۴۴۸ | اس امر کی تحقیق کہ فلوس کو نقدین سے بدلنا جبکہ ایک ادھار ہو جائز ہے۔ اور قاری الہدایہ رحمۃ اللہ علیہ کے مسئلہ کی تصنیف۔ | ۴۲۹ | ۴۲۹ | لکھنوی صاحب کے شبہ کے تین جواب۔ | ۴۲۹ ۴۴۹ | اس معنی کی تضعیف جو علماء نے جامع صغیر کی عبارات سے سمجھا اور علامہ شامی نے قاری الہدایہ کی اس سے تائید کی، اور ذخیرہ و بحر وغیرہ پر تطفل۔ | ۴۳۰ | ۴۳۰ | ایک درم کو ۱۱۲ اشرفی بلکہ ہزار اشرفی کے بدلے بیچ سکتے ہیں۔ | ۴۳۰ ۴۴۹ | تطفل ۲۔ | ۴۳۷ | ۴۳۷ | ایک شبہ کا بیان۔ | ۴۳۷ ۴۴۹ | تطفل ۳۔ | ۴۳۸ | ۴۳۸ | ربوی کا اپنی جنس سے بدلنا جب کم والے نقد کے ساتھ اور کوئی چیز ہو مسئلہ اخری ہے۔ | ۴۳۸ ۴۵۰ | معروضہ بر علامہ شامی ۱ | ۴۴۱ | ۴۴۱ | مالیت میں تفاضل کے ساتھ کراہت تنزیہی ہے۔ | ۴۴۱ ۴۵۲ | معروضہ بر علامہ شامی ۲ | ۴۴۱ | ۴۴۱ | پہلا جواب۔ | ۴۴۱ ۴۵۲ | علامہ قاری الہدایہ پر تطفلات۔ | ۴۴۱ | ۴۴۱ | دوسرا جواب۔ | ۴۴۱ ۴۵۳ | جواب سوال دہم۔ | ۴۴۱

| ۴۴۱ | تیسرا جواب۔ | ۴۴۱ ۴۵۵ | نوٹ میں سلم جائز ہے۔ | ۴۴۱ | ۴۴۱ | فتویٰ مطلقاً امام کے قول پر ہے۔ | ۴۴۱ ۴۵۵ | اس مسئلہ کی تحقیق اور امام محمد رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ کے قول کی تنقیح۔ | ۴۴۱ | ۴۴۱ | چوتھا جواب۔ | ۴۴۱ ۴۵۷ | فتح القدیر پر تطفل | ۴۴۲ | ۴۴۲ | کراہت کے مختلف اطلاقات۔ | ۴۴۲ ۴۵۹ | جواب سوال یاز دہم۔ | ۴۴۵ | ۴۴۵ | اس امر کے دلائل کہ مالیت میں تفاضل مکروہ تحریمی نہیں ہے۔ | ۴۴۵ - | نوٹ کو کم اور زیادہ بیچنا جائز ہے۔ | ۴۴۵ | ۴۴۵ | - | ۴۴۵

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

Topic	Page	Topic	Page
Method to avoid interest 1	461	Fifth evidence that disparity in value is not 'Makruh Tahrimi'.	472
Method to avoid interest 2	461	'Makruh Tahrimi' is a minor sin, and 'Tanzihi' is not a sin.	473
Method to avoid interest 3	462	An indication of the error of the scholar of Lucknow.	473
Method to avoid interest 4	463	Sixth evidence that disparity in value is not 'Makruh Tahrimi'.	474
Method to avoid interest 5	463	It is permissible to sell one paisa for a hundred specific paisas.	474
Comments (Tatfil) on Khaniyah.	463	Seventh evidence that disparity in value is not 'Makruh Tahrimi'.	474
Explanation of 'Bai Ina'.	463	Comments (Tatfil) on Al-Fath.	475
Method to avoid interest 6	465	Eighth evidence that disparity in value is not 'Makruh Tahrimi'.	476
Method to avoid interest 7	465	Ninth evidence that disparity in value is not 'Makruh Tahrimi'.	476
'Bai Ina' is 'Makruh Tanzihi'.	465	Tenth evidence that disparity in value is not 'Makruh Tahrimi'.	476
The difference between the definitions of 'Mursal' in the science of Principles of Jurisprudence and the science of Hadith.	466	First response to the discourse of Sheikh Abdul Haleem.	477
Evaluation of the Hadith regarding 'Ina'.	467	Something being obligatory in itself is one thing, and being obligatory for something else is another thing.	477
A Mujtahid mentioning someone in a chain of narration is proof of the authenticity of that Hadith.	468	Sometimes 'Mustahabb' is also called 'Wajib'.	477
Which is the best profession?	469	Second response.	477

Topic	Page	Topic	Page
Striving in buying and selling is Sunnah.	470	What is meant by 'Wajib' in the Hadith "Six rights are obligatory for a Muslim upon another Muslim".	478
Second evidence that disparity in value is not 'Makruh Tahrimi'.	471	Third response to the discourse of Sheikh Abdul Haleem.	479
There are four scenarios of increase or decrease in quantity, and all four are permissible in case of different species.	471	Mention of an incident from the Ottoman State.	479
Third evidence that disparity in value is not 'Makruh Tahrimi'. Fourth evidence.	471	Fifth rebuttal of the scholar of Lucknow.	482

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
ब्याज से बचने का उपाय 1	461	मूल्य में अंतर के'मक़रूह तहरीमी' न होने का पांचवां प्रमाण।	472
ब्याज से बचने का उपाय 2	461	'मक़रूह तहरीमी' छोटा पाप है और 'तंज़ीही' पाप नहीं है।	473
ब्याज से बचने का उपाय 3	462	लखनऊ के विद्वान की त्रुटि की ओर संकेत।	473
ब्याज से बचने का उपाय 4	463	मूल्य में अंतर के'मक़रूह तहरीमी' न होने का छठा प्रमाण।	474
ब्याज से बचने का उपाय 5	463	एक पैसे को सौ निश्चित पैसों के बदले बेचना जायज़ है।	474
खानिया पर टिप्पणियाँ (ततफ़ुल)।	463	मूल्य में अंतर के'मक़रूह तहरीमी' न होने का सातवां प्रमाण।	474
बैअ-ए-ईना का बयान।	463	अल-फ़तह पर टिप्पणियाँ (ततफ़ुल)।	475
ब्याज से बचने का उपाय 6	465	मूल्य में अंतर के'मक़रूह तहरीमी' न होने का आठवां प्रमाण।	476
ब्याज से बचने का उपाय 7	465	मूल्य में अंतर के'मक़रूह तहरीमी' न होने का नौवां प्रमाण।	476
बैअ-ए-ईना 'मक़रूह तंज़ीही' है।	465	मूल्य में अंतर के'मक़रूह तहरीमी' न होने का दसवां प्रमाण।	476
उलूम-ए-फ़िक्ह और उलूम-ए-हदीस में 'मुरसल' की परिभाषाओं में अंतर।	466	शेख अब्दुल हलीम के कथन का पहला उत्तर।	477
हदीस-ए-ईना की परख।	467	किसी चीज़ का स्वयं अनिवार्य होना और बात है और दूसरी चीज़ के लिए अनिवार्य होना और बात है।	477

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
एक मुज्तहिद का किसी को सनद (श्रृंखला) में उल्लेख करना उस हदीस की सत्यता का प्रमाण है।	468	कभी 'मुस्तहब' को भी 'वाजिब' कहते हैं।	477
सबसे उत्तम व्यवसाय कौन सा है?	469	दूसरा उत्तर।	477
खरीद-बिक्री में सौदेबाजी करना सुन्नत है।	470	हदीस "मुसलमान के मुसलमान पर छह हक़ वाजिब हैं" में वाजिब से क्या अर्थ है।	478
मूल्य में अंतर के'मक़रूह तहरीमी' न होने का दूसरा प्रमाण।	471	शेख अब्दुल हलीम के कथन का तीसरा उत्तर।	479
मात्रा में कमी-बेशी की चार स्थितियाँ हैं, और अलग-अलग प्रजाति की स्थिति में चारों हलाल हैं।	471	उस्मानिया साम्राज्य की एक घटना का उल्लेख।	479
मूल्य में अंतर के'मक़रूह तहरीमी' न होने का तीसरा प्रमाण। चौथा प्रमाण।	471	लखनऊ के विद्वान का पांचवां खंडन।	482

موضوع	صفحہ
سود سے بچنے کی تدبیر ۱	۴۶۱
سود سے بچنے کی تدبیر ۲	۴۶۱
سود سے بچنے کی تدبیر ۳	۴۶۲
سود سے بچنے کی تدبیر ۴	۴۶۳
سود سے بچنے کی تدبیر ۵	۴۶۳
خانیہ پر تطفل۔	۴۶۳
بیع عینہ کا بیان۔	۴۶۳
سود سے بچنے کی تدبیر ۶	۴۶۵
سود سے بچنے کی تدبیر ۷	۴۶۵

موضوع	صفحہ
مالیت میں تفاضل کے مکروہ تحریمی نہ ہونے کی پانچویں دلیل۔	۴۷۲
مکروہ تحریمی گناہ صغیرہ ہے اور تنزیہی گناہ نہیں ہے۔	۴۷۳
فاضل لکھنوی کی لغزش کی طرف اشارہ۔	۴۷۳
مالیت میں تفاضل مکروہ تحریمی نہ ہونے کی چھٹی دلیل۔	۴۷۴
ایک پیسہ سو معین پیسہ کے بدلے میں بیچنا جائز ہے۔	۴۷۴
مالیت میں تفاضل کے مکروہ تحریمی نہ ہونے کی ساتویں دلیل۔	۴۷۴
تطفل علی الفتح۔	۴۷۵
مالیت میں تفاضل کے مکروہ تحریمی نہ ہونے کی آٹھویں دلیل۔	۴۷۶
	۴۷۶

موضوع	صفحہ
بیع عینہ مکروہ تنزیہی ہے۔	۴۶۵
علم اصول فقہ اور علم حدیث میں مرسل کی تعریفوں میں فرق ہے۔	۴۶۶
حدیث عینہ کی پرکھ۔	۴۶۷
مجتہد کا کسی کو سند میں ذکر کرنا اس حدیث کی صحت کی دلیل ہے۔	۴۶۸
سب سے افضل کسب کون سا ہے۔	۴۶۹
خرید و فروخت میں کشش کرنا سنت ہے۔	۴۷۰
مالیت میں تفاضل کے مکروہ تحریمی نہ ہونے کی دوسری دلیل۔	۴۷۱
	۴۷۱
مالیت میں تفاضل کے مکروہ تحریمی نہ ہونے کی نویں دلیل۔	
مالیت میں تفاضل کے مکروہ تحریمی نہ ہونے کی دسویں دلیل۔	۴۷۶
شیخ عبدالحلیم کے کلام کا پہلا جواب۔	۴۷۷
کسی چیز کا خود واجب ہونا اور بات ہے اور دوسری چیز کے لئے واجب ہونا اور بات ہے۔	۴۷۷
کبھی مستحب کو بھی واجب کہتے ہیں۔	۴۷۷
دوسرا جواب۔	۴۷۷
حدیث "مسلمان کے مسلمان پر چھ حق واجب ہیں" میں واجب سے کیا مراد ہے۔	۴۷۸
شیخ عبدالحلیم کے کلام کا تیسرا جواب۔	۴۷۹
دولت عثمانیہ کے واقعہ کا ذکر۔	۴۷۹

موضوع	صفحہ
مقدار میں کمی بیشی کی چار صورتیں ہیں، اور اختلاف جنس کی صورت میں چاروں حلال ہیں۔	
مالیت میں تفاضل کے مکروہ تحریمی نہ ہونے کی تیسری دلیل۔ چوتھی دلیل	۴۷۱
فاضل لکھنوی کا پانچواں رد۔	۴۸۲

Fatawa Rizvia, Volume Seventeen (17)

Topic	Page	Topic	Page
Seven more refutations against Fazil Lakhnawi.	483	First refutation.	507
The thirteenth great refutation of Fazil Lakhnawi's delusion.	484	Meaning is taken into consideration in contracts.	507
Statement explaining that when different currencies are equal in value and circulation, one has the choice to pay the price in whichever one wants, and it does not necessarily follow that exchanging them with mutual excess or deficiency is prohibited when their type or value differs.	486	Giving a greater return for a gift is a Sunnah.	508
The fourteenth refutation regarding the statement that Fazil Lakhnawi's view leads to the conclusion that usury (interest) is permissible.	490	In return for one she-camel as a vow, the Prophet (peace and blessings be upon him) granted six she-camels.	508
Fifteenth refutation.	491	Such a rectification in a contract is void by consensus if it alters the original intention of the contracting parties.	509
Answer to the twelfth question.	493	It is not permissible to designate a 'Murabaha' sale as 'Tawliyah'.	509
Selling a ten-rupee note for twelve on a one-year promise by installments is permissible; it is not usury.	493	Second refutation.	509
Giving extra from one's own side while repaying a loan.	494	A 'Tamassuk' (bond/document) is from one specific person to another specific person.	509
The borrower buying the debt from the creditor.	494	A note is undoubtedly wealth (Mal); calling it a 'Tamassuk' (bond) is sheer blindness.	509

Topic	Page	Topic	Page
Methods to avoid usury.	494	Third refutation.	511
Evidence for such measures from the Quran and Hadith.	496	The existence or absence of debt is not contingent upon the existence or absence of a bond document.	511
Fatwa of Hazrat Maulana Irshad Husain Sahib (May Allah have mercy on him), which the author referenced in the answer to the eleventh question.	502	In a 'Hawala' (debt transfer), the debtor is called 'Muheel', the creditor 'Muhtal', and the person to whom the debt was transferred for collection is called 'Muhtal Alaih' or 'Muhweel'.	512
Kasir-us-Safeeh-il-Wahim fi Ibdal-e-Qirtas-id-Diraham, Ad-Dhayl-ul-Manoot li Risalat-in-Not (Detailed refutation of the fatwas of Maulvi Rashid Gangohi and Maulana Abdul Hayy Lakhnawi regarding paper notes).	505	Eleventh refutation.	516
Refutation of foolishness.	506	Twelfth refutation.	517
Refutation of a fatwa by Gangohi.	507	The intention of trade in coins is only necessary when they do not circulate as a price (money); otherwise, in money, there is no need for trade intention at all, even if it is technical money.	517

फ़तावा रज़विया, जिल्द सत्रहवीं (17)

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
फाज़िल लखनवी पर सात और आपत्तियां (रद्द)।	483	पहली आपत्ति (रद्द)।	507
फाज़िल लखनवी के भ्रम का तेरहवां महान खंडन।	484	अनुबंधों (अक़ूद) में अर्थों का विचार किया जाता है।	507
इस बात का विवरण कि जब विभिन्न मुद्राएं मूल्य और प्रचलन में समान हों, तो विकल्प है कि जिसमें चाहे कीमत चुका दे, और इससे यह आवश्यक नहीं होता कि उनके प्रकार या मूल्य भिन्न होने पर उनमें पारस्परिक कमी या अधिकता के साथ विनिमय वर्जित हो।	486	उपहार (हदिया) में अधिक प्रतिफल देना सुन्नत है।	508
चौदहवां खंडन इस बात के विवरण में कि फाज़िल लखनवी के कथन से यह आवश्यक होता है कि सूद (ब्याज) हलाल हो।	490	एक ऊंटनी की मन्नत के बदले हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने छह ऊंटनी प्रदान फरमाईं।	508
पंद्रहवां खंडन।	491	अनुबंध (अक़्द) में ऐसा सुधार आम सहमति से शून्य है जिससे अनुबंध करने वालों का मूल उद्देश्य बदल जाए।	509
बारहवें प्रश्न का उत्तर।	493	बिक्री (बै) को 'मुराबहा' से 'तौवलिया' करार देना जायज़ नहीं है।	509
दस रुपये का नोट बारह के बदले साल भर के लिए वादे पर किस्तों में बेचना जायज़ है; यह सूद नहीं है।	493	दूसरा खंडन।	509
ऋण चुकाते समय अपनी ओर से अधिक देना।	494	तम्सुक (प्रमाण-पत्र) एक विशिष्ट व्यक्ति से दूसरे विशिष्ट व्यक्ति के लिए होता है।	509
ऋण लेने वाले का ऋणदाता से ऋण खरीद लेना।	494	नोट निश्चित रूप से संपत्ति (माल) है, इसे तम्सुक कहना अंधापन है।	509

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
सूद से बचने के उपाय।	494	तीसरी आपत्ति (रद्द)।	511
ऐसे उपायों का कुरआन और हदीस से प्रमाण।	496	ऋण (दैन) का होना या न होना तम्सुक (प्रमाण-पत्र) के होने या न होने पर निर्भर नहीं है।	511
हज़रत मौलाना इरशाद हुसैन साहब (रहमतुल्लाह अलैहि) का फतवा जिसका संदर्भ लेखक ने ग्यारहवें प्रश्न के उत्तर में दिया।	502	हवाला (ऋण स्थानांतरण) में कर्जदार 'मुहील' कहलाता है और लेनदार 'मुहताल', और जिस पर ऋण हस्तांतरित किया गया ताकि उससे वसूल किया जा सके, उसे 'मुहताल अलैह' या 'मुहवील' कहते हैं।	512
कासिरुस सफ़ीह अल-वाहिम फ़ी इबदालि क़िर्तास अद-दराहिम, अज़-ज़ैलुल मनूत लि-रिसालतिन-नूत (कागज़ी नोटों के संबंध में मौलवी रशीद गंगोही और मौलाना अब्दुल हई लखनवी के फतवों का विस्तृत खंडन)।	505	ग्यारहवां खंडन।	516
मूर्खता का खंडन।	506	बारहवां खंडन।	517
गंगोही के एक फतवे का खंडन।	507	पैसों में व्यापार की नियत की आवश्यकता तभी है जब वे मूल्य के रूप में न चलते हों, अन्यथा मूल्य में व्यापार की नियत की बिल्कुल आवश्यकता नहीं है, चाहे वह तकनीकी मूल्य ही क्यों न हो।	517

فتاوی رضویہ، جلد ہفدہم (۱۷)

عنوان	صفحہ
فاضل لکھنوی پر مزید سات رد۔	۴۸۳
فاضل لکھنوی کے وہم کا تیرھواں عظیم رد۔	۴۸۴
اس امر کا بیان کہ مختلف نقد جب مالیت اور چلن میں برابر ہوں تو اختیار ہے جس میں چاہے قیمت ادا کرے اور اس میں یہ لازم نہیں آتا کہ ان کی جنس یا قدر مختلف ہونے پر ان میں باہمی کمی بیشی پر بدلنا منع ہے۔	۴۸۶
چودھواں رد اس امر کے بیان میں کہ فاضل لکھنوی کے قول پر لازم آتا ہے کہ سود حلال ہو۔	۴۹۰
پندرھواں رد۔	۴۹۱
جواب سوال دوازدہم۔	۴۹۳

عنوان	صفحہ
پہلا رد۔	۵۰۷
عقود میں معانی کا اعتبار ہے۔	۵۰۷
ہدیہ میں زیادہ عوض دینا سنت ہے۔	۵۰۸
ایک اونٹنی نذر کے بدلے حضور علیہ الصلوۃ والسلام نے چھ ناقے عطا فرمائے۔	۵۰۸
عقد میں ایسی تصحیح بالاجماع باطل ہے جس سے اصل عاقدین کی تغیر ہوتی ہو۔	۵۰۹
بیع کو مرابحہ سے تولیہ قرار دینا جائز نہیں۔	۵۰۹
دوسرا رد۔	۵۰۹

عنوان	صفحہ
دس روپے کا نوٹ بارہ کے بدلے سال بھر کے لئے وعدہ پر قسط بندی سے بیچنا جائز ہے سود نہیں ہے۔	
قرض ادا کرتے وقت اپنی طرف سے زائد دینا۔	۴۹۴
قرض لینے والے کا قرضخواہ سے قرض خرید لینا۔	۴۹۴
سود سے بچنے کی ترکیبیں۔	۴۹۴
ایسی تدبیروں کا قرآن وحدیث سے ثبوت۔	۴۹۶
حضرت مولانا ارشاد حسین صاحب رحمتہ اللہ تعالیٰ علیہ کا فتوی جس کا حوالہ مصنف نے جواب سوال یازدہم میں دیا۔	۵۰۲
کاسر السفیہ الواہم فی ابدال قرطاس الدراہم، الذیل المنوط لرسالۃ النوط (کاغذی نوٹ سے متعلق مولوی رشید گنگوہی اور مولانا عبدالحی لکھنوی کے فتووں کا تفصیلی رد)	۵۰۵

عنوان	صفحہ
تمسک ایک معین سے دوسرے معین کے لئے ہوتا ہے۔	۵۰۹
نوٹ بالیقین مال ہے اس کو تمسک کہنا اندھا پن ہے۔	۵۰۹
تیسرا رد۔	۵۱۱
تمسک کے وجود وعدم پر دین کا وجود عدم موقوف نہیں ہوتا۔	۵۱۱
حوالہ میں مدیون محیل کہلاتا ہے اور دائن محتال، اور جس پر قرض اتارا گیا کہ اس سے وصول کر لینا اس کو محتال علیہ یا محویل کہتے ہیں۔	۵۱۲
گیارہواں رد۔	۵۱۶

عنوان	صفحہ	عنوان	صفحہ
رد سفاہت۔	۵۰۶	بارھواں رد۔	۵۱۷
		پیسوں میں نیت تجارت کی ضرورت اسی وقت ہے جب وہ ثمن ہو کر نہ	
گنگوہی کے ایک فتوی کا رد۔	۵۰۷	چلتے ہوں ورنہ ثمن میں ہرگز نیت تجارت کی حاجت نہیں اگر چہ ثمن اصطلاحی ہو۔	۵۱۷

Fatawa Razawiyya | Volume 17

Page | Topic 518 | Thirteenth refutation. 518 | Fourteenth refutation. 518 | Fifteenth refutation. 519 | Sixteenth refutation. 519 | Seventeenth refutation. 519 | Eighteenth refutation. 520 | Refutation of a misconception. 520 | One hundred and twenty refutations against the scholar of Lucknow. 520 | Maulvi Lakhnawi Sahib writes 'He is the Corrector' at the beginning of every answer, which is incorrect for three reasons. 520 | Literal meaning of 'Musawwib' and 'Tasweeb'. 521 | It is appropriate to give notice about something undesirable or disliked. 521 | There is a legal difference between natural and conventional currency. 522 | Being within the ruling of a thing does not necessitate unity in its genus and value. 522 | A note is inherently a conventional currency (Thaman Istilahi). 522 | Natural and conventional currencies are distinct entities. 522 | Essential identity is impossible between distinct entities. 522 | The pure Sharia does not allow the 'Andiya' (personal opinion) based religion of madmen. 522 | Natural currency is restricted to two types: gold and silver. 523 | Items with fixed value (Qaimi) and items sold by sample (Mithli) cannot be the same. 524 | That which is united with something united is itself united. 525 | Acceptance of the rightful party and unity of genus have a relationship of general and specific in one aspect. 525 | The absence of an excuse does not imply that an excuse could not exist. 527 | Mere unity of genus does not make disparity (tafadul) forbidden; unity of value/measure (qadr) is also required. 527 | A note has no measure (qadr) at all; it is neither volumetric (makil) nor weighed (mauzun), but rather counted (ma'dud). 528 | The tree is known by its fruit. 528 | Money is one genus under which there are two kinds: natural (khalqi) and conventional (istilahi). 528 | The types of conventional money are notes, coins, and cowrie shells. Natural money is one genus under which there are two kinds: gold and silver. 528 | In Sharia, 'genus' is a universal category whose individual members have different purposes. 528 | A note is a true species whose individual members have agreed-upon purposes. 529 | A true species cannot be identical to any genus. 529 | A necessary change negates the identity of the necessitated thing. 531 | A sublime subtlety. 534 | Notes and rupees are not of the same genus. 534 | There is no common value (qadr mushtarak) between rupees and notes. 534 | The practice of conventional people treating a note as a price will make it conventional money, not natural money.

फतावा रज़विया | खंड १७

पृष्ठ | विषय ५१८ | तेरहवाँ रद (खंडन)। ५१८ | चौदहवाँ रद। ५१८ | पंद्रहवाँ रद। ५१९ | सोलहवाँ रद। ५१९ | सत्रहवाँ रद। ५१९ | अठारहवाँ रद। ५२० | भ्रम का निवारण। ५२० | फाज़िल लखनवी पर एक सौ बीस रद। ५२० | मौलवी लखनवी साहब हर जवाब के शुरू में 'हुवल मुसव्विब' लिखते हैं जो तीन कारणों से गलत है। ५२० | 'मुसव्विब' और 'तस्वीब' का शाब्दिक अर्थ। ५२१ | बुराई या नापसंदीदा चीज़ पर सूचित करना उचित होता है। ५२१ | प्राकृतिक (खल्की) और सांकेतिक (इस्तलाही) मुद्रा में शईं अंतर है। ५२२ | किसी चीज़ के हुक्म (नियम) में होने का मतलब यह नहीं कि वह उस चीज़ की जाति और माप में भी समान है। ५२२ | नोट स्वयं में एक सांकेतिक मुद्रा (थमन इस्तलाही) है। ५२२ | प्राकृतिक और सांकेतिक मुद्राएँ एक-दूसरे से भिन्न (मुतबाइन) हैं। ५२२ | भिन्न चीज़ों में पूर्ण समानता (ऐनियत) असंभव है। ५२२ | पाक़ शरिया पागलों के'अंदिया' (मनगढ़ंत मत) को स्वीकार नहीं करती। ५२२ | प्राकृतिक मुद्रा केवल दो प्रकार की होती है: सोना और चाँदी। ५२३ | कीमती (क़ैमी) और मिस्ली (समान चीज़ें) एक नहीं हो सकते। ५२४ | जो चीज़ किसी एक के साथ जुड़ी है, वह उसी से जुड़ी हुई मानी जाती है। ५२५ | हक़दार की स्वीकृति और जाति की एकता में 'उमूम ओ ख़ुसूस मिन वज्ह' का संबंध है। ५२५ | बहाना न होने का अर्थ यह नहीं कि बहाना हो ही नहीं सकता। ५२७ | केवल जाति की समानता से असमानता (तफ़ाज़ुल) हराम नहीं होती, बल्कि माप (क़द्र) की समानता भी आवश्यक है। ५२७ | नोट का कोई माप (क़द्र) नहीं है; न यह नाप (मकील) कर बिकता है न तौल (मौज़ून) कर, बल्कि यह गिना (मअदूद) जाता है। ५२८ | पेड़ अपने फल से पहचाना जाता है। ५२८ | 'थमन' (मूल्य/मुद्रा) एक जाति है जिसके अंतर्गत दो प्रकार हैं: प्राकृतिक और सांकेतिक। ५२८ | सांकेतिक मुद्रा की किस्में नोट, पैसे और कौड़ियाँ हैं; प्राकृतिक मुद्रा एक जाति है जिसके अंतर्गत सोना और चाँदी आते हैं। ५२८ | शरीअत में 'जिंस' (जाति) वह व्यापक शब्द है जिसके सदस्यों के उद्देश्य भिन्न होते हैं। ५२८ | नोट एक वास्तविक प्रजाति (नउ हक़ीक़ी) है जिसके सभी सदस्यों के उद्देश्य एक समान होते हैं। ५२९ | एक वास्तविक प्रजाति किसी जाति के पूर्णतः समान नहीं हो सकती। ५२९ | आवश्यक परिवर्तन मूल वस्तु की पहचान को समाप्त कर देता है। ५३१ | एक उत्तम सूक्ष्म बात (लतीफ़ा जलीला)। ५३४ | नोट और रुपये एक ही जाति के नहीं हैं। ५३४ | रुपयों और नोटों में कोई साझा मूल्य (क़द्रे मुश्तरक) नहीं है। ५३४ | आम लोगों द्वारा नोट को मुद्रा के रूप में उपयोग करना उसे सांकेतिक मुद्रा बनाएगा, न कि प्राकृतिक।

पृष्ठ ४४/७१५

صفحہ | عنوان ۵۱۸ | تیرہواں رد۔ ۵۱۸ | چودہواں رد۔ ۵۱۸ | پندرھواں رد۔ ۵۱۹ | سولہواں رد۔ ۵۱۹ | سترھواں رد۔ ۵۱۹ | اٹھارہواں رد۔ ۵۲۰ | رد و ہم۔ ۵۲۰ | فاضل لکھنوی پر ایک سو بیس رد۔ ۵۲۰ | مولوی لکھنوی صاحب ہر جواب کے شروع میں ھوالمصوب لکھتے ہیں جو تین وجوہ سے غیر صحیح ہے۔ ۵۲۰ | مصوب اور تصویب کا لغوی معنی ۵۲۱ | منکر یا ناپسندیدہ پر اطلاع دینا مناسب ہوتا ہے۔ ۵۲۱ | ثمن خلقی و اصطلاحی میں شرعاً فرق ہے۔ ۵۲۲ | حکم شیء میں ہونا جنس و قدر شیئی میں سے اتحاد نہیں۔ ۵۲۲ | نوٹ بذاتہ ثمن اصطلاحی ہے۔ ۵۲۲ | ثمن خلقی و اصطلاحی متبائنیں ہیں۔ ۵۲۲ | متبائنیں میں عینیت محال ہوتی ہے۔ ۵۲۲ | شرع مطہر عندیہ کا مذہب جنوں رواں نہیں رکھتی۔ ۵۲۲ | ثمن خلقی دو قسم ذھب و فضہ میں منحصر ہے۔ ۵۲۳ | قیمتی ومثلی ایک نہیں ہو سکتے۔ ۵۲۴ | متحد کا متحد متحد ہوتا ہے۔ ۵۲۵ | قبول ذی حق اور اتحاد جنس میں عموم و خصوص من وجہ ہے۔ ۵۲۵ | عذر نہ ہونا عذر نہ ہو سکنے کو مستلزم نہیں۔ ۵۲۷ | نرے اتحاد جنس سے تفاضل حرام نہیں ہوتا بلکہ اتحاد قدر بھی لازم ہے۔ ۵۲۷ | نوٹ سرے سے قدری نہیں رکھتا کہ نہ مکیل ہے نہ موزون بلکہ معدود ہے۔ ۵۲۸ | الشجرۃ تنبی عن الثمرۃ ۵۲۸ | ثمن ایک جنس ہے جس کے تحت دو جنسیں ہیں خلقی اور اصطلاحی۔ ۵۲۸ | ثمن اصطلاحی کی نوعیں نوٹ، پیسے اور کوڑیاں ہیں ثمن خلقی ایک جنس ہے جس کے تحت دو جنسیں ہیں سونا اور چاندی۔ ۵۲۸ | شرع میں جنس وہ کلی ہے جس کے افراد مختلف الاغراض ہوں۔ ۵۲۸ | نوٹ نوع حقیقی ہے جس کے سب افراد متفقہ الاغراض ہیں۔ ۵۲۹ | نوع حقیقی کسی جنس کا عین نہیں ہو سکتا۔ ۵۲۹ | تغیر لازم نافی عینیت ملزوم ہے۔ ۵۳۱ | لطیفہ جلیلہ۔ ۵۳۴ |

نوٹ اور روپے ایک جنس نہیں۔ ۵۳۴ | روپوں میں اور نوٹ میں قدر مشترک نہیں۔ ۵۳۴ | نوٹ کے ساتھ اہل عرف کا معاملہ اثمان برتنا اسے ثمن اصطلاحی کرے گا نہ کہ خلقی۔

Fatawa Razawiya Volume 17 (17)

532 | Estimating value through rupees did not turn a note into a rupee; every terminological estimation is based on the natural/original one. | 542 | Paying off debt takes precedence over the distribution of inheritance. | 562 542 | Following terminology is not obligatory for the contracting parties; they may increase or decrease as they wish by mutual consent. | 542 | Nowadays, the fatwa is that if one has control even over a different type, it is permissible to take possession of it in exchange for one's due right. | 562 542 | Scholars have declared it permissible to sell a piece of paper for a thousand rupees. | 542 | If someone else's right emerges on the sold item, the buyer is entitled to receive the price back. | 563 542 | Scholars have permitted the violation of general terminology regarding money. | 544 | A buyer constructing a new building on purchased land is not contrary to the claim of entitlement (Istihqaq). | 563 542 | Scholars allowed the violation of common usage regarding the original price in rupees and gold coins (ashrafis). | 544 | If a house is built on someone else's land, the builder will be ordered to remove the structure and vacate the land, or by mutual consent, the landowner should compensate for the structure. | 563 Note | 546 | A buyer purchased one biswa of land from a seller; upon measurement, the land proved to be less. The buyer has the choice to take the deficient land at the same price or cancel the sale and take back the price; no compensation for the loss will be given. | 564 Detailed Achievement. | 546 | If a partial portion of the sold land emerges as a claim of entitlement, the price of that portion can be collected from the seller. | 565 Corroborations of the Fatwa of the Late Author. | 557 | In the issue of entitlement, regarding the purchase price, fungible (mithli), non-fungible (qimi), measured (mazru'), and counted (ma'dud) items are all equal. | 565 First Corroboration. | 557 | Cloth is non-fungible (qimi) and measured (mazru'). | 565 Second Corroboration. | 558 | In a sale, a condition to place expenses on the seller, or if the sold item is a tree, a condition to keep it for a certain duration, is invalid (fasid). | 566 Third Corroboration. | 558 | The ruling on an invalid sale is the annulment of the sale. | 566 Fourth Corroboration. | 558 | Chapter on Salam Sale (Forward Sale) | Chapter of Entitlement | There are twelve conditions for a Salam sale; the absence of any one of them makes this contract usurious and impermissible. | 569 If the dower (mahr) is more than the inheritance, the entire inheritance will be accounted for as mahr; other heirs have no right in it. | 562

फ़तावा रज़विया जिल्द सत्रह (17)

532 | रुपयों से मूल्य का अनुमान लगाने ने नोट को रुपया नहीं बना दिया; प्रत्येक पारिभाषिक अनुमान प्राकृतिक/मूल आधार पर ही होता है। | 542 | ऋण की अदायगी विरासत के बँटवारे पर प्राथमिकता रखती है। | 562 542 | अनुबंध करने वाले पक्षों के लिए शब्दावली का पालन करना अनिवार्य नहीं है; वे आपसी सहमति से जितना चाहें कम या अधिक कर सकते हैं। | 542 | आजकल फतवा इस पर है कि यदि किसी भिन्न प्रकार की वस्तु पर भी अधिकार हो, तो अपने आने वाले अधिकार के बदले उस पर कब्ज़ा करना जायज़ है। | 562 542 | विद्वानों ने एक हज़ार रुपये में कागज़ का एक टुकड़ा बेचना जायज़ करार दिया है। | 542 | यदि बेची गई वस्तु पर किसी और का अधिकार निकल आए, तो खरीदार मूल्य वापस पाने का हकदार है। | 563 542 | विद्वानों ने पैसों के मामले में सामान्य शब्दावली के उल्लंघन की अनुमति दी है। | 544 | खरीदार द्वारा खरीदी गई भूमि पर नया निर्माण कर लेना 'इस्तिहक़ाक़' (हकदारी के दावे) के विरुद्ध नहीं है। | 563 542 | विद्वानों ने रुपयों और अशर्फियों में मूल मूल्य के संबंध में सामान्य प्रचलन के उल्लंघन की अनुमति दी। | 544 | दूसरे की ज़मीन पर मकान बना लेने पर, निर्माता को आदेश दिया जाएगा कि वह अपना निर्माण हटाकर ज़मीन खाली करे या आपसी सहमति से ज़मीन का मालिक निर्माण का मुआवज़ा दे दे। | 563 चेतावनी | 546 | एक खरीदार ने विक्रेता से एक बिसवा ज़मीन खरीदी; नापने पर ज़मीन कम निकली। खरीदार को विकल्प है कि वह उतनी ही कीमत पर अधूरी ज़मीन ले ले या सौदा रद्द कर दे और अपनी कीमत वापस ले ले; नुकसान का कोई मुआवज़ा नहीं मिलेगा। | 564 विस्तृत विवरण। | 546 | यदि बेची गई भूमि का एक हिस्सा हकदारी के तौर पर किसी और का निकल जाए, तो उतने हिस्से की कीमत विक्रेता से वसूल की जा सकती है। | 565 दिवंगत लेखक के फ़तवे के समर्थन। | 557 | हकदारी के मसले में, खरीद मूल्य के संबंध में समरूपी (मिस्ल), मूल्यवान (क़ीमी), मापी गई (मज़रूअ) और गिनी गई (मअदूद) वस्तुएं सब बराबर हैं। | 565 प्रथम समर्थन। | 557 | कपड़ा मूल्यवान (क़ीमी) और मापा जाने वाला (मज़रूअ) है। | 565 द्वितीय समर्थन। | 558 | बिक्री में खर्च का बोझ विक्रेता पर डालने की शर्त, या यदि बेची गई वस्तु पेड़ हो तो उसे कुछ समय तक रखने की शर्त 'फासिद' (दूषित) है। | 566 तृतीय समर्थन। | 558 | फासिद बिक्री का हुक्म सौदे को रद्द करना है। | 566 चतुर्थ समर्थन। | 558 | सलाम बिक्री (अग्रिम बिक्री) का अध्याय | हकदारी का अध्याय | सलाम बिक्री की बारह शर्तें हैं; इनमें से किसी एक की

अनुपस्थिति इस अनुबंध को ब्याज और नाजायज़ बना देती है। | 569 यदि महर विरासत से अधिक हो, तो पूरी विरासत महर में गिनी जाएगी; अन्य वारिसों का इसमें कोई अधिकार नहीं है। | 562

पृष्ठ 45 का 715

۵۳۲ | روپوں سے اندازہ قیمت نے نوٹ کو روپیہ نہیں کردیا ہر اصطلاحی کا اندازہ خلقی سے ہی ہوتا ہے۔ | ۵۴۲ | ادائے قرض تقسیم ترکہ پر مقدم ہے۔ | ۵۶۲ ۵۴۲ | اصطلاح کی پیروی عاقدین پر لازم نہیں وہ اپنی تراضی سے جو چاہیں کم و بیش کریں۔ | ۵۴۲ | آج کل فتویٰ اس پر ہے کہ خلاف جنس پر بھی قدرت ہو تو اپنے آتے ہوئے حق کے بدلہ اس پر قبضہ جائز ہے۔ | ۵۶۲ ۵۴۲ | علماء نے کاغذ کا ٹکڑا ہزار روپے کو بیچنا جائز فرمایا، | ۵۴۲ | شئے مبیع پر کسی کا حق نکلے تو مشتری قیمت واپس پانے کا مستحق ہے۔ | ۵۶۳ ۵۴۲ | پیسوں میں اصطلاحِ عام کی مخالفت علماء نے جائز فرمائی۔ | ۵۴۴ | مشتری کا خریدی ہوئی زمین پر جدید تعمیر کر لینا استحقاق کے منافی نہیں۔ | ۵۶۳ ۵۴۲ | علماء نے ثمن خلقی روپے اشرفی میں مخالفت عرف عام کی اجازت دی۔ | ۵۴۴ | دوسرے کی زمین پر مکان تعمیر کر لینا صاحبِ تعمیر کو حکم ہوگا کہ اپنی تعمیر ہٹا کر زمین خالی کرے یا باہمی تراضی سے زمین والا تعمیر کا معاوضہ دے دے۔ | ۵۶۳ تنبیہ | ۵۴۶ | مشتری نے ایک بسوہ زمین بائع سے خریدی ناپنے پر زمین کم ثابت ہوئی، مشتری کو اختیار کہ اتنی ہی قیمت پر وہ ناقص زمین لے یا بیع توڑ دے اور اپنی قیمت واپس لے نقصان کا معاوضہ نہیں ملے گا۔ | ۵۶۴ تحصیل جلیل۔ | ۵۴۶ | ارضِ مبیع کا جز حصہ بطور استحقاق نکل جائے تو اتنے حصہ کی قیمت بائع سے وصول کر سکتا ہے۔ | ۵۶۵ فتویٰ مصنف علیہ الرحمۃ کے مؤیدات۔ | ۵۵۷ | مسئلہ استحقاق میں زرِ ثمن کے بارے میں مثلی، قیمی، مذروع و معدود سب برابر ہیں۔ | ۵۶۵ مؤید اول۔ | ۵۵۷ | کپڑا قیمتی اور مذروع ہے۔ | ۵۶۵ مؤید دوم۔ | ۵۵۸ | بیع میں حرجہ خرچہ بذمہ بائع لگانے کی شرط یا درخت مبیع ہو تو کچھ مدت تک باقی رکھنے کی شرط فاسد ہے۔ | ۵۶۶ مؤید سوم۔ | ۵۵۸ | بیعِ فاسد کا حکم فسخِ بیع ہے۔ | ۵۶۶ مؤید

چہارم۔ | ۵۵۸ | باب بیع السلم | باب الاستحقاق | بیع سلم کی بارہ شرطیں ہیں کسی ایک کا فقدان اس عقد کو سود اور ناجائز بنا دیتا ہے۔ | ۵۶۹ مہر ترکہ سے زیادہ ہو تو پورا ترکہ مہر میں محسوب ہوگا دیگر ورثاء کا اس میں کوئی حق نہیں۔ | ۵۶۲

Fatawa Razawiyyah Volume 17

If the price is not fixed in Bai' Salam, the sale is not valid.	570	For the conclusion of a contract, the past tense is necessary; a contract is not concluded with the future tense.	579
The sale of sugarcane juice before extraction, even as Salam, is impermissible.	573	A contract based on whatever the rate will be at harvest time is void (Fasid).	579
If the seller cannot provide the goods on time in Bai' Salam, taking extra money in lieu is interest (Riba).	574	For the validity of Salam, specifying the quantity of goods is necessary, whether it costs less or more than the market price.	579
Detailed ruling when the seller provides some part and is unable to provide the rest on time in Bai' Salam.	575	Saying "we will give" and "we will take" does not constitute a contract; it is just a promise, and the seller cannot be forced at that time.	579
If the goods become unavailable at the time, the buyer only has the choice to take back the capital (Ras-ul-Maal) or wait for the goods until the next harvest.	575	Another matter regarding Bai' Salam.	580
Neither of the contracting parties is allowed to deal with the goods before taking possession.	575	Selling credit for credit is prohibited.	580
At the time of delivery in Bai' Salam, only those qualities will be considered that were mentioned at the time of the contract.	575	A question about taking more than the capital.	581
Mention of Bai' Salam for bricks.	576	Two questions regarding Bai' Salam.	581
Some impermissible forms of Bai' Salam involving money.	577	Ruling on various impermissible types of Bai' Salam.	581
Determination of the period is necessary in Bai' Salam.	577	A case of sale before possession.	582
	577	In Bai' Salam, if the seller cannot provide the goods on time, and the buyer gifts	583

It is not permissible to take goods contrary to what was agreed upon.		the same kind of goods to a third party, and the seller buys from them and gives to the buyer, there is no harm in this.	
Disposing of goods before possession in Salam is not permissible.	577	Sale of next year's juice at the time when sugarcane sprouts appear, when the crop is ready, or even when juice is being extracted, is impermissible.	585
Description of a case where there is a possibility of both loan (Qarz) and Salam.	578	If juice extraction has started, then Bai' Salam is permissible with a person who doesn't have juice yet, for the period during which juice continues to be extracted.	585
Regarding the conditions of Bai' Salam.	578	If the crop has ended in one place but remains in another, and that place is so far that getting it from there is very difficult, then Bai' Salam is not permissible in such a case.	586
If even one of the twelve conditions is missing, the Salam becomes void (Fasid).	578		

बैअ-ए-सल्लम में भाव तय नहीं किया तो बैअ जायज़ नहीं।	570	अक़्द (अनुबंध) के समापन के लिए भूतकाल (माज़ी) का प्रयोग ज़रूरी है, भविष्य काल से अनुबंध नहीं होता।	579
गन्ने का रस निकलने से पहले उसे सल्लम के तौर पर बेचना भी नाजायज़ है।	573	फ़सल के समय जो भाव हो, उस पर किया गया अनुबंध फ़ासिद (अमान्य) है।	579
बैअ-ए-सल्लम में समय पर माल न दे सका तो उसके बदले अधिक पैसा लेना सूद (ब्याज) है।	574	सल्लम की शुद्धता के लिए माल की मात्रा निर्धारित करना ज़रूरी है, चाहे वह बाज़ार भाव से कम पड़े या ज़्यादा।	579
बैअ-ए-सल्लम में विक्रेता ने समय पर कुछ दिया और कुछ न दे सका, तो शेष के लिए विस्तृत आदेश।	575	"देंगे-लेंगे" कहने से अनुबंध नहीं होता, यह केवल वादा है; समय आने पर विक्रेता को मजबूर नहीं किया जा सकता।	579
यदि समय पर माल मिलना बंद हो जाए, तो खरीदार के पास केवल यह अधिकार है कि वह मूलधन (रास-उल-माल) वापस ले ले या अगली फ़सल तक माल का इंतज़ार करे।	575	बैअ-ए-सल्लम का एक और मामला।	580
अनुबंध करने वालों में से किसी के लिए भी कब्ज़े से पहले माल का उपयोग जायज़ नहीं है।	575	उधार के बदले उधार बेचना मना है।	580
बैअ-ए-सल्लम में माल सौंपते समय वही गुण देखे जाएंगे जिनका ज़िक्र अनुबंध के समय हुआ था।	575	मूलधन से अधिक लेने के बारे में सवाल।	581
ईंट की बैअ-ए-सल्लम का ज़िक्र।	576	बैअ-ए-सल्लम के दो सवाल।	581
पैसों की बैअ-ए-सल्लम की कुछ नाजायज़ सूरतें।	577	बैअ-ए-सल्लम की विभिन्न नाजायज़ किस्मों का हुक्म।	581

बैअ-ए-सल्लम में समय सीमा तय करना ज़रूरी है।	577	कब्ज़े से पहले बिक्री की एक सूरत।	582
जैसा माल तय हुआ था, उसके विरुद्ध लेना जायज़ नहीं।	577	बैअ-ए-सल्लम में समय पर विक्रेता माल न दे सके, तो खरीदार उस माल की किस्म किसी तीसरे व्यक्ति को हिबा (उपहार) कर दे, और विक्रेता उससे खरीदकर खरीदार को दे दे, इसमें कोई हर्ज नहीं।	583
सल्लम में कब्ज़े से पहले माल का उपयोग जायज़ नहीं।	577	ईख की पौध दिखने, फ़सल तैयार होने बल्कि रस निकाले जाने के वक़्त अगले साल के रस की बिक्री नाजायज़ है।	585
एक ऐसे मामले का विवरण जिसमें ऋण (क़र्ज़) और सल्लम दोनों की संभावना है।	578	रस निकलना शुरू हो गया तो ऐसे व्यक्ति के साथ जिसके यहाँ रस नहीं निकलता, उस अवधि तक जब तक रस निकलता रहेगा, बैअ-ए-सल्लम जायज़ है।	585
बैअ-ए-सल्लम की शर्तों के संबंध में।	578	एक जगह फ़सल खत्म हो गई और दूसरी जगह बची है, और वह जगह इतनी दूर है कि वहां से मंगवा कर देने में बहुत कठिनाई हो, तो ऐसी स्थिति में बैअ-ए-सल्लम जायज़ नहीं।	586
बारह शर्तों में से कोई एक भी रह गई तो सल्लम फ़ासिद (अमान्य) हो जाएगा।	578		

पृष्ठ 46/715

بیع سلم میں بھاؤ متعین نہیں کیا تو بیع ۵۷۰ جائز نہیں۔

گنے کے رس کی بیع رس نکالنے ۵۷۳ سے پہلے بطور سلم بھی ناجائز ہے۔

بیع سلم میں وقت پر مبیع نہ دے سکا تو اس کے حساب سے زائد روپیہ لینا ۵۷۴ سود ہے۔

بیع سلم میں بائع نے وقت پر کچھ دیا کچھ نہ دے سکا بقیہ کے لئے تفصیلی ۵۷۵ حکم۔

مبیع وقت پر منقطع ہو گیا تو مشتری کو صرف یہ اختیار ہے کہ راس المال ۵۷۵ واپس لے یا آئندہ فصل کے لئے مبیع کا انتظار کرے۔

متعاقدین میں سے کسی کو قبضہ سے ۵۷۵ پہلے تصرف جائز نہیں۔

۵۷۵ راس المال سے زائد لینے کے بارے میں سوال۔ ۵۸۱

انعقاد عقد کے لئے ماضی کا صیغہ ضروری ۵۷۹ ہے مستقبل سے عقد نہیں منعقد ہوتا۔

فصل پر جو نرخ ہو یہ عقد فاسد ہے۔ ۵۷۹

صحت سلم کے لئے مبیع کی تعین مقدار

ضروری ہے وہ بازار بھاؤ سے کم پڑے یا ۵۷۹ زیادہ۔

دیں گے لیں گے کہنے سے عقد نہیں ہوتا، یہ

صرف وعدہ ہے، وقت پر بائع کو مجبور نہیں ۵۷۹ کیا جا سکتا۔

مبیع سلم کا ایک اور معاملہ ۵۸۰

ادھار کی ادھار سے بیع منع ہے۔ ۵۸۰

بیع سلم میں ادائیگی کے وقت ہی اوصاف ملحوظ ہوں گے جن کا ذکر عقد کے وقت ہوا ہو۔ ۵۷۶
اینٹ کی بیع سلم کا ذکر۔ ۵۷۶
پیسوں کی بیع سلم کی کچھ ناجائز صورتیں۔ ۵۷۷
بیع سلم میں میعاد کی تعیین ضروری ہے۔ ۵۷۷
مبیع جیسا طے ہوا اس کے خلاف لینا جائز نہیں۔ ۵۷۷
سلم میں قبضہ سے پہلے تصرف جائز نہیں۔ ۵۷۷
ایک ایسے معاملہ کا بیان جس میں قرض و سلم دونوں کا امکان ہے۔ ۵۷۸
بیع سلم کے دو سوال۔ ۵۸۱
بیع سلم کی مختلف ناجائز قسموں کا حکم ۵۸۱
بیع قبل القبض کی ایک صورت۔ ۵۸۲
بیع سلم میں وقت پر بائع مبیع نہ دے سکے تو مشتری مبیع کی جنس کسی تیسرے کو ہبہ کرے اور بائع اس سے خرید کر مشتری کو دے اس میں کچھ حرج نہیں۔ ۵۸۳
اکھ کی پود ظاہر ہونے فصل کے تیار ہونے بلکہ رس نکالے جانے کے وقت آئندہ سال کے رس کی بیع ناجائز ہے۔ ۵۸۵
رس نکلنا شروع ہو گیا تو ایسے شخص کے ساتھ جس کے یہاں بھی رس نہیں نکلتا اس مدت میں جب تک رس نکلتا رہے گا بیع سلم جائز ہے۔ ۵۸۵

ایک جگہ فصل ختم ہو گئی اور دوسری جگہ

باقی ہے، اور وہ جگہ اتنی دور ہے کہ وہاں

بیع سلم کی شرائط سے متعلق۔ ۵۷۸ ۵۸۶

سے منگا کر دینے میں سخت مشکل ہو تو ایسی

صورت میں بیع سلم جائز نہیں۔

بارہ شرطوں میں سے کوئی ایک بھی

۵۷۸

رہ گئی سلم فاسد ہو جائے گی۔

Fatawa Razawiyya Volume 17 (17)

Statement of an incorrect transaction of Bai' Salam. | 586 | Question about a void (fasid) form of sale. | 594 Statement of a sale which is a promise at the beginning and mutual delivery at the end. | 587 | **Chapter of Istisna' (Contract for Manufacture)** Money given on the promise of getting priority on crops etc., that is a loan with a condition of benefit. | 588 | Istisna' in which cash and credit in the same deal is impermissible. | 597 A loan does not become void due to a void condition, but giving a loan in this manner is a sin. | 588 | A void contract is a sin, and removing the sin is obligatory. | 597 'Al-Ma'roof kal-Mashroot' (What is customary is as if it were a condition). | 589 | Definition of Istisna' and its essentials. | 597 A permissible form of the above transaction. | 589 | If Istisna' is for less than a month, and a condition of more is added, then it becomes a Bai' Salam contract. | 598 If both sides of a saying are validated, act upon whichever you wish. | 590 | Istisna' is actually a sale. | 599 In a sale with a void condition, if the condition is concurrent with the contract, it creates invalidity (fasad). | 591 | In Istisna', the subject of the contract is the physical entity, not the labor. | 599 Regarding a condition after the contract, there are two opinions of Imam Sahib; no judicial compulsion for fulfillment of the promise. | 591 | The non-existent sometimes comes under the ruling of the existent. | 599 If the contract is without a condition and the condition is as a promise, then compulsion can be exercised for the fulfillment of the promise. | 592 | Zaid's friend applied kohl, and Zaid, upon the encouragement of the kohl-maker, took and sent the kohl; the kohl-maker can demand payment from Zaid. | 600 All debts besides maintenance (nafaqah) that are of equal value and status for both parties are initially exchanged and then cancelled. | 593 | In a sale, rights refer back to the agent (wakil), and in marriage, they refer to the spouses. | 600 Sale of movable property before possession to the seller is void. | 594 | Buying at the instruction of an adult is not considered buying on behalf of the seller. | 600 **Chapter of Sarf (Currency Exchange)** Question regarding buying/selling currency notes at a higher or lower value. | 601 Currency notes are a new invention; they did not exist during the time of the jurist authors. | 601

फ़तावा रज़विया जिल्द 17 (17)

बैअ-ए-सलाम के एक गलत मामले का बयान। | 586 | बैअ (बिक्री) के एक फासिद (अमान्य) रूप का सवाल। | 594 एक ऐसी बैअ का बयान जो शुरुआत में वादा है और अंत में ताती (पारस्परिक लेनदेन) है। | 587 | **बाब अल-इस्तिस्ना (निर्माण का अनुबंध)** फसल आदि पर प्राथमिकता पाने के वादे पर दिया गया पैसा, वह एक ऋण है जिसके साथ लाभ की शर्त है। | 588 | इस्तिस्ना में नकद और उधार एक ही सौदे में नाजायज है। | 597 फासिद शर्त से कर्ज फासिद नहीं होता, लेकिन इस तरह कर्ज देना गुनाह है। | 588 | फासिद अनुबंध एक गुनाह है और गुनाह को दूर करना फ़र्ज़ है। | 597 'अल-मारूफ कल-मशरुत' (जो प्रथागत है वह शर्त के समान है)। | 589 | इस्तिस्ना की परिभाषा और उसके अनिवार्य तत्व। | 597 उपरोक्त मामले का एक जायज रूप। | 589 | इस्तिस्ना एक महीने से कम में होगा, अगर अधिक की शर्त लगा दी जाए तो यह बैअ-ए-सलाम का अनुबंध हो जाएगा। | 598 यदि किसी कथन के दोनों पक्ष प्रमाणित हों, तो जिस पर चाहें अमल करें। | 590 | इस्तिस्ना वास्तव में एक बैअ (बिक्री) है। | 599 बैअ-ए-शर्त-ए-फासिद में यदि शर्त अनुबंध के साथ हो, तो यह बिगाड़ (फसाद) पैदा करेगी। | 591 | इस्तिस्ना में अनुबंधित वस्तु भौतिक वस्तु है, श्रम नहीं। | 599 अनुबंध के बाद की शर्त में इमाम साहब के दो विचार हैं; वादे को पूरा करने के लिए कानूनी दबाव नहीं है। | 591 | अस्तित्वहीन कभी-कभी मौजूद के नियम के अंतर्गत आ जाता है। | 599 अनुबंध बिना शर्त हुआ और शर्त वादे के रूप में हो, तो वादे को पूरा करने पर दबाव हो सकता है। | 592 | ज़ैद के दोस्त ने सुरमा लगाया और ज़ैद ने सुरमा बनाने वाले के प्रोत्साहन पर सुरमा लेकर भेज दिया, सुरमा वाला ज़ैद से मांग कर सकता है। | 600 भरण-पोषण (नफ़क़ा) के अलावा सभी ऋण जो दोनों पक्षों के लिए समान मूल्य और स्थिति के हों, पहले अदल-बदल होकर समाप्त हो जाते हैं। | 593 | बिक्री में अधिकार वकील की ओर लौटते हैं और निकाह में पति-पत्नी की ओर। | 600 चल संपत्ति की बिक्री कब्जे से पहले विक्रेता के हाथ में फासिद है। | 594 | वयस्क के कहने पर खरीदना विक्रेता की ओर से खरीदना नहीं होगा। | 600 **बाब अस-सर्फ़(मुद्रा विनिमय)** नोटों की कम या ज्यादा बिक्री से संबंधित प्रश्न। | 601 नोट एक नई वस्तु है; न्यायविदों और लेखकों के समय में इसका अस्तित्व नहीं था। | 601

पृष्ठ 715 का 47

بیع سلم کے ایک غلط معاملہ کا بیان۔ | ۵۸۶ | بیع کی ایک فاسد صورت کا سوال۔ | ۵۹۴ ایک ایسی بیع کا بیان جو ابتداء وعدہ ہے اور انتہاء تعاطی ہے۔ | ۵۸۷ | **باب الاستصناع** فصل پر غلبہ یارس وغیرہ لینے کے لئے بالفاظ وعدہ پر جو پیسہ دیا ہے اس میں وہ قرض ہے جس کے ساتھ انتفاع کی شرط ہے۔ | ۵۸۸ | استصناع میں بھی نقد وادھار ایک ہی صفقہ میں ناجائز ہے۔ | ۵۹۷ شرط فاسد سے قرض فاسد نہیں ہوتا لیکن اس طرح قرض دینا معصیت ہے۔ | ۵۸۸ | عقد فاسد گناہ اور گناہ کا ازالہ فرض ہے۔ | ۵۹۷ المعروف کالمشروط | ۵۸۹ | استصناع کی تعریف اور اس کے فرائض۔ | ۵۹۷ معاملہ بالا کی ایک جائز صورت۔ | ۵۸۹ | استصناع ایک مہینہ سے کم میں ہوگا زائد کی شرط لگا دی جائے تو یہ عقد بیع سلم ہوجائے گا۔ | ۵۹۸ کسی قول میں دونوں طرف تصحیح ہو تو جس پر چاہو عمل کرو۔ | ۵۹۰ | استصناع حقیقۃً بیع ہے۔ | ۵۹۹ بیع بشرط فاسد میں شرط مقارن عقد ہو تو فساد پیدا کرے گی۔ | ۵۹۱ | استصناع میں معقود علیہ عین ہے عمل نہیں ہے۔ | ۵۹۹ بعد عقد کی شرط میں امام صاحب کے دو قول ہیں وعدہ کی وفاء پر قضاء جبر نہیں۔ | ۵۹۱ | معدوم کبھی موجود کے حکم میں ہوجاتا ہے | ۵۹۹ عقد بلا شرط ہوا اور شرط بطورِ وعدہ ہو تو وعدہ کی وفاء پر جبر ہوسکتا ہے۔ | ۵۹۲ | زید کے دوست نے سرمہ لگایا اور زید نے سرمہ بنانے والے کی ترغیب سے سرمہ لے کر بھیج دیا، سرمہ والا زید سے تقاضا کرسکتا ہے۔ | ۶۰۰ نفقہ کے علاوہ تمام ایسے قرضے جو طرفین پر مساوی قدر و حیثیت کے ہوں اول بدل ہوکر ساقط ہوجاتے ہیں۔ | ۵۹۳ | بیع میں حقوق وکیل کی طرف راجع ہوتے ہیں اور نکاح میں زوجین کی طرف۔ | ۶۰۰ منقول کی بیع قبضہ سے پہلے بائع کے ہاتھ فاسد ہے۔ | ۵۹۴ | بائع کے کہنے سے خریدنا بائع کی طرف سے خریدنا نہیں ہوگا۔ | ۶۰۰ **باب الصرف** نوٹ کی کم وبیش

بیع سے متعلق سوال۔ | ۶۰۱ نوٹ ایک نو پیدا چیز ہے فقہاء مصنفین کے زمانہ میں اس کا وجود نہ تھا۔ | ۶۰۱

Page	Content	Page	Content
601	From a jurisprudential perspective, the sale of notes with more or less [than face value] seems permissible. The cause for the prohibition of Riba is the union of measurement (Qadr) and genus (Jins).	605	Question regarding the sale of notes with more or less value.
601		606	In a contract, taking more or less than the fixed price is permissible, provided there is mutual consent between the parties.
602	A note is neither measured by volume (Makil) nor by weight (Mawzun), and it is not the genus of silver either; therefore, the union of measurement and genus is absent in its sale.	607	Mutual possession of both counter-values (Taqabudh-e-Badalayn) is necessary in the sale of gold and silver.
602	Removal of a doubt.	607	It is permissible to buy gold coins (Ashrafi) with rupees when they are cheap and sell them for more when they are expensive.
602	A note is actually terminological money (Thaman Istilahi), so it will not be real money (Haqiqi Thaman).	607	Selling a note for more or less is permissible, but taking one paisa extra as a loan is prohibited (Haram).
602	Like notes, coins (paisa) are also terminological money.	607	It is permissible to sell rupees in exchange for coins for more or less. Increasing or decreasing in credit transactions is contrary to what is preferable (Khilaf-e-Aula).
602	A specific legal detail regarding the permissibility of selling small coins (fuloos) for more or less.	608	Avoiding giving a loan is contrary to what is preferable.

Page	Content
602	Whatever is terminological money, the new terminology of the contracting parties can designate it as goods.
603	Giving ninety-nine as a loan and taking back a hundred is Riba (usury).
603	The reason for the non-permissibility of a bill of exchange (Hundi) is the benefit of safety of the path.
603	Keeping money with a shopkeeper (baqal) became prohibited due to this benefit of protection.
604	In exchanging rupees for coins, mutual possession of both counter-values is not a condition; possession of the rupee is sufficient.
604	There is no harm in taking coins for one rupee in several installments.
605	Half the coins of one rupee were received while the circulation of the old coins ceased; the sale of the remaining coins became void (Fasid).
605	The aforementioned question in the Urdu language.
608	Taking one paisa extra by giving a ten-rupee note as a loan is prohibited (Haram).
608	In the case of a sale, more or less, cash or credit, it is permissible in every way.
609	A note does not contain the substance of silver; otherwise, selling a ten-rupee note for ten rupees would have been Riba.
609	Shari'ah has not considered market value in Riba; it has commanded equality in weight and volume.
609	If a note were actual silver, it wouldn't be actual gold, and with it being a sale of notes, it would be permissible as required.
609	It is permissible to sell one rupee for two gold coins (Ashrafi).
609	A detail from Fath al-Qadir: a piece of paper can be sold for a thousand rupees. Silver rupees for coins, and coins for grain at harvest time is a forward sale (Bai' Salam), for which its conditions are required.

जिल्द हफ़्तदहुम (१७) - फ़तावा रज़विया

पृष्ठ	विषय-वस्तु
६०१	फ़िक़्ही दृष्टिकोण से नोट की कम या ज़्यादा पर बिक्री जायज़ मालूम होती है। रिबा की हुरमत का कारण क़द्र और जिन्स का एक होना है।
६०१	
६०२	नोट न मकील (माप वाला) है न मौज़ून (तौल वाला) और यह चांदी की भी जिन्स नहीं है, इसलिए इसकी बिक्री में क़द्र और जिन्स की समानता मौजूद नहीं है।
६०२	एक शंका का निवारण।
६०२	नोट वास्तव में 'समने इस्तलाही' (पारिभाषिक मुद्रा) है, इसलिए यह वास्तविक मुद्रा नहीं होगा।
६०२	नोट की तरह पैसा भी 'समने इस्तलाही' है।
६०२	सिक्कों (फ़ुलूस) की कम-ज़्यादा बिक्री के जायज़ होने का विवरण।
६०२	
६०५	नोट की कम-ज़्यादा बिक्री का सवाल।
६०६	अनुबंध (अक़द) में तयशुदा कीमत से कुछ लेना जायज़ है, जबकि दोनों पक्षों की आपसी सहमति हो।
६०७	सोने और चांदी की बिक्री में दोनों तरफ से उसी वक्त क़ब्ज़ा (तकाबुज़) ज़रूरी है।
६०७	सस्ते समय में रुपयों से अशर्फी खरीदकर महँगे समय में अधिक मूल्य पर बेचना जायज़ है।
६०७	नोट की कम-ज़्यादा पर बिक्री जायज़ है और ऋण देकर एक पैसा अधिक लेना हराम है।
६०७	रुपयों को पैसों के बदले कम या ज़्यादा पर बेचना जायज़ है। उधार में कमी-बेशी करना बेहतर के खिलाफ (खिलाफ़-ए-औला) है।
६०८	ऋण देने से मना करना बेहतर के खिलाफ है।
६०८	ऋण के रूप में दस का नोट देकर एक पैसा अधिक लेना हराम है।

पृष्ठ	विषय-वस्तु
	जो चीज़ पारिभाषिक मुद्रा हो, अनुबंध करने वालों की नई परिभाषा उसे सामान (वस्तु) घोषित कर सकती है।
६०३	ऋण के रूप में निन्यानवे देकर सौ लेना ब्याज (सूद) है।
६०३	हुंडी के नाजायज़ होने का कारण रास्ते की सुरक्षा का लाभ उठाना है।
६०३	दुकानदार (बक़्क़ाल) के पास रुपये रखना इसी सुरक्षा के लाभ के कारण मना हुआ।
६०४	रुपये को पैसे में तुड़वाने में दोनों ओर से क़ब्ज़ा शर्त नहीं है, रुपये पर क़ब्ज़ा ही काफी है।
६०४	एक रुपये के पैसे कई बार करके लेने में कोई हर्ज नहीं है।
६०५	एक रुपये के आधे पैसे वसूल किए गए जबकि पुराने पैसों का प्रचलन खत्म हो गया, तो बाकी पैसों में बिक्री फ़ासिद (अमान्य) हो गई।
६०५	उपरोक्त प्रश्न उर्दू भाषा में।
६०८	बिक्री की स्थिति में कम-ज़्यादा, नकद और उधार हर तरह से जायज़ है।
६०९	नोट स्वयं चांदी नहीं है, अन्यथा दस का नोट दस रुपये में बेचना रिबा होता।
६०९	शरीयत ने रिबा में बाज़ार मूल्य का विचार नहीं रखा है, बल्कि वजन और माप में समानता का आदेश दिया है।
६०९	यदि नोट स्वयं चांदी होता, तो वह स्वयं सोना न होता, और नोट की बिक्री होने के साथ आवश्यकतानुसार जायज़ होती।
६०९	एक रुपये को दो अशर्फियों के बदले बेचना जायज़ है।
६०९	'फ़तह अल-क़दीर' का विवरण: कागज़ का एक टुकड़ा हज़ार रुपये में बेच सकते हैं। चांदी के रुपये का पैसों से, और पैसों का अनाज से फसल पर सौदा 'बय-सल्लम' है, जिसके लिए उसकी शर्तें आवश्यक हैं।

صفحہ	مضمون
	نظر فقہی میں نوٹ کم وبیش سے بیع
۶۰۱	جائز معلوم ہوتی ہے۔ حرمت ربا کی علت اتحاد قدر و جنس ہے۔
۶۰۱	
	نوٹ مکیل ہے نہ موزون اور یہ
۶۰۲	چاندی کی بھی جنس نہیں اس لئے اس کی بیع میں اتحاد قدر و جنس مفقود ہے۔
۶۰۲	ایک شبہ کا ازالہ۔
۶۰۲	نوٹ دراصل ثمن اصطلاحی ہے تو یہ حقیقی ثمن نہ ہوگا۔
۶۰۲	نوٹ کی طرح پیسہ بھی ثمن اصطلاحی ہے۔
۶۰۲	
۶۰۵	نوٹ کی کم وبیش میں بیع کا سوال۔
۶۰۶	عقد میں طے شدہ قیمت سے کچھ لینا جائز ہے۔ جبکہ تراضی طرفین سے ہو۔
۶۰۷	سونے اور چاندی کی بیع میں تقابض بدلین ضروری ہے۔
۶۰۷	ارزانی کے وقت روپیہ سے اشرفی خرید کر گرانی کے وقت زائد پر بیچنا جائز ہے۔
۶۰۷	نوٹ کی بیع کم وبیش پر جائز ہے اور قرض دے کر ایک پیسہ زائد لینا حرام ہے۔
۶۰۷	روپیہ کو پیسہ کے عوض کم وبیش بیچنا جائز ہے ادھار میں کمی بیشی کرنا خلاف اولیٰ ہے۔
۶۰۸	قرض دینے سے اعراض خلاف اولیٰ ہے۔

صفحہ	مضمون
	فلوس کی بیع کم وبیش جائز ہونے کا جزئیہ۔
۶۰۲	جو چیز اصطلاحی ثمن ہو متعاقدین کی اصطلاح جدید اس کو سامان قرار دے سکتی ہے۔
۶۰۳	قرض کے طور پر ننانوے دے کر سولیتا سود ہے۔
۶۰۳	ہنڈی کے عدم جواز کا سبب انتفاع امن طریق ہے۔
۶۰۳	بقال کے پاس روپے رکھنا اسی انتفاع حفاظت کی وجہ سے ممنوع ہوا۔
۶۰۴	روپیہ کا پیسہ بھنانے میں تقابض بدلین شرط نہیں، روپیہ پر قبضہ کافی ہے۔
۶۰۴	ایک روپیہ کا پیسہ کئی بار کر کے لینے میں حرج نہیں ہے۔
۶۰۵	
۶۰۸	بطور قرض دس کا نوٹ قرض دے کر ایک پیسہ زائد لینا حرام ہے۔
۶۰۸	بیع کی صورت میں کم وبیش، نقد و ادھار ہر طرح جائز ہے۔
۶۰۹	نوٹ پر چاندی کا عین نہیں ورنہ دس کا نوٹ دس روپیہ میں بیچنا ربا ہوگا۔
۶۰۹	شرع نے ربا میں مالیت کا لحاظ نہیں رکھا ہے وزن اور کیل میں برابری کا حکم دیا ہے۔
۶۰۹	نوٹ اگر عین چاندی ہو تو عین سونا نہ ہوگا اور نوٹ کی بیع ہونے کے ساتھ متقاضاً جائز ہوگی۔
۶۰۹	ایک روپیہ دو اشرفی کے بدلے بیچنا جائز ہے۔
۶۰۹	

صفحہ	مضمون	صفحہ	مضمون
	ایک روپیہ کے آدھے پیسے وصول کئے کہ بہہ پیسہ کا چلن جاتا رہا بقیہ پیسہ میں بیع فاسد ہو گئی۔		فتح القدیر کا جزئیہ ایک کاغذ ہزار روپے میں بیچ سکتے ہیں، چاندی کا روپیہ پیسوں سے، اور پیسے کا غلہ فصل پر بیع سلم ہے اس کی شرائط درکار ہے۔
۶۰۵	مذکورہ بالا سوال بزبان اردو۔		

Fatawa Razawiyya Volume 17

If in rupees and fuloos (copper coins), the fuloos also contain some silver, then credit will be impermissible.	610	Giving a ten-rupee note as a loan and taking twelve back is haram and interest.	613
Question about the sale of notes.	610	Non-believers raised this objection: what is the difference between interest and trade?	613
Customary determination and being a conventional price does not make excess or deficiency haram for the contracting parties.	611	The sale of notes with excess/deficiency and on credit are both permissible, however, taking more after giving it as a loan is haram.	613
Excess or deficiency between paisas and rupees is halal (permissible).	611	'Istighraq' (absorption/pledge) without possession is nothing, and after possession it becomes a mortgage (rahn), from which profiting is haram.	614
Excess or deficiency between rupees and Ashrafi (gold coins) is halal.	611	Statement regarding the sale of one paisa for two paisas.	614
Just as the value of common goods is estimated in rupees but they do not become rupees or silver, similarly it is for conventional prices.	611	The sale of notes with excess/deficiency is permissible, however, selling a debt is disliked (makruh); this sale will also be void due to an invalid condition.	616
Ashrafi (gold coin) is also valued in rupees.	611	Ruling on the sale of notes.	616
The cause of Riba (interest) is unity of measure and genus.	612	Ruling on taking half the value of paisas for one rupee today and half tomorrow.	617
In cases where excess or deficiency is haram, equality in weight is necessary, not in value.	612	In the sale of currency, if the genus differs, possession on at least one side is necessary.	617
In the sale of silver for silver, poor or good quality will not be considered.	612	Exchange of two copper coins of different weights is not permissible.	619

A single piece of paper can be worth a thousand rupees; this is a clear specific ruling regarding notes. 612

If a note were the essence of silver, selling a ten-rupee note for ten rupees would be Riba, as there is an extraordinary difference in weight. 613

A note cannot be the essence of both silver and gold simultaneously. 613

In this matter, the statement of Imam Muhammad (Allah have mercy on him) is closest to being correct. 619

Analogizing the sale of one for two paisas on the rulings of Hifniyya and Hanafis is weak. 620

Zaid sold a note on credit to Amr; Amr took possession of the note. When the time for payment arrived, Amr got rupees from Zaid himself and paid it back to Zaid; this is permissible. 620

फतावा रज़विया जिल्द 17

रुपये और फ़ुलूस (तांबे के सिक्के) में यदि फ़ुलूस में भी कुछ चांदी हो, तो उधार नाजायज़ रहेगा। ६१०

नोट की बिक्री का सवाल। ६१०

प्रथागत निर्धारण और पारंपरिक मूल्य होना अनुबंध करने वालों के लिए कमी या बेशी को हराम नहीं बनाता। ६११

पैसों और रुपयों में कमी-बेशी हलाल है। ६११

रुपये और अशर्फ़ी (सोने के सिक्के) में कमी-बेशी हलाल है। ६११

जिस तरह सामान्य वस्तुओं की कीमत का आकलन रुपये से करने से वे रुपया या चांदी नहीं हो जातीं, उसी तरह पारंपरिक मूल्य के लिए भी है। ६११

अशर्फ़ी का मूल्य भी रुपये में आंका जाता है। ६११

रिबा (ब्याज) का कारण माप और प्रजाति की एकता है। ६१२

कमी-बेशी हराम होने की स्थिति में वजन की समानता आवश्यक है, मूल्य की नहीं। ६१२

ऋण के रूप में दस का नोट देकर बारह लेना हराम और ब्याज है। ६१३

काफ़िरों ने यह आपत्ति जताई थी कि ब्याज और व्यापार में क्या अंतर है। ६१३

नोटों की कमी-बेशी और उधार के साथ बिक्री दोनों तरह से जायज़ है, हालांकि ऋण देकर अधिक लेना हराम है। ६१३

बिना कब्ज़े के 'इस्तिग़राक़' (गिरवी) कुछ भी नहीं है, और कब्ज़े के बाद वह बंधक (रहन) है, जिससे लाभ उठाना हराम है। ६१४

एक पैसे के बदले दो पैसे की बिक्री का विवरण। ६१४

नोटों की कमी-बेशी के साथ बिक्री जायज़ है, हालांकि ऋण की बिक्री मकरूह है; यह बिक्री भी गलत शर्त के कारण शून्य हो जाएगी। ६१६

नोट की बिक्री का हुक्म। ६१६

एक रुपये के बदले आधे पैसे आज और आधे कल लेने का हुक्म। ६१७

मुद्रा की बिक्री में प्रजाति (लिंग) में भिन्नता होने की स्थिति में एक पक्ष का कब्ज़ा होना अनिवार्य है। ६१७

६१९

चांदी के बदले चांदी की बिक्री में घटिया या बढ़िया गुणवत्ता नहीं देखी जाएगी।

कागज का एक टुकड़ा एक हजार रुपये तक पहुँच सकता है; यह नोटों के बारे में एक स्पष्ट विवरण है। ६१२

यदि नोट चांदी का सार होता, तो दस का नोट दस रुपये में बेचना रिबा (ब्याज) होता क्योंकि वजन में असामान्य अंतर है। ६१३

एक नोट एक साथ चांदी और सोने दोनों का सार नहीं हो सकता। ६१३

तांबे के दो सिक्के जिनका वजन अलग-अलग हो, उनका आपस में विनिमय जायज़ नहीं है।

इस मसले में इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाह अलैह) का कथन सच्चाई के सबसे करीब है। ६१९

एक के बदले दो पैसे की बिक्री को हफ़्निया और हनफ़ियों के नियमों पर आधारित करना कमज़ोर तर्क है। ६२०

ज़ैद ने अम्र को उधार नोट बेचा, अम्र ने नोट पर कब्ज़ा कर लिया। फिर जब भुगतान का समय आया, तो अम्र ने ज़ैद से ही रुपये लिए और ज़ैद को ही चुका दिए; यह जायज़ है। ६२०

روپیہ اور فلوس میں اگر فلوس بھی کچھ چاندی کے ہوں تو ادھار ناجائز رہے گا۔ ۶۱۰

نوٹ کی بیع کا سوال۔ ۶۱۰

عرفی تعین اور ثمن اصطلاحی ہونا عاقدین پر کمی بیشی کو حرام نہیں کرتا۔ ۶۱۱

پیسے اور روپے میں کمی بیشی حلال ہے۔ ۶۱۱

روپے اور اشرفی میں کمی بیشی حلال ہے۔ ۶۱۱

جس طرح عام اشیاء کی قیمت کا اندازہ روپیہ سے کرنے سے وہ روپیہ یا چاندی نہیں ہوتا اسی طرح ثمن اصطلاحی بھی ہے۔ ۶۱۱

بطور قرض دس کا نوٹ دے کر بارہ لینا حرام اور سود ہے۔ ۶۱۳

کافروں نے یہ اعتراض کیا تھا کہ سود اور بیع میں کیا فرق ہے۔ ۶۱۳

نوٹ کی بیع کمی بیشی اور ادھار دونوں طرح جائز ہے البتہ بطور قرض دے کر زیادہ لینا حرام ہے۔ ۶۱۳

استغراق بے قبضہ کچھ نہیں، اور قبضہ کے بعد رہن ہے اس سے انتفاع حرام ہے۔ ۶۱۴

ایک پیسہ کی دو پیسہ کے بدلے بیع کا بیان۔ ۶۱۴

نوٹ کی بیع کمی بیشی سے جائز البتہ قرض فروخت کرنا مکروہ ہے یہ بیع بھی شرط فاسدہ سے فاسد ہوگی۔ ۶۱۶

نوٹ کی بیع کا حکم۔ ۶۱۶

اشرفی کا اندازہ بھی روپے سے کیا جاتا ہے۔ ۶۱۲

علت ربا اتحاد قدر و جنس ہے۔ ۶۱۲

کمی بیشی حرام ہونے کی صورت میں وزن کی یکسانیت ضروری ہے مالیت کی نہیں۔ ۶۱۲

چاندی سے چاندی کی بیع ردی اور جید نہیں دیکھا جائے گا۔ ۶۱۲

ایک کاغذ ہزار روپے کو پہنچ سکتے ہیں یہ نوٹ کا صریح جزئیہ ہے۔ ۶۱۲

نوٹ چاندی کا عین ہو تو دس کا نوٹ دس روپیہ میں بیچنا ربا ہوگا کہ وزن میں غیر معمولی تفاوت ہے۔ ۶۱۳

نوٹ بیک وقت چاندی اور سونے دونوں کا عین نہیں ہو سکتا۔ ۶۱۳

ایک روپیہ کے پیسے نصف آج اور نصف کل لینے کا حکم۔ ۶۱۷

ثمن کی بیع میں اختلاف جنس کی صورت میں ایک طرف قبضہ ضرور ہے۔ ۶۱۷

تانبہ کے دو پیسے جن کا وزن کم و بیش ہو ان کا باہم تبادلہ جائز نہیں۔ ۶۱۹

اس مسئلہ میں امام محمد رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ کا قول اقرب الی الصواب ہے۔ ۶۱۹

ایک دو پیسہ کی بیع کو حفنیہ اور حنفیین پر قیاس کرنا ضعیف ہے۔ ۶۲۰

زید نے عمرو کے ہاتھ نوٹ ادھار بیچا، نوٹ پر عمرو نے قبضہ کر لیا، پھر جب ادا کا وقت آیا عمرو نے لا کر زید ہی سے روپیہ لیا اور زید ہی کو ادا کر دیا یہ جائز ہے۔ ۶۲۰

Fatawa Razawiya (Volume 17)

Page	Content
627	Yes, if the note that Amr bought from Zaid is brought back exactly and exchanged for less money from Zaid, it is not permissible.
628	Doubt on this issue from "Al-Athman la ta'ayyan" (Prices are not specified) and its answer.
628	The basis for the prohibition of buying and selling here is "making a contract again for what was previously owned."
628	The basis for the prohibition of reselling a note at a lower price is "profit on what is not guaranteed (ribh ma lam yudman)."
629	Whether prices are natural (khilqi) or conventional (istilahi), they are not specific in contracts but specific in ownership.
629	In a deposit (wadiah), it is necessary to keep the same money.
629	Zaid sold a one thousand note to Amr for eleven hundred on an eight-month promise and got a bond written. Then he gave that bond to Bakr saying "you collect the money." Zaid gave eleven hundred notes instead of eleven hundred rupees. If Zaid made Bakr his agent or made Bakr the
620	Gold in Kalabatun (silver/ gold thread) is only for color; the value depends on whether it can be separated by melting.
620	When selling Kalabatun with silver, both equality (tamathul) and immediate possession (taqabud) are necessary.
620	When selling gold for Kalabatun, excess (tafadul) is permissible, but immediate mutual possession (taqabul fil hal) is necessary.
622	Ruling on selling silver for mixed silver.
622	When Allah Almighty does not stop the sustenance of sinners, how will He stop the sustenance of those who follow the Shariah?
622	Easy way for a permissible sale of Kalabatun.
623	Definition of Bai' Sarf (exchange of currencies).

Page	Content
	owner of the eleven hundred, it is permissible. And if he only made him a messenger, it is impermissible.
629	And in the case of permissibility, it is also permissible to return exactly those hundred notes mixed.
631	Details of the issue from books of Fiqh.
631	Account of an oversight by Hazrat Allama Shami (may Allah have mercy on him).
631	Exquisite speech on the words of 'Bahr'.
631	Interpretation and justification of the words of Mukhtasar al-Karkhi.
623	Possession from one side at the time of sale of natural and non-natural prices is necessary.
623	A physical object (ayn) can be sold for a debt (dayn).
625	If a camel is sold for wheat or rupees, other things can also be taken instead of them.
625	Mahr (dower), ijrah (rent), daman (guarantee), badal-e-khula (divorce compensation), itq bi-mal (manumission for property), murath (inheritance), and musi-bihi (legacy) all have the same ruling.
626	In the case of exchanging price for rupees, it is necessary to give the full rupee in the session (majlis), otherwise, it will be a sale of debt for debt.
627	One form of Bai' al-Kali bi-al-Kali (sale of credit for credit) and the aspect of its permissibility.

फ़तावा रज़विया (खंड १७)

पृष्ठ	विषय
६२७	हाँ, जिस नोट को अम्र ने ज़ैद से खरीदा था, वही हुबहू लाकर ज़ैद से कम रुपयों में बदलना जायज़ नहीं है।
६२८	इस मसले पर "अल-असमान ला तअय्यन" (क़ीमतें मुतअय्यन नहीं होतीं) से संदेह और उसका उत्तर।
६२८	यहाँ खरीद-फरोख्त की हुरमत (प्रतिबंध) का आधार "जिसका पहले मालिक था दोबारा उसी का अनुबंध करना" है।
६२८	नोट को दोबारा कम कीमत पर बेचने की हुरमत का आधार "उस चीज़ पर मुनाफा जिसका जोखिम न लिया गया हो (रिबह मा लम युज़मन)" है।
६२९	कीमतें (समन) चाहे प्राकृतिक (खिल्क़ी) हों या पारिभाषिक (इस्तिलाही), अनुबंधों में निश्चित नहीं होतीं, स्वामित्व में निश्चित होती हैं।
६२९	अमानत (वदीअत) में वही रुपया बाकी रखना ज़रूरी है।
६२९	

पृष्ठ	विषय
६२०	कलाबतून (चांदी या सोने का धागा) में सोने का केवल रंग होता है, इसका आधार इस पर है कि वह गलाने से अलग हो जाए।
६२०	कलाबतून को चांदी के साथ बेचें तो बराबरी (तमातुल) और कब्ज़ा (तकाबुज़) दोनों ज़रूरी हैं।
६२०	सोने से कलाबतून बेचने की सूरत में बढ़ोतरी (तफ़ादुल) जायज़ है और तुरंत कब्ज़ा (तकाबुल फ़िल हाल) ज़रूरी है।
६२२	चांदी को मिश्रित चांदी के साथ बेचने का हुक्म।
६२२	अल्लाह तआला जब गुनाहगारों का रिज़्क़ (रोज़ी) बंद नहीं करता, तो शरीयत पर चलने वालों का रिज़्क़ कैसे बंद करेगा।
६२२	कलाबतून की जायज़ बिक्री का आसान तरीका।
६२३	

पृष्ठ	विषय
	ज़ैद ने अम्र के हाथ एक हज़ार का नोट ग्यारह सौ में आठ महीने के वादे पर बेचा, और दस्तावेज़ (तमस्सुक) लिखवा लिया। फिर बक्र को वह दस्तावेज़ दे दिया कि तुम रुपया वसूल कर लो। ज़ैद ने ग्यारह सौ रुपयों के बजाय ग्यारह सौ के नोट दिए। ज़ैद ने बक्र को अपना वकील बनाया हो या ग्यारह सौ का बक्र को मालिक बना दिया हो तो जायज़ है। और सिर्फ संदेशवाहक (कासिद) बनाया हो तो नाजायज़ है।
६२९	और जायज़ होने की स्थिति में हुबहू वही सौ नोट मिलाकर वापस करना भी जायज़।
६३१	फिक्ह (इस्लामी न्यायशास्त्र) की किताबों से मसले का विवरण।
६३१	हज़रत अल्लामा शामी (रहमतुल्लाह अलैह) के एक संदेह (वहम) का विवरण।
६३१	'बहर' के कलाम पर उत्कृष्ट विवेचन।
६३१	मुख़्तसर अल-करख़ी के कलाम की व्याख्या और औचित्य।
	बय सर्फ़(मुद्रा विनिमय) की परिभाषा।
६२३	प्राकृतिक और अप्राकृतिक कीमतों की बिक्री के समय एक तरफ से कब्ज़ा ज़रूरी है।
६२३	किसी वस्तु (ऐन) को ऋण (दैन) के बदले बेचा जा सकता है।
६२५	ऊँट को गेहूँ या रुपयों के बदले बेचा तो उसके बजाय और चीज़ भी ले सकते हैं।
६२५	महर, उजरत (मजदूरी), ज़मानत, बदल-ए-खुल' (तलाक़ का मुआवज़ा), इक़्र बि-माल (धन के बदले दास मुक्ति), मौरूस (विरासत), और मूसी-बिही (वसीयत की गई वस्तु), इन सबका यही हुक्म है।
६२६	कीमत को रुपयों से बदलने की स्थिति में पूरा रुपया ही मजलिस (बैठक) में देना ज़रूरी

पृष्ठ	विषय
	है, अन्यथा उधार की बिक्री उधार से हो जाएगी।
६२७	बय अल-काली बिल-काली (उधार के बदले उधार की बिक्री) का एक रूप और इसके जायज़ होने का पहलू।

पृष्ठ ५० (कुल ७१५)

صفحہ	مضمون
۶۲۷	ہاں جس نوٹ کو عمرو نے زید سے خریدا تھا بعینہ وہی لاکر زید سے کم روپیہ پر بدلا تو جائز نہیں۔
۶۲۸	اس مسئلہ پر "الاثمان لاتتعین" سے شبہ اور اس کا جواب۔
۶۲۸	یہاں بیع و شراء کی حرمت کا مدار "جس کا پہلے مالک تھا دوبارہ اسی کا عقد کرنا ہے"
۶۲۸	نوٹ کو دوبارہ کم دام پر بیچنے کی حرمت کا مدار ربح مالم یضمن ہے۔
۶۲۹	

صفحہ	مضمون
۶۲۰	کلا بتوں میں سونے کا صرف رنگ ہوتا ہے اعتبار اس کا ہے کہ گلانے سے علیحدہ ہو جائے۔
۶۲۰	کلا بتوں کو چاندی کے ساتھ بیچیں تو تماثل اور تقابض دونوں ضروری ہے۔
۶۲۰	سونے سے کلابتوں بیچنے کی صورت میں تفاضل جائز اور تقابل فی الحال ضروری ہے۔
۶۲۲	چاندی کو مخلوط چاندی کے ساتھ بیچنے کا حکم۔
۶۲۲	

صفحہ	مضمون	صفحہ	مضمون
	ثمن خواہ خلقی ہو خواہ اصطلاحی عقود میں متعین نہیں ہوتے ملک میں متعین ہوتے ہیں۔		اللہ تعالیٰ جب گنہ گاروں کا رزق نہیں بند کرتا تو شریعت پر عمل کرنے والوں کا رزق کیسے بند کرے گا۔
۶۲۹	ودیعت میں اسی روپیہ کا باقی رکھنا ضروری ہے۔	۶۲۲	کلا بتوں کی جائز بیع کا آسان طریقہ۔
۶۲۹	زید نے عمرو کے ہاتھ ایک ہزار کا نوٹ گیارہ سو میں آٹھ ماہ کے وعدہ پر بیچا، اور تمسک لکھوالیا پھر بکر کو وہ تمسک دے دیا کہ تم روپیہ وصول کرلو۔ زید نے بجائے گیارہ سو روپیہ کے گیارہ سو کے نوٹ دیئے، زید نے بکر کو اپنا وکیل بنایا ہو یا گیارہ سو کا بکر کو مالک بنادیا ہو تو جائز ہے۔ اور صرف قاصد بنایا ہو تو ناجائز ہے۔	۶۲۳	بیع صرف کی تعریف۔
۶۲۹	اور جواز کی صورت میں بعینہ وہی نوٹ سو ملا کر واپس کرنا بھی جائز۔	۶۲۳	خلقی وغیر خلقی اثمان کی بیع کے وقت ایک طرف سے قبضہ ضروری ہے۔
۶۳۱	کتب فقہ سے مسئلہ کی جزئیات۔	۶۲۳	عین کو دین کے بدلہ بیچا جاسکتا ہے۔

صفحہ	مضمون
۶۳۱	حضرت علامہ شامی رحمۃ اللہ تعالیٰ کے ایک وہم کا بیان۔
۶۳۱	بحر کے کلام کی نفیس تقریر۔
۶۳۱	مختصر کرخی کے کلام کی تفسیر و توجیہ۔
۶۲۵	اونٹ کو گیہوں یا روپے کے بدلے بیچا تو اس کے بجائے اور چیز بھی لے سکتے ہیں۔
۶۲۵	مہر، اجرۃ، ضمان، بدل خلع، عتق بمال، مورث، اور موصی بہ سب کا یہی حکم ہے۔
۶۲۶	قیمت کو روپیہ سے بدلنے کی صورت میں پورا روپیہ ہی مجلس میں دینا ضروری ہے ورنہ ادھار کی بیع ادھار سے ہو جائے گی۔
۶۲۷	بیع الکالی بالکالی کی ایک صورت اور اس کے جواز کا پہلو۔

Fatawa Razawiya (Volume 17)

Subject	Page
Sale of copper coins for silver dirhams is not a currency exchange (Bay' Sarf).	631
As long as copper coins are in circulation, they are considered conventional price; once circulation ends, they are treated as goods.	632
When exchanging rupees for copper coins, possession of one of the substitutes is necessary.	633
In the aforementioned case, mutual possession from one side is the majority view, according to the decree of Imam Muhammad (may Allah have mercy on him).	635
Resolution of contradictions using the texts of Mabsut and Jami al-Saghir.	636
Commentary on Allama Shami's position.	636
According to the predominant view, possession from one side is sufficient in the sale of copper coins for dirhams.	637
Attestation of Kafil al-Faqih al-Faham.	638
Chapter: Bay' al-Taljia (Symbolic Sale)	
Definition and ruling of Bay' al-Taljia.	639
	639
The harm of a symbolic sale (Bay' al-Taljia) can also be removed through a gift.	641
If a symbolic sale is proven by evidence or confession, the buyer will not be the owner of the sold item.	641
Chapter: Bay' al-Wafa (Sale with Right of Redemption)	
Bay' al-Wafa is in reality a pledge (mortgage).	644
After the fatwas of authoritative jurists are manifest, the baseless disagreement of non-jurists carries no weight.	644
There are eight opinions on Bay' al-Wafa; the majority of scholars hold that it is a pledge.	644
What is customary and known is legally known.	645
Explanation of Bay' al-Wafa.	645
Ruling on Bay' al-Wafa.	645
When is a sale absolute, when is it Bay' al-Wafa, and the ruling for each.	646

Subject	Page
It can sometimes occur in the sense of a real sale.	
A suspended sale (Bay' Mawquf) becomes void upon the death of the contracting parties or their legal heirs.	640
The owner's heirs cannot validate a suspended sale.	640
In a symbolic sale, the buyer should religiously disclose its fictitious nature.	640
In a gift, there is a right of revocation if there is no legal impediment.	640
Chapter: Miscellaneous Matters of Sale	
Selling stamps is not free from religious dislike (karahat).	649
Income from sold property is unlawful (in certain contexts).	650
Description of the difference between pure service and service linked to an obligation, and the ruling for both.	650
A person is sinful for breaking a promise, but there is no legal compulsion from Sharia for its fulfillment.	650
Ruling on 'Ghatu' (loss/ shortage).	651

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

विषय	पृष्ठ
तांबे के सिक्कों (फुलूस) का चांदी के सिक्कों (दिरहम) से विक्रय 'बैय सर्फ़ (मुद्रा विनिमय) नहीं है।	631
जब तक तांबे के सिक्के चलन में हैं, वे प्रथागत मूल्य (थमन) हैं; चलन समाप्त होने पर वे माल की श्रेणी में आ जाते हैं।	632
रुपये को फुलूस से बदलते समय एक पक्ष का कब्ज़ा अनिवार्य है।	633
उपरोक्त स्थिति में एक पक्ष से कब्ज़ा पर्याप्त होने का अधिकांश विद्वानों का मत है और इमाम मुहम्मद (रह.) का यही फ़रमान है।	635
'मबसूत' और 'जामे सगीर' के ग्रंथों के माध्यम से विरोधाभास का समाधान।	636
अल्लामा शामी पर टिप्पणी।	636
प्रभावी मत के अनुसार, दिरहम के बदले फुलूस के विक्रय में एक ही पक्ष का कब्ज़ा पर्याप्त है।	637
'कफ़ील अल-फ़कीह अल-फ़ाहिम' का सत्यापन।	638
हिबा (उपहार) के माध्यम से भी सांकेतिक विक्रय (बैय अल-तलजिया) के नुकसान को समाप्त किया जा सकता है।	641
यदि गवाही या स्वीकारोक्ति से सांकेतिक विक्रय सिद्ध हो जाए, तो खरीदार बेची गई वस्तु का मालिक नहीं होगा।	641
अध्याय: बैय अल-वफ़ा (पुनर्खरीद के अधिकार के साथ विक्रय)	
बैय वफ़ा वास्तव में गिरवी (रहन) है।	644
विश्वसनीय न्यायविदों (अहले फ़तवा) के फ़तवे ज़ाहिर होने के बाद, गैर-फ़तवा देने वालों के बिना प्रमाण के मतभेद का कोई महत्व नहीं है।	644
बैय वफ़ा पर आठ राय हैं; अधिकांश विद्वानों का मत है कि यह गिरवी है।	644
जो प्रथागत रूप से ज्ञात है, वह शरई रूप से भी मान्य है।	645
बैय वफ़ा की व्याख्या।	645
बैय वफ़ा का नियम।	645

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
अध्याय: बैय अल-तलजिया (सांकेतिक विक्रय)			
बैय अल-तलजिया की परिभाषा और उसका नियम।	639	विक्रय कब अंतिम है और कब बैय वफ़ा, और प्रत्येक का नियम।	646
कभी-कभी यह वास्तविक विक्रय के अर्थ में भी होता है।	639	**अध्याय: विक्रय के विविध मामले**	
अनुबंधित पक्षों या कानूनी वारिसों की मृत्यु पर 'बैय मौकूफ' (निलंबित विक्रय) निरस्त हो जाता है।	640	स्टाम्प बेचना अरुचिकरता (कराहियत) से मुक्त नहीं है।	649
मालिक के वारिस निलंबित विक्रय को वैध नहीं कर सकते।	640	बेची गई संपत्ति से आय (कुछ संदर्भों में) नाजायज है।	650
बैय तलजिया में खरीदार को चाहिए कि धार्मिक रूप से इस विक्रय का काल्पनिक होना स्पष्ट कर दे।	640	शुद्ध सेवा और दायित्व से जुड़ी सेवा के बीच अंतर का वर्णन और दोनों का नियम।	650
उपहार में बाधा न होने की स्थिति में वापसी का अधिकार होता है।	640	वादा तोड़ने पर व्यक्ति पापी होता है, लेकिन वादा पूरा करने के लिए शरीयत की ओर से कोई कानूनी दबाव नहीं है।	650
		'घाटू (घाटा/कमी) का नियम।	651

مضمون	صفحہ
بیع فلوس بالدراہم بیع صرف نہیں ہے۔	۶۳۱
فلوس جب تک رائج ہوں ثمن اصطلاحی ہیں رواج ختم ہو جانے پر سامان کے حکم میں ہیں۔	۶۳۲
روپیہ فلوس سے بدلیں تو احد البدلین کا قبضہ ضروری ہے۔	۶۳۳
مذکورہ بالا صورت میں ایک جانب سے تقابض کی شرط اکثر کا قول ہے اور امام محمد رحمتہ اللہ تعالیٰ علیہ کا فرمان ہے۔	۶۳۵
مبسوط اور جامع صغیر کی عبارتوں سے دفع تدافع۔	۶۳۶
علامہ شامی پر تطفل۔	۶۳۶
	۶۳۷

مضمون	صفحہ
ہبہ سے بھی بیع تلجیہ کا ضرر ختم ہوسکتا ہے۔	۶۴۱
بیع تلجیہ کا ثبوت گواہی یا اقرار سے ہوجائے تو مشتری مبیع کا مالک نہ ہوگا۔	۶۴۱
باب بیع الوفاء	
بیع وفا حقیقت میں رہن ہے۔	۶۴۴
ذی اعتبار اہل فتوی کے فتوی کے ظاہر ہو جانے کے بعد غیر مفتیوں کے بلادلیل اختلاف کا اعتبار نہیں۔	۶۴۴
بیع وفاء میں آٹھ قول ہیں اکثر علماء کا قول یہ ہے کہ یہ رہن ہے۔	۶۴۴
	۶۴۵

مضمون	صفحہ
مذہب راجح پر بیع فلوس بالدراہم میں ایک ہی جانب کا قبضہ کافی ہے۔	
کفل الفقیہ الفاہم کی تصدیق۔	۶۳۸
باب بیع التلجیہ	
بیع تلجیہ کی تعریف اور اس کا حکم۔	۶۳۹
کبھی واقع بمعنی میقع بھی ہوتا ہے۔	۶۳۹
بیع موقوف متعاقدین یا عاقلہ کے انتقال سے باطل ہو جاتی ہے۔	۶۴۰
بیع موقوف کو مالک کے ورثہ جائز نہیں کر سکتے۔	۶۴۰
بیع تلجیہ میں دیانۃً مشتری کو چاہئے کہ اس بیع کا فرضی ہونا ظاہر کر دے۔	۶۴۰
ہبہ میں عدم مانع کی صورت میں اختیار رجوع ہوتا ہے۔	۶۴۰

مضمون	صفحہ
جو عرفاً معہود ہو وہ شرعاً معہود ہے۔	
بیع وفاء کی تشریح۔	۶۴۵
بیع وفاء کا حکم۔	۶۴۵
بیع کب قطعی ہے اور کب بیع وفاء ہے اور ہر ایک کا حکم۔	۶۴۶
باب متفرقات البیع	
اسٹامپ کی بیع کراہت سے خالی نہیں۔	۶۴۹
جائداد مبیعہ کی آمدنی ناجائز ہے	۶۵۰
خدمت محضہ اور خدمت معلل بالفرض میں فرق کا بیان اور دونوں کا حکم۔	۶۵۰
وعدہ توڑنے پر آدمی گنہگار ہوتا ہے مگر ایفائے وعدہ پر شرع کی جانب سے جبر نہیں۔	۶۵۰
گھاٹو کا حکم۔	۶۵۱

Fatawa Ridawiyya Volume 17

Book of Suretyship (Kitab al-Kafala)

1. "I will pay Amr's debt" - this is a promise; suretyship is not established by it. (653, 656)
2. The creditor said, "Amr is absolved, I will take it from you," and the surety remained silent; at most, only a promise is established by this. (653, 656)
3. For suretyship, words of commitment like "Kafaltu wa Dhamantu (I took charge and guaranteed), Alaiya (upon me), Ilaiya (towards me)" are necessary. (654, 656)
4. When a promise is in the form of a condition, such as "If Zaid does not pay, I will pay," it becomes binding. (654, 658)
5. Absolving the principal debtor from the demand does not absolve the surety; however, absolving from the original debt also absolves the surety from the demand. (655, 659)
6. If the suretyship is by the order of the debtor or with his consent, the surety can seek recourse from him, otherwise not. (655, 659)
7. A question regarding personal suretyship (Kafala bi-an-Nafs) combined with financial suretyship (Kafala bi-al-Mal). (656, 659)
8. If someone said, "I am the guarantor for so-and-so until the 18th date," according to Zahir al-Riwayah, the guarantee remains even after the 18th. But if said "from a certain date to a certain date," the guarantee ends on the latter date. (656, 659)
9. Nowadays, the custom is that there is no difference between the two, and both forms are interpreted to mean the guarantee ends after that date. (656, 659)
10. Fatwa is based on custom (Urf). (656)
11. One who does not know the people of the times is ignorant. (656)
12. "I am a guarantor from the 18th date; if he flees, I will pay the demand." If he flees within the 18th, the demand must be paid. (656)
13. Detailed question again. (657)
14. "I am the guarantor for the presence of the defendant until the 18th date; if he flees, I am responsible for the plaintiff's demand." If the plaintiff or their lawyer did not accept the guarantee for the demand, then there is neither a right to the financial demand nor does the personal guarantee remain after the 18th. (658)

15. If a surety did not mention money or the amount of demand in a financial guarantee and only used the word 'demand,' paying money is not mandatory. (659)
16. There is a difference between 'demand' (mutalaba) and 'debt' (dayn). The literal meaning of demand is seeking and requesting; money is its metaphorical meaning. (659)
17. According to Imam Azam, as long as the literal meaning is possible, applying the metaphorical meaning is not permissible. (659)
18. "If the defendant flees, I am responsible for the plaintiff's demand" - this is a promise to ask for the loan from the defendant; it is not related to financial suretyship. (659)
19. Conditioning a financial suretyship is valid. (659)
20. "If the condition fails, that which was conditioned also fails" is a universal rule. (661)

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

ज़मानत की किताब (किताब अल-कफ़ाला)

1. "मैं अम्र का क़र्ज़ अदा करूँगा" - यह एक वादा है; इससे ज़मानत (कफ़ाला) साबित नहीं होती। (653, 656)
2. क़र्ज़दाता ने कहा, "अम्र मुक्त हुआ, मैं तुझसे लूँगा," और ज़मानतदार (कफ़ील) खामोश रहा; इससे अधिक से अधिक केवल एक वादा साबित होता है। (653, 656)
3. ज़मानत के लिए प्रतिबद्धता के शब्द जैसे "कफ़ल्तु व ज़मन्तु (मैंने ज़िम्मेदारी और ज़मानत ली), अलैया (मुझ पर), इलैया (मेरी ओर)" आवश्यक हैं। (654, 656)
4. जब वादा शर्त के रूप में हो, जैसे "यदि ज़ैद नहीं देगा, तो मैं दूँगा," तो वह अनिवार्य हो जाता है। (654, 658)
5. मूल ऋणी को मांग से मुक्त करना ज़मानतदार को मुक्त नहीं करेगा; हालाँकि, मूल क़र्ज़ से मुक्त करना ज़मानतदार को मांग से भी मुक्त कर देता है। (655, 659)
6. यदि ज़मानत क़र्ज़दार के आदेश या उसकी सहमति से हो, तो ज़मानतदार उससे वापसी की मांग कर सकता है, अन्यथा नहीं। (655, 659)
7. वित्तीय ज़मानत (कफ़ाला बिल-माल) के साथ व्यक्तिगत ज़मानत (कफ़ाला बिन-नफ़्स) का एक प्रश्न। (656, 659)
8. यदि किसी ने कहा, "मैं 18 तारीख तक फ़लां का जामिन हूँ," तो ज़ाहिर अर-रिवाया के अनुसार, 18 तारीख के बाद भी ज़मानत बनी रहती है। लेकिन यदि कहा गया "अमुक तिथि से अमुक तिथि तक," तो ज़मानत बाद वाली तिथि पर समाप्त होगी। (656, 659)
9. आजकल का प्रचलन (उर्फ़) यह है कि दोनों में कोई अंतर नहीं है, और दोनों रूपों का अर्थ यही लिया जाता है कि उस तारीख के बाद ज़मानत समाप्त हो गई। (656, 659)
10. फ़तवा प्रचलन (उर्फ़) पर आधारित होता है। (656)
11. जो अपने समय के लोगों को नहीं जानता, वह अज्ञानी है। (656)
12. "मैं 18 तारीख से जामिन हूँ; अगर वह भाग गया तो मांग मैं दूँगा।" यदि वह 18 तारीख के भीतर भाग गया, तो मांग का भुगतान करना होगा। (656)
13. दोबारा विस्तृत प्रश्न। (657)

14. "मैं 18 तारीख तक प्रतिवादी की उपस्थिति का जामिन हूँ; यदि वह भाग गया, तो मैं वादी की मांग का ज़िम्मेदार हूँ।" यदि वादी या उनके वकील ने मांग की ज़मानत स्वीकार नहीं की, तो न तो वित्तीय मांग का अधिकार रहेगा और न ही 18 के बाद व्यक्तिगत ज़मानत बाकी रहेगी। (658)
15. यदि एक ज़मानतदार ने वित्तीय ज़मानत में धन या मांग की राशि का उल्लेख नहीं किया और केवल 'मांग' शब्द का उपयोग किया, तो धन देना अनिवार्य नहीं है। (659)
16. 'मांग' (मुतालबा) और 'क़र्ज़' (दैन) में अंतर है। मांग का शाब्दिक अर्थ खोजना और अनुरोध करना है; धन इसका लाक्षणिक अर्थ है। (659)
17. इमाम आज़म के अनुसार, जब तक शाब्दिक अर्थ संभव है, लाक्षणिक अर्थ लागू करना जायज़ नहीं है। (659)
18. "यदि प्रतिवादी भाग गया, तो मैं वादी की मांग का ज़िम्मेदार हूँ" - यह प्रतिवादी से ऋण मांगने का वादा है; इसका वित्तीय ज़मानत से कोई संबंध नहीं है। (659)
19. वित्तीय ज़मानत की शर्त (तअलीक़) वैध है। (659)
20. "यदि शर्त विफल हो जाती है, तो वह जो शर्त पर आधारित था, वह भी विफल हो जाता है" एक व्यापक नियम है। (661)

فتاویٰ رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

کتاب الکفالۃ

۱۔ "میں عمرو کا قرض ادا کروں گا" یہ وعدہ ہے اس سے کفالت ثابت نہیں ہوتی۔ (۶۵۳، ۶۵۶) ۲۔ قرضخواہ نے کہا عمرو بری ہوا میں تجھ سے لوں گا، اور کفیل خاموش رہا، اس سے بھی زیادہ سے زیادہ وعدہ ثابت ہوتا ہے۔ (۶۵۳، ۶۵۶) ۳۔ کفالت کے لئے التزام کے الفاظ جیسے "کفلت وضمنت، علی، الی" ضروری ہے۔ (۶۵۴، ۶۵۶) ۴۔ وعدہ جب تعلیق کی صورت میں ہو جیسے "زید نہ دے گا تو میں دوں گا" لازم ہو جاتا ہے۔ (۶۵۴، ۶۵۸) ۵۔ اصیل کو مطالبہ سے بری کرنا کفیل کو بری نہ کریگا ہاں اصل قرض سے بری کرنا تو کفیل مطالبہ سے بھی بری ہو جاتا۔ (۶۵۵، ۶۵۹) ۶۔ کفالت قرضدار کے حکم یا اس کی رضا سے ہو تو کفیل اس سے رجوع کر سکتا ہے ورنہ نہیں۔ (۶۵۵، ۶۵۹) ۷۔ کفالت بالنفس مع کفالت بالمال کا ایک سوال۔ (۶۵۶، ۶۵۹) ۸۔ کسی نے یہ کہا "۱۸ تاریخ تک فلاں کا ضامن ہوں" تو ظاہر الروایہ یہ ہے کہ ۱۸ تاریخ کے بعد بھی ضمانت باقی ہے اور اگر فلاں تاریخ سے فلاں تاریخ تک تو بعد والی تاریخ کو ضمانت منتہی ہوگی۔ (۶۵۶، ۶۵۹) ۹۔ آج کل کا عرف یہ ہے کہ دونوں میں کچھ فرق نہیں اور ان دونوں صورتوں کا مطلب یہی لیتے ہیں کہ اس تاریخ کے بعد ضمانت ختم ہو گئی۔ (۶۵۶، ۶۵۹) ۱۰۔ فتویٰ عرف پر ہوتا ہے۔ (۶۵۶) ۱۱۔ جو اہل زمانہ کو نہ جانے جاہل ہے۔ (۶۵۶) ۱۲۔ "۱۸ تاریخ سے ضامن ہوں بھاگ گیا تو مطالبہ میں دوں گا" اگر ۱۸ تاریخ کے اندر بھاگ گیا مطالبہ دینا ہو گا۔ (۶۵۶) ۱۳۔ دوبارہ مفصل سوال۔ (۶۵۷) ۱۴۔ "۱۸ تاریخ تک میں مدعا علیہ کا حاضر ضامن ہوں اگر بھاگ گئے مطالبہ مدعیہ کا میں ذمہ دار ہوں" اور مطالبہ کی ضمانت کو مدعیہ یا مدعی کے وکیل نے قبول نہ کیا تو نہ مال کے مطالبہ کا حق نہ ۱۸ کے بعد نفس کی ضمانت باقی۔ (۶۵۸) ۱۵۔ کفیل نے کفالت بالمال

میں مال یا زرِ مطالبہ کا ذکر نہ کیا صرف مطالبہ کا لفظ کہا تو مال دینا لازم نہیں۔ (۶۵۹) ۱۶۔ مطالبہ اور دین میں فرق ہے مطالبہ کے حقیقی معنی طلب اور تقاضا کے ہیں، مال تو معنی مجازی ہے۔ (۶۵۹) ۱۷۔ امام اعظم کے نزدیک جب تک معنی حقیقی بن سکیں مجازی پر حمل جائز نہیں۔ (۶۵۹) ۱۸۔ مدعی علیہ بھاگ گیا تو مدعی کے مطالبہ کا میں ذمہ دار ہوں یہ مدعا علیہ سے قرض مانگنے کا وعدہ ہے اس کو کفالت بالمال سے علاقہ نہیں۔ (۶۵۹) ۱۹۔ کفالت بالمال کی تعلیق صحیح ہے۔ (۶۵۹) ۲۰۔ اذا فات الشرط فات المشروط قاعدہ کلیہ ہے۔ (۶۶۱)

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

Table of Contents / Summary of Rulings:

1. According to Zahir al-Riwayah, in a suretyship where the initial end date is not mentioned, the suretyship begins after the mentioned date. (661) | The speech of the contract maker, the vow taker, the swearer, and the waqf maker will all be interpreted according to their custom. (669)
2. A dependent does not take precedence over the principle. And if the principle is non-existent, the dependent is also not established. (663) | Zahir al-Riwayah has absolutely no connection to our current and prevailing custom. (669)
3. When suretyship for property is dependent on suretyship for person, if there is exoneration from the second, the first is also removed. (663) | In the questioned case, there is also a ruling of piety. (670)
4. Both proposal and acceptance in the meeting of suretyship are pillars of suretyship, so the absence of the beneficiary will also invalidate the suretyship. (664) | If suretyship for property is dependent on suretyship for person, then as soon as the principal ends, the dependent also ends. (670)
5. If the beneficiary is not in the meeting of proposal but accepts the suretyship after being informed, even then the suretyship is invalid. (664) | A question regarding a decision on suretyship for property. (670)
6. In the matter of the beneficiary's absence, the fatwa is based on the opinion of both sides (Tarafayn). It is not from the preference of the followers of Mahbubi and Nasafi. (665) | Detailed explanation of 20 reasons for defects among seven witnesses. (673)
7. If fatwas differ, then in the absence of a change in era, the fatwa is based on the opinion of the Imam. (665) | Witnessing for this ruling is unacceptable and suretyship for property is lapsed. (676)
8. [Blank] | Correspondence between testimony and claim is necessary; in case of difference, testimony is unacceptable. (676)
9. Deviation from the weightier (Rajih) opinion is not permissible. (666) | Appearance (Zahir) benefits the defendant, not the plaintiff. (676)
10. If the beneficiary is absent from the meeting of proposal and someone accepts on their behalf, then this acceptance will depend on the permission of the beneficiary. (666) | A question from a non-Shariah form of suretyship. (677)

11. In the questioned case, suretyship for property is invalid due to lack of acceptance in the meeting of proposal. (667) | Suretyship for property is permissible in Shariah. (677)
12. In suretyship for person, the current custom is that after the end date, the suretyship ends. (667) | Definition of suretyship for property. (677)
13. Explicit texts from books of jurisprudence on the mentioned issue. (667) | In suretyship for property, a single demand is made on both the creditor and the surety. (677)
14. "One month," "up to one month," "from today up to one month," these three phrases are synonymous. (668) | [Blank]

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

विषय सूची / अहकाम का सारांश:

1. ज़ाहिर अल-रिवाया के अनुसार, जिस कफ़ालत (जमानत) में शुरुआत की अवधि का उल्लेख नहीं होता, वह उल्लेखित तिथि के बाद शुरू होती है। (661) | अनुबंध करने वाले, मन्नत मानने वाले, कसम खाने वाले और वक़्फ़ करने वाले, सभी की बातों को उनके रीति-रिवाजों (उर्फ़) के अनुसार समझा जाएगा। (669)
2. आश्रित (ताबी), प्रधान (मतबू) पर प्राथमिकता नहीं रखता। और यदि प्रधान का अस्तित्व नहीं है, तो आश्रित भी सिद्ध नहीं होता। (663) | ज़ाहिर अल-रिवाया का हमारे प्रचलित और सामान्य रीति-रिवाजों से कोई संबंध नहीं है। (669)
3. जब धन की जमानत (कफ़ालत बिल-माल), व्यक्ति की जमानत (कफ़ालत बिन-नफ़्स) के अधीन हो, तो दूसरे से मुक्ति मिलने पर पहली भी समाप्त हो जाती है। (663) | प्रश्नाधीन मामले में धार्मिक निष्ठा (दयानत) का भी एक हुक्म है। (670)
4. जमानत की सभा में प्रस्ताव (ईजाब) और स्वीकृति (क़बूल) दोनों का होना जमानत का मुख्य स्तंभ है, अतः लाभार्थी (मकफ़ूल लहू) की अनुपस्थिति भी जमानत को अमान्य कर देगी। (664) | यदि धन की जमानत, व्यक्ति की जमानत के अधीन हो, तो मूल के समाप्त होते ही आश्रित भी समाप्त हो जाएगी। (670)
5. यदि लाभार्थी प्रस्ताव की सभा में मौजूद न हो लेकिन सूचना मिलने के बाद जमानत स्वीकार कर ले, तो भी जमानत अमान्य है। (664) | धन की जमानत के एक फैसले के बारे में एक सवाल। (670)
6. लाभार्थी की अनुपस्थिति के मामले में फ़तवा 'तरफ़ैन' (इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम अबू यूसुफ़) के कथन पर है। यह महबूबी और नसफ़ी के विद्वानों की प्राथमिकता पर आधारित नहीं है। (665) | सात गवाहों में दोषों के20 कारणों का विस्तृत वर्णन। (673)
7. यदि फ़तवे अलग-अलग हों, तो समय के अंतर के अभाव में फ़तवा इमाम के कथन पर होता है। (665) | इस हुक्म के लिए गवाही अस्वीकार्य है और धन की जमानत समाप्त हो गई। (676)
8. [रिक्त] | गवाही और दावे में समानता आवश्यक है; अंतर की स्थिति में गवाही अस्वीकार्य होती है। (676)

9. 'राजिह' (प्रबल) मत से हटना जायज़ नहीं है। (666) | ज़ाहिर (स्पष्ट स्थिति) प्रतिवादी के लिए लाभदायक होती है, वादी के लिए नहीं। (676)
10. यदि लाभार्थी प्रस्ताव की सभा से अनुपस्थित हो और कोई उसकी ओर से स्वीकार कर ले, तो यह स्वीकृति लाभार्थी की अनुमति पर निर्भर होगी। (666) | जमानत के एक गैर-शरिया रूप से संबंधित प्रश्न। (677)
11. प्रश्नाधीन मामले में प्रस्ताव की सभा में स्वीकृति न होने के कारण धन की जमानत अमान्य है। (667) | शरीयत में धन की जमानत जायज़ है। (677)
12. व्यक्ति की जमानत में वर्तमान रीति-रिवाज यही है कि समाप्ति की तिथि के बाद जमानत खत्म हो जाती है। (667) | धन की जमानत की परिभाषा। (677)
13. उल्लेखित मुद्दे पर फ़िक़ह (न्यायशास्त्र) की किताबों के स्पष्ट प्रमाण। (667) | धन की जमानत में लेनदार (दाइन) और ज़मानतदार (कफ़ील) दोनों पर एक ही मांग होती है। (677)
14. "एक महीना," "एक महीने तक," "आज से एक महीने तक," ये तीनों शब्द एक ही अर्थ रखते हैं। (668) | [रिक्त]

جلد ہفدہم (۱۷) فتاوی رضویہ

فہرست مضامین / خلاصہ احکام:

۱۔ ظاہر الروایہ کے مطابق کفالت میں جو ابتدائے غایت مذکور نہ ہو تو کفالت تاریخ مذکور کے بعد شروع ہوتی ہے۔ ۶۶۱ | عقد کرنے والے، منت ماننے والے، قسم کھانے والے اور وقف کرنے والے سب کا کلام ان کے عرف پر محمول ہوگا۔ ۶۶۹ ۲۔ تابع متبوع پر مقدم نہیں ہوتا۔ اور متبوع معدوم ہو تو تابع بھی متحقق نہیں ہوتا۔ ۶۶۳ | ظاہر الروایہ کو ہمارے عرف دائر و سائر سے اصلا تعلق نہیں۔ ۶۶۹ ۳۔ کفالت بالمال جب کفالت بالنفس کی تابع ہو ، ثانی سے برائت ہو تو اول بھی مرتفع ہو جاتی ہے۔ ۶۶۳ | صورت مسئولہ میں ایک حکم دیانت کا بھی ہے۔ ۶۷۰ ۴۔ مجلس کفالت میں ایجاب و قبول دونوں ہونا رکن کفالت ہے، تو مکفول لہ کی غیر حاضری بھی کفالت کو باطل کر دے گی۔ ۶۶۴ | کفالت بالمال کفالت بالنفس کے تابع ہو تو اصل کے ختم ہوتے ہی تابع بھی ختم ہو جائی گی۔ ۶۷۰ ۵۔ مکفول لہ مجلس ایجاب میں نہ ہو مگر اطلاع کے بعد کفالت قبول کرے پھر بھی کفالت باطل ہے۔ ۶۶۴ | کفالت بالمال کے ایک فیصلہ کے بارے میں ایک سوال۔ ۶۷۰ ۶۔ مکفول لہ کی غیبت کے مسئلہ میں فتوئ طرفین کے قول پر ہے۔ محبوبی اور نسفی اصحاب ترجیح سے نہیں۔ ۶۶۵ | سات گواہوں میں ۲۰ وجوہ نقائص کا تفصیلی بیان۔ ۶۷۳ ۷۔ فتوئ مختلف ہو تو عدم اختلاف زمانہ کی صورت میں فتوئ امام کے قول پر ہوتا ہے۔ ۶۶۵ | اس حکم کی گواہی نامقبول اور کفالت بالمال ساقط۔ ۶۷۶ ۸۔ [خالی] | شہادت اور دعوئ میں مطابقت ضروری ہے اختلاف کی صورت میں گواہی نامقبول ہوتی ہے۔ ۶۷۶ ۹۔ راجح سے عدول جائز نہیں۔ ۶۶۶ | ظاہر مدعا علیہ کو مفید ہوتا ہے مدعی کو نہیں۔ ۶۷۶ ۱۰۔ مکفول لہ مجلس ایجاب سے غائب ہو اور کوئی اس کی جانب سے قبول کرے تو یہ قبول مکفول لہ کی اجازت پر موقوف ہوگا۔ ۶۶۶ | کفالت

کی ایک غیر شرعی صورت سے سوال۔ ۶۷۷ ۱۱۔ صورت مسئولہ میں کفالت بالمال عدم قبول فی المجلس ایجاب کی وجہ سے باطل ہے۔ ۶۶۷ | کفالت بالمال شرعا جائز ہے۔ ۶۷۷ ۱۲۔ کفالت بالنفس میں عرف حال یہی ہے کہ تاریخ انتہاء کے بعد کفالت ختم ہے۔ ۶۶۷ | کفالت بالمال کی تعریف۔ ۶۷۷ ۱۳۔ مسئلہ مذکورہ پر نصوص کتب فقہیہ۔ ۶۶۷ | کفالت بالمال میں ایک ہی مطالبہ دائن اور کفیل دونوں پر ہوتا ہے۔ ۶۷۷ ۱۴۔ ایک مہینہ، ایک مہینہ تک آج سے ایک مہینہ تک، یہ تینوں الفاظ ہم معنی ہیں۔ ۶۶۸ | [خالی]

Fatawa Razawiya, Volume 17

Content Description	Page No.	Content Description	Page No.
The words for personal guaranty (Kafalat bin-Nafs): "Kafaltu bi-nafsihi 'alayya ila..."	677	Requirement of guaranty (Kafalat) is not the restriction on transactions.	681
The words for financial guaranty (Kafalat bil-Maal): "Kafaltu bimaalika 'alayhi bimaa yudriku fi haadha al-bay'"	677	Even if it is stipulated as a condition that "I will pay the guaranty amount from the price of this house", selling the house is still not mandatory.	681
Making a property a surety (Makful) while it remains in the owner's possession, but the owner is restricted from transactions like sale or gift so that the creditor can recover their claim - all this is an un-Islamic method.	677	A claim for a property made as surety is not legally maintainable in Shariah.	681
Shariah has prescribed two methods for the authentication of debt: Guaranty (Kafalat) and Mortgage/Pledge (Rahn).	677	If Amr stood as guarantor for Zaid without Zaid's wish and paid the amount, he is not entitled to recover that amount from Zaid.	681
For a pledge (Rahn), the possession of the pledged item by the pledgee is necessary.	677	In guaranty, the guarantor (Kafil) will be authorized to collect the claim from the debtor only if the guaranty was done at the debtor's request or the debtor expressed consent in the assembly of offer, otherwise not.	682
For a guaranty, it is necessary to be a person; property cannot be a guarantor.	678	If both the creditor and debtor are present and the guarantor initiated the offer of guaranty: if the debtor expressed consent first, the guarantor will be authorized to collect the claim;	682

Content Description	Page No.	Content Description	Page No.
		if the creditor gave approval first, then not.	
		The above is the school of thought of 'Tarfain' (Imam Abu Hanifa and Imam Abu Yusuf). According to the 'Mufta Bihi' (fatwa-decreed) opinion, guaranty	
Property is often engrossed in one's own debts; no person can be their own guarantor.	678	becomes complete just by the guarantor's statement; however, the right to recover the claim from the debtor will be based on the debtor's command.	683
There is no responsibility/ liability on animals.	679	In such a guaranty where a house is made a surety at the debtor's command, even then the guarantor has no right of recovery.	685
Literal meaning of 'Zimma' is 'covenant', and in Shariah, it is the covenant between man and God, or the attribute by which a person is held accountable.	679	A person who gives something to someone thinking it is their right over them can take it back if that thought is proven wrong.	685
Explanation of five matters in guaranty.	680	If valid and Shariah-compliant guaranty is done at the debtor's command, and the guarantor fulfilled the claim in cash to save the property from being confiscated, he can recover the claim from the debtor.	685
Detail of arguments and refutation of making property a surety.	680		

फ़तावा रज़विया, जिल्द 17

सामग्री विवरण	पृष्ठ संख्या	सामग्री विवरण	पृष्ठ संख्या
व्यक्तिगत ज़मानत (कफ़ालत बिन-नफ़्स) के शब्द: "कफ़ल्तु बि-नफ़्सिहि अलैय इला..."	677	कफ़ालत (ज़मानत) की आवश्यकता लेन-देन पर प्रतिबंध (हज्र) नहीं है।	681
वित्तीय ज़मानत (कफ़ालत बिल-माल) के शब्द: "कफ़ल्तु बि-मालिका अलैहि बिमा युदरिकु फ़ी हाज़ा अल-बै"	677	यदि यह शर्त रखी जाए कि "मैं इस घर की कीमत से ज़मानत राशि अदा करूँगा", तब भी घर बेचना अनिवार्य नहीं है।	681
किसी संपत्ति को ज़मानत (मकफ़ूल) बनाना जबकि वह मालिक के कब्ज़े में रहे, लेकिन मालिक को बिक्री या उपहार जैसे लेन-देन से रोक दिया जाए ताकि ऋणदाता अपना दावा वसूल कर सके- यह सब ग़ैर-शरई तरीका है।	677	ज़मानत में रखी गई संपत्ति का दावा शरई तौर पर मान्य नहीं है।	681
शरीअत ने ऋण की पुष्टि के दो तरीके निर्धारित किए हैं: कफ़ालत (ज़मानत) और रहन (गिरवी)।	677	यदि ज़ैद की इच्छा के बिना अम्र ने उसकी ज़मानत दी और राशि का भुगतान कर दिया, तो वह ज़ैद से वह राशि पाने का हकदार नहीं है।	681
रहन के लिए गिरवी रखी चीज़ पर गिरवी रखने वाले (मुर्तहिन) का कब्ज़ा ज़रूरी है।	677	कफ़ालत में, ज़मानतदार (कफ़ील) ऋणी से वसूली का हकदार तभी होगा जब कफ़ालत ऋणी के कहने पर की गई हो या उसने प्रस्ताव की सभा में सहमति व्यक्त की हो, अन्यथा नहीं।	682
	678	यदि ऋणदाता और ऋणी दोनों मौजूद हों और ज़मानतदार ने स्वयं कफ़ालत का	682

सामग्री विवरण	पृष्ठ संख्या
कफ़ालत के लिए इंसान का होना ज़रूरी है; संपत्ति ज़मानतदार (कफ़ील) नहीं हो सकती।	
संपत्ति अक्सर अपने ही ऋणों में डूबी होती है; कोई व्यक्ति स्वयं अपना ज़मानतदार नहीं हो सकता।	678
जानवरों पर कोई ज़िम्मेदारी (ज़िम्मादारी) नहीं है।	679
'ज़िम्मा' के शाब्दिक अर्थ 'वचन' के हैं, और शरीअत में यह वह वचन है जो बंदे और अल्लाह के बीच हो या वह गुण जिससे व्यक्ति जवाबदेह हो।	679
कफ़ालत में पाँच विषयों की व्याख्या।	680
संपत्ति को ज़मानत बनाने के खंडन और तर्कों का विवरण।	680
प्रस्ताव दिया: यदि पहले ऋणी ने सहमति दी, तो ज़मानतदार वसूली के लिए अधिकृत होगा; यदि पहले ऋणदाता ने स्वीकृति दी, तो नहीं।	
उपर्युक्त मत 'तरफ़ैन' (इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम अबू यूसुफ़) का है। फ़तवा इस राय पर है कि कफ़ालत केवल ज़मानतदार के बयान से पूरी हो जाती है; हालाँकि, ऋणी से वसूली का अधिकार ऋणी के आदेश पर आधारित होगा।	683
ऐसी कफ़ालत जिसमें ऋणी के आदेश पर घर को ज़मानत बनाया गया हो, तब भी ज़मानतदार को वसूली का अधिकार नहीं है।	685
जो व्यक्ति इस विचार से किसी को कुछ देता है कि यह उस पर उसका अधिकार है, तो विचार गलत साबित होने पर वह उसे वापस ले सकता है।	685
यदि सही और शरई कफ़ालत ऋणी के आदेश पर हो, और ज़मानतदार ने संपत्ति को कुर्क होने से बचाने के लिए नकद भुगतान कर दिया हो, तो वह ऋणी से वसूली कर सकता है।	685

تفصیلِ مضمون	صفحہ نمبر
کفالت بالنفس کے الفاظ "کفلت بنفسہ علیٰ الیٰ"۔	۶۷۷
کفالت بالمال کے الفاظ "کفلت بمالک علیہ بما یدرك في هذا البیع"۔	۶۷۷
کسی جائیداد کو مال میں مکفول کرنا کہ جائیداد قبضہ مالک میں رہتی ہے، مگر مالک کو اس میں بیع و ہبہ وغیرہ تصرفات سے روک دیتے ہیں تاکہ دائن اس سے اپنا مطالبہ وصول کر سکے، یہ سب غیر شرعی طریقہ ہے۔	۶۷۷
شرع نے توثیق دین کے دو طریقے مقرر فرمائے: کفالت اور رہن۔	۶۷۷
	۶۸۲
کفالت کا مقتضیٰ حجر عن التصرفات نہیں۔	۶۸۱
اگر اس طرح شرط کی کہ میں اس مکان کی قیمت سے زرِ کفالت ادا کروں گا تب بھی گھر کا بیچنا ضروری نہیں۔	۶۸۱
جائیداد مکفولہ کا دعویٰ شرعاً قابل سماعت نہیں۔	۶۸۱
زید کی خواہش کے بغیر عمرو نے اس کی کفالت کی اور زرِ کفالت ادا کر دیا تو زید سے وہ رقم پانے کا حقدار نہیں۔	۶۸۱

تفصیلِ مضمون	صفحہ نمبر
رہن کے لئے شے مرہون پر مرتہن کا قبضہ ضروری ہے۔	
کفالت کے لئے آدمی کا ہونا ضروری ہے جائیداد کفیل نہیں ہو سکتی۔	۶۷۸
جائیداد کا استغراق اکثر اپنے قرض میں ہوتا ہے کوئی شخص خود اپنا کفیل نہیں ہو سکتا۔	۶۷۸
جانوروں پر کوئی ذمہ داری نہیں۔	۶۷۹
کفالت میں کفیل مطلوب سے مطالبہ وصول کرنے کا تب مجاز ہوگا کہ اس کے کہنے سے کفالت کی ہو یا مجلس ایجاب میں اس نے رضا ظاہر کر دی ہو ورنہ نہیں۔	
اگر طالب و مطلوب دونوں موجود ہوں اور کفیل نے از خود کفالت کا ایجاب کیا، اگر پہلے مطلوب نے رضا ظاہر کی، مطالبہ وصول کرنے کا کفیل مجاز ہوگا اور طالب نے پہلے منظوری دے دی تو نہیں۔	۶۸۲
اوپر والا مسلک طرفین کا ہے، مفتیٰ بہ قول پر کفالت صرف کفیل کے قول سے تام ہو جاتی ہے، البتہ رجوع مطالبہ کا حق مطلوب کے امر پر مبنی ہوگا۔	۶۸۳
ایسی کفالت جس میں مکان مکفول کیا جائے مدیون کے امر سے ہو تب بھی کفیل کو رجوع کا حق نہیں۔	۶۸۵

تفصیلِ مضمون	صفحہ نمبر
ذمہ کے لغوی معنی عہد کے اور شرعاً وہ عہد جو بندے اور خدا کے درمیان ہوا یا وہ وصف جس سے آدمی مکلف ہو۔	۶۷۹
کفالت میں پانچ امور کی تشریح۔	۶۸۰
جائیداد کے مکفول کرنے کا رد اور دلائل کی تفصیل۔	۶۸۰
جو آدمی اس خیال سے کسی کو کچھ دے کہ یہ مجھ پر اس کا حق ہے تو خیال غلط ثابت ہونے پر اس کو واپس لے سکتا ہے۔	۶۸۵
کفالت صحیح و شرعی بامر مدیون ہو، اور کفیل نے اس میں جائیداد فرق ہونے سے بچانے کے لئے نقد سے مطالبہ پورا کر دیا، تو مدیون سے مطالبہ لے سکتا ہے۔	۶۸۵

Volume 17 | Fatawa Razawiyya

- Bailing with property is undoubtedly permissible in Sharia. (Page 685)
- Bailing for illegal demands is also valid. (Page 686)
- Pledging occurs in an apparently obligatory debt. (Page 689)
- Even if a debtor's property is submerged in debt, the debtor cannot be legally prevented from disposing of their property. (Page 690)
- The prevalent lease of villages is illegal, but its bailment is possible. (Page 686)
- Even after the judge's interdiction (Hajr), he retains the right of disposal. (Page 690)
- If the bailment is by the order of the one sought (debtor), the bailor can claim payment from them after paying. (Page 687)
- According to the Sahihayn (two companions) regarding interdiction, "A debtor submerged in debt". (Page 690)
- Pledging property in debt is nothing legally; such property can be gifted. (Page 687)
- After a judge's decree, provided there is notification, some disposals in one's existing assets will be prohibited. (Page 690)
- In the gifting of submerged property, setting a condition that the payment of the demand is the responsibility of the donee is a void condition, but a void condition does not invalidate the gift. (Page 687)
- Imposing a restriction on the donee of submerged property to pay any indemnity that arises against the property is a void condition, but it will not affect the gift. (Page 691)
- Two definitions of bailment (Kafalat) and their explanation. (Page 688)
- Explanation of 'a condition not necessitated by the contract' and 'what is necessitated by the contract'. (Page 691)
- Bailing for both existing and expected demands is possible. (Page 688)
- The same rule applies to gifts, charity, and bailment. (Page 692)
- Some things become permissible through customary practice. (Page 688)
- Since no legal right is established over movable property, accepting it is like accepting an impossibility. (Page 693)
- In bailment, the demand remains on the responsibility; even if the bailor's property is destroyed, the bailor is not absolved from the demand. (Page 689)
- Such matters do not become binding even by independent acceptance. (Page 693)

- In a pledge (Rahn), the demand is on the pledged item. If it is destroyed, the debt is reduced by that amount. (Page 689)
- The contract of village lease, where the land remains under sharecropping lease and the profit is given on the contract, is absolutely void. (Page 693)
- The value of the pledged item will be fixed on the day of possession. (Page 689)
- An illegal demand under coercion can be bailed. (Page 694)

जिल्द 17 | फतावा रज़विया

- माल के साथ ज़मानत (कफालत) निस्संदेह शरिया में जायज़ है। (पृष्ठ 685)
- नाजायज़ मांगों की ज़मानत भी सही है। (पृष्ठ 686)
- गिरवी रखना (रहन) ज़ाहिरी तौर पर वाजिब कर्ज़ में होता है। (पृष्ठ 689)
- यदि ऋणी की संपत्ति कर्ज़ में डूबी हो, तब भी ऋणी को कानूनी रूप से अपनी संपत्ति के निपटान से नहीं रोका जा सकता। (पृष्ठ 690)
- गांवों की प्रचलित पट्टेदारी नाजायज़ है लेकिन इसकी ज़मानत हो सकती है। (पृष्ठ 686)
- काज़ी (न्यायाधीश) द्वारा रोक (हज्र) लगाए जाने के बाद भी उसे निपटान का अधिकार रहता है। (पृष्ठ 690)
- यदि ज़मानत ऋणी के आदेश से हो, तो ज़मानतदार भुगतान के बाद ऋणी से मांग कर सकता है। (पृष्ठ 687)
- रोक (हज्र) के संबंध में साहिबैन के अनुसार "कर्ज़ में डूबा हुआ ऋणी"। (पृष्ठ 690)
- कर्ज़ में संपत्ति को गिरवी रखना शरीयत में कुछ नहीं है, ऐसी संपत्ति का दान (हिबा) किया जा सकता है। (पृष्ठ 687)
- काज़ी के फैसले के बाद, सूचना की शर्त पर, अपनी मौजूदा संपत्तियों में कुछ निपटान वर्जित होंगे। (पृष्ठ 690)
- डूबी हुई संपत्ति के दान में यह शर्त लगाना कि मांग का भुगतान प्राप्तकर्ता की ज़िम्मेदारी है, एक गलत शर्त है, लेकिन गलत शर्त से दान गलत नहीं होता। (पृष्ठ 687)
- डूबी हुई संपत्ति के प्राप्तकर्ता पर यह पाबंदी लगाना कि संपत्ति पर आने वाली किसी भी क्षतिपूर्ति का भुगतान वह करे, एक गलत शर्त है, लेकिन इसका दान पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। (पृष्ठ 691)
- ज़मानत (कफालत) की दो परिभाषाएँ और उनका वर्णन। (पृष्ठ 688)
- 'अनुबंध द्वारा अपेक्षित नहीं शर्त' और 'अनुबंध द्वारा अपेक्षित शर्त' का स्पष्टीकरण। (पृष्ठ 691)
- मौजूदा और संभावित दोनों मांगों की ज़मानत हो सकती है। (पृष्ठ 688)
- दान, सदका, ज़मानत, इन सब का यही नियम है। (पृष्ठ 692)
- कुछ बातें प्रथागत व्यवहार से भी जायज़ हो जाती हैं। (पृष्ठ 688)

- चल संपत्ति पर कानूनी रूप से कोई अधिकार स्थापित नहीं होता, इसलिए इसे स्वीकार करना एक असंभव बात को स्वीकार करना है। (पृष्ठ 693)
- ज़मानत में मांग ज़िम्मेदारी पर रहती है, भले ही ज़मानतदार की संपत्ति नष्ट हो जाए, ज़मानतदार मांग से मुक्त नहीं होता। (पृष्ठ 689)
- ऐसे मामले स्वतंत्र रूप से स्वीकार करने से भी अनिवार्य नहीं होते। (पृष्ठ 693)
- गिरवी (रहन) में मांग गिरवी रखी चीज़ पर होती है। यदि वह नष्ट हो जाए, तो उतना ही कर्ज़ कम हो जाएगा। (पृष्ठ 689)
- गांवों का ठेका जिसमें ज़मीन बटाई पर रहती है और मुनाफ़ा ठेके पर दिया जाता है, बिल्कुल बातिल (अमान्य) है। (पृष्ठ 693)
- गिरवी रखी वस्तु का मूल्य कब्ज़े के दिन के अनुसार लगाया जाएगा। (पृष्ठ 689)
- नाजायज़ मांग जिस पर ज़बरदस्ती हो, उसकी ज़मानत हो सकती है। (पृष्ठ 694)

पृष्ठ 55/715

- کفالت بالمال بلاشبہ شرعاً جائز ہے۔ (صفحہ ۶۸۵)
- ناجائز مطالبوں کی کفالت بھی صحیح ہے۔ (صفحہ ۶۸۶)
- رہن دینِ واجب ظاہر میں ہوتی ہے۔ (صفحہ ۶۸۹)
- مدیون کی جائداد دین سے مستغرق ہو تب بھی مدیون اپنی جائداد میں تصرف سے شرعاً روکا نہیں جاسکتا۔ (صفحہ ۶۹۰)
- دیہات کی رائج مستاجری ناجائز ہے مگر اس کی کفالت ہوسکتی ہے۔ (صفحہ ۶۸۶)
- قاضی کے حجر کے بعد بھی اس کو تصرف کا حق رہتا ہے۔ (صفحہ ۶۹۰)
- مطلوب کے حکم سے کفالت ہو تو کفیل ادا کے بعد مطلوب سے مطالبہ وصول کرسکتا ہے (صفحہ ۶۸۷)
- صاحبین کے حجر کے نزدیک "مدیون مستغرق فی الدین" (صفحہ ۶۹۰)
- جائداد کا دین میں مغلول کرنا شرعاً کچھ نہیں، ایسی جائداد کا ہبہ ہوسکتا ہے۔ (صفحہ ۶۸۷)
- قضائے قاضی کے بعد بشرط اطلاع اپنے موجودہ اموال میں بعض تصرفات سے ممنوع ہوگا۔ (صفحہ ۶۹۰)
- مستغرق جائداد کے ہبہ میں یہ شرط لگانا کہ مطالبہ کی ادائیگی موہوب لہ کے ذمہ ہے شرطِ فاسد ہے، لیکن شرطِ فاسد سے ہبہ فاسد نہیں ہوتا۔ (صفحہ ۶۸۷)
- جائداد مستغرقہ کے موہوب لہ کو یہ پابندی لگانا کہ جائداد پر جو تاوان آئے یہ ادا کرے شرطِ فاسد ہے، لیکن ہبہ پر اس سے اثر نہیں پڑے گا۔ (صفحہ ۶۹۱)
- کفالت کی دو تعریفیں اور ان کا بیان۔ (صفحہ ۶۸۸)

- شرطِ مالایقتضیہ العقد اور مایقتضیہ العقد کی تشریح۔ (صفحہ ۶۹۱)
- مطالبہ موجود اور متوقع دونوں کی کفالت ہوسکتی ہے۔ (صفحہ ۶۸۸)
- ہبہ، صدقہ، کفالت سب کا یہی حکم ہے۔ (صفحہ ۶۹۲)
- بعض باتیں تعامل سے بھی جائز ہوجاتی ہیں۔ (صفحہ ۶۸۸)
- جائداد منقولہ پر شرعاً کوئی حق قائم نہیں ہوتا تو اس کو قبول کرنا امرِ محال کو قبول کرنا ہے۔ (صفحہ ۶۹۳)
- کفالت میں مطالبہ ذمہ پر رہتا ہے، کفیل کی جائداد تلف ہوجائے تب بھی کفیل مطالبہ سے بری نہیں ہوتا۔ (صفحہ ۶۸۹)
- ایسے امور مستقلاً قبول کرنے سے بھی لازم نہیں ہوتے۔ (صفحہ ۶۹۳)
- رہن میں مطالبہ مرہون پر ہوتا ہے۔ وہ تلف ہو تو اتنا ہی دین ساقط ہوجائے گا۔ (صفحہ ۶۸۹)
- دیہات کا ٹھیکہ جس میں زمین اجارہ مزارعاں میں رہتی ہے اور توفیر ٹھیکہ پر دی جاتی ہے، قطعاً باطل ہے۔ (صفحہ ۶۹۳)
- شے مرہون کی قیمت قبضہ کے دن کی لگائی جائے گی۔ (صفحہ ۶۸۹)
- ناجائز مطالبہ جس پر جبر ہو اس کی کفالت ہوسکتی ہے۔ (صفحہ ۶۹۴)

صفحہ ۵۵ از ۷۱۵

Fatawa Rizvia Volume 17

Page	Topic
694	For the act of sponsorship (Kafalat), both offer and acceptance must take place in the sponsorship assembly.
693	If fatwas differ, following the Imam's statement is obligatory.
695	If a stranger accepts sponsorship, it depends on the sponsored person's permission.
696	Responsibility for a mother-in-law's maintenance is a promise of kindness upon which no compulsion can be exercised.
697	Guarantee of such a promise is also void.
697	A condition of sponsorship is that the demand must be mandatory upon the original.
697	Morally, one should fulfill promises.
698	Differences in the question lead to differences in the answer, for which the responsibility lies with the questioner.
701	If a Mufti knows the questioner asked a wrong question, he should not answer.
708	In a transfer (Hawala), the original debtor is absolved from the debt.
709	Forgiveness from the original debtor cannot occur after a transfer.
710	After a transfer, if the original debtor pledges something as collateral for the debt, it is not valid.
710	After the transfer, the pledger shall take back the pledge.
710	If the transferee denies the transfer and dies insolvent, the transfer becomes void and the debt reverts to the original debtor; this view's rectification is reported.
712	Appointing an agent to collect one's debt and granting them authority of disposal is permissible.
712	The intricate issue of taking higher prices for a credit transfer.
712	The issue of transfer involving partial cash and partial credit.
712	Definition of Hundi (Bill of Exchange).

Page	Topic
	Kitab al-Hawala (Book of Transfer)
703	A debt with interest was taken from a moneylender out of necessity; it is permissible to give the original debt to another moneylender and transfer one's debt to them.
705	Striving to avoid sin is mandatory.
706	Definition of Hawala (Transfer).
712	Selling notes instead of Hundi and then transferring their price is an excellent method by which the benefit of Hundi is also obtained.
714	If a condition is set in the sale contract itself to pay the price in a specific city, the contract becomes void.
715	Dealing in Hundi is permissible if it involves people of war (Ahl al-Harb).

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

पृष्ठ	विषय
694	कफ़ालत (ज़मानत) के लिए ईजाब और क़बूल दोनों का कफ़ालत की सभा में होना ज़रूरी है।
693	यदि फ़तवे अलग-अलग हों, तो इमाम के कथन पर अमल करना अनिवार्य है।
695	यदि कोई अजनबी कफ़ालत स्वीकार करता है, तो यह मक़फ़ूल-लह की अनुमति पर निर्भर करेगा।
696	सास के भरण-पोषण की ज़िम्मेदारी दया का एक वादा है जिस पर ज़बरदस्ती नहीं की जा सकती।
697	ऐसे वादे की गारंटी भी अमान्य है।
697	कफ़ालत की शर्त यह है कि मूल रूप से माँग अनिवार्य हो।
697	नैतिक रूप से वादों को पूरा करना चाहिए।
698	सवाल में मतभेद होने से जवाब में मतभेद होता है, जिसकी ज़िम्मेदारी सवाल पूछने वाले पर है।
701	
708	हवाला (कर्ज़ हस्तांतरण) में मूल कर्ज़दार ऋण से मुक्त हो जाता है।
709	हवाला के बाद मूल कर्ज़दार से माफ़ी नहीं हो सकती।
710	हवाला के बाद मूल कर्ज़दार अपनी कोई चीज़ ऋण के बदले गिरवी रखे, तो वह सही नहीं है।
710	हवाला के बाद गिरवी रखने वाला गिरवी वापस ले लेगा।
710	यदि वह व्यक्ति जिसके पक्ष में हवाला हुआ है, इसका इनकार करे और निर्धन होकर मर जाए, तो हवाला रद्द हो जाता है और कर्ज़ मूल पर वापस आ जाता है; इस विचार का सुधार वर्णित है।
712	अपने कर्ज़ की वसूली के लिए किसी को वकील बनाना और उसे अधिकार देना जायज़ है।
712	उधार दाम के हस्तांतरण पर अधिक शुल्क लेने का पेचीदा मसला।
712	हवाला और कुछ नकद तथा कुछ उधार का मसला।
712	हुंडी की परिभाषा।

पृष्ठ	विषय
	यदि मुफ़्ती को पता चले कि सवाल पूछने वाले ने गलत सवाल पूछा है, तो वह जवाब न दे।
	किताबुल हवाला (हस्तांतरण की पुस्तक)
703	महाजन से ब्याज पर कर्ज़ मजबूरी में लिया गया; मूल कर्ज़ किसी दूसरे महाजन को देकर अपना कर्ज़ उस महाजन पर स्थानांतरित करना जायज़ है।
705	पाप से बचने के लिए प्रयास करना अनिवार्य है।
706	हवाला की परिभाषा।
712	हुंडी के बजाय नोटों की बिक्री और फिर उनकी कीमत का हवाला एक उत्तम तरीका है जिससे हुंडी का लाभ भी प्राप्त होता है।
714	यदि बिक्री अनुबंध में ही किसी विशिष्ट शहर में कीमत चुकाने की शर्त लगाई जाए, तो अनुबंध रद्द (फ़ासिद) हो जाएगा।
715	हुंडी का मामला अहल-ए-हर्ब (युद्धरत लोग) से हो तो जायज़ है।

صفحہ	عنوان
۶۹۳	فتویٰ مختلف ہو تو قول امام پر عمل واجب ہے۔
۶۹۴	کفالت کا رکن ایجاب و قبول دونوں میں اور ان کا مجلس کفالت میں ہونا ضروری ہے۔
۶۹۵	اجنبی کفالت قبول کرے تو مکفول لہ کی اجازت پر موقوف ہوگی۔
۶۹۶	خوشدامن کے نفقہ کا ذمہ ایک احسان کا وعدہ ہے جس پر جبر نہیں کیا جاسکتا۔
۶۹۷	ایسے وعدہ کی ضمانت بھی باطل ہے۔
۶۹۷	کفالت کی شرط ہے کہ مطالبہ اصل پر لازم ہو۔
۷۰۸	حوالہ میں اصل قرضدار دین سے بری ہو جاتا ہے۔
۷۰۹	حوالہ کے بعد اصل قرضدار سے معافی نہیں ہو سکتی۔
۷۱۰	حوالہ کے بعد اصل قرضدار اپنی کوئی چیز دین کے بدلے رہن رکھے صحیح نہیں۔
۷۱۰	حوالہ کے بعد راہن رہن واپس لے لے گا۔
۷۱۰	محتال علیہ حوالہ کا انکار کرے مفلس مرجائے تو حوالہ باطل ہو کر دین اصل پر لوٹ آتا ہے اس قول کی تصحیح مروی ہے۔
۷۱۲	

صفحہ	عنوان	صفحہ	عنوان
			اپنے قرض کی وصولی کے لئے کسی کا وکیل بنانا، اور اس پر تصرف کا اختیار دینا جائز ہے۔
۶۹۷	اخلاقاً ایفائے وعدہ کرنا چاہئے۔	۷۱۲	حوالہ ادھار دام زیادہ لینے کا لا جلا مسئلہ۔
۶۹۸	سوال کے اختلافات سے جواب میں اختلاف ہوتا ہے جس کی ذمہ داری سائل پر ہے۔	۷۱۲	حوالہ اور بعض نقد ادھار اور بعض کا مسئلہ
۷۰۱	مفتی کو معلوم ہو کہ سائل نے غلط سوال کیا ہے تو جواب نہ دے۔	۷۱۲	ہنڈی کی تعریف۔
			ہنڈی کے بجائے نوٹ کی بیع پھر اس کے
	کتاب الحوالہ	۷۱۲	ثمن کا حوالہ ایک عمدہ طریقہ ہے جس سے ہنڈی کا فائدہ بھی حاصل ہوتا ہے۔
۷۰۳	مہاجن سے سودی قرض مجبوراً لیا اصل قرض کسی دوسرے مہاجن کو دے کر اپنا قرض اس مہاجن پر حوالہ کرنا جائز ہے۔	۷۱۴	خود عقد بیع میں قیمت فلاں شہر میں ادا کرنے کی شرط لگائی تو عقد فاسد ہو جائے گا۔
۷۰۵	معصیت سے بچنے کی جدوجہد کرنا لازم ہے۔	۷۱۵	ہنڈی کا معاملہ اہل حرب سے ہو تو جائز ہے۔

عنوان	عنوان صفحہ	صفحہ
	حوالہ کی تعریف۔	۷۰۶

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

Index of Supplementary Issues

Hadith Benefits: - What is meant by "obligatory" (Wajib) in the Hadith "A Muslim has six rights over another Muslim"? (Page 478) - An example of the Hadith "Every loan that attracts a benefit is usury (Haram)." (Page 91) - Citing the Hadith of the camel from Hazrat Jabir (may Allah be pleased with him) on this issue. (Page 237) - Drawing an argument from the Hadith of Hazrat Jabir (may Allah be pleased with him) regarding giving back more than the loan amount. (Page 320) - Drawing arguments from the Hadiths of Hazrat Abu Hurairah (may Allah be pleased with him). (Page 320) - Examination of the Hadith of 'Inah' (a specific type of sale). (Page 467) - A Mujtahid's mention of someone in a chain of narration is proof of the Hadith's authenticity. (Page 468)

Rules of the Mosque: - Someone's land cannot be forcibly purchased for the mosque to increase the mosque's income. (Page 136) - It is forbidden to spend interest (usury) income on the mosque. (Page 352) - The ruling on purchasing promissory notes with mosque funds. (Page 353)

Imamship: - It is a sin to appoint a person who consumes interest as an Imam; if prayer was performed behind him, it must be repeated. (Page 269)

Page 57 of 715

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

अनुषंगी मसलों की सूची

हदीस के लाभ: - हदीस "एक मुसलमान के दूसरे मुसलमान पर छह अधिकार वाजिब (अनिवार्य) हैं" में 'वाजिब' से क्या तात्पर्य है? (पृष्ठ 478) - हदीस "प्रत्येक ऋण जो लाभ लाता है, वह हराम (वर्जित) है" का एक उदाहरण। (पृष्ठ 91) - इस मसले पर हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु की ऊँट वाली हदीस से प्रमाण। (पृष्ठ 237) - ऋण से अधिक देने पर हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु तआला अन्हु की हदीस से दलील (तर्क)। (पृष्ठ 320) - हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु की हदीसों से दलील। (पृष्ठ 320) - हदीस-ए-ईनह की परख। (पृष्ठ 467) - मुजतहिद का सनद में किसी का ज़िक्र करना उस हदीस की सेहत (प्रामाणिकता) की दलील है। (पृष्ठ 468)

मस्जिद के अहकाम (नियम): - मस्जिद की आमदनी बढ़ाने के लिए किसी की ज़मीन ज़बरदस्ती मस्जिद पर खरीदी नहीं जा सकती। (पृष्ठ 136) - ब्याज (सूद) की आमदनी मस्जिद में लगाना मना है। (पृष्ठ 352) - मस्जिद की रक़म से प्रॉमिसरी नोट खरीदने का हुक्म। (पृष्ठ 353)

इमामत: - सूदखोर व्यक्ति को इमाम बनाना गुनाह है; यदि उसके पीछे नमाज़ पढ़ ली है, तो उसे दोहराएँ। (पृष्ठ 269)

पृष्ठ 57/715

فتاویٰ رضویہ (جلد ہفدہم ۱۷)

فہرست ضمنی مسائل

فوائدِ حدیثیہ: - حدیث "مسلمان کے مسلمان پر چھ حق واجب ہیں" میں واجب سے کیا مراد ہے۔ (صفحہ ۴۷۸) - حدیث کل قرض جر نفعاً فھو حرام کی ایک مثال۔ (صفحہ ۹۱) - اس مسئلہ پر حضرت جابر رضی اللہ عنہ کی حدیث جمل سے استشہاد۔ (صفحہ ۲۳۷) - قرض سے زائد دینے پر حدیث جابر رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے استدلال۔ (صفحہ ۳۲۰) - حضرت ابو ہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ کی حدیثوں سے استدلال۔ (صفحہ ۳۲۰) - حدیث عینہ کی پرکھ۔ (صفحہ ۴۶۷) - مجتہد کا کسی کو سند میں ذکر کرنا اس حدیث کی صحت کی دلیل ہے۔ (صفحہ ۴۶۸)

احکام مسجد: - مسجد کی آمدنی بڑھانے کے لئے کسی کی زمین زبردستی مسجد پر خریدی نہیں جاسکتی۔ (صفحہ ۱۳۶) - بیاج کی آمدنی مسجد میں لگانا منع ہے۔ (صفحہ ۳۵۲) - مسجد کی رقم سے پرامیسری نوٹوں کی خریداری کا حکم۔ (صفحہ ۳۵۳)

امامت: - سود خور شخص کا امام بنانا گناہ، اس کے پیچھے نماز پڑھ لی تو دہرائیں۔ (صفحہ ۲۶۹)

Fatawa Razawiya, Volume 17

Zakat - Zakat is obligatory on whatever money is deposited in a company or whatever its assets are. (Page 362) - There is no guardianship over a fetus except for Allah and His Messenger. (Page 213) - Evidence from the Quran and Hadith for the guardianship of the Messenger of Allah, peace and blessings be upon him. (Page 213) - Zakat is applicable on currency notes. (Page 409) - Nowadays, many orphans do not have a perfect guardian. (Page 282)

Marriage (Nikah) - Dower (Mahr) - If a marriage is contracted for two days and the time limit is specified in the contract, it is void (baatil); if it is only intended in the heart, it is valid. (Page 228) - A husband gave property to his wife in exchange for dower; this contract can be interpreted in three ways. (Page 110)

Divorce (Talaq) - A person bequeathed the inheritance share of his heir, which the heir would receive after his death, as dower for a woman whose marriage with the heir has not yet taken place; what is the ruling? (Page 120) - Warning against having marital relations with a woman who does not pray, and the command to divorce her. (Page 303) - Giving property in exchange for dower is a sale (bay') from start to finish. (Page 121) - Dower before marriage is neither a specific asset nor a debt, so it is not considered property at all. (Page 121)

Guardianship (Wilayat) - A person's disposal of their property before their terminal illness (Maradh al-Maut) will be effective. (Page 96) - Doubt regarding the payment of dower before marriage and its answer. (Page 122) - A father has guardianship over the circumcision of a minor son and the buying and selling of his property; the uncle and mother do not have this right, they only have the right to protect the property and accept gifts. (Page 99) - If future salary or a position-related grant is promised as dower, it is non-existent and void; both its gifting and selling are void. (Page 123) - An adulterer is not the guardian of an illegitimate child, so he does not have the right to accept a sale on behalf of the child as a guardian. (Page 151) - It is permissible to have some dower in cash, some in exchange for land or a house, and some in installments. (Page 243) - Mother, brother, and uncle do not have financial guardianship over a minor. (Page 151) - Currency notes can be used as dower. (Page 410)

फ़तावा रज़विया, जिल्द 17

ज़कात - कंपनी में जितनी राशि जमा की गई है या उसकी जो संपत्ति है, उस पर ज़कात फ़र्ज़ (अनिवार्य) है। (पृष्ठ 362) - भ्रूण (गर्भ में पल रहे बच्चे) पर अल्लाह और उसके रसूल के अलावा किसी की विलायत (संरक्षण) नहीं है। (पृष्ठ 213) - रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की विलायत पर आयत और हदीस से प्रमाण। (पृष्ठ 213) - नोट पर ज़कात है। (पृष्ठ 409) - आजकल बहुत से अनाथों का कोई पूर्ण संरक्षक (वली-ए-कामिल) नहीं होता। (पृष्ठ 282)

निकाह - महर - यदि दो दिनों के लिए निकाह किया गया और अनुबंध (अक़्द) में समय सीमा की शर्त रखी गई तो निकाह बातिल (अमान्य) है, और यदि केवल मन में है तो जायज़ है। (पृष्ठ 228) - पति ने महर के बदले पत्नी को संपत्ति दी, इस अनुबंध को व्याख्या के आधार पर तीन तरह से देखा जा सकता है। (पृष्ठ 110)

तलाक़ - एक व्यक्ति ने अपने वारिस के उस हिस्से को, जो वारिस को वसीयतकर्ता की मृत्यु के बाद मिलना है, एक ऐसी महिला के महर के रूप में लिख दिया जिसका निकाह अभी उस वारिस से नहीं हुआ है; इसके लिए क्या हुक्म है? (पृष्ठ 120) - नमाज़ न पढ़ने वाली महिला से संभोग करने पर चेतावनी और उसे तलाक़ देने का आदेश। (पृष्ठ 303) - महर के बदले संपत्ति देना शुरुआत से अंत तक क्रय-विक्रय (बय) है। (पृष्ठ 121) - निकाह से पहले महर न तो कोई ठोस वस्तु है और न ही ऋण, इसलिए यह संपत्ति ही नहीं है। (पृष्ठ 121)

विलायत (संरक्षण) - मरज़-उल-मौत (मृत्यु-पूर्व बीमारी) से पहले व्यक्ति द्वारा अपनी संपत्ति का हर लेन-देन प्रभावी होगा। (पृष्ठ 96) - निकाह से पहले महर के भुगतान से संबंधित संदेह और उसका उत्तर। (पृष्ठ 122) - पिता को नाबालिग लड़के के खतना और उसकी संपत्ति की खरीद-बिक्री की विलायत हासिल है; चाचा और माँ को यह अधिकार नहीं है, उन्हें केवल संपत्ति की सुरक्षा और उपहार (हिबा) स्वीकार करने का अधिकार है। (पृष्ठ 99) - यदि भविष्य में मिलने वाले वेतन या पद-आधारित अनुदान को महर के रूप में तय किया गया, तो यह स्वयं अस्तित्वहीन और बातिल है; इसका उपहार देना और बेचना दोनों बातिल हैं। (पृष्ठ 123) - व्यभिचारी (ज़ानी) ज़िना की संतान का वली (संरक्षक) नहीं होता, इसलिए वह उसका संरक्षक बनकर किसी सौदे को स्वीकार करने का अधिकार नहीं रखता। (पृष्ठ 151) - कुछ महर नकद, कुछ के बदले ज़मीन या घर, और कुछ किस्तों

में देना जायज़ है। (पृष्ठ 243) - माँ, भाई और चाचा को नाबालिग पर विलायत-ए-मालिया (वित्तीय संरक्षण) प्राप्त नहीं है। (पृष्ठ 151) - नोट महर हो सकता है। (पृष्ठ 410)

فتاویٰ رضویہ، جلد ہفدہم (۱۷)

زکوٰۃ - جتنا روپیہ کمپنی میں جمع کیا یا اس کا جو مال ہو اس پر زکوٰۃ فرض ہے۔ (صفحہ ۳۶۲) - جنین پر اللہ ورسول کے علاوہ کسی کی ولایت نہیں۔ (صفحہ ۲۱۳) - رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم کی ولایت پر آیت وحدیث سے سند۔ (صفحہ ۲۱۳) - نوٹ پر زکوٰۃ ہے۔ (صفحہ ۴۰۹) - آج کل بہت سے یتیموں کا ولی کامل نہیں ہوتا۔ (صفحہ ۲۸۲)

نکاح - مہر - دو دن کے لئے نکاح کیا وقت کی قید عقد میں ہے تو نکاح باطل اور دل میں ہے تو جائز۔ (صفحہ ۲۲۸) - شوہر نے زوجہ کو مہر کے بدلہ جائیداد دی یہ عقد تعبیر کے اعتبار سے تین طرح ہو سکتا ہے۔ (صفحہ ۱۱۰)

طلاق - مورث نے اپنے وارث کے حصہ کو جو مورث کی موت کے بعد اسے ملے گا ایک ایسی عورت کے مہر کے بدلہ میں لکھا جس کا نکاح ابھی وارث سے نہیں تو کیا حکم ہے۔ (صفحہ ۱۲۰) - بے نماز عورت سے صحبت پر وعید اور اس کو طلاق دینے کا حکم۔ (صفحہ ۳۰۳) - مہر کے عوض جائیداد دینا ابتدأ و انتہا بیع ہے۔ (صفحہ ۱۲۱) - مہر قبل از نکاح نہ عین ہے نہ دین، تو یہ مال ہی نہیں۔ (صفحہ ۱۲۱)

ولایت - مرض الموت سے قبل آدمی کا اس کی ملک میں ہر تصرف نافذ ہوگا۔ (صفحہ ۹۶) - قبل از نکاح مہر کی ادائیگی سے شبہ اور اس کا جواب۔ (صفحہ ۱۲۲) - باپ کو نابالغ لڑکے کی ختنہ اور اس کے مال کے بیچ و شراء کی ولایت حاصل ہے چچا اور ماں کو نہیں صرف مال کی حفاظت اور قبول ہبہ کا حق حاصل ہے۔ (صفحہ ۹۹) - آئندہ ملنے والی تنخواہ یا عطیہ منصب کو مہر کے عوض کیا تو یہ خود معدوم اور باطل ہے، اس کا ہبہ اور بیع دونوں باطل ہے۔ (صفحہ ۱۲۳) - زانی ولد الزنا کا ولی نہیں تو اس کا ولی بن کر بیع کے قبول کرنے کا بھی حق نہیں رکھتا۔ (صفحہ

۱۵۱) - بعض مہر نقد، بعض کے بدلے میں زمین و مکان اور بعض کی قسط بندی جائز ہے۔ (صفحہ ۲۴۳) - ماں، بھائی، چچا کو نابالغ پر ولایت مالیہ نہیں ہے۔ (صفحہ ۱۵۱) - نوٹ مہر ہو سکتا ہے۔ (صفحہ ۴۱۰)

Fatawa-e-Razvia (Volume 17)

Page	Content (Left)	Content (Right)	Page
561	If the dower is more than the inheritance, the entire inheritance will be accounted for in the dower. Other heirs have no right in it.	Every invalid sale is forbidden and must be annulled.	160
-	Zihar	What is built on falsehood is false.	163
312	Calling a woman mother or daughter is not Zihar.	The false has no legal status/ ruling.	163
-	Fundamental Principles	The author's research that the absence of a condition for formation invalidates the contract, and ignorance of the two counter-values is its requirement.	184
81	In these contracts, the intended meaning is considered, not the word.	The word 'thaman' (price) requires the realization of a sale.	246
82	In rulings based on custom and habit, rational possibilities of the opposite are not considered.	In pure Sharia, the matter depends on the meanings of the words of the contracting parties.	248
109	Bare rights are not suitable for ownership transfer and exchange.	In an incidental matter, the general rule is that it will be attributed to the nearest time.	256
109	When a contract is made by a competent party in a suitable place with sound pillars, there is no doubt about its validity, and it will surely produce its results, albeit after possession.	If there is a debate about the validity or invalidity of a contract, corruption will not be proven without clear evidence; the action will be based on validity.	258
112	Many things are valid implicitly but not directly.	What is established by custom is like stipulating a condition.	275
118	A man is held accountable for his confession.	Pledge (Rahn) and lease (Ijarah) are mutually exclusive and cannot be combined.	276

Page	Content (Left)	Content (Right)	Page
122	It is not permissible to prioritize the ruling over the cause.	The Messenger of Allah (peace be upon him) declared four things as measured (kayli) and gold/silver as weighed (wazni), so they will always remain so.	292
135	Writing is like speaking.	Custom will be the authority in determining whether other items are measured or weighed.	293
152	An offer from one absent from the session does not depend on acceptance but becomes void.	The real ruling is based on realities, not on words.	310
160	A condition that benefits only one of the contracting parties is a corrupt condition.	Obtaining a permissible matter is also included in Sharia interest (maslahah).	313
160	Every corrupt condition invalidates the sale.	The prohibition of Riba in Dar al-Islam is not because of the status of the land; complete research on the issue.	316

फ़तावा-ए-रज़विया (खण्ड 17)

पृष्ठ	वाम पक्ष की सामग्री	दक्षिण पक्ष की सामग्री	पृष्ठ
561	यदि महर विरासत से अधिक हो, तो पूरी विरासत महर में गिनी जाएगी। अन्य वारिसों का इसमें कोई अधिकार नहीं है।	हर अवैध (फ़ासिद) बिक्री हराम है और उसे रद्द करना अनिवार्य है।	160
-	ज़िहार	जो असत्य पर आधारित हो, वह स्वयं असत्य है।	163
312	स्त्री को माँ या बेटी कहना ज़िहार नहीं है।	असत्य का कोई कानूनी प्रभाव या निर्णय नहीं होता।	163
-	मौलिक सिद्धांत	लेखक का शोध कि अनुबंध के गठन की शर्त का अभाव अनुबंध को अमान्य कर देता है, और दोनों विनिमय मूल्यों की अज्ञानता इसकी आवश्यकता है।	184
81	इन अनुबंधों में इच्छित अर्थ का महत्व है, न कि शब्द का।	'थमन' (मूल्य) शब्द बिक्री की प्राप्ति की आवश्यकता है।	246
82	रीति-रिवाजों पर आधारित फैसलों में तर्कसंगत विपरीत संभावनाओं पर विचार नहीं किया जाता है।	पवित्र शरिया में, मामला अनुबंध करने वाले पक्षों के शब्दों के अर्थों पर निर्भर करता है।	248
109	केवल अधिकार स्वामित्व हस्तांतरण और विनिमय के योग्य नहीं हैं।	एक आकस्मिक मामले में, सामान्य नियम यह है कि उसे निकटतम समय से जोड़ा जाएगा।	256
109	जब अनुबंध सक्षम पक्ष द्वारा उपयुक्त स्थान पर सही स्तंभों के साथ किया जाता है, तो इसकी वैधता में कोई संदेह नहीं है और इसके फल निश्चित रूप से प्राप्त होंगे, भले ही कब्जे के बाद।	यदि अनुबंध की वैधता या अवैधता पर बहस हो, तो स्पष्ट साक्ष्य के बिना दोष सिद्ध नहीं होगा; कार्यवाही वैधता पर आधारित होगी।	258

पृष्ठ	वाम पक्ष की सामग्री	दक्षिण पक्ष की सामग्री	पृष्ठ
112	बहुत सी चीजें अप्रत्यक्ष रूप से मान्य होती हैं लेकिन प्रत्यक्ष रूप से नहीं।	जो रीति-रिवाजों से तय होता है, वह शर्त लगाने जैसा ही है।	275
118	मनुष्य को उसके इकबालिया बयान के लिए जवाबदेह ठहराया जाता है।	गिरवी (रहन) और पट्टा (इजारा) आपस में विरोधी हैं और इन्हें जोड़ा नहीं जा सकता।	276
122	कारण पर निर्णय को प्राथमिकता देना अनुमेय नहीं है।	अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने चार चीजों को मापने योग्य (कैली) और सोने-चांदी को तौलने योग्य (वज़नी) घोषित किया, इसलिए वे हमेशा ऐसे ही रहेंगे।	292
135	लेखन बोलने के समान है।	अन्य वस्तुओं के मापने या तौलने योग्य होने के निर्धारण में रीति-रिवाज का अधिकार होगा।	293
152	सभा से अनुपस्थित व्यक्ति का प्रस्ताव स्वीकृति पर निर्भर नहीं होता बल्कि शून्य हो जाता है।	वास्तविक निर्णय वास्तविकताओं पर आधारित होता है, शब्दों पर नहीं।	310
160	वह शर्त जिसमें अनुबंध करने वाले पक्षों में से केवल एक का लाभ हो, वह भ्रष्ट शर्त (शर्त-ए-फासिद) है।	किसी जायज़ बात की प्राप्ति भी शरिया हित (मसलहत) में शामिल है।	313
160	हर भ्रष्ट शर्त बिक्री को अमान्य कर देती है।	दार अल-इस्लाम में सूद (रिबा) की मनाही भूमि के सम्मान के कारण नहीं है; इस मुद्दे पर पूर्ण शोध।	316

صفحہ	مضمون (دائیں)	مضمون (بائیں) صفحہ
۵۶۱	مہر ترکہ سے زیادہ ہو تو پورا ترکہ مہر میں محسوب ہوگا۔ دیگر ورثہ کا اس میں کوئی حق نہیں۔	ہر بیع فاسد حرام و واجب الفسخ ہے۔ ۱۶۰
-	ظہار	المبنی علی الباطل باطل۔ ۱۶۳
۳۱۲	عورت کو ماں، بیٹی کہنا ظہار نہیں۔	الباطل لاحکم لہ۔ ۱۶۳
-	فوائد اصولیہ	مصنف کی تحقیق کہ شرطِ انعقاد کا عدم مبطلِ عقد ہے اور جہالت بدلین کا مقتضی ہے۔ ۱۸۴
۸۱	ان عقود میں مقصود معنی ہے نہ کہ لفظ	لفظِ ثمن تحقق بیع کا مقتضی ہے۔ ۲۴۶
۸۲	احکام عرف و عادت میں خلاف کے احتمالات عقلیہ کا لحاظ نہیں ہوتا۔	شرعِ مطہر میں عاقدین کے الفاظ کے معانی پر مدار کار ہے۔ ۲۴۸
۱۰۹	حقوقِ مجردہ صالحِ تملیک و معاوضہ نہیں۔	امر حادث میں قاعدہ کلیہ یہ ہے کہ اقرب وقت کی طرف منسوب ہوگا۔ ۲۵۶
۱۰۹	عقد جب اہل سے محل میں بسلامت ارکان واقع ہو تو اس کے عدمِ بطلان میں کوئی شبہ نہیں	عقد کی صحت اور عدمِ صحت سے بحث ہو تو روشن دلیل کے بغیر فساد ثابت نہ ہوگا، عمل صحت پر ہوگا۔ ۲۵۸

صفحہ	مضمون (دائیں)	مضمون (بائیں)	صفحہ
	اور اپنے ثمرات کو اگرچہ بعد القبض بالیقین مثمر ہوگا۔		
۱۱۲	کم من یصح ضمناً ولا یصح قصداً۔	جو چیز عرفاً طے شدہ ہو وہ شرط لگانے کی طرح ہے۔	۲۷۵
۱۱۸	المرء مؤاخذ باقرارہ۔	رہن اور اجارہ آپس میں متنافی ہیں جمع نہیں ہو سکتے۔	۲۷۶
۱۲۲	حکم کو سبب پر مقدم کرنا جائز نہیں۔	رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے چار چیزوں کو کیلی اور نقدین کو وزنی قرار دیا تو یہ ہمیشہ ایسی ہی رہیں گی۔	۲۹۲
۱۳۵	الکتاب کالخطاب۔	دیگر اشیاء کے کیلی یا وزنی ہونے میں عرف کا اختیار ہوگا۔	۲۹۳
۱۵۲	ایجابِ غائب عن المجلس کے قبول پر موقوف نہیں ہوتا بلکہ باطل ہو جاتا ہے۔	اصل حکم حقائق پر ہے الفاظ پر نہیں۔	۳۱۰
۱۶۰	جس شرط میں احد المتعاقدین کا فائدہ ہو وہ شرطِ فاسد ہے۔	کسی امر مباح کا حصول بھی مصلحتِ شرعی میں داخل ہے۔	۳۱۳
۱۶۰	ہر شرطِ فاسد مفسدِ بیع ہے۔		۳۱۶

دار الاسلام میں ربا کی حرمت شرفِ

دار کی وجہ سے نہیں مسئلہ کی

مکمل تحقیق۔

Fatawa Rizvia, Volume 17

Page	Topic
316	Reliability is based on the original source from which something is transmitted, not on the transmitter.
317	The strangeness/rarity of an issue is not dispelled by a large number of copies/transmissions if they all originate from a single source.
322	The legality of trade lies in the survival of needy individuals bound by law and fulfilling their needs through excellent management.
325	Value is also established by some individuals treating it as wealth.
340	A general rule on which all issues of the chapter on usury depend.
340	Various applications of "makrooh" (disliked actions).
352	Discrepancy in the value of proofs for this matter is not strictly forbidden (makrooh tahrimi).
357	There is a difference in the definitions of "mursal" (a type of narration) in the science of Principles of Jurisprudence and the science of Hadith.
358	Makrooh Tahrimi is a minor sin, while Makrooh Tanzihi is not a sin.
382	Something being mandatory in itself is one thing, and being mandatory for something else is another thing.
382	

Page	Topic
415	Something does not become halal from haram due to a change in territory (dar).
416	According to the reliable school of thought, disbelievers are addressed by the branches (subsidiary rulings of law).
421	In usurious properties (ribwi goods), the consideration of quality is nullified.
422	Every person's intention is valid for themselves, not for others.
445	What is forbidden will not become permissible through mutual consent.
457	Divine commands cannot change by anyone's amendment.
459	The ruling on wealth changes with the change of ownership (mulk).
466	Definition of Dar al-Islam (Territory of Islam).
473	India is Dar al-Islam.
477	Pledging (mortgage) and leasing are two incompatible contracts.
477	

Page	Topic
	Sometimes even recommended actions (mustahab) are called mandatory (wajib).
398	In contracts, the meanings/intentions are considered.
403	Any correction in a contract that changes the identity of the original contracting parties is void by consensus.
412	Holding on (tamsuk) is from one specified entity for another specified entity.
413	The existence or non-existence of debt does not depend on the existence or non-existence of a document (tamsuk).

Page	Topic
	Two different possessions of a single thing at the same time are impossible.
507	Valuation necessitates the existence of value/wealth.
509	A written document/letter itself does not have intrinsic financial value.
509	In valuation, the current state of a thing is considered, not what its original state was.
511	For something to have value, it is not necessary that it be considered wealth everywhere.

फतावा रिज़विया, खंड १७

पृष्ठ	विषय
३१६	विश्वसनीयता उस मूल स्रोत पर आधारित है जिससे कुछ प्रसारित होता है, न कि प्रेषक पर।
३१७	किसी मुद्दे की विलक्षणता/दुर्लभता प्रतियों की बड़ी संख्या से दूर नहीं होती यदि वे सभी एक ही स्रोत से उत्पन्न हों।
३२२	व्यापार की वैधता कानून से बंधे जरूरतमंद व्यक्तियों के अस्तित्व और उत्कृष्ट प्रबंधन के माध्यम से उनकी जरूरतों को पूरा करने में निहित है।
३२५	कुछ व्यक्तियों द्वारा इसे धन के रूप में मानने से भी मूल्य स्थापित होता है।
३४०	एक सामान्य नियम जिस पर सूद के अध्याय के सभी मुद्दे निर्भर करते हैं।
३४०	"मकरूह" (नापसंद किए गए कार्यों) के विभिन्न अनुप्रयोग।
३५२	इस मामले के प्रमाणों के मूल्य में विसंगति सख्ती से वर्जित (मकरूह तहरीमी) नहीं है।
३५७	न्यायशास्त्र के सिद्धांतों के विज्ञान और हदीस के विज्ञान में "मुरसल" (एक प्रकार का वर्णन) की परिभाषाओं में अंतर है।
३५८	मकरूह तहरीमी एक छोटा पाप है, जबकि मकरूह तंज़ीही कोई पाप नहीं है।
३८२	
४१५	क्षेत्र (दार) बदलने से कोई वस्तु हराम से हलाल नहीं हो जाती।
४१६	विश्वसनीय विचारधारा के अनुसार, अविश्वासियों को शाखाओं (कानून के सहायक नियमों) द्वारा संबोधित किया जाता है।
४२१	सूद वाली संपत्तियों (रिबवी सामान) में, गुणवत्ता का विचार शून्य हो जाता है।
४२२	प्रत्येक व्यक्ति की नीयत स्वयं के लिए मान्य है, दूसरों के लिए नहीं।
४४५	आपसी सहमति से जो वर्जित है वह स्वीकार्य नहीं हो जाएगा।
४५७	ईश्वरीय आदेश किसी के संशोधन से नहीं बदल सकते।
४५९	स्वामित्व (मुल्क) बदलने से धन का निर्णय बदल जाता है।
४६६	दारुल इस्लाम (इस्लाम का क्षेत्र) की परिभाषा।
४७३	भारत दारुल इस्लाम है।
४७७	

पृष्ठ	विषय
	किसी चीज़ का अपने आप में अनिवार्य होना एक बात है, और किसी और चीज़ के लिए अनिवार्य होना दूसरी बात है।
३८२	कभी-कभी अनुशंसित कार्यों (मुस्तहब) को भी अनिवार्य (वाजिब) कहा जाता है।
३९८	अनुबंधों में अर्थों/इरादों पर विचार किया जाता है।
४०३	किसी अनुबंध में ऐसा कोई सुधार जो मूल अनुबंधित पक्षों की पहचान को बदल देता है, सर्वसम्मति से शून्य है।
४१२	किसी एक निर्दिष्ट इकाई से दूसरी निर्दिष्ट इकाई के लिए पकड़ (तमसुक) होती है।
४१३	ऋण का होना या न होना दस्तावेज़ (तमसुक) के होने या न होने पर निर्भर नहीं करता है।
	गिरवी रखना और पट्टे पर देना दो असंगत अनुबंध हैं।
४७७	एक ही समय में एक ही वस्तु के दो अलग-अलग अधिकार असंभव हैं।
५०७	मूल्यांकन के लिए मूल्य/धन के अस्तित्व की आवश्यकता होती है।
५०९	एक लिखित दस्तावेज/पत्र का स्वयं में कोई आंतरिक वित्तीय मूल्य नहीं होता है।
५०९	मूल्यांकन में वस्तु की वर्तमान स्थिति पर विचार किया जाता है, न कि उसकी मूल स्थिति क्या थी।
५११	किसी चीज़ का मूल्य होने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि उसे हर जगह धन माना जाए।

पृष्ठ ७१५ का ६०

صفحہ	مضمون
۳۱۶	اعتبار منقول عنہ کا ہوتا ہے نہ کہ ناقل کا۔
۳۱۷	نقلوں کی کثرت سے مسئلہ کی غرابت دفع نہیں ہوتی جبکہ ایک ہی منقول عنہ ان سب کا منتہی ہو۔
۳۲۲	بیع کی مشروعیت میں مکلف محتاجوں کی بقا اور عمدہ انتظام کے ساتھ ان کی حاجتوں کو پورا کرنا ہے۔
۳۲۵	مالیت بعض کے مال بنانے سے بھی ثابت ہو جاتی ہے۔
۳۴۰	ایک عام قاعدہ جس پر باب ربا کے تمام مسائل کا مدار ہے۔
۳۴۰	کراہت کے مختلف اطلاقات۔
۳۵۲	اس امر کے دلائل کی مالیت میں تفاضل مکروہ تحریمی نہیں ہے۔
۴۱۵	اختلاف دار سے کوئی شے حرام سے حلال نہیں ہوتی۔
۴۱۶	مذہب معتمد میں کفار مخاطب بالفروع ہیں۔
۴۲۱	اموال ربویہ میں وصف کا اعتبار ساقط ہے۔
۴۲۲	ہر شخص کی نیت خود اس کے لئے معتبر ہے نہ کہ دوسرے کے لئے۔
۴۴۵	باہمی رضامندی سے حرام حلال نہ ہو جائے گا۔
۴۵۷	احکام الہیہ کسی کی ترمیم سے بدل نہیں سکتے۔
۴۵۹	ملک بدلنے سے مال کا حکم بدل جاتا ہے۔

صفحہ	مضمون
۳۵۷	علم اصول فقہ اور علم حدیث میں مرسل کی تعریفوں میں فرق ہے۔
۳۵۸	مکروہ تحریمی گناہ صغیرہ ہے اور تنزیہی گناہ نہیں۔
۳۸۲	کسی چیز کا خود واجب ہونا اور بات ہے اور دوسری چیز کے لئے واجب ہونا اور بات ہے۔
۳۸۲	کبھی مستحب کو بھی واجب کہتے ہیں۔
۳۹۸	عقود میں معانی کا اعتبار ہے۔
۴۰۳	عقد میں ایسی تصحیح بالا جماع باطل ہے جس سے اصل عاقدین کی تغیر ہوتی ہو۔
۴۱۲	تمسک ایک معین سے دوسرے معین کے لئے ہوتا ہے۔
۴۱۳	تمسک کے وجود و عدم پر دین کا وجود و عدم موقوف نہیں ہوتا۔
۴۶۶	دارالاسلام کی تعریف۔
۴۷۳	ہندوستان دارالاسلام ہے۔
۴۷۷	رہن اور اجارہ دونوں عقد منافی ہیں۔
۴۷۷	شے واحد پر وقت واحد میں دو مختلف قبضے محال ہیں۔
۵۰۷	تقویم مالیت کو مستلزم ہے۔
۵۰۹	مکتوب کی مالیت نہیں ہے۔
۵۰۹	تقوّم میں شئی کی موجودہ حالت دیکھی جاتی ہے، یہ نہیں دیکھا جاتا کہ اصل میں کیا تھا۔
۵۱۱	مالیت کے لئے ضروری نہیں کہ وہ چیز ہر جگہ مال سمجھی جائے۔

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

Page	Topic
522	Being within the ruling of a thing does not mean unity with its essence (jins) and value (qadr).
522	Natural and conventional prices (thaman khalqi and istilahi) are distinct from each other.
522	Sameness of essence (ayniyat) is impossible between distinct things.
523	Valuables (qaymi) and fungibles (mithli) cannot be the same.
524	The united of the united is united.
525	Not having an excuse does not necessitate the impossibility of having one.
528	The tree reveals the fruit (Ash-shajaratu tunbi'u 'an ath-thamara).
529	A necessary change negates the identity of the required.
534	Notes and silver coins (rupees) are not of the same genus.
534	There is no common value shared between silver coins and notes.
591	In a sale with an invalid condition, if the condition is concurrent, it causes invalidity (fasad).
599	A non-existent thing sometimes falls under the ruling of an existent one.
600	In a sale, rights revert to the agent, while in marriage, they revert to the spouses.
611	Customary determination and being a conventional price do not make an increase or decrease between contracting parties forbidden (haram).
620	Comparing a sale worth one or two paisas to a handful or two handfuls is weak analogy.
645	What is customarily worshipped is religiously considered worshipped.
659	According to Imam Azam, as long as the literal meaning is possible, metaphorical interpretation is not permissible.
661	"When the condition fails, the conditioned fails" is a universal rule.
663	The follower does not precede the followed, and if the followed is non-existent, the follower also does not materialize.
663	When financial surety follows personal surety, if discharge from the

Page	Topic
534	The customary dealing of people with notes as money makes it a conventional price (thaman istilahi), not a natural one (khalqi).
534	Estimating value based on rupees does not turn a note into a rupee; every conventional measure is based on a natural one.
534	Following convention is not mandatory for the contracting parties; they can increase or decrease as they wish by mutual consent.
588	A loan does not become invalid due to an invalid condition, but giving a loan in this manner is a sin (ma'siyat).
589	What is customary is like what is stipulated (Al-ma'roofu kal-mashroot).
590	If both sides of a view are authenticated, act upon whichever you wish.

Page	Topic
	latter occurs, the former is also revoked.
	Ifta and the Protocol of the Mufti (Ifta wa Rasm al-Mufti)
251	Al-Zakhira is an excellent and authentic collection of fatwas.
251	Bada'i' is a magnificent book authored by Imam Abu Bakr bin Mas'ud bin Ahmad al-Kashani.
251	The reliability of 'Al-Muhit' is like the midday sun.
253	Support and authentication from Allama Shami.
253	It is not permissible to give a fatwa from Durr-e-Mukhtar without its commentaries.

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

पृष्ठ	विषय
522	किसी चीज़ के हुक्म में होना उस चीज़ की जिन्स और केंद्र में एकता नहीं है।
522	समन-ए-ख़ल्की (प्राकृतिक मूल्य) और इस्तिलाही (परंपरागत मूल्य) भिन्न हैं।
522	भिन्न चीज़ों में ऐनियत (एक होना) असंभव है।
523	क़ीमती और मिस्ली एक नहीं हो सकते।
524	मुत्तहिद (एक) का मुत्तहिद मुत्तहिद होता है।
525	उज्र (बहाना) न होना, उज्र न हो सकने को अनिवार्य नहीं करता।
528	पेड़ फल से पहचाना जाता है (अश-शजरतु तुन्बिउ अन अथ-थमरा)।
529	अनिवार्य परिवर्तन मलज़ूम की ऐनियत की नफ़ी करता है।
534	नोट और रुपये एक जिन्स नहीं हैं।
534	रुपयों और नोटों में कोई साझा मूल्य नहीं है।
591	शर्त-ए-फासिद के साथ बैअ (बिक्री) में अगर शर्त साथ हो तो फ़साद पैदा करेगी।
599	गैर-मौजूद कभी मौजूद के हुक्म में आ जाता है।
600	बैअ में अधिकार वकील की तरफ़ लौटते हैं और निकाह में पति-पत्नी की तरफ़।
611	उरफ़ी (प्रचलित) निर्धारण और समन-ए-इस्तिलाही होना अनुबंधकर्ताओं के बीच कमी-बेशी को हराम नहीं करता।
620	एक-दो पैसे की मबीअ (बिक्री की वस्तु) को मुट्ठी भर पर कयास करना कमज़ोर है।
645	जो उर्फ़(प्रचलन) में पूज्य है, वह शरअ में पूज्य है।
659	इमाम आज़म के नज़दीक जब तक हक़ीक़ी (वास्तविक) अर्थ संभव हो, मजाज़ी (लाक्षणिक) पर ले जाना जायज़ नहीं।
661	"जब शर्त फौत हो जाए तो मशरूत भी फौत हो जाता है" एक सामान्य नियम है।
663	ताबेअ (अनुगामी), मतबूअ (अनुसरित) से पहले नहीं होता, और अगर मतबूअ न हो तो ताबेअ भी नहीं होता।
663	कफ़ालत-बिल-माल जब कफ़ालत-बिन-नफ़्स के अधीन हो, तो दूसरे से मुक्ति होने पर पहला भी खत्म हो जाता है।

पृष्ठ	विषय
534	नोटों के साथ उर्फ़ वालों का व्यवहार उन्हें समन-ए-इस्तिलाही बनाता है, न कि ख़ल्की।
534	रुपयों से मूल्य का अनुमान लगाने ने नोट को रुपया नहीं बना दिया; हर इस्तिलाही अनुमान ख़ल्की से ही होता है।
534	अनुबंधकर्ताओं पर इस्तिलाह का पालन अनिवार्य नहीं है; वे आपसी सहमति से जितना चाहें कम या ज़्यादा कर सकते हैं।
588	शर्त-ए-फासिद से क़र्ज़ फ़ासिद नहीं होता, लेकिन इस तरह क़र्ज़ देना गुनाह है।
589	जो उर्फ़ में है वह शर्त के समान है (अल-मारूफ़ कल-मशरूत)।
590	यदि किसी बात में दोनों पक्षों को सही माना गया हो, तो जिस पर चाहें अमल करें।

पृष्ठ	विषय
	इफ़्ता और रस्मुल मुफ्ती
251	'ज़ख़ीरा' एक बेहतरीन और प्रामाणिक फ़तावा है।
251	'बदाइ' इमाम अबू बक्र बिन मसूद बिन अहमद काशानी की एक महान पुस्तक है।
251	'मुहीत' की प्रामाणिकता दोपहर के सूरज की तरह है।
253	अल्लामा शामी की ताईद और तौसीक़ (समर्थन)।
253	बिना हाशिये के'दुर्रे मुख़्तार' से फ़तवा देना जायज़ नहीं है।

صفحہ	عنوان
۵۲۲	حکم شے میں ہونا جنس و قدر شے میں شیئی سے اتحاد نہیں۔
۵۲۲	ثمن خلقی واصطلاحی متبائین ہیں۔
۵۲۲	متبائین میں عینیت محال ہوتی ہے۔
۵۲۳	قیمتی و مثلی ایک نہیں ہو سکتے۔
۵۲۴	متحد کا متحد متحد ہوتا ہے۔
۵۲۵	عذر نہ ہونا عذر نہ ہو سکنے کو مستلزم نہیں۔
۵۲۸	الشجرۃ تنبئ عن الثمرۃ۔

صفحہ	عنوان
۵۹۱	بیع بشرط فاسد میں شرط مقارن ہو تو فساد پیدا کرے گی۔
۵۹۹	معدوم کبھی موجود کے حکم میں ہو جاتا ہے۔
۶۰۰	بیع میں حقوق وکیل کی طرف راجع ہوتے ہیں اور نکاح میں زوجین کی طرف۔
۶۱۱	عرفی تعین اور ثمن اصطلاحی ہونا عقدین پر کمی و بیشی کو حرام نہیں کرتا۔
۶۲۰	ایک دو پیسہ کی مبیع کو حفنہ اور حفنتین پر قیاس کرنا ضعیف ہے۔
۶۴۵	جو عرفاً معبود ہو وہ شرعاً معبود ہے۔
۶۵۹	

صفحہ	عنوان	صفحہ	عنوان
			امام اعظم کے نزدیک جب تک معنی حقیقی بن سکیں مجازی پر حمل جائز نہیں۔
۵۲۹	تغیر لازم نافی عینیت ملزوم ہے۔	۶۶۱	اذا فات الشرط فات المشروط قاعدہ کلیہ ہے۔
۵۳۴	نوٹ اور روپے ایک جنس نہیں۔	۶۶۳	تابع متبوع پر مقدم نہیں ہوتا، اور متبوع معدوم ہو تو تابع بھی متحقق نہیں ہوتا۔
۵۳۴	روپوں میں اور نوٹ میں قدر مشترک نہیں۔	۶۶۳	کفالت بالمال جب کفالت بالنفس کی تابع ہو ثانی سے برات ہو تو اول بھی مرتفع ہو جاتی ہے۔
۵۳۴	نوٹ کے ساتھ اہل عرف کا معاملہ اثمان برتنا اسے ثمن اصطلاحی کرے گا نہ کہ خلقی۔		افتاء و رسم المفتی
۵۳۴	روپوں سے اندازہ قیمت نے نوٹ کو روپیہ نہیں کر دیا ہر اصطلاحی کا اندازہ خلقی سے ہی ہوتا ہے۔	۲۵۱	ذخیرہ ایک عمدہ اور مستند فتاویٰ ہے۔
۵۳۴	اصطلاح کی پیروی عاقدین پر لازم نہیں وہ اپنی تراضی سے جو چاہیں کم و بیش کریں۔	۲۵۱	بدائع تصنیف امام ابوبکر بن مسعود بن احمد کاشانی جلیل الشان کتاب ہے۔

صفحہ	عنوان	صفحہ	عنوان
۵۸۸	شرط فاسد سے قرض فاسد نہیں ہوتا لیکن اس طرح قرض دینا معصیت ہے۔	۲۵۱	محیط کا اعتبار آفتاب نیمروز ہے۔
۵۸۹	المعروف کالمشروط	۲۵۳	علامہ شامی کی تائید و توثیق۔
۵۹۰	کسی قول میں دونوں طرف تصحیح ہو تو جس پر چاہو عمل کرو۔	۲۵۳	بے حواشی کے در مختار سے فتویٰ دینا جائز نہیں۔

Volume 17 (17) Fatawa-e-Razviya

Page Number	Topic	Page Number	Topic
253	Qazi Khan (may Allah have mercy on him) restricting himself to a particular saying is evidence of the strength of that saying.	669	The speech of one who enters into a contract, makes a vow, takes an oath, or makes an endowment (waqf) will be interpreted according to their common usage (urf).
259	A Mufti will give a fatwa based on reality, while a Qazi (judge) will pass judgment based on the apparent.	692	If fatwas differ, it is obligatory to act upon the saying of the Imam.
342	Citing the actions of common people is a sign of ignorance.	698	A difference in the question leads to a difference in the answer, the responsibility of which lies with the questioner.
415	Some benefits regarding the etiquette of a Mufti.	701	If a Mufti knows that the questioner has asked an incorrect question, he should not answer.
	Munazara Dard Mand Pahan		
415	Quniyah is well-known for containing weak narrations.	312	Attributing the saying of the permissibility of riba (usury) to our Imams is a fabrication by the Ghair-Muqallids.
415	When Quniyah contradicts well-known books, it will not be accepted.	766	The eighth argument for the non-dislikedness of disparity in value.
415	When Quniyah contradicts well-known books, it will not be accepted unless another reliable narration is found in its support.	766	The ninth argument for the non-dislikedness of disparity in value.

Page Number	Topic	Page Number	Topic
455	A fatwa is generally based on the saying of the Imam.	766	The tenth argument for the non-dislikedness of disparity in value.
642	After the fatwas of reliable authorities become clear, the groundless disagreement of non-muftis holds no weight.	777	The first response to Sheikh Abdul Haleem's discourse.
656	Today's common usage is that there is no difference between the two, and the meaning of both these cases is taken to be that the guarantee ended after this date.	777	Fatwa is based on common usage (urf).
656	Second response.	779	The third response to Sheikh Abdul Haleem's discourse.
665	Whoever does not know the people of their time is ignorant.	482	The fifth refutation of Fazil Lakhnawi.
665	In the matter of the absence of the guaranteed party (makful-lahu), the fatwa is based on the saying of the two sides (Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad).	483	Seven more refutations of Fazil Lakhnawi.
665	Mahbubi and Nasafi are not among the authorities of preference (ashab al-tarjih).	484	The thirteenth great refutation of Fazil Lakhnawi's misconception.
665	If fatwas differ, then in case of no change in time, the fatwa is based on the saying of the Imam.	490	The fourteenth refutation explaining that Fazil Lakhnawi's saying implies that interest (sood) is halal.
666	Deviating from the preferred (rajih) view is not permissible.		

जिल्द सत्रह (17) फतावा-ए-रज़विया

पृष्ठ संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या	विषय
253	काज़ी खान (रहमतुल्लाह अलैहि) का किसी कौल (कथन) पर इक्तिसार (सीमित रहना) करना उस कौल की मजबूती की दलील है।	669	निकाह करने वाले, मिन्नत मानने वाले, कसम खाने वाले और वक्फ करने वाले, इन सभी के शब्दों का अर्थ उनके 'उर्फ (लोक-प्रथा) के अनुसार लिया जाएगा।
259	मुफ्ती वास्तविकता के आधार पर फतवा देगा, जबकि काजी बाहरी स्थिति के आधार पर फैसला करेगा।	692	यदि फतवा अलग-अलग हो तो इमाम के कौल पर अमल करना वाजिब है।
342	आम लोगों के कार्यों को प्रमाण बनाना अज्ञानता की निशानी है।	698	प्रश्न में भिन्नता से उत्तर में भिन्नता आती है, जिसकी जिम्मेदारी प्रश्नकर्ता पर होती है।
415	मुफ्ती के शिष्टाचार के कुछ लाभ।	701	यदि मुफ्ती को पता चले कि प्रश्नकर्ता ने गलत सवाल किया है, तो वह उत्तर न दे।
	मुनाज़रा दर्द मंद पहा		
415	'कुनियाह' प्रसिद्ध है कि इसकी रिवायतें (वर्णन) कमजोर हुआ करती हैं।	312	हमारे इमामों पर ब्याज (रिबा) के जायज होने का आरोप लगाना गैर-मुक़ल्लिदों का झूठ है।
415	जब 'कुनियाह' प्रसिद्ध पुस्तकों के विरुद्ध हो तो वह स्वीकार्य नहीं होगी।	766	मालियत (मूल्य) में अंतर के मकरूह (नापसंद) न होने की आठवीं दलील।
415	जब 'कुनियाह' प्रसिद्ध पुस्तकों के विरुद्ध हो तो वह तब तक स्वीकार्य नहीं होगी जब तक	766	मालियत में अंतर के मकरूह न होने की नौवीं दलील।

पृष्ठ संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या	विषय
	उसके समर्थन में कोई अन्य विश्वसनीय वर्णन न मिल जाए।		
455	फतवा पूर्णतः इमाम के कौल पर होता है।	766	मालियत में अंतर के मकरूह न होने की दसवीं दलील।
642	विश्वसनीय मुफ्ती के फतवे सामने आ जाने के बाद, गैर-मुफ्ती के बिना दलील वाले विरोध का कोई महत्व नहीं है।	777	शेख अब्दुल हलीम के कथन का पहला उत्तर।
656	आज कल का 'उर्फ यह है कि दोनों में कोई अंतर नहीं है और इन दोनों स्थितियों का मतलब यही लिया जाता है कि उस तारीख के बाद जिम्मेदारी (ज़मानत) खत्म हो गई।	777	फतवा 'उर्फ (प्रथा) पर आधारित होता है।
656	दूसरा उत्तर।	779	शेख अब्दुल हलीम के कथन का तीसरा उत्तर।
665	जो अपने समय के लोगों (के चलन) को नहीं जानता, वह अज्ञानी है।	482	फ़ाज़िल लखनवी का पांचवा खंडन।
665	मक़फ़ूल लहू (जिसके लिए गारंटी दी गई हो) की अनुपस्थिति के मामले में फतवा दोनों पक्षों के कौल पर है।	483	फ़ाज़िल लखनवी पर सात और खंडन।
665	महबूबी और नसफी तरजीह देने वाले विद्वानों (असहाब-ए-तरजीह) में से नहीं हैं।	484	फ़ाज़िल लखनवी के भ्रम का तेरहवां बड़ा खंडन।
665	यदि फतवे अलग हों, तो समय के बदलाव न होने की स्थिति में फतवा इमाम के कौल पर होता है।	490	चौदहवां खंडन इस बात के वर्णन में कि फ़ाज़िल लखनवी के कथन से यह अनिवार्य होता है कि ब्याज (सूद) हलाल हो।

पृष्ठ संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या	विषय
666	स्पष्ट रूप से बेहतर (राजेह) राय से हटना जायज नहीं है।		

صفحہ نمبر	عنوان
۲۵۳	قاضی خان رحمۃ اللہ تعالیٰ کا کسی قول پر اقتصار کرنا اس قول کے قوت کی دلیل ہے۔
۲۵۹	مفتی حقیقت پر فتویٰ دے گا قاضی ظاہر پر حکم کرے گا۔
۳۴۲	عوام کے افعال سے سند جہالت ہے۔
۴۱۵	آدابِ مفتی کے بعض فوائد۔
	مناظرہ درد مند پہاں
۴۱۵	قنیہ مشہور ہے کہ اس کی روایتیں ضعیف ہوا کرتی ہیں۔
۴۱۵	
۶۶۹	عقد کرنے والے، منت ماننے والے، قسم کھانے والے اور وقف کرنے والے سب کا کلام ان کے عرف پر محمول ہوگا۔
۶۹۲	فتویٰ مختلف ہو تو قولِ امام پر عمل واجب ہے۔
۶۹۸	سوال کے اختلاف سے جواب میں اختلاف ہوتا ہے جس کی ذمہ داری سائل پر ہے۔
۷۰۱	مفتی کو معلوم ہو کہ سائل نے غلط سوال کیا ہے تو جواب نہ دے۔
۳۱۲	ہمارے ائمہ پر جوازِ ربا کا قول غیر مقلدوں کا افتراء ہے۔
۷۶۶	

صفحہ نمبر	عنوان
	قنیہ جب مشہور کتابوں کی مخالفت کرے تو مقبول نہ ہو گی۔
۴۱۵	قنیہ جب مشہور کتابوں کی مخالفت کرے تو مقبول نہ ہو گی جب تک اس کی تائید میں اور کوئی نقل معتمد نہ پائی جائے۔
۴۵۵	فتویٰ مطلقاً امام کے قول پر ہے۔
۶۴۲	ذی اعتبار اہل فتویٰ کے فتویٰ کے ظاہر ہو جانے کے بعد غیر مفتیوں کے بلادلیل اختلاف کا اعتبار نہیں۔
۶۵۶	آج کل کا عرف یہ ہے کہ دونوں میں کچھ فرق نہیں اور ان دونوں صورتوں کا مطلب یہی لیتے ہیں کہ اس تاریخ کے بعد ضمانت ختم ہوگئی۔
۶۵۶	دوسرا جواب۔
۶۶۵	جو اہلِ زمانہ کو نہ جانے جاہل ہے۔

صفحہ نمبر	عنوان
	مالیت میں تفاضل کے مکروہ نہ ہونے کی آٹھویں دلیل
۷۶۶	مالیت میں تفاضل کے مکروہ نہ ہونے کی نویں دلیل
۷۶۶	مالیت میں تفاضل کے مکروہ نہ ہونے کی دسویں دلیل
۷۷۷	شیخ عبدالحلیم کے کلام کا پہلا جواب۔
۷۷۷	فتویٰ عرف پر ہوتا ہے۔
۷۷۹	شیخ عبدالحلیم کے کلام کا تیسرا جواب۔
۴۸۲	فاضل لکھنوی کا پانچواں رَد

صفحہ نمبر	عنوان
۶۶۵	مکفول لہ کی غیبت کے مسئلہ میں فتویٰ طرفین کے قول پر ہے۔
۶۶۵	محبوبی اور نسفی اصحابِ ترجیح سے نہیں۔
۶۶۵	فتویٰ مختلف ہو تو عدم اختلافِ زمانہ کی صورت میں فتویٰ امام کے قول پر ہوتا ہے۔
۶۶۶	راجح سے عدول جائز نہیں۔
۴۸۳	فاضل لکھنوی پر مزید سات رَد
۴۸۴	فاضل لکھنوی کے وہم کا تیرہواں عظیم رَد۔
۴۹۰	چودھواں رَد اس امر کے بیان میں کہ فاضل لکھنوی کے قول پر لازم آتا ہے کہ سود حلال ہو۔

Fatawa Razawiyyah (Vol. 17)

Topic	Page	Detail	Page
Fifteenth Refutation			
Curse	491		
Refutation of a fatwa by Gangohi.	507	In Urdu, 'within a year' and 'up to a year' mean the same thing.	266
One hundred and twenty refutations of the scholar of Lucknow.	520	Literal meaning of 'Musawwib' and 'Tasweeb'.	520
Maulvi Lakhnawi writes 'Hua al-Musawwib' at the beginning of every answer, which is incorrect for three reasons.	520	Saying 'we will give, we will take' does not constitute a contract; it is merely a promise. An adult cannot be forced at the time.	579
Explanation of the reasons for errors in a wrong fatwa and the correct ruling on the matter.	494	Jurisprudential Benefits	
Refutation of Gangohi Sahib.	399	In Sharia, the past tense is required for offer and acceptance.	81
Refutation of a jurisprudential branch using traditional evidence.	417	'Ta'ati' (mutual delivery) like offer and acceptance is a cause for the binding nature of a sale.	81
Refutation of a jurisprudential branch using rational evidence.	417	In a sale, the commodity (Mabi') is original; its rejection will cancel the sale, but rejection of the price (Thaman) will not cancel it.	94
Refutation of Maulana Lakhnawi.	446	The past tense is necessary for offer and acceptance.	95
Three answers to the doubt of the Lakhnawi Sahib.	448	A promise is not a contract.	
Indication of a slip-up by the scholar of Lucknow.	473	A form of subsequent permission.	107
Logic			111

Topic	Page	Detail	Page
		There are two opinions on the sale of rights: validity and invalidity, and both are substantial.	
Acceptance of a right-holder and unity of genus share a 'general-particular-in-some-respect' relationship.	525	The sale of the right of way, right of water, right of height, etc., is not inherently permissible.	112
In Sharia, a genus is a universal whose individuals have different purposes.	528	Those according to whom the sale of rights is not permissible do not consider the invalidity to extend to the included item.	112
Note: A real species is one whose individuals have unanimous purposes.	528	Mixing 'Hurumiyyah' (nobility/ freedom) with a slave also results in an irregular (fasid) sale, not a void (baatil) one.	112
A real species cannot be identical to any genus.	529	Payment of price is neither among the conditions for the validity of a sale nor among the conditions for its execution.	118

फतावा रज़विया (खंड 17)

विषय	पृष्ठ	विवरण	पृष्ठ
पंद्रहवाँ रद (खंडन)			
लानत (अभिशाप)	491		
गंगोही के एक फतवे का रद।	507	उर्दू में 'साल के अंदर' और 'साल तक' दोनों का अर्थ एक ही है।	266
फाजिल लखनवी पर एक सौ बीस रद।	520	'मुसव्विब' और 'तस्वीब' का शाब्दिक अर्थ।	520
मौलवी लखनवी साहब हर जवाब के शुरू में 'हुवल मुसव्विब' लिखते हैं जो तीन कारणों से गलत है।	520	'देंगे, लेंगे' कहने से अनुबंध (अक्द) नहीं होता, यह केवल एक वादा है; समय आने पर वयस्क को मजबूर नहीं किया जा सकता।	579
एक गलत फतवे की खामियों का वर्णन और मसले का सही हुक्म।	494	फिक़्ही लाभ	
गंगोही साहब का रद।	399	शरीयत में इजाब-ओ-क़ुबूल (प्रस्ताव और स्वीकृति) के लिए भूतकाल (माज़ी) का प्रयोग आवश्यक है।	81
पारंपरिक साक्ष्य (दलील-ए-नक्ली) से फिक़्ही शाखा का रद।	417	'ताती' (लेन-देन) इजाब-ओ-क़ुबूल की तरह खरीद-बिक्री (बय) के अनिवार्य होने का कारण है।	81
तार्किक साक्ष्य (दलील-ए-अक्ली) से फिक़्ही शाखा का रद।	417	बय में 'मबी' (वस्तु) मूल है, उसके वापस होने से बय रद्द हो जाएगी, 'समन' (कीमत) की वापसी से बय रद्द नहीं होगी।	94
मौलाना लखनवी का रद।	446	इजाब-ओ-क़ुबूल के लिए भूतकाल का शब्द (सीगा) ज़रूरी है।	95
लखनवी साहब के संदेह के तीन उत्तर।	448	वादा कोई अनुबंध नहीं है।	

विषय	पृष्ठ
फाजिल लखनवी की चूक की ओर इशारा।	473
तर्कशास्त्र (मंतिक़)	
हकदार की स्वीकृति और लिंग की एकता में 'विशेष-सामान्य' (उमूम-ओ-खूसूस मिन वज्ह) संबंध है।	525
शरीयत में लिंग (जीनस) वह सार्वभौमिक है जिसके व्यक्ति अलग-अलग उद्देश्यों वाले हों।	528
नोट: वास्तविक प्रकार वह है जिसके सभी व्यक्तियों के उद्देश्य एक समान हों।	528
वास्तविक प्रकार किसी लिंग के समान नहीं हो सकता।	529

विवरण	पृष्ठ
बाद की अनुमति (इजाज़त-ए-लाहिका) की एक स्थिति।	107
अधिकारों की बिक्री (बय) में दो मत हैं: वैधता और अवैधता, और दोनों प्रबल हैं।	111
रास्ते का अधिकार, पानी का अधिकार, ऊंचाई का अधिकार आदि की बिक्री मौलिक रूप से जायज़ नहीं है।	112
जिनके अनुसार अधिकारों की बिक्री जायज़ नहीं है, वे भी इस शून्यता को शामिल वस्तु तक व्याप्त नहीं मानते।	112
'हुर्रुमियत' (स्वतंत्रता) को गुलाम के साथ मिलाने पर भी बय 'फासिद' (अनियमित) होती है, 'बातिल' (शून्य) नहीं।	112
कीमत की अदायगी न तो बिक्री की वैधता की शर्तों में शामिल है और न ही बिक्री के निष्पादन की शर्तों में।	118

موضوع	ص
پندرھواں رد۔	
لعنت	۴۹۱
گنگوہی کے ایک فتویٰ کا رد۔	۵۰۷
فاضل لکھنوی پر ایک سو بیس رد۔	۵۲۰
مولوی لکھنوی صاحب ہر جواب کے شروع میں ھو المصوب لکھتے ہیں جو تین وجوہ سے غیر صحیح ہے۔	۵۲۰
ایک غلط فتوے کے وجوہ خلل کا بیان اور مسئلہ کا صحیح حکم۔	۴۹۴
گنگوہی صاحب کا رد۔	۳۹۹
دلیل نقلی سے فرع فقیہ کا رد۔	۴۱۷
فرع فقیہ کا دلیل عقلی سے رد۔	۴۱۷

تفصیل	ص
اردو میں سال کے اندر اور سال تک دونوں کا حاصل ایک ہے۔	۲۶۶
مصوب اور تصویب کا لغوی معنی۔	۵۲۰
دیں گے لیں گے کہنے سے عقد نہیں ہوتا،	
یہ صرف وعدہ ہے، وقت پر بالغ کو مجبور نہیں کیا جاسکتا۔	۵۷۹
فوائد فقیہ	
شرع میں ایجاب و قبول کے لئے ماضی کا صیغہ درکار ہے۔	۸۱
تعاطی مثل ایجاب و قبول لزوم بیع کا سبب ہوتی ہے۔	۸۱
	۹۴

موضوع	ص
مولانا لکھنوی کا رد۔	۴۴۶
لکھنوی صاحب کے شبہہ کے تین جواب۔	۴۴۸
فاضل لکھنوی کی لغزش کی طرف اشارہ۔	۴۷۳
منطق	
قبول ذی حق اور اتحاد جنس میں عموم و خصوص من وجہ ہے۔	۵۲۵
شرع میں جنس وہ کلی ہے جس کے افراد مختلفہ الاغراض ہوں۔	۵۲۸
نوٹ نوع حقیقی ہے جس کے سب افراد متفقہ الاغراض ہیں۔	۵۲۸
نوع حقیقی کسی جنس کا عین نہیں ہو سکتا۔	۵۲۹

تفصیل	ص
بیع میں مبیع اصل ہے، اس کے رد سے بیع فسخ ہو جائے گی، ثمن کے رد سے فسخ نہ ہوگی۔	۹۵
ایجاب و قبول کے لئے ماضی کا صیغہ ضروری ہے۔	
وعدہ کوئی عقد نہیں۔	
اجازت لاحقہ کی ایک صورت۔	۱۰۷
حقوق کی بیع میں دو مذہب ہیں: صحت و فساد، اور دونوں باقوت ہیں۔	۱۱۱
حق مرور، حق شرب، حق تعلی وغیرہ کی بیع اصالۃً جائز نہیں۔	۱۱۲
جن کے نزدیک حقوق کی بیع جائز نہیں وہ بھی بطلان کو مضموم الیہ تک ساری نہیں مانتے۔	۱۱۲
حرومیتہ کو عبد اور غلام کے ساتھ ملایا تو بھی بیع فاسد ہوتی ہے باطل نہیں۔	۱۱۲
ادائے ثمن نہ شرائطِ صحتِ بیع میں داخل ہے نہ شرائطِ نفاذِ بیع میں۔	۱۱۸

Fatawa Rizvia (Volume 17)

Subject (Right)	Serial No.	Subject (Left)	Page No.
Sale is the name for the exchange of wealth for wealth.	121	Statement on the difference between innate connection and temporary corruption.	187
In boundaries, if there is a difference written in the measurement fraction of land, even then the boundary will not be reliable.	122	Definition of hoarding (Ihtikar) and its ruling.	189
Along with the measurement fraction, if it is also written that per yard it is this much, then measurement will be reliable, not the boundary.	142	A Murabaha contract can also be on credit, however, an increase in price due to a loan is not commendable.	219
Purchasing is of three types.	142	The definition of Murabaha contract as mentioned in the original texts.	220
Meaning of offer and acceptance (Ijab-o-Qabul).	143	Objection to the word 'contract' for the price in the mentioned definition for not being comprehensive and exclusive.	220
There are three types of impermissible sales: void, irregular, and abominably prohibited.	151	Definition of 'Durar' in which the use of these two words has been avoided, but even this is not free from flaws.	220
Definition of void sale and its example.	152	Allama Bahr attempted a comprehensive and exclusive definition, but even that is not sound.	220
Sale of non-existent items is impermissible.	155	The author's research regarding the object of sale in Murabaha and reconciliation between the statements of the Imams.	222

Subject (Right)	Serial No.	Subject (Left)	Page No.
Definition of wealth (Maal).	157	Dinars and Dirhams are of a single genus in the chapter of Murabaha.	230
Definition of usury (Riba).	160	A banknote is not a price in its essence, but through reform, it has acquired the character of price.	232
The money from a promissory note is never returned by the government; this is a 'dead loan'.	166	The technical price character is voided if the contracting parties nullify it, and that thing becomes specific.	234
Definition of dead loan.	167	Price is not fixed in dower (Mahr).	238
Explanation of a modern form of void sale.	167	Prices are not fixed in compensatory exchanges.	238
There is a difference between validity and permissibility; it is possible for something to be valid but prohibited.	170	Trusts and donations become specific after acceptance; they are not fixed in vows.	238
Religious Ruling.	174	A deferred debt can be made deferred, and a non-installment debt can be made into installments.	244
Whether there is corruption in the core of the contract or the formation condition is missing, in both cases, reform during the contract session is not useful for validity.	183		

फ़तावा रिज़विया (जिल्द 17)

विषय (दाएं)	क्रम संख्या	विषय (बाएं)	पृष्ठ संख्या
विक्रय (बय) माल के बदले माल के विनिमय का नाम है।	121	जन्मजात जुड़ाव और अस्थायी जुड़ाव में फसाद (बिगाड़) के अंतर का विवरण।	187
सीमाओं (चौहद्दी) में यदि भूमि की माप की सूक्ष्मता में कोई भिन्नता लिखी हो, तब भी चौहद्दी का ही विचार होगा।	122	इहतिकार (जमाखोरी) की परिभाषा और उसका हुक्म।	189
माप की सूक्ष्मता के साथ यदि यह भी लिखा हो कि प्रति गज इतना, तो अब चौहद्दी का नहीं बल्कि माप का ही विचार होगा।	142	मुराबाहा अनुबंध उधार भी हो सकता है, हालांकि ऋण के कारण मूल्य में वृद्धि सराहनीय नहीं है।	219
खरीदारी तीन प्रकार की होती है।	142	मुराबाहा अनुबंध की वह परिभाषा जो मूल ग्रंथों में वर्णित है।	220
ईजाब-ओ-क़ुबूल (प्रस्ताव और स्वीकृति) का अर्थ।	143	उल्लिखित परिभाषा में 'अनुबंध मूल्य' शब्द पर व्याख्याकारों की आपत्ति कि परिभाषा व्यापक और विशिष्ट नहीं है।	220
नाजायज विक्रय की तीन श्रेणियां हैं: शून्य (बातिल), अनियमित (फ़ासिद), और घृणित निषिद्ध (मकरूह तहरीमी)।	151	'दुरर' की परिभाषा जिसमें इन दोनों शब्दों के उपयोग से बचा गया है, लेकिन यह भी कमियों से मुक्त नहीं है।	220
शून्य विक्रय (बय बातिल) की परिभाषा और उसका उदाहरण।	152	अल्लामा बह्र ने एक व्यापक और विशिष्ट परिभाषा का प्रयास किया, लेकिन वह भी दोषमुक्त नहीं है।	220
गैर-मौजूद वस्तुओं का विक्रय नाजायज है।	155		222

विषय (दाएं)	क्रम संख्या	विषय (बाएं)	पृष्ठ संख्या
		मुराबाहा में विक्रय वस्तु के संबंध में लेखक का शोध और इमामों के कथनों के बीच सामंजस्य।	
धन (माल) की परिभाषा।	157	मुराबाहा के अध्याय में दीनार और दिरहम एक ही श्रेणी के हैं।	230
सूद (रिबा) की परिभाषा।	160	बैंक नोट अपने आप में मूल्य (थमन) नहीं है, लेकिन सुधार के माध्यम से इसे मूल्य का गुण प्राप्त हुआ है।	232
प्रॉमिसरी नोट का पैसा सरकार कभी वापस नहीं करती; यह एक 'मृत ऋण' है।	166	तकनीकी मूल्य का गुण अनुबंध करने वालों के निरस्त करने से शून्य हो जाता है और वह वस्तु निश्चित हो जाती है।	234
मृत ऋण (क़र्ज़-ए-मुरदा) की परिभाषा।	167	मेहर (दहेज) में मूल्य निश्चित नहीं होता।	238
शून्य विक्रय के एक नए रूप का विवरण।	167	मुआवज़े (विनिमय) में मूल्य निश्चित नहीं होते।	238
वैधता और अनुमति के बीच अंतर है; संभव है कि कोई चीज़ सही (वैध) हो लेकिन हराम (निषिद्ध) हो।	170	अमानत और दान स्वीकृति के बाद निश्चित होते हैं, मन्नत (नज़्र) में निश्चित नहीं होते।	238
धार्मिक निर्णय (हुक्म-ए-दियानत)।	174	स्थगित ऋण को पुनः स्थगित किया जा सकता है, और बिना किस्त वाले ऋण को किस्तबद्ध किया जा सकता है।	244
अनुबंध के मूल में खराबी हो या गठन की शर्त अनुपस्थित हो, दोनों स्थितियों में अनुबंध सभा के दौरान सुधार वैधता के लिए उपयोगी नहीं है।	183		

पृष्ठ 64 का 715

موضوع (دائیں)	نمبر شمار	موضوع (بائیں)	صفحہ نمبر
بیع مبادلہ مال بمال کا نام ہے۔	۱۲۱	خلقی اتصال اور عارضی میں فساد کے فرق کا بیان۔	۱۸۷
چوہدی میں اگر زمین کی کسر پیمائش میں اختلاف تحریر ہوا تو بھی چوہدی کا اعتبار نہ ہوگا۔	۱۲۲	احتکار کی تعریف اور اس کا حکم۔	۱۸۹
کسر پیمائش کے ساتھ ساتھ اگر یہ بھی تحریر ہو کہ فی گز اتنا تو اب چوہدی کا نہیں پیمائش کا اعتبار ہوگا۔	۱۴۲	عقد مرابحہ ادھار بھی ہو سکتا ہے البتہ قرض کی وجہ سے دام میں اضافہ مستحسن نہیں۔	۲۱۹
خریداری تین طرح ہوتی ہے۔	۱۴۲	عقد مرابحہ کی وہ تعریف جو متون میں مذکور ہے۔	۲۲۰
ایجاب و قبول کا معنیٰ۔	۱۴۳	تعریف مذکور میں لفظ عقد ثمن پر شراح کا تعریف کے جامع و مانع نہ ہونے سے اعتراض۔	۲۲۰
ناجائز بیع کی تین قسمیں ہیں: باطل، فاسد، مکروہ تحریمی۔	۱۵۱		۲۲۰

موضوع (دائیں)	نمبر شمار	موضوع (بائیں)	صفحہ نمبر
		درر کی تعریف جس میں ان دونوں لفظوں کے استعمال سے احتراز کیا گیا ہے لیکن یہ بھی نقص سے خالی نہیں۔ علامہ بحر نے ایک جامع اور مانع	
بیع باطل کی تعریف اور اس کی مثال۔	۱۵۲	تعریف کی کوشش کی لیکن وہ بھی سالم نہیں۔	۲۲۰
معدوم کی بیع ناجائز ہے۔	۱۵۵	مرابحہ میں مبیع سے متعلق مصنف کی تحقیق اور کلام ائمہ میں تطبیق۔	۲۲۲
مال کی تعریف۔	۱۵۷	دینار و درہم باب مرابحہ میں جنس واحد سے ہے۔	۲۳۰
ربو کی تعریف۔	۱۶۰	نوٹ بذاتہ ثمن نہیں مگر بذریعہ اصلاح اس کو ثمنیت عارض ہے۔	۲۳۲
پرامیسری نوٹ کا روپیہ گورنمنٹ کبھی واپس نہیں کرتی یہ قرض مردہ ہے۔	۱۶۶	ثمن اصطلاحی کی ثمنیت متعاقدین کے باطل کر دینے سے باطل ہو جاتی ہے اور وہ شے متعین ہو جاتی ہے۔	۲۳۴
قرض مردہ کی تعریف۔	۱۶۷	ثمن مہر میں متعین نہیں ہوتا۔	۲۳۸
بیع باطل کی ایک جدید شکل کا بیان۔	۱۶۷	اثمان معاوضات میں متعین نہیں ہوتے۔	۲۳۸

موضوع (دائیں)	نمبر شمار
صحت اور جواز میں فرق ہے ممکن ہے ایک چیز صحیح تو ہو لیکن حرام ہو۔	۱۷۰
حکم دیانت	۱۷۴
صلب عقد میں فساد ہو یا شرط انعقاد معدوم ہو دونوں صورتوں میں مجلس عقد میں اصلاح مفید صحت نہیں۔	۱۸۳

موضوع (بائیں)	صفحہ نمبر
امانات و تبرعات بعد تسلیم میں متعین ہوتے ہیں نذر میں متعین نہیں ہوتے۔	۲۳۸
دین موجل کو مؤجل، غیر منجم کو منجم کر سکتے ہیں۔	۲۴۴

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

Topic	Page	Topic	Page
Sale becomes void due to ignorance of the price.	245	Definition and ruling of interest (Riba).	326
Rescission of a void sale is obligatory.	245	Definition of gambling.	330
Knowledge of the price is one of the conditions for the validity of a sale.	245	There is a big difference between a sale contract and a promise.	330
If the condition for the price's meaning is in the essence of the sale contract and in the past tense, the sale will not be void; the voidance happens with the future tense.	258	Scholars identified an irrational minor as one who takes the sold item but asks for the money back as well.	330
Difference between a sale on condition of a loan and a loan on condition of a sale.	275	Definition of property (Maal).	332
There can be one buyer of a sold item and several beneficiaries for whom it is bought.	279	Two forms of void transactions.	348
Despite paying the price from joint property, the sold item can belong to only one person.	280	Definition of Dhimmi and Mustamin.	348
Ruling on splitting a transaction before the completion of the sale.	287	There is no Salam sale for less than one month.	353
In the chapter on interest (Riba), Sharia assessment is based on volume and weight.	291	Ruling on a complicated form of interest.	355
Explanation of the universal rule of lawfulness and unlawfulness in four scenarios.	291	Ruling on the buying and selling of company shares.	362
Explanation of Sharia necessity and details of some artificial necessities.	299	Explanation of the reality of currency notes and that they are property themselves, not a claim to property.	398

Topic	Page	Topic	Page
Preservation of life, gaining strength, and protection from humiliation and taunts are Sharia necessities.	300	A currency note is a piece of paper.	398
There is no interest between a master and a slave.	309	Paper is valuable property.	398
There is also no interest between partners in compensatory or joint-capital partnerships.	309	Meaning of property (Maal).	398
Definition of Riba (interest).	311	Four types of property and jurisprudential discussions on them.	404
Difference between void contracts and usurpation/theft.	319	A note is a commodity, i.e., property, not a document, because it is a piece of paper.	408
A loan is a transaction separate from a sale, which the holy Law has legislated for people based on the wisdom of need.	342		

फ़तावा रज़विया (खण्ड १७)

विषय	पृष्ठ
मूल्य की अनभिज्ञता के कारण बिक्री शून्य (फ़ासिऽ) हो जाती है।	२४५
शून्य बिक्री को रद्द करना अनिवार्य है।	२४५
मूल्य का ज्ञान बिक्री की वैधता की शर्तों में से एक है।	२४५
यदि मूल्य के अर्थ की शर्त बिक्री अनुबंध के मूल में हो और भूतकाल के शब्द में हो, तो बिक्री शून्य नहीं होगी; शून्यता भविष्य काल के शब्द से होती है।	२५८
ऋण की शर्त पर बिक्री और बिक्री की शर्त पर ऋण में अंतर।	२७५
किसी बिकी हुई वस्तु का क्रेता एक और जिसके लिए खरीदी गई वे कई हो सकते हैं।	२७९
संयुक्त संपत्ति से मूल्य का भुगतान करने के बावजूद, बिकी हुई वस्तु केवल एक व्यक्ति की हो सकती है।	२८०
बिक्री पूर्ण होने से पहले सौदे को विभाजित करने का नियम।	२८७
सूद (ब्याज) के अध्याय में शरीयत के अनुसार अनुमान माप और वजन से है।	२९१
चार स्थितियों में वैधता और अवैधता के व्यापक नियम का विवरण।	२९१
शरीयत की आवश्यकता का विवरण और कुछ कृत्रिम आवश्यकताओं का विस्तार।	२९९
सूद (ब्याज) की परिभाषा और नियम।	३२६
जुए की परिभाषा।	३३०
बिक्री के अनुबंध और वादे में बड़ा अंतर है।	३३०
विद्वानों ने नासमझ बालक की पहचान यह बताई है कि वह बिकाऊ वस्तु ले ले और पैसा भी वापस माँगे।	३३०
संपत्ति (माल) की परिभाषा।	३३२
शून्य लेनदेन के दो रूप।	३४८
ज़िम्मी और मुस्तमिन की परिभाषा।	३४८
एक महीने से कम के लिए सलाम बिक्री नहीं होती।	३५३
सूद के एक जटिल रूप का नियम।	३५५
कंपनी के शेयरों की खरीद-बिक्री का नियम।	३६२
	३९८

विषय	पृष्ठ
जीवन की रक्षा, शक्ति प्राप्ति, अपमान और तानों से सुरक्षा शरीयत की आवश्यकताएं हैं।	३००
स्वामी और दास के बीच कोई सूद नहीं है।	३०९
क्षतिपूर्ति साझेदारी और पूंजीगत साझेदारी के भागीदारों के बीच भी सूद नहीं है।	३०९
सूद (रिबा) की परिभाषा।	३११
शून्य अनुबंधों और हड़पने/چوری के बीच अंतर।	३१९
ऋण बिक्री से अलग एक लेनदेन है जिसे शरीयत ने आवश्यकता की बुद्धिमानी के आधार पर लोगों के लिए जायज़ किया है।	३४२
नोटों की वास्तविकता का विवरण और यह कि वे स्वयं संपत्ति हैं, न कि संपत्ति का दस्तावेज़।	
नोट कागज का एक टुकड़ा है।	३९८
कागज मूल्यवान संपत्ति है।	३९८
संपत्ति (माल) का अर्थ।	३९८
संपत्ति के चार प्रकार और उनमें न्यायशास्त्रीय चर्चाएं।	४०४
नोट एक वस्तु यानी संपत्ति है, दस्तावेज़ नहीं क्योंकि वह कागज का एक टुकड़ा है।	४०८

موضوع	صفحہ
بوجہ جہالت ثمن بیع فاسد ہوتی ہے۔	۲۴۵
بیع فاسد کا فسخ واجب ہے۔	۲۴۵
معلومیت ثمن شرائط صحت بیع میں سے ہے۔	۲۴۵
ثمن کے معانی کی شرط نفس عقد بیع میں ہو اور ماضی کے لفظ سے تو بیع فاسد نہ ہوگی، فساد مستقبل کے لفظ سے ہوتا ہے۔	۲۵۸
بیع بشرط القرض اور قرض بشرط البیع میں فرق۔	۲۷۵
کسی مبیع کا مشتری ایک اور مشتری لہ چند ہو سکتے ہیں۔	۲۷۹
مشترک مال سے ثمن ادا کرنے کے باوجود مبیع صرف ایک شخص کے لئے ہو سکتی ہے۔	۲۸۰
تفریق صفقہ قبل تمام بیع کا حکم۔	۲۸۷
باب ربو میں اندازہ شرعی کیل ووزن ہے۔	۲۹۱
سود کی تعریف اور حکم۔	۳۲۶
جوئے کی تعریف۔	۳۳۰
عقد بیع اور وعدہ میں بڑا فرق ہے۔	۳۳۰
علماء نے صبی لایعقل کی یہ پہچان بتائی کہ مبیع لے کر پیسہ بھی واپس مانگے۔	۳۳۰
مال کی تعریف۔	۳۳۲
معاملہ فاسدہ کی دو صورتیں۔	۳۴۸
ذمی اور مستامن کی تعریف۔	۳۴۸
ایک مہینہ سے کم کے لئے بیع سلم نہیں۔	۳۵۳
سود کی ایک الجھی ہوئی صورت کا حکم۔	۳۵۵

موضوع	صفحہ
حلت و حرمت کے قاعدہ کلیہ کا بیان چار صورتوں میں۔	۲۹۱
ضرورت شرعی کا بیان اور چند مصنوعی ضرورتوں کی تفصیل۔	۲۹۹
حفظ نفس، تحصیل قوت، تحفظ عن الذیۃ والطعن ضرورت شرعیہ ہے۔	۳۰۰
مالک اور غلام کے درمیان سود نہیں۔	۳۰۹
شرکت معاوضہ اور شرکت عنان کے شرکاء کے درمیان بھی سود نہیں۔	۳۰۹
ربو کی تعریف۔	۳۱۱
عقود فاسدہ اور غصب و سرقہ کا فرق۔	۳۱۹
قرض بیع سے علیحدہ ایک معاملہ ہے جس کو شرع شریف نے لوگوں کو احتیاج کی حکمت سے مشروع فرمایا۔	۳۴۲
کمپنی کے حصص کی بیع شراء کا حکم۔	۳۶۲
حقیقت نوٹ کا بیان اور یہ کہ وہ خود مال ہے نہ کہ مال کا تمسک ہے۔	۳۹۸
نوٹ کاغذ کا ایک ٹکڑا ہے۔	۳۹۸
کاغذ مال متقوم ہے۔	۳۹۸
مال کا معنی۔	۳۹۸
مال کی چار قسمیں اور ان میں فقہی مباحث۔	۴۰۴
نوٹ ایک متاع یعنی مال ہے سند نہیں کیونکہ ایک پرچہ کاغذ ہے۔	۴۰۸

Vol. 17 Fatawa-e-Razvia

408 - A note is technically considered 'Thaman' (price/consideration) because it is treated like one. Scholars permitted deviating from common technical terms regarding money. - 534

411 - Excellent jurisprudential issues, discussions, and research. Scholars allowed deviating from common custom regarding 'Thaman Khalqi' (natural money) like Rupee and Ashrafi. - 534

412 - The author's research states that for the validity of a sale, it is not necessary for the price to be at least one paisa. Cloth is valuable and... (illegible/archaic term). - 565

417 - The benefit of using the letter 'Ta-e-Wahdat' in the word 'Kaghazah' in jurisprudential texts. The ruling for a voidable sale is its rescission. - 566

425 - Selling notes in exchange for rupees is not 'Bai' Sarf' (currency exchange) where mutual possession by both parties is a condition. The past tense is necessary for concluding a contract; a contract is not concluded with the future tense. - 579

425 - Definition of 'Bai' Sarf'. Description of a sale that is initially a promise and ultimately a hand-to-hand transaction. - 587

471 - There are four scenarios for increase or decrease in quantity, and all four are permissible in case of difference in genus. The sale of movable property before taking possession is voidable in the hands of the seller. - 593

509 - A note is certainly 'Maal' (property); calling it just a bond is shortsightedness. Definition of 'Istisna' (commissioned manufacturing) and its obligations. - 597

513 - In 'Hawala' (debt transfer), the debtor is called 'Muhil', the creditor 'Muhtal', and the one to whom the debt is transferred is called 'Muhtal Alaih' or 'Muhawwal'. 'Istisna' is effectively a sale. - 599

521 - There is a Shar'i difference between 'Thaman Khalqi' (natural) and 'Thaman Istilahi' (technical money). Buying at the behest of the seller will not be considered buying from the seller. - 600

522 - Obviously, a note is 'Thaman Istilahi'. From a jurisprudential perspective, selling a note for more or less seems permissible. - 601

522 - 'Thaman Khalqi' is limited to two types: gold and silver. The cause for the prohibition of Riba (interest/usury) is the unity of measure and genus. - 601

527 - Mere unity of genus doesn't make 'Tafadhul' (excess) haram; unity of measure is also necessary. Like notes, coins are also 'Thaman Istilahi'. - 602

527 - A note has no measure at all; it is neither measured by volume nor weight, but is countable. Definition of 'Bai' Sarf'. - 629

528 - 'Thaman' is one genus under which there are two types: natural and technical. Possession by one party is necessary at the time of sale of natural and non-natural prices. - 629

जिल्द 17 फतावा-ए-रज़विया

408 - नोट शब्दावली में 'थमन' (मूल्य) है क्योंकि इसके साथ थमन जैसा व्यवहार किया जाता है। विद्वानों ने रुपयों-पैसों के मामले में सामान्य शब्दावली के विपरीत आचरण की अनुमति दी है। - 534

411 - उत्कृष्ट न्यायशास्त्रीय मुद्दे, चर्चाएँ और शोध। विद्वानों ने 'थमन ख़ल्की' (प्राकृतिक मुद्रा) जैसे रुपया और अशरफ़ी में सामान्य प्रथा के विरोध की अनुमति दी। - 534

412 - लेखक का शोध है कि बिक्री की वैधता के लिए कम से कम एक पैसे का मूल्य होना आवश्यक नहीं है। कपड़ा मूल्यवान और... (अपठनीय शब्द) है। - 565

417 - न्यायशास्त्रियों के ग्रंथों में 'काग़ज़ा' शब्द में 'ता-ए-वहदत' जोड़ने का लाभ। दोषपूर्ण बिक्री का आदेश बिक्री को रद्द करना है। - 566

425 - रुपयों के बदले नोट बेचना 'बै-सर्र्फ़' (मुद्रा विनिमय) नहीं है जिसमें दोनों पक्षों का कब्जा शर्त हो। अनुबंध करने के लिए भूतकाल की क्रिया आवश्यक है, भविष्य काल से अनुबंध संपन्न नहीं होता। - 579

425 - 'बै-सर्र्फ़' की परिभाषा। एक ऐसी बिक्री का विवरण जो प्रारंभ में वादा है और अंत में लेनदेन (तआति) है। - 587

471 - मात्रा में कमी या वृद्धि की चार स्थितियाँ हैं, और लिंग (वस्तु के प्रकार) में भिन्नता की स्थिति में चारों हलाल हैं। कब्जा करने से पहले चल संपत्ति की बिक्री विक्रेता के हाथ में दोषपूर्ण (फ़ासिद) है। - 593

509 - नोट निश्चित रूप से 'माल' (संपत्ति) है, इसे केवल 'तमस्सक' (बांड) कहना अंधापन है। 'इस्तिसना' (अनुबंधित निर्माण) की परिभाषा और इसके दायित्व। - 597

513 - 'हवाला' (ऋण हस्तांतरण) में कर्जदार को 'मुहील' कहा जाता है, ऋणदाता को 'मुहताल', और जिस पर ऋण हस्तांतरित किया गया है उसे 'मुहताल अलैह' या 'मुहव्वल' कहते हैं। 'इस्तिसना' वास्तव में एक बिक्री है। - 599

521 - 'थमन ख़ल्की' (प्राकृतिक) और 'थमन इस्तिलाही' (पारिभाषिक) में शरीयत के अनुसार अंतर है। विक्रेता के कहने पर खरीदना विक्रेता से खरीदना नहीं माना जाएगा। - 600

522 - जाहिर है, नोट 'थमन इस्तिलाही' है। न्यायशास्त्रीय दृष्टि से नोट को कम या ज्यादा में बेचना जायज़ लगता है। - 601

522 - 'थमन ख़ल्की' दो प्रकारों: स्वर्ण और रजत (सोना और चाँदी) तक सीमित है। 'रिबा' (ब्याज) की मनाही का कारण माप और लिंग की एकता है। - 601

527 - केवल लिंग की एकता से 'तफाज़ुल' (अधिकता) हराम नहीं होता, बल्कि माप की एकता भी आवश्यक है। नोट की तरह पैसा (सिक्का) भी 'थमन इस्तिलाही' है। - 602

527 - नोट का कोई माप नहीं होता, यह न तो 'मकील' (आयतन से मापा जाने वाला) है और न ही 'मौज़ून' (वजन से मापा जाने वाला), बल्कि यह 'मादूद' (गिनने योग्य) है। 'बै-सर्र्फ़' की परिभाषा। - 629

528 - 'थमन' एक लिंग है जिसके अंतर्गत दो प्रकार हैं: ख़ल्की (प्राकृतिक) और इस्तिलाही (पारिभाषिक)। ख़ल्की और गैर-ख़ल्की कीमतों की बिक्री के समय एक पक्ष से कब्जा आवश्यक है। - 629

جلد ہفدہم (۱۷) فتاویٰ رضویہ

۴۰۸ - نوٹ اصطلاح میں ثمن ہے کیونکہ اس کے ساتھ ثمن جیسا معاملہ کیا جاتا ہے۔ پیسوں میں اصطلاح عام کی مخالفت علماء نے جائز فرمائی۔ - ۵۳۴

۴۱۱ - عمدہ فقہی مسائل و مباحث و تحقیقات۔ علماء نے ثمن خلقی روپے اشرفی میں مخالفت عرف عام کی اجازت دی۔ - ۵۳۴

۴۱۲ - مصنف کی تحقیق کہ صحت بیع کے لئے کم سے کم ایک پیسہ کی قیمت ہونا کچھ ضرور نہیں۔ کپڑا قیمتی اور مندر وع ہے۔ - ۵۶۵

۴۱۷ - عبارات فقہاء میں لفظ "کاغذہ" میں تاء وحدت لانے کا فائدہ۔ بیع فاسد کا حکم فسخ بیع ہے۔ - ۵۶۶

۴۲۵ - روپوں کے بدلے نوٹ بیچنا بیع صرف نہیں کہ تقابض طرفین شرط ہو۔ انعقادِ عقد کے لئے ماضی کا صیغہ ضروری ہے مستقبل سے عقد نہیں منعقد ہوتا۔ - ۵۷۹

۴۲۵ - بیع صرف کی تعریف ایک ایسی بیع کا بیان جو ابتداءً وعدہ ہے اور انتہاءً تعاطی ہے۔ - ۵۸۷

۴۷۱ - مقدار میں کمی بیشی کی چار صورتیں ہیں، اور اختلافِ جنس کی صورت میں چاروں حلال ہیں۔ منقول کی بیع قبضہ سے پہلے بائع کے ہاتھ فاسد ہے۔ - ۵۹۳

۵۰۹ - نوٹ بالیقین مال ہے اس کو تمسک کہنا اندھا پن ہے۔ استصناع کی تعریف اور اس کے فرائض۔ - ۵۹۷

۵۱۳ - حوالہ میں مدیون محیل کہلاتا ہے اور دائن محتال، اور جس پر قرض اتارا گیا کہ اس سے وصول کر لینا اس کو محتال علیہ یا محویل کہتے ہیں۔ استصناع حقیقتہً بیع ہے۔ - ۵۹۹

۵۲۱ - ثمن خلقی و اصطلاحی میں شرعاً فرق ہے۔ بائع کے کہنے سے خریدنا بائع کی طرف سے خریدنا نہیں ہوگا۔ - ۶۰۰

۵۲۲ - نوٹ بداہیۃً ثمن اصطلاحی ہے۔ نظر فقہی میں نوٹ کم و بیش سے بیع جائز معلوم ہوتی ہے۔ - ۶۰۱

۵۲۲ - ثمن خلقی دو قسم ذہب و فضہ میں منحصر ہے۔ حرمت ربا کی علت اتحادِ قدر و جنس ہے۔ - ۶۰۱

۵۲۷ - نرے اتحادِ جنس سے تفاضل حرام نہیں ہوتا بلکہ اتحادِ قدر بھی لازم ہے۔ نوٹ کی طرح پیسہ بھی ثمن اصطلاحی ہے۔ - ۶۰۲

۵۲۷ - نوٹ سرے سے قدر ہی نہیں رکھتا کہ نہ مکیل ہے نہ موزون بلکہ معدود ہے۔ بیع صرف کی تعریف۔ - ۶۲۹

۵۲۸ - ثمن ایک جنس ہے جس کے تحت دو جنسیں ہیں خلقی اور اصطلاحی۔ خلقی و غیر خلقی اثمان کی بیع کے وقت ایک طرف سے قبضہ ضروری ہے۔ - ۶۲۹

Volume Seventeen (17) Fatawa Razawiyya

- An actual item ('ayn) can be sold in exchange for a debt (dayn). (631) | The literal meaning of 'zimmah' is a covenant, and legally it is the covenant between a servant and God, or the attribute by which a person becomes obligated. (679)
- According to the preferred view, in the sale of copper coins for silver dirhams, possession on one side is sufficient. (637) | Explanation of five matters in 'kafalat' (guarantee). (680)
- Definition of 'bay' al-talji'ah' (simulated sale) and its ruling. (639) | Two definitions of 'kafalat' and an account of the preferred one. (688)
- Statement of the difference between pure service and service motivated by a goal, and the ruling for both. (650) | Explanation of a condition that is not necessitated by the contract and one that is necessitated by the contract. (691)
- For 'kafalat', words of commitment such as "I have guaranteed and taken responsibility upon myself" are necessary. (652) | Hibah (Gift) (691)
- A promise becomes binding when it is in the form of a condition, such as "If Zaid does not pay, I will pay." (652) | Gifting a debt to the debtor is permissible, but to a third party it is not, although it is permissible as taking possession for a third party. (106)
- In 'kafalat bi al-nafs' (guarantee for the person), the current custom is that the guarantee ends after the expiry date. (667) | Renouncing the right of revocation in a gift is not valid; however, if renunciation occurs after receiving something, it will be considered 'hibah bi al-'iwad' (gift with exchange). (106)
- Definition of 'kafalat bi al-mal' (guarantee of property). (677) | If the contracting party combines an actual item ('ayn) and a right in a single contract, it is initially a gift in the case of 'hibah bi-shart al-'iwad' (gift conditional on exchange), and combining a right with an actual item will not invalidate the gift. In the other two cases, it will have the meaning of a sale, and the ruling of sale is valid and accepted according to the chosen view. (110)
- In 'kafalat bi al-mal', there is a single claim against both the creditor and the guarantor. (677) | Land was bought verbally for oneself, but the deed was written in the names of sons; it did not belong to the daughters. However, the deed will be considered a gift, and because it is 'musha'' (joint/undivided property), the gift will be void. (128)
- Shariah has prescribed two methods for securing a debt: guarantee (kafalat) and pledge (rahn). (677) | Giving an exchange for dower debt (dayn mahr) is

'wahib bi al-'iwad' (gifting with exchange), which is in reality a sale, and possession is not necessary for the validity of the sale. If a house obtained through 'hibah bi-'iwad mahr' conditional on an invalid term was usurped by someone and the husband filed a suit and took possession, then the contract of 'mahr bi-'iwad al-mahr' became void and the husband became its owner. (163)

- There is no responsibility (liability) upon animals. (679) | If the husband gives to the wife through a new gift, the woman will become the owner, and her dower will still be the husband's responsibility; but if he returns it under the previous contract, the woman will not be the owner. (164)

जिल्द सत्रह (17) फ़तावा रज़विया

- ऐन (वस्तु) को दय्न (ऋण) के बदले बेचा जा सकता है। (631) | ज़िम्मा का शाब्दिक अर्थ 'प्रतिज्ञा' है और शरीयत में वह प्रतिज्ञा जो बंदे और खुदा के बीच हो या वह गुण जिससे व्यक्ति उत्तरदायी हो। (679)
- पसंदीदा मत के अनुसार फ़ुलूस (तांबे के सिक्के) की दिरहम (चांदी के सिक्के) के साथ बिक्री में एक तरफ का कब्ज़ा पर्याप्त है। (637) | कफ़ालत (ज़मानत) में पाँच मामलों की व्याख्या। (680)
- बैअ-ए-तलजिआ (दिखावटी बिक्री) की परिभाषा और उसका हुक्म। (639) | कफ़ालत की दो परिभाषाएँ और पसंदीदा मत का वर्णन। (688)
- केवल सेवा और किसी उद्देश्य के लिए की गई सेवा के बीच अंतर का वर्णन और दोनों का हुक्म। (650) | अनुबंध द्वारा अपेक्षित नहीं होने वाली शर्त और अनुबंध द्वारा अपेक्षित शर्त की व्याख्या। (691)
- कफ़ालत के लिए प्रतिबद्धता के शब्द जैसे "मैंने ज़मानत दी और अपने ऊपर लिया" ज़रूरी हैं। (652) | हिबा (दान/उपहार) (691)
- वादा तब अनिवार्य हो जाता है जब वह किसी शर्त के रूप में हो, जैसे "अगर ज़ैद नहीं देगा तो मैं दूँगा"। (652) | ऋणी को ऋण का दान देना जायज़ है और किसी अन्य को नाजायज़, हालांकि कब्ज़े के रूप में किसी अन्य को दान देना जायज़ है। (106)
- कफ़ालत बिल नफ़्स (व्यक्ति की ज़मानत) में वर्तमान प्रथा यही है कि समय सीमा समाप्त होने के बाद ज़मानत खत्म हो जाती है। (667) | हिबा में वापसी के अधिकार से हाथ धोना सही नहीं है, हाँ अगर कुछ लेकर हाथ धोया जाए तो इसे 'हिबा बिल-इवज़' (बदले वाला उपहार) माना जाएगा। (106)
- कफ़ालत बिल-माल (संपत्ति की ज़मानत) की परिभाषा। (677) | यदि अनुबंध करने वाले ने एक ही अनुबंध में ऐन और हक़ को जमा किया, तो 'हिबा बिशर्त-ए-इवज़' के मामले में यह शुरुआत में हिबा है और ऐन के साथ हक़ को शामिल करने से हिबा अमान्य नहीं होगा। और बाकी दोनों स्थितियों में इसका अर्थ बिक्री होगा और चुनिंदा मत के अनुसार बिक्री का हुक्म सही और स्वीकार्य है। (110)

- कफ़ालत बिल-माल में ऋणदाता और ज़मानतदार दोनों पर एक ही दावा होता है। (677) | ज़मीन ज़बानी अपने लिए खरीदी, बैअ-नामा लड़कों के नाम लिखवाया, लड़कियों की नहीं हुई, अलबत्ता बैअ-नामा हिबा माना जाएगा और 'मुशाअ' (साझा संपत्ति) होने के कारण हिबा अमान्य होगा। (128)
- शरीयत ने ऋण सुरक्षित करने के दो तरीके निर्धारित किए हैं: कफ़ालत और रहन (गिरवी)। (677) | महर के ऋण का बदला देना 'वाहिब बिल-इवज़' है, जो वास्तव में बिक्री है और बिक्री की वैधता के लिए कब्ज़ा ज़रूरी नहीं है। यदि किसी ने 'हिबा ब-इवज़ महर' के तहत मिली संपत्ति को हड़प लिया और पति ने मुकदमा करके कब्ज़ा कर लिया, तो वह अनुबंध अमान्य हो गया और पति उसका मालिक बन गया। (163)
- जानवरों पर कोई ज़िम्मेदारी (दायित्व) नहीं है। (679) | यदि पति नए हिबा के ज़रिए पत्नी को कुछ देता है, तो औरत मालिक बन जाएगी और उसका महर भी पति के ज़िम्मे रहेगा; लेकिन अगर वह पिछले अनुबंध के तहत लौटाता है, तो औरत मालिक नहीं होगी। (164)

- عین کو دین کے بدلہ بیچا جا سکتا ہے۔ (۶۳۱) | ذمہ کے لغوی معنی عہد کے اور شرعاً وہ عہد جو بندے اور خدا کے درمیان ہوا یا وہ وصف جس سے آدمی مکلف ہو۔ (۶۷۹)
- مذہب راجح پر بیع الفلوس بالدراہم میں ایک ہی جانب کا قبضہ کافی ہے۔ (۶۳۷) | کفالت میں پانچ امور کی تشریح۔ (۶۸۰)
- بیع تلجیہ کی تعریف اور اس کا حکم۔ (۶۳۹) | کفالت کی دو تعریفیں اور راجح کا بیان۔ (۶۸۸)
- خدمت محضہ اور خدمت معلل بالغرض میں فرق کا بیان اور دونوں کا حکم۔ (۶۵۰) | شرط مالا یقتضیہ العقد اور مایقتضیہ العقد کی تشریح۔ (۶۹۱)
- کفالت کے لئے التزام کے الفاظ جیسے "کفلت و ضمنت علی الی" ضروری ہے۔ (۶۵۲) | ہبہ (۶۹۱)
- وعدہ جب تعلیق کی صورت میں ہو جیسے "زید نہ دے گا تو میں دوں گا" لازم ہو جاتا ہے۔ (۶۵۲) | مدیون کو دین کا ہبہ جائز اور غیر کو ناجائز، البتہ بطور قبضہ غیر کو ہبہ جائز ہے۔ (۱۰۶)
- کفالت بالنفس میں عرف حال یہی ہے کہ تاریخ انتہاء کے بعد کفالت ختم ہے۔ (۶۶۷) | ہبہ میں رجوع کے حق سے دستبرداری صحیح نہیں، ہاں کچھ لے کر دستبرداری ہو تو یہ ہبہ بالعوض قرار دیا جائے گا۔ (۱۰۶)
- کفالت بالمال کی تعریف۔ (۶۷۷) | عاقد نے عین اور حق ایک ہی عقد میں جمع کیا تو یہ ہبہ بشرط العوض کی صورت میں ابتداءً ہبہ ہے اور عین کے ساتھ حق جمع کردینے میں ہبہ باطل

نہ ہوگا۔ اور بقیہ دونوں صورتوں میں معنی بیع ہوگا اور بیع کا حکم مذہب مختار پر صحت وقبول ہے۔ (۱۱۰)

- کفالت بالمال میں ایک ہی مطالبہ دائن اور کفیل دونوں پر ہوتا ہے۔ (۶۷۷) | زمین زبانی اپنے لئے خریدی بیع نامہ لڑکوں کے نام لکھایا، لڑکیوں کی نہ ہوئی، البتہ بیع نامہ ہبہ قرار دیا جائے گا اور مشاع ہونے کی وجہ سے ہبہ باطل ہوگا۔ (۱۲۸)
- شرع نے توثیق دین کے دو طریقے مقرر فرمائے : کفالت اور رہن۔ (۶۷۷) | دین مہر کا عوض دینا واہب بالعوض ہے، جو فی الحقیقت بیع ہے اور صحت بیع کے لئے قبضہ ضروری نہیں۔ ہبہ بعوض مہر مشروط بشرط الفاسد سے حاصل ہونے والے مکان کو کسی نے غصب کرلیا شوہر نے نالش کر کے اس پر قبضہ کرلیا تو مہر بعوض المہر والا عقد باطل ہو گیا اور شوہر اس کا مالک ہو گیا۔ (۱۶۳)
- جانوروں پر کوئی ذمہ داری نہیں۔ (۶۷۹) | شوہر ہبہ جدید کے ذریعہ عورت کو دے تو عورت مالک ہو جائے گی اور اس کا مہر بھی شوہر کے ذمہ رہے گا اور پہلے والے عقد کے تحت لوٹائے تو عورت مالک نہ ہوگی۔ (۱۶۴)

Fatawa Razawiya | Volume Seventeen (17)

213 | An unborn fetus cannot be gifted. | 690 228 | Out of fear of a pre-emptor, the owner of a house gifted it to someone, and that person gifted the purchase price back to the owner; Shari'ah-wise, this is a valid gift and pre-emption will not apply. | 690 229 | If someone wants to gift a joint (musha') property, they should sell it to the donee and waive the price. | 690 256 | If the purchase price was gifted before the acceptance of the sale, the sale is valid and the gift is void. | 341 | If there is more than what is divisible, it should be given separately; if it remains mixed, the gift will not be valid. | 95 | An impossible scenario of a gift. | 103 472 | In the absence of an impediment to a gift, the right of revocation exists. | 216 640 | The harm of a simulated sale (Bay' Talji'ah) can also be eliminated through a gift. | 562 641 | Pledging property for a debt is nothing in Shari'ah; such property can be gifted. | 687 | In the gift of an encumbered property, stipulating that the payment of claims is the responsibility of the donee is a void condition, but the gift does not become void due to a void condition. | 93

Coercion (Ikrah) 218 | The insistence of arbitrators for some work is not Shari'i coercion. | 90

Interdiction (Hajr) | 90 | Even if a debtor's property is submerged in debt, the debtor cannot be legally stopped from disposing of his property. | | Even after the Qadi's interdiction, he still has the right of disposal. | | After the Qadi's judgment, subject to notification, he will be prohibited from some disposals in his existing assets. |

Inheritance (Meeras) | The payment of debts from the deceased's estate shall precede distribution. | | Shari'i determination and detail of the shares of heirs of a property. | | Distribution of heirs' shares in an estate. | | Payment of debt precedes the distribution of the estate. |

Wills (Wasiyat) | Dispositions made during a terminal illness (Maradh al-Mawt) are not enforceable. |

Leasing/Hiring (Ijarah) | An owner cannot take his own property on lease from a non-owner. | | Money obtained through an invalid lease is usurpation (Ghasb). It is necessary to return the entire amount. |

फतावा रज़विया | जिल्द सत्रहवीं (१७)

२१३ | गर्भ की किसी वस्तु का हिबा (उपहार) नहीं किया जा सकता। | ६९० २२८ | शुफ़ा करने वाले (शफ़ी) के डर से मकान मालिक ने अपना मकान किसी को हिबा कर दिया, और उस व्यक्ति ने मकान मालिक को कीमत की राशि हिबा कर दी; शरीयत के अनुसार यह हिबा मान्य है और शुफ़ा (अग्रक्रयाधिकार) लागू नहीं होगा। | ६९० २२९ | यदि कोई व्यक्ति किसी को अविभाजित संपत्ति (मुशाअ) हिबा करना चाहता है, तो उसे आदाता के हाथों बेच देना चाहिए और कीमत माफ कर देनी चाहिए। | ६९० २५६ | बिक्री स्वीकार करने से पहले यदि कीमत की राशि हिबा कर दी गई, तो बिक्री सही है और हिबा बातिल (अमान्य) है। | ३४१ | यदि विभाज्य से अधिक हो, तो उसे अलग से दिया जाना चाहिए; यदि वह मिश्रित रहता है, तो हिबा सही नहीं होगा। | ९५ | हिबा की एक असंभव स्थिति। | १०३ ४७२ | हिबा में बाधा न होने की स्थिति में, हिबा वापस लेने का अधिकार होता है। | २१६ ६४० | बनावटी बिक्री (बैअ-ए-तल्जिया) का नुकसान हिबा के माध्यम से भी समाप्त किया जा सकता है। | ५६२ ६४१ | संपत्ति को कर्ज में गिरवी रखना शरीयत में कुछ नहीं है; ऐसी संपत्ति का हिबा किया जा सकता है। | ६८७ | ऋणग्रस्त संपत्ति के हिबा में यह शर्त लगाना कि दावों का भुगतान आदाता की जिम्मेदारी है, एक फासिद (त्रुटिपूर्ण) शर्त है, लेकिन फासिद शर्त से हिबा फासिद नहीं होता। | ९३

इक्राह (ज़बरदस्ती/दबाव) २१८ | किसी काम के लिए पंचों का आग्रह शरीई इक्राह नहीं है। | ९०

हज्र (प्रतिबंध) | ९० | यदि ऋणी की संपत्ति कर्ज में डूबी हो, तब भी ऋणी को उसकी संपत्ति के निपटान से कानूनी रूप से रोका नहीं जा सकता। | | काज़ी द्वारा प्रतिबंध लगाए जाने के बाद भी उसे निपटान का अधिकार रहता है। | | काज़ी के फैसले के बाद, सूचना के अधीन, वह अपनी वर्तमान संपत्तियों में कुछ निपटान करने से निषिद्ध होगा। |

मीरास (उत्तराधिकार) | मृतक की संपत्ति से कर्ज की अदायगी विभाजन से पहले होगी। | | एक संपत्ति के वारिसों के हिस्सों का शरीई निर्धारण और विवरण। | | एक संपत्ति में वारिसों के हिस्सों का विभाजन। | | कर्ज की अदायगी संपत्ति के विभाजन पर प्रधान है। |

वसीयत | मरणशैया (मरज़ुल मौत) के दौरान किए गए लेनदेन प्रभावी नहीं होते हैं। |

इजारा (किराया/पट्टा) | मालिक अपनी संपत्ति गैर-मालिक से किराए पर नहीं ले सकता। | | बातिल इजारा के माध्यम से प्राप्त धन गसब (अवैध कब्जा) है। पूरी राशि वापस करना आवश्यक है। |

पृष्ठ ७१५ का ६८

۲۱۳ | حمل کی کوئی چیز ہبہ نہیں کی جاسکتی۔ | ۶۹۰ ۲۲۸ | شفیع کے ڈر سے صاحب مکان نے اپنا مکان کسی کو ہبہ کیا، اور اس کا زر ثمن اس شخص نے صاحب مکان کو ہبہ کر دیا شرعاً یہ ہبہ ہوا شفعہ نہیں چل سکے گا۔ | ۶۹۰ ۲۲۹ | اگر کوئی شخص کسی کو مشاع ہبہ کرنا چاہے تو موہوب لہ کے ہاتھ بیچ کر دے اور ثمن معاف کر دے۔ | ۶۹۰ ۲۵۶ | قبول بیع سے پہلے زر ثمن ہبہ کیا تو بیع صحیح اور ہبہ باطل ہے۔ | ۳۴۱ | زائد قابل تقسیم ہو تو اس کو علیحدہ سے دینا چاہئے مخلوط رہے گا تو ہبہ صحیح نہ ہو گا۔ | ۹۵ | ہبہ کی ایک ناممکن صورت۔ | ۱۰۳ ۴۷۲ | ہبہ میں عدم مانع کی صورت میں اختیار رجوع ہوتا ہے۔ | ۲۱۶ ۶۴۰ | ہبہ سے بھی بیع تلجیہ کا ضرر ختم ہو سکتا ہے۔ | ۵۶۲ ۶۴۱ | جائداد کا دین میں مکفول کرنا شرعاً کچھ نہیں، ایسی جائداد کا ہبہ ہو سکتا ہے۔ | ۶۸۷ | مستغرق جائداد کے ہبہ میں یہ شرط لگانا کہ مطالبہ کی ادائیگی موہوب لہ کے ذمہ ہے شرط فاسد ہے، لیکن شرط فاسد سے ہبہ فاسد نہیں ہوتا۔ | ۹۳

اکراہ ۲۱۸ | کسی کام کے لئے پنچوں کا اصرار اکراہ شرعی نہیں۔ | ۹۰

حجر | ۹۰ | مدیون کی جائداد دین سے مستغرق ہو تب بھی مدیون اپنی جائداد میں تصرف سے شرعاً روکا نہیں جاسکتا۔ | | قاضی کے حجر کے بعد بھی اس کو تصرف کا حق رہتا ہے۔ | | قضائے قاضی کے بعد بشرط اطلاع اپنے موجودہ اموال میں بعض تصرفات سے ممنوع ہوگا۔ |

میراث | میت کے ترکہ سے قرض کی ادائیگی تقسیم پر مقدم ہوگی۔ | | ایک جائداد کے وارثوں کے حصص کی شرعی تعیین اور تفصیل۔ | | ایک ترکہ میں وارثوں کے حصص کی تقسیم۔ | | ادائے قرض تقسیم ترکہ پر مقدم ہے۔ |

وصیت | مرض الموت کے تصرفات غیر نافذ ہیں۔ |

اجارہ | مالک اپنی ملک غیر مالک سے کرایہ پر نہیں لے سکتا۔ | | اجارہ باطلہ کے ذریعہ رقم حاصل ہو غصب ہے۔ پوری رقم واپس کرنا ضروری ہے۔ |

Fatawa Razawiyya Volume Seventeen (17)

Rulings / Descriptions	Page
In cases where the crop belongs to the seller, if the buyer wishes, the seller must vacate the land. If it remains with the buyer's permission, the buyer can take rent according to custom.	120
The prevalent sub-leasing (Mustajiri) in villages is impermissible, but its guarantee is possible.	686
A village contract where the land remains under peasant lease and a profit share is given on the contract is strictly void.	693
AGRICULTURE (ZIRA'AT)	
Detailed explanation on when crops follow the land in a sale and when they do not.	119
In the sale of cultivated land, the buyer will be the owner of the crop.	119
AGENCY (WIKALAT)	
Zaid appointed a person as an agent (wakil) to buy goods; after taking possession, it is permissible for Zaid to sell those goods to the same agent on a cost-plus profit (Murabahah) basis.	137
This transaction is actually a pledge (Rahn), and a pledge without possession is void (Baatil).	90
Sale with the right of redemption (Bay' bil Wafa) is actually a pledge.	91
If the pledgor (Rahin) does not hand over possession of the pledged item to the pledgee (Murtahin), the pledge is void. Even if possessed, taking benefit from the pledged item is forbidden (Haraam).	91
Taking a pledge against a non-existent debt is not permissible.	122
If a farmer pledges a field, it will not be considered a pledge.	276
Sale with right of redemption (Bay' Wafa) is in reality a pledge.	644
For a pledge, possession of the pledged item by the pledgee is necessary.	677
In a pledge, the claim is on the pledged item. If it is destroyed, an equivalent amount of debt will be waived.	689

Rulings / Descriptions	Page
Telling an agent a fixed price for an item and saying "sell it for more or less as you see fit, we will take the fixed price and give you 2% commission from it" is impermissible for both the agent and the principal.	172
An agent appointed to buy a specific item at a specific price cannot buy the object for himself nor for someone else; however, if bought against the principal's request, it will become the property of the agent.	218
Appointing an agent for borrowing (Istiqraz) is not permissible.	271
Appointing an agent for lending (Iqraz) is permissible.	271

PLEDGE (RAHN)

Rulings / Descriptions	Page
The value of the pledged item will be assessed as of the day of taking possession.	689
A pledge occurs for an obligatory and apparent debt.	689

USURPATION (GHASAB)

Rulings / Descriptions	Page
Showing someone else's house as one's own property, selling it to someone, and giving possession to the buyer is usurpation.	82

फतावा रज़विया जिल्द सत्रह (17)

विवरण / नियम	पृष्ठ
जिन स्थितियों में फसल विक्रेता की होती है, यदि खरीदार चाहे तो विक्रेता को जमीन खाली करनी होगी, और खरीदार की अनुमति से शेष रहने पर खरीदार प्रथा के अनुसार किराया ले सकता है।	१२०
गांवों की प्रचलित पट्टेदारी (मुस्तजरी) नाजायज है लेकिन इसकी जमानत हो सकती है।	६८६
गांवों का वह ठेका जिसमें जमीन किसानों के पट्टे पर रहती है और मुनाफा ठेके पर दिया जाता है, पूरी तरह शून्य है।	६९३
कृषि (ज़राअत)	
इस बात का विस्तृत विवरण कि बिक्री में फसल कब जमीन के अधीन होती है और कब नहीं।	११९
कृषि भूमि की बिक्री में फसल का मालिक खरीदार होगा।	११९
एजेंसी / वकालत	
ज़ैद ने माल खरीदने के लिए एक व्यक्ति को अपना एजेंट (वकील) बनाया, उस पर कब्जा करने के बाद ज़ैद का उस माल को उसी वकील के हाथ मुनाफे (मुराबहा) पर बेचना जायज है।	१३७
यह मामला वास्तव में गिरवी (रहन) का है और कब्जे के बिना गिरवी शून्य (बातिल) है।	१२०
'बै बिल वफ़ा' (वादे के साथ बिक्री) वास्तव में गिरवी है।	६८६
यदि गिरवी रखने वाला (राहिन) गिरवी वस्तु पर कब्जा न दे तो गिरवी शून्य है, और कब्जा होने पर भी गिरवी वस्तु से लाभ उठाना हराम है।	६९३
गैर-मौजूद ऋण के बदले गिरवी लेना जायज नहीं है।	१२२
यदि किसान ने खेत गिरवी रखा तो वह गिरवी नहीं होगा।	२७६
'बै वफ़ा' वास्तव में गिरवी है।	६४४
गिरवी के लिए गिरवी रखी वस्तु पर गिरवीदार (मुर्तहिन) का कब्जा जरूरी है।	६७७
गिरवी में मांग गिरवी रखी वस्तु पर होती है। यदि वह नष्ट हो जाए तो उतना ही ऋण माफ हो जाएगा।	६८९

विवरण / नियम	पृष्ठ
वकील को वस्तु का निश्चित दाम बताकर यह कहना कि 'इससे कम या ज्यादा बेचो तुम्हारी मर्जी, हम वही निश्चित दाम लेंगे और उसमें से तुम्हें दो प्रतिशत कमीशन देंगे', ऐसा सौदा वकील और मुवक्किल दोनों के लिए नाजायज है।	१७२
निश्चित वस्तु को निश्चित कीमत पर खरीदने का वकील उस वस्तु को न तो अपने लिए खरीद सकता है न दूसरे के लिए, हाँ यदि मुवक्किल के निर्देश के विरुद्ध खरीदा तो वह वकील की संपत्ति होगी।	२१८
ऋण लेने (इस्तिकराज़) का वकील बनाना जायज नहीं है।	२७१
ऋण देने (इकराज़) का वकील बनाना जायज है।	२७१

रहन (गिरवी)

पृष्ठ 69 का 715

विवरण / नियम	पृष्ठ
गिरवी रखी वस्तु की कीमत कब्जे के दिन की लगाई जाएगी।	६८९
गिरवी अनिवार्य और स्पष्ट ऋण के लिए होती है।	६८९
हड़पना (ग़सब)	
किसी दूसरे के मकान को अपनी मिल्कियत दिखाकर किसी के हाथ बेचना और खरीदार को कब्जा दिलाना 'ग़सब' (हड़पना) है।	८२

تفصیل / احکام	صفحہ
جن صورتوں میں زراعت بائع کی ہے مشتری چاہے تو بائع کو زمین خالی کرنا ہوگی، اور مشتری کی اجازت سے باقی رکھی تو مشتری حسب عرف کرایہ لے سکتا ہے۔	۱۲۰
دیہات کی رائج مستاجری ناجائز ہے مگر اس کی کفالت ہوسکتی ہے۔	۶۸۶
دیہات کا ٹھیکہ جس میں زمین اجارہ مزارعاں میں رہتی ہے اور توفیر ٹھیکہ پر دی جاتی ہے، قطعاً باطل ہے۔	۶۹۳
زراعت	
اس امر کا تفصیلی بیان کہ بیع میں کب زمین کے تابع کھیتی ہے اور کب نہیں۔	۱۱۹
مزروعہ زمین کی بیع میں زراعت کا مالک مشتری ہوگا۔	۱۱۹

تفصیل / احکام	صفحہ
یہ معاملہ حقیقتۂ رہن کا ہے اور رہن بے قبضہ باطل ہے۔	۹۰
بیع بالوفاء حقیقتۂ رہن ہے۔	۹۱
راہن سے شے مرہونہ پر قبضہ نہ کرے تو رہن باطل ہے، اور قبضہ ہو تب بھی شیئی مرہونہ سے انتفاع حرام ہے۔	۹۱
دین معدوم کے بدلے رہن لینا جائز نہیں۔	۱۲۲
کاشتکار نے کھیت رہن رکھا تو رہن نہ ہوگا۔	۲۷۶
بیع وفا حقیقت میں رہن ہے۔	۶۴۴

تفصیل / احکام	صفحہ
وکالت	
زید نے مال خریدنے کے لئے ایک ایک شخص کو وکیل بنایا، اس پر قبضہ کرنے کے بعد زید کا اس مال کو اسی وکیل کے ہاتھ مرابحۃً بیچنا جائز ہے۔	۱۳۷
وکیل کو چیز کے متعین دام بتاکر کہنا اس سے کم زیادہ بیچو تو تم جانو ہم وہی متعینہ دام لیں گے اور اس میں سے دو فیصدی تمہیں دلالی دیں گے، ایسا معاملہ وکیل اور موکل دونوں کے لئے ناجائز ہے۔	۱۷۲
شیئی معین کے معین قیمت پر خریدنے کا وکیل مبیع کو نہ تو اپنے لئے خرید سکتا ہے نہ دوسرے کے لئے ، ہاں موکل کی فرمائش کے خلاف خریدا تو وکیل کی ملک ہوگا۔	۲۱۸
استقراض کا وکیل بنانا جائز نہیں۔	۲۷۱
اقراض کا وکیل بنانا جائز ہے۔	۲۷۱

تفصیل / احکام	صفحہ
رہن کے لئے شے مرہون پر مرتہن کا قبضہ ضروری ہے۔	۶۷۷
رہن میں مطالبہ مرہون پر ہوتا ہے۔ وہ تلف ہو تو اتنا ہی دین ساقط ہوجائے گا۔	۶۸۹
شے مرہون کی قیمت قبضہ کے دن کی لگائی جائے گی۔	۶۸۹
رہن دین واجب وظاہر میں ہوتی ہے۔	۶۸۹
غصب	
کسی دوسرے کے مکان کو اپنی ملکیت ظاہر کرکے کسی کے ہاتھ بیچنا اور مشتری کو قبضہ دلانا غصب ہے۔	۸۲

ربن

صفحہ 69 از 715

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

Ruling / Topic	Page	Ruling / Topic	Page
The ruling on selling a usurped item to someone other than the usurper.	82	If the parties to an invalid sale do not cancel it, the judge should cancel it by force.	160
Nowadays, auctions commonly held in courts fall under the ruling of a sale by a usurper, which depends on the owner's permission.	104	If a judge makes an incorrect decision, another judge can overturn it.	201
In the sale of a usurped item, all increase/profit before the sale belongs to the original owner.	106	Judicial rulings are not applicable in Dar al-Harb (Abode of War) and Dar al-Bughat (Abode of Rebels) where there is no judicial authority.	318
Even if the seller usurped the item sold, the sale is valid and the buyer's ownership is established.	117	**Claim**	
A form of usurpation.	117	A mere stranger has no right to file a claim.	83
Usurpation of real estate is not agreed upon.	117	If property was sold to an heir during a state of health, the sale is valid, and other heirs have no right in the property. However, if there was no acknowledgement of receiving or waiving the price money, the remaining heirs can claim the price money. Proof of non-payment of price money cannot be established through circumstantial evidence.	117
Testimony			123

Ruling / Topic	Page	Ruling / Topic	Page
		In a land sale deed, whatever boundaries (Chauhadi) are written belong entirely to the buyer. If by mistake another person's owned land comes within the boundaries, that portion will be released after legal recourse by the original owners.	
If Sharia-compliant witnesses testify to the ownership of something, possession will be ruled accordingly.	82	The seller claims that a partial portion of the sold land is excluded from the sale. But if he remained silent for many years while seeing the buyer's possession of the sold land, the seller's claim will be declared void.	126
Consistency between testimony and claim is necessary; in case of discrepancy, the testimony is unacceptable.	676	If there is a dispute regarding the execution or invalidity of a sale, the claimant of execution must present witnesses. If there are no witnesses, the statement of the claimant of invalidity will be credible with an oath. When there is a dispute about health or illness (of the seller at the time of sale), the statement of the claimant of illness will be credible with an oath along with the mentioned details; if the one required to take an oath refuses, the opponent's right will be established.	215

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

नियम / विषय	पृष्ठ
हड़पी हुई चीज़ को हड़पने वाले के अलावा किसी दूसरे को बेचने का हुक्म।	82
आजकल कचहरियों में आमतौर पर होने वाली नीलामी हड़पने वाले की बिक्री के हुक्म में है, जो मालिक की अनुमति पर निर्भर होगी।	104
हड़पी हुई चीज़ की बिक्री में, बिक्री से पहले की सारी वृद्धि (मुनाफ़ा) मालिक का होगा जिससे चीज़ हड़पी गई थी।	106
यदि विक्रेता ने बेची गई वस्तु को हड़प लिया हो, तब भी बिक्री सही है और खरीदार का मालिकाना हक स्थापित हो जाता है।	117
हड़पने का एक रूप।	117
अचल संपत्ति को हड़पने के बारे में एकराय नहीं है।	117
यदि अमान्य बिक्री के पक्षकार उसे रद्द नहीं करते हैं, तो न्यायाधीश को उसे बलपूर्वक रद्द कर देना चाहिए।	160
यदि किसी न्यायाधीश ने गलत निर्णय दिया है, तो दूसरा न्यायाधीश उसे रद्द कर सकता है।	201
न्यायपालिका के आदेश 'दार अल-हरब' और 'दार अल-बुगात' (विद्रोहियों के क्षेत्र) में लागू नहीं होते जहाँ न्यायपालिका का शासन नहीं है।	318
दावा	
केवल किसी अजनबी को दावा करने का अधिकार नहीं होता।	83
यदि स्वास्थ्य की स्थिति में किसी वारिस को संपत्ति बेच दी गई, तो बिक्री सही हो गई और दूसरे वारिसों का संपत्ति में कोई अधिकार नहीं है। हाँ, यदि कीमत की राशि प्राप्त करने	117

नियम / विषय	पृष्ठ
शहादत (गवाही)	
यदि किसी चीज़ के स्वामित्व के शरई गवाह गुज़रें, तो कब्ज़ा कानूनी तौर पर तय कर दिया जाएगा।	82
गवाही और दावे में समानता ज़रूरी है; मतभेद की स्थिति में गवाही स्वीकार्य नहीं होती।	676
क़ज़ा (न्यायपालिका)	
पृष्ठ 70 ऑफ़ 715	

नियम / विषय	पृष्ठ
या माफ़ करने का इकरार नहीं किया गया हो, तो शेष वारिस कीमत की राशि का दावा कर सकते हैं। कीमत की अदायगी न होने का प्रमाण परिस्थितियों के आधार पर नहीं होगा।	
भूमि के विक्रय पत्र में जो सीमाएँ(चौहद्दी) लिखवाई गईं, वे पूरी खरीदार की हुईं। यदि चौहद्दी में गलती से किसी दूसरे की मालिकाना ज़मीन आ गई, तो असली मालिकों की कानूनी कार्रवाई के बाद वह हिस्सा खाली करा दिया जाएगा।	123
विक्रेता दावा करता है कि बेची गई ज़मीन का एक हिस्सा बिक्री से बाहर है। लेकिन अगर वह सालों-साल बेची गई ज़मीन पर खरीदार का कब्ज़ा देखकर खामोश रहा, तो विक्रेता का दावा बातिल (अमान्य) करार दिया जाएगा।	126
यदि बिक्री के निष्पादन या अमान्यता के बारे में विवाद हो, तो निष्पादन का दावा करने वाला गवाह पेश करे। यदि गवाह न हो, तो अमान्यता का दावा करने वाले का कथन शपथ के साथ विश्वसनीय होगा। जब स्वास्थ्य और बीमारी (बिक्री के समय विक्रेता की) में विवाद हो, तो बीमारी का दावा करने वाले का कथन उपर्युक्त विवरण के साथ शपथ पर विश्वसनीय होगा; जिस पर शपथ अनिवार्य है यदि वह शपथ से इनकार करे तो प्रतिद्वंद्वी का अधिकार साबित हो जाएगा।	215

مسئلہ / عنوان صفحہ		مسئلہ / عنوان صفحہ	
مغصوب کو غاصب کے علاوہ کسی دوسرے کے ہاتھ بیچنے کا حکم۔	۸۲	اگر عاقدین بیع فاسد کو فسخ نہ کریں تو قاضی جبراً فسخ کردے۔	۱۶۰
آج کل کچہریوں میں عام طور سے جو نیلام ہوتا ہے بیع غاصب کے حکم میں ہے جو مالک کی اجازت پر موقوف ہوگی۔	۱۰۴	قاضی نے غلط فیصلہ کیا تو دوسرا قاضی اس کو رد کر سکتا ہے۔	۲۰۱
بیع مغصوب میں بیع سے قبل کی ساری توفیر کا مغصوب منہ مالک ہوگا۔	۱۰۶	احکام قضاء دارالحرب اور دارالبغاۃ میں نافذ نہیں جہاں حکم قضاء نہیں۔	۳۱۸
مبیع کو بائع نے غصب کر لیا تب بھی بیع صحیح ہے اور مشتری کی ملک ثابت ہے۔	۱۱۷	**دعویٰ**	
غصب کی ایک صورت۔	۱۱۷	اجنبی محض کو دعویٰ کا اختیار نہیں ہوتا۔	۸۳

مسئلہ / عنوان صفحہ		مسئلہ / عنوان صفحہ	
		حالت صحت میں کسی وارث کے ہاتھ جائداد بیع کردی بیع صحیح ہوگئی دوسرے وارثوں کا جائداد میں کوئی	
عقار کا غصب متفق نہیں۔	۱۱۷	حق نہیں، ہاں زر ثمن پانے یا معاف کرنے کا اقرار نہ کیا ہو تو بقیہ ورثاء زر ثمن کا دعویٰ کرسکتے ہیں زر ثمن کی عدم ادائیگی کا ثبوت قرائن سے نہ ہوگا۔	۱۱۷
		اراضی کے بیعنامہ میں جو چوہدی لکھائی گئی کل مشتری کی ہوئی، اگر چوہدی میں غلطی سے کسی	
شہادت		دوسرے کی مملوکہ زمین آگئی تو اصل مالکوں کی چارہ جوئی کے بعد وہ حصہ واگزار کردیا جائے گا۔	۱۲۳
کسی شی کی ملکیت کے شرعی گواہ گزریں تو قبضہ حکماً قرار دیا جائے گا۔	۸۲	بائع ارض مبیعہ کے جز حصہ کو بیع سے خارج ہونے کا مدعی ہے۔ لیکن سالہا سال سے ارض مبیعہ پر مشتری کا تصرف دیکھ کر خاموش رہا تو بائع کا دعویٰ باطل قرار دیا جائے گا۔	۱۲۶
		بیع کے انعقاد و بطلان میں اختلاف ہو تو مدعی انعقاد	
شہادت اور دعویٰ میں مطابقت ضروری ہے	۶۷۶	گواہ پیش کرے۔ گواہ نہ ہو تو مدعی بطلان کا قول قسم کے ساتھ معتبر ہوگا جب صحت و مرض میں اختلاف ہو	۲۱۵
اختلاف کی صورت میں گواہی نا مقبول ہوتی ہے۔		تو مدعی مرض کا قول مذکورہ تفصیل کے ساتھ بقسم معتبر ہوگا جس پر قسم ہے وہ حلف سے انکار کرے تو خصم کا حق ثابت ہوگا۔	

Fatawa Razawiya (Volume 17)

256: A Christian woman married to a Muslim claimed she converted to Islam before her husband's death, while the heirs stated it was after his death. The heirs' statement is considered credible as it is closer to the time of death. (Left side entry for 256): Giving money as a loan and keeping a half share in the profit is interest (Riba), but if done as 'Mudarabat' (partnership of capital and labor), this transaction is permissible. [Page 335]

257: **Partnership (Shirkat)** In case of a dispute regarding a void condition in a contract, the statement of those denying the condition will be given weight.

259: If there is a dispute between the contracting parties regarding the validity or invalidity of a contract, the claimant's statement regarding validity will be accepted. (Left side entry for 259): In a formal partnership, sharing both profit and loss is necessary, whereas in these specific dealings, sharing is only in the profit. [Page 371]

259: **Pre-emption (Shufa)** If the seller claims invalidity and the buyer claims validity, the buyer's statement with an oath will be credible; a contradictory claim is not acceptable.

676: What is apparent benefits the defendant, not the claimant. (Left side entry for 676): A house was sold verbally and possession was given to a buyer who had the right of pre-emption (shufa). He had previously refused to purchase that house. Now, he no longer holds the right of pre-emption. [Page 191]

681: **Guaranty and Indemnity (Zaman-o-Tawan)** A claim on property held as security (makfoola) is not legally admissible.

Confession (Iqrar) (Left side entry): If property taken for inspection before purchase (Maqbooz ala soom-ush-shira) is destroyed, indemnity can be recovered from the possessor. [Page 93]

82: If a usurper acknowledges the owner's title, then the sale of the usurped property is valid. (Left side entry for 82): A trustee is not liable for indemnity (zaman) if there is no transgression or negligence in safekeeping. [Page 102]

82: A confession (iqrar) is a stronger proof than external evidence (bayyinah). (Left side entry for 82): If a seller resells already sold goods to a second person, he commits a grave sin. If the goods are with the second buyer, the first buyer should

take them back. If not available, the first buyer should recover the value of those goods from the seller at the current market rate as indemnity. [Page 161]

Mudarabat (Left side entry): Someone owed money to Zaid; Amr became the guarantor. Upon Zaid's demand, Amr refused to pay. Zaid sued Amr in court. Amr requested time, which Zaid granted on the condition that Amr pays for Zaid's legal expenses. Amr paid the expenses and eventually the principal debt. Now, Amr has the right to claim back those court-related expenses from Zaid. [Page 391]

फ़तावा रज़विया (खण्ड 17)

256: एक मुसलमान से विवाहित ईसाई महिला ने दावा किया कि उसने अपने पति की मृत्यु से पहले इस्लाम स्वीकार कर लिया था, जबकि वारिसों ने कहा कि यह मृत्यु के बाद हुआ। वारिसों का कथन विश्वसनीय माना जाता है क्योंकि यह मृत्यु के समय के अधिक निकट है। (256 के लिए बायीं ओर की प्रविष्टि): ऋण के रूप में पैसा देना और लाभ में आधा हिस्सा रखना ब्याज (सूद) है, लेकिन 'मुज़ारबत' (पूंजी और श्रम की साझेदारी) के रूप में यह मामला जायज़ है। [पृष्ठ 335]

257: **साझेदारी (शिरकत)** अनुबंध में किसी शून्य (फासिद) शर्त के संबंध में विवाद होने पर, शर्त से इनकार करने वालों के कथन को प्राथमिकता दी जाएगी।

259: यदि अनुबंध की वैधता या अवैधता के संबंध में पक्षों के बीच विवाद हो, तो वैधता का दावा करने वाले पक्ष का कथन स्वीकार किया जाएगा। (259 के लिए बायीं ओर की प्रविष्टि): साझेदारी में लाभ और हानि दोनों में हिस्सा होना आवश्यक है, जबकि इन लेन-देन में हिस्सा केवल लाभ में होता है। [पृष्ठ 371]

259: **अग्रक्रयाधिकार (शुफ़ा)** यदि विक्रेता अवैधता का दावा करता है और खरीदार वैधता का, तो शपथ के साथ खरीदार का कथन विश्वसनीय होगा; विरोधाभासी दावा स्वीकार्य नहीं है।

676: प्रत्यक्ष साक्ष्य प्रतिवादी के लिए फायदेमंद होता है, वादी के लिए नहीं। (676 के लिए बायीं ओर की प्रविष्टि): एक घर की मौखिक बिक्री हुई और कब्ज़ा उस खरीदार को दे दिया गया जिसे अग्रक्रयाधिकार (शुफ़ा) प्राप्त था। उसने पहले उस घर को खरीदने से इनकार कर दिया था। अब उसे शुफ़ा का अधिकार नहीं है। [पृष्ठ 191]

681: **ज़मानत और हर्ज़ाना (ज़मान-ओ-तावान)** ज़मानत के तौर पर रखी गई संपत्ति पर दावा कानूनी रूप से स्वीकार्य नहीं है।

स्वीकारोक्ति (इक़रार) (बायीं ओर की प्रविष्टि): यदि खरीदारी से पहले निरीक्षण के लिए ली गई संपत्ति (मक़बूज़ अला सूम-उश-शिरा) नष्ट हो जाती है, तो कब्ज़ाधारी से हर्ज़ाना वसूल किया जा सकता है। [पृष्ठ 93]

82: यदि कोई व्यक्ति जिसने संपत्ति हड़पी हो वह मालिक के स्वामित्व को स्वीकार कर लेता है, तो हड़पी गई संपत्ति की बिक्री वैध है। (82 के लिए बायीं ओर की प्रविष्टि): यदि अमानत रखने वाले

(अमीन) से सुरक्षा में कोई उल्लंघन या लापरवाही नहीं हुई है, तो वह हर्ज़ाने का उत्तरदायी नहीं है। [पृष्ठ 102]

82: स्वीकारोक्ति (इक़रार) बाहरी साक्ष्य (बय्यना) से अधिक शक्तिशाली प्रमाण है। (82 के लिए बायीं ओर की प्रविष्टि): यदि विक्रेता बेची गई वस्तु को किसी दूसरे व्यक्ति को दोबारा बेच देता है, तो वह घोर पापी है। यदि वस्तु दूसरे खरीदार के पास मौजूद है, तो पहला खरीदार उसे वापस ले ले। यदि उपलब्ध न हो, तो खरीदार को विक्रेता से उस वस्तु का हर्ज़ाना बाज़ार भाव के अनुसार वसूल करना चाहिए। [पृष्ठ 161]

मुज़ारबत (बायीं ओर की प्रविष्टि): ज़ैद का पैसा किसी पर बकाया था; अम्र ने उसकी ज़मानत ली। ज़ैद के मांगने पर अम्र ने मना कर दिया। ज़ैद ने कोर्ट में मामला दायर किया। अब अम्र ने समय माँगा, जो ज़ैद ने इस शर्त पर दिया कि अम्र ज़ैद के कानूनी खर्चों का भुगतान करेगा। अम्र ने खर्चे और अंततः मूल ऋण चुका दिया। अब अम्र को ज़ैद से उन कानूनी खर्चों को वापस पाने का अधिकार है। [पृष्ठ 391]

पृष्ठ 71 का 715

فتاویٰ رضویہ (جلد ۱۷)

۲۵۶: ایک مسلمان کی نصرانیہ عورت نے دعویٰ کیا میں اپنے شوہر کی موت سے پہلے اسلام لائی اور وارثوں نے کہا بعد موت، تو وارثوں کا قول معتبر ہے کہ یہ اقرب وقت ہے۔ روپیہ قرض دے کر منافع میں آدھا ساجھا رکھنا سود ہے اور بطور مضاربت یہ معاملہ جائز ہے۔ [صفحہ ۳۳۵]

۲۵۷: شرکت عقد میں شرط فاسد کے بارے میں اختلاف ہو تو منکرین شرط کے قول کا اعتبار ہوگا۔

۲۵۹: عاقدین کے صحت و فساد عقد میں اختلاف ہو تو قول مدعی صحت کا تسلیم ہوگا۔ بطور شرکت اس میں نفع اور نقصان دونوں میں شرکت ضروری ہے، اور ان معاملات میں صرف نفع میں شرکت ہوتی ہے۔ [صفحہ ۳۷۱]

۲۵۹: شفعہ بائع فساد کا دعویٰ کرے اور مشتری صحت کا، تو قسم کے ساتھ مشتری کا قول معتبر ہوگا تناقض دعویٰ قابلِ تسلیم نہیں۔

۶۷۶: ظاہر مدعیٰ علیہ کو مفید ہوتا ہے مدعی کو نہیں۔ مکان کی زبانی بیع ہو گئی اور اس پر قبضہ مشتری ہو گیا جس کو حقِ شفعہ تھا، وہ اس مکان کی خریداری سے انکار کر چکا تھا اب اس کو حق شفعہ نہیں۔ [صفحہ ۱۹۱]

۶۸۱: ضمان و تاوان جائداد مکفولہ کا دعویٰ شرعاً قابلِ سماعت نہیں۔

اقرار مقبوض علی سوم الشراء ہلاک ہو جائے تو قابض سے تاوان وصول کر سکتے ہیں۔ [صفحہ ۹۳]

۸۲: غاصب مالک کی ملکیت کا اقرار کرے تو مغصوب کی بیع صحیح ہے۔ امین پر بلا تعدی و تقصیر فی الحفظ ضمان نہیں۔ [صفحہ ۱۰۲]

۸۲: اقرار بینہ سے قوی حجت ہے۔ بائع نے اگر مالِ مبیع کو دوسرے کے ہاتھ بیچ دیا تو سخت گنہگار ہوا، مالِ دوسرے مشتری کے پاس موجود ہو تو مشتری اول اس کو واپس لے اور موجود نہ ہو تو اتنے مال کا تاوان اس وقت کے بازار کے بھاؤ سے مشتری بائع سے وصول کرے۔ [صفحہ ۱۶۱]

مضاربت زید کا روپیہ کسی پر باقی تھا عمرو نے ضمانت لی، زید کے مطالبہ پر عمرو نے انکار کیا، زید نے قاضی کے یہاں دعویٰ کیا اب عمرو نے مہلت چاہی اس نے اس شرط پر مہلت دی کہ کچہری کی دوڑ دھوپ میں میرا جو خرچ ہوا عمرو ادا کرے اس نے ادا کر دیا، پھر اصل قرض بھی دے دیا تو اب عمرو زید سے کچہری کی دوڑ دھوپ والا تاوان پانے کا حقدار ہے۔ [صفحہ ۳۹۱]

Fatawa Razawiya Volume 17

[Right Column Table Content] - 39: If the buyer takes possession of the sold item without paying the full or partial price, the profit from it is lawful for them. - 90: Possession of interest is malicious/impure. - 94: Retaining earnest money if the sale does not take place is oppression, even if the excess (fault) lies with the buyer. - 95: Compulsion cannot be used to fulfill a promise. - 97: Difference in price between cash and credit transactions is not forbidden or impermissible. - 107: Public auction of public property is permissible with the owner's permission (whether given before or after the auction). - 107: In a suspended contract (Aqd-e-Mauqoof), the buyer's disposal of the item before permission is obtained is not lawful. - 108: When something is purchased through a valid legal contract, the sin of the seller spending the price on sinful acts does not fall upon the buyer, nor will it invalidate the sale. - 111: For rights that are established fundamentally (such as a legatee of a punishment, right of retaliation, right of marriage, right of slavery), it is permissible to take compensation for them. - 126: Depositing goods at a brokerage and taking their price in advance from the broker on the condition that accounts will be settled when sold is forbidden. However, a loan can be taken with the broker's consent.

[Left Column Table Content] - 410: Indemnity for a currency note shall be paid in the form of a note. - 656: If someone says "I am a guarantor for so-and-so until the 18th", the apparent ruling is that the guarantee remains after the 18th as well. If it's specified from one date to another, it ends on the later date. - 656: If one says "I am a guarantor starting from the 18th; if he flees, I will pay the claim," and the person flees within the 18th, the claim must be paid. - 658: If one says "I am the presence guarantor for the defendant until the 18th; if they flee, I am responsible for the plaintiff's claim," but the plaintiff or their lawyer does not accept the guarantee for the claim, then there is no right to claim property, and the guarantee for the person does not remain after the 18th.

[Section Heading: Beliefs and Theology] - 213: A fetus is certainly a believer. - 522: The pure Shariah does not acknowledge the religion of jinn based on mere conjecture.

[Section Heading: Repentance and Forgiveness] - 304: The correct way to repent from interest is to feel remorse, resolve not to take it in the future, and return what has already been taken. - 304: The one who repents from a sin is like one who has never committed a sin.

[Section Heading: Prohibitions and Permissions]

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

[दायाँ कॉलम टेबल सामग्री] - 39: यदि खरीदार ने पूरी या आंशिक कीमत चुकाए बिना बेची गई वस्तु (मबी') पर कब्ज़ा कर लिया है, तो उस वस्तु से होने वाला लाभ उसके लिए हलाल है। - 90: ब्याज का स्वामित्व खबीस (अशुद्ध) है। - 94: सौदा न होने की स्थिति में बयाना रोक लेना ज़ुल्म है, चाहे गलती खरीदार की ही क्यों न हो। - 95: वादे को पूरा करने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता। - 97: नकद और उधार के भाव में अंतर हराम और नाजायज़ नहीं है। - 107: आम जनता की संपत्ति की सरकारी नीलामी मालिक की अनुमति से (पहले या बाद में) हो तो जायज़ है। - 107: 'अक़्द-ए-मौक़ूफ़' (निलंबित अनुबंध) में अनुमति मिलने से पहले खरीदार द्वारा वस्तु का उपयोग या निपटान हलाल नहीं है। - 108: जब कोई चीज़ सही शरई अनुबंध के साथ खरीदी गई हो, तो विक्रेता द्वारा उस कीमत को गुनाह के कामों में खर्च करने का बोझ खरीदार पर नहीं होगा, और न ही सौदे में कोई खराबी आएगी। - 111: जो अधिकार मूल रूप से स्थापित हैं (जैसे सज़ा का वसीयतदार, क़िसास का अधिकार, निकाह का अधिकार, गुलामी का अधिकार), उनका मुआवज़ा लेना जायज़ है। - 126: आढ़त (कमीशन एजेंसी) में माल जमा करके उसकी कीमत आढ़ती से अग्रिम लेना कि जब माल बिकेगा तब हिसाब होगा, हराम है। हाँ, आढ़ती की मर्जी से कर्ज लिया जा सकता है।

[बायाँ कॉलम टेबल सामग्री] - 410: नोट का हर्जाना नोट के रूप में ही दिया जाएगा। - 656: यदि किसी ने कहा "मैं 18 तारीख तक फलां का ज़मानतदार (गारंटर) हूँ", तो ज़ाहिरी राय यह है कि 18 तारीख के बाद भी ज़मानत बनी रहेगी। यदि एक तारीख से दूसरी तारीख तक है, तो बाद वाली तारीख पर ज़मानत समाप्त होगी। - 656: "18 तारीख से ज़मानतदार हूँ, अगर वह भाग गया तो दावा मैं चुकाऊंगा", अगर वह 18 तारीख के भीतर भाग गया तो दावा चुकाना होगा। - 658: "18 तारीख तक मैं प्रतिवादी की उपस्थिति का ज़मानतदार हूँ, यदि वह भाग गया तो मैं वादी के दावे का ज़िम्मेदार हूँ", और वादी या उसके वकील ने दावे की ज़मानत स्वीकार नहीं की, तो न तो संपत्ति के दावे का अधिकार रहा और न ही 18 के बाद व्यक्ति की ज़मानत बची।

[अनुभाग शीर्षक: अक़ायद व कलाम (आस्था और धर्मशास्त्र)] - 213: गर्भस्थ शिशु निश्चित रूप से मोमिन (आस्तिक) है। - 522: शरीयत-ए-मुतह्हरा (पवित्र शरीयत) महज़ अटकलबाज़ी के आधार पर जिन्नों के धर्म को स्वीकार नहीं करती।

[अनुभाग शीर्षक: तौबा व इस्तिग़फ़ार (पश्चाताप और क्षमा)] - 304: ब्याज से तौबा का सही तरीका यह है कि शर्मिंदगी हो, भविष्य में न लेने का पक्का इरादा हो और जो लिया है उसे वापस किया जाए। - 304: गुनाह से तौबा करने वाला ऐसा है मानो उसने गुनाह किया ही न हो।

[अनुभाग शीर्षक: हज़्र व इबाहत (निषेध और अनुमति)]

पृष्ठ 72 / 715

فتاوی رضویہ جلد بفتدہم (۱۷)

[دایاں کالم] ۳۹: مشتری نے کل یا جز قیمت ادا کئے بغیر مبیع پر قبضہ کر لیا تو مبیع کا منافع اس کے لئے حلال ہے۔ ۹۰: سود کی ملک خبیث ہے۔ ۹۴: بیع نہ ہونے کی شکل میں بیعانہ روک لینا ظلم ہے چاہے زیادتی مشتری کی ہی کیوں نہ ہو۔ ۹۵: وفائے وعدہ پر جبر نہیں کیا جاسکتا۔ ۹۷: نقد اور ادھار کے بھاؤ میں تفاوت حرام اور ناجائز نہیں۔ ۱۰۷: عوام کی جائداد کا سرکاری نیلام مالک کی اجازت سے (سابقہ یا لاحقہ) ہو تو جائز۔ ۱۰۷: عقد موقوف میں اجازت سے قبل بیع میں مشتری کا تصرف حلال نہیں۔ ۱۰۸: کوئی چیز جب عقد صحیح شرعی سے خریدی گئی تو بائع کا ثمن کو کار معصیت میں خرچ کرنے کا وبال مشتری پر نہیں ،نہ بیع میں کوئی خلل واقع ہوگا۔ ۱۱۱: جو حقوق اصالۃً ثابت ہوں (جیسے موصی لہ بالحد، حق قصاص، حق نکاح، حق غلامی) انکا عوض لینا جائز ہے۔ ۱۱۱ ۱۲۶: آڑھت میں مال جمع کر کے اس کی قیمت پیشگی آڑھت دار سے لینا کہ جب مال بکے گا حساب ہوگا حرام ہے۔ البتہ قرض آڑھت دار کی مرضی سے لے سکتا ہے۔

[بایاں کالم] ۴۱۰: نوٹ کا تاوان نوٹ دیا جائے گا۔ ۶۵۶: کسی نے یہ کہا "۱۸ تاریخ تک فلاں کا ضامن ہوں" تو ظاہر الرویہ یہ ہے کہ ۱۸ تاریخ کے بعد بھی ضمانت باقی ہے اور اگر فلاں تاریخ سے فلاں تاریخ تک تو بعد والی تاریخ کو ضمانت منتہی ہوگی۔ ۶۵۶: "۱۸ تاریخ سے ضامن ہوں بھاگ گیا تو مطالبہ میں دوں گا" اگر ۱۸ تاریخ کے اندر بھاگ گیا مطالبہ دینا ہوگا۔ ۶۵۸: "۱۸ تاریخ تک میں مدعا علیہ کا حاضر ضامن ہوں اگر بھاگ گئے مطالبہ مدعیہ کا میں ذمہ دار ہوں" اور مطالبہ کی ضمانت کو مدعیہ یا مدعی کے وکیل نے قبول نہ کیا تو نہ مال کے مطالبہ کا حق نہ ۱۸ کے بعد نفس کی ضمانت باقی۔

عقائد وکلام ۲۱۳: جنین ضرور مومن ہے۔ ۵۲۲: شرع مطہر عندیہ کا مذہب جنوں روا نہیں رکھتی۔

توبہ واستغفار ۳۰۴: سود سے توبہ کا صحیح طریقہ یہ ہے کہ ندامت اور آئندہ نہ لینے کے عزم کے ساتھ ساتھ جو لیا ہے وہ واپس کرے۔ ۳۰۴: گناہ سے توبہ کرنے والا ایسا ہی ہے جیسے اس نے گناہ کیا ہی نہ ہو۔

حظر واباحت

- It is permissible to state a higher price and then reduce it, or to take double the price, as long as one does not lie. (139) | If one does not know that the earning from a specific thing is forbidden, one can consume it. (172)
- It is permissible to sell the skin of a carcass after tanning or drying it; otherwise, it is forbidden. (161) | Ruling on outbidding a brother's bid. (191)
- The sale of bones is permissible if there is no fat on them. (161) | Buying grain on the standing crop and selling it is permissible; whoever calls such a sale forbidden is being audacious against Sharia. (191)
- The sale of pig skin or bone is not permissible under any circumstances. (162) | Ruling on purchasing animals from a cattle shed. (202)
- Buying stolen property knowingly is forbidden. (165) | Collecting money from both parties for an arbitrators' decision is invalid, and giving both sums to one party is further injustice, and it is forbidden for one party to take this money from the other. (218)
- One should avoid taking money for getting someone else employed in one's place. (165) | In an irregular (voidable) sale, the contracting parties are sinful due to entering into an irregular contract. (245)
- There is no harm in buying 'Nuzul' (government-owned) land from the government. (168) | If the seller voluntarily adds something to the sold item, it is permissible to take it. (261)
- It is permissible to sell wood to those who cremate the dead, provided there is no intention of assisting in that act. (168) | If the seller is a non-Muslim, a Muslim should not ask for more, as the seller might consider it a favor. (262)
- Selling hemp (bhang) to those who consume it for intoxication is impermissible; however, its sale for medicinal purposes is permissible. (168) | Deduction made in a state of displeasure is forbidden. (263)
- Selling opium for medicinal external use is permissible, but it is forbidden for consumption. (170) | If a seller sells goods on credit at a price higher than the market rate, it is not usury; it is permissible with the buyer's consent, though it is better avoided. (267)
- The sale of a carcass is forbidden. (171) | Buying something at an inflated price due to a loan is disliked (Makhruh). (275)

- The sale of a graveyard is forbidden; it is forbidden for the seller to take the price. (171) | It is permissible to give a bribe to satirists to protect one's honor. (300)

- झूठ न बोले तो ज़्यादा दाम कहकर घटाना या दोगुनी क़ीमत लेना जाइज़ है। (139) | मुअय्यन चीज़ के कसब हराम होने का इल्म न हो तो उसे खा सकते हैं। (172)
- मुरदार की खाल पकाकर या सुखाकर बेचना जाइज़ है वरना हराम है। (161) | भाई के भाव पर भाव बढ़ाने का हुक्म। (191)
- हड्डी पर चिकनाई न हो तो उसकी बय (बिक्री) जाइज़ है। (161) | फ़स्ल पर ग़ल्ला ख़रीद कर बेचना जाइज़ है, ऐसी बय को हराम कहने वाला शरअ पर जुर्रत कर रहा है। (191)
- सुअर की खाल या हड्डी की किसी हाल में बय जाइज़ नहीं। (162) | मवेशी खाने के जानवरों की ख़रीदारी का हुक्म। (202)
- माल-ए-मसरूक़ा (चोरी का माल) को जानकर ख़रीदना हराम है। (165) | पंचों के फ़ैसले के लिए तरफ़ैन से रक़म जमा कराना बातिल और दोनों की रक़म किसी एक को दे देना मज़ीद ज़ुल्म और एक फ़रीक़ को दूसरे का यह पैसा लेना हराम। (218)
- अपनी जगह किसी दूसरे को नौकर रखवा कर उसका पैसा लेने से बचना चाहिए। (165) | बय-ए-फ़ासिद में आग़िदीन (अनुबंध करने वाले) बसबब-ए-इर्तिकाब-ए-अक़्द-ए-फ़ासिद गुनहगार होते हैं। (245)
- नुज़ूल की ज़मीन को सरकार से ख़रीदने में कोई हर्ज नहीं है। (168) | बाइअ (विक्रेता) अपनी मर्ज़ी से मबीअ (बिक्री की चीज़) पर कुछ इज़ाफ़ा कर दे तो लेना जाइज़ है। (261)
- मुर्दा फूँकने वालों के हाथ लकड़ी बेचना जाइज़ है इस काम में उसकी इआनत (सहायता) की नियत न करे। (168) | बाइअ काफ़िर हो तो मुसलमान को ज़ायद का सवाल न चाहिए कि वह एहसान तसव्वुर करेगा। (262)
- भाँग पीने वालों के हाथ उसकी बय नाजाइज़ है अलबत्ता दवा के तौर पर उसकी बय जाइज़ है। (168) | कटौती नाराज़गी की हालत में हराम है। (263)
- अफ़ीम की बय दवाअन् ख़ारजी इस्तेमाल के लिए जाइज़ है और खाने के लिए हराम है। (170) | बाइअ अपना सौदा और उधार बाज़ार भाव से ज़ायद दे तो सूद नहीं मुश्तरी (ख़रीददार) की रज़ा से जाइज़ है, हाँ ख़िलाफ़-ए-औला है। (267)
- मुरदार की बय हराम है। (171) | क़र्ज़ की वजह से किसी चीज़ को ज़ायद क़ीमत पर ख़रीदना मकरूह। (275)

- क़ब्रिस्तान की बय हराम बाइअ को क़ीमत लेना हराम। (171) | अपनी आबरू बचाने के लिए हिजो गोइयों (व्यंग्यकारों) को रिश्वत देना जाइज़ है। (300)

- جھوٹ نہ بولے تو زیادہ دام کہہ کر گھٹانا یا دگنی قیمت لینا جائز ہے۔ (۱۳۹) | معین چیز کے کسب حرام ہونے کا علم نہ ہو تو اسے کھا سکتے ہیں۔ (۱۷۲)
- مردار کی کھال پکا کر یا سکھا کر بیچنا جائز ہے ورنہ حرام ہے۔ (۱۶۱) | بھائی کے بھاؤ پر بھاؤ بڑھانے کا حکم۔ (۱۹۱)
- ہڈی پر چکنائی نہ ہو تو اس کی بیع جائز ہے۔ (۱۶۱) | فصل پر غلہ خرید کر بیچنا جائز ہے، ایسی بیع کو حرام کہنے والا شرع پر جرات کر رہا ہے۔ (۱۹۱)
- سور کی کھال یا ہڈی کی کسی حال میں بیع جائز نہیں۔ (۱۶۲) | مویشی خانہ کے جانوروں کی خریداری کا حکم۔ (۲۰۲)
- مالِ مسروقہ کو جان کر خریدنا حرام ہے۔ (۱۶۵) | پنچوں کے فیصلہ کے لئے طرفین سے رقم جمع کرانا باطل اور دونوں کی رقم کسی ایک کو دے دینا مزید ظلم اور ایک فریق کو دوسرے کا یہ پیسہ لینا حرام۔ (۲۱۸)
- اپنی جگہ کسی دوسرے کو نوکر رکھوا کر اس کا پیسہ لینے سے بچنا چاہئے۔ (۱۶۵) | بیعِ فاسد میں عاقدین بسببِ ارتکابِ عقدِ فاسد گنہگار ہوتے ہیں۔ (۲۴۵)
- نزول کی زمین کو سرکار سے خریدنے میں کوئی حرج نہیں ہے۔ (۱۶۸) | بائع اپنی مرضی سے مبیع پر کچھ اضافہ کر دے تو لینا جائز ہے۔ (۲۶۱)
- مردہ پھونکنے والوں کے ہاتھ لکڑی بیچنا جائز ہے اس کام میں اس کی اعانت کی نیت نہ کرے۔ (۱۶۸) | بائع کافر ہو تو مسلمان کو زائد کا سوال نہ چاہئے کہ وہ احسان تصور کرے گا۔ (۲۶۲)

- بھنگ پینے والوں کے ہاتھ اس کی بیع ناجائز ہے البتہ دوا کے طور پر اس کی بیع جائز ہے۔ (۱۶۸) | کٹوتی ناراضگی کی حالت میں حرام ہے۔ (۲۶۳)
- افیون کی بیع دواءً خارجی استعمال کے لئے جائز ہے اور کھانے کے لئے حرام ہے۔ (۱۷۰) | بائع اپنا سودا اور ادھار بازار بھاؤ سے زائد دے تو سود نہیں مشتری کی رضا سے جائز ہے، ہاں خلاف اولیٰ ہے۔ (۲۶۷)
- مردار کی بیع حرام ہے۔ (۱۷۱) | قرض کی وجہ سے کسی چیز کو زائد قیمت پر خریدنا مکروہ۔ (۲۷۵)
- قبرستان کی بیع حرام بائع کو قیمت لینا حرام۔ (۱۷۱) | اپنی آبرو بچانے کے لئے ہجو گویوں کو رشوت دینا جائز ہے۔ (۳۰۰)

Fatawa Rizwia Volume 17

301: If there is no fear of demand from the creditor for an insolvent person, then taking an interest-bearing loan solely for the thought of accountability in the hereafter is forbidden (Haram). Commingled charity (Sadaqah Musha') is permissible. 322

307: Lawful property (Maal-e-Mubah) or one's own right can also be obtained through void contracts (Aqood-e-Fasidah). Just as it is necessary to avoid bad deeds, it is also necessary to avoid a bad name. 325

307: It is prohibited to spend prohibited money even in an Islamic madrasa. The sale of banknotes at a premium or discount is permissible for both Hindus and Muslims. 327

309: Drinking even a syrup while considering it alcohol is forbidden. Interest-bearing loans can be taken in cases of Sharia necessity. 327

311: If someone believes a permissible transaction to be forbidden and treats it as such, they are a criminal in the eyes of Allah Almighty. Giving the name of honesty to a void transaction is forbidden. 333

311: Looking at a piece of cloth from afar, thinking it's a strange woman, with an evil eye makes one a sinner. There is no harm in taking the extra amount received as interest on money deducted in a provident fund from non-Muslims, considering it lawful property (Maal-e-Mubah). 339

Without any Sharia-based benefit, giving a forbidden name to a permissible thing is disliked (Makruh). Establishing a cooperative bank and running it on interest is forbidden. 340

312: Support from the action of Prophet Ibrahim (peace be upon him) for calling his wife his sister for a Sharia-based benefit. Deceiving a non-believer (Kafir) is not permissible. 342

313: The fatwa is that a deserving person can take their right in any case, whether from the same type of property or a different one. The interest-based business of Muslims' cooperative banks is forbidden, and becoming a member of such a bank is aiding in sin. 343

317: Treachery (Ghadar) and Usury (Riba) are forbidden by consensus in Dar-ul-Harb. Neither can an extra amount from a Muslim bank be collected for oneself nor for any organization. 344

317: Sharia has specified a particular method for the lawfulness of private parts. A transaction where there is only profit and no liability for loss is not permissible. 344

317: The property of the owner is lawful with their consent. Which non-believer's property is permissible for a Muslim to take and in what manner? 348

319: Usurpation (Ghasb) and theft (Sarqah) of lawful property (Maal-e-Mubah) is permissible. Treachery and breach of promise are absolutely forbidden, even with any non-believer. 348

320: If there is no condition of paying extra while giving a loan, neither verbally nor by custom, then giving extra is permissible. If there is a fear of ill-repute in obtaining lawful property through a void contract, such that the ignorant public will label one as a usurer, then one should avoid it. 349

फतावा रज़विया जिल्द सत्रह (17)

301: यदि किसी कंगाल व्यक्ति के लिए लेनदार की ओर से मांग का कोई डर न हो, तो केवल परलोक के हिसाब-किताब के विचार से ब्याज वाला ऋण लेना हराम है। मुशा (साझा) सदक़ा जायज़ है। 322

307: मुबाह माल या अपना अधिकार अक़ूद-ए-फासिदा (दोषपूर्ण अनुबंधों) के माध्यम से भी प्राप्त किया जा सकता है। जिस तरह बुरे काम से बचना ज़रूरी है, उसी तरह बदनामी से बचना भी ज़रूरी है। 325

307: वर्जित राशि को इस्लामी मदरसे में भी खर्च करना मना है। नोटों की कम या ज्यादा कीमत पर खरीद-बिक्री हिंदू और मुसलमान सभी के लिए जायज़ है। 327

309: शरबत को भी शराब समझकर पीना हराम है। शरीयत की मजबूरी पर ब्याज वाला ऋण लिया जा सकता है। 327

311: यदि किसी ने जायज़ मामले को हराम यक़ीन किया और उसे हराम समझकर ही किया, तो वह अल्लाह तआला का अपराधी हुआ। बातिल (अमान्य) मामले को ईमानदारी का नाम देना हराम है। 333

311: दूर से किसी कपड़े को पराई औरत समझकर उसे बुरी नज़र से देखने वाला गुनहगार है। भविष्य निधि (प्रोविडेंट फंड) में काटी गई राशि पर ब्याज के नाम से जो अतिरिक्त राशि मिलती है, उसे गैर-मुस्लिमों से मुबाह माल समझकर लेने में कोई हर्ज नहीं। 339

बिना किसी शरई ज़रूरत के किसी हलाल चीज़ का हराम नाम रखना मकरूह है। सहकारी बैंक बनाकर उसे ब्याज पर चलाना हराम है। 340

312: शरई हित के लिए अपनी पत्नी को बहन कहने के हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के कार्य से प्रमाण। काफ़िर को धोखा देना जायज़ नहीं। 342

313: सही फ़तवा यह है कि हक़दार हर हाल में अपना हक़ ले सकता है, चाहे वह उसी चीज़ से हो या किसी और चीज़ से। मुसलमानों के सहकारी बैंक का ब्याज का कारोबार हराम है और ऐसे बैंक का सदस्य बनना पाप में मदद करना है। 343

317: दारुल हर्ब में विश्वासघात (ग़दर) और सूद (रिबा) सर्वसम्मति से हराम हैं। मुस्लिम बैंक से अतिरिक्त राशि न अपने लिए वसूल कर सकते हैं और न ही किसी संस्था के लिए। 344

317: शरीयत ने गुप्त अंगों के हलाल होने का एक विशेष तरीका बताया है। जिसमें केवल लाभ से सरोकार रहे और नुकसान की कोई ज़िम्मेदारी न हो, वह जायज़ नहीं है। 344

317: मालिक की अनुमति से मालिक का माल हलाल है। किस-किस काफ़िर का माल किस-किस स्थिति में मुसलमान के लिए लेना जायज़ है। 348

319: मुबाह माल का अपहरण (ग़सब) और चोरी जायज़ है। विश्वासघात और वादा खिलाफी हर काफ़िर के साथ भी बिल्कुल हराम है। 348

320: यदि ऋण देते समय अतिरिक्त देने की शर्त न हो, न ज़बानी और न ही प्रथा के अनुसार, तो अतिरिक्त देना जायज़ है। यदि अक़ूद-ए-फासिदा के माध्यम से मुबाह माल प्राप्त करने में बदनामी का डर हो कि अनपढ़ लोग सूदखोर कहेंगे, तो इससे बचना चाहिए। 349

पृष्ठ 74 का 715

فتاوٰی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

۳۰۱: مفلس کو قرض خواہ کی طرف سے تقاضا کا خطرہ نہ ہو تو صرف مواخذہ آخرت کے خیال سے سودی قرض لینا حرام ہے۔ صدقہ مشاع جائز ہے۔ ۳۲۲

۳۰۷: مالِ مباح یا اپنا حق عقودِ فاسدہ کے ذریعہ بھی وصول کرسکتے ہیں۔ جس طرح بُرے کام سے بچنا ضرور ہے، بُرے نام سے بچنا بھی ضروری ہے۔ ۳۲۵

۳۰۷: ممنوعہ رقم مدرسہ اسلامیہ میں بھی صرف کرنا منع ہے۔ کم وبیش پر نوٹ کی بیع ہندو مسلمان سب سے جائز ہے۔ ۳۲۷

۳۰۹: شربت بھی شراب سمجھ کر پینا حرام ہے۔ شرعی مجبوری پر سودی قرض لے سکتے ہیں۔ ۳۲۷

۳۱۱: کسی حلال معاملہ کو کسی نے حرام یقین کیا اور حرام سمجھ کر ہی اسے برتا تو وہ اللہ تعالٰی کا مجرم ہوا۔ معاملہ باطل کو ایمانداری کا نام دینا حرام ہے۔ ۳۳۳

۳۱۱: دور سے کسی کپڑے کو اجنبی عورت سمجھ کر اس کو نظر بد سے دیکھا گنہگار ہوا۔ پراویڈنٹ فنڈ میں کٹی ہوئی رقم پر جو زائد رقم بنام سود ملتی ہے غیر مسلم لوگوں سے مالِ مباح سمجھ کر لینے میں حرج نہیں۔ ۳۳۹

بغیر کسی مصلحت کے کسی حلال چیز کا حرام نام رکھنا مکروہ ہے۔ کوآپریٹیو بنک بنا کر سود پر چلانا حرام ہے۔ ۳۴۰

۳۱۲: مصلحت شرعی سے بیوی کو بہن کہنے کی حضرت ابراہیم علیہ السلام کے فعل سے سند۔ کافر کو دھوکا دینا جائز نہیں۔ ۳۴۲

۳۱۳: مفتی بہ یہ ہے کہ مستحق اپنا حق بہر حال لے سکتا ہے جنس حق سے خواہ خلاف جنس سے۔ مسلمانوں کے کوآپریٹیو بنک کا سودی کاروبار حرام ہے اور ایسے بنک کا ممبر بننا اعانت علی الاثم ہے۔ ۳۴۳

۳۱۷: دار الحرب میں غدر اور ربا بالاتفاق حرام ہیں مسلم بنک سے زائد رقم نہ اپنے لئے وصول کرسکتے ہیں نہ کسی انجمن کے لئے۔ ۳۴۴

۳۱۷: شرمگاہ حلال ہونے کا شرع نے ایک مخصوص طریقہ بتایا ہے۔ جس میں صرف منافع سے واسطہ رہے نقصان کی ذمہ داری نہ ہو جائز نہیں۔ ۳۴۴

۳۱۷: مالِ صاحب مال کی رضا سے حلال ہے۔ کس کس کافر کا مال کس کس صورت میں مسلمان کو لینا جائز ہے۔ ۳۴۸

۳۱۹: مالِ مباح کا غصب و سرقہ جائز ہے۔ غدر اور بد عہدی مطلقاً ہر کافر سے بھی حرام ہے۔ ۳۴۸

۳۲۰: قرض دیتے وقت زائد دینے کی شرط نہ ہو تو لفظاً نہ عرفاً، تو زائد دینا جائز ہے۔ مالِ مباح کو عقدِ فاسد سے حاصل کرنے میں اگر بدنامی کا ڈر ہو کہ جاہل عوام سود خور مشہور کریں گے تو اس سے بچنا چاہئے۔ ۳۴۹

Vol. 17 (17) --- Fatawa Razawiyya

349 | One should avoid both bad deeds and a bad reputation. | Begging is humiliation and forbidden (Haram). | 420 350 | Trading currency notes with a difference (premium) or on credit is permissible in every way from everyone. | There is severe wrath and punishment in seizing others' property. | 420 355 | Eating each other's wealth without a Shar'i (legal) reason is prohibited according to the Quran. | It is appropriate to report an evil or undesirable act. | 521 358 | No one has the right to question the reasons behind Divine commands. | There is no legal compulsion for the fulfillment of a promise. | 591 359 | One should not eat at the house of usurers, but it is not forbidden until it is known that the food itself is usury (interest). | If the contract is unconditional and the condition is in the form of a promise, then compulsion can be applied for the fulfillment of the promise. | 592 360 | Muslims were already commanded not to look at the comforts of disbelievers. | Apart from maintenance (nafaqah), all such debts that are of equal value and status between both parties are cancelled by setting them off against each other. | 593 360 | Anything whose specific wealth is not known to be forbidden can be accepted as a donation. | A void contract is a sin, and removing the sin is obligatory. | 597 363 | It is forbidden to not return the interest taken from someone to prevent them from extravagance and wasteful spending. | It is permissible to buy gold coins (Ashrafi) with rupees during low prices and sell them for more during high prices. | 607 369 | Following the practice of [Abu Bakr] as-Siddiq (may Allah be pleased with him), one should avoid places of suspicion. | Buying/selling currency notes at varying prices is permissible, but lending and taking one extra paisa is forbidden (Haram). | 607 369 | Some permissible scenarios are legally crimes. One should avoid those too. | Avoiding giving a loan is contrary to what is best (khilaf-e-awla). | 608 369 | | Giving a ten-rupee note as a loan and taking one extra paisa is forbidden (Haram). | 613 370 | Looking at a cloth while imagining a woman with an evil eye is a sin. | Total involvement without possession is nothing, and after possession it becomes a mortgage (Rahn), and deriving benefit from it is forbidden (Haram). | 614 379 | If the original owner of illicit (Khabeeth) property is not known, it must be given to a poor person. Eating it oneself is forbidden. | A person is sinful for breaking a promise, but there is no legal compulsion from Sharia for the fulfillment of a promise. | 650 379 | If heirs know about specific illicit property, they should do the same; if it is not known or everything is mixed, it is permissible for the heirs. | Financial guarantee (Kafalat-

bil-maal) is legally permissible. | 677 381 | The prohibition of marriage and life insurance. | It is necessary to strive to avoid sin. | 705

Page 75 of 715

जिल्द सत्रहवीं (17) --- फतावा रज़विया

349 | बुरे काम और बुरे नाम दोनों से बचना चाहिए। | भीख माँगना अपमान और हराम है। | 420 350 | नोटों की खरीद-फरोख्त कमी-बेशी या उधार पर हर तरह से और हर एक से जायज़ है। | दूसरों का माल छीनने में सख्त ग़ज़ब और सज़ा है। | 420 355 | बिना किसी शरीई वजह के एक-दूसरे का माल खाना कुरान के अनुसार मना है। | बुराई या नापसंद चीज़ की सूचना देना उचित होता है। | 521 358 | ईश्वरीय आदेशों के कारणों को पूछने का किसी को अधिकार नहीं है। | वादे को पूरा करने पर कानूनी दबाव नहीं है। | 591 359 | ब्याज खाने वालों के यहाँ खाना नहीं खाना चाहिए, लेकिन वह तब तक हराम नहीं है जब तक कि यह न पता हो कि यह खाना वास्तव में ब्याज है। | यदि अनुबंध बिना शर्त हो और शर्त वादे के रूप में हो, तो वादे को पूरा करने के लिए दबाव डाला जा सकता है। | 592 360 | मुसलमानों को पहले ही काफिरों की सुख-सुविधाओं की ओर नज़र न उठाने का आदेश दिया जा चुका है। | गुज़ारे (नफ़क़ा) के अलावा, दोनों पक्षों पर समान मूल्य और स्थिति वाले सभी ऋण एक-दूसरे के बदले समाप्त हो जाते हैं। | 593 360 | जिस चीज़ का माल के रूप में हराम होना ज्ञात न हो, उसे चंदे में लिया जा सकता है। | गलत अनुबंध (अक़द फ़ासिद) पाप है और पाप को मिटाना अनिवार्य (फ़र्ज़) है। | 597 363 | किसी को फालतू खर्च और अपव्यय से रोकने के लिए उससे लिया गया ब्याज वापस न करना हराम है। | मंदी के समय रुपयों से अशर्फी खरीदकर महंगाई के समय उसे अधिक कीमत पर बेचना जायज़ है। | 607 369 | हज़रत सिद्दीक़ (रज़ियल्लाहु अन्हु) के अमल की तस्दीक़ के अनुसार बदनामी वाली जगहों से बचना चाहिए। | नोटों की खरीद-फरोख्त कमी-बेशी पर जायज़ है और उधार देकर एक पैसा भी अधिक लेना हराम है। | 607 369 | जायज़ स्थितियों में से कुछ स्थितियाँ कानूनी रूप से अपराध हैं। उनसे भी बचना चाहिए। | कर्ज देने से कतराना बेहतर कार्य (खिलाफ़-ए-औला) के विरुद्ध है। | 608 369 | | कर्ज के तौर पर दस का नोट देकर एक पैसा भी अधिक लेना हराम है। | 613 370 | कपड़े को औरत समझकर बुरी नज़र से देखना पाप है। | कब्ज़े के बिना पूर्ण संलग्नता कुछ नहीं है, और कब्ज़े के बाद वह गिरवी (रहन) है, जिससे लाभ उठाना हराम है। | 614 379 | हराम (खबीस) संपत्ति का यदि असली मालिक पता न हो, तो उसे गरीब को देना ज़रूरी है। खुद खाना हराम है। | वादा तोड़ने पर व्यक्ति पापी होता है, लेकिन वादा पूरा करने पर शरीयत की ओर से कोई ज़बरदस्ती नहीं है। | 650 379 | यदि उत्तराधिकारियों को विशिष्ट हराम संपत्ति के बारे में पता हो, तो वे भी वही करें; यदि पता न हो या सब मिला हुआ हो, तो उत्तराधिकारियों के लिए जायज़ है। | वित्तीय गारंटी (कफ़ालत-

बिल-माल) शरीयत के अनुसार जायज़ है। | 677 381 | शादी और जीवन बीमा की हुरमत (प्रतिबंध)। | पाप से बचने के लिए संघर्ष करना अनिवार्य है। | 705

पृष्ठ 75/715

۳۴۹ | برے کام اور برے نام دونوں سے بچنا چاہئے۔ | بھیک مانگنا ذلت و حرام ہے۔ | ۴۲۰ ۳۵۰ | نوٹ کی بیچ تفاضل و نسیہ ہر طرح ہر ایک سے جائز ہے۔ | دوسروں کا مال چھیننے میں سخت غضب اور سزا ہے۔ | ۴۲۰ ۳۵۵ | بلاوجہ شرعی آپس میں ایک دوسرے کا مال کھانا ازروئے قرآن ممنوع ہے۔ | منکر یا ناپسندیدہ پر اطلاع دینا مناسب ہوتا ہے۔ | ۵۲۱ ۳۵۸ | احکام الٰہی کی وجہ دریافت کرنے کا کسی کو حق نہیں۔ | وعدہ کی وفاء پر قضاءً جبر نہیں۔ | ۵۹۱ ۳۵۹ | سود خوروں کے یہاں کھانا نہ کھانا چاہئے، لیکن حرام اس وقت تک نہیں جب تک یہ معلوم نہ ہو کہ یہ کھانا بعینہ سود ہے۔ | عقد بلا شرط ہو اور شرط بطور وعدہ ہو تو وعدہ کی وفا پر جبر ہو سکتا ہے۔ | ۵۹۲ ۳۶۰ | مسلمانوں کو کافروں کی آسائش کی طرف نگاہ نہ اٹھانے کا پہلے ہی حکم دیا گیا ہے۔ | نفقہ کے علاوہ تمام ایسے قرضے جو طرفین پر مساوی قدر و حیثیت کے ہوں اول بدل ہو کر ساقط ہو جاتے ہیں۔ | ۵۹۳ ۳۶۰ | جس چیز کا بعینہ مال حرام ہونا معلوم نہ ہو چندہ میں لیا جاسکتا ہے۔ | عقد فاسد گناہ اور گناہ کا ازالہ فرض ہے۔ | ۵۹۷ ۳۶۳ | کسی کو اسراف اور فضول خرچی سے روکنے کے لئے اس سے لیا ہوا سود واپس نہ کرنا حرام ہے۔ | ارزانی کے وقت روپیہ سے اشرفی خرید کر گرانی کے وقت زائد پر بیچنا جائز ہے۔ | ۶۰۷ ۳۶۹ | مسئلہ کی تصدیق عمل صدیق رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے تہمت کی جگہوں سے بچنا چاہئے۔ | نوٹ کی بیع کم و بیش پر جائز ہے اور قرض دے کر ایک پیسہ زائد لینا حرام ہے۔ | ۶۰۷ ۳۶۹ | مباح صورتوں میں سے کچھ صورتیں قانوناً جرم ہیں۔ ان سے بھی بچنا چاہئے۔ | قرض دینے سے اعراض خلاف اولیٰ ہے۔ | ۶۰۸ ۳۶۹ | | بطور قرض دس کا نوٹ قرض دے کر ایک پیسہ زائد لینا حرام ہے۔ | ۶۱۳ ۳۷۰ | کپڑے کو عورت سمجھ کر نظر بد سے دیکھنا گناہ ہے۔ | استغراق بے قبضہ کچھ

نہیں، اور قبضہ کے بعد رہن ہے اس سے انتفاع حرام ہے۔ | ۶۱۴ ۳۷۹ | ملک خبیث اس کے اصل مالک کو وہ نہ ہو تو فقیر کو دینا ضروری ہے۔ خود کھانا حرام ہے۔ | وعدہ توڑنے پر آدمی گنہگار ہوتا ہے مگر ایفائے وعدہ پر شرع کی جانب سے جبر نہیں۔ | ۶۵۰ ۳۷۹ | ورثاء کو مال متعین کے بارے میں ملک خبیث ہونا معلوم ہو تو وہ بھی وہی کریں اور معلوم نہ ہو یا سب مخلوط ہوں تو ورثہ کے لئے جائز ہے۔ | کفالت بالمال شرعاً جائز ہے۔ | ۶۷۷ ۳۸۱ | شادی اور زندگی کے بیمہ کی حرمت۔ | معصیت سے بچنے کی جدوجہد کرنا لازم ہے۔ | ۷۰۵

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

Page	Topic (Stratagems / Legal Devices)
92	Different Sharia-compliant ways to terminate 'Bay-bil-Wafa' (Sale with the right of redemption).
175	Device for buying unharvested crops.
382	A form of benefiting from the borrower (mustaqriz).
383	If the borrower wants to provide a benefit from their property to the lender (muqriz), the lender should be hired as an employee and paid more than the usual compensation.
383	Some permissible ways to benefit from the borrower.
385	The borrower keeps an item with the lender as a trust and fixes a monthly fee for its protection and supervision; however, this fee should not exceed the value of

Page	Related Rulings
345	It is permissible to take money given under the name of 'invalid contracts' (uqud-e-fasida) by a non-Muslim who is neither a Dhimmi (protected non-Muslim citizen) nor a Mustamin (non-Muslim with safe passage), provided it is given with their consent and without any excuse.
341	Giving or taking interest (usury) while knowing it is forbidden (haram) is transgression and debauchery; doing so while considering it lawful (halal) is disbelief (kufr) and apostasy (irtidad).
348	Bohras and Rafidis are apostates.
348	Every apostate is an infidel, rather the worst kind of infidels.
348	Indian infidels are not Dhimmi or Mustamin.
349	The ruling on invalid contracts (uqud-e-fasida) with an apostate and a Harbi (one from the abode of war).
350	Further forms of invalid contracts with a Harbi.

Page	Topic (Stratagems / Legal Devices)	Page	Related Rulings
	the item. This is also a way of benefiting from the borrower.		
386	Waqfi mortgage is usury. Ways to avoid usury.	352	Expecting reward (thawab) after giving forbidden (haram) wealth to a beggar is disbelief (kufr).
461	Strategy to avoid usury.	352	If the beggar prayed for the giver knowing that he gave forbidden wealth, then the beggar should also renew his Islam.
494	Techniques to avoid usury.	356	India is Dar al-Islam (Abode of Islam); however, the non-Muslims here are Harbi, and it is permissible to derive profit from them.
496	Evidence for such strategies from the Quran and Hadith.	368	The property of the people of war (Ahl al-Harb) is not protected (ghair-masoom).
629	An easy way for the permissible sale of 'Kalabatoon' (silver/gold thread).	368	A disbeliever who accepted Islam in the abode of war (Dar al-Harb) and did not migrate to the abode of Islam (Dar al-Islam), his property is also not protected.

Section: Siyar (International Law/Statecraft)

Page	Topic	Page	Related Rulings
413	In the condition of interest not being applicable to the property of a Harbi, the restriction of 'Abode of War' (Dar al-Harb) is to exclude the Mustamin; the property of a Harbi Mustamin is lawful even in Dar al-Islam.	369	Why is the property of a Mustamin protected, even if he is a disbeliever?
		369	In Dar al-Islam, the property of a non-Mustamin Harbi is unprotected.

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

पृष्ठ	विषय (हीला - शरिया सम्मत उपाय)
92	बय-बिल-वफ़ा (वापसी की शर्त पर बिक्री) को समाप्त करने की विभिन्न शरिया सम्मत सूरतें।
175	कच्ची खेती खरीदने का हीला।
382	मुस्तक़रिज़ (उधार लेने वाले) से नफ़ा हासिल करने की एक सूरत।
383	यदि मुस्तक़रिज़ अपनी किसी जायदाद से मुक़रिज़ (उधार देने वाले) को फ़ायदा पहुँचाना चाहे, तो मुक़रिज़ को मुलाज़िम रखे और मामूल से ज़्यादा मुआवज़ा दे।
383	मुस्तक़रिज़ से नफ़ा हासिल करने की चंद जायज़ सूरतें।
385	क़र्ज़ख़्वाह (लेनदार) के पास क़र्ज़दार अपनी कोई चीज़ अमानत रखे और उसकी हिफ़ाज़त व निगरानी का माहना कुछ तय कर दे, मगर यह ध्यान रहे कि उजरत उस चीज़ की क़ीमत से ज़्यादा

पृष्ठ	संबंधित आदेश
345	गैर-मुस्लिम जो धिम्मी और मुस्तअमिन न हो, अपनी रज़ा से किसी उज्र के बिना 'अक़ूद-ए-फ़ासिदा' (अमान्य अनुबंधों) के नाम से जो रक़म दे, उसे लेना जायज़ है।
341	सूद (ब्याज) को हराम जानकर लेना-देना फ़िस्क़-ओ-फ़ुजूर है और इसे हलाल समझकर ऐसा करना कुफ़्र और इर्तिदाद (धर्मत्याग) है।
348	बोहरे और राफ़िज़ी मुर्तद (धर्मत्यागी) हैं।
348	हर मुर्तद काफ़िर है, बल्कि काफ़िरों की बदतरीन क़िस्म है।
348	हिंद के काफ़िर धिम्मी और मुस्तअमिन नहीं हैं।
349	मुर्तद और हर्बी (युद्ध क्षेत्र के निवासी) से अक़ूद-ए-फ़ासिदा का हुक्म।
350	हर्बी के साथ अक़ूद-ए-फ़ासिदा की मजीद चंद सूरतें।

पृष्ठ	विषय (हीला - शरिया सम्मत उपाय)
	नहीं होनी चाहिए; मुस्तक़रिज़ से नफ़ा पाने की यह भी एक सूरत है।
386	वक़्फ़िया रहन सूद है। सूद से बचने के तरीक़े।
461	सूद से बचने की तदबीर।
494	सूद से बचने की तरकीबें।
496	ऐसी तदबीरों का क़ुरआन व हदीस से सुबूत।
629	कलाबत्तून (सोने-चांदी के धागे) की जायज़ बिक्री का आसान तरीक़ा।

पृष्ठ	संबंधित आदेश
352	हराम माल फ़क़ीर को देकर सवाब की उम्मीद रखना कुफ़्र है।
352	फ़क़ीर ने यह जानते हुए कि उसने हराम माल दिया, उसके लिए दुआ की, तो वह भी तजदीद-ए-इस्लाम (इस्लाम का नवीनीकरण) करे।
356	हिन्दुस्तान दारुल इस्लाम है, अलबत्ता यहाँ के गैर-मुस्लिम हर्बी हैं, उनसे नफ़ा हासिल करना जायज़ है।
368	अहल-ए-हर्ब का माल ग़ैर-मासूम (सुरक्षित नहीं) है।
368	जो काफ़िर दारुल हर्ब में ईमान लाया और दारुल इस्लाम की तरफ़ हिजरत नहीं की, उसका माल भी ग़ैर-मासूम है।

अनुभाग: सियर (राज्य-प्रबंध/अंतर्राष्ट्रीय कानून)

पृष्ठ	विषय
413	हर्बी के माल में रिबा (सूद) न होने की शर्त में दारुल हर्ब की क़ैद मुस्तअमिन को बाहर रखने के लिए है; हर्बी मुस्तअमिन का माल दारुल इस्लाम में भी हलाल है।

पृष्ठ	संबंधित आदेश
369	मुस्तअमिन काफ़िर ही क्यों न हो, उसका माल महफ़ूज़ है।
369	दारुल इस्लाम में भी हर्बी ग़ैर-मुस्तअमिन का माल ग़ैर-महफ़ूज़ है।

صفحہ		حیل صفحہ	متعلقہ احکام
			غیر مسلم جو ذمی اور مستامن نہ ہو اپنی رضا سے کسی عذر کے بغیر عقودِ فاسدہ کے نام سے جو رقم دے اس کا لینا جائز ہے۔
۹۲	بیع بالوفاء کو ختم کرنے کی مختلف شرعی صورتیں۔	۳۴۱	حرام جان کر سود لینا دینا فسق و فجور اور حلال جان کر ایسا کرنا کفر و ارتداد ہے۔
۱۷۵	کچی کھیتی خریدنے کا حیلہ۔	۳۴۸	بوہرے رافضی مرتد ہیں۔
۳۸۲	مستقرض سے انتفاع کی ایک صورت	۳۴۸	ہر مرتد کافر بلکہ کافروں کی بدترین قسم ہے۔
۳۸۳	مستقرض اپنی کسی جائیداد سے مقرض کو فائدہ پہنچانا چاہے تو مقرض کو نوکر رکھے اور معمول سے زیادہ معاوضہ دے۔	۳۴۸	کفارِ ہندی ذمی و مستامن نہیں۔
۳۸۳	مستقرض سے انتفاع کی چند جائز صورتیں۔	۳۴۹	مرتد اور حربی سے عقودِ فاسدہ کا حکم۔

صفحہ	حیل صفحہ	متعلقہ احکام
	قرضخواہ کے پاس قرضدار اپنی کوئی چیز امانت رکھے اور اس کی حفاظت و نگرانی کا ماہانہ کچھ	
۳۸۵	مقرر کردے، مگر یہ خیال رہے کہ اجرت اس چیز ۳۵۰ کی قیمت سے زائد نہ ہونا چاہئے مستقرض سے انتفاع کی یہ بھی ایک صورت ہے۔	عقودِ فاسدہ مع الحربی کی مزید چند صورتیں۔
۳۸۶	وقفی رہن سود ہے۔ سود سے بچنے کے طریقے ۳۵۲	مالِ حرام فقیر کو دے کر ثواب کی امید رکھنا کفر ہے۔
		فقیر نے یہ معلوم ہوتے ہوئے کہ اس نے مالِ حرام دیا اس کے
۴۶۱	سود سے بچنے کی تدبیر۔ ۳۵۲	لئے دعا کی تو وہ بھی تجدیدِ اسلام کرے۔
		ہندوستان دارالاسلام ہے البتہ
۴۹۴	سود سے بچنے کی ترکیبیں۔ ۳۵۶	یہاں کے غیر مسلم حربی ہیں ان سے نفع حاصل کرنا جائز ہے۔
		اہل حرب کا مال غیر معصوم
۴۹۶	ایسی تدبیروں کا قرآن و حدیث سے ثبوت۔ ۳۶۸	ہے۔
		جو کافر دارالحرب میں ایمان
۶۲۹	کلا بتوں کی جائز بیع کا آسان طریقہ۔ ۳۶۸	لایا اور دارالاسلام کی طرف

ہجرت نہ کی اس کا مال بھی

غیر معصوم ہے۔

حصہ: سیر

حربی کے مال میں ربا نہ ہونے کی شرط میں دارالحرب
۴۱۳ کی قید مستامن کے نکالنے کے لئے ہے، حربی مستامن ۳۶۹ مستامن کافر ہی کیوں نہ ہو
کا مال دارالاسلام میں بھی حلال ہے۔ اس کا مال محفوظ ہے۔

دارالاسلام میں بھی حربی
۳۶۹ غیر مستامن کا مال غیر
محفوظ ہے۔

Fatawa-e-Razvia (Volume 17)

- 508: In exchange for one camel vowed, the Prophet (peace and blessings be upon him) gave six camels.
- 351: Riba is a collection of seventy-three sins, the least of which is like a man committing adultery with his own mother.

Exhortation and Warning (Targhib-wa-Tarhib) - 171: Description of the afterlife punishment for those who illegally seize land. - 463: Warnings regarding the prohibition of usury (interest). - 191: Condemnation of oppression towards neighbors. - 463: There is a curse upon four types of people involved in usury-based business. - 278: Hadiths describing warnings against usury. - 479: The wealth of usury is ill-gotten wealth. - 293: Three Hadiths stating that usury is 33 times worse than adultery. - 391: Warnings against taking usury.

Prescribed Punishments and Discretionary Punishments (Hudud-wa-Ta'zir) - 294: Three Hadiths on the subject that one dirham of usury is equivalent to the sin of committing adultery 36 times. - 380: Open usurers should be boycotted. - 294: Ten Hadiths stating that usury has more than seventy sins, the least of which is equivalent to committing adultery with one's mother. - 410: The Islamic ruler shall cut off the hand for stealing a note (currency). - 298: Curse upon four types of people related to usury.

Virtues and Merits (Fazail-wa-Manaqib) - 303: It is better to die in debt for the dower (Mahr) than to live with a woman who does not offer prayers. - 251: Great scholars, both past and present, have been citing the author of 'Durr-e-Mukhtar'. - 402: Assisting in usury-based business is also a sin. - 253: Qazi Khan had the status of Ijtihad. - 332: Hadiths and warnings against wishing ill or causing harm to a Muslim. - 351: Allah Almighty is Pure and accepts only what is pure. - 335: Warnings from Quran and Hadith regarding usury-based business. - 469: Which is the most excellent profession?

History and Biographies (Tareekh-wa-Tazkirah) - 335: Description of the destruction of religion and worldly life in usury-based transactions. - 341: The Hadith curses the one who eats usury, the one who feeds it, the one who writes it, and the one who witnesses it. - 446: The habit of Maulvi Abdul Hai Lakhnawi. - 341: If a giver of usury is also a taker of usury, he is doubly cursed. - 479: Mention of the incident of the Ottoman state. - 351: Riba is worse than adultery, far worse.

फ़तावा-ए-रजविया (जिल्द 17)

- ५०८: एक ऊँटनी की मन्नत के बदले हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने छह ऊँट अता फरमाए।
- ३५१: रिबा (ब्याज) तिहत्तर गुनाहों का समूह है जिनमें सबसे कमतर यह है कि आदमी अपनी माँ के साथ व्यभिचार करे।

तरग़ीब ओ तरहीब (प्रोत्साहन और चेतावनी) - १७१: ज़मीन पर नाजायज़ कब्ज़ा करने वालों की आख़िरत की सज़ा का बयान। - ४६३: ब्याज की हुरमत (निषेध) की चेतावनियाँ। - १९१: पड़ोसी पर ज़ुल्म की मज़म्मत (निंदा)। - ४६३: ब्याज के कारोबार में शरीक चार तरह के आदमियों पर लानत है। - २७८: ब्याज की चेतावनियों के बयान की अहादीस। - ४७९: ब्याज का माल ख़बीस (अपवित्र) है। - २९३: ब्याज के ज़िना (व्यभिचार) से ३४ गुना बदतर होने की तीन हदीसें। - ३९१: ब्याज लेने पर चेतावनियाँ।

हुदूद ओ त'अज़ीर (दंड विधान) - २९४: इस मज़मून की तीन हदीसें कि ब्याज का एक दिरहम ३६ बार व्यभिचार के गुनाह के बराबर है। - ३८०: खुलेआम ब्याज खाने वालों का बहिष्कार करना चाहिए। - २९४: दस हदीसें कि ब्याज के सत्तर से ज़्यादा गुनाह हैं जिनमें अदना (न्यूनतम) गुनाह माँ से व्यभिचार के बराबर है। - ४१०: नोट की चोरी पर हाकिम-ए-इस्लाम हाथ काटेगा। - २९८: ब्याज से मुताल्लिक चार आदमियों पर लानत।

फ़ज़ाइल ओ मनाक़िब (गुण और विशेषताएँ) - ३०३: बे-नमाज़ी औरत के साथ रहने से उसके मेहर का कर्ज़दार होकर मरना बेहतर है। - २५१: साहिब-ए-दुर्रे-मुख्तार से बड़े उलेमा-ए-सल्फ़ ओ खलफ़ सनद लेते आए हैं। - ४०२: ब्याज के कारोबार में मदद करना भी गुनाह है। - २५३: क़ाज़ी ख़ान को इजतिहाद का मर्तबा हासिल था। - ३३२: मुसलमान की बदख़्वाही और नुक्सान पहुँचाने पर अहादीस और चेतावनी। - ३५१: अल्लाह तआला पाक है और पाक ही को क़ुबूल फरमाता है। - ३३५: ब्याज के कारोबार पर क़ुरान ओ हदीث की चेतावनियाँ। - ४६९: सबसे अफ़ज़ल (श्रेष्ठ) पेशा कौन सा है।

तारीख़ ओ तज़किरा (इतिहास और संस्मरण) - ३३५: ब्याज के लेन-देन में दीन ओ दुनिया की बर्बादी का बयान। - ३४१: ब्याज खाने वाले, खिलाने वाले, लिखने वाले और उस पर गवाही देने वाले पर हदीस में लानत आई है। - ४४६: मौलवी अब्दुल हई लखनवी साहब की आदत। - ३४१: ब्याज देने

वाला ब्याज लेने वाला भी हो तो डबल मलऊन (अभिशप्त) है। - ४७९: दौलत-ए-उस्मानिया के वाकये का ज़िक्र। - ३५१: रिबा व्यभिचार से बदतर, कहीं ज़्यादा बदतर है।

पृष्ठ 77 / 715

فتاویٰ رضویہ (جلد ہفدہم (۱۷))

- ۵۰۸: ایک اونٹنی نذر کے بدلے حضور علیہ الصلوۃ والسلام نے چھ ناقے عطا فرمائے۔
- ۳۵۱: ربا تہتر گناہوں کا مجموعہ ہے جن میں سے کمترین یہ ہے کہ آدمی اپنی ماں سے زنا کرے۔

ترغیب وترہیب - ۱۷۱: زمین پر ناجائز قبضہ کرنے والوں کی اخروی سزا کا بیان۔ - ۴۶۳: حرمت سود کی وعیدیں۔ - ۱۹۱: ہمسایہ پر ظلم کی مذمت۔ - ۴۶۳: سود کے کاروبار میں شریک چار قسم کے آدمیوں پر لعنت ہے۔ - ۲۷۸: سود کی وعیدوں کے بیان کی احادیث۔ - ۴۷۹: سود کا مال ملک خبیث ہے۔ - ۲۹۳: سود کے زنا سے ۳۳ درجہ بدتر ہونے کی تین حدیثیں۔ - ۳۹۱: سود لینے پر وعیدیں۔

حدود و تعزیر - ۲۹۴: اس مضمون کی تین حدیثیں کہ سود کا ایک درم ۳۶ بار زنا کے گناہ کے برابر۔ - ۳۸۰: علانیہ سود خوروں کا مقاطعہ کرنا چاہئے۔ - ۲۹۴: دس حدیثیں کہ سود کے ستر سے زیادہ گناہ جن میں ادنیٰ گناہ ماں سے زنا کے برابر۔ - ۴۱۰: نوٹ کی چوری پر حاکم اسلام ہاتھ کاٹے گا۔ - ۲۹۸: سود سے متعلق چار آدمیوں پر لعنت۔

فضائل ومناقب - ۳۰۳: بے نمازی عورت کے ساتھ رہنے سے اس کے مہر کا قرضدار ہو کر مرنا بہتر ہے۔ - ۲۵۱: صاحب درمختار سے علماء کبار سلفاً خلفاً استناد کرتے آئے ہیں۔ - ۴۰۲: سودی کاروبار میں معاونت کرنا بھی گناہ ہے۔ - ۲۵۳: قاضی خاں کو رتبہ اجتہاد حاصل تھا۔ - ۳۳۲: مسلمان کی بدخواہی اور ضرر رسانی پر احادیث و وعید۔ - ۳۵۱: اللہ تعالیٰ پاک ہے اور پاک ہی کو

قبول فرماتا ہے۔ - ۳۳۵: سودی کاروبار پر قرآن و حدیث کی وعیدیں۔ - ۴۶۹: سب سے افضل کسب کون سا ہے۔

تاریخ وتذکرہ - ۳۳۵: سودی لین دین میں دین و دنیا کی بربادی کا بیان۔ - ۳۴۱: سود کھانے والے، کھلانے والے، لکھنے والے، اور اس پر گواہی دینے والے پر حدیث میں لعنت آئی ہے۔ - ۴۴۶: مولوی عبدالحئی لکھنوی صاحب کی عادت۔ - ۳۴۱: سود دہندہ سود گیرندہ بھی ہو تو ڈبل ملعون ہے۔ - ۴۷۹: دولت عثمانیہ کے واقعہ کا ذکر۔ - ۳۵۱: ربا زنا سے بدتر جہا بدتر ہے۔

Volume 17 | Fatawa Razawiyya

Trust | Explanation of Shami's statement | 174 In an unauthorized sale, the seller's possession of the price is a trust possession. | 102 | Justification of Fath's text and critique on Shami. | 179 If the owner of a deposit dies and there is no heir, it can be spent on one's own or others' needs. | 315 | Second critique on Shami. | 181 Gambling | Third critique on Shami. | 182 Description of a form of gambling and its prohibition. | 161 | Author's research regarding the correction of the phrase 'bima yata'ayyan' in Allama Bahr's definition. | 222 Transaction of buying grain by giving money, is it 'Salam'? | 327 | Critique on Kifaya, Inaya, Sa'di Afandi, Jami al-Rumuz, and Durr al-Mukhtar. | 223 Detailed description of a new form of gambling and its Sharia ruling. | 329 | Inaya's objection to the definition of Hidaya and the author's response. | 228 Lottery/Ticket is also a form of gambling. | 331 | In Bahr al-Raiq, after the word 'mimma yata'ayyan', it was necessary to add 'ghayr ribawi qubila bijinsihi'. | 233 Gambling involves deception and harm. | 331 | Answer to an objection by Hasan Shurunbulali. | 233 Selling goods through lottery is gambling. | 334 | Currency notes are not ribawi wealth. | 234 Insurance is not a Sharia contract, it is gambling. This transaction with a non-Muslim company is restricted by the condition that there is no un-Islamic restriction and it is beneficial in every way. | 365 | Explanation of a passage from Durr al-Mukhtar and Allama Shami's support. | 249 Miscellaneous | Explanation of a text from Fatawa Khairiyya unrelated to the issue. | 266 Weakening of a specific point from Bahr and Durr. | 97 | Fear and greed motivate humans toward struggle. | 330 Wealth is a fleeting thing. | 118 | Meaning of a jurisprudential passage. | 345 Blood, carcass, and soil are things but not 'wealth'. | 121 | Address to Shami. | 405 Knowledge of adulteration in sale occurs in three ways. | 151 | Third category. | 406 Explanation of a passage from Durar and citation from Shami. | 157 | Critique on Tanwir al-Absar. | 406

जिल्द सत्रहवीं (१७) | फतावी रज़विया

अमानत (धरोहर) | शामी के कथन की व्याख्या | १७४ अनाधिकृत बिक्री में कीमत पर विक्रेता का कब्ज़ा अमानत कब्ज़ा है। | १०२ | फतह के पाठ का स्पष्टीकरण और शामी पर आलोचना। | १७९ जिस अमानत का मालिक मर जाए और कोई वारिस न हो, तो उसे अपनी या दूसरों की ज़रूरतों में खर्च किया जा सकता है। | ३१५ | शामी पर दूसरी आलोचना। | १८१ जुआ (क़िमार) | शामी पर तीसरी आलोचना। | १८२ जुए का एक रूप और उसकी वर्जना का विवरण। | १६१ | अल्लामा बहर की परिभाषा में 'बिमा यतअय्यन' शब्द के सुधार के संबंध में लेखक का शोध। | २२२ पैसा देकर अनाज खरीदने का मामला, क्या यह 'सलम' हुआ? | ३२७ | किफ़ाया, इनाया, सादी आफ़ंदी, जामे अर-रुमुज़ और दुर्रे मुख्तार पर आलोचना। | २२३ जुए के एक नए रूप का विस्तृत विवरण और उसका शरीअत हुक्म। | ३२९ | हिदाया की परिभाषा पर इनाया की आपत्ति और उस आपत्ति पर लेखक की पकड़। | २२८ चिट्ठी (लाटरी) भी जुए का एक रूप है। | ३३१ | बहर अर-राइक में शब्द 'मिम्मा यतअय्यन' के बाद 'गैर रिबवी क़ुबिला बिजिनिसही' जोड़ने की आवश्यकता थी। | २३३ जुए में धोखा और नुक़सान होता है। | ३३१ | हसन शुरुनबुलाली की एक आपत्ति का उत्तर। | २३३ चिट्ठी के माध्यम से माल बेचना जुआ है। | ३३४ | नोट रिबवी माल नहीं है। | २३४ बीमा शरीअत अनुबंध नहीं है, यह जुआ है। गैर-मुस्लिम कंपनी के साथ यह मामला इस शर्त के साथ सीमित है कि कोई गैर-शरीअत पाबंदी न हो और हर तरह अपना नफ़ा (लाभ) हो। | ३६५ | दुर्रे मुख्तार के एक पाठ की व्याख्या और अल्लामा शामी का समर्थन। | २४९ विविध | फतावा खैरिया के मुद्दे से असंबद्ध लेख की व्याख्या | २६६ बहर और दुर के एक मुद्दे की कमजोरी। | ९७ | डर और लालच इंसान को जद्दोजहद (संघर्ष) के लिए उभारते हैं। | ३३० धन आने-जाने वाली चीज़ है। | ११८ | एक फिकही (न्यायिक) इबारत (पाठ) का अर्थ। | ३४५ रक्त, मृत शरीर और मिट्टी चीज़ें तो हैं लेकिन 'माल' (वैध धन) नहीं हैं। | १२१ | शामी को संबोधन। | ४०५ बिक्री में मिलावट का ज्ञान तीन तरह से होता है। | १५१ | तीसरी किस्म। | ४०६ दुरर के एक पाठ की व्याख्या और शामी से प्रमाण। | १५७ | तनवीर अल-अबसार पर आलोचना। | ४०६

पृष्ठ ७८ / ७१५

امانت | شامی کے قول کی توضیح | ۱۷۴ بیع فضولی میں قیمت پر بائع کا قبضہ قبضہ امانت ہے۔ | ۱۰۲ | عبارت فتح کی توجیہ اور شامی پر تطفل۔ | ۱۷۹ جس ودیعت کا مالک فوت ہو گیا اور کوئی وارث نہیں تو اس کو اپنی یا دوسرے کی ضروریات میں صرف کر سکتے ہیں۔ | ۳۱۵ | شامی پر دوسرا تطفل۔ | ۱۸۱ قمار | شامی پر تیسرا تطفل۔ | ۱۸۲ قمار کی ایک صورت اور اس کی حرمت کا بیان۔ | ۱۶۱ | علامہ بحر کی تعریف میں لفظ بما یتعین کی تصحیح سے متعلق مصنف کی تحقیق۔ | ۲۲۲ روپیہ دے کر غلہ کی خریداری کا معاملہ کیا یہ سلم ہوئی۔ | ۳۲۷ | کفایہ، عنایہ، سعدی آفندی، جامع الرموز اور در مختار پر تطفل۔ | ۲۲۳ جوئے کی ایک نئی صورت کا تفصیلی بیان اور اس کا شرعی حکم۔ | ۳۲۹ | ہدایہ کی تعریف پر عنایہ کا اعتراض اور اس اعتراض پر مصنف کی گرفت۔ | ۲۲۸ چٹھی بھی قمار کی ایک صورت ہے۔ | ۳۳۱ | بحر الرائق میں لفظ "مما یتعین" کے بعد "غیر ربوی قوبل بجنسہ" کے اضافہ کی ضرورت تھی۔ | ۲۳۳ قمار میں غش و ضرر ہوتا ہے۔ | ۳۳۱ | حسن شرنبلالی کے ایک اعتراض کا جواب۔ | ۲۳۳ چٹھی کے ذریعہ مال کی فروخت جوا ہے۔ | ۳۳۴ | نوٹ مال ربوی نہیں۔ | ۲۳۴ بیمہ عقد شرعی نہیں، یہ جوا ہے۔ غیر مسلم کمپنی سے یہ معاملہ اس شرط کے ساتھ مقید ہے کہ کوئی غیر شرعی پابندی نہ ہو اور ہر طرح اپنا نفع ہو۔ | ۳۶۵ | در مختار کی ایک عبارت کی توضیح اور علامہ شامی کی تائید۔ | ۲۴۹ متفرقات | فتاویٰ خیریہ کی مسئلہ سے غیر متعلق تحریر کی توضیح | ۲۶۶ بحر اور در کے ایک جزئیے کی تضعیف۔ | ۹۷ | خوف اور طمع انسان کو جدوجہد پر ابھارتے ہیں۔ | ۳۳۰ مال آنے جانے والی چیز ہے۔ | ۱۱۸ | ایک فقہی عبارت کا مطلب۔ | ۳۴۵ خون، مردار اور مٹی اشیاء تو ہیں مگر مال نہیں ہے۔ | ۱۲۱ | معروضہ علی الشامی | ۴۰۵ بیع

میں ملاوٹ کا علم تین طرح ہوتا ہے۔ | ۱۵۱ | قسم سوم۔ | ۴۰۶ درر کی ایک عبارت کی توضیح اور شامی سے استشہاد۔ | ۱۵۷ | تطفل علی تنویر الابصار۔ | ۴۰۶

Fatawa Rizwia Volume Seventeen (17)

- Taftul (commentary) on Tanveer. 415
- The extent of India and the limits of its length and breadth. 418
- To abandon a habit is to create enmity with oneself. 420
- An explanation of the issue of Qunya. 422
- The weakening of the meaning that scholars understood from the text of Jami-al-Saghir and which Allama Shami supported with the text of Qari-al-Hidaya, and Taftul on Zakhira, Bahr, etc. 430
- Presentation to Allama Shami 1. 441
- Presentation to Allama Shami 2. 441
- Taftulat (commentaries) on Allama Qari al-Hidaya. 441
- Taftul on Fath al-Qadir. 442
- Taftul on Khania. 464
- Taftul on al-Fath. 475
- Description of a misconception of Hazrat Allama Shami (may Allah the Almighty have mercy on him). 625
- Refined discourse on the speech of Bahr. 625
- Interpretation and explanation of the speech of Mukhtasar Karkhi. 626
- Resolving the contradiction between the texts of Mabsoot and Jami al-Saghir. 636
- Taftul on Allama Shami. 636

फतावा रज़विया जिल्द सत्रह (17)

- तन्वीर पर तफ़्फ़ुल (हस्तक्षेप/टीका)। 415
- हिंद देश का विस्तार और उसकी लंबाई और चौड़ाई की सीमाएं। 418
- आदत छोड़ना खुद के साथ दुश्मनी करना है। 420
- कुन्या के मसले की एक व्याख्या। 422
- उस अर्थ की दुर्बलता जिसे विद्वानों ने जामि-अल-सगीर के पाठ से समझा और अल्लामा शामी ने क़ारी-अल-हिदाया के पाठ से उसका समर्थन किया, और जखीरा, बहर आदि पर तफ़्फ़ुल। 430
- अल्लामा शामी की सेवा में निवेदन 1. 441
- अल्लामा शामी की सेवा में निवेदन 2. 441
- अल्लामा क़ारी-अल-हिदाया पर तफ़्फ़ुलात। 441
- फ़तह अल-क़दीर पर तफ़्फ़ुल। 442
- खानिया पर तफ़्फ़ुल। 464
- तफ़्फ़ुल अलल फ़तह। 475
- हज़रत अल्लामा शामी (अल्लाह तआला उन पर रहम करे) के एक भ्रम का विवरण। 625
- बहर के कलाम का सुंदर प्रवचन। 625
- मुख्तसर कर्खी के कलाम की व्याख्या और स्पष्टीकरण। 626
- मबसूत और जामि-अल-सगीर की इबारतों से विरोधाभास का निवारण। 636
- अल्लामा शामी पर तफ़्फ़ुल। 636

पृष्ठ 79 का 715

فتاویٰ رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

- تنویر پر تطفل۔ ۴۱۵
- ملک ہند کی وسعت اور اس کے طول وعرض کی حدیں۔ ۴۱۸
- عادت کا چھوڑنا خود اپنے ساتھ عداوت کرنا ہے۔ ۴۲۰
- مسئلہ قنیہ کی ایک توجیہ۔ ۴۲۲
- اس معنی کی تضعیف جو علماء نے جامع صغیر کی عبارت سے سمجھا اور علامہ شامی نے قاری الہدایہ کی اس سے تائید کی، اور ذخیرہ وبحر وغیرہ پر تطفل۔ ۴۳۰
- معروضہ بر علامہ شامی ۱۔ ۴۴۱
- معروضہ بر علامہ شامی ۲۔ ۴۴۱
- علامہ قاری الہدایہ پر تطفلات۔ ۴۴۱
- فتح القدیر پر تطفل۔ ۴۴۲
- خانیہ پر تطفل۔ ۴۶۴
- تطفل علی الفتح۔ ۴۷۵
- حضرت علامہ شامی رحمۃ اللہ تعالیٰ کے ایک وہم کا بیان۔ ۶۲۵
- بحر کے کلام کی نفیس تقریر۔ ۶۲۵
- مختصر کرخی کے کلام کی تفسیر وتوجیہ۔ ۶۲۶
- مبسوط اور جامع صغیر کی عبارتوں سے دفع تدافع۔ ۶۳۶
- علامہ شامی پر تطفل۔ ۶۳۶

Fatawa Razawiyya Volume 17

In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful.

Book of Sales (Description of buying and selling)

Issue 1: What do the scholars of religion and jurists of the clear Shariah say in this case? Zaid said, "I am selling my house," and Amr said, "I will buy it." Both agreed, and the price was settled. Zaid even took an earnest money deposit (bayana) from Amr and brought paper for writing the sale deed. In this situation, is the sale legally complete or incomplete according to Shariah? Explain and be rewarded. (t)

Answer: Although in the inquired case, the explicit words of offer (ijab) and acceptance (qabul) were not found—since "I will buy" is in the future tense whereas the past or present tense is required here—nevertheless, if the custom in these cities and towns is such that after negotiations regarding the bargain and settling of the price, giving and taking earnest money implies a final sale, and after this, one party alone cannot retract from the contract even if formal words of offer and acceptance were not exchanged, then the sale is complete. This is because in these contracts, the meaning (intent) is what matters, not the literal words. The actual basis is the mutual consent of both parties, whether expressed verbally or through action. Therefore, 'ta’ati' (transaction by conduct) is established as a cause for the binding nature of a sale, just like offer and acceptance. It is as if the contracting parties said nothing with their tongues, yet habit is firm and custom is credible. A ruling based on custom revolves around it. When this action, like words, manifests mutual consent, then it will result in a completed sale just like words would.

In Al-Hidayah: "The meaning is what is considered in these contracts, and for this reason, sale is concluded through conduct (ta'ati)."

It is in Hidayah that in these contracts, it is the meaning that is considered; therefore, the sale through conduct is concluded in both valuable and trivial items.

Page 81 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

बिस्मिल्लाह हिर्रहमान निर्रहीम

किताब अल-बयूँ (खरीद-बिक्री का वर्णन)

मसला १: धर्म के विद्वान और शरीयत के मुफ्ती इस मामले में क्या कहते हैं कि ज़ैद ने कहा, "मैं अपना घर बेचता हूँ," और अमर ने कहा, "मैं इसे खरीदूँगा।" दोनों आपस में सहमत हो गए और कीमत तय हो गई। ज़ैद ने अमर से बयाना (अग्रिम राशि) भी ले लिया और बिक्रीनामा लिखने के लिए कागज भी ले आया। इस स्थिति में शरीयत के अनुसार बिक्री पूरी हो गई या अधूरी रही? बयान करें और पुण्य पायें। (त)

उत्तर: हालाँकि पूछी गई स्थिति में ईजाब (प्रस्ताव) और कुबूल (स्वीकृति) के शब्द नहीं पाए गए, क्योंकि "खरीदूँगा" भविष्य काल है जबकि यहाँ भूतकाल या वर्तमान काल की आवश्यकता है। लेकिन अगर इन शहरों और इलाकों में यह रिवाज है कि मोलभाव और कीमत तय होने के बाद बयाना देना और लेना पूरी बिक्री का सूचक माना जाता है, और इसके बाद एक पक्ष अकेले अनुबंध से पीछे नहीं हट सकता, भले ही ईजाब और कुबूल के औपचारिक शब्द बीच में न आए हों, तो बिक्री पूरी हो गई। क्योंकि इन अनुबंधों में अर्थ (उद्देश्य) का महत्व है न कि शब्दों का। और असल आधार दोनों पक्षों की आपसी रज़ामंदी है, चाहे वह बोलकर प्रकट हो या कार्य द्वारा। इसीलिए 'तआती' (लेन-देन के व्यवहार) को ईजाब और कुबूल की तरह बिक्री की बाध्यता का कारण माना गया है। मानो अनुबंध करने वालों ने जुबान से कुछ न कहा हो, क्योंकि आदत पक्की है और रिवाज विश्वसनीय है। और जो नियम रिवाज पर आधारित होता है, वह उसी के साथ चलता है। जब यह कार्य, शब्दों की तरह आपसी रज़ामंदी को प्रकट करता है, तो उन्हीं की तरह यह भी पूरी बिक्री का कारण होगा।

अल-हिदाया में है: "इन अनुबंधों में अर्थ ही मान्य है, और इसी कारण से तआती (आचरण द्वारा लेनदेन) से बिक्री संपन्न हो जाती है।"

हिदाया में है कि इन अनुबंधों में अर्थ का ही विचार किया जाता है, इसीलिए बढ़िया और घटिया चीज़ों में बय-ए-तआती (आचरण द्वारा बिक्री) संपन्न हो जाती है।

فتاویٰ رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

بسم اللہ الرحمن الرحیم

کتاب البیوع (خرید وفروخت کا بیان)

مسئلہ ۱: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اور مفتیانِ شرع متین اس صورت میں کہ زید نے کہا میں اپنا مکان بیچتا ہوں ، عمرو نے کہا میں خریدوں گا، دونوں آپس میں راضی ہوئے قیمت قرار پا گئی، زید نے عمرو سے بیانہ بھی لے لیا اور کاغذ واسطے تحریر بیعنامہ کے خرید کر لایا، اس صورت میں شرعاً بیع تمام ہو گئی یا ناتمام رہی؟ بینوا توجروا (بیان کیجئے اجر پائے۔ت)

الجواب: ہر چند صورت مستفسرہ میں الفاظ ایجاب و قبول نہ پائے گئے کہ "خرید کروں گا" صیغہ استقبال ہے اور یہاں درکار ماضی یا حال، لیکن اگر متعارف ان بلاد و امصار یوں یوں ہے کہ بعد گفتگوئے مساومت و قرار دادِ قیمت بیانہ اور لینا مستلزم تمام بیع ٹھہرتا ہے اور بعد اس کے تنہا ایک عاقد عقد سے رجوع نہیں کر سکتا اگر چہ الفاظ ایجاب و قبول درمیان نہ آئے ہوں تو بیع تمام ہو گئی کہ مقصود ان عقود میں معنی ہیں نہ کہ لفظ، اور اصل مدار تراضی طرفین قولا ظاہر ہو خواہ فعلا، اس لیے تعاطی مثل ایجاب و قبول لزوم بیع کا سبب قرار پائی، گویا عاقدین زبان سے کچھ نہ کہیں کہ عادت محکم ہے اور تعارف معتبر، اور جو حکم عرف پر مبنی ہوتا ہے اس کے ساتھ دائر رہتا ہے، جب یہ فعل مثل الفاظ مظہر تراضی ہوا تو انہیں کی طرح موجب تمام بیع ہوگا۔

فی الھدایۃ والمعنی ھو المعتبر فی ھذہ العقود و لھذا ینعقد بالتعاطی ہدایہ میں ہے کہ ان عقود میں معنی ہی کا اعتبار ہوتا ہے اسی لئے بڑھیا اور گھٹیا چیزوں میں بیع تعاطی منعقد

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

"In precious and cheap things, it is correct because mutual consent is realized." [Sale] takes place and this is correct because mutual consent is established. 1 And Allah Almighty knows best and His knowledge is most complete. (T)

Case 2: From Rampur State, Vegetable Market Mohalla, sent by Syed Maqbool Hussain Sahib, Lawyer, 21 Muharram 1332 AH. What do the scholars of religion and muftis of the firm Shariah say about this matter: Zaid left an inherited house. His son and heir, named 'Amr, was a sole heir but he was a minor. Another person, a non-heir, during 'Amr's minority, declared the said house as his own property and sold it to Bakr. Bakr took possession. After reaching maturity, 'Amr, while not in possession of the said house, sold it to Khalid. Khalid possesses a sale deed based on 'Amr's admission against Bakr, and 'Amr is also a claimant for vacating and obtaining possession of the said house. 'Amr admits to having sold it, and he accepts the claim. Bakr, the possessor of the sold house, regards his possession as proof and denies the claim, raising the Shariah plea of "Maqdoor-ut-Tasleem" (ability to deliver). In the above-mentioned scenario, can the issue of "Maqdoor-ut-Tasleem" be legally relevant? Also, please write the true meaning of the said issue and its example so that it becomes understandable to common people. Explain and be rewarded.

The Answer: At the time 'Amr sold to Khalid, if 'Amr had just Shariah witnesses to the effect that "this house is my property, Bakr is the seller [falsely] but Bakr is a usurper," then the sale by 'Amr to Khalid occurred as valid, complete, and effective. The house became the property of Khalid. Khalid's claim is correct due to the existence of just evidence. 'Amr legally had the "power of delivery," and this much is sufficient for the validity and effectiveness of the sale. Actual immediate "power of delivery" is not necessary according to anyone. For example, if a slave was sent a thousand kos (a unit of distance) away for some work and was sold here, the sale is valid because his return is expected according to custom, although there is a possibility he might rebel and run away. Or pigeons that have been tamed and are flown in the morning and return home in the evening; if they are sold during their absence, the sale is valid because their return is expected, so the "power of delivery" is legally present. Similarly, when just evidence is present, there is a strong hope of obtaining a decree (legal judgment), so here too, legal power is present, and this is enough. Likewise, if the usurper had admitted to the usurpation and the owner's ownership, then also the owner's sale would be valid and effective because an admission is, regarding the person making it, like just evidence - a binding proof, in

fact, even stronger. Therefore, if a denier makes an admission after the presentation of evidence, the judgment will be based on the admission, not the evidence. Yes, if at the time of sale 'Amr had no evidence, nor was Bakr admitting 'Amr's ownership, then now...

1 Al-Hidayah, Kitab al-Buyu' (Book of Sales), Yusufi Press, Lucknow, 3/22, 25. Page 82 of 715

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

"कीमती और सस्ती चीज़ों में, यह सही है क्योंकि आपसी सहमति सिद्ध हो जाती है।" [बिक्री] हो जाती है और यही सही है क्योंकि आपसी रजामंदी सिद्ध है। 1 और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है और उसका ज्ञान सबसे पूर्ण है। (त)

मसला 2: रियासत रामपुर, मोहल्ला सब्जी मंडी, प्रेषक सैयद मकबूल हुसैन साहब, वकील, 21 मुहर्रम 1332 हिजरी। दीन के विद्वान और शरीअत के मुफ़्ती इस मसले के बारे में क्या कहते हैं: ज़ैद ने एक वरासत में मिला हुआ मकान छोड़ा। उसका बेटा और वारिस, जिसका नाम 'अम्र' है, वह इकलौता वारिस था लेकिन नाबालिग था। एक दूसरे व्यक्ति ने, जो वारिस नहीं था, 'अम्र' के नाबालिग होने के समय उक्त मकान को अपनी संपत्ति घोषित कर उसे 'बक्र' को बेच दिया। बक्र ने कब्ज़ा कर लिया। बालिग होने के बाद, अम्र ने उक्त मकान पर कब्ज़ा न होने की स्थिति में उसे 'ख़ालिद' को बेच दिया। ख़ालिद के पास बक्र के खिलाफ अम्र के इकरार (स्वीकृति) के आधार पर बिक्री दस्तावेज़ है, और अम्र भी उक्त मकान को खाली कराने और कब्ज़ा पाने का दावेदार है। अम्र द्वारा बेचे जाने की बात स्वीकार की गई है और वह दावे को स्वीकार करता है। बेचे गए मकान पर कब्ज़ा रखने वाला बक्र, खुद के कब्ज़े को ही दलील मानकर दावे से इनकार करता है और "मक़दूर-उत-तस्लीम" (सौंपने की क्षमता) की शरीअत संबंधी आपत्ति उठाता है। क्या ऊपर बताई गई स्थिति में "मक़दूर-उत-तस्लीम" का मसला कानूनी तौर पर लागू हो सकता है? साथ ही, उक्त मसले का सही अर्थ और उसका उदाहरण भी लिखें ताकि आम लोगों के लिए समझना आसान हो जाए। बयान करें, पुण्य पाएँ।

उत्तर: जिस समय अम्र ने ख़ालिद के हाथ बिक्री की, अगर उस समय अम्र के पास इस बात पर शरीअत के अनुसार न्यायपूर्ण गवाह थे कि "यह मकान मेरी मिल्कियत है, बक्र बेचने वाला है [गलत तरीके से] लेकिन बक्र गसब (अवैध कब्ज़ा करने वाला) है," तो अम्र द्वारा ख़ालिद को की गई बिक्री सही, पूर्ण और प्रभावी मानी गई। मकान ख़ालिद की मिल्कियत हो गया। न्यायपूर्ण प्रमाण (बय्यिना आबिला) की मौजूदगी के कारण ख़ालिद का दावा सही है। अम्र को हुक्मन (कानूनी तौर पर) "कुदरत-अलत-तस्लीम" (सौंपने की शक्ति) प्राप्त थी, और बिक्री की वैधता और प्रभावशीलता के लिए इतनी शक्ति पर्याप्त है। वर्तमान में वास्तव में "मक़दूर-उत-तस्लीम" होना किसी के अनुसार अनिवार्य नहीं है। उदाहरण के लिए, एक गुलाम को किसी काम के लिए हज़ार कोस दूर भेजा गया और यहाँ उसे बेच दिया गया, तो बिक्री सही है क्योंकि सामान्य तौर पर उसका वापस आना संभावित

है, हालाँकि यह संभावना है कि वह विद्रोह कर दे और भाग जाए। या पाले हुए कबूतर जो सुबह उड़ाए जाते हैं और शाम को घर लौट आते हैं; उनकी अनुपस्थिति में बिक्री सही है क्योंकि उनकी वापसी संभावित है, इसलिए "कुदरत-अलत-तस्लीम" हुक्मन प्राप्त है। इसी तरह जब न्यायपूर्ण प्रमाण मौजूद हो, तो डिक्री (कानूनी आदेश) मिलने की मज़बूत उम्मीद होती है, तो यहाँ भी कानूनी शक्ति प्राप्त है, और यही काफी है। इसी तरह अगर गसब करने वाला गसब और मालिक की मिल्कियत का इकरार कर ले, तब भी मालिक की बिक्री सही और प्रभावी होती क्योंकि इकरार भी इकरार करने वाले के हक़ में न्यायपूर्ण प्रमाण की तरह एक बाध्यकारी दलील है, बल्कि उससे भी अधिक प्रबल है। इसीलिए अगर इनकार करने वाला प्रमाण पेश होने के बाद इकरार कर ले, तो फैसला इकरार के आधार पर होगा न कि प्रमाण के आधार पर। हाँ, अगर बिक्री के समय न तो अम्र के पास शरीयत के अनुसार प्रमाण था और न ही बक्र अम्र की मिल्कियत का इकरार करने वाला था, तो अब...

1 अल-हिदाया, किताब अल-बुयूँ (बिक्री की किताब), युसुफी प्रेस, लखनऊ, 3/22, 25. पृष्ठ 82/715

فی النفیس والخسیس ھو الصحیح لتحقق المراضاۃ [بیع] ہو جاتی ہے اور یہی صحیح ہے کیونکہ باہمی رضامندی متحقق ہے۔ 1 واللہ تعالٰی اعلم وعلمہ اتم۔ ہے، واللہ تعالٰی اعلم وعلمہ اتم (ت)

مسئلہ ۲: از ریاست رامپور محلہ سبزی منڈی مرسلہ سید مقبول حسین صاحب وکیل ۲۱ محرم ۱۳۳۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیان شرع متین بیچ اس مسئلہ کے کہ زید نے ایک مکان متروکہ چھوڑا، مسمٰی عمرو اس کا پسر وارث مع الحصر مگر وہ نابالغ تھا دیگر شخص غیر وارث نے بہ زمانہ نابالغی مسمٰی عمرو مکان مذکور کو اپنی ملکیت قرار دے کر بدست بکر بیچ کر دیا، بکر نے قبضہ کر لیا، بعد بلوغ مسمٰی عمرو نے بحالت غیر قابض مکان مذکور بدست خالد بیچ کر دیا خالد بذریعہ دستاویز بیعنامہ اقراری عمرو بنام بکر و نیز عمرو دعویدار تخلیہ و دخلیابی مکان مذکور ہے عمرو کو بیع کر دینا تسلیم ہے اور دعوٰی سے اقبال ہے بکر قابض مکان بیع موسومہ خود کو حجت گردان کر منکر دعوٰی ہے اور مسئلہ شرعی مقدور التسلیم کا عذر کرتا ہے، کیا صورت مذکورہ بالا میں مسئلہ مقدور التسلیم شرعاً متعلق ہو سکے گا اور مسئلہ مذکور کے حقیقی معنی اور اس کی مثال بھی تحریر فرمائے تاکہ عام فہم ہو جائے۔ بینوا توجروا۔

الجواب: عمرو نے جس وقت خالد کے ہاتھ بیع کی اگر عمرو اس وقت گواہانِ عادل شرعی اس امر پر رکھتا تھا کہ یہ مکان میری ملک ہے بکر بائع بکر غاصب ہے جبکہ تو بیع عمرو بدست خالد صحیح و تام و نافذ واقع ہوئی مکان ملک خالد ہو گیا، خالد کا دعوٰی صحیح ہے بوجہ وجود بینہ عادلہ، عمرو کو حکماً قدرتہ علی التسلیم حاصل تھی اور اسی قدر صحت و نفاذ بیع کے لئے کافی ہے حقیقۃ مقدور التسلیم فی الحال ہونا کسی کے نزدیک ضرور نہیں، غلام کو کسی کام کے لئے ہزار کوس پر بھیجا اور یہاں اسے بیچ کر دیا، بیع صحیح ہو گئی کہ عادۃً اس کا واپس آنا مظنون

ہے اگر چہ احتمال ہے کہ سرکشی کرے اور بھاگ جائے، کبوتر بلے ہوئے کہ صبح اڑائے جاتے اور شام کو گھر پلٹ آتے ہیں، ان کی غیبت میں بیچے بیع صحیح ہے کہ رجوع مرجوع ہے تو قدرتہ علی التسلیم حکماً حاصل ہے یوں ہی جب بینہ عادلہ موجود ہے تو ڈگری ملنے کی امید قوی ہے تو یہاں بھی قدرت حکمیہ حاصل، اور یہی بس ہے، اسی طرح اگر غاصب مقر غصب و ملک مالک ہوتا جب بھی بیع مالک صحیح و نافذ ہوتی کہ اقرار بھی حق مقر میں مثل بینہ حجت ملزمہ ہے بلکہ اس سے بھی اقویٰ، ولہٰذا اگر منکر بعد اقامتِ بینہ اقرار کر دے حکم بربنائے اقرار ہوگا نہ کہ بربنائے بینہ، ہاں اگر وقت بیع عمرو نہ بکر مقر ملک عمرو تھا، نہ عمرو کے پاس بینہ شرعیہ، تو اب

1 الهدایه کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنؤ ۲۲/۳، ۲۵ Page 82 of 715

Volume 17 Fatawa-e-Razvia

The issue of the condition of 'capability to deliver' (qudrah 'ala al-taslim) will necessarily arise. It is evident that in this case, Amr has neither literal nor legal capability to deliver, as obtaining a decree without admission and evidence is not at all certain. Thus, this is like a fugitive slave who has run away defiantly and is absent. If the owner sells him, it will not be valid at all. Similarly, a new pigeon that has flown away and is not tamed so that its return is expected; its sale is also not permissible because the capability to deliver is missing. If this was the situation, then Khalid has no right of claim. Regarding the capability to deliver, there are two opinions of our Imams, both strong: first, that it is a condition for the formation (in'iqad) of the contract, meaning without it, the sale is absolutely void (batil); second, that it is a condition for the validity (sihhat) of the sale, meaning without it, the sale is irregular (fasid). According to the first opinion, it is clear that Khalid is not the buyer nor is Amr the seller; how can a mere stranger have the right to claim? According to the second opinion, since the sale is irregular, and in an irregular sale the buyer does not become the owner without possession, and when the irregularity is due to lack of capability to deliver, and in an irregular sale the removal of the factor causing irregularity makes the sale valid, the validity of the sale depended on Bakr admitting or just witnesses being found. Therefore, this sale became suspended (mawquf), like a disliked (makruh) sale which is both irregular and suspended. And a suspended sale also does not grant ownership to the buyer. Thus, in any case, in this situation, Khalid does not have ownership in the house, nor does he have a right of claim over the house. It is stated in Alamgiri:

If he sells the usurped property to someone other than the usurper, it is suspended according to the sound opinion. If the usurper admits, the sale is completed and becomes binding. If he denies but the one from whom it was usurped has evidence, it is the same. This is also mentioned in al-Ghiyathiyya. And if he has no evidence and he does not deliver it until it is destroyed, the sale is annulled. This is also mentioned in al-Dhakhira.[1]

If the owner sold the usurped property to someone other than the usurper, the correct view is that the sale became suspended. If the usurper admitted, the sale became complete and binding. If he denied and the person from whom it was usurped has witnesses available, the ruling is the same. Similarly, in Ghiyathiya it says if he does not have witnesses and he could not hand over the sold item to the buyer until the item was destroyed, the sale broke. Similarly, it is in Dhakhira. (Transl.)

It is in Durr-e-Mukhtar:

The sale by the owner of the usurped property is suspended upon evidence or the usurper's admission.[2]	The owner's sale of the usurped property will be suspended upon the presence of the usurper's admission or witnesses. (Transl.)

1 Fatawa Hindiyya, Book of Sales, Chapter 9, Section 3, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 3/111 2 Durr-e-Mukhtar, Book of Sales, Section on Fusus, Mujtabai Press, Delhi, 2/31

सुपुर्दगी की क्षमता (कुदरह अला अल-तस्लीम) की शर्त का मसला निश्चित रूप से लागू होगा। यह स्पष्ट है कि इस स्थिति में अम्र के पास न तो वास्तविक और न ही कानूनी सुपुर्दगी की क्षमता है, क्योंकि बिना स्वीकृति और साक्ष्य के डिक्री मिलना बिल्कुल भी निश्चित नहीं है। तो यह एक भगोड़े गुलाम की तरह है जो विद्रोह करके भाग गया है और अनुपस्थित है। यदि मालिक उसे बेचता है, तो यह बिल्कुल भी सही नहीं होगा। इसी तरह, एक नया कबूतर जो उड़ गया है और वह अभ्यस्त नहीं है कि उसकी वापसी की उम्मीद हो; उसकी बिक्री भी जायज़ नहीं है क्योंकि सुपुर्दगी की क्षमता लुप्त है। यदि यह स्थिति थी, तो खालिद को दावे का कोई अधिकार नहीं है। सुपुर्दगी की क्षमता के बारे में हमारे इमामों की दो राय हैं, दोनों ही प्रबल हैं: पहली यह कि वह अनुबंध के गठन (इनइकाद) की शर्त है, यानी उसके बिना बिक्री बिल्कुल शून्य (बातिल) है; दूसरी यह कि वह बिक्री की वैधता (सिहत) की शर्त है, यानी उसके बिना बिक्री दोषपूर्ण (फ़ासिद) है। पहली राय के अनुसार, यह स्पष्ट है कि न खालिद खरीदार है और न अम्र विक्रेता; एक अजनबी को दावा करने का क्या अधिकार है? और दूसरी राय के अनुसार, चूँकि बिक्री दोषपूर्ण है, और दोषपूर्ण बिक्री में खरीदार बिना कब्जे के मालिक नहीं बनता है, और जब दोष सुपुर्दगी की क्षमता न होने के कारण हो, और दोषपूर्ण बिक्री में दोष पैदा करने वाले कारक को दूर करने से बिक्री सही हो जाती है, तो बिक्री की वैधता इस बात पर निर्भर थी कि बक्र स्वीकार कर ले या न्यायपूर्ण गवाह मिल जाएँ। इसलिए यह बिक्री स्थगित (मौकूफ़) भी हुई, जैसे मकरूह बिक्री कि दोषपूर्ण भी है और स्थगित भी। और स्थगित बिक्री भी खरीदार को स्वामित्व प्रदान नहीं करती है। तो किसी भी स्थिति में, खालिद का मकान पर स्वामित्व नहीं है, न ही उसका मकान पर दावा बनता है। आलमगीरी में है:

यदि मालिक ने अपहृत संपत्ति को अपहर्ता के अलावा किसी और को बेच दिया, तो सही मत के अनुसार यह स्थगित है। यदि अपहर्ता स्वीकार कर लेता है, तो बिक्री पूरी और अनिवार्य हो जाती है। यदि वह इनकार करता है लेकिन जिससे अपहरण किया गया था उसके पास साक्ष्य हैं, तब भी यही नियम है। ऐसा ही अल-ग़ियाथिया में है। और यदि उसके पास साक्ष्य नहीं हैं और वह उसे तब तक

मालिक ने अपहृत को अपहर्ता के गैर के हाथ बेचा तो सही यह है कि वह बिक्री स्थगित हो गई, अगर अपहर्ता ने स्वीकार किया तो बिक्री पूर्ण और अनिवार्य हो गई, अगर उसने इनकार किया और अपहृत व्यक्ति (जिससे छीना गया) के पास गवाह मौजूद हैं तब भी यही हुक्म है। इसी तरह ग़ियाथिया में है अगर उसके पास गवाह मौजूद नहीं और वह बेची गई वस्तु को खरीदार के

नहीं सौंपता जब तक कि वह नष्ट न हो जाए, तो बिक्री रद्द हो जाती है। ऐसा ही अल-ज़खीरा में है।[1]

हवाले न कर सका यहाँ तक कि वस्तु नष्ट हो गई तो बिक्री टूट गई। इसी तरह ज़खीरा में है। (अनु.)

दुर्र-ए-मुख्तार में है:

मालिक द्वारा अपहृत संपत्ति की बिक्री गवाहों या अपहर्ता की स्वीकृति पर स्थगित है।[2]

मालिक का अपहृत वस्तु को बेचना अपहर्ता की स्वीकृति या गवाहों की उपस्थिति पर स्थगित होगा। (अनु.)

1. फतावा हिंदिया, किताबुल बुयू, बाब ९, फसल ३, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर ३/१११
2. दुर्र-ए-मुख्तार, किताबुल बुयू, फसल फिल फुसूल, मतबा मुजतबाई, दिल्ली २/३१

ضرور مسئلہ اشتراط قدرۃ علی التسلیم عائد ہو گا ، ظاہر ہے کہ اس صورت میں عمرو کو نہ حقیقۃً قدرۃ التسلیم ہے نہ حکماً کہ بے اقرار و بینہ ڈگری ملنا ہر گز مظنون نہیں، تو یہ غلامِ آبق کی مانند ہوا جو سرکشی کر کے بھاگ گیا اور غائب ہے ، مالک اگر اسے بیچ کرے گا ہر گز صحیح نہ ہو گی ، یونہی نیا کبوتر کہ اڑ گیا وہ ہلہ ہوا نہیں کہ واپس مظنون ہو اس کی بیع بھی جائز نہیں کہ قدرۃ التسلیم مفقود ہے، اگر یہ صورت تھی تو خالد کو دعوٰی کا کوئی حق نہیں، قدرۃ التسلیم میں ہمارے ائمہ کے دو قول ہیں، دونوں با قوت، اول یہ کہ وہ شرطِ انعقاد ہے کہ بے اس کے بیع باطل محض ہے، دوم شرطِ صحتِ بیع ہے ، کہ بے اس کے بیع فاسد ہے، پہلے قول پر تو ظاہر ہے کہ نہ خالد مشتری ہے نہ عمرو بائع، اجنبی محض کو دعوٰی کا کیا اختیار ، اور قولِ ثانی پر جبکہ بیع فاسد ہے اور بیع فاسد میں مشتری بے قبضہ مالک نہیں ہوتا پھر جبکہ فساد بوجہ عدمِ قدرۃ التسلیم ہے اور بیع فاسد میں ارتفاعِ مفسد بیع کو صحیح کر دیتا ہے تو صحتِ بیع اس پر موقوف ہوئی کہ بکر مقر ہو جائے یا کوئی بینہ عادلہ ہاتھ آئے لہٰذا یہ بیع موقوف بھی ہوئی جیسے بیع مکروہ کہ فاسد بھی ہے اور موقوف بھی اور بیع موقوف بھی مفید ملکِ مشتری نہیں ہوتی تو بہر طور اس صورت میں خالد کے لئے مکان میں ملک نہیں ، نہ اسے مکان پر دعویٰ پہنچے ، عالمگیریہ میں ہے:

اذا باع المغصوب من غیر المغاصب — مالک نے مغصوب کو غاصب کے غیر کے ہاتھ بیچا تو

فھو موقوف ھوا لصحیح فان اقر — صحیح یہ ہے کہ وہ بیع موقوف ہو گئی، اگر غاصب نے

الغاصب تم البیع و لزمہ ، وان جہدو اقرار کیا تو بیع تام و لازم ہو گئی ، اگر اس نے انکار کیا اور

للمغصوب منہ بینہ فکذلک کذا فی — مغصوب منہ کے پاس گواہ موجود ہیں تب بھی یہی حکم ہے

الغیاثیۃ وان لکم یکن لہ بینہ و لم — یونہی غیاثیہ میں ہے اگر اس کے پاس گواہ موجود نہیں اور

یسلمہ حتیٰ ہلک انتقض البیع کذا فی وہ مبیع کو مشتری کے حوالے نہ کر سکا حتیٰ کہ مبیع ہلاک

الذخیرہ ۔[1] ہو گیا تو بیع ٹوٹ گئی یونہی ذخیرہ میں ہے۔ (ت)

در مختار میں ہے :

وقف بیع المالك المغصوب علی مالک کا مغصوب کو فروخت کرنا غاصب کے اقرار یا

البینۃ او اقرار الغاصب[2] گواہوں کے موجود ہونے پر موقوف ہو گا (ت)

1 فتاویٰ ہندیہ کتاب البیوع الباب التاسع الفصل الثالث نورانی کتب خانہ پشاور ۳ / ۱۱۱ 2 درمختار کتاب البیوع فصل فی الفصول مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۳۱

Fatawa Razawiyya Volume (17)

In Khania, before the chapter on corrupting conditions, it is stated:

(Arabic) Selling usurped property to someone other than the usurper: if the usurper denies the act and claims ownership, and the victim has no evidence, the sale is not permissible. If there is evidence, it is permissible.[1]

The owner sold the usurped property to someone other than the usurper, while the usurper denies the theft and claims ownership, and the victim of the usurpation has no witnesses, then the sale is not valid. If witnesses are present, then the sale is valid. (T)

It is in Tanwir al-Absar:

(Arabic) The sale of a bird in the air that does not return is void (fasid). If it flies and returns, it is valid.[2]

The sale of a bird in the air that does not return is void. If it flies and then returns, its sale in the air is valid. (T)

It is in Radd al-Muhtar:

(Arabic) It is said in *Al-Fath*: Because what is customarily known is like what occurs. The possibility of non-return or the occurrence of its absence does not prevent the validity of the sale, just as the possibility of the sold item's destruction before possession does not prevent it. If destruction occurs, the sale is annulled, and it is the same here. (End of quote). In *An-Nahr*, there is room for consideration because among the conditions for a valid sale is the ability to deliver the sold item immediately following the contract. Therefore, the sale of a runaway slave is not permissible. (End of quote). H said: The author of *An-Nahr* distinguished between pigeons and runaway slaves, for custom

It is stated in *Al-Fath* that customarily known facts are considered as actual occurrences. The mere possibility that they (the birds) might not return or that the condition of non-return might occur does not prevent the validity of the sale, just as the possibility of the item being destroyed before possession does not prevent the sale. If the item is destroyed, the sale will be annulled; the same applies here. (End of quote). And in *An-Nahr* it is mentioned that this is subject to scrutiny because one of the conditions for the validity of a sale is the ability to deliver the sold item after the sale. That is why the sale of a runaway slave is invalid. (End of quote). H said that the author of *An-Nahr* distinguished between pigeons and slaves, as the habit of a runaway slave (is not to return).

does not dictate the return of a runaway slave.

---

[1] Fatawa Qadi Khan, Kitab al-Buyu', Chapter on Invalid Sales, Naval Kishore Press, Lucknow, 3/342 [2] Al-Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Kitab al-Buyu', Chapter on Void Sales, Mujtabai Press, Delhi, 2/24

फ़तावा रज़विया जिल्द (17)

खानिया में मफ़सदा (भ्रष्ट करने वाली) शर्तों के अध्याय से पहले है:

(अरबी) हड़पी गई वस्तु को हड़पने वाले के अलावा किसी और को बेचना: यदि हड़पने वाला इनकार करता है और स्वामित्व का दावा करता है, और पीड़ित के पास कोई सबूत नहीं है, तो बिक्री जायज़ नहीं है। यदि उसके पास सबूत है, तो बिक्री जायज़ है।[1]

मालिक ने अपहृत संपत्ति को अपहरणकर्ता के अलावा किसी अन्य व्यक्ति को बेच दिया, जबकि अपहरणकर्ता अपहरण से इनकार करता है और इसे अपनी संपत्ति होने का दावा करता है, और अपहरण के शिकार के पास कोई गवाह नहीं है, तो बिक्री वैध नहीं है। यदि गवाह मौजूद हैं, तो बिक्री जायज़ है। (त)

तनवीरुल अबसार में है:

(अरबी) हवा में उस पक्षी की बिक्री फ़ासिद (शून्य) है जो वापस नहीं आता। यदि वह उड़ता है और वापस आता है, तो बिक्री वैध है।[2]

हवा में उस पक्षी की बिक्री अमान्य है जो वापस नहीं आता है, और यदि वह उड़ता है और फिर वापस आ जाता है, तो हवा में उसकी बिक्री जायज़ है। (त)

रद-उल-मुहतार में है:

(अरबी) 'अल-फ़त्ह' में कहा गया है: क्योंकि जो आदतन ज्ञात है वह घटित होने के समान है। उनके वापस न आने की संभावना या वापस न आने की स्थिति का उत्पन्न होना बिक्री की वैधता में बाधा नहीं बनता है, जैसे कि कब्ज़ा करने से पहले बिक्री की वस्तु के नष्ट होने की संभावना बिक्री में बाधा नहीं होती है। यदि वस्तु नष्ट हो जाती है, तो बिक्री रद्द हो जाएगी, यहाँ भी ऐसा ही होगा। (समाप्त)। 'अन-नहर' में है कि इसमें विचार की आवश्यकता है क्योंकि बिक्री की वैधता की शर्तों में से एक बिक्री के बाद वस्तु को सौंपने की क्षमता

'फ़त्ह' में कहा गया है कि सामान्य रूप से ज्ञात तथ्य वास्तविक घटनाओं की तरह माने जाते हैं। केवल यह संभावना कि वे (पक्षी) वापस नहीं आएंगे या उनके वापस न आने की स्थिति उत्पन्न हो जाएगी, बिक्री की वैधता को नहीं रोकती है, ठीक वैसे ही जैसे कब्ज़ा करने से पहले वस्तु के नष्ट होने की संभावना बिक्री को नहीं रोकती है। यदि वस्तु नष्ट हो जाती है, तो बिक्री रद्द हो जाएगी; यहाँ भी ऐसा ही होगा। (समाप्त)। और 'नहर' में है कि यह गौर करने वाली बात है क्योंकि बिक्री की वैधता की शर्तों में से एक यह है

है। इसलिए भागे हुए गुलाम की बिक्री नाजायज़ है। (समाप्त)। 'ह' ने कहा कि 'नहर' के लेखक ने कबूतर और गुलाम के बीच अंतर किया है, क्योंकि भागे हुए गुलाम की आदत (वापस आने की नहीं है)।

कि बिक्री के बाद वस्तु को सौंपने की शक्ति हो। इसीलिए भागे हुए गुलाम की बिक्री अमान्य है। (समाप्त)। 'ह' ने कहा कि 'नहर' के लेखक ने कबूतर और गुलाम के बीच अंतर किया है कि भागे हुए गुलाम की आदत (वापस आने की नहीं है)।

---

[1] फ़तावा काज़ी खान, किताबुल बुयूअ, बातिल बिक्री पर अध्याय, नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, 3/342 [2] अद-दुर्रुल मुख्तार शरह तनवीरुल अबसार, किताबुल बुयूअ, फ़ासिद बिक्री पर अध्याय, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 2/24

خانیہ میں قبیل فصل شروط مفسدہ ہے:

باع المغصوب من غیر الغاصب ان کان الغاصب جاحدًا یدعی انہ لہ ولم یکن للمغصوب منہ بینۃ لایجوز بیعہ وان کان لہ بینۃ جاز بیعہ 1۔

مالک نے مغصوب کی بیع غیر غاصب کے ہاتھ کر دی درانحالیکہ غاصب منکرِ غصب ہے اور اپنی ملکیت کا دعویدار ہے اور مغصوب منہ کے پاس گواہ بھی نہیں ہیں تو بیع جائز نہیں اور اگر اس کے پاس گواہ موجود ہیں تو بیع جائز ہے۔ (ت)

تنویر الابصار میں ہے:

فسد بیع طیر فی الھواء لایرجع وان یطیر ویرجع صح 2۔

ہوا میں اس پرندے کی بیع فاسد ہے جو واپس نہ آئے اور اگر وہ اڑتا ہے اور پھر واپس آجاتا ہے تو ہوا میں اس کی بیع جائز ہے۔ (ت)

ردالمحتار میں ہے:

قال فی الفتح لان المعلوم عادۃ فتح میں فرمایا اس لئے کہ معلومِ عادی واقع کی مثل ہے محض کالواقع وتجویز کونھا لاتعود او عروض عدم عودھا لایمنع جواز البیع کتجویز ھلاک المبیع قبل القبض ثم اذا عرض الھلاک انفسخ کذا ھنا اھ وفی النھر فیہ نظر لان

اس بات کا امکان کہ وہ (پرندے) واپس نہ آئیں گے یا عدم رجوع کا انھیں عارض ہو جانا جواز بیع سے مانع نہیں جیسا کہ قبضہ سے قبل ہلاک بیع کا امکان مانع بیع نہیں، پھر اگر مبیع کو ہلاکت عارض ہو گئی تو بیع فسخ ہو جائیگی، ایسا ہی یہاں بھی ہوگا، اھ اور نہر میں ہے کہ اس میں نظر ہے کیونکہ

من شروط صحة البيع القدرة على التسليم عقبہ ولذا لم يجز بيع الابق اھ قال ح فرق ما بين الحمام والابق فان العادة لم تقض بعوده

صحت بیع کی شرطوں میں سے ہے کہ بیع کے بعد تسلیم مبیع پر قدرت ہو، اسی لئے بھاگے ہوئے غلام کی بیع ناجائز ہے اھ، ح نے فرمایا کہ صاحب نہر نے کبوتر اور غلام میں فرق کیا ہے کہ عادت بھاگے ہوئے غلام کے (واپس آنے کی نہیں ہے)

---

1 فتاوی قاضی خاں کتاب البیوع فصل فی البیع الباطل مطبع نولکشور لکھنؤ ۳/ ۳۴۲ 2 الدر المختار شرح تنویر الابصار کتاب البیوع فصل فی باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۲۴

Fatawa Ridawiyya (Volume 17)

[Table Header] [Left Column: Arabic Text with Urdu Introduction] Generally, unlike pigeons. And as for what was claimed regarding the condition of capability of delivery immediately following it: if he meant actual capability, then it is prohibited; otherwise, the presence of the sold item at the assembly of the contract would be a condition, and no one says that. If he meant constructive capability, as mentioned after this, then our case here is similar because habit dictates its return. (End of quote). I say: This is a strong point, for it is analogous to a slave sent on his master's business; his sale is permissible, and they justified it by saying he is constructively capable of delivery at the time of the contract because his return is expected (apparent). 1

In Durr al-Mukhtar it is stated: If he sold him (i.e., the runaway slave) then he returned and was delivered, the sale is completed according to the view of its irregularity (fasad), and al-Kamal preferred this. It is said that it is not completed according to the view of its nullity based on the narration. This was chosen in al-Hidayah and others, and al-Balkhi and others used to give fatwas upon it. (Bahr and Ibn al-Kamal). 2

In al-Hindiyyah from al-Muheet it is stated: And a group of our scholars adopted this, and Abu Abdullah al-Balkhi used to give fatwas based on it, and the Sheikh mentioned thus.

[Right Column: Urdu Translation] ...does not generally rule for return, unlike the pigeon. And the claim made by the author of Nahr regarding the condition of being capable of delivery after the sale: if by it he meant the time of delivery in reality, then this is prohibited, otherwise, it would be necessary to present the sold item in the assembly of the contract, whereas no one is a proponent of this. If it means constructively as he himself mentioned later, then our problem under discussion is also like this because habit rules the return of the pigeon. (End of quote). I say this is strong; therefore, this is analogous to that slave who is sent somewhere for the master's work because his sale is permissible, and the jurists have stated the cause of this permissibility is that the slave is constructively capable of delivery at the time of sale because his return is apparent. (T)

If a runaway slave was sold, then he returned and was handed over to the buyer, the sale would become complete according to the statement in which this sale was declared irregular (fasad), and Kamal gave preference to this. According to the

statement in which this sale was declared void (batil), the sale would not be complete, and this is the more apparent narration. Hidayah etc. have adopted this and Balkhi etc. used to give fatwa on this. (Bahr, Ibn Kamal). (T)

This has been adopted by a group of our scholars, and Abu Abdullah Balkhi used to give fatwas on this.

[Footnotes] 1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Bay' al-Fasid, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/107. 2. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Bay' al-Fasid, Matba' Mujtabai, Delhi, 2/25.

फतावा रज़विया (जिल्द 17)

[तालिका शीर्षक] [बायाँ कॉलम: अरबी पाठ उर्दू परिचय के साथ] सामान्यतः, कबूतरों के विपरीत। और जहाँ तक बिक्री के तुरंत बाद सुपुर्दगी की क्षमता की शर्त के बारे में दावा किया गया है: यदि उनका अर्थ वास्तविक क्षमता से है, तो यह वर्जित है; अन्यथा, अनुबंध की सभा में बिक्री की वस्तु की उपस्थिति एक शर्त होगी, और ऐसा कोई नहीं कहता। यदि उनका अर्थ रचनात्मक क्षमता से है, जैसा कि इसके बाद उल्लेख किया गया है, तो हमारा मामला भी वैसा ही है क्योंकि आदत उसके लौटने का निर्देश देती है। (उद्धरण समाप्त)। मैं कहता हूँ: यह एक पुख्ता दलील है, क्योंकि यह उस गुलाम के समान है जिसे उसके मालिक के काम से भेजा गया हो; उसकी बिक्री जायज़ है, और उन्होंने इसे यह कहकर सही ठहराया कि वह अनुबंध के समय रचनात्मक रूप से सुपुर्दगी के योग्य है क्योंकि उसका लौटना अपेक्षित है। 1

दुर्र-ए-मुख़्तार में लिखा है: यदि उसने उसे (यानी भागे हुए गुलाम को) बेच दिया, फिर वह लौट आया और उसे सुपुर्द कर दिया गया, तो बिक्री 'फासिद' (दोषपूर्ण) होने के विचार के अनुसार पूरी हो जाती है, और अल-कमाल ने इसे प्राथमिकता दी। यह कहा जाता है कि कथन के आधार पर इसकी शून्यता के विचार के अनुसार यह पूरी नहीं होती है। इसे अल-हिदाया और अन्य में चुना गया था, और अल-बल्खी और अन्य इस पर फतवा दिया करते थे। (बहर और इब्न अल-कमाल)। 2

अल-मुहीत से अल-हिन्दिया में लिखा है: और हमारे विद्वानों के एक समूह ने इसे अपनाया है, और अबू अब्दुल्ला अल-बल्खी इस पर फतवा दिया करते थे, और शेख ने इसी प्रकार उल्लेख किया है।

[दायाँ कॉलम: उर्दू अनुवाद] ...वापस आने का हुक्म आमतौर पर नहीं करती, कबूतर के विपरीत। और बिक्री के बाद बिक्री की सुपुर्दगी के योग्य होने की शर्त का जो दावा 'नहर' के लेखक ने किया है, उससे उनका तात्पर्य यदि वास्तव में सुपुर्दगी के समय की क्षमता से है, तो यह मना है, अन्यथा बिक्री की वस्तु को अनुबंध की सभा में उपस्थित करना आवश्यक होगा, जबकि इसका कोई भी कायल नहीं है। यदि यह रचनात्मक (हुक्मन) रूप से है जैसा कि उन्होंने स्वयं बाद में उल्लेख किया है, तो हमारा विचाराधीन मामला भी वैसा ही है क्योंकि आदत कबूतर के लौटने का हुक्म करती है। (उद्धरण समाप्त)। मैं कहता हूँ यह प्रबल है; इसलिए, यह उस गुलाम के समान है जिसे मालिक के काम के लिए कहीं भेजा गया हो क्योंकि उसकी बिक्री जायज़ है, और फकीहों ने इस वैधता का

कारण यह बताया है कि वह गुलाम बिक्री के समय रचनात्मक रूप से सुपुर्दगी के योग्य है क्योंकि उसका लौटना स्पष्ट है। (त)

अगर भागे हुए गुलाम को बेच दिया गया, फिर वह लौट आया और उसे खरीदार को सौंप दिया गया, तो उस कथन के अनुसार बिक्री पूर्ण हो जाएगी जिसमें इस बिक्री को 'फासिद' घोषित किया गया था, और कमाल ने इसे वरीयता दी। जिस कथन में इस बिक्री को 'बातिल' घोषित किया गया था, उसके अनुसार बिक्री पूरी नहीं होगी, और यही अधिक स्पष्ट रिवायत है। हिदाया आदि ने इसे अपनाया है और बल्खी आदि इस पर फतवा देते थे। (बहर, इब्न कमाल)। (त)

इसे हमारे मशायख के एक समूह ने अपनाया है, और अबू अब्दुल्ला बल्खी इस पर फतवा देते थे।

[पाद टिप्पणियाँ] 1. रद-उल-मुहतार, किताब अल-बुयू, बाब अल-बय अल-फासिद, दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 4/107. 2. दुर्र-ए-मुख़्तार, किताब अल-बुयू, बाब अल-बय अल-फासिद, मतबा मुज्तबाई, दिल्ली, 2/25.

غالباً بخلاف الحمام، وما ادعاہ من اشتراط القدرۃ علی التسلیم عقبہ ان اراد بہ القدرۃ حقیقۃ فہو ممنوع والا لاشترط حضور المبیع مجلس العقد واحد لایقول بہ، وان اراد بہ القدرۃ حکماً کما ذکرہ بعد ھذا فما نحن فیہ کذالک لحکم العادۃ بعودہ اھ قلت وھو وجیہ فھو نظیر العبد المرسل فی حاجۃ المولی فانہ یجوز بیعہ وعللوہ بأنہ مقدور التسلیم وقت العقد حکماً اذا الظاھر عودہ ۱۔

واپس آنے کا حکم غالباً نہیں کرتی، بخلاف کبوتر کے، اور بیع کے بعد بیع کے مقدور التسلیم ہونے کے اشتراط کا جو دعوٰی صاحبِ نہر نے کیا ہے اس سے مراد اگر وقتِ تسلیم حقیقتاً ہے تو یہ ممنوع ہے ورنہ مبیع کا مجلسِ عقد میں حاضر کرنا ضروری ہوگا حالانکہ اس کا کوئی بھی قائل نہیں ہے اگر حکماً ہے جیسا کہ بعد خود انہوں نے ذکر کیا تو ہمارا زیرِ بحث مسئلہ بھی ایسا ہی ہے کیونکہ عادت کبوتر کے لوٹ آنے کا حکم کرتی ہے اھ میں کہتا ہوں یہ قوی ہے پس یہ اس غلام کی نظیر ہے جسے مالک کے کام کے لئے کہیں بھیجا گیا ہو کیونکہ اس کی بیع جائز ہے، اور فقہاء نے اس جواز کی علت یہ بیان کی ہے کہ وہ غلام بوقتِ بیع حکماً مقدور التسلیم ہے کیونکہ ظاہر اس کا لوٹ آنا ہے۔ (ت)

در مختار میں ہے: لو باعہ (ای الآبق) ثم عاد وسلمتہ یتم البیع علی القول بفسادہ ورجحہ الکمال وقیل لایتم علی القول ببطلا نہ من الروایۃ واختارہ فی الہدایۃ وغیرہا و بہ کان یفتی البلخی وغیرہ، بحر و ابن کمال ۲ ۔

اگر بھاگے ہوئے غلام کو فروخت کیا پھر وہ لوٹ آیا اور اس کو مشتری کے حوالے کر دیا تو اس قول کے مطابق بیع تام ہو جائے گی جس قول میں اس بیع کو فاسد قرار دیا گیا اور کمال نے اس کو

ترجیح دی اور جس قول میں اس بیع کو باطل قرار دیا گیا اس کے مطابق بیع تام نہ ہوگی اور یہی زیادہ ظاہر روایت ہے ہدایہ وغیرہ نے اس کو اختیار کیا اور بلخی وغیرہ اس پر ہی فتویٰ دیتے تھے ، بحر ، ابن کمال (ت)

ہندیہ میں محیط سے ہے: و بہ اخذ جماعة من مشایخنا و بہ کان یفتی ابو عبد اللہ البلخی و ھکذا ذکر شیخ

اس کو اخذ کیا ہے ہمارے مشائخ کی ایک جماعت نے اور اس پر ابو عبداللہ بلخی فتویٰ دیتے تھے

۱ ردالمحتار، کتاب البیوع باب البیع الفاسد دار احیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۱۰۷ ۲ درمختار کتاب البیوع باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۲۵

Fatawa Ridawiyya, Volume 17 (17)

Sheikh-ul-Islam has mentioned it in the same way. (T) Islam[1]. Also in Ghiyathiyah it is: "They said: and this is what is chosen"[2] (the scholars have stated that this is the chosen view. T). In Radd al-Muhtar it is: "He said in Al-Fath: The truth is that the disagreement in this is based on the disagreement whether it is void (batil) or irregular (fasid). And you certainly know that removing the cause of irregularity in a fasid sale returns it to being valid, because the sale persists despite the irregularity. Whereas with voidness (butlan), it does not remain existing with the attribute of voidness, but rather becomes non-existent. Thus, the reason for voidness is the inability to deliver; so the reason for voidness is the inability to deliver, while the reason for irregularity is the persistence of value and ownership. In my view, the reason is that the inability to deliver the item of sale makes the sale irregular (fasid), not void (batil)."[3] (T)

In Hindiyyah, from Al-Muhit, it is: "And Al-Karkhi and a group of our scholars adopted this, and thus Al-Qadi al-Isbijabi mentioned it in his commentary."[4] And this has been adopted by Al-Karkhi and a group of our scholars, and Al-Qadi al-Isbijabi has mentioned it in his commentary as such. (T)

Also, it has been mentioned from him with reference to Ghiyathiyah: "It is suspended (mawquf), and that is the correct view."[5] End. And that is the correction... It is suspended, this is correct. End. And that is the statement about irregularity.

[1] Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Buyu', Chapter 9, Section 3, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/112 [2] Al-Fatawa al-Ghiyathiyah, Kitab al-Buyu', Section 2, Maktaba Islamia Quetta, p. 144 [3] Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Chapter of Fasid Sale, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/113 [4] Fatawa Hindiyyah, Chapter 9, Section 3, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/112 [5] Fatawa Hindiyyah, Chapter 9, Section 3, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/111

फ़तावा रज़विया, जिल्द सत्रहवीं (१७)

शेख़-उल-इस्लाम ने इसी तरह ज़िक्र फ़रमाया है। (त) इस्लाम[1]। नीज़ ग़ियासिया में है: "क़ालू वल-मुख्तार हाज़ा"[2] (मशाइख़ ने फ़रमाया यही मुख्तार है। त) रद्दुल मुहतार में है: "अल-फ़तह में फ़रमाया: हक़ यह है कि इसमें इख़्तिलाफ़ इस इख़्तिलाफ़ पर मबनी है कि यह बैअ बातिल है या फ़ासिद, और बेशक तू जानता है कि अज़ाल-ए-मुफ़्सिद से बैअ फ़ासिद सही हो जाती है क्योंकि फ़साद के बावजूद बैअ क़ायम रहती है जबकि बुतलान के साथ ब-सिफ़त-ए-बुतलान के बैअ क़ायम नहीं रहती बल्कि मादूम हो जाती है, पस बुतलान की वजह क़ुदरत-ए-तस्लीम का न होना है, पस बुतलान की वजह क़ुदरत-ए-तस्लीम का न होना है, जबकि फ़साद की वजह से मालियत व मिलक का क़ियाम है और मेरे नज़दीक इसकी वजह यह है कि तस्लीम-ए-मबीअ पर क़ादिर न होना बैअ को फ़ासिद करने वाला है न कि बातिल करने वाला।"[3] (त)

हिन्दिया में मुहीत से है: "व बिही अख़ज़ल करख़ी व जमाअतुम मिन मशाइखिना व हाकज़ा ज़करल क़ाज़ीयुल अस्बीजाबी फ़ी शरहिहि"[4] और इसी को अख़ज़ किया है करख़ी और हमारे मशाइख़ की एक जमाअत ने और क़ाज़ी अस्बीजाबी ने अपनी शरह में यूँ ज़िक्र फ़रमाया है। (त)

नीज़ इसी से ब-हवाला ग़ियासिया गुज़रा: "हुवा मौक़ूफ़ हुवस-सहीह"[5] अ.ह व हुवा तसहीह वह मौक़ूफ़ है यही सही है अ.ह और वह क़ौल-ए-फ़साद

[1] फ़तावा हिन्दिया किताबुल बुयूअ अल-बाब अत-तासेअ अल-फ़स्ल अत-सालिथ नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर 3/112 [2] अल-फ़तावा अल-ग़ियासिया किताबुल बुयूअ अल-फ़स्ल अत-थानी मकतबा इस्लामिया क्वेटा पृ. 144 [3] रद्दुल मुहतार किताबुल बुयूअ बाब बैअल फ़ासिद दार इहया अत-तुराथ अल-अरबी बेरूत 4/113 [4] फ़तावा हिन्दिया अल-बाब अत-तासेअ अल-फ़स्ल अत-सालिथ नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर 3/112 [5] फ़तावा हिन्दिया अल-बाब अत-तासेअ अल-फ़स्ल अत-सालिथ नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर 3/111

पृष्ठ ८६ / ७१५

شیخ الاسلام نے یو نہی ذکر فرمایا ہے۔ (ت) الاسلام[1]۔ نیز غیاثیہ میں ہے: قالو والمختار هذا[2] (مشائخ نے فرمایا یہی مختار ہے۔ ت) ردالمحتار میں ہے : قال في الفتح والحق ان الاختلاف فيه بناء على الاختلاف في انه باطل او فاسد وانك علمت ان ارتفاع المفسد في الفاسد يرده صحيحا لان البيع قائم مع الفساد ومع البطلان لم يكن قائماً بصفة البطلان بل معدوماً، فوجه البطلان عدم قدرة التسليم، فوجه البطلان عدم قدرة التسليم، ووجه الفساد قيام المالية والملك، والوجه عندى ان عدم القدرة على التسليم مفسد لا مبطل[3]۔ فتح میں فرمایا: حق یہ ہے کہ اس میں اختلاف اس اختلاف پر مبنی ہے کہ یہ بیع باطل ہے یا فاسد، اور بیشک تو جانتا ہے کہ ازالہ مفسد سے بیع فاسد صحیح ہو جاتی ہے کیونکہ فساد کے باوجود بیع قائم رہتی ہے جبکہ بطلان کے ساتھ بصفہ بطلان کے بیع قائم نہیں رہتی بلکہ معدوم ہو جاتی ہے، پس بطلان کی وجہ قدرتِ تسلیم کا نہ ہونا ہے جبکہ فساد کی وجہ سے مالیت و ملک کا قیام ہے اور میرے نزدیک اس کی وجہ یہ ہے کہ تسلیم مبیع پر قادر نہ ہونا بیع کو فاسد کرنے والا ہے نہ کہ باطل کرنے والا۔ (ت)

ہندیہ میں محیط سے ہے: وبه اخذ الكرخى وجماعة من مشايخنا وهكذا ذكر القاضى الاسبيجابى فى شرحه[4]۔ اور اسی کو اخذ کیا ہے کرخی اور ہمارے مشائخ کی ایک جماعت نے اور قاضی اسبیجابی نے اپنی شرح میں یوں ذکر فرمایا ہے۔ (ت)

نیز اسی سے بحوالہ غیاثیہ گزرا: هو موقوف هو الصحيح[5] اھ و هو تصحيح وہ موقوف ہے یہی صحیح ہے اھ اور وہ قولِ فساد

[1] فتاوی ہندیہ کتاب البیوع الباب التاسع الفصل الثالث نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۱۱۲ [2] الفتاوی الغیاثیہ کتاب البیوع الفصل الثانی مکتبہ اسلامیہ کوئٹہ ص ۱۴۴ [3] ردالمحتار کتاب البیوع باب بیع الفاسد داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۱۳ [4] فتاوی ہندیہ الباب التاسع الفصل الثالث نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۱۱۲ [5] فتاوی ہندیہ الباب التاسع الفصل الثالث نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۱۱۱

Fatawa Razawiya, Volume 17

[Top Box] Arabic: ...for the opinion of invalidity (fasad) as we explained in its margin. There is no wonder in the combination of invalidity and suspension (tawaqquf). For in 'Radd al-Muhtar' from 'al-Bahr', it is stated that the sale of a coerced person (mukhrah) is 'fasid' (invalid) and 'mawquf' (suspended), etc. Its full discussion is there. Through it, a reconciliation is achieved in our issue between the statement of 'al-Khaniyah' that his sale is impermissible and the statement of others that it is suspended. And Allah, Glorified and Exalted, knows best, and His knowledge, Glorified be His Majesty, is most complete and wise; Mighty is His status, most wise. Urdu: ...is the correction, as we explained in its margin. There is no surprise in combining invalidity and suspension. Thus, it is in 'Radd al-Muhtar' citing 'al-Bahr' that the sale of a coerced person is 'fasid' and 'mawquf', etc. Its full discussion is therein. Through this, reconciliation is achieved in our issue between the statement of 'al-Khaniyah' that the sale is impermissible and the statement of others that the sale is suspended. And Allah, Glorified and Exalted, knows best, and His knowledge, Glorified be His Majesty, is most complete and wise; Mighty is His status, most wise. (T)

Problem 3: From the old city, 2nd Muharram-ul-Haram 1316 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid sold an item on the condition that half the price would be taken at the time of purchase and the other half when the goods are dispatched, saying "we will send our man to collect it when the first shipment goes." Zaid did not send a man. The buyer sent that half-payment through his own man. Now, because the current market rate for those goods has doubled, Zaid's intention is to return the money received for half the price and not deliver the goods. It should also be clarified that the goods Zaid agreed to provide were not given; instead, he gave goods of lower value. Explain, and may you be rewarded.

Answer: A sale is completed by offer (ijab) and acceptance (qubul). Once a Shariah-compliant valid sale has taken place, neither the seller nor the buyer is allowed to back out without the consent of the other. Nor can the completed contract be broken by such backing out. It is obligatory for Zaid to deliver the sold goods in full to the buyer. It is stated in 'al-Hidayah':

[Bottom Box] Arabic: When offer and acceptance are achieved, the sale becomes binding, and neither party has the option [to rescind] unless due to a defect or non-viewing [of the item]. 2 Urdu: When offer and acceptance are achieved, the sale

becomes binding, and neither the seller nor the buyer has the right of rescission (khiyar), except if a defect appears in the item sold or if the buyer had not seen it at the time of sale. (T)

1. Radd al-Muhtar, Book of Sales, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/4.
2. Al-Hidayah, Book of Sales, Matba' Yusufi, Lucknow, 3/25.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 17

[ऊपरी बॉक्स] अरबी: ...ही सही है जैसा कि हमने इसके हाशिये पर बयान किया और फ़साद (अमान्यता) व तवक़्कुफ़ (निलंबन) के जमा होने में कोई ताज्जुब नहीं, फ़ी 'रद्दुल मुहतार' अनल 'बह्र' कि मुकरह (मजबूर) की बैअ (बिक्री) फ़ासिद व मौक़ूफ़ है आदि...। उर्दू: ...ही सही है जैसा कि हमने इसके हाशिये पर बयान किया और फ़साद (अमान्यता) व तवक़्कुफ़ (निलंबन) के जमा होने में कोई ताज्जुब नहीं, पस 'रद्दुल मुहतार' में 'बह्र' के हवाले से है कि मुकरह की बैअ फ़ासिद व मौक़ूफ़ है आदि और इसकी मुकम्मल बहस इसमें है और इसी से हमारे मसले में 'ख़ानिया' के क़ौल कि बैअ ना-जायज़ है और इसके ग़ैर के क़ौल कि बैअ मौक़ूफ़ है के दरमियान ततबीक़ (सामंजस्य) हासिल हो गई, और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है और उसका इल्म, जल्ल मजदहु, ज़्यादा मुकम्मल और हिकमत वाला है, अज़्ज़ शानहु, सबसे बड़ा हाकिम। (त)

मसला 3: शहर-ए-कुहना से, 2 मुहर्रम-उल-हराम 1316 हिजरी। उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि ज़ैद ने एक चीज़ को इस शर्त पर फ़रोख़्त (बेचा) किया कि आधा रुपया माल की ख़रीदारी के वक़्त लिया और आधा रुपया माल भेजते वक़्त, यह कहते हुए कि जब पहली बार माल जाएगा हम अपना आदमी भेज कर मंगा लेंगे। ज़ैद ने आदमी नहीं भेजा, ख़रीदार ने वो आधा रुपया अपने तौर पर अपने आदमी के हाथ भेज दिया। अब चूंकि उस माल का मौजूदा बाज़ार भाव दुगना हो गया है, इसलिए ज़ैद की अब यह नीयत है कि यह रुपया जो आधे माल की क़ीमत का आया है वापस कर दे और माल न दे, और यह भी साफ़ हो कि जो माल ज़ैद से लेना तय हुआ था वो माल भी नहीं दिया, उससे कम क़ीमत का दिया है। बयान फरमाएं आपको अज्र (पुण्य) मिले।

जवाब: बैअ (बिक्री) ईजाब व क़बूल (प्रस्ताव और स्वीकृति) से पूरी हो जाती है, और जब शरीअत के मुताबिक़ सही बैअ हो जाए तो उसके बाद बेचने वाले या ख़रीदार किसी को भी दूसरे की रज़ामंदी के बिना उससे फिर जाना जायज़ नहीं, और न ही उसके फिर जाने से वह मुआहिदा (अनुबंध) जो पूरा हो चुका है टूट सकता है। ज़ैद पर लाज़िम है कि बिका हुआ माल पूरा का पूरा ख़रीदार को दे। 'हिदाया' में है:

[निचला बॉक्स] अरबी: जब ईजाब व क़बूल हासिल हो जाए तो बैअ लाज़िम हो जाती है और दोनों में से किसी को भी इख़्तियार नहीं रहता सिवाय ऐब या बे-देखे होने की सूरत में। 2 उर्दू: जब ईजाब व क़बूल हासिल हो जाए तो बैअ लाज़िम हो जाती है और बेचने वाले व ख़रीदार में से किसी को भी

फ़स्ख़ (रद्द करने) का इख़्तियार हासिल नहीं होता, सिवाय इसके कि बिके हुए माल में कोई ऐब (दोष) ज़ाहिर हो जाए या ख़रीदार ने बिक्री के वक़्त उसे देखा न हो। (त)

1. रद-उल-मुहतार, किताब-उल-बुयूअ, दार इह्या-अत-तुरास-अल-अरबी, बेरूत, 4/4
2. अल-हिदाया, किताब-उल-बुयूअ, मतबा यूसुफ़ी, लखनऊ, 3/25

पृष्ठ 87 / 715

[باکس] عربی: للقول بالفساد کما بینا علی هامشها ولاغرو جمع الفساد والتوقف ففی رد المحتار عن البحر ان بیع المکره فاسد موقوف ۱ الخ وتمامه فیه وبه یحصل الجمع بین قول الخانیة فی مسالتنا لایجوز بیعه وقول غیره موقوف، واللہ سبحانہ وتعالٰی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم عز شانہ احکم۔

اردو: کی تصحیح ہے جیسا کہ ہم نے اس کے حاشیہ پر بیان کیا اور فساد و توقف کے جمع ہونے میں کوئی تعجب نہیں، پس ردالمحتار میں بحر کے حوالے سے ہے کہ مکرہ کی بیع فاسد موقوف ہے الخ اور اس کی مکمل بحث اس میں ہے اور اسی سے ہمارے مسئلہ میں خانیہ کے قول کہ بیع ناجائز ہے اور اس کے غیر کے قول کہ بیع موقوف ہے کے درمیان تطبیق حاصل ہوگئی ، واللہ سبحانہ وتعالی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم عز شانہ احکم (ت)

مسئلہ ۳: از شہر کہنہ ۲ محرم الحرام ۱۳۱۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے ایک شے کو فروخت کیا اس شرط پر کہ نصف روپیہ خریداری مال لیا اور نصف روپیہ وقت جانے مال کے کہ جو پہلی مرتبہ جائے گا ہم اپنا آدمی بھیج کر منگا لیں گے ، زید نے آدمی نہ بھیجا، خریدار نے وہ نصف روپیہ اپنے طور پر اپنے آدمی کے ہاتھ بھیج دیا، اب چونکہ نرخ اس مال کا بموجب فروخت حال کے دو چند ہو گیا لہذا زید کی اب یہ نیت ہے کہ یہ روپیہ جو نصف مال کی قیمت کا آیا ہے واپس کر دے اور مال نہ دے، اور یہ بھی واضح ہو کہ جو مال زید سے لینا قرار پایا تھا وہ مال بھی نہ دیا اس سے کم قیمت کا دیا ہے ۔ بینوا توجروا الجواب: بیع ایجاب و قبول سے تمام ہو جاتی ہے، اور جب بیع صحیح شرع واقع ہولے تو اس کے بعد بائع یا مشتری کسی کو بے رضامندی دوسرے کے اس سے یوں پھر جانا روا نہیں، نہ اس کے پھرنے سے وہ معاہدہ جو

مکمل ہو چکا ٹوٹ سکتا ہے، زید پر لازم ہے کہ مال فروخت شدہ تمام و کمال خریدار کو دے، ہدایہ میں ہے :

[باکس] عربی: اذا حصل الایجاب والقبول لزم البیع ولاخیار لو احد منھما الا من عیب وعدم روٴیة ۲۔

اردو: جب ایجاب و قبول حاصل ہو جائے تو بیع لازم ہو جاتی ہے اور بائع ومشتری میں سے کسی کو فسخ کا خیار حاصل نہیں ہوتا سوائے اس کے کہ مبیع میں کوئی عیب ظاہر ہو جائے یا مشتری نے بوقت بیع اس کو دیکھا نہ ہو۔ (ت)

۱ رد المحتار کتاب البیوع داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۲ ۴ الہدایہ کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنؤ ۳/ ۲۵

Fatawa Razawiya (Volume 17)

If the defective goods sent by Zaid are contrary to the agreement, the buyer can return them and get his original purchase amount back, provided that no act has been committed by the buyer that prevents the return. For example, after seeing it, saying or doing something that serves as evidence of being satisfied with that property. It is stated in 'Durr-e-Mukhtar':

(Arabic)

(He) meaning the buyer (has the right to return it when he sees it) unless the seller brought it to the buyer's house, then he cannot return it after seeing it unless he returns it to the seller (Ashbah). (The option) of sight (is established absolutely, not timed) by a period, this is the most correct view (Inaya). This is due to the absolute nature of the text as long as no nullifier is found. The nullifier of the 'option of condition' (khiyar-e-shart) also nullifies this absolutely, whether it is verbal or physical. Such an act or word which indicates satisfaction after seeing it, not before seeing it, is a nullifier. (Durr - summarized). And Allah Almighty knows best.

(Urdu Translation)

He, meaning the buyer, has the choice to reject the sale when he sees the item. However, if the seller has brought the item to the buyer's house, then the buyer cannot reject it upon seeing it. Yes, if the buyer returns the item to the seller, it will be rejected. (Ashbah). And the 'option of sight' (khiyar-e-ruyat) is established absolutely; it is not restricted to any time period. This is more correct (Inaya) because the text (nass) is absolute, until a nullifier of the option of sight is found. Its nullifier is the same as that of 'option of condition' (khiyar-e-shart) absolutely, i.e., whether verbal or physical. And that action or word is also a nullifier which indicates satisfaction when it occurs after seeing, not before seeing. (Durr - summarized). And Allah Almighty knows best. (T)

Issue 4: Asked by Azimuddin Afsar, Teacher at Madarsa Masoodiya, Dargah Sharif Hazrat Syed Masood Ghazi Sahib Salar, on Saturday, 10th Rabi al-Thani 1337 AH.

What do the scholars of religion and jurists of the firm Shariah say regarding this issue: when is the sale of land complete? When the buyer pays the full price? If the buyer does not pay in full, are the proceeds of that land lawful (halal) and permissible (mubah) for the buyer until the payment of the price or not? In the case that he has not paid the full price, and the buyer has deducted some interest money from the seller from the price, while the buyer claims he is giving some extra amount above

the price to the seller, but the seller says this money was given to me because of a promise or as charity. So, can this interest money, which the buyer took from the seller, be adjusted or not? End.

---

1 Ad-Durr al-Mukhtar, Book of Sales, Chapter on Option of Sight, Mujtabai Press Delhi, 2/17. Page 88 of 715

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

ज़ैद द्वारा भेजा गया दोषपूर्ण माल जो समझौते के विपरीत है, खरीदार उसे वापस करके अपनी मूल खरीद का माल ले सकता है, बशर्ते कि खरीदार द्वारा कोई ऐसा कार्य न किया गया हो जो वापसी को रोकता हो। उदाहरण के लिए, उसे देखने के बाद ऐसी कोई बात कहना या काम करना जो उस माल से संतुष्ट होने का प्रमाण हो। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

(अरबी)

(वह) यानी खरीदार (वस्तु को देखते ही उसे वापस करने का अधिकार रखता है), जब तक कि विक्रेता उसे खरीदार के घर न ले आया हो, तो वह देखने के बाद उसे वापस नहीं कर सकता जब तक कि वह उसे विक्रेता को न लौटा दे (अश्बाह)। और (विकल्प) दर्शन (पूर्ण रूप से सिद्ध है, समयबद्ध नहीं) किसी अवधि के साथ, यह सबसे सही विचार है (इनाया)। यह पाठ की निरपेक्ष प्रकृति के कारण है जब तक कि कोई बाधक न मिल जाए। 'खीयार-ए-शर्त' का बाधक भी इसे पूर्ण रूप से निरस्त कर देता है, चाहे वह मौखिक हो या शारीरिक। ऐसा कार्य या शब्द जो देखने के बाद संतुष्टि का संकेत दे, न कि देखने से पहले, एक बाधक है। (दुर्र - संक्षेप में)। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

(उर्दू अनुवाद)

उसे यानी खरीदार को अधिकार है कि जब वह वस्तु को देखे तो बिक्री को रद्द कर दे। लेकिन अगर विक्रेता वस्तु को खरीदार के घर ले आया हो, तो अब खरीदार उसे देखने पर रद्द नहीं कर सकता। हाँ, यदि खरीदार ने वस्तु को विक्रेता की ओर लौटा दिया तो रद्द हो जाएगा। (अश्बाह)। और 'खीयार-ए-रूयत' (देखने का विकल्प) पूर्ण रूप से सिद्ध होता है, यह किसी समय सीमा के साथ प्रतिबंधित नहीं है, यही अधिक सही है (इनाया) क्योंकि पाठ (नस्स) में पूर्णता है जब तक कि देखने के विकल्प का कोई बाधक (मुबतल) न पाया जाए। और उसका बाधक वही है जो 'खीयार-ए-शर्त' (शर्त का विकल्प) का बाधक है, चाहे वह मौखिक हो या व्यावहारिक। और वह कार्य या वचन भी बाधक है जो संतुष्टि का संकेत देता हो जब वह देखने के बाद पाया जाए, न कि देखने से पहले। (दुर्र - संक्षेप में)। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसअला 4: मुस्तौल्हा अज़ीमुद्दीन अफ़सर, मुदर्रिस मदरसा मसूदिया दरगाह शरीफ़ हज़रत सैय्यद मसूद ग़ाज़ी साहब सालार, शनिवार, 10 रबीउल थानी 1337 हिजरी।

धर्म के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ्ती इस मसअले में क्या फरमाते हैं कि किसी भूमि की बिक्री पूर्ण कब मानी जाएगी? क्या तब जब खरीदार पूरी कीमत अदा कर दे? यदि खरीदार पूरी कीमत अदा न करे, तो कीमत की अदायगी तक उस भूमि की पैदावार खरीदार के लिए हलाल और जायज़ है या नहीं? इस स्थिति में कि उसने पूरी कीमत अदा नहीं की है, खरीदार ने विक्रेता से ब्याज के कुछ पैसे कीमत में से काट लिए हैं, जबकि खरीदार यह दावा करता है कि वह विक्रेता को कीमत से अधिक कुछ पैसे दे रहा है, पर विक्रेता कहता है कि यह पैसे मुझे किसी वादे के कारण या दान के रूप में दिए गए हैं। तो, क्या यह ब्याज का पैसा जो खरीदार ने विक्रेता से लिया है, उसमें समायोजित किया जा सकता है या नहीं? फ़क़त।

---

1 अद्दुर्रुल मुख्तार, किताबुल बुयूअ, बाब खीयारुल रूयत, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 2/17. पृष्ठ 88 का 715

مالِ ناقص جو خلافِ قرار داد زید نے بھیجا مشتری اسے واپس پہنچا کر اپنی اصل خریداری کا مال لے سکتا ہے جب کہ مشتری سے کوئی امر مانع واپسی نہ ہوا ہو مثلاً اسے دیکھنے کے بعد وہ قول یا فعل جو اسی مال پر راضی ہو جانے کی دلیل ہو، در مختار میں ہے:

(عربی)

(له) ای للمشتری (ان یرده اذا رآه) الا اذا حمله البائع لبیت المشتری فلا یرده اذا رآه الا اذا اعاده الی البائع اشباه (ویثبت الخیار) للرؤیة (مطلقاً غیر موقت) بمدة هو الاصح، عنایة، لاطلاق النص مالم یوجد مبطله و هو مبطل خیار الشرط مطلقاً ومفید الرضا بعد الرؤیة لاقبلها، درر، ۱ اھ مختصرا واللہ تعالیٰ اعلم۔

(اردو)

اس کو یعنی مشتری کو اختیار ہے کہ بیع کو رد کردے جب مبیع کو دیکھے مگر جب بائع مبیع کو مشتری کے گھر اٹھا لایا ہو تو اب مشتری نے اسے دیکھنے پر رد نہ کیا ہو، ہاں اگر مشتری نے مبیع کو بائع کی طرف لوٹا دیا تو رد ہو جائے گا۔ (اشباہ) اور خیارِ رؤیت مطلقاً ثابت ہوتا ہے کسی مدت کے ساتھ مقید نہیں ہوتا یہی زیادہ صحیح ہے (عنایہ) کیونکہ نص میں اطلاق ہے جب تک مبطلِ خیارِ رؤیت نہ پایا جائے اور اس کا مبطل وہی ہے جو خیارِ شرط کا مبطل ہے مطلقاً یعنی قولی ہو یا فعلی، اور وہ فعل یا قول بھی مبطل ہے جو مفید رضا ہو جبکہ وہ رؤیت کے بعد پایا جائے نہ کہ رؤیت سے پہلے، در راہ (مختصراً) واللہ تعالٰی اعلم۔(ت)

مسئلہ ۴: مسئولہ عظیم الدین افسر مدرس مدرسہ مسعودیہ درگاہ شریف حضرت سید مسعود غازی صاحب سالار، بروز شنبہ، ۱۰ ربیع الثانی ۱۳۳۷ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرعِ متین اس مسئلہ میں کہ کسی اراضی کا بیع کامل کب ہو سکتا ہے جبکہ مشتری پورا زرِ ثمن ادا کردے اگر مشتری پورا نہ ادا کرے تو تا ادائے زرِ ثمن کے اس اراضی کا حاصلات مشتری کو حلال اور مباح ہے یا نہیں؟ اس صورت میں کہ اس نے زرِ ثمن پورا ادا نہیں کیا بائع سے کچھ روپیہ زرِ سود کا مشتری نے زرِ ثمن مجرا لیا ہے کچھ روپیہ مشتری بائع کو زائد زرِ ثمن دینا ظاہر کرتا ہے حالانکہ بائع کہتا ہے کہ یہ روپیہ بوجہ اقراری مجھے دیا گیا ہے یا بطورِ خیرات، پس یہ روپیہ زرِ سود میں جو مشتری نے بائع سے لیا ہے وضع ہو سکتا ہے یا نہیں؟ فقط

---

۱ الدار المختار کتاب البیوع باب خیار الرؤیۃ مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۱۷ Page 88 of 715

Fatawa Razawiyyah Volume 17

The Answer: A sale is completed by offer and acceptance. The item leaves the ownership of the seller and enters the ownership of the buyer. However, it is necessary for the buyer to pay the price first. The seller has the right not to hand over the sold item until the price is received. But if the seller handed over the sold item to the buyer's possession before receiving part or all of the price, then whatever profits are derived from it belong to the buyer and are lawful for him. The interest taken by the buyer from the seller is absolutely forbidden (Haram). Taking some money as a penalty for breach of contract is also forbidden for the seller. However, the seller can adjust this money against the interest the buyer took from him, as long as it does not exceed that amount. And Allah Almighty knows best.

Matter 5: From the city of Gonda, Anjuman-e-Islamia, sent by Mr. Mirza Mahmood Baig, Advocate and Secretary of Anjuman-e-Islamia Gonda, 3 Ramadan 1332 AH. I am submitting copies of documents dated February 6, 1908, and January 12, 1909, and request you to kindly inform me whether these documents are valid. According to the aforementioned documents, Anjuman-e-Islamia Gonda has acquired houses from Syed Maqbool Ahmed and Syed Manzoor Ahmed through "Bai' al-Khiyar" (sale with option). The Anjuman has possession in such a way that a separate rental agreement has been written, and the Anjuman has been receiving a monthly rent of (specified amount). The collected rent is spent on the Anjuman's expenses. Is this rent amount Shariah-permissible, and can the Anjuman spend it legitimately?

The Answer: Both documents have been reviewed; both are completely void. "Bai' al-Khiyar" for two years does not exist anywhere in the pure Shariah. The rent taken by non-owners from the actual owners of the house is all a false pretext and usury (interest). It is obligatory upon the Anjuman to return all the rent collected so far to the owners or to adjust it against the loan given and provide receipts to the owners. In the noble Hadith, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

"Every loan that draws a benefit is usury (Riba)." - Every loan that attracts a profit is interest. (T)

Kanz al-Ummal Hadith 15512, Mu'assasat al-Risalah Beirut 6/238

उत्तर: प्रस्ताव और स्वीकृति (ईजाब-ओ-क़बूल) से बिक्री पूरी हो जाती है, चीज़ विक्रेता के स्वामित्व से निकलकर खरीदार के स्वामित्व में आ जाती है। हाँ, पहले खरीदार को कीमत अदा करनी चाहिए। विक्रेता को यह अधिकार है कि जब तक उसे कीमत न मिल जाए, वह बेची हुई चीज़ खरीदार को न सौंपे। लेकिन यदि विक्रेता ने पूरी या आंशिक कीमत प्राप्त करने से पहले ही वस्तु खरीदार के कब्ज़े में दे दी, तो उससे प्राप्त होने वाला लाभ खरीदार का है और उसके लिए हलाल है। खरीदार ने विक्रेता से जो ब्याज (सूद) लिया, वह पूरी तरह हराम है। अनुबंध तोड़ने के मुआवज़े में कुछ जुर्माना लेना भी विक्रेता के लिए हराम है। लेकिन विक्रेता इस रकम को उस ब्याज में समायोजित (एडजस्ट) कर सकता है जो खरीदार ने उससे लिया था, बशर्ते वह उस राशि से अधिक न हो। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

मसला 5: गोंडा शहर की अंजुमन-ए-इस्लामिया से, मिर्ज़ा महमूद बेग साहब, वकील और सचिव अंजुमन-ए-इस्लामिया गोंडा द्वारा प्रेषित, 3 रमज़ान 1332 हिजरी। 6 फरवरी 1908 और 12 जनवरी 1909 के दस्तावेज़ों की प्रतियां भेजकर निवेदन है कि कृपया सूचित करें कि क्या ये दस्तावेज़ जायज़ हैं। उक्त दस्तावेज़ों के अनुसार, अंजुमन-ए-इस्लामिया गोंडा ने सैयद मक़बूल अहमद और सैयद मंज़ूर अहमद से "बय-अल-ख़ियार" (विकल्प के साथ बिक्री) के माध्यम से मकान खरीदे हैं। अंजुमन का कब्ज़ा इस प्रकार है कि एक अलग किरायानामा लिखा गया है और अंजुमन प्रति माह (निर्धारित राशि) किराया वसूल कर रही है। वसूल किया गया किराया अंजुमन के खर्चों पर खर्च किया जाता है। क्या यह किराए की राशि शरीयत के अनुसार जायज़ है और क्या अंजुमन इसे वैध रूप से खर्च कर सकती है?

उत्तर: दोनों दस्तावेज़ों का अवलोकन किया गया; दोनों पूरी तरह से शून्य (बातिल) हैं। दो साल के लिए "बय-अल-ख़ियार" का प्रावधान पवित्र शरीयत में कहीं नहीं है। मकान के वास्तविक मालिकों से गैर-मालिकों द्वारा लिया गया किराया महज़ एक झूठा बहाना और सूद (ब्याज) है। अंजुमन पर यह अनिवार्य (फर्ज़) है कि अब तक वसूला गया सारा किराया मालिकों को लौटा दे या उसे दिए गए ऋण में समायोजित करके मालिकों को रसीद दे दे। हदीस शरीफ में अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

"हर वह कर्ज़ जो लाभ खींचता है, वह सूद (ब्याज) है।" - हर वह ऋण जिससे लाभ प्राप्त किया जाए, वह ब्याज है। (त)

कंज़ुल उम्माल हदीस 15512, मुअस्सससतुल रिसाला बेरूत 6/238

पृष्ठ 89/715

الجواب: بیع ایجاب و قبول سے تمام ہو جاتی ہے، چیز بائع کے ملک سے نکل کر مشتری کی ملک میں داخل ہو جاتی ہے ہاں پہلے مشتری کو چاہئے کہ ثمن ادا کرے، بائع کو اختیار ہے کہ جب تک ثمن نہ لے مبیع سپرد نہ کرے لیکن اگر اس نے بعض یا کل ثمن لینے سے پہلے مبیع اس کے قبضہ میں دے دی تو اس سے جو کچھ منافع حاصل ہوں ملک مشتری ہیں مشتری کے لئے حلال ہیں مشتری نے بائع سے جو سود لیا وہ حرام قطعی ہے، اور بد اقراری کے معاوضہ میں کچھ روپیہ جرمانہ لینا بائع کو حرام ہے لیکن بائع یہ روپیہ اس سود میں مجرا لے سکتا ہے جو مشتری نے اس سے لیا تھا جبکہ اس کی مقدار سے زائد نہ ہو، واللہ تعالی اعلم۔

مسئلہ ۵: از شہر گونڈہ انجمن اسلامیہ مرسلہ جناب مرزا محمود بیگ صاحب وکیل و سکریٹری انجمن اسلامیہ گونڈہ ۳ رمضان ۱۳۳۲ھ خدمت مبارک میں نقل دستاویزات مورخہ ۶ فروری ۱۹۰۸ء و ۱۲ جنوری ۱۹۰۹ء بھیج کر متدعی ہوں کہ براہ مہربانی مطلع فرمائیے کہ آیا دستاویزات جائز ہے بموجب دستاویزات مذکور الصدر کے انجمن اسلامیہ گونڈہ نے مکانات سید مقبول احمد و سید منظور احمد بیع بالخیار لئے ہیں اور قبضہ انجمن کا اس طور پر ہے کہ علیحدہ سرخط کرایہ نامہ لکھا لیا ہے اور کرایہ مبلغ (عدد ماہ بماہ) انجمن وصول کرتی آئی ہے جو کرایہ وصول ہوتا ہے ہو مصارف انجمن پر خرچ ہوتا ہے، آیا یہ رقم کرایہ شرعاً جائز ہے اور انجمن اس کو جائز طور پر صرف کر سکتی ہے؟

الجواب: دونوں دستاویزیں ملاحظہ ہوئیں دونوں باطل محض ہیں، دو برس کے لئے بیع بالخیار شریعت مطہر میں کہیں نہیں، کرایہ کہ اثاثا مالکان مکان سے غیر مالکوں نے لیا سب حیلہ باطلہ اور ربا سود ہے انجمن پر فرض ہے کہ جتنا کرایہ اس وقت تک وصول کیا ہو مالکوں کو واپس

دے یا اپنے دئے ہوئے قرض میں مجرا کر کے اتنی رسید مالکوں کو دے دے، حدیث شریف میں رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

کل قرض جر منفعة فهو ربوا ۔ ہر قرض جو منفعت کو کھینچے وہ سود ہے۔ (ت)

کنز العمال حدیث ۱۵۵۱۲ موسسہ الرسالہ بیروت ۲۳۸/۶

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

This situation is essentially one of a mortgage. The sellers themselves, in another document, called it 'absorbed property' and wrote it as 'collateral' for a period of two years. Thus, this is the reality; the rest is just a meaningless name for a sale, a mere weak ruse, and a mortgage without possession is void. Allah Almighty says, "then a pledge in hand (shall be taken)" (Allah Almighty said: so a pledge should be given in possession. -T)

Furthermore, owners taking their own property on rent from non-owners is severely invalid. So, the true nature of this monthly payment is interest, and taking it under the name of a void lease will not even have the effect that comes from the vile ownership of rejected interest; rather, it is obligatory to return it in full to the owners. Due to lack of ownership, it was a forced seizure, so returning it and being liable for its loss if destroyed is mandatory. And Allah Almighty knows best.

Problem 168 to 176: From the town of Rasioon, Mohalla Mir Zadgan, at Masjid Mir Zadgan, district Unnao, sent by Qadir Ali Sahib, 16 Jumada al-Akhir 1337 AH. What do the scholars of religion say regarding these issues: (1) What is the definition of Bay' al-Khiyar (sale with option)? (2) What conditions are necessary for it, and what is its maximum duration? (3) Should possession of the sold item be taken immediately in Bay' al-Khiyar? (4) If possession of the sold item was not taken, does Bay' al-Khiyar remain valid or not? (5) If possession of the item was not taken, but the profit on the money was received according to the mutually agreed rate, does Bay' al-Khiyar remain valid or not? (6) If after the expiry of the period, the same buyer of Bay' al-Khiyar continues to take the agreed profit and did not take possession of the property, is this profit interest or not? Is it permissible or impermissible? (7) Can the seller, within the period of Bay' al-Khiyar, sell the property to the same person or someone else, return the money, and take back the property? (8) Can a part of the property be returned by returning some of the money, concluding the sale for that portion, and taking back the rest of the property?

Al-Quran al-Kareem 2/283 Page 90 of 715

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

यह स्थिति वास्तव में गिरवी (रहन) की है। विक्रेताओं ने स्वयं दूसरे दस्तावेज़ में इसे 'मस्तग़रक़ा जायदाद' (डूबी हुई संपत्ति) कहा और दो साल की अवधि के लिए इसे 'मक़फ़ूल' (संपार्श्विक) लिखा। बस वास्तविकता इतनी ही है, बाकी 'बय' (बिक्री) का नाम केवल एक अर्थहीन नाम है, एक कमज़ोर चाल है, और बिना कब्ज़े के गिरवी बातिल (अमान्य) है। अल्लाह तआला ने फ़रमाया, "तो गिरवी कब्ज़े में दी हुई हो" (अल्लाह तआला ने फ़रमाया: तो रहन कब्ज़े में दिया हुआ हो। -त)

इसके अलावा, मालिकों का अपनी ही संपत्ति को गैर-मालिकों से किराये पर लेना गंभीर रूप से अमान्य है। तो इस मासिक भुगतान की वास्तविक प्रकृति ब्याज (सूद) है, और 'अजारा-ए-बातिला' (अमान्य पट्टे) के नाम पर इसे लेना वह प्रभाव भी नहीं देगा जो ठुकराए हुए सूद के बुरे स्वामित्व से होता है; बल्कि मालिकों को इसे पूरी तरह वापस करना अनिवार्य है। स्वामित्व की कमी के कारण यह 'ग़सब' (ज़बरन कब्ज़ा) था, इसलिए इसे लौटाना और इसके नष्ट होने की स्थिति में मुआवज़ा देना अनिवार्य है। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला 168 से 176: कस्बा रसियून, मोहल्ला मीर ज़ादगान, मीर ज़ादगान मस्जिद, ज़िला उन्नाव से प्रेषित, क़ादिर अली साहब द्वारा, 16 जमादी-उल-आख़िर 1337 हिजरी। धर्म के विद्वान इन मुद्दों पर क्या कहते हैं: (1) 'बय-ए-खियार' (विकल्प के साथ बिक्री) की परिभाषा क्या है? (2) इसमें कौन सी शर्तें ज़रूरी हैं और इसकी अधिकतम अवधि क्या है? (3) क्या बय-ए-खियार में बेची गई वस्तु (मुबीआ) पर तुरंत कब्ज़ा होना चाहिए? (4) यदि बेची गई वस्तु पर कब्ज़ा नहीं हुआ, तो क्या बय-ए-खियार कायम रहा या नहीं? (5) यदि वस्तु पर कब्ज़ा नहीं हुआ, बल्कि पैसे पर मुनाफ़ा उसी दर से मिला जो आपसी सहमति से तय हुआ था, तो क्या बय-ए-खियार कायम रहा या नहीं? (6) यदि अवधि समाप्त होने के बाद भी बय-ए-खियार का वही खरीदार तयशुदा मुनाफ़ा लेता रहा और संपत्ति पर कब्ज़ा नहीं किया, तो क्या यह मुनाफ़ा सूद (ब्याज) हुआ या नहीं? यह जायज़ है या नाजायज़? (7) क्या विक्रेता बय-ए-खियार की अवधि के भीतर संपत्ति को उसी व्यक्ति या किसी अन्य व्यक्ति को बेचकर पैसे वापस कर सकता है और संपत्ति वापस ले सकता है? (8) क्या कुछ पैसे वापस करके संपत्ति का एक हिस्सा प्राप्त किया जा सकता है, उस हिस्से के लिए बिक्री को अंतिम मानकर बाकी संपत्ति वापस ली जा सकती है?

अल-कुरान अल-करीम 2/283 पृष्ठ 90 का 715

یہ صورت حقیقتۂ رہن کی ہے خود بائعوں نے دوسری دستاویز میں اسے جائداد مستغرقہ کہا اور میعاد دو سال اسے مکفول لکھا بس حقیقت اس قدر ہے باقی بیع کا بے معنی نام محض حیلہ خام ہے اور رہن بے قبضہ باطل ہے، قال اللہ تعالیٰ "فَرِهٰنٌ مَّقْبُوضَةٌ" (اللہ تعالیٰ نے فرمایا: تو رہن ہو قبضہ میں دیا ہوا۔ ت)

نیز مالکوں کا اپنی ملک غیر مالکوں سے کرایہ پر لینا شدید باطل ہے تو اس ماہوار کی اصل حقیقت سود ہے اور بنام اجارہ باطلہ لینا اتنا بھی اثر نہ دے گا جو سود مردود کی ملک خبیث سے ہوتا بلکہ مالکوں کو تمام و کمال واپس دینا فرض ہے لعدم الملك فكان غصباً فوجب الرد و الضمان هالكاً (ملک نہ ہونے کی وجہ سے لہٰذا وہ غصب ہو گا تو اس کا لوٹانا اور ہلاکت کی صورت میں ضمان واجب ہو گا۔ ت) واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۱۶۸ تا ۱۷۶: از قصبہ رسیون محلہ میر زادگان بمقام مسجد میر زادگان ضلع اناؤ مرسلہ قادر علی صاحب ۱۶ جمادی الآخر ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسائل میں: (۱) بیع خیار کی تعریف کیا ہے؟ (۲) کیا شرائط اس میں ضروری ہیں اور انتہائے مدت اس کی کیا ہے؟ (۳) کیا بیع خیار میں شیئی مبیعہ پر فوراً قبضہ ہونا چاہئے؟ (۴) اگر شیئی مبیعہ پر قبضہ نہ ہوا تو بیع خیار قائم رہی یا نہیں؟ (۵) اگر شے پر قبضہ تو نہیں ہوا بلکہ روپیہ کا منافع جس حساب سے باہمی ٹھہرا تھا وہ ملا کیا تو بیع خیار قائم رہی یا نہیں؟ (۶) اگر بعد میعاد گزر جانے کے یہی مشتری بیع خیار طے شدہ منافع اپنا لیتا رہا جائداد پر قبضہ نہیں کیا تو یہ منافع سود ہوا یا نہیں، جائز ہے یا ناجائز؟ (۷) کیا بائع اندر میعاد بیع خیار جائداد کو اسی شخص یا کسی غیر شخص سے بیچ کر کے روپیہ

واپس کر کے جائداد واپس لے سکتا ہے؟ (۸) کیا بعض روپیہ واپس کرنے کے ایک جز واسی جائداد کا مشتری بیع خیار کو بیع قطع کر کے بقیہ اپنی جائداد واپس کر سکتا ہے؟

القرآن الکریم ۲/ ۲۸۳ صفحہ 90 از 715

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

(9) If a buyer, out of their own free will, returns a portion of the property to the seller and makes the sale of the remaining property final, will there be any legal/religious liability in this case?

(10) If after the expiry of the fixed period for a conditional sale (Bay' Khiyar), no further action was taken between the seller and the buyer, but for three years or more, the same arrangement continued, i.e., receiving the agreed profit on that money; in this case, is the amount received by the buyer interest, and did the buyer become a usurer? Will this be effective from the date the document was written or after the expiry of the period?

(11) In such documents with conditions where possession of the sold item was not given, and only the agreed profit on the money continued to be received, and even after the expiry of the period, no action was taken; in this situation, is it better to get a final sale deed written or to keep the same conditional sale document as it is?

The Answer: In Shariah, "Bay' Khiyar" (sale with an option) refers to a situation where the seller sells or the buyer buys a thing on the condition that they have the option for up to three days to decide whether to maintain the sale or not. They can both set this three-day option for themselves. They cannot set this option for more than three days, but they can set it for less, like one day or one hour if they wish. Within this period, the one (or both) who has the option of condition has the right to reject the sale, and it will be annulled. If the fixed period passes, the sale becomes binding. However, the questioner has referred to "Bay' al-Wafa" (sale with a right of redemption) as "Bay' al-Khiyar". Its form is that Zaid sold a thing to Amr and they mutually fixed a period of one or two years, more or less, that if Zaid does not pay the price within this period, the sale will become final. In this situation, most people do this: they give possession of the item to the buyer, and the buyer keeps gaining benefit from it through residence, rent, or agriculture, etc. This is forbidden (Haram) because according to the correct and reliable school of thought, "Bay' al-Wafa" is not a sale but a mortgage (Rahn). It is forbidden for the mortgagee (the one who receives the mortgage) to derive benefit from the mortgaged item. It is stated in a Hadith:

"Every loan that draws a benefit is usury (Riba)." - (T)

And the completely bold ones do this: the item remains in the possession of the seller, and profit is taken on their money. This is not even a mortgage, as a mortgage without possession is void.

Kanz al-Ummal, chapter on appendices to the book of Hadith, 15516, Mu'assasat al-Risalah, Beirut, 6/238.

फतावा रज़विया (खंड 17)

(9) क्या खरीदार अपनी इच्छा से संपत्ति का एक हिस्सा विक्रेता को वापस करके शेष संपत्ति की बिक्री को अंतिम (कत्तई) बना देता है, तो क्या इस स्थिति में कोई शरई दोष होगा?

(10) यदि 'बय खियार' (शर्त वाली बिक्री) की निर्धारित अवधि बीतने के बाद विक्रेता और खरीदार के बीच कोई कार्यवाही नहीं हुई, बल्कि तीन साल या उससे अधिक समय तक वही प्रक्रिया चलती रही, यानी उसी पैसे पर तयशुदा मुनाफा मिलता रहा, तो इस स्थिति में खरीदार द्वारा वसूल की गई यह रकम क्या सूद (ब्याज) है और क्या खरीदार सूदखोर हुआ या नहीं? इसका निर्धारण दस्तावेज़ लिखने की तारीख से होगा या अवधि बीतने के बाद से?

(11) इस प्रकार के दस्तावेज़ जिसमें शर्त (खियार) हो और बेची गई चीज़ पर कब्ज़ा न हुआ हो, केवल पैसे पर तयशुदा मुनाफा मिलता रहा हो, और अवधि खत्म होने के बाद भी कोई कार्यवाही न हुई हो; तो ऐसी स्थिति में 'बय कतई' (अंतिम बिक्री) का दस्तावेज़ लिखवाना बेहतर है या उसी 'बय खियार' के दस्तावेज़ को बरकरार रखना?

उत्तर: शरीयत में 'बय खियार' उसे कहते हैं कि विक्रेता कोई चीज़ इस शर्त पर बेचे या खरीदार इस शर्त पर खरीदे कि मुझे तीन दिन तक अधिकार है कि बिक्री को बहाल रखूँ या नहीं, चाहे दोनों अपने लिए तीन दिन के अधिकार की शर्त लगा लें। वे इस अधिकार को तीन दिन से ज़्यादा नहीं बढ़ा सकते, और कम में एक दिन या एक घंटा जो चाहें तय करें। इस अवधि के भीतर, वह एक या दोनों जिनके लिए 'खियार शर्त' (विकल्प की शर्त) रखी गई है, उन्हें अधिकार होगा कि बिक्री नामंज़ूर कर दें, तो वह रद्द हो जाएगी और अगर निर्धारित अवधि गुज़र गई तो बिक्री अनिवार्य (लाज़िम) हो जाएगी। लेकिन प्रश्नकर्ता ने 'बय बिल-वफ़ा' को 'बय बिल-खियार' कहा है। इसकी सूरत यह है कि ज़ैद ने एक चीज़ अम्र के हाथ बेची और आपस में एक साल, दो साल या कम-ज़्यादा की अवधि तय कर ली कि इस अवधि में अगर ज़ैद कीमत अदा नहीं करेगा तो बिक्री अंतिम हो जाएगी। इस सूरत में अक्सर लोग यह करते हैं कि वह चीज़ खरीदार के कब्ज़े में दे देते हैं, खरीदार उससे रहने, किराए या खेती वगैरह के ज़रिए मुनाफा हासिल करता रहता है। यह हराम है क्योंकि सही और विश्वसनीय मत के अनुसार 'बय वफ़ा' बिक्री नहीं बल्कि 'रहन' (गिरवी) है। मुर्तहिन (जिसके पास गिरवी रखी गई हो) के लिए रहन से नफा हासिल करना हराम है। हदीस में है:

"प्रत्येक ऋण जो लाभ पहुँचाए वह सूद (ब्याज) है।" - (त)

और जो पूरी तरह निडर हैं वे यह करते हैं कि चीज़ विक्रेता के कब्ज़े में ही रहती है और उससे अपने रुपयों का नफ़ा उठाया जाता है। यह तो रहन भी न हुआ क्योंकि बिना कब्ज़े के रहन बातिल (अमान्य) है।

कंज़ुल उम्माल, हदीस की किताब के परिशिष्ट पर अध्याय, 15516, मुअस्ससतुर रिसाला, बेरूत, 6/238।

पृष्ठ 91 का 715

(۹) کیا مشتری بیع خیار بخوشی خاطر ایک جزو جائداد کا بائع کو واپس کر کے بقیہ جائداد کو بیع قطعی کرتا ہے تو اس صورت میں کوئی ملزم شرعی ہوگا؟

(۱۰) اگر بعد انقضائے میعاد متعینہ بیع خیار کوئی کاروائی فیما بین بائع و مشتری نہیں ہوئی بلکہ تین سال اور زائد تک وہی عملدرآمد یعنی وہی طے شدہ منافع اسی روپیہ کا لیتا رہا تو اس صورت میں یہ رقم وصول شدہ مشتری سود ہے اور مشتری سود خور ہوا یا نہیں اس کا استقرار تاریخ تحریر دستاویز سے ہوگا یا انقضائے میعاد کے بعد سے؟

(۱۱) اس قسم کی دستاویز مع خیار جس کا شئی مبیع پر قبضہ نہیں ہوا صرف روپیہ کا منافع طے شدہ ملتا رہا، بعد ختم میعاد بھی کوئی کاروائی نہیں ہوئی تو اس شکل میں دستاویز بیع قطع لکھانا بہتر ہے یا بدستور وہی دستاویز بیع خیار قائم رکھنا؟

الجواب: بیع خیار شرع میں تو اسے کہتے ہیں کہ بائع ایک چیز اس شرط پر بیچے یا مشتری اس شرط پر خریدے کہ مجھے تین دن تک اختیار ہے کہ بیع قائم رکھوں یا نہیں خواہ دونوں اپنے لئے تین دن اختیار ہونے کی قید لگا لیں، یہ اختیار تین دن سے زیادہ کا نہیں لگا سکتے اور کم میں ایک دن یا ایک گھنٹہ جو چاہیں مقرر کریں، اس مدت کے اندر ایک یا دونوں جس کا خیار شرط کیا گیا ہے اسے اختیار ہوگا کہ بیع نا منظور کر دے وہ فسخ ہو جائے گی اور اگر مدت مقررہ گزر گئی تو بیع لازم ہو جائے گی مگر سائل نے بیع بالوفاء کو بیع بالخیار کہا ہے، اس کی صورت یہ ہوئی کہ زید نے ایک چیز عمرو کے ہاتھ بیچی اور سال دو سال یا کم بیش باہم ایک مدت طے کر لی کہ اس مدت میں زید زر ثمن نہ دے گا تو بیع قطعی ہو جائے گی اس صورت میں اکثر تو یہ کرتے ہیں کہ

وہ چیز قبضہ مشتری میں دے دیتے ہیں مشتری اس سے نفع حاصل کرتا رہتا ہے بذریعہ سکونت یا کرایہ یا زراعت وغیرہ یہ حرام ہے کہ صحیح و معتمد مذہب میں بیع وفاء بیع نہیں رہن ہے مشتری مرتہن کو رہن سے نفع حاصل کرنا حرام ہے، حدیث میں ہے:

کل قرض جر منفعة ھو ربو - جو بھی قرض نفع دے وہ سود ہے (ت)

اور پورے بیباک یہ کرتے ہیں کہ چیز بھی بائع کے قبضہ میں رہتی ہے اور اس سے اپنے روپیہ کا نفع اٹھایا جاتا ہے یہ رہن بھی نہ ہوا کہ رہن بے قبضہ باطل ہے۔

کنز العمال فصل فی لواحق کتاب الحدیث ۱۵۵۱۶ مؤسسة الرسالہ بیروت ۶ / ۲۳۸

Fatawa Ridawiyya, Volume (17)

Allah Almighty says: "...then a pledge in hand [is sufficient]" 1 (Allah Almighty said that the mortgage should be given into possession). This profit that has been fixed upon it is open usury (Riba) and is purely forbidden (Haram) and rejected. In short, this is not a sale in any form. Since the buyer did not take possession, he has no connection to the property at all. He can take back as much money as he gave whenever he wants, whether the term has expired or not, because due to the absence of possession, it remains a simple loan, and for a loan, there is no fixed term in Shariah. Even if a term is fixed, it is not binding. Taking even a single grain more than the money given is forbidden for him, and he has no right in this property even after the expiry of the term. And if the buyer has taken possession, then it is a mortgage (Rahn); it is forbidden for the buyer to take profit from it. The seller can take back the property at any time by returning the money, even if the term has expired. He can also do this: with mutual consent, he can permanently sell a portion of the same property to the buyer in exchange for the debt and take back the rest of the property. As for the seller or buyer selling the whole or part of the property to another person: if the buyer did not have possession, then the seller has full authority as it is his pure property, and the buyer has no authority at all as he has no connection to the property. If the buyer has taken possession, then if the seller sells it, this sale will depend on the buyer's permission, as is the ruling for the sale of mortgaged property. The answer to the last question is that in this case, there is neither a sale nor a mortgage. What should be kept standing? Whether to make a final sale or not is at the discretion of the seller; the buyer has no claim over it except for his money. And Allah Almighty knows best.

Problem 171: From the city, Sabzi Mandi bazaar, sent by Wilayat Husain Sahib, dated 18 Rabi' al-Awwal 1337 AH. Zaid came to Bakr and said that a gentleman needs cloth and also needs to have some clothes stitched. Bakr also does tailoring work. Bakr went to three shops, fixed prices for different types of fabrics with the owners, and went with Zaid to the gentleman's place. Zaid said that I am going to show the cloth to that gentleman and he left taking the clothes. Neither that person was found nor the cloth. Now, do the owners of the goods have the right in Shariah to take the price of that fabric from Bakr? Only.

1 Al-Quran al-Karim 2/283 Page 92 of 715

फतवा रज़विया, जिल्द (17)

अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "...तो गिरवी रखा हुआ (माल) कब्ज़े में दिया हुआ हो" 1 (अल्लाह तआला ने फ़रमाया कि गिरवी कब्ज़े में दी हुई होनी चाहिए)। यह नफ़ा (लाभ) जो इस पर तय किया गया है, खुला हुआ सूद (ब्याज) है और सरासर हराम व मर्दूद (अस्वीकार्य) है। संक्षेप में, यह किसी भी सूरत में बिक्री (बैअ) नहीं है। जब खरीदार (मुश्तरी) का कब्ज़ा नहीं हुआ, तो उसका जायदाद से कोई संबंध ही नहीं। वह जितना रुपया दिया है जब चाहे वापस ले सकता है, मियाद (अवधि) गुज़री हो या नहीं, क्योंकि कब्ज़े के अभाव के कारण यह साधारण ऋण रह गया, और ऋण के लिए शरीयत में कोई मियाद नहीं है। यदि मियाद तय भी की गई है, तो उसका पालन अनिवार्य नहीं है। दिए गए रुपये से एक दाना (रत्ती) भी अधिक लेना उसके लिए हराम है। मियाद गुज़रने पर भी उसका इस जायदाद में कोई अधिकार नहीं है। और यदि खरीदार का कब्ज़ा हो गया है, तो वह 'रहन' (गिरवी) है, खरीदार के लिए उससे लाभ उठाना हराम है। विक्रेता (बाइ) किसी भी समय रुपया देकर जायदाद वापस ले सकता है, भले ही मियाद गुज़र गई हो। वह यह भी कर सकता है कि उसी जायदाद का कुछ हिस्सा आपसी रज़ामंदी से ऋण के बदले खरीदार के हाथ अंतिम रूप से बेच दे और शेष जायदाद वापस ले ले। रहा विक्रेता या खरीदार का जायदाद का पूरा या कुछ हिस्सा किसी दूसरे के हाथ बेचना: यदि खरीदार का कब्ज़ा नहीं हुआ है, तो विक्रेता को पूर्ण अधिकार है क्योंकि वह उसकी शुद्ध संपत्ति है, और खरीदार को मूल रूप से कोई अधिकार नहीं है क्योंकि उसका जायदाद से कोई संबंध नहीं है। और यदि खरीदार का कब्ज़ा हो गया है, तो यदि विक्रेता बेचे तो यह बिक्री खरीदार की अनुमति पर टिकी रहेगी, जैसा कि गिरवी रखी गई चीज़ (मरहून) की बिक्री का नियम है। अंतिम प्रश्न का उत्तर यह है कि इस स्थिति में न तो बिक्री है और न ही गिरवी। किस चीज़ को कायम रखा जाए? अंतिम बिक्री करना या न करना विक्रेता के विवेक पर है; खरीदार का अपने रुपये के अलावा उस पर कोई दावा नहीं है। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसला 171: शहर मुहल्ला सब्ज़ी मंडी बाज़ार से, प्रेषक विलायत हुसैन साहब, दिनांक 18 रबी-उल-अव्वल 1337 हिजरी। ज़ैद बक्र के पास आया और कहा कि एक साहब को कपड़े की ज़रूरत है और उन्हें कुछ कपड़ा सिलवाना भी है। बक्र सिलाई का काम भी करता है। बक्र ने तीन दुकानों से अलग-अलग प्रकार के कपड़ों की कीमत मालिकों के साथ तय की और ज़ैद के साथ उन साहब के यहाँ चला गया। ज़ैद ने कहा कि मैं उन साहब को कपड़ा दिखाने जाता हूँ और वह कपड़े लेकर चला

गया। न वह व्यक्ति मिला और न ही कपड़ा मिला। अब क्या माल के मालिकों को शरीयत के अनुसार बक्र से उस कपड़े की कीमत लेने का अधिकार है या नहीं? बस।

1 अल-क़ुरआन अल-करीम 2/283 पेज 92/715

جلد ہفدہم (۱۷)

فتاویٰ رضویہ

قال اللہ تعالیٰ "فَرِهَانٌ مَّقْبُوضَةٌ" 1 (اللہ تعالیٰ نے فرمایا تو رہن ہو قبضہ میں دیا ہوا ت) یہ نفع جو اس پر ٹھہرا کھلا سود اور نرا حرام و مردود ہے۔ بالجملہ یہ بیع کسی صورت میں نہیں ہے، مشتری کا قبضہ نہ ہوا، جب تو اسے جائداد سے کوئی تعلق ہی نہیں، جتنا روپیہ دے اہے جب چاہے واپس لے سکتا ہے میعاد گزری ہو یا نہیں کہ بوجہ عدم رہن سادہ قرض رہ گیا اور قرض کے لئے شرعاً کوئی میعاد نہیں، اگر مقرر بھی کی ہے اس کی پابندی نہیں اس دئے ہوئے روپیہ سے ایک حبہ زائد اس کو حرام ہے، نہ میعاد گزرنے پر اس جائداد میں اس کا کوئی حق ہے، اور اگر مشتری کا قبضہ ہو گیا ہے تو وہ رہن ہے مشتری کو اس سے نفع لینا حرام ہے، اور بائع ہر وقت روپیہ دے کر جائداد واپس لے سکتا ہے اگرچہ میعاد گزر گئی ہو، اور یہ بھی کر سکتا ہے کہ اسی جائداد کا کوئی حصہ باہمی رضا مندی سے مشتری کے ہاتھ بیع قطعی بعوض دین کر دے اور باقی جائداد واپس لے لے، رہا بائع یا مشتری کا دوسرا کے ہاتھ جائداد کا کل یا بعض بیچنا، اگر قبضہ مشتری نہیں ہوا ہے جب تو بائع کو اس کا اختیار کامل ہے کہ وہ اس کی ملک خالص ہے، اور مشتری کو اصلاً اختیار نہیں کہ اسے جائداد سے کوئی تعلق نہیں، اور اگر قبضہ مشتری ہو گیا ہے تو اگر بائع بیچے تو یہ بیع مشتری کی اجازت پر موقوف رہے گی کما ھو حکم بیع المرھون (جیسا کہ مرہون کی بیع کا حکم ہے ۔ت) سوال اخیر کا جواب یہ ہے کہ اس صورت میں نہ بیع ہے نہ رہن ہے قائم کس چیز کو رکھا جائے اور بیع قطعی کرنا نہ کرنا بائع کو اختیار ہے مشتری کو اپنے روپیہ کے سوا کوئی دعویٰ اس پر نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ مسئلہ ۱۷۱: از شہر محلہ سبزی منڈی بازار مرسلہ ولایت حسین صاحب مورخہ ۱۸ ربیع الاول ۱۳۳۷ھ زید بکر کے پاس آیا اور یہ کہا کہ ایک

صاحب کو کپڑا کی ضرورت ہے اور اس کو کچھ کپڑا سلوانا بھی ہے، بکر سلائی کا کام بھی کرتا ہے، بکر نے تین دکانات پر سے مختلف قسم کے پارچہ مالکان مال سے ان کی قیمت طے کر کے زید کے ساتھ صاحب کے یہاں چلا گیا، زید نے یہ کہا کہ میں ان صاحب کو کپڑا دکھانے جاتا ہوں اور وہ کپڑے کو لے کر چلا گیا، بکر نہ وہ شخص ملا نہ کپڑا ملا، اب مالکان مال کو شرعاً بکر سے اس پارچہ کی قیمت لینے کا حق ہے یا نہیں؟ فقط

1 القرآن الکریم ۲/۲۸۳ Page 92 of 715

Fatawa Razawiya (Volume 17)

The Answer: The sellers can take compensation for their clothes from Bakr. Because what is seized for bargaining is guaranteed, and Allah knows best. (T)

Issue 18: What do the scholars of religion and jurists of the clear Sharia say about this issue: Zaid, during his lifetime, wrote a sale deed of his property like a garden or land and pond etc. to an heir. After his death, if another heir wants to rescind the sale, does he have the legal right to do so or not? And does the seller have the right of rescission due to the option of defect or inspection? Explain and you will be rewarded.

The Answer: In the inquired situation, if the sale was not made during the terminal illness, then after its bindingness and completion, the seller and his heirs have no right of rescission in any way. The option of inspection (Khiyar al-Ru'yah) is specific to the buyer. As for the option of defect (Khiyar al-Ayb), even if it is available to the seller, it is only in the sense that the price can be replaced if it's faulty currency, not that he can rescind the sale because of it. Therefore, the option of inspection absolutely, and the option of defect that causes rescission, are specific to the buyer; they are never available to the seller.

In Durr al-Mukhtar: When offer and acceptance are both found, the sale becomes binding without any option, except for the option of defect and inspection. In Hidayah: He who sells something he has not seen has no option of inspection. Imam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him) used to say initially that he has the option of inspection, and he used to deduce it by analogy with the option of defect and the option of condition. In Inayah: Making an analogy with the option of defect...

1. Durr al-Mukhtar, Book of Sales, Mujtabai Press, Delhi, 3/5.
2. Al-Hidayah, Book of Sales, Chapter of Option of Inspection, Yusufi Press, Lucknow, 3/40-41. Page 93 of 715

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

अल-जवाब (उत्तर): बेचने वाले अपने कपड़ों का मुआवज़ा बक्र से ले सकते हैं। क्योंकि वह चीज़ जिसे मोल-भाव के लिए कब्ज़े में लिया गया हो, उसकी ज़मानत (guarantee) ज़रूरी है, और अल्लाह बेहतर जानता है। (त)

मसला 18: दीन के विद्वान और शरीअत के मुफ़्ती इस मामले में क्या कहते हैं कि ज़ैद ने अपने जीवनकाल में अपने किसी वारिस (उत्तराधिकारी) के नाम अपनी संपत्ति जैसे बाग़, ज़मीन या तालाब आदि का बैनामा (बिक्री पत्र) लिख दिया। उसकी मृत्यु के बाद, यदि दूसरा वारिस बिक्री को रद्द करना चाहे, तो क्या उसे शरीअत के अनुसार इसका अधिकार है या नहीं? और क्या विक्रेता को दोष (ऐब) या निरीक्षण (रूयत) के विकल्प के कारण बिक्री रद्द करने का अधिकार प्राप्त है या नहीं? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

अल-जवाब (उत्तर): पूछी गई स्थिति में, यदि बिक्री 'मरज़-उल-मौत' (मृत्युशैया की बीमारी) में नहीं हुई है, तो इसके अनिवार्य और पूर्ण होने के बाद विक्रेता और उसके वारिसों को किसी भी तरह से बिक्री रद्द करने का अधिकार नहीं है। निरीक्षण का विकल्प (खियार-ए-रूयत) विशेष रूप से खरीदार के लिए है। जहाँ तक दोष के विकल्प (खियार-ए-ऐब) की बात है, यदि वह विक्रेता को प्राप्त भी हो, तो वह केवल इस अर्थ में है कि दोषपूर्ण मुद्रा के बदले सही मुद्रा ली जा सके न कि इस आधार पर वह बिक्री रद्द कर सके। अत; निरीक्षण का विकल्प पूरी तरह से, और दोष का विकल्प जो रद्दीकरण का कारण बनता है, खरीदार के लिए विशिष्ट हैं; विक्रेता को ये कभी प्राप्त नहीं होते।

दुर्र अल-मुख्तार में है: जब ईजाब और क़बूल (प्रस्ताव और स्वीकृति) दोनों पाए गए, तो बिक्री बिना किसी विकल्प के अनिवार्य हो गई, सिवाय दोष और निरीक्षण के विकल्प के। हिदाया में है: जिसने ऐसी चीज़ बेची जिसे उसने देखा नहीं, तो उसे निरीक्षण का विकल्प नहीं है। इमाम अबू हनीफ़ा (रज़ियल्लाहु अन्हु) पहले कहा करते थे कि उसे निरीक्षण का विकल्प है, और वे इसे दोष के विकल्प और शर्त के विकल्प पर कयास (अनुमान) करते थे। इनाया में है कि दोष के विकल्प पर कयास करना...

1. दुर्र अल-मुख्तार, किताब अल-बयूँ, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 3/5।
2. अल-हिदाया, किताब अल-बयूँ, बाब खियार-उर-रूयत, यूसुफ़ी प्रेस, लखनऊ, 3/40-41। पेज 93 of 715

الجواب: بیچنے والے اپنے کپڑوں کا تاوان بکر سے لے سکتے ہیں۔ لان المقبوض علی سوم الشراء مضمون، واللہ تعالیٰ اعلم (ت) جس چیز پر بھاؤ طے کرنے کے لئے قبضہ کیا جائے وہ قابل ضمان ہے، واللہ تعالیٰ اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۱۸: کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید نے اپنی حیات میں کسی وارث کو بیعنامہ اپنی جائدار کا مثل باغ یا اراضی و تالاب وغیرہ ہاکے لکھ دیا اس کی موت کے بعد دوسرا وارث اگر فسخِ بیع چاہے تو اسے شرعاً اختیار ہے یا نہیں؟ اور بائع کو بوجہ خیار عیب یا رویت اختیارِ فسخ حاصل ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: صورتِ مستفسرہ میں بیع اگر مرضِ موت میں نہیں تو بعد لزوم و تکمیل بائع اور اس کے ورثاء کو کسی طرح اختیار فسخ نہیں اور خیارِ رویت خاص مشتری کے لئے ہے اور خیارِ عیب اگر بائع کو حاصل بھی ہے تو صرف بایں معنی کہ ثمن ناقص جید سے بدل سکتا ہے نہ یہ کہ اس کی وجہ سے فسخ بیع کر سکے، پس خیارِ رویت مطلقاً اور خیارِ عیب کہ سبب فسخ ہے مشتری کے لئے خاص ہیں بائع کو ہرگز حاصل نہیں۔

فی الدر المختار واذا وجد اللزوم البیع بلا خیار الالعیب اورؤیة '، فی الھدایة ومن باع مالم یرہ فلا خیار لہ و کان ابو حنیفة رضی اللہ تعالیٰ عنہ یقول اولالہ الخیار اعتباراً بخیار العیب وخیار الشرط 2، فی العنایة اعتباراً بخیار العیب فانہ لایختص بجانب المشتری بل اذا وجد البائع الثمن زیفا در مختار ہے جب ایجاب وقبول دونوں پائے گئے تو بیع بلا خیار لازم ہو گئی سوائے خیار عیب اور رویت کے، ہدایہ میں ہے جس نے ایسی چیز کو بیچا جسے اس نے دیکھا نہیں تو اسے خیار رؤیت نہیں، امام

ابوحنیفہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ پہلے کہا کرتے تھے کہ اسے خیار رؤیت ہے اور وہ اس کو خیار عیب اور خیار شرط پر قیاس کرتے تھے، عنایہ میں ہے کہ خیار عیب پر قیاس کرنا

1 در مختار کتاب البیوع مطبع مجتبائی دہلی ۳/۵ 2 الہدایۃ کتاب البیوع باب خیار الرؤیۃ مطبع یوسفی لکھنؤ ۳/ ۴۰.۴۱ Page 93 of 715

Fatawa-e-Razawiyya Volume 17

[Arabic Text]: "He has the choice: if he wishes, he may approve it, and if he wishes, he may return it, like the buyer when he finds the sold item defective. However, the contract is not annulled by returning the price, but it is annulled by returning the sold item, because it is the essence, not the price. And knowledge is with the Bestower of sciences, the Knower of every hidden secret."

[Urdu Explanation]: This is why it is correct that it is not exclusive to the buyer; rather, if the seller finds the currency to be counterfeit, he has the option to either accept it as valid or reject it, just as the buyer has the option upon finding the sold item defective. However, by rejecting the price, the contract is not annulled, whereas by rejecting the sold item, the contract is annulled, because the sold item is the core, not the price. And true knowledge lies with the Giver of knowledge, who knows every hidden secret. (T)

Issue 19: 11 Rajab 1307 AH What do the scholars of religion say in this matter: An agreement was reached between Zaid and Amr, and Zaid gave 21 (twenty) rupees to Amr as earnest money (deposit). Now Zaid, out of bad faith and without any fault of Amr, has backed out of the said agreement. In this case, is Zaid entitled to the return of the said money or not? Explain and be rewarded.

The Answer: He will definitely get it back. Seizing earnest money when a sale has not taken place, as is the custom among the ignorant, is blatant injustice. Allah Almighty says: "And do not consume one another's wealth unjustly" [Quran 4:29]. Allah Almighty said: "Do not eat each other's wealth among yourselves wrongfully." (T) Yes, if the sale contract had been completed between them, meaning offer and acceptance occurred from both sides and there was no reason for the buyer alone to annul the sale, and now Zaid (the buyer) backs out of the contract without a Sharia-compliant reason, then it is certainly permissible for Amr not to accept his backing out and to consider the completed sale as final and binding. This would mean the sold item becomes the property of Zaid and the price becomes the right of Amr. It is stated in the chapter on 'Iqala' (cancellation of sale) in 'Durr-ul-Mukhtar': [Arabic]: "Among its conditions is the mutual consent of the contracting parties." Among the conditions of Iqala is the mutual consent of the seller and the buyer. (T)

1. Al-Inayah on the margins of Fath al-Qadir, Book of Sales, Chapter of Option of Sight, Maktaba Nooria Rizvia Sukkur, 5/533.

2. The Holy Quran, 4/29.
3. Durr-ul-Mukhtar, Book of Sales, Chapter of Cancellation, Mujtabai Press Delhi, 2/33.

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द 17

[अरबी पाठ]: "वह विकल्प पर है: यदि वह चाहे तो उसे अनुमति दे दे और यदि वह चाहे तो उसे वापस कर दे, जैसे कि खरीदार जब वह बेची गई वस्तु को दोषपूर्ण पाता है। लेकिन मूल्य वापस करने से अनुबंध रद्द नहीं होता है, बल्कि बेची गई वस्तु को वापस करने से अनुबंध रद्द हो जाता है क्योंकि वह मूल है न कि मूल्य। और ज्ञान विज्ञान के प्रदाता के पास है, जो हर छिपे हुए रहस्य का ज्ञाता है।"

[उर्दू स्पष्टीकरण]: इसलिए यह सही है कि यह केवल खरीदार के साथ विशिष्ट नहीं है; बल्कि, यदि विक्रेता को मुद्रा नकली लगती है, तो उसके पास विकल्प है कि वह चाहे तो उसे मान्य मान ले और चाहे तो उसे अस्वीकार कर दे, जैसे कि खरीदार को बेची गई वस्तु दोषपूर्ण मिलने पर विकल्प होता है। हालांकि, मूल्य को अस्वीकार करने से अनुबंध रद्द नहीं होता है, जबकि बेची गई वस्तु को वापस करने से अनुबंध रद्द हो जाता है क्योंकि बेची गई वस्तु मुख्य है, मूल्य नहीं। और ज्ञान वास्तव में ज्ञान देने वाले के पास है जो हर छिपे हुए रहस्य को जानने वाला है। (त)

मसला 19: 11 रजब 1307 हिजरी धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि ज़ैद और अम्र के बीच एक समझौता हुआ और ज़ैद ने अम्र को 21 (बीस) रुपये बयाने (अग्रिम राशि) के रूप में दिए। अब ज़ैद अपनी दुर्भावना से और अम्र के बिना किसी दोष के उक्त समझौते से मुकर गया, तो इस स्थिति में क्या ज़ैद उक्त राशि की वापसी का हकदार है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: निश्चित रूप से वापस पाएगा। बिक्री न होने की स्थिति में बयाना ज़ब्त कर लेना, जैसा कि अज्ञानियों में रिवाज है, स्पष्ट अन्याय है। अल्लाह तआला ने फरमाया: "व ला ता'कुलू अमवालकुम बैनकुम बिल-बातिलि" [कुरान 4:29] अल्लाह तआला ने फरमाया: आपस में एक दूसरे का माल नाहक (गलत तरीके से) मत खाओ। (त) हाँ, यदि बिक्री का अनुबंध आपस में पूरा हो गया था, यानी दोनों पक्षों की ओर से प्रस्ताव और स्वीकृति (ईजाब-ओ-क़ुबूल) हो गई थी और खरीदार के लिए अकेले बिक्री रद्द करने का कोई कारण नहीं रहा था, अब बिना किसी शरीयत कारण के ज़ैद (खरीदार) अनुबंध से फिर जाता है, तो निश्चित रूप से अम्र के लिए जायज़ है कि वह उसके फिरने को न माने और पूरी हुई बिक्री को अंतिम और आवश्यक माने। इसका अर्थ यह होगा कि बेची गई वस्तु ज़ैद की संपत्ति और मूल्य अम्र का अधिकार है। दुर्रे मुख्तार के इक़ाला (बिक्री रद्दीकरण) के अध्याय

में है: [अरबी]: "मिन शराइतिहा रज़ल मुताकिदैन।" इक़ाला की शर्तों में से विक्रेता और खरीदार का आपसी रजामंद होना है। (त)

1. अल-इनाया, फ़तहुल क़दीर के हाशिये पर, किताबुल बुयू, बाब खियारुर रुया, मकतबा नूरिया रिज़विया सुक्कुर, 5/533।
2. पवित्र कुरान, 4/29।
3. दुर्रे मुख्तार, किताबुल बुयू, बाबुल इकाला, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 2/33।

पृष्ठ 715 में से 94

فہو بالخیار ان شاء جوز و ان شاء ردہ کالمشتری اذا وجد المبیع معیبا لکن العقد لاینفسخ برد الثمن و ینفسخ برد المبیع لانہ اصل دون الثمن ۱ والعلم عند واہب العلوم عالم کل سرمکتوم۔

اس لئے درست ہے کہ وہ فقط مشتری کے ساتھ مختص نہیں بلکہ اگر بائع ثمنوں کو کھوٹا پایا تو اسے اختیار ہے چاہے تو جائز قرار دے دے اور چاہے تو رد کردے جیسا کہ مبیع کو معیوب پاکر مشتری کو اختیار ہوتا ہے لیکن ثمن رد کرنے سے عقد فسخ نہیں ہوتا اور مبیع کو رد کرنے سے عقد فسخ ہو جاتا ہے کیونکہ مبیع اصل ہے نہ کہ ثمن، اور علم درحقیقت علم عطا فرمانے والے کے پاس ہے جو ہر چھپے راز کو جاننے والا ہے۔ (ت)

مسئلہ ۱۹: ۱۱ رجب ۱۳۰۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ معاہدہ مابین زید و عمر کے قرار پایا اور زید نے عمرو کو ۲۱ بیس روپے بطور بیعانہ کے دئے اب زید اپنی بدنیتی سے بلا قصور عمر کے معاہدہ مذکورہ سے منحرف ہو گیا تو اس صورت میں زید واپسی زر مذکور کا مستحق ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: بیشک واپس پائے گا، بیع نہ ہونے کی حالت میں بیعانہ ضبط کرلینا جیسا کہ جاہلوں میں رواج ہے ظلم صریح ہے، قال اللہ تعالٰی "وَلَا تَاْكُلُوْٓا اَمْوَالَكُمْ بَيْنَكُمْ بِالْبَاطِلِ" ۲۔ اللہ تعالٰی نے فرمایا: آپس میں ایک دوسرے کا مال ناحق مت کھاؤ، (ت) ہاں اگر عقدِ بیع باہم تمام ہو لیا تھا یعنی طرفین سے ایجاب و قبول واقع ہو لیا اور کوئی موجب تنہا مشتری کے فسخ بیع کردینے کا نہ رہا، اب بلا وجہ شرعی زید مشتری عقد سے پھرتا ہے تو بیشک عمرو کو روا ہے کہ اس کا پھرنا نہ مانے اور بیع تمام شدہ کو تمام و لازم جانے، اس کے یہ معنی ہوں گے کہ مبیع ملکِ زید اور ثمن حقِ عمرو،

در مختار کے باب الاقالہ میں ہے: من شرائطھا رضا المتعاقدین ۳۔ اقالہ کی شرطوں میں سے بائع و مشتری کا باہم رضامند ہونا ہے۔ (ت)

۱ العنایہ علی ہامش فتح القدیر کتاب البیوع باب خیار الرؤیۃ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۵/۵۳۳ ۲ القرآن الکریم ۴/۲۹ ۳ درمختار کتاب البیوع باب الاقالۃ مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۳۳

Fatawa Razawiyya, Volume 17

It will never be the case that the sale is annulled, the subject matter of the sale is not given to Zaid, and his money is confiscated for the 'crime' of changing his mind. Is this not open injustice? (Is this not open injustice? - Translator) And Allah the Almighty knows best.

Problem 20: From Pilibhit, 5 Dhu al-Qi'dah 1312 AH What do the scholars of religion and the experts of clear Sharia say on this issue: Zaid gave some money to a woman named Zainab in the presence of several veiled women and several men, on the promise that "we will take such and such a house or land of this woman Zainab for this amount of money," and he gave 122 rupees as earnest money. Zainab took the money and spent it on her necessities, and she confessed this in front of all the witnesses. A few days after the confession, Zainab passed away. Therefore, legally, did the sale take place or not? And according to the Noble Sharia, can Zaid take possession or not? Only.

The Answer: "We will take" is only a promise, and a promise is not a contract. Nor can the one who made the promise be forced to fulfill it, as stated in Al-Hindiyya, Al-Khayriyya, and other books of jurisprudence (as is explicitly mentioned in books of Fiqh like Hindiyya and Khayriyya. - Translator). So, after her death, how can there be any compulsion on the heirs? Therefore, Zaid has no right to take possession at all. He is only entitled to the money he gave in advance, which should be recovered from Zainab's estate before the distribution of inheritance. And Allah the Almighty knows best.

Problem 21: 25 Rabi' al-Akhir 1312 AH What do the scholars of religion say on this issue: Zaid sold his rights to two Biswansi Kachwansi to Bakr for the sum of 158 rupees (with masha). He wrote a deed of sale, signed it, took earnest money, and agreed to register it. Later, he wrote a deed of sale and got it registered in favor of Khalid, his paternal cousin, for 395 rupees (with masha). Now Bakr says that in reality, this sale deed is artificial, written out of fear of a pre-emptor (Shufi'), and in truth, it was originally sold to him for 158 rupees (with masha) as per Bakr's purchase. Bakr also says, "I am a pre-emptor in this because I have fifteen 'bastas'." In this case, according to the Noble Sharia, can Bakr obtain this property through pre-emption and also get it at that price according to the agreement? Only.

The Answer: A sale is a binding contract. After completion, the seller has no choice at all to sell it to someone else when...

1. Fatawa Hindiyya, Kitab al-Ijarah, Chapter 7, On the Renting of the Renter, Noorani Kutub Khana Peshawar, 4/472; Al-Uqud ad-Durriyah, Miscellaneous Issues and Benefits from Prohibition and Permission, Arg Bazar Kandahar Afghanistan, 2/353.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 17

ऐसा कभी नहीं होगा कि बिक्री रद्द कर दी जाए, ज़ैद को वस्तु न दी जाए, और उसका पैसा इस 'जुर्म' में ज़ब्त कर लिया जाए कि तुम क्यों फिर गए। क्या यह स्पष्ट अन्याय नहीं है? (क्या यह स्पष्ट अन्याय नहीं है? - अनुवादक) और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला 20: पीलीभीत से, 5 ज़िलक़ादा 1312 हिजरी दीन के विद्वान और शरीयत के विशेषज्ञ इस मसले पर क्या फ़रमाते हैं: ज़ैद ने कुछ पर्देदार महिलाओं और कुछ पुरुषों की उपस्थिति में एक महिला ज़ैनब को कुछ पैसे इस वादे पर दिए कि "हम इस महिला ज़ैनब का फ़लां मकान या ज़मीन इतने रुपयों में लेंगे," और बयाने के तौर पर 122 रुपये दिए। ज़ैनब ने वह पैसे ले लिए और अपनी ज़रूरतों पर खर्च कर दिए, और सभी गवाहों के सामने इसका इक़रार किया। इक़रार के कुछ दिनों बाद ज़ैनब की मृत्यु हो गई। तो क्या शरीयत के अनुसार बिक्री हुई या नहीं? और शरीयत के अनुसार क्या ज़ैद अपना कब्ज़ा कर सकता है या नहीं? फ़क़त।

जवाब: "लेंगे" सिर्फ एक वादा है, और वादा कोई अनुबंध (अक़्द) नहीं है। न ही वादा करने वाले को वादा निभाने के लिए मजबूर किया जा सकता है, जैसा कि अल-हिन्दिया, अल-खैरिया और फ़िक़्ह की अन्य किताबों में उल्लेख किया गया है (जैसा कि हिन्दिया और खैरिया आदि फ़िक़्ह की किताबों में इस पर साफ़ कहा गया है। - अनुवादक)। तो उसकी मृत्यु के बाद वारिसों पर क्या ज़बरदस्ती संभव है? इसलिए, ज़ैद को कब्ज़ा करने का कोई अधिकार नहीं है। वह केवल उन रुपयों का हकदार है जो उसने अग्रिम दिए थे, जिन्हें विरासत के बँटवारे से पहले ज़ैनब की संपत्ति (तरका) से वसूल किया जाए। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला 21: 25 रबीउल आखिर 1312 हिजरी दीन के विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि ज़ैद ने अपने अधिकार (2 बिस्वांसी कचवांसी) बक्र के हाथ 158 रुपये में बेचे। उसने बिक्री पत्र (बैय नामा) लिखकर हस्ताक्षर किए, बयाना लिया और रजिस्ट्री कराने का वादा किया। बाद में उसने अपने चचेरे भाई खालिद के पक्ष में 395 रुपये का बिक्री पत्र लिखकर रजिस्ट्री करा दी। अब बक्र कहता है कि वास्तव में यह बिक्री पत्र बनावटी है, जो शफ़ीअ के डर से लिखा गया है, और सच्चाई यह है कि मूल रूप से यह बक्र की खरीद के अनुसार 158 रुपये में ही बेचा गया था। बक्र यह भी कहता है कि "मैं इसमें शफ़ीअ हूँ क्योंकि मेरे पंद्रह बस्ते हैं।" तो इस सूरत में क्या बक्र शरीयत के अनुसार शफ़ाअत

के ज़रिए इस संपत्ति को पा सकता है और साथ ही समझौते के अनुसार उसी कीमत पर पा सकता है या नहीं? फ़क़त।

जवाब: बिक्री एक अनिवार्य अनुबंध (अक़्द-ए-लाज़िम) है। पूर्ण होने के बाद विक्रेता को यह अधिकार बिल्कुल नहीं है कि वह इसे किसी दूसरे के हाथ बेच दे जब...

1. फ़तावा हिन्दिया, किताब अल-इजारा, अध्याय 7, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 4/472; अल-उक़ूद अद-दुर्रिया, कंदहार अफ़गानिस्तान, 2/353।

पृष्ठ 95/715

یہ کبھی نہ ہوگا کہ بیع کو فسخ ہو جاہمان کر مبیع زید کو نہ دے اور اس کے روپے اس جرم میں کہ تو کیوں پھر گیا ضبط کرے، ھل ھذا الا الظلم صریح (کیا یہ ظلم صریح نہیں ہے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۰: از پیلی بھیت ۵ ذیقعدہ ۱۳۱۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اور فضلائے شرع مبین اس مسئلہ میں کہ زید نے ایک عورت زینب کو بمواجہ چند عورات مستورات اور چند مردمان کر کے کچھ روپیہ اس وعدہ پر دیا کہ ہم فلاں مکان یا زمین اسی عورت زینب کا اس قدر تعداد روپیہ لیں گے اور بقدر ۱۲۲ بئیس روپیہ مثل بیعانہ دئے ہیں اور اس عورت زینب نے اس روپیہ کو لے کر صرف مایحتاج کر لیا اور سب گواہان کے سامنے اقرار کر دیا بعد اقرار کے کچھ دنوں بعد زینب فوت ہو گئی لہٰذا شرعاً بیع ہوئی یا نہیں؟ اور از روئے شرع شریف کے زید اپنا قبضہ کر سکتا ہے یا نہیں؟ فقط

الجواب: "لیں گے" صرف وعدہ ہے اور وعدہ کوئی عقد نہیں، نہ وفائے وعدہ پر خود وعدہ کرنے والے کو جبر کیا جا سکتا ہے کما نص علیہ فی الھندیۃ والخیریۃ وغیرھما من الکتب الفقھیۃ (جیسا کہ ہندیہ اور خیریہ وغیرہ کتب فقہ میں اس پر نص کی گئی ہے۔ ت) تو اس کی موت کے بعد وارثوں پر کیا جبر ممکن ہے پس زید کو قبضہ کرنے کا اصلاً اختیار نہیں وہ صرف ان روپوں کا مستحق رہا جو اس نے پیشگی دئے تھے ترکہ زینب سے قبل تقسیم ورثہ وصول کئے جائیں، واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۱: ۲۵ ربیع الآخر شریف ۱۳۱۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے اپنا حق حقوق ۲ بسوانسی کچوہوانسی بکر کے ہاتھ فروخت کیا مبلغ (ماسہ معہ ۱۵۸) روپیہ کو اور بیع نامہ لکھ کر اپنے دستخط کئے اور بیعانہ لیا اور رجسٹری کرا دینے کا معاہدہ کیا اور بعد کو خالد اپنے چچازاد بھائی کو (سامہ لعہ ۳۹۵) روپیہ کا بیعنامہ لکھ کر رجسٹری کرا دی ، اب بکر کہتا ہے کہ درحقیقت یہ بیعنامہ مصنوعی لکھا ہے شفیع کے ڈر سے اور یہ حقیقت اصل میں وہی (ما صہ معہ ۱۵۸) کو بموجب بیع بکر کے فروخت کی ہے، اور بکر یہ بھی کہتا ہے کہ میں اس میں شفیع ہوں کیونکہ میری پندرہ بستے ہیں، تو اس صورت میں بکر بموجب شرع شریف کے شفاعت سے اس حقیت کو اور نیز بموجب معاہدہ کے اس قیمت کو پا سکتا ہے یا نہیں؟ فقط

الجواب: بیع عقد لازم ہے بعد تمامی ہر گز بائع کو اختیار نہیں کہ دوسرے کے ہاتھ بیع کر دے جب

1 فتاویٰ ہندیہ کتاب الاجارۃ الباب السابع فی اجارۃ المستاجر نورانی کتب خانہ پشاور ۴ / ۴۷۲، العقود الدریہ مسائل و فوائد شتی من الحظر والاباحۃ ارگ بازار قندھار افغانستان ۲ / ۳۵۳

He wrote the bill of sale by the hand of Bakr and signed it; thus, there remains absolutely no doubt in the entire contract. Registration is neither necessary according to Sharia nor does it have any involvement in the completion of the contract. In fact, according to Sharia, sale is simply the name of offer and acceptance. Even if a bill of sale is not written, it is fine. However, writing the bill of sale in the well-known and customary manner, signing it, and the buyer's acceptance of it is a complete and sufficient contract, even if the specific verbal words of buying and selling ("I bought", "I sold") were not mentioned. It is in *Al-Ashbah*:

Arabic	**Urdu Translation**
Writing validates the sale. It is stated in *Al-Hidayah* that writing is like speech. (1)	Writing validates the sale; it is stated in *Hidayah* that writing is like speech. (T)
The meaning is what is considered in these contracts; therefore, sale by mutual delivery (Ta'ati) is valid for both precious and common items, and this is correct because mutual consent is established. (2)	In these contracts, the meaning is what is considered; therefore, sale by delivery is established in both superior and inferior things, and this is correct because mutual consent is realized. (T)

In short, the mentioned reality is that it [the property] exited from the ownership of Zaid and entered the ownership of Bakr. Zaid can only demand (masa mah 158) from Bakr. The second sale made to Khalid without Bakr's permission is rejected. Bakr has no need for a claim of pre-emption (Shuf'a) in his own property. And Allah Almighty knows best, and His knowledge, glorified be His majesty, is most perfect and most firm.

Issue 22: What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid has two wives. Now Zaid sells his rights to one wife. Does Zaid have the authority to sell during his lifetime or not? Explain and be rewarded.

The Answer: If this sale occurred from Zaid before his terminal illness, in a state of physical health and soundness of mind, then it is absolutely effective. And Allah Almighty knows best.

Issue 23: What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid died leaving one wife, one sister, and one nephew as heirs, and three biswa of inherited property. The wife sold that entire property on her own behalf to Khalid, but that bill of sale

was written with the knowledge of all heirs, and they are all adults and they all gave their testimonies...

---

1. *Al-Ashbah wa al-Naza'ir*, Third Art, Rulings of Writing, Idarat al-Qur'an Karachi, 2/196.
2. *Al-Hidayah*, Book of Sales, Yusufee Press Lucknow, 3/24-25.

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

उसने बक्र के हाथ विक्रय-पत्र (बै-नामा) लिख दिया और उस पर अपने हस्ताक्षर कर दिए, तो पूरे अनुबंध में बिल्कुल कोई संदेह नहीं रहा। रजिस्ट्री न तो शरीयत के अनुसार आवश्यक है और न ही अनुबंध के पूरा होने में इसका कोई दखल है। बल्कि शरीयत के अनुसार, बिक्री केवल प्रस्ताव और स्वीकृति (ईजाब-ओ-क़ुबूल) का नाम है। भले ही विक्रय-पत्र न लिखा जाए, तो भी ठीक है। लेकिन प्रचलित और प्रथागत तरीके से विक्रय-पत्र लिखकर हस्ताक्षर करना और खरीदार का उसे स्वीकार कर लेना एक पूर्ण और पर्याप्त अनुबंध है, भले ही खरीद-बिक्री के विशिष्ट मौखिक शब्दों ("मैंने खरीदा", "मैंने बेचा") का उल्लेख न किया गया हो। 'अल-अशबाह' में है:

अरबी	**उर्दू अनुवाद**
लेखन से बिक्री मान्य हो जाती है। 'अल-हिदाया' में कहा गया है कि लेखन भाषण (कलाम) की तरह है। (1)	लेखन से बिक्री सही हो जाती है, हिदाया में है कि लेखन भाषण के समान है। (त)
इन अनुबंधों में अर्थ (नीयत) का महत्व होता है; इसीलिए कीमती और सस्ती वस्तुओं में आपसी लेनदेन (बै-ए-तआती) द्वारा बिक्री संपन्न हो जाती है, और यही सही है क्योंकि आपसी सहमति सिद्ध हो जाती है। (2)	इन अनुबंधों में अर्थ का विचार होता है, इसीलिए अच्छी और घटिया चीज़ों में बै-तआती (लेनदेन द्वारा बिक्री) संपन्न हो जाती है और यही सही है क्योंकि आपसी रज़ामंदी सिद्ध होती है। (त)

संक्षेप में, उपर्युक्त वास्तविकता यह है कि वह [संपत्ति] ज़ैद के स्वामित्व से निकलकर बक्र के स्वामित्व में प्रवेश कर गई। ज़ैद बक्र से केवल (मासा मह 158) की मांग कर सकता है। खालिद के हाथ की गई दूसरी बिक्री, बक्र की अनुमति के बिना, अस्वीकार्य है। बक्र को अपनी संपत्ति में शुफ़आ (pre-emption) के दावे की कोई आवश्यकता नहीं है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है, और उसका ज्ञान, उसकी महिमा महिमामय हो, सबसे पूर्ण और सबसे दृढ़ है।

मसला 22: दीन के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि ज़ैद की दो पत्नियाँ हैं। अब ज़ैद अपने अधिकार एक पत्नी के नाम बेचता है, तो ज़ैद को अपने जीवनकाल में बेचने का अधिकार है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: यदि यह बिक्री ज़ैद से उसकी मृत्यु रोग (मरज़-उल-मौत) से पहले, शारीरिक स्वास्थ्य और मानसिक स्थिरता की स्थिति में हुई, तो यह निश्चित रूप से प्रभावी है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 23: दीन के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि ज़ैद ने एक पत्नी, एक बहन और एक भतीजे को वारिस और तीन बिस्वा छोड़ी गई संपत्ति छोड़कर वफात पाई। पत्नी ने वह पूरी मिल्कियत अपनी ओर से खालिद के हाथ बेच दी, लेकिन वह विक्रय-पत्र सभी वारिसों की जानकारी के साथ लिखा गया था और वे सभी वयस्क हैं और उन सभी ने अपनी गवाही दी...

---

1. अल-अशबाह व अल-नज़ाइर, तीसरा खंड, लेखन के नियम, इदारात अल-कुरान कराची, 2/196।
2. अल-हिदाया, बिक्री की पुस्तक, यूसुफ़ी प्रेस लखनऊ, 3/24-25।

وہ بدستِ بکر بیع نامہ لکھ دیا اس پر اپنے دستخط کر دیئے، تو تمامی عقد میں اصلاً کوئی شبہ نہ رہا۔ رجسٹری نہ شرعاً ضروریہ نہ اسے تکمیلِ عقد میں اصلاً کچھ دخل، بلکہ شرعاً تو صرف ایجاب و قبول کا نام بیع ہے اگرچہ بیع نامہ بھی نہ لکھا جائے تو نہی تنہا بیع نامہ بطریقِ معروف و معہود لکھ کر دستخط کرنا مشتری کا اسے قبول کرلینا بھی عقد تام وکافی ہے، اگرچہ زبانی الفاظ مقررہ خرید و فروخت (میں نے خریدا، میں نے بیچا ت) کا ذکر نہ آیا ہو۔ اشباہ میں ہے:

عربی	اردو ترجمہ
الكتابة يصح البيع بها قال في الهداية والكتاب كَالخطاب 1	تحریر سے بیع صحیح ہو جاتی ہے، ہدایہ میں ہے فرمایا تحریر کلام کی مثل ہے۔ (ت)
المعنى هو المعتبر في هذه العقود ولهذا ينعقد بالتعاطى في النفيس والخسيس هو الصحيح لتحقق المراضاة 2	ان عقود میں معنی کا اعتبار ہوتا ہے اسی لئے بڑھیا اور گھٹیا چیزوں میں بیع تعاطی منعقد ہو جاتی ہے اور یہی صحیح ہے کیونکہ باہمی رضامندی متحقق ہوتی ہے۔ (ت)

غرض حقیقتِ مذکورہ ملک زید سے خارج ہو کر ملک بکر میں داخل ہو گئی، زید بکر سے صرف (ماسہ مہ ۱۵۸) کا مطالبہ کر سکتا ہے بیع ثانی کہ بدست خالد کی، بے اجازتِ بکر مردود ہے، بکر کو اپنی ملک میں دعوی شفعہ کی کوئی حاجت نہیں، واللہ تعالٰی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم۔

مسئلہ ۲۲: علمائے دین اس مسئلہ میں کیا فرماتے ہیں کہ زید کی دو زوجہ ہیں، اب زید اپنا حق حقوق ایک زوجہ کے نام بیع کرتا ہے، تو زید کو اپنی حیات میں بیع کرنے کا اختیار ہے یا نہیں؟

بینوا توجروا

الجواب: اگر یہ بیع زید سے قبل مرضِ موت کے بحالتِ صحتِ نفس و ثباتِ عقل واقع ہوئی تو قطعاً نافذ ہے واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۲۳: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے ایک زوجہ اور ایک ہمشیرہ اور ایک بھتیجا وارث اور تین بسوہ جائداد متروکہ چھوڑ کر انتقال کیا زوجہ نے وہ کل حقیت اپنی طرف سے بدستِ خالد فروخت کی مگر وہ بیع نامہ سب ورثاء کی اطلاع سے لکھا گیا اور وہ سب بالغ ہیں اور سب نے اپنی گواہیاں

---

1 الاشباہ والنظائر الفن الثالث احکام الکتابۃ ادارۃ القرآن کراچی ۲ / ۱۹۶ 2 الھدایہ کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنؤ ۳ / ۲۴-۲۵

Fatawa Razawiyya Volume 17

Write on this sale deed and declare that this sale is correct, there is no claim on the sold item, the entire price was paid by the buyer and all heirs distributed it among themselves. Now after nine or ten years, the sister of Zaid is the claimant, stating that I did not make this sale, only the wife of Zaid sold the entire property as owner, whereas she was not entitled to the whole. In this situation, will that sale be Shariah-compliant and valid, and will the claimant's claim be declared unjust and void or not? Explain and be rewarded.

The Answer: In the inquired situation, that sale is correct and valid, and the claimant's claim is purely unjust and void. Although Zaid's wife was not the owner of the entire property and she sold the whole property on her own behalf, since this occurred with the knowledge of the other heirs and they approved it and did not object, to the extent that they took their share of the price and they were all adults, now that sale will be considered as if they all sold their own respective shares and took the price. Now they have no grounds for claim or objection left.

[Reference Section] Arabic: In Tanwir al-Absar and al-Durr al-Mukhtar, the owner's acceptance of the price or demanding it from the buyer is considered an approval [Summary]. As for what appeared in al-Bahr and then al-Durar regarding invalidity if the unauthorized person (Fuzuli) sells for himself, it is a misconception contrary to the branches of the school and against the manifest narrations, as clarified by Mawla Khair al-Milla wa al-Din al-Ramli then Allama Shami Effendi. So one should be aware of this, and Allah Almighty knows best. Urdu Translation: It is in Tanwir al-Absar and Durr al-Mukhtar that the owner receiving the price from the buyer or demanding the price from him is approval of the sale [Summary]. And what appeared in Bahr and then Durar, stating that the sale is void if an unauthorized person (Fuzuli) sells for himself, is a misconception and contrary to the religious branches and against the manifest narrations (Zahir al-Riwaya), as researched by Hazrat Maulana Khairuddin Ramli then Allama Shami Effendi. Therefore, one should be aware of this. And Allah Almighty knows best. (T)

Question 22: What do the scholars of religion say on this matter: when grain is 16 Seer for cash in the market, is it permissible, forbidden, or disliked to sell it for 15 or 12 Seer on credit? Explain and be rewarded.

The Answer: This act, regardless of how much it differs from the market rate, is not forbidden or impermissible because it does not involve coercion against the buyer.

Footnote: 1. Durr al-Mukhtar, Book of Sales, Chapter on the Unauthorized Person (Al-Fuzuli), Mujtabai Press, Delhi, 2/32.

Page 97 of 715

इस बैनामा (बिक्री पत्र) पर लिखें और यह कह दें कि यह बिक्री सही है, इसमें बिकने वाली वस्तु पर कोई दावा नहीं है, खरीदार ने पूरी कीमत अदा कर दी और सभी वारिसों ने आपस में बाँट लिया। अब नौ-दस साल बाद ज़ैद की बहन दावेदार है कि मैंने यह बिक्री नहीं की, केवल ज़ैद की पत्नी ने मालिकाना तौर पर पूरी जायदाद बेच दी, जबकि वह पूरी की हक़दार नहीं थी। इस सूरत में क्या वह बिक्री शरीयत के अनुसार सही और लागू होगी, और क्या दावेदार का दावा गलत और बातिल करार दिया जाएगा या नहीं? बयान फरमाएँ सवाब पाएँ।

उत्तर: पूछी गई स्थिति में वह बिक्री सही और लागू है और दावेदार का दावा सरासर गलत और बातिल है। हालाँकि ज़ैद की पत्नी पूरी जायदाद की मालिक नहीं थी और उसने अपनी ओर से सारी जायदाद बेच दी, मगर चूँकि यह मामला अन्य वारिसों की जानकारी में हुआ और उन्होंने इसे पसंद किया और इनकार नहीं किया, यहाँ तक कि कीमत में से अपना हिस्सा भी लिया और वे सब बालिग़ थे, तो अब वह बिक्री उसी तरह मानी जाएगी जैसे उन सबने खुद अपना-अपना हिस्सा बेचा और कीमत ली। अब उनके पास दावे या आपत्ति का कोई स्थान शेष नहीं रहा।

[संदर्भ अनुभाग] अरबी: तनवीरुल अबसार और दुर्रुल मुख्तार में है कि मालिक का खरीदार से कीमत लेना या उससे कीमत माँगना बिक्री की अनुमति है [संक्षेप]। और जो अल-बहर और फिर दुरर में आया है कि यदि फुज़ूली (अनधिकृत व्यक्ति) ने अपने लिए बिक्री की तो वह बातिल है, वह एक वहम है और मज़हबी शाखाओं के खिलाफ और ज़ाहिरुल रिवाया के खिलाफ है जैसा कि मौला खैरुल मिल्लत वद-दीन रम्ली और फिर अल्लामा शामी अफ़ंदी ने स्पष्ट किया है। अतः इससे अवगत होना चाहिए, और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है। उर्दू अनुवाद: तनवीरुल अबसार और दुर्रे मुख्तार में है कि मालिक का खरीदार से कीमत वसूल कर लेना या उससे कीमत माँगना बिक्री की अनुमति है [संक्षेप]। और वह जो बहर और फिर दुरर में आया है कि बिक्री बातिल है यदि फुज़ूली ने अपने लिए बिक्री की, वह वहम है और मज़हबी शाखाओं के विरुद्ध और ज़ाहिरुल रिवाया के खिलाफ है जैसा कि हज़रत मौलाना खैरूद्दीन रम्ली और फिर अल्लामा शामी अफ़ंदी ने तहकीक फरमाई। लिहाज़ा इससे बाखबर होना चाहिए। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है। (त)

प्रश्न 22: उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फरमाते हैं कि जब बाज़ार में अनाज नकद में 16 सेर हो, तो क्या उधार में 15 या 12 सेर बेचना जायज़ है या हराम या मकरूह? बयान फरमाएँ सवाब पाएँ।

उत्तर: यह कार्य, चाहे बाज़ार भाव से कितना ही अलग हो, हराम या नाजायज़ नहीं है क्योंकि यह खरीदार पर किसी प्रकार की ज़बरदस्ती नहीं करता।

पाद-टिप्पणी: 1. दुर्रे मुख्तार, किताबुल बुयू, फुज़ूली का अध्याय, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 2/32.

اس بیعنامہ پر لکھیں اور یہ کہہ دا کہ یہ بیع صحیح ہے اس میں کچھ دعوٰی مبیع نہیں ہے کل زر ثمن مشتری نے ادا کردیا اور سب ورثاء نے باہم تقسیم کر لیا، اب بعد نو دس برس کے ہمشیرہ زید مدعیہ ہے کہ یہ بیع میں نے نہیں کی فقط زوجہ زید نے بطور مالکانہ کل حقیت بیع کی حالانکہ وہ کل کی مستحق نہیں، اس صورت میں وہ بیع شرعا صحیح و نافذ ، اور دعوٰی مدعیہ ناحق و باطل قرار پائے گا یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: صورت مستفسرہ میں وہ بیع صحیح و نافذ ہے اور دعوٰی مدعیہ محض ناحق و باطل کہ اگرچہ زوجہ زید کل حقیت کی مالک نہ تھی اور اس نے ساری جائداد اپنی طرف سے بیع کی مگر یہ جبکہ یہ امر باطلاع ورثاء دیگر واقع ہوا اور انھوں نے پسند رکھا اور انکار نہ کیا یہاں تک کہ زر ثمن سے حصہ لیا اور وہ سب بالغ تھے تو اب وہ بیع ایسے ہی قرار پائے گی کہ گویا ان سب نے خود اپنا اپنا حصہ بیع کیا اور ثمن لیا اب کسی طرح سے انھیں محل دعوٰی و اعتراض باقی نہیں

[حوالہ جات] عربی عبارت: في تنوير الابصار والدرالمختار اخذ المالك الثمن او طلبه من المشترى اجازة ١ اھ ملخصا واما ما وقع في البحر ثم الدرر من البطلان ان باع الفضولى لنفسه موهم مخالف للفروع المذهبية ومضاد للظاہر الرواية كما حققه المولى خير الملة والدين الرملى ثم العلامة الشامى افندى فليتنبه، واللہ تعالٰی اعلم۔ اردو ترجمہ: تنویر الابصار اور درمختار میں ہے کہ مالک کا مشتری سے ثمن وصول کر لینا یا اس سے ثمن مانگنا اجازت بیع ہے اھ ملخصاً، اور وہ جو بحر پھر درر میں آیا ہے کہ بیع باطل ہے اگر فضولی نے اپنے لئے بیع کی وہ وہم ہے اور فروع مذہبیہ کے مخالف اور ظاہر الروایہ کے خلاف ہے جیسا کہ حضرت مولانا خیر الدین رملی پھر علامہ شامی آفندی ن تحقیق فرمائی، پس اس سے باخبر ہونا چاہئے واللہ تعالٰی اعلم۔(ت)

مسئلہ ۲۲: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ جب غلہ بازار میں نقدوں ۱۶ سیر کا ہو تو قرضوں ۱۵ یا ۱۲ سیر کا بیچنا جائز ہے یا حرام یا مکروہ؟ بینوا توجروا

الجواب: یہ فعل اگر چہ نرخ بازار سے کیسا ہی تفاوت ہو حرام یا ناجائز نہیں کہ وہ مشتری پر جبر نہیں کرتا

حاشیہ: ۱ درمختار کتاب البیوع فصل فی الفضولی مطبع مجتبائی دہلی ۳۲/۲

Fatawa Rizvia Volume 17

He is not deceiving him, and every person has the right over their property, whether they give a penny's worth of item for a thousand rupees; the buyer may be interested or not.

[Arabic Box:] In Radd al-Muhtar, if someone sold a piece of paper for a thousand, it is permissible and not disliked. And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 25: What do the scholars of religion say in this matter that four brothers, Sheikh Khizri, Karimullah, Muhammad Basharat, and Shah Muhammad, acquired a property including everything and their livelihood remained joint until death. After that, Khizri left two daughters Fajju and Ajju, and one son Muhammad Bakhsh whose heir is his wife Amreen. The other, Fajju, whose heirs are her husband Kallu and children Ali Bakhsh, Hussain Bakhsh, and Suleman. Shah Muhammad left wife Nooran, son Muhammad Ali, and daughter Blaqan. Karimullah left wife Mango, son Yad Ali, and Amreen, Muneeran, Bagla, daughters. Muhammad Basharat left a wife and sons Muhibbullah and Kallan, and daughter Umda, leaving their respective heirs. After their passing, all these heirs sold that joint undivided property in one contract to a person for eight hundred rupees and gave him possession and control. But Kallan, Ali Hussain, Hussain Bakhsh, and Suleman were minors at the time of sale, so their mother Kallu sold on their behalf as a guardian (wilayat). And Yad Ali's wife, without permission and information of Yad Ali, sold his ownership share of her own accord. Now these five heirs are claiming and want the cancellation of the sale. So in this case, is the mentioned sale valid and effective, and will those heirs get their share back or not?

The Answer: In the questioned scenario, if any word or action proceeded from Yad Ali after learning about the sale that indicated permission and acceptance of the sale, then that sale became valid and effective, and his claim will never be heard. And if nothing was done verbally or practically that indicated permission, even if he remained silent after receiving news of the sale and said nothing, then in this case his claim is audible and the sale to the extent of his share is invalid. The buyer should return his share and keep the remaining to the extent of the price against it, or return it too by identifying defect and take back his entire price. And if the property of minor children was sold, this sale will never be valid, and the buyer...

1 Radd al-Muhtar, Kitab al-Kafala, Matlab fi Bai' al-Inah, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/279.

वह उसे धोखा नहीं देता है और प्रत्येक व्यक्ति को अपनी संपत्ति पर अधिकार है चाहे वह कौड़ी की चीज़ हज़ार रुपये में दे, खरीदार को गरज हो या न हो।

[अरबी बॉक्स:] रद अल-मुह्तार में है, यदि किसी ने कागज का एक टुकड़ा हजार के बदले में बेचा तो यह जायज़ है और मकरूह (नापसंद) नहीं है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 25: दीन के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि शेख खिजरी, करीमुल्लाह, मुहम्मद बशारत और शाह मुहम्मद, चार भाइयों ने सब कुछ मिलाकर एक जायदाद पैदा की और मृत्यु तक उनका खाना-पीना एक साथ रहा। उसके बाद, खिजरी ने दो बेटियाँ फज्जू और अज्जू और एक बेटा मुहम्मद बख्श छोड़ा जिसकी वारिस उसकी पत्नी अमरीन है। दूसरी, फज्जू जिसके वारिस उसके पति कल्लू और बच्चे अली बख्श, हुसैन बख्श और सुलेमान हैं। शाह मुहम्मद ने पत्नी नूरन, बेटा मुहम्मद अली और बेटी बलाक़न छोड़ी। करीमुल्लाह ने पत्नी मंगो, बेटा याद अली और अमरीन, मुनीरन, बगला, बेटियाँ छोड़ीं। मुहम्मद बशारत ने एक पत्नी और बेटे मुहिब्बुल्लाह और कल्लन, और बेटी उमदा छोड़ी, जो अपने-अपने वारिस छोड़कर मर गए। उनके इंतकाल के बाद, इन सभी वारिसों ने उस संयुक्त अविभाजित संपत्ति को एक अनुबंध में एक व्यक्ति को आठ सौ रुपये के बदले बेच दिया और उसे कब्ज़ा और अधिकार दे दिया। लेकिन कल्लन, अली हुसैन, हुसैन बख्श और सुलेमान बिक्री के समय नाबालिग थे, इसलिए उनकी माँ कल्लू ने उनकी ओर से विलायत (अभिभावक) के रूप में बिक्री की। और याद अली की पत्नी ने, याद अली की अनुमति और जानकारी के बिना, अपनी मर्जी से उसका मालिकाना हिस्सा बेच दिया। अब ये पाँचों वारिस दावा कर रहे हैं और बिक्री को रद्द करना चाहते हैं। तो इस स्थिति में, क्या उक्त बिक्री सही और प्रभावी है और क्या उन वारिसों को उनका हिस्सा वापस मिलेगा या नहीं?

जवाब: सवाल की सूरत में, यदि बिक्री की जानकारी होने के बाद याद अली से कोई ऐसा शब्द या कार्य हुआ जो बिक्री की अनुमति और स्वीकृति का संकेत देता हो, तो वह बिक्री सही और प्रभावी हो गई, और उसका दावा कभी नहीं सुना जाएगा। और यदि मौखिक या व्यावहारिक रूप से कोई ऐसी बात नहीं हुई जो अनुमति का संकेत दे, भले ही वह बिक्री की खबर मिलने के बाद चुप रहा और कुछ नहीं कहा, तो इस स्थिति में उसका दावा सुना जाने योग्य है और उसके हिस्से की सीमा तक बिक्री अवैध है। खरीदार को उसका हिस्सा वापस करना चाहिए और बाकी को उसके बदले की कीमत की

सीमा तक स्वीकार रखना चाहिए, चाहे वह उसे भी दोष के कारण वापस कर दे और अपनी पूरी कीमत वापस ले ले। और यदि नाबालिग बच्चों की संपत्ति बेची गई, तो यह बिक्री कभी सही नहीं होगी और खरीदार उसका...

---

1 रद अल-मुह्तार, किताब अल-कफाला, मतलब फी बैय अल-इनाह, दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 4/279।

نہ اسے دھوکا دیتا ہے اور اپنے مال کا ہر شخص کو اختیار ہے چاہے کوڑی کی چیز ہزار روپیہ کو دے، مشتری کو غرض ہولے، نہ ہو نہ لے۔

فی رد المحتار لو باع کاغذہ بالف یجوز ولا یکرہ۱۔ واللہ تعالی اعلم۔ | ردالمحتار میں ہے اگر کسی نے کاغذ کا ٹکڑا ہزار کے بدلے میں بیچا تو جائز ہے اور مکروہ نہیں ہے، واللہ تعالٰی اعلم۔(ت)

مسئلہ ۲۵: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ شیخ خضر وی و کریم اللہ و محمد بشارت و شاہ محمد چار بھائیوں نے ایک جائداد بشمول ہمہ گر پیدا کی اور تادم مرگ خورد نوش ان کا یکجار رہا، بعدۃ خضری نے دو دختر فجو اور اجو اور ایک پسر محمد بخش جس کی وارث اس کی زوجہ امرین ہے، اور دوسری فجو جس کے ورثاء اس کے زوج کلو اور علی بخش و حسین بخش و سلیمن اولاد ہیں، اور شاہ محمد نے زوجہ نورن وابن محمد علی وبنت بلاقن اور کریم اللہ نے زوجہ منگو اور ابن یاد علی اور امیرن منیرن، بگلا، بنات اور محمد بشارت نے زوجہ چھوڑی، اور محب اللہ و کلن پسران اور عمدہ دختر اپنے اپنے ورثاء چھوڑ کر وفات پائی، بعد ان کے انتقال کے ان سب وارثوں نے وہ جائداد مشترکہ غیر منقسمہ ایک عقد میں ایک شخص کے ہاتھ بعوض آٹھ سو روپیہ کے بیچ کی اور اسے قابض و متصرف کرادیا مگر کلن اور علی حسین اور حسین بخش اور سلیمان وقت بیع نابالغ تھے کہ ان کی ماں کلو نے ولایۃً ان کی جانب سے بھی بیچ کی اور یاد علی کی بی بی نے بے اجازت و اطلاع یاد علی باختیار خود حصہ اس کا مالکانہ بیچ ڈالا، اب یہ پانچوں وارث دعوٰی کرتے ہیں اور نقض بیع چاہتے ہیں پس اس صورت میں بیع مذکور صحیح و نافذ اور حصہ ان ورثاء کا انھیں واپس ملے گا یا نہیں؟

الجواب: صورت مسئولہ میں اگر یاد علی سے بعد از علم بالبیع کوئی قول یا فعل ایسا صادر ہوا کہ دال اجازت و تسلیم بیع پر تھا تو وہ بیع صحیح و نافذ ہو گئی، اور دعویٰ اس کا ہرگز نہ سنا جائے گا، اور جو قولاً و فعلاً کوئی امر ایسا نہ ہوا کہ اجازت پر دلالت کرے اگر چہ بعد خبر پہنچنے بیع کے چپ رہا، اور کچھ نہ کہا تو اس صورت میں دعویٰ اس کا مسموع اور بیع بقدراس کے حصہ کے ناجائز مشتری حصہ اس کا واپس کرے اور مابقی بقدراس ثمن کے کہ مقابل اس کے ہے مقبول رکھے خواہ اسے بھی بالعیین رد کردے اور اپنا کل ثمن پھیرلے اور اگر جائداد اولاد صغار بیچ کردی گئی تو یہ بیع ہرگز صحیح نہ ہوگی اور مشتری اس کا

---

١ رد المحتار كتاب الكفالة مطلب في بيع العينة دار احياء التراث العربى بيروت ۴/ ۲۷۹

He cannot become the owner in any way. The buyer should return the shares of Kallan, Ali Hussain, Hussain Bakhsh, and Sulaiman from this property to them, and regarding the remainder, he has the choice: whether to cancel the entire sale and take back the full price, or to maintain the sale for the remaining portion and take back that portion of the price which was against the returned property. And Allah Almighty knows best.

The Second Detailed Answer: A mother does not have any kind of guardianship over the property of minor children except for protection and supervision or buying necessary things for them.

| (Arabic) In Al-Ashbah wal-Naza'ir: There is no guardianship for the mother over the property of a minor except for preservation and purchasing what is indispensable for the minor. End. In Fatawa Qazi Khan, from the Book of Prohibition and Permission, Chapter on what is disliked in looking and touching: A man may circumcise his minor son, take possession of a gift for him, buy for him and sell for him. This is not permissible for the paternal uncle's executor (wasi), except that he may take possession of a gift for him, and likewise for the mother. End, summarized. | (Urdu) It is stated in Al-Ashbah wal-Naza'ir that in the property of minor children, the mother has no guardianship except for protection and purchasing necessary items. End. In Fatawa Qazi Khan, Book of Prohibition and Permission, Chapter on what is disliked in looking and touching, it is mentioned that a man has the authority to circumcise his minor son, to take possession of a gift for him, and to buy and sell for him. And for the executor (wasi) of a paternal uncle, this is not permissible except that he can take possession of a gift for him, and the same rule applies to the mother as well. End (T) |

Therefore, the property that Kallu sold on behalf of the minors Kallan, Ali Hussain, Hussain Bakhsh, and Sulaiman will be considered 'Bay Fuduli' (unauthorized sale). Since at the time of the contract there was no one to authorize it, it will be absolutely invalid and void. Even if the mentioned minors authorized it after reaching puberty, it would not become valid because a void act does not remain dependent on anyone's permission, and its correction is inconceivable.

| (Arabic) In Al-Durr al-Mukhtar, from the section on the 'Fuduli' (unauthorized person): Every transaction that proceeds from him, while having someone who can authorize this transaction from among those who are capable... | (Urdu) In Durr-ul-

Mukhtar, under the section on 'Fuduli' (unauthorized agent), it is stated that every transaction performed by an unauthorized person, provided that at the time of this transaction there is someone who has the power to... |

---

1. Al-Ashbah wal-Naza'ir, Third Art, Rules of Mahram, Idarat-ul-Quran wal-Uloom-ul-Islamia Karachi 2/188
2. Fatawa Qazi Khan, Book of Prohibition and Permission, Chapter on what is disliked in looking and touching, Naval Kishore Lucknow 4/783

वह किसी तरह मालिक नहीं हो सकता। खरीदार को चाहिए कि वह इस जायदाद में से कल्लन, अली हुसैन, हुसैन बख्श और सुलेमान के हिस्सों को उन्हें वापस कर दे, और बाकी के संबंध में वह स्वतंत्र है: चाहे वह पूरी बिक्री रद्द कर दे और पूरी कीमत वापस ले ले, या शेष हिस्से की बिक्री को कायम रखे और कीमत का वह हिस्सा वापस ले ले जो वापस की गई जायदाद के बदले में था। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

दूसरा विस्तृत उत्तर: नाबालिग बच्चों की संपत्ति पर माँ को किसी भी प्रकार का अधिकार (विलायत) प्राप्त नहीं है, सिवाय इसके कि वह उनकी रक्षा और देखभाल करे या उनके लिए ज़रूरी चीजें खरीदे।

| (अरबी) अल-अशबाह वन-नज़ाइर में है: नाबालिग की संपत्ति में माँ के लिए कोई विलायत नहीं है सिवाय हिफाज़त और नाबालिग के लिए अनिवार्य चीज़ें खरीदने के। फ़तावा क़ाज़ी ख़ान की किताबुल हज़्र वल इबाहत के बाब 'म यकरहु मिनन नज़र वल मस्स' में है: आदमी को अपने नाबालिग बेटे का खतना करने, उसके लिए तोहफ़ा (हिबा) प्राप्त करने, और उसके लिए खरीद-ओ-फरोख्त करने का अधिकार है। चचा के वसी (निष्पादक) के लिए यह जायज़ नहीं है सिवाय इसके कि वह उसके लिए हिबा पर कब्ज़ा कर सकता है, और यही हुक्म माँ का भी है। समाप्त। | (उर्दू) अल-अशबाह वन-नज़ाइर में है कि नाबालिग औलाद के माल में माँ को हिफाज़त और ज़रूरी चीज़ों की खरीदारी के सिवा कोई विलायत हासिल नहीं, फ़तावा क़ाज़ी ख़ान किताबुल हज़्र वल इबाहत बाब 'म यकरहु मिनन नज़र वल मस्स' में ज़िक्र है कि मर्द को अपने नाबालिग बेटे का खतना करने, उसके लिए हिबा पर कब्ज़ा करने और उसके लिए खरीद-ओ-फरोख्त का इख्तियार है और चचा के वसी के लिए यह जायज़ नहीं सिवाए इसके कि वह उसके लिए हिबा पर कब्ज़ा कर सकता है और यही हुक्म माँ का भी है। (त) |

अत: कल्लू ने जो जायदाद कल्लन, अली हुसैन, हुसैन बख्श और सुलेमान नाबालिगों की ओर से बेच डाली, वह 'बैअ फुज़ूली' (अनधिकृत बिक्री) मानी जाएगी। चूँकि अनुबंध (निकाह/अनुबंध) के समय कोई अनुमति देने वाला (मुजीज़) मौजूद नहीं था, इसलिए यह पूर्णतः नाजायज़ और बातिल (अमान्य) होगी। यदि उल्लेखित नाबालिग वयस्क होने के बाद अनुमति देते तब भी यह सही नहीं होती क्योंकि बातिल (शून्य) किसी की अनुमति पर निर्भर नहीं रहता और उसका सही होना अकल्पनीय है।

| (अरबी) अल-दुरुल मुख्तार के फसलुल फुज़ूली में है: जो भी तसर्रुफ (व्यवहार) उससे सादिर हुआ, जबकि उस तसर्रुफ के लिए कोई मुजीज़ (अनुमति देने वाला) हो जो सक्षम हो... | (उर्दू) दुर्रे मुख्तार में फुज़ूली के बयान में है कि जो तसर्रुफ फुज़ूली से सादिर हुआ और दरआंहालिकह उस तसर्रुफ के वकुअ के वक़्त कोई ऐसा शख्स मौजूद हो जो इस तसर्रुफ (को जायज़ कर सके)... |

---

1. अल-अशबाह वन-नज़ाइर, अल-फन्नुस सालिस, अहकामुल महारिम, इदारतुल कुरान वल उलूमुल इस्लामिया कराची, 2/188
2. फ़तावा क़ाज़ी ख़ान, किताबुल हज़्र वल इबाहत, फ़सल फीमा यकरहु मिनन नज़र वल मस्स, नवल किशोर लखनऊ, 4/783

کسی طرح مالک نہیں ہوسکتا مشتری اس جائدا د میں سے کلن و علی حسین و حسین بخش و سلیمن کو بقد ر ان کے حصص کے واپس کردے اور مابقی کی نسبت مختار ہے چاہے سب بیع ترک کردے اور کل ثمن واپس لے لے یا بیع نسبت مابقی کے قائم رکھے اور اس قدر حصہ ثمن کا کہ مقابل جائداد رد شدہ کے تھا پھیر لے ۔واللہ تعالیٰ اعلم۔

الجواب الثانی بالتفصیل: مال اولاد نابالغ میں ماں کو کسی طرح کی ولایت حاصل نہیں سوا اس کے کہ حفظ ونگہبانی کرے یا ضروری چیزیں انھیں خرید دے۔

| فی الاشباہ والنظائر لاولایۃ للام فی مال الصغیر الا الحفظ وشراء مالا بد منہ للصغیر اہ وفی فتاوی قاضیخان من کتاب الحظر والاباحۃ باب مایکرہ من النظر والمس للرجل ان یختن ولدہ الصغیر و یقبض لہ الھبہ ویشتری ویبیع ولایجوز ذلك لوصی العم الا انہ یقبض لہ الھبۃ وکذا الام اہ ملخصا۔ | الاشباہ والنظائر میں ہے کہ نابالغ اولاد کے مال میں ماں کو سوائے حفاظت و اشیاء ضروریہ کی خریداری کے کوئی ولایت حاصل نہیں اھ ، فتاوی قاضی خاں کتاب الحظر والاباحۃ باب مایکرہ من النظر والمس ، میں مذکور ہے کہ مرد کو اپنے نابالغ بیٹے کے ختنے کرنے ، اس کے لئے ہبہ پر قبضہ کرنے اور اس کے لئے خرید وفروخت کا اختیار ہے اور چچا کے وصی کے لئے یہ جائز نہیں سوائے اس کے کہ اس کے لئے ہبہ پر قبضہ کر سکتا ہے اور یہی حکم ماں کا بھی ہے اھ (ت) |

پس کلونے کہ جائداد اور کلن اور علی حسین اور حسین بخش اور سلیمن نابالغوں کی ان کی جانب سے بیچ ڈالی، بیع فضولی قرار پائے گی ، اور اس سبب سے کہ حالت عقد کوئی مجیز یعنی قابل

اجازت نہ تھا محض ناجائز و باطل ہوگی کہ اگر نابالغان مذکورین بعد از بلوغ اجازت دیتے تاہم صحیح نہ ہوتی کہ باطل کسی کی اجازت پر موقوف نہیں رہتا اور اس کی تصحیح غیر منصور۔

| فی الدر المختار من فصل الفضولی کل تصرف صدر منہ ولہ مجیزای لھذا التصرف من یقدر علی | در مختار میں فضولی میں ہے کہ جو تصرف فضولی سے صادر ہوا اور درانحالیکہ اس تصرف کے وقوع کے وقت کوئی ایسا شخص موجود ہو جو اس تصرف |

---

1 الاشباہ والنظائر الفن الثالث احکام المحارم ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۲ / ۱۸۸ 2 فتاوی قاضی خان کتاب الحظر والاباحۃ فصل فیما یکرہ من النظر والمس نولکشور لکھنؤ ۴ / ۷۸۳

Fatawa Razawiyya Volume 17

[Arabic]: Its ratification at the time of its occurrence makes it suspended (mawquf), and that for which there is no ratifier at the time of the contract does not conclude at all. Summarized. And in it [is mentioned] the suspension of the sale of another's property if the other is a sane adult; if they are a minor or insane, it does not conclude at all, as in 'Al-Zawahir' attributed to 'Al-Hawi'. [Urdu]: If someone can grant permission, its execution will depend on that person's permission. If at the time of the unauthorized (Fuduli) act, no such person who can grant permission is present, then this transaction will not be concluded at all. Summarized. In the same [source], it is stated that the sale of another's property is suspended if that person is a sane adult, and if they are a minor or insane, the sale will not be concluded at all, as stated in 'Al-Zawahir' while attributing it to 'Al-Hawi'. (T)

Thus, regarding the shares of the aforementioned minors, which is slightly more than a tenth of the total sold property—specifically, a fourth of the deceased estate of Sheikh Khizri—out of these 192 shares, it is mandatory for the buyer to return 70 shares to these minors and receive the price money for these shares (at 3/4 paisa per share) from their mother, Kallu. Similarly, the wife of Yaad Ali, Hurmat, who sold their shares without permission as if she were the owner, such a sale is void and not subject to ratification according to the rulings of 'Bada'i', 'Bahr-ul-Ra'iq', 'Ashbah wa Naza'ir', and the text of 'Tanwir-ul-Absar'.

[Arabic]: In 'Al-Durr al-Mukhtar': selling it for oneself is void, as in 'Al-Bahr' and 'Al-Ashbah' from 'Al-Bada'i'. The text of 'Al-Ashbah' says: The unauthorized (Fuduli) sale is suspended except when he sells for himself, then it is void. 'Al-Bada'i', summarized. Also in it: the sale of another's property is suspended if sold on the basis that it belongs to the owner, but if sold on the basis that it is for himself, then the sale is void. Summarized. [Urdu]: It is in 'Durr-e-Mukhtar' that an unauthorized person's sale for their own benefit is void, as referenced in 'Bada'i', 'Bahr', and 'Ashbah'. The text of 'Ashbah' is such that the unauthorized sale is suspended, but when it is sold for one's own self, it will be void. ('Bada'i' summarized with changes). In the same, it is stated that the sale of another's property is suspended when sold with the understanding that it is for the owner, and if for oneself, then the sale is void. Summarized. (T)

However, Maulana Muhammad bin Abdullah Ghazi Timirtashi, the author of 'Tanwir-ul-Absar', weakens this view due to its conflict with the branches (furu') of the school

of thought; if an unauthorized person sells another's property claiming it as their own, the manifest report (Zahir al-Riwayah) is that...

1. Durr-e-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Chapter on al-Fuduli, Mujtabai Press Delhi, 2/31
2. Durr-e-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Chapter on al-Fuduli, Mujtabai Press Delhi, 2/31
3. Durr-e-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Chapter on al-Fuduli, Mujtabai Press Delhi, 2/31
4. Durr-e-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Chapter on al-Fuduli, Mujtabai Press Delhi, 2/31

[अरबी]: इसकी घटना के समय इसकी पुष्टि इसे निलंबित (मौकूफ़) कर देती है, और जिसके लिए अनुबंध के समय कोई पुष्टि करने वाला न हो, वह बिलकुल भी संपन्न नहीं होता है। सारांश। और इसमें दूसरे की संपत्ति की बिक्री के निलंबन का उल्लेख है यदि वह अन्य व्यक्ति समझदार वयस्क है; यदि वे नाबालिग या पागल हैं, तो यह बिलकुल भी संपन्न नहीं होता है, जैसा कि 'अल-हवावी' के हवाले से 'अल-ज़वाहिर' में है। [उर्दू]: यदि कोई अनुमति दे सकता हो तो उसका संपन्न होना उस व्यक्ति की अनुमति पर निर्भर (मौकूफ़) हो जाएगा और यदि अनाधिकृत (फ़ुज़ूली) कार्य के समय ऐसा कोई अनुमति देने वाला मौजूद न हो, तो यह लेन-देन सिरे से संपन्न ही नहीं होगा। सारांश। इसी में है कि दूसरे के माल की बिक्री मौकूफ़ होती है यदि वह दूसरा व्यक्ति समझदार और वयस्क हो और यदि वह नाबालिग या पागल हो तो बिक्री सिरे से संपन्न नहीं होगी जैसा कि हावी की ओर संदर्भित करते हुए ज़वाहिर में है। (त)

अतः उपरोक्त नाबालिगों के हिस्से जो बेची गई कुल संपत्ति के दसवें हिस्से से कुछ अधिक हैं—अर्थात शेख़ ख़िज़री की छोड़ी हुई संपत्ति का चौथा हिस्सा—इन 192 हिस्सों में से 70 हिस्से खरीदार पर अनिवार्य हैं कि वह उन नाबालिगों को वापस कर दे और उन हिस्सों का मूल्य (3/4 पैसा प्रति हिस्सा) उनकी माँ कल्लो से प्राप्त कर ले। इसी प्रकार याद अली की पत्नी हुरमत ने जो बिना अनुमति के उनके हिस्से अपनी ओर से मालिक के रूप में बेच डाले, वह 'बदाइ', 'बहरुर राइक़', 'अशबाह व नज़ाइर' और 'तन्वीरुल अबसार' के आदेशानुसार बातिल (शून्य) है और अनुमति के योग्य नहीं है।

[अरबी]: 'अद-दुर्रुल मुख़्तार' में है: स्वयं के लिए बेचना बातिल (शून्य) है जैसा कि 'अल-बहर' और 'बदाइ' के हवाले से 'अल-अशबाह' में है। 'अशबाह' की इबारत इस प्रकार है: फ़ुज़ूली (अनाधिकृत) की बिक्री मौकूफ़ है सिवाय इसके कि जब वह अपने लिए बेचे तो बातिल होगी। 'बदाइ' सारांश। इसी में यह भी है: दूसरे के माल की बिक्री मौकूफ़ है यदि इस आधार पर बेचे कि वह मालिक के लिए है, लेकिन यदि अपने लिए होने के आधार पर बेचे तो बिक्री बातिल है। सारांश। [उर्दू]: 'दुर्र-ए-मुख़्तार' में है कि फ़ुज़ूली की अपनी ज़ात के लिए बिक्री बातिल है जैसा कि बदाइ, बहर और अशबाह के हवाले से है। अशबाह की इबारत इस तरह है कि फ़ुज़ूली की बिक्री मौकूफ़ होती है लेकिन जब वह अपनी ज़ात के लिए बेचे तो बातिल होगी। (बदाइ सारांश और परिवर्तन के साथ)। इसी में है कि गैर के माल की बिक्री मौकूफ़ होती है जबकि यह समझकर बेचे कि वह मालिक के लिए है और यदि अपने लिए बेचे तो बिक्री बातिल है। सारांश। (त)

मगर मौलाना मुहम्मद बिन अब्दुल्ला ग़ज़ी तिमिर्ताशी, 'तन्वीरुल अबसार' के लेखक, पंथ की शाखाओं (फ़ुरूह) के साथ विरोध के कारण इस विचार को कमज़ोर बताते हैं; फ़ुज़ूली यदि गैर के माल को अपना बताकर बेचे तो ज़ाहिर अल-रिवायत यही है कि...

1. दुर्र-ए-मुख़्तार, किताबुल बुयूअ, फ़स्ल फ़िल फ़ुज़ूली, मुजतबाई प्रेस दिल्ली, 2/31
2. दुर्र-ए-मुख़्तार, किताबुल बुयूअ, फ़स्ल फ़िल फ़ुज़ूली, मुजतबाई प्रेस दिल्ली, 2/31
3. दुर्र-ए-मुख़्तार, किताबुल बुयूअ, फ़स्ल फ़िल फ़ुज़ूली, मुजतबाई प्रेस दिल्ली, 2/31
4. दुर्र-ए-मुख़्तार, किताबुल बुयूअ, फ़स्ल फ़िल फ़ुज़ूली, मुजतबाई प्रेस दिल्ली, 2/31

पृष्ठ 100/715

اجازته حال وقوعه انعقد موقوفا ومالا مجیز له حالة العقد لاینعقد اصلا۱ اه ملخصاً، وفیه وقف بیع مال الغیر لو الغیر بالغاعاقلا فلو صغیرا اومجنونا لم ینعقد اصلا کما في الزواهر معزیاً للحاوی۲ اھ کی اجازت دے سکتا ہو تو اس کا انعقاد اس شخص کی اجازت پر موقوف ہو جائے گا اور اگر بوقت تصرف فضولی کوئی ایسا اجازت دینے والا موجود نہ ہو تو یہ تصرف سرے سے منعقد ہی نہ ہو گا اہ ملخصاً۔ اسی میں ہے کہ مال غیر کی بیع موقوف ہوتی ہے اگر وہ غیر عاقل و بالغ ہو اور اگر وہ غیر نا بالغ یا مجنون ہو تو بیع سرے سے منعقد نہ ہوگی جیسا کہ حاوی کی طرف منسوب کرتے ہوئے زواہر میں ہے اہ (ت)

پس سہم نا بالغان مذکورین کہ کل جائداد مبیعہ کے دسویں حصہ سے کچھ زائد ہے یعنی چہارم جائداد متروکہ کہ شیخ خضری تھی اس ایک سو بانوے سہام سے ستر سہام مشتری پر لازم ہے کہ ان نا بالغان کو واپس کر دے اور (سہ ۴/۳ پے) زر ثمن ان سہام کا ان کی ماں کلو سے وصول کرلے اسی طرح حرمت زوجہ یاد علی نے کہ ان کا سہام بلا اذن اس کے اپنی جانب سے بطریق مالکانہ بیچ ڈالا حسب حکم بدائع وبحر الرائق واشباہ و نظائر متن تنویر الابصار بیع باطل و غیر صالح اجازت ہے۔

فی الدرالمختار بیعه لنفسه باطل کما فی البحر والاشباه عن البدائع وعبارة الاشباه بیع الفضولی موقوف الا اذا باع لنفسه فباطل بدائع۳ اه مع التلخیص فیه ایضاً وقف بیع مال الغیران باعه علی انه للمالك اما لوباعه علی انه لنفسه فالبیع باطل اه٤ ملخصاً۔ در مختار میں ہے کہ فضولی کی اپنی ذات کے لئے بیع باطل ہے جیسا کہ بحوالہ بدائع، بحر اور اشباہ میں ہے اشباہ کی عبارت یوں ہے کہ فضولی کی بیع موقوف ہوتی ہے مگر جب وہ اپنی ذات کے لئے بیع کرے تو باطل ہوگی (بدائع اہ مع تلخیص و

تغیر) اسی میں ہے کہ غیر کے مال کی بیع موقوف ہوتی ہے جبکہ یہ سمجھ کر بیچے کہ وہ مالک کے لئے ہے اور اگر اپنے لئے تو بیع باطل ہے اہ تلخیص۔ (ت)

مگر مولنا محمد بن عبداللہ غزی تمرتاشی مصنف تنویر الابصار اس مذہب کی بوجہ مخالفت فروع مذہب تضعیف فرماتے ہیں فضولی اگر مال غیر کو اپنا ٹھہرا کر بیچے تو ظاہر الروایت یہی ہے کہ

1 درمختار کتاب البیوع فصل فی الفضولی مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۳۱ 2 درمختار کتاب البیوع فصل فی الفضولی مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۳۱ 3 درمختار کتاب البیوع فصل فی الفضولی مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۳۱ 4 درمختار کتاب البیوع فصل فی الفضولی مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۳۱

Fatawa Ridawiyyah Volume 17

The rightful owner has the option to grant permission, meaning the sale will not be void but will remain suspended upon the owner's permission.

[Left Column: Arabic Text] In Al-Durr al-Mukhtar, however, the author declared the first case (i.e., the nullity of his sale when he sells for himself) as weak because it contradicts the sub-branches of the school of thought, as the scholars explicitly stated that the sale by a usurper is suspended. Also, if the subject of sale is claimed as a right, then according to the apparent narration, the claimant has the right to permit it, even though the seller sold it for himself and not for the owner who is the rightful claimant; yet it was suspended upon permission [1]. In Ghamz 'Uyun al-Basa'ir Sharh al-Ashbah wa al-Naza'ir by Allama al-Hamawi, under the statement: "The sale by an unauthorized person (fuduli) is suspended except in three cases where it is void: when the owner sets a condition of option in it—this is in al-Talqih; and when he sells for himself—this is in al-Bada'i." The statement "and when he sells for himself" means it does not depend on the owner's permission because it did not conclude at all. Some scholars said that this is challenged by what they stated that if the subject of sale is claimed as a right, the contract is not annulled according to the apparent narration by the judge's ruling of rightfulness, and the rightful claimant has the right to permit it. The reason for the challenge is that the seller sold it for himself and not for the owner who is the rightful claimant [2].

[Right Column: Urdu Translation/Explanation] It is stated in Durr al-Mukhtar, but the author declared the first case (i.e., the sale by an unauthorized person for himself being void) as weak due to its contradiction with the sub-branches of the school of thought. This is because the Imams explicitly stated that the sale by a usurper is suspended (mawquf), and if a rightful claim is established in the subject of sale, then according to the apparent narration, the claimant has the option to permit it. Despite the fact that the seller made the sale for himself and not for that owner who is the rightful claimant, it still remained suspended upon his permission. In Ghamz 'Uyun al-Basa'ir Sharh al-Ashbah wa al-Naza'ir, authored by Allama Hamawi, it is mentioned under the author's statement: "The sale of an unauthorized person is suspended except in three cases where it is void: when he keeps a condition of option for the owner in it, and this is in al-Talqih; and when he sells for himself, and this is in al-Bada'i." The author's statement that when an unauthorized person sells for himself (it is void) means it will not be suspended upon the owner's permission because it was not concluded in the first place. Some scholars said that a challenge arises

against this from the statement of the mentors that if a rightful claim is established in the subject of sale, then despite the judge's decision on the rightful claim, the sale is not annulled, and the owner/claimant has the option of permission. The reason for the challenge is that the seller sold for his own person.

---

[1] Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Section on al-Fuduli, Matba' Mujtabai, Delhi, 2/31 [2] Ghamz 'Uyun al-Basa'ir, Third Art, Kitab al-Buyu', Idarat al-Qur'an, Karachi, 1/329

मुस्तहिक़ (हक़दार) को इजाज़त का इख़्तियार हासिल है, यानी बैय (बिक्री) बातिल (अमान्य) नहीं होगी और मालिक की इजाज़त पर मौक़ूफ़ (निलंबित) रहेगी।

[बायां कॉलम: अरबी पाठ] अद-दुर्रुल मुख़्तार में है, लेकिन मुसन्निफ़ (लेखक) ने पहली सूरत (यानी फुज़ूली का अपने लिए बेचना बातिल है) को मज़हब की उप-शाखाओं के विपरीत होने के कारण कमज़ोर बताया है, क्योंकि इमामों ने स्पष्ट किया है कि ग़ासिब (हड़पने वाले) की बैय मौक़ूफ़ है। और यह कि अगर मबीअ (बिक्री की वस्तु) में इस्तिहक़ाक़ (हक़) साबित हो जाए, तो ज़ाहिरुल रिवायत के अनुसार मुस्तहिक़ को इजाज़त देने का इख़्तियार है, बावजूद इसके कि बेचने वाले ने अपने लिए बेचा था न कि उस मालिक के लिए जो मुस्तहिक़ है, फिर भी यह इजाज़त पर मौक़ूफ़ रही [1]। अल्लामा हमवी की 'ग़म्ज़ उयूनुल बसायर शरह अल-अशबाह व अन-नज़ायर' में मातिन (मूल लेखक) के इस कथन के तहत: "फुज़ूली की बैय मौक़ूफ़ है सिवाय तीन सूरतों के जहाँ वह बातिल है: जब मालिक के लिए उसमें शर्ते खियार (विकल्प की शर्त) रखे—यह तलक़ीह में है; और जब वह अपने लिए बेचे—यह बदाए में है।" कथन "और जब वह अपने लिए बेचे" का अर्थ है कि यह मालिक की इजाज़त पर निर्भर नहीं होगा क्योंकि यह सिरे से संपन्न ही नहीं हुई। कुछ विद्वानों ने कहा कि इस पर उनके उस कथन से आपत्ति आती है कि अगर मबीअ में इस्तिहक़ाक़ साबित हो जाए, तो काज़ी के इस्तिहक़ाक़ के फ़ैसले से ज़ाहिरुल रिवायत में अनुबंध रद्द नहीं होता और मुस्तहिक़ को इसकी इजाज़त देने का इख़्तियार होता है। आपत्ति का कारण यह है कि बेचने वाले ने अपनी ज़ात के लिए बेचा था न कि उस मालिक के लिए जो मुस्तहिक़ है [2]।

[दायां कॉलम: उर्दू अनुवाद/व्याख्या] दुर्रे मुख़्तार में है मगर मुसन्निफ़ ने सूरते ऊला (यानी फुज़ूली की अपने लिए बैय बातिल है) को फ़रुआ मज़हब के मुख़ालिफ़ होने की वजह से ज़ईफ़ (कमज़ोर) क़रार दिया, क्योंकि आइम्मा ने तसरीह (स्पष्टता) की कि ग़ासिब की बैय मौक़ूफ़ है और यह कि मबीअ में अगर इस्तिहक़ाक़ साबित हो जाए तो ज़ाहिरुर रिवायत पर मुस्तहिक़ को इजाज़त का इख़्तियार हासिल है बावजूद इसके कि बाएअ (विक्रेता) ने अपने लिए बैय की न कि उस मालिक के लिए जो कि मुस्तहिक़ है इसके बावजूद उसकी इजाज़त पर मौक़ूफ़ हो गई। ग़म्ज़ उयूनुल बसायर शरह अशबाह व अन-नज़ायर तसनीफ़ अल्लामा हमवी में मातिन के इस क़ौल "फुज़ूली की बैय मौक़ूफ़ है मगर तीन सूरतों में बातिल है, जब मालिक के लिए उसमें शर्ते खियार रखे और यह तलक़ीह में है, और जब वह अपने लिए बेचे और यह बदाए में है" के तहत मज़कूर है। मातिन का क़ौल कि जब फुज़ूली अपने

लिए बैय करे (तो बातिल है) यानी मालिक की इजाज़त पर मौक़ूफ़ न होगी क्योंकि वह सिरे से मुनअक़िद (संपन्न) ही नहीं हुई। बाज़ फ़ुज़ला (विद्वानों) ने कहा कि इस पर मशाइख़ के इस क़ौल से इष्काल (आपत्ति) वारिद होता है कि मबीअ में अगर इस्तिहक़ाक़ साबित हो जाए तो काज़ी के इस्तिहक़ाक़ का फ़ैसला कर देने के बावजूद बैय फ़स्ख़ (रद्द) नहीं होती और मालिक मुस्तहिक़ को उसकी इजाज़त का इख़्तियार हासिल होता है। इष्काल की वजह यह है कि बाएअ ने अपनी ज़ात के लिए बेचा है।

---

[1] दुर्रे मुख़्तार किताबुल बुयूअ फ़स्ल फ़िल फुज़ूली मतबअ मुजतबाई देहली 2/31 [2] ग़म्ज़ उयूनुल बसायर अल-फ़न्नुस सालिस किताबुल बुयूअ इदारतुल क़ुरआन कराची 1/329

पृष्ठ 101/715

مستحق کو اختیارِ اجازت حاصل ہے یعنی بیع باطل نہ ہوگی اور اجازتِ مالک پر موقوف رہے گی۔

[Left Column: Arabic Text] في الدرالمختار لكن ضعف المصنف الاولى (اى بطلان بيعه اذا باعه لنفسه) لمخالفتها لفروع المذهب لتصريحهم بأن بيع الغاصب موقوف ، وبأن المبيع اذا استحق فالمستحق اجازته على الظاهر مع ان البائع باع لنفسه لا للمالك الذى هو المستحق مع انه توقف على الاجازة [1] اهـ . فى غمز العيون البصائر شرح الاشباه والنظائر للعلامة الحموى تحت قوله بيع الفضولي موقوف الا فى ثلث فباطل اذا شرط الخيار فيه المالك وهى فى التلقيح وفيما اذا باع لنفسه وهى في البدائع اهـ قوله وفيما اذا باع لنفسه يعنى لا يتوقف على اجازة المالك لانه لم ينعقد اصلا قال بعض الفضلاء ويشكل عليه ما قالوا من ان المبيع اذا استحق لا ينفسخ العقد في ظاهر الرواية بقضاء القاضي بالاستحقاق وللمستحق اجازته اهـ ، ووجه اشكاله ان البائع باعه لنفسه لا للمالك الذى هو المستحق اهـ [2]۔

[Right Column: Urdu Translation/Explanation] در مختار میں ہے مگر مصنف نے صورتِ اولٰی (یعنی فضولی کی اپنے لئے بیع باطل ہے) کو فروع مذہب کے مخالف ہونے کی وجہ سے ضعیف قرار دیا، کیونکہ ائمہ نے تصریح کی کہ غاصب کی بیع موقوف ہے اور یہ کہ مبیع میں اگر استحقاق ثابت ہو جائے تو ظاہر الروایت پر مستحق کو اجازت کا اختیار حاصل ہے باوجودیکہ بائع نے اپنے لئے بیع کی نہ کہ اس مالک کے لئے جو کہ مستحق ہے اس کے باوجود اس کی اجازت پر موقوف ہو گئی اھ، غمز عیون البصائر شرح اشباہ والنظائر تصنیف علامہ حموی میں ماتن کے اس قول "فضولی کی بیع موقوف ہے مگر تین صورتوں میں باطل ہے ، جب مالک کے لئے اس میں شرط خیار رکھے اور یہ تلقیح میں ہے، اور جب وہ اپنے لئے بیچے اور یہ بدائع میں ہے اھ" کے تحت مذکور ہے، ماتن کا قول کہ جب فضولی اپنے لئے بیع کرے (تو

باطل ہے) یعنی مالک کی اجازت پر موقوف نہ ہوگی کیونکہ وہ سرے سے منعقد ہی نہیں ہوئی، بعض فضلاء نے کہا کہ اس پر مشائخ کے اس قول اشکال وارد ہوتا ہے کہ مبیع میں اگر استحقاق ثابت ہو جائے تو قاضی کے استحقاق کا فیصلہ کر دینے کے باوجود بیع فسخ نہیں ہوتی اور مالک مستحق کو اس کی اجازت کا اختیار حاصل ہوتا ہے اھ، اشکال کی وجہ یہ ہے کہ بائع نے اپنی ذات کے لئے بیچا ہے

---

[1] درمختار کتاب البیوع فصل فی الفضولی مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۳۱ [2] غمز العیون البصائر الفن الثالث کتاب البیوع ادارۃ القرآن کراچی ۱ / ۳۲۹

Fatawa Razawiyyah, Volume 17

...not for that owner who is entitled. [End of excerpt] (t) Therefore, if before this claim, any word or action proceeded from Yad-e-Ali that is legally established as permission for the sale—for example, he asked for the price from the buyer, or gifted it to them, or said to his wife, "You did well" or "You did poorly"—according to the school of Imam Muhammad (RA), which is the preferred view (Istihsan) in al-Alamgiri (1) and the chosen view in Fath al-Qadir (According to the school of Imam Muhammad, and this is Istihsan in Alamgiri, and this is the chosen view in Fath al-Qadir. - t), then this claim of his will not be heard. The sale in his share has become effective. The price for his portion, which consists of (along with) rupees, remained as a trust with his wife, provided it was not destroyed while with her through no fault of her own. He may collect it from her. If the wife was not negligent in safeguarding the amount, nor did she use it for herself, yet it was destroyed in some way, he cannot recover it from her, for she was a trustee, and a trustee is not liable for loss without negligence in safekeeping.

Arabic Text

In al-Durr al-Mukhtar: Sale by an unauthorized person (Fuzuli) becomes effective upon the owner's acceptance, provided the seller, the buyer, and the sold item are all present. Similarly, for the price, if it is in the form of goods. If the price is not goods, it belongs to the authorizing owner and is held as a trust in the hands of the unauthorized person (Multaqa). If the owner takes the price or demands it from the buyer, it constitutes permission (Imadiyyah). And his saying, "You did badly" (Nahr), "How bad is what you did," or "You did well," or "You were correct," is permission according to the chosen view (Fath). Gifting the price to the buyer or confirming it is also considered permission. [End of summary]

Urdu Translation

In Durr al-Mukhtar, the ruling on an unauthorized (Fuzuli) sale is that it accepts the owner's permission, provided that the seller, the buyer, and the sold item are present. Similarly, the price too, if it is in the form of goods. If the price is not goods, it becomes the property of the authorizing owner and remains as a trust in the possession of the unauthorized person (Multaqā). If the owner receives the price or demands it from the purchaser, this constitutes permission (Imādiyyah). And the owner's saying, "You did badly" (Nahr), or "What you did was bad," or "You did well," or "You were right," according to the chosen opinion (Fatḥ al-Qadīr), and gifting the price to the purchaser or donating it as charity,

Arabic Text	Urdu Translation
	constitutes permission. [End of summary] (t)

And if before the claim no word or action proceeded from him, rather he was either unaware of the sale or remained silent after hearing it and said nothing, then his claim is admissible and he has the right to reclaim, for an owner's silence upon hearing news of a sale is not legally considered permission.

---

1. Fatawa Hindiyyah, Book of Sales, Chapter 12: Rulings on Suspended Sales, Nurani Kutub Khana Peshawar, 3/152; Radd al-Muhtar, Book of Sales, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/141.
2. Durr al-Mukhtar, Book of Sales, Section on Fuzuli, Matba’ Mujtabai Delhi, 2/32.

फतवा रज़विया, जिल्द सत्रह (17)

...न कि उस मालिक के लिए जो हक़दार है। (त) अतः यदि इस दावे से पहले यद-ए-अली की ओर से कोई ऐसा वचन या कर्म हुआ हो जिसे शरीयत के अनुसार बिक्री की अनुमति माना जाए, जैसे कि उसने खरीदार से कीमत माँगी हो, या उसे उसे उपहार में दे दिया हो, या अपनी पत्नी से कहा हो कि "तुमने बुरा किया" या "अच्छा किया", इमाम मुहम्मद (रह.) के मत के अनुसार जो 'आलमगीरी' (1) में 'इस्तिहसान' है और 'फतहुल क़दीर' में 'मुख़्तार' (पसंदीदा) है—(इमाम मुहम्मद के मत पर और यही इस्तिहसान है आलमगीरी में, और यही मुख़्तार है फतहुल क़दीर में। - त)—तो अब उसका यह दावा नहीं सुना जाएगा। उसके हिस्से में बिक्री प्रभावी हो चुकी है। उसके हिस्से की कीमत जो कि (साथ में) रुपये है, उसकी पत्नी के पास अमानत के रूप में रही, बशर्ते कि वह उसकी किसी गलती के बिना नष्ट न हुई हो। वह उसे उससे प्राप्त कर ले। यदि पत्नी ने राशि की सुरक्षा में कोई कोताही नहीं की और न ही उसे अपने उपयोग में लाया, फिर भी वह किसी तरह नष्ट हो गई, तो वह उससे उसकी वसूली नहीं कर सकता क्योंकि वह अमानतदार (ट्रस्टी) थी, और अमानतदार पर सुरक्षा में लापरवाही के बिना कोई मुआवज़ा (ज़मान) नहीं है।

अरबी पाठ

'दुर्रे मुख़्तार' में: फुज़ूली (अनधिकृत व्यक्ति) की बिक्री का नियम मालिक की अनुमति की स्वीकृति है, बशर्ते विक्रेता, खरीदार और बेची गई वस्तु उपस्थित हों। इसी प्रकार कीमत का भी, यदि वह माल के रूप में हो। यदि कीमत माल न हो, तो वह अनुमति देने वाले मालिक की मिल्कियत है और फुज़ूली के पास अमानत के रूप में है (मुल्तका)। यदि मालिक कीमत प्राप्त करता है या खरीदार से माँगता है, तो यह अनुमति है (इमादिया)। और उसका यह कहना कि "तुमने बुरा किया" (نهر), "तुमने जो किया वह बुरा है", या "तुमने अच्छा किया", या "तुमने सही किया", पसंदीदा मत (मुख़्तार) के अनुसार

उर्दू अनुवाद

'दुर्रे मुख़्तार' में फुज़ूली की बिक्री का नियम मालिक की अनुमति को स्वीकार करना है, जबकि विक्रेता, खरीदार और बेची गई वस्तु मौजूद हों, और इसी तरह कीमत भी, यदि वह सामान के रूप में हो। यदि कीमत सामान न हो, तो वह अनुमति देने वाले मालिक की मिल्कियत है और फुज़ूली के कब्ज़े में अमानत के तौर पर है (मुल्तक़ा)। यदि मालिक कीमत वसूल करे या खरीदार से कीमत माँगे, तो यह अनुमति है (इमादिया)। और मालिक का यह कहना कि "तुमने बुरा किया" (नहर), या "तुमने जो किया वह बुरा है", या "तुमने अच्छा किया", या "तुमने सही किया", पसंदीदा मत (मुख़्तार) के अनुसार

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
अनुमति है (फतह)। खरीदार को कीमत उपहार में देना या उसकी पुष्टि करना भी अनुमति है। (सारांश)	(फतहुल क़दीर), और खरीदार को कीमत उपहार में देना या उसे सदक़ा कर देना अनुमति है। (संक्षिप्त) (त)

और यदि दावे से पहले उसकी ओर से कोई वचन या कर्म नहीं हुआ, बल्कि उसे बिक्री की सूचना भी नहीं मिली या सुनकर चुप रहा और कुछ नहीं कहा, तो उसका दावा सुना जाने योग्य है और उसे वापस लेने का अधिकार प्राप्त है, क्योंकि बिक्री की खबर सुनकर मालिक का चुप रहना शरीयत में अनुमति नहीं माना जाता।

---

1. फतवा हिंदीया, किताबुल बुयूअ, अध्याय 12: निलंबित बिक्री के नियम, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/152; रद्दुल मुहतार, किताबुल बुयूअ, दार इह्या अत-तुराथ अल-अरबी बेरुत, 4/141।
2. दुर्रे मुख़्तार, किताबुल बुयूअ, फुज़ूली पर अनुभाग, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 2/32।

पृष्ठ 102 / 715

نہ کہ اس مالک کے لئے جو مستحق ہے اھ (ت) پس اگر قبل اس دعوی کے یاد علی سے کوئی قول یا فعل ایسا صادر ہوا ہو جو شرعاً اجازت بیع قرار پائے مثلاً ازرِ ثمن مشتری سے مانگا ہو یا اس کو ہبہ کردیا ہو یا اپنی عورت سے کہا ہو تو نے برا کیا یا اچھا کیا، علی مذہب محمد وھو الاستحسان عالمگیری ۱ وھو المختار فتح القدیر (مذہب محمد پر اور یہی استحسان ہے، عالمگیری، اور یہی مختار ہے، فتح القدیر۔ ت) تو اب یہ دعوی اس کا نہ سنا جائے گا اور اس کے حصہ میں بیع، نافذ ہوچکی اس کے سہم کا زر ثمن کہ (معہ) روپے ہیں اس کی زوجہ کے پاس امانت رہا بشرطیکہ بلا قصور اس کے پاس سے تلف نہ ہو گیا ہو اس سے وصول کرلے اور اگر زوجہ نے حفظ مبلغ میں کچھ تقصیر نہ کی نہ اپنے تصرف میں لائی اور کسی طرح تلف ہو گیا تو اس سے بھر نہیں لے سکتا کہ وہ امینہ تھی اور امین پر بلا تقصیر فی الحفظ ضمان نہیں۔

| فی الدرالمختار ای بیع الفضولی قبول الاجازۃ من المالک اذا کان البائع والمشتری والمبیع قائما و کذا الثمن لو کان عرضاً و غیر العرض ملك للمجیز امانة في ید الفضولي ملتقی، و ان اخذ المالك الثمن او طلبه من المشتری یکون اجازۃ، عمادیۃ، و قوله اسأت نهر بئس ما صنعت او احسنت او اصبت علی المختار، فتح، وهبة الثمن من المشتری والتصدیق علیه به اجازۃ اھ ملخصاً۔ | در مختار میں اور فضولی کی بیع کا حکم مالک کی اجازت کو قبول کرنا ہے جبکہ بائع، مشتری اور مبیع قائم ہو اور اسی طرح ثمن بھی جبکہ بصورت سامان ہوں اور ثمن سامان نہ ہوں تو وہ مالک مجیز کی ملک ہیں اور فضولی کے قبضہ میں بطور امانت ہیں، ملتقٰی، اگر مالک ثمن وصول کرے یا مشتری سے ثمن طلب کرے تو یہ اجازت ہے، عمادیہ، اور مالک کا یہ کہنا کہ تو نے بُرا کیا، نہر، یا جو تو نے کیا

بُرا ہے یا تو نے اچھا کیا یا تو نے درست کیا قولِ مختار کے مطابق، فتح القدیر، اور مشتری کو ثمن ہبہ کر دینا یا اس پر صدقہ کر دینا اجازت ہے اھ تلخیص (ت) |

اور اگر قبل از دعوی کوئی قول یا فعل اس سے صادر نہ ہوا بلکہ بیع کی خبر بھی نہ ہوئی یا سن کر چپ رہا اور کچھ نہ کہا تو دعوی اس کا مسموع اور اسے اختیار استرداد حاصل کہ خبر بیع سن کر مالک کا خاموش رہنا شرعاً اجازت نہیں۔

---

1 فتاوٰی ہندیہ کتاب البیوع الباب الثانی عشر فی احکام البیع الموقوف نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۱۵۲، ردالمحتار کتاب البیوع داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۴۱ 2 درمختار کتاب البیوع فصل فی الفضولی مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۳۲

Fatawa Razawiyya Volume 17 (17)

In Al-Fatawa al-Hindiyya: "If it reaches the owner that an unauthorized person (fuzuli) sold his property and he remained silent, it does not constitute an authorization." 1 Ah

In Fatawa Hindiyya: The owner was informed that an unauthorized person sold your owned item, and he remained silent; then this will not be considered permission. Ah

(T)

In this case, it is obligatory for the buyer to return Yad Ali's share as well, similar to the share of the minors—meaning fourteen shares out of forty shares of the property's fourth part—to Yad Ali and receive the price for this share, which is (together) rupees, from his wife. As for what the ruling is for what remains in the first case after the return of only the minors' share, and in the second case after the return of both Yad Ali's and the minors' shares, because the item sold is of varying value (dhawat al-qiyam) and the entitlement relative to Yad Ali occurred after taking full possession, the buyer has the option: either keep what remains in exchange for the remaining price, which on the first estimation is (12) and on the second estimation is (12/12), or return the entire sold property to all the adults and receive his full eight hundred from them. And Allah Almighty knows best.

Problem 26: 17 Jumada al-Ula 1303 AH What do the scholars of religion say in this matter: in a village there are three partners: Zaid, Khalid, and Zaid's son Amr. A decree of approximately eight hundred rupees was issued against Amr by the English court in a case involving Hindah. Hindah put Amr's property up for auction through the English court. Five biswahs of Amr were auctioned separately as follows: three biswahs on 27 Ramadan 1301 AH (corresponding to 21 July 1882 AD and 13 Sawan 1292 Fasli), then one biswah on 1 Safar 1302 AH (corresponding to 20 November 84 AD and 7 Agahan (ghar) 92 Fasli), then one biswah on 24 Jumada al-Ula 1302 AH (corresponding to 20 February 1885 AD and 21 Phagun 1292 Fasli). All these auctions were bought by Hindah, the decree-holder herself. Afterward, on 7 Rajab 1302 AH (corresponding to 23 April 1885 AD and 24 Baisakh 1292 Fasli), Hindah sold this entire property, i.e., the five biswahs, to Khalid, the third partner. Khalid, with caution according to Sharia rulings, sought permission from the original owner, i.e., Amr, for the transfer to his name. Amr gave permission happily. Then, for further assurance, on 16 Jumada al-Ula 1303 AH (corresponding to 21 February 1886 AD and 3 Phagun 1293 Fasli), the said Amr wrote a document with the following content: "These five biswahs which Hindah, the auction buyer, sold to Khalid, I have happily validated this

transfer and waived the price money for Khalid, and since the day of the auction, which was the beginning of the Kharif cultivation of 1292 Fasli..."

---

1. Fatawa Hindiyya, Kitab al-Buyu', Chapter 12, Noorani Kutub Khana Peshawar 3/153 Page 103 of 715

फतावा रज़विया जिल्द 17 (17)

अल-फतावा अल-हिन्दिया में: "यदि मालिक को पता चले कि किसी अनधिकृत व्यक्ति (फुज़ूली) ने उसकी संपत्ति बेच दी है और वह चुप रहा, तो यह अनुमति नहीं मानी जाएगी।" 1 अह

फतावा हिन्दिया में: मालिक को खबर मिली कि एक फुज़ूली (बिना अधिकार के कार्य करने वाले) ने आपकी मिल्कियत की चीज़ बेच दी है और वह खामोश रहा तो यह इजाज़त (अनुमति) नहीं होगी। अह

(त)

इस सूरत में खरीदार (मुश्तरी) पर लाज़िम है कि वह नाबालिगों के हिस्से की तरह याद अली का हिस्सा भी—यानी जायदाद के चौथे हिस्से के चालीस हिस्सों में से चौदह हिस्से—याद अली को वापस कर दे और इस हिस्से की कीमत, जो (साथ में) रुपये है, उसकी पत्नी से वसूल कर ले। रहा यह कि पहली सूरत में सिर्फ नाबालिगों की वापसी के बाद और दूसरी सूरत में याद अली और नाबालिगों दोनों के हिस्सों की वापसी के बाद जो बाकी बचे, उसका क्या हुक्म है, तो इस बारे में कि बिकी हुई चीज़ 'ज़वात-उल-क़ियाम' (कीमत वाली वस्तुएँ) में से है और याद अली के हक़ का दावा पूरे कब्ज़े के बाद हुआ, खरीदार को अख्तियार (विकल्प) है: चाहे तो बाकी कीमत के बदले बाकी हिस्सा अपने पास रखे, जो पहले अंदाज़े पर (12) है और दूसरे अंदाज़े पर (12/12) है, या पूरी बिकी हुई चीज़ तमाम बालिगों को वापस कर दे और अपने पूरे आठ सौ उनसे वसूल कर ले। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 26: 17 जमादी-उल-उला 1303 हिजरी दीन के विद्वान इस मसले में क्या फरमाते हैं कि: एक गाँव में तीन साझेदार हैं: ज़ैद, खालिद और ज़ैद का बेटा अम्र। अम्र पर अंग्रेज़ी कचहरी से हिन्दा के साथ एक मामले में लगभग आठ सौ रुपये की डिग्री हुई। हिन्दा ने अंग्रेज़ी कचहरी के ज़रिये अम्र की जायदाद नीलामी पर चढ़ाई। अम्र के पाँच 'बिस्वा' इस तरह अलग-अलग नीलाम हुए: तीन बिस्वा 27 रमज़ान 1301 हिजरी (मुताबिक 21 जुलाई 1882 ईस्वी और 13 सावन 1292 फस्ली) को, फिर एक बिस्वा 1 सफ़र 1302 हिजरी (मुताबिक 20 नवंबर 84 ईस्वी और 7 अगहन 92 फस्ली) को, फिर एक बिस्वा 24 जमादी-उल-उला 1302 हिजरी (मुताबिक 20 फरवरी 1885 ईस्वी और 21 फागुन 1292 फस्ली) को। ये तमाम नीलामी खुद हिन्दा डिग्री-होल्डर ने खरीद लिये। उसके बाद 7 रजब 1302 हिजरी (मुताबिक 23 अप्रैल 1885 ईस्वी और 24 बैसाख 1292 फस्ली) को हिन्दा ने यह पूरी जायदाद यानी पाँचों बिस्वा तीसरे साझेदार खालिद के नाम बेच दिये। खालिद ने शरीयत के हुक्म के

मुताबिक एहतियात बरतते हुए असल मालिक यानी अम्र से अपने नाम इंतिक़ाल (हस्तांतरण) की इजाज़त चाही। अम्र ने खुशी-खुशी इजाज़त दे दी। फिर और ज़्यादा मज़बूती के लिए 16 जमादी-उल-उला 1303 हिजरी (मुताबिक 21 फरवरी 1886 ईस्वी और 3 फागुन 1293 फस्ली) को उक्त अम्र ने एक दस्तावेज़ इस मज़मून के साथ लिख दी कि: "ये पाँचों बिस्वा जो नीलामी खरीदार हिन्दा ने खालिद के हाथ बेचे, मैंने इस हस्तांतरण को खुशी-खुशी जायज़ रखा और कीमत की रकम खालिद को माफ कर दी और नीलामी के दिन से, जो कि खरीफ 1292 फस्ली की खेती की शुरुआत थी..."

---

1. फतावा हिन्दिया, किताब-अल-बुयू, अध्याय 12, नूरानी कुतुब खाना पेशावर 3/153 Page 103 of 715

فی الفتاوی الھندیۃ بلغ المالك ان فضولیا باع ملکه فسکت لا یکون اجازۃ ۱ اھ

فتاوٰی ہندیہ میں مالک کو خبر پہنچی کہ فضولی نے تیری مملوک چیز فروخت کردی اور وہ خاموش رہا تو یہ اجازت نہ ہوگی اھ

(ت)

اس صورت میں مشتری پر لازم ہے کہ مثل حصہ نابالغان یاد علی کا حصہ بھی یعنی چہارم جائیداد کے چالیس سہام سے چودہ سہام یاد علی کو واپس کردے اور ثمن اس حصہ کا کہ (معہ) روپے ہے اس کی زوجہ سے وصول کرلے، رہا یہ کہ درصورت اولٰی بعد واپسی صرف نابالغان و در صورت ثانیہ پس از رد ہر دو سہام یاد علی و نابالغان جو باقی بچے اس کا کیا حکم ہے اس کی نسبت بوجہ اس بات کے کہ مبیع ذوات القیم سے اور استحقاق نسبت یاد علی بعد قبض کل واقع ہوا مشتری کو اختیار ہے خواہ عوض باقی زر ثمن کے کہ پہلی تقدیر پر (لعہ ۱۲) ہے اور دوسری تقدیر پر (لعہ ۱۲/۱۲) ہے اپنے پاس رکھے یا کل مبیع سب بالغوں کو واپس کردے اور اپنے پورے آٹھ سو ان سے وصول کرلے، واللہ تعالٰی اعلم۔ مسئلہ ۲۶: ۱۷ جمادی الاولٰی ۱۳۰۳ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک گاؤں میں تین شریک ہیں زید اور خالد اور زید کا بیٹا عمرو، عمرو پر کچہری انگریزی سے ایک معاملہ میں ہندہ کی بقدر آٹھ سو روپیہ کی ڈگری ہوئی ہندہ نے جائیداد عمرو نیلام پر چڑھائی کچہری انگریزی سے پانچ بسوہ عمرو کے بتفریق اس طرح نیلام ہوئے کہ ۲۷ رمضان ۱۳۰۱ مطابق ۲۱ جولائی ۱۸۸۲ء و ۱۳ ساون ۱۲۹۲ فصلی کو تین بسوہ پھر یک صفر ۱۳۰۲ھ مطابق ۲۰ نومبر ۸۴ء و ۷ اگہن (گھر) ۹۲ فصلی کو ایک بسوہ پر ۲۴ جمادی الاولٰی ۱۳۰۲ھ مطابق ۲۰ فروری ۱۸۸۵ء و ۲۱ پھاگن ۱۲۹۲ فصلی کو ایک بسوہ اور یہ سب

نیلام خود ہندہ ڈگری دار نے خرید لئے، بعدہ ہفتم رجب ۱۳۰۲ھ مطابق ۲۳ اپریل ۱۸۸۵ء و ۲۴ بیساکھ ۱۲۹۲ فصلی کو ہندہ نے یہ کل جائیداد یعنی پانچوں بسوئے بنام خالد شریک سوم بیچ کردئے، خالد نے باحتیاط بحکم شرع اصل مالک یعنی عمرو سے اپنے نام جو انتقال ہوا اس کی اجازت چاہی عمرو نے بخوشی اجازت دی پھر مزید وثوق کے لئے ۱۶ جمادی الاولیٰ ۱۳۰۳ھ مطابق ۲۱ فروری ۱۸۸۶ء و ۳ پھاگن ۱۲۹۳ فصلی کو عمرو مذکور نے ایک دستاویز بدیں مضمون لکھ دی کہ یہ پانچوں بسوہ جو ہندہ مشتریہ نیلام نے بدست خالد بیچے کتے میں نے یہ انتقال بخوشی جائز رکھا اور زر ثمن خالد کو معاف کیا اور روز نیلام سے کہ ابتدائے زراعت خریف ۱۲۹۲ فصلی تھی

---

۱ فتاویٰ ہندیہ کتاب البیوع الباب الثانی عشر نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۱۵۳ Page 103 of 715

Fatawa-e-Razvia Volume 17

Regarding the extra produce ('taufir') from these five biswas of land up to Rabi 1292, it was explicitly written that I have gifted that taufir of these five biswas to the aforementioned Khalid on the condition that the donee gives me ten mounds of wheat in exchange for my right of revocation. Khalid took possession and received that taufir, and I received the mentioned wheat from Khalid. Now, I have no right left in this taufir, nor do I have the authority to revoke this gift. Now, the question according to the noble Sharia is, in the stated situation, who is entitled to all this taufir: the buyer Khalid or Zaid, the father of Amr? Explain and be rewarded.

The Answer: In the stated case, Zaid, the father of Amr, is in no way the owner of the taufir. Rather, all the taufir regarding the five biswas for the entire year 1292 Fasli is purely Khalid's right and should be received by him and him alone.

[Jurisprudential Reasoning Table]

Arabic Text: And the jurisprudence in that is that the sale to the highest bidder issued by the rulers of the time is not a sale by the owner, and this is obvious, nor is it with his permission. For they do not ask him nor do they seek his pleasure; rather, they sometimes sell what is worth a thousand for a hundred or less. Nor is it by the permission of the pure Sharia, as is not hidden from anyone who has the slightest understanding. So it is not permissible to derive it based on the opinion of the two companions (Sahibayn) regarding the judges selling the property of a debtor against his will if he refuses, nor as a forced sale so as to make it voidable (fasid), because the owner does not undertake the offer (ijab); rather, he sometimes does not witness the contract. Indeed, they sell by themselves forcing it upon him. Therefore, it is nothing but like the sale of a usurper, which remains suspended upon the ratification of the owner.

Urdu Translation/Explanation: The jurisprudence in this is that a sale by auction (neelam), as the rulers of today do, is not a sale from the owner's side, and this is apparent, nor is it with the owner's permission because the rulers neither ask the owner nor do they seek his consent; in fact, sometimes they sell an item worth a thousand for a hundred or even less. Nor does this sale happen with the permission of the pure Sharia, as is not hidden from anyone having even a slight connection with the Sharia. And there is no room to declare this mentioned sale as a voidable (fasid) sale by connecting it to the opinion of the 'Sahibayn' (Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad) regarding rulers selling a debtor's property by force despite his refusal.

This is because there is no 'offer' (ijab) from the owner here; rather, sometimes the owner is not even present at the time of the contract, but the rulers, while forcing him, sell it themselves. Therefore, this is purely like the sale of a usurper (ghasib), the validity of which depends on the owner's permission.

फतावा-ए-रज़विया जिल्द १७

रबी १२९२ तक इन पाँचों बिस्वा (जमीन की माप) से जो भी 'तौफीर' (अतिरिक्त उपज) हुई, उसके बारे में स्पष्ट रूप से लिख दिया गया कि वह तौफीर मैंने खालिद को इस शर्त पर हिबा (उपहार) कर दी कि वह मुझे मेरे 'हक-ए-रुजू' (वापसी के अधिकार) के बदले दस मन गेहूँ दे। खालिद ने उस तौफीर पर कब्ज़ा कर लिया और मैंने वह गेहूँ प्राप्त कर लिया। अब मेरा उस तौफीर में कोई हक नहीं बचा और न ही मुझे उस हिबा से रुजू करने का अधिकार है। अब शरीयत के अनुसार सवाल यह है कि इस पूरी तौफीर का हकदार खरीदार खालिद है या ज़ैद (अम्र का पिता)? उत्तर देकर पुण्य कमायें।

जवाब: उल्लेखित मामले में, ज़ैद (अम्र का पिता) किसी भी तरह तौफीर का मालिक नहीं है। बल्कि फसल वर्ष १२९२ फस्ली की पांचों बिस्वा की पूरी तौफीर केवल खालिद का हक है और सिर्फ और सिर्फ उसी को मिलनी चाहिए।

[न्यायशास्त्रीय तर्क तालिका]

अरबी पाठ: इसमें नियम यह है कि नीलामी के ज़रिए बिक्री, जो आज के शासकों द्वारा की जाती है, वह मालिक की तरफ से की गई बिक्री नहीं है और यह स्पष्ट है। न ही यह मालिक की अनुमति से है क्योंकि वे न तो उससे पूछते हैं और न ही उसकी रज़ामंदी लेते हैं; बल्कि वे कभी-कभी हज़ार की चीज़ सौ या उससे भी कम में बेच देते हैं। और न ही यह पाक शरीयत की अनुमति से है, जैसा कि शरीयत का थोड़ा भी ज्ञान रखने वाले पर छिपा नहीं है। अतः इस बिक्री को साहिबैन (इमाम अबू यूसुफ और इमाम मोहम्मद) के उस कथन पर आधारित करना जायज़ नहीं है जो कर्जदार के इनकार पर काज़ियों द्वारा जबरन उसकी संपत्ति बेचने से संबंधित है, और न ही इसे 'मजबूरन बिक्री' (बय-ए-मुकरह) मानकर 'फासिद' (अमान्य) करार दिया जा सकता है, क्योंकि इसमें मालिक की ओर से 'ईजाब' (प्रस्ताव) नहीं होता; बल्कि कभी-कभी वह अनुबंध के समय उपस्थित भी नहीं होता। वे शासक खुद ही जबरन बिक्री कर देते हैं। इसलिए, यह महज़ एक 'गासिब' (हड़पने वाले) की बिक्री की तरह है जिसका लागू होना मालिक की अनुमति पर निर्भर है।

उर्दू अनुवाद/व्याख्या: इसमें फिक्ह (न्यायशास्त्र) यह है कि बोली लगाकर बेचना (नीलामी) जैसा कि आजकल के शासक करते हैं, वह मालिक की तरफ से बिक्री नहीं है और यह ज़ाहिर है, और न ही मालिक की इजाज़त से है क्योंकि शासक न तो मालिक से पूछते हैं और न ही उसकी रज़ा मालूम

करते हैं; बल्कि बाज़ दफा तो हज़ार की मालियती चीज़ सौ या उससे भी कम पर फरोख्त कर देते हैं। और न ही यह बिक्री शरीयत-ए-मुतहरा के इज़्न से होती है जैसा कि शरीयत से अदना सा ताल्लुक रखने वाले पर मख्फ़ी (छिपा) नहीं। और यह बिक्री-ए-मज़कूर को 'बय-ए-मुकरह' और मदयून (कर्जदार) के इंकार के बावजूद हुकाम की तरफ से जब्रन उसके माल को फरोख्त करने से मुतअल्लिक कौल-ए-साहिबैन पर मुतफर्रअ (आधारित) करके'बय-ए-फासिद' करार देने की गुंजाइश नहीं है क्योंकि यहाँ मालिक की तरफ से ईजाब नहीं होता बल्कि बाज़ औकात तो मालिक बवक्त-ए-अक्द हाज़िर ही नहीं होता बल्कि हुकाम उस पर जब्र करते हुए अज़-खुद बय कर देते हैं, लिहाज़ा यह तो महज़ बय-ए-गासिब की मिसाल है जिसका इनेकाद मालिक की इजाज़त पर है।

पृष्ठ १०४/७१५

ربیع ۱۲۹۲ تک جس قدر توفیر ان پانچوں بسوؤں کے ہوئی اس کی نسبت صریحا لکھ دیا کہ وہ توفیر ان پانچوں بسوؤں کے میں نے خالد مذکور کو اس شرط پر کہ موہوب لہ میرے حق رجوع کے عوض مجھے دس من خادم گندم دے ہبہ کئے خالد اس توفیر کو قبض و وصول کرے اور میں نے گندم مذکور کو خالد سے وصول پالی، اب میرا کوئی حق اس توفیر میں نہیں اور نہ مجھے اس ہبہ سے رجوع کا اختیار باقی رہا، اب شرع شریف سے سوال ہے کہ صورت مذکورہ میں اس تمام توفیر کا استحقاق خالد خریدار کو ہے یا زید پدر عمرو کو؟ بینوا توجروا۔

الجواب: صورت مستفسرہ میں زید پدر عمرو کسی طرح توفیر کا مالک نہیں بلکہ وہ کل توفیر پانچوں بسوہ کی بابت سال تمام ۱۲۹۲ فصلی کی محض خالد کا حق ہے اور صرف اور صرف اسی کو ملنا چاہیے۔

(فقہی استدلال کا جدول)

عربی عبارت: والفقه في ذلك ان بيع من يزيد الصادر من حكام الزمان ليس ببيع المالك وهو ظاهر ولا باذنه فانهم لا يسألون ولا يسترضونه بل ربما باعوا ما يساوى الفا بمائة اواقل ولا باذن الشرع المطهر كما لا يخفى على من له ادنى مسكة فلا يسوغ تفريعه على قول الصاحبين في بيع القضاة مال المديون كرها عليه ان ابي ولا ببيع المكره حتى يجعل فاسدا لان المالك لا يتولى الايجاب بل ربما لا يشهد العقد وانما هم يبيعون بانفسهم جبرا عليه فاذن ليس الا كبيع الغاصب ينعقد موقوفا على اجازة المالك

اردو ترجمہ و وضاحت: اس میں فقہ یہ ہے کہ بولی لگا کر بیچ (نیلامی) جیسا کہ آج کل کے حکمران کرتے ہیں وہ مالک کی طرف سے بیع نہیں اور یہ ظاہر ہے اور نہ مالک کی اجازت سے

ہے کیونکہ حکمران نہ تو مالک سے پوچھتے ہیں اور نہ ہی اس کی رضا معلوم کرتے ہیں بلکہ بعض دفعہ تو ہزار کی مالیتی چیز سو یا اس سے بھی کم پر فروخت کردیتے ہیں، اور نہ ہی یہ بیع شرع مطہر کے اذن سے ہوتی ہے جیسا کہ شریعت سے ادنی سا تعلق رکھنے والے پر مخفی نہیں، اور یہ بیع مذکور کو بیع مکرہ اور مدیون کے انکار کے باوجود حکام کی طرف سے جبرا اس کے مال کو فروخت کرنے سے متعلق قول صاحبین پر متفرع کر کے بیع فاسد قرار دینے کی گنجائش نہیں کیونکہ یہاں مالک کی طرف سے ایجاب نہیں ہوتا بلکہ بعض اوقات تو مالک بوقت عقد حاضر ہی نہیں ہوتا بلکہ حکام اس پر جبر کرتے ہوئے از خود بیع کر دیتے ہیں لہذا یہ تو محض بیع غاصب کی مثل ہے جس کا انعقاد مالک کی اجازت پر ہے۔

صفحہ 104 از 715

Fatawa Rizvia (Volume 17)

[Arabic Text]: If [the owner] grants permission, it becomes valid, otherwise it is void. In *Al-Durr al-Mukhtar*, it is stated: "The sale by a usurper (ghasib) is suspended upon the owner's permission."[1] Since this is the case, Hindah, who purchased it from the rulers, did not establish ownership over the item sold. Consequently, her sale to Khalid was also an unauthorized sale (bay' al-fuduli) due to the lack of ownership and the owner's permission. Thus, it also depends on his permission. In *Radd al-Muhtar*: "The sale by a purchaser from a usurper is suspended."[2] Whichever of these two contracts receives permission, it specifically becomes effective. In *Hashiya Shamiya*, citing *Jami' al-Fasulayn* from *Al-Mabsut*: "If someone buys from a usurper, then sells it to another, and so on through multiple hands, and then the owner permits one of these contracts, specifically that contract becomes valid because all of them were suspended on his permission. Whichever one he permitted becomes effective specifically."[3] Here (in the case in question), the permission applied to the final contract, so it became effective and established.

[Urdu Text]: It remains suspended; if permission is granted, it becomes effective, otherwise it will become void. In *Durr al-Mukhtar*, it is stated that a usurper's sale is suspended upon the owner's permission. When the situation is such, ownership was not established for Hindah, who purchased from the rulers, in the item sold. Therefore, her selling it to Khalid also became an unauthorized sale due to the absence of ownership and the owner's permission, so this too will be suspended upon the owner's permission. In *Radd al-Muhtar*, it is stated that a purchaser's sale from a usurper is suspended. Thus, whichever of these two contracts received permission, that specifically became effective. It is narrated in *Hashiya Shamiya* with reference to *Mabsut* and *Jami' al-Fasulayn* that if a person who bought from a usurper sold it to someone, who then sold it further, and so on until it was sold in several places, and now the owner granted permission for any one of these contracts, then that specific contract will become effective because all these contracts were suspended on the owner's permission. So, the one he permitted specifically became effective. And here (in the questioned case), the permission applied to the last contract, so it became effective, therefore...

---

[1] Al-Durr al-Mukhtar, Book of Sales, Chapter on Unauthorized Sale, Mujtabai Press, Delhi, 2/31. [2] Radd al-Muhtar, Book of Sales, Chapter on Unauthorized Sale, Dar Ihya

al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/124. [3] Radd al-Muhtar, Book of Sales, Chapter on Unauthorized Sale, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/124.

फतावा रज़विया (जिल्द 17)

[अरबी पाठ]: अगर (मालिक) अनुमति दे दे तो यह वैध हो जाता है, अन्यथा यह अमान्य है। 'अल-दुर अल-मुख्तार' में है: "ग़ासिब (अवैध कब्जा करने वाले) द्वारा की गई बिक्री मालिक की अनुमति पर निर्भर है।"[1] चूंकि स्थिति ऐसी है, इसलिए हाकिमों से खरीदने वाली हिन्दा का बिकी हुई वस्तु पर मालिकाना हक साबित नहीं हुआ। इसी तरह, उसका खालिद को बेचना भी मालिक की अनुमति और स्वामित्व न होने के कारण 'बै-ए-फज़ूली' (अनधिकृत बिक्री) हुआ, तो यह भी मालिक की अनुमति पर निर्भर होगा। 'रद्द अल-मुह्तार' में है कि ग़ासिब से खरीदार द्वारा की गई बिक्री स्थगित (suspended) रहती है।[2] इन दोनों अनुबंधों में से जिसे भी अनुमति मिल गई, वह विशेष रूप से प्रभावी हो गया। 'हाशिया शामिया' में 'जामे अल-फसुलैन' के हवाले से 'मबसूत' से उद्धृत है: "अगर ग़ासिब से खरीदने वाले ने किसी और को बेचा, उसने फिर आगे बेचा, और इस तरह कई हाथों से होता हुआ बिका, अब मालिक ने इन अनुबंधों में से किसी एक को अनुमति दे दी, तो विशेष रूप से वही अनुबंध प्रभावी हो जाएगा क्योंकि ये सभी अनुबंध मालिक की अनुमति पर निर्भर थे। तो उसने जिसकी अनुमति दी, वही विशेष रूप से प्रभावी हो गया।"[3] और यहाँ (पूछे गए मामले में) अनुमति अंतिम अनुबंध पर हुई, तो वह प्रभावी हो गया और साबित हुआ।

[उर्दू पाठ]: स्थगित रहता है; अगर अनुमति दे दे तो प्रभावी वरना अमान्य हो जाएगी। 'दुर-ए-मुख्तार' में है कि ग़ासिब की बिक्री मालिक की अनुमति पर निर्भर होती है। और जब स्थिति यह है तो हाकिमों से खरीदने वाली हिन्दा का बिकी हुई वस्तु में स्वामित्व साबित ही नहीं हुआ। चुनांचे उसका खालिद के हाथ बेचना भी स्वामित्व और मालिक की अनुमति न होने के कारण 'बै-ए-फज़ूली' हुआ, तो यह भी मालिक की अनुमति पर निर्भर होगा। 'रद्दुल मुह्तार' में है कि ग़ासिब से खरीदार की बिक्री स्थगित होती है। तो इन दोनों अनुबंधों में से जिसको अनुमति मिल गई, वह विशेष रूप से प्रभावी हो गया। 'हाशिया शामिया' में 'मबसूत' के हवाले से 'जामे अल-फसुलैन' से उद्धृत है कि अगर ग़ासिब से खरीदने वाले ने किसी के हाथ बेचा, उसने आगे फिर उसने आगे बेचा यहाँ तक कि वह कई जगह बिका, अब मालिक ने इन अनुबंधों में से किसी एक अनुबंध को अनुमति दे दी, तो विशेष रूप से वही अनुबंध प्रभावी हो जाएगा क्योंकि ये तमाम अनुबंध मालिक की अनुमति पर निर्भर थे। तो उसने जिसकी अनुमति दी, वही विशेष रूप से प्रभावी हो गया। और यहाँ (पूछे गए मामले में) अनुमति अंतिम अनुबंध पर हुई, वह प्रभावी हो गया, चुनांचे...

1. दर-ए-मुख्तार, किताबुल बुयू, अनधिकृत बिक्री का अध्याय, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 2/31.
2. रद्दुल मुह्तार, किताबुल बुयू, अनधिकृत बिक्री का अध्याय, दार अहिया अत-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 4/124.
3. रद्दुल मुह्तार, किताबुल बुयू, अनधिकृत बिक्री का अध्याय, दार अहिया अत-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 4/124.

[عربی عبارت]: فان اجاز جاز والابطل فی الدرالمختار وقف بیع الغاصب علی اجازۃ المالك اھ 1 واذا کان الامر کذلك فلم یثبت الملك فی المبیع لھندۃ المشتریۃ من احکام فبیعھا من خالد ایضا بیع الفضولی لعدم الملك واذن المالك فیتوقف ایضا علی اجازتہ، فی رد المحتار بیع المشتری من الغاصب موقوف 2 اھ فایما عقد منھما صادفتہ الاجازۃ نفذ بخصوصۃ، فی الحاشیۃ الشامیۃ عن جامع الفصولین عن المبسوط لوباعہ المشتری من غاصب ثم وثم حتی تداولتہ الایدی فاجاز مالکہ عقدا من العقود جاز ذلك العقد خاصۃ لتوقف کلھا علی الاجازۃ فاذا اجاز عقدا منھا جاز ذلك عقدا منھا جاز ذلك خاصۃ 3 اھ وھھنا قد لحقت الاجازۃ العقد الآخر فنفذ وثبت۔

[اردو ترجمہ و تشریح]: موقوف ہوتا ہے اگر اجازت دے دے تو نافذ ورنہ باطل ہوجائے گی، درمختار میں ہے کہ غاصب کی بیع اجازت مالک پر موقوف ہوتی اھ اور جب صورت حال یہ ہے تو حکام سے خریدنے والی ہندہ کی مبیع میں ملک ہی ثابت نہ ہوئی، چنانچہ اس کا خالد کے ہاتھ بیچنا بھی ملک اذن مالک کے نہ ہونے کی وجہ سے بیع فضولی ہوا تو یہ بھی اجازت مالک پر موقوف ہوگا، رد المحتار میں ہے کہ غاصب سے خریدار کی بیع موقوف ہوتی ہے اہ، تو ان دونوں عقدوں میں سے جس کو اجازت لاحق ہوگئی وہ بطورِ خاص نافذ ہوگیا۔ حاشیہ شامیہ بحوالہ مبسوط، جامع الفصولین سے منقول ہے کہ اگر غاصب سے خریدنے والے نے کسی کے ہاتھ فروخت کیا اس نے آگے پھر اس نے آگے فروخت کردیا حتی کہ وہ کئی جگہ فروخت ہوا، اب مالک نے ان عقدوں میں سے کسی ایک عقد کی اجازت دے دی تو خاص وہ عقد نافذ ہو جائے گا کیونکہ یہ تمام عقود مالک کی اجازت پر موقوف تھے تو جس کی اجازت اس نے دی وہی بطورِ خاص نافذ ہوگیا اھ، اور یہاں (صورتِ مسئولہ میں) اجازت آخری عقد کو لاحق ہوئی وہ نافذ ہوگیا، چنانچہ۔

1 درمختار کتاب البیوع فصل فی الفضولی مطبع مجتبائی دہلی ۳۱/۲ 2 ردالمحتار کتاب البیوع فصل فی الفضولی داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۲۴ 3 ردالمحتار کتاب البیوع فصل فی الفضولی داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۲۴

The ownership for Khalid in the sold item (mabi'), its growth, and its revenue is established from the day he purchased it from the Indian woman (Hindah). It is stated in Tanwir al-Absar and its commentary: Everything that arises from the sale, such as earnings, offspring, and dower (of a slave-girl), even if before validation (by the owner in an unauthorized sale), belongs to the buyer, because complete ownership is established for him from the time of purchase, unlike a usurper [1]. As for what was obtained from the farms before Khalid's purchase, neither Khalid nor Hindah has any right to it; rather, it belongs exclusively to Amr, because it is the substitute for the benefits of his property before it was utilized for harvesting. Gifting a debt to someone who does not owe it is invalid, unless they are empowered to take possession. In the commentary of Al-Ala'i, it is mentioned regarding making someone the owner of a debt who is not the debtor: if the creditor orders the debtor to give possession to him, then the gift becomes valid as it reverts to being a gift of a physical entity [2]. In our current case, empowerment for possession was granted as mentioned in the question, thus the gift became valid and giving a compensation (for the gift) also became correct. It is cited in the commentary of Tanwir from 'Al-Jawahir' that it is not valid to exempt someone from the right of revocation even if a settlement was made.

[1] Durr-e-Mukhtar, Sharh Tanwir al-Absar, Kitab al-Buyu', Chapter on Al-Fuduli, Matba' Mujtabai, Delhi, 2/32 [2] Durr-e-Mukhtar, Kitab al-Hibah, Kitab al-Buyu', Chapter on Al-Fuduli, Matba' Mujtabai, Delhi, 2/158

बेची गई वस्तु (मबीअ), उसकी वृद्धि और उसकी आय में उस दिन से खालिद का स्वामित्व सिद्ध हो गया जिस दिन उसने उसे हिन्दह से खरीदा था। 'तन्वीर अल-अबसार' और उसकी व्याख्या में है कि मबीअ से जो कुछ प्राप्त हो जैसे कमाई, संतान और दहेज़ (मेहर), तो वह खरीदार का है, भले ही वह अनुमति (इजाज़त) से पहले हो। क्योंकि खरीद के समय से ही उसे पूर्ण स्वामित्व प्राप्त हो गया है, हड़पने वाले (गासिब) के विपरीत [1]। और खालिद की खरीदारी से पहले खेतों से जो कुछ प्राप्त हुआ, उसमें खालिद और हिन्दह का कोई अधिकार नहीं है, बल्कि वह विशेष रूप से अम्र का है, क्योंकि यह उसकी ऐसी संपत्ति के लाभ का प्रतिफल (बदल) है जो फसल प्राप्त करने से पहले की है। और कर्ज का दान (हिबा-ए-दैन) उस व्यक्ति को जिस पर कर्ज नहीं है, अमान्य है, सिवाय इसके कि उसे कब्जा करने का अधिकार दे दिया जाए। 'शरह अलाई' में है कि ऐसे व्यक्ति को कर्ज का मालिक बनाना जिस पर कर्ज नहीं है; अब यदि ऋणदाता (साहब-ए-दैन) ने कर्जदार (मदियून) को कर्ज पर कब्जा देने का आदेश दे दिया, तो यह दान सही हो गया क्योंकि यह वस्तु के दान (हिबा-ए-ऐन) की ओर वापस लौट जाएगा [2]। हमारे विचाराधीन मामले में, चूंकि कब्जे का अधिकार दे दिया गया है जैसा कि प्रश्न में उल्लेखित है, इसलिए दान सही हो गया और मुआवजे (इवज़) का देना भी सही हो गया। 'तन्वीर' की व्याख्या में 'जवाहर' के हवाले से उद्धृत है कि किसी को वापस लेने के अधिकार (हक़-ए-रुजूअ) से मुक्त कर देना सही नहीं है, भले ही समझौता कर लिया गया हो।

[1] दुर्रे मुख़्तार शरह तन्वीर अल-अबसार, किताब अल-बुयूँ, फ़स्ल अल-फ़ुज़ूली, मतबा मुज्तबाई, दिल्ली, २/३२ [2] दुर्रे मुख़्तार किताब अल-हिबा, किताब अल-बुयूँ, फ़स्ल अल-फ़ुज़ूली, मतबा मुज्तबाई, दिल्ली, २/१५८

مبیع اور اس سے حاصل شدہ آمدنی میں اس دن سے خالد کی ملک ثابت ہو گئی جس دن اس نے ہندہ سے خریدا، تنویر الابصار اور اس کی شرح میں ہے کہ جو کچھ مبیع سے حاصل ہو جیسے کمائی، اولاد اور عقر، تو وہ مشتری کا ہے اگرچہ اجازت سے قبل ہو کیونکہ خریداری کے وقت سے ہی اس کو ملک تام حاصل ہو گئی، بخلاف غاصب کے اھ [۱] ، اور جو کچھ خالد کی خریداری سے قبل کھیتوں سے حاصل ہوا اس میں خالد اور ہندہ کا کوئی حق نہیں بلکہ وہ خاص عمرو کا ہے کیونکہ یہ اس کی ایسی ملک کے منافع کا بدل ہے جو غلہ حاصل کرنے کے قبل ہے، اور دین کا ہبہ اس شخص کو جس پر دین نہیں باطل ہے سوائے اس کے کہ اس کو قبضہ کا اختیار دے دے شرح علائی میں ہے کہ ایسے شخص کو دین کا مالک بنایا جس پر دین نہیں، اب اگر صاحب دین نے مدیون کو دین پر قبضہ کا حکم دے دیا تو یہ ہبہ صحیح ہو گیا کیونکہ یہ (ہبہ دین) ہبہ عین کی طرف راجع ہوگا اھ [۲] ہمارے زیر بحث مسئلہ میں چونکہ قبضہ کا اختیار دے دیا ہے جیسا کہ سوال میں مذکور ہے لہذا ہبہ صحیح ہو گیا اور عوض دینا بھی درست ہو گیا شرح تنویر میں بحوالہ جواہر منقول ہے کہ کسی کو حق رجوع سے بری کر دینا صحیح نہیں ولو صالحہ۔

۱ درمختار شرح تنویر الابصار کتاب البیوع فصل فی الفضولی مطبع مجتبائی دہلی ۲/۳۲ ۲ درمختار کتاب الھبۃ کتاب البیوع فصل فی الفضولی مطبع مجتبائی دہلی ۲/۱۵۸

Fatawa Razvia, Volume 17

[Arabic]: From the right of revocation over something, it is valid and it becomes a compensation for the gift. [Urdu]: And if a settlement is made on something in exchange for the right of revocation, it is correct and it will become the compensation for the gift. (T)

In short: From the day Khalid bought that property from Hindah, its profit is the property of Khalid himself. And before that, the profit from the day of the auction until that time became his right due to Amr's gifting. Now, in the year 1292 Fasli, no one has a right to the profit of all five buses except Khalid. And Allah Almighty knows best, and His knowledge is most complete and His command, exalted be His Majesty, is most firm. (Seal of Maulvi Abdul Qadir Sahib Badayuni) (Seal of Maulvi Abdul Muqtadir Sahib Badayuni)

Problem 77: From Sitarganj, 26 Rabi al-Akhir 1318 AH What do the scholars of religion say in this matter that often the government auctions orchards and properties, movable and immovable? Is it permissible to buy it or impermissible? And the items are... only.

The Answer: Any auction that is with the owner's permission is absolutely permissible, or if the owner gives permission after the sale—for example, there was a debt of one hundred rupees, it was auctioned for one hundred and ten, and the extra ten were given to the owner and he accepted them—then it becomes permissible now even though it was impermissible initially, because "subsequent permission is like prior agency." (T) And where these two situations are not present, it is an unauthorized contract (aqd-e-fuzuli) and will remain dependent on the owner's permission; if he permits it, it becomes valid, and if he rejects it, it becomes void. And until he gives permission, it will not be lawful for the buyer to dispose of that thing.

[Arabic]: For the suspended contract does not grant lawfulness, as stated in [Urdu]: Because a suspended sale is not beneficial for lawfulness, as has been stipulated in Radd al-Muhtar etc. (T) Radd al-Muhtar etc.

Then this is also in the case where at the time of this contract there is a person who has the legal authority to grant permission; it will not be void by another, for example, if a minor's property is auctioned at half price, such that there is no one in the whole world to give permission for it, then such a contract will not remain suspended but will be void and rejected from the beginning.

1 Durr al-Mukhtar, Book of Gift, Chapter on Revocation of Gift, Mujtabai Press Delhi 2/161 2 Radd al-Muhtar, Book of Sales, Section on the Unauthorized, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut 4/139-140 Page 107 of 715

फ़तावा रज़विया, जिल्द सत्रहवीं (17)

[अरबी]: किसी चीज़ पर वापसी के अधिकार के बदले में सुलह करना सही है और यह उपहार (हिबा) का मुआवज़ा हो जाता है। [उर्दू]: और अगर हक़े रुजू (वापसी का अधिकार) के बदले किसी चीज़ पर सुलह कर ली तो सही है और यह हिबा का एवज़ (मुआवज़ा) हो जाएगा। (ت)

अल-गरज़: जिस दिन से ख़ालिद ने वह जायदाद हिंदा से ख़रीदी, उस दिन से उसका मुनाफ़ा ख़ुद मालिक ख़ालिद का है और उससे पहले जो मुनाफ़ा नीलाम के दिन से उस वक़्त तक था, वह अम्र के हिबा (दान) करने से उसका हक़ हो गया। अब पाँचों बसों के मुनाफ़े में साल 1292 फ़सली में ख़ालिद के सिवा किसी का हक़ नहीं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है, और उसका इल्म सबसे कामिल है और उसका हुक्म, उसकी शान बुलन्द हो, सबसे मज़बूत है। (मुहर मौलवी अब्दुल क़ादिर साहब बदायूँनी) (मुहर मौलवी अब्दुल मुक़्तदिर साहब बदायूँनी)

मसाला 77: सितारगंज से, 26 रबी उल-आख़िर 1318 हिजरी क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस मसले में कि अक्सर बाग़ और जायदाद मंकूला (चल) और ग़ैर-मंकूला (अचल) सरकार नीलाम करती है, उसका ख़रीदना जायज़ है या नाज़ायज़ है? और चीज़ें ... हैं फ़क़त।

अल-जवाब: जो नीलाम मालिक की इजाज़त से हो वह मुतलक़न जायज़ है, या बिक्री के बाद मालिक इजाज़त दे दे। मिसाल के तौर पर सौ रुपये क़र्ज़ थे, एक सौ दस में नीलाम हुआ, दस जो ज़्यादा थे मालिक को दिए गए और उसने स्वीकार कर लिए, तो यह अब जायज़ हो गया, हालाँकि शुरुआत में नाज़ायज़ था। क्योंकि 'बाद की इजाज़त पहले की वकालत के समान है।' (ت) और जहाँ ये दोनों सूरतें न हों, वह अक़्द-ए-फ़ुज़ूली (अनधिकृत अनुबंध) है, मालिक की इजाज़त पर मुअक्क़फ़ (निर्भर) रहेगा; अगर वह जायज़ कर दे तो जायज़ हो जाएगा, रद्द कर दे तो बातिल (अमान्य) हो जाएगा। और जब तक इजाज़त न दे, उस चीज़ में ख़रीददार के लिए इस्तेमाल हलाल नहीं होगा।

[अरबी]: क्योंकि मुअक्क़फ़ अक़्द (निलंबित अनुबंध) हलाल होने का लाभ नहीं देता, जैसा कि इसमें उल्लेख किया गया है: [उर्दू]: क्योंकि रुकी हुई बिक्री हलाल होने का फ़ायदा नहीं देती जैसा कि रद अल-मुहतार वग़ैरह में इस पर नस (स्पष्ट आदेश) की गई है। (ت) रद अल-मुहतार वग़ैरह।

फिर यह भी उसी सूरत में है जब उस अक़्द (अनुबंध) के समय कोई ऐसा व्यक्ति मौजूद हो जिसे शरीयत की ओर से उसकी इजाज़त का अधिकार हो। अन्यथा वह दूसरों के लिए बातिल हो जाएगा। मिसाल के तौर पर, नाबालिग का माल आधी क़ीमत पर नीलाम किया गया, कि उसे पूरी दुनिया में

इजाज़त देने वाला कोई नहीं, तो ऐसा अक़्द मुअक्क़फ़ (निलंबित) नहीं रहेगा बल्कि शुरुआत से ही बातिल और मरदूद (रद्द) होगा।

1 दुर्रे मुख्तार, किताबुल हिबा, बाबुर् रुजू फ़िल हिबा, मतब-ए-मुजतबाई दिल्ली 2/161 2 रद अल-मुहतार, किताबुल बुयू, फ़स्ल फ़िल फ़ुज़ूली, दार इह्या अल-तुरास अल-अरबी बैरूत 4/139-140 पेज 107 / 715

من حق الرجوع علی شیئ صح وکان عوضا عن الھبۃ اور اگر حق رجوع کے عوض کسی شیئی پر صلح کرلی تو صحیح ہے اور یہ ہبہ کا عوض ہو جائے گا ھ (ت)

بالجملہ : جس روز سے خالد نے وہ جائیداد ہندہ سے خریدی اس دن سے تو اس کی توفیر خود ملک خالد ہے اور اس سے پہلے جو توفیر روز نیلام سے اس وقت تک تھی وہ عمرو کے ہبہ کرنے سے اس کا حق ہو گئی اب پانچوں بسوں کی توفیر سال ۱۲۹۲ فصلی میں سوا خالد کے کسی کا حق نہیں، واللہ تعالٰی اعلم وعلمہ اتم وحکمہ عز شانہ احکم (مہر مولوی عبد القادر صاحب بدایونی) (مہر مولوی عبد المقتدر صاحب بدایونی)

مسئلہ ۷۷: از ستار گنج ۲۶ ربیع الآخر ۱۳۱۸ ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اکثر باغ و جائیداد منقولہ وغیرہ منقولہ سرکار نیلام کرتی ہے اس کا خریدنا جائز ہے یا ناجائز ہے اور اشیاء رو رو ہے فقط

الجواب: جو نیلام باجازت مالک ہو مطلقاً جائز ہے یا بعد بیع مالک اجازت دے دے مثلاً سو روپے قرض تھے ایک سو دس میں نیلام ہوا دس کہ زائد تھے مالک کو دئے گئے اس نے قبول کر لئے تو یہ اب جائز ہو گیا اگر چہ ابتداء ناجائز تھا فان الاجازۃ اللاحقۃ کالوکالۃ السابقۃ (کیونکہ اجازت لاحقہ، وکالت سابقہ کی مثل ہے۔ ت) اور جہاں یہ دونوں صورتیں نہ ہوں وہ عقد فضولی ہے اجازت مالک پر موقوف رہے گا اگر جائز کر دے جائز ہو جائے گا رد کر دے باطل ہو جائے گا، اور جب تک اجازت نہ دے اس شے میں مشتری کو تصرف حلال نہ ہوگا۔

فأن العقد الموقوف لا یفید الحل، کما نص علیه فی کیونکہ بیع موقوف مفید حل نہیں ہوتی جیسا کہ ردالمحتار وغیرہ میں اس پر نص کی گئی ہے۔ (ت) ردالمحتار وغیرہ۔

پھر یہ بھی اس صورت میں ہے کہ اس عقد کے ہوتے وقت کوئی ایسا شخص قائم ہو جسے شرعاً اس کی اجازت کا اختیار ہے نہ دوسرے سے باطل ہو گا مثلاً نابالغ کا مال نصف قیمت کا نیلام کیا گیا کہ اسے تمام دنیا میں اجازت دینے والا کوئی نہیں تو ایسا عقد موقوف نہ رہے گا ابتداء باطل و مردود ہوگا۔

1 درمختار کتاب الہبۃ باب الرجوع فی الہبۃ مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۱۶۱ 2 ردالمحتار کتاب البیوع فصل فی الفضولی دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۳۹-۱۴۰ Page 107 of 715

Fatawa Razawiyya, Volume 17

(Arabic): Since the disposal by a 'fudhuli' (unauthorized agent) is fundamentally void where there is no one authorized to permit it, as stated in 'Al-Durr' and others, and Allah (Glorified and Exalted is He) knows best.	**(Urdu): Because the disposal by an unauthorized person is void from the start when there is no one with the authority to authorize it, as is specified in 'Al-Durr' etc. And Allah (Glorified and Exalted is He) knows best.**

(T)

Issue 28: 11 Dhu al-Hijjah 1318 AH What do the scholars of religion say regarding this matter: if a decree includes both principal money and its interest, and a Hindu judge currently auctions off some property for the purpose of paying off the debt and interest, is it permissible for a Muslim person to buy this property or not? If it is permissible, is it only up to the amount of the principal or entirely? Please clarify and be rewarded.

The Answer: When a buyer purchases something through a valid Shariah contract, the buyer is not concerned with the actions of the seller—whether the seller will spend that purchase price on obedience or disobedience.

"And no bearer of burdens shall bear another's burden."[2]	**No one will carry the load of another.**

(T)

The payment of the purchase price into interest (God forbid) will occur after the completion of the sale contract, so what connection does it have with the buyer? And even if it exists at that time, it's the seller's intention that he will take the price and pay it there; this intention also has no connection to the contract. In any case, the buyer is free from this blame due to the intervening act of a free agent (because there is an action of a free agent in between. T). Yes, if there is a specific situation where the seller is selling to spend on interest or other forbidden expenses, and the buyer intends through the purchase to assist him in this forbidden act, then due to the corruption of intention, he will bear the Shariah blame himself. The answer regarding the inclusion of usury (Riba) is this: However, the point of consideration here is that an auction is a sale, and a sale without the owner's consent is not legally permissible according to Shariah.

Allah Almighty says: "O you who have believed..."	Allah Almighty says: "O you who have believed, do not consume one another's wealth..."

1 Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Chapter on Fudhuli, Matba' Mujtabai Delhi, 2/31. 2 The Holy Quran, 6/164.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 17

(अरबी): चूंकि 'फ़ुज़ूली' (अनधिकृत व्यक्ति) द्वारा किया गया लेनदेन पूरी तरह से अमान्य है जहाँ उसे अनुमति देने वाला कोई नहीं है, जैसा कि 'अल-दुर' आदि में स्पष्ट किया गया है, और अल्लाह बेहतर जानता है।

(उर्दू): क्योंकि अनधिकृत व्यक्ति का अधिकार वहां पूरी तरह से शून्य है जहां इसकी अनुमति देने वाला कोई न हो, जैसा कि 'दुर' आदि में उल्लेख किया गया है। और अल्लाह बेहतर जानता है।

(त)

मसला 28: 11 ज़ुल-हिज्जा 1318 हिजरी विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि यदि किसी डिक्री में मूल राशि के साथ उसका ब्याज भी शामिल है, और एक हिंदू न्यायाधीश, जो वर्तमान में है, ऋण और ब्याज के भुगतान के उद्देश्य से किसी संपत्ति की नीलामी करता है, तो क्या एक मुसलमान के लिए उस संपत्ति को खरीदना जायज़ है या नहीं? यदि जायज़ है, तो क्या केवल मूल राशि की सीमा तक है या पूरी तरह से? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: जब खरीदार एक वैध शरीयत अनुबंध के माध्यम से कोई चीज़ खरीदता है, तो विक्रेता के कार्यों से खरीदार का कोई लेना-देना नहीं होता कि वह उस बिक्री मूल्य को आज्ञाकारिता में खर्च करेगा या पाप में।

"कोई बोझ उठाने वाला दूसरे का बोझ नहीं उठाएगा।"[2]

कोई भी दूसरे का भार नहीं उठाएगा।

(त)

खरीद की कीमत का ब्याज में भुगतान (ईश्वर न करे) बिक्री अनुबंध के पूरी तरह पूरा होने के बाद होगा, तो खरीदार से इसका क्या संबंध? और यदि उस समय ऐसा है भी, तो यह विक्रेता का इरादा है कि वह कीमत लेकर वहां देगा, इस इरादे का भी अनुबंध से कोई संबंध नहीं है। बहरहाल, खरीदार इस दोष से मुक्त है क्योंकि बीच में एक स्वतंत्र कर्ता का कार्य हस्तक्षेप कर रहा है (क्योंकि बीच में स्वतंत्र कर्ता का कार्य है। त)। हाँ, यदि कोई ऐसी विशेष स्थिति हो कि विक्रेता ब्याज या अन्य हराम खर्चों के लिए बेच रहा है और खरीदार खरीदकर इस हराम काम में उसकी मदद करने का इरादा रखता है, तो इरादे की खराबी के कारण वह खुद पर शरीयत का दोष लेगा। ब्याज (रिबा) के शामिल

होने का उत्तर यह है: हालांकि, यहाँ विचारणीय बात यह है कि नीलामी एक बिक्री है, और मालिक की सहमति के बिना बिक्री शरीयत के अनुसार जायज़ नहीं है।

अल्लाह तआला ने फरमाया: "ऐ ईमान वालों!"	**अल्लाह तआला ने फरमाया: ऐ ईमान वालो! आपस में...**

1 दुर्रे मुख्तार, किताबुल बुयूअ, फस्ल फिल फ़ुज़ूली, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 2/31। 2 अल-क़ुरान अल-करीम, 6/164।

فان تصرف الفضولي حيث لامجيز باطل اصلا كما نص عليه فی الدر وغيره والله سبحانه وتعالی اعلم.

کیونکہ فضولی کا تصرف جہاں اس کی اجازت دینے کا اختیار رکھنے والا کوئی نہ ہو سرے سے باطل ہے جیسا کہ اس پر در وغیرہ میں نص کی گئی ہے واللہ سبحانہ وتعالٰی اعلم.

(ت)

مسئلہ ۲۸: ۱۱ذی الحجہ ۱۳۱۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ جس ڈگری میں اصل روپیہ اس کا سود بھی شامل ہے اس میں اگر کوئی جائداد حاکم ہندو جو فی الحال ہے نیلام بغرض ادائے دین وسود کرے تو اس جائداد کو خریدنا شخص مسلمان کو جائز ہے یا نہیں؟ جائز ہے تو بقدر زر اصل کے ہے یا بالکلیہ؟ بینوا توجروا

الجواب: مشتری جب عقد صحیح شرعی سے کوئی شے خریدے تو بائع کے فعل کا کہ وہ اس زر ثمن کو اطاعت میں خرچ کرے گا یا معصیت میں مشتری سے کچھ مطالبہ نہیں،

"وَلَا تَزِرُ وَازِرَةٌ وِزْرَ أُخْرَىٰ" 2 کوئی بوجھ اٹھانے والا کسی دوسرے کا بوجھ نہیں اٹھائے گا.

(ت)

زر ثمن کا معاذ اللہ سود میں دیا جانا تمامی عقد بیع کے بعد ہوگا تو مشتری سے کیا تعلق اور اس وقت اگر ہے تو بائع کی نیت کہ ثمن لے کر وہاں دے گا، اس نیت کو بھی عقد سے علاقہ نہیں، بہر حال مشتری اس الزام سے بیر ہے لتخلل فعل فاعل مختار (کہ درمیان میں فاعل مختار کا فعل ہے۔ ت) ہاں اگر کوئی صورت خاصہ ایسی ہو کہ بائع سود وغیرہ مصارف حرام میں صرف کرنے کے

لئے بیچتا ہے اور مشتری شراء سے نیت کرے کہ اس امر حرام میں اس کی اعانت کرے تو فساد نیت کے باعث خود اپنے اوپر الزام شرعی لے گا شمول ربا کا جواب تو یہ ہے کہ مگر یہاں محلِ نظریہ امر ہے کہ نیلام ایک بیع ہے اور بیع بے رضائے مالک شرعاً جائز نہیں،

قال اللہ تعالٰی: "یٰٓاَیُّھَا الَّذِیْنَ اٰمَنُوْا اللہ تعالٰی نے ارشاد فرمایا: اے ایمان والو! آپس میں

1 در مختار کتاب البیوع فصل فی الفضولی مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۳۱ 2 القرآن الکریم ۶ / ۱۶۴

Fatawa Razawiya (Volume 17)

"O you who have believed, do not consume one another's wealth unjustly but only [in business by] mutual consent..." [Quran 4:29] Do not consume each other's property unjustly, unless it be a trade by mutual consent among you. (T)

Therefore, if a valid and legally sound auction is conducted by the owner himself or with the owner's permission, there is no dispute regarding its permissibility. It is a 'Bay' al-Fuzuli' (unauthorized sale) in the sense that if there is no one at that time to execute it—for example, a minor's property auctioned at half price, which no one in the world can execute—then that sale is void and ineffective from the start, and the buyer's action is unlawful. If there is an executor—for example, an adult's property auctioned at however low a price—then that contract will depend on his permission. If rejected, it becomes void; if authorized, it becomes executed. One form of authorization is if the sale price is determined to be more than the demanded amount. For instance, in a decree for 500 rupees or for a property worth a thousand, it is auctioned for 510 rupees. 510 go, 10 are given to the owner, and he accepts them; this acceptance constitutes the execution of the sale. *Lan qabulahu tanfidhun kama nassu alaihi* (Because the owner's acceptance is considered an execution on his part. T). And Allah Almighty knows best.

Problem 29: What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid was a servant among the horsemen. In a state of health, he gave a house and his post (asami) to his wife Hindah as her dower (mahr). He recorded both items in a document and completed the transfer of possession (dakhil kharij). After some time, Zaid passed away. Zaid's wife sold the house to Amr. Now, Khalid, to whom Zaid owed some debt, wants to declare this house as Zaid's property to recover his debt, claiming that Zaid had written to him: "If I do not pay, recover it from my property." Is this declaration valid according to Sharia? Is that document, which mentions both the house and the post, valid in Sharia? And did this house become the property of Hindah by Zaid's contract, and then the property of Amr by Hindah's contract, or not? Please clarify and be rewarded.

The Answer: In the situation queried, indeed that house became the property of Hindah due to Zaid's contract, and then became the property of Amr due to Hindah's sale. Now, no one except Amr has any right in it, nor can any creditor of Zaid recover their debt from it. The point of consideration and clarification here is that Zaid combined an entity (i.e., the house) and a mere right (i.e., the post) in a single

contract, whereas mere rights are not fit for transfer of ownership and exchange. It is a principle of jurisprudence that when a contract is formed by competent parties for a valid subject matter with all its pillars intact, there is no doubt about its non-nullity and it yields its fruits even if...

1. Al-Quran Al-Karim 2/188 Page 109 of 715

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

"ऐ ईमान वालों! एक दूसरे का माल अन्यायपूर्ण तरीके से मत खाओ, सिवाय इसके कि तुम्हारे बीच आपसी सहमति से व्यापार हो।" [कुरान 4:29] एक-दूसरे का माल अनुचित रूप से मत खाओ सिवाय इसके कि तुम्हारे बीच आपसी सहमति से व्यापार हो। (त)

अतः, यदि कोई वैध और सही शरीयती नीलामी स्वयं मालिक द्वारा या मालिक की अनुमति से की जाती है, तो इसकी स्वीकार्यता में कोई विवाद नहीं है। यह 'बय अल-फ़ुज़ूली' (अनधिकृत बिक्री) है कि यदि उस समय इसे लागू करने वाला कोई नहीं है - उदाहरण के लिए, एक नाबालिग की संपत्ति आधी कीमत पर नीलाम की गई जिसे दुनिया में कोई भी लागू नहीं कर सकता - तो वह बिक्री शुरू से ही शून्य और निष्प्रभावी है और खरीदार का कार्य हराम है। और यदि लागू करने वाला है - उदाहरण के लिए, एक वयस्क की संपत्ति कितनी भी कम कीमत पर नीलाम की गई - तो वह अनुबंध उसकी अनुमति पर निर्भर करेगा। यदि अस्वीकार कर दिया गया तो वह शून्य हो जाएगा, और यदि अधिकृत कर दिया गया तो वह लागू हो जाएगा। अनुमति का एक रूप यह भी है कि बिक्री मूल्य मांगे गए मूल्य से अधिक निर्धारित हो। उदाहरण के लिए, 500 रुपये की डिक्री में या हजार की संपत्ति 510 रुपये में नीलाम हुई। 510 गए, 10 मालिक को दिए गए और उसने ले लिए, तो यह लेना बिक्री को लागू करना माना जाएगा। लैन क़बूलहु तनफ़ीज़ुन कमा नस्सू अलैहि (क्योंकि मालिक का स्वीकार करना उसकी ओर से लागू करना माना जाता है। त)। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

मसला 29: धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि ज़ैद घुड़सवारों में एक नौकर था। उसने स्वस्थ अवस्था में अपनी पत्नी हिंदा के महर में एक घर और अपनी पदवी (असामी) दे दी और दस्तावेज़ में दोनों चीजों का उल्लेख करके दख़िल-ख़ारिज (कब्ज़ा हस्तांतरण) करा दिया। कुछ समय बाद ज़ैद की मृत्यु हो गई। ज़ैद की पत्नी ने वह घर अम्र को बेच दिया। अब ख़ालिद, जिसका ज़ैद पर कुछ कर्ज था, उस घर को ज़ैद की संपत्ति घोषित करके अपना कर्ज वसूल करना चाहता है, यह दावा करते हुए कि ज़ैद ने उसे लिख कर दिया था कि "अगर मैं भुगतान न करूँ तो मेरी संपत्ति से वसूल कर लेना"। क्या यह इकरार शरीयत के अनुसार जायज़ है? और वह दस्तावेज़ जिसमें घर के साथ पदवी का भी उल्लेख है, क्या शरीयत में सही है? और क्या यह घर ज़ैद के अनुबंध के कारण हिंदा की मिल्कियत और फिर हिंदा के अनुबंध के कारण अम्र की मिल्कियत हुआ या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

जवाब: पूछी गई स्थिति में, वास्तव में वह घर ज़ैद के अनुबंध के कारण हिंदा की मिल्कियत बन गया और फिर हिंदा की बिक्री के कारण अम्र की मिल्कियत हो गया। अब अम्र के अलावा इसमें किसी का कोई अधिकार नहीं है, और न ही ज़ैद का कोई लेनदार इससे अपना कर्ज वसूल कर सकता है। यहाँ विचार और स्पष्टीकरण का बिंदु केवल इतना है कि ज़ैद ने एक ही अनुबंध में एक चीज़ (अर्थात घर) और एक मात्र अधिकार (अर्थात पदवी) को एक साथ मिला दिया, जबकि मात्र अधिकार स्वामित्व हस्तांतरण और विनिमय के योग्य नहीं होते। फ़िक़्ह (इस्लामी न्यायशास्त्र) का सिद्धांत है कि जब अनुबंध योग्य पक्षों द्वारा वैध विषय-वस्तु के लिए सभी स्तंभों की सलामती के साथ संपन्न हो, तो इसके शून्य न होने में कोई संदेह नहीं है और अपने फलों को चाहे...

1. अल-कुरान अल-करीम 2/188 पेज 109 ऑफ़ 715

لَا تَاْكُلُوْٓا اَمْوَالَكُمْ بَيْنَكُمْ بِالْبَاطِلِ اِلَّآ اَنْ تَكُوْنَ تِجَارَةً عَنْ تَرَاضٍ مِّنْكُمْ ۱؎ ایک دوسرے کا مال ناحق مت کھاؤ سوائے اس کے کہ تمہارے درمیان باہمی رضامندی سے تجارت ہو۔ (ت)

پس اگر نیلام جائز صحیح شرعی خود مال کرے یا باذن مالک ہو تو اس کے جواز میں کلام نہیں وہ بیع فضولی ہے کہ اگر اس وقت اس کا کوئی نافذ کرنیوالا نہیں مثلاً نابالغ کا مال نصف قیمت کو نیلام ہوا کہ اسے تمام جہاں میں کوئی نافذ نہیں کر سکتا جب تو وہ بیع سرے سے باطل وبے اثر ہے اور خریدار حرام اور اگر نافذ کرنے والا ہے مثلاً بالغ کا مال کتنی ہی کم قیمت کو نیلام ہوا تو وہ عقد اس کی اجزت پر موقوف رہے گا، اگر رد کردیا یا باطل ہوگیا، اور اگر جائز کردیا نافذ ہوگیا، اور اجازت کی صورت میں ایک یہ بھی ہے کہ زرِ ثمن قدر مطالبہ سے زائد قرار پایا مثلاً پانچ سو روپے کی ڈگری میں یا ہزار کا مال پانچ سو دس روپے کو نیلام ہوا پانچ سو دس کو گئے دس مالک کو دے اس نے لے لئے تو یہ لینا بیع کو نافذ کردینا ہوگا لان قبولہ تنفیذ کما نصوا علیہ (کیونکہ مالک کا قبول کرنا اس کی طرف سے نافذ کرنا متصور ہوتا ہے۔ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۹: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید کہ سواروں میں نوکر تھا اس نے اپنے زوجہ ہندہ کے مہر میں بحالت صحت مکان اور اپنی اسامی دے دی اور دستاویز میں دونوں چیزوں کا ذکر لکھ کر داخل خارج کرادیا، بعد ایک عرصہ کے زید کا انتقال ہوگیا، زوجہ زید نے مکان عمرو کے ہاتھ فروخت کیا، اب خالد جس کا زید پر کچھ قرض آتا تھا اس مکان کو مملوک زید قرار دے کر اپنا قرضہ اس سے وصول کرایا چاہتا ہے کہ زید نے اسے لکھ دیا تھا اگر میں ادا نہ کروں میری جائداد سے وصول کر لے، آیا یہ اقرار شرعاً روا اور وہ دستاویز جس میں مکان کے

ساتھ اسامی کا بھی ذکر ہے شرعاً صحیح اور یہ مکان بوجہ عقد زید مملوک ہندہ پھر بسبب عقد ہندہ مملوک عمرو ہوگیا یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: صورتِ مستفسرہ میں بیشک وہ مکان بوجہ عقدِ زید مملوک ہندہ پھر بسببِ بیع ہندہ مملوک عمرو ہوگیا، اب سوائے عمرو کسی کا اس میں کچھ حق نہیں، نہ کوئی قرضخواہِ زید اس سے اپنا قرضہ وصول کرسکتا ہے، محل تامل وامر تنقیح طلب یہاں اس قدر کہ زید نے عقدِ واحدہ میں عین یعنی مکان اور حقِ مجرد یعنی اسامی میں جمع کیا حالانکہ حقوقِ مجردہ صالح تملیک ومعاوضہ نہیں، کلیہ فقہ ہے کہ جب عقد اہل سے محل میں بسلامت ارکان واقع ہو تو اس کے عدم بطلان میں کوئی شبہ نہیں اور اپنے ثمرات کو اگرچہ

Fatwa-e-Razawiyya (Volume 17)

After possession, it will certainly be fruitful. However, at the time of the judge's consideration, whether the contract that occurred between Zaid and Zaid's wife is termed a settlement of dower or a gift from Hinda or Zaid, and whether it's a gift with a consideration or on condition of consideration, this difference arises from the disagreement of the contracting parties. In any case, the aforementioned matter of transferring ownership of the property itself does not interfere with the validity of the sale by Hinda. Even in the last case—a gift on condition of consideration—it is initially a gift and its rules apply to it, though eventually, upon delivery of the consideration, it turns into a sale. If in a gift, a transferable thing and a non-transferable thing are combined, its invalidity remains limited to that [non-transferable part], and in the [transferable] portion, the gift is absolutely valid.

In Al-Ashbah wal-Nazair, a principle is mentioned: "When the permissible and the forbidden are combined, the forbidden prevails." He said: "Among such instances is the gift, and it is not invalidated by an invalid condition, so it [the invalidity] does not extend to the permissible part."[1]

A rule is mentioned in Al-Ashbah wal-Nazair that when halal and haram are combined, haram will prevail. He said that a gift is also included in this; it is not voided by an invalid condition, therefore it will not extend to the permissible part. (T)

In other remaining cases, although this contract might be in the form of a gift or settlement, its meaning is buying and selling: Zaid is the seller, Hinda is the buyer, the house and names are the sold goods, and the dower is the price.

As for a gift with consideration, it is clear. As for settlement, it is as stated in Al-Alamgiriyah citing Al-Muhit: "When a settlement is made for a debt, its ruling is like the price in a sale. If it is made for a specific object, its ruling is like the sold goods in a sale. Thus, whatever can be a price or sold goods in a sale can also be an exchange in a settlement, and what cannot be, cannot be an exchange for settlement."[2]

But in a gift with consideration, this is clear, and settlement is for this reason as it appears in Al-Alamgiriyah with reference to Al-Muhit that if settlement occurs on a debt, its rule is the same as the price in a sale, and if the settlement occurs on a specific object, its rule is the same as the sold item in a sale. Therefore, whatever can become a price or sold item in a sale can also become an exchange in a settlement, and whatever cannot become a price or sold item in a sale

cannot become an exchange for settlement. (T)

Now this discourse will shift towards the issue of taking compensation for religious duties (وظائف), where although there is a difference of opinion among several scholars...

---

[1] Al-Ashbah wal-Nazair, Al-Fann al-Awwal, Al-Qa'idah al-Thaniyah, Idara-tul-Quran Karachi, 1/129. [2] Fatawa Hindiyyah, Kitab-us-Sulh, Noorani Kutub Khana Peshawar, 4/231.

क़ब्ज़े के बाद निश्चित रूप से यह फलदायी होगा। हालांकि, न्यायाधीश के विचार के समय, ज़ैद और ज़ैद की पत्नी के बीच हुआ अनुबंध चाहे मेहर (दहेज) का समझौता माना जाए या हिंदा या ज़ैद की ओर से उपहार (हिबा), और चाहे वह उपहार प्रतिफल के साथ हो या प्रतिफल की शर्त पर, यह मतभेद अनुबंध करने वाले पक्षों की असहमति से उत्पन्न होगा। किसी भी स्थिति में, मकान के मालिकाना हक हस्तांतरण का उक्त मामला हिंदा द्वारा बिक्री की वैधता में बिल्कुल भी हस्तक्षेप नहीं करता है। यदि अंतिम स्थिति—प्रतिफल की शर्त पर उपहार—हो, तो प्रारंभ में यह एक उपहार है और इसके नियम इस पर लागू होते हैं, हालांकि अंत में प्रतिफल की प्राप्ति पर यह बिक्री में बदल जाता है। यदि एक उपहार में, हस्तांतरणीय और गैर-हस्तांतरणीय चीज़ों को एक साथ मिला दिया जाता है, तो इसकी अमान्यता केवल उसी (गैर-हस्तांतरणीय भाग) तक सीमित रहती है, और उपहार उस [हस्तांतरणीय] सीमा तक बिल्कुल वैध हो जाता है।

अल-अशबाह वन-नज़ैर से, इस सिद्धांत पर: "जब हलाल और हराम एक साथ मिल जाएं तो हराम प्रभावी होता है।" उन्होंने कहा: "इनमें उपहार भी शामिल है, और यह अमान्य शर्त के कारण रद्द नहीं होता है, इसलिए यह (अमान्यता) जायज़ (मान्य भाग) तक नहीं फैलती है।"[1]

अल-अशबाह वन-नज़ैर में एक नियम का उल्लेख है कि जब हलाल और हराम एक साथ मिलते हैं, तो हराम प्रभावी होगा। उन्होंने कहा कि उपहार भी इसी में शामिल है और वह अमान्य शर्त से रद्द नहीं होता है, इसलिए वह जायज़ की ओर नहीं फैलेगा। (त)

और शेष स्थितियों में, हालांकि यह अनुबंध उपहार या समझौते के रूप में हो सकता है, लेकिन इसका अर्थ खरीद और बिक्री ही है: ज़ैद विक्रेता है, हिंदा क्रेता है, घर और नाम बेची गई वस्तु हैं, और मेहर कीमत है।

जहाँ तक प्रतिफल के साथ उपहार की बात है, वह स्पष्ट है। और जहाँ तक समझौते की बात है, तो जैसा कि अल-आलमगीरिया में अल-मुहीत के हवाले से आया है: "जब ऋण पर समझौता होता है, तो उसका नियम बिक्री में कीमत के समान होता है। यदि वह किसी विशिष्ट वस्तु पर होता है,

लेकिन प्रतिफल के साथ उपहार में तो यह स्पष्ट है, और समझौता इसलिए है जैसा कि आलमगीरिया में मुहीत के हवाले से आया है कि अगर समझौता ऋण पर होता है, तो उसका नियम वही है जो बिक्री में कीमत का है, और अगर समझौता किसी विशिष्ट वस्तु पर होता है, तो

तो उसका नियम बिक्री में बेची गई वस्तु के समान होता है। इस प्रकार, जो कुछ भी बिक्री में कीमत या बेची गई वस्तु बन सकता है, वह समझौते में विनिमय भी बन सकता है, और जो नहीं हो सकता, वह समझौते के लिए विनिमय नहीं बन सकता।"[2]

उसका नियम वही है जो बिक्री में बेची गई वस्तु का है। इसलिए, जो चीज़ बिक्री में कीमत या बेची गई वस्तु बन सकती है, वह समझौते में भी विनिमय बन सकती है, और जो बिक्री में कीमत या बेची गई वस्तु नहीं बन सकती, वह समझौते का विनिमय भी नहीं बन सकती। (त)

अब यह चर्चा धार्मिक कर्तव्यों (वज़ाइफ़) के मुआवजे के मसले की ओर मुड़ेगी, जहाँ हालाँकि कई विद्वानों के बीच मतभेद है...

---

[1] अल-अशबाह वन-नज़ैर, अल-फ़न अल-अव्वल, अल-क़ाइदा अल-सानिया, इदारातुल क़ुरान कराची, 1/129। [2] फ़तावा हिंदिया, किताबुस-सुल्ह, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 4/231।

पृष्ठ 110/715

بعد القبض بالیقین مثمر ہوگا مگر وقتِ نظر حاکم کہ وہ عقد جو درمیان زید و زوجہ زید واقع ہوا عام ازیں کہ صلح عن المہر ٹھہرے خواہ ہندہ یا زید کی طرف سے ہبہ اور ہبہ ہو تو بالعوض خواہ بشرط العوض اور یہ اختلاف سہ اختلافِ عاقدین سے ناشی ہوگا، بہر تقدیر امر مذکور نفسِ مکان کے تملیک پھر ہندہ کی صحتِ بیع میں ہر گز مخل نہیں کہ اگر صورتِ اخیر ہبہ بشرط العوض تو وہ تو ابتداء ہبہ ہے اور اسی کے احکام اس پر جاری، اگرچہ انتہاء بدستیاری معاوضہ جانبِ بیع منقلب ہو جائے اور ہبہ میں اگر شے صالح التملیک و غیر صالح یکجا کی جائیں تو اس کا فساد اسی پر مقصر رہتا ہے اور اس قدر میں ہبہ قطعاً صحیح ہو جاتا ہے،

فی الاشباہ والنظائر من قاعدۃ اذا اجتمع الحلال و الحرام غلب الحرام قال ومنھا الھبۃ وھی لاتبطل بالشرط الفاسد فلا یتعدی الی الجائز ۱ اھ

الاشتباہ والنظائر میں ایک قاعدہ مذکور ہے کہ جب حلال و حرام مجتمع ہوں تو حرام غالب ہو گا فرمایا کہ اسی میں سے ہبہ بھی ہے اور وہ شرطِ فاسد سے باطل نہیں ہوتا لہٰذا جائز کی طرف متعدی نہیں ہو گا دھ (ت)

اور صورِ باقیہ میں اگرچہ یہ عقد لباسِ ہبہ یا صلح میں ہو مگر معنیٰ بیع و شراء ہے زید بائع ہندہ مشتریہ مکان واسامی مبیع مہر ثمن،

اما فی الھبۃ بالعوض فظاھر واما فی لیکن ہبہ بالعوض میں تو یہ ظاہر ہے اور صلح اس لئے جیسا الصلح فکما في العالمگیریۃ عن المحیط اذا وقع الصلح عن دین فحکمہ حکم الثمن فی البیع وان وقع علی عین

کہ عالمگیریہ میں بحوالہ محیط آیا ہے کہ اگر صلح دین پر واقع ہو تو اس کا حکم وہی ہے جو بیع میں ثمن کا ہے اور اگر صلح عین پر واقع ہو تو اس کا حکم وہی ہے جو بیع میں

فحکمه حکم المبیع فما یصلح ثمنا فی مبیع کا ہے چنانچہ جو چیز بیع میں ثمن یا مبیع بن سکتی ہے البیع او مبیعا یصلح بدلا فی الصلح وہ صلح میں بدل بھی بن سکتی ہے اور جو بیع میں ثمن یا ومالا لا ۲۔ مبیع نہیں بن سکتی وہ بدلِ صلح بھی نہیں بن سکتی۔ (ت)

اب یہ کلام مسئلہ اعتیاض عن الوظائف کے طرف مجر ہو گا وہاں ہر چند علماء کو اختلاف ہے

---

1 الاشباہ والنظائر الفن الاول القاعدۃ الثانیہ ادارۃ القرآن کراچی ۱/ ۱۲۹ 2 فتاوٰی ہندیہ کتاب الصلح نورانی کتب خانہ پشاور ۴/ ۲۳۱

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

And this subject is a matter of great scholarly debate, but according to the great masters and researchers, the practice is correct and acceptable, and it should be considered at the time of need, God willing. May Allah the Almighty be exalted; although its other aspect is also very heavy and weighty.

[Table Content] Arabic Text: In Al-Durr al-Mukhtar, citing Al-Ashbah: The school's position is that specific custom (urf-e-khas) is not considered. However, many scholars have given fatwa in favor of its consideration. Based on this, a fatwa was issued regarding the permissibility of resigning from designated posts/allowances in exchange for money, etc. Allamah Sayyid Ahmad al-Tahtawi said in his marginalia that the jurists recognized this as an ancient custom, and scholars and rulers approved of it. He further stated, quoting Abu Saud from Sayyid Ahmad al-Hamawi, who in turn quoted some learned individuals citing Allamah Badr al-Din al-Ayni, that resigning from such posts is correct. This is reasoned by analogy with a woman giving up her turn for a co-wife, because each of these is merely a waiver of a right, etc.

Urdu Translation/Explanation: In Durr al-Mukhtar, it is mentioned with reference to Ashbah that the school's doctrine is that specific custom (urf-e-khas) is not taken into account. However, many scholars have issued fatwas in favor of considering it. On this basis, a fatwa was given for the permissibility of resigning from posts (wazaif) in exchange for money, etc. Allamah Sayyid Ahmad al-Tahtawi mentioned in his marginal notes that the jurists regarded this as an ancient custom, and scholars and rulers appreciated it. Allamah Tahtawi further said that Abu Saud cited the statement of some scholars with reference to Allamah Badr al-Din al-Ayni via Sayyid Ahmad al-Hamawi that resigning from posts is correct. This is argued by analogy with a woman relinquishing her turn to her co-wife, because both of these are merely the waiving of a right, etc. (T)

Allamah Sayyid Ahmad al-Hamawi, in 'Ghamz Uyun al-Basair', citing Allamah Nur al-Din Ali al-Maqdisi, mentions the consideration and validity of this issue based on some branches from Sarakhsi's 'Al-Mabsut' and says: 'Falyuhfaz fa'innahu nafisun jiddan' (Let this be remembered, for it is very precious. - Transl.) The seal of researchers, Allamah Ibn Abidin Shami, in 'Radd al-Muhtar', cites support for this from the discourse of Allamah Bayri, the commentator of 'Al-Ashbah'. He differentiates the rights of a servant-legatee, retaliation (qisas), marriage, and slavery from pre-emption rights (shuf'ah), a wife's turn (qasm), and the option of choice in

marriage. The reason provided is that in the former cases, the right is established fundamentally, so receiving compensation for them is permissible.

---

1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Mujtabai Press, Delhi, 2/4
2. Hashiya al-Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Dar al-Ma'rifah, Beirut, 3/9
3. Ghamz Uyun al-Basair, Al-Qa'ida al-Ula, Idarat al-Qur'an wal-Ulum al-Islamiyya, Karachi, 1/139

फ़तावा रज़विया (खंड १७)

और यह विषय विद्वानों के बीच चर्चा का एक प्रमुख मुद्दा है, लेकिन महान विद्वानों और शोधकर्ताओं के अनुसार, यह प्रथा सही और स्वीकार्य है, और ज़रूरत के समय इसे ध्यान में रखा जाना चाहिए, इंशाल्लाह। अल्लाह सर्वशक्तिमान सर्वोच्च है; हालाँकि इसका दूसरा पहलू भी बहुत भारी और वजनी है।

[तालिका विवरण] अरबी पाठ: दुर्र-ए-मुख्तार में 'अल-अशबाह' के हवाले से उल्लेख है कि मज़हब यह है कि विशिष्ट प्रथा (उर्फए-खास) का कोई विचार नहीं किया जाता है। लेकिन कई विद्वानों ने इसके विचार के पक्ष में फतवा दिया है। इसी आधार पर धन आदि के बदले में पदों/वजीफों से इस्तीफे की अनुमति का फतवा दिया गया था। अल्लामा सैय्यद अहमद तहातावी ने अपने हाशिये में कहा है कि फकीहों ने इसे एक प्राचीन प्रथा माना है, और विद्वानों और शासकों ने इसे पसंद किया है। आगे उन्होंने कहा, अबू सऊद ने सैय्यद अहमद हमवी के माध्यम से कुछ विद्वानों के कथन को उद्धृत किया जिन्होंने अल्लामा बदरुद्दीन ऐनी के हवाले से कहा कि पदों से इस्तीफा देना सही है। इसे इस सादृश्य (क़यास) पर उचित ठहराया गया है कि जैसे एक महिला अपनी बारी अपनी सौतन के लिए छोड़ देती है, क्योंकि ये दोनों ही केवल एक अधिकार का त्याग हैं, आदि।

उर्दू अनुवाद/व्याख्या: दुर्र-ए-मुख्तार में 'अशबाह' के हवाले से उल्लेख है कि मज़हब यह है कि 'उर्फ ए-खास' (विशिष्ट प्रथा) का एतबार नहीं किया जाता, लेकिन बहुत से विद्वानों ने इसके एतबार का फतवा दिया है। इसी बुनियाद पर माल के बदले वज़ीफ़ों (पदों) से दस्तबरदारी (इस्तीफ़े) के जायज़ होने का फतवा दिया गया, इत्यादि। अल्लामा सैय्यद अहमद तहातावी ने अपने हाशिये (टिप्पणी) में कहा कि फ़क़ीहों ने इसे 'उर्फए-क़दीम' (प्राचीन प्रथा) समझा और विद्वानों व हुक्मरानों ने इसे पसंद किया। यहाँ तक कि अल्लामा तहातावी ने कहा कि अबू सऊद ने बाज़ विद्वानों का कौल अल्लामा बदरुद्दीन ऐनी के हवाले से सैय्यद अहमद हमवी से नकल किया कि वज़ीफ़ों से दस्तबरदारी सही है, औरत के अपनी बारी अपनी सौतन के लिए छोड़ देने पर क़यास करते हुए, क्योंकि इन दोनों में से हर एक महज़ इस्कात (अधिकार का त्याग) है, इत्यादि। (अनुवाद)

अल्लामा सैय्यद अहमद हमवी ने 'गम्ज़ उयून अल-बसायर' में अल्लामा नूरुद्दीन अली मक़दिसी के हवाले से सरखसी की 'अल-मबसत' की कुछ शाखाओं के आधार पर इस मसले के विचार और वैधता का उल्लेख करते हुए कहा है: 'फ़ल-युहफ़ज़ फ़इन्नहु नफ़ीसुन जिद्दन' (इसे याद रखना चाहिए क्योंकि

यह बहुत उम्दा बात है। - अनुवाद) शोधकर्ताओं के मुहर, अल्लामा इब्ने आबिदीन शामी ने 'रद अल-मुह्तार' में 'अल-अशबाह' के व्याख्याकार अल्लामा बीरी के कलाम से इसकी ताईद (समर्थन) नक़ल की है। उन्होंने मुसा-लहु बिल-खिदमत (सेवा के वसीयतदार), किसास, निकाह और गुलामी के अधिकारों को शुफ़ा (अग्रक्रय अधिकार), बीवी की बारी और निकाह में चयन के विकल्प (ख़ियार) से इस वजह से अलग किया है कि पहले वाले मामलों में हक मौलिक रूप से (असालतन) साबित है, इसलिए उनके बदले मुआवज़ा लेना जायज़ है।

---

1. दुर्र-ए-मुख्तार, किताब अल-बुयू, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, २/ ४
2. हाशिया अल-तहातावी अला अल-दुर्र अल-मुख्तार, किताब अल-बुयू, दार अल-मारिफ़ा, बेरूत, ३/ ९
3. गम्ज़ उयून अल-बसायर, अल-काइदा अल-ऊला, इदारत अल-कुरान वल-उलूम अल-इस्लामिया, कराची, १/ १३९

पृष्ठ १११ / ७१५

اور یہ مبحث معرکۃ الآراء ہے مگر مرضی جماہیر فحول و نحاریر عدول صحت و قبول ہے اور وہی ہنگام اعتبار و ملاحظہ نظائر ان شاء اللہ تعالٰی اظہر، اگرچہ دوسرا پلہ بھی بہت ثقیل و گراں ہے،

[جدول] عربی متن: فی الدر المختار من الاشباہ المذہب عدم اعتبار العرف الخاص لکن افتی کثیر باعتبارہ وعلیہ فیفتی بجواز النزول من الوظائف بمال الخ قال العلامۃ السید احمد الطحطاوی فی حاشیتہ وقد تعارف ذلک الفقہاء عرفاً قدیماً رضیہ العلماء والحکام الی ان قال عن ابی السعود عن السید احمد الحموی من بعض الفضلاء عن العلامۃ بدرالدین العینی ان النزول عن الوظائف صحیح قیاساً علی ترک المرأۃ قسمھا لصاحبتھا لان کل منھما مجرد اسقاط الخ۔

اردو ترجمہ و تشریح: در مختار میں بحوالہ اشباہ مذکور ہے کہ مذہب یہ ہے کہ عرف خاص کے عدم اعتبار کا ہے لیکن کثیر علماء نے اس کے اعتبار کرنے کا فتوی دیا اسی بنیاد پر مال کے بدلے وظائف سے دستبرداری کے جواز کا فتوی دیا گیا الخ علامہ سید احمد طحطاوی نے اپنے حاشیہ میں کہا کہ فقہاء نے اس کو عرف قدیم سمجھا اور علماء وحکام نے اس کو پسند کیا یہاں تک کہ علامہ طحطاوی نے کہا کہ ابوسعود نے بعض فضلاء کا قول بحوالہ علامہ بدر الدین عینی سید احمد حموی سے نقل کیا کہ وظائف سے دستبرداری صحیح ہے قیاس کرتے ہوئے عورت کے اپنی باری اپنی سوکن کے لئے چھوڑ دینے پر ، کیونکہ ان دونوں میں سے ہر ایک محض اسقاط ہے، الخ (ت)

علامہ سید احمد حموی غمز عیون البصائر میں علامہ نور الدین علی مقدسی سے بعض فروع مبسوط سرخسی پر اس مسئلہ کا اعتبار اور صحت کا استظہار نقل کرکے فرماتے ہیں: فلیحفظ فانہ

نفیس جدا (اس کو یاد رکھنا چاہئے کیونکہ یہ بہت عمدہ ہے۔ ت) خاتم المحققین علامہ ابن عابدین شامی ردالمحتار میں کلام علامہ بیری شارح اشباہ سے اس کی تائید نقل اور حقوق موصی لہ بالخدمہ وقصاص و نکاح ورق کا حقوق شفعہ وقسم زوجہ و خیار مخیرہ فی النکاح سے بدیں وجہ کہ صور اولیٰ میں حق اصالۃً ثابت ہے تو ان سے اعتیاض جائز

---

۱ درمختار کتاب البیوع مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۴ ۲ حاشیہ الطحطاوی علی الدر المختار کتاب البیوع دار المعرفۃ بیروت ۳/ ۹ ۳ غمز عیون البصائر القاعدۃ الاولیٰ ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۱/ ۱۳۹

Unlike the latter case, where the establishment of a right is solely based on harm, when the right holder agrees to compensation, it is known that the right was not firmly established initially and became void. What kind of compensation is this? After explaining the difference, they say:

Arabic	Urdu
It is not hidden that the holder of the post has an established right in it by the appointment of the judge as a primary right, not as a removal of harm (concluding up to what he said), although the more apparent view in it is what we have stated.[1]	And let it not be hidden that certainly the holder of the post has an established right through the appointment of the judge as a fundamental right, not for the purpose of removing harm (citing up to here), although in this, what we have said is more evident. (T)

On this estimation, this would resolve the doubt about combining valid and invalid items in a single transaction (safqah wahidah) as being definitively severed. Even if another school of thought is adopted, it is clear to a jurist that many things are valid indirectly (dimnan) but not valid directly (qasdan) (many things are correct implicitly and are not correct intentionally-T). After all, passage, water rights, and height are also abstract rights. If these follow physical properties like roads, canals, and buildings, their sale is permissible by consensus. Here too, selling names (titles/ offices) is not just the sale of an abstract right, but includes horses and clothing along with it, as is not hidden (as is not concealed-T). Then, to say it's independent and pure would be a definitive invalidity only if the sale of names was considered absolutely void in one school of thought. However, it is certain to this extent that this invalidity is a matter of disagreement. Thus, it will only be proven that Zaid combined one item which is valid for sale by consensus and another item of differing validity in a single transaction. In such a case, according to those who argue for invalidity, although the sale of that specific item is void, its corruption does not spread to the other item. Its sale remains valid by consensus. In short, even according to those who prohibit it, the relinquishing of a post is like endowments (awqaf), not like a free person and a slave where the invalidity of one makes the sale of the house also corrupt.

Arabic	Urdu
In 'Al-Durr al-Mukhtar', they restricted the spreading of corruption in the chapter of	In 'Durr-e-Mukhtar' it is stated that the jurists, in the chapter of void sales,

Arabic	Urdu
void sales to 'strong corruption' upon which there is consensus. It then spreads, like combining a free person and a slave. This is contrary to 'weak corruption' which is disputed; it remains confined to its own subject and does not transcend it, like combining a slave and a mudabbar[2] (a slave promised manumission)... etc. And in 'Al-Shami'...	restricted the spreading of corruption to strong, agreed-upon corruption. So that corruption will spread throughout the entire contract, such as combining a free person and a slave in a single contract. Unlike weak corruption involving disagreement, which remains restricted to its location and from it...

[1] Radd al-Muhtar, Book of Sales, Section on relinquishing posts, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/15 [2] Al-Durr al-Mukhtar, Book of Hiring, Mujtabai Press, Delhi, 2/167

फतावा-ए-रज़विया जिल्द 17

इसके विपरीत अंतिम मामले में जहां अधिकार की स्थापना केवल क्षति के आधार पर है, जब अधिकार स्वामी मुआवजे पर सहमत हो जाता है, तो यह ज्ञात होता है कि अधिकार शुरू से ही स्थिर नहीं था और पूरी तरह से शून्य हो गया। यह कैसा मुआवजा है? अंतर बताते हुए वे कहते हैं:

अरबी

और यह छिपा नहीं रहना चाहिए कि पद धारक के लिए न्यायाधीश की नियुक्ति से मौलिक रूप से अधिकार स्थापित हो गया है, न कि क्षति को दूर करने के लिए (यहाँ तक उल्लेख करते हुए जहाँ तक उन्होंने कहा), हालांकि इसमें अधिक स्पष्ट वही है जो हमने कहा।[1]

उर्दू

और यह छिपा नहीं रहना चाहिए कि पद धारक के लिए न्यायाधीश की नियुक्ति से मौलिक रूप से अधिकार स्थापित हो गया है, न कि क्षति को दूर करने के लिए (यहाँ तक उल्लेख करते हुए जहाँ तक उन्होंने कहा), हालांकि इसमें अधिक स्पष्ट वही है जो हमने कहा। (त)

इस अनुमान पर, यह एक ही सौदे (सफ्का वाहिदा) में वैध और अवैध को मिलाने के संदेह को पूरी तरह से समाप्त कर देगा। और यदि कोई अन्य पंथ अपनाया जाए, तब भी एक फकीह (विधिवेत्ता) पर यह स्पष्ट है कि बहुत सी चीजें परोक्ष रूप से (दिम्मन) सही होती हैं लेकिन प्रत्यक्ष रूप से (क़स्दन) सही नहीं होतीं (बहुत सी चीजें परोक्ष रूप से सही होती हैं और जानबूझकर सही नहीं होती हैं-त)। आखिरकार गुज़रने का अधिकार, पानी का अधिकार और ऊंचाई का अधिकार भी अमूर्त अधिकार हैं। यदि ये संपत्तियों जैसे सड़क, नहर और इमारत के साथ आते हैं, तो इनकी बिक्री सर्वसम्मति से जायज है। यहाँ भी नाम (पद/उपाधि) बेचना केवल अमूर्त अधिकार की बिक्री नहीं है, बल्कि उसके साथ घोड़े और कपड़े भी हैं जैसा कि छिपा नहीं है (जैसा कि छिपा नहीं है। त)। फिर इसे स्वतंत्र और शुद्ध कहना केवल तभी पूर्ण शून्यता होगी यदि एक पंथ में नामों की बिक्री को पूरी तरह से शून्य माना जाए। हालांकि, इस हद तक तो निश्चित है कि यह शून्यता विवादास्पद है। अतः केवल इतना सिद्ध होगा कि जैद ने एक ही सौदे में एक सर्वसम्मति से बिक्री के लिए वैध वस्तु और दूसरी विवादास्पद वैधता वाली वस्तु को मिला दिया। ऐसी स्थिति में, शून्यता के समर्थकों के अनुसार भी, हालांकि उस विशिष्ट विषय की बिक्री शून्य है, लेकिन उसकी खराबी दूसरी वस्तु तक नहीं फैलती। उसकी बिक्री सर्वसम्मति से सही रहती है। संक्षेप में यह कि विरोधियों के अनुसार भी पद का त्याग औकाफ (बंदोबस्त) के समान है, न कि एक स्वतंत्र व्यक्ति और दास के समान कि जिसकी शून्यता से घर की बिक्री भी दूषित हो जाए।

अरबी

'अल-दुर्र अल-मुख्तार' में है कि फकीहों ने दूषित बिक्री के अध्याय में भ्रष्टाचार के प्रसार को केवल उस 'मजबूत भ्रष्टाचार' तक सीमित किया है जिस पर आम सहमति है। फिर वह पूरे अनुबंध में फैल जाता है, जैसे कि एक स्वतंत्र व्यक्ति और एक दास को एक साथ मिलाना। यह उस 'कमजोर भ्रष्टाचार' के विपरीत है जिसमें मतभेद है; वह अपने स्थान तक ही सीमित रहता है और उससे आगे नहीं बढ़ता, जैसे कि एक दास और एक मुदब्बर[2] (वह दास जिसे स्वामी की मृत्यु के बाद मुक्त करने का वादा किया गया हो) को मिलाना... आदि। और 'अल-शामी' में...

उर्दू

'दुर्र-ए-मुख्तार' में है कि फकीहों ने दूषित बिक्री के अध्याय में भ्रष्टाचार के प्रसार को केवल उस 'मजबूत भ्रष्टाचार' तक सीमित किया है जिस पर आम सहमति है। फिर वह पूरे अनुबंध में फैल जाता है, जैसे कि एक स्वतंत्र व्यक्ति और एक दास को एक साथ मिलाना। यह उस 'कमजोर भ्रष्टाचार' के विपरीत है जिसमें मतभेद है; वह अपने स्थान तक ही सीमित रहता है और उससे आगे नहीं बढ़ता, जैसे कि...

[1] रद-अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू, पदों से हटने का विषय, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 2/15 [2] अल-दुर्र अल-मुख्तार, किताब अल-इजा़रा, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 2/167

بخلاف اخیر ہ کہ وہاں ثبوتِ حق صرف بر بنائے ضرر ہے جب صاحبِ حق اعتیاض پر راضی ہو ا معلوم ہو ا مستقر نہ تھا راساً حق باطل ہوا یہ عوض کیسا فرق بیان کر کے فرماتے ہیں:

عربی متن	اردو ترجمہ
ولا یخفی ان صاحب الوظیفة ثبت له الحق فیه بتقریر القاضي علی وجه الاصالة لاعلی رفع الضرر (ینقل الی ماقال) وان کان الاظهر فیها ماقلنا۔[1]	اور مخفی نہ رہے کہ بیشک صاحبِ وظیفہ کے لئے حق قاضی کی تقریر سے بطور اصل ثابت ہوا نہ کہ رفعِ ضرر کے طور پر (نقل کرتے ہوئے یہاں تک کہا) اگرچہ اس میں زیادہ ظاہر وہی ہے جو ہم نے کہا۔(ت)

اس تقدیر پر یہ تو وہ شبہ کو صفقة واحدة میں صالح و غیر صالح کو جمع کیا راساً مقطوع اور اگر مذہبِ آخر اختیار کیجئے تاہم فقیہہ پر روشن کہ کم من شیئ یصح ضمناً ولا یصح قصداً (بہت سی اشیاء ضمناً صحیح ہوتی ہے اور قصداً صحیح نہیں ہوتیں۔ت) آخر مرور و شرب و تعلی بھی تو حقوقِ مجردہ ہیں اگر یہ تبعیاتِ رقبات طریق و نہر و علو ان کی بیع بالاتفاق جائز، یہاں بھی اسامی بیچنا صرف اس حقِ مجرد کے بیع نہیں بلکہ اس کے ساتھ اسپ و لباس بھی ہے کمالایخفی (جیسا کہ پوشیدہ نہیں۔ت) پھر استقلال و تمحض کہا جو بطلان مقطوع ہو محضاً اگر ایک مذہب پر بیع اسامی مطلقاً باطل ہی مانی جائے، تاہم اس قدر تو یقینی کہ یہ بطلان مختلف فیہ ہے، پس صرف اتنا ثابت ہوگا کہ زید نے صفقة واحدة میں ایک شے صالحِ البیع بالاتفاق اور شے دوسری مختلف الصلاحیۃ کو ضم کیا اور ایسی صورت میں قائلین بالبطلان کے نزدیک اگرچہ اس مضمون کی بیع باطل، مگر اس کا فساد مضمون الیہ تک ساری نہیں ہوتا اس کی بیع بالاتفاق صحیح رہتی ہے،

خلاصہ یہ کہ مانعین کے نزدیک بھی حلِ وظیفہ مثلِ اوقاف ہے نہ کہ مانندِ حرومیت کہ اس کے بطلان سے بیع مکان بھی فاسد ٹھہرے،

عربی متن	اردو ترجمہ
في الدرالمختار وقيد وا سراية الفساد في باب البيع الفاسد بالفاسد القوي المجمع عليه فيسرى كجمع بين حر و عبد بخلاف الضعيف المختلف فيقتصر على محله ولايتعداه كجمع بين عبد و مدبر[2] الخ وفي الشامية	درمختار میں ہے کہ فقہاء نے بیع فاسد کے باب میں سرایتِ فساد کو فسادِ قوی متفق علیہ کے ساتھ مقید کیا تو وہ فساد تمام عقد میں سرایت کرے گا جیسے آزاد اور غلام کو عقدِ واحد میں جمع کرنا بخلاف فسادِ ضعیف اختلاف کے کہ وہ اپنے محل پر بند رہتا ہے اور اس سے

[1] ردالمختار کتاب البیوع مطلب فی النزول عن الوظائف داراحیاء التراث العربی بیروت ۲/ ۱۵ [2] الدرالمختار کتاب الاجارۃ مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۱۶۷

Fatawa Razawiya, Volume 17

[Arabic Fragment]: The corruption (fasad) is not strong due to the lack of consensus on it, so it does not spread. [Urdu Commentary]: It does not exceed, like combining a slave and a 'mudabbar' (a slave promised freedom after the master's death) in a single contract, etc. And it is stated in Ash-Shami that this corruption is not strong because there is no consensus on it, therefore it will not spread. (T)

And hypothetically, even if we were to concede more ground—though this point is not subject to such concession—the ultimate result would be that corruption (fasad) becomes necessary in the sale of the house, not nullity (batlan). This is because the cause of corruption in the 'Harumiyah' issue is being conditioned upon something unacceptable, and a sale becomes corrupt due to corrupt conditions, not void (batil).

[Arabic Section]: I say: although the expressions of the scholars in this regard have not followed a single pattern—some of them used the term 'corruption' (fasad) and some expressed it as 'nullity' (batlan)—corruption is what is meant, because they are two interchangeable terms. Each of them is used in place of the other, as is not hidden from one who examines the words of the group. Al-Quhistani said in the explanation of 'nullity' (batil): "Often, 'corrupt' (fasid) is applied to it, and vice versa." End quote. Among the strongest evidence for this is the statement of the noble Imam, the expert jurist Fakhr al-Din Khan al-Qadi, when he said in al-Khaniyah: "Sale is of types: null (batil), corrupt (fasid), suspended (mawquf), binding (lazim), and disliked (makruh)." Then he established a chapter on the 'Null Sale'.

[Urdu Translation/Explanation]: I say that although the expressions of the scholars in this matter have not occurred in one style, some of them declared it as corruption (fasad) and some expressed it with nullity (batlan), by which corruption itself is intended because between these two words, i.e., corruption and nullity, each is used in place of the other, as is not hidden from those who keep in view the words of the group. And Al-Quhistani said in the description of 'void' (batil) that sometimes the term 'corrupt' (fasid) is applied to it, and similarly its opposite, meaning 'null' (batil) is applied to 'corrupt' (fasid). End quote. The strongest proof for this is the speech of Imam Hammam, the expert in jurisprudence, Fakhr-ud-Din Khan Qazi, because he said in Fatawa Khaniya: "There are several types of sale: null, corrupt, suspended,

binding, and disliked." Then he established a chapter regarding the null sale and in it...

1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Ijarah, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 5/5.
2. Jami' al-Rumuz, Kitab al-Buyu', Chapter on Corrupt Sale, Maktaba Islamia Gumbad Qamus Iran, 3/32.
3. Fatawa Qazi Khan, Kitab al-Buyu', Naval Kishore, Lucknow, 2/335.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 17

[अरबी अंश]: भ्रष्टाचार (फ़साद) प्रबल नहीं है क्योंकि इस पर आम सहमति की कमी है, इसलिए यह फैलता नहीं है। [उर्दू भाष्य]: यह सीमा से बाहर नहीं जाता, जैसे एक ही अनुबंध में एक दास और एक 'मुदब्बर' (वह दास जिसे मालिक की मृत्यु के बाद मुक्ति का वादा किया गया हो) को जोड़ना आदि। और शामी में है कि यह भ्रष्टाचार प्रबल नहीं है क्योंकि इस पर कोई सहमति नहीं है, इसलिए यह प्रसारित नहीं होगा। (त)

और मान लीजिए कि अगर हम इससे भी नीचे उतरें—हालाँकि यह बिंदु झुकने के योग्य नहीं है—तो फिर भी इसका अंतिम परिणाम यह होगा कि घर की बिक्री में भ्रष्टाचार (फ़साद) आवश्यक हो जाएगा, न कि शून्यता (बतलान)। ऐसा इसलिए है क्योंकि 'हरूमिया' मुद्दे में भ्रष्टाचार का कारण अयोग्य वस्तु को स्वीकार करने की शर्त है, और बिक्री भ्रष्ट शर्तों के कारण भ्रष्ट हो जाती है, शून्य नहीं।

[अरबी अनुभाग]: मैं कहता हूँ: हालाँकि इस संबंध में विद्वानों की अभिव्यक्तियाँ एक ही पद्धति पर नहीं रही हैं—उनमें से कुछ ने 'भ्रष्टाचार' (फ़साद) शब्द का उपयोग किया और उनमें से कुछ ने इसे 'शून्यता' (बतलान) के रूप में व्यक्त किया—भ्रष्टाचार ही अभिप्रेत है क्योंकि ये दो विनिमेय शब्द हैं। उनमें से प्रत्येक का उपयोग दूसरे के स्थान पर किया जाता है, जैसा कि समूह के शब्दों की जाँच करने वाले पर छिपा नहीं है। अल-कुहिस्तानी ने 'शून्यता' (बातिल) की व्याख्या में कहा: "अक्सर, 'भ्रष्ट' (फ़ासिद) इस पर लागू होता है, और इसके विपरीत भी।" अंत। इसके लिए सबसे मजबूत सबूतों में से एक महान इमाम, न्यायशास्त्र विशेषज्ञ फख्र अल-दीन खान अल-काजी का कथन है, जब उन्होंने 'अल-खानिया' में कहा: "बिक्री के प्रकार हैं: शून्य (बातिल), भ्रष्ट (फ़ासिद), निलंबित (मौक़ूफ़), बाध्यकारी (लाज़िम) और नापसंद (मक़रूह)।" फिर उन्होंने 'शून्य बिक्री' पर एक अध्याय स्थापित किया।

[उर्दू अनुवाद/व्याख्या]: मैं कहता हूँ कि हालाँकि इस मामले में विद्वानों की अभिव्यक्तियाँ एक शैली में नहीं हुई हैं, उनमें से कुछ ने इसे भ्रष्टाचार (फ़साद) घोषित किया और कुछ ने शून्यता (बतलान) के साथ व्यक्त किया, जिससे भ्रष्टाचार ही अभिप्रेत है क्योंकि इन दो शब्दों यानी भ्रष्टाचार और शून्यता में से प्रत्येक एक दूसरे की जगह इस्तेमाल होता रहता है जैसा कि कौम के शब्दों को ध्यान में रखने वाले पर छिपा नहीं है और कुहिस्तानी ने बातिल के वर्णन में कहा कि कई बार इस पर फ़ासिद का

अनुप्रयोग होता है और इसी तरह इसके विपरीत भी यानी फ़ासिद पर बातिल का अनुप्रयोग होता है। अंत। इस पर सबसे मजबूत दलील इमाम हम्माम फखरुद्दीन खान काजी का कलाम है क्योंकि उन्होंने फतावा खानिया में फरमाया: "बिक्री की कई किस्में हैं: बातिल, फ़ासिद, मौक़ूफ़, लाज़िम और मक़रूह।" फिर बिक्री बातिल के बारे में एक अध्याय स्थापित किया और उसमें...

1. रद अल-मुह्तार, किताब अल-इजारा, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 5/5।
2. जामी अल-रुमुज़, किताब अल-बुयू, भ्रष्ट बिक्री पर अध्याय, मकतबा इस्लामिया गुम्बद कामूस ईरान, 3/32।
3. फ़तावा क़ाज़ी ख़ान, किताब अल-बय, नवल किशोर, लखनऊ, 2/335।

पृष्ठ 113/715

الفساد غیر قوی لعدم الاتفاق علیہ فلا یسری۱۔ تجاوز نہیں کرتا جیسے غلام اور مدبر کو عقد واحد میں جمع کرنا الخ اور شامی میں ہے کہ یہ فساد غیر قوی ہے کیونکہ اس پر اتفاق نہیں لہذا یہ سرایت نہیں کریگا (ت)

اور بالفرض اگر اس سے بھی تنزل کیجئے اگرچہ یہ تنزل کے قابل نہیں لیکن تاہم غایت یہ ہے کہ اس سے بیع مکان میں فساد لازم آئے گا، نہ بطلان کہ وجہ فساد مسئلہ حرومیہ میں قبول غیر صالح سے مشروط ہوتا ہے اور بیع شروط فاسدہ سے سے فاسد ہو جاتی ہے نہ کہ باطل،

اقول: وان کانت تعبیرات العلماء فی ذلك لم ترد علی نسق واحد فمنهم وهم بالفساد ومنهم من عبر بالبطلان والفساد هو المراد لانهما لفظان متعاوران یرد کل واحد منهما مشرب صاحبه کما لا یخفی علی الناظر فی کلمات القوم وقال القهستاني في بیان الباطل کثیرا ما یطلق الفاسد علیه وبالعکس۲ اھ، ومن اقوی الدلیل علی ذلك کلام الامام الهمام فقیه النفس فخر الدین خان القاضی اذا قال في الخانیة البیع انواع باطل وفاسد و موقوف ولازم و مکروہ۳ ثم عقد فصلا في البیع الباطل۔ میں کہتا ہوں کہ اگرچہ اس میں علماء کی تعبیریں ایک طرز پر واقع نہیں ہوئیں، ان میں سے بعض نے اس کو فساد قرار دیا اور بعض نے بطلان سے تعبیر کیا جس سے مراد فساد ہی ہے کیونکہ ان دونوں لفظوں یعنی فساد و بطلان میں سے ہر ایک دوسرے کی جگہ استعمال ہوتا رہتا ہے جیسا کہ کلمات قوم کو مد نظر رکھنے والے پر مخفی نہیں اور قہستانی نے باطل کے بیان میں کہا کہ بسا اوقات اس پر فاسد کا اطلاق ہوتا ہے اور اسی طرح اس کے برعکس بھی یعنی فاسد پر باطل کا اطلاق ہوتا ہے اھ اس پر قوی ترین دلیل امام ہمام فقہ النفس فخر الدین خان قاضی کا کلام ہے کیونکہ انھوں نے فتاوی

خانیہ میں فرمایا بیع کی کئی قسمیں ہیں باطل، فاسد، موقوف، لازم اور مکروہ پر بیع باطل کے بارے میں فصل قائم کی اور اس میں بیع باطل کے

۱ ردالمحتار کتاب الاجارۃ دار احیاء التراث العربی بیروت ۵/۵ ۲ جامع الرموز کتاب البیوع فصل البیع الفاسد مکتبہ اسلامیہ گنبد قاموس ایران ۳/ ۳۲ ۳ فتاوی قاضی خاں کتاب البیع نولکشور لکھنو ۲/ ۳۳۵

Fatawa Razawiya Volume 17

[Arabic Text Transcription & Translation]: He mentioned a matter, then said: Chapter on the invalid sale. The invalidators of a sale are of various types, and this chapter consists of several sections. The first section is regarding the invalidity of a sale due to the ignorance (uncertainty) of one of the two exchanges. It includes combining the existing and the non-existent, and combining wealth with non-wealth. [1] End. So this, as you see, is a clear text that does not accept deviation or interpretation. I say: Our Imam Al-Mujtahid, the pillar of the school of thought, our master Muhammad, made this clear in 'Al-Muheet' and 'Al-Mabsut' and others in other works, as it is in 'Jami al-Rumuz' and 'Al-Kifayah'. The discourse of Imam Burhan al-Din al-Marghinani in 'Al-Hidayah' revolves around this, as does the discourse of the Absolute Investigator (Al-Muhaqqiq 'ala al-Itlaq) in 'Al-Fath', the virtuous Zayn al-Din al-Misri in 'Al-Ashbah', Sayyid Ahmad al-Hamawi in 'Ghamz al-Uyun', and Allamah Nuh Afandi, and the virtuous Sayyid Ahmad al-Tahtawi, and others - may Allah Almighty have mercy on them all. So this is the point of reliance and dependence, as I have verified in the Fatawa titled 'Al-Ataya al-Nabawiyyah fi al-Fatawa al-Radawiyyah', contrary to what was understood by Allamah Abu Abdullah Muhammad bin Abdullah al-Ghazzi from the occurrence of the word 'nullity' (butlan) in...

[Urdu Text Transcription & Translation]: Mentioned the issues, thereafter established the chapter on invalid sales and stated that the invalidators of a sale are of various kinds, and this chapter consists of several sections. The first kind is about the invalidity of a sale due to ignorance regarding one of the two considerations, and it includes combining the non-existent and the existent, and wealth and non-wealth in a single contract, etc. So this, as you are seeing, is a clear text which does not accept metaphor or interpretation. I say, and the same was clarified by the Pillar of the Madhhab, Imam Mujtahid, our master Imam Muhammad in Al-Muheet and Al-Mabsut, and other Imams in other books such as in Jami al-Rumuz and Kifayah, and on this is centered the discourse of Imam Burhan-ud-Din Marghinani in Hidayah, the discourse of Imam Allamah Al-Muhaqqiq ala al-Itlaq in Fath, the discourse of the virtuous Zain-ud-Din Misri in Al-Ashbah, the discourse of Syed Ahmad Hamawi in Ghamz-ul-Uyun, and on this is centered the discourse of Allamah Nuh Afandi and the virtuous Syed Ahmad Tahtawi etc. Imams, may Allah Almighty shower His mercy on all of them. Therefore, this is the reliable and trusted stance, as I have researched it in the Fatawa titled "Al-Ataya-un-Nabawiyyah fil-Fatawa-ur-Radawiyyah". Contrary to

this, what Allamah Abu Abdullah Muhammad bin Abdullah Ghazi understood from the occurrence of the word 'nullity' in some words of the people...

[Footnote]: 1. Fatawa Qadi Khan, Book of Sale, Nawal Kishore Lucknow 2/335 Page 114 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

[अरबी पाठ का अनुवाद]: उन्होंने एक मसअले का ज़िक्र किया, फिर कहा: अमान्य बिक्री का अध्याय। बिक्री को अमान्य करने वाले कारक विभिन्न प्रकार के हैं, और यह अध्याय कई खंडों पर आधारित है। पहला खंड दो विनिमयों में से किसी एक की अज्ञानता (अनिश्चितता) के कारण बिक्री की अमान्यता के बारे में है। इसमें मौजूद और गैर-मौजूद को मिलाना, और धन को गैर-धन के साथ मिलाना शामिल है। [1] समाप्त। तो यह, जैसा कि आप देखते हैं, एक स्पष्ट प्रमाण (नस्) है जो किसी व्याख्या या तावील को स्वीकार नहीं करता है। मैं कहता हूँ: हमारे इमाम अल-मुज्तहिद, मज़हब के आधार, हमारे स्वामी मुहम्मद ने 'अल-मुहीत' और 'अल-मब्सूत' तथा अन्य ग्रंथों में इसे स्पष्ट किया है, जैसा कि 'जामे-उर-रुमूज़' और 'अल-किफ़ाया' में है। इमाम बुरहान अल-दीन अल-मरग़िनानी का 'अल-हिदाया' में कथन इसी पर आधारित है, जैसा कि 'अल-फ़तह' में अल्लामा मुहक़्क़िक़ अलल इतलाक़ का कथन, 'अल-अशबाह' में फ़ाज़िल ज़ैन अल-दीन अल-मिस्री, 'ग़म्ज़ अल-उयून' में सैय्यद अहमद अल-हमवी, और अल्लामा नूह अफ़ंदी, और फ़ाज़िल सैय्यद अहमद अल-तहतावी तथा अन्य - अल्लाह तआला उन सभी पर अपनी दया करे। अतः यही भरोसे और निर्भरता का बिंदु है, जैसा कि मैंने 'अल-अताया अल-नबविय्या फ़ी अल-फ़तावा अल-रज़विय्या' शीर्षक वाले फ़तावा में सत्यापित किया है, जो अल्लामा अबू अब्दुल्ला मुहम्मद बिन अब्दुल्ला अल-ग़ज़ी द्वारा कुछ कथनों में 'शून्यता' (बुतलान) शब्द के प्रयोग से समझे गए अर्थ के विपरीत है...

[उर्दू पाठ का लिप्यंतरण]: मसअलों को ज़िक्र किया, बाद अज़ाँ बैअ फ़ासिद का बाब क़ायम करके फ़रमाया कि मुफ़्सिदाते बैअ मुतअद्दिद क़िस्मों के हैं और ये बाब कई फ़सलों पर मुश्तमिल है, पहली क़िस्म बदलैन में से किसी एक की जहालत की वजह से फ़सादे बैअ के बारे में है और इसमें मादूम व मौजूद को और माल व ग़ैर माल को अक़्दे वाहिद में जमा करना दाख़िल है इलख़। तो ये जैसा कि तू देख रहा है सरीह नस है जो मजाज़ व तावील को क़बूल नहीं करती। मैं कहता हूँ और इसी को वाज़ेह फ़रमाया है उम्दतुल मज़हब इमाम मुज्तहिद हमारे सरदार इमाम मुहम्मद ने मुहीत और मब्सूत में और दीगर अइम्मा ने दूसरी किताबों में जैसा कि जामे-उर-रुमूज़ और किफ़ाया में है, और इसी पर दाइर है इमाम बुरहानुद्दीन मरग़िनानी का कलाम हिदाया में, इमाम अल्लामा मुहक़्क़िक़ अलल इतलाक़ का कलाम फ़तह में, फ़ाज़िल ज़ैनुद्दीन मिस्री का कलाम अल-अशबाह में, सैय्यद अहमद हमवी का कलाम ग़म्ज़ुल उयून में, और इसी पर दाइर है अल्लामा नूह अफ़ंदी और फ़ाज़िल सैय्यद अहमद तहतावी वग़ैरह अइम्मा का कलाम, अल्लाह तआला इन तमाम पर रहमत नाज़िल फ़रमाए,

पस इसी पर भरोसा और एतमाद है जैसा कि इसकी तहक़ीक़ मैंने "अल-अताया अल-नबविय्या फ़िल फ़तावा अर-रज़विय्या" के लक़ब से मुल्क़ब फ़तावा में कर दी है, बरख़िलाफ़ इसके जो बाज़ कलमाते क़ौम में लफ़्ज़े बुतलान के वाक़े होने से अल्लामा अबू अब्दुल्ला मुहम्मद बिन अब्दुल्ला ग़ज़ी...

[पाद टिप्पणी]: 1. फ़तावा क़ाज़ी ख़ान, किताब अल-बैअ, नवल किशोर लखनऊ 2/335 पृष्ठ 114 / 715

[عربی متن]: وذکر مسئلة ثم قال باب البیع الفاسد المفسد للبیع انواع وھذا الباب یشتمل علی فصول، الفصل الاول فی فساد البیع لجھالة احد البدلین وفیه الجمع بین الموجود والمعدوم والجمع بین المال وغیر المال۱ اھـ فھذا کما تری نص صریح لا یقبل صرفا ولا تأویلا قلت و به اوضح عمدة المذھب امامنا المجتھد سیدنا محمد فی المحیط والمبسوط وغیرہ فی غیرھما کما فی جامع الرموز والکفایة وعلیه یدور کلام الامام البرھان الدین المرغینانی فی الھدایة والعلامة المحقق علی الاطلاق فی الفتح والفاضل زین الدین المصری فی الاشباہ والسید احمد الحموی فی غمز العیون والعلامة نوح آفندی والفاضل سید احمد الطحطاوی وغیرھم رحمة الله تعالی علیھم اجمعین فعلیه المعول وبه الاعتماد کما حققته فی فتاوی الملقبة بالعطایا النبویة فی الفتاوی الرضویة خلافاً لما فھم العلامة ابو عبدالله محمد بن عبدالله الغزی من وقوع لفظ البطلان في

[اردو متن]: مسائل کو ذکر کیا، بعد ازاں بیع فاسد کا باب قائم کر کے فرمایا کہ مفسداتِ بیع متعدد قسموں کے ہیں اور یہ باب کئی فصلوں پر مشتمل ہے، پہلی قسم بدلین میں سے کسی ایک کی جہالت کی وجہ سے فسادِ بیع کے بارے میں ہے اور اس میں معدوم و موجود کو اور مال و غیر مال کو عقد واحد میں جمع کرنا داخل ہے الخ تو یہ جیسا کہ تو دیکھ رہا ہے صریح نص ہے جو مجاز و تاویل کو قبول نہیں کرتی میں کہتا ہوں اور اسی کو واضح فرمایا ہے عمدة المذہب امام مجتہد ہمارے سردار امام محمد نے محیط اور مبسوط میں اور دیگر ائمہ نے دوسری کتابوں میں جیسا کہ جامع الرموز اور کفایہ میں ہے، اور اسی پر دائر ہے امام برہان الدین مرغینانی کا کلام ہدایہ میں، امام علامہ محقق علی الاطلاق کا کلام فتح میں، فاضل زین الدین مصری کا کلام الاشباہ میں، سید احمد حموی کا کلام غمز العیون میں، اور اسی پر دائر ہے علامہ نوح آفندی اور فاضل

سید احمد طحطاوی وغیرہ ائمہ کا کلام، اللہ تعالیٰ ان تمام پر رحمت نازل فرمائے، پس اسی پر بھروسہ اور اعتماد ہے جیسا کہ اس کی تحقیق میں نے "العطایا النبویہ فی الفتاوی الرضویہ" کے لقب سے ملقب فتاویٰ میں کر دی ہے، برخلاف اس کے جو بعض کلماتِ قوم میں لفظِ بطلان کے واقع ہونے سے علامہ ابو عبداللہ محمد بن عبداللہ غزی

[حاشیہ]: ۱ فتاویٰ قاضی خاں کتاب البیع نولکشور لکھنؤ ۲ / ۳۳۵ Page 114 of 715

[Arabic Box:] Some words of the community or what Sayyidi Muhammad Amin al-Din Effendi clarified, commanded deliberation. Thus, there is no escape to the place of research after it has become clear and verified. And whoever intends to go against it, then upon him is to provide proof. (T) [Urdu Explanation Box:] It was explained with a command to deliberate that Sayyidi Muhammad Amin al-Din Effendi exercised caution. Therefore, after clarification and proof, there is no choice but to refer to the point of research. And anyone who intends to act contrary to it is responsible for providing evidence. (T)

And the item sold through an invalid sale (Bay' al-Fasid) becomes the property (of the buyer) after possession, as stated in general books. (T) Yes, it remains 'khabith' (impure/unlawful) for the buyer, hence rescission of the contract (Iqala) is obligatory. However, after its subsequent sale by him, it does not remain so for the second buyer.

[Arabic Box:] In 'al-Durr al-Mukhtar': Contrary to an invalid sale, it is not permissible for him (the first buyer) due to the corruption of his contract, but it is permissible for the one who buys it from him due to the validity of their contract. 1 [Urdu Explanation Box:] In 'al-Durr al-Mukhtar', it is stated: Unlike an invalid sale where it is not lawful for the buyer due to the corruption of the contract; however, for the person who buys from him, it is lawful because of the validity of that (second) contract. (T)

Therefore, in any case, this house is now certainly the property of Amr. Neither Zaid, nor Zaid's wife, nor Zaid's creditors have any right to it, nor can any debt of Zaid be recovered from it. This is what research suggests. And Allah is the Guardian of success. Allah, the Exalted and Most High, knows best, and His knowledge, glorified be His majesty, is most complete and most wise. (Likewise research is required, and Allah alone is the Master of success. And Allah, Glory be to Him and the Exalted, knows best, and His knowledge is most complete and most wise. T)

(T) Problem 30: From Camp Lal Kurti, sent by Sheikh Karim Bakhsh Sahib. 8 Ramadan 1313 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: There was a Grewia (Phalsa) tree in Zaid's house which had been sold to Bakr a month ago. Afterwards, a fire broke out in Zaid's house and the aforementioned tree was burnt. Should its price be returned to Bakr or not? Only.

The Answer: Upon inquiry, it became clear that branches of Phalsa are sold to sugar-mill owners (Khand-saris), and they cut...

1 al-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', al-Bay' al-Fasid, Mujtabai Delhi, 2/29. Page 115 of 715

[अरबी बॉक्स:] कौम के कुछ शब्द या जो सय्यदी मुहम्मद अमीन अल-दीन अफ़ंदी ने स्पष्ट किया, उस पर विचार करने का आदेश दिया। अत; स्पष्ट और प्रमाणित होने के बाद शोध के स्थान तक पहुँचने के अलावा कोई चारा नहीं है। और जो कोई इसके विरुद्ध जाने का इरादा रखता है, तो प्रमाण प्रस्तुत करना उसी की जिम्मेदारी है। (त) [उर्दू स्पष्टीकरण बॉक्स:] विचार करने के आदेश के साथ समझाया गया कि सय्यदी मुहम्मद अमीन अल-दीन अफ़ंदी ने सावधानी बरती। इसलिए, स्पष्टीकरण और प्रमाण के बाद शोध के बिंदु को संदर्भित करने के अलावा कोई विकल्प नहीं है। और जो कोई भी इसके विपरीत कार्य करने का इरादा रखता है, वह सबूत पेश करने के लिए जिम्मेदार है। (त)

और अमान्य विक्रय (बय अल-फ़ासिद) के माध्यम से बेची गई वस्तु कब्ज़ा करने के बाद (खरीदार की) संपत्ति बन जाती है, जैसा कि सामान्य पुस्तकों में है। (त) हाँ, खरीदार के लिए इसमें अशुद्धता (ख़बासत) बनी रहती है, इसलिए अनुबंध रद्द करना (इकाला) अनिवार्य है। हालाँकि, उसके द्वारा आगे बेच दिए जाने के बाद, यह दूसरे खरीदार के लिए वैसी नहीं रहती।

[अरबी बॉक्स:] 'दुर्रे मुख़्तार' में: अमान्य विक्रय के विपरीत, यह उसके(पहले खरीदार) के लिए उसके अनुबंध के भ्रष्टाचार के कारण जायज़ नहीं है, लेकिन उससे खरीदने वाले के लिए उनके अनुबंध की वैधता के कारण जायज़ है। 1 [उर्दू स्पष्टीकरण बॉक्स:] 'दुर्रे मुख़्तार' में है: अमान्य विक्रय के विपरीत जिसमें अनुबंध के भ्रष्टाचार के कारण खरीदार के लिए यह हलाल नहीं है; हालाँकि, जो व्यक्ति उससे खरीदता है उसके लिए उस (दूसरे) अनुबंध की शुद्धता के कारण यह हलाल है। (त)

अतः, हर हाल में अब यह मकान निश्चित रूप से अम्र की संपत्ति है। ज़ैद, या ज़ैद की पत्नी, या ज़ैद के लेनदारों का इसमें कोई अधिकार नहीं है, और न ही ज़ैद का कोई ऋण इससे वसूला जा सकता है। शोध यही कहता है। और अल्लाह ही सफलता देने वाला है। अल्लाह, सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है और उसका ज्ञान, जिसकी महिमा महान है, सबसे पूर्ण और सबसे अधिक हिकमत वाला है। (वैसा ही शोध चाहिए और अल्लाह ही सफलता का स्वामी है, और अल्लाह सुब्हानहु व तआला खूब जानने वाला है और उसका ज्ञान पूर्ण और हिकमत वाला है। त)

(त) मसला 30: कैंप लाल कुर्ती से, प्रेषक शेख करीम बख्श साहिब। 8 रमज़ान 1313 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं: ज़ैद के घर में एक फालसा का पेड़ था जिसे बक्र को बेचे हुए एक

महीना बीत चुका था। इसके बाद, ज़ैद के घर में आग लग गई और उक्त पेड़ जल गया। क्या उसकी कीमत बक्र को वापस दी जानी चाहिए या नहीं? फ़क़त।

उत्तर: पूछताछ के बाद स्पष्ट हुआ कि खांडसारी (चीनी मिल मालिकों) को फालसा की टहनियाँ बेची जाती हैं और वे उन्हें काट...

1 दुर्रे मुख़्तार, किताबुल बुयू, अल-बय अल-फ़ासिद, मुजतबाई दिल्ली, 2/29. पृष्ठ 715 में से 115

[عربی باکس:] بعض کلمات القوم او استظھرہ سیدی محمد امین الدین افندی امرا بالتامل فلا محیط الالی المقام بعد ما تضح وتحقق ومن اراد فعلی ایراد الدلیل۔ [اردو وضاحت باکس:] نے سمجھایا تامل کا حکم دے کہ سیدی محمد امین الدین آفندی نے احتیاط برتی، چنانچہ وضاحت و ثبوت کے بعد مقام تحقیق کی طرف رجوع کئے بغیر چارہ نہیں اور جو اس کے خلاف کا ارادہ کرے اس کے ذمے پر دلیل پیش کرنا ہے۔(ت)

اور مبیع بالبیع الفاسد بعد القبض مملوک ہو جاتی ہے کما فی عامۃ الکتب (جیسا کہ عام کتابوں میں ہے۔ت) ہاں حق مشتری میں اس کی خباثت رہتی ہے لہٰذا اقالہ واجب ہے، مگر اس کی بیع کے بعد مشتری ثانی کے لئے وہ بھی نہیں رہتی،

[عربی باکس:] فی الدر المختار بخلاف بیع الفاسد فانہ لایطیب لہ لفساد عقدہ ویطیب للمشتری منہ لصحت عقدہ 1۔ [اردو وضاحت باکس:] در مختار میں ہے بخلاف بیع فاسد کے کہ اس میں مشتری کو حلال نہیں اس عقد کے فساد کے سبب سے اور جس نے اس سے خرید اسے حلال ہے بسبب اس کی صحت عقد کے، (ت)

پس بہرحال اب یہ مکان بالیقین مملوک عمرو ہے زید یا زوجہ زید یا قرض خواہان زید کا اس میں کچھ حق نہیں، نہ قرضہ زید اس سے کوئی وصول کرسکتا ہے ھذا ینبغی التحیق واللہ ولی التوفیق، واللہ سبحنہ وتعالی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم (یونہی تحقیق چاہئے اور اللہ ہی توفیق کا مالک ہے، اور اللہ سبحانہ و تعالی خوب جاننے والا ہے اور اس کا علم اتم و احکم ہے۔ت)

ت) مسئلہ ۳۰: از کمپ لال کرتی مرسلہ شیخ کریم بخش صاحب۔ ۸ رمضان ۱۳۱۳ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید کے مکان میں ایک درخت فالسہ کا تھا اور بکر کے ہاتھ فروخت کئے ہوئے ایک مہینہ گزر گیا، بعدہ، زید کے مکان میں آگ لگ گئی، درخت مذکور جل گیا، قیمت اس کی بکر کو واپس دینا چاہئے یا نہیں؟ فقط

الجواب: بعد استفسار واضح ہوا کہ گھنڈساریوں کے ہاتھ فالسہ کی ٹہنیاں بیچی جاتی ہے وہ انہیں کاٹ

1 در مختار کتاب البیوع البیع الفاسد مجتبائی دہلی ۲۹/۲ صفحہ 115 از 715

Fatawa Razawiyya Volume 17 (17)

...take them, and the tree remains standing. This sale was also for those branches, and the buyer had not yet cut them when a fire broke out in the house and the tree burnt down. In this situation, apart from the fact that there is a long-standing dispute regarding the validity and correctness of selling only branches...

And indeed, whoever ruled for permissibility did so based on prevailing custom (ta'amul), or on the basis that the place of cutting is known by custom, as detailed in Al-Durr and its marginalia.

And whoever ruled for permissibility did so based on custom, or based on the fact that the place of cutting is known through custom, as detailed in Al-Durr and its marginalia. (T)

When the item sold is destroyed in the hands of the seller before the buyer takes possession, the sale is void, and it is obligatory to return whatever price was taken.

In Durr al-Mukhtar, from al-Fath and al-Durr al-Muntaqa: If the sold item is destroyed by the action of the seller, or by the action of the sold item itself, or by a celestial (natural) cause, the sale is nullified, and the price is returned if it has been received. And Allah knows best.

In Radd al-Muhtar, citing Fath and Durr Muntaqa, it is stated that if the sold item (while in the hands of the seller) is destroyed due to the action of the sold item, the action of the seller, or any natural calamity, then the sale will become void, and if the seller has taken possession of the price, it must be returned. And Allah knows best. (T)

Issue 31: From Old City 2 Muharram al-Haram 1316 AH What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid sold his residential house in lieu of his wife's dower (mahr) and completed the registration etc. After that, with the woman's permission, he continued to live in that house for his lifetime, i.e., for a year and a quarter. Does Zaid's staying in this house affect the validity of the sale deed or not? Explain and you shall be rewarded.

The Answer: The mentioned sale is complete and perfect. Even if Zaid's staying had been without the woman's permission, it would not have caused any flaw in the completion of the sale at all.

---

1 Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Bay' al-Fasid, Mujtabai Delhi, 2/24 2 Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/42

फ़तावा रज़विया जिल्द सत्रह (17)

...लेते हैं और पेड़ यथावत खड़ा रहता है, यह बिक्री भी उन शाखाओं की ही थी और खरीदार ने अभी उन्हें काटा नहीं था कि घर में आग लग गई और पेड़ जल गया। इस स्थिति में, इस बात को छोड़कर कि केवल शाखाओं की बिक्री के वैध और सही होने में एक लंबा विवाद है...

और वास्तव में, जिसने भी अनुमति का आदेश दिया, उसने प्रचलित प्रथा (ता'अमुल) के आधार पर या इस आधार पर आदेश दिया कि कटाई का स्थान प्रथा से ज्ञात है, जैसा कि अल-दुर और उसके हाशिये में विस्तार से बताया गया है।

और जिसने अनुमति का फैसला दिया, उसने इसे प्रथा के आधार पर दिया, या इस आधार पर कि काटने की जगह प्रथा के माध्यम से ज्ञात है, जैसा कि दुर और उसके हाशिये में विस्तार से बताया गया है। (त)

जब बेची गई वस्तु खरीदार के कब्जे में आने से पहले विक्रेता के हाथ में नष्ट हो जाए, तो बिक्री समाप्त हो जाती है और जो कीमत ली गई थी उसे वापस करना अनिवार्य है।

दुर्रे मुख्तार में अल-फ़तह और दुर्रुल मुंतक़ा से: यदि बेची गई वस्तु विक्रेता के कार्य से, या बेची गई वस्तु के अपने कार्य से, या किसी ईश्वरीय (प्राकृतिक) कारण से नष्ट हो जाती है, तो बिक्री रद्द हो जाती है और यदि कीमत प्राप्त हो गई है तो उसे वापस कर दिया जाता है। और अल्लाह बेहतर जानता है।

रद-उल-मुहतार में फ़तह और दुर्रे मुंतक़ा के हवाले से उल्लेख है कि यदि बेची गई वस्तु (विक्रेता के हाथ में रहते हुए) वस्तु के कार्य, विक्रेता के कार्य, या किसी प्राकृतिक आपदा के कारण नष्ट हो जाती है, तो बिक्री अमान्य हो जाएगी, और यदि विक्रेता ने कीमत पर कब्जा कर लिया है, तो उसे वापस किया जाना चाहिए। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है। (त)

मसाला 31: शहर-ए-कोहना से 2 मुहर्रम अल-हराम 1316 हिजरी धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं: जैद ने अपनी पत्नी के मेहर के बदले अपना आवासीय घर बेच दिया और रजिस्ट्री आदि की प्रक्रिया पूरी कर ली। उसके बाद, महिला की अनुमति से, वह उस घर में जीवन भर, यानी सवा साल तक रहता रहा। क्या जैद के उस घर में रहने से बिक्री विलेख की वैधता प्रभावित होती है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: उक्त बिक्री पूर्ण और उत्तम है। यदि जैद का रहना महिला की अनुमति के बिना भी होता, तब भी इससे पूरी बिक्री में कोई बाधा नहीं आती।

1 दुर्रे मुख्तार, किताब अल-बुयू, बाब अल-बय अल-फासिद, मुजतबाई दिल्ली, 2/24 2 रद-उल-मुहतार, किताब अल-बुयू, दार एह्या अत-तुराथ अल-अरबी बेरूत, 4/42

पृष्ठ 116/715

لیتے ہیں اور پیڑ بدستور قائم رہتا ہے، یہ بیع بھی انھیں ٹہنیوں کی تھی اور مشتری ہنوز کاٹنے نہ پایا تھا کہ مکان میں آگ لگ گئی پیڑ جل گیا، اس صورت میں قطع نظر اس سے کہ صرف ٹہنیوں کی بیع جائز و صحیح ہونے میں بہت نزاع طویل ہے۔

وانما حکم من حکم بالجواز مستندا الی التعامل اوان کان موضع القطع معلوما بالعرف کما فصلہ فی الدر وحواشیہ ۱۔

اور جس نے جواز کا حکم کیا اس نے تعامل کی بنیاد پر جواز کا حکم کیا یا اس بنیاد پر کہ از روئے عرف کاٹنے کی جگہ معلوم ہو جیسا کہ در اور اس کے حواشی میں اس کی تفصیل ہے (ت)

جب شیئ مبیع قبل قبضہ مشتری دست بائع میں ہلاک ہو گئی بیع جاتی رہی اور جو قیمت لی تھی وہ واپس دینی واجب،

فی درالمختار عن الفتح والدرالمنتقی لو ھلك المبیع بفعل البائع او بفعل المبیع او بأمر سماوی بطل البیع و یرجع بالثمن لو مقبوضا ۲ واللہ تعالٰی اعلم۔

رد المحتار میں بحوالہ فتح اور در منتقی ہے کہ اگر فعل مبیع یا فعل بائع یا کسی امر سماوی سے مبیع (بائع کے ہاتھ میں) ہلاک ہو جائے تو بیع باطل ہو جائے گی اور ثمنوں پر اگر بائع قبضہ کر چکا ہے تو لوٹائے جائیں گے ، واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۳۱: از شہر کہنہ ۲ محرم الحرام ۱۳۱۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے اپنا مکان مسکونہ بعوض دین مہر زوجہ کے ساتھ بیع کر دیا اور رجسٹری وغیرہ کی تکمیل

کرا دی، بعدہ، باجازت عورت تاحیات یعنی سوا برس اس مکان میں رہتا رہا پس بسبب رہنے زید کے اس مکان میں تکمیل بیعنامہ جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: بیع مذکور تام و کامل ہے اور زید کا رہنا بے اجازت عورت ہوتا تاہم اصلا تمامی بیع میں خلل نہ لاتا

---

۱ در مختار کتاب البیوع باب البیع الفاسد مجتبائی دہلی ۲/۲۴ ۲ ردالمحتار کتاب البیوع دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۴۲

[Arabic Box Text]: Because its ultimate outcome is usurpation (ghasb), and sale (bay'), when completed, grants ownership. Ownership is not nullified by usurpation. Furthermore, usurpation is not realized in immovable property (uqar), and a sale is not like a gift (hibah) such that possession (qabz) and evacuation (takhliya) would be a condition. This is very clear. And Allah Almighty knows best.

[Urdu Translation]: Because its ultimate purpose is that when usurpation and sale are completed, it results in ownership, and ownership is not lost due to usurpation. Furthermore, usurpation does not occur in immovable properties, and sale is not like a gift such that possession and clearance are made conditions in it. This is very obvious. And Allah knows best. (T)

Problem 32: Sent by Abul Athim Muhammad Ibrahim, Bareilly, Khwaja Qutub, 11 Muharram 1334 AH, Monday.

What do the scholars of religion and jurists of the firm Sharia say on this matter: Zaid passed away, leaving behind two real nephews and one daughter. The elder nephew is the husband of this girl, but there has been discord between the spouses for a long time, to the extent that maintenance is not provided. Zaid, during his lifetime, sold his entire property to his daughter for two thousand rupees, while the estimated value of the property is six thousand rupees. The sale deed was also legally executed. However, it appears that the buyer (daughter) did not give any money to the seller (father). Where would she get it from? Even her maintenance was the responsibility of her father. Once, on an occasion, Zaid told his younger nephew, "I have wronged you because of your elder brother; he does not give anything to his wife (my daughter) during my life, what will he give after my death?" In response, the nephew asked, "Why are you depriving me of my right?" Zaid replied, "Whatever was meant to happen has happened." In the mentioned situation, what is the ruling on this property and sale? Do both nephews receive a Shariah share or not? Explain with evidence and proof, and you shall be rewarded by the Most Gracious, the Most Compassionate.

Answer: This sale became valid, complete, and effective since it took place while Zaid was in good health,

[Arabic Box Text]: as the questioner told me verbally. This ruling is because it is a contract issued by a competent person in its proper place, so there is no rejection of it.

[Urdu Translation]: as the questioner told me verbally, and this ruling is because this is such a contract which was issued from a competent person and occurred in its proper place, so there is no obstacle in it. (T)

Page 117 of 715

[अरबी बॉक्स पाठ]: क्योंकि इसका अंतिम परिणाम हड़पना (ग़स्ब) और बिक्री (बय') है। जब बिक्री पूरी हो जाती है, तो वह स्वामित्व प्रदान करती है और ग़स्ब से स्वामित्व समाप्त नहीं होता है। इसके अलावा, अचल संपत्ति (अक़ार) में ग़स्ब सिद्ध नहीं होता है और बिक्री उपहार (हिबा) की तरह नहीं है कि इसमें कब्ज़ा (क़ब्ज़) और खाली करना (तख़्लिया) शर्त हो। यह बहुत स्पष्ट है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

[उर्दू अनुवाद]: क्योंकि इसका परिणाम यह है कि ग़स्ब और बय' जब पूरी हो जाए तो स्वामित्व प्रदान करती है और ग़स्ब से स्वामित्व समाप्त नहीं होता है, इसके अलावा ग़स्ब अचल संपत्तियों में सिद्ध नहीं होता है और बय' हिबा (उपहार) के समान नहीं है कि उसमें कब्ज़ा करना और खाली करना शर्त करार दिया जाए और यह स्पष्ट है। और अल्लाह बेहतर जानता है। (त)

मसला ३२: प्रेषक अबुल असीम मुहम्मद इब्राहिम, बरेली, ख्वाजा कुतुब, ११ मुहर्रम १३३४ हिजरी, सोमवार।

धर्म के विद्वान और सुदृढ़ शरिया के मुफ़्ती इस मसले में क्या फरमाते हैं कि ज़ैद का निधन हो गया, उन्होंने दो सगे भतीजे और एक बेटी छोड़ी। बड़ा भतीजा उस लड़की का पति है, लेकिन पति-पत्नी में लंबे समय से अनबन चल रही है, यहाँ तक कि वे भरण-पोषण भी नहीं देते। ज़ैद ने अपने जीवनकाल में अपनी पूरी संपत्ति अपनी बेटी को दो हज़ार रुपये में बेच दी, जबकि संपत्ति का अनुमानित मूल्य छह हज़ार रुपये है। बिक्रीनामा (बैनामा) भी कानूनी रूप से तैयार किया गया था। लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि खरीदार (बेटी) ने विक्रेता (पिता) को कोई पैसा नहीं दिया। उसके पास पैसे कहाँ से आते? उसका भरण-पोषण भी पिता की ज़िम्मेदारी थी। एक बार ज़ैद ने किसी अवसर पर अपने छोटे भतीजे से कहा कि तेरे बड़े भाई की वजह से मुझसे तेरा हक़ मारा गया; वह मेरे जीते-जी अपनी पत्नी (मेरी बेटी) को कुछ नहीं देता, तो मेरे मरने के बाद क्या देगा? इसके जवाब में भतीजे ने कहा कि आप मेरा हक़ क्यों मार रहे हैं? ज़ैद ने जवाब दिया कि जो होना था सो हो गया। उपरोक्त स्थिति में इस संपत्ति और बिक्री का क्या हुक्म है? क्या दोनों भतीजों को शरीयत के अनुसार हिस्सा मिलता है या नहीं? प्रमाण और दलील के साथ स्पष्ट करें, दयालु और कृपालु प्रभु से आपको इसका फल मिलेगा।

उत्तर: यह बिक्री सही, पूर्ण और प्रभावी हो गई क्योंकि यह तब हुई जब ज़ैद स्वस्थ थे,

[अरबी बॉक्स पाठ]: जैसा कि प्रश्नकर्ता ने मुझे मौखिक रूप से बताया। यह हुक्म इसलिए है क्योंकि यह एक ऐसा अनुबंध (अक़्द) है जो एक सक्षम व्यक्ति द्वारा उचित स्थान पर किया गया है, इसलिए इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

[उर्दू अनुवाद]: जैसा कि प्रश्नकर्ता ने मुझे मौखिक रूप से बताया और यह हुक्म इसलिए है क्योंकि यह एक ऐसा अनुबंध है जो सक्षम व्यक्ति से जारी होकर सही स्थान पर हुआ, तो इसमें कोई बाधा नहीं। (त)

पृष्ठ 117 का 715

فان غایتہ الغصب والبیع اذا تم افاد الملك والملك بالغصب لا یزول علی ان الغصب لا یتحقق في العقار و البیع لیس کالھبۃ حتی یشترط فیہ القبض والتخلیۃ وھذا ظاھر جدا، واللہ تعالی اعلم۔ کیونکہ غایت اس کی غصب اور بیع جب تام ہو جائے تو مفید ملک ہوتی ہے اور غصب سے ملک زائل نہیں ہوتی، علاوہ ازیں غصب غیر منقولہ اشیاء میں متحقق نہیں ہوتا اور بیع ہبہ کی مثل نہیں حتی کہ اس میں قبضہ اور فارغ کرنا شرط قرار دیا جاتا اور یہ خوب ظاہر ہے، واللہ اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۳۲: مرسلہ ابوالا ثیم محمد ابراہیم بریلی خواجہ قطب ۱۱ محرم ۱۳۳۴ھ یوم دوشنبہ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید نے انتقال کیا دو بھتیجے حقیقی اور ایک دختر چھوڑی اور بڑا بھتیجا اس لڑکی کا شوہر ہے لیکن باہم زوجین میں ایک مدت سے نا اتفاقی ہے حتی کہ نان و نفقہ تک نہیں دیتے، زید نے اپنی حیات میں اپنی کل جائداد دو ہزار روپیہ میں اپنی دختر کے ہاتھ بیع کردی لیکن قیمت جائداد تخمیناً چھ ہزار روپے ہے اور بیعنامہ بھی قانونی کردیا لیکن معلوم ہوتا ہے کہ روپیہ مشتریہ نے بائع کو کچھ نہیں دیا وہ کہاں سے دیتی اس کا نان و نفقہ بھی باپ کے ذمے تھا، ایک مرتبہ زید نے کسی موقع پر اپنے چھوٹے بھتیجے سے کہا کہ تیری حق تلفی مجھ سے ہو گئی تیرے بڑے بھائی کی وجہ سے وہ میری زندگی میں تو اپنی زوجہ (یعنی میری لڑکی) کو کچھ دیتے نہیں ہیں بعد میرے مرنے کے کیا دیں گے، اس کے جواب میں بھتیجے نے یہ کہا کہ آپ میری حق تلفی کیوں کرتے ہیں، اس کے جواب میں زید نے یہ کہا کہ جو کچھ ہونا تھا ہو گیا، پس صورت مذکورہ میں اس جائداد و بیع کا کیا حکم ہے؟ آیا دونوں بھتیجوں کو بھی شرعی حصہ پہنچتا ہے یا نہیں؟ بینوا مع الدلیل و البرھان توجروا عند الحنان المنان (دلیل و برہان کے ساتھ بیان کرواحسان و مہربانی فرمانے والے سے اجر پاؤ۔ ت)

الجواب: یہ بیع صحیح و تام و نافذ ہوگئی جبکہ زید کی حالت صحت میں تھی،

كما ذكر لي السائل بلسانه وذلك لانه عقد صدر عن اهله في محله فلا مرد له، جیسا کہ سائل نے مجھے زبانی بتایا اور یہ حکم اس لئے ہے کہ یہ ایک ایسا عقد ہے جو اہل سے صادر ہو کر محل میں واقع ہوا تو اس میں کوئی رکاوٹ نہیں۔ (ت)

Fatawa Ridawiyya, Volume 17

The payment of the price is not among the conditions for the validity or enforcement of a sale. Therefore, if the seller, after the completion of the contract, waives the entire price, it will be waived, and no flaw will occur in the sale, as stated in the Fatawa of Imam Qadi Khan, explained in Radd al-Muhtar, and as we have researched in our Fatawas. (T) Here, if the waiver is proven, then well and good. And if Zaid acknowledged receiving [the payment], then he no longer has a claim for the price against the female purchaser, because "a person is bound by their own admission" (T). And these circumstantial indications, such as 'where would she get the money from since her maintenance was her father's responsibility,' which were not heard against evidence of exoneration, are also not worthy of attention in the face of an explicit admission of receipt.

[Arabic Box] Because wealth comes and goes, and sometimes some people, especially women, have hidden wealth that others rarely know about. Perhaps she had some jewelry or items from her dowry with which she made the payment. (T)

And when Zaid's own claim would not be heard, how could the claim of the heirs, who claim on his behalf, be acceptable? Zaid's statement to a nephew that "I have wronged you" does not contradict the validity of the sale; rather, it confirms it, because if the sale were not valid, how could there be a denial of rights? As for the denial of rights in terms of religious ethics, it does not affect the validity of the sale in a judicial ruling. The sale has become valid; the nephews no longer have any right in the property. Yes, a claim for the price is possible if Zaid had not acknowledged the waiver or receipt. And Allah Almighty knows best.

Issue 33: From Pega, submitted by Maulvi Haji Nazir Ahmed Sahib, 24 Dhu al-Qi'dah 1324 AH.

What do the scholars of religion and the jurists of the clear Shariah say regarding the following issue: Zaid purchased half of Amr's landed property, in which there was some grown crops and some sown seeds of his personal cultivation, on the condition that the land which is in Amr's cultivation must also be relinquished to the extent of half cultivation. Amr had accepted this condition. At the time of the sale, there was no mention or settlement regarding the current and sown produce of this land, whether all of it would belong to Amr or half to Zaid as well? Now Zaid is also demanding half of the produce of that land which Amr had cultivated, saying "My share is half in everything of Amr's." Amr says...

मूल्य का भुगतान बिक्री की वैधता या प्रवर्तन की शर्तों में से नहीं है। इसलिए, यदि विक्रेता, अनुबंध पूरा होने के बाद, पूरी कीमत माफ कर देता है, तो वह माफ कर दी जाएगी, और बिक्री में कोई दोष नहीं आएगा, जैसा कि इमाम काजी खान के फतवों में कहा गया है, रद अल-मुहतार में समझाया गया है, और जैसा कि हमने अपने फतवों में शोध किया है। (त) यहाँ, यदि छूट सिद्ध हो जाती है, तो बहुत अच्छा। और यदि जैद ने प्राप्ति स्वीकार कर ली थी, तब भी उसका क्रेता महिला पर मूल्य का कोई दावा नहीं रहा क्योंकि "व्यक्ति अपनी स्वीकृति से बंधा होता है" (त)। और ये परिस्थितिजन्य संकेत कि 'वह पैसे कहाँ से देती जबकि उसका भरण-पोषण उसके पिता की जिम्मेदारी थी,' जो मुक्ति के साक्ष्य के विरुद्ध नहीं सुने गए थे, प्राप्ति की स्पष्ट स्वीकृति के सामने ध्यान देने योग्य नहीं हैं।

[अरबी बॉक्स] क्योंकि धन आता-जाता रहता है, और कभी-कभी कुछ लोगों, विशेषकर महिलाओं के पास कुछ छिपा हुआ धन होता है जिसके बारे में दूसरे लोग कम ही जानते हैं। शायद उस महिला के पास दहेज का कोई गहना या सामान हो जिससे उसने भुगतान किया हो। (त)

और जब स्वयं जैद का दावा नहीं सुना जाता, तो उत्तराधिकारियों का दावा कैसे स्वीकार किया जा सकता है जो उसकी ओर से दावा करते हैं? जैद का अपने एक भतीजे से यह कहना कि "मुझसे तुम्हारा हक मारा गया है" बिक्री की वैधता के विपरीत नहीं है, बल्कि इसकी पुष्टि करता है, क्योंकि यदि बिक्री वैध नहीं होती, तो हक का हनन कैसे होता? जहाँ तक धार्मिक नैतिकता के मामले में हक मारने की बात है, तो यह न्यायिक निर्णय में बिक्री की वैधता को प्रभावित नहीं करती। बिक्री वैध हो गई है, भतीजों का संपत्ति में कोई अधिकार नहीं रहा। हाँ, मूल्य का दावा संभव है यदि जैद ने छूट या प्राप्ति की स्वीकृति न दी हो। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

मसला 33: पीगा से, मौलवी हाजी नजीर अहमद साहब द्वारा प्रस्तुत, 24 जुल्कादा 1324 हिजरी।

धर्म के विद्वान और स्पष्ट शरीयत के मुफ्ती इस मसले में क्या कहते हैं कि जैद ने अम्र की जमींदारी की आधी जमीन खरीदी, जिसमें उसकी व्यक्तिगत खेती की कुछ तैयार फसल और कुछ बोए गए बीज भी थे, इस शर्त पर कि जो जमीन अम्र की खेती में है, उसे भी आधी खेती से छोड़ना होगा। अम्र ने इस शर्त को स्वीकार कर लिया था। बिक्री के समय इस जमीन की वर्तमान और बोई गई उपज के बारे में कोई चर्चा या समाधान नहीं हुआ था कि क्या पूरी उपज अम्र की होगी या आधी जैद की भी?

अब जैद उस जमीन की आधी उपज की भी मांग कर रहा है जिसे अम्र ने खेती कराई थी, यह कहते हुए कि "अम्र की हर चीज में मेरा आधा हिस्सा तय हुआ है।" अम्र कहता है...

पृष्ठ 118 ऑफ़ 715

ادائے ثمن شرائط صحت یا نفاذ بیع سے نہیں وللہٰذا اگر بائع بعدِ تمامئ عقد زرِ ثمن تمام و کمال معاف کر دے معاف ہو جائے گا اور بیع میں کوئی خلل نہ آئے گا کما نص علی فی فتاوٰی الامام قاضی خاں وبینہ فی ردالمحتار وحققناہ فی فتاوٰنا (جیسا کہ فتاوٰی امام قاضی خاں میں اس پر نص کی گئی اور ردالمحتار میں اس کو بیان کیا اور ہم نے اپنے فتاوٰی میں اس کی تحقیق کی۔ ت) یہاں اگر معاف ثابت ہو فبہا اور اگر زید نے وصول پالینے کا اقرار کیا جب بھی مشتریہ پر ثمن کا دعوٰی اسے نہ رہا لان المرء مواخذ باقرارہ (کیونکہ شخص اپنے اقرار سے پکڑا جاتا ہے۔ت) اور یہ قرائن کہ وہ کہاں سے دیتی اس کا نفقہ بھی تو باپ کے ذمہ تھا بینہ ابراء کے مقابل مسموع نہ ہوتا تو ظاہر اقرار وصول کے سامنے بھی قابلِ التفات نہیں،

لان المال غاد ورائح وقد یکون لبعض الناس لاسیما النساء مال خفی قل ما یطلع علیہ الآخرون و عسی ان یکون لھا من حلی جھازھا و امتعۃ مایفی بذلک۔ کیونکہ مال آنے جانے والی چیز ہے اور کبھی بعض لوگوں خصوصاً عورتوں کے پاس کچھ پوشیدہ مال ہوتا ہے جس پر دوسرے لوگ بہت کم مطلع ہوتے ہیں، شاید اس عورت کے پاس جہیز کا کوئی زیور یا سامان ہو جس سے وہ ادائیگی کرتی ہو، (ت)

اور جب خود زید کا دعوٰی نہ سنا جاتا تو ورثاء کہ خلافہ اسی طرف سے مدعی ہوں گے ان کا دعوٰی کیونکر مقبول ہو سکتا ہے زید کا ایک بھتیجے سے کہنا کہ مجھ سے تیری حق تلفی ہو گئی صحت بیع کا منافی نہیں بلکہ مؤکد ہے کہ اگر بیع صحیح نہ ہوتی تو حق تلفی کیونکر ہوتی باقی براہِ دیانت حق تلفی حکم قضاء میں صحت بیع پر اثر نہیں ڈالتی بیع صحیح ہو گئی ،بھتیجوں کا

جائداد میں کچھ حق نہ رہا،ہاں ثمن کا دعویٰ ممکن ہے اگر زید نے معاف یا وصول پالینے کا اقرار نہ کیا ہو، واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۳۳: از پیگا مسئولہ مولوی حاجی نذیر احمد صاحب ۲۴ ذی القعدہ ۱۳۲۴ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین مسئلہ ذیل میں کہ زید نے نصف اراضی زمینداری عمرو کی جس میں اس کی سیر و خود کاشت کی کچھ زراعت تیار شدہ کچھ تخم ریزی شدہ بھی تھی بایں شرط خریدی کہ جو اراضی عمرو کی کاشت میں ہے وہ بھی نصف کاشت سے چھوڑ دینا ہو گی، عمرو نے اس شرط کو قبول کر لیا تھا اور اس اراضی کی اس پیداوار موجودہ اور مزروعہ کا وقتِ بیع کے کچھ تذکرہ اور تصفیہ نہ ہوا تھا کہ آیا کُل عمرو کا ہوگا یا نصف زید کا بھی؟ اب زید نصف پیداوار بھی اس اراضی کی جو عمرو نے کاشت کرائی تھی طلب کرتا ہے کہ میرا تو عمرو کی ہر چیز میں نصف ٹھہرا ہے، عمرو کہتا ہے

Fatawa Rizwia (17)

I have sold the zamindari (landownership) land and the rights of zamindari, not the cultivation rights. Therefore, the zamindari right is a quarter share of this prepared and cultivated agricultural land. Take half of it, just as is taken from tenants in common practice who cultivate on half, quarter, or five-sixths shares, etc. Otherwise, according to every item of yours, I wouldn't be free even after giving household furniture etc. Therefore, the inquiry is, which of the parties, Zaid or Amr, is in the right? How is Zaid's demand and Amr's refusal? Clarify and be rewarded.

The Answer:

The fully grown and complete crop belongs entirely to Amr. In fact, if at the time of sale it had grown only enough for an animal to pluck from the ground with its lips, even then Zaid's claim would have been unanimously void. Yes, if the crop had not come out at all such that an animal could graze on it, and only a green hue was visible on the ground, and the land was sold in such a state, then according to one opinion, half the crop would be considered Zaid's property. This was considered correct in 'Tajnees', and 'Sharh al-Majma' and 'Durr al-Mukhtar' described it as the most correct opinion. According to another opinion, it still remains completely the property of Amr. In 'Fath al-Qadeer', this was termed more appropriate and in 'Siraj al-Wahaj' it was stated as correct. Most opinions lean towards the first view. It will also be seen to what extent the sowing has occurred; if the seed is still fresh and hasn't decomposed in the soil, then in this case also, by consensus, the entire crop produced from it will belong to Amr. If the sale happened when the seed had decomposed so that if one dug up the ground to retrieve it, nothing would be found, then there is a difference of opinion among scholars. Some said that now half the crop belongs to the buyer of half the land; this was adopted by Imam Fazli and the author of 'Zakhira'. Others said that it still completely belongs to the seller; this was adopted by Imam Abu al-Layth and Imam Burhan al-Din, author of 'Hidaya', and 'Durr al-Mukhtar' relied on this. In fact, the preferred view of Imam Faqih Abu al-Layth and Imam Burhan al-Din is that in all four scenarios, the crop belongs entirely to the seller, whether it has grown a little or a lot, whether the seed has decomposed or not. This is also the implication of texts like 'Tanwir al-Absar', etc. In short, in all these cases, the crop is the property of Amr. Zaid's claim for half is void except in the scenario where at the time of sale, the crop had appeared above ground but was not enough for an animal to pluck with its lips, in which case, according to the weightier opinion in 'Qadeer', half the crop would belong to the buyer of half the land. Then, in

the cases where the crop belongs solely to Amr, Zaid has the option to have the land divided and...

Page 119 of 715

फ़तावा रज़विया (17)

मैंने ज़मींदारी ज़मीन और ज़मींदारी के अधिकार बेचे हैं, खेती के अधिकार नहीं। अत; इस तैयार और बोई गई कृषि भूमि का चौथाई हिस्सा ज़मींदारी अधिकार है। इसका आधा ले लो, जैसा कि आम लोगों में उन काश्तकारों से हिस्सा लिया जाता है जो आधे, चौथाई या पाँच-छठे हिस्से आदि पर खेती करते हैं। अन्यथा, आपकी हर चीज़ के हिसाब से तो मैं घर का सामान आदि देकर भी नहीं छूट पाऊँगा। अतः प्रश्न यह है कि दोनों पक्षों में से कौन सही है, ज़ैद या अम्र? ज़ैद की मांग कैसी है और अम्र का न देना कैसा है? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर:

तैयार और पूर्ण फसल पूरी तरह से अम्र की है। वास्तव में, यदि बिक्री के समय यह केवल इतनी उगी होती कि जानवर अपने होठों से इसे ज़मीन से पकड़ सकता, तो भी ज़ैद का दावा सर्वसम्मति से निराधार होता। हाँ, अगर फसल बिल्कुल भी बाहर नहीं आई होती कि जानवर चर सके और ज़मीन पर केवल हरियाली की रंगत ही दिखाई दे रही होती, और ऐसी स्थिति में ज़मीन बेची जाती, तो एक मत के अनुसार आधी फसल ज़ैद की संपत्ति मानी जाती। 'तजनीस' में इसे सही माना गया है, और 'शरह अल-मजमा' तथा 'दुर अल-मुख्तार' में इसे सबसे सही बताया गया है। दूसरे मत के अनुसार, यह अभी भी पूरी तरह से अम्र की संपत्ति रहती। 'फ़तह अल-क़दीर' में इसे अधिक उचित और 'सिराज अल-वहाज' में सही बताया गया है। अधिकांश विद्वानों का झुकाव पहले मत की ओर है। यह भी देखा जाएगा कि बुवाई किस सीमा तक हुई है; यदि बीज अभी भी ताज़ा है और मिट्टी में गला नहीं है, तो इस मामले में भी सर्वसम्मति से उससे पैदा होने वाली पूरी फसल अम्र की होगी। यदि बिक्री उस समय हुई जब बीज गल चुका था और यदि उसे निकालने के लिए ज़मीन खोदी जाती तो कुछ भी न मिलता, तो इस मामले में भी विद्वानों के बीच मतभेद है। कुछ ने कहा कि अब आधी फसल आधी ज़मीन के खरीदार की होगी; इसे इमाम फ़ज़ली और 'ज़ख़ीरा' के लेखक ने अपनाया। दूसरों ने कहा कि यह अब भी पूरी तरह से विक्रेता की है; इसे इमाम अबू अल-लैथ और 'हिदाया' के लेखक इमाम बुरहानुद्दीन ने अपनाया और 'दुर अल-मुख्तार' में इसी पर भरोसा किया गया। वास्तव में, इमाम फ़क़ीह अबू अल-लैथ और इमाम बुरहानुद्दीन का पसंदीदा विचार यह है कि सभी चार स्थितियों में पूरी फसल विक्रेता की है, चाहे वह थोड़ी उगी हो या बहुत, बीज गला हो या नहीं। 'तन्वीर अल-अबसार' आदि के ग्रंथों का भी यही अर्थ है। संक्षेप में, इन सभी मामलों में फसल अम्र की संपत्ति है। ज़ैद का आधे का दावा निराधार है, सिवाय उस स्थिति के जब बिक्री के समय ज़मीन से फसल दिखाई

तो दे रही हो लेकिन इतनी न हो कि जानवर उसे अपने होठों से उखाड़ सके, उस स्थिति में 'क़दीर' के प्रबल मत के अनुसार आधी फसल आधी ज़मीन के खरीदार की होगी। फिर, जिन स्थितियों में फसल केवल अम्र की है, ज़ैद के पास विकल्प है कि वह ज़मीन का बँवारा करवा ले और...

पृष्ठ 715 का 119

میں نے اراضی زمینداری اور حقوق زمینداری بیع کئے ہیں، نہ حقوق کاشتکاری، پس حق زمینداری اس اراضی زراعت تیار شدہ اور مزروعہ کا چوتھائی حصہ ہے اس کا نصف لے لو جیسی کہ مخلوق میں اسامیان سے جو نصفی یا چوتھائی یا پچھبرو وغیرہ پر کاشت کرتے ہیں حصہ لیا جاتا ہے اسی طرح سے ورنہ تمھاری ہر چیز کے اعتبار سے تو میں اثاث البیت وغیرہ بھی دے کر نہ چھوٹوں گا، لہذا استفسار ہے کہ فریقین میں سے زید حق پر ہے یا عمرو؟ زید کا مطالبہ کرنا کیسا ہے اور عمرو کا نہ دینا کیسا ہے؟ بینوا توجروا

الجواب:

زراعت تیار شدہ تمام وکمال ملک عمرو ہے بلکہ اگر وقت بیع تک صرف اسی قدر اگی ہوتی جسے جانور اپنے لبوں کے ذریعہ سے زمین سے لے سکے بھی اس پر زید کا دعویٰ بالاتفاق باطل تھا، ہاں اگر بیٹا بالکل باہر نہ آتا جسے جانور چر سکے نری رنگت ہی رنگت زمین پر ظاہر ہوئی ہوتی ایسی حالت میں زمین بیچی جاتی تو ایک قول پر نصف زراعت بھی ملک زید قرار پاتی تجنیس میں اسی کو صواب اور شرح المجمع ودر مختار میں اصح بتایا اور دوسرے قول پر اب بھی وہ تمام وکمال ملک عمرو رہتی، فتح القدیر میں اسی کو اوجہ اور سراج الوہاج میں صحیح فرمایا، اور اکثر کا رجحان رائے قول اول کی طرف ہے اور جس قدر میں تخم ریزی ہوئی ہے اسے دیکھا جائے گا کہ آیا ہنوز بیج تازہ پڑا ہے کہ زمین میں گل نہ گیا ہوگا تو اس صورت میں بھی بالاتفاق جو زراعت اس سے پیدا ہوگی تمام وکمال عمرو کی ہوگی اور اگر ایسے وقت بیع ہوئی کہ بیج گل چکا تھا زمین کھود کر اگر اسے نکالنا چاہتے تو کچھ نہ ملتا تو اس صورت میں بھی اختلاف علماء ہے، بعض

نے کہا اب نصف زراعت مشتری نصف زمین کی ہوگی، اسی کو امام فضلی وصاحب ذخیرہ نے اختیار فرمایا اور بعض نے فرمایا اب بھی تمام وکمال بائع کی ہے اسی کو امام ابواللیث و امام برہان الدین صاحب ہدایہ نے اختیار فرمایا اور اسی پر در مختار میں اعتماد کیا بلکہ امام فقیہ ابواللیث وامام برہان الدین صاحب ہدایہ کا مختار یہ ہے کہ مطلقاً چاروں صورتوں میں تمام وکمال زراعت بائع کی ہی ہے خواہ تھوڑی اگی ہو یا بہت، بیج گل گیا ہو یا نہیں، اور یہی متون تنویر الابصار وغیرہ کا مفاد ہے، بالجملہ ان تمام صورتوں میں زراعت ملک عمرو ہے، زید کا دعویٰ نصف باطل ہے مگر صرف اس حالت میں کہ بیع کے وقت زمین سے کھیتی ظاہر تو ہوئی ہو اور اس قابل نہ ہو کہ جانور اپنے لب سے اسے نکال سکے کہ اس قدیر پر قول راجح میں آدھی زراعت مشتری نصف زمین کی ہوگی پھر جن صورتوں میں زراعت صرف عمرو کی ٹھہری زید کو اختیار ہے کہ زمین تقسیم کرا کر اپنا

Fatawa Rizvia Volume 17

The cultivated portion should be vacated from Amr immediately, even if the crops are not yet ready for harvest. If it is kept with Zaid's consent, then according to the custom, Zaid should be paid the land-ownership right, i.e., the rent etc. for the use of such land for such a period. It is stated in Durr-e-Mukhtar:

[Arabic Box Text]: (Crops are not included in the sale of land without being named) unless they have sprouted and have no value, then they are included according to the more correct opinion (Sharh al-Majma'). The seller will be ordered to harvest the crops and hand over the land when the delivery of the land becomes mandatory. If the buyer has not paid the price in cash, the seller will not be ordered to do so (Khaniyah). And what is mentioned in Al-Fusulayn, that the crop belongs to the seller along with the fair rent of the land, is interpreted to mean when the buyer agrees to it (An-Nahr, summarized). And Allah Almighty knows best.

[Urdu Translation in Box]: Crops are not included in the sale of land without being named, unless the crops have sprouted and have no value, then they will be included in the sale according to the most correct opinion (Sharh al-Majma'). The seller will be ordered to harvest the crop and hand over the land to the buyer when the delivery of the land has become mandatory. If the buyer has not paid the price in cash, the seller will not be given the above-mentioned order (Khaniyah). And what appears in Al-Fusulayn, that the crop belongs to the seller along with the fair rent of the land, is attributed to the case where the buyer agrees to it (An-Nahr, summarized). And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 342 to 353: From the state of Jaora, Dungarpur Gate, sent by Hidayat Noor Khan Sahib, brother of Nawab Jaora, Ramadan ul Mubarak 1326 AH. What do the scholars of religion and muftis of the firm Sharia say regarding the following issues: (1) Zaid and Hindah, at the time of the marriage proposal, i.e., the engagement of their son named Bakr in September 1902, wrote a document with this content: that fifteen rupees and four annas monthly, which after our death will reach Bakr's share from the remains, and a one-story house with its four boundaries in exchange for fifty thousand rupees as part of her dower (Mahr), for which we are guarantors and sureties, was given to Musammat Hajrah. We have also made her the possessor and user of it. However, one year and eight months after this writing, in May 1904, Hajrah's marriage with Bakr took place. At the marriage ceremony, the completion of the aforementioned writing did not take place, nor are the signatures of the Qazi of

the time who performed the marriage on it, nor the date of the wedding day, nor the approved husband. So in such a situation, if Bakr's wife...

---

1 Durr-e-Mukhtar, Book of Sales, Chapter on what is not included following the sale, etc., Mujtabai Delhi, 9/2.

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

अम्र की भूमि से खेती का हिस्सा तुरंत खाली करा लिया जाए, चाहे फसल अभी कटाई के योग्य न हुई हो। यदि जैद की सहमति से उसे रहने दिया गया, तो प्रथा के अनुसार जैद को ज़मींदारी का हक, यानी इतनी भूमि का इतने समय तक उपयोग करने का लगान आदि अदा करना होगा। दुर-ए-मुख्तार में है:

[अरबी बॉक्स पाठ]: (भूमि की बिक्री में फसल तब तक शामिल नहीं होती जब तक उसका नाम न लिया जाए) सिवाय इसके कि जब फसल उगी हो और उसका कोई मूल्य न हो, तो वह सबसे सही राय के अनुसार शामिल होगी (शर्ह अल-मजमा)। विक्रेता को फसल काटकर भूमि खरीदार के हवाले करने का आदेश दिया जाएगा जब भूमि सौंपना अनिवार्य हो गया हो। यदि खरीदार ने नकद कीमत नहीं दी है, तो विक्रेता को ऐसा करने का आदेश नहीं दिया जाएगा (खानिया)। और अल-फ़ुसुलैन में जो आया है कि फसल विक्रेता की है और साथ में भूमि का उचित किराया भी, तो उसे उस स्थिति पर माना जाएगा जब खरीदार उस पर सहमत हो (अन-नहर, सारांश)। और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है।

[बॉक्स में उर्दू अनुवाद का हिंदी अनुवाद]: भूमि की बिक्री में खेती बिना नाम लिए शामिल नहीं होती, लेकिन जब खेती उगी हुई हो और बिना किसी कीमत की हो, तो सबसे सही राय के अनुसार बिक्री में शामिल होगी (शर्ह अल-मजमा)। विक्रेता को आदेश दिया जाएगा कि वह खेती काटकर भूमि खरीदार के हवाले करे जब भूमि सौंपना अनिवार्य हो चुका हो। यदि खरीदार ने नकद कीमत नहीं दी है, तो विक्रेता को उपरोक्त आदेश नहीं दिया जाएगा (खानिया)। और अल-फ़ुसुलैन में जो आया है कि खेती विक्रेता के लिए है भूमि के उचित किराए (उजरत-ए-मिस्ली) के साथ, तो उसे उस स्थिति पर माना जाएगा जब खरीदार उस पर राजी हो (नहर, सारांश)। और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है। (त)

मसला 342 से 353: रियासत जावरा, डूंगरपुर गेट से, हिदायत नूर खान साहब, भाई नवाब जावरा द्वारा प्रेषित, रमजानुल मुबारक 1326 हिजरी। दीन के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ्ती इन निम्नलिखित मुद्दों में क्या कहते हैं: (1) जैद और हिन्दा ने अपने बेटे बक्र की मंगनी के समय सितंबर 1902 में इस आशय का एक लेख लिखा कि पंद्रह रुपये चार आने मासिक जो हमारे मरने के बाद हमारे अवशेषों से बक्र के हिस्से में आएंगे... और एक मंजिल वाला मकान अपनी चार सीमाओं के

साथ पचास हजार रुपये के बदले जो उसके महर का हिस्सा है, जिसके हम गारंटर और ज़मानती हैं, मुसम्मात हाजरा को दिया। हमने उसे उस पर कब्ज़ा और उपयोग करने वाला भी बना दिया। लेकिन इस लेख के एक साल आठ महीने बाद मई 1904 में हाजरा का निकाह बक्र के साथ हुआ। निकाह की सभा में उक्त लेख को पूरा नहीं किया गया, न ही निकाह पढ़ाने वाले उस समय के काज़ी के उस पर हस्ताक्षर हैं, न ही निकाह के दिन की तारीख है, और न ही स्वीकृत पति है। तो ऐसी स्थिति में अगर बक्र की पत्नी...

---

1 दुर-ए-मुख्तार, किताब अल-बुयू, उस पर अध्याय जो बिक्री के बाद शामिल नहीं है, आदि, मुजतबाई दिल्ली, 9/2।

حصہ زراعت عمرو سے خالی کرالے اسے فورا خالی کرنا ہوگا اگرچہ زراعت ہنوز قابلِ درو نہ ہوئی ہو۔ اگر برضائے زید باقی رکھی تو حسب دستور زید کو حقِ زمین داری یعنی جو اتنی زمین کی اس قدر مدت تک استعمال رکھنے کی لگان وغیرہ ہوتی ہے ادا کرے، درمختار میں ہے:

(لایدخل الزرع في بیع الارض بلا تسمیة) الا اذا نبت ولا قیمة له فیدخل في الاصح شرح المجمع، ویؤمر البائع بقطع الزرع وتسلیم الارض عند وجوب تسلیمها فلولم ینقد الثمن لم یؤمر به خانیة، وما في الفصولین الزرع للبائع بأجر مثلها محمول علی ما اذا رضی المشتری نهر اه ملتقطاً، واللہ تعالٰی اعلم۔

زمین کی بیع میں زراعت بغیر نام لئے داخل نہیں مگر جب کھیتی اُگی ہوئی ہو اور بے قیمت ہو تو بیع میں داخل ہوگی اصح قول کے مطابق (شرح المجمع)، بائع کو حکم دیا جائے گا کہ وہ کھیتی کو اکھاڑ کر زمین مشتری کے حوالے کرے جب زمین کی تسلیم واجب ہو چکی ہو اگر مشتری نے ثمن نقد نہ دئے ہوں تو بائع کو مذکورہ بالا حکم نہیں دیا جائے گا (خانیہ)، اور فصولین میں جو آیا ہے کہ کھیتی بائع کے لئے ہے زمین کی اُجرتِ مثلی کے ساتھ تو وہ اس صورت پر محمول ہے کہ مشتری اس پر راضی ہو، نہر اھ ملتقطاً واللہ تعالٰی اعلم۔(ت)

مسئلہ ۳۴۲ تا ۳۵۳: از ریاست جاورہ، ڈونگر پور دروازہ مرسلہ ہدایت نور خان صاحب بردر نواب جاورہ، رمضان المبارک ۱۳۲۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین ان مسائل ذیل میں : (۱) زید و ہندہ نے بر وقت خواستگاری یعنی منگنی پسر خود مسمّی بکر کے ماہِ ستمبر ۱۹۰۲ء میں ایک تحریر بدیں مضمون لکھی کہ پندرہ روپیہ چار آنہ ماہوار کہ بعد وفات ہمارے جو حصہ بکر میں پہنچیں گے اور ایک منزل مکان بحدودِ اربعہ بعوض مبلغ پنجاہ ہزار روپیہ از جملہ

مہر ش کہ کفیل وضامن اس کے ہم ہیں مسماۃ ہاجرہ کو دیا، ہم نے اور اس پر قابض و متصرف کر دیا، ہم نے مگر اس تحریر کے ایک سال آٹھ ماہ کے بعد مئی ۱۹۰۴ء میں نکاح ہاجرہ کا بکر کے ساتھ ہوا، جلسہ نکاح میں تکمیل تحریر مسطور بالا کی نہیں ہوئی ورنہ دستخط قاضی وقت کے کہ جس نے نکاح پڑھایا اس پر ہوئے ہیں، نہ تاریخ یوم نکاح ہی، نہ منظور شدہ زوج ہی، پس ایسی حالت میں اگر زوجہ بکر

---

1 درمختار کتاب البیوع فصل في ما لایدخل في البیع تبعا الخ مجتبائی دہلی ۹/۲

Fatawa-e-Razvia Volume (17)

Based on this writing, if Zaid and Hindah or Bahr make a claim, are they entitled by Shariah to receive this movable and immovable property or not? And possession of this property was not given to Musammat Hajira as owner, either originally or through agency, because Zaid and Hindah are still alive from 1902 until now, and they are in possession and control of this same movable and immovable property. In such a situation, is Hajira entitled by Shariah to receive the mentioned property or not?

(2) Zaid gifted the royal salary, which is to come in the future, in the name of Musammat Hajira in exchange for dowry (Mahr) through sale and gift, and possession was also not given. Is such a sale and gift of future salary valid according to the noble Shariah? Please explain and be rewarded.

Answer:

(1) Hajira cannot claim this property at all. It is evident that this action by Zaid and Hindah is giving a property in exchange for dowry, which is the transfer of ownership of a specific item for an exchange (Tamlik-e-Ayn bil-Iwadh). Even if the words 'gift' (Hiba) or 'grant' (Ata) are used, it is a sale (Bay') from start to finish.

In Durr al-Mukhtar: "If one says, 'I gifted this to you for such-and-such [an amount/ thing]', then it is a sale initially and finally." Translation: It is stated in Durr al-Mukhtar: If someone says, "I have gifted this thing to you in exchange for this," then it is a sale from beginning to end. (T)

And sale is the exchange of property for property as mentioned in Al-Kanz, Al-Multaqa, and others (T). And property is either a specific substance (Ayn) or a debt (Dayn). Dowry before marriage is neither a substance nor a debt, so it is not property at all. Therefore, giving something in exchange for it is purely void.

Arabic: "It became like a sale for blood, or a carcass, or soil; in fact, even less than that, because those things, although they are not 'property' (Mal), are still 'things' (Ashya), whereas dowry before marriage is nothing at all." Translation: And this became like a sale in exchange for blood, dead animals, or dust; rather, it is even less than that because although these things are not wealth, they are at least 'things', whereas dowry before marriage is not even a 'thing'. (T)

Payment before the cause of obligation (as-Sabab al-Wajib) is established is void.

In Fath al-Qadeer: "Its acceleration (early payment) is not permissible." Translation: It is stated in Fath al-Qadeer that its early payment is not permissible.

Footnote: 1 Durr al-Mukhtar, Book of Gift, Chapter on Revocation of Gift, Mujtabai Delhi, 2/164.

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द (17)

इस लेखन के अनुसार, यदि ज़ैद और हिंदा या बहर दावा करते हैं, तो क्या वे शरीयत के अनुसार इस चल और अचल संपत्ति को प्राप्त करने के हकदार हैं या नहीं? और इस संपत्ति का मालिकाना कब्ज़ा मुसम्मात हाजरा को न तो मूल रूप से और न ही एजेंसी के माध्यम से दिया गया था, क्योंकि ज़ैद और हिंदा 1902 से अब तक जीवित हैं और वे स्वयं इस चल और अचल संपत्ति पर काबिज़ और उसका उपयोग कर रहे हैं। ऐसी स्थिति में, क्या हाजरा शरीयत के अनुसार उक्त संपत्ति पाने की हकदार है या नहीं?

(2) ज़ैद ने शाही वेतन, जो भविष्य में मिलने वाला है, मुसम्मात हाजरा के नाम मेहर (दहेज) के बदले में बिक्री और उपहार (हिबा) के रूप में दिया और कब्ज़ा भी नहीं दिया। क्या भविष्य के ऐसे वेतन की बिक्री और उपहार शरीयत-ए-शरीफ़ के अनुसार मान्य है? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर:

(1) हाजरा इस संपत्ति का दावा बिल्कुल नहीं कर सकती। यह स्पष्ट है कि ज़ैद और हिंदा की ओर से यह कार्य मेहर के बदले में संपत्ति देना है, जो किसी विशिष्ट वस्तु के बदले स्वामित्व का हस्तांतरण है। भले ही 'हिबा' या 'अता' (उपहार) शब्द का उपयोग किया गया हो, यह आदि से अंत तक बिक्री (बय) ही है।

दुर-ए-मुख़्तार में है: "यदि कोई कहे, 'मैंने तुझे यह चीज़ इसके बदले में उपहार दी', तो यह प्रारंभ और अंत में बिक्री है।" अनुवाद: दुर-ए-मुख़्तार में है: अगर कहा 'मैंने तुझे इस चीज़ के बदले हिबा किया' तो यह इब्तिदा और इंतहा बय है। (त)

और बिक्री माल के बदले माल का आदान-प्रदान है जैसा कि कंज़, मुल्तक़ा और अन्य में है (त)। और माल या तो वस्तु (ऐन) है या ऋण (दैन)। निकाह से पहले मेहर न तो ऐन है और न ही दैन, इसलिए वह मूल रूप से माल ही नहीं है। अतः इसके बदले में कुछ देना पूरी तरह से बातिल (अमान्य) है।

अरबी: "और यह खून, मुर्दा जानवर या मिट्टी के बदले बिक्री के समान हो गया, बल्कि उससे भी कम, क्योंकि ये चीज़ें हालाँकि 'माल' नहीं हैं लेकिन 'वस्तुएँ (अशिया) तो हैं, जबकि निकाह से पहले मेहर तो कोई चीज़ ही नहीं है।" अनुवाद: और यह खून या मुरदार या मिट्टी के बदले बय की मिसाल हो

गया बल्कि उससे भी कम क्योंकि ये चीज़ें अगरचे माल तो नहीं मगर अशिया तो हैं जबकि मेहर क़बल अज़ निकाह तो शैई ही नहीं। (त)

अनिवार्यता के कारण (सबब-ए-वुजूब) के स्थापित होने से पहले भुगतान करना बातिल है।

फ़त-हुल-क़दीर में है: "इसे समय से पहले देना (ताजील) जायज़ नहीं है।" अनुवाद: फ़त-हुल-क़दीर में है कि इसकी ताजील (समय से पूर्व अदायगी) जायज़ नहीं।

पाद टिप्पणी: 1 दुर-ए-मुख़्तार, किताबुल हिबा, बाबुल रुजू फ़िल हिबा, मुज्तबाई दिल्ली, 2/164.

اس تحریر کی رو سے زید و ہندہ یا بحر پر دعوی کرے تو عند الشرع اس جائیداد منقولہ و غیر منقولہ کے پانے کی مستحق ہے یا نہیں؟ اور قبضہ بھی اس جائیداد پر مسماۃ ہاجرہ کو مالکانہ نہ اصالتًا نہ وکالتًا دلایا گیا کیونکہ زید و ہندہ ۱۹۰۲ء سے ابھی تک بقیدِ حیات ہیں اسی جائیداد منقولہ و غیر منقولہ پر خود قابض و متصرف ہیں پس ایسی حالت میں ہاجرہ شرعاً اس جائیداد مذکورہ کے پانے کی مستحق ہے یا نہیں؟

(۲) زید نے تنخواہ عطیہ شاہی جو کہ آئندہ آنے والی ہے اس کو بنام مسماۃ ہاجرہ بالعوض مہر بیع و ہبہ کی اور قبضہ بھی نہیں دیا تو ایسی آنے والی تنخواہ کا بیع و ہبہ از روئے شرع شریف معتبر ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب:

(۱) ہاجرہ اس جائیداد کا اصلاً مطالبہ نہیں کر سکتی، ظاہر ہے کہ زید وہندہ کی طرف سے یہ تصرف مہر کے عوض ایک جائیداد دینا ہے اور تملیک عین بالعوض، اگرچہ بلفظ ہبہ یا عطا ہو ابتداءً و انتہاءً ہر طرح بیع ہے۔

فی الدر المختار اما لو قال وھبتك بکذا فھو بیع ابتداءً و انتھاءً-1

در مختار میں ہے اگر کہا میں نے تجھے اس چیز کے بدلے ہبہ کیا تو یہ ابتداء اور انتہاء بیع ہے۔ (ت)

اور بیع مبادلہ مال بمال ہے کما فی الکنز والملتقی وغیرھما (جیسا کہ کنز اور ملتقٰی وغیرہ میں ہے۔ ت) اور مال عین ہے یا دین، اور مہر قبل از نکاح نہ عین ہے نہ دین، تو اصلاً مال ہی نہیں، تو اس کے عوض کسی شیئ کا دینا محض باطل ہے۔

وصار کالبیع بالدم او المیتة او اور یہ خون یا مردار یا مٹی کے بدلے بیع کی مثل ہو گیا بلکہ التراب بل ادون لانھا اشیاء و ان لم اس سے بھی کمتر کیونکہ یہ چیزیں اگرچہ مال تو نہیں مگر تکن اموالا و ھذا لیس بشیئ اصلا۔ اشیاء تو ہیں جبکہ مہر قبل از نکاح تو شیئی ہی نہیں۔ (ت)

انعقادِ سبب وجوب سے پہلے ادا باطل ہے۔

فی فتح القدیر لا یجوز تعجیلہ فتح القدیر میں ہے کہ اس کی تعجیل جائز نہیں۔

---

1 در مختار کتاب الھبتہ باب الرجوع فی الھبة مجتبائی دہلی ۲/ ۱۶۴

Fatawa Razawiya Volume 17

-1 Because it would then be before the cause. | Because in this way its precedence over the cause will become necessary. (T)

It is in al-Inayah: -2 Advancing the ruling before the cause is not permissible. | It is not permissible to precede the ruling over the cause. (T)

Scholars state explicitly that it is not permissible to take a pledge (mortgage/rahn) against a non-existent debt.

-3 In al-Hindiyyah: A pledge for a non-existent debt is not valid because its ruling is the establishment of the hand of realization (possession for collection), and realization follows the obligation (of the debt), as in al-Kafi. | In Hindiyyah, it is stated that taking a pledge against a non-existent debt is not correct because the ruling on a pledge is that the power to collect the debt is attained, and collection follows the obligation, just as it is in al-Kafi. (T)

So how can its payment be correct at present?

-4 And the objection regarding what is sent to a fiancée as items for her dowry does not apply, for she only owns them when she is married upon them. This is because ownership is only established in them after marriage and the fixing of dowry; as for before it, then no. Therefore, she returns them if she refuses (marriage), whether they remain existing or have perished, as in al-Durr al-Mukhtar and others. As for here, the marriage occurred for dirhams, then after that there was no compensation from the two guarantors, and what was mentioned before is of no benefit as mentioned previously. | And the objection regarding those things which someone sent to his fiancée as dowry does not occur, because in the case of marriage, she becomes the owner of those things __ and this is because here the proof of ownership in these things is after marriage and fixing the dowry, not before it. Therefore, if the woman refuses the marriage, she will return those items, whether those items are present or have been lost, as is in Durr [al-Mukhtar] etc. But here, the marriage took place for dirhams, then after that, compensation from both guarantors...

1. Fath al-Qadir, Kitab al-Zakat, Chapter: "wa laysa fi al-fislan" etc., Maktaba Nooria Razawiya, Sukkur, 12/157
2. Al-Inayah on the margin of Fath al-Qadir, Kitab al-Zakat, Chapter: "wa laysa fi al-fislan" etc., Maktaba Nooria Razawiya, Sukkur, 12/157

3. Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Rahn, First Chapter, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 5/231
4. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Nikah, Chapter on Dowry, Mujtabai Delhi, 1/203

फ़तावा रज़विया खंड 17

-1 क्योंकि वह कारण से पहले होगा। | क्योंकि इस तरह कारण (सबब) पर उसका पूर्व होना अनिवार्य हो जाएगा। (त)

'इनाया' में है: -2 कारण पर निर्णय (हुक्म) को प्राथमिकता देना अनुमत नहीं है। | हुक्म को सबब पर पहले लाना जायज़ नहीं। (त)

विद्वान स्पष्ट रूप से कहते हैं कि अस्तित्वहीन (ग़ैर-मौजूद) ऋण के बदले गिरवी (रहून) लेना भी जायज़ नहीं है।

-3 हिंदिया में: गैर-मौजूद ऋण के लिए गिरवी रखना सही नहीं है क्योंकि इसका नियम वसूली के अधिकार की स्थापना है, और वसूली दायित्व (वुज़ूब) के बाद होती है, जैसा कि 'काफी' में है। | हिंदिया में है कि गैर-मौजूद ऋण के बदले गिरवी लेना सही नहीं है क्योंकि गिरवी का हुक्म यह है कि ऋण वसूल करने की शक्ति प्राप्त रहे और वसूल करना वुज़ूब के बाद होता है जैसा कि 'काफी' में है। (त)

तो वर्तमान में उसका भुगतान करना कैसे सही होगा?

-4 और उन वस्तुओं पर आपत्ति नहीं होती जो किसी ने अपनी मंगेतर को मेहर के रूप में भेजी हों, क्योंकि निकाह होने की स्थिति में वह औरत उनकी मालिक हो जाती है। ऐसा इसलिए है क्योंकि यहाँ इन वस्तुओं में स्वामित्व का प्रमाण निकाह और मेहर तय होने के बाद है, न कि उससे पहले। इसीलिए यदि औरत निकाह से इंकार कर दे तो वह उन वस्तुओं को वापस करेगी, चाहे वे वस्तुएं मौजूद हों या नष्ट हो गई हों, जैसा कि 'दुर-ए-मुख़्तार' आदि में है। लेकिन यहाँ तो निकाह दिरहम पर हुआ, फिर उसके बाद दोनों ज़मानतदारों (कफ़ील) की ओर से कोई मुआवज़ा नहीं था, और जो पहले उल्लेख किया गया है वह कोई लाभ नहीं देता जैसा कि पहले बताया गया। | और इस पर उन वस्तुओं का आक्षेप लागू नहीं होता जो किसी ने अपनी मंगेतर को मेहर के तौर पर भेजी हों क्योंकि उन वस्तुओं पर निकाह होने की सूरत में वह औरत उनकी मालिक हो जाती है __ और यह इसलिए कि यहाँ इन चीज़ों में मिल्कियत (स्वामित्व) का सुबूत निकाह और मेहर मुक़र्रर होने के बाद है न कि उससे पहले। इसीलिए औरत अगर निकाह से इंकारी हो तो उन चीज़ों को वापस करेगी चाहे वो चीज़ें

मौजूद हों या ज़ाया हो गई हों जैसा कि 'दुर' [अल-मुख़्तार] वग़ैरह में है। मगर यहाँ तो निकाह दिरहम पर वाक़े हुआ फिर उसके बाद दोनों कफ़ील की तरफ़ से एवज़ (मुआवज़ा)...

1. फ़तह अल-क़दीर, किताब अज़-ज़कात, फ़स्ल 'वा लैसा फ़िल फ़स्लान' आदि, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर 12/157
2. अल-इनाया अला हाशियत फ़तह अल-क़दीर, किताब अज़-ज़कात, फ़स्ल 'वा लैसा फ़िल फ़स्लान' आदि, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर 12/157
3. फ़तावा हिंदिया, किताब अर-रह्न, पहला अध्याय, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर 5/231
4. दुर-ए-मुख़्तार, किताब अन-निकाह, मेहर का अध्याय, मुजतबाई दिल्ली 1/203

فتاوی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

لانه یکون قبل السبب -1 | کیونکہ اس طرح سبب پر اس کا مقدم ہونا لازم آئے گا۔ (ت)

عنایہ میں ہے: تقدیم الحکم علی السبب لا یجوز -2 | حکم کو سبب پر مقدم کرنا جائز نہیں۔ (ت)

علماء تصریح فرماتے ہیں کہ دین معدوم کے بدلے رہن لینا بھی جائز نہیں۔

فی الھندیہ الرہن بدین معدوم فلا یصح اذحکمہ ثبوت ید الاستیفاء والاستیفاء یتلو الوجوب کذا فی الکافی -3 | ہندیہ میں ہے کہ معدوم دین کے بدلے رہن لینا صحیح نہیں کیونکہ رہن کا حکم یہ ہے کہ دین وصول کرنے کی قدرت حاصل رہے اور وصول کرنا وجوب کے بعد ہوتا ہے جیسا کہ کافی میں ہے (ت)

تو فی الحال اس کا ادا کرنا کیونکر صحیح ہوگا۔

ولا یرد ما اذا بعث الی المخطوبۃ اشیاء مہراً لھا فإنھا تملکھا اذ تزوجت علیھا وذلک لان الملك انما یثبت فیھا بعد التزوج والامھار اما قبلھا فلا ولذا تردھا ان ابت قائمۃ او ھالکۃ کما فی الدر المختار وغیرہ اما ھھنا فالتزوج انما وقع علی الدراہم ثم لم یکن بعد ذلک من الکفیلین تعویض وما تقدم لا یجدی کما تقدم -4 | اور اس پر ان اشیاء کا اعتراض وارد نہیں ہوتا جو کسی نے اپنی منگیتر کو بطور مہر بھیجیں کیونکہ ان اشیاء پر نکاح ہونے کی صورت میں وہ عورت ان کی مالک ہو جاتی ہے __ اور یہ اس لئے کہ یہاں ان اشیاء میں ثبوت ملک نکاح اور مہر مقرر کرنے کے بعد ہے نہ کہ اس سے پہلے اسی لئے عورت اگر نکاح سے انکاری ہو تو ان اشیاء کو واپس کرے گی چاہے وہ اشیاء موجود ہوں یا ضائع ہو گئی ہوں جیسا کہ دروغیرہ میں ہے، مگر یہاں تو نکاح دراہم پر واقع ہوا پھر اس کے بعد دونوں کفیلوں کی طرف سے عوض

1 فتح القدير كتاب الزكوة فصل و ليس فى الفصلان الخ مكتبہ نوريہ رضويہ سكهر ١٢/ ١٥٧ 2 العناية على ہامش فتح القدير كتاب الزكوة فصل وليس في الفصلان الخ مكتبہ نوريہ رضويہ سكهر ١٢/ ١٥٧ 3 فتاوى هندية كتاب الرهن الفصل الاول نورانى كتب خانہ پشاور ٥/ ٢٣١ 4 درمختار كتاب النكاح باب المهر مجتبائى دہلى ١/ ٢٠٣

Fatawa Razvia Volume 17

...payment was also not found, and whatever has happened will not benefit, as mentioned before. (T) This is the state of the house; as for those fifteen rupees and four annas monthly, if it refers to any of his own property's surplus, then its state is like that of the house as mentioned. And if it refers to any salary which they receive as wages for some job, then its state is worse than that of the house because it is still non-existent, so this became the sale of non-existent for non-existent. And if that salary is merely a ruler's gift as a position or estate (jagir), then the condition is even worse because it is not even in their control. In any case, this compensation is purely void, and Hajirah has no right of claim through it. The document written by Zaid and Hindah, the petitioner did not send its full copy, from which it could be known whether the guarantee they gave for the dower is also shar'i-ally (legally) correct or not, nor is that the petitioner's question, so there is no need for discussion on it. And Allah Almighty knows best. (2) The sale and gift of future salary are both void because it is non-existent, and what is non-existent can neither be sold nor gifted. It is stated in Tanwir al-Absar: "The sale of the non-existent is void." (The sale of non-existent is invalid. - T). In Fatawa Khayriyyah, it is stated:

Arabic Citation	**Urdu Translation**
Wa bi-hadha 'ulima 'adamu sihati hibati ma sayatahassalu min mahsuul al-qaryatayn bil-awla li-annal-wahiba nafsuhu lam yaqbidhu ba'du fa-kayfa yamlikuhu wa hadha zahirun wallahu ta'ala a'lam.	And from this it is known that the gift of whatever will be obtained from the produce of the two villages is void a fortiori, because the donor himself has not yet taken possession of it; so how can he be its owner? And this is apparent. And Allah knows best. (T)

Issue 36: From Rampur state, Rajdwara locality, adjacent to the mosque of Late Maulvi Haider Ali Sahib, sent by Mazhar Hussain Khan son of Late Maulvi Abdul Ali Khan, 6 Rajab 1328 AH. What do the scholars of religion and muftis of the firm Sharia say in this matter that Zaid sold a plot of land measuring twenty-four 'dir'a' (a unit of length), whose length north-south is six 'dir'a' and width east-west is four 'dir'a', out of his own broken owned land whose length east-west is sixteen yards and width north-south is six yards, for a price of nine rupees to Umar and got it verified exactly. At the time of writing the sale deed, the Sharia boundary, instead of the seller's remaining land, was explicitly incorrectly recorded as the house door.

1 Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Kitab al-Buyu', Chapter: Invalid Sale, Maktaba Mujtabai Delhi 2/23 2 Fatawa Khayriyyah, Kitab al-Hiba, Dar al-Ma'rifah Beirut 2/111

फ़तवा-ए-रज़विया जिल्द 17

...देना भी नहीं पाया गया और जो कुछ हो चुका वह लाभ नहीं देगा जैसा कि पहले गुज़र चुका है। (त) यह हाल तो मकान का है, रहे वे पंद्रह रुपये चार आने मासिक, इससे अगर मुराद अपनी कोई जायदाद की अतिरिक्त आय हो तो उसका हाल मकान के हाल की तरह है जो गुज़रा। और अगर कोई तनख्वाह मुराद हो जो उन्हें किसी नौकरी की मज़दूरी में मिलती है, तो उसका हाल मकान के हाल से बदतर है कि वह खुद अभी तक अनुपलब्ध (मअदूम) है, तो यह अनुपलब्ध की बिक्री अनुपलब्ध से हुई। और अगर वह तनख्वाह महज़ हाकिम का उपहार किसी पद या जागीर के तौर पर है, तो स्थिति और भी बदतर है क्योंकि वह उनके अधिकार में ही नहीं है। बहरहाल, यह मुआवज़ा बिल्कुल बातिल (अमान्य) है और हाजिरा को इसके ज़रिए दावे का कोई हक़ नहीं। ज़ैद और हिंदा ने जो दस्तावेज़ लिखा, उसकी पूरी नकल प्रार्थी ने नहीं भेजी जिससे यह मालूम होता कि उन्होंने महर की जो ज़मानत ली है वह भी शरीयत के अनुसार सही है या नहीं, न ही यह प्रार्थी का सवाल है, इसलिए इस पर बहस की ज़रूरत नहीं। वल्लाहु तआला आलम (और अल्लाह तआला बेहतर जानता है)। (2) भविष्य की तनख्वाह की बिक्री और हिबा (उपहार) दोनों बातिल हैं क्योंकि वह मअदूम (अनुपलब्ध) है और मअदूम न बेची जा सकती है न हिबा की जा सकती है। तनवीरुल अबसार में है: "बतिल बेअल मअदूम" (मअदूम की बिक्री बातिल है। त)। फ़तवा खैरिया में है:

अरबी पाठ	**उर्दू अनुवाद**
व बि-हाज़ा उलिमा अदमू सिहती हिबती मा सयतहस्सलु मिन महसूल अल-क़र्यतैन बिल-औला लि-अन्नल-वाहिबा नफ़्सुहु लम यक़बिज़हु बादु फ़-कैफ़ यमलिकुहु व हाज़ा ज़ाहिरुन वल्लाहु तआला आलम।	और इससे यह मालूम हो गया कि दो गांवों की आमदनी से हासिल होने वाली चीज़ का हिबा पहले दर्जे में सही नहीं है क्योंकि उसे खुद हिबा करने वाले ने अभी तक कब्ज़े में नहीं लिया है, तो वह उसका मालिक कैसे बन सकता है? और यह ज़ाहिर है। और अल्लाह बेहतर जानता है। (त)

मसला 36: रियासत रामपुर, मोहल्ला राजद्वारा, मुत्तसिल मस्जिद मौलवी हैदर अली साहब मरहूम, प्रेषक मज़हर हुसैन खां वल्द मौलवी अब्दुल अली खां मरहूम, 6 रजब 1328 हिजरी। धर्म के विद्वान और शरीयत के मुफ्ती इस बारे में क्या फरमाते हैं कि ज़ैद ने एक ज़मीन का टुकड़ा जिसकी पैमाइश चौबीस दिरअ (एक माप) है, जिसकी लंबाई उत्तर-दक्षिण छह दिरअ और चौड़ाई पूर्व-पश्चिम चार दिरअ है, अपनी मिल्कियत वाली ज़मीन जिसका कुल लंबाई पूर्व-पश्चिम सोलह गज़ और चौड़ाई

उत्तर-दक्षिण छह गज़ है, नौ रुपये की कीमत पर उमर के हाथ बेच दी और उसका सत्यापन करा लिया। बैनामा (बिक्री पत्र) लिखते समय शरई सीमा, विक्रेता की शेष ज़मीन के बजाय स्पष्ट रूप से गलत तरीके से मकान का दरवाज़ा लिख दी गई।

---

1 दुर्रे मुख्तार शरह तनवीरुल अबसार, किताबुल बुयू, बाबुल बेअल फासिद, मकतबा मुजतबाई दिल्ली 2/23 2 फ़तवा खैरिया, किताबुल हिबा, दारुल मारिफ़ा बेरुत 2/111

دینا بھی نہیں پایا گیا اور جو کچھ ہو چکا وہ نفع نہیں دے گا جیسا کہ پہلے گزر گیا ہے۔ (ت) یہ حال تو مکان کا ہے ، رہے وہ پندرہ روپے چار آنے ماہوار، اس سے اگر مراد اپنی کوئی جائداداتی توفیر کی ہو تو اس کا حال مثل حال مکان ہے کہ گزر اور اگر کوئی تنخواہ مراد ہو جو ان کو کسی نوکری کی اجرت میں ملتی ہے تو اس کا حال حال مکان سے بدتر ہے کہ وہ خود ہنوز معدوم ہے تو یہ بیع معدوم بالعدوم ہوئی ، اور اگر وہ تنخواہ محض عطیہ حاکم بطور منصب و جاگیر ہے تو اس سے بھی بدتر حالت ہے کہ وہ خود ان کے اختیار ہی کی نہیں ، بہر حال یہ معاوضہ باطل محض ہے اور ہاجرہ کو اس کے ذریعہ سے کوئی استحقاق مطالبہ نہیں ، دستاویز کہ زید و ہندہ نے لکھی اس کی پوری نقل سائل نے نہ بھیجی جس سے یہ معلوم ہوتا کہ انہوں مہر کی جو کفالت کی ہے وہ بھی شرعاً صحیح ہے یا نہیں، نہ اس سے سائل کا سوال ہے لہذا اس سے بحث کی حاجت نہیں، واللہ تعالٰی اعلم۔ (۲) آئندہ تنخواہ کی بیع و ہبہ دونوں کو باطل کہ وہ معدوم ہے اور معدوم نہ بیع ہو سکتا ہے نہ ہبہ، تنویر الابصار میں ہے: بطل بیع المعدوم (معدوم کی بیع باطل ہے۔ ت) فتاوٰی خیریہ میں ہے:

وبهذا علم عدم صحة هبة ما سيتحصل من محصول القريتين بالاولى لان الواهب نفسه لم يقبضه بعد فكيف يملكه وهذا ظاهر والله تعالى اعلم.

اور اس سے معلوم ہوگیا کہ دو قریوں کی آمدنی سے حاصل شدہ شئی کا ہبہ بدرجہ اولٰی صحیح نہیں کیونکہ وہ خود واہب نے ابھی قبضہ نہیں کیا تو وہ اس کا مالک کیسے بن سکتا ہے اور یہ ظاہر ہے اللہ خوب جانتا ہے۔ (ت)

مسئلہ ۳۶: از ریاست رامپور محلہ راجدوارہ متصل مسجد مولوی حیدر علی صاحب مرحوم مرسلہ مظہر حسین خاں ولد مولوی عبدالعلی خاں مرحوم ۶ رجب ۱۳۲۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس باب میں کہ زید نے ایک قطعہ اراضی تعدادی چوبیس درعہ جس کا طول جنوباً شمالاً چھ درعہ و عرض شرقاً غرباً چار درعہ اراضی مکسر مملوکہ خود جس کا طول شرقاً غرباً سولہ گز و عرض جنوباً شمالاً چھ گز ہے بقیمت مبلغ نو روپیہ کے بدستِ عمر بیچ کر کے بعینہ تصدیق کرادیا بوقت تحریر بیعنامہ حد شرعی بجائے بقیہ اراضی بائع کے صریح غلط طور پر دروازہ مکان

---

1 در مختار شرح تنویر الابصار کتاب البیوع باب البیع الفاسد، مکتبہ مجتبائی دہلی ۲/ ۲۳ 2 فتاویٰ خیریة کتاب الهبة دار المعرفة بیروت ۲/ ۱۱۱

Fatawa Razawiya Volume 17 (17)

Khaled was written down, although the door of Khaled's house, sturdy and sound, cannot belong to the seller's entire owned plot because the end of the entire plot owned by the seller is at the boundary of ninety-six (96) yards, where there are also passage lands and houses. The door of Khaled's house is after the passage lands. In the northern boundary, instead of passage houses, it was also clearly incorrectly written as the back of Khaled's house and the door of Hindah's houses, whereas the back of Khaled's house is after the passage land and Hindah's house door is located at a great distance. Due to this error in writing boundaries, while the measurement of width and length of the sold land is specified in the sale deed, and the current rate of land and the agreed price of nine rupees can only be for twenty-four yards, not for ninety-six yards. Considering the boundaries, besides the seller's land, the common passage way of the neighborhood residents also gets included in the sold property, the sale of which is not legally permissible. Thus, in the above situation, will the sold property legally be determined as twenty-four yards of land, or the entire plot of ninety-six yards owned by the seller along with the eastern and northern passage lands of the neighborhood residents? Please state and be rewarded.

Answer: The sale deeds and the claim and response petitions have been observed. If the sale deeds are looked at, the boundaries are written consistently and clearly in all of them by consensus, and there is no mention of a rate per 6 yards anywhere in them. In such a situation, the entire mentioned land, which the first seller inherited from his maternal uncle, will be considered sold. If the paths to other houses are also included within the boundaries, they will be relinquished upon the legal recourse of the owners; the seller cannot use this as an argument. Nor can writing the quantity of sale as 44 yards and its length as 6 yards and width as 4 yards in the sale deeds be of any use when the restriction of 6 per yard is not present anywhere in the sale deed. It is stated in Durr-ul-Mukhtar:

(Arabic)	**(Urdu Translation)**
If one sells something measured by cubits on the condition that it is a hundred cubits, the buyer takes the lesser amount for the full price or leaves it, and takes the greater amount without the seller having an option. This	If measured land is sold on the condition that, for example, it is one hundred yards, then the buyer may take the lesser amount for the full price or leave it, and he will take the greater amount without the seller having an option. A 'dhira' (yard) is a

(Arabic)

is because the cubit is a description of its parts, contrary to the quantity, and a description is not countered by any part of the price unless it was intended by direct reference, as stated by his saying: 'And if he says each cubit is for a dirham'.

Page 124 of 715

(Urdu Translation)

description because if it is not kept whole, it is considered a defect. This does not correspond to any part of the price in the ruling unless the description is intended by reference, as the author explained with his statement that if the seller...

खालिद लिख दिया गया, हालाँकि खालिद के मकान का दरवाज़ा मज़बूत और सही है, वह बेचने वाले के पूरे मालिकाना भूखंड का भी हिस्सा नहीं हो सकता, क्योंकि बेचने वाले के मालिकाना भूखंड का अंत छियानवे (96) गज़ की सीमा पर है, जहाँ रास्ते की ज़मीन और मकान भी हैं। खालिद के मकान का दरवाज़ा रास्ते की ज़मीन के बाद है। उत्तरी सीमा में, रास्ते के मकानों के बजाय, स्पष्ट रूप से गलत तरीके से खालिद के मकान का पिछला हिस्सा और हिंदा के मकानों का दरवाज़ा लिख दिया गया, जबकि खालिद के मकान का पिछला हिस्सा रास्ते की ज़मीन के बाद है और हिंदा के मकान का दरवाज़ा बहुत दूरी पर स्थित है। सीमाओं को लिखने में इस गलती के कारण, जबकि बैनामा (बिक्री पत्र) में बेची गई ज़मीन की माप, चौड़ाई और लंबाई का स्पष्ट उल्लेख और निर्धारण है, और ज़मीन की मौजूदा दर और इकरारशुदा नौ रुपये की कीमत केवल चौबीस गज़ के लिए हो सकती है, न कि छियानवे गज़ के लिए। और सीमाओं के विचार से, बेचने वाले की ज़मीन के अलावा, मोहल्ले वालों का साझा रास्ता भी बेची गई संपत्ति में शामिल हो जाता है, जिसकी बिक्री कानूनी तौर पर जायज़ नहीं है। अतः उपरोक्त स्थिति में, क्या बेची गई संपत्ति कानूनी रूप से वही चौबीस गज़ ज़मीन मानी जाएगी, या बेचने वाले का पूरा छियानवे गज़ का मालिकाना भूखंड, मोहल्ले वालों के पूर्वी और उत्तरी रास्ते की ज़मीन के साथ? बयान करें और पुण्य कमाएं।

उत्तर: बैनामे और अर्ज़ी दावा व जवाब देखे गए, अगर बैनामों पर गौर किया जाए तो उनमें सीमाएं सर्वसम्मति से एक समान साफ़-साफ़ लिखी हुई हैं, और उनमें कहीं भी 6 गज़ की दर का ज़िक्र नहीं है। ऐसी स्थिति में, वह पूरी ज़मीन, जो पहले बेचने वाले को उसके मामा से विरासत में मिली थी, बिकी हुई मानी जाएगी। अगर सीमाओं में दूसरे मकानों के रास्ते भी शामिल हो गए हैं, तो मालिकों की कानूनी कार्यवाही पर वे छोड़ दिए जाएंगे; बेचने वाला इससे तर्क नहीं दे सकता। न ही बैनामों में बेची गई मात्रा 44 गज़ और उसकी लंबाई 6 गज़ और चौड़ाई 4 गज़ लिखा होना कुछ उपयोगी हो सकता है, जबकि प्रति गज़ 6 की शर्त बैनामे में कहीं नहीं है। दुर्रे मुख़्तार में है:

(अरबी)	**(उर्दू अनुवाद)**
"यदि उसने मापी गई वस्तु को इस शर्त पर बेचा कि वह सौ हाथ है, तो खरीदार कम मात्रा को पूरी कीमत पर ले ले या छोड़ दे, और अधिक मात्रा	अगर मापी गई ज़मीन को इस शर्त पर बेचा कि उदाहरण के लिए यह सौ गज़ है, तो खरीदार कम को पूरी कीमत पर ले या छोड़ दे, और विक्रेता के

(अरबी)

को विक्रेता के विकल्प के बिना ले ले। क्योंकि माप उसके हिस्सों का एक वर्णन है, मात्रा के विपरीत, और वर्णन के बदले कीमत का कोई हिस्सा नहीं होता जब तक कि वह सीधे तौर पर अभिप्रेत न हो, जैसा कि उन्होंने अपने इस कथन से व्यक्त किया है: 'और यदि वह कहे कि प्रत्येक हाथ एक दिरहम के बदले है'।"

पेज 124 ऑफ 715

(उर्दू अनुवाद)

विकल्प के बिना अधिक ले लेगा। ज़िरा यानी गज़ एक 'वस्फ़' (गुण/विशेषण) है क्योंकि इसे पूरा न रखने पर वह दोष माना जाता है। यह हुक्म के मुक़ाबले में क़ीमत का कोई हिस्सा नहीं होता, मगर जबकि वस्फ़ से संदर्भ से उद्देश्य हो, जैसा कि लेखक ने अपने इस कथन से बयान फ़रमाया कि अगर विक्रेता...

خالد تحریر ہو گیا حالانکہ دروازہ مکان خالد محکم و صحیح کل قطعہ مملوکہ بائع کی بھی نہیں ہو سکتی ہے کیونکہ منتہائے کل قطعہ اراضی مملوکہ بائع تعداد میں چھیانوے ۹۶ درعہ کے حد پر بھی اراضی مرور مکانات ہے ، دروازہ مکان خالد بعد اراضی مرور کے ہے اور حد شمالی میں بجائے مرور مکانات صریح طور پر بھی غلط پچھیت مکان خالد دروازہ مکانات ہندہ تحریر ہو گیا حالانکہ پچھیت مکان خالد بعد اراضی مرور کے اور دروازہ مکان ہندہ بہت فاصلہ پر واقع ہے اس غلطی تحریر حدود سے جبکہ بیعنامہ میں پیمائش و عرض و طول اراضی مبیعہ کی صراحت و تعین ہے اور شرح مقام اراضی موجودہ وقت اور اقرار یافتہ کے اس نو روپیہ قیمت صرف چوبیس درعہ کے ہو سکتی ہے نہ کہ چھیانوے درعہ کے اور حدود کے اعتبار سے علاوہ اراضی بائع کے راہ مرور مشترکہ محلہ داران بھی داخل مبیعہ ہو جاتا ہے جس کی بیع شرعاً جائز نہیں ہے پس صورت بالا شرعاً مبیعہ وہی چوبیس درعہ اراضی قرار پائے گی یا کہ کل قطعہ چھیانوے درعہ اراضی مملوکہ بائع مع اراضی مرور شرقی و شمالی محلہ داران۔ بینوا توجروا۔

الجواب: بیعنامے اور عرضی دعوی و جواب ملاحظہ ہوئے ، اگر بیعناموں پر نظر ہو تو ان میں حدود بالاتفاق یکساں صاف صاف مکتوب ہیں، اور ان میں شرح ۶ گز کا کہیں ذکر نہیں، ایسی حالت میں کل زمین مذکور کہ بائع اول کو اس کے ماموں سے وارثہ پہنچی بیع سمجھی جائے گی ، حدود میں اگر مکانات دیگر کے راستے بھی داخل ہو گئے ہیں مالکوں کی چارہ جوئی پر واگذاشت ہو جائیں گے بائع اس سے استدلال نہیں کر سکتا نہ بیعناموں میں مقدار مبیع ۴۴ گز اور اس کا طول ۶ گز عرض ۴ گز لکھا ہونا کچھ مفید ہو سکتا ہے جبکہ فی گز ۶ کی قید بیعنامہ میں کہیں نہیں ، درمختار میں ہے :

(عربی)	(اردو ترجمہ)
ان باع المذروع علی انه مائة ذراع اخذ المشتری الاقل بکل الثمن او ترك واخذ الاکثر بلا خیار للبائع لان الذرع وصف لتعبیه بالتبعیض ضد القدر والوصف لا یقابله شیئ من الثمن الا اذا کان مقصودا بالتناول کما افاده بقوله و ان قال کل ذراع بدرہم	اگر مدروع کو اس شرط پر بیچا کہ مثلاً یہ سو گز ہے تو مشتری اقل کو پوری قیمت سے لے یا چھوڑ دے اور اکثر بلاخیار بائع لے لے گا ذراع یعنی گز وصف ہے کیونکہ سالم نہ رکھنے پر وہ عیب قرار پاتا ہے یہ حکم کے مقابلے میں ثمن کا کوئی حصہ نہیں ہوتا مگر جبکہ وصف تناول سے مقصود ہو جیسا کہ مصنف نے اپنے اس قول سے اس کو بیان فرمایا کہ اگر بائع

Fatawa Razawiyya Volume 17 (17)

Taking every yard for a dirham or canceling it (Multaqata). He said that every yard is in exchange for one dirham, so the buyer should take every yard for a dirham or cancel the sale. (Multaqata) (T)

However, in pure Shariah, the valid contract is what the contracting parties have said to each other verbally; if something contrary to that is written in a document, it will not be valid. It is stated in Fatawa Khayriyya:

What matters is what the endower (waqif) spoke, not what the scribe wrote. Consideration is given to what the endower said verbally, not what the scribe wrote. (T)

So if it is proven by just witnesses that in the verbal contract, the price per yard was specified and accordingly 44 yards were sold for 9 rupees, then if the direction/ location of the 44 yards was also determined, as is inferred from some statements of the present petition, that these very 44 yards from the western side were sold, then the buyer's possession of the remainder is void. And if there was no determination, as mentioned in the sale description in the petition up to that time, then this sale became void (fasid) due to ambiguity (jahalat).

Because yardage only applies to something specified, so it is specified but its location is unknown, not joint (musha'), as in Radd al-Muhtar. Because yardage applies to something specified, and the measured part is specified but its location is unknown, not unspecified, as is in Radd al-Muhtar (T).

It is in Tanwir al-Absar: The sale of ten yards from a hundred yards of a house is void. Selling ten yards out of a hundred yards of a house is void. (T)

Yes, if the specification was made within the contract assembly (majlis al-aqd), the sale would have been valid because "the assembly brings together the words" (because the assembly is a collector of words. T). Similarly, if after the assembly, that void contract was abandoned and the seller gave 44 specific yards from one side to the buyer and he accepted them, it would also become valid. It is in Durr al-Mukhtar:

---

1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Mujtabai Press Delhi, 2/ 7 & 8.
2. Fatawa Khayriyya, Kitab al-Waqf, Dar al-Ma'rifah Beirut, 1/ 139-140.
3. Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/ 31-32.

4. Al-Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Kitab al-Buyu', Mujtabai Press Delhi, 8/2.

फतावा रज़विया जिल्द 17 (17)

हर हाथ (गज़) एक दिरहम के बदले में लेना या रद्द करना (मुल्तकाता)। उसने कहा कि हर गज़ एक दिरहम के बदले में है, तो खरीदार हर गज़ को एक दिरहम के बदले में ले ले या बिक्री रद्द कर दे। (मुल्तकाता) (त)

लेकिन पाक शरीयत में वही अनुबंध मान्य है जो अनुबंध करने वालों ने आपस में ज़बानी तौर पर कहा हो; कागज़ में उसके खिलाफ कुछ लिखा हो तो वह मान्य नहीं होगा। फतावा खैरिया में है:

महत्व उसका है जो वक्फ करने वाले (वाकिफ) ने ज़बान से कहा, न कि जो लेखक ने लिखा। विचार उस पर किया जाता है जो वाकिफ ने ज़बान से कहा, न कि जो लेखक ने लिखा। (त)

तो अगर न्यायप्रिय गवाहों से यह साबित हो जाए कि ज़बानी अनुबंध में प्रति गज़ की स्पष्टता थी और उसी हिसाब से 44 गज़ (9 रूपए) में बेचे गए थे, तो अगर 44 गज़ की दिशा भी तय हो गई थी, जैसा कि अब अर्जी के कुछ बयानों से पता चलता है, कि यही 44 गज़ पश्चिमी दिशा से बेचे गए, तो बाकी पर खरीदार का कब्ज़ा अमान्य है। और अगर निर्धारण नहीं था जैसा कि उस समय तक अर्जी के बिक्री विवरण में है, तो यह बिक्री अज्ञानता (जहालत) के कारण अमान्य (फासिद) हो गई।

क्योंकि 'ज़िरा' (हाथ/गज़) केवल विशिष्ट चीज़ में लागू होता है, अतः वह विशिष्ट है लेकिन उसका स्थान अज्ञात है, न कि अविभाजित (मुशाअ), जैसा कि रद्दुल मुहतार में है। क्योंकि गज़ का माप विशिष्ट चीज़ में होता है और मापा गया हिस्सा विशिष्ट है लेकिन उसका स्थान अज्ञात है, न कि अविशिष्ट जैसा कि रद्दुल मुहतार में है (त)।

तन्वीरुल अब्सार में है: एक घर के सौ गज़ में से दस गज़ की बिक्री अमान्य है। घर के सौ गज़ में से दस गज़ की बिक्री फासिद है। (त)

हाँ, अगर अनुबंध की सभा (मजलिस-ए-अक़्द) के भीतर ही निर्धारण कर दिया गया था, तो बिक्री सही हो जाती क्योंकि "सभा शब्दों को एकत्रित करती है" (क्योंकि सभा शब्दों को जमा करने वाली होती है। त)। इसी तरह अगर सभा के बाद उस फासिद अनुबंध को छोड़कर विक्रेता ने एक तरफ से 44 विशिष्ट गज़ खरीदार को दे दिए और उसने ले लिए, तो भी सही हो गई, दुर्र-ए-मुख्तार में है:

---

1. दुर्रे मुख्तार किताबुल बुयू, मतबा मुजतबाई दिल्ली 2/ 7 और 8।

2. फतावा खैरिया किताबुल वक्फ, दारुल मारिफ़ा बेरुत 1/ 139-140।

3. रद्दुल मुहतार किताबुल बुयू, दार इहयाउत तुराथ अल-अरबी बेरुत 4/ 31-32।

4. अल-दुर्रुल मुख्तार शरह तन्वीरुल अब्सार किताबुल बुयू, मतबा मुजतबाई दिल्ली 8/2।

पृष्ठ 125/715

اخذ کل ذراع ہم او فسخ (ملتقطاً) نے یوں کہا کہ ہر گز ایک درہم کے بدلے میں ہے تو مشتری ہر گز درہم کے بدلے میں لے لے یا بیع فسخ کر دے۔ (ملتقطاً) (ت)

مگر شرع مطہر میں عقد معتبر وہ ہے جو عاقدین نے باہم زبان سے کہا کاغذ میں اس کے خلاف کچھ لکھا جائے معتبر نہ ہوگا، فتاوٰی خیریہ میں ہے:

العبرۃ بما تلفظ بہ الواقف لا لما کتب الکاتب - اعتبار اس کا ہے جو واقف نے زبان سے کہا، نہ اس کا جو کاتب نے لکھا۔ (ت)

تو اگر گواہان عادل سے ثابت ہو جائے کہ عقد زبانی میں فی گز کی تصریح تھی اور اسی حساب سے ۴۴ گز (۹ لعہ) روپے کو بیع ہوئی تو اگر ۴۴ گز مبیع کی تعیین سمت بھی ہو گئی تھی جیسا کہ اب عرضی دعوٰی کے بعض بیانوں سے مستفاد ہے تو یہی ۴۴ گز جانب غربی سے بیع ہوئی باقی پر مشتری کا قبضہ باطل ہے اور اگر تعیین نہ تھی جیسا کہ بیان بیع میں کہ عرضی دعوٰی میں ہے اس وقت تک نہیں تو یہ بیع بوجہ جہالت فاسد ہوئی۔

لان الذراع انما یحل فی المعین فھو معین لکنہ مجھول الموضع لا مشاع کما فی ردالمحتار - اس لئے کہ ذراع تو معین میں جاری ہوتا ہے اور مذروع معین ہے لیکن مجہول الموضع ہے نہ کہ غیر معین جیسا کہ ردالمحتار میں ہے (ت)

تنویر الابصار میں ہے: فسد بیع عشرۃ اذرع من مائۃ ذراع من دار - گھر کے سو گز میں سے دس گز کی بیع فاسد ہے۔ (ت)

ہاں اگر مجلس عقد کے اندر تعیین کر دی تھی تو بیع صحیح ہو گئی لان المجلس یجمع الکلمات (کیونکہ مجلس جامع کلمات ہوتی ہے۔ ت) اسی طرح اگر بعد مجلس اس عقد فاسد کو ترک کر کے ایک طرف سے ۴۴ گز معین بائع نے مشتری کو دے اور اس نے لئے تو بھی صحیح ہو گئی، درمختار میں ہے:

---

1 درمختار کتاب البیوع مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۷ و ۸ 2 فتاوی خیریہ کتاب الوقف دارالمعرفۃ بیروت ۱/ ۱۴۰-۱۳۹ 3 ردالمحتار کتاب البیوع داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۳۱-۳۲ 4 الدرالمختار شرح تنویر الابصار کتاب البیوع مطبع مجتبائی دہلی ۸/۲

Fatawa Razawiyya Volume 17

[Boxed Text] Arabic: It is appropriate that the sale transforms into a valid one if the specification occurs within the session of the contract. If the specification occurs after the session, it will be a sale by mutual delivery (Bay' al-Ta'ati). Nahr. Urdu: And it is appropriate that the sale transforms into a valid one if the specification occurs in the session of the contract, and if the specification is after the session, then it will be a sale by mutual delivery. Nahr (T).

In these cases too, only the same 72 yards were specified; the buyer's possession of the rest is void. All this, i.e., taking witnesses from the seller and relying on their testimony, is in the state when the seller, seeing the second buyer's disposals in the remaining 72 yards for a long period, did not remain silent. And if the situation is as stated by the second buyer—that he built a veranda, tiled roof, and platform on the entire land from that very time, and the sellers themselves stood by and had the foundations etc. laid, which has been nearly eight years ago—then in this case, the seller's claim will not be heard at all.

[Boxed Text] Arabic: Because the scholars gave a decree definitively to cut off deception and corrupt desires, as mentioned in 'al-Uqud al-Durriyya', 'Mu'in al-Mufti', and others. And Allah Almighty knows best. Urdu: Due to this fatwa of the scholars which they gave to cut off deception and corrupt desires, as it is in 'al-Uqud al-Durriyya' and 'Mu'in al-Mufti' etc., and Allah Almighty knows best. (T).

Issue 73: From Pilibhit, Mohalla Muhammad Sher, submitted by Mr. Qamar-ud-Din, 7 Safar-ul-Muzaffar 1331 AH. What do the scholars of religion and the jurists of the firm Sharia say regarding this issue: a person wants to give his goods for commission and sell them in a shop, and wants an advance payment from the shopkeeper for the collected goods, saying 'when it is sold, we will settle the account at that time's rate'. Is it permissible to give this advance money or not?

The Answer: If he takes it 'on account' as a loan, he can take it with the shopkeeper's consent; he cannot coerce him. And if he takes the price of that commodity from the shopkeeper and makes it a condition that any increase or decrease will be accounted for upon sale, then this is forbidden (haram). And Allah Almighty knows best, and His knowledge, may His glory be magnified, is most complete and most perfect.

Footnotes: 1. Al-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Matba' Mujtabai Delhi, 2/8 2. Al-Uqud al-Durriyya fi Tanqih al-Fatawa al-Hamidiyya, Kitab al-Da'wa, Arg Bazaar Qandahar Afghanistan, 2/3

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

[बॉक्स टेक्स्ट] अरबी: और उचित है कि बिक्री वैधता की ओर मुड़ जाए यदि निर्धारण अनुबंध की सभा में हो, और यदि निर्धारण सभा के बाद हो तो यह आपसी लेन-देन (बै-ए-तआती) द्वारा बिक्री होगी। नह्र। उर्दू: और उचित है कि बिक्री वैधता की ओर मुड़ जाए अगर तईन (निर्धारण) मजलिस-ए-अक्द (अनुबंध की सभा) में हो और अगर तईन मजलिस के बाद हो तो बै-ए-बुलतआती होगी। नह्र (त)।

इन सूरतों में भी वही 72 गज़ मुअ़य्यन (निश्चित) हुई, बाक़ी पर खरीदार का क़ब्ज़ा बातिल (अमान्य) है। यह सब यानी विक्रेता से गवाह लेना और उनकी गवाही पर भरोसा करना उस हालत में है जब बाक़ी 72 गज़ में दूसरे खरीदार के तसर्रुफ़ात (उपयोग) मुद्दत-ए-दराज़ (लंबे समय) से विक्रेता ने देखकर सुकूत (चुप्पी) न किया हो, और अगर ऐसा है जैसा दूसरे खरीदार का बयान है कि उसी वक़्त से उसने दालान और खपरैल और चबूतरा कुल ज़मीन में बनवा लिया और बाएओं (विक्रेताओं) ने खुद खड़े होकर बुनियाद वग़ैरा क़ायम करा दी जिसको अर्सा क़रीब आठ साल का हो गया तो इस सूरत में दा'वा-ए-बाएअ (विक्रेता का दावा) अस्लन क़ाबिल-ए-समाअत (सुनने योग्य) न होगा।

[बॉक्स टेक्स्ट] अरबी: क्योंकि विद्वानों ने धोखे और भ्रष्ट इच्छाओं को निश्चित रूप से काटने के लिए फ़तवा दिया है जैसा कि 'उक़ूद अद-दुरिया' और 'मुईन अल-मुफ़्ती' आदि में है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। उर्दू: उलमा के इस फ़तवे की वजह से जो उन्होंने धोका दही और फासिद ख़्वाहिशों को मुनक़ता (खत्म) करने के लिए दिया है जैसा कि उक़ूद अद-दुरिया और मुईन अल-मुफ़्ती वग़ैरा में है, वल्लाह तआला अअ़लम। (त)

मसला 73: पीलीभीत, मोहल्ला मुहम्मद शेर से, प्रेषक जनाब क़मरुद्दीन साहब, 7 सफ़र-उल-मुज़फ़्फ़र 1331 हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलमा-ए-दीन व मुफ़्तियान-ए-शरअ़-ए-मतीन इस मसले में कि एक शख़्स अपना माल आढ़त में देकर दुकान में बेचना चाहता है और उससे रुपया माल-ए-जमा शुदा का पेशगी (एडवांस) चाहता है और कहता है कि जब फ़रोख़्त (बिक) हो जाएगा तो उस वक़्त का हम और तुम हिसाब कर लेंगे, यह रुपया पेशगी देना जायज़ है या नहीं?

अल-जवाब: अगर अ़ली-अल-हिसाब बत़ौर-ए-क़र्ज़ लेता है तो दुकानदार की मर्ज़ी से ले सकता है इस पर जब्र (ज़बरदस्ती) नहीं कर सकता और अगर दुकानदार से उस माल की क़ीमत लेता और यह

शर्त करता कि फ़रोख़्त पर कमी बेशी का हिसाब हो जाएगा तो यह हराम है। वल्लाह तआला अअ़लम व इल्मुहू जल्ला मजदूहू अतम व अहकम।

पाद-टिप्पणियाँ: 1. अल-दुर्र अल-मुख्तार, किताब अल-बुयू, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 2/8 2. अल-उक़ूद अल-दुरिया फी तनक़ीह अल-फ़तावा अल-हामिदिया, किताब अल-दा'वा, अर्ग बाज़ार कंधार अफ़गानिस्तान, 2/3

[Boxed Text] وینبغی انقلابہ صحیحا لو فی المجلس ولو بعدہ فبیع بالمقاطی، نہر 1- اور لائق ہے کہ بیع صحت کی طرف منقلب ہوجائے اگر تعیین مجلس عقد میں ہو اور اگر تعیین مجلس کے بعد ہو تو بیع بالتعاطی ہوگی۔ نہر (ت)

ان صورتوں میں بھی وہی ۷۲ گز معین ہوئی باقی پر مشتری کا قبضہ باطل ہے یہ سب یعنی بائع سے گواہ لینا اور ان کی گواہی پر اعتماد کرنا اس حالت میں ہے کہ بقیہ ۷۲ گز میں مشتری ثانی کے تصرفات مدت دراز سے بائع نے دیکھ کر سکوت نہ کیا ہو، اور اگر ایسا ہے جیسا مشتری ثانی کا بیان ہے کہ اسی وقت سے اس نے دالان اور کھپریل اور چبوترہ کل زمین میں بنوالیا اور بائعوں نے خود کھڑے ہو کر بنیاد وغیرہ قائم کرادی جس کو عرصہ قریب آٹھ سال کا ہو گیا تو اس صورت میں دعوٰی بائع اصلاً قابل سماعت نہ ہوگا۔

[Boxed Text] لما افتی بہ العلماء قطعاً للتزویر والاطماع الفاسدۃ کما فی العقود الدریۃ 2 ومعین المفتی وغیرھما۔ واللہ تعالٰی اعلم- علماء کے اس فتوٰی کی وجہ سے جو انہوں نے دھوکہ دہی اور فاسد خواہشوں کو منقطع کرنے کے لئے دیا ہے جیسا کہ عقود الدریہ اور معین المفتی وغیرہ میں ہے، واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۷۳: از پیلی بھیت محلہ محمد شیر مسئولہ جناب قمر الدین صاحب ۷ صفر المظفر ۱۳۳۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص اپنا مال آڑھت میں دے کر دکان میں بیچنا چاہتا ہے اور اس سے روپیہ مال جمع شدہ کا پیشگی چاہتا ہے اور کہتا ہے کہ

جب فروخت ہوجائے گا تو اس وقت کا ہم اور تم حساب کرلیں گے، یہ روپیہ پیشگی دینا جائز ہے یا نہیں؟

الجواب: اگر علی الحساب بطور قرض لیتا ہے تو دکاندار کی مرضی سے لے سکتا ہے اس پر جبر نہیں کر سکتا اور اگر دکاندار سے اس مال کی قیمت لیتا اور یہ شرط کرتا کہ فروخت پر کمی بیشی کا حساب ہوجائے گا تو یہ حرام ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم۔

حواشی: 1 الدر المختار کتاب البیوع مطبع مجتبائی دہلی ۸/۲ 2 العقود الدریۃ فی تنقیح الفتاویٰ الحامدیۃ کتاب الدعویٰ ارگ بازار قندھار افغانستان ۲/ ۳

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

Problem 38: Submitted by Nawab Wazir Ahmad Khan Sahib of Baharipur, Bareilly - 12 Jumadi al-Akhir 1331 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: A deed of sale for an item is written with usual customary words, and at the end, this sentence is added: "The execution of this sale deed will take effect after such-and-such period. The buyer will be authorized to take possession and record mutation after the expiry of the aforementioned period. If the buyer takes possession and records mutation during this period, he will be liable to pay, in addition to the purchase price, the savings/profit of that period." So, will the word "Biat" (I have sold) already written in the document prevail, or this final sentence? State the ruling and you shall be rewarded.

Answer: Both sentences will have their own effect. The effect of "Biat" (I have sold) is that the sale has occurred, and the effect of this corrupt (fasid) condition is that the sale became corrupt and forbidden (haram). It is obligatory upon both parties to rescind (cancel) it. If they do not, the Shari'ah authority will forcibly cancel it. Neither can the buyer take the sold item nor can the seller take the price. If, with the seller's consent, the buyer takes possession of the sold item, he will become its owner according to the first sentence. However, according to the second sentence, that ownership will be "mal-e-khabeeth" (impure/unlawful property), and it will still be obligatory upon him to rescind the sale and return the item. Yes, if after taking possession with consent, the buyer executes a valid sale, gift, debt settlement, endowment (waqf), or will to someone else, then although the buyer will be sinful, the sale will now become effective and cannot be rescinded. Even then, the buyer will not be entitled to the originally agreed-upon price from him; rather, he will receive the "qimat" (market value), meaning what the goods are worth at market rates. For example, if an item was bought for five and a half thousand but its market rate is four thousand, then only four thousand will be payable; the seller cannot take more than that. This all applies if the original sale was made on this condition. If the verbal agreement of "I sold, I bought" happened earlier without this condition of non-execution for a certain period, and it was written into the sale deed later, then it holds no weight. The sale became valid, effective, and binding immediately at the time of the contract. From that moment, the buyer became authorized to take possession of the item by paying the agreed-upon price, even without the seller's consent. That condition of paying extra for a certain period is purely void, rejected,

and unheard of. Not a single penny more than the purchase price shall be paid. Allah knows best.

Problem 39: From Sarniyan, District Bareilly, sent by Amir Ali Sahib Qadri - 2 Rajab 1331 AH. How is it to argue and inflate the price while buying goods?

फतावा रज़विया (खण्ड 17)

मसाला 38: प्रेषक नवाब वज़ीर अहमद ख़ान साहब बहरीपुर, बरेली - 12 जमादी अल-आखिर 1331 हिजरी। उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि किसी चीज़ का बैनामा (बिक्री पत्र) सामान्य प्रथागत शब्दों के साथ लिखकर अंत में यह जुमला लिख दिया जाए कि: "इस बैनामे का लागू होना फ़लां अवधि के बाद प्रभावी होगा। खरीदार को कब्ज़ा लेने और दाखिल-खारिज (म्युटेशन) कराने का अधिकार उक्त अवधि की समाप्ति के बाद प्राप्त होगा। यदि खरीदार इस अवधि के दौरान कब्ज़ा लेकर दाखिल-खारिज कराता है, तो वह उस अवधि की बचत (मुनाफ़ा) की राशि, विक्रय मूल्य के अतिरिक्त अदा करने का पात्र होगा।" तो दस्तावेज़ में जो "बेत" (मैंने बेच दिया) लिखा जा चुका है वह प्रभावी रहेगा या अंत का यह जुमला? बयान फ़रमाएँ, सवाब पायेंगे।

अल-जवाब (उत्तर): दोनों जुमले अपना-अपना कार्य करेंगे। "बेत" (मैंने बेच दिया) का कार्य यह हुआ कि बिक्री हो गई, और इस दूषित (फासिद) शर्त का कार्य यह हुआ कि बिक्री दूषित और हराम (वर्जित) हो गई। इन दोनों पर वाजिब है कि इसे रद्द (मंसुख) करें। अगर वे ऐसा नहीं करेंगे, तो शरियत का हाकिम ज़बरदस्ती इसे रद्द करवा देगा। न खरीदार बेची गई चीज़ ले सकता है और न बेचने वाला उसकी कीमत। और अगर बेचने वाले की रज़ामंदी से खरीदार बेची गई चीज़ पर कब्ज़ा कर ले, तो पहले जुमले के हुक्म से वह उसका मालिक हो जाएगा, मगर दूसरे जुमले के हुक्म से वह स्वामित्व 'मल्क-ए-खबीस' (अशुद्ध/अवैध संपत्ति) होगा और अब भी उस पर वाजिब होगा कि बिक्री रद्द करे और चीज़ वापस कर दे। हाँ, अगर खरीदार कब्ज़ा करने के बाद रज़ामंदी से किसी दूसरे के हाथ सही बिक्री, हिबा (उपहार), कर्ज अदायगी, वक़्फ़ या वसीयत कर दे, तो यद्यपि खरीदार गुनहगार होगा, लेकिन अब वह बिक्री लागू हो जाएगी और उसे रद्द नहीं किया जा सकेगा। और अब भी खरीदार उससे विक्रय मूल्य का हकदार नहीं होगा जो आपस में तय हुआ था, बल्कि वह 'कीमत' (बाज़ार मूल्य) प्राप्त करेगा, यानी बाज़ार के भाव से वह माल जितने का हो। उदाहरण के लिए, यदि कोई चीज़ साढ़े पाँच हज़ार में खरीदी गई और बाज़ार की दर से वह चार हज़ार की है, तो चार हज़ार ही देने होंगे; बेचने वाला उससे अधिक नहीं ले सकता। यह सब उस स्थिति में है जब मूल बिक्री इसी शर्त पर हुई हो। और यदि पहले 'बेचा, खरीदा' का मौखिक सौदा बिना इस शर्त के हुआ था कि उक्त अवधि तक लागू नहीं होगा, और बाद में बिक्री पत्र में यह शर्त लिखी गई हो, तो उसका कोई महत्व नहीं है। बिक्री अनुबंध के समय ही सही, प्रभावी और अनिवार्य हो गई। उसी समय से खरीदार को अधिकार प्राप्त हो गया कि तयशुदा कीमत देकर चीज़ पर कब्ज़ा कर ले, भले ही बेचने वाला राज़ी न

हो। और वह शर्त कि इतनी अवधि का अतिरिक्त लाभ देना होगा, पूरी तरह से बातिल (अमान्य), रद्द और अस्वीकार्य है। विक्रय मूल्य से एक कौड़ी भी अधिक नहीं दी जाएगी। वल्लाहू आलम (अल्लाह बेहतर जानता है)।

मसाला 39: सरनियां, जिला बरेली से, प्रेषक अमीर अली साहब कादरी - 2 रजब 1331 हिजरी। सौदा खरीदते समय बहस करके भाव बढ़ाना कैसा है?

مسئلہ ۳۸: مسئولہ نواب وزیر احمد خان صاحب بہاری پور، بریلی ۱۲ جمادی الآخر ۱۳۳۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ کسی شے کا بیعنامہ معمولی رواجی الفاظ کے ساتھ تحریر ہو کر آخر میں یہ فقرہ لکھ دیا جائے کہ نفاذ اس بیع نامہ کا فلاں مدت کے بعد عمل میں آئے گا مشتری کو قبضہ لینے اور داخل خارج کرنے کا مجاز بعد انقضائے مدت مذکورہ حاصل ہوگا اگر مشتری درمیان اس مدت کے قبضہ لے کر داخل خارج کرائے گا تو اس مدت کا ما حصل توفیر زر ثمن کے علاوہ ادا کرنے کا مستوجب ہوگا تو درمیان دستاویز میں جو "بعت" لکھ چکا ہے وہ غالب رہے گا یا آخر کا یہ فقرہ؟ بینوا توجروا

الجواب: دونوں جملے اپنا اپنا عمل کرینگے، "بعت" کا یہ عمل ہوا کہ بیع ہوگئی اور اس شرط فاسد کا یہ عمل ہوا کہ بیع فاسد وحرام ہوئی ان دونوں پر واجب ہے کہ اسے فسخ کریں اگر نہ کریں گے تو حاکم شرع جبراً فسخ کرادے گا، نہ مشتری مبیع لے سکتا ہے نہ بائع ثمن، اور اگر بائع کی رضا سے مشتری مبیع پر قبضہ کرلے تو بحکم جملہ اولیٰ اس کا مالک ہوجائے گا، مگر بحکم جملہ ثانیہ وہ ملک خبیث ہوگی اور اب بھی اس پر واجب ہوگا کہ بیع فسخ کرے اور مبیع واپس کردے ہاں اگر مشتری بعد قبضہ برضائے مبیع کسی دوسرے کے ہاتھ بیع صحیح یا ہبہ یادین یا وقف یا وصیت کردے تو اگرچہ مشتری گنہگار ہوگا مگر اب وہ بیع نافذ ہوجائے گی اور اس کا فسخ نہ ہوسکے گا اور اب بھی مشتری اس سے مبیع کے ثمن کا مستحق نہ ہوگا یعنی جو معاوضہ باہم قرار پایا تھا بلکہ قیمت لے گا یعنی بازار کے بھاؤ سے وہ مال جتنے کا ہو مثلاً ایک شے ساڑھے پانچ ہزار کو خریدی اور بازار کے نرخ سے وہ چار ہزار کی ہے تو چار ہزار ہی دینا آئیں گے بائع اس سے زائد نہیں لے سکتا یہ سب اس صورت میں ہے کہ اصل بیع اسی شرط پر ہوئی ہو اور اگر پہلے فروختم

خریدم زبانی ہوئے تھے اور اس میں یہ عدم نفاذ تا مدت مذکورہ کی شرط تھی بعد کو کاغذ بیعنامہ میں لکھی گئی ہو تو اس کا کچھ اعتبار نہیں بیع صحیح و نافذ ولازم ہوگئی فورا وقت عقد اس کا نفاذ ہوگیا اسی وقت سے مشتری کو اختیار ہوگیا کہ زر ثمن جتنا باہم قرار پایا ہے دے کر مبیع پر قبضہ کرلے اگر چہ بائع کی رضا نہ ہو اور وہ شرط کہ اتنی مدت کی توفیر دینی آئے گی محض باطل و مردود و نا مسموع ہے زر ثمن سے زیادہ ایک کوڑی دینی نہ ہوگی، واللہ اعلم

مسئلہ ۳۹: از سرنیاں ضلع بریلی مرسلہ امیر علی صاحب قادری ۲ رجب ۱۳۳۱ھ سودا خریدنے میں حجت کر کے بھاؤ بڑھانا کیسا ہے؟

Fatawa Razawiyya Volume Seventeen (17)

Answer: Bargaining for a price is better, in fact, it is Sunnah, except for what is purchased for the pilgrimage journey (Hajj). In that case, it is better to give what is asked. Allah knows best.

Problem 40: What do the scholars of the religion say about this matter: Zaid bought a house in the names of his two sons, 'Amr and Bakr, in equal shares, and the sale deed is also in their names. Among them, 'Amr is an adult and Bakr is a minor. Afterwards, Zaid gave one-fourth of the same house to his brother Khalid in such a way that he had the sale deed written by 'Amr. So, what is the share of 'Amr and Bakr in the remaining house according to Sharia? Explain and be rewarded.

Answer: In Sharia, verbal discourse of buying and selling is considered; the sale deed is not considered beyond that. If the verbal purchase was not in the names of the boys—that is, if it wasn't said to "sell the house to 'Amr and Bakr"—and he [Zaid] just said, "I have bought," or used the verbal terms "kharidam farokhtam" (I buy and I sell - T.) without mentioning anyone's name, then in that case, according to Sharia, the house belongs to Zaid. Then, the sale deed Zaid wrote in his sons' names or the gift (Hiba) made to them was a gift of undivided joint property (Hiba-e-mushaa') without division. Therefore, 'Amr and Bakr did not become its owners. The sale deed in Khalid's name from 'Amr is invalid because it is from a non-owner. However, this sale depended on Zaid's permission since the original owner is Zaid. Since Zaid allowed it, the sale became effective. One-fourth of the house went to Khalid, and three-fourths remain with Zaid as before. Yes, if the original verbal purchase was in the names of 'Amr and Bakr, or if the words "kharidam farokhtam" were not used in their literal sense and there was just a discussion about the price and it was decided to "make the sale deed in the names of 'Amr and Bakr," then this sale was in the names of 'Amr and Bakr. It was completed, and the acceptance by the father of both boys was sufficient. Since 'Amr also accepted it, the sale was completed in his name as well, and both boys became owners of that house. Now, since 'Amr sold one-fourth of it, that was 'Amr's half-share being sold. In the remaining house, one-third belongs to 'Amr and two-thirds belong to Bakr. Allah knows best.

Problem 41: From Khasar, Post Office Ghattiyamar, via Wasi Ali Sahib, through Maulvi Qasim Ali Sahib, student of Madrassa Manzar-ul-Islam, 28th Eid-ul-Fitr 1332 AH.

What do the scholars of the religion say about this matter: An adulteress purchased something with money obtained from adultery. Is it permissible for her to buy it now or not?

फतावा रजविया खंड सत्रह (१७)

उत्तर: मूल-भाव करना बेहतर है, बल्कि सुन्नत है, सिवाय उस चीज़ के जो हज की यात्रा के लिए खरीदी जाए। उसमें बेहतर यह है कि जो माँगा जाए वही दे दे, और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

मसला ४०: धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: जैद ने एक घर अपने दो बेटों, अम्र और बक्र के नाम समान हिस्से में खरीदा और बिक्री विलेख (बैनामा) भी उन दोनों के नाम पर है। उनमें से अम्र वयस्क है और बक्र नाबालिग है। बाद में जैद ने उसी घर का एक चौथाई हिस्सा अपने भाई खालिद को इस तरह दिया कि अम्र से बिक्री विलेख लिखवा दिया। तो शेष घर में शरीयत के अनुसार अम्र और बक्र का हिस्सा किस प्रकार रहा? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: शरीयत में खरीद-फरोख्त की मौखिक बातचीत का महत्व है; उसके आगे बिक्री विलेख का कोई महत्व नहीं है। यदि लड़कों के नाम पर मौखिक खरीदारी नहीं हुई थी - यानी यह नहीं कहा गया था कि "घर अम्र और बक्र के हाथ बेच दो" - और उसने केवल मौखिक रूप से अपने नाम पर खरीदा या मौखिक रूप से "ख़रीदम फ़रोख़्तम" (मैं खरीदता हूँ और मैं बेचता हूँ - त.) कहा और किसी का नाम नहीं लिया, तो उस स्थिति में शरीयत के अनुसार वह घर जैद का हुआ। फिर जैद ने जो अपने बेटों के नाम बिक्री विलेख लिखा या यह उनके नाम दान (हिबा) हुआ, तो वह अविभाजित संपत्ति का दान (हिबा-ए-मुशाअ) है बिना विभाजन के। इसलिए अम्र और बक्र इसके मालिक नहीं हुए। अम्र की ओर से खालिद के नाम जो बिक्री विलेख है, वह व्यर्थ है क्योंकि वह एक गैर-मालिक की ओर से है। लेकिन यह बिक्री जैद की अनुमति पर निर्भर थी क्योंकि असली मालिक जैद है। चूंकि जैद ने इसे जायज़ रखा, इसलिए बिक्री प्रभावी हो गई। घर का एक चौथाई हिस्सा खालिद का हो गया, तीन चौथाई दस्तूर के अनुसार जैद के पास रहे। हाँ, अगर मूल मौखिक खरीदारी ही अम्र और बक्र के नाम हुई थी या मौखिक "ख़रीदम फ़रोख़्तम" के शब्दों का उनके शाब्दिक अर्थ में प्रयोग नहीं किया गया था और केवल कीमत की बातचीत होकर यह तय हुआ कि "बिक्री विलेख अम्र और बक्र के नाम कर दो", तो यह बिक्री अम्र और बक्र के नाम हुई। यह पूरी हो गई और दोनों लड़कों के पिता की स्वीकृति पर्याप्त थी। चूंकि अम्र ने भी इसे स्वीकार कर लिया था, इसलिए उसके नाम भी बिक्री पूरी हो गई और दोनों लड़के उस घर के मालिक बन गए। अब चूंकि अम्र ने उसका एक चौथाई हिस्सा बेचा, तो वह अम्र का आधा हिस्सा बेचा गया। शेष घर में एक तिहाई अम्र का रहा और दो तिहाई बक्र के, और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

मसला ४१: कस्बा खसर, डाकखाना घटियामार, वसी अली साहब के माध्यम से, मौलवी कासिम अली साहब के जरिए, छात्र मदरसा मंज़र-उल-इस्लाम, २८ ईद-उल-फितर १३३२ हिजरी।

धर्म के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि एक व्यभिचारिणी ने व्यभिचार के पैसों से कोई चीज़ खरीदी, अब उसका खरीदना जायज़ है या नहीं?

الجواب: بھاؤ کے لئے حجت کرنا بہتر ہے بلکہ سنت، سوا اس چیز کے جو سفرِ حج کے لئے خریدی جائے اس میں بہتر یہ ہے کہ جو مانگے دے دے، واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۴۰: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے ایک مکان اپنے دولڑکوں عمرو وبکر کے نام سے بحصہ مساوی کیا اور اس کا بیعنامہ بھی انھیں دونوں کے ناموں سے ہے، ان میں عمرو بالغ ہے اور بکر نابالغ ، بعد ازاں زید نے اسی مکان میں سے ایک ربع اپنے بھائی خالد کو اس طرح دلایا کہ عمرو سے بیعنامہ لکھوا دیا تو بقیہ مکان میں عمرو وبکر کا حصہ شرعاً کس طرح رہا؟ بینوا توجروا

الجواب: شرع میں گفتگوئے خرید وفروخت کا اعتبار ہے اس کے آگے بیعنامہ کا اعتبار نہیں، اگر زبانی خریداری لڑکوں کے نام نہ ہوئی یعنی یہ نہ کہا کہ مکان عمرو وبکر کے ہاتھ بیچ کر دے، اس نے کہا میں نے ان کے ہاتھ بیچ کیا بلکہ صرف اپنے نام زبانی خریدا یا زبانی خریدم فروختم (میں خریدتا ہوں اور میں فروخت کرتا ہوں ۔ت) میں کسی کا نام نہ آیا تو اس صورت میں شرعاً وہ مکان زید کا ہوا، پھر زید نے جو اپنے بیٹوں کے نام بیعنامہ لکھا یا یہ ان کے نام ہبہ ہوا اور ہبہ مشاع بلا تقسیم ہے لہٰذا عمرو وبکر اس کے مالک نہ ہوئے، بیعنامہ کہ بنام خالد جانب عمرو سے ہے لغو ہے کہ غیر مالک کی طرف سے ہے مگر یہ بیع اجازت زید پر موقوف رہی کہ اصل مالک زید ہے جبکہ زید نے اسے جائز رکھا تو بیع نافذ ہو گئی، چہارم مکان خالد کا ہوا تین ربع بدستور زید کے ہیں، ہاں اگر اصل خریداری زبانی ہی بنام عمرو وبکر ہوئی یا زبانی خریدم فروختم کے الفاظ ان کے معنی ادا ہی نہ کئے گئے صرف قیمت کی گفتگو ہو کر یہ ٹھہرا کہ بیعنامہ بنام عمرو وبکر کر دو، تو یہ بیع بنام عمرو وبکر ہوئی، تام ہو گئی اور دونوں لڑکے کے باپ کا قبول کافی

تھا، عمرو نے بھی اسے مقبول رکھا تو اس کے نام بھی بیع تام ہو گئی، اور دونوں لڑکے اس مکان کے مالک ہو گئے ، اب کہ اس کا ربع عمرو نے بیچ کیا وہ نصف حصہ عمرو بیع ہوا باقی مکان میں ایک ثلث عمرو کا رہا دو ثلث بکر کے ، واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۴۱: از کھسر ڈاکخانہ گھٹیامر سلہ وصی علی صاحب معرفت مولوی قاسم علی صاحب طالب علم مدرسہ منظر الاسلام ۲۸ عید الفطر ۱۳۳۲ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زانیہ نے زنا کے روپے سے کوئی چیز خرید کی اب اس کا خریدنا جائز ہے یا نہیں؟

Fatawa Razawiya (Volume 17)

The Answer: It will be permissible if the contract and payment have not occurred on that thing; otherwise, it should not be bought. For example, if someone showed that forbidden (Haram) money to the seller and said, "Give me such-and-such item in exchange for this," and they gave it, and they paid the same Haram money as the price, then now that thing is vile (khabith), as is the fatwa-issued saying of Imam Karkhi, as mentioned in 'al-Tanwir' and others. (And Allah Almighty knows best).

Question 42: Submitted by Muhammad Hussain Khan, son of Amin Khan, resident of Rampur state, Mohalla Stains Ganj. 7 Jumada al-Ula, Sunday, 1334 AH. What do the scholars of religion and jurists of the clear Shari'ah say on this matter: A person named Jhaou Singh had purchased his share of 8 Biswa, 6 Biswansi, 13 Kachwansi, 13 Tanwansi, 13 Nanswansi plus a fraction (i.e., the twelfth part of the total tax-free land consisting of 16 Biswa) of which he was the owner and possessor, for an amount of 268 rupees to Than Singh through a final sale. However, possession did not pass to Than Singh, and Jhaou Singh passed away. After Jhaou Singh's death, his heirs remained in possession. Subsequently, Than Singh sold the purchased land to Muhammad Hussain Khan for 600 rupees through a final sale. Is Than Singh's sale to Muhammad Hussain Khan without taking possession legally permissible or impermissible in Shari'ah? And Than Singh has paid Jhaou Singh the price for the land. That's all.

The Answer: It is permissible. It is mentioned in 'Tanwir al-Absar': (Arabic text: Sahha bay'u aqarin la yukhasha halakuhu qabla qabdihi) - The sale of immovable property, for which there is no fear of destruction before taking possession, is valid. (And Allah Almighty knows best). Translation: It is permissible to sell immovable property whose destruction is not feared before taking possession of it. And Allah Almighty knows best. (T)

Question 43: Submitted by Shaukat Ali Sahib, Mohalla Shahabad, Bareilly. 28 Jumada al-Ula, 1334 AH. What do the scholars of religion say in this matter that an item is in a sealed box, whose weight, for example...

---

1. Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Kitab al-Ghasb, Mujtabai Press, Delhi, 2/206
2. Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Kitab al-Buyu', Chapter on Disposal, Mujtabai Press, Delhi, 2/37 Page 129 of 715

उत्तर: यह जायज़ होगा यदि उस चीज़ पर अनुबंध और भुगतान एक साथ न हुए हों, अन्यथा इसे नहीं खरीदा जाना चाहिए। उदाहरण के लिए, यदि किसी ने वह हराम (वर्जित) पैसा खरीदार को दिखाकर कहा कि इसके बदले अमुक वस्तु दे दो, और उसने दे दी, और उसने वही हराम पैसा कीमत के रूप में दिया, तो अब वह वस्तु खबीस (अपवित्र) है, जैसा कि इमाम करखी का फतवा-प्राप्त कथन है, जैसा कि 'तन्वीर' आदि में है। (और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है)।

मसला ४२: प्रेषक मुहम्मद हुसैन खान पुत्र अमीन खान, निवासी रामपुर राज्य, मोहल्ला स्टेन गंज। ७ जमादी-उल-उला, रविवार, १३३४ हिजरी। धर्म के विद्वान और शरीयत के न्यायविद इस मसले में क्या कहते हैं: झाऊ सिंह नामक व्यक्ति ने अपना हिस्सा ८ बिस्वा, ६ बिस्वांसी, १३ कचवांसी, १३ तनवांसी, १३ ननवांसी और कुछ अंश (यानी कुल १६ बिस्वा माफ़ी ला-खराजी भूमि का १२वां हिस्सा) जिसका वह मालिक और काबिज था, थान सिंह को २६८ रुपये की राशि के बदले अंतिम बिक्री के माध्यम से बेच दिया। लेकिन थान सिंह को कब्जा नहीं मिला और झाऊ सिंह की मृत्यु हो गई। झाऊ सिंह की मृत्यु के बाद, उनके वारिस उस पर काबिज रहे। बाद में, थान सिंह ने खरीदी गई भूमि को मुहम्मद हुसैन खान को ६०० रुपये की राशि के बदले अंतिम बिक्री के माध्यम से बेच दिया। क्या थान सिंह का बिना कब्जा लिए मुहम्मद हुसैन खान को बेचना शरीयत की दृष्टि से जायज़ है या नाजायज़? और थान सिंह ने झाऊ सिंह को भूमि की कीमत के रूप में दे दी है। बस।

उत्तर: जायज़ है। 'तन्वीर अल-अबसार' में है: (अरबी पाठ: सह्हा बयु अक़ारिन ला युख्शा हलाकुहू क़ब्ला क़ब्दिही) - अचल संपत्ति की बिक्री, जिसके कब्जे से पहले नष्ट होने का कोई डर न हो, सही है। (और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है)। अनुवाद: अचल संपत्ति जिसके नष्ट होने का खतरा न हो, उसे कब्जे में लेने से पहले उसकी बिक्री जायज़ है, और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है। (त)

मसला ४३: प्रेषक शौकत अली साहब, मोहल्ला शाहबाद, बरेली। २८ जमादी-उल-उला, १३३४ हिजरी। धर्म के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि एक वस्तु एक बंद बक्से में है, जिसका वजन उदाहरण के लिए...

---

1. दुर्रे मुख्तार शरह तन्वीरुल अबसार, किताबुल ग़सब, मटबा मुजतबाई दिल्ली २/ २०६

2. दुर्रे मुख्तार शरह तन्वीरुल अबसार, किताबुल बुयू, फस्ल फिल तसर्रुफ़, मटबा मुजतबाई दिल्ली २/ ३७ पृष्ठ ७१५ का १२९

الجواب: جائز ہو گا کہ اگر اس چیز پر عقد و نقد جمع نہ ہوئے ہوں ورنہ خریدنا نہ چاہئے، مثلاً اس نے وہ حرام روپیہ مشتری کو دکھا کر کہا اس کے بدلے فلاں شے دے دے، اس نے دے دی، اس نے وہی حرام روپیہ قیمت میں دیا تو اب وہ شیئ خبیث ہے کما ھو قول الامام الکرخی المفتی بہ کما فی التنویر و غیرہ (جیسا کہ امام کرخی کا مفتیٰ بہ قول ہے جیسا کہ تنویر وغیرہ میں ہے، ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۴۲: مسئولہ محمد حسین خان ولد امین خان ساکن ریاست رامپور محلہ سٹین گنج ۷ جمادی الاولیٰ یکشنبہ ۱۳۳۴ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص مسمیٰ جھاؤ سنگھ نے اپنا حصہ ۸ بسوے بیگہ ۶ بسوانسی ۱۳ کچوانسی ۱۳ طوانسی ۱۳ ننسوانسی کسر زائد یعنی بارھواں حصہ از کل ملک معافی لاخراجی تعدادی ۱۶ بسوہ لیا ہے جس کا کہ وہ مالک و قابض تھا بالعوض مبلغ دوسو اڑسٹھ روپے کے بدست تھان سنگھ بیع قطعی کیا لیکن قبضہ تھان سنگھ کا نہ ہوا اور جھاؤ سنگھ فوت ہو گیا جاؤ سنگھ کے مرنے کے بعد اس کے ورثاء اس پر قابض رہے بعد ازاں تھان سنگھ نے خرید شدہ اراضی بالعوض مبلغ چھ سو روپے کے بدست محمد حسین خاں بیع قطعی کر دی، آیا تھان سنگھ کا بدست محمد حسین خاں بلا قبضہ کئے ہوئے بیع کرنا شرعاً جائز ہے یا نا جائز؟ اور تھان سنگھ نے (مارمہ سہ) بابت قیمت اراضی جھاؤ سنگھ کو دے دیئے ہیں فقط

الجواب: جائز ہے تنویر الابصار میں ہے: صح بیع عقار لا یخشی ھلاکہ قبل قبضہ ۲۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ جس مال غیر منقولہ کے تلف ہونے کا خطرہ نہ ہو اس کو قبضہ میں لینے سے پہلے اس کی بیع جائز ہے، واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۴۳: مسئولہ شوکت علی صاحب محلہ شاہ آباد بریلی ۲۸ جمادی الاولیٰ ۱۳۳۴ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شیئ سربند بکس میں ہے جس کا وزن مثلاً

---

۱ درمختار شرح تنویر الابصار کتاب الغصب مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۲۰۶ ۲ درمختار شرح تنویر الابصار کتاب البیوع فصل فی التصرف مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۳۷ Page 129 of 715

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

A specific quantity was agreed upon; Zaid made a purchase. After purchasing, when it was opened, it was not full but was found to be nearly half empty. Upon seeing this, he immediately informed the seller: "This is less; either adjust the price according to the actual goods or take it back." In this situation, is the seller obligated to take back the item or not? Explain and be rewarded.

Answer: Since the weight was specified and the item turned out to be half, the buyer shall pay half the price; the seller has no right to demand more than that. It is stated in Radd al-Muhtar:

[Arabic Box Text]: "If food is in a jar, and half of it is straw, he takes it for half of the price, because the jar is a vessel in which measurement is done, so the sold item became a specified quantity of wheat. This includes cases where the designated amount was stipulated by word or by custom. And Allah Almighty knows best."

[Urdu Explanation in Box]: When a jar of food is bought and half of it turns out to be straw, the buyer will now take it in exchange for half the price because a jar is such a vessel with which measurement is done. Thus, the item sold became a specified quantity of wheat, and this rule will cover both cases—whether the quantity was explicitly named as a condition or is so by custom. Allah Almighty knows best. (T)

Problem 244 to 245: Sent by Haji Maula Bakhsh Sahib, Shoe Merchant from Mainpuri, 21 Safar 1345 AH. (1) What do the scholars of religion and muftis of the clear Shariah say regarding this matter: Zaid bought grain during the harvest season with the intention to sell it when prices rise in a certain month. In this case, can Zaid buy the grain or not, and does any religious blame apply to him? (2) Out of Bakr's necessity, Zaid gave Bakr some cash to buy goods, saying: "Buy goods of your choice from abroad and send them in our name, and then buy those goods from our shop at a profit of one anna per rupee. If the goods are lost en route due to any reason, Zaid is responsible. If there is some loss, then according to commercial rules, that loss and the transportation expenses will be added to the cost of the goods, and Zaid will sell it to Bakr after adding his profit. If there is no loss, then the expenses incurred by Bakr in bringing the goods will simply be added to the cost of the goods." Are such sales and conditions permissible for Zaid or not? Explain and be rewarded.

Answer: (1) Such trade is permissible, and there is no harm in such an intention; he has authority over his own property.

1 Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/30 Page 130 of 715

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

एक निश्चित मात्रा तय थी, जैद ने खरीदारी की। खरीदने के बाद जब उसे खोला गया तो वह भरा हुआ नहीं था बल्कि लगभग आधा निकला। देखते ही उसने तुरंत विक्रेता को सूचित किया कि यह कम निकला है, या तो माल के अनुपात में कीमत तय करो या इसे वापस लो। इस स्थिति में क्या विक्रेता पर उस वस्तु को वापस लेना अनिवार्य है या नहीं? बयान फरमाएं पुण्य प्राप्त करें।

जवाब: चूंकि वजन निश्चित है और वह वस्तु आधी निकली तो खरीदार आधी कीमत देगा, विक्रेता को इससे अधिक का अधिकार नहीं है। रद अल-मुह्तार में है:

[अरबी बॉक्स टेक्स्ट]: "यदि अनाज एक मटके(जार) में है और उसका आधा हिस्सा भूसा निकलता है, तो वह उसे आधी कीमत पर लेता है क्योंकि मटका एक मापने वाला बर्तन है, इसलिए बेची गई वस्तु गेहूं की एक निश्चित मात्रा बन गई। इसमें वे मामले भी शामिल हैं जहाँ निर्धारित मात्रा शब्दों द्वारा या प्रथा द्वारा शर्त के रूप में हो। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।"

[बॉक्स में उर्दू स्पष्टीकरण]: जब एक घड़ा अनाज खरीदा गया और उसमें आधा भूसा निकला, तो अब खरीदार इसे आधी कीमत के बदले लेगा क्योंकि घड़ा एक ऐसा बर्तन है जिससे नाप-तौल की जाती है। इस प्रकार बेची गई वस्तु गेहूं की एक निश्चित मात्रा हो गई और यह नियम इन दोनों स्थितियों को शामिल करेगा, यानी चाहे मात्रा शब्दों में तय हो या प्रथा के अनुसार। अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 244 से 245: प्रेषक हाजी मौला बख्श साहिब, जूता विक्रेता, मैनपुरी से, 21 सफर 1345 हिजरी। (1) धर्म के विद्वान और मुफ्ती-ए-शरअ-ए-मतीन इस मामले में क्या कहते हैं कि जैद ने फसल के समय अनाज खरीदा और यह नीयत की कि फलां महीने में जब इसकी कुछ दर (कीमत) बढ़ेगी तो बेच दूंगा। तो इस स्थिति में जैद अनाज की खरीदारी कर सकता है या नहीं, और क्या उस पर कोई शरई आरोप लगता है? (2) जैद ने बक्र की जरूरत के कारण उसे कुछ नकद रुपया माल खरीदने के लिए दिया कि "तुम अपनी मर्जी का माल दूसरे शहर से खरीद कर लाओ और उसे हमारे नाम पर भेज दो, और फिर हमारी दुकान से उस माल को एक आना प्रति रुपया लाभ देकर खरीद लो। अगर रास्ते में किसी वजह से माल नष्ट हो जाए तो जैद जिम्मेदार है, और अगर कुछ नुकसान होगा तो दुकानदारी के नियम के अनुसार वह नुकसान और माल लाने का खर्च माल की लागत पर डालकर और उस पर अपना लाभ जोड़कर बक्र के हाथ बेच दिया। और अगर नुकसान नहीं हुआ तो जो खर्च

बक्र का माल लाने में लगा वह खर्च ही माल की लागत पर डाल दिया जाएगा।" तो क्या ऐसी बिक्री और शर्तें जैद के लिए जायज हैं या नहीं? बयान फरमाएं पुण्य प्राप्त करें।

जवाब: (1) ऐसा व्यापार जायज है और ऐसी नीयत में कोई हर्ज नहीं है, और उसे अपने माल पर अधिकार है।

---

1 रद अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू, दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 4/30 पृष्ठ 130 of 715

چادر من معین ہے، زید نے خرید کی، بعد خریدنے کے جب کھولا گیا تو بھرا ہوا نہ تھا بلکہ قریب نصف کے نکلا، دیکھتے ہی فوراً بائع کو اطلاع کی کہ یہ کم نکلا یا تو بقدر مال کے قیمت کرو یا واپس لو۔ اس صورت میں بائع پر اس شیئ کا پھیر لینا لازم ہے یا نہیں۔ بینوا توجروا

الجواب: جبکہ وزن معین ہے اور وہ شے نصف نکلی تو مشتری نصف قیمت دے اس سے زیادہ کا بائع کو اختیار نہیں، ردالمحتار میں ہے:

[Arabic Box]: اذا کان طعاماً في حب فاذا نصفه تبن یأخذه بنصفه الثمن لان الحب وعاء یکال فیه فصار المبیع حنطة مقدرة وشمل مااذا کان المسمی مشروطاً بلفظ او بالعادة و الله تعالیٰ اعلم۔

[Urdu Explanation in Box]: جب ایک گھڑا طعام خریدا اور نصف اس میں بھوسہ نکل آیا تو اب مشتری اس کو آدھی قیمت کے بدلے لے گا کیونکہ گھڑا ایک ایسا برتن ہے جس سے کیل کیا جاتا ہے چنانچہ مبیع ایک معین مقدار میں گندم ہو گیا اور یہ ضابطہ ان دونوں صورتوں کو شامل ہو گا یعنی چاہے تو مسمیٰ لفظاً مشروط ہو یا عادتاً ، واللہ تعالیٰ اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۲۴۴ تا ۲۴۵: مرسلہ حاجی مولا بخش صاحب جفت فروش از مین پوری ۲۱ صفر ۱۳۴۵ھ

(۱) کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید نے فصل پر غلہ خرید کیا اور یہ نیت کی کہ فلان مہینہ میں اس کی کچھ نرخ ہو فروخت کردوں گا تو اس صورت میں زید غلہ کی خریداری کرسکتا ہے یا نہیں، اور اس کے اوپر کوئی الزام شرعی تو عائد نہیں ہوتا ہے؟

(۲) زید نے بکر کو بضرورت بکر کچھ روپیہ نقد مال کے خریدنے کو دیا کہ تم اپنی مرضی کا مال دساور سے خرید کر لاؤ اور اس کو ہمارے نام روانہ کر دو، اور پھر ہماری دکان سے اس مال

کو ایک آنہ روپیہ منافع دے کر خرید لو، اگر مال راستہ میں کل کسی وجہ سے ضائع ہو جائے تو زید ذمہ دار ہے اور اگر نقصان کچھ ہو جائے گا تو بقاعدہ دکانداری وہ نقصان اور خرچ راہ مال پر ڈال کر اور اس کے اوپر اپنا منافع لگا کر بکر کے ہاتھ فروخت کردیا اور اگر نقصان نہ ہوا تو جو خرچ اس مال کے لانے میں بکر کا پڑ گیا وہ خرچ ہی اس مال پر ڈال دیا جائے گا تو ایسی بیع و شرائط زید کو جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: (۱) ایسی تجارت جائز ہے اور ایسی نیت ہی میں کوئی حرج نہیں اور اسے اپنے مال کا اختیار ہے

---

۱ ردالمحتار کتاب البیوع داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۳۰ Page 130 of 715

...whether sold at once or separately, before or after, because ownership is absolute for the disposer as long as the Shariah does not prohibit it. (t) And Allah Almighty knows best.

(2) There is no doubt about adding common expenses which are usually added to the goods by traders. If there is some loss, and it is the general habit of traders to add it to the goods, then it will be added, otherwise not. It is in Durr al-Mukhtar:

Arabic	Urdu Translation
Whatever increases in the item sold or in its value is added, Durr. Al-Ayni and others relied on the custom of traders regarding addition. And what is taken on the way through oppression (unjust taxes/tolls) is not added unless the custom is to add it. This is the principle as you have known, so let it be the point of reliance as the speech of Al-Kamal suggests. (Summarized) And Allah Almighty knows best.	Whatever increases in the item sold or in its value will be added, Durr. And Al-Ayni etc. have relied on the habit of traders to add, and that which is taken by oppression on the way will not be added unless there is a custom of adding it in practice. This is the principle as you have known, therefore, this should be relied upon as the words of Al-Kamal provide this benefit. (Summarized) And Allah Almighty knows best. (t)

Problem 46: From Lahore, Sadhuwan Mosque, sent by Pir Ji Abdul Ghaffar Sahib, May his grace increase. 25 Safar al-Muzaffar 1336 AH.

What do the scholars of religion and jurists of the firm Shariah say about this matter: Zaid and Amr are two real brothers (from the same father and mother). During the lifetime of the parents, Zaid, who is older than Amr, has relatively less income, and Amr has more children than Zaid. However, both brothers give whatever they earn to their parents, and the parents spend it however they wish of their own accord. The parents are the providers for all the expenses of Zaid and Amr, and the parents bear all the expenses of the families of Zaid and Amr. And whatever they give to the children for expenses, they give equally; for example, if they give five rupees to one child, they give five to each of the children. And whatever property is purchased is also at the discretion of the parents; they may record it in whoever's name they wish. Furthermore, Zaid, due to his weakness and foresight, purchased a property by taking money from his parents and...

1 Durr al-Mukhtar, Book of Sales, Chapter of Murabaha and Tawliya, Mujtabai Press, Delhi 2/35 Page 131 of 715

...चाहे एक बार में बेचे या अलग-अलग, उससे पहले या बाद में, क्योंकि मालिकाना हक तो मुतसर्रिफ (इस्तेमाल करने वाले) के लिए मुतलक (पूर्ण) है जब तक कि शरीयत मना न करे। (त) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

(2) मामूली खर्च जो व्यापारियों की आदत के अनुसार माल पर डाला जाता है, उसे डालने में कोई संदेह नहीं है। यदि इसमें कुछ नुकसान होता है और व्यापारियों की सामान्य आदत माल पर डालने की है, तो वे डालेंगे अन्यथा नहीं, दुर्रे मुख्तार में है:

अरबी

बिकी हुई वस्तु या उसके मूल्य में जो भी वृद्धि होती है, उसे जोड़ा जाता है, दुर्र। अल-ऐनी और अन्य ने जोड़ने के संबंध में व्यापारियों के रिवाज पर भरोसा किया है। और रास्ते में ज़ुल्म (अन्यायपूर्ण कर) से जो लिया जाता है उसे नहीं जोड़ा जाएगा जब तक कि उसे जोड़ने का रिवाज न हो। यही सिद्धांत है जैसा कि आप जानते हैं, इसलिए इसी पर भरोसा किया जाना चाहिए जैसा कि अल-कमाल के शब्द दर्शाते हैं। (संक्षिप्त) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

उर्दू अनुवाद

जो चीज़ बिकी हुई वस्तु में या उसकी कीमत में अधिक हो उसे मिलाया जाएगा, दुर्र। और ऐनी आदि ने व्यापारियों के मिलाने की आदत पर भरोसा किया है, और उसे नहीं मिलाया जाएगा जो रास्ते में ज़ुल्म से लिया जाता है, मगर उस समय मिलाया जाएगा जब रिवाज में उसे मिलाने की आदत हो। यही असल (सिद्धांत) है जैसा कि तुम जान चुके हो, लिहाज़ा इसी पर भरोसा होना चाहिए जैसा कि कमाल का कलाम इसका फ़ायदा देता है। (संक्षिप्त) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 46: लाहौर से, साधुवां मस्जिद, प्रेषक पीर जी अब्दुल गफ्फार साहब जैद लुत्फुहु, 25 सफ़र अल-मुजफ्फर 1336 हिजरी।

क्या फरमाते हैं उलेमा-ए-दीन और मुफ़्तियान-ए-शरा-ए-मतीन इस मसले में कि ज़ैद और अम्र दो हकीकी सगे भाई हैं। माता-पिता के जीवनकाल में ज़ैद, जो उम्र में बड़ा है, अम्र की तुलना में कम आय रखता है और अम्र के ज़ैद से अधिक बच्चे हैं। लेकिन दोनों भाई जो कुछ भी कमाते हैं वह माता-पिता के हाथ में दे देते हैं और माता-पिता अपने अधिकार से जैसे चाहते हैं वैसे खर्च करते हैं। ज़ैद और अम्र के कुल खर्चों के उनके माता-पिता ही ज़िम्मेदार हैं और ज़ैद और अम्र के परिवार का सारा

खर्च उनके माता-पिता ही उठाते हैं। और बच्चों को जो कुछ वे खर्च के लिए देते हैं, वह बराबर देते हैं; यानी अगर एक बच्चे को पाँच रुपये देते हैं तो सभी बच्चों को पाँच-पाँच ही देते हैं। और जो कोई संपत्ति खरीदी जाती है, वह भी माता-पिता के अधिकार से होती है; वे जिसका नाम चाहें दर्ज करा दें। इसके अलावा, ज़ैद ने अपनी कमज़ोरी और दूरदर्शिता के कारण माता-पिता से रुपया लेकर एक संपत्ति खरीदी और...

---

1 दुर्रे मुख्तार, किताबुल बुयू, बाबुल मुराबाहा वत तौलीय्या, मतबा मुज्तबाई, दिल्ली 2/35 पृष्ठ 131 का 715

دفعہ بیچے خواہ متفرق یا اس سے قبل خواہ بعد، لان الملك مطلق للمتصرف مالم ینه الشرع (کیونکہ ملک تو مطلق تصرف کے لئے ہوتا ہے جب تک شرع منع نہ کرے۔ت) واللہ تعالیٰ اعلم۔ (۲) معمولی خرچ جو حسب عادت تجار مال پر ڈالا جاتا ہے اس کے ڈالے جانے میں تو شبہ نہیں رہا کچھ نقصان اس میں اگر عام عادت تجار مال پر ڈالنے کی ہے ڈالیں گے ورنہ نہیں، در مختار میں ہے:

| کل ما یزید في المبیع او في قیمته یضم، درر، واعتمدا العیني وغیره عادة التجار بالضم ولا یضم مایؤخذ في الطریق من الظلم الا اذا جرت العادة بضمه هذا هو الاصل کما علمت فلیکن المعول علیه کما یفیده کلام الکمال اهـ (ملتقطا) واللہ تعالیٰ اعلم۔ | جو چیز مبیع میں یا اس کی قیمت میں زیادہ ہو وہ ملائی جائے گی، درر، اور عینی وغیرہ نے تاجروں کے ملانے کی عادت پر اعتماد کیا ہے، اور نہیں ملایا جائے گا اس کو جو راستے میں ظلم سے لیا جاتا ہے مگر اس وقت ملایا جائے گا جب رواج میں اس کے ملانے کی عادت ہو یہی اصل ہے جیسا کہ تو جان چکا ہے لہذا اسی پر اعتماد ہونا چاہئے جیسا کہ کمال کا کلام اس کا فائدہ دیتا ہے اهـ (ملتقطا) واللہ تعالیٰ اعلم۔ (ت) |

مسئلہ ۴۶: از لاہور مسجد سادھواں مرسلہ پیر جی عبد الغفار صاحب زید لطفہ ۲۵ صفر المظفر ۱۳۳۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید و عمرو دو حقیقی اب وام بھائی ہیں، والدین کی حیات میں زید جو عمر میں بڑا ہے عمرو سے نسبتہً کم آمدنی رکھتا ہے اور عمرو زید سے کثیر الاولاد ہے، لیکن دونوں بھائی جو کچھ کماتے ہیں والدین کے ہاتھ میں دے دیتے ہیں اور والدین اپنے اختیار سے جس طرح چاہتے ہیں خرچ کرتے ہیں، زید و عمرو کے کل اخراجات کے ان کے والدین ہی کفیل ہیں اور زید و عمرو کے اہل و عیال کا خرچ سب ان کے

ماں باپ اٹھاتے ہیں، اور بچوں کو جو کچھ وہ خرچ کے واسطے دیتے ہیں تو بالسویہ دیتے ہیں یعنی اگر ایک بچے کو پانچ روپے دیں تو سب بچوں کو پانچ ہی پانچ دیتے ہیں، اور جو کوئی جائیداد خرید کی جاتی ہے تو وہ بھی والدین کے اختیار سے، وہ جس کا نام چاہیں درج کرادیں، علاوہ ازیں زید نے بوجہ اپنی ضعیفی اور دوراندیشی کے والدین سے روپیہ لے کر ایک جائیداد خرید کی اور

---

1 درمختار کتاب البیوع باب المرابحة والتولیة مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۳۵ Page 131 of 715

Fatawa-e-Razviya (Volume 17)

...got it registered in the name of his younger brother Amr, but later Amr took money from his parents and purchased more property, getting it registered in his and Zaid's names. All income from these properties remained in the possession and use of the parents. In summary, the entire income of both brothers remained under the control and use of the parents, and from this income, whatever property was purchased, some was registered in the parents' names, some in the names of Zaid and Amr, and some solely in Amr's name. All cash income of both and all income from the purchased property remained with the parents. After the death of the deceased father for six years and after the death of the compassionate mother for two years, both brothers continued to spend according to the prevailing custom of the parents' time. Now, due to certain personal matters, both brothers want to divide the property, movable and immovable. There are no other heirs or disputants besides these two brothers. What will be their respective shares according to the Shariah, and on what basis will the total property be divided? Clarify from the Book (of Allah) and receive your reward from the Sovereign Giver of all gifts. (Explain from the Book of Allah and gain reward from Allah Almighty, the Most Generous King. - Translator)

The Answer: This issue is very lengthy, complex, and subject to many doubts. By the grace of Allah Almighty, we shall explain it in such a way that it encompasses all aspects and resolves all complexities. Success is from Allah. We write two explanations for this:

First Explanation: Investigating into whose name the properties purchased by Zaid, Amr, or their parents were registered, and for whom did the sale legally occur according to Shariah. I say: (I am saying - Translator) Purchasing happens in three ways:

First: Verbal discussion between the seller and the seeker of purchase regarding the finalization of price, settlement, and other details occurs, and then a deed is written. Before this, formal offer and acceptance (I'jab and Qabul) like "I have sold, I have bought" do not occur at all. At most, it's like: "For how much will you give?" He said, "For this much." Or he said, "Are these items for sale at your place?" He said, "Yes." He asked, "What is the price?" He said, "This." Or "I want to buy such and such item." He said, "Fine." He said, "I will give this much." He said, "Okay, then prepare the document." Or he said, "This item is for sale; if you want to buy, then buy it." He said, "I'll take it." He said, "Then you have to give this much." He said, "I will give, write the

deed." These words and their likes are not formal offer and acceptance. Or an agreement is reached and a deed is given; even that is not formal offer and acceptance, but rather a validation of that agreement so that they do not retract from the sale; otherwise, the ignorant seize it, which is forbidden and prohibited in the Hadith.

फतावा-ए-रज़विया (खंड 17)

...अपने छोटे भाई अम्र के नाम पर पंजीकृत (रजिस्टर) करवा दी, लेकिन बाद में अम्र ने माता-पिता से पैसे लेकर और संपत्ति खरीदी, और उसकी रजिस्ट्री अपने और ज़ैद के नाम करवा दी। इन सभी संपत्तियों से होने वाली पूरी आय माता-पिता के कब्ज़े और उपयोग में रही। संक्षेप में यह कि दोनों भाइयों की पूरी आय माता-पिता के पास रही और इस आय से जो कुछ संपत्ति खरीदी गई, उनमें से कुछ माता-पिता के नाम पर है, कुछ ज़ैद और अम्र के नाम पर है, और कुछ केवल अम्र के नाम पर है। दोनों भाइयों की पूरी नकद आय और खरीदी गई संपत्ति की पूरी आय माता-पिता के हाथ में रही। पिता की मृत्यु के छह साल बाद और दयालु माता की मृत्यु के दो साल बाद तक, दोनों भाई माता-पिता के समय की परंपरा के अनुसार मिलकर खर्च करते रहे। अब, कुछ व्यक्तिगत कारणों से दोनों भाई चल और अचल संपत्ति का बँटवारा करना चाहते हैं। इन दो भाइयों के अलावा कोई और वारिस या दावेदार नहीं है। शरीयत के अनुसार उनके हिस्से क्या होंगे और पूरी संपत्ति का बँटवारा किन हिस्सों पर होगा? किताब (अल्लाह की किताब) के आधार पर स्पष्ट करें और बहुत अधिक प्रदान करने वाले बादशाह (अल्लाह) से इनाम प्राप्त करें। (अल्लाह की किताब से वर्णन करें और अल्लाह तआला, जो बहुत अधिक प्रदान करने वाला राजा है, से पुण्य प्राप्त करें। - अनुवादक)

उत्तर: यह मसला बहुत लंबा, जटिल और शंकाओं से भरा है। अल्लाह तआला की तौफीक से हम इसे इस तरह बयान करेंगे कि यह सभी पहलुओं को समेट ले और सभी शंकाओं को दूर कर दे। सफलता अल्लाह की ओर से है। इसके लिए हम दो विवरण लिखेंगे:

पहला विवरण: इसकी जाँच कि ज़ैद या अम्र या उनके माता-पिता ने जो संपत्तियाँ खरीदीं और उनके नाम पर हुईं, उनमें से कौन सी बिक्री (बैअ) शरीयत के अनुसार किसके लिए हुई। मैं कहता हूँ: (मैं कह रहा हूँ - अनुवादक) खरीदारी तीन तरह की होती है:

पहला: विक्रेता और खरीदार के बीच कीमत के फैसले, निपटान और अन्य विवरणों पर केवल मौखिक बातचीत होती है और फिर एक बैअनामा (बिक्री पत्र) लिखा जाता है। इससे पहले ईजाब और क़ुबूल (प्रस्ताव और स्वीकृति) जैसे 'मैंने बेचा, मैंने खरीदा' बिल्कुल बीच में नहीं आता। अधिक से अधिक यह होता है कि 'कितने में दोगे?' उसने कहा 'इतने में'। या उसने कहा 'क्या ये चीज़ें तुम्हारे यहाँ बिकाऊ हैं?' उसने कहा 'हाँ'। उसने पूछा 'कीमत क्या है?' उसने कहा 'यह'। या 'मैं फलां चीज़ खरीदना चाहता हूँ'। उसने कहा 'ठीक है'। उसने कहा 'मैं इतना दूँगा'। उसने कहा 'अच्छा तो कागज़

बनवा दो'। या उसने कहा 'यह चीज़ बिक रही है; अगर तुम्हें खरीदना है तो खरीद लो'। उसने कहा 'लेता हूँ'। उसने कहा 'तो इतना देना होगा'। उसने कहा 'दूँगा, बैअनामा लिख दो'। ये शब्द और इनके समान शब्द ईजाब और क़ुबूल नहीं हैं। या समझौता होकर बैअनामा दे दिया जाता है, वह भी ईजाब और क़ुबूल नहीं है, बल्कि उस समझौते की पुष्टि है ताकि वे बिक्री से पीछे न हटें; वरना अज्ञानी लोग इसे ज़ब्त कर लेते हैं, जो कि हराम है और हदीस में इससे मना किया गया है।

पृष्ठ 132 ऑफ़ 715

اپنے چھوٹے بھائی عمرو کے نام درج رجسٹر کرادی لیکن عمرو نے دوسرے وقت والدین سے روپیہ لے کر اور جائداد خرید کی، اس کی رجسٹری اپنے اور زید کے نام کرادی اور ان سب جائدادوں کی جو آمدنی ہوئی وہ بھی والدین کے قبضہ وتصرف میں آتی رہی، خلاصہ کلام یہ ہے کہ دونوں بھائیوں کی تمام و کمال آمدنی والدین کے قبضہ وتصرف میں رہی اور اس آمدنی سے جو کچھ جائداد خرید کی گئی بعض کی رجسٹری والدین کے نام ہے اور بعض کی زید و عمرو کے نام ہے اور بعض کی صرف عمرو کے نام ہے اور جملہ آمدنی نقد ہر دو کی اور جملہ آمدنی جائداد خرید کہ وہ والدین کے ہاتھ میں رہی، بعد انتقال پدر مرحوم کے چھ سال اور بعد وفات مادر مشفقہ کے دو سال تک دونوں بھائی باتفاق حسب دستور زمانہ والدین خرچ کرتے رہے، اب بوجہ پیش آنے بعض امور نفسانی کے دونوں بھائی انقسام جائداد و منقولہ وغیرہ منقولہ چاہتے ہیں اور سوائے ان دو بھائیوں کے اور کوئی وارث اور متخاصم نہیں ہے ان کا آپس میں از روئے شرع شریف کیا حصہ ہوگا اور کے حصص پر کل جائداد کی تقسیم ہوگی؟ بینوا بالکتاب و توجروا من ملك الوهاب (کتاب اللہ سے بیان فرمائیں اور اللہ تعالیٰ بہت زیادہ عطا کرنے والے بادشاہ سے اجر پائیں۔ت)

الجواب: یہ مسئلہ بہت طویل الاذیال کثیر الاشکال معرض الاشکال ہے ہم بتوفیقہ تعالیٰ اسے ایسے طور پر بیان کریں کہ تمام اشکال کا جامع اور رہبر اشکال کا رافع ہو وباللہ التوفیقی اس کے لئے دو بیان لکھیں:

بیان اول: اس کی تحقیق کہ جو جائدادیں زید یا عمرو یا ان کے والدین نے خریدیں اور ان کے نام ہوئیں ان میں کون سی بیع شرعا کس کے لئے واقع ہوئی۔ اقول: (میں کہتا ہوں۔ت) خریداری تین طرح ہوتی ہے :

اول: بائع و طالب شرا میں زبانی گفتگو صرف فیصلہ قیمت و تصفیہ و دیگر زوائد کی ہو کر بیعنامہ لکھا جاتا ہے اس سے پہلے ایجاب و قبول اشتریت فروختم خریدم یعنی برکھے میں نے بیچی وہ کہے میں نے خریدی اصلا درمیان میں نہیں آتا بہت ہوتا ہے تو یہ کہ کتنے کو دو گے اس نے کہا اتنے کو یا اس نے کہا یہ چیزیں تمھارے یہاں بکاؤ ہے کہا ہے، کہا کیا قیمت ہے، کہا یہ، یا میں فلاں چیز مول لینا چاہتا ہوں، کہا بہتر، کہا یہ دوں گا، کہا اچھا تو کاغذ کر دو، یا اس نے کہا یہ چیز بکتی ہے تمھیں خریدنا ہو تو خرید لو، کہا لیتا ہوں، کہا تو اتنا دینا ہوگا، کہا دوں گا بیعنامہ لکھ دو، یہ الفاظ اور ان کے امثال ایجاب و قبول نہیں یا قرارداد ہو کر بیعنامہ دے دیا جاتا ہے وہ بھی ایجاب و قبول نہیں بلکہ اس اقرار کی توثیق کی شرا سے باز نہ رہے ورنہ جاہل اسے ضبط کر لیتے ہیں اور یہ حرام ہے حدیث میں اس سے نہی فرمائی۔

Volume 17 Fatawa Razawiyya

Malik, Ahmad, Abu Dawood, and Ibn Majah narrated from Abdullah bin Amr (may Allah be pleased with them both) that the Messenger of Allah (may peace and blessings of Allah the Almighty be upon him) prohibited the sale of earnest money (Bay' al-Urban). [1]

Imam Malik, Ahmad, Abu Dawood, and Ibn Majah narrated from Abdullah bin Amr (may Allah be pleased with them both) that the Messenger of Allah (may peace and blessings of Allah the Almighty be upon him) prohibited the sale based on earnest money. (T)

It is in Durr-e-Mukhtar:

Offer (Ijab) and Acceptance (Qabul) are terms for any two words that inform about the meaning of ownership and transfer of ownership, whether both are in the past tense, both in the present, or one in the past and the other in the present. [2]

Ijab and Qabul is the name for two such words that convey the meaning of acquiring ownership and transferring ownership, whether both are in the past tense or both in the present tense, or one is past and one is present. (T)

It is in Fatawa Imam Bazzazi and Fatawa Alamgiri:

[A person] said to a butcher: "How much of this meat for a dirham?" He replied: "Two mann." The person said: "Weigh it." Then he gave a dirham and took it. This is a valid sale and re-weighing is not necessary. If he weighs it and finds it less, he returns for the proportional amount from the dirham, not from the meat, because the contract was concluded for the amount of the delivered item. [3] This ends here. So, the statement "how much for a dirham" was not made the sale, but rather it was a sale by mutual delivery (Ta'ati).

Someone said to a butcher, "How much is this meat for one dirham?" He said, "Two seers." That person said, "Weigh it." Then he gave one dirham to the butcher and took meat from him. So this sale is valid; it is not necessary to weigh it again. And if upon weighing the meat is found to be less than two seers, he can take back from the dirhams equal to the deficiency; he cannot take more meat because the contract of sale took place only for the amount he gave. End quote. So the customer's saying "how much for one dirham"

1. Sunan Abi Dawud, Kitab al-Buyu', Aftab-e-Alam Press Lahore, 2/39-138; Sunan Ibn Majah, Abwab al-Tijarat, Bab Bay' al-Urban, H.M. Saeed Company Karachi, p.

159; Musnad Ahmad bin Hanbal from Musnad Abdullah ibn Amr (may Allah be pleased with them), Dar al-Fikr Beirut, 2/183.

2. Durr-e-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Matba' Mujtabai Delhi, 2/2-3.
3. Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Buyu', Chapter 2, Section 1, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/10.

मलिक, अहमद, अबू दाऊद और इब्न माजाह ने अब्दुल्ला बिन अम्र (अल्लाह उन दोनों से प्रसन्न हो) से रिवायत की कि अल्लाह के रसूल (अल्लाह की उन पर शांति और कृपा हो) ने बयाना की बिक्री (बै-उर्बान) से मना फरमाया। [1]

दुर्र-ए-मुख़्तार में है:

ईजाब और क़बूल ऐसे दो शब्दों का नाम है जो मिल्कियत लेने और देने के अर्थ की सूचना देते हैं, चाहे दोनों भूतकाल में हों या वर्तमान काल में, या एक भूतकाल और दूसरा वर्तमान काल में हो। [2]

फ़तावा इमाम बज़ाज़ी और फ़तावा आलमगीरी में है:

इमाम मालिक, अहमद, अबू दाऊद और इब्न माजाह ने अब्दुल्ला इब्न अम्र (अल्लाह तआला उन दोनों से राजी हो) से रिवायत की कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) ने बयाना की बिक्री से मना फ़रमाया। (त)

ईजाब और क़बूल ऐसे दो शब्दों का नाम है जो तमलुक और तमलीक (स्वामित्व प्राप्ति और हस्तांतरण) के अर्थ की खबर देते हैं, चाहे दोनों भूतकाल में हों या दोनों वर्तमान काल में हों, या एक भूतकाल और एक वर्तमान काल में हो। (त)

मलिक, अहमद, अबू दाऊद और इब्न माजाह ने अब्दुल्ला बिन अम्र (अल्लाह उन दोनों से प्रसन्न हो) से रिवायत की कि अल्लाह के रसूल (अल्लाह की उन पर शांति और कृपा हो) ने बयाना की बिक्री (बै-उर्बान) से मना फरमाया। [1]

[एक व्यक्ति] ने कसाई से कहा: "एक दिरहम में यह मांस कितना है?" उसने कहा: "दो मन।" उस व्यक्ति ने कहा: "तौल दो।" फिर उसने एक दिरहम दिया और उसे ले लिया। यह जायज़ बिक्री है और दोबारा तौलना ज़रूरी नहीं है। यदि वह इसे तौलता है और इसे कम पाता है, तो वह दिरहम में से आनुपातिक राशि वापस ले सकता है, मांस से नहीं, क्योंकि अनुबंध वितरित की गई वस्तु की मात्रा के लिए संपन्न हुआ था। [3] यहाँ समाप्त। तो, "एक दिरहम में कितना" कहना बिक्री नहीं बनाया गया, बल्कि यह आपसी लेनदेन (तआती) द्वारा बिक्री थी।

इमाम मालिक, अहमद, अबू दाऊद और इब्न माजाह ने अब्दुल्ला इब्न अम्र (अल्लाह तआला उन दोनों से राजी हो) से रिवायत की कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) ने बयाना की बिक्री से मना फ़रमाया। (त)

किसी ने कसाई से कहा कि यह मांस एक दिरहम का कितना है, उसने कहा दो सेर, उस व्यक्ति ने कहा तौल दे, फिर एक दिरहम कसाई को दिया और उससे मांस ले लिया तो यह बिक्री जायज़ है, दोबारा तौलना ज़रूरी नहीं और अगर तौलने पर मांस को दो सेर से कम पाया तो कमी के बराबर दिरहम में से वापस ले सकता है, मांस में से नहीं ले सकता क्योंकि बिक्री का अनुबंध उसी मात्रा पर हुआ जितना उसने दिया। उद्धरण समाप्त। तो ग्राहक का कहना कि एक दिरहम का कितना

1. सुनन अबू दाऊद, किताब अल-बुयू, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस लाहौर, 2/39-138; सुनन इब्न माजाह, अबवाब अल-तिजारात, बाब बै अल-उर्बान, एच.एम. सईद कंपनी कराची, पृ. 159; मुसनद अहमद बिन हंबल, मुसनद अब्दुल्ला इब्न अम्र (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो), दार अल-फ़िक्र बेरूत, 2/183।
2. दुर्र-ए-मुख़्तार, किताब अल-बुयू, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 2/2-3।
3. फ़तावा हिन्दिया, किताब अल-बुयू, अध्याय 2, खंड 1, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/10।

مالك واحمد وابوداؤد وابن ماجة عن عبدالله بن عمرو رضی الله تعالی عنهما نهی رسول الله صلی الله تعالی علیه وسلم عن بیع العربان -1

امام مالک، احمد، ابوداؤد اور ابن ماجہ نے عبداللہ ابن عمرو رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے روایت کیا کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے بیعانہ کی بیع سے منع فرمایا۔ (ت)

در مختار میں ہے :

الایجاب والقبول عبارة عن کل لفظین ینبئان عن معنی التملك والتملیك ماضیین اوحالین او احدهما ماض والاخر حال -2

ایجاب و قبول ایسے دو لفظوں کا نام ہے جو تملک و تملیک کے معنی کی خبر دیتے ہیں چاہے دونوں ماضی ہوں یا دونوں حال ہوں یا ایک ماضی اور ایک حال ہو۔ (ت)

فتاوی امام بزازی و فتاوی عالمگیریہ میں ہے:

قال لقصاب کم من هذا اللحم بدرہم فقال منوین قال زن فاعطی درہماً فاخذہ فهو بیع جائز ولا یعید الوزن وان وزنہ فوجدہ انقص رجع بقدرہ من الدرہم لامن اللحم لان الانعقاد بقدر المبیع المعطی 3 اهفلم یجعل قولہ کم بدرہم قال منوین قال زن بیعابل التعاطی

کسی نے قصاب کو کہا کہ یہ گوشت ایک درہم کا کتنا ہے، اس نے کہا دو سیر ، اس شخص نے کہا تول دے، پھر ایک درہم قصاب کو دیا اور اس سے گوشت لے لیا تو یہ بیع جائز ہے دوبارہ وزن کرنا ضروری نہیں اور اگر وزن کرنے پر گوشت کو دو سیر سے کم پایا تو کمی کے برابر درہم میں سے واپس لے سکتا ہے گوشت میں سے نہیں لے سکتا

مالك واحمد وابوداؤد وابن ماجة عن عبداللہ بن عمرو رضی اللہ تعالی عنهما نهی رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیه وسلم عن بیع العربان -1

امام مالک، احمد، ابوداؤد اور ابن ماجہ نے عبداللہ ابن عمرو رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے روایت کیا کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے بیعانہ کی بیع سے منع فرمایا۔

(ت)

کیونکہ بیع کا انعقاد اسی قدر پر ہوا جتنا اس نے دیا اھ، تو مشتری کے قول کہ ایک درہم کا کتنا

1 سنن ابو داؤد کتاب البیوع آفتاب عالم پریس لاہور ۲ / ۳۹-۱۳۸، سنن ابن ماجہ ابواب التجارات باب بیع العربان ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص۱۵۹، مسند احمد بن حنبل از مسند عبداللہ ابن عمرو رضی اللہ عنہما دار الفکر بیروت ۲ / ۱۸۳ 2 درمختار کتاب البیوع مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۳-۲ 3 فتاوی ہندیہ کتاب البیوع باب ثانی فصل اول نورانی کتب خانہ پشاور ۳ / ۱۰

Fatawa Razawiya (Volume 17)

[Right Column - Urdu Translation/Explanation]: ...meat. In the response, the butcher's statement of "two seers" and then the buyer's statement "weigh it" was not considered a sale; rather, mutual delivery (Ta'ati) was declared as the sale. For this reason, the buyer does not have the right to demand as much meat as the butcher gave him less. In Al-Hindiyyah, with reference to Tatarkhaniyah and Fatawa Yatimah, it is narrated that Hazrat Imam Hasan bin Ali (may Allah be pleased with them both) was asked about a person who bargained with the seller's agent for some goods for twenty-two dinars. The agent said, "I will not give it for less than twenty-five dinars." The buyer said, "Waive these three dinars for me." The agent agreed to this but said nothing verbally, though witnesses were present to confirm his consent. Is this a sale? He replied that a sale does not occur simply by this much unless there is offer and acceptance (Ijab and Qabul) or some action that takes its place. End of quote. In the same source, with reference to Al-Muhit and Al-Mujarrad, it is narrated from Hazrat Imam-e-Azam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him) that someone said to a butcher, "How do you sell meat?" He replied, "Three ratls for one dirham." The buyer said, "I have taken it from you, weigh it for me." Then the butcher changed his mind about weighing it; he has the right to do so. And if he weighed it, then before the buyer took possession...

[Left Column - Original Arabic Text]: And for this reason, he does not have the right to demand what was lacking from the meat. In Al-Hindiyyah, from Al-Tatarkhaniyah, from Al-Yatimah, from Al-Hasan bin Ali: He was asked about a man who bargained with the seller's agent for a commodity at twenty-two dinars. The agent refused except for twenty-five. The buyer said, "Leave these three dinars for me," and he (the agent) was satisfied with that without any speech occurring from him, and there were witnesses that he was satisfied and his heart was content. Is that considered a sale? He said, "This much is not a sale unless there is offer and acceptance or what takes their place in terms of action." End of quote. In it, from Al-Muhit, from Al-Mujarrad, from Abu Hanifa (may Allah be pleased with him): When he says to the butcher, "How do you sell meat?" and he says, "Every three ratls for a dirham," and the buyer says, "I have taken from you, weigh it for me," then if it appears to the butcher not to weigh it, he has that right. And if he weighed it, then before the buyer takes possession...

[Footnote]: 1. Fatawa Hindiyyah, Book of Sales, Chapter Two, Section One, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/6

फ़तावा रज़विया (खंड १७)

[दायां स्तंभ - उर्दू अनुवाद/व्याख्या]: ...मांस। उत्तर में कसाई के कथन "दो सेर" और फिर खरीदार के कथन "तौल दे" को बिक्री (बय) नहीं बताया गया, बल्कि आपसी लेनदेन (ताती) को बिक्री करार दिया गया। इसी कारण खरीदार को यह अधिकार नहीं है कि वह उतना मांस मांगे जितना कसाई ने उसे कम दिया। और 'अल-हिंदिया' में 'ततारखनिया' के हवाले से 'फ़तावा यतीमा' से वर्णित है कि हज़रत इमाम हसन बिन अली (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से उस व्यक्ति के बारे में पूछा गया जिसने विक्रेता के एजेंट से किसी सामान का २२ दीनार भाव लगाया। एजेंट ने कहा, "मैं २५ दीनार से कम पर नहीं दूंगा।" खरीदार ने कहा, "मेरे लिए ये तीन दीनार छोड़ दो।" एजेंट इस पर राज़ी हो गया लेकिन ज़बान से कुछ नहीं कहा, हालांकि उसकी सहमति के वहां गवाह मौजूद थे। क्या यह बिक्री है? तो आपने उत्तर दिया कि केवल इतने मात्र से बिक्री नहीं होती जब तक कि वहां प्रस्ताव और स्वीकृति (ईजाब-ओ-क़ुबूल) न हो या उनके स्थान पर कोई ऐसा कार्य न पाया जाए जो उन्हें प्रतिस्थापित करे। और इसी में 'अल-मुहीत' के हवाले से 'अल-मुजर्रद' से हज़रत इमाम-ए-आज़म अबू हनीफ़ा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से वर्णित है कि किसी व्यक्ति ने कसाई से कहा, "तुम मांस कैसे बेचते हो?" उसने जवाब दिया, "तीन रतल एक दिरहम का।" खरीदार ने कहा, "मैंने तुमसे ले लिया, मेरे लिए तौल दो।" फिर कसाई का विचार बदल गया कि वह न तौले, तो उसे इसका अधिकार है। और यदि उसने तौल दिया, तो खरीदार के कब्ज़ा करने से पहले...

[बायां स्तंभ - मूल अरबी पाठ]: और इसीलिए उसे मांस में हुई कमी को मांगने का अधिकार नहीं है। और 'अल-हिंदिया' में 'ततारखनिया' से, 'अल-यतीमा' से, हसन बिन अली से वर्णित है: उनसे एक ऐसे व्यक्ति के बारे में पूछा गया जिसने विक्रेता के एजेंट से २२ दीनार में सामान का भाव किया। एजेंट ने २५ के अलावा इनकार कर दिया। खरीदार ने कहा, "मेरे लिए ये तीन दीनार छोड़ दो," और वह बिना कुछ बोले इस पर राज़ी हो गया, और वहां गवाह थे कि वह राज़ी था और उसका मन संतुष्ट था। क्या वह बिक्री होगी? उन्होंने कहा: "यह मात्रा बिक्री नहीं है जब तक कि ईजाब-ओ-क़ुबूल या उनके स्थान पर कोई क्रिया न हो।" इति। और इसमें 'अल-मुहीत' से, 'अल-मुजर्रद' से, अबू हनीफ़ा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से: जब कोई कसाई से कहे, "तुम मांस कैसे बेचते हो?" और वह कहे, "हर तीन रतल एक दिरहम के" और खरीदार कहे, "मैंने तुमसे ले लिया, मेरे लिए तौल दो," तो यदि कसाई को लगे कि वह न तौले, तो उसे इसका अधिकार है। और यदि उसने तौल दिया, तो खरीदार के कब्ज़ा करने से पहले...

[पाद-टिप्पणी]: १. फ़तावा हिंदिया, किताब-अल-बुयू, अध्याय २, अनुभाग १, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, ३/६

पृष्ठ १३४ / ७१५

[دایاں کالم - اردو ترجمہ و تشریح]: گوشت ہے جواب میں قصاب کے قول دوسیر اور پھر مشتری کے قول کہ "تول دے" کو بیع نہیں بتایا گیا بلکہ تعاطی کو بیع قرار دیا گیا اسی لئے مشتری کو یہ حق نہیں کہ اتنا گوشت طلب کرے جتنا قصاب نے اسے کم دیا، اور ہندیہ میں بحوالہ تاتارخانیہ فتاویٰ یتیمہ سے منقول ہے کہ حضرت امام حسن بن علی رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے اس شخص کے بارے میں پوچھا گیا جس نے بائع کے وکیل سے کسی مال کا بائیس دینار بھاؤ لگایا وکیل نے کہا میں پچیس دینار سے کم پر نہیں دوں گا، مشتری نے کہا مجھے یہ تین دینار چھوڑدے اس پر وکیل راضی ہو گیا مگر زبان سے کچھ نہ کہا اور اس کے رضامند ہونے پر وہاں گواہ موجود تھے تو کیا بیع ہے، تو آپ نے جواب دیا محض اس قدر سے بیع نہیں ہوتی سوائے اس کے وہاں ایجاب و قبول یا اس کے قائم مقام کوئی فعل پایا جائے اھ اور اسی میں بحوالہ محیط مجرد سے منقول ہے کہ حضرت امام اعظم ابوحنیفہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے مروی ہے کہ کسی شخص نے قصاب کو کہا گوشت کیسے بیچتے ہو اس نے جواب دیا تین رطل ایک درہم کا، مشتری نے کہا میں نے تجھ سے لیا میرے لئے تول دے، پھر قصاب کی رائے ہوئی کہ وہ نہ تولے تو اس کو یہ حق ہے، اور اگر اس نے تول دیا، تو مشتری کے قبضہ کرنے سے پہلے

[بایاں کالم - عربی متن]: ولذا لم یکن له ان یطلب مانقص من الحم۔ وفی الهندیة عن التتارخانیة عن الیتیمة عن الحسن بن علی انه سئل عن رجل ساوم وکیل البائع السلعة باثنین وعشرین دینارا وابی الوکیل الابخمسة و عشرین فقال المشتری اترك لی هذه الثلثة الدنانیر ورضی بذلك من غیر ان یوجد منه قول وهناك شهود علی انه رضی فطابت نفسه بذلك هل یکون ذلك بیعا فقال هذا القدر لیس ببیع الا ان یوجد الایجاب والقبول او ما یقوم مقامهما من الفعل اهـ وفیها عن المحیط عن المجرد عن ابی حنیفة

رضی الله تعالی عنه اذا قال للحام کیف تبیع اللحم قال کل ثلثة ارطال بدرهم قال قد اخذت منك زن الی ثم بد للحام ان لایزن فله ذلك وان وزن فقبل قبض المشتری

[حاشیہ]: ۱ فتاویٰ ہندیہ کتاب البیوع باب ثانی فصل اول نورانی کتب خانہ پشاور ۳/۶

Fatawa Razawiyyah Volume (17)

[Table Top Section] (Arabic Text): "Each of them has the right to withdraw. If the buyer has taken possession, or the seller has placed it in the buyer's vessel by his order, then the sale is final, and one dirham is due from him. It is also mentioned therein from Al-Sirajiyyah: A person said to a wood-seller, 'How much is this bundle of wood?' He said, 'So much.' Then the buyer said, 'Drive your donkey,' and he drove it. This was not a sale unless he delivered the wood and received the price. I say: This is based on the condition of giving from both sides in a mutual exchange (Bai' Ta'ati), whereas the correct view is that possession from only one side is sufficient. Imam Muhammad has explicitly stated this as in Al-Nahr." (Urdu Translation/Explanation): "Each of the two has the right to withdraw. If the buyer took possession or at his request the seller put meat in the buyer's vessel, the sale became complete and one dirham became necessary for the buyer. It is also mentioned in the same from Sirajiyyah that a person said to a wood-seller, 'How much is this bundle of wood?' He said, 'So much.' Then the buyer said, 'Drive your donkey,' and he drove it. So this is not a sale, but it will become a sale when he hands over the wood and receives the price. I say: (I say) this is based on the condition of possession on both sides in the mutual exchange sale (Bai' Ta'ati), whereas the truth is that possession from only one side is sufficient, Imam Muhammad has given a decree on this as in 'Nahr'. (T)"

[Main Body Section] In these cases, the sale deed itself is the sale, and its acceptance is the purchase, as it is written in it: 'I sold such-and-such an item to such-and-such a person for so much.' It is stated in Al-Ashbah and Al-Hindiyyah: 'Writing is like speech' (Written text is like a spoken statement. T). So this sale occurred to the person whose name is in the sale deed, for example, Khalid. Then, if he himself had the sale deed written, it is obvious that the sale is complete and effective. And if another person negotiated and, using his name, had the document prepared without his permission, this would be an unauthorized purchase (Shira' Fuduli), and it remained dependent on Khalid's authorization, even if Khalid's name did not appear at all in the verbal negotiations for the purchase; rather the negotiator, say Bakr, had expressed his own name as wanting to buy for himself.

[Table Bottom Section] (Arabic Text): "And that is because the talk that occurred between them was not a contract; rather the sale is through the writing." (Urdu Translation): "And this is because the conversation that took place between the two was not a contract; the sale is through writing."

[Footnotes] 1. Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Buyu', Bab Thani, Fasl Awwal, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/9-10 2. Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Buyu', Bab Thani, Fasl Awwal, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/10 3. Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Buyu', Bab Thani, Fasl Awwal, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/9 4. Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Buyu', Bab Thani, Fasl Awwal, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/9

फतावा रज़विय्या जिल्द (17)

[तालिका शीर्ष खंड] (अरबी पाठ): "प्रत्येक को वापस लेने का अधिकार है। यदि क्रेता ने कब्ज़ा कर लिया, या विक्रेता ने उसके आदेश पर क्रेता के बर्तन में मांस रख दिया, तो बिक्री पूरी हो गई और उस पर एक दिरहम अनिवार्य हो गया। और उसी में सिराजिया से उद्धृत है कि एक व्यक्ति ने लकड़ी बेचने वाले से कहा, 'लकड़ी का यह गट्ठा कितने का है?' उसने कहा, 'इतने का।' फिर क्रेता ने कहा, 'अपना गधा हाँको,' उसने हाँक दिया, तो यह बिक्री नहीं हुई, जब तक कि वह लकड़ी सौंप न दे और कीमत वसूल न कर ले। मैं कहता हूँ: यह परस्पर विनिमय (बैअ तआती) में दोनों पक्षों से देने की शर्त पर आधारित है, जबकि सही बात यह है कि केवल एक पक्ष से कब्ज़ा पर्याप्त है, जैसा कि इमाम मुहम्मद ने 'अल-नहर' में स्पष्ट किया है।" (उर्दू अनुवाद/व्याख्या): "दोनों में से हर एक को पलटने का अधिकार है और यदि ग्राहक ने कब्ज़ा कर लिया या उसके कहने से विक्रेता ने उसके बर्तन में मांस रख दिया तो बिक्री पूरी हो गई और ग्राहक पर एक दिरहम अनिवार्य हो गया। और उसी में सिराजिया से उद्धृत है कि एक व्यक्ति ने लकड़ी बेचने वाले से कहा कि लकड़ी का यह गट्ठा कितने का है, उसने कहा कि इतने का, फिर ग्राहक ने कहा अपना गधा हाँको, उसने हाँक दिया, तो यह बिक्री नहीं, बल्कि उस समय बिक्री होगी जब लकड़ियाँ सौंपकर कीमत वसूल कर ले। मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) यह बैअ तआती में दोनों ओर से कब्ज़ा करने की शर्त पर आधारित है, जबकि सही यह है कि केवल एक ओर से कब्ज़ा पर्याप्त है इस पर इमाम मुहम्मद ने स्पष्टीकरण दिया है जैसा कि 'नहर' में है। (त)"

[मुख्य भाग] इन स्थितियों में वह बैअनामा (बिक्री विलेख) ही स्वयं बिक्री होती है और उसकी स्वीकृति ही खरीद है, जैसा कि उसमें लिखा जाता है कि मैंने अमुक वस्तु अमुक व्यक्ति के हाथ इतने में बेची। 'अश्बाह' और 'हिन्दिया' में है: लेखन कथन की तरह है (लिखित कथन मौखिक कथन के समान है। त)। तो यह बिक्री उसी के साथ हुई जिसका नाम बैअनामा में है, जैसे खालिद। फिर यदि उसने स्वयं बैअनामा लिखवा दिया तो स्पष्ट है कि बिक्री पूर्ण और प्रभावी है। और यदि किसी अन्य ने बातचीत की और उसकी अनुमति के बिना उसका नाम लिखकर दस्तावेज़ तैयार कर लिया तो यह 'शिराए फ़ुज़ूली' (अनधिकृत खरीद) हो गया और खालिद की अनुमति पर निर्भर रहा, भले ही मौखिक खरीद वार्ता में खालिद का नाम बिल्कुल न आया हो, बल्कि बातचीत करने वाले, मान लें बक्र ने स्वयं अपना नाम प्रकट किया हो कि वह अपने लिए खरीदना चाहता है।

[तालिका निचला खंड] (अरबी पाठ): "और वह इसलिए क्योंकि उन दोनों के बीच जो बातचीत हुई वह अनुबंध नहीं था, बल्कि बिक्री लेखन के माध्यम से होती है।" (उर्दू अनुवाद): "और यह इसलिए है क्योंकि जो बातचीत उन दोनों के बीच हुई वह अनुबंध नहीं है, बिक्री तो लेखन के माध्यम से है।"

[फुटनोट] 1. फतावा हिन्दिया, किताबुल बुयूअ, बाब थानी, फसल अव्वल, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/9, 10 2. फतावा हिन्दिया, किताबुल बुयूअ, बाब थानी, फसल अव्वल, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/10 3. फतावा हिन्दिया, किताबुल बुयूअ, बाब थानी, फसल अव्वल, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/9 4. फतावा हिन्दिया, किताबुल बुयूअ, बाब थानी, फसल अव्वल, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/9

کل لکل واحد منهما الرجوع فان قبضة المشتری اوجعله البائع فی وعاء المشتری بامرة ثم البیع وعلیه درهم اه وفیها عن السراجیة قال الاخر بکم هذا الوقر من الحطب فقال بکذا فقال سق الحمار فساقه لم یکن بیعا الا اذا سلم الحطب وانتقد الثمن اه اقول: وینتنی علی اشتراط الاعطاء من الجانبین فی التعاطی والصحیح الاکتفاء لواحد نص علیه محمد کما في النهر ۳۔ دونوں میں سے ہر ایک کو رجوع کا اختیار ہے اور اگر مشتری نے قبضہ کرلیا یا اس کے کہنے سے بائع نے اس کے برتن میں گوشت رکھ دیا تو بیع تام ہو گئی اور مشتری پر ایک درہم لازم ہو گیا اہ اور اسی میں سراجیہ سے منقول ہے کہ ایک شخص نے لکڑی فروش کو کہا لکڑی کا یہ گٹھا کتنے کا ہے، اس نے کہا کہ اتنے کا، پھر مشتری نے کہا اپنا گدھا ہانکو ، اس نے ہانک دیا، تو یہ بیع نہیں، مگر اس وقت بیع ہو جائیگی جب لکڑیاں سونپ کر ثمن وصول کر لے اہ، اقول: (میں کہتا ہوں) یہ بیع تعاطی میں دونوں طرفوں پر قبضہ کرنے کے شرط ہونے پر مبنی ہے، حالانکہ صحیح یہ ہے کہ فقط ایک طرف سے قبضہ کافی ہے اس پر امام محمد نے نص فرمائی ہے جیسا کہ نہر میں ہے۔ (ت)

ان صورتوں میں وہ بیعنامہ ہی خود بیع ہوتا ہے اور اس کی تسلیم شراء کہ اسی میں لکھا جاتا ہے میں نے فلاں شئے فلاں کے ہاتھ اتنے کو بیچی، اشباہ و ہندیہ میں ہے: الکتاب کالخطاب ۴ (تحریر کلام کی طرح ہے۔ت) تو یہ بیع اسی کے ہاتھ ہوئی جس کا نام بیعنامہ میں ہے مثلا خالد ، پھر اگر اسی نے بیعنامہ لکھوا دیا جب تو ظاہر ہے کہ بیع تام و نافذ ہے اور اگر دوسرے نے گفتگو کر کے اس کا نام لے کر اس کی بے اجازت کے کاغذ کر دیا تو یہ شرائے فضولی ہوا اور اجازت خالد پر موقوف رہا اگرچہ زبانی گفتگوئے خریداری میں نام خالد اصلا نہ آیا ہو بلکہ گفتگو کرنے والے مثلا بکر نے خود اپنا نام ظاہر کیا ہو کہ اپنے لئے خریدنا چاہتا ہوں۔

وذلك لان ماجری بینهما من کلام لم یکن عقداو انما البیع بالکتاب اور یہ اس لئے ہے کہ جو کلام ان دونوں کے درمیان جاری ہوا وہ عقد نہیں بیع تو تحریر کے ذریعے

۱ فتاوی ہندیہ کتاب البیوع باب ثانی فصل اول نورانی کتب خانہ پشاور ۳ / ۹، ۱۰ ۲ فتاوی ہندیہ کتاب البیوع باب ثانی فصل اول نورانی کتب خانہ پشاور ۳ / ۱۰ ۳ فتاوی ہندیہ کتاب البیوع باب ثانی فصل اول نورانی کتب خانہ پشاور ۳ / ۹ ۴ فتاوی ہندیہ کتاب البیوع باب ثانی فصل اول نورانی کتب خانہ پشاور ۳ / ۹

Fatawa Razawiyya Volume 17

And in it is the attribution to Khalid. It occurred and in it there is an attribution towards Khalid. (T) Therefore, if Khalid validates it, he himself will be the owner of the sold item, and if he rejects it, the sale will become void; in any case, he will not be the owner. **Because the sale did not originate from him, and the one from whom it originated did not accept it. This ruling, despite its obviousness, has been explicitly stated in Al-Fatawa al-Asadiyyah and will soon follow from al-Khaniyyah.** Because the sale was not with him, and the one with whom the sale took place did not accept it. Despite the clarity of this ruling, it has been clarified in Fatawa Asadiyyah and it is coming up shortly with reference to Khaniyyah. (T)

Second: Before writing the deed of sale, offer and acceptance took place between the contracting parties (the answer was available up to this point. T)

Question 47: From the city of Bareilly, Bazuran neighborhood, 2 Safar 1338 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: A person who has been living in rented houses for a long time under distressful conditions, recently purchased land for his own residence. At the start of construction, some people of the neighborhood, out of spite and to cause specific mischief, are pressuring him to sell the land for the price they want to collect through donations to build a mosque. In such a case, is the owner of the land compelled to sell it or not?

Answer: From the petitioner's statement, it is clear that the mosque exists and there is no dire need to expand it, nor are they asking for this land to expand it. Rather, they want to put it on rent and use that rent for the mosque. If this is the factual situation, then it is absolutely not mandatory for the owner of the land to sell it, and to compel him is oppression. If they take it by oppression, then using its rent for the mosque is forbidden (Haram). And Allah Almighty knows best.

Question 48: From the city, Shahamat Ganj market, asked by Naqsh Ali, 28 Jumada al-Ula 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid gave money to Amr and told him to go and buy goods. Amr bought them and gave possession to Zaid. Afterwards, Amr bought the goods back from Zaid with some profit, either for cash or on credit, according to Shari'ah.

और उसमें खालिद की ओर निस्बत है। यह हुआ और इसमें खालिद की तरफ निस्बत मौजूद है। (त) अतः यदि खालिद इसे मान्य कर दे, तो वह स्वयं बिकी हुई वस्तु का स्वामी होगा, और यदि वह इसे अस्वीकार कर दे, तो बिक्री शून्य हो जाएगी; किसी भी स्थिति में वह उसका स्वामी नहीं होगा। **क्योंकि बिक्री उससे नहीं हुई थी, और जिससे हुई थी उसने उसे स्वीकार नहीं किया। यह नियम, अपनी स्पष्टता के बावजूद, अल-फ़तावा अल-असदिया में स्पष्ट रूप से बताया गया है और जल्द ही अल-खानिया के हवाले से आएगा।** क्योंकि बिक्री उससे नहीं हुई थी, और जिससे बिक्री हुई थी उसने उसे स्वीकार नहीं किया। इस हुक्म के ज़ाहिर होने के बावजूद, फ़तावा असदिया में इसकी स्पष्ट व्याख्या की गई है और जल्द ही खानिया के हवाले से आ रहा है। (त)

दूसरा: बिक्री विलेख लिखने से पहले, अनुबंध करने वाले पक्षों के बीच प्रस्ताव और स्वीकृति हुई (जवाब यहाँ तक उपलब्ध हुआ। त)

मसला 47: बरेली शहर, मोहल्ला बाज़ोरान से, 2 सफ़र 1338 हिजरी। धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं: एक व्यक्ति जो लंबे समय से परेशानी की स्थिति में किराये के घरों में रहता आ रहा है, उसने हाल ही में अपने निवास के लिए एक भूमि खरीदी। निर्माण शुरू करने के समय, मोहल्ले के कुछ लोग द्वेषवश और विशेष उपद्रव पैदा करने के लिए उस व्यक्ति पर दबाव डाल रहे हैं कि वह उस भूमि को उस कीमत पर बेच दे जिसे वे चंदे के माध्यम से मस्जिद के नाम पर प्रबंधित करना चाहते हैं। ऐसी स्थिति में, क्या भूमि का स्वामी इसे बेचने के लिए मजबूर है या नहीं?

उत्तर: याचिकाकर्ता के बयान से यह स्पष्ट है कि मस्जिद मौजूद है और इसे बढ़ाने की कोई सख्त ज़रूरत नहीं है, न ही वे इस भूमि को इसे बढ़ाने के लिए मांग रहे हैं। बल्कि वे चाहते हैं कि इसे किराये पर चलाकर मस्जिद में इसका किराया लगाएँ। यदि स्थिति यही है, तो भूमि के स्वामी पर इसे बेचना कतई ज़रूरी नहीं है और उसे मजबूर करना ज़ुल्म (अत्याचार) है। और यदि ज़ुल्म से लेंगे तो उसका किराया मस्जिद में लगाना हराम है। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला 48: शहर बाज़ार शहामत गंज से, मुस्तौ़ला नक़्श अली, 28 जमादी-उल-उला 1339 हिजरी। धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं: ज़ैद ने अम्र को पैसे दिए और कहा कि तुम माल खरीद लाओ, अम्र ने खरीदकर ज़ैद को कब्ज़ा करा दिया, बाद में माल ज़ैद से अम्र ने कुछ लाभ देकर खरीद लिया नकद या ऋण शरीअत के अनुसार।

وفیہ الاضافۃ الی خالد۔ ہوئی اور اس میں خالد کی طرف اضافت موجود ہے۔ (ت) پس اگر خالد جائز کردے گا شیئی مبیع کا خود مالک ہو گا اور رد کر دے گا تو بیع باطل ہو جائے گی بہر حال اس کا مالک نہ ہوگا۔ **لان البیع لم یکن منہ ومن کان منہ لم یقبلہ وھذا الحکم مع ظھورہ قد صرح بہ الفتاوی الاسعدیۃ و سیأتی عن الخانیۃ۔** کیونکہ بیع اس سے نہیں ہوئی اور جس سے بیع ہوئی اس نے اس کو قبول نہیں کیا اور اس حکم کے ظاہر ہونے کے باوجود فتاوٰی اسعدیہ میں اس کی تصریح کی گئی اور عنقریب خانیہ کے حوالے سے آرہا ہے۔ (ت)

دوم: قبل تحریر بیعنامہ باہم عاقدین میں ایجاب و قبول واقع (جواب یہاں تک دستیاب ہوا۔ ت) مسئلہ ۴۷: از شہر بریلی محلہ بازوران ۲ صفر ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص نے جو ایک عرصہ سے بحالت پریشانی کرایہ کے مکانات میں رہ کر بسر کرتا رہتا ہے حال میں اس نے ایک اراضی واسطے اپنی سکونت کے خرید کی، بوقت ابتداء تعمیر کام چند صاحبان اہل محلہ بسبب رنجش و برائے کسی خاص فساد کے اس شخص پر بہ جبر اس کا اثر ڈالتے ہیں کہ وہ اس اراضی کی قیمت جس کا کہ وہ لوگ چندہ سے بنام مسجد اہتمام کرنا چاہتے ہیں لے کر بیچ کردے پس ایسی صورت میں مالک اراضی اس کی بیع کر دینے پر مجبور ہے یا نہیں؟

الجواب: بیان سائل سے واضح ہوا کہ مسجد موجود ہے اور اسے بڑھانے کی ضرورت شدید نہیں نہ اسے بڑھانے کے لئے وہ لوگ یہ زمین مانگتے ہیں بلکہ یہ چاہتے ہیں کہ اسے کرایہ پر چلا کر مسجد میں اس کا کرایہ لگائیں، اگر صورت واقعہ یہ ہے تو مالک اراضی پر ہر گز لازم نہیں کہ اسے بیچ کرے اور اسے مجبور کرنا ظلم ہے اور ظلم سے لیں گے تو اس کا کرایہ مسجد میں لگانا حرام ہے ۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۴۸: از شہر بازار شہامت گنج مسئولہ نقش علی ۲۸ جمادی الاولیٰ ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے عمرو کو روپے دے اور کہا تم مال خرید لاؤ، عمرو نے خرید کر زید کو قبضہ کرا دیا، بعد کو مال زید سے عمرو نے کچھ نفع دے کر خرید لیا نقد یا قرض بموجب شریعت کے

Fatawa Rizvia Volume 17

Is this stratagem permissible or not? Answer: It is permissible whether it is cash or credit, and however much the profit is, all is allowed, and Allah Almighty knows best.

Problem 49: From Kanpur, Muston Road, sent by Sheikh Muhammad Umar and Muhammad Atiq, 9 Shawwal 1338 AH. What do the scholars of religion say? Zaid and Bakr were in a trade partnership. After the partnership ended, the money and goods were divided, and each took possession of their share. Later, Bakr wanted to sell his goods; Zaid wanted to buy them for four or ten rupees less and stated at the time of purchase, 'If you agree, then give them, otherwise take the money back and return the goods.' Bakr gave the goods and took the money. Is this purchase valid for Zaid or not? What is it like to call Zaid a sinner? Answer: This purchase, being with the seller's consent, is certainly permissible, even if it were bought for a thousand rupees less. To call him a sinner because of this is wrong: Allah the Almighty said: "...except it be trade by mutual consent from among you." [1] Allah the Almighty has ordained: 'But let there be amongst you traffic and trade by mutual good-will.' And Allah the Almighty knows best. (T)

Problem 50: Asked by Haji Lal Khan Sahib, 1st Safar 1347 AH. Clarification of questions as per the statement of Ms. Husein Bibi and Sabihan Bibi, daughters of the late Sheikh Amir Bakhsh Sahib. Third Question: The respected mother bought some property with her own money and some property with the money of her dower (Mahr). Will both these properties be considered the father's property, or will the second property be called the mother's property? If both properties are considered the father's, then what about the mother's gold bangles, worth eight hundred rupees, with which the father bought property—is that amount a debt payable by the father or not? Also, the late mother's gold earrings, worth one hundred rupees, which were sold and the money put into business—is the compensation for that due from the father or not?

[1] The Holy Quran 4/29 Page 137 of 715

फ़तावा रिज़विया जिल्द सत्रह (17)

यह हीला (तरीका) जायज़ है या नहीं? अल-जवाब: जायज़ है चाहे नकद हो या उधार, और मुनाफ़ा चाहे जितना भी हो सब रवा (जायज़) है, वल्लाह तआला आलम (और अल्लाह तआला बेहतर जानता है)।

मसला 49: कानपुर मस्टन रोड से, मुर्सला (प्रेषक) शेख मुहम्मद उमर और मुहम्मद अतीक साहिबान, 9 शव्वाल 1338 हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन? ज़ैद और बक्र की एक व्यापारिक साझेदारी थी। साझेदारी खत्म होने के बाद रुपया और माल तक़सीम (विभाजित) हुआ और वे अपनी-अपनी मिल्कियत पर क़ाबिज़ हो गए। फिर बक्र ने अपना माल बेचना चाहा; ज़ैद ने उसे चार या दस रुपये कम पर लेना चाहा और खरीदारी के वक्त कह दिया कि अगर मंज़ूर हो तो दो, वर्ना रुपया देकर माल वापस ले लो। बक्र ने माल दे दिया और रुपया ले लिया। क्या यह खरीदारी ज़ैद के लिए जायज़ है या नहीं? ज़ैद को ख़तावार (दोषी/गुनहगार) कहना कैसा है? अल-जवाब: यह खरीदारी जबकि बेचने वाले की रज़ामंदी से हो, बेशक जायज़ है, चाहे हज़ार रुपये कम में खरीदा गया हो। इस वजह से उसे ख़तावार कहना गलत है: अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "इल्ला अन तकूना तिजारतन अन तराज़िन मिन्कुम" [1] अल्लाह तआला ने इरशाद फ़रमाया: 'मगर हो तिजारत तुम्हारी बाहमी (आपसी) रज़ामंदी से।' वल्लाह तआला आलम। (त)

मसला 50: मसूला (पूछने वाले) हाजी लाल खां साहब, 1 सफ़र 1347 हिजरी। तंक़ीह-ए-सवालात (सवालों का स्पष्टीकरण) हस्ब बयान मुस्मात हुसैन बीबी और सबीहन बीबी, दुख्तराने (पुत्रियां) शेख अमीर बख्श साहब मरहूम। सवाल तीसरा: वालिदा माजिदा ने कुछ जायदाद खास अपनी रक़म से खरीदी थी और कुछ जायदाद वालिदा मरहूमा के दीन-ए-महर (महर की रक़म) के रुपयों से। क्या ये दोनों जायदादें वालिद साहब की मिल्कियत मानी जाएंगी या दूसरी जायदाद वालिदा साहिबा की मिल्कियत कही जाएगी? अगर दोनों जायदादें वालिद साहब की मिल्कियत करार पाएं तो वालिदा के सोने के कड़े, जिनकी कीमत आठ सौ रुपये थी और उनसे वालिद साहब ने जायदाद खरीदी, वह वालिद साहब के ज़िम्मे कर्ज़ (वाजिब-उल-अदा) है या नहीं? और वालिदा मरहूमा की सोने की बालियां, जिनकी कीमत सौ रुपये थी और बेचकर व्यापार में शामिल कर दी गई थीं, उनका एवज़ (मुआवज़ा) वालिद साहब के ज़िम्मे बाकी है या नहीं?

[1] अल-क़ुरआन अल-करीम 4/29 पृष्ठ 137 / 715

یہ حیلہ جائز ہے یا نہیں؟ الجواب: جائز ہے نقد ہو خواہ قرض، اور کتنے ہی نفع پر ہو سب روا ہے، واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۴۹: از کانپور مسٹن روڈ مرسلہ شیخ محمد عمر محمد عتیق صاحبان ۹ شوال ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین زید و بکر کی شرکت میں ایک تجارت تھی بعد شرکت روپیہ اور مال تقسیم ہوا، اپنی اپنی ملک پر قابض ہو گئے، پھر بکر نے اپنا مال بیچنا چاہا، زید نے چار یا دس روپے کم پر لینا چاہا اور بوقت خریداری کہہ دیا کہ اگر منظور ہو تو دو ورنہ روپیہ دے کر مال واپس لے لو، بکر نے مال دے دیا روپیہ لے لیا، آیا یہ خریداری زید کو جائز ہے یا نہیں؟ زید کو خطاوار کہنا کیسا ہے؟ الجواب: یہ خریداری جبکہ برضائے بائع ہو بیشک جائز ہے اگرچہ ہزار روپے کم کو خریدا گیا ہو اسے اس وجہ سے خطاوار کہنا لاخطا وار ہے: قال اللہ تعالٰی "اِلَّآ اَنْ تَكُوْنَ تِجَارَةً عَنْ تَرَاضٍ مِّنْكُمْ"۱ اللہ تعالٰی نے ارشاد فرمایا: مگر ہو تجارت تمہاری باہمی رضا مندی سے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۵۰: مسئولہ حاجی لعل خاں صاحب یکم صفر ۱۳۴۷ھ تنقیح سوالات حسب بیان مسماۃ حیسین بی بی و صبیحن بی بی دختران شیخ امیر بخش صاحب مرحوم سوال سوم، والدہ ماجدہ نے کچھ جائیداد خاص اپنی رقم سے خریدی تھی اور کچھ جائیداد والدہ مرحومہ کے دین مہر کے روپیہ سے، یہ دونوں جائیداد والد صاحب کی ملک قرار پائیں گی یا کہ دوسری جائیداد والدہ صاحبہ کی ملک کہی جائیں گی، اگر دونوں جائیداد والد صاحب کی ملک قرار پائیں تو والدہ کے سونے کے کڑے جس کی قیمت مبلغ آٹھ سو روپیہ تھی اور اس سے والد صاحب نے جائیداد خرید کی وہ بذمہ والد صاحب دین واجب الادا ہے یا نہیں؟ و نیز والدہ مرحومہ کی سونے کی بالیاں جس کی قیمت سو

روپیہ تھی اور فروخت کر کے تجارت میں شامل کر دی گئی اس کا عوض والد صاحب کے ذمہ باقی ہے یا نہیں؟

Volume 17 Fatawa Razawiya

The Answer: Whatever property the deceased (maurith) purchased with his own money clearly belongs to him. And whatever was purchased with someone else's money, if he purchased it for himself—meaning he did not make the sale contract in the other's name—then that too belongs to the same purchaser. This is because "when a purchase is found to be effective for the purchaser, it becomes effective"[1] (Urdu translation: for when a purchase is found to be effective for the purchaser, it is enacted). In this case, if it is proven that the other person gave this money to him as a transfer of ownership (tamleek), then there was no claim for the money either. Otherwise, if it was with permission, it was a loan; if without permission, it was misappropriation (ghasb). In any case, compensation (daman) is mandatory upon him. This was the ruling for buying property with someone else's money. The questioner's words are: "some property [was bought] with the money of the deceased mother's dower (mahr)". If this means that the dower had been paid and property was bought from it after the wife's possession, then it is the same case as mentioned above. And if the dower had not been paid, then buying with its money would be like him saying, "In exchange for whatever dower of yours is due upon me, I am buying this property." If bought like this, then that property becomes the ownership of the wife. Or it could be that the woman says, "Buy me a property in exchange for the dower you owe me," and he buys it; in this way too, the property becomes the wife's ownership, and possession by the wife will not be a condition, nor will it be necessary to mention the wife's name in the sale contract with the original seller. Buying and then making it compensation for her dower will be a sale on her behalf in the name of the wife in exchange for dower, and possession is not a condition for ownership in a sale. Or it could be that the wife said to him, "Buy a property for yourself from the dower you owe me," then the property will be the husband's ownership and the claim for the money will also cease, because that was permission for *iqtida' hibat al-dayn mimman 'alayhi al-dayn* (requiring the gift of a debt from the debtor). (Urdu translation: Requiring the gift of a debt to the debtor). And this is permissible. And if neither the dower was paid nor was there any such discussion between the spouses, then how can it be called buying with the dower money? Buying property with gold bangles is like buying with someone else's wealth, the ruling for which was mentioned above. If some indication of transfer of ownership (tamleek) was found from the woman's side, then the husband owes no compensation, otherwise he does. Similarly, if earrings were sold and the money put

into business: if indication of transfer of ownership was found, there is no compensation due from the husband; and if the woman gave them to participate in the business and he accepted, then she becomes a business partner. Otherwise, the minimum is fixed, i.e., it is a debt, and compensation is mandatory. And Allah knows best.

Issue 51: What do the scholars of religion say regarding the issue that nowadays shopkeepers generally quote a high price for everything and then sell it for less? Is this permissible according to Sharia or not? For example, selling a four-paisa item for double or triple its price.

---

[1] Al-Ashbah wa al-Naza'ir, Second Art, Book of Sales, Idara al-Quran Karachi, 1/323; Radd al-Muhtar, Book of Sales, Chapter of Miscellaneous, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/220.

उत्तर: मृतक (मौरिस) ने जो संपत्ति अपने पैसे से खरीदी, वह ज़ाहिर है कि उसी की है। और जो दूसरे के पैसे से खरीदी, अगर उसने वह अपने लिए खरीदी, यानी बिक्री का अनुबंध (अक़्द-ए-बै) दूसरे के नाम पर नहीं कराया, तो वह भी उसी खरीदार की है। क्योंकि "जब खरीदारी खरीदार पर प्रभावी पाई जाए, तो वह प्रभावी हो जाती है"[1] (अर्थात: इसलिए कि खरीदारी जब ग्राहक पर प्रभावी रूप में पाई जाए तो प्रभावी हो जाती है)। फिर इस स्थिति में यदि यह साबित हो जाए कि दूसरे व्यक्ति ने यह पैसा उसे मालिकाना हक़ (तमलीक) के रूप में दिया था, तो पैसे की मांग भी उस पर नहीं थी। अन्यथा, यदि यह अनुमति के साथ था तो वह ऋण (क़र्ज़) था; यदि बिना अनुमति के था तो वह ज़बरन कब्ज़ा (ग़सब) था। किसी भी स्थिति में, उस पर हर्जाना (ज़मान) अनिवार्य है। यह दूसरे के पैसे से संपत्ति खरीदने का हुक्म था। सवाल करने वाले के शब्द ये हैं कि "कुछ संपत्ति स्वर्गीय माँ के मेहर के पैसे से [खरीदी गई]"। यदि इसका अर्थ यह है कि मेहर का भुगतान कर दिया गया था और पत्नी के कब्ज़े के बाद उससे संपत्ति खरीदी गई, तब तो वही स्थिति है जो ऊपर बताई गई। और यदि मेहर का भुगतान नहीं किया गया था, तो उसके पैसे से खरीदना इस प्रकार होगा कि वह कहे, "तुम्हारा जो भी मेहर मुझ पर बकाया है, उसके बदले मैं यह संपत्ति खरीदता हूँ।" यदि इस प्रकार खरीदी गई, तो वह संपत्ति पत्नी की मिल्कियत हो गई। या फिर ऐसा होगा कि स्त्री कहे, "मेरा जो मेहर तुम्हारे ज़िम्मे है, उसके बदले मुझे संपत्ति खरीद कर दे दो," और उसने खरीद ली, तो इस तरह भी संपत्ति पत्नी की मिल्कियत हुई और पत्नी का कब्ज़ा शर्त नहीं होगा, और न ही मूल विक्रेता के साथ बिक्री अनुबंध में पत्नी का नाम लेना आवश्यक होगा। खरीद कर उसके मेहर के मुआवज़े के रूप में देना उसकी ओर से पत्नी के नाम पर मेहर के बदले बिक्री होगी, और बिक्री में कब्ज़ा मालिकाना हक़ के लिए शर्त नहीं है। या फिर ऐसा होगा कि पत्नी ने उससे कहा, "मेरा जो मेहर तुम पर बकाया है, उससे अपने लिए संपत्ति खरीद लो," तो संपत्ति पति की मिल्कियत होगी और पैसे की मांग भी नहीं रहेगी क्योंकि वह इक़्तिज़ा हिबत अल-दैन मिम्मन अलैहि अल-दैन की अनुमति थी। (अर्थात: देनदार को ऋण का उपहार देना)। और यह जायज़ है। और यदि न तो मेहर अदा किया गया था और न ही पति-पत्नी के बीच इस तरह की कोई बात हुई थी, तो इसे मेहर के पैसे से खरीदना कैसे कहा जा सकता है? सोने के कंगन बेचकर संपत्ति खरीदना वैसे ही पराये धन से खरीदारी है जिसका हुक्म ऊपर गुज़रा। यदि स्त्री की ओर से मालिकाना हक़ (तमलीक) देने का कोई संकेत पाया गया, तो पति के ज़िम्मे कोई मुआवज़ा नहीं है, अन्यथा है। इसी तरह बालियां जिन्हें बेचकर व्यापार में लगाया गया, यदि तमलीक

का संकेत पाया गया तो पति पर कोई मुआवज़ा नहीं है, और यदि स्त्री ने व्यापार में साझेदारी के लिए दीं और उसने स्वीकार किया तो वह व्यापार में भागीदार हुई, वरना कम से कम यह तय है कि वह ऋण है और मुआवज़ा अनिवार्य है। और अल्लाह बेहतर जानता है।

मसला 51: इस मसले में दीन के विद्वान क्या फरमाते हैं कि आजकल दुकानदार आमतौर पर हर चीज़ की कीमत बढ़ाकर बताते हैं और फिर उसे कम पर बेच देते हैं, क्या यह शरीयत के अनुसार जायज़ है या नहीं? जैसे चार पैसे की चीज़ को दोगुना या तिगुना दाम पर बेचना।

---

[1] अल-अश्बाह वल नज़ाइर, अल-फ़न्न अल-सानी, किताबुल बुयूअ, इदारातुल कुरआन कराची, 1/323; रद अल-मुह्तार, किताबुल बुयूअ, बाब अल-मुतफ़र्रिक़ात, दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी बैरुत, 4/220.

الجواب: مورث نے جو جائیداد اپنے روپیہ سے خریدی وہ ظاہر ہے کہ اسی کی ہے اور جو دوسرے کے روپے سے خریدی وہ اگر اپنے لئے خریدی یعنی عقد بیع دوسرے کے نام نہ کرایا تو وہ بھی اسی مشتری کی ہے لان الشراء متی وجد نفاذا علی المشتری نفذ[1] (اس لئے کہ خریداری جب مشتری پر نفاذ کے طور پر پائی جائے تو نافذ ہو جاتی ہے۔ ت) پھر اس صورت میں اگر ثابت ہو کہ یہ روپیہ دوسرے نے اسے بطور تملیک دے دیا تھا تو روپیہ کا بھی مطالبہ اس پر نہ تھا ورنہ اگر باجازت تھا قرض تھا، بے اجازت تھا غصب تھا، بہر حال اس پر ضمان لازم ہے، یہ دوسرے کے روپے سے جائیداد خریدنے کا حکم تھا، سائل کے لفظ یہ ہیں کہ "کچھ جائیداد والدہ مرحومہ کے دین مہر کے روپے سے" اس کے اگر یہ معنی ہیں کہ دین مہر ادا کر دیا تھا اور بعد قبضہ زوجہ اس سے جائیداد خریدی جب تو وہی صورت ہے جو اوپر مذکور ہوئی اور اگر دین مہر ادا نہ کیا تھا تو اس کے روپے سے خرید نا یونہی ہوگا کہ وہ کہے کہ تیرا مہر جو کچھ مجھ پر آتا ہے اس کے عوض یہ جائیداد خریدتا ہوں، یوں اگر خریدی تو وہ جائیداد ملک زوجہ ہوئی، یا یوں ہوگا کہ عورت کہے میرا مہر تجھ پر آتا ہے اس کے عوض مجھے جائیداد لے دے، اور اس نے خریدی تو یوں بھی جائیداد ملک زوجہ ہوئی اور قبضہ زوجہ پر شرط نہ ہوگا نہ اصل بائع سے عقد بیع میں زوجہ کا نام لینا ضرور ہوگا کہ خرید کر اس کے مہر کا معاوضہ کردینا اس کی طرف سے بنام زوجہ بعوض مہر بیع ہوگی اور بیع میں قبضہ شرط ملک نہیں، یا یوں ہوگا کہ زوجہ نے اس سے کہا میرا مہر جو تم پر آتا ہے اس سے اپنے لئے جائیداد خرید لو تو جائیداد ملک شوہر ہوگی اور اس پر روپے کا مطالبہ بھی نہ رہا کہ وہ اجازت اقتضاء ھبۃ الدین ممن علیہ الدین (مدیون کو دین کا اقتضاء ہبہ ہے۔ ت) تھی اور یہ جائز ہے۔ اور اگر نہ مہر ادا کیا تھا نہ اس قسم کا کوئی تذکرہ مابین زوجین

آیا تو اسے دین مہر کے روپے سے خریدنا کیونکر کہا جاسکتا ہے، سونے کے کڑوں سے جائیداد خریدنا وہی زر غیر سے شراء ہے جس کا حکم اوپر گزرا اگر عورت کی طرف سے کوئی دلالت تملیک پائی گئی تو اس کا کوئی معاوضہ ذمہ شوہر نہیں ورنہ ہے، یوں ہی بالیاں کہ بیچ کر تجارت میں لگائی گئیں اگر دلالت تملیک پائی گئی شوہر پر عوض نہیں اور اگر تجارت میں شرکت کے لئے عورت نے دیں اور اس نے قبول کیا تو وہ شریک تجارت ہوئی ورنہ ادنیٰ متعین ہے یعنی قرض اور عوض لازم ، واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۵۱ : کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ آجکل دکاندار عموما ہر چیز کی قیمت بڑھا کر کہتے ہیں اور پھر اس سے کم پر بیچ ڈالتے ہیں یہ شرعا جائز ہے یا نہیں؟ ہر ایک کا چار پیسے کی چیز کا دگنی یا تین گنی

[1] الاشباہ والنظائر الفن الثانی کتاب البیوع ادارۃ القران کراچی ۱/ ۳۲۳،ردالمحتار کتاب البیوع باب المتفرقات داراحیاء التراث العربی بیروت ۲۲۰/۴

Fatawa Razawiyya Volume 17 (17)

Is it permissible to sell at a [specified] price? Explain and be rewarded.

The Answer: Both things are permissible as long as one does not lie or deceive. For example, if someone says "this item was my purchase for three or four paisas" when the purchase was actually for three and three-quarters; or says "including expenses etc., it cost me four and a quarter" when it actually cost three and three-quarters; or states the rate etc. correctly but swaps the item – this is deception. These situations are prohibited (haram). Otherwise, there is no harm in the variation of price (bargaining) for goods. And Allah Almighty knows best.

Page 139 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द सत्रहवीं (17)

क्या [निश्चित] कीमत पर बेचना जायज़ है? बयान फ़रमाएं, सवाब पायें।

अल-जवाब: दोनों बातें जायज़ हैं बशर्ते कि व्यक्ति झूठ न बोले और धोखा न दे। मिसाल के तौर पर, यह कहना कि "यह चीज़ मैंने तीन या चार पैसे में खरीदी है", जबकि असल खरीद पौने चार पैसे की थी; या यह कहना कि "खर्च वगैरह मिलाकर मुझे सवा चार में पड़ी है", जबकि वह पौने चार में पड़ी थी; या फिर भाव (रेट) वगैरह तो सही बताया मगर माल बदल दिया – यह धोखा है। ये सूरतें हराम हैं। अन्यथा, चीज़ों की कीमत तय करने (मोल-भाव) में कमी-बेशी में कोई हर्ज नहीं है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

पृष्ठ 139 का 715

قیمت پر فروخت کرنا جائز ہے؟ بینوا توجروا

الجواب: دونوں باتیں جائز ہیں جبکہ جھوٹ نہ بولے، فریب نہ دے، مثلاً کہا یہ چیز تین یا چار پیسے کی میری خرید ہے، اور خرید پونے چار کو تھی، یا کہا خرچ وغیرہ ملا کر مجھے سوا چار میں پڑی ہے اور پڑی تھی پونے چار کو، یا نرخ وغیرہ ٹھیک بتائے مگر مال بدل دیا یہ دھوکا ہے، یہ صورتیں حرام ہیں اور نہ چیزوں کے مول لگانے میں کمی بیشی حرج نہیں رکھتی، واللہ تعالیٰ اعلم۔

صفحہ 139 از 715

Volume 17 | Fatawa Razawiya

Chapter on Void and Voidable Sales (Statement on Batil and Fasid Sales)

Question 52: Note*

Answer: It is permissible. Allah Almighty said, "And Allah has permitted trade"[1] (Allah Almighty has made trade lawful). The unlawfulness and prohibition of trade are confined to three forms: Void (Batil), Voidable (Fasid), and Prohibitively Disliked (Makruh Tahreemi). It is stated in Al-Bahr al-Raiq:

[Boxed Text] Arabic: The prohibited sale is of three types: void, voidable, and prohibitively disliked.[2] Urdu: The sale that has been prohibited is of three types: void, voidable, and prohibitively disliked etc.

Arabic: etc. I say: What is meant is the resulting form of the sale. Urdu: I say: (I say) by this sale is meant that form of sale...

*Note: The question is not included in the original.

[1] The Holy Quran 2/275 [2] Al-Bahr al-Raiq, Book of Sales, Chapter on the Voidable Sale, H.M. Saeed Company Karachi, 2/68

जिल्द 17 | फतावा रज़विया

बाब अल-बै' अल-फ़ासिद वल-बातिल (बातिल और फ़ासिद बै' का बयान)

मसला 52: नोट*

अल-जवाब: जायज़ है। अल्लाह तआला ने फ़रमाया "व अहललल्लाहुल बै'"[1] (अल्लाह तआला ने बै' यानी व्यापार को हलाल फ़रमाया है)। बै' का ना-जायज़ और ममनू (वर्जित) होना तीन सूरतों में मुन्हसिर (सीमित) है: बातिल, फ़ासिद और मकरूहे तहरीमी। बहरुल राइक़ में है:

[बॉक्स टेक्स्ट] अरबी: जिस बै' से मना किया गया है वह तीन प्रकार की है: बातिल, फ़ासिद और मकरूहे तहरीमी।[2] उर्दू: जिस बै' से रोका गया है वह तीन किस्मों पर है: बातिल, फ़ासिद और मकरूहे तहरीमी वगैरह।

अरबी: वगैरह, अक़ूलु: और मुराद (तात्पर्य) बै' की वह सूरत है जो हासिल होती है। उर्दू: अक़ूलु: (मैं कहता हूँ) इस बै' से मुराद बै' की वह सूरत है...

*नोट: असल में सवाल दर्ज नहीं है।

[1] अल-क़ुरआन अल-करीम 2/275 [2] अल-बहरुल राइक़, किताबुल बुयू', बाबुल बै' अल-फ़ासिद, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 2/68

पृष्ठ 141 का 715

جلد ہفتدہم (۱۷) | فتاویٰ رضویہ

باب البیع الفاسد والباطل (باطل اور فاسد بیع کا بیان)

مسئلہ ۵۲ : عہد*

الجواب: جائز ہے قال اللہ تعالیٰ "وَ اَحَلَّ اللّٰہُ الْبَیْعَ"[1] (اللہ تعالیٰ نے بیع کو حلال فرمایا ہے) بیع کا نا جائز و ممنوع ہونا تین صورتوں میں منحصر ہے، باطل و فاسد و مکروہ تحریمی، بحر الرائق میں ہے :

[خانہ شدہ متن] البیع المنھی عنہ ثلثۃ باطل وفاسد ومکروہ تحریماً [2] | جس بیع سے روکا گیا ہے وہ تین قسم پر ہے باطل، فاسد اور الخ،اقول: والمرار صورۃ البیع الحاصلۃ | مکروہ تحریمی الخ،اقول: (میں کہتا ہوں) اس بیع سے مراد بیع کی وہ صورت ہے

*عہد : اصل میں سوال درج نہیں۔

[1] القرآن الکریم ۲/۲۷۵ [2] البحرالرائق کتاب البیوع باب البیع الفاسد ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲/ ۶۸

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Arabic]: The phrase "from 'I sold' and 'I bought'" is more general than whether its Shariah meaning is realized or not. This is because, according to us, a void (baatil) sale is not a prohibited sale, for a void sale is not a sale at all, so how can it be a prohibited sale? It has been established that prohibition confirms legitimacy, and through this, they moved toward dividing the sale into void, irregular (fasid), and valid (sahih). If this is not meant as a division of the formal sale, then it is a clear oversight. (T)

[Urdu]: This is achieved by saying "I sold" and "I bought", regardless of whether the Shariah legal meaning of the sale is established or not. This justification is provided because a void sale is not considered a prohibited sale by us, as it is fundamentally not a sale at all, so how can it be a prohibited sale? It has been proven through research that prohibition establishes legitimacy. Therefore, the jurists have divided sales into void, irregular, and valid categories. If this does not refer to the division of the apparent sale, then it is a blatant disregard. (T)

Void is that sale in which there is a defect in the contract (aqd) itself or its subject matter (mahall). A defect in the contract, such as the buying and selling of an insane person, as their statement is legally considered as if not spoken, thus their "I sold" or "I bought" can be neither an offer nor an acceptance. And a defect in the subject matter, such as selling a carcass, as a carcass is not considered property. It is mentioned in 'Durr-ul-Mukhtar':

[Arabic]: Whatever causes a defect in the pillar (rukn) of the sale is a nullifier (mubtil).
[Urdu]: And whatever causes a defect in the pillar of the sale is what makes the sale void. (T)

It is mentioned in 'Radd-ul-Muhtar':

[Arabic]: It is offer (Ijab) and acceptance (Qabul), such as coming from an insane person or a child who lacks understanding. It was necessary for him to add a mention of defect in its subject matter, meaning the item sold (mabi'), for a defect in it is also a nullifier, such as the item sold being a carcass, blood, a free person, or wine, as in 'Ta' (Tahtawi) with reference to 'Bada'i' etc. I say: Offer is an event that must have a subject matter.

[Urdu]: It (the pillar) is offer and acceptance, in such a way that it comes from an insane person or an undiscerning child. And it was incumbent upon the text to add a

mention of a defect in the subject matter, i.e., the item sold, because a defect in the item sold is also a nullifier of the sale, in such a way that the item sold is a carcass, blood, a free person, or wine, as in 'Ta' (Tahtawi) with reference to 'Bada'i' etc. I say: Offer is an occurrence for whose existence a subject matter is required.

Footnotes: 1. Durr-ul-Mukhtar, Book of Sales, Chapter of Irregular Sale, Mujtabai Press, Delhi, 2/23. 2. Radd-ul-Muhtar, Book of Sales, Chapter of Irregular Sale, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/100.

फतावा रज़विया (खण्ड १७)

[अरबी]: "मैने बेचा और मैंने खरीदा" वाक्यांश इस बात से अधिक व्यापक है कि इसका शरीयत सम्मत अर्थ सिद्ध हो रहा है या नहीं। ऐसा इसलिए है क्योंकि हमारे अनुसार 'बातिल' (अमान्य) बिक्री वास्तव में कोई निषिद्ध बिक्री नहीं है, क्योंकि बातिल बिक्री मूलतः बिक्री ही नहीं है, तो वह निषिद्ध कैसे हो सकती है? और यह स्थापित हो चुका है कि 'नहीं' (निषेध) उसकी वैधता (मशरूइयत) की पुष्टि करता है, और इसी आधार पर वे बिक्री को बातिल, फासिद (अनियमित) और सही (वैध) में विभाजित करने की ओर प्रवृत्त हुए हैं। यदि इससे अभिप्राय बिक्री के केवल बाह्य स्वरूप का विभाजन नहीं है, तो इसमें स्पष्ट ढिलाई (चश्मपोशी) बरती गई है। (त)

[उर्दू]: जो इन शब्दों के कहने से प्राप्त होता है कि "मैंने बेचा और मैंने खरीदा", चाहे बिक्री का शरीयत सम्मत अर्थ साकार हो या न हो। यह तर्क इसलिए दिया गया है क्योंकि बातिल बिक्री हमारे पास निषिद्ध बिक्री नहीं है क्योंकि वह सिरे से बिक्री ही नहीं है, तो वह निषिद्ध बिक्री कैसे हो सकती है? और शोध से यह सिद्ध हो चुका है कि निषेध वैधता को सिद्ध करता है, इसीलिए फकीहों (धर्मशास्त्रियों) ने बिक्री को बातिल, फासिद और सही की श्रेणियों में बांटा है। यदि इससे तात्पर्य केवल दिखावे की बिक्री का विभाजन नहीं है, तो यह खुली आँखों से अनदेखा करना है। (त)

बातिल वह है जिसके स्वयं अनुबंध (अक़्द) या उसके स्थान (महल) में कोई दोष हो। अनुबंध का दोष, जैसे पागल व्यक्ति का क्रय-विक्रय, क्योंकि शरीयत में उसका कथन विचारणीय नहीं है, अतः उसके द्वारा कहे गए "बेचा" या "खरीदा" शब्द न तो ईजाब (प्रस्ताव) हो सकते हैं और न ही क़ुबूल (स्वीकृति)। और स्थान का दोष जैसे मृत जीव की बिक्री, क्योंकि मृत जीव धन (माल) नहीं है। 'दुर्रुल मुख्तार' में उल्लेख है:

[अरबी]: जो कुछ भी बिक्री के मुख्य स्तंभ (रुकन) में दोष उत्पन्न करे, वह उसे निरस्त (मुब्तिल) कर देता है। [उर्दू]: और जो चीज़ बिक्री के रुकन में खराबी पैदा करे, वह बिक्री को बातिल करने वाली है। (त)

'रद्दुल मुह्तार' में है:

[अरबी]: वह ईजाब और क़ुबूल है, जैसे कि किसी पागल या नासमझ बच्चे की ओर से हो। लेखक के लिए आवश्यक था कि वह बिक्री के स्थान यानी 'मबीअ' (बेची जाने वाली वस्तु) में दोष के उल्लेख को भी जोड़ता, क्योंकि मबीअ में दोष भी बिक्री को बातिल कर देता है, जैसे कि मबीअ मृत शरीर, रक्त,

स्वतंत्र व्यक्ति या मदिरा हो, जैसा कि 'तातावी' में 'बदाइ' के हवाले से है आदि। मैं कहता हूँ: ईजाब एक घटना (हदस) है जिसके अस्तित्व के लिए एक स्थान (महल) का होना अनिवार्य है।

[उर्दू]: वह (रुकन) ईजाब और क़ुबूल है इस प्रकार कि पागल की ओर से हो या नासमझ बच्चे की ओर से हो। और ग्रंथ के मूल पाठ में आवश्यक था कि वे स्थान यानी मबीअ में दोष के उल्लेख का विस्तार करते क्योंकि मबीअ में दोष भी बिक्री को बातिल करने वाला है, जैसे कि मबीअ मुर्दार (शव), रक्त, स्वतंत्र व्यक्ति या शराब हो जैसा कि 'तातावी' में 'बदाइ' के हवाले से है आदि। मैं (लेखक) कहता हूँ: ईजाब एक घटना है जिसके अस्तित्व के लिए स्थान की आवश्यकता होती है।

पाद-टिप्पणियाँ: १. दुर्रुल मुख्तार, किताबुल बुयूअ, बाबिल बैअ अल-फासिद, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, २/२३ २. रद्दुल मुह्तार, किताबुल बुयूअ, बाबिल बैअ अल-फासिद, दार इहया अत-तुरास अल-अरबी, बेरूत, ४/१००

पृष्ठ ७१५ का १४२

من بعت واشتریت اعم من ان تحقق معناہ الشرعي اولا وذلك لان الباطل لیس بیعا منھیا عنه عندنا لان الباطل لیس بیعا اصلا فکیف یکون بیعا منھیا عنه وقد تقرر ان النھی یقرر المشروعیة و به ذھبوا الی تقسیمھم البیع الی باطل وفاسد وصحیح ان لم یکن تقسیم البیع الصوری ففیه مسامحة ظاھرة ۔ | جو یہ کہنے سے حاصل ہوتی ہے کہ میں نے بیچا اور میں نے خریدا عام ازیں کہ بیع کا شرعی معنی متحقق ہو یا نہ ہو، اور یہ توجیہ اس لئے کی گئی کہ بیع باطل ہمارے نزدیک ممنوع بیع نہیں کیونکہ وہ سرے سے بیع ہی نہیں تو وہ ممنوع بیع کیسے ہو سکتی ہے، اور تحقیق سے ثابت ہو چکا ہے کہ نہی مشروعیت کو ثابت کرتی ہے اس لئے فقہاء نے بیع کو باطل، فاسد اور صحیح کی طرف تقسیم کیا اگر اس سے مراد بیع صوری کی تقسیم نہ ہو تو یہ کھلی چشم پوشی ہے۔(ت)

باطل وہ ہے جس کے نفس عقد یا محل میں خلل ہو خلل عقد، مثل بیع و شراء مجنون کہ اس کا قول شرعاً لایقول ہے تو اس کا بعت یا اشتریت نہ ایجاب ہو سکے نہ قبول، اور خلل محل مثل بیع بالمیتہ کہ میتہ مال نہیں، در مختار میں ہے:

کل ما اورث خللا في رکن البیع فھو مبطل ۔ | اور جو چیز بیع کے رکن میں خلل پیدا کرے وہ بیع کو باطل کرنے والی ہے۔(ت)

ردالمحتار میں ہے:

ھو الایجاب والقبول بان کان من مجنون او صبی لایعقل وکان علیه ان یزید اوفی محله اعنی المبیع فان الخلل فیه مبطل بان کان المبیع میتة اودما او حرا او خمرا کما فی ط عن البدائع اھ اقول : الایجاب حدث لابد له من محل | وہ (رکن) ایجاب و قبول ہے بایں طور کہ مجنون کی طرف سے ہو یا نہ

سمجھ بچے کی طرف سے ہو، اور متن پر لازم تھا کہ وہ محل یعنی مبیع میں خلل کے ذکر کا اضافہ کرتے کیونکہ مبیع میں خلل بھی مبطل بیع ہے بایں طور کہ مبیع مردار، خون، حر یا شراب ہو جیسا کہ ط میں بحوالہ بدائع ہے الخ اقول: (میں کہتا ہوں) کہ ایجاب حدث ہے جس کے وجود کے لئے محل کا

1 در مختار کتاب البیوع باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۲۳ 2 رد المحتار کتاب البیوع باب البیع الفاسد دار حیاء التراث العربي بیروت ۴/ ۱۰۰

Fatawa Razawiyya, Volume 17

[Arabic Text Box:] Like striking cannot exist without a person being struck; therefore, if the place/object (mahall) is absent due to a flaw, the two pillars (rukn - offer and acceptance) must also be absent because their subject matter is absent. Don't you see that if someone says, 'I sold you the stars of the sky, the waves of the air, or the rays of light,' and another says, 'I bought them,' this is not understood as a valid offer and acceptance in Sharia? Similarly, if one says, 'I sold you this free person,' and the other says, 'I bought him for this blood.' Since there is no distinction after the loss of financial value (maliyyat), the result is that a flaw in the object (mahall) necessitates a flaw in the pillar (rukn). Thus, it contains the meaning mentioned. Yes, if the author (Matin) had mentioned it explicitly, it would have been more apparent and clear.

[Urdu Text Box:] It is necessary for [the object] to exist, just as the existence of a strike is impossible without someone being struck. Therefore, when the absence of the object (mahall) becomes necessary due to a flaw, it is because their connection is absent. Don't you see that if a person said, 'I sold you the stars of the sky, the waves of the air, and the rays of light,' and another said, 'I bought them,' then legally (shar'an), it is not considered an offer and acceptance. Similarly, if someone says, 'I sold this free person to you,' and the other says, 'I bought him in exchange for this blood,' because there is no difference between the absence of financial value and the absence of the object. In summary, a flaw in the object necessitates a flaw in the pillar. Thus, by mentioning the flaw in the pillar, the flaw in the item sold (mubee') is also conceptually mentioned. Yes, if the author (Matin), may Allah have mercy on him, had mentioned it, it would have been more apparent and clear. (T)

And a 'fasid' (irregular/voidable) contract is one whose fundamental reality is free from flaws, but there is a flaw in its descriptions (wasf), i.e., those related matters that are not essential to the formation of the contract. For example, if the pillars (rukn) and object (mahall) are sound and free from flaws, then a Sharia-compliant sale is certainly established. Then, if there is a flaw in a description—such as the sale being impossible to deliver, unknown (majhul), or containing an invalid condition—the essence is that in Sharia, a sale is the name for the exchange of property for property. Offer and acceptance are its pillars (rukn), and valuable property (mal mutaqawwam) is its object (mahall). Time of payment, ability to deliver, conditions, etc., are descriptions. The transfer of ownership is the legal ruling and effect. For its legal existence, it only depends on the pillars and the object, without which there is no need for its realization. Any flaw in these will be considered a nullifier (mubtil) of

the sale, meaning that according to Sharia, there is no sale at all, just like a flaw in a pillar. (Note)

Note: Up to this point, the answer was available.

Page 143 of 715

फ़तावा रज़विया, खंड 17

[अरबी टेक्स्ट बॉक्स:] प्रहार का अस्तित्व पीड़ित के बिना नहीं हो सकता; इसलिए, यदि दोष के कारण स्थान/वस्तु (महल) अनुपस्थित है, तो दोनों स्तंभों (रुकन - प्रस्ताव और स्वीकृति) का भी अनुपस्थित होना अनिवार्य है क्योंकि उनका विषय ही अनुपस्थित है। क्या आप नहीं देखते कि यदि कोई कहता है, 'मैंने तुम्हें आकाश के तारे, हवा की लहरें, या प्रकाश की किरणें बेचीं,' और दूसरा कहता है, 'मैंने उन्हें खरीदा,' तो इसे शरीयत में वैध प्रस्ताव और स्वीकृति नहीं समझा जाता? इसी तरह, यदि कोई कहता है, 'मैंने तुम्हें यह स्वतंत्र व्यक्ति बेचा,' और दूसरा कहता है, 'मैंने उसे इस रक्त के बदले खरीदा।' चूँकि वित्तीय मूल्य (मालियत) की समाप्ति के बाद कोई अंतर नहीं रह जाता, निष्कर्ष यह है कि वस्तु (महल) में दोष स्तंभ (रुकन) में दोष का कारण बनता है। इस प्रकार, इसमें वही अर्थ निहित है जिसका उल्लेख किया गया है। हाँ, यदि लेखक (मातिन) ने इसका स्पष्ट उल्लेख किया होता, तो यह और अधिक प्रकट और स्पष्ट होता।

[उर्दू टेक्स्ट बॉक्स:] [वस्तु का] अस्तित्व में होना आवश्यक है, जैसे किसी के पिटे बिना प्रहार का अस्तित्व असंभव है। इसलिए, जब दोष के कारण वस्तु (महल) का अनुपस्थित होना आवश्यक हो जाता है, तो ऐसा उनके संबंध के अनुपस्थित होने के कारण होता है। क्या आप नहीं देखते कि यदि एक व्यक्ति ने कहा, 'मैंने तुम्हें आकाश के तारे, हवा की लहरें और प्रकाश की किरणें बेचीं,' और दूसरे ने कहा, 'मैंने उन्हें खरीदा,' तो कानूनी रूप से (शरअन), इसे प्रस्ताव और स्वीकृति नहीं माना जाता है। इसी तरह, यदि कोई कहता है, 'मैंने यह स्वतंत्र व्यक्ति आपको बेचा,' और दूसरा कहता है, 'मैंने उसे इस रक्त के बदले में खरीदा,' क्योंकि वित्तीय मूल्य की अनुपस्थिति और वस्तु की अनुपस्थिति में कोई अंतर नहीं है। संक्षेप में, वस्तु में दोष स्तंभ में दोष को आवश्यक बनाता है। इस प्रकार, स्तंभ में दोष का उल्लेख करने से, बेची गई वस्तु (मुबी') में दोष का भी वैचारिक रूप से उल्लेख हो जाता है। हाँ, यदि लेखक (मातिन), अल्लाह उन पर रहम करे, ने इसका उल्लेख किया होता, तो यह अधिक प्रकट और स्पष्ट होता। (त)

और एक 'फ़ासिद' (दूषित) अनुबंध वह है जिसकी मूल वास्तविकता दोषों से मुक्त हो, लेकिन उसके वर्णन (वस्फ़) में दोष हो, यानी उन संबंधित मामलों में जो अनुबंध के गठन के लिए अनिवार्य नहीं हैं। उदाहरण के लिए, यदि स्तंभ (रुकन) और वस्तु (महल) दोषमुक्त हैं, तो शरीयत के अनुसार बिक्री निश्चित रूप से स्थापित हो जाती है। फिर, यदि किसी वर्णन में दोष है—जैसे कि बिक्री सुपुर्द करने में असंभव हो, अज्ञात (मजहूल) हो, या उसमें कोई अमान्य शर्त हो—तो मूल बात यह है कि शरीयत में

बिक्री संपत्ति के बदले संपत्ति के आदान-प्रदान का नाम है। प्रस्ताव और स्वीकृति इसके स्तंभ (रुकन) हैं, और मूल्यवान संपत्ति (माल मुतकव्वम) इसकी वस्तु (महल) है। भुगतान का समय, सुपुर्दगी की क्षमता, शर्तें आदि इसके वर्णन हैं। स्वामित्व का हस्तांतरण कानूनी निर्णय और प्रभाव है। अपने कानूनी अस्तित्व के लिए, यह केवल स्तंभों और वस्तु पर निर्भर है, जिनके बिना इसकी प्राप्ति की कोई आवश्यकता नहीं है। इनमें से किसी में भी होने वाला दोष बिक्री को रद्द (मुब्तिल) करने वाला माना जाएगा, जिसका अर्थ यह होगा कि शरीयत के अनुसार बिक्री हुई ही नहीं, जैसे कि स्तंभ में दोष होने पर होता है। (टिप्पणी)

टिप्पणी: यहाँ तक उत्तर उपलब्ध था।

पृष्ठ 143 का 715

فتاوٰی رضویہ ، جلد ہفدہم (۱۷)

[عربی عبارت:] کالضرب لا وجود له یدون مضروب فاذا العدم المحل بتطرق الخلل وجب انعدام الرکنین لانعدام ما یتعلقان به الاتری ان من قال بعتک نجوم السماء وامواج الهواء واشعة الضیاء وقال الاخر اشتریت لم یفهم هذا ایجاب ولا قبولا فی الشرع فکذا قول القائل بعتک هذا حرا واشتریت بهذا الدم اذا لا فاصل بعد انعدام المالیة والحاصل ان خلل المحل یوجب خلل الرکن فکان فیه معنی من ذکره نعم لو ذکر لکان اظهر واوضح۔

[اردو ترجمہ باکس:] موجود ہونا ضروری ہے جیسا کہ ضرب کا وجود مضروب کے بغیر نہیں ہو سکتا، چنانچہ جب خلل کے پائے جانے کی وجہ سے محل معدوم ہونا واجب ہے بسبب ان کے متعلق کے معدوم ہونے کے ، کیا نہیں دیکھتا ہے تو کہ جس شخص نے کہا میں نے تجھ پر آسمان کے ستارے، ہوا کی موجیں اور روشنی کی شعاعیں فروخت کیں، دوسرے نے کہا میں نے خریدیں، تو اس کی شرعاً ایجاب و قبول نہیں سمجھا گیا اور یونہی ہے کسی کا یہ کہنا کہ میں نے تجھ پر یہ آزاد شخص فروخت کیا اور دوسرے کا کہنا کہ میں نے اس کو خون کے بدلے میں خریدا کیونکہ مالیت کے منعدم ہونے اور محل کے منعدم ہونے میں کوئی فرق نہیں، خلاصہ یہ کہ محل کا خلل لازم کرتا ہے رکن خلل کو۔ تو گویا خلل رکن کے ذکر میں معنی کے اعتبار سے خلل مبیع بھی مذکور ہوا، ہاں اگر ماتن علیہ الرحمۃ اس کا ذکر کر دیتے تو زیادہ ظاہر اور زیادہ واضح ہو جاتا(ت)

اور فاسد وہ جس کی اصل حقیقت خلل سے خالی ہو مگر وصف یعنی ان متعلقات میں خلل ہو جو قوام عقد میں داخل نہیں مثلاً شروط فاسدہ اگر رکن و محل سالم از خلل ہوں تو بیع شرعی قطعاً متحقق ، پھر اگر وصف میں خلل ہے مثلاً بیع مقدور التسلیم نہیں یا مجہول ہے یا کوئی شرط فاسد

مفہوم ، اصل یہ کہ بیع شرعی میں مبادلہ مال بمال کا نام ہے ایجاب و قبول اس کے رکن اور مال منقوم محل اور اجل و قدرت تسلیم و شرط و غیر ہا اوصاف اور انتقال ملک حکم واثر ہے اپنے وجود شرعی میں صرف رکن و محل کا محتاج ہے کہ بے ان کے اس کے (تحقق کی کوئی ضرورت نہیں) جو خلل کہ ان میں ہوگا مبطل بیع قرار پائے گا جس کے معنی یہ ہوں گے کہ عند الشرع را سا بیع ہی نہیں خلل رکن مثل بیع عہ

عہ : یہاں تک جواب دستیاب ہوا۔

Fatawa Razawiyya, Volume 17 (17)

Question 53: From Tehsil Patan, District Aurangabad, Hyderabad Deccan Region, Court of Justice, sent by Maulvi Abdul Aziz Sahib on 26th Rabi' al-Awwal 1306 AH. What do the scholars of the religion say about this issue: government stamped papers are available, on which the price is also written. The government rule here is that a claim is never heard unless it is written on this paper. Even after being heard, it is not necessary that the decision be in favor of the claimant. There is profit for the government in this paper; for a claim of eight rupees, a stamped paper of (1/8) [one-eighth] value is taken, up to (As'ah), (As'ah to La'ah), (La'ah Masah to Ma'e), and so on. For selling these stamped papers, only the person appointed by the government can sell them; no one else has the authority. The seller receives a five-rupee profit for every hundred rupees. Is the method of buying and selling these stamped papers Sharia-compliant or not? Explain and be rewarded.

Answer: نسأل الله هداية الحق والصواب اللهم اغفر (We ask Allah for guidance to truth and correctness. O Allah, forgive us. - T) This trade, in most cases, is not free from malice. Allah Almighty has made mutual consent a condition for the legality of trade.

Allah Almighty says: "O you who have believed, do not consume one another's wealth unjustly but only [in lawful] business by mutual consent."	**قال تعالٰی عز من قائل "يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تَأْكُلُوا أَمْوَالَكُمْ بَيْنَكُمْ بِالْبَاطِلِ إِلَّا أَنْ تَكُونَ تِجَارَةً عَنْ تَرَاضٍ مِنْكُمْ"[1]**

In a Hadith, the Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) says:

The property of a Muslim is not lawful except with his heart's pleasure. (Narrated by Al-Daraqutni from Anas bin Malik, may Allah be pleased with him. - T)	**لا يحل مال امرئ مسلم الا بطيب نفسه[2] - رواه الدار قطنی عن انس بن مالك رضی اللہ تعالٰی عنہ۔**

In another Hadith, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

It is not lawful for a Muslim to take even the stick of his brother.	**لا يحل لمسلم ان يأخذ عصا اخيه**

[1] The Holy Quran 4/29 [2] Sunan al-Daraqutni, Book of Sales, Hadith 91, Nashr al-Sunnah Multan 3/26

फ़तावा रज़विया, खंड 17 (17)

प्रश्न 53: तहसील पाटन, जिला औरंगाबाद, हैदराबाद दक्कन क्षेत्र, मुंसिफी अदालत से, मौलवी अब्दुल अज़ीज़ साहिब द्वारा 26 रबी-उल-अव्वल 1306 हिजरी को भेजा गया। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: सरकारी स्टाम्प पेपर होते हैं, जिन पर उनकी कीमत भी लिखी होती है। यहाँ सरकारी नियम यह है कि जब तक दावा इस कागज़ पर न लिखा जाए, तब तक उसे सुना ही नहीं जाता। और सुनने के बाद यह ज़रूरी नहीं कि फ़ैसला दावेदार के पक्ष में हो। इस कागज़ में सरकार का मुनाफ़ा है; आठ रुपये के दावे के लिए (1/8) मूल्य का स्टाम्प पेपर लिया जाता है, (अस'अ) तक, (अस'अ से ल'अ) तक, (ल'अ मास'अ से म'ए) तक, और इसी तरह। इन स्टाम्प पेपरों को बेचने के लिए, सरकार द्वारा नियुक्त व्यक्ति ही उन्हें बेच सकता है; किसी और को अधिकार नहीं है। विक्रेता को हर सौ रुपये पर पाँच रुपये का लाभ मिलता है। क्या इन स्टाम्प पेपरों की खरीद-बिक्री और व्यापार का तरीका शरीयत के अनुसार जायज़ है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: نسأل الله هداية الحق والصواب اللهم اغفر (हम अल्लाह से सत्य और सही मार्ग की हिदायत माँगते हैं। ऐ अल्लाह! क्षमा कर। - त) यह व्यापार अक्सर स्थितियों में बुराई से मुक्त नहीं है। अल्लाह अज़वजल ने व्यापार की वैधता के लिए आपसी सहमति को शर्त बनाया है।

قال تعالٰی عز من قائل "یَا أَیُّهَا الَّذِینَ آمَنُوا لَا تَأْكُلُوا أَمْوَالَكُمْ بَیْنَكُمْ بِالْبَاطِلِ إِلَّا أَنْ تَكُونَ تِجَارَةً عَنْ تَرَاضٍ مِنْكُمْ"[1]

अल्लाह सर्वशक्तिमान का फ़रमान है: "ऐ ईमान वालो! आपस में एक-दूसरे का माल अन्यायपूर्ण तरीके से मत खाओ, सिवाय इसके कि तुम्हारी आपसी सहमति से कोई व्यापार हो।"

हदीस में सैय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

لا یحل مال امرئ مسلم الا بطیب نفسه[2] - رواه الدار قطنی عن انس بن مالك رضی الله تعالٰی عنه۔

किसी मुसलमान का माल हलाल नहीं है सिवाय उसके दिल की खुशी के। (इसे दारकुतनी ने अनस बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है। - त)

दूसरी हदीस में हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

किसी मुसलमान के लिए जायज़ नहीं है कि वह अपने भाई की लकड़ी (छड़ी) भी ले ले। **لا یحل لمسلم ان یأخذ عصا اخیه**

[1] अल-क़ुरान अल-करीम 29/4 [2] सुनन दारकुतनी, किताबुल बुयू, हदीस 91, नश्रुस सुन्ना मुल्तान 26/3

مسئلہ ۵۳: از تعلقہ پٹن ضلع اورنگ آباد علاقہ حیدرآباد دکن کچہری منصفی مرسلہ مولوی عبدالعزیز صاحب ۲۶ ربیع الاول ۱۳۰۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ سرکاری کاغذ مہور ہوتے ہیں مہر میں اس کی قیمت بھی لکھی ہوتی ہے اور یہاں سرکاری قاعدہ یہ ہے کہ دعوی جب تک اسی کاغذ پر نہ لکھا جائے ہرگز مسموع نہیں ہوتا، اور بعد مسموع ہونے یہ ضرور نہیں کہ فیصلہ مدعی کے حسب دلخواہ ہو اس کاغذ میں سرکار کی منفعت ہے آٹھ روپے کا دعوی ہو تو (۱/۸) کا کاغذ مہور لیا جاتا ہے (عصہ) تک (عصہ۔ للعہ) تک (للعہ ماصہ) تک (مئے)، وعلی ہذا القیاس اور اس مہور کے فروخت کرنے کے واسطے سرکار کی جانب سے جو شخص معین ہوتا ہے وہی فروخت کرسکتا ہے غیر کی مجال نہیں اور اس کے بائع کو ہر سو روپے میں پانچ روپیہ نفع ملتا ہے اس کاغذ مہور کی بیع اور تجارت کا طریقہ شرعاً جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: نسأل اللہ ھدایۃ الحق والصواب اللھم اغفر (ہم اللہ تعالٰی سے حق اور درستگی کی ہدایت مانگتے ہیں اے اللہ! مغفرت فرما۔ ت) یہ تجارت اکثر صورتوں میں خالی از خباثت نہیں، اللہ عزوجل نے جواز تجارت کے لئے تراضی باہمی شرط فرمائی

اللہ تعالٰی کا ارشاد ہے: اے ایمان والو! نہ کھاؤ اپنے مال آپس میں ناحق طور پر مگر یہ کہ کوئی سودا ہو تمہارے آپس کی رضامندی سے۔ **قال تعالٰی عز من قائل "یَا أَیُّھَا الَّذِینَ آمَنُوا لَا تَأْکُلُوا أَمْوَالَکُمْ بَیْنَکُمْ بِالْبَاطِلِ إِلَّا أَنْ تَکُونَ تِجَارَۃً عَنْ تَرَاضٍ مِنْکُمْ"[1]**

حدیث میں جناب سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں :

کسی مسلمان کا مال حلال نہیں مگر اس کے جی کی خوشی سے، (اسے دار قطنی نے انس بن مالک رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا۔ ت) **لا یحل مال امرئ مسلم الا بطیب نفسہ[2] - رواہ الدار قطنی عن انس بن مالك رضی اللہ تعالٰی عنہ۔**

دوسری حدیث میں ہے حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

مسلمان کو حلال نہیں کہ اپنے مسلمان بھائی کی (لاٹھی بھی لے لے) **لا یحل لمسلم ان یأخذ عصا اخیہ**

۱ القرآن الکریم ۲۹/۴ ۲ سنن الدار قطنی کتاب البیوع حدیث ۹۱ نشر السنہ ملتان ۲۶/۳

Fatawa Rizvia, Volume 17 (17)

...without his heart's pleasure. He said this because of the severity of what Allah has prohibited regarding the property of one Muslim to another. — Narrated by Ibn Hibban in his Sahih on the authority of Abu Humaid al-Sa'idi (may Allah be pleased with him).

...without his consent, and this is because Allah Almighty has strictly forbidden the property of a Muslim to another Muslim. (Ibn Hibban narrated this in his Sahih from Abu Humaid al-Sa'idi, may Allah be pleased with him. — T)

It is evident that a person files a lawsuit for his recovery when he himself is unable to obtain it, and no person would want from the happiness of his heart that his right, which is with another, should not be available without expenditure; rather, when he considers it his right, he would certainly want to get it for free. Yes, if he sees that it cannot be obtained like this, then out of necessity according to the rule, 'He who is afflicted with two calamities should choose the lesser of them' (T), he will tolerate spending and expenses; seeing all his wealth going, he says give half and share it. This meaning, although not contrary to free will because no one forced him to take his right—he had the choice to remain completely silent and then this expenditure would not have occurred—but it is certainly a corrupting factor of consent. If he knew it was possible to obtain it without this, he would never have chosen to spend. For example, Amr usurped property worth a hundred rupees from Zaid and says, 'If you give ten rupees, I will return it.' Zaid, seeing his high-handedness and his own helplessness, went and gave ten and recovered the property. Although Zaid gave these rupees of his own choice in reality, they will not become lawful for Amr because he never gave them with his own true pleasure. There is a world of difference between choice and pleasure. Contracts of sale, purchase, gift, and the like are not invalidated only by lack of choice but even the absence of consent is sufficient for their invalidation.

As mentioned in the saying of Allah Almighty, "by mutual consent among you"[3] and in the Hadith, "the property of a Muslim person is not lawful except with his heart's pleasure."[4]

As mentioned in this decree of Allah Almighty that do not consume the property of anyone except that there is a transaction by mutual consent between you, and it has passed in the Hadith that taking the property of any believer without his heart's pleasure is not lawful. (T)

1. Al-Targhib wa al-Tarhib, citing Ibn Hibban, Hadith 9, Mustafa al-Babi Egypt, 3/17

2. Al-Ashbah wa al-Naza'ir, First Art, Explanation of rulings for those afflicted with two calamities, Idarat al-Qur'an Karachi, 1/123
3. The Holy Quran, 4/29
4. Al-Targhib wa al-Tarhib, citing Ibn Hibban, Hadith 9, Mustafa al-Babi Egypt, 3/17

...बिना उसकी प्रसन्नता के। उन्होंने ऐसा इसलिए कहा क्योंकि अल्लाह ने एक मुसलमान की संपत्ति को दूसरे मुसलमान के लिए बहुत सख़्त हराम (निषिद्ध) ठहराया है। — इब्न हिब्बान ने अपनी सहीह में अबू हुमैद अस-सादी (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) से रिवायत किया है।

...बिना उसकी मर्ज़ी के, और यह इस वजह से है कि अल्लाह तआला ने मुसलमान का माल मुसलमान पर सख़्त हराम किया है। (इसे इब्न हिब्बान ने अपनी सहीह में अबू हुमैद सादी रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया — त)

यह ज़ाहिर है कि आदमी अपनी वसूली के लिए मुक़दमा तब करता है जब वह ख़ुद उसे हासिल करने पर क़ादिर नहीं होता और कोई शख़्स अपने दिल की ख़ुशी से यह नहीं चाहेगा कि मेरा हक़ जो दूसरे के पास है, बिना ख़र्च के मयस्सर न हो; बल्कि जब वह उसे अपना हक़ जानेगा तो यक़ीनन मुफ़्त ही हाथ आना चाहेगा। हाँ, अगर देखेगा कि इस तरह नहीं मिल सकता, तो लाचारी में इस नियम के अनुसार, 'जो व्यक्ति दो मुसीबतों में फँसा हो, उसे उनमें से कमतर को चुनना चाहिए' (त) ख़र्च बर्दाश्त कर लेगा कि सारा धन जाते देखे तो आधा दे दे और बाँट ले। यह अर्थ यद्यपि इच्छा के विरुद्ध नहीं है क्योंकि किसी ने उसे अपना हक़ लेने के लिए मजबूर नहीं किया था—उसे अधिकार था कि बिल्कुल ख़ामोश रहता तो यह ख़र्च न पड़ता—मगर यह निश्चित रूप से सहमति (रज़ा) को भ्रष्ट करने वाला है। अगर वह बिना इसके प्राप्ति संभव जानता तो हरगिज़ ख़र्च न करता। उदाहरण के तौर पर, अमर ने ज़ैद का सौ रुपये का माल दबा लिया और कहता है, 'दस रुपये दो तो वापस करूँगा।' ज़ैद ने उसकी ज़बरदस्ती और अपनी लाचारी को देखते हुए दस रुपये दे दिए और माल छुड़ा लाया। यद्यपि वास्तव में ज़ैद ने ये रुपये अपनी इच्छा से दिए, लेकिन वे अमर के लिए हलाल नहीं होंगे क्योंकि उसने अपनी ख़ुशी से हरगिज़ नहीं दिए। इच्छा और रज़ा में ज़मीन-आसमान का फ़र्क़ है। ख़रीद-बिक्री, उपहार और इसी तरह के अनुबंध न केवल इच्छा की कमी से अमान्य (फ़ासिद) होते हैं बल्कि सहमति का अभाव भी उनके अमान्य होने के लिए पर्याप्त है।

जैसा कि अल्लाह तआला के इस कथन में गुज़रा 'आपस की सहमति से'[3] और हदीस में है 'किसी मुसलमान का माल

जैसा कि अल्लाह तआला के इस इरशाद में गुज़रा कि किसी का माल मत खाओ सिवाय इसके कि तुम्हारे दरमियान आपसी रजामंदी से सौदा हो, और हदीस में

उसकी दिली ख़ुशी के बिना हलाल नहीं है।[4]

गुज़रा कि किसी मोमिन की दिली ख़ुशी के बिना उसका माल लेना हलाल नहीं है। (त)

1. अत-तरग़ीब वत-तरहीब, इब्न हिब्बान के हवाले से हदीस 9, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 3/17
2. अल-अश्बाह वन-नज़ाइर, अल-फ़नुल अव्वल, बयान अहकाम मन इब्तला बिबलिय्यतैन, इदारतुल क़ुरआन कराची, 1/123
3. अल-क़ुरआनुल करीम, 4/29
4. अत-तरग़ीब वत-तरहीब, इब्न हिब्बान के हवाले से हदीस 9, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 3/17

पृष्ठ 145/715

بغیر طیب نفس منہ قال ذلک لشدۃ ماحرم الله من مال المسلم علی المسلم - رواہ ابن حبان فی صحیحہ عن ابی حمید الساعدی رضی اللہ تعالٰی عنہ۔

بغیر اس کی مرضی کے لئے اور یہ اس سبب سے ہے کہ اللہ تعالٰی نے مسلمان کا مال مسلمان پر سخت حرام کیا ہے (اسے ابن حبان نے اپنی صحیح میں ابو حمید ساعدی سے رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ت)

ظاہر ہے کہ آدمی نالش اپنے استخراج کے لئے کرتا ہے جبکہ خود اس کی تحصیل پر قادر نہیں ہوتا اور کوئی شخص اپنے دل کی خوشی سے نہ چاہے گا کہ میرا حق جو غیر کے پاس ہے بے صرف کے میسر نہ ہو بلکہ جب اسے اپنا حق جانے گا قطعاً مفت ہی ہاتھ آنا چاہے گا، ہاں اگر دیکھے گا کہ یوں نہیں مل سکتا ناچار بحکم من ابتلی ببلیتین اختار اھونھما ۲ (جو شخص دو مصیبتوں میں مبتلا ہو وہ ان میں سے ہر کمتر کو اختیار کرے۔ ت) صرف و خرچ گوارا کرلے گا کہ سارا دھن جاتا دیکھئے تو آدھا دیجئے بانٹ، یہ معنی اگرچہ منافی اختیار نہیں کہ کسی نے اس پر اپنا حق لینے کا جبر نہ کیا تھا اسے اختیار تھا کہ بالکل خاموش رہتا تو یہ صرف نہ پڑتا مگر مفسدِ رضا بیشک ہے اگر بے اس کے وصول ممکن جانتا ہرگز خرچ اختیار نہ کرتا مثلاً عمرو نے زید کا سو روپے کا مال دبا لیا اور کہتا ہے دس روپے دے تو واپس کروں، زید اس کی زبردستی اور اپنا عجز جان کر دس دے آیا اور مال چھڑا لایا یہ روپے اگرچہ فی الواقع زید نے باختیار خود دیے مگر عمرو کے لئے حلال نہ ہوجائیں گے کہ ہرگز رضائے خود نہ دئے، اختیار اور رضا میں زمین و آسمان کا فرق ہے، اور عقودِ بیع وشراء وہبہ وامثالہا صرف بے اختیاری ہی سے فاسد نہیں ہوتے بلکہ عدمِ رضا بھی ان کے فساد کو بس ہے۔

كما مر فی قوله تعالی 'عَنْ تَرَاضٍ مِّنْكُمْ' ۳ وفي الحديث 'لا يحل مال امرئ مسلم الا بطيب نفسه' ۴

جیسا کہ اللہ تعالیٰ کے اس ارشاد میں گزرا کہ کسی کا مال مت کھاؤ سوائے اس کے کہ تمہارے درمیان باہمی رضامندی سے سودا ہو، اور حدیث میں گزرا کہ کسی مومن کی دلی خوشی کے بغیر اس کا مال لینا حلال نہیں۔ (ت)

1. الترغیب والترہیب بحوالہ ابن حبان حدیث ۹ مصطفی البابی مصر ۳/ ۱۷
2. الاشباہ والنظائر الفن الاول بیان احکام من ابتلی ببلیتین ادارۃ القرآن کراچی ۱/ ۱۲۳
3. القرآن الکریم ۴/ ۲۹
4. الترغیب والترہیب بحوالہ ابن حبان حدیث ۹ مصطفی البابی مصر ۳/ ۱۷

Fatawa Rizvia Volume 17

It is in Rad al-Muhtar: [Arabic]: Nafiy al-ridha a'ammu min ifsad al-ikhtiyar wa al-ridha bi'iza'i al-karahata wa al-ikhtiyar bi'iza'i al-jabr fafi al-ikrah bi-habs aw dharb la shakka fi wujub al-karahata wa 'adam al-ridha wa in tahaqqaqa al-ikhtiyar al-sahih idh fasaduhu innama huwa bi al-takhwif bi-itlaf al-nafs aw al-'udhw. The negation of pleasure is more general than the corruption of choice. Pleasure is opposed to dislike, and choice is opposed to compulsion. Thus, in the case of compulsion through imprisonment or beating, there is no doubt about the existence of dislike and the absence of pleasure, even if sound choice is achieved, because corruption of choice occurs through threats of killing or loss of a limb. (T)

It is in Durr al-Mukhtar: [Arabic]: Al-ikrah al-mulji wa ghayr al-mulji yu'addamani al-ridha'a wa al-ridha'u shartu li-sihati hadhihi al-'uqud wa kadha al-siha al-iqrar falidha sara lahu haq al-faskh wa al-imdhah. Compulsion (ikrah), whether 'mulji' (extreme) or 'ghayr mulji' (less extreme), i.e., complete or partial compulsion, negates pleasure. Pleasure is a condition for the validity of these contracts, and likewise for the validity of an acknowledgement (iqrar). Therefore, the right to annul or proceed has been established for him. (T)

Exactly the same is the case with the purchase of the aforementioned paper. No person tolerates wasting a single penny of their own without reason; a sixteenth part of one's property is a significant amount. But when there is an order from the chief that no lawsuit shall be heard without it, a person either has to wash their hands of their rights and properties altogether, or... it is not possible that the cruel, godless person, once they become aware of this resolve, would not stop even after stripping the very clothes off one's back, thinking, "After all, for fear of the cost of litigation, they won't file a lawsuit anyway, so what is there to fear?" Or as for the hereafter, "Who has seen it? If we have to face God, we will; today we have the power, let us not (worry)." This is the state of those who believe in facing God. And as for those who have no faith in it at all, what can be said of them? They are completely unconcerned. Or, if one takes back their rights by force when they have the power, then a lawsuit is filed from the other side and in the eyes of the law, they themselves are considered the criminal. Furthermore...

---

1 Rad al-Muhtar, Book of Compulsion (Kitab al-Ikrah), Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 5/80. 2 Durr al-Mukhtar, Book of Compulsion (Kitab al-Ikrah), Mujtabai Press, Delhi, 2/195.

फ़तावा रिज़विया जिल्द 17

रद अल-मुह्तार में है: [अरबी]: नफ़ी अर-रज़ा आममुन मिन इफ़साद अल-इख़्तियार व अर-रज़ा बिइज़ाई अल-कराहता व अल-इख़्तियार बिइज़ाई अल-जब्र फ़फ़िल इकरा बि-हब्स औ ज़र्ब ला शक्का फ़ी वुजूब अल-कराहता व अदम अर-रज़ा व इन तहक़्क़क़ा अल-इख़्तियार अस-सहीह इध फ़सादुहू इन्नमा हुवा बि अत्-तख़्वीफ़ बि-इतलाफ़ अन-नफ़्स औ अल-'उध्व। रज़ा (प्रसन्नता) की नफ़ी (अभाव) इख़्तियार (चयन) के बिगाड़ से ज़्यादा आम है और रज़ा कराहत (नापसंदगी) के मुक़ाबले में है जबकि इख़्तियार जबर (जबरदस्ती) के मुक़ाबले में आता है। चुनाँचे क़ैद और मार के ज़रिए इकरा (मजबूरी) की सूरत में कराहत और अदम-ए-रज़ा (रज़ा न होना) के पाए जाने में कोई शक नहीं, हालाँकि इख़्तियार-ए-सहीह (सही चयन) मौजूद है, क्योंकि इख़्तियार का बिगाड़ जान से मार देने या अंग भंग करने की धमकी से हासिल होता है। (त)

दुर-ए-मुख्तार में है: [अरबी]: अल-इकरा अल-मुल्जी व ग़ैर अल-मुल्जी यु'अद्दमानि अर-रज़ा'आ व अर-रज़ा'उ शर्तु लि-सिह़ति हादिहि अल-'उक़ूद व कज़ा अस-सिह़ा अल-इक़्रार फ़लिज़ा सारा लहू हक़ अल-फ़स्ख़ व अल-इम्ज़ाह। इकरा-ए-मुल्जी और ग़ैर-मुल्जी यानी कामिल और नाकिस मजबूरी रज़ा को ख़त्म कर देते हैं, हालाँकि इन अनुबंधों की वैधता के लिए रज़ा शर्त है और इसी तरह इक़्रार (स्वीकारोक्ति) की वैधता के लिए भी रज़ा शर्त है, इसीलिए उसे रद्द करने और जारी रखने का अधिकार प्राप्त हुआ है। (त)

ठीक यही हाल उक्त काग़ज़ की खरीदारी का है। कोई भी व्यक्ति बिना किसी कारण अपना एक पैसा भी बर्बाद करना पसंद नहीं करता, माल का सोलहवाँ हिस्सा तो बहुत बड़ी बात है। लेकिन जब प्रमुख का आदेश हो कि इसके बिना कोई शिकायत नहीं सुनी जाएगी, तो आदमी या तो अपने अधिकारों और संपत्तियों से पूरी तरह हाथ धो बैठे, यह मुमकिन नहीं कि ज़ालिम ख़ुदा-बिज़ार (ईश्वर का भय न रखने वाला) जिसे इस इरादे का पता चल जाए, वह शरीर के कपड़े उतारने पर ही न रुक जाए, कि आख़िर यह मुक़दमेबाज़ी के ख़र्चे के डर से शिकायत तो करेगा ही नहीं, फिर डर किस बात का। रही बात आख़िरत (परलोक) की, तो "किसने देखी है? जब ख़ुदा का सामना होगा, तब देखा जाएगा, आज तो अपनी मर्जी चल रही है, न करें (परवाह)"। यह हाल उनका है जो ख़ुदा का सामना होने पर ईमान लाते हैं, और जो इस पर विश्वास ही नहीं रखते उनका तो कहना ही क्या, वे तो पूरी तरह बेफ़िक्रे हैं। या फिर अगर कोई ताक़त होने पर अपने अधिकारों को ज़बरन वापस ले ले, तो दूसरी तरफ़ से मुक़दमा हो जाता है और क़ानून की नज़र में वह ख़ुद अपराधी ठहरता है। इसके साथ...

1 रद अल-मुह्तार, किताब अल-इकरा, दार इहया अत-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 5/80। 2 दुर-ए-मुख्तार, किताब अल-इकरा, मतबा मुज्तबाई, दिल्ली, 2/195।

رد المحتار میں ہے: نفی الرضی اعم من افساد الاختیار و الرضی بازاء الکراھۃ والاختیار بازاء الجبر ففی الاکراہ بحبس او ضرب لا شک فی وجوب الکراھۃ وعدم الرضی وان تحقق الاختیار الصحیح اذ فسادہ انما ھو بالتخویف باتلاف النفس او العضو ۱۔ رضاء کی نفی فسادِ اختیار سے عام ہے اور رضا کراہت کے مقابلے میں جبکہ اختیار جبر کے مقابلے میں آتا ہے، چنانچہ قید اور مار کے ذریعے اکراہ کی صورت میں کراہت وعدمِ رضا کے پائے جانے میں کوئی شک نہیں اگرچہ اختیارِ صحیح متحقق ہے کیونکہ فسادِ اختیار جان سے مار دینے یا عضو کے ضائع کردینے کی دھمکی سے حاصل ہوتا ہے۔ (ت)

در مختار میں ہے: الاکراہ الملجی وغیر الملجی یعد مان الرضاء والرضاء شرط لصحۃ ھذہ العقود وکذا الصحۃ الاقرار فلذا صار لہ حق الفسخ والامضاء ۲۔ اکراہ ملجی و غیر ملجی یعنی اکراہ تام و ناقص رضا کو ختم کردیتے ہیں حالانکہ ان عقود کی صحت کے لئے رضا شرط ہے اور اسی طرح صحتِ اقرار کے لئے بھی رضا شرط ہے، اسی لئے اس کو فسخ کرنے اور جاری رکھنے کا حق حاصل ہوا ہے۔ (ت)

بعینہ یہی حال خریداری کاغذ مذکور کا ہے کوئی شخص بلاوجہ اپنا ایک پیسہ ضائع جانا گوارا نہیں کرتا مال کا سولہواں حصہ تو بہت ہوتا ہے مگر جب رئیس کا حکم ہے کہ بے اس کے کوئی نالش نہ سنی جائے تو آدمی یا تو اپنے حقوق واملاک سے یکدست ہاتھ دھو بیٹھے یہ ممکن نہیں کہ ظالم ناخداترس جس کے اس عزم پر آگاہ ہو جائیں اس کے تن کے کپڑے تک اتار کر بس نہ کریں کہ آخر یہ بخوف مصرف نالش تو کرے گاہی نہیں پھر ڈر کا ہے یا، رہی عاقبت، وہ کس نے دیکھی ہے خدا کا سامنا ہوگا، ہوگا، آج تو اپنی چلتی ہے نہ کریں، یہ ان کا حال ہے جو خدا کا سامنا ہونے

پر ایمان لاتے ہیں اور جو اس پر اعتقاد ہی نہیں رکھتے ان کیا کہنا، وہ تو پورے بے غم ہے یا بحالت قدرت بطور خود جبر اپنے حقوق واپس کرلے تو الٹی ان کی طرف سے نالش ہو اور حکم کے نزدیک یہ خود مجرم ٹھہرے معہذا

---

۱ رد المحتار کتاب الاکراہ داراحیاء التراث العربی بیروت ۵/۸۰ ۲ درمختار کتاب الاکراہ مطبع مجتبائی دہلی ۲/۱۹۵

If one does not provide a forever, then that is sheer oppression, and if they do, then what? Won't there be expenses of this kind? Yet, the fire is in the bowl. In short, all paths in the world are closed except for taking help from the state, and the state has openly decreed that our help is dependent on this condition; otherwise, the doors of the judiciary will never open. Compelled, one will bear the purchase of the said paper, but this bearing is of the sort that the heart does not desire. If one had their way, the truth is that one would want to get their right without spending a penny, but what can be done about compulsion? So it is proven that this purchase is by no means with a cheerful heart, and the money given in exchange as an offering to the sellers is by no means given with heartfelt pleasure. According to the Quran and Hadith, it cannot be called lawful and pure (Halal and Tayyib) wealth. Yes, it is accepted that due to the passage of time and common affliction, signs of aversion are probably not apparent to many people, especially litigants, in these types of expenses. But far from it, this is not purity of soul or heartfelt pleasure; rather, it is just that it has become a habit. And when everyone is in the same condition, 'Death in a crowd is a celebration' (In the death of a group, one's own death feels like a celebration. - Tr.). After all, do not look at other sums in which no benefit is expected for oneself, and which chiefs and kings impose on properties and farms; at first, there is a general outcry for a few days, then nothing, because after all, the world is the world. Then, expressing aversion becomes meaningless when more time has passed; go on, gradually it becomes one of the customary matters. But the heart's desire never becomes its helper. A simple test of this is, for example, if the state orders regarding this same paper that it is not necessary, we will hear claims even on plain paper, then see how many go to buy it. Absolutely not, no one will even go near it because who likes to spend their money without reason? Thus, the lack of consent is definitely permanent and eternal, and this purchase is entirely in the state of a disliked purchase (shira-e-makruh). And 'After all is said and done' (after debate and scrutiny. - Tr.), there is no doubt about the lack of consent and the absence of purity of soul. And this much is sufficient for the negation of lawfulness. Many scholars say that if the king of the time fixes a price, for example, people sell fifteen seers of wheat for a rupee, and the ruler orders that they should not sell less than twenty seers, otherwise they will be punished; in this case, this price will not be lawful for the buyer. Although the ruler did not force the seller to sell at all, as he is the owner of his property, he has ordered that if he sells, he must sell at this price, and there is a fear of the ruler in case of

violation. Therefore, his consent is not realized at this rate, and taking a Muslim's property without their consent is not lawful. In Durr al-Mukhtar, it is stated:

Arabic	Urdu Translation
If the ruler sets a price and the seller fears being struck by the leader if he reduces it, it is not lawful.	If the ruler fixes the price and the seller fears punishment from the ruler if he reduces that price, then...

जो हमेशा न करे तो वही बेतहाशा जुल्म है और अगर करे तो अब क्या इस तरह के खर्च नहीं होंगे? फिर भी वहाँ 'आतिश दर कासा' (प्याले में आग) है। सारांश यह कि दुनिया में सब रास्ते बंद हैं सिवाय इसके कि रियासत से मदद ली जाए और रियासत ने खुलेआम हुक्म दे दिया है कि हमारी इमदाद इसी शर्त पर मौकूफ है, वरना जहार दार-उल-क़ज़ा (अदालत) के दरवाज़े कभी नहीं खुलेंगे। मजबूर होकर उक्त कागज़ की खरीदारी गंवारा करनी होगी, लेकिन यह गवारा करना इसी तरह का है कि दिल नहीं चाहता। बस चले तो हक़ यही है कि अपना हक़ बिना एक कौड़ी खर्च किये हाथ आए, लेकिन मजबूरी का क्या किया जाए? तो साबित हुआ कि यह खरीदारी हरगिज़ खुशी-खुशी नहीं होती और जो रुपया इसके बदले विक्रेताओं की भेंट होता है, वह हरगिज़ दिल की रज़ामंदी से नहीं दिया जाता। क़ुरआन और हदीस के हुक्म के अनुसार इसे हलाल और पाक माल नहीं कह सकते। हाँ, इतना तस्लीम है कि वक़्त गुज़रने और आम मुसीबत की वजह से बहुत से लोगों, खासकर मुकदमेबाज़ों पर इस किस्म के खर्चों में नापसंदगी के आसार शायद ज़ाहिर नहीं होते, लेकिन हशा-व-कल्ला (बिल्कुल नहीं), यह नफ़्स की पाकीज़गी और दिल की रज़ामंदी नहीं है बल्कि यह बात वही है कि आदत हो गई है। और जब सब एक ही हाल में हों तो 'मर्ग-ए-अंबोह जशने दारद' (भीड़ की मौत एक जश्न की तरह होती है। -अनुवाद)। आख़िर अन्य रकमों में न देखिये जिनमें अपने किसी फायदे की उम्मीद नहीं होती और जिसे रईस और सुल्तान संपत्तियों और खेतों पर लगा देते हैं; शुरू-शुरू में कुछ दिन आम शोर-शराबा रहता है फिर कुछ नहीं क्योंकि आख़िर दुनिया ही तो है। फिर नापसंदगी का इज़हार बेमानी हो जाता है जब ज़्यादा वक़्त गुज़र जाए; चलिए वह धीरे-धीरे आम कामों में शामिल हो गया, मगर दिल की ख्वाहिश हरगिज़ उसकी मददगार नहीं हो जाती। इसका एक आसान सा इम्तेहान यह है कि मिसाल के तौर पर इसी कागज़ के बारे में रियासत का हुक्म हो जाए कि ज़रूरी नहीं है, सादे कागज़ पर भी दावा सुन लेंगे, तो देखिये कितने खरीदने जाते हैं। बिल्कुल नहीं, कोई पास भी नहीं भटकेगा क्योंकि बिना वजह अपना खर्च किसे अच्छा लगता है? तो निश्चित रूप से रज़ामंदी की कमी स्थायी और शाश्वत है और यह खरीद बिल्कुल मकरूह खरीद की हालत में है। और 'तमाम बहसों के बाद' (अनुवाद) रज़ामंदी की कमी और नफ़्स की पाकीज़गी के अभाव में कोई दो राय नहीं है। और हलालीयत की समाप्ति के लिए इतना ही काफी है। बहुत से विद्वान फरमाते हैं कि अगर वक़्त का बादशाह भाव तय कर दे, मिसाल के तौर पर लोग एक रुपये में पंद्रह सेर गेहूं बेचते हैं, हाकिम हुक्म दे कि बीस सेर से कम न बेचें वरना सज़ा पाएंगे; इस सूरत में खरीदार के लिए

यह भाव हलाल न होगा क्योंकि हालांकि हाकिम ने बेचने वाले पर बेचने के लिए जबर (ज़ोर) नहीं किया क्योंकि वह अपने माल का मालिक है, मगर यह हुक्म तो कर दिया है कि बेचे तो इसी भाव पर बेचे और इसके खिलाफ करने में हाकिम की तरफ से अंदेशा है, तो इस दर पर उसकी रज़ामंदी सिद्ध नहीं हुई, और मुसलमान का माल बिना उसकी मर्जी के लेना हलाल नहीं। दुर्र-ए-मुख्तार में है:

अरबी	**उर्दू अनुवाद**
इज़ा सअ-अरा व खाफ़ल बा-इउ ज़रबल इमामि लौ नक़सा ला यहिल्लु	अगर हाकिम भाव तय कर दे और बेचने वाले को हाकिम की सज़ा का डर हो, अगर वह उस भाव में कमी करे तो

جو ابدی نہ کرے تو وہی ظلم بے تحاشہ اور کرے تو اب کیا اس قسم کے صرف نہ ہوں گے پھر بھی وہاں آتش در کاسہ غرض دنیا میں سب راہیں بند ہیں سوا اس کے کہ ریاست سے مدد لے اور ریاست علانیہ حکم دے چکی کہ ہماری امداد اسی شرط پر موقوف ہے ورنہ زنہار دار القضاء کے دروازے تک باز نہ ہو گا ناچار خریداری کاغذ مذکور گوارا کرے گا مگر یہ گوارش اسی طرح کی ہے کہ دل نہیں چاہتا بس چلے تو حق یہی ہے کہ اپنا حق بے کوڑی خرچے ہاتھ لگے مگر مجبوری کو کیا کیجئے، تو ثابت ہوا کہ یہ خریداری ہرگز بطیب خاطر نہیں ہوتی اور جو روپیہ اس کے بدلے نذر فروشندگان ہوتا ہے زنہار رضائے قلب سے نہیں دیا جاتا تو بحکم قرآن و حدیث اسے مال حلال وطیب نہیں کہہ سکتے ، ہاں اس قدر مسلم کہ بوجہ مرور زمان و عموم ابتلاء بہت لوگوں خصوصاً مقدمہ بازوں پر اس قسم کے مصارف میں آثارِ کراہت غالباً ظاہر نہیں ہوتے مگر حاشا یہ طیب نفس و رضائے دلی نہیں بلکہ یہ بات وہی ہے کہ عادت ہو گئی اور جب سب ایک حال میں ہیں تو مرگ انبوہ جشنے دارد (اجتماع کی موت میں اپنی موت جشن رکھتی ہےت) آخر اور رقموں میں نہ دیکھئے جن میں اپنے کسی نفع کی توقع نہیں ہوتی اور رؤسا و سلاطین اموال و مزارع پر باندھ دیتے ہیں اول اول چند روز ایک عام واویلا رہتا ہے پھر کچھ نہیں کہ آخر دنیا اول دنیا پھر اظہار کراہت بے معنی جب زیادہ زمانہ گزرا چلئے وہ رفتہ رفتہ ایک امورِ عدیہ میں داخل ہو گیا مگر دل کی خواہش ہرگز اس کی مساعد نہیں ہو جاتی اس کا سہل سا ایک امتحان یہ ہے کہ مثلاً اسی کاغذ ہی کے نسبت ریاست کا حکم ہو جائے کہ ضروری نہیں سا دے پر بھی دعوی سن لیں گے پر دیکھئے کتنے خریدنے جاتے ہیں، حاشا وکلا کوئی پاس بھی نہ پھٹکے گا کہ بلا وجہ اپنا خرچ کسے بھاتا ہے تو قطعاً عدمِ رضا دائمی ابدی ہے اور یہ شراء بالکل شرائے مکروہ کی حالت

میں ہے وبعد اللتیا واللتی (اور بحث و تمحیص کے بعد ت) عدمِ رضا و فقدانِ طیب نفس میں کلام نہیں اور اسی قدر انعدام حلت میں کافی علماء فرماتے ہیں اگر بادشاہ وقت کا بھاؤ کاٹ دے مثلاً لوگ روپیہ کے پندرہ سیر گیہوں بیچتے ہیں حاکم حکم دے کہ بیس سیر سے کم نہ بیچیں ورنہ سزا پائیں گے اسی صورت میں مشتری کے لئے یہ بھاؤ حلال نہ ہو گا کہ اگر چہ حاکم نے بائع کو بیع پر جبر نہ کیا کہ اصلانہ بیچ تو اپنے مال کا مالک ہے مگر یہ حکم تو کر دیا ہے کہ بیچے تو اسی بھاؤ بیچے اور اس کی مخالفت میں حاکم کی طرف سے اندیشہ ہے تو اس نرخ پر اس کی رضا متحقق نہ ہوئی، اور مسلمان کا مال بے مرضی لینا حلال نہیں۔ در مختار میں ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
اذا سعر و خاف البائع ضرب الامام لو نقص لا یحل	اگر حاکم نرخ مقرر کر دے اور بائع کو ضربِ حاکم کا ڈر ہے اگر وہ اس نرخ میں کمی کرے تو

Fatawa Razawiyyah (Volume 17)

For the buyer (1). | In such a case, it is not permissible for the buyer. (T)

It is stated in Sharh al-Niqayah:

If the ruler fixes the prices and a person sells out of fear, it is not permissible for the buyer to purchase it because of the saying of the Prophet (may peace and blessings of Allah be upon him): 'The property of a Muslim is not lawful (to take) except with his heart's consent.' (2) | If the ruler has fixed the price and the seller sold out of fear of him, then it is not lawful for the buyer, because the Messenger of Allah (may Allah Almighty send peace and blessings upon him) has said that it is not permissible to take a Muslim's wealth without his heart's pleasure. (T)

Similarly, even if the chief did not force the lawsuit and would not do so, and he is free to waive his right, but has ordered that it be done, then the paper must be provided, and of that specific amount. If there is not just an apprehension but complete certainty that his right will be lost in case of opposition, then in this purchase also, consent was not established. The only difference is that if there were no ruler's order, the wheat seller would still sell the wheat himself, even if at a higher price; whereas here, if there were no order, the one filing the lawsuit would not even value this paper as much as a shell, as is not hidden (Kama la yakhfa). (As is not hidden. T)

In summary, this humble servant (Faqir) - may Allah Almighty forgive him - as far as he looks, does not find a way for this trade to be according to what is lawful and pure. Yes, there are some cases in which buyers purchase of their own free will; for example, someone bought from a seller with the intention of selling it for a small profit, similar to how street vendors buy cloth from high-end merchants. Or, the reason for filing the lawsuit was not such that overlooking it would be difficult for him, but he wants to sue merely to trouble the opponent or for revenge—this too is not a case of necessity. Or, a creditor needed this paper and told the debtors to pay off my debt, and they brought it; this purchase was also with consent because it was necessary to pay off the debt by providing paper. Or, a senior person needed a lawsuit, and a junior one bought the paper from his own funds to please him, whether it was spent for the sake of a relative, friend, or a needy person; all these situations are not due to the buyer's compulsion. In such a case, indeed, the sale is

correct and valid, and the price money is lawful and pure for the seller. And as for the question of how a penny's worth of paper can be for a hundred rupees...

1. Al-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Hazr wa al-Ibaha, Section on Sales, Mujtabai Press, Delhi, 2/248.
2. Jami' al-Rumuz, Kitab al-Karahiya, Maktabah Islamiyyah, Gunbad Qamoos Iran, 3/322.

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

खरीदार के लिए (1)। | ऐसी स्थिति में खरीदार के लिए हलाल नहीं है। (त)

शरह अल-नक़ाया में उल्लेख है:

यदि शासक दरें निर्धारित करता है और कोई व्यक्ति डर के कारण बेचता है, तो खरीदार के लिए उसे खरीदना जायज़ नहीं है क्योंकि पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का कथन है: 'किसी मुसलमान की संपत्ति उसकी दिली खुशी के बिना लेना हलाल नहीं है।' (2) | यदि हाकिम ने दर तय कर दी और बेचने वाले ने उसके डर से बेचा, तो खरीदार के लिए हलाल नहीं है, क्योंकि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया है कि किसी मुसलमान का माल उसकी दिली खुशी के बिना लेना जायज़ नहीं है। (त)

इसी प्रकार, भले ही रईस ने मुक़दमा दायर करने के लिए मजबूर न किया हो और न ही करेगा, और वह अपने अधिकार को छोड़ने के लिए स्वतंत्र है, लेकिन उसने आदेश दिया है कि ऐसा किया जाए, तो कागज़ दिया जाना चाहिए, और उसी विशिष्ट राशि का। यदि विरोध की स्थिति में अधिकार खो जाने का केवल डर ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास है, तो इस खरीद में भी रज़ामंदी साबित नहीं हुई। अंतर केवल इतना है कि यदि शासक का आदेश न होता, तो गेहूं बेचने वाला स्वयं गेहूं बेचता, भले ही अधिक कीमत पर; जबकि यहाँ, यदि आदेश न होता, तो मुक़दमा दायर करने वाला इस कागज़ को कौड़ी के भाव भी नहीं पूछता, जैसा कि छिपा नहीं है (कमा ला यखफ़ा)। (जैसा कि छिपा नहीं है। त)

सारांश में, यह तुच्छ सेवक (फ़कीर) - अल्लाह ताला उसे क्षमा करे - जहाँ तक देखता है, इस व्यापार को हलाल और पाक होने का कोई रास्ता नहीं पाता है। हाँ, कुछ स्थितियाँ ऐसी भी हैं जिनमें खरीदार स्वेच्छा से खरीदते हैं; उदाहरण के लिए, किसी ने विक्रेता से थोड़ा लाभ लेकर बेचने के इरादे से खरीदा, जैसे फेरीवाले बड़े कपड़ा व्यापारियों से कपड़ा लेते हैं। या, मुक़दमा दायर करने का कारण ऐसा नहीं था कि उसे नज़रअंदाज़ करना उसके लिए कठिन होता, बल्कि वह केवल विपक्षी को परेशान करने या बदला लेने के लिए मुक़दमा करना चाहता है—यह भी ज़रूरत की स्थिति नहीं हुई। या, एक लेनदार को इस कागज़ की ज़रूरत थी और उसने कर्जदारों से अपना कर्ज चुकाने के लिए कहा, और वे इसे ले आए; यह खरीद भी सहमति के साथ हुई क्योंकि कागज़ प्रदान करके कर्ज चुकाना आवश्यक था। या, किसी वरिष्ठ व्यक्ति को मुक़दमे की ज़रूरत हुई, और किसी कनिष्ठ ने उसे खुश करने के लिए अपने धन से कागज़ खरीदा, चाहे वह किसी रिश्तेदार, दोस्त या ज़रूरतमंद के

काम के लिए खर्च किया गया हो; ये सभी स्थितियाँ खरीदार की मजबूरी के कारण नहीं हैं। ऐसी स्थिति में निश्चित रूप से बिक्री सही और जायज़ है, और कीमत का पैसा विक्रेता के लिए हलाल और पाक है। और जहाँ तक इस सवाल का सवाल है कि एक दमड़ी का कागज़ सौ रुपये का कैसे हो सकता है...

1. अल-दुर्र अल-मुख्तार, किताब अल-हज़्र व अल-इबाहा, बिक्री पर अनुभाग, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 2/248।
2. जामि अल-रुमूज़, किताब अल-कराहीया, मकतबा इस्लामिया, गुंबद क़ामूस ईरान, 3/322।

पृष्ठ 148 का 715

جلد ہفدہم (۱۷) فتاوٰی رضویہ

للمشتری ۱۔ | ایسی صورت میں مشتری کے لئے حلال نہیں۔ (ت)

شرح نقایہ میں ہے:

لوسعر فباع للخوف لم یحل للمشتری لقولہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم لا یحل مال امری مسلم الا بطیب نفس منہ ۲۔ | اگر حاکم نے نرخ مقرر کردیا اور بائع اس کے خوف سے فروخت کیا تو مشتری کے لئے حلال نہیں کیونکہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کا ارشاد ہے کسی مسلمان کا مال اس کی دلی خوشی کے بغیر لینا حلال نہیں۔ (ت)

اسی طرح اگرچہ رئیس نے نالش پر مجبور نہ کیا نہ کرے تو اپنے ترکِ حق کا مختار ہے مگر حکم دیا ہے کہ کرے تو کاغذ ضروری دے اور اسی مقدار کا دے اور اس کی مخالفت میں تلفِ حق کا اندیشہ ہی نہیں بلکہ یقینِ کامل ہے تو اس شراء پر بھی رضا متحقق نہ ہوئی، فرق اس قدر ہے کہ حکمِ حاکم نہ ہوتا تو گیہوں والا گیہوں خود بھی بیچتا اگرچہ زیادہ کو، اور یہاں حکم نہ ہوتا تو نالش والا یہ کاغذ کوڑی کو بھی نہ پوچھتا کما لا یخفی (جیسا کہ پوشیدہ نہیں۔ ت)

بالجملہ فقیر غفراللہ تعالٰی لہ جہاں تک نظر کرتا ہے اس تجارت کے مطابق حلال و طیب ہونے کی راہ نہیں پاتا، ہاں بعض صورتیں ایسی بھی ہیں جن میں مشتری بخوشیِ خود خریدیں مثلاً فروشندہ سے دوسرے نے قدرے نفع دے کر بیچنے کو مول لیا جیسے اونچے بزازوں سے گٹھری والے کپڑا لیتے ہیں یا نالش جس بات پر کرتا ہے وہ ایسی نہ تھی جس سے درگزر کرنی کچھ اس پر شاق ہوتی صرف ایذائے مخالف یا انتقام کے لئے نالش چاہتا ہے یہ بھی صورت حاجت کی نہ ہوئی، یا دائن کو یہ کاغذ درکار تھا مدیوں سے کہا میرے قرض لادے وہ لے آیا یہ خریداری بھی برضائے

خود ہوئی کہ اس پر کاغذ دے کر قرض اتارنا لازم تھا، یا اپنے کسی بزرگ کو نالش کی حاجت ہوئی چھوٹے نے خوشنودی کے لئے اپنے پاس سے کاغذ خرید کر لگایا خواہ کسی عزیز یا دوست یا محتاج کے کام میں صرف کیا کہ یہ سب حالتیں خریدار کی ضرورت کی نہیں ایسی صورت میں بیشک بیع صحیح و جائز اور زرِ ثمن فروشندہ کے لئے حلال و طیب، اور صرف یہ بات کہ دمڑی کا کاغذ سو روپے کو کیونکر

۱ درمختار کتاب الحظر والاباحۃ فصل فی البیع مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۲۴۸ ۲ جامع الرموز کتاب الکراہیۃ مکتبہ اسلامیہ گنبد قاموس ایران ۳/ ۳۲۲

Volume 17

Fatawa Rizvia

...consent is not effective after proof is established; every person is the master of their own property and can sell it for whatever price they wish. Imam Muhaqqiq 'al-al-itlaq' (the absolute researcher) states in Fath al-Qadir:

If someone sold a piece of paper for a thousand, it is permissible and not disliked (makruh). (T)

The humble servant (may Allah forgive him) has clarified this in the issue of banknote trading, and success is from Allah. However, the occurrence of these cases is rare; trading cannot proceed by relying solely on them. If someone does content themselves with it, as long as possible, then one case of lack of compulsion is frequently occurring, i.e., buying for a false lawsuit. These people are not oppressed but are oppressors themselves. What is the compulsion for them to sell under these conditions? Although that reason for lack of permissibility did not exist, other reasons for sin will arise. It is not free from two states: either the seller knows that the buyer is an oppressor and is buying specifically for an unjust lawsuit, or he assumes without proof and knowledge that the buyer has such an intention. In the second case, he fell into 'su-e-zan' (ill-suspicion), and bad suspicion is strictly prohibited. Then, how can he legitimize [seizing] a Muslim's wealth based on a fabricated thought of sinful wealth? In the first case, when it was known that he is taking the paper for a false lawsuit, selling to him became assisting in sin, just as selling weapons to people of strife and assisting in sin is itself forbidden and a sin.

Allah Almighty said: "And do not cooperate in sin and transgression."[2] | Do not help each other in sin and transgression.

And Allah is the Guide; this is what I have, and the knowledge of truth is with my Lord, and Allah, Glorified and Exalted, knows best. (T)

Problem 52: From Calcutta, Faujdari Balakhana No. 36, sent by Mr. Mirza Ghulam Qadir Baig Sahib. What do the scholars of religion say regarding this issue: here in Calcutta, artificial i.e., 'mail' ghee is sold despite knowledge...

[1] Fath al-Qadir, Kitab al-Kafalah, Maktaba Nooriya Razvia, Sukkur, 4/224. [2] Al-Quran Al-Karim, 5/2.

जिल्द 17

फ़तावा रज़विया

...सबूत के बाद रजामंदी प्रभावी नहीं होती, हर व्यक्ति अपने माल का मुख्तार है, वह उसे जितने में चाहे बेचे। इमाम मुहक़्क़िक अल-अल-इतलाक़ (पूर्ण शोधकर्ता) फ़त्हुल क़दीर में फरमाते हैं:

"यदि किसी ने कागज़ का टुकड़ा हज़ार के बदले में बेचा तो यह जायज़ है और मकरूह नहीं है।" (त)

फक़ीर (अल्लाह उसे क्षमा करे) ने नोटों के व्यापार के मामले में इसे स्पष्ट कर दिया है और सफलता अल्लाह की ओर से है। लेकिन इन स्थितियों का होना दुर्लभ है; केवल इन्हीं पर निर्भर रहकर व्यापार नहीं चल सकेगा। और यदि कोई संतोष करे और जहाँ तक संभव हो, तो निश्चित रूप से एक मजबूरी न होने की स्थिति अक्सर पेश आती है, यानी झूठे मुकदमे के लिए खरीदना। ये लोग मज़लूम (उत्पीड़ित) नहीं बल्कि ख़ुद ज़ालिम (अत्याचारी) हैं, तो उन पर इन शर्तों पर उनके हाथ बेचने की क्या मजबूरी है? यद्यपि हलाल न होने का वह कारण नहीं हुआ, लेकिन गुनाह के अन्य कारण पैदा होंगे। यह दो हालतों से खाली नहीं है: या तो विक्रेता को पता होगा कि खरीदार ज़ालिम है और विशेष रूप से अन्यायपूर्ण मुकदमे के लिए खरीद रहा है, या वह बिना किसी दलील और ज्ञान के यह मान लेगा कि खरीदार का ऐसा इरादा है। दूसरी स्थिति में, वह 'सू-ए-ज़न' (कुशंका) में फंस गया और बदगुमानी (बुरी धारणा) कतई हराम है। फिर, मनगढ़ंत गुनाह के विचार के आधार पर मुसलमान के माल को कैसे हलाल (वैध) किया जा सकता है? पहली स्थिति में, जब यह जानना था कि वह झूठे मुकदमे के लिए कागज़ ले रहा है, तो उसके हाथ बेचना गुनाह पर मदद करना हुआ, जैसे फसाद मचाने वालों के हाथ हथियार बेचना और गुनाह पर मदद करना खुद मना और गुनाह है।

अल्लाह अज़्ज़वजल ने फरमाया: "[2]"وَلَا تَعَاوَنُوا عَلَى الْإِثْمِ وَالْعُدْوَانِ | आपस में एक दूसरे की मदद न करो गुनाह और हद से बढ़ने पर।

واللہ الہادی ھذا ما عندی والعلم بالحق عند ربی، واللہ سبحنہ وتعالی اعلم | और अल्लाह ही हिदायत देने वाला है, यह वह है जो मेरे पास है और हक का इल्म मेरे परवरदिगार के पास है, और अल्लाह सुब्हानहू व तआला खूब जानने वाला है। (त)

मसला 52: कलकत्ता, फौजदारी बालाखाना नंबर 36 से, प्रेषक जनाब मिर्ज़ा गुलाम कादिर बेग साहब। दीन के उलेमा इस मसले में क्या फरमाते हैं कि यहाँ कलकत्ता में बनावटी यानी 'मेल' का घी बिकता है, बावजूद इसके कि जानकारी है...

[1] फ़त्हुल क़दीर, किताब अल-कफाला, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 4/224। [2] अल-कुरआन अल-करीम, 5/2।

جلد ہفدہم (۱۷)

فتاویٰ رضویہ

جائے بعد ثبوت تراضی موثر نہیں، ہر شخص اپنے مال کا مختار ہے جتنے کو چاہے بیچے ، امام محقق علی الاطلاق فتح القدیر میں ہے: لو باع کاغذۃ بالف یجوز ولایکرہ[1]۔ | اگر کسی نے کاغذ کا ٹکڑا ہزار کے بدلے میں فروخت کیا تو یہ جائز ہے مکروہ نہیں ہے۔ (ت)

فقیر غفرلہ اللہ تعالیٰ لہ مسئلہ تجارت نوٹ میں اسے واضح کر چکا وباللہ التوفیق مگر ان صورتوں کا وقوع نادر ہے، انھیں پر قانع ہو کر تجارت نہ چل سکے گی، اور اگر کوئی قناعت کرے اور جب تک ہو سکتا ہے البتہ ایک صورت عدم اکراہ کثیر الوقوع ہے یعنی جھوٹی نالش کے لئے خریدنا کہ یہ لوگ مظلوم نہیں خود ظالم ہیں تو انھیں شرائط پر کیا مجبوری ان کے ہاتھ بیچنے میں اگرچہ عدم حلت کی وہ وجہ نہ ہوئی، مگر اور وجوہ معصیت پیدا ہوں گی کہ در حال سے خالی نہیں یا تو بائع کو معلوم ہوگا کہ مشتری ظالم ہے اور خاص نالش ناحق کے لئے خریدتا ہے یا بے دلیل وعلم ٹھہرا لے گا کہ اس مشتری کا ایسا ارادہ ہے۔ بر تقدیر ثانی سوء ظن میں گرفتار ہوا اور بدگمانی حرام قطعی، پھر تراشیدہ خیال معصیت مال کی بناء پر کیونکر مالِ مسلم کا استحلال کر سکتا ہے، بر تقدیر اول جبکہ یہ جاننا تھا کہ وہ نالشِ دروغ کے لئے کاغذ لیتا ہے تو اس سے اس کے ہاتھ بیچنا معصیت پر اعانت کرنا ہوا جس طرح اہل فتنہ کے ہاتھ ہتھیار اور معصیت پر اعانت خود ممنوع و معصیت،

قال عز وجل "وَلَا تَعَاوَنُوا عَلَى الْإِثْمِ وَالْعُدْوَانِ"[2]۔ | آپس میں ایک دوسرے کی مدد نہ کرو گناہ اور حد سے بڑھنے پر۔

واللہ الہادی ھذا ما عندی والعلم بالحق عند ربی، واللہ سبحنہ وتعالی اعلم۔ | اور اللہ تعالیٰ ہی ہدایت دینے والا ہے یہ وہ ہے جو میرے پاس ہے اور حق کا علم میرے پروردگار کے پاس ہے، اور اللہ سبحانہ و تعالیٰ خوب جاننے والا ہے۔ (ت)

مسئلہ ۵۲: از کلکتہ فوجداری بالا خانہ نمبر ۳۶ مرسلہ جناب مرزا غلام قادر بیگ صاحب کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ یہاں کلکتہ میں مصنوعی یعنی میل کا گھی بکتا ہے باوجود علم...

[1] فتح القدیر کتاب الکفالۃ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۴/ ۲۲۴ [2] القرآن الکریم ۲/۵

Volume 17 Fatawa Razawiyyah

Is it permissible to buy and sell such ghee for trade or not? Please explain, and may you be rewarded.

Answer: If this artificial, fake ghee is commonly sold there such that every person is aware of its being fake, and despite being aware, they purchase it, then it is permissible, provided that the buyer is from that same city and not a stranger newly arrived and unaware. Also, the amount of admixture in the ghee should not exceed what is commonly known to the local people, it should not be increased from one's own side, and its being fake should not be hidden in any way. In short, when its true condition is revealed to the buyers and there is no room for deception or delusion, then its trade is permissible. After all, selling ghee is permissible, and selling whatever is mixed in it is also permissible. The impermissibility was only due to fraud and deception; when the situation is manifest, there is no fraud. The permissibility remains, just as with market milk, which everyone knows contains water, yet they buy it with that knowledge. This applies in the case where the seller does not reveal the actual condition to the buyer at the time of sale. If he himself discloses it, then according to the manifest narrations and the school of Imam al-A'zam (may Allah be pleased with him), it is absolutely permissible, regardless of the extent of admixture, even if the buyer is a stranger, because after disclosure, no deception remains. It is stated in Durr al-Mukhtar:

There is no harm in selling adulterated goods if its adulteration is explained or if it is apparent and visible. Similarly, Imam Abu Hanifah (may Allah be pleased with him) said regarding wheat mixed with barley, where the barley is visible, that there is no harm in selling it. But if it is ground, it should not be sold. And the second [Imam Abu Yusuf] said regarding a man who has silver mixed with copper, that he should not sell it until he explains it.

There is no harm in selling an adulterated item when its adulteration is disclosed or if the adulteration is so apparent that it is visible. Similarly, Imam Abu Hanifah (may Allah be pleased with him) stated about wheat mixed with barley in such a way that the barley is visible, that there is no problem in selling such wheat. However, if that mixed wheat is ground, then do not sell it. And Imam Abu Yusuf said regarding a person who has silver mixed with copper, that he should not sell it without disclosing it. (T)

In Radd al-Muhtar, it is stated: Regarding the statement: 'And if it is ground, it should not be sold', it means: The author's statement that when he ground the mixed wheat...

[1] Durr al-Mukhtar, Chapter of Miscellaneous Issues, Mujtabai Press Delhi, 2/52 Page 150 of 715

जिल्द 17 फ़तावा रज़विया

क्या व्यापार के लिए ऐसा घी खरीदकर बेचना जायज़ है या नहीं? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: अगर यह कृत्रिम, नकली घी वहाँ आम तौर पर बिकता है कि हर व्यक्ति इसके नकली होने से अवगत है और जानकारी के बावजूद इसे खरीदता है, तो यह जायज़ है, इस शर्त के साथ कि खरीदार उसी शहर का हो, न कि कोई परदेसी जो हाल ही में आया हो और अनजान हो। साथ ही, घी में उतनी ही मिलावट हो जितनी वहाँ आम तौर पर लोगों के संज्ञान में है, अपनी ओर से और अधिक न बढ़ाई जाए और न ही किसी तरह इसका नकली होना छिपाया जाए। संक्षेप में यह कि जब खरीदारों पर इसकी स्थिति स्पष्ट हो और धोखे या भ्रम की कोई गुंजाइश न रहे, तो इसका व्यापार जायज़ है। आखिरकार, घी बेचना भी जायज़ है और जो चीज़ इसमें मिलाई गई है उसे बेचना भी जायज़ है। इसकी मनाही केवल धोखाधड़ी और मिलावट के कारण थी; जब स्थिति स्पष्ट है तो कोई धोखाधड़ी नहीं रही। और जायज़ होना वैसा ही है जैसे बाज़ार का दूध, जिसे सब जानते हैं कि इसमें पानी है, फिर भी जानकारी होने के बावजूद उसे खरीदते हैं। यह उस स्थिति में है जब विक्रेता बिक्री के समय खरीदार को असली स्थिति न बताए। और अगर वह स्वयं बता दे, तो ज़ाहिर अल-रिवायत और इमाम-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) के मज़हब में यह पूर्णतः जायज़ है, चाहे मिलावट कितनी भी हो, भले ही खरीदार परदेसी हो, क्योंकि स्पष्टीकरण के बाद कोई धोखा नहीं रहा। 'दुर्रे मुख़्तार' में है:

मिलावटी सामान बेचने में कोई हर्ज नहीं है यदि उसकी मिलावट स्पष्ट कर दी जाए या वह प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देती हो। इसी तरह इमाम अबू हनीफ़ा (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने उस गेहूँ के बारे में फ़रमाया जिसमें जौ मिले हों और जौ दिखाई देते हों, तो उसे बेचने में कोई हर्ज नहीं। लेकिन अगर उसे पीस लिया जाए तो न बेचा जाए। और दूसरे [इमाम अबू यूसुफ़] ने उस व्यक्ति के बारे में फ़रमाया जिसके पास ताँबे वाली चाँदी है कि वह उसे बिना बताए न बेचे।

मिलावट वाली चीज़ को बेचने में कोई हर्ज नहीं जब उसकी मिलावट को बयान कर दिया जाए या मिलावट ऐसी ज़ाहिर हो कि दिखाई देती हो। और इसी तरह इमाम अबू हनीफ़ा (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने फ़रमाया ऐसी गेहूँ के बारे में जिसमें जौ मिले हुए हों इस तरह कि जौ नज़र आते हों, तो ऐसी गेहूँ की बिक्री में कोई हर्ज नहीं। और अगर उस मिश्रित गेहूँ को पीस लिया तो मत बेचिए। और इमाम अबू यूसुफ़ ने उस व्यक्ति के बारे में फ़रमाया जिसके पास ताँबा मिली चाँदी है कि वह उसे बताए बिना न बेचे। (त)

'रद्दुल मुहतार' में है: उनके इस कथन पर कि 'और अगर उसने उसे पीस लिया तो न बेचे', इसका अर्थ है: लेखक का यह फ़रमाना कि जब उसने मिश्रित गेहूँ को पीस लिया...

[1] दुर्रे मुख़्तार, बाबुल मुतफ़र्रक़ा, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 2/52 पेज 150 of 715

ایسا گھی تجارت کے لئے خرید کر بیچنا جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا الجواب: اگر یہ مصنوعی جعلی گھی وہاں عام طور پر بکتا ہے کہ ہر شخص اس کے جعل ہونے پر مطلع ہے اور باوجود اطلاع خریدتا ہے تو بشرطیکہ خریدار اسی بلد کا ہو ، نہ غریب الوطن تازہ وارد ناواقف اور گھی میں اس قدر میل سے جتنا وہاں عام طور پر لوگوں کے ذہن میں ہے اپنی طرف سے اور زائد نہ کیا جائے نہ کسی طرح اس کا جعلی ہونا چھپایا جائے ، خلاصہ یہ کہ جب خریداروں پر اس کی حالت مکشوف ہو اور فریب و مغالطہ راہ نہ پائے تو اس کی تجارت جائز ہے ، آخر گھی بیچنا بھی جائز اور جو چیز اس میں ملائی گئی اس کا بیچنا بھی ، اور عدم جواز صرف بوجہ غش و فریب تھا ، جب حال ظاہر ہے غش نہ ہوا ، اور جواز رہا جیسے بازاری دودھ کہ سب جانتے ہیں کہ اس میں پانی ہے اور باوصف علم خریدتے یہ اس صورت میں ہے جبکہ بائع وقت بیع اصلی حالت خریدار پر ظاہر نہ کر دے ، اور اگر خود بتا دے تو ظاہر الروایت و مذہب امام اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ میں مطلقاً جائز ہے خواہ کتنا ہی میل ہو اگرچہ خریدار غریب الوطن ہو کہ بعد بیان فریب نہ رہا، در مختار میں ہے :

لاباس ببیع المغشوش اذا بین غشہ اوکان ظاہراً یری وکذا قال ابو حنیفہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ فی حنطۃ خلط فیھا الشعیر والشعیر یری لاباس ببیعہ وان طحنہ لایبیع وقال الثانی فی رجل معہ فضۃ نحاس لایبیعھا حتی یبین ۱۔ ملاوٹ والی چیز کو فروخت کرنے میں کوئی حرج نہیں جب اس کی ملاوٹ کو بیان کر دے یا ملاوٹ ایسی ظاہر ہو کہ دکھائی دیتی ہو اور یونہی فرمایا امام ابوحنیفہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ نے ایسی گندم کے بارے میں جس میں جو ملے ہوئے ہوں اس طور پر کہ جو نظر آتے ہوں تو ایسی گندم کی بیع کوئی مضائقہ نہیں اور اگر اس مخلوط گندم کو پیس لیا تو مت بیچئے ،

اور امام ابویوسف نے اس شخص کے بارے میں فرمایا جس کے پاس تانبا ملی چاندی ہے کہ وہ اسے بتائے بغیر نہ بیچے۔ (ت)

ردالمحتار میں ہے : قولہ وان طحنہ لایبیع ای ماتن کا یہ فرمانا کہ جب اس نے مخلوط گندم کو پیس لیا

۱ در مختار باب المتفرقہ مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۵۲ Page 150 of 715

Fatawa-e-Razvia (Volume 17)

"Now it becomes clear because it is not seen." 1. So do not sell [it], meaning do not sell without explaining because now the adulteration in it is not visible. (T)

In short: the matter depends on the manifestation of the situation, whether it is self-evident like barley in wheat or grass pea in chickpeas, due to custom and common knowledge it is clear to the buyer, like common water in milk, or he himself explains the actual state in full detail, and Allah (Glorified and Exalted is He) knows best, and His knowledge is most complete and perfect.

Issue 55: 8 Shawwal 1308 AH, from Labkan.

What do the scholars of religion and muftis of the firm Shariah say regarding this issue: Zaid, who has been severely ill for a long time with the disease of syphilis, wants to deprive his wedded wife (who has a dower) and legal heirs (Dhawi al-Furud) like his daughter of their rights. He pretends to sell his undivided land to his minor son—who is born from an unmarried bazaar woman—through a legal sale (Bai' Shari') and then gifts (Hiba) the price (Zar-e-Thaman) back to him. The wording used is: "After the offer and acceptance of the price, I have gifted the right of the sold property to the buyer." Given that the buyer is a minor, is gifting the price to him valid according to Shariah, and is this sale legally permissible or impermissible? Explain so you may be rewarded.

Answer: This sale is purely void and impermissible according to Shariah. Since that boy is born from adultery, legally he is not Zaid's son, nor is Zaid his father.

Arabic Text: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "The child belongs to the marriage bed, and for the adulterer is the stone [stoning/ deprivation]." 2. Urdu Translation: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Offspring is for the husband, and for the adulterer are stones." (T)

Therefore, Zaid has no financial guardianship (Walayat-e-Maliya) over him at all; rather, he is a complete stranger. Financial guardianship is not even held by the mother, brother, or uncle, except for the father, grandfather, the Qazi of Shariah, and their executors (Awsiya). It is even less so for such a person who has no legal relationship with him. It is stated in Tanwir al-Absar:

Arabic Text: Waliyyuhu abuhu thumma wasiyyuhu thumma jadduhu thumma wasiyyuhu thumma al-Qadi aw wasiyyuhu. Urdu Translation: The guardian of a minor is his father, then the father's executor, then his grandfather, then the grandfather's executor, then the Qazi or his executor.

1. Radd al-Muhtar, Bab al-Mutafarriqat, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/221.
2. Sahih al-Bukhari, Kitab al-Buyu, Bab Tafsir al-Mushabbahat, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/276.

फ़तावा-ए-रज़विया (जिल्द 17)

"अब यह स्पष्ट हो जाता है क्योंकि यह दिखाई नहीं देता।" 1. तो मत बेचें, इसका अर्थ है कि बिना बताए न बेचें क्योंकि अब इसमें मिलावट दिखाई नहीं देती। (त)

संक्षेप में: मामला स्थिति के प्रकट होने पर निर्भर करता है, चाहे वह स्वयं स्पष्ट हो जैसे गेहूं में जौ या चने में खेसारी, जो प्रथा और प्रसिद्धि के कारण खरीदार पर स्पष्ट हो जैसे दूध में सामान्य पानी, या वह स्वयं वास्तविक स्थिति को पूरी तरह और विस्तार से बताए, और अल्लाह (महिमावान और उच्च) सबसे अच्छा जानता है, और उसका ज्ञान सबसे पूर्ण और उत्तम है।

मसला 55: 8 शव्वाल 1308 हिजरी, लबकन से।

धर्म के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ्ती इस मसले में क्या कहते हैं: ज़ैद, जो लंबे समय से सिफलिस (आतशक) की बीमारी से गंभीर रूप से बीमार है, अपनी विवाहित पत्नी (जिसका मेहर देय है) और कानूनी उत्तराधिकारियों (धवी अल-फुरूद) जैसे अपनी बेटी को उनके अधिकारों से वंचित करना चाहता है। वह अपनी अविभाजित ज़मींदारी को अपने नाबालिग लड़के को—जो एक बाजारू अविवाहित महिला से पैदा हुआ है—एक कानूनी बिक्री (बै-ए-शर्ई) के माध्यम से बेचने का दिखावा करता है और फिर कीमत (ज़र-ए-थमन) उसे उपहार (हिबा) में दे देता है। इस्तेमाल किए गए शब्द ये हैं: "कीमत के प्रस्ताव और स्वीकृति के बाद, मैंने बेची गई संपत्ति का अधिकार खरीदार को उपहार में दे दिया है।" यह देखते हुए कि खरीदार नाबालिग है, क्या कीमत उसे उपहार में देना शरीयत के अनुसार मान्य है, और क्या यह बिक्री कानूनी रूप से जायज़ है या नाजायज़? स्पष्ट करें ताकि आप पुरस्कृत हों।

उत्तर: यह बिक्री शरीयत के अनुसार पूरी तरह से बातिल (अमान्य) और नाजायज़ है। चूंकि वह लड़का ज़िना (व्यभिचार) से पैदा हुआ है, इसलिए कानूनी तौर पर वह ज़ैद का बेटा नहीं है और न ही ज़ैद उसका पिता है।

अरबी पाठ: अल्लाह के रसूल (उन पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो) ने फरमाया: "संतान बिस्तरे (वैध विवाह) के लिए है, और ज़ानी (व्यभिचारी) के लिए पत्थर हैं।" 2. उर्दू अनुवाद: अल्लाह के रसूल (उन पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो) ने फरमाया: "औलाद पति के लिए है, और ज़ानी के लिए पत्थर हैं।" (त)

इसलिए, ज़ैद का उस पर बिल्कुल भी वित्तीय अधिकार (विलायत-ए-मालिया) नहीं है, बल्कि वह पूरी तरह से अजनबी है। वित्तीय अधिकार तो माँ, भाई या चाचा को भी नहीं होता, सिवाय पिता, दादा, शरीयत के काज़ी और उनके वसीयतदारों (औसिया) के। ऐसे व्यक्ति के लिए तो यह और भी कम है जिसका उससे कोई कानूनी रिश्ता नहीं है। तनवीरुल अबसार में है:

अरबी पाठ: वलीयुहू अबूहू सुम्मा वसीयुहू सुम्मा जद्दुहू सुम्मा वसीयुहू सुम्मा अल-क़ाज़ी औ वसीयुहू। उर्दू अनुवाद: नाबालिग का वली (अभिभावक) उसका पिता है, फिर पिता का वसीयतदार, फिर उसका दादा, फिर दादा का वसीयतदार, फिर काज़ी या उसका वसीयतदार।

1. रद्दुल मुहतार, बाब अल-मुतफर्रिक़ात, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 4/221।
2. सहीह अल-बुखारी, किताब अल-बुयू, बाब तफ़्सीर अल-मुशब्बहात, क़दीमी कुतुब ख़ाना, कराची, 1/276।

पृष्ठ 151/715

الآن یبین لانہ لایری 1- تومت بیچے، اس کا مطلب یہ ہے کہ بیان کئے بغیر نہ بیچے کیونکہ اب اس میں ملاوٹ دکھائی نہیں دیتی، (ت)

بالجملہ: مدار کا ظہور امر پر ہے خواہ خود ظاہر ہو جیسے گیہوں میں جو چنوں میں کسایا بوجہت عرف و اشتہار مشتری پر واضح ہو جیسے دودھ کا معمولی پانی خواہ یہ خود حالت واقعی تمام و کمال بیان کرے، واللہ سبحنہ و تعالٰی اعلم و علمہ اتم واحکم۔

مسئلہ ۵۵: ۸ شوال ۱۳۰۸ھ از لبکن

کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید جو زمانہ دراز سے عارضہ آتشک سخت علیل ہے اپنی زمینداری غیر منقسمہ کو صرف حق تلفی زوجہ منکوحہ ذی مہر اور ورثاء ذوی الفروض مثل دختر اپنی کے بدست اپنے لڑکے نا بالغ کے کہ جو عورت بازاری غیر نکاحی کے بطن سے ہے بیع شرعی کر کے زر ثمن اس کا ہبہ کردینا (بایں عبارت کہ بعد ایجاب و قبول زر ثمن حقیت مبیعہ کا بحق مشتری ہبہ کردیا) ظاہر کرتا ہے تو در حالیکہ مشتری نابالغ ہے تو ہبہ کردینا زر ثمن کا بحق مشتری عند الشرع قابل تقسیم ہے یا نہیں اور یہ بیع شرعاً جائز ہے یا نا جائز؟ بینوا توجروا

الجواب: یہ بیع شرعاً محض باطل و ناجائز ہے، وہ لڑکا جبکہ زنا سے ہے تو شرعاً وہ زید کا بیٹا نہ زید اس کا باپ،

عربی: قال رسول اللہ تعالٰی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم الولد للفراش وللعاھر الحجر 2- اردو: رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا: اولاد خاوند کے لئے ہے اور زانی کے لئے پتھر ہیں۔ (ت)

تو زید اس پر اصلاً ولایت مالیہ نہیں رکھتا بلکہ محض اجنبی ہے ولایت مالیہ تو باپ دادا اور قاضی شرع اور ان کے اوصیاء کے سوا ماں بھائی چچا کو بھی نہیں ہوتی نہ کہ ایسا شخص جس سے کچھ علاقہ نہ ہو، تنویر الابصار میں ہے:

عربی: ولیہ ابوہ ثم وصیہ ثم جدہ ثم وصیہ ثم القاضی او وصیہ اردو: نا بالغ کا ولی اس کا باپ ہے پھر باپ کا وصی پھر اس کا دادا، پھر دادا کا وصی پھر قاضی یا اس کا وصی

1 ردالمحتار باب المتفرقات دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۲۲۱ 2 صحیح البخاری کتاب البیوع باب تفسیر المشبہات قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۷۶

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Box 1] His executor, not the mother or her executor (Extracted).

Text: Firstly, Zaid had absolutely no authority to purchase property for this minor from himself or from someone else, whether with his own money or the minor's money, because this authority belongs to no one except the legal guardian of the property. It is stated in Durr al-Mukhtar:

[Box 2] Arabic: A mother and a brother do not possess the right to sell real estate absolutely, nor to purchase anything other than food and clothing. Urdu translation: The mother and brother of a minor do not have the authority to sell the minor's immovable property in any way, nor do they have the authority to purchase anything for them except food and clothing. (T)

Text: Secondly, he is a fuduli (unauthorized agent) in this purchase due to the absence of guardianship or executorship. In this sale, he himself acted as the manager for both parties of offer and acceptance. In such a situation, when this person is a fuduli for one side, the contract is completely void. It is stated in Durr al-Mukhtar:

[Box 3] Arabic: The offer does not depend on the acceptance of one absent from the session in all contracts including marriage, sale, and others; rather, the offer becomes void and, by consensus, ratification does not apply to it. Urdu translation: An offer does not depend on the acceptance of a person absent from the session in all contracts, such as marriage and sale, etc. Rather, that offer becomes void and, by consensus, ratification does not attach to it. (T)

Text: It is stated in Radd al-Muhtar:

[Box 4] Arabic: If the one present makes an offer while being a fuduli for one side or both sides, it does not depend on the acceptance of the absent party; rather it is void, even if the present party performs the acceptance by speaking both parts as will follow. Urdu translation: When the person present makes an offer while being an unauthorized agent (fuduli) from one side or both sides, then that offer will not depend on the acceptance of the absent party, but will be void, even if the contracting party present has accepted by uttering both statements (offer and acceptance), as will be mentioned later. (T)

Footnotes: 1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Mazun, Matba' Mujtabai, Delhi, 2/203 2. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Wasaya, Matba' Mujtabai, Delhi, 2/337 3. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Nikah, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/196 4. Radd al-Muhtar, Kitab al-Nikah, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/326

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

[Box 1] उसका वसीय (निष्पादक), न कि माँ या उसका वसीय (संक्षिप्त)।

मुख्य पाठ: पहली बात: ज़ैद को इस नाबालिग के लिए ज़मीन-जायदाद और अपने आप से, चाहे किसी दूसरे से, अपने पैसे से चाहे नाबालिग के पैसे से, किसी तरह खरीदने का बिल्कुल अधिकार नहीं था, क्योंकि यह अधिकार 'वली-ए-माल' (संपत्ति के संरक्षक) के अलावा किसी को नहीं है। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

[Box 2] अरबी: माँ और भाई को अचल संपत्ति बेचने का बिल्कुल अधिकार नहीं है, और न ही भोजन और वस्त्र के अलावा कुछ खरीदने का। हिंदी अनुवाद: नाबालिग की माँ और उसका भाई नाबालिग की अचल संपत्ति को किसी भी तरह बेचने का अधिकार नहीं रखते और न ही उन्हें भोजन और वस्त्र के अलावा कुछ खरीदने का अधिकार है। (त)

मुख्य पाठ: दूसरी बात: वह इस खरीदारी में 'फज़ूली' (अनधिकृत व्यक्ति) है क्योंकि न तो उसके पास विलायत (संरक्षण) है और न ही वसायात (वसीय होना)। इस बिक्री में उसने दोनों पक्षों (प्रस्ताव और स्वीकृति) का खुद ही संचालन किया है। ऐसी स्थिति में जब यह व्यक्ति किसी भी पक्ष से फज़ूली हो, तो अनुबंध पूरी तरह से बातिल (अमान्य) होता है। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

[Box 3] अरबी: निकाह, बिक्री और अन्य सभी अनुबंधों में सभा से अनुपस्थित व्यक्ति की स्वीकृति पर प्रस्ताव निर्भर नहीं करता है, बल्कि प्रस्ताव बातिल हो जाता है और आम सहमति से इसकी अनुमति (पुष्टि) लागू नहीं होती है। हिंदी अनुवाद: प्रस्ताव सभा से अनुपस्थित व्यक्ति की स्वीकृति पर निर्भर नहीं होता है, निकाह और बिक्री जैसे सभी अनुबंधों में, बल्कि वह प्रस्ताव बातिल हो जाता है और सर्वसम्मति से इसे बाद में स्वीकृति नहीं मिल सकती। (त)

मुख्य पाठ: 'रद्दुल मुहतार' में है:

[Box 4] अरबी: यदि उपस्थित व्यक्ति ने प्रस्ताव किया जबकि वह एक पक्ष या दोनों पक्षों की ओर से 'फज़ूली' है, तो वह अनुपस्थित की स्वीकृति पर निर्भर नहीं होगा, बल्कि बातिल हो जाएगा, भले ही उपस्थित पक्ष ने दोनों बातें (प्रस्ताव और स्वीकृति) कहकर स्वीकृति दी हो, जैसा कि आगे आएगा। हिंदी अनुवाद: जब उपस्थित व्यक्ति ने प्रस्ताव दिया जबकि वह एक पक्ष या दोनों पक्षों की ओर से अनधिकृत (फज़ूली) है, तो वह प्रस्ताव अनुपस्थित व्यक्ति की स्वीकृति पर निर्भर नहीं रहेगा, बल्कि

बातिल (निरस्त) हो जाएगा, भले ही उपस्थित व्यक्ति ने खुद ही दोनों बातें (प्रस्ताव और स्वीकृति) कहकर उसे स्वीकार कर लिया हो, जैसा कि आगे आ रहा है। (त)

पाद टिप्पणियाँ: 1. दुर्रे मुख्तार, किताब अल-माज़ून, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 2/203 2. दुर्रे मुख्तार, किताब अल-वसाया, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 2/337 3. दुर्रे मुख्तार, किताब अल-निकाह, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 1/196 4. रद्दुल मुहतार, किताब अल-निकाह, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 2/326

فتاوی رضویہ (جلد ھفدھم ۱۷)

[Box 1] وصیہ دون الام او وصیھا (ملتقطا) | اس کا وصی، نہ کہ ماں یا اس کا وصی (ملتقطاً) (ت)

اولاً: زید کو اس نابالغ کے لئے جائیداد اور اپنے نفس سے خواہ کسی غیر سے اپنے روپے خواہ نابالغ کے روپیہ سے کسی طرح خریدنے کا اصلاً اختیار نہ تھا کہ یہ اختیار ولی مال کے سوا کسی کو نہیں۔ در مختار میں ہے:

[Box 2] ام و اخ لا یملکان بیع العقار مطلقاً و لا شراء غیر طعام و کسوۃ - | نابالغ کی ماں اور اس کا بھائی نابالغ کی غیر منقولہ جائیداد کو کسی طرح فروخت کرنے کا اختیار نہیں رکھتے اور نہ ہی انہیں طعام ولباس کے سوا کچھ خریدنے کا اختیار ہے۔(ت)

ثانیاً: وہ اس خریداری میں فضولی ہے لعدم ولایۃ ولا وصایۃ (ولایت اور وصی نہ ہونے کی بناء پر۔ ت) اور وہ اس بیع میں طرفین ایجاب و قبول دونوں کا خود ہی متولی ہوا ایسی صورت میں جب یہ شخص کسی طرف سے فضولی ہو عقد باطل محض ہوتا ہے۔ در مختار میں ہے:

[Box 3] لا یتوقف الایجاب علی قبول غائب عن المجلس في سائر العقود من نکاح و بیع و غیر ھما بل یبطل الایجاب ولا تلحقه الاجازۃ اتفاقاً - | ایجاب مجلس سے غائب شخص کے قبول پر موقوف نہیں ہوتا تمام عقود میں جیسے نکاح اور بیع وغیرہ بلکہ وہ ایجاب باطل ہو جاتا ہے اور بالاتفاق اس کو اجازت لاحق نہیں ہوتی۔(ت)

رد المحتار میں ہے:

[Box 4] فاذا اوجب الحاضر وھو فضولی من جانب او من الجانبین لا یتوقف علی قبول الغائب بل یبطل و ان قبل العاقد الحاضر بان یتکلم بکلامین کما یأتی - | جب حاضر ایجاب کیا اور آنحالیکہ وہ فضولی ہے ایک طرف سے یا دونوں طرفوں سے تو وہ ایجاب، غائب کے قبول پر موقوف نہیں رہے گا بلکہ باطل ہو جائے گا اگرچہ عاقد حاضر نے قبول کیا ہو بایں طور کہ دونوں کلاموں (ایجاب و قبول) سے تکلم کیا ہو جیسا کہ آ رہا ہے۔(ت)

1 درمختار کتاب الماذون مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۲۰۳ 2 درمختار کتاب الوصایا مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۳۳۷ 3 درمختار کتاب النکاح مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۹۶ 4 ردالمحتار کتاب النکاح دار احیاء التراث العربي بیروت ۲/ ۳۲۶

Fatawa Razvia Volume 17 (17)

Thus, this sale is purely void and ineffective, and the property remains under the ownership of Zaid as before. And Allah Almighty knows best. 15 Rajab 1309 AH

Problem 56: What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid bought a tree from Amr on the condition that its cutting is Amr's responsibility. Now Amr is arguing about cutting it. What is the ruling in this case? Explain and be rewarded.

The Answer: If a tree is sold for the purpose of being cut, its cutting is legally the responsibility of the buyer, as we have clarified by the grace of Allah Almighty in our Fatawa. (T) It is stated in Radd al-Muhtar:

[Boxed Text - Arabic Quote 1] "In al-Bahr from al-Zahiriyya: If one buys a tree for uprooting, the buyer is ordered to uproot it, etc."

[Boxed Text - Urdu Translation 1] "In 'Bahr' with reference to 'Zahiriyya', it is stated that if a person bought a tree to uproot it, the buyer will be ordered to uproot it, etc. (T)"

Here, contrary to the ruling of Sharia, the condition for cutting it was placed on the seller; thus, the sale became fasid (invalid). It is mentioned in Durr al-Mukhtar and Radd al-Muhtar:

[Boxed Text - Arabic Quote 2] "The buyer cuts it immediately (i.e., when the seller demands the clearing of his property). If it was conditioned to leave it, the sale is void, just like the condition of cutting being upon the seller (Hawi). And the reason for the invalidity was given in 'al-Bahr' as it being a condition that the contract does not necessitate, and it involves occupying someone else's property, etc. summarized."

[Boxed Text - Urdu Translation 2] "The buyer should cut this tree immediately, i.e., when the seller demands the clearance of his ownership. And if a condition was made to leave it in the ground, the sale became fasid, just as setting a condition that the responsibility of cutting is on the seller makes the sale fasid, Hawi Bahr. The cause of invalidity (fasad) was explained in 'Bahr' that this is a condition which the contract does not demand, and it is a condition to keep another's property occupied, etc. summarized (T)"

Therefore, both the seller and the buyer have committed a sin, and it is obligatory upon both by the command of Sharia to...

1 Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Chapter on what is included in sale by implication, etc., Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/38. 2 Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Chapter on what is included in sale by implication, etc., Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/39; Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Chapter on what is included in sale by implication, etc., Mujtabai, Delhi, 2/9.

फ़तावा रज़विया जिल्द हफ़दहुम (17)

तो यह बिक्री सरासर बातिल और निष्प्रभावी है और संपत्ति यथावत ज़ैद के स्वामित्व में बनी रहेगी। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है। 15 रजब 1309 हिजरी

मसाला 56: धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि ज़ैद ने अम्र से इस शर्त पर एक पेड़ खरीदा कि उसे कटवाना अम्र की ज़िम्मेदारी है। अब अम्र उसे कटवाने में बहस कर रहा है, इस स्थिति में क्या हुक्म है? बयान करें और पुण्य कमाएं।

अल-जवाब (उत्तर): यदि पेड़ काटने के लिए बेचा जाए, तो उसे काटना शरीयत के अनुसार खरीदार (मुश्तरी) की ज़िम्मेदारी है, जैसा कि हमने अल्लाह तआला की तौफीक से अपने फ़तावा में इसे स्पष्ट किया है। (त) रद-उल-मुह्तार में है:

[बॉक्स टेक्स्ट - अरबी उद्धरण 1] "फी अल-बहर मिन अल-ज़हीरिय्याः इश्तरा शजरतन लिल-क़लइ यु'मरु बि-क़लइहा इला आख़िरिहि।"

[बॉक्स टेक्स्ट - हिंदी अनुवाद 1] "'बहर' में 'ज़हीरिय्या' के हवाले से है कि यदि किसी व्यक्ति ने उखाड़ने के लिए पेड़ खरीदा, तो खरीदार को उसे उखाड़ने का आदेश दिया जाएगा आदि। (त)"

यहाँ शरीयत के हुक्म के खिलाफ, उसे कटवाने की शर्त विक्रेता (बाइ) पर लगाई गई, इसलिए बिक्री फ़ासिद (दूषित) हो गई। 'दुर्रे मुख्तार' और 'रद-उल-मुह्तार' में है:

[बॉक्स टेक्स्ट - अरबी उद्धरण 2] "यक़तउहा अल-मुश्तरी फ़िल-हाल (अई इज़ा तलबा अल-बाइ' तफ़रीग़ा मिलकिहि) व इन शरता तरकहा फ़सदा अल-बयउ क-शर्ति अल-क़तइ अलल-बाइ' हावी (व अल्लला फ़िल-बहर अल-फ़सादा बि-अन्नहु शर्लुन ला यक़्तज़ीहि अल-अक़्दु व हुवा शुग़्लु मिलकि अल-ग़ैर आ-इला आख़िरिहि मुलतक़तन)।"

[बॉक्स टेक्स्ट - हिंदी अनुवाद 2] "खरीदार उस पेड़ को तुरंत काटे, यानी जब विक्रेता अपने स्वामित्व को खाली करने की मांग करे। और अगर उसे ज़मीन में छोड़े रखने की शर्त लगाई गई, तो बिक्री फ़ासिद हो गई, जैसे कि काटने की ज़िम्मेदारी विक्रेता पर डालने की शर्त लगाने से बिक्री फ़ासिद हो जाती है, हावी बहर। 'बहर' में फ़साद (दोष) का कारण यह बताया गया है कि यह ऐसी शर्त है जिसकी मांग अनुबंध नहीं करता और वह किसी और की संपत्ति को घेरे रखने की शर्त है। आदि संक्षेपित (त)"

इसलिए विक्रेता और खरीदार दोनों गुनहगार हुए और दोनों पर शरीयत के हुक्म के अनुसार वाजिब है कि अपनी इस बिक्री को... [अगले पृष्ठ पर जारी]

---

1 रद अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू, फ़स्ल फ़ी मा यदख़ुलु फ़िल बयइ तबअन आदि, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 4/38 2 रद अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू, फ़स्ल फ़ी मा यदख़ुलु फ़िल बयइ तबअन आदि, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 4/39; दुर्रे मुख्तार, किताब अल-बुयू, फ़स्ल फ़ी मा यदख़ुलु फ़िल बयइ तबअन आदि, मुजतबाई, दिल्ली, 2/9

पृष्ठ 153 का 715

پس یہ بیع محض باطل و بے اثر ہے اور جائداد بدستور ملک زید پر باقی، واللہ تعالٰی اعلم۔ ۱۵ رجب ۱۳۰۹ھ مسئلہ ۵۶: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے ایک درخت عمرو سے اس شرط پر خریدا کہ اس کا کٹوا دینا عمرو کے ذمہ ہے اب عمرو اس کے کٹوانے میں حجت کرتا ہے، اس صورت میں کیا حکم ہے؟ بینوا توجروا الجواب: درخت کاٹنے کے لئے بیچا جائے اس کا کاٹنا شرعاً مشتری کے ذمہ ہے کما اوضحناہ بتوفیق اللہ تعالٰی فی فتاوٰینا (جیسا کہ اللہ تعالٰی کی توفیق سے ہم اپنے فتاوٰی میں اسے واضح کر چکے ہیں ۔ ت) ردالمحتار میں ہے :

[باکس ٹیکسٹ - عربی اقتباس ۱] فی البحر من الظھیریۃ اشتری شجرۃ للقلع یؤمر بقلعھا الخ۔

[باکس ٹیکسٹ - اردو ترجمہ ۱] بحر میں ظہیریہ کے حوالے سے ہے کہ کسی شخص نے اکھاڑنے کے لئے درخت خریدا تو خریدار کو اسے اکھاڑنے کا حکم دیا جائے گا الخ (ت)

یہاں کہ برخلافِ حکم شرع اس کے کٹوانے کی شرط ذمہ بائع لگائی گئی بیع فاسد ہوئی، در مختار وردالمحتار میں ہے :

[باکس ٹیکسٹ - عربی اقتباس ۲] یقطعھا المشتری فی الحال (ای اذا طلب البائع تفریغ ملکہ) وان شرط ترکھا فسد البیع کشرط القطع علی البائع حاوی (وعلل فی البحر الفساد بانہ شرط لا یقتضیہ العقد وھو شغل ملك الغیر اھ ملتقطا۔

[باکس ٹیکسٹ - اردو ترجمہ ۲] مشتری اس درخت کو فی الحال کاٹے یعنی جب بائع اپنی ملکیت کی فراغت کا مطالبہ کرے، اور اگر اس کو زمین میں چھوڑے رکھنے کی شرط لگائی تو بیع فاسد ہو گئی جیسا کہ کاٹنے کی ذمہ داری بائع پر عائد کرنے کی شرط لگانے سے بیع فاسد ہو جاتی

ہے ، حاوی بحر۔ میں فساد کی علت یوں بیان فرمائی کہ یہ ایسی شرط ہے جس کا تقاضا عقد نہیں کرتا اور وہ شرط ملک غیر کو مشغول رکھنے کی ہے اھ ملتقطاً (ت)

پس بائع و مشتری دونوں گنہگار ہوئے اور دونوں پر بحکم شرع واجب ہے کہ اپنے اس بیع۔۔۔

---

1 رد المحتار کتاب البیوع فصل فی مایدخل فی البیع تبعاً الخ دار احیاء التراث العربی بیروت ۳۸/۴ 2 رد المحتار کتاب البیوع فصل فی مایدخل فی البیع تبعاً الخ دار احیاء التراث العربی بیروت ۳۹/۴ ، در مختار کتاب البیوع فصل فی مایدخل فی البیع تبعاً الخ مجتبائی دہلی ۲/۹

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

...cancel it. If one of them does not agree, the other should say in front of them with their consent, "I have cancelled this sale," and it will be cancelled immediately. If both wish to cancel and the ruler of the Shariah (Judge) becomes aware, he shall forcibly cancel it, as it is obligatory to remove sin. It is stated in Durr al-Mukhtar:

[Box Start] Left Column (Arabic): It is obligatory for each of them to cancel it before or after taking possession as long as the subject of sale remains in its state, to eliminate the corruption because it is a sin, so its removal is obligatory. As in 'al-Bahr', this is why a judicial decree is not a condition for it. If they persist in holding onto it and the judge knows about it, he may forcibly cancel it for both of them as a right of the Shariah, [from] Bazzaziyya.

Right Column (Urdu): It is obligatory for both the seller and the buyer to cancel a void (fasid) sale, whether it is before or after taking possession of the sold item, as long as the sold item remains in its original state. This cancellation is intended to eliminate the corruption (fasad) because it is a sin. Therefore, its removal is obligatory, according to 'al-Bahr'. This is the reason why a judicial decree is not a condition for it, and if they insist on maintaining this void sale and the judge finds out, he can forcibly cancel it for both of them, i.e., the seller and the buyer, as a right of the Shariah. [Bazzaziyya, summarized (T)] [Box End]

Then, when they have cancelled this sale and there is mutual consent, they can re-enter into a valid sale from scratch without that corrupting condition. And Allah Almighty knows best.

Problem 57: 4 Rajab 1311 AH What do the scholars of religion and the muftis of the firm Shariah say about this matter: Zaid bought glass vials at the rate of ten annas per hundred. Then he sold them to Amr at a profit of two annas per hundred (making the price 12 annas per hundred), receiving six rupees for eight hundred vials. Zaid brought the vials to his shop to deliver them to Amr and told Amr to take his vials. Amr replied that he did not have time then and would take them after returning from Pilibhit. When Amr returned from Pilibhit, the vials were counted; out of the eight hundred vials, one hundred vials were found broken due to their fragility. Now, should the price of these one hundred broken vials be the responsibility of Zaid or Amr? Please explain and be rewarded.

The Answer: The petitioner states that the sale had not taken place at that time; rather, Amr had asked for the vials from him...

---

[1] Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Bay' al-Fasid, Mujtabai Press, Delhi, 2/28.

फ़तावा रज़विया (खण्ड १७)

...उसे निरस्त (फ़स्ख़) कर दें। यदि उनमें से कोई न माने, तो दूसरा उसकी सहमति से कह दे कि "मैंने इस बिक्री को निरस्त कर दिया है," तो वह तुरंत निरस्त हो जाएगी। और यदि दोनों निरस्त करना चाहें और शरीयत के न्यायाधीश (हाकिम-ए-शरा) को पता चले, तो वह जबरन निरस्त कर दे क्योंकि पाप को दूर करना अनिवार्य (फ़र्ज़) है। 'दुर्र-ए-मुख़्तार' में है:

[बॉक्स प्रारम्भ] बायां कॉलम (अरबी): बय'ए फासिद (दोषपूर्ण बिक्री) को निरस्त करना दोनों पर अनिवार्य है, चाहे वस्तु पर अधिकार से पहले हो या बाद में, जब तक वस्तु अपनी स्थिति में बनी रहे, ताकि भ्रष्टाचार को समाप्त किया जा सके क्योंकि यह एक पाप है, अतः इसे हटाना अनिवार्य है। 'अल-बहर' के अनुसार, इसी कारण इसमें न्यायाधीश के निर्णय की शर्त नहीं है। यदि वे इसे बनाए रखने पर अड़े रहें और न्यायाधीश को पता चले, तो वह शरीयत के अधिकार के रूप में जबरन निरस्त कर सकता है, [बज़ाज़िया]।

दायां कॉलम (उर्दू): बय'ए फासिद को विक्रेता और क्रेता में से हर एक पर निरस्त करना अनिवार्य है, चाहे वस्तु पर अधिकार करने से पहले हो या बाद में, जब तक कि वस्तु अपनी स्थिति में बनी हुई है। यह निरस्त करना भ्रष्टाचार को समाप्त करने के लिए है क्योंकि यह एक पाप है। इसलिए इसे दूर करना अनिवार्य है, 'अल-बहर'। यही कारण है कि इसमें न्यायाधीश के निर्णय (क़ज़ा-ए-क़ाज़ी) की शर्त भी नहीं है। और यदि वे इस दोषपूर्ण बिक्री को बनाए रखने पर अड़े रहें और न्यायाधीश को पता चल जाए, तो वह शरीयत के अधिकार के लिए उन दोनों यानी विक्रेता और क्रेता पर दबाव डालकर इसे निरस्त करवा सकता है। [ब़ज़ाज़िया, सारांश (त)] [बॉक्स समाप्त]

फिर जब वे इस बिक्री को निरस्त कर लें और आपसी सहमति हो, तो वे उस दोषपूर्ण शर्त के बिना नए सिरे से सही बिक्री कर सकते हैं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसाला ५७: ४ रजब १३११ हिजरी धर्म के विद्वान और शरीयत के मुफ़्ती इस मामले में क्या कहते हैं: ज़ैद ने कांच की शीशियां १० आने प्रति सौ की दर से खरीदीं। फिर उन्हें २ आने प्रति सौ के लाभ पर अम्र को बेचने का सौदा किया (१२ आने प्रति सौ की दर से), और ८०० शीशियों के ६ रुपये प्राप्त कर लिए। ज़ैद ने अम्र को देने के लिए शीशियां अपनी दुकान पर लाकर रखीं और अम्र से कहा कि वह अपनी शीशियां ले जाए। अम्र ने उत्तर दिया कि मेरे पास अभी समय नहीं है, मैं पीलीभीत से लौटकर ले जाऊंगा। जब अम्र पीलीभीत से लौटा, तो शीशियां गिनी गईं; कुल ८०० शीशियों में से १०० शीशियां

नाजुक होने के कारण टूटी हुई निकलीं। तो अब इन १०० टूटी हुई शीशियों की कीमत ज़ैद के ज़िम्मे होनी चाहिए या अम्र के? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: प्रश्नकर्ता का कहना है कि उस समय बिक्री पूरी नहीं हुई थी, बल्कि अम्र ने उससे शीशियां मांगी थीं...

---

[१] दुर्र-ए-मुख़्तार, किताबुल बुयूअ़, बाबुल बय'इल फासिद, मुज्तबाई प्रेस, दिल्ली, २/२८। पृष्ठ संख्या १५४ (कुल ७१० में से)

کو فسخ کریں ان میں جو کوئی نہ مانے دوسرا اسے اس کی رضامندی کے کہہ دے میں نے اس بیع کو فسخ فورا فسخ ہو جائے گی اور اگر دونوں فسخ کرنا چاہیں اور حاکم شرع کو خبر ہو تو وہ جبرا فسخ کر دے کہ گناہ کا زائل کرنا فرض ہے، در مختار میں ہے:

[باکس شروع] یجب علی کل واحد منهما فسخه قبل القبض او بعده | بیع فاسد کو بائع ومشتری میں سے ہر ایک پر واجب ہے چاہے ما دام المبیع بحاله اعداماً للفساد لانه معصیة | مبیع پر قبضہ سے پہلے ہو یا بعد، جب تک مبیع اپنے حال پر قائم فیجب رفعها بحر ولذا لا یشترط فیه قضاء قاضی واذا | ہے اور یہ فسخ فساد کو ختم کرنے کے لئے ہے کیونکہ یہ معصیت اصر علی امساکه وعلم به القاضی فله فسخه جبرا | ہے۔ لہذا اس کا رفع واجب ہے، بحر ، یہی وجہ ہے کہ اس میں علیهما حقاً للشرع بزازیه ۱۔ | قضاء قاضی کی شرط بھی نہیں اور اگر وہ اس بیع فاسد کے برقرار رکھنے پر اصرار کریں اور قاضی کو خبر ہو جائے تو وہ حق شرع کے لئے ان دونوں یعنی بائع ومشتری پر جبر کر کے فسخ کر اسکتا ہے ، بزازیہ اھ تلخیص (ت) [باکس ختم]

پھر جب اس بیع کو فسخ کر لیں اور باہم رضامندی ہو تو نئے سرے سے پھر بیع صحیح بغیر اس شرط مفسد کے کر سکتے ہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۵۷: ۴ رجب ۱۳۱۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اور مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید نے شیشی قاروری فی سیکڑہ دس آنے کے حساب سے خرید کر بمنافع فی صدی دو آنہ سیکڑہ کے عمرو سے تعداد ی آٹھ سو قاروری کے مبلغ چھ روپے وصول پا کر قارورياں واسطے دینے عمرو کے اپنی دکان پر لاکر رکھیں اور عمرو سے کہا کہ آپ شیشیاں اپنی لے جائے، عمرو نے

جواب دیا کہ مجھ کو اس وقت فرصت نہیں ہے پیلی بھینت سے واپس آ کر لوں گا ، جب عمرو پیلی بھینت سے واپس آیا اس وقت قاروریاں شمار کی گئیں تو منجملہ آٹھ سو قاروری کے سو قاروری بوجہ نازکی کے ٹوٹی نکلیں تو اب اس سو قاروری شکستہ کی قیمت ۱۲ از ید کے ذمہ ہونا چاہئے یا عمرو کے ؟ بینوا توجروا

الجواب: سائل مظہر کہ اس وقت بیع نہ ہوئی تھی بلکہ عمرو نے اس سے شیشیاں مانگیں اس کے پاس

---

۱ درمختار کتاب البیوع باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۲۸ صفحہ ۱۵۴ از ۷۱۵

Fatawa Ridawiyyah (17)

...were not [present], he said he would buy it for him and settled the price, saying, 'I will give it to you at a profit of two annas per hundred over whatever price I buy it for.' Amr gave him money in advance. This did not constitute a sale; it was only a promise and an agreement. Even if an offer and acceptance had occurred, it would still be void because the bottles were not in Zaid's possession, and selling something that is not yet in one's ownership is void, except in the case of 'Bai Salam' (advance payment sale).

Arabic	**Urdu**
In Al-Durr al-Mukhtar regarding void sales: Selling what is not in one's ownership is void, because selling a non-existent thing or something whose non-existence is a risk is void, except by way of Salam. This is because he (peace and blessings be upon him) prohibited selling what is not in one's possession and granted an exemption for Salam.	It is stated in Al-Durr al-Mukhtar that selling something not in the seller's possession belongs to the category of void sales, because selling a non-existent thing or something risky is void. However, selling them through Salam is not void because the Messenger of Allah (peace and blessings be upon him) prohibited the sale of what is not with a person but allowed Bai Salam, etc.
In Radd al-Muhtar: What is meant is the sale of what one will soon own before it is in one's ownership.	It is stated in Radd al-Muhtar that this refers to selling something that will soon enter one's ownership before it actually does. (T) Thus, the bottles Zaid bought were in Zaid's ownership. However many broke, it was his loss; Amr has no concern with it. And Allah Almighty knows best.

Issue 58: 19 Ramadan al-Mubarak 1312 AH What do the scholars of religion say regarding this matter: A person bought mangoes while they were still in blossom (flowers) and promised to pay the total amount the next day, but did not pay the price on the promised day and cancelled the promise. Is the sale valid or invalid? Explain and be rewarded.

The Answer: Selling fruit while it is still in the blossom stage is fundamentally forbidden (Haraam) and impermissible. That sale is unanimously not valid. Both the seller and the buyer are required to withdraw from it and repent.

Arabic	Urdu
In Al-Durr al-Mukhtar: Selling fruit before it appears is not valid.	It is stated in Al-Durr al-Mukhtar that selling fruit before it emerges is not valid.

1. Al-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Chapter of Void Sales, Mujtabai Press, Delhi, 2/44.
2. Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Chapter of Void Sales, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/105.

...नहीं थीं, उसने खरीद कर देने को कहा और कीमत तय की कि जिस भाव में मैं खरीदूँगा, तुम्हें प्रति सौ दो आने के मुनाफे पर दूँगा। अम्र ने उसे पेशगी (एडवांस) पैसे दे दिए। यह बिक्री का रूप नहीं हुआ, केवल एक वादा और समझौता हुआ। और अगर ईजाब-ओ-क़ुबूल (प्रस्ताव और स्वीकृति) हो भी जाता, तब भी यह बातिल (अमान्य) था क्योंकि बोतलें ज़ैद के पास नहीं थीं, और जो चीज़ अभी अपनी मिल्कियत (स्वामित्व) में ही नहीं है, उसे 'बैय-ए-सल्लम' (अग्रिम भुगतान बिक्री) के अलावा बेचना बातिल है।

अरबी

दुर्रे मुख्तार में बातिल बिक्री के बारे में है: जो चीज़ अपनी मिल्कियत में न हो उसे बेचना बातिल है, क्योंकि गैर-मौजूद चीज़ और जिसके न होने का खतरा हो उसकी बिक्री बातिल है, सिवाय 'सल्लम' के तरीके के। ऐसा इसलिए है क्योंकि नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने उस चीज़ को बेचने से मना फरमाया जो इंसान के पास न हो और बैय-ए-सल्लम में रियायत दी।

रद्दुल मुहतार में फरमाया: इससे मुराद उस चीज़ की बिक्री है जो जल्द ही उसके स्वामित्व में आ जाएगी, उसके स्वामित्व में होने से पहले।

उर्दू

दुर्रे मुख्तार में है कि बातिल बिक्री की श्रेणी में से उस चीज़ की बिक्री है जो विक्रेता के स्वामित्व में न हो, क्योंकि गैर-मौजूद चीज़ और जिसके न होने का खतरा हो, उसकी बिक्री बातिल है। लेकिन 'सल्लम' के तौर पर उनकी बिक्री बातिल नहीं क्योंकि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने उस चीज़ की बिक्री से मना फरमाया जो आदमी के पास न हो और बैय-ए-सल्लम में रियायत दी।

रद्दुल मुहतार में फरमाया कि इससे मुराद उस चीज़ की बिक्री है जो जल्द ही उसके स्वामित्व में आएगी उसके स्वामित्व में होने से पहले। (त) अतः जो बोतलें ज़ैद ने खरीदी थीं, वे ज़ैद के ही स्वामित्व में थीं। जितनी भी टूटीं, वे उसकी थीं; अम्र का उनसे कोई संबंध नहीं। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला ५८: १९ रमजानुल मुबारक १३१२ हिजरी उलमा-ए-दीन इस मसले में क्या फरमाते हैं कि एक व्यक्ति ने फूल (मंजरी) पर आम खरीदे और अगले दिन पूरे पैसे देने का वादा किया, लेकिन अगले

दिन वादे के अनुसार कीमत अदा नहीं की और वादा रद्द कर दिया। क्या यह बिक्री जायज़ है या नाजायज़? बयान करें, सवाब पाएँ।

जवाब: फूल (मंजरी) की अवस्था में ही फल बेचना सिरे से हराम और नाजायज़ है। वह बिक्री सर्वसम्मति से सही नहीं हुई। खरीदार और विक्रेता दोनों पर इससे पीछे हटना और तौबा करना लाजिम है।

अरबी	उर्दू
दुर्रे मुख्तार में है: फल के प्रकट होने से पहले उसे बेचना सही नहीं है।	दुर्रे मुख्तार में है कि किसी ने फल को प्रकट होने से पहले बेचा तो वह सही नहीं है।

१ दुर्रे मुख्तार, किताबुल बुयूअ, बाबुल बैय अल-फासिद, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, २/४४। २ रद्दुल मुहतार, किताबुल बुयूअ, बाबुल बैय अल-फासिद, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, ४/१०५।

पृष्ठ १५५ / ७१५

نہ تھیں اس نے خرید کر دینا کہا اور قیمت فیصل کرلی کہ جس بھاؤ کو خریدوں گا فی صدی دو آنے کے نفع پر تجھے دوں گا۔ عمرو نے اسے پیشگی روپے دے دئے یہ صورت بیع کی نہ ہوئی صرف ایک وعدہ قرار داد ہوا اور اگر ایجاب وقبول ہو بھی جاتا تاہم باطل تھی کہ شیشیاں زید کے پاس نہ تھیں اور جو چیز ہنوز اپنی ملک ہی میں نہیں بیع سلم کے سوا اس کا بیچنا باطل ہے۔

عربی **اردو**

فی الدر المختار من البیع الباطل وبیع مالیس فی ملکه لبطلان بیع المعدوم ومااله خطر العدم لا بطریق السلم لانه علیه الصلوة والسلام نهی عن بیع مالیس عند الانسان ورخص فی السلم اھ

در مختار میں ہے کہ بیع باطل کے قبیلہ سے ہے اس چیز کی بیع جو بائع کی ملک میں نہ ہو کیونکہ معدوم چیز اور وہ چیز جس کے عدم کا خطرہ ہو اس کی بیع باطل ہے مگر بطور سلم ان کی بیع باطل نہیں اس لئے کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے اس چیز کی بیع سے منع فرمایا جو آدمی کے پاس نہ ہو اور بیع سلم میں رخصت دی الخ

قال فی ردالمحتار المراد بیع ماسیملکه قبل مبلکه له۔

ردالمحتار میں فرمایا کہ اس سے مراد اس چیز کی بیع ہے جو عنقریب اس کی ملک میں آئے گی اس کی ملک میں ہونے سے قبل۔(ت) پس شیشیاں کہ زید نے خریدیں زید ہی کی ملک تھیں جتنی ٹوٹیں اس کی عمرو سے کچھ علاقہ نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۵۸: ۱۹ رمضان المبارک ۱۳۱۲ھ علمائے دین اس مسئلہ میں کیا فرماتے ہیں کہ ایک شخص نے پھول پر انبہ خریدے اور کل روپیہ دینے کا فردا پر وعدہ کیا مگر کل کی قیمت وعدہ پر ادا نہ کی، وعدہ کو فسخ کیا، بیع جائز ہے یا نا جائز؟ بینوا توجروا

الجواب: پھول کا پھول پر بیچنا ہی سرے سے حرام و نا جائز ہے وہ بیع بالاتفاق صحیح نہ ہوئی بائع و مشتری دونوں پر اس سے دست کشی و توبہ لازم ہے:

عربی	اردو
فی الدر المختار باع ثمرة قبل الظهور لا يصح	در مختار میں ہے کہ کسی نے پھل کو نمودار ہونے سے پہلے بیچا تو وہ صحیح نہیں ہے۔

1 درمختار کتاب البیوع باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۴۴ 2 ردالمحتار کتاب البیوع باب البیع الفاسد دار احیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۱۰۵

By chance, Allah knows best. If sold before, it is not correct by consensus. (T) Allah knows best.

Problem 59: Submitted by Muhammad Ali Bakhsh, 9 Rabi-ul-Awwal 1308 AH. Respected Sir! What is your ruling on this matter? I am buying a property for three thousand rupees on the condition that whenever the seller wishes, by paying the same amount or a little more, they can buy it back from me, and I will return it without excuse. If this is permissible, please issue a ruling.

Answer: Including the aforementioned condition in the sale deed corrupts the sale, because additional conditions that benefit either the seller or the buyer invalidate the sale. Signed: Muhammad Yaqub Ali Khan.

Answer: The written sale deed is nothing; the oral conversation of the contracting parties is what is legally recognized in Sharia. If the seller only said, "I sold these items for three thousand rupees," and the buyer said, "I accepted," and the contract was finalized, and both considered it a valid legal sale, then the sale is correct and permissible. The buyer becomes the owner of the property and the seller becomes the owner of the price. If, after the conclusion of the contract and separately from it, they agreed that "whenever you want to buy from me, I will sell it to you," and if it was written in the sale deed for assurance—fearing that the buyer might go back on their promise—stating that "I have sold such property to so-and-so for three thousand rupees through a valid legal sale, and it is mutually promised that whenever the seller wishes, they can buy this property from the buyer for this amount, and the buyer will have no excuse in selling it back to me," then such writing does not harm the sale at all. This is because the contract was what occurred orally between them, in which there was no mention of this condition. Recording it together in the sale deed cannot invalidate the legal contract that occurred correctly. And Allah Almighty knows best.

Problem 60: From Parbhani district, Aurangabad province, sent by Maulvi Syed Ghulam Rasool Hussain Sahib, lawyer, 16 Ramadan Mubarak 1313 AH. What do the scholars of religion and muftis of the firm Sharia say about the buying and selling of soil/clay, whether it is permissible or impermissible?

Note: The issue of attaching a condition to a contract after it has been finalized relates to this matter. There are two correct opinions regarding its attachment to the contract. (T) - From the author.

[1] Durr al-Mukhtar, Book of Sales, Chapter on what is included in the sale by follow-up, etc., Mujtabai Press, Delhi, 2/9.

फ़तावा-ए-रज़विया - जिल्द सत्रह (17)

इत्तेफ़ाक़न, अल्लाह तआला बेहतर जानता है। पहले बेचा गया तो सर्वसम्मति से सही नहीं है। (त) अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 59: प्रेषक मुहम्मद अली बख्श, 9 रबी-उल-अव्वल 1308 हिजरी। जनाब आली! आप इस मामले में क्या फरमाते हैं कि मैं एक संपत्ति तीन हजार रुपये की कीमत पर खरीदता हूँ और यह शर्त तय होती है कि जब भी विक्रेता का जी चाहे, वही कीमत या कुछ रुपये ज्यादा देकर मुझसे फिर खरीद ले, मैं बिना किसी उज्र (बहाने) के उन्हें दे दूँगा। अगर यह जायज़ हो तो हुक्म फरमाएँ।

अल-जवाब: बिक्री विलेख (sale deed) में उपरोक्त शर्त को शामिल करना बिक्री को फासिद (खराब) कर देता है, क्योंकि ऐसी अतिरिक्त शर्तें जो विक्रेता या खरीदार को लाभ पहुँचाती हैं, बिक्री को अमान्य कर देती हैं। फ़क़त मुहम्मद याकूब अली खान।

अल-जवाब: बिक्री विलेख कोई चीज़ नहीं है, असल चीज़ वह ज़बानी बातचीत है जो अनुबंध (अक़्द) के समय दोनों पक्षों के बीच होती है, शरीयत में उसी का एतबार (मान्यता) है। अगर विक्रेता ने केवल इतना कहा कि "मैंने ये चीज़ें तीन हज़ार रुपये में बेचीं" और खरीदार ने कहा "मैंने स्वीकार किया", और अनुबंध समाप्त हो गया, और दोनों ने इसे सही शरीई बिक्री समझा, तो बिक्री सही और जायज़ हो गई। खरीदार संपत्ति का मालिक हो गया और विक्रेता कीमत का। फिर अनुबंध समाप्त होने के बाद, अनुबंध के अलावा आपस में यह तय हुआ कि "जब तुम चाहोगे मुझसे खरीद लेना, मैं तुम्हारे हाथ बेच दूँगा", फिर अगर बिक्री विलेख में इस भरोसे के लिए कि कहीं वह अपने वादे से फिर न जाए, ऐसा लिखा गया कि "मैंने अमुक संपत्ति इतने रुपये के बदले सही शरीई बिक्री के रूप में बेची और आपस में यह वादा तय है कि विक्रेता जब चाहेगा खरीदार से इस कीमत पर यह संपत्ति खरीद लेगा, खरीदार को मुझे बेचने में कोई उज्र न होगा", तो इसे लिखे जाने से बिक्री में कोई हर्ज नहीं है। क्योंकि अनुबंध वही था जो उनके बीच ज़बानी हुआ था जिसमें इस शर्त का ज़िक्र नहीं था। बिक्री विलेख में एक साथ लिखे जाने से वह शरीई अनुबंध जो सही तौर पर संपन्न हुआ, फासिद नहीं हो सकता। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 60: जिला परभनी, सूबा औरंगाबाद से मौलवी सैयद गुलाम रसूल हुसैन साहब वकील द्वारा भेजा गया, 16 रमजानुल मुबारक 1313 हिजरी। दीन के उलेमा और मुफ़्तियान-ए-शरअ-ए-मतीन इस बारे में क्या फरमाते हैं कि मिट्टी का क्रय-विक्रय जायज़ है या नाजायज़?

नोट: अनुबंध के बाद शर्त जोड़ने का मामला भी इसी से संबंधित है, और इसमें दो सही मत हैं। 12 महु (त)।

[1] दुर्र अल-मुख्तार, किताब अल-बुयू, खंड: जो बिक्री में अनुवर्ती रूप से शामिल है, मुज़्तबाई प्रेस, दिल्ली, 2/9।

पृष्ठ 156 / 715

اتفاقاً واللہ تعالٰی اعلم۔ پہلے بیچا تو بالاتفاق صحیح نہیں۔ (ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۵۹: مسئولہ محمد علی بخش ۹ ربیع الاول ۱۳۰۸ھ جناب عالی! کیا فرماتے ہیں آپ اس مقدمہ میں کہ ایک جائداد بقیمت مبلغ تین ہزار روپیہ کو خرید کرتا ہوں اور یہ شرط ٹھہرتی ہے کہ جب اس کا جی چاہے اسی قیمت کو یا کچھ روپیہ زیادہ دے کر مجھ سے پھر خرید لیں میں بلاعذر ان کو دے دوں گا، اگر یہ جائز ہو تو حکم فرمائے۔

الجواب: اندراج شرط مذکور الصدر بیعنامہ میں مفسد بیع ہے کیونکہ جو شروط زائد مفید بائع ہوں یا مشتری باطل کنندہ بیع میں فقط محمد یعقوب علی خاں۔

الجواب: بیعنامہ کوئی چیز نہیں وہ گفتگو عقد کی جو زبانی عاقدین میں ہو شرعاً اس کا اعتبار ہے اگر اس میں بائع نے صرف اس قدر کہا کہ میں نے یہ چیزیں تین ہزار روپیہ کو بیچیں اور مشتری نے کہا میں نے قبول کیں، اور عقد ختم کر دیا، اور دونوں نے اسے بیع صحیح شرعی لازم سمجھا تو بیع صحیح و جائز ہو گئی، مشتری جائداد اور بائع قیمت کا مالک ہو گیا پھر ختم عقد کے بعد عقد سے علاوہ باہم یہ ٹھہرا لیا کہ جب تو چاہنا مجھ سے خرید لینا میں تیرے ہاتھ بیچ ڈالوں گا، پھر اگر بیعنامہ میں اس وثوق سے کہ کہیں یہ اپنے وعدہ سے نہ پھر جائے یوں لکھا گیا کہ میں نے فلاں جائداد بجزک ہاتھ بعوض سوا تین ہزار روپے کے بیع صحیح شرعی کی اور باہم یہ وعدہ قرار داد ہے کہ میں جب چاہوں اس قدر روپے کو یہ جائداد مشتری سے خرید لوں اسے میرے ہاتھ بیچ میں عذر نہ ہوگا تو اس لکھے جانے سے بیع میں اصلاً حرج نہیں کہ عقد تو وہی تھا جو ان میں باہم

زبانی ہوا اس میں اس شرط کا اصلا ذکر نہ تھا بیعنامہ میں ایک ساتھ تحریر ہونا عقد شرعی کو جو صحیح واقع ہوا فاسد نہیں ہو سکتا۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۶۰: از ضلع پربھنی صوبہ اورنگ آباد مرسلہ مولوی سید غلام رسول حسین صاحب وکیل ۱۶ رمضان المبارک ۱۳۱۳ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین مٹی کی بیع وشراء میں کہ جائز ہے یا ناجائز؟

عہ: یتعلق بہ مسئلۃ التحاق الشرط بعد العقد عقد کے بعد شرط کو عقد کے ساتھ ملحق کرنے کا مسئلہ بھی اس سے متعلق ہے اور اس میں دو مصحح قول ہیں ۱۲ منہ (ت) بالعقد و فیھا قولان مصححان ۱۲ منہ۔

1 درمختار کتاب البیوع فصل فی ما یدخل فی البیع تبعا الخ مطبع مجتبائی دہلی ۹/۲

Fatawa Ridawiyya (17) Volume 17

In Dur-e-Mukhtar, concerning void (fasid) sales, it is stated:

[Table Header: Arabic Quote | Urdu Translation] [Arabic: The sale of what is not property is void; property is that towards which human nature inclines, and in which spending and withholding are practiced (Durr). Thus, soil and the like are excluded from this definition. (T) | Urdu: The sale of anything that is not property is void. Property is that towards which human nature is inclined, and in which (as a gift, etc.) giving and (preventing others from using it) withholding is practiced. (Durr) Thus, soil and the like are excluded from this definition. (T)]

And in some places, as in the case of a kiln, people are inclined towards soil, and spending and withholding are practiced therein, and buying and selling are also ongoing, and day by day its value increases. In this case, can the definition of property apply to soil or not? And can its buying and selling be legally permissible or not? Explain and you shall be rewarded.

The Answer: The soil that is not property and not fit for sale is a small quantity in which there is no spending or withholding, like a handful of dust. Otherwise, a large quantity of soil, especially after being transported, is undoubtedly property. Generally, city-wide dealing exists in its sale; soil for roofs, or for pots, or for clods used for cleaning is sold. In Rad al-Muhtar, on this same passage of Dur-e-Mukhtar, it is written:

[Arabic: His saying 'thus soil is excluded' means a small amount while it is in its place. Otherwise, through transportation, it undergoes what makes it a recognized property, and water is similar to it.[2] | Urdu: The meaning of the text's statement that "soil is excluded from the definition of property" is that it refers to a small quantity that is still in its original place. Otherwise, after being moved from there, it becomes recognized property. And water is also similar to this. (T)]

In fact, the earth itself is soil and its sale is absolutely permissible. So, the criterion is whether it fulfills the definition of property. And Allah Almighty knows best.

Problem 61: From Pilibhit, Panjabian neighborhood, near the mosque, sent by Sheikh Abdul Aziz Sahib, 22 Rabi al-Akhir 1312 AH.

In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful. What do the scholars of religion say in this matter that Zaid, a Muslim timber merchant, one day sold wood to a Hindu landlord on these conditions: wood of such sample and measurement...

---

[1] Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Bay' al-Fasid, Mujtabai Press, Delhi, 2/23. [2] Rad al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Bay' al-Fasid, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/101.

फ़तावा रज़विया (१७) जिल्द १७

दुर-ए-मुख्तार में फासिद (अमान्य) बिक्री के बारे में लिखा है:

[अरबी: ऐसी चीज़ की बिक्री बातिल (शून्य) है जो माल (संपत्ति) नहीं है; माल वह है जिसकी ओर स्वभाव झुकता है और जिसमें देना और रोकना प्रचलित हो (दुरर)। अतः मिट्टी आदि इस परिभाषा से बाहर हो गई। (त) | उर्दू: जो चीज़ माल नहीं है उसकी बी' (बिक्री) बातिल है, और माल वह है जिसकी तरफ तबीअत (स्वभाव) माएल (झुका हुआ) हो और उस में (बतौर-ए-हिबा वगैरह) देना और (गैर को उस में तसर्रुफ़ से) मना करना जारी होता हो (दुरर)। चुनांचे मिट्टी वगैरह इस तारीफ से खारिज हो गई। (त)]

और बाज़ मक़ाम में जैसा कि भट्टी के मक़ाम पर मिट्टी की तरफ तबाए (स्वभाव) माएल हैं और उस में बज़्ल-ओ-मनअ जारी है और बी'-ओ-शिरा (खरीद-बिक्री) भी जारी है और योमा-फ-योमा (दिन-ब-दिन) उस की क़द्र-ओ-कीमत ज़्यादा होती जाती है, इस सूरत में मिट्टी पर माल की तारीफ सादिक़ आ सकती है या नहीं? और उस की बी'-ओ-शिरा शरअन जाएज़ हो सकती है या नहीं? बय्यिनू तुजरू (बयान करें, सवाब पाएं)।

अल-जवाब: मिट्टी कि माल और सालेह-ए-बी' (बिक्री के योग्य) नहीं, वह तुराब-ए-क़लील (थोड़ी मिट्टी) है जिस में बज़्ल-ओ-मनअ नहीं जैसे एक मुट्ठी ख़ाक (धूल), वरना तुराब-ए-कसीर (अधिक मिट्टी) खुसूसन बाद-ए-नक़्ल (हटाने के बाद) बिला शुबहा माल है और उमूमन उस की बी' में तआमुल-ए-बिलाद (शहरों का चलन), मिट्टी की गांठियां छतों पर डालने या गमले करने या इस्तिनजा के ढेलों के लिए जगह बिकती है। रद अल-मुह्तार में इसी इबारत-ए-दुर-मुख्तार पर लिखा है:

[अरबी: उनका कहना 'मिट्टी निकल गई' यानी थोड़ी मात्रा में जब तक वह अपनी जगह पर है। अन्यथा, परिवहन के कारण उसमें वह गुण आ जाता है जिससे वह एक प्रतिष्ठित माल बन जाती है, और पानी भी इसी तरह है।[2] | उर्दू: मतन (मूल पाठ) के इस क़ौल कि "मिट्टी तारीफ-ए-माल से खारिज हो गई" का मतलब यह है कि वह मिट्टी क़लील हो और अभी तक अपनी जगह पड़ी हो, वरना वहां से नक़्ल कर लेने के बाद वह माल-ए-मोतबर बन जाती है। और पानी भी इसी की मिस्ल है। (त)]

बल्कि ज़मीन खुद मिट्टी है और उस की बी' क़तअन जाएज़, तो मनात (आधार) वही तहक्कुक़-ए-हद्द-ए-माल (माल की परिभाषा का सिद्ध होना) है। वल्लाहु तआला आलम (अल्लाह तआला बेहतर जानता है)।

मसला ६१: अज़ पीलीभीत, मोहल्ला पंजाबियां, मुत्तसिल (निकट) मस्जिद, मुर्सला शेख अब्दुल अज़ीज़ साहब, २२ रबी-उल-आख़िर १३१२ हिजरी।

बिस्मिल्लाह हिर्रहमान निर्रहीम, क्या फरमाते हैं उलमा-ए-दीन इस मसले में कि ज़ैद मुस्लिम ताजिर लट्ठ ने एक रोज़ कौम-ए-हनूद (हिंदू समुदाय) के ताल्लुक़ा-दार के साथ बा-ईं शरायत (इन शर्तों पर) चोब फरोश (लकड़ी बेचने) की कि जिस नमूने और पैमाइश की लकड़ी...

---

[1] दुर्र अल-मुख्तार, किताब अल-बुयू, बाब अल-बय अल-फ़ासिद, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, २/२३। [2] रद अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू, बाब अल-बय अल-फ़ासिद, दार एहया अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, ४/१०१।

درمختار کے بیع فاسد میں تحریر فرماتے ہیں:

بطل بیع مالیس بمال، المال ما یمیل الیہ الطبع ویجری فیہ البذل والمنع درر فخرج التراب ونحوہ [1] | جو چیز مال نہیں اس کی بیع باطل ہے، اور مال وہ ہے جس کی طرف طبیعت مائل ہو اور اس میں (بطور ہبہ وغیرہ) دینا اور (غیر کو اس میں تصرف سے) منع کرنا جاری ہوتا ہو (درر) چنانچہ مٹی وغیرہ اس تعریف سے خارج ہو گئی۔ (ت)

اور بعض مقام میں جیسا کہ مقام پر بھٹی میں مٹی کی طرف طبائع مائل ہیں اور اس میں بذل و منع جاری ہے اور بیع و شراء بھی جاری ہے اور یوما فیوما اس کی قدر و قیمت زیادہ ہوتی جاتی ہے، اس صورت میں مٹی پر مال کی تعریف صادق آسکتی ہے یا نہیں؟ اور اس کی بیع و شراء شرعاً جائز ہو سکتی ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: مٹی کہ مال و صالح بیع نہیں، وہ تراب قلیل ہے جس میں بذل و منع نہیں جیسے ایک مٹھی خاک، ورنہ تراب کثیر خصوصاً بعد نقل بلا شبہ مال ہے اور عموماً اس کی بیع میں تعامل بلاد، مٹی کی گانٹھیا چھتوں پر ڈالنے یا گملے کرنے یا استنجوں کے ڈھیلوں کے لئے جگہ بکتی ہے، ردالمحتار میں اسی عبارت درمختار پر لکھا:

قولہ فخرج التراب ای القلیل مادام فی محلہ والا فقد یعرض لہ بالنقل ما یصیر بہ مالا معتبرا ومثلہ الماء [2] | متن کے اس قول کہ "مٹی تعریف مال سے خارج ہو گئی" کا مطلب یہ ہے کہ وہ مٹی قلیل ہو اور ابھی تک اپنی جگہ پر پڑی ہو ورنہ وہاں سے نقل کر لینے کے بعد وہ مال معتبر بن جاتی ہے۔ اور پانی بھی اسی کی مثل ہے۔ (ت)

بلکہ زمین خود مٹی ہے اور اس کی بیع قطعاً جائز، تو مناط وہی تحقق حد مال ہے، واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۶۱: از پیلی بھیت محلہ پنجا بیاں متصل مسجد مرسلہ شیخ عبدالعزیز صاحب ۲۲ ربیع الآخر شریف ۱۳۱۲ ھ

بسم اللہ الرحمن الرحیم، کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید مسلم تاجر لٹھ نے ایک روز قوم ہنود کے تعلقہ دار کے ساتھ بایں شرائط چوب فروش کی کہ جس نمونہ اور پیمائش کی لکڑی

---

[1] در مختار کتاب البیوع باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۲۳ [2] ردالمحتار کتاب البیوع باب البیع الفاسد داراحیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۱۰۱

...would be required by Bakr, Zaid, after clearing the expenses of transportation by rail or boat, would deliver this goods to Bakr's house. Bakr made an agreement that within thirty days of the arrival of the goods, they would pay the price of this wood at the rate of (10 count) to Zaid. If they did not pay within this period, they would pay for it at the rate of three rupees. Accordingly, Zaid prepared the wood according to the measurement and order of Bakr and informed Bakr that the wood was ready. As per the previous agreement, send a carpenter to inspect and pass it. The carpenter came, inspected the wood at Zaid's house, marked it, and Zaid delivered the passed wood to Bakr's house at his own transportation cost. After delivery, he obtained a signed receipt from the authorized employees of Bakr. In the meantime, before the time for payment arrived, there was an administrative change in Bakr's area, and instead of the previous employees, a new European employee was appointed. When the payment was demanded from him, he initially procrastinated due to the start of his administration. Then, after three or four months, he selected about one-third of the wood passed by the carpenter as defective. Now, even though seven to eight months have passed instead of the agreed 30 days, the payment for the wood has not been made. Upon demand, Bakr himself and his new employee replied: "Take back the wood we found defective, and payment for the remaining good quality wood will be given at the rate of (10 count)." In such a situation, would it be permissible for Zaid, with the help of the legal departments of the current authorities, to collect the full price of the goods (which Bakr's carpenter had passed and Zaid had delivered to Bakr's house and obtained a receipt for) at the rate of (7) rupees along with court expenses, or, according to Bakr's wish, collect the price of the good wood at the rate of (10 count) and bring back the wood selected as defective after spending other transportation costs? Please explain, may you be rewarded. Only.

Answer: In the situation asked, the sale did not take place at all because at the time of sale, this wood was non-existent and not owned by the seller. The sale of such a thing, if not done through the method of Salam (forward sale), is purely void. It is stated in Durr al-Mukhtar: "The sale of what is not in one's possession is void because the sale of the non-existent and what is at risk of being non-existent is void, except by way of Salam." (Translation of Arabic): The sale of something not owned is void because the sale of something that is non-existent or has the risk of being non-existent is void, but its sale by way of Salam is not void.

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

...बकर को आवश्यकता होगी, ज़ैद अपने परिवहन खर्चों से रेल या नाव के माध्यम से माल को बकर के घर पहुंचा देगा। बकर ने यह समझौता किया कि माल पहुँचने की तारीख से तीस दिनों के भीतर वे इस लकड़ी की कीमत (10 संख्या) की दर से ज़ैद को भुगतान करेंगे। और यदि इस अवधि में भुगतान नहीं किया गया, तो वे तीन रुपये की दर से कीमत देंगे। तदनुसार, ज़ैद ने बकर की माप और आदेश के अनुसार लकड़ी तैयार की और बकर को सूचित किया कि लकड़ी तैयार है। पिछले समझौते के अनुसार, एक बढ़ई (मिस्त्री) भेजें ताकि वह इसे पास कर सके। बढ़ई आया और ज़ैद के घर पर लकड़ी का निरीक्षण किया, अपना निशान लगाया, और ज़ैद ने पास की गई लकड़ी को अपने परिवहन खर्च पर बकर के घर पहुँचा दिया और पहुँचाने के बाद बकर के अधिकृत कर्मचारियों से हस्ताक्षर युक्त रसीद प्राप्त कर ली। इस बीच, भुगतान का समय आने से पहले, बकर के क्षेत्र में प्रशासनिक परिवर्तन हुआ और पिछले कर्मचारियों के बजाय एक नया यूरोपीय कर्मचारी नियुक्त किया गया। जब उससे कीमत मांगी गई, तो पहले तो उसने प्रशासन की शुरुआत के कारण टालमटोल की। फिर तीन-चार महीने बाद, उसने बढ़ई द्वारा पास की गई लकड़ी में से लगभग एक-तिहाई को दोषपूर्ण चुन लिया। अब जबकि समझौते के30 दिनों के बजाय सात-आठ महीने बीत चुके हैं, फिर भी लकड़ी की कीमत का भुगतान नहीं हुआ है। मांग करने पर, बकर खुद और उसका नया कर्मचारी जवाब देते हैं कि: "जितनी लकड़ी हमने दोषपूर्ण पाई है उसे वापस ले जाओ और शेष अच्छी लकड़ी की कीमत (10 संख्या) की दर से दी जाएगी।" क्या ऐसी स्थिति में यह जायज़ होगा कि ज़ैद वर्तमान अधिकारियों के कानूनी विभागों की सहायता से उस पूरे माल की कीमत, जिसे बकर के बढ़ई ने पास करके निशान लगाया था और ज़ैद ने उसे बकर के घर पहुँचाकर रसीद प्राप्त की थी, (7) रुपये की दर से अदालती खर्चों सहित वसूल करे, या बकर की इच्छा के अनुसार अच्छी लकड़ी की कीमत (10 संख्या) की दर से वसूल करे और दोषपूर्ण चुनी गई लकड़ी को अपने अन्य परिवहन खर्च वहन करके वापस ले आए? कृपया स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिले। फ़क़त।

जवाब: पूछी गई स्थिति में बिक्री हुई ही नहीं क्योंकि बिक्री के समय यह लकड़ी अस्तित्वहीन (गैर-मौजूद) थी और विक्रेता के स्वामित्व में नहीं थी। ऐसी वस्तु की बिक्री, यदि 'सलाम' (अग्रिम बिक्री) के माध्यम से न हो, तो पूरी तरह से अमान्य (बातिल) है। 'दुर्रे मुख्तार' में है: "जो चीज़ अपने स्वामित्व में न हो उसकी बिक्री बातिल है क्योंकि अस्तित्वहीन और जिसके अस्तित्व न होने का खतरा हो उसकी बिक्री बातिल है, सिवाय 'सलाम' के तरीके के।" (अरबी का अनुवाद): गैर-स्वामित्व वाली चीज़ की

बिक्री बातिल है क्योंकि उस चीज़ की बिक्री बातिल है जो अस्तित्वहीन हो या जिसके अस्तित्वहीन होने का खतरा हो, लेकिन 'सलाम' के रूप में उसकी बिक्री बातिल नहीं है।

पृष्ठ 158 का 715

بکر کو درکار ہو گی زید چھڑا کر اپنے مصارف بار برداری سے بذریعہ ریل یا کشتی کے زید اس مال کو بکر کے مکان پر پہنچا دے گا اور بکر نے یہ معاہدہ کیا کہ بعد پہنچ جانے اس مال کے تاریخ پہنچنے سے عرصہ تیس یوم میں قیمت اس لکڑی کی بشرح (۱۰عد) زید کو ادا کریں گے اور اگر اس عرصہ میں نہ ادا کریں تو قیمت اس کی تین روپیہ کے نرخ سے دیں گے ، چنانچہ زید نے حسب پیمائش فرمائش بکر کی لکڑی تیار کر کے بکر کو اطلاع دی کہ لکڑی تیار ہے حسب معاہدہ سابق مستری بھیجو کہ پاس کر جائے ، چنانچہ مستری آیا اور زید کے مکان پر اس لکڑی کو پاس کر کے اپنا نشان اور ٹانچ لگایا اور زید نے اس پاس شدہ لکڑی کو اپنے مصارف بار برداری سے بکر کے مکان پر پہنچا دیا اور بعد پہنچا دینے کے بکر کے ذی اختیار کارکنان کارندگان سے رسید دستخطی حاصل کر لی اس مابین جب تک وصولیابی روپیہ کا زمانہ آئے علاقہ بکر میں انتظاما تبدل و تغیر ہوا اور بجائے کارندگان سابق کے دوسرا کارندہ یوروپین سے قائم ہوا اس سے قیمت کا روپیہ طلب کیا گیا اول تو بوجہ ابتدائے انتظام کے اس نے لیت ولعل کیا پھر عرصہ تین چار مہینے بعد اس لکڑی مستری کی پاس شدہ میں سے بقدر ایک ثلث کے ناقص انتخاب کی اور اب کہ بجائے ۳۰ یوم کے معاہدہ کے عرصہ آٹھ سات ماہ کا منقضی ہوتا ہے ہنوز قیمت چوب کا روپیہ ادا نہیں ہوا اور طلب پر بکر خود اور نیز اس کا کارندہ جدید جواب دیتے ہیں کہ جس قدر لکڑی ہم نے ناقص بر آمد کی ہے واپس لے جاؤ اور باقیماندہ عمدہ مال کی قیمت شرح (۱۰عد) کی دی جائے گی کیا ایسی صورت میں جائز ہو گا کہ زید بذریعہ نالش محکمہ جات حکام زمانہ کی امداد سے شرائط فی مابین کے پورے اس مال کی قیمت جس کو بکر کا مستری پاس کر کے نشان دے گیا تھا اور زید نے اس کو بکر کے مکان پر پہنچا کر رسید حاصل کی ہے بشرح

(۷) روپیہ کے مع خرچ محکمہ کے وصول کر کے یا حسب خواہش بکر کے عمدہ لکڑی کی قیمت بہ نرخ (۱۰عد) کے وصول کر کے ناقص منتخب کی ہوئی لکڑی اپنا دوسرا مصارف خرچ کر کے واپس لائے ، بیان فرمائیں ثواب پائیں۔ فقط

الجواب: صورتِ مستفسرہ میں بیع ہی نہ ہوئی کہ یہ لکڑی وقت بیع معدوم و غیر مملوک بائع تھی اور ایسی چیز کہ بیع بے طریق سلم باطل محض ہے ، درمختار میں ہے : بطل بیع مالیس فی مملکہ لبطلان بیع المعدوم و مالہ خطر العدم الا بطریق السلم۔ غیر مملوک کی بیع باطل ہے بسبب باطل ہونے اس چیز کی بیع کے جو معدوم ہو یا اس کے معدوم ہونے کا خطرہ ہو مگر بطور سلم اس کی بیع باطل نہیں۔

صفحہ 158 از 715

Fatawa Razawiyya Volume 17

[Arabic Box]: Because he (Allah bless him and grant him peace) forbade selling what a person does not possess and granted a concession for Salam (forward sale). [Urdu Translation]: Because the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) prohibited the sale of something that a person does not have and gave a concession in the matter of Salam (advance payment sale). (T)

In Radd al-Muhtar, it is stated:

[Arabic Box]: The sale of a non-existent thing or something whose existence is uncertain, such as a fetus (in the womb) or milk in the udder, is not valid. Nor is the sale of something not owned by the seller, even if he becomes the owner later, except for Salam... [Urdu Translation]: The sale of something that is non-existent or has the risk of being non-existent, such as a fetus or milk inside the udders, is not valid. Also, the sale of something that was not in the seller's possession is not valid, even if he becomes its owner later, except for a Salam sale, etc. (T)

Therefore, there is no agreement between Zaid and Bakr based on which they can demand anything from each other. Zaid should take back all his wood and take it wherever he wants at his own expense. Yes, if a new sale of this present material is made with mutual consent at whatever price is agreed upon, then it will be valid and can be demanded. And Allah, the Exalted, knows best.

Problem 62: From Shahjahanpur, sent by Inayat Husain Khan, Hathi Than neighborhood, 7 Rabi' al-Akhir 1318 AH. What do the scholars of religion and muftis of the firm Shariah say about this: Zaid sold the yield of sugarcane juice before it was ready, based on an estimate that it would be produced after four months, if Allah wills. Zaid sold this juice for a profit of 12 rupees per hundred man (a unit of weight) by raw weight to Bakr, on the condition that the full price was paid in advance. A mutual condition was set that if the actual yield of juice is less than the said estimate and thus less is delivered, then Zaid would have to pay Bakr half an anna per raw man (which amounts to a certain sum for 100 raw man) as 'profit' (which common people call 'Gatte') because of taking advance money, along with the remaining balance. Therefore, are this sale and the reduction in profit permissible in the Hanafi school of law, or what status do they hold? There will be reward and merit with Allah.

---

1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Bay' al-Fasid, Mujtabai Press, Delhi, 2/24.

2. Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Bay' al-Fasid, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/5.

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

[अरबी बॉक्स]: क्योंकि उन्होंने (अल्लाह उन पर कृपा करे और उन्हें शांति प्रदान करे) उस चीज़ को बेचने से मना किया जो किसी व्यक्ति के पास नहीं है और सलाम (अग्रिम भुगतान बिक्री) में छूट दी है। [उर्दू अनुवाद]: इसलिए कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने उस चीज़ की बिक्री से मना फ़रमाया जो आदमी के पास न हो और बै' सलाम (अग्रिम भुगतान बिक्री) में रुख़सत (रियायत) दी। (त)

रद-उल-मुहतार में है:

[अरबी बॉक्स]: उस चीज़ की बिक्री मान्य नहीं है जो अस्तित्वहीन हो या जिसके अस्तित्वहीन होने का ख़तरा हो, जैसे (गर्भ में) भ्रूण या थन में दूध। न ही उस चीज़ की बिक्री मान्य है जो विक्रेता के स्वामित्व में नहीं है, भले ही वह बाद में उसका मालिक बन जाए, सिवाय सलाम के.. [उर्दू अनुवाद]: उस चीज़ की बै' (बिक्री) मुनअक़िद (मान्य) नहीं होती जो मादूम (अस्तित्वहीन) हो या जिसके मादूम होने का ख़तरा हो जैसे हमल (गर्भ) और थनों के अंदर दूध, और नहीं मुनअक़िद उस चीज़ की बै' जो बाए' (विक्रेता) की मिल्क (स्वामित्व) में न हो अगरचे बाद में उसका मालिक बन जाए सिवाए बै' सलाम के वग़ैरह (त)

तो ज़ैद और बक्र में आपस में कोई मुआहदा (समझौता) ही नहीं है जिसकी बुनियाद पर एक दूसरे से कुछ मुतालबा (मांग) कर सकें ज़ैद अपनी लकड़ी तमाम-ओ-कमाल वापस ले और अपने सर्फ़(ख़र्च) से जहाँ चाहे ले जाए, हाँ अब अज़ सरे नौ (नए सिरे से) इस माल-ए-मौजूदा की बै' रज़ा-ए-बाहमी (आपसी सहमति) से जिस क़ीमत पर हो जाए तो वह जाइज़ होगी और उसका मुतालबा हो सकेगा। वल्लाहु सुब्हानहू व तआला आलम।

मसला ६२: अज़ शाहजहाँपुर मुर्सला (प्रेषित) इनायत हुसैन ख़ाँ महल्ला हाथी थान ४ रबी-उल-आख़िर १३१८ हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन और मुफ़्तियान-ए-शरअ-ए-मतीन ऊपर इस बात के कि ज़ैद ने पैदावार रस (गन्ने का रस) क़ब्ल (पहले) तैयार होने पैदावार खेत नैशकर (गन्ना) अज़ रूए तख़मीना-ओ-अंदाज़ा (अनुमान के आधार पर) के कि जो बाद चहार माह (चार महीने) के अगर अल्लाह ने चाहा तो पैदा होगा इस माल-ए-रस को ज़ैद ने बह नफ़अ मबलग़ (१२/ रुपये मुनाफ़े पर) एक सौ मन ब-वज़न-ए-ख़ाम दस्त-ए-बक्र के इस शर्त से फ़रोख़्त (बेचा) किया और फ़ौरन ज़र-ए-क़ीमत पेशगी बेबाक़ (अग्रिम भुगतान) कर लिया। शर्त बाहम ये क़रार पाई कि अगर तख़मीना

मज़्कूरा (उक्त अनुमान) से माल-ए-रस कम पैदा होगा इस वजह से कम दिया जाएगा तो फ़ी मन ख़ाम आधा आना के जिसके हिसाब से सौ मन ख़ाम पर होते हैं, ब-तारीक़-ए-मुनाफ़ा (लाभ के तौर पर) जिसे अवाम-उन्न-नास 'गट्टे' कहते हैं, ब-वजह पेशगी लेने रुपये के ज़ैद को मअ (साथ) रुपया बाक़ी मांदा (शेष) के बक्र को देना होंगे। लिहाज़ा ये बै' और कमी-ए-मुनाफ़ा दोनों शरअन मज़हब-ए-हनफ़िया में जाइज़ हैं या क्या दर्जा रखते हैं, अंदअल्लाह (अल्लाह के नज़दीक) अज्र-ओ-सवाब होगा।

---

1. दुर्रे मुख़्तार किताबुल बुयूअ बाबुल बैइल फ़ासिद मतबअ मुज्तबाई दिल्ली २/२४
2. रद-उल-मुहतार किताबुल बुयूअ बाबुल बैइल फ़ासिद दार इहया-उत-तुरास अल-अरबी बैरूत ४/५

فتاوی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

[Arabic Box]: لانه صلی الله تعالی علیه وسلم نهی عن بیع مالیس عند الانسان ورخص في السلم[1]. [Urdu Translation]: اس لئے کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم نے اس چیز کی بیع سے منع فرمایا جو آدمی کے پاس نہ ہو اور بیع سلم میں رخصت دی ۔ (ت)

ردالمحتار میں ہے:

[Arabic Box]: لم ینعقد بیع المعدوم وماله خطر العدم کالحمل واللبن في الضرع ولا بیع مالیس مملوکاله وان ملکه بعده الا السلم[2] الخ۔ [Urdu Translation]: اس چیز کی بیع منعقد نہیں ہوتی جو معدوم ہو یا اس کے معدوم ہونے کا خطرہ ہو جیسے حمل اور تھنوں کے اندر دودھ ، اور نہیں منعقد اس چیز کی بیع جو بائع کی ملک میں نہ ہوا گر چہ بعد میں اس کا مالک بن جائے سوائے بیع سلم کے الخ (ت)

تو زید و بکر میں باہم کوئی معاہدہ ہی نہیں جس کی بناء پر ایک دوسرے سے کچھ مطالبہ کر سکے ، زید اپنی لکڑی تمام و کمال واپس لے اور اپنے صرف سے جہاں چاہے لے جائے ، ہاں اب از سر نو اس مال موجودہ کی بیع برضائے باہمی جس قیمت پر ہو جائے تو وہ جائز ہوگی اور اس کا مطالبہ ہوسکے گا واللہ سبحانہ و تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۶۲: از شاہجہان پور مرسلہ عنایت حسین خاں محلہ ہاتھی تھان ۷ ربیع الآخر ۱۳۱۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اوپر اس بات کے کہ زید نے پیداوار رس قبل تیار ہونے پیداوار کھیت نیشکر ازروئے تخمینہ واندازہ کے کہ جو بعد چہار ماہ کے اگر اللہ نے چاہا تو پیدا ہو گا اس مال رس کو زید نے بہ نفع مبلغ (۱۲/) ایک سو من بوزن خام بدست بکر کے اس

شرط سے فروخت کیا اور فوراً زر قیمت پیشگی بیباک کر لیا شرط باہم یہ قرار پائی کہ اگر تخمینہ مذکورہ سے مال رس کم پیدا ہو گا اس وجہ سے کم دیا جائے گا تو فی من خام آدھ آنہ کے جس کے حساب سے سومن خام پر ہوتے ہیں ، بطریق منافع جس کو عوام الناس گٹے کہتے ہیں بوجہ پیشگی لینے روپیہ کے زید کو مع روپیہ باقی ماندہ کے بکر کو دینا ہوں گے لہٰذا یہ بیع اور کمی منافع دونوں شرعاً مذہب حنفیہ میں جائز ہیں یا کیا درجہ رکھتے ہیں ، عند اللہ اجر وثواب ہو گا۔

---

1. در مختار کتاب البیوع باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۲۴
2. ردالمختار کتاب البیوع باب البیع الفاسد دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۵

Fatawa Rizvia (Volume 17)

The Answer: This sale is haram (forbidden) and this condition is also haram, and these extra prices charged on it are pure interest. For the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) forbade the sale of what is not with one, and from sale with a condition. Riba (interest) is the excess deserved through a contract that is devoid of counter-value, as stated in Al-Hidaya, and these matters are clear. And Allah knows best. (T)

Problem 63: From the old city, sent by Molvi Khuda Yar Khan Sahib, 8 Safar 1319 AH. Respected Maulana, peace and blessings of Allah be upon you. A Muslim man was sold juice at a rate of (portion 1) percent per maund. The condition was agreed that within one and a half months after the end of the crushing season, the remaining money would be paid; if not, the rate of (with 17) would be applied. And if our money remains with Khuda Yar, he will also pay it within one and a half months; if not paid within the period, take the rate of (17). So our money came out to be thirteen hundred and the period has passed. Now, is taking the rate of (with 17) interest or not? Since I often ask you about my dealings, I am seeking confirmation now so that I may be correctly informed. Yours humbly, Khuda Yar. May Allah grant him confirmation and acknowledgement.

The Answer: This condition is invalid (fasid) and the contract is forbidden (haram) for two reasons: First, this condition serves the benefit of one of the contracting parties, Every such condition is invalid, and every invalid condition makes the sale invalid. Every invalid sale is forbidden, the annulment of which is mandatory for both the seller and the buyer. If they do not annul it, both will be sinners, and the judge (Qadi) shall forcibly annul this sale.

[1] Al-Hidaya, Book of Sales, Chapter on Interest, Yusufi Press, Lucknow, 3/80 Page 160 of 715

उत्तर: यह बिक्री भी हराम (वर्जित) है और यह शर्त भी हराम है, और इस पर लिया गया अधिक दाम शुद्ध ब्याज है। क्योंकि पवित्र नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने उस चीज़ की बिक्री से मना फ़रमाया जो आदमी के पास न हो और बिक्री और शर्त से मना फ़रमाया। और ब्याज (सूद) अनुबंध से सिद्ध होने वाली उस वृद्धि को कहते हैं जो बदले (एवज़) से खाली हो, जैसा कि हिदाया में है, और ये सभी मामले स्पष्ट हैं। और अल्लाह बेहतर जानता है। (त)

मसाला ६३: पुराने शहर से, प्रेषक मौलवी खुदा यार खान साहब, ८ सफर १३१९ हिजरी। माननीय मौलाना साहब, अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाही व बरकातुहू। एक मुसलमान व्यक्ति को रस बेचा गया था (हिस्सा १) प्रतिशत मन की दर से। शर्त यह तय हुई थी कि गन्ने की पेराई खत्म होने के डेढ़ महीने के भीतर जो पैसा बकाया होगा, वह दे दिया जाएगा; यदि नहीं दिया गया, तो (१७ के साथ) की दर लागू होगी। और यदि हमारा पैसा खुदा यार के पास बचा रहे, तो वह भी डेढ़ महीने के भीतर देगा; यदि समय सीमा के भीतर नहीं दिया गया, तो (१७) की दर ली जाएगी। तो हमारा पैसा तेरह सौ निकला और समय सीमा बीत गई। अब (१७ के साथ) की दर लेना ब्याज है या नहीं? चूंकि मैं अक्सर आपसे अपने लेनदेन के बारे में पूछता रहता हूँ, इसलिए मैं इसकी पुष्टि चाहता हूँ ताकि मुझे सही जानकारी मिल सके। आपका खाकसार खुदा यार। अल्लाह उसे पुष्टि और स्वीकार्यता प्रदान करे।

उत्तर: यह शर्त फ़ासिद (अमान्य) है और अनुबंध हराम है, इसके दो कारण हैं: पहला, इस शर्त में अनुबंध करने वाले पक्षों में से एक का लाभ है, हर ऐसी शर्त फ़ासिद है और जो शर्त फ़ासिद हो वह बिक्री को फ़ासिद कर देती है। हर फ़ासिद बिक्री हराम है जिसका रद्द करना विक्रेता और खरीदार दोनों पर अनिवार्य है। यदि वे इसे रद्द नहीं करते हैं, तो दोनों पापी होंगे और काज़ी जबरन इस बिक्री को रद्द कराएगा।

[1] अल-हिदाया, किताबुल बुयूअ, ब्याज का अध्याय, यूसुफ़ी प्रेस, लखनऊ, ३/८० पृष्ठ १६० ऑफ़ ७१५

الجواب: یہ بیع بھی حرام اور یہ شرط بھی حرام، اور یہ دام جو اس کمی پر لئے جائیں نرے سود ہیں۔ فان النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نھی عن بیع ما لیس عندہ وعن بیع وشرط والربو ھو الفضل المستحق بالعقد الخالی عن العوض کما فی الھدایۃ والمسائل واضح۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت) نبی اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے اس چیز کی بیع سے منع فرمایا جو آدمی کے پاس نہ ہو اور بیع اور شرط سے منع فرمایا اور سود عقد سے ثابت ہونے والی اس زیادتی کو کہتے ہیں جو عوض سے خالی ہو جیسا کہ ہدایہ میں ہے، اور یہ تمام مسائل واضح ہیں، واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۶۳: از شہر کہنہ مرسلہ مولوی خدایار خاں صاحب، ۸ صفر ۱۳۱۹ھ جناب مولانا معظم مکرم دام سالمھا، السلام علیکم ورحمۃ اللہ وبرکاتہ، ایک مسلمان شخص کے ہاتھ رس بیچا تھا بہ نرخ (حصہ مہ ۱) فیصدی من یہ شرط ٹھہری تھی کہ بعد ختم بیل ڈیڑھ مہینہ کے اندر جو روپیہ باقی نکلے گا دیں گے اگر نہ دیں گے تو اس کا نرخ (معہ ۱۷) کا دیں اور خدا یار کے اوپر ہمارا روپیہ باقی نکلے وہ بھی ڈیڑھ مہینہ کے اندر دیں اگر میعاد میں نہ دیں تو (مہ لہ ۱۷) کا نرخ لیں، سو روپیہ ہمارا نکلا تیرہ سو اور میعاد گزر گئی، اب نرخ (معہ ۱۷) کا لینا سود تو نہیں ہے یا ہے چونکہ میں آپ سے اکثر اپنے معاملات پوچھ لیتا ہوں لہذا اب بھی تصدیقہ دیتا ہوں کہ مجھ کو صحیح اس کی اطلاع ہو جائے۔ زیادہ نیاز خاکسار خدایار تبیتہ اللہ بالتصدیق والاقرار

الجواب: یہ شرط فاسد اور عقد حرام ہے دو وجہ سے : اولا: اس شرط میں احد العاقدین کی منفعت ہے، وکل شرط کذا فاسد وکل شرط فاسد فھو یفسد البیع وکل بیع فاسد حرام واجب الفسخ علی کل من العاقدین فان لم یفسخا اثما جمیعا وفسخ القاضی بالجبر۔ ہر وہ شرط جو ایسی ہو فاسد ہے اور جو شرط فاسد ہو وہ بیع کو فاسد کر دیتی ہے اور ہر فاسد بیع حرام ہے جس کا فسخ کرنا بائع اور مشتری میں

سے ہر ایک پر واجب ہے اگر وہ فسخ نہ کریں تو دونوں گنہگار ہوں گے اور قاضی جبراً اس بیع کو فسخ کرائے۔

[1] الہدایہ کتاب البیوع باب الربوا مطبع یوسفی لکھنؤ ۳/ ۸۰ Page 160 of 715

Fatawa Razawiyyah (Volume 17)

Secondly: This involves ignorance regarding the price amount in the future and is a characteristic of gambling, where a win-loss situation is set between the buyer and seller based on a future unknown circumstance that only God knows how it will unfold. Gambling is forbidden by the definitive text of the Quran. And Allah Subhanuhu wa Ta'ala knows best.

Issue 64: We praise Him and send blessings upon His Noble Messenger.

What do the scholars of religion say in this matter: Zaid took an amount from Amr and wrote an agreement with the content that he would provide 140 'chatte' (bundles) of wood in five installments. Out of these, only 25 bundles of wood were given. In the aforementioned agreement, a condition was written that if there is a deviation from any side in the exchange of wood, the other party would be entitled to take five rupees as a penalty per bundle. So, is Amr Shari'ah-wise entitled to take the written penalty from Zaid in this situation? Explain and be rewarded.

The Answer: In the situation asked about, if the wood was not present with Zaid at that time, then this sale is forbidden (Haram) and void (Batil). It is mandatory for Amr to return those 25 bundles to Zaid, and mandatory for Zaid to return the full amount to Amr. And if specific existing wood was sold, and then 115 bundles were not given to the buyer, it is obligatory for Zaid to give them now. If he has sold that wood elsewhere, then Zaid is a severe sinner, and Amr can take his wood back from that second buyer. If it's untraceable, then Amr should take the market value of the 115 bundles from Zaid. In any case, there is no right to take a penalty in any circumstance, nor is that condition in the agreement acceptable at all. And Allah Ta'ala knows best.

Issue 65: 22 Muharram-ul-Haram 1323 AH

What do the scholars of religion say in this matter: Is it permissible to sell the hide of a dead animal (carrion) or not? And is it permissible to sell bones or not? Some scholars say it is not permissible, and some say it is. Explain and be rewarded.

The Answer: If the hide is tanned by curing it or drying it in the sun, then selling it is permissible because of its purity and the lawfulness of benefiting from it. Otherwise, it is forbidden and void because it is a part of the dead animal and the sale of a dead animal is void. If there is no greasiness on the bone and it is dry, then selling it is permissible for the reasons mentioned before.

दूसरा: इसमें भविष्य में मूल्य की राशि के बारे में अनिश्चितता (अज्ञानता) शामिल है और यह जुए की एक विशेषता है, जहाँ खरीदार और विक्रेता के बीच भविष्य की एक अज्ञात स्थिति के आधार पर जीत-हार तय की गई है जिसे खुदा ही जानता है कि वह कैसे घटित होगी। और कुरान के स्पष्ट पाठ के अनुसार जुआ हराम (निषिद्ध) है। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है।

मसला 64: हम उसकी प्रशंसा करते हैं और उसके नेक रसूल पर दुरूद भेजते हैं।

दीन के विद्वान इस मामले में क्या फरमाते हैं कि ज़ैद ने अम्र से एक राशि लेकर इस विषय का एक इकरारनामा लिखा कि वह लकड़ी के140 'चट्टे' पाँच किस्तों में देगा। उनमें से केवल 25 चट्टे लकड़ी दी। और उपर्युक्त इकरारनामे में यह शर्त लिखी गई कि यदि किसी भी पक्ष की ओर से लकड़ी के लेन-देन में विचलन होता है, तो दूसरा पक्ष प्रति चट्टा पाँच रुपये हर्जाना (जुर्माना) लेने का पात्र होगा। तो, क्या अम्र इस स्थिति में ज़ैद से लिखित हर्जाना लेने का शरीयत के अनुसार पात्र है? उत्तर दें और पुण्य कमाएँ।

अल-जवाब (उत्तर): पूछी गई स्थिति में यदि उस समय ज़ैद के पास लकड़ी मौजूद नहीं थी, तो यह बिक्री हराम और बातिल (अमान्य) हुई। अम्र पर अनिवार्य है कि वह ये 25 चट्टे भी ज़ैद को वापस दे दे और ज़ैद पर अनिवार्य है कि वह पूरी राशि अम्र को लौटा दे। और यदि विशिष्ट मौजूदा लकड़ी बेची गई थी और फिर उसमें से 115 चट्टे खरीदार को नहीं दिए गए, तो ज़ैद पर अनिवार्य है कि वह अब दे दे। और यदि उसने वह लकड़ी दूसरी जगह बेच दी है, तो ज़ैद बहुत गुनहगार हुआ और अम्र अपनी लकड़ी उस दूसरे खरीदार से वापस ले सकता है। और अगर पता न चले, तो 115 चट्टों की जो कीमत बाजार भाव से हो, वह अम्र ज़ैद से ले। बहरहाल, किसी भी स्थिति में हर्जाना लेने का कोई अधिकार नहीं है, और न ही इकरारनामे की वह शर्त बिल्कुल स्वीकार्य है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 65: 22 मुहर्रम-उल-हराम 1323 हिजरी

दीन के विद्वान इस मसले में क्या फरमाते हैं कि मृत पशु (मुरदार) की खाल बेचना जायज़ है या नहीं? और हड्डी बेचना जायज़ है या नहीं? कुछ विद्वान कहते हैं कि जायज़ नहीं है और कुछ कहते हैं कि जायज़ है। उत्तर दें और पुण्य कमाएँ।

अल-जवाब (उत्तर): खाल को अगर पकाकर या धूप में सुखाकर दगाबत (टैनिंग) कर ली जाए, तो उसे बेचना जायज़ है उसकी पवित्रता और उससे लाभ उठाने की हलालियत के कारण। अन्यथा यह हराम और बातिल है क्योंकि यह मुरदार का हिस्सा है और मुरदार की बिक्री बातिल है। हड्डी पर यदि चिकनाई न हो और वह सूखी हो, तो उसे बेचना जायज़ है जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है।

पृष्ठ 161 का 715

ثانیا: اس میں جہالت قدرِ ثمن لازم آئندہ اور خاصہ قمار ہے کہ بائع مشتری کے لئے ایک آئندہ نامعلوم صورت میں کہ خدا جانے کس طرح واقع ہوگی ہار جیت بدی گئی ہے اور قمار بنص قطعی قرآن حرام ہے، واللہ سبحانہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۶۴: نحمدہ ونصلی علی رسولہ الکریم، کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس معاملہ میں کہ زید نے عمرو سے مبلغ (مالعہ لھہ ۱) لے کر ایک اقرار نامہ بدیں مضمون تحریر کیا کہ (۱۴۰) چٹے لکڑی پانچ اقساط میں دوں گا منجملہ ان کے صرف ۲۵ چٹے لکڑی دی اور اقرار نامہ مذکور الصدر میں یہ شرط تحریر کی کہ اگر کسی جانب سے لین دین لکڑی میں انحراف ہو تو پانچ روپیہ فی چٹہ ہرجہ لینے کا ایک دوسرے سے مستحق ہوگا، پس عمرو زید سے اس صورت سے ہرجہ تحریری لینے کا شرعاً مستحق ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: صورت مستفسرہ میں اگر لکڑی زید کے پاس اس وقت موجود نہ تھی تو یہ بیع حرام و باطل ہوئی، عمرو پر لازم ہے کہ یہ ۲۵ چٹے بھی زید کو واپس دے اور زید پر لازم کہ پورے (مالعہ لھہ ۱) عمرو کو پھیر دے اور اگر لکڑی موجود معین بیچی اور پھر اس میں سے ۱۱۵ چٹے مشتری کو نہ دی تو زید پر فرض ہے کہ اب دے دے اور اگر وہ لکڑی دوسری جگہ بیچ ڈالی ہے تو زید سخت گنہگار ہوا اور عمرو اپنی لکڑی اس دوسرے مشتری سے واپس لے سکتا ہے اور اگر پتہ نہ چلے تو ۱۱۵ چٹے کے جو دام بازار کے بھاؤ سے ہوئے عمرو زید سے لے، بہر حال ہرجہ لینے کا کسی صورت میں اختیار نہیں، نہ وہ شرط اقرار نامہ اصلاً قابل قبول۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۶۵: ۲۲ محرم الحرام ۱۳۲۳ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ کھال مردہ کا بیچنا جائز ہے یا نہیں؟ اور ہڈی بیچنا جائز ہے یا نہیں؟ بعض عالم کہتے ہیں جائز نہیں ہے اور بعض کہتے ہیں جائز ہے۔ بینوا توجروا

الجواب: کھال اگر پکا کر یا دھوپ میں سکھا کر دباغت کرلی جائے تو بیچنا جائز ہے لطھارتہ وحل الانتفاع (بسبب اس کی طہارت کے اور حلال ہونے اس سے نفع حاصل کرنے کے۔ت) ورنہ حرام و باطل ہے لانہ جزء میتة و بیع المیتة باطل (اس لئے کہ وہ مردار کی جزء ہے اور مردار کی بیع باطل ہے۔ت) ہڈی پر اگر دسومت نہ ہو خشک ہو تو اس کی بیع جائز ہے لماتقدم

...because life does not permeate it (for the reason previously mentioned). Swine is exempt from these rules; its skin or bone is not fit for buying, selling, or any form of benefit under any circumstances, because of its inherent impurity (Najis al-Ayn). And Allah Almighty knows best.

Problem 66: Sent by Muhammad Bashiruddin, student of Madrasa Imdad al-Ulum, Bansmandi neighborhood, Kanpur. 29 Safar 1330 AH. If a person buys clean meat of a live cow or goat etc., excluding the skin, then after slaughtering, ten or twelve people share and eat it; what is the status of the sale in this case? And is eating the meat halal or haram? Please clarify and be rewarded.

Answer: The sale is Fasid (invalid/irregular) and eating that meat is haram (forbidden).

[Table Content] Reason is clear; it is like a beam fixed in a roof, rather even stricter than that. In 'Al-Durr', it is stated from 'Al-Siraj' that if wool and milk are handed over to the buyer after the contract, the sale does not turn valid. Similarly, everything that has a natural connection, such as the skin of an animal, the stone of a date, and the seed of a watermelon, Allah Almighty knows best. (T)

Problem 67 to 68: From Jaora, Malwa region, asked by Mr. Syed Maqbul Ali Sahab. 12 Jumadi al-Akhir 1310 AH. (1) Zaid married Musammat Zainab on this condition and also wrote a document of settlement to the effect that: for the dower (Mahr) of fifty thousand rupees and two gold coins for which I have taken Zainab in marriage, and in lieu of this dower, I have given two plots of houses, half share each with their four boundaries, to Zainab as dower. And whatever movable or immovable property I produce in the future through the strength of my arms, the wife shall remain the owner of that too in exchange for this dower. And in case of disagreement, all movable property and...

---

1. Durr al-Mukhtar, Book of Sales, Chapter on Invalid Sales, Mujtabai Press, Delhi, 2/22.

जिल्द 17 | फतावा रज़विया

...क्योंकि जीवन उसमें व्याप्त नहीं होता (उस कारण से जो पहले बीत चुका है)। सुअर इन नियमों से अपवाद है; उसकी खाल या हड्डी किसी भी स्थिति में खरीदने, बेचने या किसी भी प्रकार के लाभ के योग्य नहीं है, उसके स्वयं के अपवित्र (नजिस अल-ऐन) होने के कारण। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसाला 66: प्रेषक: मुहम्मद बशीरउद्दीन, छात्र मदरसा इमदाद उल-उलूम, मुहल्ला बांसमंडी, कानपुर। 29 सफर 1330 हिजरी। यदि कोई व्यक्ति जीवित गाय या बकरी आदि की खाल छोड़कर साफ़ मांस खरीदे और ज़बह करने के बाद दस-बारह लोग मिलकर बांटकर खाएं तो इस स्थिति में बिक्री कैसी है? और मांस खाना हलाल है या हराम? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: बिक्री फ़ासिद (अमान्य) है और वह मांस खाना हराम है।

[तालिका सामग्री] इसका कारण स्पष्ट है, यह छत में लगी हुई कड़ी (शहतीर) की तरह है बल्कि उससे भी अधिक सख्त। 'अल-दुर्र' में 'अल-सिराज' के हवाले से कहा गया है कि यदि अनुबंध के बाद ऊन और दूध खरीदार को सौंप भी दिया जाए, तब भी बिक्री वैध नहीं होगी। इसी तरह हर वह चीज़ जिसका जुड़ाव प्राकृतिक है जैसे जानवर की खाल, खजूर की गुठली और तरबूज का बीज, अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसाला 67 से 68: जावरा, मालवा क्षेत्र से, श्रीमान सैयद मक़बूल अली साहब द्वारा पूछा गया। 12 जमादी अल-आखिर 1310 हिजरी। (1) ज़ैद ने मुसम्मात ज़ैनब से इस शर्त पर निकाह किया और एक दस्तावेज़ भी इस आशय का लिख दिया कि: जो ज़ैनब को पचास हज़ार रुपये और दो अशरफ़ी की मेहर के बदले अपने निकाह में लाया हूँ, और इस मेहर के बदले जो दो मकानों के टुकड़े आधे-आधे हिस्से अपनी चारों सीमाओं के साथ ज़ैनब को मेहर में दे दिए हैं। और भविष्य में जो चल और अचल संपत्ति अपने बाहुबल से अर्जित करूँगा, पत्नी इस मेहर के बदले उसकी भी मालकिन रहेगी। और अनबन की स्थिति में सभी चल और...

---

1. दुर्रे मुख्तार, किताबुल बुयू, बाबुल बेइल फासिद, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 2/22।

لان الحیاۃ لاتحلہ (اس وجہ سے جو پہلے گزر چکی ہے کیونکہ حیات اس میں سرایت نہیں کرتی۔ ت) اور ان احکام سے خنزیر مستثنٰی ہے اس کی کھال یا ہڈی کسی حال میں اصلا خرید و فروخت یا کسی قسم کے انتفاع کے قابل نہیں لنجاسۃ عینھا (اس کے نجس عین ہونے کی وجہ سے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۶۶: مرسلہ محمد بشیر الدین طالبعلم مدرسہ امداد العلوم محلہ بانسمنڈی کانپور ۲۹ صفر ۱۳۳۰ھ کوئی شخص زندہ گائے یا بکری وغیرہ کی کھال چھوڑ کر صاف گوشت خریدے ذبح کرنے کے بعد دس بارہ آدمی مل کر تقسیم کرکے کھائیں اس صورت میں بیع کیسی ہے؟ اور گوشت کھانا حلال ہے یا حرام؟ بینوا توجروا

الجواب: بیع فاسد ہے اور وہ کھانا حرام۔

[جدول کا متن] اس کی وجہ ظاہر ہے تو وہ چھت میں لگی ہوئی شہتیر کی مانند ہے بلکہ اس سے بھی سخت تر، در میں فرمایا کہ سراج میں ہے اگر عقد کے بعد اون اور دودھ مشتری کو سونپ بھی دیا تب بھی بیع صحیح نہ ہو گی اور ایسے ہی ہر وہ چیز جس کا اتصال پیدائشی طور پر ہے جیسے حیوان کی کھال، کھجور کی گٹھلی اور تربوز کا بیج، واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۶۷ تا ۶۸: از جاورہ ملک مالوہ مسئولہ جناب سید مقبول علی صاحب ۱۲ جمادی الآخر ۱۳۱۰ھ (۱) مسماۃ زینب سے زید نے اس شرط پر نکاح کیا اور ایک دستاویز کابین نامہ بھی اس مضمون کی لکھ دی کہ جو زینب کو بالعوض دین مہر مبلغ پچاس ہزار روپے اور دو اشرفی کے اپنے نکاح میں لایا ہوں اور بالعوض اس دین مہر جو دو قطعے مکانات نصف نصف حصہ خود مع

حدود اربعہ ہیں زینب کو دین مہر میں دے دیئے اور جو آئندہ جائیداد منقولہ وغیرہ منقولہ میں اپنے قوت بازو سے پیدا کروں گا اس کی مالک بھی عوض اس دین مہر کے منکوحہ رہے گی اور بشرط نا اتفاقی جمیع جائیداد منقولہ و...

---

۱ در مختار کتاب البیوع باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۲۲

Volume 17 (17) Fatawa Razvia

...the wedded wife is the owner of the immovable property. In this property, neither I nor my relatives will have any claim whatsoever. Subsequently, after some time, Zaid acquired other movable and immovable property through his own efforts. He also gave those movable and other properties to Zainab as per the terms of the marriage contract (Kabin Nama) and handed over possession of half. In this situation, can Zainab be considered the owner of all the property or Zaid? And what is given as dower (Mehr) in this manner, is possession mandatory? And what is the ruling if possession is not taken?

(2) After two or four years, one of the houses from the said property, where a tenant used to live, became the property [of Zaid]. Zaid filed a suit in his own name, took possession, and whether he gave it to Zainab or not, another person filed a suit against Zaid and had that house auctioned. Now Zainab is claiming that house, and Zaid admits [the facts]. Can Zainab be the owner of that house in this situation or not?

Answer: (1) Giving something in exchange for dower is Hiba-bil-Awadh (gift for consideration), and in Hiba-bil-Awadh and sale (Bay'), possession is not a condition.

In Ad-Durr al-Mukhtar: "If someone says, 'I have gifted this to you for such and such [amount],' then it is a sale from start to finish." (t)

However, in the marriage contract that Zaid wrote, he gave two plots of houses in exchange for dower and stipulated a condition that whatever he acquires in the future will also become the property of the wife in exchange for dower, and in case of disagreement, she would be the full and complete owner. Both of these conditions are void (Batil). Based on this voidness, the property that Zaid later gave to Zainab did not become Zainab's property, even if possession was given a thousand times. Because that which is built on something void is void, and the void has no legal effect (Al-mabni 'ala al-batil batil wal-batil la hukma lahu). Due to the corrupt condition (Shart-e-Fasid), the sale is corrupt (Bay-e-Fasid). It is obligatory upon Zaid and Zainab to rescind this sale. The houses should be returned to Zaid, and Zaid is responsible for Zainab's dower. This applies as long as those houses are still in Zainab's possession and ownership. If Zainab has already sold, gifted, endowed, bequeathed, or mortgaged them to someone else, then the return of the houses will not take place.

Footnote: 1. Ad-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Hiba, Bab ar-Ruju' fil-Hiba, Matba' Mujtabai Delhi, 2/162.

...गैर-मनकूला (अचल संपत्ति) की मालिक पत्नी है। इस जायदाद में मेरा और मेरे रिश्तेदारों का किसी भी तरह से कोई दावा नहीं होगा। इसके बाद, एक समय के बाद ज़ैद ने अपनी मेहनत से और मनकूला (चल) और गैर-मनकूला (अचल) जायदाद बनाई। उसने निकाहनामे (काबीननामा) की शर्तों के अनुसार वे चल और अन्य जायदादें भी ज़ैनब को देकर आधी का कब्ज़ा दिला दिया। इस स्थिति में, क्या ज़ैनब पूरी जायदाद की मालिक मानी जा सकती है या ज़ैद? और जो चीज़ मेहर (दहेज) में इस तरह दी जाए, क्या उसमें कब्ज़ा ज़रूरी है? और बिना कब्ज़ा क्या हुक्म है?

(2) दो-चार साल बाद, उक्त जायदाद में से एक मकान, जिसमें एक किराएदार रहता था, उसका मालिक बन गया। ज़ैद ने अपने नाम से मुकदमा करके कब्ज़ा ले लिया और ज़ैनब को दिया या नहीं दिया, और किसी अन्य व्यक्ति ने ज़ैद पर मुकदमा करके उस मकान को नीलाम करा दिया। अब ज़ैनब उस मकान की दावेदार है और ज़ैद स्वीकार करता है कि इस स्थिति में ज़ैनब उस मकान की मालिक हो सकती है या नहीं?

उत्तर: (1) मेहर के बदले में कुछ देना 'हिबा-बिल-अवज़' (प्रतिफल के साथ उपहार) है, और हिबा-बिल-अवज़ और बिक्री (बय) में कब्ज़ा शर्त नहीं है।

दुर्रे मुख्तार में है: "अगर किसी ने कहा कि मैंने इतने के बदले तुझे हिबा किया है, तो यह शुरू से अंत तक बिक्री (बय) है।" (त)

लेकिन ज़ैद ने जो निकाहनामा लिखा, उसमें मेहर के बदले मकान के दो टुकड़े दिए हैं और यह शर्त रखी है कि भविष्य में वह जो कुछ भी हासिल करेगा, वह भी मेहर के बदले पत्नी की मिल्कियत होगा और अनबन की स्थिति में वह पूर्ण रूप से मालिक होगी। ये दोनों शर्तें बातिल (अमान्य) हैं। इस बातिलता के आधार पर, ज़ैद ने बाद में जो जायदाद ज़ैनब को दी, वह ज़ैनब की मिल्कियत नहीं हुई, चाहे हज़ार बार कब्ज़ा करा दिया गया हो। क्योंकि 'जो बातिल पर आधारित हो वह बातिल है और बातिल का कोई हुक्म नहीं होता' (अल-मबनी अलल बातिल बातिलुन वल बातिल ला हुक्मा लहू)। 'शर्ते-फ़ासिद' (दोषपूर्ण शर्त) के कारण 'बये-फ़ासिद' (दोषपूर्ण बिक्री) है। ज़ैद और ज़ैनब पर अनिवार्य है कि इस बिक्री को रद्द (फ़स्ख़) करें। मकान ज़ैद को वापस दिए जाएं और ज़ैद ज़ैनब के मेहर का ज़िम्मेदार है। यह तब तक है जब तक वे मकान ज़ैनब के कब्ज़े और मिल्कियत में मौजूद हैं। और

अगर ज़ैनब उन्हें किसी और के हाथ बेच चुकी हो या हिबा, वक्फ़, वसीयत या गिरवी रख चुकी हो, तो अब मकानों की वापसी नहीं होगी।

फुटनोट: 1. दुर्रे मुख्तार, किताबुल हिबा, बाबुल रुजूअ फ़िल हिबा, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 2/162.

पृष्ठ 163 / 715

غیر منقولہ کی مالک منکوحہ ہے اس جائداد میں میرا اور میرے خویش واقارب کا کسی طرح سے دعوی نہ ہوگا بعد ازاں ایک مدت کے زید نے اور جائداد منقولہ و غیر منقولہ اپنے قوت بازو سے پیدا کی وہ بھی جائداد منقولہ وغیرہ منقولہ بموجب شرائط کابین نامہ زینب کو دے کر نصف قبضہ کرا دیا ،اندریں صورت مالک جمیع جائداد کی زینب قرار پا سکتی ہے یا زید ؟ اور جو شے دین مہر میں اس صورت سے دے دی جائے کیا قبضہ لازم ہو گا اور بلا قبضہ ہو تو کیا حکم ہے؟

(۲) بعد دو چار برس کے منجملہ جائداد مذکورہ ایک مکان میں کرایہ دار رہتا تھا وہ مالک بن گیا ،زید نے اپنے نام نالش کر کے قبضہ لیا اور زینب کو دیا یا نہ دیا اور دیگر شخص نے زید پر نالش کر کے اس مکان کو حراج کرایا اب اس مکان کی دعویدار زینب ہوئی اور زید کو اقرار ہے کہ اندریں صورت اس مکان کی مالک زینب ہو سکتی ہے یا نہیں؟

الجواب: (۱) دین مہر کے عوض دینا ہبہ بالعوض ہے اور ہبہ بالعوض اور بیچ میں قبضہ شرط نہیں۔

فی الدر المختار لوقال وھبتك بكذا فھو بیع ابتداءً درمختار میں ہے کہ اگر کسی نے کہا میں نے اتنے کے بدلے تجھے ہبہ کیا ہے تو یہ ابتداءً اور انتہاءً بیع ہے۔ (ت) وانتھاءً -1

مگر یہ کابین نامہ جو زید نے لکھا اس میں دو قطعہ مکان بعوض دین مہر دیئے ہیں اور یہ شرط کی ہے کہ آئندہ جو حاصل کرے وہ بھی بعوض دین مہر ملک زوجہ ہو اور بحال نا اتفاقی تمام و کمال کی مالک ہو ، یہ دونوں شرطیں باطل ہیں، اس باطل کی بناء پر جو بعد کی جائداد زید نے زینب کو دی وہ زینب کی ملک نہ ہوئی اگرچہ ہزار قبضہ کرادیا ہو فان المبنی علی الباطل باطل

والباطل لا حکم لہ (اس لئے کہ جو باطل پر مبنی ہو وہ باطل ہوتا ہے اور باطل کا کوئی حکم نہیں۔ ت) وہ بوجھ شرط فاسد بیع فاسد ہے، زید وزینب پر واجب ہے کہ اس بیع کو فسخ کریں مکان زید کو واپس دئے جائیں مہر زینب کا ذمہ دار زید ہے جبکہ وہ مکان قبضہ وملک زینب میں ہنوز موجود ہیں اور اگر زینب ان کو کسی اور کے ہاتھ بیچ یا ہبہ واوقف یا وصیت یا رہن کر چکی تو اب مکانوں کی واپسی نہ ہو گی۔

حاشیہ: 1 درمختار کتاب الہبہ باب الرجوع فی الہبہ مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۱۶۲

Fatawa Razawiyya Volume 17

However, from the dowry (mahr), only that much will be waived which is equivalent to the market value of that house at market rates. The remaining dowry remains Zaid's responsibility. (2) If that house was part of later acquired property, then it is clear that Zainab was not its owner. Zaid's admission is based on the same condition, and an admission based on a void (baatil) condition is void, as stated in Al-Ashbah and Al-Durr etc. (as it is in Ashbah and Durr etc. - T). And if it was one of those two houses which were given in dower at the time of marriage, then we have already explained that it was a corrupted sale (bay fasid) which was mandatory to be rescinded (feskh), and Zainab renting it out did not prevent rescission.

In Al-Durr al-Mukhtar:	**In Durr al-Mukhtar: If the buyer of a corrupted sale sells the corrupted object to someone other than the seller through a valid and final sale, or gifts it and hands over possession, or makes it a valid endowment (waqf), or pawns it to someone, or makes a will for this corrupted object for someone, or gives it as charity, then in all these mentioned disposals, that corrupted sale will become effective and rescission will be prevented because the rights of the servant (human) have become attached to it. The same rule applies to all verbal disposals except for lease (ijarah) and marriage. (Selected) - (T)**

في الدرالمختاران باعه المشترى فاسدا بيعا صحيحا باتا لغير بائعه او وهبه وسلم ، او وقفه وقفا صحيحا الفاسد في جميع مامرو ا امتنع الفسخ لتعلق حق العبد به وكذا كل تصرف قولي غير اجازة ونكاح -1

In Radd al-Muhtar it is: | 2- لان الاجارة تفسخ بالاعذار ورفع الفساد من الاعذار | Because a lease (ijarah) is rescinded due to valid excuses, and removing corruption is one of those excuses. (T) | | :--- | :--- |

Now that Zaid has established it as his property, filed a claim, and obtained a decree, this has become the rescission of that corrupted sale. The house has returned to Zaid, and Zainab's dowry remains his responsibility. If Zaid gives it to her again based on the previous arrangement, it will be void and useless. Now, even with Zainab's possession, it will not become her property because until that time it was a corrupted sale, and now after rescission, it has become void. Yes, if it is not on that basis, but rather he makes an independent gift (hibah) from himself and gives possession to Zainab, then Zainab will become the owner, provided that half a plot is not undivided (musha'), and Allah knows best.

---

1. Durr al-Mukhtar, Book of Sales, Chapter on Corrupted Sales, Matba' Mujtabai Delhi, 2/28-29.
2. Radd al-Muhtar, Book of Sales, Chapter on Corrupted Sales, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/127.

मगर मेहर में से उतना ही साक़ित (कम) हो जितनी मालियत (कीमत) का वह मकान बाज़ार भाव पर हो, बाक़ी मेहर ज़ैद के ज़िम्मे रहा। (2) अगर वह मकान बाद की जायदाद में था, तब तो ज़ाहिर है कि ज़ैनब उसकी मालकिन नहीं थी। ज़ैद का इक़रार उसी शर्त की बिना पर है और बातिल (अमान्य) की बिना पर जो इक़रार हो वह बातिल है जैसा कि अल-अशबाह और अद्दुर्र वग़ैरह में है। (जैसा कि अशबाह और दुर्र वग़ैरह में है। - त) और अगर वह उन दो मकानों में से था जो निकाह के वक़्त मेहर में दिए गए थे, तो हम बयान कर चुके हैं कि वह बैअ़ फ़ासिद (दूषित बिक्री) थी जो फ़स्ख़ (निरस्त) करना वाजिब था और ज़ैनब का उसे किराये पर देना फ़स्ख़ के लिए रुकावट नहीं था।

दुर्रे मुख़्तार में है:	**दुर्रे मुख़्तार में है: अगर बैअ़ फ़ासिद के ख़रीदार ने फ़ासिद चीज़ को मूल विक्रेता के अलावा किसी और के हाथ सही और पूर्ण बिक्री के साथ बेच दिया, या हिबा (उपहार) करके क़ब्ज़ा दे दिया, या सही वक़्फ़ कर दिया, या उसे किसी के पास गिरवी रख दिया, या किसी के लिए उस चीज़ की वसीयत कर दी, या सदक़ा (दान) कर दिया, तो इन तमाम ज़िक्र किए गए कार्यों से वह बैअ़ फ़ासिद लागू हो जाएगी और फ़स्ख़ करना असंभव हो जाएगा क्योंकि इसमें बंदे का हक़ जुड़ गया है। यही हुक्म तमाम ज़बानी कार्यों का है सिवाय इजारा (किराया) और निकाह के। (मल्तक़ता) - (त)**

في الدرالمختاران باعه
المشترى فاسدا بيعا صحيحا
باتا لغير بائعہ او وهبه
وسلم ، او وقفه وقفا
صحيحا الفاسد في جميع
مامرو ا امتنع الفسخ لتعلق
حق العبد به وكذا كل تصرف
1- قولي غير اجازة ونكاح

रद्दुल मुहतार में है: | 2- لان الاجارة تفسخ بالاعذار ورفع الفساد من الاعذار | क्योंकि इजारा (किराया अनुबंध) उज़्रों (बहाने/कारणों) की वजह से फ़स्ख़ हो जाता है और फ़साद (दोष) को दूर करना भी उज़्रों में से एक उज़्र है। (त) | | :--- | :--- |

अब जबकि ज़ैद ने उसे अपनी मिल्कियत ठहराकर दावा किया और डिक्री पा ली, तो यह उस बैअ़ फ़ासिद का फ़स्ख़ (निरस्त) हो जाना हो गया। मकान ज़ैद को वापस मिल गया और ज़ैनब का मेहर उसके ज़िम्मे रहा। फिर ज़ैद का उसे दोबारा देना अगर पिछली शर्त की बिना पर हो तो वह बातिल और बेकार है। अब ज़ैनब के क़ब्ज़े से भी वह उसकी मिल्कियत नहीं होगी क्योंकि उस वक़्त तक वह बैअ़ फ़ासिद थी और अब फ़स्ख़ होने के बाद बातिल हो गई। हाँ, अगर इस बिना पर न हो बल्कि अपनी तरफ़ से मुस्तक़िल (स्वतंत्र) हिबा करके ज़ैनब को क़ब्ज़ा दे दिया हो, तो ज़ैनब मालकिन हो

गई बशर्ते कि वह आधा हिस्सा मुशाअ़ (अविभाजित) न हो। वल्लाहू तआला आलम (और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है)।

---

1. दुर्रे मुख़्तार, किताबुल बुयूअ़, बाबुल बैअ़िल फ़ासिद, मतबा मुजतबाई देहली, 2/28-29.
2. रद्दुल मुहतार, किताबुल बुयूअ़, बाबुल बैअ़िल फ़ासिद, दार इह्याउत तुरास अल-अरबी बैरुत, 4/127.

مگر مہر میں سے اتنا ہی ساقط ہو جتنے کی مالیت وہ مکان بر نرخ بازار ہوں باقی مہر ذمہ زید رہا، (۲) اگر وہ مکان بعد کی جائداد میں تھا جب تو ظاہر ہے کہ زینب اس کی مالکہ ہی نہی تھی زید کا اقرار اپنے اسی شرط کی بناء پر ہے اور باطل کی بناء پر جو اقرار ہو باطل ہے کما في الاشباہ والدروغیرہما (جیسا کہ اشباہ اور درو وغیرہ میں ہے۔ت) اور اگر وہ ان دونوں مکانوں میں سے تھا جو وقتِ نکاح مہر میں دیئے تو ہم بیان کر چکے کہ وہ بیع فاسد واجب الفسخ تھی اور زینب کا اسے کرایہ پر دینا مانع فسخ تھا۔

در مختار میں ہے اگر بیع فاسد کے مشتری نے مبیع فاسد کو غیر بائع کے ہاتھ بیع صحیح تام کے ساتھ فروخت کردیا یا ہبہ کرکے قبضہ دے دیا یا وقف صحیح کے ساتھ وقف کر دیا یا اسی کو کسی کے پاس رہن رکھ دیا یا کسی کے لئے اس مبیع فاسد کی وصیت کردی یا صدقہ کردیا تو ان تمام تصرفات مذکورہ میں وہ بیع فاسد نافذ ہو جائے گی اور فسخ ممتنع ہوجائے گا بسبب حق عبد کے اس کے ساتھ متعلق ہونے کے، اور یہی حکم ہے تمام تصرفات قولی کا سوائے اجارہ اور نکاح کے۔(ملتقطا) ۔ (ت)

في الدرالمختاران باعه المشترى فاسدا بيعا صحيحا باتا لغير بائعه او وهبه وسلم ، او وقفه وقفا صحيحا الفاسد في جميع مامرو ا امتنع الفسخ لتعلق حق العبد به وكذا كل تصرف قولي غير اجازة ونكاح -1

ردالمحتار میں ہے: | لان الاجارة تفسخ بالاعذار ورفع الفساد من الاعذار -2 | اس لئے کہ اجارہ عذروں کی وجہ سے فسخ ہو جاتا ہے اور فسخ فساد بھی عذروں میں سے ایک عذر ہے۔ (ت) |

| ---: | ---: |

اب کہ زید نے اسے اپنی ملک ٹھہرا کر دعویٰ کیا اور ڈگری پائی، یہ اس بیع فاسد کا فسخ ہوگیا مکان زید کو واپس آگیا اور زینب کا مہر اس پر رہا پھر زید اس اسے دے دینا اگر وہی بربنائے سابق ہو جب تو باطل وبے سود ہے اور اب قبضہ زینب سے بھی ملک نہ ہوگی کہ اس وقت تک بیع فاسد تھی اب بعد فسخ باطل ہوگئی، ہاں اگر اس بناء پر نہ ہو بلکہ اپنی طرف سے ہبہ مستقل کرکے زینب کو قابض کر دیا ہو تو زینب مالک ہوگئی جبکہ وہ نصف قطعہ مشاع نہ ہو، واللہ تعالٰی اعلم۔

---

1 در مختار کتاب البیوع باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۲۹-۲۸ 2 ردالمحتار کتاب البیوع باب البیع الفاسد دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۲۷

Fatawa Razawiya Volume 17

Issue 69: From Sar Nayan, district Bareilly, sent by Amir Ali Sahib Qadri, 2 Rajab 1331 AH. Amr's mosque has a rule that the dry fallen wood of the trees in the mosque is always taken by the potter for his use, and in exchange, he provides pots and pitchers for the mosque's use forever.

Answer: This contract is invalid because it is indefinite (majhool). It is not known how much wood will fall, nor how many pots will be needed. Yes, if it is specified that a certain amount of wood is in exchange for a certain number of pots, then it would be permissible. And Allah Ta'ala knows best.

Issue 70 to 71: Asked by Hafiz Muhammad Amin Sahib from Najibabad town, Bijnor district, Pathan neighborhood, 25 Muharram 1332 AH. (1) What do the scholars of religion say regarding this matter: if a person steals someone's property and wants to sell it, and the person who knows it is stolen still buys it, is it permissible for him to buy it or not? And what is the ruling for a person who unknowingly buys such stolen property? And what is the ruling if it becomes known after purchasing that the property was stolen? (2) A person has been employed in a department for fifteen to twenty years and wants to resign to go for Hajj. Another person wants him not to resign but to request that the other person be appointed in his place and take fifty rupees from him. Is it permissible for the former employee to take this money or not?

Answer: (1) Knowingly buying stolen property is haram (forbidden). In fact, even if it's not definitely known but strongly suspected, it is still haram. For example, if an ignorant person, whose ancestors were also ignorant, brings a scholarly book for sale and claims it as his own, purchasing it is not allowed. If it is neither known nor is there any clear indication, then purchasing is permissible. Later, if it is proven that it is stolen property, then its use is haram; rather, it should be returned to the owner. If the owner is not found, then to his heirs. If they cannot be found either, then to the poor. And Allah Ta'ala knows best. (2) This matter is very doubtful and there are many differences and similar precedents. Caution is better. See Radd al-Muhtar from the beginning of the book of sales (Kitab al-Buyu'). And Allah Ta'ala knows best.

फतावा रजविया जिल्द 17

मसला 69: सर नैयाँ, जिला बरेली से, अमीर अली साहब कादरी द्वारा प्रेषित, 2 रजब 1331 हिजरी। अम्र की मस्जिद में यह नियम है कि मस्जिद के पेड़ों की जो सूखी लकड़ी गिरती है, उसे कुम्हार हमेशा अपने उपयोग में लाता है, और इसके बदले में वह हमेशा के लिए मस्जिद के उपयोग हेतु लोटे और घड़े देता है।

उत्तर: यह अनुबंध अनिश्चित (मझूल) होने के कारण नाजायज है। यह पता नहीं है कि कितनी लकड़ी गिरेगी, और न ही यह पता है कि कितने लोटों की आवश्यकता होगी। हाँ, यदि यह तय हो कि इतनी लकड़ी के बदले इतने लोटे, तो यह जायज होगा। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 70 से 71: हाफिज मुहम्मद अमीन साहब द्वारा पूछा गया, नजीबाबाद कस्बा, बिजनौर जिला, पठान मोहल्ला, 25 मुहर्रम 1332 हिजरी। (1) इस मामले में दीन के उलेमा क्या फरमाते हैं कि यदि कोई व्यक्ति किसी का माल चोरी करके लाया और उसे बेचना चाहा, तो जिस व्यक्ति को यह पता चल चुका है कि यह माल चोरी का है, फिर भी वह उसे खरीदता है, तो उसके लिए वह खरीदना जायज है या नहीं? और जो व्यक्ति अनजाने में ऐसा चोरी का माल खरीद ले, तो क्या हुक्म है? और खरीदने के बाद पता चले कि वह माल चोरी का था, तो क्या हुक्म है? (2) एक व्यक्ति पंद्रह-बीस साल से किसी विभाग में कर्मचारी है और वह इस्तीफा देकर हज पर जाना चाहता है। दूसरा व्यक्ति चाहता है कि तुम इस्तीफा न दो बल्कि आवेदन के माध्यम से अपनी जगह मुझे नियुक्त करवा दो और मुझसे पचास रुपये ले लो। तो यह रुपये लेना पूर्व कर्मचारी के लिए सही है या नहीं?

उत्तर: (1) जानबूझकर चोरी का माल खरीदना हराम है, बल्कि अगर मालूम न हो पर प्रबल संदेह हो तब भी हराम है। उदाहरण के लिए, यदि कोई जाहिल व्यक्ति जिसके पूर्वज भी जाहिल थे, कोई इल्मी (विद्वत्तापूर्ण) किताब बेचने लाए और उसे अपनी मिल्कियत बताए, तो उसे खरीदने की इजाजत नहीं है। और अगर न मालूम हो और न ही कोई स्पष्ट संकेत हो, तो खरीदारी जायज है। फिर अगर साबित हो जाए कि यह चोरी का माल है, तो इसका इस्तेमाल हराम है बल्कि मालिक को दिया जाए, और यदि वह न हो तो उसके वारिसों को, और उनका भी पता न चल सके तो गरीबों को। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (2) यह मसला बहुत संदिग्ध है और इसमें बहुत मतभेद और मिलते-जुलते उदाहरण हैं, और परहेज करना ही बेहतर है। रद अल-मुह्तार में किताब अल-बुयू (बिक्री की किताब) की शुरुआत में देखें। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

مسئلہ ۶۹: از سر نیاں ضلع بریلی مرسلہ امیر علی صاحب قادری ۲ رجب ۱۳۳۱ھ عمرو کی مسجد میں یہ قاعدہ ہے کہ جو درخت مسجد میں ہیں ان کی سوکھی لکڑی گری ہوئی کمہار ہمیشہ خرچ میں لاتا ہے، ہمیشہ کے لئے لوٹے گھڑے کمہار کے خرچ کو دیتا ہے۔

الجواب: یہ عقد بوجہ مجہول ہونے کے ناجائز ہے۔ نہیں معلوم کتنی لکڑی گرے گی، نہیں معلوم کتنے لوٹوں کی حاجت ہوگی، ہاں اگر یوں ہو کہ اتنی لکڑی کے عوض اتنے لوٹے، تو جائز ہو گا، واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۷۰ تا ۷۱: مسئولہ حافظ محمد آمین صاحب از قصبہ نجیب آباد ضلع بجنور محلہ پٹھان ۲۵ محرم ۱۳۳۲ھ (۱) کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ کوئی شخص کسی کا مال چوری کر کے لایا اور اس نے اس مال کو فروخت کرنا چاہا تو جس شخص کو معلوم ہو چکا ہے کہ یہ مال چوری کا ہے پھر بھی اس کو خریدتا ہے تو اس کے لئے وہ خریدنا جائز ہے یا نہیں؟ اور جو شخص لاعلمی میں ایسا مال مسروقہ خرید لے تو کیا حکم ہے؟ اور بعد خرید لینے کے معلوم ہو جائے کہ یہ مال چوری کا تھا جب کیا حکم ہے؟ (۲) ایک شخص پندرہ بیس برس سے کسی محکمہ میں ملازم ہے اور وہ نوکری کا استعفاء دے کر حج بیت اللہ شریف کا جانا ہے دوسرا شخص یہ چاہتا ہے کہ تم استعفاء مت دو بلکہ بذریعہ درخواست بجائے اپنے مجھ کو قائم کر دو اور مجھ سے پچاس روپے لے لو، تو یہ روپیہ لینا سابقہ ملازم کے واسطے درست ہے یا نہیں؟

الجواب: (۱) چوری کا مال دانستہ خریدنا حرام ہے بلکہ اگر معلوم نہ ہو مظنون ہو جب بھی حرام ہے مثلاً کوئی جاہل شخص کو اس کے مورثین بھی جاہل تھے کوئی علمی کتاب بیچنے کو لائے

اور اپنی ملک بتائے اس کے خریدنے کی اجازت نہیں اور اگر نہ معلوم ہے نہ کوئی واضح قرینہ تو خریداری جائز ہے، پھر اگر ثابت ہو جائے کہ یہ چوری کا مال ہے تو اس کا استعمال حرام ہے بلکہ مالک کو دیا جائے اور وہ نہ ہو تو اس کے وارثوں کو، اور ان کا بھی پتہ نہ چل سکے تو فقراء کو، واللہ تعالیٰ اعلم۔ (۲) یہ مسئلہ بہت مشتبہ ہے اور اختلاف کثیر ہیں اور نظائر متشابہ ہیں اور احتراز اولیٰ ہے، انظر ردالمحتار من اول البیوع (رد المحتار میں کتاب البیوع کے شروع میں دیکھئے۔ت) واللہ تعالیٰ اعلم۔

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

Issue 72: From Qasba Nethaur, District Bijnor, Mohalla Sadat, sent by Syed Shahid Hussain, Pension Inspector, 29 Muharram 1332 AH.

Respected Sir! With the utmost respect, I state that I inquired from a Maulana through writing about five issues concerning promissory notes. The response received is sent herewith for your perusal. I also inquired from Maulana Hamid Hussain of Madrasa Islamia Nethaur, who stated that in the book 'Hidaya', under 'Kitab al-Zakat' (Book of Zakat), it is written that money which is in one's possession or has been given to someone as a trust or a loan, and there is hope of receiving it—whether the debtor acknowledges it, is bankrupt, or denies it (provided that in the case of denial, the creditor possesses firm evidence for their loan, such as a credible witness or a written agreement from the debtor)—the Zakat on such a loan is mandatory upon the owner. This is so whether the owner physically takes possession of the said money from the debtor or trustee or not. Now, the submission is that the money in a promissory note is not 'dead' (irrecoverable), but it is certainly beyond control to the extent that the owner cannot obtain it at the time of need. It will return to the owner's possession only when a new buyer appears following a government announcement. No matter how much time passes, this rule is as if shares in a factory or company were sold; if a person buys shares initially and then wants to withdraw their money from the factory or company, they cannot get the money back until a buyer for those shares is found, no matter how long it takes, although the fixed profits continue to be received. Please grant a satisfactory answer out of your benevolence and kindness. A 2-pice stamp is enclosed for the reply. The discussion is only concerning promissory notes; I do not seek a reply regarding savings banks. With the highest respect! Present at this time, Hussein Ahmed offers humble greetings. This Syed Sahib is in great confusion; please satisfy him out of kindness. Finis.

The Answer:

The government never returns the money from a promissory note. If the person sells it upon finding a buyer, they will receive the money from the buyer. In the government records for paying interest, the buyer's name will replace his name. This does not constitute the return of the loan; receiving the loan means receiving it from the government, not from a buyer. Therefore, that loan is certainly 'dead'. And the fact that it is received is through the sale of the debt to someone other than the

debtor, and such a sale is impermissible, invalid, and prohibited. However, when the buyer is empowered to take possession from the debtor, as mentioned in 'Al-Ashbah':

(Arabic) It is not permissible to sell a debt to someone who is not the debtor, except	**Selling a debt to someone other than the debtor is not permissible, but it is permissible when...**

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

मसला 72: क़स्बा नीठौर, ज़िला बिजनौर, मोहल्ला सादात से प्रेषित, सैयद शाहिद हुसैन, इंस्पेक्टर पेंशनर, 29 मुहर्रम 1332 हिजरी।

जनाब आली! निहायत अदब से गुज़ारिश है कि मैंने एक मौलवी साहब से तहरीरी तौर पर प्रॉमिसरी नोट के बारे में 5 मसले पूछे थे। जो जवाब आया, वह आपके अवलोकन के लिए भेज रहा हूँ। मैंने मदरसा इस्लामिया नीठौर के मौलवी हामिद हुसैन साहब से भी पूछा तो उन्होंने फरमाया कि हिदाया 'किताब अल-ज़कात' में लिखा है कि जो रुपया मिल्कियत (स्वामित्व) में हो या किसी के पास अमानत या कर्ज़ के तौर पर हो और उसके मिलने की उम्मीद हो—चाहे कर्ज़दार (मदियून) इक़रार करे, या वह कंगाल (मुफ़लिस) हो या मुनकिर (इनकार करने वाला) हो, लेकिन मुनकिर की सूरत में लेनदार (दाइन) के पास अपने कर्ज़ का पक्का सबूत हो जैसे कोई विश्वसनीय गवाह या कर्ज़दार का इक़रारनामा—तो ऐसे कर्ज़ की ज़कात मालिक पर वाजिब है, चाहे मालिक उस रुपये पर कब्ज़ा करे या न करे। अब अर्ज़ यह है कि प्रॉमिसरी नोट का रुपया 'मुर्दा' (अप्राप्य) नहीं है, लेकिन इतना ज़रूर है कि ज़रूरत के वक्त मालिक को नहीं मिल सकता। यह तभी मिलता है जब सरकार के ऐलान पर कोई नया खरीदार पैदा हो। इस बीच कितना भी समय गुज़रे, यह नियम वैसा ही है जैसे किसी कारखाने या कंपनी में शेयर (हिस्से) बेचे जाते हैं। यदि कोई व्यक्ति शेयर खरीद ले और बाद में अपना रुपया कंपनी से वापस चाहे, तो उसे तब तक रुपया नहीं मिल सकता जब तक उन शेयरों का कोई नया खरीदार न मिल जाए, चाहे कितना भी समय बीत जाए, हालांकि तयशुदा मुनाफ़ा मिलता रहता है। कृपया करम फरमाकर संतोषजनक उत्तर दें। जवाब के लिए 2 पाई का टिकट संलग्न है। चर्चा केवल प्रॉमिसरी नोट के बारे में है, सेविंग बैंक के बारे में उत्तर नहीं चाहिए। बेहद अदब के साथ! वर्तमान में उपस्थित हुसैन अहमद हाथ जोड़कर सलाम पेश करते हैं। यह सैयद साहब बहुत ही सोच-विचार (शश-ओ-पंज) में हैं, कृपया करम करके उन्हें संतुष्ट करें। फ़क़त।

जवाब:

प्रॉमिसरी नोट का रुपया सरकार कभी वापस नहीं देती। खरीदार पैदा होने पर यदि वह इसे बेचेगा, तो खरीदार से रुपया प्राप्त करेगा। सरकारी रिकॉर्ड में ब्याज देने के लिए उसके नाम की जगह खरीदार का नाम दर्ज हो जाएगा। यह कर्ज़ की वापसी नहीं हुई। कर्ज़ की वापसी का मतलब सरकार से मिलना है, न कि खरीदार से। तो वह कर्ज़ निश्चित रूप से 'मुर्दा' है। और जो रुपया मिलता है, वह

गैर-कर्ज़दार (मदियून) के हाथ कर्ज़ बेचने से मिलता है, और वह बिक्री (बै') नाजायज़, फासिद (दूषित) और हराम है। लेकिन जब खरीदार को कर्ज़दार से कब्ज़ा लेने का अधिकार दे दिया जाए, जैसा कि 'अशबाह' में है:

(अरबी) कर्ज़दार के अलावा किसी और को कर्ज़ बेचना जायज़ नहीं है सिवाय

गैर-कर्ज़दार के हाथ कर्ज़ बेचना जायज़ नहीं है लेकिन उस वक्त जायज़ है जब उसको...

مسئلہ ۷۲: از قصبہ نیتھور ضلع بجنور محلہ سادات مرسلہ سید شاہد حسین انسپکٹر پنشنر ۲۹ محرم ۱۳۳۲ھ

جناب عالی! نہایت ادب سے گزارش ہے کہ میں نے ایک مولوی صاحب سے ذریعہ تحریر بابت پرامیسری نوٹ ۵ مسئلے دریافت کئے تو یہ جواب آیا جو ملاحظہ کے لئے ارسال کرتا ہوں اور نیتھور کے مدرسہ اسلامیہ کے حامد حسین مولوی صاحب سے دریافت کیا تو فرمایا کہ ہدایہ کتاب الزکوٰۃ میں تحریر ہے کہ جو روپیہ ملک میں ہو یا کسی کو امانت یا قرض دے رکھا ہو اور اس کے ملنے کی امید ہو چاہے مدیون مقر ہو یا مفلس یا منکر، مگر منکر کی صورت میں داین کے پاس اپنے قرض کی پکی سند ہو مثلاً معتبر گواہ یا مدیون کا اقرار نامہ ہو تو ایسے قرض کی زکوٰۃ مالک کے ذمہ واجب ہے، مالک روپیہ مذکور مدیون یا امانت دار سے لے کر قبضہ کرے یا نہ کرے، اب عرض یہ ہے کہ پرامیسری نوٹ کا روپیہ مردہ نہیں ہے البتہ اس قدر ضرور بے قابو ہے کہ ضرورت کے وقت مالک کو نہیں مل سکتا جب گورنمنٹ کے اعلان پر کوئی جدید خریدار پیدا ہو اس وقت روپیہ مالک کو ملک جائے گا اب اس کے واسطے جس قدر زمانہ گزرے یہ قاعدہ گویا ایسا ہے جیسے کہ کسی کارخانہ یا کمپنی میں حصے فروخت ہوں اور کوئی شخص اول حصہ جات کو خرید لے اب اگر حصہ دار اپنا روپیہ کارخانہ یا کمپنی سے واپس لینا چاہے تو اس کو اس وقت تک روپیہ نہیں مل سکتا جب تک کہ ان حصوں کا خریدار پیدا نہ ہوں خواہ کسی قدر زمانہ گزر جائے البتہ منافع مقررہ ملتا رہے گا۔ براہ کرم وبندہ نوازی کے جواب شافی مرحمت فرمائے ۲ پائی کا ٹکٹ جواب کے لئے ارسال ہے بحث صرف پرامیسری نوٹ کی بابت ہے سیونگ بنک کا

جواب نہیں چاہتا۔ زیادہ حد ادب ! حاضر الوقت حسین احمد دست بستہ سلام عرض کرتا ہے یہ سید صاحب بہت ہی شش و پنج میں مبتلا ہیں ان کی تسلی فرما دیجئے گا از راہ کرم۔ فقط

الجواب:

پرامیسری نوٹ کا روپیہ گورنمنٹ کبھی واپس نہیں دیتی ہے خریدار پیدا ہونے پر اگر یہ بیچ کرے گا تو خریدار سے روپیہ لے گا گورنمنٹ کے یہاں سود دینے کے لئے اس کے نام کی جگہ خریدار کا نام قائم ہوجائے گا، یہ اس قرض کا واپس ملنا نہ ہوا، قرض ملنا تو گورنمنٹ سے ملنا نہ کہ خریدار سے، تو وہ قرض یقینا مردہ ہے، اور یہ کہ ملتا ہے غیر مدیوں کے ہاتھ دین کی بیچ سے ملتا ہے، وہ بیع ناجائز وفاسد و حرام ہے، مگر جبکہ خریدار کو مدیون سے اس کا قبضہ لینے پر مسلط کرے، اشباہ میں ہے:

لا یجوز بیع الدین ممن لیس علیہ الدین الا **غیر مدیون کے ہاتھ دین فروخت کرنا جائز نہیں مگر اس وقت جائز ہے جب اس کو**

Fatawa Razawiyya, Volume 17 (17)

"If he gives him power over the possession."1 | Empower him over possession. (T) And here, gaining control over possession is impossible because a hundred buyers change, but the government will not give that money to anyone; it will keep giving interest. Thus, this money is definitively and by consensus purely forbidden (haram). Selling it is purely forbidden, taking the money is forbidden, and if it has been taken, it is mandatory to return it. Then what possibility of benefit remains from this money? And this is the meaning of a "dead debt," that ownership is established but there is no power to derive benefit. Therefore, the ruling is the same as written in the first fatwa. And Allah Almighty knows best.

Problem 73: From Rampur State, Mohalla Gher Puran Singh, adjacent to the cemetery mosque 12 'A', sent by Muhammad Abdul Qadir, Safar 1332 AH. What is your statement, may Allah Almighty have mercy on you, regarding this issue? (In this matter, what is your instruction? May Allah Almighty have mercy on you. - T) Zaid took a ticket worth nine annas for nine and a half annas and submitted it to the government. Afterwards, the government took one and a quarter rupees from the same Zaid and gave him four more tickets. After that, Zaid sold those four tickets for the same one and a quarter rupees and submitted them back to the government. After submitting the money, the government gave Zaid a cloth worth double that money. Now, is this transaction permissible according to Sharia or not? And is it permissible to pray in this cloth? Explain with proofs and references to books, and you will be rewarded. (T)

The Answer: This scenario is legally void and impermissible according to Sharia. That ticket which is sold to him and which he sells to others is not wealth (mal) at all. Therefore, the pillar of sale, which is the "exchange of wealth for wealth," is not fulfilled here. Its condition is worse than soil; soil is at least useful for something, while this serves no purpose except that a fool first traps his own neck and then searches for four more fools to free him, and each of them must find four more, and this cycle continues or ends with the loss of some fools. Yes, as for the cloth, since it is not given as compensation but as a reward, it is permissible for him in itself, and praying in it is valid2. And Allah Almighty knows best.

Problem 74: Asked by Muhammad Sulaiman, Shahjahanpur. What do the scholars of religion and muftis of the firm Sharia say regarding this issue that in this city, to whatever extent...

1 Al-Ashbah wa an-Nazair, Al-Fann ath-Thani, Idara-tul-Quran wal Uloom al-Islamiyya, Karachi, 1/211. 2 Al-Ashbah wa an-Nazair, Al-Fann ath-Thalith, Idara-tul-Quran wal Uloom al-Islamiyya, Karachi, 2/213.

फ़तावा रजविया, जिल्द 17 (17)

"यदि उसने उसके कब्ज़े पर मुसल्लत किया।"1 | कब्ज़े पर मुसल्लत करे। (त) और यहाँ कब्ज़े पर मुसल्लत करना असंभव है क्योंकि सौ खरीदार बदलेंगे, सरकार वह रुपया किसी को नहीं देगी, ब्याज देती रहेगी। तो यह रुपया निश्चित रूप से और सर्वसम्मति से पूरी तरह हराम है। इसे बेचना हराम है, रुपया लेना हराम है, और यदि ले लिया गया हो तो उसे वापस करना फ़र्ज़ है। फिर इस रुपये से लाभ उठाने की क्या संभावना रह गई? और यही "मरे हुए कर्ज़" का अर्थ है कि स्वामित्व तो हो लेकिन लाभ उठाने की शक्ति न हो। इसलिए, वही हुक्म है जो पहले फतवे में लिखा गया है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 73: रामपुर रियासत, मोहल्ला घेर पूरन सिंह, कब्रिस्तान मस्जिद 12 'अ' के पास से, प्रेषक मुहम्मद अब्दुल कादिर, सफर 1332 हिजरी। इस मसले के बारे में आपका क्या इरशाद है, अल्लाह तआला आप पर रहम फरमाए। (त) ज़ैद ने नौ आने कीमत का एक टिकट साढ़े नौ आने में लेकर सरकार में दाखिल किया। उसके बाद सरकार ने उसी ज़ैद से सवा रुपया लेकर उसे चार और टिकट दिए। इसके बाद ज़ैद ने वही चार टिकट सवा रुपये में बेचकर फिर सरकार में दाखिल किए। रुपया दाखिल करने के बाद सरकार ने ज़ैद को उस रुपये की दुगनी कीमत का एक कपड़ा दे दिया। अब क्या यह मामला शरीयत के मुताबिक जायज़ है या नहीं? और क्या उस कपड़े में नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नहीं? दलीलों और किताबों के हवाले के साथ बयान करें, आपको इसका अज्र मिलेगा। (त)

जवाब: यह सूरत शरीयत के लिहाज़ से बातिल और नाजायज़ है क्योंकि वह टिकट जो उसके हाथ बेचा जाता है और वह दूसरों को बेचता है, वह वास्तव में 'माल' नहीं है। इसलिए खरीद-फरोख्त (बैअ) का रुकन, जो 'माल का माल से तबादला' है, इसमें पूरा नहीं होता। इसकी हालत मिट्टी से भी बदतर है; मिट्टी तो काम भी आती है, जबकि यह किसी काम का नहीं है, सिवाय इसके कि एक बेवकूफ पहले अपना गला फँसाए और फिर उसे छुड़ाने के लिए अपने जैसे चार और बेवकूफों की तलाश करे, और उनमें से हर एक को चार-चार और ढूँढने पड़ें। यह सिलसिला बढ़ता रहे या कुछ बेवकूफों के नुकसान पर खत्म हो जाए। हाँ, वह कपड़ा क्योंकि मुआवज़े (बदले) के तौर पर नहीं बल्कि इनाम के तौर पर दिया जाता है, तो वह अपने आप में उसके लिए जायज़ है और उससे नमाज़ पढ़ना सही है2। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 74: मसऊला (पुछा गया) मुहम्मद सुलैमान, शाहजहाँपुर द्वारा। उलेमा-ए-दीन और मुफ्तीयान-ए-शरा मतीन इस मसले में क्या फरमाते हैं कि इस शहर में जिस कदर उफ़्तादा...

---

1 अल-अशबाह व अन-नज़ाइर, अल-फ़न्नुस-सानी, इदारातुल कुरान वल उलूम अल-इस्लामिया, कराची, 1/211. 2 अल-अशबाह व अन-नज़ाइर, अल-फ़न्नुस-सालिस, इदारातुल कुरान वल उलूम अल-इस्लामिया, कराची, 2/213.

पृष्ठ 167/715

اذا سلطہ علی قبضہ۔1 | قبضہ پر مسلط کرے۔(ت) اور یہاں قبضہ پر مسلط کرنا نا ممکن ہے کہ سو خریدار بدلیں گورنمنٹ وہ روپیہ کسی کو نہ دے گی سود دیتی رہے گی، تو یہ روپیہ قطعاً اجماعاً حرام محض بیچنا حرام روپیہ لینا حرام اور لے لیا ہو تو واپس دینا فرض ہے پھر اس روپیہ سے کون سے انتفاع کا امکان ہوا۔ اور یہی معنی قرض مردہ کے ہوں کہ ملک ہوا اور انتفاع پر قدرت نہ ہو، لہذا حکم وہی ہے جو فتوٰی اول میں لکھا گیا، واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۷۳: از ریاست رامپور محلہ گھیر پورن سنگھ متصل قبرستان مسجد ۱۲ ع مرسلہ محمد عبدالقادر صفر ۱۳۳۲ھ ما قولکم رحمکم اللہ تعالٰی فی ھذہ المسئلۃ (اس مسئلہ کے بارے میں تمہارا کیا ارشاد ہے اللہ تعالٰی تم پر رحم فرمائے۔ت) زید نے نو آنے قیمت کے ایک ٹکٹ نو ۱/۲ آنے سے لے کر سرکار میں داخل کیا بعد ازاں سرکار نے اسی زید سے سوار روپیہ لے کر اس کو چار ٹکٹ اور دے دئے، بعد اس کے زید نے وہی چار ٹکٹ وہی سوار روپیہ بیچ کر پھر سرکار میں داخل کیا، بعد روپیہ داخل کرنے کے سرکار نے اسی روپیہ کے دونی قیمت کا ایک کپڑا زید کو دے دیا اب یہ معاملہ مطابق شرع شریعت کے جائز ہے یا نہیں؟ اور اس کپڑا سے نماز پڑھنا جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا بالدلائل و حوالہ الکتب (دلائل و حوالہ کتب کے ساتھ بیان کرو اجر دئے جاؤ گے۔ت)

الجواب: یہ صورت شرعاً باطل و ناجائز ہے کہ وہ ٹکٹ جو اس کے ہاتھ بیچا جاتا ہے اور یہ دوسروں کے ہاتھ بیچتا ہے اصلاً مال نہیں تو رکن بیع کہ مبادلہ المال بالمال ہے اس میں متحقق نہیں اس کی حالت مٹی سے بھی بدتر ہے مٹی پر بھی کام آتی ہے، اور یہ کسی مصرف کا نہیں سوائے اس کے کہ احمق پہلے اپنا گلا پھانسے پھر اس کے چھڑانے کو اپنے سے چارا حمق اور تلاش

کرے اور ان میں ہر ایک کو چار چار ڈھونڈنا پڑیں اور یہ سلسلہ بڑھتا رہے یا بعض احمقوں کے خسارہ پر ختم ہو جائے، ہاں وہ کپڑا کہ اسے علاوہ معاوضہ نہیں ہوتا بلکہ بطور انعام دیا جاتا ہے تو وہ فی نفسہ اس کے لئے جائز اور اس سے نماز درست ہے2۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۷۴: مسئولہ محمد سلیمان شاہجہان پور کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ اس شہر میں جس قدر افتادہ

---

1 الاشباہ والنظائر الفن الثانی ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۱/ ۲۱۱ 2 الاشباہ والنظائر الفن الثالث ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۲/ ۲۱۳

Fatawa Razawiyya | Volume 17 (17)

Land outside the houses in streets and alleys has been confiscated by the government. The public is prohibited from building houses or walls. Now, if another neighbor buys this occupied land from the government and builds a house, is it permissible or not? Explain and be rewarded.

Answer: If it was unowned, barren land, which is called "Adiy al-Ard" (ancient land) in Shariah and commonly known as "government land", then there is no harm in buying it. And Allah Almighty knows best.

Problem 75: From Udaipur, Mewar, Maharana High School, asked by Wazir Ahmad, Teacher. Is it permissible for a Muslim to sell wood for burning a Hindu corpse?

Answer: There is no harm in selling wood because "sin does not reside in the essence of the thing itself" (meaning the wood itself isn't a sin). However, one should not have the intention of assisting in the burning; one should simply sell their property and take the price. And Allah Almighty knows best.

Problem 76: From the city, Mohalla Saudagaran, asked by Hafiz Moulvi Muhammad Hashmat Ali Sahib, Madrasa Manzar-e-Islam, 15 Safar 1339 AH.

(Arabic Text): To Ala Hazrat, our master and the master of Ahl al-Sunnah wa al-Jama'ah, the Mujaddid of the present century, may his sacred shadow be long. Peace be upon you and the mercy and blessings of Allah. After kissing your holy threshold, what does the pure Hanifi Shariah say regarding this issue: Is the sale of 'Hashish', which is called 'Bhang' in Hindi, permissible?

(Urdu Translation of the above): In the service of Ala Hazrat, our leader and the leader of the Ahl al-Sunnah wa al-Jama'ah, the Mujaddid of the present century, may your sacred shadow be lengthened. Peace be upon you and the mercy and blessings of Allah. After kissing your noble threshold, it is requested to know what the pure Hanafi Shariah says regarding this matter: Is the sale of 'Hashish', which is called 'Bhang' in Hindi, permissible?

Answer:

(Arabic Text): It is permissible for medicinal use. If there is a suspicion that the buyer will use it for intoxication, then selling it to such a person is not lawful.

(Urdu Translation of the above): It is permissible for medicine. And if there is a strong presumption that the person will use it for intoxication, then it is not lawful to sell it to such a person.

Page 168 of 715

मकानों के बाहर गलियों और कूचों की ज़मीन सरकार ने ज़ब्त कर ली है। जनता को मकान या दीवार बनाने से मना कर दिया गया है। अब अगर कोई दूसरा पड़ोसी इस कब्ज़े वाली ज़मीन को सरकार से ख़रीद कर मकान बना ले, तो क्या यह जायज़ है या नहीं? बयान फरमाएं, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: अगर वह बंजर और गैर-मालिकाना ज़मीन थी जिसे शरीयत में "आदी अल-अर्ज़" और वर्तमान में "सरकारी ज़मीन" कहा जाता है, तो उसे खरीदने में कोई हर्ज नहीं है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 75: उदयपुर, मेवाड़, महाराणा हाई स्कूल से वज़ीर अहमद, शिक्षक द्वारा पूछा गया प्रश्न। क्या एक मुसलमान के लिए हिंदू के शव को जलाने के लिए लकड़ी बेचना जायज़ है या नहीं?

उत्तर: लकड़ी बेचने में कोई बुराई नहीं है क्योंकि "बुराई चीज़ की अपनी ज़ात में नहीं होती" (यानी लकड़ी अपने आप में पाप नहीं है)। लेकिन जलाने में सहायता करने की नियत न हो, बल्कि अपना माल बेचे और उसकी कीमत ले ले। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 76: शहर के मोहल्ला सौदागरां से, मदरसा मंज़रे इस्लाम के हाफ़िज़ मौलवी मुहम्मद हशमत अली साहिब द्वारा पूछा गया प्रश्न, 15 सफ़र 1339 हिजरी।

(अरबी पाठ): आला हज़रत, हमारे और अहले सुन्नत व जमाअत के सरदार, वर्तमान सदी के मुजद्दिद की सेवा में, आपका पवित्र साया लंबा हो। आप पर सलामती और अल्लाह की रहमत और बरकत हो। आपकी पवित्र चौखट चूमने के बाद निवेदन है कि इस मसले में शरीअते हनीफिया क्या कहती है: क्या हशीश, जिसे हिंदी में भांग कहा जाता है, की बिक्री जायज़ है?

(उपरोक्त का उर्दू अनुवाद): आला हज़रत की सेवा में, हमारे और अहले सुन्नत व जमाअत के सरदार, वर्तमान सदी के मुजद्दिद, आपका पवित्र साया लंबा हो, आप पर सलाम और अल्लाह की रहमत व बरकत हो। श्रीमान की पवित्र चौखट चूमने के बाद निवेदन है कि शरीअत-ए-मुताहरा हनीफ़िया इस मसले में क्या फ़रमाती है कि क्या हशीश, जिसे हिंदी में भांग कहा जाता है, की बिक्री जायज़ है?

उत्तर:

(अरबी पाठ): दवा के लिए जायज़ है। और यदि यह आशंका हो कि वह इसे नशे के लिए उपयोग करेगा, तो उसे बेचना वैध नहीं है।

(उपरोक्त का उर्दू अनुवाद): दवा के लिए जायज़ है और अगर प्रबल संभावना हो कि वह इसे नशे के लिए इस्तेमाल करेगा तो ऐसे व्यक्ति को बेचना हलाल नहीं है।

पृष्ठ 168/715

زمین مکانات سے باہر گلیوں کوچوں میں ہے سب سرکار نے ضبط کر لی ہے پبلک کو مکان بنانا دیوار بنانی منع کر دیا ہے ، اب اگر دوسرا پڑوسی زمین مقبوضہ کو سرکار سے خرید کر مکان بنالے ، جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: اگر وہ افتادہ زمین غیر مملوکہ تھی جسے شرع میں "عادی الارض" عرفِ حال میں "سرکاری زمین" کہتے ہیں تو خریدنے میں کوئی حرج نہیں ہے، واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۷۵: از اودے پور میواڑ مہارانا ہائی اسکول مسئولہ وزیر احمد مدرس مسلمان کو ہندو مردہ جلانے کے لئے لکڑیاں بیچنا جائز ہے یا نہیں؟

الجواب: لکڑیاں بیچنے میں حرج نہیں لان المعصیۃ لاتقوم بعینھا (کیونکہ معصیت اس کے عین کے ساتھ قائم نہیں ہوتی۔ ت) مگر جلانے میں اعانت کی نیت نہ کرے اپنا ایک مال بیچے اور دام لے واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۷۶: از شہر محلہ سوداگراں مسئولہ حافظ مولوی محمد حشمت علی صاحب مدرسہ منظرِ اسلام ۱۵ صفر ۱۳۳۹ھ

الی اعلیحضرت سیدنا وسید اھل السنت والجماعت | بخدمت جناب اعلیحضرت ، ہمارے اور اہلسنت و جماعت کے مجدد المائۃ الحاضرۃ مدظلھم الاقدس السلام | سردار ، موجودہ صدی کے مجدد ، جناب کا سایہ مقدس دراز ہو، علیکم ورحمۃ اللہ وبرکاتہ بعد لثم عتبتکم القدسیۃ | آپ پر سلام اور اللہ کی رحمت و برکت ہو، جناب والا کی پاکیزہ ماتقول الشریعۃ الحنیفیۃ الحنفاء فی ھذہ المسئلۃ | چوکھٹ کے بوسہ کے بعد گزارش ہے کہ شریعت مطہرہ حنیفیہ ھل یجوز مبایعۃ الحشیش الذی یقال

لہ فی الھندیۃ | اس مسئلہ میں کیا فرماتی ہے کہ کیا حشیش جس کو ہندی میں بھنگ | بھنگ کہا جاتا ہے، کی بیع جائز ہے؟

الجواب:

یجوز للدواء وان ظن انہ یتعاطاہ للتفتیر لایحل | دوا کے لئے جائز ہے اور اگر گمان غالب ہو کہ وہ اس کو نشہ البیع منہ | کے لئے استعمال کرے گا تو ایسے شخص کو بیچنا حلال نہیں۔

Fatawa Rizvia (17) Volume 17

...for the establishment of the sin itself. And Allah knows best. [It is not permissible to sell to such a person because the sin itself is established with it. And Allah knows best. (T)]

Issue 77: From Rampur State 1st Dhu al-Qi'dah 1338 AH What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid sold his property (haqiyat) to his wife for ten thousand rupees and marital rights (huquq-e-zaujiyat) as an absolute sale. The woman has possession of the property, and there is no dispute between the contracting parties. However, a third party, who is an adult and a decree-holder, declares this sale void. The court ruled that a part of the price, i.e., marital rights, cannot be considered as 'Thaman' (price/consideration). Therefore, the sale is void. The question is: can marital rights, when considered as maintenance (nan-nafaqah), be classified as property (mal) or not? Is such a sale void, valid, or irregular (fasid)? And if a sale is made in exchange for two things, one of which cannot be pure (valid consideration), can the sale be valid regarding the remaining part?

Answer: Marital rights that have been set as consideration are property, i.e., dower (Mahr), maintenance (Nafaqah), and clothing (Kiswah). It is stated in 'Durr-ul-Mukhtar': "Khul' (divorce at the instance of the wife) extinguishes every right related to that marriage."[1] [Khul' drops every right that is related to that marriage. (T)]

In 'Radd al-Muhtar' it is stated: "This includes the dower, the fixed maintenance, past maintenance, and likewise clothing."[2] [This ruling includes Mahr, fixed maintenance, past maintenance, and similarly clothing. (T)]

Therefore, there is no doubt in the conclusion of this sale. Then, if the established known rights are meant, the sale is valid. But if it is meant that future maintenance is also absolved in exchange for it, then the sale is irregular (fasid) because "it is a corrupt condition in which there is benefit for one of the contracting parties, hence the sale becomes irregular." [Because this is a corrupt condition which benefits one of the contracting parties, seller or buyer, hence the sale will be irregular. (T)]. Even in an irregular sale, ownership of the buyer is established after possession, although it is an 'unpleasant' (khabeeth) ownership, as all jurists have explicitly stated. The second question does not apply here as marital rights are considered property. And Allah knows best.

[1] Durr-ul-Mukhtar, Book of Divorce, Chapter of Khul', Mujtabai Press Delhi, 1/27 [2] Radd al-Muhtar, Book of Divorce, Chapter of Khul', Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut 2/565

फ़तावा रज़विया (17) जिल्द 17

...गुनाह को खुद कायम करने के लिए। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है। [ऐसे व्यक्ति के हाथ बेचना हलाल नहीं है क्योंकि गुनाह खुद इसके साथ कायम होता है, और अल्लाह ताला बेहतर जानता है। (त)]

मसला 77: रियासत रामपुर से 1 ज़िल-क़ादा 1338 हिजरी दीन के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: ज़ैद ने अपनी हकीकत (संपत्ति) अपनी पत्नी के नाम दस हज़ार रुपये और वैवाहिक अधिकारों के बदले में मुकम्मल तौर पर बेच दी। औरत का संपत्ति पर कब्ज़ा है और अनुबंध करने वालों के बीच कोई विवाद नहीं है। एक तीसरा व्यक्ति, जो वयस्क है और डिक्री धारक है, इस बिक्री को अमान्य घोषित करता है। अदालत ने फैसला सुनाया कि कीमत का एक हिस्सा यानी वैवाहिक अधिकार, 'शमन' (कीमत) होने की क्षमता नहीं रखते, इसलिए बिक्री शून्य है। सवाल यह है कि क्या वैवाहिक अधिकार, भरण-पोषण (नान-नफ़का) मानकर भी संपत्ति हो सकते हैं या नहीं? ऐसी बिक्री शून्य है या सही (वैध) या फ़ासिद (अनियमित)? और अगर कोई बिक्री ऐसी दो चीज़ों के बदले में हो जिनमें से एक जायज़ न हो सके तो क्या शेष भाग के हिसाब से बिक्री सही हो सकती है?

उत्तर: वैवाहिक अधिकार जो कीमत के रूप में निर्धारित किए गए हैं, वे संपत्ति हैं यानी महर, भरण-पोषण और वस्त्र। 'दुर्रे मुख्तार' में है: "खुलअ (विवाह विच्छेद) उस निकाह से संबंधित हर अधिकार को समाप्त कर देता है।"[1] [खुलअ हर ऐसे हक़ को साक़ित (ख़त्म) कर देता है जो उस निकाह से मुतअल्लिक़ (संबंधित) होता है। (त)]

'रद्दुल मुहतार' में है: "इसमें महर, निर्धारित भरण-पोषण, पिछला भरण-पोषण और इसी तरह वस्त्र शामिल हैं।"[2] [यह हुक्म शामिल है महर, नफ़का मुक़र्ररा (निर्धारित भरण-पोषण), नफ़का गुज़श्ता (पिछला भरण-पोषण) और इसी तरह लिबास को। (त)]

तो इस बिक्री के होने में कोई संदेह नहीं है। फिर अगर स्थापित ज्ञात अधिकार अभिप्रेत हैं तो बिक्री सही है। और अगर यह मतलब है कि भविष्य के भरण-पोषण से भी इसके बदले बरी हो जाए, तो बिक्री फ़ासिद (अनियमित) है क्योंकि "यह एक दूषित शर्त है जिसमें अनुबंध करने वाले पक्षों में से एक का लाभ है, इसलिए बिक्री फ़ासिद हो जाती है।" [क्योंकि यह शर्त फ़ासिद है जिसमें अनुबंध करने वालों (बिक्रेता और खरीदार) में से एक का नफ़ा (लाभ) है, लिहाज़ा बिक्री फ़ासिद होगी। (त)] और फ़ासिद बिक्री में भी कब्ज़े के बाद खरीदार का मालिकाना हक़ साबित हो जाता है, हालांकि वह

मिल्क-ए-ख़बीस (अप्रिय स्वामित्व) है जैसा कि सभी फ़क़ीहों (विधिवेत्ताओं) ने स्पष्ट रूप से कहा है। दूसरे सवाल का यहाँ से कोई सरोकार नहीं रहा क्योंकि वैवाहिक अधिकार संपत्ति हैं। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

[1] दुर्रे मुख्तार, किताबुत्तलाक़, बाबुल्-खुलअ, मुतबाई प्रेस दिल्ली, 1/27 [2] रद्दुल मुहतार, किताबुत्तलाक़, बाबुल्-खुलअ, दार एहयाउत्तुर्रास अल-अरबी बेरुत 2/565

لقیام المعصیۃ بہ بعینہ۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ شخص کے ہاتھ بیع کرنا حلال نہیں کیونکہ معصیت بعینہ اس کے ساتھ قائم ہوتی ہے، واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۷۷: از ریاست رامپور یکم ذی القعدہ ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے اپنی حقیت اپنی زوجہ کے نام بعوض دس ہزار روپے اور حقوق زوجیت بیع قطعی کی جائداد پر عورت کا قبضہ ہے اور عاقدین میں کوئی نزاع نہیں شخص ثالث جو بالغ کا ڈگری دار ہے اس بیع کو کالعدم قرار دیتا ہے کچہری سے تجویز ہو جانے پر جزو ثمن یعنی حقوق زوجیت ثمن ہونے کی صلاحیت نہیں رکھتے لہٰذا بیع باطل ہے، سوال یہ ہے کہ حقوق زوجیت نان نفقہ قرار پا کر بھی مال ہو سکتے ہیں یا نہیں؟ ایسی بیع باطل ہے یا صحیح یا فاسد؟ اور اگر کوئی بیع ایسی دو چیزوں کے معاوضہ میں ہو جن میں سے ایک پاک نہ ہو سکتی ہو تو بقیہ جز کے اعتبار سے بیع صحیح ہو سکتی ہے؟

الجواب: حقوق زوجیت کہ ثمن قرار دئے گئے مال ہیں یعنی مہر و نفقہ و کسوت، در مختار میں ہے: یسقط الخلع کل حق متعلق بذلك النکاح۱۔ خلع ہر ایسے حق کو ساقط کر دیتا ہے جو اس نکاح سے متعلق ہوتا ہے۔ (ت)

رد المحتار میں ہے: شمل المھر والنفقۃ المفروضۃ والماضیۃ والکسوۃ کذلک۲۔ یہ حکم شامل ہے مہر، نفقہ مقررہ، نفقہ گزشتہ اور اسی طرح لباس کو۔ (ت)

تو اس بیع کے انعقاد میں شک نہیں پھر اگر حقوق ثابتہ معلومہ ہیں تو بیع صحیح ہے اور اگر یہ مراد ہو کہ آئندہ نفقہ سے بھی اس کے عوض برائت ہو تو بیع فاسد ہے لانہ شرط فاسد فیہ نفع احد

العاقدین فیفسد البیع (کیونکہ یہ شرط فاسد ہے جس میں متعاقدین بائع و مشتری میں سے ایک کا نفع ہے لہٰذا بیع فاسد ہو گی ۔ ت) اور بیع فاسد میں بھی بعد قبضہ ملک مشتری ثابت ہو جاتی ہے اگرچہ ملک خبیث ہے کما نصوا علیہ قاطبۃ (جیسا کہ اس پر تمام فقہاء نے نص کی ہے۔ ت) دوسرے سوال کو یہاں سے تعلق نہ رہا کہ حقوق زوجیت مال ہیں، واللہ تعالٰی اعلم۔

۱ در مختار کتاب الطلاق باب الخلع مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۲۷ ۲ رد المحتار کتاب الطلاق باب الخلع دار احیاء التراث العربی بیروت ۵۶۵/۲

Fatawa Razawiya (Volume 17)

Problem 78: From Dhaman Gaon, District Amravati, Berar, through Haji Muhammad Usman Timber Merchant, asked by Zia-ud-Din, 11 Ramadan 1339 AH. What do the scholars of religion say about two people making a deal, for example, one buys a type of wood from the other? At that time, the price of this wood is three rupees per piece. Now, a condition is set between them that on a certain date there should be several hundred pieces of this type of wood. If the seller does not provide the wood at this fixed price, then I will take money according to the market rate at that time, whether it is expensive or cheap. The seller also agrees and accepts, and takes the full payment for the wood in advance. What is the ruling of pure Shariah on this sale? Explain and be rewarded.

The Answer: This sale is prohibited because the condition of taking money according to the current market rate is a corrupt condition (shart-e-fasid) due to uncertainty (jahalat). A sale with a corrupt condition becomes a corrupt sale (bay' fasid). A corrupt sale is prohibited and is like usury (riba), as mentioned in Al-Durr al-Mukhtar etc. (as it is in Durr-e-Mukhtar. T) And Allah Almighty knows best.

Problem 79: From Chowk Lucknow, Madrasa Furqania, sent by Hafiz Sheikh Ikramuddin Razvi, 27 Jumada al-Ula 1336 AH. What do the scholars of religion say regarding the validity of the sale of opium and hemp (bhang)? (T)

The Answer: Validity is one thing and permissibility in the sense of 'Halal' is another. Although these items (opium and hemp) are prohibited to the extent of intoxication, unlike wine and pork, they have not lost their status as 'valued property' (mutaqawwam). When a sale involves valued property that is deliverable, it is valid even if it is prohibited. Therefore, validity here is absolute. If they are intended for external medical treatment, then permissibility in the sense of 'Halal' will also apply. But if intended for sin, it is not permissible. Allah Almighty says: "And do not cooperate in sin and transgression." (1) - And Allah [knows best].

Validity is one thing and permissibility in the sense of 'Halal' is another thing. The aforementioned items, namely opium and bhang, when they reach the level of intoxication, although they are prohibited, they do not fall out of the category of 'mutaqawwam' (valued property), just as wine and pork fall out of the category of being 'mutaqawwam'. So, if a sale involves 'mutaqawwam' property that is deliverable, it is valid even if it is prohibited. Therefore, validity in them is absolute.

And if external medical treatment is desired through them, then there will also be permissibility in the sense of 'Halal', and if it is for sin, then their [use is not allowed]...

(1) The Holy Quran 5/2 Page 170 of 715

फतावा रज़विया (खंड 17)

मसाला 78: धामन गाँव, जिला अमरावती, बरार से, हाजी मोहम्मद उस्मान टिम्बर मर्चेंट के माध्यम से, ज़िया-उद-दीन द्वारा पूछा गया, 11 रमज़ान 1339 हिजरी। धर्म के विद्वान क्या कहते हैं कि दो व्यक्ति आपस में सौदा करते हैं, उदाहरण के लिए, एक दूसरे से एक प्रकार की लकड़ी खरीदता है। उस समय उस लकड़ी की कीमत तीन रुपये प्रति नग है। अब दोनों के बीच यह शर्त तय हुई है कि फलां तारीख को इस प्रकार की लकड़ी के कई सौ नग होने चाहिए। यदि वह इस निश्चित मूल्य पर लकड़ी नहीं देगा, तो मैं उस समय के बाजार भाव के अनुसार पैसा ले लूंगा, चाहे वह महंगा हो या सस्ता। बेचने वाला भी राजी होकर स्वीकार कर लेता है और लकड़ी के पूरे दाम पहले ही ले लेता है। इस बिक्री (बय) पर शरीयत का क्या हुक्म है? बयान करें और पुण्य पायें।

अल-जवाब: यह बिक्री हराम है क्योंकि समय के बाजार भाव के अनुसार पैसा लेने की शर्त 'जहालत' (अनिश्चितता) के कारण 'शर्ते फासिद' (दूषित शर्त) है। और दूषित शर्त से बिक्री दूषित (फासिद) हो जाती है। और बय फासिद हराम है और सूद (रिबा) के समान है, जैसा कि अल-दुर्रुल मुख्तार आदि में है। (जैसा कि दुर्रे मुख्तार में है। त) और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसाला 79: चौक लखनऊ, मदरसा फुरकानिया से, हाफिज शेख इकराम-उद-दीन रज़वी द्वारा प्रेषित, 27 जमादी-उल-उला 1336 हिजरी। अफीम और भांग की बिक्री की वैधता (सिहत) के बारे में धर्म के विद्वान क्या कहते हैं? (त)

अल-जवाब: वैधता एक चीज़ है और हलाल होने के अर्थ में अनुमति (जवाज़) दूसरी चीज़ है। यद्यपि ये चीजें (अफीम और भांग) नशे की हद तक पहुँचने पर हराम हैं, लेकिन शराब और सूअर के मांस की तरह ये 'मुतक्व्वम' (कीमती संपत्ति) होने से बाहर नहीं होतीं। जब बिक्री ऐसी कीमती संपत्ति पर हो जिसकी डिलीवरी संभव हो, तो वह सही होती है भले ही वह हराम हो। इसलिए, यहाँ वैधता पूर्ण है। और यदि शरीर के बाहरी हिस्से के उपचार के लिए इनका उपयोग वांछित है, तो हलाल होने के अर्थ में अनुमति भी होगी। और यदि पाप (गुनाह) के लिए हो तो जायज़ नहीं है। अल्लाह तआला का फरमान है: "और पाप और ज़्यादती में एक-दूसरे की मदद न करो।" (1) - और अल्लाह बेहतर जानता है।

वैधता और चीज़ है और हलाल होने के अर्थ में अनुमति दूसरी चीज़ है, उपरोक्त वस्तुएँ यानी अफीम और भांग जब नशे के स्तर तक पहुँच जाएँ तो यद्यपि वे हराम हैं लेकिन वे 'मुतक्व्वम' (मूल्यवान

संपत्ति) होने से बाहर नहीं होतीं, जैसे शराब और सूअर का मांस मुतक्व्वम होने से बाहर हो जाते हैं। तो यदि बिक्री ऐसी मुतक्व्वम संपत्ति पर हो जिसकी डिलीवरी संभव हो, तो वह सही होती है चाहे वह हराम हो। इसलिए इनमें वैधता निरपेक्ष (एब्सोल्यूट) है। और यदि इनसे बाहरी उपचार वांछित हो तो हलाल के अर्थ में अनुमति भी होगी और यदि पाप के लिए हो तो उनकी...

(1) अल-कुरान अल-करीम 5/2 पृष्ठ 170 / 715

مسئلہ ۷۸: ازدھا من گاؤں ضلع امراوتی برار معرفت حاجی محمد عثمان ٹمبر مرچنٹ مسئولہ ضیاء الدین ۱۱ رمضان ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین کہ دو شخص آپس میں سودا کرتے ہیں مثلاً ایک دوسرے سے ایک قسم کی لکڑی خریدتا ہے کہ اس وقت اس لکڑی کی قیمت فی عدد تین روپے ہے، اب دونوں میں یہ شرط ٹھہری ہے کہ فلاں تاریخ اس قسم کی لکڑی کئی سو عدد ہونا اگر اس قیمت معین پر لکڑی نہ دے گا تو اس وقت کے بھاؤ کے موافق روپیہ لے لوں گا مہنگا ہو یا سستہ ، اور بیچنے والا بھی راضی ہو کر قبول کرلیتا ہے اور لکڑی کے سب دام پہلے سے لیتا ہے اس بیع پر شرطِ مطہر کا کیا حکم ہے؟ بینواتوجروا الجواب: یہ بیع حرام ہے کہ نرخ وقت کے حساب سے روپیہ لے لینے کی شرط بوجہ جہالت شرط فاسد ہے اور شرطِ فاسد سے بیع فاسد ہوتی ہے اور بیع فاسد حرام و مثلِ ربو ہے کما فی الدرالمختار وغیرہ (جیسا کہ در مختار میں ہے۔ت) واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۷۹: از چوک لکھنؤ، مدرسہ فرقانیہ مرسلہ حافظ شیخ اکرام الدین رضوی ۲۷ جمادی الاولٰی ۱۳۳۶ھ چہ می فرمایند علمائے دین در صحت بیع افیون و بھنگ۔ کیا فرماتے ہیں علمائے دین افیون اور بھنگ کی صحت کے بارے میں؟ (ت) الجواب: صحت چیزے دیگر ست و جواز بمعنی حل دیگر اینا اگرچہ تا حد سکر حرام است فاما ہمچو خمر و خنزیر از تقوم بر نیفتادہ است و چوں بیع بر مال متقوم مقدور التسلیم وارد شود صحیح بود گو حرام باشد پس صحت در اینجا مطلق ست و گربرائے تداوی از بیرون بدن می خواھد میخوابد میخواھد حل نیز باشد و گربرائے معصیت میخواھد روانیست قال تعالٰی "وَلَا تَعَاوَنُوا عَلَى الْإِثْمِ وَالْعُدْوَانِ" ۱- واللہ صحت اور چیز ہے اور جواز بمعنی حل دوسری چیز ، مذکورہ اشیاء یعنی افیون اور بھنگ جب نشہ کی حد تک پہنچ جائیں تو اگرچہ

حرام ہیں مگر متقوم ہونے سے خارج نہیں ہوتیں، جیسے شراب اور خنزیر متقوم ہونے سے خارج ہوتے ہیں تو بیع مالِ متقوم مقدور التسلیم پر وارد ہو تو صحیح ہوتی ہے اگرچہ حرام ہو لہٰذا صحت تو ان میں مطلق ہے اور اگر بیرون بدن ان میں سے علاج معالجہ مطلوب ہو تو جواز بمعنی حل بھی ہوگا اور اگر معصیت کے لئے ان کی

Volume 17 Fatawa Razawiyya

If the sale is for a desired item, it is not permissible. Allah Almighty has said: "Do not cooperate in sin and transgression." And Allah Almighty knows best. (T)

Almighty knows best.

Problem 80: From District Salempur, village Sugo, post office Sugo, Maulvi Muhammad Hayat, Sunday, 16 Dhu al-Hijjah 1337 AH. What do the scholars of religion and muftis of the firm Sharia say regarding this issue: If a halal animal dies naturally, is it permissible for a Muslim to sell its meat as goat meat to fulfill their needs or not?

The Answer: An animal that becomes carrion, i.e., dies without Islamic slaughter, it is haram (forbidden) to sell it and its proceeds are also haram. Allah Almighty knows best.

Problem 81: Asked by Abdul Rahim and Khuda Bakhsh, Bareilly, Mohalla Azam Nagar, 15 Jumada al-Awwal 1337 AH. What do the scholars of religion and muftis of the firm Sharia say regarding this issue: A graveyard was under Hindu possession for a long time. The father of Hakim Mazharul Islam, through the efforts of the local people and legal proceedings, retrieved it from the Hindus. After the death of Mazharul Islam, Rahim Bakhsh Behishti purchased it at a very low price from Mazharul Islam's wife and had a sale deed written up claiming it as ancestral land. None of the local residents were aware of this. Rahim Bakhsh knew it was a graveyard but bought it with the intention of profit. Is the buying and selling of this graveyard permissible or forbidden (haram)? Should the local people reclaim this graveyard from Rahim Bakhsh by paying him or without payment? If they do not reclaim it, is there any religious accountability or punishment? Should Rahim Bakhsh take the original price paid, the price mentioned in the deed, or more? If they pay the price, will there be religious accountability? Please clarify and be rewarded.

The Answer: It is obligatory upon Rahim Bakhsh to immediately vacate the graveyard without demanding any price. If he does not, his punishment on the Day of Judgment will be severe: he will be tasked with digging that piece of land down to the seven depths of the earth, and then mountains weighing millions of maunds will be placed as yokes around his neck. If he takes even a single penny for it, it will be the fire of Hell for him. It is obligatory upon the local residents to use every permissible means to free the graveyard from his oppressive possession without payment. If they are

forced and it cannot be freed without payment, they may pay, but accepting that payment will be like consuming pork for him. Whether he takes the original price, the price in the deed, less or more—it is absolutely forbidden (haram) in every way. However, the price he paid to Mazharul Islam's wife is absolutely forbidden for that woman. She must return it to Rahim Bakhsh. But Rahim Bakhsh cannot withhold the graveyard pending this return; he must release it immediately without charge, whether he gets the money back from the woman or...

जिल्द 17 फतावा रज़विया

यदि बिक्री वांछित वस्तु के लिए है, तो यह जायज़ नहीं है। अल्लाह तआला ने फरमाया: "पाप और ज़ुल्म में एक-दूसरे का सहयोग मत करो।" और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

तआला आलम।

मसला 80: ज़िला सलेमपुर, गाँव सुगो, डाकखाना सुगो से, मौलवी मुहम्मद हयात, रविवार, 16 ज़िल-हिज्जा 1337 हिजरी। दीन के उलमा और शरीयत के मुफ्ती इस मसले में क्या फरमाते हैं कि जो हलाल जानवर (प्राकृतिक मौत) मर जाए, क्या किसी मुसलमान के लिए उसे बकरी का मांस बनाकर अपनी ज़रूरत पूरी करना जायज़ है या नहीं?

अल-जवाब (उत्तर): जो जानवर मुर्दार हो गया, यानी बिना शरई ज़बह के मर गया, उसे बेचना हराम है और उसकी कीमत भी हराम है। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 81: सायल अब्दुल रहीम और खुदा बख्श, बरेली मोहल्ला आज़म नगर, 15 जमादी-उल-अव्वल 1337 हिजरी। दीन के उलमा और शरीयत के मुफ्ती इस मसले में क्या फरमाते हैं कि एक कब्रिस्तान जो लंबे समय से हिंदुओं के कब्जे में था, हकीम मज़हरुल इस्लाम के पिता ने मोहल्ले वालों की कोशिश से कचहरी (न्यायालय) के ज़रिए हिंदुओं से वापस लिया। मज़हरुल इस्लाम की मृत्यु के बाद, रहीम बख्श बहिश्ती ने उसे मज़हरुल इस्लाम की पत्नी से बहुत कम कीमत पर खरीद लिया और उसे पैतृक भूमि बताकर बैनामा (बिक्री विलेख) लिखवा लिया। मोहल्ले के किसी व्यक्ति को पता भी न चला। रहीम बख्श जानता था कि यह कब्रिस्तान है लेकिन मुनाफे के ख्याल से खरीद लिया। क्या कब्रिस्तान की यह खरीद-फरोख्त जायज़ है या हराम? और क्या मोहल्ले वालों को यह कब्रिस्तान रहीम बख्श से कीमत देकर छुड़ाना चाहिए या बिना कीमत के? और अगर वे इसे नहीं छुड़ाते हैं, तो क्या शरीयत के अनुसार कोई जवाबदेही या पकड़ है या नहीं? और रहीम बख्श को असली कीमत लेनी चाहिए या वह जो बैनामा में लिखी है या उससे अधिक? और अगर वे कीमत लेते हैं, तो क्या शरई मुआख़ज़ा (जवाबदेही) होगी या नहीं? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

अल-जवाब (उत्तर): रहीम बख्श पर फ़र्ज़ है कि वह कब्रिस्तान को तुरंत बिना किसी कीमत के छोड़ दे। यदि वह नहीं छोड़ता है, तो कयामत के दिन उसकी सज़ा यह है कि उसे कष्ट दिया जाएगा कि वह ज़मीन के उस टुकड़े को सातों तबकों (स्तरों) तक खोदे और फिर करोड़ों-करोड़ मन वज़नी पहाड़ उसके गले में तौक (बेड़ी) के रूप में डाल दिए जाएंगे। इस पर यदि वह एक कौड़ी भी कीमत

लेगा, तो उसके लिए जहन्नुम (नरक) की आग है। मोहल्ले वालों पर फ़र्ज़ है कि हर जायज़ कोशिश से कब्रिस्तान को उसके ज़ुल्माना कब्जे से बिना कीमत के छुड़ाएं। यदि वे मजबूर हों और बिना कीमत के न छूट सकें तो वे कीमत दे सकते हैं, लेकिन वह कीमत लेना उसके लिए सूअर (के मांस) के समान होगा। चाहे वह असली कीमत ले या बैनामा वाली, कम हो या ज़्यादा, हर तरह से यह कतई हराम है। हाँ, उसने जो कीमत मज़हरुल इस्लाम की पत्नी को दी, वह उस औरत के लिए कतई हराम है। वह उसे रहीम बख्श को वापस कर दे। लेकिन रहीम बख्श उस वापसी के इंतज़ार में कब्रिस्तान को रोक नहीं सकता; उसे तुरंत बिना किसी कीमत के उसे छोड़ देना चाहिए, चाहे उसे औरत से पैसे वापस मिलें या...

पेज 171 का 715

بیچ مطلوب ہو تو جائز نہیں۔ اللہ تعالٰی نے فرمایا گناہ اور ظلم پر تعاون مت کرو۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

(ت)

تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۸۰: از ضلع سلیمپور موضع سگوڑاکخانہ سگو، مولوی محمد حیات بروز یکشنبہ ۱۶ ذی الحجہ ۱۳۳۷ھ علمائے دین و مفتیانِ شرع متین کیا فرماتے ہیں اس مسئلہ میں جو کہ جانور حلال مر جائے اس کو مسلمان بکری کرکے اپنی ضرورت پوری کرنی جائز ہے یا نہیں؟

الجواب: جو جانور مردار ہو گیا بغیر ذبح شرعی کے مر گیا اس کا بیچنا حرام ہے اور اس کے دام حرام واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۸۱: مسئولہ عبدالرحیم وخدا بخش بریلی محلہ اعظم نگر ۱۵ جمادی الاول ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ ایک قبرستان جو ایک مدت سے ہندوؤں کے قبضے میں تھا حکیم مظاہر الاسلام کے والد نے اس کو بہ کوشش اہل محلہ کچہری کے ذریعہ سے ہندوؤں سے واپس لیا بعد مرگ مظاہر الاسلام رحیم بخش بہشتی نے بہت کم قیمت کو زوجہ مظاہر الاسلام سے خرید لیا اور ایک بیعنامہ موروثی زمین قرار دے کر لکھوا لیا کسی اہل محلہ کو معلوم بھی نہ ہوا رحیم بخش جانتا تھا کہ قبرستان ہے مگر نفع کے خیال سے خرید لیا، آیا یہ خرید و فروخت قبرستان جائز ہے یا حرام؟ اور اہل محلہ اس قبرستان کو رحیم بخش کے ہاتھ سے قیمت دے کر چھڑائیں یا بغیر قیمت، اور اگر نہ چھڑائیں تو شرعی مواخذہ و پکڑ ہے یا نہیں؟

اور رحیم بخش کو اصلی قیمت لینا چاہئے یا جو بیعنامہ میں لکھی ہے یا زیادہ، اور اگر قیمت لیں تو مواخذہ شرعی ہوگا یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: رحیم بخش پر فرض ہے کہ قبرستان کو فوراً بلا قیمت چھوڑ دے، اگر نہ چھوڑے گا تو روزِ قیامت اس کا عذاب یہ ہے کہ اسے تکلیف دی جائے گی کہ زمین کا اتنا ٹکڑا ساتوں طبقوں تک کھودے اور پھر وہ کروڑہا کروڑ من پہاڑ اس کے گلہ میں طوق ڈالے جائیں، اس پر اگر ایک کوڑی قیمت لے گا تو اس کے لئے جہنم کی آگ ہے، اہل محلہ پر فرض ہے کہ ہر جائز کوشش سے قبرستان کو بلا قیمت اس کے قبضۂ ظلم سے چھڑائیں اگر مجبور ہوں اور بے قیمت نہ چھوٹ سکے تو یہ قیمت دے سکتے ہیں مگر اس کا لینا اسے سور کی مثل ہوگا اور خواہ اصلی لے یا بیعنامہ کی، کم یا زیادہ ہر طرح حرام قطعی ہے، ہاں اس نے جو قیمت زوجہ مظاہر الاسلام کو دی وہ اس عورت پر حرام قطعی ہے، وہ رحیم بخش کو واپس دے مگر رحیم بخش اس کی واپسی پر قبرستان کو روک نہیں سکتا اسے فوراً بلا قیمت واگذاشت کردے خواہ اسے عورت سے واپس ملے یا

Fatawa Rizvia (Volume 17)

...not found. And Allah Almighty knows best.

Problem 82 to 84: From Surat, Mohalla Syedwara, Syed Abdul Qadir Syed Hasan Waiz, Saturday, 6 Safar al-Muzaffar 1324 AH.

What do the scholars of religion and muftis of the firm Sharia say about this matter: In a town, Muslims were divided into two factions. Therefore, the people of the said town took two or three persons from Surat city. They gathered both factions in one place, and after identifying whose fault it was, asked them to seek forgiveness from the opposing faction. So, they sought forgiveness. Afterwards, the persons who had come from Surat ordered sweets with their own money and distributed them in the gathering. One person among them did not take those sweets and said, "You are brokers for selling goats, so water, food, and sweets from your house are forbidden (haram) in all four schools of thought (Madhhab)." Is the person who said this a sinner or not?

(1) In Surat, people send their goats to agents (wakils) on the condition that "you sell it and pay us the full price; profit and loss are the responsibility of the agent, and take two rupees percent as commission." Is this correct or not? (2) If a Muslim has such income, is it correct to eat at their house or not? (3) What is the ruling for someone who gives a fatwa without being educated, saying it's forbidden in all four schools of thought?

The Answer: (1) From this statement, it is understood that those people fix a certain price, saying "send us this much money whether you sell for less or more, and take two percent of that price as your commission." If this is the case, then undoubtedly it is impermissible for both parties, the principals (muwakkils) as well as the agents (wakils). In such a situation, that person's objection was not misplaced, although he used excessive words. And Allah Almighty knows best. (2) There is much detail in this, and the summary is what our Master Imam Muhammad (may Allah be pleased with him) said:

[Arabic Box Text]: We adopt it as long as we do not know a specific thing to be forbidden (haram) itself. —Al-Hindiya from Al-Dhakhira. [Urdu Translation in Box]: We

take it as long as the prohibition of a specific thing is not known to us. —Hindiya with reference to Dhakhira. (T)

1. Fatawa Hindiya, Kitab al-Karahiya, Chapter 2, Nurani Kutub Khana Peshawar, 5 / 342.

फतावा रज़विया (खण्ड 17)

...नहीं मिला। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 82 से 84: सूरत, मोहल्ला सैयदवाड़ा से, सैयद अब्दुल कादिर सैयद हसन वाइज़, शनिवार, 6 सफर अल-मुजफ्फर 1324 हिजरी।

दीन के उलेमा और मज़बूत शरीअत के मुफ्ती इस मसले में क्या कहते हैं: एक कस्बे में मुसलमानों के दो गुट हो गए थे। उस पर उक्त कस्बे के लोग सूरत शहर से दो-तीन व्यक्तियों को ले गए। उन्होंने दोनों गुटों को एक जगह इकट्ठा किया और जिनका कसूर पाया गया उनसे कहा कि तुम विरोधी पक्ष से अपना कसूर माफ करवाओ, तो उन्होंने माफी मांगी। बाद में जो लोग सूरत से गए थे, उन्होंने अपने पैसों से मिठाई मंगवाई और सभा में बांटी। उनमें से एक व्यक्ति ने वह मिठाई नहीं ली और कहा कि तुम बकरी बेचने के दलाल हो, इसलिए तुम्हारे घर का पानी, खाना और मिठाई चारों मज़हबों में हराम है। तो क्या ऐसा कहने वाला गुनहगार है या नहीं?

(1) सूरत में लोग अपनी बकरी वकीलों (एजेंटों) को इस शर्त पर भेजते हैं कि "तुम इसे बेचो और इसकी पूरी कीमत हमें अदा कर दो, लाभ-हानि वकील की होगी और दलाली का दो रुपया प्रति सैकड़ा ले लो।" क्या यह सही है या नहीं? (2) यदि किसी मुसलमान की ऐसी कमाई हो, तो उसके घर का खाना खाना सही है या नहीं? (3) उस व्यक्ति के लिए क्या हुक्म है जो बिना पढ़े फतवा दे दे कि चारों मज़हबों में हराम है?

उत्तर: (1) इस इबारत (कथन) से यह समझ आता है कि वे लोग एक निश्चित कीमत तय कर देते हैं कि "हमें इतने पैसे भेज देना चाहे तुम कम में बेचो या ज़्यादा में, और उन पैसों में से दो रुपया प्रति सैकड़ा अपनी दलाली का ले लो।" अगर यही स्थिति है, तो निस्संदेह यह दोनों पक्षों के लिए नाजायज़ है—मोवक्किलों (मालिकों) के लिए भी और वकीलों (एजेंटों) के लिए भी। ऐसी स्थिति में उस व्यक्ति का एतराज़ (आपत्ति) गलत नहीं था, भले ही उसने शब्द बढ़ा-चढ़ा कर कहे। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (2) इसमें बहुत विस्तार है और संक्षेप में वह है जो सैय्यदना इमाम मुहम्मद (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) ने फरमाया:

[अरबी बॉक्स पाठ]: हम इसे तब तक अपनाते हैं जब तक हमें किसी चीज़ के विशेष रूप से हराम होने का पता न चले। —अल-हिन्दिया, अज़-ज़ख़ीरा। [बॉक्स में उर्दू अनुवाद]: हम उसी को लेते हैं

जब तक कि किसी निश्चित चीज़ का हराम होना हमें मालूम न हो जाए। —हिन्दिया, ज़ख़ीरा के हवाले से। (त)

1. फतावा हिन्दिया, किताब अल-कराहिया, अध्याय 2, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 5/342।

पृष्ठ 172/715

نہ ملے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۸۲ تا ۸۴ : از سورت محلہ سید واڑہ سید عبدالقادر سید حسن واعظ بروز شنبہ بتاریخ ۶ صفر المظفر ۱۳۲۴ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ ایک قصبہ مسلمانوں میں دو فریق ہو گئے تھے اس پر سے شہر سورت میں سے دو تین شخص کو مذکورہ قصبہ والے لے گئے اور انھوں نے دونوں کو ایک جگہ جمع کیا اور جس کا قصور پایا ان سے کہا کہ تم مقابل فریق سے اپنا قصور معاف کراؤ، تو انھوں نے مقابل فریق سے قصور کی معافی چاہی، بعد میں جو شخص سورت گئے تھے انھوں نے اپنے پیسے سے شیرینی منگوائی اور مجلس میں تقسیم کردی اس میں سے ایک شخص نے وہ شیرینی نہ لی اور کہا کہ تم بکری فروخت کرنے کے دلال ہو تو تمھارے مکان کا پانی، کھانا اور شیرینی چار مذہب میں حرام ہے، تو کہنے والا گنہگار ہے یا نہیں،

(۱) صورت میں لوگ اپنی بکری وکیلوں پر روانہ کرتے ہیں اس شرط پر کہ تم اس کو بیچو اور اس کی قیمت ہم کو پوری ادا کر دو، نفع و نقصان وکیل کے ذمہ اور دلالی کا روپیہ فی صدی دو روپیہ لے لو، یہ درست ہے یا نہیں ؟ (۲) ایسی کمائی ہو مسلمان کی تو اس کے گھر کا کھانا درست ہے یا نہیں ؟ (۳) بے پڑھا فتویٰ دے دے کہ چار مذہب میں حرام تو اس کا کیا حکم ہے؟

الجواب: (۱) اس عبارت سے یہ مفہوم ہوتا ہے کہ وہ لوگ ایک قیمت معین کردیتے ہیں کہ اتنے دام ہم کو بھیج دو خواہ تم کم کو بیچو یا زیادہ کو، اور ان داموں میں سے دو روپیہ فیصدی اپنی دلالی کے لے لو، اگر یہی صورت ہے تو بلا شبہ فریقین کو ناجائز ہے موکلوں کو بھی اور وکلاء کو بھی

ایسی صورت میں اس شخص کا اعتراض بیجا نہ تھا اگرچہ لفظ زائد کہے، واللہ تعالٰی اعلم۔ (۲) اس میں تفصیل بہت ہے اور اجمال یہ ہے جو سیدنا امام محمد رضی اللہ تعالٰی عنہ نے فرمایا :

به ناخذ مالم نعرف شیئاً حراماً بعینه ۱ هندیة عن الذخیره۔ ہم اسی کو لیتے ہیں جب تک کسی معین چیز کا حرام ہونا ہمیں معلوم نہ ہو جائے، ہندیہ بحوالہ ذخیرہ۔ (ت)

۱ فتاوٰی ہندیہ کتاب الکراہیۃ الباب الثانی نورانی کتب خانہ پشاور ۵ / ۳۴۲

That is, as long as it is not known that the item that has come to us is specifically haram (forbidden), there is no harm in eating or drinking it. And Allah knows best. (3) Its answer was given above: if the situation was the same, then it is undoubtedly haram. It is not harmful to state the Sharia ruling heard without reading it, if it is known through research, although not daring [to speak without reading] is better for him. And Allah knows best.

Problem 75: Questioned by Ilah Dad Khan Sahib, Scribe at Madrassah Ahle Sunnat, on Friday, 12 Dhu al-Qi'dah 1333 AH. What do the scholars of religion and the muftis of the firm Sharia say in this matter: Zaid sold his house worth one thousand rupees, more or less, for two hundred or three hundred rupees. At the same time or afterwards, he got a separate agreement written from Amr that within two years, four years, or five years, you must sell this house back to me at the same price you bought it from me. Zaid himself lived in that house and a monthly amount was settled between them and fixed by Zaid. Is this permissible or not?

The Answer: If this condition was not part of the sale contract and the contract was valid according to Sharia, free from corrupt conditions, and there was no prior agreement between them on this basis for the sale to take place, then the sale is valid. It is permissible for the seller to stay in the house after the sale by agreeing on a rent with the buyer and for the buyer to pay the fixed monthly rent. However, if this condition was made in the sale contract, or if it was not mentioned in the contract but there was a prior agreement that the sale would be done in this way and this condition would apply, and then the sale was executed based on that agreement, then in both these cases, it is haram. It is stated in Radd al-Muhtar:

(Arabic Text)	**(Urdu Translation)**
Ashara bi-qawlihi bi-shartin ila annahu labudda min kawnihi muqarinan lil-'aqdi li-annash-shartal-fasida law iltahaqa ba'dal-'aqdi qila yaltahiqu 'inda Abi Hanifata radiyallahu ta'ala 'anhu wa qila la wa huwal-asahu kama fi Jami'il-Fusulayn. (Tanbihun) fi Jami'il-Fusulayn	The author (Matin), with his statement "on condition," pointed out that it is necessary for it to be simultaneous with the contract. This is because if a corrupt condition is attached after the contract, one view is that according to Imam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him), it becomes attached to the contract, and another view is that it does not become attached, and this is more correct, as stated in Jami' al-Fusulayn. (Notice) In

(Arabic Text)

aidan law sharata fasidan qablal-'aqdi thumma 'aqada

(Urdu Translation)

Jami' al-Fusulayn, it is also mentioned that if they made a corrupt condition before the contract and then contracted...

अर्थात्, जब तक यह ज्ञात न हो कि जो वस्तु हमारे पास आई है वह विशेष रूप से हराम (वर्जित) है, तब तक उसे खाने-पीने में कोई हर्ज नहीं है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (3) इसका उत्तर ऊपर आ चुका है कि यदि स्थिति वही थी, तो इसमें कोई संदेह नहीं कि वह हराम है। बिना पढ़े, जो शरीयत का हुक्म सुना है, उसे शोध के आधार पर ज्ञात होने पर बयान करने में कोई हर्ज नहीं है, यद्यपि हिम्मत न करना ही उसके लिए बेहतर है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 75: मुस्तफ़्ती (प्रश्नकर्ता): इलाह दाद खान साहब, मुहर्रिर (लेखक), मदरसा अहले सुन्नत, शुक्रवार, 12 ज़ुल-क़ादा 1333 हिजरी। दीन के विद्वान और शरीअत के मुफ़्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि ज़ैद ने अपना मकान, जिसकी कीमत लगभग एक हज़ार रुपये थी, दो या तीन सौ रुपये में अम्र के हाथ बेच दिया। उसी समय या उसके बाद अम्र से एक अलग इकरारनामा लिखवा लिया कि दो साल, चार साल या पाँच साल के भीतर यह मकान मुझे उसी कीमत पर वापस बेच देना जिस कीमत पर मुझसे खरीदा है। और ज़ैद स्वयं उसी मकान में रहा और आपस में तय करके ज़ैद ने एक मासिक किराया निर्धारित कर दिया। क्या यह जायज़ है या नहीं?

अल-जवाब (उत्तर): यदि बिक्री के अनुबंध (निकाह-ए-बैय) में यह शर्त नहीं थी और अनुबंध शरीयत के अनुसार सही था, दूषित शर्तों से मुक्त था, और पहले से उनके बीच यह समझौता नहीं हुआ था कि इसी आधार पर बिक्री होगी, तो बिक्री जायज़ है। और बेचने वाले का बिक्री के बाद खरीदार से किराया तय करके उसी में किराए पर रहना और खरीदार को तयशुदा मासिक किराया देना जायज़ है। और यदि बिक्री के अनुबंध में यह शर्त रखी गई थी, या बिक्री में इसका उल्लेख नहीं था लेकिन पहले से आपस में यह समझौता हो गया था कि इस तरह बिक्री करेंगे और यह शर्त होगी, फिर उसी समझौते पर यह बिक्री हुई, तो इन दोनों स्थितियों में यह हराम है। रद अल-मुह्तार में है:

(अरबी पाठ)	**(अनुवाद)**
अशारा बि-क़ौलिहि बि-शर्तिन इला अन्नहू ला बुद्दा मिन कौनिहि मुक़ारिनन लिल-अक़्दी लि-अन्नश-शर्तल-फ़ासिदा लौ इल्तहक़ा बाद़ल-अक़्दी क़ीला यल्तहिक़ु 'इन्दा अबी हनीफ़ा रज़ियल्लाहु तआला	मातिन (ग्रंथकार) ने अपने शब्द "बशर्त" से इस बात की ओर संकेत किया है कि उसका अनुबंध के साथ जुड़ा होना आवश्यक है। क्योंकि यदि कोई दूषित शर्त अनुबंध के बाद जोड़ी जाती है, तो एक विचार यह है कि इमाम अबू हनीफ़ा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु के अनुसार वह

(अरबी पाठ)

अन्हु व क़ीला ला व हुवल-असहू कमा फ़ी जामि'इल-फ़ुसूलैन। (तन्बीह) फ़ी जामि'इल-फ़ुसूलैन ऐज़न लौ शरता फ़ासिदन क़ब्लल-अक़्दी सुम्मा अक़दा

(अनुवाद)

अनुबंध के साथ जुड़ जाती है, और एक विचार यह है कि नहीं जुड़ती, और यही अधिक सही है जैसा कि जामि' अल-फ़ुसूलैन में है। (चेतावनी) जामि' अल-फ़ुसूलैन में यह भी है कि यदि उन्होंने अनुबंध से पहले कोई दूषित शर्त रखी और फिर अनुबंध किया...

یعنی جب تک معلوم نہ ہو کہ یہ شے جو ہمارے پاس آئی خاص حرام ہے اس وقت تک اس کے کھانے پینے میں حرج نہیں، واللہ تعالیٰ اعلم۔ (۳) اس کا جواب اوپر گزرا کہ اگر صورت وہی تھی تو بلا شبہ حرام ہے، بے پڑھے کہ جو حکم شرعی سنا ہے بہ تحقیق معلوم ہے اس کے بیان میں حرج نہیں اگر چہ جرات نہ کرنا ہی اس کے لئے بہتر ہے واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۷۵: مسئولہ الہ داد خان صاحب محرر مدرسہ اہلسنت بروز جمعہ بتاریخ ۱۲ ذی القعدہ ۱۳۳۳ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید نے اپنا مکان ایک ہزار روپیہ یا کچھ کم و بیش کا دوسو یا تین سو روپے میں عمرو کے ہاتھ فروخت کیا اور اسی وقت یا بعد کو عمرو سے ایک اقرار نامہ علیحدہ لکھوا لیا کہ دو برس یا چار برس یا پانچ برس میں یہ مکان میرے ہاتھ فروخت کر دینا جس قیمت میں مجھ سے خریدا ہے، اور زید اس مکان میں خود رہا اور کچھ ماہواری باہم تصفیہ ہو کر زید نے مقرر کر دیا، یہ جائز ہے یا نہیں؟

الجواب: اگر عقد بیع میں یہ شرط نہ تھی عقد صحیح برو جہ شرعی خالی عن الشروط الفاسدہ تھانہ پہلے سے باہم یہ قرارداد ہو کر اسی بناء پر وہ بیع ہو سکتی تو بیع جائز ہے اور بائع کا بعد بیع اس میں مشتری سے کرایہ ٹھہرا کر کرایہ پر رہنا اور مشتری کو ماہوار مقرر شدہ دینا جائز ہے اور اگر عقد بیع میں یہ شرط کی یا بیع میں تو اس کا ذکر نہ تھا مگر پہلے سے باہم قرارداد ہوئی تھی کہ یوں بیع کریں گے اور یہ شرط ہو گی پھر اسی قرار داد پر یہ بیع کی تو ان دونوں صورتوں میں حرام ہے، ردالمحتار میں ہے:

| اشار بقولہ بشرط الی انہ لابد من کونہ مقارناً للعقد لان الشرط الفاسد لو التحق بعد العقد قیل یلتحق عند ابی حنیفہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ وقیل لا وھو الاصح کما فی جامع الفصولین (تنبیہ) فی جامع الفصولین ایضاً لو شرطا فاسداً قبل العقد ثم عقدا | ماتن نے اپنے قول "بشرط" سے اس بات کی طرف اشارہ کیا کہ اس کا عقد سے مقترن ہونا ضروری ہے اس لئے کہ شرط فاسد اگر عقد کے بعد لگائی جائے تو ایک قول یہ ہے کہ امام ابو حنیفہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے نزدیک عقد سے ملحق ہوتی ہے اور ایک قول یہ ہے کہ ملحق نہیں ہوتی، اور یہی زیاد صحیح ہے جیسا کہ جامع الفصولین میں ہے (تنبیہ) جامع الفصولین میں یہ بھی ہے کہ اگر بائع اور مشتری نے عقد سے قبل کوئی شرط |

[Arabic Box] "The contract is not void." I say: It should be corrupt (fasid) if they both agreed to base the contract upon it, as they have clarified regarding a sale in jest (bay' al-hazl). Al-Khayr al-Ramli was asked about two men who reached an agreement on 'bay' al-wafa' (sale with right of redemption) before its contract, and then executed the sale contract devoid of that condition. He replied that it is clarified in Al-Khulasah, Al-Faydh, Al-Tatarkhaniyya, and others that it will be based on what they agreed upon. (Excerpts ended). I wrote regarding the Shami's statement "it will be based on what they agreed upon" that this ruling applies when they both are truthful in that the contract is based on that agreement, as restricted in Al-Khayriyya and Al-Khulasah. I say: and this is regarding legal judgment (qada). As for religious conscience (diyanah), when Allah Almighty knows the news from them, then the contract is based on it, even if they both lie afterwards. And Allah Almighty knows best. (T)

[Urdu Box] ...set a corrupt [condition], then executed the contract, that contract will not be void, etc. I say: it should be corrupt (fasid) if both of them are in agreement that the contract is based on that condition, just as the jurists have clarified regarding the sale in jest (bay' al-hazl). Al-Khayr al-Ramli was asked about those two men who made an agreement on 'bay' al-wafa' before the contract and then executed the contract devoid of that condition. So he replied that it has been clarified in Khulasah, Faydh, Tatarkhaniyya, etc., that this sale will be based on their agreement. (Until the end of Shami's statement). I wrote on Shami's statement "according to what they agreed" that this ruling will be applicable only when both of them are truthful in this matter that this contract is based on that agreement, just as this restriction was placed in Khayriyya and Khulasah. I say that this ruling is for legal judgment; as for religious conscience, when it is in the knowledge of Allah Almighty that they have based the contract on that agreement, then this contract will be based on the same even if they lied later. And Allah Almighty knows best.

Problem 86: Questioned by Natthe Miyan Sahib, Bareilly city, Mohalla Saudagran from Kotwali, on Saturday dated 24th Dhul-Hijjah 1333 AH. Is it permissible to purchase a standing field/crop or not? The Answer: If the field is ready and will be harvested immediately, it is permissible. And if it has not yet ripened and until it ripens [sentence continues on next page]...

1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu, Bab al-Bay' al-Fasid, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/ 120-21
2. Jadd al-Mumtar 'ala Radd al-Muhtar

[अरबी बॉक्स] "संविदा (अनुबंध) अमान्य नहीं होती।" मैं कहता हूँ: इसे अमान्य (फ़ासिद) होना चाहिए यदि वे दोनों इस बात पर सहमत हों कि संविदा उसी पर आधारित है, जैसा कि उन्होंने हंसी-मज़ाक वाली बिक्री (बय-ए-हज़ल) के मामले में स्पष्ट किया है। खैरुद्दीन रमली से उन दो पुरुषों के बारे में पूछा गया जिन्होंने संविदा से पहले 'बय-ए-वफ़ा' पर समझौता किया और फिर उस शर्त के बिना संविदा की। उन्होंने उत्तर दिया कि 'खुलासा', 'फ़ैज़' और 'तातारखालिया' आदि में स्पष्ट किया गया है कि यह उनकी आपसी सहमति के अनुसार होगी। (उद्धरण समाप्त)। मैंने शामी के इस कथन "जैसा उन्होंने तय किया" पर लिखा कि यह नियम तब लागू होगा जब वे दोनों इस बात में सच्चे हों कि संविदा उसी समझौते पर आधारित है, जैसा कि 'खैरिया' और 'खुलासा' में यह शर्त लगाई गई है। मैं कहता हूँ: और यह अदालती फैसले (क़ज़ा) के लिए है। जहाँ तक धार्मिक निष्ठा (दियानत) का प्रश्न है, तो जब अल्लाह तआला उनसे सच्चाई जानता है और संविदा उसी पर आधारित होती है, भले ही वे बाद में झूठ बोलें। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

[उर्दू बॉक्स] ...फ़ासिद [शर्त] लगाई फिर अक़्द (अनुबंध) किया तो वह अक़्द बातिल (शून्य) न होगा आदि। मैं कहता हूँ कि फ़ासिद होना चाहिए अगर वे दोनों इस पर मुत्तफ़िक़ (सहमत) हों कि अक़्द इसी शर्त पर मबनी (आधारित) है जैसा कि फ़ुकहा (धर्मशास्त्रियों) ने बय-ए-हज़ल में इसकी तसरीह (स्पष्टीकरण) की। ख़ैरउद्दीन रमली से इन दो मर्दों के बारे में सवाल किया गया जिन्होंने अक़्द से पहले बय-ए-वफ़ा पर क़रारदाद की फिर इस शर्त से खाली अक़्द किया तो उन्होंने जवाब दिया कि ख़ुलासा, फ़ैज़ और तातारख़ानिया वग़ैरह में तसरीह की गई है कि यह बय उनकी क़रारदाद पर मबनी होगी (शामी के बयान के आख़िर तक)। मैंने शामी के क़ौल "अला मा तवाज़आ" (जैसा उन्होंने तय किया) पर लिखा कि यह हुक्म तब होगा जब वे दोनों इस बात में सच्चे हों कि यह अक़्द इस क़रारदाद पर मबनी है जैसा कि ख़ैरिया और ख़ुलासा में यह क़ैद (शर्त) लगाई गई। मैं कहता हूँ कि यह हुक्म क़ज़ा (कानूनी फैसले) में है, रहा दियानत (धार्मिक अंतरात्मा) में तो जब अल्लाह तआला के इल्म में है कि उन्होंने अक़्द की बिना इस क़रारदाद पर की है तो यह अक़्द इसी पर मबनी होगा अगरचे उन्होंने बाद में झूठ कहा। वल्लाह तआला आलम।

मसला ८६: नत्थे मियाँ साहब, बरेली शहर, मोहल्ला सौदागरान से कोतवाली के निवासी द्वारा शनिवार, २४ ज़िल-हिज्जा १३३३ हिजरी को पूछा गया सवाल। खड़ी फसल खरीदना जायज़ है या

नहीं? अल-जवाब: खेत अगर तैयार हो गया है और उसे अभी काट लिया जाएगा तो यह जायज़ है। और अगर वह अभी पका नहीं है और पकने तक [वाक्य अगले पृष्ठ पर जारी है]...

---

1. रद्द अल-मुह्तार किताब अल-बुयू बाब अल-बय अल-फ़ासिद दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी बैरुत २/ २१-१२०
2. जद अल-मुम्तार अली रद्द अल-मुह्तार

पृष्ठ १७४ / ७१५

لم یبطل العقد اه قلت ینبغی الفساد لو اتفقا علی بناء العقد علیه کما صرحوا به فی بیع الهزل، وقد سئل الخیر الرملي عن رجلین تواضعا علی بیع الوفاء قبل عقده وعقد البیع خالیا عن الشرط فأجاب بانه صرح فی الخلاصة والفیض والتتارخانیة وغیرها بانه یکون علی ما تواضعا اهـ (ملتقطا) ما فی الشامی وکتبت علی قوله یکون علی ما تواضعا اذا تصادقا علی ان العقد مبنی علی تلك الموضعة کما قید به فی الخیریة والخلاصة اقول: وهذا فی القضاء اما فی الدیانة فاذا علم الله تعالی منهما النباء وعلیها یکون وان تکاذبا من بعد والله تعالی اعلم۔

فاسد لگائی پھر عقد کیا تو وہ عقد باطل نہ ہوگا الخ میں کہتا ہوں کہ فاسد ہونا چاہئے اگر وہ دونوں اس پر متفق ہوں کہ عقد اسی شرط پر مبنی ہے جیسا کہ فقہاء نے بیع ہزل میں اس کی تصریح کی خیر الدین رملی سے ان دو مردوں کے بارے میں سوال کیا گیا جنہوں نے عقد سے پہلے بیع وفاء پر قرارداد کی پھر اس شرط سے خالی عقد کیا تو انہوں نے جواب دیا کہ خلاصہ، فیض اور تتارخانیہ وغیرہ میں تصریح کی گئی ہے کہ یہ بیع ان کی قرارداد پر مبنی ہوگی (شامی کے بیان کے آخر تک) میں نے شامی کے قول "علی ما تواضعا" پر لکھا کہ یہ حکم تب ہوگا جب وہ دونوں اس بات میں سچے ہوں کہ یہ عقد اس قرارداد پر مبنی ہے جیسا کہ خیریہ اور خلاصہ میں یہ قید لگائی گئی، میں کہتا ہوں کہ یہ حکم قضا میں ہے رہا دیانت میں تو جب اللہ تعالی کے علم میں ہے کہ انہوں نے عقد کی بناء اس قرارداد پر کی ہے تو یہ عقد اسی پر مبنی ہوگا اگرچہ انہوں نے بعد میں جھوٹ کہا۔ واللہ تعالی اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۸۶: مسئولہ نتھے میاں صاحب شہر بریلی محلہ سوداگران از کرتوالی، بروز شنبہ بتاریخ ۲۴ ذی الحجہ ۱۳۳۳ھ کھڑا کھیت خرید کرنا جائز ہے یا نہیں؟ الجواب: کھیت اگر تیار ہو گیا اور ابھی کاٹ لیا جائے گا تو جائز ہے اور اگر ابھی نہ پکا اور پکنے تک

---

1 رد المحتار كتاب البيوع باب البيع الفاسد دار احياء التراث العربي بيروت ۲/ ۲۱-۱۲۰ 2 جد الممتار على رد المحتار

If the crop is to be kept [on the field after purchase], the buying and selling are prohibited with the condition of benefit for a party without the requirement of the contract. (This is because of imposing a condition which benefits one of the parties and the contract itself does not necessitate it. - Transl.) And the legal stratagem (hila) for its permissibility is, for example, if a crop is expected to ripen in two months, one should buy the current crop without making a condition to keep it there, and at the same time, rent the land on which the crop is growing for a fixed rent for two months for any of one's work. In the purchase, one should keep the calculation of this rent in mind. For example, if a field is worth twenty rupees and the monthly land rent is one rupee, and if rent is to be taken for two months, then buy the field for eighteen rupees and take the land on rent for two rupees. As stated in Durr al-Mukhtar:

[Arabic Box Text:] "The legal stratagem regarding crops and grass is that what exists is purchased with part of the price, and the land is rented for a known period in which ripening is known, with the remainder of the price. And Allah knows best."

[Urdu Translation in Box:] "The legal stratagem for keeping the crop and grass is to buy what exists in exchange for part of the price, and in exchange for the remaining price, rent the land for a fixed period during which the crop's ripening is known. And Allah Almighty knows best." (T)

Problem 87: From Kasiran Kalan, Post Office Khas, District Bulandshahr, sent by Ahmed Ali son of Hakim Muhammad Amir, 15 Safar 1338 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: It is an ancient custom among the public that when they sell mango or melon crops, etc., they take some produce in addition to the price, which is known as "Dali". The custom is to take 100 mangoes per rupee of mango produce, and 5 seers per rupee on melons. Sometimes the quantity is fixed by weight, and often the custom of selling the crop is at the time of flowering or when the fruit appears, without a specified time. In such a situation, is the sale of the mango crop, etc., valid or not? And is it permissible to take and eat the customary produce? If not, what is the Shariah-compliant method for selling the crop so that the sale is valid and taking the produce is also considered lawful?

The Answer: Selling the crop at the stage of flowering is prohibited. When the fruit appears, even if it is only fit for animal consumption, the sale is permissible, but on the condition that the buyer picks it immediately. And if it is agreed that until the fruit is ready...

1 Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Chapter on what is included in the sale as a follow-up, Mujtabai Press, Delhi, 9/2 Page 175 of 715

यदि फसल खेत में ही रखी जानी है, तो खरीद-फरोख्त तब तक नाजायज है जब तक उसमें किसी पक्ष का ऐसा लाभ शर्त के रूप में शामिल हो जिसकी अनुबंध (कॉन्ट्रैक्ट) मांग नहीं करता। (अर्थात् ऐसी चीज़ की शर्त लगाने के कारण जिससे किसी पक्षकार को लाभ हो और अनुबंध की प्रकृति इसकी मांग न करती हो। - अनु.) और इसकी वैधता की युक्ति (हीला) यह है कि मान लीजिए कि फसल दो महीने में पकने की उम्मीद है, तो खरीदार फसल को वर्तमान स्थिति में खरीद ले और उसे खेत में ही रखने की शर्त न रखे, और उसी समय उस जमीन को जिसमें फसल है, दो महीने के लिए एक निश्चित किराए पर अपने किसी काम के लिए ले ले। खरीदारी में इस किराए के हिसाब को मन में समझ ले। उदाहरण के लिए, यदि बीस रुपये कीमत का खेत है और ज़मीन का किराया एक रुपया प्रति माह है, और यदि दो महीने के लिए किराया लेना है, तो अठारह रुपये में खेत खरीदे और दो रुपये में ज़मीन किराये पर ले। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

[अरबी पाठ:] "फसल और घास के संबंध में युक्ति (हीला) यह है कि जो मौजूद है उसे मूल्य के कुछ भाग के बदले खरीदा जाए, और बाकी मूल्य के बदले ज़मीन को एक निश्चित अवधि के लिए किराए पर लिया जाए जिसमें फसल का पकना ज्ञात हो। और अल्लाह बेहतर जानता है।"

[उर्दू अनुवाद:] "फसल और घास के बाकी रखने की युक्ति यह है कि जो मौजूद हो उसे मूल्य के कुछ हिस्से के बदले खरीद ले और बाकी मूल्य के बदले ज़मीन को एक निश्चित समय के लिए किराए पर ले ले जिसमें फसल का पकना मालूम हो, वल्लाहु तआला आलम।" (त)

मसाला 87: कस्सीरा कलां, डाकखाना खास, ज़िला बुलंदशहर, प्रेषक अहमद अली वल्द हकीम मुहम्मद अमीर, 15 सफर 1338 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: आम जनता में प्राचीन काल से यह रिवाज चला आ रहा है कि जब वे आम या खरबूजे आदि की फसल बेचते हैं, तो कीमत के अलावा कुछ उपज लेते हैं जिसे "डाली" के नाम से जाना जाता है। आम की उपज में प्रति रुपया एक सौ आम, और खरबूजे पर प्रति रुपया 5 सेर लेने का रिवाज है। कभी-कभी उपज वजन के हिसाब से तय होती है, और अक्सर बिना समय तय किए फसल बेचने का रिवाज फूल आने या फल दिखाई देने के समय होता है। ऐसी स्थिति में आम आदि की फसल की बिक्री सही है या नहीं? और पारंपरिक उपज लेना और खाना जायज है या नहीं? अगर जायज नहीं है, तो शरीयत के अनुसार फसल बेचने का वह क्या तरीका है जिससे बिक्री भी सही रहे और उपज लेना भी जायज माना जाए?

अल-जवाब: फूल की अवस्था में फसल बेचना नाजायज है। जब फल आ जाएं, भले ही वे केवल जानवरों के खाने लायक हों, तो बिक्री जायज है, लेकिन इस शर्त पर कि खरीदार उसे तुरंत तोड़ ले। और अगर यह तय हो कि फल तैयार होने तक...

---

1 दुर्रे मुख्तार, किताबुल बुयू, फसल फि मा यदखुलु फिल बय तबा, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 9/2 पेज 175/715

کھیتی قائم رکھی جائے گی، تو خرید وفروخت ناجائز ہے بشرط مافیہ نفع عاقد بلا قضیۃ العقد (اس چیز کی شرط لگانے کی وجہ سے جس میں کسی عاقد کا نفع ہے اور عقد اس کا تقاضا نہیں کرتا۔ ت) اور اس کے جواز کا حیلہ یہ ہے کہ مثلاً کھیتی دو مہینہ میں پکتی سمجھے تو کھیتی فی الحال خرید لے اور اس کے باقی رکھنے کی شرط نہ کرے اور اسی وقت معاوضہ زمین جس میں کھیتی ہے اپنے کسی کام کے لئے دو مہینہ تک کو ایک معینہ کرایہ پر لے لے خریداری میں اس اجرت کا حساب دل میں سمجھ لے مثلاً بیس روپے قیمت کا کھیت ہے اور روپیہ مہینہ زمین کا کرایہ ہو گا اور دو مہینہ کو کرایہ لینا ہوا تو اٹھارہ روپے کو کھیت خریدے اور دو روپے کو زمین کرایہ پر لے، درمختار میں ہے:

والحیلۃ في الزرع والحشیش یشتری الموجود ببعض الثمن ویستأجر الارض مدۃ معلومۃ یعلم فیھا الادراك بباقی الثمن۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

کھیتی اور گھاس کے باقی رکھنے کا حیلہ یہ ہے کہ جو موجود ہو اس کو بعض ثمن کے مقابل میں خرید لے اور باقی ثمن کے عوض زمین کو ایک معینہ مدت کے لئے کرایہ پر لے لے جس میں کھیتی کا پکنا معلوم ہو، واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۸۷: از کسیر ان کلاں ڈاکخانہ خاص ضلع بلند شہر مرسلہ احمد علی ولد حکم محمد امیر ۱۵ صفر ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ عوام میں قدیم سے یہ دستور رائج ہے کہ جب فصل انبہ یا خربوزہ وغیرہ کی فروخت کرتے ہیں تو قیمت کے سوا کچھ جنس لیتے ہیں جو ڈالی کے نام سے مشہور ہے، انبہ کی جنس فی روپیہ ایک صد آم، اور خربوزہ پر فی روپیہ ۵ سیر

لینے کا معمول ہے، اور بعض اوقات جنس بقدر تول طے پاتی ہے اور اکثر بلا تعین وقت کے فصل کی فروختگی کا معمول وقت پھول آنے یا پھل کے نمودار ہو جانے پر ہے۔ تو بائیں صورت فصل انبہ وغیرہ کی بیع درست ہے یا نہیں اور جنس دستوری کا لینا اور اس کا کھانا جائز ہے یا نہیں؟ اگر جائز نہیں تو شرعاً وہ کیا فصل کی بیع کا طریقہ ہے کہ جس سے بیع بھی درست رہے اور جنس کا لینا بھی روا قرار پائے۔

الجواب: بیع یا پھول پر فصل کی بیع ناجائز ہے، اور جب پھل آجائیں اگرچہ جانور کے کھانے کے قابل ہوئے ہوں تو بیع جائز ہے مگر یوں کہ خریدار اسی وقت توڑے، اور اگر یہ ٹھہرا کر پھل تیار ہونے تک

---

۱ درمختار کتاب البیوع فصل فی ما یدخل فی البیع تبعاً مطبع مجتبائی دہلی ۹/۲ Page 175 of 715

If they remain attached, it is unlawful and forbidden, and to fix it at one rupee per mango or five seers of melon or more or less for the seller is another forbidden act. Yes, it can be that for example, in the case of mangoes, however much of the spring crop is intended to be sold, the existing fruits are bought in their current state, then the buyer says to the seller, 'I have taken these trees from you through a contract so that I may take care of them, and whatever fruit is produced from them, in every thousand, one is yours and nine hundred and ninety-nine are mine, or one hundred are yours and nine hundred are mine, whatever is agreed upon.' Let him buy the roots of melons, watermelons, wood, and eggplants so that whatever is produced becomes the property of the buyer. This purchase should be for a portion of the price for which they wish to sell and buy the spring crop. For the remaining portion of the price, let him take that land on lease for a known period within which he thinks the crop will be cleared. The same method applies to farming as well; for instance, if they want to enter into a contract for one hundred rupees, let him buy the roots of melons etc., or the existing crop for fifty rupees, and if he thinks it will be cleared in six months, let him take it on lease for the remaining fifty rupees for six months. In Durr al-Mukhtar, it is stated:

He who sells visible fruit, whether its suitability (ripeness) has appeared or not, it is valid according to the manifest view of the school of thought, and al-Sarakhsi has authenticated it. The buyer must cut them immediately by compulsion against him, and if he stipulates leaving them on the trees, the sale is void. The legal device is to take the tree as a 'Mu'amalah' contract such that he has one part out of a thousand parts, and to buy the roots of green vegetables like eggplants, and the vines of melons and cucumbers, so that what arises belongs to the buyer. Regarding crops and grass, he buys what exists for part of the price and leases the land for

A person who sold visible fruit, whether its fitness appeared or did not appear, then according to the most correct saying, it is valid. And if he sold fruit before it appeared, then by consensus it is not valid. And if some fruit appeared and some has not yet appeared, then in the manifest school of thought the sale is not valid; Sarakhsi declared it valid. And after the sale, the buyer should cut the fruits immediately, he will be compelled in this matter. And if he laid down the condition of leaving the fruits on the trees, then the sale will be void (fasid). And the legal device in this is that the buyer takes the trees from the seller as a contract such that one part out of a thousand will be the

a known period in which maturity is known, for the rest of the price, summarized. And Allah Almighty knows best.

seller's, and that he buys the roots of eggplant, watermelon, and wood (plant) so that the newly produced fruits are the property of the buyer, and in the case of crops and grass, the existing...

[1] Durr al-Mukhtar, Book of Sales, Section on what is included in the sale consequently, Mujtabai Press, Delhi, 2/9.

यदि वे लगे रहेंगे तो यह नाजायज़ और हराम है और इसमें इसे प्रति रुपया आम या पाँच सेर तरबूज या कम-ज्यादा विक्रेता के लिए निर्धारित करना दूसरा हराम है। हाँ, यह हो सकता है कि उदाहरण के लिए आमों में जितना बहार (फ़सल) बेचना मंजूर हो, मौजूदा फल जिस स्थिति में हैं उतने को खरीद लिया जाए, फिर खरीदार विक्रेता से कहे कि मैंने ये पेड़ अनुबंध के तहत तुझसे लिए ताकि मैं इनकी देखभाल करूँ और जो फल पैदा होंगे उनमें से हर हज़ार में एक तेरा और नौ सौ निन्यानबे मेरे, या सौ तेरे और नौ सौ मेरे जो तय हो जाए। तरबूज, खरबूजे, लकड़ी, बैंगन की जड़ें खरीदे ताकि जो पैदा हों वे खरीदार के स्वामित्व में हों। यह खरीदारी क़ीमत के एक हिस्से पर हो जितने पर वे फ़सल बेचना और खरीदना चाहते हों। बाकी क़ीमत के बदले उस ज़मीन को एक निश्चित अवधि के लिए पट्टे (इजारे) पर ले ले जिसमें उसे लगे कि फ़सल पूरी हो जाएगी। यही तरीका खेती में भी है; उदाहरण के लिए अगर सौ रुपये पर सौदा करना चाहते हैं तो खरबूजे आदि की जड़ें या मौजूद खेती पचास रुपये में खरीदे और अगर समझे कि छह महीने में पूरी हो जाएगी तो बाकी पचास रुपये के बदले छह महीने के लिए पट्टे पर ले ले। दुर्रे मुख़्तार में है:

जिसने प्रकट फल बेचे, चाहे उसकी उपयुक्तता दिखाई दी हो या न दी हो, तो पंथ (मज़हब) के प्रकट दृष्टिकोण के अनुसार वह सही है और सरख़सी ने इसकी पुष्टि की है। और खरीदार उन्हें तुरंत काटने पर मजबूर होगा, और यदि उसने उन्हें पेड़ों पर छोड़ने की शर्त रखी तो बिक्री अमान्य (फ़ासिद) होगी। और युक्ति (हीला) यह है कि पेड़ को अनुबंध (मुआमला) के रूप में लिया जाए कि उसका हज़ार हिस्सों में से एक हिस्सा हो, और हरी सब्ज़ियों जैसे बैंगन और तरबूज और खीरे की लताओं की जड़ें खरीदे ताकि जो भी पैदा हो वह खरीदार का हो। और खेती और घास में, जो मौजूद है उसे क़ीमत के कुछ हिस्से के लिए खरीदे और बाकी क़ीमत के बदले उस ज़मीन को

जिस व्यक्ति ने प्रकट फल बेचा, चाहे उसकी उपयुक्तता प्रकट हुई हो या न हुई हो, तो सबसे सही कथन के अनुसार सही है। और यदि प्रकट होने से पहले फल बेचा तो सर्वसम्मति से सही नहीं है। और यदि कुछ फल प्रकट हुए और कुछ अभी प्रकट नहीं हुए हैं तो मज़हब के स्पष्ट दृष्टिकोण में बिक्री सही नहीं है, सरख़सी ने इसे सही घोषित किया है। और बिक्री के बाद खरीदार फलों को तुरंत काटे, इस मामले में उसे मजबूर किया जाएगा। और अगर उसने फलों को पेड़ों पर छोड़ने की शर्त लगाई तो बिक्री फ़ासिद (अमान्य) होगी। और इसमें युक्ति यह है कि खरीदार विक्रेता से पेड़ अनुबंध के रूप में ले ले कि हज़ार में से एक हिस्सा विक्रेता का होगा और

एक ज्ञात अवधि के लिए पट्टे पर ले ले जिसमें परिपक्वता का पता हो, संक्षिप्त रूप में। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

यह कि बैंगन, तरबूज और लकड़ी की जड़ें खरीद ले ताकि नए पैदा होने वाले फल खरीदार का स्वामित्व हों और खेती और घास में जो मौजूद है...

[1] दुर्रे मुख़्तार, किताबुल बुयूअ (बिक्री की पुस्तक), अध्याय: बिक्री में जो अनुगामी रूप से शामिल है, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 2/9।

لگے رہیں گے تو یہ ناجائز و حرام ہے اور اس میں اسے فی روپیہ آم یا پانچ سیر خربوزہ یا کم و بیش بالغ کے لئے قرار دینا دوسرا حرام ہے ، ہاں یہ ہو سکتا ہے کہ مثلاً آم میں جتنے کو بہار بیچی منظور ہو موجودہ پھل جس حالت کے ہیں اتنے کو خرید کئے جائیں پھر مشتری بائع سے کہے کہ میں نے یہ پیڑ بعقد معاملہ تجھ سے لئے کہ میں ان کی غور و پرداخت کروں گا اور جو پھل پیدا ہوں گے ان میں سے ہر ہزار میں ایک تیرا اور نو سو ننانوے میرے یا سو تیرے اور نو سو میرے جو قرار پا جائے، خربوزے، تربوز، لکڑی، بیگن کی جڑیں خریدے تاکہ جو پیدا ہوئے مشتری کی ملک ہو یہ خریداری ایک حصہ ثمن پر ہو جتنے پر بہار بیچنا اور خریدنا چاہتے ہوں باقی حصہ ثمن پر اس زمین کو ایک مدت معلوم تک اجارہ پر لے جس میں یہ سمجھے کہ فصل فارغ ہو جائے گی یہی طریقہ کھیتی میں بھی ہے مثلاً سو روپے پر معاملہ کرنا چاہتے ہیں تو خربوزے وغیرہ کی جڑیں یا موجود کھیتی پچاس روپے کو خریدے اور چھ مہینے میں فارغ ہوتی سمجھیں تو باقی پچاس روپے کے بدلے میں چھ مہینے کے واسطے اجارہ پر لے لے، در مختار میں ہے :

من باع ثمرة بارزة اما قبل الظهور فلا يصح اتفاقا ظهر صلاحها اولا يصح في ظاهر المذهب و صححه السرخسی، ويقطعها المشتری في الحال جبرا عليه وان شرط تركها على الاشجار فسد البيع. والحيلة ان يأخذ الشجرة معاملة على ان له جزء من الف جزئ و ان يشتری اصول

جس شخص نے نمودار پھل بیچا چاہے اس کی صلاحیت ظاہر ہوئی ہو یا نہ ہوئی ہو تو اصح قول کے مطابق صحیح ہے اور اگر نمودار ہونے سے قبل پھل بیچا تو بالاتفاق صحیح نہیں ، اور اگر کچھ پھل نمودار ہوا اور کچھ ابھی نمودار نہیں ہو تو ظاہر مذہب میں بیع صحیح نہیں سرخسی نے اس کو صحیح قرار دیا اور بیع کے بعد مشتری پھلوں کو فی الحال قطع کرے اس سلسلہ میں اس

الرطبة كالباذنجان و اشجار البطيخ والخيار ليكون الحادث للمشترى و فی الزرع والحشيش يشترى الموجود ببعض الثمن ويستأجر الارض مدة معلومة يعلم فيها الادراك بباقی الثمن[1] مختصرا ۔ والله تعالیٰ اعلم۔

پر جبر کیا جائے گا اور اگر اس نے پھلوں کو درختوں پر چھوڑنے کی شرط لگائی تو بیع فاسد ہوگی اور اس میں حیلہ یہ ہے کہ مشتری بائع سے درخت بطور معاملہ لے کر ہزار میں سے ایک جزو بائع کی ہوگی اور یہ کہ بیگن ، تربوز اور لکڑی کی جڑیں خریدلے تاکہ نئے پیدا ہونے والے پھل مشتری کی ملک ہوں اور کھیتی اور گھاس میں موجود

[1] در مختار کتاب البیوع فصل فی ما یدخل فی البیع تبعاً مطبع مجتبائی دہلی ۲/۹

Fatawa Razawiya, Volume 17

...buy it in exchange for part of the price and take the land on lease for a specified period for the remainder of the price, a period during which the ripening of the crop is known. (T)

Problem 88: From Kanpur, Jami' Masjid, sent by Muhammad Idris Sahib Partabgarhi, 29 Dhu al-Qi'dah 1336 AH.

After the traditional greeting to the Master of the children of Adam and the Master of humans and jinn (may my soul be sacrificed for him), it is humbly submitted that the servant intends to inquire about several matters from your excellence. Zaid sold his house to Amr and regarding the price, it was agreed that whatever price Bakr decides will be the price. That is, the sale was made at that time but the estimation and determination of the price was left to Bakr's opinion. Is this sale valid (sahih) or voidable (fasid)? Furthermore, when Bakr determined the price after three months, did the corruption (fasad) go away or not? And which corruption is removed after the cause of corruption is removed? What is the meaning of corruption being at the core of the contract? And what are the forms of confirming a sale? It is hoped that your excellence will surely inform us of these matters in detail with book references. State the ruling and be rewarded.

Answer: This sale is voidable (fasid). It is stated in Al-Alamgiriyyah:

Arabic	**Urdu**
Among the conditions for validity is that the sale (subject matter) be known and the price be known with a knowledge that prevents dispute. Thus, the sale of something unknown with an ignorance that leads to it is not valid, such as the sale of a sheep from this flock, and the sale of a thing for its price or according to the judgment of so-and-so.	Among the conditions for the validity of a sale is that the subject matter (mabi') be known and the price be known in such a way that no dispute arises. Thus, selling such an unknown thing is not valid from which dispute may arise, for example, if it is said that a sheep from this flock is sold or this thing is sold along with its price or according to the decision of so-and-so. (T)

Since Bakr determined the price after the conclusion of the sales session (majlis), that corruption (fasad) has become established by consensus (ijma'). It cannot be removed now unless this sale is rescinded. It is stated in Radd al-Muhtar:

Arabic	Urdu
In Al-Nihayah, Al-Fath, and others, Shams al-A'immah al-Halwani said: even if it is known by the written [price] in...	It is in Al-Nihayah, Al-Fath, etc., Shams al-A'immah al-Halwani said that even if the written [price] within the session for the buyer...

1. Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Buyu', Chapter 1, Nurani Kutub Khana Peshawar, 3/3 Page 177 of 715

फतावा रज़विया, जिल्द 17

...कुछ कीमत के बदले खरीद ले और बाकी कीमत के बदले जमीन को एक निश्चित अवधि के लिए किराए पर ले ले, जिस अवधि में फसल का पकना ज्ञात हो। (त)

मसला 88: कानपुर, जामे मस्जिद से, प्रेषक मुहम्मद इदरीस साहिब प्रतापगढ़ी, 29 ज़ुल-क़ादा 1336 हिजरी।

आदम की संतानों के स्वामी और इंसानों और जिन्न के स्वामी (मेरी जान उन पर कुर्बान हो) को सुन्नत के अनुसार सलाम के बाद, विनम्रतापूर्वक निवेदन है कि खादिम आपसे कुछ मसलों के बारे में पूछना चाहता है। ज़ैद ने अपना मकान अम्र को बेचा और कीमत के बारे में यह तय किया कि बक्र जो भी तय करेगा वही कीमत होगी। यानी बिक्री तो उसी वक्त हो गई लेकिन कीमत का आकलन और निर्धारण बक्र की राय पर छोड़ दिया गया। क्या यह बिक्री (बय) सही है या फासिद (त्रुटिपूर्ण)? फिर जब बक्र ने तीन महीने बाद कीमत तय की, तो क्या वह फासिद होना खत्म हो गया या नहीं? और कौन सा फासिद कारण हटने के बाद खत्म हो जाता है? और अनुबंध की जड़ में फासिद होने का क्या अर्थ है? और बिक्री की पुष्टि के क्या तरीके हैं? आशा है कि आप इन विषयों पर किताब के हवाले के साथ विस्तार से जानकारी देंगे। बयान करें और सवाब पाएं।

उत्तर: यह बिक्री फासिद है, आलमगीरिया में है:

अरबी

वैधता की शर्तों में से यह है कि बिक्री (वस्तु) ज्ञात हो और कीमत इस तरह ज्ञात हो जो विवाद को रोके। अत; ऐसी अज्ञानता के साथ किसी अज्ञात चीज़ की बिक्री जो विवाद की ओर ले जाए, सही नहीं है, जैसे इस झुंड में से एक भेड़ की बिक्री, और किसी चीज़ की उसकी कीमत पर या फलां के निर्णय के अनुसार बिक्री।

उर्दू

बिक्री के सही होने की शर्तों में से यह है कि बेची जाने वाली वस्तु (मबीअ) ज्ञात हो और कीमत (थमन) इस तरह ज्ञात हो कि झगड़ा न पैदा हो। चुनाँचे ऐसी अज्ञात चीज़ की बिक्री सही नहीं जिससे झगड़ा पैदा हो, जैसे कहा जाए कि इस रेवड़ में से एक बकरी बेची या इस चीज़ की बिक्री उसकी कीमत के साथ या फलां के फैसले के अनुसार बेची। (त)

चूंकि बक्र ने कीमत का निर्धारण बिक्री की सभा (मजलिस-ए-बय) के खत्म होने के बाद किया, इसलिए वह फासिद होना सर्वसम्मति (इज्मा) से तय हो गया। अब यह तब तक नहीं हट सकता जब तक इस बिक्री को रद्द न किया जाए। रद-उल-मुह्तार में है:

अरबी	उर्दू
निहाया, फ़तह आदि में शम्सुल अइम्मा हलवानी ने कहा: भले ही वह लिखित [कीमत] द्वारा ज्ञात हो...	निहाया और फ़तह आदि में है, शम्सुल अइम्मा हलवानी ने फरमाया कि अगर ग्राहक को सभा के अंदर ही लिखी हुई [कीमत का पता चल जाए]...

1. फतावा हिंदिया, किताबुल बुयू, बाब अव्वल, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/3 पृष्ठ 177 का 715

بعض ثمن کے بدلے خرید لے اور باقی ثمن کے بدلے زمین کو مدتِ معینہ کے لئے کرایہ پر لے لے جس مدت میں کھیتی کا پکنا معلوم ہو۔ (ت)

مسئلہ ۸۸: از کانپور مسجد جامع مرسلہ محمد ادریس صاحب پرتا بگڑھی ۲۹ ذی القعدہ ۱۳۳۶ھ

پس از سلام مسنون حضرت سید ولد آدم وسید الانس والجان (روحی فداہ) معروض خدمت ولا ہے کہ خادم کو چند مسائل کے متعلق جناب سے استفسار مقصود ہے زید نے اپنے مکان کہ عمرو سے بیچ کیا اور قیمت کے متعلق یہ قرار دیا کہ جو بکر قرار دے وہی قیمت ہے یعنی بیع تو اس وقت کی اور قیمت کی تقدیر و تعیین بکر کی رائے پر موقوف کردی یہ بیع صحیح ہوئی یا فاسد، پھر جبکہ بکر نے تخمینہ تین ماہ کے بعد قیمت معین کی تو بصورت فساد وہ فساد اُٹھ گیا یا نہیں؟ اور کون سا فساد بعد رفع علت فساد اٹھ جاتا ہے اور فساد کے صلبِ عقد میں ہونے کا کیا معنی ہے، اور تقررِ بیع کی کیا صورتیں ہیں، امید کہ حضرت والا ان امور سے ضرور بالتفصیل مع حوالہ کتاب آگاہ فرمائیں گے۔ بینوا توجروا

الجواب: یہ بیع فاسد ہے، عالمگیریہ میں ہے:

عربی	اردو
اما اشائط الصحة فمنها ان یکون البیع معلوما و الثمن معلوماً علماً یمنع من المنازعة فبیع المجهول جهالة تقضی الیها غیر صحیح کبیع شاة من هذا	بیع کے صحیح ہونے کی شرط میں سے یہ ہے کہ مبیع معلوم ہو اور ثمن معلوم ہو اس طور پر کہ جھگڑا نہ پیدا ہو چنانچہ ایسی مجہول چیز کی بیع صحیح نہیں جس سے جھگڑا پیدا نہ ہو، جیسے کہا جائے کہ اس گلہ میں سے ایک

عربی	اردو
القطيع و بيع الشيئ بيقيمته و بحكم فلان 1۔	بکری کی بیع یا اس شے کی بیع اس کی قیمت کے ساتھ یا فلاں کے فیصلے کے مطابق بیع۔ (ت)

بکر نے جبکہ تعیین ثمن انقضائے مجلس بیع کے بعد کی وہ فساد بالا جماع متقرر ہوگیا اب نہیں اٹھ سکتا جب تک یہ بیع فسخ نہ کی جائے۔ ردالمحتار میں ہے:

عربی	اردو
فی النهاية والفتح وغيرهما قال شمس الائمة الحلوانی وان علم بالرقم في	نہایتہ اور فتح وغیرہ میں ہے شمس الائمہ حلوانی نے فرمایا کہ اگر چہ مشتری کو مجلس کے اندر لکھی ہوئی

1 فتاوی ہندیہ کتاب البیع الباب الاول نورانی کتب خانہ پشاور ۳/۳ Page 177 of 715

Fatawa Razawiya (Volume 17)

[Table 1] Arabic: The session does not turn that contract into a valid one, but if the seller remains satisfied and the buyer also becomes satisfied with it, a contract is concluded between them by mutual consent. Finished (ah). In 'Al-Fath', it was expressed as 'At-Ta'ati' (mutual delivery), and the meaning of both is the same. Finished (ah).

Urdu: The price will be known _____ even then the contract will not be valid, but if the seller stands by his consent and the buyer also agrees to it, then a contract will be concluded between them by mutual consent, etc. In 'Al-Fath', this is expressed as 'Ta'ati' and the meaning of both is the same. (T) (This Urdu sentence is repeated twice in the original text)

[Table 2] And the words of 'Al-Fath' are these: Arabic: And its validity, if known in the session through another contract, is 'At-Ta'ati' as Al-Halwani said. Finished (ah). I say: This specification is that 'At-Ta'ati' after a void contract, if it occurs in the session, does not require a prior abandonment of that void contract, unlike after the session. Do you not see his restriction by his saying 'if known in the session'? Otherwise, the conclusion of a sale through a new contract does not depend on it being in the first session. Thus, reconciliation has been achieved, even if Ash-Shami found it unlikely and noted that they are two reports—namely, the requirement of abandonment in 'At-Ta'ati' after a void contract and its absence. So understand, and success is from Allah.

Urdu: Its validity, upon becoming known in the assembly, is through another contract which is 'At-Ta'ati' as Al-Halwani said. I say: This specification is to state that indeed when 'At-Ta'ati' occurs after a void contract within the same assembly, it does not require the prior abandonment of that void contract, unlike 'At-Ta'ati' occurring after the assembly. Do you not see that 'Al-Fath' placed a restriction through its saying 'when he knows it in the assembly'? Otherwise, the conclusion of a sale through a new contract is not dependent on being in the first assembly. Reconciliation and synchronization (of various texts) have been achieved, even though Ash-Shami considered it remote and, as a precaution, stated that these are two reports—meaning, the condition of abandonment in 'At-Ta'ati' after a void contract and its absence. So understand, and success is only from Allah the Almighty. (T)

[Table 3] Then Ash-Shami said: Arabic: And he asserted the contrary in Al-Hindiyyah at the end of the chapter. Urdu: In Al-Hindiyyah, at the end of the Chapter of Murabaha, it is contrary to this.

[Footnotes] 1 Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Dar Ihya at-Turath al-Arabi, Beirut, 4/12. 2 Fath al-Qadir, Kitab al-Buyu', Maktaba Nooria Razaviya, Sukkur, 5/274.

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

[तालिका 1] अरबी: मजलिस उस अनुबंध को वैध नहीं बनाती है, लेकिन यदि विक्रेता अपनी रज़ामंदी पर कायम है और खरीदार भी उस पर सहमत हो जाता है, तो उनके बीच आपसी सहमति से अनुबंध संपन्न हो जाएगा। 'अल-फतह' में इसे 'तआती' (पारस्परिक सुपुर्दगी) के रूप में व्यक्त किया गया है, और दोनों का अर्थ एक ही है।

उर्दू: कीमत मालूम होगी _____ तो भी अनुबंध वैध नहीं होगा, लेकिन यदि विक्रेता रज़ामंदी पर कायम है और खरीदार भी उस पर सहमत हो गया है, तो उनके बीच आपसी रज़ामंदी से अनुबंध संपन्न हो जाएगा, इत्यादि। फ़तह में इसे 'तआती' से व्यक्त किया गया है और दोनों का अर्थ एक ही है। (त) (यह वाक्य मूल उर्दू पाठ में दो बार दोहराया गया है)

[तालिका 2] और 'फ़तह' के शब्द ये हैं: अरबी: मजलिस में दूसरे अनुबंध के माध्यम से ज्ञात होने पर इसकी वैधता 'तआती' है, जैसा कि हलवानी ने कहा। मैं कहता हूँ: यह विनिर्देश इसलिए है कि वास्तव में जब फासिद (शून्य) अनुबंध के बाद उसी मजलिस में 'तआती' होती है, तो उसे उस फासिद अनुबंध के पूर्व परित्याग की आवश्यकता नहीं होती है, मजलिस के बाद होने वाली 'तआती' के विपरीत। क्या आप नहीं देखते कि 'फतह' ने अपने इस कथन के माध्यम से शर्त लगाई कि 'जब वह मजलिस में ज्ञात हो'? अन्यथा, नए अनुबंध के साथ बिक्री का संपन्न होना इस बात पर निर्भर नहीं करता कि वह पहली मजलिस में हो। विभिन्न कथनों के बीच सामंजस्य और अनुकूलन प्राप्त हो गया है, हालांकि शामी ने इसे दूर की बात माना और सावधानी बरतते हुए कहा कि वास्तव में ये दो अलग-अलग रिपोर्ट हैं—यानी फासिद अनुबंध के बाद 'तआती' में परित्याग की शर्त होना और शर्त न होना। अतः समझें और सफलता अल्लाह की ओर से है।

उर्दू: मजलिस में मालूम हो जाने पर इसकी वैधता दूसरे अनुबंध के साथ है जो कि तआती है जैसा कि हलवानी ने फरमाया। मैं कहता हूँ यह मामला स्पष्ट करने के लिए है कि बेशक तआती जब फासिद अनुबंध के बाद मजलिस में हो तो वह पहले फासिद अनुबंध को छोड़ने की मोहताज नहीं होती, मजलिस के बाद वाली तआती के उलट। क्या आप नहीं देखते कि फतह ने अपने कौल में यह शर्त लगाई कि 'जब वह उसे मजलिस में जान ले'? वरना नए अनुबंध के साथ बिक्री का होना मजलिस-ए-अव्वल में होने पर मुनहसिर नहीं है। तहकीक (विभिन्न इबारतों में) सुलह और तालमेल हासिल हो गया है, हालांकि शामी ने इसे मुश्किल माना और एहतियात बरतते हुए कहा कि बेशक ये दो रिवायतें

हैं यानी फासिद अनुबंध के बाद तआती में मुतारका की शर्त होना और शर्त न होना। तो समझो और तौफीक अल्लाह तआला ही की तरफ से है। (त)

[तालिका 3] फिर शामी ने कहा: अरबी: और उसने हिंदिया में बाब के अंत में इसके विपरीत बात की पुष्टि की है। उर्दू: हिंदिया में बाब अल-मुराबहा के अंत में इसके विपरीत।

[फुटनोट्स] 1 रद अल-मुह्तार, किताब अल-बुयूं, दार इह्या अत-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 4/12 2 फतह अल-कादिर, किताब अल-बुयूं, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 5/274

فتاوی رضویہ (جلد ۱۷)

[جدول ۱] عربی: المجلس لاینقلب ذلك العقد جائزا ولكن ان كان البائع دائما على الرضا فرضی به المشتری ینعقد بینهما عقد بالتراضی اھ وعبر فی الفتح بالتعاطی والمراد واحد اھ

اردو: قیمت معلوم ہوگی __ **تو بھی عقد جائز نہیں ہوگا لیکن اگر بائع رضامندی پر قائم ہے اور مشتری بھی اس پر راضی ہو گیا تو دونوں کی باہمی رضامندی سے عقد ان کے درمیان منعقد ہو جائے گا الخ فتح میں اس کو تعاطی سے تعبیر کیا گیا اور مراد دونوں سے ایک ہی ہے اھ (ت) قیمت معلوم ہوگی** ____ تو بھی عقد جائز نہیں ہوگا لیکن اگر بائع رضامندی پر قائم ہے اور مشتری بھی اس پر راضی ہو گیا تو دونوں کی باہمی رضامندی سے عقد ان کے درمیان منعقد ہو جائے گا الخ فتح میں اس کو تعاطی سے تعبیر کیا گیا اور مراد دونوں سے ایک ہی ہے اھ (ت)

[جدول ۲] اور لفظ فتح یہ ہیں: عربی: وجواز اذا علم فی المجلس بعقد أخر هو التعاطی كما قاله الحلوانی اھ اقول: وهذا التعیین ان التعاطی بعد عقد فاسد اذا وقع فی المجلس لایحتاج الی سبقة متاركة ذلك الفاسد بخلافه بعد المجلس الاتری الی تقییده بقوله اذا علم فی المجلس والا فحصول البیع بعقد جدید لا یتوقف علی كونه فی المجلس الاول فقد حصل التوفیق وان استبعده الشامي و استظهر انهما روایتان اعنی اشتراط المتاركة فی التعاطی بعد الفاسد وعدمه فافهم وباللہ التوفیق۔

اردو: مجلس میں معلوم ہو جانے پر اس کا جواز دوسرے عقد کے ساتھ ہے جو کہ تعاطی ہے جیسا کہ حلوانی نے فرمایا اھ میں کہتا ہوں یہ امر کی تعیین کے لئے ہے کہ بیشک تعاطی جب عقد فاسد کے بعد مجلس میں واقع ہو تو وہ پہلے اس عقد فاسد کے متارکہ کی محتاج نہیں ہوتی بخلاف مجلس کے بعد تعاطی کے، کیا تو نہیں دیکھتا کہ فتح نے اپنے اس قول کے ذریعے قید لگائی کہ "جب اس

کو مجلس میں معلوم ہو" ورنہ عقدِ جدید کے ساتھ بیع کا حصول اس بات پر موقوف نہیں کہ وہ مجلسِ اول میں ہو تحقیق (مختلف عبارتوں میں) توفیق و تطبیق حاصل ہوگئی اگرچہ شامی نے اس کو بعید جانا اور احتیاط برتتے ہوئے کہا کہ بیشک یہ دو روایتیں ہیں یعنی عقدِ فاسد کے بعد تعاطی میں متارکہ کا شرط ہونا اور شرط نہ ہونا پس سمجھ اور توفیق اللہ تعالی ہی کی طرف سے ہے۔ (ت)

[جدول ۳] پھر شامی نے فرمایا: عربی: وجزم بخلاف فی الھندیۃ آخر باب اردو: ہندیہ میں باب المرابحہ کے آخر میں اس کے خلاف

[حواشی] ۱ ردالمحتار کتاب البیوع داراحیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۱۲ ۲ فتح القدیر کتاب البیوع مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۵ / ۲۷۴

Fatawa Razawiyya Volume 17

Regarding Murabaha, it is mentioned that knowing the price within the session (Majlis) makes it as if it were the beginning of the contract, and it becomes similar to delaying the acceptance until the end of the session. The author of Al-Fath has also affirmed this there (1).

I say (firstly): Allama Shami has strayed from the argument. In the investigation of the chapter on 'Option of Condition' (Khiyar al-Shart) in Al-Hidayah, it is stated that indeed the seller removed the invalidating factor before the invalidity became established, so the sale became valid. This is like someone selling at a written price and then informing the buyer of that price within the session, etc. Al-Fath and other commentators have upheld this. In Al-Fath, at the beginning of the Book of Sales (Kitab al-Buyu'), it is mentioned that among the things with which a sale is impermissible is: selling something for its value, or for what it settles at, or for what you want, or for what the seller bought it for, or for the like of what so-and-so bought it for. These are not permissible. However, if the buyer learns the amount of the price within the session and agrees to it, the sale becomes valid, etc. Al-Bada'i states: If the seller says, 'I sold this slave for his value,' the sale is invalid because the value varies according to different appraisers, making the price unknown. Similarly, if he sells at the discretion of the buyer or at the discretion of so-and-so.

---

1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/12
2. Al-Hidayah, Kitab al-Buyu', Bab Khiyar al-Shart, Matba' Yusufi, Lucknow, 3/34
3. Fath al-Qadir, Kitab al-Buyu', Maktaba Nooria Razawiya, Sukkur, 5/467

फतावा रज़विया जिल्द 17

मुराबाहा के बारे में उल्लेख किया गया है कि मजलिस (बैठक) के भीतर मूल्य का ज्ञान अनुबंध की शुरुआत की तरह माना जाता है, और यह मजलिस के अंत तक स्वीकृति को स्थगित करने जैसा हो जाता है। 'फतह' के लेखक ने भी वहां इसी पर ज़ोर दिया है (1)।

मैं कहता हूँ (पहली बात): अल्लामा शामी तर्क से दूर हो गए हैं। 'हिदाया' के'खियार अल-शर्त' (शर्त के विकल्प) अध्याय के शोध में कहा गया है कि वास्तव में विक्रेता ने अमान्यता स्थापित होने से पहले अमान्य करने वाले कारक को समाप्त कर दिया, इसलिए बिक्री मान्य हो गई। यह वैसा ही है जैसे किसी ने लिखी हुई कीमत पर बिक्री की और मजलिस के भीतर खरीदार को वह कीमत बता दी, इत्यादि। 'फतह' और अन्य टिप्पणीकारों ने इसे बरकरार रखा है। 'फतह' में 'किताब अल-बुयू' (बिक्री की पुस्तक) की शुरुआत में उन चीज़ों का उल्लेख है जिनके साथ बिक्री नाजायज़ है: किसी चीज़ को उसके मूल्य के बदले बेचना, या जो तय हो जाए, या जो आप चाहें, या जितने में विक्रेता ने खरीदा, या अमुक व्यक्ति ने जितने में खरीदा उसके समान मूल्य पर। इन सभी स्थितियों में बिक्री नाजायज़ है। फिर, यदि खरीदार को मजलिस के भीतर कीमत की मात्रा का पता चल जाता है और वह उस पर सहमत हो जाता है, तो बिक्री जायज़ हो जाएगी, इत्यादि। 'अल-बदाई' में कहा गया है: यदि विक्रेता कहता है, 'मैंने इस गुलाम को उसके मूल्य के बदले बेचा', तो बिक्री अमान्य है क्योंकि अलग-अलग मूल्यांककों के अनुसार मूल्य भिन्न होता है, जिससे कीमत अज्ञात हो जाती है। इसी तरह, यदि वह खरीदार के फैसले या अमुक व्यक्ति के फैसले पर बेचता है।

---

1. रद्द अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 4/12
2. अल-हिदाया, किताब अल-बुयू, बाब खियार अल-शर्त, मतबा यूसुफी, लखनऊ, 3/34
3. फतह अल-कादिर, किताब अल-बुयू, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 5/467

पृष्ठ 179/715

المرابحة وذكر ان العلم في المجلس يجعل كابتداء العقد ويصير كتأخير القبول الى آخر المجلس وبه جزم في الفتح هناك ايضا اهـ 1 - پر جزم کیا اور ذکر کیا کہ مجلس میں معلوم ہونے کو ابتداء عقد کی مانند بنایا جائے گا اور یہ آخر مجلس تک قبول کو مؤخر کرنے کی طرح ہو جائے گا اور یہاں پر فتح نے بھی اسی پر جزم کیا ہے۔

اقول اولا : لقد ابعد الحجة فقد قال في الهداية من باب خيار الشرط انه اسقط المفسد قبل تقرره فيعود جائزا كما اذا باع بالرقم واعمله في المجلس 2 اهـ واقره الفتح و الشراح اقول : (میں کہتا ہوں) اولا : علامہ شامی دلیل سے دور ہو گئے تحقیق ہدایہ کے باب خیار الشرط میں فرمایا کہ بیشک بائع نے مفسد کو فساد کے مستحکم ہونے سے قبل ساقط کردیا تو بیع جائز ہو گئی جیسا کہ کسی نے لکھی ہوئی قیمت پر بیع کی اور مجلس کے اندر مشتری کو وہ قیمت بتادی الخ فتح اور شارحین نے اسے برقرار رکھا، فتح میں کتاب البیوع کے آغاز میں فرمایا جن چیزوں کے ساتھ بیع ناجائز ہے ان میں سے یہ ہے کہ کوئی چیز کی بیچ اس کی قیمت کے بدلے میں یا اس چیز کے بدلے جس سے بیع حلال ہو یا بائع مشتری کو یہ کہے کہ جتنی قیمت تو چاہے اس کے بدلے میں بیچتا ہوں یا کہے جتنے پر اس نے خریدا ہے اس کے بدلے میں یا کہے جتنے پر فلاں نے خریدا اس کی مثل قیمت کے بدلے میں، تو ان تمام صورتوں میں بیع ناجائز ہے پھر اگر مشتری کو مجلس کے اندر قیمت کی مقدار معلوم ہو گئی اور وہ اس پر رضامند ہوا تو بیع جائز ہو جائے گی الخ۔ بدائع نے فرمایا کہ اگر بائع نے کہا میں نے غلام اس کی قیمت کے عوض بیچا۔ وقال في الفتح صدر البيوع ممالا يجوز البيع به البيع بقيمته او بما حل به او بما تريد او بما اشتراه او بمثل ما اشترى فلان لايجوز فان علم المشترى بالقدر في المجلس فرضيه عاد جائزا اهـ 3 - وقال في البدائع لو قال بعت هذا العبد بقيمته

فالبیع فاسد لان قیمته تختلف باختلاف المقومین فکان الثمن مجهولا وکذا اذا باع بحکم المشتری او بحکم فلان۔

---

1 رد المحتار کتاب البیوع داراحیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۱۲ 2 الہدایه کتاب البیوع باب خیار الشرط مطبع یوسفی لکهنؤ ۳ / ۳۴ 3 فتح القدیر کتاب البیوع مکتبہ نوریہ رضویہ سکهر ۵ / ۴۶۷

[Arabic Text Section]: Because it is not known what judgment so-and-so will pass, and ignorance of the price prevents the validity of the sale. However, if it becomes known and he agrees to it, the sale is valid because the ignorance has been removed within the assembly (majlis), and it holds the ruling of the state of the contract, as if it were known at the time of the contract. But if it is not known until they separate, the corruption (fasad) is confirmed.[1] [Summary] And in them also from Abu Hanifa (may Allah be pleased with him): "The total price is unknown at the time of the contract, an ignorance that leads to dispute, thus necessitating the corruption of the contract. According to us, if it is removed within the assembly, the contract turns towards validity because the assembly, even if long, has the ruling of the moment of the contract."[2] [Summary] And in it also: "If he bought a garment by its marked price and the buyer did not know its marked price until the sale became corrupt, then..."

[Urdu Text Section]: Then the sale is corrupt (fasid) because the price of this slave will vary based on different appraisers. Thus, the price will be unknown (majhul). Similarly, if a slave is sold in exchange for something determined by the buyer or a specific person, the sale will still be corrupt because it is not known what that person will decide, and ignorance of the price prevents the validity of the sale. Then, when the buyer comes to know the price and agrees to it, the sale becomes valid because the ignorance was removed within the assembly itself. So it becomes as if it was known at the time of the contract. And if the price was not known until the seller and buyer separated, the corruption became firm. [Summary]. And in the same source is this saying of Imam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him) that if at the time of the contract the entire price is unknown in such a way that the ignorance leads to a dispute, then it will cause the corruption of the contract. According to us, when the ignorance is removed within the assembly, the contract reverts to being valid because the assembly, even if long, carries the ruling of the time of the contract. [Summary]. And in it is also this: when someone bought clothes in exchange for a written price and the buyer did not know that written price, until the sale became corrupt, then...

---

1. Bada'i as-Sana'i, Kitab al-Buyu', Section: Conditions of Validity, H.M. Saeed Company, Karachi, 5/158.
2. Bada'i as-Sana'i, Kitab al-Buyu', Section: Conditions of Validity, H.M. Saeed Company, Karachi, 5/159. Page 180 of 715

[अरबी पाठ अनुभाग]: क्योंकि यह ज्ञात नहीं है कि फलां व्यक्ति क्या निर्णय देगा, और कीमत की अज्ञानता (जहालत) बिक्री की वैधता को रोकती है। लेकिन अगर यह ज्ञात हो जाए और वह इससे सहमत हो जाए, तो बिक्री जायज़ है क्योंकि अज्ञानता सभा (मजलिस) के भीतर ही समाप्त हो गई है, और इसका वही हुक्म है जो अनुबंध (अक़्द) की स्थिति का है, जैसे कि यह अनुबंध के समय ज्ञात था। लेकिन यदि उनके अलग होने तक इसका पता न चले, तो भ्रष्टाचार (फ़साद) पक्का हो जाता है।[1] [संक्षिप्त] और उनमें इमाम अबू हनीफा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से यह भी है: "अनुबंध के समय कुल कीमत अज्ञात थी, ऐसी अज्ञानता जो विवाद की ओर ले जाती है, इस प्रकार अनुबंध के भ्रष्टाचार का कारण बनती है। हमारे अनुसार, यदि सभा के भीतर यह समाप्त हो जाए, तो अनुबंध वैधता की ओर लौट आता है क्योंकि सभा, भले ही लंबी हो, अनुबंध के क्षण का हुक्म रखती है।"[2] [संक्षिप्त] और उसमें यह भी है: "यदि उसने अपनी लिखित कीमत पर कपड़ा खरीदा और खरीदार को उसकी लिखित कीमत का पता नहीं चला जब तक कि बिक्री दूषित (फ़ासिद) नहीं हो गई, फिर..."

[उर्दू पाठ अनुभाग]: तो बिक्री फ़ासिद (दूषित) है क्योंकि अलग-अलग कीमत लगाने वालों के आधार पर इस गुलाम की कीमत अलग-अलग होगी। इस तरह कीमत अज्ञात (मजहूल) होगी। इसी तरह अगर गुलाम उस चीज़ के बदले बेचा गया जिसका फैसला खरीदार या फलां व्यक्ति करेगा, तो भी बिक्री फ़ासिद होगी क्योंकि यह ज्ञात नहीं है कि फलां व्यक्ति क्या फैसला करेगा, और कीमत की अज्ञानता बिक्री की वैधता के लिए बाधक है। फिर जब खरीदार को कीमत का पता चला और वह उस पर सहमत हो गया, तो बिक्री जायज़ हो जाएगी क्योंकि अज्ञानता सभा के भीतर ही दूर हो गई। तो यह वैसा ही हो गया जैसे कि अनुबंध के समय ज्ञात था। और अगर कीमत का पता तब तक नहीं चला जब तक विक्रेता और खरीदार अलग नहीं हो गए, तो भ्रष्टाचार पक्का हो गया। [संक्षिप्त]। और इसी में इमाम अबू हनीफा (रज़ियल्लाहु अन्हु) का यह कथन भी है कि यदि अनुबंध की स्थिति में पूरी कीमत इस तरह अज्ञात हो कि अज्ञानता झगड़े तक पहुँचा दे, तो यह अनुबंध के भ्रष्टाचार का कारण बनेगी। और हमारे अनुसार जब सभा के भीतर अज्ञानता दूर हो जाए, तो अनुबंध वैधता (जवाज़) की ओर लौट आता है क्योंकि सभा चाहे लंबी हो, उसका हुक्म अनुबंध के समय वाला ही होता है। [संक्षिप्त]। और इसी में यह भी है कि जब किसी ने लिखित मूल्य के बदले कपड़ा खरीदा और खरीदार को उस लिखित मूल्य का पता नहीं था, यहाँ तक कि बिक्री फ़ासिद हो गई, फिर...

1. बदाइ-उस-सनाइ, किताब-उल-बुयू, अनुभाग: वैधता की शर्तें, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 5/158।
2. बदाइ-उस-सनाइ, किताब-उल-बुयू, अनुभाग: वैधता की शर्तें, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 5/159। पृष्ठ 180/715

[عربی متن کا حصہ]: لانه لایدری بما ذا یحکم فلان وجهالة الثمن تمنع صحة البیع فاذا علم ورضی به جاز البیع لان الجهالة قد زالت في المجلس وله حکم حالة العقد فصار کانه کان معلوماً عند العقد وان لم یعلم به حتی افترقا تقرر الفساد[1] اه مختصرا وفیهما ایضاً لابی حنیفة رضي الله تعالیٰ عنه ان جملة الثمن مجهولة حالة العقد جهالة مفضیة الی المنازعة فتوجب فساد العقد و عندنا اذا ارتفعت فی المجلس ینقلب العقد الی الجواز لان المجلس وان طال فله حکم ساعة العقد[2] اهـ وفیها ایضاً اذا اشتری ثوبا برقمه ولم یعلم المشتری رقمه حتی فسد البیع ثم

[اردو متن کا حصہ]: تو بیع فاسد ہے کیونکہ مختلف قیمت لگانے والوں کے اعتبار سے اس غلام کی قیمت مختلف ہوگی تو اس طرح ثمن مجہول ہوگا اس طرح اگر غلام بیچا اس چیز کے بدلے میں جس کا فیصلہ مشتری یا فلاں شخص کرے گا تو بھی بیع فاسد ہوگی کیونکہ معلوم نہیں فلاں شخص کیا فیصلہ کریگا اور جہالت ثمن صحت بیع سے مانع ہے پھر جب مشتری کو ثمن کا علم ہوا اور وہ اس پر رضامند ہوگیا تو بیع جائز ہوجائے گی کیونکہ جہالت مجلس کے اندر ہی زائل ہوگئی تو یہ ایسے ہی ہوگیا جیسے گویا کہ عقد کے وقت معلوم تھا اور اگر ثمن کا علم نہ ہوا یہاں تک کہ بائع اور مشتری متفرق ہوگئے تو فساد مستحکم ہوگیا اھ مختصرا۔ اور اسی میں امام ابوحنیفہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ کا یہ قول بھی ہے کہ اگر حالت عقد میں تمام ثمن اس طرح مجہول ہوں کہ جہالت جھگڑے تک پہنچائے تو یہ فساد عقد کا موجب بنے گی اور ہمارے نزدیک جب مجلس کے اندر جہالت رفع ہو جائے تو عقد جواز کی طرف پلٹ آتا ہے کیونکہ مجلس اگرچہ طویل ہو اس کا حکم ساعت عقد والا ہی ہوتا ہے اھ اور اسی میں یہ بھی ہے کہ جب کسی نے لکھی ہوئی قیمت کے بدلے میں کپڑا خریدا اور مشتری کو اس لکھی ہوئی قیمت کا علم نہیں ہے حتی کہ بیع فاسد ہوئی پھر

1 بدائع الصنائع کتاب البیوع فصل و اما شرائط الصحة ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۵/ ۱۵۸ 2 بدائع الصنائع کتاب البیوع فصل و اما شرائط الصحة ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۵/ ۱۵۹ Page 180 of 715

Fatawa Rizwia (Volume 17)

[Right Column - Urdu] ...he became aware of its written price. Even if this knowledge came before the separation (of the parties) and he chose to proceed with the sale, then according to us, the sale becomes valid. However, if he came to know the written price after the separation, then by consensus (Ijma'), the sale will not be valid, etc.

Secondly: I searched through the entire chapter on 'Murabahah' (profit-sharing sale) in 'Al-Hindiyyah'. I did not find the aforementioned reasoning in it, neither in the Egyptian edition nor in the Indian edition. However, indeed, at the beginning of the chapter on Murabahah, it is stated: If someone sells a ten-rupee item for eleven as a profit (called 'dah-yazah'), it is not permissible unless the buyer learns the price while still in the same session (Majlis). In that case, the sale becomes valid and the buyer has the option. If he chooses the contract, then by way of 'Istihsan' (juristic preference), eleven units will be binding upon him. Similarly, if he sold that thing as 'Tawliyah' (sale at cost price) and the buyer does not know how much it cost the seller, the sale is not permissible. But if the buyer learns the price within the session, it is permissible and the buyer will have the option; this is also mentioned in 'Muheet al-Sarakhsi' (End of Quote). And at the end of the chapter, it says that if a person transfers something to another as 'Tawliyah' for whatever it cost him, and the buyer does not know that cost, the sale is corrupted (invalid). Then if the seller informs him...

[Left Column - Arabic] ...knowledge of its written price. If it is known before the separation and he chooses the sale, it is permissible according to us. And if it is after the separation, it is not permissible by consensus (End of Quote).

Secondly: I have tracked the entire chapter of Murabahah in 'Al-Hindiyyah', and I did not see what was mentioned of the reasoning in it, neither in the Egyptian edition nor in the Indian edition. Indeed, it said in both of them at the beginning of the chapter of Murabahah: if he sells it with a profit of 'dah-yazah' (ten-for-eleven), it is not permissible unless the price is known in the session (Majlis). Then it is permissible and he (i.e., the buyer) has the option. So if he chooses the contract, eleven is binding on him by way of preference (Istihsan). And similarly, if he sells it as Tawliyah and the buyer does not know how much it cost him, it is not permissible unless the price is known in the session, then it is permissible and he has the option. Thus it is in 'Muheet al-Sarakhsi' [Footnote 2] (End of Quote). And it said at the end of the

chapter: whoever transfers to a person something for what it cost him, and the buyer does not know how much it cost him, the sale is corrupted (invalid). Then if the seller informs him...

[Footnotes] 1. Bada'i' al-Sana'i', Kitab al-Buyu', Chapter: And as for the conditions of validity, H.M. Saeed Company, Karachi, 15/178. 2. Fatawa al-Hindiyyah, Chapter Fourteen, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 3/160.

फ़तावा रिज़विया (खंड 17)

[दायाँ कॉलम - उर्दू] ...उसे इसकी लिखी हुई कीमत का पता चल गया। भले ही यह ज्ञान अलग होने (जुदाई) से पहले हुआ हो और उसने बिक्री को जारी रखने का विकल्प चुना हो, तो हमारे अनुसार बिक्री मान्य हो गई। और यदि जुदाई के बाद उसे लिखी हुई कीमत का पता चला, तो सर्वसम्मति (इज्मा) से बिक्री मान्य नहीं होगी, आदि।

दूसरा: मैंने 'अल-हिंदिया' के'मुरबाहा' (लाभ-साझाकरण बिक्री) के पूरे अध्याय को खोजा। मैंने उसमें उल्लिखित तर्क नहीं देखा, न ही मिस्र के संस्करण में और न ही भारतीय संस्करण में। हाँ, वास्तव में मुरबाहा के अध्याय की शुरुआत में यह कहा गया है: यदि किसी ने दस की चीज़ लाभ के रूप में ग्यारह के बदले बेची (जिसे 'दह-याज़ह' कहा जाता है), तो यह तब तक जायज़ नहीं है जब तक कि खरीदार को उसी मजलिस (बैठक) में कीमत का पता न चल जाए। उस स्थिति में, बिक्री जायज़ हो जाएगी और खरीदार के पास विकल्प होगा। यदि वह अनुबंध चुनता है, तो 'इस्तेहसान' (न्यायशास्त्रीय वरीयता) के तौर पर उस पर ग्यारह अनिवार्य होंगे। इसी तरह, यदि उसने वह चीज़ 'तवलिया' (लागत मूल्य पर बिक्री) के रूप में बेची और खरीदार नहीं जानता कि बेचने वाले को वह कितने में पड़ी, तो बिक्री जायज़ नहीं है। लेकिन अगर मजलिस के अंदर उसे कीमत मालूम हो गई, तो जायज़ है और खरीदार को विकल्प होगा; ऐसा 'मुहीत अल-सरख़सी' में भी है (समाप्त)। और अध्याय के अंत में कहा गया है कि जिस व्यक्ति ने किसी पर तवलिया के रूप में कोई चीज़ इतने में बेची जितने में बेचने वाले को वह पड़ी थी, और खरीदार को उस लागत का पता नहीं है, तो यह बिक्री अमान्य (फ़ासिद) हुई। फिर अगर बेचने वाला...

[बायाँ कॉलम - अरबी] ...उसकी लिखी हुई कीमत का ज्ञान। यदि अलग होने से पहले पता चल जाए और वह बिक्री चुन ले, तो हमारे यहाँ जायज़ है। और यदि अलग होने के बाद हो, तो सर्वसम्मति से जायज़ नहीं है (समाप्त)।

दूसरा: मैंने 'हिंदिया' के मुरबाहा के पूरे अध्याय का अनुसरण किया, और मैंने उसमें वह नहीं देखा जो तर्क का उल्लेख किया गया था, न ही मिस्र के संस्करण में और न ही भारतीय संस्करण में। वास्तव में, उन दोनों में मुरबाहा के अध्याय की शुरुआत में कहा गया है: यदि वह उसे 'दह-याज़ह' (दस-के ग्यारह) के लाभ के साथ बेचता है, तो यह जायज़ नहीं है जब तक कि मजलिस (बैठक) में कीमत ज्ञात न हो जाए। फिर यह जायज़ है और उसके पास (अर्थात खरीदार के पास) विकल्प है। तो यदि वह

अनुबंध चुनता है, तो इस्तेहसान (वरीयता) के रूप में उस पर ग्यारह अनिवार्य हैं। और इसी तरह यदि वह इसे 'तवलिया' के रूप में बेचता है और खरीदार नहीं जानता कि उसे यह कितने में पड़ा, तो यह जायज़ नहीं है जब तक कि मजलिस में कीमत ज्ञात न हो जाए, तब यह जायज़ है और उसके पास विकल्प है। ऐसा ही 'मुहीत अल-सरख़सी' [पादलेख 2] में है (समाप्त)। और अध्याय के अंत में कहा गया: जिसने किसी व्यक्ति को कोई चीज़ उस लागत पर सौंपी जो उसे पड़ी थी, और खरीदार नहीं जानता कि उसे यह कितने में पड़ी, तो बिक्री भ्रष्ट (अमान्य) हो गई। फिर यदि बेचने वाले ने उसे सूचित किया...

[पादलेख] 1. बदाए अल-सनाए, किताब अल-बुयूँ, अध्याय: और वैधता की शर्तों के संबंध में, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 15/178। 2. फ़तावा अल-हिंदिया, चौदहवां अध्याय, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 3/160।

पृष्ठ 181 / 715

[دایاں کالم - اردو] اسے لکھی ہوئی قیمت کا علم ہوا اگر چہ یہ علم افتراق سے قبل ہو اور اس نے بیع کو اختیار کرلیا تو ہمارے نزدیک بیع جائز ہوگئی اور اگر افتراق کے بعد اسے لکھی ہوئی قیمت کا علم ہوا تو بالاتفاق بیع جائز نہیں ہوگی الخ،

وثانیا: میں نے ہندیہ کا تمام باب مرابحہ تلاش کیا تعلیل مذکورہ میں نے اس میں نہیں دیکھی نہ مصری نسخے میں اور نہ ہندی نسخے میں، ہاں بیشک اس کے اندر باب مرابحہ کے شروع میں یہ فرمایا اگر کسی نے دہ یازدہ یعنی دس کی چیز بطور نفع گیارہ کے بدلے میں فروخت کی تو جائز نہیں مگر جب مجلس میں ہی مشتری کو ثمن کا علم ہوگیا تو بیع جائز ہوگئی اور مشتری کو اختیار ہے اگر اس نے عقد کو اختیار کیا تو بطور استحسان اس پر گیارہ لازم ہوں گے یونہی اگر وہ چیز بطور تولیہ بیچی اور مشتری نہیں جانتا کہ اسے کتنے میں پڑے گی تو بیع جائز نہیں مگر جب مجلس کے اندر اس کو ثمن معلوم ہوگئے تو جائز ہے اور مشتری کو اختیار ہوگا اس طرح محیط سرخسی میں ہے اھ اور باب کے آخر میں کہا کہ جس شخص نے کسی مرد پر بطور تولیہ کوئی شیئ اتنے میں بیچی جتنے میں بائع کو پڑی اور مشتری کو اس کا علم نہ ہو تو یہ فاسد ہوئی، پھر اگر بائع---

[بایاں کالم - عربی] علم رقمہ فان علم قبل الافتراق واختار البیع جاز عندنا و ان کان بعد الافتراق لا یجوز بالاجماع اھ

وثانیا: تتبعت جمیع باب المرابحۃ من الہندیۃ فلم ار فیھا ما ذکر من التعلیل لا فی النسخۃ المصریۃ ولا فی الہندیۃ وانما قال فیھما اول باب المرابحۃ ان باعہ بربح دہ یازدہ لایجوز الا اذا علم الثمن فی المجلس

فیجوز ولہ (ای للمشتری) الخیار فاذا اختار العقد یلزمہ احد عشر استحسانا و کذا لو باعہ تولیۃ ولایعلم المشتری بکم یقوم علیہ ولایجوز الا اذا علم الثمن فی المجلس فیجوز ولہ الخیار ھکذا فی محیط السرخسی ۲ اھ وقال فی اٰخر الباب من ولی رجلا شیئا بما قام علیہ ولم یعلم المشتری بکم قام علیہ فسد البیع فان اعلمہ البائع۔۔۔

[حواشی] ۱ بدائع الصنائع کتاب البیوع فصل و اما شرائط الصحۃ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱۵/ ۱۷۸ ۲ فتاویٰ ہندیہ الباب الرابع عشر نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۱۶۰

Volume 17 (17) Fatawa Razawiya

[Arabic text]: "In the session (majlis), if the sale is authenticated and the buyer is given the option: if he wishes he takes it and if he wishes he leaves it. Thus it is in al-Kafi (1). And it was said a little before it from al-Hawi: When a man sells goods with a profit of ten-eleven or something similar, and the buyer then learns the price, he may take it if he wishes or leave it if he wishes. If he knew the price before the contract, he does not have the right to return it (2). I say: what is meant is knowledge within the session, based on the evidence of what preceded and what follows." [Urdu text]: If [the seller] informs the buyer within the session, the sale is valid, and the buyer has the choice: if he wants, he can take it, and if he wants, he can leave it. This is how it is in al-Kafi. And a little before this, citing al-Hawi, it is said that if a man sold some goods bought for ten for eleven, or adopted a similar form, then when the buyer learned the price, he has the choice to take it or leave it. And if the buyer knew the price before the contract, he would not have the right to reject it, etc. I say: by this, knowledge within the session is meant, with the evidence that preceded and what comes after it.

And thirdly: The aforementioned reasoning is like a contradiction, for its end implies that it is by the first contract, and its beginning implies that it is by a new contract. And thirdly: The mentioned reasoning is like a contradiction because its end provides the benefit that it is with the first contract, and its beginning provides the benefit that it is with a new contract. (T)

The core of the contract consists of the two exchanges. In Fath al-Qadir, regarding this issue of unknown terms, it says: "The core of the contract is the two exchanges" (3) (The core of the contract is both exchanges, i.e., price and commodity. - T). This corruption can never be removed unless the contract itself is rescinded. Here, rectification within the very session of the contract is also not effective. For example, if someone sells one rupee for two rupees and then drops the extra rupee before parting ways, the contract will not return to validity. In al-Hidayah, it says:

"If he sold [expecting payment] at these times, and they agreed to drop [the term]..." If someone made a sale based on the promise of the aforementioned times.

---

1. Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Buyu', Chapter 14, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/165.

2. Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Buyu', Chapter 14, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/165.
3. Fath al-Qadir, Bab al-Bay' al-Fasid, Maktaba Nooriyah Razawiyah Sukkur, 6/88.

जिल्द सत्रह (17) फ़तावा रज़विया

[अरबी पाठ]: "सत्र (मजलिस) के भीतर, यदि बिक्री प्रमाणित हो जाती है और खरीदार को विकल्प दिया जाता है: यदि वह चाहे तो इसे ले सकता है और यदि वह चाहे तो इसे छोड़ सकता है। इसी तरह अल-काफ़ी (1) में है। और इससे थोड़ा पहले अल-हावी के हवाले से कहा गया: जब कोई व्यक्ति दस-ग्यारह के लाभ या इसी तरह के किसी लाभ पर सामान बेचता है, और फिर खरीदार को कीमत का पता चलता है, तो वह चाहे तो इसे ले सकता है या चाहे तो छोड़ सकता है। यदि उसे अनुबंध से पहले कीमत पता थी, तो उसे इसे वापस करने का अधिकार नहीं है (2)। मैं कहता हूँ: इसका अर्थ सत्र के भीतर ज्ञान है, जो पहले बताए गए और बाद में आने वाले प्रमाणों पर आधारित है।" [उर्दू पाठ]: मजलिस के अंदर खरीदार को बता दे तो बिक्री सही हो गई और खरीदार को विकल्प है अगर चाहे तो ले ले और चाहे तो छोड़ दे इसी तरह काफ़ी में है। और इससे थोड़ा पहले हावी के हवाले से कहा कि अगर किसी व्यक्ति ने कोई सामान जो दस का खरीदा हुआ था ग्यारह के बदले बेचा, इससे मिलती-जुलती कोई सूरत अपनाई, फिर जब खरीदार को कीमत का पता चला तो उसे विकल्प है चाहे तो ले ले और चाहे तो छोड़ दे और अगर खरीदार को अनुबंध से पहले कीमत मालूम हो तो उसे रद्द करने का विकल्प न होगा इत्यादि। मैं कहता हूँ इससे मुराद मजलिस के अंदर ज्ञान होना है उस दलील के साथ जो पहले गुज़री और जो इसके बाद है।

तीसरा: उल्लेखित तर्क विरोधाभासी जैसा है, क्योंकि इसका अंत यह दर्शाता है कि यह पहले अनुबंध के साथ है, और इसका प्रारंभ यह दर्शाता है कि यह एक नए अनुबंध के साथ है। तीसरा: उल्लेखित दलील विरोधाभासी की तरह है क्योंकि इसका अंत इस बात का लाभ देता है कि वह पहले अनुबंध के साथ है और इसका प्रारंभ इस बात का लाभ देता है कि वह नए अनुबंध के साथ है। (त)

अनुबंध का मुख्य हिस्सा दोनों विनिमय हैं। फतह अल-कादिर में अज्ञात समय के इसी मुद्दे में है: "अनुबंध का मुख्य हिस्सा दो विनिमय हैं" (3) (अनुबंध का मुख्य हिस्सा दोनों विनिमय हैं, यानी कीमत और वस्तु। - त)। यह खराबी कभी दूर नहीं हो सकती जब तक कि अनुबंध को ही रद्द न कर दिया जाए। यहाँ मजलिस के अंदर सुधार भी काम नहीं आता, जैसे कोई एक रुपया दो रुपये में बेचे फिर अलग होने से पहले अतिरिक्त रुपया छोड़ दे, अनुबंध वैधता की ओर नहीं लौटेगा। हिदाया में है:

"यदि उसने इन समयों के वादे पर बिक्री की और वे उसे छोड़ने पर सहमत हो गए..." अगर किसी ने इन उल्लेखित समयों के वादे पर बिक्री की।

1. फ़तावा हिन्दिया, किताब अल-बुयू, अध्याय 14, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/165।
2. फ़तावा हिन्दिया, किताब अल-बुयू, अध्याय 14, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/165।
3. फतह अल-कादिर, बाब अल-बय अल-फ़ासिद, मकतबा नूरया रज़विया सुक्कुर, 6/88।

فی المجلس صح البیع وللمشتری الخیار ان شاء اخذہ وان شاء ترکہ کذا فی الکافی ۱ اھ وقال قبیلہ عن الحاوی اذا باع الرجل المتاع بربح دہ یازدہ او ماشاکل ذلك فاذا علم المشتری بالثمن ان شاء اخذہ وان شاء ترکہ، ان علم بالثمن قبل العقد فلیس لہ ان یرد ۲ اھ اقول: والمراد العلم فی المجلس بدلیل ما تقدم و ماتاخر۔ مجلس کے اندر مشتری کو بتادے تو بیع صحیح ہو گئی اور مشتری کو اختیار ہے اگر چاہے تو لے لے اور چاہے تو چھوڑ دے اسی طرح کافی میں ہے اھ اور اس سے تھوڑا پہلے حاوی کے حوالہ سے کہا کہ اگر کسی مرد نے کوئی سامان جو دس کا خریدا ہوا تھا گیارہ کے بدلے بیچا اس سے ملتی جلتی کوئی صورت اختیار کی پھر جب مشتری کو ثمن کا علم ہوا تو اس کا اختیار ہے چاہے تو لے لے اور چاہے تو چھوڑ دے اور اگر مشتری کو عقد سے پہلے ثمن معلوم ہوں تو اسے رد کا اختیار نہ ہوگا الخ میں کہتا ہوں اس سے مراد مجلس کے اندر علم ہونا ہے اس دلیل کے ساتھ جو پہلے گزری اور جو اس کے بعد ہے۔

وثالثا: التعلیل المذکور کالمتناقض فان آخرہ یفید انہ بالعقد الاول واولہ انہ بعقد جدید۔ وثالثاً: تعلیل مذکور متناقض کی مانند ہے اس لئے کہ اس کا آخر اس بات کا فائدہ دیتا ہے کہ وہ عقد اول کے ساتھ ہے اور اس کا اول اس بات کا فائدہ دیتا ہے کہ وہ عقد جدید کے ساتھ ہے۔ (ت)

صلب عقد بدلین ہیں فتح القدیر میں اسی مسئلہ آجال مجہول میں ہے: صلب العقد بدلان ۳ (صلب عقد دونوں بدل ہیں (یعنی ثمن و مبیع)۔ت) یہ فساد کبھی مرتفع نہیں ہو سکتا جب تک کہ اس عقد ہی کو فسخ نہ کریں یہاں نفس مجلس عقد میں اصلاح بھی کار آمد نہیں جیسے ایک روپیہ دو روپے کو بیچے پھر قبل افتراق زائد روپیہ ساقط کردے، عقد صحت کی طرف عود نہ کرے گا۔ ہدایہ میں ہے:

لو باع الی هذه الاصال تراضیا باسقاط اگر کسی نے ان اوقات مذکورہ کے وعدہ پر بیع کی

---

۱ فتاوی ہندیہ کتاب البیوع الباب الرابع عشر نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۱۶۵ ۲ فتاوی ہندیہ کتاب البیوع الباب الرابع عشر نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۱۶۵ ۳ فتح القدیر باب البیع الفاسد مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶/ ۸۸

Fatawa Razawiyya Volume (17)

[Table Header/Content] [Arabic]: The term before people start harvesting and threshing and before the arrival of the pilgrims, the sale became valid. Imam Zafar said: It is not permissible because it occurred as invalid, so it does not turn into valid. Our argument is that the invalidity was due to potential dispute, and it was removed before it became established. This ignorance was in an additional condition, not in the core of the contract, so its removal is possible. This is unlike when one sells a dirham for two dirhams and then drops the additional dirham, because there, the invalidity is in the core of the contract. 1- [Urdu Explanation]: Then the seller and buyer agreed to waive this period before the people started harvesting or threshing the crops and before the arrival of the pilgrims, then the sale became valid. Imam Zafar said it would not be valid because this sale occurred as invalid, therefore it will not return to validity. Our reason is that the corruption (invalidity) was due to the fear of dispute, whereas it was removed before the corruption became established. This ignorance did not occur in the core of the contract but in an additional condition which is possible to waive. Unlike when a dirham is sold for two dirhams, then both the seller and buyer waive the extra dirham; even then, this sale will not be valid because here the corruption is in the core of the contract. (T)

And the corruption due to the absence of a condition of formation was annexed to it,

[Arabic]: For its absence nullifies the contract, not that it is contracted with the attribute of invalidity so that its correction is possible in the assembly. [Urdu Explanation]: Because the absence of a condition makes the contract void; it is not that the contract was formed with the attribute of corruption such that its correction in the assembly would be possible. (T)

In 'Inayah' of Imam Kamal Babarti, in the mentioned place, it is stated:

[Arabic]: An objection was raised that if one marries without witnesses and then brings witnesses after the marriage, it does not turn valid, even though the corruption is not in the core of the contract. The answer was given that the corruption in it is due to the lack of a condition. [Urdu Explanation]: An objection was raised against this: if someone marries without witnesses and then establishes witnesses after the marriage, that marriage will not turn towards validity, even

though in this case the corruption is not in the core of the contract. The answer given to this was that here, [the reason is] the absence of a condition.

1. Al-Hidaya, Book of Sales, Chapter on Invalid Sale, Yusuphi Press, Lucknow 3/62. Page 183 of 715

फतावा रज़विया जिल्द (17)

[तालिका शीर्षक/सामग्री] [अरबी]: लोगों के कटाई और गहाई शुरू करने से पहले और हाजियों के आने से पहले की अवधि, तो बिक्री वैध हो गई। इमाम ज़फ़र ने कहा: यह जायज़ नहीं है क्योंकि यह अमान्य (फ़ासिद) रूप में हुई है, इसलिए यह वैध नहीं होगी। हमारा तर्क यह है कि अमान्यता विवाद के डर से थी, जबकि वह अमान्यता पुख्ता होने से पहले ही दूर हो गई। और यह अज्ञानता अनुबंध के मूल (सल्ब-ए-अक़द) में नहीं थी बल्कि एक अतिरिक्त शर्त में थी जिसे खत्म करना संभव है। इसके विपरीत, यदि कोई एक दिरहम को दो दिरहम के बदले बेचे और फिर अतिरिक्त दिरहम को छोड़ दे, तब भी यह बिक्री जायज़ नहीं होगी क्योंकि यहाँ अमान्यता अनुबंध के मूल में है। 1- [उर्दू स्पष्टीकरण]: फिर बैअ (विक्रेता) और मुश्तरी (क्रेता) इस अवधि को समाप्त करने पर सहमत हो गए, इससे पहले कि लोग फसल की कटाई या गहाई शुरू करें और हाजियों के आने से पहले, तो बिक्री वैध हो गई। इमाम ज़फ़र ने कहा कि यह वैध नहीं होगी क्योंकि यह बिक्री अमान्य (फ़ासिद) हुई थी, इसलिए यह वैधता की ओर नहीं लौटेगी। हमारी दलील यह है कि फसाद (अमान्यता) तो झगड़े के डर से था, जबकि वह फसाद पुख्ता होने से पहले ही दूर हो गया। और यह अज्ञानता अनुबंध के मूल में नहीं थी बल्कि एक अतिरिक्त शर्त में हुई थी जिसे हटाना संभव है। इसके विपरीत, जब एक दिरहम को दो दिरहम के बदले बेचा गया और फिर विक्रेता और क्रेता दोनों ने अतिरिक्त दिरहम को हटा दिया, तब भी यह बिक्री वैध नहीं होगी क्योंकि यहाँ फसाद अनुबंध के मूल में है। (त)

और गठन की शर्त की अनुपस्थिति के कारण होने वाले फसाद को इससे जोड़ दिया गया,

[अरबी]: क्योंकि इसकी अनुपस्थिति अनुबंध को शून्य कर देती है, ऐसा नहीं है कि यह अमान्यता के गुण के साथ संपन्न हुआ हो कि सभा में इसका सुधार संभव हो। [उर्दू स्पष्टीकरण]: इसलिए कि शर्त का न होना अनुबंध को बातिल (शून्य) कर देता है; ऐसा नहीं है कि वह अनुबंध फसाद के गुण के साथ संपन्न हुआ हो कि सभा में उसका सुधार संभव हो। (त)

इमाम कमाल बाबरती की 'इनाया' में, उल्लिखित स्थान पर है:

[अरबी]: इस पर आपत्ति जताई गई कि यदि कोई गवाहों के बिना निकाह करता है और फिर निकाह के बाद गवाह बनाता है, तो वह वैध नहीं होता, भले ही फसाद अनुबंध के मूल में न हो। उत्तर दिया गया कि इसमें फसाद शर्त की कमी के कारण है। [उर्दू स्पष्टीकरण]: इस पर आपत्ति की गई कि यदि कोई व्यक्ति गवाहों के बिना निकाह करे और फिर निकाह के बाद गवाह पेश कर दे, तो वह निकाह

वैधता की ओर नहीं लौटेगा, हालाँकि इस मामले में फसाद अनुबंध के मूल में नहीं है। इसका उत्तर यह दिया गया कि यहाँ अमुक शर्त की अनुपस्थिति है।

1. अल-हिदाया, किताबुल बुयूँ, बाबुल बयउल फ़ासिद, मतबा यूसुफी लखनऊ 3/62 पृष्ठ 183/715

الاجل قبل ان یاخذ الناس فی الحصاد و الدیاس و قبل قدوم الحاج جاز البیع ، و قال زفر لا یجوز لانہ وقع فاسدا فلا ینقلب جائزا ، ولنا ان الفساد للمنازعۃ وقد ارتفع قبل تقررہ و ھذہ الجھالۃ فی شرط زائد لا فی صلب العقد فیمکن اسقاطہ بخلاف ما اذا باع الدرھم بالدرھمین ثم اسقط الدرھم الزائد لان الفساد فی صلب العقد ۱- پھر بائع اور مشتری اس مدت کو ساقط کرنے پر رضامند ہوگئے قبل اس کے کہ لوگ کھیتی کاٹنے یا اس کو گاہنے کا آغاز کریں اور قبل اس کے کہ حاجی لوگ آئیں تو بیع جائز ہوگئی ، امام زفر نے کہا جائز نہیں ہوگی کیونکہ یہ بیع فاسد واقع ہوئی لہذا جواز کی طرف نہیں پلٹے گی، اور ہماری دلیل یہ ہے کہ فساد تو جھگڑے کے ڈر سے تھا درانحالیکہ وہ فساد مستحکم ہونے سے پہلے ہی دور ہوگیا اور یہ جہالت صلب عقد میں نہیں بلکہ ایک زائد شرط میں واقع ہوئی جس کو ساقط کرنا ممکن ہے بخلاف اس کے کہ جب ایک درہم دو درہموں کے عوض بیچا پھر بائع اور مشتری دونوں نے زائد درہم کو ساقط کردیا تب بھی یہ بیع جائز نہ ہوگی کیونکہ یہاں فساد صلب عقد میں ہے۔ (ت)

اور عدم شرط انعقاد کا فساد اس سے ملحق کیا گیا،

فان انعدامہ یعدم العقد لا انہ منعقد بصفۃ الفساد فیکمن اصلاحہ فی المجلس۔ اس لئے کہ شرط کا معدوم ہونا عقد کو باطل کردیتا ہے ایسا نہیں کہ وہ عقد صفت فساد کے ساتھ منعقد ہوا کہ مجلس میں اس کی اصلاح ممکن ہو۔ (ت)

عنایہ امام کمال بابرتی محل مذکور میں ہے:

اعترض بانه اذا نكح بغير شهود ثم اشهد بعد النكاح فانه لا ينقلب جائزا وليس الفساد في صلب العقد واجيب بان الفساد فيه لعدم الشرط اس پر اعتراض کیا گیا کہ اگر کوئی شخص بغیر گواہوں کے نکاح کرے پھر نکاح کے بعد اس پر گواہ قائم کردے تو وہ نکاح جواز کی طرف نہیں پلٹے گا حالانکہ اس صورت میں فساد صلب عقد میں نہیں، اس کا جواب یہ دیا گیا کہ یہاں فلاں عدم شرط کی

[Box 1 - Arabic]: It is strong, as if it were in the core of the contract. Do you not see that if someone prays without purification and then purifies themselves, their prayer does not turn back to being valid? End. Summary. [Box 1 - Urdu]: It stems from a reason that is strong, just as if corruption (fasad) occurs in the core of the contract, it is strong. Do you not see that if a person performs prayer without purification and then purifies themselves afterwards, their prayer will not turn towards validity? End (T).

There is something similar to this in *Al-Fath* as well:

[Box 2 - Arabic]: I say: It is based on the premise that witnesses are a condition for the conclusion (in'iqad) of a marriage. This is the apparent meaning of the majority of their statements, and it was explicitly stated in *Al-Durr* and others that they are conditions of validity (sihah). Thus, a marriage without witnesses would be irregular (fasid), not void (batil). Allah Almighty knows best. Then I say: Rather, the truth is that the absence of a condition for conclusion (in'iqad) is a nullifier (mubtil), not a corrupter (mufsid). And the discussion is about the irregular (fasid), so the question falls from its basis. [Box 2 - Urdu]: I say: (I say) that its foundation is on this, that witnesses in marriage are the honor of conclusion (sharaf-e-in'iqad), and the apparent words of the jurists also point to this. And in *Al-Durr* etc., it was clarified that witnesses are conditions of validity. Therefore, marriage without witnesses will be irregular (fasid), not void (batil). Allah Almighty knows best. Then I say: (Then I say) rather, the truth is that not finding the condition of conclusion (in'iqad) is what makes it void (batil), not irregular (fasid). Whereas the discussion is about being irregular (fasid), so the question itself is dropped from the start. (T)

Any corruption (fasad) other than these, if it is strong, its removal within the session of the sale (majlis al-bay') alone can make the contract valid. After the session, the corruption becomes established and even if the corruptive factor is removed, it will not be eliminated. Examples include deferring the price until a storm blows or rain falls. If the corruption is weak, it remains correctable even after the session as long as the corruption has not completed its effect. Completion is the end, not the beginning. An example is deferring the price until pilgrims arrive or winds blow. If this condition was dropped before the arrival or blowing, the sale became valid, even if it happened months after the session of the contract. But if the pilgrims arrived or the winds blew, then dropping the condition has no meaning; the corruption has

become established. Without rescinding the contract, it will not be removed. The passage from *Al-Hidayah* was mentioned; in *Fath al-Qadir* on the mentioned passage, it is stated:

---

1 *Al-Inayah* on the margin of *Fath al-Qadir*, Book of Sales, Chapter of Irregular Sale, Maktaba Nooriyah Razawiyya Sukkur, 6/88. 2 *Durr-e-Mukhtar*, Book of Marriage, Matba Mujtabai Delhi, 1/186.

जिल्द 17 | फ़तावा रज़विया

[बॉक्स 1 - अरबी]: यह मज़बूत है, जैसे कि यह अनुबंध के मूल में हो। क्या आप नहीं देखते कि यदि कोई बिना पवित्रता के प्रार्थना करता है और फिर पवित्र हो जाता है, तो उसकी प्रार्थना वैधता की ओर नहीं लौटती? अंत। सारांश। [बॉक्स 1 - उर्दू]: यह उस कारण से आया है जो मज़बूत है, जैसा कि अनुबंध के मूल में भ्रष्टाचार (फ़साद) हो तो वह मज़बूत होता है। क्या आप नहीं देखते कि यदि कोई व्यक्ति बिना पवित्रता के नमाज़ पढ़ ले, फिर बाद में पवित्रता हासिल कर ले, तो उसकी नमाज़ वैधता की ओर नहीं पलटेगी। अंत (त)।

इसी के समान 'अल-फ़त्ह' में भी है:

[बॉक्स 2 - अरबी]: मैं कहता हूँ: यह इस पर आधारित है कि गवाह निकाह के संपन्न होने (इन्इक़ाद) की शर्त हैं। उनके अधिकांश कथनों का ज़ाहिरी अर्थ यही है, और 'अद-दुर्र' आदि में स्पष्ट किया गया है कि वे वैधता (सिहत) की शर्तें हैं। अतः गवाहों के बिना निकाह 'फ़ासिद' (अनियमित) होगा, 'बातिल' (शून्य) नहीं। अल्लाह बेहतर जानता है। फिर मैं कहता हूँ: बल्कि सच्चाई यह है कि संपन्न होने की शर्त का न पाया जाना 'मुबतिल' (शून्य करने वाला) है, न कि 'मुफ़्सिद' (भ्रष्ट करने वाला)। और चर्चा 'फ़ासिद' के बारे में है, इसलिए सवाल अपने मूल से ही गिर जाता है। [बॉक्स 2 - उर्दू]: मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) कि इसकी बुनियाद इस पर है कि निकाह में गवाह संपन्न होने का गौरव (शरफ़-ए-इन्इक़ाद) हैं, और फ़ुक़हा के शब्दों का ज़ाहिर भी इसी पर इशारा करता है। और 'दुर्र' वगैरह में स्पष्ट किया गया कि गवाह वैधता की शर्त हैं। इसलिए गवाहों के बिना निकाह फ़ासिद होगा न कि बातिल। अल्लाह सबसे बेहतर जानता है। फिर मैं कहता हूँ: (फिर मैं कहता हूँ) बल्कि हक़ यह है कि इन्इक़ाद की शर्त का न पाया जाना बातिल करने वाला है न कि फ़ासिद करने वाला। हालाँकि बात फ़ासिद होने में है, तो सिरे से सवाल ही साक़ित (ख़त्म) है। (त)

इनके अलावा जो फ़साद (भ्रष्टाचार) हो, अगर वह मज़बूत है, तो केवल बिक्री की सभा (मजलिस-ए-बैअ) के भीतर ही उसका निवारण अनुबंध को सही कर सकेगा। सभा के बाद फ़साद मुस्तक़र (स्थापित) हो जाएगा और भले ही फ़साद पैदा करने वाला कारक समाप्त हो जाए, वह दूर नहीं होगा। जैसे क़ीमत के भुगतान को आंधी चलने या बारिश होने तक टालना। और अगर वह कमज़ोर है, तो सभा के बाद भी सुधार योग्य है जब तक कि वह फ़साद अपना कार्य पूरा न कर ले, क्योंकि कार्य का पूरा होना अंत है न कि शुरुआत। जैसे हाजियों के आने या हवाएँ चलने पर क़ीमत की मोहलत। यदि

आने और चलने से पहले इस शर्त को हटा दिया गया, तो बिक्री सही हो गई, भले ही अनुबंध की सभा के महीनों बाद हुआ हो। और अगर हाजी आ गए या हवाएँ चल गईं, तो अब शर्त हटाने का कोई अर्थ नहीं; फ़साद स्थापित हो चुका है। अनुबंध रद्द किए बिना वह दूर नहीं होगा। 'हिदाया' की इबारत गुज़री, 'फ़त्हुल क़दीर' में उक्त इबारत पर है:

---

1 अल-इनाया, 'फ़त्हुल क़दीर' के हाशिये पर, किताबुल बुयूअ, बाबुल बैअ अल-फ़ासिद, मकतबा नूरिय्या रज़विय्या सुक्कुर, 6/88. 2 दुर्र-ए-मुख्तार, किताबुन निकाह, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/186.

[باکس ۱ - عربی]: فھو قوی کما لوکان فی صلب العقد الاتری ان من صلی بغیر طھارۃ ثم تطھر لم تنقلب صلاتہ جائزۃ اہ ۱ ملخصا۔ [باکس ۱ - اردو]: وجہ سے آیا ہے جو قوی ہے جیسا کہ صلبِ عقد میں فساد ہو تو قوی ہوتا ہے کیا تو نہیں دیکھتا ہے کہ اگر کوئی شخص بلا طہارت نماز پڑھ لے پھر بعد میں طہارت کر لے تو اس کی نماز جواز کی طرف نہیں پلٹے گی اھ (ت)

اسی کے مثل فتح میں بھی ہے:

[باکس ۲ - عربی]: اقول: ویبتنی علی ان الشھود شرط الانعقاد فی النکاح وعلیہ ظاھر عامۃ کلما تھم وصرح فی الدر ۲ وغیرہ انھم من شروط الصحۃ فیکون النکاح بلاھود فاسدا لا باطلا واللہ تعالی اعلم، ثم اقول: بل الحق ان عدم شرط الانعقاد مبطل لامفسد والکلام فی الفاسد فالسوال ساقط من اصلہ۔

ان کے سوا جو فساد ہو اگر قوی ہے صرف مجلس بیع کے اندر اس کا ازالہ عقد کو صحیح کر سکے گا، بعد مجلس فساد مستقر ہو جائے گا اور اگرچہ مفسد زائل ہو جائے مرتفع نہ ہوگا جیسے ثمن کا آندھی چلنے یا مینہ برسنے پر مؤجل کرنا اور اگر ضعیف ہے تو بعد مجلس بھی اصلاح پذیر ہے جب تک وہ فساد اپنا عمل نہ کر لے کہ بعد عمل انتہا ہے نہ کہ اتقاء جیسے حاجیوں کے آنے یا ہوائیں چلنے پر ثمن کی تاجیل اگر آنے اور چلنے سے پہلے اس شرط کو ساقط کر دیا تو بیع صحیح ہوگئی اگرچہ مجلس عقد کے مہینوں بعد ہوا، اور اگر حاجی آئے ہوائیں چلی گئی تو اب اسقاط شرط کے کوئی معنی نہیں فساد مستقر ہوگیا بے فسخ عقد مرتفع نہ ہوگا، ہدایہ کی عبارت گزری، فتح القدیر میں عبارت مذکورہ پر ہے:

۱ العنایہ علی ہامش فتح القدیر کتاب البیوع باب البیع الفاسد مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶/ ۸۸ ۲

درمختار کتاب النکاح مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۸۶

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

(Arabic) تقييده بهذه الأجال الاخراج نحو التأجيل بهبوب الريح ونزول المطر فانه لواجل بهائم السقطعه لا يعود صحيحه اتفاقاً

(Urdu) The restriction of these terms in the text is to exclude terms like deferment until the wind blows or the rain falls; because if a term was set with them and then it was dropped, the sale would still not be valid by consensus. (T)

In Sharh al-Tahtawi by Imam al-Isbijabi, then al-Haqa'iq Sharh al-Manzuma al-Nasafiyya, then in Radd al-Muhtar it is stated:

(Arabic) البيع باجل مجهول لا يجوز اجماعا كانت الجهالة متقاربة كالحصاد والدياس اومتفاربة الريح وقدوم واحد من سفره فان ابطل المشترى المتقارب قبل محله وقبل فسخ العقد انقلب البيع جائزا عندنا ولو مضت المدة قبل ابطال الاجل تاكدا الفساد ولا ينقلب جائزا اجماعا، وان ابطل المشترى المتفاوت قبل التفرق ونقد الثمن انقلب جائزا عندنا ولو تفرقا قبل الابطال تاكد الفساد ولا ينقلب جائزا اجماعا

(Urdu) A sale with an unknown term is impermissible by consensus, whether the ignorance is close (mutaqarab), like harvesting and threshing of crops, or the ignorance is distant (mutafawit), like the blowing of winds and someone returning from a journey. If the buyer terminated the term with close ignorance before it became firm and before the contract was rescinded, then according to us, the sale will become valid. And if the period passed before terminating the term, the invalidity became firm and the sale will not be valid by consensus. And if the buyer terminated the distant ignorance before parting and paid the price, then according to us, the sale became valid. And if the buyer and seller parted from each other before terminating the ignorance, then the invalidity became firm and now it will not be valid by consensus. (Summarized) (T)

In Bada'i' by Imam Malik al-Ulama, it is stated:

(Arabic) الاصل عندنا انه ينظر الى الفساد فأن كان قويا بان دخل في صلب العقد وهو البدل والمبدل لا يحتمل	**(Urdu) According to us, the rule is that the invalidity will be seen; if it is strong, meaning it is in the core of the contract which is the exchange and the object exchanged, then with the removal of the invalidating factor, the possibility of it being valid...**

1. Fath al-Qadir, Book of Sales, Chapter of Invalid Sales, Maktaba Nuriya Razawiyya, Sukkur, 6/88.
2. Radd al-Muhtar, Book of Sales, Chapter of Invalid Sales, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/120.

फ़तावा रज़विया (खंड १७)

(अरबी) تقييده بهذه الأجال بهبوب الريح ونزول المطر فانه لواجل الاخراج نحو التأجيل بهائم السقطعه لا يعود صحيحه اتفاقاً

(उर्दू) पाठ में इन अवधियों का प्रतिबंध हवाओं के चलने और बारिश होने की मियाद को बाहर करने के लिए है; क्योंकि अगर उनके साथ मियाद तय की गई फिर उसे खत्म कर दिया गया तब भी बिक्री सर्वसम्मति से सही नहीं होगी। (त)

इमाम अल-इस्बीजाबी की 'शरह अल-तहावी' में, फिर 'अल-हक़ायिक शरह अल-मंज़ुमा अल-नसफ़िया' में, फिर 'रद अल-मुह्तार' में है:

(अरबी) البيع باجل مجهول لا يجوز اجماعا كانت الجهالة متقاربة كالحصاد والدياس اومتفاربة الريح وقدوم واحد من سفره فان ابطل المشترى المتقارب قبل محله وقبل فسخ العقد انقلب البيع جائزا عندنا ولو مضت المدة قبل ابطال الاجل تاكدا اد ولا ينقلب جائزاالف اجماعا، وان ابطل المشترى المتفاوت قبل التفرق ونقد الثمن انقلب جائزا عندنا ولو تفرقا قبل الابطال تاكد الفساد ولا ينقلب جائزا اجماعا

(उर्दू) अज्ञात मियाद के साथ बिक्री सर्वसम्मति से नाजायज़ है चाहे अज्ञानता करीब (मुतक़ारिब) हो जैसे फसलों की कटाई और उनको गाहना, या अज्ञानता दूर (मुतफ़ावित) हो जैसे हवाओं का चलना और किसी का सफर से वापस आना। अगर खरीदार ने मुतक़ारिब अज्ञानता वाली मियाद को पक्का होने और अनुबंध खत्म होने से पहले खत्म कर दिया तो हमारे नज़दीक बिक्री जायज़ हो जाएगी और अगर मियाद खत्म करने से पहले अवधि बीत गई तो अमान्यता पक्की हो गई और बिक्री सर्वसम्मति से जायज़ न होगी। और अगर खरीदार ने मुतफ़ावित अज्ञानता को अलग होने से पहले खत्म कर दिया और कीमत अदा कर दी तो हमारे नज़दीक बिक्री जायज़ हो गई और अगर अज्ञानता खत्म करने से पहले विक्रेता और खरीदार एक दूसरे से अलग हो गए तो अमान्यता पक्की हो गई और अब सर्वसम्मति से जायज़ न होगी। (संक्षिप्त) (त)

इमाम मलिक अल-उलमा की 'बदई' में है:

(अरबी) الاصل عندنا انه ينظر الى الفساد فأن كان قويا بان دخل في صلب العقد وهو لا يحتمل الالبدل والمبد	**(उर्दू) हमारे नज़दीक नियम यह है कि अमान्यता को देखा जाएगा अगर वह मज़बूत है यानी अनुबंध के मूल में है जो कि बदल और मुबदल है तो अमान्य करने वाले कारक को हटाने के साथ जायज़ होने का...**

1. फतह अल-कादिर, बिक्री की किताब, अमान्य बिक्री का अध्याय, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, ६/८८।
2. रद अल-मुह्तार, बिक्री की किताब, अमान्य बिक्री का अध्याय, दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, ४/१२०।

पृष्ठ १८५/७१५

تقییدہ بھذہ الأجال الاخراج نحو التأجیل بھبوب الریح ونزول المطر فانہ لواجل بھائم السقطعہ لا یعود صحیحہ اتفاقاً ۱۔

متن کا ان مدتوں کی قید لگانا ہواؤں کے چلنے اور بارش برسنے کی میعاد کو خارج کرنے کے لئے ہے اس لئے کہ اگر ان کے ساتھ میعاد مقرر کی پھر اسے ساقط کر دیا تب بھی بیع بالاتفاق صحیح نہ ہو گی۔ (ت)

شرح الطحطاوی للامام الاسبیجابی پھر حقائق شرح منظومہ نسفیہ پھر ردالمحتار میں ہے:

البیع باجل مجهول لا یجوز اجماعا کانت الجهالة متقاربة کالحصاد والدیاس اومتفاربة الریح وقدوم واحد من سفره فان ابطل المشتری المتقارب قبل محله وقبل فسخ العقد انقلب البیع جائزا عندنا ولو مضت المدة قبل ابطال الاجل تاکدا الفساد ولا ینقلب جائزا اجماعا، وان ابطل المشتری المتفاوت قبل التفرق ونقد الثمن انقلب جائزا عندنا ولو تفرقا قبل الابطال تاکد الفساد ولا ینقلب جائزا اجماعا ۲ (مختصرا)

مدت مجهولہ کے ساتھ بیع بالاجماع ناجائز ہے چاہے جہالت متقارب ہو جیسے فصلوں کی کٹائی اور ان کو گاہنا، م یا جہالت متفادنہ ہو جیسے ہواؤں کا چلنا اور کسی کا سفر سے واپس آنا، اگر مشتری نے جہالت متقارب والی میعاد کو مستحکم ہونے اور فسخ عقد سے پہلے ختم کر دیا تو ہمارے نزدیک بیع جائز ہو جائیگی اور اگر میعاد کو ختم کرنے سے پہلے مدت گزر گئی تو فساد پختہ ہو گیا اور بیع بالاجماع جائز نہ ہوگی، اور اگر مشتری نے جہالت متفاوتہ کو جدا ہونے سے قبل ختم کر دیا اور ثمن ادا کر دئے تو ہمارے نزدیک بیع جائز ہو گئی اور اگر جہالت کو ختم کرنے سے پہلے بائع اور مشتری ایک دوسرے سے جدا ہو گئے تو فساد مستحکم ہو گیا اور اب بالاجماع جائز نہ ہوگی۔ (مختصرا) (ت)

بدائع امام ملک العلماء میں ہے:

الاصل عندنا انه ینظر الی الفساد فأن کان قویا بان دخل في صلب العقد وهو البدل والمبدل لا یحتمل

ہمارے نزدیک ضابطہ یہ ہے کہ فساد کو دیکھا جائے گا اگر وہ قوی ہے یعنی صلب عقد میں ہے جو کہ بدل و مبدل ہے تو رفع مفسد کے ساتھ جائز ہونے کا

۱ فتح القدیر کتاب البیوع باب البیع الفاسد مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶/ ۸۸ ۲ ردالمحتار کتاب البیوع باب البیع الفاسد دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۲۰

Fatawa Rizwia (Volume 17)

Legality through the removal of the corrupting element, as Imam Zufar stated regarding the case where someone sells a slave for a thousand dirhams and a ratl of wine, then waives the wine for the buyer. Even if the corruption is weak—meaning it is not part of the core contract but rather found in a permissible condition—then in this case, there is a possibility of the contract's legality along with the removal of the corrupting element. (T)

It is stated in the same source: Among the conditions for the validity of a sale is that the item sold (mubee') must be deliverable without causing harm to the seller. Thus, if someone sells a beam fixed in a roof, or bricks fixed in a wall, or a yard of silk or wool fabric [while still part of a larger piece], it is not permissible. However, if the seller removes or cuts the item and delivers it to the buyer before the buyer rescinds the sale, the sale becomes valid, to the point that the buyer can be compelled to take it. This is because the impediment to legality was the harm that would befall the seller upon delivery; once the seller delivers it of their own choice and consent, the impediment is removed, and the sale becomes valid and binding. A distinction is made between this case and the sale of the fat-tail of a living sheep, the pit inside a date, the oil within an olive, the flour within wheat, or the seeds within a watermelon, and similar things. For such sales are not contracted at all; even if the seller delivers the item to the buyer, it would still not be valid. The established principle is that if it is not possible to deliver except by causing harm which leads to cutting...

[1] Bada'i al-Sana'i, Book of Sales, Section: Regarding the Conditions of Validity, H.M. Saeed Company, Karachi, 5/8/7. Page 186 of 715

भ्रष्ट करने वाले तत्व को हटाने के माध्यम से वैधता, जैसा कि इमाम ज़फ़र ने उस मामले के बारे में कहा जहाँ कोई व्यक्ति एक हज़ार दिरहम और एक रतल शराब के बदले में एक गुलाम बेचता है, फिर खरीदार के लिए शराब को छोड़ देता है। भले ही भ्रष्टाचार कमज़ोर हो—यानी यह अनुबंध के मूल का हिस्सा नहीं है बल्कि एक अनुमति योग्य शर्त में पाया जाता है—तो इस मामले में, भ्रष्ट तत्व को हटाने के साथ अनुबंध की वैधता की संभावना है। (त)

उसी में कहा गया है: बिक्री की वैधता की शर्तों में से एक यह है कि बेची गई वस्तु (मबीअ) विक्रेता को नुकसान पहुँचाए बिना सुपुर्दगी (डिलीवरी) के योग्य होनी चाहिए। तदनुसार, यदि किसी ने छत में लगी शहतीर, या दीवार में लगी ईंटें, या रेशमी या ऊनी कपड़े में से एक गज़ बेचा है [जबकि वह अभी भी एक बड़े टुकड़े का हिस्सा है], तो यह जायज़ नहीं है। हालाँकि, यदि विक्रेता वस्तु को हटा देता है या काट देता है और खरीदार के बिक्री रद्द करने से पहले इसे खरीदार को सौंप देता है, तो बिक्री जायज़ हो जाती है, यहाँ तक कि खरीदार को इसे लेने के लिए मजबूर किया जा सकता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि वैधता में बाधा वह नुकसान था जो सुपुर्दगी पर विक्रेता को होता; अब जबकि विक्रेता ने अपनी इच्छा और सहमति से वस्तु सुपुर्द कर दी है, तो बाधा दूर हो गई है, और बिक्री जायज़ और अनिवार्य हो गई है। इस मामले और जीवित भेड़ की पूंछ की चर्बी, खजूर के अंदर की गुठली, जैतून के अंदर का तेल, गेहूं के अंदर का आटा, या तरबूज के अंदर के बीज और इसी तरह की अन्य चीजों की बिक्री के बीच अंतर किया जाता है। क्योंकि ऐसी बिक्री मूल रूप से अनुबंधित ही नहीं होती है; यहाँ तक कि अगर विक्रेता वस्तु खरीदार को सौंप भी दे, तब भी यह जायज़ नहीं होगी। स्थापित सिद्धांत यह है कि यदि सुपुर्दगी संभव नहीं है सिवाय नुकसान के जो काटने की ओर ले जाता है...

[1] बदाइ अस-सनाइ, बिक्री की किताब, अध्याय: वैधता की शर्तों के संबंध में, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 5/8/7। पृष्ठ 186 का 715

الجواز برفع المفسد کما قال زفر اذا باع عبداً بالف درھم ورطل من خمر فحط الخمر عن المشتری وان کان ضعیفاً لم یدخل فی صلب العقد بل فی شرط جائز یحتمل برفع المفسد[1] ۔ احتمال نہیں رکھتا جیسا کہ امام زفر نے اس صورت کے بارے میں کہا کہ جب کوئی شخص ہزار درہم اور ایک رطل شراب کے بدلے میں غلام فروخت کرے پھر مشتری سے شراب کو ساقط کردے اور اگر فساد وضعیف ہے یعنی صلب عقد میں داخل نہیں بلکہ شرط جائز میں پایا گیا تو اس صورت میں رفع مفسد کے ساتھ جواز عقد کا احتمال ہے۔ (ت)

اسی میں ہے: منہا (ای من شرائط صحۃ البیع) ان یکون مقدور التسلیم من غیر ضرر یلحق البائع، فاذا باع جذعاً لہ فی سقف او اجراً لہ فی حائط او ذراعاً فی دیباج او کرباس لا یجوز، فان نزعہ البائع او قطعہ وسلمہ الی المشتری قبل ان یفسخ المشتری البیع جاز البیع حتی یجبر المشتری علی الاخذ لان المانع من الجواز ضرر البائع بالتسلیم فاذا سلم باختیارہ ورضاہ فقد زال المانع فجاز البیع ولزم ، فرق بین ہذا وبین بیع الالیۃ فی الشاۃ الحیۃ والنوی فی التمر والزیت فی الزیتون والدقیق فی الحنطۃ والبزر فی البطیخ ونحوہا انہ لا ینعقد اصلاً حتی لو سلم لم یجز اولاً صل المحفوظ ان لا یمکن تسلیمہ الا بضرر یرجع الی قطع

صحت کی بیع کی شرائط میں سے یہ ہے کہ مبیع مقدور التسلیم ہو بغیر اس کے کہ بائع کو ضرر لاحق ہو، چنانچہ اگر کسی نے چھت میں لگی ہوئی شہتیر یا دیوار میں لگی ہوئی اینٹیں یا ریشمی یا اونی کپڑے میں سے ایک گز فروخت کیا تو جائز نہیں پھر اگر بائع نے مبیع کو اکھاڑیا یا کاٹ دیا اور مشتری کے بیع کو فسخ کرنے سے پہلے مبیع مشتری کے حوالے کردیا تو بیع جائز ہوگئی یہاں تک کہ مشتری کو مجبور کیا جائے گا کہ وہ اس کو لے کیونکہ مانع جواز تو تسلیم کے سبب

سے بائع کو لاحق ہونے والا ضرر تھا اب جبکہ بائع نے اپنی رضامندی اور اختیار سے تسلیم مبیع کردیا تو وہ مانع زائل ہو گیا اور بیع جائز اور لازم ہوگئی، فرق کیا گیا ہے درمیان مذکورہ صورت کے اور درمیان اس کے کہ زندہ دنبہ کی چکی، کھجور میں موجود گٹھلی زیتون میں موجود روغن، گندم میں موجود آٹا، تربوز میں موجود بیج اور اس طرح کی دیگر اشیاء فروخت کی جائیں کیونکہ ان میں سرے سے بیع منعقد ہی نہیں ہوتی یہاں تک اگر بائع مبیع کو مشتری کے حوالے بھی کردے تب بھی جائز نہ ہوگی اور اصل محفوظ یہ ہے کہ اگر

[1] بدائع الصنائع کتاب البیوع فصل واما شرائط الصحۃ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۷/۸/۵ Page of 715 186

[Arabic Column:] Connection fixed by original creation: its sale is void (baatil). That which cannot be delivered except with harm that stems from severing an accidental connection: its sale is irregular (fasid), unless [the seller] cuts it by his choice and delivers it, then it is permissible. By analogy with this principle, it should be permissible to sell wool on the back of sheep because it is possible to deliver it without harm by shearing. However, they (the jurists) preferred non-permissibility based on the text (Hadith), which is what was narrated from Ibn Abbas (may Allah be pleased with both) from the Messenger of Allah (may Allah send peace and blessings upon him). Furthermore, because a part from its origin is not free from harming the animal, and the shearing point above that is unknown, leading to dispute; therefore it is not permissible. [Summarized ends]. I say: This falls under the category of non-removal of the corrupting factor. His statement 'shear the high part on a neck or rent for it in a wall' implies specific items, so there is no corruption except from the aspect of necessity of harm.

[Urdu Column:] If the delivery of the sold item (mabi') is not possible without causing such harm to the seller that results from severing a connection fixed by original creation, then the sale will be void. And if the delivery of the sold item is not possible without such harm that results from severing an accidental connection, then the sale will be irregular, but when the seller cuts it by his choice and delivers the sold item, the sale will become valid. Analogy based on this principle requires that the sale of wool grown on the backs of sheep be permissible because delivery is possible in it without harm reaching the seller, which becomes necessary due to shearing the wool. However, the jurists deemed its impermissibility as better (Istihsan) because of the text which Sayyiduna Hazrat Ibn Abbas (may Allah be pleased with both) narrated from the Messenger of Allah (may Allah send peace and blessings upon him), and because cutting the wool from the root is not free from causing harm to the animal, and if they cut from above the root, the place of cutting is not determined, hence a dispute will arise in it; therefore it is impermissible, etc. So I say that this has come under the chapter of the non-removal of the corrupting factor. And the statement of the author of Badai that "the seller sold beams fixed in the ceiling or bricks fixed in the wall," then in it there is a possibility that those beams and bricks are specific; so in that, there will be no corruption from any aspect other than the necessity of harm. (T)

1 Badai al-Sanai, Kitab al-Buyu' (Book of Sales), Section: And as for the conditions of validity, H.M. Saeed Company Karachi, 5/167 Page 187 of 715

[अरबी कॉलम:] प्राकृतिक रचना से जुड़ाव: इसकी बिक्री अमान्य (बातिल) है। वह जिसे बिना नुकसान के सुपुर्द नहीं किया जा सकता, जो किसी आकस्मिक जुड़ाव को खत्म करने से होता हो: इसकी बिक्री दोषपूर्ण (फासिद) है, जब तक कि वह (विक्रेता) अपनी मर्जी से उसे काटकर सुपुर्द न कर दे, तब यह वैध है। इस सिद्धांत के आधार पर, भेड़ों की पीठ पर ऊन बेचना वैध होना चाहिए क्योंकि कतरन द्वारा बिना किसी नुकसान के सुपुर्दगी संभव है। हालाँकि, उन्होंने (विधिवेत्ताओं ने) पाठ (हदीस) के आधार पर गैर-अनुमेयता को बेहतर (इस्तिहसान) माना, जो कि हज़रत इब्न अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के माध्यम से वर्णित है। इसके अलावा, क्योंकि अपने मूल से एक हिस्सा जानवर को नुकसान पहुँचाने से मुक्त नहीं है, और उसके ऊपर कतरन का स्थान अज्ञात है, जिससे विवाद पैदा होता है; इसलिए यह अनुमेय नहीं है। [संक्षिप्त अंत]। मैं कहता हूँ: यह बिगाड़ने वाले कारक के दूर न होने की श्रेणी में आता है। उनका कथन 'एक गर्दन पर ऊँचे हिस्से को काटना या दीवार में ईंटें' विशिष्ट वस्तुओं का संकेत देता है, इसलिए नुकसान की अनिवार्यता के पहलू के अलावा कोई बिगाड़ नहीं है।

[उर्दू कॉलम:] यदि बेची गई वस्तु (मबी) की सुपुर्दगी विक्रेता को ऐसा नुकसान पहुँचाए बिना संभव न हो जो प्राकृतिक रूप से जुड़ी वस्तु को काटने से होता हो, तो बिक्री अमान्य (बातिल) होगी। और यदि सुपुर्दगी बिना ऐसे नुकसान के संभव न हो जो किसी आकस्मिक जुड़ाव को खत्म करने से होता हो, तो बिक्री दोषपूर्ण (फासिद) होगी, लेकिन जब विक्रेता अपनी इच्छा से उसे काटकर सुपुर्द कर दे तो बिक्री वैध हो जाएगी। इस सिद्धांत पर कयास (तर्क) यह कहता है कि भेड़ों की पीठ पर उगी ऊन की बिक्री वैध होनी चाहिए क्योंकि इसमें विक्रेता को बिना किसी नुकसान के सुपुर्दगी संभव है, जो ऊन काटने के कारण होता है। लेकिन फ़ुकहा (न्यायविदों) ने इसे अवैध घोषित करना बेहतर (इस्तिहसान) समझा, उस नस (हदीस) की वजह से जिसे सैय्यदना हज़रत इब्न अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) ने रसूल अल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से रिवायत किया है। और इसलिए भी कि ऊन को जड़ से काटना जानवर को नुकसान पहुँचाने से खाली नहीं है और यदि जड़ के ऊपर से काटें तो काटने का स्थान निश्चित नहीं है, जिससे विवाद पैदा होगा; इसलिए यह नाजायज़ है। मैं कहता हूँ कि यह मामला बिगाड़ने वाले कारक के दूर न होने के कारण है। साहिब-ए-बदाइ का कहना है कि 'विक्रेता ने छत में लगी शहतीर या दीवार में लगी ईंटें बेचीं', तो इसमें संभावना है कि वे शहतीर और ईंटें निश्चित हों; तो इसमें नुकसान की अनिवार्यता के अलावा किसी और वजह से बिगाड़ नहीं होगा। (त)

1 बदाइ अल-सनाइ, किताब अल-बयूँ (बिक्री की पुस्तक), अध्याय: और वैधता की शर्तें, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 5/167 पेज 187/715

[عربی کالم:] اتصال ثابت باصل الخلقة فبیعه باطل ومالایمکن تسلیمه الابضرر یرجع الی قطع اتصال عارض فبیعه فاسد الا ان یقطع باختیاره ویسلم فیجوز ولقیاس علی هذا الاصل ان یجوز بیع الصوف علی ظهر الغنم لانه یمکن تسلیمه من غیر ضرر یلزمه بالحز الا انهم استحسنوا عدم الجواز للنص وهو ماروی عن ابن عباس رضی اللہ تعالی عنهما عن رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیه وسلم ولان الجزء من اصله لا یخلو عن الاضرار بالحیوان وموضع الجز فیما فوق ذلك غیر معلوم فتجری فیه النازعة فلا یجوز اھـ ملتقطا اقول: فکان هذا من باب عدم ارتفاع المفسد وقوله "جز عالہ فی مقف او اجر له فی حائط" یحتمل المعین فلا فساد الا من جهة لزوم الضرر۔

[اردو کالم:] تسلیم مبیع بائع کو ایسا ضرر پہنچے بغیر ممکن نہ ہو جو ضرر اصل خلقت سے ثابت شدہ اتصال کے قطع کی طرف لوٹتا ہے تو بیع باطل ہوگی اور اگر تسلیم مبیع ایسے ضرر کے بغیر ممکن نہ ہو جو اتصال عارضی کے قطع کی طرف لوٹتا ہے تو بیع فاسد ہوگی مگر جب بائع اپنے اختیار سے قطع کرکے تسلیم مبیع کردے تو بیع جائز ہو جائیگی۔ اور اس اصل پر قیاس کا تقاضا ہے کہ بکریوں کی پشت پر اگی ہوئی اون کی بیع جائز ہو کیونکہ اس میں تسلیم ممکن ہے بائع کو ضرر لاحق ہوئے بغیر جو بسبب اون کاٹنے کے لازم آتا ہے مگر فقہاء نے اس کے جائز نہ ہونے کو مستحسن قرار دیا اس نص کی وجہ سے جس کو سیدنا حضرت ابن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہما نے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سے روایت فرمایا اور اس وجہ سے کہ اون کو جڑ سے کاٹنا حیوان کو ضرر پہنچانے سے خالی نہیں اور جڑ کے اوپر سے کاٹیں تو کاٹنے کی جگہ متعین نہیں لہذا اس میں جھگڑا پیدا ہو گا اس لئے ناجائز ہے الخ پس میں کہتا ہوں کہ یہ مفسد کے دور نہ ہونے کے باب سے ہو گیا اور صاحب بدائع کا قول کہ "بائع نے چھت میں لگی شہتیر یا دیوار میں

لگی ہوئی اینٹیں فروخت کیں" تو اس میں احتمال ہے کہ وہ شہتیر اور اینٹیں معین ہوں تو اس میں سوائے لزوم ضرر کے کسی اور جہت سے فساد نہ ہوگا۔ (ت)

---

1 بدائع الصنائع کتاب البیوع فصل و اما شرائط الصحۃ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۵/ ۱۶۷ صفحہ 187 از 715

Fatawa Razawiya, Volume 17 (17)

Rather, it is stated in Durr al-Mukhtar:

| (Fasada) Sale of a specific (beam) (in a roof). As for a non-specific one, it does not turn valid (Ibn Kamal). (And a yard of cloth whose partitioning harms it). If it is cut and delivered before the buyer rescinds the contract, it becomes valid. And if cutting it does not harm it, like a heap of grain, it is permissible due to the absence of a barrier[1]. | The sale of a specific beam fixed in a roof is invalid (fasid). As for a non-specific one, its sale cannot take place (Ibn Kamal). And the sale of one yard from a piece of cloth that would be damaged by partitioning is invalid. However, if the seller cuts the cloth and delivers it to the buyer before the buyer cancels the sale, the sale becomes valid. And if cutting it does not cause damage, then the sale is valid due to the absence of any obstruction. (T) |

But it is stated in Radd al-Muhtar:

| And it is weak because regarding the non-specific, it is reasoned with the necessity of harm and ignorance. So when the seller bears the harm and delivers it, the cause of invalidity disappears and ignorance is also removed. Hence, it is asserted in Al-Fath that it returns to being valid.[2] Ayn | And that [view] is weak because the cause of invalidity of the sale in a non-specific item is cited as the necessity of harm and ignorance. So when the seller has borne the harm and handed over the item to the buyer, the corrupting factor is removed and the ignorance also disappears. This is why it is stated with certainty in Al-Fath that the sale will return to a state of validity. (T) |

Ayn: Answer found incomplete.

---

[1] Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Bay' al-Fasid, Mujtabai Press, Delhi, 2/24 [2] Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Bay' al-Fasid, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/108-9

फ़तावा रज़विया, जिल्द 17 (17)

बल्कि 'दुर्रे मुख्तार' में है:

| (फ़सदा) छत में लगी हुई एक निश्चित (बीम/शहतीर) की बिक्री अमान्य (फ़ासिद) है। जहाँ तक अनिश्चित का सवाल है, वह वैध नहीं हो सकती (इब्ने कमाल)। (और कपड़े का एक गज़ जिसकी तक़्सीम उसे नुक़सान पहुँचाए)। यदि खरीदार द्वारा बिक्री रद्द करने से पहले इसे काटकर सुपुर्द कर दिया जाए, तो यह वैध हो जाता है। और यदि काटना उसे नुक़सान न पहुँचाए, जैसे अनाज का ढेर, तो बाधा की अनुपस्थिति के कारण यह जायज़ है।[1] | छत में लगी हुई एक निश्चित शहतीर की बिक्री फ़ासिद (अमान्य) है। जहाँ तक अनिश्चित का संबंध है, उसकी बिक्री संभव नहीं है (इब्ने कमाल)। और उस कपड़े में से एक गज़ की बिक्री फ़ासिद है जिसे अलग करने से नुक़सान होता हो। फिर यदि खरीदार के बिक्री रद्द करने से पहले विक्रेता ने उस कपड़े को काटकर खरीदार के हवाले कर दिया, तो बिक्री जायज़ हो गई। और यदि काटना उसे नुक़सान नहीं पहुँचाता, तो रुकावट न होने के कारण बिक्री जायज़ है। (त) |

लेकिन 'रद्दुल मुहतार' में है:

| और वह कमज़ोर है क्योंकि अनिश्चित के मामले में, इसका कारण नुक़सान की अनिवार्यता और अज्ञानता (जहालत) बताया गया है। अतः जब विक्रेता नुक़सान सहन कर लेता है और उसे सुपुर्द कर देता है, तो बिगाड़ने वाला कारक समाप्त हो जाता है और अज्ञानता भी दूर हो जाती है। इसीलिए 'अल-फ़तह' में यह दृढ़ता से कहा गया है कि बिक्री वैधता की ओर लौट आएगी।[2] अैन | और वह [राय] कमज़ोर है क्योंकि अनिश्चित चीज़ में बिक्री के अमान्य होने का कारण नुक़सान की अनिवार्यता और अज्ञानता को माना गया है। तो जब विक्रेता ने नुक़सान को बर्दाश्त कर लिया और बेची गई वस्तु खरीदार के सुपुर्द कर दी, तो अमान्य करने वाला तत्व समाप्त हो गया और अज्ञानता भी जाती रही। यही कारण है कि 'फ़तह' में इस पर ज़ोर दिया गया है कि बिक्री वापस सही स्थिति में आ जाएगी। (त) |

अैन : उत्तर अधूरा मिला।

---

[1] दुर्रे मुख्तार, किताब अल-बुयू, बाब अल-बय अल-फ़ासिद, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 2/24 [2] रद्दुल मुहतार, किताब अल-बुयू, बाब अल-बय अल-फ़ासिद, दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी बेरूत, 4/108-9

بلکہ در مختار میں ہے:

| (فَسَدَ) بَیعُ (جِذع) معین (فی سقف) اما غیر المعین فلا ینقلب صحیحاً ابن کمال (وذراع من ثوب یضرہ التبعیض) فلو قطع وسلم قبل فسخ المشتری عاد صحیحاً ولو لم یضرہ القطع ککر بآس جاز لانتفاء المانع[1]۔ | چھت میں لگی ہوئی معین شہتیر کی بیع فاسد ہے رہی غیر معین تو اس کی بیع نہیں ہوسکتی (ابن کمال) اور جس کپڑے کو تبعیض نقصان دے اس میں سے ایک گز کی بیع فاسد ہے پھر اگر مشتری کے بیع کو فسخ کرنے سے قبل بائع نے اس کپڑے کو کاٹ کر مشتری کے سپرد کر دیا تو بیع جائز ہو گئی اور اگر کاٹنا اس کو نقصان نہیں پہنچاتا تو مانع کے نہ ہونے کی وجہ سے بیع جائز ہے۔(ت) |

مگر ردالمحتار میں ہے:

| وھو ضعیف لانہ فی غیر المعین معلل بلزوم الضرر الجھالۃ فإذا تحمل البائع الضرر وسلمہ زال المفسد وارتفعت الجھالۃ ایضاً ومن ثم جزم فی الفتح بأنہ یعود صحیحاً[2] عـ | اور وہ ضعیف ہے کیونکہ غیر معین میں فساد بیع کی علت لزوم ضرر اور جہالت کو قرار دیا گیا تو جب بائع نے ضرر کو برداشت کرلیا اور مبیع مشتری کے سپرد کر دیا تو مفسد زائل ہو گیا اور جہالت بھی جاتی رہی، یہی وجہ ہے کہ فتح میں اس پر جزم کیا گیا کہ بیع صحت کی طرف پلٹ آئے گی۔(ت) |

عـ : جواب ناتمام ملا۔

---

1 در مختار کتاب البیوع باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۲۴ 2 ردالمحتار کتاب البیوع باب البیع الفاسد دار احیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۹-۱۰۸

Vol. 17 --- Fatawa Ridawiyyah

Chapter on Disliked Sales (Description of Disliked Sales)

Problem 89: What do the scholars of religion say regarding this matter: is it permissible to withhold grain and then sell it or not? Please explain, and may you be rewarded.

Answer: Withholding grain with the intent of selling it during a time of inflation is disliked (Makruh) and prohibited, provided it was purchased from that same place or its vicinity and withholding it from sale is harmful to the people. And if the grain was purchased from a distant place and withheld while waiting for inflation, or if withholding it is not harmful to the people, then there is no issue.

In al-Alamgiriyyah: Hoarding (Ihtikar) is disliked, and that is to purchase such that it harms the people; thus in al-Hawi. And if one purchases in that city and stores it, and it does not harm the people of the city, there is no harm in it; thus in al-Tatarkhaniyyah, quoting from al-Tajnīs. And if one purchases from a place near the city, brings food to the city and stores it, and…

In Alamgiriyyah it is stated: Hoarding is disliked. Its form is that one buys grain in the city and stops it from being sold, and this withholding is harmful to the people; this is in al-Hawi. And if one buys in the city and stops its sale but it does not cause harm to the people, there is no harm. Similarly, it has been quoted from al-Tajnīs in al-Tatarkhaniyyah. And if one bought from near the city, brought it to the city, and stopped it from being sold while…

जिल्द सत्रह (17) --- फ़तावा रज़विया

बाबुल बैअ अल-मकरूह (नापसंद ख़रीद-ओ-फ़रोख़्त का बयान)

मसला 89: उलमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि अनाज (ग़ल्ला) को रोक कर बेचना जायज़ है या नहीं? बयान फ़रमायें, सवाब पायें।

जवाब: अनाज को इस नीयत से रोकना कि महंगाई के वक़्त बेचेंगे, इस शर्त के साथ कि उसी जगह या उसके क़रीब से ख़रीदा गया हो और उसका न बेचना लोगों के लिए नुक़सानदेह हो, मकरूह और वर्जित (ममनू) है। और अगर अनाज दूर से ख़रीद कर लाए और महंगाई के इंतज़ार में न बेचने से या उसका न बेचना आम लोगों के लिए नुक़सानदेह न हो, तो कोई हर्ज नहीं।

फ़िल आलमगीरिया: एह्तिकार (जमाखोरी) मकरूह है और वह यह है कि ऐसा ख़रीदे जिससे लोगों को नुक़सान हो, जैसा कि अल-हावी में है। और अगर शहर में ख़रीदा और उसे रोक लिया लेकिन इससे शहर वालों को नुक़सान नहीं होता तो इसमें कोई हर्ज नहीं, जैसा कि अत्तातारख़ानिया में अत्तजनीस से नक़्ल किया गया है। और अगर शहर के क़रीब किसी स्थान से ख़रीदा, शहर में अनाज लाया और उसे रोक लिया और...

आलमगीरिया में है: जमाखोरी मकरूह है। इसकी सूरत यह है कि शहर में अनाज ख़रीद ले और उसे बेचने से रोक रखे और यह रोकना लोगों के लिए नुक़सानदेह हो, यह हावी में है। और शहर में ख़रीद कर उसे बेचने से रोका मगर इससे लोगों को नुक़सान नहीं पहुँचता तो कोई हर्ज नहीं। इसी तरह तातारख़ानिया में तजनीस से नक़्ल किया गया है। और अगर शहर के क़रीब से ख़रीदा और शहर में लाया और बेचने से रोक रखा जबकि...

جلد ہفدہم (۱۷) --- فتاوٰی رضویہ

باب البیع المکروہ (بیع مکروہ کا بیان)

مسئلہ ۸۹: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ غلہ کو روک کر بیچنا جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: غلہ کو اس نظر سے روکنا کہ گرانی کے وقت بیچیں گے بشرطیکہ اسی جگہ یا اس کے قریب سے خریدا اور اس کا نہ بیچنا لوگوں کو مضر ہو مکروہ و ممنوع ہے، اور اگر غلہ دور سے خرید کر لائے اور انتظارِ گرانی نہ بیچنے یا نہ بیچنا اس کا خلق کو مضر نہ ہو تو کچھ مضائقہ نہیں،

فی العالمگیریہ الاحتکار مکروہ وذلک ان یشتری ذلک یضر بالناس کذا فی الحاوی وان اشتری فی ذلک المصر وحبسہ ولا یضر بأھل المصر لابأس بہ کذا فی التتارخانیة ناقلا عن التجنیس واذا اشتری من مکان قریب من المصر فحمل طعاماً الی المصر وحبسہ و

عالمگیریہ میں ہے احتکار مکروہ ہے اس کی صورت یہ ہے کہ شہر میں غلہ خرید لے اور اس کو فروخت کرنے سے روک رکھے اور یہ روکنا لوگوں کے لئے نقصان دہ ہو یہ حاوی میں ہے اور شہر میں خرید کر اس کے بیچنے سے روکا مگر اس سے لوگوں کو ضرر نہیں پہنچتا تو کوئی حرج نہیں یونہی تاتارخانیہ میں تجنیس سے نقل کیا گیا ہے، اور اگر شہر کے قریب سے خریدا اور شہر میں اٹھا لایا اور فروخت سے روک رکھا جبکہ

Fatawa Razawiyya Volume 17

[Boxed Text] Arabic: ذلک یضر بأهله فهو مکروه هذا قول محمد وهو احدی الروایتین عن ابی یوسف وهو المختار هکذا فی الغیاثیة وهو الصحیح هکذا في جواهر الاخلاطی، وفی الجامع الجوامع فان جلب من کان بعید واحتکر لم یمنع کذا فی التتارخانیة ١- Urdu Translation from page: If it harms the townspeople, then it is disliked (Makruh). This is the saying of Imam Muhammad (Mercy of Allah be upon him), and from Imam Abu Yusuf (may Allah Almighty have mercy on him) also, it has appeared in one of the two narrations; this is the chosen view, similarly it is in Al-Ghiyathiyya, and this is correct as mentioned in Jawahir al-Akhlati and it is in Jami' al-Jawami' that if grain was purchased from somewhere far and brought in and withheld from sale in the city, then it is not prohibited, in Tatar-khaniyya it is thus. (T)

Problem 90: From Old City, 11 Rabi al-Akhir Sharif 1321 AH. What do the scholars of the religion say about this issue: Zaid purchased wheat worth five hundred rupees during the harvest season and kept as much as needed for his family, and sold the remaining in the month of Asarh. In this scenario, is Zaid liable for punishment/ accountability or not?

The Answer: There is no accountability in buying and selling wheat worth five hundred or even five thousand during the harvest season in Bareilly, because the difference in rates between these two periods is usually always there. Yes, if one wishes for price hikes to occur, then he is an ill-wisher of Allah's creation and is sinful. And Allah Almighty knows best.

Problem 91 to 92: From Bareilly, Muhalla Zakhira, Mr. Maqboolur Rahman Khan. (1) What do the scholars of religion say about this issue: The sale of a residential house was agreed upon with a Muslim. The sale deal was finalized and possession of the house was given to the buyer after writing the draft of the sale deed and signing it. According to English law, the sale deed had not yet been written and registered, when another Muslim from the same neighborhood, who had previously refused to buy, now expresses the intention to buy by increasing the price by one hundred rupees. Possession is still with the person with whom the seller had previously finalized the talk of sale, and the signed draft is also in his possession. In such a situation, which sale is legally valid according to Sharia, and what is the Sharia sale...

1. Fatawa Hindiyya, Kitab al-Buyu' (Book of Sales), Chapter on Hoarding, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/213. Page 190 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द १७

[बॉक्स में दिया गया टेक्स्ट] अरबी: ذلک یضر بأهله فهو مکروه هذا قول محمد وهو احدی الروایتین عن ابی یوسف وهو المختار هکذا فی الغیاثیة وهو الصحیح هکذا في جواهر الاخلاطی، وفی الجامع الجوامع فان جلب من کان بعید واحتکر لم یمنع کذا فی التتارخانیة
१- उर्दू अनुवाद (पृष्ठ से): इससे शहर वालों को नुकसान पहुँचता है तो यह मकरूह है, यह इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाहि अलैहि) का कथन है, और इमाम अबू यूसुफ (रहमतुल्लाहि तआला अलैहि) से भी दो रिवायतों में से एक में यही आया है, यही मुख्तार (पसंद किया गया) है, इसी तरह ग़ियाथिया में है, और यही सही है जैसा कि जवाहरुल अख़लाती में ज़िक्र है और जामिउल जवामी' में है कि अगर कहीं दूर से अनाज खरीद कर लाया और शहर में बेचने से रोक रखा तो वर्जित नहीं है, तातारख़ानिया में इसी तरह है। (त)

मसला ९०: पुराने शहर से, ११ रबी-उल-आख़िर शरीफ़ १३२१ हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस मसले में कि जैद ने पाँच सौ रुपये के गेहूँ खरीदे फसल के समय और अपनी ज़रूरत के मुताबिक अपने बाल-बच्चों के लिए रख लिए, और बाकी असाढ़ के महीने में बेच दिए। इस सूरत में क्या जैद मुआख़ज़े (जवाबदेही) का हक़दार हुआ या नहीं?

अल-जवाब (उत्तर): बरेली में पाँच सौ बल्कि पाँच हज़ार के गेहूँ फसल पर खरीदने और बेचने में कोई मुआख़ज़ा नहीं है क्योंकि इन दोनों समयों में कीमतों का अंतर आमतौर पर हमेशा होता है। हाँ, अगर कोई महँगाई बढ़ने की ख्वाहिश रखे तो वह अल्लाह की मख़लूक (सृष्टि) का बदख्वाह (बुरा चाहने वाला) और गुनहगार है। वल्लाहु तआला आलम।

मसला ९१ से ९२: बरेली मोहल्ला ज़ख़ीरा, जनाब मक़बूलुर्रहमान खाँ की तरफ से। (१) क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस मसले में कि एक रिहायशी मकान की बिक्री एक मुसलमान से तय हुई, वह मामला तय हो गया और खरीदार को मकान का कब्ज़ा बिक्री विलेख (मसौदा) लिखकर और हस्ताक्षर करके दे दिया गया। अंग्रेज़ी कानून के मुताबिक अभी बिक्री विलेख लिखा और पंजीकृत (रजिस्ट्री) नहीं हुआ था कि उसी मोहल्ले के एक दूसरे मुसलमान ने, जिसने पहले खरीदने से इनकार कर दिया था, अब सौ रुपया बढ़ाकर खरीदने का इरादा ज़ाहिर किया। कब्ज़ा अभी उसी शख़्स का है

जिससे विक्रेता ने पहले ही बिक्री की बात तय कर ली थी और उसके कब्ज़े में हस्ताक्षरित मसौदा भी मौजूद है। ऐसी स्थिति में कौन सी बिक्री शरीयत के लिहाज़ से जायज़ है और जो शरई बिक्री...

1. फ़तावा हिन्दिया, किताबुल बुयूअ, फसल फ़िल एहतिकार, नूरानी कुतुब खाना पेशावर ३/२१३। पृष्ठ ७१५ का १९०

[عبارت در جدول] عربی: ذلک یضر بأهله فهو مکروه هذا قول محمد وهو احدی الروایتین عن ابی یوسف وهو المختار هکذا فی الغیاثیة وهو الصحیح هکذا في جواهر الاخلاطی، وفی الجامع الجوامع فان جلب من کان بعید واحتکر لم یمنع کذا فی التتارخانیة ۱- اردو ترجمہ: اس سے شہر والوں کو ضرر پہنچتا ہے تو یہ مکروہ ہے یہ امام محمد علیہ الرحمۃ کا قول ہے، اور امام ابو یوسف رحمہ اللہ تعالٰی علیہ سے بھی دو روایتوں میں سے ایک میں یہی آیا ہے، یہی مختار ہے، اسی طرح غیاثیہ میں ہے، اور یہی صحیح ہے جیسا کہ جواھر الاخلاطی میں مذکور ہے اور جامع الجوامع میں ہے کہ اگر کہیں دور سے اناج خرید کر کھینچ لایا اور شہر میں فروخت سے روک رکھا تو ممنوع نہیں، تاتارخانیہ میں یوں ہی ہے۔ (ت)

مسئلہ ۹۰: از شہر کہنہ ۱۱ ربیع الآخر شریف ۱۳۲۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زد نے مبلغ پانسو روپے کے گیہوں خریدے فصل میں اور بقدر ضرورت اپنے اہل و عیال کے لئے رکھ لئے، اور باقیماندہ ماہ اساڑھ میں فروخت کر دئے اس شکل میں زید مواخذہ دار ہوا یا نہیں؟

الجواب: بریلی میں پانسو بلکہ پانچ ہزار کے گیہوں فصل پر خریدنے اور بیچنے میں کوئی مواخذہ نہیں کہ ان دونوں زمانوں میں نرخ کا اختلاف معمولی طور پر ہمیشہ ہوتا ہے، ہاں اگر گرانی پڑنے کی خواہش کرے تو خلق اللہ کا بدخواہ اور ماخوذ گناہ ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۹۱ تا ۹۲: از بریلی محلہ ذخیرہ جناب مقبول الرحمن خاں (۱) کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک مکان مسکونہ کی بیع ایک مسلمان سے قرار پائی وہ معاملہ بیع طے ہو گیا

اور قبضہ مکان پر مشتری کو بعد تحریر مسودہ بیعنامہ کر دینے دستخط کر دے دیا گیا حسب قانون انگریزی ہنوز بیعنامہ تحریر ور رجسٹری نہ ہوا تھا کہ ایک دوسرا مسلمان اسی محلہ کا جو پہلے خریداری سے انکار کر چکا تھا اب ایک سو روپیہ بڑھا کر خریداری کا ارادہ ظاہر کرتا ہے اور قبضہ ہنوز اس شخص کا ہے جس سے پہلے بائع ان کی گفتگو بیع کی طے ہو چکی ہے اور اس کے قبضہ میں مسودہ دستخط شدہ بھی موجود ہے، ایسی صورت میں کون سی بیع شرعاً جائز ہے اور جو بیع شرعی

۱ فتاویٰ ہندیہ کتاب البیوع فصل فی الاحتکار نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۱۳ Page 190 of 715

Fatawa Ridawiyyah (Volume 17)

...what is the ruling for him who is not satisfied? (2) For three weeks, the previous buyer with family and children has been living in this house, of which the sellers gave possession willingly. So has he now acquired the right of neighborhood for the residents of the locality or not? And if it is acquired, is it permissible for the new buyer, who is a neighbor, to trouble him and forcibly have him vacate the house or not? And if not, then what is the ruling for him? Explain so you may be rewarded. The Answer: Interfering with another's purchase, increasing the price, or turning it towards oneself is all forbidden (Haram). "The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) forbade a man from bargaining over his brother's bargain," let alone the situation mentioned in the question. (T) Forcing him to vacate the house is oppression, and the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Oppression will be darkness on the Day of Resurrection." And in the Great Quran, the oppressors are cursed, and oppression of a neighbor is even more severe and a major sin. It is obligatory for the seller to stand by his previous sale; legally, the sale has taken place. It is not at all necessary according to Sharia to have it written on a registry or stamp paper. And it is obligatory for that second person to refrain from this oppression. And Allah Almighty knows best.

Problem 93: From Chandpur, Bijnor District, sent by Hakim Ridawi Sahib, 23 Shawwal 1338 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: if grain is purchased during the harvest and season of abundance and then sold at the market rate when the opportunity arises, to what extent is it nonsense to say its profit is forbidden for a Muslim? Opponents use this as a taunt; a ruling is sought from his presence for the sake of argument. The Answer: The trade of grain in the mentioned form is undoubtedly lawful and permissible. The one who calls it forbidden makes a lawful Sharia act...

1 Musnad Ahmad bin Hanbal, Hadith Abu Hurairah (may Allah be pleased with him), Dar al-Fikr, Beirut, 2/411 2 Musnad Ahmad bin Hanbal, Abdullah ibn Umar (may Allah be pleased with him), Dar al-Fikr, Beirut, 2/106 Page 191 of 715

फतावा रज़विया (जिल्द 17)

...जो राजी न हो उसके लिए क्या हुक्म है? (2) तीन हफ़्ते से पिछला खरीदार (मुश्तरी) बाल-बच्चों के साथ उस मकान में रह रहा है जिस पर बेचने वालों (बाइआन) ने खुशी-खुशी कब्ज़ा दे दिया है, तो अब उसे मोहल्ले वालों के पड़ोसी होने का हक हासिल हो गया या नहीं? और अगर हासिल हो गया तो नए खरीदार को जो पड़ोसी है, उसे तकलीफ देना और मकान ज़बरदस्ती उससे खाली कराना जायज़ है या नहीं? और अगर नहीं तो उसके लिए क्या हुक्म है? बयान कीजिए, आपको सवाब मिलेगा। अल-जवाब (उत्तर): दूसरे के सौदे में दखल देना, कीमत बढ़ाना, अपनी तरफ फेरना सब हराम है। "बेशक रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने इस बात से मना फरमाया कि कोई शख्स अपने भाई के सौदे पर सौदा करे," तो फिर सवाल में ज़िक्र की गई सूरत का क्या कहना। (त) मकान ज़बरदस्ती उससे खाली कराना जुल्म है, और रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं: "जुल्म कयामत के दिन अंधेरियाँ होगा।" और कुरान अज़ीम में ज़ालिमों पर लानत फरमाई गई है और पड़ोसी पर जुल्म और भी ज़्यादा सख्त और कबीरा (बड़ा) गुनाह है। बेचने वाले (बाइ') पर फ़र्ज़ है कि अपनी पिछली बिक्री (बै') पर कायम रहे। शरीअत के मुताबिक बिक्री हो चुकी है, रजिस्ट्री या स्टाम्प पेपर पर लिखा जाना शरीअत की रू से असल में ज़रूरी नहीं है, और उस दूसरे शख्स पर फ़र्ज़ है कि इस जुल्म से बाज़ आ जाए। वल्लाहु तआला आलम (और अल्लाह तआला बेहतर जानता है)।

मसला 93: चाँदपुर, ज़िला बिजनौर से हकीम रज़वी साहब की जानिब से, 23 शव्वाल 1338 हिजरी। उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फरमाते हैं कि फसल और सस्ती के मौसम में अनाज खरीदा जाए और मौका आने पर बाज़ार के भाव पर बेच दिया जाए, इसका मुनाफा मुसलमान के लिए हराम होना कहाँ तक बेहूदगी है? मुखालिफीन (विरोधी) इसमें ताना देते हैं, दलील के लिए हुज़ूर से हुक्म माँगा गया है। अल-जवाब (उत्तर): ज़िक्र की गई सूरत में अनाज की तिजारत (व्यापार) बिला शुबहा हलाल और जायज़ है। इसे हराम कहने वाला हलाल शरीअत को...

1 मुसनद अहमद बिन हंबल, हदीस अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु), दारुल फिक्र, बेरुत, 2/411 2 मुसनद अहमद बिन हंबल, अब्दुल्ला इब्न उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु), दारुल फिक्र, बेरुत, 2/106 पृष्ठ 191/715

پر راضی نہ ہو اس کے لئے کیا حکم ہے؟ (۲) تین ہفتہ سے مشتری سابق مع عیال واطفال اس مکان میں رہتا ہے جس پر بائعان بخوشی قبضہ دے چکے ہیں تو اب اس کو حق اہل محلہ کے پڑوسی ہونے کا حاصل ہو گیا یا نہیں؟ اور اگر حاصل ہو گیا تو نئے مشتری کو جو پڑوسی ہے اس کو تکلیف دینا اور مکان بہ جبراً اس سے خالی کرانا جائز ہے یا نہیں؟ اور اگر نہیں تو اس کے لئے کیا حکم ہے؟ بینوا توجروا الجواب: دوسرے کا اب بیع سے تعرض کرنا، قیمت بڑھانا، اپنی طرف پھیر ناسب حرام ہے۔ فقد نهى رسول الله صلى الله عليه وسلم عن سوم الرجل على سوم اخيه فضلاً عن الصورة المذكورة في السؤال۔ بیشک رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم نے اس بات سے منع فرمایا کہ کوئی شخص اپنے بھائی کے سودا پر سودا کرے چہ جائیکہ سوال میں مذکورہ صورت ہو۔ (ت) مکان بہ جبراً اس سے خالی کرانا ظلم ہے، اور رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم فرماتے ہیں: الظلم ظلمات يوم القيمة۔ ظلم قیامت کے دن اندھیریاں ہو جائے گا۔ اور قرآن عظیم میں ظالموں پر لعنت فرمائی اور ہمسایہ ظلم اور بھی سخت اشد کبیرہ ہے، بائع پر فرض ہے کہ اپنی اگلی بیع پر قائم رہے شرعاً بیع ہو چکی رجسٹری یا اسٹامپ پر لکھا جانا شرعاً اصلاً ضرور نہیں، اور اس دوسرے شخص پر فرض ہے اس ظلم سے باز آ جائے واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۹۳: از چاند پور ضلع بجنور مرسلہ حکیم رضوی صاحب ۲۳ شوال ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ فصل اور موسم ارزانی میں غلہ خرید کیا جائے عندالموقع بشرح نرخ بازار فروخت کر دیا جائے اس کا منافع مسلم کے لئے حرام ہونا کہاں تک لغویت ہے مخالفین اس میں طعنہ زن ہوتے ہیں بغرض حجت حضور سے استصواب ہے۔ الجواب: صورت مذکورہ پر غلہ کی تجارت بلا شبہ حلال و جائز ہے اسے حرام کہنے والا حلال شرعی کو

1 مسند احمد بن حنبل حدیث ابو ہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ دارالفکر بیروت ۲ / ۴۱۱ 2 مسند احمد بن حنبل عبداللہ ابن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہ دارالفکر بیروت ۲ / ۱۰۶ Page 191 of 715

Fatawa Razawiyya Volume Seventeen (17)

[The author] calls it haram; it is haram to buy the grain coming into the town oneself and store it to sell at whatever high price one wants, such that it causes hardship for the townspeople. And it is 'makruh' (disliked) if buying it doesn't cause hardship to the town but one wishes for a famine so that one might get a lot of profit. When it is free from both these matters, as in the case of the question, then there is no dislike (karahat) at all. It is stated in 'Durr al-Mukhtar': "Hoarding the food of humans and animals in a city where it causes harm to its inhabitants is disliked (makruh); if it does not harm them, it is not disliked." Hoarding the food of humans and cattle for the purpose of selling it at a high price in a city where its inhabitants are harmed by this withholding is disliked. If there is no harm, it is not disliked. (T)

It is stated in 'Radd al-Muhtar': "One sins by waiting for inflation and famine with an evil intention towards Muslims. And Allah knows best." One becomes a sinner by withholding grain in anticipation of inflation and famine because this involves ill-will towards Muslims. And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 94: From Faridpur district, sent by Hafiz Inayat Ali and Kifayat Ali, 25 Safar 1319 AH. Respected Maulana Ahmed Raza Khan Sahib, after greetings, I hope you are well. The situation is that a person asks for 20 rupees worth of wheat on a six-month credit at the rate of 9.5 seers [per rupee], while the market rate for wheat is 11.5 to 12 seers. The person who takes the wheat sells it in the market at the rate of 11.5 to 12 seers for his needs. The person who gives the wheat on credit does not have it at home but buys it from the market and gives it. Another person asks for 10 rupees worth of wheat at the rate of 8 seers and requests 10 rupees in cash; the 10 rupees given to him will be taken back as exactly 10 rupees. Please guide as to what the ruling is.

The Answer: These forms are not haram nor are they a sin, yet they are 'makruh' (disliked). It is better to avoid them, as mentioned in 'al-Fath' and 'Radd al-Muhtar'. (T)

1- Durr al-Mukhtar, Kitab al-Hazr wa al-Ibahah, Chapter on Sales, Mujtabai Press, Delhi, 2/248. 2- Radd al-Muhtar, Kitab al-Hazr wa al-Ibahah, Chapter on Sales, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 5/256.

[लेखक] इसे हराम कहते हैं; हराम यह है कि बस्ती में आने वाले अनाज को खुद खरीद ले और रोक रखे ताकि जितना महंगा चाहे बेचे, जिससे बस्ती वालों को तंगी हो जाए। और 'मकरूह' (नापसंद) यह है कि इसे खरीदने से बस्ती में तंगी तो न हो लेकिन उसे यह आरज़ू हो कि अकाल पड़े ताकि उसे बहुत मुनाफ़ा मिले। जब यह इन दोनों बातों से पाक हो, जैसा कि सवाल की सूरत में है, तो इसमें बिल्कुल भी कराहत (नापसंदगी) नहीं है। 'दुर्रे मुख्तार' में है: "इंसानों और जानवरों की खुराक को ऐसे शहर में महंगा बेचने की नीयत से रोक रखना मकरूह है जिसके बाशिंदों को इस रोकने से नुकसान पहुँचे। और अगर नुकसान न हो तो मकरूह नहीं है।" इंसानों और चौपायों की खुराक महंगा बेचने के उद्देश्य से ऐसे शहर में रोक रखना मकरूह है जिसके निवासियों को इस रोक से हानि हो। और यदि हानि न हो तो मकरूह नहीं। (त)

'रद्दुल मुहतार' में है: "महंगाई और अकाल के इंतज़ार में मुसलमानों के प्रति बुरी नीयत रखने से इंसान गुनहगार होता है। और अल्लाह बेहतर जानता है।" महंगाई और अकाल के इंतज़ार में अनाज को रोक रखने से इंसान गुनहगार होता है क्योंकि इसमें मुसलमानों के लिए बदख्वाही (बुरी चाहत) है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 94: ज़िला फरीदपुर से, प्रेषक हाफ़िज़ इनायत अली और किफ़ायत अली, 25 सफ़र 1319 हिजरी। जनाब मौलाना अहमद रज़ा खाँ साहब, सलाम के बाद मिज़ाज शरीफ़, हाल यह है कि एक व्यक्ति छह महीने के वादे पर साढ़े नौ सेर प्रति रुपये की दर से 20 रुपये का गेहूं मांगता है, जबकि बाज़ार में गेहूं का भाव साढ़े ग्यारह सेर या बारह सेर है। गेहूं लेने वाला व्यक्ति अपनी ज़रूरत पूरी करने के लिए बाज़ार में उसे साढ़े ग्यारह या बारह सेर के भाव से बेच देता है। गेहूं उधार देने वाले के घर पर गेहूं नहीं है, वह बाज़ार से खरीदकर देता है। दूसरा व्यक्ति आठ सेर के भाव से 10 रुपये का गेहूं मांगता है और 10 रुपये नकद मांगता है; उसे जो 10 रुपये दिए जाएंगे, वह दस के दस ही वापस लिए जाएंगे। जैसा कुछ हो, मार्गदर्शन फरमाएं।

अल-जवाब (उत्तर): ये सूरतें हराम नहीं हैं और न ही गुनाह हैं, फिर भी ये मकरूह हैं, इनसे बचना बेहतर है। जैसा कि 'अल-फ़तह' और 'रद्दुल मुहतार' में है। (त)

1- दुर्रे मुख्तार, किताबुल हज़र वल इबाहह, फस्ल फिल बैय, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 2/248. 2- रद्दुल मुहतार, किताबुल हज़र वल इबाहह, फस्ल फिल बैय, दारु इहयाउत तुरास अल-अरबी बैरुत, 5/256.

पेज 192/715

حرام کہتا ہے، حرام یہ ہے کہ بستی میں آنے والا غلہ خود خرید لے اور بند رکھے کہ جتنا مہنگا چاہے بیچنے جس سے بستی پر تنگی ہو جائے، اور مکروہ یہ ہے کہ اس کے خریدنے سے بستی پر تنگی تو نہ ہو مگر اسے آرزو ہو کہ قحط پڑے کہ مجھے نفع بہت ملے ، اور جب ان دونوں باتوں سے پاک ہے جیسا صورت سوال میں ہے تو اصلاً کراہت بھی نہیں۔ در مختار میں ہے : کرہ احتکار قوۃ البشر و البہائم فی بلد یضر باھلہ فان لم یضر لم یکرہ۔ انسانوں اور چوپایوں کی خوراک مہنگا بیچنے کی غرض سے ایسے شہر میں روک رکھنا مکروہ ہے جس کے باشندوں کو اس روکنے سے ضرر پہنچے اور اگر ضرر نہ ہو تو مکروہ نہیں۔ (ت)

ردا لمحتار میں ہے : اثم بانتظار الغلاء والقحط لنیۃ السوء للمسلمین واللہ تعالٰی اعلم۔ مہنگائی اور قحط سالی کے انتظار میں غلہ کو روک رکھنے سے گنہگار ہوا کیونکہ اس میں مسلمانوں کے لئے بدخواہی ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۹۴ : از ضلع فرید پور مرسلہ حافظ عنایت علی و کفایت علی ۲۵ صفر ۱۳۱۹ھ جناب مولانا احمد رضا خاں صاحب بعد سلام علیکم مزاج شریف ، احوال یہ ہے کہ ایک شخص گندم مبلغ بیس ۲۰ روپے کے ساڑھے نو سیر کے وعدہ پر چھ ماہ کو طلب کرتا ہے اور گندم کا نرخ بازار میں ساڑھے گیارہ سیر و بارہ سیر ہے ، جو شخص گندم لیتا ہے اپنی ضرورت کو بازار میں ساڑھے گیارہ سیر و بارہ سیر فروخت کرکے اپنا کام نکال لیتا ہے اور جو شخص گندم ادھار دیتا ہے اس کے مکان پر گندم نہیں بازار سے خرید کر دیتا ہے ، دوسرا شخص مبلغ دس روپے کے گندم آٹھ سیر کے بھاؤ سے مانگتا ہے اور مبلغ دس روپے نقد طلب کرتا ہے اسے جو دس روپے دئے جائیں گے اس روپیہ کو دس کے دس لئے جائیں گے جیسا کچھ ارشاد فرمائیں۔

الجواب : یہ صورتیں حرام نہیں گناہ نہیں پھر بھی مکروہ ہیں ان سے بچنا بہتر ہے ، کما فی الفتح ورد المحتار (جیسا کہ فتح اور رد المحتار میں ہے ۔ ت)

۱- در مختار کتاب الحظر والاباحة فصل فی البیع مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۲۴۸ ۲- رد المحتار کتاب الحظر والاباحة فصل فی البیع دار احیاء التراث العربی بیروت ۵ / ۲۵۶

Fatawa Razawiyyah Volume 17

Chapter on Unauthorized Sale (Rules of Sale by a Fuduli/Unauthorized person)

Question 95: What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid sold the jewelry of his wife Hind, which she had received as dowry, without her permission and used the money for himself. Is this sale valid, and does Hind have the right to demand it from Zaid or not? And does the jewelry, utensils, and other dowry items, which Hind's parents specifically gave for Hind's use, belong to Hind or to Zaid? Please explain, may you be rewarded.

The Answer: The jewelry, utensils, and other dowry items that Hind's parents gave specifically for her belong entirely to Hind. Zaid has no right to them.

In Al-Durr al-Mukhtar: "If a father prepares a dowry for his daughter and hands it over to her, he does not have the right to take it back from her, nor do his heirs after his death, if he handed it over while in good health. Rather, it belongs exclusively to her, and this is the issued fatwa."

In Durr-al-Mukhtar, it is stated: "If a father gave dowry to his daughter and gave it into her possession, now neither can he take it back himself nor can his heirs take it back after his death, provided he gave this dowry in a state of health. Rather, the ownership of this dowry is specific to the daughter, and the fatwa is based on this." (T)

1 Durr al-Mukhtar, Book of Marriage, Chapter on Dowry (Mahr), Mujtabai Press, Delhi, 1/ 203

फ़तावा रज़विया खंड 17

बाब बै-उल-फ़ुज़ूली (अनधिकृत व्यक्ति द्वारा बिक्री के नियम)

प्रश्न 95: धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: ज़ैद ने अपनी पत्नी हिंदा के गहने, जो उसे दहेज में मिले थे, उसकी अनुमति के बिना बेच दिए और उस पैसे का इस्तेमाल खुद पर किया। क्या यह बिक्री प्रभावी है, और क्या हिंदा को ज़ैद से माँग करने का अधिकार प्राप्त है या नहीं? और गहने, बर्तन और अन्य दहेज की सामग्री, जो हिंदा के माता-पिता ने विशेष रूप से हिंदा के लिए दी थी, वह हिंदा की संपत्ति है या ज़ैद की? कृपया स्पष्ट करें, पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: गहने, बर्तन और अन्य दहेज की वस्तुएं जो हिंदा के माता-पिता ने विशेष रूप से उसके लिए दी थीं, निस्संदेह हिंदा की मिल्कियत (स्वामित्व) हैं। ज़ैद का इसमें कोई अधिकार नहीं है।

अल-दुर अल-मुख्तार में है: "जिसने अपनी बेटी के लिए दहेज तैयार किया और उसे सौंप दिया, उसे उससे वापस लेने का अधिकार नहीं है, और न ही उसके उत्तराधिकारियों को उसकी मृत्यु के बाद, यदि उसने इसे अपनी स्वस्थ स्थिति में सौंपा था। बल्कि यह उसके साथ विशिष्ट है, और इसी पर फ़तवा है।"

दुर-ए-मुख्तार में है कि यदि पिता ने बेटी को दहेज दिया और बेटी के कब्जे में दे दिया, तो अब न तो वह खुद उसे वापस ले सकता है और न ही उसकी मृत्यु के बाद उसके उत्तराधिकारी उसे वापस ले सकते हैं, बशर्ते कि उसने यह दहेज स्वस्थ अवस्था में दिया हो। बल्कि उस दहेज का स्वामित्व बेटी के साथ ही विशिष्ट है, और इसी पर फ़तवा है। (त)

1 दुर्रे मुख्तार, किताबुन निकाह, बाबुल् महर, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/ 203

पृष्ठ 193 का 715

فتاوٰی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

باب بیع الفضولی (فضولی کی بیع کے احکام)

مسئلہ ۹۵: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے زیور اپنی زوجہ ہندہ کا کہ اسے جہیز میں ملا تھا بلا اجازت ہندہ بیچ کیا اور اپنے صرف میں لایا، آیا یہ بیع نافذ اور ہندہ کو زید سے اختیار مطالبہ حاصل ہے یا نہیں؟ اور زیور و ظروف وغیرہ اسباب جہیز جو والدین ہندہ نے خاص واسطے صرف ہندہ کے دیا ہے ملک ہندہ کی ہے یا زید کی؟ بینوا توجروا۔

الجواب: زیور و ظروف وغیرہ اسباب جہیز کہ والدین ہندہ نے خاص واسطے صرف ہندہ کے دیا بلا وجہ ملک ہندہ ہے زید کو اس میں کچھ حق نہیں۔

فی الدرالمختار جھز ابنتہ بجھاز وسلمھا ذلک لیس لہ الاسترداد منھا، ولا لورثتہ بعدہ ان سلمھا ذلک فی صحتہ بل تختص بہ، وبہ یفتی۔

در مختار میں ہے کہ باپ نے بیٹی کو جہیز دیا اور بیٹی کے قبضہ میں دے دیا تو اب نہ تو وہ خود واپس لے سکتا ہے نہ ہی اس کے مرنے کے بعد اس کے ورثاء واپس لے سکتے ہیں جب کہ اس نے یہ جہیز حالت صحت میں دیا ہو بلکہ اس جہیز کی ملکیت بیٹی کے ساتھ مختص ہے اور اسی پر فتوٰی ہے۔ (ت)

1 در مختار کتاب النکاح باب المھر مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۲۰۳

Fatawa Razawiyya Volume (17)

Therefore, the sale made by Zaid without Hindah's permission cannot be enforced. If Hindah demands it, the jewelry can be taken back from the buyer. And Allah Almighty knows best.

Problem 96: What do the scholars of religion say regarding this matter: Hindah, during her terminal illness (marz-ul-maut), sold a house and a shop worth approximately sixteen hundred rupees for six hundred rupees to her husband and daughter. Hindah died fifteen days later. In this case, is this sale valid or not? Explain and be rewarded.

Answer: In the case questioned, the sale is not valid because selling at a lower price during terminal illness is invalid according to the consensus of Imam Azam and the Sahibayn (may Allah have mercy on them). Furthermore, selling to an heir even at market value is not valid according to Imam Azam without the consent of other heirs.

[Arabic Citation]: In Al-Talwih, if one sells a specific item from the estate to one of the heirs for a similar value, it is not permissible according to Abu Hanifa. Summarized. And Allah Almighty knows best. (T)

[Translation]: It is stated in Al-Talwih that if someone sold a specific item from the legacy items to their heir at an equal price, it is not permissible according to Imam Abu Hanifa (may Allah Almighty be pleased with him). Summarized. And Allah Almighty knows best.

Problem 97: For example, Zaid purchased a house without Amr's permission and had the sale deed written in the name of his brother Amr, paid the price himself, and also acknowledged that this house belongs to Amr. Later, Amr, who was on a journey at the time of the house purchase, died there. Amr's heirs, based on the aforementioned sale deed and acknowledgment, demanded the house from Zaid with the help of the ruler, and Zaid, by the order of the ruler, surrendered and delivered it.

1 Al-Talwih with Al-Tawdih, Chapter on matters affecting eligibility, including illness. Nurani Kutub Khana, Qissa Khani Peshawar, p. 663. Page 194 of 715

अतः ज़ैद द्वारा हिन्दा की अनुमति के बिना की गई बिक्री लागू नहीं की जा सकती, और यदि हिन्दा मांग करती है, तो आभूषण खरीदार से वापस लिए जा सकते हैं, और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला 96: धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि हिन्दा ने अपनी मृत्यु शैय्या (मर्ज़-उल-मौत) के दौरान लगभग सोलह सौ रुपये के मूल्य का एक घर और एक दुकान अपने पति और बेटी को छह सौ रुपये में बेच दी, पंद्रह दिनों के बाद हिन्दा की मृत्यु हो गई, इस स्थिति में क्या यह बिक्री वैध है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: पूछे गए मामले में बिक्री सही नहीं है क्योंकि मृत्यु शैय्या की बीमारी के दौरान कम कीमत पर बेचना इमाम आज़म और साहिबैन (उन पर अल्लाह की दया हो) की सहमति से अवैध है। और एक वारिस को तो बराबर कीमत पर भी अन्य वारिसों की अनुमति के बिना इमाम आज़म के नज़दीक जायज़ नहीं है।

[अरबी उद्धरण]: 'अल-तलवीह' में है कि यदि कोई विरासत की वस्तुओं में से कोई विशिष्ट वस्तु अपने किसी वारिस को समान मूल्य पर बेचता है, तो यह अबू हनीफ़ा के अनुसार अनुमेय नहीं है। संक्षिप्त। और अल्लाह सर्वशक्तिमान सबसे बेहतर जानता है। (त)

[अनुवाद]: 'तलवीह' में है कि अगर विरासत की चीजों में से कोई खास चीज़ किसी ने अपने वारिस के हाथ बराबर कीमत पर फरोख्त की तो इमाम अबू हनीफा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु के नज़दीक जायज़ नहीं है। संक्षिप्त। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 97: उदाहरण के तौर पर ज़ैद ने अम्र की अनुमति के बिना एक मकान खरीदा और उसका बैनामा (बिक्री विलेख) अपने भाई अम्र के नाम लिखवा लिया और उसकी कीमत भी खुद ही दे दी और यह इकरार भी किया कि यह मकान अम्र का है। बाद में जब अम्र, जो मकान की खरीदारी के समय सफर पर था, वहीं मर गया तो अम्र के वारिसों ने बैनामा और उक्त इकरार की वजह से हाकिम (शासक) की मदद से ज़ैद से मकान की मांग की और ज़ैद ने हाकिम के हुक्म पर सौंप दिया और सुपुर्द कर दिया।

1 अल-तलवीह मअ अत-तौज़ीह, पात्रता को प्रभावित करने वाले मामलों पर अध्याय, जिसमें बीमारी शामिल है। नूरानी कुतुब खाना, किस्सा खानी पेशावर, पृ. 663। पृष्ठ 194 / 715

پس وہ بیچ کہ زید نے کی بلا اجازت ہندہ نافذ نہیں ہو سکتی ، اور اگر ہندہ مطالبہ کرے تو وہ زیور مشتری سے پھر سکتا ہے ، واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۹۶: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ہندہ نے اپنے مرض موت میں ایک مکان اور ایک دکان کہ قریب سولہ سو روپے کے قیمت کے تھے چھ سو روپے کو اپنے شوہر اور دختر کے ہاتھ بیچ کئے ، بعد پندرہ روز کے بعد ہندہ مرگئی ، اس صورت میں یہ بیچ جائز ہے یا نہیں ؟ بینوا توجروا

الجواب: صورت مسئولہ میں بیع صحیح نہیں کہ بیع مرض موت میں کم قیمت کو باتفاق امام اعظم و صاحبین رحمہم اللہ تعالٰی ناجائز ہے اور وارث کے ہاتھ تو برابر قیمت کو بھی بے اجازت دیگر ورثہ امام اعظم کے نزدیک جائز نہیں

فی التلویح لو باع من احد الورثۃ عینا من اعیان الترکۃ بمثل القیمۃ فلایجوز عند ابی حنیفۃ اھ ملخصا واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت)

تلویح میں ہے اگر اشیاء ترکہ میں سے کوئی خاص شئی کسی نے اپنے وارث کے ہاتھ برابر قیمت پر فروخت کی تو امام ابو حنیفہ رضی اللہ تعالٰی عنہ کے نزدیک جائز نہیں ہے اھ ملخصا، واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۹۷: مثلا زید یک مکان بلا اجازت عمر و خریدہ بیعنامہ آں بنام عمرو برادر خود تحریر کنانندہ گرفت وزر ثمن آں نیز خودداده اقرارہم کردہ ماند کہ ایں مکان عمرو ست بعد ازاں عمرو کہ وقت خرید مکان در سفر بود درانجا فوت کرد ورثہ عمرو مکان مذکورہ باعانت حاکم از زید بوجہ

بیعنامہ واقرار مذکورہ خواستند وزیر بحکم حاکم تفویض و تسلیم مثال کے طور پر زید نے ایک مکان اپنے بھائی عمرو کی اجازت کے بغیر خرید کر اس کا بیعنامہ عمرو کے نام لکھوا دیا اور اس کا زرِ ثمن بھی خود ہی دے کر اقرار کیا کہ یہ مکان عمرو کا ہے، بعد میں جب عمرو جو مکان کی خریداری کے وقت سفر پر تھا وہیں فوت ہو گیا تو عمرو کے وارثوں نے بیعنامہ اور اقرار مذکورہ کی وجہ سے حاکم کی مدد کے ذریعے زید سے مکان کا مطالبہ کیا اور زید حاکم کے حکم پر

1 التلویح مع التوضیح فصل فی الامور المعترضة علی الاهلیة منها المرض نورانی کتب خانہ قصہ خانی پشاور ص ۶۶۳ Page 194 of 715

[Left Column - Persian]: He did so; thus, in the current situation, is Zaid entitled to receive the purchase price (zar-e-saman), the payment of which by Zaid was proven in court, from the heirs of Amr? Or, by virtue of admitting Amr's ownership of the said house, has it also been admitted that the money given as the purchase price of the house also belonged to Amr? Give a ruling and be rewarded.

[Right Column - Urdu]: The house was handed over to them. Now, is Zaid entitled to receive the purchase price from Amr's heirs, whose payment by Zaid was proven in court? Or, by virtue of admitting Amr's ownership of the said house, does it also constitute an admission that the money paid as the purchase price of the house also belonged to the same Amr? State the ruling and be rewarded. (T)

Answer: [Left Column - Persian/Urdu]: Shari'ah-wise, in the questioned scenario, Zaid is entitled to recover the purchase price from Amr's heirs after handing over the house to them, the payment of which by Zaid was established in court. Zaid's admission regarding the house for Amr—as in the case of buying it in [Amr's] absence and paying the price from his own pocket, meaning the purchase was for Amr—cannot generally be considered an admission of Amr's ownership of the price. This is especially true if Zaid stated the price was from his own funds. This is because an admission regarding one thing cannot be an admission regarding another thing that is separate from the admitted object and is not an integral part of it. The purchase price is a separate and distinct thing from the admitted house; as it is not a part of the house nor compounded with it, it does not follow the house. Thus, generally, it cannot be included in the admission of the house, especially when Zaid claimed it to be his own, just like an admission regarding a female slave's person.

[Right Column - Urdu]: In the questioned scenario, after handing over the house to Amr's heirs, Zaid is legally entitled to recover the purchase price from them, the payment of which by Zaid was proven in court. Zaid's admission that the house belongs to Amr—as in the case of buying it in Amr's absence and paying the price from his own pocket, meaning the purchase was for Amr—cannot generally be taken as an admission that the price money belonged to Amr. This is especially true when Zaid stated he paid the price from his own funds (then, all the more, Amr's ownership of the money is not established). This is because an admission regarding one thing cannot be an admission regarding another thing that is separate from the admitted object and is not an integral part of it. The purchase price is a separate and distinct

entity from the house for which Zaid admitted Amr's ownership. Therefore, because it is not a part of the house nor compounded with it, the purchase price does not follow the status of the house. Thus, generally, it cannot be included in the admission of the house.

फ़तावा रज़विया, खंड 17

[बायाँ कॉलम - फारसी]: उसने ऐसा किया; अतः वर्तमान स्थिति में, क्या ज़ैद अम्र के वारिसों से खरीद मूल्य (ज़र-ए-समन) प्राप्त करने का हकदार है, जिसकी ज़ैद द्वारा अदायगी अदालत में सिद्ध हुई थी? या, उक्त मकान पर अम्र के स्वामित्व को स्वीकार करने के कारण, क्या यह भी स्वीकार कर लिया गया है कि मकान के खरीद मूल्य के रूप में दिया गया पैसा भी अम्र का था? व्यवस्था दें और पुण्य प्राप्त करें।

[दायाँ कॉलम - उर्दू]: वह मकान उनके हवाले कर दिया, तो क्या अब ज़ैद वह जर-ए-समन (खरीद मूल्य) अम्र के वारिसों से पाने का हक़दार है जिसकी ज़ैद की तरफ़ से अदालत में अदायगी साबित है? या उक्त मकान पर अम्र की मिल्कियत (स्वामित्व) का इकरार करने की वजह से इस बात का भी इकरार हो गया कि मकान के जर-ए-समन में दिया गया रुपया भी उसी अम्र की तरफ़ से है? बयान करें और अज्र पाएँ। (त)

उत्तर: [बायाँ कॉलम - फारसी/उर्दू]: शरीयत के अनुसार, पूछे गए मामले में, ज़ैद अम्र के वारिसों को मकान सुपुर्द करने के बाद उनसे वह जर-ए-समन प्राप्त करने का हकदार है, जिसकी ज़ैद की ओर से अदालत में अदायगी सिद्ध हुई है। अम्र के लिए मकान के संबंध में ज़ैद का इकरार—जैसा कि [अम्र की] अनुपस्थिति में उसे खरीदने और अपनी जेब से कीमत चुकाने के मामले में होता है, जिसका अर्थ है कि खरीद अम्र के लिए थी—आम तौर पर अम्र के कीमत के स्वामित्व का इकरार नहीं माना जा सकता। यह विशेष रूप से सच है यदि ज़ैद ने कहा कि कीमत उसके अपने धन से थी। ऐसा इसलिए है क्योंकि एक चीज़ के बारे में इकरार किसी दूसरी चीज़ के बारे में इकरार नहीं हो सकता जो स्वीकृत वस्तु से अलग हो और उसका अभिन्न अंग न हो। खरीद मूल्य स्वीकृत मकान से एक अलग और विशिष्ट चीज़ है; चूंकि यह मकान का हिस्सा नहीं है और न ही इसके साथ मिश्रित है, यह मकान का अनुसरण नहीं करता है। अत; आम तौर पर, इसे मकान के इकरार में शामिल नहीं किया जा सकता है, विशेष रूप से जब ज़ैद ने इसे अपना होने का दावा किया हो, ठीक वैसे ही जैसे एक दासी के व्यक्ति के संबंध में इकरार।

[दायाँ कॉलम - उर्दू]: सूरत-ए-मसूला में, अम्र के वारिसों को मकान सुपुर्द करने के बाद ज़ैद उनसे वह जर-ए-समन हासिल करने का शरई तौर पर हक़दार है, जिस जर-ए-समन की ज़ैद की तरफ़ से अदालत में अदायगी साबित है। और ज़ैद का यह इकरार कि मकान अम्र के लिए है—जैसा कि

खरीदारी की सूरत में अम्र की अनुपस्थिति में अपने पास से समन (कीमत) अदा करना इस अर्थ में कि मकान की खरीदारी अम्र के लिए है—इस बात का इकरार आम तौर पर नहीं हो सकता कि समन अम्र की मिल्कियत थे। विशेष रूप से उस स्थिति में जब ज़ैद ने अपने पास से समनों की अदायगी का कहा भी हो (तो और भी बेहतर तरीके से समनों का अम्र की मिल्कियत होना साबित नहीं होगा)। क्योंकि एक चीज़ का इकरार किसी दूसरी ऐसी चीज़ का इकरार नहीं हो सकता जो उस चीज़ से अलग हो जिसका इकरार किया गया है और वह उसका अभिन्न अंग न हो। और समन उस मकान से अलग और पृथक चीज़ है जिस मकान का इकरार ज़ैद ने अम्र के लिए किया है। इसलिए उस मकान का हिस्सा न होने और उसके साथ मिश्रित न होने के कारण जर-ए-समन मकान के अधीन नहीं है, अतः आम तौर पर मकान के इकरार में शामिल नहीं हो सकेगा।

पृष्ठ 195/715

فتاوی رضویہ، جلد ہفدہم (۱۷)

[بایاں کالم - فارسی]: ایساں کرد پس الحمال زید مستحق یافتن زر ثمن کہ در عدالت دادن زید ثابت گردید از ورثاء عمرو ہست یا بوجہ اقرار بر ملکیت عمرو بسبب مکان مذکور اقرار بریں امر ہم گردید کہ روپیہ دادہ شدہ زر ثمن مکان ازاں عمرو ست، بینوا توجروا۔

[دایاں کالم - اردو]: وہ مکان ان کے حوالے کردیا، تو کیا اب زید وہ زر ثمن عمرو کے وارثوں سے پانے کا حقدار ہے جس کی زید کی طرف سے عدالت میں ادائیگی ثابت ہے یا مکان مذکور پر عمرو کی ملکیت کا اقرار کرنے کی وجہ سے اس بات کا بھی اقرار ہوگیا کہ مکان کہ زر ثمن میں دیا گیا روپیہ بھی اسی عمرو کی طرف سے ہے، بیان کرو اجر پاؤگے۔ (ت)

الجواب: [بایاں کالم - فارسی/اردو]: شرعاً در صورت مسؤل فیہا زید مستحق یافتن زر ثمن کہ در عدالت دادن زید ثابت گردیدہ از ورثہ عمرو بعد تسلیم مکان بایشان است، واقرار زید بمکان برائے عمرو کہ بمچوں صورت خرید در غیبت دادن ثمن از نزد خود بمعنی خریدہ شدن برائے عمرو است اقرار بملکیت ثمن برائے عمو عموماً خصوص بحالیکہ زید بودن ثمن ازاں خود گفتہ باشد نمی تواند شد چہ اقرار بر یک چیز اقرار بچیز دیگر منفصل از مقربہ کہ جزء تابع آں نباشد نمی شود وزر ثمن کہ چیزے منفصل وعلیحدہ از مکان مقربہ است بوجہت نبودن جزء مکان و مرکب نبودنش دراں تابع مکان نیست پس داخل در اقرار مکان عموماً خصوص در حالیکہ زید بودنش ازاں خود گفتہ باشد نمی تواند شد مانند اقرار بجاریہ مقبوضہ ذات۔

[دایاں کالم - اردو]: صورت مسئولہ میں عمرو کے ورثاء کو مکان سپرد کرنے کے بعد زید ان سے وہ زر ثمن حاصل کرنے کا شرعی طور پر مستحق ہے جس زر ثمن کی زید کی طرف سے عدالت

میں ادائیگی ثابت ہے، اور زید کا یہ اقرار کہ مکان عمرو کے لئے ہے جیسا کہ خریداری کی صورت میں عمرو کی عدم موجودگی میں اپنے پاس سے ثمن ادا کرنا بایں معنی کہ مکان کی خریداری عمرو کے لئے ہے اس بات کا اقرار عموماً نہیں ہوسکتا کہ ثمن عمرو کی ملکیت تھے خصوصاً اس حال میں کہ جب زید نے اپنے پاس سے ثمنوں کی ادائیگی کا کہا بھی ہو (تو بدرجہ اولیٰ ثمنوں کا ملک عمرو ہونا ثابت نہ ہوگا) کیونکہ ایک چیز کا اقرار کسی دوسری ایسی چیز کا اقرار نہیں ہوسکتا جو اس چیز سے منفصل ہو جس کا اقرار کیا گیا ہے اور اس کی تابع جزء نہ ہو، اور ثمن اس مکان سے منفصل اور علیحدہ چیز ہے جس مکان کا اقرار زید نے عمرو کے لئے کیا ہے لہذا اس مکان کی جزء نہ ہونے اور اس کے ساتھ مرکب نہ ہونے کی وجہ سے زر ثمن مکان کے تابع نہیں چنانچہ بالعموم اقرار مکان میں داخل نہ ہوسکے گا۔

Child and acknowledgment of a chest containing goods, and acknowledgment of a possessed house containing goods and livestock; that acknowledging the child of a slave-girl, the goods in a chest, and the goods and livestock in a house, does not occur due to this collective cause, i.e., because each of these is not a component or derivative of the acknowledged object. In Fatawa Qazi Khan it is written: A man has in his hands a slave-girl and her child, and he says: "The slave-girl belongs to so-and-so," the child is not included therein, etc. And in Al-Muhit it is written (text quoted on the margin of Durr-ul-Mukhtar, p. 482) "end of selection." And if one ponders well, this very subject—meaning the non-inclusion of unacknowledged prices in the acknowledgment of a house, and its non-obligation upon the acknowledger—is clear from Al-Hidayah, Al-Aini, and others, following "Ma Aqarra Bihi" (that which he acknowledged) in the phrase "Lazimahū Iqraruhū, Majhūlan Kāna Mā Aqarra Bihī aw Ma'lūman" (his acknowledgment becomes binding on him, whether what he acknowledged was unknown or known) [2], and "Al-Iqrāru Mulzimun 'alal Muqirri Mā Aqarra Bihī" (Acknowledgment makes binding upon the acknowledger what he acknowledged) [3]. It becomes clear that since unacknowledged prices cannot be included in the acknowledgment of a house,

specially in the case when Zaid has also said that "I am giving the price from my own side," it becomes like a person making an acknowledgment about a female slave in his possession who has children, or about a chest containing goods, or about a house containing goods and livestock. In such cases, the acknowledgment will not include the children of the female slave, the goods kept in the chest, or the goods and livestock present in the house. This is because of the collective cause, i.e., because none of these are components or derivatives of the things for which the acknowledgment was made. In Fatawa Qazi Khan, it is written that if a person has a female slave and her child in his possession and he says "this slave belongs to so-and-so," then the child of the slave will not be included in this acknowledgment, etc. And in Al-Muhit, it is recorded (text on the margin of Durr-ul-Mukhtar, p. 482) "end of selection." And if one ponders well, this very subject—meaning the non-inclusion of unacknowledged prices in the acknowledgment of a house, and the non-obligation of the price on the one acknowledging the house—is obtained from the restriction of "Ma Aqarra Bihi" (that which he acknowledged) mentioned in Al-Hidayah, Al-Aini, etc.

This restriction, which they applied in these texts, means that the acknowledgment becomes binding on the acknowledger for whatever he acknowledged, whether...

1. Fatawa Qazi Khan, Book of Acknowledgment, Section on Exceptions, Naval Kishore Lucknow, 3/623.
2. Al-Hidayah, Book of Acknowledgment, Matba' Yusafi Lucknow, 3/229.
3. Al-Binayah fi Sharh al-Hidayah, Book of Acknowledgment, Al-Maktabah al-Imdadiyyah Makkah al-Mukarramah 3/777; Fath al-Qadir, Book of Acknowledgment, Maktabah Nuriyyah Razaviyyah Sukkur 17/299.

बच्चा और सामान से भरे संदूक की स्वीकारोक्ति, और सामान व पशुओं से युक्त कब्ज़े वाले घर की स्वीकारोक्ति; कि दासी की संतान, संदूक के सामान और घर के सामान व पशुओं की स्वीकारोक्ति इस सामूहिक कारण से नहीं होती, अर्थात् इनमें से प्रत्येक उस चीज़ का हिस्सा या अनुगामी नहीं है जिसके बारे में स्वीकारोक्ति की गई है। फतावा काज़ी ख़ान में लिखा है: एक व्यक्ति के पास एक दासी और उसका बच्चा है, और वह कहता है: "दासी अमुक की है," तो बच्चा उसमें शामिल नहीं होता, इत्यादि। और मुहीत में लिखा है (दुर्रे मुख्तार के हाशिये पर उद्धृत इबारत, पृष्ठ 482) "इंतिहा मुल्तकृतन"। और यदि अच्छी तरह से विचार किया जाए, तो यही विषय — यानी घर की स्वीकारोक्ति में गैर-स्वीकृत कीमतों का शामिल न होना और स्वीकारकर्ता पर उसकी अनिवार्यता न होना — हिदाया, ऐनी और अन्य से स्पष्ट है, जो इबारत "लज़िमहू इक़रारुहू, मजहूलन काना मा अक़र्रा बिही औ मालूमन्" (उसकी स्वीकारोक्ति उस पर अनिवार्य हो जाती है, चाहे वह अज्ञात हो जिसके बारे में उसने स्वीकार किया या ज्ञात हो) [2], और "अल-इकरारु मुल्ज़िममुन अलल मुक़िरि मा अक़र्रा बिही" (स्वीकारोक्ति स्वीकारकर्ता पर वह चीज़ अनिवार्य कर देती है जिसके बारे में उसने स्वीकार किया) [3] में 'मा अक़र्रा बिही' के बाद आता है। यह स्पष्ट हो जाता है कि चूंकि गैर-स्वीकृत कीमतें घर की स्वीकारोक्ति में शामिल नहीं हो सकतीं,

विशेष रूप से उस स्थिति में जब ज़ैद ने यह भी कह दिया है कि "मैं अपनी ओर से कीमत दे रहा हूँ," तो यह वैसा ही हो गया जैसे कोई व्यक्ति अपने कब्जे वाली उस दासी के बारे में स्वीकारोक्ति (इकरार) करे जिसके बच्चे हों, या उस संदूक के बारे में स्वीकारोक्ति करे जिसमें सामान हो, या उस घर के बारे में स्वीकारोक्ति करे जिसमें सामान और चौपाया (पशु) हों। ऐसी स्थिति में यह स्वीकारोक्ति दासी की संतान, संदूक में रखे सामान और घर में मौजूद सामान व चौपायों को शामिल नहीं करेगी। इसी "इल्लत-ए-जामिया" (सामूहिक कारण) की वजह से, यानी इस कारण से कि इनमें से कोई भी उन चीजों का हिस्सा या अनुगामी (ताबे) नहीं है जिनके बारे में स्वीकारोक्ति की गई है। फतावा काज़ी ख़ान में लिखा है कि यदि किसी व्यक्ति के पास एक दासी और उसकी संतान हो और वह कहे कि "यह दासी अमुक व्यक्ति की है," तो दासी की संतान इस स्वीकारोक्ति में शामिल नहीं होगी, इत्यादि। और 'मुहीत' में अंकित है (दुर्रे मुख्तार के हाशिये पर इ؍ا़त, पृष्ठ 482) 'इंतिहा मुल्तकृतन'। और यदि गहराई से विचार किया जाए, तो यही विषय — यानी गैर-स्वीकृत कीमतों का घर की स्वीकारोक्ति में शामिल न होना और घर की स्वीकारोक्ति करने वालों पर कीमत का अनिवार्य न होना — 'हिदाया'

और 'ऐनी' आदि में वर्णित "मा अक़र्रा बिही" (जिसके बारे में उसने स्वीकार किया) की शर्त से प्राप्त होता है। जो शर्त उन्होंने इन इबारतों में लगाई है कि स्वीकारकर्ता पर उसका इक़ ्रार लाज़िम हो जाता है, चाहे...

1. फतावा काज़ी ख़ान, किताबुल इक़रार, फस्ल-फि-इस्तस्ना, नवल किशोर लखनऊ, 3/623।
2. अल-हिदाया, किताबुल इक़रार, मतबा यूसुफी लखनऊ, 3/229।
3. अल-बिनाया फी शरहिल हिदाया, किताबुल इक़रार, अल-मकतबातुल इमदादिया मक्का मुकर्रमा 3/777; फतहुल क़दीर, किताबुल इक़रार, मकतबा नूरिया रिज़विया सुक्कुर 17/299।

ولد واقرار بصندوق محمولہ متاع و اقرار بدار مقبوضہ مشمولہ بمتاع ودواب کہ اقرار بولد جاریہ ومتاع صندوق ومتاع دار ودواب از ہمیں علت جامعہ یعنی از جہت نبودن ہر یکے ازاں جزو تابع مقربہ نمے شود در فتاوی قاضیخان نوشتہ رجل فی یدیہ جاریۃ وولدہا فقال ان الجاریۃ لفلان لایدخل فیہ الولد الخ۔ ودر محیط نوشتہ (عبارت منقول بر ہامش در مختار ص ۴۸۲) انتی ملتقطاً واگر نیک غور کردہ آید ہمیں مضمون یعنی داخل نبودن ثمن غیر مقربہ در اقرار مکان ولازم نبودنش بر مقر ان از ہدایہ و عینی و غیر ہما بقیہ ما اقر بہ در عبارت لزمہ اقرارہ مجہولہ کان ما اقربہ اومعلومًا ۲ والاقرار ملزم علی المقرما اقربہ ۳۔ واضح می شود وچوں ثمن غیر مقربہ داخل در اقرار مکان نمی تواند شد

خصوصا اس حال میں کہ جب زید نے یہ کہہ بھی دیا ہے کہ ثمن میں اپنے پاس دے رہا ہوں یہ ایسے ہی ہو گیا جیسے کوئی شخص اولاد والی مقبوضہ لونڈی کے بارے میں اقرار کرے یا اس صندوق کے بارے میں اقرار کرے جس میں سامان ہو یا ایسے گھر کے بارے میں اقرار کرے جس میں سامان اور چوپائے ہوں تو یہ اقرار لونڈی کی اولاد، صندوق میں رکھے ہوئے سامان اور گھر میں موجود سامان اور چوپایوں کو شامل نہ ہو گا اسی علت جامعہ کی وجہ سے یعنی اس وجہ سے کہ ان میں کوئی بھی ان چیزون کی جزو و تابع نہیں جن کے بارے میں اقرار کیا گیا، فتاویٰ قاضی خاں میں لکھا ہوا کہ ایک شخص کے قبضہ میں لونڈی اور اس کی اولاد ہو اور وہ کہے کہ یہ لونڈی فلاں شخص کی ہے تو لونڈی کی اولاد اس اقرار میں داخل نہ ہوگی الخ۔ اور محیط میں مرقوم ہے (عبارت برہامش در مختار ص ۴۸۲) انتی ملتقطاً اور اگر خوب غور کیا جائے تو یہی مضمون یعنی غیر اقرار شدہ ثمنوں کا اقرار مکان میں داخل نہ ہونا اور مکان کا اقرار کرنیوالوں پر ثمن کا

لازم نہ ہونا ہدایہ اور عینی وغیرہ میں مذکور ماالقربہ (جس کا اس نے اقرار کیا) کی قید سے حاصل ہوتا ہے جو قید انھوں نے ان عبارتوں میں لگائی کہ مقر پر اس کا اقرار لازم ہو جاتا ہے چاہے

۱ فتاویٰ قاضی خان کتاب الاقرار فصل فی الاستثناء نولکشور لکھنو ۳ / ۶۲۳ ۲ الہدایہ کتاب الاقرار مطبع یوسفی لکھنو ۳ / ۲۲۹ ۳ البنایۃ فی شرح الہدایۃ کتاب الاقرار المکتبۃ الامدادیہ مکۃ المکرمہ ۳ / ۷۷۷، فتح القدیر کتاب الاقرار مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۱۷ / ۲۹۹

Fatawa Rizvia Volume 17

Therefore, Zaid, who bought the mentioned house in Amr's name without his permission, paid the price for it from his own pocket because he was the direct party in the purchase transaction and was compelled to pay the price, which was a debt owed to the seller. When Amr's heirs took possession of the house after the court's order following Zaid's delivery, Zaid is undoubtedly entitled to recover the price he paid from Amr's heirs. The possibility of voluntary donation or charity in such a state of necessity is absent because, legally, anyone compelled to pay someone else's debt cannot be considered a voluntary donor. As is clear from this reliable narration from Sharh Hamawi: "If one of the heirs pays the creditor's right from his own property on the condition that he will not seek reimbursement from the estate, the judge will not overturn the division but will let it stand. However, if he stipulated reimbursement or remained silent, then the division is returned (nullified) unless they pay the right of the heir who paid the creditor's right from his own property. This is the answer."

The thing he acknowledged, whether known or unknown, becomes established as a liability due to his acknowledgment. Since the unacknowledged price cannot be included in the acknowledgment of the house, then the house Zaid bought in Amr's name without his permission, paying the price from his own pocket because he was the direct party in the purchase and compelled to pay the price (which is a debt due), and Amr's heirs took possession of that house from Zaid's handover after the court's order—now Zaid is undoubtedly entitled to recover from Amr's heirs the price money he paid from his own pocket. In such a situation of necessity, the possibility of the payment being voluntary (as a favor) does not exist. Because if a person is compelled to pay a debt incumbent on someone else, legally that payer is never considered a voluntary donor. As is evident from the reliable narration of Sharh Hamawi: if an heir pays a creditor's right from his own property on the condition that he will not reclaim it from the estate, then the judge will not break the division but will maintain it; and if he intended to reclaim it from the estate...

अत: ज़ैद, जिसने अमर की अनुमति के बिना उसके नाम पर उक्त घर खरीदा, उसने खरीद के लेनदेन में प्रत्यक्ष पक्ष होने और मूल्य भुगतान करने के लिए मजबूर होने के कारण अपने पास से विक्रेता को मूल्य का भुगतान किया, जो देय ऋण था। जब अमर के वारिसों ने अदालत के आदेश के बाद ज़ैद की सुपुर्दगी से उस घर को अपने कब्जे में ले लिया, तो ज़ैद निर्विवाद रूप से अमर के वारिसों से उस मूल्य को वसूलने का हकदार है जो उसने अपने पास से भुगतान किया था। ऐसी विवशता की स्थिति में मूल्य के भुगतान में स्वैच्छिक दान या परोपकार की संभावना नहीं होती क्योंकि कानूनी रूप से, किसी अन्य के ऋण का भुगतान करने के लिए मजबूर व्यक्ति को कभी भी स्वैच्छिक दाता नहीं माना जाता है। जैसा कि शरह हमावी की इस विश्वसनीय रिवायत से स्पष्ट है: "यदि वारिसों में से एक ने अपने धन से लेनदार का अधिकार इस शर्त पर चुका दिया कि वह संपत्ति (तरका) से इसकी वसूली नहीं करेगा, तो न्यायाधीश विभाजन को नहीं तोड़ेगा बल्कि उसे जारी रखेगा। लेकिन यदि उसने वसूली की शर्त रखी या चुप रहा, तो विभाजन रद्द कर दिया जाएगा जब तक कि वे उस वारिस का अधिकार न चुका दें जिसने अपने धन से लेनदार का अधिकार चुकाया था। यही उत्तर है।"

वह वस्तु जिसका उसने इकरार (स्वीकारोक्ति) किया, चाहे वह ज्ञात हो या अज्ञात, उसके इकरार के कारण एक देयता बन जाती है। जब गैर-इकरारशुदा घर का मूल्य घर के इकरार में शामिल नहीं हो सकता, तो ज़ैद ने जो घर अमर की अनुमति के बिना उसके नाम पर खरीदा और मूल्य अपने पास से विक्रेता को दिया क्योंकि वह खरीद के मामले में प्रत्यक्ष था और मूल्य भुगतान में मजबूर था (जो कि एक देय ऋण है), और अदालत के आदेश के बाद ज़ैद की सुपुर्दगी से अमर के वारिसों ने वह घर अपने कब्जे में ले लिया—तो अब ज़ैद निस्संदेह अमर के वारिसों से उस मूल्य धन को प्राप्त करने का हकदार है जो उसने अपने पास से भुगतान किया है। और विवशता की ऐसी स्थिति में मूल्य भुगतान में स्वैच्छिक दान (एहसान के तौर पर) की संभावना मौजूद नहीं है। क्योंकि यदि कोई व्यक्ति किसी के जिम्मे वाजिब कर्ज चुकाने में किसी तरह मजबूर हो, तो शरीयत के अनुसार उस कर्ज चुकाने वाले व्यक्ति को स्वैच्छिक दाता कतई करार नहीं दिया जाता। जैसा कि शरह हमावी की इस विश्वसनीय रिवायत से जाहिर है: अगर किसी वारिस ने अपने माल से किसी लेनदार का हक इस शर्त पर अदा कर दिया कि वह संपत्ति में से कर्ज की वापसी नहीं करेगा, तो काजी (न्यायाधीश) विभाजन को नहीं तोड़ेगा बल्कि उसे कायम रखेगा; और अगर उसने संपत्ति से वापसी की...

پس زید کہ مکان مذکور آں بلا اجازت عمرو بنام او خریدہ زر ثمن آں از نزد خود بجہت مباشر بودن معاملہ خرید و مضطر بودن در ادائے ثمن کہ دینے واجب الادا بود ببائع آں نمود ورثہ عمرو آں مکان را بعد حکم حاکم بر تسلیم زید در قبضہ خود در آوردند بے شبہہ زید مستحق یافتن زر ثمن ادا کردہ خود از ورثہ عمرواست واحتمال تطوع و تبرع در ہمچوں حالت اضطرار ادائے ثمن مفقود کہ شرعاً مضطر بادائے دینِ ذمی کسی بہ نیکی باشد ہر گز متطوع و متبرع قرارداد ہ نمی شود چنانچہ ازیں روایت معتبرہ شرح حموی ظاہرست لو قضٰی واحد من الورثۃ حق الغریم من مالہ علی ان لایرجع فی الترکۃ فالقاضی لا ینقض القسمۃ بل یمضیھا اما اذا شرط الرجوع او سکت فالقسمۃ مردودۃ الاان یقضوا حق الوارث الذی قضی حق الغریم من مالہ وھذا الجواب

وہ شئے جس کا اس نے اقرار کیا معلوم ہو یا مجہول، مقرر لزوم اس کے اقرار کی وجہ سے ہوتا ہے۔ جب غیر اقرار شدہ ثمن مکان کے اقرار میں داخل نہیں ہو سکتے تو پھر زید نے جو مکان عمرو کی اجازت کے بغیر اس کے نام پر خریدا اور زر ثمن اپنے پاس سے اس لئے بائع کو دیا کہ وہ خریداری کے معاملہ میں مباشر تھا اور ثمن جو کہ واجب الادا دین ہے کی ادائیگی میں مجبور تھا اور حکم حاکم کے بعد زید کی سپردگی سے عمرو کے ورثاء نے وہ مکان اپنے قبضہ میں لے لیا تو اب زید بلا شبہہ عمرو کے ورثاء سے اس زر ثمن کو وصول کرنے کا مستحق ہے جو اس نے اپنے پاس سے ادا کیا ہے اور اس طرح کی اضطراری حالت میں ثمن کی ادائیگی میں تطوع و تبرع (بطور احسان ادا کرنا) کا احتمال موجود نہیں کیونکہ کسی کے ذمے لازم قرض کی ادائیگی میں اگر کوئی شخص کسی طرح مجبور ہو تو شرعی طور پر اس قرض ادا کرنے والے شخص کو تطوع و تبرع کرنے والا ہر گز قرار نہیں دیا جاتا، جیسا کہ شرح حموی کی اس معتبر روایت سے

ظاہر ہے اگر کسی وارث نے اپنے مال سے کسی قرض خواہ کا حق ادا کر دیا اس شرط پر کہ وہ ترکہ میں سے قرض کا رجوع نہیں کرے گا تو قاضی تقسیم کو نہیں توڑے گا بلکہ اس کو قائم رکھے گا اور اگر اس نے ترکہ سے رجوع کی

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Left Column Text] It is apparent in the case where the condition of recourse was made, but problematic where he remained silent. It is appropriate that he be considered a volunteer (mutatowwi') when silent. The answer is that he was not made a volunteer because he was compelled by the judgment (of the court) [1] end. And for the proof of Zaid's entitlement regarding receiving the price money from Amr's heirs—since the house bought by Zaid, after the ruler's order to hand it over to Zaid, despite the proof of payment of the price by Zaid, came into their possession—this narration from Hidaya, Inaya, Nata'ij etc. is indicative, and it is this: "And whoever said to the other..." i.e. (quoted from the margin of Al-Durr from the chapter on Al-Fuduli) "except that the buyer delivers it to him", i.e., now the buyer delivers the purchased slave to him for whose sake (he bought it). And it is possible that its meaning is: now so-and-so delivers the purchased slave for whose sake (it was bought). The subject (agent) of "yusallim" is a pronoun referring back to the buyer based on the two narrations with kasra and fatha on the "ra", so it would be a sale and upon him is the responsibility, i.e., upon...

[Right Column Text] ...if a condition was set or he remained silent, the division will be rejected until the heirs pay the right of that heir who paid the creditor's right from his own property. This ruling is apparent in the case of a "condition of recourse" and problematic in the case of "silence". Thus, in the case of remaining silent, that heir should be declared a volunteer. The answer to this is that he was not declared a volunteer because he was compelled in the payment of the debt, end. When the house purchased by Zaid, after being handed over to Zaid by the judge's order, came into the possession of Amr's heirs, even though the payment of the price money from Zaid's side is proven, now for the proof of Zaid's entitlement to the price money from Amr's heirs, this narration from Hidaya, Inaya, and Nata'ij is sufficient, which is: "And the person who said to another: buy for me etc." (quoted from Hashiya Durr-e-Mukhtar, Chapter Al-Fuduli). Except that the buyer hands over the slave to him for whom he bought it, meaning the sale will not be valid unless the buyer hands over the purchased slave to him for whom he bought it. And it is possible that the meaning is thus: but at that time the sale will be valid when the buyer hands over the purchased slave to that so-and-so for whose sake the slave was bought. And the subject (agent) of "yusallim" is a pronoun that returns to the buyer. This difference is based on two narrations, with kasra and fatha on the "ra" of the "mushtari" (buyer).

1 Ghamz 'Uyun al-Basair, Al-Fann al-Thani, Kitab al-Qisma, Idara al-Quran wal-'Ulum al-Islamiya, Karachi, 2/ 94-95 Page 198 of 715

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

[बायाँ कॉलम टेक्स्ट] यह उस मामले में स्पष्ट है जहाँ वापसी की शर्त लगाई गई थी, लेकिन जहाँ चुप्पी साधी गई थी वहाँ यह मुश्किल है। चुप्पी की स्थिति में उसे एक स्वयंसेवक (मुततव्वे) माना जाना उचित है। जवाब यह है कि उसे स्वयंसेवक नहीं माना गया क्योंकि वह न्यायिक आदेश द्वारा बाध्य था [1], समाप्त। और ज़ैद के अम्र के वारिसों से कीमत की रकम पाने के अधिकार के प्रमाण के लिए—क्योंकि ज़ैद द्वारा खरीदा गया घर, हाकिम द्वारा उसे सौंपे जाने के आदेश के बाद और भुगतान के प्रमाण के बावजूद, वारिसों के कब्ज़े में चला गया—हिदाया, इनाया, नताइज आदि की यह रिवायत संकेत देती है, और यह इस प्रकार है: "और जिसने दूसरे से कहा..." यानी (अल-दुर्र के हाशिये, अध्याय अल-फ़ुज़ूली से उद्धृत) "जब तक कि खरीददार उसे उसे न सौंप दे", जिसका अर्थ है कि अब खरीददार खरीदा हुआ गुलाम उस व्यक्ति को सौंप देता है जिसके लिए उसने उसे खरीदा था। यह संभव है कि इसका अर्थ यह हो: अब [फलां] खरीदे गए गुलाम को सौंप देता है जिसके लिए उसे खरीदा गया था। 'सौंपने' (युसल्लिम) का कर्ता खरीददार को संदर्भित करने वाला एक सर्वनाम है, जो अक्षर 'रा' पर कसरा या फ़तहा के साथ दो संस्करणों पर आधारित है। इस प्रकार यह एक बिक्री बन जाती है और जिम्मेदारी उस पर होती है, यानी...

[दायाँ कॉलम टेक्स्ट] ...यदि उसने कोई शर्त रखी या चुप रहा, तो विभाजन तब तक अमान्य है जब तक कि वारिस उस वारिस को वापस भुगतान नहीं करते जिसने अपने धन से लेनदार के दावे का निपटारा किया था। यह नियम 'वापसी की शर्त' के मामले में स्पष्ट है लेकिन 'चुप्पी' के मामले में कठिन है। इसलिए, चुप्पी में, वारिस को स्वयंसेवक माना जाना चाहिए। उत्तर यह है कि उसे ऐसा नहीं माना गया क्योंकि उसे ऋण चुकाने के लिए मजबूर किया गया था। समाप्त। न्यायाधीश के आदेश से ज़ैद का खरीदा हुआ घर उसे सौंपे जाने के बाद और फिर अम्र के वारिसों के कब्ज़े में आने के बाद, ज़ैद के भुगतान के प्रमाण के बावजूद, हिदाया, इनाया और नताइज की यह रिवायत ज़ैद के लिए अम्र के वारिसों से कीमत का दावा करने के प्रमाण के रूप में पर्याप्त है। इसमें कहा गया है: "और वह व्यक्ति जिसने दूसरे से कहा: मुझे बेच दो..." (दुर्रे मुख़्तार के हाशिये, अध्याय अल-फ़ुज़ूली से)। सिवाय इसके कि खरीददार गुलाम को उस व्यक्ति को सौंप देता है जिसके लिए उसने उसे खरीदा था। यानी, बिक्री तभी मान्य है जब खरीददार खरीदा हुआ गुलाम इच्छित पक्ष को सौंप देता है। वैकल्पिक रूप से, बिक्री तब मान्य होती है जब खरीददार खरीदे गए गुलाम को उस विशिष्ट व्यक्ति को सौंप देता है जिसके लिए इसे खरीदा गया था। 'युसल्लिम' का कर्ता खरीददार को संदर्भित करने वाला एक

सर्वनाम है। यह अंतर 'मुश्तरी' (खरीददार) शब्द में अक्षर 'रा' के उच्चारण (कसरा या फ़तहा) से जुड़ी दो रिवायतों पर आधारित है।

---

1 ग़म्ज़ उयूनुल बसायर, अल-फ़न्नुस-सानी, किताबुल क़िस्मत, इदारातुल कुरान वल-उलूमुल इस्लामिया, कराची, 2/ 94-95 पृष्ठ 198 / 715

[بایاں کالم] ظاہر فیما اذا شرط الرجوع مشکل فیما اذا سکت، وینبغی ان یجعل متطوعاً اذا سکت والجواب انہ لم یجعل متطوعاً لانہ مضطر فی القضاء[1] انتھی۔ وبرائے ثبوت استحقاقِ زید بہ نسبت یافتنِ زر ثمن از ورثہ عمرو کہ مکان خریدہ زید را بعد حکم حاکم بہ تسلیم زید باوصف ثبوت ادائے ثمن ازاں زید بقبضہ ایشاں دررسیدہ ایں روایت ہدایہ وعنایہ ونتائج وغیرہ کنایت میکند و ہی ہذہ ومن قال الاخر یعنی (منقول ہامش الدر من باب الفضولی) الا ان یسلمہ المشتری لہ ای الان یسلمہ المشتری لہ العبد المشتری لاجلہ الیہ ویجوز ان یکون معناہ الان یسلم فلاناً العبد المشتری لاجلہ وفاعل یسلم ضمیر یعود الی المشتری بناء علی الروایتین بکسر الراء وفتحھا فیکون بیعاً وعلیہ العھدہ ای علی

[دایاں کالم] شرط لگائی یا خاموش رہا تو تقسیم مردود ہوگی تا وقتیکہ ورثاء اس وارث کا حق ادا کردیں جس نے قرضخواہ کا حق اپنے مال سے ادا کیا، یہ حکم شرط رجوع والی صورت میں ظاہر اور سکوت والی صورت میں شکل ہے چنانچہ خاموش رہنے کی صورت میں اس وارث کو متطوع قرار دینا چاہئے، اس کا جواب یہ ہے کہ اس کو متطوع اس لئے قرار نہیں دیا گیا کہ وہ قرض کی ادائیگی میں مجبور تھا انتھی، زید کا خریدا ہوا مکان حکم حاکم پر زید کے سپردگی کے بعد جب ورثاء عمرو کے قبضہ میں پہنچ گیا با وجودیکہ زید کی طرف سے زرِ ثمن کی ادائیگی ثابت ہے تو اب ورثاء عمرو سے زید کے زرِ ثمن کے مستحق ہونے کے ثبوت کے لئے ہدایہ، عنایہ اور نتائج کی یہ روایت کافی ہے جو کہ یہ ہے اور جس شخص نے دوسرے کو کہا کہ مجھ پر فروخت کرالخ (منقول از حاشیہ درمختار، باب الفضولی) مگر یہ کہ مشتری غلام اس کے حوالے کردے جس کے لئے اس نے خریدا یعنی سوائے اس کے بیع جائز نہ ہوگی کہ مشتری خریدا ہوا غلام اس کے حوالے کردے جس کے لئے اس نے خریدا اور ممکن ہے کہ معنٰی یوں ہو مگر اس وقت بیع جائز

ہوگی جب مشتری خریدا ہوا غلام اس فلاں کے سپرد کردے جس کی خاطر وہ غلام خریدا گیا اور یسلم کا فاعل ضمیر ہو جو مشتری کی طرف لوٹتی ہے، یہ اختلاف دوروایتوں پر مبنی ہے مشتری کی راء پر کسرہ اور فتحہ

---

[1] غمز عیون البصائر الفن الثانی کتاب القسمۃ ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۲/ ۹۴-۹۵

Fatawa Ridawiyyah Volume 17

[Arabic Column] ...so-and-so, the responsibility of taking [the item] lies in handing over the price because he has become a buyer by transaction (ta'ati), like an unauthorized person (fuduli) when he buys for someone then hands it over to the buyer for his sake. [Footnote 1: Al-Inayah on the margins of Fath al-Qadir, Book of Agency, Chapter of Agency in Buying and Selling, Maktabah Nuriyyah Ridawiyyah, Sukkur, 7/51-52.] Except that the buyer hands it over to him. The word 'buyer' (mushtari) has been narrated in two ways: with a kasrah on the ra and with a fathah. According to the kasrah, 'buyer' is the subject (fa'il), and his saying 'to him' (lahu) means 'for his sake' (li-ajlihi), and the second object is omitted, which is 'to him' (ilaihi). So the meaning is: except that the fuduli hands over the slave he bought for so-and-so to him. According to the fathah, 'buyer to him' (mushtara lahu) is the second object without a preposition, like 'so-and-so', and the subject is a hidden pronoun referring back to the buyer. So the meaning is: except that the fuduli hands over the slave to the one for whom he bought (al-mushtara lahu), who is so-and-so. Then this exception is from his saying 'it was not...' etc. [Footnote 2: Nata'ij al-Afkar, which is the completion of Fath al-Qadir, Book of Agency, Chapter of Agency in Buying and Selling, Maktabah Nuriyyah Ridawiyyah, Sukkur, 7/51-52.] (Quoted from the margin of Al-Durr from Al-Fuduli) etc.

[Urdu Column] ...with [him], so in this way, this will be a new sale and it is his, i.e., so-and-so's, responsibility to pay the price and take it, because he has become the buyer by transaction (ta'ati), like that unauthorized person (fuduli) who buys something for someone and hands over that thing which was bought for him (Inayah). Except that the buyer hands over that slave to him. The word 'buyer' has been narrated in two ways, with kasrah and fathah on the letter ra. In the case of kasrah, 'buyer' will be the subject (fa'il) and the author's saying lahu will mean li-ajlihi (for his sake) and the second object will be omitted which is ilaihi. So the meaning of the mentioned statement will be this: except that the fuduli (buyer) hands over that slave, which he bought because of so-and-so, to so-and-so. And in the case of fathah, 'buyer to him' (mushtari lahu) will be the second object without a preposition and 'buyer to him' is that very so-and-so, and the subject of yusallim will be the pronoun that returns towards the buyer. So the meaning of the mentioned statement will be this: except that the fuduli (buyer) hands over the slave to the mushtari lahu (the one for whom it was bought) and he, i.e., mushtari lahu, is that very so-and-so. Then this exception is from the author's statement 'it was not...' etc. (Quoted from the margin in).

फ़तावा रज़विया खंड 17

[अरबी कॉलम] ...अमुक (फलां), कीमत सौंपने के साथ लेने की ज़िम्मेदारी है क्योंकि वह लेन-देन (तआती) द्वारा खरीदार बन गया है, उस अनधिकृत व्यक्ति (फ़ुज़ूली) की तरह जब वह किसी के लिए खरीदता है और फिर खरीदार को उसके लिए सौंप देता है। [पाद टिप्पणी 1: 'अल-इनाया' फ़तहुल क़दीर के हाशिये पर, किताबुल वकाला, बाबुल वकाला फ़िल बयई वश शिरा, मकतबा नूरिय्या रज़विया, सुक्कुर, 7/51-52।] मगर यह कि खरीदार उसे सौंप दे। शब्द 'मुश्तरी' (खरीदार) दो तरह से वर्णित है: 'रा' पर कसरा और फ़तहा के साथ। कसरा के अनुसार, 'मुश्तरी' कर्ता (फ़ाइल) होगा, और उसका कहना 'लहू' (उसके लिए) का अर्थ 'लि-अजलिही' होगा, और दूसरा कर्म लुप्त है जो 'इलैही' (उसकी ओर) है। तो अर्थ यह है: सिवाय इसके कि फ़ुज़ूली उस गुलाम को, जिसे उसने अमुक के लिए खरीदा था, उसे सौंप दे। और फ़तहा के अनुसार, 'मुश्तरी लहू' बिना अव्यय के दूसरा कर्म होगा, जैसे 'अमुक', और कर्ता एक छिपा हुआ सर्वनाम होगा जो खरीदार की ओर लौटता है। तो अर्थ यह होगा: सिवाय इसके कि फ़ुज़ूली गुलाम को 'मुश्तरी लहू' (जिसके लिए खरीदा गया) को सौंप दे, जो कि अमुक ही है। फिर यह अपवाद उसके कथन 'नहीं था...' आदि से है। [पाद टिप्पणी 2: 'नताइजुल अफ़कार', जो फ़तहुल क़दीर की पूरक है, किताबुल वकाला, बाबुल वकाला फ़िल बयई वश शिरा, मकतबा नूरिय्या रज़विया, सुक्कुर, 7/51-52।] (अल-दुर्र के हाशिये से अल-फ़ुज़ूली से उद्धृत) आदि।

[उर्दू कॉलम] ...के साथ, तो इस प्रकार यह नई बिक्री होगी और उसकी यानी अमुक की ज़िम्मेदारी है कि वह कीमत अदा करके इसे ले ले क्योंकि वह लेन-देन (तआती) के साथ खरीदार हो गया है उस फ़ुज़ूली की तरह जो किसी व्यक्ति के लिए कुछ खरीदे और वह चीज़ उसके हवाले कर दे जो उसके लिए खरीदी गई थी (इनाया)। मगर यह कि खरीदार वह गुलाम उसके हवाले कर दे, शब्द 'मुश्तरी' दो तरह से रिवायत किया गया है 'रा' के कसरा और फ़तहा के साथ। कसरा की सूरत में मुश्तरी कर्ता (फ़ाइल) होगा और लेखक का कथन 'लहू' का अर्थ 'लि-अजलिही' (उसके लिए) होगा और दूसरा कर्म (मफ़ऊले सानी) लुप्त होगा जो कि 'इलैही' है। तो इस प्रकार उक्त कथन का अर्थ यह होगा: मगर यह कि फ़ुज़ूली (खरीदार) वह गुलाम जो अमुक की वजह से उसने खरीदा वह अमुक के हवाले कर दे। और फ़तहा की सूरत में 'मुश्तरी लहू' बिना हरफ़े जर के दूसरा कर्म होगा और 'मुश्तरी लहू' वही अमुक ही है और 'यसल्लिम' का कर्ता वह सर्वनाम होगा जो खरीदार की ओर लौटता है। तो इस प्रकार उक्त कथन का अर्थ यह होगा: मगर यह कि वह फ़ुज़ूली (खरीदार) गुलाम को 'मुश्तरी लहू'

(जिसके लिए खरीदा गया) के हवाले कर दे और वह यानी 'मुश्तरी लहू' वही अमुक ही है। फिर यह अपवाद लेखक के कथन 'लम यकुन' आदि से है। (हाशिये से उद्धृत)।

पृष्ठ 199/715

[عربی عبارت] فلان عهدة الاخذ بتسليم الثمن لانه صار مشتريا بالتعاطى كالفضولى اذا اشترى لشخص ثم سلمه المشترى لاجله، 1 عناية الا ان يسلم المشترى له روى لفظ المشترى بروايتين بكسر الراء وفتحها فعلى الكسر يكون المشترى فاعلا، وقوله له اى لاجله ويكون المفعول الثانى محذوفا وهو اليه، فالمعنى الا ان يسلم الفضولي العبد الذى اشتراه لاجل فلان اليه، وعلى الفتح يكون المشترى له مفعولا ثانيا بدون حرف الجر وحو فلان، ويكون الفاعل مضمرا يعود الى المشترى فالمعنى الا ان يسلم الفضولى العبد الى المشترى له وهو فلان، ثم ان هذا الاستثناء من قوله لم يكن 2 الخ (منقوله هامش الدر من الفضولى) الخ

[اردو عبارت] کے ساتھ تو اس طرح یہ نئی بیع ہو گی اور اس کی یعنی فلاں کی ذمہ داری ہے کہ وہ ثمن ادا کر کے اس کو لے لے کیونکہ وہ تعاطی کے ساتھ مشتری ہو گیا ہے اس فضولی کی طرح جو کسی شخص کے لئے کچھ خریدے وہ چیز اس کے حوالے کر دے جو اس کے لئے خریدی گئی (عنایہ) مگر یہ کہ مشتری وہ غلام اس کے حوالے کر دے، لفظ مشتری دو طرح سے روایت کیا گیا راء کے کسرہ اور فتحہ کے ساتھ، کسرہ کی صورت میں مشتری فاعل ہوگا اور ماتن کا قول لہ کا بمعنی لاجلہ ہوگا اور مفعولِ ثانی محذوف ہوگا جو کہ الیہ ہے تو اس طرح عبارت مذکورہ کا معنی یہ ہو گا مگر یہ کہ فضولی (مشتری) وہ غلام جو فلاں کی وجہ سے اس نے خریدا وہ فلاں کے حوالے کر دے، اور فتحہ کی صورت میں مشتری لہ بغیر حرفِ جر کے مفعولِ ثانی ہوگا اور مشتری لہ وہ فلاں ہی ہے اور یسلم کا فاعل وہ ضمیر ہوگی جو مشتری کی طرف لوٹتی ہے تو اس طرح عبارت مذکورہ کا معنی یہ ہوگا مگر یہ کہ وہ فضولی (مشتری) غلام کو مشتری لہ

(جس کے لئے خریدا گیا) کے حوالے کر دے اور وہ یعنی مشتری لہ وہ فلاں ہی ہے، پھر یہ استثناء ماتن کے قول لم یکن الخ سے ہے (منقول از حاشیہ در)

1 العنایۃ علی ھامش فتح القدیر کتاب الوکالۃ باب الوکالۃ فی البیع والشراء مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۷/ ۵۲ و ۵۱ 2 نتائج الافکار وھی تکملہ فتح القدیر کتاب الوکالۃ باب الوکالۃ فی البیع والشراء مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۷/ ۵۲ و ۵۱

Fatawa Razawiyya, Volume 17

(Chapter on the Fuzuli - Unauthorized agent) Results, Allah Almighty knows best and His knowledge is most firm. The respondent, named Muhammad Faqir Allah al-Ghani (may he be forgiven), sent this to Sayyid Maulana Shah Ali with great care for verification in the middle of Jumada al-Ula 1295 AH.

I say: The summary of the response comprises two matters: First, Zaid acknowledged the house but not the price. He was compelled to pay the price, so he will reclaim it, and it will not be considered a voluntary donation (tabarru). Second, when Zaid handed over the house to the heirs of Amr, it became a definitive sale through mutual delivery (ta'ati). Therefore, the responsibility for taking the house by paying the price lies with them. You know there is a discrepancy and contradiction between these two matters. In my view, the answer is not as the respondent stated. This is because Zaid, at the time of purchase, either said 'I bought this house for so-and-so' or 'for myself,' or he said nothing of the sort. In the first case, he acted as a fuzuli (unauthorized agent), and the validity of his purchase depends on the authorization of the person for whom he bought it. Since that person died before giving authorization, the sale became void. It then becomes clear that the sold item belongs to the seller, and the price belongs to the fuzuli purchaser who paid it from his own pocket. Therefore, nothing...

Page 200 of 715

फ़तावा रज़विया, खंड 17

(बाब अल-फ़ज़ूली - अनधिकृत प्रतिनिधि का अध्याय) परिणाम, अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है और उसका ज्ञान अत्यंत सुदृढ़ है। उत्तरदाता, जिनका नाम मुहम्मद फ़क़ीर उल्लाह अल-ग़नी (ईश्वर उन्हें क्षमा करे) है, ने इसे मध्य जुमादा अल-उला 1295 हिजरी में सत्यापन के लिए पूरी सावधानी के साथ सैय्यद मौलाना शाह अली के पास भेजा।

मैं कहता हूँ: उत्तर का सारांश दो बातों में है: पहली यह कि ज़ैद ने केवल मकान को स्वीकार किया, न कि उसकी कीमत को, और वह कीमत चुकाने के लिए मजबूर था, इसलिए वह उसे वापस मांगेगा और इसे दान (तबर्रु) नहीं माना जाएगा। दूसरी बात यह है कि जब ज़ैद ने मकान अम्र के वारिसों को सौंप दिया, तो यह आपसी लेनदेन (ता'अती) के माध्यम से एक निश्चित बिक्री बन गई। अत; कीमत चुकाकर मकान लेने की जिम्मेदारी उन्हीं पर है। आप जानते हैं कि इन दोनों बातों में विसंगति और विरोधाभास है। मेरे विचार में, उत्तर वैसा नहीं है जैसा उत्तरदाता ने कहा है। इसका कारण यह है कि ज़ैद ने खरीदारी के समय या तो यह कहा होगा कि 'मैंने यह मकान फलां व्यक्ति के लिए खरीदा है' या 'अपने लिए', या फिर उसने ऐसा कुछ नहीं कहा। पहली स्थिति में, उसने एक फ़ज़ूली (अनधिकृत प्रतिनिधि) के रूप में कार्य किया, और उसकी खरीदारी की वैधता उस व्यक्ति की अनुमति पर निर्भर करती है जिसके लिए उसने इसे खरीदा था। चूँकि अनुमति देने से पहले ही उस व्यक्ति की मृत्यु हो गई, इसलिए बिक्री शून्य हो गई। तब यह स्पष्ट हो जाता है कि बेची गई वस्तु विक्रेता की है, और कीमत उस फ़ज़ूली खरीदार की है जिसने अपनी जेब से भुगतान किया था। इसलिए, कुछ भी नहीं...

पृष्ठ 715 में से 200

(باب الفضولی) نتائج، اللہ تعالٰی بہتر جانتا ہے اور اس کا علم بہت مضبوط ہے، مجیب فقیر محمد فقیر اللہ نے اس کو سید مولانا شاہ علی کے پاس پورے اہتمام کے ساتھ تصدیق کے لئے ارسال کیا نصف جمادی الاولٰی ۱۲۹۵ھ (ت)

نتائج، واللہ تعالٰی اعلم وعلمہ احکم المجیب المدعو بمحمد فقیر اللہ الغنی عفی عنہ ارسلہ الی سید مولانا شاہ علی باہتمام تام للتصدیق لمنتصف جمادی الاولٰی ۱۲۹۵ھ

اقول: (میں کہتا ہوں) جواب کا حاصل دو امر ہیں: پہلا یہ کہ زید نے مکان کا اقرار کیا نہ کہ ثمن کا اور وہ ثمن کی ادائیگی میں مجبور تھا لہذا وہ رجوع کرے گا اور اس کو تبرع قرار نہیں دیا جائے گا، دوسرا امر یہ ہے کہ زید نے جب مکان ورثاء عمرو کے حوالے کر دیا اور یہ تعاطی کے ساتھ نئی بیع ہوئی تو اب ثمن ادا کر کے اس کو لینا عمرو کے ورثاء کی ذمہ داری ہے اور تو جانتا ہے کہ ان دونوں امروں میں مخالفت و منافات ہے، اور میرے نزدیک اس کا جواب اس طرح نہیں جس طرح میرے مجیب نے کہا اس لئے کہ زید نے خریداری کے وقت یا تو یہ کہا ہے کہ میں نے یہ مکان فلاں کے لئے خریدا ہے یا یہ کہا کہ یہ میرے اپنے لئے ہوگا یا ایسا اس نے نہیں کیا، پہلی صورت میں وہ فضولی ہے اور اس کی خریداری کا نفاذ اس کی اجازت پر موقوف ہوگا جس کے لئے اس نے یہ مکان خریدا حالانکہ وہ اجازت سے قبل مر گیا ہے تو بیع باطل ہو گئی اور ظاہر ہو گیا کہ مبیع بائع کی ملک اور ثمن اس فضولی مشتری کی ملک ہے جس نے اپنے پاس سے ادا کیا، چنانچہ

اقول: حاصل الجواب امران الاول انہ انما اقر بالدار دون الثمن وكان مضطراً الى قضائہ فيرجع ولا يجعل تبرعاً۔ الثانى انہ لما سلم الدار الى ورثۃ عمرو صار بيعاً مبتۃً بالتعاطى فكان عهدة الاخذ بتسليم الثمن عليهم وانت تعلم ان بين الامرين تبايناً وتنافياً وعندى الجواب ليس كما قال لان زيداً اما ان يكون قال عند الشراء اشتريتہ لفلان او قال لى اولاً ولا على الاول كان فضولياً يتوقف نفاذ شرائہ على اجازة من اشترى لہ وقد مات قبل ان يجيز فبطل واستبان ان المبيع للبائع والثمن للفضولى المشترى الذى اداه من عنده، فلا شيئ

Volume 17 - Fatawa Razawiya

[Arabic Column Translation]: ...for Amr nor for his heirs. The ruler's judgment in their favor is not considered; rather it is returned and annulled because he judged for them with the property of another. The confession is void because it is a confession regarding the property of another. Yes, if it transfers to him later by any means, it is taken based on his confession. So, when the matter is raised to the judge, it is mandatory to overturn his judgment due to the manifestation of his error from the legal standpoint. Furthermore, this transaction (mutual handing over) cannot be a new sale because the unauthorized agent (Fuzuli) has no right in the item sold. Even if it were a sale, it would be an unauthorized sale (Fuzuli) dependent on the first seller's permission. If he permits, the price belongs to him, not the Fuzuli. Otherwise, the house is reclaimed from the heirs and the price is returned to the Fuzuli. According to the latter two views, the purchase is binding on the Fuzuli due to the lack of attribution to the one on whose behalf he bought it. Then, he is held accountable for his confession, and the judge had decreed the house to the heirs based on the confession. So on what basis will he claim the price back from them? And if it is proven to the judge that he only bought it with his own money...

[Urdu Column Translation]: For Amr and his heirs, there is nothing, and in their favor, the ruler decreed property belonging to another. The confession is void because it's a confession about another's property. However, if later that house somehow transfers to Zaid, it will be taken based on his confession. If this matter is brought to the judge, it's mandatory to nullify the previous decision because its error from the Shariah perspective has become manifest. Also, this mutual transaction (Ta'ati) being a new sale is not permissible because an unauthorized agent (Fuzuli) has no right in the sold item. If it were a new one, it would be an unauthorized sale dependent on the first seller's permission. If he grants permission, the price will be for him, not the unauthorized person. If he rejects the sale, the house will be taken back from Amr's heirs and the price returned to the unauthorized person. In the other two cases, the purchase was enforced upon the unauthorized person because he didn't attribute it to the person for whom he bought the house. Then, due to his confession, he became responsible, and the judge ruled in favor of Amr's heirs using Zaid's confession as evidence. Now, on what ground will Zaid (the unauthorized person) claim the price from Amr's heirs? And if it is proven in the court of the judge...

जिल्द हफ़्दहुम (17) - फ़तावा रज़विया

[अरबी कॉलम का अनुवाद]: ...अम्र के लिए और न ही उसके वारिसों के लिए। उनके लिए शासक का निर्णय मान्य नहीं है; बल्कि इसे वापस किया जाता है और रद्द किया जाता है क्योंकि उसने उनके लिए दूसरे की संपत्ति का निर्णय दिया। इकरार बातिल (शून्य) है क्योंकि यह दूसरे की मिल्कियत का इकरार है। हाँ, यदि यह बाद में किसी भी तरह से उसकी ओर स्थानांतरित हो जाए, तो यह उसके इकरार के आधार पर ले लिया जाएगा। अतः जब मामला काजी के पास ले जाया जाता है, तो शरीयत की दृष्टि से उसकी गलती के स्पष्ट होने के कारण उसके निर्णय को पलटना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त, यह 'ताती' (लेन-देन) एक नई बेअ (बिक्री) नहीं हो सकती क्योंकि फुज़ूली का मबीअ (बिक्री की वस्तु) में कोई हक नहीं है। यदि यह बेअ होती भी, तो यह पहले विक्रेता की अनुमति पर निर्भर एक फुज़ूली बेअ होती। यदि वह अनुमति दे देता है, तो मूल्य उसका होगा, फुज़ूली का नहीं। अन्यथा, वारिसों से घर वापस ले लिया जाएगा और मूल्य फुज़ूली को लौटा दिया जाएगा। बाद की दो स्थितियों के अनुसार, खरीदारी फुज़ूली पर लागू हुई क्योंकि उस व्यक्ति के प्रति कोई अज़ाफ़त (संबद्धता) नहीं थी जिसके लिए उसने इसे खरीदा था। फिर, वह अपने इकरार के लिए जवाबदेह है, और काजी ने इकरार के आधार पर वारिसों के पक्ष में घर का निर्णय दिया था। तो वह किस आधार पर उनसे कीमत वापस माँगेगा? और यदि काजी के पास यह साबित हो जाए कि उसने इसे केवल अपनी कीमत से खरीदा था...

[उर्दू कॉलम अनुवाद]: अम्र और उसके वारिसों के लिए कुछ भी नहीं है और शासक ने उनके पक्ष में दूसरे की मिल्कियत का हुक्म दिया है। इकरार बातिल है क्योंकि यह दूसरे की मिल्कियत का इकरार है। हाँ, अगर इसके बाद किसी तरह वह मकान ज़ैद की तरफ मुंतकिल (स्थानांतरित) हो जाए तो वह उसके इकरार की वजह से ले लिया जाएगा। और अगर यह मामला काजी के पास ले जाया जाए तो पहले फैसले को रद्द करना वाजिब है क्योंकि शरीयत की तरफ से उसकी गलती ज़ाहिर हो चुकी है। और इस ताती का नई बेअ होना भी जायज़ नहीं है क्योंकि फुज़ूली का मबीअ में कोई हक नहीं है। और अगर नई हुई भी तो वह ऐसी फुज़ूली बेअ होगी जो पहले विक्रेता की इजाज़त पर टिकी होगी। अगर उसने इजाज़त दे दी तो समन (कीमत) उसके लिए होगी, फुज़ूली के लिए नहीं। और अगर उसने बेअ रद्द कर दी तो मकान अम्र के वारिसों से वापस ले लिया जाएगा और समन फुज़ूली को लौटा दिए जाएँगे। बाकी दोनों सूरतों में खरीदारी फुज़ूली पर नाफ़िज़ (लागू) हुई क्योंकि उसने उस शख्स का ज़िक्र नहीं किया जिसके लिए उसने घर खरीदा था। फिर अपने इकरार की वजह से वह

ज़िम्मेदार हो गया और काजी ने अम्र के वारिसों के हक में फैसला दिया जो ज़ैद के इकरार को दलील बना रहे हैं। तो अब ज़ैद (फुज़ूली) कीमत के बारे में अम्र के वारिसों पर किस बिना पर दावा करेगा? और अगर काजी के यहाँ साबित...

पेज 715 का 201

[عربی کالم]: لعمر و ولا لورثته وحکم الحاکم لهم لایعتبر بل یرد و یفسخ لانہ قضی لهم بمال الغیر والاقرار باطل لانہ اقرار بملک الغیر نعم ان انتقل الیہ بعد بوجہ من الوجوہ اخذ باقرار ہ فاذا رفع الامر الی القاضی وجب ان یرد قضاؤہ لظهور خطائہ من جهۃ الشرع، وهذا التعاطی ایضا لایجوز ان یکون بیعا مبتداء اذا لفضولی لاحق لہ فی المبیع وان کان کان بیع فضولی متوقفا علی اجازۃ البائع الاول ، فان اجاز کان الثمن لہ لالفضولی والا یسترد الدار من الورثۃ ویرد الثمن علی الفضولی ، وعلی الثانیین نفذ الشراء علی الفضولی لعدم الاضافۃ الی من اشتراها لا جلہ ، ثم انہ مؤاخذہ باقرارہ وقد قضی القاضی للورثۃ بالدار محتجبین بالاقرار ففیم یرجع علیهم بالثمن وان ثبت عند القاضی انہ انما شراها بثمنہ

[اردو کالم]: عمرو اور اس کے وارثوں کے لئے کچھ بھی نہیں اور ان کے حق میں حاکم نے ان کے لئے ملک غیر کا حکم کیا ہے اور اقرار باطل ہے کیونکہ یہ ملک غیر کا اقرار ہے، ہاں اگر اس کے بعد کسی طرح وہ مکان زید کی طرف منتقل ہو جائے تو وہ اس کے اقرار کے سبب سے لے لیا جائے گا ، اور اگر یہ معاملہ قاضی کے پاس لے جایا جائے تو اس پر پہلے فیصلے کو رد کردینا واجب ہے کیونکہ شریعت کی جہت سے اس کی خطاء ظاہر ہو چکی ہے اور اس تعاطی کا نئی بیع ہونا بھی جائز نہیں کیونکہ فضولی کا مبیع میں کوئی حق نہیں اور اگر نئی ہوئی بھی تو ایسی بیع فضولی ہوگی جو بائع اول کی اجازت پر موقوف ہوگی اگر اس نے اجازت دے دی تو ثمن اس کے لئے ہوں گے نہ کہ فضولی کے لئے ، اور اگر اس نے بیع کو رد کر دیا تو مکان عمرو کے وارثوں سے واپس لے لیا جائے گا اور ثمن فضولی کو لوٹا دئے جائیں گے ، دیگر دونوں صورتوں میں خریداری فضولی پر نافذ ہوئی کیونکہ اس نے اس شخص کی طرف اضافت نہیں کی

جس کے لئے اس نے گھر خریدا پھر بسبب اس کے اقرار کے وہ ذمہ دار ہو گیا اور قاضی نے ورثاء عمرو کے حق میں فیصلہ دیا جو زید کے اقرار کو دلیل بنا رہے ہیں تو اب زید (فضولی) ثمن کے بارے میں ورثاء عمرو پر کس وجہ سے رجوع کرے گا اور اگر قاضی کے ہاں ثابت

Fatawa Razawiya (Volume 17)

[Left Column - Arabic/Urdu Mix] When purchase occurs in the court of law, why doesn't the acknowledgement of the house necessitate the acknowledgement of the price? For the meaning of being held accountable for an acknowledgement is not that the thing acknowledged be decreed to the beneficiary and the acknowledger returns for the price based on the fact that he had purchased it, because in an acknowledgement, the actual reality is not looked at, rather a man is held by his own assertion due to the possibility that he purchased it and then a cause occurred so it became the property of the beneficiary. And if he claims that he only acknowledged it based on his assertion that his purchase would not be binding upon him, then this is a word he is saying, it is not accepted from him due to what is in 'Al-Ashbah': when one acknowledges something then claims a mistake, it is not accepted except if he acknowledged divorce based on what a Mufti issued a fatwa on - then it appeared that the ruling is not like that, then he claimed a mistake based on this, it is accepted. Similarly, if he claims that his acknowledgement was a transfer of ownership and a gift and it became void due to the death of 'Amr.

[Right Column - Urdu Translation/Explanation] ...should become such that Zaid bought that house with the price (money) of Amr, then according to the legal experts of Sharia, this matter will not fall under the court of justice. Although acknowledging a house as someone else's thing does not demand that that house was bought with his money. Because holding someone accountable for their acknowledgement does not mean that the decision of the acknowledged thing should be made for that person for whom the acknowledgement was made and then the acknowledger should turn back to the beneficiary for the price on the basis that this acknowledger had bought this thing. This is because in an acknowledgement, the actual reality is not considered, but rather the acknowledger is held by their own assumption/ statement. Because it is possible that the acknowledger bought this item and then some such reason arose due to which that item's ownership was transferred to the beneficiary. And if the acknowledger claims that they bought this item (the subject of acknowledgement) with this thought that its purchase would not be binding on them, then this is merely their statement which will not be accepted. This is due to the reasoning in 'Al-Ashbah' that if a person acknowledges something and then claims a mistake in it...

1 Al-Ashbah wal-Naza'ir, Kitab al-Iqrar, Idarat al-Qur'an Karachi 2/20-21. Page 202 of 715

फतावा रज़विया (खंड १७)

[बायां स्तंभ - अरबी/उर्दू मिश्रण] जब न्याय की अदालत में खरीद हुई और घर को स्वीकार करने से उसकी कीमत को स्वीकार करना आवश्यक क्यों नहीं हुआ? क्योंकि स्वीकृति के आधार पर उत्तरदायी होने का अर्थ यह नहीं है कि स्वीकृत वस्तु लाभार्थी के पक्ष में निर्धारित कर दी जाए और स्वीकृति देने वाला इस आधार पर कीमत की मांग करे कि उसने इसे खरीदा था, क्योंकि स्वीकृति में वास्तविकता नहीं देखी जाती बल्कि व्यक्ति को उसकी धारणा के आधार पर पकड़ा जाता है, इस संभावना के कारण कि उसने इसे खरीदा हो फिर कोई कारण उत्पन्न हुआ हो जिससे वह लाभार्थी की संपत्ति बन गई। और यदि वह दावा करे कि उसने केवल इस धारणा पर स्वीकार किया था कि उसकी खरीद उस पर प्रभावी नहीं होगी, तो यह केवल उसकी एक बात है जो स्वीकार्य नहीं है क्योंकि 'अल-अश्बाह' में है: जब कोई किसी बात को स्वीकार करे फिर गलती का दावा करे तो स्वीकार नहीं किया जाता सिवाय इसके कि जब मुफ्ती के फतवे के आधार पर तलाक स्वीकार किया हो - फिर स्पष्ट हुआ कि निर्णय वैसा नहीं था तो इस आधार पर गलती का दावा स्वीकार है। इसी प्रकार यदि वह दावा करे कि उसकी स्वीकृति स्वामित्व देना और उपहार था और अम्र की मृत्यु से निरस्त हो गया।

[दायां स्तंभ - उर्दू अनुवाद/व्याख्या] ...हो जाए कि ज़ैद ने वह मकान अम्र के धन से खरीदा है तो शरीयत के जानकारों के निकट यह मामला अदालती फैसले के तहत दाखिल नहीं होगा। हालांकि किसी के घर को अपना स्वीकार करना इस बात की मांग नहीं करता कि वह मकान उसके धन से खरीदा गया है। क्योंकि किसी व्यक्ति को उसकी स्वीकृति के कारण पकड़ने का यह अर्थ नहीं है कि स्वीकृत वस्तु का निर्णय उस व्यक्ति के लिए किया जाए जिसके लिए स्वीकृति दी गई है और फिर स्वीकृति देने वाला लाभार्थी से कीमत के बारे में वापसी मांगे कि इस स्वीकृति देने वाले ने यह वस्तु खरीदी थी। इसलिए कि स्वीकृति में वास्तविकता को नहीं देखा जाता बल्कि स्वीकृति देने वाला अपने गुमान/कथन के कारण पकड़ा जाता है क्योंकि हो सकता है कि स्वीकृति देने वाले ने इस वस्तु को खरीदा हो फिर कोई ऐसा कारण पैदा हो गया हो जिससे वह वस्तु लाभार्थी की मिल्कियत में चली गई हो। और अगर स्वीकृति देने वाला यह दावा करे कि उसने यह वस्तु (स्वीकृत वस्तु) इस विचार से खरीदी थी कि उसकी खरीदारी मुझ पर लागू नहीं होगी तो यह केवल उसका एक कथन है जिसे स्वीकार नहीं किया जाएगा, इस दलील की वजह से जो अश्बाह में है कि एक व्यक्ति ने किसी चीज़ को स्वीकार किया फिर उसमें गलती का...

1 अल-अश्बाह वल-नज़ायर, किताब अल-इकरार, इदारात अल-कुरान कराची २/२०-२१। पृष्ठ २०२/७१५

[بایاں کالم - عربی/اردو] لما وقع عند الشراء فی محکمة القضاء ولم لم یستلزم الاقرار بالدار الاقرار بالثمن اذلیس معنی المؤاخذة بالاقرار ان یقضی بالمقر به للمقر له ویرجع المقر بالثمن بناء علی انه کان اشتراه اذ فی الاقرار لا ینظر الی الواقع انما یواخذ الرجل بزعمه لاحتمال انه کان اشتراه ثم حدث سبب فصار ملکا للمقر له وان ادعی انه انما اقر بناء علی زعمه ان شراءه لاینفذ علیه فهذه کلمة هو قائلها لا تقبل منه لما فی الاشباه اذا اقر بشیئ ثم ادعی الخطاء لم تقبل الا اذا اقر بالطلاق اذا اقر به بناء علی ما افتی به المفتی - ثم ظهر ان الحکم لیس کذلك فادعی الخطاء بناء علی هذا قبل وکذا ان ادعی ان اقراره کان تملیکا وهبة وبطلت لموت عمرو -

[دایاں کالم - اردو ترجمہ و تشریح] ہو جائے کہ زید نے وہ مکان عمرو کے ثمن سے خریدا ہے تو اہل شرع خریداروں کے نزدیک یہ معاملہ محکمہ قضاء کے تحت داخل نہ ہوگا اگرچہ کسی کے شے مکان کا اقرار کرنا اس بات کا تقاضا نہیں کرتا کہ وہ مکان اس کے ثمن سے خریدا گیا ہے کیونکہ کسی شخص کو اس کے اقرار کے سبب پکڑنے کا یہ مطلب نہیں کہ اقرار والی شے کا فیصلہ اس شخص کے لئے کیا جائے جس کے لئے اقرار کیا گیا ہے اور پھر اقرار کرنے والا اس بناء پر مقر لہ سے ثمن کے بارے میں رجوع کرے کہ اس اقرار کرنے والے نے یہ شے خریدی تھی اس لئے کہ اقرار میں واقع کو نہیں دیکھا جاتا بلکہ اقرار کرنے والا اپنے گمان / قول کے سبب سے پکڑا جاتا ہے کیونکہ ہو سکتا ہے اقرار کرنے والے نے اس شئی کو خریدا ہو پھر کوئی ایسا سبب پیدا ہو گیا ہو جس سے وہ شے مقر لہ کی ملکیت منتقل ہوگئی ہو، اور اگر اقرار کرنے والا یہ دعویٰ کرے کہ اس نے یہ شئی (مقر بہ اس خیال سے خریدی تھی کہ اس کی خریداری مجھ پر نافذ

نہ ہوگی تو یہ محض اس کا ایک قول ہے جس کو قبول نہیں کیا جائے گا، اس دلیل کی وجہ سے جو اشباہ میں ہے کہ ایک شخص نے کسی چیز کا اقرار کیا پھر اس میں خطاء کا

---

1 الاشباہ والنظائر کتاب الاقرار ادارۃ القرآن کراچی ۲/۲۱-۲۰ Page 202 of 715

Fatawa Razawiyya Volume 17

...before acceptance and delivery, as the death of one of the contracting parties voids the gift if it occurs before delivery. Before acceptance, ... [blank space in original] ... also not accepted, as stated in al-Ashbah. Furthermore, this delivery which took place by order of the judge occurred based on acknowledgement, not as a form of sale. Delivery does not constitute a 'Bai' al-Ta'ati' (sale by conduct) unless it occurs in that capacity. It is stated in al-Durr in the chapter of agency for buying and selling: "Because delivery in the manner of sale is a sale by conduct, etc." Additionally, a sale depends on mutual consent, whereas here, delivery occurred by order of the judge, and there is no consent after a judicial decree. These are the flaws I have identified in the responder's answer. The truth in the answer is what...

...if he made a claim, it will not be accepted except in the case of divorce. If a person admitted to a divorce based on an incorrect fatwa from a Mufti, and then realized that the matter is not as such, and consequently claimed it was an error, his claim will be accepted. The same ruling applies if Zaid claimed that his acknowledgement was for transferring ownership and gifting, and it became void due to Amr's death before acceptance and delivery. This is because the death of either party voids a gift if it occurs before delivery. ... Furthermore, this delivery ordered by the judge is not as a sale but based on acknowledgement. As long as delivery is not as a sale, it cannot be a 'Bai' al-Ta'ati'. In the chapter of agency for buying and selling, it is mentioned that indeed delivery happening as a sale is sale by conduct, etc. Moreover, sale is based on mutual consent, whereas here, delivery was by the judge's order, and there is no consent after a decree. These were the reasons for the flaws occurring in the responder's answer that became apparent to me. The truth in the answer is that which...

1. Durr al-Mukhtar, Book of Agency, Chapter of Agency for Sale, etc., Mujtabai Press, Delhi, 2/106. F: There is a blank space here in the original. Page 203 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

...स्वीकृति और सुपुर्दगी से पहले, क्योंकि संविदाकारी पक्षों में से किसी एक की मृत्यु उपहार को रद्द कर देती है यदि वह सुपुर्दगी से पहले हो। स्वीकृति से पहले... [मूल पाठ में रिक्त स्थान] ... भी स्वीकार नहीं किया गया, जैसा कि 'अल-अश्बाह' में स्पष्ट किया गया है। फिर, न्यायाधीश के आदेश से हुई यह सुपुर्दगी केवल स्वीकारोक्ति (इक़रार) के आधार पर हुई है, न कि बिक्री के रूप में। सुपुर्दगी 'बय-ए-ताती' (आचरण द्वारा बिक्री) नहीं होती जब तक कि वह उस हैसियत से न हो। 'अल-दुर्र में खरीद-बिक्री के एजेंसी के अध्याय में कहा गया है: "क्योंकि बिक्री के रूप में सुपुर्दगी आचरण द्वारा बिक्री है, इत्यादि।" इसके अलावा, बिक्री आपसी सहमति पर आधारित होती है, जबकि यहाँ सुपुर्दगी न्यायाधीश के आदेश से हुई है, और न्यायिक डिक्री के बाद कोई सहमति नहीं होती। ये मेरे द्वारा प्रतिवादी के उत्तर में पाई गई कमियों के कारण थे। उत्तर में सत्य वह है जो...

...यदि उसने दावा किया, तो तलाक के अलावा इसे स्वीकार नहीं किया जाएगा। यदि किसी व्यक्ति ने मुफ़्ती के गलत फतवे के आधार पर तलाक स्वीकार कर लिया, और फिर उसे पता चला कि मामला वैसा नहीं है, और परिणामस्वरूप उसने गलती का दावा किया, तो उसे स्वीकार कर लिया जाएगा। यही नियम लागू होगा यदि ज़ैद ने दावा किया कि उसकी स्वीकारोक्ति स्वामित्व हस्तांतरण और उपहार के लिए थी, जो स्वीकृति और सुपुर्दगी से पहले अम्र की मृत्यु के कारण रद्द हो गई। ऐसा इसलिए है क्योंकि सुपुर्दगी से पहले किसी भी पक्ष की मृत्यु उपहार को शून्य कर देती है। ... इसके अलावा, न्यायाधीश द्वारा आदेशित यह सुपुर्दगी बिक्री के रूप में नहीं बल्कि स्वीकारोक्ति के आधार पर है। जब तक सुपुर्दगी बिक्री के रूप में न हो, वह 'बय-ए-ताती' नहीं हो सकती। खरीद-बिक्री की एजेंसी के अध्याय में उल्लेख है कि वास्तव में बिक्री के रूप में होने वाली सुपुर्दगी आचरण द्वारा बिक्री है, इत्यादि। इसके अलावा, बिक्री आपसी सहमति पर आधारित होती है, जबकि यहाँ सुपुर्दगी न्यायाधीश के आदेश से हुई थी, और डिक्री के बाद कोई सहमति नहीं होती। ये प्रतिवादी के उत्तर में होने वाली खामियों के कारण थे जो मुझ पर स्पष्ट हुए। उत्तर में सत्य वह है जो...

1. दुर्र-ए-मुख्तार, किताबुल वकाला, बाबुल वकाला बिल-बय आदि, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 2/106। फ़: यहाँ मूल में रिक्त स्थान है। पृष्ठ 203 / 715

قبل القبول والتسلیم فان الموت احدالعاقدین یبطل الہبۃ اذا کان قبل التسلیم فقبل القبول ----- فـ ---ابی لم تقبل ایضا صرح بہ فی الاشباہ ثم ھذا التسلیم الواقع بامرالقاضی انما وقع علی حکم الاقرار لاعلی وجہ البیع والتسلیم لایکون بیع التعاطی الا اذا وقع علی جھتہ قال فی الدر فی باب الوکالۃ بالبیع والشراء لان التسلیم علی وجہ البیع بیع بالتعاطی ۱ الخ۔ وایضا یعتمد البیع بالتراضی و ھھنا التسلیم بامر القاضی ولا رضاء بعد القضاء ھذا ما ظھری من وجوہ الخلل فی الجواب فالحق فی الجواب ما

دعوی کیا تو یہ دعوی قبول نہیں کیا جائے گا سوائے طلاق کے کہ جب کسی شخص نے مفتی کے غلط فتوی کی بناء پر طلاق کا اقرار کرلیا۔ پھر اسے معلوم ہوا کہ مسئلہ اس طرح نہیں ہے چنانچہ اس وجہ سے اس نے خطاء کا دعوی کیا تو قبول کر لیا جائے گا اور یہی حکم ہوگا کہ اگر زید نے دعوی کیا کہ اس کا اقرار تو تملیک اور ہبہ تھا اور وہ قبول وتسلیم سے عمرو کے فوت ہو جانے کی وجہ سے باطل ہوگیا ہے کیونکہ عاقدین میں سے کسی ایک کی موت ہبہ کو باطل کردیتی ہے جبکہ تسلیم سے پہلے موت واقع ہوئی ہے ..... پھر قاضی کے حکم سے واقع ہونے والے یہ تسلیم بطور بیع نہیں بلکہ اقرار کی بنیاد پر ہے اور تسلیم جب تک بطور بیع نہ ہو وہ بیع تعاطی نہیں ہو سکتی ورنہ میں بیع وشراء کی وکالت کے باب میں ہے کہ بیشک بیع کے طور پر ہونے والی تسلیم بیع تعاطی ہے الخ۔ نیز بیع کی بنیاد تو باہمی رضا مندی پر ہوتی ہے جبکہ یہاں قاضی کے حکم سے تسلیم ہوئی اور قضاء کے بعد رضا نہیں ہوتی ، یہ مجیب کے جواب میں واقع ہونے والے خلل کی وجوہات تھیں جو میرے لئے ظاہر ہوئیں اور جواب میں حق وہ ہے جو

۱ درمختار کتاب الوکالۃ باب الوکالۃ بالبیع الخ مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۱۰۶ فـ : یہاں اصل میں بیاض ہے۔ Page 203 of 715

Fatawa Razawiyya (17) Volume 17

I say (I say that): If it is proven that Zaid, at the time of purchasing the house, did not attribute the purchase to Amr, even if he had his name written in the deed after the completion of the contract and the occurrence of the proposal and acceptance, then undoubtedly this purchase will be enforced upon Zaid and the house will become his property. Then he will be held accountable for his admission in every respect, so the house will be taken from him as the judge has decided. In this case, he cannot claim the price from Amr's heirs. And if it is proven that the attribution was made at the time of purchase, then this purchase was suspended (mawquf), which has become void due to Amr's death before authorization. In Ad-Durr, regarding the sale by an unauthorized agent (fuduli), it is said that his heir's authorization is not valid because it became void upon his death[1]. The same is in general books, so certainly the ruling for the purchase by an unauthorized agent will be the same. In Al-Ashbah, it is said that a suspended sale becomes void upon the death of the person whose authorization it was dependent on, and his heir does not stand in his place except in division (qismat), as mentioned in Al-Walwalijiyyah[2]. End. Therefore, Amr's heirs have no right either to the house or to the price, and...

---

1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Section on Al-Fuduli, Matba' Mujtabai, Delhi, 2/32.
2. Al-Ashbah wan-Nazair, Kitab al-Buyu', Second Art, Idarat al-Qur'an, Karachi, 1/330.

फ़तावा रज़विया (17) भाग 17

मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ कि) यदि यह सिद्ध हो जाए कि ज़ैद ने मकान खरीदते समय खरीदारी को अम्र की ओर सम्बद्ध नहीं किया था, यद्यपि अनुबंध की पूर्णता और प्रस्ताव एवं स्वीकृति के होने के बाद विक्रय विलेख (बैनामा) में उसका नाम लिखवा दिया था, तो निस्संदेह यह खरीदारी ज़ैद पर लागू होगी और मकान उसका स्वामित्व बन जाएगा। फिर उसे उसके पूर्ण स्वीकारोक्ति के कारण जवाबदेह ठहराया जाएगा, इसलिए मकान उससे ले लिया जाएगा जैसा कि न्यायाधीश (क़ाज़ी) ने निर्णय किया है। इस स्थिति में वह मूल्य (थमन) के बारे में अम्र के वारिसों से कोई दावा नहीं कर सकता। और यदि खरीदारी के समय अम्र की ओर सम्बद्ध करना सिद्ध हो जाए, तो यह खरीदारी 'मौक़ूफ़' (निलंबित) थी, जो अम्र की अनुमति देने से पहले मृत्यु के कारण निरस्त (बातिल) हो चुकी है। 'अद-दुर्र में एक अनधिकृत व्यक्ति (फुज़ूली) द्वारा बिक्री के बारे में कहा गया है कि उसके वारिस की अनुमति मान्य नहीं होगी क्योंकि उसकी मृत्यु के कारण वह निरस्त हो गई है। सामान्य पुस्तकों में भी ऐसा ही है, तो निश्चित रूप से अनधिकृत खरीदारी का भी यही नियम होगा। 'अल-अश्बाह' में कहा गया है कि निलंबित बिक्री उस व्यक्ति की मृत्यु के साथ निरस्त हो जाती है जिसकी अनुमति पर वह निर्भर थी, और उसका वारिस उसका स्थान नहीं लेता सिवाय विभाजन (क़िस्मत) के मामले में, जैसा कि 'अल-वलवालिजिया' में है। समाप्त। अत; अम्र के वारिसों का न तो मकान में कोई अधिकार है और न ही मूल्य में और...

---

1. दुर्र अल-मुख्तार, किताब अल-बुयू, अनधिकृत (फुज़ूली) पर अनुभाग, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 2/32।
2. अल-अश्बाह वन-नज़ायर, किताब अल-बुयू, दूसरी कला, इदारातुल कुरान, कराची, 1/330।

पृष्ठ 715 में से 204

اقول: (میں کہتا ہوں) اگر ثابت ہو جائے کہ زید نے مکان خریدتے وقت خریداری کو عمرو کی طرف منسوب نہیں کیا اگرچہ ایجاب و قبول کے وقوع اور عقد کے انعقاد کے بعد بیعنامہ میں اس کا نام لکھوا دیا ہے تو بیشک یہ شراء زید پر نافذ ہوگی اور مکان اس کی ملک ہوگا پھر اس کے اقرار کلی وجہ سے وہ مکان اس سے لے لیا جائے گا جیسا کہ قاضی نے فیصلہ کیا ہے اس صورت میں وہ ثمن کے بارے میں ورثاء عمرو سے رجوع نہیں کر سکتا اور اگر بوقت خریداری عمرو کی طرف نسبت کرنا ثابت ہو جائے تو یہ شراء موقوف ہوئی جو کہ عمرو کی قبول از اجازت موت کے سبب سے باطل ہو چکی ، در میں فضولی کی بیع کے بارے میں فرمایا کہ اس کے وارث کی اجازت سے جائز نہ ہوگی کیونکہ وہ بیع اس (صاحب متاع) کی موت کی وجہ سے باطل ہو چکی ہے اور اسی طرح عام کتابوں میں ہے تو یقیناً اسی طرح فضولی کی شراء کا حکم ہوگا، اشباہ میں کہا کہ موقوف بیع اس شخص کی موت سے باطل ہوتی ہے جس کی اجازت پر وہ موقوف تھی اور اس کا وارث اس کے قائم مقام نہیں ہوتا سوائے قسمت کے جیسا کہ ولوالجیہ میں ہے انتہی ، لہذا ورثاء عمرو کا نہ تو مکان میں کوئی حق ہے نہ ہی ثمن میں اور

---

[1] درمختار کتاب البیوع فصل في الفضولی مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۳۲ [2] الاشباہ والنظائر کتاب البیوع الفن الثاني ادارۃ القرآن کراچی ۱/ ۳۳۰

[Arabic Text]: So when the matter is raised to the judge, it is obligatory for him to overturn his judgment because its error has become clear by the ruling of Sharia. If the seller claims, the house is returned to him and the price to the buyer, and there is nothing for the heirs. This, and Allah Almighty knows best, and His knowledge is most complete, and His ruling most wise.

[Urdu Translation of Arabic]: When the matter is brought before the judge, it is obligatory to reject his judgment because the error has become apparent from the perspective of Sharia. Thus, if the seller makes a claim, the house will be returned to him and the price to the buyer; there will be nothing for the heirs of Amr. Remember this well, and Allah Almighty knows best, and His knowledge is most complete, His majesty most perfect, and His judgment most wise. (T)

Question 98: What do the scholars of religion say regarding this issue: Zaid purchased two houses with his own money and had the sale deeds written in the name of his younger brother Khalid, who was also an adult. At the time of purchase, he said before his family members that he had bought these houses for his brother Khalid and that no one else was their owner. After the purchase, he gave possession to Khalad [sic - Khalid] and handed over the documents to him as well. Rent agreements continued to be made in Khalid's name, tenants lived there according to his will, and he continued to receive the rent. Now, ten years later, after Zaid's death, his third brother Amr is claiming that he, along with Zaid's wife, son, and daughter, are the owners of these houses because they were purchased with his and Zaid's money, whereas in reality, none of his money was involved at all. In this situation, who can be the owner of the houses? Clarify, and you shall be rewarded.

The Answer: If at the time of purchase, the contract of sale and purchase took place between the owners of the house and Zaid in the name of Khalid, then the purchase was 'Fuduli' (unauthorized agency) and dependent on Khalid's permission.

[Table Content]: [Left Column - Arabic]: In Ad-Durr al-Mukhtar: If he added (meaning the unauthorized buyer added the purchase to another) by saying, "Sell this slave to so-and-so," and the seller said, "I have sold him to so-and-so," it is suspended, as in Bazzaziyya etc. Ah. In Radd al-Muhtar: on the permission of the one for whom he purchased; if he permits, it is valid, and the liability is on the permitter, not on the unauthorized agent. [Right Column - Urdu]: It is in Durr al-Mukhtar that if an unauthorized buyer attributed the purchase to someone else in such a way that he

said, "Sell this slave for so-and-so," and the seller said, "I sold it for so-and-so," then this purchase will be suspended, Bazzaziyya etc. Ah. It is in Radd al-Muhtar that it will be dependent on the permission of the person for whom the unauthorized agent made the purchase; if he gives permission...

[Footnote]: 1 Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Chapter on al-Fuduli, Matba' Mujtabai Delhi, 2/311 Page 205 of 715

[अरबी पाठ]: जब मामला काज़ी के पास ले जाया गया तो उसका फ़ैसला रद्द करना वाजिब है क्योंकि शरीअत की ओर से उसकी ग़लती ज़ाहिर हो चुकी है। इसलिए अगर बेचने वाला (बाइअ) दावा करे तो मकान उसे और कीमत खरीदार (मुश्तरी) को लौटा दी जाएगी। वारिसों के लिए कुछ नहीं होगा। यह, और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है, उसका ज्ञान सबसे पूर्ण और उसका हुक्म सबसे मज़बूत है।

[उर्दू अनुवाद]: जब मामला काज़ी के पास ले जाया गया तो उसकी कज़ा (फ़ैसले) को रद्द करना वाजिब है क्योंकि शरअ की जानिब से उसकी खता (ग़लती) ज़ाहिर हो चुकी है। चुनाँचे अगर बाइअ दावा करे तो मकान उसको और समन (कीमत) मुश्तरी को लौटा दिए जाएँगे। अम्र के वर्सा (वारिसों) के लिए कोई चीज़ न होगी। इसे खूब याद रखो वल्लाह तआला आलम व इल्मुहू अतम व मजदहू अतम व अहकम। (त)

मसला 98: क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस मसले में कि ज़ैद ने दो मकान अपने रुपये से खरीद कर उनके बैनामे अपने छोटे भाई खालिद के नाम, जो कि बालिग था, लिखा दिए और खरीदते वक्त अपने अहल-ए-खानदान के रूबरू कहा कि यह मकान मैंने अपने भाई खालिद के लिए खरीदे हैं, इनका कोई और मालिक नहीं है और खरीद के बाद खालिद को काबिज़ करा दिया और दस्तावेज़ भी उसे दे दी और किरायानामा खालिद ही के नाम से होता रहा और किरायेदार उसी की मर्ज़ी पर आबाद होते रहे और किराया भी वही पाता रहा। अब दस बरस के बाद ज़ैद फौत हुआ, उसका तीसरा भाई अम्र मुद्दई है कि इन मकानों का मैं और ज़ौजा (पत्नी), पिसर (बेटा) व दुख़्तर (बेटी) ज़ैद मालिक हैं कि ये मेरे और ज़ैद के रुपये से खरीदे गए हैं, हालाँकि वाकेअ में उसका रुपया असल में न था। इस सूरत में मकानों का मालिक कौन हो सकता है? बेयनू तूजरू (बयान करें, सवाब पाएँ)।

अल-जवाब: अगर खरीदते वक्त अक़्द-ए-बै व शिरा (खरीद-फरोख्त का अनुबंध) मकान मालिकों और ज़ैद के बीच बनाम खालिद वाक़े हुआ था, तो शिरा 'फुज़ूली' (अनधिकृत) थी और इजाज़त-ए-खालिद पर मौकूफ़।

[तालिका सामग्री]: [बायाँ कॉलम - अरबी]: अद्दुर्र अल-मुख्तार में: यदि उसने (अनधिकृत खरीदार ने) खरीदारी को दूसरे की ओर जोड़ा, यह कहते हुए, "इस दास को फ़लां को बेच दो," और विक्रेता ने कहा, "मैंने उसे फ़लां को बेच दिया," तो यह रुका हुआ है, जैसा कि बज़ाज़िया आदि में है। रद्द अल-

मुह्तार में: उस व्यक्ति की अनुमति पर जिसके लिए उसने खरीदा; यदि वह अनुमति देता है, तो यह मान्य है, और ज़िम्मेदारी अनुमति देने वाले पर है, अनधिकृत एजेंट पर नहीं। [दायाँ कॉलम - उर्दू]: दुर्रे मुख्तार में है कि अगर फ़ुज़ूली मुश्तरी ने शिरा की निस्बत किसी गैर की तरफ बा-ईं तौर कि यूँ कहा: "यह गुलाम फ़लां के लिए फरोख्त कर," बाइअ ने कहा: "मैंने फ़लां के लिए फरोख्त किया," तो यह शिरा मौकूफ़ होगी, बज़ाज़िया वग़ैरह अ-ह। रद-अल-मुह्तार में है कि उस शख्स की इजाज़त पर मौकूफ़ होगी जिसके लिए फ़ुज़ूली ने खरीदारी की, अगर वह इजाज़त...

[पाद टिप्पणी]: 1 दुर्रे मुख्तार किताब अल-बुयूअ फ़स्ल फ़िल-फ़ुज़ूली मतबा मुजतबाई दिल्ली 2/311

فإذ ارفع الامرا الی القاضی وجب ان یرد قضاؤہ لما تبین من خطائہ بحکم الشرع فان ادعی البائع ردت الدار الیہ والثمن الی المشتری ولا شیئ للورثۃ ھذا واللہ تعالی اعلم وعلمہ اتم وحکمہ احکم۔

جب قاضی کے پاس معاملہ لے جایا گیا تو اس کی قضا کو رد کرنا واجب ہے کیونکہ شرع کی جانب سے اس کی خطاء ظاہر ہو چکی ہے چنانچہ اگر بائع دعویٰ کرے تو مکان اس کو اور ثمن مشتری کو لوٹا دئے جائیں گے ورثاء عمرو کے لئے کوئی شیئ نہ ہوگی اسے خوب یاد رکھو واللہ تعالیٰ اعلم وعلمہ اتم ومجدہ اتم واحکم۔ (ت)

مسئلہ ۹۸: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے دو مکان اپنے روپیہ سے خرید کر ان کے بیعنامے اپنے چھوٹے بھائی خالد کے نام کہ وہ بھی بالغ تھا لکھادئے اور خریدتے وقت اپنے اہل خاندان کے روبرو کہا کہ یہ مکان میں نے اپنے بھائی خالد کے لئے خریدے ہیں ان کا کوئی مالک نہیں اور بعد خریداری خلاد کو قابض کرادیا اور دستاویز بھی اسے دے دی اور کرایہ نامے خالد ہی کے نام سے ہوتے رہے اور کرایہ دار اسی کی مرضی پر آباد ہوتے رہے اور کرایہ بھی وہی پاتا رہا اب دس برس کے بعد کو زید فوت ہوا اس کا تیسرا بھائی عمرو مدعی ہے، ان مکانوں کے میں اور زوجہ وپسر ودختر زید مالک ہیں کہ میرے اور زید کے روپے سے خرید کردہ ہیں حالانکہ واقع میں اس کا روپیہ اصلا نہ تھا اس صورت میں مالک مکانوں کا کون ہو سکتا ہے؟ بینوا توجروا

الجواب: اگر خریدتے وقت عقد بیع وشراء مالکان مکان وزید سے بنام خالد وقع ہوا تھا تو وشراء فضولی تھا اور اجازت خالد پر موقوف،

فی الدار المختار لو اضافہ(یعنی اضاف المشتری الفضولی الشراء الی غیرہ)بان قال بع ھذا العبد لفلان فقال البائع بعتہ لفلان توقف بزازیة وغیرہا اھـ فی رد المحتار علی اجازة من شری لہ فان اجاز جاز و عھدتہ علی المجیز لاعلی | در مختار میں ہے کہ اگر فضولی مشتری نے شراء کی نسبت کسی غیر کی بایں طور کہ یوں کہا یہ غلام فلاں کے لئے فروخت کر، بائع نے کہا میں نے فلاں کے لئے فروخت کیا، تو یہ شراء موقوف ہوگی، بزازیہ وغیرہ اھـ ردالمحتار میں ہے کہ اس شخص کی اجازت پر موقوف ہوگی جس کے لئے فضولی نے خریداری کی اگر وہ اجازت

1 درمختار کتاب البیوع فصل فی الفضولی مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۳۱۱ Page 205 of 715

Fatawa Razawiya (Vol. 17)

The Contractor[1] - if he gives, then this purchase will be valid, and its responsibility will lie with the one who gave the permission, not the contracting parties. (T)

Whereas Khalid took possession of the houses, that purchase became valid and effective.

Just as taking possession of the price is authorization for an unauthorized (Fuzuli) sale; in 'Al-Durr al-Mukhtar' it is stated that the owner receiving the price is authorization[2] (summary). Then it is said that the author's words provide the benefit that authorization is valid through both action and speech[3] (T).

And from the statement of the question, it is clear that Zaid paid the price of his own accord without Khalid's permission from his own wealth, so he was a volunteer and a benefactor in this matter. This fact is clear from the conversation in the mentioned question. Therefore, the houses are the exclusive property of Khalid without any partners, and Zaid's heirs have no claim regarding the houses or the price.

In 'Al-Fatawa al-Khayriyya', it is stated that if someone pays another person's debt with their permission, they can seek reimbursement from them and will not be considered a volunteer because the payment was made with permission. So much so that if the debtor had not given him permission to pay the debt, then he would have been considered a benefactor (i.e., he would not have the right of reimbursement). From this, it is known that if someone, with the husband's permission, paid his wife's dowry on his behalf or paid the price of a female slave whose purchase he had ordered, then the payer can seek reimbursement from the husband and the owner of the slave, and the current situation is the same[4] (T).

1. Radd al-Muhtar, Book of Sales, Chapter on Fuzuli, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut 4/73.
2. Durr al-Mukhtar, Book of Sales, Chapter on Fuzuli, Matba' Mujtabai, Delhi 2/32.
3. Durr al-Mukhtar, Book of Sales, Chapter on Fuzuli, Matba' Mujtabai, Delhi 2/32.
4. Fatawa al-Khayriyya, Book of Sales, Chapter on Fuzuli, Dar al-Ma'rifah, Beirut 1/234.

फ़तावा रज़विया (खंड १७)

अनुबंधकर्ता[1] - यदि वह देगा तो यह क्रय वैध हो जाएगा, और इसकी जिम्मेदारी अनुमति देने वाले पर होगी, न कि अनुबंधकर्ताओं पर। (त)

चूंकि खालिद ने घरों पर कब्जा कर लिया, वह क्रय वैध और प्रभावी हो गया।

जैसा कि कीमत पर कब्जा करना एक अनधिकृत (फुज़ूली) बिक्री के लिए अनुमति है; 'अल-दुर्र अल-मुख्तार' में कहा गया है कि मालिक का मूल्य प्राप्त करना अनुमति है[2] (संक्षेप में)। फिर कहा गया कि लेखक के शब्द यह लाभ प्रदान करते हैं कि अनुमति कार्य और वचन दोनों के माध्यम से वैध है[3] (त)।

और प्रश्न के विवरण से स्पष्ट है कि ज़ैद ने खालिद की अनुमति के बिना अपने स्वयं के धन से अपनी स्वेच्छा से मूल्य का भुगतान किया, इसलिए वह इस मामले में एक स्वयंसेवक और उपकारी था। यह तथ्य उल्लेखित प्रश्न की बातचीत से स्पष्ट है। इसलिए, घर बिना किसी साझेदार के खालिद की अनन्य संपत्ति हैं, और ज़ैद के उत्तराधिकारियों का घरों या कीमत के संबंध में कोई दावा नहीं है।

'अल-फ़तावा अल-खैरिया' में कहा गया है कि यदि कोई किसी अन्य व्यक्ति का ऋण उसकी अनुमति से चुकाता है, तो वह उससे प्रतिपूर्ति की मांग कर सकता है और उसे स्वयंसेवक नहीं माना जाएगा क्योंकि भुगतान अनुमति के साथ किया गया था। यहाँ तक कि यदि ऋणी ने उसे ऋण चुकाने की अनुमति नहीं दी होती, तो उसे एक उपकारी माना जाता (अर्थात, उसे प्रतिपूर्ति का अधिकार नहीं होता)। इससे ज्ञात होता है कि यदि किसी ने पति की अनुमति से उसकी ओर से उसकी पत्नी का मेहर (दहेज) अदा किया या उस दासी की कीमत चुकाई जिसकी खरीद का उसने आदेश दिया था, तो भुगतान करने वाला पति और दासी के मालिक से प्रतिपूर्ति की मांग कर सकता है, और वर्तमान स्थिति वही है[4] (त)।

1. रद अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू, फुज़ूली पर अध्याय, दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत ४/७३।
2. दुर्र अल-मुख्तार, किताब अल-बुयू, फुज़ूली पर अध्याय, मतबा मुजतबाई, दिल्ली २/३२।
3. दुर्र अल-मुख्तार, किताब अल-बुयू, फुज़ूली पर अध्याय, मतबा मुजतबाई, दिल्ली २/३२।
4. फ़तावा अल-खैरिया, किताब अल-बुयू, फुज़ूली पर अध्याय, दार अल-मारिफा, बेरूत १/२३४।

पृष्ठ २०६ का ७१५

جلد ہفدہم (۱۷) فتادی رضویہ

العاقد ۱ - دے گا تو یہ شراء جائز ہو جائے گی اور اس کی ذمہ داری اجازت دینے والے پر ہو گی نہ کہ عاقدین پر۔ (ت)

جبکہ خالد نے مکانات پر قبضہ کیا وہ شراء جائز و نافذ ہو گیا۔

کما ان قبض الثمن اجازة لبیع الفضولی فی الدار المختار اخذ المالك الثمن اجازة ۲ اه ملخصاً ثم قال وافاد کلامه جواز الاجازة بالفعل والقول ۳ اهـ جیسا کہ ثمن پر قبضہ کرنا بیع فضولی کی اجازت ہوتا ہے در مختار میں ہے کہ مالک کا ثمن وصول کرنا اجازت ہے اه ملخص، پھر کہا ماتن کا قول اس بات کا فائدہ دیتا ہے کہ اجازت قول و فعل دونوں سے جائز ہے۔ اه (ت)

اور تقریر سوال سے ظاہر کہ ثمن زید نے بطور خود بے اذن وام خالد اپنے مال سے ادا کیا تو وہ اس امر میں تبرع واحسان کرنیوالا تھا اور یہ بات خود گفتگو مذکور سوال سے واضح ہے پس مکانات بے شرکت غیرے خاص ملک خالد ہیں اور اس پر وارثان زید کا کوئی دعوی نہ درباره مکانات ہے نہ درباب ثمن،

فی الفتاوٰی الخیریة اذا دفع دینا لحق الآخر بأذنه فله الرجوع علیه ولا یکون متبرعاً للاذن حتی اذا لم یأذن له به کان متبرعاً و به یعلم انه اذا دفع مهر زوجته عنه بأذنه او ثمن الجاریة التي امره بشرائها یرجع علیه بما دفع والحال هذه ۴ اهـ فتاوٰی خیریہ میں ہے اگر کسی نے دوسرے کا قرض اس کی اجازت سے ادا کیا تو اس سے رجوع کر سکتا ہے اور متبرع نہ ہوگا کیونکہ اس کی اجازت سے ادائیگی کی ہے حتیٰ کہ اگر مقروض نے اس کو ادائیگی قرض کا اذن نہ دیا ہوتا تو یہ احسان کرنے والا قرار پاتا (یعنی حق رجوع نہ رکھتا) اس سے معلوم ہوا کہ اگر کسی نے شوہر کے اذن سے اس

کی طرف سے اس کی بیوی کا مہر ادا کردیا یا کسی لونڈی کی قیمت ادا کر دی جس کی خریداری کا اس نے حکم دیا تھا تو ادا کرنے والا شوہر اور لونڈی کے مالک سے رجوع کر سکتا ہے اور صورت حال یہی ہے اہ (ت)

1. رد المحتار کتاب البیوع فصل فی الفضولی دار احیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۷۳
2. درمختار کتاب البیوع فصل فی الفضولی مطبع مجتبائی دہلی ۳۲/۲
3. درمختار کتاب البیوع فصل فی الفضولی مطبع مجتبائی دہلی ۳۲/۲
4. فتاوٰی خیریہ کتاب البیوع فصل فی الفضولی دار المعرفۃ بیروت ۱ / ۲۳۴

As for Amr, if in reality some of his money was also spent in paying the price and he also gave it like Zaid on his own, then he is also a donor who cannot demand it back from anyone. And if Zaid asked him for it and spent it in the price, then the ultimate result is that this will be a debt of Amr upon Zaid, to be taken from his estate; no claim against Khalid reaches him.

[Arabic Box 1]: Because if he lent, he only lent to Zaid, so the responsibility lies with him, not with Khalid, as is not hidden. [Urdu Explanation]: For if he had given a loan, he gave this loan to Zaid; the responsibility for it falls on him, not on Khalid, as it is not hidden. (T)

And if the contract of sale and purchase was in the name of Zaid, even if afterwards Zaid wrote Khalid's name in the sale deeds, then at the time of purchase, those houses became the property of Zaid.

[Arabic Box 2]: Because when a purchase finds validity, it becomes effective for the contracting party, as stipulated in Al-Hidayah, Al-Durr al-Mukhtar, and common books. In Al-Durr, it says that if one purchases for another, it is effective for himself, etc. [Urdu Explanation]: Because if a purchase finds a possibility of effectiveness, it becomes effective for the contractor, as is textually stated in Hidaya and common books; in Durr, it says that if one purchases for someone else, it will be effective on himself, etc. (T)

And even if Amr's money was given in payment of the price, it does not necessarily follow from this that the purchased house belongs to Amr or that his share is established in it; rather, Zaid alone will remain its owner.

[Arabic Box 3]: In Al-Fatawa al-Khayriyya, a house is not established for the father by the son's statement: "I bought it with my father's money," because it does not follow from buying with the father's money that the item sold belongs to the father, as there is the possibility of it being a loan or misappropriation (Ghasb). [Urdu Explanation]: It is stated in Fatawa Khayriyya that by a son saying that "I bought the house with my father's money," the house will not be established for the father, because buying with the father's money does not necessitate that the sold item belongs to the father, for there is a possibility that he may have misappropriated the father's money or taken it as a loan. (T)

Then, after the purchase, whatever acts and statements occurred from Zaid, and he put the house in Khalid's name in the sale deed...

---

1. Radd al-Muhtar, Book of Sales, Chapter on Miscellaneous Matters, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/220; Fatawa Qazi Khan, Book of Sales, Section on Suspended Sale, Naval Kishore, Lucknow, 2/351.
2. Durr al-Mukhtar, Book of Sales, Section on Al-Fuduli (unauthorized agent), Matba Mujtabai, Delhi, 2/31.
3. Fatawa Khayriyya, Book of Sales, Section on Al-Fuduli, Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/219.

जहाँ तक अम्र का सवाल है, अगर वास्तव में उसका भी कुछ पैसा कीमत चुकाने में खर्च हुआ और उसने भी ज़ैद की तरह अपनी ओर से दिया था, तो वह भी एक दानकर्ता है जो किसी से इसकी माँग नहीं कर सकता। और अगर ज़ैद ने उससे माँगकर कीमत में खर्च किया, तो इसका परिणाम यह है कि यह अम्र का ज़ैद पर एक ऋण होगा, जिसे उसकी संपत्ति से लिया जाएगा; खालिद पर उसका कोई दावा नहीं बनता।

[अरबी बॉक्स 1]: क्योंकि यदि उसने ऋण दिया, तो उसने केवल ज़ैद को ऋण दिया, इसलिए जिम्मेदारी उसी पर है, खालिद पर नहीं, जैसा कि छिपा नहीं है। [उर्दू स्पष्टीकरण]: इसलिए कि अगर उसने ऋण दिया था, तो यह ऋण ज़ैद को दिया था; इसकी जिम्मेदारी उस पर आती है न कि खालिद पर, जैसा कि छिपा नहीं है। (त)

और अगर खरीद-बिक्री का अनुबंध ज़ैद के नाम पर था, भले ही बाद में ज़ैद ने बिक्री विलेखों में खालिद का नाम लिखवा दिया, तो खरीदारी के समय वे घर ज़ैद के स्वामित्व में हो गए।

[अरबी बॉक्स 2]: क्योंकि जब खरीदारी को वैधता मिल जाती है, तो वह अनुबंध करने वाले पर प्रभावी हो जाती है, जैसा कि अल-हिदाया, अल-दुर अल-मुख्तार और सामान्य पुस्तकों में वर्णित है। अल-दुर में कहा गया है कि यदि कोई दूसरे के लिए खरीदारी करता है, तो वह स्वयं उस पर प्रभावी होती है, इत्यादि। [उर्दू स्पष्टीकरण]: क्योंकि खरीदारी प्रभावी होने की गुंजाइश पाती है तो अनुबंध करने वाले पर प्रभावी हो जाती है जैसा कि हिदाया और आम किताबों में स्पष्ट रूप से कहा गया है; दुर में है कि अगर किसी दूसरे के लिए खरीदारी की तो खुद उस पर प्रभावी होगी इत्यादि (त)

और भले ही अम्र का पैसा कीमत चुकाने में दिया गया हो, इससे यह आवश्यक नहीं होता कि खरीदा गया घर अम्र का हो या उसमें उसका हिस्सा तय हो जाए; बल्कि ज़ैद ही उसका अकेला मालिक रहेगा।

[अरबी बॉक्स 3]: अल-फ़तावा अल-ख़ैरियाह में है कि बेटे के इस कथन से कि "मैंने इसे अपने पिता के धन से खरीदा है," पिता के लिए घर सिद्ध नहीं होता, क्योंकि पिता के धन से खरीदने का अर्थ यह नहीं है कि बेची गई वस्तु पिता की है, क्योंकि इसमें ऋण या गबन (ग़स्ब) की संभावना बनी रहती है। [उर्दू स्पष्टीकरण]: फतावा खैरिया में है कि बेटे के यह कहने से कि मैंने घर अपने बाप के माल से खरीदा है, घर बाप के लिए साबित न होगा क्योंकि बाप के माल से खरीदने से यह आवश्यक नहीं

आता कि बेची गई वस्तु बाप के लिए हो क्योंकि इसमें यह संभावना मौजूद है कि उसने बाप का माल गबन किया हो या ऋण लिया हो। (त)

फिर खरीदारी के बाद ज़ैद से जो कार्य और कथन हुए और उसने बिक्री विलेख में वह घर खालिद के नाम...

---

1. रद अल-मुहतार, किताब अल-बुयू, बाब अल-मुतफरकात, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 4/220; फतावा काज़ी खान, किताब अल-बुयू, फसल फिल-बय अल-मौकूफ, नवल किशोर, लखनऊ, 2/351।
2. दुर-ए-मुख्तार, किताब अल-बुयू, फसल फिल-फुज़ूली, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 2/31।
3. फतावा खैरिया, किताब अल-बुयू, फसल फिल-फुज़ूली, दार अल-मआरिफा, बेरूत, 1/219।

رہا عمرو ع اگر واقع میں کچھ روپیہ اس کا بھی ادائے ثمن میں صرف ہوا اور اس نے بھی مثل زید بطور خود دیا تھا تو وہ بھی متبرع ہے جس کا مطالبہ کسی سے نہیں کر سکتا، اور اگر زید نے اس سے مانگ کر ثمن میں صرف کیا تو غایت یہ ہے کہ یہ قرض عمرو کا زید پر ہو گا اس کے ترکہ سے لے، خالد پر کوئی دعوٰی اسے نہیں پہنچتا۔

فانہ ان اقرض فانما اقرض زیدا فعلیہ العہدۃ لا علی خالد کما لا یخفی۔ اس لئے کہ اگر اس نے قرض دیا تھا تو یہ قرض زید کو دیا تھا اس پر اس کی ذمہ داری عائد ہوتی ہے نہ کہ خالد پر، جیسا کہ پوشیدہ نہیں۔ (ت)

اور اگر عقد بیع و شراء بنام زید ہوا تھا اگر چہ بعد کو زید نے بیعناموں میں خالد کا نام لکھادیا تو وہ مکان وقت خریداری مملوک زید ہوئے۔

لان الشراء اذا وجد نفاذا نفذ علی العاقد کما نص علی فی الہدایۃ والدر المختار وعامۃ الاسفار فی الدر لو اشتری لغیرہ نفذ علیہ الخ۔ کیونکہ شراء نفاذ کی گنجائش پائے تو عاقد پر نفاذ ہو جاتی ہے جیسا کہ اس پر ہدایہ اور عام کتابوں میں نص کی گئی ہے، در میں ہے کہ اگر کسی غیر کے لئے خریداری کی تو خود اس پر نافذ ہوگی الخ (ت)

اور عمرو کا روپیہ ادائے ثمن میں دیا بھی گیا ہو تو اس سے یہ لازم نہیں آتا کہ وہ مکان خرید کردہ عمرو کے ٹھہریں یا ان میں اس کا حصہ قرار پایا جائے بلکہ تنہا زید ہی اس کا مالک ٹھہرے گا،

فی الفتاوی الخیریۃ لا تثبت الدار للاب بقول الابن اشتریتہا من مال ابی اذا لا یلزم من الشراء من مال الاب ان یکون المبیع للاب لانہ یحتمل القرض و الغصب۔ فتاوٰی خیریہ میں ہے کہ بیٹے کے یوں

کہنے سے کہ میں نے گھر اپنے باپ کے مال سے خریدا ہے گھر باپ کے لئے ثابت نہ ہوگا کیونکہ باپ کے مال سے خریدنے سے یہ لازم نہیں آتا کہ مبیع باپ کے لئے ہو اس لئے کہ اس میں یہ احتمال موجود ہے کہ اس نے باپ کا مال غصب کیا ہو یا قرض کیا ہو۔ (ت)

پھر بعد خریداری جو افعال و اقوال زید سے واقع ہوئے اور اس نے وہ مکان خالد کا نام بیعنام میں

---

1. رد المحتار کتاب البیوع باب المتفرقات دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۲۲۰، فتاوٰی قاضی خان کتاب البیوع فصل فی البیع الموقوف نولکشور لکھنؤ ۲/ ۳۵۱
2. درمختار کتاب البیوع فصل فی الفضولی مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۳۱
3. فتاوٰی خیریہ کتاب البیوع فصل فی الفضولی دار المعرفۃ بیروت ۱/ ۲۱۹

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

Writing it down and handing it over is a clear proof of a gift (Hiba).

Arabic Text	Urdu Translation
Thus, Hiba is also concluded by mutual exchange (ta'ati). Many sub-issues in the school of law indicate this. It is stated in Al-Durr al-Mukhtar that if someone makes clothes for their son or student and then intends to give them to someone else, they do not have the right to do so unless they had specified at the time of making that these clothes are a loan (ariyat) [End of quote]. In 'Uqud al-Durriyya, in the revision of Fatawa Hamidiyya, and in Al-Dhakhira and Al-Tajnis, it is mentioned that if a woman buys property for her minor child using her own money, the purchase is considered for the mother because she does not possess the right to purchase for the child, but the property will belong to the child because the mother becomes the donor (wahiba).	Thus, Hiba is also concluded by mutual exchange (ta'ati). Many sub-issues in the school of law indicate this. It is stated in Al-Durr al-Mukhtar that if someone makes clothes for their son or student and then intends to give them to someone else, they do not have the right to do so unless they had specified at the time of making that these clothes are a loan (ariyat). In 'Uqud al-Durriyya, Fatawa Hamidiyya, Al-Dhakhira, and Al-Tajnis, it is mentioned that if a woman buys property for her minor child using her own money, the purchase is for the mother because she does not possess the right to purchase for the child, but the property will belong to the child because the mother becomes the donor (wahiba). (T)

Therefore, in this case as well, after possession, Khalid's ownership became complete, and no one else has any right in these houses. As for the price, if Amr paid anything, its status is as mentioned above—i.e., if it was voluntary (tatwu'), then there is no claim against anyone, and if it was a loan, then it is upon Zaid and has nothing to do with Khalid. Yes, if the contract itself was for both Zaid and Amr, where the seller said "I sold this house to both of you" and they said "we bought it," or if Amr had made Zaid his agent for the purchase of his house on his behalf, then the property would belong to both Zaid and Amr in equal shares, even if Amr had paid nothing towards the price. Now, this gift in the name of Khalid made only by Zaid remains completely invalid.

Arabic Text	Urdu Translation
Because he only owns the right to gift what he possesses, and it is undivided (musha'), and the gift of an undivided portion is not valid. The silence of Amr is not sufficient to make it a gift for both because the owner's silence in an unauthorized sale...	Because he only has the power to gift his own property, and his property is an undivided portion (musha'), the gift of which is not permissible. And Amr's silence is not sufficient so that both...

1. Al-Durr al-Mukhtar, Book of Gift, Matba' Mujtabai, Delhi, 2/160.
2. Al-Uqud al-Durriyya fi Tanqih al-Fatawa al-Hamidiyya, Book of Wills, Abdul Ghaffar Bookstore, Qandahar, Afghanistan, 2/33.

लिखकर उसे सुपुर्द कर देना हिबा (दान) का स्पष्ट प्रमाण है।

अरबी पाठ

अतः, हिबा आपसी लेन-देन (तआती) से भी संपन्न हो जाता है, इस पर धर्मशास्त्र में कई उप-नियम संकेत करते हैं। अल-दुरुल मुख्तार में है कि यदि किसी ने अपने बेटे या शिष्य के लिए कपड़े बनवाए और फिर किसी और को देने का इरादा किया, तो उसे ऐसा करने का अधिकार नहीं है जब तक कि बनाने के समय उसने यह स्पष्ट न कर दिया हो कि ये कपड़े उधार (आरियत) हैं। उक़ूद अद-दुरिया, फ़तावा हामिदिया, ज़ख़ीरा और तजनीस में है कि यदि किसी महिला ने अपने धन से अपने नाबालिग बच्चे के लिए संपत्ति खरीदी, तो खरीद माँ के लिए हुई क्योंकि वह बच्चे के लिए खरीदारी की मालिक नहीं है, और वह संपत्ति बच्चे की होगी क्योंकि माँ हिबा (दान) करने वाली बन गई।

उर्दू अनुवाद

अतः, हिबा आपसी लेन-देन (तआती) से भी संपन्न हो जाता है, इस पर धर्मशास्त्र में कई उप-नियम संकेत करते हैं। अल-दुरुल मुख्तार में है कि यदि किसी ने अपने बेटे या शिष्य के लिए कपड़े बनवाए और फिर किसी और को देने का इरादा किया, तो उसे ऐसा करने का अधिकार नहीं है जब तक कि बनाने के समय उसने यह स्पष्ट न कर दिया हो कि ये कपड़े उधार (आरियत) हैं। उक़ूद अद-दुरिया, फ़तावा हामिदिया, ज़ख़ीरा और तजनीस में है कि यदि किसी महिला ने अपने धन से अपने नाबालिग बच्चे के लिए संपत्ति खरीदी, तो खरीद माँ के लिए हुई क्योंकि वह बच्चे के लिए खरीदारी की मालिक नहीं है, और वह संपत्ति बच्चे की होगी क्योंकि माँ हिबा (दान) करने वाली बन गई। (त)

इसलिए, इस मामले में भी, कब्ज़ा मिलने के बाद खालिद का पूर्ण स्वामित्व हो गया और इन मकानों में किसी का कोई अधिकार नहीं रहा। और कीमत के मामले में यदि अम्र ने कुछ दिया भी है, तो उसकी स्थिति वही है जो ऊपर बताई गई है—अर्थात् यदि वह स्वैच्छिक था, तो किसी पर कोई दावा नहीं है, और यदि वह ऋण के रूप में था, तो वह ज़ैद पर है और खालिद से इसका कोई लेना-देना नहीं है। हाँ, यदि अनुबंध स्वयं ज़ैद और अम्र दोनों के लिए होता, जहाँ विक्रेता कहता "मैंने यह घर तुम दोनों को बेचा" और वे कहते "हमने खरीदा," या यदि अम्र ने ज़ैद को अपनी ओर से अपने घर की खरीद के लिए एजेंट नियुक्त किया होता, तो संपत्ति ज़ैद और अम्र दोनों के बराबर हिस्से में होती, भले ही अम्र ने कीमत में कुछ न दिया हो। अब, केवल ज़ैद द्वारा खालिद के नाम पर किया गया यह हिबा पूरी तरह से अवैध है।

अरबी पाठ

क्योंकि वह केवल अपनी संपत्ति को हिबा करने का अधिकारी है, और उसकी संपत्ति एक अविभाजित हिस्सा (मुशा) है जिसका हिबा मान्य नहीं है। और अम्र की चुप्पी दोनों के लिए हिबा बनाने के लिए पर्याप्त नहीं है क्योंकि मालिक की चुप्पी अनाधिकृत बिक्री में...

उर्दू अनुवाद

क्योंकि वह केवल अपनी संपत्ति को हिबा करने का अधिकारी है, और उसकी संपत्ति एक अविभाजित हिस्सा (मुशा) है जिसका हिबा जायज़ नहीं है। और अम्र की चुप्पी पर्याप्त नहीं है कि दोनों...

1. अल-दुरुल मुख्तार, किताब अल-हिबा, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 2/160।
2. अल-उक़ूद अद-दुरिया फ़ी तनक़ीह अल-फ़तावा अल-हामिदिया, किताब अल-वसाया, अब्दुल गफ्फार कुतुबखाना, कंधार, अफगानिस्तान, 2/33।

पृष्ठ 208/715

لکھا کر اسے سپرد کر دے یہ صریح دلیل ہبہ ہے۔

عربی عبارت

فالهبة ايضاً ينعقد بالتعاطي دل عليه فروع جمة في المذهب وفي الدر المختار اتخذ لولده اولتلميذه ثياباً ثم اراد دفعها لغيره ليس له ذلك مالك يبين وقت الاتخاذ انها عارية 1 اه وفي العقود الدرية في تنقيح الفتاوى الحامدية وفي الذخيرة والتجنيس امرأة اشترى ضيعة لولدها الصغير من مالها وقع الشراء للام لانها لا تملك الشراء للولد وتكون الضيعة للولد لان الام تصير واهبة 2۔

اردو ترجمہ

چنانچہ ہبہ بھی تعاطی (باہمی لین دین) سے منعقد ہو جاتا ہے اس پر مذہب میں واقع کثیر فروع دلالت کرتی ہے، در مختار میں ہے کہ بیٹے یا شاگرد کے لئے کسی نے کپڑے بنائے پھر غیر کو دینے کا ارادہ کیا تو اس کو ایسا کرنے کا اختیار نہیں جب تک کہ بنانے کے وقت یہ وضاحت نہ کر دی ہو کہ یہ کپڑے عاریت ہیں اھ عقود الدریۃ، فتاوی حامدیہ، ذخیرہ اور تجنیس میں ہے کہ ایک عورت نے اپنے مال سے نابالغ بچے کے لئے جائداد خریدی تو شراء ماں کے لئے واقع ہوئی کیونکہ وہ بچے کے لئے خریداری کی مالک نہیں اور وہ جائداد بچے کی ہوگی کیونکہ مال ہبہ کرنے والی بن گئی۔ (ت)

پس اس صورت میں بھی بعد قبضہ خالد کے ملک تام ہوگئی اور ان مکانات میں کسی کا کچھ حق نہ رہا اور زرِ ثمن میں اگر عمرو نے کچھ دیا بھی تو اس کا وہی حال ہے جو اوپر مذکور ہوا یعنی بطورِ تطوع تھا تو کسی پر مطالبہ نہیں اور بطورِ قرض تھا تو وہ زید پر ہے خالد سے کچھ تعلق نہیں، ہاں اگر نفس عقدِ زید و عمرو دونوں کے لئے واقع ہوتا نچلا بائع کہتا میں نے یہ مکان تم دونوں کے ہاتھ بیچے، یہ کہتے ہم نے خریدے، یا عمرو زید کو اپنی طرف سے اپنے مکان کی

خریداری کا وکیل کر دیتا تو البتہ وہ بحصہ مساوی زید و عمرو دونوں کے ملک ہوتے اگرچہ عمرو نے ثمن میں کچھ نہ دیا ہو اور اب یہ ہبہ بنام خالد کہ صرف زید نے کیا محض ناجائز رہتا،

عربی عبارت	اردو ترجمہ
لانه ما يملك الاهبه مبلكه وهو مشاع ولا يكفي سكوت عمرو حتى يجعل هبة لكل لان سكوت المالك يبيع الفضولى	کیونکہ وہ تو صرف اپنی ملک کو ہبہ کرنے کا مالک ہے، اور اس کی ملک جزء غیر منقسم ہے جس کا ہبہ جائز نہیں اور عمرو کا سکوت کافی نہیں کہ دونوں کا

1 در مختار كتاب الهبة مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۱۶۰ 2 العقود الدرية في تنقيح الفتاوى الحامدية كتاب الوصاية عبد الغفار كتبخانہ قندهار افغانستان ۲/ ۳۳

Fatawa Razawiyya Volume (17)

[Boxed Text] Arabic: لا یکون رضا کما فی الاشباہ فکیف بالھبۃ - It should not be made a gift because the silence of the owner at the time of an unauthorized sale (bay' fuzuli) is not considered consent, as stated in 'Al-Ashbah'; so how could it be so in the case of a gift? (T)

Mas'ala 99: From Pilibhit, sent by Maulvi Abdul Wahid Sahib, 4 Jumada al-Ula 1336 AH. What do the scholars of religion and muftis of the clear Shari'ah say regarding this matter: Zaid, while in a state of terminal illness (maraz-ul-maut), sold a property to an heir for charitable purposes. So, did this remain a waqf (endowment) or a sale? In such a situation, can this sale also remain valid for one-third (thulth) in favor of the heir or not? Will this sale be considered a sale or a gift in such a state? Please explain and may you be rewarded.

Al-Jawab (The Answer): Since he has sold it, that contract can neither be a waqf nor a gift; rather, it will be a sale. If it truly occurred during a sickness that is shari'atically considered terminal illness (maraz-ul-maut), then selling to an heir without the permission of other heirs is absolutely impermissible. It cannot be enforced even within one-third, nor for a thousandth part. And Allah Almighty knows best.

Mas'ala 100: From the town of Firozabad, district Agra, questioned by Syed Basharat Ali and Sarfaraz Ali, bangle merchants, 2 Dhu al-Hijjah 1337 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: In these times, the government has established cattle pounds in every city, town, and village. Unclaimed cows, oxen, goats, etc., are admitted into them. They remain in the cattle pound for a maximum of fifteen days so that when the owner of the cattle arrives, they are released after collecting the fine and the cost of fodder. If the owner does not appear by the fixed period, then the regional officer or the concerned authority auctions that animal. Now the question is whether such a sale is permissible or not? Is it permissible to perform sacrifice (qurbani) on Baqra Eid with this kind of cow, ox, etc., purchased from an auction? The second thing is, if another person buys such an animal, whether Hindu or Muslim, and then another person buys it from them and performs sacrifice, is it permissible or not? The person performing the sacrifice knows that it was bought from an auction at the cattle pound. Zaid and Amr, both are Maulvis, say that the sacrifice of such an animal is permissible. Bakr is another Maulvi who says that this animal is under the ruling of a foundling (laqeet), therefore sacrifice of such an animal is also impermissible. Please explain and may you be rewarded.

1 Al-Ashbah wan-Nazair, First Art, Twelfth Rule, Idarat al-Qur'an Karachi, 1/185.

फ़तावा रज़विया जिल्द (17)

[बॉक्स वाला टेक्स्ट] अरबी: لا یکون رضا کما فی الاشباہ فکیف بالھبۃ - इसे हिबा (उपहार) नहीं बनाया जाना चाहिए क्योंकि अनाधिकृत बिक्री (बय फ़ुज़ूली) के समय मालिक की चुप्पी उसकी सहमति नहीं होती जैसा कि 'अल-अश्बाह' में है; तो हिबा में ऐसा कैसे हो सकता है? (त)

मसला 99: पीलीभीत से, मौलवी अब्दुल वाहिद साहिब द्वारा प्रेषित, 4 जमादी-उल-उला 1336 हिजरी। दीन के विद्वान और शरीयत के मुफ़्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं: ज़ैद ने मृत्यु की अवस्था (मरज़-उल-मौत) में एक हक़्क़ियत (संपत्ति) एक वारिस के पक्ष में नेक कामों के लिए बेच दी। तो क्या यह वक़्फ़ रहा या बिक्री? ऐसी स्थिति में क्या यह बिक्री भी एक-तिहाई (थुल्थ) में वारिस के हक़ में रह सकती है या नहीं? ऐसी स्थिति में इस बिक्री को बिक्री माना जाएगा या हिबा? कृपया स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

अल-जवाब (उत्तर): जब उसने बेच दिया है, तो वह अनुबंध न तो वक़्फ़ हो सकता है और न ही हिबा; बल्कि वह बिक्री ही होगी। अगर वाकई वह उसी बीमारी में हुई है जिसे शरीयत के अनुसार 'मरज़-उल-मौत' माना जाता है, तो अन्य वारिसों की अनुमति के बिना वारिस के हाथ बेचना बिल्कुल नाजायज़ है। यह न तो एक-तिहाई में लागू हो सकता है और न ही हज़ारवें हिस्से में। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 100: कस्बा फ़िरोज़ाबाद, ज़िला आगरा से, सैयद बशारत अली और सरफ़राज़ अली, चूड़ी व्यापारियों द्वारा पूछा गया, 2 ज़िल-हिज्जा 1337 हिजरी। दीन के विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं: इस ज़माने में सरकार ने शहर-शहर, कस्बा-कस्बा, गाँव-गाँव मवेशी खाने बना रखे हैं। इसमें लावारिस गाय, बैल, बकरी वगैरह डाली जाती हैं और वे ज़्यादा से ज़्यादा पंद्रह दिन मवेशी खाने में इस वजह से रहती हैं कि जब मवेशी का मालिक आएगा, उस समय ज़ुर्माना और चारे का पैसा वसूल करके छोड़ दिया जाएगा। और जब तयशुदा अवधि तक मालिक नहीं आता, तो परगना का हाकिम या संबंधित अधिकारी उस जानवर को नीलाम कर देता है। अब सवाल यह है कि ऐसी बिक्री जायज़ है या नहीं? इस किस्म की गाय, बैल वगैरह नीलाम से खरीदकर बकरा ईद पर क़ुरबानी करना उस जानवर का जायज़ है या नहीं? दूसरी बात यह है कि अगर ऐसे जानवर को दूसरा व्यक्ति खरीदे, चाहे वह हिंदू हो या मुसलमान, फिर उससे एक और व्यक्ति खरीदकर क़ुरबानी करे तो जायज़ है या नहीं? क़ुरबानी करने वाले को यह पता है कि उसने मवेशी खाने से नीलामी में खरीदा है। ज़ैद और अम्र

दोनों मौलवी हैं, वे दोनों कहते हैं कि ऐसे जानवर की क़ुरबानी जायज़ है। बक्र एक मौलवी है, वह कहता है कि यह जानवर 'लक़ीत' (लावारिस वस्तु) के हुक्म में है, इसलिए ऐसे जानवर की क़ुरबानी भी नाजायज़ है? कृपया स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

---

1 अल-अश्बाह वन-नज़ायर, अल-फ़न्नुल अव्वल, अल-क़ाइदतुत थानिया अशरा, इदारतुल क़ुरान कराची, 1/185.

[Boxed Text] لا یکون رضا کما فی الاشباہ فکیف بالھبۃ - ہبہ بنا دیا جائے کیونکہ فضولی کی بیع کے وقت مالک کا سکوت اس کی رضا نہیں ہوتا جیسا کہ اشباہ میں ہے تو ہبہ میں ایسا کیسے ہو سکتا ہے (ت)

مسئلہ ۹۹: از پیلی بھیت مرسلہ مولوی عبدالواحد صاحب ۴ جمادی الاولی ۱۳۳۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید نے بحالت مرض الموت ایک حقیت بحق وارث بیع کی بہ امورات خیر، تو یہ وقف رہا یا بیع؟ ایسی صورت میں یہ بیع بھی ایک تثلث میں بحق وارث رہ سکتی ہے یا نہیں؟ یہ بیع ایسی حالت میں بیع جانی جائے گی یا ہبہ؟ فقط بینوا توجروا

الجواب: جبکہ بیع کی ہے تو وہ عقد نہ وقف ہو سکتا ہے نہ ہبہ ہو سکتا ہے بلکہ بیع ہی ہوگا اگر واقعی اسی مرض میں ہے جسے شرعاً مرض الموت مانا جائے تو وارث کے ہاتھ بے اجازت دیگر ورثہ مطلقاً ناجائز ہے نہ تثلث میں نافذ ہو سکتی ہے نہ ہزارویں حصے میں، واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۰۰: از قصبہ فیروز آباد ضلع آگرہ مسئولہ سید بشارت علی و سرفراز علی سوداگران چوڑی ۲ ذی الحجہ ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اس زمانے میں گورنمنٹ نے شہر بہ شہر، قصبہ بہ قصبہ، گاؤں گاؤں مویشی خانے مقرر کر رکھے ہیں اس میں لاوارثی گائے بیل بکری وغیرہ داخل کی جاتی ہیں اور وہ زیادہ سے زیادہ پندرہ یوم مویشی خانہ میں اس وجہ سے رہتی ہے کہ جب مالک مویشی آئے گا اس وقت زر جرمانہ و زر خوراک وصول کر کے چھوڑ دیا جائے گا اور جب میعاد مقررہ تک مالک راس نہیں آیا تو اس جانور کو حاکم پرگنہ یا حاکم متعلقہ نیلام کر دیتا ہے، اب سوال یہ ہے کہ ایسی بیع جائز ہے یا نہیں؟ اس قسم کی

گائے بیل وغیرہ نیلام میں سے خرید کر کے بقرہ عید پر قربانی کرنا اس جانور کا جائز ہے یا نہیں؟ دوسری بات یہ ہے کہ اگر ایسے جانور کو دوسرا شخص خریدے خواہ ہندو ہو یا مسلمان پھر اس سے ایک اور شخص خرید کر کے قربانی کرے تو جائز ہے یا نہیں؟ قربانی کرنے والے کو اس کا علم ہے کہ اس نے مویشی خانے میں سے نیلام میں خریدی ہے زید و عمر و دونوں مولوی ہیں یہ دونوں کہتے ہیں کہ ایسے جانور کی قربانی جائز ہے اور بکر ایک مولوی ہے وہ یہ کہتا ہے کہ یہ جانور حکم لقیط میں ہے لہٰذا ایسے جانور کی قربانی بھی ناجائز ہے؟ بینوا توجروا۔

---

1 الاشباہ والنظائر الفن الاول القاعدۃ الثانیہ عشر ادارۃ القرآن کراچی ۱/ ۱۸۵

Fatawa Razawiyya (17)

The Answer: Whatever is sold without the owner's knowledge, that sale remains dependent on the owner's permission. If a hundred sales occur one after another before permission, all will remain dependent on his permission. Before permission, no one will be its owner, nor will its disposal be permissible, nor can its sacrifice be valid. The ruling for lost property (Luqta) is public announcement, then giving it as charity to a poor person, not selling it without announcement. Yes, after notification, whichever sale he validates will become effective, provided that the seller, the buyer, and the item sold are present. It is stated in Fatawa Qazi Khan and Fatawa Alamgiriyyah, etc.:

Arabic Text	Urdu Translation
If a man sells someone else's property, according to us, the sale is suspended upon the owner's permission. For the validity of the permission, it is required that the contracting parties and the subject matter of the contract are extant.	When a person sells someone else's property, according to us, this sale will be dependent on the owner's permission, and the condition for the permission to be valid is that the contracting parties and the subject of the contract are present (T).

Problem 101: From Benares, Mohalla Kachi Bagh, locality Jaitpura, sent by Khalil-ur-Rehman Sahib, 28 Jumada al-Ula 1322 AH. What do the scholars of religion and muftis of the firm Shariah say about this matter according to reliable books? Explain and clarify, may you be rewarded. It should be clear that a person named Hasham, when he fell ill, sold his house to his wife and daughter while in a state of illness. However, it was proven by witnesses that the mentioned buyers did not pay the price in the presence of witnesses. After selling the house, Hasham was not in such a condition that he could get up from his bed to do necessary work. Finally, after twenty-one days, he passed away. After Hasham's death, his daughter also died after one week. Then, after a period of five months, a son was born to Hasham. After the birth of the son, Musammat Jan Bibi, wife of Hasham, fell ill, and in a state of illness, Hasham's wife sold the aforementioned house to a person. Four days after selling the house, Hasham's wife also passed away. That is all. The son of Hasham who was born remained alone, then that boy also died after two months. When everyone died and no one was left except one nephew of Hasham named Yar Muhammad, then between Yar Muhammad and the one to whom Hasham's wife [sold the house]...

1. Fatawa Hindiyya, Kitab al-Buyu', Chapter 13, Nurani Kutub Khana Peshawar, 3/152; Fatawa Qazi Khan, Kitab al-Buyu', Section on Suspended Sale, Naval Kishore Lucknow, 2/351.

फ़तावा रज़विया (17)

उत्तर (अल-जवाब): जो चीज़ मालिक की जानकारी के बिना बेची जाए, वह बिक्री मालिक की अनुमति पर निर्भर रहती है। अनुमति से पहले यदि एक के बाद एक सौ बिक्री भी हो जाए, तो सब उसकी अनुमति पर निर्भर रहेंगी और अनुमति से पहले कोई उसका मालिक नहीं होगा, न उसका उपभोग जायज़ होगा, न उसकी कुर्बानी हो सकेगी। 'लुक़्ता' (खोई हुई वस्तु) का नियम सार्वजनिक घोषणा है, उसके बाद ग़रीब को दान देना है, न कि बिना घोषणा के बेचना। हाँ, सूचना मिलने के बाद वह जिस बिक्री को लागू कर देगा, वह प्रभावी हो जाएगी, बशर्ते कि बेचने वाला, खरीदने वाला और बेची गई वस्तु मौजूद हों। फ़तावा क़ाज़ी खान और फ़तावा आलमगिरी आदि में है:

अरबी मूलपाठ	**उर्दू अनुवाद**
जब कोई व्यक्ति हमारे अनुसार किसी और की संपत्ति बेचता है, तो बिक्री मालिक की अनुमति पर रुकी रहती है। अनुमति की वैधता के लिए यह आवश्यक है कि अनुबंध करने वाले पक्ष और अनुबंध की वस्तु अभी भी अस्तित्व में हों।	जब किसी व्यक्ति ने दूसरे की संपत्ति बेची तो हमारे निकट यह बिक्री मालिक की अनुमति पर निर्भर होगी और अनुमति के सही होने के लिए शर्त है कि अनुबंधकर्ता और जिसके लिए अनुबंध हुआ है (विषय वस्तु) मौजूद हों (T)।

मसला 101: बनारस, मोहल्ला कच्ची बाग, क्षेत्र जैतपुरा से, प्रेषक खलीलुर रहमान साहिब, 28 जमादी-उल-उला 1322 हिजरी। धर्म के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ्ती इस मामले में विश्वसनीय पुस्तकों के अनुसार क्या कहते हैं? वर्णन करें, स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें। स्पष्ट हो कि हशाम नाम का व्यक्ति जब बीमार हुआ, तो बीमारी की स्थिति में उसने अपना घर अपनी पत्नी और बेटी दोनों के हाथ बेच दिया। लेकिन गवाहों से साबित हुआ कि गवाहों के सामने उपरोक्त खरीदारों ने कीमत अदा नहीं की। घर बेचने के बाद हशाम की हालत ऐसी नहीं थी कि वह चारपाई से उठकर ज़रूरी काम कर सके। अंततः इक्कीस दिनों के बाद उनका निधन हो गया। हशाम के निधन के बाद उनकी बेटी की भी एक सप्ताह बाद मृत्यु हो गई। फिर पाँच महीने की अवधि बीतने के बाद हशाम का एक बेटा पैदा हुआ। बेटे के जन्म के बाद हशाम की पत्नी मुसम्मात जान बीबी बीमार हो गई और बीमारी की हालत में हशाम की पत्नी ने उक्त घर एक व्यक्ति के हाथ बेच दिया। घर बेचने के चार दिन बाद हशाम की पत्नी का भी निधन हो गया। बस इतना ही। हशाम का जो बेटा पैदा हुआ था वह अकेला रहा, फिर वह लड़का भी दो महीने बाद मर गया। जब सब लोग मर गए, कोई नहीं बचा सिवाय

हशाम के एक भतीजे के जिनका नाम यार मोहम्मद है, तो यार मोहम्मद और जिसके हाथ हशाम की पत्नी ने [घर बेचा]...

---

1. फ़तावा हिंदिया, किताब अल-बुयू, अध्याय तेरह, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/152; फ़तावा क़ाज़ीखान, किताब अल-बुयू, अनुभाग निलंबित बिक्री, नवल किशोर लखनऊ, 2/351।

الجواب: جو چیز ہے بے اطلاع مالک بیچی جائے وہ بیع اجازت مالک پر موقوف رہتی ہے قبل از اجازت اگر سو بیعیں یکے بعد دیگرے ہوں سب اسی کی اجازت پر موقوف رہیں گی اور قبل اجازت اس میں کوئی اس کا مالک نہ ہوگا نہ اس کا تصرف جائز ہو، نہ اس کی قربانی ہو سکے ، لقطہ کا حکم تشہیر ہے اس کے بعد فقیر پر تصدق نہ کہ بلا تشہیر بیع ، ہاں بعد اطلاع جس بیع کہ وہ نافذ کر دے نافذ ہو جائیگی جبکہ بائع و مشتری و مبیع قائم ہوں، فتاوی قاضی خاں و فتاوی عالمگیریہ وغیرہما میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
اذا باع الرجل مال الغیر عندنا یتوقف البیع علی اجازۃ المالك ویشترط لصحۃ الاجازۃ قیام العاقدین والمقود علیہ۔	جب کسی شخص نے غیر کا مال فروخت کیا تو ہمارے نزدیک یہ بیع مالک کی اجازت پر موقوف ہو گی اور اجازت کے صحیح ہونے کے لئے شرط ہے کہ عاقدین اور معقود علیہ قائم ہوں (ت)

مسئلہ ۱۰۱: از بنارس محلہ کچی باغ علاقہ جیت پورہ مرسلہ خلیل الرحمن صاحب ۲۸ جمادی الاولی ۱۳۲۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں جو کچھ از روئے کتب معتبرہ ہو بیان فرمائیں، بینوا توجروا واضح ہو کہ مسمی حشام جب بیمار ہوئے تو حالت بیماری میں اپنا مکان اپنی زوجہ وا پنی دختر دونوں کے ہاتھ بیع کیا مگر گواہان سے ثابت ہوا کہ زر ثمن رو برو گواہوں کے مشتریاں مذکورہ نے ادا نہیں کیا اور بعد بیع کرنے مکان کے مسمی حشام ایسے نہ ہوئے کہ چار پائی سے اٹھ کر کام ضروری کرتے آخر بعد اکیس یوم کے قضا کر گئے، اور بعد قضا کرنے حشام کے ان کی دختر بھی ایک ہفتہ کے بعد مر گئی، اور پھر گزرنے

مدت پانچ ماہ کے لڑکا حشام کا پیدا ہوا، اور بعد پیدا ہونے بیٹے کے مسماۃ جان بی بی زوجہ حشام بیمار ہوئیں اور بیماری کی حالت میں زوجہ حشام نے مکان مذکور کو ایک شخص کے ہاتھ بیع کیا اور بعد بیع کرنے مکان کے چار روز بعد زوجہ حشام بھی قضا کر گئیں فقط لڑکا حشام کا جو پیدا ہوا تھا وہ تنہا رہا، پھر وہ لڑکا بھی دو مہینے بعد مر گیا ، جب سب لوگ مر گئے کوئی نہ بچا مگر ایک برادر زادہ حشام کے مسمی یار محمد ہیں، تو یار محمد سے اور جس کے ہاتھ زوجہ حشام نے [مکان بیچا]...

---

1. فتاوی ہندیہ کتاب البیوع الباب الثالث عشر نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۱۵۲، فتاوی قاضیخان کتاب البیوع فصل البیع الموقوف نولکشور لکھنو ۲/ ۳۵۱

Fatawa Ridawiyya, Volume 17

A house was sold, leading to a dispute. The buyer claimed to have purchased it, while Yar Muhammad asserted their own right and ownership. In short, when the locals observed the escalating conflict, elders (arbitrators) advised both parties to cease fighting and promised to resolve the matter. The elders convened and learned of the differing accounts: the buyer claimed that Hasham recovered after the sale, while Yar Muhammad, Hasham's nephew, maintained that after the sale, his uncle never rose from his bed and subsequently passed away. The elders decided to consult neighbors residing near the house. Two neighbors, Ilahi Bakhsh and Jan Muhammad, who frequented Hasham's home, were summoned. Their testimonies were recorded as follows:

Testimony of witness Ilahi Bakhsh: Under oath before the elders in the mosque, Ilahi Bakhsh stated: "I used to visit his house occasionally. Hasham's condition was such that he could not move anywhere except his bed. He was so weak that he could not even leave the house for natural calls, performing them inside. He passed away approximately less than a month after the deed of sale was drafted."

Testimony of witness Jan Muhammad: It was stated in the mosque that when Hasham drafted the sale deed, his condition was such that he was bedridden. Due to the severity of his illness, he could not leave the house for using the toilet and would relieve himself indoors. I frequently checked on him; he would even lean over on the same bed to prepare his hookah. He passed away from the same illness in approximately less than a month.

The Answer:

A sale executed in favor of an heir during a terminal illness (maradh al-mawt) falls under the rulings of a will; upon the death of the legator, it is void without the consent of the other heirs. As stated in Fatawa Imam Qazi Khan and others:

[Table Content] Arabic Text: It is among the suspended sales; if a sick person sells a specific item from their estate to one of their heirs during their terminal illness, then if they recover, the sale becomes valid, but if they die from that same illness, it is not permissible. Urdu Text: It is among the suspended sales that when a patient, during their terminal illness, sells a specific item from their property to one of their heirs; now if they recover, the sale will be valid, and if they die from the same illness and their heirs [do not consent]...

फ़तावा रज़विया, खंड 17

एक मकान बेचा गया था, जिस पर विवाद हो गया। खरीदार ने कहा कि हमने इसे खरीदा है और यार मोहम्मद ने कहा कि हमारा अधिकार है और हम मालिक हैं। संक्षेप में, जब पड़ोस के लोगों ने झगड़ा बढ़ता देखा, तो पंचों ने दोनों से कहा कि झगड़ा मत करो, हम तुम्हारा विवाद सुलझा देंगे। पंच एकत्रित हुए और वस्तुस्थिति से अवगत हुए, यानी खरीदार ने कहा कि हशाम मकान बेचने के बाद स्वस्थ हो गए थे, और हशाम के भतीजे यार मोहम्मद ने कहा कि मकान बेचने के बाद उनके चाचा अपनी चारपाई से नहीं उठे और उनका इंतकाल हो गया। इस मामले में पंचों ने मशविरा किया कि जो लोग मकान के करीब रहते हैं उनसे पूछताछ करनी चाहिए। तब दो पड़ोसियों को बुलाया गया जो हशाम के घर आते-जाते रहते थे। वे लोग आए, यानी इलाही बख्श और जान मोहम्मद। दोनों गवाहों से पूछताछ की गई, तो उन्होंने जो गवाही दी, वह दर्ज है:

गवाह इलाही बख्श का बयान: इलाही बख्श ने पंचों के सामने मस्जिद में शपथ लेकर बयान दिया कि मैं समय-समय पर उनके घर जाता था, तो हशाम की हालत ऐसी थी कि वे चारपाई के अलावा कहीं नहीं जा सकते थे। कमजोरी इतनी अधिक थी कि वे अपनी बुनियादी जरूरतों के लिए भी घर से बाहर नहीं जा सकते थे। वे घर के अंदर ही शौच आदि करते थे और बिक्रीनामा लिखने के लगभग एक महीने से भी कम समय में उनका इंतकाल हो गया।

गवाह जान मोहम्मद का बयान: मस्जिद में यह बयान दिया गया कि जब हशाम ने बिक्रीनामा लिखा था, तब उनकी हालत ऐसी थी कि वे चारपाई के अलावा कहीं नहीं जा सकते थे। बीमारी के कारण कमजोरी इतनी थी कि वे शौच के लिए घर से बाहर नहीं जा सकते थे और घर के अंदर ही जरूरतें पूरी करते थे। मैं समय-समय पर उनकी स्थिति देखने जाता रहता था, तो वे उसी चारपाई पर झुककर हुक्का भी भर लिया करते थे। और इसी बीमारी में लगभग एक महीने से भी कम समय में उनका देहांत हो गया।

उत्तर:

जो बिक्री 'मरज़-उल-मौत' (मृत्यु-पूर्व गंभीर बीमारी) में किसी वारिस के नाम की जाए, वह वसीयत के हुक्म में है कि मूरिस (मूल संपत्ति स्वामी) की मृत्यु के बाद, अन्य वारिसों की अनुमति के बिना वह बातिल (अवैध) है। फ़तावा इमाम काज़ी खान आदि में दर्ज है:

[तालिका सामग्री] अरबी पाठ: यह उन बिक्रियों में से है जो रुकी हुई (निलंबित) होती हैं, जब कोई बीमार व्यक्ति मरज़-उल-मौत में अपनी संपत्ति की कोई विशिष्ट वस्तु अपने किसी वारिस को बेचता है, तो यदि वह स्वस्थ हो जाता है, तो बिक्री वैध हो जाती है, और यदि वह उसी बीमारी में मर जाता है, तो यह जायज़ नहीं है। उर्दू पाठ: यह निलंबित बिक्रियों में से है कि जब किसी बीमार ने अपनी मृत्यु-पूर्व बीमारी में अपने माल में से कोई निश्चित चीज़ अपने किसी वारिस को बेची; अब यदि वह स्वस्थ हो गया तो बिक्री जायज़ हो जाएगी और यदि वह इसी बीमारी में मर गया और उसके वारिसों ने (अनुमति नहीं दी)...

مکان بیچ کیا تھا اس سے تنازع ہوئی، مشتری نے کہا کہ ہم نے خریدا ہے اور یار محمد نے کہا کہ ہمارا حق ہوتا ہے ہم مالک ہیں، غرضکہ جب جھگڑا زیادہ اہل محلہ نے دیکھا تب پنچوں نے دونوں سے کہا کہ جھگڑو نہ ہم لوگ تمھارا جھگڑا طے کر دیں گے، پنچ جمع ہوئے، مطلب سے آگاہ ہوئے یعنی مشتری نے کہا کہ حشام بعد بیع کرنے مکان کے تندرست ہو گئے تھے اور یار محمد بھتیجے حشام نے کہا کہ بیع کرنے کے بعد چا اپنی چارپائی سے نہ اٹھے اور فوت ہوئے، اس بات میں پنچوں نے صلاح کیا کہ جو لوگ قریب مکان کے رہتے ہیں ان سے دریافت کرنا چاہئے تب دو آدمی پڑوسی کو بلایا ایسے کہ وہ لوگ حشام کے گھر جاتے رہتے تھے، وہ لوگ آئے یعنی مسمیٰ الہی بخش و مسمیٰ جان محمد، دونوں گواہوں سے پوچھا گیا تو جو گواہوں نے شہادت دی ہے وہ رقم ہوتا ہے فقط

بیان الہی بخش گواہ کا یہ ہے: الہی بخش از روئے حلف بمقابلہ پنچوں کے مسجد میں بیان کیا کہ میں گاہ گاہ ان کے گھر جاتا تھا تو حالت حشام کی ایسی تھی کہ سوائے چارپائی کے کہیں جا نہیں سکتے تھے اور ضعف اس قدر تھا کہ واسطے حاجات ضروری کے مکان سے باہر نہیں جا سکتے تھے مکان کے اندر پاخانہ و پیشاب کرتے تھے اور بیعنامہ لکھنے کے تخمیناً ایک ماہ سے کمتر میں انتقال کر گئے،

بیان جان محمد گواہ کا یہ ہے: مسجد میں بیان کیا گیا کہ حشام نے جب بیعنامہ لکھا تو حالت ان کی یہ تھی کہ سوائے چارپائی کے کہیں جا نہیں سکتے تھے، بیماری میں ضعف اس قدر تھا کہ واسطے پاخانہ و پیشاب کے مکان سے باہر نہیں جا سکتے تھے اندر ہی مکان کے حاجت ادا کرتے

تھے میں گاہ گاہ ان کی حالت کو جاتا رہتا تھا تو اسی چارپائی پر جھک کر حقہ بھی بھر لیتے تھے، اور اسی بیماری میں تخمیناً ایک ماہ سے کمتر میں قضا کر گئے۔

الجواب:

بیع جو مرض الموت میں وارث کے نام کی جائے حکم وصیت میں ہے کہ بعد موت مورث، بے اجازت وارث باطل ہے، فتاویٰ امام قاضی خاں وغیرہ میں ہے:

[جدول] عربی متن: من البيع الموقوف اذا باع المريض في مرض الموت من وارثه عينا من اعيان ماله ان صح جاز بيعه وان مات من ذلك المرض ولم يجز اردو ترجمہ: موقوف بیوع میں سے ہے کہ جب مریض نے مرض موت میں اپنے مال میں سے جو معین چیز اپنے کسی وارث کے ہاتھ فروخت کی اب اگر وہ صحتیاب ہو گیا تو بیع جائز ہو جائے گی اور گر اسی بیماری میں مر گیا اور اس کے وارثوں نے

Fatawa Ridawiyya Volume 17

1. If the heirs do not permit the sale, it will become void. (T)

The time for permission is immediately following the death of the legatee, to the extent that permission from heirs during their lifetime is not valid. As stated in Al-Hidayah:

1. "The permission of heirs during the lifetime [of the owner] is not considered, because it is given before the establishment of the right, as the right is established at the time of death." (T)

And the birth of a boy a few months after Hisham's death proves that at the time of death, this boy was also an heir. If a child is still in the womb, it is clear that neither their own permission can be conceived, nor is it possible for anyone else to give permission on their behalf, except for Allah Almighty and His Messenger (may Allah's glory be exalted and peace and blessings be upon him), who is the guardian or executor over an unborn child...

Note: It is evident that Allah Almighty is the Guardian and Ruler of the entire universe, and through His vicegerency, the authority (Wilayat) of the Radiant Prophet, the Master of the Universe, the Supreme Caliph (may Allah's peace and blessings be upon him) extends over everything. This humble person can prove the authority of the Holy Prophet (may peace and blessings be upon him) over the fetus from the Great Quran and Sahih Hadith. The verse is the Word of Allah Almighty: "The Prophet is closer to the believers than their own selves" (33:6), in which it is commanded that the Messenger of Allah (may peace and blessings be upon him) is the greater Guardian, Ruler, Controller, and possessor of authority over every Muslim than their own life. There is no doubt that a fetus is also a human and certainly not a disbeliever. The Messenger of Allah (may peace and blessings be upon him) says:

1. "Every child is born upon the natural disposition (Fitrah) of Islam." (T)
(Continued on the next page)

2. Fatawa Qadi Khan, Book of Sales, Section on Suspended Sales, Naval Kishore Lucknow, 4/353.

3. Al-Hidayah, Book of Wills, Yusufi Press Lucknow, 4/651.
4. Al-Quran Al-Karim, 33/6.

5. Sahih al-Bukhari, Book of Funerals, Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/181; Sahih Muslim, Book of Decree, Chapter on the Meaning of 'Every child is born on Fitrah', Qadimi Kutub Khana Karachi, 2/336.

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

1. यदि उत्तराधिकारी बिक्री की अनुमति नहीं देते हैं, तो वह शून्य हो जाएगी। (त)

अनुमति का समय मृतक की मृत्यु के तुरंत बाद का है, यहाँ तक कि जीवनकाल में उत्तराधिकारियों की अनुमति मान्य नहीं है। जैसा कि अल-हिदाया में है:

1. "मालिक के जीवनकाल में उत्तराधिकारियों की अनुमति मान्य नहीं है क्योंकि यह अधिकार स्थापित होने से पहले है, क्योंकि अधिकार मृत्यु के समय स्थापित होता है।" (त)

और हिशाम की मृत्यु के कुछ महीने बाद एक लड़के का जन्म होना यह साबित करता है कि मृत्यु के समय यह लड़का भी एक उत्तराधिकारी था। यदि कोई बच्चा अभी भी गर्भ में है, तो यह स्पष्ट है कि न तो उसकी स्वयं की अनुमति की कल्पना की जा सकती है, और न ही उसकी ओर से किसी और के लिए अनुमति देना संभव है, सिवाय अल्लाह सर्वशक्तिमान और उसके रसूल (अल्लाह की महिमा बुलंद हो और उन पर शांति और आशीर्वाद हो) के, जो गर्भस्थ शिशु पर वली (अभिभावक) या वसी (कार्यकारी) हैं...

टिप्पणी: यह स्पष्ट है कि अल्लाह सर्वशक्तिमान पूरे ब्रह्मांड का वली और हाकिम है, और उसकी खिलाफत (प्रतिनिधित्व) के माध्यम से, कायनात के स्वामी, सर्वोच्च खलीफा (अल्लाह की शांति और आशीर्वाद उन पर हो) का अधिकार (विलायत) हर चीज़ पर है। यह विनम्र व्यक्ति कुरान और सही हदीस से भ्रूण पर पवित्र पैगंबर (शांति और आशीर्वाद उन पर हो) के अधिकार को साबित कर सकता है। आयत अल्लाह सर्वशक्तिमान का कथन है: "नबी मोमिनों के लिए उनकी अपनी जान से भी ज़्यादा करीब हैं" (33:6), जिसमें आदेश दिया गया है कि अल्लाह के रसूल (शांति और आशीर्वाद उन पर हो) हर मुसलमान पर उनकी अपनी जान से भी बढ़कर वली, हाकिम, मुख्तार और अधिकार रखने वाले हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि भ्रूण भी एक इंसान है और निश्चित रूप से काफिर नहीं है। अल्लाह के रसूल (शांति और आशीर्वाद उन पर हो) फरमाते हैं:

1. "हर बच्चा इस्लाम की फितरत (प्राकृतिक स्वभाव) पर पैदा होता है।" (त) (अगले पृष्ठ पर जारी)

2. फ़तावा काज़ी ख़ां, किताबुल बुयूअ, फ़स्ल फ़िल बैउल मौक़ूफ़, नवल किशोर लखनऊ, 4/353।

3. अल-हिदाया, किताबुल वसाया, मतबा यूसुफ़ी लखनऊ, 4/651।
4. अल-कुरान अल-करीम, 33/6।
5. सही बुखारी, किताबुल जनाइज़, क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची, 1/181; सही मुस्लिम, किताबुल क़द्र, बाब 'कुल मौलूद यूलद अलल फ़ितराह' का अर्थ, क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची, 2/336।

पृष्ठ 212 का 715

فتاوٰی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

الورثة بطل البیع ۱ - اس بیع کی اجازت بھی نہ دی تو بیع باطل ہو جائے گی۔ (ت)

او وقتِ اجازت متصل موتِ مورث ہے یہاں تک کہ حیات میں اجازتِ ورثہ معتبر نہیں، ہدایہ میں ہے:

لا معتبر باجازتهم في حال حياته لانها قبل ثبوت الحق، اذا الحق يثبت عند الموت ۲ - مریض کی زندگی میں وارثوں کی اجازت معتبر نہیں کیونکہ یہ اجازت ثبوتِ حق سے پہلے ہوئی اس لئے کہ واثوں کا حق تو مریض کی موت کے وقت ثابت ہوگا۔ (ت)

اور موت ہشام سے چند ماہ بعد لڑکا پیدا ہونے سے ثابت ہوا کہ وقتِ موت یہ لڑکا بھی ایک وارث تھا اور اگر بچہ کہ ہنوز پیٹ میں ہو ظاہر ہے کہ نہ تو خود اس کی اجازت متصور نہ اس کی طرف سے کسی کی اجازت ممکن کہ پیٹ کے بچے پر اللہ عزوجل اور رسول جل جلالہ و صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کے سوا کسی ولی یا وصی کا...

عہ: اللہ جل جلالہ کا ولی ووالی جملہ عالم ہونا ظاہر اور اس کی خلافت سے حضور پر نور سید عالم خلیفہ اعظم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی ولایت بھی ہر شیئ پر ہے اور خود جنین پر حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی ولایت فقیر قرآن عظیم وحدیث صحیح سے ثابت کرسکتا ہے، آیت تو قول الٰہی عزوجل النبی "النَّبِيُّ أَوْلَىٰ بِالْمُؤْمِنِينَ مِنْ أَنْفُسِهِمْ" ۳ جس میں ارشاد ہوا کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم ہر مسلمان پر اس کی جان سے زیادہ ولی ووالی و مختار وصاحب تصرف و اقتدار ہیں، اور شک نہیں کہ جنین بھی انسان ہے اور یقینا کافر نہیں، رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

کل مولود یولد علی فطرۃ الاسلام ۴ - ہر بچہ فطرت اسلام پر پیدا ہوتا ہے۔ (ت) (باقی بر صفحہ آئندہ)

۱ فتاوٰی قاضی خاں کتاب البیوع فصل فی البیع الموقوف نولکشور لکھنؤ ۴/ ۳۵۳ ۲ الہدایہ کتاب الوصایہ مطبع یوسفی لکھنؤ ۴/ ۶۵۱ ۳ القرآن الکریم ۳۳/ ۶ ۴ صحیح البخاری کتاب الجنائز قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۱۸۱، صحیح مسلم کتاب القدر باب معنی کل مولود یودل علی الفطرۃ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/ ۳۳۶

Vol 17 Fatawa Razawiyya

Even a judge, or even the father himself does not have guardianship. It is mentioned in 'Walwaljiyyah', then 'Ma'in al-Mufti', then 'Ghamz al-Uyun al-Qawl fil-Milk': "The father has no guardianship over the fetus." [1] | Guardian authority over the fetus is not held by the father. (T)

In the third part, it is from the second: "In 'al-Tabyin', a gift (hiba) to a fetus is not valid because acceptance and possession are among the conditions of a gift, and these are inconceivable from a fetus, nor does anyone have guardianship over it such that they could [accept] on its behalf." | It says in 'Tabyin': A gift is not correct for a fetus because acceptance and possession are part of the conditions for a gift, while this is not imaginable from a fetus, nor does anyone have guardianship over it to act on its behalf.

(Continued from the previous page's footnote) Allah Subhanau wa Ta'ala says: "The nature of Allah according to which He has created mankind." [2] | Allah's nature is that upon which He created people. (T)

According to the Ahl al-Sunnah, there is no intermediary between faith (iman) and disbelief (kufr), so the fetus is definitely a believer. And by the command of the verse, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) is the guardian and master of every believer. This proof comes from the verse, and from the Hadith it is as you have just heard the clarifications of the jurists that the fetus has no [earthly] guardian, and the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: "Allah and His Messenger are the guardians of those who have no guardian." [3] - Narrated by al-Tirmidhi who graded it 'hasan' (fair), and by Ibn Majah from the Commander of the Faithful al-Faruq (may Allah be pleased with him). (12) From him, may he be forgiven. (T) | Whosoever has no guardian, Allah and His Messenger (Jalla wa 'Ala and peace and blessings of Allah be upon him) are their guardian, master, and protector. (Tirmidhi narrated it and graded it 'hasan', and Ibn Majah narrated it from the Commander of the Faithful 'Umar al-Faruq, may Allah be pleased with him). (12) From him, may he be forgiven.

[1] Ghamz Uyun al-Basa'ir with al-Ashbah, Third Art, Discourse on Ownership, Idarat al-Qur'an etc. Karachi, 2/203. [2] Al-Qur'an al-Karim, 30:30. [3] Sunan Ibn Majah, Chapters on Inheritance, Chapter on Distant Relatives, H.M. Saeed Company Karachi, p. 201. Page 213 of 715

जिल्द 17 फतावा रज़विया

यहाँ तक कि न्यायाधीश या स्वयं पिता को भी अभिभावकत्व (विलायत) नहीं है। 'वलवलजिया', फिर 'मुईनुल मुफ्ती', फिर 'गमज़ुल उयून अल-कौल फिल मिल्क' में है: "भ्रूण पर पिता का कोई अभिभावकत्व नहीं है।" [1] | भ्रूण पर पिता को अभिभावकत्व का अधिकार प्राप्त नहीं है। (त)

तीसरे खंड में दूसरे से है: "तबीईन में है: भ्रूण को उपहार (हिबा) देना वैध नहीं है क्योंकि स्वीकारोक्ति और कब्ज़ा उपहार की शर्तों में से हैं, और भ्रूण से इसकी कल्पना नहीं की जा सकती, न ही उस पर किसी को अभिभावकत्व प्राप्त है कि वह उसकी ओर से [इसे स्वीकार करे]।" | तबीईन में है: भ्रूण के लिए उपहार सही नहीं है क्योंकि स्वीकार और कब्ज़ा उपहार की शर्तों में से है, जबकि भ्रूण से यह कल्पनीय नहीं है और न ही उस पर किसी को विलायत (अभिभावकत्व) प्राप्त है कि वह उसकी ओर से कार्य करे।

(पिछले पृष्ठ के पाद-टिप्पणी का शेष भाग) अल्लाह सुब्हानहु व तआला फरमाता है: "अल्लाह की वह फितरत (स्वभाव) जिस पर उसने मनुष्यों को पैदा किया।" [2] | अल्लाह की फितरत वह है जिस पर उसने लोगों को पैदा किया। (त)

अहले सुन्नत के अनुसार, ईमान और कुफ्र के बीच कोई मध्यस्थ नहीं है, इसलिए भ्रूण निश्चित रूप से मोमिन (आस्तिक) है और आयत के हुक्म से अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) हर मोमिन के वली और वाली हैं। यह प्रमाण आयत से प्राप्त हुआ और हदीस से यह कि अभी आपने फुकहा (न्यायविदों) की स्पष्ट व्याख्या सुनी कि भ्रूण का कोई [सांसारिक] वली नहीं है, और अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं: "अल्लाह और उसके रसूल उसका वली है जिसका कोई वली नहीं।" [3] - इसे तिर्मिज़ी ने रिवायत किया और इसे हसन (श्रेष्ठ) करार दिया, और इब्ने माजा ने इसे अमीरुल मोमिनीन फारूक (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से रिवायत किया। (12) उनकी ओर से, अल्लाह उन्हें क्षमा करे। (त) | जिसका कोई वली न हो उसके वली, वाली और मौला अल्लाह और उसके रसूल (जल्ला व अला व सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) हैं। (इसे तिर्मिज़ी ने रिवायत किया और इसे हसन करार दिया और इब्ने माजा ने इसे अमीरुल मोमिनीन उमर फारूक रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया)। (12) उनकी ओर से, अल्लाह उन्हें क्षमा करे।

[1] गमज़ुल उयूनुल बसायर मा अल-अशबाह, तीसरा फन, अल-कौल फिल मिल्क, इदारातुल कुरआन आदि कराची, 2/203. [2] अल-कुरआन अल-करीम, 30/30. [3] सुनन इब्ने माजा, अबवाबुल फरायज़, बाब ज़विल अरहाम, एच.एम. सईद कंपनी कराची, पृ. 201. पेज 213 of 715

یا حاکم یہاں تک کہ خود باپ کو بھی ولایت نہیں۔ ولو الجیہ پھر معین المفتی پھر غمز العیون القول فی الملک میں ہے: لاولایۃ للاب علی الجنین -۱ | جنین پر باپ کی ولایت حاصل نہیں۔ (ت)

ثالث میں ثانی سے ہے: وفی التبیین ولا تصح الھبۃ للحمل لان الھبۃ من شرطھا القبول والقبض ولایتصور ذلک من الجنین ولا یلی علیہ احد حتی | تبیین میں ہے: حمل کے لئے ہبہ درست نہیں کیونکہ قبول و قبضہ ہبہ کی شرائط میں سے ہے جبکہ جنین سے یہ متصور نہیں اور نہ ہی اس پر کسی کو ولایت حاصل ہے کہ وہ اس کی طرف سے

(بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ) اللہ سبحانہ وتعالٰی فرماتا ہے: "فِطْرَتَ اللهِ الَّتِیْ فَطَرَ النَّاسَ عَلَیْھَا" ۲ | اللہ کی فطرت وہ ہے جس پر اس نے لوگوں کو پیدا فرمایا۔ (ت)

اہلسنت کے نزدیک ایمان و کفر میں واسطہ نہیں تو جنین ضرور مومن ہے اور بحکم آیت رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم ہر مومن کے ولی و والی ہیں، یہ ثبوت آیت سے ہوا اور حدیث سے یہ کہ ابھی فقہائے کرام کی تصریحیں سن چکے کہ جنین کا کوئی ولی نہیں، اور رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم فرماتے ہیں: اللہ ورسولہ مولی من لا مولی لہ ۳ ۔ رواہ الترمذی وحسنہ وابن ماجۃ عن امیر المومنین الفاروق رضی اللہ تعالی عنہ ۱۲ منہ غفر لہ (ت) | جس کا کوئی ولی نہ ہو اس کے ولی و والی و مولی اللہ و رسول ہیں جل وعلا و صلی اللہ تعالی علیہ وسلم (اسے ترمذی نے روایت کیا اور اسے حسن قرار دیا اور ابن ماجہ نے اسے امیر المومنین عمر فاروق رضی اللہ تعالی عنہ سے روایت کیا ت) ۱۲منہ غفر لہ

١ غمز عیون البصائر مع الاشباہ الفن الثالث القول فی الملک ادارۃ القرآن الخ کراچی ۲/ ۲۰۳ ۲

القرآن الکریم ۳۰ / ۳۰ ۳ سنن ابن ماجہ ابواب الفرائض باب ذوی الارحام ایچ ایم سعید کمپنی کراچی

ص ۲۰۱ Page 213 of 715

Fatawa Ridawiyya (17) Volume Seventeen (17)

[Arabic Quote:] "...take possession for him, thus it became like a sale. I say: Indeed, the author (may Allah Exalted have mercy on him) has pointed out that no one has guardianship over the fetus at all, and by this, the error of one who issued a fatwa that a guardian (wasi) has the right to dispose of the property set aside for a pregnancy has been exposed." [Urdu Text:] ...take possession, thus it became like a sale. I say that the author (may mercy be upon him) has clarified this point that indeed no person has any kind of guardianship whatsoever over a fetus. Therefore, the error of that person who gave the fatwa that a guardian is the owner of disposing of property kept for a pregnancy has become evident. (T)

In 'Uqud ad-Durriya' it is cited from 'Manh al-Ghaffar': [Arabic Quote:] "There is no guardianship for a father over a fetus, let alone for a guardian (wasi), due to Az-Zayla'i's statement: 'And he has no authority over the pregnancy' End." [Urdu Text:] When a father does not have guardianship over the fetus, how can a guardian have it? This is due to the statement of Az-Zayla'i that he does not have authority over the pregnancy. End. (T)

And any contract which, at the time it requires permission, has no one present to grant that permission, is absolutely void; even if a suitable permitter appears later and grants permission, it cannot become valid. It is stated in 'Durr-ul-Mukhtar': [Arabic Quote:] "That for which there is no authorized person at the time of the contract does not conclude at all. An explanation of this is: a minor child sold something, for example, then reached puberty before his guardian's permission and authorized it himself; it is valid because he had a guardian who could authorize it at the time of the contract. This is contrary to if he divorced, for example, then reached puberty and authorized it himself; it would not be valid because at the time of the contract there was no one to authorize it, so it is void." [Urdu Text:] A sale for which there is no one to give permission at the time of the contract is not established at all. Its explanation is that a minor child made a sale, then reached puberty before the guardian's permission and authorized it himself; then the sale became valid because at the time of the contract, his guardian was present who could have given permission for the sale. This is unlike his giving a divorce in the age of minority and then, after reaching puberty, authorizing it himself; this divorce would not be valid because at the time of the contract there was no one to grant permission, hence it was void. (T)

So it appeared that in the inquired case, the dispute between Yar Muhammad and the buyer as to whether Hisham made that sale while in health or during terminal illness (Marad-ul-Mawt)...

1. Ghamz 'Uyun al-Basa'ir with al-Ashbah, Third Art, The Statement on Ownership, Idarat al-Qur'an etc. Karachi 4/203
2. Al-'Uqud ad-Durriya fi Tanqih al-Fatawa al-Hamidiyya, Book of Wills, Chapter on the Guardian, Arg Bazar Kandahar Afghanistan 2/330
3. Durr-ul-Mukhtar, Book of Sales, Section on the Unauthorized Agent, Majtabai Press Delhi 2/31

[अरबी उद्धरण:] "...उसके लिए कब्ज़ा ले, तो वह बिक्री की तरह हो गया। मैं कहता हूँ: निःसंदेह, लेखक (अल्लाह उन पर दया करे) ने यह स्पष्ट कर दिया है कि किसी का भी गर्भस्थ शिशु (जनीन) पर कोई विलायत (संरक्षण) बिल्कुल नहीं है, और इससे उस व्यक्ति की गलती उजागर हो गई जिसने यह फतवा दिया कि वसी (संरक्षक) गर्भ के लिए रखी गई संपत्ति में निपटान करने का अधिकार रखता है।" [उर्दू पाठ:] ...कब्ज़ा करे, अतः यह बिक्री की तरह हो गया। मैं कहता हूँ कि मुसन्निफ़ (लेखक) अलैहिर्रहमा ने इस बात का लाभ दिया कि निःसंदेह जनीन पर किसी को किसी प्रकार की विलायत बिल्कुल प्राप्त नहीं है, तो इससे उस व्यक्ति की गलती प्रकट हो गई जिसने यह फतवा दिया कि गर्भ के लिए रखे हुए माल में वसी तसर्रुफ़ (निपटान) करने का मालिक है। (त)

'उक़ूद अद-दुर्रिया' में 'मन्ह अल-ग़फ़्फ़ार' से उद्धृत है: [अरबी उद्धरण:] "पिता को गर्भ पर कोई विलायत प्राप्त नहीं है, तो वसी को कैसे हो सकती है? अज़-ज़ैलई के इस कथन के कारण: 'और वह गर्भ पर विलायत नहीं रखता।' अंत।" [उर्दू पाठ:] बाप को जनीन पर विलायत प्राप्त नहीं तो वसी को कैसे प्राप्त हो सकती है? अज़-ज़ैलई के इस कथन के कारण कि उसे गर्भ पर विलायत नहीं है। अंत (त)

और जो अनुबंध (अक़्द) जिस समय अनुमति का मोहताज हो और उस समय उसकी अनुमति देने वाला कोई न हो, वह पूर्णतः बातिल (अमान्य) होता है, चाहे बाद में कोई वैध अनुमति देने वाला उत्पन्न होकर अनुमति दे भी दे, तब भी वह मान्य नहीं हो सकता। 'दुर्र-ए-मुख़्तार' में है: [अरबी उद्धरण:] "जिस अनुबंध के लिए अनुबंध के समय कोई अनुमति देने वाला न हो, वह मूल रूप से संपन्न नहीं होता। इसका विवरण यह है: उदाहरण के लिए, एक नाबालिग ने बिक्री की, फिर अपने वली (अभिभावक) की अनुमति से पहले वयस्क हो गया और उसने स्वयं इसकी अनुमति दे दी, तो यह मान्य है क्योंकि अनुबंध के समय उसकी अनुमति देने वाला उसका वली मौजूद था जो बिक्री की अनुमति दे सकता था। इसके विपरीत, यदि उसने उदाहरण के लिए तलाक दिया और फिर वयस्क होकर स्वयं इसकी अनुमति दी, तो यह मान्य नहीं होगा क्योंकि अनुबंध के समय इसकी अनुमति देने वाला कोई नहीं था, इसलिए वह बातिल है।" [उर्दू पाठ:] जिस बिक्री का अनुबंध के समय कोई अनुमति देने वाला न हो, वह मूल रूप से संपन्न नहीं होता। इसका विवरण यह है कि एक नाबालिग बच्चे ने बिक्री की, फिर वली की अनुमति से पहले वयस्क हो गया और स्वयं उसकी अनुमति दे दी तो बिक्री जायज़ हो गई, क्योंकि अनुबंध के समय इस बिक्री की अनुमति देने वाला उसका वली मौजूद

था जो बिक्री की अनुमति दे सकता था। इसके विपरीत यह कि उसने नाबालिग की आयु में तलाक दिया, फिर बालिग होकर स्वयं उसकी अनुमति दी तो यह तलाक जायज़ न होगा क्योंकि अनुबंध के समय इसका कोई अनुमति देने वाला न था, अतः यह बातिल हो गया। (त)

तो स्पष्ट हुआ कि प्रश्नगत मामले में यार मोहम्मद और खरीदार के बीच यह विवाद कि हिशाम ने वह बिक्री स्वास्थ्य की स्थिति में की या मरज़-उल-मौत (मृत्यु-पूर्व रोग) में...

1. ग़मज़ उयून अल-बसायर मअ अल-अशबाह, तीसरा फन, मिल्क (स्वामित्व) के बारे में चर्चा, इदारातुल कुरआन आदि कराची 4/203
2. अल-उक़ूद अद-दुर्रिया फ़ी तन्क़ीह अल-फ़तावा अल-हामिदिया, वसीयतों की किताब, वसी का अध्याय, अर्ग बाज़ार कंधार अफ़गानिस्तान 2/330
3. दुर्र-ए-मुख़्तार, बिक्री की किताब, फ़ुज़ूली (अनधिकृत एजेंट) का खंड, मत्मा मज्तबाई देहली 2/31

يقبض عنه فصار كالبيع قلت فقد افاد رحمه الله تعالى انه لاولاية لاحد على الجنين اصلا و به ظهر خطأ من افتى ان الوصى يملك التصرف في المال الموقوف للحمل ۔ ۱ قبضہ کرے چنانچہ یہ بیع کی طرح ہو گیا، میں کہتا ہوں کہ مصنف علیہ الرحمہ نے اس بات کا فائدہ دیا کہ بیشک جنین پر کسی کو کسی قسم کی ولایت بالکل حاصل نہیں تو اس سے اس شخص کی غلطی ظاہر ہو گئی جس نے یہ فتوی دیا کہ حمل کے لئے رکھے ہوئے مال میں وصی تصرف کرنے کا مالک ہے۔ (ت)

عقود الدرریہ میں منح الغفار سے ہے: لاولاية للاب على الجنين فضلا عن الوصى لقول الزيلعي ولايلى على الحمل اھ ۔ ۲ باپ کو جنین پر ولایت حاصل نہیں تو وصی کو کیسے حاصل ہو سکتی ہے بسبب زیلعی کے قول کے کہ اس کو حمل پر ولایت نہیں اھ (ت)

اور جو عقد جس وقت محتاج اجازت ہو اور اس وقت اس کا اجازت دینے والا کوئی نہ ہو وہ باطل محض ہوتا ہے کہ پھر آئندہ کوئی صالح اجازت پیدا ہو کر اجازت بھی دے تو جائز نہیں ہو سکتا، در مختار میں ہے: ما لا مجيز له حالة العقد لا ينعقد اصلا بيانه صبى باع مثلا ثم بلغ قبل اجازة وليه فاجازه بنفسه جاز لان له وليا يجيزه حالة العقد بخلاف ما لو طلق مثلا ثم بلغ فاجازه بنفسه لم يجز لانه وقت العقد لا مجيز له فيبطل ۔ ۳ جس بیع کا بوقت عقد کوئی اجازت دینے والا نہ ہو وہ اصلا منعقد نہیں ہوتا اس کا بیان یہ ہے کہ نابالغ بچے نے بیع کی پھر ولی کی اجازت سے قبل بالغ ہو گیا اور بذات خود اس کی اجازت دے دی تو بیع جائز ہو گئی کیونکہ بوقت عقد اس بیع کی اجازت دینے والا اس کا ولی موجود تھا جو بیع کی اجازت دے سکتا تھا، بخلاف اس کے کہ اس نے نابالغی کی عمر میں طلاق دی پھر بالغ ہو کر بذات خود اس کی اجازت دی تو یہ طلاق جائز نہ ہو گی کیونکہ بوقت عقد اس کا کوئی اجازت دہندہ نہ تھا لہٰذا یہ باطل ہو گئی (ت)

تو ظاہر ہوا کہ صورت مستفسرہ میں یار محمد مو مشتری کا اختلاف کہ ہشام نے وہ بیع صحت میں کی یا مرض الموت

۱ غمز عیون البصائر مع الاشباہ الفن الثالث القول في الملك ادارة القرآن الخ کراچی ۴/ ۲۰۳ ۲ العقود الدرية في تنقيح الفتاوى الحامدية كتاب الوصايا باب الوصي ارگ بازار قندهار افغانستان ۲/ ۳۳۰ ۳ درمختار کتاب البیوع فصل في الفضولی مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۳۱

Fatawa Razawiyya Volume 17

In reality, there is a dispute regarding the formation and invalidity of this sale. The buyer claims that the sale was legally formed, while Yar Muhammad says it was not formed but is purely void and non-existent. When a dispute occurs regarding the invalidity and formation of a sale, the statement on oath of the person claiming invalidity is reliable. It is stated in Al-Ashbah wa al-Naza'ir and Dur al-Mukhtar:

[Arabic]: If the two parties to a sale disagree on validity and invalidity, the word is for the one claiming invalidity. If they disagree on validity and corruption (fasad), the word is for the one claiming validity, except in the matter of iqala (cancellation of sale). [Urdu]: If a dispute arises between the seller and buyer regarding the validity or invalidity of the sale, the statement of the person claiming invalidity will be credible. If the dispute is between validity and corruption, then the statement of the person claiming validity will be credible, except in the case of iqala. (T)

Similarly, when there is a dispute regarding health or illness—whether the deceased made this contract with an heir or made such an admission for them during their illness or while healthy—the statement of the person who says it occurred during illness is credible. It is stated in Radd al-Muhtar:

[Arabic]: If someone makes an admission for an heir and then dies, and the beneficiary (muqarr lahu) says he admitted it while healthy, and the rest of the heirs say it was during his illness, the word is that of the heirs. The burden of proof (bayyina) is on the beneficiary. If he provides no proof and wants to take an oath from them, he has that right. [Urdu]: If someone made a declaration in favor of one of their heirs for something and then died, and now the beneficiary (the one for whom the declaration was made) says that this declaration was made in a state of health, while the other heirs say that he made this declaration during terminal illness (marad al-mawt), then the statement of the other heirs will be credible. It is the responsibility of the beneficiary to present witnesses. If he does not present witnesses and wants to take an oath from the other heirs, he has the right to do so. (T)

In the same book, it is stated:

[Arabic]: In Al-Atqrawi: Some heirs claimed that the deceased gifted them a specific item and they took possession of it while he was healthy, and [the others] said... [Urdu]: In Anqrawi: Some heir claimed that the deceased gifted him a specific thing

of his, and in the state of health of the deceased, that heir [took possession of] the gifted item...

---

1. Dur al-Mukhtar, Book of Sales, Chapter on Iqala, Mujtabai Press Delhi, 2/34; Al-Ashbah wa al-Naza'ir, Second Art, Book of Sales, Idarat al-Qur'an wal-Ulum al-Islamiyya, Karachi, 1/326.
2. Radd al-Muhtar, Book of Testimonies, Chapter on Acceptance and Rejection, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/387. Page 215 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

वास्तव में, इस बिक्री के गठन (इनक़ाद) और अमान्यता (बतलान) के संबंध में विवाद है। खरीदार का दावा है कि वह बिक्री कानूनी रूप से संपन्न हुई थी, और यार मोहम्मद का कहना है कि यह संपन्न नहीं हुई थी, बल्कि पूरी तरह से शून्य और अस्तित्वहीन है। जब बिक्री की अमान्यता और गठन में विवाद हो, तो शपथ पर उसका बयान विश्वसनीय होता है जो अमान्यता का दावा कर रहा हो। 'अशबाह व अन-नज़ैर' और 'दुरुल मुख्तार' में है:

[अरबी]: यदि बिक्री के दो पक्ष वैधता और अमान्यता पर असहमत हों, तो शब्द अमान्यता का दावा करने वाले का होता है। और वैधता और बिगाड़ (फ़साद) में, शब्द वैधता का दावा करने वाले का होता है, सिवाय 'इकाला' के मामले में। [उर्दू]: विक्रेता और खरीदार के बीच बिक्री की वैधता या अमान्यता के बारे में विवाद होने पर, अमान्यता का दावा करने वाले का बयान विश्वसनीय होगा। और यदि विवाद वैधता और बिगाड़ के बीच हो, तो वैधता का दावा करने वाले का बयान विश्वसनीय होगा, सिवाय 'इकाला' के। (त)

इसी तरह, जब स्वास्थ्य या बीमारी के संबंध में विवाद हो कि मृतक ने किसी उत्तराधिकारी के साथ यह अनुबंध किया या उनके लिए अपनी बीमारी के दौरान या स्वस्थ रहते हुए ऐसा कोई इकरार (स्वीकृति) किया, तो उसका बयान विश्वसनीय है जो कहता है कि यह बीमारी के दौरान हुआ था। 'रद्दुल मुख्तार' में है:

[अरबी]: यदि कोई उत्तराधिकारी के लिए कुछ स्वीकार करता है और फिर मर जाता है, और लाभार्थी कहता है कि उसने अपने स्वास्थ्य के दौरान स्वीकार किया था, और बाकी वारिस कहते हैं कि यह उसकी बीमारी के दौरान था, तो शब्द वारिसों का होगा। सबूत (बय्यिना) का भार लाभार्थी पर है। यदि वह कोई सबूत नहीं देता है और उनसे शपथ लेना चाहता है, तो उसे इसका अधिकार है। [उर्दू]: यदि किसी ने अपने किसी वारिस (उत्तराधिकारी) के पक्ष में किसी चीज़ का इकरार किया और फिर मर गया, अब मुक़र लहु (जिसके लिए इकरार किया गया) कहता है कि यह इकरार उसने स्वास्थ्य की स्थिति में किया था, जबकि अन्य वारिस कहते हैं कि उसने यह इकरार 'मरज़-उल-मौत' (मृत्यु शैय्या पर) में किया था, तो अन्य वारिसों का बयान विश्वसनीय होगा। गवाह पेश करना लाभार्थी की जिम्मेदारी है। यदि वह गवाह पेश नहीं करता है और अन्य वारिसों से शपथ लेना चाहता है, तो उसे ऐसा करने का अधिकार है। (त)

उसी में है:

[अरबी]: 'अल-अतक़रवी' में: कुछ वारिसों ने दावा किया कि मृतक ने उन्हें एक विशिष्ट वस्तु उपहार में दी थी और उन्होंने उसके स्वस्थ रहने के दौरान उस पर कब्ज़ा कर लिया था, और [दूसरों ने] कहा... [उर्दू]: 'अनक़रवी' में है: किसी वारिस ने दावा किया कि मृतक ने उसे अपनी कोई विशिष्ट चीज़ हिबा (उपहार) की थी और मृतक के स्वास्थ्य की स्थिति में उस वारिस ने उपहार में दी गई चीज़ [पर कब्ज़ा कर लिया]...

---

1. 'दुरुल मुख्तार', किताबुल बुयूअ, बाबुल इक़ाला, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 2/34; 'अशबाह व अन-नज़ैर', अल-फ़न अल-सानी, किताबुल बुयूअ, इदारातुल कुरआन वल उलूमुल इस्लामिया कराची, 1/326।
2. 'रद्दुल मुख्तार', किताबुश शहादात, बाबु कूबूल व अदमहू, दार इह्या अत-तुरास अल-अरबी बैरूत, 4/387। पेज 215/715

میں در حقیقت اس بیع کی انعقاد و بطلان میں اختلاف ہے مشتری مدعی ہے کہ وہ بیع شرعاً منعقد ہے اور یار محمد کہتا ہے منعقد نہیں بلکہ محض باطل و کالعدم ہے اور جب بیع کے بطلان وانعقاد میں اختلاف واقع ہو تو قول اس کا بحلف معتبر ہے جو قائل بطلان ہو، اشباہ والنظائر و درالمختار میں ہے:

اختلف المتبایعان في الصحة والبطلان فالقول للمدعی البطلان وفي الصحة والفساد لمدعی الصحة الا في مسئلة في اقالة - بائع اور مشتری کا بیع کی صحت وبطلان میں اختلاف واقع ہو تو بطلان کا دعوی کرنے والے کا قول معتبر ہوگا اور اگر صحت و فساد میں اختلاف ہو تو صحت کا دعوی کرنے والا کا قول معتبر ہوگا سوائے اقالہ کے (ت)

اسی طرح جب صحت مرض میں اختلاف ہو کہ مورث نے یہ عقد وارث کے ساتھ یا اس کے لئے فلاں اقرار اپنے مرض میں کیا یا صحت میں، تو قول اس کا معتبر ہے جو مرض میں ہونا بتاتا ہے۔ ردالمختار میں ہے:

لو اقر لوارث ثم مات فقال المقر له اقر في صحته و قال بقیة الورثة في مرضه فالقول قول الورثة والبینة للمقر له وان لم یقم بینة واراد استخلافهم له ذلك۔ اگر کسی نے اپنے کسی وارث کے لئے کسی شے کا اقرار کیا پھر مرگیا اب مقر لہ (جس کے لئے اقرار کیا گیا) کہتا ہے کہ یہ اقرار اس نے حالت صحت میں کیا جبکہ دیگر ورثاء کہتے ہیں کہ اس نے یہ اقرار مرض الموت میں کیا تو دیگر وارثوں کا قول معتبر ہوگا اور گواہ پیش کرنا مقر لہ کے ذمے ہے اگر وہ گواہ پیش نہ کرے اور دیگر وارثوں سے قسم لینا چاہے تو اس کو ایسا کرنے کا حق ہے۔ (ت)

اسی میں ہے:

فی الاتقروی ادعی بعض الورثة ان المورث وھبه شیئاً معیناً وقبضه فی صحته وقالت انقروی میں ہے کسی وارث نے دعوی کیا کہ مورث نے اپنی کوئی معین شے اس کو ہبہ کی اور مورث کی حالت صحت میں اس وارث نے موہوب شیئ

---

1 در مختار کتاب البیوع باب الاقالة مطبع مجتبائی دہلی ۳۴/۲، اشباہ والنظائر الفن الثانی کتاب البیوع ادارة القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۳۲۶/۱ 2 رد المحتار کتاب الشهادات باب القبول وعدمه داراحیاء التراث العربی بیروت ۳۸۷/۴ صفحہ 215 از 715

Volume 17 - Fatawa Razawiya

[Arabic Box]: Al-baqiyyatu kaana fil maradi fal qawlu lahum wa in aqamul bayyinata 'ala qabdihi lima da'is-sihhati - 1. [Urdu Translation in Box]: ...had taken possession, while the other heirs say that all this happened during death-illness (marz-ul-maut), then the statement of the remaining heirs will be reliable, and if they present witnesses, then those witnesses will be reliable who claim the state of health. (T)

Therefore, in the case presented in the question, Yar Muhammad did not need witnesses; rather, witnesses should be requested from the buyer. If he proves through just, trustworthy, and pious witnesses that Hisham made this sale during his health or that he became healthy after this sale, or if he cannot provide witnesses and wants Yar Muhammad to take an oath, and Yar Muhammad refuses to take the oath before the arbiters, then in both these cases it will be proven that the sale Hisham made to his wife and daughter was certainly valid and effective. The women became the independent owners of this house. If there was no detail of shares in the sale, then both became owners of half each. Then when the daughter died and her brother was born within six months of her death, it became clear that he is also an heir to the sister. Now that Hisham's wife sold the entire house to the buyer during her illness, if this buyer is not an heir to the seller, then the sale became valid to the extent that was the property of the said wife, i.e., half of the house which became her property through the sale from Hisham. From the other half, which was the property of the daughter, one-third [was valid] as there was no requirement for [more than] one-third. The remaining two-thirds of that half, i.e., one-third of the total house, became the right of the newly born brother. If there was no other heir of the said mother and brother besides the daughter, and then when the boy died and had no heir other than Yar Muhammad, then that one-third became the property of Yar Muhammad; give it back to him in that amount. If the buyer could not provide witnesses or the religiously just witnesses were not acceptable, and Yar Muhammad, at the request of the buyer, took an oath before the arbiters that Hisham made this sale during his death-illness, then in this case the sale became void. Then, after Hisham's death, if his heirs are only this wife, son, and daughter, the woman's share is one-eighth, and from the daughter's 2/4 shares, under the mentioned condition, one-third, i.e., 7/21, then went to Hisham's wife. So at the time of sale, Hisham's wife was the owner of only 2/16 i.e., 2/9 parts. The sale can only remain valid to that extent. The buyer should return the remaining house under the mentioned

condition, i.e., 7 out of 9 parts of the house, to Yar Muhammad. And Allah Almighty knows best.

1 Radd al-Muhtar, Kitab al-Shahadat, Bab al-Qabul wa Adamuhu, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/387. Page 216 of 715

जिल्द सत्रहवीं (17) - फ़तावा रज़विया

[अरबी बॉक्स]: البقية كان فى المرض فالقول لهم وان اقاموا البينة على قبضه لمادعي الصحة। - १ [बॉक्स में उर्दू अनुवाद]: ...क़ब्ज़ा कर लिया था जबकि बाक़ी वारिस कहते हैं कि यह सब कुछ मरज़-उल-मौत (मृत्यु-रोग) में हुआ, तो बाक़ी वारिसों का बयान विश्वसनीय होगा, और अगर वे गवाह पेश करें तो गवाह उनके विश्वसनीय होंगे जो स्वास्थ्य की स्थिति का दावा करने वाला है। (त)

अतः प्रश्न की स्थिति में यार मुहम्मद को गवाहों की आवश्यकता नहीं थी, बल्कि खरीदार से गवाह मांगे जाने चाहिए। अगर वह न्यायप्रिय, विश्वसनीय और धर्मनिष्ठ गवाहों के माध्यम से सिद्ध कर दे कि हिशाम ने यह बिक्री अपने स्वास्थ्य के दौरान की थी या इस बिक्री के बाद वह स्वस्थ हो गया था, या यदि वह गवाह नहीं दे पाता है और यार मुहम्मद से शपथ चाहता है, और यार मुहम्मद पंचों के सामने शपथ लेने से इनकार कर देता है, तो इन दोनों स्थितियों में यह सिद्ध हो जाएगा कि हिशाम ने अपनी पत्नी और बेटी को जो बिक्री की थी वह निश्चित रूप से वैध और प्रभावी थी। महिलाएँ इस मकान की पूर्ण स्वामी बन गईं, और यदि बिक्री में हिस्सों का विवरण नहीं था, तो दोनों आधे-आधे की मालकिन बनीं। फिर जब बेटी का निधन हो गया और उसकी मृत्यु के छह महीने के भीतर उसका भाई पैदा हुआ, तो स्पष्ट हुआ कि वह भी बहन का वारिस है। अब जबकि हिशाम की पत्नी ने अपनी बीमारी के दौरान पूरा मकान खरीदार को बेच दिया, यदि यह खरीदार विक्रेता का वारिस नहीं है, तो बिक्री उस हिस्से में वैध हो गई जो उक्त पत्नी की संपत्ति थी, यानी आधा मकान जो हिशाम से बिक्री के माध्यम से उसकी संपत्ति बना था। और अन्य आधे से जो बेटी की संपत्ति थी, एक-तिहाई [वैध हुआ] क्योंकि इसके लिए कोई और आवश्यकता नहीं थी। आधे का शेष दो-तिहाई, यानी पूरे मकान का एक-तिहाई हिस्सा, नवजात भाई का अधिकार बन गया। यदि उक्त माँ और भाई के अलावा बेटी का कोई और वारिस न हो, फिर जब लड़का मर गया और यार मुहम्मद के अलावा उसका कोई वारिस नहीं था, तो वह एक-तिहाई यार मुहम्मद का हुआ; उसे उतनी मात्रा में वापस दे दें। और यदि खरीदार गवाह नहीं दे सका या धार्मिक रूप से न्यायप्रिय गवाह स्वीकार्य नहीं थे और यार मुहम्मद ने खरीदार के अनुरोध पर पंचों के सामने शपथ ली कि हिशाम ने यह बिक्री अपने मरज़-उल-मौत (अंतिम बीमारी) में की थी, तो उस स्थिति में वह बिक्री शून्य हो गई। फिर, हिशाम की मृत्यु के बाद, यदि उसके वारिस केवल यही पत्नी, पुत्र और पुत्री हैं, तो पत्नी का हिस्सा आठवां (1/8) है और पुत्री के2/4 हिस्सों में से उल्लिखित शर्त के तहत एक-तिहाई, यानी 7/21, फिर हिशाम की पत्नी के पास चला गया। तो बिक्री के समय हिशाम की पत्नी केवल 2/16 यानी 2/9 की मालकिन थी। बिक्री केवल उसी हद तक

कायम रह सकती है। खरीदार बाकी मकान को उल्लिखित शर्त के तहत, यानी मकान के9 हिस्सों में से 7 हिस्से, यार मुहम्मद को वापस कर दे। वल्लाहु तआला आलम (और अल्लाह तआला बेहतर जानता है)।

1 रद अल-मुह्तार, किताबुश-शहादत, बाबुल्-क़बूल व अदमुहु, दार इहयाइत्-तुरास अल-अरबी, बेरूत, 4/387. पेज 216/715

البقیة کان فی المرض فالقول لھم وان اقاموا البینة علی قبضه لمادعي الصحة - ۱ پر قبضہ کرلیا تھا جبکہ باقی ورثاء کہتے ہیں کہ یہ سب کچھ مرض الموت میں ہوا تو باقی وارثوں کا قول معتبر ہوگا اور اگر وہ گواہ پیش کریں تو گواہ اس کے معتبر ہوں گے جو حالت صحت کا دعوٰی کرنیوالا ہے۔ (ت)

پس صورت سوال میں یار محمد کو حاجت گواہان نہ تھی بلکہ مشتری سے گواہ لئے جائیں اگر وہ گواہان عادلہ ثقہ متقی سے ثابت کردے کہ یہ بیع ہشام نے اپنی تندرستی میں کی یا اس بیع کے بعد وہ تندرست ہوگیا تھا، یا وہ گواہ نہ دے سکے اور یار محمد سے قسم چاہے، اور یار محمد پنچوں کے سامنے قسم کھانے سے انکار کرے تو ان دونوں صورتوں میں ثابت ہوجائے گا کہ ہشام نے جو بیع اپنی زوجہ و دختر کے ہاتھ کی ضرور صحیح و نافذ تھی عورتیں اس مکان کی مالک مستقل ہو گئیں اور اگر بیع میں تفصیل حصص نہ تھی تو دونوں نصفا نصف کی مالک ہوئیں، پھر جب دختر نے انتقال کیا اور اس کی موت سے چھ مہینے کے اندر اس کا بھائی پیدا ہوا تو ظاہر ہوا کہ یہ بھی بہن کا وارث ہے، اب کہ زوجہ ہشام نے اپنے مرض میں کل مکان مشتری کے ہاتھ بیع کردیا، اگر یہ مشتری بائعہ کا وارث نہیں تو بیع اس قدر میں صحیح ہوگئی جو ملک زوجہ مذکورہ تھا یعنی نصف مکان کہ بیع ہشام سے اس کی ملک ہوا اور نصف دیگر ملک دختر سے ایک ثلث جبکہ اسے ثلث سے کوئی حاجت نہ ہو، باقی دو ثلث نصف یعنی کل مکان کا ایک ثلث حق برادر نو پیدا ہوا، اگر مادر و برادر مذکور کے سوادختر کا کوئی اور وارث نہ ہو، پھر جب لڑکا مر گیا اور یار محمد کے سوا اس کا کوئی وارث نہ ہو تو وہ ثلث یار محمد کا ہوا اس قدراسے واپس دے، اور اگر مشتری گواہ نہ دے سکا یا گواہ عادل شرعی قابل قبول نہ تھے اور یار محمد نے پنچوں کے سامنے

بطلب مشتری حلف کرلیا کہ ہشام نے یہ بیع اپنے مرض موت میں کی تو اس صورت میں وہ بیع باطل ہوئی، پھر بعد موت ہشام اگر اس کے وارث یہی زن و پسر و دختر ہیں عورت کا ایک ثمن اور دختر کے ۲/۴ حصوں میں سے بشرط مذکور ایک ثلث یعنی ۷/۲۱ پھر زوجہ ہشام کو پہنچے تو وقت بیع زوجہ ہشام صرف ۲/۱۶ یعنی ۹/۲ کی مالک تھی اسی قدر میں بیع قائم رہ سکتی ہے مشتری باقی مکان بشرط مذکور یعنی مکان کے ۹ حصوں سے ۷ حصے یار محمد کو واپس دے ، واللہ تعالیٰ اعلم۔

۱ ردالمحتار کتاب الشہادات باب القبول وعدمہ داراحیاء التراث العربي بیروت ۴ / ۳۸۷ صفحہ 216 از 715

Fatawa Razawiya Volume 17 Chapter of Cancellation (Iqala) (Explanation of Cancellation of Sales)

Problem 102: From Moradabad, Mohalla Bara Shah Safa, requested by Hafiz Abdul Majeed, 6 Shawwal 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid negotiated to purchase a property belonging to Amr for 625 rupees through his friend Bakr. After the price was fixed, 100 rupees were given to Amr as earnest money, and a receipt was written. In the receipt, Bakr deceitfully included his own name as well and claimed that the property was negotiated as a joint purchase for both of them, although this is completely false. This matter was brought before a Panchayat (local council). The council members took 50 rupees from each and deposited it, stating that whoever takes this money will not get the property, and whoever takes the property cannot take this money. Zaid agreed to purchase the property. Bakr took the 100 rupees and wanted to write a receipt. Before it could be written, people from Bakr's locality, who hold grudge and enmity towards Zaid, told Zaid, "Return this sales receipt to Amr; we will not let you buy this property. Instead, we will buy it for the mosque's income." Under compulsion, Zaid returned the receipt to Amr. Now, is it permissible for them to buy this property for the mosque's income without Zaid's permission? The people of Bakr's locality also say, "You have no say in this, nor is your consent required." Explain and you will be rewarded.

The Answer: In the stated situation, Zaid appointed Bakr as an agent to purchase a specific item. He had no authority to...

फ़तावा रज़विया जिल्द 17 बाब अल-इक़ाला (बय इक़ाला का बयान)

मसला 102: मुरादाबाद, मोहल्ला बाड़ा शाह सफ़ा से, हफ़िज़ अब्दुल मजीद द्वारा पूछा गया, 6 शव्वाल 1339 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: ज़ैद ने अपने दोस्त बक्र के माध्यम से अम्र की एक संपत्ति 625 रुपये में खरीदने की बात तय की। कीमत तय होने के बाद, अम्र को बयाने के तौर पर 100 रुपये देकर रसीद लिखवाई गई। रसीद में बक्र ने धोखे से अपना नाम भी लिखवा लिया और दावा किया कि संपत्ति हम दोनों की साझा तौर पर तय हुई थी, जबकि यह पूरी तरह से गलत है। यह मामला पंचायत में ले जाया गया। पंचों ने दोनों से पचास-पचास रुपये लेकर जमा कराए और कहा कि जो व्यक्ति यह रुपये लेगा उसे संपत्ति नहीं मिलेगी, और जो संपत्ति लेगा वह यह रुपये नहीं ले सकता। ज़ैद ने संपत्ति खरीदना स्वीकार किया। बक्र ने सौ रुपये उठा लिए और रसीद लिखना चाहा। अभी रसीद लिखी नहीं गई थी कि बक्र के मोहल्ले के लोग, जो ज़ैद से द्वेष और शत्रुता रखते हैं, ज़ैद से बोले कि यह रसीद अम्र को वापस कर दो, हम तुम्हें यह संपत्ति खरीदने नहीं देंगे, बल्कि इसे मस्जिद की आमदनी के लिए खरीदेंगे। ज़ैद ने मजबूरी में रसीद अम्र को वापस कर दी। अब, क्या ज़ैद की अनुमति के बिना मस्जिद की आमदनी के लिए यह संपत्ति खरीदना जायज़ है या नहीं? बक्र के मोहल्ले वाले यह भी कहते हैं कि तुम्हारा इसमें कोई दखल नहीं है और न ही तुम्हारी रज़ामंदी की ज़रूरत है। बयान फरमाएं, आपको सवाब मिलेगा।

अल-जवाब (उत्तर): पूछी गई स्थिति में, ज़ैद ने बक्र को एक विशिष्ट वस्तु खरीदने के लिए वकील (प्रतिनिधि) नियुक्त किया था। उसे कोई अधिकार नहीं था कि...

पृष्ठ 217 / 715

فتاوٰی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷) باب الاقالۃ (بیع اقالہ کا بیان)

مسئلہ ۱۰۲: از مراد آباد محلہ باڑہ شاہ صفا مسئولہ حافظ عبدالمجید ۶ شوال ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے ایک جائداد عمرو کی چھ سو پچیس ۶۲۵ روپے پر اپنے دوست بکر کے ذریعہ خریدنے کے لئے طے کرائی، قیمت طے ہونے کے بعد سو روپیہ بطور بیعنامہ عمرو کو دے کر رسید لکھوائی، رسید میں بکر نے دھوکے سے اپنا نام بھی تحریر کرالیا اور دعوٰی کردیا کہ جائداد تو میری اور تمھاری دونوں کی مشترک طے ہوئی، حالانکہ یہ بالکل غلط ہے، یہ قصہ پنچایت میں ڈالا گیا، پنچوں نے دونوں سے پچاس پچاس روپے لے کر جمع کرائے اور کہا جو شخص یہ روپیہ لے گا اسے جائداد نہیں ملے گی اور جو جائداد لے گا یہ روپیہ نہیں لے سکتا۔ زید نے جائداد خریدنی منظور کی، بکر نے سو روپے اٹھالئے اور رسید لکھنی چاہی، ابھی لکھی نہ تھی کہ بکر کے محلہ والے جو زید سے بغض و عداوت رکھتے ہیں زید سے بولے کہ یہ رسید بیعنامہ عمرو کو واپس کردو ہم تم کو یہ جائداد خریدنے نہ دیں گے بلکہ اسے مسجد کی آمدنی کے لئے خریدیں گے، زید نے مجبوری رسید عمرو کو واپس کردی، اب بے اجازت زید آمدنی مسجد کے لئے یہ جائداد خریدیں یہ جائز ہے یا نہیں؟ بکر کے اہل محلہ یہ بھی کہتے ہیں کہ تمھارا اس میں کچھ دخل نہیں نہ تمھاری رضامندی کی ضرورت ہے۔ بینواتوجروا

الجواب: صورت مستفسرہ میں کہ زید نے بکر کو ایک شے معین خریدنے کا وکیل کیا اسے کوئی اختیار نہ تھا کہ غیبت

Fatawa Rizvia Volume (17)

...Zaid should buy it for himself, rather, buying it for himself would also be for the principal (Mu'akkil) as long as there is no contravention.

In Durr al-Mukhtar: If someone appoints a person as an agent to buy a specific thing, the agent should not buy that thing for himself in the principal's absence, and even more so, he should not buy it for another principal so that there is no deception. This rule applies when the agent does not contravene the principal's order. And if the agent buys that thing with something other than cash or at a price contrary to what the principal told him, then this purchase will be for the agent himself due to the contravention of the principal's order, and because of this contravention, he will be dismissed from the agency. — 'Aini. (1)

In Durr al-Mukhtar it is stated: If someone has made a person a proxy for the purchase of a specific object, then the proxy should not purchase that object for himself in the absence of the client, and more so should not purchase for another client so that there is no deception. This ruling is applicable when the proxy does not act against the command of the client, and if the proxy has purchased that thing with something other than cash, or purchased it against that price which the client had told him, then this purchase, due to the violation of the client's command, will be from the proxy himself, and due to this violation, he will be removed from the proxy. — 'Aini (T)

Bakar writing his name in the sale receipt was oppression, fraud, ignorance, and folly. The fifty rupees collected by the arbitrators from both parties and their meaningless decision were strictly void and rejected; those fifty rupees are forbidden for Bakar, and it is mandatory for him to return them to Zaid.

Allah the Almighty said: "And do not consume one another's wealth unjustly" (2) | Allah the Almighty has said: Do not eat each other's wealth in a false way. (T)

From the text of the question, it does not appear that there was any Shar'i coercion (Ikrah) on Zaid from the neighborhood people on behalf of Bakar. Conventional compulsion due to people's insistence is not Shar'i coercion. In this situation, since Zaid returned the sale deed and Amr accepted it, if the sale had not occurred, it was

prevented, and if it had occurred, it was rescinded. In any case, Zaid no longer has any connection to this property. If the neighborhood people or Bakar buy it for the mosque, they can do so with Amr's consent; Zaid's consent is not required. And Allah the Almighty knows best.

1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Wakala, Bab al-Wakala bi al-Bai' wa al-Shira', Mujtabai Press Delhi, 2/105
2. Al-Quran al-Karim, 2/188

फ़तावा रिज़विया खंड (17)

...ज़ैद उसे अपने लिए खरीदे, बल्कि अपने लिए खरीदना भी ज़ैद के मुअक्किल (Principal) के लिए ही होगा जब तक कि कोई उल्लंघन न किया गया हो।

दुर्र अल-मुख़्तार में है: यदि कोई किसी व्यक्ति को किसी विशिष्ट वस्तु की खरीद के लिए एजेंट नियुक्त करता है, तो एजेंट को मुअक्किल की अनुपस्थिति में वह वस्तु अपने लिए नहीं खरीदनी चाहिए, और इससे भी अधिक, उसे दूसरे मुअक्किल के लिए नहीं खरीदना चाहिए ताकि कोई धोखा न हो। यह नियम तब लागू होता है जब एजेंट मुअक्किल के आदेश का उल्लंघन नहीं करता है। और यदि एजेंट उस वस्तु को नकद के अलावा किसी और चीज़ से खरीदता है या मुअक्किल द्वारा बताए गए मूल्य के विपरीत खरीदता है, तो मुअक्किल के आदेश के उल्लंघन के कारण यह खरीद एजेंट के लिए होगी, और इस उल्लंघन के कारण उसे एजेंसी से बर्खास्त कर दिया जाएगा। — ऐनी। (1)

दुर्र अल-मुख़्तार में है कि किसी ने किसी व्यक्ति को किसी निश्चित वस्तु की खरीदारी का वकील बनाया तो वकील उस चीज़ को मुअक्किल की अनुपस्थिति में अपने लिए न खरीदे और दूसरे मुअक्किल के लिए तो और भी नहीं खरीदना चाहिए ताकि धोखा न हो, यह नियम तब है जब वकील मुअक्किल के आदेश का उल्लंघन न करे, और यदि वकील ने उस चीज़ को नक़द के अलावा किसी और चीज़ से खरीदा या मुअक्किल द्वारा बताए गए मूल्य के विरुद्ध खरीदा, तो यह खरीदारी मुअक्किल के आदेश के उल्लंघन के कारण स्वयं वकील की होगी और इस उल्लंघन के कारण वह वकालत से हटा दिया जाएगा। — ऐनी (त)

बकर का बिक्री रसीद में अपना नाम लिखना ज़ुल्म, धोखाधड़ी, अज्ञानता और मूर्खता थी। पंचों ने दोनों पक्षों से जो पचास रुपये जमा किए और वह अर्थहीन फ़ैसला दिया, वह सख्त बातिल (शून्य) और अस्वीकार्य था। वे पचास रुपये बकर पर हराम हैं, उस पर फ़र्ज़ है कि वह ज़ैद को वापस कर दे।

अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "और आपस में एक-दूसरे का माल अन्यायपूर्वक न खाओ" (2) | अल्लाह तआला ने फ़रमाया: आपस में एक-दूसरे का माल ग़लत तरीके से मत खाओ। (त)

प्रश्न के विवरण से ज़ैद पर बकर की ओर से मोहल्ले वालों द्वारा कोई शरई इकरह (दबाव) होना ज़ाहिर नहीं होता। लोगों के आग्रह से होने वाली प्रथागत मजबूरी शरई दबाव नहीं है। इस स्थिति में जब ज़ैद ने बिक्री विलेख (बयानामा) वापस कर दिया और अम्र ने उसे स्वीकार कर लिया, तो यदि बिक्री नहीं हुई थी तो रुक गई, और यदि हो चुकी थी तो रद्द हो गई। किसी भी स्थिति में ज़ैद का अब इस संपत्ति से कोई संबंध नहीं रहा। यदि मोहल्ले वाले या बकर इसे मस्जिद के लिए खरीदते हैं, तो वे अम्र की सहमति से खरीद सकते हैं; ज़ैद की सहमति की कोई आवश्यकता नहीं है। और अल्लाह तआला ही सबसे बेहतर जानता है।

1. दुर्र अल-मुख़्तार, किताब अल-वकाला, बाब अल-वकाला बिल-बय वश-शिरा, मुजतबाई प्रेस दिल्ली, 2/105
2. अल-क़ुरआन अल-करीम, 2/188

पृष्ठ 218 का 715

زید میں اسے اپنے نفس کے لئے خریدے بلکہ اپنے نفس کے لئے خریدنا جب بھی زید موکل کے لئے ہو جب مخالفت نہ کی ہو،

ففی الدرالمختار لو وکلہ بشراء شیئ بعینہ لایشتر یہ | در مختار میں ہے کسی نے کسی شخص کو کسی معین شے کی لنفسہ ولولموکل اخر بالاولی عند غیبتہ حیث لم | خریداری کا وکیل بنایا تو وکیل اس شے کو موکل کی غیر یکن مخالفاً دفعاً للضرر فلو اشتراہ بغیر النقد او | موجودگی میں اپنے لئے نہ خریدے اور دوسرے موکل کے بخلاف ماسمی الموکل لہ من الثمن وقع الشراء | لئے تو بدرجہ اولیٰ نہ خریدے تاکہ دھوکہ دہی نہ ہو، یہ حکم تب للوکیل لمخالفتہ امرہ وینعزل فی ضمن المخالفۃ | ہے جب وکیل امرِ موکل کی مخالفت نہ کرے ، اور اگر وکیل عینی (1)۔ | نے اس شیئ کو غیر نقود سے خریدا اس ثمن کے خلاف خریدا | جو موکل نے اس کو بتایا تھا تو یہ خریداری امرِ موکل کی مخالفت | کی وجہ سے خود وکیل سے ہوگی اور اس مخالفت کے سبب سے | وہ وکالت سے معزول ہوجائے گا۔ عینی (ت)

بکرنے کہ رسید بیعنامہ میں اپنا نام بھی لکھالیا ظلم و فریب و جہل وحماقت تھا، پنچوں نے جو فریقین سے پچاس جمع کرائے اور وہ بے معنی فیصلہ قرار دیا سخت باطل ومردود تھا وہ پچاس روپے بکر پر حرام ہیں اس پر فرض ہے کہ زید کو واپس کردے۔

قال اللہ تعالیٰ "لَا تَأْكُلُوا أَمْوَالَكُمْ بَيْنَكُمْ بِالْبَاطِلِ" 2 | اللہ تعالیٰ نے فرمایا: آپس میں ایک دوسرے کے مال باطل | طریقے پر مت کھاؤ۔ (ت)

عبارت سوال سے زید پر اہل محلہ بکر کی جانب سے کوئی اکراہ شرعی نہ ہونا نہیں نکلتا لوگوں کے اصرار سے عرفی مجبوری اکراہ شرعی نہیں اس صورت میں جبکہ زید نے بیعنامہ واپس کردیا اور عمرونے قبول کرلیا بیع اگر نہ ہوئی تھی ہونے نہ پائی اور اگر ہو چکی تھی فسخ ہوگئی بہر حال زید کو اس جائداد سے کوئی تعلق نہ رہا اہل محلہ بکر اگر مسجد کے لئے خریدیں برضائے عمرو خرید سکتے ہیں رضائے زید کی کچھ حاجت نہیں، واللہ تعالیٰ اعلم۔

1 در مختار کتاب الوکالۃ باب الوکالۃ بالبیع والشراء مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۱۰۵ 2 القرآن الکریم ۲/ ۱۸۸

Fatawa Razawiyya Volume 17

Chapter on Murabaha (Description of Murabaha Sale)

Problem 103: 10 Jamadi al-Ula 1319 AH Zaid said to Amr, "You buy this item worth 1 rupee with your own money. After you have bought it, I will buy it from you for 1 rupee and 1 anna, and I will pay in one month because I don't have the money right now." Is the profit permissible in this situation? Please explain and be rewarded.

The Answer: It is permissible, but if this increase in price over the regular rate was made on the basis that Zaid is buying on credit, then it is not better. [Arabic]: As it entails turning away from the virtue of lending, as explained in | [Urdu]: Because it involves turning away from the goodness and kindness of lending, al-Fath and Radd al-Muhtar and other books. And Allah Almighty | as mentioned in the benefits provided by books like Fath and Radd al-Muhtar. knows best. | And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 104: From Kathiawar, Dhoraji, Mohalla Siyahi Garan, asked by Haji Isa Khan Muhammad Sahib, 8 Jamadi al-Ula 1330 AH Murabaha sale of a currency note, meaning selling a note and saying "I will take one anna more per rupee than the written amount," is it permissible or not?

फ़तावा रज़विया जिल्द सत्रहवीं (17)

बाब अल-मुराबहा (मुराबहा बिक्री का वर्णन)

मसाला 103: 10 जमादी उल-ऊला 1319 हिजरी ज़ैद ने अम्र से कहा कि तुम यह 1 रुपये का माल अपने रुपये से खरीद लो, खरीदने के बाद मैं तुमसे यह 1 रुपया 1 आना देकर खरीद लूँगा और एक महीने में दूँगा क्योंकि मेरे पास रुपया नहीं है, तो इस सूरत में नफ़ा (लाभ) जायज़ है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य पायें।

उत्तर: जायज़ है लेकिन कीमत की यह बढ़ोतरी अगर सामान्य दर से इस आधार पर बढ़ाई गई कि ज़ैद उधार खरीद रहा है तो बेहतर नहीं है। [अरबी]: जैसा कि इसमें कर्ज देने की नेकी से मुँह मोड़ना है जैसा कि | [उर्दू अनुवाद]: क्योंकि इसमें कर्ज देने की नेकी और शराफ़त से एराज (परहेज) है अल-फ़तह और रद-उल-मुहतार आदि किताबों में बताया गया है, और अल्लाह तआला | जैसा कि इसका फायदा फ़तह और रद-उल-मुहतार वगैरह किताबों ने दिया है। बेहतर जानता है। | और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसाला 104: काठियावाड़ धोराजी मोहल्ला सियाही गिराँ से, हाजी ईसा खान मोहम्मद साहब द्वारा पूछा गया, 8 जमादी उल-ऊला 1330 हिजरी नोट की बिक्री मुराबहा यानी नोट बेचा और कहा कि प्रति रुपया एक आना लिखी हुई रकम से ज्यादा लूँगा, जायज़ है या नहीं?

पेज 715 का 219

فتاوٰی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

باب المرابحۃ (بیع مرابحہ کا بیان)

مسئلہ ۱۰۳: ۱۰ جمادی الاولی ۱۳۱۹ھ زید نے عمرو سے کہا کہ تم یہ ۱ روپیہ کا مال اپنے روپے سے خرید لو بعد خریدنے تمہارے کے میں تم سے یہ ۱ ایک روپیہ آنہ دے کر خرید لوں گا اور ایک ماہ میں دوں گا کیونکہ میرے پاس روپیہ نہیں تو اس صورت میں نفع جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: جائز ہے مگر یہ ثمن کی زیادتی اگر معمولی نرخ سے اس بناء پر بڑھائی گئی کہ زید قرض خریدتا ہے تو بہتر نہیں لما فیہ من الاعراض عن مبرۃ الاقراض کما افادہ فی | کیونکہ اس میں قرض دینے کی نیکی اور مروت سے اعراض الفتح وردالمحتار وغیرہما من الاسفار، واللہ تعالی | ہے جیسا کہ اس کا فائدہ فتح اور ردالمحتار وغیرہ کتابوں نے دیا اعلم۔ | ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۱۰۴: از کاٹھیا وار د ھوراجی محلہ سیاہی گراں مسئولہ حاجی عیسی خاں محمد صاحب ۸ جمادی الاولی ۱۳۳۰ھ نوٹ کی بیع مرابحہ یعنی نوٹ بیچا اور کہا کہ فی روپیہ ایک آنہ لکھی ہوئی رقم سے زیادہ لوں گا جائز ہے یا نہیں؟

Answer: This matter requires clarification. First, we will mention the texts from the books, then with the success granted by Allah Almighty, our research, and then the ruling for the questioned situation. And with Allah is all success.

(Arabic Text): So know that our Imams, may Allah Almighty have mercy on them, have defined 'Murabahah' in the texts as the transfer of what was owned through the first contract at the first price along with an added profit, as mentioned in 'Al-Hidayah'. It was shortened in 'Al-Kanz' as: "A sale at a previous price plus an increase." The discourse of the generality of jurists revolves around this. Commentators have objected that it is flawed both in inclusion and exclusion (it is neither comprehensive nor exclusive). They have deliberated at length on this, providing branch rulings. Most of the objections have been answered, either completely or partially, as elaborated in 'Al-Inayah', 'Al-Fath', and others. Since the origin of most objections was the terms 'contract' and 'price', the author of 'Ad-Durar' omitted them and said: "A sale of what one owned for an amount equivalent to what it cost him plus an increase." Even this is not safe from some flaws. We are not here to list them along with their strengths and weaknesses.

(Urdu Translation): So know that our noble Imams, may Allah Almighty have mercy on them, have defined 'Murabahah' in the texts as a sale where something owned through the first contract is transferred to another at the first price along with some profit, as stated in 'Al-Hidayah'. In 'Al-Kanz', it is shortened to: selling at the first price plus some addition. The discourse of common jurists revolves around this definition. Commentators objected that this definition is neither comprehensive nor exclusive; they spoke at length about it, which is useful for several branch rulings. Most of these objections were given complete or incomplete answers, as mentioned in detail in 'Al-Inayah' and 'Al-Fath' etc. Since the basis of most objections were the words 'contract' (aqd) and 'price' (thaman), 'Ad-Durar' omitted both and said: transferring what one has become the owner of for the same price it cost him plus something more. This definition also [is subject] to some objections.

1. Al-Hidayah, Kitab al-Buyu', Bab al-Murabahah wa al-Tawliyah, Matba' Yusufi Lucknow, 3/73.

2. Kanz al-Daqaiq, Bab al-Tawliyah wa al-Murabahah, H.M. Saeed Company Karachi, p. 232.
3. Al-Durar al-Hukkam fi Sharh Ghurar al-Ahkam, Bab al-Murabahah wa al-Tawliyah, Mir Muhammad Kutub Khana Karachi, 2/180.

उत्तर: यह मसला स्पष्टीकरण की मांग करता है। हम पहले पुस्तकों के उद्धरणों का उल्लेख करेंगे, फिर अल्लाह तआला की तौफीक से अपना शोध और फिर पूछे गए मामले का हुक्म पेश करेंगे। और अल्लाह के साथ ही सफलता है।

(अरबी पाठ): तो जान लें कि हमारे इमामों (अल्लाह तआला उन पर रहम करे) ने ग्रंथों में 'मुराबहा' को इस तरह परिभाषित किया है कि पहले अनुबंध (अक्द) के माध्यम से जो कुछ भी स्वामित्व में आया, उसे पहले मूल्य (थमन) पर कुछ अतिरिक्त लाभ के साथ हस्तांतरित करना, जैसा कि 'अल-हिदाया' में है। 'अल-कंज़' में इसे संक्षिप्त करते हुए कहा गया: "पिछले मूल्य पर बिक्री और वृद्धि।" अधिकांश न्यायविदों का विमर्श इसी के इर्द-गिर्द घूमता है। व्याख्याकारों ने इस पर आपत्ति जताई है कि यह परिभाषा व्यापक और अनन्य (जामे और माने) नहीं है। उन्होंने इस पर विस्तार से चर्चा की है जिससे कई उप-नियम प्राप्त हुए हैं। इनमें से अधिकांश आपत्तियों के पूर्ण या अपूर्ण उत्तर दिए गए हैं, जैसा कि 'अल-इनाया', 'अल-फतह' आदि में विस्तार से बताया गया है। चूंकि अधिकांश आपत्तियों का मूल 'अनुबंध' और 'मूल्य' शब्द थे, इसलिए 'अद-दुरर' के लेखक ने उन दोनों को छोड़ दिया और कहा: "जो कुछ स्वामित्व में है, उसे उसी मूल्य पर बेचना जितने में वह पड़ा है, साथ ही कुछ अतिरिक्त।" यह परिभाषा भी कुछ दोषों से मुक्त नहीं है। हम यहाँ उनकी खूबियों और कमियों के साथ उन्हें सूचीबद्ध करने के उद्देश्य से नहीं हैं।

(उर्दू अनुवाद): तो जान लें कि हमारे महान इमामों (अल्लाह तआला उन पर रहम करे) ने ग्रंथों में मुराबहा की परिभाषा इस तरह की है कि मुराबहा वह बिक्री है जिसमें पहले अनुबंध के साथ जिस चीज़ का मालिक हुआ है, उसे पहले मूल्य और कुछ मुनाफे की अधिकता के साथ दूसरे को हस्तांतरित करना, जैसा कि हिदाया में है। कंज़ में इसे संक्षिप्त करके कहा गया कि पहले मूल्य और कुछ वृद्धि के साथ बेचना। आम फुक़हा (न्यायविदों) का कलाम इसी परिभाषा के इर्द-गिर्द घूमता है। व्याख्याकारों ने इस पर आपत्ति की कि यह परिभाषा व्यापक और अनन्य नहीं है, उन्होंने इस पर लंबा कलाम किया जो कई फुरुई (उप) नियमों के लिए उपयोगी है। और शोध के अनुसार उनमें से अधिकांश आपत्तियों के पूर्ण या अपूर्ण उत्तर दिए गए, जैसा कि इनाया और फतह आदि में इसका विवरण दिया गया है। चूंकि अधिकांश आपत्तियों का मूल शब्द 'अक्द' (अनुबंध) और शब्द 'थमन' (मूल्य) है, इसलिए 'दुरर' में इन दोनों को छोड़कर यूँ कहा गया कि जिस चीज़ का मालिक हुआ है वह चीज़ जितने में उसको पड़ी है उसकी तरह और कुछ ज़्यादा के साथ उसको मुंतकिल (हस्तांतरित) करना। यह परिभाषा भी कुछ आपत्तियों से [मुक्त नहीं है]।

1. अल-हिदाया, किताब अल-बुयू, बाब अल-मुराबहा व अल-तवलिया, मतबा यूसुफी लखनऊ, 3/73।

2. कंज़ अद-दकाइक़, बाब अल-तवलिया व अल-मुराबहा, एच.एम. सईद कंपनी कराची, पृ. 232।
3. अद-दुरर अल-हुक्काम फ़ी शरह ग़ुरर अल-अहकाम, बाब अल-मुराबहा व अल-तवलिया, मीर मुहम्मद कुतुब खाना कराची, 2/180।

पृष्ठ 220 का 715

الجواب: یہ مسئلہ تنقیح طلب ہے ہم اولاً: عبارات کتب ذکر کریں پھر بتوفیق اللہ تعالی اپنے تحقیق پھر صورت مسئولہ کا حکم وباللہ التوفیق،

تو جان لے کہ ہمارے ائمہ کرام رحمۃ اللہ تعالی علیہم نے

فاعلم ان ائمتنا رحمهم الله تعالى عرفوا المرابحة فى المتون بأنها نقل ماملكه بالعقد الاول بالثمن الاول مع زيادة ربح كما فى الهداية واختصره فى الكنز فقال بيع بثمن سابق وزيادة وكلام عامتهم تدور حول ذلك واعترضهم الشراح بانه منتقض طردا وعكسا واطالو فيه بما افادوا احكام فروع وقد اجيب عن اكثر الايرادات بما يتم اولا كما بسطه فى العناية والفتح وغيرهما ولما كان منشأ اكثرها العقد والثمن تركهما فى الدرر وقال بيع ماملكه بمثل ما قام عليه بزيادة ولا يسلم ايضا من بعض النقوض، ولسنا ههنا بصدد سردها مع مالها وعليه، وقام

متون میں مرابحہ کی تعریف یوں کی ہے کہ مرابحہ وہ بیع ہے کہ عقد اول کے ساتھ جس چیز کا مالک ہوا ہے اس کو ثمن اول مع کچھ نفع کی زیادتی کے دوسرے کو منتقل کرنا، جیسا کہ ہدایہ میں ہے، کنز میں اس کو مختصر کرکے کہا کہ ثمن اول اور کچھ اضافے کے ساتھ فروخت کرنا، عام فقہاء کا کلام اسی تعریف کے گرد گھومتا ہے، شارحین نے اس پر اعتراض کیا کہ یہ تعریف جامع اور مانع نہیں انھوں نے اس میں طویل کلام کیا جو کئی فروعی احکام کا مفید ہے، اور تحقیق ان میں سے اکثر اعتراضوں کے تام یا غیر تام جوابات دئے گئے، جیسا کہ عنایہ اور فتح وغیرہ میں اس کی تفصیل مذکور ہے، چونکہ اکثر اعتراضات کا منشا لفظ عقد اور لفظ ثمن ہے، چنانچہ درر میں ان دونوں کو چھوڑ کر یوں کہا جس چیز کا مالک ہوا ہے وہ چیز جتنے میں اس کو پڑی ہے اس کی مثل اور کچھ زیادہ کے ساتھ اس کو منتقل کرنا، یہ تعریف بھی بعض اعتراضات سے

1 الهدايہ كتاب البيوع باب المرابحة والتولية مطبع يوسفى لكهنؤ ٣ / ٧٣ 2 كنز الدقائق باب التولية والمرابحة ايچ ايم سعيد كمپنى كراچى ص ٢٣٢ 3 الدرر الحكام فى شرح غرر الاحكام باب المرابحة والتولية مير محمد كتب خانہ كراچى ٢ / ١٨٠

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Left Column - Arabic Text] The learned scholar, the 'Ocean' (author of Al-Bahr al-Ra'iq), sought in Al-Bahr al-Ra'iq to provide a definition so comprehensive and exclusive that absolutely no objections could be raised against it. Thus, he elaborated extensively by listing all the conditions of validity, yet it was still not complete, as you will see, God willing. Here, in its printed edition, it is recorded: "...transferring what he came to possess through means other than a contract of reconciliation (sulh) or a gift with a condition of compensation, by that which is specified as its cost, or its equivalent, or the price marked upon it, etc." His commentator, the learned Al-Shami, noted in 'Al-Minhah': "His phrase 'by that which is specified' is connected via the preposition 'ba' (by/with) to his phrase 'what he possessed' (ma mallakahu). End of quote." This indicates that in his manuscript as well, it was written with the preposition 'ba'. The statement of Al-Bahr found under the text's words: "The condition for both of them (i.e., Tawliyah and Murabahah) is that the original price be fungible (mithli)," may tend toward supporting this. Its exact wording was: "The phrase from Al-Majma' is superior, which is: 'That is not valid until the compensation is fungible or owned by the buyer...'"

[Right Column - Urdu Text] ...are not preserved, and we are not pursuing the details of those objections, their pros and cons. The author of Al-Bahr was determined that he would provide such a comprehensive and exclusive definition in Al-Bahr al-Ra'iq that no objection could be raised against it. Accordingly, he spoke at length to encompass the conditions of validity, but that too is not complete, as you will soon know, God willing. Here, in the printed edition, it is stated as follows: "transferring, without a contract of reconciliation or a gift with a condition of compensation, that thing for which a specified price made him the owner, for exactly that price which it cost him, or for its equivalent, or for the price written on it, etc." Its commentator, Allama Shami, stated in 'Al-Minhah' that the saying of the author of Al-Bahr "by that which is specified" (bima yata'ayyan) relates to his saying "what he possessed" (ma malakahu). End. And this is useful in showing that in the commentator's copy as well, the text is thus, meaning "bima" with the preposition 'ba'. And the statement of Al-Bahr appearing under the text's words "The condition for both Tawliyah and Murabahah is that the first price be fungible," in which he explicitly stated that the phrasing of Al-Majma' is superior, which is: "Tawliyah and Murabahah are not valid until the compensation is fungible or [owned by] the buyer's..."

[Footnotes] 1. Al-Bahr al-Ra'iq, Kitab al-Buyu' (Book of Sales), Bab al-Murabahah wa al-Tawliyah, H.M. Saeed Company, Karachi, 6/107. 2. Minhat al-Khaliq 'ala al-Bahr al-Ra'iq, Bab al-Murabahah wa al-Tawliyah, H.M. Saeed Company, Karachi, 6/107.

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

[बायां कॉलम - अरबी पाठ] विद्वान 'अल-बहर' (अल-बहर अल-राइक़ के लेखक) ने अल-बहर अल-राइक़ में एक ऐसी व्यापक और अनन्य परिभाषा देने का प्रयास किया कि उस पर कोई भी आपत्ति न उठाई जा सके। इसलिए, उन्होंने वैधता की शर्तों को विस्तार से सूचीबद्ध किया, फिर भी यह पूर्ण नहीं हुआ, जैसा कि आप अल्लाह की इच्छा से देखेंगे। यहाँ, इसके मुद्रित संस्करण में यह दर्ज है: "...उस चीज़ को स्थानांतरित करना जो उसने सुलह (समझौता) के अनुबंध या मुआवजे की शर्त के साथ उपहार के अलावा अन्य माध्यमों से प्राप्त की है, उस वस्तु की लागत, या उसके समकक्ष, या उस पर अंकित मूल्य आदि के द्वारा।" उनके टिप्पणीकार, विद्वान अल-शामी ने 'अल-मिन्हा' में उल्लेख किया है: "उनका वाक्यांश 'जिसके द्वारा निर्दिष्ट है' उपसर्ग 'बा' (के द्वारा/के साथ) के माध्यम से उनके वाक्यांश 'जो उसके पास था' (मा मल्लकाहू) से जुड़ा है। उद्धरण समाप्त।" यह इंगित करता है कि उनकी पांडुलिपि में भी यह उपसर्ग 'बा' के साथ लिखा गया था। मूल पाठ के शब्दों के तहत पाए गए अल-बहर के कथन: "उन दोनों (अर्थात, तौलिया और मुराबहा) के लिए शर्त यह है कि मूल मूल्य विनिमेय (मिथली) हो," इसका समर्थन करने की ओर झुक सकते हैं। इसके सटीक शब्द थे: "अल-मजमा' का वाक्यांश बेहतर है, जो कि है: 'वह तब तक मान्य नहीं है जब तक कि मुआवजा मिथली न हो या खरीदार के स्वामित्व में न हो...'"

[दायां कॉलम - उर्दू पाठ] ...सुरक्षित नहीं हैं, और हम उन आपत्तियों के विवरण, उनके पक्ष और विपक्ष के पीछे नहीं पड़े हैं। अल-बहर के लेखक इस बात पर दृढ़ थे कि वे अल-बहर अल-राइक़ में ऐसी व्यापक और अनन्य परिभाषा लाएंगे जिस पर कोई आपत्ति न उठाई जा सके। तदनुसार, उन्होंने वैधता की शर्तों को शामिल करने पर लंबा व्याख्यान दिया, लेकिन वह भी पूर्ण नहीं है, जैसा कि आप जल्द ही जानेंगे, इंशाअल्लाह। यहाँ, मुद्रित संस्करण में, यह इस प्रकार है: "सुलह के अनुबंध या मुआवजे की शर्त के साथ उपहार के बिना उस चीज़ को, जिसके बदले एक निश्चित मूल्य ने उसे मालिक बना दिया, उसी मूल्य के बदले में जिसमें उसे वह पड़ी या उसके समकक्ष के बदले में या उस पर लिखी हुई कीमत के बदले में स्थानांतरित करना, आदि।" इसके टिप्पणीकार अल्लामा शामी ने 'मिन्हा' में कहा कि अल-बहर के लेखक का कहना "बि़मा यत'अय्यन" (जिसके द्वारा निर्दिष्ट है) उनके कहना "मा मल्लकाहू" (जो उसके पास था) से संबंधित है। समाप्त। और यह इस तथ्य को दर्शाने के लिए उपयोगी है कि टिप्पणीकार की प्रति में भी पाठ इसी तरह है, अर्थात उपसर्ग 'बा' के साथ "बि़मा"। और मूल पाठ के शब्दों "तौलिया और मुराबहा दोनों के लिए पहले मूल्य का मिथली होना

शर्त है" के तहत आने वाला अल-बहर का कहना, जिसमें उन्होंने स्पष्ट किया कि मजमा का वाक्यांश श्रेष्ठ है, जो यह है कि तौलिया और मुराबहा तब तक सही नहीं होते जब तक कि मुआवजा मिथली या खरीदार का...

[पादलेख] 1. अल-बहर अल-राइक़, किताब अल-बुयू, बाब अल-मुराबहा व अल-तौलिया, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 6/107। 2. मिन्हात अल-खालिक अल-बहर अल-राइक़, बाब अल-मुराबहा व अल-तौलिया, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 6/107।

[بایاں کالم - عربی متن] العلامة البحر في البحر الرائق ليأتي بحد جامع مانع لا يرد عليه شيئ اصلاً فاطال بالاستيعاب شروط الجواز ولم يتم ايضاً كما ستعرفه ان شاء الله تعالى ووقع ههنا في نسخته المطبوعة نقل ما مبلكه بغير عقد الصلح والهبة بشرط عوض بما يتعين بعين ما قام عليه او بمثله او برقمه ۱ الخ، قال محشيه العلامة الشامي في المنحة قوله بما يتعين متعلق ببا مبلكه ۲ اه وهذا يفيد انه كذلك بالباء في نسخته وقد يجنح الى تأييده قول البحر تحت قول المتن شرطهما (اى التولية و المرابحة كون الثمن الاول مثلياً مانصه عبارة المجمع اولى وهي ولا يصح ذلك حتى يكون العوض مثلياً او مملوكاً للمشترى،

[دایاں کالم - اردو متن] محفوظ نہیں اور ہم ان اعتراضات کی تفصیل ان کے مالہ، اور ماعلیہ کے درپے نہیں ہیں، علامہ صاحب البحر اس بات پر کمر بستہ ہوئے کہ وہ بحرالرائق میں ایسی جامع مانع تعریف لائیں گے جس پر کوئی اعتراض وارد نہ ہوتا ہو، چنانچہ انہوں نے شروطِ جواز کا احاطہ کرنے پر طویل کلام کیا مگر وہ بھی تام نہیں جیسا کہ ان شاء اللہ تعالٰی عنقریب تو جان لے گا، یہاں پر نسخہ مطبوعہ میں یوں واقع ہے کہ عقدِ صلح اور ہبہ بشرط عوض کے بغیر جس چیز کا متعین ثمن کے بدلے میں مالک ہوا ہے اس کو بعینہ اس ثمن کے بدلے میں جس میں اس کو پڑی یا اس کی مثل کے بدلے میں یا اس پر لکھی ہوئی قیمت کے بدلے میں منتقل کرنا الخ اس کے محشی علامہ شامی نے منحہ میں فرمایا صاحبِ بحر کا قول "بما یتعین" اس کے قول "ما ملکہ" سے متعلق ہے اھ اور یہ اس امر کا مفید ہے کہ محشی کے پیش نسخہ میں بھی عبارت اس طرح ہے یعنی "بما" پر باء کے ساتھ، اور اس کی تائید کی طرف مائل ہے، متن کے قول "تولیہ و مرابحہ دونوں کے لئے ثمن اول کا مثلی ہونا شرط ہے" کے تحت وارد ہونے والا بحر کا قول جس میں اس

نے نص کی کہ مجمع کی عبارت اولیٰ ہے جو یہ ہے کہ تولیہ و مرابحہ صحیح نہیں ہوتا جب تک عوض مثلی یا مشتری کی

[حواشی] ۱ بحر الرائق کتاب البیوع باب المرابحة والتولیة ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۶ / ۱۰۷ ۲ منحة الخالق علی البحر الرائق باب المرابحة والتولیة ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۶ / ۱۰۷

He said: "But it is necessary to restrict it with the determined to avoid currency exchange (as-sarf), because it is not permissible in both of them [Murabahah and Tawliyah]. End. Because here it is in the explanation of the compensation, so it gave the illusion of the condition that his ownership must be with what is determined."

Owner did not have possession, the author of Bahr said that however, for the wording of Majma', the restriction of being determined is necessary so that currency exchange (as-sarf) is avoided because both Tawliyah and Murabahah are not permissible in Dirhams and Dinars. End. Because in this phrase, this restriction is in the explanation of compensation; therefore, it gives the illusion that he became the owner in exchange for a determined price.

I say (the author): This is clearly false, and no one among the people holds such a view; otherwise, resale with profit (Murabahah) and resale at cost (Tawliyah) would be prohibited in all absolute sales from beginning to end, because the prices in them are among those that are not determined. Imam Samarqandi said in 'Tuhfat al-Fuqaha', and from it in 'Ghayat al-Bayan': "When someone sells something through Murabahah based on the initial price, then the price will not be outside of two states: either it is from among fungibles (dhawat al-amthal) like Dirhams, Dinars, and items measured by volume, weight, and similar counts, or it is from among disparate counts, such as slaves, houses, clothes, pomegranates, watermelons, etc. However, if the initial price was fungible (mithli) and he sold it through Murabahah based on the initial price with added profit, it is permissible whether the profit is of the same genus as the initial price or not, provided it is a thing of known quantity, like a Dirham and a pointed-to garment, or a Dinar etc." In my view, the correct statement is "with what is determined."

I say: (I say that) its being false is obvious and no one among the people holds this view, otherwise Murabahah and Tawliyah would become prohibited in all absolute sales because the prices in them are undetermined. Imam Samarqandi said in Tuhfat al-Fuqaha and citing it, it is in Ghayat al-Bayan that when someone sold something at the initial price with some profit, that price is not free from two states: either it is from among the fungibles like Dirham, Dinar, measured by volume, weight, or similar counts, or it is from among different counts like slaves, clothes, houses, watermelons, and pomegranates etc. In any case, if the first price was fungible and he sold it by adding some profit to the first price, it is permissible whether that profit

is of the same genus as the first price or not, provided it is a determined and known thing like a Dirham and such a cloth towards which an indication has been made or a Dinar etc. According to me, the correct thing is "with what is determined."

1. Bahr al-Ra'iq, Kitab al-Buyu', Bab al-Murabahah wa al-Tawliyah, H.M. Saeed Company, Karachi, 6/108.
2. Tuhfat al-Fuqaha, Kitab al-Buyu', Bab al-Iqalah wa al-Murabahah, Dar al-Kutub al-Ilmiyyah, Beirut, 1/106.

उन्होंने कहा: "लेकिन सर्राफ़ा (मुद्रा विनिमय) से बचने के लिए 'निर्धारित' के साथ प्रतिबंधित करना आवश्यक है, क्योंकि उन दोनों [मुराबाहा और तौलिया] में यह जायज़ नहीं है। इति। क्योंकि यहाँ यह मुआवज़े के विवरण में है, इसलिए इससे यह भ्रम होता है कि उसकी मिल्कियत का उस चीज़ के साथ होना शर्त है जो निर्धारित है।"

स्वामित्व में न हो, बहर के लेखक ने कहा कि लेकिन मजमा की इबारत के लिए निर्धारित की शर्त आवश्यक है ताकि 'बै-ए-सर्रफ़' से बचा जा सके क्योंकि तौलिया और मुराबाहा दोनों दिरहम और दीनार में जायज़ नहीं हैं। इति। क्योंकि इस इबारत में यह शर्त मुआवज़े के बयान में है, इसलिए इससे यह वहम होता है कि वह निर्धारित कीमत के बदले मालिक बना हो।

अक़ूल (मैं कहता हूँ): इसका बातिल होना ज़ाहिर है और लोगों में से कोई भी इसका कायल नहीं है; अन्यथा सभी पूर्ण बिक्रियों (बयाआत मुतलक़ा) में शुरू से अंत तक मुराबाहा और तौलिया वर्जित हो जाएँगे क्योंकि उनमें कीमतें निर्धारित नहीं होतीं। इमाम समरकंदी ने 'तोहफ़तुल फ़ुक़हा' में कहा है, और उसी के हवाले से 'ग़ायतुल बयान' में है: "जब किसी ने पहली कीमत पर कुछ लाभ के साथ कोई चीज़ बेची, तो वह कीमत दो स्थितियों से खाली नहीं है: या तो वह 'ज़वातिल अमसाल' (समान वस्तुओं) में से है जैसे दिरहम, दीनार, और मात्रा, वजन और निकटतम गिनती से मापी जाने वाली वस्तुएँ या वह भिन्न गिनती वाली वस्तुओं में से है जैसे गुलाम, मकान, कपड़े, अनार, तरबूज आदि। बहरहाल, यदि पहली कीमत 'मिस्ली' थी और उसने पहली कीमत पर कुछ लाभ जोड़कर बिक्री की, तो यह जायज़ है, चाहे लाभ पहली कीमत की नस्ल (जिंस) से हो या न हो, बशर्ते वह एक ज्ञात मात्रा वाली चीज़ हो जैसे दिरहम और एक कपड़ा जिसकी ओर इशारा किया गया हो या दीनार आदि।" मेरे निकट सही बात यह है कि "बमा युतअय्यन" (जिससे निर्धारित हो)।

अक़ूल: (मैं कहता हूँ) कि इसका बातिल होना ज़ाहिर है और न ही लोगों में इसका कोई कायल है, वरना मुराबाहा और तौलिया तमाम बयानात-ए-मुतलक़ा में वर्जित हो जाएँगे क्योंकि उनमें कीमत गैर-निर्धारित होती है। इमाम समरकंदी ने तोहफ़तुल फ़ुक़हा में कहा है और उसी के हवाले से ग़ायतुल बयान में है कि जब किसी ने पहली कीमत पर कुछ लाभ के साथ कोई चीज़ बेची, तो वह कीमत दो स्थितियों से खाली नहीं है: या तो वह 'ज़वातिल अमसाल' में से है जैसे दिरहम, दीनार, कीली, वज़नी और अददी मुतकारिब या वह अददी मुतफ़ावित में से है जैसे गुलाम, कपड़े, मकान, तरबूज़ और

अनार वगैरह। बहरहाल, अगर पहली कीमत मिस्ली हो और उसने पहली कीमत पर कुछ लाभ लगाकर बिक्री की तो जायज़ है, चाहे वह लाभ पहली कीमत की जिंस से हो या न हो, बशर्ते वह निर्धारित और ज्ञात चीज़ हो जैसे दिरहम और ऐसा कपड़ा जिसकी ओर इशारा किया गया हो या दीनार आदि। मेरे नज़दीक सही बात यह है कि "बमा युतअय्यन"।

1. बहरुल रायक़, किताबुल बुयू, बाब अल-मुराबाहा वत तौलिया, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 6/108।
2. तोहफ़तुल फ़ुक़हा, किताबुल बुयू, बाब अल-इक़ाला वल मुराबाहा, दारुल कुतुब अल-इल्मिया, बेरूत, 1/106।

पृष्ठ 222 का 715

قال ولكن لابد من التقييد بالمعين للاحتراز عن الصرف فانه لايجوز ان فيهما 1 اهـ فانه ههنا في بيان العوض فاوهم اشتراط ان يكون ملكه بما يتعين۔

ملکیت میں نہ ہو، صاحب بحر نے کہا کہ لیکن عبارت مجمع کے لئے معین کی قید ضروری ہے تاکہ بیع صرف سے احتراز ہو جائے کیونکہ تولیہ و مرابحہ دونوں دراہم و دنانیر میں جائز نہیں اھ، کیونکہ اس عبارت میں یہ قید بیان عوض میں ہے لہٰذا اس سے وہم ہوتا ہے کہ وہ معین ثمن کے عوض مالک بنا ہو،

اقول: وهو ظاهر البطلان ولا قائل به احد من الناس والا لامتنعت المرابحة والتولية في البياعات المطلقة عن آخرها لكون الاثمان فيها مما لا يتعين وقد قال الامام السمرقندي في تحفة الفقهاء، وعنها في غاية البيان اذا باع شيئا مرابحة على الثمن الاول، فلا يخلوا ما ان يكون الثمن من ذوات الامثال كالدراهم و الدنانير والمكيل والموزون والمعدد المتقارب، او يكون من الاعداد المتفاوتة، مثل العبيد والدور والثياب والرمان والبطاطيخ وغيرها اما اذا كان الثمن الاول مثليا فباعه مرابحة على الثمن الاول وزيادة ربح فيجوز سواء كان الربح من جنس الثمن الاول اولم يكن بعد ان يكون شيئا مقدارا معلوما نحو الدرهم وثوب مشار اليه او دينار 2 الخ۔

اقول: (میں کہتا ہوں) کہ اس کا باطل ہونا ظاہر ہے اور نہ ہی لوگوں میں اس کا کوئی قائل ہے ورنہ مرابحہ وتولیہ تمام بیانات مطلقہ میں ممنوع ہوجائیں گی کیونکہ ان میں ثمن غیر معین ہوتے ہیں، امام سمرقندی نے تحفۃ الفقہاء میں کہا اور اسی کے حوالے سے غایۃ البیان میں ہے کہ جب کسی نے ثمن اول پر کچھ نفع کے ساتھ کوئی چیز فروخت کی تو وہ ثمن دو حال سے خالی نہیں کہ وہ

ذوات الامثال میں سے ہے جیسے درہم، دینار، کیلی، وزنی اور عددی متقارب یا وہ عددی متفاوت میں سے ہے جیسے غلام، کپڑے، مکانات، تربوز اور انار وغیرہ، بہر حال اگر ثمن اول مثلی ہو اور اس نے ثمن اول پر کچھ نفع لگا کر بیع کی تو جائز ہے چاہے وہ نفع ثمن اول کی جنس سے ہو یا نہ ہو بعد اس کے وہ معین و معلوم شے ہو جیسے درہم اور ایسا کپڑا جس کی طرف اشارہ کیا گیا ہو یا دینار الخ، میرے نزدیک درست بات یہ ہے کہ "بما یتعین"

1 بحر الرائق کتاب البیوع باب المرابحة والتولیة ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱۰۸/۶ 2 تحفة الفقهاء کتاب البیوع باب الاقالة والمرابحة دار الکتب العلمیه بیروت ۱/ ۱۰۶

Fatawa Razawiya (Volume 17)

In my view, the 'ba' in 'bi-ma yat'ayyan' is a scribal error; it should correctly be 'mimma yat'ayyan' (from what is specified). This refers to something he owned while it belongs to the category of things that are specified in contracts. Specifiability is a condition for the owned item that he intends to transfer via Murabaha, but not for its substitute. It is stated in 'Al-Kifaya' regarding the phrase 'transferring what he owns': it means goods/commodities, because if one buys dinars with dirhams, it is not permissible to then sell those dinars as Murabaha. In 'Al-Inaya', after mentioning objections to the text's wording, it is said: Based on this, it would have been better to say 'transferring the owned goods for what they cost him'. Sa'di Effendi mentions in his annotations that 'what he owns' refers to the specific previously mentioned owned item, meaning the goods, for the price they cost him. It is stated in 'Jami' al-Rumuz' that Tawliya requires a condition in the sale—meaning the sale of commodities—to exclude currency exchange (Sarf). Thus, Tawliya and Murabaha do not occur in the sale of dirhams and dinars, as...

---

1 Al-Kifaya with Fath al-Qadir, Book of Sales, Chapter of Murabaha and Tawliya, Maktaba Nooriya Razawiya, Sukkur, 6/122 2 Al-Inaya on the margins of Fath al-Qadir, Book of Sales, Chapter of Murabaha and Tawliya, Maktaba Nooriya Razawiya, Sukkur, 6/122 3 Hashiya Chalpi, Book of Sales, Chapter of Murabaha and Tawliya, Maktaba Nooriya Razawiya, Sukkur, 6/123 Page 223 of 715

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

मेरे विचार में, 'बि-मा यतअय्यन' में 'बा' लिपिकों की गलती है; यह वास्तव में 'मिम्मा यतअय्यन' (उनमें से जो निर्दिष्ट हैं) होना चाहिए। इसका तात्पर्य उस वस्तु से है जिसका वह मालिक बना, जबकि वह उन वस्तुओं की श्रेणी में आती है जिन्हें अनुबंधों में निर्दिष्ट किया जाता है। विशिष्टता उस स्वामित्व वाली वस्तु के लिए एक शर्त है जिसे वह मुरबाहा के माध्यम से स्थानांतरित करना चाहता है, न कि उसके बदले (कीमत) के लिए। 'अल-किफ़ाया' में 'जो उसके स्वामित्व में है उसे स्थानांतरित करना' वाक्यांश के बारे में कहा गया है: इससे तात्पर्य माल या वस्तुओं से है, क्योंकि यदि कोई दिरहम के साथ दीनार खरीदता है, तो उन दीनारों को मुरबाहा के रूप में बेचना जायज़ नहीं है। 'अल-इनाया' में, पाठ की शब्दावली पर आपत्तियों का उल्लेख करने के बाद, कहा गया है: इसके आधार पर, यह कहना बेहतर होता 'स्वामित्व वाले माल को उसकी लागत पर स्थानांतरित करना'। सादी एफेंदी अपनी टिप्पणियों में उल्लेख करते हैं कि 'जिसका वह मालिक है' का तात्पर्य विशिष्ट रूप से पहले से वर्णित वस्तु से है, यानी माल से, उस कीमत पर जो उसे चुकानी पड़ी। 'जामि अल-रुमुज़' में कहा गया है कि तवलिया के लिए बिक्री में एक शर्त की आवश्यकता होती है—अर्थात माल की बिक्री—ताकि मुद्रा विनिमय (सर्फ़) को बाहर रखा जा सके। इस प्रकार, तवलिया और मुरबाहा दिरहम और दीनार की बिक्री में नहीं होते, जैसा कि...

---

1 अल-किफ़ाया मय फ़तह अल-क़दीर, किताब अल-बयूँ, बाब अल-मुरबाहा वत-तवलिया, मक्तबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 6/122 2 अल-इनाया हाशिये पर फ़तह अल-क़दीर, किताब अल-बयूँ, बाब अल-मुरबाहा वत-तवलिया, मक्तबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 6/122 3 हाशिया चलपी, किताब अल-बयूँ, बाब अल-मुरबाहा वत-तवलिया, मक्तबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 6/123 पृष्ठ 223/715

فالصواب عندی ان الباء فی بما یتعین من خطاء النساخ و انما ہو مما یتعین ای ماملکه حال کونه من الاشیاء التی یتعین فی العقود فالتعین شرط فیما ملکه وھو الذی یرید نقله مرابحة لافی عوضه وقال فی الکفایة ۱۸ قوله نقل ماملکه ای من السلع لانه اذا اشتری بالدراھم الدنانیر لا یجوز بیع الدنانیر بعد ذلك مرابحة ۱۸ اھ وقال فی العنایة بعد ذکر الایرادات علی حد المتن قیل فعلی ھذا الاولی ان یقال نقل ماملکه من السلع بما قام عنده ۲۸ اھ و قال سعدی افندی فی حاشیتھا المراد بما ماملکه ھو المملوك المعھود الذی کان الکلام الی ھنافیه اعنی السلع ۳۸ اھ قال فی جامع الرموز التولیة ان یشترط فی البیع ای بیع العرض احتراز عن الصرف فالتولیة والمرابحة لم تکونا فی بیع الدراھم ودنانیر کما

پر "با" کاتبوں کی غلطی سے ہے (دراصل) وہ "مما یتعین" ہے یعنی جس چیز کا وہ مالک ہوا درانحالیکہ وہ ان اشیاء میں سے ہو جو عقود میں متعین ہوتی ہیں چنانچہ تعین اس مملوکہ شے میں شرط ہے جس کو وہ بطور مرابحہ منتقل کرنا چاہتا ہے عوض میں تعین شرط نہیں۔ اور کفایہ میں کہا کہ متن کا قول کہ منتقل کرنا اس چیز کو جس کا وہ مالک ہوا، اس چیز سے سامان مراد ہے کیونکہ اگر درہموں کے بدلے دنانیر خریدے تو اس کے بعد ان دیناروں کی بیع بطور مرابحہ جائز نہیں اھ عنایہ میں متن پر وارد ہونے والے اعتراضات کو ذکر کرنے کے بعد فرمایا، کہا گیا ہے کہ اس بناء پر بہتر تھا کہ وہ یوں کہا جاتا کہ اس سامان کو منتقل کرنا جس کا وہ مالک ہوا اس کے بدلے میں جتنے میں اس کو پڑا اھ اور سعدی آفندی نے اس کے حاشیہ میں کہا کہ اس چیز سے مراد جس کا وہ مالک ہوا وہی مملوک معہود ہے جس میں یہاں تک کلام ہو رہی ہے یعنی سامان اتنے کے بدلے میں جتنے میں اس کو پڑا اھ، جامع الرموز میں کہا تولیہ یہ ہے کہ شرط لگائی

جائے بیع میں یعنی سامان کی بیع میں یہ بیع صرف سے احتراز ہے چنانچہ تولیہ و مرابحہ دونوں دراہم و دنانیر کی بیع میں نہیں ہوتے جیسا کہ

---

1 الکفایۃ مع فتح القدیر کتاب البیوع باب المرابحۃ والتولیۃ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶/ ۱۲۲ 2 العنایۃ علی ہامش فتح القدیر کتاب البیوع باب المرابحۃ والتولیۃ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶/ ۱۲۲ 3 حاشیہ چلپی کتاب البیوع باب المرابحۃ والتولیۃ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶/ ۱۲۳ صفحہ 223 از 715

Fatawa Ridawiyya (Volume 17)

In 'Al-Kifayah' (1), it is stated: "And it is said in 'Al-Durr al-Mukhtar' that Murabaha is the sale of owned goods for the amount they cost plus some excess." (2) (T)

I say: And with Allah is the guidance (I say, and success is from Allah Almighty. T) For anything sold through Murabaha, it is not necessary for it to be general merchandise or commodities, but Murabaha is also permissible on gold and silver when gold is bought with dirhams or silver with dinars. It is in "Fatawa 'Alamgiri":

If one buys gold for ten dirhams and sells it with a profit of one dirham, it is permissible. Likewise in 'Al-Hawi' (3).

If one bought gold worth ten dirhams and sold it with a profit of one dirham, it is permissible; it is similarly stated in 'Al-Hawi'. (T)

In the same (work), from 'Al-Muhit':

If someone sells a silver bracelet weighing ten dirhams for one dinar and they exchanged possession, then he sells it with a profit of one dirham or a profit of half a dinar, it is permissible. As for selling with a profit of half a dinar, it is because he becomes a seller of a silver bracelet weighing ten dirhams for one and a half dinars. Since the species are different, the profit does not appear. As for selling with a profit of one dirham, according to the mentioned answer, it is the Zahir al-Riwayah (manifest transmission) because he becomes a seller of the bracelet for a dinar and a dirham. And it is permissible because one dirham is set against its equivalent (weight) of silver from the bracelet, and the rest of the bracelet is against the dinar.

If a silver bracelet weighing ten dirhams was bought for one gold dinar and then sold with a profit of one dirham (for one dinar and one dirham) or with a profit of half a dinar (i.e., for one and a half dinars), it is permissible. Selling with a profit of half a dinar is permissible because he is selling a silver bracelet weighing ten dirhams for one and a half dinars; since the species are different, the profit is not manifest. As for selling with a profit of one dirham, the stated ruling is from Zahir al-Riwayah, because against the one dirham (price) there is its equivalent, i.e., one dirham (weight) of silver from the bracelet, and the rest of the bracelet is against the dinar. (T)

1 Jami' al-Rumuz, Kitab al-Buyu', Bab al-Murabaha wa al-Tawliyah, Maktabah Islamiyah Gunbad Qamus Iran, 3/53. 2 Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-

Murabaha wa al-Tawliyah, Matba' Mujtabai Delhi, 2/35. 3 Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Sarf, Al-Bab al-Thalith, Al-Fasl al-Thani, Nurani Kutub Khana Peshawar, 3/230.

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

'अल-किफाया' (1) में है: "और 'अल-दुर्रुल मुख्तार' में कहा गया है कि मुराबहा (लागत-प्लस-लाभ) उस स्वामित्व वाली वस्तु की बिक्री है जो उसकी लागत और कुछ अतिरिक्त लाभ के बदले हो।" (2) (त)

मैं कहता हूँ: और अल्लाह की ओर से ही तौफीक है (मैं कहता हूँ, और कामयाबी अल्लाह तआला की तरफ से है। त) जो चीज़ मुराबहा के तौर पर बेची जाए, उसके लिए यह ज़रूरी नहीं कि वह केवल माल या सामान हो, बल्कि सोने और चाँदी पर भी मुराबहा जायज़ है, जबकि सोना दिरहम के बदले खरीदा गया हो या चाँदी दीनार के बदले। 'फतावा आलमगीरी' में है:

अगर किसी ने दस दिरहम में सोना खरीदा और उसे एक दिरहम के लाभ के साथ बेच दिया, तो यह जायज़ है। 'अल-हावी' (3) में भी ऐसा ही है।

अगर दस दिरहम का सोना खरीदा और एक दिरहम मुनाफ़े के साथ बेच दिया तो जायज़ है, 'अल-हावी' में भी ऐसा ही है। (त)

इसी में 'अल-मुहीत' से उद्धृत है:

अगर किसी ने दस दिरहम वज़नी चाँदी का कंगन एक दीनार के बदले बेचा और दोनों ने लेन-देन कर लिया, फिर उसे एक दिरहम के मुनाफ़े या आधे दीनार के मुनाफ़े पर बेचा, तो यह जायज़ है। आधे दीनार के मुनाफ़े पर बेचना इसलिए जायज़ है क्योंकि वह दस दिरहम वज़नी चाँदी के कंगन को डेढ़ दीनार में बेचने वाला हो गया। चूँकि प्रजाति अलग है, इसलिए मुनाफ़ा ज़ाहिर नहीं होता। रहा एक दिरहम मुनाफ़े पर बेचना, तो बताए गए जवाब के अनुसार यह 'ज़ाहिरुल रिवायत' है क्योंकि वह कंगन को एक दीनार और एक दिरहम के बदले बेचने वाला बना। और यह जायज़ है क्योंकि एक दिरहम के बदले कंगन में से उसी के बराबर यानी एक दिरहम चाँदी हो गई और बाक़ी कंगन दीनार के बदले।

अगर दस दिरहम वज़नी चाँदी का कंगन सोने के एक दीनार के बदले खरीदा गया, फिर उसे एक दिरहम मुनाफ़े पर (एक दीनार और एक दिरहम के बदले) या आधे दीनार मुनाफ़े पर (यानी डेढ़ दीनार के बदले) बेच दिया तो जायज़ है। आधे दीनार मुनाफ़े पर बेचना इसलिए जायज़ है क्योंकि वह दस दिरहम वज़नी चाँदी के कंगन को डेढ़ दीनार में बेचने वाला है, चूँकि प्रजाति अलग है इसलिए

मुनाफ़ा ज़ाहिर नहीं हुआ। रहा एक दिरहम मुनाफ़े पर बेचना, तो उक्त हुक्म 'ज़ाहिरुल रिवायत' से है क्योंकि एक दिरहम के बदले कंगन में से उसके बराबर यानी एक दिरहम चाँदी हुई और बाक़ी कंगन दीनार के बदले। (त)

1 जामिअुल रुमूज़, किताबुल बुयूअ, बाब अल-मुराबहा व अल-तवलिया, मकतबा इस्लामिया गुम्बद कामूस ईरान, 3/53। 2 दुर्रुल मुख्तार, किताबुल बुयूअ, बाब अल-मुराबहा व अल-तवलिया, मतबअ मुज्तबाई दिल्ली, 2/35। 3 फतावा हिन्दिया, किताबुस सर्फ़, अल-बाब अल-सालिस, अल-फ़स्ल अल-सानी, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 3/230।

पेज 224 / 715

فی الکفایۃ ۱ اھ وقال فی الدرالمختار المرابحۃ بیع ما ملکہ من العروض بما قام علیہ وبفضل اھ ۲- کفایہ میں ہے اھ در مختار میں کہا کہ مرابحہ یہ ہے کہ سامانِ مملوک کو اتنے کے بدلے جتنے میں اس کو پڑا ہے اور کچھ زیادتی کے ساتھ فروخت کرنا، (ت)

اقول: وباللہ التوفیق (میں کہتا ہوں اور توفیق اللہ تعالٰی سے ہے۔ت) جو چیز مرابحۃً بیچی جائے نہ تو اس کا عرض وسلع ومتاع وکیلا ہونا لازم بلکہ سونے چاندی پر بھی مرابحہ جائز ہے جبکہ سوناروپوں کو خریدا ہویا چاندی اشرفیوں کو، فتاوٰی عالمگیری میں ہے:

اذا اشتری ذھباً بعشرۃ دراھم فباعہ بربح درھم جاز کذا فی الحاوی ۳- اگر دس درہم کا سونا خریدا اور ایک درہم نفع کے ساتھ فروخت کردیا تو جائز ہے، ایسا ہی حاوی میں ہے۔ (ت)

اسی میں محیط سے ہے:

اذا باع قلب فضۃ وزنہ عشرۃ دراھم بدینار وتقابضا ثم باعہ بربح درھم او بربح نصف دینار جاز اما اذا باعہ بربح نصف دینار فلانہ یصیر بائعاً قلب فضۃ وزنہ عشرۃ دراھم بدینار ونصف وزنہ عشرۃ دراھم بدینار ونصف دینار لان الجنس مختلف فلا یظھر الربح۔ واما اذا باع بربح درھم فبما ذکر من الجواب ظاھر الروایۃ لانہ یصیر بائعاً للقلب بدینار ودرھم، وانّہ جاز لانہ یجعل بازاء الدرھم من القلب مثلہ والباقی من القلب بازاء الدینار ۔ وعن اگر دس درہم وزنی چاندی کا کنگن سونے کے ایک دینار کے بدلے میں خریدا پھر ایک درہم نفع پر (ایک دینار اور ایک درہم کے بدلے میں) یا نصف دینار نفع پر (یعنی ڈیڑھ دینار کے بدلے میں) فروخت کردیا تو جائز ہے، نصف دینار نفع پر بیچنا تو اس لئے جائز ہے کہ وہ چاندی کے ایک ایسے کنگن کو ڈیڑھ دینار میں فروخت کرنے والا ہے، جس کا

وزن دس درہم ہے کیونکہ جنس مختلف ہے لہذا نفع ظاہر نہ ہوا، رہا ایک درہم نفع پر بیچنا تو حکم مذکور ظاہر الروایہ ہے کیونکہ ایک درہم کے عوض کنگن میں سے اس کی مثل یعنی ایک درہم ہوا اور باقی کنگن دینار کے بدلے۔ (ت)

۱ جامع الرموز کتاب البیوع باب المرابحۃ والتولیۃ مکتبۃ اسلامیۃ گنبد قاموس ایران ۳/ ۵۳ ۲ درمختار کتاب البیوع باب المرابحۃ والتولیۃ مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۳۵ ۳ فتاوٰی ہندیہ کتاب الصرف الباب الثالث الفصل ثانی نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۳۰

Fatawa-e-Razvia, Volume 17

Abu Yusuf said: "It is not permissible etc."[1] The remaining bracelet was exchanged for dinars. It is narrated from Imam Abu Yusuf that this is not permissible etc. (T)

Neither does a transaction being 'Sarf' (exchange of currencies/precious metals) absolutely necessitate its prohibition; gold bought for ten rupees and sold for eleven, or a ten-rupee weight silver bracelet bought for one gold coin (Ashrafi) and sold for one and a half gold coins or one gold coin and one rupee—all these are 'Sarf' and Murabaha (cost-plus sale) is permissible. Nor is the absence of 'Sarf' absolutely sufficient for the validity of Murabaha; if one buys a maund (unit of weight) of wheat for a maund of wheat, their Murabaha sale is prohibited (haram) as it constitutes usury (Riba), even though it is not 'Sarf'. It is stated in Sharunbulali on Al-Durar:

"When a usurper hides a fungible item (Mithli) and is judged to pay its equivalent, he becomes its owner. However, it is not permissible for him to sell it for more than its cost because that would be usury."[2]

A usurper hid a fungible item. The judge ruled that he must return its equivalent. Thus, he became the owner of the usurped item. It is not permissible for him to sell this item for more than its cost price because this constitutes interest (Riba). (T)

It is stated in [Fatawa] Hindiyya, quoting Al-Muhit:

"If one buys a sealed measure of wheat for two sealed measures of barley without specifying the particular items, and then both parties take possession, there is no harm in selling the wheat on a Murabaha basis. Similarly, this applies to every category of things sold by volume (Makil) or weight (Mawzun) when exchanged for a different category. From the implication of the phrase 'with another category,' it is inferred that if the exchange is within the same genus, Murabaha is not permissible. We will soon, God willing, provide you with the proof for this."[3]

If someone purchased one measure of wheat for two unspecified measures of barley and both parties took possession, there is no issue in selling the wheat via Murabaha. The same ruling applies to selling any category of measurable or weighable items for another category. (End quote). From the implication of Hindiyya's statement "with another category," the benefit is derived that if the exchange is between the same genus, Murabaha sale is impermissible. We will soon, Insha'Allah, give you the proof for this. (T)

Rather, the refined research is that for any item to be sold via Murabaha, two conditions must be met:

---

[1] Fatawa Hindiyya, Kitab al-Sarf, Chapter 3, Section 2, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 3/230-31. [2] Ghunyat Dhawi al-Ahkam fi Bughyat al-Durar al-Ahkam, Chapter on Murabaha and Tawliya, Mir Muhammad Kutub Khana, Karachi, 2/180. [3] Fatawa Hindiyya, Kitab al-Buyu', Chapter 14, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 3/161.

फ़तावा-ए-रिज़विया, जिल्द 17

अबू यूसुफ़ से उद्धरण: "यह जायज़ नहीं है इत्यादि।"[1] बाकी कंगन दीनारों के बदले हो गया। इमाम अबू यूसुफ़ से रिवायत है कि यह जायज़ नहीं है इत्यादि। (त)

न तो किसी सौदे का 'सर्फ़ (मुद्रा/कीमती धातुओं का विनिमय) होना पूर्णतः इसकी मनाही का कारण है; जैसे दस रुपये में सोना खरीदकर ग्यारह रुपये में बेचना, या दस रुपये भार का चांदी का कंगन एक अशरफ़ी में खरीदकर डेढ़ अशरफ़ी या एक अशरफ़ी और एक रुपये में बेचना—यह सब 'सर्फ़ है और मुराबहा जायज़ है। और न ही 'सर्फ़ न होना मुराबहा की वैधता के लिए पर्याप्त है; यदि कोई एक मन (वजन की इकाई) गेहूँ को एक मन गेहूँ के बदले खरीदता है, तो उनकी मुराबहा बिक्री हराम है क्योंकि यह सूद (ब्याज) है, भले ही यह 'सर्फ़ न हो। शरुनबुलाली अली अद-दुरर में है:

"जब कोई ग़ासिब (गबन करने वाला) किसी मिस्ली (समान वस्तु) चीज़ को छिपा देता है और उस पर वैसी ही चीज़ देने का फ़ैसला सुनाया जाता है, तो वह उसका मालिक बन जाता है। उसके लिए इसे इसकी लागत से अधिक पर बेचना जायज़ नहीं है क्योंकि यह सूद है।"[2]

ग़ासिब ने मिस्ली चीज़ को गायब कर दिया। काज़ी (न्यायाधीश) की ओर से उस पर उसकी मिस्ल (समान वस्तु) देने का फ़ैसला जारी हुआ। अब वह उस ग़सब की गई चीज़ का मालिक बन गया। उसके लिए जायज़ नहीं है कि वह इस चीज़ को उसकी लागत से अधिक पर बेचे क्योंकि यह सूद है। (त)

फ़तावा हिंदिया में अल-मुहीत के हवाले से है:

"यदि कोई व्यक्ति गेहूँ की एक सीलबंद माप को जौ की दो गैर-निर्धारित सीलबंद मापों के बदले में खरीदे और फिर दोनों पक्षों ने कब्ज़ा ले लिया हो, तो गेहूँ को मुराबहा के आधार पर बेचने में कोई हर्ज नहीं है। इसी तरह, नाप (मक़ील) और तोल (मौज़ून) वाली हर श्रेणी की चीज़ों को दूसरी श्रेणी के साथ बेचने का यही हुक्म है। 'दूसरी श्रेणी के साथ' वाक्यांश के अर्थ से यह लाभ प्राप्त हुआ कि यदि समान नस्ल (जिंस) का विनिमय समान नस्ल से हो, तो मुराबहा बिक्री जायज़ नहीं है। हम जल्द ही, इंशाअल्लाह, आपको इसका प्रमाण देंगे।"[3]

अगर किसी ने गेहूँ का एक मख़्तूम (सीलबंद माप) जौ के दो गैर-मुअय्यन (अनिश्चित) मख़्तूमों के बदले में खरीदा और फिर आपसी कब्ज़ा भी कर लिया, तो गेहूँ को मुराबहा के तौर पर बेचने में कोई

हर्ज नहीं। ऐसे ही नापे और तोले जाने वाली हर चीज़ की एक किस्म को दूसरी किस्म के साथ बेचने का यही हुक्म है। (हिंदिया का कथन समाप्त)। फ़तावा हिंदिया के शब्द "दूसरी किस्म के साथ" के मफ़हूम (तात्पर्य) ने यह लाभ दिया कि यदि जिंस का मुकाबला जिंस से हो, तो बै-ए-मुराबहा (मुराबहा बिक्री) नाजायज़ है। हम जल्द ही इंशाअल्लाह आपको इसकी दलील (प्रमाण) देंगे। (त)

बल्कि तहकीक (शोध) यह है कि जो चीज़ मुराबहा बेची जाए उसमें दो शर्तें हैं:

---

[1] फ़तावा हिंदिया, किताब अस-सर्फ़, बाब 3, फ़स्ल 2, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 3/230-31। [2] ग़ुनियत ज़वी अल-अहकाम फ़ी बुग़ियत अल-दुरर अल-अहकाम, बाब अल-मुराबहा वल-तवलिया, मीर मुहम्मद कुतुब खाना, कराची, 2/180। [3] फ़तावा हिंदिया, किताब अल-बुयू, बाब 14, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 3/161।

ابی یوسف انه لا یجوز ۱ الخ باقی کنگن دینار کے عوض ہو گیا امام ابو یوسف سے مروی ہے کہ یہ جائز نہیں الخ۔ (ت)

نہ بیع کا صرف ہونا مطلقاً اس کی ممانعت کو مستلزم، سونا کہ دس روپے کو خریدا تھا گیارہ روپے کو بیچا یا دس روپے بھر چاندی کا کنگن کہ ایک اشرفی کو مول لیا تھا ڈیڑھ اشرفی یا ایک اشرفی اور ایک روپے کو بیچنا، یہ سب صرف ہی ہے اور مرابحہ اور جائز، نہ صرف نہ ہونا مطلقاً جواز مرابحہ کو کافی، من بھر گیہوں من بھر گیہوں کو خریدے، ان کی بیع مرابحہ حرام ہے کہ سود ہے حالانکہ صرف نہیں۔ شرنبلالی علی الدرر میں ہے:

المثلی اذا غیبه الغاصب وقضی علیه بمثله مملکه ولا یجوز له بیعه بازید منه لکونه ربی ۲۔

غاصب نے مثلی شے کو غائب کردیا، قاضی کی طرف سے اس پر اس کی مثل دینے کا فیصلہ صادر ہوا تو اب وہ مغصوب کا مالک بن گیا اس کے لئے جائز نہیں کہ اس چیز کو اس سے زائد پر فروخت کرے کیونکہ یہ سود ہے، (ت)

ہندیہ میں محیط سے ہے:

لو اشتری مختوم حنطة بمختومی شعیر بغیر عینهما ثم تقابضا فلا بأس بان یبیع الحنطة مرابحة، وکذلك کل صنف من المکیل والموزون بصنف آخراه، افاد بمفهوم قوله بصنف اخر انه لو قوبل الجنس بالجنس لم تجز المرابحة وسنعطیك دلیله ان شاء الله تعالی، ۳

اگر کسی نے گندم کا ایک مختوم جو کے دو غیر معین مختوموں کے بدلے میں خریدا پھر باہمی قبضہ بھی کر لیا تو گندم کو بطور مرابحہ فروخت کرنے میں کوئی حرج نہیں ایسے ہی ہر کیلی

اور وزنی چیزوں کی ایک قسم کو دوسری قسم کے ساتھ بیچنے کا یہی حکم ہے اھ ہندیہ کے قول یصنف اخر (یعنی دوسری قسم کے ساتھ) کے مفہوم نے یہ فائدہ دیا کہ اگر جنس کا مقابلہ جنس سے ہو تو بیع مرابحہ ناجائز ہے، ہم عنقریب ان شاء اللہ تعالٰی تجھے اس کی دلیل دیں گے۔ (ت)

بلکہ تحقیق یہ ہے کہ جو شے مرابحہ بیچی جائے اس میں دو شرطیں ہیں:

---

۱ فتاوٰی ہندیہ کتاب الصرف الباب الثالث الفصل الثانی نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۳۰-۲۳۱ ۲ غنیہ ذوی الاحکام فی بغیۃ درر الاحکام باب المرابحۃ والتولیۃ میر محمد کتب خانہ کراچی ۲/ ۱۸۰ ۳ فتاوٰی ہندیہ کتاب البیوع الباب رابع عشر نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۱۶۱

First Condition: The item must be specific, meaning that the exchange contract pertains to its specific essence, rather than a general item becoming a liability. Prices, such as rupees or gold coins (Ashrafis), are not specified in exchange contracts; if an item is bought for a hundred rupees, it is not mandatory to pay those exact hundred rupees that were present at the time, any hundred can be given. However, if, for example, gold bracelets are sold, those specific bracelets must be provided; it is not permissible to replace them with other bracelets even if they are identical in weight and craftsmanship. This condition applies to all three: Murabaha (profit-mark-up sale), Tawliyah (sale at cost), and Wadiah (sale at a loss). That is, whether selling at a profit from the original, or at cost, or at a loss, it is necessary for the item to be specified here because this contract is executed on that previously owned item. Since the original item was not specified, one cannot claim it is the same item. Therefore, if gold coins are purchased with rupees, they cannot be sold through Murabaha.

[Arabic Text]: As stated in At-Tabyin, Al-Fath, Al-Inayah, Al-Kifayah, Al-Bahr, An-Nahr, Az-Zahiriyyah, Al-Khaniyyah, Khizanat al-Muftin, Al-Hindiyyah, Jami' al-Rumuz, and others. Although 'Ta' (Tahtawi) has quoted from Sari al-Din's commentary on Az-Zaylai, citing Al-Bada'i, that it is permissible. (1) [Urdu Explanation]: As specified in Tabyin, Fath al-Qadir, Inaya, Kifaya, Bahr, Nahr, Zahiriya, Khaniya, Khazanat al-Muftin, Hindiya, and Jami' al-Rumuz. Although Tahtawi has quoted from Sari al-Din's commentary on Tabyin, referencing Bada'i, that it is permissible. (T)

Because gold coins are not specified; if the seller gave other identical coins in their place, it would be permissible. And now that he is selling them, they will still not be specific, whether he gives these gold coins or others like them. So how can it be said that the gold coins that first entered his possession are the same ones being sold at this profit margin for it to be a Murabaha sale? It is stated in Fatawa Imam Qazi Khan:

[Arabic Text]: A man purchased dinars for dirhams, then sold the dinars as Murabaha. This is not permissible because dinars are not specified in a sale; therefore, the amount received in the exchange contract (Sarf) was not the subject of the first sale. (2) [Urdu Explanation]: A person purchased dinars in exchange for dirhams, then sold those dinars through Murabaha. This is not permissible because dinars do not become specified in a sale. Therefore, the dinars possessed during the currency exchange contract cannot be considered as the exact same subject of the first sale. (T)

Footnotes: 1. Hashiya al-Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar, Book of Sales, Chapter on Murabaha and Tawliyah, Dar al-Ma'rifah Beirut, 3/94. 2. Fatawa Qazi Khan, Book of Sales, Chapter on Credit, Naval Kishore Lucknow, 2/401.

फ़तावा रिज़विया (जिल्द 17)

पहली शर्त: वह वस्तु विशिष्ट (निर्दिष्ट) होनी चाहिए, यानी विनिमय अनुबंध उसकी विशिष्ट सत्ता से संबंधित होता है, न कि यह कि एक सामान्य चीज़ ज़िम्मेदारी (ज़िम्मा) पर अनिवार्य हो जाए। क़ीमत जैसे रुपया या अशरफ़ी, विनिमय अनुबंधों में निर्दिष्ट नहीं होते; यदि कोई चीज़ सौ रुपये में खरीदी गई है, तो यह कतई ज़रूरी नहीं कि वही सौ रुपये दिए जाएं जो उस समय सामने थे, बल्कि कोई भी सौ रुपये दे सकता है। लेकिन अगर, उदाहरण के लिए, सोने के कंगन बेचे जाएं तो विशेष रूप से वही कंगन देने होंगे; वह उन्हें बदलकर दूसरे कंगन नहीं दे सकता, भले ही वे वज़न और बनावट में उनके समान हों। यह शर्त मुराबहा (लागत प्लस लाभ), तवलिया (लागत पर) और वज़ीआ (लागत से कम पर) तीनों में है। यानी पहले से लाभ पर बेचे या बराबर या कमी पर, यहाँ उस वस्तु का निश्चित होना इसलिए ज़रूरी है क्योंकि यह अनुबंध उसी पिछली स्वामित्व वाली वस्तु पर किया जाता है। और जब वह निश्चित नहीं है, तो यह नहीं कह सकते कि यह वही वस्तु है। इसीलिए, अगर रुपयों से अशरफियाँ खरीदी जाएं तो उन्हें मुराबहा के तौर पर नहीं बेचा जा सकता।

[अरबी पाठ]: जैसा कि तबीन, फ़तह, इनाया, किफ़ाया, बहर, नहर, ज़हीरिया, खानिया, ख़ज़ानतुल मुफ़्तीन, हिंदिया और जामेउर रुमूज़ आदि में स्पष्ट किया गया है। यद्यपि 'ता' (तहतावी) ने ज़ैलई पर सरीउद्दीन के हाशिये से बदाइअ के हवाले से उद्धृत किया है कि यह जायज़ है। (1) [उर्दू स्पष्टीकरण]: जैसा कि तबीन, फ़तहुल क़दीर, इनाया, किफ़ाया, बहर, नहर, ज़हीरिया, खानिया, ख़ज़ानतुल मुफ़्तीन, हिंदिया और जामेउर रुमूज़ में इस पर नस (स्पष्ट उल्लेख) की गई है। यद्यपि 'ता' ने तबीन के हाशिये सरीउद्दीन से बदाइअ के हवाले से नकल किया है कि यह जायज़ है। (त)

इसलिए कि अशरफियाँ निश्चित नहीं होतीं; यदि बेचने वाला उन अशरफियों के बदले वैसी ही दूसरी दे देता तो जायज़ था, और अब जो यह बेच रहा है, अब भी वे निश्चित नहीं होंगी; चाहे वह ये अशरफियाँ दे या उनके जैसी दूसरी। तो यह कैसे कहा जा सकता है कि जो अशरफियाँ पहले उसके स्वामित्व में आई थीं, वही इतने लाभ पर बेची जा रही हैं कि वह मुराबहा बिक्री हो? फ़तावा इमाम क़ाज़ी ख़ान में है:

[अरबी पाठ]: एक व्यक्ति ने दिरहम के बदले दीनार खरीदे, फिर उन दीनारों को मुराबहा के रूप में बेचा। यह जायज़ नहीं है क्योंकि दीनार बिक्री में निश्चित नहीं होते हैं; अतः विनिमय अनुबंध (सरफ़) में प्राप्त राशि पहली बिक्री की वस्तु नहीं थी। (2) [उर्दू स्पष्टीकरण]: एक व्यक्ति ने दिरहमों के बदले

दीनार खरीदे फिर उन दीनारों को बतौर मुराबहा बेचा तो यह जायज़ नहीं क्योंकि दीनार बिक्री में मुतअय्यन (निश्चित) नहीं हुआ करते लिहाज़ा अक़्द-ए-सरफ़ (विनिमय अनुबंध) में जिन दीनारों पर क़ब्ज़ा किया गया बे-ऐनही (वही के वही) वही पहली बिक्री का मबीअ (वस्तु) करार न पाएं। (त)

पाद टिप्पणियाँ: 1. हाशियतुत तहतावी अलल दुर्रिल मुख्तार, किताबुल बुयूअ, बाबुल मुराबहा वत तवलिया, दारुल मारिफ़ा बेरुत 3/94 2. फ़तावा क़ाज़ी ख़ान, किताबुल बुयूअ, फ़स्ल फ़िल अजल, नवल किशोर लखनऊ 2/401

पृष्ठ 226/715

شرط اول: وہ شے معین ہو یعنی عقد معاوضہ اس کی ذات خاص سے متعلق ہوتا ہے نہ یہ کہ ایک مطلق چیز ذمہ پر لازم آتی ہو، ثمن جیسے روپیہ اشرفی عقود معاوضہ میں متعین نہیں ہوتے، ایک چیز سو روپے کو خریدی کچھ ضرور نہیں کہ یہی سو روپے جو اس وقت سامنے تھے ادا کرے بلکہ کوئی سو دے دے، اور اگر مثلاً سونے کے کنگن بیچے تو خاص وہی کنگن دینے ہوں گے، یہ نہیں کر سکتا کہ ان کو بدل کر دوسرے کنگن دے اگر چہ وزن ساخت میں ان کے مثل ہوں یہ شرط مرابحہ و تولیہ و وضیعہ تینوں میں ہے یعنی اول سے نفع پر بیچے یا برابر کو یا کمی پر، یہاں اس شئی کا معین ہونا اس لئے ضرور ہے کہ یہ عقد اسی شئی مملوک سابق پر وارد کیا جاتا ہے اور جب وہ معین نہیں تو نہیں کہہ سکتے کہ یہ وہی شئی ہے، ولذا اگر روپوں سے اشرفیاں خریدیں تو ان کو مرابحہ نہیں بیچ سکتے۔

كما نص عليه في التبيين والفتح والعناية والكفاية والبحر والنهر والظهيرية والخانية وخزانة المفتين والهندية وجامع الرموز وغيرهما وان نقل ط عن حاشية سرى الدين على الزيلعي نقل عن البدائع انه يجوز 1- جیسا کہ تبیین، فتح القدیر، عنایہ، کفایہ، بحر، نہر، ظہیریہ، خانیہ، خزانہ المفتین، ہندیہ اور جامع الرموز میں اس پر نص کی گئی ہے اگر چہ طانے تبیین کے حاشیہ سری الدین سے بحوالہ بدائع نقل کیا ہے کہ یہ جائز ہے۔ (ت)

اس لئے کہ اشرفیاں معین نہیں ہوتیں، بیچنے والا ان اشرفیوں کے بدلے دوسری اسی طرح کی دے دیتا تو جائز تھا اور اب جو یہ بیچ رہا ہے اب بھی متعین نہ ہوں گی یہ اشرفیاں دے یا ان کے ساتھ کی دوسری، تو یہ کیونکر کہا جا سکتا ہے کہ جو اشرفیاں پہلے اس کی ملک میں آئی تھی وہی اتنے نفع پر بیچیں کہ بیع مرابحہ ہو، فتاوٰی امام قاضی خاں میں ہے:

رجل اشترى دنانير بدراهم ثم باع الدنانير مرابحة لا يجوز لان الدنانير لا تتعين في البيع فلم يكن المقبوض بعقد الصرف مبيعاً في البيع الاول 2- ایک شخص نے درہموں کے عوض دینار خریدے پھر ان دیناروں کو بطور مرابحہ بیچا تو یہ جائز نہیں کیونکہ دینار بیع میں متعین نہیں ہوا کرتے لہٰذا عقد صرف میں جن دیناروں پر قبضہ کیا گیا بعینہ وہی بیع اول کا مبیع قرار نہ پائے۔ (ت)

1 حاشیه الطحطاوی علی الدر المختار کتاب البیوع باب المرابحة والتولیة دار المعرفة بیروت ۳/ ۹۴

2 فتاویٰ قاضی خان کتاب البیوع فصل فی الاجل نولکشور لکھنؤ ۲/ ۴۰۱

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

In Fath al-Qadir, it is mentioned:

Arabic	Urdu Translation
Murabahah is not permissible in this because the counter-values of Sarf (currency exchange) are not specified; thus, these specific Dinars were not specified so that their becoming the subject of sale (Mabi') would be necessary. [1]	Murabahah is impermissible in this because the counter-values in currency exchange (Bay' al-Sarf) are not specified. Thus, these exact dinars did not become specified such that it would be necessary for them to be the object of sale. (T)

And if gold jewelry was purchased for rupees, then it can be sold via Murabahah, because it became specified in the sale, so the contract will occur on the first-owned property.

Arabic	Urdu Translation
As we have previously mentioned, it is clear from it that their intention with 'commodities' (Ardh) and 'goods' (Sila') is everything that is specified, even if it is one of the two currencies. And by 'exchange' (Sarf) they mean that in which the exchange that entered the ownership of one who intends to sell it via Murabahah is not specified. And that the first statement of al-Fath is superior, meaning the intention is the transfer of what he owned of what is a specified sale by the indication of his statement 'at the first price', for its counterpart being an absolute price indicates that what he owned was necessarily an absolute object of sale. [2]	As we have mentioned before, it has become clear from this that by 'commodities' and 'goods', the jurists mean everything that is specified, even if it is one of the two currencies. And by 'Sarf' contract, they mean that sale in which the exchange does not become specified, which was acquired into the ownership of the person who intends to sell it via Murabahah. From this, it also became clear that the first statement of Fath is superior, meaning the intent is to transfer this specified object of sale which he became the owner of. The evidence for this is his phrase "first price" because having an absolute price against it implies that the thing he owned is necessarily an absolute object of sale. (T)

This is the research/verification of the first condition. (T)

Second Condition: It should not be such a usurious (ribawi) property that was taken in exchange for its own kind, such as gold for gold, silver for silver, wheat for wheat, or barley for barley. It is mentioned in Alamgiriyyah:

Arabic	Urdu Translation
If gold is purchased for gold or silver for silver, Murabahah is not permissible at all. Similarly it is in al-Tatarkhaniyyah. [3]	If gold was bought in exchange for gold, or silver in exchange for silver, then Murabahah in it is not permissible at all. This is in Tatarkhaniyyah. (T)

Footnotes: 1. Fath al-Qadir, Kitab al-Buyu', Bab al-Murabahah wa al-Tawliyah, Maktabah Nooriya Razawiyya, Sukkur, 6/122 2. Fath al-Qadir, Kitab al-Buyu', Bab al-Murabahah wa al-Tawliyah, Maktabah Nooriya Razawiyya, Sukkur, 6/122 3. Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Sarf, Chapter 3, Section 2, regarding Murabahah, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 3/231

फतावा रज़विया (जिल्द 17)

फ़त्ह अल-क़दीर में है:

अरबी

मुराबाहा इसमें जायज़ नहीं है क्योंकि सरफ़ (मुद्रा विनिमय) के दोनों बदले निश्चित नहीं होते; अतः ये विशिष्ट दीनार निश्चित नहीं हुए कि उनका मबीअ (बिक्री की वस्तु) होना अनिवार्य हो। [1]

उर्दू अनुवाद

इसमें मुराबाहा इसी लिए नाजायज़ है क्योंकि बैअ-ए-सरफ़ के बदले निश्चित नहीं होते, तो ठीक यही दीनार निश्चित नहीं हुए कि उनका मबीअ होना लाज़िम होता। (त)

और अगर सोने के गहने रुपयों के बदले खरीदे गए, तो उसे मुराबाहा के तौर पर बेचा जा सकता है क्योंकि वह बैअ (बिक्री) में निश्चित हो गया, अतः अनुबंध (अक़्द) पहले स्वामित्व वाली वस्तु पर होगा।

अरबी

जैसा कि हमने पहले उल्लेख किया है, इससे यह स्पष्ट हो गया कि 'अर्ज़' (माल) और 'सिला' (वस्तुओं) से उनका अभिप्राय हर वह चीज़ है जो निश्चित हो जाए, चाहे वह दो मुद्राओं में से एक ही क्यों न हो। और 'सरफ़' से उनका अभिप्राय वह बिक्री है जिसमें वह बदला निश्चित न हो जो उस व्यक्ति के स्वामित्व में आया जो उसे मुराबाहा के तौर पर बेचना चाहता है। और यह कि फ़त्ह का पहला कथन उत्तम है, यानी अभिप्राय उस निश्चित मबीअ को स्थानांतरित करना है जिसका वह स्वामी बना है, जिसका प्रमाण उनका कथन 'प्रथम मूल्य के साथ' है, क्योंकि इसके विपरीत पूर्ण मूल्य होने का लाभ यह है कि वह जिस चीज़ का स्वामी बना, वह अनिवार्य रूप से मबीअ मुतलक़ है। [2]

उर्दू अनुवाद

जैसा कि हम पहले उल्लेख कर चुके हैं और इसी से स्पष्ट हो गया कि यहाँ 'अर्ज़' और 'सिला' से फ़ुक़हा का अभिप्राय हर वह चीज़ है जो निश्चित हो, चाहे वह नक़दैन (सोना-चाँदी) में से कोई एक हो। और अक़्द-ए-सरफ़ से उनका अभिप्राय वह बैअ है जिसमें वह बदला निश्चित न हो जो उस व्यक्ति के स्वामित्व में प्राप्त हुआ जो मुराबाहा के तौर पर इसे बेचने का इरादा रखे। और इससे यह भी स्पष्ट हुआ कि फ़त्ह का कथन उत्तम है, यानी अभिप्राय इस निश्चित मबीअ को स्थानांतरित करना है जिसका वह स्वामी हुआ है, इस पर प्रमाण उनका कथन "समन-ए-अव्वल" (प्रथम मूल्य) है, क्योंकि इसके बदले में समन-ए-मुतलक़ (पूर्ण मूल्य) होना इस बात का लाभ देता है कि जिस चीज़ का वह स्वामी हुआ वह आवश्यक रूप से मबीअ-ए-मुतलक़ है। (त)

तो यह है पहली शर्त का शोध/सत्यापन। (त)

दूसरी शर्त: वह ऐसा रिबावी (ब्याजयुक्त) माल न हो जो अपनी ही नस्ल के बदले लिया गया हो, जैसे सोने के बदले सोना, चाँदी के बदले चाँदी, गेहूँ के बदले गेहूँ, या जौ के बदले जौ। आलमगीरिया में है:

अरबी	उर्दू अनुवाद
यदि सोने को सोने से या चाँदी को चाँदी से खरीदा जाए, तो मुराबाहा बिल्कुल भी जायज़ नहीं है। इसी प्रकार तातारखनिया में है। [3]	अगर सोने को सोने के बदले या चाँदी को चाँदी के बदले खरीदा गया, तो इसमें मुराबाहा बिल्कुल जायज़ नहीं। यह तातारखनिया में है। (त)

पाद-टिप्पणियाँ: 1. फ़त्ह अल-क़दीर, किताब अल-बुयूँ, बाब अल-मुराबाहा व अल-तवलिया, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 6/122 2. फ़त्ह अल-क़दीर, किताब अल-बुयूँ, बाब अल-मुराबाहा व अल-तवलिया, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 6/122 3. फतावा हिन्दिया, किताब अल-सरफ़, अध्याय 3, खंड 2, मुराबाहा के विषय में, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 3/231

पृष्ठ 227/715

فتح القدیر میں ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
انما لم تجز المرابحة في ذلك لان بدلی الصرف لا یتعینان فلم تکن عین هذه الدنانیر متعینة لتلزم مبیعا_1	اس میں مرابحہ اسی لئے ناجائز ہے کہ بیع صرف کے بدلین متعین نہیں ہوتے تو بعینہ یہی دینار متعین نہ ہوئے کہ ان کا مبیع ہو نالازم ہوتا۔(ت)

اور اگر سونے کا گہنا روپوں کو خرید ا تو اسے مرابحۃً بیچ سکتا ہے کہ وہ بیع میں متعین ہو گیا تو عقد سے مملوک اول پر واقع ہوگا۔

عربی متن	اردو ترجمہ
کما قدمناه و به ظهر ان مرادهم بما بالعرص والسلع کل مایتعین و لم من احد النقدین و بالصرف مالا یتین فیه البدل الذي حصل في ملك من یرید بیعه مرابحة و ان الاولی قول الفتح المراد نقل ما ملکه مما هو ببیع متعین بدلالة قوله بالثمن الاول فان کون مقابله ثمنا مطلقا یفیدان مامکله بالضرورة مبیع مطلقا_2 اھ	جیسا کہ ہم پہلے ذکر کرچکے ہیں اور اسی سے ظاہر ہو گیا کہ یہاں پر عرض اور سلع سے فقہاء کی مراد ہر وہ چیز ہے جو متعین ہو اگرچہ نقدین میں سے کوئی ایک ہو اور عقد صرف سے ان کی مراد وہ بیع ہے جس میں وہ بدل متعین نہ ہو جو اس شخص کی ملکیت میں حاصل ہو جو بطور مرابحہ اس کو بیچنے کا ارادہ کرے، اور اس سے یہ بھی ظاہر ہوا کہ فتح کا قول اولیٰ ہے یعنی مراد یہ ہے کہ اس مبیع متعین کو منتقل کرنا جس کا وہ مالک ہوا ہے اس پر دلیل اس کا قول "ثمن اول" ہے اس لئے کہ اس کے مقابل ثمن مطلق ہونا اس بات کا فائدہ

عربی متن	اردو ترجمہ

دیتا ہے کہ جس چیز کا وہ مالک ہوا وہ ضروری طور پر مبیع

مطلق ہے اھ (ت)

فھذا ھو تحقیق الشرط الاول (پس یہ ہے شرط اول کی تحقیق۔ت) شرط دوم: وہ ایسا مال ربوی نہ ہو جو اپنی جنس کے بدلے لیا ہو جیسے سونا سونے یا چاندی چاندی، یا گیہوں ، گیہوں، یا جو جو کو، عالمگیر یہ میں ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
ان اشتری ذھبا بذھب او فضۃ بفضۃ لم تجز مرابحۃ اصلا کذا في التتارخانیۃ_3	اگر سونے کو سونے کے بدلے یا چاندی کو چاندی کے بدلے خریدا تو اس میں مرابحہ بالکل جائز نہیں۔ یہ تاتارخانیہ میں ہے۔(ت)

1 فتح القدیر کتاب البیوع باب المرابحۃ والتولیۃ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۱۲۲ 2 فتح القدیر کتاب البیوع باب المرابحۃ والتولیۃ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۱۲۲ 3 فتاوٰی ہندیہ کتاب الصرف الباب الثالث الفصل الثانی فی المرابحۃ نورانی کتب خانہ پشاور ۳ / ۲۳۱

This condition exists in selling at a higher or lower price relative to the first Murabaha and Wadi'ah, not in Tawliyah, i.e., selling at an equal price. I say: And with Allah is success. The reason for this is that when an usurious (Ribawi) commodity, in which excess or deficiency leads to interest (Riba), is obtained in exchange for its own kind, now if he sells it through Murabaha, will he exchange it for its own kind or for a different kind? If he exchanges it for its own kind, it will be obligatory that both are exactly equal, how is excess or deficiency possible when it is the very essence of Riba? And if he exchanges it for a different kind, then it is neither Murabaha nor can it be permissible. Murabaha was meant to be selling at the cost price it was acquired for, plus some profit; here the kind of compensation has changed.

(Arabic Text)

And from this, the dismissal of the objection raised in 'al-Inayah' against the definition in 'al-Hidayah' becomes apparent, which was followed in 'al-Bahr'. As he said, and the wording for Al-Akmal in summary is: "It was objected against him that it contains ambiguity from which a definition must be free. Because in the author of al-Hidayah's statement 'the first price,' either the specific original price is intended or its equivalent. The first is not possible because the specific original price has become the property of the first seller. Nor is the second possible because the equivalent (of the price) is not free from two cases: either it means being equivalent to the first price in terms of kind, or in terms of quantity. Equivalence in terms of kind is not a condition because of the evidence found in 'al-Idah' and 'al-Muhit' that when one sells something as Murabaha, if an equivalent of what he bought it with exists, then this

(Urdu Translation/Explanation)

And from this, the dismissal of the objection raised in 'al-Inayah' against the definition in 'al-Hidayah' becomes apparent, and 'al-Bahr' followed it. In summary, the words of Al-Akmal are: It was objected that this definition (the definition in Hidayah) contains ambiguity, which a definition must be free from. Because from the author of Hidayah's statement "first price," is the specific first price meant or its equivalent? There is no way toward the first because the specific first price became the property of the first seller. Nor is there a way toward the second because the second (equivalent of the price) is not free from two states: either it means equivalence to the first price in terms of kind, or in terms of quantity. Equivalence in terms of kind is not a condition due to the evidence in 'al-Idah' and 'al-Muhit' that when one sells something as Murabaha, if an equivalent of what he bought it with is present, then

(Arabic Text)

Murabaha sale is permissible, whether he set the profit in the same kind as the capital (e.g., dirhams from dirhams) or from a different kind (e.g., dinars from dirhams), or vice versa, provided it is known."

Page 228 of 715

(Urdu Translation/Explanation)

this Murabaha sale is permissible, whether he kept the profit from the kind of the capital, i.e., dirhams from dirhams, or from something else, i.e., dinars from dirhams.

جلد بفتدہم (۱۷) [जिल्द १७] فتاوىٰ رضویہ [फ़तावा रज़विया]

यह शर्त मुराबाहा (लाभ पर बेचना) और वजीअह (हानि पर बेचना) में पहले के मूल्य के आधार पर कम या ज़्यादा में बेचने के मामले में है, तौलिया (समान मूल्य पर बेचना) में नहीं। मैं कहता हूँ: और अल्लाह की मदद से सफलता है। इसका कारण यह है कि जब कोई रिबवी (सूदी) माल, जिसमें कमी या बेशी से सूद हो जाता है, अपनी ही श्रेणी के बदले में प्राप्त होता है, तो अब यदि वह इसे मुराबाहा के रूप में बेचेगा, तो वह इसे अपनी श्रेणी के बदले बेचेगा या किसी अन्य श्रेणी के बदले? यदि वह उसी श्रेणी के बदले बेचता है, तो यह अनिवार्य होगा कि दोनों पूरी तरह समान हों, कमी-बेशी कैसे संभव है जब यह स्वयं रिबा (सूद) है? और यदि वह किसी अन्य श्रेणी के बदले बेचता है, तो न तो यह मुराबाहा हुआ और न ही यह जायज़ हो सकता है। मुराबाहा तो यह था कि जिस मूल्य पर उसने इसे खरीदा है, उसी पर कुछ लाभ जोड़कर बेचे, यहाँ तो विनिमय की श्रेणी ही बदल गई।

(अरबी पाठ)

और इससे उस आपत्ति का खारिज होना स्पष्ट हो गया जो 'अल-इनाया' में 'अल-हिदाया' की परिभाषा पर की गई थी और 'अल-बहर' ने उसका अनुसरण किया। जैसा कि उन्होंने कहा, और अल-अकमल के शब्दों में संक्षेप में: "उन पर यह आपत्ति की गई कि यह परिभाषा अस्पष्टता (इबहाम) लिए हुए है जिससे एक परिभाषा का मुक्त होना आवश्यक है। क्योंकि हिदाया के लेखक के कथन 'प्रथम मूल्य' (समन-ए-अव्वल) से तात्पर्य या तो वही मूल मूल्य है या उसके समान। पहले की कोई गुंजाइश नहीं है क्योंकि मूल मूल्य तो पहले विक्रेता की संपत्ति बन गया। और न ही दूसरे की गुंजाइश है क्योंकि समान (मूल्य का विकल्प) दो स्थितियों से खाली नहीं है: या तो इससे तात्पर्य श्रेणी (जिन्स) के आधार पर प्रथम मूल्य के समान होना है या मात्रा के आधार पर। श्रेणी के आधार पर समानता इस दलील के कारण

(उर्दू अनुवाद/व्याख्या)

और इससे उस आपत्ति का खारिज होना ज़ाहिर हो गया जो हिदाया की परिभाषा पर इनाया में वारिद की गई और बहर ने उसकी इत्तेबा की। इख़्तसारन लफ़्ज़ अकमल के यह हैं कि इस पर एतराज़ किया गया है कि यह तारीफ (तारीफ-ए-हिदाया) इबहाम पर मुश्तमिल है जिससे तारीफ का खाली होना वाजिब है, इसलिए साहिब-ए-हिदाया के कौल "समन-ए-अव्वल" से मुराद समन-ए-अव्वल का ऐन है या उसकी मिस्ल। अव्वल की तरफ कोई राह नहीं क्योंकि ऐन-ए-अव्वल तो बाए-ए-अव्वल की मिल्क हो गया और न ही सानी की तरफ कोई राह है क्योंकि सानी (समन की मिस्ल) दो हाल से खाली नहीं, या तो उससे मुराद जिन्स के एतबार से समन-ए-अव्वल का मिस्ल होना है या मिकदार के एतबार से। जिन्स के एतबार से

(अरबी पाठ)

शर्त नहीं है जो 'अल-ईजाह' और 'अल-मुहीत' में है कि जब कोई मुराबाहा के तौर पर किसी चीज़ को बेचता है, यदि उस चीज़ का विकल्प मौजूद है जिसके बदले उसने इसे खरीदा था, तो यह मुराबाहा की बिक्री जायज़ है चाहे उसने लाभ को मूलधन (रास-उल-माल) की श्रेणी से रखा हो यानी दिरहम के बदले दिरहम, या उसके अलावा यानी दिरहम के बदले दीनार, या इसके विपरीत, बशर्ते कि वह ज्ञात हो।"

(उर्दू अनुवाद/व्याख्या)

मिस्लियत तो इस दलील की वजह से शर्त नहीं जो ईज़ाह और मुहीत में है कि जब उसने बतौरे-मुराबाहा किसी चीज़ की बय की, अगर उस चीज़ की मिस्ल मौजूद है जिसके बदले में उसने उसको खरीदा था तो यह बय मुराबाहा जायज़ है चाहे उसने नफ़ा रास-उल-माल यानी दराहम की जिन्स यानी दराहम से रखा या उसके गैर भी यानी दीनारों से रखा हो।

یہ شرط مرابحہ و وضیعہ اول کے اعتبار سے زیادہ یا کم بیچنے میں ہے تولیہ یعنی برابر بیچنے میں نہیں اقول: وباللہ التوفیق وجہ اس کی یہ ہے کہ جب ایک ربوی مال جس میں کمی بیشی سے سود ہو جاتا ہے اپنی جنس کے بدلے اسے ملا ہے، اب جو یہ اسے مرابحہ بیچتے گا تو اس کی جنس سے بدلے گا یا غیر جنس سے، اگر جنس سے بدلے تو فرض ہو گا کہ دونوں پورے برابر ہوں، کمی بیشی کیونکر ممکن عین ربو ہے، اور اگر غیر جنس سے بدلے تو نہ مرابحہ ہوئی، نہ جائز ہو سکتی ہے، مرابحہ تو یہ تھی کہ جس عوض پر اسے پڑی ہے اسی کو مع کچھ نفع کے بیچے، یہاں عوض کی جنس بدل گئی۔

| وبه ظهر سقوط مااعترض به فی العنایة علی تعریف الهدایة و تبعه فی البحر اذ قال واللفظ للأکمل بالاختصار"اعترض علیه بانه مشتمل علی ابهام یجب عنه خلوا لتعریف لان قوله بالثمن الاول اما ان یراد به عین الثمن الاول او مثله لاسبیل لا الاول لان عین الثمن الاول صار ملکا للبائع الاول، ولا الی الثانی لانه لایخلوا ما ان یراد المثل من حیث الجنس او المقدار الاول لیس بشرط لما فی الایضاح والمحیط انه اذا باعه مرابحة فان کان ما اشتراه به له مثل جاز سواء جعل الربح من جنس راس المال الدراهم من الدراهم او من غیر الدراهم من الدنانیر او علی العکس اذا کان معلوما | اور اس سے اس اعتراض کا ساقط ہونا ظاہر ہو گیا جو ہدایہ کی تعریف پر عنایہ میں وارد کیا گیا اور بحر نے اس کی اتباع کی اختصاراً لفظ اکمل کے یہ ہیں کہ اس پر اعتراض کیا گیا ہے کہ یہ تعریف،(تعریفِ ہدایہ) ابہام پر مشتمل ہے جس سے تعریف کا خالی ہونا واجب ہے اس لئے صاحبِ ہدایہ کے قول "ثمنِ اول" سے مراد ثمنِ اول کا عین ہے یا اس کی مثل، اول کی طرف کوئی راہ نہیں کیونکہ عینِ اول تو بائعِ اول کی ملک ہو گیا اور نہ ہی ثانی کی طرف کوئی راہ ہے کیونکہ ثانی (ثمن کی مثل)

دو حال سے خالی نہیں یا تو اس سے مراد جنس کے اعتبار سے ثمنِ اول کا مثل ہونا ہے یا مقدار کے اعتبار سے جنس کے اعتبار سے مثلیت تو اس دلیل کی وجہ سے شرط نہیں جو ایضاح اور محیط میں ہے کہ جب اس نے بطورِ مرابحہ کسی چیز کی بیع کی اگر اس چیز کی مثل موجود ہے جس کے بدلے میں اس نے اس کو خریدا تھا تو یہ بیع مرابحہ جائز ہے چاہے اس نے نفع راس المال یعنی دراہم کی جنس یعنی دراہم سے رکھا یا اس کے غیر بھی یعنی دیناروں سے رکھا ہو |

Fatawa-e-Razawiyya Volume (17)

[Left Column - Arabic Text] Purchase with it is permissible because everything is price (Thaman). The second implies that the wages of the bleacher, dyer, embroiderer, and others should not be added to the capital, etc. (1). Al-Akmal, although he answered it, chose the latter part, but the author of al-Bahr was not satisfied with it; rather, he rejected it with something that does not benefit the objection except later. I say: It is strange that the objector confined [the options] and invalidated all the parts, so how can he object with ambiguity? Why didn't he rule with invalidity? Then, the most amazing thing is the reliance on what was quoted from al-Idah and al-Muhit, for it has no relevance to the claim, as pointed out by al-Allama Sa'di Effendi where he says, "It is not hidden from you that what he quoted from those two books only indicates the non-stipulation of the profit being of the same genus as the capital, not the non-stipulation of the second price (Thaman) being of the same genus as the first in genus (2)." I say:

[Right Column - Urdu Translation/Explanation] Or let the situation be reversed (i.e., capital is in Dinars instead of Dirhams). When this is specified, then buying in exchange for it is permissible because all these are 'price' (Thaman). And if similarity in terms of quantity is intended, then this necessitates that the wages of the washerman, dyer, and engraver, etc., should not be combined with the capital, etc. Although Akmal answered this by choosing the final option, the author of Bahr is not satisfied with it, rather he rejected it, which gives nothing but a subsequent objection. I say: (I say) It is a wonder that the objector, while narrowing down, declared all options void; so how did the objection of ambiguity arise? Why was the ruling of invalidity not applied? Then the most severe wonder is on the reliance placed on the text quoted from 'Idah' and 'Muheet', because it has no connection with the claim, as Allama Sa'di Effendi cautioned on this saying, "O addressed one! It is not hidden from you that what Akmal has quoted from these two books, that points to the fact that it is not a condition for the profit to be like the capital in terms of genus; it does not point to the fact that it is not a condition for the second price to be like the first price in terms of genus." I say: (I say)

[Footnotes - Arabic] 1. Al-'Inayah on the margin of Fath al-Qadir, Chapter of Murabahah and Tawliyah, Maktaba Nooria Razawiyya, Sukkur, 6/122. 2. Hashiya Sa'di Effendi on the margin of Fath al-Qadir, Chapter of Murabahah and Tawliyah, Maktaba Nooria Razawiyya, Sukkur, 6/122.

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द सत्रह (१७)

[बायां कॉलम - अरबी पाठ] इसके साथ खरीदारी जायज़ है क्योंकि सब कुछ कीमत (थमन) है। दूसरा यह मक़सद रखता है कि पूंजी (रास अल-माल) में धोबी, रंगरेज़, बेल-बूटे बनाने वाले और अन्य लोगों की मज़दूरी नहीं जोड़ी जानी चाहिए, इत्यादि (१)। अल-अकमल ने हालांकि इसका उत्तर दिया, लेकिन उन्होंने अंतिम हिस्से को चुना, पर अल-बहर के लेखक इससे संतुष्ट नहीं थे; बल्कि उन्होंने इसे ऐसी बात से खारिज कर दिया जो आपत्ति में बाद के अलावा कोई लाभ नहीं देती। मैं कहता हूँ: यह आश्चर्य की बात है कि आपत्ति करने वाले ने [विकल्पों] को सीमित कर दिया और सभी हिस्सों को अमान्य कर दिया, तो फिर वह अस्पष्टता के साथ आपत्ति कैसे कर सकता है? अमान्यता का निर्णय क्यों नहीं दिया गया? फिर, सबसे आश्चर्यजनक बात अल-इदाह और अल-मुहीत से उद्धृत किए गए अंश पर निर्भरता है, क्योंकि दावे से इसका कोई संबंध नहीं है, जैसा कि अल्लामा सादी एफेंदी ने इशारा किया है जहाँ वे कहते हैं, "आप पर यह छुपा नहीं है कि उन दो पुस्तकों से उन्होंने जो उद्धृत किया है, वह केवल इस बात का संकेत देता है कि मुनाफ़े का पूंजी के समान जाति (जीनस) का होना अनिवार्य शर्त नहीं है, न कि इस बात का कि दूसरी कीमत का पहली कीमत के समान जाति का होना अनिवार्य शर्त नहीं है (२)।" मैं कहता हूँ:

[दायां कॉलम - उर्दू अनुवाद/व्याख्या] या इसके विपरीत स्थिति हो (यानी पूंजी दिर्हमों के बजाय दीनारों में हो)। जब यह निर्दिष्ट हो, तो इसके बदले खरीदारी जायज़ है क्योंकि ये सभी 'थमन' (कीमत) हैं। और यदि मात्रा के संदर्भ में समानता अभिप्रेत है, तो यह आवश्यक बनाता है कि पूंजी के साथ धोबी, रंगरेज़ और नक्काशी आदि की मज़दूरी न मिलाई जाए, इत्यादि। हालाँकि अकमल ने अंतिम विकल्प चुनकर इसका उत्तर दिया, लेकिन बहर के लेखक इससे संतुष्ट नहीं हैं, बल्कि उन्होंने इसे अस्वीकार कर दिया, जो कि बाद की आपत्ति के अलावा कुछ नहीं देता। मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) यह आश्चर्य की बात है कि आपत्ति करने वाले ने सीमित करते हुए सभी विकल्पों को शून्य घोषित कर दिया; तो फिर अस्पष्टता की आपत्ति कैसे उत्पन्न हुई? अमान्यता का निर्णय क्यों नहीं लागू किया गया? फिर सबसे गंभीर आश्चर्य उस भरोसे पर है जो 'इदाह' और 'मुहीत' से उद्धृत पाठ पर किया गया है, क्योंकि दावे के साथ इसका कोई संबंध नहीं है, जैसा कि अल्लामा सादी एफेंदी ने इस पर आगाह करते हुए कहा, "हे संबोधित व्यक्ति! आप पर यह छुपा नहीं है कि अकमल ने इन दो पुस्तकों से जो उद्धृत किया है, वह इस बात की ओर इशारा करता है कि लाभ का पूंजी के समान जाति का होना

शर्त नहीं है; यह इस बात की ओर इशारा नहीं करता कि दूसरी कीमत का पहली कीमत के समान जाति का होना शर्त नहीं है।" मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ)

[पाद टिप्पणियाँ - अरबी] १. अल-इनाया, फ़त अल-क़दीर के हाशिये पर, मुराबाहा और तवलिया का अध्याय, मकतबा नूरिया रिज़विया, सुक्कुर, ६/१२२। २. हाशिया सादी एफेंदी, फ़त अल-क़दीर के हाशिये पर, मुराबाहा और तवलिया का अध्याय, मकतबा नूरिया रिज़विया, सुक्कुर, ६/१२२।

पृष्ठ ७१५ का २२९

[بایاں کالم - عربی متن] یجوز به الشراء لان الکل ثمن والثانی یقتضی ان لایضم الی رأس المال اجرة القصار والصباغ والطراز وغیرها ۱ الخ والاکمل وان اجاب عنه فانما اختار الشق الاخیر والبحر لم یرضه بل رده بما لایفید الایراد الا بعدا۔ اقول: والعجب ان المعترض حصر والبطل جمیع الشفق فکیف یعترض بالابهام لم لا یحکم بالبطلان ثم العجب اشد العجب الاستناد بما نقل عن الایضاح والمحیط فانہ لامساس لہ بالمدعی کما نبہ علیہ العلامۃ سعدی آفندی حیث یقول "لایخفی علیك ان مانقله من ذینك الکتابین انمایدل علی عدم اشتراط مما ثلثة الربح لرأس المال جنسا لا علی عدم شرطبة مماثلة الثمن الثانی للاول فی الجنس ۲ اھ۔ اقول:

[دایاں کالم - اردو ترجمہ و تشریح] یا اس کے برعکس صورت ہو (یعنی راس المال بجائے درہموں کے دینار ہوں) جب یہ معین ہو تو اس کے بدلے خریداری جائز ہے کیونکہ یہ سب ثمن ہیں اور اگر مقدار کے اعتبار سے مثلیت مراد ہو تو یہ مقتضی ہے اس امر کو کہ راس المال کے ساتھ دھوبی، رنگریز اور نقش و نگار وغیرہ کی اُجرت نہ ملائی جائے الخ اکمل نے اگر چہ اس کا جواب دیتے ہوئے آخری شق کو اختیار کیا مگر صاحب بحر اس پر راضی نہیں بلکہ اس کو رد کر دیا جو کہ اعتراض میں بعد کے سوا کچھ فائدہ نہیں دیتا۔ اقول: (میں کہتا ہوں) تعجب ہے معترض نے حصر کرتے ہوئے تمام شقوں کو باطل قرار دیا ہے تو اس پر ابہام کا اعتراض کیسے ہوا بطلان کا حکم کیوں نہیں لگایا گیا پھر شدید ترین تعجب اس استناد پر ہے جو ایضاح اور محیط سے منقول عبارت پر کیا گیا کیونکہ اس کا مدعا سے کوئی تعلق نہیں جیسا کہ علامہ سعدی آفندی نے یہ کہتے ہوئے اس پر تنبیہ فرمائی کہ اے مخاطب! تجھ پر پوشیدہ نہیں کہ اکمل نے ان دونوں کتابوں سے جو نقل کیا ہے وہ تو اس بات پر دلالت کرتا ہے کہ نفع کا اعتبار جنس کے راس المال کی مثل ہونا شرط

نہیں، اس بات پر وہ دلالت نہیں کرتا کہ ثمن ثانی کا باعتبار جنس کے ثمن اول کی مثل ہونا شرط نہیں اھ اقول: (میں کہتا ہوں)

[حواشی - عربی] ۱ العنایة علی هامش فتح القدیر باب المرابحة والتولیة مکتبة نوریہ رضویہ سکھر ۶/ ۱۲۲ ۲ حاشیہ سعدی آفندی علی ہامش فتح القدیر باب المرابحة والتولیة مکتبة نوریہ رضویہ سکھر ۶/ ۱۲۲

Fatawa Razawiya Volume 17 (17)

[Arabic Text - Left Column] And there is no regard for what the portrayal with dirhams and dinars may delude, nor for the reasoning that all are price, for profit is permitted absolutely from whatever genus it may be, whether cloth, a slave, land, or other than that, provided that it is a known amount, as we have previously stated from Al-Inayah on the authority of Al-Tuhfah, and the like is in general books; so this is one aspect. I say secondly: even if we disregard this, there is nothing in it that prevents or negates the condition of homogeneity, for they have explicitly stated that the dirham and dinar are one genus in several places, including Murabaha, as in Al-Bahr, Al-Durr, and others. I say thirdly: and it is the decisive statement and the destroyer of the objection from its root, that all books have unanimously agreed that the condition for the validity of Murabaha and Tawliya is that the compensation, i.e., the first price, be fungible (mithli). Those who gave the reasoning, such as Al-Hidayah and its commentaries, including Al-Inayah, Al-Tabyin, Al-Bahr, and others—and the wording is from Al-Inayah—reasoned that the basis of both (Tawliya and Murabaha) is on guarding against betrayal (dishonesty) and...

[Urdu Text - Right Column] Describing the situation with dirhams and dinars, which creates an illusion, is not intended by Allama Afandi, nor is that reasoning which Akmal stated by saying all these are prices, because profit is absolutely permissible regardless of the genus, i.e., whether it is cloth, a slave, land, etc., provided that it is a specified quantity as we have previously stated from Inayah with reference to Tuhfat al-Fuqaha, and the like is in common books. This is an interpretation. I say secondly: (I say again) even if we disregard this, there is nothing in it that prevents or negates the condition of homogeneity, so the jurists have clarified that in several places dirham and dinar are considered one genus, including Murabaha, as is in Bahr and Durr etc. I say thirdly: (I say for the third time) the statement which is decisive and completely demolishes the objection is that all books agree that the condition for the validity of Tawliya and Murabaha is that the compensation, i.e., the first price, be 'mithli' (fungible), and those who stated the reasoning like Hidaya and its commentaries Inayah, Tabyin, and Bahr etc. have explained its reason like this—the

words are from Inayah—that the basis of both of these (Tawliya and Murabaha) is on guarding against betrayal and...

1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Bay' al-Fasid, Matba' Mujtabai Delhi 2/46; Bahr al-Ra'iq, Kitab al-Buyu', Bab al-Bay' al-Fasid, HM Saeed Company Karachi 6/83.

फ़तावा रज़विया जिल्द 17 (17)

[अरबी पाठ - बायां कॉलम] और दिरहम और दीनार के रूप में चित्रण से उत्पन्न होने वाले भ्रम पर कोई ध्यान नहीं दिया जाएगा, और न ही उस तर्क पर कि ये सब मूल्य (क़ीमत) हैं, क्योंकि लाभ पूर्ण रूप से जायज़ है चाहे वह किसी भी श्रेणी की वस्तु हो, चाहे कपड़ा हो, गुलाम हो, ज़मीन हो या कुछ और, बशर्ते कि उसकी मात्रा ज्ञात हो, जैसा कि हमने पहले इनाया के हवाले से तोहफा से वर्णन किया है, और इसी तरह की बात आम किताबों में भी है; तो यह एक पहलू है। मैं दूसरी बात कहता हूँ: यदि हम इसे नज़रअंदाज़ भी कर दें, तो इसमें ऐसी कोई चीज़ नहीं है जो समानता की शर्त में बाधक हो, क्योंकि उन्होंने स्पष्ट किया है कि कई स्थानों पर दिरहम और दीनार को एक ही श्रेणी माना जाता है, जिसमें मुराबहा भी शामिल है, जैसा कि अल-बहर, अल-दुर्र और अन्य में है। मैं तीसरी बात कहता हूँ: और यह निर्णायक कथन है और आपत्ति को जड़ से मिटा देने वाला है कि सभी किताबें इस पर सर्वसम्मति से सहमत हैं कि मुराबहा और तौवलिया की वैधता की शर्त यह है कि मुआवज़ा यानी पहली क़ीमत 'मिस्ली' (समान वस्तु) हो। और तर्क देने वालों ने, जैसे हिदाया और उसकी व्याख्याओं इनाया, तबीन, बहर आदि ने इसकी वजह यह बताई है - और शब्द इनाया के हैं - कि इन दोनों (तौवलिया और मुराबहा) का आधार विश्वासघात (खयानत) से बचने पर है और...

[उर्दू पाठ - दायां कॉलम] दिरहम और दीनार से स्थिति का वर्णन करना जो भ्रम पैदा करता है, वह अल्लामा आफ़ंदी को वांछित नहीं है, और न ही वह तर्क जो अकमल ने यह कहकर दिया कि ये सब क़ीमत हैं, क्योंकि नफ़ा (लाभ) तो पूर्ण रूप से जायज़ है चाहे किसी भी श्रेणी से हो, यानी चाहे कपड़ा हो, गुलाम हो या ज़मीन आदि, बशर्ते कि वह मात्रा निश्चित हो जैसा कि हम इनाया के हवाले से तोहफ़तुल फ़ुक़्हा से पहले बयान कर चुके हैं और इसी तरह की बात आम किताबों में है। यह एक व्याख्या है। मैं दूसरी बात कहता हूँ: (मैं दोबारा कहता हूँ) अगर हम इससे हटकर भी देखें, तो इसमें ऐसी कोई चीज़ नहीं है जो समानता (मजानसत) की शर्त में बाधक हो, अतः न्यायविदों ने स्पष्ट किया है कि कुछ स्थानों पर दिरहम और दीनार को एक ही श्रेणी माना जाता है, उनमें मुराबहा भी शामिल है, जैसा कि बहर और दुर्र आदि में है। मैं तीसरी बात कहता हूँ: (मैं तीसरी बार कहता हूँ) जो कथन निर्णायक है और आपत्ति को पूरी तरह समाप्त कर देने वाला है वह यह है कि तमाम किताबें इस पर सहमत हैं कि तौवलिया और मुराबहा के सही होने की शर्त यह है कि मुआवज़ा यानी पहली क़ीमत 'मिस्ली' हो, और तर्क देने वालों जैसे हिदाया और उसकी व्याख्याओं इनाया, तबीन और बहर आदि ने

इसका कारण इस प्रकार बताया है - शब्द इनाया के हैं - कि इन दोनों (तौवलिया और मुराबहा) का आधार खयानत से बचने पर है और...

1. दुर्र-ए-मुख्तार, किताबुल बुयू, बाबुल बे-फ़ासिद, मतबा मुजतबाई दिल्ली 2/46; बहरुर रैक़, किताबुल बुयू, बाबुल बे-फ़ासिद, एचएम सईद कंपनी कराची 6/83।

पृष्ठ 230 का 715

[عربی عبارت - بایاں کالم] ولانظر الی مایوھمہ التصویر بالدراھم والدنانیر والتعلیل بان الکل ثمن فان الربح یجوز مطلقاً من ای جنس کان ثوبا او عبدا او ارضا او غیر ذلك بعد ان یکون مقدارا معلوماً کما قدمناہ عن العنایۃ عن التحفۃ ومثلہ فی عامۃ الکتب فھذا وجہ و اقول ثانیاً: لئن قطعنا النظر عن ھذا لم یکن فیہ مایمنع اشتراط المجانسۃ وینفیہ فقد نصوا ان الدرھم والدینار جنس واحد فی بضع مواضع منھا المرابحۃ کما فی البحر والدر وغیرھما، اقول ثالثاً: وھو القول الفصل وھادم الاعتراض من الاصل اطبقت الکتب قاطبۃ ان شرط صحۃ المرابحۃ والتولیۃ کون العوض الی الثمن الاول مثلیاً وعللہ المعللون کالھدیۃ والشروح ومنھا العنایۃ والتبیین والبحر وغیرھما واللفظ للعنایۃ بان مبناھما علی الاحتراز عن الخیانۃ و

[اردو عبارت - دایاں کالم] دراہم ودنانیر سے صورت بیان کرنا جس وہم کو پیدا کرتا ہے علامہ آفندی کو ملحوظ ہے نہ ہی وہ تعلیل جو اکمل نے یہ کہہ کر بیان کی کہ یہ سب ثمن ہیں اس لئے کہ نفع تو مطلقاً جائز ہے چاہے کسی بھی جنس سے ہو یعنی چاہے کپڑا ہو یا غلام ہو یا زمین وغیرہ ہو بشرطیکہ وہ مقدار معین ہو جیسا کہ ہم عنایہ سے بحوالہ تحفۃ الفقہاء پہلے بیان کر چکے ہیں اور اس کی مثل عام کتابوں میں ہے یہ توجیہ ہے اقول ثانیاً: (میں دوبارہ کہتا ہوں) اگر ہم اس سے قطع نظر کرلیں تو بھی اس میں ایسی کوئی چیز نہیں جو شرط مجانست سے مانع و نافی ہو، چنانچہ فقہاء نے تصریح کی ہے کہ چند جگہوں میں درہم اور دینار جنس واحد شمار ہوتے ہیں، ان میں سے مرابحہ بھی ہو، جیسا کہ بحر اور در وغیرہ میں ہے، اقول ثالثاً: (میں سہ بارہ کہتا ہوں) جو قول فیصلہ کن اور اعتراض کو سرے سے منہدم کردینے والا ہے کہ تمام کتابیں اس پر متفق ہیں کہ تولیہ و مرابحہ کے صحیح ہونے کی شرط یہ ہے کہ عوض یعنی ثمن اول مثلی ہو اور علت بیان

کرنے والوں جیسے ہدایہ اور اس کی شروحات عنایہ، تبیین اور بحر وغیرہ نے اس کی علت یوں بیان کی، لفظ عنایہ کے ہیں کہ ان دونوں (تولیہ و مرابحہ) کی بناء خیانت اور

1 درمختار کتاب البیوع باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۴۶، بحر الرائق کتاب البیوع باب البیع الفاسد ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۸۳/۶

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Arabic Text Section] Avoiding the suspicion of betrayal in non-fungible goods (qimiyyat) if possible. It may not be possible to avoid the suspicion because the buyer only buys the sold item for the value of the price (thaman) that was paid for it, as it is impossible to give the specific item if he does not own it, nor its equivalent because the assumption is its non-existence. Thus, the value becomes determined, and it is unknown, identified through conjecture and estimation. Therefore, the suspicion of betrayal is possible therein, unless the buyer sells it via Murabaha (resale with profit) to one who owned that substitute from the first seller through some means. In that case, he buys it as Murabaha with a known profit of dirhams or some measurable or weighable item, due to his ability to fulfill what he committed to. End [of quote]. I say: And do not forget what we stated before that profit is permissible absolutely, even if it is a garment, as stated in Al-Tuhfa and also in Al-Fath: if the thing he bought it with reached the one who is now selling it as Murabaha, he can sell it with a profit.

[Urdu Translation Section] The emphasis is on avoiding the suspicion of betrayal, whereas in valuable goods, although avoidance of betrayal is possible, avoidance of the suspicion of betrayal is sometimes not possible. This is because in Murabaha, the buyer can only purchase the sold item for the price at which the consideration (thaman) occurred, not for the original consideration itself. This is because when he is not its owner, giving it is impossible for him, nor can he give it in exchange for the equivalent of the price because the assumption is its non-existence. Thus, the value is determined, and it is unknown, recognized through conjecture and estimation. Therefore, a suspicion of betrayal is found in it, except when the first buyer sells the item to a person via Murabaha who has become the owner of the substitute of that item from the first seller by some means. This is because in this case, the second buyer is purchasing this item for a specific and known profit in dirhams or some measurable or weighable thing. This is because the second buyer is capable of fulfilling what he has committed to. End [of quote]. I say: (I say) do not forget what we have already mentioned, that profit is applicable absolutely even if it is cloth, as stated in Fath [al-Qadir], that if somehow the price of the sold item reaches the person who is now selling it as Murabaha, and...

1 Al-Inayah on the margin of Al-Fath al-Qadir, Book of Sales, Chapter of Murabaha and Tawliyah, Maktaba Nooriya Razawiyya Sukkur 6/124. Page 231 of 715

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

[अरबी पाठ अनुभाग] मूल्यवान वस्तुओं (क़ीमियात) में यदि संभव हो तो विश्वासघात के संदेह से बचना चाहिए। इसके संदेह से बचना कभी मुमकिन नहीं हो सकता क्योंकि खरीदार बेची गई वस्तु को उसी कीमत के बदले ही खरीद सकता है जिसमें उसका मूल्य (थमन) निर्धारित हुआ था, क्योंकि यदि वह उसका स्वामी नहीं है तो विशिष्ट वस्तु देना उसके लिए असंभव है, और न ही वह उसके समान कुछ दे सकता है क्योंकि कल्पना उसके अभाव की है। अतः मूल्य ही निर्धारित होता है, और वह अज्ञात होता है, जिसे केवल अनुमान और अटकलबाज़ी से पहचाना जाता है। इसलिए, इसमें विश्वासघात का संदेह संभव है, सिवाय इसके कि जब खरीदार उसे मुराबाहा (लाभ पर पुनर्विक्रय) के माध्यम से उस व्यक्ति को बेच दे जिसने किसी माध्यम से पहले विक्रेता से उस वस्तु का प्रतिस्थापन प्राप्त किया हो। उस स्थिति में, वह उसे दिरहम या किसी मापने या तौलने वाली वस्तु के ज्ञात लाभ के साथ मुराबाहा के रूप में खरीदता है, क्योंकि वह अपने वचन को पूरा करने में सक्षम है। समाप्त। मैं कहता हूँ: और हमने जो पहले कहा है उसे न भूलें कि लाभ पूरी तरह से जायज़ है, चाहे वह कपड़ा ही क्यों न हो, जैसा कि 'अल-तुहफ़ा' और 'अल-फ़तह' में कहा गया है: यदि वह चीज़ जिससे उसने उसे खरीदा था, उस व्यक्ति तक पहुँच गई जो अब उसे मुराबाहा के रूप में बेच रहा है, तो वह उसे लाभ के साथ बेच सकता है।

[उर्दू अनुवाद अनुभाग] विश्वासघात के संदेह से बचने पर ज़ोर है, जबकि मूल्यवान वस्तुओं में हालांकि विश्वासघात से बचना संभव है, लेकिन विश्वासघात के संदेह से बचना कभी-कभी संभव नहीं होता। ऐसा इसलिए है क्योंकि मुराबाहा में, खरीदार बेची गई वस्तु को केवल उसी मूल्य के बदले खरीद सकता है जिस पर प्रतिफल (थमन) हुआ था, न कि स्वयं मूल प्रतिफल के बदले। ऐसा इसलिए है क्योंकि जब वह उसका स्वामी नहीं है, तो उसे देना उसके लिए असंभव है, और न ही वह मूल्य के बराबर के बदले में दे सकता है क्योंकि धारणा उसके अभाव की है। इस प्रकार, मूल्य निर्धारित हो जाता है, और वह अज्ञात होता है, जिसे अनुमान और अटकलबाज़ी के माध्यम से पहचाना जाता है। इसलिए, इसमें विश्वासघात का संदेह पाया जाता है, सिवाय इसके कि जब पहला खरीदार उस वस्तु को मुराबाहा के माध्यम से उस व्यक्ति को बेचता है जो किसी कारण से पहले विक्रेता से उस वस्तु के प्रतिस्थापन का स्वामी बन गया हो। ऐसा इसलिए है क्योंकि इस मामले में, दूसरा खरीदार दिरहम या किसी मापने योग्य या तौलने योग्य वस्तु में एक विशिष्ट और ज्ञात लाभ के लिए इस वस्तु को खरीद रहा है। ऐसा इसलिए है क्योंकि दूसरा खरीदार अपनी प्रतिबद्धता को पूरा करने में सक्षम है। उद्धरण

समाप्त। मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) हमने पहले जो उल्लेख किया है उसे न भूलें, कि लाभ पूरी तरह से लागू होता है चाहे वह कपड़ा ही क्यों न हो, जैसा कि फ़तह [अल-क़दीर] में कहा गया है, कि यदि किसी तरह बेची गई वस्तु की कीमत उस व्यक्ति तक पहुँच जाती है जो अब इसे मुराबाहा के रूप में बेच रहा है, और...

1 अल-इनाया, अल-फ़तह अल-क़दीर के हाशिये पर, क्रय-विक्रय की पुस्तक, मुराबाहा और तवलिया का अध्याय, मकतबा नूरिया रज़विया सक्कर 6/124. पृष्ठ 231/715

[عربی عبارت] شبهها والاحتراز عن الخيانة فى القيميات ان امكن، وقد لايمكن عن شبهها لان المشترى لا يشترى المبيع الابقيمة ما وقع فيه من الثمن اذ لا يمكن دفع عينة حيث لم يملكه ولا دفع مثله اذ الفرض عدمه فتعينت القيمة وهى مجهولة تعرف بالخرص والظن فيتمكن فيه شبهة الخيانة الا اذا كان المشترى باعه مرابحة ممن ملك ذلك البدل من البائع الاول بسبب من الاسباب فأنه يشتريه مرابحة بربح معلوم من دراهم او شيئ من المكيل والموزون الموصوف لاقتداره على الوفاء بما التزمه اهـ اقول: ولا تنس ما قدمنا ان الربح سائغ مطلقاً و لو ثوباً كما نص عليه فى التحفة وقال فى التحفة وقال فى الفتح لو كان ما اشتراه به وصل الى من يبيعه منه فرابحه عليه بربح

[اردو ترجمہ] شبہ خیانت سے اجتناب پر ہے جبکہ قیمتی چیزوں میں اگرچہ خیانت سے اجتناب ممکن ہے مگر شبہ خیانت سے اجتناب کبھی ممکن نہیں ہوتا کیونکہ مرابحہ میں مشتری مبیع کو اس قیمت کے بدلے ہی خرید سکتا ہے جس میں ثمن واقع ہوا نہ کہ عین ثمن کے بدلے کیونکہ جب وہ اس کا مالک ہی نہیں تو اس کا دینا اس کے لیے نامکن ہے اور نہ ہی مثل ثمن کے بدلے کیونکہ مفروض اس کا عدم ہے تو قیمت ہی متعین ہوئی اور وہ مجہول ہے جو کہ ظن و تخمینہ سے پہچانی جاتی ہے لہٰذا اس میں شبہ خیانت پایا جاتا ہے سوائے اس کے کہ جب مشتری اول مبیع کو اس شخص کے ہاتھ بطور مرابحہ بیچے جو اس بائع اول سے اس مبیع کے بدل کا کسی سبب سے مالک بن چکا ہے کیونکہ اس صورت میں مشتری ثانی اس مبیع کو دراہم یا کسی کیلی وزنی شے میں سے معین و معلوم نفع پر خرید رہا ہے یہ اس لئے ہے کہ مشتری ثانی نے جس چیز کا التزام کیا ہے وہ اس کی ادائیگی پر قادر ہے اھ ، اقول: (میں کہتا ہوں) جو ہم پہلے ذکر کر چکے ہیں اس

کو مت بھولیں کہ نفع مطلقاً جاری ہوتا ہے اگرچہ کپڑا ہو جیسا کہ فتح میں کہا کہ اگر کسی طرح مبیع کے ثمن اس شخص کے پاس پہنچ جائیں جس کے ہاتھ اب یہ بیع بطور مرابحہ بیچ رہا ہے اور

18 العنایہ علی ہامش الفتح القدیر کتاب البیوع باب المرابحۃ والتولیۃ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ /

(Arabic Text)

If a person says, "I sell this to you on a Murabahah (cost-plus profit) basis based on the garment in your hand, with a profit of one dirham, or a 'Kur' of barley, or the profit of this garment," it is permissible. ^{1} Thus, restricting it to weighed or measured items has no specific underlying implication. It is clear that the condition of similarity in the initial price necessitates similarity in genus between it and the second price. Otherwise, it would lead to the negation of the intended purpose. For when an item, even if it is fungible (mithli), is exchanged for something of a different genus, the similarity disappears, and the matter reverts to evaluation (valuation). There you said that it is impossible to pay its equivalent because the assumption is its non-existence; here we say that it is impossible to pay its equivalent because the assumption is that the second sale is for something of a different genus. This was something extremely clear in the utmost clarity. Glory be to Him who caused these great scholars to overlook such an obvious point; infallibility belongs only to the Speech of Allah and the speech of the Messenger, Glorified and Exalted is He, and peace and blessings of Allah be upon him.

(Urdu Translation)

Set a specific profit on this price, for example, by saying: "I sell this item to you on a Murabahah basis in exchange for the cloth in your possession, and at a profit of one dirham, or a profit of one 'Kur' of barley, or the profit of this cloth." This Murabahah sale is permissible. Accordingly, there is no implication of restriction to items sold by measure or weight for the profit. It is obvious that the condition of the first price being similar necessitates that there be similarity in genus between the first and second prices. Because if it were not so, this would return to the intended purpose as a contradiction. Even if a thing is fungible, when it is exchanged for a different genus, the similarity is removed from between them, and the matter reverts to fixing a price (valuation). There you said that it is not possible to give an equivalent of the first price because its non-existence is assumed; here we say that it is not possible to give its equivalent because the assumption is that the second sale is in exchange for something other than its genus. This is an extremely clear matter; Pure is He who made these great figures forget such an obvious thing. Immunity from error is only for the word of Allah Almighty and the word of the Messenger of Allah, peace and blessings of Allah be upon him. (T)

And it became impermissible in such a way as was just mentioned with reference to 'Inayah' etc., that the compensation for a different genus being like and equal to the first would be purely by estimation and conjecture, and in estimation there is the possibility of error. The basis of Murabahah is on perfect trust (honesty); even the suspicion of betrayal in it is forbidden. It should be exactly equal to the first price.

---

^{1} Fath al-Qadir, Kitab al-Buyu, Bab al-Murabahah wa al-Tawliyah, Maktabah Nooriya Razawiya Sukkur 6/124. Page 232 of 715

(अरबी पाठ)

यदि कोई कहता है, "मैं आपको यह चीज़ उस कपड़े के आधार पर मुराबहा (लागत-प्लस-लाभ) पर बेचता हूँ जो आपके हाथ में है, और एक दिरहम के लाभ पर, या एक 'कुर' जौ के लाभ पर, या इस कपड़े के लाभ पर," तो यह जायज़ है। ^{1} इस प्रकार, नपे या तुले हुए सामानों तक सीमित रहने का कोई विशेष निहित अर्थ नहीं है। यह स्पष्ट है कि पहले मूल्य में समानता की शर्त, उसके और दूसरे मूल्य के बीच प्रजाति (जीन्स) में समानता की आवश्यकता को अनिवार्य बनाती है। अन्यथा, यह अपने इच्छित उद्देश्य के विरुद्ध होगा। क्योंकि जब कोई वस्तु, भले ही वह 'मिस्ली' (समान गुण वाली) हो, अपनी प्रजाति के अलावा किसी चीज़ से बदली जाती है, तो समानता समाप्त हो जाती है और मामला मूल्यांकन की ओर लौट जाता है। वहां आपने कहा कि उसके जैसा देना संभव नहीं है क्योंकि धारणा उसके अभाव की है; यहाँ हम कहते हैं कि उसके जैसा देना संभव नहीं है क्योंकि धारणा यह है कि दूसरी बिक्री उसकी प्रजाति के अलावा किसी चीज़ के बदले में है। यह एक अत्यंत स्पष्ट बात थी। पवित्र है वह जिसने इन महान विद्वानों को ऐसी स्पष्ट बात भुला दी। अचूकता तो केवल अल्लाह के कलाम और उसके रसूल

(उर्दू अनुवाद)

इस कीमत पर एक निश्चित लाभ तय करें, उदाहरण के लिए यह कहकर: "मैं आपको यह चीज़ मुराबहा के रूप में उस कपड़े के बदले में बेचता हूँ जो आपके कब्जे में है, और एक दिरहम के लाभ पर, या एक 'कुर' जौ के लाभ पर, या इस कपड़े के लाभ पर।" तो यह मुराबहा बिक्री जायज़ है। तदनुसार, लाभ के लिए माप या वजन द्वारा बेची जाने वाली वस्तुओं के प्रतिबंध का कोई अर्थ नहीं है। यह स्पष्ट है कि पहले मूल्य के समान होने की शर्त इस बात को अनिवार्य बनाती है कि पहले और दूसरे मूल्य के बीच प्रजाति के संदर्भ में समानता हो। क्योंकि यदि ऐसा नहीं होता, तो यह उद्देश्य के विपरीत होता। भले ही कोई चीज़ 'मिस्ली' हो, जब उसे दूसरी प्रजाति से बदल दिया जाता है, तो उनके बीच से समानता समाप्त हो जाती है, और मामला कीमत तय करने (मूल्यांकन) की ओर लौट जाता है। वहां आपने कहा था कि पहले मूल्य के बराबर देना संभव नहीं है क्योंकि इसका अभाव माना गया है; यहाँ हम कहते हैं कि इसके बराबर देना संभव नहीं है क्योंकि धारणा यह है कि दूसरी बिक्री इसकी प्रजाति के अलावा किसी चीज़ के बदले में है। यह एक अत्यंत स्पष्ट बात है; वह पवित्र है जिसने इन महान हस्तियों को ऐसी स्पष्ट बात भुला दी। त्रुटि से मुक्ति केवल अल्लाह सर्वशक्तिमान के शब्द और

(अरबी पाठ)	(उर्दू अनुवाद)
(सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के कलाम के लिए है।	अल्लाह के रसूल, उन पर शांति और आशीर्वाद हो, के शब्द के लिए है। (त)

और यह इस तरह से नाजायज़ हो गई जैसा कि अभी 'इनाया' आदि के संदर्भ में बताया गया था, कि एक अलग प्रजाति का मुआवज़ा पहले के समान और बराबर होना विशुद्ध रूप से अनुमान और अंदाज़े से होगा, और अनुमान में गलती की संभावना है। मुराबहा का आधार पूर्ण अमानत (ईमानदारी) पर है; इसमें खयानत (बेईमानी) का संदेह भी हराम है। यह पूरी तरह से पहले मूल्य के बराबर होना चाहिए।

---

^{1} फत्हुल क़दीर, किताबुल बुयू, बाब अल-मुराबहा वत-तवलिया, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर 6/124. पृष्ठ 232 / 715

(عربی متن)

معین کان یقول ابیعك مرابحة علی الثوب الذي بیدك وربح درهم او کر شعیر اوربح هذا الثوب جازاه 1^8 فالقصر علی المکیل والموزون لامفهوم له ومن البین ان اشتراط مثلیة الثمن الاول یوجب المماثلة بینه وبین الثمن الثانی فی الجنس اذا لاه لعاد علی مقصوده بالنقض فان الشیئ ولومثلیاً اذا بدل بخلاف جنسه خرج المثل من البین وآل الامر الی التقویم فهناك قلتم لایمکنه دفع مثله اذا الفرض عدمه وهنا نقول لایمکن دفعه مثله اذ الفرض ان البیع الثانی بخلاف جنسه وهذا کان شیئاً واضحاً فی غایة الوضوح فسبحان الذی اذ هل هؤلاء الاکابر من مثله ولاعصمة الالکلام الله وکلام الرسول جل جلاله وصلی الله تعالی علیه وسلم۔

(اردو ترجمہ)

اس ثمن پر معین نفع لگائے مثلاً یوں کہے کہ میں یہ چیز بطور مرابحہ تجھ پر فروخت کرتا ہوں اس کپڑے کے عوض جو تیرے قبضے میں ہے اور ایک درہم کے نفع پر یا ایک کُر جو کے نفع پر یا اس کپڑے کے نفع پر تو یہ بیع مرابحہ جائز ہے اھ چنانچہ نفع کے کیلی اور وزنی اشیاء میں اقتصار کا کوئی مفہوم نہیں ، اور ظاہر ہے ثمن اول کے مثل ہونے کی شرط اس بات کو واجب کرتی ہے کہ ثمن اول اور ثمن ثانی کے درمیان جنس کے اعتبار سے مماثلت ہو اس لئے کہ اگر ایسا نہ ہو تو یہ امر مقصود پر بطور نقض لوٹے گا کیونکہ کوئی شے اگر چہ مثلی ہو جب غیر جنس سے بدلی جائے تو مماثلت درمیان سے نکل جاتی ہے اور معاملہ قیمت لگانے کی طرف لوٹ آتا ہے، وہاں تم نے کہا کہ ثمن اول کی مثل دینا ممکن نہیں کیونکہ مفروض اس کا عدم ہے تو یہاں ہم کہتے ہیں کہ اس کی مثل دینا ممکن نہیں کیونکہ مفروض یہ ہے کہ بیع ثانی اس کی جنس کے غیر بدلے میں ہے یہ انتہائی واضح چیز ہے، پاک ہے وہ جس نے ان اکابر کو اس جیسی ظاہر چیز بھلا دی، خطا

(عربی متن) **(اردو ترجمہ)**

سے پاک تو صرف اللہ تعالیٰ اور رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا کلام ہے۔(ت)

اور ناجائز یوں ہوئی جس کا بیان ابھی عنایہ وغیرہ کے حوالے سے گزرا کہ غیر جنس کا عوض اول کے مثل و مساوی ہونا محض تخمین و اندازہ سے ہوگا اور تخمین میں غلطی کا احتمال ہے اور مرابحہ کی بناء کمالِ امانت پر ہے اس میں خیانت کا شبہ بھی حرام ہے پورا ٹھیک ٹھیک ثمن اول کا مساوی۔

Fatawa Razviya, Volume 17

By adding profit to it; it is impossible to state exact equality in different types. Therefore, when usurious (ribawi) property is exchanged for its own kind, selling it as Murabahah (cost-plus profit) is impossible and forbidden. This was the second necessary, mandatory, and obligatory condition, which was neglected in 'Bahr al-Raiq' despite thorough investigation.

[Arabic Column]: And this is what we promised you before, that the definition provided is also incomplete. It was necessary for him to add after his statement "of what is specified" the words "non-usurious, exchanged for its own kind." Then, wonder at the learned researcher, Abu al-Ikhlas Hasan al-Shurunbulali (may Allah Almighty have mercy on him), when an objection was raised against the mentioned definition of 'al-Durar' [which is] "selling what one owns for the like of what it cost him with an increase," with the issue of fungible property when the usurper hides it, pays compensation, and becomes the owner, yet he cannot make a profit as we have previously cited from him. He said: And it does not apply to one who said "selling for the like of the first price." I say: If the situation is described with compensation for usurpation, then "what it cost him" holds true but "the price" does not. If the situation were described with usurious property for which he became the owner by its own kind, such as wheat for wheat, then the compensation and the prices would both apply, and it would apply to all equally. So this is the verification of the second condition. And the Lord, Glory be to Him and Most High, has favored [me] with these investigations, so master them, for you will not find them in another place. And praise be to Allah for His continuous blessings, and blessings and peace be upon the Master of His Prophets, Muhammad, and his family and his beloveds.

[Urdu Column]: This is what we had previously promised you, that the definition stated by Allama Bahr is also not complete. It was incumbent upon him that after his statement "from what is specified," he should have added these words: "non-usurious, exchanged for its kind," meaning that thing should be other than usurious property against which it is compared with its own kind. Furthermore, it is surprising that Allama al-Muhaqqiq Abu al-Ikhlas Hasan Shurunbulali (may Allah Almighty have mercy on him), when an objection was raised against this definition of 'Durar'—"it is the sale of owned property for its equivalent of what it cost him plus some increase"—with this problem that if an usurper hides a thing upon giving [its value] and upon paying its liability (compensation) he becomes the owner of that usurped thing, despite that he cannot do a Murabahah sale in it as has been quoted from him,

then Allama Abu al-Ikhlas Hasan Shurunbulali said that this objection does not apply to the one who said in the definition "selling for the like of the first price," meaning to sell in exchange for the equivalent of the first price. I say: (I say) a case is described with compensation for usurpation which holds true for "what it cost him" but does not hold true for "price"; if a case was described with such usurious property of which he is its...

1 Ghunyat Dhawi al-Ahkam, Commentary on Durar al-Ahkam, Chapter of Murabahah and Tawliyah, Mir Muhammad Kutub Khana, Karachi, 2/180.

फतावा रजविया, जिल्द 17

उस पर लाभ निर्धारित करके, अलग-अलग श्रेणियों में सटीक समानता बताना असंभव है। इसलिए, जब सूदखोर (रिबावी) संपत्ति को उसकी अपनी श्रेणी के बदले लिया जाता है, तो उसे मुराबाहा (लागत-प्लस लाभ) के रूप में बेचना असंभव और हराम है। यह वह दूसरी आवश्यक, अनिवार्य और बाध्यकारी शर्त थी, जिसकी 'बहर अल-रैक' में गहन जांच के बावजूद उपेक्षा की गई।

[अरबी कॉलम]: और यह वही है जिसका हमने आपसे पहले वादा किया था कि दी गई परिभाषा भी अधूरी है। उनके लिए अपने कथन "जो निर्दिष्ट है" के बाद "गैर-सूदखोर, अपनी ही श्रेणी के बदले" शब्द जोड़ना आवश्यक था। फिर, विद्वान शोधकर्ता, अबू अल-इखलास हसन अल-शुरुनबुलाली (अल्लाह उन पर रहम करे) पर आश्चर्य होता है, जब 'अल-दुरार' की उल्लिखित परिभाषा - "जो वह मालिक है उसे उसी की लागत के समान मूल्य पर कुछ वृद्धि के साथ बेचना" - पर आपत्ति जताई गई, उस मसले के साथ कि जब अपहरणकर्ता उस वस्तु को छिपा देता है, हर्जाना देता है और उसका मालिक बन जाता है, फिर भी वह उसमें लाभ (मुराबाहा) नहीं कमा सकता जैसा कि हमने उनसे पहले उद्धृत किया है। उन्होंने कहा: और यह उस पर लागू नहीं होता जिसने कहा "पहले मूल्य के समान मूल्य पर बेचना"। मैं कहता हूँ: यदि अपहरण के हर्जाने के साथ स्थिति का वर्णन किया गया है, तो "जो उसे पड़ा" सच है लेकिन "मूल्य" सच नहीं है। यदि स्थिति का वर्णन ऐसी सूदखोर संपत्ति के साथ किया गया होता जिसके लिए वह अपनी ही श्रेणी से मालिक बना, जैसे गेहूं के बदले गेहूं, तो हर्जाना और मूल्य दोनों लागू होते, और यह सभी पर समान रूप से लागू होता। तो यह दूसरी शर्त का सत्यापन है। और प्रभु, वह पवित्र और सर्वोच्च है, ने इन शोधों के साथ मुझ पर कृपा की है, इसलिए इन्हें कंठस्थ कर लें, क्योंकि आप इसे किसी अन्य स्थान पर नहीं पाएंगे। और निरंतर वरदानों के लिए अल्लाह की प्रशंसा है, और उसके नबियों के सरदार मुहम्मद, उनके परिवार और उनके प्रियजनों पर कृपा और शांति हो।

[उर्दू कॉलम]: यह वह है जिसका हमने आपके साथ पहले वादा किया था कि जो परिभाषा अल्लामा बहर ने बयान की है वह भी पूर्ण नहीं है। उन पर अनिवार्य था कि वे अपने कथन "मम्मा यतऐयन" के बाद ये शब्द बढ़ाते "गैर रिबावी क़ुबिला बिजिनसिही" यानी वह चीज़ माल-ए-रिबावी के अलावा हो जिसका मुकाबला उसकी श्रेणी से किया गया हो। फिर अल्लामा मुहक़्क़िक़ अबू अल-इख़लास हसन शरुमबुलाली (रहमतुल्लाह अलैह) पर आश्चर्य है कि जब दुरर की इस परिभाषा - "वह मम्लूक (स्वामित्व वाली) चीज़ की बिक्री है उसकी मिसाल के साथ जितने में उसे पड़ी, कुछ अधिकता के

साथ" - पर इस मसले के साथ आपत्ति आई कि अपहरणकर्ता देने पर उस चीज़ को छिपा दे और उसका हर्जाना (ज़मान) देने पर वह उस अपहृत चीज़ का मालिक बन गया, इसके बावजूद वह उसमें मुराबाहा बिक्री नहीं कर सकता जैसा कि उनसे नकल किया जा चुका है, तो अल्लामा अबुल इख़लास हसन शरुमबुलाली ने कहा कि यह आपत्ति उस पर नहीं आती जिसने परिभाषा में यों कहा कि "बयअ बिमिसल अस-समन अल-अव्वल" यानी पहले मूल्य की मिसाल के बदले बेचना। अक़ूलु: (मैं कहता हूँ) अपहरण के हर्जाने के साथ स्थिति बयान की गई हो जो "मा क़ामा अलैहि" (जो उसे पड़ा) पर सटीक है और मूल्य पर सटीक नहीं, अगर ऐसी सूदखोर संपत्ति के साथ स्थिति बयान की जाती जिसका वह उसकी...

1 ग़ुनियत ज़वी अल-अहकाम, हाशियत दुरर अल-अहकाम, बाब अल-मुराबाहा वत-तवलियाह, मीर मुहम्मद कुतुब खाना कराची 2/180.

पृष्ठ 715 का 233

بنا کر اس پر نفع باندھے، غیر جنس میں ٹھیک مساوات بتانا محال ہے لہذا مال ربوی جب اپنی جنس کے عوض کیا ہوا سے مرابحہ بیچنا ناممکن وحرام ہے، یہ وہ شرط ثانی ضروری ولازمی و واجب تھی جس سے بحر الرائق میں باوصف استقصاء کے غفلت واقع ہوئی۔

[Arabic Column]: وهذا ما وعدناك من قبل بأن الحد الذی اتی به لم یتم ایضا وکان علیه ان یزید بعض قوله "مما یتعین" غیر ربوی قوبل بجنسه ثم العجب من العلامة المحقق ابی الاخلاص حسن الشرنبلالی رحمه الله تعالی اذا ورد علی تعریف الدرر المذکور بیع ما ملکه بمثل ما قام علیه بزیادة مسئلة المثلی اذا غیبه الغاصب وضمن وملك ولا یربح کما قدمنا عنه، قال ولا یرد علی من قال بیع بمثل الثمن الاول - اقول: صور بضمان الغصب فصدق ما قام علیه ولم یصدق الثمن ولو صور بربوی مملکه بجنسه کبر ببر لعم الضمان والاثمان وورد علی الکل بالسویة فهذا تحقیق الشرط الثانی وقد تفضل علی المولی سبحانه و تعالی بهذا المباحث فاتقنها فانك لا تجده فی محل آخر ولله الحمد علی تواتر الائه والصلوٰة والسلام علی سید انبیائه محمد واله واحبائه۔

[Urdu Column]: یہ وہ ہے جس کا ہم نے آپ کے ساتھ پہلے وعدہ کیا تھا کہ جو تعریف علامہ بحر نے بیان کی ہے وہ بھی تام نہیں، ان پر لازم تھا کہ وہ اپنے قول "مما یتعین" کے بعد یہ الفاظ بڑھاتے "غیر ربوی قوبل بجنسه" یعنی وہ چیز مال ربوی کا غیر ہو جس کا مقابلہ اس کی جنس سے کیا گیا ہو، پھر علامہ محقق ابو الاخلاص حسن شرنبلالی رحمہ اللہ تعالیٰ پر حیرت ہے کہ جب درر کی اس تعریف "وہ مملوک چیز کی بیع ہے اس کی مثل کے ساتھ جتنے میں اس کو پڑی مع کچھ زیادتی کے" پر اس مسئلہ کے ساتھ اعتراض وارد ہوا کہ غاصب دینے پر وہ اس شیئ کو غائب کردیا اور اس کا ضمان دینے پر وہ اس شیئ مغصوب کا مالک بن گیا اس کے باوجود وہ

اس میں بیع مرابحہ نہیں کرسکتا جیسا کہ اس سے نقل کرچکے ہیں، تو علامہ ابوالاخلاص حسن شرنبلالی نے فرمایا کہ یہ اعتراض اس پر وارد نہیں ہوتا جس نے تعریف میں یوں کہا کہ "بیع بمثل الثمن الاول" یعنی ثمنِ اول کی مثل کے بدلے بیع کرنا، اقول: (میں کہتا ہوں) ضمان غصب کے ساتھ صورت بیان کی گئی ہو جو "ما قام علیہ" پر صادق اور ثمن پر صادق نہیں اگر ایسے مال ربوی کے ساتھ صورت بیان کی جاتی جس کا وہ اس کی

1 غنیہ ذوی الاحکام حاشیہ درر الاحکام باب المرابحۃ والتولیۃ میر محمد کتب خانہ کراچی ۲/ ۱۸۰

If one becomes the owner in exchange for a genus, such as wheat for wheat, then this situation would involve liability for usurpation and prices, and objections would apply equally to all. This is the investigation of the second condition. Surely, the Lord (Subhanahu wa Ta'ala) has bestowed His grace upon Muhammad due to these grand discussions, so preserve them as you will not find them elsewhere. For the bestowal of these continuous blessings, praise is for Allah alone, and peace and blessings be upon the master of prophets, Muhammad Mustafa (Sallallahu Ta'ala Alaihi Wa Sallam), and his progeny and companions. (T)

When this fundamental and refined principle is established, let us proceed to the answer of the problem. I say: and success is with Allah (So I say, and guidance is from Allah. T). The second condition is naturally present in the note, as it is not ribawi property at all, nor are it and rupees or gold coins of the same genus. As for the first condition, it is verified in its very essence that it is inherently a commodity and an asset, not price, but 'priceliness' (thmaniyat) is accidental to it through convention. As long as it remains in circulation and the contracting parties do not explicitly designate it, it will not be designated in exchange contracts. It has been known above that designation is required at two times: at the time of the first ownership and at the time of this 'Murabaha' sale, so that it may be true that the very thing which previously came into his ownership was sold at this profit. The designation at the time of Murabaha is also self-evident because since Murabaha is impossible without designation and they intend Murabaha, they must have designated it, just as in the 'Salam' sale of copper coins (paisa) according to the consensus of our Imams, and in selling one designated copper coin for two designated copper coins according to our Imam-e-Azam and Imam Abu Yusuf (may Allah Ta'ala be pleased with them both), the research of which is in our treatise 'Kifl al-Faqih al-Fahim'.

[Boxed Text] (Arabic portion): And I said in 'Al-Wifaqiyyah' that the 'Muslam-fih' (object of sale in Salam) can never be the price. Therefore, their action in making copper coins as Muslam-fih is a proof of invalidation (ibtāl), i.e., invalidation of the convention of 'priceliness' which necessitates a lack of designation. In 'Al-Hidayah', regarding the disputed issue, the argument of the 'Shaikhain' (Imam Abu Hanifa and Imam Abu Yusuf) is stated that 'priceliness' in their regard is based on their convention. (Urdu portion): I stated in the agreed-upon and consensus issue that the 'Muslam-fih' can never be the price. Therefore, the step of the seller and buyer to make the copper coins (paisa) as 'Muslam-fih' is a proof of invalidation (Ibtal), i.e.,

invalidation of the convention of 'priceliness' which demands a lack of designation. And in 'Hidayah', regarding the contentious issue, the evidence of the 'Shaikhain' is described as follows: for the seller and buyer, the quality of being price (thmaniyat) is due to their mutual convention.

---

[1] Kifl al-Faqih al-Fahim, Imam al-'Ashir, Noori Kutub Khana, Data Darbar Lahore, pp. 61-62; Kifl al-Faqih al-Fahim, Imam al-'Ashir, Munazzama al-Da'wah al-Islamiyyah, Lohari Darwaza Lahore, p. 77.

यदि कोई एक ही प्रकार की वस्तु के बदले स्वामी बन जाए, जैसे गेहूँ के बदले गेहूँ, तो यह स्थिति ज़मानत (हर्जाना), गसब (छीनने) और क़ीमतों को शामिल होगी और सभी पर आपत्ति समान रूप से लागू होगी। यह दूसरी शर्त की तहक़ीक़ (जांच) है। निःसंदेह मवाली सुब्हानहू व तआला ने इन महान चर्चाओं के कारण मुहम्मद पर अपना फ़ज़्ल फ़रमाया, अतः इन्हें सुरक्षित रखें क्योंकि आप इन्हें दूसरी जगह नहीं पाएंगे। इन निरंतर नेमतों के मिलने पर अल्लाह तआला ही के लिए हम्द (प्रशंसा) है और नबियों के सरदार मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम और आपकी आल व असहाब पर दुरूद व सलाम हो। (त)

जब यह आधारभूत और परिष्कृत सिद्धांत स्थापित हो गया, तो अब समस्या के उत्तर की ओर चलें। मैं कहता हूँ: और सफलता अल्लाह की ओर से है। (तो मैं कहता हूँ और तौफ़ीक़ अल्लाह से है। त) नोट में दूसरी शर्त तो स्वयं मौजूद है कि वह सिरे से माल-ए-रिबवी ही नहीं है, न वह और रुपये या अशर्फ़ी एक ही प्रकार (जिन्स) के हैं। और पहली शर्त उसकी अपनी ज़ात में तो सत्यापित है कि वह स्वयं एक वस्तु और संपत्ति (मताअ) है न कि मूल्य (शमन), बल्कि परिपाटी (इस्तलाह) के माध्यम से उसे मूल्य होना (शमनियत) प्राप्त है। और जब तक यह प्रचलन में रहेगा और अनुबंध करने वाले इसे जानबूझकर निर्धारित (मुतअय्यन) नहीं करेंगे, विनिमय अनुबंधों में यह निर्धारित नहीं होगा। और ऊपर यह विदित हो चुका है कि यहाँ दो समय पर निर्धारण आवश्यक है: पहले स्वामित्व के समय और इस मुराबहा बिक्री के समय, ताकि यह सच हो सके कि वही वस्तु जो पहले उसके स्वामित्व में आई थी, उसे इस लाभ पर बेचा गया। मुराबहा के समय का निर्धारण भी स्वयं स्पष्ट है कि जब मुराबहा बिना निर्धारण के असंभव है और वे मुराबहा का इरादा कर रहे हैं, तो उन्होंने निश्चित रूप से इसे निर्धारित कर लिया है। जैसे हमारे इमामों की सहमति से पैसों की 'सलाम' बिक्री में, और एक निर्धारित पैसे को दो निर्धारित पैसों के बदले बेचने में हमारे इमाम आज़म और इमाम अबू यूसुफ़ रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा के निकट है, जिसकी तहक़ीक़ हमारे रिसाला 'कफ़्ल अल-फ़क़ीह अल-फ़ाहिम' में है।

[बॉक्स पाठ] (अरबी भाग का अनुवाद): मैंने 'अल-वफ़ाक़ियाह' में कहा कि 'मुसलम-फ़ीह' कभी भी मूल्य नहीं हो सकता। इसलिए, उसे मुसलम-फ़ीह बनाने पर उनकी कार्रवाई अमान्य करने (इब्ताल) का प्रमाण है, अर्थात शमनियत की परिपाटी का इब्ताल जो अनिर्धारण का परिणाम देती है। और 'हिदाया' में विवादास्पद मसले के बारे में दोनों (शैख़ैन) के लिए कहा गया है कि उनके हक़ में

शमनियत उनकी अपनी परिपाटी के कारण है। (उर्दू भाग): मैंने इत्तेफ़ाक़ी और इजमाई मसले में कहा कि मुसलम-फ़ीह कभी भी मूल्य (शमन) नहीं हो सकता, इसलिए बेचने वाले और ख़रीदने वाले का पैसों को मुसलम-फ़ीह बनाने का क़दम इब्ताल (अमान्य करने) की दलील है, अर्थात शमनियत (मूल्य होने) की परिपाटी का इब्ताल जो अनिर्धारण की मांग करती है। और हिदाया में विवादास्पद मसले के बारे में शैख़ैन की दलील इस प्रकार बयान की गई है कि बेचने वाले और ख़रीदने वाले के हक़ में शमनियत उन दोनों की अपनी परिपाटी से है।

---

1. कफ़्ल अल-फ़क़ीह अल-फ़ाहिम, इमाम अल-आशिर, नूरी कुतुब ख़ाना दाता दरबार लाहौर, पृ. ६१-६२; कफ़्ल अल-फ़क़ीह अल-फ़ाहिम, इमाम अल-आशिर, मुनज़्ज़मा अद-दावतुल इस्लामिया लोहारी दरवाज़ा लाहौर, पृ. ७७

पृष्ठ २३४ / ४१५

جنس کے بدلے میں مالک ہوا جیسے گندم کے بدلے گندم تو یہ صورت ضمان غصب اور شمنوں کو شامل ہوتی اور سب پر اعتراض کا ورود برابر ہوتا۔ یہ شرط ثانی کی تحقیق ہے۔ بیشک مولٰی سبحانہ وتعالٰی نے ان مباحث جلیلہ کے سبب محمد پر فضل فرمایا اور تو ان کو محفوظ کر کہ انھیں تو دوسری جگہ نہیں پائے گا۔ ان مسلسل نعمتوں کے عطا ہونے پر اللہ تعالٰی ہی کے لئے حمد ہے اور درود و سلام ہو نبیوں کے سردار محمد مصطفٰی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم اور آپ کی آل و اصحاب پر۔ (ت)

جب یہ اصل اصیل منقح ہوئی اب جواب مسئلہ کی طرف چلئے فاقول: وباللہ التوفیق (تو میں کہتا ہوں اور توفیق اللہ سے ہے۔ ت) نوٹ میں شرط دوم تو خود موجود ہے کہ وہ سرے سے مال ربوی ہی نہیں نہ وہ اور روپے یا اشرفی متحد الجنس۔ اور شرط اول اس کی نفس ذات میں تو متحقق ہے کہ وہ فی نفسہ ایک عرض ومتاع ہے نہ ثمن مگر بذریعہ اصطلاح اسے ثمنیت عارض ہے اور جب تک رائج رہے گا اور عاقدین بالقصد اسے متعین نہ کریں گے عقود معاوضہ متعین نہ ہوگا۔ اور اوپر معلوم ہو لیا کہ یہاں تعین دونوں وقت درکار ہے ملک اول کے وقت اور اس بیع مرابحہ کے وقت تاکہ صادق آئے کہ وہی شے جو پہلے اس کی ملک میں آئی تھی اس نفع پر بیچی۔ وقت مرابحہ کا تعین بھی خود ہی ظاہر ہے کہ جب مرابحہ بے تعین ناممکن اور وہ قصد مرابحہ کر رہے ہیں ضرور اسے متعین کر لیا جس طرح پیسوں کی بیع سلم میں ہمارے ائمہ کے اجماع سے اور ایک پیسہ معین دو پیسے معین کو بیچنے میں ہمارے امام اعظم و امام ابویوسف رضی اللہ تعالٰی عنہما کے نزدیک ہے جس کی تحقیق ہمارے رسالہ کفل الفقیہ الفاھم میں ہے۔

[Boxed Section] وقلت فی الوفاقیة ان المسلم فیه لا یکون ثمنا قط فاقدامها علی جعلها مسلما فیها دلیل علی الابطال ۱ھ ای ابطال الاصطلاح علی الثمینیة القاضیة بعدم التعیین وفی الهدایة فی الخلافیة لهما ان الثمینیة فی حقهما باصطلاحهما میں نے اتفاقی اور اجماعی مسئلہ میں کہا کہ مسلم فیہ کبھی بھی ثمن نہیں ہوسکتا لہذا بائع اور مشتری کا پیسوں کو مسلم فیہ بنانے کا اقدام دلیل ابطال ہے اھ یعنی اصطلاح ثمنیت کا ابطال جو عدم تعین کا تقاضا کرتی ہے اور ہدایہ میں اختلافی مسئلہ کے بارے میں شیخین کی دلیل یوں بیان کی کہ بائع اور مشتری کے حق میں ثمنیت ان دونوں کی باصطلاحہما

---

۱ کفل الفقیه الفاهم امام العاشر نوری کتب خانہ داتا دربار لاہور ص ۶۲-۶۱ کفل الفقیه الفاهم امام العاشر منظمة الدعوة الاسلامیه لوہاری دروازہ لاہور ص ۷۷

Fatawa Rizvia (Volume 17)

(Arabic Text)

...so it becomes void by their terminology. I said in the marginalia of 'Al-Kifl': The need to validate the contract is sufficient as a context for that. It is not necessary for this to arise from the essence of the contract itself, like someone who sells one dirham and two dinars for two dirhams and one dinar; it is interpreted as permissible by directing the genus to the non-genus, despite the fact that the essence of the contract itself does not refuse the matching of genus with genus, and the possibility of usury is like its realization. Thus, the motive for it is the need for validation, and how many similar examples are there.

(Urdu Translation)

...is due to terminology, therefore it will become void by the terminology of both. And I have said regarding this disputed issue in the marginalia of 'Kifl-ul-Faqih' that the need to validate the contract is a sufficient indicator for it. It is not necessary for it to arise from the essence of the contract itself. For example, if someone sold one dirham and two dinars in exchange for two dirhams and one dinar, then by turning the genus towards the non-genus, it will be considered permissible, even though the essence of the contract itself does not deny matching genus with genus, and the possibility of usury is also like the reality of usury. So, besides the need to validate the contract, there is no other reason for it, and there are several examples of this. (T)

Now, there is only consideration for time. If someone gifted this note to him, or gave it as charity, or he received it through a will or the estate of a deceased person, or he snatched it from someone and paid indemnity, or someone's trust was kept with him and he denied it, then sold it after paying indemnity - in all these cases, he can sell it as 'Murabahah' (resale with profit), because now in all aspects, the rupees and gold coins themselves become specific, which are natural prices. The note is a conventional price. In the first four cases, he should mention its price according to the market rate and add profit to it, for example, "This note is of one hundred rupees, I sold it to you at a profit of so many rupees." And in the last two cases, he should mention whatever indemnity he had to pay and keep a profit on it, saying "This note cost me this much and I sold it to you at so much profit." It is mentioned in 'Durr-ul-Mukhtar':

| Al-Murabahatu bai'u ma malakahu walau bi-hibatin au | Murabahah is the sale of that thing which one became the owner of, even if... |

1. Al-Hidayah, Kitab al-Buyu' (Book of Sales), Bab al-Musallam, Matba' Mujtabai Delhi, 3/94
2. Kifl-ul-Faqih al-Fahim Imam al-Aashir, Hashiya Nuri Kutub Khana, Data Darbar Lahore, p. 62; Kifl-ul-Faqih al-Fahim Imam al-Aashir, Munazzamah ad-Da'wah al-Islamiyyah, Lohari Darwaza Lahore, p. 48

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

(अरबी पाठ)

...तो यह उनकी शब्दावली के कारण शून्य हो जाता है। मैंने 'अल-किफ़्ल' के हाशिये में कहा है: अनुबंध को मान्य करने की आवश्यकता इसके लिए संदर्भ के रूप में पर्याप्त है। यह आवश्यक नहीं है कि यह अनुबंध के सार से ही उत्पन्न हो, जैसे कि कोई एक दिरहम और दो दीनार को दो दिरहम और एक दीनार के बदले बेचता है; इसे लिंग (जीनस) को गैर-लिंग की ओर निर्देशित करके जायज़ माना जाता है, इसके बावजूद कि अनुबंध का सार स्वयं लिंग के साथ लिंग के मिलान से इनकार नहीं करता है, और सूद (ब्याज) की संभावना उसके साकार होने के समान है। इस प्रकार, इसके लिए प्रेरणा अनुबंध की वैधता की आवश्यकता है, और इसके कितने ही समान उदाहरण हैं।

(उर्दू अनुवाद)

...शब्दावली के कारण है, इसलिए उन दोनों की शब्दावली से बातिल (शून्य) हो जाएगा। और मैंने इस विवादास्पद मुद्दे के बारे में 'किफ़्लुल फ़कीह' के हाशिये पर कहा है कि अक़्द (अनुबंध) को सही करने की हाजत (आवश्यकता) उस पर काफ़ी क़रीना (संकेत) है। इसका नफ़्स-ए-अक़्द (अनुबंध के सार) से नाशी (उत्पन्न) होना लाज़िम नहीं है। जैसे किसी ने एक दिरहम और दो दीनार को दो दिरहमों और एक दीनार के एवज़ (बदले) फ़रोख़्त किया। तो जिन्स (लिंग) को ग़ैर-जिन्स की तरफ़ फेरते हुए उसको जवाज़ (वैधता) पर महमूल करेंगे बावजूद इसके कि ख़ुद ज़ात-ए-अक़्द जिन्स का मुक़ाबला जिन्स से करने से इनकार नहीं करती और सूद का एहतेमाल (संभावना) भी हक़ीक़त-ए-सूद की तरह है तो सिवाए तसही-ए-अक़्द (अनुबंध की वैधता) की हाजत के इसका कोई बाइस (कारण) नहीं और इसकी मुतअद्दिद नज़ीरें (अनेक उदाहरण) हैं। (त)

अब समय पर विचार करना ही रह गया है। अगर यह नोट किसी ने उसे हिबा (उपहार) किया था या उस पर तसद्दुक़ (दान) किया या वसीयत के ज़रिए या वारिस के रूप में विरासत में मिला, या उसने किसी से छीन लिया और तावान (हर्जाना) दे दिया, या किसी की अमानत उसके पास रखी थी, उससे मुकर कर तावान देकर बेच लिया, तो इन सूरतों में वह इसे बै-ए-मुरबाह (मुनाफ़े के साथ बिक्री) कर सकता है कि अब सब लिहाज़ से रुपये और अशर्फ़ी मुअय्यन (निश्चित) होते हैं जो कि स्वाभाविक मूल्य (शमन-ए-ख़ल्की) हैं। नोट तो केवल एक प्रचलित मूल्य (शमन-ए-इस्लाही) है। पहली चार सूरतों में बाज़ार के भाव से उसकी क़ीमत बताकर उस पर नफ़ा (लाभ) लगाए, मसलन "यह नोट सौ रुपये का है, मैंने तुम्हें इतने रुपये के लाभ पर बेचा।" और पिछली दो सूरतों में जो कुछ तावान (हर्जाना)

देना पड़ा हो, वह बताकर उस पर नफ़ा रखे कि "यह नोट मुझे इतने में पड़ा और इतने नफ़ा पर मैंने तुम्हारे हाथ बेच दिया।" दुर्रे मुख़्तार में है:

| अल-मुरबाहतु बै'उ मा मलकाहु वलौ बि-हिबतिन औ | मुरबाह उस चीज़ की बिक्री है जिसका कोई मालिक बना, चाहे उपहार द्वारा या... |

1. अल-हिदाया, किताबुल बुयूअ, बाबुल मुसल्लम, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 3/94
2. किफ़्लुल फ़कीह अल-फ़ाहीम इमाम अल-आशिर, हाशिया नूरी कुतुब ख़ाना दाता दरबार लाहौर पृ. 62; किफ़्लुल फ़कीह अल-फ़ाहीम इमाम अल-आशिर, मुनज़्ज़मतुद दा'वा अल-इस्लामिया, लोहारी दरवाज़ा लाहौर पृ. 48

(عربی عبارت) **(اردو ترجمہ)**

اصطلاح کی وجہ سے ہے لہٰذا ان دونوں کی اصطلاح

فتبطل باصطلاحهما اه وقلت فيها فی هامش الكفل ان الحاجة الى تصحيح العقد تكفی قرينة على ذلك ولا يلزم كون ذلك ناشئا عن نفس ذات العقد كمن باع دريما ودينارين بدربين ودينار يحمل على الجواز صرفاً للجنس الى خلاف الجنس مع ان نفس ذات العقد لاتابى مقابلة الجنس بالجنس واحتمال الرباء كتحققه فبا الحامل عليه الاجاحة التصحيح و كم بله من نظير۔

سے باطل ہو جائے گی۔ اور میں نے اس مسئلہ اختلافیہ کے بارے میں کفل الفقیہ کے حاشیہ پر کہا ہے کہ عقد کو صحیح کرنے کی حاجت اس پر کافی قرینہ ہے اس کا نفس عقد سے ناشی ہونا لازم نہیں جیسے کسی نے ایک درہم اور دو دینار کو دو درہموں اور ایک دینار کے عوض فروخت کیا۔ تو جنس کو غیر جنس کی طرف پھیرتے ہوئے اس کو جواز پر محمول کریں گے با وجودیکہ خود ذات عقد جنس کا مقابلہ جنس سے کرنے سے انکار نہیں کرتی اور سود کا احتمال بھی حقیقت سود کی طرح ہے تو سوائے تصحیح عقد کی حاجت کے اس کا کوئی باعث نہیں اور اس کی متعدد نظیریں ہیں۔ (ت)

اب نہ رہی مگر وقت میں نظر۔ اگر یہ نوٹ کسی نے اسے ہبہ کیا تھا یا اس پر تصدق کیا یا بذریعہ وصیت یا مورث کے ترکہ میں اسے ملا یا اس نے کسی سے چھین لیا اور تاوان دے دیا یا کسی کا اس کے پاس امانت رکھا تھا اس سے منکر ہو کر تاوان دے کر بیچ لیا تو ان صورتوں میں اسے بیع مرابحہ کر سکتا ہے کہ اب سب وجوہ میں خود روپے اشرفی معین ہوتے ہیں جو ثمن خلقی ہیں نوٹ تو ثمن اصطلاحی ہے، پہلی چار صورتوں میں تو بازار کے بھاؤ سے اس کی قیمت بتا کر اس پر

نفع لگائے مثلاً یہ نوٹ سو روپے کا ہے میں نے تیرے ہاتھ اتنی روپے کے نفع پر بیچا اور پچھلی دو صورتوں میں جو کچھ تاوان دینا پڑا ہو وہ بتا کر اس پر نفع رکھے کہ یہ نوٹ مجھے اتنے میں پڑا اور اتنے نفع پر میں نے تیرے ہاتھ بیچ کیا، در مختار میں ہے :

| المرابحة بیع ما ملکه ولو بهبة او | مرابحہ اس چیز کی بیع ہے جس کا مالک بنا گرچہ |

1 الهداية كتاب البيوع باب المسلم مطبع مجتبائی دہلی ۳ / ۹۴ 2 كفل الفقية الفاهم امام العاشر حاشیہ نوری کتب خانہ داتا دربار لاہور ص ۶۲ ، كفل الفقيه الفاهم امام العاشر منظمة الدعوة الاسلاميه لوہاری دروازہ لاہور ص ۴۸

Volume 17 (17) Fatawa Razawiyya

Inheritance, bequest, or usurpation [1] - Became the owner due to gift, inheritance, bequest, or usurpation. (T)

In Al-Bahr it is stated:

[Arabic Text]: If compensation for usurpation is paid, then selling the usurped item through Murabaha (resale with profit) or Tawliyah (resale at cost) based on that compensation is permissible. And if one becomes the owner through gift, inheritance, or bequest, when a price is determined for it, he can sell that owned item through Murabaha based on that price, provided he is truthful in determining the price. [Summary] [2]

In Al-Ashbah, then in Radd al-Muhtar it is stated:

[Arabic Text]: Dirhams and Dinars become specified in trusts, gifts, charity, partnership, Mudaraba, and usurpation. [3]

Similarly, if this note was purchased through Bai' Salam (forward sale), he can perform Murabaha on it. For example, if a note of 100 was purchased for 90 rupees on a one-month promise, this note became specified according to what we mentioned earlier. (Due to the reason we have already mentioned. T). Now, putting 90 rupees as the original price, he can fix a certain profit on it. Fixing profit on 100 rupees as the original price will be prohibited. Similarly, if it was clearly specified in the purchase of the note that particularly this exact note was sold for this much, because by such clear specification, the conventional price becomes specified, then he can perform Murabaha for the amount he took it for. And just by saying that this note was sold for this much, it will not become specified until the contracting parties clearly specify that the intention is to relate the contract of sale specifically to its essence. In Tabyin al-Haqa'iq it is stated:

[1] Durr al-Mukhtar Kitab al-Buyu' Bab al-Murabaha wa al-Tawliyah, Mujtabai Press Delhi, 2/35. [2] Al-Bahr al-Ra'iq Kitab al-Buyu' Bab al-Murabaha wa al-Tawliyah, H.M. Saeed Company Karachi, 6/107. [3] Radd al-Muhtar Kitab al-Buyu' Bab al-Murabaha wa al-Tawliyah, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/129.

विरासत, वसीयत या गसब [1] - हिबा (उपहार), विरासत, वसीयत या गसब के कारण मालिक बना हो। (त)

अल-बहर में है:

[अरबी पाठ]: गसब का जब हर्जाना दे दिया गया तो अब उस हर्जाने पर गसब की बिक्री मुराबहा (लाभ के साथ पुनर्विक्रय) या तवलिया (लागत मूल्य पर पुनर्विक्रय) के तौर पर जायज़ है। और जिस चीज़ का हिबा, विरासत या वसीयत के ज़रिए मालिक बना, जब उसकी कीमत तय करे तो उस कीमत पर उस स्वामित्वाधीन चीज़ की बिक्री मुराबहा कर सकता है बशर्ते कि कीमत तय करने में सच्चा हो। [सारांश] [2]

अशबाह फिर रद-उल-मुहतार में है:

[अरबी पाठ]: अमानतों, हिबा, सदक़ा, शिरकत, मुज़ारबा और गसब में दराहिम और दनानीर मुतय्यन (निश्चित) हो जाते हैं। [3]

इसी तरह अगर यह नोट बैअ-सल्लम से खरीदा गया, उस पर मुराबहा कर सकता है। मिसाल के तौर पर नब्बे रुपये के बदले सौ की रकम का नोट एक महीने के वादे पर खरीदा गया, यह नोट मुतय्यन हो गया जैसा कि हम पहले ज़िक्र कर चुके हैं। (उस दलील की वजह से जिसका हम पहले ज़िक्र कर चुके हैं। त)। अब नब्बे रुपये असल कीमत लगाकर उस पर निश्चित लाभ तय करे, सौ रुपये असल कीमत मानकर उस पर लाभ लगाना हराम होगा। इसी तरह अगर नोट खरीदने में साफ़ तौर पर ज़िक्र कर दिया गया कि खास तौर पर यही नोट इतने में बेचा गया, क्योंकि ऐसी स्पष्ट व्याख्या से प्रचलित कीमत निश्चित हो जाती है, तो जितने में लिया उतने पर मुराबहा कर सकता है। और सिर्फ यह कहने से कि यह नोट इतने में बेचा गया, यह निश्चित नहीं होगा जब तक कि दोनों पक्ष साफ़ तौर पर यह न कह दें कि खास तौर पर इसी नोट से बिक्री का अनुबंध करना मक़सद है। तबयीन-उल-हक़ाइक में है:

[1] दुर्रे मुख्तार किताब अल-बुयू बाब अल-मुराबहा व अल-तवलिया, मुज्तबाई प्रेस दिल्ली, 2/35।
[2] अल-बहर अल-राइक किताब अल-बुयू बाब अल-मुराबहा व अल-तवलिया, एच.एम. सईद कंपनी

कराची, 6/107। [3] रद-उल-मुहतार किताब अल-बुयू बाब अल-मुराबहा व अल-तवलिया, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी बेरुत, 4/129।

पृष्ठ 715 का 236

ارث او وصیۃ او غصب ۱- ہبہ، میراث، وصیت یا غصب کے سبب سے مالک بنا ہو۔ (ت)

بحر میں ہے:

الغصب اذا ضمنه جازله بیعه مرابحة وتولیة علی ماضمن ومایملکه بهبة اوارث اووصیة اذا قومه فله المرابحة علی القیمة اذا کان صاد قافي التقویم اه ملتقطاً۔ ۲- غصب کا جب تاوان دے دیا تو اب اس تاوان پر غصب کی بیع بطورِ مرابحہ یا بطورِ تولیہ جائز ہے اور جس چیز کا ہبہ، میراث یا وصیت کے ذریعے مالک بنا جب اس کی قیمت مقرر کرے تو اس قیمت پر اس مملوک چیز کی بیع مرابحہ کرسکتا ہے بشرطیکہ قیمت مقرر کرنے میں سچا ہو اھ التقاط (ت)

اشباہ پھر ردالمحتار میں ہے:

تتعین ای الدراہم والدنانیر فی الامانات والهبة والصدقة والشرکة والمضاربة والغصب ۳۔ امانتوں۔ ہبہ، صدقہ، شرکت، مضاربہ اور غصب میں دراہم و دنانیر متعین ہو جاتے ہیں (ت)

یونہی اگر یہ نوٹ بیع سلم سے مول لیا اس پر مرابحہ کرسکتا ہے مثلاً نوے روپے کے بدلے سو کی رقم کا نوٹ ایک مہینہ کے وعدہ پر خریدا یہ نوٹ معین ہوگیا لما قدمنا۔ (اس دلیل کی وجہ سے جس کا ہم پہلے ذکر کرچکے ہیں۔ ت) اب نوے روپے اصل ثمن لگا کر اس پر نفع معین کرے سو روپے اصل قیمت کو ٹھہرا کر اس پر نفع لگانا حرام ہوگا یونہی اگر نوٹ اور خریدنے میں صاف تصریح کردی کہ خاص یہ نوٹ بعینہ اتنے کو بیچا کہ ایسی صریح تصریح سے ثمن اصطلاحی متعین ہوجاتا ہے تو جتنے کو لیا اتنے پر مرابحہ کرسکتا ہے اور صرف اس کے کہنے سے کہ یہ

نوٹ اتنے کو بیچا معین نہ ہوگا جب تک عاقدین صاف تصریح نہ کریں کہ خاص اس کی ذات سے عقد بیع کا متعلق کرنا مقصود ہے۔ تبیین الحقائق میں ہے:

۱ درمختار کتاب البیوع باب المرابحة والتولیة مطبع مجتبائی دہلی ۲/۳۵ ۲ البحر الرائق کتاب البیوع باب المرابحة والتولیة ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۶/ ۱۰۷ ۳ ردالمحتار کتاب البیوع باب المرابحة والتولیة دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۲۹

Fatawa Razawiyya - Volume 17

[Arabic Text] Sale with current copper coins (fulus) is valid even if they are not specified, because they are known assets that have become price (thaman) by convention. Therefore, sale with them is permissible and they become a liability, just like dirhams and dinars. Even if they are specified, they do not become specified because they have become price by the convention of people. He has the right to give other coins instead, because the status of being a price is not invalidated by specifying them. This is because specifying them could potentially be to clarify the quantity and quality of what is obligatory, as is the case with dirhams. It is also possible that it was intended to link the ruling to their specific essence. The general convention is not invalidated by a mere possibility as long as they do not explicitly state its invalidation by saying, 'We intended to link the ruling specifically to these coins.' In that case, the contract relates to those specific coins. This is unlike the case where one sells a specific copper coin for two other specific copper coins, where they become specified even without an explicit statement. This is because if they did not become specified, the sale would be corrupt based on what we explained before. Thus, there was a necessity to seek a way for its validity. Here, the sale is valid in both cases, so there is no need to invalidate the general convention.

[Urdu Text] Sale with current coins is permissible even if they are not specified because they are known assets that have become the price due to convention. Thus, sale with them will be permissible and they will be a liability, just as is the ruling for dirhams and dinars. If someone specifies them, they still will not become specific because they have become the price by people's convention. Despite specification, the payer has the option to give other coins because the status of being a price is not invalidated by specification. Specification holds the possibility that it is meant to state the quantity and quality of what is obligatory, and it is also possible that the ruling is linked to the essence of those specific coins. Therefore, convention is not invalidated by mere possibility unless the seller and buyer explicitly state its invalidation by saying that we intended to link the ruling specifically to these coins. At that time, the contract will relate to those specific coins. This is contrary to the case when someone sold one coin for two specific coins, because here they will become specific without explicit statement. This is because if they do not become specific in this case, the sale will be void (fasid) for the reason we stated earlier. Thus, there was a need to seek validity in it, whereas here the sale is valid in both scenarios, hence there is no need to invalidate the general convention. (T)

1. Tabyin al-Haqa'iq, Kitab al-Sarf, Al-Matba'at al-Kubra al-Amiriyya, Egypt, 4/123

फ़तावा रज़विया - जिल्द 17

[अरबी पाठ] प्रचलित तांबे के सिक्कों (फुलूस) के साथ खरीद-फरोख्त (बैअ) जायज़ है, भले ही वे निर्दिष्ट न हों क्योंकि वे ज्ञात संपत्तियां हैं जो प्रथा के कारण कीमत (थमन) बन गई हैं। इसलिए उनके साथ बैअ जायज़ होगी और वे ज़िम्मे पर होंगे जैसे दिरहम और दीनार का हुक्म है। अगर उन्हें निर्दिष्ट किया जाए तब भी वे निर्दिष्ट नहीं होंगे क्योंकि वे लोगों की प्रथा से थमन बने हैं और निर्दिष्ट करने के बावजूद उसे दूसरे पैसे देने का अधिकार है क्योंकि उनके निर्दिष्ट करने से थमनियत (कीमत होने का गुण) बातिल नहीं होती। क्योंकि निर्दिष्ट करने में यह संभावना है कि वह अनिवार्य मात्रा और गुण को स्पष्ट करने के लिए हो, और यह भी संभव है कि हुक्म को उन विशिष्ट पैसों के अस्तित्व से जोड़ने के लिए हो। अतः मात्र संभावना से प्रथा बातिल नहीं होती जब तक कि विक्रेता और खरीदार इसे बातिल करने का स्पष्ट उल्लेख न करें, इस तरह कि वे कहें कि हमने विशेष रूप से उन्हीं पैसों से हुक्म को जोड़ने का इरादा किया है। उस समय अनुबंध उन्हीं विशिष्ट पैसों से संबंधित होगा। इसके विपरीत उस स्थिति में जब किसी ने दो विशिष्ट पैसों के बदले एक पैसा बेचा, क्योंकि यहाँ बिना स्पष्टीकरण के वे निर्दिष्ट हो जाएंगे। इसलिए कि अगर इस स्थिति में वे निर्दिष्ट न हों तो बैअ फासिद (अमान्य) होगी उस कारण से जो हमने पहले बयान किया है। तो इसमें वैधता तलाशने की आवश्यकता हुई और यहाँ दोनों स्थितियों में बैअ जायज़ होगी, अतः सभी की प्रथा को बातिल करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

[उर्दू पाठ] प्रचलित पैसों के साथ बैअ जायज़ है अगरचे मुतअय्यन (निर्दिष्ट) न हों क्योंकि वे अमवाल-ए-मालूमा हैं जो कि इस्तिलाह (प्रथा) के सबब से थमन (कीमत) बने हैं। तो उनके साथ बैअ जायज़ होगी और ये ज़िम्मे पर होंगे जैसा कि दिरहम व दीनार का हुक्म है। अगर उनको मुतअय्यन करे तब भी ये मुतअय्यन न होंगे क्योंकि ये लोगों की इस्तिलाह से थमन बने हैं और तअय्युन (निर्दिष्ट करने) के बावजूद उसको दूसरे पैसे देने का इख्तियार है क्योंकि उनकी तअय्युन से थमनियत बातिल नहीं होती। क्योंकि तअय्युन में एहतिमाल (संभावना) है कि वह वाजिब की मिक़दार और वस्फ़ को बयान करने के लिए हो और यह भी मुमकिन है कि हुक्म को इन मुअय्यन पैसों की ज़ात से मुअय्यन करने के लिए हो। चुनांचे महज़ एहतिमाल से इस्तिलाह बातिल नहीं होती जब तक बाए (विक्रेता) और मुश्तरी (खरीदार) उसको बातिल करने की तसरीह (स्पष्टीकरण) न करें बा-ईं तौर कि वह यूँ कहें कि हमने ख़ास इन्हीं पैसों से हुक्म को मुतलक़ करने का इरादा किया है। उस वक़्त ख़ास इन ही मुअय्यन पैसों से अक़्द (अनुबंध) मुतअल्लिक़ होगा। बखिलाफ़ उस सूरत के जब किसी ने दो मुअय्यन पैसों के

एवज़ एक पैसा फ़रोख़्त किया क्योंकि यहाँ बग़ैर तसरीह के वह मुतअय्यन हो जाएंगे। इसलिए कि अगर इस सूरत में वह मुतअय्यन न हों तो बैअ फ़ासिद होगी इस वजह से जो हमने पहले बयान कर दी है। तो इसमें तलाश-ए-जवाज़ की ज़रूरत हुई और यहाँ दोनों सूरतों में बैअ जायज़ होगी लिहाज़ा तमाम की इस्तिलाह को बातिल करने की कोई ज़रूरत नहीं। (त)

---

1. तब्यीनुल हक़ायक़, किताबुस सर्फ़, अल-मतबअतुल कुबरा अल-अमीरिया, मिस्र, 4/123

صح البیع بالفلوس النافقة و ان لم یعین لانها اموال معلومة صارت ثمنا بالاصطلاح فجاز بها البیع و وجب فی الذمة کالدراهم و الدنانیر و ان عینها لا تتعیین لانها صارت ثمنا باصطلاح الناس و له ان یعطیه غیرهما لان الثمنیة لا تبطل بتعیینها لان التعیین یحتمل ان یکون لبیان قدر الواجب و وصفه کما فی الدراهم، و یجوز ان یکون لتعلیق الحکم بعینها فلا یبطل الاصطلاح بالمحتمل ما لم یصرحا بابطاله بأن یقولا اردنا به تعلیق الحکم بعینها فحینئذ یتعلق العقد بعینها بخلاف ما اذا باع فلسا بفلسین باعیانهما حیث یتعین من غیر تصریح لانه لو لم یتعیین لفسد البیع علی مابینا من قبل فکان فیه ضرورة تحریا للجواز و هنا یجوز علی التقدیرین فلا حاجة الی ابطال اصطلاح الکافة ۔

رائج پیسوں کے ساتھ بیع جائز ہے اگرچہ متعین نہ ہوں کیونکہ وہ اموالِ معلومہ ہیں جو کہ اصطلاح کے سبب سے ثمن بنے ہیں تو ان کے ساتھ بیع جائز ہوگی اور یہ ذمہ پر ہونگے جیسا کہ دراہم و دنانیر کا حکم ہے اگر ان کو متعین کرے تب بھی یہ متعین نہ ہونگے کیونکہ یہ لوگوں کے اصطلاح سے ثمن بنے ہیں اور تعیین کے باوجود اس کو دوسرے پیسے دینے کا اختیار ہے کیونکہ ان کی تعیین سے ثمنیت باطل نہیں ہوتی کیونکہ تعیین میں احتمال ہے کہ وہ واجب کی مقدار اور وصف کو بیان کرنے کے لئے ہو اور یہ بھی ممکن ہے کہ حکم کو ان معین پیسوں کی ذات سے معین کرنے کے لئے ہو چنانچہ محض احتمال سے اصطلاح باطل نہیں ہوتی جب تک بائع اور مشتری اس کو باطل کرنے کی تصریح نہ کریں بایں طور کہ وہ یوں کہیں کہ ہم نے خاص انہی پیسوں سے حکم کو مطلق کرنے کا ارادہ کیا ہے اس وقت خاص ان ہی معین پیسوں سے عقد متعلق ہوگا بخلاف اس صورت کے جب کسی نے دو معین پیسوں کے عوض ایک پیسہ فروخت کیا کیونکہ یہاں بغیر تصریح کے وہ متعین ہو جائیں گے اس لئے کہ اگر اس صورت میں وہ متعین نہ

ہوں تو بیع فاسد ہوگی اس وجہ سے جو ہم نے پہلے بیان کردی ہے تو اس میں تلاش جواز کی ضرورت ہوئی اور یہاں دونوں صورتوں میں بیع جائز ہوگی لہٰذا تمام کی اصطلاح کو باطل کرنے کی کوئی ضرورت نہیں۔ (ت)

---

1 تبیین الحقائق کتاب الصرف المطبعۃ الکبری الامیریہ مصر ۴ / ۱۲۳

Fatawa Razawiya Volume 17

Yes, without this clarification, as notes are generally bought and sold, a note is not specified. For instance, if a note is sold for a hundred rupees, the seller has the option not to give this specific note, but to provide any other hundred-rupee note instead, as long as its value in circulation is equal. And if the note was destroyed, torn, or lost before it could be given to the buyer, the sale is not voided because that specific note itself was not designated. If another note is given, one cannot conduct a 'Murabaha' transaction (resale at cost-plus-profit) on these generally purchased notes because they do not enter into ownership by being specified, as we have just explained (T). Similarly, if a woman's dowry (mahr) was fixed in notes and she received them from her husband, she cannot sell them on a Murabaha basis because 'athman' (prices/monetary values) are not specified in a dowry. It is mentioned in 'Al-Ashbah' and then in 'Radd al-Muhtar':

Arabic Original

Dowry (Mahr) is not specified even if it's after divorce before consummation. Hence, its equivalent half is returned. Therefore, zakat is obligatory on her if it reaches the nisab for a year in her possession. I say: The reason for this is that dowry is also a compensation (mu'awadah), and prices (athman) are not specified in compensations. They are specified in things other than that, such as voluntary gifts (tabarru'at), including gifts (hibah) and charity (sadaqah), and in trusts (amanat), including 'mudarabah' (profit-sharing), partnership (shirkah), agency (wakalah), and deposits (wadi'ah). All of these become specified after delivery. As for before delivery, there is no demand or entitlement. Rather, the consideration in specifying currencies and their absence is from...

Urdu Translation

Prices (Thaman) are not specified in dowry, even if it is after divorce before consummation. In this case, the divorced woman will return the equivalent of half of the dowry. For this very reason, zakat is obligatory on this woman for this dowry if it is equal to the nisab and remains with the woman for a year. I say: The reason for this is that dowry is a compensation, and prices (thaman) are not specified in compensations. Whereas, apart from compensations, i.e., in voluntary gifts (tabarru'at), trusts (amanat), and groups, they become specified. Gift (hibah) and charity (sadaqah) are among voluntary gifts, while mudarabah, partnership, agency, and deposit are among trusts. In all these, specification has been happening after delivery; before delivery, in this case, there is neither a demand nor any

Arabic Original	Urdu Translation
	entitlement. Regarding specifying currencies and their absence...

1. Radd al-Muhtar, Book of Sales, Chapter of Invalid Sales, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/129; Al-Ashbah wa al-Nazair, Third Art, Rulings of Money, Idara al-Quran wa al-Ulum al-Islamiya, Karachi, 2/159.

हाँ, इस स्पष्टीकरण के बिना, जैसा कि आमतौर पर नोटों की खरीद-बिक्री होती है, नोट निर्दिष्ट नहीं होता है। यहाँ तक कि यदि यह नोट सौ रुपये में बेचा गया, तो विक्रेता को अधिकार है कि वह यह विशिष्ट नोट न दे, बल्कि इसके बदले कोई अन्य सौ का नोट दे दे, जबकि चलन में उसका मूल्य इसके समान हो। और यदि अभी यह नोट खरीदार को देने से पहले ही जल गया, फट गया या नष्ट हो गया, तो बिक्री रद्द नहीं होगी क्योंकि वह विशिष्ट नोट स्वयं निर्दिष्ट नहीं था। यदि दूसरा नोट दिया जाए, तो इन सामान्य रूप से खरीदे गए नोटों पर 'मुराबहा' (लागत-प्लस-लाभ पर बिक्री) नहीं किया जा सकता क्योंकि वे निर्दिष्ट होकर स्वामित्व में नहीं आते, जैसा कि हमने अभी स्पष्ट किया है (त)। इसी तरह यदि किसी स्त्री का मेहर नोटों में तय हुआ था और उसने वे अपने पति से प्राप्त किए, तो वह उन्हें मुराबहा पर नहीं बेच सकती क्योंकि मेहर में 'अथमान' (कीमतें/मौद्रिक मूल्य) निर्दिष्ट नहीं होते। 'अशबाह' और फिर 'रद्द अल-मुह्तार' में है:

अरबी मूल

मेहर में मूल्य निर्दिष्ट नहीं होते, चाहे वह संभोग से पूर्व तलाक के बाद ही क्यों न हो। अतः इसके आधे के समान वापस किया जाता है। इसी कारण से उस स्त्री पर उस मेहर की ज़कात अनिवार्य है यदि वह निसाब के बराबर हो और साल भर स्त्री के पास रहे। मैं कहता हूँ: इसका कारण यह है कि मेहर भी एक मुआवज़ा (मुअवज़ा) है, और मुआवज़ों में कीमतें (अथमान) निर्दिष्ट नहीं होतीं। वे मुआवज़ों के अलावा अन्य चीजों में निर्दिष्ट होती हैं, जैसे दान (तबर्रुआत), जिनमें उपहार (हिबा) और दान (सदक़ा) शामिल हैं, और अमानतों में, जिनमें मुदारब; साझेदारी (शिरकत), एजेंसी (वकालत) और जमा (वदीअत) शामिल हैं। ये सभी सुपुर्दगी (तस्लीम) के बाद निर्दिष्ट हो जाते हैं। जहाँ तक सुपुर्दगी से पहले की बात है, तो न कोई माँग

उर्दू अनुवाद

मेहर में मूल्य (थमन) निर्दिष्ट नहीं होते, चाहे वह संभोग से पूर्व तलाक के बाद ही क्यों न हो। ऐसी स्थिति में तलाकशुदा स्त्री मेहर के आधे के समान वापस करेगी। इसी कारण से उस स्त्री पर उस मेहर की ज़कात अनिवार्य है यदि वह निसाब के बराबर हो और साल भर स्त्री के पास रहे। मैं (कहता हूँ): इसका कारण यह है कि मेहर एक मुआवज़ा है, और मुआवज़ों में कीमतें (थमन) निर्दिष्ट नहीं होतीं। जबकि मुआवज़ों के अलावा यानी दान (तबर्रुआत), अमानतों और समूहों में वे निर्दिष्ट हो जाते हैं। हिबा और सदक़ा तबर्रुआत में से हैं, जबकि मुदारब; साझेदारी, वकालत और वदीअत अमानतों में से हैं। इन सब में विनिर्दिष्टिकरण सुपुर्दगी के बाद होता रहा है; सुपुर्दगी से पहले तो इस स्थिति में न कोई माँग है

अरबी मूल	उर्दू अनुवाद
है और न ही कोई अधिकार। बल्कि, मुद्रा के विनिर्दिष्टिकरण और उसके अभाव पर विचार...	और न ही कोई अधिकार। मुद्रा के विनिर्दिष्टिकरण और उसके अभाव के संबंध में...

1. रद्द अल-मुह्तार, किताबुल बुयूअ (बिक्री की पुस्तक), बाबुल् बैइल फासिद (अमान्य बिक्री का अध्याय), दार इहया अत-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 4/129; अल-अशबाह वन-नज़ाइर, तीसरी कला, मुद्रा के नियम, इदारा अल-कुरान वल-उलूम अल-इस्लामिया, कराची, 2/159।

ہاں بغیر اس تصریح کے جس طرح عام طور پر نوٹ کی خرید وفروخت ہوتی ہے نوٹ معین نہیں ہوتا یہاں تک کہ اگر یہ نوٹ سو روپے کو بیچا بائع کو اختیار ہے کہ یہ خاص نوٹ نہ دے اس کے بدلے اور کوئی نوٹ سو کا دے دے جبکہ چلن میں اس کا مساوی ہو اور اگر ابھی یہ نوٹ مشتری کو نہ دینے پایا تھا کہ جل گیا، پھٹ گیا، تلف ہو گیا تو بیع باطل نہ ہوئی کہ خاص اس نوٹ کی ذات اسے متعین نہ تھی دوسرا دے تو اس عام طور کے خریدے ہوئے نوٹوں پر مرابحہ نہیں کر سکتا کہ وہ معین ہو کر اس کی ملکیت میں نہ آئے، کما بیناہ آنفاً (جیسا کہ ابھی ہم نے بیان کیا ہے ت)

اسی طرح اگر عورت کا مہر نوٹ قرار پائے تھے وہ اس نے شوہر سے اپنے مہر میں پائے انھیں مرابحہ نہیں بیچ سکتی کہ اثمان مہر میں متعین نہیں ہوتے۔ اشباہ پھر ردالمحتار میں ہے :

| لایتعین فی المھر ولو بعد الطلاق قبل الدخول فترد مثل نصفه ولذا لزمها زکوته لونصابا حولیا عندها ۱ اھ اقول: والوجه فیه ان المھر ایضا معاوضة والاتمان لا یتعین فی المعاوضات وتتعین فیما وراء ها من التبرعات وفیها الھبة والصدقة ومن الامانات ومنها المضاربة والشرکة والوکالة والودیعة کلها بعد التسلیم اما قبله فلا مطالبة ولا استحقاق وانما النظر فی تعین النفقود وعدمه من | ثمن مہر میں متعین نہیں ہوتے اگرچہ دخول سے قبل طلاق کے بعد ہوں تو اس صورت میں مطلقہ نصف مہر کی مثل واپس کرے گی اسی وجہ سے اس عورت پر اس مہر کی زکوۃ واجب ہے اگر وہ نصاب کے برابر ہوں اور سال بھر عورت کے پاس رہے اھ، اقول: (میں کہتا ہوں) وجہ اس میں یہ ہے کہ مہر معاوضہ ہے اور ثمن معاوضوں میں متعین نہیں ہوتے جبکہ معاوضوں کے ماسوا یعنی تبرعات، امانات اور عصبات میں متعین ہو جاتے ہیں، ہبہ اور صدقہ تبرعات میں سے ہیں جبکہ مضاربت،

شرکت، وکالت اور ودیعت امانات میں سے ہیں۔ ان سب میں تعین تسلیم کے بعد ہوتا رہا ہے قبل از تسلیم تو اس صورت میں نہ مطالبہ نہ کوئی استحقاق، نقود کے |

۱ ردالمحتار کتاب البیوع باب البیع الفاسد دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۲۹ ، الاشباہ والنظائر الفن الثالث احکام النقد ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۲/۱۵۹

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Arabic Column Text] This direction is as in the rulings of currency (Ahkam al-Naqd) from Al-Ashbah. I say: And for this reason, currencies are not specified in vows (nadhr) because a claim is only made for something that involves an act of devotion (qurba), and there is no devotion in specifying a particular currency, time, or person (the poor), as stated in Jami' al-Fusulayn, Chapter Seventeen. And among the items akin to misappropriated property (ghasbiyat) is what is received in currency exchange (Sarf) when it becomes invalid due to separation before the exchange of values, and in a sale when it becomes invalid according to the more correct opinion because its return is mandatory. And in a legal claim, if another person claims property and it is decreed in his favor, he takes possession, then admits he was on falsehood in it. As for a shared debt, if one of them takes possession of it, he is ordered to return the share of his partner from the actual amount received. I say: If his taking possession was by right, then he is a trustee (amin); if not, then he is a usurper (ghasib). Thus, the matter is confined to the principle I have established. And praise be to Allah, master it, for you will not find it anywhere else but here.

[Urdu Column Text] The consideration in specification and non-specification is only from this aspect (after acceptance), as it is in the chapter on Currency Rulings in Al-Ashbah. I say: For this reason, currencies are not specified in vows because a claim is made only for something in which there is an act of devotion, whereas there is no devotion in currency, time, or the specificity of a poor person, as stated in Jami' al-Fusulayn, Chapter 17. And in currency exchange (Sarf), whatever is taken into possession becomes akin to misappropriated property if the exchange contract becomes invalid due to separation before taking possession of the counter-value. According to the most correct opinion, in an invalid sale as well, it is akin to misappropriation because its return is mandatory. Similarly, in a legal claim, if someone makes a claim for some property against another, then after a judgment is passed in their favor and they take possession, they then admit that their claim was false, i.e., they were a liar. As for a shared debt, if one of the two partners takes possession of it, he will be ordered to give his partner's share from the actual amount received to him. I say: (I say) If he took possession rightfully, then he is a trustee; and if he took possession wrongfully, then he is a usurper. Therefore, the principle I have described is what the matter is limited to. Allah Almighty knows best.

[Footnotes] 1 Al-Ashbah wa al-Nazair, Ahkam al-Naqd, Idarat al-Qur'an wa al-'Ulum al-Islamiyyah, Karachi, 2/158-159. 2 Jami' al-Fusulayn, Chapter Seventeen, Islami Kutub Khana, Karachi, 1/230.

फतावा रज़विया (जिल्द 17)

[अरबी कॉलम का पाठ] यह पहलू 'अल-अश्बाह' के मुद्रा नियमों (अहकाम अन-नक़्द) में वर्णित अनुसार है। मैं कहता हूँ: और इसी कारण मन्नत (नज़्र) में मुद्राएँ विशिष्ट नहीं होतीं, क्योंकि माँग केवल उसी चीज़ की होती है जिसमें ईश्वर की निकटता (क़ुर्बत) हो, और किसी विशेष मुद्रा, समय या विशेष निर्धन व्यक्ति के निर्धारण में कोई निकटता नहीं है, जैसा कि 'जामी अल-फ़ुसुलैन', अध्याय सत्रह में है। छीनी गई वस्तुओं (ग़सबियात) में वह भी शामिल है जो मुद्रा विनिमय (सर्फ़) में प्राप्त किया गया हो जब वह विनिमय मूल्यों के लेन-देन से पहले अलगाव के कारण अमान्य हो जाए, और बिक्री में जब वह सबसे सही मत के अनुसार अमान्य हो जाए क्योंकि उसका वापस करना अनिवार्य है। और कानूनी दावे में, यदि कोई व्यक्ति धन का दावा करता है और उसके पक्ष में निर्णय सुनाया जाता है, वह कब्ज़ा कर लेता है, फिर स्वीकार करता है कि वह उसमें असत्य पर था। साझा ऋण के मामले में, यदि उनमें से एक उस पर कब्ज़ा कर लेता है, तो उसे वास्तविक प्राप्त राशि में से अपने साथी का हिस्सा लौटाने का आदेश दिया जाएगा। मैं कहता हूँ: यदि उसका कब्ज़ा अधिकारपूर्ण था, तो वह अमानतदार (अमीन) है; यदि नहीं, तो वह अपहरणकर्ता (ग़ासिब) है। अत; मामला उसी सिद्धांत तक सीमित है जो मैंने स्थापित किया है। और अल्लाह की स्तुति हो, इसे अच्छी तरह समझ लें, क्योंकि आपको यह इसके अलावा कहीं और नहीं मिलेगा।

[उर्दू कॉलम का पाठ] निर्धारण और अनिर्धारण में विचार केवल इसी पहलू (स्वीकृति के बाद) से है जैसा कि 'अल-अश्बाह' के'मुद्रा के नियम' अध्याय में है। मैं कहता हूँ: इसी कारण मन्नत की मुद्राओं का निर्धारण नहीं होता क्योंकि दावा केवल उस चीज़ का होता है जिसमें क़ुर्बत हो, जबकि मुद्रा, समय या किसी निर्धन के विशेष होने में कोई क़ुर्बत नहीं है, जैसा कि 'जामी अल-फ़ुसुलैन', अध्याय 17 में है। मुद्रा विनिमय (सर्फ़) में जिस चीज़ पर कब्ज़ा किया जाए, वह ग़सबियात के साथ जुड़ जाती है यदि विनिमय के पूरा होने से पहले अलगाव के कारण सर्फ़ अनुबंध अमान्य हो जाए। सबसे सही मत के अनुसार अमान्य बिक्री में भी यह छीनने के समान है क्योंकि इसे वापस करना अनिवार्य है। इसी प्रकार मुक़दमे में, यदि किसी ने दूसरे पर कुछ धन का दावा किया, फिर अपने पक्ष में फ़ैसला होने और कब्ज़ा करने के बाद उसने स्वीकार किया कि वह उस दावे में असत्य पर था यानी झूठा था। साझा ऋण की बात करें तो, यदि दो भागीदारों में से एक ने उस पर कब्ज़ा कर लिया, तो उसे आदेश दिया जाएगा कि वह प्राप्त की गई वास्तविक राशि में से अपने साथी का हिस्सा उसे दे। मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) यदि उसने अधिकार के साथ कब्ज़ा किया तो वह अमानतदार (अमीन) है, और यदि

बिना अधिकार के कब्ज़ा किया तो वह अपहरणकर्ता (ग़ासिब) है। अत; जो नियम मैंने वर्णित किया है, मामला उसी पर निर्भर है। अल्लाह तआला (की जय हो)।

[पादलेख] 1 अल-अश्बाह व अन-नज़ायर, अहकाम अन-नक़्द, इदारातुल क़ुरआन वल उलूमल इस्लामिया, कराची, 2/158-159। 2 जामी अल-फ़ुसुलैन, अध्याय सत्रह, इस्लामी कुतुब खाना, कराची, 1/230।

पृष्ठ 239/715

[عربی کالم کا متن] هذه الجهة كما في احكام النقد من الاشباه اقول : ولذا لم تتعين في النذر اذ ليس مطالب الا بما فيه قربة ولا قربة في خصوص نقد او وقت او فقير كما في جامع الفصولين من الفصل السابع عشر ومن الغصبيات ويلتحق بها المقبوض في الصرف اذا فسد بالتفريق قبل قبض بدل و فی البيع اذا فسد على ماهو الاصح لكونہ واجب الرد و فی الدعوى اذا ادعى آخر مالا فقضى لہ فقبض ثم اقر انه كان مبطلا فيها اما الدين المشترك اذا قبضه احدهما يؤمر برد حصة صاحبه من عين المقبوض۔ اقول: ان كان قبضه بحق فامين او لا فغاصب فانحصر الامر فيما ابديت من الضابط والله الحمد اتقنه فانك لاتجده في غير هذه۔

[اردو کالم کا متن] تعین اور عدم تعین میں نظر صرف اسی جہت (بعد از تسلیم) سے ہے جیسا کہ اشباہ کی فصل احکام النقد میں ہے۔ اقول: اسی لئے نقود نذر میں متعین نہیں ہوتے کیونکہ مطالبہ صرف اس چیز کا ہوتا ہے جس میں قربت ہو جبکہ نقد یا وقت یا فقیر کے خاص ہونے میں کوئی قربت نہیں جیسا کہ جامع الفصولین فصل ۱۷ میں ہے، اور بیع صرف میں جس چیز پر قبضہ کیا جائے وہ غصبیات کے ساتھ ملحق ہو جاتی ہے جبکہ بدل صرف پر قبضہ کرنے سے پہلے تفریق کی وجہ سے عقد صرف فاسد ہو جائے، اور مذہب اصح کے مطابق بیع فاسد میں بھی غصب سے ملحق ہے کیونکہ اس کا رد کرنا واجب ہے اور یوں ہی دعوی میں ہے اگر کسی نے دوسرے پر کچھ مال کا دعوی کیا پھر فیصلہ کے حق میں ہونے اور قبضہ کرنے کے بعد اس نے اقرار کیا کہ وہ اس دعوی میں باطل پر تھا یعنی جھوٹا تھا۔ رہا دین مشترک تو اگر اس پر دو شریکوں میں سے ایک نے قبضہ کرلیا تو اس کو حکم دیا جائے گا کہ وہ عین مقبوض میں سے اپنے شریک کا حصہ اس کو دے۔ اقول : (میں کہتا ہوں) اگر اس نے حق کے ساتھ قبضہ کیا تو امین ہے اور اگر ناحق

قبضہ کیا ہے تو غاصب ہے۔ چنانچہ جو ضابطہ میں نے بیان کیا ہے معاملہ اسی پر منحصر ہوا۔ اللہ تعالیٰ

[حواشی] 1 الاشباہ والنظائر احکام النقد ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۲/ ۱۵۸-۱۵۹ 2 جامع الفصولین الفصل السابع عشر اسلامی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۳۰

Fatawa Ridawiyyah (Volume 17)

...the lines, and praise be to Allah for the continuous abundance of His bounties. Keep this in mind, for you will not find it in lines other than these. And all praises are for Allah Almighty for the continuous bestowal of abundant blessings. (T)

Then, where Murabahah (cost-plus profit sale) is prohibited on banknotes, it means that profit cannot be fixed based on the original ownership. One should initiate a sale without regard for the previous cost, which is called Musawamah (bargaining sale). Then one has the choice to sell for whatever amount desired, even if a ten-rupee note is sold for a thousand. It is stated in Al-Bahr:

[Table Content] Arabic: The text constrained it by saying "he does not earn a profit" because Musawamah is valid, as the prohibition of Murabahah is due to doubt regarding the rights of people, not the rights of the Shari'ah. The full discussion is in Al-Binayah[1]. Urdu: The text imposed this condition that he cannot perform a Murabahah sale because a Musawamah sale is correct in this case, for the prohibition of Murabahah is due to ambiguity regarding human rights, not in the right of the Shari'ah. The complete discussion on this is in Al-Binayah. (T)

And where Murabahah is permissible and was conducted as mentioned in the question—for example, saying "I will take one anna more per rupee than the written amount"—it is necessary for the buyer to know the total amount and realize what the sum is. Otherwise, if sold to an illiterate person who does not know the value of the note, if he finds out during the same sales session that it is, for example, a hundred-rupee note and he is being charged one hundred and six rupees and four annas, then after gaining this knowledge, he has the option to proceed with the purchase or refuse. If he does not find out until the end of the sales session, the sale becomes invalid (fasid), forbidden (haram), and must be annulled (wajib al-faskh), even if he finds out later. It is stated in Radd al-Muhtar:

[Table Content] Arabic: It is stated in Al-Nahr that if the substitute is fungible (mithli) and he sold it for that fungible substitute plus its tenth—i.e., a tenth of that fungible item—then if the buyer knows the total of that, it is valid. Otherwise, if he finds out during the session, he has an option; if not, it is invalid[2]. Urdu: It is stated in Al-Nahr that if the substitute is fungible and he sold it for that fungible substitute and its additional tenth, meaning the tenth part of that similar item, in this case, if the buyer knows the total, the sale is valid. And if he did not know but found out in the same session, he has an option, otherwise it will be invalid. (T)

1. Al-Bahr al-Ra'iq, Book of Sales, Chapter on Murabahah and Tawliyah, H.M. Saeed Company, Karachi, 6/111.
2. Radd al-Muhtar, Book of Sales, Chapter on Murabahah and Tawliyah, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/154.

फ़तावा रज़विया (खण्ड 17)

...पंक्तियाँ और अल्लाह की प्रशंसा हो उसकी नेमतों की निरंतर प्रचुरता पर। इसे सुरक्षित कर लें क्योंकि आप इसे इन पंक्तियों के अलावा कहीं और नहीं पाएंगे। और अल्लाह तआला के लिए ही तमाम प्रशंसाएँ हैं उसकी निरंतर और प्रचुर नेमतों के लिए। (त)

फिर जहाँ नोट पर मुराबहा (लागत के साथ लाभ) मना है, इसका अर्थ यह है कि पहली मिल्कियत (मालिकाना हक) के लिहाज़ से लाभ तय नहीं किया जा सकता। उसे पिछले दाम का विचार किए बिना नए सिरे से बेचना चाहिए जिसे मुसावमा (सौदेबाजी) कहते हैं। फिर उसे अधिकार है कि जितने में चाहे बेचे, भले ही दस का नोट हज़ार में। 'बह्र' में है:

[तालिका सामग्री] अरबी: मूल पाठ ने यह शर्त लगाई कि "वह लाभ नहीं कमाता" क्योंकि मुसावमा सही है, क्योंकि मुराबहा की मनाही हुकूक-उल-इबाद (बंदों के अधिकारों) में संदेह के कारण है, न कि शरीयत के हक में। इसकी पूरी चर्चा 'बिनाया' में है[1]। उर्दू: मूल पाठ ने यह शर्त लगाई कि वह मुराबहा बिक्री नहीं कर सकता क्योंकि इसमें मुसावमा बिक्री सही है, इसलिए कि मुराबहा की मनाही शरीयत के हक में नहीं बल्कि बंदों के अधिकारों में संदेह की वजह से है। इसकी पूरी चर्चा 'बिनाया' में है। (त)

और जहाँ मुराबहा जायज़ है और इस तरह मुराबहा किया जैसा सवाल में ज़िक्र है, जैसे कि लिखी हुई रक़म से प्रति रुपया एक आना ज़्यादा लूँगा, तो उसके लिए ज़रूरी है कि ग्राहक (खरीदार) को भी इसकी रक़म पता हो और वह जान ले कि कुल इतनी हुई। वर्ना अगर किसी अनपढ़ के हाथ बेचा है जिसे मालूम नहीं कि यह नोट कितने का है, तो इस सूरत में अगर उसी मजलिस-ए-बैय (सौदा होने की बैठक) में उसे पता चल गया कि यह मसलन सौ रुपये का है और मुझे एक सौ छह रुपये चार आने में दिया जा रहा है, तो पता चलने के बाद उसे अधिकार है कि खरीदारी पर कायम रहे या इनकार कर दे। और अगर मजलिस के ख़त्म होने तक उसे पता न चले तो बैय फासिद (अमान्य), हराम और वाजिब-उल-फ़स्ख़ (रद्द करना ज़रूरी) हो गई, भले ही बाद में उसे पता चल जाए। 'रद-उल-मुहतार' में है:

[तालिका सामग्री] अरबी: 'नहर' में कहा गया कि अगर बदल मिस्ली (समान वस्तु) है और उसने उस मिस्ली बदल और उसके दसवें हिस्से के बदले सौदा किया, तो इस सूरत में अगर ग्राहक को इस सब का ज्ञान है तो बैय सही है। वर्ना अगर मजलिस में पता चले तो विकल्प है, अन्यथा अमान्य है[2]। उर्दू:

'नहर' में कहा गया कि अगर बदल मिस्ली है और उसने उस मिस्ली बदल और उसके दसवें हिस्से यानी उस मिस्ली वस्तु के दसवें भाग के बदले बिक्री की, तो इस सूरत में अगर खरीदार को इस सब का ज्ञान है तो बिक्री सही है। और अगर उसे पता नहीं था लेकिन उसी मजलिस में पता चल गया, तो उसे अधिकार है, अन्यथा यह फासिद होगी। (त)

---

1. अल-बह्र-उर-राईक़, किताब-उल-बुयू, बाब-उल-मुराबहा वत-तवलिया, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 6/111।
2. रद-उल-मुहतार, किताब-उल-बुयू, बाब-उल-मुराबहा वत-तवलिया, दार इह्या अत-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 4/154।

السطور والحمد للہ علی تواتر الائہ بالوفور۔ کے لئے ہی حمد ہے۔ اسے محفوظ کر لو کہ اس کو تو ان سطور میں کے غیر میں نہ پائیگا۔ اور مسلسل وافر نعمتوں کی عطا پر تمام تعریفیں اللہ تعالٰی کے لئے ہیں۔(ت)

پھر جہاں نوٹ پر مرابحہ منع ہے اس کے یہ معنی ہیں کہ ملکِ اول کے لحاظ سے نفع مقرر نہیں کر سکتا ابتدائے بیع بے لحاظ سابق کرے جسے مساومہ کہتے ہیں۔ تو اختیار ہے جتنے کو چاہے بیچے اگرچہ دس کا نوٹ ہزار کو۔ بحر میں ہے:

[جدول کا متن] عربی: قید بقولہ لم یربح لانہ یصح مساومۃ لان منع المرابحۃ انما ھي للشبھۃ في حق العباد لافی حق الشرع وتمامہ في البنایۃ[1]۔ اردو: متن نے یہ قید لگائی کہ وہ بیع مرابحہ نہیں کر سکتا کیونکہ بیع مساومہ اس میں صحیح ہے اس لئے کہ مرابحہ کی ممانعت حقوق العباد میں شبہ کی وجہ سے ہے نہ کہ حق شرع میں۔ اس کی پوری بحث بنایہ میں ہے۔ (ت)

اور جہاں مرابحہ جائز ہے اور یوں مرابحہ کیا جس طرح سوال میں مذکور ہے کہ لکھی ہوئی رقم سے مثلاً فی روپیہ ایک آنہ زیادہ لوں گا تو اس کے لئے ضرور ہے کہ مشتری کو بھی اس کی رقم معلوم ہو اور جانے کہ مجموع یہ ہوا اور نہ اگر کسی ناخواندہ کے ہاتھ بیچا ہے معلوم نہیں کہ یہ نوٹ کتنے کا ہے اس صورت میں اگر اسی جلسہ بیع میں اسے علم ہو گیا کہ یہ مثلاً سو روپے کا ہے اور مجھے ایک سو چھ روپے چار آنے میں دیا جاتا ہے تو بعد علم اسے اختیار ہے کہ خریداری پر قائم رہے یا انکار کر دے اور اگر ختم جلسہ بیع تک اسے علم نہ ہو تو بیع فاسد وحرام و واجب الفسخ ہو گئی اگرچہ بعد کو اسے علم ہو جائے۔ رد المحتار میں ہے:

[جدول کا متن] عربی: قال في النهر لو كان البدل مثلياً فباعه به وبعشره ای بعشر ذلك المثلی فان كان المشتری یعلم جملة ذلك صح والافان علم في المجلس خیر والا فسد[2]۔ اردو: نہر میں کہا کہ اگر بدل مثلی ہے اور اس نے اس مثلی بدل اور مزید اس کے عشر یعنی اس مثل کے دسویں حصہ کے عوض بیع کی، اس صورت میں اگر مشتری کو اس تمام کا علم ہے تو بیع صحیح ہے اور اگر علم نہیں تھا مگر اسی مجلس میں اس کو معلوم ہو گیا تو اسے اختیار ہے ورنہ فاسد ہوگی۔ (ت)

---

1. البحر الرائق کتاب البیوع باب المرابحة والتولیة ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۶/ ۱۱۱
2. ردالمحتار کتاب البیوع باب المرابحة والتولیة دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۵۴

Fatawa-e-Razawiyya Volume 17

It is stated in al-Hidayah, Chapter of Murabahah:

[Arabic Text Column]: If knowledge (of the price) is obtained within the session, it is considered as the beginning of the contract, and it becomes similar to delaying acceptance until the end of the session. After separation, it is established, so it does not accept rectification. Its parallel is selling a thing by its mark. 1- And Allah Almighty knows best.

[Urdu Translation Column]: When the buyer gains knowledge of the price within the session, it will be treated like the start of the contract, and it has become similar to delaying acceptance until the end of the session. If knowledge was gained after separation (change of session), then since the corruption has become established, this sale will not accept reform. Its example is selling something for its written price. And Allah knows best. (T)

---

1 Al-Hidayah, Book of Sales, Chapter of Murabahah and Tawliyah, Matba' Yusufi, Lucknow, 3/76-77. Page 241 of 715

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द 17 (सत्रहवीं)

हिदाया के बाबुल मुराबाहा में है:

[अरबी पाठ स्तंभ]: यदि सत्र (मजलिस) के भीतर (कीमत का) ज्ञान प्राप्त हो जाए, तो इसे अनुबंध की शुरुआत की तरह माना जाता है और यह सत्र के अंत तक स्वीकृति को स्थगित करने के समान हो जाता है। पृथक्करण के बाद, यह पक्का हो गया है, अतः यह सुधार स्वीकार नहीं करता है। इसका उदाहरण किसी वस्तु को उसके निशान (लिखी हुई कीमत) पर बेचना है। 1- और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

[उर्दू अनुवाद स्तंभ]: जब खरीदार को सत्र के भीतर कीमत का पता चल गया, तो इसे अनुबंध की शुरुआत की तरह माना जाएगा और यह सत्र के अंत तक स्वीकृति को स्थगित करने जैसा हो गया। और यदि जुदाई (सत्र परिवर्तन) के बाद पता चला, तो अब चूंकि बिगाड़ पक्का हो चुका है, इसलिए यह बिक्री सुधार को स्वीकार नहीं करेगी और इसका उदाहरण किसी चीज़ को उसकी लिखी हुई कीमत के बदले बेचना है। और अल्लाह तआला खूब जानता है। (त)

---

1 अल-हिदाया, किताबुल बुयू' (क्रय-विक्रय की पुस्तक), बाबुल मुराबाहा वत-तवलिया, मतबा' यूसुफ़ी, लखनऊ, 3/76-77। पृष्ठ 715 में से 241

فتاوٰی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

ہدایہ باب المرابحہ میں ہے:

[عربی عبارت]: اذ احصل العلم فی المجلس جعل کابتداء العقد وصار کتاخیر القبول الی آخر المجلس وبعد الافتراق قد تقرر فلا یقبل الاصلاح ونظیرہ بیع الشیئ برقمہ 1- واللہ تعالٰی اعلم۔

[اردو ترجمہ]: جب مشتری کو مجلس کے اندر ثمن کا علم ہو گیا تو اس کی ابتداء عقد کی طرح قرار دیا جائے گا اور یہ آخر مجلس تک قبول کو مؤخر کرنے کی مثل ہو گیا اور جدائی (تبدیلی مجلس) کے بعد اگر علم ہوا تو اب چونکہ فساد مستحکم ہو چکا ہے لہٰذا یہ بیع اصلاح کو قبول نہیں کرے گی اور اس کی نظیر کسی شے کو اس کی لکھی ہوئی قیمت کے عوض فروخت کرنا ہے۔ اور اللہ تعالٰی خوب جانتا ہے۔ ت)

---

1 الہدایہ کتاب البیوع باب المرابحۃ والتولیۃ مطبع یوسفی لکھنو ۳ / ۷۶-۷۷ Page 241 of 715

Volume 17 Fatawa Razawiya

Chapter on disposing of the sold item and the price (Account of disposing of the sold item and the price)

Problem 105: From Baroda, Paigah Qam-e-Halah, sent by Sayyid Miyan Halah, 19 Rabi' al-Akhir Sharif 1310 AH. O Exemplar of Scholars, Pillar of Excellences, what do you decree regarding this significant matter? A person married a woman. After a few days, the woman demanded her dower (Mahr). Her husband said to her, "Receive some money from me in cash at this moment; for the remaining amount, purchase a house and land at market rates, and whatever still remains from that, I will continue to pay in monthly installments. I will fulfill your dower in any case." The woman agreed to this. Is this permissible in Shariah or not? Please write along with the dower, supporting book citations in Arabic text and Urdu translation summary. May Allah Almighty reward you for this. Only. Written by Sayyid Miyan Halah from Baroda.

The Answer: There are three points here: 1. Paying part of the dower with actual cash. 2. Giving a house and land at market rates in exchange for a part. [3.] Setting installments for the remaining amount. These three matters are legally (Shari'i) permissible. The first is obvious in itself. Even if, legally or by custom, the deferred dower (Mahr Mu'ajjal) was promised upon 'Iddah and divorce, or at a fixed term that has not yet arrived—for example, it was decided to be paid after ten years—and he paid the whole or part of it now, the woman would be compelled to accept it because the fixed term is a right of the debtor. And he...

Page 243 of 715

जिल्द सत्रह (17) फ़तावा रज़विया

बाब अत-तसर्रफ़ फ़िल मबी' वल समन (बिकी हुई चीज़ और क़ीमत में तसर्रफ़ करने का बयान)

मसला 105: बड़ौदा, पाइगाह क़ाम-ए-हाला से, प्रेषक सैयद मियां हाला, 19 रबी अल-आख़िर शरीफ़ 1310 हिजरी। विद्वानों के आदर्श, श्रेष्ठताओं के स्तंभ, इस महत्वपूर्ण मामले में आप क्या फ़रमाते हैं? एक व्यक्ति ने एक महिला से विवाह किया। कुछ दिनों बाद महिला ने अपने मेहर (स्त्री-धन) की माँग की। उसके पति ने उससे कहा, "इस समय मुझसे कुछ नकद रुपये ले लो; बाकी बचे रुपयों के बदले बाज़ार भाव पर घर और ज़मीन ख़रीद लो, और उसके बाद जो भी शेष बचेगा, मैं उसे महीने-दर-महीने किस्तों में देता रहूँगा। मैं तुम्हारा मेहर हर हाल में अदा कर दूँगा।" महिला इस बात पर सहमत हो गई। क्या शरीअत-ए-मुतह्हरा में यह जायज़ है या नाजायज़? मेहर के साथ, अरबी इबारत और उर्दू अनुवाद सारांश सहित दस्तावेजी प्रमाण लिखने की कृपा करें। अल्लाह तआला आपको इसका बदला अता फ़रमाए। फ़क़त। लेखक सैयद मियां हाला, बड़ौदा से।

अल-जवाब (उत्तर): यहाँ तीन बातें हैं: 1. मेहर का कुछ हिस्सा नकद राशि से अदा करना। 2. कुछ के बदले बाज़ार भाव पर मकान और ज़मीन देना। [3.] शेष राशि की किस्तबंदी करना। ये तीनों बातें शरीअत के अनुसार जायज़ हैं। पहली बात तो स्वयं स्पष्ट है। हालाँकि शरीअत के अनुसार या प्रथा के अनुसार अगर 'मेहर-ए-मुअज्जल' (विलंबित मेहर) इद्दत और तलाक़ पर, या ऐसी अवधि पर तय था जो अभी नहीं आई—उदाहरण के लिए, दस साल बाद देना तय हुआ था—और उसने पूरा या कुछ हिस्सा अभी दे दिया, तो महिला को इसे लेने के लिए विवश होना पड़ेगा क्योंकि निर्धारित अवधि ऋणी (देनदार) का अधिकार है। और वह...

पेज 243/715

باب التصرف فی المبیع والثمن (مبیع اور ثمن میں تصرف کرنے کا بیان)

مسئلہ ۱۰۵: از بڑودہ پائگاہ قام حالہ مرسلہ سیدہ میاں حالہ ۱۹ ربیع الآخر شریف ۱۳۱۰ھ قدوۃ العلماء عمدۃ الفضلاء اس مسئلہ کبیر میں کیا ارشاد فرماتے ہیں ایک شخص نے ایک عورت سے نکاح کیا۔ چند روز کے بعد عورت نے اپنا مہر طلب کیا، خاوند اس کا کہنے لگا کچھ روپیہ اس وقت نقد مجھ سے وصول کرلے باقی روپیہ جو رہا مکان اور زمین نرخ بازار سے خرید لے اور جو اس سے بھی باقی رہے قسط بقسط ماہ بماہ دیتا رہوں گا تیرا مہر بہر حال ادا کردوں گا۔ عورت اس بات پر راضی ہوئی، شرع شریف میں یہ جائز ہے یا ناجائز ہے؟ مع مہر ، سند کتاب عبارت عربی و ترجمہ اردو خلاصہ تحریر فرمائے گا اس کا صلہ آپ کو اللہ تعالیٰ جل شانہ ، عطا کرے گا فقط ۔ راقم سید و میاں حالہ از بڑودہ۔

الجواب: یہاں تین باتیں ہیں: ۱۔ بعض مہر کا بالفعل زر نقد سے ادا کرنا۔ ۲۔ بعض کے عوض مکان وزمین نرخ بازار پر دینا۔ باقی ماندہ کی قسط بندی ہونا ، یہ تینوں امر شرعاً جائز ہیں۔ اول تو خود ظاہر ہے اگرچہ شرعاً خواہ عرفاً مہر مؤجل عدت و طلاق یا ایسی اجل پر موعود ہو جو ہنوز نہ آئی مثلاً دس برس بعد دینا ٹھہرا تھا اس نے کل یا بعض ابھی دے دیا عورت کو جبر الینا ہو گا کہ اجل حق مدیون ہے۔ اور اسے

Fatawa Rizvia (Volume 17)

The authority to waive it,

Arabic Text	Urdu/English Translation
In Al-Zaylai, Al-Khaniya, Al-Nihaya, then Al-Ashbah then Al-Ashbah then Al-Uqud ad-Durriya, it is stated: Al-Dayn al-Mu'ajjal idha qadahu qabla hawl al-ajal yujbaru al-talib 'ala tasliimihi li'an al-ajal haqq al-madyun falahu an yasqutahu[1].	In Al-Zaylai, Al-Khaniya, Al-Nihaya, then Al-Ashbah then Ashbah then Uqud ad-Durriya, it is stated that if a debtor pays a deferred debt before the expiry of its term, the creditor (talib) will be compelled to receive it because the term is the right of the debtor which he has the right to waive. - (T)

And secondly[2], it is also permissible that even if the original requirement of the debt is that the same thing which is demanded should be given, for example, rupees be paid for rupees, it is stated in Al-Ashbah wal-Durr etc., "Al-duyun tuqda bi-amthaliha[2]" (In Ashbah and Durr etc., it is mentioned that debts should be fulfilled by their likes. - T) But outside of transactions of Salam and Sarf, by mutual consent, it is also permissible to make the compensation of the debt another thing.

Arabic Text	Urdu/English Translation
In Radd al-Muhtar: Talaba madyunahu faba'atha ilaihi sha'iran qadran ma'luman wa qala khudh-hu bis'ir al-balad wal-si'ru lahuma ma'lum kana bai'an[3].	In Radd al-Muhtar it is stated that if someone asked his debtor for his debt, and he sent a specific quantity of barley and said, "Take it according to the city rate," then if the rate is known to both, it became a sale. - (T)

And thirdly, the answer is also clear; even if at that time there was no installment plan, the prompt (debt) can be made deferred and the non-installment (debt) can be made installment-based by mutual consent. That is, regarding a debt for which it was decided that it would be paid immediately, then it is agreed upon that it will be given after so much time, or if there were no installments until now, now it is decided that it will be paid in monthly or yearly installments.

Arabic Text	Urdu/English Translation
In Al-Kanz: Sahha ta'jil kulli dayn ghayr al-qard[4], and in Al-Ashbah: Al-haal yaqbal al-ta'jil.	In Kanz it is stated that it is correct to set a period for every debt except for a loan, and in Ashbah it is stated that an immediate debt accepts a deferred term.

[1] Al-Ashbah wal-Nazair, Second Art, Book of Debts, Idarat al-Qur’an wal-Ulum al-Islamiyyah, Karachi, 2/288 [2] Tatimma fi al-Furuq min al-Ashbah wal-Nazair ma'a al-Ashbah, Idarat al-Qur’an wal-Ulum al-Islamiyyah, Karachi, 6/2 [3] Radd al-Muhtar, Book of Sales, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/12 [4] Kanz al-Daqaiq, Chapter on Murabaha and Tawliya, Section: Validity of selling real estate, H.M. Saeed Company, Karachi, p. 225

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

इसे समाप्त करने का अधिकार,

अरबी पाठ	हिंदी अनुवाद
अल-ज़ैलाई, अल-ख़ानिया, अल-निहाया, फिर अल-अश्बाह, फिर अल-अश्बाह, फिर उक़ूद अद-दुर्रिया में है: अद-दैन अल-मुअज्जिल इज़ा क़दाहु क़बला हौल अल-अजल युजबुरु अत-तालिब अला तसलीमिही लि-अन्ना अल-अजल हक़्क़ अल-मदयुन फ़लहू अन यस्कुताहु[1]।	अल-ज़ैलाई, अल-ख़ानिया, अल-निहाया, फिर अल-अश्बाह, फिर अश्बाह, फिर उक़ूद अद-दुर्रिया में उल्लेख है कि यदि ऋणी समय सीमा समाप्त होने से पहले आस्थगित ऋण का भुगतान करता है, तो ऋणदाता (तालिब) को इसे स्वीकार करने के लिए विवश किया जाएगा क्योंकि समय सीमा ऋणी का अधिकार है जिसे छोड़ने का उसे अधिकार है। - (त)

और दूसरी बात[2] यह भी जायज़ है कि यद्यपि ऋण की मूल आवश्यकता यही है कि वही चीज़ दी जाए जिसकी माँग है, उदाहरण के लिए रुपयों के बदले रुपये ही दिए जाएँ, अल-अश्बाह और अद-दुर्र आदि में उल्लेख है, "अद-दुयुन तुक्दा बि-अम्सालिहा[2]" (अश्बाह और दुर्र आदि में है कि ऋण उनकी मिसाल/समतुल्य से चुकाए जाएँ। - त) परन्तु सलाम और सर्फ़ के अलावा, आपसी सहमति से यह भी अनुमत है कि ऋण का मुआवज़ा दूसरी चीज़ बना ली जाए।

अरबी पाठ	हिंदी अनुवाद
रद्द अल-मुह्तार में है: तलबा मदयुनहु फ़बअसा इलैहि शईरन क़दरन मा'लूमं व क़ाला ख़ुज़हु बिसि'रि अल-बलद वल-सि'रु लहुमा मा'लूमं काना बै'अन[3]।	रद्द अल-मुह्तार में है कि किसी ने अपने ऋणी से ऋण की माँग की, तो उसने एक निश्चित मात्रा में जौ भेजे और कहा कि शहर के भाव के अनुसार ले लो। यदि शहर का भाव दोनों को ज्ञात है, तो यह बिक्री (बै') हो गई। - (त)

और तीसरी बात का उत्तर भी स्पष्ट है, यद्यपि उस समय तक किस्तों का कोई प्रावधान नहीं था, आपसी सहमति से नकद देय ऋण को आस्थगित और बिना किस्त वाले ऋण को किस्तों में बदला जा सकता है। अर्थात, जिस ऋण के बारे में यह तय हुआ था कि उसे तुरंत दिया जाएगा, फिर यह तय कर लें कि वह इतने समय के बाद दिया जाएगा, या अब तक किस्तें नहीं थीं, अब तय कर लें कि वह मासिक या वार्षिक किस्तों में अदा किया जाएगा।

अरबी पाठ	हिंदी अनुवाद
अल-कंज में है: सह-हा ता'जील कुल्लि दैन ग़ैर अल-क़र्ज़[4], और अल-अश्बाह में है: अल-हाल यक़बल अत-ता'जील।	कंज में है कि ऋण (लोन) के अलावा हर ऋण में समय सीमा निर्धारित करना सही है, और अश्बाह में है कि नकद देय ऋण आस्थगन स्वीकार करता है।

[1] अल-अश्बाह वल-नज़ायर, द्वितीय कला, ऋण की पुस्तक, इदारातुल क़ुरआन वल-उलूम अल-इस्लामिया, कराची, 2/288 [2] ततिम्मा फ़िल-फ़ुरूक़ मिन अल-अश्बाह वल-नज़ायर मआ अल-अश्बाह, इदारातुल क़ुरआन वल-उलूम अल-इस्लामिया, कराची, 6/2 [3] रद्द अल-मुह्तार, बिक्री की पुस्तक, दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 4/12 [4] कंज अल-दक़ाइक़, मुराबहा और तवलिया का अध्याय, अनुभाग: अचल संपत्ति की बिक्री की वैधता, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, पृष्ठ 225

اس کے ساقط کرنے کا اختیار،

اردو

عربی عبارت

ترجمہ

في الزيلعی والخانية والنهاية ثم الاشباه ثم اشباه پھر عقود الدریہ میں ہے کہ مدیون الدریۃ الدين المؤجل اذا قضاه قبل حول الاجل اگر دین مؤجل کی ادائیگی اجل گزرنے سے پہلے کرے تو یجبر الطالب علی تسلیمه لان الاجل حق المدیون طالب (قرض خواہ) پر اس کی وصولی کے لئے جبر کیا جائے گا فله ان یسقطه ۱۔ کیونکہ اجل مدیون کا حق ہے جسے ساقط کرنے کا اسے اختیار ہے۔ (ت)

اور ثانی ۲ بھی جائز کہ اگر چہ اصل مقتضائے دین یہی ہے کہ جس چیز کا مطالبہ ہے وہی دی جائے، مثلاً روپے کے روپے ہی ادا کئے جائیں، فی الاشباہ والدر وغیرہما الدیون تقضی بامثالہا ۲ (اشباہ اور در وغیرہ میں ہے کہ قرضے ان کی مثل سے ادا کئے جائیں۔ ت) مگر ماورائے سلم و صرف میں باہمی تراضی سے یہ بھی روا کہ دین کا معاوضہ دوسری چیز کر لیں۔

عربی عبارت	**اردو ترجمہ**
فی ردالمحتار طالب مدیونہ فبعث الیہ شعیر ا قدرا معلومًا و قال خذہ بسعر البلد والسعر لہما معلوم کان بیعًا ۳۔	ردالمحتار میں ہے کہ کسی نے اپنے مقروض سے قرضے کا مطالبہ کیا تو اس نے معین مقدار میں جو بھیجے اور کہا کہ شہر کے بھاؤ کے مطابق لے لو اگر شہر کا بھاؤ دونوں کو معلوم ہے تو بیع ہو گئی۔ (ت)

اور ثالث کا بھی جواب واضح، اگر چہ اس وقت تک قسط بندی نہ تھی کہ برضا مندی معجل کو مؤجل، غیر منجم کو منجم کر سکتے ہیں۔ یعنی جس دین کی نسبت قرار پایا تھا کہ فوراً دیا جائے گا پھر یہ ٹھہرالیں کہ اتنی مدت کے بعد دیا جائے گا یا اب تک قسطیں نہ تھیں اب قرار دے لیں کہ ماہانہ یا سالانہ قسط سے ادا ہوا کرے گا۔

عربی عبارت	اردو ترجمہ
في الكنز صح تاجيل كل دين غير القرض ۴، و فی الاشباہ الحال يقبل التأجيل	کنز میں ہے کہ قرض کے سوا ہر دین میں میعاد مقرر کرنا صحیح ہے، اور اشباہ میں ہے دینِ حالی تا جیل (تاخیر) قبول کرتا ہے

---

۱ الاشباہ والنظائر الفن الثانی کتاب المداینات ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۲/ ۲۸۸ ۲ تتمہ فی الفروق من الاشباہ والنظائر مع الاشباہ ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۶/ ۲ ۳ ردالمحتار کتاب البیوع داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۲ ۴ کنز الدقائق باب المرابحۃ والتولیۃ فصل صح بیع العقار ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص ۲۲۵

Fatawa-e-Razvia Volume 17

"...except what we have already mentioned.[1] It refers to what the author mentioned in his saying: In Shari'ah, there is no debt that is not immediate (present) except for the capital of Salam, the consideration for Sarf, a loan, the price after Iqaala (cancellation), the debt of a deceased person, and that for which a pre-emptor takes property."[2] - He accepts it except for what we have already mentioned. 'Ah', it means what the author mentioned in his saying that in Shari'ah there is no debt which is only immediate except for the capital in Bai' Salam, the exchange in Sarf, a loan, the price after Iqaala, the debt of a deceased person, and that against which a pre-emptor has taken property. (T)

However, while giving a house or land, it is necessary to take into account that if the market rate is not known to the man and woman, then the rate should be inquired first. The sale should take place with its determination, such as if a thing is worth one thousand rupees according to the market rate, the husband should say to the wife: "I gave you this land and house of mine in exchange for your one thousand rupees." She should say: "I accepted." It should not be that the sale happens first and then they go to investigate what the market rate is, because in this case, due to ignorance of the price (Jahalat-e-Thaman), the sale will become invalid (fasid), and both the man and woman will be sinners for committing an invalid contract. Then the annulment of this sale will be mandatory due to its invalidity. Yes, if the market rate becomes known in the same session of offer and acceptance, then the sale will certainly be valid. And the female buyer will have the option to take or not take that thing after knowing the price, but this matter is uncertain and difficult, therefore, inquire first and then conduct the sale in the aforementioned manner.

"In 'Al-Durr [al-Mukhtar]', a sale in which silence is observed regarding the price is invalid, such as selling it 'at its value'[3] 'Ah', summarized. And in 'Al-Hindiyyah', among the conditions for the validity of a sale is that the price must be known in a way that prevents dispute. Thus, a sale of something unknown with an ignorance that leads to dispute is not valid, such as selling something for its value." - In 'Al-Durr' it is stated that a sale in which silence was maintained regarding the price is invalid, like the sale of something in exchange for its value. 'Ah', summary. In 'Al-Hindiyyah' it is stated that among the conditions for the health (validity) of a sale is for the price to be known in such a way that no dispute arises. Therefore, the sale of an unknown (thing/price) with such ignorance which becomes a cause for dispute is not valid, like selling some item in exchange for its value.

1 Al-Ashbah wal-Naza'ir, Third Art, Discourse on Debt, Idarat al-Qur'an etc., Karachi, 4/212 2 Al-Ashbah wal-Naza'ir, Third Art, Discourse on Debt, Idarat al-Qur'an etc., Karachi, 4/212 3 Durr-e-Mukhtar, Book of Sales, Chapter of Invalid Sale, Matba' Mujtabai, Delhi, 2/24

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द सत्रह (17)

"...सिवाय उसके जिसका हम पहले ज़िक्र कर चुके हैं।[1] इसका अर्थ वह है जिसका ज़िक्र लेखक ने अपने इस कथन में किया है: शरीअत में कोई ऐसा ऋण (क़र्ज़) नहीं है जो केवल नक़द (हाली) न हो, सिवाय 'बैअ-ए-सल्लम' की मूल पूँजी, 'सर्फ़' का विनिमय, ऋण, 'इक़ाला' (निरस्तीकरण) के बाद की क़ीमत, मृतक का ऋण, और वह जिसके बदले शफ़ई (पड़ोसी/साझेदार) ने संपत्ति ली है।"[2] - वह उसे स्वीकार करता है सिवाय उसके जिसका हम पहले ज़िक्र कर चुके हैं। 'अह' (अत), इससे मुराद वह है जिसका ज़िक्र मुसन्निफ़ (लेखक) ने अपने इस क़ौल (कथन) में किया कि शरीअत में कोई दीन (ऋण) ऐसा नहीं जो फ़क़त हाली (वर्तमान/नक़द) हो सिवाय बैअ-ए-सल्लम में रास-उल-माल (मूल पूँजी), बदल-ए-सर्फ़, क़र्ज़, इक़ाला के बाद समन (क़ीमत) और दीन-ए-मय्यत के और वह जिसके बदले शफ़ीअ ने जायदाद ली। (त)

मगर मकान या ज़मीन देने में इतना लिहाज़ (ध्यान) ज़रूरी है कि यदि बाज़ार का भाव मर्द और औरत को मालूम नहीं है, तो पहले भाव दरयाफ़्त (पता) कर लें, उसके निर्धारण के साथ बिक्री (बैअ) हो, जैसे कि बाज़ार के भाव से यह चीज़ एक हज़ार रुपये की है तो शौहर औरत से कहे: "मैंने अपनी यह ज़मीन व मकान तुम्हारे एक हज़ार रुपये के बदले में तुम्हें दिया।" वह कहे: "मैंने स्वीकार किया।" ऐसा न हो कि पहले बिक्री हो जाए और उसके बाद जाँच-पड़ताल करने जाएँ कि बाज़ार का भाव क्या है, क्योंकि इस स्थिति में क़ीमत की अज्ञानता (जहालत-ए-समन) के कारण बिक्री फ़ासिद (अमान्य/दोषपूर्ण) हो जाएगी और स्त्री-पुरुष दोनों फ़ासिद अनुबंध करने के कारण गुनहगार होंगे। फिर इस बिक्री का फ़स्ख़ (निरस्तीकरण) फ़साद (दोष) के कारण वाजिब (अनिवार्य) होगा। हाँ, अगर उसी ईजाब-ओ-क़बूल (प्रस्ताव और स्वीकृति) की सभा में बाज़ार का भाव मालूम हो जाए, तो बेशक बिक्री सही हो जाएगी। और खरीदार महिला को क़ीमत जानने के बाद उस चीज़ को लेने या न लेने का अधिकार होगा, मगर यह बात संदिग्ध और कठिन है, इसलिए पहले ही दरयाफ़्त करके ऊपर बताए गए तरीक़े से बिक्री करें।

"अल-दुर्र [अल-मुख़्तार] में है कि जिस बिक्री में क़ीमत के बारे में चुप्पी साधी गई हो वह फ़ासिद है, जैसे इसे 'इसकी क़ीमत पर' बेचना।[3] 'अह' सारांश। और अल-हिंदिया में है कि बिक्री की वैधता की शर्तों में से यह है कि क़ीमत इस तरह ज्ञात हो कि विवाद न हो। अतः अज्ञात चीज़ की ऐसी अज्ञानता के साथ बिक्री जो विवाद का कारण बने, सही नहीं है, जैसे किसी चीज़ को उसकी क़ीमत के बदले बेचना।" - 'दुर्र' में है कि जिस बैअ (बिक्री) में समन (क़ीमत) से सकूत (चुप्पी) इख़्तियार किया गया

वह फ़ासिद है, जैसे किसी चीज़ की बैअ उसकी क़ीमत के बदले में। 'अह' तल्ख़ीस (सारांश)। 'हिंदिया' में है कि सेहत-ए-बैअ (बिक्री की वैधता) की शर्तों में से समन का इस तरह मालूम होना है कि झगड़ा पैदा न हो। लिहाज़ा मजहूल (अज्ञात) की बैअ ऐसी जहालत (अज्ञानता) के साथ जो झगड़े का बाइस (कारण) बने सही नहीं, जैसे किसी शय (चीज़) को उसकी क़ीमत के बदले फ़रोख़्त (बेचना)।

---

1 अल-अशबाह वल-नज़ाइर, फ़न-ए-सालिस, अल-क़ौल फ़ि-दीन, इदारत-उल-क़ुरआन आदि, कराची, 4/212 2 अल-अशबाह वल-नज़ाइर, फ़न-ए-सालिस, अल-क़ौल फ़ि-दीन, इदारत-उल-क़ुरआन आदि, कराची, 4/212 3 दुर्र-ए-मुख़्तार, किताब-उल-बुयूअ, बाब-उल-बैअ-उल-फ़ासिद, मतबा मुज्तबाई, दिल्ली, 2/24

الاماقدمناہ ' اہ یعنی ما ذکر فی قولہ لیس فی الشرع دین لا یکون الا حالا الا راس مال السلم وبدل الصرف والقرض والثمن بعد الاقالۃ ودین المیت وما اخذبہ الشفیع العقار 2۔ کو قبول کرتا ہے سوائے اس کے جس کا ہم پہلے ذکر کر چکے ہیں اھ، اس سے مراد وہ ہے جس کا ذکر مصنف نے اپنے اس قول میں کیا کہ شرع میں کوئی دین ایسا نہیں جو فقط حالی ہو سوائے بیع سلم میں راس المال، بدل صرف، قرض، اقالہ کے بعد ثمن اور دین میت کے اور وہ جس کے بدلے شفیع نے جائیداد لی۔ (ت)

مگر مکان زمین دینے میں اتنا لحاظ ضرور ہے کہ نرخ بازار مردوزن کا معلوم نہیں تو پہلے نرخ دریافت کرلیں، اس کے تعین کے ساتھ بیع واقع ہو کہ بازار کے بھاؤ سے یہ چیز ہزار روپے کی ہے تو شوہر عورت سے کہے میں نے اپنی یہ زمین ومکان تیرے ہزار روپے کے عوض میں تجھے دی۔ وہ کہے میں نے قبول کی، یہ نہ ہو کہ پہلے بیع ہو لے اس کے بعد تحقیقات کرنے جائیں کہ بازار کا نرخ کیا ہے کہ اس صورت میں بوجہ جہالتِ ثمن بیع فاسد ہو جائے گی اور زن و مرد دونوں بسبب ارتکاب عقد فاسد گنہگار ہونگے پھر اس بیع کا فسخ بوجہ فساد واجب ہو گا ہاں اگر اسی جلسہ ایجاب وقبول میں نرخ بازار معلوم ہو جائے تو البتہ بیع صحیح ہو جائے گی۔ اور مشتریہ کو بعد علم قیمت اس شئی کی لینے نہ لینے کا اختیار ہو گا مگر یہ امر موہوم و مشکل ہے لہذا پہلے ہی دریافت کر کے بیع بطریق مذکور کریں۔

فی الدر فسد بیع ماسکت فیہ عن الثمن کبیعہ بقیمۃ 3 اہ ملخصاً۔ وفی الھندیۃ اما اشراط الصحۃ فمنھا ان یکون الثمن معلوماً علماً یمنع من المنازعہ فبیع المجھول جھالۃ تفضی الیھا غیر صحیح کبییع الشبیئ در میں ہے کہ جس بیع میں ثمن سے سکوت اختیار کیا وہ فاسد ہے جیسے کسی شے کی بیع اس کی

قیمت کے بدلے میں اھ تلخیص ، ہندیہ میں ہے کہ صحت بیع کی شرائط میں سے ثمن کا اس طرح معلوم ہونا ہے کہ جھگڑا پیدا نہ ہو لہذا مجہول کی بیع ایسی جہالت کے ساتھ جو جھگڑے کا باعث بنے صحیح نہیں جیسے کسی شیئ کو اس کی قیمت کے بدلے فروخت

---

1 الاشباہ والنظائر الفن الثالث القول فی الدین ادارۃ القرآن الخ کراچی ۴/ ۲۱۲ 2 الاشباہ والنظائر الفن الثالث القول فی الدین ادارۃ القرآن الخ کراچی ۴/ ۲۱۲ 3 درمختار کتاب البیوع باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۲۴

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Arabic Excerpt]: "...its remaining part, summarized. It is mentioned in it that if a person sells something to another through 'Tawliyah' (selling at cost price) without the buyer knowing the cost price, the sale is invalid (fasid). However, if the seller informs the buyer of the cost price within the gathering, the sale becomes valid, and the buyer has the choice to either accept it or decline it. This is stated in Al-Kafi. End of quote. And Allah, Glorified and Exalted is He, knows best, and His knowledge, Majestic is His Glory, is most complete and most perfect." [Urdu Translation]: "Summarized. And in the same it is stated that if a person deals with another regarding 'Tawliyah' of something in exchange for what it cost him, while the buyer does not know what it cost the seller, then the sale will be invalid. Then if the seller informs the buyer within the gathering, the sale will become valid, and the buyer will have the option: if he wishes he may take it, and if he wishes he may leave it. It is likewise in 'Al-Kafi'. And Allah, Glorified and Exalted is He, knows best, and His knowledge, Majestic is His Glory, is most complete and most perfect. (T)"

Question 106: What do the scholars of the religion say about this issue: if a property is sold, and in the same gathering or another gathering the seller waives the price for the buyer, is it permissible or not? And due to this waiver, will that sale remain a sale and its rulings apply to it, or will it become a gift (Hiba)? Explain and be rewarded.

Answer: Indeed, it is permissible for a seller to sell something and waive the entire or part of the price for the buyer in the same or another gathering. Due to this waiver, that contract will remain a contract of sale and its rulings will apply to it. Because of this discharge (Ibraa), it cannot be considered a gift (Hiba) such that the rulings of Hiba apply, because whatever gift or discharge occurred was of the price, not of that property. And the word 'price' (Thaman) itself necessitates the actualization of a sale, for if it were not a sale, what was this 'price' that was waived?

[Arabic Excerpt]: "In Al-Fatawa al-Alamgiriyya, if the entire price is reduced, gifted, or discharged, if that occurred before the price was collected, all are valid but do not attach to the original contract. If it occurred after collecting the price, the reduction and gift are valid, but the discharge (Ibraa) is not valid. This is how it is in Al-Muhit." [Urdu Translation]: "In Fatawa Alamgiriyya it is stated: the entire price was reduced, or gifted, or discharged; if this was done before possession, all cases are correct, but it will not be annexed to the original contract. And if this was done after taking

possession of the price, then reducing and gifting will be correct, but discharging will not be correct. It is likewise in 'Al-Muhit'. (T)"

Footnotes: 1. Fatawa Hindiyya, Book of Sales, Chapter One, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/3 2. Fatawa Hindiyya, Book of Sales, Chapter of Murabaha and Tawliyah, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/165 3. Fatawa Hindiyya, Book of Sales, Chapter Sixteen, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/171

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

[अरबी अंश]: "...उसका शेष भाग, संक्षेप में। इसमें उल्लेख है कि यदि कोई व्यक्ति दूसरे को 'तौलिआ' (लागत मूल्य पर बिक्री) के माध्यम से कुछ बेचता है और खरीदार को लागत मूल्य का पता नहीं होता है, तो बिक्री अमान्य (फ़ासिद) है। हालाँकि, यदि विक्रेता सभा (मजलिस) के भीतर खरीदार को लागत मूल्य की सूचना दे देता है, तो बिक्री वैध हो जाती है, और खरीदार के पास विकल्प होता है कि वह या तो इसे स्वीकार करे या अस्वीकार कर दे। यह अल-काफ़ी में वर्णित है। उद्धरण समाप्त। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है, और उसका ज्ञान सबसे पूर्ण और सबसे सटीक है।" [उर्दू अनुवाद]: "संक्षेप में। और इसी में है कि यदि किसी व्यक्ति ने दूसरे के साथ किसी वस्तु का तौलिआ इतने के बदले में किया जितने में उसे वह वस्तु पड़ी थी, जबकि खरीदार को यह नहीं पता कि विक्रेता को वह कितने में पड़ी है, तो बिक्री फ़ासिद होगी। फिर यदि विक्रेता ने सभा के भीतर खरीदार को बता दिया, तो बिक्री सही हो जाएगी और खरीदार को विकल्प होगा: यदि चाहे तो ले ले, और यदि चाहे तो छोड़ दे। 'काफी' में भी ऐसा ही है। अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है और उसका ज्ञान सबसे पूर्ण और सटीक है। (त)"

प्रश्न 106: उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फरमाते हैं कि यदि कोई जायदाद बेची जाए और उसी सभा में या किसी दूसरी सभा में विक्रेता कीमत (थमन) खरीदार को माफ़ कर दे, तो यह जायज़ है या नहीं? और इस माफ़ी के कारण वह बिक्री ही रहेगी और उस पर उसी के नियम लागू होंगे या वह 'हिबा' (उपहार) हो जाएगी? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: निःसंदेह यह जायज़ है कि विक्रेता कोई चीज़ बेचे और उसी सभा में या दूसरी सभा में पूरी कीमत या उसका कुछ हिस्सा खरीदार को माफ़ कर दे। इस माफ़ी के कारण वह अनुबंध बिक्री का ही रहेगा और उस पर उसी के नियम लागू होंगे। इस छूट (इबरा) के कारण इसे 'हिबा' मानकर उस पर हिबा के नियम लागू नहीं किए जा सकते, क्योंकि जो हिबा या छूट दी गई है वह कीमत की है, न कि उस जायदाद की। और 'थमन' शब्द स्वयं बिक्री के अस्तित्व का प्रमाण है, क्योंकि यदि वह बिक्री नहीं थी तो वह 'थमन' क्या था जिसे माफ़ किया गया?

[अरबी अंश]: "फ़तावा अल-आलमगीरिया में है, यदि पूरी कीमत कम कर दी गई, उपहार में दी गई, या ऋणमुक्त कर दी गई, और यदि यह कीमत वसूलने से पहले हुआ, तो सभी मान्य हैं लेकिन मूल अनुबंध के साथ नहीं जुड़ते। यदि यह कीमत वसूलने के बाद हुआ, तो कटौती और उपहार मान्य हैं,

लेकिन ऋणमुक्त करना (इबरा) मान्य नहीं है। अल-मुहीत में ऐसा ही है।" [उर्दू अनुवाद]: "फ़तावा आलमगीरिया में है: पूरी कीमत घटा दी गई या उपहार स्वरूप दे दी गई या उससे मुक्त कर दिया गया; यदि कब्ज़ा करने से पहले ऐसा किया गया तो सभी स्थितियां सही हैं, लेकिन यह मूल अनुबंध के साथ नहीं जुड़ेगा। और यदि कीमत पर कब्ज़ा करने के बाद ऐसा किया गया है, तो घटाना और उपहार देना सही होगा लेकिन ऋणमुक्त करना (इबरा) सही न होगा। मुहीत में ऐसा ही है। (त)"

पाद-टिप्पणियाँ: 1. फ़तावा हिन्दिया, किताब अल-बुयू, अध्याय एक, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/3 2. फ़तावा हिन्दिया, किताब अल-बुयू, मुराबाहा और तौलिआ का अध्याय, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/165 3. फ़तावा हिन्दिया, किताब अल-बुयू, सोलहवाँ अध्याय, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/171

पृष्ठ 246/715

بقیتہ اھ۱ مختصرا وفیھا من ولی رجلا شیئا بما قام علیہ ولم یعلم المشتری بکم قام علیہ فسد البیع فان اعلمہ البائع فی المجلس صح البیع وللمشتری الخیار ان شاء اخذہ وان شاء ترکہ کذا في الکافي انتھی ۲ واللہ سبحنہ وتعالٰی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم۔ کرنا اھ اختصار۔ اور اسی میں ہے کہ کسی شخص نے دوسرے کے ساتھ کسی شئی کی تولیہ کی اتنے کے بدلے میں جتنے میں اس کو پڑی درانحالیکہ مشتری کو معلوم نہیں کہ بائع کو کتنے میں پڑی ہے تو بیع فاسد ہوگی، پھر اگر بائع نے مجلس کے اندر مشتری کو بتادیا تو بیع صحیح ہو جائے گی اور مشتری کو اختیار ہوگا اگر چاہے تو لے لے اور اگر چاہے تو چھوڑ دے، یونہی کافی میں ہے۔ واللہ سبحانہ وتعالٰی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم و احکم۔ (ت)

مسئلہ ۱۰۶ : کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اگر ایک جائیداد بیع کی جائے اور اسی مجلس خواہ دوسری مجلس میں بائع کا ثمن مشتری کو معاف کردے تو جائز ہے یا نہیں؟ اور اس معاف کرنے کے سبب وہ بیع بیع رہے گی اور اس کے احکام اس پر جاری ہوں گے یا ہبہ ہو جائے گی؟ بینوا توجروا۔

الجواب: بیشک جائز ہے کہ بائع کوئی چیز بیچے اور اسی مجلس خواہ دوسری مجلس میں کل ثمن یا بعض مشتری کو معاف کردے اور اس معافی کے سبب وہ عقد عقد بیع ہی رہے گا اور اسی کے احکام اس پر جاری ہوں گے اس ابراء کے سبب ہبہ ٹھہر کر احکام ہبہ کا محل نہیں قرار پاسکتا کیونکہ ہبہ یا ابراء جو کچھ ہوا ثمن کا ہوا ہے نہ اس جائیداد کا، اور لفظ ثمن خود تحقق بیع کو مقتضی ہے کہ اگر وہ بیع نہ تھی تو یہ ثمن کا ہے کہ تھا جو معاف کیا گیا،

في الفتاوی العالمگیریة اذ احط کل الثمن او وھبه او ابرأه عنه فان کان ذلك قبل قبض الثمن صح الکل ولکن لا یلتحق باصل العقد وان کان بعد قبض الثمن صح الحط والھبة ولم یصح الابراء ھکذا فی المحیط۳۔ فتاوٰی عالمگیریہ میں ہے پورا ثمن گھٹا دیا یا ہبہ کردیا یا بری کردیا اگر قبضہ سے پہلے ایسا کیا تو سب صورتیں درست ہیں مگر یہ اصل عقد کے ساتھ لاحق نہیں ہوگا اور اگر ثمن پر قبضہ کے بعد ایسا کیا ہے تو گھٹانا اور ہبہ کرنا درست ہوگا مگر بری کرنا درست نہ ہوگا محیط میں ایسا ہی ہے۔ (ت)

حواشی: ۱ فتاوٰی ہندیہ کتاب البیوع باب الاول نورانی کتب خانہ پشاور ۳/۳ ۲ فتاوٰی ہندیہ کتاب البیوع الباب المرابحة التولیة نورانی کتب خانہ پشاور ۳/۱۶۵ ۳ فتاوٰی ہندیہ کتاب البیوع الباب السادس عشر نورانی کتب خانہ پشاور ۳/۱۷۱

Fatawa Razawiyya - Volume 17

Narrated from Sayyiduna Jabir (may Allah be pleased with him) in Sahih Bukhari and Sahih Muslim:

[Arabic Table Text] He said: I went on a campaign with the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him). He said: The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) caught up with me while I was on a water-carrying camel of ours which had become exhausted and could hardly move. He said to me: "What is wrong with your camel?" I said: It is exhausted. He said: So the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) fell behind, prodded it, and prayed for it. Then it continued to be ahead of the other camels, leading them. He said to me: "How do you find your camel now?" I said: Better, your blessing has reached it. He said: "Will you sell it to me?" He (Jabir) said: I was shy to refuse since we had no other water-carrying camel. I said: Yes. He said: "Sell it to me." He said: I sold it to him on the condition that I could ride on its back until I reached Madinah. When the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) reached Madinah, I went to him with the camel. He gave me its price and returned the camel to me. (Excerpts condensed).

[Urdu Table Text] He said that I went on a Jihad with the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him). He met me while I was riding a water-carrying camel that was tired and almost unable to walk. He asked me, "What happened to your camel?" Hazrat Jabir (may Allah be pleased with him) says: I submitted that it is tired. He (the Prophet) turned back, prodded the camel, and prayed for it. Then it continuously walked ahead of all the camels. Then the Master of both worlds (peace and blessings of Allah be upon him) said to me, "How do you find the camel?" I submitted that it is better, it has received your blessing. He said, "Will you sell it to me?" I felt shy to refuse as we had no other camel. So, I sold that camel to you on the condition that I would ride on its back until Madinah Munawwarah. When the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) arrived in Madinah Munawwarah, I presented the camel in his noble service. He gave me the price of the camel and also returned the camel to me. (Excerpts condensed). (T)

Behold, the Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him) bought the camel, gave the price, and did not take the camel either. Likewise, it is permissible for the seller (ba'i) to deliver the sold item (mabi') and not take the price. And Allah Almighty knows best.

1 Sahih al-Bukhari, Book of Jihad, Chapter on a Man Seeking Permission from the Imam etc., Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/416; Sahih Muslim, Book of Sharecropping, Chapter on the Sale of a Camel and the Exception of Riding It, Qadimi Kutub Khana, 2/29.

फ़तावा रज़विया - जिल्द सत्रह (17)

सही बुखारी और सही मुस्लिम में सैय्यदुना जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु से मरवी (वर्णित) है:

[अरबी तालिका पाठ] उन्होंने कहा: मैं अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के साथ एक जिहाद में गया। उन्होंने कहा: नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) मुझसे आ मिले जबकि मैं हमारे एक पानी ढोने वाले ऊंट पर सवार था जो थक गया था और मुश्किल से चल पा रहा था। आपने मुझसे फ़रमाया: "तुम्हारे ऊंट को क्या हुआ?" मैंने कहा: यह थक गया है। उन्होंने कहा: फिर अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) पीछे रह गए, उसे झिड़का और उसके लिए दुआ की। फिर वह लगातार सभी ऊंटों के आगे चलने लगा। आपने मुझसे फ़रमाया: "तुम अपने ऊंट को अब कैसा पाते हो?" मैंने कहा: बेहतर, आपकी बरकत उसे पहुँच गई है। आपने फ़रमाया: "क्या तुम इसे मुझे बेचोगे?" उन्होंने (जाबिर) कहा: मुझे मना करने में हया आई क्योंकि हमारे पास कोई दूसरा पानी ढोने वाला ऊंट नहीं था। मैंने कहा: हाँ। आपने फ़रमाया: "इसे मुझे बेच दो।" उन्होंने कहा: मैंने उसे इस शर्त पर उन्हें बेच दिया कि मैं मदीना पहुँचने तक उसकी पीठ पर सवारी करूँगा। जब अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) मदीना पहुँचे, तो मैं ऊंट लेकर उनकी सेवा में हाज़िर हुआ। आपने मुझे उसकी कीमत दे दी और ऊंट भी मुझे वापस कर दिया। (संक्षिप्त).

[उर्दू तालिका पाठ] उन्होंने कहा कि मैं एक जिहाद में रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के साथ गया तो आप मुझसे आ मिले दरआँहालेकि (जबकि) मैं पानी लाने वाले एक ऊंट पर सवार था जो थक चुका था और चलने से तक़रीबन आजिज़ (असमर्थ) हो गया था। आपने मुझे फ़रमाया कि तेरे ऊंट को क्या हुआ। हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु तआला अन्हु कहते हैं मैंने अर्ज़ की कि थक गया है, आपने पीछे मुड़कर ऊंट को झिड़का और उसके लिए दुआ फ़रमाई तो वह मुसलसल (लगातार) तमाम ऊंटों के आगे चलने लगा फिर सरकार-ए-दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मुझसे फ़रमाया ऊंट को कैसा पाते हो? मैंने अर्ज़ की कि बेहतर है इसको आपकी बरकत पहुँची है, आपने फ़रमाया क्या तुम इसको मेरे पास फ़रोख़्त (बेचना) करोगे तो मैंने इनकार से हया की जबकि हमारे पास और ऊंट न था तो मैंने वह ऊंट इस शर्त पर आपके हाथ बेच दिया कि मैं मदीना मुनव्वरा तक उसकी पुश्त (पीठ) पर सवारी करूँगा, जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम मदीना मुनव्वरा तशरीफ़ लाए तो मैं ऊंट लेकर आपकी खिदमत-ए-अक़दस में हाज़िर हुआ आपने मुझे ऊंट के समन (कीमत) अता फ़रमाए और ऊंट भी मुझे वापस कर दिया (मुल्तक़तन)।(त)

देखिए हुज़ूर सरवर-ए-आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने ऊंट खरीद कर कीमत भी अता फ़रमाई और ऊंट भी न लिया, यूँ ही बाइ (बेचने वाले) को रवा (जायज़) है कि मबी (बेची हुई चीज़) भी सुपुर्द कर दे और समन (कीमत) भी न ले। वल्लाहु तआला आलम (और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है)।

---

1. सही अल-बुखारी, किताब अल-जिहाद, बाब अल-इस्तिज़ान अल-रजुल अल-इमाम आदि, कदीमी कुतुब खाना कराची, १/४१६; सही मुस्लिम, किताब अल-मुसाकात, बाब बय अल-बईर व इस्तिसना रकुबिह, कदीमी कुतुब खाना, २/२९।

पृष्ठ 247/715

صحیح بخاری اور صحیح مسلم میں سیدنا جابر رضی اللہ تعالٰی عنہ سے مروی:

[عربی جدول کا متن] قال غزوت مع رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم قال فتلاحق بى النبي صلى الله تعالىٰ عليه وسلم وانا على ناضح لنا قد اعيا فلا يكاد يسير فقال لى ما لبعيرك قال قلت اعى، قال فتخلف رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم فزجره ودعا له فما زال بين يدى الابل قد امها يسير فقال لى كيف ترى بعيرك قال قلت بخير قد اصابته بركتك قال افتبيعنيه قال فاستحييت ولم يكن لنا ناضح غيره قال فلقلت نعم قال فبعنى قال فبعته اياه على ان لى فقار ظهره حتى بلغ المدينة فلما قدم رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم المدينة غدوت عليه بالبعير فاعطا لى ثمنه ورده على[1] (ملتقطاً)۔

[اردو جدول کا متن] انہوں نے کہا کہ میں ایک جہاد میں رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کے ساتھ گیا تو آپ مجھ سے آملے درانحالیکہ میں پانی لانے والے ایک اونٹ پر سوار تھا جو تھک چکا تھا اور چلنے سے تقریباً عاجز ہو گیا تھا۔ آپ نے مجھے فرمایا کہ تیرے اونٹ کو کیا ہوا۔ حضرت جابر رضی اللہ تعالیٰ عنہ کہتے ہیں میں نے عرض کی کہ تھک گیا ہے، آپ نے پیچھے مڑ کر اونٹ کو جھڑکا اور اس کے لئے دعا فرمائی تو وہ مسلسل تمام اونٹوں کے آگے چلنے لگا پھر سرکار دو عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے مجھ سے فرمایا اونٹ کو کیسا پاتے ہو؟ میں نے عرض کی کہ بہتر ہے اس کو آپ کی برکت پہنچی ہے، آپ نے فرمایا کیا تم اسکو میرے پاس فروخت کروگے تو میں نے انکار سے حیا کیا جبکہ ہمارے پاس اور اونٹ نہ تھا تو میں نے وہ اونٹ اس شرط پر آپ کے ہاتھ بیچ دیا کہ میں مدینہ منورہ تک اس کی پشت پر سواری کروں گا، جب رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم مدینہ منورہ تشریف لائے تو میں اونٹ لے کر آپ کی

خدمت اقدس میں حاضر ہوا آپ نے مجھے اونٹ کے ثمن عطا فرمائے اور اونٹ بھی مجھے واپس کر دیا (ملتقطاً)۔(ت)

دیکھو حضور سرور عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے اونٹ خرید کر قیمت بھی عطا فرمائی اور اونٹ بھی نہ لیا، یوں ہی بائع کو روا ہے کہ مبیع بھی سپرد کر دے اور ثمن بھی نہ لے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

---

۱ صحیح البخاری کتاب الجہاد باب الاستیذان الرجل الامام الخ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱ / ۴۱۶، صحیح مسلم، کتاب المساقاۃ باب بیع البعیر و استثناء رکوبہ قدیمی کتب خانہ ۲/ ۲۹

Fatawa-e-Razviya (Volume 17)

Problem 107: (Note)

The Answer:

In the queried situation, several points are noteworthy: (1) In the pure Shari'ah, the validity of a contract is not based on the inner intentions or hidden goals of the parties, but rather on the meanings of the words they utter. Hundreds of Shari'ah issues are derived from this principle. For this reason, if someone marries a woman while having a firm intention in his heart that he is marrying for two days and will divorce her on the third day, then that marriage remains valid and effective. He then has the choice whether to divorce or not. However, if the marriage contract itself is enacted with these words [specifying duration], then it becomes absolutely void.

[Boxed Text] Arabic: Al-Binaya by Allama al-'Ayni, Book of Marriage, Chapter on Prohibited Marriages: Our Sheikh Zain al-Din al-Iraqi said in the commentary of Jami' al-Tirmidhi: Mut'ah marriage is prohibited if a specific duration is expressed therein. However, if the husband only intended in his mind to keep this woman in his wedlock for a year or a month or such, but did not stipulate it as a condition at the time of marriage, then certainly this marriage is valid.

Urdu Translation: It is written in the composition 'Al-Binaya' by Allama al-'Ayni, Book of Marriage, Chapter on Prohibited Marriages, that our Sheikh Zain al-Din al-Iraqi said in the commentary of Jami' al-Tirmidhi that Mut'ah marriage is forbidden provided that a specific duration is declared in it. If the husband has only intended in his mind that he will keep this woman in his wedlock for a period like one year or one month etc., but did not make it a condition at the time of marriage, then certainly this marriage is valid. (T)

Similarly, if a person wants to sell his house to Zaid and, for fear of the pre-emptor (shafi'), does not use the word 'sale' but gifts (hiba) the house to him, and the buyer gifts him money equal to the price, then this gift will legally remain a gift in Shari'ah and the right of pre-emption will not be established, even though their intention was the exchange of wealth for wealth. Al-Alamgiriyah, Ahmadi Press, Volume 6, Page 129:

[Boxed Text] Arabic: The seller gifts the house to the buyer and brings witnesses. Urdu: The seller gifts the house to the buyer and provides witnesses for it.

Note: The original question is not recorded. The nature of the question can be understood from the answer.

1. Al-Binaya fi Sharh al-Hidaya, Book of Marriage, Chapter on the Marriage of Forbidden Persons, Al-Maktabah al-Imdadiyah, Makkah Mukarramah, 2/67.

फ़तावा-ए-रज़विया (जिल्द 17)

मसला 107: (नोट)

जवाब:

पूछी गई स्थिति में कुछ बातें विचारणीय हैं: (1) शरीअत-ए-मुतह्हरा में अनुबंध करने वालों (आक़िदीन) की दिली नीयत और आंतरिक उद्देश्यों पर काम नहीं चलता, बल्कि उन्होंने जो शब्द कहे हैं उनके अर्थों पर आधार है, शरीअत के सैंकड़ों मसले इसी पर आधारित हैं। इसी लिए अगर कोई किसी औरत से निकाह करे और उसके दिल में पक्का इरादा हो कि वह दो दिनों के लिए निकाह कर रहा है और तीसरे दिन तलाक़ दे देगा, तो वह निकाह सही और प्रभावी रहता है। फिर उसे अधिकार रहता है कि चाहे तलाक़ दे या न दे। और अगर निकाह का अनुबंध ही इन्हीं शब्दों से हो (समय तय करके), तो वह पूरी तरह बातिल (अमान्य) हो जाता है।

[बॉक्स टेक्स्ट] अरबी: अल्लामा अल-ऐनी की अल-बिनाया, निकाह की किताब, निषिद्ध विवाहों का अध्याय: हमारे शैख ज़ैन अल-दीन अल-इराकी ने जामी अल-तिर्मिज़ी की व्याख्या में कहा: मुतअ निकाह निषिद्ध है यदि इसमें एक विशिष्ट अवधि व्यक्त की गई हो। हालांकि, यदि पति ने केवल अपने मन में इस महिला को एक वर्ष या एक महीने या इस तरह के लिए अपने विवाह में रखने का इरादा किया था, लेकिन निकाह के समय इसे शर्त के रूप में निर्धारित नहीं किया था, तो निश्चित रूप से यह निकाह वैध है।

उर्दू अनुवाद: अल्लामा ऐनी की रचना 'बिनाया', किताबुन् निकाह, फ़स्ल-ए-मुहर्रमात में है कि हमारे शैख़ ज़ैनुद्दीन इराक़ी ने जामे तिर्मिज़ी की शरह (व्याख्या) में फ़रमाया कि निकाह-ए-मुत्आ हराम है बशर्ते कि उसमें एक निश्चित अवधि व्यक्त की जाए। और अगर शौहर ने केवल अपनी नीयत में यह तय किया हो कि वह उस औरत को एक साल या एक महीने आदि की अवधि तक अपने निकाह में रखेगा लेकिन निकाह के समय यह शर्त नहीं लगाई, तो यक़ीनन यह निकाह सही है। (त)

इसी तरह अगर कोई व्यक्ति अपना घर ज़ैद के हाथ बेचना चाहे और शफ़ीअ (हक़दार) के डर से 'बय' (बिक्री) शब्द न कहे बल्कि उसे घर हिबा (उपहार) कर दे और वह (खरीदार) उसे क़ीमत के बराबर पैसे हिबा कर दे, तो यह हिबा शरीअत के अनुसार हिबा ही रहेगा और शफ़ीअ का अधिकार साबित नहीं होगा, चाहे उनकी नीयत माल के बदले माल के विनिमय की ही क्यों न थी। आलमगीरिया, मतबा अहमदी, जिल्द 6, पृष्ठ 129:

[बॉक्स टेक्स्ट] अरबी: बेचने वाला घर खरीदार को हिबा कर दे और गवाह पेश करे। उर्दू: बेचने वाला घर खरीदार को तोहफे में दे दे और उस पर गवाह बना ले।

नोट: मूल प्रश्न दर्ज नहीं है। जवाब से सवाल की स्थिति समझी जा सकती है।

1. अल-बिनाया फ़ी शरह अल-हिदाया, किताबुन् निकाह, फ़स्ल फ़ी निकाह अल-मुहर्रमात, अल-मक्तबा अल-इमदादिया, मक्का मुकर्रमा, 2/67.

فتاوٰی رضویہ (جلد ہفدہم (۱۷))

مسئلہ ۱۰۷: عہ

الجواب:

صورتِ مستفسرہ میں چند امور قابلِ لحاظ ہیں: (۱) شرع مطہر میں عاقدین کی نیاتِ قلبیہ و اغراضِ باطنیہ پر بائے کار نہیں بلکہ جو لفظ انہوں نے کہے ان کے معانی پر مدار ہے، صدہا مسائلِ شرع اس پر متفرع۔ اسی لئے اگر کسی عورت سے نکاح کرے اور اس کے دل میں عزم قطعی ہو کہ دو روز کے لئے نکاح کرتا ہوں تیسرے روز طلاق دے دوں گا تو وہ نکاح صحیح و نافذ رہتا ہے پھر اسے اختیار رہتا ہے چاہے طلاق دے یا نہ دے۔ اور اگر عقد نکاح ہی ان لفظوں سے واقع ہو تو باطل محض ہو جاتا ہے،

بناية للعلامة العينى كتاب النكاح فصل المحرمات، قال شيخنا زين الدين العراقي في شرح جامع الترمذى نكاح المتعة المحرم اذ خرج بالتوقيت فيه اما اذا كان في تعيين الزوج انه لا يقيم معها الاسنة او شهرا او نحو ذلك ولم يشترط ذلك فانه نكاح صحيح[1]۔ علامہ عینی کی تصنیف بنایہ کتاب النکاح، فصل محرمات میں ہے کہ ہمارے شیخ زین الدین عراقی نے جامع ترمذی کی شرح میں فرمایا کہ نکاح متعہ حرام ہے بشرطیکہ اس میں معین مدت کا اظہار کرے، اور اگر زوج نے محض اپنی نیت میں تعین کی ہو کہ وہ اس عورت کو ایک سال یا ایک مہینہ وغیرہ مدت تک اپنی زوجیت میں رکھے گا لیکن بوقت نکاح شرط نہیں لگائی تو بیشک یہ نکاح صحیح ہے۔(ت)

علٰی ہذا اگر کوئی شخص اپنا مکان زید کے ہاتھ بیچنا چاہے اور شفیع کے خوف سے لفظِ بیع نہ کہے بلکہ یہ اس کو مکان ہبہ کردے اور وہ بقدرِ ثمن روپیہ اسے ہبہ کردے تو یہ ہبہ شرعاً ہبہ ہی

رہے گا اور شفیع کا حق ثابت نہ ہوگا اگرچہ ان کی نیت مبادلہ مال بالمال تھی۔ عالمگیریہ مطبع احمدی جلد ششم صفحہ ۱۲۹:

یھب البائع الدار من المشتری ویشھد بائع مکان مشتری کو ہبہ کردے اور اس پر گواہ

عہ: اصل میں سوال درج نہیں۔ جواب سے سوال کی صورت سمجھی جاسکتی ہے۔

[1] البناية في شرح الهداية كتاب النكاح فصل في نكاح المحرمات المكتبة الامداديه مكہ مكرمہ ۲/۶۷

Fatawa Razawiyya Volume 17

[Arabic]: The price remains due from the buyer, then the buyer gifts the price to the seller and calls witnesses for it. It is mentioned in 'Hiyal al-Asl' that the buyer then gives an equivalent compensation for the price. When the buyer and seller do this, the right of pre-emption (shuf'ah) is not established because the right of pre-emption is specific to transactions involving exchange (mu'awadat). [Urdu Explanation]: Establish it, then let the buyer gift the price to the seller and establish witnesses for it. It is mentioned in 'Hiyal al-Asl' that then the buyer should fix a compensation equal to the price. Once the buyer and seller have done this, then pre-emption will not be proven because the right of pre-emption is specific to exchanges. (T)

Similarly, if a person wants to gift an undivided share (musha') and knows that the gift will become invalid due to its being musha', then the scholars state: sell that musha' to him and waive the price so that his purpose, i.e., transfer of ownership without compensation, is also achieved. Because this contract is legally a sale, it will not be invalid either. Radd al-Muhtar, Annotation on Durr al-Mukhtar, printed by Dar al-Islam, Constantinople, Vol. 4, p. 777:

[Arabic Snippet]: (Benefit) Whoever wants to gift half of an undivided house should sell half the house for a known price and then release him from the price. Bazaziya. [Urdu Explanation]: (Benefit) If one wants to gift half an undivided house, they should sell half the house to the donee and then release them from the price. Bazaziya. (T)

The plaintiff admits that the case at hand is exactly this specific partial ruling which the jurists have explicitly stated, because her statement in the petition is that this contract was weak and conditional with terms, therefore it was transferred towards a sale. And Allah knows best. (2) Regarding the passage from Durr al-Mukhtar presented by the plaintiff's lawyer that "batal hatt al-kull" (waiving the entire amount is void. T), Allama Shami (may Allah have mercy on him) explained its meaning in Radd al-Muhtar that it means gifting the price will also be valid and the contract will also remain valid, but it will not be considered part of the original contract. That is, it will not be decided that the contract was originally without price from the start so that invalidity doesn't follow or the sale doesn't turn into a gift. This is contrary to waiving a part, which is [part of] the original...

1. Fatawa Hindiyya, Book of Stratagems (Kitab al-Hiyal), Chapter 20, Noorani Kutub Khana Peshawar, 6 / 421.

2. Radd al-Muhtar, Book of Gift (Kitab al-Hibah), Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4 / 508.
3. Durr al-Mukhtar, Book of Sales (Kitab al-Buyu'), Chapter on Disposition in Sale and Price, Matba' Mujtabai Delhi, 2 / 38. Page 249 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

[अरबी]: खरीदार पर कीमत बनी रहती है, फिर खरीदार विक्रेता को कीमत उपहार में देता है और उस पर गवाह पेश करता है। 'हियल अल-अस्ल' में उल्लेख है कि फिर खरीदार कीमत के बराबर मुआवजा देता है। जब खरीदार और विक्रेता ऐसा करते हैं, तो शुफ़ा (पूर्व-क्रय अधिकार) स्थापित नहीं होता है क्योंकि शुफ़ा का अधिकार केवल विनिमय वाले लेन-देन (मुआवादत) के लिए विशिष्ट है। [उर्दू व्याख्या]: इसे स्थापित करे, फिर खरीदार विक्रेता को कीमत उपहार में दे दे और उस पर गवाह स्थापित करे। 'हियल अल-अस्ल' में ज़िक्र है कि फिर खरीदार उस पर कीमत के बराबर मुआवज़ा मुक़र्रर करे। जब विक्रेता और खरीदार ने ऐसा कर लिया, तो अब शुफ़ा साबित नहीं होगा क्योंकि शुफ़ा का हक़ तो विनिमय (मुआवादत) के साथ विशिष्ट है। (त)

इसी तरह अगर कोई व्यक्ति किसी अविभाजित चीज़ (मुशाअ) को उपहार में देना चाहे और जानता हो कि अविभाजित होने के कारण उपहार अमान्य (फ़ासिद) हो जाएगा, तो विद्वान कहते हैं: उस मुशाअ को उसे बेच दे और कीमत माफ़ कर दे ताकि उसका उद्देश्य, यानी बिना मुआवज़े के स्वामित्व हस्तांतरण, भी प्राप्त हो जाए। इस वजह से कि यह अनुबंध कानूनी रूप से बिक्री है, यह अमान्य भी नहीं होगा। रद्द अल-मुह्तार, दुर्र-ए-मुख़्तार पर टीका, दारुल इस्लाम कांस्टेंटिनोपल द्वारा मुद्रित, खंड 4, पृष्ठ 777:

[अरबी]: (लाभ) जो व्यक्ति किसी अविभाजित घर का आधा हिस्सा उपहार में देना चाहता है, उसे घर का आधा हिस्सा ज्ञात कीमत पर बेचना चाहिए और फिर उसे कीमत से मुक्त कर देना चाहिए। बज़ज़िया। [उर्दू व्याख्या]: (फ़ायदा) जो व्यक्ति आधा मकान अविभाजित उपहार करना चाहे तो वह आधा मकान उपहार प्राप्तकर्ता के हाथ बेचकर कीमत से उसे बरी कर दे, बज़ज़िया। (त)

वादी स्वीकार करता है कि मामले की स्थिति बिल्कुल यही विशिष्ट आंशिक नियम है जिसे न्यायविदों ने स्पष्ट रूप से बताया है, क्योंकि उसके दावे के बयान में है कि यह अनुबंध शर्तों के साथ कमज़ोर था, इसलिए इसे बिक्री की ओर स्थानांतरित किया गया। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है। (2) वादी के वकील ने दुर्र-ए-मुख़्तार से जो इबारत पेश की कि "बतल हत्त अल-कुल्ल" (पूरी राशि घटा देना बाटल है। त), अल्लामा शामी (अल्लाह उन पर रहम करे) ने रद्द अल-मुह्तार में इसका अर्थ बताया है कि इसका मतलब है कि कीमत का उपहार भी सही होगा और अनुबंध भी सही रहेगा, लेकिन यह मूल अनुबंध का हिस्सा नहीं माना जाएगा। यानी यह तय नहीं होगा कि शुरू से ही अनुबंध

बिना कीमत के था ताकि अमान्यता न आए या बिक्री उपहार में न बदल जाए। इसके विपरीत, कुछ हिस्सा घटाना जो कि मूल...

1. फ़तावा हिंदिया, किताबुल हियल, अध्याय 20, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 6 / 421
2. रद्द अल-मुह्तार, किताबुल हिबा, दार इहया अत-तुराथ अल-अरबी बेरूत, 4 / 508
3. दुर्र-ए-मुख़्तार, किताबुल बुयू, बिक्री और कीमत में निपटान पर अध्याय, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 2 / 38 पृष्ठ 249 / 715

علیہ ثمن المشتری یھب الثمن من البائع و یشھد علیہ و ذکر فی حیل الاصل ثم المشتری یعوضہ مقدار الثمن فاذا فعلا ذلک لا تجب الشفعہ لان حق الشفعہ یختص بالمعاوضات ۱۔ قائم کر دے پھر مشتری ثمن بائع کو ہبہ کرے اور اس پر گواہ قائم کرے اور حیل اصل میں مذکور ہے کہ پھر مشتری اس پر ثمن کے برابر عوض مقرر کرے، جب بائع اور مشتری نے ایسا کرلیا تو اب شفعہ ثابت نہیں ہوگا کیونکہ حق شفعہ تو معاوضات کے ساتھ مختص ہے۔ (ت)

اسی طرح اگر کسی شخص ایک شے مشاع ہبہ کرنا چاہے اور جانے کہ ہبہ بوجہ شیوع فاسد ہو جائیگا، تو علماء فرماتے ہیں اس مشاع کو اس کے ہاتھ بیع کرے ور ثمن معاف کرے کہ اس کی غرض یعنی تملیک بلا عوض بھی حاصل ہو جائے گی، اور بدیں وجہ کہ یہ عقد شرعاً بیع ہے فاسد بھی نہ ہوگا، ردالمختار حاشیہ درمختار مطبوعہ دارالاسلام قسطنطنیہ جلد ۴ ص ۷۷۷ : (فائدہ) من اراد ان یھب نصف دار مشاعاً یبیع منہ نصف الدار بثمن معلومہ ثم یبریہ عن الثمن بزازیۃ ۲۔ (فائدہ) جو آدھا مکان غیر منقسم ہبہ کرنا چاہے تو وہ آدھا مکان موہوب لہ کے ہاتھ بیچ کر ثمن سے اس کو بری کردے، بزازیہ۔ (ت)

مدعیہ تسلیم کرتی ہے کہ صورت مقدمہ بعینہ یہی جزئیہ خاص ہے جس کا حکم فقہاء نے بالتصریح فرما دیا کیونکہ اس کی عرضی دعوٰی کا بیان ہے کہ یہ عقد ضعیف مشروط بشرائط تھا لہذا بیع کی طرف انتقال کیا گیا، واللہ تعالٰی اعلم۔ (۲) وکیل مدعیہ نے جو عبارت درمختار پیش کی کہ بطل حط الکل ۳ (کل کا گھٹا دینا باطل ہے۔ت) علامہ شامی رحمۃ اللہ تعالٰی علیہ نے ردالمختار میں اس کے معنی بیان فرمائے کہ مراد یہ ہے کہ ہبہ ثمن بھی صحیح ہوگا اور عقد بھی صحیح رہے گا مگر یہ

کہ بہ اصل عقد سے ملحق نہ ہوگا یعنی یہ نہ قرار پائے گا کہ سرے سے عقد بلا ثمن ہوا تھا تاکہ فساد لازم آئے یا بیع ہبہ ہو جائے، بخلاف حط بعض کے کہ وہ اصل

۱ فتاویٰ ہندیہ کتاب الحیل الفصل العشرون نورانی کتب خانہ پشاور ۶ / ۴۲۱ ۲ ردالمختار کتاب الھبۃ دار احیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۵۰۸ ۳ درمختار کتاب البیوع فصل فی التصرف فی البیع والثمن مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۳۸ Page 249 of 715

Fatawa Razawiya, Volume 17

...is appended to the contract. So if someone sells for a hundred and then reduces it by twenty-five, it will be as if it was sold for seventy-five from the beginning. Shami, printed in Istanbul, Vol. 4, p. 259:

[Left Column (Arabic excerpt)] (His statement) "So the reduction of the whole is void," meaning its attachment is void despite the validity of the contract and the waiver of the price from the buyer, contrary to what some have imagined that the sale becomes invalid, taking from Al-Zaylai's reasoning by his statement, "Because attachment in it leads to its change, because it turns into a gift or a sale without a price, so it becomes invalid, while the intention of both was trade through a contract that is legitimate from every aspect. Thus, attachment in it leads to its change, so it does not attach to it." His statement "so it does not attach" is explicit that the discussion is about attachment, and his statement "so it becomes invalid" is branched from attachment, as stated in Sharh al-Hidayah. It is said in al-Dhakhirah: If the whole price is reduced, gifted, or absolved, if it was before possession, the whole is valid and it does not attach to the original contract. In al-Bada'i, regarding pre-emption (shuf'ah): If the whole price is reduced, the pre-emptor takes it for the whole price, and nothing is dropped from him, because the reduction of the whole price does not attach.

[Right Column (Urdu commentary)] The phrase "to reduce all is void" means that attaching it to the original contract is void. Even though the contract and the waiver of the price from the buyer are both valid, this ruling is against the delusion of some people that the sale becomes invalid. They argued based on Zaylai's reasoning, which he stated in his discourse that this attachment leads to a change in the original contract because, due to it, the sale would either become a gift or a sale without a price, and thus it would become invalid. However, their intention was trade through a contract that was legitimate in every respect, and since attachment causes change in it, therefore it will not be appended to the contract. His statement "it will not be appended" is explicit that the discourse is about it being appended. And his statement "it will become invalid" is a consequence of this attachment, as clarified in Sharh al-Hidayah. In al-Dhakhirah, it is said that when the seller reduces the entire price, gives it as a gift, or absolves the buyer from the price, if this is before the price is taken possession of, then everything is correct, and it will not be appended to the original contract. In al-Bada'i, in the discussion of pre-emption, it is stated that if the

seller reduces the entire price, the pre-emptor can take it in exchange for the full price, and nothing will be waived from it because of all the prices...

फ़तावा रज़विया, जिल्द 17

...अनुबंध के साथ जुड़ जाता है। इसलिए यदि किसी ने सौ में बेचा और फिर पच्चीस घटा दिए, तो यह ऐसा माना जाएगा जैसे शुरुआत में पचहत्तर में बेचा गया था। शामी, इस्तांबुल में मुद्रित, खंड 4, पृष्ठ 259:

[बायां कॉलम (अरबी उद्धरण)] (उनका कथन) "तो पूरे की कमी शून्य है," यानी अनुबंध की वैधता और खरीदार से कीमत की छूट के बावजूद इसका जुड़ाव शून्य है, जैसा कि कुछ लोगों ने कल्पना की है कि बिक्री अमान्य हो जाती है, अल-ज़ैलई के तर्क से लेते हुए उनके बयान के अनुसार, "क्योंकि इसमें जुड़ाव इसके परिवर्तन की ओर ले जाता है, क्योंकि यह उपहार या बिना कीमत के बिक्री में बदल जाता है, इसलिए यह अमान्य हो जाता है, जबकि दोनों का इरादा हर पहलू से वैध अनुबंध के माध्यम से व्यापार था। इस प्रकार, इसमें जुड़ाव इसके परिवर्तन की ओर ले जाता है, इसलिए यह इसके साथ नहीं जुड़ता है।" उनका बयान "तो यह नहीं जुड़ता" स्पष्ट है कि चर्चा जुड़ाव के बारे में है, और उनका बयान "तो यह अमान्य हो जाता है" जुड़ाव से उपजा है, जैसा कि शरह अल-हिदाया में कहा गया है। अल-ज़खीरा में कहा गया है: यदि पूरी कीमत कम कर दी जाती है, उपहार में दी जाती है, या बरी कर दी जाती है, यदि यह कब्जे से पहले था, तो सब सही है और यह मूल अनुबंध के साथ नहीं जुड़ता है। अल-बदाए में शुफ़आ (पूर्व-क्रय अधिकार) के बारे में है: यदि पूरी कीमत कम कर दी जाती है, तो शुफ़आ करने वाला पूरी कीमत के बदले में लेता है, और उससे कुछ भी कम नहीं किया जाता है, क्योंकि पूरी कीमत की कमी अनुबंध से नहीं जुड़ती है।

[दायां कॉलम (उर्दू व्याख्या)] "सब कुछ घटा देना बातिल (शून्य) है" वाक्यांश का अर्थ है कि इसे मूल अनुबंध के साथ जोड़ना बातिल है। भले ही अनुबंध और खरीदार से कीमत की छूट दोनों सही हों, यह हुक्म कुछ लोगों के इस वहम (भ्रम) के खिलाफ है कि बिक्री फ़ासिद (अमान्य) है। उन्होंने ज़ैलई के तर्क से दलील दी जो उन्होंने अपने कलाम में बयान की कि यह इल्हाक़ (जुड़ाव) मूल अनुबंध के परिवर्तन तक ले जाता है क्योंकि इसके कारण बिक्री या तो हिबा (उपहार) बन जाएगी या बिना कीमत के बिक्री, तो इस तरह वह फ़ासिद हो जाएगी। हालाँकि उन दोनों का इरादा ऐसे अनुबंध के ज़रिए व्यापार था जो हर लिहाज़ से मसरूअ (वैध) हो और चूंकि इल्हाक़ इसमें बदलाव का कारण है, इसलिए यह अनुबंध के साथ मुलहक़ (सम्बद्ध) नहीं होगा। उनका कहना "मुलहक़ नहीं होगा" इस बात में स्पष्ट है कि बात इल्हाक़ होने के बारे में है। और उनका कहना "तो फ़ासिद हो जाएगा" इसी लहूक़ (जुड़ाव) पर आधारित है जैसा कि शरह हिदाया में इसकी तसरीह (स्पष्टीकरण) की गई है।

और ज़खीरा में कहा गया है कि जब विक्रेता पूरी कीमत घटा दे या हिबा कर दे या खरीदार को कीमत से बरी कर दे, अगर यह कीमत पर कब्जे से पहले है तो सब सही है और यह मूल अनुबंध के साथ मुलहक़ नहीं होगा। बदाए में शुफ़आ की बहस में है कि अगर विक्रेता ने पूरी कीमत घटा दी तो शफीअ (शुफ़आ करने वाला) पूरी कीमत के बदले ले सकता है, उससे कुछ भी साक़ित (कम) नहीं होगा क्योंकि तमाम कीमतों का...

पृष्ठ 250 का 715

عقد سے ملحق ہو جاتا ہے سو کو بیچا پھر پچیس حط کر دے تو یہ ٹھہرے گا گویا ابتداء پچھتر کو بیچا تھا۔ شامی مطبوعہ استنبول ج ۴ ص ۲۵۹:

[بایاں کالم (عربی اقتباس)] (قولہ) فبطل حط الکل ای بطل التحاقہ مع صحۃ العقد وسقوط الثمن عن المشتری خلافا لما توھمہ بعضھم من ان البیع یفسد اخذا من تعلیل الزیلعی بقولہ لان الالتحاق فیہ یؤدی الی تبدیلہ لانہ ینقلب ھبۃ او بیع بلاثمن فیفسد وقد کان من قصد ھما التجارۃ بعقد مشروع من کل وجہ فالا لتحاق فیہ یؤدی الی تبدیلہ فلایلتحق بہ اہ فقولہ فلا یلتحق صریح فی ان الکلام فی الالتحاق وان قولہ فیفسد مفرع علی الالتحاق کما صرح بہ شرح الھدایۃ وقال فی الذخیرۃ اذا حط کل الثمن او وھب او ابرأ عنہ فان کان قبل قبضہ صح الکل ولا یلتحق بأصل العقد وفی البدائع من الشفعۃ ولو حط جمیع الثمن یأخذ الشفیع بجمیع الثمن ولا یسقط عنہ شیئ لان حط کل الثمن لا یلتحق

[دایاں کالم (اردو تشریح)] قولہ یعنی ماتن کا قول کہ "کل کو گھٹا دینا باطل ہے" اس سے مراد یہ ہے کہ اس کو اصل عقد کے ساتھ لاحق کرنا باطل ہے اور باوجودیکہ عقد اور مشتری سے ثمن کا اسقاط دونوں صحیح ہیں، یہ حکم بعض لوگوں کے اس وہم کے خلاف ہے کہ بیع فاسد ہے، ان لوگوں نے زیلعی کی تعلیل سے استدلال کیا جو اس نے اپنے اس کلام میں بیان کی کہ یہ الحاق اصل عقد کی تبدیلی تک پہنچاتا ہے کیونکہ اس کے سبب سے بیع یا تو ہبہ بن جائے گی یا بیع بلا ثمن تو اس طرح وہ فاسد ہو جائے گی، حالانکہ ان دونوں کا ارادہ ایسے عقد کے ذریعے تجارت تھا جو ہر لحاظ سے مشروع ہو اور الحاق چونکہ اس میں تبدیلی کا موجب ہے لہٰذا یہ عقد کے ساتھ ملحق نہ ہو گا اھ اس کا قول "فلا یلتحق" صریح ہے اس بات میں کلام لاحق ہونے کے بارے میں ہے اور اس کا قول "فیفسد" اسی لحوق پر متفرع ہے جیسا کہ شرح ہدایہ میں اس کی تصریح کی

گئی ہے، اور ذخیرہ میں کہا کہ جب بائع تمام ثمن گھٹا دے یا ہبہ کرے یا مشتری کو ثمن سے بری کر دے اگر یہ ثمن پر قبضہ سے پہلے ہے تو سب درست ہے اور یہ اصل عقد کے ساتھ لاحق نہیں ہو گا۔ بدائع میں شفعہ کی بحث میں ہے کہ اگر بائع نے تمام ثمن گھٹا دیئے تو شفیع تمام ثمن کے بدلے لے سکتا ہے اس سے کچھ بھی ساقط نہ ہو گا کیونکہ تمام ثمنوں کا

Volume 17 - Fatawa Razawiyya

[Arabic Box Text]: ...with the original contract because if it were to be attached, the sale would become void as it would be a sale without a price. Therefore, the reduction [of the entire price] is not valid regarding the right of the pre-emptor (Shufi'), but it is valid regarding the right of the buyer, as it constitutes an exoneration from the price. End quote. And it was added in Al-Muhit that it corresponds to a debt established against his liability, and the full discussion on this is in the Fatwas of Allama Qasim.

[Urdu Box Text]: Reduction does not attach to the original contract because if it were to be attached, the sale would become void as it would be a sale without a price. Thus, reducing the entire price is not valid in favor of the pre-emptor, but it is valid in favor of the buyer, and this constitutes an exoneration for him from the price. End quote. And it was added in Al-Muhit that it corresponds to a debt that is established with his liability; the full discussion on this is in the Fatwas of Allama Qasim. (T)

Observe how well-reasoned and clear the elegant research provided by Allama Amin al-Millat wa al-Din Muhammad ibn Abidin Afandi Shami (may Allah Almighty have mercy on him) is. And it is not merely his own invention; rather, he cites explicit texts from the books of the Imams upon which the authors of Durr al-Mukhtar and other great scholars of the past and present have relied. — 'Dhakhira' is an excellent, authoritative collection of Fatwas. 'Bada'i' authored by Imam Abu Bakr ibn Mas'ud ibn Ahmad al-Kashani, about which scholars say: "This is a magnificent book, the likes of which I have not seen in our books." (This is a magnificent book whose equal is not seen in our books. T). 'Al-Muhit' whose credibility is as clear as the midday sun. The Fatwas of Allama Qasim ibn Qutlubugha, the distinguished disciple of Imam Allama Kamal al-Din Muhammad ibn al-Humam. 'Tabyin al-Haqa'iq', a commentary on 'Kanz al-Daqa'iq' by Imam Allama Faqih Muhaddith Zayla'i. 'Sharh al-Hidaya' and in other books too, this issue is written exactly as the investigating Allama has verified. 'Majma' al-Anhur', a commentary on 'Multaqa al-Abhur', printed in Istanbul, volume 2, page 75:

[Arabic Box Text]: Disposal of the price through sale, gift, or transferring ownership to the one who owes it, whether for consideration or without consideration, is valid before its possession. Reduction from it is also valid. The reduction becomes effective immediately and attaches to the original contract retroactively. This contains an indication that reducing the entire price does not attach [to the original contract].

[Urdu Box Text]: Disposal of the price is valid before possession, such as sale, gift, or making the one who owes the price its owner, whether for consideration or without consideration. And reduction from the price is also valid. This reduction is established immediately and, being attributed to the original contract, attaches to it. And in this, there is an indication that reducing the entire price...

---

1. Radd al-Muhtar, Book of Sales, Chapter on Disposal of the Sold Item and the Price, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/167.

जिल्द 17 - फतावा रजविया

[अरबी बॉक्स पाठ]: ...मूल अनुबंध के साथ क्योंकि यदि यह जुड़ जाए तो बिक्री शून्य हो जाएगी क्योंकि यह बिना मूल्य की बिक्री हो जाएगी। इसलिए, [संपूर्ण मूल्य की] कटौती पूर्व-क्रय अधिकार (शफ़ी) के संबंध में मान्य नहीं है, लेकिन खरीदार के संबंध में मान्य है, क्योंकि यह मूल्य से मुक्ति माना जाता है। और 'अल-मुहीत' में जोड़ा गया कि यह उस ऋण के समान है जो उसके दायित्व के विरुद्ध स्थापित है, और इस पर पूरी चर्चा अल्लामा कासिम के फतवों में है।

[उर्दू बॉक्स पाठ]: घटाना मूल अनुबंध के साथ संलग्न नहीं होता क्योंकि यदि यह संलग्न हो जाए तो बिक्री शून्य हो जाएगी क्योंकि यह बिना मूल्य की बिक्री बन जाएगी। अत; शफ़ी के अधिकार में पूरे मूल्य की कटौती सही नहीं है, अलबत्ता खरीदार के अधिकार में सही है और यह उसे मूल्य से मुक्त करना हुआ। और 'अल-मुहीत' में जोड़ा गया कि यह उस ऋण के समान है जो उसके दायित्व के साथ स्थापित है, इसकी पूरी चर्चा अल्लामा कासिम के फतवों में है। (टी)

ध्यान दें कि अल्लामा अमीन अल-मिल्लत व अल-दीन मुहम्मद बिन आबिदीन आफ़ंदी शामी (अल्लाह उन पर दया करे) द्वारा प्रदान किया गया शानदार शोध कितना तर्कसंगत और स्पष्ट है। और यह केवल उनका अपना आविष्कार नहीं है; बल्कि, वे इमामों की पुस्तकों से स्पष्ट ग्रंथ उद्धृत करते हैं जिन पर 'दुर्र अल-मुख्तार' के लेखक और अन्य महान विद्वानों ने भरोसा किया है। — 'ज़खीरा' एक उत्कृष्ट, आधिकारिक फतवा संग्रह है। इमाम अबू बक्र बिन मसूद बिन अहमद अल-काशानी द्वारा रचित 'बदाई', जिसके बारे में विद्वान कहते हैं: "यह एक शानदार पुस्तक है, जिसके समान मैंने हमारी पुस्तकों में नहीं देखा।" (यह एक महान पुस्तक है जिसकी मिसाल हमारी किताबों में नहीं दिखाई देती। टी)। 'अल-मुहीत' जिसकी विश्वसनीयता दोपहर के सूरज की तरह स्पष्ट है। अल्लामा कासिम बिन कुतलुबुघा के फतवे, जो इमाम अल्लामा कमाल अल-दीन मुहम्मद बिन अल-हुमाम के प्रतिष्ठित शिष्य थे। 'तबयीन अल-हक़ाएक़', इमाम अल्लामा फ़कीह मुहद्दिस ज़ैलई द्वारा 'कंज अल-दक़ाएक़' की व्याख्या। 'शरह अल-हिदाया' और अन्य पुस्तकों में भी यह मसला ठीक वैसा ही लिखा है जैसा कि खोजी अल्लामा ने सत्यापित किया है। 'मजमा अल-अन्हुर', 'मुल्तक़ा अल-अबहुर' की व्याख्या, इस्तांबुल मुद्रित, खंड 2, पृष्ठ 75:

[अरबी बॉक्स पाठ]: कब्ज़े से पहले मूल्य का निपटान जैसे बिक्री, उपहार, या ऋण देने वाले को स्वामित्व हस्तांतरित करना, चाहे प्रतिफल के साथ हो या बिना प्रतिफल के, मान्य है। उससे कटौती

भी मान्य है। कटौती तुरंत प्रभावी होती है और पूर्वव्यापी रूप से मूल अनुबंध से जुड़ जाती है। इसमें एक संकेत है कि पूरे मूल्य को घटाना [मूल अनुबंध से] नहीं जुड़ता है।

[उर्दू बॉक्स पाठ]: मूल्य में कब्ज़े से पहले निपटान सही है जैसे बिक्री, उपहार, और जिस पर मूल्य बकाया है उसे कुछ प्रतिफल के साथ या बिना प्रतिफल के मालिक बनाना, और मूल्य में से कुछ घटा देना, और यह घटाना वर्तमान में सिद्ध होता है और मूल अनुबंध की ओर संकेत होकर उसके साथ संलग्न होता है और इसमें संकेत है कि पूरे मूल्य की कटौती...

---

1. रद अल-मुहतार, किताब अल-बुयूअ, बिक्री की वस्तु और मूल्य के निपटान पर अध्याय, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 4/167.

بأصل العقد لانه لو التحق لبطل البيع لانه يكون بيعا بلا ثمن فلم يصح الحط في حق الشفيع وصح في حق المشتري وكان ابراء له عن الثمن اھ زاد في المحيط لانه لاقى دينا قائما في ذمته وتمامه في فتاوى العلامة قاسم[1]۔

گھٹانا اصل عقد کے ساتھ لاحق نہیں ہوتا اس لئے کہ اگر یہ لاحق ہو تو بیع باطل ہو جائے گی کیونکہ یہ بیع بلا ثمن بن جائے گی، چنانچہ شفیع کے حق میں کل ثمن کا گھٹانا صحیح نہیں البتہ مشتری کے حق میں صحیح ہے اور یہ اس کو ثمن سے بری کرنا ہوا۔ اھ اور محیط میں زیادہ کیا کہ وہ اس دین کے مقابل ہوا جو اس کے ذمہ کے ساتھ قائم ہے، اس کی پوری بحث علامہ قاسم کے فتاوی میں ہے۔ (ت)

ملاحظہ کیا جائے کہ علامہ امین الملۃ والدین محمد بن عابدین آفندی شامی رحمۃ اللہ تعالٰی علیہ نے جو تحقیق انیق ارشاد فرمائی ہے کس قدر مدلل و مبرہن ہے اور وہ بھی صرف اپنی ایجاد نہیں بلکہ کتب ائمہ سے اس پر نصوص صریحہ نقل فرمائیں جن سے صاحب در مختار وغیرہ علمائے کبار سلفاً و خلفاً استناد کرتے آئے ہیں۔_ ذخیرہ کہ ایک عمدہ مستند فتاوی ہے۔ بدائع تصنیف امام ابوبکر بن مسعود بن احمد کاشانی جس کی نسبت علماء فرماتے ہیں ھذا الکتاب جلیل الشان لم ار لہ نظیر فی کتبنا (یہ عظیم الشان کتاب ہے جس کی نظیر ہماری کتابوں میں دکھائی نہیں دیتی۔ت)، محیط جس کا اعتبار آفتاب نیمروز ہے، فتاوی علامہ قاسم بن قطلوبغا تلمیذ رشید امام علامہ کمال الدین محمد بن الہمام، تبیین الحقائق شرح کنز الدقائق امام علامہ فقیہ محدث زیلعی، شرح الہدایہ اور ان کے سوا اور کتابوں میں بھی یہ مسئلہ یونہی لکھا ہے جیسا علامہ محقق نے تحقق فرمایا، مجمع الانہر شرح ملتقی الابحر مطبوعہ استنبول جلد ۲ صفحہ ۷۵:

صح التصرف في الثمن ببيع وهبة وتمليك ممن عليه بعوض وغير عوض قبل قبضه والحط منه ويثبت الحط في الحال ويلتحق بأصل العقد استنادا وفيه اشارة الى ان حط كل الثمن غير ملتحق

ثمن میں قبضہ سے قبل تصرف صحیح ہے جیسے بیع، ہبہ، اور جس پر ثمن لازم ہے اس کو کچھ عوض کے ساتھ یا بلا عوض مالک بنانا، اور ثمن میں سے کچھ گھٹا دینا، اور یہ گھٹانا فی الحال ثابت ہوتا ہے اور اصل عقد کی طرف منسوب ہو کر اس کے ساتھ لاحق ہوتا ہے اور اس میں اشارہ ہے کہ تمام ثمن کا گھٹانا

---

1. رد المحتار كتاب البيوع فصل في التصرف في المبيع والثمن دار احياء التراث العربي بيروت ۴ / ۱۶۷

Fatawa Razawiya (Volume 17)

...by agreement with the contract - abbreviated from 'Multaqit'. (T) By consensus, it does not join with the original contract. (T)

Sharh al-Niqayah, published in Lucknow, Vol. 3, Page 330: "Disposal of the price and its reduction is valid, meaning it is valid for the buyer to reduce all or part of the goods from the seller, and for the seller to waive all or part of the price for the buyer, even if the goods no longer exist and the price has not been received. Thus, it is correct to say: 'I have reduced all or part of it from you,' or 'I have gifted it to you,' or 'I have absolved you of it' (until his words), even if it does not join with the original contract." **Urdu Translation:** Handling the price and reducing it is correct, meaning it is permissible for the buyer to reduce all or some of the sold goods from the seller, and similarly, it is permissible for the seller to waive all or some of the price for the buyer. Even if the goods are no longer remaining and the price has not been taken into possession, it will be correct to say: 'I have reduced all or part for you' or 'I have absolved you from it' (up to this statement), although this will not be joined with the original contract. (T)

Khulasat al-Fatawa, Book of Sales, Chapter 13: "If he gifts the entire price, it does not join with the original contract, but if he gifts part of the price, it joins." **Urdu Translation:** If the entire price is gifted, it will not be joined with the original contract, and if part of the price is gifted, then it will be joined. (T)

Fatawa Hindiyyah, Ahmadi Press, Vol. 3, Page 58: "When he reduces the whole price, or gifts it, or absolves him of it, if that was before taking possession of the price, then all forms are valid, but it does not join with the original contract." **Urdu Translation:** When someone reduces the entire price, or gifts it, or absolves the buyer from it, if this happened before taking possession of the price, then all forms are correct, but this will not be joined with the original contract. (T)

And the author of Durr al-Mukhtar (may Allah the Almighty have mercy on him) has relied on all these books in hundreds of places in that same Durr al-Mukhtar.

---

1. Majma' al-Anhur Sharh Multaqal Abhur, Book of Sales, Chapter on Sales before taking possession of goods, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/80-81.
2. Sharh al-Niqayah.
3. Khulasat al-Fatawa, Book of Sales, Thirteenth Section regarding the price, Maktaba Habibiyah, Quetta, 3/94.

4. Fatawa Hindiyyah, Book of Sales, Sixteenth Chapter, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 3/173.

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

अनुबंध (अक़्द) के साथ इत्तेफ़ाक़ से - संक्षेप में 'मुल्तक़ित' से। (त) सर्वसम्मति से यह मूल अनुबंध के साथ नहीं जुड़ता है। (त)

शरह अल-निक़ायाह, लखनऊ से प्रकाशित, भाग 3, पृष्ठ 330: "कीमत (समन) का उपयोग और उसमें कमी करना वैध है, अर्थात खरीदार (मुश्तरी) के लिए विक्रेता (बाइ') से पूरी या कुछ वस्तु कम करना वैध है, और इसी तरह विक्रेता के लिए खरीदार से पूरी या कुछ कीमत माफ करना वैध है, भले ही वस्तु शेष न रही हो और कीमत प्राप्त न की गई हो। अतः यह कहना सही होगा: 'मैंने तुमसे पूरी या कुछ कमी कर दी,' या 'मैंने इसे तुम्हें उपहार में दे दिया,' या 'मैंने तुम्हें इससे मुक्त कर दिया' (उनके कथन तक), भले ही यह मूल अनुबंध के साथ न जुड़े।" **उर्दू अनुवाद (हिंदी में):** कीमत का उपयोग और उसे कम करना सही है, यानी खरीदार के लिए विक्रेता से पूरी या कुछ बेची गई वस्तु को कम करना और इसी तरह विक्रेता के लिए खरीदार से पूरी या कुछ कीमत माफ कर देना सही है। भले ही बेची गई वस्तु बाकी न रही हो और कीमत पर कब्ज़ा न किया गया हो, तो यह कहना सही होगा कि मैंने तुमसे पूरा या कुछ कम कर दिया या मैंने तुम्हें इससे बरी (मुक्त) कर दिया (उनके इस कथन तक), हालांकि यह मूल अनुबंध के साथ नहीं जुड़ेगा। (त)

खुलासत अल-फ़तावा, खरीद-बिक्री की किताब, अध्याय 13: "यदि वह पूरी कीमत उपहार (हिबा) में दे देता है, तो वह मूल अनुबंध के साथ नहीं जुड़ता, लेकिन यदि वह कीमत का कुछ हिस्सा उपहार में देता है, तो वह जुड़ जाता है।" **उर्दू अनुवाद (हिंदी में):** अगर पूरी कीमत उपहार में दे दी जाए, तो मूल अनुबंध के साथ नहीं जुड़ेंगे, और अगर कीमत का कुछ हिस्सा उपहार में दिया जाए, तो वे जुड़ जाएंगे। (त)

फ़तावा हिन्दिया, अहमदी प्रेस, भाग 3, पृष्ठ 58: "जब वह पूरी कीमत कम कर देता है, या उसे उपहार में दे देता है, या उसे उससे मुक्त कर देता है, यदि वह कीमत पर कब्ज़ा करने से पहले था, तो सभी स्थितियाँ वैध हैं, लेकिन वह मूल अनुबंध के साथ नहीं जुड़ता।" **उर्दू अनुवाद (हिंदी में):** जब कोई पूरी कीमत कम कर दे या उपहार में दे दे या खरीदार को उससे मुक्त कर दे, अगर यह कीमत पर कब्ज़ा करने से पहले हुआ, तो सभी सूरतें दुरुस्त हैं, लेकिन यह मूल अनुबंध के साथ नहीं जुड़ेगा। (त)

और इन सभी किताबों से 'दुर्रे मुख़्तार' के लेखक (अल्लाह उन पर रहम करे) ने उसी 'दुर्रे मुख़्तार' में सैकड़ों जगहों पर प्रमाण लिया है।

---

1. मजमा अल-अन्बुर शरह मुल्तक़ल अभुर, खरीद-बिक्री की किताब, बेरूत 2/80-81।
2. शरह अल-निक़ायाह।
3. खुलासत अल-फ़तावा, कीमत के बारे में तेरहवाँ खंड, क्वेटा 3/94।
4. फ़तावा हिन्दिया, सोलहवाँ अध्याय, पेशावर 3/173।

بالعقد اتفاقاً اھ ملتقطاً۔ اصل عقد کے ساتھ بالاتفاق لاحق نہیں ہوتا اھ اختصاراً۔ (ت)

شرح نقایہ مطبوعہ لکھنؤ ج ۳ صفحہ ۳۳۰ : صح التصرف فی الثمن والحط عنه، ای صح للمشتری القاء کل المبیع او بعضه عن البائع، وللبائع القاء کل الثمن او بعضه عن المشتری وان لم یبق المبیع ولم یقبض الثمن فصح ان یقول حططت کله او بعضه عنك او وهبته منك او ابرأتک عنه (الی قوله) وان لم یلتحق باصل العقد 2۔ ثمن میں تصرف اور اس کو گھٹانا درست ہے یعنی مشتری کے لئے کل یا بعض مبیع بائع سے گھٹانا اور اسی طرح بائع کے لئے کل یا بعض ثمن مشتری سے ساقط کر دینا درست ہے اگر چہ مبیع باقی نہ رہا ہو اور ثمن پر قبضہ نہ کیا ہو تو یہ کہنا صحیح ہوگا کہ میں نے تجھ سے کل یا بعض گھٹا دیا یا میں نے تجھ کو اس سے بری کر دیا (اس کے اس قول تک) اگر چہ یہ اصل عقد کے ساتھ ملحق نہیں ہو گا۔ (ت)

خلاصة الفتاوی کتاب البیوع فصل ۱۳: ولو وهب کل الثمن لا یلتحق باصل العقد ولو وهب بعض الثمن یلتحق 3۔ اگر کل ثمن ہبہ کر دیے تو اصل عقد کے ساتھ ملحق نہ ہونگے اور اگر بعض ثمن ہبہ کئے تو ملحق ہو جائیں گے۔ (ت)

فتاوی ہندیہ مطبع احمدی جلد سوم صفحہ ۵۸ : اذا حط کل الثمن او وهبه او ابرأه عنه فان کان ذلك قبل قبض الثمن صح الکل ولکن لا یلتحق باصل العقد 4۔ جب کسی نے کل ثمن گھٹا دیئے یا ہبہ کر دیے یا مشتری کو اس سے بری کر دیا اگر یہ ثمن پر قبضہ سے پہلے ہوا تو سب صورتیں درست ہیں لیکن یہ اصل عقد کے ساتھ ملحق نہیں ہوگا۔ (ت)

اور ان سب کتابوں سے صاحب در مختار رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ نے اسی در مختار میں صدہا جگہ استناد کیا ہے

---

1 مجمع الانہر شرح ملتقی الابحر کتاب البیوع فصل فی بیان البیع قبل قبض المبیع ، دار احیاء التراث العربی بیروت ۲/ ۸۱-۸۰ 2 شرح النقایہ 3 خلاصۃ الفتاوی کتاب البیوع الفصل الثالث عشر فی الثمن مکتبہ حبیبیہ کوئٹہ ۳/ ۹۴ 4 فتاوی ہندیہ کتاب البیوع الباب السادس عشر نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۱۷۳

...except for Fatawa Hindiyyah, since its compilation and composition are later than Durr al-Mukhtar. Now it has become as clear as the sun at midday that the opposing party's excuse—that against Durr al-Mukhtar, what is the weight of Shami—is quite misplaced. Regardless of the fact that the worthy and superior investigations of Allama Shami (may Allah the Almighty have mercy on him) are seen in this marginal note and the excellent book Uqud al-Durriya, etc., such words can never be said. Furthermore, scholars have explicitly stated that although Durr al-Mukhtar is a reliable book, it is not permissible to give fatwa from it unless its marginalia (Hawashi) are available, because its phrasing in many places is like a riddle, from which it is difficult to understand the correct meaning. Setting aside all these matters, when the research of such great leading authoritative imams regarding the author of Durr al-Mukhtar is exactly in accordance with Allama Shami's research, then what occasion is there for such wording?

(3) If it is accepted that the apparent meaning understood from the text of Durr al-Mukhtar is correct, and the research of the majority of imams is not considered, even then, what relation does its implication have with the plaintiff's claim? From this, it is only understood that gifting the price is void, not that the sale is corrupt (fasid) and liable to annulment as per the plaintiff's claim. I wish this phrase could be produced from somewhere: "Batal al-bay' bi-hatt al-kull" (The sale becomes void by reducing the entire price. -Translator), then perhaps it would be worthy of attention.

(4) The phrasing from Alamgiri presented by the plaintiff's counsel, stating that if the gift of the price occurs before acceptance, the contract is not valid—this is a disputed issue. Fatawa Khulasa, Kitab al-Buyu' (Book of Sales), Section 2:

| In *Majmu' al-Nawazil*: A man said, "I have sold this slave to you for ten dirhams and have gifted you those ten." The other person said, "I have bought him." The sale is not valid, just as if he had sold it without a price. In *al-Nawazil*, it says the purchase is valid but the gift is not valid. | In *Majmu' al-Nawazil*, it is written: A person said to another, "I sold this slave to you in exchange for ten dirhams, and I gifted those ten dirhams to you." The other replied, "I bought it." The sale would not be valid, as if he sold it without a price. In *Nawazil*, it says that the purchase is valid and the gift is invalid. (T) |

And the Imam, the scholar, the master of jurisprudence, the owner of correction and preference, Fakhr al-Millah wa al-Din Qadi Khan al-Uzjandi (may Allah the Almighty

have mercy on him), in his Fatawa, affirmed the report of validity (of the sale) and limited himself to mentioning it, not reporting the other version at all, and he provided evidence and proof for this report. Qadi Khan, published by Al-Ulum, vol. 2, pp. 249 and 344:

---

1. Khulasat al-Fatawa, Kitab al-Buyu', Chapter 2, Maktaba Habibiyah, Quetta, 3/12.

फ़तावा रज़विया जिल्द १७

...फ़तावा-ए-हिन्दिया के अलावा, क्योंकि इसका संकलन और लेखन दुर-ए-मुख़्तार के बाद का है। अब यह दोपहर के सूरज की तरह स्पष्ट हो गया है कि विपक्षी पक्ष का यह बहाना - कि दुर-ए-मुख़्तार के सामने शामी की क्या साख - कितना अनुचित है। इस तथ्य को छोड़ दें कि अल्लामा शामी (अल्लाह उन पर रहम करे) की योग्य और श्रेष्ठ खोजें इस हाशिए और उत्कृष्ट पुस्तक उक़ूद-अद-दुर्रिया आदि में देखी गई हैं, ऐसी बात कभी नहीं कही जा सकती। इसके अलावा, विद्वानों ने स्पष्ट रूप से कहा है कि यद्यपि दुर-ए-मुख़्तार एक विश्वसनीय पुस्तक है, लेकिन जब तक इसके हाशिये (हावाशी) उपलब्ध न हों, इससे फतवा देना जायज़ नहीं है, क्योंकि कई जगहों पर इसकी शब्दावली एक पहेली की तरह है, जिससे सही अर्थ समझना मुश्किल होता है। इन सब बातों को किनारे रखते हुए, जब इतने महान प्रामाणिक इमामों का शोध दुर-ए-मुख़्तार के लेखक के बारे में अल्लामा शामी के शोध के बिल्कुल अनुरूप है, तो ऐसी शब्दावली का क्या अवसर बचा?

(३) यदि यह स्वीकार कर लिया जाए कि दुर-ए-मुख़्तार के पाठ से समझा गया स्पष्ट अर्थ ही सही है, और अधिकांश इमामों के शोध पर विचार नहीं किया जाता है, फिर भी, इसके निहितार्थ का वादी के दावे से क्या संबंध है? इससे केवल इतना समझा गया कि कीमत का उपहार देना शून्य (बातिल) है, न कि यह कि बिक्री दूषित (फ़ासिद) है और वादी के दावे के अनुसार रद्द होने योग्य है। काश यह वाक्यांश कहीं से लाया जा सकता: "बतल अल-बय' बि-हत्त अल-कुल्ल" (पूरी कीमत घटा देने से बिक्री शून्य हो गई। -अनुवादक), तो शायद यह ध्यान देने योग्य होता।

(४) वादी के वकील ने आलमगीरी से जो वाक्यांश प्रस्तुत किया कि यदि स्वीकृति से पहले कीमत का उपहार होता है, तो अनुबंध वैध नहीं है - यह मुद्दा विवादास्पद है। फ़तावा-ए-खुलासा, किताब-अल-बुयू (बिक्री की पुस्तक), खंड २:

| मजमू अल-नवाज़िल में है: एक व्यक्ति ने कहा, "मैंने यह गुलाम तुम्हारे हाथ दस दिरहम के बदले बेचा और मैंने तुम्हें वे दस दिरहम उपहार में दिए।" दूसरे ने कहा, "मैंने खरीदा।" बिक्री मान्य नहीं है, जैसे कि उसने बिना किसी मूल्य के बेचा हो। और नवाज़िल में है कि खरीद वैध है लेकिन उपहार मान्य नहीं है। | मजमू अल-नवाज़िल में है: एक व्यक्ति ने दूसरे से कहा कि यह गुलाम मैंने तुम्हारे हाथ दस दिरहम के बदले बेचा और मैंने तुझे दस दिरहम हबा (उपहार) किए, दूसरे ने जवाब में कहा

कि मैंने खरीदा, तो बिक्री सही न होगी जैसा कि वह बिना कीमत के बेचे, और नवाज़िल में है कि खरीदारी जायज़ है और हबा नाजायज़ है। (त) |

और इमाम, अल्लामा, फ़क़ीह-अन-नफ़्स, शोध और वरीयता के विशेषज्ञ, फख्रुल मिल्लत वद-दीन क़ाज़ी खान उज़जंदी (अल्लाह उन पर रहम करे) ने अपने फ़तावा में वैधता (बिक्री की) की रिपोर्ट की पुष्टि की और खुद को इसी के उल्लेख तक सीमित रखा, दूसरी रिवायत का ज़िक्र ही नहीं किया, और इसी रिवायत को दलीलों के साथ सिद्ध किया। क़ाज़ी खान, अल-उलूम द्वारा प्रकाशित, खंड २, पृष्ठ २४९ और ३४४:

---

1. खुलासातुल फ़तावा, किताबुल बुयू, अध्याय २, मकतबा हबीबिया, क्वेटा, ३/१२।

سوا فتاوٰی ہندیہ کے کہ اس کی تالیف تصنیف در مختار سے متاخر ہے تو اب کالمشمس فی النصف النہار روشن ہو گیا کہ طرف مقابل کا یہ عذر کہ بمقابلہ در مختار شامی کا کیا اعتبار، کتنی بے محل بات ہے، قطع نظر اس سے کہ علامہ شامی رحمۃ اللہ تعالٰی علیہ کی تحقیقات لائقہ اور تدقیقات فائقہ اس حاشیہ اور کتاب مستطاب عقود دریہ وغیرہما میں دیکھی ہیں وہ ایسا لفظ ہر گز نہیں کہہ سکتا، اور علاوہ اس سے کہ علماء نے تصریح فرما دی ہے کہ در مختار ہر چند معتبر کتاب ہے مگر جب تک اس کے حواشی پاس نہ ہوں اس سے فتوٰی دینا جائز نہیں کیونکہ عبارت اس کی اکثر مقامات پر ایسی چیستاں ہے جس سے صحیح مطلب سمجھ لینا دشوار ہوتا ہے، ان سب باتوں سے قطع نظر کرکے جب اس قدر اکابر ائمہ مستندین صاحب در مختار کی تحقیق علامہ شامی کے بالکل مطابق ہے تو اس لفظ کا کون سا موقع رہا۔

(۳) اگر تسلیم کیا جائے کہ عبارت در مختار سے ظاہر جو مطلب سمجھا گیا وہی صحیح ہے اور جماہیر ائمہ کی تحقیق کا کچھ اعتبار نہیں تاہم اس کے مفاد کو دعوٰی مدعیہ سے کیا علاقہ، اس سے اس قدر سمجھا گیا کہ ہبہ ثمن باطل ہے نہ یہ کہ بیع فاسد و قابل فسخ ہے جیسا کہ دعوٰی مدعیہ ہے کاش یہ عبارت کہیں سے پیدا کی جاتی کہ بطل البیع بحط الکل (کل ثمن گھٹا دینے سے بیع باطل ہو گئی۔ت) تو شاید قابل التفات ہوتی۔

(۴) وکیل مدعیہ نے جو عبارت عالمگیری پیش کی کہ اگر ہبہ ثمن قبل قبول واقعہ ہوا تو عقد صحیح نہیں، یہ مسئلہ مختلف فیہ ہے۔ فتاوٰی خلاصہ کتاب البیوع فصل ۲:

| فی مجموع النوازل رجل قال بعت منك هذا العبد بعشرة دراهم ووهبت منك العشرة وقال الآخر اشتریت لا یصح البیع کما لو باع بدون الثمن، وفی النوازل الشراء جائز ولم تجز الهبة۱۔ | مجموع النوازل میں ہے ایک شخص نے دوسرے کو کہا کہ یہ غلام میں نے تیرے ہاتھ دس درہم کے عوض بیچا اور میں نے تجھ دس درہم ہبہ کئے دوسرے نے جواب میں کہا کہ میں نے خریدا تو بیع صحیح نہ ہو گی جیسا کہ وہ بغیر ثمن کے بیچے، اور نوازل میں ہے کہ خریداری جائز ہے اور ہبہ ناجائز ہے۔(ت) |

اور امام علامہ فقیہ النفس مالک التصحیح والترجیح فخر الملۃ والدین قاضی خان اوز جندی رحمۃ اللہ تعالٰی علیہ نے اپنے فتاوٰی میں روایت صحت پر جزم کیا اور اسی کے ذکر پر اقتصار فرمایا دوسری روایت نقل ہی نہ فرمائی اور اسی روایت کو مدلل و مبرہن کیا۔ قاضی خاں مطبوعہ العلوم جلد ۲ ص ۲۴۹ و ۳۴۴:

---

۱ خلاصۃ الفتاوٰی کتاب البیوع الفصل الثانی مکتبہ حبیبیہ کوئٹہ ۳/ ۱۲

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

Arabic Text

Naziru ma lau qala ba'tuka hazash-shai'a bi-'ashrati darahima wa-wahabtu laka al-'ashrata thumma qabila al-mushtari al-bay'a jaza al-bay'a, wala yabra'u al-mushtari 'an ath-thamani li'anna ath-thamana la yajibu illa ba'da qabuli al-bay'i, fa-idha abra'a 'an ath-thamani qabla al-qabuli kana ibra'an qabla as-sababi fala yasihhu.[1]

Urdu Translation / Explanation

Its example is like if someone said: "I sold this thing to you for ten dirhams and I gifted those ten to you." Then the buyer accepted the sale, the sale is valid, but the buyer is not absolved from the price because the price only becomes due after acceptance of the sale. So if he (the seller) absolved him from the price before acceptance, it was an absolution before the cause (of debt), so it is not valid. (T)

And scholars clarify that restricting (one's statement) to a certain saying is a proof of reliance upon it. Radd al-Muhtar, printed in Constantinople, 5th volume, page 652: | Al-iqtisaru 'alayhi yadullu 'ala i'timadihi.[2] | Restricting to it indicates reliance upon it. (T) |

Tahtawi Hashiya on Durr al-Mukhtar, printed in Bulaq, Dar as-Sultanat, Egypt, 4th volume, page 321: | Al-iqtisaru 'alayhi yadullu 'ala i'timadihi.[3] | Restricting to it indicates reliance upon it. (T) |

And they also clarify that providing reasons and evidence for a certain saying is also a proof of its preference, Fatawa Hamidiya along with At-Tanqih, printed in Matba' Sultani, Egypt, 1st volume, page 16: | At-ta'lilu dalilu at-tarjihi[4] wa-fiha huwa al-murajjahu iz huwa al-muhalla bi-at-ta'lili.[5] | Stating the reason for something is a proof of its preference, and it is in this that it is preferred because that statement is adorned with evidence. (T) |

Thus, it is proven by two reasons that Imam Qadi Khan relied upon the validity of the sale and preferred it. Now scholars clarify that the statement of this exalted Imam is more worthy of consideration and reliance and his correction and preference are superior as he possessed the rank of Ijtihad. Hashiya Jami' al-Fusulayn by Allama Khayr al-Din al-Ramli.

---

[1] Fatawa Qadikhān, Book of Sales, Section on the Rulings of Invalid Sales, Naval Kishore Lucknow, 2/447. [2] Radd al-Muhtar 'ala al-Durr al-Mukhtar, Book of Wills, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 5/225. [3] Hashiya al-Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar,

Book of Wills, Dar al-Ma'rifa Beirut, 3/421. [4] Al-'Uqud al-Durriya fi Tanqih al-Fatawa al-Hamidiya, Book of Marriage, Haji Abdul Ghaffar Bookstore, Arg Bazar, Kandahar, Afghanistan, 1/71. [5] Al-'Uqud al-Durriya fi Tanqih al-Fatawa al-Hamidiya, Book of Marriage, Haji Abdul Ghaffar Bookstore, Arg Bazar, Kandahar, Afghanistan, 1/71.

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

अरबी मूल

नज़ीरो मा लौ काला ब'तुका हाज़श-शै'आ बि-'अशरति दराहिमा व-वहाब्तु लका अल-'अशरता थुम्मा कबिला अल-मुश्तरी अल-बै'अ जज़ा अल-बै'अ, वला यब्र'उ अल-मुश्तरी 'अन अथ-थमनी लि'अन्ना अथ-थमना ला यजीबु इल्ला बा'दा कबूलि अल-बै'ई, फ़-इज़ा अब्र'आ 'अन अथ-थमनी क़ब्ला अल-क़बूली काना इब्रा'अन क़ब्ला अस-सबबी फ़ला यसीहहु।[1]

उर्दू अनुवाद / व्याख्या

इसकी नज़ीर यह है कि अगर किसी ने कहा मैंने ये चीज़ तुम्हारे हाथ दस दिरहम के बदले फ़रोख्त की और मैं ने तेरे लिये दस दिरहम हिबा किये, फिर मुश्तरी ने बैअ को कबूल कर लिया तो बैअ जाइज़ है और मुश्तरी थमन से बरी न होगा क्योंकि थमन तो कबूल बैअ के बाद ही वाजिब होते हैं, अगर उस ने कबूल से पहले मुश्तरी को थमन से बरी किया तो ये सबब से क़ब्ल बरी करना हुआ लिहाज़ा सहीह न होगा। (त)

और उलमा तसरीह फ़रमाते हैं कि किसी कौल पर इक्तिसार करना उस के एतिमाद की दलील है। रद-उल-मुहतार मतबूआ कस्तुनतुनिया पंचम सफ़हा 652: | अल-इक्तिसारु अलैहि यदुल्लू अला एतिमादिही।[2] | उस पर इक्तिसार उस के एतिमाद पर दलालत करता है। (त) |

तह्तावी हाशियह दर मुख्तार मतबूआ बोलाक़ दार-अस-सल्तनत मिस्र जिल्द 4 सफ़हा 321: | अल-इक्तिसारु अलैहि यदुल्लू अला एतिमादिही।[3] | उस पर इक्तिसार उस के एतिमाद पर दलालत करता है। (त) |

और ये भी तसरीह फ़रमाते हैं कि किसी क़ौल को मुदल्लल व मुबरहन करना भी उस की तरजीह की दलील है, फ़तावा हामिदिया म'अ अत-तन्क़ीह मतबूआ मत़ब'अ सुल्तानी मिस्र जिल्द अव्वल सफ़हा 16: | अत-ता'लीलु दलीलु अत-तरजीहि[4] व-फ़ीहा हुवा अल-मुरज्जहु इज़ हुवा अल-मुहल्ला बि-अत-ता'लीली।[5] | किसी की इल्लत बयान करना उस की तरजीह की दलील है, और इसी में है कि वही राज़ेह है क्योंकि वो बयान दलील से मुज़ैय्यन है (त) |

पस दो वजह से साबित हुआ कि इमाम काज़ी ख़ाँ ने सेहत बैअ पर एतिमाद फ़रमाया और इसी को तरजीह दी अब उलमा तसरीह फ़रमाते हैं कि इस इमाम अजल का इरशाद ज़्यादा एतिबार व एतिमाद के लाइक़ और उन की तसहीह व तरजीह फ़ाइक़ है कि उन्हें रुतबा इज्तिहाद हासिल था, हाशियह जामे-उल-फ़ुसुलैन लिल्लामह खैर उद्दीन अलरमली।

[1] फ़तावा काज़ी ख़ाँ, किताबुल बुयूअ फ़स्ल फ़ी अहकामि बैअ-अल-फ़ासिद नवलकिशोर लखनऊ 2/447। [2] रद-उल-मुहतार अलद्दुर्र-इल-मुख्तार, किताबुल वसाया दार इहया-उत-तुरास अल-अरबी बैरुत 5/225। [3] हाशियत-उत-तह्तावी अलद्दुर्र-इल-मुख्तार, किताबुल वसाया दारुल म'आरिफ़ा बैरुत 3/421। [4] अल-उक़ूद-अद-दुर्रियह फ़ी तन्क़ीह-इल-फ़तावा अल-हामिदियह, किताबुन निकाह हाजी अब्दुल ग़फ़्फ़ार। कुतुबख़ाना अर्ग बाज़ार कंधार अफ़ग़ानिस्तान 1/71। [5] अल-उक़ूद-अद-दुर्रियह फ़ी तन्क़ीह-इल-फ़तावा अल-हामिदियह, किताबुन निकाह हाजी अब्दुल ग़फ़्फ़ार कुतुबख़ाना अर्ग बाज़ार कंधार अफ़ग़ानिस्तान 1/71।

सफ़हा 715 का 254

عربی متن	اردو ترجمہ و تشریح
نظیرہ مالو قال بعتک ھذا الشیئ بعشرۃ دراھم و وھبت لک العشرۃ ثم قبل المشتری البیع جاز البیع۔ ولا یبرأ المشتری عن الثمن لان الثمن لا یجب الابعد قبول البیع فاذا ابرأ عن الثمن قبل القبول کان ابراء قبل السبب فلایصح- 1	اس کی نظیر یہ ہے کہ اگر کسی نے کہا میں نے یہ چیز تمہارے ہاتھ دس درہم کے بدلے فروخت کی اور میں نے تیرے لئے دس درہم ہبہ کئے، پھر مشتری نے بیع کو قبول کرلیا تو بیع جائز ہے اور مشتری ثمن سے بری نہ ہوگا کیونکہ ثمن تو قبول بیع کے بعد ہی واجب ہوتے ہیں، اگر اس نے قبول سے پہلے مشتری کو ثمن سے بری کیا تو یہ سبب سے قبل بری کرنا ہوا لہٰذا صحیح نہ ہوگا۔ (ت)

اور علماء تصریح فرماتے ہیں کہ کسی قول پر اقتصار کرنا اس کے اعتماد کی دلیل ہے۔ ردالمحتار مطبوعہ قسطنطنیہ پنجم صفحہ ۶۵۲: | الاقتصار علیہ یدل علی اعتمادہ- 2 | اس پر اقتصار اس کے اعتماد پر دلالت کرتا ہے۔ (ت) |

طحطاوی حاشیہ در مختار مطبوعہ بولاق دار السلطنت مصر جلد ۴ ص ۳۲۱: | الاقتصار علیہ یدل علی اعتمادہ- 3 | اس پر اقتصار اس کے اعتماد پر دلالت کرتا ہے۔ (ت) |

اور یہ بھی تصریح فرماتے ہیں کہ کسی قول کو مدلل و مبرہن کرنا بھی اس کی ترجیح کی دلیل ہے، فتاوٰی حامدیہ مع التنقیح مطبوعہ مطبع سلطانی مصر جلد اول ص ۱۶: | التعلیل دلیل الترجیح 4 وفیھا ھو المرجح اذ ھو المحلی بالتعلیل- 5 | کسی کی علت بیان کرنا اس کی ترجیح کی دلیل ہے، اور اسی میں ہے کہ وہی راجح ہے کیونکہ وہ بیان دلیل سے مزین ہے (ت) |

پس دو وجہ سے ثابت ہوا کہ امام قاضی خاں نے صحت بیع پر اعتماد فرمایا اور اسی کو ترجیح دی اب علماء تصریح فرماتے ہیں کہ اس امام اجل کا ارشاد زیادہ اعتبار و اعتماد کے لائق اور ان کی تصحیح و ترجیح فائق ہے کہ انہیں رتبہ اجتہاد حاصل تھا، حاشیہ جامع الفصولین للعلامہ خیر الدین الرملی

---

1 فتاویٰ قاضیخاں کتاب البیوع فصل فی احکام البیع الفاسد نولکشور لکھنو ۲/۴۴۷ 2 ردالمحتار علی الدرالمختار کتاب الوصایا داراحیاء التراث العربی بیروت ۵/۲۲۵ 3 حاشیۃ الطحطاوی علی الدرالمختار کتاب الوصایا دارالمعرفۃ بیروت ۳/۴۲۱ 4 العقود الدریۃ فی تنقیح الفتاویٰ الحامدیۃ کتاب النکاح حاجی عبدالغفار کتب خانہ ارگ بازار قندھار افغانستان ۱/۷۱ 5 العقود الدریۃ فی تنقیح الفتاویٰ الحامدیۃ کتاب النکاح حاجی عبدالغفار کتب خانہ ارگ بازار قندھار افغانستان ۱/۷۱

Fatawa Razawiya Volume 17

Author of Ad-Durr al-Mukhtar: Arabic: ‘Alaika bima fil-Khaniyah fa-inna Qazi Khan ahlu al-tas’hihi wat-tarjih – 1 Urdu: You must accept what is in Al-Khaniya, because Imam Qazi Khan is among the people of authentication and preference. (T)

Tas’hih al-Quduri by Allama Qasim: Arabic: Ma yusahhihuhu Qazi Khan minal aqwali yakunu muqaddaman ‘ala ma yusahhihuhu ghairuhu liannahu kana faqihan-nafs – 2 Urdu: The opinions authenticated by Qazi Khan are prioritized over the opinions authenticated by others because Imam Qazi Khan was 'Faqih al-Nafs' (a master of legal reasoning). (T)

Hashiya Sayyid Ahmad Tahtawi on Ad-Durr al-Mukhtar, printed in Egypt, Volume 2, Page 25: Arabic: Alladhi yazharu i’timadu ma fil-Khaniyati qawluhum inna Qazi Khan min ajalli ma yu’tamadu ka’ala tas’hihatihi – 3 Urdu: It is clear that reliance should be placed on what is in Al-Khaniya because of the scholars' saying that Qazi Khan is among those great figures whose authentications are relied upon. (T)

Ghamz al-Uyun wal-Basair Sharh al-Ashbah wan-Nazair, printed in Mustafa Press, Delhi, Page 572: Arabic: Hadhal qawlu sahhahahu Qazi Khan fayanbaghi i’timaduh – 4 Urdu: Qazi Khan has authenticated this opinion, so it should be relied upon. (T)

Uqud ad-Durriyya, printed in Egypt, Volume 2, Page 57: Arabic: Ma yusahhihuhu Qazi Khan muqaddamun ‘ala ma yusahhihuhu ghairuh – 5 Urdu: What Qazi Khan authenticates takes precedence over what anyone else authenticates. (T)

Footnotes: 1. Al-A’ali ad-Durriya fil Fawa’id al-Khairiyya, Hashiya Jalila Jami’ al-Fusulayn, Section 18, Islami Kutub Khana, Karachi, 1/226 2. Ghamz Uyun al-Basair bi-hawala Tas’hih al-Quduri ma’al Ashbah, Volume 2, Book of Leasing (Kitab al-Ijarat), Idara-tul-Quran Karachi, 2/55 3. Hashiyatut-Tahtawi ‘alal Durr al-Mukhtar, Book of Marriage (Kitab al-Nikah), Chapter on Prohibitions, Dar al-Ma’rifa Beirut, 2/25 4. Ghamz Uyun al-Basair ma’al Ashbah, Volume 2, Book of Leasing (Kitab al-Ijarat), Idara-tul-Quran Karachi, 2/55 5. Al-Uqud ad-Durriyya fi Tanqih al-Fatawa al-Hamidiyya, Book of Leasing (Kitab al-Ijarat), Haji Abdul Ghaffar & Sons Books, Kandahar Afghanistan, 2/103

फ़तावा-ए-रज़विया खंड 17

अद-दुर्र अल-मुख्तार के लेखक: अरबी: अलैका बिमा फ़िल-खनिया फ़-इन्ना क़ाज़ी खान अहलु अत-तस्हीही वत-तरजीह – 1 उर्दू: जो खनिया में है उसे स्वीकार करना आपके लिए अनिवार्य है क्योंकि इमाम क़ाज़ी खान तरजीह और तस्हीह (प्रामाणिक ठहराने वालों) में से हैं। (त)

अल्लामा कासिम द्वारा तस्हीह अल-कुदुरी: अरबी: मा युसहहिहूह क़ाज़ी खान मिनल अक़वाली यकुनु मुक़द्दमन अला मा युसहहिहूह ग़ैरुह लिअन्नहू काना फ़क़ीहन-नफ़्स – 2 उर्दू: क़ाज़ी खान द्वारा प्रमाणित किए गए मत उन मतों पर वरीयता रखते हैं जिन्हें अन्य लोगों ने प्रमाणित किया है क्योंकि इमाम क़ाज़ी खान 'फ़क़ीह-उन-नफ़्स' (कानूनी तर्क के उस्ताद) थे। (त)

अद-दुर्र अल-मुख्तार पर सैय्यद अहमद तहतावी का हाशिया, मिस्र में मुद्रित, खंड 2, पृष्ठ 25: अरबी: अल्लज़ी यज़हरु इ'तिमादु मा फ़िल-खनियाति क़ौलुहुम इन्ना क़ाज़ी खान मिन अजल्लि मा यु'तमदु क-अला तस्हीहातिही – 3 उर्दू: यह स्पष्ट है कि खनिया में जो है उस पर भरोसा किया जाना चाहिए, क्योंकि विद्वानों का कहना है कि क़ाज़ी खान उन महान लोगों में से हैं जिनकी तस्हीह (प्रमाणन) पर भरोसा किया जाता है। (त)

ग़मज़ अल-उयून वल-बसायर शरह अल-अशबाह वन-नज़ायर, मुस्तफ़ा प्रेस दिल्ली में मुद्रित, पृष्ठ 572: अरबी: हाज़ल क़वलु सह्हहहू क़ाज़ी खान फ़-यन्बग़ी इ'तिमादुह – 4 उर्दू: क़ाज़ी खान ने इस मत को सही ठहराया है, इसलिए इस पर भरोसा किया जाना चाहिए। (त)

उक़ूद अद-दुर्रिया, मिस्र में मुद्रित, खंड 2, पृष्ठ 57: अरबी: मा युसहहिहूह क़ाज़ी खान मुक़द्दमुन अला मा युसहहिहूह ग़ैरुह – 5 उर्दू: क़ाज़ी खान जिसे प्रमाणित करते हैं, वह उस पर वरीयता रखता है जिसे कोई और प्रमाणित करे। (त)

पाद-टिप्पणियाँ: 1. अल-आली अद-दुर्रिया फ़िल फ़वाइद अल-खैरिय्या, हाशिया जलीला जामिअ अल-फ़ुसुलैन, खंड 18, इस्लामी कुतुब खाना कराची, 226/1 2. ग़मज़ उयून अल-बसायर बा-हवाला तस्हीह अल-कुदुरी मअल अशबाह, फन-थानी, किताबुल इजारात, इदारा-तुल-क़ुरान कराची, 55/2 3. हाशियातुत-तहतावी अलल दुर्र अल-मुख्तार, किताबुन निकाह, फ़स्ल फ़िल मुहर्रमात, दार अल-मारिफ़ा बेरुत, 25/2 4. ग़मज़ उयून अल-बसायर मअल अशबाह, फन-थानी, किताबुल इजारात, इदारा-तुल-क़ुरान कराची, 55/2 5. अल-उक़ूद अद-दुर्रिया फ़ी तन्क़ीह अल-फ़तावा अल-हामिदिय्या, किताबुल इजारात, हाजी अब्दुल ग़फ़्फ़ार एंड संस बुक्स, कंधार अफ़ग़ानिस्तान, 103/2

استاد صاحب الدر المختار: علیك بما فی الخانیة فان قاضی خان اهل التصحیح و الترجیح - 1 جو خانیہ میں ہے اس کو قبول کرنا تجھ پر لازم ہے کیونکہ امام قاضی خان ترجیح و تصحیح والوں میں سے ہیں۔ (ت)

تصحیح القدوری للعلا مہ قاسم: ما یصححه قاضی خان من الاقوال یکون مقدما علی ما یصححه غیره لانه کان فقیه النفس - 2 جن اقوال کی تصحیح قاضی خان کر دیں وہ مقدم ہوتے ہیں ان اقوال پر جن کی تصحیح دوسرے کریں کیونکہ امام قاضی خان فقیہ النفس ہیں۔ (ت)

حاشیہ سید احمد طحطاوی علی الدر المختار مطبوعہ مصر جلد دوم ص ۲۵: الذی یظهر اعتماد ما فی الخانیة قولهم ان قاضی خان من اجل ما یعتمد کعلی تصحیحاته - 3 جو خانیہ میں ہے اس پر اعتماد ظاہر ہے فقہاء کے اس قول کی وجہ سے کہ قاضی خان ان جلیلہ القدر لوگوں میں سے ہیں جن کی تصحیحات پر اعتماد کیا جاتا ہے۔ (ت)

غمز العیون والبصائر شرح الاشباہ والنظائر مطبوع مطبع مصطفٰی دہلی ص ۵۷۲: هذا القول صححه قاضی خان فینبغی اعتماده - 4 اس قول کو قاضی خان نے صحیح قرار دیا ہے لہٰذا اس پر اعتماد کرنا چاہئے۔ (ت)

عقود الدریة مطبوعہ مصر جلد دوم ص ۵۷: ما یصححه قاضی خان مقدم علی ما یصححه غیره - 5 جس کی تصحیح قاضی خان فرما دیں وہ اس پر مقدم ہے جس کی تصحیح کوئی دوسرا کرے۔ (ت)

حواشی: 1. الآلی الدریۃ فی الفوائد الخیریہ حشیۃ جلیلۃ جامع الفصولین الفصل الثامن عشر اسلامی کتب خانہ کراچی ۱/۲۲۶ 2. غمز عیون البصائر بحوالہ تصحیح القدوری مع الاشباہ الفن الثانی کتاب

الاجارات ادارة القرآن کراچی ۵۵/۲ 3. حاشیۃ الطحطاوی علی الدر المختار کتاب النکاح فصل فی المحرمات دار المعرفۃ بیروت ۲۵/۲ 4. غمز عیون البصائر مع الاشباہ الفن الثانی کتاب الاجارات ادارۃ القرآن کراچی ۵۵/۲ 5. العقود الدریۃ فی تنقیح الفتاوی الحامدیۃ کتاب الاجارات حاجی عبد الغفار و پسران کتب قدھار افغانستان ۱۰۳/۲

Fatawa Razawiyyah, Volume 17 (17)

Similarly, it is explicitly mentioned in other books as well; thus, it is proven that the preferred view is the validity of the sale, even if the gift of the price occurred between the offer and acceptance. The interesting point is that the same *Alamgiri* which the opposing side relies upon for this issue, in its third volume, page 76, citing *Khaniyah*, states:

If he said: "I sold to you for such an amount on the condition that I deduct such an amount from you," or said: "on the condition that I gift to you such an amount," the sale is valid. (Arabic: Law qala ba'tu minka bi-kadha 'ala an hattatu 'anka kadha aw qala 'ala an wahabtu laka kadha jaza al-bay') [1]	If someone said: "I sell to you for such a price on the condition that I will reduce this much for you," or said: "on the condition that I will gift this much to you," then the sale is valid. (T)

In short, the opposing side has no basis for argument left, whether the gift was valid or not? This is a separate matter from the claimant's claim.

(5) Even if we concede for the sake of argument and accept the ruling of *Alamgiri*, the gist of the disagreement between the parties would be whether this gift occurred before acceptance or after. Now it should be seen which time the scholars give weight to in such a scenario, but we find it explicitly stated that in occurrences, the principle is that they are attributed to the nearest time, and whoever argues for delay, their word will be considered credible. And it is also explicitly mentioned that this evidence benefits the defendants, not the claimants. *Al-Ashbah wa al-Nazair*, Matba' Mustafa'i, page 60:

The principle is that a new occurrence is attributed to its nearest time. (Arabic: Al-aslu idafatu al-hadith ila aqrabi awqatihi) [2]	The principle is that a new occurrence should be attributed to its nearest time. (T)

Many issues in jurisprudence are based on this principle. For instance, a Christian woman was married to a Muslim. That Muslim passed away. The woman came to the court of law and claimed: "I am a Muslim and I had embraced Islam while the deceased was still alive; I should get his inheritance." The heirs said: "You became a Muslim only after he had passed away, you are not entitled to the inheritance." The scholars say that the word of the heirs will be considered credible because her Islam

is a new occurrence, so it will be attributed to the nearest time unless the former is proven by evidence. *Hidayah*, Matba' Mustafa'i, Volume 2, page 132:

---

[1] Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Buyu', Chapter 10, Nurani Kutub Khana Peshawar, 3/136.

[2] Al-Ashbah wa al-Nazair, First Art, Third Principle, Idarat al-Qur'an Karachi, 1/94.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 17 (17)

इसी तरह अन्य पुस्तकों में भी स्पष्ट रूप से उल्लेख है; अतः यह सिद्ध हुआ कि अधिक मान्य मत विक्रय (बिक्री) की वैधता है, भले ही मूल्य का उपहार (हेबा-ए-समन) प्रस्ताव और स्वीकृति के बीच हुआ हो। मज़े की बात यह है कि वही 'आलमगीरी' जिस पर इस मामले में विपक्षी पक्ष भरोसा करता है, उसी के तीसरे खंड, पृष्ठ 76 पर 'खनिया' के हवाले से लिखा है:

यदि उसने कहा: "मैंने तुम्हें इतने में बेचा इस शर्त पर कि मैं तुमसे इतना कम कर दूँ," या कहा: "इस शर्त पर कि मैं तुम्हें इतना उपहार दूँ," तो विक्रय वैध है। (अरबी: लौ काला बअतु मिनका बिकज़ा अला अन हतत्तू अनका कज़ा अव काला अला अन वहबतु लका कज़ा जाज़ा अल-बय) [1]

अगर किसी ने कहा कि मैं तेरे हाथ इतने के बदले बेचता हूँ इस शर्त पर कि मैं तुझ से इतने घटाऊंगा या कहा इस शर्त पर कि मैं तेरे लिये इतना हेबा (उपहार) करूँगा तो बेच (बिक्री) जायज़ है। (त)

संक्षेप में, विपक्षी पक्ष के पास बहस के लिए कोई स्थान नहीं बचा है, चाहे उपहार भी सही हुआ हो या नहीं? यह वादी के दावे से अलग बात है।

(5) दलील के तौर पर यदि 'आलमगीरी' के आदेश को ही स्वीकार कर लिया जाए, तो दोनों पक्षों के बीच विवाद का सार यह होगा कि क्या यह उपहार स्वीकृति से पहले हुआ या बाद में। अब यह देखना चाहिए कि ऐसी स्थिति में विद्वान किस समय को महत्व देते हैं, लेकिन हम स्पष्ट रूप से पाते हैं कि बुनियादी घटनाओं में नियम यह है कि उन्हें निकटतम समय से जोड़ा जाए और जो देरी का दावा करता है, उसकी बात विश्वसनीय मानी जाएगी। और यह भी स्पष्ट है कि यह प्रमाण प्रतिवादियों के लिए फायदेमंद है, वादियों के लिए नहीं। 'अशबाह वन-नज़ायर', मतबा मुस्तफ़ाई, पृष्ठ 60:

सिद्धांत यह है कि नई घटना को उसके निकटतम समय से जोड़ा जाए। (अरबी: अल-अस्लु इज़ाफ़तुल हादिसे इला अक़रबे औक़ातिहि) [2]

असल यह है कि हादिस (नई घटना) की इज़ाफ़त (संबद्धता) उसके करीब तरीन वक़्त की तरफ़ की जाए। (त)

फ़िक़्ह (इस्लामी न्यायशास्त्र) में कई मसले इस नियम पर आधारित हैं। उदाहरण के तौर पर एक ईसाई महिला एक मुसलमान के निकाह में थी। उस मुसलमान की मृत्यु हो गई। महिला ने अदालत में आकर दावा किया कि मैं मुसलमान हूँ और मृतक के प्राण निकलने से पहले ही मैं इस्लाम ले आई थी, इसलिए मुझे उसकी विरासत मिलनी चाहिए। वारिसों ने कहा कि तुम उस समय मुसलमान हुई हो

जब उसके प्राण निकल चुके थे, तुम्हें विरासत नहीं मिलती। विद्वान कहते हैं कि वारिसों की बात विश्वसनीय मानी जाएगी क्योंकि उसका इस्लाम लाना एक नई घटना है, इसलिए इसे निकटतम समय से जोड़ा जाएगा जब तक कि पहले का प्रमाण साक्ष्य (बीनह) से न हो। 'हिदाया', मतबा मुस्तफ़ाई, खंड 2, पृष्ठ 132:

---

[1] फ़तावा हिंदिया, किताबुल बुयूँ, अध्याय दसवां, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/136। [2] अल-अशबाह वन-नज़ायर, फ़न अव्वल, तीसरा कायदा, इदारतुल कुरान कराची, 1/94।

فتاوٰی رضویہ، جلد ہفدہم (۱۷)

اور اسی طرح اور کتب میں بھی تصریح ہے، پس ثابت ہوا کہ مذہبِ راجح صحتِ بیع ہے اگرچہ ہبہِ ثمن مابین الایجاب والقبول واقع ہوا ہو۔ لطف یہ ہے کہ وہی عالمگیری جس سے اس مسئلہ میں طرفِ مقابل کو استناد ہے، اسی کی جلد سوم ص ۷۶ پر بحوالہ خانیہ مرقوم:

لو قال بعت منك بكذا على ان حططت عنك كذا او قال على ان وهبت لك كذا جاز البيع [1]- اگر کسی نے کہا کہ میں تیرے ہاتھ اتنے کے عوض بیع کرتا ہوں اس شرط پر کہ میں تجھ سے اتنے گھٹاؤں گا یا کہا اس شرط پر کہ میں تیرے لئے اتنا ہبہ کروں گا تو بیع جائز ہے (ت)

بالجملہ طرف مقابل کو کوئی محل استدلال نہیں رہا یہ کہ ہبہ بھی صحیح ہوا یا نہیں؟ یہ دعوٰی مدعیہ سے جدا بات ہے۔

(۵) بطریق تنزل عرض کیا جاتا ہے کہ اگر حکمِ عالمگیری ہی تسلیم کیا جائے تو حاصلِ اختلافِ فریقین کا یہ ہوگا کہ آیا یہ ہبہ قبلِ قبول واقعہ ہوا یا بعد۔ اب یہ دیکھنا چاہئے کہ ایسی صورت میں علماء کون سے وقت کا اعتبار رکھتے ہیں مگر ہم تصریح پاتے ہیں کہ اصل حوادث میں یہ ہے کہ وقتِ قریب کی طرف اضافت کئے جائیں اور جو بعدیت کا قائل ہے اسی کا قول معتبر رکھا جائے گا اور یہ بھی تصریح ہے کہ یہ دلیل مدعاعلیہم کو مفید ہے نہ مدعیوں کو۔ اشباہ والنظائر مطبع مصطفائی صفحہ ۶۰:

الاصل اضافة الحادث الى اقرب اوقاته [2]- اصل یہ ہے کہ حادث کی اضافت اس کے قریب ترین وقت کی طرف کی جائے۔ (ت)

فقہ میں بہت مسائل اس ضابطہ پر مبنی ہیں، تمثیلاً ایک عرض کیا جاتا ہے، ایک عورت نصرانیہ ایک مسلمان کے نکاح میں تھی، اس مسلمان کا انتقال ہوا عورت نے دارالقضا میں آکر دعویٰ کیا کہ میں مسلمان ہوں اور مورث کا ہنوز دم نہ نکلا تھا کہ میں اسلام لے آئی تھی مجھے اسکا ترکہ ملنا چاہئے، ورثہ نے کہا تو اس وقت مسلمان ہوئی ہے جب اس کا دم نکل چکا تھا تجھے ترکہ نہیں پہنچتا، علماء فرماتے ہیں قول ورثہ کا معتبر رہے گا کیونکہ اسلام اس کا حادث ہے تو وقتِ قریب کی طرف اضافت کیا جائے گا جب تک اول کا ثبوت بینہ سے نہ ہو۔ ہدایہ مطبع مصطفائی جلد دوم ص ۱۳۲:

---

[1] فتاوٰی ہندیہ کتاب البیوع الباب العاشر نورانی کتب خانہ پشاور ۳ / ۱۳۶ [2] الاشباہ والنظائر الفن الاول القاعدۃ الثالثہ ادارۃ القرآن کراچی ۱ / ۹۴

If a Muslim man dies while he has a Christian wife who comes as a Muslim after his death and says, "I embraced Islam before his death," while the heirs of the deceased say she embraced Islam after his death, the word of the heirs will be considered valid. (Footnote 1)

If a Muslim died in a state that he had a Christian wife who was a Muslim after his death and she came and said that I had brought Islam before his death while the heirs of the deceased say that she brought Islam after his death, then the statement of the heirs will be reliable. (T)

In Al-Binayah of Allama Al-Ayni it is:

Because Islam is an occurrence (hadith), and an occurrence is attributed to the nearest of times. (Footnote 2)

The statement of the heirs is reliable because Islam is an occurrence and the attribution of an occurrence is made towards its nearest time. (T)

So here too, the price is an occurrence, therefore the statement of the defendants will be considered valid that this gift occurred after the completion of the sale, not between offer and acceptance. (6) It is proven from the case presented by the plaintiff herself that if the gift is by way of a condition within the contract itself, it invalidates the sale, otherwise not. Now the outcome of the disagreement is that the plaintiff claims the existence of an invalidating condition, and the defendants deny it. In this specific sub-issue too, there is a clarification by scholars that the statement of the one who denies the invalid condition is considered valid. It is stated in Khaniyah, published by Al-Uloom, Volume 2, Page 251:

If someone claims regarding a slave in another person's possession that he bought him from him for a thousand dirhams, and the seller says, "I sold this slave to you for a thousand dirhams and stipulated that you shall neither sell nor gift him," or if the buyer claims that and the seller denies it, the word is the word of the one who denies the invalid condition.

If a person claimed about a slave who is in the possession of another that I bought this slave from him in exchange for a thousand dirhams, and the seller said that I sold this slave to your hand in exchange for a thousand dirhams and imposed this condition that you will neither sell it nor gift it, or the buyer claimed this condition and the seller denied it.

1 Al-Hidayah Sharh al-Bidayah, Book of Adab al-Qadhi, Chapter on Judgment in Inheritance, Yusufi Press, Lucknow, 3/714 2 Al-Binayah fi Sharh al-Hidayah, Book of Adab al-Qadhi, Chapter on Judgment in Inheritance, Al-Maktabah al-Imdadiyyah, Makkah al-Mukarramah, 302/3

यदि एक मुसलमान का निधन हो जाए और उसकी एक ईसाई पत्नी हो, जो उसकी मृत्यु के बाद मुसलमान होकर आए और कहे, "मैंने उसकी मृत्यु से पहले इस्लाम स्वीकार किया था," जबकि मृतक के वारिस कहते हैं कि उसने उसकी मृत्यु के बाद इस्लाम स्वीकार किया, तो वारिसों का कथन मान्य होगा। (पाद टिप्पणी 1)

यदि कोई मुसलमान इस स्थिति में मर गया कि उसकी एक ईसाई पत्नी थी जो उसकी मृत्यु के बाद मुसलमान थी और उसने आकर कहा कि मैं उसकी मृत्यु से पहले इस्लाम लाई थी, जबकि मृतक के वारिसों का कहना है कि वह उसकी मृत्यु के बाद इस्लाम लाई है, तो वारिसों का कथन विश्वसनीय होगा। (त)

अल्लामा अल-ऐनी की 'अल-बिनाया' में है:

क्योंकि इस्लाम एक घटना (हादिस) है, और एक घटना को निकटतम समय से जोड़ा जाता है। (पाद टिप्पणी 2)

वारिसों का कथन इसलिए विश्वसनीय है क्योंकि इस्लाम एक घटना है और घटना का संबंध उसके निकटतम समय से लगाया जाता है। (त)

तो यहाँ भी मूल्य (क़ीमत) एक घटना है, इसलिए प्रतिवादियों का कथन विश्वसनीय रहेगा कि यह उपहार (हिबा) बिक्री के पूर्ण होने के बाद हुआ, न कि प्रस्ताव और स्वीकृति के बीच में। (6) स्वयं वादी द्वारा प्रस्तुत मामले से सिद्ध होता है कि यदि उपहार अनुबंध के भीतर ही एक शर्त के रूप में हो, तो यह बिक्री को अमान्य कर देता है, अन्यथा नहीं। अब मतभेद का परिणाम यह है कि वादी एक अमान्यकारी शर्त के होने का दावा करती है, और प्रतिवादी इससे इनकार करते हैं। इस विशेष उप-मुद्दे में भी विद्वानों का स्पष्टीकरण है कि उसका कथन विश्वसनीय माना जाएगा जो अमान्यकारी शर्त से इनकार करता है। 'खानिया', अल-उलूम द्वारा प्रकाशित, खंड 2, पृष्ठ 251 में है:

यदि कोई व्यक्ति किसी अन्य के कब्जे में गुलाम के बारे में दावा करता है कि उसने उसे उससे एक हजार दिरहम में खरीदा है, और विक्रेता कहता है, "मैंने यह गुलाम आपको एक हजार दिरहम के बदले में बेचा और यह शर्त रखी कि आप इसे न तो बेचेंगे और न ही उपहार देंगे," या यदि खरीदार ऐसा दावा करता है और विक्रेता इससे इनकार करता है, तो कथन उसका माना जाएगा जो अमान्यकारी शर्त से इनकार करता है।

यदि किसी व्यक्ति ने एक गुलाम जो कि दूसरे के कब्ज़े में है के बारे में दावा किया कि मैंने उससे यह गुलाम हज़ार दिरहम के बदले खरीदा है, और विक्रेता ने कहा कि मैंने तेरे हाथ यह गुलाम हज़ार दिरहम के बदले बेचा और यह शर्त लगाई कि तू इसको न तो बेचेगा और न हिबा (उपहार) करेगा, या खरीदार ने इस शर्त का दावा किया और विक्रेता ने उसका इनकार किया।

1 अल-हिदाया शर्ह अल-बिदाया, किताब अदब अल-क़ाज़ी, फ़स्ल फ़ी क़ज़ा बिल-मवारीथ, मताब युसुफ़ी लखनऊ, 3/714 2 अल-बिनाया फ़ी शर्ह अल-हिदाया, किताब अदब अल-क़ाज़ी, फ़स्ल फ़ी क़ज़ा बिल-मवारीथ, अल-मकतबा अल-इमदादिया, मक्का अल-मुकर्रमा, 302/3

لومات المسلم وله امراة نصرانية فجاءت مسلمة بعد موته وقالت اسلمت قبل موته وقالت الورثة اسلمت بعد موته فالقول قولهم ۔ 1

اگر کوئی مسلمان فوت ہوا اس حال میں کہ اس کی ایک نصرانی بیوی تھی جو کہ اس کی موت کے بعد مسلمان تھی اور آئی اور کہا کہ میں اس کی موت سے پہلے اسلام لائی تھی جبکہ ورثاء میت کا کہنا ہے کہ یہ اسکی موت کے بعد اسلام لائی ہے تو ورثاء کا قول معتبر ہوگا۔ (ت)

بنایۃ العلامۃ العینی میں ہے:

لان الاسلام حادث والحادث يضاف الى اقرب الاوقات ۔ 2

ورثاء کا قول اس لئے معتبر ہے کہ اسلام حادث ہے اور حادث کی اضافت اس کے قریب ترین وقت کی طرف کی جاتی ہے۔ (ت)

تو یہاں بھی ثمن حادث ہے پس قول مدعاعلیہم کا معتبر رہے گا کہ یہ ہبہ بعد تمامی بیع واقع ہوا، نہ مابین الایجاب والقبول۔ (۶) خود مسئلہ پیش کردہ مدعیہ سے ثابت کہ اگر ہبہ بطریق اشتراط فی نفس العقد ہو تو مفسد بیع ہے ورنہ نہیں، تو اب حاصل اختلاف یہ ہوا کہ مدعیہ وجود شرط مفسد کا دعویٰ کرتی ہے مدعاعلیہم اس کا انکار کرتے ہیں اس خاص جزئیہ میں بھی علماء کی تصریح ہے کہ قول اسکا معتبر ہے جو شرط فاسد کا انکار کرتی ہے۔ خانیہ مطبوعہ العلوم جلد دوم ص ۲۵۱ میں ہے:

لو ادعى عبداً في يد رجل انه اشتراه منه بألف درهم وقال البائع بعتك بألف دراهم وشرطت ان لا تبيع ولا تهب او ادعى المشترى ذلك وانكر البائع كان القول قول من ينكر الشرط الفاسد

اگر کسی شخص نے ایک غلام جو کہ دوسرے کے قبضہ میں ہے کے بارے میں دعویٰ کیا کہ میں نے اس سے یہ غلام ہزار درہم کے عوض خریدا ہے، اور بائع نے کہا کہ میں نے تیرے ہاتھ یہ غلام ہزار درہم کے عوض فروخت کیا اور یہ شرط لگائی کہ تو اس کو نہ تو بیچے گا اور نہ ہبہ کرے، یا مشتری نے اس شرط کا دعویٰ کیا اور بائع نے اس کا انکار کیا

1 الهداية شرح البداية كتاب ادب القاضى فصل فى قضاء بالمواريث مطبع يوسفى لكهنو ٣/ ٧١٤ 2 البناية فى شرح الهداية كتاب ادب القاضى فصل فى قضاء بالموراريث المكتبة الامداديه مكه مكرمه ٣٠٢/٣

Volume 17 (17) | Fatawa Razawiyyah

[Table 1] Arabic: And the evidence is the evidence of the latter. Similarly, if in place of the void condition, there was a condition of wine and swine. (1) Urdu: So his word will be credible who denies that void condition, and the witnesses of the other will be accepted. And such will be the ruling if the condition of wine and swine were in place of that void condition. (T)

(7) This was also conceded that being forgiven in the essence of the offer was mentioned, but the researching scholars distinguish between the past and future tense in such places; that if it was the future tense it was impermissible and if it was the past tense it was permissible. It is obvious that in the document presented by the defendants, the past tense is mentioned: "He forgave the price in exchange for filial rights." In Fatawa Qazikhana, Vol 2, Page 239, it is stated:

[Table 2] Arabic: If he said "on the condition that I gift you from its price such," it is not permissible. If he said "I sold to you for such on the condition that I dropped for you such and on the condition that I gifted to you such," the sale was permissible. (Summary) (2) Urdu: If he said on this condition that I sell to you, that I will gift you this much from its price, then the sale will not be permissible. And if he said that I sold to you this much on this condition that I reduced this much for you or gifted you this much, then the sale is permissible. (Summary) (T)

And similarly, it is mentioned in Nawazil, and from it in Khulasa it is narrated the same way, and Alamgiri itself, a reliable representative of the plaintiff, has narrated and established it as before (as passed - T) and in all without mentioning any disagreement.

(8) Scholars state that if there is a question about the validity or invalidity of a contract, it will be carried to validity, and it will be accepted that all conditions of validity were gathered until the corruption is proved with clear proof; mere possibility is not enough. Fatawa Khairiyya Li-Naf' al-Bariyya, authored by Imam Khair al-Milla wa al-Din al-Ramli, teacher of the author of Durr al-Mukhtar, printed at Matba' Miri Egypt, Volume 2, Page 94:

[Table 3] Arabic: The origin is its validity. So in al-Bazzaziyya, if asked about its validity, a fatwa of its validity is given, based on the fulfillment of conditions, for the absolute [contract]. Urdu: The original state of a contract is its validity. Therefore, in

Bazzaziyya, it is stated that if a question is asked about the validity of a contract, it will be answered on the basis that all the conditions of validity were met.

Footnotes: 1 Fatawa Qazikhana, Kitab al-Buyu', Chapter on Rulings of Void Sales, Matba' Nawal Kishore, Lucknow, 2/350. 2 Fatawa Qazikhana, Kitab al-Buyu', Chapter on Corrupting Conditions, Matba' Nawal Kishore, Lucknow, 2/347.

खंड सत्रह (17) | फ़तावा रज़विया

[तालिका 1] अरबी: और गवाही बाद वाले की गवाही है। और इसी प्रकार यदि शून्य शर्त के स्थान पर शराब और सुअर की शर्त होती। (1) उर्दू: तो उसका कहना विश्वसनीय होगा जो उस शून्य शर्त का इन्कार करता है और दूसरे के गवाह स्वीकार किए जाएंगे और वैसा ही हुक्म होगा अगर उस शून्य शर्त की जगह शराब और सुअर की शर्त हो। (त)

(7) यह भी स्वीकार किया गया कि मूल प्रस्ताव में माफ़ी का ज़िक्र था, मगर शोधकर्ता विद्वान ऐसी जगह भूतकाल और भविष्य काल में अंतर करते हैं कि यदि भविष्य काल हो तो नाजायज़ और यदि भूतकाल हो तो जायज़। और ज़ाहिर है कि प्रतिवादियों द्वारा प्रस्तुत दस्तावेज़ में भूतकाल का शब्द उल्लेखित है कि 'संतान के अधिकारों के बदले मूल्य माफ़ किया'। फ़तावा क़ाज़ीख़ां जिल्द 2 पृष्ठ 239 में है:

[तालिका 2] अरबी: यदि उसने कहा "इस शर्त पर कि मैं तुम्हें इसके मूल्य में से इतना उपहार दूंगा," तो यह जायज़ नहीं है। और यदि उसने कहा "मैंने तुम्हें इतने में बेचा इस शर्त पर कि मैंने तुम्हारे लिए इतना कम कर दिया या तुम्हें इतना उपहार दिया," तो बिक्री जायज़ है। (सारांश) (2) उर्दू: अगर कहा इस शर्त पर तेरे हाथ बिक्री की कि तुझे इसके मूल्य में से इतने दान करूँगा तो बिक्री जायज़ न होगी और अगर कहा कि मैंने तेरे हाथ इतने की बिक्री की इस शर्त पर तुझसे इतना घटा दिया या तुझे इतना दान किया तो बिक्री जायज़ है। (सारांश) (त)

और इसी तरह नवाज़िल में उल्लेखित है और उससे ख़ुलासा में इसी तरह नक़ल किया गया और स्वयं आलमगीरी ने वादी के विश्वसनीय वकील की तरह रिवायत करके इसे बरक़रार रखा जैसा कि पहले गुज़रा (जैसा कि गुज़रा - त) और सब में बिना किसी मतभेद के ज़िक्र है।

(8) विद्वान फरमाते हैं कि यदि किसी अनुबंध की वैधता या अवैधता के बारे में सवाल हो, तो उसे वैधता पर माना जाएगा और यह मान लिया जाएगा कि वैधता की सभी शर्तें मौजूद थीं जब तक कि स्पष्ट प्रमाण से भ्रष्टाचार सिद्ध न हो जाए; मात्र संभावना पर्याप्त नहीं है। फ़तावा खैरिया लि-नफ़ अल-बरिया, इमाम खैर अल-मिल्लाह वल-दीन अल-रम्ली, जो दुर्रे मुख़्तार के लेखक के उस्ताद थे, द्वारा लिखित, मतबा मीरी मिस्र, जिल्द 2, पृष्ठ 94 में:

[तालिका 3] अरबी: मूल इसकी वैधता है। अतः बज़ाज़िया में है कि यदि इसकी वैधता के बारे में पूछा जाए, तो उसकी वैधता का फ़तवा दिया जाएगा, शर्तों के पूरा होने के आधार पर, क्योंकि निरपेक्ष [कथन पूर्णता का संकेत देता है]। उर्दू: अनुबंध की असल उसकी वैधता है, अतः बज़ाज़िया में है कि अगर अनुबंध की वैधता के बारे में सवाल किया जाए तो इस आधार पर कि उसमें तमाम शर्तें मौजूद थीं।

पाद टिप्पणियाँ: 1 फ़तावा क़ाज़ीख़ां, किताबुल बुयूअ, फ़स्ल फ़ी अहकामुल बैअ फ़ासिद, मतबा नवल किशोर, लखनऊ, 2/350। 2 फ़तावा क़ाज़ीख़ां, किताबुल बुयूअ, फ़स्ल फ़िश-शुरूतिल मुफ़्सिदाह, मतबा नवल किशोर, लखनऊ, 2/347।

[Table 1] والبينة بينة الآخر. وكذلك لو كان مكان الشرط الفاسد شرط الخمر والخنزير - 1 تو اس کا قول معتبر ہوگا جو اس شرط فاسد کا منکر ہے اور گواہ دوسرے کے مقبول ہوں گے اور ایسا ہی حکم ہوگا اگر اس شرط فاسد کی جگہ خمر و خنزیر کی شرط ہو۔ (ت)

(۷) یہ بھی تسلیم کیا کہ نفس ایجاب میں معاف ہو نامذکور تھا مگر علمائے محققین ایسی جگہ صیغہ ماضی و مستقبل میں فرق فرماتے ہیں کہ اگر صیغہ مستقبل تھا تو ناجائز اور صیغہ ماضی تھا تو جائز، اور ظاہر ہے کہ دستاویز پیش کردہ مدعاعلیہم میں لفظ ماضی مذکور ہے کہ ثمن بعوض حقوق فرزندی معاف کیا۔ فتاوی قاضیخاں جلد ۲ ص ۲۳۹ میں ہے:

[Table 2] لو قال على ان اهب لك من ثمنه كذا لا يجوز، ولو قال بعت منك بكذا على ان حططت عنك كذا وعلى ان وهبت لك كذا جاز البيع اه ملخصاً- 2 اگر کہا اس شرط پر تیرے ہاتھ بیع کی کہ تجھے اس کے ثمن سے اتنے ہبہ کروں گا تو بیع جائز نہ ہوگی وار اگر کہا کہ میں نے تیرے ہاتھ اتنے کو بیع کی اس شرط پر تجھ سے اتنا گھٹا دیا یا تجھے اتنا ہبہ کیا تو بیع جائز ہے اھ تلخیص۔ (ت)

اور اسی طرح نوازل میں مذکور ہے اور اس سے خلاصہ میں یونہی نقل کیا اور خود عالمگیری مستند وکیل مدعیہ اسی طرح روایت کر کے مقرر رکھا کما مر (جیسا کہ گزرا ت) اور سب میں بلاذکر خلاف۔

(۸) علماء فرماتے ہیں کہ اگر کسی عقد کے صحت و عدم صحت سے سوال ہو تو اسے صحت پر حمل کیا جائیگا اور یہ مان لیا جائے گا کہ تمام شرائط صحت مجتمع تھیں تا وقتیکہ فساد دلیل روشن

سے ثابت نہ ہو مجرد احتمال کفایت نہیں کرتا۔ فتاوی خیریہ لنفع البریہ تصنیف امام خیر الملة والدین رملی استاذ صاحب در مختار مطبوعہ مطبع میری مصر دوم صفحہ ۹۴:

[Table 3] الاصل صحته ففی البزازیة لو سئل عن صحته یفتی بصحته حملا علی استیفاء الشرائط اذ المطلق اصل عقد کی صحت ہے چنانچہ بزازیہ میں ہے کہ اگر صحت عقد کے بارے میں سوال کیا جائے تو اس بنیاد پر کہ اس میں تمام شرائط مجتمع تھیں

حواشی: 1 فتاوی قاضیخان کتاب البیوع فصل فی احکام البیع فاسد مطبع نولکشور لکھنؤ ۲/ ۳۵۰ 2 فتاوی قاضیخان کتاب البیوع فصل فی الشروط المفسدة مطبع نولکشور لکھنؤ ۲/ ۳۴۷

Fatawa Razawiya, Volume 17

(Top Table Right Column - Urdu): A fatwa for its validity will be given because an absolute statement is interpreted as being in perfect condition, free from impediments to validity, and Allah knows best. And in the same book, Volume 2, Page 35: If a question is asked regarding the sale of such property which the owner himself has transacted, then undoubtedly it is permissible, despite the fact that if he were insane, no one would say the purchase is valid. It is also mentioned therein that looking towards making a legally responsible person's statement actionable is better than rendering it void and likening the person to animals and his speech to the braying/noises of animals. Allah knows best. (T)

(Top Table Left Column - Arabic): It is interpreted based on perfection free from impediments to validity, and Allah knows best (1). And in it, Volume 2, Page 35: If a question is raised about the sale of property sold by the owner, it is permissible without doubt, even though he was insane, for no one says the purchase was valid (2). And in it: Considering the action according to the expression of the legally responsible person is better than discarding it and likening him to animals and his speech to their sounds, and Allah Almighty knows best (3).

(Middle Paragraph - Urdu): Note that when it is the order for a Mufti to act upon the original validity and give a fatwa by assuming the collection of conditions for validity, then for a Qazi, whose gaze is restricted only to the apparent and taking into account remote possibilities is separate from his position, it would be even more appropriate and necessary to keep an eye on the original validity. Especially here, where the deceased seller was a religious scholar and his intention to transfer ownership is apparent, so avoiding impediments to validity is expected of him. (9) Scholars explicitly state that when a dispute occurs between the contracting parties regarding validity and invalidity, the statement to be considered is that of the claimant of validity. Fatawa Qazi Khan, Volume 2, Page 251:

(Bottom Table Right Column - Urdu): When there is a dispute between the seller and the buyer, where one claims the validity of the contract while the other claims the invalidity of the contract due to some corrupt condition, then the statement of the claimant of validity will be preferred, and the witnesses of the claimant of invalidity will be considered reliable; there is agreement on this in all reports.

(Bottom Table Left Column - Arabic): When the two parties to a sale disagree, one claiming validity and the other invalidity due to a corrupt condition... the statement is

that of the claimant of validity, and the evidence is the evidence of the claimant of invalidity by agreement of reports, even if he is the claimant.

(Footnotes): 1. Fatawa Khayriyya, Kitab al-Sulh, Dar al-Ma'rifah, Beirut, 2/103. 2. Fatawa Khayriyya, Kitab al-Wakala, Dar al-Ma'rifah, Beirut, 2/39. 3. Fatawa Khayriyya, Kitab al-Da'wa, Dar al-Ma'rifah, Beirut, 2/77.

फ़तावा रज़विया, खंड 17

(शीर्ष तालिका दायां कॉलम - उर्दू): इसकी वैधता का फतवा दिया जाएगा क्योंकि एक निरपेक्ष कथन को वैधता में बाधाओं से मुक्त पूर्णता पर आधारित माना जाता है, और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है। और इसी पुस्तक के खंड 2, पृष्ठ 35 पर है: यदि ऐसी संपत्ति की बिक्री के बारे में प्रश्न पूछा जाए जिसे मालिक ने स्वयं संपन्न किया है, तो निस्संदेह यह जायज़ है, इस तथ्य के बावजूद कि यदि वह पागल होता, तो कोई भी यह नहीं कहता कि खरीदारी वैध है। इसी में है कि एक उत्तरदायी व्यक्ति (मुकल्लफ) के कथन को कार्यान्वयन योग्य बनाने पर विचार करना उसे व्यर्थ घोषित करने और उस व्यक्ति को जानवरों के समान और उसकी बातचीत को जानवरों की आवाज़ों के समान समझने से बेहतर है। अल्लाह बेहतर जानता है। (त)

(शीर्ष तालिका बायां कॉलम - अरबी): इसे वैधता की बाधाओं से रहित पूर्णता पर आधारित किया जाता है और अल्लाह बेहतर जानता है (1)। और उसमें खंड 2, पृष्ठ 35 पर: यदि मालिक द्वारा बेची गई संपत्ति की बिक्री के बारे में प्रश्न उठाया जाए, तो यह बिना किसी विवाद के जायज़ है, हालांकि वह पागल था, क्योंकि कोई भी यह नहीं कहता कि खरीदारी वैध थी (2)। और उसमें: उत्तरदायी व्यक्ति की अभिव्यक्ति के अनुसार कार्य पर विचार करना उसे त्यागने और उसे जानवरों के समान और उसके शब्दों को उनकी आवाज़ों के समान समझने से बेहतर है, और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है (3)।

(मध्य पैराग्राफ - उर्दू): ध्यान रहे कि जब मुफ्ती के लिए यह आदेश है कि वह मूल वैधता पर कार्य करे और वैधता की शर्तों के एकत्र होने को मानकर फतवा दे, तो काज़ी जिसकी दृष्टि केवल प्रत्यक्ष पर सीमित है और दूर की संभावनाओं पर विचार करना उसके पद से अलग बात है, वहाँ तो मूल (वैधता) पर नज़र रखना और भी उचित और आवश्यक होगा। विशेष रूप से यहाँ जहाँ मृतक विक्रेता एक धार्मिक विद्वान थे और उनका स्वामित्व हस्तांतरण करने का इरादा स्पष्ट था, तो उनसे वैधता की बाधाओं से बचने की ही अपेक्षा है। (9) विद्वान स्पष्ट रूप से कहते हैं कि जब अनुबंध करने वाले पक्षों के बीच वैधता और अवैधता के बारे में विवाद हो, तो उसका कथन मान्य है जो वैधता का दावेदार है। फ़तावा काज़ी खान, खंड 2, पृष्ठ 251:

(निचली तालिका दायां कॉलम - उर्दू): जब विक्रेता और खरीदार के बीच विवाद हो, जिनमें से एक अनुबंध की वैधता का दावा करे जबकि दूसरा किसी भ्रष्ट शर्त के कारण अनुबंध की अवैधता का दावा

करे, तो वैधता के दावेदार का कथन बेहतर होगा और अवैधता के दावेदार के गवाह विश्वसनीय होंगे; इस पर सभी वृत्तांतों में सहमति है।

(निचली तालिका बायां कॉलम - अरबी): जब बिक्री के दो पक्ष असहमत हों, एक वैधता का दावा करे और दूसरा किसी भ्रष्ट शर्त के कारण अवैधता का... तो कथन वैधता के दावेदार का है, और प्रमाण अवैधता के दावेदार का प्रमाण है वृत्तांतों के समझौते से, भले ही वह दावेदार हो।

(पादलेख): 1. फ़तावा खैरिया, किताब अस-सुलह, दार अल-मारिफ़ा, बेरूत, 2/103. 2. फ़तावा खैरिया, किताब अल-वकाला, दार अल-मारिफ़ा, बेरूत, 2/39. 3. फ़तावा खैरिया, किताब अद-दावा, दार अल-मारिफ़ा, बेरूत, 2/77.

पृष्ठ 259 का 715

فتاوٰی رضویہ ، جلد ہفدہم (۱۷)

(اوپری جدول دایاں کالم - اردو): اس کی صحت کا فتوٰی دیا جائیگا کیونکہ مطلق کو موانع صحت سے خالی کمال پر محمول کیا جاتا ہے اور اللہ تعالٰی خوب جانتا ہے۔ اور اسی میں جلد دوم ص۳۵ پر ہے : اگر ایسے مال کی بیع کے بارے میں سوال کیا جائے جس کو مال والے نے منعقد کیا ہے تو بلاشبہ یہ جائز ہے اس کے باوجود کہ اگر وہ مجنون ہے تو کوئی بھی یہ نہیں کہتا کہ خریداری درست ہے۔ اسی میں ہے کہ مکلف کی عبارت کو قابل عمل بنانے پر نظر کرنا اس کو لغو قرار دینے اور مکلف کو حیوانوں اور اس کے کلام کو حیوانوں کے ڈکارنے کے ساتھ لاحق کرنے سے اولٰی ہے، اللہ تعالٰی بہتر جانتا ہے۔ (ت)

(اوپری جدول بایاں کالم - عربی): یحمل علی الکمال الخالي عن الموانع للصحة واللہ اعلم ۱ وفیھا جلد دوم ص۳۵: اذا رفع السوال ببیع مال باعه ذوالمال جاز بلا مرأ مع انه کان مجنوناً فلا احد یقول بانه صح الشراء ۲۔وفیھا النظر الی العمل بعبارة المکلف اولی من اھدارھا والحاقه بالحیوانات وکلامه بجوارھا واللہ تعالی اعلم ۳۔

(درمیانی پیراگراف - اردو): ملاحظہ ہو کہ جب مفتی کے لئے یہ حکم ہے کہ اصل صحت پر عمل کرے اور شرائط صحت کا اجتماع مان کر فتوٰی دے تو قاضی جس کی نظر صرف ظاہر پر مقتصر ہے اور احتمالات بعیدہ کا لحاظ اس کے منصب سے جدا بات ہے وہاں تو اصل پر نظر رکھنا اولٰی واحتق ہوگا۔ خصوصاً یہاں کہ بائع مرحوم عالم دین تھے اور ان کا قصد تملیک کا ہونا ظاہر، تو موانع صحت سے احتراز کرنا ہی ان سے متوقع۔ (۹) علماء تصریح فرماتے ہیں جب عاقدین میں صحت و فساد کی اختلاف واقع ہو تو قول اس کا قول ہے جو مدعی صحت ہے۔ فتاوٰی قاضی خان جلد دوم ص ۲۵۱:

(نیچے کا جدول دایاں کالم - اردو): جب بائع اور مشتری میں اختلاف ہو ان میں سے ایک صحت عقد کا جبکہ دوسرا کسی شرط فاسد کی وجہ سے فساد عقد کا دعویٰ کرے تو قول صحت کے مدعی کا بہتر ہوگا اور گواہ فساد کے مدعی کے معتبر ہوں گے ، اس پر تمام روایات میں اتفاق ہے۔

(نیچے کا جدول بایاں کالم - عربی): اذا اختلف المتبایعان احدهما یدعی الصحة والاخر الفساد بشرط اسد اواجمل فاسد کان القو قول مدعی الصحة والبینة بینة مدعی الفساد باتفاق الروایات، وان کان مدعی

(حواشی): ۱ فتاوی خیریه کتاب الصلح دار المعرفه بیروت ۲/ ۱۰۳ ۲ فتاوی خیریه کتاب الوکالة دار المعرفه بیروت ۲/ ۳۹ ۳ فتاوی خیریه کتاب الدعوی دار المعرفه بیروت ۲/ ۷۷

[Arabic Box Text]: "The corruption (fasad) is claimed based on a reason within the essence of the contract, for instance, if one claims they bought it for a thousand dirhams and a measure of wine, while the other claims the sale was for a thousand dirhams. There are two narrations from Imam Abu Hanifa (may Allah Almighty have mercy on him). In 'Zahir al-Riwayah', the statement is that of the person claiming validity (sahhat), and the evidence is that of the other, as in the first case. Another narration states that the statement of the person claiming corruption is reliable."[1]

[Urdu Box Text]: If the person claiming corruption (fasad) does so due to a defect found in the original contract—for instance, if they claim to have bought an item for a thousand dirhams and a measure of wine, while the other claims they sold it for a thousand dirhams—then two narrations are cited from Imam Abu Hanifa (may Allah Almighty have mercy on him). In 'Zahir al-Riwayah', it is held that the statement of the claimant of validity is credible and the testimony of the other party is prioritized, as explained in the first scenario. And in another narration, it is held that the statement of the claimant of corruption will be credible. (T)

And similarly, it is cited in Fatawa Alamgiri, Vol. 3, p. 52. Summary of the Book of Sales, Chapter 4:

[Arabic Box Text]: "If one of them claims corruption of the contract and the other claims validity, the statement is that of the person claiming validity[2] etc."

[Urdu Box Text]: It is in Fatawa Sughra: If either the seller or the buyer claims corruption of the contract while the other claims validity of the contract, then the statement of the claimant of validity will be credible. (T)

It is noteworthy that when the statement of the original seller is not accepted when claiming corruption, how could that of a stranger be? (10) Another point worthy of attention is that the female claimant has no grounds to deny the gifting of the price (thaman), whether conditional or unconditional, occurring between offer and acceptance or after acceptance. For in this case, the act of sale and gift by the predecessor is established, in whatever manner it occurred. And this statement is completely contradictory to her formal suit and sworn statement. Scholars explicitly state that a contradictory claim is not acceptable. Thus, the statement of the defendants is unchallenged and worthy of acceptance. And Allah Almighty knows best, and His judgment, exalted be His glory, is most wise.

Problem 108: From Rampur state, sent by Mr. Syed Nadir Hussain Sahab, 5 Sha'ban 1317 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Hindah sold a house of hers to Salma (with whom Hindah's son's marriage was fixed) through a valid Sharia-compliant sale. The price money that became due from Salma due to this sale was [gifted] to Salma happily...

---

[1] Fatawa Qazi Khan, Book of Sales, Chapter on Rulings of Corrupt Sale, Nawal Kishore Press, Lucknow, 3/350 [2] Khulasat al-Fatawa, Book of Sales, Chapter Four, Maktaba Habibiya, Quetta, 3/48, 49

फ़तावा रज़विया | जिल्द सत्रह (17)

[अरबी बॉक्स टेक्स्ट]: "अनुबंध के सार के भीतर किसी कारण के आधार पर भ्रष्टाचार (फ़साद) का दावा किया जाता है, उदाहरण के लिए, यदि कोई दावा करता है कि उन्होंने इसे एक हज़ार दिरहम और शराब के एक माप के बदले खरीदा है, जबकि दूसरा दावा करता है कि बिक्री एक हज़ार दिरहम के लिए थी। इमाम अबू हनीफ़ा (अल्लाह उन पर दया करे) से दो कथन हैं। 'ज़ाहिर अल-रिवयाह' में, कथन वैधता (सेहत) का दावा करने वाले व्यक्ति का है, और प्रमाण दूसरे का है, जैसा कि पहले मामले में है। एक अन्य कथन में कहा गया है कि भ्रष्टाचार का दावा करने वाले व्यक्ति का कथन विश्वसनीय है।"[1]

[उर्दू बॉक्स टेक्स्ट]: यदि भ्रष्टाचार (फ़साद) का दावा करने वाला व्यक्ति मूल अनुबंध में पाई जाने वाली किसी त्रुटि के कारण ऐसा करता है—उदाहरण के लिए, यदि वे दावा करते हैं कि उन्होंने एक हज़ार दिरहम और शराब के एक माप के बदले एक वस्तु खरीदी है, जबकि दूसरा दावा करता है कि उन्होंने इसे एक हज़ार दिरहम में बेचा—तो इमाम अबू हनीफ़ा (अल्लाह तआला उन पर दया करे) से दो कथन उद्धृत हैं। 'ज़ाहिर अल-रिवयाह' में यह माना गया है कि वैधता के दावेदार का कथन विश्वसनीय है और दूसरे पक्ष की गवाही को प्राथमिकता दी जाती है, जैसा कि पहले परिदृश्य में समझाया गया है। और एक अन्य कथन में, यह माना गया है कि भ्रष्टाचार के दावेदार का कथन विश्वसनीय होगा। (त)

और इसी तरह फ़तावा आलमगीरी, जिल्द 3, पृ. 52 में उद्धृत है। किताब-उल-बुयू (बिक्री की पुस्तक) का सारांश, अध्याय 4:

[अरबी बॉक्स टेक्स्ट]: "यदि उनमें से कोई अनुबंध के भ्रष्टाचार का दावा करता है और दूसरा वैधता का दावा करता है, तो कथन वैधता का दावा करने वाले व्यक्ति का होगा[2] इत्यादि।"

[उर्दू बॉक्स टेक्स्ट]: फ़तावा सुग़रा में है: यदि विक्रेता या खरीदार में से कोई अनुबंध के भ्रष्टाचार का दावा करता है जबकि दूसरा अनुबंध की वैधता का दावा करता है, तो वैधता के दावेदार का कथन विश्वसनीय होगा। (त)

यह ध्यान देने योग्य है कि जब भ्रष्टाचार का दावा करने पर मूल विक्रेता का कथन स्वीकार नहीं किया जाता है, तो किसी अजनबी का कथन कैसे स्वीकार किया जा सकता है? (10) ध्यान देने योग्य एक और बात यह है कि महिला दावेदार के पास मूल्य (थमन) के उपहार को अस्वीकार करने का कोई

आधार नहीं है, चाहे वह शर्त के साथ हो या बिना शर्त के, जो प्रस्ताव और स्वीकृति के बीच या स्वीकृति के बाद हुआ हो। क्योंकि इस मामले में, पूर्वज द्वारा बिक्री और उपहार का कार्य स्थापित हो जाता है, चाहे वह किसी भी तरह से हुआ हो। और यह कथन उसके औपचारिक मुकदमे और शपथ पत्र के पूरी तरह से विपरीत है। विद्वान स्पष्ट रूप से कहते हैं कि विरोधाभासी दावा स्वीकार्य नहीं है। इस प्रकार, प्रतिवादियों का कथन निर्विरोध और स्वीकार करने योग्य है। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है, और उसका निर्णय सबसे प्रबुद्ध है।

मसला 108: रामपुर राज्य से, श्री सैयद नादिर हुसैन साहब द्वारा भेजा गया, 5 शाबान 1317 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: हिंदा ने अपना एक घर सलमा को (जिसके साथ हिंदा के बेटे की शादी तय हुई थी) एक वैध शरिया-अनुपालक बिक्री के माध्यम से बेच दिया। इस बिक्री के कारण सलमा पर जो मूल्य राशि बकाया हुई थी, वह खुशी-खुशी सलमा को [उपहार स्वरूप] दे दी गई...

---

[1] फ़तावा क़ाज़ी खान, किताब-उल-बुयू, फ़स्ल फ़ी अहकाम अल-बै अल-फ़ासिद, नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, 3/350 [2] ख़ुलासत अल-फ़तावा, किताब-उल-बुयू, अध्याय चार, मकतबा हबीबिया, क्वेटा, 3/48, 49

الفساد یدعی الفساد لمعنی فی صلب العقد بان ادعی انه اشتراه بالف درہم ورطل من خمر والاخر یدعی البیع بالف درہم، فیه روایتان عن ابی حنیفة رحمہ اللہ تعالٰی فی ظاھر الروایة القول قول من یدعی الصحة ایضا والبینة بینة الاخر کما فی الوجہ الاول وفی روایة القول قول من یدعی الفساد۔ ۱

اگر فساد کا دعوٰی کرنے والا اصل عقد میں پائی جانیوالی کسی خرابی کے سبب سے فساد کا دعوٰی کرے مثلاً اگر وہ دعوٰی کرے کہ اس نے یہ شے ہزار درہم اور ایک رطل شراب کے عوض خریدی ہے جبکہ دوسرا دعوٰی کرے کہ اس نے ہزار درہم کے عوض فروخت کی، تو اس میں امام ابوحنیفہ رحمہ اللہ تعالٰی سے دو روایتیں منقول ہیں، ظاہر الروایۃ میں ہے کہ قول مدعی صحت کا اور گواہی دوسرے کے معتبر ہیں جیسا کہ پہلی صورت میں بیان ہوا، اور ایک روایت میں یوں ہے کہ فساد کے مدعی کا قول معتبر ہوگا۔ (ت)

اور اسی طرح فتاوٰی عالمگیری میں نقل کیا جلد ۳ ص ۵۲۔ خلاصہ کتاب البیوع فصل ۴:

لو ادعی احدھما فساد العقد والاخر الصحة القول قول من یدعی الصحة ۲الخ۔

فتاوٰی صغرٰی میں ہے اگر بائع اور مشتری میں سے ایک نے فساد عقد کا جبکہ دوسرے نے صحت عقد کا دعوٰی کیا تو صحت کے مدعی کا قول معتبر ہوگا۔ (ت)

قابل لحاظ ہے کہ جب اصل بائع دعوٰی فساد کرتا تو اس کا قول تسلیم نہ ہوتا غیر کا کیونکر ہوگا۔ (۱۰) اتنی بات اور بھی لائق التفات ہے کہ مدعیہ کو اس کی گنجائش ہی نہیں کہ وہ ہبہ ثمن بر سبیل اشتراط یا بلا اشتراط مابین الایجاب والقبول خواہ بعد القبول واقع ہو نامانے، کیونکہ اس تقدیر پر مورث کا بیع وہبہ کرنا ثابت ہوتا ہے اگرچہ وہ کسی طور پر ہو اور یہ قول اس کی عرضی دعوٰی

واظہار حلفی کے بالکل مناقض ہے، اور علماء تصریح فرماتے ہیں کہ مناقض دعویٰ قابل تسلیم نہیں تو مدعا علیہم کا قول بلا معارض ولائق قبول ہے واللہ تعالیٰ اعلم وحکمہ جل مجدہ احکم مسئلہ ۱۰۸: از ریاست رامپور مرسلہ جناب سید نادر حسین صاحب ۵ شعبان ۱۳۱۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ہندہ نے اپنا ایک مکان سلمیٰ کے ہاتھ جس سے پسر ہندہ کی شادی قرار پائی تھی بیع صحیح شرعی کیا اور زر ثمن کے سلمیٰ پر اس بیع سے واجب ہوا تھا سلمیٰ کو بخوشی

---

۱ فتاویٰ قاضی خان کتاب البیوع فصل فی احکام البیع الفاسد مطبع نولکشور لکھنؤ ۳ / ۳۵۰ ۲ خلاصۃ الفتاویٰ کتاب البیوع الفصل الرابع مکتبہ حبیبیہ کوئٹہ ۳ / ۴۸، ۴۹

Fatawa Ridawiyyah (Volume 17)

The document of this contract was written and registered with the following summary: I, Saadat-un-Nisa Begum, wife of Sayyid Saadat Ali Sahib, resident of Rampur, who is the owner and possessor of a one-story house (details provided below) located in Rampur; in a state of sound health and intellect, without any compulsion or coercion, and of my own free will, have sold all rights and easements for a sum of eight hundred rupees (current coin) to Musammat Salma Begum, daughter of Sayyid Nadir Husain, resident of Bareilly, whose marriage was settled according to my wish with Sayyid Sikandar Shah, my biological son.

And I have made the said female buyer the owner and possessor of the sold house as myself, and I have received the full price from the buyer, meaning I have forgiven and gifted the price to Salma Begum, the buyer, due to natural love for the aforementioned Sayyid Sikandar Shah. Now, neither I nor my legal representatives have any claim to the purchase price, nor will there be any. Mutual possession of the exchanges has taken place. Now, I, the female seller, have no concern with the sold house. If any partner or associate arises, I, the seller, am responsible. In this case, is this sale Shari'ah-compliant/valid or not? And does Hindah (the seller) or her legal representatives have any right to object or reject this sale? And was this forgiveness of the price also valid? And does Hindah or her heirs have the right to revoke this forgiveness? Please clarify and be rewarded.

The Answer: In the queried case, both the sale of the house and the forgiveness of the price are valid, complete, and perfect. Neither Hindah nor any of her heirs or legal representatives has the right to object to this sale and forgiveness, nor can they ever have the right to revoke it. It is stated in Fatawa Alamgiri:

Arabic	**Urdu Translation**
If one reduces the entire price, or gifts it, or absolves (the buyer) from it, if this occurs before the price is collected, it is all valid.	If the entire price is reduced, gifted, or absolved, if it is before taking possession of the price, then all of it is permissible. (T)

It is stated in Niqayah and its commentary:

Arabic	Urdu Translation
Disposal of the price and reduction from it is valid, meaning it is valid for the buyer to drop the whole…	Disposal of the price and reducing it is correct, meaning it is valid for the buyer that he [obtains] from the seller the full…

[1] Fatawa Hindiyyah, Book of Sales, Chapter 16, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/173

फ़तावा रिज़विया (खंड 17)

इस अनुबंध का दस्तावेज़ इस सारांश के साथ लिखकर पंजीकृत किया गया है कि: मैं सआदत-उन-निसा बेगम, पत्नी सैय्यद सआदत अली साहब, निवासी रामपुर, जो एक मंजिला मकान (जिसका विवरण नीचे है) की मालिक और कब्जेदार हूँ, जो रामपुर में स्थित है; अपने पूर्ण स्वास्थ्य और बुद्धि की स्थिरता में, बिना किसी दबाव या मजबूरी के, अपनी स्वेच्छा और इच्छा से, सभी अधिकारों और सुविधाओं के साथ आठ सौ रुपये के बदले मुसम्मात सलमा बेगम, पुत्री सैय्यद नादिर हुसैन, निवासी बरेली, जिनका विवाह मेरी इच्छा के अनुसार मेरे सगे पुत्र सैय्यद सिकंदर शाह के साथ तय हुआ है, को बेच दिया है।

और मैंने उक्त महिला खरीदार को बेचे गए मकान पर अपने समान मालिक और कब्जेदार बना दिया है, और मैंने खरीदार से पूरी कीमत प्राप्त कर ली है, यानी सैय्यद सिकंदर शाह के प्रति स्वाभाविक प्रेम के कारण मैंने खरीदार सलमा बेगम को कीमत माफ कर दी और उपहार में दे दी। अब मुझ पर और मेरे उत्तराधिकारियों पर कीमत का कोई दावा नहीं है और न ही होगा। लेन-देन का कब्ज़ा हो चुका है। अब मुझ विक्रेता का बेचे गए मकान से कोई सरोकार नहीं रहा। यदि कोई हिस्सेदार या साझेदार पैदा होता है, तो मैं विक्रेता उत्तरदायी हूँ। इस स्थिति में, क्या यह बिक्री शरीयत के अनुसार सही है या नहीं? और क्या हिंदा या उसके उत्तराधिकारियों को इस बिक्री पर कोई आपत्ति या अस्वीकृति का अधिकार है? और क्या यह कीमत की माफी भी सही हुई या नहीं? और क्या हिंदा या उसके वारिसों को इस माफी को वापस लेने का अधिकार है? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: पूछे गए मामले में, घर की बिक्री और माफी (कीमत की) दोनों सही, पूर्ण और मुकम्मल हैं। न तो हिंदा और न ही उसके किसी वारिस या उत्तराधिकारी को इस बिक्री और माफी पर आपत्ति करने का अधिकार है, और न ही कभी वापस लेने का अधिकार मिल सकता है। फ़तावा आलमगिरी में है:

अरबी	**उर्दू अनुवाद**
यदि पूरी कीमत घटा दी जाए या उपहार में दे दी जाए या उससे बरी कर दिया जाए, यदि यह कीमत पर कब्ज़ा करने से पहले हो तो सब जायज़ है।	अगर पूरा थमन (कीमत) घटा दिया जाए या हिबा (उपहार) कर दिया जाए या उससे बरी कर दिया जाए, अगर यह थमन पर कब्ज़ा करने से पहले हो तो सब जायज़ है। (त)

निक़ाया और उसकी शरह (व्याख्या) में है:

अरबी	उर्दू अनुवाद
कीमत में निपटान और उसमें कमी करना सही है, यानी खरीदार के लिए यह सही है कि वह विक्रेता से पूरा...	थमन (कीमत) में तसर्रुफ़ (निपटान) और उसको घटाना सही है, यानी मुश्तरी (खरीदार) के लिए दुरुस्त है कि वो बाए (विक्रेता) से पूरा...

[1] फ़तावा हिन्दिया, किताबुल बुयूअ (बिक्री की पुस्तक), अध्याय 16, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/173

पृष्ठ 261/715

معاف کر دیا اس عقد کی دستاویز بدیں خلاصہ تحریر ہو کر رجسٹری ہو گئی منکہ سعادت النساء بیگم زوجہ سید سعادت علی صاحب ساکن رام پور ہوں جو کہ ایک منزل مکان (چنیں و چناں) واقع رامپور محدودہ ذیل مقبوضہ مملوکہ میرا ہے واہب میں نے بحالت صحت نفس و ثبات عقل بلا اکراہ واجبار بطوع و رغبت اپنی سے جمیع حقوق و مرافق بعوض مبلغ آٹھ سو روپیہ چہرہ دار ہمدست مسماۃ سلمیٰ بیگم بنت سید نادر حسین صاحب ساکنہ بریلی جس کا نکاح حسب خواہش میری سید سکندر شاہ پسر بطنی میرے سے قرار پایا ہے بیچ دیا اور بیج کیا میں نے ،

اور مکان مبیعہ پر مشتریہ مذکورہ کو مثل اپنی ذات کے مالک و قابض کر دیا میں نے، اور زر ثمن تمام کمال مشتریہ سے وصول پایا میں نے، یعنی ثمن اسکا بوجہ محبت فطری سید سکندر شاہ مذکور کے سلمیٰ بیگم مشتریہ کو معاف کیا اور بخشا میں نے اب مجھ کو اور قائم مقامان میرے کو دعویٰ زر ثمن کا نہیں ہے اور نہ ہوگا تقابض بدلین واقع ہوا اب مجھ بائعہ کو مکان مبیعہ سے کچھ سروکار نہ رہا، اگر کوئی سہیم یا شریک پیدا ہو تو جوابدہ میں بائعہ ہوں فقط، اس صورت میں یہ بیع شرعاً صحیح ہے یا نہیں؟ اور ہندہ خواہ اس کے قائم مقاموں کو اس بیع پر کوئی رد و اعتراض ہے یا نہیں؟ او یہ معافی ثمن بھی صحیح ہوئی یا نہیں؟ اور ہندہ یا اسکے ورثہ کو اس معافی سے رجوع کا اختیار ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا ۔

الجواب: صورت مستفسرہ میں وہ بیع مکان و معافی دونوں میں صحیح و تام و کامل ہیں ہندہ خواہ اس کے کسی وارث قائم مقام کو نہ اس بیع و معافی پر اعتراض پہنچتا ہے نہ ہرگز رجوع کا اختیار مل سکتا ہے، فتاویٰ عالمگیریہ میں ہے:

عربی	اردو ترجمہ
اذا حط کل الثمن او وھبه او ابراہ عنہ فان کان ذلک قبل قبض الثمن صح الکل۔	اگر پورا ثمن گھٹا دیا یا ہبہ کردیا یا اس سے بری کردیا اگر یہ ثمن پر قبضہ سے پہلے ہو تو سب جائز ہے (ت)

نقایہ و شرح نقایہ میں ہے:

عربی	اردو ترجمہ
صح التصرف فی الثمن والحط عنہ ای صح للمشتری القاء کل	ثمن میں تصرف اور اس کو گھٹانا صحیح ہے یعنی مشتری کے لئے درست ہے کہ وہ بائع سے پورا

[1] فتاوٰی ہندیہ کتاب البیوع الباب السادس عشر نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۱۷۳

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

(Selling) the whole or part of the object from the seller. It is permissible for the seller to waive the entire price or part of it for the buyer.[1]

Or he may drop part of the sold item, and it is correct for the seller to waive the entire or partial price for the buyer. (T)

It is in Radd al-Muhtar: | If he waives the entire price, it is valid in favor of the buyer, and it would be an exoneration for him from the price. End of quote[2] with summarization. | If the seller reduces the entire price, it will be correct in favor of the buyer, and this will be considered as the seller exonerating the buyer from the price. End of quote, summarization (T) | |---|---|

It is in Al-Ashbah wal-Naza'ir and Ghamz al-Uyun: | The wording is his, unlike exoneration, for there is no revocation in it, whether a hindrance to revocation in a gift is found or not.[3] And Allah, Glory be to Him and Most High, knows best. | The words are from Ghamz. Unlike exoneration, because there is no right of revocation in it, whether there is something preventing revocation, such as a gift, or not. And Allah, Glory be to Him and Most High, knows best (T) | |---|---|

Problem 109: From Surnian, District Bareilly, sent by Amir Ali Sahib Qadri, 2 Rajab 1331 AH. When Bakr buys lotas (water pots) from a potter, he says they are being taken for a mosque, so give more. The potter adds two or four extra lotas. And if the name of the mosque was not mentioned, the same number would be given, and if he gives more than the set rate, how is it to take more lotas?

The Answer: If he gives more of his own free will, there is no harm. However, if the potter is a non-believer, one should not ask him for the mosque, as he might consider it a favor upon the mosque and Muslims. And Allah Almighty knows best.

---

[1] Sharh al-Nuqayah [2] Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Chapter on Sold Item and Price, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/167 [3] Ghamz Uyun al-Basa'ir, Third Art, Differences between Gift and Exoneration, Idarat al-Qur'an, Karachi, 2/248

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

विक्रेता द्वारा पूरी या आंशिक वस्तु बेचना। विक्रेता के लिए खरीदार के लिए पूरी कीमत या उसका हिस्सा माफ करना जायज़ है।[1]

या बेची गई वस्तु का कुछ हिस्सा छोड़ दे, और विक्रेता के लिए यह सही है कि वह खरीदार से पूरी या आंशिक कीमत माफ कर दे। (त)

रद-अल-मुह्तार में है: | यदि वह पूरी कीमत माफ कर देता है, तो यह खरीदार के पक्ष में मान्य है, और यह उसके लिए कीमत से मुक्ति होगी। उद्धरण समाप्त[2] संक्षेप में। | यदि विक्रेता ने पूरी कीमत कम कर दी, तो यह खरीदार के हक में सही होगा और इसे विक्रेता की ओर से खरीदार को कीमत से मुक्त करना माना जाएगा। उद्धरण समाप्त, संक्षेप (त) | |---|---|

अल-अशबाह वन-नज़ायर और ग़म्ज़ अल-उयून में है: | शब्द उसके हैं, दोषमुक्ति (इब्रा) के विपरीत, क्योंकि इसमें कोई वापसी नहीं है, चाहे उपहार में वापसी की कोई बाधा पाई जाए या नहीं।[3] और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है। | शब्द ग़म्ज़ के हैं। इब्रा (दोषमुक्ति) के विपरीत क्योंकि इसमें वापस लेने का कोई अधिकार नहीं है, चाहे वापस लेने से रोकने वाली कोई चीज़ हो, जैसे उपहार, या न हो। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है (त) | |---|---|

मसला 109: सुरनियां, जिला बरेली से, प्रेषक अमीर अली साहब कादरी, 2 रजब 1331 हिजरी। बक्र जब कुम्हार से लोटे खरीदता है तो कहता है कि मस्जिद के लिए ले जा रहे हैं, ज़्यादा दे दो। कुम्हार दो-चार लोटे ज़्यादा दे देता है। और अगर मस्जिद का नाम न लिया जाए तब भी उतने ही मिलते, और अगर भाव से ज़्यादा भी दे तो ज़्यादा लोटे लेना कैसा है?

जवाब: अगर वह अपनी खुशी से ज़्यादा दे तो कोई हर्ज नहीं, लेकिन अगर कुम्हार काफ़िर है तो मस्जिद के लिए उससे नहीं माँगना चाहिए क्योंकि वह मस्जिद और मुसलमानों पर इसे उपकार (एहसान) समझेगा। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

---

[1] शरह अल-नुक़ायाह [2] रद-अल-मुह्तार, किताबुल बुयू, मबीअ और समन का अध्याय, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 4/167 [3] ग़म्ज़ उयून अल-बसायर, अल-फन्न अल-सालिस, हिबा और इब्रा के बीच अंतर, इदारत अल-कुरान, कराची, 2/248

पृष्ठ 262/715

المبیع او بعضہ عن البائع وللبائع القاء یا بعض مبیع ساقط کردے اور بائع کیلئے درست ہے کہ
کل الثمن او بعضہ عن المشتری ۱- وہ مشتری سے پورا یا بعض ثمن ساقط کردے۔(ت)

ردالمحتار میں ہے: | لو حط جمیع الثمن صح فی حق المشتری وکان ابراء لہ عن الثمن اہـ ۲ بتلخیص۔ | اگر بائع نے پورا ثمن گھٹا دیا تو مشتری کے حق میں یہ صحیح ہوگا اور یہ بائع کی طرف سے مشتری کو ثمن سے بری کرنا قرار پائیگا اھ تلخیص(ت) | |---|---|

اشباہ والنظائر وغمر العیون میں ہے: | واللفظ لہ بخلاف الابراء فانہ لارجوع فیہ سواء وجد فیہ مانع من موانع الرجوع فی الہبۃ اولا ۳۔ واللہ سبحنہ وتعالی اعلم۔ | لفظ غمز کے ہیں بخلاف ابراء کے کیونکہ اس میں رجوع کا حق نہیں کوئی رجوع سے مانع ہو، جیسے ہبہ یا منع نہ ہو۔ واللہ سبحانہ و تعالی اعلم(ت) | |---|---|

مسئلہ ۱۰۹: از سرنیاں ضلع بریلی مرسلہ امیر علی صاحب قادری ۲ رجب ۱۳۳۱ھ بکر کمہار سے جس وقت لوٹے مول لیتا ہے کہتا ہے مسجد کے لئے لئے جاتے ہیں زیادہ دینا، کمہار دو چار لوٹے پر زیادہ کردیتا ہے، اور اگر مسجد کا نام نہ لیا جائے جب بھی اسی قدر ملتے ، اور اگر بھاؤ سے زیادہ بھی دے تو زیادہ لوٹے کیسا ہے؟

الجواب: اگر وہ اپنی خوشی سے زیادہ دے کوئی حرج نہیں، مگر کمہار اگر کافر ہے تو مسجد کے لئے اس سے مانگنا نہ چاہئے کہ گویا مسجد اور مسلمان پر احسان سمجھے گا۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

---

۱ شرح النقایۃ ۲ ردالمحتار کتاب البیوع فصل فی المبیع والثمن دار احیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۱۶۷ ۳ غمز عیون البصائر الفن الثالث ما افترق فیہ الہبۃ والابراء ادارۃ القرآن کراچی ۲ / ۲۴۸

Volume 17 (17) Fatawa Rizvia

Problem 110: Received from the shop of Hamida-ullah and Abdur Rahman, shoe sellers, Delhi Bazaar Fateh Puri, 9 Rajab al-Murajab 1334 AH. What do the scholars of religion and muftis of the clear Sharia say regarding this: we traders buy goods from craftsmen and deduct one paisa per rupee as a discount from the price. This practice has been announced to the craftsmen before the sale occurs. In this case, is this sale Sharia-compliant/permissible or impermissible? Second scenario: If the seller (craftsman) agrees to the deduction, what is the ruling, and if they are unhappy/ disagree, what is the ruling? Third scenario: The goods purchased after deducting a paisa per rupee are then sold to a dealer by stating the full price (without mentioning the deduction) and profit is taken per rupee. That is, the original deduction is not passed on to the dealer. Is this permissible or impermissible? Explain and be rewarded.

The Answer: In a state of dissatisfaction (of the other party), it is haram (forbidden). Allah Almighty says: "except it be trade by mutual consent among you." [1]. Allah Almighty has stated: But that it be trade among you by mutual consent. (T)

And whether it is with consent or dissatisfaction, it is not permissible to represent the cost of the goods as more than what it actually cost the seller. And Allah Almighty knows best.

Problem 111: From Rampur State, Madrasa Matla-ul-Uloom, sent by Muhammad Imam-ud-Din Sahib, 15 Safar 1336 AH. Is it correct to increase the price in a sale based on the deferred payment period? If so, does it vary according to the prices and the time periods? If so, what is the ruling?

The Answer: It is correct, though disliked (makruh), and any variation depends on the mutual consent of the contracting parties. And Allah Almighty knows best.

Problem 112: From city mohalla behind Kotwali, sent by Sheikh Maqbool Ahmad son of Sheikh Ali Jan. I sent goods from Calcutta to a dealer (worth 1 Re). It reached him, but due to an oversight, the entry for the payment was missed in our account books. After nearly two years, that dealer told us: "A surplus amount of nearly (1 Re) belonging to you has appeared in our accounts, and this amount is not credited in your books. Now, God knows if it was your mistake or ours. It is better that you take the money from us, but do not bring it into your personal use/capital, rather spend it in God's path." Accordingly, from the dealer we...

[1] The Holy Quran 4/29 Page 263 of 715

जिल्द 17 (17) फ़तावा रज़विया

मसला 110: हमीद-उल्लाह और अब्दुर रहमान की दुकान, जूता विक्रेता, दिल्ली बाज़ार फतेह पुरी से प्राप्त, 9 रजब अल-मुराजब 1334 हिजरी। दीन के उलेमा और स्पष्ट शरीयत के मुफ्ती क्या फरमाते हैं कि हम व्यापारी कारीगरों से जो माल खरीदते हैं, उसकी कीमत से प्रति रुपया एक पैसा काटकर भुगतान करते हैं और इस बात की घोषणा कारीगरों को बिक्री से पहले कर दी गई है। इस स्थिति में यह बिक्री शरीयत के अनुसार जायज़ है या नाज़ायज़? दूसरी सूरत: यदि विक्रेता (कारीगर) कटौती से सहमत है तो क्या हुक्म है और यदि वह असंतुष्ट है तो क्या हुक्म है? तीसरी सूरत: प्रति रुपया एक पैसा काटकर खरीदा गया माल किसी अन्य व्यापारी को पूरे एक रुपये की कीमत बताकर बेचा जाता है और प्रति रुपया लाभ लिया जाता है, यानी व्यापारी को कटौती का लाभ नहीं दिया जाता। क्या यह बात जायज़ है या नाज़ायज़? बयान फ़रमाएं सवाब पायें।

अल-जवाब (उत्तर): नाराजगी की स्थिति में यह हराम (वर्जित) है। अल्लाह तआला ने फरमाया: "सिवाय इसके कि तुम्हारे बीच आपसी सहमति से व्यापार हो" [1]। अल्लाह तआला ने इर्शाद फरमाया: मगर यह कि वह तुम्हारे दरमियान आपसी रजामंदी से व्यापार हो। (त)

और चाहे रजामंदी से हो या नाराजगी से, माल जितने का पड़ा है उससे अधिक बताना जायज़ नहीं है। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला 111: रियासत रामपुर, मदरसा मतला-उल-उलूम से, प्रेषक मुहम्मद इमाम-उद-दीन साहब, 15 सफर 1336 हिजरी। क्या समय (उधार) के अनुसार बिक्री में कीमत बढ़ाना सही है? यदि हाँ, तो क्या यह कीमतों और समय के अनुसार अलग-अलग है? यदि हाँ, तो क्या है?

अल-जवाब (उत्तर): मकरूह (नापसंदीदा) होने के साथ सही है, और अंतर अनुबंध करने वाले पक्षों की आपसी सहमति पर निर्भर करता है। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला 112: शहर मोहल्ला कोतवाली के पीछे से, प्रेषक शेख मक़बूल अहमद साहब सुपुत्र शेख अली जान साहब। मैंने कलकत्ता से एक व्यापारी को माल (1 रुपया मूल्य) भेजा। माल उस तक पहुँच गया लेकिन भूलवश हमारे यहाँ खातों में दर्ज होने से रह गया। करीब दो साल बाद उस व्यापारी ने हमसे अब कहा कि करीब (1 रुपये) की एक अतिरिक्त राशि आपकी हमारे खाते से निकली है और आपके यहाँ यह राशि जमा नहीं है। अब खुदा जाने कि यह आपकी गलती है या हमारी, इससे बेहतर

है कि आप हमसे रुपया ले लें लेकिन इसे अपने निजी उपयोग/पूंजी में न लाएं, बल्कि खुदा की राह में खर्च करें। चुनांचे व्यापारी से हमने...

[1] अल-क़ुरआन अल-करीम 4/29 पृष्ठ 263/715

مسئلہ ۱۱۰: آمدہ از دوکان حمیدہ اللہ و عبد الرحمن جفت فروش دہلی بازار فتح پوری ۹ رجب المرجب ۱۳۳۴ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین کہ ہم لوگ تاجر کاریگروں سے جو مال خریدتے ہیں ایک پیسہ روپیہ کٹوتی کاٹ کر مال کی قیمت دیتے ہیں اور اس بات کا اعلان کاریگروں کو بیع سے پہلے کر دیا گیا ہے اس صورت میں یہ بیع شرعاً جائز ہے یا نا جائز؟ صورت ثانی اگر بائع کٹوتی سے راضی ہو تو کیا حکم اور اگر ناراض ہو تو کیا حکم؟ صورت ثالث یہ ہے کہ پیسہ روپیہ کاٹ کر جو مال خرید کیا جاتا ہے بیوپاری کو پورا ایک روپیہ کا بتا کر نفع فی روپیہ لیا جاتا ہے یعنی بیوپاری کو کٹوتی مجرا نہیں دی جاتی، یہ امر جائز ہے یا نا جائز؟ بینوا توجروا۔

الجواب: ناراضی کی حالت میں حرام ہے، قال اللہ تعالیٰ "إِلَّا أَنْ تَكُونَ تِجَارَةً عَنْ تَرَاضٍ مِنْكُمْ" [1]۔ اللہ تعالیٰ نے ارشاد فرمایا: مگر یہ کہ ہو وہ تمہارے درمیان تجارت باہمی رضامندی سے۔ (ت)

اور رضا سے ہو یا ناراضی سے ، مال جتنے کو اسے پڑا اس سے زیادہ کو بتانا جائز نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم مسئلہ ۱۱۱: از ریاست رام پور مدرسہ مطلع العلوم مرسلہ محمد امام الدین صاحب ۱۵ صفر ۱۳۳۶ھ بیع میں زیادت ثمن بحسب آجال درست ہے یا نہیں؟ اگر ہے تو بحسب اثمان و آجال مختلف ہے یا نہیں؟ اگر ہے تو کیا ہے؟ الجواب: درست ہے مع الکراہۃ اور اختلاف تراضی عاقدین پر۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ مسئلہ ۱۱۲: از شہر محلہ عقب کوتوالی مرسلہ شیخ مقبول احمد صاحب پسر شیخ علی جان صاحب کلکتہ سے میں نے ایک بیوپاری کو (مال ص ۱) مال روانہ کیا اور وہ اس کے پاس پہنچا لیکن روپیہ بھول سے ہمارے یہاں کھاتے میں درج کرنے سے رہ گیا قریب دو سال کے اس بیوپاری نے ہم سے اب کہا کہ قریب (مال ص ۱) کے ایک رقم فاضل تمہاری ہمارے

کھاتے سے برآمد ہوئی ہے اور تمہارے یہاں یہ رقم جمع نہیں، اب خدا معلوم کہ تمہاری غلطی ہے یا ہماری، اس سے بہتر کہ روپیہ ہم سے لے مگر اس کو اپنے مصرف میں نہ لانا خدا کی راہ میں صرف کرنا چنانچہ بیوپاری سے ہم نے

[1] القرآن الکریم ۴ / ۲۹ Page 263 of 715

...promised that we would give this amount in charity. The merchant took an oath from us that if you do not give this amount in charity, it will remain a burden upon you.

Answer: If it is not known whether this amount is rightfully due, then it is absolutely not permissible to use it for oneself; it should all be given in charity. However, if it is known that this is our money that was due from him but was missed in recording, then it is his property, and using it for oneself would not be forbidden. But since a promise has been made for the sake of Allah, then turning back from it would be a cause of severe misfortune.

Allah Almighty says: "So He penalized them with hypocrisy in their hearts until the Day they meet Him, because they broke their word to Allah and because they used to lie." 1 - And Allah Almighty knows best.

Allah the Almighty said: So Allah placed hypocrisy in their hearts as a punishment until the day they meet Him, because they violated the promise they made to Allah and because they used to lie. And Allah Almighty knows best (T).

Problem 113: What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid sold a piece of land to Bakr for four hundred rupees. Zaid took one hundred and fifty rupees as an earnest money deposit from Bakr and issued a receipt, promising that the remaining amount would be paid at the time of registration of the document, and he would have the sale deed verified within a year. The question is whether, according to Sharia, the sale is concluded and completed and the remaining price is a debt upon Bakr, or is the sale void (fasid) due to the term of payment of the price being unknown? Is stipulating a period for payment in any case a cause for voiding the sale, or is it only a cause for voiding if the condition for a period is included within the core contract? In the court's deliberation, two narrations from the books Bahr-ul-Ra'iq and Fatawa Khairiyyah regarding the invalidity of the sale due to the ignorance of the term of payment have been recorded. They are as follows; in Bahr-ul-Ra'iq:

[Arabic text] Valid for an immediate price and for a known deferred payment, restricted by knowledge of the term, because ignorance of it leads to dispute.	**Sale is valid in exchange for an immediate price and with a known term. The author added the restriction of being "known" with the "term" because ignorance of the term is a cause for dispute.**

1 Al-Quran al-Kareem 9/77 Page 264 of 715

फ़तावा रिज़विया (जिल्द 17)

...वादा कर लिया कि यह रक़म हम खैरात (दान) कर देंगे, व्यापारी ने हमसे इस बात की कसम ली है कि अगर इस रक़म की खैरात नहीं करोगे तो तुम्हारे ऊपर बोझ रहेगा।

जवाब: अगर इस रक़म का वाजिब (उचित) होना मालूम नहीं है, तो इसे अपने इस्तेमाल में लाना हरगिज़ जायज़ नहीं है, सब खैरात कर दिया जाए। और अगर मालूम है कि हमारी यह रक़म उस पर वाजिब थी लेकिन लिखने से रह गई थी, तो अगर वह उसका माल है तो अपने इस्तेमाल में लाना हराम न होगा, लेकिन जब अल्लाह के लिए वादा कर चुका है, तो उससे फिरना सख़्त शामत (दुर्भाग्य) का कारण है।

अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "अतः उसने उनके दिलों में उस दिन तक के लिए निफ़ाक़ (पाखंड) डाल दिया जब वे उससे मिलेंगे, इस कारण कि उन्होंने अल्लाह से जो वादा किया था उसकी खिलाफ़वर्ज़ी की और इस कारण कि वे झूठ बोलते थे।" 1 - और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

अल्लाह तआला ने फ़रमाया: तो अल्लाह तआला ने उनकी सज़ा में उनके दिलों में निफ़ाक़ रख दिया उस दिन तक जब वे उससे मिलेंगे, इस सबब से कि उन्होंने उस वादे की खिलाफ़वर्ज़ी की जो उन्होंने अल्लाह तआला से किया था और इस सबब से कि वे झूठ बोलते थे। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 113: उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि ज़ैद ने बक्र के हाथ एक ज़मीन चार सौ रुपये की क़ीमत पर बेची और ज़ैद ने बक्र से एक सौ पचास रुपये बयाने (अग्रिम राशि) के तौर पर लिए और रसीद लिखकर दी, और वादा किया कि बाक़ी रक़म रजिस्ट्री के समय दी जाएगी और मैं एक साल के भीतर बैनामा (बिक्री पत्र) की तस्दीक़ करा दूँगा। सवाल यह है कि क्या शरीयत के अनुसार बिक्री संपन्न और पूर्ण हो गई और बाक़ी क़ीमत बक्र के ज़िम्मे क़र्ज़ रही, या क़ीमत की अदायगी की अवधि अज्ञात होने के कारण बिक्री फासिद (अमान्य) हो गई? और क्या अदायगी की मोहलत तय करना हर हाल में बिक्री को फासिद करता है या सिर्फ़ अनुबंध के समय मोहलत की शर्त होना फासिद करता है? अदालत की तजवीज़ में 'बहर-उर-राईक़' और 'फ़तावा ख़ैरिया' की दो रिवायतें बिक्री के फासिद होने के बारे में अदायगी की अवधि की जहालत (अज्ञानता) के संबंध में दर्ज हैं, वे ये हैं। 'बहर-उर-राईक़' में है:

[अरबी पाठ] नक़द क़ीमत और एक मालूम मुद्दत के बदले बिक्री सही है, मुद्दत के ज्ञान की शर्त के साथ, क्योंकि इसकी जहालत झगड़े की ओर ले जाती है।

बिक्री नक़द क़ीमत के बदले और मालूम मुद्दत के साथ सही है। लेखक ने मुद्दत के साथ 'मालूम' होने की शर्त लगाई है क्योंकि मुद्दत की जहालत झगड़े का कारण है।

1 अल-क़ुरआन अल-करीम 9/77 पेज 264 / 715

وعدہ کرلیا کہ یہ رقم ہم خیرات کردیں گے بیوپاری نے ہم سے قسم اس امر کی لی ہے کہ اگر اس رقم کی خیرات نہ کروگے تو تمہارے اوپر بوجھ رہے گا۔

الجواب: اگر اس رقم کا واجبی ہونا معلوم نہیں جب تواس کا اپنے تصرف میں لانا ہر گز جائز نہیں سب خیرات کر دیا جائے اور اگر معلوم ہے کہ ہماری یہ رقم اس پر آئی تھی لکھنے سے رہ گئی تھی تو اگر وہ اس کا مال ہے اور اپنے صرف میں لانا حرام نہ ہوگا مگر جب اللہ کے لئے وعدہ کرچکا ہے تو اس سے پھر نا سخت شامت کا موجب ہے۔

قال اللہ تعالٰی" فَاَعْقَبَہُمْ نِفَاقًا فِیْ قُلُوْبِہِمْ اِلٰی یَوْمِ یَلْقَوْنَہٗ بِمَآ اَخْلَفُوا اللہَ مَا وَعَدُوْہُ وَ بِمَا کَانُوْا یَکْذِبُوْنَ" 1- واللہ تعالٰی اعلم۔

اللہ تعالٰی نے فرمایا: تو اللہ تعالٰی نے ان کی سزا میں ان کے دلوں میں نفاق رکھ دیا اس دن تک جب وہ اس کو ملیں گے اس سبب سے کہ انہوں نے خلاف ورزی کی اس وعدہ کی جو انہوں نے اللہ تعالٰی سے کیا تھا اور اس سبب سے کہ وہ جھوٹ بولتے تھے۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ ۱۱۳: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے بکر کے ہاتھ ایک اراضی بقیمت مبلغ چار سو روپے کی فروخت کی اور ایک سو پچاس روپیہ کی بابت بیعانہ زید نے بکر سے لے کر رسید تحریر کردی اور وعدہ کیا کہ بقیہ روپیہ وقت رجسٹری دستاویز لے کر بیعنامہ اندر مدت ایک سال کے تصدیق کرادوں گا، سوال یہ ہے کہ آیا شرعاً بیع منعقد اور مختتم ہوگی اور بقیہ زر ثمن بکر کے ذمہ دین رہا یا بیع فاسد ہوئی بوجہ مجہول غیر معلوم ہونے مدت ادائے زر ثمن کے اور قرار داد مہلت ادائے ثمن بہر حال مفسد بیع ہے یا فقط صلب عقد میں مہلت کا شرط ہونا مفسد

ہوتا ہے اور تجویز عدالت میں دور وایتیں کتاب بحر الرائق وفتاوی خیریہ کی بابت فاسد ہونے بیع کے بجھالت مدت ادائے ثمن کے درج ہوئی ہیں وہ یہ ہیں، بحر الرائق میں ہے:

صح بشمن حال و باجل معلوم قید بعلم الاجل لان جھالتہ تفضی الی النزاع فالبائع

بیع ثمن حالی کے بدلے اور میعاد معلوم کے ساتھ صحیح ہے ماتن نے اجل کے ساتھ معلوم ہونے کی قید لگائی اس لئے کہ اجل کی جہالت جھگڑے کا

1 القرآن الکریم ۹ /۷۷ Page 264 of 715

Volume 17 Fatawa Razawiya

(Arabic text 1): [He] demands it within a short period and the buyer refuses, so it becomes void. - 1 (Urdu text 1): It becomes a cause; for instance, the seller demands the price within a short period and the buyer refuses, thus corruption/voidness arises. (T)

In Fatawa Khayriyyah, it is mentioned: (Arabic text 2): A question was asked about a man who sold a camel to another for thirty-two 'ghirsh' (a coin equivalent to two annas) deferred until three installments/options, each installment being one-third of the price. The first installment period arrived, and he paid him one-third. Then [the seller] demanded the remaining two-thirds before the arrival of the next two installments, claiming that the mentioned deferment is invalid and that the entire price is due immediately. What is the ruling on that? (Answer) The mentioned sale is void. - 2 (Urdu text 2): It was asked about a person who sold a camel to another for thirty-two "ghirsh" (a coin equivalent to two annas) and fixed a term over three options/installments, such that in each option one-third of the price would be paid. Upon the start of the first option, he gave one-third of the price to the seller. The seller then demands the remaining two-thirds before the start of the next two options, while claiming that the said term is not correct and in this sale the entire price becomes due immediately. What is the ruling in this case? (The answer was) The mentioned sale is void. (T)

And what is the answer to the court's proposal, which is recorded as follows according to necessity: Court proposal text as per necessity: According to Shariah rules, ignorance of the term for payment of the price leads to the corruption/ voidness of the sale. This is because the plaintiff wrote in the lawsuit that the defendant, after taking the earnest money, promised that I would certify the sale deed with the remaining money within one year at the time of registration. Thus, the promise to pay the remaining price during the year, as established by the plaintiff's claim, is not fixed, specified, or restricted by a particular date. Its application is generally equal from the beginning of the promise to the end of the last part of the year's day, which can involve a dispute between the parties, so this sale is void. Only.

1 Al-Bahr al-Ra'iq, Kitab al-Bay', HM Saeed Company, Karachi, 5/29 2 Fatawa Khayriyyah, Kitab al-Buyu', Bab al-Bay' al-Fasid, Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/238

जिल्द सत्रह (17) फ़तावा रज़विया

(अरबी पाठ 1): वह थोड़े समय के भीतर इसकी माँग करता है और खरीदार इनकार कर देता है, तो यह अमान्य (फ़ासिद) हो जाता है। - 1 (उर्दू पाठ 1): यह कारण बनता है; जैसे कि विक्रेता थोड़े समय में कीमत की माँग करेगा और खरीदार इससे इनकार करेगा तो इस तरह सौदे में खराबी (अमान्यता) आएगी। (त)

फ़तावा खैरिया में है: (अरबी पाठ 2): एक व्यक्ति के बारे में पूछा गया जिसने दूसरे को बत्तीस 'ग़िर्श' (दो आने के मूल्य का एक सिक्का) के लिए एक ऊँट बेचा, जिसकी अदायगी तीन किस्तों (खियारों) में तय थी, प्रत्येक किस्त कीमत का एक तिहाई थी। पहली किस्त का समय आया और उसने उसे एक तिहाई अदा कर दिया। फिर (विक्रेता) ने अगली दो किस्तों के आने से पहले ही बाकी दो तिहाई कीमत की माँग की, यह दावा करते हुए कि उक्त देरी गलत है और पूरी कीमत तुरंत देय है। इस पर क्या निर्णय है? (उत्तर) उक्त बिक्री अमान्य है। - 2 (उर्दू पाठ 2): एक ऐसे व्यक्ति के बारे में पूछा गया जिसने दूसरे के हाथ बत्तीस "ग़िर्श" (दो आने के बराबर एक सिक्का) के बदले ऊँट बेचा और उस पर तीन किस्तों (खियारों) तक समय तय किया, हर किस्त में कीमत का एक तिहाई देगा। अतः एक किस्त के शुरू होने पर उसने विक्रेता को कीमत का एक तिहाई दे दिया और विक्रेता दूसरी दो किस्तों के शुरू होने से पहले ही बाकी दो तिहाई कीमत की माँग करता है, जबकि वह दावा करता है कि उक्त समय सही नहीं है और इस बिक्री में पूरी कीमत तुरंत लाज़िम होती है। तो इस स्थिति में क्या हुक्म है? (तो उत्तर दिया गया कि) उक्त बिक्री अमान्य (फ़ासिद) है। (त)

और अदालत के उस प्रस्ताव का क्या उत्तर है जो आवश्यकतानुसार नीचे दिया गया है: आवश्यकतानुसार अदालत के प्रस्ताव का पाठ: शरई नियमों के अनुसार, कीमत की अदायगी की अवधि की अनिश्चितता बिक्री को अमान्य (फ़ासिद) कर देती है। इसलिए क्योंकि वादी ने दावे में लिखा है कि प्रतिवादी ने बयाना लेकर यह वादा किया कि मैं रजिस्ट्री दस्तावेज़ के समय एक साल के भीतर बाकी पैसे लेकर बिक्री विलेख (बैनामा) की पुष्टि कर दूँगा। अतः बाकी कीमत की अदायगी का वादा जो वादी के दावे के अनुसार साल के दौरान तय हुआ, वह किसी निश्चित या विशेष तिथि से बंधा नहीं है। इसका प्रयोग सामान्य रूप से वादे की शुरुआत से लेकर साल के अंतिम दिन के अंतिम भाग तक समान है, जिसमें दोनों पक्षों के बीच विवाद हो सकता है, इसलिए यह बिक्री अमान्य है। केवल।

1 अल-बहर अर-राइक, किताब अल-बैअ, एचएम सईद कंपनी, कराची, 5/29 2 फ़तावा खैरिया, किताब अल-ब्यूअ, बाब अल-बैअ अल-फ़ासिद, दारुल मारिफा, बेरूत, 1/238

یطالبه في مدة قریبة والمشتری یأباها فیفسد - 1 | سبب بنتی ہے چنانچہ بائع قریبی مدت میں ثمن کا مطالبہ کرے گا اور مشتری اس سے انکار کریگا تو اس طرح فساد آئے گا۔ (ت)

فتاوی خیریہ میں ہے : سئل في رجل باع آخر جملا باثنین و ثلاثین غرشا مؤجلة علیه الی ثلث خیارات کل خیار ثلث الثمن فطلع الاخیار ودفع له ثلثه ویطالبه بثلثیه قبل طلوع الخیارین مدعیا ان الاجل المذکور غیر صحیح و انه یستوجب کل الثمن عاجلا فالحکم في ذلك (اجاب) البیع المذکور فاسد - 2 | ایک ایسے شخص کے بارے میں کیا گیا جس نے دوسرے کے ہاتھ بتیس "غرش" (دو آنے کے برابر ایک سکہ) کے عوض اونٹ بیچا اور اس پر تین خیاروں تک اجل مقرر کی ہر خیار میں تہائی ثمن دے گا پس ایک خیار کے طلوع ہونے پر اس نے بائع کو ثمن کا ایک تہائی دے دیا اور بائع دوسرے دو خیاروں کے طلوع سے قبل ہی باقی دو تہائی ثمن کا مطالبہ کرتا ہے درانحالیکہ وہ اس بات کا دعوی کرتا ہے کہ اجل مذکور درست نہیں اور اس بیع میں تمام ثمن معجل طور پر لازم ہوتا ہے تو اس صورت میں کیا حکم ہے (تو جواب دیا کہ) بیع مذکور فاسد ہے۔ (ت)

اور تجویز عدالت جو بقدر ضرورت درج ذیل ہے اس کا کیا جواب ہے : عبارت تجویز عدالت بقدر ضرورت بقواعد شرعیہ جہالت اجل ثمن موجب فساد بیع ہے اس لئے کہ مدعی نے دعوی میں تحریر کیا ہے کہ مدعاعلیہ نے بیعانہ لے کر یہ وعدہ کیا کہ بقیہ روپیہ وقت رجسٹری دستاویز لے کر بیعنامہ اندر مدت ایک سال کے تصدیق کردوں گا ، پس وعدہ ادائے ثمن بقیہ کا جو درمیان سال کے حسب دعوی مدعی قرار داد ہوا وہ بقید تاریخ معین مخصوص و مقید نہیں ہے اس کا اطلاق عموماً علی السویہ آغاز وعدہ سے تا اختتام جزو آخر روز سال مابین فریقین متضمن نزاع ہو سکتا ہے تو یہ بیع فاسد ہے فقط

1 البحر الرائق کتاب البیع ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲۹/۵ 2 فتاوی خیریہ کتاب البیوع باب البیع الفاسد دارالمعرفة بیروت ۱/ ۲۳۸

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

The Answer: In the situation inquired about, the sale is complete and valid, and the remaining price is obligatory upon the buyer. This agreement for a delay in paying the price is in no way a corrupter of the sale, neither after the completion of the contract, even if we say it is annexed to the original contract, nor in the core of the contract itself, as this is a fixed term (ajal mu'ayyan) and a sale with a fixed term is valid. The same passage from Al-Bahr al-Ra'iq cited as a recommendation is sufficient: "A sale is valid with a spot price and with a known term." Considering it an unknown term has no basis for validity at all; conventionally and linguistically, "within a year" and "up to one year" yield the same result, by which the term is limited to one year, and a year is a specific thing, not unknown. In the same Al-Bahr al-Ra'iq, in the same discussion, it is stated:

In Al-Siraj al-Wahhaj, terms are of two types: known and unknown. Known terms are years, months, and days, etc.	**It is mentioned in Al-Siraj al-Wahhaj that terms are of two types: known and unknown. Known terms are years, months, and days, etc. (T)**

The buyer's option to pay from the start of the promise until the end of the year is not harmful; rather, it is the very purpose of deferment, for the term is for his welfare, as in Al-Hidayah, etc. (as it is in Al-Hidayah, etc. - T). And if the purpose was that its application should include all parts [of the year] so that he could demand it at every point, leading to dispute, then this is purely void. Since he has permitted the buyer to pay within a year, he has no right of demand as long as it is within the year, for it falls under that very permission of delay. "And the deferment has become binding from his side, so he cannot demand it." (Verily, the term has become binding from his side; now he cannot demand the price. - T). Yes, when it goes beyond the year, at that time he will have the right of demand and now the buyer can have no excuse; then where is the dispute? And it is clear from the cited passage of Al-Bahr al-Ra'iq itself that the term which corrupts [the sale] is only that which leads to dispute. The text from Khayriyyah has no relevance here, as in it, the sale is up to three options (khayar), and an option is not a fixed thing. Unlike a year. And Allah Almighty knows best.

Issue 112: From Ardah Nagla, Post Office Pachnera, District Agra, sent by Sadiq Ali Khan, 28 Shawwal 1336 AH. A person sells his grain at a price lower than the market

rate on the condition that he will take the price after some time, for example, the rate...

1. Al-Bahr al-Ra'iq, Kitab al-Bay', H.M. Saeed Company, Karachi, 5/297
2. Al-Bahr al-Ra'iq, Kitab al-Bay', H.M. Saeed Company, Karachi, 5/280

जवाब: पूछी गई स्थिति में बिक्री पूर्ण और वैध है और शेष मूल्य खरीदार के ज़िम्मे अनिवार्य है। भुगतान में देरी का यह समझौता किसी भी तरह से बिक्री को खराब करने वाला नहीं है, न ही अनुबंध पूरा होने के बाद, भले ही हम कहें कि यह मूल अनुबंध से जुड़ा है, और न ही अनुबंध के मूल में, क्योंकि यह एक निश्चित अवधि (अजल मुअय्यन) है और एक निश्चित अवधि के साथ बिक्री वैध है। इसके लिए बहरुल रैक से उद्धृत वही इबारत पर्याप्त है: "बिक्री नकद मूल्य के साथ और एक ज्ञात अवधि के साथ वैध है।" इसे अज्ञात अवधि समझना वैधता का कोई आधार नहीं रखता; भाषाई और पारंपरिक रूप से हर तरह से "एक साल के भीतर" और "एक साल तक" का परिणाम एक ही है, जिससे अवधि एक साल तक सीमित हो जाती है और साल एक निश्चित चीज़ है, अज्ञात नहीं। उसी बहरुल रैक में, इसी चर्चा में है:

अस-सिराजुल वहाज में उल्लेख है कि अवधियाँ दो प्रकार की होती हैं: ज्ञात और अज्ञात। ज्ञात अवधियाँ वर्ष, महीने और दिन आदि हैं।

अस-सिराजुल वहाज में उल्लेख है कि अवधियाँ दो प्रकार की होती हैं: ज्ञात और अज्ञात। ज्ञात अवधियाँ वर्ष, महीने और दिन आदि हैं। (त)

वादे की शुरुआत से साल के अंत तक खरीदार के पास भुगतान करने का विकल्प होना हानिकारक नहीं है, बल्कि यह विलंब (ता'जील) का ही उद्देश्य है, क्योंकि अवधि उसकी सुविधा के लिए है जैसा कि अल-हिदाया आदि में है (जैसा कि अल-हिदाया आदि में है - त)। और अगर यह उद्देश्य होता कि इसका लागू होना उन सभी हिस्सों को शामिल करता है ताकि वह हर हिस्से में मांग सके और इससे विवाद पैदा होता, तो यह पूरी तरह से शून्य होता। जब उसने खरीदार को साल के भीतर भुगतान की अनुमति दे दी है, तो जब तक साल के भीतर है, उसे मांग करने का अधिकार नहीं है क्योंकि वह उसी देरी की अनुमति के अंतर्गत आता है। "और विलंब उसकी ओर से बाध्यकारी हो गया है, इसलिए वह इसकी मांग करने में सक्षम नहीं है।" (वास्तव में, उसकी ओर से अवधि अनिवार्य हो गई है; अब वह मूल्य की मांग नहीं कर सकता। - त)। हाँ, जब साल से बाहर जाएगा, उस समय उसे मांग करने का अधिकार होगा और अब खरीदार के पास कोई बहाना नहीं हो सकता; फिर विवाद कहाँ? और बहरुल रैक से उद्धृत इबारत से ही स्पष्ट है कि केवल वही अवधि खराब करने वाली है जो विवाद का कारण बने। खैरिय्याह की इबारत का यहाँ से कोई संबंध नहीं है क्योंकि उसमें तीन खियार (विकल्प)

तक बिक्री है और खियार कोई निश्चित चीज़ नहीं है। साल के विपरीत। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 112: अरदह नगला, डाकखाना पचनेरा, ज़िला आगरा से, सादिक अली खान द्वारा प्रेषित, 28 शव्वाल 1336 हिजरी। एक व्यक्ति अपना अनाज बाज़ार भाव से कम पर इस शर्त पर देता है कि कीमत कुछ समय बाद लूँगा, उदाहरण के लिए भाव...

1. अल-बहरुल रैक, किताबुल बय', एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 5/297
2. अल-बहरुल रैक, किताबुल बय', एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 5/280

पृष्ठ 266 का 715

الجواب: صورت مستفسرہ میں بیع تام و صحیح ہے اور بقیہ ثمن ذمہ مشتری واجب۔ یہ قرارداد مہلت ادائے ثمن کسی طرح مفسد بیع نہیں، نہ بعد تمامِ عقد ،وان قلنا بالتحاقه بأصل العقد (اگرچہ ہم اس کے اصل عقد کے ساتھ لاحق ہونے کا قول کریں۔ ت) نہ نفس صلبِ عقد میں کہ یہ اجل معین ہے اور بیع اجل معین کے ساتھ صحیح ہے اس کے لئے خود وہی عبارت بحر الرائق منقولہ تجویز کافی ہے کہ صح بثمن حال و بأجل معلوم (بیع درست ہے ثمن حالی کے ساتھ اور معلوم میعاد کے ساتھ ۔ ت) اسے اجل مجہول سمجھنا اصلاً وجہِ صحت نہیں رکھتا عرفاً لغیۃً ہر طرح سال کے اندر اور ایک سال تک کا حاصل ایک ہے جس سے اجل کی تحدید ایک سال سے ہوتی ہے اور سال شے معین ہے نہ کہ مجہول ، اسی بحر الرائق میں اسی بحث میں ہے:

وفی السراج الوهاج الآجال علی ضربین معلومة و مجهولة فالمعلومة السنون والشهور والایام الخ۔

السراج الوہاج میں مذکور ہے کہ میعادیں دو طرح کی ہیں، معلوم اور مجہول۔ معلوم میعاد دیں سال، مہینے اور دن ہیں الخ (ت)

آغازِ وعدہ سے اختتامِ سال تک مشتری کو اختیار ادا ہو نا مضر نہیں بلکہ عین مقصودِ تا جیل ہے کہ اجل اسی کے رفاہ کے لئے ہے کما فی الھدایۃ وغیرہ (جیسا کہ ہدایہ وغیرہ میں ہے۔ت) اور اگر یہ مقصود کہ اس کا اطلاق ان تمام اجزاء کو شامل تو بالغ ہر جز میں طلب کرسکتا ہے اور یہ مفضی الی النزاع ہے تو یہ محض باطل ہے جب وہ مشتری کو سال کے اندر ادائیگی اجازت کر چکا تو جب تک سال کے اندر ہے اسے اختیارِ مطالبہ نہیں کہ وہ اسی اجازتِ تاخیر کے اندر داخل ہے وقد لزم التأجیل من جهته فلا یقدر ان یطالبه (تحقیق اس کی طرف سے میعاد لازم ہو چکی ہے اب وہ ثمن کا مطالبہ نہیں کر سکتا۔ ت) ہاں جب سال سے باہر جائے اس وقت اسے اختیارِ مطالبہ

ہوگا اور اب مشتری کو کوئی عذر نہیں ہو سکتا پھر نزاع کہاں، اور خود عبارت بحر الرائق منقولہ تجویز سے ظاہر کہ اجل وہی مفسد ہے جو مفضی نزاع ہو عبارتِ خیریہ کو یہاں سے کوئی تعلق نہیں کہ اس میں تین خیار تک بیع ہے اور خیار کوئی شے معین نہیں۔ بخلاف سال۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۱۱۲: ازاردہ نگلہ ڈاک خانہ پچھنیرہ ضلع آگرہ مرسلہ صادق علی خان ۲۸ شوال ۱۳۳۶ھ ایک شخص غلہ اپنا نرخ بازار سے کم اس شرط پر دیتا ہے کہ قیمت کچھ عرصہ بعد لوں گا مثلاً بھاؤ...

1. البحر الرائق کتاب البیع ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲۹۷/۵
2. البحر الرائق کتاب البیع ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲۸۰/۵

Volume 17 (17) Fatawa Razawiyya

Question: The market rate is 20 Nisar, but he gives it to people at the rate of 16 Nisar. Is there interest (Riba) involved in giving this loan? Is it permissible or impermissible?

The Answer: This is not interest, nor is there any harm in it as long as there is consent from the buyer, and the 'ajal' (i.e., the deadline for payment) is fixed.

Allah the Almighty said: "...unless it be trade by mutual consent among you."[1] — Allah the Almighty said: But let there be business between you by mutual consent. (T)

In short, this sale is without any dislike (Karahat); however, it is against priority (Khilaf-e-Awlawiyat). It is stated in Fath al-Qadir:

"There is no dislike, [even if it is] against the ideal, because a portion of the price corresponds to the time period. And Allah Almighty knows best."[2] There is no dislike in it, however, it is against what is better because a part of the price is in exchange for the time period. And Allah Almighty knows best. (T)

---

[1] Al-Quran al-Karim 4/29 [2] Fath al-Qadir, Book of Suretyship, Maktaba Nooriya Razawiyya, Sukkur, 6/324

जिल्द सत्रह (१७) फ़तावा रज़विया

सवाल: बाज़ार का भाव २० निसार है और वह लोगों को १६ निसार के हिसाब से देता है, क्या इस क़र्ज़ (उधार) देने में सूद (ब्याज) तो नहीं होता? यह जायज़ है या ना-जायज़?

अल-जवाब (उत्तर): यह सूद नहीं है, और न ही इसमें कोई हर्ज (दिक्क़त) है जबकि खरीदार की रज़ामंदी हो, और अजल यानी अदायगी (भुगतान) की मुद्दत (समय सीमा) तय कर दी जाए।

अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "...मगर यह कि वह तुम्हारे बीच तुम्हारी आपसी रज़ामंदी से व्यापार हो।"[1] — अल्लाह तआला ने फ़रमाया: मगर यह कि वह तुम्हारे दरमियान तुम्हारी आपसी रज़ामंदी से तिजारत हो। (त)

संक्षेप में यह कि यह बिक्री (बैय) बिना किसी कराहत (नापसंदगी) के है, हाँ यह खिलाफ़-ए-औलवियत (प्राथमिकता के विपरीत) है। फ़तह अल-क़दीर में है:

"इसमें कोई कराहत नहीं है, हालांकि यह खिलाफ़-ए-औला (बेहतर के खिलाफ़) है क्योंकि भुगतान की अवधि के मुक़ाबले क़ीमत का एक हिस्सा होता है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।"[2] इसमें कराहत नहीं है, हालांकि यह खिलाफ़-ए-औली है क्योंकि अजल (अवधि) के मुक़ाबले क़ीमत (थमन) का एक हिस्सा है और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

---

[1] अल-कुरान अल-करीम ४/२९ [2] फ़तह अल-क़दीर, किताबुल कफ़ाला, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, ६/३२४

पेज २६७ ऑफ़ ७१५

بازاری ۲۰ نثار ہے اور لوگوں کو ۱۶ نثار کے حساب سے دیتا ہے اس قرض دینے میں سود تو نہیں ہوتا؟ جائز ہے یا نا جائز؟

الجواب: یہ سود نہیں، نہ اس میں کوئی حرج جبکہ رضائے مشتری ہو، اور اجل یعنی میعادِ ادا معین کردی جائے،

قال اللہ تعالٰی "اِلَّآ اَنْ تَكُوْنَ تِجَارَةً عَنْ تَرَاضٍ مِّنْكُمْ"[1] اللہ تعالٰی نے فرمایا: مگر یہ کہ ہو وہ تمہارے درمیان تجارت تمہاری باہمی رضامندی سے۔ (ت)

غرض یہ بیع بلا کراہت ہے، ہاں خلافِ اولویت ہے۔ فتح القدیر میں ہے:

لا کراھة الاخلاف الاولی فان الاجل قابله قسط من الثمن - واللہ تعالی اعلم[2] اس میں کراہت نہیں تاہم یہ خلافِ اولی ہے کیونکہ اجل کے مقابل ثمن کا ایک حصہ ہے واللہ تعالٰی اعلم (ت)

---

[1] القرآن الکریم ۲۹/۴ [2] فتح القدیر کتاب الکفالة مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶/۳۲۴

Fatawa-e-Razvia Volume 17

Chapter on Loans (Explanation of Loans)

Question 115: What do the scholars of religion and the muftis of the firm Shariah say about this: a person borrowed an amount of one hundred rupees on the condition that I will keep giving twenty-five rupees as a fixed annual profit without any loss, and whenever you demand the principal amount, I will return your full money. Does the person who accepted this condition and gave the money fall under the ruling of usury (riba) himself or not? And would it be permissible or impermissible to pray (Salah) behind him? Please explain and be rewarded. (T)

The Answer: It is absolute usury and definitely haraam (forbidden), a major sin, foul, and equivalent to carrion. It is mentioned in the Hadith: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Every loan that draws a benefit is usury." (T)

It is severely disliked (Makruh) to pray behind such a person, who is commanded to be removed. To appoint him as an Imam is a sin, as stated by Imam al-Halabi in 'Al-Ghuniyah' (as the great Imam al-Halabi has explicitly stated in Al-Ghuniyah. T). And Allah Almighty knows best.

Footnotes: 1. Kanz al-Ummal, Hadith 15516, Mu'assasat al-Risalah, Beirut, 6/238. 2. Ghuniyat al-Mustamli, Chapter on Imamate, Suhail Academy, Lahore, pp. 414-513.

Page 269 of 715

फ़तावा-ए-रज़विया खंड सत्रह (17)

बाब अल-क़र्ज़ (क़र्ज़ का बयान)

मसला 115: दीन के उलमा और मज़बूत शरीयत के मुफ़्ती क्या फ़रमाते हैं कि एक शख़्स ने सौ रुपये की रक़म इस शर्त पर क़र्ज़ ली कि मैं पच्चीस रुपये सालाना तयशुदा मुनाफ़ा बिना किसी नुक़सान के देता रहूँगा और जब आप अपनी मूल रक़म मांगेंगे तो मैं आपका पूरा रुपया वापस कर दूँगा, जिस शख़्स ने इस शर्त को क़बूल करके रुपया दे दिया, उस पर ख़ुद सूदख़ोरी (ब्याजखोरी) का हुक्म है या नहीं? और उसके पीछे नमाज़ पढ़ना जायज़ होगा या नाजायज़? बयान फ़रमाएं और सवाब पाएँ। (त)

अल-जवाब: यह यक़ीनी तौर पर सूद है और निश्चित रूप से हराम, गुनाह-ए-कबीरा, ख़बीस और मुर्दार है। हदीस में है: रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "हर वह क़र्ज़ जो फ़ायदा खींचे (मुनाफ़ा लाए), वह सूद (ब्याज) है।" (त)

ऐसे शख़्स के पीछे नमाज़ पढ़ना सख़्त मकरूह है जिसे हटाने का हुक्म है, और उसे इमाम बनाना गुनाह है, जैसा कि इमाम अल-हलबी ने 'अल-ग़ुनिया' में साफ़ तौर पर ज़िक्र किया है (जैसा कि सायर इमाम अल-हलबी ने ग़ुनिया में नस फ़रमाई है। त)। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

पादमार्ग (Footnotes): 1. कंज़ुल उम्माल, हदीस 15516, मुअस्ससतुर रिसाला बेरूत, 6/238। 2. ग़ुनियतुल मुस्तमली, फ़सल फ़िल इमामा, सुहैल एकेडमी लाहौर, पृ. 414-513।

पृष्ठ 715 में से 269

باب القرض (قرض کا بیان)

مسئلہ ۱۱۵: کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین کہ ایک شخص نے مبلغ سو روپیہ اس شرط پر قرض لیا کہ پچیس روپے سالانہ منافع مقررہ بلا نقصان کے دیتا رہوں گا اور جب جمع طلب کرو گے تو تمہارا پورا روپیہ واپس کردوں گا، جس شخص نے اس شرط کو قبول کرکے روپیہ دے دیا اس پر خود سود خوری کا حکم ہے یا نہیں؟ اور اس کے پیچھے نماز پڑھنا جائز ہوگی یا نا جائز؟ بینوا توجروا (بیان کرو اجر دئے جاؤ گے۔ ت)

الجواب: قطعی سود اور یقینی حرام و گناہ کبیرہ خبیث و مردار ہے۔ حدیث میں ہے: قال رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کل قرض جر منفعۃ فھو ربوا - ۱ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا جو قرض نفع کو کھینچے وہ سود ہے۔ (ت)

ایسے شخص کے پیچھے نماز پڑھنی سخت مکروہ ہے جس کے پھیرنے کا حکم ہے اور اسے امام کرنا گناہ، کما نص علیہ الامام الحلبی فی الغنیۃ ۲ (جیسا کہ سائر امام حلبی نے غنیہ میں نص فرمائی ہے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

۱ کنز العمال حدیث ۱۵۵۱۶ مؤسسۃ الرسالہ بیروت ۶ / ۲۳۸ ۲ غنیۃ المستملی فصل فی الامامۃ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۴۱۴ - ۵۱۳

Fatawa Razawiyya Volume 17

Problem 116: 5 Shawwal 1307 AH What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid asked his servant to bring him fifty rupees as a loan from someone. The servant brought fifty rupees from a money-lender (Mahajan) by saying that my master needs money. The money-lender gave fifty rupees in absentia without confirmation, and the servant wrote his own promissory note (receipt) for it. Afterwards, he gave the money to his master and stated that I have brought this money as a loan in your name from such-and-such money-lender and have given my signed note. After some time, Zaid gave those (Rs. 50/-) to this servant. After a long time, it was discovered through investigation that the money did not reach the money-lender, but the servant took it for his own use. When the servant was asked, he also admitted that I did not give the money to the money-lender, and said that I brought this money against my own note, I should have received it from the master. In this situation, are those (Rs. 50/-) again payable by Zaid or not? And will those (Rs. 50/-) that the servant spent come back to him (the money-lender) or not? Please clarify and be rewarded.

The Answer: In the situation asked, if the servant had asked for the loan in this way: "Give my master a loan of fifty rupees" or "My master is asking you for a loan of fifty rupees," then this loan is the responsibility of the master. And if he asked like this: "My master needs fifty rupees, give me a loan" or "Give me a loan of fifty rupees for my master," then the loan of the money-lender became the responsibility of the servant. It is stated in Rad al-Muhtar:

In Jami' al-Fusulayn, it is mentioned that someone sent a man to take a loan for him. He took the loan and it was lost in his hands. If he said while taking the loan, "Give a loan for the sender," the sender would be the guarantor. If he said, "Give me a loan for the sender," then the messenger would be the guarantor. The conclusion is that it is permissible to appoint an agent (Wakil) to give a loan, but not to take a loan. Sending a messenger (Qasid) to take a loan is permissible. And if the agent for taking a loan spoke as a messenger, the loan would be for the one who ordered it (the master).

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

मसाला 116: 5 शव्वाल 1307 हिजरी दीन के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: ज़ैद ने अपने नौकर से कहा कि मुझे किसी से पचास रुपये उधार लाकर दो। नौकर एक महाजन से यह कहकर पचास रुपये उधार लाया कि मेरे मालिक को रुपयों की ज़रूरत है। महाजन ने बिना पुष्टि के अनुपस्थिति में पचास रुपये दे दिए और नौकर ने उसे अपना रक़ा (रसीद) लिखकर दे दिया। इसके बाद उसने रुपये मालिक को अदा कर दिए और बताया कि मैं फलां महाजन से यह रुपया आपके नाम से उधार लाया हूँ और अपना हस्ताक्षरित रक़ा लिखकर दे आया हूँ। कुछ समय बाद ज़ैद ने वे (50/- रुपये) उस नौकर को दे दिए। बहुत समय बाद जाँच से पता चला कि रुपया महाजन के पास नहीं पहुँचा, बल्कि नौकर ने स्वयं उसका उपभोग कर लिया। नौकर से पूछने पर उसने भी स्वीकार किया कि मैंने महाजन को रुपये नहीं दिए, और कहता है कि यह रुपया तो मैं अपने रक़े से लाया था, मुझे मालिक से मिलना चाहिए था। इस स्थिति में क्या वे (50/- रुपये) दोबारा ज़ैद की ज़िम्मेदारी में देय हैं या नहीं? और क्या नौकर ने जो (50/- रुपये) खर्च कर लिए, वे उसे (महाजन को) देने होंगे या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: पूछी गई स्थिति में यदि नौकर ने इस तरह ऋण माँगा था कि "मेरे मालिक को पचास रुपये ऋण दे दो" या "मेरा मालिक तुमसे पचास रुपये ऋण माँगता है," तो यह ऋण मालिक की ज़िम्मेदारी है। और यदि इस तरह माँगा था कि "मेरे मालिक को पचास रुपये की ज़रूरत है, मुझे ऋण दे दो" या "मेरे मालिक के लिए मुझे पचास रुपये ऋण दे दो," तो महाजन का ऋण नौकर की ज़िम्मेदारी हुआ। रद-उल-मुहतार में है:

जामि-उल-फुसुलैन में है कि किसी ने एक व्यक्ति को ऋण लेने के लिए भेजा। उसने ऋण लिया और वह उसके हाथ से नष्ट हो गया। यदि उसने ऋण लेते समय इस तरह कहा कि "भेजने वाले के लिए ऋण दे दो," तो भेजने वाला उत्तरदायी होगा। और यदि कहा कि "भेजने वाले के लिए मुझे ऋण दे दो," तो अब संदेशवाहक (क़ासिद) उत्तरदायी होगा। निष्कर्ष यह है कि ऋण देने के लिए वकील बनाना जायज़ है न कि ऋण लेने के लिए, और ऋण लेने के लिए संदेशवाहक भेजना जायज़ है, और यदि ऋण लेने के वकील ने संदेशवाहक के रूप में बात की, तो ऋण आदेश देने वाले (मालिक) के लिए होगा।

पेज 270 ऑफ़ 715

مسئلہ ۱۱۶: ۵ شوال ۱۳۰۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے اپنے ملازم سے کہا پچاس روپے مجھے کسی سے قرض لادے، ملازم ایک مہاجن سے پچاس روپے یہ کہہ کر قرض لایا کہ میرے آقا کو ضرورت روپے کی ہے مہاجن نے غائبانہ بلا تصدیق پچاس روپے دے دیئے اور ملازم نے اپنا رقعہ اسے لکھ دیا بعدہ روپیہ آقا کو ادا کر دیا اور بیان کیا کہ میں فلاں مہاجن سے یہ روپیہ آپ کے نام سے قرض لایا ہوں اور رقعہ اپنا دستخطی لکھ کر دے آیا ہوں، بعد چندے زید نے وہ (م/۵۰) اس ملازم کو دے دیئے ، بعد بہت عرصہ کے تحقیق ہوا کہ روپیہ مہاجن کو نہیں پہنچا بلکہ ملازم نے خود اپنے تصرف میں کر لیا اور ملازم سے پوچھا تو وہ بھی اقرار کرتا ہے کہ روپیہ میں نے مہاجن کو نہیں دیا، اور کہتا ہے یہ روپیہ تو میں اپنے رقعہ سے لایا تھا آقا سے مجھے ملنا چاہئے تھا، اس صورت میں وہ (م/۵۰) مکرر ذمہ زید کے واجب الادا ہیں یا نہیں؟ اور یہ (م/۵۰) کہ نوکر نے تصرف کر لئے اسے دینا آئیں گے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: صورت مستفسرہ میں اگر نوکر نے یوں قرض مانگا تھا کہ میرے آقا کو پچاس روپے قرض دے دے یا میرا آقا تجھ سے پچاس روپے قرض مانگتا ہے جب تو یہ قرض آقا کے ذمہ ہے اور اگر یوں مانگا تھا کہ میرے آقا کو پچاس روپے کی ضرورت ہے مجھے قرض دے یا میرے آقا کے لئے مجھے پچاس روپے قرض دے تو مہاجن کا قرض نوکر کے ذمہ ہوا۔ ردالمحتار میں ہے :

فی جامع الفصولین بعث رجلا یستقرضہ فاقرضہ فضاع فی یدہ فلو قال اقرض للمرسل ضمن مرسلہ، ولو قال اقرضنی للمرسل ضمن رسولہ، و الحاصل ان التوکیل بالقراض جائز لابالاستقراض و الرسالۃ بالاستقراض تجوز، ولواخرج وکیل الاستقراض کلامہ مخرج الرسالۃ یقع القرض للأمر، جامع

الفصولین میں ہے کسی نے ایک شخص کو قرض لینے کے لئے بھیجا اس نے قرض لیا اور اس

کے ہاتھ سے ضائع ہوگیا، اگر اس نے قرض لیتے وقت یوں کہا کہ بھیجنے والے کے لئے قرض دے تو بھیجنے والا ضامن ہوگا، اور اگر کہا کہ بھیجنے والے کے لئے مجھے قرض دے تو اب قاصد ضامن ہوگا۔ حاصل یہ کہ قرض دینے کے لئے وکیل بنانا جائز نہ کہ قرض لینے کے لئے، اور قرض لینے کے لئے قاصد بھیجنا جائز ہے، اور اگر قرض لینے کے وکیل نے بطور قاصد کلام کیا تو قرض آمر کے لئے ہوگا اور

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

Fatawa Razawiyya Volume 17

[Arabic Section]: If the wording of the agency is such that he attributes it to himself, it falls upon the agent, and he has the right to withhold it from his principal (the one who ordered him). I say, the difference is that if he attributes the contract to the principal, for example, by saying 'So-and-so asks you to lend him such-and-such,' then he becomes a messenger (rasul), and a messenger is merely an intermediary and a narrator. This is in contrast to when he attributes it to himself, by saying 'Lend me such-and-such' or 'Lend me such-and-such for so-and-so,' for it then falls upon himself, and his statement 'for so-and-so' means 'for his sake.' And they (the scholars) said: Indeed, appointing an agent for borrowing is not valid because it is appointing an agent for begging (takaddi), which is not valid. I say: The reason for this is that a loan is initially a gift and a favor, so it falls upon the borrower, as representation (niyabah) is not valid in that. Thus, it is a type of begging in the sense of asking for charity. This is what has become apparent to me. [Footnote 1]

[Urdu Section]: If he spoke as an agent in such a way that he attributed it to his own person, then in this case the loan will occur for the agent himself, and he will have the choice not to give that loan to the principal. I say, the difference between these two cases is that when he attributes the contract to the principal, for example, by saying: 'So-and-so demands from you that you give him a loan,' then in this case he becomes a messenger, and a messenger is merely an intermediary and a narrator; unlike the case when he makes the attribution to himself and says 'Give me this much loan' or 'Give me this much loan for so-and-so,' then this loan occurs for himself and the meaning of his statement 'for so-and-so' would be 'due to so-and-so.' And the scholars have said that appointing an agent for taking a loan is not correct because this is like appointing an agent for begging, which is not correct. I say the reason for this is that a loan is initially a gift and a favor, therefore it will occur for the one asking for the loan because representation is not correct in it. So in this way, it will be a type of 'takaddi' meaning begging. This is what has become manifest to me. (T)

Then in this case, while the servant brought those rupees which had legally become his property and gave them to the master, and he took them for his own use, and it is obvious that this giving was not by way of a gift but based on a loan and the

obligation of demand and payment of an equivalent, therefore the servant's debt remained as a liability upon the master.

[Arabic Section]: Because the borrowing, when it was executed upon the servant due to his attributing it to himself, and he gave it by way of settlement (taqadi)...

[Urdu Section]: Because taking the loan became effective upon the servant due to attributing it to his own self, and with mutual consent, he gave it to his master as a fulfillment of an obligation.

1. Radd al-Muhtar, Book of Sales, Chapter on Loans, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 5/178.

फ़तावा रज़विया (खंड १७)

फ़तावा रज़विया खंड १७

[अरबी अनुभाग]: यदि वकालत के शब्द ऐसे हों कि उसने इसे अपनी ओर जिम्मेदार ठहराया है, तो यह वकील पर लागू होता है, और उसे अधिकार है कि वह इसे अपने मालिक (आमिर) को न दे। मैं कहता हूँ, अंतर यह है कि यदि उसने अनुबंध को मुवक्किल की ओर जिम्मेदार ठहराया है, जैसे कि उसने कहा 'फलां आपसे मांगता है कि आप उसे इतना उधार दें,' तो वह एक संदेशवाहक (रसूल) बन जाता है, और संदेशवाहक केवल एक माध्यम और व्याख्याकार होता है। इसके विपरीत जब उसने इसे अपनी ओर जिम्मेदार ठहराया हो, यह कहकर कि 'मुझे इतना उधार दें' या 'मुझे फलां के लिए इतना उधार दें,' तो यह उसके अपने ऊपर लागू होता है, और 'फलां के लिए' कहने का अर्थ 'उसकी खातिर' होगा। विद्वानों ने कहा: वास्तव में, उधार लेने के लिए वकील नियुक्त करना मान्य नहीं है क्योंकि यह भीख माँगने (तकद्दी) के लिए वकील नियुक्त करना है, जो मान्य नहीं है। मैं कहता हूँ: इसका कारण यह है कि ऋण शुरुआत में एक उपहार और उपकार है, इसलिए यह ऋण लेने वाले पर लागू होता है, क्योंकि इसमें प्रतिनिधित्व (नियाबत) मान्य नहीं है। इस प्रकार, यह भीख माँगने के अर्थ में एक प्रकार की 'तकद्दी' है। यह वही है जो मेरे लिए स्पष्ट हुआ है। [पादलेख १]

[उर्दू अनुभाग]: यदि उसने वकील के रूप में इस प्रकार बात की कि उसे अपने व्यक्तित्व से जोड़ा, तो इस स्थिति में ऋण स्वयं वकील के लिए होगा और उसे अधिकार होगा कि वह वह ऋण आदेश देने वाले (आमिर) को न दे। मैं कहता हूँ कि इन दोनों स्थितियों में अंतर यह है कि जब उसने अनुबंध को मुवक्किल की ओर जोड़ा, उदाहरण के लिए उसने कहा कि 'फलां आपसे मांग करता है कि आप उसे ऋण दें,' तो इस स्थिति में वह संदेशवाहक बन गया और संदेशवाहक केवल दूत और अनुवादक होता है; इसके विपरीत उस स्थिति के जब उसने अपनी ओर संबंध जोड़ा और कहा कि 'मुझे इतना ऋण दें' या कहा कि 'मुझे फलां के लिए इतना ऋण दें,' तो यह ऋण स्वयं उसके लिए हुआ और उसके इस कथन 'फलां के लिए' का अर्थ होगा कि 'फलां के कारण।' और विद्वानों ने कहा है कि ऋण लेने में वकील बनाना इसलिए सही नहीं है क्योंकि यह गदागरी (भीख मांगना) में वकील बनाना है जो कि सही नहीं है। मैं कहता हूँ इसका कारण यह है कि ऋण आरंभ में संबंध और उपकार है इसलिए ऋण मांगने वाले के लिए होगा क्योंकि इसमें प्रतिनिधित्व सही नहीं है तो इस प्रकार वह 'तकद्दी' यानी गदागरी की एक किस्म होगा, यह वह है जो मेरे लिए स्पष्ट हुआ है। (त)

फिर इस स्थिति में जबकि नौकर ने वे रुपये जो वास्तव में उसकी संपत्ति बन चुके थे, लाकर मालिक को दे दिए और उसने अपने उपयोग में ले लिए, और यह स्पष्ट है कि यह देना दान (हिबा) के रूप में नहीं था बल्कि ऋण और मांग की अनिवार्यता और उसके समान भुगतान के आधार पर था, तो नौकर का कर्ज मालिक के जिम्मे रहा।

[अरबी अनुभाग]: क्योंकि उधार लेना, जब वह नौकर पर उसकी अपनी ओर जिम्मेदारी ठहराने के कारण प्रभावी हुआ, और उसने निपटान (तकादी) के रूप में दिया...

[उर्दू अनुभाग]: क्योंकि ऋण लेना स्वयं की ओर जिम्मेदारी ठहराने के कारण नौकर पर प्रभावी हो गया और आपसी सहमति से दायित्व की पूर्ति के रूप में अपने मालिक को।

1. रद अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू', ऋण पर अध्याय, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, ५/१७८।

पृष्ठ २७१ / ७१५

ولو مخرج الوکالۃ بان اضافہ الی نفسہ یقع للوکیل | اگر اس نے بطور وکیل کلام کیا بایں اس کو اپنی ذات کی ولہ منعہ عن آمرہ اھ. قلت والفرق انہ اضاف العقد | طرف منسوب کیا تو اس صورت میں قرض خود وکیل کے لئے الی الموکل بان قال ان فلان یطلب منك ان تقرضہ | واقع ہوگا اور اس کو اختیار ہوگا کہ وہ قرض آمر کو نہ دے اھ کذا صار رسولا والرسول سفیر ومعبر بخلاف ما اذا | میں کہتا ہوں ان دونوں صورتوں میں فرق یہ ہے کہ جب اضافہ الی نفسہ بأن قال اقرضنی کذا او قال اقرضنی | اس نے عقد کو موکل کی طرف منسوب کیا مثلاً یوں کہا کہ لفلان کذا فانہ یقع لنفسہ ویکون قولہ لفلان بمعنی | فلاں تجھ سے مطالبہ کرتا ہے کہ تو اس کو قرض دے تو اس لاجلہ، وقالوا انما لم یصح التوکیل بالاستقراض | صورت میں وہ قاصد ہو گیا اور قاصد محض سفیر اور معبر ہوتا لانہ توکیل بالتکدی وھو لا یصح. قلت ووجھہ ان | ہے، بخلاف اس صورت کے کہ جب اس نے اپنی طرف نسبت القرض صلۃ وتبرع ابتداء فیقع للمستقرض اذلا | کی اور کہا مجھے اتنا قرض دے یا کہ کہ مجھے فلاں کے لئے اتنا تصح النیابۃ فی ذلك فھو نوع من التکدی بمعنی | قرض دے تو یہ قرض خود اس کے لئے واقع ہوا اور اس کے الشحاذۃ ھذا ما ظھر لی اھ[1]۔ | قول "فلاں کے لئے" کا مطلب ہوگا کہ فلاں کی وجہ سے۔ اور | علماء نے کہا کہ قرض لینے میں وکیل بنانا اس لئے صحیح نہیں کہ | یہ گداگری میں وکیل بنانا ہے جو کہ صحیح نہیں۔ میں کہتا ہوں | اس کی وجہ یہ ہے کہ قرض ابتداءً صلہ اور احسان ہے چنانچہ | قرض مانگنے والے کے لئے واقع ہوگا کیونکہ اس میں نیابت | درست نہیں تو اس طرح وہ تکدی بمعنی گداگری کی ایک قسم | ہوگا، یہ وہ ہے جو میرے لئے ظاہر ہوا اھ (ت)

پھر اس صور میں جبکہ نوکر نے وہ روپے جو حقیقۃً اس کی ملک ہو چکے تھے لا کر آقا کو دے دیے اور اس نے اپنے صرف میں لئے، اور ظاہر ہے کہ یہ دینا بروجہ ہبہ نہ تھا بلکہ بر بنائے قرض ووجوب تقاضا وادائے مثل تھا تو نوکر کا دین آقا کے ذمہ رہا۔

لان الاستقراض لما نفذ علی الخادم لاضافته الی | کیونکہ قرض لینا اپنی ذات کی طرف منسوب کرنے کی وجہ سے نفسه وقد اعطی علی وجه التقاضی | خادم پر نافذ ہو گیا اور اس باہمی رضامندی سے وجوب تقاضا | کے طور پر اپنے آقا کو

---

[1] ردالمحتار کتاب البیوع فصل فی القرض داراحیاء التراث العربي بیروت ۵/ ۱۷۸

Fatawa Razawiya Volume 17

[Table Header] [Arabic Text]: Without it being a gift, and by mutual consent, he became like an unauthorized person (fuzuli) who purchased something by attributing it to himself until the sale became binding upon him. Then he gave it to the person for whom he bought it and took the price from him. This would not be an authorization of the previous contract because authorization applies to suspended (mawquf) contracts, not executed (nafidh) ones. Rather, it becomes a new contract between them through reciprocal delivery (ta'ati), as mentioned in Al-Hidayah, Al-Durr al-Mukhtar, and other books. This is because the payment was made in the form of a sale, not a gift. [Urdu Text]: He gave it, not as a gift, but by mutual consent. Thus, that servant became like an unauthorized person (fuzuli) who purchased something by attributing it to his own self until the purchase became effective against him. Then the servant gave that thing to the person for whom he had purchased it and received the price from him. Here, this will not be considered as an authorization for the previous contract because authorization is attached to a suspended contract and not an effective one. Instead, through mutual dealing, this will be a new contract between them, as stated in the books Al-Hidayah, Al-Durr al-Mukhtar, etc. And this is due to giving it as a sale and not as a gift. (T)

And it is evident that when the money did not reach the moneylender, his debt was not repaid in any way.

[Table Header] [Arabic Text]: Because it is wealth that perished before reaching the seeker or his agent, so there is no meaning to the fulfillment of debt and discharge of liability. [Urdu Text]: Because that wealth was destroyed before reaching the seeker or his agent, there is now no meaning to the repayment of the debt and becoming free from liability. (T)

Now, if the actual case was the first scenario, the moneylender's debt remained on Zaid. As for the money Zaid gave to the servant to pay the debt, and he spent it on himself, his action is unauthorized and prohibited, and the servant is liable for compensation.

[Table Header] [Arabic Text]: Because he was a trustee who committed breach of trust, destroyed [the trust], and committed transgression in what he disposed of. Thus, he became a guarantor (liable) after having been a trustee. [Urdu Text]: Because he was a trustee (amin), he committed breach of trust and performed

unauthorized disposal in the trust with excess. Therefore, he is now a guarantor (damin), whereas he was previously a trustee. (T)

And his excuse that 'I brought the money with my own note, I should have received it from the master' is purely unacceptable. When the master owed a debt to the moneylender, it should have reached the moneylender. Who was he to take it in between? And if the actual case was the second scenario, then the moneylender's debt remained the servant's responsibility, having nothing to do with Zaid. And this money which the servant, on the basis of document, to his own...

1. Al-Bahr al-Ra'iq, Book of Sale, Chapter on Unauthorized Sale (Bay' al-Fuzuli), H.M. Saeed Company Karachi, 6/129.

फतावा रज़विया जिल्द 17

[तालिका शीर्षक] [अरबी पाठ]: उपहार के रूप में नहीं, और आपसी सहमति से वह उस अनधिकृत व्यक्ति (फ़ुज़ूली) की तरह हो गया जिसने अपनी ओर संकेत करते हुए कुछ खरीदा, यहाँ तक कि वह उस पर लागू हो गया। फिर उसने उसे उस व्यक्ति को दे दिया जिसके लिए उसने खरीदा था और उससे कीमत ले ली। यहाँ यह पिछले अनुबंध की अनुमति नहीं होगी क्योंकि अनुमति केवल स्थगित (मौक़ूफ़) अनुबंधों पर लागू होती है, प्रभावी (नाफ़िज़) अनुबंधों पर नहीं। बल्कि, यह आपसी लेन-देन (तआती) के माध्यम से उनके बीच एक नया अनुबंध होगा, जैसा कि हिदाया, दुर्र अल-मुख्तार और अन्य पुस्तकों में वर्णित है। ऐसा इसलिए है क्योंकि भुगतान बिक्री के रूप में किया गया था, न कि उपहार के रूप में। [उर्दू पाठ]: उसने दे दिया न कि उपहार के रूप में, तो इस तरह वह नौकर उस फ़ुज़ूली (अनधिकृत) की तरह हो गया जिसने अपनी जात की तरफ निस्बत करते हुए कोई चीज़ खरीदी यहाँ तक कि खरीदारी उस पर नाफ़िज़ (लागू) हो गई। फिर वह चीज़ नौकर ने उस शख्स को दे दी जिसके लिए उसने खरीदी थी और उससे क़ीमत वसूल कर ली। यहाँ यह पिछले अनुबंध की अनुमति नहीं होगी क्योंकि अनुमति तो मौक़ूफ़ (स्थगित) अनुबंध को होती है न कि नाफ़िज़ को, बल्कि यह आपसी लेन-देन से उन दोनों के बीच एक नया अनुबंध होगा जैसा कि हिदाया और दुर्र-ए-मुख्तार वगैरह किताबों में है, और यह बिक्री के तौर पर देने की वजह से है न कि उपहार के तौर पर। (त)

और स्पष्ट है कि जब पैसा महाजन (साहूकार) तक नहीं पहुँचा, तो उसका ऋण किसी भी तरह से चुकाया नहीं गया।

[तालिका शीर्षक] [अरबी पाठ]: क्योंकि यह वह धन है जो चाहने वाले (लेनदार) या उसके प्रतिनिधि तक पहुँचने से पहले ही नष्ट हो गया, इसलिए अदायगी और दायित्व से मुक्ति का कोई अर्थ नहीं है। [उर्दू पाठ]: क्योंकि वह माल चाहने वाले या उसके वकील तक पहुँचने से पहले ही नष्ट हो गया, तो अब क़र्ज़ की अदायगी और उससे बरी-उद-ज़िम्मा (मुक्त) होने का कोई अर्थ नहीं है। (त)

अब यदि वास्तविक स्थिति पहली वाली थी, तो महाजन का ऋण ज़ैद पर बना रहा। और वे रुपये जो ज़ैद ने नौकर को ऋण चुकाने के लिए दिए थे और उसने उन्हें अपने निजी उपयोग में ले लिया, उसका यह व्यवहार अनुचित और हराम है, और नौकर पर इसका हर्जाना अनिवार्य है।

[तालिका शीर्षक] [अरबी पाठ]: क्योंकि वह अमानतदार था जिसने विश्वासघात किया, उसे नष्ट किया और उसमें अनुचित हस्तक्षेप करके ज़्यादती की। अतः वह अमानतदार होने के बाद अब ज़मानतदार बन गया है। [उर्दू पाठ]: क्योंकि वह अमीन (अमानतदार) था, उसने खयानत की और अमानत में अनुचित हस्तक्षेप करके ज़्यादती की, तो अब वह ज़ामिन (ज़िम्मेदार) है जबकि इससे पहले वह अमीन था। (त)

और उसका यह बहाना कि 'मैं तो पैसा अपनी पर्ची (रक़्क़ा) से लाया था, मुझे मालिक से मिलना चाहिए था' पूरी तरह से अस्वीकार्य है। जब मालिक पर महाजन का ऋण था, तो वह महाजन तक पहुँचना चाहिए था। वह बीच में लेने वाला कौन था? और अगर वास्तव में दूसरी स्थिति थी, तो महाजन का ऋण नौकर के ज़िम्मे रहा, ज़ैद से उसका कोई संबंध नहीं। और ये रुपये जो नौकर ने दस्तावेज़ के आधार पर अपने...

1. अल-बह्र अल-रैक, किताब अल-बय, फ़ुज़ूली की बिक्री का अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 6/129।

पृष्ठ 272/715

[جدول کا عنوان] [عربی متن]: دون الھبۃ وبالتراضی صار کفضولی شری مضیفاً الی نفسہ حتی نفذ علیہ ثم اعطاہ من اشتری لہ واخذ منہ الثمن حیث لایکون ھذا اجازۃ للعقد السابق لان الاجازۃ انما تلحق الموقوف دون النافذ بل یکون عقدا جدیداً بینھما بالتعاطی ۱ کما فی الھدایۃ والدر المختار وغیرھما من الاسفار وذلك لکون الدفع بجھۃ البیع دون الھبۃ۔ [اردو متن]: دے دیا نہ کہ ہبہ کے طور پر، تو اس طرح وہ نوکر اس فضولی کی طرح ہو گیا جس نے اپنی ذات کی طرف نسبت کرتے ہوئے کوئی چیز خریدی یہاں تک کہ خریداری اس پر نافذ ہو گئی پھر وہ چیز نوکر نے اس شخص کو دے دی جس کے لئے اس نے خریدی اور اس سے ثمن وصول کر لئے، یہاں یہ عقد سابق کی اجازت نہ ہوگی اس لئے کہ اجازت تو عقد موقوف کو لاحق ہوتی ہے نہ کہ نافذ کو، بلکہ یہ باہمی لین دین سے ان دونوں کے درمیان ایک نیا عقد ہوگا جیسا کہ ہدایہ اور در مختار وغیرہ کتاب میں ہے، اور یہ بطور بیع دینے کی وجہ سے ہے نہ کہ بطور ہبہ۔ (ت)

اور ظاہر کہ جب روپے مہاجن کو نہ پہنچے تو اس کا قرض کسی طرح ادا نہ ہوا،

[جدول کا عنوان] [عربی متن]: لانہ مال ھلك قبل الوصول الی الطالب او الی وکیلہ فلا معنی للقضاء وبراءۃ الذمۃ۔ [اردو متن]: اس لئے کہ وہ مال طالب یا اس کے وکیل تک پہنچنے سے قبل ہی ہلاک ہو گیا تو اب قرض کی ادائیگی اور اس سے بری الذمہ ہونے کا کوئی معنی نہیں۔ (ت)

اب اگر واقع صورت اولٰی تھی مہاجن کا قرض زید پر رہا اور یہ روپے کہ زید نے نوکر کو ادائے دین کے لئے دئے اور اس نے اپنے صرف میں کر لئے اس کا تصرف بیجا اور حرام ہے اور نوکر پر اس تاوان لازم،

[جدول کا عنوان] [عربی متن]: لکونہ امیناً خان و اتلف وتعدی علیہ فیما تصرف فصار ضمیناً بعد ان کان امینا۔ [اردو متن]: کیونکہ وہ امین تھا اس نے خیانت کی اور امانت میں بیجا تصرف کرکے زیادتی کی تو اب وہ ضامن ہے جبکہ اس سے قبل وہ امین تھا۔ (ت)

اور اس کا یہ عذر کہ روپیہ تو میں اپنے رقعہ سے لایا تھا آقا سے مجھے ملنا چاہئے تھا محض نامقبول کہ جب آقا پر دین مہاجن کا تھا تو مہاجن کو پہنچنا چاہئے تھا یہ بیچ میں لے لینے والا کون تھا، اور اگر واقع صورت ثانیہ تھی تو مہاجن کا قرض نوکر کے ذمہ رہا زید سے کچھ تعلق نہیں اور یہ روپے کہ نوکر نے بربنائے سند کو اپنے

۱ بحر الرائق کتاب البیع فصل فی بیع الفضولی ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۶ / ۱۲۹

...taking it thinking it's owed, whereas in reality, it was Zaid's debt for the servant's work, and it should have gone to him from Zaid. Thus, 'the creditor succeeded in obtaining the type of his right.' Now, the servant Zaid is free from the demand because 'he has fully received what was due to him.' So, the summary of the ruling is: If the servant brought it saying 'give credit to my master,' then the merchant's fifty rupees stay against Zaid, and the servant owes Zaid fifty rupees. And if he brought it saying 'give me credit for the master,' then the merchant's fifty rupees are mandatory on the servant, and the fifty rupees the servant owed the master are paid. In short, the servant owes fifty rupees in both cases: in the first case to the master, and in the second to the merchant. And Zaid is liable to the merchant in the first case and to no one in the second. And Allah Almighty knows best.

Problem 117: From Sarnia, Bareilly district, sent by Amir Ali Sahab Qadri, 2 Rajab 1331 AH. Grain was bought from Zaid at market price, but on credit till harvest time; at harvest time, Zaid took as much grain as the money owed.

The Answer: If at the time of selling, Zaid made a condition that 'I will not take money as its price, but instead of money, I will take grain at the harvest rate,' then this is impermissible. And if no such condition was made, and at the time of harvest, the creditor asked for his due money and the debtor said 'I don't have money, take grain for it,' then it is permissible, provided it is not the same grain that was bought from Zaid [originally], or if it is the same, it should be given at the same rate it was bought at, otherwise it is impermissible. And Allah Almighty knows best.

Problem 118: From Dhoraji, Kathiawar district, Siyahi Garan locality, sent by Haji Isa Khan Muhammad Sahab Razvi, 1 Dhu al-Hijjah 1332 AH. A person gave a thousand-rupee note for eleven hundred rupees with a promise of ten months. The debtor gave eleven notes of hundred rupees each on his promise to the creditor (did not give the same note); is this permissible or what? Please honor with an answer.

The Answer: If a thousand-rupee note was given as a loan and it was decided to take more than a thousand, then it is haraam, it is interest (usury). Yes, if a thousand-rupee note was sold for eleven hundred rupees and the payment was deferred for, say, ten months, and when the promised day arrived, the seller demanded the price money from the buyer, and he said 'I don't have rupees, take eleven hundred-rupee notes...'

...यह समझकर उठा लिए कि वास्तव में ज़ैद पर नौकर की मज़दूरी का कर्ज़ था और ज़ैद से उसी को मिलना चाहिए था, तो 'वह ऐसा लेनदार हुआ जो अपने हक की जिंस को वसूल करने में कामयाब हो गया'। अब नौकर ज़ैद की मांग से मुक्त हो गया क्योंकि 'उसने अपना पूरा हक वसूल कर लिया'। अतः हुक्म का सारांश यह है कि यदि नौकर यह कहकर लाया था कि 'मेरे मालिक को कर्ज़ दे दो', तो महाजन के पचास रुपये ज़ैद पर रहे और ज़ैद के पचास रुपये नौकर पर अनिवार्य हुए। और यदि वह यह कहकर लाया कि 'मुझे मालिक के लिए कर्ज़ दे दो', तो महाजन के पचास रुपये नौकर पर वाजिब हुए और नौकर के पचास रुपये जो मालिक पर थे, वे अदा हो गए। संक्षेप में, नौकर पर हर हाल में पचास रुपये की मांग है: पहली सूरत में मालिक की, दूसरी में महाजन की। और ज़ैद पर पहली सूरत में महाजन की मांग है और दूसरी में किसी की नहीं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 117: सरनिया, ज़िला बरेली से, प्रेषक: अमीर अली साहब कादरी, 2 रजब 1331 हिजरी। ज़ैद से अनाज बाज़ार भाव पर खरीदा गया, लेकिन फसल आने पर भुगतान की शर्त पर। फसल आने पर, ज़ैद ने बकाया रकम के बराबर अनाज ले लिया।

उत्तर: यदि बेचते समय ज़ैद ने यह शर्त रखी थी कि 'मैं इसकी कीमत के रूप में नकद नहीं लूंगा, बल्कि नकदी के बदले फसल के भाव पर अनाज लूंगा', तो यह नाजायज़ है। और यदि कोई ऐसी शर्त नहीं थी, और फसल के समय लेनदार ने अपना बकाया पैसा माँगा और देनदार ने कहा कि 'मेरे पास पैसे नहीं हैं, अनाज ले लो', तो यह जायज़ है; बशर्ते कि वह वही अनाज न हो जो ज़ैद से खरीदा गया था, या यदि वही हो, तो उसी भाव पर दिया जाए जिस पर खरीदा गया था, अन्यथा यह नाजायज़ है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 118: धोराजी, ज़िला काठियावाड़, मोहल्ला सियाही गरां से, प्रेषक: जनाब हाजी ईसा खान मोहम्मद साहब रज़वी, 1 ज़िलहिज्जा 1332 हिजरी। एक व्यक्ति ने एक हज़ार रुपये का नोट दस महीने के वादे पर ग्यारह सौ रुपये में दिया। देनदार ने अपने वादे पर लेनदार को सौ-सौ रुपये के ग्यारह नोट दिए (वही नोट नहीं दिए)। क्या यह जायज़ है? उत्तर से अनुग्रहित करें।

उत्तर: यदि हज़ार रुपये का नोट कर्ज़ के तौर पर दिया गया और हज़ार से ऊपर पैसा लेना तय हुआ, तो यह हराम है, यह सूद (ब्याज) है। हाँ, यदि हज़ार रुपये का नोट ग्यारह सौ रुपये में बेचा गया और

भुगतान की अवधि, उदाहरण के लिए, दस महीने तय हुई, जब वादे का दिन आया तो विक्रेता ने खरीदार से कीमत माँगी, और उसने कहा कि 'मेरे पास रुपये नहीं हैं, ग्यारह सौ रुपये के नोट...'

पृष्ठ 273/715

سمجھ کر اٹھالئے بجائے اس کے کہ فی الواقع زید پر نوکری ہی کا دین تھا اور زید سے اسی کو ملنا چاہئے تھا فکان دائما ظفر بجنس حقہ (وہ ایسا قرض خواہ ہوا وہ اپنے حق کی جنس کو وصول کرنے میں کامیاب ہو گیا۔ ت) اب زید نوکر کے مطالبہ سے بری ہو گیا لانہ استوفی ماکان لہ (کیونکہ اس نے اپنا حق پورا وصول کر لیا۔ ت) پس خلاصہ حکم یہ ہے کہ اگر نوکر یہ کہہ کر لایا تھا کہ میرے آقا کو قرض دے، تو مہاجن کے پچاس روپے زید پر قائم اور زید کے پچاس روپے نوکر پر لازم، اور اگر یہ کہہ کر لایا کہ مجھے آقا کے لئے قرض دے، تو مہاجن کے پچاس روپے نوکر پر واجب اور نوکر کے پچاس روپے جو آقا پر تھے ادا ہو گئے۔ غرض نوکر پر ہر طرح پچاس روپے کا مطالبہ ہے، پہلی صورت میں آقا دوسری میں مہاجن کا، اور زید پر پہلی صورت میں مہاجن کا مطالبہ ہے دوسری میں کسی کا نہیں، واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۱۱۷: از سرنیاں ضلع بریلی مرسلہ امیر علی صاحب قادری ۲ رجب ۱۳۳۱ھ بھاؤ بکتا زید سے اناج خرید کیا مگر ادھار فصل پر بھاؤ بکتا جتنا روپیہ ادھر تھا اس کا زید نے مول لیا۔ الجواب: اگر زید نے بیچتے وقت شرط کر لی تھی کہ اس کی قیمت میں روپیہ نہ لوں گا بلکہ روپیہ کے عوض فصل کے بھاؤ سے اناج لوں گا، تو یہ ناجائز ہے اور اگر شرط نہ کی تھی اور فصل پر اس سے اپنا آتا ہوا روپیہ مانگا اس نے کہا روپیہ تو میرے پاس نہیں اس کا اناج لے لو، تو یہ جائز ہے جبکہ وہی اناج نہ ہو جو زید سے خریدا تھا یا وہی ہو تو اتنے ہی بھاؤ کو دیا جائے جتنے کو خریدا تھا ورنہ ناجائز ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۱۸: از دھوراجی ضلع کاٹھیاواڑ محلہ سیاہی گراں مرسلہ جناب حاجی عیسیٰ خان محمد صاحب رضوی یکم ذی الحجہ ۱۳۳۲ھ ایک شخص کو ایک ہزار روپے کا نوٹ دس ماہ کے وعدہ

سے گیارہ سو روپے کو دیا، قرضدار نے اپنے وعدہ پر قرض خواہ کو گیارہ سو روپے کے دوسرے نوٹ دئے (وہی نہیں دیئے) تو جائز یا کیا؟ جواب سے سرفراز فرمائیں۔ الجواب: اگر ہزار روپے کا نوٹ قرض دیا اور پیسہ اوپر ہزار لینا ٹھہرا تو حرام ہے سود ہے ہاں اگر ہزار روپے کا نوٹ گیارہ سو روپے کو بیچا اور ادائے ثمن کا وعدہ مثلاً دس ماہ کا قرار پایا جب وعدہ کا دن آیا بائع نے زر ثمن کا مشتری سے مطالبہ کیا اس نے کہا میرے پاس روپیہ نہیں گیارہ سو روپے کے نوٹ

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

Take it in exchange for the price; if he accepted and gave notes in return, it is permissible. This is the issue of 'purchasing a debt from the debtor'. (T) And Allah Almighty knows best.

Problem 119: From Paksar Anwan Post Office Rasulpur, District Rae Bareli, asked by Abdul Wahab. 20 Ramadan 1339 AH. Question: What do the scholars of religion say regarding this matter: Bakr took one maund of wheat from Zaid in the month of Katak for the purpose of sowing, and upon harvesting the crop in the month of Chait, returned exactly one maund of wheat, i.e., there was no increase or decrease. Is this permissible or not? Please explain and be rewarded. Answer: It is permissible. Acting upon the saying of Imam Abu Yusuf that in measured (kaili) and weighed (wazni) items, custom (urf) is absolutely considered. This is practiced by people and the borrowing of wheat by weight is common among them. There is no power to avoid sin and no strength to do good except from Allah, the Most High, the Magnificent. And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 120: Asked by Alif Khan, Manager of Madrasa Anjuman-e-Islamia, Sangwa town, State of Kota, Rajputana, on Sunday, 3 Shaban 1336 AH. (1) Is it Sharia-compliant to sell a note valued at 25 rupees along with 100 or 500 rupees for approximately 50 rupees to a Hindu or Muslim on a promise of a certain period? Similarly, is it correct to sell gold jewelry or any trade item cloth along with rupees on credit at a higher price, and to sell only the note on credit at a higher price than its original value? (2) Is it correct to sell commercial grain on credit at a price higher than the current market rate? Answer: (1) If a borrower, out of necessity, buys a low-value item at a high price along with the loan such that the sale is conditional on that loan, it is unanimously forbidden (haram).

फ़तावा रज़विया (खंड १७)

इसे क़ीमत के बदले ले लो; यदि उसने स्वीकार कर लिया और बदले में नोट दे दिए, तो यह जायज़ है। यह 'क़र्ज़दार से क़र्ज़ ख़रीदने' का मसला है। (त) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला ११९: पक्सर अनवान डाकखाना रसूलपुर, ज़िला रायबरेली, सायल अब्दुल वहाब। २० रमज़ान १३३९ हिजरी। प्रश्न: विद्वान इस बारे में क्या कहते हैं कि बक्र ने ज़ैद से कातक के महीने में बुवाई के उद्देश्य से एक मन गेहूं लिया और फसल कटने पर चैत के महीने में ठीक एक मन गेहूं वापस कर दिया, यानी कोई कमी-बेशी नहीं हुई। क्या यह जायज़ है या नहीं? बयान फ़रमाएं और सवाब पाएं। उत्तर: यह जायज़ है। इमाम अबू यूसुफ़ के कथन पर अमल करते हुए कि नापी जाने वाली और तौली जाने वाली चीज़ों में पूरी तरह से प्रथा (उर्फ़) का एतबार है। लोग इस पर अमल करते हैं और गेहूं को वज़न के आधार पर उधार लेना लोगों में प्रचलित है। अल्लाह के सिवा न गुनाह से बचने की ताक़त है और न नेकी की शक्ति, जो बुलंद और अज़मत वाला है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला १२०: सायल अलिफ़ खान, प्रबंधक मदरसा अंजुमन-ए-इस्लामिया, कस्बा सांगवा, रियासत कोटा, राजपूताना, रविवार ३ शाबान १३३६ हिजरी। (१) क्या २५ रुपये के नोट को १०० या ५०० रुपये के साथ लगभग ५० रुपये की कीमत पर किसी हिंदू या मुसलमान को किसी समय की अवधि के वादे पर बेचना शरीयत के अनुसार सही है? इसी तरह, सोने के आभूषण या किसी व्यापारिक कपड़े को रुपयों के साथ उधार में अधिक कीमत पर बेचना और अकेले नोट को उसकी असली कीमत से अधिक पर उधार बेचना सही है या नहीं? (२) क्या व्यापारिक अनाज को उधार में वर्तमान दर से अधिक कीमत पर बेचना सही है या नहीं? उत्तर: (१) यदि क़र्ज़ लेने वाला ज़रूरत के कारण क़र्ज़ के साथ कम मूल्य की चीज़ अधिक क़ीमत पर इस तरह ख़रीदे कि वह बिक्री उस क़र्ज़ पर शर्त हो, तो यह सर्वसम्मति से हराम है।

पृष्ठ २७४/७१५

زرِ ثمن کے بدلے لے لو، اس نے قبول کیا اور نوٹ اس کے عوض میں دے دئے تو یہ جائز ہے وھی مسئلہ شراء القرض من المستقرض (یہ مقروض سے قرض خریدنے کا مسئلہ ہے۔ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۱۹: از پکسر انواں ڈاکخانہ رسول پور ضلع رائے بریلی مسئولہ عبدالوہاب ۲۰ رمضان ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید سے بکر نے ماہ کاتک میں بغرض تخم ریزی ایک من گیہوں لیا اور فصل کٹنے پر ماہ چیت میں ایک من کا ایک من گیہوں واپس دیا یعنی کچھ کمی بیشی نہیں ہوئی، جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔ الجواب: جائز ہے، عملا بقول الامام ابی یوسف من اعتبار العرف فی الکیل والوزن مطلقاً وقد تعمل بہ الناس وشاع بینھم استقراض الحنطۃ وزناً، ولاحول ولا قوۃ الا باللہ العلی العظیم۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ امام ابو یوسف کے قول پر عمل کرتے ہوئے کہ کیلی اور وزنی اشیاء میں مطلقاً عرف کا اعتبار ہے اور لوگوں کا اس پر عمل ہے اور گندم کو وزن کے اعتبار سے قرض لینا لوگوں میں رائج ہے، گناہ سے بچنے اور نیکی کی طاقت نہیں مگر بلند و عظمت والے معبود کی طرف سے۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ ۱۲۰: مسئولہ الف خان مہتمم مدرسہ انجمن اسلامیہ قصبہ سانگوا ریاست کوٹہ راجپوتانہ بروز یکشنبہ ۳ شعبان ۱۳۳۶ھ (۱) نوٹ قیمتی پچیس روپے کو ہمراہ یک صد یا پانچ سو روپے کے قریباً پچاس روپے کی قیمت پر بدست کسی ہندو یا مسلمان کے کسی مدت کے وعدہ پر بیچ کرنا شرعاً درست ہے کہ نہیں؟ اسی طرح زیور طلائی یا کوئی پارچہ کسی شیء تجارت کو ہمراہ روپے ادھار میں زیادہ قیمت پر بیچ کرنا اور تنہا نوٹ کو بھی اصلی قیمت سے زیادہ ادھار میں بیچ کرنا درست ہے کہ نہیں؟ (۲) غلہ تجارتی کو ادھار میں موجودہ نرخ سے زیادہ قیمت پر بیچ کرنا درست

ہے کہ نہیں؟ الجواب: (۱) قرض لینے والا بضرورت قرض قرض کے ساتھ کم مالیت کی شے زیادہ قیمت کو اس طرح خریدے کہ وہ بیع اس قرض پر مشروط ہو تو بالاتفاق حرام ہے،

Volume 17 (17) Fatawa Razawiyya

- Because the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) forbade a sale with a condition. (1) | Because the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) forbade buying with a condition. (T)

Whether this condition is explicit (nassan) or implicit (dalalatan), "Because what is customary is like what is stipulated" (2) (Because known custom is like a condition. T). If the loan contract comes first and this sale is not explicitly or implicitly conditioned in it, there is a difference of opinion. Some scholars allow it, saying this is not a sale with a condition of a loan, but rather a loan with a condition of a sale, and a loan is not invalidated by corrupt conditions. However, the weightier opinion is that this too is forbidden because even if the condition does not invalidate the loan, it is a loan through which the lender has gained a benefit, and this is impermissible. The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) says: "Every loan that draws a benefit is usury (riba)" (3) (Any loan that draws profit is interest. T). Therefore, all these situations should be avoided, the word 'loan' should not even be mentioned, and pure sale should take place on a fixed promise. Now, the sale of currency notes in exchange for rupees will be valid even if a ten-rupee note is sold for a hundred. The difference in both cases is what the Great Quran stated:

- "And Allah has permitted trade and forbidden interest." (4) | Allah Almighty made trade lawful and interest unlawful. (T)

But the sale of gold and silver will still not be permissible (in this way), but the sale of notes will be.

- The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "When types are different, then sell however you wish." (5) | The Noble Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said that when the items of exchange are of different types, then sell as you please. (T)

And giving this higher price, although it is in a state of a loan, is permissible because of the sale, even if it is not preferable. It is mentioned in 'Durr al-Mukhtar':

Buying something at a high price due to the need for a loan. | Buying something at a high price because of the need for a loan.

1. Nasb al-Rayah, Book of Sales, Chapter of Corrupt Sales, Al-Maktabat al-Islamiyya, Riyadh 4/17
2. Fath al-Qadir, Book of Sales, Chapter of Murabaha and Tawliya, Maktaba Nuriyya Razawiyya, Sukkur 6/436
3. Kanz al-Ummal, Hadith 15512, Mu'assasatur Risala, Beirut 6/238
4. Al-Quran al-Karim 2/275
5. Nasb al-Rayah for Hadiths of al-Hidaya, Book of Sales, Al-Maktabat al-Islamiyya, Riyadh 4/4

जिल्द सत्रह (17) फतावा रज़विया

- क्योंकि नबी सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने शर्त के साथ खरीद-फरोख्त से मना फरमाया है। (1) | क्योंकि नबी सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने शर्त के साथ बिक्री से मना फरमाया है। (त)

चाहे यह शर्त स्पष्ट (नसन) हो या सांकेतिक (दलालतन), "क्योंकि जो प्रथा में है वह शर्त के समान है" (2) (क्योंकि जो जाना-पहचाना है, वह शर्त की तरह होता है। त)। यदि ऋण (क़र्ज़) का अनुबंध पहले हो और यह बिक्री इसमें स्पष्ट या सांकेतिक रूप से शर्त न हो तो इसमें मतभेद है। कुछ विद्वान इसकी अनुमति देते हैं कि यह ऋण की शर्त पर बिक्री नहीं बल्कि बिक्री की शर्त पर ऋण है, और ऋण भ्रष्ट शर्तों से अमान्य नहीं होता। लेकिन प्रबल राय यह है कि यह भी वर्जित है क्योंकि भले ही शर्त ऋण को खराब न करे, लेकिन यह वह ऋण है जिसके माध्यम से ऋणदाता ने लाभ प्राप्त किया है, और यह अनुचित है। नबी सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फरमाते हैं: "हर वह ऋण जो लाभ खींचे वह सूद (ब्याज) है" (3) (जो ऋण लाभ खींचे वह सूद है। त)। इसलिए इन सभी स्थितियों को त्याग दिया जाना चाहिए, ऋण का नाम भी न लिया जाए और शुद्ध बिक्री एक निश्चित वादे पर हो। अब करेंसी नोट की बिक्री रुपयों के बदले जायज़ होगी भले ही दस का नोट सौ में बेचा जाए, और दोनों स्थितियों में वही अंतर है जो कुरआन अज़ीम ने फरमाया:

- "और अल्लाह ने व्यापार को हलाल किया और ब्याज को हराम किया।" (4) | अल्लाह तआला ने बिक्री को हलाल और सूद को हराम किया। (त)

मगर चाँदी-सोने की बिक्री अब भी (इस तरह) जायज़ न होगी और नोट की जायज़ होगी।

- नबी सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने फरमाया: "जब प्रकार भिन्न हों, तो जैसे चाहो बेचो।" (5) | नबी करीम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने फरमाया कि जब दोनों विनिमय वस्तुएं अलग-अलग प्रकार की हों, तो जैसे चाहो बिक्री करो। (त)

और यह अधिक कीमत देना भले ही ऋण की स्थिति में हो, बिक्री की वजह से जायज़ है, चाहे वह बेहतर न हो। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

ऋण की आवश्यकता के कारण किसी वस्तु को ऊँची कीमत पर खरीदना। | किसी चीज़ को क़र्ज़ की ज़रूरत की वजह से महँगे दामों पर खरीदना।

1. नसबुर राया, किताबुल बुयूअ, बाबुल बेइल फासिद, अल-मकतबतुल इस्लामिया, रियाद 4/17
2. फतहुल क़दीर, किताबुल बुयूअ, बाबुल मुराबाहा वत तौलिया, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर 6/436
3. कंज़ुल उम्माल, हदीस 15512, मुअस्ससतुर रिसाला, बेरूत 6/238
4. अल-कुरआनुल करीम 2/275
5. नसबुर राया ले अहादीसिल हिदाया, किताबुल बुयूअ, अल-मकतबतुल इस्लामिया, रियाद 4/4

पृष्ठ 275 का 715

لان النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نھی عن بیع و شرط -1 | کیونکہ نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے بیع و شرط سے منع فرمایا ہے۔(ت)

خواہ یہ شرط نصاً ہو یا دلالۃً "لان المعروف کالمشروط" 2 (کیونکہ معروف، مشروط کی طرح ہوتا ہے۔ت) او اگر عقد قرض پہلے ہو اور یہ بیع اس میں نصاً یا دلالۃً مشروط نہ ہو تو اس میں اختلاف ہے، بعض علماء اجازت دیتے ہیں کہ یہ بیع بشرط القرض نہیں بلکہ قرض بشرط البیع ہے اور قرض شروط فاسدہ سے فاسد نہیں ہوتا، اور راجح یہ ہے کہ یہ بھی ممنوع ہے کہ اگرچہ شرط مفسد قرض نہیں مگر یہ وہ قرض ہے جس کے ذریعہ سے ایک منفعت قرض دینے والے نے حاصل کی اور یہ ناجائز ہے۔ نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: "کل قرض جر منفعۃ فھو ربو" 3 (جو قرض نفع کھینچے وہ سود ہے۔ت) لہٰذا ان سب صورتوں کو ترک کیا جائے وار قرض کا نام ہی نہ لیا جائے اور خالص بیع ایک وعدہ معینہ پر ہو، اب نوٹ کی بیع روپے کے عوض جائز ہوگی اگرچہ دس کا نوٹ سو کو بیچے، اور دونوں صورتوں میں فرق وہی ہے جو قرآن عظیم نے فرمایا:

"وَاَحَلَّ اللّٰہُ الْبَیْعَ وَحَرَّمَ الرِّبٰوا" 4۔ | اللہ تعالٰی نے بیع کو حلال وار سود کو حرام کیا۔ (ت)

مگر چاندی سونے کی بیع اب بھی جائز نہ ہوگی اور نوٹ کی جائز ہوگی۔

قال النبی صلی اللہ تعالٰی اعلم وسلم اذا اختلف النوعان فبیعوا کیف شئتم 5۔ | نبی کریم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا کہ جب بدلین مختلف نوعوں کے ہوں تو جیسے چاہو بیع کرو۔(ت)

اور یہ زیادہ قیمت دینا اگرچہ بحالت قرض ہے بوجہ بیع جائز ہے اگر چہ اولٰی نہیں ، در مختار میں ہے:

شراء شيئ بثمن غال لحاجۃ القرض | کسی چیز کو حاجت قرض کی وجہ سے مہنگے داموں

1 نصب الراية كتاب البيوع باب البيع الفاسد المكتبة الاسلامية لصاحبها الرياض ۴/ ۱۷ 2 فتح القدير كتاب البيوع باب المرابحه والتولية مكتبه نوريہ رضويہ سكهر ۶/ ۴۳۶ 3 كنز العمال حديث ۱۵۵۱۲ مؤسسة الرساله بيروت ۶/ ۲۳۸ 4 القرآن الكريم ۲/ ۲۷۵ 5 نصب الراية لاحاديث الهدايه كتاب البيوع المكتبة الاسلاميہ لصاحبها الرياض ۴/ ۴

Volume 17 Fatawa Razawiyya

It is permissible but disliked[1] - And Allah Almighty knows best. (2) It is correct. And Allah Almighty knows best. Buying is permissible and disliked (T). And Allah Almighty knows best.

Problem 122: From Chhaoni Bans Bareilly, Bungalow 42, employee of Major Store Sahib, Sixteen Mr. Shakoor Muhammad Sahib Khansaman, 9 Rabi al-Awwal 1332 AH. I am keeping a person's field as collateral (mortgage) for twenty-five rupees. After a period of two years, that person will take back his field after giving us twenty-five rupees. For two years, we will plow this field, work on it, and sow whatever we desire, such as chickpeas, wheat, maize, etc. The harvest will belong to us, and we will also pay the government tax that remains on it. After two years, he will return the full twenty-five rupees and take back his field. Now, kindly and graciously write if this is interest (usury)? If it has become interest, I will not keep it; and if it is not interest, I will. Please explain it well and write back because someone here is of the opinion that this has become interest. Now this matter depends on your opinion; if it is interest, we will not keep our field as collateral with anyone else either.

The Answer: This is neither a mortgage (Rahn) according to Sharia, nor is it interest in any way. For a thing to be a mortgage, it is necessary that it belongs to the person giving it as collateral, or the owner has given permission for it. A thing cannot be mortgaged without the permission of the owner. Here, both these conditions are missing. It is clear that the field is not the property of the cultivator; it belongs to the landlord, and the landlord has not given permission for its mortgage. On his behalf, it is a lease (Ijarah) for which he will take the rent, i.e., tax. 'Mortgage and lease are two contradictory contracts that cannot coexist' (T). So, let him mention to the landlord that, for example, for two years this land will be under my cultivation and I will pay the tax. The landlord will give permission. Now, this cultivation and its produce will all undoubtedly be halal. If he takes back exactly the same amount of money lent to the first cultivator and not more, then this situation is not interest in any way. And Allah Almighty knows best.

[1] Durr-e-Mukhtar, Book of Sales, Chapter on Loans, Mujtabai Press, Delhi, 2/204 Page 276 of 715

यह जायज़ है और मकरूह है[1] - और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (2) सही है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। ख़रीदना जायज़ और मकरूह है (त) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसअला 122: छावनी बांस बरेली, बंगला 42, मेजर स्टोर साहब के मुलाज़िम, सोलह जनाब शकूर मोहम्मद साहब खानसामां, 9 रबी-उल-अव्वल 1332 हिजरी। मैं एक व्यक्ति का खेत पच्चीस रुपये में गिरवी रख रहा हूँ। दो साल की अवधि के बाद, वह व्यक्ति हमें पच्चीस रुपये देकर अपना खेत वापस ले लेगा। इन दो सालों तक हम इस खेत में हल चलाएंगे, मेहनत करेंगे और जो हमारी मर्जी होगी वह बोएंगे, जैसे चना, गेहूं, मक्का आदि। तो जो फसल होगी वह हमारी होगी, और सरकारी लगान भी हम देंगे जो शेष है। दो साल बाद वह पूरे पच्चीस रुपये वापस देकर अपना खेत वापस ले लेगा। अब कृपा करके और मेहरबानी के साथ यह लिखकर बतायें कि कहीं यह ब्याज तो नहीं हो गया? अगर ब्याज हो गया हो तो मैं नहीं रखूंगा और अगर ब्याज न हुआ हो तो रख लूंगा। अच्छी तरह समझा कर लिखें क्योंकि यहाँ एक साहब की राय है कि यह ब्याज हो गया है। अब यह मामला आपकी राय पर निर्भर है; अगर ब्याज हो गया तो हम भी अपना खेत किसी दूसरे के पास गिरवी नहीं रखेंगे।

उत्तर: यह न तो शरीयत के अनुसार रहन (गिरवी) है और न ही किसी तरह से ब्याज है। किसी चीज़ के रहन होने के लिए यह ज़रूरी है कि वह चीज़ गिरवी रखने वाले की मिल्कियत (स्वामित्व) हो या मालिक ने उसे रहन रखने की अनुमति दी हो। मालिक की अनुमति के बिना किसी की मिल्कियत रहन नहीं हो सकती। यहाँ ये दोनों स्थितियाँ स्पष्ट हैं कि खेत काश्तकार (किसान) की मिल्कियत नहीं है, बल्कि ज़मींदार की मिल्कियत है, और ज़मींदार ने इसके रहन की अनुमति नहीं दी है। उसकी तरफ से यह इजारा (किराया/लीज़) में है, जिसका वह किराया यानी लगान लेगा। 'रहन और इजारा दो ऐसे अनुबंध हैं जो एक-दूसरे के विपरीत हैं और एक साथ नहीं हो सकते' (त)। अतः वह ज़मींदार से यह उल्लेख कर दे कि मिसाल के तौर पर दो साल तक यह ज़मीन मेरी काश्त में रहेगी और मैं लगान दूँगा। ज़मींदार अनुमति दे देगा। अब यह काश्त और इसका फल सब निस्संदेह हलाल होगा। पहले काश्तकार को जितना रुपया उधार दिया है, उतना ही वापस ले, उससे ज़्यादा न ले, तो यह स्थिति किसी भी तरह ब्याज नहीं है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

[1] दुर्रे मुख़्तार, किताबुल बुयू, कर्ज़ का अध्याय, मतबा मुज्तबाई, दिल्ली, 2/204 पृष्ठ 276/715

یجوز ویکرہ - ۱ واللہ تعالٰی اعلم- (۲) درست ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم خریدنا جائز اور مکروہ ہے (ت) واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۱۲۲: از چھاؤنی بانس بریلی بنگلہ ۴۲ ملازم میجر اسٹور صاحب سولہ جناب شکور محمد صاحب خانساماں ۹ ربیع الاول ۱۳۳۲ھ میں ایک شخص کا کھیت مبلغ پچیس روپے میں گروی رکھتا ہوں اپنے پاس، عرصہ دو سال کے بعد وہ شخص اپنا کھیت مبلغ پچیس روپے ہم کو دے کر واپس لے گا اور دو سال تک اس کھیت میں جوت کر اور اس میں محنت کر کے جو ہماری طبیعت چاہے وہ ہم بوئیں گے مثلاً چنا، گیہوں اور مکاؤ وغیرہ، تو جو فصل اس میں ہوگی وہ ہماری ہے، اور سرکاری لگان بھی ہم دیں گے جو اس کی باقی ہے، اور بعد دو برس کے وہ پورے پورے مبلغ پچیس روپے واپس دے کر اپنا کھیت واپس لے لے گا، اب ازراہِ مہربانی اور عنایت پروری کے ساتھ یہ تحریر کریں کہ یہ بیاج تو نہیں ہوا؟ اگر بیان ہو گیا تو نہ رکھوں اور اگر بیاج نہ ہوا ہو تو رکھ لوں۔ خوب اچھی طرح سمجھا کر تحریر کر دو کیونکہ ایک صاحب اس میں رائے دیتے ہیں کہ یہ بیاج ہو گیا، اب آپ کیہ رائے پر ہے یہ معاملہ ، اگر بیاج ہو گیا تو ہم بھی اپنا کھیت دوسرے کے پاس نہ گروی رکھیں۔

الجواب: یہ نہ شرعاً رہن ہے نہ کسی طرح سود رہنے کے لئے ضروری ہے کہ وہ شئی رہن رکھنے والے کی ملک ہو یا مالک نے اسے رہن کی اجازت دی ہو گیر کی ملک ہے اس کی اجازت کے رہن نہیں ہو سکتی، یہاں یہ دونوں صورتیں، ظاہر ہے کہ کھیت کاشتکار کی ملک نہیں زمیندار کی ملک ہے اور زمیندار نے اسکے رہن کی اجازت نہ دی کہ اسکی طرف سے وہ اجارہ میں ہے وہ اس کی اجرت یعنی لگان لے گا والرہن والاجارۃ عقدان متنافیان لایجتمعان (رہن اور اجارہ دو

ایسے عقد ہیں جو ایک دوسرے کے منافی ہیں آپس میں جمع نہیں ہو سکتے۔ ت) تو اتنے زمانے کے لئے یہ زمیندار سے ذکر کر دے کہ مثلاً دو برس تک یہ زمین میری کاشت میں رہے گی اور میں لگان دوں گا وہ اجازت دے دے گا اب یہ کاشت اور اس کا محاصل سب بلاشبہ حلال ہوگا، پہلے کاشت کار کو جتنا روپیہ قرض دیا ہے اسی قدر اس سے واپس لے زائد نہ لے تو یہ صورت کسی طرح سود نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم

۱ درمختار کتاب البیوع فصل فی القرض مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۲۰۴ Page 276 of 715

Fatawa Razvia Volume 17

Problem 123 to 124: From Jaes District Rai Bareli, Mohalla Zer Masjid, House of Haji Ibrahim, sent by Waliullah Sahib, 2nd Rabi-ul-Awwal Sharif 1320 AH. What do the scholars of the religion say about these issues: Question 1: Is it permissible to give bad grain and take good grain back at harvest time? Question 2: To give money for rice or wheat by deducting/fixing a rate to be taken at harvest time; if the crop fails, adding interest to that money based on the same rate, i.e., when calculated at that rate the amount increases, then leaving it for the next harvest or taking a cow or ox in its place—is this permissible or not? Only.

The Answer: (1) If one gave inferior grain and there was no condition that "I will take good grain", and the debtor willingly gave good grain of the same quantity as the debt taken, then there is no harm in it. But if the loan is given on the condition that "I give bad grain and will take back an equal, lesser, or greater amount of good grain", then it is impermissible.

[Left Box:] Because it is contrary to the Shari'ah ruling that debts must be paid with their like, and reduction is also not permissible because equality in quantity is a condition, and good and bad are equal in this regard. And Allah Almighty knows best. [Right Box:] Because it is contrary to the Shari'ah ruling that debts are settled with their equivalent, and decrease is also not permissible because equality in terms of quantity is a condition; high quality and low quality are equal in this. And Allah Almighty knows best. (T)

(2) Giving money for grain by fixing a rate, if it is in these words that "we will take it at this rate at harvest", then it is merely a promise which the grain-owner is not bound to fulfill. And if it is like this: "bought this much grain at this rate for this much money", then this is *Bai' Salam* (pre-paid forward sale). If all its conditions are met, it is permissible; otherwise, it is forbidden (*Haram*). Then, in any case, when he cannot provide that grain, it is absolutely forbidden (*Haram*) to take money or any object like a cow in exchange based on that agreed rate.

[Left Box:] Due to the Hadith: "Do not take except your [agreed] product or your capital." 1 — And Allah Almighty knows best, and His knowledge is most complete and most wise. [Right Box:] Because of this Hadith, do not take anything other than the purchase of *Bai' Salam* or the capital. And Allah Almighty knows best, and His knowledge is most complete and most wise. (T)

1 Durr-ul-Mukhtar, Kitab-ul-Buyu', Bab-us-Salam, Matba' Mujtabai Delhi, 2/49; Tabayin-ul-Haqa'iq, Kitab-ul-Buyu', Bab-us-Salam, Al-Matba-ul-Kubra Bulaq Egypt, 4/118. Page 277 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

मसला 123 से 124: जायस, जिला रायबरेली, मोहल्ला ज़ेर मस्जिद, हाजी इब्राहिम का मकान, प्रेषक वलीउल्लाह साहिब, 2 रबी-उल-अव्वल शरीफ़ 1320 हिजरी। दीन के उलमा इन मसलों में क्या फरमाते हैं: सवाल अव्वल (पहला): खराब अनाज खिलाना और फसल पर अच्छा अनाज लेना जायज़ है या नहीं? सवाल दोम (दूसरा): चावल या गेहूं पर रुपया देना भाव (दर) तय करके कि फसल पर इस दर से लेंगे; फसल न हुई तो उस रुपये को उसी भाव से जोड़कर ज़्यादा करके, यानी जब उस भाव को जोड़ा तो अब रुपया ज़्यादा हो, दूसरी फसल पर छोड़ देना या गाय-बैल लगा लेना जायज़ है या नहीं? फ़क़त।

जवाब: (1) अगर उसने घटिया अनाज दिया और यह शर्त न थी कि 'मैं उमदा (अच्छा) अनाज लूँगा', और कर्जदार ने अपनी खुशी से उतना ही उमदा अनाज दे दिया जितना कर्ज लिया था, तो इसमें कोई हर्ज नहीं। और अगर इसी शर्त पर कर्ज दे कि 'खराब देता हूँ और उसके बराबर या कम या ज़्यादा उमदा लूँगा', तो यह नाजायज़ है।

[बायाँ बॉक्स:] क्योंकि यह शरीअत के इस हुक्म के खिलाफ है कि कर्ज की अदायगी उसके मिसल (समान) के साथ होती है और कमी भी जायज़ नहीं क्योंकि इसमें मिकदार (मात्रा) के ऐतबार से बराबरी शर्त है, और अच्छा और घटिया इसमें बराबर हैं। वल्लाहु तआला आलम। [दायाँ बॉक्स:] क्योंकि यह शरीअत के इस हुक्म के खिलाफ है कि कर्जों की अदायगी उनके समान (मिसल) के साथ होती है और कमी भी जायज़ नहीं क्योंकि इसमें मात्रा के ऐतबार से समानता शर्त है, उमदा और घटिया इसमें बराबर हैं। वल्लाहु तआला आलम। (त)

(2) अनाज का रुपया भाव तय करके देना अगर इन्हीं लफ़्ज़ों से हो कि 'फसल पर इस भाव से लेंगे', तो यह महज एक वादा है जिसे पूरा करना अनाज वाले पर लाज़िम नहीं। और अगर यूँ है कि 'इतना अनाज इस भाव से इतने रुपये का खरीद लिया', तो यह 'बैअ-सल्लम' है। अगर इसकी सब शर्तें पाई गईं तो जायज़ है, वरना हराम। फिर बहरहाल जब वह अनाज न दे सके, तो उस तयशुदा भाव के हिसाब से रुपया या उसके बदले गाय वगैरा कोई चीज़ लेना कतई हराम है।

[बायाँ बॉक्स:] हदीस के कारण: "अपने (तयशुदा) माल या अपने मूलधन के अलावा कुछ न लो।" 1 - वल्लाहु तआला आलम व इल्मुहू अतम व अहकम। [दायाँ बॉक्स:] इस हदीस की वजह से बैअ-

सल्लम की चीज़ या मूलधन (रासुल माल) के अलावा कुछ मत लो। वल्लाहु तआला आलम व इल्मुहू अतम व अहकम। (त)

1 दुर्रे मुख्तार, किताबुल बुयूअ, बाब-उस-सल्लम, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 2/49; तबयीनुल हकाइक, किताबुल बुयूअ, बाब-उस-सल्लम, अल-मतबा-तुल-कुबरा बोलाक मिस्र, 4/118. पेज 277 का 715

مسئلہ ۱۲۳ تا ۱۲۴ : از جائس ضلع رائے بریلی محلہ زیر مسجد مکان حاجی ابراہیم مرسلہ ولی اللہ صاحب ۲ ربیع الاول شریف ۱۳۲۰ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ان مسائل میں: سوال اول: خراب اناج کھلانا اور فصل پر اچھا اناج لینا جائز ہے یا نہیں؟ سوال دوم: چاول یا گیہوں پر روپیہ دینا نرخ کاٹ کر کہ فصل پر اس نرخ سے لیں گے فصل نہ ہوئی تو اس روپیہ کو اسی بھاؤ سے جوڑ کر زیادہ کر کے یعنی جب اس بھاؤ کو جوڑا تو اب روپیہ زیادہ ہو دوسری فصل پر چھوڑ دینا یا گائے بیل لگا لینا جائز ہے یا نہیں؟ فقط

الجواب: (۱) اگر اس نے اناج ناقص کر دیا اور یہ شرط نہ تھی کہ عمدہ لوں گا قرضدار نے اپنی خوشی سے عمدہ ناج دے دیا اسی قدر جتنا قرض لیا تھا تو اس میں مضائقہ نہیں اور اگر اسی شرط پر قرض دے کہ خراب دیتا ہوں اس کے برابر یا کم یا زائد عمدہ لوں گا ، تو یہ ناجائز ہے،

[بایاں باکس:] لکونہ خلاف حکم الشرع من ان الدیون تقضی بأمثالھا ولم یجز التنقیص ایضا لان الشرط المساواۃ قدرا و الجید والردی فیہ سواء- واللہ تعالٰی اعلم- [دایاں باکس:] کیونکہ یہ شرع کے اس حکم کے خلاف ہے کہ قرضوں کی ادائیگی ان کی مثل کے ساتھ ہوتی ہے اور کمی بھی جائز نہیں کیونکہ اس میں مقدار کے اعتبار سے مساوات شرط ہے، عمدہ اور گھٹیا اس میں برابر ہیں، واللہ تعالٰی اعلم (ت)

(۲) اناج روپیہ نرخ کاٹ کر دینا اگر انہیں لفظوں سے ہو کہ فصل پر اس نرخ سے لیں گے ، تو نرا وعدہ ہے جس کا وفا کرنا ناج والے پر لازم نہیں اور اگر یوں ہے کہ اتنا ناج اس بھاؤ سے اتنے روپیہ کا خرید لیا تو یہ بیع سلم ہے اس کی سب شرطیں پائی گئیں تو جائز ہے ورنہ حرام- پھر بہر

حال جب وہ ناج نہ دے سکے تو اس قرار داد بھاؤ کے حساب سے روپیہ یا اس کے بدلے گائے وغیرہ کوئی شے لینا قطعی حرام ہے،

[بایاں باکس:] لحدیث لا تأخذ الاصلمك او راس مالك ۱ - واللہ تعالٰی اعلم وعلمہ اتم و احکم۔ [دایاں باکس:] اس حدیث کی وجہ سے بیع سلم کی بیع یا راس المال کے علاوہ مت لے ، واللہ تعالیٰ علم وعلمہ اتم واحکم۔ (ت)

۱ درمختار کتاب البیوع باب السلم مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۴۹، تبیین الحقائق کتاب البیوع باب السلم المطبعۃ الکبرٰی بولاق مصر ۴ / ۱۱۸

Fatawa Razawiyya (17)

Issue 125: From Marehra Sharif, District Etah, sent by Sheikh Shaan-e-Ilahi, 15 Jamadi-ul-Awwal 1317 AH. Question: What do the scholars of religion say regarding this matter: if Zaid gives a ten-rupee note as a loan to Amr, and at that time or after some days Amr pays back twelve rupees in cash, can this be classified as interest (usury)? And are Zaid and Amr sinners or not? Clarify and be rewarded. Answer: The Answer: If this condition was made while giving the loan, then undoubtedly it is interest, absolutely forbidden (haram), and a major sin. The one giving such a loan is cursed, and the one taking it is also cursed like him, provided the loan was taken without a legitimate Sharia necessity. It is mentioned in the Hadith that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

Arabic: "كل قرض جر منفعة فهو ربا" Urdu Translation: Any benefit obtained through a loan is interest. 1 - Narrated by Al-Harith ibn Usama from the Leader of the Faithful, Hazrat Ali (may Allah honor his face).

In multiple authentic Hadiths, it is stated that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

Arabic: "لعن الله آكل الربو ومؤكله وكاتبه وشاهده" Urdu Translation: Allah's curse be upon the one who consumes interest, the one who gives interest to others, the one who writes the interest document, and its witnesses. 2 - Narrated by Ahmad, Abu Dawud, Tirmidhi, and Ibn Majah with an authentic chain from Abu Mas'ud; and Ahmad and Nasa'i with an authentic chain from the Leader of the Faithful Ali (may Allah be pleased with them both); and it is in Muslim with the wording "The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) cursed..." Imam Ahmad narrated from Ali (may Allah be pleased with both of them), but in that version, instead of the word 'witness', the words 'withholder of charity' (mani' sadqah) are used, and...

1. Kanz al-Ummal, Hadith 15516, Mu'assasat ar-Risalah Beirut, 6/238.
2. Musnad Imam Ahmad ibn Hanbal, Dar al-Fikr Beirut, 1/393; Sunan Abu Dawud, Book of Sales, Chapter on Consuming Interest, Aftab-e-Alam Press Lahore, 2/17; Jami' at-Tirmidhi, Book of Sales, Chapter on what has been narrated regarding Consuming Interest, H.M. Company Kutub Khana Rashidiyah Delhi, 1/125.

फ़तावा रज़विय्या, जिल्द 17 (17)।

मसला 125: मारहरा शरीफ, जिला एटा से, प्रेषक शेख शान-ए-इलाही, 15 जमादी-उल-अव्वल 1317 हिजरी। प्रश्न: विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि यदि ज़ैद, अम्र को दस रुपये का नोट उधार देता है और उस समय या कुछ दिनों के बाद अम्र नकद बारह रुपये अदा करता है, तो क्या इस पर सूद (ब्याज) लागू हो सकता है या नहीं? और क्या ज़ैद और अम्र गुनहगार हुए या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें। उत्तर: अल-जवाब: यदि ऋण देते समय यह शर्त रखी गई थी, तो निस्संदेह यह सूद है, पूरी तरह हराम और कबीरा गुनाह (बड़ा पाप) है। ऐसा ऋण देने वाला अभिशप्त (मलऊन) है और लेने वाला भी उसी की तरह अभिशप्त है, यदि ऋण बिना किसी शरिया आवश्यकता के लिया गया हो। हदीस में है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

अरबी: "كل قرض جر منفعة فهو ربا" उर्दू अनुवाद: ऋण पर जो लाभ प्राप्त किया जाए वह सूद है। 1 - इसे हारिस बिन उसामा ने अमीरुल मोमिनीन हज़रत अली कर्रमल्लाहु वज्हहुल करीम से रिवायत किया है।

अनेक सही हदीसों में आया है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

अरबी: "لعن الله آكل الربو ومؤكله وكاتبه وشاهده" उर्दू अनुवाद: अल्लाह की लानत सूद खाने वाले पर, सूद खिलाने वाले पर, सूद का कागज़ लिखने वाले और उसके गवाह पर। 2 - अहमद, अबू दाऊद, तिर्मिज़ी और इब्न माजह द्वारा अबू मसूद से सही सनद के साथ रिवायत; और अहमद और नसाई द्वारा अमीरुल मोमिनीन अली (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से सही सनद के साथ रिवायत; और मुस्लिम में "अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने लानत की..." शब्दों के साथ है। इमाम अहमद ने अली (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा) से रिवायत किया है, लेकिन उसमें 'गवाह' (शाहिद) शब्द के बजाय 'सदका रोकने वाला' (मानए सदका) शब्द है और...

1. कंज़ अल-उम्माल, हदीस 15516, मुअस्ससतुर रिसाला बेरूत, 6/238।
2. मसनद इमाम अहमद बिन हंबल, दारुल फिक्र बेरूत, 1/393; सुनन अबू दाऊद, किताबुल बुयू, सूद खाने का अध्याय, आफताब-ए-आलम प्रेस लाहौर, 2/17; जामिअत तिर्मिज़ी, किताबुल बुयू, सूद खाने के बारे में जो आया है, एच.एम. कंपनी कुतुब खाना रशीदिया दिल्ली, 1/125।

فتاوٰی رضویہ، جلد ہفتدہم (۱۷)

مسئلہ ۱۲۵: از مارھرہ شریف ضلع ایٹہ مرسلہ شیخ شان الہی، ۱۵ جمادی الاولٰی ۱۳۱۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اگر زید عمرو کو دس روپے کا نوٹ قرض دے اور اس وقت یا کچھ دنوں کے بعد عمرو بارہ روپے نقد ادا کرے تو اس پر سود کا اطلاق ہو سکتا ہے نہیں اور زید و عمرو گنہگار ہوئے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔ الجواب: اگر قرض دینے میں یہ شرط ہوئی تھی تو بیشک سود و حرام قطعی و گناہ کبیرہ ہے، ایسا قرض دینے والا ملعون اور لینے والا بھی اسے کے مثل ملعون ہے اگر بے ضرورت شرعیہ قرض لیا ہو۔ حدیث میں ہے رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم فرماتے ہیں: کل قرض جر منفعة فهو ربا ۱ - رواه الحارث ابن اسامة قرض پر جو نفع حاصل کیا جائے وہ سود ہے۔ (اسے حارث بن اسامہ نے امیر المومنین حضرت علی کرم اللہ وجہہ الکریم سے روایت کیا ہے۔)

متعدد احادیث صحیحہ میں ہے رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم فرماتے ہیں: لعن الله آكل الربو ومؤكله وكاتبه وشاهده ۲ - رواه احمد وابوداؤد و الترمذی وابن ماجة بسند صحیح عن ابی مسعود واحمد والنسائی بسند صحیح عن امیر المومنین علی رضی اللہ تعالی عنهما وهو عند مسلم عنه بلفظ لعن رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم اللہ کی لعنت سود کھانے والے پر اور سود کھلانے والے پر اور سود کا کاغذ لکھنے والے اور اس کے گواہ پر۔ (اس کو امام احمد، ابوداؤد، ترمذی اور ابن ماجہ نے صحیح سند کے ساتھ سیدنا ابومسعود رضی اللہ تعالی عنہ سے روایات کیا، اور امام احمد اور نسائی نے صحیح سند کے ساتھ امیر المومنین حضرت علی رضی اللہ تعالی عنہ سے روایت کیا اور امام احمد علی رضی اللہ تعالی عنہما سے روایت کیا مگر اس میں لفظ شاہد کے بدلے مانع صدقہ کے لفظ ہیں اور...

١ كنز العمال حديث ١٥٥١٦ مؤسسة الرساله بيروت ٦/ ٢٣٨ ٢ مسند امام احمد بن حنبل دار الفكر بيروت ١/ ٣٩٣، سنن ابوداؤد كتاب البيوع باب في اكل الربا آفتاب عالم پريس لاہور ٢/ ١٧ ، جامع الترمذى كتاب البيوع باب ماجاء في اكل الربو ايچ ايم كمپنى كتب خانہ رشيديہ دہلى ١/ ١٢٥

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

Arabic: "The consumer of interest, its payer, its writer, and its witnesses are [cursed]; and he (the Prophet) said they are all equal."[1]

Explanation: This is narrated by Imam Muslim from Hazrat Ali (may Allah be pleased with him) with these words: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) cursed the consumer of interest, the one who feeds it to others, the one who writes it, and its witnesses, and said that they are all equal. (T)

And if there was no condition, but a loan of ten rupees was taken with the understanding that a ten-rupee note would be repaid in exchange, then Amr had a thought to voluntarily increase it to twelve rupees, adding two rupees as a favor, then this is permissible and an act of kindness. Or, for example, if Zaid asked for the return of his loaned note and Amr didn't have it, and it was decided to give twelve rupees in exchange, then there are two scenarios: If Amr has already spent the note, it is unanimously permissible without doubt, provided the rupees are given in the same sitting; otherwise, it will be impermissible. If the same note is still with him and he gives rupees in exchange for that existing note, then according to our Imam-e-Azam and Imam Muhammad (may Allah be pleased with them both), it is absolutely impermissible as the contract is void; it is mandatory for Zaid to return the rupees to Amr. Yes, if instead of giving rupees for the existing note, he gives them in exchange for the debt of the note that became obligatory upon him due to the loan, then it is permissible according to both aforementioned Imams. However, this latter form is usually not within the common person's perception and thought, that while the note exists, they would differentiate between 'ayn' (the physical thing) and 'dayn' (the debt) and intend to give/take exchange for what is owed (ma fi al-dhimma) instead of what is in hand (ma fi al-yad). It is stated in Durr al-Mukhtar:

Arabic: "The borrower becomes the owner of the loan upon mere possession according to the two [Imam Abu Hanifa and Imam Muhammad], contrary to the second [Imam Abu Yusuf]. Therefore, it is permissible for the borrower to purchase the loan from the lender in exchange for possessed dirhams, even if it exists. If they separate before possession, it becomes void because it is separation from a debt. [Bazzaziya][2] Summarized."

Translation: According to both Imam-e-Azam and Imam Muhammad, the debtor becomes the owner of the loan merely by taking possession. Contrary to Imam Abu Yusuf. Therefore (according to the two), it is permissible for the debtor to buy the

loan from the creditor in exchange for possessed dirhams if the loan is present. If those two people separate before taking possession of the said dirhams, then this purchase will be void because it is separation from a debt. Bazzaziya, summarized. (T)

[1] Sahih Muslim, Kitab al-Musaqat, Bab al-Riba, Qadeem Kutub Khana, Karachi, 2/72. [2] Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Fasl fi al-Qard, Matba' Mujtabai, Delhi, 2/39-40. Page 279 of 715

फ़तावा रज़विया (खण्ड 17)

अरबी: "सूद खाने वाला, उसे खिलाने वाला, उसे लिखने वाला और उसके गवाह [शापित हैं]; और उन्होंने (पैगंबर ने) कहा कि वे सभी बराबर हैं।"[1]

स्पष्टीकरण: यह इमाम मुस्लिम द्वारा हज़रत अली (रज़ियल्लाहु अन्हु) से इन शब्दों के साथ वर्णित है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने सूद खाने वाले, खिलाने वाले, लिखने वाले और उसके गवाहों पर लानत भेजी, और फ़रमाया कि वे सब बराबर हैं। (त)

और अगर कोई शर्त नहीं थी, बल्कि दस रुपये का कर्ज लिया गया था कि उसके बदले दस रुपये का ही नोट वापस किया जाएगा, फिर अम्र के दिल में ख्याल आया कि नोट के बदले अपनी ओर से दस और दो रुपये एहसान के तौर पर बढ़ाकर बारह रुपये दे दे, तो यह जायज़ और एहसान है। या मान लीजिए कि ज़ैद ने उससे अपने कर्ज़ का नोट माँगा और उसके पास वह नहीं था, और उसके बदले बारह रुपये देने का फैसला हुआ, तो इसकी दो स्थितियाँ हैं: अगर अम्र नोट खर्च कर चुका है, तो सर्वसम्मति से बिना किसी संदेह के जायज़ है, बशर्ते कि रुपये उसी बैठक में दे दिए जाएँ; अन्यथा यह नाजायज़ होगा। और अगर वही नोट उसके पास अभी भी मौजूद है और वह उस मौजूद नोट के बदले रुपये देता है, तो हमारे इमाम-ए-आज़म और इमाम मुहम्मद (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) के नज़दीक यह पूर्णतः नाजायज़ है क्योंकि अनुबंध (अक़्द) बातिल है; ज़ैद के लिए अम्र को रुपये लौटाना अनिवार्य है। हाँ, अगर मौजूद नोट के बदले रुपये देने के बजाय, उस नोट के कर्ज के बदले रुपये दे जो ऋण लेने के कारण उसके ज़िम्मे अनिवार्य हुआ था, तो दोनों प्रशंसित इमामों के अनुसार यह जायज़ है। लेकिन यह बाद वाली स्थिति आम लोगों की सोच और समझ में नहीं आती कि नोट के मौजूद रहते हुए वे 'ऐन' (वस्तु) और 'दैन' (ऋण) में अंतर करें और हाथ में मौजूद चीज़ (मा फ़िल यद) के बजाय ज़िम्मे में वाजिब चीज़ (मा फ़िज़ ज़िम्मा) का बदला देना-लेना मुराद रखें। दुर्र-ए-मुख्तार में है:

अरबी: "उधार लेने वाला केवल कब्ज़ा करने पर ऋण का मालिक बन जाता है, उन दोनों [इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम मुहम्मद] के अनुसार, दूसरे [इमाम अबू यूसुफ़] के विपरीत। इसलिए, कर्जदार के लिए लेनदार से प्राप्त दिरहमों के बदले ऋण खरीदना जायज़ है, भले ही वह मौजूद हो। यदि वे कब्ज़े से पहले अलग हो जाते हैं, तो यह बातिल हो जाता है क्योंकि यह ऋण से अलग होना है। [बज़ाज़िया][2] संक्षेप में।"

अनुवाद: महज़ कब्ज़ा करने से कर्ज़दार उन दोनों, यानी इमाम-ए-आज़म और इमाम मुहम्मद के नज़दीक कर्ज़ का मालिक हो जाता है। इमाम अबू यूसुफ़ के विपरीत। इसलिए (तरफ़ैन के नज़दीक) कर्ज़दार का मक़बूज़ा दिरहमों के बदले में कर्ज़ देने वाले से कर्ज़ खरीदना जायज़ है अगर कर्ज़ मौजूद हो। अगर वे दोनों व्यक्ति उक्त दिरहमों पर कब्ज़ा करने से पहले अलग हो गए, तो यह खरीदारी बातिल होगी क्योंकि यह दैन (ऋण) से अलग होना है। बज़ाज़िया, संक्षेप। (त)

[1] सहीह मुस्लिम, किताब अल-मुसाक़ात, बाब अर-रिबा, कदीम कुतुब खाना, कराची, 2/72. [2] दुर्र-ए-मुख्तार, किताब अल-बुयू, फ़स्ल फ़िल क़र्ज़, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 2/39-40. पृष्ठ 279/715

اکل الربا و مؤکلہ و کاتبہ و شاھدیہ وقال ھم سواء۔$1^$ یہ امام مسلم کے نزدیک حضرت علی رضی اللہ تعالٰی عنہ سے ان لفظوں کے ساتھ مروی ہے کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے سود کے کھانے والے، کھلانے والے، لکھنے والے اور اس کے گواہوں پر لعنت فرمائی، اور فرمایا کہ وہ سب برابر ہیں۔ (ت)

اور اگر شرط نہ ٹھہری تھی بلکہ دس روپے کا قرض لیا کہ اس کے عوض دس ہی روپے کا نوٹ ادا کیا جائے گا، پھر عمرو کے دل میں خیال آیا کہ نوٹ کے بدلے دس اور دو روپے اپنی طرف سے احسانًا بڑھا کر بارہ روپے دے دے تو یہ جائز و احسان ہے یا زید نے مثلاً اس سے اپنے قرض کا نوٹ مانگا اس کے پس نہ تھا بارہ روپے اس کے عوض دینے پر فیصلہ ہوا تو اس کی دو صورتیں ہیں، اگر نوٹ عمرو خرچ کر چکا تو بالاتفاق بالشبہ جائز ہے جبکہ روپے اسی جلسہ میں دے دئے جائیں ورنہ ناجائز ہو جائے گا اور اگر وہی نوٹ اس کے پاس بدستور موجود ہے اور اسی نوٹ موجود کے عوض روپے دے تو ہمارے امام اعظم و امام محمد رضی اللہ تعالٰی عنہما کے نزدیک مطلقاً ناجائز ہے کہ عقد باطل ہے، زید پر لازم ہے کہ روپے عمرو کو پھیر دے، ہاں نوٹ موجود کے بدلے روپے نہ دے بلکہ قرض لینے کے باعث جو اس کے ذمہ پر نوٹ لازم ہوا ہے اس کے عوض دے تو دونوں امام ممدوح کے طور پر جائز ہے مگر یہ شکل اخیر عوام کے تصور و خیال میں نہیں ہوتی کہ باوصف بقائے نوٹ وہ عین و دین میں فرق کریں اور بجائے مافی الید مافی الذمہ کا عوض دینا لینا مراد رکھیں، درمختار میں ہے :

یملك المستقرض القرض بنفس القبض عندھما الامام ومحمد خلاف للثاني، فجاز شراء المستقرض القرض ولو قائماً من المقرض بدراھم مقبوضة فلو تفرقا قبل قبضھا بطل لانه افتراق عن دین

بزازیة^2 اھ ملخصاً۔ مقروض محض قبضہ کرنے سے ان دونوں یعنی امام اعظم اور امام محمد کے نزدیک قرض کا مالک ہو جاتا ہے۔ بخلاف امام ابو یوسف کے، لہٰذا (طرفین کے نزدیک) مقروض کا دراہم مقبوضہ کے بدلے میں قرض دہندہ سے قرض کو خریدنا جائز ہے اگر قرض موجود ہو اگر وہ دونوں شخص دراہم مذکورہ پر قبضہ سے قبل جدا ہو گئے تو یہ خریداری باطل ہوگی کیونکہ یہ دین سے جدا ہونا ہے، بزازیہ، اھ تلخیص۔ (ت)

^{1} صحیح مسلم کتاب المساقات باب الربا قدیم کتب خانہ کراچی ۲ / ۷۲ ^{2} درمختار کتاب البیوع فصل فی القرض مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۳۹ - ۴۰ Page 279 of 715

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

In Radd al-Muhtar, it is stated:

The explanation is that sometimes the debtor buys what he owes to the creditor, and sometimes he buys the exact item he borrowed which is currently in his possession.

In the first case, as mentioned in Al-Dhakhira, if the debtor buys from the creditor a 'kur' (a unit of grain measure) that he already owes for a hundred dinars, this is permissible. This is because it is a debt he owes that did not arise from a currency exchange (sarf) or an advance payment (salam) contract. If the borrowed item has already been consumed at the time of purchase, everyone agrees it is permissible, as he became its owner through consumption and an equivalent is indisputably due from him. If the item still exists, the same ruling (permissibility) applies according to the two Imams (Abu Hanifa and Muhammad). However, according to Imam Abu Yusuf, it is more appropriate that it not be permissible, because in his view, the debtor does not own the borrowed item until he consumes it, and thus an equivalent is not yet due from him. Therefore, when he relates the purchase to the 'kur' he owes, he is relating it to something non-existent, which is not allowed. This is what is stated in the commentary.

In the second case, Al-Dhakhira also mentions that if a person borrows a 'kur', takes possession of it, and then buys that exact same 'kur' from the creditor, it is not permissible according to the view of the two Imams, because the debtor has already become the owner of the loan merely by taking possession of it.

Page 280 of 715

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

रद अल-मुह्तार में उल्लेख है:

इसका विवरण यह है कि कभी ऋणी (कर्ज़दार) उस चीज़ को खरीदता है जो लेनदार (कर्ज़ देने वाले) के प्रति उसके ज़िम्मे है, और कभी वह उस ऋण की वस्तु को ही खरीदता है जो उसके कब्ज़े में मौजूद है।

यदि पहला मामला हो, तो अल-ज़खीरा में है कि ऋणी ने लेनदार से सौ दीनार के बदले एक 'कुर' (अनाज का माप) खरीदा जो उसके ज़िम्मे था, तो यह जायज़ है क्योंकि यह उस पर एक ऋण है जो 'सर्फ़ या 'सलम' अनुबंध के कारण नहीं है। यदि खरीद के समय ऋण की वस्तु का उपभोग कर लिया गया (खत्म हो गई) है, तो सभी के अनुसार यह जायज़ है क्योंकि उपभोग के कारण वह उसका स्वामी बन गया और बिना किसी विवाद के उसके बराबर वस्तु उसके ज़िम्मे वाजिब है। और यदि खरीद के समय वस्तु मौजूद है, तो दोनों इमामों (अबू हनीफा और मुहम्मद) के अनुसार भी यही आदेश (जायज़) है। जबकि इमाम अबू यूसुफ के अनुसार यह जायज़ नहीं होना चाहिए क्योंकि उनके अनुसार जब तक वह ऋण की वस्तु का उपभोग नहीं करता, वह स्वामी नहीं होगा, इसलिए उसके बराबर वस्तु ऋणी के ज़िम्मे वाजिब नहीं होगी। अतः जब उसने खरीद को उस 'कुर' से जोड़ा जो उसके ज़िम्मे है, तो उसने इसे एक अस्तित्वहीन चीज़ से जोड़ दिया, इसलिए यह जायज़ नहीं है। यह वह है जो विवरण में है।

और यदि दूसरा मामला है, तो अल-ज़खीरा में इसके बारे में भी है कि किसी व्यक्ति ने एक 'कुर' उधार लिया, फिर उस पर कब्ज़ा कर लिया और फिर उसी 'कुर' को लेनदार से खरीद लिया, तो दोनों इमामों के अनुसार यह जायज़ नहीं है क्योंकि ऋणी मात्र कब्ज़ा करने से ही ऋण का स्वामी बन चुका है।

पृष्ठ 715 में से 280

ردالمحتار میں ہے :

بیان ذلك انه تارة یشتری ما فی ذمته للمقرض وتارة اس کا بیان یہ ہے کہ مقروض کبھی تو اس چیز کو خریدتا ہے جو ما فی یده ای عین مااستقرضه فان کان الاول ففی قرض دہندہ کے لئے اس کے ذمہ پر ہے اور کبھی بعینہ اس قرض الذخیرة اشتری من المقرض الکر الذی له علیه کو خریدتا ہے جو اس کے قبضہ میں موجود ہے، اگر پہلی صورت بمائة دینار جاز لانه دین علیه لا بعقد صرف ولا ہو تو اس کے بارے میں ذخیرہ میں ہے کہ مقروض نے قرض سلم ، فان کان مستهلکا وقت الشراء فالجواز قول دہندہ سے سو دینار کے عوض کر (غلہ) خریدا قرض دہندہ الکل لانه ملکه بالاستهلاك و علیه مثله فی ذمته بلا کے لئے مقروض کے ذمہ پر لازم ہے تو یہ جائز ہے کیونکہ اس خلاف وان کان قائما فکذلك عندهما وعلی قول ابي پر دین ہے جو کہ عقد صرف اور عقد سلم کے سبب سے نہیں یوسف ینبغی ان لایجوز لانه لا یملکه مالم یستهلکه ہے پھر اگر مقروض نے بوقت شراء قرض ہلاک کردیا ہے تو فلم یجب مثله فی ذمته ، فاذا اضاف الشراء الی الکر اس صورت میں سب نے جواز شراء کا قول کیا ہے کیونکہ وہ الذی فی ذمته فقد اضافه الی معدوم فلا یجوز اهو هذا ہلاک کرنے کے سبب سے قرض کا مالک ہو گیا اور بلا خلاف ما فی الشرح وان کان الثانی ففی الذخیرة ایضا اس کی مثل اس کے ذمے لازم ہے اور اگر بوقت شراء قرض استقرض من رجل کرا و قبضه ثم اشتری ذلك مقروض کے پاس موجود ہے تو بھی طرفین کے نزدیک یہی الکر بعینه من المقرض لا یجوز علی قولهما لانه ملکه حکم (جواز) ہے جبکہ امام ابویوسف کے قول پر مناسب ہے کہ بنفس القبض فیصیر مشتریا جائز نہ ہو کیونکہ ان کے نزدیک جب تک وہ قرض کو ہلاک نہ کرے مالک نہیں ہوگا لہٰذا اس کی مثل مقروض کے ذمہ پر لازم نہ ہو گی اھ، یہ وہ ہے جو شرح میں ہے ، اور

اگر دوسری صورت میں ہے تو اس کے بارے میں بھی ذخیرہ میں ہے کہ کسی شخص نے ایک کر قرض لیا پھر اس پر قبضہ کر کے بعینہ وہی کر اس مقروض نے قرض دہندہ سے خرید لیا تو طرفین کے قول پر جائز نہیں کیونکہ وہ مقروض محض قبضہ کرنے سے قرض کا مالک ہو چکا ہے

Fatawa Razviyya Volume 17

[Boxed Text Top Left - Arabic]: ملك نفسه اما على قول ابى يوسف فالكر باقى على المقرض فيصير المستقرض مشتريا ملك غيره فيصح۔ [Boxed Text Top Right - Urdu]: So now he became a buyer of his own property, but according to the statement of Imam Abu Yusuf, since it remains in the ownership of the lender, the debtor becomes a buyer of someone else's property, and thus this purchase is valid. (T)

In the same (book) it is stated:

[Boxed Text Middle Left - Arabic]: فى البزازية من اخر الصرف، اذاكان له على اخر طعام او فلوس فاشتراہ من عليه بدرہم وتفرقا قبل قبض الدراہم بطل وہذا مما يحفظ ۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ [Boxed Text Middle Right - Urdu]: In al-Bazzaziyya, at the end of the chapter on Sarf (exchange), it says: If someone owes another person grain or small coins (fulus), and the debtor buys that grain or coins from him in exchange for dirhams, and they separate before the possession of the dirhams occurs, then the purchase is void. This is something worth remembering. (T) And Allah knows best.

Problem 126: From Allahabad, Dairah Shah Ajmal, sent by Maulvi Muhammad Sahib Muhammadi, brother of the late Maulana Mufti Asadullah Khan, 24 Rabi al-Akhir 1312 AH.

What do the scholars of the religion and the jurists of the clear Shari'ah say regarding this matter: That [someone] was absolved from the consideration of the debt or inheritance of the predecessor. According to the Shari'ah of the Ahl al-Sunnah wa al-Jama'at, should the other heirs be given their proportionate share of the debt or inheritance money from the mentioned heir who purchased the property of the debtor in cash? Or will the property purchased by the said heir be considered part of the estate, and the other heirs be given a share in the property according to their fixed shares? Explain in detail with reasoning and evidence from the books, and you will be rewarded by Allah, the Mighty King, the Bestower. (State in detail with evidence and book references; you will be rewarded by Allah, the Dominant King, the Great Giver. -T)

---

1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Fasl fi al-Qard, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/173.
2. Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Fasl fi al-Qard, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/174.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 17

[ऊपरी बाएँ बॉक्स - अरबी]: ملك نفسه اما على قول ابى يوسف فالكر باقى على المقرض فيصير المستقرض مشتريا ملك غيره فيصح۔ [ऊपरी दाएँ बॉक्स - उर्दू]: तो अब वह अपनी ही संपत्ति का खरीदार हो गया, लेकिन इमाम अबू यूसुफ़ के कथन के अनुसार, चूंकि वह ऋणदाता के स्वामित्व में रहता है, इसलिए ऋणी किसी और की संपत्ति का खरीदार बन जाता है, अतः यह खरीदारी सही है। (त)

इसी में है:

[मध्य बाएँ बॉक्स - अरबी]: فى البزازية من اخر الصرف، اذاكان له على اخر طعام او فلوس فاشتراه من عليه بدربم وتفرقا قبل قبض الدرابم بطل وبذا مما يحفظ ۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ [मध्य दाएँ बॉक्स - उर्दू]: बज़ाज़िया के सर्फ़(विनिमय) अध्याय के अंत में है: यदि किसी का दूसरे पर अनाज या पैसे बकाया हों, फिर ऋणी ने उससे कुछ दिरहम के बदले वह अनाज या पैसे खरीद लिए और दिरहम पर कब्ज़ा होने से पहले ही वे दोनों अलग हो गए, तो खरीदारी शून्य (बातिल) है। यह बात याद रखने योग्य है। (त) और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

मसला 126: इलाहाबाद, daira शाह अजमल से, मौलवी मुहम्मद साहिब मुहम्मदी द्वारा भेजा गया, जो मरहूम मौलाना मुफ़्ती असदुल्लाह खान के भाई हैं, 24 रबी अल-आख़िर 1312 हिजरी।

दीन के विद्वान और शरीयत के मुफ़्ती इस मसले में क्या कहते हैं: कि विरासत या कर्ज़ के बदले में उसे मुक्त कर दिया गया। सुन्नत वल जमाअत के मज़हब के अनुसार, क्या अन्य वारिसों को उस वारिस से, जिसने ऋणी की संपत्ति खरीदी है, उनके हिस्से के अनुसार कर्ज़ या विरासत की नकद राशि दिलाई जाएगी? या उक्त वारिस द्वारा खरीदी गई संपत्ति को छोड़ा हुआ माल (तरका) मानकर अन्य वारिसों को भी उनके निर्धारित शेयरों के अनुसार संपत्ति का हिस्सा दिलाया जाएगा? किताब के हवाले के साथ विस्तार से और दलील के साथ बयान करें, आपको अल्लाह, जो महान राजा और अत्यधिक देने वाला है, के यहाँ प्रतिफल मिलेगा। (विस्तार से दलीलों और किताबों के संदर्भों के साथ समझाएं, अल्लाह तआला जो शक्तिशाली राजा और बहुत देने वाला है, उनके यहाँ आपको इनाम मिलेगा। - त)

1. रद अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू, फ़स्ल फ़िल क़र्ज़, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 4/173.
2. रद अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू, फ़स्ल फ़िल क़र्ज़, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 4/174.

पृष्ठ 281/715

[اوپری بائیں باکس - عربی]: ملك نفسه اما علی قول ابی یوسف فالکر باقی علی المقرض فیصیر المستقرض مشتریا ملك غیرہ فیصح۔ [اوپری دائیں باکس - اردو]: تو اب وہ اپنی ہی ملک کا خریدار ہوگیا لیکن امام ابویوسف کے قول پر چونکہ وہ قرض دہندہ کی ملک پر باقی ہے، چنانچہ مقروض ملک غیر کا خریدار ہوا لہٰذا یہ خریداری صحیح ہے۔(ت)

اسی میں ہے:

[درمیانی بائیں باکس - عربی]: فی البزازیة من اخر الصرف، اذاکان له علی اخر طعام او فلوس فاشتراہ من علیه بدرہم وتفرقا قبل قبض الدراہم بطل وہذا مما یحفظ ۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ [درمیانی دائیں باکس - اردو]: بزازیہ باب الصرف کے آخر میں ہے کہ اگر کسی کا دوسرے کے ذمے اناج یا پیسے لازم ہیں پھر مقروض نے اس سے کچھ دراہم کے بدلے وہ اناج یا پیسے خرید لئے اور دراہم پر قبضہ سے پہلے ہی یہ دونوں شخص متفرق ہوگئے تو خریداری باطل ہے، یہ بات قابلِ حفظ ہے۔ (ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۲۶: از الہ آباد دائرہ شاہ اجمل صاحب مرسلہ مولوی محمد صاحب محمدی برادر مولانا مفتی اسد اللہ خان صاحب مرحوم ۲۴ ربیع الآخر ۱۳۱۲ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ عوضِ قرضہ یا فتنی مورث کے منجملہ سے بری کردیا، مطابق شرع مذہب اہل سنت وجماعت دیگر وارثان کو وارثِ مذکور اس جو خریدار جائدا دِ مدیون ہے بقدرِ حصہ رسدی زرِ قرضہ یا فتنی مورث کے نقد دلایا جائے گا یا جائدا دِ خریدہ وارث مذکور متروکہ متصور ہو کر دیگر وارثان کو بھی بقدرِ سہامِ مفروضہ حصہ جائیداد

دلایا جائیگا۔ بینوا مشروحاً و مدللا مع سند الکتاب توجروا عند اللہ الملک العزیز الوھاب (تفصیل سے مدلل اور حوالہ کتب کے ساتھ بیان فرمائیں اللہ تعالیٰ بادشاہِ غالب بہت عطا فرمانے والے کے ہاں اجر دئے جاؤ گے۔ ت)

1۔ رد المحتار کتاب البیوع فصل فی القرض دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۷۳ 2۔ رد المحتار کتاب البیوع فصل فی القرض دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۷۴

Fatawa Razawiyya Volume 17

The Answer: In the case inquired about, it is apparent that the intention of the indebted seller would be to give the property in lieu of the debt shares of all heirs, such that each one receives property equivalent to their share, and by giving it, the debtor becomes free from the debt. When the purchaser also accepts it towards a joint debt, it is religiously expected that they did not purchase it solely for themselves. However, reality often differs. From the wording of the question, it is not clear in whose name the sale took place. A single person being the purchaser does not necessarily mean they are the sole beneficiary. Similarly, designating the price from a joint property or even a specific property of another is not proof that the purchase was for a joint interest or for another person.

Arabic: In al-Khayriyya, it does not follow from purchasing with the father's money that the item sold belongs to the father.[1]	**It is stated in Fatawa Khayriyya that buying something with the father's money does not necessitate that the purchased item belongs to the father. (T)**

Therefore, it is necessary for us to discuss every possibility. If in this contract, the actions of the contracting parties were different—meaning the seller attributed it to all heirs for their complete exoneration, but the purchaser kept it exclusively for their own benefit; for example, if he said, "I sold this property to all of you in exchange for your debt," and the purchaser said, "I bought it for myself"—then the sale did not even occur because the offer and acceptance were contradictory.

Arabic: In al-Bahr al-Ra'iq, from Furuq al-Karabisi: If someone says, "I bought for so-and-so for such an amount," and the seller says, "I sold to you," the contract is void according to the more correct of two narrations. The difference is that he addressed the purchaser, while the purchaser wants to direct it towards another, so it is not a [matching] response. Thus, it was half a contract.[2]

It is narrated in Bahr al-Ra'iq from Furuq al-Karabisi that if someone says, "I bought this item for so-and-so in exchange for this much," and the seller says, "I sold it to your hand," then according to the more correct of two narrations, the contract will be void. The difference is that the seller addressed the purchaser, while the purchaser wants to return it to another; thus, this is not a response from the purchaser, so in this way, it was half a contract (i.e., only one of the two pillars was found). (T)

1. Al-Fatawa al-Khayriyya, Book of Sales, Chapter on Loans, Dar al-Ma'rifa, Beirut, 1/219.
2. Bahr al-Ra'iq, Book of Sales, Chapter on Fuduli Sale, H.M. Saeed Company, Karachi, 6/129.

फ़तावा रज़विया जिल्द सत्रह (17)

उत्तर: पूछताछ की गई स्थिति में यह स्पष्ट है कि ऋणी विक्रेता का उद्देश्य यह होगा कि वह संपत्ति सभी वारिसों के ऋण हिस्से में दे दे, ताकि उनमें से प्रत्येक अपने हिस्से के बराबर संपत्ति पा ले और इसे देकर ऋणी ऋण से मुक्त हो जाए। जब खरीदार भी इसे साझा ऋण के बदले में लेता है, तो धार्मिक रूप से उससे भी यही उम्मीद है कि उसने केवल अपने लिए नहीं खरीदी होगी। लेकिन वास्तव में कई बार इसके विपरीत होता है। और प्रश्न के शब्दों से यह स्पष्ट नहीं होता कि बिक्री किसके नाम पर हुई। एक व्यक्ति का खरीदार होना यह अनिवार्य नहीं करता कि खरीदार (लाभार्थी) भी केवल वही हो। इसी तरह, कीमत को किसी साझा संपत्ति या किसी अन्य की संपत्ति से तय करना इसका प्रमाण नहीं है कि खरीद साझा या किसी अन्य के लिए थी।

अरबी: अल-खैरिया में है कि पिता के धन से खरीदने का मतलब यह नहीं है कि बेची गई वस्तु पिता की हो।[1]	**फ़तवा खैरिया में है कि पिता के धन से किसी चीज़ को खरीदने से यह आवश्यक नहीं हो जाता कि खरीदी गई वस्तु पिता के लिए हो। (त)**

इसलिए, हमें हर संभावना पर चर्चा करना आवश्यक है। यदि इस अनुबंध में अनुबंध करने वालों के कार्य अलग-अलग थे, अर्थात विक्रेता ने अपनी पूर्ण मुक्ति के लिए सभी वारिसों की ओर इसका श्रेय दिया और खरीदार ने अपने लाभ के लिए केवल अपनी विशेषता रखी; उदाहरण के लिए, उसने कहा, "मैंने यह संपत्ति तुम सबके ऋण के बदले तुम सबके हाथ बेची," और खरीदार ने कहा, "मैंने इसे अपने लिए खरीदा," तो बिक्री हुई ही नहीं क्योंकि प्रस्ताव और स्वीकृति विरोधाभासी रहे।

अरबी: अल-बहर अल-रईक में फुरूक अल-कराबीसी से उद्धृत है: यदि कोई कहे, 'मैंने फलां के लिए इतने में खरीदा,' और विक्रेता कहे, 'मैंने तुम्हें बेचा,' तो दो वृत्तांतों में से अधिक सही के अनुसार अनुबंध शून्य है। अंतर यह है कि उसने खरीदार को संबोधित किया, जबकि खरीदार इसे किसी अन्य की ओर मोड़ना चाहता है, इसलिए यह जवाब नहीं हुआ। इस प्रकार यह आधा अनुबंध था।[2]

बहर अल-रईक में फुरूक अल-कराबीसी से उद्धृत है कि यदि किसी ने कहा कि मैंने इतने के बदले यह वस्तु फलां के लिए खरीदी, और विक्रेता ने कहा कि मैंने तुम्हारे हाथ बेची, तो दो वृत्तांतों में से अधिक सही के अनुसार अनुबंध शून्य (बातिल) होगा। अंतर यह है कि विक्रेता ने खरीदार को संबोधित किया जबकि खरीदार इसे किसी अन्य की ओर मोड़ना चाहता है, तो यह खरीदार का जवाब नहीं हुआ, तो इस तरह यह आधा अनुबंध हुआ (अर्थात दो में से केवल एक तत्व पाया गया)। (त)

1. अल-फ़तावा अल-खैरिया, किताबुल बुयूअ, ऋण पर अध्याय, दारुल मारिफ़ा बेरूत 1/219
2. बहर अल-रईक, किताबुल बुयूअ, फ़ुज़ुली बिक्री पर अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी कराची 6/129

الجواب: صورت مستفسرہ میں ظاہر ہے کہ بائع مدیون کا مقصود یہی ہو گا کہ جائداد سب ورثہ کے حصہ دین میں دے ان میں ہر ایک بقدر اپنے حصہ کے جائداد بعوض دین پالے کہ مدیون اسے دے کر دین سے بری ہو اور مشتری بھی جبکہ دین مشترک میں لیتا ہے تو دیانۃً اس سے بھی یہی امید کہ تنہا اپنے ہی لئے نہ خریدی ہو مگر واقع بار ہا اس کے خلاف ہوتا ہے اور عبارت سوال سے کچھ نہیں کھلتا کہ بیع کس کے نام واقع ہوئی تنہا ایک شخص کا مشتری ہونا اسے مستلزم نہیں کہ مشتری لہ بھی تنہا وہی ہو، یوں ہی ثمن کسی مال مشترک بشرکت ملک بلکہ خاص ملک غیر ہی کو قرار دینا اس کی دلیل نہیں کہ شرا مشترک یا غیر کے لئے ہو،

فی الخیریۃ لایلزم من الشراء من مال الاب ان یکون المبیع للاب-1 فتاوٰی خیریہ میں ہے کہ باپ کے مال سے کسی شیئ کو خریدنے سے لازم نہیں آتا کہ مبیع باپ کے لئے ہو۔ (ت)

لہٰذا ہمیں ہر احتمال پر کلام لازم اگر اس عقد میں کام عاقدین مختلف واقع ہوا یعنی بائع نے اپنی براءت تامہ کے لئے سب ورثہ کی طرف اضافت کی اور مشتری نے اپنی منفعت کے واسطے صرف اپنی خصوصیت رکھی ، مثلاً اس نے کہا میں نے یہ جائداد تم سب کے ہاتھ تمہارے دین میں بیع کی اس نے کہا میں نے اپنے لئے خریدی جب تو بیع ہی نہ ہوئی کہ ایجاب و قبول مخالف رہے،

فی البحر الرائق عن فروق الکرابیسی لو قال اشتریت لفلان بکذا و البائع یقول بعت منك بطل العقد فی اصح الروایتین والفرق انه خاطب المشتری و المشتری یسترد لغیره فلایکون جواباً فکان شطر العقد-2

بحر الرائق میں فروق الکرابیسی سے منقول ہے کہ اگر کسی نے کہا کہ میں نے اتنے کے عوض یہ شیئ فلاں کے لئے خریدی، اور بائع نے کہا کہ میں نے تیرے ہاتھ فروخت کی، تو دو روایتوں میں سے زیادہ صحیح روایت کے مطابق عقد باطل ہو گا، فرق یہ ہے کہ بائع نے مشتری کو مخاطب بنایا جبکہ مشتری اس کو غیر کی طرف لوٹانا چاہتا ہے تو یہ مشتری کا جواب نہ ہوا تو اس طرح یہ آدھا عقد ہوا (یعنی دو میں سے صرف ایک رکن پایا گیا) (ت)

1 الفتاوی الخیریة کتاب البیوع فصل فی القرض دار المعرفة بیروت ۱/ ۲۱۹ 2 بحر الرائق کتاب البیوع فصل فی بیع الفضولی ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۶/ ۱۲۹

In this case, the property is returned to the debtor and the debt of the heirs remains upon him, only the purchaser has been absolved. If his absolution occurred separately from this contract, meaning the debt was intended to be forgiven on its own, and if no separate absolution occurred from him either, but he absolved him from the claim based on this purchase of property in exchange for debt, then his debt also remains as it was. We have clarified and detailed this in the discussion of debts (Mudayanat) in our Fatawa. (Added note: We have explained this in detail in our Fatawa in the discussion of debts). And if the purchaser bought it for himself and the seller also sold it to him without attributing it to all the heirs, then the sale is completed for that purchaser. Other heirs have no right in the property, however, the inclusion of that debt in the purchase price will depend on their valid Sharia permission. Whoever gives permission, the seller is absolved from their share of the debt, and that much money becomes obligatory upon the purchaser for the one who gave permission. As for the purchaser's own share of the debt, the seller has already been absolved. This permission of the other heirs required here is permission for the cash (payment), not permission for the contract. The contract with the purchaser has become complete and effective. To the extent that if someone buys something for themselves and designates another person's slave or house as its price, then also, merely because this is a purchase in one aspect, and the purchase becomes effective on the purchaser and the contract is completed in the name of the purchaser. Although it is a sale in one aspect, and the sale of another's property is ineffective and suspended, where it is a purchase in every aspect, its effectiveness on the purchaser is clear and manifest.

Arabic Text

In Al-Bahr al-Ra'iq, it is stated: if the price is a commodity, it will belong to the 'fuzuli' (unauthorized agent), and the owner's permission is permission for the cash, not permission for the contract. This is because when the compensation is fixed, it is 'purchase' in one respect, and purchase is not suspended but becomes effective on the person performing it if there is a way for it to be effective. Thus,

Urdu Translation

In 'Al-Bahr al-Ra'iq', it is stated: if the price is a commodity, it will belong to the 'fuzuli', and the owner's permission is permission for the cash, not permission for the contract. Because when the compensation is fixed, it is a purchase in one aspect, and purchase is not suspended but becomes effective on the performer. If it finds a way to be effective, it becomes the purchaser's property. And

Arabic Text

it becomes his property, and with the owner's permission, it does not transfer to him; rather, the effect of his permission is in the cash, not in the contract. Then, the 'fuzuli' is liable for a replacement of the sold item if it is fungible, otherwise its value etc.

Urdu Translation

with the owner's permission, it will not transfer to the owner, but his permission will take effect in the cash and not in the contract. Then, the 'fuzuli' will be liable for a replacement of the sold item, and if it is fungible, otherwise its value will be due, etc. (Added note)

1. Al-Bahr al-Ra'iq, Kitab al-Buyu', Chapter on Sale by Fuzuli, H.M. Saeed Company, Karachi, 128/6 Page 283 of 715

इस स्थिति में, संपत्ति ऋणी को वापस कर दी जाती है और वारिसों का ऋण उस पर बना रहता है, केवल खरीदार ही मुक्त हुआ है। यदि उसकी मुक्ति इस अनुबंध से अलग हुई है, यानी ऋण को अपने आप माफ करने का इरादा था, और यदि उसकी ओर से भी कोई अलग मुक्ति नहीं हुई, लेकिन उसने ऋण के बदले संपत्ति की इस खरीद के आधार पर उसे दावे से मुक्त कर दिया, तो उसका ऋण भी पहले की तरह बना रहा। हमने इसे अपने फतवे में ऋण (मुदायनात) की चर्चा में स्पष्ट और विस्तृत किया है। (जोड़ा गया नोट: हमने इसे अपने फतवा में ऋण की चर्चा में विस्तार से समझाया है)। और यदि खरीदार ने इसे अपने लिए खरीदा और विक्रेता ने भी इसे सभी वारिसों के प्रति आरोपित किए बिना उसे बेच दिया, तो बिक्री उसी खरीदार के लिए पूरी हो गई। अन्य वारिसों का संपत्ति में कोई अधिकार नहीं है, हालांकि, खरीद मूल्य में उस ऋण का शामिल होना उनकी वैध शरीयत अनुमति पर निर्भर करेगा। जो अनुमति देगा, विक्रेता उसके ऋण के हिस्से से मुक्त हो जाएगा, और उतनी राशि अनुमति देने वाले के लिए खरीदार पर अनिवार्य हो जाएगी। जहाँ तक खरीदार के अपने ऋण के हिस्से की बात है, विक्रेता पहले ही मुक्त हो चुका है। यहाँ अन्य वारिसों की जो अनुमति आवश्यक है, वह नकद (भुगतान) के लिए अनुमति है, अनुबंध के लिए नहीं। खरीदार के साथ अनुबंध पूरा और प्रभावी हो चुका है। यहाँ तक कि यदि कोई व्यक्ति अपने लिए कुछ खरीदता है और किसी अन्य के गुलाम या घर को उसकी कीमत के रूप में निर्धारित करता है, तो भी, केवल इस आधार पर कि यह एक पहलू से 'खरीद' है, और खरीद खरीदार पर प्रभावी हो जाती है और अनुबंध खरीदार के नाम पर पूरा हो जाता है। यद्यपि यह एक पहलू से 'बिक्री' है, और दूसरे की संपत्ति की बिक्री अप्रभावी और निलंबित होती है, जहाँ यह हर पहलू से 'खरीद' है, वहाँ खरीदार पर इसकी प्रभावशीलता स्पष्ट और प्रकट है।

अरबी पाठ

अल-बहर अल-राइक में है: यदि कीमत कोई सामान हो, तो वह फुजुली (अनधिकृत व्यक्ति) की संपत्ति होगी और मालिक की अनुमति नकद की अनुमति है न कि अनुबंध की अनुमति, क्योंकि जब मुआवजा तय हो जाता है तो यह एक पहलू से खरीद है और खरीद

उर्दू अनुवाद

अल-बहर अल-राइक में है: यदि कीमत सामान हो तो वह फुजुली की ममलुक (संपत्ति) होगी और मालिक की अनुमति नकद की अनुमति है न कि अनुबंध की अनुमति, क्योंकि मुआवजा जब तय है तो यह एक पहलू से खरीद है और खरीद निलंबित नहीं होती बल्कि निष्पादक पर प्रभावी हो जाती है।

अरबी पाठ

निलंबित नहीं होती है बल्कि निष्पादक पर प्रभावी हो जाती है यदि उसे प्रभावी होने का रास्ता मिल जाए। तो यह उसकी संपत्ति हुई और मालिक की अनुमति से यह मालिक की ओर स्थानांतरित नहीं होगा बल्कि उसकी अनुमति नकद में प्रभावी होगी न कि अनुबंध में, फिर फुजुली पर बेची गई वस्तु के समान वस्तु अनिवार्य होगी यदि वह वस्तु मिस्ली (समान उपलब्ध) है, अन्यथा उसकी कीमत अनिवार्य होगी आदि।

उर्दू अनुवाद

अगर वह प्रभावी होने का रास्ता पाए तो यह खरीदार की मिल्क (संपत्ति) हुई और मालिक की अनुमति से यह खरीदार की मिल्क हो और मालिक की अनुमति से यह मालिक की तरफ मुंतकिल (स्थानांतरित) नहीं होगा बल्कि उसकी अनुमति नकद में असर करेगी न कि अनुबंध में, फिर फुजुली पर मबी (बेची गई वस्तु) की मिस्ल (समान) वाजिब होगी और अगर वह मिस्ली है वरना उसकी कीमत वाजिब होगी आदि (जोड़ा गया नोट)।

1. अल-बहर अल-राइक, किताब अल-बुयू, फुजुली की बिक्री पर अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, ६/१२८ पेज २८३ / ٧١٥

اس صورت میں جائیداد مدیون کو واپس اور ورثہ کا دین اس پر قائم ، صرف مشتری کے بری کر چکا، اگر اس کا ابراء اس عقد سے جدا واقع ہوا یعنی دین بطور خود معاف کر دینا چاہا ہو ، اور اگر اس کی طرف سے بھی کوئی برائے جدا گانہ واقع نہ ہوا اسی شرائے جائیداد بعوض دین کی بناء پر دعوٰی سے اسے بری کیا ہے تو اس کا بھی دین بدستور باقی رہا وقد اوضحناہ وفصلناہ فی المداینات من فتاوٰینا (اس کی وضاحت و تفصیل ہم اپنے فتاوٰی میں مداینات کی بحث میں بیان کر چکے ہیں ۔ ت) اور اگر مشتری نے اپنے ہی لئے خریدی اور بائع نے بھی اس کے ہاتھ بیچی سب ورثہ کی طرف اضافت نہ کی تو بیع اسی مشتری کے لئے تمام ہو گئی دیگر ورثہ کا جائیداد میں کچھ حق نہیں ، ہاں زرِ ثمن میں اس دین کا محسوب ہونا ان کی اجازت جائزہ شرعیہ پر موقوف رہے گا، جو اجازت دے گا اس کے حصہ دین سے بائع بری ، اور اس قدر روپیہ اجازت دہندہ کے لئے لازم بذمہ مشتری اور خود مشتری کے حصہ دین سے تو بائع بری ہو ہی چکا یہ اجازت دیگر ورثہ کہ یہاں درکار ہوئی اجازت نقد ہے نہ اجازت عقد، عقد تو بالمشتری تام و نافذ ہو لیا یہاں تک کہ اگر کوئی شخص اپنے لئے کچھ خریدے اور اس کا ثمن کسی غیر کا غلام یا مکان قرار دے تو وہاں بھی صرف اس بناء پر کہ یہ من وجہ شراء ہے اور شراء مشتری پر نافذ عقد بنام مشتری تمام ہو جاتا ہے حالانکہ وہ من وجہ بیع ہے اور بیع مال غیر غیر نافذ و موقوف، تو جہاں من کل وجہ شراء ہے اس کا مشتری پر نفاذ واضح و جلی ہے،

عربی عبارت	اردو ترجمہ
فی البحر الرائق ان کان الثمن عرضاً کان مملوکاً للفضولی واجازۃ المالک	البحر الرائق میں ہے ثمن اگر سامان ہو تو فضولی کا مملوک ہوگا اور مالک کی اجازت اجازتِ نقد ہے نہ کہ

عربی عبارت	اردو ترجمہ
اجازة نقداً لا اجازة عقد لانہ لما کان العوض متعیناً کان شراء من وجہ والشراء لایتوقف بل ینفذ علی المباشر ان وجد نفاذا۔ فیکون ملکاً لہ وباجازة المالک لاینتقل الیہ بل تاثیر اجازتہ فی النقد لافی العقد ثم یجب علی الفضولی مثل المبیع ان کان مثلیاً والافقیمتہ الخ۔	اجازتِ عقد، کیونکہ عوض جب متعین ہے تو یہ من وجہ شراء ہے اور شراء موقوف نہیں ہوتی بلکہ مباشر پر نافذ ہو جاتی ہے اگر وہ نفاذ کی راہ پائے تو یہ مشتری کی ملک ہوا اور مالک کی اجازت سے یہ مشتری کی ملک ہو اور الک کی اجازت سے یہ مالک کی طرف منتقل نہیں ہوگا بلکہ اس کی اجازت نقد میں اثر کرے گی نہ کہ عقد میں ، پھر فضولی پر مبیع کی مثل واجب ہوگی اور اگر وہ مثلی ہے ورنہ اس کی قیمت واجب ہوگی الخ (ت)

۱۔ البحرالرائق کتاب البیوع فصل فی بیع الفضولی ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱۲۸/۶ Page 283 of 715

And any heir who does not grant permission has the option to maintain their claim for their full share of the debt against the debtor. Alternatively, whatever portion of the debt the purchaser (one of the heirs) received through buying property, it shall be divided among all shares; the heir can then claim an amount of money from the purchaser proportionate to his own share, and claim the remainder from the debtor. For example, if there was a debt of ninety rupees, and Zaid, Amr, and Bakr are three sons and heirs. Rashid was the debtor and Zaid bought property from him in his own name in exchange for the deceased's debt. Thus Zaid received his thirty rupees. If Amr validated this transaction, he can take his full thirty rupees from Zaid. If Bakr did not grant permission, he may, if he wishes, claim the full thirty rupees from the debtor. Or, since the joint debt arose from a single cause, i.e., inheritance, and Zaid has already received his share from it, Bakr can take his proportionate share (one-third, i.e., ten rupees) from Zaid and claim the remaining twenty from the debtor. He cannot make a claim on the property unless Zaid voluntarily gives him a proportionate share of the property and he accepts it.

Arabic Text

In Ad-Durr al-Mukhtar: A joint debt between two persons arising from a single cause, such as an inherited debt; if one of them receives any part of it, the other may join him in it if he wishes, or pursue the debtor. If one of them buys something with half of the debt, the partner may hold him liable for a quarter, because he took possession of half through set-off. Or the other partner may pursue the debtor because his right remains in the debtor's liability. (Summarized). In Al-Fatawa al-Hindiyya: If one partner buys a cloth in exchange for his share, the other partner has the right to hold him liable for half the price of the cloth, and he will have no right over

Urdu Translation

It is mentioned in Durr al-Mukhtar: If two persons have a joint debt arising from a single cause, such as an inherited debt, and one of them recovers some of the joint debt, the other can choose to share in what was recovered or pursue the debtor. If one of the two partners buys something from the debtor in exchange for half of the debt, the purchasing partner shall pay compensation for one-fourth of the debt to the other partner, because he took possession of half of the debt by way of set-off against the price. Alternatively, the other partner can pursue the debtor because his right remains outstanding against the debtor. (Summarized). It is in Al-Hindiyya: If one partner buys a cloth from the debtor in exchange for his share, the other partner

Arabic Text	Urdu Translation
the cloth itself. However, if both agree on a partnership in the cloth, that is permissible. Likewise in Siraj al-Wahhaj.	has the right to hold him liable for half the price of the cloth, and he will have no right over the cloth itself. But if both agree to be partners in the cloth, that is permissible. It is mentioned similarly in Siraj al-Wahhaj. (T)

1 Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sulh, Section on Claim of Debt, Mujtabai Press, Delhi, 2 / 144 2 Fatawa Hindiyya, Kitab al-Shirkah, Chapter 6, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 2 / 33

फतावा रज़विया जिल्द 17

और वारिसों में से जो इजाज़त नहीं देगा उसे इख़्तियार है कि अपने तमाम हिस्सा-ए-दैन (ऋण का हिस्सा) का मुतालबा मदयून (ऋणी) पर रखे, ख़्वाह जिस क़दर हिस्सा-ए-दैन मुश्तरी (ख़रीदार वारिस) ने ज़रिए-ए-शिरा (ख़रीदने के माध्यम से) वसूल पाया उसे जमीअ सहाम (सभी हिस्सों) पर तक़सीम करके बक़द्र अपने सहम (हिस्से के अनुसार) के रुपयों का मुतालबा मुश्तरी से और बाक़ी का मदयून से रखे। मिसाल के तौर पर, नब्बे रुपये दैन (कर्ज़) थे, और ज़ैद, उमर, बक्र तीन बेटे वारिस हैं। रशीद मदयून था, ज़ैद ने मदयून से मौरूस (मृतक) के दैन के बदले अपने नाम जायदाद ख़रीद ली, तो उसने अपने तीस रुपये पा लिए। उमर ने इस तसर्रुफ़ (लेन-देन) को जायज़ रखा, तो वह अपने पूरे तीस रुपये ज़ैद से ले ले। बक्र ने इजाज़त नहीं दी, वह चाहे तो कामिल (पूरे) तीस रुपये मदयून से ले, या फिर चूंकि दैन-ए-मुश्तरक (संयुक्त ऋण) सबब-ए-वाहिद यानी विरासत से पैदा हुआ था और ज़ैद ने अपना हिस्सा उससे पा लिया, तो बक्र बक़द्र सुलुस (एक तिहाई) यानी दस रुपये ज़ैद से ले और बाक़ी बीस का मुतालबा मदयून पर रखे। वह जायदाद पर दावा नहीं कर सकता, मगर यह कि ज़ैद अपनी ख़ुशी से उसे जायदाद का हिस्सा दे और वह उसे क़बूल कर ले।

अरबी पाठ

अद-दुरुल मुख्तार में है: दो व्यक्तियों के बीच एक ही कारण से संयुक्त ऋण हो जैसे विरासत का ऋण; यदि उनमें से एक कुछ हिस्सा प्राप्त कर ले, तो दूसरा चाहे तो उसमें शामिल हो जाए या ऋणी का पीछा करे। यदि उसने आधे ऋण के बदले कुछ ख़रीदा, तो उसका साथी उसे चौथाई का ज़ामिन (उत्तरदायी) ठहराए क्योंकि उसने मुक़ासा (सेट-ऑफ) के ज़रिए आधे पर क़ब्ज़ा किया। या वह ऋणी का पीछा करे क्योंकि उसका हक़ ऋणी के ज़िम्मे बाक़ी है। (संक्षिप्त)। हिन्दिया में है: यदि एक साथी ने अपने हिस्से के बदले कपड़ा ख़रीदा, तो दूसरे साथी को

उर्दू अनुवाद

दुर-ए-मुख़्तार में ज़िक्र है: दो शख़्सों में सबब-ए-वाहिद से मुश्तरक दैन (संयुक्त ऋण) हो जैसे दैन-ए-मौरूस (विरासत का ऋण) हो और उन दोनों में से एक ने अगर कुछ मुश्तरक दैन वसूल कर लिया तो दूसरा अगर चाहे तो उसमें शरीक हो जाए या फिर मदयून (ऋणी) का पीछा करे। और दोनों में से एक शरीक ने आधे दैन के बदले मदयून से कोई चीज़ ख़रीदी तो यह ख़रीदने वाला शरीक दूसरे को दैन के चौथाई का तावान (मुआवज़ा) दे क्योंकि उसने आधे दैन पर क़ब्ज़ा किया है दैन की क़ीमत में मुजरा (सेट-ऑफ) होने के सबब से, या फिर दूसरा शरीक मदयून का पीछा करे क्योंकि उसका हक़ मदयून के ज़िम्मे पर बाक़ी है। (संक्षिप्त)। हिन्दिया में है कि अगर एक शरीक ने अपने

अरबी पाठ

हक़ है कि उसे आधे कपड़े की क़ीमत का ज़ामिन ठहराए, और कपड़े पर उसका कोई अधिकार नहीं होगा। यदि दोनों कपड़े में साझेदारी पर सहमत हो जाएँ तो यह जायज़ है। सिराजुल वहाज में इसी तरह है।

उर्दू अनुवाद

हिस्से के बदले में मदयून से कपड़ा ख़रीदा तो दूसरे शरीक को हक़ हासिल है कि वह उसको आधे कपड़े की क़ीमत का ज़ामिन ठहराए और कपड़े पर उसका कोई हक़ न होगा। और अगर वे दोनों कपड़े की शिरकत (साझेदारी) पर मुत्तफ़िक़ (सहमत) हो जाएँ तो यह जायज़ है। सिराजुल वहाज में यूँ ही है। (त)

1 दुर-ए-मुख़्तार, किताबुल सुलह, दैन के दावे का बयान, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 2/144 2 फतावा हिन्दिया, किताबुल शिरकत, छठा बाब, नूरानी कुतुब ख़ाना, पेशावर, 2/33

اور ورثہ سے جو اجازت نہ دے گا اسے اختیار ہے کہ اپنے تمام حصہ دین کا مطالبہ مدیون پر رکھے خواہ جس قدر حصہ دین مشتری نے بذیعہ شراء وصول پایا اسے جمیع سہام پر تقسیم کرکے بقدر اپنے سہم کے روپے کا مطالبہ مشتری اور باقی کا مدیون سے رکھے، مثلاً نوے روپے دین تھے، اور زید، عمرو، بکر تین بیٹے وارث رشید نے مدیون سے جائیداد بعوض دین مورث اپنے نام خرید لی تو اس نے اپنے تیس روپے پائے عمرو نے یہ تصرف جائز رکھا وہ اپنے پورے تیس روپے زید سے لے لے بکر نے اجازت نہ دی وہ چاہے تو کامل تیس روپے مدیون سے لے خواہ ازانجا کہ دین مشترک سبب واحد یعنی ارث سے ناشی تھا اور زید نے اپنا حصہ اس سے پالیا بقدر ثلث یعنی دس روپے زید سے لے باقی بیس کا مطالبہ مدیون پر رکھے جائیداد پر دعوی نہیں کر سکتا مگر یہ کہ زید اپنی خوشی سے اسے حصہ رسد جائداد دے اور وہ قبول کر لے،

| في الدر المختار الدين المشترك بسبب متحد كدين موروث اذا قبض احدهما شيئا منه شاركه الآخر فيه ان شاء او اتبع الغريم ، فلو اشترى بنصفه شيئا ضمنه شريكه الربع لقبضه النصف بالمقاصة اواتبع غريمه لبقاء حقه فى ذمته ١ اه مختصرا و فى الهندية ولو اشترى بنصيبه ثوبا فللشريك ان يضمنه نصف ثمن الثوب ولا سبيل له على الثوب فان اجتمعا جميعا على الشركة فى الثوب فذلك جائز كذا فى السراج الوهاج ٢ - | درمختار میں مذکور ہے دو شخصوں میں سبب واحد سے مشترک دین ہو جیسے دین موروث ہو اور ان دونوں میں سے ایک نے اگر کچھ دین مشترک وصول کر لیا تو دوسرا اگر چاہے تو اس میں شریک ہوجائے یا پھر مدیون کا پیچھا کرے، اور دونوں میں سے ایک شریک نے نصف دین کے بدلے مدیون سے کچھ چیز خریدی تو یہ خریدنے والا شریک دوسرے کو دین کے چوتھائی کا تاوان دے کیونکہ اس نے نصف دین پر قبضہ کیا ہے دین کے ثمن میں مجرا ہونے کے سبب

سے یا پھر دوسرا شریک مدیون کا پیچھا کرے کیونکہ اس کا حق مدیون کے ذمے پر باقی ہے اھ مختصراً۔ ہندیہ میں ہے کہ اگر ایک شریک نے اپنے حصے کے بدلے میں مدیون سے کپڑا خریدا تو دوسرے شریک کو حق حاصل ہے کہ وہ اس کو آدھے کپڑے کے ثمن کا ضامن ٹھہرائے اور کپڑے پر اس کا کوئی حق نہ ہوگا اور اگر وہ دونوں کپڑے کی شرکت پر متفق ہو جائیں تو یہ جائز ہے السراج الوہاج میں یونہی ہے۔ (ت) |

1 درمختار کتاب الصلح فصل فی دعوی الدین مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۱۴۴ 2 فتاوٰی ہندیہ کتاب الشرکۃ الباب السادس نورانی کتب خانہ پشاور ۲ / ۳۳

Fatawa Rizwia (17)

And if this purchase contract occurred for all heirs—for example, the debtor said: "I have given this property to all of you heirs in lieu of debt," and the buyer said: "I have bought it on behalf of all" or "I took it for all," or he said only: "I accepted"—then according to the correct school of thought, the attribution to another in even one of the two statements is enough for the contract to be suspended, provided there is no contradiction in the other statement.

[Box Section] Arabic: In Al-Bazzaziyah, Al-Bahr and others, the correct view is that if the contract is attributed in one of the two statements to so-and-so, it remains suspended pending his approval. End quote. As for the absence of contradiction, we have already stated it from Al-Bahr, citing Al-Furuq, that in the case of contradiction, the more correct view is its invalidity. I say: and this is the intention of the author of Wajiz al-Kardari in his statement: "If he says: I bought for so-and-so, and the seller said: I sold to you, the more correct view is the lack of suspension." End quote. And a misconception occurred here for Allama Shami in Radd al-Muhtar, which we pointed out in our written marginalia on it. And success is only from Allah the Almighty. Urdu: It is mentioned in Bazzaziyah and Bahr etc. that the correct view is that when out of two statements, the attribution of the contract to someone specific is made in only one of them, the contract will be suspended upon their permission. As for the absence of contradiction, we have already stated from Bahr with reference to Furuq that in the case of contradiction between the statements of the seller and the buyer, the more correct view is that the contract will be void. I say that this is the meaning of Wajiz al-Kardari's statement that if the buyer said: "I bought for so-and-so," and the seller said: "I sold to you," then the more correct view is that the contract will not be suspended. Here Allama Shami in Radd al-Muhtar encountered a misconception, which we pointed out in our written annotations on Radd al-Muhtar, and success is only from Allah the Almighty. (T)

So in this case, if the buyer had the authority for this purchase on behalf of the remaining heirs via will, guardianship, or proxy, then it is clear that the contract was completed and executed immediately, and all heirs became partners in the property according to their share, and the debtor was absolved of the debt of all, "because it is the disposal of one who has the authority of disposal, so it was completed and executed without suspension." (Since it is his act who has the authority to act, it became complete and executed without suspension. -T). Otherwise, if there is a minor among the heirs over whom no one has legal authority for this purchase—as

many orphans are nowadays who have no father, no grandfather, no executor, no executor of the executor, nor a Sharia judge in these lands, nor a Muslim ruler, and besides them...

---

1. Al-Bahr al-Ra'iq, Book of Sale, Section on Fuduli's Sale, H.M. Saeed Company Karachi, 6/139.
2. Al-Fatawa al-Bazzaziyah on the margin of Al-Fatawa al-Hindiyyah, Book of Sale, Chapter Nine, Noorani Kutub Khana Peshawar, 4/283.

और अगर यह खरीद का अनुबंध (अक़्द-ए-शिरा) सभी वारिसों के लिए हुआ, उदाहरण के लिए देनदार ने कहा, "मैंने तुम सभी वारिसों को यह संपत्ति ऋण के बदले में दी," और खरीदार ने कहा, "मैंने सबकी ओर से खरीदी" या "सबके लिए ली," या सिर्फ इतना कहा कि "मैंने स्वीकार किया," तो सही मज़हब पर, एक ही कथन में किसी अन्य की ओर निस्बत करना अनुबंध के स्थगन (तवक़्क़ुफ़) के लिए पर्याप्त है, जब तक कि दूसरे के कथन में इसके विपरीत कुछ न हो।

[बॉक्स अनुभाग] अरबी: अल-बज़ाज़िया, अल-बहर और अन्य में सही बात यह है कि जब दो कथनों में से एक में अनुबंध को 'अमुक' से जोड़ा गया हो, तो वह उसकी अनुमति पर निर्भर रहता है। जहाँ तक विरोध के न होने की बात है, हमने अल-बहर के माध्यम से अल-फ़ुरूक़ से पहले ही बताया है कि विरोध के मामले में अधिक सही बात अनुबंध का शून्य होना है। मैं कहता हूँ: वजीज़ अल-करदरी के इस कथन 'यदि उसने कहा मैंने अमुक के लिए खरीदा और विक्रेता ने कहा मैंने तुम्हें बेचा, तो अधिक सही यह है कि स्थगन नहीं होगा' से यही तात्पर्य है। यहाँ रद अल-मुह्तार में अल्लामा शामी को एक भ्रम हुआ, जिसे हमने रद अल-मुह्तार पर अपनी टिप्पणियों में स्पष्ट किया है। और सफलता अल्लाह की ओर से है। उर्दू: बज़ाज़िया और बहर आदि में उल्लेख है कि सही यह है कि जब दो कथनों में से केवल एक में अनुबंध का संबंध किसी विशेष व्यक्ति से किया गया हो, तो अनुबंध उसकी अनुमति पर मवक़ूफ़ (निर्भर) होगा। जहाँ तक अंतर्विरोध के न होने की बात है, तो हम बहर से फ़ुरूक़ के हवाले से पहले बता चुके हैं कि विक्रेता और खरीदार के बयानों में अंतर्विरोध होने पर अधिक सही यह है कि वह अनुबंध बातिल (शून्य) होगा। मैं कहता हूँ कि वजीज़ अल-करदरी के इस कथन का यही अर्थ है कि यदि खरीदार ने कहा "मैंने फ़लाँ के लिए खरीदा" और विक्रेता ने कहा "मैंने तुम्हें बेचा" तो अधिक सही यह है कि अनुबंध मवक़ूफ़ नहीं होगा। यहाँ अल्लामा शामी को रद अल-मुह्तार में एक भ्रम हुआ, जिसे हमने रद अल-मुह्तार पर अपने लिखे गए नोट्स में इंगित कर दिया है। और सफलता अल्लाह तआला की ओर से ही है। (त)

तो इस स्थिति में यदि खरीदार के पास शेष वारिसों की ओर से वसीयत, विलायत (अभिभावकत्व) या वकालत के माध्यम से इस खरीद का अधिकार था, तो यह स्पष्ट है कि अनुबंध पूरी तरह से तुरंत लागू हो गया और सभी वारिस संपत्ति में अपने हिस्से के अनुसार भागीदार हो गए, और देनदार सभी के ऋण से मुक्त हो गया, "क्योंकि यह उस व्यक्ति का कार्य है जिसे कार्य करने का अधिकार है, इसलिए यह बिना किसी स्थगन के पूर्ण और लागू हो गया।" (क्योंकि यह उसका कार्य है जिसे कार्य करने का

अधिकार है, तो बिना रुके पूर्ण और लागू हो गया। -त)। अन्यथा यदि वारिसों में कोई ऐसा नाबालिग है जिस पर किसी को इस खरीद का कानूनी अधिकार नहीं है—जैसा कि आज कल बहुत से अनाथ होते हैं जिनके न पिता हैं, न दादा, न उनका वसी, न वसी का वसी, न ही इन शहरों में कोई शरा का काज़ी है, न ही इस्लाम का सुल्तान, और उनके अलावा...

---

1. अल-बहर अर-राइक, किताब अल-बुयू, फ़ज़ूली की बिक्री का अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 6/139।
2. अल-फ़तावा अल-बज़ाज़िया, अल-फ़तावा अल-हिंदिया के हाशिये पर, किताब अल-बुयू, अध्याय 9, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 4/283।

اور اگر یہ عقد شراء سب وارثوں کے لئے واقع ہوا مثلاً مدیون نے کہا میں نے تم سب ورثہ کو یہ جائداد دین میں دی، مشتری نے کہا میں نے سب کی طرف سے خریدی یا سب کے لئے لی، یا اسی قدر کہا کہ میں نے قبول کی کہ مذہب صحیح پر ایک ہی کلام میں اضافت الی الغیر توقف عقد کے لئے بس ہے جبکہ کلام غیر میں اس کا خلاف نہ ہو،

[باکس سیکشن] عربی: في البزازية والبحر وغيرهما الصحيح انه اذا اضيف العقد في احد الكلامين الى فلان يتوقف على اجازته اهـ واما عدم التخالف فقد منّاه عن البحر عن الفروق ان الاصح عند التخالف البطلان قلت وهو مراد وجيز الكردري بقوله لو قال اشتريت لفلان وقال البائع بعت منك الاصح عدم التوقف اهـ وقد عرض ههنا وهم للعلامة الشامي في ردالمحتار نبهنا عليه فيما علقنا عليه وبالله التوفيق۔
اردو: بزازیہ اور بحر وغیرہ میں مذکور ہے صحیح یہ ہے کہ جب دو کلاموں میں سے صرف ایک میں عقد کی اضافت فلان کی طرف کی گئی ہو تو عقد اس کی اجازت پر موقوف ہوگا، رہا مخالفت کا نہ ہونا تو ہم بحر سے بحوالہ فروق پہلے بیان کرچکے ہیں کہ بائع و مشتری کے کلاموں میں مخالفت کی صورت میں زیادہ صحیح یہ ہے کہ وہ عقد باطل ہوگا، میں کہتا ہوں کہ وجیز الکردری کے اس قول سے یہی مراد ہے کہ اگر مشتری نے کہا میں نے فلاں کے لئے خریدا اور بائع نے کہا میں نے تیرے ہاتھ بیچا تو زیادہ صحیح یہ ہے کہ عقد موقوف نہیں ہوگا یہاں پر علامہ شامی کو ردالمحتار میں ایک وہم عارض ہوا، ہم نے ردالمحتار پر اپنی تحریر کردہ تعلیقات میں اس پر تنبیہ کردی، اور توفیق اللہ تعالٰی ہی کی طرف سے ہے۔ (ت)

تو اس صورت میں اگر مشتری باقی سب ورثہ کی طرف سے وصایتاً یا ولایتاً یا وکالتاً اس شراء کا اختیار رکھتا تھا جب تو ظاہر کہ عقد تمام وکمال فوراً نافذ اور سب ورثہ رسد جائداد میں شریک اور

مدیون سب کے دین سے بری لانه تصرف من له التصرف فتم ونفذ من دون توقف (کیونکہ یہ اس کا تصرف ہے جس کو تصرف کا اختیار ہے تو بلا توقف تمام و نافذ ہوگیا۔ت) ورنہ اگر ورثہ میں کوئی قاصر ایسا ہے جس پر کسی کو اس شراء کا اختیار شرعی نہیں جس طرح آج کل بہت یتیم ہوتے ہیں جن کے نہ باپ، نہ دادا نہ ان کا وصی، نہ وصی الوصی، نہ ان بلاد میں قاضی شرع، نہ سلطان اسلام، اور ان کے سوا

---

1 البحر الرائق کتاب البیع فصل فی بیع الفضولی ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۶ / ۱۳۹ 2 الفتاوی البزازیة علی هامش الفتاوی الهندیة کتاب البیوع ، الباب التاسع نورانی کتب خانہ پشاور ۴ / ۲۸۳

Fatawa Razawiyya Volume (17)

Mother, brother, uncle etc. are not authorized to purchase property for an orphan, so there is no one on his behalf to grant permission for this purchase, and a contract initiated by an unauthorized person (fudhuli) such that there is no authorizer (mujeez) at the time of the contract, is void (batil).

In Al-Durr (Al-Mukhtar): Every transaction that proceeds from an unauthorized person (fudhuli) and for which there is someone capable of authorizing it at the time of its occurrence, is concluded as a suspended (mawquf) contract. As for that for which there is no one to authorize it at the time of the contract, it is not concluded at all.

It is mentioned in [Al-Durr] that every transaction which proceeds from a fudhuli (unauthorized person) and at the time of the contract there is a mujeez (authorizer), i.e., such a person exists who can grant permission for it, then the conclusion of that contract will be suspended upon his permission. And a transaction for which no mujeez exists at the time of contract will not be concluded at all. (T)

Therefore, the acceptance by the buyer on behalf of this minor is neither an effective acceptance nor a suspended acceptance, but rather purely void (batil) and non-existent. The offer (ijab) was for everything, but acceptance was not found even for a part, or let's say the offer was for the entire sold item and acceptance was for a part. In any case, because the offer and acceptance differed, the contract became fundamentally void. All the property should be returned to the debtor and the debt remains established as in the first mentioned scenario.

In Radd al-Muhtar, citing al-Bahr al-Ra'iq: If the person making the offer (al-moujib) is one and the addresses (al-mukhatab) are multiple, it is not permissible to split the acceptance by one of them accepting, whether the offeror was the seller or the buyer. Conversely, acceptance is not permissible for the share of one of them. (End quote) And in it (it is stated): A condition for the contract is the conformity of the acceptance to the offer. Thus, if he accepts something other than what was offered, or a part of it, or with something other than what was offered, or a part of it, it is not concluded except in pre-emption (shufa), etc.

It is mentioned in Radd al-Muhtar with reference to al-Bahr al-Ra'iq that if the person making the offer is one and the addresses are multiple, then splitting is not permissible, such that only one of them accepts, whether the offeror is the seller or

the buyer. And if it is the opposite, then acceptance for the share of one of them is not permissible. In both these books it is mentioned that it is a condition for the acceptance to be in accordance with the offer, in such a way that the buyer accepts the same thing for which the seller made the offer. If the buyer accepts something else or a part of it, or the price which the seller [specified...]

1. Al-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Chapter on al-Fudhuli, Mujtabai Press Delhi, 2/31.
2. Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/19; al-Bahr al-Ra'iq, Kitab al-Bay', H.M. Saeed Company Karachi, 5/267-68.
3. Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/5; al-Bahr al-Ra'iq, Kitab al-Bay', H.M. Saeed Company Karachi, 5/258.

फ़तावा रज़विया जिल्द (17)

माँ, भाई, चाचा आदि अनाथ के लिए संपत्ति खरीदने के पात्र नहीं हैं, इसलिए उसकी ओर से इस खरीद की अनुमति देने वाला कोई नहीं है। एक अनधिकृत व्यक्ति (फुज़ूली) द्वारा किया गया अनुबंध, जिसके लिए अनुबंध के समय कोई अधिकृत व्यक्ति (मुजीज़) न हो, वह अमान्य (बातिल) होता है।

अल-दुर्र (अल-मुख़्तार) में वर्णित है: एक अनधिकृत व्यक्ति (फुज़ूली) द्वारा किया गया प्रत्येक व्यवहार, जिसके लिए उसके होने के समय उसे अधिकृत करने में सक्षम कोई व्यक्ति हो, वह एक निलंबित (मौकूफ़) अनुबंध बन जाता है। जहाँ तक उसके लिए अनुबंध के समय उसे अधिकृत करने वाला कोई न हो, वह बिल्कुल भी प्रभावी नहीं होता है।

[अल-दुर्र] में उल्लेख है कि प्रत्येक व्यवहार जो किसी अनधिकृत व्यक्ति से होता है और अनुबंध के समय उसका कोई मुजीज़ यानी ऐसा कोई व्यक्ति मौजूद हो जो उसकी अनुमति दे सके, तो उस अनुबंध का समापन उसकी अनुमति पर निर्भर (निलंबित) होगा। और जिस व्यवहार के लिए अनुबंध के समय कोई मुजीज़ मौजूद न हो, वह बिल्कुल भी संपन्न नहीं होगा। (त)

अतः इस नाबालिग की ओर से खरीदार द्वारा स्वीकृति न तो प्रभावी स्वीकृति है और न ही निलंबित स्वीकृति, बल्कि विशुद्ध रूप से अमान्य (बातिल) और अस्तित्वहीन है। प्रस्ताव (ईजाब) सभी के लिए था और कुछ की ओर से स्वीकृति नहीं पाई गई, या यों कहें कि प्रस्ताव पूरी बेची गई वस्तु के लिए था और स्वीकृति कुछ हिस्से के लिए हुई। बहरहाल, ईजाब और क़ुबूल (प्रस्ताव और स्वीकृति) में भिन्नता होने के कारण अनुबंध मौलिक रूप से अमान्य हो गया। पूरी संपत्ति ऋणी को लौटा दी जानी चाहिए और ऋण पहली बताई गई स्थिति के अनुसार बना रहेगा।

रद्द अल-मुह्तार में अल-बहर अल-राईक़ के हवाले से: यदि प्रस्ताव देने वाला व्यक्ति एक हो और संबोधित व्यक्ति अनेक हों, तो उनमें से किसी एक द्वारा स्वीकृति देकर विभाजन करना जायज़ नहीं है, चाहे प्रस्ताव देने वाला विक्रेता हो या खरीदार। इसके विपरीत, उनमें से किसी एक के हिस्से में स्वीकृति जायज़ नहीं है (अंत)। और इसमें (यह भी है): अनुबंध की एक शर्त यह है कि स्वीकृति प्रस्ताव के अनुरूप होनी चाहिए। यदि वह प्रस्तावित वस्तु के अलावा किसी अन्य चीज़ को स्वीकार करता है, या उसके किसी हिस्से को, या प्रस्तावित मूल्य के अलावा किसी अन्य मूल्य पर, या उसके किसी हिस्से को, तो वह संपन्न नहीं होता, सिवाय शुफ़ा (अग्रक्रयाधिकार) आदि के।

रद्द अल-मुह्तार में अल-बहर अल-राईक़ के संदर्भ में उल्लेख है कि यदि प्रस्ताव देने वाला एक हो और संबोधित अनेक हों, तो विभाजन जायज़ नहीं है कि उनमें से केवल एक स्वीकार करे, चाहे प्रस्तावक विक्रेता हो या खरीदार। और यदि इसके विपरीत हो, तो उनमें से एक के हिस्से के लिए स्वीकृति जायज़ नहीं है। इन दोनों पुस्तकों में उल्लेख है कि स्वीकृति का प्रस्ताव के अनुकूल होना शर्त है, इस प्रकार कि खरीदार उसी चीज़ को स्वीकार करे जिसका विक्रेता ने प्रस्ताव दिया था। यदि खरीदार उसके अलावा किसी और चीज़ को या उसके कुछ हिस्से को स्वीकार करे, या जो मूल्य विक्रेता ने [निर्दिष्ट किया...]

1. अल-दुर्र अल-मुख़्तार, किताब अल-बुयू, फ़ुज़ूली पर खंड, मुजतबाई प्रेस दिल्ली, 2/31।
2. रद्द अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी बेरुत, 4/19; अल-बहर अल-राईक़, किताब अल-बय, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 5/267-68।
3. रद्द अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी बेरुत, 4/5; अल-बहर अल-राईक़, किताब अल-बय, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 5/258।

ماں بھائی چچا وغیرہ یتیم کے لئے جائیداد خریدنے کے مجاز نہیں تو اس کی طرف اس خریداری کی اجازت دینے والا کوئی نہیں اور فضولی سے وہ عقد ایسا صادر ہو کہ وقت عقد جس کا مجیز نہیں ہو باطل ہوتا ہے،

فی الدر کل تصرف صدر منہ ولہ مجیز ای من یقدر علی اجازتہ حال وقوعہ انعقد موقوفا و ما لا مجیز لہ حالۃ العقد لا ینعقد اصلا۔

در میں مذکور ہے ہر وہ تصرف جو فضولی سے صادر ہو اور عقد کے وقت اس کا کوئی مجیز یعنی کوئی ایسا شخص موجود ہے جو اس کی اجازت دے سکتا ہے تو اس عقد کا انعقاد اس کی اجازت پر موقوف ہوگا اور جس تصرف کا بوقت عقد کوئی مجیز موجود نہ ہو وہ بالکل منعقد نہیں ہوگا۔ (ت)

تو مشتری کا اس نا بالغ کی طرف سے قبول، نہ قبولِ نافذ ہے نہ قبول موقوف بلکہ محض باطل ہے اور باطل معدوم، تو ایجاب سب کے لئے تھا اور قبول بعض کی طرف سے نہ پایا گیا، یا یوں کہیئے کہ ایجاب کل مبیع کا تھا اور قبول بعض کا ہوا، بہر حال ایجاب و قبول مختلف ہو کر عقد راساً باطل ہو گیا کل جائیداد مدیون کو واپس اور دین بدستور مذکور صورتِ اولٰی قائم،

فی ردالمحتار عن البحر الرائق الموجب اذا اتحد وتعدد المخاطب لم یجز التفریق بقبول احدھما بائعا کان الموجب او مشتریا و علی عکسہ لم یجز القبول فی حصۃ احدھما اھ وفیھا شرط العقد موافقۃ الایجاب للقبول فلو قبل غیر ما او جبہ او بعضہ او بغیر ما او جبہ او بعضہ لم ینعقد الا فی الشفعۃ الخ۔

ردالمحتار میں البحر الرائق کے حوالے سے مذکور ہے کہ ایجاب کرنے والا اگر ایک ہو اور مخاطب متعدد ہوں تو تفریق جائز نہیں کہ ان دونوں میں سے ایک قبول کرے، چاہے ایجاب کرنے والا بائع ہو یا مشتری ہو، اور اگر اس کے برعکس ہو تو ان دونوں میں سے ایک کے حصہ میں قبول جائز نہیں اھ انہی دونوں کتابوں میں مذکور ہے کہ قبول کا ایجاب کے موافق ہونا شرط ہے بایں طور کہ مشتری اسی چیز کو قبول کرے جس کا بائع نے ایجاب کیا مشتری اس کے غیر یا اس کے بعض کو قبول کرے یا جو ثمن بائع نے

1 الدرالمختار کتاب البیوع فصل فی الفضولی مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۳۱ 2 ردالمحتار کتاب البیوع داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۹، بحر الرائق کتاب البیع ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۵/ ۶۸-۲۶۷ 3 ردالمحتار کتاب البیوع داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۵، بحر الرائق کتاب البیع ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۵/ ۲۵۸

Volume 17 Fatawa Razawiyya

If [the buyer] accepts [an offer] in exchange for something other than what was mentioned in the proposal (Ijab) or for a part of it, then except for the case of pre-emption (Shufa'), it is not concluded, etc. (T) And if these two situations do not exist, i.e., neither is this disposal by the buyer effective over all heirs, nor is there anyone among them over whom someone else's such disposal is effective, then the purchase is effective and binding regarding the buyer and also regarding the person on whose behalf his acceptance is effective. For the remaining heirs, it is dependent on the permission of themselves or their executor (Wasi) or an authorized executor; whoever gives permission will also become the owner of the property to the extent of his share. And if he rejects it, it will be cancelled in his favor, as is the nature of an unauthorized contract (Aqd al-Fuduli). (T) Now, in the case of partial rejection, the situation will be that the property which the seller had sold in a single deal (Safqa Wahida), part of it remained as sold goods and part of it went out of the deal. In this case, there will be splitting of the bargain (Tafreeq-e-Safqa) before completion, to which he cannot be forced.

As for the splitting, it is apparent, and likewise, its being before completion. How can a pending deal be complete before permission? Do you not see that the one for whom the purchase was made has the right to reject it without a court order or mutual consent? Therefore, the option of condition (Khiyar al-Shart) prevents its completion, as explicitly stated in 'al-Fath' etc. It is stated in 'al-Durr al-Mukhtar': The principle is that rejecting a part necessitates the splitting of the bargain, which is permissible after completion, not before it. Thus, the option of condition and the option of viewing (Khiyar al-Ru'yah) prevent its completion, while the option of defect (Khiyar al-Aib) prevents it before possession, not after it. etc. I say:

But splitting is obvious, and so is its being before completion because a contract dependent on permission cannot be complete before permission. Do you not see that the one for whom the purchase was made has the option to reject even without court ruling or consent? That is why the option of condition prevents the completion of the deal, as stated in Fath etc. In Durr al-Mukhtar it is: The principle is that returning a part causes splitting of the deal, and it is allowed after the completion of the deal, not before it. So, option of condition and option of viewing prevent the completion of the deal, whereas option of defect prevents it before possession, not after possession, etc. I say:

1. Fath al-Qadeer, Kitab al-Buyu', Bab Khiyar al-Ru'yah, Maktaba Nooriya Razawiyya, Sukkur, 5/523; Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Bab Khiyar al-Ru'yah, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/70.
2. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab Khiyar al-Ru'yah, Matba' Mujtabai, Delhi, 2/15.

ईजाब (प्रस्ताव) में ज़िक्र किया गया खरीदार उसके सिवा या उसके कुछ हिस्से के बदले कुबूल (स्वीकार) करे, तो शुफ़ा (अग्रक्रयाधिकार) के अलावा मुनअक़िद (संपन्न) नहीं हुआ, इत्यादि। (त) और अगर ये दोनों सूरतें नहीं हैं, यानी न तो सभी वारिसों पर खरीदार का यह तसर्रुफ़ (अधिकार प्रयोग) नाफ़िज़ (प्रभावी) है और न ही उनमें कोई ऐसा है जिस पर किसी का ऐसा तसर्रुफ़ नाफ़िज़ हो, तो खरीदारी खरीदार के हक में और उसके हक में भी जिसके पक्ष से उसका कुबूल नाफ़िज़ है, नाफ़िज़ और लाज़िम है। बाकी वारिसों के लिए यह स्वयं उनकी या उनके वसी (वसीयतदार) या अधिकृत वसी की अनुमति पर निर्भर है। जो अनुमति देगा, वह भी उस संपत्ति का अपने हिस्से के बराबर मालिक होगा, और जो रद्द करेगा, उसके हक में वह रद्द हो जाएगा, जैसा कि अक़्द-ए-फुज़ूली (अनधिकृत अनुबंध) की स्थिति होती है। (त) अब रद्द करने की स्थिति में कुछ सूरत यह होगी कि वह संपत्ति जिसे विक्रेता ने एक ही सौदे (सफ्क़ा वाहिदा) में बेचा था, उसका कुछ हिस्सा बिका हुआ रहा और कुछ सौदे से बाहर हो गया। इसमें सौदे की पूर्णता से पहले 'तफ़रीक़-ए-सफ्क़ा' (सौदे का विखंडन) होगा, जिसके लिए उसे मजबूर नहीं किया जा सकता।

जहाँ तक विखंडन का सवाल है, वह स्पष्ट है और इसी तरह उसका पूर्णता से पहले होना भी। अनुमति पर निर्भर अनुबंध अनुमति से पहले कैसे पूर्ण हो सकता है? क्या आप नहीं देखते कि जिसके लिए खरीदारी की गई है, उसे अदालती फैसले या आपसी सहमति के बिना भी रद्द करने का अधिकार है? इसीलिए 'खियार-ए-शर्त' (शर्त का विकल्प) सौदे की पूर्णता में बाधक है, जैसा कि 'फ़तह' आदि में स्पष्ट किया गया है। 'अद-दुरुल मुख्तार' में है: सिद्धांत यह है कि किसी हिस्से को रद्द करना सौदे के विखंडन का कारण बनता है और यह पूर्णता के बाद जायज़ है, उससे पहले नहीं। चुनाँचे 'खियार-ए-शर्त' और 'खियार-ए-रूयत' सौदे की पूर्णता में बाधक हैं, जबकि 'खियार-ए-ऐब' कब्ज़े से पहले बाधक है, कब्ज़े के बाद नहीं, इत्यादि। मैं कहता हूँ।

लेकिन विखंडन स्पष्ट है, इसी तरह उसका पूर्णता से पहले होना भी, क्योंकि अनुमति पर निर्भर अनुबंध अनुमति से पहले कैसे पूर्ण हो सकता है? क्या आप नहीं देखते कि जिसके लिए खरीदारी की गई है, उसे फैसले और सहमति के बिना ही रद्द करने का अधिकार है? इसीलिए खियार-ए-शर्त सौदे की पूर्णता से बाधक है, जैसा कि फ़तह आदि में वर्णित है। दुर्र-ए-मुख्तार में है: मूल बात यह है कि कुछ हिस्से को वापस करना सौदे के विखंडन का कारण है और वह सौदे की पूर्णता के बाद जायज़ है न कि उससे पहले। चुनाँचे खियार-ए-शर्त और खियार-ए-रूयत सौदे की पूर्णता से बाधक हैं, जबकि खियार-ए-ऐब कब्ज़े से पहले बाधक है, कब्ज़े के बाद बाधक नहीं, इत्यादि। मैं कहता हूँ।

1. फ़तह अल-क़दीर, किताब अल-बुयू, बाब खियार अल-रूयत, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 5/523; रद अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू, बाब खियार अल-रूयत, दार इहया अल-तुरास अल-अरबी, बेरुत, 4/70।
2. दुर्र-ए-मुख्तार, किताब अल-बुयू, बाब खियार अल-रूयत, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 2/15।

ایجاب میں ذکر کیا مشتری اس کے غیر یا اس کے بعض کے بدلے قبول کرے تو سوائے شفعہ کے منعقد نہیں ہوا الخ۔(ت) اور اگر یہ دونوں صورتیں نہیں یعنی نہ سب ورچہ پر مشتری کا یہ تصرف نافذ نہ ان میں کوئی ایسا جس پر کسی کا ایسا تصرف نافذ ،تو شرابحق مشتری اور نیز اس کے حق میں جس کی طرف سے اس کا قبول نافذ ہے نافذ ولازم باقی ورثہ کے لئے خود ان کی خواہ ان کے وصی یا وصی مجاز کی اجازت پر موقوف جو اجازت دے گا وہ بھی بقدر حصہ اس جائداد کا مالک ہوگا اور جرد کرے گا اس کے حق میں رد ہو جائیگا کما ھو شان عقد الفضولی (جیسا کہ عقد فضولی کی شان ہے۔ت) اب بحالت رد بعض صورت یہ ہوگی کہ جائداد جو بائع نے بصفقہ واحدہ بیچ کی تھی اس کی بعض مبیع رہی اور بعض مبیع سے نکل گئی اس میں اس پر تفریق صفقۃ قبل تمام ہوگی جس پر وہ مجبور نہیں ہوسکتا،

اما التفريق فظاهر وكذا كونه قبل التمام فكيف تتم صفقة موقوفة قبل الاجازة الاترى ان للمشترى له الرد بدون قضاء ولارضاء ولذا كان خيار الشرط مانعاً تمامها كما نص عليه فى الفتح وغيره قال فى الدر المختار الاصل ان رد البعض يوجب تفريق الصفقة وهو بعد التمام جائز لاقبله فخيار الشرط و الرؤية يمنعان تمامها وخيار العيب يمنعه قبل القبض لابعده ٢ الخ قلت والدين لازم بيعه ممن ليس الخ میں کہتا ہوں

لیکن تفریق ظاہر ہے یونہی اس کا قبل از تمام ہونا کیونکہ اجازت پر موقوف عقد اجازت سے قبل کیسے تمام ہوسکتا ہے، کیا تو نہیں دیکھتا کہ جس کے لئے خریداری ہو اس کو قضاء ورضاء کے بغیر ہی رد کا اختیار ہے، اسی لئے خیار شرط تمامیت صفقہ سے مانع ہے جیسا کہ فتح وغیرہ میں منصوص ہے۔ در مختار میں ہے اصل یہ ہے کہ بعض کو رد کرنا تفریق صفقہ کا موجب ہے اور وہ تمامیت صفقہ کے بعد جائز ہے نہ کہ اس سے پہلے، چنانچہ خیار شرط اور خیار رؤیت تمامیت صفقہ سے مانع ہیں جبکہ خیار عیب قبضہ سے پہلے مانع ہے قبضہ کے بعد مانع نہیں الخ میں کہتا ہوں

1 فتح القدير كتاب البيوع باب خيار الرؤية مكتبہ نوريہ رضويہ سكهر ٥٢٣/٥، ردالمحتار كتاب البيوع باب خيار الرؤية داراحياء التراث العربى بيروت ٧٠/٤ 2 درمختار كتاب البيوع باب خيار الرؤية مطبع مجتبائى دہلى ١٥/٢

Fatawa Razawiya (Volume 17)

It is mandatory to sell the debt to the person who is both the principal and the agent (fudhuli). As an agent, the person for whom it was purchased has the right to either reject or validate it. In this scenario, the seller's consent to the splitting of the transaction and its return with the defect of partnership is established. It is stated in Al-Hidayah that if two individuals purchase a slave on the condition that both possess the right of option (Khiyar), and subsequently one of them becomes satisfied, the other does not have the authority to return the slave. This is because the slave was removed from the seller's ownership without the defect of partnership; if one were to return him now, he would be returned with the defect of partnership, imposing an additional loss on the seller. Granting the option to both does not imply the seller's consent for only one of them to return him, as the possibility remains for both to return him collectively. (Summary ends). In Ad-Durr al-Mukhtar, it is noted that neither individual has the right to independently authorize or reject, contrary to the view of the two companions (Sahibayn). Al-Majma'. (T)

Therefore, he will have the option to return the entire property, and the previously mentioned debt will remain mandatory for him. Whether he tolerates the loss caused by this division and takes back the share of the person who rejected it while maintaining the sale for the remainder, in that case, those who rejected it will be granted the same aforementioned option, whether they demand their respective shares of the debt.

---

1 Al-Hidayah, Kitab al-Buyu', Bab Khiyar al-Shart, Matba' Yusifi, Lucknow, 3/39-40. 2 Ad-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab Khiyar al-Shart, Matba' Mujtabai, Delhi, 2/13.

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

ऋण उस व्यक्ति को बेचना आवश्यक है जो मूल (असील) और एजेंट (फुज़ूली) दोनों है। एक एजेंट के रूप में, जिसके लिए इसे खरीदा गया था, उसे इसे अस्वीकार करने या वैध करने का अधिकार है। इस स्थिति में, विक्रेता की ओर से लेनदेन के विभाजन और साझेदारी के दोष के साथ इसकी वापसी पर सहमति स्थापित होती है। अल-हिदाया में कहा गया है कि यदि दो व्यक्ति इस शर्त पर एक गुलाम खरीदते हैं कि दोनों के पास विकल्प (खियार) का अधिकार है, और बाद में उनमें से एक संतुष्ट हो जाता है, तो दूसरे के पास गुलाम को वापस करने का अधिकार नहीं है। ऐसा इसलिए है क्योंकि गुलाम विक्रेता के स्वामित्व से साझेदारी के दोष के बिना निकला था; यदि कोई अब उसे वापस करता है, तो उसे साझेदारी के दोष के साथ वापस किया जाएगा, जिससे विक्रेता पर अतिरिक्त हानि होगी। दोनों को विकल्प प्रदान करने का अर्थ यह नहीं है कि विक्रेता उनमें से केवल एक द्वारा उसे वापस करने के लिए सहमत है, क्योंकि दोनों के सामूहिक रूप से उसे वापस करने की संभावना बनी रहती है। (संक्षेप समाप्त)। अद-दुर्र अल-मुख्तार में यह उल्लेख किया गया है कि किसी भी व्यक्ति को स्वतंत्र रूप से अनुमति देने या अस्वीकार करने का अधिकार नहीं है, जो दो साथियों (साहिबैन) के दृष्टिकोण के विपरीत है। अल-मजमा। (त)

इसलिए, उसके पास पूरी संपत्ति वापस करने का विकल्प होगा, और पहले उल्लेखित ऋण उसके लिए अनिवार्य रहेगा। चाहे वह इस विभाजन के कारण होने वाली हानि को सहन करे और अस्वीकार करने वाले व्यक्ति का हिस्सा वापस ले ले, जबकि शेष के लिए बिक्री को बनाए रखे, उस स्थिति में, जिन्होंने इसे अस्वीकार किया था, उन्हें वही पूर्वोक्त विकल्प दिया जाएगा, चाहे वे ऋण के अपने संबंधित शेयरों की मांग करें।

---

1 अल-हिदाया, किताब अल-बुयू, बाब खियार अल-शर्त, मतबा यूसुफी, लखनऊ, 3/39-40। 2 अद-दुर्र अल-मुख्तार, किताब अल-बुयू, बाब खियार अल-शर्त, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 2/13। पृष्ठ 715 का 288

لازم دین کو فروخت کرنا اس شخص سے جو اصیل ہے اور فضولی بھی، فضولی ہونے کی حیثیت سے جس کے لئے خریدا اس کو رد کرنے بلکہ جائز کرنے کا اختیار ہے تو اندریں صورت بائع کی طرف سے سودے کے متفرق ہونے اور شرکت عیب کے ساتھ رد کرنے پر رضامندی پائی گئی، ہدایہ میں فرمایا کہ جب دو شخص نے ایک غلام خریدا اس شرط پر کہ دونوں کو خیار شرط حاصل ہوگا پھر ان میں سے ایک راضی ہو گیا تو دوسرے کو رد کرنے کا اختیار نہیں کیونکہ غلام مبیع بائع ملک سے اس حال میں نکلا تھا کہ اس میں عیب شرکت نہیں تھا، اب اگر دونوں میں سے ایک اس کو واپس کرے تو اس حال میں واپس کرے گا کہ اس میں شرکت کا عیب موجود ہے اور اس میں بائع پر ضرر زائد لازم کرنا ہوا، اور بائع کی طرف سے ان دونوں کو خیار دینے سے یہ لازم نہیں آتا کہ وہ ان میں سے ایک کے رد کرنے پر راضی ہو کیونکہ ان کے رد پر جمع ہونے کا احتمال موجود ہے اھ مختصراً، در مختار میں ہے دونوں میں سے ایک کو انفرادی طور اجازت یا رد کا اختیار نہیں بخلاف صاحبین کے، مجمع۔ (ت)

لہذا اسے اختیار ہوگا کہ کل جائداد واپس لے اور دین بدستور مذکور سابق اس پر لازم رہے خواہ اس ضرر تفریق کو گوارا کر کے جس نے رد کیا اس کا حصہ پھیر لے باقی میں بیع مقبول رکھے اس تقدیر پر جنہوں نے رد کیا انہیں وہی اختیار مذکور دیا جائے گا کہ خواہ اپنے اپنے حصص دین کا مطالبہ

---

1 الہدایۃ کتاب البیوع باب خیار الشرط مطبع یوسفی لکھنؤ ۳ / ۳۹-۴۰ 2 الدر المختار کتاب البیوع باب خیار الشرط مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۱۳ Page 288 of 715

Fatawa Rizwia, Volume 17

...keep it from the debtor, whether those sharing partners, i.e., the buyer, etc. (for whom the contract was executed by the action of the buyer, whether with their permission or that of their guardians or executors), whatever debt they received in exchange for property, they should take their proportional share from those receivers and leave the remainder for the original debtor as previously mentioned. (T) For example, in the described scenario, Zaid bought for all heirs, Amr gave permission, Zaid and Amr became owners of two-thirds of the property in exchange for the debt. Bakr, who did not deem it permissible, if he wishes, can take his full amount from the debtor, or take ten each from Zaid and Amr who have already received sixty, and leave the claim for the remaining ten on the debtor. And Allah, Glory be to Him and Most High, knows best, and His knowledge, glorified be His majesty, is most complete and most perfect.

Problem 712: From Allahabad, Daira Ajmal Shah, sent by Maulvi Mohammad Sahib Mohammadi, 13 Jumada al-Thani 1314 AH. Related to the previous problem.

To the honorable Maulana Al-Majd, may your grace continue, peace be upon you and the mercy of Allah and His blessings. The fatwa you kindly granted contains the following passages. Due to ill health, I could not attend to extracting the said passages from the books, and despite searching by the boys, those passages were not found in the book. Compelled, I am presenting my request to your honorable presence with the hope that you would kindly write in which chapter and section the said passages are located. I would be highly obliged. Greetings!

In al-Durr al-Mukhtar: A shared debt with a single cause, such as an inherited debt, when one of the two takes possession... etc. (Summarized) In al-Hindia: If one partner buys a garment for his share, the other partner has the right to demand compensation from him... etc.

It is stated in Durr-ul-Mukhtar that regarding a shared debt arising from a single cause, like an inherited debt, when one of the two partners takes possession, etc. It is in Hindia that when one partner buys cloth from the debtor in exchange for his share, the other partner has the right to take a guarantee (indemnity) from him, etc. (T)

The Answer: Honorable Maulana, may Allah honor you, Peace be upon you and the mercy of Allah and His blessings. The passage is from Durr-ul-Mukhtar, Book of Reconciliation.

1. Al-Durr al-Mukhtar, Book of Reconciliation, Section on Claim of Debt, Mujtabai Press, Delhi, 2/144.
2. Fatawa Hindia, Book of Partnership, Chapter Six, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 2/33.

फ़तावा रज़विया, खंड 17

...कर्ज़दार से रखें, चाहे उन पाने वाले शरीकों यानी खरीदार आदि ने (जिनके लिए खरीदार के कार्य द्वारा अनुबंध प्रभावी हुआ, चाहे उनकी अनुमति से या उनके संरक्षकों या निष्पादकों की अनुमति से) संपत्ति के बदले में जो कुछ ऋण प्राप्त किया, वे उस राशि से अपना आनुपातिक हिस्सा उन प्राप्तकर्ताओं से ले लें और शेष मूल कर्ज़दार पर छोड़ दें जैसा कि पहले बताया गया है। (त) उदाहरण के तौर पर, वर्णित चित्र में ज़ैद ने सभी वारिसों के लिए खरीदा, उम्र ने अनुमति दी, ज़ैद और उम्र ऋण के बदले दो-तिहाई संपत्ति के मालिक बन गए। बक्र ने, जिसने इसे जायज़ नहीं माना, अगर वह चाहे तो अपना पूरा हिस्सा कर्ज़दार से ले ले, या दस-दस ज़ैद और उम्र से ले ले जो अपने साठ वसूल कर चुके हैं, और शेष दस का दावा कर्ज़दार पर रखे। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है, और उसका ज्ञान, उसकी महिमा महिमामय हो, सबसे पूर्ण और सबसे सही है।

मसला ७१२: इलाहाबाद, दायरा अजमल शाह से, मौलवी मोहम्मद साहब मोहम्मदी द्वारा प्रेषित, १३ जमादी अल-थानी १३१४ हिजरी। पिछले मसले से संबंधित।

आदरणीय मौलाना अल-मज्द की सेवा में, आपकी कृपा बनी रहे, आप पर शांति और अल्लाह की दया और उसकी कृपा हो। आपने जो फतवा प्रदान किया है उसमें निम्नलिखित उद्धरण हैं। खराब स्वास्थ्य के कारण, मैं पुस्तकों से उक्त उद्धरण निकालने की ओर ध्यान नहीं दे सका और लड़कों द्वारा खोजने पर वे उद्धरण पुस्तक में नहीं मिले। मजबूर होकर, मैं आपकी सेवा में इस आशा के साथ विनती कर रहा हूँ कि आप कृपा करके लिख दें कि उक्त उद्धरण किस अध्याय और अनुभाग में हैं। मैं आपका बहुत आभारी रहूँगा। वत-तस्लीम!

अल-दुर्र अल-मुख्तार में: एक साझा ऋण जो एक ही कारण से हो, जैसे विरासत में मिला ऋण, जब उनमें से एक कब्ज़ा कर ले... आदि। (संक्षेप में)

दुर्र-ए-मुख्तार में है कि साझा ऋण जो एक ही कारण से हो जैसे विरासत में मिला ऋण, जब उन दोनों में से एक साझेदार कब्ज़ा कर ले आदि।

अल-हिंदिया में: और यदि कोई साझेदार अपने हिस्से के बदले में एक कपड़ा खरीदता है, तो दूसरे साझेदार को उससे हर्जाना (गारंटी) लेने का अधिकार है... आदि।

हिंदिया में है कि जब एक साझेदार ने कर्ज़दार से अपने हिस्से के बदले में कपड़ा खरीदा तो दूसरे साझेदार को अधिकार है कि वह उससे ज़मानत ले ले आदि। (त)

उत्तर: आदरणीय मौलाना, अल्लाह आपको सम्मानित करे, आप पर शांति और अल्लाह की दया और उसकी कृपा हो। दुर्र-ए-मुख्तार, किताबुस सुल्ह (सुलह की पुस्तक) में यह उद्धरण है।

1. अल-दुर्र अल-मुख्तार, किताबुस सुल्ह, ऋण के दावे पर अनुभाग, मुज्तबाई प्रेस, दिल्ली, २/१४४।
2. फ़तावा हिंदिया, किताबुश शिरकत, अध्याय छठा, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, २/३३।

पृष्ठ २८९/७१५

مدیون سے رکھیں خواہ ان پانے والے شریکوں یعنی مشتری وغیرہ نے (جن جن کے لئے عقد بفعل مشتری خواہ ان کے یا ان کے اولیاء یا اوصیا کی اجازت سے نافذ ہوا) جو کچھ دین بمواوضہ جائداد وصول پالیا اس قدر روپے سے اپنا حصہ رسد مطالبہ ان پانے والوں سے کریں باقی کا اصل مدیون سے رکھیں کما سبق (جیسا کہ پیچھے گزرا۔ ت) مثلاً تصویرِ مسطور میں زید نے سب ورثہ کے لئے خریدی عمرو نے اجازت دی زید و عمر و بو عوض دین دو ثلث جائداد کے مالک ہوئے بکر نے کہ اسے جائز نہ رکھا چاہے تو اپنے تئیں پورے مدیون سے لے خواہ دس دس زید و عمرو سے لے جو اپنے ساتھ وصول پاچکے ہیں باقی دس کا مطالبہ مدیون پر رکھے۔ واللہ سبحنہ و تعالٰی اعلم و علمہ جل مجدہ اتم واحکم۔

مسئلہ ۷۱۲ : از الہ آباد دائرہ اجمل شاہ صاحب مرسلہ مولوی محمد صاحب محمدی ۱۳ جمادی الآخر ۱۳۱۴ھ متعلقہ مسئلہ سابقہ

بعالی خدمت جناب مولانا المجد دام فضلکم السلام علیکم و رحمۃ اللہ و برکاتہ جو فتویٰ آپ نے مرحمت فرمایا اس میں عبارات ذیل ہیں، بسبب علالت طبعیت، میں استخراجِ عبارت مذکورہ من الکتب کی طرف متوجہ نہ ہوسکا اور لڑکوں کی تلاش سے وہ عبارتیں کتاب میں نہ ملیں مجبورانہ خدمتِ گرامی بجال تمنا ملتمس ہوں کہ براہِ عنایت کریمانہ تحریر فرمائیے کہ عبارتِ مذکور کس باب و فصل میں ہیں ممنون منت ہوں گا، والتسلیم !

فی الدرالمختار الدین المشترک بسبب متحد کدین موروث اذا قبض احدہما

در مختار میں ہے کہ دین مشترک جو سبب واحد کے ساتھ ہو جیسے دین موروث، پر دونوں میں سے ایک شریک جب

۱ الخ (ملخصاً) فی الہندیۃ ولو قبضہ کرلے الخ ہندیہ میں ہے کہ جب ایک شریک نے مدیون اشتری بنصیبہ ثوباً فللشریک ان سے اپنے حصہ کے بدلے میں کپڑا خریدا تو دوسرے شریک یضمنہ ۲ الخ۔ کو حق حاصل ہے کہ وہ اس سے ضمان لے الخ (ت)

الجواب: مولانا المکرم اکرم اللہ تعالٰی، السلام علیکم و رحمۃ اللہ و برکاتہ، عبارت در مختار کتاب الصلح

۱ الدرالمختار کتاب الصلح فصل فی دعوی الدین مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۱۴۴ ۲ فتاوٰی ہندیۃ کتاب الشرکۃ الباب السادس نورانی کتب خانہ پشاور ۲ / ۳۳

Fatawa Ridawiyya Volume 17

Chapter on the claim of debt, and in the text of Al-Hindia, Book of Partnership, Chapter Six on Miscellaneous matters, and peace.

Problem 128: 28 Dhu al-Hijjah 1311 AH What do the scholars of religion say regarding this matter: A person borrowed money at the rate of nineteen seers (a unit of weight) per rupee, but could not provide the grain. Consequently, the creditor took cash from him instead of grain according to the market rate. Is this excess over the loan based on the market rate permissible or impermissible? Please explain and be rewarded.

The Answer: It is impermissible, absolutely haram, and pure interest (usury). **It is in the Hadith: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: Every loan that pulls a profit is interest. And Allah knows best.** It is mentioned in the Hadith that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Any loan that brings benefit is interest." And Allah knows best. (T)

1 Kanz al-Ummal, Hadith 15516, Muassasah ar-Risalah Beirut 6/238 Page 290 of 715

फ़तावा रज़विया खण्ड सत्रह (17)

ऋण के दावे पर अध्याय, और किताब अल-हिन्दिया, साझेदारी की किताब, विविध मामलों पर छठे अध्याय में उल्लेख है, और सलाम।

मसाला 128: 28 ज़ुल हिज्जा 1311 हिजरी धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: एक व्यक्ति ने प्रति रुपये उन्नीस सेर के हिसाब से पैसे उधार लिए लेकिन अनाज उपलब्ध नहीं करा सका। इसके परिणामस्वरूप, लेनदार ने अनाज के बजाय बाजार दर के हिसाब से उससे नकद पैसे ले लिए। तो कर्ज पर बाजार दर का यह अतिरिक्त हिस्सा जायज़ है या नाजायज़? कृपया स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: नाजायज़ और निश्चित रूप से हराम है और कोरा ब्याज है। **हदीस में है: अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: हर वह ऋण जो लाभ खींचता है, वह ब्याज (सूद) है। और अल्लाह बेहतर जानता है।** हदीस में है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने इरशाद फरमाया कि जो कर्ज फायदा खींचे वह सूद है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है (त)।

1 कंज़ुल उम्माल, हदीस 15516, मुअस्ससतुर् रिसाला बेरुत 6 / 238 पेज 290 of 715

فصل فی دعوی الدین اور عبارت ہندیہ کتاب الشرکۃ الباب السادس فی المتفرقات میں ہے والسلام۔

مسئلہ ۱۲۸: ۲۸ ذی الحجہ ۱۳۱۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص نے فی روپیہ انیس سیر کے حساب سے روپے قرض لئے لیکن غلہ بہم نہ کر سکا تو دائن نے اس سے بجائے غلہ کے زر نقد بحساب نرخ بازار لے لیا تو یہ شرح بازار قرضہ پر جو افزود ہے آیا جائز ہے یا ناجائز؟ بینوا توجروا۔

الجواب: ناجائز اور حرام قطعی اور نرا سود ہے، **فی الحدیث قال رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کل قرض جر منفعۃ فھو ربوا واللہ تعالٰی اعلم۔** حدیث میں ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے ارشاد فرمایا کہ جو قرض نفع کھینچے سود ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

۱ کنز العمال حدیث ۱۵۵۱۶ مؤسسۃ الرسالہ بیروت ۶ / ۲۳۸ Page 290 of 715

Volume 17 Fatawa Razawiyya

Chapter on Riba (Usury) (Statement on Interest)

Question 129: What do the scholars of religion and jurists of the clear Sharia say regarding this issue: when the genus (kind) and measurement/weight of a thing are not the same, is it permissible to voluntarily sell it against the market rate and on promise (credit)? For example, if someone sells silver or gold in exchange for gold, or lime or grain, is it permissible to give credit and sell a small amount for a larger amount? And if it is sold on promise, for what duration is the promise Shari'ly permissible? Explain and be rewarded.

The Answer: The Shari'i measurement that is reliable regarding Riba (usury) is of two types: Kayl (volume/measure) and Wazn (weight/trawl). The general rule of permissibility and prohibition is explained here in four situations:

First Situation: When two things are common in measurement, meaning they are quantified by the same type of measurement; for example, both are weighed or both are measured by volume, and both are also of the same genus, for example, wheat for wheat or iron for iron. In this case, the mutual sale of such two things is only valid when both are absolutely equal in their designated Shari'i or customary measurement, and there is no credit involved. If either or both of these two things are on credit, or they are not made equal in their designated measurement—whether the measurement was not done at all, or it was done but there was an excess or deficiency, or equality was maintained but through a different type of measurement, for example, a thing meant to be weighed was made equal by volume—[then it is invalid].

खण्ड सत्रह (17) फ़तावा-ए-रज़विया

बाब-उर-रिबा (ब्याज का अध्याय) (सूद का बयान)

मसला 129: दीन के विद्वान और शरीयत के मुफ़्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि जिस चीज़ की जिन्स (प्रकार) और तोल दोनों एक न हों, उसे अपनी मर्ज़ी से बाज़ार दर के ख़िलाफ़ बेचना और वादे (उधार) पर बेचना जायज़ है या नहीं? उदाहरण के तौर पर चाँदी, सोना सोने के बदले में, या चूने या अनाज के बदले में बेचे, तो इसमें उधार देना और थोड़े माल को बहुत के बदले में बेचना जायज़ है या नहीं? और अगर वादे पर बेचे तो शरीयत के मुताबिक़ कितनी मुद्दत का वादा जायज़ है? बयान फ़रमाएँ पुण्य पाएँ।

अल-जवाब (उत्तर): शरीयत का पैमाना जो सूद (ब्याज) के बारे में मान्य है, वह दो प्रकार का है: कैल यानी माप (आयतन) और वज़्न यानी तोल। हलाल और हराम का सामान्य नियम यहाँ चार स्थितियों में बयान किया गया है:

पहली स्थिति: जब दो चीज़ें माप में एक समान हों, यानी उनकी मात्रा एक ही प्रकार के पैमाने से तय की जाती हो, उदाहरण के तौर पर दोनों वज़नी हों या दोनों कैली (माप वाली) हों, और दोनों एक ही जिन्स (प्रकार) की हों, मसलन गेहूँ का गेहूँ से या लोहे का लोहे से, तो ऐसी दो चीज़ों की आपस में ख़रीद-बिक्री उसी समय सही है जब दोनों अपने उसी पैमाने में, जो शरीयत या रिवाज के अनुसार उनके लिए तय है, बिल्कुल बराबर हों और उनमें कोई उधार भी न हो। और अगर ऐसी दो चीज़ों में से एक या दोनों उधार हों, या अपने तयशुदा पैमाने में बराबर न की गई हों—अब चाहे सिरे से माप ही न किया गया हो या माप किया गया हो लेकिन कम-ज़्यादा रहा हो, या बराबरी तो की गई लेकिन दूसरे प्रकार के पैमाने से की गई हो, मसलन जो चीज़ तोलने वाली थी उसे माप के बराबर किया गया —[तो यह अमान्य है]।

पृष्ठ 291/715

باب الربو (سود کا بیان)

مسئلہ ۱۲۹: کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ جس چیز کی جنس اور تول دونوں ایک نہ ہوں اس کو باختیار اپنے خلاف بازار نرخ کرنا اور وعدہ پر بیچنا درست ہے یا نہیں؟ مثلاً چاندی سونا عوض سونے کے یا چونے یا غلے کے عوض بیچے تو اس میں ادھار دینا اور تھوڑے مال کو بہت کے عوض میں بیچنا درست ہے یا نہیں؟ اور اگر وعدہ پر بیچے تو کس قدر مدت کا وعدہ شرعاً جائز ہے؟ بینوا توجروا

الجواب: اندازہ شرعی جو درباره ربو معتبر ہے دو قسم ہے: کیل یعنی ناپ اور وزن بمعنی تول، اور حلت و حرمت کا قاعدہ کلیہ یہاں چار صورت میں بیان ہوتا ہے:

صورت اولیٰ: جو دو چیزیں اندازہ میں مشترک ہیں یعنی ایک ہی قسم کے اندازہ سے ان کی تقدیر کی جاتی ہے مثلاً دونوں وزنی ہیں یا دونوں کیلی، اور دونوں ہیں بھی ایک جنس کے، مثلاً گیہوں گیہوں یا لوہا لوہا، تو ایسی دو چیزوں کی آپس میں بیع اسی وقت صحیح ہے جب دونوں اپنے اسی اندازہ میں جو شرعاً یا عرفاً ان کا مقرر ہے بالکل برابر ہوں اور ان میں کوئی ادھار بھی نہ ہو، اور اگر ایسی دو چیزیں ایک یا دونوں ادھار ہوں یا اپنے اس اندازہ مقرر میں برابر نہ کی گئیں، اب خواہ سرے سے اندازہ ہی نہ کیا گیا یا اندازہ کیا مگر کمی بیشی رہی یا برابری تو کی مگر دوسری قسم کے اندازہ سے کی مثلاً جو تول کی چیز تھی اسے ناپ کے برابر کیا

Fatawa Razawiya (Volume 17)

...or if it was measured and then equalized by weight, then this sale is absolutely unlawful and will be considered usury (riba).

Second Case: Two things that are of the same kind but do not share a common method of measurement, whether both are outside the customary measurements, like Gulbadan [a type of silk cloth] with Gulbadan, Tanzib [another type of cloth] with Tanzib, or horse with horse, as their estimation is not done by measure (kayl) or weight (wazn); clothes are sold by yards (gaz) and horses by count. Or, if there is measurement on one side only and the other side is outside [measurement], like a sword with iron or goat meat with a live goat. Although they are of the same kind, iron and meat are measured as they are sold by weight, while a sword and a goat are not measured as they are items of count. In these cases, excess (tafadul), i.e., increase or decrease, is permissible, but it is not permissible for one of them to be a debt (dayn).

Third Case: When two things share the same type of measurement, for example, both are measured by volume (kayli) or both are measured by weight (wazni) but are not of the same kind, like wheat with barley, or iron with copper. Here too, the same ruling applies: excess is allowed, and credit (nasi'ah) is forbidden, except for gold and silver. Although they are items of weight, buying weighed items like iron, copper, lime, saffron, etc., on credit by paying cash as in a Salam sale (advance payment) is unanimously permissible due to necessity, even if they share the same type of measurement.

Fourth Case: When two things are neither of the same kind nor share the same type of measurement. Now, whether both are originally not subject to measurement by volume or weight, like a horse and cloth; or one is included and one is excluded, like a horse and wheat; or both are included but their estimation is not by the same type of measurement, but rather one is measured by volume (kayli) and the other by weight (wazni), like rice and dates. In such cases, both excess (tafadul) and credit (nasi'ah) are lawful.

Note: The problem of credit for gold and silver can be avoided if possession is taken immediately. For example, if this gold was sold in exchange for that silver, and the seller did not take possession of the silver and the buyer did not take possession of the gold, and they separated, then that sale is not valid. In items other than these, only being known and specified is a condition, possession is not mandatory. For

example, if one sold this wheat in exchange for that barley, and both separated without taking possession, the sale is valid, and this barley and wheat will not be called credit.

Benefit: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) declared four things as measured by volume (kayli): (1) Wheat (2) Barley (3) Dates (4) Salt. These four will always remain kayli (measured by volume), even if people start selling them by weight. Now, if someone sells wheat for wheat by equal weight, it will be forbidden; rather, they must be equal in volume measurement. And two items the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him)...

फतावा रज़विया (खण्ड 17)

...या जो नाप की थी उसे तोल कर बराबर किया तो यह बिक्री बिल्कुल नाजायज़ और सूद (रिबा) करार पाएगी।

दूसरी सूरत: जो दो चीजें एक ही जाति की हों लेकिन अंदाज़े में बराबर न हों, चाहे दोनों तरफ अंदाज़े के सामान्य तरीके से बाहर हों, जैसे गुलबदन [एक प्रकार का रेशमी कपड़ा] के बदले गुलबदन, तन्ज़ीब के बदले तन्ज़ीब, या घोड़े के बदले घोड़ा, क्योंकि इनका अंदाज़ा नाप (कैल) या वज़न से नहीं होता; कपड़े गज़ों से बिकते हैं और घोड़े गिनती से। या एक तरफ सिर्फ अंदाज़ा हो और दूसरी तरफ अंदाज़े से बाहर हो, जैसे लोहे के साथ तलवार या जीवित बकरी के साथ बकरी का गोश्त। हालाँकि ये एक ही जाति के हैं, लेकिन लोहे और गोश्त की तरफ अंदाज़ा है क्योंकि वे तोल कर बिकते हैं, और तलवार व बकरी की तरफ अंदाज़ा नहीं है क्योंकि वे गिनती की चीजें हैं। इन सूरतों में तफ़ादुल यानी कमी-बेशी तो जायज़ है, लेकिन एक का नक़द और दूसरे का उधार होना जायज़ नहीं।

तीसरी सूरत: जो दोनों चीजें एक ही प्रकार के अंदाज़े में शामिल हों, उदाहरण के लिए दोनों नापी जाने वाली (कैली) हों या दोनों तोली जाने वाली (वज़नी) हों लेकिन एक ही जाति की न हों, जैसे जौ के साथ गेहूं, या तांबे के साथ लोहा। तो यहाँ भी वही हुक्म है कि तफ़ादुल (कमी-बेशी) जायज़ है, और उधार (नसीया) हराम है, सिवाय सोने और चांदी के। हालाँकि ये वज़न की चीजें हैं, लेकिन 'बै-ए-सलम' (अग्रिम भुगतान) के तौर पर उन्हें नक़द देकर वज़नी चीज़ें जैसे लोहा, तांबा, चूना, केसर आदि उधार खरीदना ज़रूरत के कारण सर्वसम्मति से जायज़ है, भले ही वे एक ही प्रकार के अंदाज़े में शामिल हों।

चौथी सूरत: जो दो चीजें न तो एक ही जाति की हों और न ही एक ही प्रकार के अंदाज़े में शामिल हों। अब चाहे दोनों मूल रूप से नाप और वज़न के अंदाज़े में शामिल न हों जैसे घोड़ा और कपड़ा; या एक शामिल हो और एक बाहर जैसे घोड़ा और गेहूं; या दोनों शामिल हों लेकिन एक ही प्रकार के अंदाज़े से उनका निर्धारण न होता हो, बल्कि एक कैली (नापी जाने वाली) हो और दूसरी वज़नी (तोली जाने वाली) जैसे चावल और खजूर, तो ऐसी सूरतों में तफ़ादुल और नसीया (कमी-बेशी और उधार) दोनों हलाल हैं।

फ़ायदा: सोने-चांदी के उधार होने से इस तरह बचा जा सकता है कि उन पर तुरंत कब्ज़ा कर लिया जाए। उदाहरण के लिए, यह सोना उस चांदी के बदले बेचा गया और विक्रेता ने चांदी पर और

खरीदार ने सोने पर कब्ज़ा नहीं किया और अलग हो गए, तो वह बिक्री जायज़ नहीं है। इनके अलावा अन्य चीज़ों में केवल ज्ञात और निश्चित होना शर्त है, कब्ज़ा अनिवार्य नहीं है। उदाहरण के लिए, यह गेहूं उस जौ के बदले बेचे और दोनों बिना कब्ज़ा किए अलग हो गए, तो बिक्री सही है और यह जौ और गेहूं उधार नहीं कहलाएंगे।

फ़ायदा: चार चीज़ों को अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने 'कैली' (नाप से बिकने वाली) फ़रमाया है: (1) गेहूं (2) जौ (3) खजूर (4) नमक। ये चारों हमेशा कैली ही रहेंगी, भले ही लोग उन्हें वज़न से बेचना शुरू कर दें। अब अगर गेहूं के बदले गेहूं बराबर तोल कर बेचे तो हराम होगा, बल्कि नाप में बराबर करना चाहिए। और दो को हुज़ूर अकदस (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम)...

पृष्ठ 715 का 292

یا جو ناپ کی تھی اسے تول کر یکساں کیا تو یہ بیع محض ناجائز اور ربو قرار پائے گی۔

صورت ثانیہ : جو دو چیزیں ہم جنس تو ہیں مگر اندازہ میں مشترک نہیں خواہ دونوں طرف اندازہ معہودہ سے خارج ہوں جیسے گلبدن گلبدن ، تنزیب تنزیب ، گھوڑا گھوڑا کہ کیل و وزن سے ان کی تقدیر نہیں ہوتی، کپڑے گزوں سے بکتے ہیں اور گھوڑے شمار سے ، یا ایک طرف فقط اندازہ ہو اور دوسری سمت خارج ، جیسے تلوار لوہے کے ساتھ یا بکری کا گوشت زندہ بکری کے ساتھ کہ بہر چند ہم جنس ہیں مگر لوہے اور گوشت کی طرف اندازہ ہے کہ تل کر بکتے ہیں اور تلوار اور بکری کی طرف اندازہ نہیں کہ شمار کی چیزیں ہیں تو ان صورتوں میں تفاضل یعنی کمی بیشی تو جائز ہے مگر ایک دونوں کا دین ہونا جائز نہیں۔

صورت ثالثہ : جو دونوں چیزیں ایک قسم کے اندازہ میں تو شریک ہوں مثلاً دونوں کیلی ہیں یا دونوں وزنی مگر ہم جنس نہیں، جیسے گیہوں جو کے ساتھ ، یا لوہا تانبے کے ساتھ ، تو یہاں بھی وہی حکم کہ تفاضل روا، اور نسیہ حرام سوا سونے چاندی کے کہ ہر چند وزن کی چیزیں ہیں مگر بیع سلم کے طور پر انہیں نقد دے کر اشیائے موزونہ لوہا تانبا چونا زعفران وغیرہ ادھار خریدنا بسبب حاجت کے بالاجماع جائز ہے اگرچہ ایک ہی قسم کے اندازہ میں شریک ہیں

صورت رابعہ : جو دو چیزیں نہ ہم جنس ہوں نہ ایک قسم کے اندازہ میں شریک ، اب خواہ دونوں اصلاً داخل اندازہ کیل و وزن نہ ہوں جیسے گھوڑا کپڑا، یا ایک داخل ہو ایک خارج جیسے گھوڑا گیہوں ، یا دونوں داخل ہوں مگر ایک قسم کے اندازہ سے ان کی تقدیر نہ ہوتی بلکہ ایک کیلی ہو دوسری وزنی جیسے چاول کھجوریں، تو ایسی صورتوں میں تفاضل و نسیہ دونوں حلال ہیں۔

فائدہ : سونے چاندی کا ادھار ہونا یونہی دفعہ ہو سکتا ہے کہ ان پر قبضہ کر لیا جائے مثلاً یہ سونا بعوض اس چاندی کے بیچا اور بائع نے چاندی اور مشتری نے سونے پر قبضہ نہ کیا اور جدا ہو گئے وہ بیع جائز نہیں اور ان کے سوا اور چیزوں میں فقط معلوم معین ہونا شرط ہے قبضہ ضرور نہیں مثلاً یہ گیہوں بعوض اس جو کے بیچے اور دونوں بے قبضہ کئے جدا ہو گئے بیع صحیح ہے اور یہ جو اور گیہوں ادھار نہ کہلائیں گے۔

فائدہ : چار چیزوں کو رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے کیلی فرمایا ہے: (۱) گیہوں (۲) جو (۳) چھوہارے (۴) نمک۔ یہ چاروں ہمیشہ کیلی رہیں گی اگرچہ لوگ انہیں وزن سے بیچنے لگیں تو اب اگر گیہوں کے بدلے گیہوں برابر تول کر بیچے تو حرام ہوگا بلکہ ناپ میں برابر کرنا چاہئے۔ اور دو کو حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم

Fatawa Razawiya (Volume 17)

...has declared them as weighable: (1) Gold (2) Silver - these will always remain weighable. Besides these, the basis of action is on custom and habit; what is sold by weight in custom is weighable, and what is sold by yards or count is outside of estimation. (Note)

Problem 130: 21 Rajab-ul-Murajjab 1316 AH What do the scholars of religion say regarding this issue that a person stated that consuming interest (usury) is worse than committing adultery with one's mother, and taking one rupee of interest is more severe than committing adultery so many times. Is this matter correct or not? Explain and you shall be rewarded.

Answer: Indeed it is correct, many Hadiths have been narrated in this chapter:

Hadith (1): The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Whoever consumes a dirham of interest, it is like thirty-three acts of adultery, and whoever's flesh grows from forbidden sources (haram), the fire of Hell is most deserving of him." (Narrated by Al-Tabarani in Al-Awsat and Al-Saghir, and its beginning by Ibn Asakir from Ibn Abbas, may Allah be pleased with them both.) (T)

Hadith (2 & 3): The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Indeed, a dirham that a man obtains from interest is greater in the sight of Allah, the Almighty, than thirty-three acts of adultery that a person commits in Islam." (Narrated by Al-Tabarani)

Note: The answer was available up to this point.

1. Al-Mu'jam al-Awsat by Al-Tabarani, Hadith 2968, Maktaba al-Ma'arif, Riyadh, 3/541.
2. Ad-Durr al-Manthur with reference to Tabarani under verse 2/279, Manshurat Qom Iran 1/367; At-Targhib wat-Tarhib from Abdullah bin Salam, Hadith 12, Mustafa al-Babi Egypt 3/6; Majma' al-Zawa'id, Chapter on what came regarding Riba, Dar al-Kitab Beirut 4/117.

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

...ने वज़नी (तौलने योग्य) फ़रमाया है: (1) सोना (2) चाँदी - ये हमेशा वज़नी रहेंगे, इन चीज़ों के अलावा कार्य का आधार उरफ़ (प्रथा) और आदत पर है, जो चीज़ उरफ़ में तौलकर बिकती है वह वज़नी है और जो गज़ या गिनती से बिकती है वह अंदाज़े से बाहर है। (नोट)

मसला 130: 21 रजब-उल-मुरज्जब 1316 हिजरी दीन के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि एक साहब ने बयान किया कि सूद (ब्याज) खाना अपनी माँ के साथ ज़िना (व्यभिचार) करने से बदतर है और सूद का एक रुपया लेना इतनी बार ज़िना करने से अधिक कठोर है। क्या यह बात सही है या नहीं? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: बेशक सही है, इस अध्याय में बहुत सी हदीसें आई हैं:

हदीस (1): हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं: "जिसने सूद का एक दिरहम खाया वह तैंतीस ज़िना के बराबर है, और जिसका मांस हराम (अवैध कमाई) से बढ़े तो जहन्नम की आग उसकी ज़्यादा हक़दार है।" (इसे तबरानी ने मुअजम औसत और सगीर में और इब्न असाकिर ने इब्न अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हुमा से रिवायत किया।) (त)

हदीस (2 और 3): हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं: "बेशक एक दिरहम जो आदमी सूद से पाए, अल्लाह अज़्ज़ व जल्ल के नज़दीक तैंतीस ज़िना से ज़्यादा संगीन है जो आदमी इस्लाम में करे।" (इसे तबरानी ने रिवायत किया।)

नोट: जवाब यहाँ तक उपलब्ध हुआ।

1. अल-मुअजम अल-औसत लित-तबरानी, हदीस 2968, मकबला अल-मआरिफ़ रियाज़ 3/541।
2. अद-दुर अल-मंसूर ब-हवाला तबरानी आयत 2/279 के तहत, मन्शूरात क़ुम ईरान 1/367; अत-तर्गीब वत-तर्हीब अन अब्दुल्लाह बिन सलाम हदीस 12 मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 3/6; मजमा-अज़-ज़वाइद, सूद के बारे में जो आया उस पर अध्याय, दारुल किताब बैरूत 4/117।

पृष्ठ 293 का 715

نے وزنی فرمایا ہے: (۱) سونا (۲) چاندی_ یہ ہمیشہ وزنی رہیں گے، ان چیزوں کے سوا بنائے کار عرف و عادت پر ہے، جو چیز عرف میں تل کر بکتی ہے وہ وزنی ہے اور جو گزوں یا گنتی سے بکتی ہے وہ اندازہ سے خارج عہ۔

مسئلہ ۱۳۰: ۲۱ رجب المرجب ۱۳۱۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک صاحب نے بیان فرمایا کہ سود کھانا اپنی ماں کے ساتھ زنا کرنے سے بدتر ہے اور سود کا ایک روپیہ لینا اتنی بار زنا کرنے سے سخت تر ہے، یہ امر صحیح ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: بیشک صحیح ہے، اس باب میں احادیث کثیرہ وارد ہیں:

حدیث (۱) کہ فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم: من اکل درھما من ربو فھو مثل ثلث و ثلثین زنیة، ومن نبت لحمه من السحت فالنار اولی به 1 رواہ الطبرانی فی الاوسط والصغیر وصدرہ ابن عساکر عن ابن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہما۔ | ایک درہم سود کا کھانا تینتیس زنا کے برابر ہے جس کا گوشت حرام سے بڑھے تو نار جہنم اس کی زیادہ مستحق ہے (اس کو طبرانی نے معجم اوسط اور صغیر میں اور ابن عساکر نے ابن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کیا۔ (ت)

حدیث (۲ و ۳) کہ فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم: لدرھم یصیبه الرجل من الربا اعظم عند اللہ من ثلثة و ثلثین زنیة یزینھا فی الاسلام 2 رواہ الطبرانی | بیشک ایک درم کہ آدمی سود سے پائے اللہ عزوجل کے نزدیک سخت تر ہے تینتیس زنا سے کہ آدمی اسلام میں کرے۔ (اس کو طبرانی نے

عہ: جواب یہاں تک دستیاب ہوا۔

1 المعجم الاوسط للطبرانی حدیث ۲۹۶۸ مکتبۃ المعارف ریاض ۳/ ۵۴۱ 2 الدرالمنثور بحوالہ طبرانی تحت آیۃ ۲/ ۲۷۹ منشورات قم ایران ۱/ ۳۶۷، الترغیب والترہیب عن عبد اللہ بن سلام حدیث ۱۲ مصطفٰی البابی مصر ۳/ ۶، مجمع الزوائد باب ماجاء فی الربا دار الکتاب بیروت ۴/ ۱۱۷

Fatawa Razawiya Volume 17

In Al-Mu'jam al-Kabir on the authority of Abdullah bin Mas'ud, also on the authority of Abdullah bin Salam (may Allah be pleased with them both). Al-Mu'jam al-Kabir narrates from Abdullah bin Mas'ud and also from Abdullah bin Salam (may Allah be pleased with them). (T)

Hadith (4) that he (peace and blessings of Allah be upon him) says: A dirham of usury (riba) that a man consumes while knowing is more severe with Allah than thirty-six acts of adultery. [Narrated by Ahmad with a sahih chain and by Al-Tabarani in Al-Kabir on the authority of Abdullah bin Hanzalah, the one washed by angels]. One dirham of interest that a person intentionally consumes is more severe before Allah than thirty-six acts of adultery. (T) (Imam Ahmad narrated this with a sahih chain and Al-Tabarani narrated it in Al-Mu'jam al-Kabir from Abdullah bin Hanzalah, the one washed by the angels, may Allah be pleased with him. (T))

Hadith (5) that he (peace and blessings of Allah be upon him) says: Verily, a dirham that a man obtains from usury is greater in sin with Allah than thirty-six acts of adultery committed by a man. [Narrated by Ibn Abi al-Dunya in the condemnation of backbiting and Al-Bayhaqi on the authority of Anas (may Allah be pleased with him)]. One dirham that a man obtains from interest is a greater sin before Allah than committing adultery thirty-six times. (Ibn Abi al-Dunya narrated this in his condemnation of backbiting and Al-Bayhaqi narrated it from Anas bin Malik (may Allah be pleased with him). (T))

Hadith (6) that he (peace and blessings of Allah be upon him) says: A dirham of usury is more severe in crime with Allah than thirty-seven acts of adultery. [Narrated by Al-Hakim in Al-Kuna on the authority of the Mother of the Believers, al-Siddiqah (may Allah be pleased with her)]. Indeed, a dirham of interest is a greater crime before Allah Almighty than thirty-seven acts of adultery. (Al-Hakim narrated this in the chapter of kunyas from the Mother of the Believers, Sayyidah Aisha al-Siddiqah (may Allah be pleased with her). (T))

Hadith (7) that he (peace and blessings of Allah be upon him) says: Interest (usury) has seventy categories of sin, the easiest of which is like a man who marries... Interest consists of seventy sins, the easiest of which is for that person...

---

1. Al-Mu'jam al-Awsat, Hadith 2703, Maktabat al-Ma'arif Riyadh, 3/330; Musnad Ahmad bin Hanbal, Hadith of Abdullah bin Hanzalah, Dar al-Fikr Beirut, 5/225.

2. At-Targhib wat-Tarhib with reference to Dhamm al-Ghibah, and Al-Bayhaqi chapter of Targhib from usury, Mustafa al-Babi Egypt, 3/7.
3. Kanz al-Ummal with reference to Al-Hakim in Al-Kuna, Hadith 9780, Mu'assasat al-Risalah Beirut, 4/109.

फतावा रजविया जिल्द 17

अल-मुअजम अल-कबीर में अब्दुल्ला बिन मसूद से और अब्दुल्ला बिन सलाम (अल्लाह उन दोनों से प्रसन्न हो) से भी वर्णित है। अल-मुअजम अल-कबीर में अब्दुल्ला बिन मसूद और अब्दुल्ला बिन सलाम (अल्लाह उन दोनों से प्रसन्न हो) से रिवायत किया गया है। (टी)

हदीस (4) कि वह (अल्लाह की शांति और आशीर्वाद उन पर हो) फ़रमाते हैं: सूद (ब्याज) का एक दिरहम जो आदमी जानते हुए खाता है, अल्लाह के नज़दीक छत्तीस बार ज़िना (व्यभिचार) करने से अधिक गंभीर है। [इसे इमाम अहमद ने सहीह सनद के साथ और तबरानी ने अल-मुअजम अल-कबीर में अब्दुल्ला बिन हन्ज़ला ग़सील-उल-मलैका (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) से रिवायत किया है।] सूद का एक दिरहम कि आदमी जानते-बूझते खाए, अल्लाह तआला के नज़दीक छत्तीस ज़िना से अधिक सख़्त है। (टी) (इसे इमाम अहमद ने सहीह सनद के साथ और तबरानी ने मुअजम कबीर में अब्दुल्ला बिन हन्ज़ला ग़सील-उल-मलैका रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया है। टी)

हदीस (5) कि वह (अल्लाह की शांति और आशीर्वाद उन पर हो) फ़रमाते हैं: बेशक, सूद से प्राप्त किया गया एक दिरहम अल्लाह के नज़दीक गुनाह में छत्तीस बार ज़िना करने से बढ़कर है। [इसे इब्न अबी अल-दुनिया ने ग़ीबत (चुगली) की निंदा में और बैहक़ी ने अनस (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) से रिवायत किया है।] एक दिरहम कि आदमी सूद से पाए, अल्लाह तआला के नज़दीक छत्तीस बार ज़िना करने से गुनाह में ज़्यादा है। (इसे इब्न अबी अल-दुनिया ने ग़ीबत की मज़म्मत में और बैहक़ी ने अनस बिन मालिक रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया है। टी)

हदीस (6) कि वह (अल्लाह की शांति और आशीर्वाद उन पर हो) फ़रमाते हैं: बेशक सूद का एक दिरहम अल्लाह के यहाँ सैंतीस बार ज़िना करने से बड़ा जुर्म है। [इसे हाकिम ने कुनियत के अध्याय में उम्मुल मोमिनीन सिद्दीका (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) से रिवायत किया है।] बेशक सूद का एक दिरहम अल्लाह अज़्ज़-व-जल्ल के यहाँ सैंतीस ज़िना से बढ़कर जुर्म है। (इसे हाकिम ने कुनियत के अध्याय में उम्मुल मोमिनीन सैयदा आयशा सिद्दीका रज़ियल्लाहु तआला अन्हा से रिवायत किया है। टी)

हदीस (7) कि वह (अल्लाह की शांति और आशीर्वाद उन पर हो) फ़रमाते हैं: सूद (ब्याज) के सत्तर दर्जे (श्रेणियाँ) हैं, जिनमें सबसे आसान यह है कि जैसे कोई व्यक्ति... सूद सत्तर गुनाह है जिनमें सबसे आसान उस शख़्स के लिए है...

1. अल-मुअजम अल-अवसत हदीस 2703 मकतबतुल मआरिफ़ रियाज़ 3/330, मुस्नद अहमद बिन हंबल हदीस अब्दुल्ला बिन हन्ज़ला दारुल फिक्र बेरुत 5/225
2. अत-तर्गीब वत-तरहीब बहवाला ज़म्मुल ग़ीबत, और अल-बैहक़ी बाब अत-तर्गीब मिनर्रिबा मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 3/7
3. कन्ज़ुल उम्माल बहवाला अल-हाकिम फ़िल कुना हदीस 9780 मुअस्ससतुर रिसाला बेरुत 4/109

فتاوٰی رضویہ جلد بفدہم (۱۷)

فی الکبیر عن عبد اللہ بن مسعود ایضا عن عبد اللہ بن سلام رضی اللہ تعالٰی عنہما۔ معجم کبیر میں عبد اللہ بن مسعود سے نیز عبد اللہ بن سلام رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کیا (ت)

حدیث (۴) کہ فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم: درھم ربا یأکلہ الرجل وھو یعلم اشد عند اللہ من ستۃ وثلثین زنیۃ ۱- رواہ احمد بسند صحیح والطبرانی فی الکبیر عن عبد اللہ بن حنظلۃ غسیل الملائکۃ۔ سود کا ایک درہم کہ آدمی دانستہ کھائے اللہ تعالٰی کے نزدیک چھتیس زنا سے سخت تر ہے ت (اس کو امام احمد نے سند صحیح کے ساتھ اور طبرانی نے معجم کبیر میں عبد اللہ بن حنظلہ غسیل ملائکہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ۔ ت)

حدیث (۵) کہ فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم: ان الدرھم یصیبہ الرجل من الربا اعظم عند اللہ فی الخطیئۃ من ست وثلثین زنیۃ یزنیہا الرجل ۲- رواہ ابن ابی الدنیا فی ذم الغیبۃ والبیہقی عن انس رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ ایک درہم کہ آدمی سود سے پائے اللہ تعالٰی کے نزدیک چھتیس بار زنا کرنے سے گناہ میں زیادہ ہے۔ (اس کو ابن ابی الدنیا نے غیبت کی مذمت میں اور بیہقی نے انس بن مالک رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ۔ ت)

حدیث (۶) کہ فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم: لدرھم ربا اشد جرما عند اللہ من سبع وثلثین زنیۃ ۳- رواہ الحاکم فی الکنی عن ام المؤمنین الصدیقۃ رضی اللہ تعالٰی عنہا۔ بیشک سود کا ایک درہم اللہ عزوجل کے یہاں سینتیس زنا سے بڑھ کر جرم ہے۔ (اس کو حاکم نے کنیتیوں کے باب میں ام المؤمنین سیدہ عائشہ صدیقہ رضی اللہ تعالٰی عنہا سے روایت کیا ۔ ت)

حدیث (۷) کہ فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم: الربا سبعون حوبا ایسرہا کالذی ینکح سود ستر گناہ ہے جن میں سب سے آسان تر اس شخص

---

1. المعجم الاوسط حدیث ۲۷۰۳ مکتبۃ المعارف ریاض ۳ / ۳۳۰، مسند احمد بن حنبل حدیث عبداللہ بن حنظلہ دار الفکر بیروت ۵ / ۲۲۵
2. الترغیب والترھیب بحوالہ ذم الغیبۃ، والبیھقی باب الترغیب من الربا مصطفی البابی مصر ۳ / ۷
3. کنز العمال بحوالہ الحاکم فی الکنی حدیث ۹۷۸۰ موسسۃ الرسالۃ بیروت ۴ / ۱۰۹

[Transcription of Arabic Text]: ...his mother[1]. And in one narration, there are seventy doors [of usury], the least of which is like a man who marries his mother[2]. Narrated by Ibn Majah and Ibn Abi al-Dunya in 'Dhamm al-Ghibah' and Ibn Jarir, and narrated by al-Bayhaqi with a chain that has no harm in it, with the second wording, all of them from Abu Hurayrah (Allah be pleased with him). [Urdu Translation]: ...is like the one who marries his own mother. (And in one narration it is mentioned that there are seventy doors of usury, the least of which is that he falls upon his mother. - T) (Ibn Majah and Ibn Abi al-Dunya narrated it in 'Dhamm al-Ghibat', and Ibn Jarir and Bayhaqi narrated it with such a chain in which there is no harm, with the second wording, all from Hazrat Abu Hurairah (Allah be pleased with him). - T)

Hadith (8): He (peace and blessings of Allah be upon him) says: [Transcription of Arabic Text]: Verily, usury has many doors; one door of it is equivalent to seventy sins, the least of which is an immorality like a man lying with his mother[3]. Narrated by Ibn Mundah and Abu Nu'aym from Al-Aswad bin Wahb bin Abd Manaf bin Zahrah al-Zuhri al-Qurashi, the maternal uncle of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him and be pleased with him). [Urdu Translation]: Undoubtedly, there are many doors to usury; one of those doors is equal to seventy sins, of which the lightest sin is like sleeping with one's mother. (Ibn Mundah and Abu Nu'aym narrated it from the maternal uncle of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), Hazrat Aswad bin Wahb bin Abd Manaf bin Zahrah al-Zuhri al-Qurashi (Allah be pleased with him). - T)

Hadith (9): He (peace and blessings of Allah be upon him) says: [Transcription of Arabic Text]: Usury has seventy-one doors, or he said seventy-three sins, the least of which is like a man coming to his mother[4]. Narrated by Abd al-Razzaq from a man of the Ansar. [Urdu Translation]: Usury has seventy-one doors, or it is said seventy-three sins, the lightest of which is like a man committing intercourse with his mother. (Imam Abdur Razzaq narrated it from [a man] of the Ansar...)

---

[1] Sunan Ibn Majah, Chapter on Strictness in Usury, H.M. Saeed Company, Karachi, p. 165; Shu'ab al-Iman, Hadith 5519, Dar al-Kutub al-Ilmiyyah, Beirut, 4/394 [2] Shu'ab al-Iman, Hadith 5520, Dar al-Kutub al-Ilmiyyah, Beirut, 4/394 [3] Al-Isabah fi Tamyiz al-Sahabah, with reference to Ibn Mundah, biography 172, Aswad bin Wahb, Dar Sader, Beirut, 1/46 [4] Al-Musannaf of Abd al-Razzaq, Chapter on what has been narrated regarding usury, Hadith 15365, Al-Maktab al-Islami, Beirut, 8/312

जिल्द 17 | फतावा रज़विया

[अरबी पाठ का लिप्यंतरण]: ...अपनी माँ[1]। और एक रिवायत में है कि [सूद के] सत्तर दरवाज़े हैं, जिनमें से सबसे छोटा वैसा ही है जैसे कोई अपनी माँ से निकाह करे[2]। इसे इब्न माजह और इब्न अबी अल-दुनिया ने 'ज़म्म अल-गीबाह' में और इब्न जरीर ने रिवायत किया है, और अल-बैहक़ी ने इसे एक ऐसी सनद के साथ रिवायत किया है जिसमें दूसरे शब्दों के साथ कोई हर्ज नहीं है, वे सभी अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से हैं। [उर्दू अनुवाद]: ...की तरह है जो अपनी माँ से निकाह करे। (और एक रिवायत में है कि सूद के सत्तर दरवाज़े हैं जिनमें अदना (सबसे कम) यह है कि वह अपनी माँ पर पड़े। - त) (इसको इब्न माजह और इब्न अबी अल-दुनिया ने ज़म्म अल-ग़ीबत में और इब्न जरीर ने और बैहक़ी ने इसको ऐसी सनद के साथ रिवायत किया जिसमें कोई हर्ज नहीं, साथ लफ़्ज़ थानी (दूसरे शब्द) के तमाम ने हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया। - त)

हदीस (8): हुज़ूर (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: [अरबी पाठ का लिप्यंतरण]: बेशक सूद के कई दरवाज़े हैं, उसका एक दरवाज़ा सत्तर गुनाहों के बराबर है, जिनमें से सबसे छोटा गुनाह वैसा ही है जैसे किसी आदमी का अपनी माँ के साथ लेटना[3]। इसे इब्न मंदा और अबू नुअैम ने अल-असवद बिन वहाब बिन अब्द मुनाफ बिन ज़हरा अल-ज़ुहरी अल-क़ुरैशी से रिवायत किया है, जो नबी (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) के मामू थे। [उर्दू अनुवाद]: बेशक रबा (सूद) के कई दरवाज़े हैं उनमें से एक दरवाज़ा बराबर सत्तर गुनाह के है जिनमें सबसे हल्का गुनाह ऐसा है जैसे अपनी माँ के साथ हम-बिस्तर होना (इसको इब्न मंदा और अबू नुअैम ने नबी करीम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के मामू हज़रत असवद बिन वहाब बिन अब्द मुनाफ़ बिन ज़हरा अल-ज़ुहरी अल-क़ुरैशी रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया। - त)

हदीस (9): हुज़ूर (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: [अरबी पाठ का लिप्यंतरण]: सूद के इकहत्तर दरवाज़े हैं, या फ़रमाया तिहत्तर गुनाह हैं, जिनमें से सबसे छोटा वैसा ही है जैसे किसी आदमी का अपनी माँ के पास आना[4]। इसे अब्द अल-रज्जाक ने अंसार के एक व्यक्ति से रिवायत किया है। [उर्दू अनुवाद]: सूद इकहत्तर दरवाज़े हैं या फ़रमाया तिहत्तर गुनाह हैं जिनमें सबसे हल्का ऐसा है जैसे आदमी का अपनी माँ से जिमा (संभोग) करना (इसको इमाम अब्दुर रज्ज़ाक ने अंसार के [एक आदमी] से...)

---

[1] सुनन इब्न माजह, सूद में सख़्ती का अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, पृ. 165; शुअब अल-ईमान, हदीस 5519, दार अल-कुतुब अल-इल्मिया, बेरुत, 4/394 [2] शुअब अल-ईमान, हदीस 5520, दार अल-कुतुब अल-इल्मिया, बेरुत, 4/394 [3] अल-इसाबा फी तमीज़ अल-सहाबा, इब्न मंदा के हवाले से, जीवनी 172, असवद बिन वहाब, दार सादिर, बेरुत, 1/46 [4] अल-मुसन्निफ़ अब्द अल-रज्ज़ाक के लिए, सूद के बारे में जो आया है उसका अध्याय, हदीस 15365, अल-मक्तब अल-इस्लामी, बेरुत, 8/312

امہ [1]، و فی روایۃ سبعون بابا ادنا ھا کالذی یقع علی امہ [2] ، رواہ ابن ماجۃ وابن ابی الدنیا فی ذم الغیبۃ وابن جریر ورواہ البیھقی بسند لاباس بہ باللفظ الثانی کلھم عن ابی ھریرۃ رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ کی طرح ہے جو اپنی ماں سے نکاح کرے۔ (اور ایک روایت میں ہے کہ سود کے ستر دروازے ہیں جن میں ادنٰی یہ ہے کہ وہ اپنی ماں پر پڑے۔ت) (اس کو ابن ماجہ اور ابن ابی الدنیا نے ذم الغیبۃ میں اور ابن جریر نے اور بیہقی نے اس کو ایسی سند کے ساتھ روایت کیا جس میں کوئی حرج نہیں ساتھ لفظ ثانی کے تمام نے حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا۔ (ت)

حدیث (۸) کہ فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم: ان الربا ابواب،الباب منہ عدل سبعین حوبا ادناہ فجرۃ کاضطجاع الرجل مع امۃ [3]، رواہ ابن مندۃ وابونعیم عن الاسود بن وھب بن عبد مناف بن زھرۃ الزھری القرشی خال النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم ورضی اللہ تعالٰی عنہ۔ بیشک ربا کے کئی دروازے ہیں ان میں سے ایک دروازہ برابر ستر گناہ کے ہے جن میں سب سے ہلکا گناہ ایسا ہے جیسے اپنی ماں کے ساتھ ہم بستر ہونا (اس کو ابن مندہ اور ابو نعیم نے نبی کریم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کے ماموں حضرت اسود بن وہب بن عبد مناف بن زہرہ الزہری القرشی رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ت)

حدیث (۹) کہ فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم: الربا احد وسبعون باباً او قال ثلثۃ وسبعون حوباً ادنا ھا مثل اتیان الرجل امہ [4] ،رواہ عبدالرزاق عن رجل من الانصار سود اکہتر دروازے ہے یا فرمایا تہتر گناہ ہے جن میں سب سے ہلکا ایسا ہے جیسے آدمی کا اپنی ماں سے جماع کرنا (اس کو امام عبد الرزاق نے انصار کے [ایک آدمی] سے...)

١ سنن ابن ماجہ باب التغليظ فی الربا ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص ١۶۵، شعب الایمان حدیث ۵۵١٩ دار الکتب العلمیة بیروت ۴/ ٣٩۴ ٢ شعب الایمان حدیث ۵۵٢٠ دار الکتب العلمیة بیروت ۴/ ٣٩۴ ٣ الاصابة فی تمییز الصحابة بحواله ابن منده ترجمہ ١٧٢ اسود بن وهب دار صادر بیروت ١/ ۴۶ ۴ المصنف لعبد الرزاق باب ما جاء فی الربا حدیث ١۵٣۶۵ المکتب الاسلامی بیروت ٨/ ٣١٢

Fatawa Razawiya (Volume 17)

May Allah be pleased with them. / Narrated by a man, may Allah be pleased with him. (T)

Hadith (10): That he (the Holy Prophet ﷺ) said: "Usury (Riba) has seventy-two doors; the least of them is like a man committing incest with his mother." (Narrated by Al-Tabarani in Al-Awsat with a sound chain from Bara' bin 'Azib, may Allah be pleased with him. - T)

Hadith (11): That he (the Holy Prophet ﷺ) said: "Indeed, the doors of usury are seventy-two sins; the least of them is like a person committing adultery with their mother in Islam." (Narrated by Al-Tabarani in Al-Kabir from Abdullah bin Salam, may Allah be pleased with him. - T)

Hadith (12): That he (the Holy Prophet ﷺ) said: "Usury has seventy-three doors; the lightest of them is like a man marrying his mother." (Narrated by Al-Hakim, and he said it is authentic according to the criteria of Bukhari and Muslim, and Al-Bayhaqi narrated it from Abdullah bin Mas'ud, may Allah be pleased with him. - T)

Hadith (13): That he (the Holy Prophet ﷺ) said: "Indeed, usury has more than seventy doors, the lightest of which is like a person committing adultery with their mother while being a Muslim."

Footnotes: 1. Al-Mu'jam al-Awsat of Al-Tabarani, Hadith 7147, Maktabat al-Ma'arif Riyadh, 8/72. 2. Kanz al-Ummal with reference to Tab (Al-Tabarani) from Abdullah bin Salam, Hadith 9567, Muassasat al-Risalah Beirut, 3/105. 3. Al-Mustadrak, Kitab al-Buyu', Dar al-Fikr Beirut, 2/37; Shu'ab al-Iman of Al-Bayhaqi, Hadith 5519, Dar al-Kutub al-Ilmiyah Beirut, 4/394.

फ़तावा रज़विया (खण्ड १७)

रज़ी अल्लाह तआला अन्हुम। / एक व्यक्ति से रिवायत है, रज़ी अल्लाह तआला अन्हु। (त)

हदीस (१०): कि आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: ब्याज (रिबा) के बहत्तर दरवाज़े हैं, उनमें से सबसे कमतर वैसा है जैसे अपनी माँ के साथ संभोग करना। (इसे अल-तबरानी ने अल-औसत में सही सनद के साथ हज़रत बरा बिन आज़िब रज़ी अल्लाह तआला अन्हु से रिवायत किया। - त)

हदीस (११): कि आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: बेशक ब्याज के दरवाज़े बहत्तर गुनाह हैं, सब में कमतर वैसा है जैसे इस्लाम में अपनी माँ के साथ ज़िना करना। (इसे अल-तबरानी ने अल-कबीर में सैयदना अब्दुल्ला बिन सलाम रज़ी अल्लाह तआला अन्हु से रिवायत किया। - त)

हदीस (१२): कि आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: ब्याज के तिहत्तर दरवाज़े हैं, सब में हल्का अपनी माँ के साथ ज़िना (निकाह) के समान है। (इसे अल-हाकिम ने रिवायत किया और कहा कि यह बुखारी और मुस्लिम की शर्त पर सही है, और इमाम बैहक़ी ने इसे सैयदना हज़रत अब्दुल्ला बिन मसूद रज़ी अल्लाह तआला अन्हु से रिवायत किया। - त)

हदीस (१३): कि आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: बेशक ब्याज के सत्तर से ऊपर दरवाज़े हैं, उनमें सब से हल्का ऐसा है कि मुसलमान होकर अपनी माँ से ज़िना करना।

फुटनोट्स: १. अल-मुअजम अल-औसत लिल-तबरानी, हदीस ७१४७, मक्तबतुल मआरिफ़ रियाज़, ८/७२। २. कंज़ुल उम्माल बहवाला तब अन अब्दुल्लाह बिन सलाम, हदीस ९५६७, मुअस्ससतुर् रिसाला बेरुत, ३/१०५। ३. अल-मुस्तदरक किताबुल बुयूअ, दारुल फिक्र बेरुत २/३७, शोअतुल ईमान लिल-बैहक़ी, हदीस ५५१९, दारुल कुतुबुल इल्मिया बेरुत ४/३९४।

पृष्ठ २९६ / ७१५

فتاوٰی رضویہ (جلد ہفدہم ۱۷)

رضی اللہ تعالٰی عنہم۔ / ایک مرد سے روایت کیا رضی اللہ تعالٰی عنہم۔ (ت)

حدیث (۱۰) کہ فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم : الربا اثنان وسبعون باباً ادناھا مثل اتیان الرجل امہ 1-رواہ الطبرانی فی الاوسط بسند صحیح عن البراء بن عازب رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ سود کے بہتر دروازے ہیں ان میں سے کم ترا ایسا ہے جیسے اپنی ماں سے صحبت کرنا (اس کو طبرانی نے سند صحیح کے ساتھ معجم اوسط میں حضرت براء بن عازب رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا۔ت)

حدیث (۱۱) کہ فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم : ان ابواب الربا اثنان وسبعون حوبا ادناھا کالذی یاتی امہ فی الاسلام 2-رواہ الطبرانی فی الکبیر عن عبداللہ بن سلام رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ بیشک سود کے دروازے بہتر گناہ ہیں سب میں کمتر ایسا ہے جیسے اسلام میں اپنی ماں سے زنا کرنا (اسی کو طبرانی نے معجم کبیر میں سید نا عبداللہ بن سلام رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا۔ ت)

حدیث (۱۲) کہ فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم : الربا ثلث وسبعون باباً ایسرھا مثل ان ینکح الرجل امہ 3 رواہ الحاکم وقال صحیح علی شرطھا و البیھقی عن عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ سود کے تہتر دروازے ہیں سب میں ہلکا اپنی ماں سے زنا کے مثل ہے (اس کو حاکم نے روایت کیا اور فرمایا کہ یہ بخاری و مسلم کی شرط پر صحیح ہے اور امام بیہقی نے اس کو سید نا حضرت عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا۔ت)

حدیث (۱۳) کہ فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم : ان الربا نیف وسبعون باباً اھونھن باباً مثل من اتی امہ فی الاسلام سود کے کچھ اوپر ستر دروازے ہیں ان میں سب سے ہلکا ایسا ہے کہ مسلمان ہو کر اپنی ماں سے زنا کرنا

1 المعجم الاوسط للطبرانی حدیث ۷۱۴۷ مکتبۃ المعارف ریاض ۸/ ۷۲ 2 کنز العمال بحوالہ طب عن عبد اللہ بن سلام حدیث ۹۵۶۷ موسسۃ الرسالۃ بیروت ۳/ ۱۰۵ 3 المستدرک کتاب البیوع دارالفکر بیروت ۲/ ۳۷، شعب الایمان للبیھقی حدیث ۵۵۱۹ دارالکتب العلمیۃ بیروت ۴/ ۳۹۴

Volume 17 Fatawa Razawiya

- "One dirham of interest is more severe than thirty-five acts of adultery. (Reported by Al-Bayhaqi from Hazrat Abdullah bin Abbas (RA). -T)"

Hadith (14): The Leader of the Believers, Hazrat Uthman Ghani (RA) says: - "Interest has seventy doors; the easiest of them is like a man marrying his mother. (Reported by Ibn Asakir with an authentic chain of narration. -T)"

Hadith (15): Hazrat Abdullah bin Masood (RA) says: - "Interest has seventy-two sins; the smallest of them is like one who commits adultery with his mother while in Islam, and one dirham of interest is more severe than thirty-some acts of adultery. (Reported by Ibn Abi al-Dunya, Al-Baghawi, and others; and Al-Musannaf of Abd al-Razzaq has it with the words 'seventy-some'. -T)"

Hadith (16): Hazrat Abdullah bin Salam (RA) says: - "Interest has seventy-three sins; the lowest of them is like one who commits adultery with his mother while in Islam, and one dirham of interest is like thirty-some acts of adultery. (This is reported by...)"

Footnotes: 1. Al-Durr al-Manthur, with reference to Al-Bayhaqi in Shu'ab, under the verse 9/124, Manthurat Qom, Iran, 6/96; Al-Targhib wa al-Tarhib, with reference to Al-Bayhaqi in Shu'ab, Al-Tarhib min al-Riba, Hadith 6, Mustafa al-Babi Egypt, 8/3. 2. Al-Muntaqa by Ibn al-Jarud, from Abu Hurairah, Hadith 737, Dar Nashr al-Kutub al-Islamiyah Lahore, p. 218. 3. Al-Targhib wa al-Tarhib, with reference to Ibn Abi al-Dunya and Al-Baghawi, Hadith 12, Dar Nashr al-Kutub al-Islamiyah Lahore, 3/7; Sharh al-Sunnah by Al-Baghawi, Chapter on the Threat against the Consumer of Interest, Hadith 2054, Al-Maktab al-Islami Beirut, 8/52. 4. Al-Musannaf by Abd al-Razzaq, Chapter on what was narrated regarding interest, Hadith 15326, Al-Maktab al-Islami Beirut, 8/312. 5. Al-Musannaf by Abd al-Razzaq, Chapter on what was narrated regarding interest, Hadith 15344, Al-Maktab al-Islami Beirut, 8/312.

जिल्द सत्रहवीं (17) फ़तावा रज़विया

- "ब्याज का एक दिरहम पैंतीस बार व्यभिचार करने से अधिक गंभीर है। (इसे अल-बैहक़ी ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हुमा से रिवायत किया है। -टी)"

हदीस (14): अमीरुल मोमिनीन हज़रत उस्मान गनी रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं: - "ब्याज के सत्तर दरवाज़े हैं, उनमें से सबसे आसान अपनी माँ के साथ निकाह (व्यभिचार) करने के समान है। (इसे इब्न असाकिर ने सही सनद के साथ रिवायत किया है। -टी)"

हदीस (15): हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसूद रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं: - "ब्याज में बहत्तर पाप हैं, जिनमें सबसे छोटा इस्लाम की हालत में अपनी माँ के साथ व्यभिचार करने के समान है, और ब्याज का एक दिरहम तीस से अधिक बार व्यभिचार करने से भी अधिक गंभीर है। (इसे इब्न अबी अल-दुनिया और अल-बग़वी आदि ने रिवायत किया है, और इमाम अब्दुर्रज्ज़ाक़ के यहाँ शब्द 'सत्तर से कुछ अधिक' के साथ है। -टी)"

हदीस (16): हज़रत अब्दुल्लाह बिन सलाम फ़रमाते हैं: - "ब्याज में तिहत्तर पाप हैं, जिनमें सबसे छोटा इस्लाम की हालत में अपनी माँ के साथ संभोग करने के समान है, और ब्याज का एक दिरहम तीस से कुछ अधिक व्यभिचारों के समान है। (इसे...)"

पाद टिप्पणियाँ (Footnotes): 1. अल-दुर अल-मंसूर, अल-बैहक़ी फी अल-शुअ़ब के हवाले से, आयत 9/124 के तहत, मंसूरात क़ुम ईरान 6/96; अल-तरग़ीब व अल-तरहीब, अल-बैहक़ी फी अल-शुअ़ब के हवाले से, अल-तरहीब मिन अल-रिबा हदीस 6, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 8/3. 2. अल-मुंतक़ा लि-इब्न अल-जारूद, हज़रत अबू हुरैरा से हदीस 737, दार नश्र अल-कुतुब अल-इस्लामिया लाहौर पृ. 218. 3. अल-तरग़ीब व अल-तरहीब, इब्न अबी अल-दुनिया और अल-बग़वी के हवाले से हदीस 12, दार नश्र अल-कुतुब अल-इस्लामिया लाहौर 3/7; शरह अल-सुन्नाह लिल-बग़वी, बाब वईद आकिल अल-रिबा हदीस 2054 अल-मकतब अल-इस्लामी बैरूत 8/52. 4. अल-मुसन्निफ़ ले-अब्दुर्रज्ज़ाक़, बाब मा जाआ फ़ी अल-रिबा हदीस 15326 अल-मकतब अल-इस्लामी बैरूत 8/312. 5. अल-मुसन्निफ़ ले-अब्दुर्रज्ज़ाक़, बाब मा जाआ फ़ी अल-रिबा हदीस 15344 अल-मकतब अल-इस्लामी बैरूत 8/312.

पृष्ठ 297/715

ودرھم من رباً اشد من خمس و ثلثین زنیة ۱۔رواہ البیھقی عن ابن عباس رضی اللہ تعالی عنھما۔ | اور سود کا ایک درہم پینتیس زنا سے سخت تر ہے۔ (اس کو بیہقی نے سیدنا عبداللہ بن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے روایت کیا۔ ت)

حدیث (۱۴) سیدنا امیر المومنین عثمان غنی رضی اللہ تعالیٰ عنہ فرماتے ہیں : الربا سبعون باباً اھونھا مثل نکاح الرجل امہ ۲۔رواہ ابن عساکر بسند صحیح۔ | سود ستر دروازے ہیں ان میں آسان تر اپنی ماں سے زنا کے مثل ہیں۔ (اس کو ابن عساکر نے صحیح سند کے ساتھ روایت فرمایا۔ ت)

حدیث (۱۵) سیدنا عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ فرماتے ہیں : الربا اثنان وسبعون حوباً اصغرھا حوباً کمن اتی امہ في الاسلام ودرھم من الربا اشد من بضع و ثلثین زنیة ۳۔رواہ ابن ابی الدنیا والبغوی وغیرھما وصدرہ عند عبدالرزاق بلفظ بضعة وسبعون ٤۔ | سود بہتر گناہ ہے سب سے چھوٹا بحالت اسلام اپنی ماں سے زنا کی طرح ہے اور سود کا ایک درہم کئی اوپر تیس زنا سے سخت تر ہے۔ (اس کو ابن ابی الدنیا اور بغوی وغیرہ نے روایت کیا، اور امام عبدالرزاق کے ہاں لفظ بضع و سبعون کے ساتھ ہے۔ ت)

حدیث (۱۶) سیدنا عبداللہ بن سلام فرماتے ہیں : الربا ثلث وسبعون حوباً ادناھا حوباً کمن اتی امہ فی الاسلام ودرھم من الربا کبضع وثلثین زنیة ٥۔ | سود میں تہتر گناہ ہیں سب سے کم ایسا جیسے اسلام میں اپنی ماں سے جماع کرنا اور سود کا ایک درہم چند اور تیس زنا کی مانند ہے (اس کو

حواشی: ۱ الدر المنثور بحوالہ البیہقی فی الشعب تحت آیة ۹/۱۲۴ منثورات قم ایران ۶/ ۹۶،
الترغیب و الترہیب بحوالہ البیہقی فی الشعب الترہیب من الربا حدیث ۶ مصطفی البابی مصر ۳/۸ ۲

المنتقی لابن الجارود عن ابی ہریرہ حدیث ۷۳۷ دار نشر الکتب الاسلامیہ لاہور ص ۲۱۸ ۳ الترغیب و الترہیب بحوالہ ابن ابی الدنیا والبغوی حدیث ۱۲ دار نشر الکتب الاسلامیہ لاہور ۳/ ۷، شرح السنة للبغوی باب وعید آکل الربا حدیث ۲۰۵۴ المکتب الاسلامی بیروت ۵۲/۸ ٤ المصنف لعبد الرزاق باب ما جاء فی الربا حدیث ۱۵۳۲۶ المکتب الاسلامی بیروت ۳۱۲/۸ ٥ المصنف لعبد الرزاق باب ما جاء فی الربا حدیث ۱۵۳۴۴ المکتب الاسلامی بیروت ۳۱۲/۸

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

Narrated by Abdur Razzaq. | (Imam Abdur Razzaq has narrated this - T)

Hadith (17): Ka'b al-Ahbar states:

"Verily, to commit adultery thirty-three times is more beloved to me than consuming one dirham of usury (Riba) while Allah, the Mighty and Sublime, knows that I consumed it as usury."1 - Narrated by Imam Ahmad from him with a good chain of narration. | Indeed, for me to commit adultery thirty-three times is more preferable than consuming one dirham of interest, knowing that Allah Almighty knows that I have eaten interest. (Imam Ahmad narrated this with a sound chain. - T)

We seek refuge in Allah Almighty; may Allah grant guidance to Muslims. Amen. And Allah Almighty knows best.

Issue 131: 27 Rajab, Monday, 1306 AH What do the scholars of religion say regarding this issue: Zaid is in debt and is so needy that even daily sustenance is difficult to obtain. He wishes to take an interest-based loan to start some business so that a way to repay the debt appears and he can afford some food. Is this act permissible or not? And will the person who guarantees such principal amount be a sinner or not? Please clarify and be rewarded.

The Answer: Just as taking interest is forbidden (Haram), giving it is also forbidden. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

"Allah has cursed the one who consumes usury, the one who pays it, the one who writes the contract for it, and its witness."2 - Narrated by Ahmad and Abu Dawood. | Allah's curse is upon the one who eats interest, the one who feeds it, the one who writes its document, and its witnesses.

---

1 Musnad Imam Ahmad bin Hanbal, Hadith of Abdullah bin Hanzalah, Dar al-Fikr Beirut 5/225 2 Sahih Muslim, Book of Al-Musaqat, Chapter of Riba, Qadimi Kutub Khana Karachi 2/72; Sunan Abi Dawud, Book of Al-Buyu', Aftab-e-Alam Press Lahore 2/117; Jami' at-Tirmidhi, Chapters of Al-Buyu', Amin Company Delhi 1/145; Sunan Ibn Majah, Chapters of Trade, Chapter on Sternness Regarding Usury, H.M. Saeed Company Karachi p. 166; Musnad Ahmad bin Hanbal from Ibn Mas'ud, Dar al-Fikr Beirut 1/393, 402, 409, and 553; Musnad Ahmad bin Hanbal from Ali (Karam Allah Wajhahu), Dar al-Fikr Beirut 1/83, 107, 133, and 150; Sunan an-Nasa'i, Book of Adornment, Noor Muhammad Karkhana Karachi 2/280.

फतावा रज़विया (खंड 17)

अब्दुर रज़्ज़ाक द्वारा वर्णित। | (इमाम अब्दुर रज़्ज़ाक ने इसे वर्णित किया है - टी)

हदीस (17): का'ब अल-अहबार कहते हैं:

"निश्चित रूप से, मेरे लिए तैंतीस बार व्यभिचार (ज़िना) करना सूद (ब्याज) का एक दिरहम खाने से अधिक प्रिय है, जबकि अल्लाह, जो पराक्रमी और महान है, जानता है कि मैंने इसे सूद के रूप में खाया है।"1 - इसे इमाम अहमद ने उनके माध्यम से एक अच्छी सनद (वर्णन श्रृंखला) के साथ वर्णित किया है। | वाकई, मुझे तेंतीस बार व्यभिचार करना ब्याज का एक दिरहम खाने से ज्यादा पसंद है, जिसे अल्लाह अज़्ज़वजल जानता है कि मैंने ब्याज खाया है। (इमाम अहमद ने इसे अच्छी सनद के साथ रिवायत किया है। - टी)

और अल्लाह की पनाह, अल्लाह तआला मुसलमानों को हिदायत दे, आमीन। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसला 131: 27 रजब, सोमवार, 1306 हिजरी दीन के विद्वान इस मसले में क्या फरमाते हैं कि ज़ैद कर्ज़दार है और इस कदर मोहताज है कि रोज़मर्रा की गुज़र-बसर भी मुश्किल से होती है। वह चाहता है कि कुछ ब्याज वाला कर्ज़ लेकर कोई रोज़गार करे ताकि कर्ज़ चुकाने की सूरत बन सके और कुछ गुज़र-बसर हो सके। तो क्या यह बात जायज़ है या नहीं? और जो व्यक्ति ऐसे मूल धन की ज़मानत दे, क्या वह गुनहगार होगा या नहीं? बयान फरमाएं और सवाब पायें।

जवाब: ब्याज जिस तरह लेना हराम है, देना भी हराम है। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) फरमाते हैं:

"अल्लाह ने सूद खाने वाले, उसे खिलाने वाले (देने वाले), उसके लिखने वाले और उसके गवाहों पर लानत भेजी है।"2 - इसे अहमद और अबू दाऊद ने रिवायत किया है। | सूद खाने वाले, खिलाने वाले, उसका कागज़ लिखने वाले और उसकी गवाही देने वाले पर अल्लाह की लानत है।

---

1 मुसनद इमाम अहमद बिन हंबल, हदीस अब्दुल्लाह बिन हंज़ला, दार अल-फिक्र बेरूत 5/225 2 सहीह मुस्लिम, किताब अल-मुसाकात, बाब अर-रिबा, कदीमी कुतुब खाना कराची 2/72; सुनन अबू दाऊद, किताब अल-बुयूं, आफताब-ए-आलम प्रेस लाहौर 2/117; जामिअ अत-तिर्मिज़ी, अबवाब अल-बुयूं, अमीन कंपनी दिल्ली 1/145; सुनन इब्न माजह, अबवाब अत-तिजारत, बाब अत-तगलीज़

फिल रिबा, एच.एम. सईद कंपनी कराची पृ. 166; मुसनद अहमद बिन हंबल अन इब्न मसूद, दार अल-फिक्र बेरूत 1/393, 402, 409 और 553; मुसनद अहमद बिन हंबल अन अली (करम अल्लाह वज्हहू), दार अल-फिक्र बेरूत 1/83, 107, 133 और 150; सुनन अन-नसाई, किताब अज़-ज़ीनह, नूर मुहम्मद कारखाना कराची 2/280।

पेज 298 का 715

فتاوٰی رضویہ (جلد ہفدہم (۱۷))

رواہ عبدالرزاق۔ | امام عبدالرزاق نے روایت کیا۔ت)

حدیث (۱۷) کعب احبار فرماتے ہیں :

لان ازنی ثلثاً و ثلثین زنیۃ احب الی من ان اکل درھماً ربا یعلم اللہ انی اکلتہ حین اکلتہ رباً 1 - رواہ الامام احمد عنہ بسند جید۔ | بیشک مجھے اپنا تینتیس بار زنا کرنا اس سے زیادہ پسند ہے کہ سود کا ایک درہم کھاؤں جسے اللہ عزوجل جانے کہ میں نے سود کھایا ہے۔ (اس کو امام احمد نے سند جید کے ساتھ روایت کیا ہے۔ ت)

والعیاذ باللہ تعالٰی، اللہ تعالٰی مسلمانوں کو ہدایت بخشے آمین۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۳۱: ۲۷ رجب روز دوشنبہ ۱۳۰۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید مقروض ہے اور اس قدر محتاج ہے کہ قوتِ روز مرہ بھی بدشواری میسر آتا ہے چاہتا ہے کہ کچھ روپیہ سودی قرض لے کر کچھ روزگار کرے تاکہ صورت ادائے قرض کی ظہور میں آئے اور کچھ قوتِ بسری میں لائے، پس یہ امر مباح ہے یا نہیں؟ اور جو شخص ایسے اصل روپیہ کی ضمانت کرے گنہگار ہوگا یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: سود جس طرح لینا حرام ہے دینا بھی حرام ہے۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں :

لعن اللہ اکل الربو و موکلہ و کاتبہ و شاھدہ 2- رواہ احمد و ابوداؤد | اللہ کی لعنت سود کھانے والے اور کھلانے والے اور اس کا کاغذ لکھنے والے اور اس کی گواہی

1 مسند امام احمد بن حنبل حدیث عبداللہ بن حنظلہ دارالفکر بیروت ۵ / ۲۲۵ 2 صحیح مسلم کتاب المساقات باب الربا قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/ ۷۲، سنن ابوداؤد کتاب البیوع آفتاب عالم پریس لاہور ۲/ ۱۱۷) (جامع الترمذی ابواب البیوع امین کمپنی دہلی ۱/ ۱۴۵، سنن ابن ماجہ ابواب التجارات باب التغلیظ فی الربا ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص۱۶۶، مسند احمد بن حنبل عن ابن مسعود دارالفکر بیروت ۱/ ۳۹۳ و ۴۰۲ و ۴۰۹ و ۵۵۳، مسند احمد بن حنبل عن علی کرم اللہ وجہہ دارالفکر بیروت ۱/ ۸۳ و ۱۰۷ و ۱۳۳ و ۱۵۰، سنن النسائی کتاب الزنیہ نور محمد کارخانہ کراچی ۲/ ۲۸۰

Fatawa Ridawiyya Volume (17)

| (Arabic) Wal-Tirmidhi wabnu Majah wal-Tabarani fil-Kabir wa zadu wahum ya'lamun. Kullahum 'an ibn Mas'ud Radi Allahu Ta'ala 'anhu. Ahmad wal-Nasa'i 'an 'Ali Karram Allahu Ta'ala wajhah, sanadahuma Sahihan. Wa bi-ma'nahu 'inda Muslim fi Sahihahu wa zadu wahum sawa. | (Urdu Translation) Narrated by Imam Ahmad, Abu Dawud, Tirmidhi, and Ibn Majah. Tabarani added in Mu'jam al-Kabir that 'they know it is interest'. All these Imams narrated it from our master Ibn Mas'ud (may Allah be pleased with him). According to Imam Ahmad and Nasa'i, a similar narration is reported from our master Hazrat Ali al-Murtaza (may Allah ennoble his noble face), and the chains of both are authentic. Imam Muslim narrated it with the same meaning in his Sahih and added that they are all equal. (T - Translator's note) |

However, the established rule of the pure Sharia is: "Necessities make the prohibited permissible." (T) Therefore, scholars say it is permissible for a needy person to take a loan with interest.

| (Arabic) Fil-Ashbah wan-Naza'ir wa fil-Qunya wal-Bughya yajuzu lil-muhtaj al-istiqrad bil-ribh. Qala fil-Ghamz wa dhalika nahwu an yaqtariḍa 'ashrata dananira mathalan wa yaj'ala lirabbiha shay'an ma'luman fi kulli yawmin ribhan. | (Urdu Translation) In Al-Ashbah wan-Naza'ir, Qunya, and Bughya, it is mentioned that it is permissible for a needy person to take a loan on interest. In Ghamz, it was said that its form is such that, for example, he borrows ten dinars and fixes some daily profit for the lender. (T) |

I say: "Needy" here refers to one who has a real, genuine necessity acceptable in Sharia, such that there is no other way and no possibility of obtaining money without interest. It will absolutely not be permissible in cases common among people, such as wanting to marry off children: having a hundred rupees but desiring to spend a thousand, so one takes out a loan on interest; or having a place to live but desiring a solid mansion, so one takes a loan on interest to build it; or those trading with interest, who have enough for their family's sustenance but their self (nafs) desires a large deal and takes five or six hundred on interest; or having jewelry etc. at home which can be sold to get money, but instead of selling, a loan on interest is taken. And so on with hundreds of situations that are not actual necessities, so the ruling of permissibility cannot apply to them, even if people consider them necessities in their own estimation.

---

1 Majma' al-Zawa'id, citing Al-Tabarani in Al-Kabir, Chapter on what was said about Riba, Dar al-Kutub Beirut, 4/118. 2 Sahih Muslim, Book of Musaqat, Chapter on Riba, Qadimi Kutub Khana Karachi, 2/74. 3 Al-Ashbah wan-Naza'ir, First Art, Fifth Rule, Idara al-Qur'an Karachi, 1/126. 4 Ghamz 'Uyun al-Basa'ir, First Art, Fifth Rule, Idara al-Qur'an Karachi, 1/126.

फ़तावा रज़विया खंड (१७)

| (अरबी) वल-तिर्मिज़ी वबनु माजह वत-तबरानी फ़िल-कबीर व ज़ादू वहुम य'लमून। कुल्लहुम 'अन इब्न मसूद रज़ियल्लाहु तआला 'अन्हु। अहमद वन-नसाई 'अन 'अली कर्रमल्लाहु तआला वज्हह, सनदहुमा सहीहान। व बि-मा'नहु 'इंदा मुस्लिम फ़ी सहीहहु व ज़ादू वहुम सवा। | (उर्दू अनुवाद) इमाम अहमद, अबू दाऊद, तिर्मिज़ी और इब्न माजह ने रिवायत किया। तबरानी ने मुअजम कबीर में यह ज़्यादा किया कि 'वे जानते हों कि यह सूद (ब्याज) है'। इन तमाम अइम्मा ने इसे सैय्यदना इब्न मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया। इमाम अहमद और नसाई के नज़दीक इसकी मिसाल सैय्यदना हज़रत अली अल-मुर्तज़ा (करमल्लाहु तआला वज्हहुल करीम) से मरवी है और इन दोनों की सनदें सही हैं। इसी के हम-मानी इमाम मुस्लिम ने अपनी सहीह में रिवायत किया और यह इज़ाफ़ा किया कि वे सब बराबर हैं। (त - अनुवादक की टिप्पणी) |

मगर शरीअत-ए-मुतह्हरा का कायदा मुक़र्रर है कि "अज़-ज़रूरात तुबीहुल महज़ूरात" (ज़रूरतें मना की गई चीज़ों को मुबाह/जायज़ कर देती हैं। त) इसी लिए उलमा फ़रमाते हैं कि मोहताज को सूदी क़र्ज़ लेना जायज़ है।

| (अरबी) फ़िल-अशबाह वन-नज़ाइर व फ़िल-कुन्या वल-बग़िया यजूसु लिल-मुहताज अल-इस्तिक़ाज़ बिल-रिब़ा। क़ाला फ़िल-ग़म्ज़ व ज़ालिका नह्वु अन यक़तरिदा 'अशरता दनानीरा मसल़न व यज'अला लिरब्बिहा शैअन म'लूमन फ़ी कुल्लि यौमिन रिब़ह़न। | (उर्दू अनुवाद) अल-अशबाह वन-नज़ाइर, कुन्या और बग़िया में है कि मोहताज के लिए सूद पर क़र्ज़ लेना जायज़ है। ग़म्ज़ में फ़रमाया कि इसकी सूरत यह है कि मिसाल के तौर पर वह दस दीनार क़र्ज़ ले और क़र्ज़ देने वाले के लिए यौमिया (दैनिक) कुछ नफ़ा मुक़र्रर करे। (त) |

अक़ूल (मैं कहता हूँ): मोहताज के ये मानी कि जो वाक़ई हक़ीक़ी ज़रूरत-ए-क़ाबिल-ए-क़बूल-ए-शरअ रखता हो कि न इसके बग़ैर चारा हो न किसी तरह बे-सूदी रुपया मिलने का चारा और न हरगिज़ जायज़ होगा जैसे लोगों में राइज है कि औलाद की शादी करनी चाही, सौ रुपये पास हैं हज़ार रुपये लगाने को जी चाहा तो सूदी निकलवाए; या मकान रहने को मौजूद है, दिल पक्के महल को हुआ तो सूदी क़र्ज़ लेकर बनाया; या सूद और सौ की तिजारत करते हैं, बाल-बच्चों की खुराक बक़द्र-ए-किफ़ायत मिलती है मगर नफ़्स ने बड़ा सौदा करना चाहा और पांच-छह सौ सूदी निकलवाए; या घर में ज़ेवर वग़ैरह मौजूद है जिसे बेचकर रुपया हासिल कर सकते हैं, नहीं बेचा बल्कि सूदी क़र्ज़

लिया। और इसी तरह की सैंकड़ों सूरतें हैं कि ये ज़रूरतें नहीं हैं, तो इनमें जवाज़ का हुक्म नहीं हो सकता, चाहे लोग अपने ख्याल में इसे ज़रूरत समझें।

---

1 मजमा-उज़-ज़वाइद, बहवाला-ए-तबरानी फ़िल कबीर, बाबू मा जा'आ फ़िर रिबा, दारुल किताब बेरुत ४/११८ 2 सहीह मुस्लिम, किताबुल मुसाक़ात, बाबू रिबा, क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची २/७४ 3 अल-अशबाह वन-नज़ाइर, फ़न अव्वल, क़ायदा पंजुम, इदारातुल क़ुरआन कराची १/१२६ 4 ग़म्ज़ उयूनुल बसायर, फ़न अव्वल, क़ायदा पंजुम, इदारातुल क़ुरआन कराची १/१२६

पृष्ठ ७१५ का २९९

فتاوی رضویہ جلد بفد بم (۱۷)

| والترمذی وابن ماجۃ والطبرانی فی الکبیر وزاد وھم یعلمون ۱ کلھم عن ابن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ احمد والنسائی عن علی کرم اللہ تعالٰی وجھہ سند اھما صحیحان و بمعناہ عند مسلم فی صحیحہ وزاد وھم سواء ۲- | کرنیوالے پر (اس کو امام احمد، ابو داود، ترمذی اور ابن ماجہ نے روایت کیا۔ طبرانی نے معجم کبیر میں یہ زیادہ کیا کہ وہ جانتے ہوں کہ یہ سود ہے ان تمام ائمہ نے اس کو سیدنا ابن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا، امام احمد اور نسائی کے نزدیک اس کی مثل سیدنا حضرت علی المرتضی کرم اللہ تعالٰی وجہہ الکریم سے مروی ہے اور ان دونوں کی سندیں صحیح ہیں اس کے ہم معنی امام مسلم نے اپنی صحیح میں روایت کیا اور یہ اضافہ کیا کہ وہ سب برابر ہیں۔ ت) |

مگر شریعتِ مطہرہ کا قاعدہ مقرر ہے کہ الضرورات تبیح المحظورات (ضرورتیں ممنوعات کو مباح کردیتی ہیں۔ ت) اسی لئے علماء فرماتے ہیں محتاج کو سودی قرض لینا جائز ہے،

| فی الاشباہ والنظائر وفی القنیۃ والبغیۃ یجوز للمحتاج الاستقراض بالربح ۳ اہ قال فی الغمز و ذلك نحو ان یقترض عشرۃ دنانیر مثلاً ویجعل لربھا شیئاً معلوما فی کل یوم ربحاً ۴ اھـ | الاشبا ہ والنظائر، قنیہ اور بغیہ میں ہے کہ محتاج کے لئے سود پر قرض لینا جائز ہے اہ غمز میں فرمایا اس کی صورت یہ ہے کہ مثلاً وہ دس دینار قرض لے اور قرض دہندہ کے لئے یومیہ کچھ نفع مقرر کرے اہ (ت) |

اقول: محتاج کے یہ معنی جو واقعی حقیقی ضرورتِ قابلِ قبولِ شرع رکھتا ہو کہ نہ اس کے بغیر چارہ ہو نہ کسی طرح بے سودی روپیہ ملنے کا یارا اور نہ ہرگز جائز نہ ہوگا جیسے لوگوں میں

رائج ہے کہ اولاد کی شادی کرنی چاہی سو روپے پاس ہیں ہزار روپے لگانے کو جی چاہا سو سودی نکلوائے یا مکان رہنے کو موجود ہے دل پکے محل کو ہوا سودی قرض لے کر بنایا یا سود و سو کی تجارت کرتے ہیں قوتِ اہل و عیال بقدرِ کفایت ملتا ہے نفس نے بڑا سودا کرنا چاہا پانچ چھ سو سودی نکلوائے یا گھر میں زیور وغیرہ موجود ہے جسے بیچ کر روپیہ حاصل کرسکتے ہیں نہ بیچا بلکہ سودی قرض لیا وعلی ہذا القیاس صد ہا صورتیں ہیں کہ یہ ضرورتیں نہیں تو ان میں حکمِ جواز نہیں ہو سکتا اگرچہ لوگ اپنے زعم میں ضرورت سمجھیں

---

1 مجمع الزوائد بحوالہ الطبرانی فی الکبیر، باب ماجاء فی الرباء، دار الکتاب بیروت ۴ / ۱۱۸ 2 صحیح مسلم کتاب المساقات باب الربا قدیمی کتب خانہ کراچی ۲ / ۷۴ 3 الاشباہ والنظائر الفن الاول القاعدۃ الخامسۃ ادارۃ القرآن کراچی ۱ / ۱۲۶ 4 غمز عیون البصائر الفن الاول القاعدۃ الخامسۃ ادارۃ القرآن کراچی ۱ / ۱۲۶

Fatawa Razawiya Volume 17

Therefore, permission to take an interest-based loan for the sustenance of family members is only granted when there is no other way to survive, such as not knowing any trade or not finding a job that provides basic food and coarse clothing suitable for a needy person's survival. Otherwise, if one can manage that much, then trading with interest-based money would be out of a desire for wealth, not a necessity for sustenance. As for taking an interest-based loan with the intention of paying off a debt, if one knows that if it is not paid now, the creditor will have him imprisoned, resulting in no maintenance reaching the children and additionally causing humiliation and disgrace, and currently there is no other way to pay, then permission will be given. This is because a necessity has been established. The necessity of self-preservation and obtaining sustenance is obvious, and avoiding humiliation and being taunted is also a matter that Sharia considers very important and has permitted some prohibited things for it. For example, malicious poets who take eulogies to the wealthy, if they do not receive a desired reward, they start reciting satires. Although for them to take that reward is haram (forbidden), and giving what is not permissible to take is generally not allowed, these people who give to save their honor are specifically giving a bribe, and bribery is explicitly haram. Despite this, Sharia has allowed the givers to give for the sake of protecting their honor, even though it remains absolutely haram for the receivers.

In Ad-Durr al-Mukhtar: "There is no harm in bribery when one fears for one's religion (the wording in 'Al-Mujtaba' is 'for whoever fears'). And the Prophet, peace and blessings of Allah be upon him, used to give to poets and to those whose tongues he feared (Al-Khattabi narrated in 'Al-Gharib' from 'Ikrimah as a mursal report: A poet came to the Prophet, peace and blessings of Allah be upon him, and he said, 'O Bilal, cut off his tongue from me,' so he gave him forty dirhams)." And among ill-gotten gains is what a poet takes.

In Durr al-Mukhtar it is stated that when someone fears for their religion, there is no harm in giving a bribe (in the wording of Mujtaba it is "whoever has fear"). The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) used to give to poets and those whose sharp tongues were feared (Khattabi narrated from Hazrat Ikrimah [may Allah be pleased with him] as a mursal report: Ikrimah said that a poet came to the Holy Prophet [peace and blessings of Allah be upon him], so he said to Hazrat Bilal [may Allah be pleased with him], "O Bilal! Cut off his tongue from me." Consequently, Hazrat Bilal [may Allah be pleased with him] gave him forty dirhams).

Note: It is clear that this humiliation will occur because Sharia has made it obligatory to give respite to a bankrupt person. 12 Minhu.

इसलिए, परिवार के भरण-पोषण के लिए सूदी (ब्याज वाला) क़र्ज़ लेने की अनुमति तभी हो सकती है जब इसके बिना गुजर-बसर का कोई और तरीका न हो, न कोई पेशा आता हो, न नौकरी मिलती हो जिसके जरिए दाल-रोटी और मोटा कपड़ा एक मोहताज आदमी के गुजर के लायक मिल सके। वरना अगर इतना पा सकता है तो सूदी रुपयों से व्यापार करना फिर वही अमीरी की हवस होगी, न कि ज़रूरत। रहा क़र्ज़ अदा करने की नीयत से सूदी क़र्ज़ लेना, अगर जानता है कि अब अदा न हुआ तो क़र्ज़ देने वाला जेल करा देगा जिसके कारण बच्चों को खर्चा नहीं पहुँच सकेगा और इसके अलावा अपमान और ज़िल्लत भी होगी, और फिलहाल इसके सिवा कोई और रास्ता नहीं है तो अनुमति दी जाएगी क्योंकि ज़रूरत साबित हो गई। जान की रक्षा और भोजन प्राप्त करने की ज़रूरत तो ज़ाहिर ही है, और अपमान और तिरस्कार से बचना भी एक ऐसा मामला है जिसे शरीयत ने बहुत महत्वपूर्ण समझा है और इसके लिए कुछ मना की गई चीज़ों को जायज़ कर दिया है। मिसाल के तौर पर शरारती शायर जो अमीरों के पास प्रशंसा के शेर लिखकर ले जाते हैं, अगर उन्हें मनचाहा इनाम न मिले तो वे उनकी बुराई (हजो) करने लगते हैं। हालाँकि उनके लिए वह इनाम लेना हराम है और जिस चीज़ का लेना जायज़ नहीं उसे देना भी जायज़ नहीं होता, फिर भी ये लोग जो अपनी इज़्ज़त बचाने के लिए देते हैं, वे खास तौर पर रिश्वत देते हैं और रिश्वत साफ़ तौर पर हराम है। इसके बावजूद शरीयत ने इज़्ज़त की रक्षा के लिए देने वालों के हक़ में इसे जायज़ करार दिया है, हालाँकि लेने वाले के लिए यह अभी भी पूरी तरह हराम है।

'अद-दुर्र अल-मुख्तार' में है: "रिश्वत देने में कोई हर्ज नहीं जब किसी को अपने दीन का डर हो ('अल-मुज्तबा' के शब्दों में 'जिसे डर हो')। और नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) शायरों को और उन लोगों को जिनका डर उनकी ज़बान की वजह से होता था, दिया करते थे (खत्ताबी ने 'अल-ग़रीब' में हज़रत इक्रमा रज़ियल्लाहु अन्हु से मुरसल रिवायत की है कि एक शायर नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के पास आया तो आपने हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु अन्हु से फ़रमाया: 'ऐ बिलाल! इसकी ज़बान मुझसे काट दो।' तो आपने उसे चालीस दिरहम दिए)।" और हराम कमाई (सुल्त) में वह भी है जो शायर लेता है।

'दुर्र-ए-मुख्तार' में है कि जब किसी को अपने दीन के बारे में डर हो तो उसके लिए रिश्वत देने में कोई हर्ज नहीं (मुज्तबा की इबारत में है जिसे डर हो)। नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम शायरों को और जिनकी ज़बान दराज़ी का डर होता था उन्हें अता फ़रमाते थे (खत्ताबी ने ग़रीब में हज़रत

इक्रमा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से मुरसलन रिवायत किया, इक्रमा ने कहा कि एक शायर नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के पास आया तो हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से फ़रमाया: 'ऐ बिलाल! इसकी ज़बान मुझसे क़त्अ (अलग) करो।' चुनाँचे हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु तआला अन्हु ने उसे चालीस दिरहम (दिए)।)

नोट: ज़ाहिर है कि यह ज़िल्लत पहुँचेगी क्योंकि मुफ़लिस (कंगाल) को मोहलत देनी शरीयत ने वाजिब की है। 12 मिन्हु।

पेज 300 ऑफ़ 715

وللہذا قوت اہل وعیال کے لئے سودی قرض لینے کی اجازت اسی وقت ہو سکتی ہے جب اس کے بغیر کوئی طریقہ بسر اوقات کا نہ ہو، نہ کوئی پیشہ جانتا ہو، نہ نوکری ملتی ہے جس کے ذریعہ سے دال روٹی اور موٹا کپڑا محتاج آدمی کی بسر کے لائق مل سکے ورنہ اس قدر پاسکتا ہے تو سودی روپے سے تجارت پھر وہی تونگری کی ہوس ہوگی نہ ضرورت قوت، رہا ادائے قرض کی نیت سے سودی قرض لینا، اگر جانتا ہے کہ اب ادا نہ ہوا تو قرضخواہ قید کرائے گا جس کے باعث بال بچوں کو نفقہ نہ پہنچ سکے گا اور ذلت وخواری علاوہ اور فی الحال اس کے سوا کوئی شکل ادا نہیں تو رخصت دی جائیگی کہ ضرورت متحقق ہوئی حفظ نفس و تحصیل قوت کی ضرورت تو خود ظاہر، اور ذلت عہ ومطعونی سے بچنا بھی ایسا امر ہے جسے شرع نے بہت اہم سمجھا اور اس کے لئے بعض محظورات کو جائز فرمایا، مثلاً شریر شاعر جو امراء کے پاس قصائد مدح لکھ کر لیجاتے ہیں کہ خاطر خواہ انعام نہ پائیں تو ہجو سنائیں انہیں اگرچہ وہ انعام لینا حرام ہے اور جس چیز کا لینا جائز نہیں دینا بھی روا نہیں، پھر یہ لوگ کہ اپنی آبرو بچانے کو دیتے ہیں خاص رشوت دیتے ہیں اور رشوت صریح حرام، بایں ہمہ شرع نے حفظ آبرو کے لئے انہیں دینا دینے والے کے حق میں روا فرمایا اگرچہ لینے والے کو بدستور حرام محض ہے،

فی الدرالمختار لاباس بالرشوۃ اذا خاف علی دینہ (عبارۃ المجتبی لمن یخاف) والنبی صلی اللہ تعالی علیہ وسلم کان یعطی الشعراء ولمن یخاف لسانہ (فقد روی الخطابی فی الغریب عن عکرمۃ مرسلا قال اتی شاعر النبی صلی اللہ تعالی علیہ وسلم فقال یا بلال اقطع لسانہ عنی فاعطاہ اربعین درھما) ومن السحت مایأخذہ شاعر

در مختار میں ہے کہ جب کسی کو اپنے دین کے بارے میں خوف ہو تو اس کے لئے رشوت دینے میں کوئی حرج نہیں (مجتبی کی عبارت میں ہے جسے خوف ہو) نبی کریم صلی اللہ علیہ وسلم شاعروں کو اور جن کی زبان درازی کا خوف ہوتا ان کو عطا فرماتے تھے (خطابی نے غریب میں حضرت عکرمہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے مرسلاً روایت کیا عکرمہ نے کہا کہ ایک شاعر نبی کریم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے پاس آیا تو حضرت بلال رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے فرمایا اے بلال! اس کی زبان مجھ سے قطع کرو۔ چنانچہ حضرت بلال رضی اللہ تعالیٰ عنہ نے اس کو چالیس درہم

عہ: ظاہر ہے کہ یہ ذلت پہنچے گی کہ مفلس کو مہلت دینی شرع نے واجب کی ۱۲ منہ۔

Fatawa Rizwia (Volume 17)

[Arabic Box Text]: ...for poetry (because it is usually given to him solely to stop his tongue. So if he is one from whose evil one is safe, then apparently what is given to him is lawful, based on the evidence of the Prophet (peace and blessings be upon him) giving his cloak to Ka'b when he praised him with his famous poem. Reflect. 1 End summary from Radd al-Muhtar.)

[Urdu Box Text]: ...gives it) although whatever a poet takes because of poetry is forbidden (because usually whatever is given to him is to stop his long tongue; therefore, if there is a poet whose evil is not feared, then it is obvious that whatever is given to him is lawful. The proof for this is the Prophet (peace and blessings be upon him) gifting his blessed cloak to Hazrat Ka'b (may Allah be pleased with him) when Hazrat Ka'b (may Allah be pleased with him) presented his famous poem in his noble presence). End summary from the mixture of Radd al-Muhtar (T).

And if there are no such concerns from the side of the creditor of this poor debtor, but he only wants to clear his account for the Hereafter, then in such a state, granting permission for interest-based loans is strictly distant from the objectives of Sharia. When a debtor is poor, Sharia makes it obligatory for the creditor to wait and grant him respite until he has the means and ease.

[Quranic Verse Box]: Arabic: Allah Almighty said: "And if the debtor is in difficulty, then grant him respite until a time of ease." 2 Urdu Translation: Allah Almighty said: If the debtor is in financial hardship, then give him respite until he finds ease and facility. (T)

And it commands the debtor to strive as much as possible for repayment and always keep the intention of paying back with a sincere heart. He should not consider poverty as a certificate of exemption, thinking 'who will take anything from me now?'. When he maintains such a sincere intention and continues his effort towards repayment, which has become a Sharia duty, then Sharia does not burden him beyond that.

[Quranic Verse Box]: Arabic: Allah Almighty said: "Allah does not burden a soul except [with that within] its capacity." 3 Urdu Translation: Allah Almighty said: Allah does not burden any soul except according to its capacity. (T)

Then if he dies in this state and was unable to repay, there is a strong hope that the Most Merciful of the merciful (Allah) Almighty, glory be to Him, will forgive him by...

1 Durr al-Mukhtar, Book of Prohibition and Permission, Section on Sale, Mujtabai Press Delhi, 2/253; Radd al-Muhtar, Book of Prohibition and Permission, Section on Sale, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 5/272. 2 Al-Quran al-Karim, 2/280 3 Al-Quran al-Karim, 2/286

फतावा रजविया (जिल्द 17)

[अरबी बॉक्स पाठ]: ...कविता के लिए (क्योंकि आमतौर पर उसे केवल उसकी जुबान रोकने के लिए दिया जाता है। इसलिए यदि वह उन लोगों में से है जिसकी बुराई से सुरक्षा हो, तो स्पष्ट रूप से उसे जो दिया जाता है वह हलाल है, जिसका प्रमाण पैगंबर (उन पर शांति और आशीर्वाद हो) द्वारा का'ब को उनकी प्रसिद्ध कविता के साथ उनकी प्रशंसा करने पर अपना लबादा देना है। चिंतन करें। 1 रद अल-मुहतार से संक्षिप्त सारांश।)

[उर्दू बॉक्स पाठ]: ...दे दे) हालांकि शायर जो कुछ शेर की वजह से लेता है वह हराम है (क्योंकि आम तौर पर उसे जो दिया जाता है वह उसकी ज़बान-दराज़ी को रोकने के लिए होता है; इसलिए अगर कोई शायर ऐसा हो जिसकी शर (बुराई) से अमन हो, तो ज़ाहिर यह है कि उसे जो कुछ दिया जाए वह हलाल है। इस पर दलील हुज़ूर अकदस सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का हज़रत का'ब रज़ियल्लाहु अन्हु को अपनी मुबारक चादर अता फरमाना है जब हज़रत का'ब रज़ियल्लाहु अन्हु ने आपकी बारगाहे अकदस में अपना मशहूर कसीदा पेश किया)। रद अल-मुहतार के मिश्रण से सारांश (त)।

और अगर उस निर्धन कर्ज़दार के लेनदार की ओर से इस प्रकार की कोई चिंता नहीं है, बल्कि वह केवल परलोक के हिसाब-किताब को स्पष्ट करना चाहता है, तो ऐसी स्थिति में ब्याज आधारित ऋण की अनुमति देना शरीयत के उद्देश्यों से बहुत दूर है। जब कर्ज़दार निर्धन हो, तो शरीयत लेनदार पर यह अनिवार्य करती है कि वह प्रतीक्षा करे और उसे तब तक मोहलत दे जब तक कि उसके पास साधन और आसानी न हो जाए।

[कुरान की आयत का बॉक्स]: अरबी: अल्लाह सर्वशक्तिमान ने कहा: "और यदि कर्ज़दार तंगी में हो, तो आसानी होने तक मोहलत दो।" 2 हिन्दी अनुवाद: अल्लाह तआला ने इरशाद फरमाया: अगर कर्ज़दार तंगदस्त हो तो उसकी कुशादगी (सुविधा) और आसानी मुहैया होने तक मोहलत दो। (त)

और यह कर्ज़दार को आदेश देता है कि वह यथासंभव भुगतान के लिए प्रयास करे और हमेशा सच्चे दिल से चुकाने की नियत रखे। वह निर्धनता को छूट का प्रमाणपत्र न मान ले, यह सोचते हुए कि 'अब मुझसे कोई क्या लेगा?'। जब वह ऐसी सच्ची नियत रखेगा और भुगतान के लिए अपने चल रहे प्रयासों को जारी रखेगा, जो एक शरई कर्तव्य बन गया है, तो शरीयत उसे उससे अधिक कष्ट नहीं देती।

[कुरान की आयत का बॉक्स]: अरबी: अल्लाह सर्वशक्तिमान ने कहा: "अल्लाह किसी जीव पर उसकी सामर्थ्य से अधिक बोझ नहीं डालता।" 3 हिन्दी अनुवाद: अल्लाह तआला ने इरशाद फरमाया: अल्लाह तआला किसी नफ़्स (प्राण) को उसकी वुसअत (सामर्थ्य) के अतिरिक्त कष्ट नहीं देता। (त)

फिर यदि वह इसी अवस्था में मर गया और भुगतान करने में असमर्थ रहा, तो प्रबल आशा है कि दयालुओं में सबसे दयालु (अल्लाह) सर्वशक्तिमान, उसकी महिमा हो, उसे क्षमा कर देंगे...

---

1 दुर्रे मुख्तार, किताबुल हज़्र वल इबाहत, फ़स्ल फ़िल बैय, मुजतबाई प्रेस दिल्ली, 2/253; रद अल-मुहतार, किताबुल हज़्र वल इबाहत, फ़स्ल फ़िल बैय, दारु इह्याउत तुरास अल-अरबी, बेरूत, 5/272। 2 अल-कुरान अल-करीम, 2/280 3 अल-कुरान अल-करीम, 2/286

पृष्ठ 301/715

[عربی عبارت]: لشعر(لانه انما یدفع له عادة قطعاً للسانه فلو کان ممن یؤمن شره فالظاهر ان ما یدفع له حلال بدلیل دفعه علیه السلام بردته للکعب لما امتدحه بقصیدته المشهورة تأمل ۱ اھ ملخصا مختلطا برد المحتار۔

[اردو عبارت]: دے دے) حالانکہ شاعر جو کچھ شعر کی وجہ سے لیتا ہے وہ حرام ہے (کیونکہ عادتاً جو کچھ اس کو دیا جاتا ہے وہ اس کی زبان درازی روکنے کے لئے ہوتا ہے چنانچہ اگر کوئی شاعر ایسا ہو جس کے شر سے امن ہو تو ظاہر یہ ہے کہ اس کو جو کچھ دیا جائے وہ حلال ہے اس پر دلیل حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کا حضرت کعب رضی اللہ تعالٰی عنہ کو اپنی چادر مبارک عطا فرمانا ہے جب حضرت کعب رضی اللہ تعالٰی عنہ نے آپ کی بارگاہ اقدس میں اپنا مشہور قصیدہ پیش کیا) اھ تلخیص باختلاط ردالمختار (ت)

اور اگر اس مفلس قرضدار کی قرضخواہ کی طرف اس قسم کے اندیشے نہیں بلکہ صرف حسابِ آخرت پاک کرنا چاہتا ہے تو ایسی حالت میں سودی قرض لینے کی اجازت مقاصدِ شرع سے سخت بعید ہے قرضدار جب مفلس ہو تو شرع قرضخواہ پر واجب کرتی ہے کہ انتظار کرے اور جب تک اسے استطاعت نہ ہو مہلت دے،

[قرآنی آیت کا خانہ]: عربی: قال اللہ تعالیٰ "وَإِن كَانَ ذُو عُسْرَةٍ فَنَظِرَةٌ إِلَى مَيْسَرَةٍ" ۲ اردو ترجمہ: اللہ تعالٰی نے ارشاد فرمایا: اگر قرضدار تنگدست ہو تو اس کی کشادگی اور آسانی مہیا ہونے تک مہلت دو۔ (ت)

اور قرضدار کو حکم دیتی ہے کہ حتی الامکان ادا میں کوشش کرے اور ہر وقت سچے دل سے ادا کی نیت رکھے مفلسی کو پروانہ معافی نہ ٹھہرالے کہ اب ہم سے کوئی کیا لے گا، جب ایسی سچی نیت رکھے گا اور اپنی چلتی فکر ادا میں جو بوجہ شرعی ہو گئی نہ کرے گا تو اس سے زیادہ شرع اسے تکلیف نہیں دیتی،

[قرآنی آیت کا خانہ]: عربی: قال اللہ تعالٰی "لَا يُكَلِّفُ اللَّهُ نَفْسًا إِلَّا وُسْعَهَا" ۳۔ اردو ترجمہ: اللہ تعالٰی نے ارشاد فرمایا: اللہ تعالیٰ کسی نفس کو تکلیف نہیں دیتا مگر اس کی وسعت کے مطابق۔ (ت)

پھر اگر اسی حال پر مرگیا اور ادا نہ ہوسکا تو امید قوی ہے کہ ارحم الراحمین جل جلالہ درگزر فرما کر

---

1 درمختار کتاب الحظر والاباحة فصل في البيع مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۲۵۳، ردالمحتار کتاب الحظر والاباحة فصل في البيع دار احياء التراث العربي بيروت ۵/ ۲۷۲ 2 القرآن الكريم ۲/ ۲۸۰ 3 القرآن الكريم ۲/ ۲۸۶

Volume 17 Fatawa Razawiyya

It will grant salvation from the demands of the creditor. The Holy Prophet, leader of the messengers, peace and blessings of Allah be upon him, says:

Whoever takes people's wealth with the intention of repaying it, Allah will fulfill it on his behalf; and whoever takes it with the intention of wasting it, Allah will destroy him. (Imam Ahmad, Bukhari, and Ibn Majah narrated it from Abu Huraira, may Allah be pleased with him. - T)

And he says, peace and blessings of Allah be upon him:

Whoever contracts a debt intending to repay it, Allah will fulfill it on his behalf on the Day of Resurrection. (Tabarani narrated it in Al-Mu’jam al-Kabir with a sound chain of narration from Maymunah bint al-Harith, may Allah be pleased with her. - T)

And he says, peace and blessings of Allah be upon him:

Whosoever of my Ummah carries the burden of a debt, then strives to repay it, but then dies before paying it, I am his protector and administrator of his affairs. (Imam Ahmad narrated it with a good chain, and Abu Ya'la and Tabarani in Al-Mu’jam al-Awsat from the Mother of the Believers, Aisha al-Siddiqah, may Allah be pleased with her. - T)

And in another Hadith, the Holy Prophet, peace and blessings of Allah be upon him, says:

Majlis of Dawat

1 Sahih al-Bukhari, Book of Borrowing etc., Chapter on "Whoever takes people's wealth..." etc., Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/321 2 Al-Mu’jam al-Kabir, Hadith 1049, Al-Maktaba al-Faysaliyya, Beirut, 23/232 and Hadith 72, 24/28 3 Musnad Ahmad bin Hanbal from Aisha, may Allah be pleased with her, Dar al-Fikr, Beirut, 6/27, 152; Al-Mu’jam al-Awsat by Tabarani, Hadith 9334, Maktaba al-Ma'arif, Riyadh, 10/158

खंड 17 फ़तावा रज़विया

यह कर्जदाता की मांग से मुक्ति प्रदान करेगा। रसूलों के सरदार, पैग़म्बर-ए-अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फ़रमाते हैं:

जो लोगों की संपत्ति उसे चुकाने की नीयत से लेता है, अल्लाह उसकी ओर से उसे चुका देगा; और जो नष्ट करने के इरादे से लेता है, अल्लाह उसे नष्ट कर देगा। (इमाम अहमद, बुखारी और इब्न माजा ने हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से इसे उद्धृत किया है। - त)

और आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फ़रमाते हैं:

जो कोई कर्ज ले और उसे चुकाने की नीयत रखे, अल्लाह कयामत के दिन उसकी ओर से उसे चुका देगा। (तबरानी ने मुअजम कबीर में सही सनद के साथ हज़रत मैमूना बिंत अल-हारिस रज़ियल्लाहु अन्हा से इसे उद्धृत किया है। - त)

और आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फ़रमाते हैं:

मेरी उम्मत का जो कोई भी कर्ज का बोझ उठाए, फिर उसे चुकाने का प्रयास करे, फिर उसे चुकाने से पहले मर जाए, तो मैं उसका वाली और कार्य-संरक्षक हूँ। (इसे इमाम अहमद ने उत्तम सनद के साथ और अबू याला और तबरानी ने मुअजम औसत में उम्मुल मोमिनीन हज़रत आयशा सिद्दीका रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत किया है। - त)

और एक हदीस में हुज़ूर अकदस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फ़रमाते हैं:

मजलिस-ए-दावत

1 सहीह अल-बुखारी, किताबुल इस्तिक़राज़ आदि, अध्याय: "जो लोगों का माल ले..." आदि, कदीमी कुतुब खाना, कराची, 1/321 2 अल-मुअजम अल-कबीर, हदीस 1049, अल-मकतबा अल-फ़ैसलिया, बेरूत, 23/232 और हदीस 72, 24/28 3 मुसनद अहमद बिन हंबल हज़रत आयशा से रज़ियल्लाहु अन्हा, दारुल फिक्र, बेरूत, 6/27, 152; अल-मुअजम अल-औसत लित-तबरानी, हदीस 9334, मकतबा अल-मारिफ़, रियाद, 10/158

قرضخواہ کے مطالبہ سے نجات بخشے گا۔ حضور اقدس سید المرسلین صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

من اخذ اموال الناس یرید اداءھا ادی اللہ عنہ، و من اخذیرید اتلافھا اتلفہ اللہ ۱- اخرجہ احمد و البخاری و ابن ماجۃ عن ابی ھریرۃ رضی اللہ تعالی عنہ۔ | جو لوگوں کے مال بہ نیت ادا لے اللہ تعالٰی اس کی طرف سے ادا فرمادے اور جو تلف کر دینے کے ارادے سے لے اللہ تعالٰی اسے ہلاک کر دے۔ (امام احمد، بخاری اور ابن ماجہ نے حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے اسکی تخریج فرمائی۔ ت)

اور فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم ہیں:

من ادان دینا ینوی قضاءہ اداہ اللہ یوم القیمۃ ۲- اخرجہ الطبرانی فی الکبیر عن میمونۃ بن الحارث رضی اللہ تعالی عنھا باسناد صحیح۔ | جو کوئی دین لے کہ اسکے ادا کی نیت رکھتا ہو اللہ تعالٰی روزِ قیامت اس کی طرف سے ادا فرمادے گا (طبرانی نے معجم کبیر میں سند صحیح کے ساتھ حضرت میمونہ بنت حارث رضی اللہ تعالٰی عنہا سے اس کی تخریج فرمائی۔ (ت)

اور فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم ہیں:

من حمل من امتی دینا ثم جھد فی قضائہ ثم مات قبل ان یقضیہ فانا ولیہ ۳-رواہ احمد باسناد جید و ابو یعلی و الطبرانی فی الاوسط عن ام المؤمنین الصدیقۃ رضی اللہ تعالٰی عنھا۔ | میرا جو امتی کسی دین کا بار اٹھائے پھر اس کے ادا میں کوشش کرے پھر بے ادا کئے مر جائے تو میں اس کا ولی و کفیل

کار ہوں (اس کو امام احمد نے اسناد جید کے ساتھ اور ابو یعلی اور طبرانی نے معجم اوسط میں ام المومنین سیدہ عائشہ صدیقہ رضی اللہ تعالیٰ عنہا سے روایت کیا- ت)

اور ایک حدیث میں حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

1 صحیح البخاری کتاب فی الاستقراض الخ باب من اخذ اموال الناس الخ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۳۲۱ 2 المعجم الکبیر حدیث ۱۰۴۹ المکتبۃ الفیصلیۃ بیروت ۲۳/ ۲۳۲ وحدیث ۷۲، ۲۴/ ۲۸ 3 مسند احمد بن حنبل عن عائشہ رضی اللہ تعالیٰ عنہا دارالفکر بیروت ۶/ ۲۷، ۱۵۲، المعجم الاوسط للطبرانی حدیث ۹۳۳۴ مکتبۃ المعارف الریاض ۱۰/ ۱۵۸

Fatawa Razawiyyah (Volume 17)

"Whoever takes a debt with the intention in his soul to fulfill it, then dies, Allah will pass over him and satisfy his creditor with whatever He wills." - Hadith reported by al-Hakim[1] Whoever conducts a transaction involving debt and keeps the intention of its repayment in his heart, then dies, Allah Almighty will overlook his fault and satisfy his creditor as He pleases. Al-Hadith (Reported by al-Hakim, and a similar narration was reported by al-Tabarani in al-Mu'jam al-Kabir from Abu Umamah, may Allah be pleased with him. t) And similarly by al-Tabarani in al-Kabir from Abu Umamah, may Allah Almighty be pleased with him.

In short, after good intention, there is hope for a clean account; besides that, no precedent is found in the Pure Shariah that permits obtaining wealth through an unlawful method for the repayment of a debt. And indeed, taking an interest-bearing loan is an unlawful method; rather, scholars have clearly stated to the extent that if a woman does not offer prayer even upon being struck, [the husband should] give her divorce, even if he is not capable of paying her dower (mahr), because meeting Allah Almighty in a state where the demand for dower is upon his neck is better than having intimacy with a non-praying woman.

"In al-Ghunya: The husband has the right to strike his wife for abandoning prayer. If she does not cease abandoning it by being struck, he should divorce her even if he is not capable of her dower. Meeting Allah Almighty while her dower is his responsibility is better for him than having intercourse with a woman who does not pray.[2]" It is mentioned in al-Ghunya that the husband has the right to strike his wife for leaving prayer, and if she does not refrain from leaving prayer despite the striking, he should divorce her even if he does not have the power to pay the dower. This is because meeting Allah Almighty while his wife's dower is his responsibility is better than having intimacy with such a woman who does not pray. (t)

See, a woman's not praying is not the husband's sin as long as she does not accept his guidance and warning in any way. Nevertheless, it was not tolerated for him to keep her, and dying as a debtor was considered easier than that. Then how can taking an interest-bearing loan, which is one's own sin, be tolerated? And dying as a debtor will not be easier compared to it. "All this is what has appeared to me, and I hope it is correct, if Allah Almighty wills." (All this is what became apparent to me and I hope that, if Allah Almighty wills, this is correct. t). As for the guarantee, it is in reality aid in obtaining a loan. If taking an interest-based loan was Shariah-

permissible for that needy person, then there is no harm in guaranteeing the principal amount, as helping a Muslim brother in a permissible matter...

---

[1] Al-Mustadrak li al-Hakim, Book of Sales, Chapter: Whoever takes a debt, etc., Dar al-Fikr, Beirut, 2/32 [2] Ghunyah al-Mustamli, Rulings of Mosques, Miscellaneous Issues, Sohail Academy, Lahore, p. 621

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

"जिसने ऋण लिया और उसके मन में उसे चुकाने का संकल्प था, फिर वह मर गया, तो अल्लाह उसे दरकिनार कर देगा और उसके लेनदार को जिससे चाहे संतुष्ट कर देगा।" - हाकिम द्वारा वर्णित हदीस[1] जो कोई ऋण का कोई मामला करे और मन में उसे अदा करने का इरादा रखे, फिर मर जाए तो अल्लाह तआला उससे दरगुज़र फ़रमाएगा और उसके ऋणदाता को जैसे चाहेगा राज़ी कर देगा। अल-हदीस (इसे हाकिम ने वर्णित किया है और इसी के समान तबरानी ने मुअजम कबीर में अबू उमामा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से वर्णित किया है। त) और इसी के समान तबरानी ने अल-कबीर में अबू उमामा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से वर्णित किया है।

संक्षेप में, नेक नियत के बाद हिसाब की पवित्रता की वैसी ही आशा है; अन्यथा पाक शरीयत में इसकी कोई मिसाल नहीं मिलती कि ऋण चुकाने के लिए किसी नाजायज़ तरीके से धन प्राप्त करने को जायज़ ठहराया गया हो। और निःसंदेह सूदी ऋण लेना एक नाजायज़ तरीका है; बल्कि विद्वान तो यहाँ तक स्पष्ट रूप से फ़रमाते हैं कि यदि पत्नी मारने पर भी नमाज़ न पढ़े, तो उसे तलाक़ दे दे, भले ही वह उसका महर अदा करने में सक्षम न हो, क्योंकि अल्लाह तआला से इस हाल में मिलना कि महर का दावा उसकी गर्दन पर हो, इससे बेहतर है कि वह एक बे-नमाज़ी औरत से सोहबत करे।

"गुनिया में: पति को यह अधिकार है कि वह अपनी पत्नी को नमाज़ छोड़ने पर मारे। यदि वह मारने पर भी नमाज़ छोड़ना बंद न करे, तो वह उसे तलाक़ दे दे, भले ही वह उसके महर पर सक्षम न हो। और उसके लिए अल्लाह तआला से इस हाल में मिलना कि उसका महर उसके ज़िम्मे हो, उस औरत के साथ सोहबत करने से बेहतर है जो नमाज़ नहीं पढ़ती।[2]" गुनिया में है कि पति को यह हक़ पहुँचता है कि वह अपनी पत्नी को नमाज़ छोड़ने पर मारे, और अगर मारने के बावजूद वह नमाज़ छोड़ने से बाज़ नहीं आती, तो तलाक़ दे दे, भले ही उसे महर की अदायगी पर कुदरत न हो। क्योंकि अल्लाह तआला को इस हाल में मिलना कि उसकी पत्नी का महर उसके ज़िम्मे हो, इससे बेहतर है कि ऐसी औरत से सोहबत करे जो नमाज़ नहीं पढ़ती। (त)

देखो, औरत का नमाज़ न पढ़ना पति का गुनाह नहीं है जब तक कि वह उसकी हिदायत और नसीहत को किसी तरह नहीं मानती, फिर भी इसे गवारा नहीं किया गया और कर्जदार होकर मरना उससे आसान समझा गया। तो सूदी कर्ज लेना जो स्वयं अपना गुनाह है, उसे कैसे गवारा किया जाएगा? और कर्जदार होकर मरना उसके मुक़ाबले आसान नहीं होगा। "यह सब वह है जो मुझ पर

स्पष्ट हुआ और मुझे आशा है कि अल्लाह ने चाहा तो यह सही होगा।" (यह सब वह है जो मुझ पर ज़ाहिर हुआ और मैं उम्मीद करता हूँ कि इंशा अल्लाह तआला यह दुरुस्त होगा। त)। रही ज़मानत की बात, तो वह वास्तव में ऋण प्राप्त करने में सहायता है। यदि उस ज़रूरतमंद के लिए सूदी ऋण लेना शरीयत के अनुसार जायज़ होता, तो मूल राशि की ज़मानत देने में कोई हर्ज नहीं था, क्योंकि एक जायज़ काम में एक मुसलमान भाई की...

---

[1] अल-मुस्तदरक लिल हाकिम, किताबुल बुयू, बाब: जो ऋण लेता है इत्यादि, दारुल फ़िक्र बेरूत 2/32 [2] ग़ुनियतुल मुस्तमली, अहकामुल मसाजिद, मसाइले शत्ता, सुहैल एकेडमी लाहौर पृ. 621

من تداین بدین وفی نفسه وفاؤه ثم مات تجاوز الله عنه وارضی غریمه بما شاء - الحدیث رواه الحاکم[1] جو کسی دین کا معاملہ کرے اور دل میں اس کے ادا کا ارادہ رکھے پھر مر جائے تو اللہ تعالٰی اس سے درگزر فرمائے اور اس کے قرضخواہ کو جیسے چاہے راضی کردے الحدیث (اس کو حاکم نے روایت کیا اور اس کی مثل طبرانی نے معجم کبیر میں ابوامامہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ت) و بنحوه الطبراني فی الکبیر عن ابی امامة رضی الله تعالی عنه۔

غرض بعد نیک نیتی کے پاکی حساب کی ویسے ہی امید ہے باقی شرع مطہر سے اس کی کوئی نظیر نہیں ملتی کہ ادائے قرض کے لئے کسی ناجائز طریقے سے مال حاصل کرنے کو جائز فرمایا ہو اور بیشک سودی قرض لینا ناجائز طریقہ ہے بلکہ علماء تو یہاں تک تصریح فرماتے ہیں کہ عورت اگر مارے سے بھی نماز نہ پڑھے طلاق دے دے اگرچہ اس کا مہر دینے پر قادر نہ ہو کہ اللہ تعالٰی سے اس حال پر ملنا کہ اس کا مطالبہ مہر اس کی گردن پر ہو اس سے بہتر ہے کہ ایک بے نمازی عورت سے صحبت کرے،

فی الغنیة الزوج له ان یضرب زوجته علی ترك الصلوة وان لم تنته عن ترکها بالضرب یطلقها ولو لم یکن قادر اعلی مهرها ولان یلقی الله تعالی ومهرها فی ذمته خیر له من ان یطأ امرأة لا تصلی[2]۔ غنیہ میں ہے کہ شوہر کو حق پہنچتا ہے کہ وہ اپنی بیوی کو نماز چھوڑنے پر مارے اور اگر مارنے کے باوجود وہ نماز چھوڑنے سے باز نہیں آتی تو طلاق دے دے اگرچہ اس کو مہر کی ادائیگی پر قدرت نہ ہو کیونکہ اللہ تعالٰی کو اس حال میں ملنا کہ اس کی بیوی کا مہر اسکے ذمہ پر ہو بہتر ہے اس سے کہ ایسی عورت سے صحبت کرے جو نماز نہیں پڑھتی۔ (ت)

دیکھو عورت کا نماز نہ پڑھنا اس کا کوئی گناہ نہیں جبکہ وہ اس کی ہدایت و تنبیہ کسی طرح نہیں مانتی بائنمہ اسے گوارا نہ کیا گیا اور قرضدار مرنے کو اس سے آسان سمجھا، تو سودی قرض لینا کہ جو خود اس کا گناہ ہے کیونکر گوارا کیا جائے گا اور قرضدار مرنا اس کی نسبت آسان نہ ہوگا۔ "ھذا کلہ ماظھر لي وارجوان یکون صوابا ان شاء اللہ تعالیٰ" (یہ سب وہ ہے جو مجھ پر ظاہر ہوا اور میں امید کرتا ہوں کہ ان شاء اللہ تعالیٰ یہ درست ہوگا۔ ت) رہی ضمانت وہ در حقیقت قرض ملنے پر اعانت ہے اگر اس محتاج کو سودی قرض لینا شرعاً جائز تھا تو اصل روپے کی ضمانت میں کوئی حرج نہیں کہ جائز بات میں ایک مسلمان بھائی کی

---

1 المستدرك للحاکم کتاب البیوع باب من تداین بدین الخ دار الفکر بیروت ۲/۳۲ 2 غنیة المستملی احکام المساجد مسائل شتی سہیل اکیڈمی لاہور ص ۶۲۱

Fatawa Razawiya Volume 17

...helps, and if it was illegitimate, he should not guarantee even the principal at all, as this would be assisting in sin. Allah the Almighty says: "And do not cooperate in sin and aggression" - 1. Allah the Almighty has commanded: Do not cooperate in sin and injustice. And Allah the Almighty knows best. (T)

Issue 132: 15 Dhu al-Hijjah 1306 AH What do the scholars of religion say regarding this matter: A person took out some money on interest, and two people became guarantors. Now, who is the bigger sinner? The person who took money on interest now repents and wants to return the interest; will his repentance be accepted or not? And will he be cleansed from the sin of interest? Explain and be rewarded.

The Answer: Taking an interest-based loan without severe compulsion, which Shariah recognizes as a necessity, is Haraam (forbidden). Similarly, any kind of participation in its processing is a cause of sin. In a Sahih Hadith, it is stated: "Hum Sawaa'" [2], meaning they are all equal in the essence of the sin. The meaning of repentance from interest is that whatever interest was taken should be returned, and one should sincerely repent and promise Allah Almighty for the future. Whoever does this, his repentance will surely be accepted. "He is the One Who accepts repentance from His servants" [3]. And he will be purified from the sin of interest. "One who repents from sin is like one who has no sin" [4]. And Allah the Almighty knows best, and His knowledge is most complete.

Issue 133 to 138: From Shahjahanpur, Khalil locality, sent by Muhammad I'zaz Hussain Khan, manager of Madrasa Islamiya, 26 Muharram 1309 AH. What do the scholars of religion and the jurists of the firm Shariah say in this case that: (1) Zaid, during his lifetime, gave some money on interest and Zaid died before receiving the money. Is it permissible for Zaid's heirs to take the interest up to the date of Zaid's death or not?

1 Quran al-Kareem 5/2 2 Sahih Muslim, Book of Musaqat, Chapter on Riba, Qadimi Kutub Khana Karachi 2/72 3 Quran al-Kareem 42/25 4 Sunan al-Kubra by al-Bayhaqi, Book of Testimonies, Dar Sader Beirut 10/154; Sunan Ibn Majah, Chapters on Zuhd, Chapter on Mentioning Repentance, HM Saeed Company Karachi p. 424

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

...मदद करता है और यदि वह नाजायज़ था, तो उसे मूल (प्रिंसिपल) की भी ज़मानत नहीं देनी चाहिए, क्योंकि यह गुनाह में मदद करना होगा। अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "व ला तआव़ानू अलल इस्मि वल उद्वान" - 1। अल्लाह तआला ने इरशाद फ़रमाया: गुनाह और ज़ुल्म पर तावुन (सहयोग) मत करो। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसअला 132: 15 ज़िल हिज्जाह 1306 हिजरी दीन के विद्वान इस मसअले में क्या फ़रमाते हैं कि: एक व्यक्ति ने कुछ रुपया सूद (ब्याज) पर निकलवाया, दो व्यक्ति ज़ामिन (गारंटर) बने। अब ज़्यादा गुनहगार कौन है? वह व्यक्ति जिसने सूद पर लिया, अब तौबा करता है और सूद वापस देना चाहता है, तो क्या उसकी तौबा क़बूल होगी या नहीं? और क्या वह सूद के गुनाह से पाक हो जाएगा या नहीं? बयान करें, सवाब पाएँ।

अल-जवाब (उत्तर): बिना किसी सख्त मजबूरी के, जिसे शरीयत भी मजबूरी कहे, सूदी कर्ज़ लेना हराम है। इसी तरह, इसके काम में किसी भी तरह की भागीदारी गुनाह का कारण है। सहीह हदीस में है: "हुम सवाअ" [2], यानी वे सब गुनाह के मामले में बराबर हैं। सूद से तौबा का मतलब यह है कि जितना सूद लिया गया है उसे वापस कर दे और अल्लाह अज्ज़वजल से भविष्य के लिए सच्चे दिल से शर्मिंदा होकर वादा करे। जो ऐसा करेगा, उसकी तौबा यक़ीनन क़बूल होगी। "वही है जो अपने बंदों की तौबा क़बूल फ़रमाता है" [3]। और वह सूद के गुनाह से पाक हो जाएगा। "गुनाह से तौबा करने वाला ऐसा है जैसे उसने कोई गुनाह न किया हो" [4]। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है और उसका इल्म कामिल (पूर्ण) है।

मसअला 133 से 138: शाहजहाँपुर, मुहल्ला खलील, प्रेषक: मोहम्मद एजाज़ हुसैन खान, प्रबंधक मदरसा इस्लामिया, 26 मुहर्रम 1309 हिजरी। दीन के विद्वान और शरीयत के मुफ़्ती इस मामले में क्या फ़रमाते हैं कि: (1) ज़ैद ने अपने जीवन काल में कुछ रुपया सूद पर कर्ज़ दिया और रुपया वसूल होने से पहले ज़ैद मर गया। अब ज़ैद के वारिसों के लिए ज़ैद की मौत की तारीख तक का सूद लेना जायज़ है या नहीं?

1 अल-क़ुरआन अल-करीम 2/5 2 सहीह मुस्लिम, किताबुल मुसाक़ात, बाबुर रिबा, क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची 2/72 3 अल-क़ुरआन अल-करीम 42/25 4 सुनन अल-कुबड़ा लिल बहक़ी, किताबुश

शहादात, दार सादिर बेरुत 10/154; सुनन इब्ने माजह, अबवाबुज़ ज़ुहद, बाबु ज़िकृत तौबा, एच.एम. सईद कंपनी कराची पृ. 424

पृष्ठ 304 का 715

مدد کرتا ہے اور ناجائز تھا تو ہرگز اصل کی بھی ضمانت نہ کرے کہ یہ معصیت پر اعانت ہو گی، قال اللہ تعالٰی "وَلَا تَعَاوَنُوْا عَلَی الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ" - 1 | اللہ تعالٰی نے ارشاد فرمایا: گناہ اور ظلم پر تعاون مت کرو۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ ۱۳۲: ۱۵ ذی الحجہ ۱۳۰۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص نے کچھ روپیہ سودی نکلوایا دو شخص ضامن ہوئے اب گناہگار زیادہ کون ہے؟ وہ شخص جس نے سود پر دیا اب توبہ کرتا ہے اور سود کو واپس دینا چاہتا ہے تو یہ توبہ اسکی قبول ہوگی یا نہیں؟ اور وہ سود کے گناہ سے پاک ہوگا یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: بغیر سخت مجبوری کے جسے شرع بھی مجبور کہے سودی قرض لینا حرام ہے، اور اسی طرح اس کے کام میں کسی طرح کی شرکت ہو باعث گناہ ہے، اور حدیث صحیح میں: ھم سواء 2 فرمایا یعنی وہ سب نفس گناہ میں برابر ہیں، اور سود سے توبہ کے یہی معنی ہیں کہ جس قدر سود لیا واپس دے اور اللہ عزوجل سے آئندہ کے لئے سچے دل سے نادم ہو کر عہد کرے، جو ایسا کرے گا اس کی توبہ بیشک قبول ہوگی "ھُوَ الَّذِیْ یَقْبَلُ التَّوْبَۃَ عَنْ عِبَادِہٖ" 3 (وہ وہی ہے جو اپنے بندوں کی توبہ قبول فرماتا ہے۔ت) اور وہ سود کے گناہ سے پاک ہو جائے گا التائب من الذنب کمن لاذنب لہ 4 (گناہ سے توبہ کرنے والا ایسے ہے جیسے اس نے کوئی گناہ نہ کیا ہو۔ت) واللہ تعالٰی اعلم و علمہ اتم۔

مسئلہ ۱۳۳ تا ۱۳۸: از شاہجہان پور محلہ خلیل مرسلہ محمد اعزاز حسین خاں مہتمم مدرسہ اسلامیہ ۲۶ محرم ۱۳۰۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اور مفتیانِ شرع متین اس صورت میں کہ: (۱) زید

نے اپنی حیات میں کچھ روپیہ سود پر قرض دیا اور قبل وصول روپیہ کے زید مر گیا اب ورثا زید کو تاریخ وفات زید تک کا سود لینا جائز ہے یا نہیں؟

1 القرآن الکریم ۲/۵ 2 صحیح مسلم کتاب المساقات باب الربا قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/۷۲ 3 القرآن الکریم ۴۲/۲۵ 4 سنن الکبری للبیہقی کتاب الشہادات دار صادر بیروت ۱۰/۱۵۴، سنن ابن ماجہ ابواب الزہد باب ذکر التوبہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص ۴۲۴

(2) Zaid had lent money on interest and obtained a decree from the civil court along with interest. According to court regulations, 8% interest until the repayment of money is also mentioned in the decree. After Zaid's death, can his heirs take both types of interest? Is it legally (Sharia-wise) permissible or not?

(3) Zaid had purchased promissory notes and used to receive 4.5% annual interest from the government. Zaid died. According to court regulations, it is necessary for Zaid's heirs to first obtain an inheritance certificate. Without it, the heirs can neither receive interest on the notes nor can they sell them. Obtaining the certificate will incur a cost of approximately three thousand rupees in court. Zaid's heirs want to take interest from the government notes and spend it on obtaining the certificate, i.e., take it from the government and return it to them. So, can Zaid's heirs take interest on the notes up to the date of Zaid's death, or can they also take it for the future, or is it absolutely prohibited?

(4) Amr purchased promissory notes worth one lakh. The rule of promissory notes is that the government never pays back the principal amount but gives 4.5% annual interest. However, if the owner wishes, he can sell them to other buyers. The rate of notes also fluctuates; sometimes it is less and sometimes more, for example, nowadays a hundred-rupee promissory note sells for one hundred and eight rupees. So, if Amr sells his one-lakh promissory notes at an 8% profit or sells them at two rupees more than the current market rate, is this sale valid or not?

(5) A person obtained a court decree for two thousand rupees, in which one thousand is the principal and one thousand is interest. If that person or his heir sells that decree to someone for twelve hundred rupees, how is it?

(6) In the above scenarios, if the amount declared as interest is taken in whole or in part and given to an Islamic school, what is its status according to Sharia? State the verdict so you may be rewarded.

The Answer:

(1) It is definitively prohibited (Haram).

Allah the Almighty and Exalted said: "O you who have believed, fear Allah and give up what remains [due to you] of interest, if you should be believers. And if you do not do so, then be informed of a war [against you] from Allah and His Messenger."

Translation: Allah the Almighty and Exalted said: O you who believe! Fear Allah and leave whatever interest remains if you are believers. If you do not do so, then be warned of war from Allah and His Messenger, or declare it.

(2) ज़ैद ने ब्याज पर रुपया उधार देकर दीवानी अदालत से ब्याज सहित डिक्री प्राप्त की थी और अदालती नियमों के अनुसार, अदायगी तक 8% ब्याज भी डिक्री में लिखा जाता है। ज़ैद की मृत्यु के बाद क्या उसके वारिस दोनों तरह का ब्याज ले सकते हैं? क्या यह शरीयत के अनुसार जायज़ है या नहीं?

(3) ज़ैद ने प्रॉमिसरी नोट खरीदे थे और सरकार से साढ़े चार प्रतिशत वार्षिक ब्याज लिया करता था। ज़ैद मर गया। अदालती नियमों के अनुसार, ज़ैद के वारिसों को पहले उत्तराधिकार प्रमाण पत्र लेना अनिवार्य है। इसके बिना वारिस न तो नोटों का ब्याज पा सकते हैं और न ही उन्हें बेच सकते हैं। प्रमाण पत्र प्राप्त करने में अदालत में लगभग तीन हज़ार रुपये खर्च होंगे। ज़ैद के वारिस चाहते हैं कि सरकारी नोटों से ब्याज लेकर प्रमाण पत्र लेने में खर्च कर दें, यानी सरकार से लेकर फिर उसी को वापस कर दें। तो क्या ज़ैद के वारिस ज़ैद की मृत्यु की तिथि तक का ब्याज ले सकते हैं या भविष्य का भी ले सकते हैं, या यह पूरी तरह से नाजायज़ है?

(4) अम्र ने एक लाख के प्रॉमिसरी नोट खरीदे। प्रॉमिसरी नोटों का नियम यह है कि सरकार कभी भी मूल राशि वापस नहीं करती है, बल्कि साढ़े चार प्रतिशत वार्षिक ब्याज देती है। हाँ, यदि मालिक चाहे तो दूसरे खरीदारों को बेच सकता है। नोटों की दर भी कम या ज़्यादा होती रहती है, जैसे आजकल सौ रुपये का प्रॉमिसरी नोट एक सौ आठ रुपये में बिकता है। तो क्या अगर अम्र अपने एक लाख रुपये के प्रॉमिसरी नोट को आठ प्रतिशत लाभ पर बेचे या बाज़ार भाव से दो रुपये अधिक लाभ पर बेचे, तो क्या यह बिक्री वैध है या नहीं?

(5) किसी व्यक्ति ने अदालत से दो हज़ार की डिक्री प्राप्त की जिसमें एक हज़ार मूलधन है और एक हज़ार ब्याज। वह व्यक्ति या उसका वारिस उस डिक्री का कुछ हिस्सा बारह सौ में किसी के हाथ बेच दे तो यह कैसा है?

(6) ऊपर की स्थितियों में जो राशि ब्याज की तय की गई है, अगर उसमें से पूरी या कुछ हिस्सा लेकर किसी इस्लामी मदरसे में दे दी जाए, तो शरीयत के अनुसार इसकी क्या स्थिति है? उत्तर दें ताकि आप पुरस्कृत हों।

उत्तर:

(1) यह निश्चित रूप से हराम (वर्जित) है।

अल्लाह सुब्हानहु व तआला ने फरमाया: "ऐ ईमान वालो! अल्लाह से डरो और जो ब्याज बाकी रह गया है उसे छोड़ दो अगर तुम मोमिन हो। फिर अगर तुम ऐसा न करो तो अल्लाह और उसके रसूल से युद्ध की घोषणा सुन लो।" अनुवाद: मौला सुब्हानहु व तआला ने फरमाया: ऐ ईमान वालो! अल्लाह से डरो और जो ब्याज बाकी रहा है उसे छोड़ दो अगर तुम मुसलमान हो, फिर जो ऐसा न करो तो खबरदार हो जाओ खुदा और रसूल से लड़ने के लिए या ऐलान कर दो।

पृष्ठ 305/715

(۲) زید نے روپیہ قرض سود پر دے کر دیوانی سے مع سود ڈگری حاصل کی تھی اور حسب ضابطہ کچہری ۸ فیصدی سود تا ادائے روپیہ اور بھی ڈگری میں لکھا جاتا ہے بعد مرنے زید کے ورثاء اسکے دونوں قسم کا سود لے سکتے ہیں اور شرعاً جائز ہے یا نہیں؟

(۳) زید نے پرامیسری نوٹ خریدے تھے اور گورنمنٹ سے ساڑھے چار روپیہ فیصدی سالانہ سود لیا کرتا تھا زید مر گیا ورثاء زید کو حسب ضابطہ کچہری اول سرٹیفکیٹ وراثت لینا ضرور ہے اور بغیر اس کے ورثاء نہ سود نوٹوں کا پاسکتے ہیں اور نہ ان کو فروخت کر سکتے ہیں اور سرٹیفکیٹ لینے میں قریب تین ہزار روپیہ کے کچہری میں صرف ہوگا ورثاء زید چاہتے ہیں کہ گورنمنٹ نوٹوں تک سود لے کر سرٹیفکیٹ کے لینے میں خرچ کر دیں یعنی گورنمنٹ سے لے کر پھر اسی کو واپس کر دیں پس ورثاء زید تاریخ انتقال زید تک سود نوٹوں کالے سکتے ہیں یا آئندہ کا بھی لے سکتے ہیں یا مطلق ناجائز ہے؟

(۴) عمرو نے پرامیسری نوٹ ایک لاکھ کے خریدے اور پرامیسری نوٹوں کا قاعدہ ہے کہ گورنمنٹ اصل روپیہ کبھی نہیں دیتی بلکہ ساڑھے چار روپیہ فی صدی سالانہ سود دیا کرتی ہے ہاں اگر مالک چاہے تو دوسرے خریداروں کے ہاتھ فروخت کرے اور نرخ نوٹوں کا بھی کم ہوتا ہے اور کبھی زیادہ جیسے آجکل سو روپیہ کا پرامیسری نوٹ ایک سو آٹھ روپیہ کو فروخت ہوتا ہے پس اگر عمرو بھی ایک لاکھ روپیہ کے پرامیسری فیصدی آٹھ روپیہ کے نفع سے فروخت کرے یا نرخ سے دو روپیہ زیادہ نفع پر بیچ ڈالے تو یہ بیع درست ہے یا نہیں؟

(۵) کسی شخص نے دو ہزار کی ڈگری کچہری سے حاصل کی جس میں ایک ہزار اصل ہے اور ایک ہزار سود، وہ شخص کسی کے ہاتھ یا وارث اس کا بعض بارہ سو کے وہ ڈگری فروخت کر ڈالے تو کیسا ہے؟

(۶) اوپر کی صورتوں میں جو جو رقم کہ سود کی قرار دی گئی اگر اس میں سے کل یا بعض لے کر مدرسہ اسلامیہ میں دے دی جائے تو شرعاً کیا اس کی حالت ہے؟ بینوا توجروا۔

الجواب:

(۱) حرام قطعی ہے،

قال المولی سبحانہ وتعالیٰ "یٰٓاَیُّہَا الَّذِیْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰہَ وَ ذَرُوْا مَا بَقِیَ مِنَ الرِّبٰٓوا اِنْ کُنْتُمْ مُّؤْمِنِیْنَ ۝ فَاِنْ لَّمْ تَفْعَلُوْا فَاْذَنُوْا بِحَرْبٍ" مولا سبحانہ و تعالیٰ نے فرمایا: اے ایمان والو! اللہ سے ڈرو اور جو سود باقی رہا ہے چھوڑ دو اگر تم مسلمان ہو پھر جو ایسا نہ کرو تو خبردار ہو جاؤ خدا اور رسول سے لڑنے سے یا اعلان کر دو

Fatawa Razawiya (Volume 17)

From Allah and His Messenger. 1 This was said regarding the remainder (of interest) that had been left from before the prohibition. The Muslims thought, "This is from before the prohibition, let us take it and refrain in the future." Upon this, this command was revealed. The Companions (may Allah be pleased with them) said, "We do not have the strength to fight against Allah and His Messenger." They abandoned that remainder as well. It was not, God forbid, that this wretched remainder was decided to be taken or given after the divine prohibition. And whoever takes it should prepare fully for war against Allah, the Mighty, the Powerful, the Subduer, and His noble Messenger, the Compeller (Mighty and Majestic is He, and may Allah bless him and grant him peace). If one believes in the Quran, let them be certain that one who fights Allah and His Messenger (Exalted is His Glory, may Allah bless him and grant him peace) is falling into severe destruction. And we seek refuge with Allah, the Lord of all worlds (Ameen). Otherwise, they would be deserving of what belongs to the heir and his inheritance; this ill-omened interest is neither property nor inheritance. Through what means can a claim for it reach? And Allah is the Guide, and there is no power nor might except with Allah, the Most High, the Most Great. And Allah (Glorified and Exalted is He) knows best.

(2) One cannot take any type; both are absolutely forbidden. It is mentioned in the Hadith that the Messenger of Allah (may Allah bless him and grant him peace) says: There are seventy, and in one Hadith seventy-two, and in another seventy-three doors (types) of interest. The lightest among them is like a man committing adultery with his mother.

Arabic Text	**Urdu Translation**
Al-Hakim narrated from Ibn Mas’ud (may Allah be pleased with him) from the Prophet (may Allah bless him and grant him peace): "Interest has seventy-three doors; the easiest of them is like a man marrying his mother." 2	Al-Hakim narrated from Sayyiduna Ibn Mas’ud (may Allah be pleased with him) and he narrated from the Holy Prophet (may Allah bless him and grant him peace) that interest has seventy-three doors; the lightest of them is like a person committing adultery with his own mother.
Al-Tabarani in 'Al-Awsat' from Al-Bara bin Azib (may Allah be pleased with him) said: The Messenger of Allah (may	Al-Tabarani narrated in 'Mu'jam Al-Awsat' from Sayyiduna Bara bin Azib (may Allah be pleased with him) that the Messenger of

Arabic Text	Urdu Translation
Allah bless him and grant him peace) said: "Interest has seventy-two doors; the lowest of them is like a man having intercourse with his mother."	Allah (may Allah bless him and grant him peace) said: "There are seventy-two doors of interest; the least among them is like a man [having intercourse with] his own mother."

1 Al-Quran al-Kareem 2/278, 279 2 Al-Mustadrak lil-Hakim, Kitab al-Buyu', Dar al-Fikr, Beirut 2/37

अल्लाह और उसके रसूल की ओर से। 1 यह उस बकाया (ब्याज) के बारे में इरशाद हुआ जो हराम होने से पहले रह गया था। मुसलमानों ने सोचा कि यह तो हराम होने से पहले का है, इसे ले लें और भविष्य में इससे बचेंगे। इस पर यह हुक्म आया। सहाबा (रज़ियल्लाहु अन्हुम) ने कहा कि हममें खुदा और रसूल से लड़ने की ताकत नहीं है, उन्होंने वह बकाया भी छोड़ दिया। ऐसा नहीं था कि, मा'ज़अल्लाह (अल्लाह की पनाह), यह नहूसत भरा बकाया खुदा की मनाही के बाद लेना-देना तय हुआ हो। और जो इसे लेने वाला है, वह अल्लाह जो ज़बरदस्त, कुदरत वाला और कहर ढाने वाला है और उसके रसूल जो जलील और जब्बार हैं (अल्लाह की शान बुलन्द हो और उन पर अल्लाह की रहमत और सलाम हो), उनसे लड़ाई का पूरा सामान तैयार कर ले। और अगर वह कुरआन पर ईमान रखता है तो यकीन रखे कि जो अल्लाह और उसके रसूल (अल्लाह की शान बुलन्द हो, उन पर अल्लाह की रहमत और सलाम हो) से लड़ने वाला है, वह सख्त हलाकत (विनाश) में पड़ने वाला है। और हम अल्लाह, रब्बुल आलमीन की पनाह माँगते हैं। वर्ना वे उस चीज़ के मुस्तहिक (हकदार) होते जो वारिस की मिल्कियत और उसका विरसा (विरासत) हो। यह मनहूस ब्याज न तो मिल्कियत है और न ही विरसा, इसका दावा किस ज़रीये से पहुँचाया जा सकता है? अल्लाह ही हिदायत देने वाला है और अल्लाह जो बुलंद और अज़ीम है, उसके सिवा न तो कोई ताकत है और न ही कोई कुव्वत। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है।

(2) किसी भी प्रकार का ब्याज नहीं ले सकते, दोनों (प्रकार) बिल्कुल हराम हैं। हदीस में है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं: ब्याज के सत्तर, और एक हदीस में बहत्तर, और दूसरी में तिहत्तर दरवाज़े (प्रकार) हैं। उन सबमें सबसे हल्का ऐसा है जैसे कोई व्यक्ति अपनी माँ से ज़िना (व्यभिचार) करे।

अरबी इबारत	**उर्दू अनुवाद**
अल-हाकिम ने इब्न मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से, उन्होंने नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से रिवायत किया: "ब्याज के तिहत्तर दरवाज़े हैं, उनमें सबसे आसान ऐसा है जैसे कोई अपनी माँ से निकाह करे।" 2	हाकिम ने सैय्यदिना इब्न मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से और उन्होंने नबी-ए-करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से रिवायत किया कि "ब्याज के तिहत्तर दरवाज़े हैं, उनमें सबसे हल्का ऐसा है जैसे कोई व्यक्ति अपनी माँ से ज़िना करे।"

अरबी इबारत

तबरानी ने 'मोजम औसत' में अल-बरा बिन आज़िब (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने इरशाद फरमाया: "ब्याज के बहत्तर दरवाज़े हैं, उनमें से अदना (सबसे छोटा) ऐसा है जैसे किसी मर्द का अपनी माँ के पास आना।"

उर्दू अनुवाद

तबरानी ने 'मोजम औसत' में सैय्यदिना बरा बिन आज़िब (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने इरशाद फरमाया: "ब्याज के बहत्तर दरवाज़े हैं, उनमें से कमतरीन ऐसा है जो कोई मर्द अपनी माँ से [ज़िना करे]।"

1 अल-कुरआन अल-करीम 2/278, 279 2 अल-मुस्तदरक लिल-हाकिम, किताबुल बियू', दारुल फिक्र बेरुत 2/37

पृष्ठ 306/715

مِّنَ اللّٰہِ وَرَسُوْلِہٖ ط ۱ یہ اس بقیہ کی نسبت ارشاد ہوا جو تحریم سے پہلے رہ گیا تھا مسلمانوں نے خیال کیا یہ تو حرمت سے پیشتر ہے اسے لے لیں آئندہ سے باز رہیں گے اس پر یہ حکم آیا صحابہ رضی اللہ تعالی عنہم نے کہا ہم میں خدا ورسول سے لڑنے کی طاقت نہیں، وہ بقیہ بھی چھوڑ دیا نہ کہ معاذ اللہ یہ بقیہ شقیہ کے سرے سے بعد تحریم الہی کے لینا دینا ٹھہرا، اور اس کا لینے والا اللہ عزیز مقتدر قہار اور اس کے رسول جلیل جبار جل جلالہ و صلی اللہ تعالی علیہ وسلم سے لڑائی کا پورا سامان کرلے اور قرآن پر ایمان رکھتا ہو تو یقین جانے کہ خدا ورسول عز مجدہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم سے لڑنے والا سخت ہلاکت میں پڑنے والا ہے، والعیاذ باللہ رب العلمین (اللہ کی پناہ جو تمام جہانوں کو پالنے والا ہے۔ ت) ورنہ اس چیز کے مستحق ہوتے ہیں جو مورث کی ملک اور اس کا ترکہ ہو یہ سود نا مسعود نہ ملک نہ ترکہ اس کا مطالبہ کس ذریعہ سے پہنچ سکتا ہے واللہ الھادی ولا حول ولا قوۃ الا باللہ العلی العظیم، واللہ سبحانہ وتعالی اعلم۔

(۲) کسی قسم کا نہیں لے سکتے ، دونوں قطعی حرام ہیں ، حدیث میں ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم فرماتے ہیں: سود کے ستر ، اور ایک حدیث میں بہتر ، اور دوسری میں تہتر دروازے ہیں ، ان سب میں ہلکا ایسا ہے جیسے آدمی ماں سے زنا کرے۔

عربی عبارت	اردو ترجمہ
الحاکم عن ابن مسعود رضی اللہ تعالی عنہ عن النبی صلی اللہ تعالی علیہ وسلم	حاکم نے سیدنا ابن مسعود رضی اللہ تعالی عنہ سے اور انہوں نے نبی کریم صلی اللہ تعالی علیہ وسلم سے روایت کیا کہ سود کے تہتر دروازے ہیں ان میں سے سب سے

عربی عبارت	اردو ترجمہ
الربا ثلث وسبعون بابا ایسرھا مثل ان ینکح الرجل امہ ۲	ہلکا ایسے ہے جیسے کوئی شخص اپنی ماں سے زنا کرے۔
الطبرانی فی الاوسط عن البراء بن عازب رضی اللہ تعالی عنہ قال قال رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم الربا اثنان وسبعون بابا ادناھا مثل اتیان الرجل	طبرانی نے معجم اوسط میں سیدنا براء بن عازب رضی اللہ تعالی عنہ سے روایت کیا کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم نے ارشاد فرمایا سود کے بہتر دروازے ہیں ان میں سے کمترین ایسے ہے جو کوئی مرد اپنی ماں سے [زنا کرے]۔

۱ القرآن الکریم ۲/ ۲۷۸، ۲۷۹ ۲ المستدرک للحاکم کتاب البیوع دار الفکر بیروت ۲/ ۳۷

Fatawa Razawiya Volume 17

1. Ibn Majah and al-Bayhaqi [narrated it] with a chain of transmission that is not bad, and the wording is his [al-Bayhaqi's], from Abu Hurayrah (may Allah be pleased with him) who said: The Messenger of Allah (may Allah's peace and blessings be upon him) said: "Riba (usury) has seventy doors, the lowest of which is like a man committing incest with his mother." 2 -

...committing adultery. Ibn Majah and Bayhaqi narrated this with a chain of transmission in which there is no harm, and the words are of Bayhaqi. It is narrated from Sayyiduna Hazrat Abu Hurairah (may Allah be pleased with him) that the Messenger of Allah (may Allah's peace and blessings be upon him) said: "There are seventy gates of usury; the least of them is like a man committing adultery with his mother." (T)

So, the person who wants to take a single penny of interest, if he believes in the saying of the Messenger of Allah (may Allah's peace and blessings be upon him), let him reflect within himself first whether he accepts not receiving this money or committing adultery seventy times with his own mother. And Allah is the Guide. (3) Taking interest is definitively haram, a major and grave sin, which can in no way be permissible. However, it is permissible to take legally permissible (mubah) wealth or one's own given right to the extent of the right with the intention of acquiring what is permissible or receiving what is due, not with the intention of usury or other forbidden matters, even if some unlawful name is made a means for its acquisition due to some excuse.

This is a majestic and subtle matter which no one is alerted to except by the guidance of Allah the Almighty, and we will detail it one day, if Allah the King, the All-Knowing, Exalted and Most High, wills.

This is a subtle issue carrying great majesty and grandeur; awareness of it cannot be achieved except through the guidance of Allah Almighty. We will, if Allah Almighty wills, explain it in detail some day. (T)

(4 & 5) One cannot sell an excess, equal, or lesser amount at all because in both these cases, it is actually the sale of debt to someone other than the debtor, and that is legally void. It is in Al-Ashbah:

The sale of debt is not permissible, but if it is sold to the debtor or gifted to him, it

The sale of debt is not permissible, and if one sells the debt to the debtor or gifts it

is permissible. 3 - And Allah the Almighty [knows best].

to him, it is permissible. And Allah the Almighty [knows best].

1. Al-Mu'jam al-Awsat by at-Tabarani, Hadith 7147, Maktaba al-Ma'arif, Riyadh, 8/278.
2. Sunan Ibn Majah, Chapter on Severity in Riba, H.M. Saeed Company, Karachi, 2/125; Shu'ab al-Iman, Hadith 5520, Dar al-Kutub al-Ilmiyah, Beirut, 4/394.
3. Al-Ashbah wa'n-Naza'ir, Third Art, Discussion on Debt, Idarat al-Qur'an, Karachi, 2/213.

फतावा रज़विया जिल्द सत्रहवीं (17)

1. इब्ने माजह और बैहक़ी ने ऐसी सनद के साथ रिवायत किया जिसमें कोई हर्ज नहीं और लफ्ज़ बैहक़ी के हैं। सैयदना हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से मरवी है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने इरशाद फ़रमाया कि सूद के सत्तर दरवाज़े हैं, उनमें से सबसे छोटा ऐसा है जैसे कोई मर्द अपनी माँ से ज़िना करे। 2 - ...ज़िना करे। इब्ने माजह और बैहक़ी ने ऐसी सनद के साथ इसको रिवायत किया जिस में कोई हर्ज नहीं और लफ्ज़ बैहक़ी के हैं। सैयदना हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से मरवी है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि सूद के सत्तर दरवाज़े हैं उन में से कमतर ऐसा है जैसे कोई मर्द अपनी माँ से ज़िना करे। (त)

तो जो शख़्स सूद का एक पैसा लेना चाहे, अगर रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का इरशाद मानता है तो ज़रा गिरेबान में मुँह डाल कर पहले सोच ले कि इस पैसे का न मिलना क़बूल है या अपनी माँ से सत्तर सत्तर बार ज़िना करना, वल्लाहु अल-हादी। (3) सूद लेना हराम क़तई व कबीरा व अज़ीमा है जिसका लेना किसी तरह रवा नहीं हो सकता हाँ माल मुबाह शरई या अपना दिया हुआ हक़ बक़दरे हक़ ब नियत तहसील मुबाह या वसूल हक़ न ब नियत रिबा वगैरह उमूरे मुहर्रमा लेना जाइज़ है अगरचे किसी उज़्र के सबब किसी नाजाएज़ नाम को उसके हुसूल का ज़रिया किया जाए।

यह बड़ी जलालत व अज़मत का हामिल दक़ीक़ मसला है सिवाए अल्लाह तआला की तौफीक के इस पर आगाही नहीं हो सकती, हम इंशाअल्लाह तआला किसी दिन इसको मुफ़स्सल बयान करेंगे। यह बड़ी जलालत व अज़मत का हामिल दक़ीक़ मसला है सिवाए अल्लाह तआला की तौफीक के इस पर आगाही नहीं हो सकती, हम इन शाअ अल्लाह तआला किसी दिन इसको मुफ़स्सल बयान करेंगे। (त)

(4 व 5) ज़ायद, बराबर कम किसी मिक़दार को असलन बैअ नहीं कर सकता कि इन दोनों सूरत में हक़ीक़तन ग़ैर मदयून के हाथ दैन का बेचना है और वो शरअन बातिल है। अश्बाह में है:

दैन की बैअ जाइज़ नहीं और अगर कोई मदयून पर दैन को बेचे या उसको हिबा कर दे तो जाइज़ है। 3 - वल्लाहु तआला। दैन की बैअ जाइज़ नहीं और अगर कोई मदयून पर दैन को बेचे या उसको हिबा कर दे तो जाइज़ है, वल्लाहु तआला।

1. अल-मुअजमुल औसत लित-तबरानी हदीस 7147 मक्तबा अल-मआरिफ़ रियाज़ 8/278

2. सुनन इब्ने माजह बाबुत तग़लीज़ फ़िर-रिबा एच.एम. सईद कंपनी कराची 2/125, शुअबुल ईमान हदीस 5520 दारुल कुतुब अल-इल्मिया बैरूत 4/394
3. अल-अश्बाह वन-नज़ाइर अल-फन्नुस सालिस अल-क़ौलु फ़िद-दैन इदारातुल क़ुरआन कराची 2/213

पृष्ठ 307/715

۱۔ ابن ماجۃ والبیھقي باسناد لابأس به واللفظ له عن ابي هريرة رضي الله تعالی عنه قال قال رسول الله صلی الله تعالی علیه وسلم الربا سبعون بابا ادناها کالذی یقع علی امه ۲ -

زنا کرے۔ ابن ماجہ اور بیہقی نے ایسی اسناد کے ساتھ اس کو روایت کیا جس میں کوئی حرج نہیں اور لفظ بیہقی کے ہیں۔ سید نا حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے مروی ہے کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ وسلم نے ارشاد فرمایا کہ سود کے ستر دروازے ہیں ان میں سے کمتر ایسا ہے جیسے کوئی مرد اپنی ماں سے زنا کرے (ت)

تو جو شخص سود کا ایک پیسہ لینا چاہے اگر رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا ارشاد مانتا ہے تو ذرا گریبان میں منہ ڈال کر پہلے سوچ لے کہ اس پیسہ کا نہ ملنا قبول ہے یا اپنی ماں سے ستر ستر بار زنا کرنا، واللہ الہادی۔ (۳) سود لینا حرام قطعی و کبیرہ و عظیمہ ہے جس کا لینا کسی طرح روا نہیں ہو سکتا ہاں مال مباح شرعی یا اپنا دیا ہوا حق بقدر حق بہ نیت تحصیل مباح یا وصول حق نہ بہ نیت ربا وغیرہ امور محرمہ لینا جائز ہے اگرچہ کسی عذر کے سبب کسی ناجائز نام کو اس کے حصول کا ذریعہ کیا جائے،

وھذا مسألة جلیلة دقیقة لایتنبه الا بتوفیق الله تعالی وسنفصلها یوما ان شاء الملك العلام جل و علا۔

یہ بڑی جلالت و عظمت کا حامل دقیق مسئلہ ہے سوائے اللہ تعالیٰ کی توفیق کے اس پر آگاہی نہیں ہو سکتی، ہم ان شاء اللہ تعالیٰ کسی دن اس کو مفصل بیان کریں گے۔ (ت)

(۴ و ۵) زائد، برابر کم کسی مقدار کو اصلاً بیع نہیں کر سکتا کہ ان دونوں صورت میں حقیقۃ غیر مدیون کے ہاتھ دین کا بیچنا ہے اور وہ شرعاً باطل ہے۔ اشباہ میں ہے:

بیع الدین لا یجوز ولو باعه من المدین دین کی بیع جائز نہیں اور اگر کوئی مدیون پر دین کو بیچے

او وهبه جاز ۳ - واللہ تعالی یا اس کو ہبہ کر دے تو جائز ہے، واللہ تعالیٰ

۱ المعجم الاوسط للطبرانی حدیث ۷۱۴۷ مکتبۃ المعارف ریاض ۲۷۸/۸ ۲ سنن ابن ماجہ باب التغلیظ فی الربا ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲/ ۱۲۵، شعب الایمان حدیث ۵۵۲۰ دار الکتب العلمیۃ بیروت ۴/ ۳۹۴ ۳ الاشباہ والنظائر الفن الثالث القول فی الدین ادارۃ القرآن کراچی ۲/ ۲۱۳

Volume 17 (17) Fatawa Razawiya

Allah, the Pure, knows best and His judgment is most firm. Allah, the Pure, knows best and His judgment is most firm. (T) (6) From the previous answers, it is clear that where and in what manner taking is permissible, giving is not. And Allah Almighty knows best. Problem 6:139 5 Jumada al-Ula 1310 AH What do the scholars of the religion say about this issue: a person says that here, taking interest from Hindus is permissible but not from Muslims. How is this statement? Explain and be rewarded.

Answer: Taking interest is permissible neither from a Muslim nor from a Hindu. Due to the general application of the saying of Allah Almighty, "And Allah has forbidden interest." As for what is taken from a Harbi [non-Muslim citizen of a non-Islamic state at war] in Dar al-Harb [territory of war], it is permissible wealth, not interest. And Allah Almighty knows best. Due to the general nature of this command from Allah Almighty that "And Allah has forbidden interest," but whatever is taken from a Harbi in Dar al-Harb is permissible wealth, not interest. And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 140: Sent by Muhammad Inayat Husain, former department head at the hospital of Bareilly district, 30 Rabi' al-Thani 1311 AH. What do the scholars of the religion say about this issue: If a moneylender took an illegitimate amount from Zaid, like interest etc., which Zaid had no power to recover. And Zaid, not with the intention of interest but to recover his right, deposits some money in the moneylender's firm, and considers the monthly amount received on it as an adjustment against what is owed to him until the full right is recovered, after which he takes back his principal. Similarly, if a king or ruler has taken any tax, levy, land revenue, stamp duty, or fine etc. from him or from the common subjects in a way that is Sharia-wise illegitimate or exceeds the Sharia limits. And to recover that illegitimate amount, the said entitled person deposits his personal money or money from the funds of common Muslims in a royal bank, and receives from it with the intention of recovering the right and without the intention of interest. In the first case, he spends it for his personal use, and in the case of funds, he spends it on those Muslim welfare expenses for which the funds were collected. Is this Sharia-wise permissible or not? And will it be called taking interest or what? Explain and be rewarded.

1 The Holy Quran 2/275 Page 308 of 715

अल्लाह, जो पाक है, बेहतर जानता है और उसका फैसला सबसे मज़बूत है। अल्लाह, जो पाक है, बेहतर जानता है और उसका फैसला सबसे मज़बूत है। (त) (६) पिछले जवाबों से साफ़ है कि जहाँ जिस तरह लेना जायज़ है, वहाँ देना जायज़ नहीं है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। मसला ६:१३९ जमादी उल-ऊला १३१० हिजरी। दीन के उलेमा इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि एक शख़्स कहता है कि यहाँ हनूद (हिंदुओं) से सूद (ब्याज) लेना जायज़ है, मुसलमानों से नहीं। यह कौल कैसा है? ब्यान फरमाएं, सवाब पायें।

जवाब: सूद लेना न मुसलमान से जायज़ है न हिंदू से। अल्लाह तआला के इस फरमान के आम होने की वजह से कि "और अल्लाह तआला ने सूद को हराम कर दिया है।" लेकिन जो कुछ दार-उल-हरब में हरबी से लिया जाए तो वो मुबाह (जायज़) माल है, सूद नहीं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। अल्लाह तआला के इस इरशाद के आम होने की वजह से कि "और अल्लाह तआला ने सूद को हराम कर दिया" लेकिन जो कुछ दारुल हरब में हरबी से लिया जाए तो वो मुबाह माल है सूद नहीं। वल्लाह तआला आलम (त)

मसला १४०: प्रेषक मुहम्मद इनायत हुसैन, पूर्व विभाग अध्यक्ष अस्पताल ज़िला बरेली, ३० रबी-उस-सानी १३११ हिजरी। दीन के उलेमा इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि ज़ैद से अगर किसी बनिए ने कोई नाजायाज़ रकम सूद वगैरह की तरह ली हो, जिसे वसूल करने पर उसे कुदरत न थी। और वो सूद की नीयत से नहीं बल्कि उस हक़ को वसूल करने के लिए उसकी कोठी में कुछ रुपया इतना जमा करे, और जो रकम माहवार उस पर मिले उसे अपने आते हुए (बकाया) में मुजरा (समायोजन) समझता जाए यहाँ तक कि वो हक़ पूरा निकल आए, उसके बाद अपना रुपया वापस ले ले। इसी तरह बादशाह या हाकिम ने कोई महसूल या टैक्स या मालगुज़ारी या स्टाम्प या जुर्माना वगैरह उससे या आम रिआया से ऐसे तरीके पर लिया हो जो शरई तौर पर नाजायाज़ या शरअ की हद से ज़्यादा हो, और उस नाजायाज़ मिकदार तक वसूल करने के लिए अपने ज़ाती रुपये या आम मुसलमानों के चंदे का रुपया शाही बैंक में जमा करके हक़दार-ए-मज़कूर उससे हक़ वसूल करने की नीयत के साथ, बिना सूद की नीयत के हासिल करे। और पहली सूरत में उसे अपने निजी खर्च में और चंदे की सूरत में उन मुसा़रिफ-ए-मुस्लिमीन (मुसलमानों के कल्याण खर्चों) में खर्च करे जिनके लिए वो चंदा वसूल किया गया था, तो क्या यह शरअन जायज़ है या नहीं? और क्या इसे सूद लेना कहेंगे या क्या? ब्यान फ़रमायें, सवाब पायें।

جلد ہفدہم (۱۷) فتاوٰی رضویہ

اعلم و حکم سبحانہ احکم۔ اعلم و حکم سبحانہ احکم (ت) (۶) جوابات سابقہ سے واضح جہاں جس طرح لینا جائز دینا جائز وہاں نہیں ہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم مسئلہ ۱۳۹:۶ جمادی الاولٰی ۱۳۱۰ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص کہتا ہے یہاں ہنود سے سود لینا جائز ہے مسلمانوں سے نہیں، یہ قول کیسا ہے؟ بینوا توجروا۔

الجواب: سود لینا نہ مسلمان سے جائز نہ ہندو سے، لاطلاق قولہ تعالٰی "وَحَرَّمَ الرِّبٰوا" اما یؤخذ من الحربی فی دار الحرب فمال مباح لیس بربا۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ اس ارشادِ باری تعالٰی کے اطلاق کی وجہ سے کہ "اور اللہ تعالٰی نے سود کو حرام کر دیا" لیکن جو کچھ دار الحرب میں حربی سے لیا جائے تو وہ مباح مال ہے سود نہیں ۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ ۱۴۰: مرسلہ محمد عنایت حسین سرشتہ دار سابق شفا خانہ ضلع بریلی ۳۰ ربیع الثانی ۱۳۱۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید سے اگر کسی بننے نے کوئی رقم ناجائز مثل سود وغیرہ کے لی ہو جس کے وصول کرنے پر اسے قدرت نہ تھی اور وہ نہ بہ نیت سود بلکہ اس حق کو وصول کرنے کے لئے اس کی کوٹھی میں کچھ روپیہ اتنا جمع کرے اور جو رقم ماہوار اس پر ملے اسے اپنے آتے ہوئے میں مجرا سمجھتا جائے یہاں تک کہ وہ حق پورا نکل آئے، اس کے بعد اپنا روپیہ واپس لے لے، اسی طرح بادشاہ یا حاکم نے کوئی محصول یا ٹیکس یا مالگزاری یا اشٹام یا جرمانہ وغیرہ اس سے یا عام رعایا سے ایسے طریقہ پر لیا ہو جو شرعاً ناجائز یا حدِ شرع سے زیادہ ہو اور اس مقدار ناجائز تک وصول کرنے کے لئے اپنے ذاتی روپیہ یا عام مسلمانوں کے چندہ کا روپیہ شاہی بینک میں جمع کر کے حقدار مذکور اس سے نیت وصولِ حق کے ساتھ بے نیت سود حاصل کرے، اور پہلی صورت میں اسے اپنے صرف خاص اور چندہ کی

صورت میں ان مصارفِ مسلمین میں جن کے لئے وہ چندہ وصول کیا گیا تھا صرف کر دے تو یہ شرعاً جائز ہے یا نہیں؟ اور اور اسے سود لینا کہیں گے یا کیا؟ بینوا توجروا۔

The Answer: Interest (Riba) is absolutely forbidden (Haram) and is a major sin. Taking it is not permissible under any circumstances. However, it must be either actually taking interest or having the intention to take interest, as the intention of disobedience is also a sin, even if the act itself is not a sin in reality. For example, drinking syrup mistakenly thinking it is wine; although it is actually permissible, in his own view, he has committed a sin. Where there is neither the reality nor the intention, and it is just a name, that too out of necessity, then it obviously has no connection to that sin, as is not hidden. Therefore, whether it is a state or non-state entity, if anyone has a general or specific right over another person, and it cannot be recovered due to legal constraints or some other reason—for instance, if time has elapsed (statute of limitations), or the debtor denies it and there are no witnesses, or witnesses were provided but the court did not accept them and dismissed the case, or someone took some amounts from him contrary to Shariah and he is unable to take them back, such as a merchant taking interest, a judge taking a bribe, etc.—and it is available under another illegitimate Shariah name where there are no legal or other obstacles, then making that illegitimate name a means of recovery only up to the amount of his right is permissible under Shariah, provided it does not lead to any prohibited act and the intention and goal is to recover one's right, not to commit the prohibited act. In this case, neither the reality of that illegitimate matter nor its intention exists, nor is there a legal prohibition from which worldly protection is sought. Riba and other forbidden matters refer to the meanings of Riba and prohibitions, not just meaningless words. This is why scholars say:

[Boxed Text] Arabic: There is no Riba (usury/interest) between a master and his slave, because the slave and whatever is in his possession belongs to his master, so Riba is not established. Similarly, there is no Riba between partners in a Mufawada partnership, nor in an Inan partnership, as stated in al-Hidayah, al-Durr, and other brilliant books. Urdu: There is no interest between a master and his slave because the slave and whatever is in his possession is the property of the master, hence interest is not realized. Similarly, there is no interest between two partners of Mufawada and Inan partnerships, as is mentioned in the illuminating books of Hidayah and Durr al-Mukhtar etc. (T)

It is stated in Durr al-Mukhtar:

1 Al-Hidayah, Chapter on Riba, Yusufi Press, Lucknow, 3/87 2 Durr al-Mukhtar, Book of Sales, Chapter on Riba, Mujtabai Press, Delhi, 2/43

उत्तर: ब्याज (सूद) पूर्णतः हराम और एक बड़ा गुनाह (कबीरा) है, जिसे लेना किसी भी हाल में जायज़ नहीं हो सकता। मगर हक़ीक़त में सूद लेना हो या सूद लेने की नीयत हो, क्योंकि अवज्ञा (मासियत) का इरादा भी एक गुनाह है, भले ही वह कार्य वास्तव में गुनाह न हो। जैसे कि शरबत को गलती से शराब समझकर पीना कि वह हक़ीक़त में हलाल ही सही, पर वह व्यक्ति अपनी नज़रों में गुनाहगार हुआ। और जहाँ न हक़ीक़त हो न नीयत, केवल नाम ही नाम हो, वह भी मजबूरी में, तो प्रत्यक्ष रूप से उसका उस गुनाह से कोई संबंध नहीं रहा जैसा कि छिपा हुआ नहीं है। अतः राज्य हो या गैर-राज्य, जिस व्यक्ति पर जिसका कोई सामान्य या विशेष अधिकार (हक) हो और वह कानूनी मजबूरी या किसी अन्य कारण से वसूल न हो सके—उदाहरण के लिए, समय बीत गया हो या देनदार मुकर जाए और कोई गवाह न हो, या गवाह दिए गए लेकिन अदालत ने नहीं माना और मामला खारिज कर दिया, या किसी ने शरीयत के खिलाफ उससे कुछ रकमें लीं और वह उन्हें वापस लेने में असमर्थ है जैसे कि बनिए ने सूद लिया, काज़ी ने रिश्वत ली आदि—और वह दूसरे शरीयत के विरुद्ध नाम से मिलता हो जिसमें कोई कानूनी या अन्य बाधाएं न हों, तो उस अवैध नाम को केवल उस मात्रा तक जहाँ तक उसका अधिकार है, वसूली का ज़रिया बनाना, जबकि वह किसी निषिद्ध कार्य की ओर न ले जाए और इरादा व नीयत अपना अधिकार प्राप्त करना हो न कि उस निषिद्ध कार्य को करना, तो शरीयत की दृष्टि में यह जायज़ है। इस स्थिति में न तो उस अवैध कार्य की वास्तविकता है, न ही उसकी नीयत, और न ही कानूनी मनाही जिससे दुनियावी सुरक्षा की जाए। सूद और अन्य हराम कार्यों का तात्पर्य सूद के अर्थ और हराम चीजों से है, न कि केवल अर्थहीन शब्दों से। इसीलिए विद्वान कहते हैं:

[बॉक्स टेक्स्ट] अरबी: स्वामी और उसके दास के बीच कोई सूद नहीं होता क्योंकि दास और जो कुछ उसके अधिकार में है वह उसके स्वामी की संपत्ति है, अतः सूद सिद्ध नहीं होता। इसी तरह मुफावज़ा और अ़नान साझेदारी के दो भागीदारों के बीच भी सूद नहीं होता, जैसा कि अल-हिदाया, अल-दुर्र और अन्य उज्ज्वल पुस्तकों में है। उर्दू: मालिक और उसके गुलाम के बीच कोई सूद नहीं होता क्योंकि गुलाम और जो कुछ उसके कब्जे में हो वह मालिक की मिल्कियत होता है, अतः सूद सिद्ध नहीं होता। इसी प्रकार मुफावज़ा और अ़नान कंपनी के दो भागीदारों के बीच भी सूद नहीं होता जैसा कि हिदाया और दुर्र-ए-मुख्तार आदि रोशन किताबों में है।(त)

दुर्र-ए-मुख्तार में है:

1 अल-हिदाया, बाब अल-रिबा, युसुफी प्रेस, लखनऊ 3/87 2 दुर्र-ए-मुख्तार, किताब अल-बुयूअ़, बाब अल-रिबा, मुज्तबाई प्रेस, दिल्ली 2/43

الجواب: سود حرام قطعی و کبیرہ عظیمہ ہے جس کا لینا کسی حال روا نہیں ہو سکتا مگر حقیقۃً سود لینا ہو یا سود لینے کی نیت کہ ایسا قصد معصیت بھی معصیت ہے اگرچہ فعل واقع میں معصیت نہ ہو جیسے شربت براہ غلط شراب سمجھ کر پینا کہ وہ حقیقۃً حلال سہی پر یہ تو اپنے نزدیک مرتکب گناہ ہوا، اور جہاں نہ حقیقت نہ نیت صرف نام ہی نام ہے وہ بھی بضرورت، تو اسے بالبداہۃ اس معصیت سے کچھ علاقہ نہ رہا کما لا یخفی (جیسا کہ مخفی نہیں۔ت) پس ریاست خواہ غیر ریاست جس شخص پر جس کا کوئی حق عام یا خاص ہو اور وہ بوجھ مجبوری قانون یا کسی وجہ سے اس طور پر وصول نہ ہو سکے مثلاً تمادی عارض ہے یا مدیون منکر اور گواہ نہیں یا گواہ دیئے کچہری نہ مانی ڈسمس کردی یا کسی نے کچھ رقمیں خلاف شرع اس سے لیں اور یہ انہیں واپس لینے پر قادر نہیں جیسے بنئے نے سود، قاضی نے رشوت وغیرہ ہما اور وہ دوسرے طریقہ ناجائز شرعی کے نام سے ملتا ہو کہ اس میں ممانعت قانونی و غیر موانع نہ ہوں تو اس طریقہ ناجائز کے نام کو صرف اس مقدار تک جہاں تک اس کا حق ہے ذریعہ وصول بنانا جبکہ کسی امر ممنوع کی طرف منجر نہ ہو اور قصد و نیت میں اپنا حق لینا ہو نہ اس طریقہ ممنوعہ کا مرتکب ہونا، شرعاً جائز ہے کہ اس صورت میں نہ اس امر ناجائز کی حقیقت نہ اس کی نیت نہ قانونی ممانعت جس سے دنیوی تحفظ کیا جائے رہا وغیرہ امور محرمہ کے معانی رہا و محرمات ہیں، نہ مجرد الفاظ بے معنی، ولذا علماء فرماتے ہیں:

لا ربابين المولى وعبده لان العبد ومافي يده ملك لمولاه فلا يتحقق الربا وكذا لاربا بين شريكى المفاوضة وكذا العنان كما في الهداية والدر وغيرهما من الاسفار الغر۔ | مالک اور اس کے غلام کے درمیان کوئی سود نہیں ہوتا کیونکہ غلام اور جو کچھ اس کے قبضہ میں ہو وہ مالک کی ملک ہوتا

ہے لہذا سود متحقق نہیں ہوتا اسی طرح شرکت مفاوضہ اور شرکت عنان کے دو شریکوں کے درمیان بھی سود نہیں ہوتا جیسا کہ ہدایہ اور درمختار وغیرہ روشن کتابوں میں ہے۔(ت)

در مختار میں ہے:

1 الھدایۃ باب الربوا مطبع یوسفی لکھنو ۳/ ۸۷ 2 درمختار کتاب البیوع باب الربا مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۴۳

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

The principle is that when something is due from one aspect and it reaches the person entitled to it through another aspect, it will be considered as having reached through the entitled aspect, provided it reached the entitled person from the one who owed it. (T)

To the extent that scholars have allowed the acquisition of permissible property (mubah), in which no prior established right existed, through methods that are otherwise prohibited like interest (riba) and gambling (qimar), provided that the method was employed with the consent of the property owner, i.e., it is free from treachery and deception.

As the jurists (fuqaha) have explicitly stated regarding the interest of a 'Mustamin' (a Muslim granted safe passage in a non-Muslim land) and the gambling of a prisoner. It is mentioned in 'Radd al-Muhtar' citing 'Siyar al-Kabir' and its commentary: When a Muslim enters 'Dar al-Harb' (abode of war) with safe passage, there is no harm in him taking their property with their heartfelt consent by whatever means, because he has taken permissible property in a way that is free from treachery. Therefore, it is lawful for him. The prisoner and the 'Mustamin' are equal, to the extent that if one of them sold one dirham for two dirhams, or sold a carcass for some dirhams, or took their property through gambling, all of that is lawful for him. Summary from 'Radd al-Muhtar'. (T)

And the fact that the Leader of the Believers, the Imam of the Pious, our master Siddiq-e-Akbar (may Allah be pleased with him) obtained property from the disbelievers of Makkah through a wager with the permission of the Radiant Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him), even though such a wager is not legally permissible according to Shariah, is a clear proof.

1. Durr-e-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Bay' al-Fasid, Mujtabai Press Delhi, 2/28
2. Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Riba, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/188 Page 310 of 715

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

नियम यह है कि जो चीज़ एक पहलू (जिहत) से देय हो, जब वह हकदार व्यक्ति को दूसरे पहलू से पहुँचे, तो उसे हकदार पहलू से ही पहुँचा हुआ माना जाएगा, बशर्ते कि वह देनदार की ओर से हकदार को मिली हो। (त)

यहाँ तक कि विद्वानों ने जायज़ (मुबाह) संपत्ति की प्राप्ति, जिसमें पहले से कोई अधिकार स्थापित न हो, उन तरीकों से भी जायज़ रखी है जो सामान्यतः वर्जित हैं जैसे ब्याज (रिबा) और जुआ (किमार), बशर्ते कि वह तरीका संपत्ति के मालिक की सहमति से अपनाया गया हो, यानी वह धोखे और छल से मुक्त हो।

जैसा कि फ़कीहों (कानूनविदों) ने मुस्तमिन (वह मुस्लिम जिसे गैर-मुस्लिम देश में सुरक्षा मिली हो) के ब्याज और कैदी के जुए के बारे में स्पष्ट किया है। रद-अल-मुह्तार में सियार-ए-कबीर और उसकी व्याख्या के हवाले से उल्लेख है: जब कोई मुसलमान सुरक्षा लेकर दार-अल-हर्ब (युद्ध क्षेत्र) में प्रवेश करता है, तो इसमें कोई बुराई नहीं है कि वह उनकी संपत्ति उनकी सहमति से किसी भी तरह ले ले, क्योंकि उसने जायज़ संपत्ति ऐसे तरीके से ली है जो धोखे से पाक है, इसलिए यह उसके लिए हलाल (वैध) है। कैदी और मुस्तमिन बराबर हैं, यहाँ तक कि अगर किसी ने उनमें से एक दिरहम को दो दिरहम के बदले बेचा, या मरे हुए जानवर को कुछ दिरहम के बदले बेचा, या जुए के ज़रिए उनकी संपत्ति ले ली, तो यह सब उसके लिए हलाल है। सारांश। (त)

और अमीर-उल-मोमिनीन, इमाम-उल-मुत्तकीन, हमारे आका सिद्दीक़-ए-अकबर (रज़ियल्लाहु अन्हु) का मक्का के काफ़िरों से हुज़ूर पुरनूर सैय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की इजाज़त से शर्त (बाजी) के नाम पर धन प्राप्त करना, जबकि ऐसी शर्त शरीयत में जायज़ नहीं है, एक स्पष्ट प्रमाण है।

1. दुर्रे मुख़्तार, किताब अल-बुयू, बाब अल-बैय अल-फ़ासिद, मुजतबाई प्रेस दिल्ली, 2/28
2. रद अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू, बाब अर-रिबा, दार इह्या अत-तुराथ अल-अरबी बेरूत, 4/188 पेज 310 / 715

الاصل ان المستحق بجهة اذا وصل الی المستحق بجهة اخری اعتبر واصلا بجهة مستحقه ان وصل الیه من المستحق علیه ۱ - قاعدہ یہ ہے کہ جو چیز ایک جہت سے مستحق ہو جب وہ شخص مستحق کو پہنچے دوسری جہت سے تو وہ جہت مستحقہ سے واصل سمجھی جائے گی بشرطیکہ وہ مستحق علیہ کی طرف سے مستحق کو پہنچی ہو (ت)

یہاں تک کہ علماء نے تحصیل مال مباح جس میں پہلے سے اس کا کوئی حق مستقر نہیں بحیلہ نام طرق ممنوعہ مثل ربوا و قمار و غیر ہما جائز رکھی بشرطیکہ وہ طریقہ صاحب مال کی رضامندی سے برتا گیا یعنی غدر سے پاک وجدا ہو ،

کما نصوا علیه في ربا المستامن و مقامرة الاسیر في ردالمحتار عن السیر الکبیر و شرحہ اذا دخل المسلم دار الحرب بامان فلا بأس بأن یأخذ منهم اموالهم بطیب انفسهم بای وجہ کان لانه انما اخذ المباح علی وجہ عری عن الغدر فیکون طیباً له والاسیر و المستأمن سواء حتی لو باعهم درهماً بدرهمین او میتة بدراهم او اخذ مالاً منهم بطریق القمار فذالك کله طیب له ۲ اه ملخصاً- جیسا کہ فقہاء نے مستامن کے سود اور قیدی کے جوا کے بارے میں اس پر نص فرمائی ہے، ردالمحتار میں سیر کبیر اور اس کی شرح کے حوالے سے مذکور ہے جب کوئی مسلمان امان لے کر دارالحرب میں داخل ہو تو اس میں کوئی حرج نہیں کہ وہ حربیوں کا مال ان کی رضامندی سے کسی بھی طریقے سے لے کیونکہ اس نے مال مباح ایسے طریقے سے لیا جو کہ دھوکہ سے خالی ہے لہذا یہ اس کے لئے حلال ہے ، قیدی اور مستامن برابر ہیں، یہاں تک کہ اگر کسی نے ان پر دو درہموں کے عوض ایک درہم بیچا یا کچھ درہموں کے عوض مردار بیچا یا جوئے کے ذریعے ان کا مال لے لیا تو یہ سب اس کے لئے حلال ہے اہ تلخیص ۔ (ت)

اور حضرت امیر المومنین امام المتقین سیدنا صدیق اکبر رضی اللہ تعالیٰ عنہ کا کفار مکہ سے بنام شرط باجازت حضور پر نور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم مال حاصل فرمانا حالانکہ شرط شرعاً روا نہیں، دلیل واضح ہے

۱ درمختار کتاب البیوع باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۲۸ ۲ ردالمحتار کتاب البیوع باب الربا دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۸۸ Page 310 of 715

Fatawa Razvia Volume 17

Because a forbidden name does not make a permissible matter forbidden, As stated in al-Fath and others, quoting from al-Mabsut, as evidence for our school of thought in this chapter. (T)

So how can a proven right of revival be prohibited merely because of a name that has no corresponding reality? This is what every jurist knows, and the issue is the 'Issue of Victory' (Mas'alat al-Zafar), which is explicitly mentioned in al-Wahbaniyya, al-Quniyya, al-Durr, and others. (T)

Further clarification of the situation is that the actual ruling is based on realities, not on words. For example, if someone takes what is rightfully theirs from Zaid and names it 'riba' (usury), it does not become riba or forbidden. Or if there are two types of debts, and one person takes a portion of the second debt along with the installments of the first, with the debtor's consent or even in a state of denial without consent, it can never be riba, even if expressed with the word 'riba', because the definition of riba—namely, an excess devoid of consideration entitled by contract (an exchange that is devoid of such increase whose entitlement is through contract. T)—does not apply to it. Yes, if out of ignorance they consider it true riba and commit to taking it with that knowledge, then although they are not guilty of taking usury (because what they took is not usury in the sight of Allah), doing an act with the intention of opposing Sharia will certainly be a separate sin for them, as they are, in their own estimation, violating a divine command. This is why scholars say that if someone looks at a piece of clothing from afar, thinking it is a non-mahram woman, with an evil gaze, they will be a sinner even if in reality it is just empty clothing, because in their own mind, they are proceeding towards disobedience to God. It is stated in Mizan al-Shari'a al-Kubra, Book of Sales, Chapter on what is permissible to sell and what is not:

If a person looks at a piece of clothing placed on a shelf, thinking it is a non-mahram woman, it is forbidden for him. | If someone looked at a piece of clothing kept on a shelf thinking it was an unrelated woman with an evil gaze, then it is forbidden for him (T).

And when neither of these two is present, then as for the mere name, even that is forbidden when used without necessity or need, purely as a joke or play...

1. Mizan al-Kubra, Book of Sales, Chapter on what is permissible to sell and what is not, Mustafa al-Babi, Egypt 2/67 Page 311 of 715

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द सत्रहवीं (१७)

चूँकि एक नाजायज़ नाम किसी जायज़ काम को नाजायज़ नहीं बना देता, जैसा कि 'अल-फ़तह' आदि में 'अल-मबसूत' के हवाले से इस बारे में हमारे मज़हब की दलील के तौर पर बयान किया गया है। (त)

तो पुनर्जीवन (Revival) का एक साबित हक़ सिर्फ़ एक बेबुनियाद नाम की वजह से कैसे वर्जित (Prohibited) हो सकता है? यह वह बात है जिसे हर फ़क़ीह (विधिवेत्ता) जानता है, और यह मसला 'मसला-ए-ज़फ़र' (Issue of Victory) है, जिसका उल्लेख वहबनिया, क़ुनिया, और दर आदि में स्पष्ट रूप से किया गया है। (त)

स्थिति की और स्पष्टता यह है कि वास्तविक आदेश हक़ीक़त पर आधारित होता है न कि शब्दों पर। उदाहरण के लिए, यदि कोई व्यक्ति ज़ैद से अपना हक़ वसूल करता है और उसे 'रिबा' (ब्याज) का नाम देता है, तो वह रिबा या हराम नहीं हो जाएगा। या दो तरह के ऋण हों और ऋणदाता की सहमति से या इनकार की स्थिति में बिना सहमति के पहले ऋण की किश्तों के साथ दूसरे ऋण का भी एक हिस्सा वसूल किया जाए, तो वह भी कभी रिबा नहीं हो सकता, भले ही उसे 'रिबा' शब्द से व्यक्त किया जाए, क्योंकि रिबा की हक़ीक़त - यानी अनुबंध (Contract) के माध्यम से हकदार ऐसा लाभ जो किसी प्रतिफल (Consideration) से मुक्त हो (वह प्रतिफल जो ऐसी वृद्धि से खाली हो जिसकी हकदारी अनुबंध के माध्यम से हो। त) - इस पर खरी नहीं उतरती। हाँ, यदि कोई अपनी अज्ञानता के कारण इसे वास्तविक रिबा समझे और यही जानकर इसे लेने का दोषी हो, तो भले ही उस पर सूद लेने का गुनाह न हो (क्योंकि जो उसने लिया वह अल्लाह के नज़दीक सूद नहीं है), लेकिन शरीयत के विरोध के इरादे से कोई कार्य करना निश्चित रूप से उसके हक़ में एक अलग गुनाह होगा, क्योंकि वह अपनी समझ में ईश्वरीय आदेश का उल्लंघन कर रहा है। इसीलिए विद्वान कहते हैं कि यदि कोई दूर से किसी कपड़े को पराई स्त्री समझकर बुरी नज़र से देखेगा, तो वह गुनहगार होगा, भले ही वास्तव में वह केवल एक कपड़ा हो, क्योंकि वह अपनी ओर से ईश्वर की अवज्ञा करने का प्रयास कर रहा है। 'मीज़ान अल-शरिया अल-कुबरा', 'किताबुल बयू', 'अध्याय: क्या बेचना जायज़ है और क्या नहीं' में लिखा है:

यदि कोई व्यक्ति किसी ताक (shelf) में रखे कपड़े को पराई स्त्री समझकर उसे देखता है, तो यह उसके लिए हराम है। | अगर किसी इंसान ने ताक में रखे हुए कपड़े को अजनबी औरत समझकर नज़र-ए-बद (बुरी नज़र) से देखा तो यह उसके लिए हराम है। (त)

और जब ये दोनों (इरादा और हक़ीक़त) न हों, तो रहा केवल नाम, तो वह भी बिना किसी ज़रूरत और हाजत के, महज़ खेल-कूद और मज़ाक़ के तौर पर वर्जित है...

---

1. मीज़ान अल-कुबरा, किताबुल बयू, बाब मा यजूजु बीउहु व मा ला यजूजु, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, २/६७ पेज ३११ / ७१५

کہ نام ناجائز امرِ جائز کو ناجائز نہیں کر دیتا، کما افادہ فی الفتح وغیرہ نقلا عن المبسوط مستد لالمذھبنا فی ھذا الباب۔ | جیسا کہ مبسوط سے نقل کرتے ہوئے فتح وغیرہ میں اس کا فائدہ دیا ہے اس باب میں ہمارے مذہب سے استدلال کرتے ہوئے۔ (ت)

توا حیائے حق ثابت مجرد کسی اسمِ بے مسمّٰی کے باعث کیونکر ممنوع ہو سکتا ہے، ھذا ما یعرفہ کل فقیہ والمسئلۃ مسئلۃ الظفر المنصوص علیہا فی الوھبانیۃ والقنیۃ والدر و غیرہا۔ | یہ وہ ہے جس کو ہر فقیہ جانتا ہے اور مسئلہ تو مسئلۂ ظفر ہے جس پر وہبانیہ، قنیہ اور در وغیرہ میں نص کی گئی ہے (ت)

زیادت ایضاح مقام یہ ہے کہ اصل حکم حقائق پر ہے نہ کہ الفاظ پر، مثلاً اگر کوئی شخص زید سے اپنا آتا ہوا لے اور اس کا نام ربا رکھے تو وہ ربا یا حرام نہ ہو جائے گا یا دو قسم کے قرض ہوں ایک کی قسطوں کے ساتھ دوسرے کا بھی ایک حصہ برضائے مدیون خواہ بحالت انکار بلا رضائے لیا کرے تو وہ بھی ہر گز ربا نہیں ہو سکتا اگرچہ بلفظ ربا تعبیر کرے کہ حقیقت ربا یعنی فضل خالی عن العوض مستحق بالعقد (وہ عوض جو ایسی زیادتی سے خالی ہو جس کا استحقاق بذریعہ عقد ہو۔ت) اس پر صادق نہیں، ہاں اگر یہ اپنی جہالت سے اسے حقیقت ربا سمجھے اور یہی جان کر اس کے لینے کا مرتکب ہو تو اگرچہ سود لینے کا اس پر گناہ نہیں کہ جو اس نے لیا وہ سود عند اللہ نہیں مگر بقصدِ مخالفِت شرع کسی فعل کا کرنا ضرور اس کے حق میں معصیت جدا گانہ ہو گا کہ یہ تو اپنے زعم میں حکم الہی کا خلاف ہی کر رہا ہے، ولذا علماء فرماتے ہیں اگر دور سے کسی کپڑے کو زن اجنبیہ سمجھ کر بہ نگاہِ بد اس کی طرف نظر کرے گا گنہگار ہو گا

اگرچہ واقع میں وہ خالی کپڑا ہے کہ یہ تو اپنے نزدیک نافرمانی خدا پر اقدام کر رہا ہے، میزان الشریعۃ الکبری کتاب البیوع باب ما یجوز بیعه و ما لا یجوز میں ہے:

لو نظر انسان الی ثوب موضوع فی طاق علی ظن انه امرأة اجنبیة فأنه یحرم علیه1۔ | اگر کسی انسان نے طاق میں رکھے ہوئے کپڑے کو اجنبی عورت سمجھ کر نظر بد سے دیکھا تو یہ اس کے لئے حرام ہے (ت)

اور جب یہ دونوں نہ ہوں تو رہا نر ا نام ، تو وہ بھی جب بے ضرورت وحاجت محض بطور لہو ولعب وہزل

---

1 میزان الکبری کتاب البیوع باب ما یجوز بیعه و ما لا یجوز مصطفی البابي مصر ۲/ ۶۷ صفحہ

Fatawa Ridawiyya Volume (17)

It should be considered disliked (makruh) to call one's wife 'mother' or 'sister', as by simply naming her so, she does not actually become his mother or sister. "Their mothers are only those who gave birth to them." (1) (Quran 58:2) - They are not their mothers except those who gave birth to them. (T) There is absolutely no accountability regarding intimacy with her, as she does not become forbidden (haram) to him by saying this. Abu Dawud narrated in his Sunan from Abu Tamimah al-Hujaymi that a man said to his wife, 'O my sister.' The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said, 'Is she your sister?' He disliked this statement and forbade it. (2) It is stated in Al-Fath al-Qadir: The Hadith signifies that this statement does not constitute Zihar (a specific form of divorce), as no ruling other than dislike and prohibition was mentioned. (3) (T)

Yes, the only flaw would be that he described a permissible and lawful thing with a forbidden name without any necessity or benefit, As Allah Almighty said: "And indeed, they utter an objectionable statement and a falsehood." (4) (Quran 58:2) - As Allah Almighty said: And indeed, they say a bad thing and a lie. (T)

However, if there is a benefit/wisdom behind it, then even this flaw will not remain, Like the statement of our master Ibrahim (peace be upon our noble Prophet and upon him and upon all other Prophets, best of blessings) regarding our lady Sarah (may Allah be pleased with her).

---

1 Al-Quran Al-Karim 2/58 2 Sunan Abu Dawud, Book of Divorce, Chapter regarding a man saying to his wife 'O my sister', Aftab-e-Alam Press Lahore 1/301 3 Fath al-Qadir, Chapter on Zihar, Maktaba Nooria Razvia Sukkur 2/91 4 Al-Quran Al-Karim 2/58

अपनी पत्नी को माँ या बहन कहना मकरूह (नापसंद) होना चाहिए, क्योंकि उसे ऐसा कहने मात्र से वह वास्तव में उसकी माँ या बहन नहीं बन जाएगी। "उनकी माताएँ केवल वही हैं जिन्होंने उन्हें जन्म दिया है।" (१) (क़ुरआन ५८:२) - उनकी माताएँ वही हैं जिन्होंने उन्हें जना है। (त) न ही उसके साथ सहवास में कोई जवाबदेही है, क्योंकि ऐसा कहने से वह उस पर हराम (वर्जित) नहीं होगी। अबू दाऊद ने अपनी सुनन में अबू तमीमा अल-हुजैमी से रिवायत किया कि एक व्यक्ति ने अपनी पत्नी से कहा, 'ऐ मेरी बहन।' अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया, 'क्या वह तुम्हारी बहन है?' आपने उसकी इस बात को नापसंद किया और इससे मना किया। (२) 'फ़तह' में कहा गया है कि हदीस इस बात का फ़ायदा देती है कि यह कथन 'ज़िहार' (एक प्रकार का तलाक़) नहीं है, क्योंकि इसमें नापसंदगी और मनाही के अलावा कोई और हुक्म बयान नहीं किया गया है। (३) (त)

हाँ, केवल इतनी बुराई होगी कि उसने बिना किसी ज़रूरत या भलाई के एक जायज़ और हलाल चीज़ को हराम नाम से पुकारा, जैसा कि अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "और बेशक वे एक बुरी और झूठी बात कहते हैं।" (४) (क़ुरआन ५८:२) - जैसा कि अल्लाह तआला ने फ़रमाया: और बेशक वे बुरी बात और झूठ कहते हैं। (त)

फिर अगर कोई भलाई या हिकमत हो, तो यह बुराई भी नहीं रहेगी, जैसे कि हमारे आका इब्राहीम (हमारे आदरणीय नबी पर और उन पर और सभी नबियों पर सबसे अच्छी रहमत हो) का हज़रत सारा (रज़ियल्लाहु अन्हा) के बारे में फ़रमाना।

---

१ अल-क़ुरआन अल-करीम २/५८ २ सुनन अबू दाऊद, किताब-उत-तलाक, बाब: एक आदमी अपनी पत्नी को 'ऐ मेरी बहन' कहता है, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस लाहौर १/३०१ ३ फ़तह अल-क़दीर, बाब अज़-ज़िहार, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर २/९१ ४ अल-क़ुरआन अल-करीम २/५८

ہو مکروہ ہونا چاہئے جیسے اپنی عورت کو ماں یا بہن کہنا کہ اس کا نام رکھنے سے نہ وہ حقیقتۃً اس کی ماں بہن ہو جائے گی، "اِنْ اُمَّهٰتُهُمْ اِلَّا الّٰٓيْ وَلَدْنَهُمْ ط" ۱ نہیں ہیں ان کی مائیں مگر وہ جنہوں نے ان کو جنا۔ (ت) نہ اس کی مقاربت میں اس پر اصلاً کوئی مواخذہ کہ اس کہنے سے وہ اس پر حرام نہ ہوگی، ابوداؤد فی سننہ عن ابی تمیمة الهجیمی ان رجلا قال لامرأته یا اختی فقال رسول الله صلی الله تعالٰی علیہ وسلم اختك هی فکره ذلک ونهی عنہ ۲، قال فی الفتح الحدیث افادکونہ لیس ظهارا حیث لم یبین فیہ حکماسوی الکراهة والنهی ۳۔ امام ابوداؤد نے اپنی سنن میں ابو تمیمہ ہجیمی سے روایت کیا کہ ایک مرد نے اپنی بیوی کو کہا کہ اے میری بہن، تو رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا کیا یہ تیری بہن ہے، آپ نے اس کی اس بات کو ناپسند جانا اور اس سے منع فرمایا۔ فتح میں کہا کہ حدیث اس قول کے ظہار نہ ہونے کا فائدہ دیتی ہے کیونکہ اس میں ناپسندیدگی اور ممانعت کے سوا کوئی حکم بیان نہیں کیا گیا۔ (ت)

ہاں صرف اتنی قباحت ہوگی کہ اس نے بے کسی ضرورت و مصلحت کے ایک جائز حلال شے کو حرام نام سے تعبیر کیا، کما قال اللہ تعالٰی "وَاِنَّهُمْ لَيَقُوْلُوْنَ مُنْكَرًا مِّنَ الْقَوْلِ وَزُوْرًا ط" ۴۔ جیسا کہ اللہ تعالٰی نے فرمایا: اور بیشک وہ بری بات اور جھوٹ کہتے ہیں۔ (ت)

پھر اگر مصلحت ہو تو یہ قباحت بھی نہ رہے گی، کقول سیدنا ابراهیم علی نبینا الکریم وعلیہ وعلی سائر الانبیاء افضل الصلوة جیسا کہ سیدنا حضرت سارہ رضی اللہ تعالٰی عنہا کے بارے میں سیدنا حضرت ابراہیم کا فرمانا۔

۱ القرآن الکریم ۲/۵۸ ۲ سنن ابوداؤد کتاب الطلاق باب فی الرجل یقول لامراتہ یا اختی آفتاب عالم پریس لاہور ۱/۳۰۱ ۳ فتح القدیر باب الظہار مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲/۹۱ ۴ القرآن الکریم ۲/۵۸

Fatawa Razawiya (Volume 17)

[Arabic]: And the submission [regarding] our lady Sarah (may Allah Almighty be pleased with her) that "She is my sister." (1) [Urdu]: Indeed, she is my sister; may the best blessings and peace be upon our Noble Prophet, Prophet Ibrahim, and all the Noble Prophets. (T)

Then, the scholars here did not consider only the expediency of taking the permissible as valid, rather the expediency of reviving rights and removing injustices is clearly greater and more complete than that. And hypothetically, even if there were no such expediency, there is fundamentally no doubt in the lawfulness and purity of this wealth.

[Arabic]: As you have known, and indeed the generality of their saying "There is no usury between the master and his slave, nor between two partners of Mufawadha and Inan" includes it, as is not hidden. [Urdu]: As you have already known, and the research into this general statement of the jurists includes that there is no usury between a master and a slave, and between two partners of Mufawadha and Inan, as it is not hidden. (T)

And from here it becomes clear that in this issue, it is not necessary that the person from whom [the wealth] is taken be a belligerent infidel (Harbi) or that the place of taking be the Abode of War (Dar al-Harb), as witnessed by the issues of the master and partners. (As the issues of the master and partners are witnesses to this. T) Only the negation of reality and intent remains. It is required that after this, there be no commission of a forbidden act in the sight of Allah, nor any step taken in opposition to Shariah in one's own perception. The reason scholars mentioned the condition of Dar al-Harb in the issue of the Harbi is to exclude the musta'min (one granted safe conduct), as his wealth is no longer permissible. It is stated in Radd al-Muhtar:

[Arabic]: His statement "Then, i.e., in the Abode of War": He restricted it with this because if he entered our land with safe conduct and a Muslim sold him one dirham for two dirhams, it is impermissible by consensus. Reported by 'Ta' from Miskeen (2). [Urdu]: The statement of the text "there, meaning Dar al-Harb": this restriction is because if a Harbi entered our country with safe conduct, and then some Muslim sold him one dirham for two dirhams, it is impermissible by consensus. 'Ta' quoted from Miskeen. (T)

In Hidaya, it is stated: [Arabic]: There is no usury between a Muslim and a Harbi in the Abode of War, unlike the musta'min from among them because his wealth... [Urdu]: There is no usury between a Muslim and a Harbi in the Abode of War, unlike a Harbi musta'min because...

---

1. Al-Durr al-Manthur, by Abu Ya'la from Abu Sa'id under the verse "Rather, their leader did it," publications of Maktaba Ayatollah al-Uzma, Qum, Iran, 4/321.
2. Radd al-Muhtar, Book of Sales, Chapter on Usury, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/188.

फतावा रज़विया (जिल्द 17)

[अरबी]: और हमारी सैयदा सारा (अल्लाह ताला उनसे खुश हो) के बारे में यह तस्लीम (मानना) कि 'वह मेरी बहन है'। (1) [उर्दू]: कि वास्तव में यह मेरी बहन है, हमारे नबी करीम, हज़रत इब्राहिम और सभी नबियों पर बेहतरीन दुरूद और सलाम हो। (त)

फिर विद्वानों ने तो यहाँ जायज़ (मुबाह) लेने की मसलहत (भलाई) को ही विश्वसनीय माना है, न कि हक़ जीवित करने और ज़ुल्म मिटाने की मसलहत, जो कि ज़ाहिर तौर पर इससे कहीं अधिक और पूर्ण है। और फर्ज़ करें कि अगर कोई मसलहत न भी होती, तो भी इस माल की हलालियत और पवित्रता में कोई संदेह नहीं होता।

[अरबी]: जैसा कि आप जानते हैं, और वास्तव में फुक़हा (धर्मशास्त्रियों) के इस आम कथन की तहक़ीक़ कि 'मालिक और उसके गुलाम के बीच, और मुफावज़ा और इनान के दो साझेदारों के बीच कोई सूद (ब्याज) नहीं है', इसे भी शामिल करती है, जैसा कि छिपा नहीं है। [उर्दू]: जैसा कि आप जान चुके हैं, और फुक़हा के इस कथन का विस्तार इसे भी शामिल करता है कि मालिक और गुलाम के बीच, और मुफावज़ा और इनान के दो साझेदारों के बीच कोई सूद नहीं है जैसा कि छिपा नहीं है। (त)

और यहीं से स्पष्ट हो गया कि इस मसले में जिससे लिया जा रहा है, उसका काफिर हर्बी होना या लेने की जगह का दारुल हर्ब होना ज़रूरी नहीं है, जैसा कि मालिक और साझेदारों के मसले इस पर गवाह हैं। (जैसा कि मालिक और साझेदारों के मसले इस पर गवाह हैं। त) केवल वास्तविकता और इरादे का अभाव ही रह गया। इसकी आवश्यकता है कि इसके बाद न तो अल्लाह के यहाँ हराम का काम हो और न ही अपने विचार में शरीअत के विरोध में कोई कदम उठाया जाए। विद्वानों ने जो हर्बी के मसले में दारुल हर्ब की शर्त का ज़िक्र किया है, उसका उद्देश्य मुस्तामिन (जिसे सुरक्षा दी गई हो) को बाहर करना है, क्योंकि उसका माल मुबाह नहीं रहा। रद-उल-मुहतार में है:

[अरबी]: उनका कथन 'फिर, यानी दारुल हर्ब में': उन्होंने इसे इस शर्त के साथ बांधा है क्योंकि अगर वह हमारे देश में अमान (सुरक्षा) लेकर दाखिल हुआ और फिर किसी मुसलमान ने उसे एक दिरहम के बदले दो दिरहम बेचे, तो यह सर्वसम्मति से जायज़ नहीं है। 'त' ने मिस्कीन से नकल किया (2)। [उर्दू]: मूल पाठ का कथन 'वहाँ यानी दारुल हर्ब': यह शर्त इसलिए है कि अगर कोई हर्बी हमारे देश

में अमान लेकर दाखिल हुआ, फिर किसी मुसलमान ने उसके हाथ एक दिरहम दो दिरहमों के बदले बेचा, तो सर्वसम्मति से नाजायज़ है। 'त' ने मिस्कीन से उद्धृत किया। (त)

हिदाया में है: [अरबी]: मुसलमान और हर्बी के बीच दारुल हर्ब में कोई सूद नहीं है, उनके मुस्तामिन के विपरीत क्योंकि उसका माल... [उर्दू]: मुसलमान और हर्बी के बीच दारुल हर्ब में कोई सूद नहीं है, हर्बी मुस्तामिन के विपरीत क्योंकि...

---

1. अल-दुर्र अल-मनसूर, अबू याला के हवाले से, अबू सईद से, आयत "बल्कि उनके बड़े ने किया" के तहत, मकतबा आयतुल्ला अल-उज़मा, कुम, ईरान, 4/321।
2. रद-उल-मुहतार, किताब अल-बुयू, बाब अर-रिबा, दार इह्या अत-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 4/188।

والتسلیم لسیدتنا سارۃ رضی اللہ تعالٰی عنہا انھا اختي - 1 کہ بیشک یہ میری بہن ہے، ہمارے نبی کریم، حضرت ابراہیم اور تمام انبیاء کرام پر بہترین دور و سلام ہو۔ (ت)

پھر علماء نے تو یہاں مصلحت اخذ مباح تک معتبر رکھی نہ کہ مصلحت احیائے حق وازالہ مظالم کے بالبداہتہ اس سے ازید واتم ہے اور بالفرض کوئی مصلحت نہ بھی ہوتا ہم اس مال کے حل و طیب میں اصلاً شک نہیں،

کما علمت وقد انظمہ اطلاق قولھم لاربا بین المولی وعبدہ ولا بین شریکي المفاوضۃ والعنان کما لا یخفی۔ جیسا کہ تو جان چکا ہے، اور تحقیق فقہاء کے اس قول کا اطلاق اس کو شامل ہے کہ مالک و غلام کے درمیان اور مفاوضہ و عنان کے دو شریکوں کے درمیان کوئی سود نہیں جیسا کہ پوشیدہ نہیں۔ (ت)

اور یہیں سے ظاہر ہو گیا کہ اس مسئلہ میں ماخوذ منہ کا کافر حربی خواہ محل اخذ کا دارالحرب ہونا ضرور نہیں کما تشھد بہ مسائل المولی والشرکاء (جیسا کہ مالک اور شریکوں کے مسئلے اس پر گواہ ہیں۔ ت) صرف انتفائے حقیقت و قصد رہا، درکار ہے کہ اس کے بعد نہ عنداللہ ارتکاب حرام نہ اپنے زعم میں مخالفت شرع پر اقدام، علماء نے کہ مسئلہ حربی میں قید دارالحرب ذکر فرمائی اس کا منشاء اخراج مستامن ہے کہ اس کا مال مباح نہ رہا۔ رد المحتار میں ہے:

قولہ ثم ای فی دار الحرب قید بہ لانہ دخل دار نا بامان فباع منہ مسلم درھما بدرھمین لایجوز اتفاقا ط عن المسکین 2۔ متن کا قول "وہاں یعنی دارالحرب، یہ قید اس لئے کہ اگر کوئی حربی ہمارے ملک

میں امان لے کر داخل ہوا پھر کسی مسلمان نے اس کے ہاتھ ایک درہم دو درہموں کے عوض فروخت کیا تو بالاتفاق ناجائز ہے ط نے مسکین سے نقل کیا۔ (ت)

ہدایہ میں ہے: لاربا بین المسلم والحربی فی دار الحرب بخلاف المستامن منھم لان مالہ مسلمان اور حربی کے درمیان دارالحرب میں کوئی سود نہیں بخلاف حربی مستامن کے کیونکہ

---

1 الدر المنثور بحولہ ابو یعلی عن ابی سعید تحت آیت بل فعلہ کبیرھم منشورات مکتبہ آیۃ العظمٰی قم ایران ۴ / ۳۲۱ 2 ردالمحتار کتاب البیوع باب الربا دار احیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۱۸۸

Fatawa Razawiya (Volume 17)

It became prohibited due to the contract of security (Aman). [Summary (T)]

In Fath al-Qadir, it is detailed as follows:

The general texts regarding prohibited wealth state that it is only forbidden for a Muslim to take the wealth of a belligerent enemy (Harbi) if it is through treachery. If it is taken without treachery, by whatever means it was obtained, it is lawful for him, provided it was with the consent of that enemy. This is unlike an enemy who has been granted security (Musta'man) in the Abode of Islam, because their wealth has become prohibited due to the security. Therefore, if it is taken by any means other than the prescribed one, it would be treachery. (T)

In summary, the reality of usury (Riba) is manifested in prohibited wealth as you have just heard (T), and the wealth belonging to creditors and victims of injustice is prohibited if it is of the same kind as the right, as is the case in most scattered instances, then by consensus, otherwise according to the issued fatwa due to the corruption of times.

In Durr al-Mukhtar, it is stated:

A claimant does not have the right to take anything other than the kind of their right, while Imam Shafi'i (may Allah have mercy on him) has permitted it, and there is more scope in that. (T)

In Radd al-Muhtar, it is stated:

His statement "and Imam Shafi'i permitted it": We have previously mentioned in the Book of Hajar (Legal Incapacity) that the non-permissibility was in their time, but today the fatwa is on permissibility. And in it, from the Book of Hajar... The statement from the text that "Imam Shafi'i permitted it," we have already explained in the Book of Hajar that non-permissibility was in their time, but today the fatwa is on permissibility, and similarly in the Book of Hajar.

---

1 Al-Hidaya, Book of Sales, Chapter on Usury, Yusufi Press, Lucknow, 3/87. 2 Fath al-Qadir, Chapter on Usury, Maktaba Nooria Razavia, Sukkur, 6/178. 3 Durr al-Mukhtar, Book of Prohibition and Permission, Section on Sales, Mujtabai Press, Delhi, 2/253. 4 Radd al-Muhtar, Book of Prohibition and Permission, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 5/271.

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

सुरक्षा (अमान) के अनुबंध के कारण वह धन प्रतिबंधित हो गया। [सारांश (त)]

फ़तह अल-क़दीर में विस्तार से है:

प्रतिबंधित धन के बारे में सामान्य ग्रंथों का अर्थ यह है कि एक मुसलमान के लिए किसी युद्धरत शत्रु (हरबी) का धन लेना केवल तभी हराम है जब वह धोखे से लिया जाए। यदि उसने बिना धोखे के लिया हो, चाहे वह किसी भी तरीके से लिया गया हो, तो वह उसके लिए हलाल है बशर्ते वह उस शत्रु की सहमति से लिया गया हो। इसके विपरीत, दारुल इस्लाम में सुरक्षा प्राप्त (मुस्तअमन) शत्रु के लिए, क्योंकि उसका धन सुरक्षा के कारण प्रतिबंधित हो गया है, इसलिए यदि उसे निर्धारित तरीके के अलावा लिया गया तो वह धोखा होगा। (त)

संक्षेप में, सूद (रिबा) की वास्तविकता प्रतिबंधित धन में प्रकट होती है जैसा कि आपने अभी सुना (त), और लेनदारों और अन्याय के शिकार लोगों का धन यदि वह अधिकार के समान प्रकार का हो, जैसा कि अधिकांश बिखरे हुए मामलों में होता है, तो सर्वसम्मति से, अन्यथा समय के भ्रष्टाचार के कारण जारी किए गए फतवे के अनुसार प्रतिबंधित है।

दुर्र अल-मुख्तार में है:

अधिकार रखने वाले के लिए यह उचित नहीं है कि वह अपने अधिकार के प्रकार के अलावा कुछ और ले, जबकि इमाम शाफ़ई (रहमतुल्लाह अलैह) ने इसे जायज़ करार दिया है और इसमें अधिक गुंजाइश है। (त)

रद्द अल-मुह्तार में है:

उनका कथन 'और इमाम शाफ़ई ने इसे जायज़ ठहराया': हमने पहले 'किताब अल-हज्र' (कानूनी अक्षमता) में उल्लेख किया है कि गैर-जवाज़ उनके समय में था, लेकिन आज फतवा जवाज़ (अनुमति) पर है। और इसमें 'किताब अल-हज्र' से... मूल पाठ का यह कथन कि 'इमाम शाफ़ई ने इसे जायज़ करार दिया है', हम किताब अल-हज्र में बयान कर चुके हैं कि गैर-जवाज़ उनके ज़माने में था लेकिन आज कल फ़तवा जवाज़ पर है, और इसी में किताब अल-हज्र।

---

1 अल-हिदाया, किताब अल-बुयू, बाब अर-रिबा, यूसुफ़ी प्रेस, लखनऊ, 3/87। 2 फ़तह अल-क़दीर, बाब अर-रिबा, मकतबा नूरिय्या रज़विया, सुक्कुर, 6/178। 3 दुर्रे मुख्तार, किताब अल-हज़र वल इबाहा, फ़स्ल फ़िल बैय्य, मुज्तबाई प्रेस, दिल्ली, 2/253। 4 रद्द अल-मुह्तार, किताब अल-हज़र वल इबाहा, दार इह्या अत-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 5/271।

فتادی رضویہ (جلد ہفدہم ۱۷)

صار محظورا بعقد الامان اھ ملخصا عقدامان کی وجہ سے اس کا مال ممنوع ہو گیا اھ تلخیص (ت)

فتح القدیر میں مبسوط سے ہے :

اطلاق النصوص فی المال المحظور وانما یحرم علی المسلم اذا کان بطریق الغدر فاذا لم یأخذ غدر فبأی طریق اخذہ حل بعد کونہ برضا بخلاف المستأمن منھم عندنا لان مالہ صار محظورا بالامان فاذا اخذہ بغیر الطریق المشروعۃ یکون غدرا نصوص کا اطلاق ممنوع مال میں ہے حربی کا مال مسلمان پر صرف اس صورت میں حرام ہوتا ہے جب وہ دھوکے سے لے ، چنانچہ جب اس نے دھوکہ کے بغیر لیا چاہے جس طریقے سے لیا ہو تو اس کے لئے حلال ہے بشرطیکہ اس حربی کی رضامندی سے لیا ہو۔ بخلاف حربی مستأمن کے دار الاسلام میں کیونکہ اس کا مال امان کی وجہ سے ممنوع ہو گیا لہٰذا اسکو اگر جائز طریقے کے علاوہ لیا ہو تو دھوکہ ہوگا۔ (ت)

بالجملہ حقیقت ربا اموال محظورہ میں تحقق ہوتی ہے کما سمعت انفا (جیسا کہ تو نے ابھی سنا ہے ۔ ت) اور مال اصحاب دیون و مظالم بقدر دیون و مظالم محظور اگر جنس حق سے ہو جیسا کہ اکثر صور منتشرہ میں ہے تو بالاجماع ور نہ علی المفتی بہ لفساد الزمان،

در مختار میں ہے :

لیس لذی الحق ان یأخذ غیر جنس حقہ وجوزہ الشافعی وھو الاوسع صاحب حق کے لئے روا نہیں کہ اپنے حق کی جنس کا غیر لے جبکہ امام شافعی رحمۃ اللہ تعالٰی علیہ نے اس کو جائز قرار دیا اور اس میں زیادہ وسعت ہے (ت)

رد المحتار میں ہے :

قولہ وجوزہ الشافعی قدمنا فی کتاب الحجر ان عدم الجواز کان فی زمانھم اما الیوم فالفتوی علی الجواز اھ وفیہ من کتاب الحجر متن کا قول کہ "امام شافعی نے اس کو جائز قرار دیا" ہم اس کو کتاب الحجر میں بیان کر چکے ہیں کہ عدم جواز انکے زمانے میں تھا لیکن آج کل فتویٰ جواز پر ہے اھ ، اور اسی میں کتاب الحجر

---

1 الہدایہ کتاب البیوع باب الربا مطبع یوسفی لکھنو ۳ / ۸۷ 2 فتح القدیر باب الربا مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۱۷۸ 3 درمختار کتاب الحظر والاباحۃ فصل فی البیع مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۲۵۳ 4 ردالمحتار کتاب الحظر والاباحۃ دار احیاء التراث العربی بیروت ۵ / ۲۷۱

صفحہ 715 کا 314

Fatawa Ridawiyya, Volume 17

It is narrated from Allama Hamwi, from Allama Maqdisi, from his grandfather Jamal Al-Ashqar, from Imam Al-Akhasib, that he said in the commentary of 'Al-Quduri': "Verily, the prohibition of taking from a different kind of property was in their time due to their compliance with rights. Today, the fatwa (legal ruling) is on the permissibility of taking it whenever one is able to, from any property whatsoever, especially in our cities because of their constant disobedience."

In 'Tanwir al-Absar' it is stated: "Whoever has a right in the public treasury (Bayt al-Mal) and happens upon property belonging to it, it is permissible for him to take it as a matter of conscience (diyanatan)."

In 'Durr-al-Mukhtar' it is stated: "The depositary (one with whom a trust is kept) may spend the deposit on himself or on other expenditures if the owner of the deposit has died and has no heir."

In 'Radd-al-Muhtar' it is stated: "From the commentary of 'Al-Wahbaniyah' on the authority of 'Al-Bazzaziyah' from Imam Al-Halwani: Because if he were to give it to the public treasury, it would be wasted because they [are corrupt/negligent]."

1 Radd-al-Muhtar, Kitab al-Hajr, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 5/95. 2 Durr-al-Mukhtar, Sharh Tanwir al-Absar, Kitab Masail Shattá, Mujtabai Delhi, 2/433. 3 Durr-al-Mukhtar, Sharh Tanwir al-Absar, Kitab al-Zakat, Bab al-Ushr, Mujtabai Delhi, 1/140.

फतावा रज़विया, जिल्द 17

अल्लामा हमवी से वर्णित है, उन्होंने अल्लामा मक़दसी से, उन्होंने अपने दादा जमाल अल-अशक़र से, उन्होंने इमाम अल-अख़सब से उद्धृत किया है कि उन्होंने 'शरह अल-क़ुदूरी' में कहा: "वास्तव में, भिन्न प्रकार की संपत्ति से हक लेने की मनाही उनके समय में अधिकारों के पालन की वजह से थी। जबकि आज फतवा इसके जायज़ होने पर है कि जब भी किसी भी माल से लेने में सक्षम हों, विशेष रूप से हमारे शहरों में उनकी निरंतर अवज्ञा के कारण।"

'तन्वीर अल-अबसार' में है: "जिसका बैतुल-माल (सार्वजनिक कोष) में अधिकार हो और उसे बैतुल-माल की कोई संपत्ति मिल जाए, तो उसके लिए इसे लेना धार्मिक रूप से (दियानतन) जायज़ है।"

'दुर्र-ए-मुख़्तार' में है: "जिसके पास अमानत (वदीअत) रखी गई है, वह उस अमानत को स्वयं पर या अन्य खर्चों में इस्तेमाल कर सकता है, यदि अमानत रखने वाले की मृत्यु हो गई हो और उसका कोई वारिस न हो।"

'रद्द-अल-मुह्तार' में है: "शरह अल-वहबानिया में 'अल-बज़्ज़ाज़िया' के हवाले से इमाम अल-हलवानी से वर्णित है: क्योंकि यदि उसने वह अमानत बैतुल-माल को दे दी, तो वह नष्ट हो जाएगी क्योंकि वे [अक्षम/भ्रष्ट] हैं।"

1 रद्द-अल-मुह्तार, किताबुल हज्र, दार इह्या अत-तुरास अल-अरबी, बेरूत, 5/95 2 दुर्रे मुख़्तार शरह तन्वीरुल अबसार किताब मसाइले शत्ता मुज्तबाई दिल्ली 2/433 3 दुर्रे मुख़्तार शरह तन्वीरुल अबसार किताबुज़ ज़कात बाबुल उश्र मुज्तबाई दिल्ली 1/140 पृष्ठ 315 / 715

عن العلامة الحموي عن العلامة المقدسي عن جده الجمال الاشقر عن الامام الاخصب انه قال في شرح القدوری ان عدم جواز الاخذ من خلاف الجنس كان في زمانهم لمطاوعتهم في الحقوق والفتوی اليوم علی جواز الاخذ عند القدرة من ای مال كان لاسيما في ديارنا لمداومتهم العقوق ۱ھ میں علامہ حموی سے منقول ہے انہوں نے علامہ مقدسی سے انہوں نے اپنے دادا جمال اشقر سے انہوں نے امام اخصب سے نقل کیا انہوں نے شرح قدوری میں کہا کہ تحقیق غیر جنس سے حق لینے کا عدم جواز ان کے زمانے میں تھا حقوق میں ان کی پاسداری کی وجہ سے جبکہ آج کل فتوٰی جواز پر ہے جب کسی بھی مال سے لینے پر قادر ہو خصوصاً ہمارے شہروں میں بسبب ان کی دائمی نافرمانی کے اھ(ت)

تنویر الابصار میں ہے: من له حظ في بيت المال ظفر بما وجد لبيت المال فله اخذه ديانة۔ جس کا بیت المال میں حق ہو اور اس نے بیت المال کا مال پایا دیانت کے اعتبار سے اس کو لینا جائز ہے۔(ت)

درمختار میں ہے: وللمودع صرف وديعة مات ربها ولا وارث لنفسه او غيره من المصارف۔ جس کے پاس ودیعت رکھی گئی ہے وہ ودیعت کو اپنی ذات یا دیگر مصارف میں صرف کرسکتا ہے جبکہ ودیعت رکھنے والا فوت ہوگیا ہو اور اس کا کوئی وارث نہ ہو۔ (ت)

ردالمختار میں ہے: عن شرح الوهبانية عن البزازية عن الامام الحلواني لانه لو اعطاها لبيت المال لضاع لانهم شرح وہبانیہ میں بحوالہ بزازیہ امام حلوانی سے منقول ہے، اس لئے کہ اگر اس نے ودیعت بیت المال کو دے دی تو وہ ضائع ہو جائیگی۔

1 ردالمختار کتاب الحجر دار احیاء التراث العربی بیروت ۵/ ۹۵ 2 درمختار شرح تنویر الابصار کتاب مسائل شتی مجتبائی دہلی ۲/ ۴۳۳ 3 درمختار شرح تنویر الابصار کتاب الزکوۃ باب العشر مجتبائی دہلی ۱/ ۱۴۰ Page 315 of 715

Fatawa Razawiyyah Volume 17

[Arabic Box] They do not spend it on appropriate avenues, so if one is among the eligible recipients, they may spend it on themselves. If they are not among the eligible recipients, they should spend it on other valid recipients. (Translator's end note) [Urdu Translation in Box] Because those in charge of the public treasury (Bait-ul-Mal) do not spend on legitimate avenues. Therefore, if someone is themselves an eligible recipient, they should spend it on themselves. And if they are not among the eligible recipients, they should spend it on another legitimate avenue. (Translator's note)

From these explanations, it has become well-cleared that, God forbid, our noble Imams (may Allah be pleased with them) have never permitted usury (ribba) under any circumstances. This is merely a fabrication by non-conformists (Ghair-Muqallidun). Rather, in instances where permissibility is ruled, the reason is that it is not usury at all; it is about obtaining one's right or some permissible (mubah) wealth through a lawful means, even if that person, out of necessity or expediency, has termed it otherwise. This is why scholars state "La Riba" (There is no usury. - Translator's note) in these matters, not "La Yuhillu al-Riba" (Usury is not forbidden/is permissible. - Translator's note). We seek Allah's refuge from such a thought.

Supplement: Although it has been clarified from our previous discourse that the negation of ribba between a Muslim and a non-Muslim combatant (Harbi) in the Land of War (Dar-ul-Harb) is based on the lack of protection (of property) and the existence of permissibility, not because of the lack of sanctity of the territory. However, to further clarify this point for added benefit, I say: And with Allah is success. (So I say, and success is from Allah Almighty alone. - Translator's note). If by this it is meant that the prohibition of forbidden things was due to the sanctity of the place, and since in Dar-ul-Harb this sanctity is absent and prohibition is absent, and therefore usurpation and usury are permissible and a cause of ownership there, then this is patently false. Divine commands are not contingent upon one land over another, nor can a difference in land make a forbidden thing permissible.

[Arabic Box] For all servants belong to Allah, all lands belong to Allah, judgment belongs to Allah, and sovereignty belongs to Allah. "Blessed is He who sent down the Criterion upon His Servant that he may be to the worlds a warner." [25:1] And Allah Almighty said: "And wherever you may be, turn your faces..." [Urdu Translation in Box] Because all servants and cities belong to Allah Almighty; authority and kingdom

belong to Allah Almighty. Blessed is He who revealed the book that distinguishes between truth and falsehood to His servant so that he might be a warner to all the worlds. And Allah Almighty said: "And wherever you are, [turn] your..."

---

1. Radd al-Muhtar, Book of Zakat, Chapter on 'Ushr, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/56.
2. The Holy Quran, 25/1.

फतावा रज़विया खंड 17

[अरबी बॉक्स] वे उचित मार्गों पर खर्च नहीं करते हैं, इसलिए यदि कोई पात्र प्राप्तकर्ताओं में से है, तो वे इसे स्वयं पर खर्च कर सकते हैं। यदि नहीं, तो उन्हें इसे अन्य वैध प्राप्तकर्ताओं पर खर्च करना चाहिए। (त) [उर्दू अनुवाद बॉक्स में] क्योंकि बैतुल-माल (सार्वजनिक खजाना) के अधिकारी वैध मदों में खर्च नहीं करते हैं। इसलिए, यदि कोई स्वयं पात्र प्राप्तकर्ताओं में से है, तो वह इसे अपनी जात पर खर्च करे। और यदि वह स्वयं पात्र प्राप्तकर्ताओं में से नहीं है, तो वह इसे किसी अन्य वैध मद में खर्च करे। (त)

इन व्याख्याओं से यह खूब स्पष्ट हो गया है कि, खुदा न करे, हमारे महान इमामों (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) ने कभी भी किसी भी स्थिति में सूद (रिबा) को हलाल (वैध) नहीं ठहराया है। यह गैर-मुक़ल्लिदों (अनुयायियों का पालन न करने वालों) का निरा मनगढ़ंत आरोप है। बल्कि उन स्थितियों में जहाँ अनुमति का नियम है, उसका कारण यह है कि वह सूद है ही नहीं; वह अपने हक या किसी जायज़ (मुबाह) माल को किसी वैध ज़रिये से हासिल करना है, चाहे मजबूरी या ज़रूरत के तहत उस व्यक्ति ने इसे किसी और शब्द से व्यक्त किया हो। इसीलिए विद्वान इन मसलों में "ला रबा" (कोई सूद नहीं है। - अनुवादक का नोट) कहते हैं, न कि "ला युहिल्लु अल-रिबा" (सूद हलाल है। - अनुवादक का नोट)। अल्लाह तआला की पनाह।

अनुपूरक: हालाँकि हमारी पिछली चर्चा से यह स्पष्ट हो गया है कि दार-उल-हर्ब (युद्ध की भूमि) में मुसलमान और हर्बी (गैर-मुस्लिम शत्रु) के बीच सूद का निषेध इस आधार पर है कि वहाँ (शत्रु की) संपत्ति की सुरक्षा नहीं है और वह मुबाह (अनुमेय) है, न कि इस आधार पर कि भूमि की पवित्रता समाप्त हो गई है। लेकिन हम इस बिंदु को और अधिक स्पष्ट करने के लिए कहते हैं: "व बिल्लाहित-तौफीक" (अतः मैं कहता हूँ और अल्लाह तआला ही से सफलता है। - अनुवादक का नोट)। अगर इससे यह मतलब है कि हराम चीज़ों की मनाही स्थान की पवित्रता के कारण थी और दार-उल-हर्ब में चूँकि यह पवित्रता गायब है और मनाही भी खत्म हो गई है, इसलिए वहाँ गसब (छीनना) और सूद हलाल है और स्वामित्व का कारण बनता है, तो यह स्पष्ट रूप से गलत है। ईश्वरीय आदेश एक देश के बजाय दूसरे देश पर निर्भर नहीं करते, और न ही ज़मीन का अंतर किसी हराम चीज़ को हलाल कर सकता है।

[अरबी बॉक्स] क्योंकि सभी बंदे अल्लाह के हैं, सभी देश अल्लाह के हैं, फैसला अल्लाह का है और बादशाहत अल्लाह की है। "बड़ी बरकत वाला है वह जिसने अपने बंदे पर 'फ़ुर्क़ान' (सत्य-असत्य में भेद करने वाली पुस्तक) उतारा ताकि वह दुनिया वालों के लिए सचेत करने वाला हो।" [25:1] और अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "और तुम जहाँ कहीं भी हो, अपने चेहरे फेर लो..." [उर्दू अनुवाद बॉक्स में] क्योंकि तमाम बंदे और शहर अल्लाह तआला के हैं, हुक्म और बादशाहत अल्लाह तआला की है, बरकत वाला वह है जिसने हक़ और बातिल में फर्क करने वाली किताब अपने बंदे पर नाज़िल फ़रमाई ताकि वह तमाम जहानों के लिए डर सुनाने वाला हो जाए, और अल्लाह तआला ने फ़रमाया: और जहाँ कहीं तुम हो अपने...

---

1. रद अल-मुह्तार, ज़कात की किताब, 'उश्र' का अध्याय, दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 2/56।
2. अल-कुरान अल-करीम, 25/1।

पृष्ठ 316/715

فتاوٰی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

[Arabic Box] لا یصر فون مصارفہ فإذا کان من اھلہ صرفہ الی نفسہ وان لم یکن من المصارف صرفہ الی المصرف اھ [Urdu Translation in Box] کیونکہ بیت المال والے مصارف میں خرچ نہیں کرتے لہٰذا اگر وہ خود مصارف میں سے ہے تو اپنی ذات پر صرف کرے اور اگر وہ خود مصارف میں سے نہیں ہے تو کسی اور مصرف میں خرچ کرے اھ (ت)

ان تقریروں سے خوب روشن ہوگیا کہ حاش للہ ہمارے ائمہ کرام رضی اللہ تعالٰی عنہم نے ہر گز کسی صورت ربا کو حلال نہ ٹھہرایا یہ غیر مقلدوں کا محض افتراء ہے بلکہ ان مواقع میں کہ حکم جواز ہے وجہ یہ کہ وہ ربا ہی نہیں اپنا حق یا کوئی مال مباح ایک ذریعہ جائز سے حاصل کرنا ہے اگرچہ بضرورت و مصلحت اس شخص نے اسے کسی لفظ سے تعبیر کیا ہو، ولذا علماء ان مسائل میں لاربا (کوئی سود نہیں ت) فرماتے ہیں نہ لایحل الربا (سود حلال ہے ت) والعیاذ باللہ تعالٰی۔

تتمیم : اگرچہ ہمارے کلام سابق سے متبین ہوا کہ مسلم و حربی میں دار الحرب میں نفیِ ربا بر بنائے انتفائے عصمت ووجودِ اباحت ہے نہ بربنائے انتفائے شرف دار مگر ہم تتمیم فائدہ کو اس مطلب کی مزید توضیح کرتے ہیں فاقول: وباللہ التوفیق (پس میں کہتا ہوں اور اللہ تعالٰی ہی سے توفیق ہے ت) اگر اس سے یہ مقصود کہ تحریمِ محرمات بوجہ شرف دار تھی دار الحرب میں کہ یہ شرف مفقود وحرمت مفقود، ولہٰذا وہاں غصب و ربا حلال و موجب ملک ہے تو بداہۃً باطل، احکام الہیہ دار دون دار (ایک ملک سوائے دوسرے ملک کے ت) پر موقوف نہیں، نہ اختلاف زمین کسی حرام شیی کو حلال کرسکتا ہے،

[Arabic Box] فان العباد للہ والبلاد للہ والحکم للہ والملک للہ۔ "تَبٰرَكَ الَّذِیْ نَزَّلَ الْفُرْقَانَ عَلٰی عَبْدِهٖ لِیَكُوْنَ لِلْعٰلَمِیْنَ نَذِیْرًا ۙ(۱)" 2. وقال اللہ تعالٰی: "وَ حَیْثُ مَا كُنْتُمْ فَوَلُّوْا وُجُوْهَكُمْ" [Urdu

Translation in Box] کیونکہ تمام بندے اور شہر اللہ تعالیٰ کے ہیں، حکم اور بادشاہی اللہ تعالیٰ کی ہے، برکت والا وہ ہے جس نے حق و باطل میں فرق کرنیوالی کتاب اپنے بندے پر نازل فرمائی تاکہ وہ تمام جہانوں کے لئے ڈر سنانے والا ہوجائے، اور اللہ تعالیٰ نے فرمایا: اور جہاں کہیں تم ہو اپنے

---

1. رد المحتار کتاب الزکوۃ باب العشر دار احیاء التراث العربی بیروت ۲/ ۵۶
2. القرآن الکریم ۱/ ۲۵

Fatawa Razviya (Volume 17)

| "...its direction"[1] "And kill them wherever you overtake them"[2]. And the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "The earth has been made a mosque and a place of purification for me, so whenever the time of prayer comes for any man of my Ummah, let him pray (wherever he may be)." (T) | Turn your faces towards the Masjid al-Haram. And Allah the Almighty said: Kill them wherever you find them. And the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said that the earth has been made a mosque and a purifier for me, so when the time of prayer comes for a person from my Ummah, he should pray (wherever he is). (T) |

Even to the extent that in the reliable school of thought, the disbelievers themselves are addressed by the subsidiary matters (of Islamic law).

| Even in acts of worship, in performance and belief, they will be punished for omitting the performance as well, because of the saying of Allah the Almighty: "They will say, 'We were not of those who prayed...'" up to the saying of Allah the Almighty: "...and we used to deny the Day of Judgment."[4] (T) | Even to the extent that in terms of the performance and belief of acts of worship, they will be punished for leaving the performance as well, based on the evidence of Allah the Almighty's command that those disbelievers will say, "We were not among those who prayed" (hence we are in torment), up to Allah the Almighty's command "and we used to deny the day of judgment." (T) |

Ultimately, treachery in the Abode of War (Dar al-Harb) is forbidden by consensus, and likewise adultery, because permissibility does not apply to sexual intercourse (because permissibility does not run in private parts. T). It is quoted in *Fath al-Qadir* from *Al-Mabsut* after the mentioned text:

| And contrary to adultery, if it is compared to usury, because the vulva (sexual organ) is not made permissible by mere permission, but through a specific method. As for property, it becomes permissible due to the heart's pleasure and permission.[5] | Contrary to adultery if it is compared to usury, because the private part is not made permissible by mere permissibility, but by a special method (marriage). As for wealth, it becomes permissible by giving it with goodwill and by permission. (T) |

1. Al-Quran al-Kareem 2/144
2. Al-Quran al-Kareem 2/191 and 2/91

3. Al-Sunan al-Kubra by al-Bayhaqi, Book of Prayer, Chapter: Wherever the prayer catches you, Dar Sader Beirut 2/433
4. Al-Quran al-Kareem 74/43 to 46
5. Fath al-Qadir, Chapter of Usury, Maktaba Nooria Razvia Sukkur 6/178

फ़तावा-ए-रजविया (जिल्द 17)

| "...उसकी ओर"[1] "और उन्हें जहाँ भी पाओ, मार डालो"[2]। और नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "मेरे लिए ज़मीन को मस्जिद और पाक करने वाली बना दिया गया है, इसलिए मेरी उम्मत के किसी भी व्यक्ति के लिए जब नमाज़ का वक़्त हो जाए, तो वह नमाज़ पढ़ ले (जहाँ भी हो)।" (त) | अपने चेहरों को मस्जिद-ए-हराम की तरफ फेर लो। और अल्लाह तआला ने फ़रमाया: उन्हें जहाँ कहीं पाओ कत्ल करो। और रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया कि मेरे लिए ज़मीन को मस्जिद और पाक करने वाली बना दिया गया है, इसलिए मेरी उम्मत के किसी व्यक्ति पर जब नमाज़ का वक़्त हो जाए तो नमाज़ पढ़ ले (जहाँ भी हो)। (त) |

यहाँ तक कि विश्वसनीय मत के अनुसार, काफ़िर स्वयं भी शरीयत के गौण मामलों (फुरू) के संबोधन के पात्र हैं।

| यहाँ तक कि इबादतों की अदायगी और विश्वास के आधार पर भी, उन्हें अदायगी छोड़ने पर भी सज़ा दी जाएगी, अल्लाह तआला के इस कथन के प्रमाण के साथ कि काफ़िर कहेंगे, "हम नमाज़ पढ़ने वालों में से नहीं थे..." अल्लाह तआला के इरशाद "और हम क़यामत के दिन को झुठलाते थे"[4] तक। (त) | यहाँ तक कि इबादतों की अदायगी और अकीदे के एतबार से, चुनांचे अदायगी छोड़ने पर भी उन्हें अज़ाब दिया जाएगा अल्लाह तआला के इस इरशाद की दलील से कि वो काफ़िर कहेंगे हम नमाज़ी नहीं थे (इसलिए अज़ाब में मुब्तला हैं) अल्लाह तआला के इरशाद "और हम कयामत के दिन को झुठलाते थे" तक (त) |

अंतत; दारुल हर्ब (युद्ध क्षेत्र) में धोखा देना सर्वसम्मति से हराम है, इसी तरह ज़िना (व्यभिचार) भी, क्योंकि यौन अंगों (शर्मगाहों) के मामले में सामान्य अनुमति (इबाहत) प्रभावी नहीं होती। 'फ़तह' में 'मबसूत' से उपरोक्त इबारत के बाद उद्धृत है:

| और ज़िना के विपरीत, यदि इसकी तुलना सूद (ब्याज) से की जाए, क्योंकि फ़र्ज (शर्मगाह) सामान्य अनुमति से वैध नहीं होती, बल्कि एक विशेष तरीके से होती है। जहाँ तक धन (माल) का सवाल है, वह स्वेच्छा से देने और अनुमति से वैध हो जाता है।[5] | बख़िलाफ़ ज़िना के अगर इसको सूद पर

कियास किया जाए क्योंकि फ़र्ज (शर्मगाह) इबाहत से मुबाह नहीं होती बल्कि खास तरीके(निकाह) से, रहा माल तो वो खुशदिली से देने के सबब से और इबाहत से मुबाह हो जाता है (त) |

1. अल-क़ुरान अल-करीम 2/144
2. अल-क़ुरान अल-करीम 2/191 और 2/91
3. अस-सुनन अल-कुबरा लिल-बैहक़ी, किताबुस-सलात, बाब: जहाँ कहीं नमाज़ का वक़्त आ जाए, दार सादर बैरूत 2/433
4. अल-क़ुरान अल-करीम 74/43 से 46
5. फ़तहुल क़दीर, बाबुल रिबा, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर 6/178

पृष्ठ 317/715

| "شَطْرَہٗ" 1 "وَاقْتُلُوھُمْ حَیْثُ ثَقِفْتُمُوھُمْ" 2 وقال صلی اللہ تعالی علیہ وسلم جعلت لی الارض مسجدا و طھورا فایما رجل من امتی ادرکتہ الصلاۃ فلیصل 3۔ | چہروں کو مسجد حرام کی طرف پھیر لو۔ اور اللہ تعالٰی نے فرمایا: ان کو قتل کرو جہاں کہیں ان کو پاؤ۔ اور رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا کہ میرے لئے زمین کو مسجد اور پاک کرنیوالی بنا دیا گیا ہے چنانچہ میری امت کے کسی شخص پر جب نماز کا وقت ہو جائے تو نماز پڑھے (جہاں بھی ہو)۔ (ت) |

یہاں تک کہ مذہب معتمد میں کفار خود بھی مخاطب بالفروع ہیں

| حتی العبادات اداء واعتقادا فیعذبون علی ترک الاداء ایضا، لقولہ تعالی قالوا لم نک من المصلین الی قولہ تعالی و کنا نکذب بیوم الدین 4۔ | یہاں تک کہ عبادات کی ادائیگی اور اعتقاد کے اعتبار سے چنانچہ ادائیگی چھوڑنے پر بھی ان کو عذاب دیا جائے گا بدلیل اللہ تعالٰی کے اس ارشاد کے کہ وہ کفار کہیں گے ہم نمازی نہیں تھے (اس لئے عذاب میں مبتلا ہیں) اللہ تعالٰی کے ارشاد "اور ہم قیامت کے دن کو جھٹلاتے تھے" تک (ت) |

آخر دارالحرب میں غدر بالا جماع حرام یونہی زنا لعدم جریان الاباحۃ فی الابضاع (کیونکہ شرمگاہوں میں اباحت جاری نہیں ہوتی۔ت) فتح میں مبسوط سے بعد عبارت مذکورہ منقول،

| و بخلاف الزنا ان قیس علی الربا لان البضع لا یستباح بالاباحۃ بل بالطریق الخاص اما المال فیباح بطیب النفس بہ واباحتہ 5۔ | بخلاف زنا کے اگر اس کو سود پر قیاس کیا جائے کیونکہ فرج (شرمگاہ) اباحت سے مباح نہیں ہوتی بلکہ خاص طریقے (نکاح) سے، رہا مال تو وہ خوشدلی سے دینے کے سبب سے اور اباحت سے مباح ہو جاتا ہے (ت) |

1 القرآن الکریم ۲/ ۱۴۴ 2 القرآن الکریم ۲/ ۱۹۱ و ۲/ ۹۱ 3 السنن الکبری للبیهقی کتاب الصلوة باب اینما ادرکتك الصلوة دار صادر بیروت ۲/ ۴۳۳ 4 القرآن الکریم ۷۴/ ۴۳ تا ۴۶ 5 فتح القدیر باب الربا مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶/ ۱۷۸

Fatawa Razawiyya Volume 17

Therefore, a contract of interest (riba) with a Muslim Mustamin (one granted safety) is absolutely forbidden, even if the honor of the territory is negated, due to the existence of protection (al-Ismah). And it is permissible with a non-migrating Muslim because of the absence of protection (al-Ismah). It is stated in Al-Durr al-Mukhtar:

[Arabic]: The ruling for one who accepted Islam in Dar al-Harb (the territory of war) and did not migrate is like that of a Harbi (enemy combatant). Thus, it is permissible for a Muslim to take interest from him, contrary to the view of the two companions (Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad), because his property is not protected. If he migrated to us and then returned to them, there is no interest by consensus. (Al-Jauhara).

[Urdu]: The person who brought Islam in Dar al-Harb and did not migrate, his ruling is that of a Harbi, meaning a Muslim can take interest from him. This is contrary to the view of the Sahiban (the two companions), because his property is not protected. If he migrated to our side, i.e., to Dar al-Islam, and then returned to their side, i.e., to Dar al-Harb, then by consensus there is no interest (meaning interest is not permissible). (Al-Jauhara).

Thus, every land and spot is certainly a place for the execution of the divine commands of Allah, the Exalted and Almighty. Yes, judicial rulings (ahkam al-qada) are not enforced in Dar al-Harb, and even in Dar al-Baghy (the territory of rebellion), due to the severance of authority (wilayah). Their non-enforcement does not mean that the inherent permissibility or prohibition (hallat and hurmat) within themselves change. Therefore, where the scholars have denied the judicial ruling (hukm al-qada), they have simultaneously affirmed the religious ruling (hukm al-diyanah).

[Arabic]: In Al-Durr (al-Mukhtar): If a Harbi made a Mustamin his debtor or vice versa, or if one of them usurped the property of the other and they both came to us, we shall not adjudicate anything for anyone. A fatwa will be given to the Muslim to return the usurped property as a matter of religious obligation (diyanah), not judicially (qada), because it is a deception. The same applies to two Harbis who did that and then became Mustamins based on what we have explained. (Summarized).

[Urdu]: In Al-Durr al-Mukhtar, it says: A Harbi made a Mustamin his debtor or vice versa, meaning a Muslim Mustamin made a Harbi his debtor, or one of them usurped the property of the other and both came to our side, i.e., Dar al-Islam, then we will

not pass a judgment for either of them for anything. A fatwa will be given to the Muslim to return the usurped property as a matter of religious obligation, not judicially, because non-payment of debt is a deception. And the same ruling applies to those two Harbis who committed the mentioned act and then (after entering Dar al-Islam) became Mustamins, due to the same reasoning we have explained. (Summarized).

It is stated in Tabyin al-Haqa'iq:

[Arabic]: Because judicial adjudication (al-qada) requires authority (al-wilayah) and relies upon it.

[Urdu]: Because adjudication (qada) requires authority (wilayah) and is based upon it.

Footnotes: 1. Al-Durr al-Mukhtar, Chapter of Interest (Riba), Mujtabai Press Delhi, 2/43. 2. Al-Durr al-Mukhtar, Chapter of the Mustamin, Mujtabai Press Delhi, 1/346.

फ़तावा रज़विया जिल्द सत्रह (17)

इसलिए, एक मुस्लिम मुस्तमिन (शरण प्राप्त) के साथ ब्याज का अनुबंध पूर्णतः हराम है, भले ही क्षेत्र की प्रतिष्ठा का अभाव हो, क्योंकि 'अत-इसमत' (सुरक्षा) मौजूद है। और गैर-हिजरती मुस्लिम के साथ हलाल है क्योंकि 'इसमत' का अभाव है। दुर्रे मुख़्तार में है:

[अरबी]: जो व्यक्ति दारुल हर्ब (युद्ध का क्षेत्र) में इस्लाम लाया और हिजरत नहीं की, उसका हुक्म हर्बी वाला है। अत; एक मुसलमान के लिए उससे ब्याज लेना जायज़ है, साहिबैन (इमाम अबू यूसुफ और इमाम मुहम्मद) के विचार के विपरीत, क्योंकि उसका माल 'मासूम' (सुरक्षित) नहीं है। यदि वह हिजरत करके हमारी ओर आ गया और फिर उनकी ओर लौट गया, तो सर्वसम्मति से ब्याज नहीं है। (जौहरा)।

[उर्दू]: जो व्यक्ति दारुल हर्ब में इस्लाम लाया और हिजरत न की, उसका हुक्म हर्बी वाला है, यानी मुसलमान उससे सूद ले सकता है। साहिबैन के विपरीत, क्योंकि उसका माल मासूम नहीं, अगर वह हिजरत करके हमारी तरफ यानी दारुल इस्लाम में आ गया फिर उनकी तरफ यानी दारुल हर्ब में लौट गया तो अब बिल-इत्तेफ़ाक सूद नहीं (यानी सूद जायज़ नहीं)। (जौहरा)।

तो हर ज़मीन और जगह निश्चित रूप से अल्लाह सुभानहु व ताआला के आदेशों के लागू होने का स्थान है। हाँ, दारुल हर्ब, बल्कि दारुल बग़ी (विद्रोह का क्षेत्र) में भी विलायत (अधिकार) के विच्छेद के कारण न्यायपालिका के हुक्म (अहकाम-ए-क़ज़ा) लागू नहीं होते। उनके लागू न होने से उनके स्वयं में हलाल या हराम होने में कोई बदलाव नहीं आ सकता। इसीलिए उलेमा ने जहाँ हुक्म-ए-क़ज़ा का खंडन किया, उसके साथ ही हुक्म-ए-दयानत (धार्मिक कर्तव्य) को साबित किया है।

[अरबी]: दुर्रे मुख़्तार में है: यदि एक हर्बी ने एक मुस्तमिन को अपना ऋणी बनाया या इसके विपरीत, या उनमें से एक ने दूसरे की संपत्ति हड़प ली और वे दोनों हमारे पास आ गए, तो हम किसी के लिए किसी भी चीज़ का फैसला नहीं करेंगे। मुसलमान को हड़पी हुई संपत्ति वापस करने का फ़तवा दयानत (धार्मिकता) के आधार पर दिया जाएगा, न कि क़ज़ा (न्यायिक) के आधार पर, क्योंकि यह एक धोखा है। यही बात उन दो हर्बियों पर भी लागू होती है जिन्होंने ऐसा किया और फिर हमारे बताए गए कारणों के आधार पर मुस्तमिन बन गए। (संक्षेप में)।

[उर्दू]: दुर्रे मुख़्तार में है: हर्बी ने मुस्तमिन को कर्ज़दार किया या इसके बरअक्स यानी मुसलमान मुस्तमिन ने हर्बी को कर्ज़दार किया या उनमें से एक ने दूसरे का माल ग़सब (हड़प) किया और दोनों

हमारी तरफ यानी दारुल इस्लाम में निकल आए तो हम उनमें से किसी के लिए किसी शै का हुक्म नहीं करेंगे। और मुसलमान को रद-ए-मग़सब (हड़पा माल लौटाने) का फ़तवा दिया जाएगा दयानत के एतबार से न कि क़ज़ा के एतबार से, क्योंकि ऋण की अदायगी न करना धोखा है, और यही हुक्म उन दो हर्बियों का है जिन्होंने फेल-ए-मज़कूर किया फिर (दारुल इस्लाम में दाखिल होकर) मुस्तमिन हो गए, उसी दलील की वजह से जिसे हमने बयान किया। (तल्ख़ीस)।

तब्यीनुल हक़ाएक़ में है:

[अरबी]: क्योंकि न्याय (क़ज़ा) विलायत (सत्ता/अधिकार) की माँग करता है और उसी पर आधारित है।

[उर्दू]: क्योंकि क़ज़ा विलायत का तक़ाज़ा करती है और इस पर आधारित है।

पाद-टिप्पणियाँ: 1. दुर्रे मुख़्तार, बाबुल रिबा (ब्याज का अध्याय), मुजतबाई प्रेस दिल्ली, 2/43. 2. दुर्रे मुख़्तार, बाबुल मुस्तमिन (मुस्तमिन का अध्याय), मुजतबाई प्रेस दिल्ली, 1/346.

पृष्ठ 318 का 715

ولہٰذا مسلم مستامن سے عقد رباقطعاً حرام اگرچہ شرف دار منتفی ہے لوجود العصمۃ (عصمت کے پائے جانے کی وجہ سے۔ت) اور مسلم غیر مہاجر سے حلال لانعدام العصمۃ (عصمت کے معدوم ہونے کی وجہ سے۔ت) در مختار میں ہے:

[عربی]: وحکم من اسلم فی دار الحرب ولم یھاجر کحربی فللمسلم الربو معه خلافاً لھما لان ماله غیر معصوم فلوھاجر الینا ثم عاد الیھم فلا ربوباتفاق، جوہرہ 1۔

[اردو]: جو شخص دارالحرب میں اسلام لایا اور ہجرت نہ کی اس کا حکم حربی والا ہے یعنی مسلمان اس سے سود لے سکتا ہے۔ بخلاف صاحبین کے، کیونکہ اس کا مال معصوم نہیں، اگر وہ ہجرت کرکے ہماری طرف یعنی دارالاسلام میں آگیا پھر ان کی طرف یعنی دارالحرب میں لوٹ گیا تو اب بالاتفاق سود نہیں (یعنی سود جائز نہیں) جوہرہ (ت)

تو ہر زمین و بقعہ بالیقین محل جریان احکام الٰہیہ جل وعلا ہے ہاں احکام قضا دارالحرب بلکہ دارالبغی میں بھی بسبب انقطاع ولایت نافذ نہیں ان کے عدم سے حلت و حرمت فی نفسہما مختلف نہیں ہوسکتی، ولہٰذا علماء نے جہاں حکم قضا کی نفی فرمائی اس کے ساتھ ہی حکم دیانت کا اثبات فرمایا،

[عربی]: فی الدرادانہ حربی او بعکسہ او غصب احدھما صاحبہ وخرجا الینا لم نقض لاحد بشیئ و یفتی المسلم برد المغصوب دیانۃ لا قضاء لانہ غدر، وکذا الحکم فی حربیین فعلا ذٰلک ثم استامنا لما بینا اھ 2 ملخصا۔

[اردو]: در مختار میں ہے: حربی نے مستامن کو مدیون کیا یا اس کے برعکس یعنی مسلمان مستامن نے حربی کو مدیون کیا یا ان میں سے ایک نے دوسرے کا مال غصب کیا اور دونوں ہماری طرف یعنی دارالاسلام میں نکل آئے تو ہم ان میں سے کسی کیلئے کسی شے کا حکم نہیں کرینگے اور مسلمان کو رد مغصوب کا فتوٰی دیا جائیگا دیانت کے اعتبار سے نہ کہ قضاء کے اعتبار سے، کیونکہ دین کی عدم ادائیگی دھوکہ ہے، اور یہی حکم ان دو حربیوں کا ہے جنہوں نے فعل مذکور کیا پھر (دارالاسلام میں داخل ہو کر) مستامن ہوگئے اسی دلیل کی وجہ سے جس کو ہم نے بیان کیا اھ تلخیص (ت)

تبیین الحقائق میں ہے:

[عربی]: لان القضاء یستدعی الولایۃ ویعتمدھا

[اردو]: کیونکہ قضاء ولایت کا تقاضا کرتی ہے اور اس پر (مبنی ہے)۔

حواشی: 1 در مختار باب الربا مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۴۳ 2 در مختار باب المستامن مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۳۴۶

Fatawa Razawiya Volume 17

[Arabic Box Text]: There is no jurisdiction at the time of indebting at all, because the judge has no power over the one who is in Dar al-Harb (Abode of War), etc. [Urdu Commentary]: It relies on this, whereas at the time of indebting (making one a debtor), there is no jurisdiction here at all because in this case, the judge has no power over the person who is in Dar al-Harb, etc. (T)

So it is proven that nothing prohibited can become permissible due to the lack of sanctity of the land, and the permissibility of something in Dar al-Harb is its inherent permissibility which does not change with the difference of land. As for the mentioned matters being permissible there, it is not at all based on the premise that these prohibitions are permissible there; rather, the reason is that the reality of these prohibitions is based on protection and restriction, as stated in al-Mabsut as previously mentioned (as it has been explicitly mentioned in al-Mabsut as already passed. T). And since that is absent there, their reality is effectively negated in those forms, even if the bare form and name remain. The ruling is based on reality, not on name and form, as is not hidden (as it is not concealed. T). And if the intended meaning was that the mentioned matters, although not prohibited in reality, are prohibited in Dar al-Islam merely due to the sanctity of the land based on their name and form, then that is certainly false. For fundamentally, the basis of rulings is realities, not a name without the essence (ism bi-la musamma). Otherwise, transactions between a master and slave, or partners in mufawada or 'anan partnerships, where the bare name exists there as well, would never be permissible. Nor would permission be granted in the issue of 'Zafar bil-Haq' (attaining one's right) for taking by force or taking secretly, where the form of usurping (ghasb) and theft (sarqa) is certainly present, though the reality is negated due to the absence of restriction. The permissibility of the form of theft has passed in previous passages, and the permissibility of the form of usurping is this:

[Arabic Box Text]: It is said in al-Durr: The stratagem (hila) for permissibility is that the creditor gives his zakat to his poor debtor, then takes it back from him in exchange for his debt. If the debtor refuses, the creditor may extend his hand and take it, because he is succeeding in obtaining the type of his right. [Urdu Commentary]: In 'al-Durr' it is said: The stratagem for permissibility is that the creditor gives his zakat to his poor debtor, then takes back that same given zakat from him in exchange for the debt. If the debtor creates an obstacle, he should hold his hand and take it by force, because this is achieving success in collecting the type of his right. (T)

In short, these two premises—that Dar al-Harb does not make the prohibited permissible, and Dar al-Islam does not prohibit such a 'name without essence'—are clear and manifest from countless explicit statements. Thus, there is no way to differentiate between land and land in our current discussion. Similarly, differentiating based on the form of usurping, theft, and the name of a 'void contract' (aqd fasid) is impossible. If mere knowledge and the form were prohibited, why wouldn't usurping and theft be prohibited? And if they are not, why would the name of a 'void contract' start making it prohibited? In fact, usurping and theft are more severe and more evil than a void contract, as follows.

---

1 Tabyin al-Haqa'iq, Bab al-Musta'min, Al-Matba'at al-Kubra, Bulaq, Egypt, 3/266. 2 Durr Mukhtar, Kitab al-Zakat, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/130.

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

[अरबी बॉक्स पाठ]: ऋण देते समय कोई अधिकार बिल्कुल नहीं है क्योंकि न्यायाधीश (काज़ी) के पास उस व्यक्ति पर कोई अधिकार नहीं है जो दारुल हर्ब (युद्ध क्षेत्र) में है आदि। [उर्दू विवरण]: यह इस पर निर्भर करता है, जबकि ऋण देते समय यहाँ अधिकार बिल्कुल नहीं है क्योंकि इसमें न्यायाधीश (काज़ी) के पास उस व्यक्ति पर कोई अधिकार नहीं होता जो दारुल हर्ब में है आदि। (त)

अत: यह सिद्ध हुआ कि दारुल हर्ब की पवित्रता न होने के कारण कोई भी हराम वस्तु हलाल नहीं हो सकती। दारुल हर्ब में किसी चीज़ की हलालियत उसकी अपनी वास्तविकता है जो स्थान बदलने से नहीं बदलेगी। रही बात वहाँ वर्णित कार्यों के हलाल होने की, तो वह कतई इस आधार पर नहीं है कि ये निषिद्ध वस्तुएं वहाँ हलाल हैं, बल्कि कारण यह है कि इन निषिद्ध वस्तुओं की वास्तविकता सुरक्षा और प्रतिबंध पर आधारित है, जैसा कि अल-मबसूत में स्पष्ट किया गया है (जैसा कि पहले गुज़र चुका है। त)। और चूंकि वहाँ वह अनुपस्थित है, इसलिए वास्तव में उन रूपों में उनकी हकीकत ही समाप्त हो जाती है, भले ही मात्र रूप और नाम शेष रहे। फैसला हकीकत पर होता है, न कि नाम और रूप पर, जैसा कि छिपा नहीं है (जैसा कि गुप्त नहीं है। त)। और यदि यह उद्देश्य होता कि वर्णित विषय भले ही वास्तव में हराम नहीं हैं, लेकिन दारुल इस्लाम में स्थान की गरिमा के कारण उनका केवल नाम और रूप ही हराम है, तो यह निश्चित रूप से निराधार है। क्योंकि मूल रूप से आदेशों का आधार वास्तविकताएँ हैं, न कि बिना अर्थ का नाम, अन्यथा स्वामी और दास का मामला, या मुफ़ावदा और अनान के साझेदारों का मामला, जहाँ मात्र नाम वहाँ भी मौजूद है, कभी भी जायज़ न होता। और न ही 'ज़फ़र बिल-हक़' के मसले में बलपूर्वक या गुप्त रूप से लेने की अनुमति होती, क्योंकि गसब (छीनना) और चोरी का रूप वहाँ निश्चित रूप से है, हालाँकि हकीकत प्रतिबंध के अभाव के कारण समाप्त है। चोरी के रूप के जायज़ होने की बात पिछली इबारतों में आ चुकी है, और गसब के रूप की हलालियत यह है:

[अरबी बॉक्स पाठ]: दुर्र में कहा गया है: इसके जायज़ होने का हिला (उपाय) यह है कि ऋणदाता अपने गरीब ऋणी को अपनी ज़कात दे, फिर उससे ऋण के बदले में वह ज़कात ले ले। यदि ऋणी इनकार करे, तो ऋणदाता हाथ बढ़ाकर उसे ले ले क्योंकि वह अपने हक की चीज़ प्राप्त करने में सफल हो रहा है। [उर्दू विवरण]: दुर्र में कहा गया है कि इसके जायज़ होने का हिला यह है कि ऋणदाता अपने गरीब ऋणी को अपनी ज़कात दे, फिर उससे ऋण के बदले में वही दी हुई ज़कात

वापस ले ले। यदि ऋणी रुकावट डाले, तो उसका हाथ पकड़े और जबरन ले ले, क्योंकि यह अपने हक की चीज़ को प्राप्त करने में सफलता है। (त)

संक्षेप में, ये दोनों प्रस्ताव कि दारुल हर्ब हराम को हलाल नहीं बनाता और दारुल इस्लाम किसी ऐसे 'बिना अर्थ वाले नाम' को हराम नहीं करता, अनगिनत स्पष्टीकरणों से स्पष्ट हैं। तो हमारे विषय में एक देश और दूसरे देश के बीच अंतर करने का कोई रास्ता नहीं है। इसी तरह, गसब और चोरी के रूप और 'अक़्द-ए-फ़ासिद' (अवैध अनुबंध) के नाम के आधार पर अंतर करना असंभव है। यदि मात्र ज्ञान और रूप हराम होता, तो गसब और चोरी क्यों हराम न होते? और यदि वे हराम नहीं हैं, तो 'अक़्द-ए-फ़ासिद' का नाम क्यों इसे हराम बनाने लगा? बल्कि गसब और चोरी तो अक़्द-ए-फ़ासिद से भी अधिक गंभीर और बुरे हैं, जैसा कि इसके बाद बताया गया है।

---

1 तबयीन अल-हकाइक, बाब अल-मुस्तामिन, अल-मतबअतुल कुबरा, बुलाक़, मिस्र, 3/266 2 दुर्र मुख्तार, किताबुज़ ज़कात, मतबअ मुज्तबाई, दिल्ली, 1/130

فتاوی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

ولا ولایة وقت الادانة اصلا اذ لا قدرة للقاضی فیه علی من هو فی دار الحرب الخ۔ اعتماد کرتی ہے جبکہ ادانت (مدیون بناتے) وقت کی ولایت تو یہاں بالکل نہیں کیونکہ اس میں قاضی کو اس شخص پر قدرت نہیں جو دار الحرب میں ہے الخ (ت)

پس ثابت ہوا کہ کوئی حرام بوجہ انتفائے شرف دار حلال نہیں ہوسکتا اور دار الحرب میں کسی شے کی حلت فی نفسہ اس کی حلت ہے کہ باختلاف دار مختلف نہ ہوگی، رہا وہاں امور مذکورہ کا حلال ہونا وہ ہر گز اس بناء پر نہیں کہ یہ محرمات وہاں حلال ہیں بلکہ وجہ یہ کہ ان محرمات کی حقیقت عصمت و محظوریت پر مبنی کما نص علیہ فی المبسوط کما تقدم (جیسا کہ اس پر مبسوط میں نص کی گئی ہے جیسے گزر چکا ہے۔ت) اور وہ وہاں معدوم تو حقیقۃً ان کی حقیقت ہی ان صورتوں میں منتفی اگرچہ مجرد صورت و اسم باقی ہو اور حکم حقیقت پر ہے نہ کہ اسم و صورت پر کما لا یخفی (جیسا کہ پوشیدہ نہیں۔ت) اور اگر یہ مقصود کہ امور مذکورہ اگر چہ حقیقۃً محرمات نہیں مگر دارالاسلام میں بوجہ شرف دار ان کا صرف نام و صورت ہی حرام ، تاہم بالیقین باطل کہ بدایۃً مدار احکام حقائق ہیں نہ کہ اسم بے مسمیٰ، ورنہ معاملہ مولیٰ و عبد و شرکاء مفاوضہ و شرکاء عنان کہ اسم مجرد وہاں بھی موجود ، ہر گز جائز نہ ہوتا، نہ مسئلہ ظفر بالحق میں اخذ بالجبر و اخذ خفیہ کی اجات ہوتی کہ صورت غصب و سرقہ یقینا ہے گو حقیقت بوجہ عدم محظوریت منتفی صورت سرقہ کا جواز تو عبارات سابقہ میں گزرا اور صورت غصب کی حلت یہ ہے:

قال فی الدر وحیلۃ الجواز ان یعطی مدیونہ الفقیر زکاتہ ثم یاخذها عن دینہ ولو امتنع المدیون مد یدہ واخذها لکونہ ظفر بجنس حقہ۔ در میں کہا جواز کا حیلہ یہ ہے کہ دائن اپنے فقیر مدیون کو اپنی

زکوۃ دے پھر دین کے عوض اس سے وہی دی ہوئی زکوۃ لے لے اگر مدیون رکاوٹ ڈالے تو اسکا ہاتھ پکڑے اور جبر اًلے لے کیونکہ یہ اپنے حق کی جنس وصول کرنے پر کامیابی ہے۔ (ت)

وبالجملہ یہ دونوں مقدمے کہ دار الحرب حرام کو حلال نہیں کرتی اور دار الاسلام کسی ایسے اسم بے مسمیٰ کو حرام نہیں فرماتی، تصریحات بے شمار سے واضح و آشکار ، تو مانحن فیہ میں تفرقہ بین دار و دار کی طرف کوئی سبیل نہیں۔ یونہی صورت غصب و سرقہ و نام عقد فاسد سے فرق ناممکن کہ اگر مجرد العلم و صورت محرم ہو تو غصب و سرقہ کیوں محرم نہ ہوئے اور نہ ہو تو نام عقد فاسد کیوں حرام کرنے لگا بلکہ غصب و سرقہ تو عقد فاسد سے اشد و اخبث ہیں کہ یہ بعد۔

---

1 تبیین الحقائق باب المستامن المطبعۃ الکبریٰ بولاق مصر ۳ / ۲۶۶ 2 در مختار کتاب الزکوۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۱۳۰

Volume 17 (17) Fatawa Razawiya

Possession becomes useful ownership even if it is through foul [means], and it is not originally inherited ownership. This is what I have, and the knowledge of the truth is with my Lord. (This is what is with me, and the knowledge of the truth is with my Lord. - Translator) And Allah the Exalted knows best, and His knowledge, glorified be His majesty, is most complete and most perfect.

Issue 141: From Old City. 29 Rabi-ul-Awwal Sharif 1313 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid borrowed some money from Bakr for a fixed period. At the time of taking the money, there was no mention of interest, etc.; rather, Zaid clearly said, "I am taking it without interest." When returning the money, he added some more money as a favor in return. Are these extra rupees included in interest, or is it according to the Sunnah way, or is it commendable (mustahabb)? Explain and you shall be rewarded.

Answer: Since giving more was neither promised in words nor customary, the meaning of 'riba' (interest/usury) is certainly absent, especially when there is a mention of the negation of riba in words. Rather, it is simply a kind of kindness, generosity, and chivalry, and it is undoubtedly commendable and established by Sunnah.

[Table of Evidence]

Left Column (Arabic Hadith): Due to the Hadith of Sahih al-Bukhari and Sahih Muslim: On the authority of Jabir bin Abdullah Ansari (may Allah be pleased with them both), who said: "I came to the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) and he owed me a debt. He paid me back and gave me extra." (Summarized). And due to their Hadith from Abu Huraira (may Allah be pleased with him), who said: "A man had a claim against the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) for a camel of a certain age. He came to him to demand it. The Prophet said, 'Give it to him.' They looked for a camel of that age but could only find one of a better age..."

Right Column (Urdu Translation/Explanation): Due to the Hadith of Sahih Bukhari and Sahih Muslim: It is narrated from Sayyiduna Hazrat Jabir bin Abdullah Ansari (may Allah be pleased with them both) that he said: "I presented myself in the holy service of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him). I had a loan against you. You paid it back and also bestowed some extra on me." And due to the Hadith of both of them from Sayyiduna Hazrat Abu Huraira (may Allah be pleased with him)

that he said: "A person had a loan of a camel of a certain age against the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him). That person came to the holy presence and began demanding the loan. The Holy Presence (peace and blessings of Allah be upon him) ordered the companions to give him the camel. They searched for a camel of its age but did not find any except one that was of a better age than it..."

---

1 Sahih al-Bukhari, Book of Loans, Chapter: Good Repayment. Qadeemi Kutub Khana Karachi 1/322. Page 320 of 715

जिल्द सत्रहवीं (17) फतावा रज़विया

कब्ज़ा मुफ़ीद मिल्क (उपयोगी स्वामित्व) हो जाता है चाहे वह खबीस (अनुचित) तरीके से हो, और वह मूल रूप से वारिस की मिल्कियत नहीं है। यह वह है जो मेरे पास है और हक़ का इल्म मेरे परवरदिगार के पास है। (त) और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है और उसका इल्म, जिसकी बुज़ुर्गी बुलंद है, सबसे कामिल और सबसे पुख्ता है।

मसला 141: पुराने शहर से। 29 रबीउल अव्वल शरीफ़ 1313 हिजरी। दीनी उलेमा इस मसले के बारे में क्या फ़रमाते हैं कि ज़ैद ने बक्र से एक तयशुदा मुद्दत के लिए कुछ रुपये उधार लिए। रुपये लेते वक़्त सूद (ब्याज) वगैरह का कोई ज़िक्र नहीं हुआ, बल्कि ज़ैद ने साफ़ कह दिया कि मैं बिना सूद के ही ले रहा हूँ। और रुपये वापस करते समय एहसान के तौर पर कुछ रुपये ज़्यादा दे दिए। तो ये जो ज़्यादा रुपये दिए गए, क्या ये सूद में शामिल हैं या सुन्नत का तरीका है या मुस्तहब (पसंदीदा) है? बयान फ़रमाएँ, सवाब पाएँ।

अल-जवाब: चूंकि ज़्यादा देना न तो ज़ुबानी तौर पर तय था और न ही ऐसी कोई पुरानी रीत थी, इसलिए 'रिबा' (सूद) का मतलब यकीनन ख़त्म हो जाता है, ख़ासकर जब लफ़्ज़ों में सूद की नफी (मनाही) का ज़िक्र मौजूद हो। बल्कि ये सिर्फ़ एक तरह का एहसान, करम और मुरव्वत है और बेशक मुस्तहब और सुन्नत से साबित है।

[प्रमाणों की तालिका]

बायां कॉलम (अरबी हदीस): सहीह अल-बुखारी और सहीह मुस्लिम की हदीस के कारण: जाबिर बिन अब्दुल्लाह अन्सारी (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा) से रिवायत है, उन्होंने कहा: "मैं नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के पास आया और मेरा उन पर एक ऋण था। उन्होंने मुझे वह चुकाया और मुझे अतिरिक्त दिया।" (संक्षिप्त)। और अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से उनकी हदीस के कारण, उन्होंने कहा: "एक व्यक्ति का नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) पर एक निश्चित उम्र के ऊंट का ऋण था। वह उनसे मांगने आया। नबी ने कहा, 'इसे दे दो।' उन्होंने उस उम्र का ऊंट ढूंढा लेकिन उन्हें उससे बेहतर उम्र का ही मिला..."

दायां कॉलम (उर्दू अनुवाद/व्याख्या): सहीह बुखारी और सहीह मुस्लिम की हदीस की वजह से: हज़रत जाबिर बिन अब्दुल्लाह अन्सारी (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा) से मरवी है, वह फ़रमाते हैं कि मैं हुज़ूर नबी-ए-करीम (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) की ख़िदमत-ए-अकदस में हाज़िर हुआ,

मेरा आप पर कुछ क़र्ज़ था। आपने उसे अदा फ़रमाया और मुझे कुछ ज़्यादा भी अता फ़रमाया। और इन दोनों की इस हदीस की वजह से कि सैयदुना हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से मरवी है, उन्होंने फ़रमाया कि एक शख़्स का नबी-ए-अकदस (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) पर एक उम्र का ऊँट क़र्ज़ था। वह शख़्स खिदमत-ए-अकदस में आया और क़र्ज़ का तक़ाज़ा करने लगा। हुज़ूर-ए-अकदस (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) ने सहाबा को हुक्म दिया कि उसे ऊँट दे दो। उन्होंने उस उम्र का ऊँट तलाश किया लेकिन उन्हें उससे बेहतर उम्र का ऊँट ही मिला...

---

1 सहीह अल-बुखारी, किताबुल इस्तिराज़, बाब: हुस्नुल कज़ा। कदीमी कुतुब खाना कराची 1/322. पृष्ठ 320 का 715

قبض مفید ملک ہو جاتے ہیں اگرچہ بوجہ خبیث، اور وہ اصلاً مورث ملک نہیں، ھذا ما عندی والعلم بالحق عند ربی (یہ وہ ہے جو میرے پاس ہے اور حق کا علم میرے پروردگار کے پاس ہے۔ ت) واللہ سبحٰنہ وتعالٰی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم۔

مسئلہ ۱۴۱: از شہر کہنہ ۲۹ ربیع الاول شریف ۱۳۱۳ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے کچھ روپے بکر سے مدت معینہ پر قرض لئے اور وقت روپیہ لینے کے کچھ ذکر سود وغیرہ کا نہ ہوا بلکہ زید نے صاف کہہ دیا کہ بلا سود ہی لیتا ہوں اور وقت دینے روپے کے کچھ اور روپے بدلے اس کے احسان کے زیادہ کر دیئے، تو یہ روپے جو زیادہ دیئے یہ سود میں داخل ہیں یا طریقہ سنت کا ہے یا مستحب ہے؟ بینوا توجروا۔

الجواب: جبکہ زیادہ دینا نہ لفظاً موعود نہ عادۃً معہود، تو معنی ربا یقیناً مفقود خصوصاً جبکہ خود لفظوں میں نفی ربا کا ذکر موجود، بلکہ یہ صرف ایک نوع احسان و کرم و مروت ہے اور بیشک مستحب و ثابت بہ سنت

[احادیث کا جدول]

بائیں کالم میں (عربی احادیث): لحدیث صحیح البخاری وصحیح مسلم وعن جابر بن عبداللہ انصاری رضی اللہ تعالٰی عنہما قال اتیت النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم وکان لی علیہ دین فقضانی وزادنی ۱ (ملخصاً) ولحدیثہما عن ابی ہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ قال کان لرجل علی النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سن من الابل فجاءہ یتقاضاہ فقال اعطوہ فطلبو اسنہ فلم یجدوالا الاسنّا فوقھا

دائیں کالم میں (اردو ترجمہ و تشریح): صحیح بخاری اور صحیح مسلم کی حدیث کی وجہ سے کہ سیدنا حضرت جابر بن عبداللہ انصاری رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے مروی ہے فرماتے ہیں کہ میں حضور نبی کریم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی خدمت اقدس میں حاضر ہوا میرا آپ پر کچھ قرض تھا آپ نے وہ ادا فرما دیا اور کچھ زیادہ بھی مجھے عنایت فرمایا۔ اور ان دونوں کی اس حدیث کی وجہ سے کہ سیدنا حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے مروی ہے انہوں نے فرمایا کہ ایک شخص کا نبی اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم پر ایک عمر کا اونٹ قرض تھا وہ شخص خدمت اقدس میں آیا اور قرض کا تقاضا کرنے لگا، حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے صحابہ کو حکم دیا کہ اس کو اونٹ دے دو، انہوں نے اس عمر کا اونٹ تلاش کیا لیکن انہیں اس سے بہتر عمر کا اونٹ ہی ملا...

---

۱ صحیح البخاری کتاب الاستقراض باب حسن القضاء قدیمی کتب خانہ کراچی ۳۲۲/۱ صفحہ 715 کا 320

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Arabic Box Content]: He said, "Give it to him." The man said, "You have fulfilled my right, may Allah fulfill yours." The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said, "The best of you are those who are best in settling their debts."[1] And for the Hadith where he (peace and blessings of Allah be upon him) said to the weighman, "Weigh it and tilt it (meaning give a little more)."[2] This was narrated by Ahmad, the four Sunan compilers, Ibn Hibban, and al-Hakim from Suwayd bin Qays al-Abdi (may Allah be pleased with him). Al-Tirmidhi said it is Hasan Sahih, and al-Hakim said it is Sahih. This weighman was in Makkah. It was also narrated by al-Tabarani in al-Mu'jam al-Awsat[3] and Abu Ya'la in al-Musnad, and Ibn Asakir from Abu Hurairah (may Allah be pleased with him), and this weighman was in Madinah Munawwarah. (T)

[Urdu Box Content]: Upon searching, a camel similar to his was not found, but a camel of a better age was found. So, the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said, "Give this camel to this person." That person said, "You have given me in full, may Allah give you in full." The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "The best among you is the one who is best in repaying debts." And because of this Hadith in which the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) told the weighman to weigh and tilt the scale (i.e., give a little more), Imam Ahmad, the four Sunan compilers, Ibn Hibban, and al-Hakim narrated it from Suwayd bin Qays al-Abdi (may Allah be pleased with him). Imam Tirmidhi said this is Hasan Sahih. Imam Hakim said it is Sahih and this weighman was in Makkah Mukarramah. And Tabarani narrated it in Mu'jam al-Awsat, Abu Ya'la in Musnad, and Ibn Asakir from Hazrat Abu Huraira (may Allah be pleased with him), and this weighman was in Madinah Munawwarah. (T)

[Main Urdu Text]: However, the situation applies where either the excess is not divisible, for example, nine and a half rupees were owed and ten were given in full, because now the excess is of half a rupee and one rupee is not capable of being split again; or if it is divisible, then give it separately, for example, ten were owed and given, and then one rupee was given separately as a favor. In these cases, the excess will be lawful for 'Bakr' (the recipient). But if it was divisible and given in an integrated and undivided manner, for example, ten were owed but eleven were given at once as 'ten and one as a favor', then neither will the gift (Hiba) be valid, nor will 'Bakr' be the owner of that excess. It is stated in Alamgiri:

[Bottom Box Arabic]: A man gave another man nine dirhams and said [Bottom Box Urdu]: A man gave another nine dirhams and said

[Footnotes]: 1 Sahih al-Bukhari, Book of Loans, Chapter on Good Repayment, Qadimi Kutub Khana Karachi 1/422. 2 Musnad Imam Ahmad bin Hanbal, Hadith of Suwayd bin Qays (may Allah be pleased with him), Dar al-Fikr Beirut 4/452; Jami' al-Tirmidhi, Chapters on Sales 1/156; and al-Mustadrak, Book of Sales 2/40. 3 Al-Mu'jam al-Awsat, Hadith 6590, Al-Maktabah al-Ma’arif al-Riyadh 7/307.

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

[अरबी बॉक्स की सामग्री]: उसने कहा, "उसे दे दो।" उस आदमी ने कहा, "आपने मेरा हक़ पूरा किया, अल्लाह आपका हक़ पूरा करे।" नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने फ़रमाया, "तुम में सबसे अच्छे वे हैं जो अपने क़र्ज़ को चुकाने में सबसे अच्छे हैं।"[1] और उस हदीस के लिए जिसमें उन्होंने (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) तौलने वाले से फ़रमाया, "तौलो और झुकाओ (यानी थोड़ा ज़्यादा दो)।"[2] इसे अहमद, चार सुनन संकलनकर्ताओं, इब्न हिब्बान और अल-हाकिम ने सुवैद बिन क़ैस अल-अब्दी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। अल-तिर्मिज़ी ने कहा कि यह हसन सहीह है, और अल-हाकिम ने कहा कि यह सहीह है। यह तौलने वाला मक्का में था। इसे अल-तबरानी ने अल-मुअजम अल-औसत[3] में और अबू या'ला ने अल-मुसनद में, और इब्न असाकिर ने अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है, और यह तौलने वाला मदीना मुनव्वरा में था। (त)

[उर्दू बॉक्स की सामग्री]: तलाश करने पर उसके ऊंट जैसा ऊंट नहीं मिला, बल्कि उससे बेहतर उम्र का ऊंट मिला। तो आपने फ़रमाया कि यही ऊंट उस शख़्स को दे दो। उस शख़्स ने कहा, "आपने मुझे भरपूर अता फ़रमाया, अल्लाह ताला आपको भरपूर अता फ़रमाए।" हुज़ूर अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने फ़रमाया: "तुम में से बेहतर वह है जो क़र्ज़ की अदायगी में तुम से बेहतर है।" और इस हदीस की वजह से जिसमें नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने वज़न करने वाले से फ़रमाया कि वज़न कर और तराज़ू को झुका (यानी क़दरे ज़्यादा दे), इसे इमाम अहमद, सुनन अरब'आ, इब्न हिब्बान और हाकिम ने सुवैद बिन क़ैस अब्दी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया। इमाम तिर्मिज़ी ने कहा यह हसन सहीह है। इमाम हाकिम ने कहा यह सहीह है और यह वज़न करने वाला मक्का मुकर्रमा में था। और इसे तबरानी ने मुअजम औसत में, अबू या'ला ने मुसनद में और इब्न असाकिर ने हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया और यह वज़न करने वाला मदीना मुनव्वरा में था। (त)

[मुख्य उर्दू पाठ]: मगर इसकी जगह वहां है जहां या तो वह ज़्यादती (बढ़ोतरी) बांटने योग्य न हो, मिसाल के तौर पर साढ़े नौ रुपये आते थे और पूरे दस दिए, क्योंकि अब आधे रुपये की ज़्यादती है और एक रुपया दोबारा बांटने के लायक नहीं; या अगर बांटने योग्य हो तो अलग करके दे, मिसाल के तौर पर दस आते थे वे दिए और एक रुपया अहसान के तौर पर अलग से दिया। इन सूरतों में वह ज़्यादती 'बक्र' (पाने वाले) के लिए हलाल हो जाएगी। और अगर वह बांटने योग्य थी और इसी तरह मिली-जुली दी, मिसाल के तौर पर दस आते थे और ग्यारह एक साथ दिए कि 'दस और एक

अहसान', तो न तो हिबा (दान) सही होगा और न ही बक्र उस ज़्यादती का मालिक होगा। आलमगीरी में है:

[निचला बॉक्स अरबी]: एक आदमी ने दूसरे आदमी को नौ दिरहम दिए और कहा [निचला बॉक्स उर्दू]: एक मर्द ने दूसरे को नौ दिरहम दिए और कहा

[पाद लेख]: 1 सहीह अल-बुखारी, किताबुल इस्तिराज़, बाबू हुस्नुल क़ज़ा, क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची 1/422. 2 मुसनद इमाम अहमद बिन हंबल, हदीस सुवैद बिन क़ैस (रज़ियल्लाहु अन्हु), दारुल फ़िक्र बैरूत 4/452; जामि' अत-तिर्मिज़ी, अबवाबुल बुयूँ 1/156; और अल-मुस्तदरक, किताबुल बुयूँ 2/40. 3 अल-मुअजम अल-औसत, हदीस 6590, अल-मक्तबह अल-मआरिफ़ अर-रियाज़ 7/307.

[Arabic Box Content]: فقال اعطوه فقال او فيتنى او فاك الله فقال النبى صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم ان خياركم احسنكم قضاءً ۱ و لحديث قوله صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم لوزان زن و ارجح ۲ رواه احمد والاربعة وابن حبان والحاكم عن سويد بن قيس العبدى رضى الله تعالى عنه قال الترمذى حسن صحيح وقال الحاكم صحيح وهذا الوزان في مكة و رواه الطبراني في الاوسط ۳ وابويعلى في المسند وابن عساكر عن ابى هريرة رضى الله تعالىٰ عنہ و ھٰذا لوزان فى المدينة۔

[Urdu Box Content]: تلاش کرنے پر اس کے اونٹ جیسا اونٹ نہ ملا مگر اس سے بہتر عمر کا اونٹ ملا، تو آپ نے فرمایا کہ یہی اونٹ اس شخص کو دے دو، اس شخص نے کہا آپ نے مجھے بھر پور عطا فرمایا اللہ تعالی آپ کو بھر پور عطا فرمائے۔ حضور اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا: تم میں سے بہتر وہ ہے جو قرض کی ادائیگی میں تم سے بہتر ہے۔ اور اس حدیث کی وجہ سے جس میں نبی کریم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے وزن کرنیوالے سے فرمایا کہ وزن کر اور ترازو کو جھکا (یعنی قدرے زیادہ دے) اس کو امام احمد، سنن اربعہ، ابن حبان اور حاکم نے سوید بن قیس عبدی رضی اللہ تعالی عنہ سے روایت کیا، امام ترمذی نے کہا یہ حسن صحیح ہے۔ امام حاکم نے کہا یہ صحیح ہے اور یہ وزن کرنے والا مکہ مکرمہ میں تھا، اور اس کو طبرانی نے معجم اوسط میں، ابویعلی نے مسند میں اور ابن عساکر نے حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا اور یہ وزن کرنے والا مدینہ منورہ میں تھا۔(ت)

[Main Urdu Text]: مگر محل اس کا وہاں ہے کہ یا تو وہ زیادت قابل تقسیم نہ ہو مثلاً ساڑھے نو روپے آتے تھے دس پورے دیئے کہ اب بقدر نصف روپے کی زیادتی ہے اور ایک روپیہ دوبارہ کرنے کے لائق نہیں یا قابل تقسیم ہو تو جدا کر کے دے، مثلاً دس آتے تھے وہ دے

کر ایک روپیہ احساناً الگ دیا ان صورتوں میں وہ زیادتی بکر کے لئے حلال ہو جائے گی، اور اگر قابل تقسیم تھی اور یوں ہی مخلوط و مشاع دی مثلاً دس آتے تھے گیارہ یکمشت دیئے دس آتے میں اور ایک احساناً تو نہ ہبہ صحیح ہو گا نہ بکر اس زیادت کا مالک۔ عالمگیری میں ہے:

[Bottom Box Arabic]: رجل دفع الی رجل تسعة دراهم وقال [Bottom Box Urdu]:

ایک مرد نے دوسرے کو نو درہم دیئے اور کہا

[Footnotes]: ۱ صحیح البخاری کتاب الاستقراض باب حسن القضاء قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۳۲۲ ۲ مسند امام احمد بن حنبل حدیث سوید بن قیس رضی اللہ عنہ دارالفکر بیروت ۴ / ۴۵۲، جامع الترمذی ابواب البیوع ۱/ ۱۵۶ والمستدرک کتاب البیوع ۲/ ۴۰ ۳ المعجم الاوسط حدیث ۶۵۹۰ المکتبة المعارف الریاض ۷ / ۳۰۷

Vol. 17, Fatawa Razawiyya

[Boxed Text] Arabic: Three are for the fulfillment of your right, three are a gift for you, and three are charity. If everything is lost, one is liable for the three dirhams of the gift because it is an invalid gift, but not for the three of charity because charity of joint property is permissible except in one narration; so it is in Muhit al-Sarakhsi. And Allah Almighty knows best. Urdu Translation: Three are in payment of your right, three are a gift for you, and three are charity. Then if all are lost, he will be liable for the three dirhams of the gift because this is an invalid gift, and he will not be liable for the three dirhams of charity because charity of a joint property is permissible except in one narration; so it is in Muhit al-Sarakhsi. And Allah Almighty knows best (T).

Issues 142 to 144: From Mouza Devrniyan. What do the scholars of religion say regarding these issues: (1) Is it permissible for a Muslim to give interest or not? (2) Is it permissible to take interest from Hindus or not? (3) Is it permissible to have interest written in a document, even if there is no intention for it? Explain and you shall be rewarded.

The Answer: (1) It is absolutely not permissible unless there is a specific, severe necessity that Sharia also recognizes as a necessity and there is no way out without giving interest. And Allah Almighty knows best. (2) It is not permissible from anyone, Hindu or Muslim. And Allah Almighty knows best. (3) Not correct, as it is putting a false accusation of sin upon oneself. And Allah Almighty knows best.

Issue 145: From Shahar Kohna, 29 Jumadi al-Ula 1314 AH. Some grain was given to the tenants of a village for the purpose of sowing seeds, and the market value of that grain in rupees was established against the tenant. However, at that time, it was not decided with the tenant at what rate per rupee the grain to be produced in the future would be taken from the tenant. At the time of harvest, that grain, i.e., 'sathi' (a type of rice), was sold at seventeen seers per rupee, and now it is sold at thirteen seers. From the tenant at harvest, 'sathi' was taken at the rate of 25 seers per rupee. Is this action permissible or impermissible? If it is impermissible, what method should be followed and at what rate...

1. Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Hiba, Chapter 2, Noorani Kutub Khana Peshawar 4/397. Page 322 of 715

जिल्द 17, फ़तावा रज़विया

[बॉक्स में दिया गया पाठ] अरबी: तीन आपके अधिकार की पूर्ति के लिए हैं, तीन आपके लिए उपहार हैं, और तीन दान हैं। यदि सब कुछ खो जाता है, तो उपहार के तीन दिरहमों के लिए उत्तरदेही है क्योंकि यह एक अमान्य उपहार है, लेकिन दान के तीन के लिए नहीं क्योंकि संयुक्त संपत्ति का दान एक वर्णन को छोड़कर जायज़ है; ऐसा मुहीत अल-सरखसी में है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। उर्दू अनुवाद: तीन आपके हक की अदायगी में हैं, तीन आपके लिए हिबा (उपहार) हैं और तीन सदका (दान) हैं, फिर अगर सब नष्ट हो जाएं तो वह हिबा के तीन दिरहमों का जिम्मेदार होगा क्योंकि यह फासिद (अवैध) हिबा है और वह सदका के तीन दिरहमों का जिम्मेदार नहीं होगा क्योंकि मुशाअ (अविभाजित संपत्ति) का सदका जायज़ है सिवाय एक रिवायत के, मुहीत सरखसी में ऐसा ही है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है (त)।

मसला 142 से 144: मौज़ा देवरनियां से। इन मसलों में दीन के उलेमा क्या फ़रमाते हैं: (1) मुसलमान को सूद (ब्याज) देना जायज़ है या नहीं? (2) हिंदुओं से सूद लेना जायज़ है या नहीं? (3) दस्तावेज़ में सूद लिखवाना, भले ही उसके लिए नियत न हो, जायज़ है या नहीं? बयान करें, आपको पुण्य मिलेगा।

अल-जवाब (उत्तर): (1) हरगिज़ जायज़ नहीं है, मगर जब कोई खास शदीद (गंभीर) ज़रूरत हो जिसे शरीअत भी ज़रूरत माने और बिना सूद दिए कोई चारा न हो। वल्लाहु तआला आलम। (2) हिंदू हो या मुसलमान, किसी से जायज़ नहीं। वल्लाहु तआला आलम। (3) नादरुस्त है क्योंकि यह अपने ऊपर गुनाह की झूठी तोहमत लगाना है। वल्लाहु तआला आलम।

मसला 145: शहर कोहना से, 29 जमादी उल उला 1314 हिजरी। एक मौज़ा के असामियों (किसानों) को बीज बोने के उद्देश्य से कुछ अनाज दिया गया और उस अनाज का मूल्य बाज़ार भाव के अनुसार रुपयों में असामी के ज़िम्मे तय कर दिया गया। लेकिन उस समय असामी से यह तय नहीं किया गया कि भविष्य में पैदा होने वाला अनाज किस भाव से प्रति रुपया असामी से लिया जाएगा। फसल के समय वह अनाज यानी 'साठी' सत्रह सेर प्रति रुपया के हिसाब से बिक रहा था और अब तेरह सेर का बिक रहा है। और असामी से फसल पर 25 सेर प्रति रुपया के हिसाब से साठी ली गई।

क्या यह कार्रवाई जायज़ हुई या नाजायज़? अगर नाजायज़ है तो क्या तरीका अपनाया जाए और किस दर पर...

1. फ़तावा हिंदिया, किताब अल-हिबा, बाब दोम, नूरानी कुतुब खाना पेशावर 4/397. पृष्ठ 322 का 715

ثلثة قضاء من حقك وثلثة هبة لك وثلثة صدقة فضاع الكل يضمن ثلثة الهبة لانها هبة فاسدة ولايضمن ثلثة الصدقة لان صدقة المشاع جائزة الا في رواية كذا فی محیط السرخسی واللہ تعالٰی اعلم۔ تین تیرے حق کی ادائیگی میں تین تیرے لئے ہبہ اور تین صدقہ ہیں، پھر سب ضائع ہوگئے تو ہبہ کے تین درہموں کا وہ ضامن ہوگا کیونکہ یہ فاسد ہبہ ہے اور صدقہ کے تین درہموں کا ضامن نہیں ہوگا کیونکہ صدقہ مشاع جائز ہے سوائے ایک روایت کے، محیط سرخسی میں یونہی ہے واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ ۱۴۲ تا ۱۴۴: از موضع دیور نیاں کیا فرماتے ہیں علمائے دین ان مسائل میں: (۱) سود دینا مسلمان کو درست ہے یا نہیں؟ (۲) ہنود سے سود لینا درست ہے یا نہیں؟ (۳) دستاویز میں سود تحریر کرانا اگر چہ اس کے لئے نیت نہ ہو جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب (۱) ہرگز درست نہیں مگر جب کوئی خاص ضرورتِ شدید ہو جسے شرع بھی ضرورت مانے اور بغیر سود دیئے چارہ نہ ہو۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ (۲) ہند و مسلمان کسی سے درست نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم (۳) نادرست کہ جھوٹی تہمت گناہ اپنے اوپر لگانی ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۴۵: از شہر کہنہ ۲۹ جمادی اولی ۱۳۱۴ھ ایک موضع کے اسامیان کو کچھ غلہ بغرض تخم ریزی کے دیا گیا اور اس غلہ کا بہ نرخ بازار روپیہ اسامی کے ذمہ قائم کر دیا گیا مگر اس وقت میں اسامی سے یہ امر طے نہ کیا گیا کہ کس نرخ سے بحساب فی روپیہ غلہ جو آئندہ پیدا ہوگا وہ اس اسامی سے لیا جائیگا، فصل پر وہ غلہ یعنی ساٹھی سترہ سیر کی فروخت ہوئی اور اب تیرہ

سیر کی فروخت ہوتی ہے اور اسامی سے فصل پر بحساب ۲۵ سیر فی روپیہ ساٹھی لی گئی، آیا یہ کارروائی جائز ہوئی یا ناجائز؟ اگر ناجائز ہے تو کیا طریقہ برتا جائے اور کس نرخ

۱ فتاویٰ ہندیہ کتاب الھبۃ الباب الثانی نورانی کتب خانہ پشاور ۴ / ۳۹۷ Page 322 of 715

Fatawa Razawiyya Volume 17

...that grain be taken from him, so that it be permissible? Please explain and be rewarded.

The Answer: If at that time no illegal contract was made, nor later did the debtor give it through any compulsion or aggression, but rather willingly gave grain in exchange for those rupees at the rate of seventeen seers, then taking it is permissible, otherwise it is forbidden. And Allah Almighty knows best, and His knowledge is most complete and wise.

Question 146: 8 Ramadan al-Mu'azzam 1314 AH What do the scholars of religion say regarding this matter: is it permissible to take interest on money deposited in the treasury of non-believers or not? Please explain and be rewarded.

The Answer: Taking interest is absolutely forbidden. Allah Almighty has stated categorically: “And Allah has permitted trade and has forbidden interest.”[1] Allah has made trade permissible and interest forbidden. In this, the Lord of Honor, Glorified and Exalted is He, has not made any exception that taking interest from such and such is forbidden and from such and such is permissible; rather, He has forbidden it absolutely, and it remains absolutely forbidden, even if it is from a Muslim. Yes, if one is owed something or if any other legitimate wealth is obtained through a legitimate legal means, that is a different matter, and the details are in our Fatawa. (Detailed in our Fatawa. - Editor) And Allah, Glorified and Exalted, knows best.

Question 147: From Marehra, District Etah, sent by Hazrat Syed Murtaza Husain Sahib, 12 Rajab 1316 AH Is taking interest from a bank permissible or impermissible? With high regards.

The Answer: Taking interest is absolutely forbidden. Allah Almighty has said: “And [He] has forbidden interest.”[2] (Allah Almighty has stated: And Allah Almighty has forbidden interest. - Editor) And Allah Almighty knows best.

Question 148: 8 Jumada al-Ula 1319 AH What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid purchased goods worth 10 rupees with his own money for Amr and said that he would take 11 rupees from him. Is this profit permissible or not? Please explain and be rewarded.

---

[1] Al-Quran al-Kareem 2/275 [2] Al-Quran al-Kareem 2/275

फ़तावा रज़विया जिल्द १७

...ताकि उससे अनाज लिया जाए और वह जायज़ हो? बयान करें और पुण्य कमाएं।

अल-जवाब (उत्तर): यदि उस समय कोई नाजायज़ अनुबंध (contract) नहीं हुआ था, और न ही बाद में किसी जबरदस्ती या ज़्यादती से देनदार ने दिया, बल्कि स्वेच्छा से उन रुपयों के बदले सत्रह सेर के हिसाब से अनाज दे दिया, तो लेना जायज़ है वरना हराम है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है और उसका ज्ञान सबसे पूर्ण और दृढ़ है।

मसला १४६: ८ रमजानुल मुबारक १३१४ हिजरी धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि जो रुपया काफिरों (अविश्वासियों) के खजाने में जमा किया जाए, उस पर ब्याज लेना जायज़ है या नहीं? बयान करें और पुण्य कमाएं।

अल-जवाब (उत्तर): ब्याज लेना पूरी तरह हराम है, अल्लाह अज़्ज़वजल ने स्पष्ट रूप से फरमाया है: «[1]الرِّبٰوا وَحَرَّمَ الْبَيْعَ اللّٰهُ وَاَحَلَّ» अल्लाह ने व्यापार को हलाल किया और ब्याज को हराम किया। इसमें रब्ब-उल-इज़्ज़त जल्ल जलालाहू ने कोई विशिष्टता नहीं बताई कि फलां से ब्याज लेना हराम है और फलां से हलाल, बल्कि इसे पूरी तरह हराम बताया है, और वह पूरी तरह हराम ही है चाहे वह मुस्लिम से हो। हाँ, यदि किसी का किसी पर कुछ बकाया हो या कोई अन्य शरीयत सम्मत धन किसी शरीयत सम्मत युक्ति से प्राप्त किया जाए तो वह दूसरी बात है। इसका विवरण हमारे फतावा में है। (विवरण हमारे फतावा में है। - संपादक) और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है।

मसला १४७: मारेहरा, जिला एटा से, प्रेषक हज़रत सैयद मुर्तज़ा हुसैन साहब, १२ रजब १३१६ हिजरी बैंक से ब्याज लेना जायज़ है या नाजायज़? अधिक श्रद्धा के साथ।

अल-जवाब (उत्तर): ब्याज लेना पूरी तरह हराम है। अल्लाह तआला ने फरमाया: «[2]الرِّبٰوا وَحَرَّمَ» (अल्लाह तआला ने इरशाद फरमाया: और अल्लाह तआला ने ब्याज को हराम किया है। - संपादक) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला १४८: ८ जमादि-उल-अव्वल १३१९ हिजरी धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि जैद ने अपने १० रुपये से अम्र के लिए माल दिलवाया और कहा कि मैं तुमसे ११ रुपये लूंगा, क्या इसमें मुनाफा जायज़ है या नहीं? बयान करें और पुण्य कमाएं।

---

[1] अल-कुरान अल-करीम २/२७५ [2] अल-कुरान अल-करीम २/२७५

पृष्ठ ७१५ का ३२३

سے غلہ لیا جائے کہ وہ جائز ہو؟ بینوا توجروا۔

الجواب: اگر اس وقت کوئی ناجائز عقد نہ ہوا تھا، نہ بعد کو کسی جبر وتعدی سے آسامی نے دیا بلکہ بخوشی سترہ سیر کے حساب سے غلہ ان روپیوں کا دے دیا تو لینا جائز ہے ورنہ حرام۔ واللہ تعالٰی اعلم و علمہ اتم واحکم۔

مسئلہ ۱۴۶: ۸ رمضان المعظم ۱۳۱۴ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ جو روپیہ کفار کے خزانہ میں جمع کیا جائے اس کا سود لینا جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: سود لینا قطعاً حرام ہے، اللہ عزوجل نے مطلقاً فرمایا: «وَاَحَلَّ اللّٰہُ الْبَیْعَ وَحَرَّمَ الرِّبٰوا»[1] اللہ نے حلال کی بیع اور حرام کیا سود۔ اس میں رب العزت جل جلالہ نے کوئی تخصیص نہ فرمائی کہ فلاں سے سود لینا حرام اور فلاں سے حلال ہے بلکہ مطلقاً حرام فرمایا، اور وہ مطلقاً ہی حرام ہے خواہ مسلم سے۔ ہاں اپنا کسی پر آتا ہو یا اور کوئی مال جائز شرعی کسی حیلہ شرعیہ سے حاصل کرنا دوسری بات ہے والتفصیل فی فتاوٰنا (اور تفصیل ہمارے فتاوٰی میں ہے۔ ت) واللہ سبحانہ وتعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۴۷: از مارہرہ ضلع ایٹہ مرسلہ حضرت سید ارتضٰی حسین صاحب ۱۲ رجب ۱۳۱۶ھ بنک سے سود لینا جائز یا ناجائز؟ زیادہ نیاز

الجواب: سود لینا مطلقاً حرام ہے، قال اللہ تعالٰی «وَحَرَّمَ الرِّبٰوا»[2] (اللہ تعالٰی نے ارشاد فرمایا: اور اللہ تعالٰی نے سود کو حرام کیا۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۴۸: ۸ جمادی الاولیٰ ۱۳۱۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے ۱۰ روپے کا مال اپنے روپیہ سے عمرو کو دلوادیا اور کہا کہ میں تم سے ۱۱ لوں گا اس میں نفع جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

---

[1] القرآن الکریم ۲ / ۲۷۵ [2] القرآن الکریم ۲ / ۲۷۵

Fatawa Razawiyya, Volume 17

The Answer: It is pure usury and forbidden, and Allah, Glorified and Exalted is He, knows best.

Issue 149: From Ujjain, sent by Haji Muhammad Yaqub Ali Khan Sahib, 24 Sha'ban 1315 AH. When both genus (kind) and quantity are present, then according to the Great Imam (Imam Abu Hanifa), both delay (nasi'ah) and excess (fadl) are prohibited. So, if someone sells one mound of wheat for one mound of wheat hand-to-hand, what benefit did the seller and the buyer gain in this trade? From this, it is also found that if someone needed wheat, barley, sorghum, or chickpeas etc., and he said to someone, "Give me one mound of wheat etc. on credit, I will return it to you in a few days," then this would also be included in usury. And this need arises for everyone. Please explain the investigated ruling on this issue. State it and be rewarded.

The Answer: Debt (Qard) is another contract distinct from sale (Bay'), which the Pure Shariah has permitted for the needs of the people. Forget grain, the biggest debt is of money. Money itself is among the ribawi (usurious) goods, for if money or silver is exchanged for money, then both quantity and genus are present, and both excess and delay are forbidden. However, taking a loan of money is permissible, and taking a loan of grain itself is established from the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) in authentic Hadith. And the Lord of Honor, Glorified and Exalted is He, says:

"O you who believe! When you contract a debt for a fixed period, write it down." [Translation: O believers! When you transact a debt for a fixed term, write it down. (T)]

And in usurious goods, the Pure Shariah has disregarded the consideration of quality (wasf), therefore their superior and inferior grades are considered equal. The difference in qualities can be a cause of different purposes and needs of people. For example, Zaid desires one type of item, but he doesn't have that type, he has another type. And that desired type is with Amr, who in turn desires the type that Zaid has. So, by exchanging them hand-to-hand in equal measure, each can obtain what they desire. Furthermore, there's a situation where, for instance, Zaid has taken an oath that he will not eat the wheat he currently possesses. Now, if he exchanges that wheat for Amr's wheat hand-to-hand in equal measure...

---

[1] Al-Quran Al-Karim 2/282 Page 324 of 715

फ़तावा रज़विया, खंड 17

उत्तर: यह निरा सूद और हराम है, और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है।

मसला 149: उज्जैन से, हाजी मोहम्मद याकूब अली खान साहब द्वारा प्रेषित, 24 शाबान 1315 हिजरी। जब जिंस (प्रकार) और कद्र (मात्रा) दोनों पाए जाएं तो इमाम-ए-आज़म के निकट नसिआ (देरी) और फ़ज़्ल (अतिरिक्त) दोनों हराम हैं। तो यदि कोई एक मन गेहूं को एक मन गेहूं के साथ नकद बेचे, तो इस व्यापार में विक्रेता और खरीदार को क्या लाभ हुआ? इससे यह भी पता चला कि यदि किसी को गेहूं, जौ, ज्वार या चना आदि की आवश्यकता पड़ी और उसने किसी से कहा कि 'मुझे एक मन गेहूं आदि उधार दे दो, मैं तुम्हें कुछ दिनों में दे दूंगा', तो यह भी सूद (ब्याज) में शामिल हो गया। और यह ज़रूरत हर खासो-आम को पेश आती है। इस मसले में जो शोधित निर्णय हो, उसे बयान फरमाएं। स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: ऋण (कर्ज़) तो खरीद-फरोख्त (बैय) के अलावा एक दूसरा अनुबंध है, जिसे शरीयत-ए-मुतह्हरा ने लोगों की ज़रूरतों के लिए जायज़ फरमाया है। अनाज तो क्या, सबसे बड़ा कर्ज़ तो रुपयों का होता है। रुपया स्वयं रबीवी माल (सूद वाली वस्तुओं) में से है क्योंकि रुपये के बदले रुपया या चांदी हो तो कद्र और जिंस दोनों मौजूद हैं और फ़ज़्ल और नसिआ दोनों हराम हैं, मगर रुपया कर्ज़ लेना जायज़ ही है। और स्वयं अनाज कर्ज़ लेना सही हदीस में हुज़ूर अकदस सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से साबित है। और रब्बुल इज़्ज़त फरमाता है:

"ऐ ईमान वालो! जब तुम एक निश्चित अवधि के लिए ऋण का लेन-देन करो, तो उसे लिख लिया करो।" [अनुवाद: ऐ ईमान वालो! जब तुम एक मुक़र्रर मुद्दत तक किसी दीन का लेन-देन करो तो उसे लिख लिया करो। (त)]

और रबीवी माल में शरीयत-ए-मुतह्हरा ने गुणवत्ता (वस्फ़) के विचार को समाप्त कर दिया है, इसलिए उनका श्रेष्ठ और निम्न स्तर समान है। गुणों का अंतर लोगों के उद्देश्यों और ज़रूरतों के अंतर का कारण हो सकता है। उदाहरण के तौर पर, ज़ैद को एक प्रकार की चीज़ की आवश्यकता है, उसके पास उस प्रकार की नहीं है बल्कि दूसरी प्रकार की है। और उस प्रकार की चीज़ अम्र के पास है, उसे उस प्रकार की चीज़ की आवश्यकता है जो ज़ैद के पास है। तो वे आपस में नकद और बराबर अदला-बदली करके अपनी-अपनी वांछित वस्तु प्राप्त कर सकते हैं। इसके अलावा यह स्थिति भी है

कि मान लीजिए ज़ैद ने कसम खा ली कि वह अपने पास मौजूद गेहूं नहीं खाएगा। अब यदि वह उन गेहूं को अम्र के गेहूं से नकद और बराबर मात्रा में बदल ले...

---

[1] अल-कुरान अल-करीम 282/2 पृष्ठ 324/715

الجواب: نرا سود اور حرام ہے ، واللہ سبحنہ و تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۴۹: از اوجین مرسلہ حاجی محمد یعقوب علی خان صاحب ۲۴ شعبان ۱۳۱۵ھ جب جنس و قدر دونوں پائے جائیں تو امام اعظم کے نزدیک نسیہ و فضل دونوں حرام ہیں تو اگر کوئی ایک من گیہوں ایک من گیہوں سے دست بدست بیچے تو اس تجارت میں بائع و مشتری کو کیا فائدہ ہوا اور اس سے یہ بھی پایا گیا کہ کسی کو گیہوں یا جو یا جوار یا چنا وغیرہ کی ضرورت پڑی اور اس نے اس سے کہا کہ مجھ کو ایک من گیہوں وغیرہ بطریق ادھار دے دے میں تجھ کو چند روز میں دے دوں گا تو یہ بھی سود میں داخل ہو گیا اور یہ ضرورت ہر کس و ناکس کو پیش آتی ہے اس مسئلہ میں جو حکم تحقیق ہو بیان فرمائیں۔ بینوا توجروا۔

الجواب: قرض تو ایک دوسرا عقد ہے بیع کے سوا جسے شرع مطہر نے حاجات ناس کے لئے جائز فرمایا غلہ کیا ، بڑا قرض تو روپے کا ہوتا ہے روپیہ خود اموال ربویہ سے ہے کہ روپے کے عوض روپیہ یا چاندی ہو تو قدر و جنس دونوں موجود اور فضل و نسیہ دونوں حرام مگر روپیہ قرض لینا جائز ہی ہے اور خود غلہ قرض لینا صحیح حدیث میں حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے ثابت ہے اور رب العزت جل وعلا فرماتا ہے:

"یَا أَیُّهَا الَّذِینَ آمَنُوا إِذَا تَدَایَنْتُمْ بِدَیْنٍ إِلَىٰ أَجَلٍ مُسَمًّى فَاكْتُبُوهُ" الآیہ۔ [اے ایمان والو! جب تم ایک مقررہ مدت تک کسی دین کا لین دین کرو تو اس کو لکھ لیا کرو۔ (ت)]

اور اموال ربویہ میں شرع مطہر نے وصف کا اعتبار ساقط فرمایا ہے لہذا ان کا جید وردی یکساں ہے اور اختلاف اوصاف اختلاف اغراض و حاجات ناس کا باعث ہو سکتا ہے مثلاً ایک قسم کی چیز

زید کو مطلوب ہے اس کے پاس اس قسم کی نہیں دوسری قسم کی ہے اور اس قسم کی شیئ عمرو کے پاس ہے اسے اس قسم کی مطلوب ہے جو زید کے پاس ہے تو باہم دست بدست یکساں برابر مبادلہ کر کے ہر ایک اپنے مطلوب کو پہنچ سکتا ہے معہذا یہ صورت بھی ہے کہ مثلاً زید کے منہ سے قسم نکل گئی کہ یہ گیہوں جو اپنے پاس ہیں نہ کھائے گا اب اگر وہ ان گیہوں کو عمرو کے گندم سے دست بدست برابر بدل لے

Fatawa Rizvia (Volume 17)

...then the oath will also be fulfilled and no harm will follow. Moreover, Sharia has not made it mandatory to sell hand-to-hand equally; it is said that if you want to trade these things mutually, do it this way, and if you don't, then don't. There is no Sharia compulsion. And Allah, the Glorified and Exalted, knows best. From Lahore, Begum Shahi Mosque, sent by Maulvi Ahmaduddin Sahib, 1st Dhu al-Qi'dah 1338 AH.

Problem 150: What do the scholars of religion say regarding whether it is permissible to take interest from Hindus in this country or not? Some say that taking interest from Christians is incorrect because they are People of the Book. Is it correct to pray behind those who hold such views or not?

The Answer: Interest (usury) is absolutely forbidden. Allah the Almighty said: "And Allah has forbidden usury."[1] (T) However, whatever wealth is obtained from a non-Muslim who is neither a 'Dhimmi' (protected non-Muslim citizen) nor a 'Musta'min' (non-Muslim on a safe-conduct) without any deception or breach of promise on one's own part, even if it is through 'Uqood-e-Fasidah' (invalid contracts), it is permissible to take it with the same intention and not with the intention of 'Riba' (usury) or other prohibitions, even if the giver says or thinks something else. For him is his intention, and for the other is his. "For every person is what he intended."[2] (For every person is that which he intended. T) Still, just as it is necessary to avoid bad deeds, it is also appropriate to avoid a bad name. "Beware of ill-suspicion." (T) In all these rulings, polytheists, Magians, and People of the Book are all equal as long as they are not 'Dhimmi' or 'Musta'min' and no deception is practiced; rather, this condition is sufficient as it encompasses both of them. And Allah the Almighty knows best.

Problem 151: From the town of Hasanpur, District Moradabad, sent by Muhammad Sher Ali Khan, dated 7th Dhu al-Hijjah 1338 AH. What do the scholars of religion say concerning the matter of how far interest (usury) is permissible based on the mutual consent of both parties, or is it not? And if not, in what form and why? Please write in detail.

[1] Al-Quran Al-Karim 2/275 [2] Sahih al-Bukhari, Book of Faith, Chapter on Actions being by Intention and Reward, Qadimi Kutub Khana Karachi 1/13

फ़तावा रिज़विया (जिल्द 17)

...तो शपथ भी पूरी हो जाएगी और कोई हर्ज भी लाज़िम नहीं आएगा। इसके अलावा, शरीयत ने हाथ-से-हाथ बराबर व्यापार करना अनिवार्य नहीं किया है, बल्कि यह फ़रमाया है कि अगर इन चीज़ों का आपस में व्यापार करना हो तो इस तरह करो, और अगर नहीं करना हो तो न करो, कोई शरीई मजबूरी नहीं है। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है। लाहौर, बेगम शाही मस्जिद से, प्रेषक मौलवी अहमद उद्दीन साहब, 1 ज़ुल-क़ादा 1338 हिजरी।

मसाला 150: धर्म के विद्वान इस बारे में क्या फ़रमाते हैं कि इस देश में हिंदुओं से ब्याज लेना जायज़ है या नहीं? कुछ लोग कहते हैं कि ईसाइयों से अहल-ए-किताब होने के कारण ब्याज लेना ग़लत है, ऐसे विचार रखने वालों के पीछे नमाज़ पढ़ना सही है या नहीं?

अल-जवाब: सूद (ब्याज) पूर्णतः हराम है। अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "और अल्लाह ने सूद को हराम किया।"[1] (त) हाँ, जो माल किसी ग़ैर-मुस्लिम से, जो न ज़िम्मी हो और न मुस्तमिन, अपनी तरफ़ से बिना किसी धोखे या वादाखिलाफ़ी के मिले, चाहे वह 'उक़ूद-ए-फ़ासिदा' (अमान्य अनुबंधों) के नाम से हो, उसे उसी नीयत से लेना जायज़ है न कि रिबा (ब्याज) या अन्य वर्जनाओं की नीयत से, भले ही देने वाला कुछ और कहे या समझे। उसके लिए उसकी नीयत बेहतर है न कि दूसरे की। "हर व्यक्ति के लिए वही है जिसकी उसने नीयत की।"[2] (त) फिर भी, जिस तरह बुरे कामों से बचना ज़रूरी है, वैसे ही बदनामी (बुरे नाम) से बचना भी उचित है। "बदगुमानी (बुरी आशंका) से बचो।" (त) इन सभी आदेशों में मुशरिक, मजूसी और अहल-ए-किताब सब बराबर हैं, जब तक कि वे ज़िम्मी या मुस्तमिन न हों और धोखा न दिया जाए; बल्कि यही शर्त काफ़ी है क्योंकि यह उन दोनों को भी घेरती है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसाला 151: कस्बा हसनपुर, जिला मुरादाबाद से, प्रेषक मुहम्मद शेर अली खान, दिनांक 7 ज़ुल-हिज्जा 1338 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या फ़रमाते हैं कि दोनों पक्षों की आपसी सहमति पर सूद (ब्याज) कहाँ तक जायज़ है या नहीं, और यदि नहीं तो किस रूप में और क्यों? विस्तार से लिखें।

[1] अल-क़ुरान अल-करीम 2/275 [2] सहीह अल-बुखारी, किताबुल ईमान, बाब: आमाल नीयत पर निर्भर हैं, क़दीमी कुतुब खाना कराची 1/13

पृष्ठ 325/715

تو قسم بھی پوری ہوگی اور کوئی حرج بھی لازم نہ آئے گا۔ علاوہ بریں شرع نے دست بدست برابر بیع کرنا واجب تو نہ کیا یہ فرمایا ہے کہ اگر ان چیزوں کی باہم بیع کرنی ہو تو یوں کرو جس نہ کرنی ہو نہ کرے کوئی شرعی ایجاب تو نہیں۔ واللہ سبحانہ و تعالٰی اعلم۔ از لاہور مسجد بیگم شاہی مرسلہ مولوی احمد الدین صاحب یکم ذی القعدہ ۱۳۳۸ھ

مسئلہ ۱۵۰: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس بارہ میں کہ اس ملک میں اہل ہنود سے بیاج لینا جائز ہے یا نہیں؟ بعض کہتے ہیں کہ نصاری سے بوجہ اہل کتاب ہونے کے بیاج لینا نا درست ہے، ایسے خیال والوں کے پیچھے نماز پڑھنی درست ہے یا نہیں؟

الجواب: سود مطلقاً حرام ہے، قال اللہ تعالٰی "وحرّم الربوا" ۱۔ اللہ تعالٰی نے فرمایا: اور اللہ تعالٰی نے سود کو حرام کیا۔ (ت) ہاں جو مال غیر مسلم سے کہ نہ ذمی ہو نہ مستامن بغیر اپنی طرف سے کسی غدر اور بدعہدی کے ملے اگرچہ عقودِ فاسدہ کے نام سے اسے اسی نیت سے نہ بہ نیت ربا وغیرہ محرمات سے لینا جائز ہے اگرچہ وہ دینے والا کچھ کہے یا سمجھے کہ اسکے لئے اس کی نیت بہتر ہے نہ کہ دوسرے کی، لکل امرئ مانوی ۲۔ (ہر شخص کے لئے وہی ہے جس کی اس نے نیت کی۔ت) پھر بھی جس طرح برے کام سے بچنا ضرور ہے، برے نام سے بچنا بھی مناسب ہے ایاک وبالسوء الظن (بدگمانی سے بچ۔ت) ان تمام احکام میں مشرک و مجوسی و کتابی سب برابر ہیں جبکہ نہ ذمی و مستامن ہوں نہ غدر کیا جائے بلکہ یہی شرط کافی ہے کہ ان دونوں کو بھی حاوی ہے، واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۵۱: از قصبہ حسن پور ضلع مراد آباد مرسلہ محمد شیر علی خان مورخہ ۷ ذوالحجہ ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین بدیں امر کہ ہر دو فریق کہ باہمی رضامندی پر سود (بیاج) کہاں تک جائز ہے یا نہیں، اور اگر نہیں تو کس صورت میں اور کیوں؟ مفصل تحریر فرمائیے۔

۱؎ القرآن الکریم ۲/۲۷۵ ۲؎ صحیح البخاری کتاب الایمان باب ما جاء ان الاعمال بالنیة والحسبة قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۱۳

Fatawa Razawiya Volume 17

The Answer:

If interest could become permissible through mutual consent, then adultery would also become permissible and pork would also become permissible if the owner of the pig agrees to its consumption. What role does anyone's consent play in the wrath of Allah and His Messenger? It is mentioned in a Sahih Hadith that consuming interest is more severe than committing adultery with one's mother seventy-three times. Can adultery with one's mother be permissible 73 times with mutual consent? Allah Almighty knows best.

From the city of Bans Mandi, requested by Muhammad Siddiq Beg Sahib, 25 Muharram 1339 AH.

Problem 152: What do the scholars of religion say on this matter: What is interest (usury) and in what situations does it become interest? Clarify and be rewarded.

The Answer:

That excess which is devoid of any compensation and for which an entitlement is established in an agreement is interest. For example, if a hundred rupees are lent and it is agreed that an extra paisa will be taken, then this paisa is devoid of any Sharia compensation; therefore, the interest is prohibited. Allah Almighty knows best.

From Madrasa Manzar-ul-Islam Bareilly, requested by Akhtar Hussain Student, 15 Safar 1339 AH.

Problem 153: What do the scholars of religion say on this matter: If someone gives ten or five rupees to a betel-seller or a kohl-seller and tells him, "As long as my money is with you, give me betel leaf according to my daily requirement, and when you return the money, stop giving it," is this form permissible or not? And if not, what is the way to make it permissible?

The Answer:

This form is specifically interest and is prohibited; there is no way for interest to be permissible. Allah Almighty knows best.

From Bareilly, requested by Azizuddin Khan Merchant, 17 Shawwal 1339 AH.

Problem 154 to 155: What do the scholars of religion say on these matters: (1) A ten-rupee note was given to a Muslim and a Hindu; will the profit agreed upon from both

the Hindu and the Muslim be taken or not? (2) Is it permissible for a Muslim to take a cash loan on interest from a Hindu or not? Or is it permissible for a Muslim to take money on interest from a Hindu by pledging some jewelry? Clarify and be rewarded.

फ़तावा रज़विया जिल्द १७

अल-जवाब:

अगर आपसी सहमति से सूद जायज़ हो सकता, तो व्यभिचार (ज़िना) भी जायज़ हो सकता और सुअर भी जायज़ हो सकता जब सुअर का मालिक उसके खाने पर राज़ी हो। अल्लाह और रसूल के क्रोध में किसी की सहमति का क्या दखल? सही हदीस में है कि सूद खाना बहत्तर बार अपनी माँ से व्यभिचार करने से ज़्यादा सख़्त है। क्या आपसी सहमति से माँ के साथ ७३ बार व्यभिचार जायज़ हो सकता है? अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

शहर बांस मंडी से, प्रार्थी मोहम्मद सिद्दीक बेग साहब, २५ मुहर्रम १३३९ हिजरी।

मसला १५२: उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या कहते हैं कि सूद (ब्याज) क्या चीज़ है और किस-किस स्थिति में सूद हो जाता है? बयान करें और पुण्य कमाएं।

अल-जवाब:

वह वृद्धि जो किसी बदले (मुआवज़े) से रहित हो और समझौते में उसका अधिकार तय किया गया हो, सूद है। उदाहरण के तौर पर सौ रुपये उधार दिए और यह तय कर लिया कि एक पैसा ऊपर से लेगा, तो यह पैसा शारी बदले से रहित है, इसलिए सूद हराम है। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मदरसा मंज़र-उल-इस्लाम बरेली से, प्रार्थी अख्तर हुसैन छात्र, १५ सफ़र १३३९ हिजरी।

मसला १५३: उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या कहते हैं कि किसी पान बेचने वाले या सुरमा बेचने वाले को कोई व्यक्ति दस या पाँच रुपये दे और उससे कहे कि जब तक मेरे रुपये तुम्हारे पास रहें मुझे रोज़ाना के खर्च के बराबर पान दिया करो और जब रुपया वापस कर दोगे तो मत देना, क्या यह सूरत जायज़ है या नहीं? और अगर नहीं तो जायज़ होने की कौन सी सूरत है?

अल-जवाब:

यह सूरत विशुद्ध रूप से सूद और हराम है, सूद के जायज़ होने का कोई रूप नहीं। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

बरेली से, प्रार्थी अज़ीज़ुद्दीन ख़ान सौदागर, १७ शव्वाल १३३९ हिजरी।

मसला १५४ से १५५: उलेमा-ए-दीन इन मसलों में क्या कहते हैं कि: (१) एक मुसलमान और एक हिंदू को दस रुपये का नोट दिया या हिंदू-मुसलमान दोनों से इसका जो लाभ तय हुआ है वह लिया जाएगा या नहीं? (२) हिंदू से नकद कर्ज़ सूद पर लेना मुसलमान के लिए जायज़ है या नहीं? या कुछ ज़ेवर गिरवी रखकर हिंदू से सूद पर रुपया लेना मुसलमान के लिए जायज़ है या नहीं? बयान करें और पुण्य कमाएं।

पेज ३२६ ऑफ़ ७१५

الجواب:

اگر باہمی رضامندی سے سود جائز ہو سکے گا تو زنا بھی جائز ہو سکے گا اور سور بھی جائز ہو سکے گا جبکہ سور کا مالک اس کے کھانے پر راضی ہو، اللہ و رسول کے غضب میں کسی کی رضامندی کو کیا دخل، صحیح حدیث میں ہے فرمایا کہ سود کھانا بہتر بار اپنی ماں سے زنا کرنے سے زیادہ سخت ہے۔ کیا باہمی رضامندی سے ماں کے ساتھ ۷۳ بار زنا جائز ہو سکتا ہے، واللہ تعالیٰ اعلم

از شہر بانس منڈی مسئولہ محمد صدیق بیگ صاحب ۲۵ محرم ۱۳۳۹ھ

مسئلہ ۱۵۲: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ سود کیا چیز ہے اور کس کس صورت میں سود ہو جاتا ہے؟ بینوا توجروا۔

الجواب:

وہ زیادت کہ عوض سے خالی ہو اور معاہدہ میں اس کا استحقاق قرار پایا ہو سود ہے مثلاً سو روپے قرض دئے اور یہ ٹھہرالیا کہ پیسہ اوپر سے لے گا تو یہ پیسہ عوض شرعی سے خالی ہے لہٰذا سود حرام ہے واللہ تعالیٰ اعلم۔

از مدرسہ منظر الاسلام بریلی مسئولہ اختر حسین طالب علم ۱۵ صفر ۱۳۳۹ھ

مسئلہ ۱۵۳: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ کسی پنواڑی یا سرمہ فروش کو دس یا پانچ روپے کوئی شخص دے اور اس سے کہے کہ جب تک میرے روپے تمہارے ذمہ رہے مجھے

پان بقدر خرچ روزانہ کے دیا کرو اور جب روپیہ واپس کردوگے تو مت دینا یہ صورت جائز ہے یا نہیں؟ اور نہیں تو جواز کی کون سی صورت ہے؟

الجواب:

یہ صورت خاص سود اور حرام ہے، سود کے جواز کی کوئی شکل نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

از بریلی مسئولہ عزیز الدین خاں سوداگر ۱۷ شوال ۱۳۳۹ھ

مسئلہ ۱۵۴ تا ۱۵۵: کیا فرماتے ہیں علمائے دین ان مسئلوں میں کہ: (۱) ایک مسلمان اور ایک ہندو کو دس روپیہ کا نوٹ دیا یا ہندو مسلمان دونوں سے اس کا نفع جو قرار پایا ہے لیا جائے گا یا نہیں؟ (۲) ہندو سے نقد قرض سودی لینا مسلمان کو جائز ہے یا نہیں؟ یا کچھ زیور رکھ کر روپیہ سودی لینا مسلمان کو ہندو سے جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

Fatawa Rizvia Volume 17

The Answer: (1) If a ten-rupee note is sold for more, it is permissible to take it from both Hindus and Muslims. However, if it was given as a loan and it was agreed to take back more, then it is absolutely forbidden (haram) from a Muslim, and permissible from a Hindu as long as he does not consider it interest (usury). Allah Almighty knows best. (2) Just as taking interest is forbidden, giving it is also forbidden unless there is a true, genuine necessity. If the jewelry is one's own, then pawning it to get interest-bearing money is forbidden because this is not a necessity—why not just sell the jewelry? And if it was borrowed from someone else to be pawned, and one has nothing of their own to sell to manage, and there is a true need and necessity to take a loan, then it is permissible. Allah Almighty knows best.

Issue 156: From Bareilly city, sent by Shaukat Ali Sahib, 15 Shaban 1337 AH. What is the ruling of the people of Sharia on this matter: Zaid asked Bakr for ten rupees on the condition that at harvest time he would give 5 'mans' (a unit of weight) of wheat. Khalid asked Bakr for ten rupees on the condition that he would give ten rupees' worth of wheat at the market rate prevailing at harvest time. Bakr said, "I don't have money right now. You two take ten rupees' worth of wheat each at the current rate (which is 10 'mans' for 10 rupees)." Both individuals willingly took the wheat according to the above conditions, sold it, and used the ten rupees each. Now, is it permissible for Zaid to give wheat at the rate of 15 'mans' per rupee as promised at harvest, and for Khalid to give wheat at the market rate of 12 'mans' per rupee? And would it have been permissible if Bakr had given Khalid money on the condition that he would give wheat at the harvest market rate?

The Answer: This scenario is absolutely forbidden (haram) and pure interest (usury). Taking back more than the two and a half 'mans' of wheat that he gave is forbidden, forbidden, forbidden. And if he had given money, there would have been two possibilities: if he gave the money as a loan and made it a condition that wheat be given at the time of repayment, then this condition would be void; Zaid and Khalid would only have had to repay that amount of money. If he were purchasing wheat and paying the money in advance, this would be a 'Bai Salam' (forward sale) transaction; it would be permissible if its conditions were met, otherwise forbidden. Allah Almighty knows best.

Issue 157: From Shahjahanpur, Mohalla Khalil, sent by Haji Muhammad Aizaz Hussain Khan Sahib, 16 Rabi-ul-Awwal 1320 AH. What do the scholars of religion say in this

matter: a person has advertised that "I give a thirty-rupee watch for one rupee, but on the condition that the person who buys my ticket for one rupee, I will send five tickets in his name. When he sells those five tickets for five rupees and returns those five rupees along with the names of the five buyers..."

जवाब: (1) दस का नोट अगर ज़्यादा में बेचा गया तो हिंदू और मुसलमान दोनों से लेना जायज़ है, और अगर क़र्ज़ दिया गया और ज़्यादा लेना तय हुआ तो मुसलमान से हराम क़तई (पूर्णतः वर्जित) है और हिंदू से जायज़ है जब तक कि वह इसे सूद (ब्याज) न समझे। वल्लाहु तआला आलम (अल्लाह ही बेहतर जानता है)। (2) सूद जिस तरह लेना हराम है, वैसे ही देना भी हराम है जब तक कि सच्ची हक़ीक़ी मजबूरी न हो। ज़ेवर अगर अपना है तो उसे गिरवी रखकर सूदी रुपया निकलवाना हराम है क्योंकि यह मजबूरी नहीं हुई, ज़ेवर बेच क्यों नहीं देते? और अगर दूसरे से गिरवी रखने के लिए माँग कर लिया है और पास कोई ऐसी चीज़ नहीं जिसे बेचकर काम निकाल सके और क़र्ज़ लेने की सच्ची ज़रूरत व मजबूरी है तो जायज़ है। वल्लाहु तआला आलम।

मसला 156: शहर बरेली से, प्रेषक शौकत अली साहब, 15 शाबान 1337 हिजरी। शरीयत के जानकारों का इस मसले में क्या हुक्म है कि ज़ैद ने बक्र से दस रुपये इस शर्त पर माँगे कि मैं फ़सल पर 5 मन (एक वज़न की इकाई) गेहूँ दूँगा, और खालिद ने बक्र से दस रुपये इस शर्त पर माँगे कि जो बाज़ार का भाव फ़सल पर होगा, उस भाव से दस रुपये के गेहूँ दूँगा। बक्र ने कहा कि मेरे पास इस वक़्त रुपया नहीं है, तुम दोनों व्यक्ति दस-दस रुपये के गेहूँ ले जाओ जो इस वक़्त (10 मन) का भाव है। दोनों व्यक्तियों ने रज़ामंदी से उपर्युक्त शर्तों के अनुसार गेहूँ ले लिए और उसे बेचकर दस-दस रुपये अपने काम में लाए। अब क्या ज़ैद का फ़सल पर वादे के मुताबिक़ 15 मन प्रति रुपया गेहूँ देना और खालिद का बाज़ार भाव के हिसाब से 12 मन प्रति रुपया गेहूँ देना जायज़ हुआ या नहीं? और अगर बक्र खालिद को रुपया उपर्युक्त शर्तों पर देता कि फ़सल पर जो भाव होगा उसके हिसाब से गेहूँ दूँगा, तो क्या यह जायज़ होता?

जवाब: यह सूरत (स्थिति) हराम क़तई और विशुद्ध सूद है। उसने जो ढाई मन गेहूँ दिए, उनसे ज़्यादा लेना हराम हराम हराम है। और अगर रुपया देता तो इसमें दो सूरतें थीं: रुपया क़र्ज़ देता और यह शर्त लगा लेता कि अदायगी के वक़्त गेहूँ देंगे तो यह शर्त बातिल (अमान्य) थी; ज़ैद और खालिद को सिर्फ़ उतना रुपया अदा करना था। और अगर गेहूँ की खरीदारी करता और रुपया पेशगी (अग्रिम) देता तो यह सूरत 'बै-सल्म' (अग्रिम भुगतान बिक्री) की थी; अगर इसकी शर्तें पूरी होतीं तो जायज़ होता, वरना हराम। वल्लाहु तआला आलम।

मसला 157: शाहजहाँपुर, मुहल्ला ख़लील से, प्रेषक हाजी मुहम्मद एज़ाज़ हुसैन ख़ान साहब, 16 रबी-उल-अव्वल 1320 हिजरी। उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि एक व्यक्ति ने विज्ञापन दिया है कि मैं एक रुपये में तीस रुपये की घड़ी देता हूँ लेकिन इस शर्त पर कि जो व्यक्ति मेरा टिकट एक रुपये में खरीदेगा, उसके नाम मैं पाँच टिकट भेजूँगा। जब वह पाँच टिकट पाँच रुपये में बेचकर वह पाँच रुपये उन पाँच खरीदारों के नाम के साथ...

पृष्ठ 327 का 715

الجواب: (۱) دس کا نوٹ اگر زیادہ کو بیچا تو ہندو و مسلمان دونوں سے لینا جائز اور اگر قرض دیا اور زیادہ لینا قرار پایا تو مسلمان سے حرام قطعی اور ہندو سے جائز جبکہ اسے سود سمجھ کر نہ لے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ (۲) سود جس طرح لینا حرام ہے یونہی دینا بھی حرام جب تک سچی حقیقی مجبوری نہ ہو، زیور اگر اپنا ہے تو اسے رہن رکھ کر سودی روپیہ نکلوانا حرام کہ یہ مجبوری نہ ہوئی، زیور بیچ کیوں نہیں ڈالتا، اور اگر دوسرے سے رہن رکھنے کے لیے مانگ کر لیا ہے اور پاس کوئی ایسی چیز نہیں جسے بیچ کر کام نکال سکے اور قرض لینے کی سچی ضرورت و مجبوری ہے تو جائز ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۱۵۶: از شہر بریلی مرسلہ شوکت علی صاحب ۱۵ شعبان ۱۳۳۷ھ کیا حکم ہے اہل شریعت کا اس مسئلہ میں کہ زید نے بکر سے دس روپیہ اس شرط پر مانگے کہ میں فصل پر گندم ۵ اماں دوں گا اور خالد نے بکر سے دس روپیہ اس شرط پر مانگے کہ جو نرخ بازار فصل پر ہوگا اس نرخ سے دس روپیہ کے گندم دوں گا۔ بکر نے کہا میرے پاس اس وقت روپیہ نہیں ہے تم دونوں شخص دس دس روپیہ کے گندم جو اس وقت (۱۰ اماں) کا نرخ لے جاؤ۔ دونوں شخص رضامندی سے گندم حسب شرائط بالا لے گئے اور فروخت کر کے دس دس روپے اپنے صرف میں لائے، اب زید کو فصل پر فی روپیہ (۱۵ اماں) گندم حسب وعدہ اور خالد کو فی روپیہ (۱۲ اماں) گندم نرخ بازار دیتے ہوئے یہ بیع جائز ہوئی یا نہیں؟ اور اگر بکر خالد کو روپیہ حسب شرائط بالا یعنی جو فصل پر نرخ ہوگا دوں گا دیتا تو جائز ہوتا یا نہیں؟

الجواب: یہ صورت حرام قطعی اور خالص سود ہے، ڈھائی من گیہوں جو اس نے دیئے ان سے زیادہ لینا حرام حرام حرام۔ اور اگر روپیہ دیتا تو اس میں دو صورتیں تھیں، روپیہ قرض دیتا اور یہ

شرط ٹھہرالیتا کہ ادا کے وقت گیہوں دیں تو یہ شرط باطل تھی، زید و خالد پر صرف اتنا روپیہ ادا کرنا تھا اور اگر گیہوں کی خریداری کرتا اور روپیہ پیشگی دیتا تو یہ صورت بیع سلم کی تھی اگر اس کے شرائط پائے جاتے جائز ہوتی ورنہ حرام۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۱۵۷: از شاہجہاں پور محلہ خلیل مرسلہ حاجی محمد اعزاز حسین خان صاحب ۱۶ ربیع الاول ۱۳۲۰ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص نے اشتہار دیا ہے کہ میں ایک روپیہ میں تیس روپیہ کی گھڑی دیتا ہوں لیکن اس شرط سے کہ جو شخص میرا ٹکٹ ایک روپیہ کو خریدے اس کے نام پانچ ٹکٹ میں بھیجوں گا جب وہ پانچ ٹکٹ پانچ روپیہ کو فروخت کر کے وہ پانچ روپیہ مع ان کے پانچ خریداروں کے

Fatawa Rizvia Volume 17 (17)

...send the names to me, then I will send five tickets to each of those five buyers. When each of them sells their respective tickets and sends twenty-five rupees to me, I will send a thirty-rupee watch to the aforementioned person. Then the advertiser will send five tickets to each of those previous twenty-five buyers once they sell their tickets and send the money to him. When he sends watches worth thirty rupees each to those five people who had bought tickets from the aforementioned person—in short, as soon as thirty rupees reach him in this sequence, he will continue to send a watch to one person in order. Thus, every person will get a watch for one rupee, but on the condition that tickets worth thirty rupees are sold by him. Those tickets are actually like a certificate and document of purchase because he has written the word 'coupon' on this ticket, the translation of which is written as 'interest-bearing agreement', which shows that these tickets are not the item sold but an agreement that in exchange for one rupee, an item worth thirty rupees from the goods for sale for which the buyer requests will be received according to the mentioned terms in the advertisement. So, is it Shariah-compliant to take anything from this mentioned transaction or not? If it is permissible, is this contract a contract of sale (Bai') or what? And if it is a sale, is any other contract like agency, brokerage, and taking of wages etc., included in it or not? And is the price that one rupee, or is it including the aforementioned extra amount? If it is with the extra amount, then this sale will be in the sense of the prohibited 'lottery' (chitti) sale in Shariah, even if all lotteries are not at once but scattered, or is it not in that sense? Furthermore, will this sale be valid with the inclusion of the above-mentioned conditions or not? Please provide an answer with authoritative Shariah evidence. A copy of the advertisement for reference is attached to this question. "Explain, O Allah, and you will be rewarded by Allah."

The copy of the advertisement for observation is written below: A valuable thirty-rupee [item] for only one rupee from London Watch Company, Commercial Building, Lucknow. Gold, silver or metal pocket watches, clocks, and jewelry, etc. You will get this certificate for which you have spent only one rupee. And sell those tickets included in them faithfully at one rupee per ticket among your friends and acquaintances as much as you can. And then when you send this certificate to us along with the money you have collected from the sale, we promise that we will send you one of those things mentioned above that you deserve (see our sample list) when the following detailed conditions are met. First condition: [send] to us the

names and addresses clearly written in pen of those persons to whom you sold tickets...

फतावा रिज़विया जिल्द सत्रह (17)

...नामों को मेरे पास भेज दे फिर मैं इन पांचों खरीदारों के पास पांच-पांच टिकट भेजूंगा जबकि उनमें से हर एक व्यक्ति अपने-अपने टिकट बेचकर पच्चीस रुपये की राशि मेरे पास भेज देंगे तो मैं तीस रुपये की घड़ी उस पूर्वोक्त व्यक्ति के पास भेज दूंगा और फिर वह विज्ञापनदाता व्यक्ति उन पिछले पच्चीस खरीदारों में से हर एक के नाम पांच-पांच टिकट भेज देगा जबकि वे अपने-अपने टिकट बेचकर रुपये उसके पास भेज देंगे जब वह उन पांच व्यक्तियों के पास तीस-तीस रुपये की घड़ी भेजेगा जिन्होंने पूर्वोक्त व्यक्ति से टिकट खरीदे थे। संक्षेप में, इसी क्रम में जब उसके पास तीस रुपये पहुँचते रहेंगे, तो वह क्रमानुसार एक व्यक्ति को घड़ी भेजता रहेगा। तो हर व्यक्ति को घड़ी एक रुपये में मिलेगी, लेकिन इस शर्त पर कि उसके माध्यम से तीस रुपये के टिकट उस व्यक्ति द्वारा बेच दिए जाएँ और वे टिकट वास्तव में खरीदारी के एक प्रमाण पत्र और दस्तावेज़ के रूप में हैं क्योंकि उसने इस टिकट पर 'कूपन' शब्द लिखा है जिसका अनुवाद 'ब्याजी अनुबंध' लिखा गया है, जिससे स्पष्ट है कि ये टिकट बिकाऊ वस्तु नहीं हैं बल्कि इस बात का अनुबंध हैं कि एक रुपये के बदले तीस रुपये की वस्तु, उन बिकाऊ वस्तुओं में से जिसके लिए खरीदार विज्ञापन में दी गई शर्तों के अनुसार आवेदन करेगा, उसे मिलेगी। अत; इस उपर्युक्त मामले से किसी वस्तु का लेना शरई तौर पर जायज़ है या नहीं? यदि जायज़ है, तो क्या यह अनुबंध 'बैय' (बिक्री) का अनुबंध है या कुछ और? और यदि यह बैय है, तो क्या इसमें एजेंसी, दलाली और पारिश्रमिक लेने आदि जैसा कोई दूसरा अनुबंध शामिल है या नहीं? और कीमत वह एक रुपया है या उस उक्त अतिरिक्त राशि के साथ है? यदि अतिरिक्त राशि के साथ है, तो यह बिक्री शरीअत में वर्जित प्रचलित 'चिट्ठी' (लॉटरी) पद्धति की बिक्री के अर्थ में होगी, भले ही सारी चिट्ठी एक साथ न हों बल्कि अलग-अलग हों, या यह उस अर्थ में नहीं है? फिर ऊपर बताई गई शर्तों के साथ यह बिक्री जायज़ होगी या नहीं? शरई प्रामाणिक साक्ष्यों के साथ उत्तर प्रदान करने की कृपा करें। विज्ञापन की प्रति अवलोकन हेतु इस प्रश्न के साथ संलग्न है। "स्पष्ट करें, हे अल्लाह, आपको अल्लाह के पास इसका प्रतिफल मिलेगा।"

अवलोकन हेतु विज्ञापन की प्रति नीचे दी जा रही है: कीमती तीस रुपये वाली [वस्तु] केवल एक रुपये में लंदन वॉच कंपनी, कमर्शियल बिल्डिंग, लखनऊ। सोने, चाँदी या धातु की जेबी घड़ियाँ, क्लॉक और आभूषण आदि। आपको यह प्रमाणपत्र मिलेगा जिसके लिए आपने केवल एक रुपया खर्च किया है। और उन टिकटों को जो इनमें शामिल हैं, ईमानदारी के साथ प्रति टिकट एक रुपये में अपने मित्रों और परिचितों में बेचें, जितना आपसे हो सके। और फिर जब आप इस प्रमाणपत्र को उस राशि के

साथ जो आपने बेचकर प्राप्त की है हमें भेजेंगे, तो हम वादा करते हैं कि हम आपको ऊपर बताई गई चीज़ों में से कोई एक चीज़ जिसके आप हकदार होंगे (हमारी नमूना सूची देखें) भेजेंगे, जब निम्नलिखित विस्तृत शर्तें पूरी होंगी। पहली शर्त: हमारे पास उन व्यक्तियों के नाम और पते साफ लिखावट में भेजें जिन्हें आपने टिकट बेचे हैं...

पृष्ठ 715 में से 328

ناموں کے میرے پاس بھیج دے پھر میں ان پانچوں خریداروں کے پاس پانچ پانچ ٹکٹ بھیجوں گا جبکہ ان میں سے ہر ایک شخص اپنے اپنے ٹکٹ فروخت کر کے مبلغ پچیس روپیہ میرے پاس بھیج دیں گے تو میں تیس روپیہ کی گھڑی اس مقدم الذکر شخص کے پاس بھیج دوں گا اور پھر وہ شخص اشتہار دینے والا ان پچھلے پچیس خریداروں میں سے ہر ایک کے نام پانچ پانچ ٹکٹ بھیج دے گا جبکہ یہ اپنے اپنے ٹکٹ فروخت کر کے روپیہ اس کے پاس بھیج دیں گے جب وہ ان پانچ شخصوں کے پاس تیس تیس روپیہ کی گھڑی بھیجے گا جنہوں نے مقدم الذکر شخص سے ٹکٹ خریدے تھے غرضکہ اسی سلسلہ میں جبکہ اس کے پاس تیس روپیہ پہنچتے جائیں گے تو وہ حسب ترتیب ایک شخص کو گھڑی بھیجتا رہے گا، تو ہر شخص کو گھڑی ایک روپیہ میں ملے گی مگر بایں شرط کہ اس کے ذریعہ سے تیس روپیہ کے ٹکٹ اس شخص کے فروخت ہوجائیں اور وہ ٹکٹ دراصل بطور ایک سند و وثیقہ خریداری کے ہیں کیونکہ اس ٹکٹ پر لفظ کو پن اس نے لکھا ہے جس کا ترجمہ سودی اقرار نامہ لکھا ہے جس سے ظاہر ہے کہ یہ ٹکٹ مبیعہ نہیں بلکہ اقرار نامہ ہے اس بات کا کہ بعوض ایک روپیہ تیس روپیہ کی شے اشیاء مبیعہ سے جس کی وہ خریدار درخواست کرے بلحاظ شرائط مذکورہ و مندرجہ اشتہار ملے گی، پس اس معاملہ مذکورہ سے کسی شے کا لینا شرعاً جائز ہے یا نہیں، اگر جائز ہے تو یہ عقد عقد بیع ہے یا کیا؟ اور اگر بیع ہے تو اس میں کوئی دوسرا عقد مثل توکیل و دلالی واخذ اجرت وغیرہ مندرج ہے یا نہیں، اور ثمن وہ ایک روپیہ ہے یا مع اس زیادتی مذکورہ کے، اگر مع زیادتی ہے تو یہ بیع بطریق بیع چھٹی مروجہ ممنوعہ شرعیہ کے معنی میں ہوگی گو ایک لخت سب چھٹی نہ ہوں متفرقاً متفرقاً ہوں یا اس معنی میں نہیں، پھر یہ بیع باندرج شرائط مذکورہ بالا جائز ہوگی یا نہیں، بحوالہ شرعیہ دلائل معتبرہ

جواب مرحمت فرمایا جائے اور نقل اشتہار بغرض ملاحظہ ہمرشتہ سوال ہذا ہے بینوا اللہ توجروا عند اللہ۔

نقل اشتہار بغرض ملاحظہ ذیل میں تحریر کی جاتی ہے: قیمتی تیں روپیہ صرف ایک روپیہ کو لندن واچ کمپنی کمرشیل بلڈنگ لکھنو سونے چاندی یا دھات کی جیبی گھڑیاں کلاک اور زیور وغیرہ تم کو یہ سند ملے گی جس کے واسطے تم نے صرف ایک روپیہ خرچ کیا ہے اور ان ٹکٹوں کو جو کہ ان میں شامل ہیں ایمان کے ساتھ فی ٹکٹ ایک روپیہ فروخت کرو اپنے دوستوں اور ملاقاتیوں میں ان میں سے ٹکٹ فروخت کرو جس قدر کہ تم سے ہوسکے، اور پھر جب تم اس سند کو مع اس روپیہ کے جو تم نے فروخت کر کے وصول کیا ہے ہمارے پاس بھیجو گے ہم وعدہ کرتے ہیں کہ ہم تم کو ایک چیز ان چیزوں میں سے جو کہ اوپر بیان کی گئیں جس کے تم مستحق ہو گے (ہماری فہرست نمونہ کی دیکھ لو) جبکہ شرائط مفصلہ ذیل پوری ہوں گی ہم بھیجیں گے، شرط اول تم ہمارے پاس نام اور پتہ صاف قلم سے ان شخصوں کے جسکے ہاتھ تم نے ٹکٹ

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

...you will send those you have sold. The second condition is that we will inquire from each of those persons through writing for our satisfaction whether you have sold to those persons or not. The third condition is that the person should send us their certificate along with the rupees they received from selling the tickets; even if you or your friend cannot sell five tickets, you will still be entitled to one of our excellent items, whether it was four, three, two, or just one ticket sold according to the above conditions. Consider carefully that by spending only one rupee from your own pocket, you make yourself entitled in return, according to the above conditions, to a pure gold pocket watch or a clock whose price will be thirty rupees. We work with you with honesty, and we are confident that you will also work with us with honesty; we trust you. From our goods, whichever item you desire, you may satisfy yourself by checking according to the sample list in India, Burma, or Ceylon.

Translation of that ticket which is sold for one rupee: To the buyer of this one ticket for the full value of the rupee, a certificate with five tickets will be given, which he should sell for one rupee each. Afterwards, he should send the collected price of five rupees to us via Money Order or Check and distribute it as written on the certificate. For the word ticket, the term 'coupon' is used, which is translated in the dictionary as 'interest-based agreement', only.

The Answer: The mentioned matter is purely forbidden and gambling, a heap and pile of thousands upon thousands of countless prohibitions; rather, it is an endless series of forbidden acts, a strange invention of the deceitful Iblees [Satan].

| Allah Almighty said: "And so We have appointed for every Prophet enemies—devils from among humans and jinn, inspiring one another with flowery talk to deceive [others]. Had your Lord willed, they would not have done it. So leave them and what they invent. And [it is] so that the hearts of those who do not believe in the Hereafter may incline toward it..." | Allah Almighty said: Similarly, We have made for every prophet some enemies, devils from men and jinn, who put into each other's hearts false, gilded words to deceive (and had your Lord willed, they would not have done so; so leave them and the lies they fabricate). Secondly, so that the hearts of those who do not believe in the Hereafter may lean towards this falsehood. |

फ़तावा रज़विया (जिल्द सत्रहवीं)

...बेचे हैं भेजोगे। दूसरी शर्त यह है कि हम हर एक शख्स से पत्र के माध्यम से जानकारी प्राप्त करेंगे अपने इत्मीनान के लिए कि आया तुमने उन लोगों के हाथ बेचा है या नहीं। तीसरी शर्त वह शख्स हमारे पास अपनी सनद साथ इस रुपये के जो उन्होंने अपने टिकट बेचकर वसूल किए हैं हमारे पास भेजें, अगर तुम या तुम्हारा दोस्त पांच टिकट न बेच सकें तो भी तुम हमारी एक उम्दा चीज़ों में से मुस्तहक़ होगे अगरचे चार या तीन या दो या सिर्फ एक ही टिकट बमूजब शरायत बाला के बेचे गए हों। अच्छी तरह गौर कर लो कि तुम सिर्फ एक रुपया अपनी जेब से खर्च करके उसके बदले में बमूजब शरायत बाला के अपने आप को खालिस सोने की जेबी घड़ी या दीवार घड़ी जिसका मूल्य तीस रुपये होगा, के मुस्तहक़ करते हो। हम तुम्हारे साथ ईमानदारी से काम करते हैं और हमें यकीन है कि तुम भी हमारे साथ ईमानदारी करोगे, हम तुम पर ऐतबार करते हैं। हमारे माल में से जिस चीज़ को जी चाहे नमूने की फेहरिस्त के मुताबिक भारत, बर्मा, सीलोन में जाँच कराके इत्मीनान करा लो।

इस टिकट का अनुवाद जो एक रुपये में बेचा जाता है: तुम्हें रुपये की पूरी कीमत के लिए, इस एक टिकट के खरीदार को एक सनद के साथ पांच टिकट मिलेंगे जिन्हें उसे प्रति टिकट एक रुपया में बेचना चाहिए। उसके बाद उसे पाँच रुपये की वसूल की गई राशि मनी ऑर्डर या चेक के माध्यम से हमें भेजनी चाहिए और तकसीम (वितरण) करना चाहिए जैसा कि सनद पर लिखा है। टिकट के लिए 'कूपन' शब्द लिखा है जिसका अनुवाद डिक्शनरी में 'सूदी इकरारनामा' (ब्याज समझौता) लिखा है, बस।

अल जवाब (उत्तर): मज़कूरह मामला महज़ हराम और जुआ है, हज़ारों हज़ार अनगिनत मनाही चीज़ों का ढेर और अंबार है, बल्कि हरामों का एक कभी न खत्म होने वाला सिलसिला, मक्कार इबलीस (शैतान) की एक अजीब ईजाद है।

| अल्लाह तआला ने फरमाया: "इसी तरह हमने हर नबी के लिए कुछ दुश्मन बनाए—इंसानों और जिन्नों में से शैतान, जो धोखे के लिए एक-दूसरे के दिलों में चिकनी-चुपड़ी झूठी बातें डालते हैं। और अगर आपका रब चाहता तो वे ऐसा न करते, तो आप उन्हें और जो वे झूठ गढ़ते हैं उसे छोड़ दें। और (यह इसलिए है) ताकि परलोक पर विश्वास न करने वालों के दिल इस झूठ की तरफ झुक जाएं.." | अल्लाह तआला ने फरमाया: इसी तरह हमने हर नबी के लिए कुछ दुश्मन बनाए, आदमी और जिन्न शैतान, जो एक दूसरे के दिलों में झूठी और सजावटी बातें धोखे के लिए डालते हैं (और अगर आपका

रब चाहता तो वे ऐसा न करते, तो उन्हें और उनके गढ़े हुए झूठ को छोड़ दें)। दूसरे इसलिए ताकि वे लोग जो आखिरत पर ईमान नहीं रखते, उनके दिल इस बातिल (असत्य) की तरफ झुक जाएँ। |

पृष्ठ 329 / 715

فروخت کئے ہیں بھیجوگے۔ شرط دوسری ان میں سے ہر ایک شخص سے ہم بذریعہ تحریر کے دریافت کریں گے اپنے اطمینان کے واسطے کہ آیا تم نے ان شخصوں کے ہاتھ فروخت کیا ہے یا نہیں۔ تیسری شرط وہ شخص ہمارے پاس اپنی سند مع اس روپیہ کے جو کہ انہوں نے اپنے ٹکٹ فروخت کرکے وصول کیا ہے ہمارے پاس بھیجیں گے، اگر تم یا تمہارے دوست پانچ ٹکٹ نہ فروخت کرسکیں تاہم تم ہماری ایک چیز کے عمدہ چیزوں میں سے مستحق ہوگے اگرچہ چار یا تین یا دو یا صرف ایک ہی ٹکٹ بموجب شرائط بالا کے فروخت ہوا ہو خوب غور کرلو کہ تم صرف ایک روپیہ اپنی جیب سے خرچ کرکے اس کے عوض میں بموجب شرائط بالا کے اپنے آپ کو مستحق کرتے ہو خالص سونے کی جیبی گھڑی کا یا کلاک کا جس کی قیمت تیس روپیہ ہوگی ہم تمہارے ساتھ ایمانداری سے کام کرتے ہیں اور ہم کو یقین ہے کہ تم بھی ہمارے ساتھ ایمانداری کروگے، ہم تم پر اعتبار کرتے ہیں ہمارے مال میں سے جس چیز کو جی چاہے بموجب نمونہ کی فہرست کے ہندوستان، برما، سیلون میں جانچ کراکے اطمینان کرالو۔

ترجمہ اس ٹکٹ کا جو ایک روپیہ کو فروخت ہوتا ہے: تمہیں روپیہ کی قیمت کامل صرف ایک روپیہ کو خریدنے والے کو اس ٹکٹ کے ایک سند مع پانچ ٹکٹوں کے ملے گی جن کو کہ فی ٹکٹ اس کو ایک روپیہ میں فروخت کرنا چاہئے بعدہ ہمارے پاس اس کی قیمت یعنی پانچ روپیہ وصول شدہ بذریعہ منی آرڈر یا چک کے بھیجنا چاہئے اور تقسیم کرنا چاہئے جیسا کہ سند پر لکھا ہے ٹکٹ کے لفظ کو کوپن لکھا ہے جس کا ترجمہ ڈکشنری میں سودی اقرار نامہ لکھا ہے، فقط،

الجواب: معاملہ مذکورہ محض حرام و قمار، ہزاراں ہزار محرمات بے شمار کا تودہ وانبار، بلکہ حراموں کا سلسلہ ناپیداکنار، طرفہ اختراع ابلیس مکار ہے،

| اللہ تعالیٰ نے فرمایا: اسی طرح ہم نے ہر نبی کیلئے کچھ دشمن بنائے شیطان آدمی اور جن کہ ایک دوسرے کے دل میں جھوٹی بات ملمع کی ہوئی ڈالتے ہیں ایک تو فریب دینے کو (اور تیرا رب چاہتا تو وہ ایسا نہ کرتے تو تو چھوڑ دے انہیں اور ان کے باندھے جھوٹ کو) دوسرے اس لئے کہ جھک آئیں اس باطل کی طرف ان کے دل | قال اللہ تعالیٰ "وَ كَذٰلِكَ جَعَلْنَا لِكُلِّ نَبِيٍّ عَدُوًّا شَيٰطِيْنَ الْاِنْسِ وَ الْجِنِّ يُوْحِيْ بَعْضُهُمْ اِلٰى بَعْضٍ زُخْرُفَ الْقَوْلِ غُرُوْرًا ؕ وَ لَوْ شَآءَ رَبُّكَ مَا فَعَلُوْهُ فَذَرْهُمْ وَ مَا يَفْتَرُوْنَ(۱۱۲) وَ لِتَصْغٰۤى اِلَيْهِ اَفْـِٕدَةُ الَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ بِالْاٰخِرَةِ" |

Fatawa Razawiya (Volume 17)

"And that they may be pleased with it, and that they may commit what they are committing." 1 | (Those who do not believe in the Hereafter and prefer it, and earn through it what they are to earn.)

Torment and punishment in the Hereafter, and in this world—for example, in the case in question, some money and some watch or jewelry etc., and some—

"He has lost this world and the Hereafter." 2 (He has suffered loss in this world and the Hereafter. - T) that the money was gone and nothing was received.

"Say, 'Has Allah permitted you [this], or do you invent [lies] about Allah?'" 3 | O Prophet! Say to these people, has Allah given you permission for this, or do you forge lies against God?

Meaning, there is no permission, so it is surely a fabrication.

"Or have they partners who have ordained for them a religion which Allah has not allowed?" 4 | Do they have some self-made gods who have fabricated for them a religion for which Allah gave no permission?

May Allah Almighty protect Muslims from the deception of Satan, Amen! The brief detail of this summary is that if you look at the reality, the mentioned matter, in view of the objectives of the ticket seller and ticket buyer, is not a legal contract of sale and purchase (bai' wa shira) at all. Rather, it is just trapping people in the net of greed and casting lots on a vague hope, and this is gambling (qimar). But it is evident that there is no mention at all of the sale and purchase of that watch or jewelry, etc., which was lured for; nor is the category of that item determined. Instead, the merchant says that when such happens, we promise that we will send you one thing from these items. This is a promise, and sale (bai') is a contract, and there is a vast difference between a promise and a contract. Now, concerning the certificate and ticket: he asks for the certificate back along with the price, and in a sale, returning the sold item along with the price makes no sense. Scholars have written the identification of a child who does not understand sale and purchase (a child who does not comprehend buying and selling. - T) that he takes the item and also starts asking for the money back, "so it is known that you do not know the meaning of exchange (mubadala), and sale is nothing but exchange." (T). Yes, the name 'sale of ticket' was taken, but that text was printed on it which clearly showed that this is not a sold commodity (mabi') but a...

1 The Holy Quran 6/ 113-114 2 The Holy Quran 22/ 11 3 The Holy Quran 10/ 59 4 The Holy Quran 42/ 21

फ़तावा रज़विया (खण्ड 17)

"और ताकि वे इससे प्रसन्न हों, और ताकि वे वह करें जो वे कर रहे हैं।" 1 | (जिन्हें आख़िरत (परलोक) पर ईमान नहीं है और वे इसे पसंद करते हैं और इसके माध्यम से वह कमाते हैं जो उन्हें कमाना है।)

आख़िरत में वबाल और अज़ाब और दुनिया में, उदाहरण के तौर पर, विचारणीय मामले में कुछ रुपया और कोई घड़ी या गहना आदि और कोई—

"उसने दुनिया और आख़िरत दोनों खो दी।" 2 (उसने दुनिया और आख़िरत में घाटा पाया। - त) कि रुपया चला गया और कुछ न मिला।

"कह दीजिए, 'क्या अल्लाह ने तुम्हें अनुमति दी है, या तुम अल्लाह पर झूठ गढ़ते हो?'" 3 | ऐ नबी! इन लोगों से फ़रमा दीजिए कि क्या अल्लाह ने तुम्हें इसकी अनुमति दी है या खुदा पर बोहतान (झूठा आरोप) लगाते हो।

यानी अनुमति तो है नहीं, तो निश्चित रूप से यह झूठ ही है।

"या उनके कुछ ऐसे साझेदार हैं जिन्होंने उनके लिए धर्म का ऐसा मार्ग निर्धारित कर दिया है जिसकी अल्लाह ने अनुमति नहीं दी?" 4 | क्या उनके लिए कुछ स्व-निर्मित देवता हैं जिन्होंने उनके लिए वह धर्म गढ़ दिया है जिसकी अनुमति अल्लाह ने नहीं दी?

अल्लाह अज़्ज़वजल मुसलमानों को शैतान के फरेब से बचाए, आमीन! इस संक्षिप्त विवरण का सारांश यह है कि हकीकत देखी जाए तो उक्त मामला टिकट विक्रेता और टिकट खरीदार के उद्देश्यों के नज़रिये से हरगिज़ खरीद-बिक्री (बै-ओ-शिरा) आदि का कोई शरीयत सम्मत अनुबंध नहीं है, बल्कि केवल लालच के जाल में लोगों को फँसाना और एक अनिश्चित उम्मीद पर पाँसा डालना है और यही जुआ (क़िमार) है। पर प्रत्यक्ष है कि उस लालच दी गई घड़ी या गहने आदि की खरीद-बिक्री का तो मूल रूप से ज़िक्र ही नहीं, न ही उस चीज़ की श्रेणी निर्धारित है, बल्कि व्यापारी कहता है कि जब ऐसा होगा तो हम वादा करते हैं कि हम तुम्हें इन चीज़ों में से एक चीज़ भेजेंगे। यह वादा है और 'बै' (बिक्री) एक अनुबंध है, और वादे और अनुबंध में ज़मीन-आसमान का अंतर है। अब रही बात प्रमाण-पत्र और टिकट की, वह प्रमाण-पत्र तो स्वयं कीमत के साथ वापस माँगता है और बिक्री में बेची गई वस्तु (मबी) को कीमत के साथ वापस करने का कोई अर्थ नहीं है। विद्वानों ने उस बच्चे की पहचान लिखी है जो

खरीद-बिक्री की समझ नहीं रखता (वह बच्चा जो बै-ओ-शिरा को नहीं समझता। - त) कि वह चीज़ लेकर पैसा भी वापस माँगने लगे, "तो पता चल गया कि तुम विनिमय (मुबादला) का अर्थ नहीं जानते और बिक्री तो विनिमय ही है।" (त)। हाँ, टिकट की बिक्री का नाम लिया गया मगर उस पर वह इबारत छापी जिसने साफ़ बता दिया कि यह 'मबी' (बेची जाने वाली वस्तु) नहीं बल्कि एक...

---

1 अल-क़ुरआन अल-करीम 6/ 113-114 2 अल-क़ुरआन अल-करीम 22/ 11 3 अल-क़ुरआन अल-करीम 10/ 59 4 अल-क़ुरआन अल-करीम 42/ 21

पृष्ठ 330/715

"وَلِيَرْضَوْهُ وَلِيَقْتَرِفُوْا مَا هُمْ مُّقْتَرِفُوْنَ" 1 | جنہیں آخرت پر ایمان نہیں اور اسے پسند کریں اور اس کے ذریعے سے کمالیں جو انہیں کمانا ہے۔

آخرت میں وبال وعذاب اور دنیا میں، مثلاً صورتِ مسئولہ میں کوئی روپیہ اور کوئی گھڑی یا گہنا وغیرہ اور کوئی—

"خَسِرَ الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةَ" 2 (دنیا و آخرت میں اس نے گھاٹا پایا۔ ت) کہ روپیہ گیا اور کچھ نہ ملا،

"قُلْ آٰللّٰهُ اَذِنَ لَكُمْ اَمْ عَلَى اللّٰهِ تَفْتَرُوْنَ" 3 | اے نبی! تو ان لوگوں سے فرما کیا اللہ نے تمہیں اس کی پروانگی دی ہے یا خدا پر بہتان اٹھاتے ہو۔

یعنی پروانگی تو ہے نہیں ضرور افتراء ہی ہے،

"اَمْ لَهُمْ شُرَكٰٓؤُا شَرَعُوْا لَهُمْ مِّنَ الدِّيْنِ مَا لَمْ يَأْذَنْۢ بِهِ اللّٰهُ" 4 | کیا ان کے لئے کچھ ساختہ خدا ہیں جنہوں نے ان کو وہ دین گھڑ دیا جس کی اجازت اللہ نے نہ دی۔

اللہ عزوجل مسلمانوں کو شیطان کے فریب سے بچائے، آمین! اس اجمال کی تفصیلِ مجمل یہ ہے کہ حقیقت دیکھئے تو معاملہ مذکورہ بنظر مقاصد ٹکٹ فروش و ٹکٹ خراں ہر گز بیع و شرا وغیرہ کوئی عقدِ شرعی نہیں بلکہ صرف طمع کے جال میں لوگوں کو پھانسنا اور ایک امیدِ موہوم پر پانسا ڈالنا ہے اور یہی قمار ہے، پر ظاہر کہ اس طمع دلائی ہوئی گھڑی یا گہنے وغیرہ کی خرید و فروخت کا تو اصلاً ذکر نہ اس شیئ کی جنس ہی متعین، بلکہ تاجر کہتا ہے جب ایسا ہو گا تو ہم وعدہ کرتے ہیں کہ تم کو ایک چیز ان چیزوں سے بھیجیں گے، یہ وعدہ ہے اور بیع عقد، اور وعدہ و عقد میں زمین و آسمان کا بعد۔ اب رہی سند اور ٹکٹ، سند تو خود مع قیمت واپس مانگتا ہے اور

بیع میں مبیع مع قیمت واپس ہونے کے کوئی معنی نہیں علماء نے صبی لا یعقل البیع والشراء (وہ بچہ جو بیع و شراء کی سمجھ نہیں رکھتا۔ ت) کی پہچان لکھی کہ چیز لے کر پیسہ بھی واپس مانگنے لگے فیعلم انك لا یعرف معنی المبادلة وما البیع الا المبادلة (پس معلوم ہو گیا کہ وہ مبادلہ کا معنی نہیں جانتا اور بیع تو ہے ہی مبادلہ۔ ت) ہاں ٹکٹ کی بیع کا نام لیا مگر اس پر وہ عبارت چھاپی جس نے صاف بتا دیا کہ یہ مبیع نہیں ایک

---

1 القرآن الکریم 6/ 113-114 2 القرآن الکریم 22/ 11 3 القرآن الکریم 10/ 59 4 القرآن الکریم 42/ 21

Fatawa Razawiya Volume 17

It is an evidentiary document through which, after fulfilling the existing conditions, one who has paid one rupee can obtain goods worth thirty rupees from the merchant. If it were just the ticket being sold, would the buyers be so foolish as to pay a rupee to buy a mere two-inch scrap of useless paper that no one would value at even two pennies? Certainly, buying and selling etc. are out of the question here. Rather, the merchant thought that for free, while sitting at home, people would exert their lives and efforts across the country to drain his stock, coming one after another to pay exorbitant prices at inappropriate times. Servants work for wages, but these are unpaid slaves; yet they will get trapped in such a way that they will pay the price and do my work. A person strives in any matter for only two reasons: fear or greed. Here both will be combined. Out of the greed to get thirty for one, whoever buys one ticket will be forced, willy-nilly, to trap five more fools from wherever he can. If six are trapped, this is cash coming without compensation. Now, each of those five new captives, out of greed for the same thirty and fear of their own money being wasted for nothing, will cast their nets on five more each. In this way, the chain will continue to grow, and the senseless people across the country will strive with their lives to move my goods. Then, as long as the chain continues, well and good; money will keep pouring in at home without effort, double or one-and-a-half times over. And wherever it stalls, what is mine is gone? It is the loss of those ticket-eaters who bought air for their rupees. We are still saving hundreds for free. In any case, the merchant loses nothing. These were the plans of the merchant. On the other hand, the buyer thought: if one rupee is gone, so be it, but if I get thirty, let's try my luck. Up to this point, it was pure greed. Now that the money has been sent, the fear of losing it also arises, and it becomes necessary in every way to cast nets on others so that one's own money is recovered, even if others end up in a dry landing (lose their money). In this way, this cycle of hope and fear, which is gambling, will progress. The first few will be in the win of some forbidden wealth, but in the end, it will go bad for whoever it goes bad. This is the 'consumption of wealth by false means' which the Great Quran has declared forbidden:

"O you who have believed, do not consume one another's wealth unjustly." (1) (T)

This is falling into and putting others into uncertainty, danger, and harm, which is prohibited in the authentic Hadiths. This matter is much worse than the 'Chhathi' (a specific type of game/gamble); there, everyone falls into that gambling and sin on their own, but here every first person, for their own profit, will strangle five others.

There, it was just danger, but here there is danger, harm, injury, and deception, everything. And the Messenger of Allah, peace and blessings of Allah be upon him, says:

1. Al-Qur'an al-Karim 4/29

यह एक इक़रारी सनद है जिसके माध्यम से मौजूदा शर्तों के पूरा होने के बाद, एक रुपये वाला व्यापारी से तीस रुपये का माल प्राप्त कर सकेगा। यदि केवल टिकट ही बेचा जा रहा होता, तो क्या खरीदार इतने मूर्ख थे कि एक रुपया देकर दो अंगुल का केवल एक बेकार काग़ज़ का टुकड़ा मोल लेते जिसे कोई दो कौड़ी को भी न पूछता? निश्चित रूप से, यहाँ क्रय-विक्रय आदि सब दरकिनार है, बल्कि व्यापारी ने तो यह समझा कि बिना किसी मेहनत के, घर बैठे लोग मेरे माल की निकासी के लिए देशभर में जी-जान लगाकर प्रयास करने वाले फैल जाएँगे और वे बिना किसी समय की पाबंदी के मुंह मांगे दाम पर लगातार आते रहेंगे। नौकर वेतन लेकर काम करते हैं और ये बिना वेतन के गुलाम हैं, मगर ये ऐसे फँसेंगे कि दाम भी देंगे और मेरा काम भी करेंगे। मनुष्य किसी भी मामले में दो ही कारणों से प्रयास करता है: भय या लोभ। यहाँ दोनों का मेल होगा। एक के बदले तीस मिलने के लोभ में, जिसने एक टिकट ले लिया उस पर हर हाल में यह अनिवार्य हो जाएगा कि वह जहाँ से भी हो सके पाँच और मूर्खों को फँसाए। यदि छह फँस गए तो यह बिना किसी मुआवज़े के नकद आय है। अब वे पाँच नए बंदी, उसी तीस के लोभ में और अपना रुपया बेकार में मारे जाने के डर से, पाँच-पाँच और लोगों पर जाल डालेंगे। इसी तरह यह सिलसिला बढ़ता जाएगा और देशभर के नासमझ लोग मेरा माल निकलवाने में जी-जान से जुट जाएंगे। फिर जब तक सिलसिला चलता रहे, बहुत बढ़िया, बिना मेहनत के घर बैठे दोगुना-डेढ़ा पैसा बरसता रहेगा। और जहाँ यह थमा, तो मेरा क्या गया? उन टिकट-खोरों का गया जिन्होंने रुपयों से हवा खरीदी। हमें तो वैसे भी सैकड़ों मुफ्त में बच रहे हैं। बहरहाल, व्यापारी का अपना कुछ नहीं गया। ये तो व्यापारी की योजनाएँ थीं। दूसरी ओर ग्राहक ने सोचा कि अगर एक गया तो गया, लेकिन अगर तीस मिलें तो चलो किस्मत आज़माते हैं। यहाँ तक तो केवल लोभ था। अब जबकि रुपया भेज चुके हैं, तो उसके मारे जाने का डर भी पैदा हो गया और हर तरह से यह अनिवार्य हो गया कि दूसरों पर जाल डालें ताकि अपना रुपया वापस आ जाए, चाहे दूसरे किसी भी हाल में हों। इसी प्रकार आशा और भय का यह जुए वाला सिलसिला आगे बढ़ेगा। पहले के कुछ लोग हराम माल की जीत में रहेंगे, अंत में जिसका भी बुरा होगा, वह होगा। यही 'बातिल (अनुचित) तरीके से माल खाना' है जिसे महान कुरान ने हराम (वर्जित) घोषित किया है कि:

"ऐ ईमान वालों! आपस में एक-दूसरे का माल अनुचित तरीके से मत खाओ।" (१) (त)

यही 'ग़रर' (अनिश्चितता), जोखिम और हानि में पड़ना और दूसरों को डालना है, जिससे प्रामाणिक हदीसों में मना किया गया है। यह मामला 'छठी' (एक प्रकार का जुआ) से कहीं अधिक बुरा है। वहाँ

हर व्यक्ति अपने स्तर पर उस जुए और गुनाह में पड़ता है, लेकिन यहाँ हर पहला व्यक्ति अपने लाभ के लिए दूसरे पाँच का गला घोंटेगा। वहाँ केवल जोखिम था, यहाँ जोखिम, हानि, चोट और धोखा सब कुछ है, और अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

(१) अल-कुरान अल-करीम ४/२९

اقراری سند ہے جس کے ذریعہ سے ایک روپے والا بعد موجود شرائط تیس روپے کا مال تاجر سے لے سکے گا اگر ٹکٹ ہی بکتا تو خریدار کیا ایسے احمق تھے کہ روپیہ دے کر دو انگل کا محض بیکار پرچہ کاغذ مول لیتے جسے کوئی دو کوڑی کو بھی نہ پوچھے گا، لاجرم بیع وغیرہ سب بالائے طاق ہے بلکہ تاجر تو یہ سمجھا کہ مفت گھر بیٹھے میرے مال کی نکاسی میں جان لڑا کر سعی کرنیوالے ملک بھر میں پھیل جائیں گے اور محض بے وقت منہ مانگے دام پے در پے آیا کرینگے نوکر دام لے کر کام کرتے ہیں اور غلام بے دام، مگر یہ ایسے پھنسیں گے کہ آپ دام دیں گے اور میرا کام کرینگے انسان کسی امر میں دو ہی وجہ سے سعی کرتا ہے خوف یا طمع، یہاں دونوں مجتمع ہوں گے، ایک کے تیس ملنے کی طمع میں جس نے ایک ٹکٹ لے لیا اس پر خواہی نخواہی لازم ہوگا کہ جہاں سے جانے پانچ احمق اور پھانسے چھ تو یہ نقد بلا معاوضہ آئے اب وہ نو گرفتار پانچ میں ہر ایک اسی تیس کی طمع اور اپنا روپیہ مفت مارے جانے کے خوف سے اور پانچ پانچ پر ڈورے ڈالے گا یونہی یہ سلسلہ بڑھتا رہے گا اور ملک بھر کے بے عقل میرا مال نکلنے میں بجان ساعی ہو جائیں گے پھر جب تک سلسلہ چلا فبہا، گھر بیٹھے بے محنت دونے ڈیوڑھے چھنا چھن آرہے ہیں اور جہاں تھکا تو اپنا کیا گیا، ان ٹکٹ خوروں کا گیا جنہوں نے روپے کو ہوا خریدی، ہمیں یوں بھی صد ہا مفت بچ رہے ہیں، بہرحال اپنا احمق کہیں نہیں گیا تاجر کے تو یہ منصوبے تھے ادھر مشتری سمجھا کہ گیا تو ایک اور ملے تو تیس لاؤ قسمت آزما دیکھیں یہاں تک نری طمع تھی اب کہ روپیہ بھیج چکے مارے جانے کا خوف بھی عارض ہو گیا اور ہر طرح لازم ہوا کہ اوروں پر جال ڈالیں اپنا روپیہ ہرا ہو، دوسرے سوکھے گھاٹ اتریں تو اتریں، یونہی یہ امید وبیم کا سلسلہ قمار ترقی پکڑے گا، اول کے دو چار کچھ حرام مال کی جیت

میں رہیں گے آخر میں بگڑے گا جس جس کا بگڑے گا یہی اکل مال بالباطل ہے جسے قرآن عظیم نے حرام فرمایا کہ:

"یٰٓاَیُّھَا الَّذِیْنَ اٰمَنُوْا لَا تَاْکُلُوْٓا اَمْوَالَکُمْ بَیْنَکُمْ بِالْبَاطِلِ" (۱) اے ایمان والو! آپس میں ایک دوسرے کا مال ناحق طور مت کھاؤ۔ (ت)

یہی غرر و خطر و ضرر و ضرر میں پڑنا اور ڈالنا ہے جس سے صحاح احادیث میں نہی ہے، یہ معاملہ چھٹی سے بدرجہا بدتر ہے وہاں ہر ایک بطور خود اس قمار و گناہ میں پڑتا ہے اور یہاں ہر پہلا اپنے نفع کیلئے دوسرے پانچ کا گلا پھانسے گا تو وہاں صرف خطر تھا یہاں خطر و ضرر و ضرر و غش سب کچھ ہے، اور رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

(۱) القرآن الکریم ۴ / ۲۹

Volume 17, Fatawa Rizvia

“He who deceives us is not of us.”[1] Narrated by Muslim, Ahmad, Abu Dawud, Ibn Majah, and Al-Hakim from Abu Hurayrah, and Al-Tabarani in Al-Kabir from Dhamirah, may Allah be pleased with them both. One who acts against the well-being of Muslims is not among our group (narrated by Imams Muslim, Ahmad, Abu Dawud, Ibn Majah, and Imam Al-Hakim from Sayyiduna Abu Hurayrah (RA), and Al-Tabarani in Mu’jam Al-Kabir from Sayyiduna Dhamirah (RA)).

It is in a Hadith: “He who deceives a Muslim, or harms him, or plots against him is not of us.”[2] Narrated by Imam Al-Rafi'i from the Leader of the Believers Ali, may Allah honor his face. He is not among us who wishes ill for a Muslim or causes him harm (narrated by Imam Al-Rafi'i from Sayyiduna Amir al-Mu'minin Hazrat Ali, may Allah honor his noble face).

Hadiths in this regard reach the level of mass-narration (tawatur), and the prohibition of these matters is among the necessities of religion, as is not hidden (as it is not concealed). This was the reality of the matter, and if you look at the literal wording, it is about the buying and selling of tickets. Firstly, there is a discussion about it being considered 'wealth' (mal). Wealth is that towards which human nature is inclined and which can be stored for the time of need. These tickets lack both these attributes. It is stated in Kashf al-Kabir, Bahr al-Ra’iq, and Radd al-Muhtar:

“By wealth is meant that towards which nature inclines and which can be stored for the time of need.”[3] By wealth is meant that thing towards which natures incline and which can be stored for the time of need.

On this premise, this sale would be fundamentally void (batil) because it is an exchange of wealth.

[1] Sahih Muslim, Kitab al-Iman, Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/70; Musnad Imam Ahmad bin Hanbal, Musnad Abu Hurayrah (RA), Dar al-Fikr Beirut, 2/417; Sunan Abu Dawud, Kitab al-Buyu', Aftab-e-Alam Press Lahore, 2/133. [2] Kanz al-Ummal, with reference to Al-Rafi'i from Ali, Hadith 9502, Muassasah ar-Risalah Beirut, 3/60. [3] Bahr al-Ra’iq, Kitab al-Buyu', H.M. Saeed Company Karachi, 5/256.

जिल्द 17, फ़तावा रज़विया

"वह हममें से नहीं जिसने हमें धोखा दिया।"[1] (मुस्लिम, अहमद, अबू दाऊद, इब्न माजा और अल-हाकिम ने अबू हुरैरा से और अल-तबरानी ने अल-कबीर में धमीरा रज़ियल्लाहु अन्हुमा से रिवायत किया है)। जो मुसलमानों के खिलाफ खैर-ख्वाही (भलाई) के विपरीत व्यवहार करे वह हमारे समूह में से नहीं है (इसे इमाम मुस्लिम, अहमद, अबू दाऊद, इब्न माजा और इमाम हाकिम ने सैय्यदना हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से और तबरानी ने मुअजम कबीर में सैय्यदना हज़रत धमीरा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है)।

एक हदीस में है: "वह हममें से नहीं जिसने किसी मुस्लिम को धोखा दिया या उसे नुकसान पहुँचाया या उसके साथ मक्कारी की।"[2] (इमाम राफ़ेई ने अमीरुल मोमिनीन अली करमल्लाहु वज्हुल करीम से रिवायत किया है)। हममें से नहीं जो किसी मुसलमान की बदख्वाही (बुरा चाहना) करे या उसे नुकसान पहुँचाए (इसे इमाम राफ़ेई ने सैय्यदना अमीरुल मोमिनीन हज़रत अली करमल्लाहु वज्हुल करीम से रिवायत किया है)।

इस विषय में हदीसें तवातुर (अत्यधिक संख्या) के स्तर पर हैं और इन मामलों की हुरमत (प्रतिबंध) दीन की ज़रूरतों में से है जैसा कि स्पष्ट है (छिपा हुआ नहीं है)। मामले की हकीकत तो यह थी और शब्दों की सूरत पर नज़र डालें तो टिकट की खरीद-फरोख्त है। पहले तो इसके'माल' होने में चर्चा है, कि माल वह है जिसकी ओर स्वभाव आकर्षित हो और ज़रूरत के समय के लिए जमा रखा जा सके यह टिकट दोनों गुणों से खाली है। कशफ़ुल कबीर, बहरुर रैक और रद्दुल मुह्तार में है:

"माल से मुराद वह चीज़ है जिसकी तरफ स्वभाव आकर्षित हों और उसे ज़रूरत के समय के लिए जमा किया जा सके।"[3] माल से मुराद वह चीज़ है जिसकी ओर स्वभावों का रुझान हो और उसे ज़रूरत के समय के लिए संचित किया जा सके।

इस आधार पर तो यह बिक्री (बैय) सिरे से केवल बातिल (अमान्य) होगी क्योंकि यह माल का विनिमय है।

[1] सही मुस्लिम, किताबुल ईमान, कदीमी कुतुब खाना कराची, 1/70; मसनद इमाम अहमद बिन हन्बल, मसनद अबू हुरैरा (र.अ.), दारुल फ़िक्र बेरूत, 2/417; सुनन अबू दाऊद, किताबुल बुयू, आफ़ताबे आलम प्रेस लाहौर, 2/133। [2] कन्ज़ुल उम्माल, बहवाला राफ़ेई, अली से हदीस 9502,

मुअस्ससतुर् रसाला बेरूत, 3/60। ³ बहरुर रैक, किताबुल बुयू, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 5/256।

पृष्ठ 332 का 715

لیس منا من غشنا 1 رواہ مسلم، احمد وابوداؤد و ابن ماجہ والحاکم عن ابی ھریرۃ والطبرانی فی الکبیر عن ضمیرۃ رضی اللہ تعالی عنھما۔ جو مسلمانوں کے خلاف خیر خواہی معاملہ کرے وہ ہمارے گروہ میں سے نہیں (اس کو امام مسلم، احمد، ابوداؤد، ابن ماجہ اور امام حاکم نے سیدنا حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے اور طبرانی نے معجم کبیر میں سیدنا حضرت ضمیرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ۔ ت)

ایک حدیث میں ہے: لیس منا من غش مسلما اوضرہ او ماکرہ 2 رواہ الامام الرافعی عن امیر المومنین علی کرم اللہ تعالٰی وجھہ۔ ہم میں سے نہیں جو کسی مسلمان کی بدخواہی کرے یا اسے ضرر پہنچائے (اس کو امام رافعی نے سیدنا امیر المومنین حضرت علی کرم اللہ تعالٰی وجہہ الکریم سے روایت کیا ہے۔ ت)

احادیث اس باب میں حد تواتر پر ہیں اور خود ان امور کی حرمت ضروریات دین سے ہے کما لا یخفی (جیسا کہ پوشیدہ نہیں۔ ت) حقیقت امر تو یہ تھی اور صورت الفاظ پر نظر کیجئے تو ٹکٹ کی خرید و فروخت ہے۔ اول تو اس کے مال ہونے میں کلام ہے کہ وہ جس کی طرف طبائع میل کریں اور وقت حاجت کے لئے ذخیرہ رکھا جائے، یہ ٹکٹ دونوں وصف سے خالی ہے، کشف الکبیر و بحر الرائق و رد المحتار میں ہے :

المراد بالمال ما یمیل الیہ الطبع و یمکن ادخارہ لوقت الحاجۃ 3 مال سے مراد وہ چیز ہے جس کی طرف طبیعتیں میلان کریں اور اس کو حاجت کے وقت کیلئے ذخیرہ کیا جاسکتا ہو۔ (ت)

اس تقدیر پر تو یہ بیع سرے سے محض باطل ہوگی لانہ مبادلۃ مال۔

1 صحیح مسلم کتاب الایمان قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۷۰، مسند امام احمد بن حنبل مسند ابو ہریرہ رضی اللہ تعالی عنہ دار الفکر بیروت ۲/ ۴۱۷، سنن ابو داؤد کتاب البیوع آفتاب عالم پریس لاہور ۲/ ۱۳۳ 2 کنز العمال بحوالہ الرافعی عن علی حدیث ۹۵۰۲ موسسة الرساله بروت ۳/ ۶۰ 3 بحر الرائق کتاب البیوع ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۵/ ۲۵۶

Fatawa-e-Razawiya (Volume 17)

By property as mentioned in al-Kanz, al-Multaqa, and others (because a sale is the name for taking one property in exchange for another, as stated in al-Kanz and al-Multaqa etc. T). And assuming it is property, it consists of numerous void conditions.

"And the Messenger of Allah (may Allah Almighty bless him and grant him peace) forbade a sale with a condition. 2 -" "The Messenger of Allah (may Allah Almighty bless him and grant him peace) forbade sale and condition. (T)"

So the contract became void for various reasons, and each cause of invalidity is independently forbidden. Then this chain of fraud, corruption, and prohibited acts continued; on one hand, among the ticket purchases, it continued one after another. On the other hand, for a thirty-something item received, its genus was not even specified. It was not given merely for his labor, as his work concluded with the sale of five tickets. In this state of greed, he would only become entitled to the promised item when those five were sold, and their five, and five for each of them were received. This is by no means the work of the first person alone. Thus, even if it were a hiring (ijara), it would be void in itself and a corrupter of its conditioned sale. In reality, however, it is nothing but inciting greed and akin to bribery. In short, the evils of this forbidden-upon-forbidden dealing are numerous, and the most severe of all is the phrase: 'We work with you with honesty.' Attributing honesty to such severe sins and invented paths is many degrees worse than the original sins themselves, especially when the one giving this advertisement is a Muslim. Now, this is not just the beautification of the forbidden (tahseen-e-haram), but rather, we seek refuge in Allah, the Lord of the worlds. This [is the answer], and Allah, the Sublime and Exalted, knows best.

Issue 158 to 159: From Budaun, Sutnah locality, sent by Maulvi Hamid B. Khansh Sahib Khan Bahadur, 7 Ramadan al-Mubarak 1322 AH. Respected Maulana and our leader, protector of the Sunnah, may your blessings continue. After the desire to attain the honor of kissing your feet, the purpose of writing is to request that correct answers be granted to the following questions according to the rulings of Sharia, so that the misguided may be guided: (1) What do the scholars of the religion and the jurists of the firm Sharia say regarding this issue: two persons, Zaid and Bakr, divided their owned goods and belongings into as many parts as the total value of that wealth was. They adopted this method of sale: every person who became a shareholder to purchase a part was given a chit (slip). When all the chits were

collected, a draw was held. The person whose chit was drawn first received 1/- one full rupee on the chit. The second person received ten, the third received a hundred rupees, the fourth person received two rupees, and the remaining 66 chit-holding buyers, until the last number, were given 8/- full per ticket. Is this method of sale [valid]...

---

1. Multaqa al-Abhur, Book of Sales, Al-Muassasah al-Risalah, Beirut, 2/5
2. Nasb al-Rayah, Book of Sales, Al-Maktabah al-Islamiyyah, Riyadh, 4/17

फ़तावा रज़विया (खण्ड १७)

ब-माल कमा फ़िल कन्ज़ि वल मुल्तक़ा वग़ैरहुमा (इसलिए कि बैय तो एक माल के बदले दूसरा माल लेने का नाम है जैसा कि कन्ज़ और मुल्तक़ा वग़ैरह में है। त) और बिल-फ़र्ज़ माल हो तो मुतअद्दिद शराइत-ए-फ़ासिदा पर मुश्तमिल है,

"व क़द नहा रसूलुल्लाहि सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम अन बैयिन व शर्त 2-" "रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने बैय और शर्त से मना फ़रमाया। (त)"

तो अक़्द बुजूह-ए-फ़ासिद हुआ और हर फ़साद जुदागाना हराम है फिर ये सिलसिला-ए-ग़श व फ़साद व हराम, तो उधर टिकट ख़रीदों में यके बाद दीगरे मुस्तमिर् चला, उधर ऐसे जो तीस की शय मिली उसकी जिन्स तक मुअय्यन न थी न सिर्फ़ उसके अमल पर मिली कि उसका काम तो पांच टिकट बिकने पर मुन्तही हो गया और इस वादा-ए-तमा में चीज़ का मुस्तौजिब उस वक़्त होगा कि फिर वो बिकें और पांच उनके और पांच पांच उनके और पांच के वसूल हों, ये हरगिज़ इसी अव्वल का अमल नहीं तो अगर इजारा होता बुजूह-ए-ख़ुद फ़ासिदा और अपनी मश्रूत बैय का मुफ़्सिद होता मगर हक़ीक़तन वो सिर्फ़ तमा-दिही और अज़ क़बील-ए-रिश्वत है, ग़रज़ इस मुआमला हराम दर हराम के मफ़ासिद ब-कसरत हैं और इन सब से सख़्त तर वो लफ़्ज़ है कि हम तुम्हारे साथ ईमानदारी से काम करते हैं, ऐसे शदीद गुनाहों इख़्तरायी राहों को ईमानदारी का काम बताना उन असल गुनाहों से कितने दर्जे ज़ाइद है जबकि ये इश्तिहार देने वाला कोई मुसलमान हो कि अब ये तहसीन-ए-हराम बल्कि वल-इयाज़ु बिल्लाहि रब्बिल आलमीन हाज़ा वल्लाहु सुब्हानहू व तआला आलम।

मसअला १५८ ता १५९: अज़-बदायूँ सूतन्हा मोहल्ला मुर्सला मौलवी हामिद ब. ख़नश साहब ख़ान बहादुर ७ रमज़ानुल मुबारक १३२१ हि. जनाब मौलाना व मुक़्तदाना हामि-ए-सुन्नत दामत बरकातुहुम, बाद तमन्ना-ए-हसूल-ए-क़दमबोसी मुद्दआ-निगार हूँ कि सवालात-ए-मन्दरजा ज़ैल का जवाब बा-सवाब जो मुताबिक़-ए-अहकाम-ए-शरीअत हो मरहमत फ़रमाइये ताकि गुमराहों की रहबरी होवे: (१) क्या फ़रमाते हैं उलमा-ए-दीन व मुफ़्तियान-ए-शरअ-ए-मतीन इस मसअले में कि ज़ैद व बक्र दो शख़्सों ने अपना बज़ाअत का मम्लूका माल व अस्बाब इतने ही हिस्सों में तक़्सीम किया जिस क़दर की मालियत का वो कुल माल था और फ़रोख़्त का ये तरीक़ा रखा कि हर शख़्स जो उसकी ख़रीदारी के वास्ते हिस्सा दार हो चुका उसको एक चिट्ठी दे दी गई और सब चिट्ठियां जमा हो जाने पर बरू-ए-क़ुरा-अन्दाज़ी सब से अव्वल चिट्ठी लिखने वाले को १/ कामिल एक रुपये के चिट्ठी पर मिला और दूसरे

शख़्स को दस का और तीसरे को सौ रुपया और चौथे शख़्स को दो रुपया और बाक़ी ६६ चिट्ठी वाले ख़रीदारों को आख़िर नम्बर तक ८/ कामिल फ़ी टिकट दिया गया आया ये तरीक़ा-ए-बैय...

---

1. मुल्तक़ल अभर किताबुल बुयू अल-मुअस्ससतुर रिसाला बैरुत २/ ५
2. नसबुर राया किताबुल बुयू अल-मकतबतुल इस्लामिया रियाज़ ४/ १७

पृष्ठ ३३३/७१५

بمال کمافی الکنز والملتقٰی وغیرہما(اس لئے کہ بیع تو ایک مال کے بدلے دوسرا مال لینے کا نام ہے جیسا کہ کنز اور ملتقی وغیرہ میں ہے۔ت) اور بالفرض مال ہو تو متعدد شرائطِ فاسدہ پر مشتمل ہے،

وقد نھی رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم عن بیع وشرط 2۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے بیع اور شرط سے منع فرمایا۔(ت)

تو عقد بوجوہ فاسد ہوا اور ہر فساد جداگانہ حرام ہے پھر یہ سلسلہ غش و فساد و حرام ، تو ادھر ٹکٹ خروں میں یکے بعد دیگر مستمر چلا، ادھر ایسے جوتیس کی شے ملی اس کی جنس تک معین نہ تھی نہ صرف اس کے عمل پر ملی کہ اس کا کام تو پانچ ٹکٹ بکنے پر منتہی ہوگیا اور اس وعدہ طمع میں چیز کا مستوجب اس وقت ہوگا کہ پھر وہ بکیں اور پانچ ان کے اور پانچ پانچ ان کے اور پانچ کے وصول ہوں ، یہ ہر گز اسی اول کا عمل نہیں تو اگر اجارہ ہوتا بوجوہ خود فاسدہ اور اپنی مشروط بیع کا مفسد ہوتا مگر حقیقۃً وہ صرف طمع دہی اور از قبیل رشوت ہے، غرض اس معاملہ حرام در حرام کے مفاسد بکثرت ہیں اور ان سب سے سخت تر وہ لفظ ہے کہ ہم تمہارے ساتھ ایمانداری سے کام کرتے ہیں، ایسے شدید گناہوں اختراعی راہوں کو ایمانداری کا کام بتانا ان اصل گناہوں سے کتنے درجے زائد ہے جبکہ یہ اشتہار دینے والا کوئی مسلمان ہو کہ اب یہ تحسینِ حرام بلکہ والعیاذ باللہ رب العلمین ہذا واللہ سبحنہ وتعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۵۸ تا ۱۵۹: ازبدایوں سوتنہ محلہ مرسلہ مولوی حامد ب خنش صاحب خان بہادر ۷ رمضان المبارک ۱۳۲۲ھ جناب مولانا و مقتدانا حامی سنت دامت برکاتہم، بعد تمنائے حصولِ قدمبوسی مدعانگار ہوں کہ سوالات مندرجہ ذیل کا جواب باصواب جو مطابقِ احکامِ شریعت ہو مرحمت

فرمایئے تاکہ گمراہان کی رہبری ہووے : (۱) کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید وبکر دو شخصوں نے اپنا بضاعت کا مملوکہ مال و اسباب اتنے ہی حصوں میں تقسیم کیا جس قدر کی مالیت کا وہ کل مال تھا اور فروخت کا یہ طریقہ رکھا کہ ہر شخص جو اس کی خریداری کے واسطے حصہ دار ہوچکا اس کو ایک چٹھی دے دی گئی اور سب چٹھیاں جمع ہوجانے پر بروئے قرعہ اندازی سب سے اول چٹھی لکھنے والے کو ۱/ کامل ایک روپیہ کے چٹھی پر ملا اور دوسرے شخص کو دس کا اور تیسرے کو سو روپیہ اور چوتھے شخص کو دوروپیہ اور باقی ۶۶ چٹھی والے خریداروں کو آخر نمبر تک ۸/ کامل فی ٹکٹ دیا گیا آیا یہ طریقہ بیع

---

1 ملتقی الابحر کتاب البیوع موسسۃ الرسالۃ بیروت ۲/ ۵ 2 نصب الرایۃ کتاب البیوع المکتبۃ الاسلامیۃ الریاض ۴/ ۱۷

Fatawa Razawiyya Volume 17

...is it in accordance with the commands of Sharia or not? (2) Zaid deposited some money in a government post office savings bank or other English commercial banks, on which the government or English traders paid him profit at a fixed rate. Is the person who deposited the money entitled to take this profit according to the rulings of Sharia or not?

The Answer: (1) This situation is absolutely forbidden (Haram) and is a form of gambling; both the buyer and seller deserve the punishment of Hellfire. And Allah Almighty knows best. (2) Interest (Riba) is absolutely forbidden. Allah Almighty said: "And He has forbidden interest" (Al-Quran 2:275). However, if there was a Sharia-compliant claim on the money deposited there, and it could not be obtained in any other way, then receiving it under this name with the intention of recovering one's due right would entitle one to take it up to the extent of that right. And if nothing was due, but some permissible (Mubah) wealth comes to hand through mutual consent without treachery or committing a crime, it is permissible for the recipient with the intention of it being Mubah, even if the giver labels it with any other name. A complete investigation of this issue is also in the Fatawa of the poor servant (Ahmad Raza Khan). And Allah Almighty knows best.

Problem 160: From Bareilly, Muhalla Sanghi Tola, sent by Muhammad Raza Ali, 5 Dhu al-Hijjah 1322 AH. What do the scholars of religion and jurists of the clear Sharia say about this issue: Zaid gave money to Amr on the condition that after four months, he would take twenty-five (maunds) of wheat from you for the mentioned money. Is this permissible or not? Explain, and you will be rewarded.

The Answer: If money was given as a loan and it was conditioned that after four months, twenty-five (maunds) of wheat would be taken for one rupee, and the market rate is much less than twenty-five seers, then this is pure interest and strictly forbidden. It is stated in the Hadith:

"Every loan that draws a benefit is interest."

And if wheat was bought and the price was paid in advance, then it is a Salam sale (Bai' al-Salam), provided all the conditions of Bai' al-Salam are met...

1. Al-Quran Al-Kareem 2/275
2. Kanz al-Ummal, on the authority of Al-Harith from Ali, Hadith 15512, Mu'assasat al-Risalah, Beirut 6/238

फतावा रज़विया खंड 17

...शरीयत के आदेशों के अनुकूल है या नहीं? (2) ज़ैद ने सरकारी डाकखाने के सेविंग बैंक या अन्य अंग्रेजी व्यापारिक बैंकों में कुछ रुपया जमा किया जिस पर निश्चित दर के अनुसार सरकार या अंग्रेजी व्यापारियों ने उसे लाभ (मुनाफ़ा) दिया। क्या जमा करने वाला व्यक्ति शरीयत के आदेशों के अनुसार इस लाभ को लेने का पात्र है या नहीं?

उत्तर (अल-जवाब): (1) यह स्थिति पूरी तरह हराम है और जुआ है, और खरीदार व विक्रेता दोनों नरक की आग की सजा के पात्र हैं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (2) ब्याज (सूद) पूर्णतः हराम है। अल्लाह तआला ने फरमाया: "और उसने ब्याज को हराम कर दिया" (अल-क़ुरआन 2:275)। लेकिन जिस स्थान पर रुपया जमा किया गया है, यदि उस पर शरीयत के अनुसार कोई दावा बनता था और वह किसी और तरीके से प्राप्त नहीं हो सकता था, तो उस नाम से प्राप्त होने पर, अपने हक की नीयत से हक की सीमा तक उसे लेने का अधिकार है। और यदि कुछ भी बकाया नहीं था, लेकिन आपसी सहमति से बिना किसी धोखे या अपराध के कोई अनुमत (मुबाह) धन प्राप्त होता है, तो लेने वाले के लिए उसे मुबाह की नीयत से लेना जायज़ है, भले ही देने वाला उसे किसी भी नाम से पुकारे। इस मसले की विस्तृत जांच इस फकीर (अहमद रज़ा खान) के फतावा में भी मौजूद है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 160: बरेली, मोहल्ला संघी टोला से, मोहम्मद रज़ा अली द्वारा प्रेषित, 5 ज़िल-हिज्जा 1322 हिजरी। दीन के विद्वान और शरीयत के मुफ्ती इस मसले में क्या फरमाते हैं कि ज़ैद ने अम्र को इस शर्त पर रुपया दिया कि चार महीने बाद हम आपसे उक्त रुपये के बदले पच्चीस (मन) गेहूँ लेंगे। क्या यह जायज़ है या नहीं? स्पष्ट करें, पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर (अल-जवाब): यदि रुपया कर्ज के रूप में दिया गया और यह शर्त रखी गई कि चार महीने बाद एक रुपये के बदले पच्चीस (मन) गेहूँ लेंगे और बाजार भाव पच्चीस सेर से बहुत कम है, तो यह शुद्ध ब्याज है और सख्त हराम है। हदीस में आया है:

"प्रत्येक वह कर्ज जो लाभ खींचता है, वह ब्याज है।"

और यदि गेहूँ खरीदे गए और कीमत पहले ही दे दी गई है, तो यह 'बै-ए-सलम' (अग्रिम भुगतान बिक्री) है, बशर्ते कि बै-ए-सलम की सभी शर्तें पूरी हों...

1. अल-क़ुरआन अल-करीम 2/275
2. कंज़ अल-उम्माल, हज़रत अली से अल-हारिस के हवाले से, हदीस 15512, मुअस्ससत अल-रिसाला, बेरूत 6/238

पृष्ठ 334 / 715

...موافق احکامِ شریعت ہے یا نہیں؟ (۲) ڈاک خانہ سرکاری کے سیونگ بینک میں یا دوسرے انگریزی تجارتی بینکوں میں زید نے کچھ روپیہ داخل کیا جس پر بہ شرح معینہ اس کو گورنمنٹ نے یا تاجر انگریز نے منافع ادا کیا تو جمع کرنے والا شخص مطابقِ احکامِ شریعت اس منافع کو لینے کا مستحق ہے یا نہیں؟

الجواب: (۱) یہ صورت قطعی حرام ہے اور نزاقمار اور بائع و مشتری سب کے لئے استحقاقِ عذابِ نار واللہ تعالیٰ اعلم (۲) سود مطلقاً حرام ہے قال اللہ تعالیٰ 'وَ حَرَّمَ الرِّبٰوا' ۱ (اللہ تعالیٰ نے فرمایا: اللہ تعالیٰ نے سود کو حرام کیا۔ ت) مگر جس کے یہاں روپیہ جمع کیا گیا اس پر کوئی مطالبہ شرعاً آتا تھا اور وہ اور طور پر نہ مل سکتا تھا اس نام سے وصول ہو جائیگا تو اپنے اس حق کی نیت سے قدر حق تک لے لینے کا استحقاق ہے اور اگر کچھ نہ آتا تھا مگر کوئی مال مباح بلا غدر و بلا ارتکاب جرم برضا مندی ہاتھ آتا ہو تو بہ نیتِ مباح اسے لینے والے کو مباح ہے اگرچہ دینے والا کسی نام سے تعبیر کرے اس مسئلہ کی تحقیق کامل بھی فتاویٰ فقیر میں ہے واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۱۶۰: از بریلی محلہ سنگھی ٹولہ مرسلہ محمد رضا علی ۵ ذی الحجہ ۱۳۲۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید نے عمرو کو روپیہ اس شرط پر دیا کہ چار ماہ کے بعد تم سے روپیہ مذکور کے پچیس (من) گندم لیں گے، یہ جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: اگر روپیہ قرض دیا اور یہ شرط کرلی کہ چار مہینے کے بعد ایک روپے کے پچیس (من) گیہوں لیں گے اور نرخ بازار پچیس سیر سے بہت کم ہے تو یہ محض سود اور سخت حرام ہے حدیث میں ہے:

کُلُّ قَرْضٍ جَرَّ مَنْفَعَۃً فَھُوَ رِبًوا ۲ (جو قرض نفع کو کھینچے وہ سود ہے۔ ت)

اور اگر گیہوں خریدے اور قیمت پیشگی دی ہے تو بیع سلم ہے اگر سب شرائطِ بیع سلم کے

۱ القرآن الکریم ۲/ ۲۷۵ ۲ کنز العمال بحوالہ الحارث عن علی حدیث ۱۵۵۱۲ موسسۃ الرسالۃ بیروت ۶/ ۲۳۸

...if paid, it is permissible even if ten mounds of wheat are fixed for the rupee, otherwise it is prohibited. And Allah Almighty knows best.

Problem 161: Sent by Ahmad Shah Khan from Mauza Nagariya Sadat. Zaid gave some money as a loan to Amr for business and they agreed among themselves that in addition to the principal amount of the loan, whatever profit occurs in the business, half will be mine and half will be yours. So is this interest (usury) or not? Explain and be rewarded.

The Answer: This is definitely interest and prohibited. Yes, if he does not give the money as a loan but gives it for business such that the money is mine and the labor is yours and the profit is fifty-fifty, then it is permissible. And Allah Almighty knows best.

Problem 162: From Patiala Marwar, Muhammad Abdur Rahman, leather merchant, 21 Dhu al-Qi'dah 1329 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Is it Shariah-permissible or not for Muslims in current-day India to deal in interest with non-Muslims for the purpose of improving their religious and national condition?

The Answer: Taking and giving interest is absolutely forbidden. Allah Almighty said: "and Allah has forbidden interest"[1] (Allah Almighty said: And Allah has made interest unlawful. - T)

It is stated in a Sahih Hadith:

| The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) cursed the one who consumes interest, the one who pays it, the one who writes it down, and its witnesses, and he said: They are all the same.[2] | The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) cursed those who consume interest, those who pay interest, those who write the document for interest, and those who bear witness to it. And he said they are all equal. |

Will the religious condition improve with the curse of Allah, or will it get worse? And the state of the national and worldly condition is also known. Allah Almighty says: "Allah destroys interest and gives increase for charities."[3] Allah eradicates interest and increases Zakat.

---

[1] Al-Quran Al-Karim 2/275 [2] Sahih Muslim, Chapter of Riba, Qadeemi Kutub Khana Karachi 2/27 [3] Al-Quran Al-Karim 2/276

फतावा रज़विया, जिल्द 17

...अदा कर ली हैं तो जायज़ है अगर्चे रुपये के दस मन गेहूं ठहर जाएं वरना हराम है। वल्लाहु तआला आलम।

मसला १६१: मुर्सला अहमद शाह खां अज़ मौज़अ नगरिया सादात। ज़ैद ने कुछ रुपये क़र्ज़ वास्ते तिजारत के अम्र को दिए और आपस में यह ठहरलिया कि इलावा क़र्ज़ के रुपयों के जिस क़दर मुनाफ़ा तिजारत में हो इस में से निस्फ़ हमारा और निस्फ़ तुम्हारा, तो यह सूद हुआ या नहीं? बेनवा तूजरू।

अल-जवाब: यह सूद और हराम ए क़तई है, हां अगर रुपया उसे क़र्ज़ न दे बल्कि तिजारत के लिए दे कि रुपया मेरा और मेहनत तेरी और मुनाफ़ा निसफ़न-निसफ़, तो यह जायज़ है। वल्लाहु तआला आलम।

मसला १६२: अज़ पटियाला मारवाड़ मोहम्मद अब्दुर्रहमान सौदागर चर्म २१/ ज़िल-क़ादह १३२९ हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस मसले में कि आया सरज़मीन-ए-हिन्दुस्तान में बहालत-ए-मौजूदा मुसलमानों को अपनी दीनी और क़ौमी हालत संवारने की ग़रज़ से सूद का लेन-देन ग़ैर-मुस्लिम से शरअन् जायज़ है या नहीं?

अल-जवाब: सूद लेना देना मुतलक़न हराम हैं, क़ालल्लाहु तआला "व-हर्र-मर्रिबौ"[1] (अल्लाह तआला ने फ़रमाया: और अल्लाह तआला ने सूद को हराम किया। त)

हदीस-ए-सहीह में है:

| लअन रसूलुल्लाहि सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम अकलल रिबौ व मुकिलहु व कातिबहु व शाहिदहु व क़ाला हुम सवाउ।[2] | रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने लअनत फ़रमाई सूद खाने वाले और सूद देने वाले और सूद का काग़ज़ लिखने वाले और इस पर गवाही देने वालों पर। और फ़रमाया वो सब बराबर हैं। |

अल्लाह की लअनत के साथ दीनी हालत संवरेगी या और बदतर होगी, और क़ौमी दुनियावी हालत संभलना भी मालूम, अल्लाह अज़्ज़वजल फ़रमाता है: "यम-हक़ुल्लाहु रिबौ व-युरबिस-सदक़ात"[3] अल्लाह मिटाता है सूद को और बढ़ाता है ज़कात (सदक़ात) को।

---

[1] अल-क़ुरआन अल-करीम २/२७५ [2] सहीह मुस्लिम बाबुल रिबा क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची २/२७ [3] अल-क़ुरआन अल-करीम २/२७६

ادا کر لی ہیں تو جائز ہے اگرچہ روپے کے دس من گیہوں ٹھہر جائیں ورنہ حرام ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۶۱: مرسلہ احمد شاہ خاں از موضع نگریا سادات زید نے کچھ روپے قرض واسطے تجارت کے عمرو کو دئے اور آپس میں یہ ٹھہرالیا کہ علاوہ قرض کے روپوں کے جس قدر منافع تجارت میں ہو اس میں سے نصف ہمارا اور نصف تمہارا، تو یہ سود ہوا یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: یہ سود اور حرام قطعی ہے، ہاں اگر روپیہ اسے قرض نہ دے بلکہ تجارت کے لئے دے کہ روپیہ میرا اور محنت تیری اور منافع نصفا نصف، تو یہ جائز ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۱۶۲: از پٹیالہ مار واڑ محمد عبدالرحمن سوداگر چرم ۲۱/ ذی القعدہ ۱۳۲۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ آیا سرزمین ہندوستان میں بحالت موجودہ مسلمانوں کو اپنی دینی اور قومی حالت سنوارنے کی غرض سے سود کا لین دین غیر مسلم سے شرعاً جائز ہے یا نہیں؟

الجواب: سود لینا دینا مطلقاً حرام ہیں، قال اللہ تعالٰی "وَحَرَّمَ الرِّبٰو" 1 (اللہ تعالٰی نے فرمایا: اور اللہ تعالٰی نے سود کو حرام کیا۔ ت) حدیث صحیح میں ہے:

| لعن رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم اكل الربو و مؤكله وكاتبه و شاہدہ و قال هم سواء 2 ۔ | رسول الله صلى الله تعالىٰ عليہ وسلم نے لعنت فرمائی سود کھانے والے اور سود دینے والے اور سود کا کاغذ لکھنے والے اور اس پر گواہی دینے والوں پر۔ اور فرمایا وہ سب برابر ہیں۔ |

الله کی لعنت کے ساتھ دینی حالت سنورے گی یا اور بدتر ہوگی، اور قومی دنیوی حالت سنبھلنا بھی معلوم، الله عزوجل فرماتا ہے: "يَمْحَقُ اللَّهُ الرِّبٰو وَيُرْبِي الصَّدَقٰتِ ط " 3 الله مٹاتا ہے سود کو اور بڑھاتا ہے زکوٰۃ کو۔

---

1 القرآن الکریم ۲/ ۲۷۵ 2 صحیح مسلم باب الربا قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/ ۲۷ 3 القرآن الکریم ۲/ ۲۷۶

Fatawa Razawiyya Volume 17

How can someone prosper whom Allah destroys and ruins? Even if, for the sake of argument, they appear to prosper in outward appearance for a few days, then the more they prosper, the more the curse of Allah will increase. Mubada dil aan farumaya shaad ki az bahr-e-duniya dehad deen ba-baad (Let not the heart of that lowly one be happy who ruined his religion for the sake of this world. - Translation) If there is faith in the Great Quran, then the consequence of usury (interest) is certainly destruction and loss. The questioner asks about transactions; where do Muslims have wealth? The disbelievers (kuffar) are the big wealthy ones; what need would they have to take interest-bearing loans from you? And even if they did, thousands from their own community are available for lending and borrowing. Is the benefit of paying interest for the [Muslim] community or for the disbelievers? If the national condition were to improve by paying interest, then millions of Muslims paying interest to moneylenders (banyas) and ruining their properties – where a property worth a thousand is sold for two to two-and-a-half hundred – would you call this an improvement in condition? Some permissible ways of taking profit can be found, some of which are mentioned in our Fatawa and many in our treatise on banknotes (Risala Note), which is being published with translation. However, the business of a shopkeeper cannot run solely on taking profit; he must also give it. And when the matter involves disbelievers, it is difficult to adhere to those three conditions on which permissibility is based. Giving interest in this way, even to a disbeliever, is strictly forbidden and warrants the fire [of Hell]. Yes, if the method of currency notes that we have written in that treatise becomes prevalent among merchants, then undoubtedly the calamity of taking and giving interest would be removed, and the general market for transactions would open with Shariah permissibility. And guidance is with Allah. And Allah the Almighty knows best.

Problem 163: From the city of Bareilly, Muhalla Malukpur, posed by Abdul Ghani Sahib, merchant, 13 Dhu al-Qi'dah 1337 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Mahboob Allah's shop is mortgaged to a grocer for four hundred rupees, and Mahboob Allah pays one percent monthly interest. Now a person sits in another shop of Mahboob Allah at a rent of ten rupees. Mahboob Allah says to this tenant, "Give me four hundred rupees, I will pay off the grocer, and you get a document written for the four hundred rupees. I will reduce the rent for you." Is it permissible in this situation or not?

The Answer: If he reduces it permanently and clearly records in the loan document that no profit will be taken or given on it, and this reduction is merely a favor in exchange for a favor and not a profit from the loan, then there is no harm. And Allah the Almighty knows best.

जिसे अल्लाह तबाह और बर्बाद करे वह भला कैसे फल-फूल सकता है, और मान लीजिए कि कुछ दिनों के लिए वह बाहरी नज़र में फलता-फूलता भी दिखे, तो वह जितना बढ़ेगा, अल्लाह की लानत ही बढ़ेगी। मुबादा दिल आँ फरूमाया शाद कि अज़ बहर-ए-दुनिया देहद दीन बा-बाद (उस कमज़ोर दिल वाले का मन खुश न हो जिसने दुनिया की खातिर अपने धर्म को बर्बाद कर दिया। - अनुवाद) यदि महान कुरान पर ईमान है, तो ब्याज का परिणाम निश्चित रूप से विनाश और नुकसान है। पूछने वाला लेन-देन के बारे में पूछता है; मुसलमानों के पास धन कहाँ है और काफ़िर बड़े-बड़े अमीर हैं, उन्हें आपसे ब्याज पर ऋण लेने की क्या आवश्यकता होगी? और यदि हो भी, तो उनके समुदाय के हज़ारों लोग लेन-देन के लिए मौजूद हैं और ब्याज देने में समुदाय का लाभ है या काफ़िरों का? यदि ब्याज देने से राष्ट्रीय स्थिति सुधरती, तो लाखों मुसलमान बनियों को ब्याज देते और अपनी संपत्तियों को नष्ट करते - जहाँ हज़ार का माल दो ढाई सौ में बिक जाता है - क्या आप इसी को स्थिति सुधरना कहते हैं? लाभ लेने के कुछ जायज़ तरीके निकल सकते हैं, जिनमें से कुछ का उल्लेख हमारे फ़तावा में है और बहुतों का हमारे 'रिसाला नोट' (नोट पर पुस्तिका) में है जो अनुवाद के साथ छप रहा है, लेकिन किसी दुकानदार का काम केवल लाभ लेने से नहीं चलता, उसे देना भी पड़ता है, और जब मामला काफ़िरों से हो, तो उन तीन शर्तों का पालन करना कठिन है जिन पर जायज़ होने का दारोमदार है। इस तरह ब्याज देना, चाहे काफ़िर को ही क्यों न हो, कतई हराम है और नर्क की आग का हकदार बनाता है। हाँ, यदि नोटों का वह तरीका जो हमने उस पुस्तिका में लिखा है व्यापारियों में प्रचलित हो जाए, तो निस्संदेह ब्याज लेने-देने की आफत दूर हो जाएगी और लेन-देन का सामान्य बाज़ार शरई इजाज़त के साथ खुल जाएगा। और अल्लाह ही तौफीक देने वाला है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला १६३: शहर बरेली, मोहल्ला मलूकपुर से, अब्दुल ग़नी साहब व्यापारी द्वारा प्रेषित, १३ ज़िल्कादा १३३७ हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि महबूब अल्लाह की एक दुकान एक बनिये के पास चार सौ रुपये में गिरवी है और महबूब अल्लाह हर महीने एक प्रतिशत ब्याज देते हैं। अब एक व्यक्ति महबूब अल्लाह की दूसरी दुकान में दस रुपये किराए पर बैठता है। महबूब अल्लाह उस किराएदार से कहता है कि "मुझे चार सौ रुपये दे दो, मैं बनिये को चुका दूँगा और तुम चार सौ रुपये का दस्तावेज़ लिखवा लो, मैं तुम्हारे लिए किराया कम कर दूँगा।" क्या इस स्थिति में यह जायज़ है या नहीं?

जवाब: यदि वह हमेशा के लिए किराया कम कर दे और ऋण के दस्तावेज़ में स्पष्ट रूप से लिख दे कि इस पर कोई लाभ नहीं लिया-दिया जाएगा, और यह कमी केवल उस एहसान के बदले में एहसान हो, ऋण का लाभ न हो, तो कोई हर्ज नहीं है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

पृष्ठ ७१५ का ३३६

جسے اللہ تباہ وبرباد کرے وہ کیونکر بڑھ سکتا ہے، اور بالفرض کچھ دن کو ظاہری نگاہ میں بڑھے بھی تو جتنا بڑھے گا اللہ کی لعنت بڑھے گی۔ مبادا دل آں فرومایہ شاد کہ از بہر دنیا دہد دین بباد (اس کمینے کا دل خوش نہ ہو جس نے دنیا کی خاطر دین کو برباد کیا۔ ت) اگر قرآن عظیم پر ایمان ہے تو سود کا انجام یقیناً تباہی و خسران ہے۔ سائل لین دین پوچھتا ہے، مسلمانوں کے پاس مال کہاں اور کفار بڑے بڑے مالدار، انہیں آپ سے سودی قرض لینے کی کیا ضرورت ہو گی، اور اگر ہو بھی تو ان کی قوم کے ہزاروں لینے دینے کو موجود ہیں اور سود دینے میں قوم کا نفع ہے یا کفار کا، سود دینے سے قومی حالت سنورتی تو لاکھوں مسلمان بنیوں کو سود دیتے اور اپنی جائدادوں کو تباہ کرتے ہیں ہزار کا مال دو ڈھائی سو میں بک جاتا ہے کیا اسی کو حالت سنورنا کہتے ہیں، نفع لینے کی بعض جائز صورتیں نکل سکتی ہیں جن میں کچھ کا ذکر ہمارے فتاویٰ اور بہت کا ہمارے رسالہ نوٹ میں ہے کہ مع ترجمہ چھپ رہا ہے، مگر کسی کوٹھی کا کام فقط نفع لینے سے نہیں چلتا اسے دینا بھی ضرور پڑتا ہے، اور معاملہ جب کفار سے ہو تو ان تینوں صورتوں کی پابندی دشوار ہے جن پر جواز کا مدار ہے اور یوں سود دینا اگر چہ کافر کو ہو قطعاً حرام واستحقاقِ نار ہے، ہاں اگر نوٹ کا طریقہ جو ہم نے اس رسالہ میں لکھا تجار میں رائج ہو جائے تو بلاشبہ سود لینے دینے کی آفت اٹھ جائے اور لین دین کا عام بازار شرعی جواز کے ساتھ کھل جائے، وباللہ التوفیق۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۱۶۳: از شہر بریلی محلہ ملوک پور مسئولہ عبدالغنی صاحب تاجر ۱۳ ذیقعدہ ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ محبوب اللہ کی دکان ایک بقال کے پاس چار سو روپیہ میں رہن ہے اور محبوب اللہ فی صدی ایک روپیہ ماہوار سود ادا کرتے ہیں اب ایک شخص محبوب

اللہ کی دوسری دکان میں مبلغ دس روپیہ کرایہ پر بیٹھتا ہے محبوب اللہ اس کرایہ دار سے کہتا ہے کہ مجھ کو تم چار سو روپیہ دے دو میں بقال کو ادا کردوں گا اور تم چار سو روپیہ کی دستاویز تحریر کرالو میں تم کو کرایہ میں کمی کردوں گا اس صورت میں جائز ہے یا نہیں؟

الجواب: اگر ہمیشہ کے لئے کمی کردے اور صاف صاف قرض میں تحریر کردیں کہ کچھ نفع اس پر لیا دیا نہ جائیگا یہ کمی صرف اس احسان کے بدلے میں احسان ہو قرض کا منافع نہ ہو تو حرج نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

Volume 17 - Fatawa Rizwia

Issue 164: From Reodar via Abu, sent by Contractor Anmol Musa Munshi Sahib, 12 Rajab 1337 AH. Question: What do the scholars of religion say regarding this matter: Is it permissible to exchange one grain for another? For example, one maund of maize is given two months earlier, and later one maund of wheat is taken after two months. The Muslims here conduct transactions on this condition. Is this exchange permissible or not? Answer: The Answer: There is no harm in exchanging one grain for another grain in a cash transaction. When the genus changes, then inequality (excess or deficiency) is permissible. If it is given from one side now and decided to be given from the other side after a period, then it requires the conditions of "Bay' Salam" (forward sale). And Allah Almighty knows best.

Issue 165: From Johar Kot Barkhan, Balochistan province, sent by Qadir Bakhsh Sahib, 14 Rabi' al-Awwal Sharif 1337 AH. Question (Persian): What do the scholars of religion say regarding this matter: The market rate is three powas per rupee. Now, a person sells at a rate lower than the market rate, at two powas per rupee, with a term of three months or more. Is this permissible or disliked (makruh)? Question (Urdu translation): What do the scholars of religion say regarding this matter: The market rate is three powas (a unit of weight) per rupee. Now, a person sells at a rate lower than the market rate, at two powas per rupee, with a term of three months or more. Is this permissible according to Sharia or disliked (makruh)? Answer: The Answer: It is permissible. And Allah Almighty knows best.

Issue 166: From Saidpur Post Office, Wazirganj, District Budaun, sent by Agha Ali Khan Sahib, dated 16 Rabi' al-Awwal Sharif 1337 AH. Question: If a moneylender does not take interest from his Muslim businessman but instead changes the word 'interest' to something else like 'excess' for the purpose of protecting the Muslim from it by calling it commission/brokerage (Arhat), can the Muslim be saved from this issue of interest or not? Answer: The Answer: It is not just the word 'interest' (Sud) that is prohibited, but the reality of interest is prohibited. Expressing it with the word 'addition' or 'excess' will neither save it from being interest nor will it change the prohibition. And Allah Almighty knows best.

जिल्द 17 - फ़तावा रज़विया

मसला 164: रेयोदर बराह आबू से, प्रेषक ठेकेदार अनमोल मूसा मुंशी साहब, 12 रजब 1337 हिजरी। प्रश्न: धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि क्या एक अनाज को दूसरे अनाज से बदलना जायज़ है या नहीं? उदाहरण के लिए, दो महीने पहले एक मन मक्का दिया गया और बाद में दो महीने के बाद एक मन गेहूँ लिया जाता है, यहाँ के मुसलमान इस शर्त पर लेन-देन करते हैं, क्या यह बदलना भी जायज़ है या नहीं? उत्तर: अल-जवाब: एक अनाज को दूसरे अनाज से नकद बदलने में कोई हर्ज नहीं है और जब वस्तु की श्रेणी (जीन्स) बदल गई हो, तो कमी-बेशी जायज़ है। और यदि एक तरफ से अभी दिया गया और दूसरी तरफ से एक अवधि के बाद देना तय हुआ, तो यह 'बैय-ए-सल्लम' (अग्रिम बिक्री) की शर्तों का मोहताज है। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसला 165: जौहर कोट बारखान, प्रांत बलूचिस्तान से, प्रेषक कादिर बख्श साहब, 14 रबीउल अव्वल शरीफ़ 1337 हिजरी। प्रश्न (फारसी): धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि बाज़ार का भाव तीन पाव प्रति रुपया है, अब एक व्यक्ति तीन महीने या उससे अधिक की अवधि पर बाज़ार के भाव से कम दो पाव प्रति रुपया के हिसाब से बेचता है, क्या यह जायज़ है या मकरूह? प्रश्न (उर्दू अनुवाद): धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि बाज़ार का भाव तीन पाव (वज़न की एक इकाई) प्रति रुपया है, अब एक व्यक्ति तीन महीने या उससे अधिक की अवधि पर बाज़ार के भाव से कम दो पाव प्रति रुपया के हिसाब से बेचता है, क्या यह शरई तौर पर जायज़ है या मकरूह? उत्तर: अल-जवाब: जायज़ है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 166: सैदपुर डाकखाना वज़ीरगंज, ज़िला बदायूँ से, प्रेषक आग़ा अली ख़ां साहब, दिनांक 16 रबीउल अव्वल शरीफ़ 1337 हिजरी। प्रश्न: अगर साहूकार अपने मुस्लिम व्यापारी से सूद (ब्याज) न ले, बल्कि सूद के शब्द को बदलकर कुछ अतिरिक्त (इज़ाफ़ा) कहने लगे और मुसलमान को उससे बचाने के लिए इसे 'आढ़त' (कमीशन) का नाम दे दे, तो क्या मुसलमान सूद के इस मसले से बच सकता है या नहीं? उत्तर: अल-जवाब: सिर्फ'सूद' शब्द ही हराम नहीं है, बल्कि सूद की हकीकत (तथ्य) हराम है। इसे 'इज़ाफ़ा' (अतिरिक्त) शब्द से व्यक्त करना इसे सूद होने से नहीं बचाएगा, और न ही इसकी हराम होने (हुर्मत) में कोई फर्क आएगा। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

مسئلہ ۱۶۴: از ریو در براہ ابو مرسلہ ٹھیکیدار انمول موسیٰ منشی صاحب ۱۲ رجب ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اناج کا بدلنا بھی دوسرے اناج سے جائز ہے یا نہیں؟ مثلاً مکئی ایک من دوماہ پہلے دی بعد میں دوماہ کے ایک من گندم لیتے ہیں، اس شرط سے لین دین یہاں کے مسلمان کرتے ہیں، یہ بدلنا بھی جائز ہے یا نہیں؟ الجواب: ایک اناج دوسرے ناج سے نقد بدلنے میں کوئی حرج نہیں اور جب جنس بدل گئی ہے تو کمی بیشی جائز ہے اور ایک طرف سے اب دیا گیا اور دوسری طرف سے ایک مدت کے بعد دینا ٹھہرا تو یہ بیع سلم کے شرائط کا محتاج ہے، واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۱۶۵: از جوہر کوٹ بار کھان ملک بلوچستان مرسلہ قادر بخش صاحب ۱۴ ربیع الاول شریف ۱۳۳۷ھ چہ میفرمایند علمائے دین دریں مسئلہ کہ نرخ بازار سہ پونہ فی روپیہ است اکنوں شخصی بمیعاد تا ۳ سہ ماہ یا زیادہ کم از نرخ بازار دو پونٹ فی روپیہ فروخت میکند آیا جائز است یا مکروہ؟ علمائے دین اس مسئلہ میں کیا فرماتے ہیں کہ بازار کا بھاؤ تین پونٹ فی روپیہ ہے، اب ایک شخص تین ماہ یا زیادہ کی میعاد پر بازار کے بھاؤ سے کم دو پونٹ فی روپیہ کے حساب سے فروخت کرتا ہے، کیا شرعاً جائز ہے یا مکروہ؟ (ت) الجواب: جائز ہے۔ واللہ تعالیٰ بہتر جانتا ہے (ت)

مسئلہ ۱۶۶: از سید پور ڈاکخانہ وزیر گنج ضلع بدایوں مرسلہ آغا علی خاں صاحب مورخہ ۱۶ ربیع الاول شریف ۱۳۳۷ھ اگر ساہو کار اپنے مسلمان روز گاری سے سود نہ لے بلکہ کچھ اضافہ لفظ سود سے بدلنے اور مسلمان کو اس سے محفوظ کرنے کی غرض سے آڑھت پر کر لے تو مسلمان اس مسئلہ سود سے بچ سکتا ہے یا نہیں؟ الجواب: سود کا لفظ فقط حرام نہیں بلکہ سود کی

حقیقت حرام ہے اسے اضافہ کے لفظ سے تعبیر کرنا اسے سود ہونے سے بچا لے گا، نہ حرمت میں فرق آئے گا۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

صفحہ 337 از 715

Fatawa Razawiyya Volume 17

Issue 167 to 170: From Abdul Hakim Khan, shopkeeper, Katkor neighborhood, Rampur State.

(1) Zaid sold a gold coin (ashrafi) worth 24 rupees to Bakr. Bakr paid 12 rupees on the spot and promised the remaining 12, which he paid after a few days.

(2) Zaid asked Bakr for change for a rupee and gave him the rupee. Bakr gave him eight annas worth of copper coins immediately and gave two four-anna silver coins (chawannis) after two days.

(3) Zaid gave a rupee to Bakr and asked for small coins. Bakr gave him one eight-anna coin (athanni) immediately and promised the rest in two days. Accordingly, after three days, he gave eighteen pice worth of coins.

(4) Zaid bought one anna's worth of goods from Bakr. Bakr said he didn't have the remaining change for the rupee at that moment and to take it later. Zaid gave the rupee to Bakr and took the remaining change after two days. Is there any form of Riba (interest/usury) in any of these cases or not?

The Answer:

(1) This is forbidden (haram) because in the exchange of gold and silver, hand-to-hand delivery is a condition.

(2) If Zaid asked for copper coins for a rupee and gave the rupee, and Bakr gave eight annas worth of copper coins now and gave four-anna or eight-anna silver coins after two days instead of the remaining copper coins, then it is permissible. This is because in the exchange of silver rupees for copper coins, possession from one side is sufficient, as we have investigated in 'Kafil al-Faqih al-Fahim'. (Translator's note: as we have researched in Kafil al-Faqih al-Fahim). And if Zaid himself asked for eighteen pice and two four-anna coins for the rupee, which were given at a later time, then it is forbidden because the requirement of 'Bai-as-Sarf' (currency exchange) is hand-to-hand delivery. (Translator's note: because in Sarf transactions, hand-to-hand exchange is a condition).

(3) This scenario is permissible as possession of the copper coins occurred on one side, and for the eight-anna silver coin, it occurred on both sides.

(4) This is also permissible based on the aforementioned reason, when it was decided to take the remaining change later, as stated in the question.

Issue 171: From Saidpur, Rangpur district, Bengal, sent by Mahmood Khan Sahab, Puncher Superintendent, 9 Jumada al-Ula 1336 AH.

I am employed in the railway as a Puncher Superintendent. Every month, the railway deducts some money from my salary, and that money is given back after leaving the job along with some interest, as per the railway circular. Therefore, can I use this money for my own expenses or for some charitable work? Out of ignorance, I had inquired from Madrasa Deoband, and it was declared permissible there. Later, it became known that their fatwa for us...

फ़तावा रज़विया खंड 17

मसाला 167 से 170: अब्दुल हकीम खान दुकानदार, मोहल्ला कटकोर, रामपुर रियासत।

(1) ज़ैद ने बक्र के हाथ 24 रुपये की अशर्फ़ी बेची। बक्र ने 12 रुपये उसी समय दे दिए और 12 का वादा किया, चुनाँचे दो-चार दिन बाद वह भी दे दिए।

(2) ज़ैद ने बक्र से एक रुपये के पैसे माँगे और रुपया दिया। बक्र ने आठ आने के पैसे उसी समय दे दिए और दो दिन के बाद दो चवन्नियाँ दे दीं।

(3) ज़ैद ने बक्र को एक रुपया देकर पैसे माँगे, बक्र ने एक अठन्नी उस समय दे दी और बाक़ी के बारे में दो दिन का वादा किया। चुनाँचे तीन दिन के बाद 18 पैसे दे दिए।

(4) ज़ैद ने एक आने का सौदा बक्र से लिया, बक्र ने कहा कि इस समय बाक़ी रुपये के पैसे नहीं हैं, फिर ले लेना। बक्र को ज़ैद ने रुपया दे दिया और दो दिन के बाद बाक़ी के पैसे ले लिए। इन सब सूरतों में कोई सूरत रिबा (ब्याज) की है या नहीं है?

उत्तर (अल-जवाब):

(1) यह हराम है क्योंकि सोने और चाँदी के विनिमय (तबादले) में हाथों-हाथ (दस्त-ब-दस्त) होना शर्त है।

(2) अगर ज़ैद ने रुपये के पैसे (ताँबे के सिक्के) माँगे और रुपया दे दिया, उसने आठ आने के पैसे अब दे दिए और बाक़ी पैसों के बदले दो दिन के बाद चवन्नियाँ या अठन्नी दी, तो जायज़ है कि रुपये और पैसों के विनिमय में एक तरफ़ से कब्ज़ा काफ़ी है, जैसा कि हमने 'कफ़ीलुल फ़क़ीहुल फ़ाहिम' में इसकी तहक़ीक़ की है। (अनुवाद: जैसा कि हमने कफ़ीलुल फ़क़ीहुल फ़ाहिम में इसकी तहक़ीक़ की है। त) और अगर ज़ैद ही ने रुपये के18 पैसे और दो चवन्नियाँ माँगी थीं जो उसने दूसरे समय दीं, तो यह हराम है क्योंकि 'बै-ए-सर्फ़ में हाथों-हाथ लेना शर्त है। (अनुवाद: क्योंकि बै-ए-सर्फ़ में हाथों-हाथ लेना शर्त है। त)

(3) यह सूरत जायज़ है कि पैसों में एक तरफ़ का कब्ज़ा हो गया और अठन्नी में दोनों तरफ़ का।

(4) यह भी उक्त दलील के कारण जायज़ है जबकि बाक़ी के पैसे लेना तय हुआ जैसा कि सवाल में है।

मसाला 171: सैदपुर, जिला रंगपुर, बंगाल से, प्रेषक महमूद खान साहब, पंचर सुपरिटेंडेंट, 9 जमादी-उल-उला 1336 हिजरी।

सेवक रेलवे में पंचर सुपरिटेंडेंट के पद पर नियुक्त है और हर महीने वेतन से कुछ रुपया रेलवे काट लेती है और वह रुपया नौकरी छोड़ने के बाद कुछ ब्याज के साथ दिया जाता है जो रेलवे का सर्कुलर है। अतः क्या यह रुपया अपने उपयोग में या किसी नेक काम में लाया जा सकता है या नहीं? अज्ञानतावश मैंने मदरसा देवबंद से पूछा था, वहाँ से इसे जायज़ करार दिया गया। बाद में पता चला कि वहाँ का फ़तवा हम लोगों के..

पृष्ठ 338 / 715

فتاوی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

مسئلہ ۱۶۷تا۱۷۰: عبدالحکیم خان دکاندار محلہ کٹکور ریاست رامپور

(۱) زید نے بکر کے ہاتھ ۲۴روپیہ کی اشرفی فروخت کی ۱۲ روپیہ تو بکر نے اسی وقت دے دئے ۱۲ کا وعدہ کیا چنانچہ دو چار روز کے بعد وہ بھی دے دئے۔

(۲) زید نے بکر سے ایک روپیہ کے دام مانگے اور روپیہ دیا بکر نے آٹھ آنے پیسے اسی وقت دے دئے اور دو یوم کے بعد دو چونیاں دے دیں۔

(۳) زید نے بکر سے ایک روپیہ دے کر پیسے مانگے، بکر نے ایک اٹھنی اس وقت دے دی باقی کے بابت دو یوم کا وعدہ کیا چنانچہ تین یوم کے بعد ۱۸ کے پیسے دے دئے۔

(۴) زید نے ایک آنہ کا سودا بکر سے لیا، بکر نے کہا کہ اسوقت باقی روپیہ کے پیسے نہیں ہیں پھر لے لینا، بکر کو زید نے روپیہ دے دیا اور دو روز کے بعد باقی کے پیسے لے لئے، ان سب صورتوں میں کوئی صورت ربا کی ہے یا نہیں ہے؟

الجواب:

(۱) یہ حرام ہے کہ سونے چاندی کے مبادلہ میں دست بدست ہونا شرط ہے۔

(۲) اگر زید نے روپے کے پیسے مانگے اور روپیہ دے دیا اس نے آٹھ آنے پیسے اب دے دئے اور باقی پیسوں کے بدلے دودن کے بعد چونیاں اٹھنی دی تو جائز ہے کہ روپے اور پیسوں کے مبادلہ میں ایک طرف سے قبضہ کافی ہے کما حققناہ فی کفل الفقیہ الفاھم (جیسا کہ ہم نے کفل الفقیہ الفاھم میں اس کی تحقیق کی ہے۔ ت) اور اگر زید ہی نے روپے کے ۱۸ پیسے اور دو چونیاں

مانگیں جو اس نے دوسرے وقت دیں یہ حرام ہے لاشتراط الصرف یدا بید (کیونکہ بیع صرف میں ہاتھوں ہاتھ لینا شرط ہے۔ ت)

(۳) یہ صورت جائز ہے کہ پیسوں میں ایک طرف کا قبضہ ہو گیا اور اٹھنی میں دونوں طرف کا۔

(۴) یہ بھی بدلیل مذکور جائز ہے جبکہ باقی کے پیسے لینے ٹھہرے جیسا کہ سوال میں ہے۔

مسئلہ ۱۷۱: از صیدپور ضلع رنگپور بنگال مرسلہ محمود خان صاحب پنچر سپرنٹنڈنٹ ۹ جمادی الاولی ۱۳۳۶ھ

فدوی ریلوے میں بعہدہ پنچر سپرنٹنڈنٹ ملازم ہے اور ہر ماہ مشاہرہ سے کچھ روپیہ ریلوے کاٹ لیتی ہے اور وہ روپیہ بعد ترک ملازمت مع کچھ سود کے دیا جاتا ہے جو ریلوے کا سرکلر ہے لہٰذا یہ روپیہ اپنے صرف میں یا کسی کارِ خیر میں لاسکتا ہے یا نہیں؟ مدرسہ دیوبند سے لاعلمی سے میں نے دریافت کیا تھا وہاں سے جائز قرار دیا گیا ہے بعد میں معلوم ہوا کہ وہاں کا فتویٰ ہم لوگوں کے

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

...is not reliable for [this purpose]. Therefore, it is requested in your presence to be honored with an answer.

The Answer: Allah Almighty has forbidden interest (Riba) and has not made any distinction between a Muslim and a non-Muslim in this regard. The absolute command is: "And Allah has forbidden interest" 1 (Holy Quran 2/275). Therefore, taking it by designating it as interest is not permissible. If a Muslim is also a shareholder in any company, then taking this extra amount is absolutely forbidden. If no Muslim is a shareholder, then intending it as interest is not permissible; rather, one should consider it as permissible (mubah) wealth obtained with the consent of the owners without any deception. In this way, there is no inherent harm in taking it, and one may use it for personal expenses or for charitable works, as we have established in our fatawa. And Allah Almighty knows best.

Problem 171: Petitioner Hafiz Muhammad Noor-ul-Haq, Majalla Panjahian, Pilibhit. 25 Safar 1331 AH.

My master and most honorable Maulana Ahmad Raza Khan Sahib (may his glory endure), after the Sunnah greeting, the request is that a person named Wazir passed away, leaving behind two minor daughters among other heirs. From his estate, four hundred rupees in cash fell to the daughters' share. In addition to the total money, another person took this amount from them as a trust on the promise that "we will continue to give you five rupees monthly as profit on this money." For the purpose of securing this money, the person taking the money mortgaged his house in exchange for this money, and a mortgage deed was written. However, the content of the mortgage deed is: "The sum of four hundred rupees has been deposited with us as a trust or provision through Mst. Bane Begum for both the minors, which will remain deposited with us until the maturity of both minors. Since there is no formal document from our side with the lady regarding the trust money for assurance, we hereby acknowledge through this writing that the said money will remain deposited for both mentioned minors, and we will continue to pay its interest at the rate of 1 1/4 (1/4/3) percent monthly to the minors month by month without any excuse or pretext. And for the security of the said money, we make one house submerged and secured (mortgaged) by this document so that until the full payment of the said money, we will not transfer it elsewhere. If we do, it will be invalid. Therefore, this

interest-bearing mortgage deed in favor of the minor daughters of Wazir is written as a certificate."

Now, the matter to be inquired is that the person mentioned who took the money has passed away and did not pay the fixed monthly amount. Now, those minors will take their money from that house, but can they also take the one hundred rupees that has exceeded the original four hundred rupees up to this time, or not? Because for those minors or their...

---

1 The Holy Quran 2/275 Page 339 of 715

फ़तावा रज़विया (खंड १७)

...के लिए विश्वसनीय नहीं है, इसलिए आपकी सेवा में प्रार्थना है कि उत्तर प्रदान कर मुझे सम्मानित करें।

उत्तर: अल्लाह अज़वजल ने ब्याज (सूद) को हराम (वर्जित) घोषित किया है और इसमें मुस्लिम और गैर-मुस्लिम के बीच कोई भेद नहीं किया है। स्पष्ट आज्ञा है: "और अल्लाह ने ब्याज को हराम कर दिया है।" 1 (अल-क़ुरान २/२७५)। अतः इसे ब्याज मानकर लेना वैध नहीं है। यदि किसी कंपनी में कोई मुसलमान भी हिस्सेदार है, तो इस अतिरिक्त धन का लेना पूर्णतः हराम है। और यदि कोई मुसलमान हिस्सेदार नहीं है, तो ब्याज की नियत करना अवैध है; बल्कि यह समझना चाहिए कि यह अनुमत (मुबाह) संपत्ति है जो मालिकों की इच्छा से बिना किसी धोखे के मिल रही है। इस प्रकार इसे लेने में मूलतः कोई दोष नहीं है और व्यक्ति इसे अपने स्वयं के उपयोग के लिए रख सकता है या नेक कार्यों में लगा सकता है, जैसा कि हमने अपने फ़तावा में विस्तार से बताया है। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

मसला ١٧١: याचिकाकर्ता हाफ़िज़ मुहम्मद नूरुल हक़, मोहल्ला पंजाहीयां, पीलीभीत। २५ सफ़र १३४१ हिजरी।

मेरे श्रद्धेय और सम्माननीय श्रीमान मौलाना अहमद रज़ा खान साहब (उनकी महिमा बनी रहे), सुन्नत के अनुसार अभिवादन के बाद, निवेदन यह है कि वज़ीर नाम के एक व्यक्ति का निधन हो गया, जिसने अन्य उत्तराधिकारियों के बीच दो नाबालिग बेटियाँ छोड़ीं। उसकी संपत्ति से बेटियों के हिस्से में चार सौ रुपये नकद आए। इस कुल राशि के अतिरिक्त, एक अन्य व्यक्ति ने इसे न्यास (अमानत) के रूप में इस वादे के साथ लिया कि "हम आपको इस राशि पर पांच रुपये मासिक लाभ देते रहेंगे।" इस राशि के भरोसे के लिए, राशि लेने वाले व्यक्ति ने अपना घर इस राशि के बदले गिरवी रख दिया और उसका गिरवीनामा लिखा गया। परंतु गिरवीनामे की विषय-वस्तु इस प्रकार है: "चार सौ रुपये की राशि मुसम्मात बने बेगम के माध्यम से हमारे पास दोनों नाबालिगों के लिए न्यास या निर्वाह (फ़ितना) के रूप में जमा हुई है, जो दोनों नाबालिगों के वयस्क होने तक हमारे पास रहेगी। चूंकि हमारी ओर से मुसम्मात के पास आश्वासन के लिए न्यास की कोई आधिकारिक लिखा-पढ़ी नहीं है, इसलिए हम इस दस्तावेज़ के अनुसार प्रतिज्ञा करते हैं कि उक्त राशि दोनों वर्णित नाबालिगों के लिए जमा रहेगी और हम इसका ब्याज (١/٤/٣) प्रतिशत मासिक की दर से नाबालिगों को बिना किसी

बहाने या टालमटोल के महीने-दर-महीने देते रहेंगे। और उक्त राशि की सुरक्षा के लिए, हम एक घर को इस दस्तावेज़ द्वारा गिरवी (मकफ़ूल) रखते हैं ताकि उक्त राशि के पूर्ण भुगतान तक इसे कहीं और स्थानांतरित न किया जा सके। यदि ऐसा किया जाता है, तो वह अवैध होगा। इसलिए, वज़ीर की नाबालिग बेटियों के पक्ष में यह ब्याजी गिरवीनामा लिखा गया है ताकि प्रमाण स्वरूप रहे।"

अब पूछताछ का विषय यह है कि जिस व्यक्ति ने राशि ली थी, उसका निधन हो गया और उसने वह तय मासिक राशि नहीं दी। अब वे नाबालिग अपना पैसा उस घर से प्राप्त करेंगी, परंतु मूल चार सौ रुपये से अधिक जो एक सौ रुपये अब तक जमा हो गए हैं, क्या वे उसे भी ले सकती हैं या नहीं? क्योंकि उन नाबालिगों को या उनके..

---

1 अल-क़ुरान अल-करीम २/ २७५ पृष्ठ ३३९ of ४१५

واسطے قابل وثوق نہیں ہے لہٰذا حضور کی خدمت میں التماس ہے کہ جواب سے سرفراز فرمایا جاؤں۔

الجواب: اللہ عزوجل نے سود کو حرام فرمایا اور اس میں کوئی تخصیص مسلم وکافر کی نہیں رکھی، مطلق ارشاد ہوا ہے "وَحَرَّمَ الرِّبٰوا" 1 (اور اللہ تعالٰی نے سود کو حرام کر دیا۔ت) تو اسے سود قرار دے کر لینا جائز نہیں اور اگر کسی کمپنی میں کوئی مسلمان بھی حصہ دار ہو تو مطلقاً اس زیادہ روپیہ کا لینا حرام ہے اور اگر کوئی مسلمان حصہ دار نہیں تو سود کی نیت کرنا نا جائز ہے بلکہ یوں سمجھے کہ ایک مال مباح بلا غدر مالکوں کی خوشی سے ملتا ہے یوں اس کے لینے میں فی نفسہ کوئی حرج نہیں اور اسے چاہے اپنے صرف میں لائے چاہے کار خیر میں لگائے کما حققناہ فی فتاوٰنا (جیسا کہ ہم نے اپنے فتاوٰی میں اس کی تحقیق کی ہے۔ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۷۱: سائل حافظ محمد نورالحق مجلہ پنجاہیاں پیلی بھیت ۲۵ صفر ۱۳۳۱ھ

مخدومی و مکرمی جناب مولانا احمد رضا خان صاحب دام مجدہ بعد سلام مسنون التماس یہ ہے کہ ایک شخص مسمٰی وزیر نے انتقال کیا منجملہ اور وارثوں کے دو لڑکیاں نابالغ اس نے چھوڑیں، اس کے مال میں چار سو روپیہ نقد ان لڑکیوں کے حصہ میں علاوہ کل روپیہ ایک شخص دیگر نے امانتاً اس سے اس وعدہ پر لیا کہ ہم تم کو پانچ روپیہ ماہوار اس روپیہ کا منافع دیتے رہیں گے، اور اس روپیہ کے اطمینان کی غرض سے اس شخص روپیہ لینے والے نے اپنا مکان اس روپیہ کے بالعوض رہن کر دیا اور اس کا رہن نامہ لکھا گیا مگر رہن نامے میں مضمون یہ ہے کہ مبلغ چار سو روپے معرفت مسماۃ بنے بیگم ہمارے پاس امانتاً یا فتنہ ہر دو نابالغہ کے جمع ہوئے ہیں جو تا

بلوغ ہر دو نابالغہ کے ہمارے پاس جمع رہیں گے چونکہ زر امانت کی کوئی تحریر باضابطہ بغرض اطمینان کے منجانب ہمارے کہ مسماۃ کے پاس نہیں ہیں، لہٰذا ہم بموجب تحریر ہذا کے اقرار کرتے ہیں کہ زر مذکور ہر دو مذکور نابالغان کے جمع رہیں گے اور اس کا سود بشرح فیصدی (۱/۴/۳) ماہواری کے حساب سے نابالغان کو ماہ بماہ بلا عذر و حیلہ کے ادا کرتے رہیں گے اور واسطے اطمینان زر مذکور کے ایک مکان مستغرق و مکفول دستاویز ہذا کرتے ہیں تا ببیباق زر مذکور کے بجائے دیگر منتقل نہیں کریں گے، اگر کریں تو نا جائز ہو، لہٰذا یہ رہن نامہ سودی بحق نابالغان دختران وزیر کے لکھ دیں کہ سند ہو۔

تواب امر دریافت طلب یہ ہے کہ شخص مذکور جس نے روپیہ لیا تھا اس نے انتقال کیا اور ماہواری جو مقرر کیا تھا وہ نہیں دیا اب وہ نابالغان اپنا روپیہ اس مکان سے لیں گی مگر اصل کے چار سو روپیہ سے جو ایک سو روپیہ زائد اس وقت تک ہو گیا ہے وہ بھی لے سکتی ہیں یا نہیں کیونکہ ان نابالغان کو یا اس کے

---

1 القرآن الکریم ۲/ ۲۷۵ Page 339 of 715

Fatawa Razawiya (Vol. 17)

And none of the heirs knew that five rupees monthly interest was stipulated in the document; they also understood that they would be given five rupees monthly as house rent or from the profits of that money. If they take those hundred rupees which are in excess of the principal, will there be any accountability for them, and will they not be sinners before Allah? It is also worth noting that they are extremely poor and have no means of livelihood. If there is any way they can take it and there is no accountability for them in the hereafter, it would be very good as many of their needs would be fulfilled.

The Answer: That money is interest and haram (forbidden) in every way. Taking it is not permissible in any situation. If it is written as interest, it is haram; if considered profit, it is interest. Regarding it as house rent is invalid; there is no meaning in the owner of the house taking rent from someone who is not the owner. In any case, it is interest. Yes, if the person who took this money as a trust and fixed five rupees monthly to be given is from non-Muslim nations like Hindus, etc., then those hundred rupees extra received according to the agreement can be taken considering it as permissible (mubah) wealth. Taking it considering it interest is haram. And Allah knows best.

Problem 173: From Kaithal, District Karnal, sent by Fazl Qadeer Sahib, student of Madrasa Islamia, 16 Jumada al-Ula 1331 AH.

Question: Under government supervision, agricultural banks are being opened in the villages of Punjab and Madras. The purpose of agricultural banks is not usury, but rather to disconnect completely from usurious moneylenders. The official name of this bank is the "Cooperative Credit Society". Its structure is such that the village people deposit ten rupees per person annually into their society for ten years. They also take interest-bearing loans from the same society as needed, but only shareholders have the right to take loans; non-shareholders are absolutely not given any. Whatever interest the debtor pays to this bank, that amount will also come into the debtor's share proportionally. Thus, the interest-payer is also the interest-receiver. After ten years, when sufficient capital has accumulated in this society, the interest is greatly reduced or completely stopped. Is this agricultural bank permissible or not? Answer and be rewarded.

The Answer: Haram, haram, absolutely and certainly haram. Ten years is a long time; interest cannot be halal (permissible) for even a single moment or an instant. Divine commands cannot be changed by anyone's amendment. Allah Almighty says:

"And Allah has permitted trade and has forbidden interest" 1 And Allah made trade lawful and interest forbidden. (T)

1 Al-Quran al-Karim 2/275 Page 340 of 715

और किसी वारिस को यह मालूम न था कि दस्तावेज़ के अंदर वे पांच रुपये मासिक ब्याज दिया गया है, वे भी यही समझी हुई थीं कि हमें पांच रुपये मासिक मकान का किराया या इस रुपये के मुनाफ़े में से दिया जाएगा। अगर वे सौ रुपये जो असल से अधिक हैं ले लें, तो क्या उनके ज़िम्मे कोई जवाबदेही तो न होगी और वे अल्लाह के नज़दीक गुनहगार तो न होंगी? और यह भी लिखने योग्य बात है कि वे बहुत ही गरीब हैं और उनके पास कोई रोज़गार भी नहीं है। अगर कोई ऐसी सूरत हो कि वे उसे ले सकें और उनके ज़िम्मे परलोक में कोई जवाबदेही न हो तो बहुत ही बेहतर होगा क्योंकि उनके बहुत से काम निकल आएंगे।

जवाब: वह रुपया हर तरह से ब्याज और हराम है, उसका लेना किसी भी हाल में जायज़ नहीं हो सकता। ब्याज लिखा गया तो हराम है, मुनाफ़ा समझा तो ब्याज है। मकान का किराया समझा जाना बातिल (अमान्य) है, मकान का मालिक गैर-मालिक से किराया ले, इसका कोई अर्थ नहीं। बहरहाल वह ब्याज है। हाँ, अगर वह व्यक्ति जिसने यह रुपया अमानत के तौर पर लिया और उस पर पांच रुपये मासिक देना तय किया, हिंदू आदि गैर-मुस्लिम समुदायों से हो, तो यह सौ रुपये अतिरिक्त उसके समझौते के अनुसार मिलते हैं, इसे एक मुबाह (अनुमेय) माल समझकर लेना जायज़ है, ब्याज समझकर लेना हराम है। वल्लाहु तआला आलम (और अल्लाह बेहतर जानता है)।

मसला 173: कैथल, ज़िला करनाल से, प्रेषक फ़ज़ल क़दीर साहब, छात्र मदरसा इस्लामिया, 16 जमादी-उल-उला 1331 हिजरी।

सवाल: सरकार की देखरेख में पंजाब और मद्रास के गांवों में कृषि बैंक खोले जा रहे हैं। कृषि बैंक का उद्देश्य सूदखोरी नहीं है, बल्कि सूदखोर महाजनों से संबंध पूरी तरह तोड़ना है। इस बैंक का सरकारी नाम 'अंजुमन इमदाद क़र्ज़ा' (सहकारी ऋण समिति) है। इसकी रूपरेखा यह है कि गांव के लोग शेयरधारक के रूप में दस रुपये प्रति व्यक्ति सालाना दस साल तक अपनी इस अंजुमन में जमा करते रहते हैं और इसी अंजुमन से ज़रूरत के अनुसार ब्याजी ऋण भी लेते रहते हैं। लेकिन ऋण लेने का अधिकार केवल शेयरधारकों को है, गैर-शेयरधारकों को बिल्कुल नहीं दिया जाता। क़र्ज़दार ब्याज की जो कुछ राशि इस बैंक को देगा, वह राशि आनुपातिक रूप से उस क़र्ज़दार के हिस्से में भी आएगी। मानो ब्याज देने वाला ही ब्याज लेने वाला भी है। दस साल के बाद जब इस अंजुमन के पास

पर्याप्त पूंजी जमा हो जाती है, तो ब्याज बहुत कम या बिल्कुल बंद कर दिया जाता है। क्या यह कृषि बैंक जायज़ है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

जवाब: हराम, हराम, क़तई और यक़ीनी तौर पर हराम। दस साल तो बहुत होते हैं, ब्याज एक पल या एक क्षण के लिए भी हलाल नहीं हो सकता। ईश्वरीय आदेश किसी के संशोधन से नहीं बदल सकते। अल्लाह अज़्ज़-व-जल्द फ़रमाता है:

"व अ-हल्लल्लाहुल बै-अ व हर्र-मर्रिबा" 1 और अल्लाह ने व्यापार को हलाल किया और ब्याज को हराम किया। (त)

1 अल-क़ुरआन अल-करीम 2/275 पेज 340 ऑफ़ 715

اور کسی وارث کو یہ معلوم نہ تھا کہ دستاویز کے اندر وہ پانچ روپیہ ماہوار سود دیا گیا ہے وہ بھی سمجھی ہوئی تھیں کہ ہم کو پانچ روپیہ ماہوار کرایہ مکان یا اس روپیہ کے منافع میں سے دیا جائے گا اگر وہ سو روپیہ جو اصل سے زائد ہے لے لیں تو کوئی مواخذہ تو ان کے ذمہ میں نہ ہوگا اور وہ عنداللہ گنہگار تو نہ ہوں گی، اور یہ بھی امر قابل تحریر ہے کہ وہ نہایت ہی غریب ہیں اور کوئی معاش بھی ان کے پاس نہیں ہے اگر کوئی صورت ایسی ہو کہ وہ اسے لے سکتی ہیں اور ان کے ذمہ کوئی مواخذہ اخروی نہ ہو تو نہایت ہی بہتر ہوگا کیونکہ ان کے بہت سے کام نکلیں گے۔

الجواب: وہ روپیہ ہر طرح سود اور حرام ہے اس کا لینا کسی حال میں جائز نہیں ہو سکتا ہے، سود لکھا گیا تو حرام ہے، منافع سمجھا تو سود ہے۔ مکان کا کرایہ جانا تو باطل ہے، مالک مکان غیر مالک سے کرایہ پر لے اس کے کوئی معنی نہیں بہر حال وہ سود ہے، ہاں اگر وہ جس شخص نے یہ روپیہ امانتاً لیا اور اس پر پانچ روپے ماہوار دینا مقرر کیا ہندو وغیرہ غیر اقوام سے ہو تو یہ سو روپیہ زائد اس کے قرار داد سے ملتے ہیں ایک مال مباح سمجھ کر لینا جائز ہے سود سمجھ کر لینا حرام واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۱۷۳: از کتھل ضلع کرنال مرسلہ فضل قدیر صاحب طالب علم مدرسہ اسلامیہ ۱۶ جمادی الاولیٰ ۱۳۳۱ھ

گورنمنٹ کی نگرانی میں پنجاب و مدراس کے دیہات میں زرعی بینک کھولے جاتے ہیں زراعتی بنک کی غرض سے سود خوری نہیں ہوتی بلکہ سود خور مہاجنوں سے قطع متعلق ہوتا ہے سرکاری نام اس بنک کا انجمن امداد قرضہ ہے (ہیئت اس کی یہ ہے) کہ گاؤں کے لوگ بطور

حصہ داری کے دس روپیہ سالانہ فی آدمی دس سال تک اس اپنی انجمن میں جمع کرتے رہتے ہیں اور اسی انجمن سے حسب ضرورت سودی قرض بھی لیتے رہتے ہیں مگر قرض لینے کا حق محض حصہ داروں کو ہے غیر حصہ دار کو ہر گز ہر گز نہیں دیا جاتا مقروض جو کچھ رقم سود اس بنک کو دے گا وہ رقم بحصہ رسد اس مقروض کے حصہ میں بھی آئے گی گویا سود دہندہ سود گیرندہ بھی ہے اس انجمن کے پاس دس سال کے بعد کافی سرمایہ جمع ہو جاتا ہے تو سود بہت کم یا بالکل موقوف کر دیا جاتا ہے، یہ بنک زراعتی ہے یہ بنک جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: حرام، حرام، حرام قطعی یقینی حرام، دس برس تو بہت ہوتے ہیں سود ایک لمحہ ایک آن کو حلال نہیں ہو سکتا، احکام الہیہ کسی کی ترمیم سے بدل نہیں سکتے ،اللہ عزوجل فرماتا ہے:

"وَاَحَلَّ اللّٰہُ الْبَیْعَ وَحَرَّمَ الرِّبٰوا" 1 اور اللہ نے بیع کو حلال اور سود کو حرام کیا۔ (ت)

1 القرآن الکریم ۲ / ۲۷۵ Page 340 of 715

Fatawa Razviyya (Volume 17)

It is in a Sahih Hadith: "The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) cursed the consumer of interest, the provider of it, the one who records it, and the two witnesses to it, and he said: 'They are all equal.'"

The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) cursed the one who eats interest, the one who feeds interest, the one who writes the interest document, and those who bear witness to it, and said they are all equal. (T)

To the extent that the giver of interest is also a receiver of interest, meaning he is doubly cursed. Those who commit this due to the wretchedness of their souls and consider it haram are transgressors and sinners. And those who consider it halal are apostates and disbelievers, may Allah protect us. Yes, if in this also, the method of 'sale of notes' is implemented as we mentioned in the previous writing, then they would avoid this absolute haram without difficulty. But today, who cares about the halal and haram? "Except those upon whom my Lord has mercy. Indeed, my Lord is Forgiving, Merciful." (But only he on whom my Lord shows mercy; surely my Lord is Forgiving, Merciful. T). And Allah Almighty knows best.

Problem 171: From Najibabad, Bijnor district, Bazar Chowk, sent by Abdul Razzaq and Abdul Ghafoor Tailors, 17 Jumadi al-Ula 1331 AH. What do the scholars of religion and muftis of the firm Shariah say about this matter: if a person is a Sunni Muslim, a firm Hanafi, and if this mentioned person takes interest from disbelievers like Christians, Hindus, Rafidis, and Kharajites, and takes it with the consent of the mentioned disbelievers as trade to earn money, and also this Muslim interest-taker has the intention that at no time will interest be taken from any Muslim. In this case, is it permissible or impermissible for this Muslim to take interest from the mentioned disbelievers? Whatever the ruling of the noble Shariah is, without interpretation and without fear of blame, for the elite and the general public, please send it. Only, explain and you shall be rewarded.

The Answer: Allah Almighty stated absolutely: "And [Allah] has forbidden interest." Allah has forbidden interest. In this, there is no distinction for Muslim, disbeliever, Sunni, or innovator. Taking interest from anyone is not halal. What is halal is not interest, and what is interest is not halal. The wealth of a non-Dhimmî disbeliever obtained without betrayal, it is halal to take it considering it 'Mubah' (permissible) wealth; taking it as interest is haram.

1 Sahih Muslim, Book of Musaqat and Muzara'ah, Chapter on Riba, Qadimi Kutub Khana Karachi, 2/27 2 Al-Quran Al-Karim 12/53 3 Al-Quran Al-Karim 2/275

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

सहीह हदीस में है: "रसूल अल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने सूद (ब्याज) खाने वाले, सूद खिलाने वाले, सूद का काग़ज़ लिखने वाले और उस पर गवाही देने वालों पर लानत फरमाई, और फरमाया कि वे सब बराबर हैं।"

रसूल अल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने सूद खाने वाले और सूद खिलाने वाले और सूद का काग़ज़ लिखने वाले और इस पर गवाहियाँ करने वालों पर लानत फरमाई, और फरमाया वे सब बराबर हैं (त)।

यहाँ तक कि सूद देने वाला ही सूद लेने वाला भी है, यानी वह दोहरा लानती है जो अपनी नफ़्स की बदकिस्मती से इसका इर्तिकाब (गुनाह) करें और इसे हराम जानें, वे फासिक और फाजिर हैं। और जो हलाल समझें वे मुर्तद (धर्मत्यागी) काफिर हैं, वलयाज़ु बिल्लाहि तआला। हाँ, अगर इसमें भी उसी नोटों की खरीद-फरोख्त (बैअ) के तरीके को लागू करें जिसका हमने पिछली तहरीर में ज़िक्र किया है, तो वे बिना किसी मुश्किल के इस हराम-ए-कतई से बच जाएंगे। मगर आज हराम और हलाल की फिक्र किसे है? "मगर वही जिस पर मेरा रब रहम फरमाए, बेशक मेरा रब बख्शने वाला मेहरबान है।" (मगर वही जिस पर मेरा रब रहम फरमाए, बेशक मेरा रब बख्शने वाला मेहरबान है। त) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 171: नजीबाबाद, जिला बिजनौर, बाज़ार चौक से, प्रेषक अब्दुल रज़ाक और अब्दुल गफूर खैयातान (दर्जी), 17 जमादी अल-उला 1331 हिजरी। दीन के उलेमा और शरीयत के मुफ्ती इस मसले में क्या फरमाते हैं कि: एक व्यक्ति सुन्नी मुसलमान है, पक्का हनफी है, अगर यह व्यक्ति ईसाइयों, हिंदुओं, राफ़िदियो और खारिज़ियों जैसे काफिरों से सूद लेता है, और उक्त काफिरों की रजामंदी से व्यापार के तौर पर पैसा कमाने के लिए लेता है, और साथ ही इस मुसलमान सूद लेने वाले की यह नीयत हो कि किसी भी समय किसी मुसलमान से सूद नहीं लिया जाएगा। इस स्थिति में, क्या इस मुसलमान के लिए उक्त काफिरों से सूद लेना जायज है या नाजायज? शरीयत का जो भी हुक्म हो, बिना किसी व्याख्या और बिना किसी उलेमा की मलामत के डर के, खास और आम के लिए भेज दिया जाए। फक़त, बयान फरमाएं और सवाब पाएं।

अल-जवाब (उत्तर): अल्लाह अज़्ज़वजल ने मुतलक (बिना शर्त) फरमाया: "और अल्लाह ने सूद को हराम किया है।" अल्लाह ने सूद हराम किया। इसमें मुसलमान, काफिर, सुन्नी, बद-मजहब किसी की

कोई विशेषता नहीं है। सूद लेना किसी से हलाल नहीं है, जो हलाल है वह सूद नहीं है, और जो सूद है वह हलाल नहीं है। काफिर गैर-ज़िम्मी का माल जो बिना किसी विश्वासघात के प्राप्त हो, उसे 'मुबाह' (अनुमेय) माल समझकर लेना हलाल है, सूद समझकर लेना हराम है।

1 सहीह मुस्लिम, किताब अल-मुसाक़ात वल-मुज़ारआ, बाब अर-रिबा, कदीमी कुतुब खाना कराची, 2/27 2 अल-कुरआन अल-करीम 12/53 3 अल-कुरआन अल-करीम 2/275

صحیح حدیث میں ہے: لعن رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم اکل الربوا ومؤکلہ وکاتبہ وشاھدیہ وقال ھم سواء۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم نے لعنت فرمائی سود کھانے والے اور سود کھلانیوالے اور سود کا کاغذ لکھنے والے اور اس پر گواہیاں کرنیوالوں پر، اور فرمایا وہ سب برابر ہیں (ت)

یہاں تک کہ سود دہندہ ہی سود گیرندہ بھی ہے معنی یہ کہ ڈبل ملعون ہے جو براہِ شامت نفس اس کا ارتکاب کریں اور حرام جانیں وہ فاسق فاجر ہیں اور جو حلال سمجھیں وہ مرتد کافر، والعیاذ باللہ تعالٰی، ہاں اگر اس میں بھی اسی طریقہ بیع نوٹ کا اجراء کریں جو ہم نے تحریرِ سابق میں ذکر کیا تو بلاوقت اس حرامِ قطعی سے بچ جائیں مگر حلالِ حرام کی آج فکر کسے ہے اِلَّا مَا رَحِمَ رَبِّیْ ط اِنَّ رَبِّی غَفُوْرٌ رَّحِیْمٌ۔ (مگر وہی جس پر میرا رب رحم فرمائے ، بیشک میرا رب بخشنے والا مہربان ہے۔ت) واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۱۷۱: از نجیب آباد ضلع بجنور بازار چوک مرسلہ عبدالرزاق و عبدالغفور خیاطاں ۱۷ جمادی الاولٰی ۱۳۳۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرعِ متین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص مسلمان اہلِ سنت والجماعت پکا حنفی اگر یہ شخص مذکور کفار مثل نصاریٰ و ہنود و رافضی و خارجی سے سود لے اور کفارِ مذکور کی رضا سے لے بطور تجارت روپیہ کمانے کو اور نیز اس مسلمان سود گیرندہ کی یہ نیت ہو کہ کسی وقت میں کسی مسلمان سے سود نہ لیا جائے تو اس صورت میں اس مسلمان کو کفار مذکورہ سے سود لینا جائز ہے یا ناجائز جو حکمِ شرع شریف ہو بلا تاویل بلا خوف ملامت علمائے خاص و عام ارسال فرمایا جائے، فقط، بینوا توجروا۔

الجواب: اللہ عزوجل نے مطلق فرمایا: "وَحَرَّمَ الرِّبٰوا" اللہ نے سود حرام کیا۔ اس میں تخصیصِ مسلم ، کافر ، سنی ، بد مذہب کسی کی نہیں۔ سود لینا کسی سے حلال نہیں، جو حلال ہے وہ سود نہیں ، اور جو سود ہے وہ حلال نہیں ، کافر غیر ذمی کا مال بلا غدر جو حاصل ہو وہ مالِ مباح سمجھ کر لینا حلال ہے سود جان کر لینا حرام۔

١ صحیح مسلم کتاب المساقاۃ والمزارعۃ باب الربوا قدیمی کتب خانہ کراچی ٢/ ٢٧ ٢ القرآن الکریم ١٢/ ٥٣ ٣ القرآن الکریم ٢/ ٢٧٥

Fatawa Rizvia Volume 17

The intention of sin is itself a sin. For example, if someone buys goods worth one hundred rupees from a non-believer and withholds the price or gives counterfeit money through deception, it is impermissible because it is against the agreement.

Allah Almighty says: "O you who have believed, fulfill [all] contracts." 1 - Allah Almighty said: O you who have believed! Fulfill your promises (T).

And if goods worth two hundred rupees weight of silver were purchased for one hundred rupees, thinking that for one hundred rupees it became one hundred rupees, and the remaining wealth of the non-believer is obtained without treachery and with his consent, it is permissible, provided that the non-believer is not a protected non-Muslim (Dhimmi/Mustamin). The details of this are in our fatwa of 1311 AH, which was written twenty years before your fear of criticism. And Allah Almighty knows best.

Issue 175 to 176: From Fatehabad, District Amritsar, Tehsil Tarn Taran. Requested by Molvi Muhammad Inayatullah Sabri and Muhammad Ismail Chishti Sabri Qadri, 4th Dhu al-Hijjah 1331 AH.

What do the scholars of the religion say in these matters: (1) A group of Muslims has established an interest-based bank on these terms that whoever enters it and becomes a member first pays one rupee admission fee and an amount (1/-) as the first installment, after which they keep depositing ten rupees annually. After ten years, they will get back their principal money along with interest at the rate of (12/-) percent per month. And every member, when in need, can take money at 12% interest according to their status and then pay it back in installments. They claim this bank is made for poor Muslims, but no one gets money except a member who pays the admission fee, meaning ordinary Muslims don't get it. The Imam of our mosque is also a member. He says, "I will not take interest on my money; it is forbidden for me. Interest was given at the time of need. Just as we already give interest to Hindus at times of need, and since taking is forbidden, giving like this is also forbidden. When we give, what's the harm in taking? Giving and taking are equal. I have already entered; I cannot leave." (2) He says those Muslims who deposit money in government post offices and take interest, why do they eat it? He claims it is

permissible. Is it permissible to pray behind such an Imam or not? Clarify and you will be rewarded.

1. The Holy Quran 5/1 Page 342 of 715

फ़तावा रिज़विया जिल्द 17

गुनाह का इरादा खुद एक गुनाह है। मिसाल के तौर पर, किसी काफ़िर से सौ रुपये का माल खरीदा और कीमत दबा ली या धोखा देकर खोटे पैसे दे दिए, तो यह नाजायज़ है क्योंकि यह समझौते के खिलाफ है।

अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "ऐ ईमान वालों! अपने वादों को पूरा करो।" 1 - अल्लाह तआला ने फ़रमाया: ऐ ईमान वालों! अपने कोल (वादों) को पूरा करो (त)।

और अगर दो सौ रुपये चांदी के वज़न के बराबर का माल सौ रुपये में खरीदा और यह समझा कि सौ रुपये के बदले सौ रुपये ही हुए, और बाकी काफ़िर का माल बिना धोखे के उसकी मर्ज़ी से मिलता है, तो यह जायज़ है बशर्ते कि वह काफ़िर 'ज़िम्मी' या 'मुस्तमन' न हो। इसकी तफ़सील हमारे 1311 हिजरी के फ़तवे में है, जो आपके मलामत के डर से बीस साल पहले लिखा गया था। वल्लाहु तआला आलम।

मसला 175 से 176: फ़तेहाबाद, ज़िला अमृतसर, तहसील तरन तारन से। सायल: मौलवी मुहम्मद इनायतुल्लाह साबरी और मुहम्मद इस्माइल चिश्ती साबरी कादरी, 4 ज़ुल-हिज्जा 1331 हिजरी।

उलमा-ए-दीन इन मसाइल में क्या फ़रमाते हैं: (1) कुछ मुसलमानों ने इन शर्तों पर एक सूदी (ब्याज वाला) बैंक कायम किया है कि जो भी इसमें शामिल होकर मेम्बर बनेगा, पहले एक रुपया दाखिला फीस और पहली किस्त के तौर पर एक रुपया जमा करेगा, उसके बाद सालाना दस रुपये जमा करता रहेगा। दस साल बाद उसे अपनी मूल राशि के साथ 12% प्रति माह की दर से ब्याज मिलेगा। ज़रूरत पड़ने पर हर मेम्बर अपनी हैसियत के हिसाब से 12% ब्याज पर रुपया ले सकता है और किस्तों में चुका सकता है। वे कहते हैं कि यह बैंक गरीब मुसलमानों के लिए है, लेकिन मेम्बर के अलावा किसी को पैसा नहीं मिलता, यानी आम मुसलमानों को नहीं मिलता। हमारी मस्जिद के इमाम भी इसमें शामिल हैं। वह कहते हैं, "मैं अपने रुपये का ब्याज नहीं लूंगा, वह मुझ पर हराम है। ज़रूरत के वक्त ब्याज दिया गया, जैसे हम ज़रूरत के वक्त हिंदुओं को देते हैं। चूंकि लेना हराम है, तो देना भी हराम है। जब हम देते हैं, तो लेने में क्या बुराई है? लेना-देना बराबर है। मैं अब शामिल हो चुका हूँ, छोड़ नहीं सकता।" (2) वह कहता है कि जो मुसलमान सरकारी डाकखाने में रुपया जमा

करके ब्याज लेते हैं, वे क्यों खाते हैं? वह जायज़ है। क्या ऐसे इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नहीं? बयान फ़रमाएं, सवाब मिलेगा।

1. अल-कुरान अल-करीम 5/1 पेज 342 ऑफ 715

قصد معصیت خود معصیت ہے، مثلاً کافر سے کوئی مال سو روپیہ کو خریدا اور قیمت دبالی یا دھوکا دے کر کھوٹے دام دئے یہ ناجائز ہے کہ خلافِ معاہدہ ہوا۔

قال اللہ تعالٰی "یٰٓاَیُّھَا الَّذِیْنَ اٰمَنُوْٓا اَوْفُوْا بِالْعُقُوْدِ" ۱ - اللہ تعالٰی نے فرمایا: اے ایمان والو! اپنے قول پورے کرو (ت)

اور اگر چاندی کا دو سو روپیہ بھر مال سو روپیہ کو مول لیا اور یہ سمجھا کہ سو روپیہ ہی کے بدلے سو روپے ہوگئے باقی کافر کا مال بلا غدر اس کی مرضی سے ملتا ہے تو جائز جبکہ وہ کافر ذمی مستامن نہ ہو، اس کی تفصیل ہمارے فتوٰی ۱۳۱۱ھ میں ہے جو آپ کے خوف ملامت سے بیس سال پہلے لکھا گیا، واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۷۵ تا ۱۷۶: از فیتہ آباد ضلع امر تسر تحصیل ترن تارن مسئولہ مولوی محمد عنایت اللہ صابری و محمد اسمعیل چشتی صابری قادری ۴ ذی الحجہ ۱۳۳۱ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین ان مسائل میں کہ : (۱) ایک بینک سودی مسلمانان نے ان شرائط پر قائم کیا ہے کہ جو کوئی اس میں داخل ہو اور ممبر بنے اول ایک روپیہ داخلہ اور مبلغ (۱/-) پہلی قسط بعدہ دس روپے سالانہ داخل کرتا جائے بعد دس سال کے اپنا اصلی روپیہ مع سود فی صدی فی ماہ (۱۲/-) کے حساب سے مل جائے گا اور ہر ایک ممبر کو جب ضرورت ہو اپنی حیثیت موجب (۱۲/-) سیکڑہ سود پر روپیہ لے سکتا ہے پھر قسطوں سے ادا کرتا جائے، کہتے ہیں کہ یہ بینک غریب مسلمانوں کے لئے بنایا گیا ہے مگر ممبر کے سوا جو کہ داخلہ نہ دے روپیہ نہیں ملتا یعنی عام مسلمانوں کو نہیں ملتا ہماری مسجد کا امام بھی اس میں شامل و داخل ہے وہ کہتا ہے کہ میں

اپنے روپے کا سود نہ لوں گا مجھ پر حرام ہے ضرورت کے وقت سود دیا گیا چنانچہ ضرورت کے وقت ہم لوگ آگے بھی تو اہل ہنود کو دیتے ہیں جیسا کہ لینا حرام ہے ایسا دینا بھی تو حرام ہے جب ہم لوگ دیتے ہیں تو لینے میں کیا قباحت لینا دینا برابر ہے، میں اب داخل ہوچکا ہوں چھوڑ نہیں سکتا۔ (۲) کہتا ہے جو مسلمان ڈاکخانہ سرکاری میں روپیہ جمع کرا کر سود لیتے ہیں وہ کیوں کھاتے ہیں وہ جائز ہے، ایسے امام کے پیچھے نماز پڑھنا جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

Fatawa Rizvia, Volume 17

The Answer: That bank is absolutely Haraam (forbidden), and all these rules are satanic. To become its member is Haraam. Giving and taking interest are certainly equal (in sin). It is stated in Sahih Muslim from the Commander of the Faithful Ali (may Allah honor him):

Arabic	**Urdu Translation**
The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) cursed the one who consumes interest, the one who pays it, the one who records it, and the two witnesses to it, and he said: "They are all equal."[1]	The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) cursed the one who consumes interest, the one who feeds it, the one who writes it, and its witnesses, and said they are all equal. (T)

Therefore, accepting the membership of all such mentioned banks is a sin and Haraam.

| Allah the Almighty said: "And do not cooperate in sin and transgression."[2] | Allah the Almighty said: Do not cooperate with each other in sin and oppression. (T) |

It is stated in a Hadith:

| Whoever walks with an oppressor to assist him, knowing that he is an oppressor, has surely removed the bond of Islam from his neck.[3] | Whoever intentionally assists in oppression has removed the rope of Islam from his neck. (T) |

And there is no doubt that taking interest is severe oppression. Becoming its member and giving money to those usurers is assisting in this severe oppression. The assistant is like the doer, which is why the scribe was also cursed. Thus, the one who becomes a member and the one who gives money for it will certainly deserve a curse far greater than that of the scribe. The mentioned Imam's persistence in this is persistence in Haraam and public transgression and arrogance. Praying behind an open transgressor (fasiq mu'allin) is Makruh Tahrimi (highly disliked). Making him an Imam is a sin, and dismissing him is obligatory. All prayers offered behind him must be repeated. Furthermore, if someone takes an interest-based loan for purely ignorant needs without any Sharia-compliant necessity, it will certainly be like consuming interest.

[1] Sahih Muslim, Book of Musaqat and Muzara'at, Chapter on Interest, Qadeemi Kutub Khana Karachi 2/72 [2] Al-Quran Al-Karim 2/5 (Actually 5:2) [3] Al-Mu'jam Al-Kabir Hadith 619, Al-Maktaba Al-Faysaliyya Beirut 1/77; Shu'ab al-Iman Hadith 7655, Dar al-Kutub al-Ilmiyya Beirut 6/122

फ़तावा रज़विया, जिल्द १७

उत्तर: वह बैंक पूरी तरह से हराम है, और ये सभी नियम शैतानी हैं और इसका सदस्य बनना हराम है, और ब्याज देना और लेना निश्चित रूप से समान हैं, सही मुस्लिम में अमीरुल मोमिनीन अली (करम अल्लाह वज्हहु-अल-करीम) से वर्णित है:

अरबी	**उर्दू अनुवाद**
अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने ब्याज खाने वाले, ब्याज खिलाने वाले, इसे लिखने वाले और इसके गवाहों पर लानत भेजी है, और फरमाया: "वे सब बराबर हैं।"[1]	अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने ब्याज खाने वाले, और ब्याज खिलाने वाले और इसके लिखने वाले और इसके गवाहों पर लानत फरमाई, और फरमाया वे सब बराबर हैं। (त)

अतः उक्त बैंक की सदस्यता स्वीकार करना गुनाह और हराम हुआ।

| अल्लाह तआला ने फरमाया: "गुनाह और ज़ुल्म में एक-दूसरे का सहयोग न करो।"[2] | अल्लाह तआला ने फरमाया: गुनाह और ज़ुल्म में एक दूसरे से सहयोग मत करो। (त) |

हदीस में है:

| जो जानबूझकर किसी ज़ालिम की मदद करने के लिए उसके साथ चले, जबकि वह जानता हो कि वह ज़ालिम है, उसने इस्लाम की रस्सी अपनी गर्दन से निकाल दी।[3] | जो जानबूझकर ज़ुल्म पर मदद करे उसने इस्लाम की रस्सी अपनी गर्दन से निकाल दी। (त) |

और इसमें कोई संदेह नहीं है कि ब्याज लेना घोर अन्याय है और इसका सदस्य बनना और उन सूदखोरों को पैसा देना इस घोर अन्याय में सहायता करना है और सहायक कर्ता के समान होता है, इसलिए लेखक पर भी लानत भेजी गई है। तो इसका सदस्य बनने वाला और इसके लिए पैसा देने वाला निश्चित रूप से लेखक की तुलना में कहीं अधिक लानत का पात्र होगा। उक्त इमाम का इस पर अड़े रहना हराम पर अडिग रहना और खुलेआम अवज्ञा और अहंकार है, और खुले तौर पर अवज्ञा करने वाले (फासिक मुअल्लीन) के पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह तहरीमी है और उसे इमाम बनाना गुनाह है और उसे पदमुक्त करना वाजिब है, और जितनी नमाज़ें उसके पीछे पढ़ी गई हैं उन्हें दोहराना अनिवार्य है। इसके अलावा, अगर कोई बिना शरई ज़रूरत के महज़ अज्ञानतापूर्ण जरूरतों के लिए ब्याजी ऋण लेगा, तो वह भी ब्याज खाने के समान ही होगा।

[1] सही मुस्लिम, किताब अल-मुसाकात व अल-मुज़ाराअत, बाब अर-रिबा, पुरानी कुतुब खाना कराची 2/72 [2] अल-क़ुरान अल-करीम 2/5 (वास्तव में 5:2) [3] अल-मुजम अल-कबीर हदीस 619, अल-मकतबा अल-फ़ैसलिया बेरूत 1/77; शुअब अल-ईमान हदीस 7655, दार अल-कुतुब अल-इल्मिया बेरूत 6/122

الجواب: وہ بینک حرام قطعی ہے، اور یہ قواعد سب شیطانی ہیں اور اس کا ممبر بننا حرام ہے، اور سود دینا اور لینا ضرور برابر ہیں، صحیح مسلم میں امیر المؤمنین علی کرم اللہ وجہہ الکریم سے ہے :

عربی **اردو ترجمہ**

لعن رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم اکل الربو و موکلہ و کاتبہ و شاھدیہ و قال ھم سواء - 1

رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے لعنت فرمائی سود کھانے والے اور سود کھلانے والے اور اس کے لکھنے والے اور اس کے گواہوں پر، اور فرمایا وہ سب برابر ہیں۔ (ت)

تو تمام مذکورہ اس بینک کی ممبری قبول کرنا گناہ و حرام ہوا،

| قال اللہ تعالٰی "وَلَا تَعَاوَنُوا عَلَى الْإِثْمِ وَالْعُدْوَانِ" - 2 | اللہ تعالٰی نے فرمایا: گناہ اور ظلم میں ایک دوسرے سے تعاون مت کرو۔ (ت) |

حدیث میں ہے:

| من مشی مع ظالم لیعینہ وھو یعلم انہ ظالم فقد خلع من عنقہ ربقۃ الاسلام - 3 | جو دانستہ ظلم پر اعانت کرے اس نے اسلام کی رسی اپنی گردن سے نکال دی (ت) |

اور شک نہیں کہ سود لینا ظلم شدید ہے اور اس کا ممبر بننا اور اسکے ان سود خوروں کو روپیہ دینا اس ظلم شدید پر اعانت ہے اور معین مثل فاعل ہے ولہذا کاتب پر بھی لعنت فرمائی، تو اس کا رکن بننے والا اور اس کے لئے روپیہ دینے والا ضرور کاتب سے بدرجہا زائد لعنت کا مستحق ہوگا اور امام مذکور کا اس پر اصرار حرام پر اصرار اور اعلانیہ فسق و استکبار ہے، اور فاسق

معلن کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی اور اسے امام بنانا گناہ اور اسے معزول کرنا واجب اور جتنی اس کے پیچھے پڑھی ہوں ان کا پھیرنا لازم، پھر اگر بلا ضرورت شرعیہ محض جاہلانہ ضرورتوں کے لئے سودی قرض لے گا تو ضرور وہ بھی سود کھانے کے مثل ہوگا۔

1 صحیح مسلم کتاب المساقاۃ والمزارعۃ باب الربو قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/ ۷۲ 2 القرآن الکریم ۲/ ۵ 3 المعجم الکبیر حدیث ۶۱۹ المکتبۃ الفیصلیۃ بیروت ۱/ ۷۷، شعب الایمان حدیث ۷۶۵۵ دار الکتب العلمیۃ بیروت ۶/ ۱۲۲

Fatawa Rizvia Volume 17

And this will result in receiving the second part of the curse, and to present the actions of the common people as an authority and to cite them against the command of Allah is pure ignorance and misguidance. Yes, if one takes a loan with interest solely out of Shar'i (legal) necessity to the extent needed, then it is an exception, for the places of necessity have been exempted by the Shari'ah itself.

Allah Ta'ala says: "Fear Allah as much as you can."[1] And He says: "Allah does not burden any soul beyond its capacity."[2] — Allah has said: And fear Allah Almighty as much as you have the ability. And Allah Almighty said: Allah Almighty does not make anyone responsible for more than their strength. (T)

In Durr-e-Mukhtar it is written: "It is permissible for a needy person to take a loan with interest."[3] — It is permissible for a needy person to take a loan with interest. (T)

However, making this an authority to assist interest-eaters or becoming a member of an interest-based company can neither save one from the prohibition nor from the curse of Allah. Therefore, the ruling regarding the aforementioned Imam is the same as what has passed above. And Allah Almighty knows best.

Problem 71: From the town of Biliwar, Mohalla Dargah Pir Shad, from the house of Fakhruddin Sahib, Chief and Member of Customs, sent by Hafiz Shamsuddin, 23rd Dhu al-Hijjah 1331 AH. Is it permissible for a Muslim to take interest from any nation or not? And what are the different types of interest? Please explain in detail. Is it permissible to deposit money in a bank and collect interest from them according to its rate or not? Or can one deposit the money of an association in a post office and take interest from them or not? Or engage in such trade where whoever deposits a certain amount of money will be given interest at such a percentage, not being a partner in loss and having no concern with loss, and the one depositing the money does not take it considering it interest and also does not bear loss, is that Halal (permissible) or Haram (forbidden)? Or if someone gives some money to a shopkeeper based on profit and is not a partner in loss, is that profit Halal or not?

The Answer: Taking interest is absolutely Haram (forbidden), whether it is from a Muslim or a non-Muslim, from a bank or a merchant. All the scenarios described in the question are impermissible. Increasing any profit on a loan is interest, or selling a thing on credit in exchange for its own kind, or two things that are both sold by weight or both by measure, when one is exchanged for another...

[1] Al-Quran Al-Karim 64/16 [2] Al-Quran Al-Karim 2/286 [3] Al-Ashbah wal-Nazair, Al-Fann Al-Awwal, Al-Qa'idah al-Khamisah, Idara-tul-Quran Karachi, 1/126

फ़तावा रिज़विया जिल्द 17

और यह लानत का दूसरा हिस्सा मिलेगा और अवाम के फेल (कार्य) से सनद लाना और हुक्मे इलाही के मुक़ाबले उसे सुनाना महज़ जहालत व ज़लालत (गुमराही) है। हाँ अगर महज़ मजबूरी ए शरई के लिए सूदी रुपया बक़दरे ज़रूरत क़र्ज़ ले तो वह इससे मुस्तस्ना (अपवाद) है कि मवाज़ेअ (स्थान) ज़रूरत शरअ ने खुद इस्तिस्ना फ़रमा दिए हैं।

अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "तो डरो अल्लाह से जहाँ तक हो सके तुमसे।"[1] और फ़रमाया: "अल्लाह किसी जान पर बोझ नहीं डालता मगर उसकी ताक़त भर।"[2] — अल्लाह ने फ़रमाया: और डरो अल्लाह तआला से जिस क़दर तुम इस्तिताअत (क्षमता) रखते हो। और अल्लाह तआला ने फ़रमाया: अल्लाह तआला किसी को उसकी ताक़त से ज़्यादा का मुकल्लफ़ (उत्तरदायी) नहीं बनाता। (त)

दुर्रे मुख़्तार में है: "ज़रूरतमंद के लिए सूद पर क़र्ज़ लेना जाइज़ है।"[3] — मोहताज के लिए सूदी क़र्ज़ लेना जाइज़ है। (त)

मगर इसको सनद बना कर सूद खोरों की इआानत (सहायता) और सूदी कंपनी की रुकनियत (सदस्यता) न हराम होने से बचा सकती है न लानते इलाही से बचा सकती है। लिहाज़ा इमाम मज़कूर की निस्बत हुक्म वही है जो ऊपर गुज़रा। वल्लाहु तआला आलम।

मसला 71: अज़ क़स्बा बिलीवर महल्ला दरगाह पीर शाद अज़ मकान फ़खरुद्दीन साहब रईस व मेम्बर चंगी मुरसला हाफ़िज़ शम्सुद्दीन 23 ज़िल हिज्जा 1331 हिजरी। सूद लेना किसी क़ौम से मुसलमान को जाइज़ है या नहीं? और सूद किस किस क़िस्म से होता है? मुशर्रह (विस्तृत) बयान फ़रमाया जाए। किसी बैंक में रुपया जमा करके उनसे सूद वसूल करना मूजिब इसकी शरह के जाइज़ है या नहीं, या किसी अंजुमन का रुपया डाकख़ाना में जमा करके उनसे सूद ले सकता है या नहीं, या कोई तिजारत इस तरह की करे कि जो इस क़दर रुपया जमा करे उसको इतने सैकड़ा का सूद देंगे नुक़सान का वह शरीक नहीं और उसको नुक़सान से कुछ मतलब नहीं और रुपया जमा करने वाला सूद जान कर न ले और नुक़सान भी न दे तो वह हलाल है या हराम या किसी दुकानदार को कुछ रुपया बमूजिब नफ़ा के दे नुक़सान का शरीक न हो वह नफ़ा हलाल है या नहीं?

अल-जवाब: सूद लेना मुतलक़न (पूर्णत) हराम है मुसलमान से हो या काफ़िर से, बैंक से हो या ताजिर से जितनी सूरतें सवाल में बयान कीं सब नाजाइज़ हैं। क़र्ज़ देकर उस पर कुछ नफ़ा बढ़ा लेना सूद है

या एक चीज़ को उसकी जिन्स के बदले उधार बेचना या दो चीज़ें कि दोनों तौल से बिकती हों या दोनों नाप से, उनमें एक को दूसरे से...

[1] अल-क़ुरआन अल-करीम 64/16 [2] अल-क़ुरआन अल-करीम 2/286 [3] अल-अश्बाह वन्नज़ाइर, अल-फ़न्नुल अव्वल, अल-क़ाएदतुल ख़ामिसाह, इदारातुल क़ुरआन कराची, 1/126

सफ़हा 344/715

اور یہ لعنت کا دوسرا حصہ ملے گا اور عوام کے فعل سے سند لانا اور حکم الہی کے مقابل اسے سنانا محض جہالت و ضلالت ہے ہاں اگر محض مجبوری شرعی کے لئے سودی روپیہ بقدر ضرورت قرض لے تو وہ اس سے مستثنٰی ہے کہ مواضع ضرورت شرع نے خود استثناء فرمادئے ہیں،

قال اللہ تعالٰی "فَاتَّقُوا اللّٰہَ مَا اسْتَطَعْتُمْ" 1 ، وقال تعالٰی "لَا یُکَلِّفُ اللّٰہَ نَفْسًا إِلَّا وُسْعَھَا" 2 - اللہ نے فرمایا: اور ڈرو اللہ تعالٰی سے جس قدر تم استطاعت رکھتے ہو۔ اور اللہ تعالٰی نے فرمایا: اللہ تعالٰی کسی کو اس کی طاقت سے زیادہ کا مکلف نہیں بناتا۔ (ت)

در مختار میں ہے: یجوز للمحتاج الاستقراض بالربح 3 - محتاج کے لئے سودی قرض لینا جائز ہے۔ (ت)

مگر اس کو سند بنا کر سود خوروں کی اعانت اور سودی کمپنی کی رکنیت نہ حرام ہونے سے بچ سکتی ہے نہ لعنت الہی سے بچاسکتی ہے لہٰذا امام مذکور کی نسبت حکم وہی ہے جو اوپر گزرا۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۷۱: از قصبہ بیلیور محلہ درگاہ پیر شاد از مکان فخر الدین صاحب رئیس و ممبر چنگی مرسلہ حافظ شمس الدین ۲۳/ ذی الحجہ ۱۳۳۱ھ سود لینا کسی قوم سے مسلمان کو جائز ہے یا نہیں؟ اور سود کس کس قسم سے ہوتا ہے؟ مشرح بیان فرمایا جائے، کسی بنک میں روپیہ جمع کرکے ان سے سود وصول کرنا موجب اس کی شرح کے جائز ہے یا نہیں، یا کسی انجمن کاروپیہ ڈاکخانہ میں جمع کرکے ان سے سود لے سکتا ہے یا نہیں، یا کوئی تجارت اس طرح کی کرے کہ جو اس قدر

روپیہ جمع کرے اس کو اتنے سیکڑہ کا سود دینگے نقصان کا وہ شریک نہیں اور اس کو نقصان سے کچھ مطلب نہیں اور روپیہ جمع کرنے والا سود جان کر نہ لے اور نقصان بھی نہ دے تو وہ حلال ہے یا حرام یا کسی دکاندار کو کچھ روپیہ بموجب نفع کے دے نقصان کا شریک نہ ہوں وہ نفع حلال ہے یا نہیں؟

الجواب: سود لینا مطلقاً حرام ہے مسلمان سے ہو یا کافر سے، بنک سے ہو یا تاجر سے جتنی صورتیں سوال میں بیان کیں سب ناجائز ہیں قرض دے کر اس پر کچھ نفع بڑھا لینا سود ہے یا ایک چیز کو اس کی جنس کے بدلے ادھار بیچنا یا دو چیزیں کہ دونوں تول سے بکتی ہوں یا دونوں ناپ سے، ان میں ایک کو دوسرے سے

1 القرآن الکریم ۱۶/۶۴ 2 القرآن الکریم ۲/۲۸۶ 3 الاشباہ والنظائر الفن الاول القاعدۃ الخامسۃ ادارۃ القرآن کراچی ۱/۱۲۶

Volume 17 Fatawa Ridawiyya

Exchanging on credit or selling an item measured by weight or volume for its own kind with an increase or decrease—for example, selling one seer of high-quality wheat in exchange for one and a quarter seers of inferior wheat—these are forms of interest (riba). When something is legally considered interest, forming the intention that 'I am not taking interest but something else' is sheer ignorance. Yes, such an intention can be valid in a situation that is not actually interest, even if the giver considers it interest. For example, if one deposits money with a non-Muslim in their shop, firm, or bank, provided no Muslim is a partner in it, and takes the profit given by the non-Muslim according to their custom, not considering it as profit or interest on one's own money, but rather understanding it as a permissible asset obtained with the owner's consent, then there is no harm in it. And Allah Almighty knows best.

Problem 178: "If someone buys a measurable item by measure, it is forbidden to sell or eat it until he measures it himself." (The Arabic text's translation in brackets). From this, it is understood that if an item is bought by measure, it should be measured again at home before being used. Based on this, should milk be measured again at home after purchase or not?

Answer: This applies to the case where an item was bought by weight or measure, and the seller did not weigh or measure it in front of the buyer or their representative. In that case, weighing it is mandatory, and its disposal is impermissible otherwise. However, if it was weighed in front of the buyer or their representative, there is no need to weigh it again. And Allah Almighty knows best.

Problem 179: Inquiry by Maulvi Hashmat Ali Sahib, Teacher at Madrasa Ahl-e-Sunnat, Bareilly, 2 Jumada al-Akhira 1333 AH.

Respected Sir! If a Hindu agent, for instance, a Patwari, Katuwar, or Tahneet, collects interest from tenants using a Muslim landlord's money and uses it for their own personal expenses, but the landlord neither says anything to them about it nor takes any of that money himself, and these people collect interest from tenants by telling them, "If you do not pay the landlord's money at each harvest, interest will be charged on it," then in this situation, would the landlord be deserving of sin according to Sharia or not? And is it mandatory for the landlord to forbid his Hindu employees in this situation, given that the landlord also benefits because his money is collected at each harvest without any difficulty? Out of fear of interest, tenants pay immediately; otherwise, they do not pay arrears for several years even though they

have the money. However, some rebellious tenants refuse to pay just to harass the landlord, and when he files a lawsuit, they immediately deposit the money in court that very day, causing loss to the landlord. To avoid these troubles, is there any...

उधार बदलना या माप अथवा तौल की चीज़ को उसकी ही जाति की चीज़ से कम या अधिक के साथ बेचना, उदाहरण के तौर पर एक सेर बढ़िया गेहूँ को सवा सेर घटिया गेहूँ के बदले बेचना—ये सब सूद (ब्याज) के रूप हैं। और जो शरीयत की दृष्टि से सूद है, उसमें यह नियत (इरादा) कर लेना कि मैं सूद नहीं ले रहा हूँ बल्कि कुछ और ले रहा हूँ, निरा अज्ञान है। हाँ, वहाँ यह नियत काम आ सकती है जहाँ वास्तव में सूद न हो, भले ही देने वाला उसे सूद ही समझ कर दे। उदाहरण के तौर पर यहाँ किसी काफ़िर (अविश्वासी) के पास उसकी दुकान, कोठी या बैंक में, बशर्ते कि उसमें कोई मुसलमान साझीदार न हो, रुपया जमा कर दिया और उस पर जो लाभ काफ़िर ने अपने दस्तूर के अनुसार दिया, उसे अपने रुपये का लाभ और सूद समझ कर न लिया जाए बल्कि यह समझ कर लिया जाए कि यह एक माल-ए-मुबाह (वैध धन) है जो मालिक की रज़ामंदी से मिल रहा है, तो इसमें कोई हर्ज नहीं है। वल्लाह तआला आलम (और अल्लाह बेहतर जानता है)।

मसला 178: "अगर किसी ने नापी जाने वाली वस्तु माप के आधार पर खरीदी, तो जब तक वह उसे स्वयं न नाप ले, उसका बेचना और खाना हराम है।" (अरबी पाठ का कोष्ठक में उर्दू अनुवाद)। इससे यह समझ में आता है कि जो चीज़ माप कर खरीदी जाए, उसे घर लाकर फिर से नापना चाहिए फिर इस्तेमाल करना चाहिए। इस आधार पर, क्या दूध खरीदकर उसे घर में फिर से नापना चाहिए या नहीं?

अल-जवाब (उत्तर): यह उस स्थिति में है जब चीज़ तौल या माप से खरीदी गई हो और विक्रेता ने खरीदार या उसके वकील (प्रतिनिधि) के सामने उसे नहीं तौला हो। ऐसी स्थिति में उसे तौलना अनिवार्य है, और उसके बिना उसका उपयोग करना नाजायज़ है। लेकिन अगर उसे खरीदार या उसके वकील के सामने तौला गया है, तो दोबारा तौलने की आवश्यकता नहीं है। वल्लाह तआला आलम।

मसला 179: प्रार्थी मौलवी हशमत अली साहब, शिक्षक, मदरसा अहले सुन्नत बरेली, 2 जमादि-उल-आख़िर 1333 हिजरी।

हुज़ूर! एक मुसलमान ज़मींदार के रुपये से अगर कोई हिन्दू जैसे पटवारी या कटवार या तहनीत आसामियों (किरायेदारों) से सूद लेकर अपने उपयोग में लाए, मगर ज़मींदार न तो उसे इस पर कुछ कहे और न ही स्वयं उसमें से कोई पैसा ले, और ये लोग ज़मींदार के रुपये से आसामियों से यह

कहकर सूद लें कि "अगर तुमने ज़मींदार का रुपया फसल पर अदा नहीं किया तो तुमसे उसका सूद लिया जाएगा", तो क्या इस स्थिति में ज़मींदार शरीयत के अनुसार किसी गुनाह का पात्र होगा या नहीं? और क्या ज़मींदार के लिए इस स्थिति में अपने हिन्दू कर्मचारियों को मना करना अनिवार्य होगा, जबकि ज़मींदार का भी इसमें यह लाभ है कि उसका रुपया हर फसल पर बिना किसी कठिनाई के वसूल हो जाता है? सूद के डर से आसामी तुरंत रुपया दे देते हैं, वरना वे कई-कई साल तक बकाया नहीं चुकाते, जबकि उनके पास रुपया होता है। मगर कुछ विद्रोही लोग ज़मींदार को परेशान करने के लिए रुपया नहीं देते और जब वह मुकदमा करता है तो तुरंत उसी दिन कचहरी में रुपया जमा कर देते हैं और ज़मींदार का नुकसान करवाते हैं। इन परेशानियों से बचने के लिए क्या कोई...

ادھار بدلنا یا ناپ خواہ تول کے چیز کو اس کی جنس سے کمی بیشی کے ساتھ بیچنا مثلاً سیر بھر کھرے گیہوں سوا سیر ناقص گیہوں کے عوض بیچنا یہ صورتیں سود کی ہیں اور جو شرعاً سود ہے، اس میں یہ نیت کرلینا کہ سود نہیں لیتا ہوں کچھ اور لیتا ہوں محض جہالت ہے، ہاں وہاں یہ نیت کام دے سکتی ہے جو واقع میں سود نہ ہو اگرچہ دینے والا اسے سود ہی سمجھ کر دے مثلاً یہاں کسی کافر کے پاس اس کی دکان یا کوٹھی یا بنک میں بشرطیکہ اس میں کوئی مسلمان شریک نہ ہو روپیہ جمع کردیا اور اس پر جو نفع کافر نے اپنے دستور کے موافق دیا اسے اپنے روپیہ کا نفع اور سود خیال کر کے نہ لیا بلکہ یہ سمجھ کر لیا کہ ایک مال مباح برضائے مالک ملتا ہے تو اسمیں حرج نہیں ، واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۱۷۸: ولو اشتری مکیلا کیلا حرم بیعه واکله حتی یکیله (اگر کسی نے کیلی شے کیل کے طور پر خریدی تو جب تک کیل نہ کرے اس کی بیع اور اس کا کھانا حرام ہے۔ ت) اس سے سمجھ میں یہ آتا ہے جو چیز مکیل خریدی جائے پھر گھر میں اگر اسے ناپ لے پھر صرف کرے اس بنا پر دودھ خرید کر پھر اپنے گھر میں اس کو ناپ کر لینا چاہئے یا نہیں؟

الجواب: یہ اس صورت میں ہے کہ چیز تول یا ناپ سے خریدی اور بائع نے اس کے یا اس کے وکیل کے سامنے نہ تولی تو اسے تولنا لازم ہے اس کا تصرف ناجائز ہے اور اگر اس کے یا اس کے وکیل کے سامنے تولی تو دوبارہ تولنے کی حاجت نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۱۷۹: مسئولہ مولوی حشمت علی صاحب مدرس مدرسہ اہل سنت بریلی ۲ جمادی الآخر ۱۳۳۳ھ

حضور! ایک مسلمان زمیندار کے روپے سے اگر کوئی ہندو مثلاً پٹواری یا کٹوار یا تہنیت اسامیوں سے سود لے کر اپنے صرف میں کرے مگر زمیندار نہ اس سے اس پر کچھ کہے اور نہ خود اس میں سے کوئی پیسہ لے اور یہ لوگ زمیندار کے روپے سے اسامیوں سے یہ کہہ کر سود لیں کہ اگر تم زمیندار کا روپیہ بر فصل ادا نہ کیا کرو گے تو تم سے اس کا سود لیا جائے گا، تو اس صورت میں زمیندار شرعاً کسی گناہ کا مستحق ہوگا یا نہیں، اور زمیندار کو اس حالت میں اپنے ملازم ہنود کو منع کرنا لازم ہوگا یا نہیں کہ اس زمیندار کا بھی اتنا نفع ہے کہ اس کا روپیہ ہر فصل پر وصول ہو جاتا ہے اور کوئی دقت اسے پیش نہیں آتی، سود کے خوف سے اسامی فوراً روپیہ وصول کر دیتے ہیں ورنہ کئی کئی سال تک بقایا نہیں وصول کرتے حالانکہ ان کے پاس روپیہ ہوتا ہے مگر بعض سرکش زمیندار کے دق کرنے کو نہیں دیتے اور جب وہ نالش کرتا ہے تو فوراً کچہری میں روپیہ اسی روز داخل کر دیتے ہیں اور زمیندار کا نقصان کرواتے ہیں، ان پریشانیوں سے بچنے کی کوئی

Fatawa-e-Razvia Volume 17

Please clarify the situation, otherwise, to avoid this, most Muslims openly commit haram (forbidden acts).

The Answer:

If the tenants are Muslims, then this action is absolutely haram. And when the landlord is aware of this, then remaining silent is haram for him; it is obligatory (fard) to eradicate the forbidden act (munkar), especially when he is silent for his own benefit, thus consenting to it. Consenting to a major sin (kabirah) is itself a major sin, and sometimes even harsher. If the tenants are local polytheists who are neither protected non-Muslim citizens (dhimmi) nor have safe-conduct from an Islamic state (mustamin), then whether the landlord applies the rule to them that if arrears accumulate, a certain monthly penalty will be charged - the detailed discussion of which is in our Fatawas - even then, it is not permissible to take it considering it interest (usury). This is because of Allah Almighty's saying, "And Allah has forbidden interest" (Holy Quran 2:275). Rather, he should take it as permissible property in compensation for the distress caused by them. And Allah Almighty knows best.

Issue 180: From Wilayat Hussain Sahab, Jamia Masjid Bareilly, 17 Jumadi al-Akhira 1334 AH.

What do the scholars of religion and supporters of the firm Shariah say about this matter: Zaid's wife passed away. After managing the funeral and shroud expenses, Zaid does not have money for the Fatiha and Soyem (post-funeral rituals), or Zaid considers his daughter's marriage a duty, and it is a duty, but he does not have enough funds to perform it. So, out of necessity, Zaid mentioned this matter to his friend Amr. Amr gave some jewelry to Zaid and said, "Pawn this and fulfill your duty or Fatiha etc." Zaid set out to pawn the jewelry while Amr stayed behind. On the way, Zaid met a friend named Khalid and explained the whole situation to him. Khalid heard it and remained silent. Zaid said to Khalid, "Come quickly, let's pawn this jewelry and get some money." Khalid went along with Zaid. Zaid met another person named Mahmood, who was aware of the situation. Mahmood did not know where Khalid and Zaid were going. Mahmood also joined them. These three individuals reached the pawnbroker's shop, and Zaid pawned the jewelry, took the money at an interest rate, and they all returned together. Zaid used this money for his needs. Could they do this or not? Did the deceased receive the reward (thawab) or not? Or

was there any defect in the girl's marriage? And among these four persons, who became liable for punishment?

Quran al-Kareem 2/275 Page 346 of 715

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द 17 (17)

कृपया स्थिति स्पष्ट करें, अन्यथा इससे बचने के लिए अधिकांश मुसलमान खुले तौर पर हराम (वर्जित कार्य) करने के दोषी होते हैं।

उत्तर:

यदि किरायेदार (असामी) मुसलमान हैं, तो यह कार्य पूरी तरह से हराम है। और जब ज़मींदार को इसकी जानकारी हो, तो उसका चुप रहना हराम है; बुराई (मुनकर) को मिटाना फ़र्ज़ है, खासकर जब वह अपने लाभ के लिए चुप हो, तो इस प्रकार वह सहमत है। किसी बड़े पाप (कबीरा) पर सहमति देना स्वयं एक बड़ा पाप है, बल्कि कभी-कभी उससे भी गंभीर। और यदि किरायेदार स्थानीय बहुदेववादी (मुशरिक) हैं जो न तो ज़िम्मी (संरक्षित गैर-मुस्लिम) हैं और न ही इस्लामी राज्य से सुरक्षा प्राप्त (मुस्तमिन), तो ज़मींदार चाहे उन पर यह नियम लागू करे कि बकाया रहने पर हर महीने इतना जुर्माना लिया जाएगा - जिसका विस्तृत विवरण हमारे फ़तावा में है - तो उसे भी ब्याज (सूद) समझकर लेना जायज़ नहीं है। अल्लाह तआला के इस कथन के कारण: "और अल्लाह ने ब्याज को हराम कर दिया है" (पवित्र कुरान 2:275)। इसके बजाय, उन्हें उनके द्वारा पहुँचाई गई परेशानी के मुआवज़े में एक जायज़ संपत्ति समझकर ले। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसला 180: प्रेषक विलायत हुसैन साहब, जामा मस्जिद बरेली, 17 जमादी अल-आखिरा 1334 हिजरी।

धर्म के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के समर्थक इस मामले में क्या कहते हैं: ज़ैद की पत्नी का निधन हो गया। अंतिम संस्कार और कफ़न के खर्च के बाद, ज़ैद के पास फ़ातिहा और सोयम (मृत्यु के बाद की रस्में) के लिए पैसे नहीं हैं, या ज़ैद अपनी बेटी की शादी करना अपना कर्तव्य (फ़र्ज़) समझता है, और यह फ़र्ज़ है, लेकिन उसके पास इतना खर्च नहीं है कि वह इसे पूरा कर सके। विवश होकर ज़ैद ने अपने मित्र अम्र से इस मामले की चर्चा की। अम्र ने ज़ैद को कुछ गहने दिए और कहा कि "इसे गिरवी (रहन) रखकर तुम इस फ़र्ज़ या फ़ातिहा आदि से मुक्त हो जाओ।" ज़ैद गहने लेकर गिरवी रखने के लिए चल दिया और अम्र वहीं रुक गया। रास्ते में खालिद नाम का एक मित्र मिला, ज़ैद ने उसे पूरी स्थिति बताई। खालिद सुनकर चुप रहा। ज़ैद ने खालिद से कहा कि "जल्दी चलो और यह गहना गिरवी रखकर पैसे लाएं।" खालिद ज़ैद के साथ चल दिया। ज़ैद को एक और व्यक्ति मिला जिसका नाम महमूद है और वह इस मामले की जानकारी रखता है, लेकिन महमूद को यह नहीं पता था कि

खालिद और ज़ैद कहाँ जा रहे हैं। महमूद भी साथ हो लिया। ये तीनों व्यक्ति गिरवी रखने वाले (मुर्तहिन) की दुकान पर पहुँचे और ज़ैद ने ब्याज की दर पर गहने गिरवी रखकर पैसे लिए और वे सब साथ वापस आए। ज़ैद ने इस पैसे से अपनी ज़रूरतें पूरी कीं। क्या वे ऐसा कर सकते थे या नहीं? क्या मृत व्यक्ति को सवाब (पुण्य) मिला या नहीं? या उस लड़की की शादी में कोई दोष हुआ या नहीं? और इन चार व्यक्तियों में से कौन-कौन सज़ा का पात्र हुआ?

कुरान अल-करीम 2/275 पृष्ठ 715 का 346

صورت حضور عطا فرمائیں ورنہ ان سے بچنے کے واسطے اکثر مسلمان ظاہر ظہور میں مرتکبِ حرام ہوتے ہیں۔

الجواب:

اسامیاں مسلمان ہیں تو یہ عمل قطعاً حرام ہے اور جبکہ زمیندار کو اس پر اطلاع ہے تو اسے سکوت حرام ہے ازالہ منکر فرض ہے خصوصاً جب اپنے نفع کے لئے خاموش ہو تو یوں راضی ہے اور رضا بالکبیرہ خود ہی کبیرہ ہے بلکہ کبھی اس سے بھی سخت تر، اور اگر اسامیاں یہاں کے مشرکین ہیں کہ ذمی نہیں ، نہ سلطنت اسلام سے مستامن، تو زمیندار خواہ ان سے یہ قاعدہ جاری کرے کہ جس پر بقایا ٹوٹے گی ، اس پر ہر مہینہ اتنا حرجہ لیا جائیگا وتحقیق الکلام فی فتاؤنا (تحقیق کلام ہمارے فتاوٰی میں ہے۔ ت) اسے بھی سود سمجھ کر لینا جائز نہیں لقولہ تعالٰی "وَحَرَّمَ الرِّبٰوا" ۱ (اللہ تعالٰی کے اس ارشاد کی وجہ سے کہ: اللہ تعالٰی نے سود کو حرام کیا۔ ت) بلکہ ان کی ایذا رسانی کے معاوضہ میں ایک مالِ مباح سمجھ کر لے ۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۸۰: مسئولہ ولایت حسین صاحب جامع مسجد بریلی ۱۷/ جمادی الاخری ۱۳۳۴ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین و حامیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید کی زوجہ نے انتقال کیا زید بعد فراغت خرچ تجہیز و تکفین کے، خرچ فاتحہ وسوئم نہیں رکھتا ہے یا زید اپنی لڑکی کی شادی کرنا فرض سمجھتا ہے اور فرض ہے مگر اتنا خرچ نہیں ہے کہ فرض ادا کرے تو مجبور ہو کر زید نے اپنے دوست عمرو سے اس معاملہ کا تذکرہ کیا، عمرو نے کچھ زیور زید کو دیا اور یہ کہا کہ اس کو رہن کر کے تم اس فرض یا فاتحہ وغیرہ سے فارغ ہو جاؤ، زید زیور لے کر برائے رہن

چلا اور عمرو وہیں رہا، ایک دوست راستہ میں جو خالد تھا زید نے اس سے تمام معاملہ کی کیفیت بیان کی خالد سن کر خاموش ہورہا، زید نے خالد سے کہا کہ جلد چلو اور یہ زیور رہن کر کے روپیہ لائیں، خالد زید کے ہمراہ چلا، زید کو ایک شخص اور ملا جس کا نام محمود ہے اور وہ اس معاملہ سے واقفیت رکھتا ہے اور محمود کو یہ نہیں معلوم کہ خالد اور زید کہاں جارہے ہیں، محمود بھی ہمراہ ہولیا، یہ تینوں شخص دکانِ مرتہن پر پہنچے اور زید نے وہ زیور رہن کر کے بشرح سود روپیہ لے کر واپس ہمراہ آئے اور اس روپیہ سے کار برآری کی، کر سکتے تھے یا نہیں؟ میت کو ثواب پہنچا یا نہیں؟ یا اس لڑکی کی شادی میں کوئی نقص ہوا یا نہیں؟ اور ان چار اشخاص میں کون کون مرتکب عذاب کا ہوا؟

Fatawa-e-Razviya (Volume 17)

Answer: Taking an interest-based loan for the third-day Fateha ceremony or a daughter's marriage is forbidden (haram). Zaid has certainly committed a major sin and deserves punishment. Similarly, Amr, who gave jewelry for this haram purpose, and Khalid, whom he took along asking him to hold it as collateral, are also sinful. As for Mahmood, since he did not know where they were going, there was no sin on him for going along. However, if after reaching there and finding out, he helped or supported it in any way, then he too committed a similar sin. But this does not invalidate the actual marriage contract. It is difficult for the reward (thawab) of Fateha to reach when performed with haram money. Allah the Almighty knows best.

Problem 181 to 182: From Jalalpur Dhai, Post Office Khas, District Raebareli, sent by Munshi Ali Hussain Khan, Postmaster, 28 Safar 1338 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: (1) Is the exchange of wheat, paddy, barley, or chickpeas, etc., with sweet potatoes, potatoes, or fruit, with an increase or decrease, permissible or impermissible? According to Indian custom, sweet potatoes, potatoes, and fruit are measured by weight (wazni). What is the consideration according to jurists (Fuqaha)? Wheat, etc., according to jurists, is measured by volume (kayli). The difference in genus is clear; what is the ruling regarding the difference in measurement? (2) Exchanging wheat for wheat, barley for barley, or wheat for barley, in equal amounts or with an increase or decrease, such that it is given in the autumn crop (Kharif) and received in the spring crop (Rabi), how is this?

Answer: (1) Buying and selling sweet potatoes, potatoes, and fruit in exchange for wheat, barley, and chickpeas with inequality (more or less) is undoubtedly permissible because the genus (kind) is different. The measurement of wheat and barley is certainly different from them. And where fruits like mangoes or sweet potatoes are counted by number (adadi), even if the measurement is not different from chickpeas, the mere difference in genus makes inequality permissible. The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "When the two types (of goods) differ, then sell as you wish." And Allah the Almighty knows best. The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "When the 'exchanged items' are of two different types, then sell them however you wish." And Allah the Almighty knows best. (T)

Footnote: Nasb ar-Raya li-Ahadith al-Hidaya, Kitab al-Buyu', Maktaba Islamiya Riyadh, 4/4. Page 347 of 715

उत्तर: फातिहा सोम (तीसरे दिन की फातिहा) या बेटी की शादी के लिए सूदी कर्ज (ब्याज वाला ऋण) लेना हराम है। ज़ैद ने निश्चित रूप से बड़ा गुनाह (गुनाह-ए-कबीरा) किया है और वह अज़ाब का हकदार हुआ। इसी तरह अम्र भी गुनहगार है जिसने इस हराम काम के लिए जेवर दिए, और खालिद भी जिसे उसने गिरवी रखने के लिए कहकर अपने साथ लिया। रहा महमूद, तो चूंकि उसे मालूम नहीं था कि ये कहाँ जा रहे हैं, साथ जाने में उस पर कोई गुनाह नहीं हुआ। मगर वहाँ जाकर मालूम होने पर अगर उसने किसी तरह इसमें मदद दी या समर्थन किया, तो वह भी वैसा ही गुनहगार हुआ। लेकिन इससे मूल निकाह में कोई खराबी नहीं आती। और हराम माल से की गई फातिहा का सवाब पहुंचना मुश्किल है। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 181 से 182: जलालपुर धई, डाकखाना खास, जिला रायबरेली, प्रेषक मुंशी अली हुसैन खान पोस्ट मास्टर, 28 सफ़र 1338 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मसले में क्या फरमाते हैं कि: (1) गेहूँ या धान या जौ या चना आदि का शकरकंद या आलू या फल से अधिकता या कमी के साथ विनिमय (तबादला) जायज़ है या नाजायज़? भारतीय प्रथा के अनुसार शकरकंद, आलू और फल वजन (वज़नी) के आधार पर हैं, फुक़हा (विधिवेत्ताओं) के अनुसार इसका क्या विचार है? फुक़हा के अनुसार गेहूँ आदि आयतन (कैली) के आधार पर हैं। नस्ल (जिंस) में अंतर स्पष्ट है; माप (क़द्र) में अंतर के बारे में क्या ज्ञात है? (2) गेहूँ को गेहूँ से या जौ से, या जौ को जौ से और गेहूँ से बराबर या कम-ज़्यादा पर इस तरह बदलना कि खरीफ की फसल में दे और रबी की फसल में वसूल करे, यह कैसा है?

उत्तर: (1) गेहूँ, जौ, चने के बदले आलू, शकरकंद, फलों की खरीद-फरोख्त कम-ज़्यादा (कीमत या मात्रा में) के साथ निस्संदेह जायज़ है क्योंकि इनकी नस्ल (जिंस) अलग है और गेहूँ व जौ से माप (क़द्र) भी निश्चित रूप से भिन्न है। और जहाँ फल जैसे आम या शकरकंद गिनती (अददी) में हों, वहां चने से भी, और अगर माप अलग न भी हो, तो केवल नस्ल का अंतर कमी-बेशी को जायज़ (मुबाह) कर देता है। नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "जब दो प्रकार (की वस्तुएं) भिन्न हों, तो जैसे चाहो बेचो।" और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "जब विनिमय की वस्तुएं(बदलैन) दो अलग-अलग प्रकार की हों, तो जैसे चाहो बेचो।" और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

पादलेख: नसबुर रायः लि-अहादीथिल हिदाया, किताबुल बुयूअ, मकतबा इस्लामिया रियाद 4/4 पृष्ठ 347/715

الجواب: فاتحہ سوم یا لڑکی کی شادی کے لئے سودی قرض لینا حرام ہے، زید ضرور مرتکب گناہ کبیرہ و مستحق عذاب ہوا، یو نہیں عمرو بھی جس نے اس حرام کے لئے زیور دیا، یو نہیں خالد بھی جسے اس نے رہن رکھنے کے لئے کہہ کر اپنے ساتھ لیا، رہا محمود جبکہ اسے معلوم نہ تھا کہ یہ کہاں جارہے ہیں ساتھ جانے میں اس پر گناہ نہ ہوا مگر وہاں جا کر معلوم ہونے پر اگر اس نے کسی طرح اس میں مدد دی یا تائید کی تو وہ بھی ویسا ہی مرتکب گناہ ہوا مگر اصل نکاح میں اس سے خلل نہیں آتا اور مال حرام لے کر فاتحہ کا ثواب پہنچنا مشکل ہے، واللہ تعالیٰ اعلم۔ مسئلہ ۱۸۱ تا ۱۸۲: از جلالپور دھئی ڈاکخانہ خاص ضلع رائے بریلی مرسلہ منشی علی حسین خان پوسٹ ماسٹر ۲۸ صفر ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ: (۱) تبادلہ گیہوں یا دھان یا جو یا چنا وغیرہ شکر قند یا آلو یا میوہ سے زیادتی یا کمی کے ساتھ جائز ہے یا ناجائز؟ رواج اعتبار ہند شکر قند و آلو و میوہ من حیث قدر وزنی ہے، اعتبار عند الفقہاء کیا ہے، گیہوں وغیرہ باعتبار فقہاء من حیث قدر کیلی ہے تغایر جنس ظاہر ہے تغایر قدر میں نہیں معلوم کیا ہے؟ (۲) گیہوں کو گیہوں سے یا جو سے یا جو کو جو سے اور گیہوں سے مساوی یا کم زائد بدلنا اس طرح پر کہ خریف میں دے دے اور ربیع میں وصول کرے، کیسا ہے؟

الجواب: (۱) گیہوں جو، چنے سے آلو شکر قند، میووں کی خرید و فروخت کم بیش کو بلاشبہ جائز ہے کہ جنس مختلف ہے اور گیہوں اور جو سے قدر بھی یقینا مختلف، اور جو میوے مثلاً آم یا شکر قند جہاں عددی ہوں وہاں چنے سے بھی، اور قدر مختلف نہ بھی ہو تو فقط اختلاف جنس کمی بیشی کو مباح کرتا ہے، قال صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم اذا اختلف النوعان فبیعوا کیف شئتم - واللہ تعالیٰ

اعلم۔ نبی کریم صلی اللہ تعالیٰ علیہ و سلم نے فرمایا: جب "بدلین" دو مختلف نوعوں کے ہوں تو جیسے چاہے فروخت کرو۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ (ت)

Fatawa Rizwia, Volume 17

(2) If wheat is exchanged for wheat, or barley for barley, with an increase [on one side], it is prohibited (haram). If it is cash on one side and credit on the other, it is also haram. Exchanging wheat for barley with a difference in quantity is lawful if it is a cash transaction, but credit is absolutely haram.

"For the presence of one of the two causes, quantity or genus, prohibits credit, and the combination of both prohibits excess. And Allah Almighty knows best." Because the presence of one of the two causes, namely quantity (weight/measure) and genus, makes credit prohibited, and the presence of both makes excess prohibited. And Allah Almighty knows best. (T)

Issues 182 to 183: From Udaipur, Mewar, Rajputana, sent by Qazi Yaqub Muhammad, Sub-Inspector of Police, 18 Shawwal 1339 AH. What do the learned scholars (May Allah have mercy on them) say about the following matters: (1) Are Rafidhi Bohras disbelievers (kafir) or apostates (murtad)? In either case, if a Muslim enters into a transaction with them or with a Hindu disbeliever, for instance, gives 1000 or 500 rupees for trade to a Rafidhi on the condition that loss doesn't usually occur in jaggery and sugar trades except in rare cases, so I will continue to take from your shop an average of profit/loss at a rate of 1.5 or 2 percent monthly, whether in cash or food items. And having this recorded on paper as a condition, and if the mutual dealing continues between them for a long time, and considering the capital safe, he keeps taking some profit as per the agreed condition in the form of food and drink items, and settles the remaining profit in cash - is this permissible or impermissible? And if it is impermissible, will it be considered interest or what? (2) Similarly, if a merchant sells goods to a disbeliever on two months' credit and has it recorded in his account book that "if I do not pay the money within two months, at the time of payment I will pay an additional (1/8 or 1/7) percent monthly profit on this merchandise" - is this permissible or impermissible? Explain with references from the Book and you will be rewarded by Allah on the Day of Judgment. (Explain with reference to the book so that you may be rewarded by Allah on the day of account. T)

The Answer: Bohras are Rafidhi apostates, and every apostate is a disbeliever, rather the worst kind of disbeliever. Among the Hindus and others here, none are Dhimmis (protected non-Muslim citizens) who live in an Islamic state as submissive subjects paying Jizya, nor are they Musta'man (temporary residents with safe passage) who have come to Dar-ul-Islam with temporary protection from an Islamic ruler. Any

disbelievers who is neither a Dhimmi nor a Musta'man - apart from treachery and breach of contract, which are absolutely prohibited even against a disbeliever - the rest of their wealth, however it is obtained with their consent through whatever contract...

फ़तावा रज़विया, जिल्द 17

(2) यदि गेहूँ की गेहूँ से या जौ की जौ से अदला-बदली कमी या बेशी के साथ हो तो हराम है, और यदि एक तरफ से नकद और दूसरी तरफ से उधार हो तो भी हराम है। गेहूँ की जौ से अदला-बदली नकद में कमी के साथ हलाल है और उधार बिल्कुल हराम है।

"क्योंकि दो कारणों यानी मात्रा और नस्ल (जिन्स) में से किसी एक कारण की उपस्थिति उधार को वर्जित करती है और दोनों का होना अधिकता को हराम करता है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।" क्योंकि दो कारणों यानी कद्र (मात्रा) और जिन्स (प्रजाति) में से एक कारण का अस्तित्व उधार को और दोनों का पाया जाना अधिकता (ब्याज) को हराम करता है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 182 से 183: उदयपुर, मेवाड़, राजपूताना से, प्रेषक काज़ी याक़ूब मुहम्मद, सब-इंस्पेक्टर पुलिस, 18 शव्वाल 1339 हिजरी। विद्वान (महानुभाव) इन मसलों के बारे में क्या फ़रमाते हैं: (1) क्या राफ़िज़ी बोहरा काफ़िर हैं या मुर्तद (धर्मत्यागी)? दोनों ही स्थितियों में, यदि कोई मुसलमान उनके साथ या हिंदू काफ़िर के साथ इस तरह का सौदा करे, उदाहरण के लिए एक हज़ार या पाँच सौ रुपये व्यापार के लिए किसी राफ़िज़ी को इस शर्त पर दे कि गुड़ और चीनी के व्यापार में आमतौर पर नुक़सान नहीं होता सिवाय बहुत कम मामलों के, इसलिए मैं तुमसे डेढ़ या दो प्रतिशत प्रति माह के हिसाब से लाभ-हानि का औसत निकालकर तुम्हारी दुकान से चाहे नकद या खाने-पीने का सामान लेता रहूँगा, और यह विषय शर्त के तौर पर काग़ज़ पर लिखवा लिया जाए और लंबे समय तक इसी तरह आपस में लेन-देन चलता रहे, और मूलधन (पूँजी) को सुरक्षित समझकर तयशुदा शर्त के अनुसार कुछ लाभ खाने-पीने की वस्तुओं के रूप में लेता रहे और बाक़ी लाभ का हिसाब करके नकद ले ले, तो क्या यह जायज़ है या नाजायज़? और यदि नाजायज़ है तो क्या यह सूद (ब्याज) होगा या कुछ और? (2) इसी तरह यदि किसी काफ़िर को उधार माल दो महीने के वादे पर बेचा जाए और उससे अपने बही-खाते में लिखवा लिया जाए कि "यदि मैं दो महीने में रुपया अदा न करूँ तो अदायगी के समय इस माल के लाभ का 1/8 या 1/7 प्रतिशत प्रति माह अतिरिक्त भुगतान करूँगा," तो क्या यह जायज़ है या नाजायज़? किताब के प्रमाण के साथ उत्तर दें, क़यामत के दिन अल्लाह के यहाँ इसका प्रतिफल पाएँगे। (किताब के हवाले से बयान करें, अल्लाह की तरफ से हिसाब के दिन इसका अज्र दिया जाएगा। त)

अल-जवाब (उत्तर): बोहरा राफ़िज़ी मुर्तद हैं और हर मुर्तद काफ़िर है, बल्कि काफ़िरों की सबसे बुरी क़िस्म है। यहाँ के हिंदू आदि जितने भी काफ़िर हैं उनमें से कोई भी 'ज़िम्मी' नहीं है जो इस्लामी हुकूमत के अधीन रहकर जज़िया देता हो, और न ही वे 'मुस्तअमन' हैं जो इस्लामी शासक से कुछ दिनों की पनाह लेकर दारुल-इस्लाम में आए हों। और वह काफ़िर जो न ज़िम्मी हो और न मुस्तअमन, तो धोखे और वादा-ख़िलाफ़ी के अलावा, जो कि हर काफ़िर के साथ भी हराम है, बाक़ी उसकी रज़ामंदी से उसका माल जिस तरह भी मिले जिस अनुबंध (सौदा) के ज़रिए...

पेज 348 / 715

(۲) گیہوں کی گیہوں یا جو کی جو سے تبدیل کمی بیشی کے ساتھ ہو تو حرام، اور ایک طرف سے نقد اور دوسری طرف سے ادھار ہو تو حرام، اور گیہوں کی جو سے تبدیل نقدوں کمی سے حلال اور ادھار مطلقاً حرام،

فان احدی العلّتین من القدر والجنس تحرّم النسئۃ واجتماعھما والتفاضل۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ کیونکہ دو علتوں یعنی قدر و جنس میں سے ایک علت کا وجود ادھار کو اور دونوں کا پایا جانا زیادتی کو حرام کرتا ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۱۸۲ تا ۱۸۳: از اودے پور میواڑ راجپوتانہ مسئولہ قاضی یعقوب محمد سب انسپکٹر پولیس ۱۸ شوال ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے کرام رحمہم اللہ مسائل ذیل میں کہ : (۱) رافضی بوہرے کافر ہیں یا مرتد ؟ بہر دو صورت اگر مسلمان ان کے ساتھ یا ہندو کافر کے ساتھ اس طرح کا معاملہ کرے مثلاً ہزار یا پانچ سو روپیہ تجارت کے لئے رافضی کو دے اس شرط پر کہ گڑ اور شکر میں نقصان کی صورت نہیں ہوا کرتی ہے الا شاذ و نادر تو میں تجھ سے ڈیڑھ یا دو روپیہ فیصد ماہوار کے حساب سے نفع نقصان کا اوسط نکال کر تیری دکان سے خواہ نقد یا سامان خوردنی لیتا رہوں گا، اور یہ مضمون بطور شرط کاغذ پر لکھوا کر اور عرصہ تک اسی طرح باہمی معاملہ آپس میں جاری رہے اور راس المال محفوظ سمجھ کر بعض نفع حسب قرارداد شرط باہمی اشیائے خوردنی و نوشیدنی لیتا رہے اور مابقی نفع کا حساب کرکے نقد لے تو جائز ہے یا نا جائز؟ اور ناجائز ہوگا تو سود ہوگا یا کیا؟ (۲) اسی طرح کافر کو اگر مال دو مہینہ کا وعدہ پر قرض فروخت کرے اور اس کے ہاتھ سے اپنے بہی کھاتے میں لکھوالے کہ دو مہینہ میں روپیہ نہ ادا کروں تو بوقت ادائے روپیہ فی صد(۱/۸ یا ۱/۷) ماہوار اس مال کے نفع کا زائد ادا کروں گا، یہ جائز ہے یا ناجائز؟ بینوا

بسند الکتاب و توجروا عنداللہ یوم الحساب (کتاب کے حوالہ سے بیان کروالله تعالٰی کی طرف سے یوم حساب کو اجر دئے جاؤ گے۔ ت)

الجواب: بوہرے رافضی مرتد ہیں اور ہر مرتد کافر ہے بلکہ کافروں کی بدتر قسم، یہاں کے ہندو وغیرہ جتنے کفار ہیں ان میں نہ کوئی ذمی ہے کہ سلطنت اسلام میں مطیع الاسلام و جزیہ گزار ہو کر رہے، نہ مستامن ہیں کہ بادشاہ اسلام سے کچھ دنوں کے لئے امان لے کر دارالاسلام میں آئے، اور جو کافر نہ ذمی ہو نہ مستامن سو اغدر و بدعہدی کے کہ مطلقاً ہر کافر سے بھی حرام ہے باقی اس کی رضا سے اس کا مال جس طرح ملے جس عقد کے

Fatawa-e-Razvia, Volume 17

...if it is in the name of a Muslim, it is lawful for him. 'We have detailed this in our fatwas such that nothing more can be added.' (Note: We have explained this in detail in our fatwas). It is stated in Al-Hidayah, Fath al-Qadir, etc.:

| Indeed, their wealth is permissible in their abode (Dar al-Harb), so in whatever way a Muslim takes it, he takes permissible wealth as long as there is no betrayal. | The wealth of non-believers is permissible in Dar al-Harb, therefore, by whatever means a Muslim took it, except for deceit, he took permissible wealth. |

The second form is also permissible, the validity of which is clear from the first answer. However, in all these cases, care should be taken that an honorable and pious person, whom the ignorant public might out of misunderstanding label as a usurer (God forbid), should avoid it. Just as one must avoid bad deeds, one should also avoid a bad reputation. And Allah Almighty knows best.

Problem 185 to 186: From Udaipur Mewar, Bara Bazar, asked by Chhipa Baksha Ji Mahmood, 8th Ramadan 1339 AH.

To the exalted service of the source of blessings, Ghaus of the time, Qutub of the era, the reviver of this age, Hazrat Maulana Al-Haj Maulvi Mufti Ahmad Raza Khan Sahib (may his high shadow last)! What is your say, O noble scholars, may Allah Almighty have mercy on you? (What do you say?)

(1) Cloth was sold on credit to Hindu non-believers for one or two thousand, more or less, on a two-month promise. While giving the cloth, it was stated that if the money is not paid within the two-month deadline, I will take one percent more profit from you. Or, for instance, it is said that the price of this cloth is one hundred rupees on a two-month promise, and if not paid on time, it will be one hundred and one rupees. This is because non-believers often do not care about paying Muslims back on time. Is this permissible or impermissible?

(2) For example, one-hundred-rupee notes were given with a surplus of twelve annas, i.e., to receive back one hundred and one or one hundred and twelve annas after a month. The notes were used by him, but at the end of the month, if he gives notes

instead of rupees, is it permissible to take them or should only rupees be taken? Explain and be rewarded.

1. Al-Hidayah, Kitab al-Buyu, Chapter on Usury, Yusufi Press Lucknow 3/87. Page 349 of 715

फ़तवा-ए-रज़विया, खंड 17

...मुसलमान के लिए हलाल है, 'हमने अपने फ़तवे में इसे विस्तार से बताया है जिससे अधिक कुछ नहीं जोड़ा जा सकता।' (अर्थात, हम इसे अपने फ़तवों में विस्तार से समझा चुके हैं)। अल-हिदाया और फ़त-उल-क़दीर आदि में है:

| वास्तव में, उनका धन उनके निवास (दार अल-हरब) में अनुमेय है, इसलिए जिस भी तरीके से एक मुसलमान इसे लेता है, वह अनुमेय धन लेता है जब तक कि कोई विश्वासघात न हो। | दार अल-हरब में गैर-मुस्लिमों का धन अनुमेय है, इसलिए धोखे के अलावा जिस भी तरीके से मुसलमान ने इसे लिया, उसने अनुमेय धन ही लिया। |

दूसरी स्थिति भी जायज़ है, जिसकी अनुमति पहले उत्तर से स्पष्ट है। हालाँकि, इन सभी मामलों में यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि एक सम्मानित और धर्मपरायण व्यक्ति, जिसे अज्ञानी जनता अपनी गलतफहमी के कारण ऐसी स्थितियों में ब्याजखोर (ईश्वर न करे) कह सकती है, उसे इससे बचना चाहिए। जैसे बुरे कामों से बचना चाहिए, वैसे ही बदनामी से भी बचना चाहिए। और अल्लाह बेहतर जानता है।

मसाला 185 से 186: उदयपुर मेवाड़, बड़ा बाज़ार, प्रेषक: छीपा बख़्शा जी महमूद, 8 रमज़ान 1339 हिजरी।

सेवा में आशीर्वादों के स्रोत, समय के गौस, युग के कुतुब, इस युग के मुजद्दिद, हज़रत मौलाना अल-हाज मौलवी मुफ्ती अहमद रज़ा खान साहब (उनका साया बना रहे)! हे विद्वानों, आप क्या कहते हैं, अल्लाह आप पर रहम करे? (आप क्या फ़रमाते हैं?)

(1) हिंदू गैर-मुस्लिमों को दो महीने के वादे पर एक या दो हज़ार या कम-ज्यादा का कपड़ा उधार बेचा गया। कपड़ा देते समय यह स्पष्ट कर दिया गया कि यदि दो महीने के भीतर पैसा नहीं चुकाया गया, तो मैं आपसे एक प्रतिशत अधिक लाभ लूँगा। या उदाहरण के लिए, यह कहा जाए कि दो महीने के वादे पर इस कपड़े की कीमत सौ रुपये है और यदि समय पर भुगतान नहीं किया गया, तो यह एक सौ एक रुपये होंगे। ऐसा इसलिए क्योंकि गैर-मुस्लिम अक्सर मुसलमानों का पैसा समय पर चुकाने की परवाह नहीं करते। क्या यह जायज़ होगा या नाजायज़?

(2) उदाहरण के लिए, सौ-सौ रुपये के नोट बारह आने की वृद्धि पर दिए गए, यानी एक महीने बाद एक सौ एक या एक सौ बारह आने वापस लेने के लिए। उन नोटों का उपयोग उसने किया, लेकिन महीने के अंत में यदि वह रुपये के बजाय नोट देता है, तो क्या उन्हें लेना जायज़ है या केवल रुपये ही लिए जाने चाहिए? उत्तर दें और पुण्य प्राप्त करें।

1. अल-हिदाया, किताब अल-बुयू, ब्याज का अध्याय, यूसुफी प्रेस लखनऊ 3/87। पृष्ठ 349 का 715

فتاوٰی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

نام سے ہو مسلمان کے لئے حلال ہے، وقد فصلنا ہ فی فتوا نا بما لا مزید علیہ (ہم اس کو اپنے فتاوٰی میں تفصیل سے بیان کر چکے ہیں جس پر مزید اضافہ کی گنجائش نہیں۔ ت) ہدایہ وفتح القدیر وغیرہ ہما میں ہے:

| ان مالہم مباح فی دارہم فبای طریق اخذہ المسلم | کفار کا مال دارالحرب میں مباح ہے لہذا ان کا سوائے دھوکا کے | | اخذ مالا مباحا اذا لم یکن فیہ غدر ۱۔ | جس طریقے سے بھی مسلمان نے لیا اس نے مالِ مباح لیا (ت) |

دوسری صورت بھی جائز ہے جس کا جواز جواب اول سے واضح ہے البتہ ان سب صورتوں میں یہ لحاظ رہے کہ ذی عزت متقی آدمی جسے جاہل عوام اپنی نافہمی کے سبب ایسی صورتوں میں معاذ اللہ سود خور مشہور کریں اسے احتراز مناسب ہے کہ جیسے برے کام سے بچنا ہے یونہی برے نام سے بچنا چاہئے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۸۵ تا ۱۸۶: از اودے پور میواڑ، بڑا بازار مسئولہ چھیپا بخشا جی محمود ۸/ رمضان ۱۳۳۹ھ

بعالی خدمت فیضہ رجت، غوث دوران، قطب زمان، مجدد ہذا الاوان، حضرت مولانا الحاج مولوی مفتی احمد رضا خان صاحب مدظلہ العالی! ما قولکم ایھا العلماء الکرام رحمکم اللہ تعالٰی (اے علماء کرام، اللہ آپ پر رحم فرمائے، آپ کیا فرماتے ہیں ت)

(۱) کفار ہنود کو ہزار دو ہزار یا کم زیادہ کا دو مہینہ کے وعدہ پر قرض کپڑا فروخت کیا، کپڑا دیتے وقت اس سے یہ ظاہر کر دیا گیا کہ اگر دو مہینہ کے وعدہ پر روپیہ نہ ادا کیا تو میں تجھ سے فی صد ایک روپیہ نفع زیادہ لوں گا یا یوں کہہ دیا جائے کہ مثلاً دو مہینے کے وعدہ پر اس کپڑے کی قیمت سو روپے اور اگر اس وعدہ پر نہ آئے تو ایک سو ایک روپے ہوں گے یہ اس لئے کہ کفار مسلمانوں کے روپوں کا وعدہ پر ادا کرنے کی فکر نہیں رکھتے، جائز ہوگا نا جائز؟

(۲) نوٹ سو سو روپے کے مثلاً یا بارہ آنہ زیادتی پر یعنی ایک سو ایک یا ایک سو بارہ آنے پر ایک مہینہ کے بعد واپس روپیہ لینا کر کے دئے گئے، وہ نوٹ تو اس کے کام میں آگئے مگر مہینہ ہونے پر وہ بدلے میں روپیہ نہ دے اور نوٹ دے تو لینا جائز ہے یا روپیہ ہی لیا جائے؟ بینوا توجروا۔

۱۔ الھدایۃ کتاب البیوع باب الربوا مطبع یوسفی لکھنؤ ۳/ ۸۷ Page 349 of 715

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

The Answer:

(1) Such conditions are permissible with the non-believers here, because they are neither 'Dhimmi' nor 'Musta'min' (protected non-Muslim subjects or visitors). However, any excess received should not be considered interest (riba), but rather lawful property (mubah). And Allah Almighty knows best.

(2) With the non-believers here, any manner of transaction is permissible,

[Arabic] Because their property in their abode (Dar al-Harb) is lawful; therefore, in whatever way a Muslim takes it, he has taken lawful property, provided there is no deception, as mentioned in Al-Hidayah and others. (T)

And if a hundred-rupee note is loaned to a Muslim with the condition that after a month twelve annas or one paisa extra will be taken, then it is forbidden and interest (riba),

[Arabic] Because every loan that brings a benefit is interest. (T)

And if a hundred-rupee note is sold to a Muslim with his consent for one hundred and one or one hundred and ten rupees on a one-month credit, it is lawful,

[Arabic] The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: When the types are different, sell as you wish. (T)

Then if at the time of the promise, he does not have the rupees and gives that note along with one rupee or ten rupees, or a hundred-rupee note and one-rupee or ten-rupee notes, then it is permissible to take it, provided it is not the same note he sold. [Arabic] Because buying back what was sold for less than the price before the payment of the price is not permissible. (T) (Because purchasing an item one sold oneself for a price lower than the initial selling price before the payment is made is impermissible. T). Yes, if the buyer had spent it and then it returned to the buyer through a new cause, and now he gives the same note to the seller, it is permissible to take it. It is in Radd al-Muhtar.

---

1 Al-Hidayah, Book of Sales, Chapter on Interest, Yusufi Press, Lucknow, 3/87 2 Kanz al-Ummal, Hadith 15516, Al-Resala Foundation, Beirut, 6/238 3 Nasb al-Rayah for the Hadiths of Al-Hidayah, Book of Sales, Islamic Library, Riyadh, 4/2

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

उत्तर:

(1) यहाँ के काफिरों के साथ ऐसी शर्त जायज़ है क्योंकि वे न तो 'ज़िम्मी' हैं और न ही 'मुस्तामिन' (संरक्षित गैर-मुस्लिम प्रजा या आगंतुक)। हालाँकि, जो भी अतिरिक्त प्राप्त हो, उसे ब्याज (सूद) न समझा जाए बल्कि मुबाह (अनुमेय) माल समझा जाए। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

(2) यहाँ के काफिरों के साथ जिस भी तरीके से हो, जायज़ है,

[अरबी] क्योंकि दारुल हर्ब में उनका माल मुबाह है; इसलिए जिस भी तरीके से मुसलमान ने उसे लिया, उसने मुबाह माल लिया, बशर्ते कि कोई धोखाधड़ी न हो, जैसा कि हिदाया आदि में है। (त)

और अगर एक मुसलमान को सौ रुपये का नोट उधार दिया जाए और शर्त रखी जाए कि एक महीने बाद बारह आने या एक पैसा ज्यादा लूँगा, तो यह हराम और सूद (ब्याज) है,

[अरबी] क्योंकि हर वह कर्ज जो लाभ खींचता है, सूद है। (त)

और अगर सौ रुपये का नोट किसी मुसलमान को उसकी मर्जी से एक महीने के वादे पर एक सौ एक या एक सौ दस रुपये में बेचा जाए, तो यह हलाल है,

[अरबी] नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: जब किस्में अलग हों, तो जैसे चाहो बेचो। (त)

फिर अगर वादे के समय उसके पास रुपये नहीं हैं और वह वह नोट और एक रुपया या दस रुपये, या सौ का एक नोट और एक-एक रुपया या दस रुपया देता है, तो लेना जायज़ है, बशर्ते कि यह वही नोट न हो जो उसने बेचा था। [अरबी] क्योंकि बेची गई चीज़ को कीमत की अदायगी से पहले उसकी कीमत से कम पर वापस खरीदना जायज़ नहीं है। (त) (क्योंकि अपनी ही बेची हुई चीज़ को कीमत की अदायगी से पहले उस कीमत से कम पर खरीदना जिस पर पहले बेची गई थी, नाजायज़ है। त)। हाँ, अगर खरीदार ने उसे खर्च कर दिया था और फिर किसी नए कारण से वह खरीदार के पास वापस आ गया और अब वह वही नोट विक्रेता को देता है, तो लेना जायज़ है। रद अल-मुह्तार में है।

1 अल-हिदाया, किताबुल बुयूअ (बिक्री की किताब), बाबूद रिबा (ब्याज का अध्याय), यूसुफी प्रेस, लखनऊ, 3/87 2 कंजुल उम्माल, हदीस 15516, मुअस्ससतुर रिसाला, बेरूत, 6/238 3 नसबुर राया अल-हिदाया की हदीसों के लिए, किताबुल बुयूअ, मकतबा इस्लामिया, रियाद, 4/2

الجواب:

(۱) یہاں کے کفار سے ایسی شرط جائز ہے لانھم غیر اھل ذمۃ ولا مستامن (کیونکہ نہ تو وہ ذمی ہیں نہ مستامن۔ ت) مگر یہ زیادت جو ملے اسے سود سمجھ کر نہ لے بلکہ مال مباح۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

(۲) یہاں کے کفار سے جس طور ہو جائز ہے،

لان مالھم مباح فی دارھم فبای طریق اخذہ المسلم اخذاً لا مباحاً اذالم یکن فیہ غدر کما فی الھدایۃ وغیرھا۔ | اس لئے کہ کفار کا مال دارالحرب میں مباح ہے لہٰذا جس طریقے سے بھی مسلمان نے اس کو لیا تو اس نے مباح مال لیا بشرطیکہ دھوکا بازی نہ ہو، جیسا کہ ہدایہ وغیرہ میں ہے (ت)

اور مسلمان کو اگر سو روپیہ کا نوٹ قرض دیا اور شرط کر لی کہ مہینہ بھر بعد بارہ آنے یا ایک پیسہ زائد لوں گا تو حرام اور سود ہے،

لان کل قرض جر منفعۃ فھو ربو ۲۔ | کیونکہ جو قرض نفع کھینچے وہ سود ہے (ت)

اور اگر سو روپیہ کا نوٹ مسلمان کے ہاتھ اس کی مرضی سے ایک سو ایک یا ایک سو دس روپیہ کو مہینہ بھر کے وعدہ پر بیچا تو حلال ہے،

قال صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم اذا اختلف النوعان فبیعوا کیف شئتم ۳۔ | نبی کریم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا: جب نوعیں مختلف ہوں تو جیسے چاہو فروخت کرو (ت)

پھر اگر وعدہ کے وقت اس کے پاس روپیہ نہیں اور وہ نوٹ اور ایک روپیہ یا دس روپے یا ایک نوٹ سو کا اور ایک ایک روپیہ یا دس روپیہ کا دے تو لینا جائز ہے بشرطیکہ یہ نوٹ وہی نہ ہو جو اس نے بیچا تھا لان شراء ما باع باقل مما باع قبل نقد الثمن لایجز (کیونکہ اپنی ہی فروخت کی ہوئی شے کو ثمن کی ادائیگی سے قبل اس ثمن سے کم پر خریدنا جس پر پہلے فروخت کی ناجائز ہے۔ ت) ہاں اگر مشتری نے اس کو خرچ کر دیا تھا اور پھر جدید سبب سے مشتری کے پاس واپس آیا اور اب وہی نوٹ بائع کو دیتا ہے لینا جائز۔ ردالمحتار میں ہے:

---

۱ الهدایۃ کتاب البیوع باب الربو مطبع یوسفی لکھنؤ ۳/ ۸۷ ۲ کنز العمال حدیث ۱۵۵۱۶ مؤسسة الرسالة بیروت ۶/ ۲۳۸ ۳ نصب الرایه لاحادیث الهدایة کتاب البیوع مکتبه اسلامیه ریاض ۴/ ۲

Fatawa Razawiyya Volume 17

"If the sold object leaves the ownership of the buyer and then returns to him by virtue of a new ownership, such as cancellation of sale (Iqala), purchase, gift, or inheritance, then it is permissible for the seller to buy it back from him for less than the first price. However, if the sold object returned to the buyer's ownership due to the cancellation of the sale because of the option of condition (Khiyar al-Shart) or option of inspection (Khiyar al-Ru'ya), whether before or after possession, then it is not permissible for the seller to buy it from him for less than the first price. Narrated by al-Bahr from al-Siraj. And Allah knows best."

If the item sold has left the buyer's possession and then returned to the buyer through a new legal reason, such as cancellation of the previous sale, a new purchase, a gift, or inheritance, it is then permissible for the original seller to buy it back for less than the initial price. But if the item returned to the buyer because the sale was cancelled due to a condition or an inspection option, whether before or after taking possession, it is not permissible for the original seller to buy it back for less than the initial price. This is narrated in 'Al-Bahr' from 'Al-Siraj'. And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 187: From Faridkot State, District Ferozepur, Government Press, sent by Muhammad Ali, 27 Safar 1338 AH.

What is the ruling of the Sharia in this matter? A person has income purely from interest (usury). A religious scholar says that even if one believes interest is forbidden (haram), if someone takes interest, it is lawful (halal) and permissible to use this pure interest income for charity, specifically for building mosques. He claims that the person's belief is sufficient justification for using the income in this manner. Interest is being taken openly. The income in question is purely from interest.

The Answer:

Interest is definitively forbidden (haram), and income derived from it is definitively haram and pure filth. And the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said:

Indeed, Allah is Pure and accepts only that which is pure. (Hadith) - Indeed Allah is pure, He accepts only the pure. (T)

For something haram, merely believing in its prohibition is not sufficient. Otherwise, what would be the difference between consuming haram wealth and committing haram acts? Would a simple belief in prohibition suffice there too? In fact, Riba (usury) is far worse than adultery. It has been stated in numerous authentic (Sahih) Hadiths:

Interest has seventy-three doors, the least of which... - Riba is a collection of seventy-three sins, of which the [lowest]...

---

1 Radd al-Muhtar, Chapter on Corrupt Sales, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/114.
2 Sahih Muslim, Book of Zakat, Chapter: Indeed the name of charity etc., Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/326.

फ़तावा रज़विया जिल्द 17 (सत्रह)

"यदि बेची गई वस्तु खरीदार के स्वामित्व से बाहर चली जाती है और फिर एक नए स्वामित्व के आधार पर उसके पास वापस आती है, जैसे बिक्री का रद्दीकरण (इकाला), खरीद, उपहार, या विरासत, तो विक्रेता के लिए इसे उससे पहली कीमत से कम पर वापस खरीदना जायज़ है। हालांकि, अगर बेची गई वस्तु खरीदार के स्वामित्व में शर्त के विकल्प (खियार अल-शर्त) या निरीक्षण के विकल्प (खियार अल-रुया) के कारण बिक्री रद्द होने के कारण वापस आई, चाहे कब्जे से पहले या बाद में, तो विक्रेता के लिए इसे उससे पहली कीमत से कम पर खरीदना जायज़ नहीं है। अल-बहर ने अल-सिराज से वर्णन किया है। और अल्लाह बेहतर जानता है।"

अगर बेची गई चीज़ खरीदार के स्वामित्व से बाहर हो गई, फिर किसी नए कारण से खरीदार के पास वापस आ गई जैसे कि इक़ाला (सौदा रद्द करना), खरीदारी, तोहफ़ा या विरासत के तौर पर। अब बेचने वाले का इसे पहली कीमत से कम पर खरीदना जायज़ है। और अगर वह चीज़ दोबारा खरीदार के पास 'खियार-ए-शर्त' या 'खियार-ए-रुयत' की वजह से सौदा रद्द होने पर वापस आई है, चाहे कब्ज़े से पहले हो या बाद में, तो अब बेचने वाले के लिए यह जायज़ नहीं कि वह पहली कीमत से कम पर इसे खरीदे। बहर ने सिराज से रिवायत किया। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 187: रियासत फ़रीदकोट, जिला फ़िरोज़पुर, सरकारी छापाखाना, प्रेषक: मोहम्मद अली, 27 सफ़र 1338 हिजरी।

इस मसले में शरीयत का क्या हुक्म है कि एक व्यक्ति के पास शुद्ध ब्याज की आय है और एक मौलवी साहब कहते हैं कि ब्याज के हराम होने का अक़ीदा (विश्वास) रखते हुए अगर कोई व्यक्ति सूद लेता है, तो उसकी इस शुद्ध ब्याज की आय को सदक़ा, खैरात, विशेषकर मस्जिदों के निर्माण में लगाना हलाल और जायज़ है, और इस आय को ऐसे कामों में लगाने के लिए उसका अक़ीदा ही काफी है। ब्याज खुलेआम लिया जा रहा है, जिस आय के बारे में सवाल है वह शुद्ध ब्याज है।

जवाब:

सूद (ब्याज) कतई हराम है और उसकी आय कतई हराम और कोरा खबीस (गंदगी) है। और नबी सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

यकीनन अल्लाह पाक है, वह केवल पाक ही को स्वीकार करता है। (हदीस) - बेशक अल्लाह पाक है, वह पाक ही को कुबूल करता है। (त)

हराम चीज़ के लिए सिर्फ उसकी हुरमत (निषेध) का अक़ीदा काफी नहीं है, वरना हराम खाने और हराम काम करने में क्या अंतर रह जाएगा? वहां भी क्या सिर्फ हुरमत का अक़ीदा काफी होगा? बल्कि रिबा (सूद) तो ज़िना से भी कहीं अधिक बदतर है। अनेक सही हदीसों में फ़रमाया गया:

सूद के तिहत्तर दरवाज़े हैं, जिनमें से सबसे छोटा... - सूद तिहत्तर गुनाहों का समूह है जिसमें सबसे...

---

1 रद-उल-मुह्तार, बाब अल-बय अल-फ़ासिद, दार एहया-उत-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 4/114. 2 सहीह मुस्लिम, किताब-उज़-ज़कात, बाब: इन अस्मि सदक़ा अलख, क़दीमी कुतुब खाना, कराची, 1/326.

ولو خرج عن ملك المشترى ثم عاد اليه بحكم ملك جديد كاقالة او شراء او هبة او ارث فشراء البائع منه بالاقل جائز لان عاد اليه بما هو فسخ بخيار رؤية او شرط قبل القبض او بعده بحر عن السراج - واللہ تعالٰی اعلم۔

اگر مبیع مشتری کی ملک سے خارج ہو گیا پھر جدید سبب سے مشتری کے پاس لوٹا جیسے اقالہ، خریداری، ہبہ یا میراث کے طور پر۔ اب بائع کا اس سے پہلے ثمن سے کم پر خریدنا جائز ہے، اور اگر مبیع دوبارہ مشتری کی ملک میں خیار شرط یا خیار رؤیت کی وجہ سے بیع کے فسخ ہونے پر واپس آیا چاہے قبضہ سے پہلے یا بعد ، تو اب بائع کے لئے جائز نہیں کہ پہلے ثمن سے کم پر اس سے خریدے۔ بحر نے سراج سے روایت کیا۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۱۸۷: از ریاست فرید کوٹ ضلع فیروز پور مطبع سرکاری مرسلہ محمد علی ۲۷ صفر ۱۳۳۸ھ

شریعت عزا کا حکم ہے اس مسئلہ میں کہ ایک شخص کے پاس خالص بیاج کی آمدنی ہے اور ایک مولوی صاحب کہتے ہیں کہ بیاج کے حرام ہونے کا عقیدہ رکھتے ہوئے اگر کوئی شخص سود لیتا ہے تو اس کی اس خالص بیاج کی آمدنی کو صدقات خیرات بالخصوص تعمیر مساجد میں لگانا حلال و جائز ہے اور اس کے اس آمدنی کے ایسے مصارف میں لگانے کے لئے اس کا عقیدہ ہی بس ہے بیاج علانیہ لیا جا رہا ہے آمدنی جس کا مسئلہ دریافت ہے خالص بیاج ہے۔

الجواب:

سود حرام قطعی ہے اور اس کی آمدنی حرام قطعی اور خبیث محض ہے۔ اور نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

ان اللہ طیب لا یقبل الا طیبا۔ بیشک اللہ پاک ہے، پاک ہی کو قبول کرتا ہے۔ (ت)

حرام کے لئے فقط اس کی حرمت کا اعتقاد کافی نہیں ورنہ حرام خوری و حرام کاری میں کیا فرق ہے وہاں بھی صرف اعتقاد حرمت کافی ہو بلکہ ربو تو زنا سے بھی بدر جہا بدتر ہے، بکثرت صحیح حدیثوں میں ارشاد ہوا:

الربو ثلثۃ وسبعون بابا ایسرہا ربو تہتر گناہوں کا مجموعہ ہے جس میں سب سے

---

1 ردالمحتار باب البیع الفاسد داراحیاء التراث العربي بیروت ۴ / ۱۱۴ 2 صحیح مسلم کتاب الزکوۃ باب ان اسم الصدقہ الخ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱ / ۳۲۶

Fatawa Razawiya (Volume 17)

(Arabic Text): "Like a man marrying his mother." - Narrated by al-Hakim in al-Mustadrak with an authentic chain from Abdullah bin Mas'ud (may Allah be pleased with him).

The lightest of its sins is like a man committing adultery with his mother. (Imam Hakim narrated this in Mustadrak with an authentic chain from our master Hazrat Abdullah bin Mas'ud, may Allah be pleased with him.) (T)

In fact, the scholars have gone so far as to say that giving haram (unlawful) money to a poor person and hoping for a reward is disbelief (kufr). And if the poor person knows that it is haram money and prays for the giver, and the giver says "Amen," then both should recite the Kalima of Islam anew and renew their marriage. It is stated in Al-Muhit, Al-Alamgiriyah, Jami' al-Fusulayn, etc.:

(Arabic Text): "Whoever gives something from unlawful wealth as charity to a poor person, hoping for reward, commits disbelief. If the poor person knows about it, prays for him, and the giver says 'Amen,' both commit disbelief."

If someone gave something from haram wealth as charity to a poor person while hoping for a reward, he becomes a disbeliever. And if the poor person knows that this wealth is haram, yet still prays for the giver and the giver says "Amen" to it, then both become disbelievers. (T)

The ruling for one who possesses haram money is that he must return it to the person from whom it was taken. If that person is no longer alive, it should be given to their heirs. If their whereabouts are unknown, then it should be given as charity to the poor. This charity is not as a voluntary act of benevolence or almsgiving, but rather because utilizing impure (mal-e-khabith) wealth is forbidden, and since the person to whom it should be returned is unknown, it becomes necessary to give it to the poor to remove the impurity and complete the repentance. The wealth discarded for this purpose should not be spent on mosques or other good deeds because it is impure, and these places are not intended for impure consumption. However, if a poor person, after accepting and taking possession of it, gives it to a mosque from their own side, then there is no harm.

(Arabic Text): "The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: 'It is charity for her and a gift for us.'"

The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "This is charity for her (Hazrat Barira, may Allah be pleased with her) and a gift for us." And Allah knows best. (T)

And Allah knows best.

Footnotes: 1. Al-Mustadrak 'ala al-Sahihayn, Book of Sales, Dar al-Fikr Beirut, 2/37. 2. Jami' al-Fusulayn, Chapter 38, on issues of words of disbelief, Islamic Kutub Khana Karachi, 12/308. 3. Sahih al-Bukhari, Book of Inheritance, Chapter on Wala' for the one who manumits, Qadimi Kutub Khana Karachi, 2/999.

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

(अरबी पाठ): "जैसे कोई आदमी अपनी माँ से निकाह करे।" - अल-हाकिम ने अल-मुस्तदरक में अब्दुल्लाह बिन मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से एक सही सनद के साथ रिवायत किया है।

इसका सबसे हल्का गुनाह यह है कि आदमी अपनी माँ के साथ ज़िना करे। (इसे इमाम हाकिम ने मुस्तदरक में सही सनद के साथ सैयदना हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसूद रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया है।) (T)

बल्कि उलेमा ने यहाँ तक फ़रमाया है कि हराम माल किसी फ़क़ीर को देकर सवाब की उम्मीद रखना कुफ़्र है। और अगर फ़क़ीर को मालूम हो कि उसने हराम माल दिया है और वह उसके लिए दुआ करे और देने वाला आमीन कहे, तो दोनों नए सिरे से कलमा-ए-इस्लाम पढ़ें और निकाह का तजदीद (नवीनीकरण) करें। अल-मुहीत, अल-आलमगीरिया, जामिअुल फुसुलैन आदि में है:

(अरबी पाठ): "जिस किसी ने हराम माल में से कुछ फ़क़ीर को सदक़ा किया और सवाब की उम्मीद रखी, वह काफ़िर हो गया। अगर फ़क़ीर को इसके बारे में पता हो, उसके लिए दुआ की और देने वाले ने आमीन कहा, तो दोनों काफ़िर हो गए।"

किसी ने हराम माल में से कुछ फ़क़ीर पर सदक़ा किया इस हाल में कि वह उससे सवाब की उम्मीद रखता है, तो वह काफ़िर हो गया। और अगर फ़क़ीर को मालूम हो कि यह माल हराम है, इसके बावजूद उसने देने वाले को दुआ दी और देने वाले ने उस पर आमीन कही, तो दोनों काफ़िर हो गए। (T)

हराम पैसे वाले के लिए यह हुक्म है कि जिससे लिया उसे वापस दे। अगर वह न रहा, तो उसके वारिसों को दे। अगर पता न चले, तो फ़ुक़रा (ग़रीबों) पर सदक़ा करे। यह सदक़ा एहसान और खैरात के तौर पर नहीं, बल्कि इसलिए कि ख़बीस (अपवित्र) माल का इस्तेमाल उसके लिए हराम है, और उस शख्स का पता नहीं जिसे वापस दिया जाना था, इसलिए नजासत (गंदगी) दूर करने और तौबा मुकम्मल करने के लिए फ़ुक़रा को देना ज़रूरी हुआ। इस मक़सद के लिए जो माल निकाला जाए, उसे मस्जिदों या अन्य नेक कामों में इस्तेमाल न किया जाए क्योंकि वह ख़बीस है, और ये स्थान ख़बीस माल के खर्च के लिए नहीं हैं। हाँ, अगर फ़क़ीर उसे स्वीकार करने और उस पर कब्ज़ा करने के बाद अपनी ओर से मस्जिद में दे दे, तो कोई हर्ज़ नहीं।

(अरबी पाठ): "नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: 'यह उसके लिए सदक़ा है और हमारे लिए तोहफ़ा (हदिया)।'"

नबी-ए-अकरम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया: "यह उसके लिए (हज़रत बरईरह रज़ियल्लाहु तआला अन्हा के लिए) सदक़ा है और हमारे लिए हदिया।" और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है। (T)

और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

फुटनोट्स: 1. अल-मुस्तदरक अल-अस-सहीहैन, किताबुल बुयूअ, दारुल फ़िक्र बेरूत, 2/37. 2. जामिअुल फुसुलैन, अध्याय 38, कुफ़्र के शब्दों के मसलों पर, इस्लामी कुतुब खाना कराची, 12/308. 3. सहीह अल-बुखारी, किताबुल फ़राइज़, बाबुल विला ले-मन अतका, क़दीमी कुतुब खाना कराची, 2/999.

पृष्ठ 352/715

مثل ان ینکح الرجل امه - رواه الحاکم فی المستدرک بسند صحیح عن عبدالله بن مسعود رضی الله تعالٰی عنه۔

ہلکا گناہ یہ ہے کہ آدمی ماں سے زنا کرے۔ (اس کو امام حاکم نے مستدرک میں سندِ صحیح کے ساتھ سیدنا حضرت عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا۔ (ت)

بلکہ علماء نے یہاں تک فرمایا کہ مال حرام فقیر کو دے کر ثواب کی امید رکھنا کفر ہے، اور اگر فقیر کو معلوم ہو کہ اس نے مال حرام دیا ہے اور اس کے لئے دعا کرے اور وہ آمین کہے تو دونوں نئے سرے سے کلمہ اسلام پڑھیں اور تجدید نکاح کریں۔ محیط و عالمگیر یہ و جامع الفصولین وغیرہا میں ہے:

تصدق علی الفقیر شیئاً من المال الحرام ویرجو الثواب کفر ولو علم به الفقیر ودعاله وامن المعطی کفرا۔

کسی نے مالِ حرام میں سے کچھ فقیر پر صدقہ کیا اس حال میں کہ وہ اس سے ثواب کی امید کرتا ہے تو کافر ہو گیا اور اگر فقیر کو معلوم ہو کہ یہ مال حرام ہے اس کے باوجود اس نے دینے والے کو دعا دی اور دینے والے نے اس پر آمین کہی تو دونوں کافر ہوگئے۔ (ت)

زرِ حرام والے کو یہ حکم ہوتا ہے کہ جس سے لیا اسے واپس دے وہ نہ رہا اس کے وارثوں کو دے پتہ نہ چلے تو فقراء پر تصدق کرے یہ تصدق بطور تبرع واحسان و خیرات نہیں بلکہ اس لئے کہ مالِ خبیث میں اسے تصرف حرام ہے اور اس کا پتہ نہیں جسے واپس دیا جاتا لہٰذا دفعِ خبث و تکمیلِ توبہ کے لئے فقراء کو دینا ضرور ہوا اس غرض کے لئے جو مال دفع کیا جائے وہ مساجد

وغیرہ امور خیر میں صرف کہ خبیث ہے اور یہ مواضع خبیث کا مصرف نہیں، ہاں فقیر اگر لے کر بعدِ قبول و قبضہ اپنی طرف سے مسجد میں دے دے تو مضائقہ نہیں۔

قال صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم ھو لھا صدقۃ ولنا ھدیۃ۔

نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا یہ اس (حضرت بریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہا) کیلئے صدقہ ہے اور ہمارے لئے ہدیہ۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

واللہ تعالٰی اعلم۔

حواشی: 1 المستدرک علی الصحیحین کتاب البیوع دار الفکر بیروت ۲ / ۳۷ 2 جامع الفصولین الفصل الثامن والثلاثون فی مسائل کلمات الکفر اسلامی کتب خانہ کراچی ۱۲ / ۳۰۸ 3 صحیح البخاری کتاب الفرائض باب الولاء لمن اعتق قدیمی کتب خانہ کراچی ۲ / ۹۹۹

صفحہ 352 من 715

Fatawa Razawiyya Volume 17

Problem 188: From Wardak Khana, District Nainital, sent by Abdullah Sahib, 6 Sha'ban 1337 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Is it permissible to fix 17 annas or 16.5 annas for a rupee and take it after two or four days? The Answer: If money was given as a loan and it was agreed to take sixteen and a quarter annas, then this is absolute interest and forbidden (haram). However, if 17 annas or 16 annas were sold for a rupee with the buyer's consent, and it was agreed to pay the price after four days, two days, or ten years, then it is permissible as long as the rupee was handed over in the same sitting; otherwise, the sale will be void.

[Boxed Text] Arabic: Likunihi iftiraqan 'an daynin bidaynin wa yakfi qabdu ahadil jaanibayni kama haqqaqnahu fi Kafil-ul-Faqeeh. Urdu: Because it is an exchange of debt for debt, and possession from one side is sufficient, as we have researched in Kafil-ul-Faqeeh. (T)

And if 17 annas or 16 annas were bought for a rupee and it was agreed to give the money after four days, then it is impermissible because this is a Salam sale (pre-paid sale), and in a Salam sale, it is not permissible to fix a period of less than one month. Az-Zayla'i and Ad-Durr give fatwas on this, and it is the relied-upon position in Al-Bahr and the school of thought in An-Nahr. (Az-Zayla'i and Ad-Durr give fatwas on this, and this is the relied-upon position (Bahr) and this is the school of thought (Nahr). T). Yes, if a period of one month or more is fixed and the rupee is given in the same sitting, and all other conditions of a Salam sale are met, then it is permissible. And Allah Almighty knows best.

Problem 189: From city locality Malukpur, asked by Muhammad Hasan Khan Sahib, 23 Rabi-ul-Akhir 1336 AH. Amr deals in cloth trade; some money for cloth was owed to him by Zaid. A period of about two to two and a half years had passed without interest; Amr does not take interest. Amr faced an extreme need; Amr demanded it from Zaid. Zaid refused and promised to pay after four months. Amr said if you do not give it to me now, it will lead to my personal disgrace; what will be the result then? Zaid's elder brother was Khalid; Amr got him to intercede. Then Zaid said that Bakr, who is my relative, I had borrowed 421 rupees from him a short time ago by writing a document. I have paid that money as per the agreement without interest, and the receipts have come. The documents are still with him; if he gives them, I will return the receipts and that document will be restored again. He will give you the

money. Amr went to Bakr along with Khalid. When he spoke to Bakr, he did not agree. Then Amr said...

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

मसला 188: वार्डक खाना, ज़िला नैनीताल से, प्रेषक अब्दुल्लाह साहिब, 6 शाबान 1337 हिजरी। उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि एक रूपये के सतरह आने या साढ़े सोलह आने तय करके दो-चार दिन में लेना कैसा है? जवाब: रूपया क़र्ज़ दिया और यह तय कर लिया कि सवा सोलह आने लेंगे, तो यह सूद (ब्याज) और क़तई हराम है। और अगर रूपये को सतरह आने या सोलह आने में ख़रीदार की रज़ामंदी से बेचा और क़ीमत चार दिन या दो दिन या दस साल बाद देनी तय हुई, तो यह जायज़ है बशर्ते कि रूपया उसी मजलिस (बैठक) में दे दिया गया हो, वरना सौदा बातिल (अमान्य) हो जाएगा।

[बॉक्स] अरबी: लिकौनिही इफ़्तिराक़न अन दैनिन बिदैनिन व यक्फ़ी क़ब्ज़ु अहादिल जानिबैनि कमा हक़क़क़नाहु फ़ी कफ़िलुल फ़क़ीह। उर्दू: क्योंकि यह क़र्ज़ के बदले क़र्ज़ का लेन-देन है और एक तरफ़ से क़ब्ज़ा पाया जाना काफ़ी है जैसा कि इसकी तहक़ीक़ हमने कफ़िलुल फ़क़ीह में कर दी है। (त)

और अगर रूपये के सतरह आने या सोलह आने ख़रीदे और पैसे चार दिन बाद देने तय हुए, तो यह नाज़ायज़ है क्योंकि यह 'बैय-ए-सलम' (अग्रिम भुगतान बिक्री) हुई और बैय-ए-सलम में एक महीने से कम की मुद्दत तय करना जायज़ नहीं है। इसी पर ज़ैलई और दुर्र फ़तवा देते हैं और यही मोतमिद (विश्वसनीय) है 'बहर' में और यही मज़हब है 'नहर' में। (इसी पर ज़ैलई और दुर्र फ़तवा देते हैं और यही मोतमिद है (बहर) और यही मज़हब है (नहर)। त)। हाँ, अगर एक महीने या उससे ज़्यादा की मुद्दत तय करें और रूपया उसी मजलिस में दे दें और बैय-ए-सलम की बाक़ी तमाम शर्तें पूरी हों तो जायज़ है। वल्लाहु तआला आलम (और अल्लाह तआला बेहतर जानता है)।

मसला 189: शहर मोहल्ला मलूकपुर से, सायल मोहम्मद हसन ख़ान साहिब, 23 रबी-उल-आख़िर 1336 हिजरी। अम्र कपड़े का व्यापार करता है, उसके कपड़े का रूपया ज़ैद के ज़िम्मे वाजिब था, जिसे लगभग दो-ढाई साल बीत चुके थे बिना ब्याज के अम्र सूद नहीं खाता है। अम्र को सख़्त ज़रूरत पेश आई, अम्र ने ज़ैद से मांग की, ज़ैद ने इनकार कर दिया और चार महीने का वादा किया। अम्र ने कहा कि अगर आप अब मुझे न देंगे तो मेरी ज़ाती रुसवाई होगी, तब क्या नतीजा होगा? ज़ैद का बड़ा भाई ख़ालिद था, उससे सिफ़ारिश कराई तब ज़ैद ने कहा कि बक्र जो मेरा अज़ीज़ (रिश्तेदार) है, उससे मैंने अभी थोड़े समय पहले 421 रूपये दस्तावेज़ लिखकर क़र्ज़ लिए थे, वो रूपया मैंने

समझौते के अनुसार बिना ब्याज के अदा कर दिया है और रसीदें आ गई हैं, दस्तावेज़ात उसी के पास हैं, अगर वो दे दे तो रसीदें वापस कर दूँ और वही दस्तावेज़ फिर से बहाल हो जाएगा। वह तुम्हें रूपया दे देगा। अम्र ख़ालिद को साथ लेकर बक्र के पास गया। बक्र से कहा तो वह राजी नहीं हुआ, तब अम्र ने कहा...

पृष्ठ 353 / 715

مسئلہ ۱۸۸: از ور وڈا کھانہ خاص ضلع نینی تال مرسلہ عبد اللہ صاحب ۶ شعبان ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ روپیہ کے سترہ آنے یا ساڑھے سولہ آنے ٹھہرا کر دو چار روز میں لینا کیسا ہے؟ الجواب: روپیہ قرض دیا اور یہ ٹھہرالیا کہ سوا سولہ آنے لیں گے، یہ سود و حرام قطعی ہے اور اگر روپیہ سترہ آنے یا سولہ آنے کا برضائے مشتری بیچا اور قیمت چار دن یا دو دن یا دس برس بعد دینی ٹھہری تو یہ جائز ہے جبکہ روپیہ اسی جلسہ میں دے دیا گیا ورنہ بیع باطل ہو جائے گی،

[خانہ] لکونہ افتراقاً عن دین بدین ویکفی قبض احد الجانبین کما حققناہ فی کفل الفقیہ۔ کیونکہ افتراق ہے دین سے دین کے بدلے میں اور ایک جانب سے قبضہ کا پایا جانا کافی ہے جیسا کہ اس کی تحقیق ہم نے کفل الفقیہ میں کردی ہے۔ (ت)

اور اگر روپے کے سترہ آنے یا سولہ آنے خریدے اور پیسے چار دن بعد دینے ٹھہرے تو یہ ناجائز ہے کہ یہ بیع سلم ہوئی اور بیع سلم میں ایک مہینے سے کم مدت مقرر کرنی جائز نہیں بہ یفتی زیلعی ودر وھو المعتمد بحر وھو المذھب نھر (اسی پر زیلعی اور در فتوٰی دیتے ہیں اور یہی معتمد ہے (بحر) اور یہی مذہب ہے (نہر)۔ ت) ہاں ایک منے یا زیادہ کی مدت مقرر کریں اور روپیہ اسی جلسہ میں دے دیں اور باقی سب شرائط بیع سلم کے پائے جائیں تو جائز ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۸۹: از شہر محلہ ملوکپور مسئولہ محمد حسن خان صاحب ۲۳/ ربیع الآخر ۱۳۳۶ھ عمرو تجارت پارچہ کی کرتا ہے، اس کا پارچہ کا روپیہ زید کے ذمہ چاہئے تھا، عرصہ جس کو دو ڈھائی برس کا ہو گیا تھا بلا سودی، عمرو سود نہیں کھاتا ہے، عمرو کو بے حد ضرورت لاحق

ہوئی، عمرو نے زید سے طلب کیا، زید نے انکار کیا اور وعدہ چار ماہ کا کیا، عمرو نے کہا کہ اگر آپ اب مجھے نہ دو گے تو میری ذات رسوائی ہو گی تب کیا نتیجہ ہوگا، زید کا بڑا بھائی خالد تھا اس سے سفارش کرائی تب زید نے کہا کہ بکر جو میرا عزیز ہے اس سے میں نے ابھی تھوڑا زمانہ ہوا ۴۲۱ سو روپیہ دستاویز لکھ کر قرض لئے تھے وہ روپیہ میں نے ادا کر دیا حسب معاہدہ بلا سود رسیات آگئی ہیں دستاویزات انہی کے پاس ہیں، اگر وہ دے دیں تو رسیدیں واپس دے دوں دستاویز وہی پھر برقرار رہے گی وہ تم کو روپیہ دے دیں عمرو خالد کو ہمراہ لے کر بکر کے پاس گیا بکر سے کہا وہ راضی نہ ہوا تب عمرو نے کہا

Give me two hundred less, my honor will be lost if I don't get the money. I am ready to take 2600 and write a receipt for 2800; this will be profitable for you. Bakr said, 'You take it from somewhere else, I will stand as a guarantor.' Amr asked a non-believer to give 2600 rupees for three months; he was demanding 100 rupees as interest. Amr said to Bakr, 'You take this hundred too, you yourself provide the 2500 rupees and take a receipt for 2800. My need is very urgent,' and he pleaded much. Khalid said he heard Bakr agreed but said that Zaid should write a letter stating, 'I will return this money in three months; if I don't, I will pay it with interest in four months.' And write a note for 500 rupees stating that if it is not paid even in four months, then in the fifth month I will have the right to demand and collect that note, along with interest on the document. Accordingly, Zaid formally wrote a penalty note for Bakr, along with an agreement letter, and returned the receipts. Bakr gave 2500 to Amr and took a receipt for 2800, deducting 200 for the shortage and 100 for interest, totaling 300. Then 1400 cash was given to Zaid or arranged through someone else. He gave the full 1400 in cash without any deductions. For a receipt of 2800, 1400 cash was given, thus totaling 4200. While writing the receipt, Amr said to Bakr, 'I am very poor; I have deducted these 100 rupees for interest, but these 200 rupees of shortage are solely because they (Zaid) did not pay, and my... without this there is humiliation. I have accepted the reduction out of compulsion because the Master (Bakr) would not have given without it. If Zaid does not pay in three months and pays in the fourth month, then the document interest that the Master receives will be my right as compensation for those 200 rupees of shortage, and I should get it. Whatever exceeds 200, the Master should take because I am providing it in exchange for them; the Master should give it to me. If the money is returned in three months, it is interest-free as per the agreement. If by my fate they pay in four months, then definitely take the interest amount and give it to me; interest is my right and permissible for me.' Zaid did not pay the money according to the agreement but paid after five months. Bakr did not take the interest on the document, which would have been 200 to 250 rupees; he let Zaid off but collected the 500-rupee penalty note, meaning he collected 4700 in place of 4200. After collection, Amr is demanding from Bakr, 'Give me two hundred from these five hundred because if the Master had not waived it, I would have received them. You did not take the small amount but took the large one; therefore, give me two hundred.' Bakr said, 'I don't remember such an agreement being made.' Then Khalid

reminded him that it was made. Now Bakr said to Amr, 'If according to the noble Shariah, by the command of God and His Messenger, that sum of two hundred of yours, and even the hundred rupees of interest I took from you, are permissible for me, then I will not give. But if they are forbidden (Haram) for me, then I am ready to give three hundred.'

आप मुझे दो सौ कम दे दें, पैसा न मिलने से मेरी प्रतिष्ठा चली जाएगी। मैं 2600 लेकर 2800 की रसीद लिखने के लिए तैयार हूँ, इससे आपको लाभ होगा। बक्र ने कहा, 'तुम इसे कहीं और से ले लो, मैं ज़मानत दे दूँगा।' अम्र ने एक गैर-मुस्लिम से कहा कि तीन महीने के लिए 2600 रुपये दे दो; वह 100 रुपये ब्याज मांग रहा था। अम्र ने बक्र से कहा, 'यह सौ भी आप ही ले लें, आप ही 2500 रुपये दें और 2800 की रसीद लें। मेरी ज़रूरत बहुत ज़्यादा है,' और उसने बहुत अनुनय-विनय की। खालिद ने कहा कि उसने सुना कि बक्र राजी हो गया, लेकिन उसने कहा कि ज़ैद एक पत्र लिख दे कि 'मैं यह पैसा तीन महीने में लौटा दूँगा; अगर नहीं लौटाया, तो चार महीने में ब्याज के साथ दूँगा।' और 500 रुपये का एक नोट लिख दे कि यदि चार महीने में भी भुगतान नहीं हुआ, तो पाँचवें महीने में मुझे उस नोट की माँग करने और उसे वसूलने का अधिकार होगा, दस्तावेज़ के ब्याज के साथ भी। तदनुसार, ज़ैद ने बक्र के लिए औपचारिक रूप से एक दंड नोट लिखा, साथ ही एक समझौता पत्र भी, और रसीदें वापस कर दीं। बक्र ने अम्र को 2500 दिए और 2800 की रसीद ली, कमी के लिए 200 और ब्याज के लिए 100 काट लिए, कुल 300। फिर 1400 नकद ज़ैद को दिए गए या किसी और के माध्यम से दिलवाए गए। उसने बिना किसी कटौती के पूरे 1400 नकद दिए। 2800 की रसीद के लिए 1400 नकद दिए गए, इस प्रकार कुल 4200 हो गए। रसीद लिखते समय अम्र ने बक्र से कहा, 'मैं बहुत गरीब हूँ; मैंने ब्याज के ये 100 रुपये काट दिए हैं, लेकिन कमी के ये 200 रुपये केवल इसलिए हैं क्योंकि उन्होंने (ज़ैद ने) भुगतान नहीं किया, और मेरी... इसके बिना अपमान है। मैंने मजबूरी में यह कटौती स्वीकार की है क्योंकि हुज़ूर (बक्र) इसके बिना नहीं देते। यदि ज़ैद तीन महीने में भुगतान नहीं करता और चौथे महीने में करता है, तो हुज़ूर को प्राप्त होने वाला दस्तावेज़ ब्याज उन 200 रुपये की कमी के मुआवजे के रूप में मेरा अधिकार होगा, और वह मुझे मिलना चाहिए। 200 से अधिक जो भी हो, वह हुज़ूर लें क्योंकि मैं उनके बदले में दे रहा हूँ; हुज़ूर वह मुझे दें। यदि पैसा तीन महीने में लौटा दिया जाता है, तो समझौते के अनुसार यह ब्याज मुक्त है। यदि मेरे भाग्य से वे चार महीने में भुगतान करते हैं, तो ब्याज की राशि ज़रूर लें और मुझे दें; ब्याज मेरा अधिकार है और मेरे लिए जायज़ है।' ज़ैद ने समझौते के अनुसार पैसा नहीं दिया बल्कि पाँच महीने बाद दिया। बक्र ने दस्तावेज़ पर ब्याज नहीं लिया, जो 200 से 250 रुपये होता; उसने ज़ैद को छोड़ दिया लेकिन 500 रुपये का दंड नोट वसूल कर लिया, जिसका अर्थ है कि उसने 4200 के बदले 4700 वसूले। वसूली के बाद, अम्र बक्र से माँग कर रहा है, 'इन पाँच सौ में से मुझे दो सौ दे दीजिए

क्योंकि यदि हुज़ूर ने इसे नहीं छोड़ा होता, तो मुझे वे प्राप्त होते। आपने छोटी राशि नहीं ली बल्कि बड़ी ली; इसलिए, मुझे दो सौ दे दीजिए।' बक्र ने कहा, 'मुझे याद नहीं कि ऐसा कोई समझौता हुआ था।' तब खालिद ने उसे याद दिलाया कि ऐसा हुआ था। अब बक्र ने अम्र से कहा, 'यदि शरीयत-ए-मुतहरा के अनुसार, ईश्वर और उसके रसूल के आदेश से, आपकी वह दो सौ की राशि, और यहाँ तक कि ब्याज के वे सौ रुपये जो मैंने आपसे लिए हैं, मेरे लिए जायज़ हैं, तो मैं नहीं दूँगा। लेकिन अगर वे मेरे लिए हराम (निषिद्ध) हैं, तो मैं तीन सौ देने के लिए तैयार हूँ।'

पृष्ठ 715 का 354

آپ دوسو مجھے کم دے دیں میری عزت جاتی رہے گی بغیر روپیہ کے ملنے کے، میں ۲۶ سو لے کر ۲۸ سو کی رسید لکھنے کو تیار ہوں، یہ آپ کو فائدہ ہو جائیگا، بکر نے کہا تم کہیں اور اسے لے لو میں ضمانت کردوں گا۔ عمرو نے ایک کافر سے کہا کہ تین ماہ کے واسطے ۲۶ سو روپے دے دے وہ سو روپیہ سود کے طلب کرتا تھا، عمرو نے بکر سے کہا کہ یہ سو بھی آپ لے لیں آپ ہی دے دیں ۲۵ سو روپے اور رسید ۲۸ سو کی لیں میری ضرورت بہت شدید ہے اور خوشامد درآمد کی، خالد نے کہا سنا بکر راضی ہو گیا مگر یہ کہا کہ زید ایک خط لکھ دے کہ یہ روپیہ تین ماہ میں واپس کروں گا اگر نہ دوں تو مع سود کے چار ماہ میں دوں گا، اور ایک رقعہ پانچ سو کا لکھ دیں کہ اگر چار ماہ میں بھی نہ ادا ہو تو پانچویں ماہ مجھ کو اس رقعہ کا مطالبہ وصول کرنے کا حق حاصل ہوگا اور سود دستاویز کا بھی۔ چنانچہ زید نے رقعہ تاوانی با ضابطہ لکھ دیا بکر کو، اور خط معاہدہ کا بھی، اور رسیدات واپس دے دیں، بکر نے عمرو کو ۲۵ سو دیا ۲۸ سو کی رسید لی، دوسو کمی کے کاٹے اور سود سو روپے، جملہ تین سو اور چودہ سو نقد زید کو دے دئیے یا کسی سے دلا دیئے، اس نے پورے چودہ سو نقد دئیے بلا کسی کاٹ چھانٹ کے ۲۸ سو کی رسید ۱۴ سو نقد، یوں ۴۲ سو ہو گئے۔ عمرو نے رسید لکھتے وقت یہ کہا بکر سے کہ میں بہت غریب ہوں یہ سو روپے تو سود کے میں نے کاٹ دیئے مگر یہ دوسو روپے کمی والے محض ان کی وجہ سے کہ انہوں نے (زید نے) نہ دیئے اور میری۔ بغیر اس کے ذلت ہے بمبوری کمی کرکے لئے ہیں کہ حضور بغیر اس کے نہ دیتے اگر زید تین ماہ میں نہ دیں اور چوتھے ماہ میں دیں تو حضور یہ سود دستاویز جو حضور کو وصول ہوگا یہ معاوضہ ان کمی والے دوسو روپے کے میرا حق ہوگا وہ مجھ کو ملے ، جو دو سو سے زائد ہوگا وہ حضور لیں کیونکہ میں تو انہیں کے بالعوض

دے رہا ہوں وہ حضور مجھ کو دیں، تین ماہ میں واپس ہو روپیہ تو حسب معاہدہ بلا سود ہے میری تقدیر سے وہ چار ماہ میں دیں تو سود کی رقم ضرور لے کر مجھے دیں سود کہ میرا حق ہے مجھ کو جائز ہے زید نے وہ روپیہ حسب معاہدہ ادا نہ کیا بلکہ پانچ ماہ بعد ادا کیا بکر نے سود تو دستاویز کا نہ لیا جو دوسو ڈھائی روپیہ ہوتا تھا زید کو چھوڑ دیا مگر رقعہ تاوانی پانچ سو کا وصول کر لیا یعنی ۴۲ سو کے ۴۷ سو وصول کر لئے بعد وصول کے عمرو طالب ہے بکر سے کہ مجھے ان پانچ سو میں سے دوسو دیجئے کیونکہ حضور نہ چھوڑتے تو وہ مجھے ملتے آپ نے چھوٹی رقم نہ لی بڑی لی لہذا مجھ کو دو سو دیجئے گا، بکر نے کہا کہ مجھ کو یاد نہیں یہ معاہدہ ہوا تھا، تب خالد نے یاد دلایا کہ ہوا تھا اب بکر نے عمرو سے کہا کہ اگر شرع شریف حکم خدا اور رسول سے مجھ کو وہ رقم دو سو کی تمہاری اور بلکہ سو روپے سود کے جو میں نے تم سے لئے ہیں جائز ہیں تو میں نہ دوں گا اور اگر مجھ کو وہ حرام ہیں تو میں تین سو دینے کو تیار

Fatawa Razawiya Volume 17

...I am Bakr, I never take interest and give thousands of rupees to my relatives and friends as interest-free loans. For this reason, Bakr asks which of the aforementioned amounts are permissible for me and which are entirely impermissible? For which amount will there be accountability before Allah and for which not? Which amount will be interest and which not, or will it all be interest? Will I be a sinner before Allah? According to the command of Sharia, is Amr entitled to receive back three hundred, two hundred, or one hundred, or is he not entitled to receive any amount back, or not entitled to receive it all back?

The Answer: O servants of Allah! Fear Allah. Allah Almighty says:

["O you who have believed, do not consume one another's wealth unjustly but only [in lawful] business by mutual consent. And do not kill yourselves [or one another]. Indeed, Allah is to you ever Merciful." (1)] | [O believers! Do not consume each other's wealth without a Sharia reason. Yes, there is no prohibition in gaining profit through mutual consent in trade, and do not throw yourselves into destruction. Indeed, Allah is Merciful to you. (T)]

The five hundred that Bakr took from Zaid is haram and absolute interest. And these three hundred—which were given as 250 interest to Amr and for which Amr wrote a receipt for 2800—are also interest and absolutely haram. It is mentioned in the Hadith that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

[Every loan that draws a profit is usury. (2)] | [Any loan that brings profit is interest. (T)]

Whatever extra is taken on a loan is interest. It is obligatory on Bakr to return Zaid's five hundred and take only twenty-five hundred from Amr. Even one paisa more is haram. And if he has taken it, he must return it as well. Amr's demand for two hundred out of those five hundred is also haram because it is haram wealth. His saying, "Give me the interest amount, it is my right, it is permissible for me," is a very severe and extreme statement. It is necessary for Amr to repent, renew his Islam (faith), and renew his marriage. And Allah Almighty knows best.

Problem 190: From the town of Chittorgarh, Mewar, sent by Dr. Sheikh Fazeelat Hussain Sahib, 17 Jamadi al-Akhira 1346 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid is sixty years old. Throughout his life, in times of poverty

when he needed cash, he continued to manage by taking loans on interest. Although giving interest is also prohibited in Sharia, but...

---

1. The Holy Quran 4/29
2. Kanz al-Ummal, Hadith 15512, Muassasat al-Risalah, Beirut, 6/238.

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

...मैं बक्र हूँ, मैं कभी ब्याज नहीं खाता हूँ और हज़ारों रुपये अपने रिश्तेदारों और दोस्तों को बिना ब्याज के ऋण देता हूँ। इस कारण बक्र पूछता है कि उपर्युक्त स्थितियों में मेरे लिए कौन सी राशि जायज़ है या सभी नाजायज़ हैं? अल्लाह के पास किस राशि के लिए जवाबदेही होगी और किसके लिए नहीं? और कौन सी राशि ब्याज होगी और कौन सी नहीं, या सब ब्याज होगा? क्या मैं अल्लाह के पास गुनहगार होऊँगा? शरीयत के हुक्म के अनुसार, क्या अम्र तीन सौ, दो सौ या एक सौ राशि वापस पाने का हकदार है, या वह किसी राशि को वापस पाने का हकदार नहीं है, या पूरी राशि वापस पाने का हकदार नहीं है?

उत्तर: ऐ अल्लाह के बंदो! अल्लाह से डरो, अल्लाह अज़्ज़ा-व-जल्ल फरमाता है:

["ऐ ईमान वालों! आपस में एक-दूसरे का माल अन्यायपूर्वक मत खाओ, सिवाय इसके कि तुम्हारी आपसी सहमति से व्यापार हो। और अपने आप को मत मारो। बेशक अल्लाह तुम पर बहुत मेहरबान है।" (1)] | [ऐ ईमान वालों! आपस में एक दूसरे का माल बिना किसी शरई कारण के न खाओ, हाँ व्यापार में आपसी रज़ामंदी से लाभ उठाने की मनाही नहीं है और अपनी जानों को हलाकत (विनाश) में न डालो, बेशक अल्लाह तुम पर मेहरबान है। (त)]

बक्र ने ज़ैद से जो पाँच सौ लिए वे हराम और निश्चित ब्याज हैं। और ये जो अम्र को 250 ब्याज दिए और अम्र ने 28 सौ की रसीद लिख दी, ये तीन सौ भी ब्याज और कतई (निश्चित रूप से) हराम हैं। हदीस में है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

[प्रत्येक ऋण जो लाभ पहुँचाता है, वह ब्याज (सूद) है। (2)] | [जो ऋण लाभ खींचे, वह ब्याज है। (त)]

ऋण पर जो कुछ अधिक लिया जाए वह ब्याज है। बक्र पर फ़र्ज़ है कि वह ज़ैद के पाँच सौ वापस करे और अम्र से केवल पच्चीस सौ ले, एक पैसा अधिक भी हराम है। और यदि ले लिया है तो उसे भी वापस दे। अम्र का उन पाँच सौ में से दो सौ माँगना भी हराम है क्योंकि वह हराम माल है। उसका यह कहना कि "ब्याज की राशि उसे दो, यह मेरा हक है, मेरे लिए जायज़ है," एक अत्यंत कठोर और अनुचित कथन है। अम्र पर अनिवार्य है कि वह तौबा करे, ईमान का नवीनीकरण (तजदीद-ए-इस्लाम) करे और निकाह का नवीनीकरण (तजदीद-ए-निकाह) करे। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 190: चित्तौड़गढ़ मेवाड़ कस्बे से, प्रेषक डॉक्टर शेख़ फ़ज़ीलत हुसैन साहब, 17 जमादी-उल-आखिरा 1346 हिजरी। इस मसले में दीन के उलेमा क्या फरमाते हैं कि ज़ैद की उम्र साठ साल है। जीवन भर मुफ़लिसी (गरीबी) के समय जब नकद रुपयों की ज़रूरत पड़ती, तो वह ब्याज पर ऋण लेकर काम चलाता रहा, हालाँकि ब्याज देना भी शरई तौर पर मना है, लेकिन...

---

1. अल-कुरान अल-करीम 4/29
2. कंज़-उल-उम्माल, हदीस 15512, मुअस्सा-तुल-रिसाला बेरूत 6/238.

ہوں، بکر کبھی سود نہیں کھاتا ہے اور ہزاروں روپے اپنے عزیزوں کو، دوستوں کو قرض بلا سود دیتا ہے۔ اس سبب سے بکر دریافت کرتا ہے مرقومہ بالا صورتوں میں کون سی رقم مجھ کو جائز ہے یا کل ناجائز ہے؟ عند اللہ مواخذہ کس رقم کا ہوگا اور کس کا نہ ہوگا؟ اور کونسی رقم سود ہوگی اور کونسی سود نہ ہوگی یا کل سود ہوگی؟ اور عند اللہ میں گنہگار ہوں گا؟ عمرو شریعت کے حکم کے موافق تین سو یا دو سو یا ایک سو کس رقم کے واپس لینے کا مستحق ہے یا کسی رقم کے واپس پانے کا مستحق نہیں ہے یا کل واپس پانے کا مستحق نہیں ہے؟

الجواب: اللہ کے بندو ! اللہ سے ڈرو، اللہ عزوجل فرماتا ہے:

"يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تَأْكُلُوا أَمْوَالَكُم بَيْنَكُم بِالْبَاطِلِ إِلَّا أَن تَكُونَ تِجَارَةً عَن تَرَاضٍ مِّنكُمْ وَلَا تَقْتُلُوا أَنفُسَكُمْ إِنَّ اللَّهَ كَانَ بِكُمْ رَحِيمًا" 1- | اے ایمان والو! آپس میں ایک دوسرے کا مال بلاوجہ شرعی نہ کھاؤ ہاں تجارت میں آپس کی رضا سے نفع اٹھانے کی ممانعت نہیں اور اپنی جانیں ہلاکت میں نہ ڈالو بیشک اللہ تم پر مہربان ہے (ت)

بکر نے جو وہ پانچ سو زید سے لئے حرام اور قطعی سود ہیں اور یہ جو عمرو کو ۲۵۰ سود دیئے اور عمرو نے ۲۸ سو کی رسید لکھ دی یہ تین سو بھی سود اور حرام قطعی ہیں، حدیث میں ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

کل قرض جر منفعة فهو ربا 2- | جو قرض نفع کھینچے وہ سود ہے۔ (ت)

قرض پر جو کچھ زیادہ لیا جائے سود ہے، بکر پر فرض ہے کہ زید کے پانچ سو واپس کرے اور عمرو سے صرف پچیس سو لے ایک پیسہ زیادہ حرام ہے اور اگر لیا ہے تو اسے بھی واپس دے،

عمرو کا ان پانچ سو میں سے دو سو مانگنا بھی حرام ہے کہ وہ مال حرام ہے اس کا کہنا کہ سود کی رقم اسے دو میرا حق ہے مجھے جائز ہے، بہت سخت اشد کلمہ ہے، عمرو پر لازم ہے کہ توبہ تجدید اسلام و تجدید نکاح کرے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۱۹۰: از قصبہ چتوڑ گڑھ میواڑ مرسلہ ڈاکٹر شیخ فضیلت حسین صاحب ۱۷ جمادی الآخرہ ۱۳۴۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید کی عمر ساٹھ سال کی ہے مدۃ العمر میں بوقت افلاس جب نقد روپیہ کی ضرورت پڑتی تو سود پر قرض لے کر کام چلاتا رہا اگر چہ سود کا دینا بھی شرعاً ممنوع ہے مگر

---

1 القرآن الکریم ۲۹/۴ 2 کنز العمال حدیث ۱۵۵۱۲ مؤسسة الرسالة بیروت ۲۳۸/۶

Fatawa Razawiyya Volume 17

Question: There was no other way to get a loan. Now Zaid has one thousand rupees in cash, on which annual Zakat is obligatory. If he does not find a way to grow it through trade etc., then in a few years, by paying 25 rupees annually, the principal amount itself will finish. Due to old age, he cannot trade himself. The condition of the times is such that neither servants are reliable nor partners are trustworthy; rather, whoever joins is a deceiver or cunning. So Zaid wants to give money by taking gold and silver jewelry from disbelievers and polytheists as a pledge (collateral) and fixing a monthly or annual profit. What is the religious objection to this? Some scholars have declared India as Dar-ul-Harb (House of War), as Maulana Shah Abdul Aziz Sahab states in his fatwas, or some scholars do not declare it Dar-ul-Harb but consider the disbelievers here as 'Harbi' (hostile) and their wealth as unprotected. In both cases, if such dealings are done with disbelievers or if one gives money by having a 'hundi' (bill of exchange) written to gain profit, for example, (note 99) giving 99 or 99.5 rupees and getting a hundi of 100 rupees written by them, and taking 100 rupees on the set period and returning their written hundi. Paying Zakat is also a very necessary obligation. What is the definition of 'Riba' (usury/interest) that Allah Almighty has prohibited in the Holy Quran? At the time of the revelation of the noble verse, what kind of interest was called Riba in Arabia? Similarly, the disbelievers and polytheist traders here buy grain etc. when it is cheap and keep it stored, waiting for prices to rise, and in case of necessity, Muslims also have to buy from them. So if Zaid also does the same, what is the Sharia ruling for it?

The Answer: It is natural that grain is cheap at harvest and expensive when sold; taking advantage of this is not prohibited. Storing grain is only prohibited if it causes hardship to the city. India is undoubtedly Dar-ul-Islam (House of Islam); it is not correct to call it Dar-ul-Harb. It is not forbidden to obtain any benefit from a disbeliever who is neither obedient to Islam nor a protected non-Muslim (Mustamin) in an Islamic state, without treachery or breach of contract. However, the method of pledges and hundis is a form of interest and is called interest. One should avoid even the bad name as much as possible. Better than this is the sale of (currency) notes. It is permissible to sell a ten-rupee note for twelve or fifteen or whatever amount is mutually agreed upon. But if one gives a ten-rupee note as a loan and fixes money above ten, this is interest. And if one sells a ten-rupee note for a hundred, it is permissible. And if someone asks for the difference, the Great Quran has answered it: "Allah has permitted trade and has forbidden interest" (Al-Quran 2/275). Interest.

[1] Al-Quran Al-Kareem 2/275 Page 356 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

सवाल: कर्ज़ मिलने की इसके अलावा कोई दूसरी सूरत नहीं थी। अब इस वक़्त ज़ैद के पास एक हज़ार रुपये नकद हैं जिस पर सालाना ज़कात फ़र्ज़ होती है। अगर तिजारत वग़ैरह करके तरक़्क़ी की सूरत पैदा न करे तो कुछ ही सालों में 25 रुपये सालाना अदा करते-करते असल रक़म ही ख़त्म हो जाएगी। बुढ़ापे की वजह से वह ख़ुद तिजारत वग़ैरह नहीं कर सकता। ज़माने की हालत यह है कि न नौकर क़ाबिल-ए-एतबार है और न शरीक अमानतदार, बल्कि जो मिलता है वह दग़ाबाज़ या मक्कार है। तो ज़ैद चाहता है कि काफ़िरों और मुशरिकों के सोने और चाँदी के ज़ेवरात बतौर रहन (गिरवी) रखकर रुपये दे दे और माहवारी या सालाना मुनाफ़ा तय कर ले, तो शरीअत की रूह से इसमें क्या बुराई है? कुछ उलेमा ने हिन्दुस्तान को 'दारुल हरब' क़रार दिया है जैसा कि मौलाना शाह अब्दुल अज़ीज़ साहब अपने फ़तावा में इरशाद फ़रमाते हैं, या कुछ उलेमा 'दारुल हरब' तो क़रार नहीं देते लेकिन यहाँ के काफ़िरों को 'हरबी' समझकर उनके माल को ग़ैर-महफ़ूज़ क़रार देते हैं। दोनों सूरतों में अगर काफ़िरों से ऐसे मामलात किए जाएँ या हुंडी लिखवाकर रुपये देकर फ़ायदा उठाया जाए, मिसाल के तौर पर (नोट 99) 99 या साढ़े 99 रुपये देकर 100 रुपये की हुंडी लिखवा ली जाए और तयशुदा मुद्दत पर 100 रुपये लेकर उनकी लिखी हुई हुंडी वापस कर दी जाए, तो क्या हुक्म है? क्योंकि ज़कात अदा करना भी निहायत ज़रूरी फ़र्ज़ है। क़ुरआन शरीफ़ में अल्लाह तआला ने जो 'रिबा' (सूद) हराम फ़रमाया है, उसमें 'रिबा' की क्या तारीफ़ (परिभाषा) है? आयत के नुज़ूल के वक़्त अरब में किस तरह के सूद को 'रिबा' कहा जाता था? इसी तरह यहाँ के काफ़िर और मुशरिक सौदागर ग़ल्ला (अनाज) वग़ैरह सस्ता होने पर ख़रीद कर जमा कर लेते हैं और मँहगाई का इंतज़ार करते हैं, और मजबूरी की हालत में मुसलमानों को भी उन्हीं से ख़रीदना पड़ता है। अगर ज़ैद भी ऐसा ही करे तो शरीअत में इसका क्या हुक्म है?

अल-जवाब: यह क़ुदरती बात है कि फ़सल के वक़्त अनाज सस्ता होता है और बिक्री के वक़्त मँहगा, इससे फ़ायदा उठाना मना नहीं है। अनाज को दबा कर रखना तब मना है जब उससे शहर में तंगी पैदा हो जाए। हिन्दुस्तान निस्संदेह 'दारुल इस्लाम' है, इसे 'दारुल हरब' कहना सही नहीं है। जो काफ़िर न तो इस्लाम का ताबे (आज्ञाकारी) हो और न ही इस्लामी सल्तनत में अमान प्राप्त हो, उससे बिना किसी धोखेबाज़ी या वादा-खिलाफ़ी के कोई फ़ायदा हासिल करना मना नहीं है। लेकिन गिरवी और हुंडी का तरीक़ा सूद की एक सूरत है और इसे सूद ही कहा जाता है। जहाँ तक हो सके इस बुरे नाम से बचना चाहिए। इससे बेहतर नोटों की ख़रीद-ओ-फ़रोख़्त है। दस रुपये का नोट बारह या

पंद्रह या जितने पर आपसी रज़ामंदी हो, बेचना जाइज़ है। लेकिन अगर दस रुपये का नोट कर्ज़ के तौर पर दे और दस से ऊपर रक़म तय करे, तो यह सूद है। और अगर दस का नोट सौ में बेचे तो यह जाइज़ है। और अगर कोई फ़र्क़ पूछे तो इसका जवाब क़ुरआन-ए-अज़ीम ने दिया है: "और अल्लाह ने हलाल की ख़रीद-ओ-फ़रोख़्त और हराम किया सूद को।" (क़ुरआन करीम 2/275) सूद।

[1] अल-क़ुरआन अल-करीम 2/275 पेज 356 ऑफ़ 715

قرض ملنے کی بجز اس کے دوسری صورت نہ تھی اب اس وقت زید کے پاس ایک ہزار روپیہ نقد ہے جس کی زکوٰۃ کے (ص عہ) سالانہ فرض ہوتے ہیں اگر تجارت وغیرہ کر کے صورت ترقی پیدا نہ کرے تو چند ہی سال میں ۲۵ روپیہ سالانہ ادا کرتے کرتے اصل رقم ہی ختم ہوتی ہے، ببعث ضعیفی بذات خود تجارت وغیرہ کر نہیں سکتا زمانہ کی وہ حالت کہ نہ نوکر قابل اعتبار، نہ شریک امانت دار، بلکہ جو ملا دغا باز یا مکار، تو زید چاہتا ہے کہ کافروں مشرکوں کے زیورات طلائی و نقرئی بطور رہن رکھ کر روپیہ دے کر ماہانہ یا سالانہ بطور منافع ٹھہرالے تو شرعاً کیا قباحت ہے، بعض علماء نے ہندوستان کو دارالحرب قرار دیا ہے جیسا کہ مولانا شاہ عبدالعزیز صاحب اپنے فتاویٰ میں ارشاد فرماتے ہیں یا بعض علماء دارالحرب تو قرار نہیں دیتے مگر یہاں کے کافروں کو حربی سمجھ کر ان کے مال غیر محفوظ فرماتے ہیں، بہر دو صورت اگر کافروں سے ایسے معاملات کئے جائیں یا ہنڈوی لکھوا کر روپیہ دے کر فائدہ اٹھائے مثلاً (لع لعہ ۹۹) یا ساڑھے ننانوے روپیہ دے کر سو روپیہ کی ہنڈوی اس سے لکھوالے میعاد مقرر شدہ پر سو روپیہ لے کر اس کی تحریر کردہ ہنڈوی اسے واپس کردے کہ زکوٰۃ کا ادا کرنا بھی نہایت ہی ضروری فرض ہے، قرآن شریف میں جو اللہ عزوجل جلالہ نے ربا حرام فرمایا ہے اس میں ربا کی کیا تعریف ہے، زمانہ نزول آیہ شریفہ میں عربستان میں ربا کس قسم کے سود کو کہتے تھے، اسی طرح یہاں کے کافر و مشرک سوداگر غلہ وغیرہ ارزانی میں خرید کر بند رکھتے ہیں اور گرانی کے منتظر رہتے ہیں اور بحالت مجبوری مسلمانوں کو بھی انہیں سے خریدنا پڑتا ہے، تو اگر زید بھی ایسا ہی کیا کرے تو شرعاً اس کا کیا حکم ہے؟ الجواب: قدرتی طور پر ہے کہ غلہ فصل پر ارزاں اور بیچ پر گراں ہوتا ہے اس سے فائدہ اٹھانا منع نہیں، غلہ بند رکھنا وہ منع ہے جس سے

شہر پر تنگی ہو جائے۔ ہندوستان بلا شبہ دارالاسلام ہے اسے دارالحرب کہنا صحیح نہیں، جو کافر مطیع اسلام نہ ہو نہ سلطنت اسلام میں مستامن ہو بلا غدر و بد عہدی اس سے کوئی نفع حاصل کرنا ممنوع نہیں مگر گروی اور ہنڈوی کا طریقہ صورت سود ہے اور اسے سود ہی کہتے ہیں اور حتی الوسع برے نام سے بھی بچنا چاہئے اس سے بہتر نوٹ کی بیع ہے دس کا نوٹ بارہ یا پندرہ یا جتنے پر باہم رضامندی ہو بیچنا جائز ہے تو دس کا نوٹ قرض دے اور پیسہ اوپر دس ٹھہرائے یہ سود ہے اور دس کا نوٹ سو کو بیچے یہ جائز ہے، اور اگر کوئی فرق پوچھے تو اس کا جواب قرآن عظیم نے دیا ہے: "وَاَحَلَّ اللّٰهُ الْبَيْعَ وَحَرَّمَ الرِّبٰوا" اللہ نے حلال کی بیع اور حرام کیا سود۔ سود

[1] القرآن الکریم ۲/ ۲۷۵ Page 356 of 715

Fatawa Razawiyya Volume (17)

This was the practice prevalent in Arabia which was declared forbidden: "Usury (Riba) is an excess devoid of consideration (compensation) that becomes due through a contract."[1] (T) That is, a condition is stipulated in a contract for an increase for which there is no legal (Shari'i) consideration in return; this increase appears in homogenous commodities in the state of credit (deferred delivery), even when they are equal in quantity, the details of which are in Fiqh (jurisprudence). For a more detailed explanation, refer to our book "Kifl al-Faqih al-Fahim". And Allah Almighty knows best.

Problem 191: Questioner Abdullah Ahmad, merchant, Amravati, Berar. Saturday, 22 Sha'ban 1334 AH. Allah (Glorified and Exalted is He) has sternly warned against usury in His Holy Book, the Quran. Indeed, the commands and prohibitions of the Quran al-Hakim are beneficial for mankind in both worlds; our heads are bowed in submission to its every command. However, for further reassurance, the need for a fatwa arose. Giving and taking interest are both definitively forbidden. In my humble opinion, hardly one in a thousand people would escape being involved in one of the two aforementioned calamities. Business trades can hardly be conducted without interest. It is a point worth considering that nowadays the interest rate is so low that the payer gives it happily and it does not weigh on him at all because he has to pay eight annas per hundred, and by trading with those rupees, he earns ten per hundred. Therefore, both the receiver and the giver benefit. So, the submission is: what is the reason for the revelation of this verse? What secret is hidden in the permissibility and impermissibility of Riba? And what is the reason for such strict prohibition? Please satisfy this humble person with a detailed written reply. Nowadays, trading without interest is, if not impossible, certainly very difficult. Especially foreign trade depends entirely on interest; for example, if the rate for a foreign bill of exchange in Bombay is fifteen rupees today, it might be fourteen and three-quarters tomorrow and fifteen and a half the day after. So, in such a situation, how can one avoid interest when transactions of millions are taking place? Since most of today's trade is in the hands of non-Muslim nations, buying and selling with them cannot proceed without taking and giving [interest]. So, the meaning of this verse is that Muslims [should operate] on a high scale...

[1] Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Riba, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/176; Al-Hidayah, Bab al-Riba, Matba' Yusufi, Lucknow, 3/80; Multaqa al-Abhur, Bab al-Riba, Muassasat al-Risala, Beirut, 2/37.

फ़तावा रज़विया जिल्द (17)

यही तरीका अरब में प्रचलित था जिसे हराम (वर्जित) घोषित किया गया: "रिबा (ब्याज) उस वृद्धि को कहते हैं जो बिना किसी प्रतिफल के हो और अनुबंध के माध्यम से देय हो।"[1] (त) अर्थात् अनुबंध में ऐसी वृद्धि की शर्त रखी जाए जिसके बदले में शरीयत के अनुसार कोई प्रतिफल न हो; यह वृद्धि एक ही प्रकार की वस्तुओं में उधार की स्थिति में प्रकट होती है, भले ही वे मात्रा में समान हों, जिसका विवरण फ़िक़्ह (इस्लामी न्यायशास्त्र) में है। अधिक विस्तृत विवरण के लिए हमारी पुस्तक "किफ़्ल अल-फ़क़ीह अल-फ़ाहीम" देखें। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसला 191: प्रेषक अब्दुल्ला अहमद, व्यापारी, अमरावती, बरार। शनिवार, 22 शाबान 1334 हिजरी। अल्लाह जल-शानहु ने अपनी पाक किताब कुरान मजीद में सूदख़ोरी (ब्याजखोरी) के खिलाफ सख्त चेतावनी दी है। बेशक कुरान हकीम के आदेश और निषेध इंसान के लिए दोनों जहानों में फायदेमंद हैं; इसके हर फरमान के आगे हमारा सिर झुका हुआ है। फिर भी, अधिक संतुष्टि के लिए फतवा पूछने की आवश्यकता पड़ी। सूद देना और सूद लेना दोनों ही पूर्णतः हराम हैं। मेरे तुच्छ विचार में, हजार में से शायद ही कोई एक व्यक्ति ऐसा होगा जो पूर्वोक्त दो बलाओं में से किसी एक में न फँसा हो। व्यापार के काम शायद ही बिना सूद के संपन्न हों। यह एक विचारणीय बात है कि वर्तमान समय में ब्याज की दर इतनी कम है कि देने वाला खुशी-खुशी देता है और उस पर कोई बोझ नहीं पड़ता, क्योंकि उसे प्रति सौ आठ आने देने पड़ते हैं और उन रुपयों से व्यापार करके वह प्रति सौ दस कमाता है। इसलिए लेने वाला और देने वाला दोनों फायदा उठाते हैं। तो निवेदन यह है कि इस आयत के अवतरण का कारण (शान-ए-नुज़ूल) क्या है? रिबा (ब्याज) के जायज़ और नाजायज़ होने में क्या रहस्य छिपा है? और इतनी सख्ती के साथ मनाही का क्या कारण है? विस्तृत उत्तर लिखकर इस तुच्छ व्यक्ति को संतुष्ट करें। आजकल बिना सूद के व्यापार करना मुश्किल ही नहीं बल्कि नामुमकिन सा है, विशेष रूप से विदेशी व्यापार पूरी तरह सूद पर टिका है; उदाहरण के लिए, बॉम्बे में विदेशी हुंडी का भाव आज पंद्रह रुपये है, तो कल पौने पंद्रह और परसों साढ़े पंद्रह। तो ऐसी स्थिति में सूद से कैसे बचा जा सकता है जबकि लाखों का लेन-देन होता है? चूँकि आजकल व्यापार ज्यादातर गैर-मुस्लिम कौमों के हाथ में है, तो उनके साथ आपसी खरीद-बिक्री बिना लेनदेन के नहीं चल सकती। तो इस आयत का यह आशय है कि मुसलमान ऊंचे स्तर पर...

[1] रद्द अल-मुह्तार, किताब अल-बुयूँ, बाब अर-रिबा, दार इह्या अल-तुरास अल-अरबी, बेरूत, 4/176; अल-हिदाया, बाब अर-रिबा, मतबा यूसुफी, लखनऊ, 3/80; मुल्तका अल-अबहुर, बाब अर-रिबा, मुअस्ससत अल-रिसाला, बेरूत, 2/37।

1 کاہی طریقہ عرب میں جاری تھا جسے حرام فرمایا گیا: الربافضل خال عن العوض مستحق بالعقد- ربا اس زیادتی کو کہتے ہیں جو عوض سے خالی ہو اور اس کا استحقاق عقد سے ہوا ہو۔ (ت) یعنی عقد میں کسی ایسی زیادت کے لئے جانے کی شرط کی جائے جس کے مقابلہ میں شرعاً کوئی عوض نہ ہو، یہ زیادت جنس متحد میں ظاہر ہوتی ہے بحالت نسیئہ اتحاد و قدر میں بھی جس کی تفصیل فقہ میں ہے اور جو زیادہ مفصل بیان چاہئے ہماری کتاب کفل الفقیہ الفاہم دیکھئے ۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۹۱: مسئولہ عبداللہ احمد سوداگر امراوٹی برار شنبہ ۲۲ شعبان ۱۳۳۴ھ اللہ جل شانہ نے اپنے کلام پاک قرآن مجید میں سود خوری کی سختی سے وعید فرمائی ہے اور بیشک قرآن حکیم کے اوامر و نواہی انسان کے لئے دارین میں سود مند ہیں اس کے ہر فرمان پر ہمار اسر تسلیم خم ہے مگر مزید اطمینان کے لئے استفتا کرنے کی ضرورت پڑی کہ سود دینا اور سود لینا دونوں قطعی حرام ہیں، میرے ناقص خیال میں ہزار میں سے ایک شخص بھی ایسا مشکل سے نکلے گا جو مقدم الذکر دو بلاؤں میں سے کسی ایک میں مبتلا نہ ہوا، تجارت کے کاروبار شاید ہی بغیر سود کے انجام پائیں، یہ ایک قابل غور بات ہے کہ فی زمانہ شرح سود اس قدر کم ہے کہ دینے والا خوشی سے ادا کرتا ہے اس پر کسی طرح کا بار نہیں پڑتا ہے کیونکہ اس کو فی صدی آٹھ آنے دینا پڑتا ہے تو ان روپوں سے تجارت کر کے سیکڑے دس پیدا کرتا ہے اسلئے لینے والا اور دینے والا دونوں فائدہ اٹھاتے ہیں، تو معروض یہ ہے کہ اس آیت کا شان نزول کیا ہے، ربا کے جواز و عدم جواز میں کیا راز مضمر ہے، اور اتنی سختی کے ساتھ ممانعت کی کیا باعث ہے، مفصل تحریر فرما کر کمترین کو مطمئن فرمائیں، بغیر سود کے آجکل بیوپار کرنا مشکل نہیں تو محال ضرور

ہے، خاص کر کے ولایت کی تجارت کا دار و مدار ہی سود پر ہے مثلاً بمبئی میں ولایت کی ہنڈوی کا بھاؤ آج پندرہ روپے ہے تو کل پونے پندرہ تو پرسوں ساڑھے پندرہ، تو پھر ایسی حالت میں سود سے بچنا کیسے ہو سکتا ہے جبکہ لاکھوں کالین دین ہوتا ہے چونکہ آج کل تجارت زیادہ تر غیر قوموں کے ہاتھ میں ہے تو ان کے ساتھ باہم خرید و فروخت میں بغیر لئے دئے کے چل نہیں سکتا، تو اس آیت کا یہ مفہوم ہے کہ مسلمان اعلیٰ پیمانہ

1 ردالمحتار کتاب البیوع باب الربوداراحیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۱۷۶، الھدایۃ باب الربو مطبع یوسفی لکھنؤ ۳/ ۸۰، ملتقی الابحر باب الربو مؤسسۃ الرسالۃ بیروت ۲ / ۳۷

Fatawa Razawiyya, Volume 17.

...they should not engage in trade, but should only do a little for basic survival, just as the meat and fat of camels were made forbidden for the Children of Israel. Today, a major flaw in trade is that goods are mostly sold on credit. In such a situation, if interest is not charged to the buyer, perhaps someone supposed to pay within a month might struggle to pay even within a year. Could the interest collected from non-believers be put into an educational aid fund for poor Muslims who cannot bear the burden of educational expenses? Due to a lack of knowledge, many Muslim boys go astray, adopt low professions, and live a life of dishonor; they even become dependent on their nightly bread. For such needy Muslims, what is the harm in giving them this aid, as even forbidden (haram) food becomes permissible after three days of starvation? Such harsh words of reprimand have been written for those who take or give interest that sitting in their shade, let alone eating at their place, is a grave sin. Then, in such a situation where not even one in a thousand in the world is free from it, what will be the state? Banks have been opened even in Islamic countries and transactions occur regularly. Although the class of scholars (Ulama) and spiritual guides (Mashayikh) avoid it, when they go out for preaching and advice, they often have to eat and drink at the homes of those who take or give interest. Call it out of necessity or choice, but I have not seen any scholar or spiritual guide raise an objection in this regard. Except that among the donations collected for madrasas and religious matters, there is hardly any donation from someone who is saved from this calamity. The historian Khakan wrote an anecdote regarding the life of Imam Fakhruddin Razi (may Allah's mercy be upon him) that Shahabuddin Ghouri had borrowed a large sum from the Imam. When he repaid it, he added a very large sum as a gift. What should be said about that additional amount, and is it permissible to take it like this? That is all.

The Verbal Answer (Al-Jawab al-Malfuz): Interest is categorically forbidden (haram qat'i), and severe warnings against it are found in the Quran and authentic, continuous Hadiths. As for why it was made haram and why there is such severity regarding it, the Great Quran has provided two answers: one general and one specific. The general one is: "He (Allah) cannot be questioned as to what He does, while they will be questioned." (1) Allah is not accountable to anyone for what He does.

---

(1) Al-Quran Al-Karim 21/23 Page 358 of 715

फतावा रजविया, खंड 17 (17)

...वे व्यापार न करें, केवल जीवन निर्वाह के लिए थोड़ा-बहुत कर लें, जिस प्रकार बनी इस्राइल पर ऊंट का मांस और चर्बी आदि हराम कर दी गई थी। आज कल व्यापार में एक बड़ा दोष यह भी है कि माल अधिकतर उधार बिकता है, तो ऐसी स्थिति में यदि खरीदार पर ब्याज न लगाया जाए, तो शायद वह एक महीने में देने वाला साल भर में मुश्किल से अदा करे। काफिरों पर जो ब्याज लागू होता है, वह उनसे वसूल करके उन गरीब मुसलमानों को दिया जाए जो शैक्षिक खर्चों का बोझ नहीं उठा सकते और अज्ञानता के कारण अधिकांश मुसलमानों के लड़के आवारा हो जाते हैं और निम्न पेशा अपनाकर अपमानजनक जीवन व्यतीत करते हैं, बल्कि वे रात की रोटी के मोहताज हो जाते हैं। ऐसे जरूरतमंद मुसलमानों के शैक्षिक सहायता कोष में यदि यह दिया जाए तो क्या बुराई है, क्योंकि तीन दिन के उपवास पर हराम खाना भी हलाल हो जाता है। सूदखोर और सूद देने वाले के लिए ऐसे कठोर निंदात्मक शब्द लिखे गए हैं कि उनके यहाँ खाना तो दूर, उनकी छाया में बैठना भी एक बड़ा पाप है। फिर ऐसी स्थिति में जब दुनिया भर में हजार में से एक भी इस समय इससे मुक्त नहीं है, तो क्या हाल होगा? इस्लामी देशों में भी बैंक खुल गए हैं और नियमित लेनदेन होता है। हालांकि विद्वानों (उलमा) और संतों (मशायख) का वर्ग इससे बचता है, लेकिन जब वे उपदेश और नसीहत के लिए निकलते हैं, तो उन बेचारों को भी यात्रा में जिनके यहाँ खाने-पीने का मौका मिलता है, वे अक्सर सूद लेने या देने वाले होते हैं। फिर मजबूरी से कहें या खुशी से, लेकिन मैंने किसी विद्वान या संत को इस बारे में किसी तरह का विरोध करते नहीं देखा है। इसके अलावा कि मदरसों और धार्मिक कार्यों के लिए जो चंदा इकट्ठा किया जाता है, उनमें से शायद ही किसी का चंदा हो जो इस आपदा से बचा हुआ हो। इतिहासकार खाकान ने इमाम फखरुद्दीन राजी (रहमतुल्लाहि अलैहि) के जीवन के संदर्भ में एक किस्सा लिखा है कि इमाम साहब से शहाबुद्दीन गौरी ने एक बड़ी राशि उधार ली थी, जब उसने उसे चुकाया तो उपहार के रूप में एक बहुत बड़ी राशि जोड़कर दी थी, तो उस अतिरिक्त राशि के बारे में क्या कहना चाहिए और क्या इस तरह लेना जायज है? बस।

मौखिक उत्तर (अल-जवाब अल-मलफूज): ब्याज स्पष्ट रूप से हराम (हराम कतई) है और इसके बारे में कुरान और विश्वसनीय हदीसों में अत्यंत कठोर चेतावनियां आई हैं। और यह कि वह क्यों हराम हुआ और उस पर इतनी सख्ती क्यों है, इसके उत्तर में महान कुरान ने दो उत्तर दिए हैं, एक सामान्य और एक विशेष। सामान्य यह है: "वह (अल्लाह) जो कुछ करता है उसके लिए उससे

पूछताछ नहीं की जा सकती, जबकि उनसे पूछताछ की जाएगी।" (1) अल्लाह जो कुछ भी करे, उससे कोई पूछने वाला नहीं है।

---

(1) अल-कुरान अल-करीम 21 / 23 पृष्ठ 358 का 715

پر تجارت نہ کریں صرف قوت بسری کے لئے کچھ تھوڑا بہت کرلیا کریں جس طرح بنی اسرائیل پر اونٹ کا گوشت اور چربی وغیرہ حرام کردی گئی تھی، آج کل تجارت میں بڑا نقص یہ بھی ہے کہ مال زیادہ تر ادھار بکتا ہے، تو ایسی حالت میں اگر خریدار کے ذمہ سود نہ لگایا جائے تو شائد وہ مہینے میں دینے والا برس بھر میں مشکل سے ادا کرے، کافروں کے ذمہ جو سود عائد ہوتا وہ ان سے وصول کر کے غریب مسلمان کو جو تعلیمی اخراجات کے بار کے متحمل نہیں ہوسکتے اور بے علمی کی وجہ سے اکثر مسلمانوں کے لڑکے آوارہ ہو جاتے ہیں اور رذیل پیشہ اختیار کر کے بے عزتی کی زندگی بسر کرتے ہیں بلکہ نان شبینہ کے محتاج ہو جاتے ہیں ایسے محتاج مسلمانوں کے تعلیمی امدادی فنڈ میں دیا جائے تو کیا قباحت ہے کیونکہ تین دن کے فاقہ پر حرام بھی کھانا حلال ہو جاتا ہے۔ سود خور اور سود دینے والے کے لئے اس قدر عتاب انگیز کلمات لکھے گئے ہیں کہ اس کے یہاں کھانا تو درکنار اس کے سایہ میں بیٹھنا بھی ایک سخت گناہ ہے، پھر ایسی حالت میں جبکہ دنیا بھر میں ہزار میں سے ایک بھی اس وقت سے بری نہیں کیا حال ہو گا یہ ممالک اسلامیہ میں بھی بنک کھولے گئے ہیں اور برابر لین دین ہوتا ہے البتہ طبقہ علماء ومشائخ اس سے محترز ہے مگر جب وعظ نصیحت کے لئے نکلتے ہیں تو ان بیچاروں کو بھی سفر میں جن کے یہاں کھانے پینے کا اتفاق ہوتا ہے اکثر سود لینے یادینے والے ہوتے ہیں پھر مجبوری سے کہو یا خوشی سے مگر میں نے کسی عالم یا مشائخ کو اس بارے میں کسی طرح کا اعتراض نکالتے نہیں دیکھا ہے ماسوا اس کے کہ مدرسوں اور دینی امورات کیلئے جو چندے وصول کئے جاتے ہیں ان میں سے شاید ہی کسی ایسے کا چندہ ہو جو اس بلا سے بچا ہوا ہو، مورخ خاکان نے امام فخر الدین رازی رحمتہ اللہ تعالیٰ علیہ کے حالات کے ضمن میں ایک حکایت

لکھی ہے کہ امام صاحب سے شہاب الدین غوری نے ایک کثیر رقم قرض لی تھی جب اس کو ادا کیا تو صلہ کے طور پر بہت بڑی رقم اضافہ کر کے دی تھی تو اس زیادہ کی رقم کو کیا کہنا چاہئے اور اس طرح لینا بھی جائز ہے کیا؟ فقط

الجواب الملفوظ سود حرام قطعی ہے اور اس پر سخت شدید وعیدیں قرآن واحادیث صحیحہ متواترہ میں وارد اور یہ کہ وہ کیوں حرام ہوا اور اس قدر اس پر سختی کیوں ہے اس کے جواب قرآن عظیم نے دو جواب عطا فرمائے، ایک عام اور ایک خاص عام تو یہ کہ: " لَا يُسْئَلُ عَمَّا يَفْعَلُ وَهُمْ يُسْئَلُوْنَ " (۱) اللہ جو کچھ کرے اس سے کوئی پوچھنے والا نہیں

---

(۱) القرآن الکریم ۲۱ / ۲۳ صفحہ 358 از 715

Fatawa Razawiyya, Volume 17 (17)

"Judgment belongs to none but Allah" (1) "His is the command, and to Him you shall be returned." (2) And everyone will be questioned; command belongs only to Allah, for Him is the sovereignty, and to Him you shall be returned. It is not for a believing man or a believing woman, when Allah and His Messenger have decided a matter, that they should [thereafter] have any choice about their affair. And whoever disobeys Allah and His Messenger has certainly strayed into clear error.

"And it is not for a believing man or a believing woman, when Allah and His Messenger have decided a matter, that they should [thereafter] have any choice about their affair. And whoever disobeys Allah and His Messenger has certainly strayed into clear error." (3)

Specifically, the disbelievers objected: "Trade is just like usury (interest)." (4) (Verily, sale is like interest. - T). What is the difference between making buying and selling permissible (halal) and interest forbidden (haram)? Profit is taken in sales too. In response to this, it was ordained: "But Allah has permitted trade and has forbidden interest." (5) Allah has made trade lawful and interest unlawful.

Who are you? You are servants; bow your heads in servitude. Orders are given to everyone, but everyone is not meant to be told the wisdom behind them. Today, in all the countries of the world, does anyone dare to criticize any section of the national law, saying it is out of place, why is it so, it should not be like this, it should have been like that? When there is no room for 'whys' and 'wherefores' before false, mortal, and metaphorical kingdoms, then why and for what reason is there hesitation before the King of Kings, the True, Pre-eternal, and Eternal King? What severe ignorance it is. Seek refuge in Allah Almighty. Taking interest is absolutely, generally, and strictly a major sin (Kabirah). Giving interest is permissible if there is a Shariah-compliant necessity and compulsion. It is mentioned in Durr al-Mukhtar: "It is permissible for the needy to borrow on interest." (6) The needy person can take a loan on interest. (T)

Yes, without necessity, such as for a son's or daughter's wedding, or to expand a business, or to build a solid (pukka) house, taking interest-based money is forbidden (haram). One should not eat at the home of a usurer, but it is not forbidden or illegitimate unless it is known that the specific thing presented to us for eating is

exactly the interest itself, for example, bread made from the wheat that he received as interest or...

1. Al-Quran al-Karim 6/57
2. Al-Quran al-Karim 28/88
3. Al-Quran al-Karim 33/36
4. Al-Quran al-Karim 2/275
5. Al-Quran al-Karim 2/275
6. Al-Ashbah wal-Nazair, with reference to Al-Quniyah, Art 1, Rule 5, Idara-tul-Quran Karachi 1/126 Page 359 of 715

फ़तावा रज़विया, जिल्द सत्रहवीं (17)

"निर्णय अल्लाह के सिवा किसी का नहीं है" (1) "उसी का शासन है, और तुम उसी की ओर लौटाए जाओगे।" (2) और सब से सवाल होगा, हुक्म नहीं मगर अल्लाह को, उसी की हुकूमत है, और तुम्हें उसी की तरफ फिरना है, किसी मुसलमान मर्द या औरत को यह गुंजाइश नहीं कुछ कि जब अल्लाह और रसूल किसी बात में कुछ हुक्म करें तो उन्हें कुछ अपना अख्तियार बाकी रहे और जो अल्लाह व रसूल के हुक्म पर न चले बेशक वह खुली गुमराही में भटका।

"और किसी मोमिन मर्द और किसी मोमिन औरत को यह हक़ नहीं कि जब अल्लाह और उसका रसूल किसी मामले का फ़ैसला कर दें, तो उनके लिए अपने उस मामले में कोई इख़्तियार बाक़ी रहे; और जो कोई अल्लाह और उसके रसूल की नाफ़रमानी करे, तो वह खुली गुमराही में पड़ गया।" (3)

और खास यह कि काफ़िरों ने ऐतराज़ किया था "बेशक तिजारत भी सूद ही की तरह है" (4) (बेशक ख़रीद-ओ-फ़रोख़्त सूद की मिसाल है। - त) तुम जो ख़रीद-ओ-फ़रोख़्त को हलाल और सूद को हराम करते हो, उनमें क्या फ़र्क है? तिजारत में भी तो नफ़ा लेना होता है, इसका जवाब इरशाद फ़रमाया: "जबकि अल्लाह ने तिजारत को हलाल किया है और सूद को हराम।" (5) अल्लाह ने हलाल की तिजारत और हराम किया सूद।

तुम होते हो कौन, बंदे हो बंदगी में सर झुकाओ, हुक्म सब को दिए जाते हैं, हिकमतें बताने के लिए सब नहीं होते, आज दुनिया भर के मुल्कों में किसी की मजाल है कि क़ानून-ए-मुल्की की किसी दफ़ा पर ऐतराज़ करे कि यह बेजा है, यह क्यों है, यों न चाहिए, यों होना चाहिए था, जब झूठी फ़ानी मजाज़ी सल्तनतों के सामने चूँ-चरा की मजाल नहीं होती, तो उस मल्क-उल-मुलूक बादशाह-ए-हक़ीक़ी अज़ली अबदी के हुज़ूर क्यों, और किस लिए कदम भरना कैसी सख़्त नादानी है, वल-इयाज़ु बिल्लाहि तआला। सूद लेना मुतलक़न उ़मूमन क़तअन सख़्त कबीरा (बड़ा गुनाह) है और सूद देना अगर ज़रूरत-ए-शरई व मजबूरी हो तो जायज़ है, दुर्रे-मुख़्तार में है: "ज़रूरतमंद के लिए सूद पर क़र्ज़ लेना जायज़ है।" (6) मोहताज सूद पर क़र्ज़ ले सकता है। (त)

हाँ बिना ज़रूरत जैसे बेटी बेटे की शादी या तिजारत बढ़ाना या पक्का मकान बनाने के लिए सूदी रुपया लेना हराम है, सूदख़ोर के यहाँ खाना नहीं चाहिए मगर हराम व नाजायज़ नहीं, जब तक यह

मालूम न हो कि यह चीज़ जो हमारे सामने खाने को आई वही सूद है मसलन उन गेहूँ की रोटी जो उसने सूद में लिए थे या...

1. अल-क़ुरआन अल-करीम 6/57
2. अल-क़ुरआन अल-करीम 28/88
3. अल-क़ुरआन अल-करीम 33/36
4. अल-क़ुरआन अल-करीम 2/275
5. अल-क़ुरआन अल-करीम 2/275
6. अल-अशबाह वन-नज़ायर, ब-हवाला अल-क़ुनियह, अल-फ़न-उल-अव्वल, अल-क़ायदा-तुल-ख़ामिसा, इदारा-तुल-क़ुरआन कराची 1/126 पृष्ठ 715 में से 359

"إِنِ الْحُكْمُ إِلَّا لِلَّهِ ﷻ" 1 "لَهُ الْحُكْمُ وَإِلَيْهِ تُرْجَعُونَ" 2 اور سب سے سوال ہوگا، حکم نہیں مگر اللہ کو اسی کی حکومت ہے، اور تمہیں اسی کی طرف پھرنا، کسی مسلمان مرد یا عورت کو یہ گنجائش نہیں کچھ کہ جب اللہ اور رسول کسی بات میں کچھ حکم کریں تو انھیں کچھ اپنا اختیار باقی رہے اور جو اللہ و رسول کے حکم پر نہ چلے بیشک وہ صریح گمراہی میں بھٹکا۔

"وَمَا كَانَ لِمُؤْمِنٍ وَلَا مُؤْمِنَةٍ إِذَا قَضَى اللَّهُ وَرَسُولُهُ أَمْرًا أَن يَكُونَ لَهُمُ الْخِيَرَةُ مِنْ أَمْرِهِمْ ۗ وَمَن يَعْصِ اللَّهَ وَرَسُولَهُ فَقَدْ ضَلَّ ضَلَالًا مُّبِينًا" 3

اور خاص یہ کہ کافروں نے اعتراض کیا تھا "إِنَّما الْبَيْعُ مِثْلُ الرِّبوا" 4 (بے شک بیع سود کی مثل ہے۔ت) تم جو خرید و فروخت کو حلال اور سود کو حرام کرتے ہو ان میں کیا فرق ہے بیع میں بھی تو نفع لینا ہوتا ہے، اس کا جواب ارشاد فرمایا: "وَأَحَلَّ اللَّهُ الْبَيْعَ وَحَرَّمَ الرِّبوا" 5 اللہ نے حلال کی بیع اور حرام کیا سود۔

تم ہوتے ہو کون، بندے ہو سر بندگی خم کرو، حکم سب کو دئے جاتے ہیں، حکمتیں بتانے کے لئے سب نہیں ہوتے، آج دنیا بھر کے ممالک میں کسی کی مجال ہے کہ قانونِ ملکی کسی دفعہ پر حرف گیری کرے کہ یہ بیجا ہے یہ کیوں ہے، یوں نہ چاہئے، یوں ہونا چاہئے تھا، جب جھوٹی فانی مجازی سلطنتوں کے سامنے چون و چرا کی مجال نہیں ہوتی تو اس ملک الملوک بادشاہ حقیقی ازلی ابدی کے حضور کیوں، اور کس لئے کادم بھرنا کیسی سخت نادانی ہے، والعیاذ باللہ تعالٰی۔ سود لینا مطلقاً عموماً قطعاً سخت کبیرہ ہے اور سود دینا اگر بضرورتِ شرعی و مجبوری ہو تو جائز ہے، درمختار میں ہے: یجوز للمحتاج الاستقراض بالربو 6 محتاج سود پر قرض لے سکتا ہے۔ (ت)

ہاں بلا ضرورت جیسے بیٹی بیٹے کی شادی یا تجارت بڑھانا یا پکا مکان بنانے کے لئے سودی روپیہ لینا حرام ہے، سود خور کے یہاں کھانا نہ چاہئے مگر حرام و ناجائز نہیں، جب تک یہ معلوم نہ ہو کہ یہ چیز جو ہمارے سامنے کھانے کو آئی بعینہ سود ہے مثلاً ان گیہوں کی روٹی جو اس نے سود میں لئے تھے یا

1 القرآن الکریم ۶/ ۵۷ 2 القرآن الکریم ۲۸/ ۸۸ 3 القرآن الکریم ۳۳/ ۳۶ 4 القرآن الکریم ۲/ ۲۷۵ 5 القرآن الکریم ۲/ ۲۷۵ 6 الاشباہ والنظائر بحوالہ القنیہ الفن الاول القاعدۃ الخامسۃ ادارۃ القرآن کراچی ۱/ ۱۲۶

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

It was purchased with interest money in such a way that both the contract and the cash payment coincided on it, meaning the interest money was shown and it was purchased in exchange for it, and that same money was given to him. As long as these specific circumstances are not verified, consuming it is neither forbidden (Haram) nor prohibited.

In Al-Hindian, from Al-Dakhira, from Muhammad: "We adopt this as long as we do not know of anything specifically forbidden." -1-	**In Fatawa Hindiyya, quoted from Al-Dhakhira of Imam Muhammad, it is stated: We take this (verdict of permissibility) as long as the specific thing is not known to be forbidden. (T)**

So there is no hardship on the creation nor any objection to the scholars. Yes, the doors of forbidden trade are open in abundance these days. If closing them is considered a hardship, then it is a necessity. Verily, the pure Shariah has closed them forever. He who desires lack of restraint today will be caught in a very harsh and severe imprisonment tomorrow. And he who remains restricted by the commandments today will find great peace and freedom tomorrow. This world is a prison for a believer and a paradise for a disbeliever. Who told the Muslims to stare wide-eyed at the vastness of the disbelievers' wealth and their free and abundant ways of acquiring it? O poor soul! You have to beautify your tomorrow (the Hereafter),

"The Day when neither wealth nor sons will avail, [88] But only one who comes to Allah with a sound heart." [89] -2-	**The day on which neither wealth nor children will benefit, except for him who comes to the presence of Allah with a sound heart.**

O poor soul! Your Lord has already told you:

"And do not extend your eyes toward that by which We have given enjoyment to [certain] categories of them, [its being but] the splendor of worldly life by which We may test them. And the provision of your Lord is better and more enduring." -3-

Do not raise your eyes towards the adornment of this worldly life which We have given to some groups of disbelievers (men and women) to enjoy, so that they may remain in its trial and be heedless of Our remembrance. And the provision of your Lord is better and more lasting.

The answer regarding the donation has been given above: if we know through investigation that the money being given is specifically interest money, then taking it is forbidden (Haram), otherwise it is permissible (Jaiz). In this case, it is established that it should be a condition in the contract, whether the condition is explicit or customary.

---

1. Fatawa Hindiyya, Kitab al-Karahiya, Chapter 12, Noorani Kutub Khana Peshawar, 5/342
2. Al-Quran al-Karim, 26/88 and 89
3. Al-Quran al-Karim, 20/131

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

ब्याज के पैसे से इस तरह खरीदारी की गई है कि उस पर अनुबंध (अक़्द) और नकद (नक़्द) दोनों एक ही चीज़ पर जमा हो गए, यानी ब्याज का रुपया दिखाकर उसी के बदले में खरीदा गया और वही रुपया उसे दे दिया गया। जब तक ये विशेष परिस्थितियाँ पुष्ट न हों, तब तक उसका उपयोग न तो हराम है और न ही मना है।

'अल-हिन्दिया' में 'अज़-ज़ख़ीरा' से इमाम मुहम्मद के हवाले से उद्धृत है: "जब तक हमें स्पष्ट रूप से किसी चीज़ का हराम होना ज्ञात न हो, हम इसी (अनुमति) को अपनाते हैं।" -1-

फ़तावा हिन्दिया में ज़ख़ीरा इमाम मुहम्मद के हवाले से नक़ल किया गया है कि हम इसी (जवाज़ यानी अनुमति के क़ौल) को लेते हैं जब तक कि विशेष रूप से किसी वस्तु का हराम होना ज्ञात न हो जाए। (त)

तो न ही सृष्टि पर कोई तंगी है और न ही विद्वानों पर कोई आपत्ति। हाँ, हराम व्यापार के दरवाज़े आज कल बहुतायत में खुले हैं। यदि उन्हें बंद करने को तंगी समझा जाए, तो यह मजबूरी है। पवित्र शरीयत ने उन्हें हमेशा के लिए बंद कर दिया है। जो आज स्वच्छंदता चाहता है, वह कल अत्यंत कठोर और भयानक क़ैद में फँसेगा। और जो आज आदेशों का पाबंद रहेगा, वह कल बड़ी शांति और स्वतंत्रता पाएगा। यह दुनिया मुसलमान के लिए क़ैदखाना है और काफिर के लिए स्वर्ग। मुसलमानों से किसने कहा कि वे काफिरों के धन की विशालता और उसे प्राप्त करने के स्वतंत्र और प्रचुर तरीक़ों की ओर फटी आँखों से देखें? ऐ दीन-दुखिया! तुझे तो अपने कल (परलोक) को सँवारना है,

"जिस दिन न धन लाभ देगा और न संतान, [88] सिवाय उसके जो अल्लाह के सामने स्वस्थ (पवित्र) हृदय लेकर उपस्थित हुआ।" [89] -2-

जिस दिन न माल फ़ायदा देगा और न औलाद, सिवाय उसके जो अल्लाह की बारगाह में सलामत दिल के साथ हाज़िर हुआ।

ऐ मिस्कीन (दीन-दुखिया)! तेरे रब ने तुझे पहले ही फ़रमा दिया है:

"और अपनी आँखें उस चीज़ की ओर न उठाओ जिसका हमने उनमें से कुछ समूहों को आनंद लेने के लिए दिया है, (जो कि) सांसारिक जीवन की शोभा है ताकि हम उन्हें उसमें परखें। और तुम्हारे रब का रिज़्क़ (प्रावधान) बेहतर और अधिक स्थायी है।" -3-	**अपनी आँखें उठाकर उस सांसारिक जीवन की सजावट की ओर न देख जो हमने काफिरों के कुछ पुरुषों और महिलाओं को बरतने के लिए दी है, ताकि वे उसकी परीक्षा में पड़े रहें और हमारी याद से ग़ाफ़िल (बेख़बर) रहें। और तेरे रब का रिज़्क़ बेहतर है और बाक़ी रहने वाला है।**

चंदे का उत्तर ऊपर आ चुका है कि यदि हमें जाँच से ज्ञात हो जाए कि दिया जाने वाला रुपया स्पष्ट रूप से ब्याज का है, तो उसे लेना हराम है, अन्यथा जायज़ है। इस स्थिति में यह सिद्ध होता है कि अनुबंध (अक़्द) में यह शर्त हो, चाहे वह शर्त मौखिक हो या प्रथागत हो।

---

1. फ़तावा हिन्दिया, किताबुल कराहिया, अध्याय 12, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 5/342
2. अल-क़ुरआन अल-करीम 26/88 और 89
3. अल-क़ुरआन अल-करीम 20/131

पृष्ठ 360/715

سود کے روپے سے اس طرح خریدی گئی ہے کہ اس پر عقد و نقد جمع ہو گئے یعنی سود کا روپیہ دکھا کر اس کے عوض خریدی اور وہی روپیہ اسے دے دیا، جب تک یہ صورتیں تحقیق نہ ہوں وہ کھانا حرام ہے نہ ممنوع۔

فی الھندیۃ عن الذخیرۃ عن محمد به نأخذ مالم نعرف شیئاً حراماً بعینہ -1-

فتاوٰی ہندیہ میں بحوالہ ذخیرہ امام محمد سے منقول ہے کہ ہم اسی (قول جواز) کو لیتے ہیں جب تک بعینہ کسی شے کا حرام ہونا معلوم نہ ہو جائے (ت)

تو نہ خلق پر تنگی ہے نہ علماء پر اعتراض ، ہاں تجارت حرام کے دروازے آج کل بکثرت کھلے ہیں ان کی بندش کو اگر تنگی سمجھا جائے تو مجبوری ہے وہ تو بیشک شرع مطہر نے ہمیشہ کیلئے بند کئے ہیں جو آج بے قیدی چاہے کل نہایت سخت شدید قید میں گرفتار ہوگا اور جو آج احکام کا مقید رہے کل بڑے چین کی آزادی پائے گا۔ دنیا مسلمان کے لئے قید خانہ ہے اور کافر کے لئے جنت۔ مسلمانوں سے کس نے کہا کہ کافروں کی اموال کی وسعت اور طریق تحصیل آزادی اور کثرت کی طرف نگاہ پھاڑ کر دیکھے ، اے مسکین ! تجھے تو کل کا دن سنوارنا ہے،

"یَوْمَ لَا یَنْفَعُ مَالٌ وَّلَا بَنُوْنَ ۙ ۸۸ اِلَّا مَنْ اَتَی اللّٰہَ بِقَلْبٍ سَلِیْمٍ ؕ ۸۹" -2-

جس دن نہ مال نفع دے گا نہ اولاد ، مگر جو اللہ کے حضور سلامت والے دل کے ساتھ حاضر ہوا۔

اے مسکین ! تیرے رب نے پہلے ہی تجھے فرما دیا ہے:

وَلَا تَمُدَّنَّ عَيْنَيْكَ اِلٰى مَا مَتَّعْنَا بِهٖۤ اَزْوَاجًا مِّنْهُمْ زَهْرَةَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا لِنَفْتِنَهُمْ فِيْهِ ؕ وَرِزْقُ رَبِّكَ خَيْرٌ وَّ اَبْقٰى -3-

اپنی آنکھ اٹھا کر نہ دیکھ اس دنیوی زندگی کی آرائش کی طرف جو ہم نے کافروں کے کچھ مردوں اور عورتوں کے برتنے کو دی تاکہ وہ اس کے فتنہ میں پڑے رہیں اور ہماری یاد سے غافل ہوں اور تیرے رب کا رزق بہتر ہے اور باقی رہنے والا۔

چندہ کا جواب اوپر آگیا کہ اگر ہم کو تحقیق سے معلوم ہو کہ یہ روپیہ جو دے رہا ہے بعینہ سود کا ہے تو لینا حرام ورنہ جائز۔ رہا اس صورت میں متحقق ہوتا ہے کہ عقد میں مشروط ہو اگرچہ شرط لفظا ہو یا عرفاً ہو

---

1 فتاوی ہندیة کتاب الکراهیة الباب الثانی عشر نورانی کتب خانہ پشاور ۵ / ۳۴۲ 2 القرآن الکریم ۸۸/۲۶ و ۸۹ 3 القرآن الکریم ۱۳۱/۲۰

Otherwise, giving more than the agreed amount as a favor is neither bad nor a crime. The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) himself bought a pair of trousers and told the person weighing the silver for the price: "Weigh it and give more"(1). This is benevolence, "There is no way against those who do good"(2). So what is the objection against Imam Razi? Taking interest has been declared absolutely prohibited by Sharia, whether from a Muslim or a non-Muslim. Allah Almighty said, "And He has forbidden interest"(3). There is no exception in this, but the basis of actions is on intention. If the wealth of a non-Muslim who is neither a 'Dhimmi' nor 'Musta'min' (under protection) is obtained without betrayal or breach of promise and without any unlawful intention, then this intention of acquiring a permissible thing is not forbidden, even if the giver considers it as interest in his mind. This money can also be spent on mosques, schools, and for the expenses of orphans. And Allah Almighty knows best.

Problem 192: From Kathore, District Surat, Haji Muhammad Sulaiman Katrwa, Sunday, 29th Rabi al-Thani, 1334 AH. What do the scholars of religion and the muftis of the firm Sharia say in this matter that nowadays shares of tramway, railway companies, and other factories, which are called 'shares' in the local terminology, are purchased? The form of this is that a company is established for tramway, railway, textile mill, ironworks, or any trade. Its capital is fixed, and its shares are sold. Its workers are also fixed as salaried employees who work according to their positions. They publish the half-yearly or annual profit and loss accounts and distribute the profit proportionally. Some money is also kept from the profit, which is also given on interest. That interest is also included in the profit and distributed to the shareholders. At the time of need, interest-bearing money is also taken, and its interest is paid from the principal amount or profit. The price of these shares increases or decreases according to the profit or loss of the company. The shareholders sell their shares at the same rate. However, the form of sale is such that the seller tells the broker that I want to sell my share of such-and-such company, so the broker says that today...

---

1 Sunan Abu Dawood, Kitab al-Buyu, Bab fi al-Rajhan fi al-Wazn, Aftab-e-Alam Press Lahore, 2/118 2 Al-Quran Al-Karim, 9/91 3 Al-Quran Al-Karim, 2/275

अन्यथा, एहसान के रूप में तय राशि से अधिक देना न तो बुरा है और न ही अपराध। स्वयं पवित्र पैगंबर (उन पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो) ने एक पाजामा खरीदा और कीमत की चांदी तौलने वाले से कहा: "तौलो और अधिक दो"(1)। यह परोपकार है, "भलाई करने वालों के विरुद्ध कोई मार्ग नहीं है"(2)। तो इमाम राजी पर क्या आपत्ति है? ब्याज लेना शरीयत द्वारा स्पष्ट रूप से हराम (वर्जित) घोषित किया गया है, चाहे वह मुस्लिम से हो या गैर-मुस्लिम से। अल्लाह तआला ने फरमाया, "और उसने ब्याज को हराम कर दिया है"(3)। इसमें कोई अपवाद नहीं है, लेकिन कार्यों का आधार नीयत (इरादा) पर है। यदि किसी गैर-मुस्लिम का धन, जो न 'ज़िम्मी' है और न ही 'मुस्तअमिन' (सुरक्षा के तहत), बिना किसी विश्वासघात या वादा खिलाफी और बिना किसी अवैध इरादे के प्राप्त किया जाता है, तो एक जायज़ वस्तु प्राप्त करने की यह नीयत मना नहीं है, भले ही देने वाला इसे अपने मन में ब्याज ही क्यों न समझे। यह धन मस्जिदों, मदरसों और अनाथों के खर्चों में भी इस्तेमाल किया जा सकता है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 192: स्थान कठौर, जिला सूरत से हाजी मोहम्मद सुलेमान कटरवा, रविवार, 29 रबी-उल-थानी, 1334 हिजरी। धर्म के विद्वान और शरीयत के मुफ्ती इस मामले में क्या कहते हैं कि आजकल ट्रामवे, रेलवे कंपनी और अन्य कारखानों के हिस्से (शेयर) खरीदे जाते हैं, जिन्हें यहाँ की भाषा में 'शेयर' कहा जाता है? इसका रूप यह होता है कि ट्रामवे, रेलवे, कपड़ा मिल, लोहा कारखाना या किसी व्यापार के लिए एक कंपनी स्थापित की जाती है। इसकी पूंजी निर्धारित की जाती है और इसके हिस्से बेचे जाते हैं। इसके कर्मचारी भी वेतनभोगी होते हैं जो अपने पद के अनुसार काम करते हैं। वे छह महीने या सालाना लाभ-हानि का हिसाब प्रकाशित करते हैं और लाभ को अनुपातिक रूप से वितरित करते हैं। लाभ में से कुछ राशि जमा भी रखी जाती है जिसे ब्याज पर भी दिया जाता है। वह ब्याज भी लाभ में शामिल करके हिस्सेदारों में बाँट दिया जाता है। आवश्यकता के समय ब्याज पर पैसा लिया भी जाता है और उसका ब्याज मूल राशि या लाभ में से दिया जाता है। इन हिस्सों (शेयरों) की कीमत कंपनी के लाभ-हानि के अनुसार घटती-बढ़ती रहती है। हिस्सेदार अपने हिस्से को उसी भाव पर बेच देते हैं। लेकिन बेचने का तरीका यह है कि विक्रेता दलाल से कहता है कि मैं अपनी अमुक कंपनी का हिस्सा बेचना चाहता हूँ, तो दलाल कहता है कि आज...

1 सुनन अबू दाऊद, किताब अल-बुयू, बाब फि अल-रजहान फि अल-वज़न, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस लाहौर, 2/118 2 अल-क़ुरआन अल-करीम, 9/91 3 अल-क़ुरआन अल-करीम, 2/275

ورنہ احسانًا قرار داد سے زائد دینا نہ رہا ہے نہ جرم۔ خود حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے ایک پاجامہ خریدا اور قیمت کی چاندی وزن کرنیوالے سے ارشاد فرمایا: زن وارجح ۱ تول اور زیادہ دے۔ یہ احسان ہے، "مَا عَلَی الْمُحْسِنِیْنَ مِنْ سَبِیْلٍ" ۲ ۔ (احسان کرنے والوں پر کوئی راہ نہیں۔ ت) پھر امام رازی پر کیا اعتراض ہے، سود لینا شرع نے مطلقًا حرام فرمایا ہے مسلم سے ہو یا کافر سے، قال تعالٰی "وَحَرَّمَ الرِّبٰوا" ۳ (اللہ تعالیٰ نے ارشاد فرمایا: اللہ تعالیٰ نے سود کو حرام کیا۔ ت) اس میں کوئی تخصیص نہیں مگر مدار اعمال نیت پر ہے اگر کسی کافر کا مال کہ نہ ذمی ہو نہ مستامن، بلا غدر و بد عہدی اور بغیر کسی نیت ناجائز کے حاصل ہو تو یہ نیت شے مباح اسے لینا ممنوع نہیں اگرچہ وہ دینے والا اپنے ذہن میں سود ہی سمجھ کر دے یہ مال مساجد و مدارس و مصارف یتامیٰ میں بھی صرف ہوسکتا ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۹۲: از مقام کٹھور ضلع سورت حاجی محمد سلیمان کٹروا بروز یکشنبہ ۲۹ ربیع الآخر ۱۳۳۴ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ فی زمانہ ٹراموے وریلوے کمپنی و دیگر کارخانہ جات کے حصص جسے یہاں کی اصطلاح میں شیئر کہتے ہیں خریدے جاتے ہیں اس کی صورت یہ ہوتی ہے کہ ایک کمپنی ٹراموے یاریلوے یا کارخانہ پارچہ بافی یا آہن سازی یا کسی تجارت کے لئے قائم کی جاتی ہے اور اس کا سرمایہ مقرر کرکے اس کے حصص فروخت کئے جاتے ہیں اور اس کے کارکنان بھی تنخواہ دار مقرر کئے جاتے ہیں جو حسبِ منصب کام کرتے ہیں اور ششماہی یا سالانہ اس کے نفع نقصان کا حساب شائع کرتے ہیں اور نفع بھی حصہ رسد تقسیم کرتے ہیں اور کچھ روپیہ نفع میں سے جمع بھی رہتا ہے جو سود پر بھی دیا جاتا ہے اور اس کا سود بھی نفع میں شامل کرکے حصہ داروں کو تقسیم کیا جاتا ہے اور

ضرورت کے وقت سودی روپیہ بھی لیا جاتا ہے اس کا سود اصل رقم یا نفع میں سے دیا جاتا ہے اور ان حصص کی قیمت کمپنی کے نفع نقصان کے اعتبار سے بڑھتی گھٹتی رہتی ہے حصہ داران اپنے حصہ کو اسی بھاؤ سے فروخت کردیتے ہیں لیکن فروخت کی یہ صورت ہوتی ہے کہ بائع دلال سے کہتا ہے کہ میں اپنی فلاں کمپنی کا حصہ فروخت کرنا چاہتا ہوں تو دلال کہتا ہے کہ آج...

---

1 سنن ابو داؤد کتاب البیوع باب فی الرجحان فی الوزن آفتاب عالم پریس لاہور ۲/ ۱۱۸ 2 القرآن الکریم ۹۱/۹ 3 القرآن الکریم ۲۷۵/۲

Volume 17, Fatawa Razawiya

[Continuing from previous context]...this is the market rate. Then, if the seller wishes to sell at this rate, the broker says "sell it," and he sells it to someone. Here, the buyer does not take physical possession of anything; instead, the broker simply has the company replace the seller's name with the buyer's name. Another point to consider is that if the buyer requests any trade commodities from the company in exchange for their shares, the company does not provide them, nor do they return the money. However, whenever they wish to sell the shares, they can be sold at the market rate through the aforementioned method, and they receive the money immediately. Now, the matter seeking clarification is: is buying shares permissible according to Sharia? And if permissible, under which category of sale does it fall? Is zakat mandatory on the market price of the shares or on the profit? Please clarify and be rewarded.

The Pronounced Answer (Al-Jawab al-Malfooz): It is evident that a share consists of rupees. If it is sold for more or less than the actual rupee value of the share, it constitutes ribā (usury) and is categorically forbidden (haram). Even if it is sold for an equal amount, it is a transaction of currency exchange ('sarf') in which simultaneous physical exchange (taqabud) has not occurred, thus making it haram. Furthermore, the interest given to shareholders as 'profit' is also haram. In short, this entire dealing is forbidden upon forbidden, purely haram. In Sharia, the "market price of shares" is not a recognized entity; rather, zakat will be mandatory on the actual amount of rupees deposited in the company, or on the proportionate share of physical assets owned, or on the portion of legitimate non-interest profit. Allah Almighty knows best.

Problem 193: From Bahraich Dargah Sharif, asked by Azeemuddin, teacher at Afsar Madrassa Masoodiya, on Thursday 22 Safar 1334 AH. What do the scholars of religion and jurists of the clear Sharia say regarding this matter: Zaid lent some money to Amr in several installments at various interest rates. No property was mortgaged for this money. After this, Khalid, the son of Zaid, purchased Amr's property with the intention of being his heir. He deducted the total loan amount (principal plus interest) from the purchase price of the property. Now, the question is that Khalid and Amr are both Sunnis and do not wish to overstep Sharia boundaries; in such a situation, is the interest amount halal and permissible for Khalid, or haram and prohibited? Khalid does not want to return the interest amount under the pretext of giving it to charity or due to the possibility that Amr might squander it. How is this excuse of his? Please write the answer with supporting evidence. That is all.

जिल्द 17, फ़तावा रज़विया

[पिछली पृष्ठ से जारी]...यह बाज़ार दर है। फिर अगर विक्रेता को इस दर पर बेचना होता है, तो दलाल कह देता है कि "बेच दो", तो वह किसी को बेच देता है। यहाँ खरीदार किसी चीज़ पर कब्ज़ा नहीं करता है, बल्कि दलाल केवल कंपनी वालों से विक्रेता के नाम की जगह खरीदार का नाम लिखवा कर दे देता है। यहाँ गौर करने वाली बात यह भी है कि अगर खरीदार कंपनी वालों से अपने शेयरों के बदले कंपनी के व्यापारिक सामानों में से कोई चीज़ मांगता है, तो कंपनी वाले उसे वह चीज़ नहीं देते और न ही उसके पैसे वापस करते हैं। हाँ, वह जिस वक्त अपना हिस्सा बेचना चाहे, तो बाज़ार दर से उसी समय ऊपर बताए गए तरीके से बिक जाता है और उसे उसी समय रुपया मिल भी जाता है। अब सवाल यह है कि शरीयत के अनुसार शेयर खरीदना जायज़ है या नहीं? और अगर जायज़ है तो यह किस प्रकार की बिक्री (बै'य) में आता है? और इसमें ज़कात शेयरों की कीमत पर वाजिब होती है या मुनाफ़े पर? स्पष्ट करें और पुण्य पाएँ।

उच्चारित उत्तर (अल-जवाब अल-मलफ़ूज़): यह ज़ाहिर है कि शेयर रुपयों का है, और उसे उतने ही रुपयों में बेचा जाएगा जितने का शेयर है। यदि उसे कम या ज़्यादा में बेचा गया, तो वह 'रिबा' (ब्याज) है और कतई हराम है। और अगर बराबर मूल्य पर ही बेचा गया, तो यह 'सर्फ़ (मुद्रा विनिमय) है जिसमें दोनों तरफ से तत्काल लेनदेन (तकाबुज़) नहीं हुआ, इसलिए यह हराम है। फिर शेयरधारकों को मुनाफ़े के नाम पर जो ब्याज दिया जाता है, वह भी हराम है। संक्षेप में, यह पूरा मामला हराम दर हराम, पूरी तरह हराम है। शरीयत की दृष्टि में "शेयरों की कीमत" कोई मान्य चीज़ नहीं है, बल्कि कंपनी में जमा किए गए असल रुपयों पर, या संपत्ति में उसके हिस्से पर, या वैध गैर-ब्याज लाभ में उसके हिस्से पर ज़कात वाजिब होगी। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 193: बहराइच दरगाह शरीफ से, अज़ीमुद्दीन, शिक्षक अफ़सर मदरसा मसूदिया द्वारा पूछा गया, गुरुवार 22 सफ़र 1334 हिजरी। धर्म के विद्वान और शरीयत के मुफ़्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि: ज़ैद ने अम्र को विभिन्न ब्याज दरों पर किश्तों में कुछ रुपया उधार दिया और इस रुपये के बदले कोई संपत्ति गिरवी (रेहन) नहीं थी। इसके बाद ज़ैद के बेटे खालिद ने वारिस होने के नाते अम्र की जायदाद खरीदी और पूरे कर्ज (मूलधन और ब्याज) को जायदाद की कीमत में काट लिया। अब सवाल यह है कि खालिद और अम्र, जो दोनों सुन्नी हैं और शरीयत की सीमाओं से बाहर नहीं निकलना चाहते, क्या ऐसी स्थिति में ब्याज की राशि खालिद के लिए हलाल और जायज़ है या हराम और नाजायज़? और खालिद खैरात और सदक़ा करने के बहाने या अम्र के फिजूलखर्ची में पड़

जाने की आशंका के कारण ब्याज की रकम वापस नहीं करना चाहता, उसका यह बहाना कैसा है? कृपया दलीलों के साथ उत्तर लिखें। बस।

पेज 362/715

یہ بھاؤ ہے پھر اگر بائع کو اس بھاؤ سے فروخت کرنا ہوتا ہے تو دلال کہہ دیتا ہے کہ بیچ دو، تو وہ کسی کو بیچ دیتا ہے، یہاں مشتری کسی چیز پر قبضہ نہیں کرتا ہے بلکہ صرف کمپنی والوں سے دلال بائع کے نام کی جگہ مشتری کا نام لکھوا کر دے دیتا ہے، یہاں قابل غور یہ امر بھی ہے کہ اگر مشتری کمپنی والوں سے اپنے حصص کے عوض کمپنی کے اسباب تجارت میں سے کوئی شے طلب کرے تو کمپنی والے وہ شیئ اسے نہیں دیتے اور نہ اسے اس کے دام واپس کرتے ہیں البتہ وہ جس وقت حصہ فروخت کرنا چاہے تو بازاری بھاؤ سے اسی وقت مذکورہ بالا طریق سے فروخت ہو جاتا ہے، اور اسے اسی وقت روپیہ مل بھی جاتا ہے، اب دریافت طلب یہ امر ہے حصص خریدنے عند الشرع جائز ہیں یا نہیں؟ اور اگر جائز ہے تو یہ کس بیع میں داخل ہے اور اس میں زکوۃ حصص کی قیمت پر لازم آتی ہے یا منافع پر؟ بینوا توجروا۔

الجواب الملفوظ ظاہر ہے کہ حصہ روپوں کا ہے اور وہ اتنے ہی روپوں کو بیچا جائے گا جتنے کا حصہ ہے یا کم زائد کو بیچا گیا تو رہا اور حرام قطعی ہے، اور اگر مساوی ہی کو بیچا گیا تو صرف ہے جس میں تقابض بدلین نہ ہوا یوں حرام ہے، پھر حصہ داروں کو جو منافع کا سود دیا جاتا ہے وہ بھی حرام ہے، غرض یہ معاملہ حرام در حرام محض حرام ہے حصص کی قیمت شرعا کوئی چیز نہیں بلکہ اصل کے روپے جتنے اس کے کمپنی میں جمع ہیں، یا مال میں اس کا جتنا حصہ ہے، یا منفعت جائز ہ غیر رہا میں اس کا جتنا حصہ ہے اس پر زکوۃ لازم آئیگی۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۱۹۳: از بہرائچ درگاہ شریف مسئولہ عظیم الدین مدرس افسر مدرسہ مسعودیہ بروز پنجشنبہ ۲۲ صفر ۱۳۳۴ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید نے عمرو کو کچھ روپیہ مختلف شرع سود پر بدفعات قرض دیا اور اس روپیہ میں کوئی جائداد مرہون نہیں تھی اس کے بعد خالد پسر زید نے عمرو کی جائداد بخیال اپنے وارث ہونے کے خرید کیا، کل زر قرض اصل معہ سود زر ثمن جائداد میں مجرا لیا، پس سوال یہ ہے کہ خالد و عمرو جو دونوں سنی المذہب ہیں اور حدود شرعیہ سے نکلنا نہیں چاہتے، ایسی صورت میں خالد کو رقم سود حلال و مباح ہے یا حرام و ناجائز ہے اور خالد خیرات و صدقہ کر دینے کے عذر سے یا عمرو کے مبتلائے اسراف ہو جانے کے احتمال سے رقم سود واپس نہیں کرنا چاہتا، یہ عذر اس کا کیسا ہے؟ جواب مع دلائل، مہربانی فرما کر تحریر فرمائے فقط۔

Fatawa Razawiyya Volume (17)

Answer:

Allah Almighty says: "O you who believe! Fear Allah and give up what remains [due to you] of interest, if you should be believers. And if you do not, then be informed of a war [against you] from Allah and His Messenger."[1]

O believers! Fear Allah and leave whatever interest remains. If you do not do so, then take notice of war from Allah and His Messenger—meaning, prepare for war with Allah and His Messenger if you do not give up interest.

It is forbidden for Khalid to take even a single grain of interest. The Hadith states: "Whoever knowingly takes one dirham of interest, it is as if he has committed adultery with his mother thirty-six times." In many authentic hadiths, it is mentioned that interest is a sum of seventy-three sins, the lightest of which is like a man marrying his own mother.[2] In a Sahih (authentic) hadith, it is said:

"The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) cursed the one who consumes interest, the one who pays it, the one who records it, and the two witnesses to it, and he said, 'They are all equal.'"[3] The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) cursed the one who takes interest, the one who writes the document, and those who witness it, and said they are all equal.

And the excuse that he will give charity or perform Umrah, or that the other party is wasteful, is purely satanic delusion. If the other person wastes money, the sin is on him, and his wealth is lost. What does it have to do with reason and religion to personally invite war from Allah and His Messenger and accept the curse of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) just to save someone else from sin? And the excuse of charity is even worse; taking haram (forbidden) wealth to give charity is like a woman who commits adultery for pay so that she can give it in charity. It is stated in Radd al-Muhtar:

"Like a woman who feeds orphans from the labor of her private parts. Woe to you! Neither commit adultery nor give charity [from such earnings]."[4] Just like that woman who feeds orphans with the earnings from her private parts; ruin be upon you, do not commit adultery and do not give charity.

[1] Al-Quran al-Karim 2 / 278-279 [2] Al-Mustadrak al-Hakim, Kitab al-Buyu, Dar al-Fikr Beirut, 2/37 [3] Sahih Muslim, Kitab al-Musaqat wa al-Muzara'ah, Bab al-Riba, Qadimi Kutub Khana Karachi, 2/27 [4] Radd al-Muhtar

फ़तावा रज़विया जिल्द (17)

उत्तर:

अल्लाह अज़-व-जल्ल फ़रमाता है: "ऐ ईमान वालो! अल्लाह से डरो और जो सूद (ब्याज) बाकी रह गया है उसे छोड़ दो अगर तुम मोमिन हो। फिर अगर तुम ऐसा न करो, तो अल्लाह और उसके रसूल की ओर से युद्ध की घोषणा सुन लो।"[1]

ऐ ईमान वालों! अल्लाह से डरो और जो ब्याज बाकी रह गया है उसे छोड़ दो। फिर अगर तुम ऐसा नहीं करते, तो अल्लाह और उसके रसूल से लड़ाई का एलान सुन लो, यानी अल्लाह और उसके रसूल से लड़ने के लिए तैयार हो जाओ अगर ब्याज नहीं छोड़ते।

खालिद के लिए ब्याज का एक दाना लेना भी हराम है। हदीस में फ़रमाया गया है: "जिसने जानते हुए ब्याज का एक दिरहम लिया, उसने मानो अपनी माँ के साथ छत्तीस बार ज़िना (व्यभिचार) किया।" बहुत सी सही हदीसों में आया है कि ब्याज तिहत्तर गुनाहों का संग्रह है, उनमें से सबसे हल्का यह है कि आदमी अपनी माँ से ज़िना करे।[2] सही हदीस में है:

"अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने ब्याज खाने वाले, खिलाने वाले, उसे लिखने वाले और उसके दोनों गवाहों पर लानत भेजी है और फ़रमाया कि वे सब बराबर हैं।"[3] रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने ब्याज लेने वाले, दस्तावेज़ लिखने वाले और उस पर गवाही देने वालों पर लानत भेजी है, और फ़रमाया कि वे सब बराबर हैं।

और यह बहाना कि वह ख़ैरात (दान) करेगा या उमराह करेगा या वह (दूसरा पक्ष) फ़ुज़ूलखर्च है, महज़ शैतानी बहकावा है। अगर वह फ़ुज़ूलखर्ची करता है तो गुनाह उस पर होगा, उसका माल बर्बाद होगा। किसी दूसरे को गुनाह से बचाने के लिए खुद अल्लाह और रसूल से लड़ाई मोल लेना और रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की लानत स्वीकार करना अक्ल और दीन से क्या वास्ता रखता है? और ख़ैरात का बहाना तो और भी बुरा है। ख़ैरात करने के लिए हराम माल लेना उस औरत की तरह है जो दान देने के लिए मजदूरी पर ज़िना करे। रद्द अल-मुह्तार में है:

"उस औरत की तरह जो अपनी शर्मगाह की कमाई से यतीमों को खाना खिलाए। तुझ पर तबाही हो! न ज़िना कर और न ख़ैरात दे।"[4] जैसे वह औरत जो अपनी शर्मगाह की कमाई से यतीमों को खाना खिलाए; तेरी बर्बादी हो, न ज़िना कर न ख़ैरात दे।

1. अल-क़ुरआन अल-करीम 2 / 278-279
2. अल-मुस्तदरक अल-हाकिम, किताब अल-बुयूँ, दार अल-फ़िक्र बेरूत, 2/37
3. सहीह मुस्लिम, किताब अल-मुसाक़ात व अल-मुज़ारा'ह, बाब अर-रिबा, कदीमी कुतुब खाना कराची, 2/27
4. रद्द अल-मुह्तार

جلد ہفدہم (۱۷) فتاویٰ رضویہ

الجواب:

اللہ عزوجل فرماتا ہے: "یٰۤاَیُّهَا الَّذِیْنَ آمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَذَرُوا مَا بَقِیَ مِنَ الرِّبَا إِن كُنتُم مُّؤْمِنِینَ ۝ فَإِن لَّمْ تَفْعَلُوا فأْذَنُوا بِحَرْبٍ مِّنَ اللّٰهِ وَ رَسُوْلِهٖ " 1 ۔

اے ایمان والو! اللہ سے ڈرو اور جو سود باقی رہا چھوڑ دو پھر اگر ایسا نہ کرو تو اللہ ورسول سے لڑائی کا اعلان کردو یعنی اللہ و رسول سے لڑنے کو تیار ہو جاؤ اگر سود نہیں چھوڑتے۔

خالد پر ایک حبہ سود کا لینا حرام ہے، حدیث میں فرمایا: "جس نے دانستہ ایک درہم سود کا لیا اس نے گویا چھتیس بار اپنی ماں سے زنا کیا"۔ بکثرت احادیث صحیحہ میں ہے کہ سود تہتر گناہوں کا مجموعہ ہے ایسرھا مثل ان ینکح الرجل امہ 2 ان سب میں ہلکا یہ ہے کہ آدمی اپنی ماں سے زنا کرے۔ صحیح حدیث میں ہے:

لعن رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم آکل الربو ومؤکلہ وکاتبہ وشاھدیہ وقال ھم سواء 3 - لعنت فرمائی رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے سود لینے والے اور کاغذ لکھنے والے اور اس پر گواہیاں کرنے والوں پر، اور فرمایا وہ سب برابر ہیں۔

اور یہ عذر کہ خیرات کرے گا یا عمرہ ومسرف ہے محض اغوائے شیطانی ہے، اسراف اگر وہ کرے تو گناہ اس پر ہوگا اس کا مال ضائع ہوگا دوسرے کو گناہ سے بچانے کے لئے خود اللہ ورسول سے لڑائی مول لینا اور رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی لعنت قبول کرنا عقل و دین سے کیا علاقہ رکھتا ہے اور خیرات کا عذر تو اور بھی بدتر ہے، خیرات کرنے کے لئے حرام مال

لینا اس عورت کے مثل ہے جو تصدق کے لئے اجرت پر زنا کرائے کہ خیرات کرے گی۔

ردالمحتار میں ہے:

كمطعمة الايتام من كد فرجها لك الويل لاتزني ولا تتصدقي 4 ۔ جیسے وہ عورت کہ اپنی فرج کی کمائی سے یتیموں کو کھانا دے، تیری خرابی ہو نہ زنا کر نہ خیرات دے۔

1 القرآن الکریم ۲ / ۲۷۸-۲۷۹ 2 المستدرک للحاکم کتاب البیوع دار الفکر بیروت ۲ / ۳۷ 3 صحیح مسلم کتاب المساقاۃ والمزارعۃ باب الربو قدیمی کتب خانہ کراچی ۲ / ۲۷ 4 ردالمحتار

Rather, Khalid's happiness lies in returning whatever interest his father took, if he fears Allah Almighty and wishes to stay within the boundaries of Shariah, then this is the way and guidance is in the hands of Allah Almighty. And Allah Almighty knows best.

Issue 194: From Mumbai, Sitaram Building, Kothi Sahib Abdullah Ali Raza Sahib, inquired by Sarwar Khan, 13 Muharram al-Haram 1334 AH. Source of grace and virtues, honorable and respected servant of Ala Hazrat Maulana Qibla, may your shadow endure, Peace be upon you!

My brother Muhammad Abdul Aziz had inquired from you from Calcutta regarding life insurance. You gave a fatwa of it being impermissible. He sent that fatwa to me; upon seeing it, it was realized that his question was incomplete. Therefore, the aforementioned issue is being presented in detail again for the purpose of research, hopeful for a correct answer. In an insurance company where all owners and authorities are of the Christian faith, besides sea and fire insurance, there is also life insurance. Its forms are varied:

First form: In this, one pays a fixed insurance fee to the company every year throughout their life, and after their death, the insurance amount is given to their heirs. For example, if a thirty-year-old person insured himself for an amount of one thousand rupees, he would have to pay an annual fee of twenty-eight rupees. After his death, the company will give the full one thousand to his heirs. For instance, if someone entered into an agreement with the insurance company today and paid the first year's fee, and died after two months or two years or four years, the full insurance amount of one thousand rupees would be given to his heirs.

Second form: This is where a limited fee is paid every year for only a few years to the aforementioned company, and upon death, the full insurance amount of one thousand rupees will be given to the heirs. This is better than the first form; after paying the fee for a few years, one doesn't have to pay anymore. For example, a person is thirty years old and pays an annual fee of thirty-five and a half rupees to the company until the age of sixty, and then stops paying, his heirs will be given the insurance amount after death. If the person paying the insurance dies before the term, his heirs will be given the full insurance amount of one thousand rupees by the insurance company.

Third form: Someone who takes insurance wants to receive the insured amount himself in his future old age, for example, after reaching the age of twenty-five, sixty, or sixty-two years. If the person paying the insurance remains alive until that age, he will receive the mentioned amount. The fee for each old age period is different. For example, a thirty-year-old person at sixty years...

बल्कि खालिद का सौभाग्य इसमें है कि उसके पिता ने जितना भी ब्याज लिया है वह उसे वापस कर दे। यदि वह अल्लाह तआला से डरता है और शरीयत की सीमाओं में रहना चाहता है, तो यही मार्ग है और मार्गदर्शन अल्लाह तआला के हाथ में है। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसला 194: स्थान मुंबई, सीताराम बिल्डिंग, कोठी साहब अब्दुल्ला अली रज़ा साहब, प्रश्नकर्ता सरवर खान, 13 मुहर्रम अल-हराम 1334 हिजरी। अनुग्रह और पुण्य के स्रोत, माननीय और सम्मानित सेवक आला हज़रत मौलाना क़िबला, अल्लाह आपकी छाया बनाए रखे, आप पर शांति हो!

मेरे भाई मोहम्मद अब्दुल अज़ीज़ ने कलकत्ता से आपसे जीवन बीमा के बारे में पूछा था, आपने इसे नाजायज़ होने का फतवा दिया था। उन्होंने वह फतवा मुझे भेज दिया; उसे देखने पर पता चला कि उनका प्रश्न अधूरा था। इसलिए, शोध के उद्देश्य से उपर्युक्त मसला फिर से विस्तार से प्रस्तुत किया जा रहा है, सही उत्तर की आशा में। एक बीमा कंपनी में, जिसके सभी मालिक और अधिकारी ईसाई धर्म के हैं, समुद्री और अग्नि बीमा के अलावा जीवन बीमा भी होता है। इसके रूप अलग-अलग हैं:

पहला रूप: इसमें व्यक्ति कंपनी को जीवन भर हर साल एक निश्चित बीमा शुल्क देता रहता है और उसकी मृत्यु के बाद उसके वारिसों को बीमा की राशि दी जाती है। उदाहरण के लिए, यदि तीस वर्ष की आयु के एक व्यक्ति ने एक हजार रुपये की राशि के लिए अपना बीमा कराया, तो उसे अठाइस रुपये वार्षिक शुल्क देना होगा और उसकी मृत्यु के बाद कंपनी उसके वारिसों को पूरे एक हजार देगी। उदाहरण के लिए, यदि किसी ने आज बीमा कंपनी के साथ समझौता किया और पहले साल का शुल्क दिया और दो महीने या दो साल या चार साल बाद मर गया, तो बीमा की पूरी राशि एक हजार रुपये उसके वारिसों को मिल जाएगी।

दूसरा रूप: यह है कि सीमित शुल्क केवल कुछ वर्षों तक हर साल कंपनी को दिया जाता रहा और उसकी मृत्यु पर उसके वारिसों को पूरी एक हजार रुपये की बीमा राशि दी जाएगी। यह पहले रूप से बेहतर है; कुछ वर्षों तक शुल्क भरने के बाद फिर नहीं भरना पड़ता है। उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति की आयु तीस वर्ष है और वह साठ वर्ष की आयु तक कंपनी को साढ़े तीस रुपये वार्षिक शुल्क देता है और फिर नहीं देता है, तो उसकी मृत्यु के बाद उसके वारिसों को बीमा की राशि दी जाएगी। यदि बीमा कराने वाला व्यक्ति अवधि से पहले मर जाता है, तो बीमा कंपनी की ओर से उसके वारिसों को पूरी एक हजार रुपये की बीमा राशि दी जाएगी।

तीसरा रूप: कोई व्यक्ति जो बीमा कराता है, वह भविष्य में अपने बुढ़ापे में, उदाहरण के लिए, पच्चीस साल या साठ साल या बासठ साल की उम्र तक पहुँचने के बाद खुद बीमा की गई राशि प्राप्त करना चाहता है। यदि बीमा कराने वाला उस उम्र तक जीवित रहता है, तो उसे उक्त राशि मिलेगी। हर बुढ़ापे की आयु का शुल्क अलग है। उदाहरण के लिए, साठ साल की उम्र का तीस साल का व्यक्ति...

بلکہ خالد کی سعادت یہ ہے کہ اس کے باپ نے جس قدر سود لیا ہے وہ بھی واپس دے اگر اللہ تعالیٰ سے ڈرتا اور حدود شرع میں رہنا چاہتا ہے تو راہ یہ ہے اور ہدایت اللہ تعالیٰ کے ہاتھ۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۱۹۴ : از مقام بمبئی سیتارام بلڈنگ کوٹھی صاحب عبداللہ علی رضا صاحب مسئولہ سرور خان ۱۳ محرم الحرام ۱۳۳۴ھ مصدر فیض و حسنات مکرم و معظم بندہ اعلیحضرت مولانا قبلہ دام ظلکم، السلام علیکم !

برادرم محمد عبدالعزیز نے کلکتہ سے آنجناب سے جان کے بیمہ کی نسبت دریافت کیا تھا، آنجناب نے ناجائز کا فتوی دیا، مذکور فتوی کو انہوں نے میرے پاس بھیج دیا دیکھنے سے معلوم ہوا کہ سوال ان کا ناقص ہے دوبارہ بغرض تحقیق مسئلہ مذکور مفصلا پیش ہوتا ہے، امیدوار جواب با صواب ہوں۔ ایک بیمہ کمپنی میں جس کے مالک و مختار سب کے سب نصرانی المذہب ہیں علاوہ دریا و آگ کے بیمہ کے ، جان کا بیمہ بھی ہوتا ہے ، صورتیں اس کی متفرق ہیں :

پہلی صورت : میں تمام عمر ایک مقررہ فی بیمہ اتارنے والا کمپنی مذکور کو تمام عمر ہر سال دیتا رہتا ہے اور اس کے مرنے کے بعد اس کے وارثوں کو بیمہ کی رقم دی جاتی ہے مثلاً تیس سال کی عمر کے شخص نے ہزار روپیہ کی رقم کے لئے اپنا بیمہ اتارا تو سالانہ فیس اس کو اٹھائیس روپیہ دینا پڑے گا اور اس کے مرنے کے بعد کمپنی اس کے وارثوں کو پورا ایک ہزار دے گی مثلاً آج کسی شخص نے بیمہ کمپنی سے معاہدہ کیا اور پہلے سال کی فیس دی اس کے بعد دو مہینہ

یا دو سال یا چار سال کے بعد مر گیا تو بیمہ کی پوری رقم ایک ہزار روپیہ اس کے وارثوں کو مل جائے گی۔

دوسری صورت : یہ ہے کہ محدود فی فقط چند سال تک ہر سال کمپنی مذکور کو دیتا رہا اور اس کے مرنے پر اس کے وارثوں کو بیمہ کی رقم پوری ایک ہزار روپیہ دی جائیگی ، یہ پہلی صورت سے اچھی ہے ، چند سال فی بھرنے کے بعد پھرنا نہیں ہوتا ہے ، مثلاً ایک شخص کی عمر تیس سال ہے اور ساٹھ سال کی عمر تک کمپنی کو سالانہ ساڑھے تیس روپیہ فیس دیتا ہے اور پھر نہ دے تو اس کے وارثوں کو بعد موت بیمہ کی رقم دی جائے گی ، اگر بیمہ اتارنے والا قبل مدت کے مر گیا تو بیمے کی طرف سے اسکے وارثوں کو پوری رقم بیمہ کی ایک ہزار روپیہ دی جائے گی۔

تیسری صورت : کوئی شخص جو بیمہ اتارتا ہے وہ آئندہ اپنے بڑھاپے میں مثلاً پچیس سال یا ساٹھ سال یا باسٹھ سال کی عمر کو پہنچنے کے بعد بیمہ کی ہوئی رقم خود وصول کرنا چاہتا ہے اس عمر تک بیمہ اتارنے والا زندہ رہا تو رقم مذکور اس کو ملے گی ہر بڑھاپے عمر کی فیس جدا ہے مثلاً تیس سال کی عمر کا شخص ساٹھ سال

Fatawa Rizvia Volume 17 (17)

After reaching the age of [blank], if one desires one thousand, then the annual fee is thirty-four and a half rupees. If he remains alive, he will have to pay the aforementioned fee annually, and he will receive the insurance amount of one thousand at the age of sixty. If the policyholder dies in the meantime, the full insurance amount of one thousand rupees will be given to his heirs.

Fourth Case: This case is similar to the third case, the difference being that in this case, the policyholder only has to pay fees for twenty years, after which he doesn't have to pay anymore. Its fee is slightly higher than the third case. For example, if a thirty-year-old person wants one thousand rupees at the age of sixty, he will have to pay forty-two rupees annually. After twenty years, he will not have to pay anymore. When he reaches the age of sixty, the company will give him the insurance amount, i.e., the sum of one thousand rupees. If he dies in the meantime, his heirs will receive the full one thousand rupees. If someone, after taking insurance in any of the above-mentioned cases, pays the insurance fee for a few years and then does not want to pay or cannot pay and wants back the money he has filled from the company, he will only receive half of the amount of the fees paid. For example, if he kept paying for ten years, let's say it totaled four hundred, more or less. Now he cancels his contract with the company and wants back the money he filled, then he will receive only half of the four hundred, i.e., two hundred. If he did not want it back, then upon completion of the fixed term, he will receive the insurance amount proportionately according to what he chose at the time of the contract. For example, if someone took insurance of the fourth case, paid the fee for five years, then could not or did not want to pay further, he would receive a receipt for one-fourth of the amount paid, i.e., 250 rupees. He would either receive the aforementioned 250 rupees at sixty years of age provided he is alive, or it would go to his heirs after death. Insurance fees vary; the younger the age, the lower the fee, and for older ages, the fee is higher. This calculation is done at the time of taking the insurance, and the fee for whatever age one is at the time of taking the insurance has to be paid for the rest of one's life or until old age, whichever one prefers. Is it permissible according to Sharia to deposit money and enter into a contract with an insurance company in the above-mentioned cases and to collect from the said company? The questioner is of the Hanafi school of thought, so the fatwa should also be according to this school. Peace.

THE ANSWER: This is pure gambling and completely void (batil) as it does not fall under any Islamic contract. The permission given for irregular contracts (uqud fasida)

without an excuse in such places is restricted to the condition that there is a definite profit in every way, and this is not expected in such companies in any way, therefore it is not permitted. As Al-Muhaqqiq al-ala-itlaq has researched in Fath al-Qadir (as Al-Muhaqqiq al-ala-itlaq has researched in Fath al-Qadir. T). And Allah Almighty knows best.

फ़तावा रज़विया जिल्द 17 (17)

...की उम्र को पहुँचने के बाद एक हज़ार चाहता है तो सालाना उसकी फ़ीस साढ़े चौंतीस रुपये है, अगर वह ज़िंदा रहा तो सालाना उसको फ़ीस मज़कूरा देना होगा, और उसको साठ साल की उम्र में बीमा की रक़म एक हज़ार मिलेगी इस दरम्यान में बीमा उतारने वाला मर गया तो पूरी रक़म बीमा की एक हज़ार रुपया उसके वारिसों को मिल जाएगी।

चौथी सूरत: यह सूरत तीसरी सूरत से मिलती जुलती है, फ़र्क़ यह है कि इस सूरत में बीमा उतारने वाले को फ़क़त बीस साल तक फ़ीस देनी पड़ती है उसके बाद फिर देना नहीं पड़ता उसकी फ़ीस तीसरी सूरत से ज़रा ज़्यादा है मसलन तीस साल की उम्र का शख़्स साठ साल में एक हज़ार रुपया चाहता है तो उसको सालाना बयालीस रुपया देना होगा बीस साल के बाद फिर देना न होगा, जब वह साठ साल की उम्र को पहुँचेगा तो कंपनी उसको बीमा की रक़म दे देगी यानी मुबलग़ एक हज़ार रुपया, इस अस्ना में वह मर गया तो उसके वारिसों को पूरा एक हज़ार रुपया मिल जाएगा। कोई शख़्स मज़कूरा बाला सूरतों का बीमा लेने के बाद चंद साल बीमा की फ़ीस देता रहा उसके बाद देना न चाहे या दे न सका और कंपनी से रुपया जो भरा है वापस चाहता है तो फ़क़त निस्फ़ रक़म फ़ीस अदा कर्दा उसको मिलेगी, मसलन दस साल तक देता रहा अंदाज़न जुमला चार सौ हुआ ज़्यादा हुआ या कम हुआ अब वह कंपनी से अपना मुआहदा मंसूख़ कराकर जो रुपया भरा है वापस चाहता है, तो फ़क़त निस्फ़ रक़म चार सौ की दो सौ मिलेगी अगर वापस न चाहा तो मुद्दत मुक़र्ररा गुज़रने पर जिस को वह इंतख़ाब किया हो बवक़्त मुआहदा बीमा की रक़म बिल-मुनासिबत मिलेगी मसलन चौथी सूरत का बीमा किसी ने लिया पाँच साल तक फ़ीस देता रहा, उसके बाद दे न सका या देना न चाहा तो उसको पाऊ (चौथाई) रक़म की दिये की रसीद मिलेगी यानी २५० रुपया उसको या तो बशर्ते हयात साठ साल की उम्र में मज़कूरा रुपया २५० मिलेगा या बाद मौत उसके वारिसों को मिलेगा, बीमा की फ़ीस जुदा जुदा है जितनी उम्र कम होगी उतनी फ़ीस कम होगी बड़ी उम्र के लिये ज़्यादा फ़ीस है, यह हिसाब बीमा उतारने के वक़्त किया जाता है और बीमा उतारने के वक़्त जो उम्र रहती है उसकी फ़ीस तमाम उम्र या बुढ़ापे की उम्र तक भरना होगा जिस को वह पसंद करे। बालामज़कूर सूरतों से रुपया जमा करना और बीमा कंपनी से मुआहदा करना और कंपनी मज़कूरा से वसूल करना शरअन जायज़ है या नहीं? सायल हनफ़ी मज़हब है लिहाज़ा फ़तवा भी इसी मज़हब पर हो। वस्सलाम।

अल-जवाब: यह बिल्कुल क़िमार (जुआ) है और महज़ बातिल कि किसी अक़्दे शरई के तहत में दाख़िल नहीं, ऐसी जगह उक़ूदे फ़ासिदा बिग़ैर उज़्र के जो इजाज़त दी गई वह इस सूरत से मुक़ैयद है कि हर तरह ही अपना नफ़ा हो और यह ऐसी कंपनियों में किसी तरह मुतवक़्क़े(अपेक्षित) नहीं लिहाज़ा इजाज़त नहीं कमा हक़्क़क़ल मुक़क़िक़ अलल इत़लाक़ फ़ी फ़तहूल क़दीर (जैसा कि मुक़क़िक़ अलल इत़लाक़ ने फ़तहूल क़दीर में तहक़ीक़ फ़रमाई। त) वल्लाहु तआला आलम।

पेज 365 का 715

کی عمر کو پہنچنے کے بعد ایک ہزار چاہتا ہے تو سالانہ اس کی فیس ساڑھے چونتیس روپے ہے، اگر وہ زندہ رہا تو سالانہ اس کو فیس مذکورہ دینا ہوگا، اور اس کو ساٹھ سال کی عمر میں بیمہ کی رقم ایک ہزار ملے گی اس درمیان میں بیمہ اتارنے والا مرگیا تو پوری رقم بیمہ کی ایک ہزار روپیہ اس کے وارثوں کو مل جائے گی۔

چوتھی صورت: یہ صورت تیسری صورت سے ملتی جلتی ہے، فرق یہ ہے کہ اس صورت میں بیمہ اتارنے والے کو فقط بیس سال تک فیس دینی پڑتی ہے اس کے بعد پھر دینا نہیں پڑتا اس کی فیس تیسری صورت سے ذرا زیادہ ہے مثلاً تیس سال کی عمر کا شخص ساٹھ سال میں ایک ہزار روپیہ چاہتا ہے تو اس کو سالانہ بیالیس روپیہ دینا ہوگا بیس سال کے بعد پھر دینا نہ ہوگا، جب وہ ساٹھ سال کی عمر کو پہنچے گا تو کمپنی اس کو بیمہ کی رقم دے دے گی یعنی مبلغ ایک ہزار روپیہ ، اس اثناء میں وہ مرگیا تو اس کے وارثوں کو پورا ایک ہزار روپیہ مل جائے گا۔ کوئی شخص مذکورہ بالا صورتوں کا بیمہ لینے کے بعد چند سال بیمہ کی فیس دیتا رہا اس کے بعد دینا نہ چاہے یا دے نہ سکا اور کمپنی سے روپیہ جو بھرا ہے واپس چاہتا ہے تو فقط نصف رقم فیس ادا کردہ اس کو ملے گی ، مثلاً دس سال تک دیتا رہا اندازاجملہ چار سو ہوا زیادہ ہوا یا کم ہوا اب وہ کمپنی سے اپنا معاہدہ منسوخ کراکر جو روپیہ بھرا ہے واپس چاہتا ہے ، تو فقط نصف رقم چار سو کی دوسو ملے گی اگر واپس نہ چاہا تو مدت مقررہ گزرنے پر جس کو وہ انتخاب کیا ہو بوقت معاہدہ بیمہ کی رقم بالمنسبت ملے گی مثلاً چوتھی صورت کا بیمہ کسی نے لیا پانچ سال تک فیس دیتا رہا، اس کے بعد دے نہ سکا یاد ینا نہ چاہا تو اس کو پاؤ رقم کی دئے کی رسید ملے گی یعنی ۲۵۰ روپیہ اس کو یا تو بشرط حیات ساٹھ سال کی عمر میں مذکورہ روپیہ ۲۵۰ ملے گا یا بعد موت

اس کے وارثوں کو ملے گا، بیمہ کی فیس جدا جدا ہے جتنی عمر کم ہوگی اتنی فیس کم ہوگی بڑی عمر کے لئے زیادہ فیس ہے، یہ حساب بیمی اتارنے کے وقت کیا جاتا ہے اور بیمہ اتارنے کے وقت جو عمر رہتی ہے اس کی فیس تمام عمر یا بڑھاپے کی عمر تک بھرنا ہو گا جس کو وہ پسند کرے۔ بالامذکور صورتوں سے روپیہ جمع کرنا اور بیمہ کمپنی سے معاہدہ کرنا اور کمپنی مذکورہ سے وصول کرنا شرعاً جائز ہے یا نہیں؟ سائل حنفی مذہب ہے لہٰذا فتویٰ بھی اسی مذہب پر ہو۔ والسلام

الجواب: یہ بالکل قمار ہے اور محض باطل کہ کسی عقدِ شرعی کے تحت میں داخل نہیں، ایسی جگہ عقودِ فاسدہ بغیر عذر کے جو اجازت دی گئی وہ اس صورت سے مقید ہے کہ ہر طرح ہی اپنا نفع ہو اور یہ ایسی کمپنیوں میں کسی طرح متوقع نہیں لہٰذا اجازت نہیں کما حقق المحقق علی الاطلاق فی فتح القدیر (جیسا کہ محقق علی الاطلاق نے فتح القدیر میں تحقیق فرمائی ہے) واللہ تعالیٰ اعلم۔

Volume 17, Fatawa-e-Razvia

Problem 195: From Village Daro, District Pilibhit, sent by Mr. Abdul Aziz Khan, 3 Rajab 1318 AH.

Question: What do the scholars of religion say regarding this issue: Selling grain on credit at a reduced rate on the condition of payment at the harvest time, as landowners do nowadays. For example, a tenant asked the landowner for seeds for cultivation. He gave it by reducing two or three seers from the market rate and made its price payable by him, collecting it at the time of crop sharing, whether he took cash or grain, which is called 'Beech Khad' in Hindi. Is this type of sale permissible or impermissible? Please explain, may you be rewarded.

Answer: There is no harm in selling items on credit at less than the current rate when there is mutual consent. However, it is essential that the rate, price, and the promise of payment date are all fixed at the time of sale, and grain should not be sold in exchange for grain. For instance, if the market rate is twelve seers, and he sold ten mounds of grain at the rate of ten seers for forty rupees with a two-month promise, there is no harm. And if it was decided that the grain is sold in exchange for such an amount of grain which, according to today's rate, would be worth that many rupees at the time of harvest, then it is haraam (forbidden) and usury. Similarly, a promise for the time of harvest is not permissible in a sale contract. If this mentioned term is part of the sale contract, the sale will be void (fasid) and sinful. Yes, if there was no mention of the credit terms in the contract itself, but then it was agreed that the money owed by the buyer would be paid at harvest time, then it is permissible.

[Arabic Box Text]: In Ad-Durr al-Mukhtar: A sale is not valid for a deferred price until the arrival of pilgrims, the harvest of crops, the threshing of grain, or the picking of grapes, because these can be earlier or later. If he sold without specifying these terms and then deferred the price to those times, the deferment is valid, as if one became a guarantor until those times, because minor uncertainty is tolerable in debt and guarantee. (Abridged)

[Urdu Explanation of Box]: It is stated in Durr-e-Mukhtar that a sale is not valid in exchange for a price whose term is fixed with the arrival of pilgrims, the cutting of fields, the threshing of grain, or the picking of grapes, because these times keep shifting forward or backward. However, if the sale was made without mentioning these times and then the price debt was deferred to these times, then fixing the term

is correct, just as someone becomes a guarantor until the said times, because a little uncertainty is tolerable in debt and guarantee. (Abridged)

1 Durr-e-Mukhtar, Book of Sales, Chapter on Invalid Sale, Mujtabai Press, Delhi, 2/27.

जिल्द 17, फतावा-ए-रज़विया

मसला 195: ग्राम दारो, जिला पीलीभीत से मुर्सला अब्दुल अज़ीज़ खां साहब, 3 रजब 1318 हिजरी।

सवाल: उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि अनाज को उधार बेचना दर से कम भाव पर, इस शर्त के साथ कि अदायगी खलिहान के समय होगी, जैसा कि आजकल ज़मींदार करते हैं। मिसाल के तौर पर, एक आसामी (काश्तकार) ने खेती के लिए ज़मींदार से बीज माँगा। ज़मींदार ने बाज़ार भाव से दो-तीन सेर कम करके उसे दे दिया और उसकी क़ीमत उसके ज़िम्मे वाजिब-उल-अदा कर दी और बटाई के समय उसे वसूल कर लिया, चाहे वह नक़द हो या अनाज, जिसे हिन्दी में 'बीच खाद' कहते हैं। क्या इस तरह की बिक्री (बैअ) जायज़ है या नाजायज़? बयान फ़रमाएं, सवाब पायेंगे।

जवाब: कर्ज़ों को मौजूदा भाव से कम पर बेचने में कोई हर्ज नहीं है जब तक कि आपसी रज़ामंदी हो। लेकिन यह ज़रूरी है कि बिक्री के समय भाव, क़ीमत और भुगतान की तारीख सब तय कर ली जाएं। और अनाज के बदले अनाज न बेचें। मिसाल के तौर पर, भाव बारह सेर का चल रहा है और उसने दस मन अनाज दस सेर के हिसाब से दो महीने के वादे पर चालीस रुपये में बेचा, तो इसमें कोई हर्ज नहीं। और अगर यह तय हुआ कि अनाज इतने अनाज के बदले बेचा जो आज के भाव से इतने रुपये का फ़सल पर हो, तो यह हराम और सूद है। इसी तरह बिक्री के अनुबंध (बैअ) में खलिहान का समय तय करना जायज़ नहीं है। अगर अनुबंध में यह समय सीमा बताई गई तो बिक्री फ़ासिद (अमान्य) और गुनाह होगी। हाँ, अगर मूल अनुबंध में कर्ज़ का ज़िक्र नहीं था, फिर यह तय पाया कि यह रुपये जो खरीदार पर लाज़िम आए हैं, खलिहान के समय अदा किये जाएंगे, तो यह जायज़ है।

[अरबी बॉक्स पाठ]: "अद-दुर्र अल-मुख्तार" में है: किसी ऐसी मुल्तवी (टाल दी गई) क़ीमत के बदले बिक्री सही नहीं है जिसकी अवधि हाजियों के आने, या फसल कटने, या अनाज गाहने, या अंगूर तोड़ने के साथ तय की गई हो, क्योंकि ये समय आगे-पीछे होते रहते हैं। हाँ, अगर इन अवधियों का ज़िक्र किए बिना बिक्री की गई और फिर क़ीमत को इन समयों तक के लिए मुल्तवी कर दिया गया, तो यह अवधि तय करना सही है, जैसा कि कोई व्यक्ति उक्त समय तक के लिए ज़मानत (गारंटी) दे, क्योंकि कर्ज़ और ज़मानत में थोड़ी बहुत अनिश्चितता (जहालत) बर्दाश्त के काबिल है। (संक्षिप्त)

[उर्दू बॉक्स की व्याख्या]: दर्रे मुख़्तार में है कि बैअ (बिक्री) उस समन (क़ीमत) के बदले सही नहीं है जिसकी मीआद (अवधि) हाजियों के आने या खेत काटने या ग़ल्ला गाहने या अंगूर तोड़ने के साथ मुक़र्रर की गई हो क्योंकि ये औक़ात (समय) आगे पीछे होते रहते हैं। हाँ अगर इन औक़ात का ज़िक्र

किये बग़ैर बैअ की फिर समन दैन (क़ीमत का कर्ज़) को इन औक़ात के साथ मोअज्जल (मुल्तवी) कर दिया तो मुद्दत मुक़र्रर करना सही है जैसा कि कोई शख़्स औक़ात-ए-मज़कूरा तक ज़ामिन बने क्योंकि थोड़ी सी जहालत दैन और ज़मानत में क़ाबिले बर्दाश्त है। (संक्षिप्त)

1 दर्रे मुख़्तार किताबुल बुयूअ बाबुल बैअल फासिद मतबा मुज्तबाई दिल्ली 2/27. पृष्ठ 366/715

مسئلہ ۱۹۵: از موضع درو ضلع پیلی بھیت مرسلہ عبدالعزیز خاں صاحب ۳ رجب ۱۳۱۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ فروخت غلہ نسیہ ساتھ نقصان نرخ کے بشرط ادائیگی وقت خرمن گاہ جس طرح فی زمانہ زمیندار کیا کرتے ہیں مثلاً اسامی نے تخم واسطے کاشتکاری زمیندار سے طلب کیا اس نے نرخ سے دو تین سیر کم کر کے دے دیا اور اس کی قیمت اس کے ذمہ واجب الادا کر کے وقت بٹائی کے وصول کر لیا خواہ روپیہ لے لیا یا اناج جس کو ہندی میں بیچ کھاد کہتے ہیں آیا اس قسم کی بیع جائز ہے یا ناجائز؟ بینوا توجروا۔ الجواب: قرضوں نرخ موجود سے کم بیچنے میں مضائقہ نہیں جبکہ باہم تراضی ہو مگر یہ ضرور ہے کہ نرخ و قیمت و وعدہ ادائے قیمت سب وقت بیع معین کر دئے جائیں اور غلے کے بدلے غلہ نہ بیچے، مثلاً بارہ سیر کا بک رہا ہے اس نے دس من غلہ دس سیر کے حساب سے دو مہینے کے وعدے پر چالیس روپے کو بیچا کوئی حرج نہیں، اور اگر یہ ٹھہرا کہ غلہ اتنے غلے کے عوض بیچا جو آج کے بھاؤ سے اتنے روپوں کا فصل پر ہو تو حرام اور سود ہے یونہی وقت خرمن گاہ کا وعدہ بیع میں جائز نہیں ہے اگر عقدِ بیع میں یہ میعاد مذکور ہوگی بیع فاسد و گناہ ہوگی، ہاں اگر نفسِ عقد میں قرضوں کا ذکر نہ تھا پھر قرار پایا کہ یہ روپے جو مشتری پر لازم آئے وقت خرمن ادا کئے جائیں گے تو جائز ہے۔

في الدر المختار لا يصح البيع بثمن مؤجل الى قدوم الحاج والحصاد للزرع والدياس للحب والقطاف للعنب لانها تتقدم وتتأخر ولو باع مطلقاً عن هذه الآجال ثم اجل الثمن اليها صح التأجيل كما لو كفل الى هذه الاوقات لان الجهالة اليسيرة متحملة في الدين والكفالة اهـ مختصرًا۔

در مختار میں ہے کہ بیع اس ثمن کے بدلے صحیح نہیں جس کی میعاد حاجیوں کے آنے یا کھیت کاٹنے یا غلہ گاہنے یا انگور توڑنے کے ساتھ مقرر کی گئی ہو کیونکہ یہ اوقات مقدم و مؤخر ہوتے رہتے ہیں ہاں اگر ان اوقات کا ذکر کئے بغیر بیع کی پھر ثمن دین کو ان اوقات کے ساتھ مؤجل کر دیا تو مدت مقرر کرنا صحیح ہے جیسا کہ کوئی شخص اوقات مذکورہ تک ضامن بنے کیونکہ تھوڑی سی جہالت دین اور ضمانت میں قابلِ برداشت ہے اہ مختصراً (ت)

1 در مختار کتاب البیوع باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۲۷ Page 366 of 715

Fatawa Razawiya Volume 17

In any case, he will be entitled to take only the agreed-upon amount of money from him. At the time of harvest, he cannot force him to give as much grain as corresponds to the current market rate for that amount of money. To the extent that if it was stipulated in the contract that at the time of harvest, grain would be taken according to whatever the market rate is in exchange for forty rupees of the price, then the sale would become invalid (fasid) and forbidden (haram).

[Box Content] Arabic: Due to the corruption of the condition, and the merging of two deals into one, and the separation of debt for debt in what was stipulated as an exchange of the price for grain, along with the ignorance of the quantity of the sold item in this exchange.

Urdu Explanation: Because it contains a corrupt condition, the merging of two deals into one, and the separation of debt for debt in what he stipulated as an exchange of price for grain at the time of harvest, even though the quantity of the sold item in this exchange is unknown. (T)

Yes, if at the time of harvest the buyer says, "I don't have money, take grain instead of this money at today's market rate" which is known to both parties, then it is permissible as stated by the scholars and as we have explained in our Fatawas (as the scholars have given a ruling on this and we have described it in our Fatawas. T).

Issue 196: From Wahiduddin Sahib, Urdu Bazaar, Bhagalpur City.

Question: What do the scholars of religion and the muftis of the clear Shari'ah say regarding this matter: Is India Dar al-Islam (Abode of Islam) or Dar al-Harb (Abode of War)? What are the definitions of both? Is it permissible to take interest from other nations in India? Is it permissible to eat at the house of a person who takes interest or makes a living from the wages of writing interest-bearing documents? Explain and be rewarded.

Answer: India is Dar al-Islam. Dar al-Islam is a country that currently has an Islamic government, or if not now, it had one previously, and the non-Muslim king has maintained the symbols of Islam such as Friday and Eid prayers, Azan, Iqamah, and congregation. If symbols of disbelief (kufr) are implemented and symbols of Islam are completely abolished, and no person remains under the original protection, and that place is not surrounded on all four sides by Dar al-Islam, then it will become Dar al-Harb. Until these three conditions are met, no Dar al-Islam can become Dar al-

Harb. Taking interest is neither permissible from a Muslim nor from a non-believer. The interest-taker, the one who writes the bond, and the one who witnesses it are all under the same ruling.[1] If the food served is known to be exactly from interest money, then eating it is forbidden. And if interest money was shown or given beforehand to buy food in exchange, then it is not permissible, otherwise it is not permissible [sic].

[1] Sahih Muslim, Kitab al-Musaqat, Bab al-Riba, Qadimi Kutub Khana Karachi 4/27

फतावा रज़विया जिल्द 17

फिर बहरहाल वह उससे उन्हीं तयशुदा रुपयों को लेने का हकदार होगा। फसल के समय वह मजबूर नहीं कर सकता कि अब इस समय के भाव से इतने रुपयों का जो अनाज हुआ वह दे। यहाँ तक कि अगर अनुबंध में यह शर्त कर ली थी कि चालीस रुपये मूल्य के बदले फसल पर जो भाव होगा उसके हिसाब से अनाज लिया जाएगा तो बिक्री (बैअ) फासिद और हराम हो जाएगी।

[बॉक्स की सामग्री] अरबी: शर्त के बिगड़ने, एक सौदे में दो सौदों के मिलन, और अनाज के साथ मूल्य के विनिमय में जो शर्त रखी गई थी उसमें ऋण के बदले ऋण के अलग होने के कारण, जबकि इस विनिमय में बेची गई वस्तु की मात्रा अज्ञात है।

उर्दू व्याख्या: क्योंकि इसमें शर्त का बिगाड़ (फ़साद-ए-शर्त), एक सौदे में दो सौदों का मेल और ऋण के बदले ऋण का अलग होना है, उस चीज़ में जिसे उसने फसल के समय मूल्य के विनिमय की शर्त लगाई, बावजूद इसके कि इस विनिमय में बेची गई वस्तु (अनाज) की मात्रा अज्ञात है। (त)

हाँ, अगर फसल पर खरीदार कहे कि "मेरे पास रुपया नहीं है, आज के बाज़ार भाव से (जो दोनों पक्षों को पता है) इन रुपयों के बदले अनाज ले लो" तो यह जायज़ है, जैसा कि विद्वानों ने स्पष्ट किया है और हमने अपने फतावा में बयान किया है। (जैसा कि इस पर विद्वानों ने हुक्म दिया है और हमने इसे अपने फतावा में वर्णित किया है। त)

मसला 196: प्रेषक वहीदुद्दीन साहब, मुहल्ला उर्दू बाज़ार, भागलपुर सिटी।

प्रश्न: धर्म के विद्वान और शरीयत के मुफ़्ती इस मसले में क्या फरमाते हैं कि भारत दारुल-इस्लाम है या दारुल-हर्ब? और दोनों की परिभाषाएं क्या हैं? क्या भारत में अन्य समुदायों से ब्याज लेना जायज़ है? जो व्यक्ति ब्याज लेता है या ब्याज के दस्तावेजों को लिखने की मज़दूरी से अपनी जीविका चलाता है, ऐसे व्यक्ति के यहाँ का खाना जायज़ है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य पाएँ।

उत्तर: भारत दारुल-इस्लाम है। दारुल-इस्लाम वह देश है जहाँ वर्तमान में इस्लामी शासन हो, या यदि अब नहीं है तो पहले था, और गैर-मुस्लिम राजा ने उसमें इस्लाम के प्रतीकों जैसे जुमे और ईद की नमाज़, अज़ान, इकामत और जमात को बाकी रखा हो। और अगर कुफ्र के प्रतीक जारी किए गए और इस्लाम के प्रतीकों को पूरी तरह हटा दिया गया, और उसमें कोई भी व्यक्ति मूल सुरक्षा पर शेष न रहा, और वह स्थान चारों ओर से दारुल-इस्लाम से घिरा हुआ न हो, तो वह दारुल-हर्ब हो जाएगा।

जब तक ये तीनों शर्तें एक साथ पूरी न हों, कोई दारुल-इस्लाम दारुल-हर्ब नहीं बन सकता। ब्याज लेना न मुसलमान से हलाल है न काफिर से। ब्याज खाने वाला, दस्तावेज़ लिखने वाला और उस पर गवाही देने वाले सभी एक ही हुक्म में हैं।[1] यदि सामने लाया गया खाना ज्ञात हो कि वह बिल्कुल ब्याज के पैसे से है, तो उसका खाना हराम है। और अगर ब्याज का रुपया दिखाकर या पहले देकर उसके बदले खाने की चीज़ खरीदी गई, तो वह नाजायज़ है, वरना नाजायज़ है।

[1] सहीह मुस्लिम, किताब अल-मुसाकात, बाब अर-रिबा, पुरानी कुतुब खाना कराची 4/27

پھر بہر حال یہ اس سے انہیں قرار یافتہ روپوں کے لینے کا مستحق ہوگا وقتِ خرمن جبر نہیں کرسکتا کہ اب اس وقت کے بھاؤ سے اتنے روپوں کا جو غلہ ہوا وہ دے یہاں تک کہ اگر عقد میں یہ شرط کرلی تھی کہ چالیس روپے زرِ ثمن کے عوض فصل پر جو بھاؤ ہوگا اس کے حساب سے غلہ لیا جائیگا تو بیع فاسد وحرام ہوجائے گی۔

[باکس کا متن] لفساد الشرط وصفقتین فی صفقة والافتراق عن دین بدین فی ما شرط من معاوضة الثمن بالحب مع جهالة قدر المبیع فی هذه المعاوضة

کیوں کہ اس میں فسادِ شرط، ایک سودے میں دو سودوں کا اجتماع اور جدا ہونا ہے دین سے دین کے بدلے میں اس چیز میں جو اس نے وقتِ خرمن پر معاوضہِ ثمن کی شرط لگائی باوجودیکہ اس معاوضہ میں مبیع کی مقدار مجہول ہے (ت)

ہاں اگر فصل پر مشتری کہے میرے پاس روپیہ نہیں آج کے نرخِ بازار سے کہ فریقین کو معلوم ہے ان روپوں کے بدلے غلہ لے لو تو جائز ہے کما نص علیه العلماء وبیناه فی فتاونا (جیسا کہ اس پر علماء نے نص فرمائی ہے اور ہم نے اس کو اپنے فتاوٰی میں بیان کیا ۔ ت)

مسئلہ ۱۹۶: مرسلہ وحید الدین صاحب محلہ اردو بازار بھاگلپور سٹی

کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیانِ شرعِ متین اس مسئلہ میں کہ ہندوستان دارالاسلام ہے یا دارالحرب اور دونوں کی تعریفیں کیا ہیں، ہندوستان میں غیر اقوام سے سود لینا جائز ہے یا نہیں؟ جو شخص سود لیتا ہے یا سود تمسکات کی تحریر کی اجرت سے اپنی اوقات گزاری کرتا ہوا ایسے شخص کے یہاں کا کھانا جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: ہندوستان دارالاسلام ہے دارالاسلام وہ ملک ہے کہ فی الحال اس میں اسلامی سلطنت ہو، یا اب نہیں تو پہلے تھی، اور غیر مسلم بادشاہ نے اس میں شعائرِ اسلام مثل جمعہ و عیدین و اذان واقامت و جماعت باقی رکھے اور اگر شعائرِ کفر جاری کئے اور شعائرِ اسلام یک لخت اٹھا دئے اور اس میں کوئی شخص امانِ اول پر باقی نہ رہا، اور وہ جگہ چاروں طرف سے دارالاسلام سے گھری ہوئی نہیں تو دارالحرب ہو جائے گا، جب تک یہ تینوں شرطیں جمع نہ ہوں کوئی دارالاسلام دارالحرب نہیں ہو سکتا۔ سود لینا نہ مسلمان سے حلال ہے نہ کافر سے۔ سود خور اور تمسک لکھنے والا اور اس پر گواہی کرنیوالے سب ایک حکم میں ہیں[1] جو کھانا سامنے لایا اگر معلوم ہو کہ یہ بعینہ سود کا ہے تو اس کا کھانا حرام اور اگر سود کار روپیہ دکھا کر یا پہلے دے کر اسکے عوض کھانے کی چیز خریدی جب ناجائز ہے ورنہ ناجائز۔

1 صحیح مسلم کتاب المساقات باب الربوا قدیمی کتب خانہ کراچی ۴/ ۲۷

No, but mixing with such people is inappropriate. Allah the Almighty knows best.

Problem 17: From Godna Post Office, Yung, District Saran, Madrasa Hamidiyah, sent by Munshi Abdul Hamid Sahib, Administrator of the said Madrasa, 18 Shawwal 1331 AH.

What do the esteemed scholars say about whether it is permissible to take interest (riba) from the people of war (Ahl al-Harb) in India, whether they are Hindus, Christians, or others towards whom we have no responsibility of protection (Dhimmah)? (T)

Answer: By the praise of Allah the Almighty, India is Dar al-Islam (Abode of Islam) because many Islamic symbols (Sha'air) remain. As long as any connection to Islamic symbols remains, a land continues to be Dar al-Islam, for Islam is superior and not surpassed [1]. As for taking interest, it is absolutely forbidden due to the general nature of the prohibitory texts. What scholars have mentioned regarding the permissibility of taking an excess in Dar al-Harb (Abode of War) is not from the category of interest at all. This is because interest only applies to protected wealth (mal ma'sum), and the wealth of the people of Dar al-Harb is not protected. Even if someone from among the people of war embraces Islam there and does not migrate to us in Dar al-Islam, taking their wealth is taking permissible (mubah) wealth, not interest. This is why the researchers say "there is no interest in Dar al-Harb," they do not say that interest is permissible there.

1. Sahih al-Bukhari, Book of Funerals, Chapter: When a child accepts Islam, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/180. Page 368 of 715

जिल्द सत्रह (17) फ़तावा-ए-रज़विया

नहीं, बल्कि ऐसे लोगों से घुलना-मिलना अनुचित है। अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

मसला 17: गोदना डाकघर, युंग, जिला सारण, मदरसा हमीदिया से मुंशी अब्दुल हमीद साहिब, उक्त मदरसा के प्रशासक द्वारा भेजा गया, 18 शव्वाल 1331 हिजरी।

माननीय विद्वान क्या कहते हैं कि क्या भारत में 'अहले हर्ब' (युद्धरत लोग) से सूद (ब्याज) लेना जायज़ है? चाहे वे हिंदू हों, ईसाई हों या उनके अलावा अन्य कोई, जिनके प्रति हमारी कोई सुरक्षा की ज़िम्मेदारी (ज़िम्मा) नहीं है। (त)

उत्तर: अल्लाह तआला की स्तुति से, भारत 'दारुल इस्लाम' है क्योंकि इसमें कई इस्लामी प्रतीक (शाएर) शेष हैं। जब तक इस्लामी प्रतीकों का कोई संबंध बना रहता है, वह भूमि दारुल इस्लाम ही रहती है, क्योंकि इस्लाम सर्वोच्च होता है और उसे दबाया नहीं जा सकता [1]। रहा सूद लेने का सवाल, तो वह मनाही वाले ग्रंथों (नसूस) की सामान्यता के कारण पूरी तरह से हराम है। विद्वानों ने दारुल हर्ब में अधिक लेने की वैधता का जो उल्लेख किया है, वह सूद की श्रेणी में बिल्कुल नहीं आता है। इसका कारण यह है कि सूद केवल संरक्षित धन (माल-ए-मासूम) पर लागू होता है, और दारुल हर्ब के लोगों का धन संरक्षित नहीं है। यहाँ तक कि अगर अहले हर्ब में से कोई व्यक्ति वहीं मुसलमान हो जाता है और प्रवास (हिजरत) करके हमारे दारुल इस्लाम में नहीं आता है, तो उसका धन लेना 'मुबाह' (अनुमेय) धन लेना है, न कि सूद लेना। इसीलिए शोधकर्ता कहते हैं कि "दारुल हर्ब में कोई सूद नहीं है," वे यह नहीं कहते कि वहां सूद जायज है।

1. सहीह अल-बुखारी, किताबुल जनाइज़, अध्याय: जब बच्चा इस्लाम स्वीकार करता है, क़दीमी कुतुब खाना, कराची, 1/180। पृष्ठ 715 में से 368

نہیں مگر ایسے لوگوں سے اختلاط نامناسب ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۱۷: از گودنا ڈاکخانہ یونگ ضلع سارن مدرسہ حمیدیہ مرسلہ منشی عبدالحمید صاحب ناظم مدرسہ مذکورہ ۱۸/ شوال ۱۳۳۱ھ ما یقول السادۃ الفضلاء ھل یجوز اخذ الربا عن اھل الحرب في الھند سواء کانوا ھنودا ام نصرانیین او غیرھم ممن لا ذمۃ لھم علینا۔ کیا فرماتے ہیں بزرگ فضلاء کہ کیا ہندوستان میں اہل حرب سے سود لینا جائز ہے؟ چاہے وہ ہندو ہوں یا نصرانی ہوں یا ان کے علاوہ جن کا ذمہ ہم پر لازم نہیں (یعنی ذمی نہیں)۔ (ت)

الجواب: الھند بحمدہ تعالٰی دار الاسلام لبقاء کثیر من شعائر الاسلام وما بقی علقۃ منھا تبقی دار الاسلام دار الاسلام لان الاسلام یعلو ولا یعلی ۱ اما اخذ الربا فأنہ لا یجوز مطلقا لاطلاق نصوص التحریم وما ذکروا من جواز اخذ الفضل في دار الحرب فلیس من باب الربا في شیئ ، لان الربا انما یکون في مال معصوم و مال اھل دار الحرب غیر معصوم حتی من اسلم منھم ثم ولم یھاجر الینا فاخذ ذلك اخذ مال مباح لا اخذ ربا، ولذا یقول المحققون لا ربا في دار الحرب لا انہ یجوز اخذ الربا فیھا۔ ہندوستان الحمد للہ دار الاسلام ہے کیونکہ اس میں بہت سے شعائر اسلامی باقی ہیں اور جب تک ان شعائر اسلامیہ کا تعلق باقی رہے دار الاسلام دار الاسلام ہی رہتا ہے اس لئے کہ اسلام غالب ہوتا ہے مغلوب نہیں ہوتا۔ رہا سود کا لینا تو وہ نصوص تحریم کے اطلاق کی وجہ سے مطلقاً حرام ہے اور فقہاء کرام نے جو دار الحرب میں زیادہ لینے کے جواز کا ذکر کیا ہے وہ سود کے قبیلہ سے نہیں ہے کیونکہ سود مال معصوم میں ہوتا ہے اور اہل حرب کا مال معصوم نہیں یہاں تک کہ اگر اہل حرب میں سے کوئی شخص وہاں ہی مسلمان ہوا اور ہجرت کرکے ہماری طرف دار الاسلام میں نہیں آیا تو اس کا

مال لینا مال مباح کا لینا ہے نہ کہ سود کا لینا، اسی لئے محققین فرماتے ہیں کہ دار الحرب میں کوئی سود نہیں، یوں نہیں فرماتے کہ وہاں سود

۱ صحیح البخاری کتاب الجنائز باب اذا اسلم الصبی قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۱۸۰ Page 368 of 715

Fatawa Razawiya (Volume 17)

[Arabic Column:] As they say, there is no usury (riba) between a master and his slave; it is not because it is permissible for the master to take usury from his slave. Rather, the term 'riba' is applied to it only in appearance, while legal rulings pertain to realities. This ruling encompasses every belligerent enemy (harbi) who is not under protection (musta’min), even if they are in the abode of Islam (Dar al-Islam), because the basis is the lack of sanctity (of their property), which includes all of them. Thus, nothing is forbidden for us with them except treachery. If you avoid treachery and take from them whatever you take under the name of any contract you desire, you have indeed taken permissible (mubah) property for which there is no liability upon you. Just as the Greatest Siddiq (Abu Bakr), may Allah be pleased with him, made a bet with the leaders of the Meccan disbelievers regarding the victory of the Romans and took their property with the permission of the Prophet, peace and blessings be upon him and his family. This was only permissible because of the lack of sanctity (of their property), otherwise, it would have been prohibited gambling. This is the established principle in this matter; whoever masters it, the derivation of specific rulings becomes easy for him. We have detailed this in our Fatawa. Indeed, there are two subtle points here to be mindful of: First, one should avoid situations that invite suspicion, especially for one who openly takes extra wealth from them...

[Urdu Column:] ...it is permissible to take, as they say that there is no interest between the master and his slave, not that taking interest from the slave by the master is permissible. The application of interest to it is merely in terms of its appearance, and rulings are for realities (not for appearances). This mentioned ruling includes every non-protected belligerent (harbi), even if he is in the land of Islam, because this ruling depends on the property not being protected (ma'sum), and that (lack of protection) includes all non-protected belligerents. Therefore, nothing is haram for us with them except deception. When you take their wealth under any name of a contract you want while avoiding deception, then you have indeed taken permissible wealth, and there is no accountability for you in this. As Sayyiduna Siddiq-e-Akbar (may Allah be pleased with him) made a condition with the infidels of Mecca regarding the victory of Rome and took the wealth of the infidels of Mecca on this condition with the permission of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him and his family), because their wealth is not protected, otherwise, it is gambling which is haram. This is a general rule in this chapter; whoever masters it, extracting details from it becomes easy, and we have discussed it in detail in our

Fatawa. Yes, there are two subtle points here that are necessary to be aware of: the first thing is that places of accusation should be avoided. The person who openly received excess wealth from the belligerents and...

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

[अरबी स्तंभ:] जैसा कि वे कहते हैं कि स्वामी और उसके दास के बीच कोई सूद (रिबा) नहीं है; इसका मतलब यह नहीं है कि स्वामी के लिए अपने दास से सूद लेना जायज़ है। बल्कि, इस पर 'रिबा' नाम का प्रयोग केवल बाहरी रूप के आधार पर किया गया है, जबकि कानूनी निर्णय वास्तविकताओं के लिए होते हैं। यह निर्णय हर उस शत्रु के लिए है जिसे शरण नहीं मिली है (हरबी ग़ैर-मुस्तमिन), चाहे वह इस्लाम के क्षेत्र (दार-अल-इस्लाम) में ही क्यों न हो, क्योंकि इस निर्णय का आधार उनके धन की पवित्रता (इस्मत) का अभाव है, जो उन सभी पर लागू होता है। इसलिए, हमारे लिए उनके साथ विश्वासघात के अलावा कुछ भी वर्जित नहीं है। अत; यदि आप विश्वासघात से बचते हुए किसी भी अनुबंध (अक़्द) के तहत उनसे जो कुछ भी लेते हैं, तो आपने वास्तव में वैध (मुबाह) धन लिया है जिसके लिए आप पर कोई ज़िम्मेदारी नहीं है। जैसा कि सिद्दीक-ए-अकबर (अबू बक्र), अल्लाह उन पर प्रसन्न हो, ने रोमियों की विजय के बारे में मक्का के काफिरों के साथ शर्त लगाई थी और नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की अनुमति से उनका धन प्राप्त किया था। यह जायज़ था क्योंकि (उनके धन की) पवित्रता का अभाव था, अन्यथा यह जुआ होता जो कि हराम है। इस अध्याय में यह एक स्थापित नियम है; जिसने इसे अच्छी तरह समझ लिया, उसके लिए विशिष्ट उप-नियमों (जुज़इयात) को निकालना आसान हो गया। हमने अपने फ़तावा में इस पर विस्तार से चर्चा की है। यहाँ दो बारीक बातें हैं जिन पर ध्यान देना आवश्यक है: पहली बात यह है कि संदेह वाले स्थानों से बचना चाहिए। जिस व्यक्ति ने खुले तौर पर शत्रुओं (हरबियों) से अतिरिक्त धन प्राप्त किया और...

[उर्दू स्तंभ:] ...लेना जायज़ है जैसा कि वे फरमाते हैं कि स्वामी और उसके दास के बीच कोई सूद नहीं है, न यह कि स्वामी का दास से सूद लेना जायज़ है। इस पर सूद का प्रयोग मात्र बाहरी रूप के आधार पर है और निर्णय तो वास्तविकताओं के लिए होते हैं (न कि रूप के लिए)। और यह उल्लेखित नियम हर उस शत्रु के लिए है जिसे शरण नहीं मिली है, चाहे वह इस्लाम के क्षेत्र में ही क्यों न हो क्योंकि इस नियम का आधार धन के पवित्र (मासूम) न होने पर है और वह (पवित्रता का अभाव) उन सभी शत्रुओं को शामिल है। इसलिए हमारे लिए उनके साथ सिवाय धोखाधड़ी के कुछ हराम नहीं है। और जब आप धोखाधड़ी से बचते हुए उनका धन जिस भी अनुबंध के नाम से चाहें लें तो बेशक आपने वैध धन लिया, इसमें आप पर कोई जवाबदेही नहीं है। जैसा कि सैयदुना सिद्दीक-ए-अकबर (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने रोम की जीत के बारे में मक्का के काफिरों से शर्त लगाई थी और नबी पाक (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की अनुमति से उस शर्त पर मक्का के काफिरों का धन ले लिया

क्योंकि उनका धन पवित्र नहीं था वरना तो यह जुआ है जो कि हराम है। इस अध्याय में यह एक सामान्य नियम है; जिसने इसे मजबूत कर लिया उस पर उप-नियमों को निकालना आसान हो गया और हमने अपने फ़तावा में इस पर विस्तार से चर्चा की है। हाँ यहाँ दो बारीक बातें हैं जिन पर सचेत होना ज़रूरी है: पहली बात यह है कि तोहमत (संदेह) के स्थानों से बचना चाहिए। जिस व्यक्ति ने खुले तौर पर शत्रुओं से अधिक धन प्राप्त किया और...

[Arabic Column:] كما يقولون لاربا بين السيد وعبده لانه يجوز للسيد اخذ الربا من عبده، فانما اطلق عليه اسم الربا نظر الى الصورة، وانما الاحكام للحقائق وهذا الحكم يعم كل حربي غير مستأمن ولو في دار الاسلام لان المناط عدم العصمة وهو يشملهم جميعا، فلا يحرم علينا معهم الا الغدر، فاذا جاوزته واخذت منهم ما اخذت بأسم اى عقد اردت فقد اخذت مالا مباحا لاتبعه عليك فيه كما راهن الصديق الاكبر عليه الرضوان الاكابر كفار مكة في غلبة الروم واخذ مالهم بأذنه عليه وعلى اله افضل الصلوة والسلام، فانما جاز لعدم العصمة والالكان قمارا محرما، فهذا هو الاصل المطرد فى هذا الباب ومن اتقنه تيسر عليه استخراج الجزئيات وقد فصلنا القول فيه فى فتاوانا، نعم هنا دقيقتان يجب التنبه لهما الاولى ينبغى التحرز عن مواقف التهم ممن جأهر بأخذ الفضل منهم

[Urdu Column:] لینا جائز ہے جیسا کہ وہ فرماتے ہیں کہ مالک اور اس کے غلام کے درمیان کوئی سود نہیں ، نہ یہ کہ مالک کا غلام سے سود لینا جائز ہے، اس پر سود کا اطلاق محض صورت کے اعتبار سے ہے اور احکام تو حقائق کے لئے ہوتے ہیں (نہ کہ صورت کے لئے) اور یہ حکم مذکور ہر حربی غیر مستأمن کو شامل ہے اگر چہ وہ دارالاسلام میں ہو کیونکہ اس حکم کا دار و مدار مال کے معصوم نہ ہونے پر ہے اور وہ (عدم عصمت) تمام غیر مستأمن حربیوں کو شامل ہے چنانچہ ہم پر ان کے ساتھ سوائے دھوکا بازی کے کچھ حرام نہیں ، اور جب تو دھوکا بازی سے اعراض کرتے ہوئے ان کا مال جس عقد کے نام سے چاہے لے تو بیشک تو نے مال مباح لیا اس میں تجھ پر کوئی مواخذہ نہیں جیسا کہ سید نا صدیق اکبر رضی اللہ تعالیٰ عنہ نے غلبہ روم کے بارے میں کفار مکہ سے شرط لگائی اور نبی اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ والہ وسلم کی اجازت سے اس شرط پر کفار مکہ کا مال لے لیا کیونکہ ان کا مال معصوم نہیں ورنہ تو یہ جوا

ہے جو کہ حرام ہے۔ اس باب میں یہ قاعدہ کلیہ ہے جس نے اس کو مستحکم کر لیا اس پر جزئیات کا استخراج آسان ہو گیا اور ہم نے اپنے فتاویٰ میں اس پر مفصل گفتگو کی ہے ہاں یہاں دو باریک باتیں ہیں جن پر متنبہ ہونا ضروری ہے ، پہلی بات یہ ہے کہ تہمت کی جگہوں سے بچنا چاہئے ۔ جس شخص نے اعلانیہ طور پر حربیوں سے زیادتی مال وصول کی اور

Fatawa Razawiya Volume 17

(Arabic Text): With the correct intention mentioned, he is indeed taking lawful wealth, but the common people will accuse him of taking usury (riba). Therefore, those who hold a position of dignity in religion should avoid it. Secondly, some of the permissible forms might be crimes under the law. Engaging in them would be exposing oneself to harm and humiliation, which is not allowed. Thus, it is necessary to avoid such forms. Apart from that, it is permissible and allowed with no restriction. However, whoever takes excess wealth from the harbis (those at war with Muslims) with the intention of usury, he has intended a sin. "Actions are according to intentions, and for every man is what he intended," as jurists have stated regarding one who intentionally looks from afar at a cloth placed in a niche, thinking it is a non-mahram woman. He sins because of his intention, even though looking at a cloth is inherently permissible. (T) And Allah (Glorified and Exalted is He) knows best.

(Urdu Text Translation): With the correct intention mentioned, he is indeed taking lawful wealth, but the common people will accuse him of taking usury (riba). Therefore, those who hold a position of dignity in religion should avoid it. Secondly, some of the permissible forms might be crimes under the law. Engaging in them would be exposing oneself to harm and humiliation, which is not allowed. Thus, it is necessary to avoid such forms. Apart from that, it is permissible and allowed with no restriction. However, whoever takes excess wealth from the harbis with the intention of usury, he has intended a sin. "Actions are according to intentions, and for every man is what he intended," as jurists have stated regarding one who intentionally looks from afar at a cloth placed in a niche, thinking it is a non-mahram woman. He sins because of his intention, even though looking at a cloth is inherently permissible. (T) And Allah (Glorified and Exalted is He) knows best.

Problem 198: From Lucknow, Jhaulal Market, House No. 73, Petitioner: Syed Aziz-ur-Rahman, 11th Ramadan 1339 AH. What is your ruling, may Allah have mercy on you? The prohibition of usury (riba) is proven by explicit texts (nasus), but no explanation of riba was given in the Holy Quran. The riba that was commonly prevalent in the days of ignorance (Jahiliyya) was that people would take loans from each other for a fixed period and [the period...]

1 Sahih al-Bukhari, Chapter: How the Revelation Began, Qadimi Kutub Khana Karachi 1/2 Page 370 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

(अरबी पाठ): बताई गई सही नीयत के साथ, वह वास्तव में हलाल (वैध) धन ले रहा है, लेकिन आम लोग उन पर सूद (ब्याज) खाने का आरोप लगाएंगे। इसलिए, धर्म में प्रतिष्ठित लोगों को इससे बचना चाहिए। दूसरी बात यह है कि कुछ वैध रूप कानून के तहत अपराध हो सकते हैं। उनमें शामिल होना खुद को नुकसान और अपमान के लिए उजागर करना है, जो कि अनुमति नहीं है। इसलिए ऐसे रूपों से बचना आवश्यक है। इसके अलावा, यह मुबाह (अनुमेय) और जायज़ है, इसमें कोई रोक नहीं है। हाँ, जिसने हराबियों (युद्धरत गैर-मुस्लिमों) से सूद की नीयत से अधिक धन लिया, उसने पाप का इरादा किया। "कर्म नीयतों पर निर्भर हैं, और हर व्यक्ति के लिए वही है जिसकी उसने नीयत की," जैसा कि फकीहों (धर्मशास्त्रियों) ने उस व्यक्ति के बारे में स्पष्ट किया है जिसने आले (ताक) में रखे कपड़े को दूर से गैर-मेहरम औरत समझकर इरादतन उसकी ओर देखा। उसे उसके इरादे के कारण पाप हुआ, हालाँकि कपड़े को देखना अपने आप में अनुमेय है। (त) और अल्लाह (महान और उच्च) सबसे बेहतर जानता है।

(उर्दू अनुवाद): बताई गई सही नीयत के साथ, वह वास्तव में हलाल धन ले रहा है, लेकिन आम लोग उस पर सूद खाने का आरोप लगाएंगे। इसलिए धार्मिक प्रतिष्ठा वाले लोगों को इससे बचना चाहिए। दूसरी बात यह है कि अनुमेय रूपों में से कुछ कानूनी तौर पर अपराध होते हैं। उनमें शामिल होना खुद को कष्ट और अपमान के लिए प्रस्तुत करना है और वह वर्जित है। इस तरह के रूपों से बचना आवश्यक है और इसके अलावा सब अनुमेय और जायज़ है, इसमें कोई रोक नहीं है। हाँ, जिसने हराबियों से सूद की नीयत से अधिक धन लिया, उसने पाप का इरादा किया और कर्मों का दारोमदार नीयतों पर है। हर व्यक्ति के लिए वही है जिसकी उसने नीयत की, जैसा कि फकीहों ने उस व्यक्ति के बारे में स्पष्ट किया है जिसने ताक में रखे कपड़े को दूर से गैर-मेहरम औरत समझते हुए इरादतन उसकी ओर देखा, क्योंकि उसने अपने इरादे में पाप किया हालाँकि कपड़े को देखना अपने आप में अनुमेय है। (त) और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

मसाला 198: लखनऊ बाज़ार झाऊलाल मकान 73 से, प्रार्थी: सैयद अज़ीज़-उर-रहमान, 11 रमज़ान 1339 हिजरी। आपका क्या फरमान है, अल्लाह आप पर रहम करे? सूद (रिबा) की हुरमत (निषेध) स्पष्ट ग्रंथों (नसूस) से सिद्ध है, लेकिन कुरान मजीद में रिबा की कोई व्याख्या नहीं की गई है। जाहिलियत (अज्ञानता) के युग में जो रिबा आम तौर पर प्रचलित था वह यह था कि लोग एक-दूसरे से एक निश्चित अवधि के लिए ऋण लेते थे और...

1 सहीह अल-बुखारी, अध्याय: वह्य (रहस्योद्घाटन) कैसे शुरू हुआ, कदीमी कुतुब खाना कराची 1/2

पृष्ठ 370 का 715

(عربی عبارت): بالنية الصحيحة المذكورة انما يأخذ حلالا ولكن يتهمه العوام بكل الربا فينبغى التحرز عنه لذوى الهيئات فى الدين و الثانية ان من الصور المباحة ما يكون جرما فى القانون ففى اقتحامه تعريض النفس للاذى والاذلال وهو لا يجوز فيجب التحرز عن مثله وما عدا ذلك مباح سائغ لا حجر فيه، نعم من اخذ منهم الفضل و نوى اخذ الربا فهو الذى قصد المعصية، و انما الاعمال بالنيات ولكل امرئ ما نوى، كما نصوا عليه في من تعمد النظر من بعيد الى ثوب موضوع فى الطاق ظنا منه انها امرأة اجنبية حيث يأثم بما قصد وان كان النظر الى الثوب مباحاً فى نفسه وهو سبحانه و تعالى اعلم۔

(اردو ترجمہ): نیت اس کی صحیح ہے جس کا ذکر ہوا تو بیشک وہ حلال مال لیتا ہے لیکن عوام اس پر سود کھانے کی تہمت لگائیں گے لہذا دینی اعتبار سے صاحب حیثیت لوگوں کو اس سے اجتناب کرنا چاہئے دوسری بات یہ ہے کہ مباح صورتوں میں سے بعض قانونی طور پر جرم ہوتی ہیں ان میں ملوث ہونا اپنی ذات کو اذیت و ذلت کے لئے پیش کرنا ہے اور وہ ناجائز ہے، اس طرح کی صورتوں سے بچنا ضروری ہے اور اس کا ماسوا مباح و جائز ہے اس میں کوئی ممانعت نہیں، ہاں جس نے حربیوں سے زیادہ مال بنیت سود لیا تو اس نے گناہ کا قصد کیا اور اعمال کا دار و مدار نیتوں پر ہے ہر شخص کے لئے وہی کچھ ہے جس کی اس نے نیت کی، جیسا کہ فقہاء کرام نے اس شخص کے بارے میں اس پر نص کی ہے جس نے طاق میں رکھے ہوئے کپڑے کو دور سے غیر محرم عورت سمجھتے ہوئے قصدًا اس کی طرف نظر کی کیونکہ اس نے اپنے قصد میں گناہ کیا اگرچہ کپڑے کو دیکھنا فی نفسہ مباح ہے۔ (ت) وھو سبحانہ و تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۹۸: از لکھنؤ بازار جھاؤلال مکان ۷۳ مسئولہ سید عزیز الرحمان ۱۱/ رمضان ۱۳۳۹ھ ما قولکم رحمکم اللہ (آپ کا کیا فرمان ہے اللہ آپ پر رحم کرے ۔ ت) ربا کی حرمت نصوص صریحہ

سے ثابت ہے مگر قرآن مجید میں ربا کی کوئی تفسیر نہیں کی گئی ، ایام جاہلیت میں جو ربا عام طور پر شائع تھا وہ یہ تھا کہ لوگ ایک دوسرے سے میعاد معینہ پر قرض لیتے تھے اور میعاد

1 صحیح البخاری باب کیف کان بدء الوحی قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲ Page 370 of 715

...upon passing [the time], the debtor would tolerate an increase on the principal amount, or an agreement would be made between them beforehand. This increment would be added to the principal, and then interest would be charged on it, just as the method of moneylending is in this era. There is no doubt about this form being forbidden (haram). However, in this era, new forms of transactions have arisen, such as bank or life insurance companies or shares in railways and mills, etc., which engage in commercial business. The person who deposits money in them does not, in reality, give a loan, and the profit he receives is not, in reality, interest; rather, it is a kind of participation in that trade. And the interest that is fixed, even if it is termed 'interest', is not interest in reality, but it is the profit of that business which is refined. Nowhere in the Holy Quran is the prohibition of refined profit mentioned, nor does there seem to be any reason for it. This is because a person who does not have the ability to understand commercial accounting has no choice but to take three or five percent after refining it beforehand, especially in this era when commercial businesses are opened with partnerships of millions of rupees and a body of directors is appointed by the partners to run the business, keep accounts, and specify profits and maintain a reserve fund. These directors are, in reality, agents (wakil) on behalf of those partners. Therefore, the profits proposed by these agents after setting aside the reserve fund cannot be interest, nor is putting money into such a business called a loan. Furthermore, the reason for the prohibition of Riba (interest/usury) stated in the blessed verse 'neither wrong nor be wronged' (Surah Al-Baqarah 2:279) does not apply to this in any way. It is necessary that the noble scholars reflect on this and write an answer so that the Muslims may find relief from the struggle they are currently facing.

The Answer: Only four scenarios are conceivable here: the person giving this money for use in work does so for the purpose of partnership, or as a gift (hiba), or as a loan for use (ariya), or as a loan (qard). The form of a gift is obviously not present here, and the invalidity of partnership is clearer than the sun. Partnership is a contract whose requirement is the sharing of both partners in the principal and the profit. Fixing a specified amount of money for one partner cuts off the partnership, as it is possible that the profit is only that much, then he alone becomes the owner of the total profit and the other partner gets nothing; then where was the sharing in profit? It is stated in Jawhara Nayyira and Tanwir al-Absar:

'Al-sharikatu 'ibaratu min 'aqdin bayna...'

[In Tanwir and the commentary of the researcher Ala'i:] 'Partnership is the name of two becoming partners in the principal and the profit.'

1 The Holy Quran 2/279

...समय बीत जाने पर ऋणी मूलधन पर वृद्धि को सहन करता था या पहले ही दोनों के बीच समझौता हो जाता था, उसी मूलधन पर उस वृद्धि को जोड़कर फिर उस पर ब्याज लगाया जाता था जैसा कि इस युग में साहूकारी का तरीका है। इस रूप के हराम होने में कोई संदेह नहीं है। लेकिन अब इस युग में लेन-देन के नए रूप उत्पन्न हो गए हैं जैसे बैंक या जीवन बीमा कंपनी या रेलवे और मिलों के शेयर आदि जो व्यापारिक व्यवसाय करते हैं। इनमें जो व्यक्ति रुपया जमा करता है वह वास्तव में ऋण नहीं देता और जो लाभ उसे मिलता है वह वास्तव में ब्याज नहीं होता बल्कि वह उस व्यापार में एक प्रकार की भागीदारी है। और जो ब्याज निर्धारित होता है, भले ही वह 'ब्याज' शब्द से हो, लेकिन वास्तव में ब्याज नहीं है बल्कि वह उस व्यवसाय का लाभ है जो स्पष्ट (refined) होता है। और पवित्र कुरान में कहीं भी स्पष्ट लाभ की मनाही नहीं आई है और न ही इसका कोई कारण ज्ञात होता है। इसका कारण यह है कि जिस व्यक्ति को व्यापारिक लेखा-जोखा समझने की क्षमता न हो, उसके पास इसके बिना कोई चारा नहीं है कि वह पहले से ही तीन या पांच प्रतिशत स्पष्ट करके लिया करे, विशेष रूप से इस युग में जब करोड़ों रुपये की भागीदारी से व्यापारिक व्यवसाय खोले जाते हैं और भागीदारों की ओर से व्यवसाय चलाने, हिसाब-किताब रखने, मुनाफ़ा निर्धारित करने और आरक्षित निधि (रिजर्व फंड) बनाए रखने के लिए निदेशकों का एक समूह नियुक्त किया जाता है, जो वास्तव में उन भागीदारों की ओर से एजेंट (वकील) होते हैं। तो आरक्षित निधि को अलग करने के बाद इन वकीलों ने जो मुनाफ़ा प्रस्तावित किया हो वह ब्याज नहीं हो सकता और न ही ऐसे व्यवसाय में रुपया जमा करने को ऋण कहा जाता है। इसके अतिरिक्त, रिबा (ब्याज) की मनाही का जो कारण आयत 'न तुम ज़ुल्म करो और न तुम पर ज़ुल्म किया जाए' (सूरह अल-बकरा २:२७९) में वर्णित है, वह इस पर किसी तरह लागू नहीं होता। आवश्यकता है कि विद्वान इस पर विचार करें और उत्तर लिखें ताकि इस समय मुसलमान जिस कशमकश में फंसे हैं उससे उन्हें मुक्ति मिल सके।

उत्तर: यहाँ चार ही स्थितियाँ संभव हैं: काम में लगाने के लिए यह रुपया देने वाला या तो भागीदारी (partnership) के उद्देश्य से देता है या उपहार (hiba) के रूप में या ऋण (ariya) के रूप में या कर्ज़ (qard) के रूप में। उपहार का रूप तो यहाँ स्पष्ट रूप से नहीं है, और भागीदारी का अमान्य होना सूरज की तरह स्पष्ट है। भागीदारी एक अनुबंध (contract) है जिसकी आवश्यकता दोनों भागीदारों का मूलधन और लाभ दोनों में साझा होना है। एक भागीदार के लिए धन की एक निश्चित मात्रा निर्धारित करना भागीदारी को समाप्त कर देता है, क्योंकि संभव है कि लाभ केवल उतना ही

हो, तो वह अकेले ही कुल लाभ का स्वामी हो गया और दूसरे भागीदार को कुछ नहीं मिला, तो लाभ में भागीदारी कब हुई? जौहरा नय्यिरा और तनवीर अल-अबसार में है:

'अल-शरिकातु इबारातु मिन अक़्दिन बैना...'

[तनवीर और शोधकर्ता अलाई की व्याख्या में:] 'भागीदारी मूलधन और लाभ में दो लोगों के भागीदार होने का नाम है।'

१ पवित्र कुरान २/२७९

पृष्ठ ३७१ का ७१५

گزر جانے پر مدیون راس المال پر اضافہ گوارا کرتا یا پہلے ہی سے دونوں میں معاہدہ ہو جاتا تھا، اسی راس المال پر اس افزائش کو اضافہ کر کے پھر اس پر سود لگایا جاتا تھا جیسا کہ اس زمانے میں مہاجنی کا طریقہ ہے اس صورت کے حرام ہونے میں کوئی شبہ نہیں مگر اب اس زمانے میں معاملات کی نئی صورتیں پیدا ہوگئی ہیں جیسے بینک یا لائف انشورنس کمپنی یا ریلوے اور ملوں کے حصے وغیرہ جو تاجرانہ کاروبار کرتے ہیں ان میں جو شخص روپیہ جمع کرتا ہے وہ در حقیقت قرض نہیں دیتا اور جو نفع اس کو ملتا ہے وہ در حقیقت سود نہیں ہوتا بلکہ وہ اس تجارت میں ایک گونہ شرکت ہے اور جو سود مقرر ہوتا ہے اگر چہ وہ بلفظ سود ہو مگر در حقیقت سود نہیں ہے بلکہ وہ اس کاروبار کا نفع ہے جو منقح ہوتا ہے اور قرآن مجید میں کہیں منقح نفع کی حرمت وارد نہیں اور نہ اس کی کوئی وجہ معلوم ہوتی ہے، اس واسطے کہ جو شخص تجارتی حساب سمجھنے کی اہلیت نہ رکھتا ہو اس کو بغیر اس کے چارہ نہیں ہے کہ وہ فیصدی تین یا پانچ روپیہ پہلے سے منقح کر کے لیا کرے خصوصاً اس زمانے میں جبکہ کروڑوں روپے کے شرکت سے تجارتی کاروبار کھولے جاتے ہیں اور شرکاء کی جانب سے ڈائرکٹروں کی جماعت کاروبار چلانے اور حساب و کتاب رکھنے اور منافع مشخص کرنے اور ریزرو فنڈ (محفوظ) کے قائم رکھنے کے لئے مقرر کئے جاتے ہیں جو در حقیقت ان شرکاء کی طرف سے وکیل ہوتے ہیں تو جو منافع بعد پس انداز کرنے ریزرو فنڈ کے ان وکیلوں نے تجویز کیا ہو وہ سود نہیں ہو سکتا اور نہ ایسے کاروبار میں روپیہ داخل کرنے کو قرض کہا جاتا ہے، علاوہ اس کے ربا کی حرمت کی جو علت آیہ کریمہ "لَا تَظْلِمُونَ وَلَا تُظْلَمُونَ" (نہ تم ظلم کرو اور نہ ظلم کئے جاؤ۔ت) میں بیان فرمائی گئی ہے وہ اس پر کسی طرح صادق نہیں آتی۔ ضرورت ہے کہ علمائے کرام اس پر غور

فرما کر جواب تحریر فرمائیں تاکہ اس زمانہ میں مسلمان جس کشمکش میں مبتلا ہیں اس سے نجات پائیں۔

الجواب: یہاں چار ہی صورتیں متصور ہیں، کام میں لگانے کے لئے یہ روپیہ دینے والا بغرضِ شرکت دیتا ہے یا بطورِ ہبہ یا عاریۃً یا قرض۔ صورتِ ہبہ تو یہاں بداہۃً نہیں اور شرکت کا بطلان اظہر من الشمس ، شرکت ایک عقد ہے جس کا مقتضی دونوں شریکوں کا اصل و نفع دونوں میں اشتراک ہے ایک شریک کے لئے معین تعداد زر مقرر کرنا قاطع شرکت ہے کہ ممکن کہ اسی قدر نفع ہو تو کلی نفع کا وہی مالک ہو گیا، دوسرے شریک کو کچھ نہ ملا توربح (نفع) میں شرکت کب ہوئی ۔ جوہرہ نیرہ و تنویر الابصار میں ہے: الشرکۃ عبارۃ من عقد بین تنویر و شرح مدقق علائی۔ شرکت نام ہے اصل و نفع میں دو شریک ہونیوالوں

1 القرآن الکریم ۲ / ۲۷۹

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

(Contract between) partners in capital and profit, Tanwir and Sharh Mudaqqiq 'Ala'i. (T) 'Ala'i.

In Durr-ul-Mukhtar it is stated: "The condition for the validity of a contractual partnership is the absence of anything that would sever the partnership, such as stipulating a fixed amount of dirhams from the profit for one of them, because it is possible that the total profit may not exceed that specified amount. The ruling of such a partnership is sharing in the profit." (T)

If a business was conducted with a single capital, then a hundred shareholders and partners joined, and each was promised ten rupees of profit, and in that year the total profit was only one thousand, then these hundred shareholders alone would take the thousand. This is not a partnership, it is plunder. The requirement of a partnership is that just as everyone shares in the profit, if there is a loss, it should also fall upon everyone according to their capital. In Radd al-Muhtar, it is stated: "Then let it be said: whatever profit occurs shall be divided between them according to their shares of capital, and likewise for any loss or liability. There is no disagreement that stipulating a loss contrary to the proportion of capital is void, while stipulating a difference in profit sharing is valid as will be mentioned later." (Then say, whatever profit there is will be between the two of them according to the amount of their capital, similarly the ruling for loss will be the same. There is no difference of opinion that setting a condition for loss contrary to the amount of capital is void, and setting a condition for difference in profit is correct, its proof we will mention soon. (T))

Here, if a loss occurred, these shareholders would still have no concern with it; they would simply take their thousand rupees and leave. Is this a partnership or usurpation? The fundamental requirement of partnership is justice and equality. Allah Almighty says: "they are partners in one-third."

1. Durr-ul-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Kitab al-Sharikah, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/307.
2. Durr-ul-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Kitab al-Sharikah, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/317.
3. Radd al-Muhtar, Kitab al-Sharikah, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 3/337.
4. Al-Quran al-Karim, 4/12.

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

(पूंजी और लाभ में) साझेदारों के बीच अनुबंध, तनवीर और शरह मुदक़्क़िक़ 'अलाई। (टी) 'अलाई।

दुर्र-ए-मुख्तार में है: "अनुबंधात्मक साझेदारी की शर्त उस चीज़ की अनुपस्थिति है जो साझेदारी को खत्म कर दे, जैसे कि उनमें से किसी एक के लिए लाभ में से निश्चित दिरहम की शर्त लगाना, क्योंकि कभी-कभी उस निश्चित राशि के अलावा कोई लाभ ही नहीं होता है। और ऐसी साझेदारी का हुक्म लाभ में साझा करना है।" (टी)

अगर एक पूंजी से व्यापार हुआ फिर उसमें सौ हिस्सेदार और साझीदार हुए और हर एक के लिए दस-दस रुपये लाभ के लिए तय हुए और उस साल एक ही हज़ार का लाभ हुआ तो यह हज़ार अकेले यही सौ हिस्सेदार ले लेंगे। यह साझेदारी नहीं बल्कि लूट है, साझेदारी की मांग यह है कि जैसे लाभ में सब शरीक होते हैं, अगर नुकसान हो तो वह भी सब पर हर एक के माल के हिसाब से पड़े। रद-अल-मुह्तार में है: "फिर कहे, जो भी लाभ होगा वह उन दोनों के बीच उनकी पूंजी की मात्रा के अनुसार होगा, और इसी तरह नुकसान का भी यही हुक्म होगा। इसमें कोई मतभेद नहीं है कि पूंजी की मात्रा के विपरीत नुकसान की शर्त लगाना बातिल (अमान्य) है, और लाभ में अंतर की शर्त लगाना सही है, जिसका प्रमाण हम जल्द ही ज़िक्र करेंगे।" (टी)

यहाँ अगर नुकसान हुआ तब भी इन हिस्सेदारों को इससे कोई सरोकार न होगा, वे अपने हज़ार रुपये लेकर छोड़ देंगे। यह साझेदारी हुई या ग़सब (अवैध कब्ज़ा), साझेदारी की मूल आवश्यकता न्याय और समानता है। अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "वे एक तिहाई में साझीदार हैं।"

1. दुर्र-ए-मुख्तार शरह तनवीर अल-अबसार, किताब अल-शरिका, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 1/307
2. दुर्र-ए-मुख्तार शरह तनवीर अल-अबसार, किताब अल-शरिका, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 1/317
3. रद-अल-मुह्तार किताब अल-शरिका, दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 3/337
4. अल-कुरान अल-करीम, 4/12

पृष्ठ 372/715

المتشارکین في الاصل والربح، تنویر و شرح مدقق (کے درمیان عقد کا، تنویر و شرح مدقق علائی۔ (ت)) علائی۔

در مختار میں ہے: شرطہا ای شرکۃ العقد عدم مایقطعہا کشرط دراہم مسماۃ من الربح لاحدہما لانہ قد لایربح غیر المسمی وحکمہا الشرکۃ فی الربح۔ (شرکت عقد کی شرط اس چیز کا نہ پایا جانا ہے جو شرکت کو قطع کرے جیسے دو شریکوں میں سے ایک کے لئے نفع میں سے معین درہموں کی شرط کیونکہ کبھی ان معینہ درہموں کے علاوہ کوئی نفع ہی نہیں ہوتا اور شرکت عقد کا حکم نفع میں شرکت ہے۔(ت))

اگر ایک سرمایہ سے تجارت ہوئی پھر اس میں سو حصہ دار اور شریک ہوئے اور ہر ایک کیلئے دس دس روپے نفع کے لئے ٹھہرے اور اس سال ایک ہی ہزار کا نفع ہوا تو یہ ہزار تنہا یہی سو حصہ دار لیں گے یہ شرکت نہیں لوٹ ہے، شرکت کا مقتضٰی یہ ہے کہ جیسے نفع میں سب شریک ہوتے ہیں نقصان ہو تو وہ بھی سب پر ہر ایک کے مال کی قدر پڑے۔ ردالمحتار میں ہے: ثم یقول فماکان من ربح فھو بینھما علی قدر رؤس اموالھما وماکان من وضیعۃ او تبعۃ فکذلک، ولا خلاف ان اشتراط الوضیعۃ بخلاف قدر اس المال باطل واشتراط الربح متفاوتا صحیح فیما سیذکر۔ (پھر کہے، جو بھی نفع ہو گا وہ دونوں کے درمیان ان کے سرمائے کی مقدار کے حساب سے ہو گا یوں ہی حکم نقصان کا بھی ہو گا اس میں کوئی اختلاف نہیں کہ سرمائے کی مقدار کے خلاف نقصان کی شرط لگانا باطل ہے اور نفع میں تفاوت کی شرط لگانا صحیح ہے اس کی دلیل ہم عنقریب ذکر کریں گے۔ (ت))

یہاں اگر نقصان ہوا جب بھی ان حصہ داروں کو اس سے غرض نہ ہو گی وہ اپنے ہزار روپے لے چھوڑیں گے یہ شرکت ہوئی یا غصب، اصل مقتضاء شرکت عدل و مساوات ہے۔ قال اللہ تعالیٰ "فَهُمْ شُرَكَاءُ فِي الثُّلُثِ"۔

1 درمختار شرح تنویر الابصار کتاب الشرکة مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۳۰۷ 2 درمختار شرح تنویر الابصار کتاب الشرکة مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۳۱۷ 3 ردالمحتار کتاب الشرکۃ داراحیاء التراث العربی بیروت ۳/ ۳۳۷ 4 القرآن الکریم ۴/ ۱۲

(Allah Almighty has stated: They all are partners in the third part of the inheritance. T) Suppose that the original capital was twice as much as these hundred shares, and this year there was a profit of fifteen hundred rupees; then those with half would take one thousand and those with double would get only five hundred. Giving double to the half and half to the double, is this justice or explicit oppression? In short, this invented contract has no relation to Shari'ah partnership. Now it remains as either a loan ('aariyah) or a debt (qard). It is a loan, yet it is a debt because the money was given to be spent, whereas in a loan, the physical object must remain intact. It is stated in Durr-ul-Mukhtar:

[Box 1 - Arabic]: Loaning of the two currencies (gold and silver) is a debt by necessity because of the consumption of its essence. [Box 2 - Urdu translation]: Loaning of currencies (gold and silver) is a debt because it entails the consumption of the physical object. (T)

In any case, there is nothing here but a form of debt, and a profit has been fixed upon it; this is riba (usury/interest) and this was practiced in the pre-Islamic era (Jahiliyyah). It is stated in the Hadith that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

[Box 3 - Arabic]: Every loan that draws a benefit is riba. [Box 4 - Urdu translation]: Any profit obtained on a loan is riba.

The Holy Qur'an is not silent about the prohibition of this gained benefit. The questioner himself recited the reason for the prohibition of riba: 'Neither do you commit oppression, nor shall you be oppressed.' (T) And here both 'oppressing' and 'being oppressed' are present. In the aforementioned cases, if the profit was only one thousand and all those hundred shareholders took it, or if the profit was fifteen hundred and those with half shares took double, these are the oppressors and those are the oppressed. And if the profit was five thousand, then those half-shareholders received a fifth part and those double-shareholders received fourfold, then these became the oppressed and those the oppressors. And if these shares were from the capital, then the oppression is even more severe, making the double and half fourfold. Now, if a situation is considered where the original capital was not separated from these shares, but rather the trade started with these shares—for example, a hundred and a quarter persons contributed a hundred rupees each and traded with ten thousand, and for each partner a profit of ten rupees was fixed—this

situation would reveal that it was either a contract of oppression and tyranny or pure ignorance and foolishness. Suppose in one year only five hundred was the profit, how will these be distributed at ten rupees per hundred? Will five hundred be usurped from somewhere and added, or by giving just fifty...

---

1. Durr-ul-Mukhtar, Kitab al-'Aariyah, Matba' Mujtabai Delhi, 2/156
2. Kanz-ul-Ummal, Hadith 15516, Muassasat-ur-Risala Beirut, 6/238
3. Al-Qur'an al-Karim, 2/279

फतावा-ए-रज़विया (खण्ड १७)

(अल्लाह तआला ने इरशाद फ़रमाया: वे सब विरासत के तिहाई हिस्से में शरीक हैं। त) फ़र्ज़ कीजिए कि असल सरमाया (मूल पूँजी) इन सौ हिस्सों से दो गुना (दो चन्द) था और इस साल पन्द्रह सौ रुपये का नफ़ा (लाभ) हुआ तो ये निस्फ़ (आधे) वाले एक हज़ार लेंगे और दो गुना वालों को सिर्फ़ पाँच सौ मिलेंगे, आधे को दूना और दूने को आधा, ये अदल (न्याय) हुआ या सरासर ज़ुल्म। बिलजुमला (संक्षेप में) इस अक़्दे मुख़्तरअ (मनगढ़ंत अनुबंध) को शिरकते शरइया (शरीयत की साझेदारी) से कोई तआल्लुक़ नहीं, अब न रहे मगर आरियत (ऋण) या क़र्ज़, आरियत है जब भी क़र्ज़ है कि रुपया सर्फ़ (खर्च) करने को दिया, और आरियत में शय ब-ऐनिही (मूल वस्तु) क़ायम रहती है। दुर्रे मुख़्तार में है:

[बॉक्स १ - अरबी]: दो कीमतों (सोना और चाँदी) की आरियत ब-ज़रूरत क़र्ज़ है क्योंकि इसके ऐन (मूल तत्व) को ख़त्म करना लाज़िम है।

बहरहाल यहाँ नहीं मगर सूरते क़र्ज़, और इस पर नफ़ा मुक़र्रर किया गया, यही सूद है और यही जाहिलियत (इस्लाम पूर्व काल) में था, हदीस में है रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

[बॉक्स ३ - अरबी]: हर वह क़र्ज़ जो कोई नफ़ा खींचे, वो रिबा (सूद) है। [बॉक्स ४ - उर्दू अनुवाद]: क़र्ज़ पर जो नफ़ा हासिल किया जाए वो रिबा है।

क़ुरआन करीम इस नफ़ा-ए-मुन्तक़ा की तहरीम (निषेध) से साकित (मौन) नहीं ख़ुद सायल ने इल्लते तहरीम रिबा (सूद के हराम होने का कारण) तिलावत की 'ला तज़लिमूना व ला तुज़लमून' (न तुम ज़ुल्म करो और न तुम पर ज़ुल्म किया जाए। त) और यहाँ 'तज़लिमूना व तुज़लमून' दोनों हैं, इन मज़कूर सूरतों में कि हज़ार ही नफ़ा के हुए और सब उन सौ हिस्सादारों ने लिये या नफ़ा के पन्द्रह सौ हुए और निस्फ़ वालों ने दूने लिये, ये ज़ालिम हैं और वो मज़लूम, और अगर पाँच हज़ार नफ़ा के हुए तो उन निस्फ़ वालों को पाँचवाँ हिस्सा मिला और उन दो चन्द ही वालों को चार चन्द, ये मज़लूम हुए और वो ज़ालिम, और अगर ये हिस्से सरमाया से थे तो ज़ुल्म अशद (अत्यधिक) है, और दूने और आधे को चार। अब एक सूरत अगर ये ख़याल की जाए कि असल सरमाया इन हिस्सों से जुदा न हुआ इन्हीं हिस्सों से तिजारत शुरू हुई, मसलन सवा सौ अशख़ास ने सौ सौ रुपये मिला कर दस हज़ार से तिजारत की और हर शरीक के लिये दस दस रुपये नफ़ा-ए-मुन्तक़ा क़रार पाया ये सूरत ज़ाहिर कर देगी कि वो क़रारदादे ज़ुल्म व जबरियत था या महज़ जेहल व हमाक़त (मूर्खता)। फ़र्ज़ कीजिये एक

साल पाँच ही सौ नफ़ा के हुए तो ये सौ पर दस दस करके कैसे बटेंगे, क्या पाँच सौ कहीं से ग़सब (छीन) करके मिलाए जाएंगे या पचास ही को देकर...

---

1. दुर्रे मुख़्तार, किताबुल आरियत, मतबा मुजतबाई देहली २/१५६
2. कन्जुल उम्माल, हदीस १५५१६, मुअस्ससतुर रिसाला बेरुत ६/२३८
3. अल-क़ुरआन अल-करीम २/२७९

पृष्ठ ३७३ (७१५ में से)

(اللہ تعالٰی نے ارشاد فرمایا: سب ترکہ کے تیسرے حصہ میں شریک ہیں۔ ت) فرض کیجئے کہ اصل سرمایہ ان سو حصوں سے دو چند تھا اور اس سال پندرہ سو روپے کے نفع ہوئے تو یہ نصف والے ایک ہزار لیں گے اور دو چند والوں کو صرف پانچ سو ملیں گے، آدھے کو دونا اور دونے کو آدھا، یہ عدل ہوا یا صریح ظلم۔ بالجملہ اس عقدِ مخترعہ کو شرکتِ شرعیہ سے کوئی علاقہ نہیں، اب نہ رہے مگر عاریت یا قرض، عاریت ہے جب بھی قرض ہے کہ روپیہ صرف کرنے کو دیا، اور عاریت میں شے بعینہٖ قائم رہتی ہے۔ درمختار میں ہے:

[باکس ۱ - عربی]: عاریۃ الثمنین قرض ضرورۃ استھلاك عینھا

بہر حال یہاں نہیں مگر صورتِ قرض، اور اس پر نفع مقرر کیا گیا، یہی سود ہے اور یہی جاہلیت میں تھا، حدیث میں ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

[باکس ۳ - عربی]: کل قرض جر منفعۃ فھو رباً [باکس ۴ - اردو ترجمہ]: قرض پر جو نفع حاصل کیا جائے وہ رہا ہے۔

قرآن کریم اس نفع منتقع کی تحریم سے ساکت نہیں خود سائل نے علت تحریم رہا تلاوت کی 'لاَ تَظْلِمُونَ وَلاَ تُظْلَمُونَ' (نہ تم ظلم کرو اور نہ ظلم کئے جاؤ۔ ت) اور یہاں 'تظلمون وتظلمون' دونوں ہیں، ان مذکور صورتوں میں کہ ہزار ہی نفع کے ہوئے اور سب ان سو حصہ داروں نے لئے یا نفع کے پندہ سو ہوئے اور نصف والوں نے دو نے لئے، یہ ظالم ہیں اور وہ مظلوم، اور اگر پانچ ہزار نفع کے ہوئے تو ان نصف والوں کو پانچواں حصہ ملا اور ان دو چند ہی والوں کو چار چند، یہ مظلوم ہوئے اور وہ ظالم، اور اگر یہ حصے سرمایہ سے تھے تو ظلم اشد ہے، اور دونے اور

آدھے کو چار۔ اب ایک صورت اگر یہ خیال کی جائے کہ اصل سرمایہ ان حصوں سے جدا نہ ہوا نہیں حصوں سے تجارت شروع ہوئی، مثلاً سوا اشخاص نے سو سو روپے ملا کر دس ہزار سے تجارت کی اور ہر شریک کے لئے دس دس روپے نفع منتقع قرار پایا یہ صورت ظاہر کردے گی کہ وہ قراردادِ ظلم و جبریت تھا یا محض جہل و حماقت۔ فرض کیجئے ایک سال پانچ ہی سو نفع کے ہوئے تو یہ سو پر دس دس کر کے کیسے بٹیں، کیا پانچ سو کہیں سے غصب کر کے ملائے جائیں گے یا پچاس ہی کو دے کر...

---

1. درمختار کتاب العارية مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۱۵۶
2. کنز العمال حدیث ۱۵۵۱۶ موسسة الرساله بیروت ۶/ ۲۳۸
3. القرآن الکریم ۲/ ۲۷۹

Fatawa Rizvia, Volume 17

...fifty lashings will be left, and who will be those fifty who receive them and who will be those fifty who are deprived? Suppose there was a profit of two thousand; after distributing ten each, one thousand remains. Will this be given to some passerby or invested in the same business? If invested in it, will it be on behalf of everyone or some? In the second case, who are those 'some' and why did they get more, while in the first case everyone received twenty each even though they agreed on ten each? How did the agreement change contrary to the contract? Naturally, common sense dictates that if there's a thousand in profit, everyone gets ten; if five hundred, everyone gets five; and if two thousand, everyone gets twenty. If there's no profit, no one gets anything; and if there's a loss, it's shared proportionally. This is justice and the requirement of partnership, and this is Sharia partnership. Fixing a profit out of thin air was pure ignorance and foolishness. In short, closing one's eyes to the pure Sharia only brings evil; absolute goodness lies only in the Sharia of Mustafa, may Allah the Almighty bless him and grant him peace.

Problem 199: From Jalandhar, Mohalla Rasta, adjacent to Deputy Ahmad Jan Sahib's house, sent by Muhammad Ahmad Khan Sahib, 20 Shawwal 1314 AH.

What do the scholars of religion say regarding this matter: A person receives interest on his money from a government bank at home. Can this person take the interest from the government and not consume it himself, but distribute it to the needy and poor, or build a well for a poor, distressed household suffering from water scarcity? Will that person be counted among usurers according to the noble Sharia? Is it permissible for those poor and needy households to take cash etc. from this interest and drink water from that well or not? Please explain with reference to authentic books.

The Answer: Taking interest is absolutely forbidden (Haram).

| Allah Almighty said: "And He has forbidden usury"[1], | Allah Almighty said: "And Allah has forbidden usury." | | and Allah Almighty said: "And give up what remains | And Allah Almighty said: "And leave what remains | | [due to you] of usury"[2]. | from usury" (T). |

So, this person who took it with the intention of interest became a sinner due to his corrupt intention. However, when that money was obtained with the consent of the

government and there is no fear of any harm from the government or to those who take it from him...

[1] The Holy Quran 2/275 [2] The Holy Quran 2/278

फतावा रिज़विया, खंड 17

...पचास कोड़े छोड़ दिए जाएंगे, और वे कौन से पचास होंगे जिन्हें दिए जाएंगे और वे कौन से पचास होंगे जिन्हें वंचित रखा जाएगा? मान लीजिए कि दो हजार का लाभ हुआ; दस-दस बाँटने के बाद एक हजार बचेंगे। क्या यह किसी राहगीर को दिए जाएंगे या उसी व्यापार में लगा दिए जाएंगे? यदि उसी में लगाएंगे, तो सबकी ओर से या कुछ की ओर से? दूसरी स्थिति में, वे 'कुछ' कौन होंगे और उन्हें अधिक क्यों मिला, जबकि पहली स्थिति में सभी को बीस-बीस मिले थे और तय दस-दस हुए थे। अनुबंध के विरुद्ध समझौता कैसे हुआ? अनिवार्य रूप से, बुद्धि यही कहती है कि जिस वर्ष एक हजार का लाभ होगा, सबको दस-दस मिलेंगे; और पांच सौ पर सबको पांच-पांच; और दो हजार पर सबको बीस-बीस। और यदि कुछ न हुआ तो किसी को कुछ नहीं, और हानि हुई तो सब पर आनुपातिक रूप से। यही न्याय है और यही साझेदारी की आवश्यकता है, और यही शरीयत आधारित साझेदारी है। और अदृश्य (बिना हुए) लाभ तय कर लेना विशुद्ध अज्ञानता और मूर्खता थी। संक्षेप में, शुद्ध शरीयत से आँखें मूँदना केवल बुराई लाता है; संपूर्ण कल्याण केवल मुस्तफ़ा (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की शरीयत में है।

मसला 199: जालंधर, मोहल्ला रास्ता, डिप्टी अहमद जान साहब के मकान के पास से, प्रेषक मुहम्मद अहमद खान साहब, 20 शव्वाल 1314 हिजरी।

धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं: एक व्यक्ति को घर बैठे सरकारी बैंक से उसके रुपयों का ब्याज आता है। क्या वह व्यक्ति सरकार से ब्याज ले ले और स्वयं न खाए बल्कि मोहताज और गरीबों में बाँट दे, या किसी निर्धन लाचार के घर जहाँ पानी की कमी हो वहाँ कुआँ लगवा दे? क्या वह व्यक्ति शरीयत शरीफ के अनुसार सूदखोरों (ब्याज खाने वालों) में गिना जाएगा? और उन निर्धनों और मोहताजों के लिए इस ब्याज से नकद आदि लेना और उस कुएँ का पानी पीना सही है या नहीं? विश्वसनीय पुस्तकों के हवाले से बयान फरमाएँ।

उत्तर: ब्याज लेना पूर्णतः हराम है।

| अल्लाह तआला ने फरमाया: "व हर्रमर्रिबा"[1], और अल्लाह तआला | अल्लाह तआला ने फरमाया कि अल्लाह तआला ने सूद को हराम किया। | | ने फरमाया: "व ज़रू मा बक़िया मिनर्रिबा"[2]। | और अल्लाह तआला ने फरमाया कि छोड़ दो जो बाकी रहा है सूद से (त)। |

तो वह व्यक्ति जिसने ब्याज की नियत से लिया, वह अपनी भ्रष्ट नियत पर गुनहगार हुआ। हाँ, जबकि वह रुपया सरकार की सहमति से प्राप्त किया गया और सरकार की ओर से या उससे लेने वालों को किसी हानि पहुँचने की आशंका न हो...

[1] अल-कुरान अल-करीम 2/275 [2] अल-कुरान अल-करीम 2/278

پچاس کورے چھوڑ دئے جائیں گے اور وہ کون سے پچاس ہوں گے جن کو دیں گے اور وہ کون سے پچاس ہوں گے جن کو محروم رکھیں گے۔ فرض کیجئے دو ہزار نفع کے ہوئے تو دس دس بانٹ کر ہزار بچیں گے یہ کسی راہ چلتے کو دئے جائیں گے یا اسی تجارت میں لگادئے جائیں گے ، اگر اسی میں لگائیں گے تو سب کی طرف سے یا بعض کی طرف سے ثانی میں وہ بعض کون ہوں گے اور ان کو کیوں زیادہ ملا اور اول پر سب کو بیس بیس ملے اور ٹھہرے تھے دس دس خلاف قرار داد عقد کیونکر ہوا۔ لاجرم عقل ہو تو یہی ماننا پڑے گا کہ جس سال ہزار نفع کے ہوں گے سب دس دس پائیں اور پانسو تو سب پانچ پانچ اور دو ہزار تو سب بیس بیس، اور کچھ نہ ہو تو کوئی کچھ نہیں، اور نقصان ہو تو سب پر حصہ رسد۔ یہی عدل ہے اور یہی مقتضائے شرکت ، اور یہی شرکت شرعیہ ، اور وہ نفع مستخرج بالغیب ٹھہرالینا محض جہل و حماقت تھا، بالجملہ شرع مطہر سے آنکھ بند کرنا شر ہی لاتا ہے ، خیر ہمہ تن خیر وہی ہے جو شرع مصطفٰی ہے صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم۔

مسئلہ ۱۹۹: از جالندھر محلہ راستہ متصل مکان ڈپٹی احمد جان صاحب مرسلہ محمد احمد خاں صاحب ۲۰ شوال ۱۳۱۴ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں، ایک شخص کو سرکاری بنک گھر سے اس کے روپیوں کا سود آتا ہے آیا یہ شخص سرکار سے سود لے لے اور آپ نہ کھائے اور محتاج اور غریبوں کو تقسیم کردے یا کسی مفلس تنگدست کے گھر جس کو پانی کی قلت ہو کنواں لگوا دے آیا وہ شخص از روئے شرع شریف سود خوروں میں شمار تو نہ ہوگا ، اور ان مفلسوں اور محتاج گھر والوں کے واسطے نقد وغیرہ اس سود سے لینی اور اس کو کنوئیں کا پانی پینا درست ہے یا نہیں؟ بحوالہ کتب معتبرہ بیان فرمائیں۔

الجواب: سود لینا مطلقاً حرام ہے،

| اللہ تعالیٰ نے ارشاد فرمایا کہ اللہ تعالیٰ نے سود کو حرام کیا۔ | قال اللہ تعالیٰ "وَ حَرَّمَ الرِّبٰوا"[1] ، وقال تعالیٰ | | اور اللہ تعالیٰ نے فرمایا کہ چھوڑ دو جو باقی رہا ہے سود سے (ت) | "وَ ذَرُوْا مَا بَقِيَ مِنَ الرِّبٰوا"[2]۔ |

تو یہ شخص جس نے سود کی نیت سے لیا اپنی نیت فاسدہ پر گنہگار ہوا، ہاں جبکہ وہ روپیہ برضا مندی گورنمنٹ حاصل کیا اور گورنمنٹ کی طرف سے یا اس سے لینے والوں کو کسی ضرر کے پہنچنے کا اندیشہ نہیں۔

[1] القرآن الکریم ۲/۲۷۵ [2] القرآن الکریم ۲/۲۷۸

Fatawa Razviya (17)

Therefore, the poor and needy can take it, not considering it as interest money, but knowing that it has been obtained from the treasury with the pleasure of the ruler of the time. For them, it is pure and lawful (Tayyib & Halal). Similarly, a well built with this money is also lawful.

[Table Section] Left Column (Arabic): As we have explained in detail in our Fatawas, this is the issue of "Az-Zafar" (obtaining one's right) mentioned in 'Al-Durr' and other brilliant books. Right Column (Urdu): As we have explained in detail in our fatwas, this is the issue of succeeding in obtaining one's right by any means, which has been explicitly stated in 'Durr' and other books. (T).

And Allah (Glorified and Exalted) knows best, and His knowledge is most perfect, His decree is most wise.

Problem 200: What do the scholars of religion say about this matter: A person says that I deposited money in the post office but I did not intend to take interest, rather I forbade them to deposit it as interest-bearing. Later, after some time when I went to the post office to take the money, they returned my money along with interest. I refused, saying I would not take interest. They said we cannot take it back either, give the interest to some needy person. What is the opinion of the scholars and the ruling of Sharia in this? Is giving that money to a needy person a source of reward or not? Because the government does not take this money back and it is of no use to us. In this situation, should we give it to a needy person or what should we do? Give a statement and you will be rewarded.

Answer: Since he did not want to take interest originally, rather he explicitly forbade it, and now taking interest is not intended but with the intention of giving it to the poor, receiving that money from the government without betrayal or breach of contract, rather being given voluntarily, and passing it on to the deserving poor, is certainly a cause for reward.

[Table Section] Left Column (Arabic): Because there is kindness towards the needy in it, "And Allah loves the doers of good" (1). And "Actions are judged by intentions" (2) and for every person is what he intended. And the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said... Right Column (Urdu): Because it involves kindness to the poor and giving the deserving their rights, and Allah Almighty loves those who do

good. And indeed, the basis of actions is on intentions, and for every person is only what he intended...

1. Al-Quran Al-Karim 3/134
2. Sahih Al-Bukhari, Chapter on How Revelation Began, Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/2

इसलिए, गरीब और जरूरतमंद इसे ब्याज का पैसा समझकर नहीं, बल्कि यह जानकर कि यह समय के शासक की खुशी से खजाने से प्राप्त हुआ है, ले सकते हैं। उनके लिए यह पवित्र और हलाल है। इसी तरह, इस पैसे से बना हुआ कुआँ भी जायज है।

[तालिका खंड] बायाँ कॉलम (अरबी): जैसा कि हमने अपने फ़तावा में विस्तार से बताया है, यह 'अज़-ज़फ़र' (अपना अधिकार प्राप्त करना) का मुद्दा है जिसका उल्लेख 'अल-दुर' और अन्य शानदार किताबों में किया गया है। दायाँ कॉलम (उर्दू): जैसा कि हमने अपने फ़तावा में विस्तार से बताया है, यह किसी भी तरह से अपना अधिकार प्राप्त करने में सफल होने का मुद्दा है, जिसका 'दुर' और अन्य किताबों में स्पष्ट उल्लेख है। (त)।

और अल्लाह (महिमा और उच्चता) सबसे अच्छा जानता है, और उसका ज्ञान सबसे पूर्ण है, उसका निर्णय सबसे बुद्धिमान है।

समस्या 200: इस मामले में धर्म के विद्वान क्या कहते हैं: एक व्यक्ति कहता है कि मैंने डाकखाने में पैसा जमा किया लेकिन मेरा इरादा ब्याज लेने का नहीं था, बल्कि मैंने उन्हें ब्याज पर जमा करने से मना किया था। बाद में, कुछ समय बाद जब मैं पैसा लेने डाकखाने गया, तो उन्होंने ब्याज के साथ मेरा पैसा वापस कर दिया। मैंने मना कर दिया कि मैं ब्याज नहीं लूँगा। उन्होंने कहा कि हम भी इसे वापस नहीं ले सकते, ब्याज किसी जरूरतमंद को दे देना। इसमें विद्वानों की क्या राय है और शरीयत का क्या हुक्म है? क्या वह पैसा किसी जरूरतमंद को देना सवाब (पुण्य) का कारण है या नहीं? क्योंकि सरकार यह पैसा वापस नहीं लेती है और यह हमारे किसी काम का नहीं है। इस स्थिति में, क्या हमें इसे किसी जरूरतमंद को देना चाहिए या हमें क्या करना चाहिए? बयान दें और आपको पुरस्कृत किया जाएगा।

उत्तर: चूंकि वह मूल रूप से ब्याज नहीं लेना चाहता था, बल्कि उसने स्पष्ट रूप से इसे मना कर दिया था, और अब ब्याज लेना उद्देश्य नहीं है, बल्कि गरीबों को देने के इरादे से है, विश्वासघात या अनुबंध के उल्लंघन के बिना सरकार से वह पैसा प्राप्त करना, बल्कि स्वेच्छा से दिया जाना, और उसे पात्र गरीबों तक पहुँचाना निश्चित रूप से पुण्य (सवाब) का कारण है।

[तालिका खंड] बायाँ कॉलम (अरबी): क्योंकि इसमें जरूरतमंदों के प्रति दया है, "और अल्लाह नेक काम करने वालों को पसंद करता है" (1)। और "कार्यों का फल नियत पर निर्भर करता है" (2) और

हर व्यक्ति के लिए वही है जो उसने नियत की। और पैगंबर (अल्लाह की शांति और आशीर्वाद उन पर हो) ने फरमाया... दायाँ कॉलम (उर्दू): क्योंकि इसमें गरीबों के प्रति दया और पात्रों को उनके अधिकार देना शामिल है, और अल्लाह सर्वशक्तिमान उन लोगों से प्यार करता है जो अच्छा करते हैं। और वास्तव में, कार्यों का आधार नियत पर है, और हर व्यक्ति के लिए केवल वही है जो उसने इरादा किया था...

1. पवित्र कुरान 3/134
2. सहीह अल-बुखारी, रहस्योद्घाटन कैसे शुरू हुआ पर अध्याय, कदीमी कुतुब खाना कराची, 1/2

تو فقراء و غرباء اسے نہ یہ سمجھ کر کہ سود کا روپیہ ہے بلکہ یہ جان کر کہ از خزانہ رضائے حاکم وقت حاصل ہوا ہے لے سکتے ہیں ان کے لئے طیب و حلال ہے یونہی اس سے بنوایا ہوا کنواں،

Left Column (Arabic) [Table Section]: کما فصلناہ فی فتاؤنا المسألة مسألة الظفر المنصوص علیه من الدر وغیرہ من الاسفار الغر- Right Column (Urdu): جیسا کہ اس کو ہم نے اپنے فتاوٰی میں مفصل بیان کیا ہے ، یہ مسئلہ اپنے حق کو کسی طریقے سے حاصل کرلینے میں کامیابی کا مسئلہ ہے جس پر در وغیرہ کتابوں میں اس پر نص کی گئی ہے (ت)۔

واللہ سبحانہ وتعالی اعلم وعلمہ اتم حکمہ احکم

مسئلہ ۲۰۰: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص کہتا ہے کہ میں نے ڈاکخانہ میں روپیہ جمع کیا مگر میرا ارادہ سود لینے کا نہ تھا بلکہ میں نے منع کیا کہ سودی نہ جمع کرنا بعد کو جب عرصہ ہو گیا تو میں روپیہ لینے کے واسطے ڈاکخانہ گیا تو اس نے مع سود روپیہ مجھ کو واپس دیا میں نے انکار کیا کہ میں سود نہ لوں گا، اس نے کہا کہ ہم بھی واپس نہیں کر سکتے سود تم کسی محتاج کو دے دینا اس میں عالموں کی کیا رائے ہے اور شرع کا کیا حکم ہے؟ آیا وہ روپیہ محتاج کو دینا ثواب ہے یا نہیں؟ کیونکہ سرکار اس روپیہ کو واپس نہیں لیتی ہے اور ہمارے بھی کسی کام کا نہیں ، اس حالت میں محتاج کو دیں یا کیا کریں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: جبکہ اس نے نہ سود لینا چاہنا اصلاً اس کا قرار داد کیا بلکہ صراحتہً منع کر دیا، نہ اب سود لینا مقصود تو فقراء کو پہنچانے کی نیت سے وہ روپیہ جو گورنمنٹ سے بلا غدر و عہد شکنی بلکہ بخوشی ملتا ہے لینا اور لے کر مساکین مستحقین کو پہنچا دینا ضرور موجب ثواب ہے ،

Left Column (Arabic) [Table Section]: لان فیه الاحسان بالمساکین، "واللہ یحب المحسنین"[1] ، وانما الاعمال بالنیات[2] وانمالکل امرئ مانوی . وقد قال صلی اللہ تعالی علیه Right Column (Urdu): کیونکہ اس میں مسکینوں پر احسان اور مستحقین کو ان کا حق پہنچانا ہے، اور اللہ تعالیٰ احسان کر نیوالوں سے محبت فرماتا ہے، اور بیشک اعمال کا دارو مدار نیتوں پر ہے اور ہر شخص کے لئے وہی کچھ ہے جس

[1] القرآن الکریم ۳/۱۳۴ [2] صحیح البخاری باب کیف کان بدأ الوحی قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۲

Fatawa Razawiyya Volume 17

...he intended. And indeed, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Whoever among you is able to benefit his brother, let him do so." (1) Narrated by Muslim from Jabir (may Allah be pleased with him). And Allah knows best. (Imam Muslim narrated this from Sayyiduna Jabir (may Allah be pleased with him). And Allah Almighty knows better. - Compiler)

Issue 201: From Mirganj, sent by Abu al-Hasan Sahib, 6 Shaban 1320 AH. What do the scholars of religion and the muftis of the firm Shariah say about this matter: is it permissible to deposit money in a savings bank, i.e., government post offices, and take the 4.75 percent interest that the government rule provides to the depositor? Explain and be rewarded.

The Answer: Interest is absolutely forbidden (Haram). Allah Almighty says: "And He has forbidden interest" (2). (Allah Almighty said: Allah has made interest unlawful. - Compiler). Yes, if someone has a legitimate or permissible rightful claim against Zaid and it cannot be obtained otherwise, then he can take it only to the extent of his claim by whatever name it may be obtained. In this case, he is taking his right, not something unlawful. The fact that the giver terms it or considers it an unlawful name will not be harmful to him as long as his intention is correct and the right is legitimate and obligatory. "And Allah knows the secret and what is hidden." (Allah Almighty knows the secrets and hidden matters. - Compiler). In this matter, the ruling for Muslims and non-Muslims is the same, provided it does not lead to betrayal or strife.

Allah Almighty says: "And strife (Fitnah) is greater than killing." (3). And Allah Almighty knows best. (Allah Almighty said: Strife is a bigger (sin) than killing. And Allah Almighty knows best. - Compiler)

Issue 202: Sent by Sheikh Alauddin Sahib from Meerut Lal Kurti, 13 Shaban-ul-Muazzam 1322 AH. What do the scholars of religion say about this matter: Zaid deposited some money in a bank. After him, Amr, considering it unlawful, gave notice to the bank saying, "Give me my total money." The bank authorities...

(Footnotes) 1 Sahih Muslim, Book of Peace, Chapter on the Recommendation of Ruqya from the Evil Eye, etc., Qadimi Kutub Khana Karachi, 2/244. 2 The Holy Quran, 2/275. 3 The Holy Quran, 2/217. Page 376 of 715

फ़तावा रज़विया खंड १७

...उसने नीयत की। और निश्चय ही अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "तुम में से जो अपने भाई को लाभ पहुँचाने की शक्ति रखता हो उसे चाहिए कि वह अपने भाई को लाभ पहुँचाए।" (1) इसे मुस्लिम ने जाबिर (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (इमाम मुस्लिम ने इसे सैय्यदुना जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। - संकलनकर्ता)

मसला २०१: मीरगंज से, अबू अल-हसन साहब द्वारा प्रेषित, ६ शाबान १३२० हिजरी। धर्म के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ़्ती इस मामले में क्या कहते हैं कि सेविंग बैंक यानी सरकारी डाकघरों में पैसा जमा करना और उस पर सरकारी नियम के अनुसार जमाकर्ता को मिलने वाला ४.७५ प्रतिशत ब्याज लेना जायज़ है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य पाएँ।

अल-जवाब (उत्तर): ब्याज पूरी तरह से हराम (वर्जित) है। अल्लाह तआला का इरशाद है: "और उसने ब्याज को हराम कर दिया है" (2)। (अल्लाह तआला ने फ़रमाया: अल्लाह ने ब्याज को हराम कर दिया है। - संकलनकर्ता)। हाँ, अगर किसी का ज़ैद पर अपना कोई जायज़ या मुबाह हक़ बनता हो और वह उसे सामान्य रूप से न मिले, तो वह केवल अपने हक़ की मात्रा तक जिस भी नाम से प्राप्त हो सके ले सकता है। इस स्थिति में वह अपना हक़ ले रहा है न कि कोई नाजायज़ चीज़। देने वाले का इसे किसी नाजायज़ नाम से संबोधित करना या समझना उसे हानि नहीं पहुँचाएगा, बशर्ते कि उसकी नीयत सही हो और हक़ जायज़ और वाजिब हो। "और अल्लाह भेदों और छिपी हुई बातों को जानता है।" (अल्लाह तआला रहस्यों और छिपी हुई बातों को जानता है। - संकलनकर्ता)। इस मामले में मुस्लिम और गैर-मुस्लिम सभी का हुक्म एक समान है, बशर्ते कि इससे धोखा या फ़ितना पैदा न हो।

अल्लाह तआला का इरशाद है: "और फ़ितना (फ़साद) कत्ल से भी बड़ा (गुनाह) है" (3)। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (अल्लाह तआला ने फ़रमाया: फ़ितना कत्ल से बड़ा (गुनाह) है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। - संकलनकर्ता)

मसला २०२: शेख़ अलाउद्दीन साहब द्वारा मेरठ लाल कुर्ती से प्रेषित, १३ शाबान-उल-मुअज़्ज़म १३२२ हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि ज़ैद ने बैंक में कुछ पैसे जमा किए। उसके बाद

उसके वारिसों में से अम्र ने इसे नाजायज़ समझते हुए बैंक को नोटिस दिया कि "मेरा सारा पैसा मुझे दे दो"। बैंक वालों ने...

(पाद-टिप्पणियाँ) 1 सहीह मुस्लिम, किताब अल-सलाम, नज़र लगने आदि से दम करने की मुस्तहबियत का बाब, कदीमी कुतुब खाना कराची, 2/244। 2 अल-कुरआन अल-करीम, 2/275। 3 अल-कुरआन अल-करीम, 2/217। पृष्ठ 376 of 715

وسلم من استطاع منکم ان ینفع اخاہ فلینفعہ 1۔ رواہ مسلم عن جابر رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ کی اس نے نیت کی۔ اور تحقیق رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا کہ تم میں سے جو اپنے بھائی کو نفع پہنچانے کی طاقت رکھتا ہو اس کو چاہئے کہ وہ اپنے بھائی کو نفع پہنچائے۔ (اس کو امام مسلم نے سید نا حضرت جابر رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت فرمایا۔ اور اللہ تعالٰی بہتر جانتا ہے۔ت)

مسئلہ ۲۰۱: از میر گنج مرسلہ ابوالحسن صاحب ۶ شعبان ۱۳۲۰ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ سیونگ بنک یعنی ڈاکخانہ جات سرکار میں روپیہ جمع کرنا اور اس کو سود ۴/۴ فیصدی جو حسبِ قاعدہ سرکاری جمع کنندہ کو ملتا ہے لینا جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: سود مطلقاً حرام ہے قال اللہ تعالٰی "وَحَرَّمَ الرِّبٰوا" 2 (اللہ تعالٰی نے ارشاد فرمایا: حرام کیا ہے اللہ تعالٰی نے سود کو۔ت) ہاں اگر کسی کا اپنا مطالبہ واجبہ یا مباحہ جائز ہِ زید پر آتا ہو اور ویسے نہ ملے تو صرف بقدرِ مطالبہ جس طریقہ کے نام سے مل سکے لے سکتا ہے کہ اس صورت میں یہ اپنا حق لیتا ہے نہ کہ کوئی چیز ناجائز ، دینے والے کا اسے ناجائز نام سے تعبیر کرنا یا سمجھنا اسے مضر نہ ہو گا جب کہ اس کی نیت صحیح اور حق جائز و واجبی ہے واللہ یعلم السر واخفی (اللہ تعالٰی رازوں اور پوشیدہ باتوں کو جانتا ہے۔ت) اس امر میں مسلم وغیرہ مسلم سب کا حکم یکساں ہے بشرطیکہ غدر نہ کرے فتنہ نہ ہو۔

قال اللہ تعالیٰ "وَالْفِتْنَةُ اَكْبَرُ مِنَ الْقَتْلِ" 3۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ اللہ تعالٰی نے فرمایا: فتنہ قتل سے بڑا (گناہ) ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔(ت)

مسئلہ ۲۰۲: مرسلہ شیخ علاء الدین صاحب از میرٹھ لال کرتی ۱۳ شعبان المعظم ۱۳۲۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے کچھ روپیہ بنک میں جمع کیا اس کے بعد اس کے ورثہ سے عمرو نے اسے ناجائز جان کر بنک کو نوٹس دے دیا کہ میرا کل روپیہ دے دو۔ بنک والوں نے

(حواشی) 1 صحیح مسلم کتاب السلام باب استحباب الرقیۃ من العین الخ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/ ۲۴۴ 2 القرآن الکریم ۲/ ۲۷۵ 3 القرآن الکریم ۲/ ۲۱۷ Page 376 of 715

Fatawa Razawiya (Volume 17)

According to its rules, [the bank] promised to pay within a year. Amr needed money and requested it from the bank. The bank officials treated it as a loan and gave it, stating that they are not giving Amr his own money yet; after a full year, the bank will take interest on this loan from Amr, and they will give Amr interest on his money from the beginning. That amount will be much more than what they take from Amr, so after deduction, Amr will receive more. However, Amr has made a firm intention that he will not take it. In this case, will it be permissible for him to say, "We will neither take nor give interest; you settle it at your end"? Please clarify and you shall be rewarded.

Answer: O Allah! All praise is for You. (T). In the pure Shari'ah, taking interest absolutely, and giving it without necessity and legal compulsion, both are prohibited. However, when lawful (mubah) wealth is obtained by mutual consent without treachery and without committing crimes, then there is no harm in taking it with a lawful intention rather than with the intention of interest.

The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Actions are but by intentions, and for every person is only what he intended." We have already investigated this matter in our Fatawa with the help of Allah Almighty in such a way that there is no need for further addition.

The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said that indeed the basis of actions is on intentions, and for every person is only what he intended. And we have investigated this matter with the grace of Allah Almighty in our Fatawa in such a manner that there is no need for any addition to it. (T)

The giver's perception of it as interest in his own mind will not harm him as long as it is not interest in reality, and the taker does not intend interest.

Do you not see the saying of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him): "For every person is what he intended"? Thus, he made everything dependent on intention. And Allah Almighty said: "It will not harm you if

Do you not look towards this instruction of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) that for every person is only what he intended. Verily, the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) left

someone has gone astray when you are guided." And Allah Almighty said:	every person with their intention, and Allah Almighty...

1 Sahih al-Bukhari, Chapter: How the Divine Revelation started, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/2 2 Sahih al-Bukhari, Chapter: How the Divine Revelation started, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/2 3 Al-Qur'an al-Karim, 5/105

फतावा रज़विया (खंड 17)

अपने नियम के अनुसार एक वर्ष में देने का वादा किया, अम्र को रुपयों की ज़रूरत हुई तो बैंक से मंगाया, बैंक वालों ने इसे ऋण (loan) मानकर दिया कि अम्र को अम्र का रुपया वे अभी नहीं दे रहे हैं, अब एक वर्ष पूरा होने के बाद बैंक वाले अम्र से इस ऋण पर ब्याज (interest) लेंगे और अम्र के रुपयों पर शुरू से उसे ब्याज देंगे। वह राशि अम्र से ली जाने वाली राशि से बहुत अधिक होगी, तो कटौती के बाद अम्र को ही अधिक मिलेगा। लेकिन अम्र ने दृढ़ संकल्प किया है कि वह नहीं लेगा। इस स्थिति में क्या यह कहना जायज़ होगा कि "हम न ब्याज लेंगे न देंगे, आप अपने यहाँ हिसाब कर लें"? स्पष्ट करें, पुण्य पाएँ।

उत्तर: ऐ अल्लाह! तेरे लिए ही सारी प्रशंसा है। (त). पाक शरीअत में ब्याज लेना पूर्णतः और बिना आवश्यकता व कानूनी मजबूरी के ब्याज देना भी दोनों हराम (वर्जित) हैं। लेकिन जब जायज़ (मुबाह) धन बिना किसी धोखे और अपराध किए आपसी सहमति से मिलता हो, तो उसे ब्याज की नीयत के बजाय उसी जायज़ नीयत से लेने में कोई हर्ज नहीं है।

अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: "कर्म नीयतों पर आधारित हैं, और हर व्यक्ति के लिए वही है जिसकी उसने नीयत की।" और हमने अल्लाह तआला की तौफीक से अपने फतावा में इस मसले की तहकीकात उस अंदाज़ में कर दी है कि उस पर और कुछ जोड़ने की ज़रूरत नहीं है।

अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया कि बेशक कर्मों का दारोमदार नीयतों पर है और हर व्यक्ति के लिए वही कुछ है जिसकी उसने नीयत की। और हमने इस मसले की तहकीकात अल्लाह तआला की तौफीक से अपने फतावा में इस अंदाज़ से कर दी है कि इस पर इज़ाफ़े(बढ़ोतरी) की ज़रूरत नहीं। (त)

देने वाले का उसे अपने भ्रम में ब्याज समझना उसे नुकसान नहीं पहुँचाएगा जब तक कि वह वास्तव में ब्याज न हो और लेने वाले का उद्देश्य ब्याज न हो।

क्या आप नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के इस कथन को नहीं देखते: "हर व्यक्ति के लिए वही है जिसकी उसने नीयत की"? तो उन्होंने हर चीज़ को नीयत पर छोड़ दिया। और अल्लाह तआला ने फरमाया: "जो गुमराह हो गया वह तुम्हें कोई

क्या तुम नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के इस इरशाद की तरफ नहीं देखते कि हर व्यक्ति के लिए वही कुछ है जिसकी उसने नीयत की। हकीकत में हुज़ूर अकदस (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने हर व्यक्ति को

नुकसान नहीं पहुँचा सकता जब तुम सीधे रास्ते पर हो।" और अल्लाह तआला ने फरमाया:	उसकी नीयत के साथ छोड़ दिया, और अल्लाह तआला...

---

1 सहीह अल-बुखारी, अध्याय: वह्य (रहस्योद्घाटन) की शुरुआत कैसे हुई, कदीमी कुतुब खाना, कराची, 1/2 2 सहीह अल-बुखारी, अध्याय: वह्य की शुरुआत कैसे हुई, कदीमी कुतुब खाना, कराची, 1/2 3 अल-कुरान अल-करीम, 5/105

पृष्ठ 377/715

اپنے ضابطہ کے موافق ایک سال میں دینے کا وعدہ کیا، عمرو کو روپیہ کی ضرورت ہوئی بینک سے منگایا، بینک والوں نے اسے قرض قرار دے کر دیا کہ عمرو کو عمرو کا روپیہ وہ ابھی نہیں دیتے اب بعد تمامی سال بینک والے اپنے اس قرض کا سود عمرو سے لیں گے اور عمرو کے روپیہ کا ابتداء سے سود اسے دیں گے وہ مقدار اس سے بہت زائد ہوگی جو وہ عمرو سے لیں گے تو بعد منہائی عمرو ہی کو زائد ملے گا لیکن عمرو قصد مصمم کر چکا ہے کہ نہ لونگا۔ اس صورت میں اسے کہنا جائز ہوگا یا نہیں کہ ہم نہ سود لیں گے نہ دیں تم اپنے یہاں حساب کر لو۔ بینوا توجروا۔

الجواب: اللھم لك الحمد (اے اللہ ! تیرے لیے ہی حمد ہے۔ ت) شرع مطہر میں سود لینا مطلقاً اور بے ضرورت و مجبوری شرعی دینا بھی دونوں حرام ہیں مگر مال مباح جب بلا غدر و بے ارتکاب جرائم برضا مندی ملتا ہو تو اسے نہ بہ نیت سود بلکہ اسی نیت مباح سے لینے میں حرج نہیں،

قال رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم انما الاعمال بالنیات وانما لکل امرئ مانوی، وقد حققنا المسئلۃ بما لامزید علیہ بتوفیق اللہ تعالی في فتاوانا۔

رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا کہ بیشک اعمال کا دارو مدار نیتوں پر ہے اور ہر شخص کے لئے وہی کچھ ہے جس کی اس نے نیت کی اور ہم نے اس مسئلہ کی تحقیق اللہ تعالیٰ کی توفیق سے اپنے فتاوٰی میں اس انداز سے کردی ہے کہ اس پر اضافہ کی ضرورت نہیں۔ (ت)

دینے والے کا اسے اپنے زعم میں سود سمجھنا اسے مضر نہ ہوگا جبکہ وہ نہ واقع میں سود نہ لینے والے کو سود مقصود،

الاتری الی قولہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم لکل امرئ مانوی، فقد جعل کلا ونیۃ و قال تعالی لایضرکم من ضل اذا اھتدیتم وقال تعالی

کیا تو نبی کریم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے اس ارشاد کی طرف نہیں دیکھتا کہ ہر شخص کے لئے وہی کچھ ہے جس کی اس نے نیت کی۔ تحقیق حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے ہر شخص کو اس کی نیت کے ساتھ چھوڑ دیا، اور اللہ تعالیٰ

---

1 صحیح البخاری باب کیف کان بداء الوحی قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۲ 2 صحیح البخاری باب کیف کان بداء الوحی قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۲ 3 القرآن الکریم ۵ / ۱۰۵

Fatawa Rizvia, Volume 17

"Say: Each one acts according to his own disposition." (1) ...said: He who has gone astray does not harm you while you yourselves are on the right path. And Allah Almighty said: O (My Beloved!) You declare that everyone acts according to their own way. (T)

However, this is only in the case where no Muslim is a partner in the bank. If Muslims are also shareholders, then it is necessary that whatever excess amount he receives, he should count it as part of what was already due to him from them. For example, if he had previously taken loans from the same bank multiple times, and interest totaling five hundred rupees had already reached the bank, and now what they give him in the name of interest is equal to or less than that, then taking it is permissible. He should take it with the intention of recovering what was legally his, which he could not have recovered without consent in any other way except this. If Muslims are partners there and he has nothing previously due, or it is less than the amount he will receive, and they insist on giving him this excess, then he should take it on behalf of other Muslims from whom these people had taken interest.

"Because they are commanded by Sharia to return what they took from them to them, but they do not return it, and Muslims do not have the power to recover it. So this would be an aid to his brothers." Because the people of war (Harbi) are commanded to return the property taken from Muslims to them, although they do not return it and Muslims lack the power to reclaim it from them, so in this manner, it will be assistance for his brothers. (T)

Then, whatever was his own due, he could keep; for the rest, it is obligatory to give it as charity (Sadaqah) to the poor.

"Because it is the path for every valid property whose rightful owner is unknown, as mentioned in Al-Durr al-Mukhtar and other reliable books. And Allah Almighty knows best." Because this is the way for every lawful property whose rightful owner is not known, as stated in reliable books like Durr-ul-Mukhtar, etc. And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 203: From Bengal, District Nasirabad, sent by Maulvi Tamizuddin Sahib, 8 Dhu al-Qi'dah 1322 AH. What do the scholars of the religion and the jurists of the firm Sharia say regarding this issue: A person initially used to consume interest (usury). Now he has repented, deciding that he will no longer take interest nor has he taken

it. Is it permissible for him to spend the previous interest money he has on his own needs? Is that wealth lawful (Halal) or prohibited (Haram) for his heirs?

(1) Al-Quran Al-Kareem 17/84

फ़तावा रिज़विया, जिल्द 17

"कहो: प्रत्येक व्यक्ति अपनी प्रकृति के अनुसार कार्य करता है।" (1) ...ने फ़रमाया: वह जो गुमराह हुआ तुम्हें नुकसान नहीं पहुँचाता जबकि तुम स्वयं हिदायत पर हो। और अल्लाह तआला ने फ़रमाया: ऐ (मेरे महबूब!) आप कह दें कि हर एक अपने तरीके पर अमल करता है। (त)

लेकिन यह उस स्थिति में है जब बैंक में कोई मुसलमान साझीदार न हो, और अगर मुसलमान भी हिस्सेदार हों तो ज़रूरी है कि यह रुपया जितना उसे ज़्यादा मिलेगा उतना या उससे ज़ायद उसका उन पर आता हुआ, उस आने वाले में इस ज़्यादती को शुमार कर ले। मिसाल के तौर पर इसी बैंक से पहले भी कई बार उसने कर्ज लिया था जिसका ब्याज सब बार का पाँच सौ रुपये बैंक को पहुँच चुका है और अब उसे जो कुछ वह ब्याज के नाम पर देंगे वह उसी के बराबर या उससे कम है तो उसे लेना जायज़ है और नियत उस आने वाले की वापसी की करके जो कानूनी तौर पर इस सूरत के सिवा बिना रजामंदी के दूसरी तरह वापस नहीं ले सकता था। और अगर वहाँ मुसलमान शरीक हैं और उसका पहले से कुछ नहीं आता या उस रक़म से जो उसे मिलेगी कम आता है और वे ज़बरदस्ती उसे यह ज़्यादती देंगे तो उसे उन मुसलमानों की ओर से ले ले जिनसे इन लोगों ने ब्याज लिया था।

"क्योंकि उन्हें शरीयत द्वारा आदेश है कि उन्होंने उनसे जो लिया है वह उन्हें वापस कर दें, लेकिन वे वापस नहीं करते और मुसलमान इसे वापस लेने में असमर्थ हैं। तो यह उसके भाइयों के लिए एक सहायता होगी।" क्योंकि अहले-हर्ब मुसलमानों से लिया हुआ माल उन्हें वापस करने के लिए पाबंद हैं हालाँकि वे वापस नहीं करते और मुसलमानों में उनसे वापस लेने की ताक़त नहीं है, तो इस तरह उसके भाइयों की मदद होगी। (त)

फिर जितना अपना बनता था खुद ले सकता था बाकी वाजिब है कि फ़ुक़रा (गरीबों) पर सदक़ा (दान) कर दे।

"क्योंकि यह उस हर पाक माल का रास्ता है जिसके हक़दार का पता न हो जैसा कि दुर्र-ए-मुख़्तार और अन्य विश्वसनीय किताबों में है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।" क्योंकि यह रास्ता हर उस माल-ए-सालेह के लिए है जिसके हक़दार का इल्म न हो जैसा कि दुर्र-ए-मुख़्तार आदि विश्वसनीय किताबों में है। वल्लाहु तआला आलम (त)

मसला 203: बंगाल, जिला नसीराबाद, प्रेषक मौलवी तमीज़ुद्दीन साहब, 8 ज़ीक़ादा 1322 हिजरी। दीन के उलेमा और शरा-ए-मतीन के मुफ्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि एक व्यक्ति पहले ब्याज खाता था अब उसने तौबा कर ली है कि अब मैं ब्याज नहीं लूँगा और न ब्याज लिया। पहला जो माल उसके पास ब्याजी है उसका अपने खर्चों में इस्तेमाल करना जायज़ है या नहीं? उसके वारिसों के लिए वह माल हलाल है या हराम?

(1) अल-क़ुरान अल-करीम 17/84

فتاوٰی رضویہ، جلد ہفدہم (۱۷)

"قُلْ كُلٌّ يَعْمَلُ عَلَى شَاكِلَتِهٖ" ۱ نے فرمایا تمہیں نقصان نہیں پہنچاتا وہ جو گمراہ ہوا جبکہ تم خود ہدایت پر ہو۔ اور اللہ تعالٰی نے فرمایا: اے (میرے محبوب) آپ فرمادیں کہ ہر ایک اپنے طریقے پر عمل کرتا ہے۔ (ت)

مگر یہ اس صورت میں ہے کہ بینک میں کوئی مسلمان شریک نہ ہو، اور اگر مسلمان بھی حصہ دار ہوں تو ضرور ہے کہ یہ روپیہ جس قدر اسے زیادہ ملے گا اتنا یا اس سے زائد اس کا ان پر آتا ہوا اس آتے ہوئے میں اس زیادت کو محسوب کر لے مثلاً اسی بینک سے پہلے بھی متعدد بار اس نے قرض لیا تھا جس کا سود سب بار کا پانچ سو روپے بینک کو پہنچ چکے ہیں اور اب اسے جو کچھ وہ بنام سود دینگے وہ اسی قدر یا اس سے کم ہے تو اسے لینا جائز ہے اور نیت اس آتے ہوئے کے واپسی کی کر کے جو قانوناً اس صورت کے سوا بلا رضامندی کے دوسری طرح واپس نہ لے سکتا تھا، اور اگر وہاں مسلمان شریک ہیں اور اس کا پہلے سے کچھ نہیں آتا یا اس رقم سے جو اسے ملے گی کم آتا ہے اور وہ خواہ مخواہ اسے یہ زیادت دیں گے تو اسے اور مسلمانوں کی جانب سے لے جن سے ان لوگوں نے سود لیا تھا،

لانھم مأمورون شرعاً برد ما اخذ وامنھم الیھم و ھم لا یردون والمسلمون لا یقدرون علی ان یستردوا فیکون ھذا عونا لاخوانھ کیونکہ اہل حرب مسلمانوں سے لیا مال انہیں واپس کرنے کے مامور ہیں حالانکہ وہ واپس نہیں کرتے اور مسلمان ان سے واپس لینے کی طاقت نہیں رکھتے تو اس طرح اسکے بھائیوں کی مدد ہوگی۔ (ت)

پھر جس قدر اپنا آتا تھا خود لے سکتا تھا باقی واجب ہے کہ فقراء پر تصدق کر دے،

لانه سبیل کل مال صالح لا یعلم مستحقه کما في الدر المختار وغیره من معتمدات الاسفار۔ واللہ تعالی اعلم۔ کیونکہ یہ سبیل ہے ہر مالِ صالح میں جس کا مستحق معلوم نہ ہو جیسا کہ در مختار وغیرہ قابلِ اعتماد کتابوں میں ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

مسئلہ ۲۰۳: ملک بنگالہ ضلع نصیرآباد مرسلہ مولوی تمیز الدین صاحب ۸ ذیقعدہ ۱۳۲۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص اول سود کھاتا تھا اب اس نے توبہ کر لی کہ اب میں سود نہیں لوں گا اور نہ سود لیا پہلا جو مال اس کے پاس سودی ہے اس کا خرچ کرنا اپنے حوائج میں جائز ہے یا نہیں اس کے ورثاؤں کو وہ مال حلال ہے یا حرام؟

۱ القرآن الکریم ۱۷ / ۸۴

Answer: The wealth received in interest (Riba), although it comes into the possession of the interest-taker and becomes his property,

[Arabic]: Because this is the ruling for invalid contracts, and the eminent [Allama] Shami made an oversight in 'Uqud ad-Durriya'. [Urdu]: Because this is the ruling for invalid contracts, and the eminent Allama Shami made an oversight in 'Uqud ad-Durriya'. (T)

However, that ownership is impure (mal-e-khabeeth). It is obligatory upon him to return the impure wealth to those from whom it was taken. If they are no longer alive, it should be given to their heirs. If they are also not found, then it should be given in charity (Sadaqah). In any case, spending it on one's own needs is forbidden (Haram). If he spends it on his own expenses, then he is still consuming interest, and his repentance is false,

[Arabic]: Because he did not regret the past, nor did he abandon it for the future, nor did he erase what remains. Thus, none of the pillars of repentance have been fulfilled. [Urdu]: Because he did not regret the past, nor did he abandon it for the future, nor did he erase what remains. Thus, none of the pillars of repentance have been fulfilled. (T)

If the heir knows that his predecessor took such-and-such an amount of forbidden wealth from such-and-such persons, he should return it to them. If it is known that exactly this money in this box or bag is pure Haram wealth, then he should give it in charity to the poor. If it is all mixed and the persons from whom it was taken are unknown, then it is permissible for the heir [to use it], though avoiding it is better. It is stated in Durr al-Mukhtar:

[Arabic]: The prohibition multiplies with the knowledge of it except in the right of the heir, and it is restricted in 'al-Zahiriyya' by the condition that he does not know the owners of the wealth. [Urdu]: If there is knowledge of the prohibition, it transfers except in the case of the heir, and in 'al-Zahiriyya', this restriction was added for the heir's right that he does not know the owners of the wealth (then it is lawful for him). (T)

It is stated in Radd al-Muhtar:

[Arabic]: The summary is that if he knows the owners of the wealth, it is obligatory to return it to them; otherwise, if he knows the specific Haram wealth, it is not lawful for him and he should give it in charity with the intention of its owner, even if it were wealth... [Urdu]: The summary is that if the heir knows the original owners of the wealth, it is obligatory for him to return their wealth to them. Otherwise, if he knows that the wealth is specifically Haram, it is not lawful for him; rather, he should give it in charity on behalf of the owner.

1. Al-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Bay' al-Fasid, Mujtabai Press, Delhi, 2/29.

फतावा रज़विया - जिल्द 17

उत्तर: सूद (ब्याज) में जो माल मिलता है, वह सूदखोर के कब्ज़े में आकर हालांकि उसकी मिल्कियत (संपत्ति) हो जाता है,

[अरबी]: क्योंकि फासिद (अमान्य) अनुबंधों का यही नियम है और अल्लामा फाज़िल शामी से 'उक़ूद अद-दुर्रिया' में चूक हुई। [उर्दू]: क्योंकि अक़्दे-फासिदा का यही हुक्म है और अल्लामा फाज़िल शामी से 'उक़ूद अद-दुर्रिया' में भूल हुई। (त)

मगर वह मिल्कियत 'ख़बीस' (अपवित्र) होती है। उस पर यह फ़र्ज़ है कि वह नापाक माल जिनसे लिया है उन्हें वापस कर दे। यदि वे न हों तो उनके वारिसों (उत्तराधिकारियों) को दे। यदि वे भी न मिलें तो सदक़ा (दान) कर दे। बहरहाल, इसे अपनी ज़रूरतों में खर्च करना हराम है। अगर वह इसे अपने खर्च में लाएगा, तो वह अब भी सूद खा रहा है और उसकी तौबा (पछतावा) झूठी है,

[अरबी]: क्योंकि उसे अतीत पर पछतावा नहीं हुआ, न ही उसने भविष्य के लिए इसे छोड़ा, और न ही जो शेष है उसे मिटाया। इस प्रकार तौबा के स्तंभों में से कोई भी नहीं पाया गया। [उर्दू]: क्योंकि वह गुज़श्ता (अतीत) पर नादिम नहीं हुआ और आइंदा के लिए उसको छोड़ा नहीं और न ही बाक़ी को मिटाया तो इस तरह अरकाने-तौबा में से कोई भी नहीं पाया गया। (त)

वारिस को अगर मालूम हो कि उसके मौरिस (पूर्वज) ने फलां-फलां शख्स से इतना-इतना हराम माल लिया था, तो उन्हें पहुँचा दे। और अगर सब मालूम हो कि बिल्कुल यही रुपया जो इस संदूक या थैली में है वह खालिस माल-ए-हराम है, तो उसे फकीरों पर सदक़ा कर दे। और अगर सब मिला हुआ है और जिनसे लिया गया वे भी मालूम नहीं, तो वारिस के लिए [इस्तेमाल] जायज़ है और बचना बेहतर है। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

[अरबी]: हराम होने की जानकारी होने पर हराम की तादाद बढ़ती रहती है सिवाय वारिस के हक के, और 'ज़हीरिया' में यह शर्त लगाई गई है कि वह वारिस माल के मालिकों को न जानता हो। [उर्दू]: हुरमत का अगर इल्म हो तो वह मुंतक़िल होती है सिवाए वारिस के हक के, और ज़हीरिया में वारिस के हक के साथ यह कैद लगाई कि वह वारिस माल के मालिकों को न जानता हो (तब उसके लिए हलाल है)। (त)

'रद्दुल मुहतार' में है:

[अरबी]: सारांश यह है कि अगर वह माल के मालिकों को जानता हो तो उन्हें लौटाना वाजिब है; वरना अगर वह ऐन-ए-हराम माल को जानता है, तो उसके लिए हलाल नहीं है और उसे उसके मालिक की नीयत से सदक़ा कर दे, चाहे वह माल... [उर्दू]: हासिल यह कि अगर वारिस माल के असल मालिकों का इल्म रखता हो तो उनका माल उन्हें लौटाना उस पर वाजिब है। वरना अगर उस माल के बिल्कुल हराम होने का उसे इल्म है, तो उसके लिए हलाल नहीं बल्कि मालिक की तरफ से [सदक़ा कर दे]।

1. अल-दुर्रुल मुख्तार, किताबुल बुयूअ, बाबुल बैय्युल फासिद, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 2/29.

فتاوٰی رضویہ (جلد ہفدہم ۱۷)

الجواب: سود میں جو مال ملتا ہے وہ سود خور کے قبضہ میں آکر اگرچہ اس کی ملک ہو جاتا ہے،

لان هذا هو حكم العقود الفاسدة وذهل الفاضل الشامی فی العقود الدریۃ۔ | کیونکہ عقد فاسدہ کا یہی حکم ہے اور علامہ فاضل شامی سے عقود دریہ میں بھول ہوئی۔ (ت)

مگر وہ ملک خبیث ہوتی ہے اس پر فرض ہوتا ہے کہ ناپاک مال جن جن سے لیا ہے انہیں واپس دے وہ نہ رہے ہوں تو ان کے وارثوں کو دے وہ بھی نہ ملیں تو تصدق کردے، بہر حال اپنے حوائج میں اسے خرچ کرنا حرام ہوتا ہے اگر اپنے خرچ میں لائے گا تو وہ اب بھی سود کھا رہا ہے اور اس کی توبہ جھوٹی ہے،

لانه لم یندم علی الماضي و ما ترك في الآتي ولم یمح الباقي فلم یوجد شیئ من ارکان التوبۃ۔ | کیونکہ وہ گذشتہ پر نادم نہیں ہوا اور آئندہ کے لئے اس کو چھوڑا نہیں اور نہ ہی باقی کو مٹایا تو اس طرح ارکان توبہ میں سے کوئی بھی نہیں پایا گیا (ت)

وارث کو اگر معلوم ہو کہ اس کے مورث نے فلاں فلاں شخص سے اتنا اتنا حرام لیا تھا تو انہیں پہنچادے اور اگر سب معلوم ہو کہ بعینہ یہ روپیہ جو اس صندوق یا اس تھیلی میں ہے خالص مال حرام ہے تو اسے فقراء پر تصدق کردے اور اگر سب مخلوط ہے اور جن سے لیا وہ بھی معلوم نہیں تو وارث کے لئے جائز ہے اور بچنا افضل ہے۔ در مختار میں ہے:

الحرمة تتعدد مع العلم بها الا فی حق الوارث وقیده في الظهیریة بان لا یعلم ارباب الاموال 1۔ | حرمت کا اگر علم ہو تو وہ منتقل ہوتی ہے سوائے وارث کے حق کے، اور ظہیریہ میں حق وارث کے ساتھ یہ قید لگائی کہ وہ وارث مال کے مالکوں کو نہ جانتا ہو (تب اس کے لئے حلال ہے۔ (ت)

ردالمحتار میں ہے:

الحاصل انه ان علم ارباب الاموال وجب رده علیهم ، والافان علم عین الحرام لا یحل له ویتصدق به بنیة صاحبہ، وان کان مالاً | حاصل یہ کہ اگر وارث مال کے اصل مالکوں کا علم رکھتا ہو تو ان کا مال انہیں لوٹانا اس پر واجب ہے ورنہ اگر اس مال کے بعینہ حرام ہونے کا اسے علم ہے تو اس کے لئے حلال نہیں بلکہ مالک کی طرف سے

1 الدرالمختار کتاب البیوع باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۲۹/۲

[Box 1] Arabic: If forbidden (haram) wealth is mixed and joined with lawful (halal) wealth, and its owners are not known, nor is any specific part of it known to be haram, then it is legally (hukman) permissible for him [the heir]. However, from a religious piety (diyanatan) standpoint, it is much better to abstain from it. 1 Urdu: While making an intention, one should give charity. And if haram wealth is mixed with halal wealth, and the heir does not know its owners, nor does he have knowledge of it being specifically haram, then it is legally permissible for him, but from the perspective of religious piety, it is much better to avoid it. (T)

Also, it is in Durr-e-Mukhtar: [Box 2] Arabic: The right of annulment (i.e., in a voidable sale/al-bay' al-fasid) is not invalidated by the death of either party (i.e., one of the contracting parties). Thus, the heir succeeds him in that right. This is the fatwa. I say: This statement implies that the transfer of ownership in ill-gotten (khabith) property does not remove the impurity (khubth). Therefore, it is obligatory for the heir to annul the voidable sale. If he does not do so, the Qadi (judge) shall compel him. And Allah Almighty knows best. 2 Urdu: In a voidable sale, the right of annulment is not invalidated due to the death of the seller or the buyer; thus, the heir of the deceased will be his successor, and the fatwa is given on this. I say that this discourse has benefited the point that the transfer of ownership in an impure possession does not eliminate the impurity. Therefore, it is obligatory for the heir to annul the voidable sale, and if he does not do so, the Qadi should compel him. And Allah Almighty knows best. (T)

Issue 204: Region of Bengal, District Nasirabad, sent by Maulvi Tamizuddin Sahib, 8 Dhu al-Qi'dah 1322 AH. What do the scholars of religion and jurists of the clear Shari'ah say regarding this matter: is it permissible to socialize with a usurer (interest-taker) and invite him to weddings and community gatherings (Panchayat) or not? Please provide a reply with reference to books and evidence. State your opinion and be rewarded.

The Answer: A usurer who openly takes interest and does not repent, nor ceases, one should not socialize with him; he should not be invited to weddings etc. Allah Almighty said: "And if Satan should cause you to forget..." : If Satan makes you forget.

1 Radd al-Muhtar, Book of Sales, Chapter on Voidable Sales, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/130. 2 Radd al-Muhtar, Book of Sales, Chapter on Voidable Sales, Matba' Mujtabai, Delhi, 2/29.

[बॉक्स 1] अरबी: यदि हराम माल हलाल के साथ मिल गया हो और उसके स्वामियों का पता न हो, और न ही उसके किसी विशिष्ट भाग के हराम होने का पता हो, तो वह कानूनी रूप से (हुकमान) उसके लिए हलाल है। हालाँकि, धार्मिक धर्मपरायणता (दियानतन) के दृष्टिकोण से, इससे बचना ही बहुत बेहतर है। 1 उर्दू: नियत करते हुए सदक़ा करे। और अगर हराम माल हलाल के साथ मिश्रित है, और वारिस उसके मालिकों को नहीं जानता है, और न ही उसे विशेष रूप से हराम होने का ज्ञान है, तो वह कानूनी रूप से उसके लिए हलाल है, लेकिन धार्मिक धर्मपरायणता के दृष्टिकोण से इससे बचना ही ज़्यादा बेहतर है। (त)

साथ ही, दुर्र-ए-मुख्तार में है: [बॉक्स 2] अरबी: किसी एक पक्ष (यानी अनुबंध करने वाले पक्षों में से एक) की मृत्यु से (फासिद बिक्री में) रद्द करने का अधिकार समाप्त नहीं होता है। अतः उत्तराधिकारी उसका स्थान लेता है। इसी पर फतवा दिया जाता है। मैं कहता हूँ: इस कथन ने यह लाभ दिया कि अपवित्र (खबीस) संपत्ति में स्वामित्व का हस्तांतरण उसकी अपवित्रता (खुब्स) को समाप्त नहीं करता है। इसलिए उत्तराधिकारी पर अनिवार्य (वाजिब) है कि वह फासिद बिक्री को रद्द करे। और अगर वह ऐसा न करे, तो काजी उसे इस पर मजबूर करे। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। 2 उर्दू: बय-ए-फासिद (दोषपूर्ण बिक्री) में विक्रेता या खरीदार की मृत्यु के कारण रद्द करने का अधिकार समाप्त नहीं होता है, इसलिए मृतक का उत्तराधिकारी उसका उत्तराधिकारी होगा और इसी पर फतवा दिया जाता है। मैं कहता हूँ कि इस प्रवचन ने इस बात का लाभ दिया है कि अशुद्ध स्वामित्व में स्वामित्व का हस्तांतरण अशुद्धता को समाप्त नहीं करता है। इसलिए, वारिस पर यह अनिवार्य है कि वह फासिद बिक्री को रद्द कर दे, और यदि वह ऐसा नहीं करता है, तो काजी को उसे मजबूर करना चाहिए। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 204: बंगाल क्षेत्र, जिला नसीराबाद, मौलवी तमीज़ुद्दीन साहब द्वारा प्रेषित, 8 ज़ुल-क़ादा 1322 हिजरी। धर्म के विद्वान और शरीयत-ए-मतीन के मुफ़्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि सूदखोर (ब्याज लेने वाले) के साथ मेल-जोल करना और शादी और पंचायत में बुलाना जायज़ है या नहीं? किताबों के हवाले और दलील के साथ जवाब इनायत फ़रमाएँ। बयान करें, आपको सवाब मिलेगा।

अल-जवाब (उत्तर): सूदखोर जो खुलेआम सूद खाए और तौबा न करे, बाज़ न आए, उसके साथ मेल-जोल नहीं रखना चाहिए, उसे शादी वगैरह में नहीं बुलाया जाना चाहिए। अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "और अगर शैतान तुम्हें भुला दे..." : अगर शैतान तुझे भुला दे।

1 रद अल-मुह्तार, किताबुल बुयूअ, बाब अल-बय अल-फासिद, दार अहया अल-तुरास अल-अरबी, बेरुत, 4/130। 2 रद अल-मुह्तार, किताबुल बुयूअ, बाब अल-बय अल-फासिद, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 2/29।

पृष्ठ 380 / 715

مختلطا مجتمعاً من الحرام ولا یعلم اربابه ولا شیئا منه بعینه حل له حکما، والاحسن دیانة التنزه عنه 1 نیت کرتے ہوئے صدقہ کرے اور اگر مال حرام حلال سے مخلوط ہے اور وہ وارث اس کے مالکوں کو نہیں جانتا، نہ ہی بعینہ اس کے حرام ہونے کا اس کو علم ہے تو وہ حکماً اس کے لئے حلال ہے مگر دیانت کے اعتبار سے اس سے بچنا ہی زیادہ بہتر ہے۔ (ت)

نیز در مختار میں ہے : ولا یبطل حق الفسخ(ای فی البیع الفاسد) بموت احدهما(ای احد العاقدین) فیخلفه الوارث به یفتی اه 2 اقول: فافاد ان انتقال الملك في الملك الخبیث لا یزیل الخبث ویجب علی الوارث فسخه فان لم یفعل اجبر القاضی۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ بیع فاسد میں بائع یا مشتری کی موت کے سبب سے حق فسخ باطل نہیں ہوتا، چنانچہ مرنے والے کا وارث اس کا قائم مقام ہوگا اور اسی پر فتوٰی دیا جاتا ہے۔ میں کہتا ہوں کہ اس کلام نے اس بات کا فائدہ دیا کہ ملک خبیث میں ملک کا منتقل ہونا خبث کو زائل نہیں کرتا لہٰذا وارث پر واجب ہے کہ بیع فاسد کو فسخ کرے اور اگر وہ ایسا نہ کرے تو قاضی اس پر جبر کرے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۲۰۴: ملک بنگالہ ضلع نصیر آباد مرسلہ مولوی تمیز الدین صاحب ۸ ذیقعدہ ۱۳۲۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ سود خور کے ساتھ میل جول کرنا اور شادی اور پنچایت میں بلانا جائز ہے یا نہیں؟ بحوالہ کتب و بادلیل جواب عنایت فرمائیں۔ بینوا توجروا۔ الجواب : سود خور کہ علانیہ سود کھائے اور توبہ نہ کرے، باز نہ آئے، اس کے ساتھ میل جول نہ چاہئے اسے شادی وغیرہ میں نہ بلایا جائے، قال اللہ تعالٰی "وَاِمَّا یُنْسِیَنَّكَ الشَّیْطٰنُ" : اگر شیطان تجھے بھلا دے

1 ردالمحتار کتاب البیوع باب البیع الفاسد دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۳۰ 2 ردالمحتار کتاب البیوع باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۲۹

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

Box 1: Verse: 'Then sit not after the remembrance with the wrongdoing people.' [Quran 6:68] - And Allah knows best. Translation: Allah Almighty has ordained: 'So after remembrance, do not sit with the oppressive nation.' And Allah Almighty knows best. (T)

Issue 205: From the State of Kishangarh, near Ajmer Sharif, Maharaja School Third Master, petitioner Sayyid Amanat Ali Sahib, 7 Rabi al-Akhir 1331 AH. Is it permissible or impermissible to do or have life and marriage insurance done? Your student from Rampur, who has been residing in Ajmer Sharif for a long time, replied upon inquiry that in his opinion, this is not forbidden. He also suggested that I should inquire from my Maulana Maulvi Ahmad Raza Khan Sahib. I hope you will favor the people of Islam by sending a fatwa, and I shall be grateful. This insurance law was also passed by the Governor-General's Council in 1312 AH, yet there has been no objection to it so far. I am sending the Urdu prospectus and the annual report in English for your observation.

The Answer: This is a form of gambling (Qimar); in this, money is lost to an extent, and the imaginary profit for which there is hope, even if received, the company is not foolish enough to pay a thousand or fifteen hundred from its own pocket; rather, it will be the same money that others lost. Even if there are Muslims among them, there is no reason for it to be lawful.

Box 2: Verse: Allah the Almighty said: 'And do not consume your wealth among yourselves unjustly.' [Quran 2:188] - And Allah Almighty knows best. Translation: Allah the Almighty said: 'Do not consume one another's wealth among yourselves unjustly.' And Allah Almighty knows best. (T)

Issue 206: Apart from Kabul, what is the ruling on eating, drinking, praying behind, or maintaining relations with those who take interest from non-Muslim nations? The Answer: This issue is not such that such harsh treatment should be meted out to them. And Allah Almighty knows best.

Issue 207: From Sayyid Ayub Ali Sahib, Mohalla Bahawalpur Ka Sagrah, Bareilly. Zaid gave some money as an interest-based loan to Bakr for a period of ten years, and its paper (deed) was registered. When...

1 Al-Quran al-Karim 68/6 2 Al-Quran al-Karim 188/2 Page 381 of 715

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

बॉक्स 1: आयत: 'फिर याद आने के बाद ज़ालिम कौम के साथ मत बैठ।' [कुरान 6:68] - और अल्लाह बेहतर जानता है। अनुवाद: अल्लाह तआला ने इरशाद फरमाया: 'तो याद आने पर ज़ालिम कौम के साथ मत बैठ।' और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 205: रियासत किशनगढ़, अजमेर शरीफ के पास, महाराजा स्कूल के तीसरे मास्टर, मुस्तफ़ा सैयद अमानत अली साहब, 7 रबी उल आख़िर 1331 हिजरी। शादी और ज़िंदगी का बीमा करना या करवाना जायज़ है या नाजायज़? आपके शागिर्द रामपुरी साहब ने, जो काफी समय से अजमेर शरीफ में रह रहे हैं, पूछने पर यह जवाब दिया कि उनके विचार में यह हराम नहीं है। उन्होंने यह भी कहा कि मेरे मौलाना मौलवी अहमद रज़ा खान साहब से पूछ लेना चाहिए। मुझे उम्मीद है कि आप अहले इस्लाम के फायदे के लिए फतवा भेजकर उपकृत करेंगे। इस बीमा का कानून गवर्नर जनरल की काउंसिल द्वारा 1312 हिजरी में पारित किया गया था, लेकिन अभी तक इस पर कोई आपत्ति नहीं हुई है। मैं आपके अवलोकन के लिए उर्दू प्रॉस्पेक्टस और अंग्रेजी में वार्षिक रिपोर्ट भेज रहा हूं।

जवाब: यह एक प्रकार का जुआ (क़िमार) है; इसमें एक हद तक पैसा बर्बाद होता है, और वह कल्पित लाभ जिसकी उम्मीद पर दीन (पैसे) अगर मिले भी, तो कंपनी इतनी मूर्ख नहीं है कि अपनी जेब से हज़ार या डेढ़ हज़ार दे; बल्कि वह वही पैसा होगा जो दूसरों का डूबा है। और अगर उनमें मुसलमान भी हों, तो इसके जायज़ होने की कोई वजह नहीं है।

बॉक्स 2: आयत: अल्लाह तआला ने फरमाया: 'और अपने माल आपस में नाहक तरीके से मत खाओ।' [कुरान 2:188] - और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। अनुवाद: अल्लाह तआला ने फरमाया: 'आपस में एक-दूसरे का माल नाहक तौर पर मत खाओ।' और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 206: काबुल के अलावा, उन लोगों के साथ खाना-पीना, उनके पीछे नमाज़ पढ़ना या संबंध रखना कैसा है जो गैर-मुस्लिम कौमों से ब्याज लेते हैं? जवाब: यह मसला ऐसा नहीं है कि उनके साथ इतना सख्त व्यवहार किया जाए। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 207: सैयद अय्यूब अली साहब, मोहल्ला बहावलपुर का सगरा, बरेली की ओर से। ज़ैद ने बक्र को दस साल की अवधि के लिए ब्याज पर कुछ पैसे उधार दिए और उसका दस्तावेज़ पंजीकृत हो गया। जब...

1 अल-कुरान अल-करीम 68/6 2 अल-कुरान अल-करीम 188/2 पेज 381 of 715

فتاوٰی رضویہ (جلد بقدہم (۱۷))

باکس ۱: فَلَا تَقْعُدْ بَعْدَ الذِّكْرٰى مَعَ الْقَوْمِ الظّٰلِمِيْنَ ۝ ۱ - واللہ تعالٰی اعلم۔ اللہ تعالٰی نے ارشاد فرمایا تو یاد آنے پر ظالم قوم کے ساتھ مت بیٹھ۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۲۰۵: از ریاست کشن گڑھ متصل اجمیر شریف مہاراجہ اسکول تھرڈ ماسٹر مسئولہ سید امانت علی صاحب ۷ ربیع الآخر ۱۳۳۱ھ شادی و زندگی کا بیمہ کر نا یا کروانا جائز ہے یا ناجائز؟ آپ کے شاگرد رامپوری صاحب نے جو کہ اجمیر شریف میں عرصہ سے قیام پذیر ہیں دریافت کرنے پر یہ جواب دیا کہ میرے خیال سے تو یہ حرام نہیں ہے انہوں نے یہ بھی فرمایا کہ میرے مولنا مولوی احمد رضا خان صاحب سے دریافت کرلینا چاہئے میں امید کرتا ہوں کہ آپ بافادہ اہل اسلام بصورت فتوٰی ارسال فرما کر ممنون و مشکور فرمائیں گے۔ اس بیمہ کا قانون بھی گورنر جنرل کی کونسل سے ۱۳۱۲ھ میں پاس ہو گیا مگر ہنوز اس پر کوئی اعتراض نہ ہوا۔ پراسپکٹس اردو و سالانہ رپورٹ بزبان انگریزی جناب کے ملاحظہ کے لئے روانہ کرتا ہوں۔

الجواب: یہ نزاقمار ہے اس میں ایک حد تک روپیہ ضائع بھی جاتا ہے اور وہ منافع موہوم جس کی امید پر دین اگر ملے بھی تو کمپنی بیوقوف نہیں کہ گرہ سے ہزار ڈیڑھ ہزار دے بلکہ وہ وہی روپیہ ہو گا جو اوروں کا ضائع گیا، اور ان میں مسلمان بھی ہوں گے تو کوئی وجہ اس کی حلت کی نہیں،

باکس ۲: قال اللہ تعالٰی "لَا تَاْكُلُوْٓا اَمْوَالَكُمْ بَيْنَكُمْ بِالْبَاطِلِ" ۲- واللہ تعالٰی اعلم۔ اللہ تعالٰی نے فرمایا : آپس میں ایک دوسرے کا مال ناحق طور مت کھاؤ۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ ۲۰۶: کابل کے علاوہ مسلمانوں کے غیر قوم سے جو سود لیتے ہیں ان کے یہاں کھانا پینا، ان کے پیچھے نماز پڑھنا یارسم رکھنا کیسا ہے؟ الجواب: یہ مسئلہ ایسا نہیں کہ ایسی شدت کا برتاؤ ان سے برتا جائے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۲۰۷: از سید ایوب علی صاحب محلہ بہاولپور کا سگرہ، بریلی زید نے کچھ روپیہ بکر کو دس سال کی مدت پر سودی قرض دیا اور اس کا کاغذ رجسٹری ہو گیا۔ جب

The residents of the neighborhood became aware of this and upon investigation, it was found that in addition to this, Zaid holds one or two other houses as mortgage (Rahn) from people and collects rent from them. On this, the neighborhood residents questioned Zaid, who admitted to it and said, "I have no intention of taking interest; I have only included this interest clause in the document according to the Indian Penal Code." Then he said, "Its duration is ten years; when that time comes, I will not take the interest money." Regarding the houses, he said, "I give that money to my daughter," and the daughter said, "I give the house rent in charity; I don't keep it for myself." He confessed all these facts only when he saw that the neighbors were ready to boycott him, and some had even done so. In such a situation, should eating and drinking at Zaid's house be avoided or not? Please clarify, and may you be rewarded.

The Answer: In the mentioned situation, Zaid is definitely an interest-taker. He should be avoided, and social interaction with him should be abandoned. His excuses are false. The rent he takes is certainly interest. He took the interest whether he consumed it himself or gave it to his daughter. There is no legal clause that mandates writing interest in a loan agreement; this is a false excuse by interest-taking liars. And saying "I have written it down but won't take it" is like someone saying, "I have taken filth in my mouth but I won't swallow it." Allah Almighty knows best.

Problem 208: From Marehra Mutahira, District Etah, Hazrat Syed Barakat Hasan Sahab, 22 Rajab 1318 AH. A person borrows six hundred rupees and gives property to the lender, and sets a 'service fee' or 'collection fee' of, say, one hundred or fifty rupees. Both want to avoid using the word 'interest'. This is a mortgage contract, not just a loan; there is no compensation in a loan. In short, please suggest a way to make the mortgage valid so that what the borrower wants to give to the lender and for the lender to take it becomes permissible. Please clarify, and may you be rewarded.

The Answer: This cannot be a mortgage. Benefit from the village is through the method of leasing (Ijarah), as the land is leased to cultivators. Ijarah and mortgage (Rahn) are two conflicting contracts and cannot be combined. Being under lease to cultivators requires their possession (of the land) for the impossibility of deriving benefit without possession. And being a mortgaged property requires the mortgagee's possession, according to the word of Allah: "then a security (pledge)

should be taken" (Quran 2:283). And two different types of possession over a single thing at a single time are impossible. Yes, Zaid, the borrower, can take money as a loan from Amr, the lender, and... 1. The Holy Quran 2/283 Page 382 of 715

मुहल्ले वालों को इसकी खबर हुई और जाँच करने पर पता चला कि इसके अलावा जैद के पास लोगों के एक-दो और मकान गिरवी (रहन) हैं और वह उनसे किराया वसूल करता है। इस पर मुहल्ले वालों ने जैद से पूछा, जिसे जैद ने स्वीकार किया और कहा, "मेरा इरादा ब्याज लेने का नहीं है; मैंने दस्तावेज़ में भारतीय दंड संहिता के नियमों के अनुसार यह ब्याज की शर्त लिखवा दी है।" फिर कहा, "इसकी अवधि दस साल है; जब वह समय आएगा, तो मैं ब्याज की राशि नहीं लूंगा।" और मकानों के बारे में कहा कि "इसका पैसा मैं अपनी बेटी को दे देता हूँ," और बेटी ने कहा, "मैं घर का किराया दान में दे देती हूँ; अपने पास नहीं रखती।" उसने इन सभी तथ्यों को तभी स्वीकार किया जब उसने देखा कि मुहल्ले वाले उसे छोड़ने (बहिष्कार करने) पर तैयार हैं, बल्कि कुछ ने तो छोड़ भी दिया है। ऐसी स्थिति में क्या जैद के यहाँ खाने-पीने से बचना चाहिए या नहीं? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिले।

उत्तर: उक्त स्थिति में जैद निश्चित रूप से ब्याजखोर (सूदखोर) है। उससे परहेज किया जाना चाहिए, उससे मेल-जोल छोड़ देना चाहिए। उसके बहाने झूठे हैं। वह जो किराया लेता है, वह निश्चित रूप से ब्याज है। उसने ब्याज लिया चाहे खुद खाया या बेटी को दिया। कानून की ऐसी कोई धारा नहीं है जो ऋण (क़र्ज़) में ब्याज लिखवाना अनिवार्य करती हो; यह ब्याजखोर झूठों का झूठा बहाना है। और यह कहना कि "लिखवा लिया है, लेंगे नहीं", ऐसा है जैसे कोई कहे कि "मुँह में गंदगी ली है, निगलेंगे नहीं।" अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला 208: मारहरा मुतहरा, जिला एटा से, हज़रत सैयद बरकात हसन साहब, 22 रजब 1318 हिजरी। एक व्यक्ति छह सौ रुपये उधार लेता है और ऋण देने वाले को संपत्ति देता है और 'सेवा शुल्क' या 'संग्रह शुल्क' के रूप में, मान लीजिए, सौ या पचास रुपये तय करता है। दोनों 'ब्याज' शब्द के प्रयोग से बचना चाहते हैं। यह एक गिरवी अनुबंध (अक़्द-ए-रहन) है, केवल ऋण नहीं है; ऋण में कोई मुआवज़ा (एवज़) नहीं होता है। संक्षेप में, कृपया गिरवी को वैध बनाने का कोई तरीका सुझाएं ताकि उधार लेने वाला जो कुछ उधार देने वाले को देना चाहता है और उसके लिए लेना जायज़ हो जाए। स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिले।

उत्तर: यह गिरवी (रहन) नहीं हो सकता। गाँव से लाभ उठाने का तरीका पट्टा (इजारा) है, क्योंकि भूमि काश्तकारों के पास पट्टे पर है। इजारा और रहन दो विरोधाभासी अनुबंध हैं और इन्हें एक साथ नहीं जोड़ा जा सकता। काश्तकारों के पास पट्टे पर होने का अर्थ है कि कब्जे के बिना लाभ प्राप्त

करना असंभव होने के कारण उन पर कब्जा होना चाहिए। और गिरवी होने के लिए गिरवीदार का कब्जा आवश्यक है, जैसा कि अल्लाह का फरमान है: "तो गिरवी रखा हुआ कब्जा किया हुआ हो" (कुरान 2:283)। और एक ही समय में एक ही वस्तु पर दो अलग-अलग प्रकार के कब्जे असंभव हैं। हाँ, जैद (उधारकर्ता) अमर (लेनदार) से ऋण के रूप में पैसा ले सकता है और... 1. अल-कुरान अल-करीम 2/283 पेज 382/715

اہلِ محلہ کو اس کی خبر ہوئی اور تحقیق کی تو معلوم ہوا کہ اس کے علاوہ دو ایک مکان بھی زید کے پاس لوگوں کے رہن ہیں اور ان سے کرایہ وصول کرتا ہے اس پر اہلِ محلہ نے زید سے پوچھا جس کا اقرار زید نے کیا اور کہا کہ میرا ارادہ سود لینے کا نہیں کاغذ میں یہ شرط سود کی بقواعد تعزیرات ہند لکھادی ہے پھر کہا اس کی مدت تو دس سال ہے جب وہ وقت آئے گا میں زرِ سود نہ لوں گا اور مکانوں کی نسبت کہا کہ اس کا روپیہ میں اپنی بیٹی کو دے دیتا ہوں اور بیٹی نے کہا کہ میں کرایہ مکان میں دیتی ہوں اپنے پاس نہیں رکھتی، اور یہ اقبال تمام واقعات کا جب کیا جب دیکھا کہ اہلِ محلہ چھوڑنے پر آمادہ ہیں بلکہ بعض نے چھوڑ بھی دیا، ایسی صورت میں زید کے یہاں کھانے پینے سے احتراز کیا جائے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔ الجواب: صورتِ مذکورہ میں زید ضرور سود خور ہے اس سے احتراز کیا جائے، اس سے میل جول ترک کیا جائے، اس کے بہانے جھوٹے ہیں، کرایہ کہ وہ لیتا ہے یقینا سود ہے، اس نے سود لیا چاہے خود کھائے یا بیٹی کو دے، قانون کی کوئی دفعہ ایسی نہیں ہے جو قرض میں سود لکھانا ضرور ہو یہ سود خور کذابوں کا جھوٹا عذر ہے اور یہ کہنا کہ لکھالیا ہے لیں گے نہیں، ایسا ہے کہ کوئی یہ کہے غلیظ منہ میں لیا ہے نگلیں گے نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۲۰۸: از مارہرہ مطہرہ ضلع ایٹہ حضرت سید برکات حسن صاحب ۲۲ رجب ۱۳۱۸ھ ایک شخص چھ سو روپے قرض لیتا ہے اور جائداد روپیہ دینے والے کو دیتا اور اس کا حق الخدمت یا حق التحصیل مثلاً سو یا پچاس روپے مقرر کرتا ہے لفظ سود سے دونوں بچنا چاہتے ہیں یہ عقد رہن ہے قرض تو ہے نہیں، قرض میں عوض نہیں ہوتا ہے، الحاصل رہن صحیح ہو جائے اس کی شکل فرمادیجئے اور روپیہ لینے والا دینے والے کو جو کچھ دینا چاہتا ہے اس کو دینا اور اس کو

لینا جائز ہو جائے ۔ بینوا توجروا۔ الجواب: یہ رہن نہیں ہوسکتا، گاؤں سے انتفاع بطریقِ اجارہ ہوتا ہے کہ زمین مزارعین کے پاس اجارے میں ہے اور اجارہ و رہن دو عقد منافی ہیں باہم جمع نہیں ہوسکتے، مزارعین کے اجارے میں ہونا مرہن پر ان کا قبضہ چاہے گا لاستحالة الانتفاع بدون القبض (کیونکہ بغیر قبضہ کے نفع حاصل کرنا محال ہے۔ت) اور مرہون ہونا مرتہن کا قبضہ چاہے گا لقولہ تعالیٰ "فَرِهَانٌ مَّقْبُوضَةٌ"1 (تو رہن قبضہ کیا ہوا ۔ت) اور دو مختلف قبضے شے واحد پر وقتِ واحد میں محال ہیں، ہاں زید مستقرض عمرو مقروض سے روپیہ قرض لے لے اور

1 القرآن الکریم ۲/ ۲۸۳ Page 382 of 715

One may employ Amr as an agent for his village. Even if the usual salary is five rupees, let him fix ten, twenty, fifty, or forty, whatever monthly amount he deems appropriate and they mutually agree upon. However, he should ensure that the salary does not encompass the entire profit (Tofeer) so that it doesn't fall outside the standard rental rates of people. (So that it does not go beyond the customary rentals of people - T). Taking this much will be lawful according to many prominent scholars. The remaining profit should be given to the owner. Once the debt is paid, Zaid should terminate Amr's employment.

[Boxed Text - Arabic to the left, Urdu translation to the right] Left (Arabic): In Al-Hindiyyah, from Al-Bazzaziyyah: The borrower hiring the lender to safeguard a specific valuable item whose value exceeds the hire price, such as a knife, a comb, or a spoon, for a certain monthly wage. The later scholars have differed on this. Some have said it is permissible without any dislike. Among them are Imam Muhammad bin Salama, the perfect Imam master Mawlana Husam-ud-Din Aliabadi, Jalal-ud-Din Abu al-Fath Muhammad bin Ali, and the author of Al-Hidayah. Indeed, eminent scholars have agreed on its permissibility upon investigation. And Allah (Glorified and Exalted is He) knows best. (T)

Right (Urdu Translation): In Al-Hindiyyah, it is mentioned with reference to Al-Bazzaziyyah: If a borrower hires the lender to safeguard a specific valuable item whose value exceeds the hire price, such as a knife, a comb, or a spoon, for a certain monthly wage, the later scholars have differed on this. Some have said it is permissible without any dislike. Among them are Imam Muhammad bin Salama, the perfect Imam master Mawlana Husam-ud-Din Aliabadi, Jalal-ud-Din Abu al-Fath Muhammad bin Ali, and the author of Al-Hidayah. Indeed, eminent scholars have agreed on its permissibility upon investigation. And Allah (Glorified and Exalted is He) knows best. (T)

Issue 209: 9th Rabi' al-Akhir Sharif 1320 AH.

Zaid wants to take a loan of one hundred and fifty rupees from Amr without interest, and Amr wishes to receive some legitimate Shariah-compliant profit without it being usury. What should be done in this situation?

The Answer: The noble scholars have written several ways for this. Among them, a very easy method is that Zaid sells some property, for example, a utensil or a cloth, to

Amr for one hundred and fifty rupees. Amr buys it and gives the price of one hundred and fifty rupees to Zaid. Afterwards, in the same sitting or another sitting, Amr sells the same property back to Zaid for two hundred rupees...

[1] Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Ijarah, Chapter 32, Noorani Kutub Khana Peshawar, 4 / 522

अम्र को अपने गाँव पर एक एजेंट के रूप में नियुक्त कर ले। भले ही सामान्य वेतन पाँच रुपये हो, वह दस, बीस, पचास, चालीस, जो भी मासिक राशि उचित समझे और आपसी सहमति से तय हो, निर्धारित कर दे। लेकिन वह इस बात का ध्यान रखे कि वेतन पूरे लाभ (तौफीर) को न घेर ले ताकि वह लोगों के सामान्य किराये की दरों से बाहर न हो जाए। (ताकि लोगों के किरायों से बाहर न हो जाए - त)। इतना लेना कई प्रमुख विद्वानों के अनुसार हलाल होगा। शेष लाभ मालिक को दे दिया जाना चाहिए। ऋण चुकाने के बाद ज़ैद को अम्र की सेवा समाप्त कर देनी चाहिए।

[बॉक्स किया हुआ पाठ] हिन्दिया में बज्जाज़िया के हवाले से उल्लेख है: कर्जदार का लेनदार को किसी ऐसी विशिष्ट मूल्यवान वस्तु की सुरक्षा के लिए नियुक्त करना, जिसका मूल्य वेतन से अधिक हो, जैसे चाकू कंघी और चम्मच कि हर महीने इतना वेतन देगा, इसमें बाद के विद्वानों (मत्ताख़रीन अइम्मा) में मतभेद है। कुछ ने कहा है कि यह बिना किसी नापसंदगी के जायज़ है। उनमें इमाम मुहम्मद बिन सलमा, कामिल इमाम स्वामी मौलाना हुसामुद्दीन आलियाबादी, जलालुद्दीन अबुल फतह मुहम्मद बिन अली और अल-हिदाया के लेखक शामिल हैं। और शोध के अनुसार महान विद्वान इसके जायज़ होने पर सहमत हुए हैं। और अल्लाह (महिमा और उच्चता वाला) बेहतर जानता है। (त)

मसला 209: 9 रबी-उल-आख़िर शरीफ़ 1320 हिजरी।

ज़ैद, अम्र से बिना ब्याज के एक सौ पचास रुपये का ऋण लेना चाहता है, और अम्र चाहता है कि उसे कुछ वैध शरीयत सम्मत लाभ प्राप्त हो और वह सूद (ब्याज) न हो। इस स्थिति में क्या किया जाना चाहिए?

उत्तर: विद्वानों ने इसके लिए कई तरीके लिखे हैं। उनमें से एक बहुत ही आसान तरीका यह है कि ज़ैद कोई संपत्ति, जैसे बर्तन या कपड़ा, अम्र को एक सौ पचास रुपये में बेच दे। अम्र उसे खरीद ले और ज़ैद को एक सौ पचास रुपये की कीमत दे दे। उसके बाद, उसी बैठक में या दूसरी बैठक में, अम्र वही संपत्ति ज़ैद को दो सौ रुपये में बेच दे...

[1] फतावा हिन्दिया, किताब अल-इजारह, अध्याय 32, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 4 / 522

عمرو کو اپنے گاؤں پر بطور کارندہ کی نوکر رکھ لے معمولی تنخواہ اگرچہ پانچ روپے ہوتی ہو اس کی دس بیس پچاس چالیس جس قدر ماہواری مناسب جانے اور باہم تراضی ہو مقرر کر دے مگر اتنا لحاظ کرے کہ تنخواہ توفیر کو محیط نہ ہو جائے کیلا یخرج من اجارات الناس (تاکہ لوگوں کے اجاروں سے خارج نہ ہو جائے۔ ت) اس قدر اسے لینا بہت اکابر کے نزدیک حلال ہوگا باقی توفیر کو مالک کر دیا کرے جب دین ادا ہو جائے زید عمرو کو موقوف کردے،

[باکس شدہ عبارت] في الهندية عن البزازية استيجار المستقرض المقرض على حفظ عين متقوم قيمته ازيد من الاجارة كالسكين والمشط والمعلقة كل شهر بكذااختلف فيه الائمة المتأخرون فقيل يجوز بلا كراهة منهم الامام محمد بن سلمة والامام الصاحب الكامل مولانا حسام الدين عليا بادى وجلال الدين ابو الفتح محمد بن على وصاحب الهداية وقد وقع على الجواز اجلة الائمة ۱۔ والله سبحانہ وتعالی اعلم۔ (ت) ہندیہ میں بزازیہ کے حوالے سے مذکور ہے ، مقروض کا کسی ایسی قیمتی معین شئی کی حفاظت کے لئے قرض دہندہ کو اجرت پر رکھنا جس شئی کی قیمت اجرت سے زیادہ ہو جیسے چھری، کنگھی اور چمچہ کہ ہر ماہ اتنی اجرت دے گا، اس میں متاخرین ائمہ کا اختلاف ہے ، بعض نے کہا ہے کہ بلا کراہت جائز ہے ان میں امام محمد بن سلمہ، امام صاحب کامل مولانا حسام الدین علیا بادی، جلال الدین ابوالفتح محمد بن علی اور صاحب ہدایہ شامل ہیں اور تحقیق جلیل القدر ائمہ کرام جواز پر متفق ہوئے۔ واللہ سبحانہ وتعالی اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۲۰۹: ۹ ربیع الآخر شریف ۱۳۲۰ھ

زید عمرو سے ڈیڑھ سو روپیہ بے سودی لینا چاہتا ہے قرض، اور عمرو کو یہ منظور ہے کہ اسے کچھ نفع جائز شرعی طور پر مل جائے اور سود نہ ہو اس صورت میں کیا کیا جائے؟

الجواب: علماء کرام نے اس کی متعدد صورتیں تحریر فرمائیں ہیں ازانجلہ بہت آسان طریقہ یہ ہے کہ زید جو قرض لینا چاہتا ہے عمرو کے ہاتھ کوئی مال مثلاً برتن یا کپڑا ڈیڑھ سو روپے کو بیچے عمرو خرید لے اور ڈیڑھ سو روپیہ زرِ ثمن کے زید کو دے دے بعدہ اسی جلسہ خواہ دوسرے جلسہ میں عمرو وہی مال زید کے ہاتھ دو سو روپیہ

۱ فتاویٰ ہندیہ کتاب الاجارۃ الباب الثانی والثلاثون نورانی کتب خانہ پشاور ۴ / ۵۲۲

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

...for example, sell it after one year. Zaid should buy it, and now in exchange for this price, if he wishes, he can also keep a pledge with Amr. In this case, Zaid's item came back to Zaid, and he got one hundred and fifty rupees, and two hundred rupees became obligatory for Amr to pay him. Amr should not derive any benefit from this pledge, otherwise it will become interest. It is stated in Fatawa Imam Qazi Khan:

[Boxed Section] (Arabic): A man is owed ten dirhams by another man. He wants to make them thirteen dirhams for a fixed term. They (the jurists) said: He should buy something from the debtor with those ten dirhams and take possession of the sold item. Then he should sell it back to the debtor for thirteen dirhams for one year. Thus, he will avoid what is forbidden (haram). Something similar is narrated from the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), that he ordered such a thing, etc. And Allah knows best. (Urdu Translation): One person owes ten dirhams to another. He wants this to become thirteen dirhams over a specific period. Scholars have said that he should buy something from the debtor for those same ten dirhams and take possession of the item, then sell that same item back to the debtor on credit for thirteen dirhams for a year. In this way, haram will be avoided. It is narrated from the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) that he gave a command for such a thing, etc. And Allah knows best. (T)

Problem 210: A person wants to borrow one hundred rupees, and another wants to lend. The lender refuses to take interest and the borrower refuses to pay interest. How should the document be drafted? They do not want to borrow from a Hindu, but the lender is not willing to give money without any profit.

The Answer: There are many ways for this. A simple way is that the giver should not give a loan but instead sell a currency note to him. For example, if someone wants to take one hundred rupees for a year and the giver wants to earn a profit, then sell a hundred-rupee note to him on a one-year promise for, say, one hundred and twelve rupees. Then, if he pays the money within the year, for example in six months, then take only one hundred and six, not more than that...

---

1. Fatawa Qazi Khan, Book of Sales, Chapter on what constitutes an evasion of interest, Naval Kishore Lucknow 2/406

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

...मिसाल के तौर पर, एक साल बाद बेच दे। ज़ैद उसे ख़रीद ले और अब इस कीमत के बदले में चाहे तो अम्र के पास गिरवी भी रख दे। इस सूरत में ज़ैद की चीज़ ज़ैद के पास वापस आ गई और उसे डेढ़ सौ रुपये मिल गए और अम्र पर उसके दो सौ रुपये वाजिब हो गए। अम्र इस गिरवी चीज़ से कोई फ़ायदा न उठाए, वरना वह सूद (ब्याज) हो जाएगा। फ़तावा इमाम क़ाज़ी ख़ां में है:

[बॉक्स वाला हिस्सा] (अरबी): एक व्यक्ति का दूसरे पर दस दिरहम का क़र्ज़ है। वह चाहता है कि एक तय समय तक ये तेरह दिरहम हो जाएं। उलेमा ने फ़रमाया है कि वह क़र्ज़दार से उन ही दस दिरहम में कोई चीज़ ख़रीदे और उस पर कब्ज़ा कर ले, फिर वही चीज़ तेरह दिरहम के बदले एक साल के उधार पर क़र्ज़दार को बेच दे। तो इस तरह हराम से बचा जा सकेगा, और इसी तरह अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से रिवायत है कि आपने ऐसा करने का हुक्म दिया है, इत्यादि। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है। (उर्दू अनुवाद): एक व्यक्ति के दूसरे पर दस दिरहम क़र्ज़ हैं। वह चाहता है कि एक मुक़र्रर मुद्दत तक ये तेरह दिरहम हो जाएं। उलमा ने फ़रमाया है कि वह मक़रूज़ से उन ही दस दिरहम में कोई चीज़ ख़रीदे और मबीअ (बिकी हुई चीज़) पर क़ब्ज़ा कर ले, फिर वही चीज़ तेरह दिरहम के बदले एक साल के उधार पर मक़रूज़ के हाथ फ़रोख़्त करे तो इस तरह से हराम से इज्तिनाब हो जाएगा, और इसी की मिसाल रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम से मरवी है कि आपने ऐसा करने का हुक्म दिया है, इत्यादि। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 210: एक व्यक्ति सौ रुपये क़र्ज़ लेना चाहता है और दूसरा देना चाहता है। रुपया देने वाला सूद लेने से इनकार करता है और लेने वाला सूद देने से इनकार करता है। किस तरीक़े पर दस्तावेज़ तैयार किया जाए? वे हिंदू से लेना नहीं चाहते लेकिन रुपया देने वाला बिना किसी नफ़े(फ़ायदे) के देना मंज़ूर नहीं करता।

जवाब: इसकी बहुत सी सूरतें हैं। एक आसान सूरत यह है कि देने वाला क़र्ज़ न दे बल्कि उसके हाथ नोट बेचे। उदाहरण के लिए, सौ रुपये लेना चाहता है और साल भर का वायदा है और देने वाला नफ़ा चाहता है, तो सौ रुपये का नोट उसके हाथ एक साल के वादे पर, मिसाल के तौर पर, एक सौ बारह रुपये में बेचे। फिर अगर वह साल के अंदर, मसलन छह महीने में रुपया दे दे, तो सिर्फ एक सौ छह ले, उससे ज़्यादा नहीं...

1. फ़तावा क़ाज़ीख़ां, किताबुल बुयू, ब्याज से बचने के तरीकों का अध्याय, नवल किशोर लखनऊ 2/406

کو مثلاً بعد ایک سال بیچے۔ زید خرید لے اور اب اس زرِ ثمن کے عوض چاہے تو عمرو کے پاس رہن بھی رکھ دے اس صورت میں زید کی چیز زید کے پاس آگئی اور اسے ڈیڑھ سو روپیہ مل گئے اور اس پر عمرو کے دوسو روپے واجب ہو گئے عمرو اس رہن سے کچھ انتفاع نہ کرے ورنہ سود ہو جائے گا۔ فتاوٰی امام قاضی خاں میں ہے:

[جدول] (عربی): رجل له علی رجل عشرة دراهم فاراد ان یجعلها ثلثة عشر الی اجل قالو ایشتری من المدیون شیئا بتلك العشرة ویقبض المبیع ثم یبیع من المدیون بثلثة عشر الی سنة فیقع التحرز عن الحرام. ومثل هذا مروی عن رسول الله صلی الله تعالی علیه وسلم انه امر بذلك الخ۔ والله تعالٰی اعلم۔ (اردو): ایک شخص کے دوسرے پر دس درہم قرض ہیں وہ چاہتا ہے کہ ایک معینہ مدت تک یہ تیرہ درہم ہو جائیں۔ علماء نے فرمایا ہے وہ مقروض سے ان ہی دس درہم میں کوئی چیز خریدے اور مبیع پر قبضہ کرلے پھر وہی چیز تیرہ درہم کے بدلے ایک سال کے ادھار پر مقروض کے ہاتھ فروخت کرے تو اس طرح سے حرام سے اجتناب ہو جائے گا، اور اسی کی مثل رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے مروی ہے کہ آپ نے ایسا کرنے کا حکم دیا ہے الخ۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ ۲۱۰: ایک شخص سو روپے قرض لیا چاہتا ہے دوسرا دیا چاہتا ہے، روپے کے دینے والے کو سود لینے سے انکار ہے اور روپیہ کے لینے والے کو سود دینے سے انکار ہے، کس طریقہ پر دستاویز تحریر کرائی جائے اور ہندو سے لینا نہیں چاہتے مگر روپیہ دینے والے کو بلا کسی نفع کے دینا منظور نہیں ہے۔

الجواب: اس کی بہت سی صورتیں ہیں، ایک سہل صورت یہ ہے کہ دینے والا قرض نہ دے بلکہ اس کے ہاتھ نوٹ بیچے، مثلاً سو روپے لینا چاہتا ہے اور سال بھر کا وعدہ ہے اور دینے والا نفع لینا چاہتا ہے تو سو روپے کا نوٹ اس کے ہاتھ ایک سال کے وعدہ پر، مثلاً ایک سو بارہ روپے کو بیچے پھر اگر وہ سال کے اندر مثلاً چھ مہینے میں روپیہ دے دے تو صرف ایک سو چھ لے، اس سے زیادہ

---

1 فتاویٰ قاضیخان کتاب البیوع فصل فیما یکون فرارا عن الربو نولکشور لکھنو ۲ / ۴۰۶

Fatawa Razawiya Volume 17

It is forbidden to take [interest]; similarly, any item which is worth one hundred rupees at the common market rate and is sold for one hundred and twelve, the same ruling applies to it. It is stated in Durr-ul-Mukhtar:

[Arabic Box Text]: If the debtor pays off the deferred debt before the due date, he [the creditor] does not take from the profit that occurred between them except to the extent of the days that have passed. [Urdu Translation]: If the debtor pays off a timed debt before the deadline, the creditor should not take the profit that was agreed upon between them, but can only take profit according to the number of days that have already passed. (T)

Secondly, if one lends him one hundred rupees and the borrower keeps something of his, for example, a knife or a plate, as a trust with the lender and says to the lender, "Guard this item of mine; I will give one rupee, or 4, or 12, or ten rupees per month as settled for its protection." However, the value of the item kept with him must be more than this wage; if kept for rupees per month, the item should be worth more than those rupees. It is stated in Alamgiriyah:

[Arabic Box Text]: Hiring of the creditor by the borrower for the protection of a valuable specific object whose value is more than the wage, like a knife, a comb, or a spoon, for such-and-such each month. The later Imams differed regarding this; it was said to be permissible without dislike by some, including Imam Muhammad bin Salama, the perfect master Maulana Husam-ud-Din Aliabadi, Jalal-ud-Din Abul Fath Muhammad bin Ali, and the author of Al-Hidayah. Indeed, the great Imams have reached a consensus on its permissibility. [Urdu Translation]: If the debtor appoints the lender for the protection of a certain valuable item at a fixed monthly wage, where the value of the item is more than the wage, for example, a knife, a comb, or a spoon, etc., then there has been a difference of opinion among the later Imams. Some have spoken of permissibility without dislike, among them are Imam Muhammad bin Salama, the perfect master Maulana Husam-ud-Din Aliabadi, Jalal-ud-Din Abul Fath Muhammad bin Ali, and the author of Al-Hidayah are included. And research shows that the high-ranking noble Imams have agreed on its permissibility. (T)

And besides these, there are other forms that we have mentioned in Kifl-ul-Faqeeh. And Allah Almighty knows best.

Problem 211: Asked by Muhammad Hussain Khan, Bareilly Old City, 3rd Shawwal-ul-Mukarram. Respected Maulvi Sahib, the Qiblah and Kaaba of both worlds, may Allah extend your shadow! With great humility, it is submitted that an [incident occurred] with me...

---

1. Durr-ul-Mukhtar, Chapter of Miscellaneous Issues, Mujtabai Press Delhi, 2/351
2. Fatawa Hindiyyah, Book of Hire, Chapter 32, Noorani Kutub Khana Peshawar, 4/522 Page 385 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द १७

लेना हराम है। इसी तरह कोई भी चीज़ जो बाज़ार के आम भाव से सौ रुपये की हो और उसे एक सौ बारह में बेचा जाए, तो उसका भी यही हुक्म है, जैसा कि 'दुर्र-ए-मुख़्तार' में है:

[अरबी बॉक्स]: यदी ऋणी (कर्ज़दार) मियादी कर्ज़ मियाद से पहले अदा कर दे, तो ऋणदाता उससे वह लाभ न ले जो उनके बीच तय पाया था, बल्कि वह केवल उतने दिनों के हिसाब से लाभ ले सकता है जितने दिन गुज़र चुके हैं। [उर्दू अनुवाद]: मक़रूज़ ने मीयादी क़र्ज़ा मीयाद से पहले अदा कर दिया तो क़र्ज़ दहंदा उससे वो नफ़ा न ले जो उनके दरम्यान तय पाया था मगर सिर्फ़ इतने दिनों के हिसाब से नफ़ा ले सकता है जितने दिन गुज़र चुके हैं (त)

दूसरी सूरत यह है कि उसे सौ रुपये उधार दे और उधार लेने वाला देने वाले के पास अपनी कोई चीज़ जैसे चाकू या थाली अमानत रखे और देने वाले से कहे, "मेरी इस चीज़ की हिफ़ाज़त करें, मैं इसकी हिफ़ाज़त पर एक रुपया या ४ या १२ या दस रुपये मासिक जो तय हो जाए दूँगा।" मगर जो चीज़ उसके पास रखे उसकी क़ीमत इस मज़दूरी (उजरत) से ज़्यादा होनी चाहिए। अगर वह मासिक रुपयों पर रखे, तो चीज़ की क़ीमत उन रुपयों से ज़्यादा हो। 'आलमगीरिया' में है:

[अरबी बॉक्स]: ऋणी द्वारा ऋणदाता को किसी ऐसी क़ीमती मुअय्यन (निश्चित) चीज़ की हिफ़ाज़त के लिए निश्चित मासिक पारिश्रमिक पर नियुक्त करना जिसकी क़ीमत पारिश्रमिक से अधिक हो, जैसे चाकू कंघी और चम्मच वग़ैरह। तो इसमें मुतअख़्ख़रीन (बाद के) अइम्मा के दरमियान इख़्तिलाफ़ (मतभेद) हुआ। कुछ ने बिना कराहत (नापसंदगी) के जवाज़ (अनुमति) का कौल किया, उनमें इमाम मुहम्मद बिन सलमा, इमाम साहिब-ए-कामिल मौलाना हुसामुद्दीन आलियाबादी, जलालुद्दीन अबुल फ़तह मुहम्मद बिन अली और साहिब-ए-हिदाया शामिल हैं। और तहक़ीक़ यह है कि जलीलुल क़द्र अइम्मा किराम ने जवाज़ पर इत्तिफ़ाक़ किया है। [उर्दू अनुवाद]: मक़रूज़ किसी ऐसी क़ीमती मुअय्यन शई की हिफ़ाज़त के लिये क़र्ज़ दहंदा को मुअय्यन माहाना उजरत पर मुक़र्रर करे जिस शई की क़ीमत उजरत से ज़्यादा है मसलन चाकू कंघी और चम्मच वग़ैरा, तो उसमें मुतअख़्ख़रीन अइम्मा के दरम्यान इख़्तिलाफ़ हुआ, बाज़ ने बिलाकराहत जवाज़ का क़ौल किया उनमें इमाम मुहम्मद बिन सलमा, इमाम साहब-ए-कामिल मौलाना हुसामुद्दीन आलियाबादी, जलालुद्दीन अबुल फ़तह मुहम्मद बिन अली और साहब-ए-हिदाया शामिल हैं, और तहक़ीक़ जलीलुल क़द्र अइम्मा किराम ने जवाज़ पर इत्तिफ़ाक़ किया है। (त)

और इसके अलावा और भी सूरतें हैं जिनका हमने 'किफ़्लुल फ़कीह' में ज़िक्र किया है। वल्लाहु तआला आलम (और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है)।

मसला २११: सायल मुहम्मद हुसैन ख़ान, बरेली शहर कुहना, ३ शव्वालुल मुकर्रम। जनाब मौलवी साहब क़िबला व काबा दारेन मदज़िल्लहु! ब-सद नियाज़ गुज़ारिश है कि मुझसे एक...

---

1 दुर्र-ए-मुख़्तार बाब मसाइल शत्ता मतबअ मुज्तबाई दिल्ली २/३५१ 2 फ़तावा हिन्दिया किताबुल इजारा अल-बाब अत्तानी वत्तालातून नूरानी कुतुब खाना पेशावर ४/५२२ पेज 385 of 715

لینا حرام ہے یونہی اور کوئی چیز جو بازار کے عام بھاؤ سے سو روپے کی ہو ایک سو بارہ کو بیچے اس کا بھی یہی حکم ہے، در مختار میں ہے:

[عربی باکس]: قضی المدیون الدین المؤجل قبل الحلول لا یاخذ من المرابحة التی جرت بینهما الابقدر مامضی من الایام۱۸۔ [اردو ترجمہ]: مقروض نے میعادی قرضہ میعاد سے پہلے ادا کردیا تو قرض دہندہ اس سے وہ نفع نہ لے جو ان کے درمیان طے پایا تھا مگر صرف اتنے دنوں کے حساب سے نفع لے سکتا ہے جتنے دن گزر چکے ہیں (ت)

دوسرے یہ کہ سو روپے اسے قرض دے اور قرض لینے والا دینے والے کے پاس اپنی کوئی چیز مثلاً چاقو یا تھالی امانت رکھے اور دینے والے سے کہے میری اس چیز کی حفاظت کریں میں اس کی حفاظت پر ایک روپیہ یا ۴ / یا ۱۲ یا دس روپے ماہوار جو ٹھہر جائے دوں گا مگر جو شے اسکے پاس رکھے اس کی قیمت اس اجرت سے زیادہ ہو روپے مہینہ پر رکھے تو روپے سے زیادہ قیمت کی چیز ہو۔ عالمگیریہ میں ہے:

[عربی باکس]: استیجار المستقرض المقرض علی حفظ عین متقومة قیمته ازید من الاجرة کالسکین والمشط و المعلقة کل شهر بکذا، اختلف فیه الائمة المتأخرون فقیل یجوز بلا کراهة منهم الامام محمد بن سلمة و الامام الصاحب الکامل مولانا حسام الدین علیا بادی وجلال الدین ابو الفتح محمد بن علی وصاحب الهدایة وقد وقع علی الجواز اجلة الائمة۲۸۔ [اردو ترجمہ]: مقروض کسی ایسی قیمتی معین شئی کی حفاظت کے لئے قرض دہندہ کو معین ماہانہ اجرت پر مقرر کرے جس شئی کی قیمت اجرت سے زیادہ ہے مثلاً چاقو، کنگھی اور چمچ وغیرہ، تو اس میں متاخرین ائمہ کے درمیان

اختلاف ہوا، بعض نے بلاکراہت جواز کا قول کیا ان میں امام محمد بن سلمہ، امام صاحب کامل مولانا حسام الدین علیابادی، جلال الدین ابوالفتح محمد بن علی اور صاحب ہدایہ شامل ہیں، اور تحقیق جلیل القدر ائمہ کرام نے جواز پر اتفاق کیا ہے۔ (ت)

اور اس کے سوا اور صورتیں ہیں کہ ہم نے کفل الفقیہ میں ذکر کیں واللہ تعالٰی اعلم۔ مسئلہ ۲۱۱: مسئولہ محمد حسین خان بریلی شہر کہنہ ۳/ شوال المکرم جناب مولوی صاحب قبلہ و کعبہ دارین مدظلہ اللہ آداب! بصد نیاز گزارش ہے کہ مجھ سے ایک

---

1 درمختار باب مسائل شتی مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۳۵۱ 2 فتاوٰی ہندیہ کتاب الاجارۃ الباب الثانی والثلاثون نورانی کتب خانہ پشاور ۴/ ۵۲۲ Page 385 of 715

Fatawa Razawiyya Volume (17)

A person wants a loan and in exchange wants to mortgage his house. I have no excuse or refusal in giving rupees and fulfilling another's need because Allah has given money, so there's hope that Allah will be pleased by fulfilling another's need. However, I do not want to consume interest. Now, the request is whether that property should be given as a possessory mortgage in exchange for money, or how should I give the money to avoid interest, as I am a Muslim. Give a verdict and be rewarded.

The Answer: A possessory mortgage is also interest and haram (forbidden). Instead, the way is that you should give the loan purely without interest and without a mortgage. Then, let that debtor give you some utensil of his, for example, for safekeeping, and for that safekeeping, you would be given a monthly amount, say one rupee or ten rupees. In this way, taking money as a fee for safekeeping will be halal (permissible). And if you specifically need the house, let him give some utensil etc. to you for safekeeping at a monthly fee of, say, ten rupees, and you rent his house for, say, ten rupees or more or less as agreed. The monthly fee for safekeeping will be due to you, and the house rent will be due from you. Then, if both fees are equal, the transaction between you two becomes even. Neither you give money to him nor he to you; you look after his item and live in that rented house. If they are not equal, then whoever owes more should pay the excess amount. And Allah the Almighty knows best.

Problem 212: 11 Shaban 1335 AH

[Persian Text:] What do the scholars of religion say regarding this matter? The authorities of Bahawalpur state have proposed a bank in every locality and village to free Muslims from the debts of Hindus. The arrangement is such that a few reliable persons of that locality are declared members of the bank. It is said to have every person deposit money in the bank according to their status and keep it collected. Then, from those specific deposited funds, give term loans at a low interest rate to the depositor or another person in times of need, and at the end of the term...

[Urdu Translation/Explanation:] What do the scholars of religion say regarding this matter? The authorities of Bahawalpur state have proposed a bank in every locality and village to free Muslims from the debts of Hindus. The arrangement is such that a few reliable persons of that locality are declared members of the bank. It is said to have every person deposit money in the bank according to their status and keep it

collected. Then, from those specific deposited funds, give term loans at a low interest rate to the depositor or another person in times of need, and at the end of the term...

फतावा रजविया खंड (17)

एक व्यक्ति ऋण चाहता है और उसके बदले में अपना मकान गिरवी रखना चाहता है। मुझे रुपये देने और दूसरे की ज़रूरत पूरी करने में कोई बहाना या इनकार नहीं है क्योंकि अल्लाह ने पैसा दिया है, इसलिए उम्मीद है कि दूसरे की ज़रूरत पूरी होने पर अल्लाह भी खुश होगा। लेकिन बात इतनी है कि मैं सूद (ब्याज) नहीं खाना चाहता। अब इस बारे में गुज़ारिश है कि वह संपत्ति रुपयों के बदले दखली रहन (कब्जे वाली गिरवी) कर दी जाए या मैं किस तरह से रुपये दूँ कि सूद से बच सकूँ क्योंकि मैं मुसलमान हूँ। उत्तर दें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: दखली रहन भी सूद और हराम है। बल्कि तरीका यह है कि आप केवल बिना ब्याज और बिना गिरवी के ऋण दें। फिर वह ऋणी आपको अपना कोई बर्तन आदि दे कि इसकी सुरक्षा करो, और उस सुरक्षा के लिए आपको एक मासिक राशि, जैसे एक रुपया या दस रुपये दिए जाएँगे। इस तरह सुरक्षा के शुल्क के रूप में पैसा लेना हलाल होगा। और अगर मकान ही चाहिए, तो वह कोई बर्तन आदि आपको सुरक्षा के लिए मासिक शुल्क पर, मान लीजिए दस रुपये, दे दे और आप उसका मकान, मान लीजिए दस रुपये या उससे कम या अधिक जैसा तय हो, किराए पर ले लें। सुरक्षा का मासिक शुल्क आप पर वाजिब होगा और मकान का किराया आप पर। फिर यदि दोनों शुल्क बराबर हैं, तो आप दोनों के बीच मामला बराबर हो गया। न आप उसे रुपये दें और न वह आपको; आप उसकी चीज़ की सुरक्षा करें और उस किराए के मकान में रहें। और अगर बराबर नहीं हैं, तो जिस पर अधिक है वह अतिरिक्त राशि का भुगतान करे। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसाला 212: 11 शाबान 1335 हिजरी

[फारसी पाठ:] विद्वान इस मामले में क्या फरमाते हैं कि रियासत बहावलपुर के अधिकारियों ने मुसलमानों को हिंदुओं के कर्ज से छुटकारा दिलाने के लिए हर बस्ती और गाँव में बैंक का प्रस्ताव दिया है। इसकी सूरत यह है कि उस बस्ती के कुछ विश्वसनीय लोगों को बैंक का सदस्य घोषित करके कहा जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति से उसकी हैसियत के अनुसार बैंक में रुपये जमा कराकर अपने पास इकट्ठा रखो। फिर उन्हीं जमा किए हुए रुपयों में से जमा करने वाले को या किसी अन्य को ज़रूरत के समय कम ब्याज पर मियादी (निश्चित समय के लिए) ऋण के रूप में दें और मियाद खत्म होने पर...

[उर्दू अनुवाद/व्याख्या:] विद्वान इस मामले में क्या फरमाते हैं कि रियासत बहावलपुर के अधिकारियों ने मुसलमानों को हिंदुओं के कर्ज से छुटकारा दिलाने के लिए हर बस्ती और गाँव में बैंक का प्रस्ताव दिया है। इसकी सूरत यह है कि उस बस्ती के कुछ विश्वसनीय लोगों को बैंक का सदस्य घोषित करके कहा जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति से उसकी हैसियत के अनुसार बैंक में रुपये जमा कराकर अपने पास इकट्ठा रखो। फिर उन्हीं जमा किए हुए रुपयों में से जमा करने वाले को या किसी अन्य को ज़रूरत के समय कम ब्याज पर मियादी (निश्चित समय के लिए) ऋण के रूप में दें और मियाद खत्म होने पर...

पेज 386/715

شخص قرضہ چاہتا ہے اور بالعوض اس کے اپنا مکان وہ شخص رہن کرنا چاہتا ہے۔ مجھے کور روپے دینے میں اور دوسرے کی حاجت نکالنے میں کچھ عذر اور انکار نہیں ہے کیونکہ روپیہ اللہ نے دیا ہے تو دوسرے کی حاجت براری ہو جانے پر امید ہے کہ اللہ بھی خوش ہوگا مگر اس قدر ہے کہ سود کھانا نہیں چاہتا ہوں، اب اس میں گزارش ہے وہ جائیداد بالعوض روپیہ کے دخلی رہن کر دیں یا کس طرح سے روپیہ دوں کہ سود سے بچوں کیونکہ میں اہل اسلام ہوں۔ بینوا توجروا۔

الجواب: دخلی رہن بھی سود اور حرام ہے بلکہ سبیل یہ ہے کہ آپ محض بلا سود و بلار ہن روپیہ قرض دیجئے پھر اس سے اپنا کوئی برتن مثلاً وہ مدیون آپ کو دے کہ اس کی حفاظت کرو حفاظت کا اتنا ماہوار مثلاً ایک روپیہ یادس روپے تمہیں دی جائینگی یوں اس حفاظت کی اجرت کا روپیہ لینا حلال ہوگا، اور اگر مکان ہی چاہئے تو وہ کوئی برتن وغیرہ مثلاً دس روپے مہینے اجرت پر کو حفاظت کے لئے دے اور آپ اس کا مکان مثلاً دس روپے یا کم و بیش کو جتنا کہ قرار پائے اس سے کرایہ پر لیجئے حفاظت کی اجرت ماہوار اس پر واجب ہوگی اور مکان کا کرایہ آپ پر، پھر اگر دونوں اجرتیں برابر ہیں تو باہم آپ دونوں کو معاملہ برابر ہو گیا، نہ آپ اسے روپیہ دیں نہ وہ آپ کو، آپ اس کی چیز کی حفاظت کریں اور اس کرایہ کے مکان میں رہیں اور اگر برابر نہیں تو جس پر زیادہ ہے وہ قدر زائد ادا کرتا رہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۲۱۲: ۱۱ شعبان ۱۳۳۵ھ

[فارسی عبارت:] چہ می فرمایند علمائے دین دریں مسئلہ کہ حکام ریاست بہاولپور برائے مخلصی مسلمانان از قرض ہندوان در ہر موضع وہ بنک تجویز کردہ اند بایں طور کہ چند معتبران موضع

رامبر آں بنک نمودہ می گویند کہ از ہر کس حسب حیثیت روپیہ داخل بنک کنایندہ نزد خود جمع سازید وازاں روپیہ خاصہ داخل کنندہ راو بدیگری رابوقت حاجت ولے قرض میعادی بسود یسیر دادہ باشید وعند المیعاد...

[اردو ترجمہ:] علماے دین اس مسئلہ میں کیا ارشاد فرماتے ہیں کہ ریاست بہاولپور کے حکام نے ہندوؤں کے قرض سے مسلمانوں کو رہائی دلانے کے لئے ہر بستی اور گاؤں میں بنک تجویز کیا ہے، اس کی صورت یہ ہے کہ اس بستی کے چند معتبروں کو بنک کا ممبر ظاہر کر کے کہتے ہیں کہ ہر شخص سے اس کی حیثیت کے مطابق روپے بنک میں داخل کرا کے اپنے پاس جمع رکھو، پھر انہیں خاص روپوں میں سے داخل کرنے والے کو یا دوسرے کو بوقت ضرورت تھوڑے سے سود پر میعادی قرض کے طور پر دیں اور...

Volume 17 (17) Fatawa Razawiyya

Collect that money along with interest from him, and in this manner, give it as a loan to someone else. Upon the expiry of the term, take back those rupees including interest from him and then, in the same way, give a loan to another person in this manner. Continue to give loans on interest to the needy one after another so that through the interest paid by you, your property progresses and the needs of Muslims are easily met through their own wealth, and there remains no need to take loans from Hindus. Therefore, what is the ruling in Sharia regarding giving money to this bank or taking from it? Since in this matter common Muslims are commanded and forced by the rulers, if any indication is given towards the permissibility of this act of theirs, it is hoped that they will be rewarded by Allah Almighty and deserving of gratitude from the creation. (T)

The Answer: Taking interest is categorically haram by consensus and a severe major sin. However, permission has been given to a needy person to give interest in case of a valid Sharia necessity. It is mentioned in 'Al-Durr al-Mukhtar' that it is permissible for a needy person to take a loan on interest. The gist of this bank is that the haram which Hindus consume should be obtained so that Muslims consume it. There is no power to avoid sin or do good except with the guidance of Allah Almighty. If the employees of this bank have concern for religion, a way is available through which they can achieve their purpose and also gain freedom from haram. For example, whoever wants a loan of a hundred rupees, do not give him cash, but give him that paper which is called a 'note'. On whatever amount interest is taken, it is usury.

1 Al-Ashbah wa al-Nazair quoting Al-Qunyah, First Art, Fifth Rule, Idara-tul-Quran Karachi 1/126 Page 387 of 715

उस रुपये को ब्याज सहित उससे वसूल करें और इसी तरह दूसरे को ऋण दें। अवधि समाप्त होने पर वह रुपये ब्याज सहित उससे वापस ले लें और फिर उसी तरह किसी दूसरे व्यक्ति को उसी तरीके से ऋण दें। इसी तरह एक के बाद एक ज़रूरतमंदों को ब्याज पर ऋण देते रहें ताकि आपके द्वारा भुगतान किए गए ब्याज से आपकी संपत्ति विकसित हो और मुसलमानों की ज़रूरतें उनके अपने धन से आसानी से पूरी हों और हिंदुओं से ऋण लेने की ज़रूरत न रहे। इसलिए, शरीअत में इस बैंक को रुपया देना या उससे लेना क्या हुक्म रखता है? चूँकि इस मामले में आम मुसलमान शासकों द्वारा आदेशित और मजबूर हैं, इसलिए यदि उनके इस कृत्य की वैधता की ओर कोई संकेत दिया जाए, तो आशा है कि वे अल्लाह सर्वशक्तिमान के यहाँ पुरस्कृत होंगे और सृजन की ओर से कृतज्ञता के पात्र होंगे। (त)

जवाब: ब्याज लेना सर्वसम्मति से स्पष्ट रूप से हराम और गंभीर बड़ा पाप है, और ब्याज देने की ज़रूरत के समय ज़रूरतमंद को वैध शरीअत आवश्यकता के लिए अनुमति दी गई है। 'दुर्रे मुख़्तार' में है कि ज़रूरतमंद के लिए ब्याज पर ऋण लेना जायज़ है। इस बैंक का सार यह है कि जो हराम हिंदू खाते हैं वह प्राप्त हो जाए ताकि उसे मुसलमान खाएं। अल्लाह सर्वशक्तिमान की तौफीक के बिना पाप से बचने और नेकी करने की कोई शक्ति नहीं है। यदि इस बैंक के कर्मचारी दीन (धर्म) का दर्द रखते हैं, तो एक ऐसी सूरत (तरीका) उपलब्ध है कि वे अपने लक्ष्य तक पहुँच भी प्राप्त करें और हराम से छुटकारा भी पाएं। जो कोई उदाहरण के तौर पर सौ रुपये ऋण चाहता है, उसे नकद न दें बल्कि वह कागज़ दें जिसका नाम 'नोट' है।

1 अल-अशबाह व अन-नज़ैर, अल-कुन्याह के हवाले से, प्रथम कला, पाँचवाँ नियम, इदारा-तुल-क़ुरआन कराची 1/126 पृष्ठ 387/715

آں روپیہ مع سود ازو وصول نمودہ بایں طرز دیگرے راہ و | میعاد گزرنے پر وہ روپے سود سمیت اس سے واپس لیں اور سیس اخیر رامی دہید از سود دادہ شما آں جائیداد شما ترقی پذیر دو | پھر اسی طرح کسی دوسرے شخص کو اسی طریقے سے قرض بر آمدگی حاجات مسلماناں از مال خویش بسہولت گردد و | دیں اسی طرح یکے بعد دیگرے حاجتمندوں کو سود پر قرض ضرورت باستقراض از ہندو ان نماند۔ پس در شرع شریف | دیتے جائیں تاکہ تمہارے ادا کردہ سود سے تمہاری جائیداد روپیہ دادن یا گرفتن ازیں بینک چہ حکم دارد، چونکہ دریں امر | ترقی اختیار کرے اور مسلمانوں کی حاجات ان کے اپنے مال عامہ مسلماناں از حکام ماورند و مجبور، از آں اگر حیلہ جواز فعل | سے باسانی پوری ہوں اور ہندوؤں سے قرض لینے کی ایشاں ایما فرمودہ شود امید کہ قرین ماجوریت عنداللہ و | ضرورت نہ پڑے۔ شرع شریف میں اس بینک کو روپیہ دینا مشکوریت من خلق اللہ خواھد شد۔ | اور اس سے لینا کیا حکم رکھتا ہے چونکہ اس معاملہ میں عام مسلمان حاکموں کی طرف سے مامور اور مجبور ہیں اس لئے اگر ان کے اس فعل کے جواز کی طرف کوئی اشارہ فرمایا جائے تو امید ہے کہ اللہ تعالیٰ کے ہاں ماجور اور مخلوق کی طرف سے شکریہ کے مستحق ہوں گے۔(ت)

الجواب: ربا گرفتن حرام قطعی بالاجماع و کبیرہ و شدید است و ربا دادن محتاج | سود لینا بالاتفاق حرام قطعی اور سخت کبیرہ گناہ ہے اور سود دینے کی بحاجت شرعیہ صحیحہ را رخصت کردہ اند فی الدر المختار یجوز | محتاج کو حاجت شرعیہ صحیحہ کے وقت اجازت دی گئی ہے۔ درمختار المحتاج الاستقراض بالربا۔ حاصل ایں بینک آنست کہ | میں ہے کہ محتاج کو سود پر قرض لینا جائز ہے، اس بینک کا حاصل یہ حرامے کہ ہندو ان می خورند بیاید تا مسلمانان خورند ولا حول ولا

| ہے کہ جو حرام ہندو کھاتے ہیں وہ حاصل ہو جائے تاکہ اس کو قوۃ الا باللہ کارکنان ایں بینک اگر درو دیں دارند صورتی مہیا است | مسلمان کھائیں۔ گناہ سے بچنے اور نیکی کرنے کی طاقت نہیں کہ بہ مقصد رسند و از حرام وار ہند ہر کہ مثلاً صدر وپیہ دام | سوائے اللہ تعالیٰ کی توفیق کے اس بینک کے کارکن اگر دین کا درد خواھد زر نذر ہند کا غذ زر کہ نوٹ نامند بد ہند و آں ہم دام ند ہند کہ | رکھتے ہیں تو ایک ایسی صورت مہیا ہے کہ وہ اپنے مقصد تک رسائی بر دام ہر چہ سودے گیر در با باشد | بھی حاصل کریں اور حرام سے خلاصی بھی پالیں، جو کوئی مثال کے طور پر سو روپیہ قرض چاہتا ہے اس کو زر نہ دیں بلکہ وہ کاغذ دیں جس کا نام نوٹ ہے

۱ الاشباہ والنظائر بحوالہ القنیہ الفن الاول القاعدۃ الخامسہ ادارۃ القرآن کراچی ۱/ ۱۲۶ صفحہ ۳۸۷ از ۷۱۵

Fatawa Razawiya Volume 17

...and it is forbidden. In the Hadith, narrated from Ali (Karam Allahu Ta'ala Wajhahu) from the Prophet (Sallallahu Alaihi Wasallam): "Every loan that draws a benefit is usury (Riba)." [1] Rather, do not give it as a loan because whatever benefit is taken on a loan becomes usury and forbidden. Instead, sell a hundred-rupee note for that profit on which both parties are mutually agreed for a fixed term; for example, sell a hundred-rupee note in exchange for one hundred and ten rupees for a period of one year. In this way, this profit will be the profit of a sale (Bay'), and the profit of a sale is lawful, whereas the profit of a loan is forbidden. Allah Almighty said: "They said, 'Trade is just like usury,' while Allah has permitted trade and forbidden usury." [2] We have given a detailed and comprehensive explanation of this matter in our book "Kifl al-Faqih al-Fahim." By this method, lawful profit will be obtained, and the borrower will also achieve their purpose. And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 213: Sent by Ahmed Khan Sahib, Lawyer of Marwar Court, stationed at Residency Udaipur Mewar, 3 Shaban 1335 AH. What do the scholars of religion and jurists of the firm Shariah say in this regard, that is it permissible to take the profit that the government is giving on loans or not? Explain and you will be rewarded.

The Answer: It is not permissible to take it with the intention of interest (usury) due to the general application of His saying: "And He has forbidden usury." [3] (Because this statement of Allah Almighty that "Allah Almighty has forbidden usury" is absolute. T) And if for any government, its consideration whether...

---

[1] Kanz al-Ummal, Hadith 15516, Mu'assasat ar-Risalah Beirut, 6/238 [2] Al-Quran al-Karim, 2/275 [3] Al-Quran al-Karim, 2/275

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

...और हराम है। हदीस में हज़रत अली (करम अल्लाह तआला वजहुहु) से नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की रिवायत ے: "हर वो कर्ज़ जो नफ़ा (लाभ) लाए वो सूद (ब्याज) है।" [1] और वो भी बतौर कर्ज़ मत दें क्योंकि कर्ज़ पर जो भी नफ़ा लेगा वो सूद और हराम हुआ। इसके बजाय सौ रुपये ۷ नोट उस नफ़ा के लिए जिस पर दोनों आपस में रज़ामंद हों, मुक़र्रर मुद्दत तक उसके हाथ फ़रोख़्त (बेचें) करें; मिसाल के तौर पर सौ का नोट एक साल के लिए एक सौ दस रुपये के बदले फ़रोख़्त करें, तो इस तरह ये नफ़ा बैय (खरीद-बिक्री) का नफ़ा होगा और बैय का नफ़ा हलाल है जबकि कर्ज़ का नफ़ा हराम। अल्लाह तआला ने इरशाद फ़रमाया: "उन लोगों ने कहा कि बैय तो सूद की तरह ही है जबकि अल्लाह तआला ने बैय को हलाल किया और सूद को हराम किया।" [2] इस मसले को हमने अपनी किताब "कफ़्लुल फ़क़ीह अल-फ़ाहिम" में मुकम्मल तौर पर तफ़्सीली रंग दिया है, इस तरीक़े से हलाल नफ़ा भी हाथ आएगा और वो कर्ज़ लेने वाला भी अपने मक़सद को हासिल कर लेगा। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 213: मुरसला (प्रेषक) अहमद खान साहब, वकील दरबार मारवाड़, मुतैयना रेजीडेंसी उदयपुर मेवाड़, 3 शाबान 1335 हिजरी। उलमा-ए-दीन और मुफ़्तियान-ए-शरह-ए-मतीन इस बारे में क्या फ़रमाते हैं कि गवर्नमेंट जो कर्ज़े का मुनाफ़ा दे रही है उसका लेना जायज़ है या नहीं? बयान कीजिए सवाब पाइए।

अल-जवाब: सूद की नियत से लेना जायज़ नहीं है, उनके इस क़ौल के आम होने के कारण: "और उसने सूद को हराम किया है।" [3] (क्योंकि अल्लाह तआला का ये इरशाद कि "अल्लाह तआला ने सूद को हराम किया" मुतलक़ (निरपेक्ष) है। त) और अगर किसी गवर्नमेंट पर उसकी रियायत चाहे...

---

[1] कँज़ुल उम्माल, हदीस 15516, मुअस्ससतुर रिसाला बेरूत, 6/238 [2] अल-क़ुरआन अल-करीम, 2/275 [3] अल-क़ुरआन अल-करीम, 2/275

وحرام، فی الحدیث عن علی کرم اللہ تعالٰی وجہہ عن النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کل قرض جر منفعۃ فھو ربواً۱ بلکہ نوٹ صدر روپیہ بہر ر بجے کہ باہم تراضی شود بمیعاد واجل مسمٰی بدست او فروشند مثلاً بیک صد و دہ روپیہ بوعدہ یک سال ایں ربح ربح بیع باشد و ربح بیع حلال است و ربح قرض حرام قال اللہ تعالٰی "اِنَّمَا الْبَیْعُ مِثْلُ الرِّبٰوا" وَ اَحَلَّ اللّٰہُ الْبَیْعَ وَ حَرَّمَ الرِّبٰوا"۲ ایں مسئلہ را در کتاب کفل الفقیہ الفاہم ہر چہ تمامتر رنگ تفصیل دادہ ایم بایں وجہ ہم ربح حلال بدست آید و ہم آں مستقرض بمراد خود برسد واللہ تعالٰی اعلم۔ اور وہ بھی بطور قرض مت دیں کیونکہ قرض پر جو بھی نفع لے گا وہ سود اور حرام ہوا۔ حدیث میں حضرت علی کرم اللہ وجہہ الکریم سے مروی ہے کہ نبی کریم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کا ارشاد ہے: جو قرض نفع کھینچے وہ سود ہے۔ بلکہ سو روپے کا نوٹ اس نفع کے لئے جس پر دونوں باہم رضامند ہوں مدت مقررہ تک اس کے ہاتھ فروخت کریں مثلاً وہ سو کا نوٹ ایک سال کے لئے ایک سو دس روپے کے بدلے فروخت کریں تو اس طرح یہ نفع بیع کا نفع ہوگا اور بیع کا نفع حلال ہے جبکہ قرض کا نفع حرام۔ اللہ تعالٰی نے ارشاد فرمایا: کہا ان لوگوں نے کہ بیع تو سود کی طرح ہی ہے جبکہ اللہ تعالٰی نے بیع کو حلال کیا اور سود کو حرام۔ اس مسئلہ کو ہم نے اپنی کتاب "کفل الفقیہ الفاہِم" میں مکمل طور پر تفصیلی رنگ دیا ہے، اس طریقے سے حلال نفع بھی ہاتھ آئیگا اور وہ قرض لینے والا بھی اپنے مقصد کو حاصل کرلے گا۔ (ت)

مسئلہ ۲۱۳: مرسلہ احمد خان صاحب وکیل دربار مارواڑ متعینہ ریزیڈنسی اودے پور میواڑ ۳ شعبان ۱۳۳۵ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین دریں باب کہ گورنمنٹ جو قرضہ کا منافع دے رہی ہے اس کا لینا جائز ہے یا نہیں ؟ بینوا توجروا۔

الجواب: سود کی نیت سے لینا جائز نہیں لاطلاق قولہ و حرم الربوا۳ (کیونکہ اللہ تعالیٰ کا یہ ارشاد کہ "اللہ تعالیٰ نے سود کو حرام کیا" مطلق ہے۔ ت) اور اگر کسی گورنمنٹ پر اس کی رعایت خواہ

---

۱ کنز العمال حدیث ۱۵۵۱۶ مؤسسة الرسالة بیروت ۶/ ۲۳۸ ۲ القرآن الکریم ۲/ ۲۷۵ ۳ القرآن الکریم ۲/ ۲۷۵

Fatawa Razawiyya Volume (17)

...and what comes to a person legally, considering it as receiving [one's right] is undoubtedly permissible, "because it is attaining the same kind as his right, as mentioned in Radd al-Muhtar etc." (Because this is success in obtaining the kind of one's right as in Radd al-Muhtar etc. - Translator). Similarly, if one is entitled to something from the public treasury (Bayt al-Mal), one can take from it as mentioned in Radd al-Muhtar from Sayyid al-Samhudi etc. (As is in Radd al-Muhtar from Sayyid al-Samhudi etc. - Translator). And if there is nothing [entitled] and he does not consider it interest (Riba) but rather conceives that a permissible wealth is being received with the owner's consent without treachery or breach of promise, then that is also permissible as we have established in our Fatawa. (As we have researched in our Fatawa. - Translator) And Allah the Almighty knows best. The basic ruling is this, but people of piety, especially leaders, should avoid these two situations, especially the latter, so that the ignorant do not accuse them. The Hadith says: "Avoid places of suspicion." (Stay away from places of accusation. - Translator). And Allah the Almighty knows best.

Problem 212: From Bareilly, Muhalla Chak, sent by Muhammad Raza Qadri, near Changi Chowki, Rajab 1335 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: A person gave some money to a "Mura'o" (trader) to sow chickpeas. At the time of giving the money, it was agreed with the Mura'o that at harvest time, three seers of chickpeas per rupee in excess of the market rate would be taken from him. At harvest, instead of chickpeas, the Mura'o gave the equivalent excess amount in money. Now, in such a situation, what should be done with this money? The person who gave the money was initially unaware of this. Therefore, now that it is known, the excess money has been kept separate. Whatever the command is, it will be obeyed wholeheartedly because if there is faith, there is everything, otherwise nothing. Explain and be rewarded.

Answer: Such a contract is certainly prohibited (najaiz) in Shari'ah. However, if that Mura'o is a non-believer (kafir), as seems to be the case, then it is not necessary to return this money that was received without treachery. However, it is better to give it as charity (sadaqah) to a poor Muslim. And Allah the Almighty knows best.

---

1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Zakat, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/12.
2. Kashf al-Khafa, Hadith 88, Mu'assasatu al-Risalah, Beirut, 1/25.

फ़तावा रज़विया जिल्द (17)

...और व्यक्ति को शरीयत के अनुसार जो कुछ मिलता है, उसे अपनी वसूली समझना निस्संदेह जायज़ है, "क्योंकि यह अपने हक़ की ही किस्म को प्राप्त करने में सफलता है जैसा कि रद्द-अल-मुह्तार आदि में है।" (यानी यह अपने हक़ की ही जिन्स को हासिल करने की कामयाबी है जैसा कि रद्द-अल-मुह्तार वगैरह में है। - अनुवादक)। इसी तरह यदि कोई बैतुल-माल (राजकोष) से हक़दार हो, तो वह उसमें से ले सकता है जैसा कि सैय्यद समहूदी आदि के हवाले से रद्द-अल-मुह्तार में है। (जैसा कि सैय्यद समहूदी वगैरह से रद्द-अल-मुह्तार में है। - अनुवादक)। और यदि कुछ (हक़) न हो और वह इसे सूद (ब्याज) न समझे बल्कि यह कल्पना करे कि एक जायज़ माल मालिक की रज़ामंदी से बिना किसी धोखे या वादा-ख़िलाफी के मिल रहा है, तो वह भी जायज़ है जैसा कि हमने अपने फ़तावा में इसकी तहकीक़ (शोध) कर दी है। (जैसा कि हमने अपने फ़तावा में इसकी तहकीक़ कर दी है। - अनुवादक)। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है। मूल हुक्म यही है, लेकिन तक़वा (परहेज़गारी) वाले लोगों, विशेष रूप से धर्मगुरुओं को इन दो स्थितियों से, विशेषकर बाद वाली स्थिति से बचना चाहिए ताकि अज्ञानी लोग उन पर आरोप न लगाएँ। हदीस में है: "अत्तिक़ू मवाज़िअत्तहुम" (आरोप वाली जगहों से बचो। - अनुवादक)। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला 212: बरेली, मोहल्ला चक, प्रेषक मुहम्मद रज़ा कादरी, चंगी चौकी के पास, रजब 1335 हिजरी। दीन के विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि: एक व्यक्ति ने एक 'मुराओ' (व्यापारी/काश्तकार) को चना बोने के लिए कुछ रुपये दिए और रुपये देते समय उस मुराओ से यह तय किया कि चना काटने पर प्रति रुपया तीन सेर चना बाज़ार भाव से ज़्यादा तुमसे लिए जाएँगे। फ़सल कटने पर मुराओ ने चने के बजाय जितनी रक़म ज़्यादा बनी वह चने के बदले दे दी। अब ऐसी स्थिति में इस रुपये का क्या किया जाए? रुपया देने वाले को पहले इसका ज्ञान नहीं था, लिहाज़ा अब मालूम होने पर उस ज़्यादा रुपये को अलग रख लिया गया है। जो भी हुक्म हो उसका पालन जी-जान से किया जाएगा क्योंकि ईमान है तो सब कुछ है वरना कुछ नहीं। बयान फरमाएं ताकि आपको सवाब मिले।

अल-जवाब: ऐसा अनुबंध (कॉन्ट्रैक्ट) शरीयत में निश्चित रूप से नाजायज़ है। लेकिन अगर वह मुराओ काफिर है जैसा कि ज़ाहिर है, तो यह रुपया जो उसे बिना धोखे के मिला, उसे वापस देना ज़रूरी नहीं है। अलबत्ता, बेहतर यह है कि किसी गरीब मुसलमान को सदका (दान) कर दिया जाए। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

1. रद्द-अल-मुह्तार, किताबुज़ ज़कात, दार इहया-उत-तुरास अल-अरबी, बेरूत, 2/12.
2. कश्फ़ुल ख़फ़ा, हदीस 88, मुअस्ससतुर रिसाला, बेरूत, 1/25.

اور شخص کا شرعاً کچھ آتا ہے اس میں وصول سمجھنا بلاشبہ روا "لانہ ظفر بجنس حقہ کما فی ردالمحتار وغیرہ" (اس لئے کہ یہ اپنے حق کی جنس کو حاصل کرنے کی کامیابی ہے جیسا کہ ردالمحتار وغیرہ میں ہے۔ت) یونہی اگر بیت المال میں حقدار ہو تو اس میں لے سکتا ہے کما فی ردالمحتار عن السید السمہودی وغیرہ (جیسا کہ سید سمہودی وغیرہ سے ردالمحتار میں ہے۔ت) اور اگر کچھ نہ ہو اور اسے سود نہ سمجھے بلکہ یہ تصور کرے کہ ایک جائز مال برضائے مالک بلا غدر و بد عہدی ملتا ہے تو وہ بھی روا ہے کما حققناہ فی فتاوٰنا (جیسا کہ ہم نے اپنے فتاوٰی میں اس کی تحقیق کردی ہے۔ت) واللہ تعالٰی اعلم۔ اصل حکم یہ ہے مگر اہل تقوٰی خصوصاً مقتداء کو ان دو صورتوں خصوصاً اخیرہ سے احتراز چاہئے کہ ناواقف اسے متہم نہ کریں، حدیث میں ہے : اتقوا مواضع التھم (تہمت کی جگہوں سے بچو۔ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۱۲: از بریلی محلہ چک مرسلہ محمد رضا قادری متصل چوکی چنگی رجب ۱۳۳۵ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص نے مراؤ کو کچھ روپیہ واسطے بونے چنا کے لئے دیا اور بر وقت دینے روپیہ یہ اس مراؤ سے ٹھہرالیا کہ چنا فصل کاٹنے پر فی روپیہ تین سیر چنا زائد بازار کے نرخ سے تم سے لئے جائیں گے۔ فصل کاٹنے پر مراؤ نے بجائے چنے کے جتنا روپیہ زائد ہوا بالمعوض چنے کے دیا، اب ایسی صورت میں اس روپیہ کا کیا کیا جائے اور روپیہ دینے والے کو اول اس کا علم نہ تھا، لہٰذا اب معلوم ہونے پر اس زائد روپیہ کو علیحدہ رکھ لیا گیا ہے جو حکم ہو اسکی تعمیل بسر و چشم کی جائے کیونکہ ایمان ہے تو سب کچھ ہے ورنہ کچھ نہیں۔ بینوا توجروا۔

الجواب: ایسا عقد شرعاً ضرور ناجائز ہے مگر اگر وہ مراؤ کافر ہے جیسا کہ یہی ظاہر ہے تو یہ روپیہ کہ بغیر غدر اسے ملا اسے واپس دینا ضرور نہیں البتہ، اور بہتر یہ ہے کہ فقیر مسلمان پر تصدق کردے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

---

1 ردالمحتار کتاب الزکوٰۃ دار احیاء التراث العربی بیروت ۱۲/۲ 2 کشف الخفاء حدیث ۸۸ مؤسسۃ الرسالۃ بیروت ۲۵/۱

Fatawa-e-Razvia | Volume 17

Question 215: From Lucknow, Madrasa Furqania, sent by Maulvi Syed Muzaffar Sahib, teacher of the said Madrasa, 21 Rabi-ul-Akhar 1336 AH.

Zaid lent six to seven thousand rupees to Amr. At the time of giving the loan, Zaid had no intention, neither implicitly nor explicitly, of taking interest (sood). Amr promised to repay the money within two months. Later, when a promissory note was written, Zaid had interest mentioned in it solely so that, according to the prevailing government laws, the note would not be considered invalid and useless in case of need. Amr, with great difficulty, repaid only half of the amount over fifteen months instead of two, and the other half remained unpaid for nearly a year. Since the validity of such a note is three years, Zaid had to file a lawsuit against Amr. In doing so, Zaid spent a significant amount of money. The court granted Zaid a decree against Amr for the principal amount plus interest, and Amr deposited the principal plus interest in court. Now, according to Sharia, is it permissible for Zaid to take his money along with the interest or not? If he abstains from the total interest, is it permissible to take an amount equal to his litigation expenses or not? And if the money cannot be retrieved from the court without the interest, then in such a forced situation, is it permissible for Zaid to take his money with interest? If he receives the money with interest from the court, what should be the method of avoidance? Should he keep an amount equal to his court expenses and give the rest as charity or return it to the original owner? In the collection of fatwas by Maulvi Abdul Hai Lakhnawi, a fatwa of non-permissibility is written, stating that the claimant (plaintiff) is the 'cause' (musabbib) and not the 'direct actor' (mubashir), and liability lies with the direct actor, not the cause, as is well known to those versed in jurisprudence. Please write the answer with references to books and arguments.

Deobandi Answer

In this situation, Zaid should keep his principal amount and return whatever has been received in the name of interest to Amr. This is because there is a difference of opinion regarding recovering litigation costs from the defendant. One view is what Maulana Abdul Hai Sahib has written. The second view is that if the defendant is obstinate and recovery is impossible without a lawsuit, then the costs can be taken from the defendant. In the mentioned case, since the plaintiff filed the suit merely keeping legal rules in mind, and no obstinacy, rebellion, or denial from Amr has been shown, it is not appropriate for Zaid to recover the costs from Amr, the defendant.

And Allah Almighty knows best. Written by Aziz-ur-Rahman (may he be forgiven), Mufti of Madrasa Deoband, 8 Rabi-ul-Thani 1336 AH.

The Answer:

Taking even a single grain (habba) of interest is strictly forbidden (Haram-e-Qat'i), as the curse of Allah and His Messenger is upon the one who takes interest. According to Sahih Hadiths.

मसाला 215: लखनऊ मदरसा फुरकानिया से, मौलवी सैयद मुजफ्फर साहब, शिक्षक उक्त मदरसा द्वारा प्रेषित, 21 रबी-उल-आखिर 1336 हिजरी।

ज़ैद ने अम्र को छह-सात हज़ार रुपये उधार दिए। उधार देते समय ज़ैद का इरादा इशारे में, संकेत में या स्पष्ट रूप से सूद (ब्याज) लेने का नहीं था। अम्र ने दो महीने में पैसे वापस करने का वादा किया था। बाद में जब रसीद लिखी गई, तो ज़ैद ने उसमें सूद इसलिए लिखवा दिया ताकि प्रचलित सरकारी कानूनों के अनुसार वह रसीद अवैध और ज़रूरत के समय बेकार न हो जाए। अम्र ने दो महीने के बजाय पंद्रह महीने में बड़ी मुश्किल से आधा रुपया ही ज़ैद को अदा किया और आधा नहीं दिया, यहाँ तक कि करीब एक साल बीत गया। चूंकि रसीद की मियाद तीन साल होती है, इसलिए ज़ैद को अम्र पर मुकदमा करना पड़ा। इस मुकदमेबाज़ी में ज़ैद के बहुत पैसे खर्च हुए और ज़ैद को अदालत से अम्र के खिलाफ सूद समेत डिक्री मिल गई। अम्र ने असल रकम और सूद अदालत में जमा कर दिया। अब शरीयत के अनुसार, क्या ज़ैद के लिए अपना रुपया सूद समेत लेना जायज़ है या नहीं? अगर वह पूरे सूद से परहेज़ करे, तो क्या अपने मुकदमे के खर्च के बराबर रकम लेना जायज़ होगा या नहीं? और अगर अदालत से रुपया बिना सूद के वापस नहीं मिल सकता, तो ऐसी मजबूरी में क्या ज़ैद के लिए अपना रुपया सूद समेत लेना जायज़ होगा? और अगर अदालत से उसे सूद समेत रुपया मिला, तो बचने का तरीका क्या होगा? क्या अपने अदालती खर्च के बराबर निकालकर बाकी सदका कर दे या असल मालिक को वापस कर दे? मौलवी अब्दुल हई लखनवी के फतावा संग्रह में नाजायज़ होने का फतवा लिखा है कि वादी (मुद्दई) 'मुसब्बिब' (कारण) है न कि 'मुबाशिर' (सीधे करने वाला), और ज़मानत (ज़िम्मेदारी) मुबाशिर पर होती है न कि मुसब्बिब पर, जैसा कि फिक्ह (इस्लामी कानून) जानने वालों से छुपा नहीं है। जवाब किताबों के हवाले और दलीलों के साथ लिखें।

देवबंदी जवाब

इस स्थिति में ज़ैद को अपनी असल रकम रख लेनी चाहिए और बाकी जो सूद के नाम से वसूल हुआ है, वह अम्र को वापस कर देना चाहिए क्योंकि मुकदमे का खर्च प्रतिवादी (मुद्दई अलैह) से वसूल करने या न करने के बारे में मतभेद है। एक तो वह बात है जो मौलाना अब्दुल हई साहब ने लिखी है। दूसरी यह कि यदि प्रतिवादी की हठधर्मी हो और बिना मुकदमे के किसी तरह वसूली संभव न हो, तो खर्च प्रतिवादी से लिया जाए। उक्त मामले में चूंकि वादी ने केवल कानूनी नियम को ध्यान में रखकर

मुकदमा किया है और अम्र की कोई हठधर्मी, सरकशी या इनकार ज़ाहिर नहीं हुआ, इसलिए ज़ैद के लिए उचित नहीं है कि वह प्रतिवादी अम्र से खर्च वसूल करे। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। लिखित: अज़ीज़ुर रहमान (अल्लाह उन्हें माफ करे), मुफ्ती मदरसा देवबंद, 8 रबी-उस-सानी 1336 हिजरी।

अल-जवाब:

सूद का एक रत्ती भर (हब्बा) लेना भी कतई हराम है क्योंकि सूद लेने वाले पर अल्लाह और उसके रसूल की लानत है। सही हदीसों के अनुसार।

पृष्ठ 390 का 715

مسئلہ ۲۱۵: از لکھنؤ مدرسہ فرقانیہ مرسلہ مولوی سید مظفر صاحب مدرس مدرسہ مذکور ۲۱ ربیع الآخر ۱۳۳۶ھ

زید نے عمرو کو چھ سات ہزار روپیہ قرض دیا اور قرض دینے کے وقت زید کا ارادہ اشارۃً یا کنایۃً یا صراحۃً سود لینے کا نہ تھا اور وعدہ عمرو نے ادائیگی روپیہ کا دو ماہ کا کیا تھا، بعد میں رقعہ تحریر کیا گیا تو اس میں سود اس وجہ سے زید نے لکھوایا کہ قانون مروجہ گورنمنٹ کے رقعہ مذکورہ ناجائز نہ ہو اور ضرورت کے وقت بیکار نہ ہو عمرو نے دو ماہ کی جگہ پندرہ ماہ میں نصف روپیہ تو بمشکل تمام زید کو ادا کیا اور نصف نہیں حتی کہ قریب سال کے ہوگئے چونکہ میعاد رقعہ تین سال ہوتی ہے اس لئے زید کو عمرو کی نالش کرنی پڑی تو اس نالش کرنے میں زید کا روپیہ بہت سا خرچ ہوا اور زید کی ڈگری عمرو پر مع سود کچہری مجاز سے ہو گئی اور عمرو نے اصل روپیہ مع سود داخل کچہری بھی کر دیا تو اب عندالشرع زید کو اپنا روپیہ مع سود لینا جائز ہے یا نہ؟ اگر کل سود سے پرہیز کرے تو بقدر اپنے خرچ نالش کے لینا جائز ہوگا یا نہ؟ اور روپیہ کچہری سے کل زید کو بلا سود واپس بھی نہیں مل سکتا تو ایسی مجبوری میں زید کو اپنا روپیہ مع سود لینا جائز ہوگا، اور اگر کچہری سے روپیہ اس کو مع سود ملا تو کیا طریقہ احتراز کا ہوگا؟ اور بقدر اپنے خرچ کچہری کے نکال کر باقی کو صدقہ کردے یا اصل مالک کو واپس؟ مجموعہ فتاوی مولوی عبدالحی لکھنوی میں عدم جواز کا فتویٰ لکھا ہوا ہے کہ مدعی مسبب ہے نہ مباشر، اور ضمان مباشر پر ہوتا ہے نہ مسبّب پر، جیسا کہ واقف فقہ پر مخفی نہیں، جواب مع حوالہ کتب و دلائل کے تحریر ہو۔

جواب دیوبندی

اس صورت میں زید کو اپنا اصل روپیہ رکھ کر باقی جو سود کے نام سے وصول ہوا ہے عمرو کو واپس کر دینا چاہئے کیونکہ خرچہ مقدمہ کا مدعی علیہ سے وصول کرنے نہ کرنے کے بارے میں اختلاف ہے، ایک یہ ہے کہ قول جو مولانا عبدالحی صاحب نے لکھا ہے، اور دوسرا یہ کہ بصورت تعنت مدعی علیہ اور بلا نالش کسی طرح وصول نہ ہو سکنے کی صورت میں خرچہ مدعی علیہ سے لیا جائے تو صورت مذکورہ میں چونکہ مدعی نے محض قانونی قاعدہ کو پیش نظر رکھ کر نالش کی ہے اور عمرو کا کوئی تعنت اور سرکشی و انکار ظاہر نہیں ہوا اس لئے زید کو مناسب نہیں کہ وہ عمرو مدعی علیہ سے خرچہ وصول کرے، واللہ تعالیٰ اعلم۔ کتبہ عزیز الرحمن عفی عنہ مفتی مدرسہ دیوبند ۸ ربیع الثانی ۱۳۳۶ھ

الجواب:

سود کا ایک حبہ لینا حرام قطعی کہ سود لینے والے پر اللہ ورسول کی لعنت ہے۔ صحیح حدیثوں

Fatawa Razawiyya, Volume 17

He (the Prophet, peace and blessings be upon him) said:

Al-Riba thalatha wa sab'una hauban aysaru hunna kana yaqa'u al-rajulu 'ala ummihi	**Interest (usury) is a collection of seventy-three sins, the lightest of which is for a man to commit adultery with his own mother. (T)**

Second Hadith states:

Man akala dirhama riba wa huwa ya'lamu kana kaman zana bi-ummihi sitta wa thalathina marrah	**Whoever intentionally consumes one dirham of interest, he is like the one who committed adultery with his mother thirty-six times. (T)**

One dirham is approximately equal to 7.10 [of current currency] here. If it consists of eighteen pennies, then for every 'dheyla' (small coin), it is like one instance of adultery with the mother. If he is truthful in his statement that he could not get the money from the court without interest, then he should take the money back and only keep his original capital. He must return everything else in full to Amr. Taking expenses from the defendant is also absolutely forbidden, even if the defendant was obstinate. The Deobandi Mufti's claim that this is a disputed matter is an absolute lie; there is no such answer in any book. The expenses the court took from him are not free from two states: either it took them rightfully or wrongfully in its view. If it took them rightfully, why does he seek compensation from another? And if it took them wrongfully in its view, then what principle of Shariah allows an oppressed person to oppress another? It is not a contract, nor an inheritance, nor a lawful property. There is no Shariah reason to take it from him, so it is nothing but falsehood, and Allah Almighty says:

"Wa la ta'kulu amwalakum baynakum bil-batili wa tudlu biha ilal-hukkami lita'kulu fariqan min amwalin-nasi bil-ithmi wa antum ta'lamun"	**"Do not consume one another's wealth unjustly or send it [in bribery] to the rulers in order that [they might aid] you [to] consume a portion of the wealth of the people in sin while you know [it is unlawful]." (T)**

It is in 'Uqood al-Durriyah':

1 Al-Mustadrak, Kitab al-Buyu', Dar al-Fikr Beirut, 2/73; Shu'ab al-Iman, Hadith 5519, Dar al-Kutub al-Ilmiyyah Beirut, 4/394. 2 Al-Mu'jam al-Awsat li'l-Tabarani, Hadith 2703, Maktabat al-Ma'arif al-Riyadh, 3/330; Al-Targhib wa al-Tarhib min al-Riba, Hadith 14, Mustafa al-Babi Egypt, 3/7. 3 The Holy Quran, 2/188.

फतवा रिज़विया, खंड सत्रह (17)

फरमाया:

अर-रिबा सलासतुन व सबऊना हौबन अइसरु हुन्ना काना यक़उ अर-रजलु अला उम्मिही	**सूद खाना तिहत्तर पापों का संग्रह है, जिनमें सबसे हल्का पाप यह है कि आदमी अपनी माँ से ज़िना (व्यभिचार) करे। (त)**

दूसरी हदीस में है:

मन अकाला दिरहमा रिबा व हुवा यालमु काना कमन ज़ना बि-उम्मिही सित्ता व सलासीना मर्रह	**जो जानबूझकर एक दिरहम सूद खाए, वह उसके समान है जिसने छत्तीस बार अपनी माँ से ज़िना किया। (त)**

एक दिरहम यहाँ के लगभग 7.10 के बराबर होता है। जिसके अठारह पैसे हुए, तो प्रति धेला एक बार माँ से ज़िना हुआ। अगर वह इस बयान में सच्चा है कि कचहरी से बिना ब्याज के रुपया उसे नहीं मिल सकता था, तो रुपया वापस ले और इसमें से सिर्फ अपना मूल धन उठाए, बाकी सब पूर्ण रूप से अम्र को वापस कर दे। प्रतिवादी (मुद्दआ अलैह) से खर्च लेना भी पूर्णतः हराम है, चाहे उसने हठधर्मी की हो। इसे मतभेदपूर्ण बताना देवबंदी मुफ्ती का सरासर झूठ है, किसी भी किताब में इसका यह जवाब नहीं है। कचहरी ने उससे जो खर्च लिया, वह दो स्थितियों से खाली नहीं है: उसने इसे अपने अनुसार सही तरीके से लिया या अन्यायपूर्वक लिया। अगर सही तरीके से लिया, तो वह दूसरे से इसका मुआवजा क्यों चाहता है? और अगर अन्यायपूर्वक लिया, तो शरीयत का कौन सा नियम है कि पीड़ित दूसरे पर ज़ुल्म करे? यह न कोई अनुबंध (अक्द) है, न विरासत, न ही वैध (मुबाह) माल। उससे लेने का कोई शरई कारण नहीं है, तो यह केवल असत्य (बातिल) है। और अल्लाह अज़्ज़-ओ-जल्ल फरमाता है:

"व ला ता'कुलू अमवालकुम बयनकुम बिल-बातिलि व तुद्लू बिहा इलल-हुक्कामि लिता'कुलू फरीक़म मिन अमवालिन-नासि बिल-इस्मि व अंतुम तलमून"	**"आसपास में एक-दूसरे का माल अनुचित रूप से न खाओ और न ही उसे अधिकारियों (जजों) तक इस नीयत से पहुँचाओ कि तुम लोगों के धन का एक हिस्सा पाप के साथ जान-बूझकर खा सको।" (त)**

उक़ूद अल-दुर्रिया में है:

---

1 अल-मुस्तदरक, किताब अल-बुयू', दार अल-फिक्र बेरुत, 2/73; शुअब अल-ईमान, हदीस 5519, दार अल-कुतुब अल-इलमिया बेरुत, 4/394। 2 अल-मुअजम अल-औसत लित-तबरानी, हदीस 2703, मकतबत अल-माआरिफ रियाद, 3/330; अत-तरगीब वत-तरहीब मिन अर-रिबा, हदीस 14, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 3/7। 3 अल-कुरान अल-करीम, 2/188।

فتاوی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

میں فرمایا:

الربا ثلثة وسبعون حوبا ایسر ھن کان یقع الرجل علی امه **سود کھانا تہتر گناہوں کا مجموعہ ہے جن میں سب سے ہلکا گناہ یہ ہے کہ آدمی اپنی ماں سے زنا کرے (ت)**

دوسری حدیث میں ہے:

من اکل درھم ربا وھو یعلم کان کمن زنی بامه ستا و ثلثین مرة **جو دانستہ ایک درہم سود کھائے وہ اس کے مثل ہو جس نے چھتیس بار اپنی ماں سے زنا کیا۔ (ت)**

ایک درہم تقریباً یہاں کے ۷.۱۰ کے برابر ہوتا ہے۔ جس کے اٹھارہ پیسے ہوئے تو فی دھیلا ایک بار ماں سے زنا ہوا۔ اگر وہ اس بیان میں سچا ہے کہ کچہری سے بلا سود روپیہ اسے نہیں مل سکتا تھا تو روپیہ واپس لے اور اس میں سے صرف اپنا زر اصل اٹھائے باقی تمام و کمال عمرو کو واپس دے مدعاعلیہ سے خرچہ لینا بھی مطلقاً حرام ہے اگر چہ اس نے تعنت کیا ہو، اسے مختلف فیہ بتانا دیوبندی مفتی کا کذب محض ہے ہر گز کسی کتاب میں اس کا جواب نہیں، خرچہ کہ اس سے کچہری نے لیا دو حال سے خالی نہیں اس کے نزدیک حقاً لیا یا ظلماً لیا، اگر حقاً لیا تو اس کا معاوضہ دوسرے سے کیا چاہتا ہے اور اگر اس کے نزدیک ظلماً لیا تو کونسی شریعت کا مسئلہ ہے کہ مظلوم دوسرے پر ظلم کرے، عقد نہیں وراثت نہیں مال مباح نہیں کوئی وجہ شرعی اس سے لینے کی نہیں تو نہ ہوا مگر باطل، اور اللہ عزوجل فرماتا ہے:

"وَلَا تَاْكُلُوْٓا اَمْوَالَكُمْ بَيْنَكُمْ بِالْبَاطِلِ وَتُدْلُوْا بِهَآ اِلَى الْحُكَّامِ لِتَاْكُلُوْا فَرِيْقًا مِّنْ اَمْوَالِ النَّاسِ بِالْاِثْمِ وَ اَنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ ۝"

آپس میں ایک دوسرے کا مال ناحق مت کھاؤ اور اس کو حاکموں کے پاس اس نیت سے مت لے جاؤ کہ تم لوگوں کا کچھ مال جان بوجھ کر گناہ کے ساتھ کھا جاؤ۔ (ت)

عقودالدریہ میں ہے:

---

1 المستدرک کتاب البیوع دارالفکر بیروت ۲/ ۷۳، شعب الایمان حدیث ۵۵۱۹ دارالکتب العلمیۃ بیروت ۴/ ۳۹۴ 2 المعجم الاوسط للطبرانی حدیث ۲۷۰۳ مکتبۃ المعارف الریاض ۳/ ۳۳۰، الترغیب والترہیب من الربا حدیث ۱۴ مصطفی البابی مصر ۳/ ۷ 3 القرآن الکریم ۲/ ۱۸۸

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Arabic Text]: A man stood guarantee for another person towards Zaid for a known debt. Then Zaid demanded it from him and compelled him before the judge. The man asked Zaid to grant him a delay, but he refused unless the man paid him the amount he spent on the costs of compulsion (litigation). So he paid it to him, then he paid him the amount guaranteed. Now the man wants to demand back from Zaid what Zaid received from him for the costs of compulsion; he has the right to do that. And Allah Almighty knows best.

[Urdu Translation of the above]: A person became a guarantor for another person's specific debt to Zaid. Then Zaid demanded the debt from the guarantor and proved his liability before a judge (Qazi). The guarantor asked Zaid for a delay, but Zaid refused to grant it unless the guarantor paid him the litigation costs incurred by Zaid. Consequently, the guarantor paid Zaid those costs. Later, he also paid Zaid the debt for which he had stood as guarantor. Now, the guarantor wants to demand back from Zaid the litigation costs he had paid him; he has the right to do so. And Allah Almighty knows best. (T)

Issue 216: From Mumbai, S. Karim Shop No. 9, submitted by Maulvi Abdul Aleem Sahib of Meerut, 7 Dhul-Hijjah 1337 AH. What do the scholars of religion and the muftis of the illustrious Shariah say regarding this: The rent money for a mosque is held by a court receiver (custodian) due to a lawsuit filed concerning the property by the heirs of the endowment (waqf). The said custodian purchased promissory notes worth eight thousand rupees with that money. When the heirs and the mosque trustees reached an agreement and obtained a 'consent decree' from the court (i.e., withdrew the case), the custodian handed over to the mosque trustees cash amounting to one thousand and eighteen rupees, fourteen annas, and two pies as annual interest on the promissory notes at a rate of 3.5%, along with four thousand one hundred and forty-seven rupees and nine annas in cash towards rent. These notes remained in the mosque's safe under the trustees' possession for several months, during which time the interest on the notes increased by one hundred and sixty-two rupees, eight annas, and ten pies. Most of the mosque trustees agreed that due to the current war and the resulting lack of stability, the market value has decreased and there is fear it may decrease further; therefore, the said notes should be sold promptly. At that time, one trustee proposed an amendment, stating that since their value has decreased because of the current war, they should not be sold

for now. After the war ends, the full value of the notes will be realized, and they should be sold then so that...

[1] Al-Uqud ad-Durriyya, Kitab al-Kafala, Haji Abdul Ghaffar, Kandahar, Afghanistan, 1/308.

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

[अरबी पाठ]: एक व्यक्ति ने ज़ैद के सामने दूसरे व्यक्ति के निश्चित ऋण की ज़मानत ली। फिर ज़ैद ने उस ज़मानतदार व्यक्ति से उस ऋण की मांग की और काज़ी (न्यायाधीश) के पास उस पर इसका दायित्व सिद्ध किया। अब उस व्यक्ति (ज़मानतदार) ने ज़ैद से मोहलत मांगी, तो ज़ैद ने उस समय मोहलत देने से इनकार कर दिया जब तक कि वह ज़ैद को मुकदमे पर किया गया खर्च न दे दे। चुनांचे उसने ज़ैद को वह खर्च दे दिया। फिर उसने ज़ैद को वह ऋण भी अदा कर दिया जिसका वह ज़मानतदार बना था। अब वह ज़मानतदार व्यक्ति चाहता है कि ज़ैद ने जो मुकदमे का खर्च उससे लिया था, वह ज़ैद से उसकी मांग करे, तो उसे ऐसा करने का अधिकार है। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

[उपरोक्त का उर्दू अनुवाद]: एक व्यक्ति ने ज़ैद के सामने दूसरे व्यक्ति के निश्चित ऋण की ज़मानत ली। फिर ज़ैद ने उस ज़मानतदार व्यक्ति से उस ऋण की मांग की और काज़ी (न्यायाधीश) के पास उस पर इसका दायित्व सिद्ध किया। अब उस व्यक्ति (ज़मानतदार) ने ज़ैद से मोहलत मांगी, तो ज़ैद ने उस समय मोहलत देने से इनकार कर दिया जब तक कि वह ज़ैद को उस मुकदमे पर किया गया खर्च न दे दे। चुनांचे उसने ज़ैद को वह खर्च दे दिया। फिर वह ऋण भी ज़ैद को अदा कर दिया जिसका वह ज़मानतदार बना था। अब वह ज़मानतदार व्यक्ति चाहता है कि ज़ैद ने जो मुकदमे का खर्च उससे लिया था, वह ज़ैद से उसकी मांग करे, तो उसे ऐसा करने का अधिकार है। अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 216: मुम्बई दुकान एस करीम नंबर 9 से प्रेषित, मौलवी अब्दुल अलीम साहब मेरठ, 7 ज़िल-हिज्जा 1337 हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन और मुफ़्तियान-ए-शरह-ए-मतीन इस बारे में कि मस्जिद के किराए के रुपये वरसा-ए-वक़्फ़ा (वक्फ के उत्तराधिकारियों) के मकान का मुकदमा दायर होने के कारण कोर्ट के रिसीवर यानी संरक्षक के पास जमा हैं। उक्त संरक्षक ने उन रुपयों से आठ हज़ार रुपयों के प्रॉमिसरी नोट खरीदे। जब वरसा-ए-वक़्फ़ा और मस्जिद के मुतवल्लियों ने आपस में समझौता करके कोर्ट से 'कंसेंट डिक्री' ली (यानी मुकदमा वापस ले लिया), उस समय उक्त संरक्षक के पास से प्रॉमिसरी नोटों का ब्याज वार्षिक साढ़े तीन प्रतिशत की दर से एक हज़ार अठारह रुपये चौदह आने दो पाई नकद और चार हज़ार एक सौ सैंतालीस रुपये नौ आने नकद किराए के मद में मस्जिद के मुतवल्लियों को दिए गए। मस्जिद के मुतवल्लियों के कब्ज़े में उक्त नोट कई महीनों तक

मस्जिद की तिजोरी में रहे, जिसके कारण उक्त नोटों का ब्याज एक सौ बासठ रुपये आठ आने दस पाई और बढ़ गया। अधिकांश मस्जिद के मुतवल्लियों ने आपस में समझौता करके यह तय किया कि वर्तमान युद्ध के कारण आपस में इत्मीनान न होने की वजह से कीमत इस समय कम हुई है और भविष्य में इससे भी कम होने का डर है, इसलिए उक्त नोटों को जल्द बेच दिया जाए। उस समय एक मुतवल्ली ने संशोधन किया कि वर्तमान युद्ध के कारण उनकी कीमत कम हुई है, इसलिए फिलहाल बिक्री न की जाए। युद्ध समाप्त होने के बाद उक्त नोटों की पूरी कीमत मिलेगी, उस समय बेचा जाए कि...

[1] अल-उक़ूद अद-दुर्रिया, किताब अल-कफ़ाला, हाजी अब्दुल ग़फ़्फ़ार, कंधार, अफ़गानिस्तान 1/308

पृष्ठ 392/715

رجل کفل آخر عن زید بدین معلوم ثم طالبہ زید بہ والزمہ بہ لدی القاضی فطلب الرجل من زید ان یمھلہ بہ فابی الا ان یدفع لہ الرجل قدر ما صرفہ فی کلفۃ الالزام فدفع لہ ثم دفع لہ المبلغ المکفول بہ ویرید الرجل مطالبۃ زید بما قبضہ زید منہ من کلفۃ الالزام فلہ ذلک ۱- واللہ تعالٰی اعلم۔

ایک شخص دوسرے شخص کا معین قرض کے بارے میں زید کے پاس ضامن بنا، پھر زید نے ضامن شخص سے اس قرض کا مطالبہ کیا اور قاضی کے پاس اس پر اس کا لزوم ثابت کیا اب اس شخص (ضامن) نے زید سے مہلت مانگی تو زید نے اس وقت مہلت دینے سے انکار کر دیا جب تک کہ وہ زید کو اس مقدمہ پر کیا ہوا خرچہ نہ دے چنانچہ اس نے زید کو وہ خرچہ دے دیا، پھر وہ قرض بھی زید کو اس نے ادا کر دیا جس کا وہ ضامن بنا تھا، اب وہ ضامن شخص چاہتا ہے کہ زید نے جو مقدمہ کا خرچ اس سے لیا تھا زید سے اس کا مطالبہ کرے تو اس کو ایسا کرنے کا حق ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۲۱۶: از بمبئی دکان ایس کریم نمبر ۹ مسئولہ مولوی عبدالعلیم صاحب میرٹھ ۷ ذی الحجہ ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیان شرع متین اس بارہ میں کہ مسجد کے کرایہ کے روپے ورثاء وقفہ مکان کے مقدمہ دائر کرنے کے سبب کورٹ کے ریسیور یعنی محافظ کے پاس جمع ہیں آٹھ ہزار روپوں کی مذکور محافظ نے پرامیسری نوٹیں خریدیں، جب مقدمہ ورثاء وقفہ اور متولیان مسجد نے آپس میں اتفاق کرکے کورٹ سے (کنسنٹ ڈگری لی) یعنی مقدمہ اٹھا لیا اس وقت محافظ مذکور کے پاس سے پرامیسری نوٹوں کا بیاج سالانہ سیکڑے ساڑھے تین ٹکے کے حساب سے ایک ہزار اٹھارہ روپے چودہ آنے دو پائی نقد اور چار ہزار ایک سو سینتالیس روپے نو آنے نقد بابت کرایہ متولیان مسجد کو دیئے متولیان مسجد کے قبضہ میں مذکور نوٹیں کئی مہینوں تک مسجد

کی تجوری میں رہیں جن کے رہنے سے مذکور نوٹوں کا ایک سو باسٹھ روپیہ آٹھ آنہ دس پائی بیاج بڑھا، اکثر متولیان مسجد نے آپس میں اتفاق کرکے یہ ٹھہراؤ کیا کہ موجودہ جنگ کے سبب آپس میں اطمینان نہ ہونے کی وجہ قیمت اس وقت کم ہوئی ہے اور آئندہ اس سے بھی کم ہونے کا خوف ہے اس وجہ سے مذکور نوٹوں کو جلد فروخت کیا جائے اس وقت ایک متولی نے ترمیم کی کہ موجودہ جنگ کی وجہ سے ان کی قیمت کم ہوئی ہے اس لئے فی الحال فروخت نہ کریں۔ جنگ ختم ہونے کے بعد مذکور نوٹوں کی پوری قیمت آئے گی اس وقت فروخت کیا جائے کہ

[1] العقود الدریۃ کتاب الکفالۃ حاجی عبدالغفار قندھار افغانستان ۱/ ۳۰۸

There will be no loss to the mosque either. No one supported this amendment, and the supervisor of the mosque was permitted to sell the aforementioned notes. At that time, it was also settled that the interest money from said notes should be entered in the mosque's office under the heading of 'interest'. At that time, a trustee proposed an amendment that from the date the guardian purchased the mentioned notes until the date they were sold, the interest money of these notes should not be collected in the mosque's office under the name of interest, but rather that amount should be handed over to the aforementioned guardian (the mentioned guardian is a Gabr Parsi). No one supported this amendment either. Is it legally permissible for the mosque's trustees to accept the interest amount and record it in the mosque's office under the name of interest? Furthermore, our exalted government considers the original price of the mentioned notes as the actual price and has been paying the full interest on these notes to date. Because of this, can the interest amount be included in the depreciated value of the notes since the full price was not received? Is it permissible for other mosque trustees to take the interest money from the guardian for the mosque or give it to the heirs of the donor as their legal share with mutual consent or not? Therefore, out of national sympathy and religious concern, please issue a Shari'a ruling in the form of a fatwa regarding the above, to save Muslims from the abyss of misguidance and earn religious and hereafter rewards. Our duty is only to convey clearly. A well-wisher of Islam.

The Answer:

Interest (usury) is forbidden (haram). Allah Almighty has said: "And Allah has permitted trade and has forbidden interest." [1] (Allah Almighty said: Allah Almighty has made interest forbidden - Tr.) The mosque cannot accept it.

Allah (blessings and peace be upon him) said: "Indeed Allah is Pure and He does not accept anything but that which is pure." [2]	**The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: Indeed Allah Almighty is pure and He does not accept anything but the pure. (Tr.)**

Collecting interest in the mosque's office under the name of interest is like polluting it with filth. If the value has decreased, the government has not seized any property of the mosque for which this amount is being taken as compensation. Giving it to a court employee has no meaning as he is not entitled to this money in any way. The

answer to taking it while considering it interest is this; yes, if they do not consider it interest...

---

1 Al-Quran al-Karim 2/275 2 Al-Sunan al-Kubra by al-Bayhaqi, Book of Salat al-Istisqa, Chapter on Redressing Grievances etc., Dar Sader Beirut 3/346; Sahih Muslim, Book of Zakat, Qadeemi Kutub Khana Karachi 1/326.

फ़तावा रिज़विया खंड 17

मस्जिद का कोई नुकसान भी नहीं होगा। इस संशोधन का किसी ने समर्थन नहीं किया, और मस्जिद के नाज़िर (निरीक्षक) को उक्त नोटों को बेचने की अनुमति दी गई। उस समय यह भी तय हुआ कि उक्त ब्याज के पैसों को मस्जिद के कार्यालय में 'ब्याज' के नाम से दर्ज किया जाए। उसी समय एक मुतवल्ली (न्यासी) ने संशोधन किया कि जिस तारीख को उक्त नोट संरक्षक (गार्जियन) ने खरीदे थे, उस तारीख से जिस तारीख तक वे बिकें, उन नोटों के ब्याज का पैसा मस्जिद के कार्यालय में ब्याज के नाम से जमा न किया जाए, बल्कि वह राशि उक्त संरक्षक के सुपुर्द की जाए (उक्त संरक्षक एक गब्र पारसी है)। इस संशोधन का भी किसी ने समर्थन नहीं किया। क्या मस्जिद के मुतवलियों के लिए ब्याज की राशि लेना और उसे मस्जिद के कार्यालय में ब्याज के नाम से दर्ज करना शरीयत के अनुसार जायज़ है? इसके अलावा, हमारी उच्च सरकार उक्त नोटों की मूल कीमत को ही वास्तविक कीमत मानती है और आज तक उन नोटों पर पूरा ब्याज दे रही है। क्या इस वजह से, चूंकि नोटों की पूरी कीमत नहीं मिली, ब्याज की राशि को नोटों की घटी हुई कीमत में शामिल किया जा सकता है? क्या अन्य मस्जिद मुतवलियों के लिए उक्त संरक्षक से मस्जिद के लिए ब्याज का पैसा लेना या आपसी सहमति से इसे वक्फ करने वाली के वारिसों को उनके शरीय हिस्से के रूप में देना जायज़ है या नहीं? अतः, राष्ट्रीय सहानुभूति और धार्मिक संवेदना के कारण, उपरोक्त के बारे में फतवे के रूप में शरीय हुक्म लिखें ताकि मुसलमानों को गुमराह होने से बचाया जा सके और दीन और आख़िरत का पुण्य प्राप्त हो। हमारा कर्तव्य केवल स्पष्ट संदेश पहुँचाना है। इस्लाम का शुभचिंतक।

उत्तर:

ब्याज (सूद) हराम है। अल्लाह तआला ने फरमाया: "और अल्लाह ने सूद को हराम कर दिया है।" [1] (अल्लाह तआला ने फरमाया: अल्लाह तआला ने सूद को हराम किया है - अनुवाद) मस्जिद इसे स्वीकार नहीं कर सकती।

अल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: "बेशक अल्लाह पाक है और वह केवल पाकीज़ा चीज़ ही स्वीकार करता है।" [2]

नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: बेशक अल्लाह तआला पाक है और वह केवल पाक को ही स्वीकार करता है। (अनुवाद)

मस्जिद के दफ्तर में सूद के नाम से पैसा जमा करना उसे अशुद्धता से अपवित्र करना है। यदि कीमत कम हो गई है, तो सरकार ने मस्जिद की कोई संपत्ति नहीं ली है जिसके हर्जाने के रूप में यह राशि ली जा रही है। कोर्ट के कर्मचारी को इसे देने का कोई मतलब नहीं है क्योंकि वह किसी भी तरह से इस पैसे का हकदार नहीं है। सूद समझकर लेने का जवाब तो यह है; हाँ, अगर इसे सूद न समझें...

---

1 अल-कुरान अल-करीम 2/275 2 अल-सुनन अल-कुबरा लिल-बैहकी, किताब सलात अल-इस्तिस्का, बाब अल-खुरुज मिन अल-मज़ालिम आदि, दार सादर बेरूत 3/346; सहीह मुस्लिम, किताब अल-ज़कात, कदीमी कुतुब खाना कराची 1/326।

مسجد کا نقصان بھی نہ ہوگا، اس ترمیم کی کسی نے تائید نہیں کی اور مذکورہ نوٹوں کو فروخت کرنے کے لئے ناظر مسجد کو اجازت دی اور اس وقت یہ بھی ٹھہراؤ کیا کہ مذکورہ بیاج کے روپیوں کو مسجد کے دفتر میں بیاج کے نام سے درج کیا جائے اس وقت ایک متولی نے ترمیم کی کہ جس تاریخ کو مذکورہ نوٹیں محافظ نے خرید کی ہیں اس تاریخ سے جس تاریخ کو بکیں ____ اس تاریخ تک مذکورہ نوٹوں کے بیاج کے روپے مسجد کے دفتر میں بیاج کے نام سے جمع نہیں کئے جائیں بلکہ وہ رقم مذکور محافظ کے حوالے کئے جائیں (مذکور محافظ گبر پارسی ہے) مذکور ترمیم کی بھی کسی نے تائید نہیں کی، کیا متولیانِ مسجد مذکور بیاج کی رقم کو لینا اور مسجد کے دفتر میں بیاج کے نام سے درج کرنا شرعاً جائز ہے؟ دیگر ہماری گورنمنٹ عالیہ مذکورہ نوٹوں کی جو اصل قیمت ہے وہی سمجھتی ہے اور اسی کے موافق آج تک مذکور نوٹوں کا بیاج پورا دے رہی ہے کیا اس وجہ سے مذکور بیاج کی رقم کو مذکور نوٹوں کی پوری قیمت نہ ملنے کی وجہ سے مذکور نوٹوں کی گھٹی ہوئی رقم میں داخل کر سکتے ہیں؟ دیگر متولیانِ مسجد کو مذکور بیاج کے روپے مذکور محافظ سے مسجد کے لئے لینا یا ورثاء واقفہ کے شرعی حصہ میں بطور رضامندی باہمی کے دینا جائز ہے یا نہیں؟ لہذا ازراہِ ہمدردی ملی و احساس دینی مذکورہ بالا کی بابت شرعی حکم بصورت فتوٰی تحریر فرما کر مسلمانوں کو ورطہ گمراہی سے نجات دیں اور خداوندِ عالم سے دینی و اخروی اجر حاصل فرمائیں و ما علینا الا البلاغ خیر خواہ اسلام۔

الجواب:

سود حرام ہے قال اللہ تعالیٰ "وَحَرَّمَ الرِّبٰوا" 1 (اللہ تعالیٰ نے فرمایا: اللہ تعالیٰ نے سود کو حرام کیا- ت) مسجد اسے قبول نہیں کرسکتی،

قال صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم ان نبی کریم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا: بیشک اللہ تعالیٰ اللہ طیب لایقبل الا طیبا 2۔ پاک ہے اور وہ قبول نہیں فرماتا مگر پاک کو۔ (ت)

مسجد کے دفتر میں سود کے نام سے جمع کرنا اسے نجاست سے آلودہ کرنا ہے، قیمت اگر گھٹ گئی تو گورنمنٹ نے کوئی مال مسجد کا نہ لے لیا جس کے تاوان میں یہ رقم لی جائے ملازم کورٹ کو اس کا دینا کوئی معنی نہیں رکھتا کہ وہ کسی طرح اس روپے کا مستحق نہیں۔ سود سمجھ کر لینے کا جواب تو یہ ہے، ہاں اگر نہ اسے سود سمجھیں

---

1 القرآن الکریم ۲ / ۲۷۵ 2 السنن الکبریٰ للبیہقی کتاب صلوٰۃ الاستسقاء باب الخروج من المظالم الخ دار صادر بیروت ۳ / ۳۴۶، صحیح مسلم کتاب الزکوٰۃ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱ / ۳۲۶

Fatawa-e-Razawiyyah (Volume 17)

Neither call it interest, nor collect it in the mosque's office under the name of interest. Rather, consider that the government, of its own accord and without any deception from our side (as deception is Shari'i-wise forbidden), provides us with an additional amount for the mosque. Therefore, there is no harm in taking it, spending it on the mosque, and recording it in the mosque's office under the name "Surplus amount from Government."

The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Indeed, actions are [judged] by intentions, and for every person is only what he intended."[1] And Allah the Almighty knows best. (T)	**The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Indeed, the basis of actions is on intentions, and for every person is only that which he intended." And Allah the Almighty knows best. (T)**

[1] Sahih al-Bukhari, Chapter: How the Revelation started..., Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/2.

न इसे ब्याज (सूद) कहें, न ही ब्याज के नाम से मस्जिद के दफ्तर में जमा करें। बल्कि यह समझें कि सरकार अपनी खुशी से, हमारी ओर से बिना किसी धोखे के(क्योंकि धोखा शरीअत में हराम है), मस्जिद के लिए कुछ अतिरिक्त धनराशि दे रही है। तो इसे लेने, मस्जिद में खर्च करने और मस्जिद के दफ्तर में "सरकार की ओर से अतिरिक्त राशि" के नाम से दर्ज करने में कोई हर्ज नहीं है।

अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: "बेशक कर्मों का दारोमदार नियतों पर है, और हर व्यक्ति के लिए वही है जिसकी उसने नियत की।"[1] और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया कि बेशक कर्मों का दारोमदार नियतों पर है और हर व्यक्ति के लिए वही कुछ है जिसकी उसने नियत की। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

---

[1] सहीह अल-बुखारी, अध्याय: वह्य (प्रकाशना) का प्रारम्भ कैसे हुआ..., कदीमी कुतुब खाना, कराची, 1/2.

نہ سود کہیں، نہ سود کے نام سے دفتر مسجد میں جمع کریں بلکہ یہ جانیں کہ گورنمنٹ اپنی خوشی سے بغیر ہمارے غدر کے (کہ غدر شرعاً حرام ہے) ایک مال زائد ہمیں مسجد کے لئے دیتی ہے تو اس کے لینے اور مسجد میں صرف کرنے اور دفتر مسجد میں بنام "رقم زائد از گورنمنٹ" لکھنے میں کوئی حرج نہیں،

رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا کہ بیشک عملوں کا دار ومدار نیتوں پر ہے اور ہر شخص کے لئے وہی کچھ ہے جس کی اس نے نیت کی۔ اور اللہ تعالٰی بہتر جانتا ہے۔(ت)

قال رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم انما الاعمال بالنیات وانما لکل امرئ مانوی ۱۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

---

۱ صحیح البخاری باب کیف بدء الوحی الخ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/۱

Fatawa Razawiyya, Volume 17 (17)

Treatise Kifl al-Faqih al-Fahim fi Ahkam Qirtas al-Darahim 1322 AH (The portion for the wise jurist regarding the rulings on paper notes)

Problem 217:

(Arabic version of the question): What is your opinion, may your grace endure, regarding this coined paper called 'Note'? Several points are to be asked about it: First, is it property (mal) or a document like a bill of exchange (sakk)? Second, is Zakat obligatory on it when it reaches the threshold (nisab) in excess of needs and a year passes over it, or not? Third, is it valid as a mahr (dowry)? Fourth, is hand-cutting mandatory for stealing it from a secure place? Fifth, if destroyed, is its replacement guaranteed by its like or in dirhams? Sixth, is its sale permissible for dirhams, dinars, or copper coins? Seventh, if it is exchanged...

(Urdu version of the question): What is your guidance—may your grace remain forever—regarding this paper which bears a stamp and is called a note? There are several things to be inquired about in it: 1. Is it wealth (mal) or a certificate like a document? 2. When it reaches the amount of Nisab and a year passes over it, will Zakat be obligatory on it or not? 3. Can it be designated as a mahr (dower)? 4. Fourth, if someone steals it from a secure place, will cutting off the hand be mandatory or not? 5. Fifth, if someone destroys it, will its compensation be stipulated as a 'Note' itself or in rupees? 6. Sixth, is its sale valid in exchange for rupees, gold coins (Ashrafis), or copper coins? 7. Seventh, if for example, with a piece of cloth...

फ़तावा रज़विया, खंड 17 (17)

रिसाला किफ़्ल अल-फ़क़ीह अल-फ़ाहिम फ़ी अहकाम क़िरतास अद-दराहिम 1322 हिजरी
(कागजी नोट के अहकाम के बारे में समझदार फकीह का हिस्सा)

मसाला 217:

(प्रश्न का अरबी संस्करण): आपका क्या कहना है, आपकी कृपा बनी रहे, इस टंकित कागज (नोट) के बारे में? इसके बारे में कई प्रश्न हैं: पहला, क्या यह धन (माल) है या विलेख (सनद) की तरह का दस्तावेज़ है? दूसरा, क्या इसमें ज़कात वाजिब है यदि यह अधिशेष निसाब तक पहुँच जाए और उस पर एक वर्ष बीत जाए, या नहीं? तीसरा, क्या यह मेहर के रूप में सही है? चौथा, क्या किसी सुरक्षित स्थान से इसकी चोरी के लिए हाथ काटना अनिवार्य है? पाँचवाँ, यदि इसे नष्ट कर दिया जाए, तो क्या इसके समान या दिरहम के साथ क्षतिपूर्ति की गारंटी है? छठा, क्या इसे दिरहम, दीनार या तांबे के सिक्कों के बदले बेचना जायज़ है? सातवाँ, यदि इसे बदल दिया जाए...

(प्रश्न का उर्दू संस्करण): आपका क्या इरशाद है—आपका फ़ज़्ल हमेशा रहे—इस कागज के बाब में जिस पर सिक्का होता है और जिसे नोट कहते हैं? और इसमें कई बातें दरियाफ्त करनी हैं: 1. क्या वह माल है या दस्तावेज़ की तरह कोई सनद? 2. जब वह निसाब की मात्रा के बराबर हो जाए और उस पर साल गुजर जाए, तो क्या उस पर ज़कात वाजिब होगी या नहीं? 3. क्या उसे महर मुकर्रर किया जा सकता है? 4. चतुर्थ, अगर कोई उसे महफूज़ जगह से चुराए, तो क्या उसका हाथ काटना वाजिब होगा या नहीं? 5. पंचम, अगर कोई उसे तलफ (ن्ष्ट) कर दे, तो मुआवज़े के तौर पर उसे नोट ही देना होगा या रुपये? 6. षष्ठम, क्या रुपयों या अशर्फियों या पैसों के बदले इसकी खरीद-फरोख्त (बैअ) जायज़ है? 7. सप्तम, अगर मिसाल के तौर पर किसी कपड़े से...

पेज 395 ऑफ़ 715

فتاویٰ رضویہ، جلد ہفتدہم (۱۷)

رسالہ کفل الفقیہ الفاھم فی احکام قرطاس الدراھم ۱۳۲۲ھ (کاغذی نوٹ کے احکام کے بارے میں سمجھ دار فقیہ کا حصہ)

مسئلہ ۲۱۷:

(عربی متن): ما قولکم دام طولکم فی ھذا القرطاس المسکوك المسمی بالنوط والسؤال عنه فی مواضع الاول ھل ھو مال ام سند من قبیل الصك، الثانی ھل تجب فیه الزکوۃ اذا بلغ نصابا فاضلا وحال علیه الحول ام لا، الثالث ھل یصح مھرا، الرابع ھل یجب القطع بسرقته من حرز، الخامس ھل یضمن بالاتلاف بمثله او بالدراھم، السادس ھل یجوز بیعه بدراھم او دنانیر او فلوس، السابع اذا استبدل

(اردو ترجمہ): آپ کا کیا ارشاد ہے آپ کا فضل ہمیشہ رہے اس کاغذ کے باب میں جس پر سکہ ہوتا ہے اور اسے نوٹ کہتے ہیں، اور اس میں متعدد باتیں دریافت کرنی ہیں، ۱۔ اول کیا وہ مال ہے یا دستاویز کی طرح کوئی سند، ۲۔ دوم جب وہ بقدر نصاب ہوا اور اس پر سال گزر جائے تو اس پر زکوٰۃ واجب ہوگی یا نہیں، ۳۔ سوم کیا اسے مہر مقرر کرسکتے ہیں، ۴۔ چہارم اگر کوئی اسے محفوظ جگہ سے چرائے تو اس کا ہاتھ کاٹنا واجب ہوگا یا نہیں، ۵۔ پنجم اگر اسے کوئی تلف کردے تو عوض میں اسے نوٹ ہی دینا ٹھہرے گا یا روپے، ۶۔ ششم کیا روپوں یا اشرفیوں یا پیسوں کے عوض اس کی بیع جائز ہے، ۷۔ ہفتم اگر مثلاً کسی کپڑے سے

Volume Seventeen (17) Fatawa Razawiyya

[Arabic Column] ...with a garment, for example, it would be a barter exchange or an absolute sale. Eighth: Is it permissible to lend it? And if it is permissible, should it be repaid in kind or in silver coins (dirhams)? Ninth: Is it permissible to sell it for silver coins on credit until a known period? Tenth: Is 'Salam' (advance payment sale) permissible in it, such that silver coins are given for a note of a known type and description to be delivered after a month, for example? Eleventh: Is it permissible to sell it for more than the number written on it in 'Rababi' coins, such that a ten-unit note is sold for twelve or twenty, or similarly for less than it? Twelfth: If this is permissible, then if Zaid wants to borrow ten 'Rababis' from Amr, and Amr says, 'I do not have silver coins, but I will sell you a ten-unit note for twelve rupees on an installment plan for one year, paying one rupee every month,' should this be prohibited because it is a trick to engage in usury (Riba)? And if it is not prohibited, what is the difference between it and usury such that this is lawful and that is forbidden, while the end result—which is obtaining an excess—is the same in both? Benefit us with the answer, may you be rewarded on the Day of Reckoning.

[Urdu Column] ...if exchanged for it, then it would be an absolute sale or a barter exchange (in which there is a commodity on both sides). 8th: Is it permissible to lend it? And if it is permissible, should the note itself be given back at the time of repayment, or rupees? 9th: Is it permissible to sell it in exchange for rupees on credit for a specific promised period? 10th: Is 'Salam' sale permissible in it, in such a way that rupees are given in advance so that, for example, after one month, a note of this kind and type will be taken? 11th: Is it permissible to sell it for more than the amount written in it, for example, selling a ten-rupee note for twelve or twenty, or similarly for less? 12th: If this is permissible, then when Zaid wants to borrow ten rupees from Amr, and Amr says, 'I do not have rupees, but I will sell you a ten-rupee note for twelve on a one-year installment plan, so that you pay one rupee every month,' will he be stopped from this, saying that this is a trick for usury (interest)? And if not stopped, then what is the difference between this and usury (Riba) that this is lawful and that is forbidden, although the outcome for both is one, i.e., obtaining an excess? Benefit us with the answer; may you receive a reward on the Day of Judgment.

[Answer Section] The Answer: O Allah, all praise is due to You, O Giver! Send blessings and peace upon the Master who turns much to You, and upon his descendants and...

O Lord! For You alone is all praise, O Great Bestower! Send peace and blessings upon that leader who is very inclined towards You, and upon their...

खंड सत्रह (17) फ़तावा रज़विया

[अरबी कॉलम] ...उदाहरण के लिए एक कपड़े के साथ, तो यह एक वस्तु-विनिमय या पूर्ण बिक्री होगी। आठवां: क्या इसे उधार देना जायज़ है? और यदि यह जायज़ है, तो क्या इसे वैसे ही (नोट में) या चांदी के सिक्कों (दिरहम) में चुकाया जाना चाहिए? नौवां: क्या इसे एक निश्चित अवधि तक उधार पर चांदी के सिक्कों के बदले बेचना जायज़ है? दसवां: क्या इसमें 'सल्म' (अग्रिम भुगतान बिक्री) जायज़ है, जैसे कि चांदी के सिक्के एक ज्ञात प्रकार और विवरण के नोट के लिए दिए जाएं जिसे एक महीने के बाद दिया जाएगा? ग्यारहवां: क्या इसे उस पर लिखी गई संख्या से अधिक में बेचना जायज़ है, जैसे कि दस-इकाई के नोट को बारह या बीस में बेचना, या इसी तरह उससे कम में? बारहवां: यदि यह जायज़ है, तो अगर ज़ैद अम्र से दस 'रबाबी' उधार लेना चाहे, और अम्र कहे, 'मेरे पास चांदी के सिक्के नहीं हैं, लेकिन मैं तुम्हें दस-इकाई का नोट बारह रुपये में एक साल की किस्तों पर बेचता हूँ, हर महीने एक रुपया देते हुए,' तो क्या इसे रोका जाना चाहिए क्योंकि यह सूद (रिबा) में शामिल होने की एक चाल है? और यदि इसे नहीं रोका जाता है, तो इसमें और सूद में क्या अंतर है कि यह हलाल है और वह हराम, जबकि अंतिम परिणाम—जो अतिरिक्त प्राप्त करना है—दोनों में समान है? हमें उत्तर के साथ लाभान्वित करें, कयामत के दिन आपको प्रतिफल मिले।

[उर्दू कॉलम] ...इसे बदलें तो यह बय (बिक्री) मुतलक होगी या मुकायज़ा (जिसमें दोनों तरफ माल होता है)। ८वाँ: क्या इसे कर्ज देना जायज़ है? और अगर जायज़ है तो अदा करते वक्त नोट ही दिया जाए या रुपये? ९वाँ: क्या रुपयों के बदले एक निश्चित वादे पर उधार में इसका बेचना जायज़ है? १०वाँ: क्या इसमें बय सल्म जायज़ है इस तरह कि रुपये पेशगी दिए जाएं कि मिसाल के तौर पर एक महीने के बाद इस किस्म का और ऐसा नोट लिया जाएगा? ११वाँ: क्या यह जायज़ है कि जितनी रकम इसमें लिखी है उससे ज़्यादा में बेचा जाए मिसाल के तौर पर दस का नोट बारह या बीस को या इसी तरह इससे कम? १२वाँ: अगर यह जायज़ है कि जब ज़ैद अम्र से दस रुपये कर्ज लेना चाहे तो अम्र कहे रुपये तो मेरे पास नहीं हैं हाँ मैं दस का नोट बारह को साल भर की किस्त बंदी पर तेरे हाथ बेचता हूँ कि तू हर महीने एक रुपया दिया करे, क्या उसको मना किया जाएगा कि यह सूद का हीला (बहाना) है? और अगर न मना किया जाए तो इसमें और रिबा (सूद) में क्या फर्क है कि यह हलाल हो और वह हराम हालांकि परिणाम दोनों का एक है यानी ज़्यादती का मिलना? हमें जवाब से फायदा बख्शो, कयामत के दिन तुम्हें अज्र (पुण्य) मिले।

[उत्तर अनुभाग] उत्तर: ऐ अल्लाह! तमाम तारीफें तेरे ही लिए हैं, ऐ देने वाले! दुरूद और सलाम भेज उन सरदार पर जो तेरी तरफ बहुत रुजू करने वाले हैं, और उनके परिवार पर और...

इलाही! तेरे ही लिए हम्द है, ऐ बहुत अता फरमाने वाले! दरूद व सलाम भेज उन सरदार पर जो तेरी तरफ बहुत रुजू फरमाने वाले हैं और उनके..

पृष्ठ ३९६/७१०

بثوب مثلا یکون مقایضة او بیعا مطلقا. الثامن هل یجوز اقراضه وان جاز فیقضی بالمثل او بالدراہم، التاسع هل یجوز بیعه بدراهم نسئة الی اجل معلوم، العاشر هل یجوز السلم فیه بأن تعطی الدراهم علی نوط معلوم نوعا وصفة یؤدی بعد شهر مثلا الحادی عشر هل یجوز بیعه بازید مما کتب فیه من عدد الربابی کان یباع نوط عشرة بأثنی عشر او عشرین او بانقص منه کذلك، الثاني عشران جاز هذا فهل یجوز اذا اراد زید استقراض عشرة ربابی من عمرو ان یقول عمرو لا دراهم عندی ولکن ابیعك نوط عشرة بأثنتی عشرة ربیة منجمة الی سنة تؤدی کل شهر ربیة وهل ینهی عن ذلك لانه احتیال في الربا وان لم ینه فما الفرق بینه و بین الربا حتی یحل هذا او یحرم ذلك مع ان المآل وهو حصول الفضل واحد فیهما افیدونا الجواب توجروا یوم الحساب۔

اسے بدلیں تو یہ بیع مطلق ہوگی یا مقایضہ (جس میں دونوں طرف متاع ہوتی ہے) ہشتم کیا اسے قرض دینا جائز ہے اور ا گر جائز ہے تو ادا کرتے وقت نوٹ ہی دیا جائے یا روپے، نہم کیا روپوں کے عوض ایک وعدہ معینہ پر قرضوں اس کا بیچنا جائز ہے، دہم کیا اس میں بیع سلم جائز ہے یوں کہ روپے پیشگی دئے جائیں کہ مثلا ایک مہینہ کے بعد اس قسم کا اور ایسا نوٹ لیا جائے گا، یاز دہم کیا یہ جائز ہے کہ جتنی رقم اس میں لکھی ہے اس سے زائد کو بیچا جائے مثلا دس کا نوٹ بارہ یا بیس کو یا اسی طرح اس سے کم، دواز دہم اگر یہ جائز ہے کہ جب زید عمرو سے دس روپے قرض لینا چاہے تو عمرو کہے روپے تو میرے پاس نہیں ہیں ہاں میں دس کا نوٹ بارہ کو سال بھر کی قسط بندی پر تیرے ہاتھ بیچتا ہوں کہ تو ہر مہینے ایک روپیہ دیا کرے، کیا اس کو منع کیا جائے گا کہ یہ سود کا حیلہ ہے ، اور اگر نہ منع کیا جائے تو اس میں اور ربا میں کیا فرق ہے

کہ یہ حلال ہو اور وہ حرام حالانکہ مآل دونوں کا ایک ہے یعنی زیادتی کا ملنا، ہمیں جواب سے فائدہ بخشو قیامت کے دن تمہیں اجر ملے۔

الجواب: اللهم لك الحمد يا وهاب صل وسلم على السيد الاوّاب و على آله و

الٰہی ! تیرے ہی لئے حمد ہے، اے بہت عطا فرمانیوالے ! درود و سلام بھیج ان سردار پر جو تیری طرف بہت رجوع فرمانے والے ہیں اور ان کے

...his family, wives, and companions. I ask You for guidance towards truth and correctness. Know—may Allah grant success to me and you towards correctness, and may He take charge of my guidance and your guidance—that the banknote is one of the most recent and newest things. You will not find any mention or trace of it in any of the writings of the scholars, even the Allamah al-Shami and those like him from the scholars who passed away recently. But the Imams—may Allah reward their beautiful efforts and pour out their great blessings upon us—have explained the upright religion in a healing way, without any obscurity. By the praise of Allah, this Shariah has become so bright and shining that its night is like its day. They established principles and explained them in detail, and they mentioned general rules that apply to countless particulars. So even if new events do not seem to end, they hardly fall outside what they provided us with from their knowledge. And if the Loving King wills, the time will not be devoid of someone whom the Lord, Glorified and Exalted is He, enables to extract those hidden matters and to profit from those gifts and merits. Yes, understanding is sometimes distant and sometimes close, and man errs and hits the mark. Knowledge is but that light which Allah casts into the heart of whomever He wills among His servants. So there is no way out but to seek refuge in the success granted by Him, Glorified is He, and His guidance. And Allah is sufficient for us, and He is an excellent Trustee.

...उनकी आल, अज़वाज और असहाब पर। मैं तुझसे हक़ और रास्ती की रहनुमाई चाहता हूँ। जान ले, अल्लाह तआला मुझे और तुझे तौफ़ीक़ दे और मेरी और तेरी हिदायत का वाली हो, कि नोट सबसे ज़्यादा जदीद और नई पैदा होने वाली चीज़ है। तो तुम उलमा की त़ालीफ़ात में इसका कोई नाम-ओ-निशान नहीं पाओगे, यहाँ तक कि अल्लामा शामी और उनके जैसे लोग भी नहीं, जिनका ज़माना हाल ही में गुज़रा है। लेकिन हमारे इमामों ने (अल्लाह उनकी नेक कोशिशों को क़बूल फ़रमाए और उनकी अज़ीम बरकतों का फ़ैज़ हम तक पहुँचाए) इस दीने-हनीफ़ का ऐसा मुकम्मल बयान फ़रमा दिया है जिसमें कोई पोशीदगी नहीं है। पस अल्लाह के फ़ज़्ल से यह शरीअत इतनी रौशन और चमकदार हो गई है कि इसकी रात भी दिन की तरह है। तो उन्होंने क़ायदे मुक़र्रर फ़रमाए और हर बात को अलग-अलग वाज़ेह कर दिया और ऐसे कुल्लिये (सामान्य सिद्धांत) ज़िक्र फ़रमाए जो अनगिनत जुज़इयात (विवरणों) पर लागू होते हैं। लिहाज़ा अगर नई पैदा होने वाली बातें ख़त्म नहीं होतीं, फिर भी वे उस इल्म से बाहर नहीं लगतीं जो इमामों ने हमें अता किया है। और अगर मालिक-ए-वदूद (प्यार करने वाला बादशाह) ने चाहा, तो ज़माना ऐसे लोगों से ख़ाली नहीं होगा जिन्हें अल्लाह तआला इन पोशीदा बातों को निकालने और इन अतायों और फ़ज़ीलतों से फ़ायदा उठाने की ताक़त देगा। हाँ, कुछ समझ दूर की होती है और कुछ नज़दीक की, और इंसान ग़लती भी करता है और सही भी। और इल्म तो उसी नूर का नाम है जिसे अल्लाह तआला अपने जिस बंदे के दिल में चाहता है डाल देता है। तो इसके सिवा कोई चारा नहीं कि अल्लाह अज़्ज़-ओ-जल्ल की तौफ़ीक़ और हिदायत की तरफ़ रुजू किया जाए। और अल्लाह हमारे लिए काफ़ी है और वह बेहतरीन कारसाज़ है।

पेज 397 ऑफ़ 715

ازواجه والا صحاب اسئلک هداية الحق والصواب، اعلم وفقنی الله وایاک والصواب، وتولّی هدای وهداك ان النوط من احدث الاشیاء واجدّهالن تجد له ذکرا ولا اثرا فی شیئ من مؤلفات العلماء حتی العلامة الشامی ومن ضاهاه من العلماء الماضین قریبا، ولکن الائمة شکرالله تعالیٰ مساعیهم الجمیلة وافاض علینا من برکاتهم الجلیلة قد بینوا الملة الحنیفیة بیاناً شافیاًلیس دونه خفاء، وقد أضت بحمد الله تعالی غراء بیضاء لیلها کنهارها فصلوا اصولا و فصلوا تفسیلا، وذکروا کلیات تنطبق علی ما لا یحصی من جزئیات، فالحوادث وان ابت النهایة لا تکاد تخرج عما افادونا من الدرایة ولن یخلو الوجود ان شاء الملك الودود عمن یقدره المولی سبحنہ و تعالٰی علی استخراج تلك الخبایا و الاسترباح من تلك العطایا والمزایا نعم من الافهام بعید و قریب والانسان یخطی ویصیب، وما العلم الانور یقذفه الله في قلب من یشاء من عباده، فلا حیلة الا التجاء الی توفیقه سبحنه و ارشاده و حسبنا الله ونعم الوکیل

آل و ازواج واصحاب پر میں تجھ سے حق وراستی کی رہنمائی چاہتا ہوں جان الله تعالیٰ مجھے اور تجھے توفیق دے اور میری اور تیری ہدایت کا والی ہو کہ نوٹ ایک سب سے زیادہ جدید اور نو پیدا چیز ہے تو تالیفات علماء میں اس کا اصلاً نام ونشان نہ پائیگا یہانتک کہ علامہ شامی اور ان کے مثل جن کا زمانہ ابھی قریب گزرا لیکن ہمارے اماموں نے (الله ان کی نیک کوششیں ٹھکانے لگائے اور ان کی عظیم برکتوں کا ہمیں فیض پہنچائے) اس دین حنیف کا شافی بیان فرمادیا جس میں اصلاً پوشیدگی نہیں تو بحمد الله یہ شریعت ایسی روشن چمکتی ہو گئی کہ اس کی رات بھی دن کی طرح ہے تو انہوں نے قواعد مقرر فرمائے اور ہر بات جدا جدا دکھا دی اور ایسے کلیے ذکر فرمائے کہ بیشمار جزئیوں پر منطبق آئیں تو نئی پیدا ہونے والی باتیں اگر ختم ہونا نہیں مانتیں مگر وہ علم جو ائمہ ہم کو دے گئے ہیں اس سے کوئی باہر رہتی نہیں معلوم ہوتی اور الله نے چاہا تو زمانہ ایسوں

سے خالی نہ ہوگا جسے اللہ تعالیٰ ان پوشیدہ باتوں کے نکالنے اور ان بخششوں اور فضیلتوں سے نفع اٹھانے پر قدرت دے ہاں فہم بعضے بعید ہوتے ہیں اور بعضے قریب، اور آدمی خطا بھی کرتا ہے اور صواب بھی، اور علم تو اسی نور کا نام ہے جو اللہ تعالیٰ اپنے جس بندے کے چاہے قلب میں القا فرماتا ہے تو سوا اس کے کوئی چارہ نہیں کہ اللہ عز و جل کی توفیق و ہدایت کی طرف التجا کی جائے اور اللہ ہم کو کافی ہے اور بہت اچھا کارساز۔

Volume 17 Fatawa Ridawiyya

On Him and then on His Messenger is the reliance, Exalted and Mighty and Generous is He, and may the blessings and peace of Allah Almighty be upon him. I say: Success is through Allah, and through Him is the attainment of the heights of investigation. Your first question is the root of all your questions. When you know the reality of this paper, all the rulings will become clear without any ambiguity. As for its origin, it is known that it is a piece of paper, and paper is a valuable commodity (maal mutaqawwim). This coinage has only increased people's desire for it and its suitability for being stored for times of need. This is the meaning of wealth (maal), i.e., that towards which one's nature is inclined and which can be stored for need, as mentioned in 'al-Bahr' and 'ash-Shami' and others. It is known that the Pure Law (Shari'ah) has never restricted a Muslim from using a piece of paper as they wish, as the prohibition came regarding wine and swine. This is the basis of value, as stated in 'Ibn Abidin'. In it, from 'at-Talwih': wealth is that which by its nature is stored for use at the time of need, and having value necessitates being property (maliyyah). And in it...

1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/3.
2. Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/3.

Page 398 of 715

उन्हीं पर और फिर उनके रसूल पर भरोसा है, वह महान, उच्च और कृपालु हैं, और अल्लाह सर्वशक्तिमान का उन पर दुरूद और सलाम हो। मैं कहता हूँ: अल्लाह की ओर से ही तौफ़ीक़ (सफलता) है और उसी के द्वारा शोध की ऊँचाइयों तक पहुँचना है। आपका पहला सवाल आपके सभी सवालों की जड़ है। जब आप इस कागज़ की हक़ीक़त (सच्चाई) को जान लेंगे, तो सभी हुक्म (नियम) बिना किसी भ्रम के स्पष्ट हो जाएंगे। जहाँ तक इसके मूल का संबंध है, यह ज्ञात है कि यह कागज़ का एक टुकड़ा है और कागज़ कीमती संपत्ति (माल मुतक़व्विम) है। इस मुद्रा ने इसमें लोगों की इच्छा और ज़रूरत के समय इसे संचित करने की उपयोगिता के अलावा कुछ नहीं बढ़ाया है। और यही 'माल' का अर्थ है, यानी वह चीज़ जिसकी ओर स्वभाव आकर्षित होता है और जिसे ज़रूरत के लिए संचित किया जा सकता है, जैसा कि 'अल-बहर' और 'अश-शामी' आदि में वर्णित है। और यह ज्ञात है कि शरीयत-ए-मुतहरा (पवित्र कानून) ने कभी किसी मुसलमान को कागज़ के टुकड़े का अपनी इच्छानुसार उपयोग करने से नहीं रोका है, जैसा कि शराब और सूअर के बारे में निषेध आया है। और संपत्ति के मूल्यवान होने का आधार इसी पर है जैसा कि 'रद-उल-मुहतार' में है। और इसी में 'तलवीह' से उद्धृत किया गया है कि 'माल' वह चीज़ है जिसकी विशेषता यह हो कि ज़रूरत के समय उससे लाभ लेने के लिए उसे संचित रखा जाए, और मूल्यवान होना 'माल' होने के लिए अनिवार्य है। और इसी में...

1. रद-उल-मुहतार, किताब अल-बुयू, दार एह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, ४/३।
2. रद-उल-मुहतार, किताब अल-बुयू, दार एह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, ४/३।

पृष्ठ ३९८/७१५

وعلیه ثم علی رسوله التعویل، جل وعلا وتکرم وصلی الله تعالی علیه وسلم، فأقول: وبالله التوفیق و به الوصول الی ذری التحقیق اول اسئلتك اصل اسئلتك واذا علمت حقیقة هذا القرطاس اتضحت الاحکام کلها من دون التباس، اما اصله فمعلوم انه قطعة کاغذ و الکاغذ مال متقوم و ما زادته هذه السکة الارغبة للناس الیه وزیادة فی صلوح ادخاره للحاجات وهذا معنی المال ای مایمیل الیه الطبع ویمکن ادخاره للحاجة کما فی البحر والشامی وغیرهما، ومعلوم ان الشرع لم یرد بحجر المسلم عن التصرف فی قطعة قرطاس کیفما کانت کما ورد به فی الخمر والخنزیر وهذا هو مناط التقوم کما فی ابن عابدین وفیه عن التلویح المال ما من شانه ان یدخر للانتفاع وقت الحاجة والتقویم یستلزم المالیة، وفیه

بنانے والا اور اسی پر اور پھر اس کے رسول پر بھروسا، وہ بزرگی و بلندی و کرم والا، اور ان پر اس کے درود و سلام، فاقول: (تو میں کہتا ہوں) اور اللہ ہی کی طرف سے توفیق ہے اور اسی سے تحقیق کی بلندیوں تک پہنچنا، آپ کا پہلا سوال آپ کے سب سوالوں کی اصل ہے اور جب اس کاغذ کی حقیقت معلوم ہو جائیگی تو سب احکام واضح ہو جائینگے جن میں کوئی شبہ نہ رہے گا، اس کی اصل تو معلوم ہے کہ وہ کاغذ کا ایک ٹکڑا ہے اور کاغذ مال متقوم ہے اور اس سکہ نے اسے کچھ زیادہ نہ کیا مگر یہی کہ لوگوں کی رغبتیں اس طرف بڑھ گئیں اور وقت حاجت کے لئے اٹھا رکھنے کا زیادہ لائق ہو گیا اور مال کے یہی معنی ہیں یعنی وہ جس کی طرف طبیعت میل کرے اور حاجت کے لئے اٹھا رکھنے کے قابل ہو، جیسا کہ بحر و شامی وغیرہما میں ہے اور معلوم ہے کہ شرع مطہر نے کبھی مسلمان کو اس سے نہ روکا کہ وہ اپنے پارہ کاغذ میں جس طرح چاہے تصرف کرے جیسا کہ شراب و خوک کے بارے میں نہی وارد ہوئی اور مال کے قیمت والے ہونے کا اسی پر مدار ہے جیسا کہ ردالمحتار میں ہے، اور اسی میں تلویح سے نقل فرمایا مال وہ چیز ہے

جس کی شان یہ ہو کہ وقت حاجت اس سے نفع لینے کے لئے اٹھا رکھا جائے اور قیمت والا ہونا مال ہونے کو مستلزم ہے، اور اسی میں

۱ ردالمحتار کتاب البیوع داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۳ ۲ ردالمحتار کتاب البیوع داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۳

Fatawa-e-Razvia - Volume 17

Quoted from Al-Bahr quoting Al-Hawi al-Qudsi: "Property (Mal) is the name of everything other than a human being which has been created for the welfare of human beings, and which can be stored and used voluntarily." (End of quote). Indeed, the Muhaqqiq 'ala al-Itlaq (Imam Ibn al-Humam) stated in Fath al-Qadir: "If one sells a piece of paper for a thousand rupees, it is permissible without any dislike." (End of quote). If one investigates, this is exactly the specific ruling (juz’iyya) regarding currency notes, which this Imam mentioned five hundred years before their emergence. For it is that paper which is sold for a thousand, and there is no wonder in this, as many such miracles (karamat) of our noble scholars have been established. May Allah Almighty benefit us with their blessings in this world and the hereafter, Ameen! So there is no doubt that the currency note is in itself valuable property (mal mutaqawwim) that is bought, sold, gifted, inherited, and everything that applies to property applies to it as well. I say: (And I state) it is among the corrupt thoughts, rather the worst of doubts, to imagine that the currency note is a type of document or deed (sanad or sakk), meaning that the government which circulates these papers borrows dirhams from those who take them and gives them these as a record of their debts and their amounts, so when those people...

1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/3.
2. Fath al-Qadir, Kitab al-Kafala, Maktabah Nuriyah Razawiyah, Sukkur, 6/324.

'अल-बहर' में 'अल-हावी अल-क़ुदसी' के हवाले से है: "संपत्ति (माल) मनुष्य के अलावा हर उस चीज़ का नाम है जो मनुष्य के लाभ के लिए बनाई गई है, और जिसे सुरक्षित रखा जा सके और अपनी इच्छा से उसमें हेर-फेर (उपयोग) किया जा सके।" (उद्धरण समाप्त)। और वास्तव में 'मुहक़्क़िक़ अली अल-इतलाक़' ने 'फ़तह अल-क़दीर' में फ़रमाया: "यदि कोई अपने कागज़ का टुकड़ा एक हज़ार रुपये में बेचे तो बिना किसी नापसंदगी (कराहियत) के जायज़ है।" (उद्धरण समाप्त)। और यदि शोध किया जाए, तो यह हुबहू करेंसी नोट के बारे में एक विशिष्ट मसला (जुज़इय्या) है जिसे इस इमाम ने इसके जन्म से पाँच सौ साल पहले ही बयान कर दिया था। क्योंकि यह वही कागज़ है जो हज़ार में बिकता है, और इसमें कोई आश्चर्य नहीं है, ऐसी कई करामातें हमारे सम्मानित विद्वानों से प्रचुरता में सिद्ध हुई हैं। अल्लाह सर्वशक्तिमान हमें इस दुनिया और आख़िरत में उनकी बरकतों से लाभान्वित करे, आमीन! तो इसमें कोई संदेह नहीं है कि नोट अपने आप में एक मूल्यवान संपत्ति (माल मुतक़व्विम) है जिसे खरीदा और बेचा जाता है, उपहार में दिया जाता है, और विरासत में मिलता है, और संपत्ति के बारे में जो भी बातें लागू होती हैं, वे सब इसमें भी लागू होती हैं। अक़ूल (मैं कहता हूँ): और यह एक भ्रष्ट धारणा है, बल्कि बदतर संदेहों में से एक है, कि नोट एक दस्तावेज़ या दस्तावेज़ की तरह कोई सनद (प्रमाण पत्र) है, यानी वह हुकूमत जो इन कागजों को प्रचलित करती है, उन्हें लेने वालों से रुपये उधार लेती है और उन्हें इन ऋणों और उनकी मात्रा की याददाश्त के रूप में ये कागज़ देती है, तो जब वे लोग...

1. 'रद्द अल-मुह्तार', किताब अल-बुयू, दार इहया अत-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 4/3.
2. 'फ़तह अल-क़दीर', किताब अल-कफ़ाला, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 6/324।

عن البحر عن الحاوی القدسی المال اسم لغیر الادمی خلق لمصالح الادمی وامکن احرازہ والتصرف فیہ علی وجہ الاختیار اھ[1] وقد قال المحقق علی الاطلاق في فتح القدیر لو باع کاغذا بألف یجوز ولا یکرہ[2] اھ وھذہ ان حققت جزئیۃ النوط اتی بھا ھذا الامام قبل حدوثہ بخمسمائۃ سنۃ، فإنہ ھوا لکاغذ الذي یباع بالف ولا غر وفکم من مثل ھذہ الکرامات لعلمائنا الکرام نفعنا اللہ تعالی ببرکاتھم في الدنیا و الآخرۃ آمین، فلا ریب ان النوط بنفسہ مال متقوم یباع ویشتری ویوھب ویورث ویجری فیہ جبیعہ مایجری في الاموال، اقول: ومن الظن بل من اردء الشکوک توھم انہ سند من قبیل الصکوک ای ان السلطنۃ التي تروج ھذہ القراطیس تستدین من اخذیھا الدراھم وتعطیھم ھذہ تذکرۃ لدیونھم و لمقادیر ھافاذا

بحوالہ بحر الرائق حاوی قدسی سے ہے، مال آدمی کے سوا ہر شے کا نام ہے جو آدمی کی مصلحتوں کے لئے پیدا کی گئی اور اس قابل ہو کہ اسے محفوظ رکھیں اور باختیار خود اس میں تصرف کریں، اور بیشک محقق علی الاطلاق نے فتح القدیر میں فرمایا اگر کوئی اپنے کاغذ کا ٹکڑا ہزار روپے کو بیچے تو بلا کراہت جائز ہے انتہی، اور اگر تحقیق کیجئے تو یہ بعینہ نوٹ کا جزئیہ ہے کہ ان امام نے اس کی پیدائش سے پانچسو برس پہلے فرمادیا کہ یہ وہ کاغذ ہے جو ہزار کو بکتا ہے اور کچھ اچنبھا نہیں ایسی کرامتیں ہمارے علماء کرام سے بکثرت ثابت ہوئیں اللہ ہمیں ان کی برکتوں سے دنیا و آخرت میں نفع پہنچائے، آمین ! تو کوئی شک نہیں کہ نوٹ بذات خود قیمت والا مال ہے کہ بکتا ہے اور مول لیا جاتا ہے اور ہبہ کیا جاتا ہے اور وراثت میں آتا ہے اور جتنی باتیں مال میں جاری ہیں سب اس میں جاری ہوتی ہیں، اقول: (میں کہتا ہوں) اور گمان فاسد بلکہ نہایت بدتر شک میں سے ہے یہ وہم کہ نوٹ دستاویز کے قبیل سے کوئی سند ہے یعنی وہ سلطنت

جو ان کاغذوں کو رائج کرتی ہے ان کے لینے والوں سے روپے قرض لیتی ہے اور یہ ان کے قرضوں اور انکی مقداروں کی یادداشت ان کو دیتی ہے تو جب وہ لوگ

[1] ردالمحتار کتاب البیوع داراحیاء التراث العربی بیروت ۳/ ۴ [2] فتح القدیر کتاب الکفالۃ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۳۲۴

Fatawa Razawiyya, Volume 17.

[Arabic Column Transcription/Translation] They brought them (the notes) to the State, and it paid their debts and took back its papers. And if they gave them to others among the subjects, they were borrowing from those others and referring them to the State, giving them that certificate as a mark of referral, so that through it they could obtain the equivalent of their debts from the State, which is the debtor to their creditors. Thus, whenever hands changed, borrowings and transfers were repeated. This is the meaning of it being a document (sanad). Every sensible child knows that these meanings never cross the mind of anyone dealing with them, and they never intend by this circulation to borrow, lend, or transfer. No such thought ever occurs to them at all. You will never see any of them recording in his ledger of debts owed by people the name of the one from whom he took money by giving a note. Nor does he ever say to him in his entire life: "You borrowed such-and-such from me, so pay me and take your certificate from me." Nor is it in the ledger of debts people owe him, from whom he took money and gave the note, and he does not mention it for anyone in his life or at his death.

[Urdu Column Transcription] They bring those notes to the government; the government pays their debts and takes back its papers. And if the note-receivers among the subjects give notes to others, they are borrowing rupees from those others and discharging their own debt onto the government. They give them that same memorandum paper as a sign of this transfer so that through it, those others can collect from the government the loan they gave to the former ones, as the government is the debtor to the former ones' creditors. In this way, as many hand-overs of notes as there are, loans and transfers keep repeating. This is the meaning of it being a document. Every sensible child knows that as many people as deal in notes, the risk of these things never even crosses anyone's heart, and they never intend to give or take a loan or make a transfer through this circulation. Their thoughts never go towards any of these matters. You will never see any of them write in his ledger of debts the name of the one who took rupees from him by giving a note. Nor does he ever say to him in his entire life: "You took a loan from me, pay it back and take your memorandum from me." And regarding what is owed to others on it, he never writes the name of the person from whom he took rupees by giving a note, neither during his life nor at the time of death, this is not...

फ़तावा रज़विया, जिल्द सत्रह (17)।

[अरबी स्तंभ प्रतिलेखन/अनुवाद] वे उन्हें (नोटों को) राज्य के पास लाए, और उसने उनके ऋणों का भुगतान किया और अपने कागजात वापस ले लिए। और यदि उन्होंने उन्हें प्रजा के बीच दूसरों को दिया, तो वे उन दूसरों से उधार ले रहे थे और उन्हें राज्य के पास भेज रहे थे, उन्हें हस्तांतरण के संकेत के रूप में वह प्रमाणपत्र दे रहे थे, ताकि उसके माध्यम से वे राज्य से अपने ऋणों के बराबर प्राप्त कर सकें, जो उनके लेनदारों का ऋणी है। इस प्रकार, जब भी हाथ बदले, उधार और हस्तांतरण दोहराए गए। यह 'सनद' (दस्तावेज) होने का अर्थ है। प्रत्येक समझदार बच्चा जानता है कि ये अर्थ उनके साथ व्यवहार करने वाले किसी भी व्यक्ति के दिमाग में कभी नहीं आते हैं, और वे इस प्रचलन से कभी भी उधार लेने, उधार देने या हस्तांतरण करने का इरादा नहीं रखते हैं। उनके मन में ऐसा कोई विचार कभी आता ही नहीं है। आप उनमें से किसी को भी लोगों द्वारा देय ऋणों के अपने बहीखाते में उस व्यक्ति का नाम दर्ज करते हुए नहीं देखेंगे जिससे उसने नोट देकर पैसे लिए थे। और न ही वह अपने पूरे जीवन में कभी उससे कहता है: "तुमने मुझसे इतना उधार लिया था, इसलिए मुझे भुगतान करो और अपना प्रमाणपत्र मुझसे ले लो।" न ही यह उन ऋणों के बहीखाते में है जो लोग उस पर बकाया हैं, जिनसे उसने पैसे लिए और नोट दिया, और वह अपने जीवन में या अपनी मृत्यु के समय किसी के लिए इसका उल्लेख नहीं करता है।

[उर्दू स्तंभ प्रतिलेखन] वे उन नोटों को सरकार के पास लाते हैं; सरकार उनके ऋण चुकाती है और अपने कागज़ वापस ले लेती है। और यदि प्रजा में से नोट प्राप्त करने वाले दूसरों को नोट देते हैं, तो वे उन दूसरों से रुपये उधार लेते हैं और अपना ऋण सरकार पर उतार देते हैं। वे उन्हें हस्तांतरण के संकेत के रूप में वही याददाश्त (ज्ञापन) का कागज़ दे देते हैं ताकि उनके माध्यम से वे दूसरे लोग सरकार से वह ऋण वसूल कर सकें जो उन्होंने पहले वालों को दिया था, क्योंकि सरकार पहले वालों के लेनदारों की ऋणी है। इस प्रकार, नोटों के जितने भी फेर-बदल होते हैं, ऋण और हस्तांतरण दोहराए जाते रहते हैं। यह 'सनद' होने का अर्थ है। प्रत्येक समझदार बच्चा जानता है कि जितने भी लोग नोट का लेन-देन करते हैं, किसी के दिल में इन बातों का विचार भी नहीं आता, और वे इस फेर-बदल से कभी ऋण देने या लेने या हस्तांतरण का इरादा नहीं करते। उनका ध्यान कभी इन बातों की ओर नहीं जाता। आप कभी भी उनमें से किसी को यह नहीं देखेंगे कि वह अपने ऋणों के खाते में उसका नाम लिखे जिसने नोट देकर उससे रुपये लिए। और न ही वह अपने पूरे जीवन में उससे यह कहता है: "तुमने मुझसे ऋण लिया है, उसे चुका दो और अपनी याददाश्त मुझसे ले लो।" और जो

दूसरों का उस पर देय होता है, उसमें भी वह कभी उस व्यक्ति का नाम नहीं लिखता जिससे उसने नोट देकर रुपये लिए, न ही अपने पूरे जीवन में या मरते समय यह नहीं...

पृष्ठ 715 में से 400

[عربی کالم کا متن] جاؤا بها الی السلطنة قضتهم دیونهم واخذت قراطیسها وان اعطوها غیرهم من الرعایا فهم یستدینون من اولئك الاخرین و یحیلونهم علی السلطنة ویعطونهم تلك التذکرة علما علی الاحالة کي یتوصلوابها الی اخذ مثل دیونهم من السلطنة المدیونة لمدییهم وهکذا کلما تداولت الایدي تکررت الادانات والحوالات هذا معنی کونه سندا وکل طفل عاقل یعلم ان هذه المعانی مما لا یخطر ببال احد من المتعاملین بها و لا یقصدون قط بهذا التداول ادانه و لا استدانة و لا حوالة و لا یذهب خاطر هم الی شیء من ذلك اصلا و لا تری احدهم قط یذکر في دفتر دیونه علی الناس من اخذ الدراهم منه باعطاء النوط و لا یقول له مدة عمره انك استدنت منی کذا فاقضنی و خذ تذکرتك منی ولا فی دفتر دیون الناس علیه من اخذه و الدراهم منه واعطاه النوط ولا یذکر لاحد فیه حیاته ولا عند مماته۔

[اردو کالم کا متن] سلطنت کے پاس وہ نوٹ لے کر آئیں سلطنت ان کے قرض ادا کر دیتی اور اپنے کاغذ واپس لیتی ہے اور اگر نوٹ لینے والے رعیت میں اوروں کو نوٹ دیں تو وہ ان دوسروں سے روپے قرض لیتی ہیں اور اپنا قرضہ سلطنت پر اتار دیتے ہیں اور اس حوالہ کی نشانی کو وہی یادداشت کا کاغذ ان کو دے دیتے ہیں تا کہ ان کے ذریعہ سے ان دوسروں نے جو قرض ان پہلوں کو دیا تھا اسے سلطنت سے وصول کر سکیں جو ان پہلوں کے مقروضوں کی مدیون ہے اور یو نہی جتنے الٹ پھیر نوٹوں کے ہوں قرض اور حوالے مکرر ہوتے چلے جاتے ہیں اس کے سند ہونے کے یہ معنی ہیں اور ہر سمجھ وال بچہ بھی جانتا ہے کہ جتنے لوگ نوٹ کا معاملہ کرتے ہیں کسی کے دل میں ان باتوں کا خطرہ بھی نہیں گزرتا اور کبھی اس الٹ پھیر سے قرض دینے یا لینے یا حوالہ کا قصد نہیں کرتے اور کبھی ان باتوں میں سے کسی طرف ان کا خیال نہیں جاتا اور تو ان میں کبھی کسی کو نہ دیکھے گا کہ اپنے قرض کے بھی کھاتے میں اس کا نام لکھے جس نے

نوٹ دے کر اس سے روپے لئے اور اپنی زندگی بھر اس سے یہ نہیں کہتا کہ تو نے مجھ سے قرض لیا ہے، ادا کر دے اور اپنی یادداشت مجھ سے لے لے اور جو اوروں کا اس پر دینا آتا ہے اس میں بھی اس کا نام کبھی نہیں لکھتا جسے نوٹ دے کر اس نے روپے لئے اور اپنی زندگی بھر یا مرتے وقت یہ نہیں۔

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Arabic Text Column] "That so-and-so is owed such-and-such by me, so pay him and take my reminder from him. And the blatant oppressors who are accustomed to consuming usury openly do not lend a single dirham to anyone except with interest imposed upon it every month until it is paid. Yet you see them taking notes and giving dirhams and not demanding a single fils in return for them, neither for a month nor for years. If they knew it was a debt, they would certainly not have left it. So the truth is that all of them only intend exchange, buying, and selling. Whoever takes a note knows for certain that he owns it in exchange for dirhams, and whoever gives it knows for certain that he has removed it from his ownership in exchange for dirhams. Its owner counts it as part of his wealth and treasure, like gold, silver, and coins. He saves it, gifts it, wills it, and gives it in charity. They understand nothing but sale and intend nothing but sale. People are judged by their intentions, and 'Indeed, actions are by intentions, and for every person is what he intended.' Thus, from what is certain and not prohibited, which does not even hover around the area of doubt, is that according to people, it is wealth."

[Urdu Text Column] ...says that so-and-so is owed this much by me, pay it to him and take my note from him. And those fearless oppressors who are habitual of eating interest openly will not lend a single rupee to anyone until they fix a monthly interest on it until the debt is paid. And you will see them giving rupees after taking a note and not asking for even a single paisa on it, neither after a month nor after years. And if they knew that this is giving a loan, they would never have left it. So the truth is that all of them intend exchange and buying and selling from it. The one who takes the note surely knows that he has become its owner by giving rupees, and the one who gives the note surely knows that I have excluded the note from my ownership by taking rupees. And the one who takes the note considers it his property and his savings like rupees, gold coins, and copper coins, and he keeps it accumulated, and he gifts it, and he makes a will in it, and he gives it in charity. So they only understand it as a sale and they only intend a sale. And people's dealings will be understood as what their intention is. And actions depend on intentions, and for every person is what he intended. So it is proven with such certainty, around which doubt has no passage at all, that notes, in the eyes of the people, are wealth.

1. Sahih al-Bukhari, Chapter 'How the Revelation Began', etc., Qadimi Kutub Khana Karachi 1/2. Page 401 of 715

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

[अरबी पाठ स्तंभ] "कि फलां व्यक्ति का मुझ पर इतना बकाया है, उसे चुका दो और उससे मेरा स्मृति पत्र ले लो। और वे बेखौफ जालिम जो खुलेआम सूद (ब्याज) खाने के आदी हैं, वे किसी को एक दिरहम भी तब तक उधार नहीं देंगे जब तक कि उसके भुगतान होने तक उस पर मासिक ब्याज तय न कर लें। फिर भी आप उन्हें नोट लेते और दिरहम देते हुए देखते हैं और उन पर एक पैसा भी नहीं मांगते, न एक महीने बाद और न ही बरसों बाद। अगर उन्हें पता होता कि यह ऋण देना है, तो वे इसे कतई नहीं छोड़ते। इसलिए सच यह है कि वे सभी केवल विनिमय और खरीद-फरोख्त का इरादा रखते हैं। जो कोई नोट लेता है वह निश्चित रूप से जानता है कि वह दिरहम के बदले उसका मालिक बन गया है, और जो उसे देता है वह निश्चित रूप से जानता है कि उसने दिरहम के बदले उसे अपने स्वामित्व से बाहर कर दिया है। इसका मालिक इसे अपने धन और खजाने के रूप में गिनता है, जैसे कि सोना, चाँदी और सिक्के। वह इसे संचित करता है, उपहार में देता है, वसीयत करता है और दान देता है। वे बिक्री के अलावा कुछ नहीं समझते और बिक्री के अलावा कुछ इरादा नहीं रखते। लोग अपने उद्देश्यों के अनुसार होते हैं और 'निश्चित रूप से कार्य नीयत पर आधारित होते हैं, और प्रत्येक व्यक्ति के लिए वही है जिसका उसने इरादा किया।' इस प्रकार, जो निश्चित है और वर्जित नहीं है, और जो संदेह के घेरे में भी नहीं आता, वह यह है कि लोगों के अनुसार यह धन है।"

[उर्दू पाठ स्तंभ] ...कहता है कि फलां का मुझ पर इतना आता है, उसे अदा कर देना और मेरी याददाश्त उससे ले लेना। और वे बेखौफ ज़ालिम जो खुलेआम सूद खाने के आदी हो गए हैं, किसी को एक रुपया भी तब तक कर्ज नहीं देंगे जब तक कि कर्ज की अदायगी तक उस पर मासिक सूद मुक़र्रर न कर लें। और आप उन्हें देखेंगे कि नोट लेकर रुपये देते हैं और उस पर एक पैसा भी नहीं मांगते, न महीने बाद न बरसों बाद। और अगर वे जानते कि यह कर्ज देना है, तो हरगिज़ न छोड़ते। तो सच यह है कि वे सब के सब इससे तबादला और खरीद-फरोख्त ही का इरादा करते हैं। जो नोट लेता है वह यकीनन जानता है कि मैं रुपये देकर इसका मालिक हो गया, और जो नोट देता है वह यकीनन जानता है कि मैंने रुपये लेकर नोट अपनी मिल्कियत (स्वामित्व) से खारिज कर दिया। और नोट लेने वाला उसे रुपयों, अशर्फ़ियों, पैसों की तरह अपना माल और अपनी जमा समझता है और उसे जोड़कर रखता है और हिबा (उपहार) करता है और उसमें वसीयत करता है और तस्दीक (दान) करता है, तो वे इसे बैय (बिक्री) ही समझते हैं और बैय ही का इरादा करते हैं। और लोगों के मामलात वही समझे जाएंगे जो उनके मक़सूद हैं। और आमाल का مدار नीयत ही पर है और हर शख्स के

लिए वही है जो उसने नीयत की। तो ऐसे यकीन से साबित है जिसके गिर्द शुबा (संदेह) को बिल्कुल रास्ता नहीं कि नोट लोगों के नज़दीक माल (धन) है।

1. सहीह अल-बुखारी, अध्याय 'वही (खुलासा) कैसे शुरू हुआ' आदि, क़दीमी कुतुब खाना कराची 1/2। पृष्ठ 715 का 401

[عربی متن کالم] ان لفلان علی کذا فاقضوہ وخذوا تذکرتی منہ والظلمۃ المہتکۃ المعتادۃ باکل الربا جہارا لا یدینون احدا درھما الابر با یوضع علیہ کل شھر مالم یقض و تراھم یاخذون النوط ویعطون الدراھم ولا یطلبون علیھا فلسا واحدا لا علی شھر ولا علی سنین ولو علموا انہ ادانۃ لما ترکوہ قطعا ، فالحق انھم جمیعا انما یقصدون المبادلۃ والبیع والشراء و من اخذ النوط یعلم قطعا انہ ملکہ بالدراھم ومن اعطاہ یعلم قطعا انہ اخرجہ من ملکہ بالدراھم وصاحبہ یعدہ من مالہ وکنزہ کالنقدین والفلوس ویدخرہ و یھبہ و یوصی بہ ویتصدق فلا یفھمون الا البیع ولا یقصدون الا البیع والناس عند مقاصدھم وانما الاعمال بالنیات وانما لکل امرئ مانوی، فمن المتیقن الذی لا یحرم یحوم حومۃ شبھۃ انہ عند الناس مال۔

[اردو متن کالم] کہتا کہ فلاں کا مجھ پر اتنا آتا ہے اسے ادا کردینا اور میری یادداشت اس سے لے لینا اور وہ ظالم بیباک جو سود علانیہ کھانے کے عادی ہوئے ہیں ایک روپیہ کسی کو قرض نہ دیں گے جب تک تادائے دین اس پر ماہوار سود نہ مقرر کرلیں اور تو انہیں دیکھئے گا کہ نوٹ لے کر روپے دیتے ہیں اور اس پر ایک پیسہ بھی نہیں مانگتے نہ مہینے پیچھے نہ برسوں بعد ، اور اگر وہ جانتے کہ یہ قرض دینا ہے تو ہرگز نہ چھوڑتے ، تو حق یہ ہے کہ وہ سب کے سب اس سے مبادلہ اور خرید و فروخت ہی کا قصد کرتے ہیں جو نوٹ لیتا ہے اور وہ یقینا جانتا ہے کہ میں روپے دے کر اس کا مالک ہو گیا اور جو نوٹ دیتا ہے وہ یقینا جانتا ہے کہ میں نے روپے لے کر نوٹ اپنی ملک سے خارج کر دیا اور نوٹ لینے والا اسے روپوں اشرفیوں پیسوں کی طرح اپنا مال اور اپنی جمع سمجھتا ہے اور اسے جوڑ کر رکھتا ہے اور ہبہ کرتا ہے اور اس میں وصیت کرتا ہے اور تصدق کرتا ہے تو وہ بیع ہی سمجھتے ہیں اور بیع ہی کا قصد کرتے ہیں اور لوگوں کے معاملات وہی سمجھے جائیں گے جو ان کے مقصود ہیں اور اعمال کا مدار نیت ہی پر ہے اور ہر

شخص کے لئے وہی ہے جو اس نے نیت کی تو ایسے یقین سے ثابت ہے جس کے گرد شبہ کو اصلاً بار نہیں کہ نوٹ لوگوں کے نزدیک مال ہے۔

۱ صحیح البخاری باب کیف بدء الوحی الخ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۔ Page 401 of 715

It is valuable property that is stored, accumulated, desired, bought, and sold, and all that applies to property applies to it. Don't you see its high prices? One piece is for ten, another for a hundred, and another for a thousand. I say: We have previously mentioned from "Al-Fath" that a piece of paper is suitable to be sold for a thousand, and that is only by mutual consent between the contracting parties. So how about when nations of people agree on it and make these pieces have these prices by their convention, especially since royal minting also has value according to Sharia? Do you not see that whoever steals ten minted Dirhams has his hand cut off, but whoever steals unminted silver equal to the weight of ten Dirhams, but its value does not reach the value of ten minted Dirhams, his hand is not cut off, as stated in "Al-Hidayah" and other general books of the school of law. And the minted copper coins (fulus) valued at one Rupee, if you take their weight in copper, it is certainly not equal to one Rupee; in fact, it might not even be equal to half a Rupee. You see the same in silver; a short time ago, two Rupees weight of silver in our country was worth one Rupee.

[1] Al-Hidayah, Kitab al-Sirqah, Al-Maktabah al-Arabiyyah, Karachi, 2/518 Page 402 of 715

यह कीमती माल है जिसे सुरक्षित रखा जाता है, जमा किया जाता है, इसकी ओर आकर्षण होता है, इसे बेचा और खरीदा जाता है, और जो कुछ माल पर लागू होता है वह इस पर भी लागू होता है। क्या आप इसकी ऊँची कीमतें नहीं देखते? एक टुकड़ा दस का, दूसरा सौ का और तीसरा हज़ार का। मैं कहता हूँ: हमने "अल-फ़तह" से पहले ही बताया है कि काग़ज़ का एक टुकड़ा हज़ार में बेचा जा सकता है, और यह केवल अनुबंध करने वाले पक्षों की आपसी सहमति से होता है। तो फिर क्या कहना जब लोगों के समूह इस पर सहमत हों और अपनी परंपरा के अनुसार इन टुकड़ों की ये कीमतें निर्धारित कर लें, इसके अलावा शाही सिक्का ढलाई का शरीयत के अनुसार भी मूल्य है। क्या आप नहीं देखते कि जो व्यक्ति दस ढले हुए दिरहम चुराता है उसका हाथ काट दिया जाता है, लेकिन जो व्यक्ति दस दिरहम के वजन के बराबर बिना ढली चांदी चुराता है, और उसकी कीमत दस ढले हुए दिरहम तक नहीं पहुँचती, तो उसका हाथ नहीं काटा जाएगा, जैसा कि "अल-हिदाया" और मज़हब की अन्य आम किताबों में स्पष्ट किया गया है। और एक रुपये के मूल्य के ढले हुए तांबे के सिक्के यदि आप उनके वजन का तांबा लें तो वह निश्चित रूप से एक रुपये के बराबर नहीं होगा; वास्तव में, वह कभी-कभी आधी चवन्नी (आठ आने) के बराबर भी नहीं होगा। आप चांदी में भी ऐसी ही स्थिति देखेंगे; अभी थोड़ा समय पहले हमारे देश में दो रुपये वजन की चांदी एक रुपये के बराबर थी।

[1] अल-हिदाया, किताब अल-सिरका, अल-मकतबा अल-अरबिया, कराची, 2/518 पृष्ठ 402/715

[1] الهداية كتاب السرقة المكتبة العربية كراچی ۵۱۸/۲ صفحہ 402 از 715

[Header: Fatawa Razawiyya (Volume 17)]

(Arabic Column): ...two units of weight for one unit in our lands, and the ignorant used to buy them without knowing the calamity of usury (Riba) involved. When multiplication occurs through repeated transactions, doubling or manifold increases are the same. It is evident to anyone who has visited the path of the noble Sharia or the source of sound reason, even as a passerby, that a very trivial thing can sometimes acquire a quality that makes it more valuable than thousands of its likes. Often, a slave girl is bought for two hundred thousand dirhams or more, while another is not desired even for thirty dirhams, even though qualities do not have a share in the price, even body parts as long as they are not intentionally destroyed. Thus, the price is for the essence itself, which qualities have increased due to the increase in demand. Tell me, if there was a piece of paper containing exquisite, wonderful, rare, and unique knowledge, and a man seeking it and knowing its value bought it for ten thousand, is there any disagreement about it? Not at all; rather, it is lawful and good (halal tayyib) according to the text of the Great Quran and established consensus without any denial or dispute. The Lord Almighty says: "except that it be trade by mutual consent among you" [Quran 4:29]. So these ten thousand are not the price of the written knowledge, for it does not fall under the category of wealth at all, as specified in Al-Hidayah and all other reasoned books in which...

(Urdu Column): ...was being sold and ignorant people were buying, and they did not know what kind of calamity of usury was in it. So when the price became double or more than the coin, then two-fold, thousand-fold, all are the same. And every person who has passed by the watering place of the pure Sharia or sound reason, even if just passing through, it is clear to him that a quality can be attached to a very insignificant thing that makes it more precious than thousands like it. Many times a slave girl was bought for two lakh (200,000) rupees and more, and no one asks for another even for thirty rupees, although no part of the price is for attributes (qualities), until even hands and feet, as long as they are not intentionally destroyed, the price is for the essence itself, which the attributes increased because of the increase in desires. Well, tell me that there is a sheet of paper in which there is a precious, strange, and rare knowledge, and a person is a seeker of this knowledge and knows its demand, and he buys that sheet for ten thousand, so is there anything against this in it? Not at all, but it is lawful and good. On this, the text of the Great Quran and consensus is established without denial and dispute. The Lord Almighty says: "But only [lawful] business by mutual consent among you" [Quran 4:29]. This

ten thousand is not the price of this written knowledge because it is not even from the category of wealth, as is specified in Al-Hidayah and all other books in which...

[Footer: 1. Al-Quran Al-Karim 29/4 | Page 403 of 715]

[शीर्षक: फ़तावा रज़विया (खंड 17)]

(अरबी कॉलम): ...हमारे शहरों में एक रुपये के वज़न के बदले दो रुपये बिकते थे, और अज्ञानी लोग उन्हें यह जाने बिना खरीदते थे कि इसमें सूद (ब्याज) की कैसी विपत्ति है। जब बार-बार के लेन-देन से गुणन होता है, तो दोगुना या कई गुना होना एक समान है। और यह हर उस व्यक्ति पर स्पष्ट है जो शरीयत-ए-मुतह्हरा के मार्ग या स्वस्थ बुद्धि के स्रोत से गुज़रा है, चाहे वह केवल राहगीर ही क्यों न हो, कि एक अत्यंत तुच्छ वस्तु में कभी-कभी ऐसा गुण आ जाता है जो उसे अपने जैसों हज़ारों से अधिक मूल्यवान बना देता है। अक्सर, एक दासी दो लाख दिरहम या उससे अधिक में खरीदी जाती है, जबकि दूसरी को कोई तीस दिरहम में भी नहीं चाहता, हालाँकि गुणों का मूल्य में कोई हिस्सा नहीं होता, यहाँ तक कि अंगों का भी जब तक कि उन्हें जानबूझकर नष्ट न किया जाए। इस प्रकार, मूल्य केवल अस्तित्व (ज़ात) का है जिसे माँग में वृद्धि के कारण गुणों ने बढ़ा दिया। मुझे बताओ, यदि कागज़ का एक टुकड़ा हो जिसमें उत्कृष्ट, अद्भुत, दुर्लभ और अद्वितीय ज्ञान हो, और एक व्यक्ति जो उस ज्ञान का खोजी हो और उसकी कीमत जानता हो, उसे दस हज़ार में खरीद ले, तो क्या इसमें कोई आपत्ति है? बिल्कुल नहीं; बल्कि यह कुरान-ए-अज़ीम के स्पष्ट आदेश और बिना किसी खंडन या विवाद के स्थापित सर्वसम्मति (इज्मा) के अनुसार वैध और उत्तम (हलाल तैयब) है। रब्ब-ए-अज़्ज़-ओ-जल्ल फरमाता है: "मगर यह कि तुम्हारी आपसी रज़ामंदी से कोई व्यापार हो" [कुरान 4:29]। तो ये दस हज़ार उस लिखे हुए ज्ञान की कीमत नहीं हैं, क्योंकि वह धन की श्रेणी में ही नहीं आता, जैसा कि अल-हिदाया और अन्य सभी तर्कपूर्ण पुस्तकों में स्पष्ट किया गया है जिनमें...

(उर्दू कॉलम): ...बिकती थी और जाहिल लोग खरीदते थे और नहीं जानते थे कि इसमें सूद का कैसा वबाल है। तो सिक्के से जब दुगनी या उससे ज़्यादा कीमत हो गई तो दो चंद, हज़ार चंद सब एक समान हैं। और हर व्यक्ति जो शरीयत-ए-मुतह्हरा या अक्ल-ए-सलीम के घाट से गुज़रा है, चाहे वह राही ही क्यों न हो, उस पर यह साफ़ है कि एक अत्यंत तुच्छ चीज़ में एक ऐसा गुण जुड़ जाता है जो उसे अपने जैसों हज़ारों से कीमती बना देता है। कई बार एक कनीज़ (दासी) दो लाख रुपये और उससे ज़्यादा में खरीदी गई और दूसरी को कोई तीस रुपये में नहीं पूछता, हालाँकि गुणों के लिए कीमत में से कोई हिस्सा नहीं है, यहाँ तक कि हाथ-पाँव जब तक कि जानबूझकर हलाक (नष्ट) न किए जाएँ वह कीमत ज़ात (अस्तित्व) ही की है जिसे इच्छाओं के बढ़ने के कारण गुणों ने बढ़ा दिया। भला बताओ कि एक वर्क़(पन्ना) कागज़ हो जिसमें एक इल्म (ज्ञान) नफ़ीस, अज़ीब-ओ-ग़रीब और नादिर हो और एक शख्स उस इल्म का तलबगार (खोजी) हो और उसकी तलब (मूल्य) जानता हो,

वह उस वर्क़ को दस हज़ार में खरीद ले तो क्या कोई इसमें खिलाफ है? हरगिज़ नहीं बल्कि हलाल तैयब है। इस पर क़ुरान-ए-अज़ीम का नस (स्पष्ट आदेश) और बिना इंकार और मुनाज़अत के इज्मा कायम है। रब्ब-ए-अज़्ज़-ओ-जल्ल फरमाता है "मगर यह कि कोई सौदा तुम्हारी आपस की खुशी का हो" [क़ुरान 4:29]। और यह दस हज़ार इस लिखे हुए इल्म की कीमत नहीं कि वह तो माल के क़बील (श्रेणी) से ही नहीं जैसा कि हिदाया और बाक़ी तमाम किताबों में तसरीह (स्पष्टता) है जिनमें...

[पादलेख: 1. अल-क़ुरान अल-करीम 29/4 | पृष्ठ 715 में से 403]

[ہیڈر: فتاویٰ رضویہ (جلد ۱۷)]

(عربی کالم): ربيتين وزناً بربية واحدة في بلادنا وكانت الجهلة يشترون ولا يعلمون ما فيه من وبال الربا فإذا حصل بالضرب التضعيف فالضعف والاضعاف سواء ومن الجلي عند كل من ورد ولو عابر سبيل مشرع الشرع الجليل او منهل العقل السليم ان الشيئ التافه جداً ربما يعرض له ما يجعله اعلى من الوف امثاله وربما اشتريت جارية بمائتي الف واكثر ولا يرغب في اخرى بثلثين درهما مع ان الاوصاف لا قسط لها من الثمن حتى الاطراف مالم تصر مقصودة بالاتلاف فما هي الاثمن الذات زادته الاوصاف لزيادة الرغبات، أرأيتك ان كانت ورقة كاغذ فيها علم نفيس عجيب نادر غريب وكان رجل يطلبه ويعرف قدره فاشتراها بعشرة الاف هل فيه من خلاف كلا ، بل حلال طيب بنص القرآن والاجماع من دون نكير ولا نزاع، قال تعالى "إِلَّا أَنْ تَكُونَ تِجَارَةً عَنْ تَرَاضٍ مِنْكُمْ"[1] فهذه العشرة الالاف ما هي ثمن المكتوب فإنه لا مالية له اصلاً كما نص عليه في الهداية وسائر الكتب المعللة وهذا

(اردو کالم): بکتی تھی اور جاہل لوگ خریدتے تھے اور نہیں جانتے تھے کہ اس میں سود کا کیسا وبال ہے تو سکہ سے جب دو نادون قیمت ہوگئی تو دو چند ہزار چند سب یکساں ، اور ہر شخص کہ شرع مطہر یا عقل سلیم کے گھاٹ گزرا ہے اگرچہ راہ چلتا ہوا، اس پر روشن ہے کہ ایک شئی نہایت حقیر میں ایک وصف لگ جاتا ہے کہ اسے اس جیسی ہزاروں سے بیش بہا کر دیتا ہے اور بارہا ایک کنیز دولاکھ روپے اور اس سے زائد کو خریدی گئی اور دوسری کو کوئی تیس روپے کو نہیں پوچھتا حالانکہ اوصاف کے لئے ثمن میں سے کوئی حصہ نہیں یہاں تک کہ ہاتھ پاؤں جب تک کہ بالقصد نہ ہلاک کئے جائیں وہ ثمن ذات ہی کا ہے جسے رغبتیں بڑھنے کے سبب اوصاف نے بڑھا دیا بھلا بتاؤ کہ ایک ورق کاغذ ہو جس میں ایک علم نفیس عجیب و غریب نادر ہو اور ایک شخص اس علم کا طلب گار ہو اور اس کی طلب جانتا ہو وہ اس ورق کو دس ہزار میں خرید لے تو

کیا کوئی اس میں خلاف ہے ہرگز نہیں بلکہ حلال طیب ہے اس پر قرآن عظیم کا نص اور بلا انکار و منازعت اجماع قائم ہے، رب عزوجل فرماتا ہے مگر یہ کہ کوئی سودا تمہارے آپس کی خوشی کا ہو اور یہ دس ہزار اس لکھے ہوئے علم کی قیمت نہیں کہ وہ تو مال کے قبیل ہی سے نہیں جیسا کہ ہدایہ اور باقی تمام کتب میں تصریح ہے جن میں

[فوٹر: ۱۔ القرآن الکریم ۲۹/۴ | صفحہ ۷۱۵ میں سے ۴۰۳]

Fatawa Ridawiyya Volume 17

Problems are mentioned along with their evidence. This text is from Al-Hidayah: The hand shall not be amputated for stealing the Holy Quran, even if it is adorned with gold ornaments, because in view of what is written, it is not considered property (maal). Its preservation is for the sake of the writing itself, and not for the binding, the pages, or the gold engravings; these things are merely subordinate. And for the theft of any kind of register/ledger, the hand shall not be amputated, because the purpose of them is what is written within, and that is not property. Except for account books, for what is written in them is of no use to others, so if someone intends to take them, then the paper itself must be the intended object. [End of Summary]. Thus, it has become clear that if the price of a single sheet of paper reaches ten thousand due to its writing, then what is the surprise if the price of a [currency] note reaches ten or more due to its writing, because of which people's desires are drawn towards it? And what prohibition is there in Shari'ah against it? In short, the matter is clearer than needing to be illuminated. How long will you keep asking for a lamp when the morning has already dawned? Then I say: (Again I say) the fact is that property is of four types, as mentioned in 'Bahr al-Raiq' etc. The first is that which is 'thaman' (price/medium of exchange) in all circumstances, and that is gold and silver.

1. Al-Hidayah, Book of Theft, Chapter on what causes amputation and what does not, Al-Maktabat al-Arabia, Beirut 2/520-21. Page 404 of 715

तथ्यों के साथ मसले (कानूनी मुद्दे) वर्णित हैं और यह हिदाया की इबारत (पाठ) है: कुरान शरीफ की चोरी में हाथ नहीं काटा जाएगा, भले ही उस पर सोने की सजावट हो, क्योंकि लिखे हुए के आधार पर वह 'माल' की श्रेणी में नहीं आता। उसका सुरक्षित रखना उस लिखे हुए के उद्देश्य से है, न कि जिल्द, पन्नों और सोने की सजावट के लिए; ये चीजें तो गौण हैं। और किसी भी प्रकार के दफ्तर (रजिस्टर) की चोरी में हाथ नहीं काटा जाएगा क्योंकि उनसे उद्देश्य वह है जो उनमें लिखा है और वह माल नहीं है। सिवाय हिसाब की बहियों के, क्योंकि उनमें जो लिखा है वह दूसरों के काम का नहीं होता, इसलिए उन्हें लेने का उद्देश्य निश्चित रूप से कागज़ ही होता है। [सारांश समाप्त]। तो यह स्पष्ट हो गया कि जब एक कागज़ के पन्ने की कीमत उसमें लिखे होने के कारण दस हज़ार तक पहुँच गई, तो इसमें क्या आश्चर्य है कि एक नोट की कीमत उसकी लिखावट के कारण दस या उससे अधिक तक पहुँच जाए, जिसके कारण लोगों की रुचि उसकी ओर खिंच गई? और शरीयत में इस पर क्या पाबंदी है? संक्षेप में, मामला इससे अधिक स्पष्ट है कि उसे स्पष्ट करने की आवश्यकता हो। आप कब तक चिराग मांगते रहेंगे जबकि सुबह हो चुकी है। फिर मैं कहता हूँ: (पुनः मैं कहता हूँ) असल बात यह है कि माल चार प्रकार के होते हैं जैसा कि 'बहर-उर-राइक' आदि में है। पहला वह जो हर स्थिति में 'थमन' (कीमत/मुद्रा) है और वह है सोना और चाँदी।

1. अल-हिदाया, किताबुस सरकाह, बाब मा युक्ताऊ फीही व मा ला युक्ताऊ, अल-मकतबतुल अरबिया, बेरूत 2/520-21। पृष्ठ 404 का 715

نصها ولا قطع فی سرقة المصحف وان کان علیه حلیة لانه لاما لیة له علی اعتبار المکتوب واحرازه لا جله لا للجلد والاوراق والحلیة وانما هی توابع، ولا فی الدفاتر کلها لان المقصود مافیها وذلك لیس بمال لادفاترا الحساب لان مافیها لایقصد بالاخذ فکان المقصود الکواغذاه۱ ملتقطاً فتبین ان الورقة الواحدة هی التی بلغ ثمنها لما فیها عشرة الاف فای غرو فی بلوغ قیمة نوط عشرة اواکثر لاجل ماکتب فیه مما استجلب رغبات الناس الیه وای حجر من الشرع علیه وبالجملة فالمسألة اوضح من ان تحتاج الی ایضاح والی کم تبتغی المصباح وقد اسفر الاصباح۔ ثم اقول: بل حقیقة الامر ان الاموال کما في البحر وغیره اربعة اقسام، الاول ثمن بکل حال وهو النقدان

مسائل مع دلائل مذکور ہیں اور یہ ہدایہ کی عبارت ہے قرآن مجید چرانے میں ہاتھ نہ کاٹا جائے گا اگرچہ اس پر سونا چڑھا ہو اس لئے کہ لکھے ہوئے کے اعتبار سے تو وہ از قبیل مال ہی نہیں اور اس کا محفوظ رکھنا اس مکتوب ہی کی غرض سے ہے نہ کہ جلد اور ورقوں اور نقوش زر کے لئے یہ چیزیں تو تابع ہیں اور کسی قسم کے دفتر کی چوری میں ہاتھ نہ کاٹا جائے گا کہ ان سے مقصود وہ ہے کہ جو ان میں لکھا ہے اور وہ مال نہیں مگر حساب کی بہیاں کہ ان میں جو لکھا ہے وہ دوسرے کے کام کا نہیں ہوتا جو اس کالینا مقصود ہو تو ضرور کاغذ ہی مقصود ہوئے انتی ملخصاً، تو کھل گیا کہ ایک ورق کاغذ ہی کی قیمت اسکی تحریر کے باعث دس ہزار کو پہنچ گئی تو اس میں کیا تعجب ہے کہ اس لکھائی کے سبب نوٹ کی قیمت دس یا زائد کو پہنچ جائے جس کے باعث لوگوں کی رغبتیں اسکی طرف کھینچ گئیں اور شرع سے اس پر کون سی روک ہے، خلاصہ یہ کہ مسئلہ اس سے زیادہ روشن ہے کہ روشن کرنے کا حاجتمند یہ ہو اور کہاں تک تو چراغ مانگے جائے گا حالانکہ صبح روشن ہوگئی، ثم اقول: (پھر میں کہتا ہوں) اصل بات یہ ہے کہ مال

چار قسم ہے جیسا کہ بحر الرائق وغیرہ میں ہے، اول وہ کہ ہر حال میں ثمن ہی ہے اور وہ سونا چاندی

۱ الہداية كتاب السرقة باب مايطقع فيہ وما لايقطع المكتبة العربية بيروت ۲/ ۵۲۰ - ۲۱ Page 404 of 715

Fatawa Razawiyya Volume 17 (17)

[Arabic Text]: For they are always prices, whether the particle 'ba' accompanies them first or they are exchanged for their own kind first, and whether custom considers them among the prices first, like manufactured items made from them. For indeed, due to the craftsmanship attached to it, it does not remain a pure price. Therefore, it becomes specified in the contract, and despite that, its sale is a 'sarf' (currency exchange) in which what is required in sarf is stipulated, because they were created for being price, and there is no change in the creation of Allah.

[Urdu Text]: It is that they will always remain a price (thaman), whether some item was sold in exchange for them or they were sold in exchange for some item, whether they are exchanged for their own kind or for a different kind, and whether the people of custom call them thaman or not. For example, silver and gold vessels: due to the craftsmanship involved, they do not remain pure thaman; hence they become specified in a sale contract. Despite this, their sale will legally be 'sarf' (i.e., selling currency for currency) and all conditions of sarf will be prerequisite for it because gold and silver were created only to be thaman, and the thing created by Allah does not change.

[Arabic Text]: And the second is a commodity in every state, such as clothes and animals. For even if they are accompanied by the 'ba' first and are exchanged for whatever you wish, they do not establish a debt on the responsibility. This is the meaning of being a price, so the objection does not arise that in a barter transaction, each of the commodities is a price in one respect. This is how Ibn Abidin justified the answer to the objection of Allama Al-Tahṭāwī.

[Urdu Text]: The second category is that which is a commodity (mabee') in every state, such as clothes or livestock. If it is said to sell something in exchange for them, and they are swapped with something, they will never become a debt on responsibility as an obligation. This is the very meaning of being thaman, so the objection will not apply that in a barter sale (muqayadah, where a commodity is sold for a commodity), both commodities are thaman from one perspective. In response to Allama Al-Tahṭāwī's objection, Allama Shami offered this justification.

[Arabic Text]: I say: In it is that manufactured items from the two stones (gold and silver) also do not establish a debt on responsibility but are specified in contracts, as previously mentioned from Al-Bahr. So if this is accepted, a rebuttal arises against it. So let one reflect, and the clearer answer to me is...

[Urdu Text]: I say: (I say) In this lies the objection that manufactured items of silver and gold, for example, vessels or jewelry, also do not become a debt on responsibility but rather are specified in the contract, as was mentioned from Al-Bahr al-Raiq. So if this discourse remains sound, then a rebuttal will arise against it. So reflect, and to me the clear answer is...

फ़तावा रज़विया खंड 17 (17)

[अरबी पाठ]: क्योंकि वे हमेशा मूल्य (समन) हैं, चाहे वे पहले 'बा' उपसर्ग के साथ आए हों या उनके ही समान धातु से विनिमय किया गया हो, और चाहे प्रथा उन्हें मूल्य मानती हो या नहीं, जैसे उनसे बनी निर्मित वस्तुएँ। क्योंकि कारीगरी के कारण वे शुद्ध मुद्रा नहीं रह जाते। इसलिए, अनुबंध में उन्हें निर्दिष्ट किया जाता है, फिर भी उनकी बिक्री 'सर्फ़ (मुद्रा विनिमय) मानी जाती है जिसमें सर्फ़ की शर्तें अनिवार्य होती हैं, क्योंकि वे मूल्य बनने के लिए ही बनाए गए थे, और अल्लाह की रचना में कोई बदलाव नहीं होता।

[उर्दू पाठ]: यानी वे हमेशा मूल्य (समन) ही रहेंगे, चाहे उनके बदले कोई चीज़ बेची जाए या उन्हें किसी चीज़ के बदले बेचा जाए, चाहे वे अपनी ही धातु से बदले जाएँ या किसी अन्य धातु से, और चाहे लोग उन्हें मूल्य कहें या न कहें। जैसे सोने-चांदी के बर्तन, जो अपनी कारीगरी के कारण शुद्ध मूल्य नहीं रह जाते, और इसी कारण बिक्री के अनुबंध में निर्दिष्ट हो जाते हैं। इसके बावजूद, उनकी बिक्री शरिया के अनुसार 'सर्फ़ (अर्थात मूल्य से मूल्य का बेचना) ठहरेगी और सर्फ़ की सभी शर्तें उस पर लागू होंगी, क्योंकि चांदी और सोना मूल्य होने के लिए ही बनाए गए हैं और अल्लाह की बनाई हुई चीज़ बदली नहीं जाती।

[अरबी पाठ]: दूसरा वह है जो हर स्थिति में बिकाऊ माल (मबीअ) है जैसे कपड़े और मवेशी। क्योंकि भले ही वे 'बा' उपसर्ग के साथ हों और जिस किसी से चाहें बदले जाएँ, वे दायित्व पर ऋण के रूप में स्थापित नहीं होते। मूल्य होने का यही अर्थ है, अतः यह आपत्ति नहीं उठेगी कि वस्तु विनिमय (मुक़ायदह) में दोनों वस्तुएँ एक दृष्टि से मूल्य हैं। अल्लामा शामी ने अल्लामा तहतावी की आपत्ति के उत्तर में इसी प्रकार का तर्क दिया है।

[उर्दू पाठ]: दूसरी श्रेणी वह है जो हर हाल में बिकाऊ माल है जैसे कपड़े, चौपाये। यदि उनके बदले कोई चीज़ बेचने को कहा जाए और उनका विनिमय किसी वस्तु के साथ हो, तो वे कभी दायित्व (ज़िम्मा) पर ऋण होकर अनिवार्य नहीं होंगे, और मूल्य होने के यही अर्थ हैं। तो यह आपत्ति लागू नहीं होगी कि मुक़ायदह की बिक्री (जिसमें माल के बदले माल बेचा जाता है) में दोनों माल एक दृष्टि से मूल्य हैं। अल्लामा तहतावी के उत्तर में अल्लामा शामी ने इसी तरह की व्याख्या की है।

[अरबी पाठ]: मैं कहता हूँ: इसमें यह आपत्ति है कि सोने-चांदी की गढ़ी हुई चीज़ें, जैसे बर्तन या गहने, वे भी दायित्व पर ऋण नहीं होते बल्कि अनुबंध में निर्दिष्ट हो जाते हैं, जैसा कि 'बहर' के हवाले से

पहले गुज़रा है। यदि इसे स्वीकार कर लिया जाए, तो इस पर खंडन लागू होगा। अतः विचार करें, और मेरे अनुसार स्पष्ट उत्तर है...

[उर्दू पाठ]: मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) इसमें यह आपत्ति है कि चांदी-सोने की बनी हुई चीज़ें मसलन बर्तन या गहने, ये भी दायित्व पर ऋण नहीं होते बल्कि अनुबंध में निर्दिष्ट हो जाते हैं जैसा कि 'बहर-उर-राइक़' से गुज़रा। तो यदि यह दलील सुरक्षित रहती है तो इस पर खंडन लागू होगा, गौर करें, और मेरे नज़दीक साफ़ जवाब...

पृष्ठ 405 / 715

فانهما اثمان ابدا صحبتهما الباء اولا وقوبلا بجنسهما اولا وعدهما العرف من الاثمان اولا كالمصوغ منهما فانه بسبب ما اتصل به من الصنعة لم يبق ثمنا صريحا ولهذا يتعين فی العقد ومع ذلك بيعه صرف يشترط فيه ما يشترط فی الصرف لانهما خلقا للثمنية ولا تبديل لخلق اللہ۔ ہے کہ ہمیشہ ثمن ہی رہیں گے خواہ انکے عوض کوئی چیز بیچی یا انکو کسی چیز کے عوض بیچنا کہیں خواہ اپنی جنس سے بدلے جائیں یا غیر جنس سے خواہ اہل عرف انہیں ثمن کہیں یا نہیں جیسے چاندی سونے کے برتن کہ وہ اس گھڑت کے سبب جو ان میں ہوئی خالص ثمن نہ رہے والہذا عقد بیع میں متعین ہو جائیں گے اور باینہمہ ان کی بیع شرعاً صرف ٹھہرے گی (یعنی ثمن سے ثمن کا بیچنا) اور جو شرائط صرف کے وہ سب اس کے مشروط ہوں گے اس لئے کہ چاندی سونا ثمن ہونے کے لئے ہی بنائے گئے اور اللہ کی پیدا کی ہوئی چیز بدلی نہیں جاتی۔ و الثانی مبیع بکل حال کالثیاب والدواب فانها وان صحبتها الباء وقوبلت بما تشاء لا تثبت دينا فی الذمة وهذا هو المعنی بالثمنية فلا يرد ان فی المقايضة كلا من العرضين ثمن من وجه هكذا وجه ابن عابدين جوابا عن ايراد العلامة الطحطاوی، قسم دوم وہ جو ہر حال مبیع ہے جیسے کپڑے، چوپائے کہ اگر ان کے عوض کوئی چیز بیچنا کہیں اور ان کا مبادلہ کسی شئی کے ساتھ ہو وہ کبھی ذمہ پر دین ہو کر لازم نہ ہوں گے، اور ثمن ہونے کے یہی معنی ہیں تو یہ اعتراض وارد نہ ہوگا کہ بیع مقایضہ (جس میں متاع کے بدلے متاع بیچی جاتی ہے) اس میں دونوں متاع ایک وجہ سے ثمن ہیں، اعتراض علامہ طحطاوی کے جواب میں علامہ شامی نے اسی طرح توجیہ فرمائی، اقول: وفيه ان المصوغ من الججرين ايضا لا يثبت دينا في الذمة بل يتعين في العقود كما تقدم عن البحر فان سلم هذا ورد النقض على ذلك فليتأمل والاظهر عندی الجواب اقول: (میں کہتا ہوں) اس میں یہ اعتراض ہے کہ چاندی سونے کی گھڑی ہوئی چیز مثلاً برتن یا

گہنا یہ بھی ذمہ پر دین نہیں ہوتے بلکہ عقد میں متعین ہو جاتے ہیں جیسا کہ بحر الرائق سے گزرا، تو اگر یہ تقریر سالم رہے تو اس پر نقض وارد ہوگا، فتامل، اور میرے نزدیک صاف جواب۔

Fatawa Razawiya (Volume 17)

[Arabic Text Transcription & Translation]: ...that every commodity in a barter exchange (Muqayada) is also a sold item (mabi'), and it cannot become purely a price (thaman), even if it has an aspect of being a price. This is because a sale cannot exist without both counterparts, unlike the upcoming category which sometimes becomes purely price and sometimes purely sold item. So the meaning of the two categories is that its status as price or sold item does not leave it in any state, even if another aspect occasionally occurs to it. Then his saying "like clothes", he left it absolute, and the commentary and marginalia maintained it. What is meant are those items whose individual financial values vary, otherwise they would be in the third category where their regulation is possible by mentioning the genus like cotton and linen, or the craft like work from Syria and Egypt, or thinness or thickness, and measurement in length and width, and weight if sold by weight. And based on this, Salam (advance payment) sale is permissible in them, as is known in its place. The third category is that which has a quality in its essence due to which it is sometimes a price and sometimes a sold item. I do not say as the Tanwir stated: "price from one perspective and sold item from another," so that the discussion on barter doesn't loop back. I say: I added the condition "a quality in its essence" to exclude the fourth category which...

[Urdu Text Transcription & Translation]: This means that in a barter sale, everything is a sold item (mabi') and cannot be a pure price (thaman), even if one side of it leans towards being a price. This is because a sale cannot occur without both price and sold item, unlike the next category which is sometimes pure price and sometimes pure sold item. So the meaning of these two categories is that being price or sold item is never separated from it in any condition, even if at some times it acquires the other aspect. Then the example of clothes that passed, the author left it general as it is, and in the commentary and marginalia it was maintained, and the meaning is those clothes whose value is not the same, otherwise they would be in the third category when they can be regulated by mentioning the genus like cotton and linen, or by mentioning the factory like the work of Syria and Egypt, or by being thin or thick, or by measurement of length and width, or by weight if they are sold by weight. And on this basis, barter sale (Salam) is permissible in them as has been known in its relevant place. The third category is those in whose essence there is such a quality due to which they are sometimes price and sometimes sold item. And I do not say like what is said in Tanwir that from one direction it is price and from another

direction it is sold item, so that the matter of barter is repeated. I say: (I say) I have added this condition that there is some quality in its essence so that...

1. Durr-ul-Mukhtar, Chapter of Sarf, Mujtabai Press Delhi, 2/57 Page 406 of 715

यह इसलिए है क्योंकि विनिमय (मुक़ायदा) के लेन-देन में हर चीज़ 'मबीअ' (बेची जाने वाली वस्तु) भी होती है और शुद्ध 'थमन' (कीमत) नहीं हो सकती, भले ही उसका एक पहलू थमनियत (कीमत होने) की ओर ही क्यों न हो। ऐसा इसलिए है क्योंकि बिक्री बिना थमन और मबीअ दोनों के संभव नहीं है, इसके विपरीत अगली श्रेणी कभी शुद्ध थमन होती है और कभी शुद्ध मबीअ। तो इन दो श्रेणियों का अर्थ यह है कि किसी भी स्थिति में इसका थमन या मबीअ होना इससे अलग नहीं होता, भले ही कुछ समय के लिए इसमें दूसरा पहलू भी आ जाए। फिर जो कपड़ों का उदाहरण गुज़रा, लेखक ने उसे ऐसे ही सामान्य छोड़ दिया और व्याख्या व हाशिए में इसे वैसे ही रखा गया। इसका अर्थ वे कपड़े हैं जिनकी वित्तीय कीमत एक समान न हो, अन्यथा वे तीसरी श्रेणी में होंगे जबकि उनका विवरण जीनस (श्रेणी) जैसे कपास और सन के उल्लेख से, या कारखाने के उल्लेख से जैसे सीरिया और मिस्र का काम, या पतलेपन या मोटाई से, या लंबाई और चौड़ाई के माप से, या वजन से यदि वे तौल कर बेचे जाते हों, निर्धारित किया जा सकता हो। और इसी आधार पर उनमें बैअ-ए-सलम (अग्रिम भुगतान बिक्री) जायज़ है जैसा कि इसके प्रासंगिक स्थान पर ज्ञात हो चुका है। तीसरी श्रेणी वे हैं जिनके अस्तित्व में कोई ऐसा गुण है जिसके कारण वे कभी थमन और कभी मबीअ होते हैं। और मैं वैसा नहीं कहता जैसा तनवीर में कहा गया है कि एक दिशा से थमन हो और एक दिशा से मबीअ, ताकि मुक़ायदा की बात पलट कर न आए। मैं कहता हूँ: मैंने यह शर्त कि 'उसके अस्तित्व में कोई गुण ऐसा हो' इसलिए बढ़ा दी है कि...

1. दुर्रे मुख्तार, बाब-अस-सर्फ़, मय्यतबाई प्रेस दिल्ली, 2/57 पेज 406 का 715

بان کل سلعة فی المقایضة مبیع ایضا ولا یمکن ان تصیر ثمنا محضا وان کان لها وجهة الی الثمنیة من حیث ان البیع لا یقوم الا بالبدلین بخلاف القسم الآتی فانہ تارة یصیر ثمنا بحتا و اخری مبیعا خالصا فمعنی القسمین انہ لا ینفك عنہ کونہ ثمنا او کونہ مبیعا بشیئ من الاحوال وان اعتراہ وجهة اخری ایضا فی بعض الحال ثم قولہ کالثیاب ارسلها ارسا لا واقرہ الشرح والحواشی والمراد المختلفة افرادها مالیة والا کانت من الثالث حیث امکن ضبطها بذکر جنس کقطن وکتان وصنعة کعمل الشام و مصر ورقة او غلظة وذرع طولا و عرضا ووزن ان بیعت بہ وبذا یجوز السلم فیها کما عرف فی محلہ والثالث ما لوصف فی ذاتہ ثمن تارة و مبیع اخری ولا اقول: کقول التنویز ثمن من وجہ مبیع من وجہ لیعود حدیث المقایضة، اقول: وانما زدت لوصف فی ذاتہ احترازا عن قسم الرابع فانہ

یہ ہے کہ بیع مقایضہ میں ہر شے مبیع بھی ہے اور ثمن خالص نہیں ہو سکتی اگرچہ اس کا ایک رخ ثمنیت کی طرف بھی سہی اس لئے کہ بیع بغیر ثمن و مبیع دونوں کے نہیں ہو سکتی، بخلاف قسم آئندہ کے کہ وہ کبھی خالص ثمن ہوتی ہے اور کبھی خالص مبیع، تو ان دونوں قسموں کے معنی یہ ہیں کہ اس کا ثمن یا مبیع ہونا کسی حال اس سے جدا نہ ہو اگرچہ بعض اوقات اسے دوسرا رخ بھی عارض ہو پھر وہ جو کپڑوں کی مثال گزری مصنف نے اسے یونہی مطلق چھوڑا اور شرح وحواشی میں اسے برقرار رکھا اور مراد وہ کپڑے ہیں جو مالیت میں ایک سے نہ ہوں، ورنہ تیسری قسم میں ہوں گے جبکہ ان کا ضبط ہو سکے ذکر جنس سے جیسے روئی اور کتان، یا کارخانہ کے ذکر سے جیسے شام ومصر کا کام ،یا پتلی اور دبیز ہونے سے یا طول و عرض کی پیمائش سے یا وزن سے اگر تول کر بیچے جاتے ہوں اور اسی بنا پر ان میں بیع سلم یعنی بدلی جائز ہے جیسا کہ اپنے محل میں معلوم ہوچکا ہے۔ قسم سوم وہ جن کی ذات میں کوئی ایسا وصف

ہے جس کے سبب کبھی ثمن کبھی مبیع ہوتے ہیں اور میں ویسا نہیں کہتا جیسا تنویر میں فرمایا کہ ایک جہت سے ثمن ہو اور ایک جہت سے مبیع کہ مقایضہ کی بات پلٹ پڑے، اقول: (میں کہتا ہوں) میں نے یہ قید کہ اس کی ذات میں کوئی وصف ایسا ہو اس لئے بڑھا دی کہ

1 در مختار باب الصرف مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۵۷ صفحہ 406 از 715

Fatawa-e-Razvia (17) Volume Seven

(Arabic text translation:) It also becomes a price (Thaman) at one time and not at another, not due to an inherent quality but due to convention or lack thereof. These are the fungibles (Mithliyat); they are either compared with one of the two currencies (gold/silver) or not. In the first case, they are absolutely the sold commodities (Mabi'), whether the 'Ba' (preposition for 'with/for') enters them first and they are specified first, such as saying 'I sold you this gold for a Kurr of wheat' or 'for this Kurr', then the wheat is absolutely the sold commodity. The sale is absolute (Mutlaq) in the case of specification, and in others, it is a Salam sale where its conditions are stipulated. In the second case, if the 'Ba' enters them first, they are absolutely the prices (Thaman), whether specified first, like 'I sold you this cloth for a Kurr of wheat' or 'for this Kurr'. The sale is absolute in both cases, and the Kurr is established as a liability. In the second case, if they are specified, they are prices, such as 'I sold you this Kurr for this cloth'; otherwise, they are sold commodities, like 'I sold you a Kurr for this slave', and the sale is Salam with its conditions. The conclusion is that if a fungible is compared with precious stones/metals (gold/silver), it is absolutely a sold commodity; otherwise, if the 'Ba' enters it, it is absolutely a price; otherwise, if it is specified, it is a price first.

(Urdu text translation:) ...the fourth category emerges, where it sometimes becomes the price (Thaman) and sometimes not, not due to any inherent quality but based on convention or the lack of it. These are the things called 'Mithli' (fungible goods). Now, they are either compared with silver and gold or with something else: in the first case, they are absolutely the sold commodity (Mabi'), whether they are set as the exchange in buying and selling or compared to gold and silver, and whether this fungible thing is specified or not. For example, if someone says, "I sold this gold for so many maunds of wheat" or "I sold it in exchange for this wheat," then wheat is the sold item in every case. Furthermore, if that wheat is specified, it is an absolute sale (Bai' Mutlaq), and if it is unspecified, then it is a Salam contract where its conditions must be met. In the second case, selling something in exchange for them, or selling them in exchange for something else: in the first scenario, they will be the price (Thaman) in every situation, whether they are specified or not. For example, if it is said, "I sold this cloth for so much wheat or in exchange for this wheat," the sale is absolute in any case, whether they are specified or not, and that wheat will be a liability on the person. In the second scenario, if these things are specified, they are the price (Thaman), such as saying, "I sold these [specific] wheat for this cloth." And if

they are not specified, they are the sold item (Mabi'), such as saying, "I sold so many maunds of wheat in exchange for this slave," then it is a Salam sale with its conditions. The summary of the discussion is that if a fungible item is compared against gold or silver, it is absolutely the sold item (Mabi'); otherwise, if it is said that something is sold in exchange for it...

(अरबी पाठ का अनुवाद:) यह भी एक समय में मूल्य (थमन) बन जाता है और दूसरे समय नहीं, अपने किसी गुण के कारण नहीं बल्कि प्रथा या उसके अभाव के कारण। ये 'मिश्ली' (समान श्रेणी की वस्तुएं) हैं; इनकी तुलना या तो दो मुद्राओं (सोने/चांदी) में से किसी एक से की जाती है या नहीं। पहली स्थिति में, वे पूर्णतः बेची गई वस्तुएँ(मबी') हैं, चाहे 'बा' (के लिए) उनमें पहले आए और वे पहले निश्चित हों, जैसे कहना 'मैंने आपको यह सोना एक कुर गेहूँ के बदले बेचा' या 'इस कुर के बदले', तो गेहूँ पूर्णतः बेची गई वस्तु है। निश्चित होने की स्थिति में बिक्री पूर्ण (मुतलक़) है, और अन्य में यह 'सलाम' बिक्री है जहाँ उसकी शर्तें निर्धारित हैं। दूसरी स्थिति में, यदि 'बा' उनमें पहले आता है, तो वे पूर्णतः मूल्य (थमन) हैं, चाहे पहले निर्दिष्ट हों, जैसे 'मैंने आपको यह कपड़ा एक कुर गेहूँ के बदले' या 'इस कुर के बदले बेचा'। बिक्री दोनों स्थितियों में पूर्ण है, और 'कुर' को ऋण के रूप में स्थापित किया गया है। दूसरी स्थिति में, यदि वे निर्दिष्ट हैं, तो वे मूल्य हैं, जैसे 'मैंने आपको यह कुर इस कपड़े के बदले बेचा'; अन्यथा, वे बेची गई वस्तुएँ हैं, जैसे 'मैंने आपको इस गुलाम के बदले एक कुर बेचा', और बिक्री अपनी शर्तों के साथ 'सलाम' है। निष्कर्ष यह है कि यदि मिश्ली की तुलना कीमती पत्थरों/धातुओं (सोने/चांदी) से की जाती है, तो वह पूर्णतः बेची गई वस्तु है; अन्यथा, यदि 'बा' इसमें प्रवेश करता है, तो यह पूर्णतः मूल्य है; अन्यथा, यदि यह निर्दिष्ट है, तो यह पहले मूल्य है।

(उर्दू पाठ का अनुवाद:) ...चौथी श्रेणी निकलती है कि वह भी तो कभी मूल्य (थमन) होती है कभी नहीं, लेकिन किसी अपने गुण के कारण नहीं बल्कि प्रथा और प्रथा के अभाव के आधार पर। और ये वे वस्तुएँ हैं जिन्हें मिश्ली (fungible goods) कहते हैं। अब उनका मुकाबला या तो चांदी सोने से होगा या किसी और चीज़ से: पहली स्थिति में पूर्णतः बेची गई वस्तु (मबी') हैं चाहे खरीद और बिक्री में उन्हें विनिमय ठहराया हो या सोने चांदी को, और यह वस्तु मिश्ली निश्चित हो या अनिश्चित जैसे कोई यूँ कहे कि मैंने यह सोना इतने मन गेहूँ को बेचा या इन गेहूँ के बदले बेचा तो गेहूँ हर हाल में 'मबी' (बेची गई वस्तु) है फिर वह गेहूँ अगर निश्चित है तो बिक्री पूर्ण (मुतलक़) है और अगर अनिश्चित है तो 'सलाम' है कि उसकी शर्तें अनिवार्य होंगी और दूसरी स्थिति में उनके बदले कोई चीज़ बेचना कभी या उन्हें किसी चीज़ के बदले बेचना कहा, पहली सूरत पर हर स्थिति में मूल्य (थमन) होंगे चाहे निश्चित हों या नहीं जैसे यूँ कहा कि मैंने यह कपड़ा इतने गेहूँ या इन गेहूँ के बदले बेचा और बिक्री हर हाल में पूर्ण है चाहे ये निश्चित हों या नहीं और वे गेहूँ ज़िम्मे पर अनिवार्य होंगे। दूसरी सूरत में यदि ये चीज़ें निश्चित हों तो मूल्य (थमन) हैं जैसे यूँ कहा कि मैंने ये गेहूँ इस कपड़े के बदले बेचे और निश्चित न हों तो

'मबी' (बेची गई वस्तु) हैं जैसे यूँ कहे कि मैंने इतने मन गेहूँ इस गुलाम के बदले बेचे और बिक्री 'सलाम' है उसकी शर्तों के साथ और सारांश यह है कि मिश्ली चीज़ अगर सोने चांदी के मुक़ाबले में हो तो पूर्णतः'मबी' (बेची गई वस्तु) है वरना अगर उसके बदले बेचना कहें...

पृष्ठ 407/715

(عربی عبارت:) ایضا یصیّر مرة ثمنا واخری لا، لالو صف في ذاته بل للاصطلاح وعدمه وھذہ ھی المثلیات فانھا اما ان تقابل باحد النقدین اولا علی الاول مبیعات مطلقاً سواء دخلتھا الباء اولا وتعینت اولا کقولك بعتك ھذا الذھب بکرّ برّ او بھذا الکرّ فالکر مبیع مطلقاً والبیع في صورة التعیین مطلق وفي غیرہ سلم یشترط فیه شرائطه وعلی الثاني اما ان تدخلھا الباء اولا علی الاول اثمان مطلقاً تعینت اولا کبعتك ھذا الثوب بکر بر او بھذا الکر والبیع مطلق في الوجھین والکر یثبت في الذمة وعلی الثاني ان تعینت فاثمان کبعتك ھذا الکر بھذا الثوب اولا فبیعات کبعتك کرا بھذا العبد والبیع سلم بشروطه والحاصل ان المثلی ان قوبل بحجر فمبیع مطلقاً والافان دخلته الباء فثمن مطلقاً والافان تعین فثمن اولا

(اردو عبارت:) قسمِ چہارم نکل جائے کہ وہ بھی تو کبھی ثمن ہوتی ہے کبھی نہیں لیکن کسی اپنے وصف کے سبب نہیں بلکہ اصطلاح وعدم اصطلاح کی بنا پر۔ اور یہ وہ اشیاء ہیں جن کو مثلی کہتے ہیں اب ان کا مقابلہ یا تو چاندی سونے سے ہوگا یا اور چیز سے : پہلی صورت میں مطلقاً مبیع ہیں چاہے خرید و فروخت میں ان کو عوض ٹھہرایا ہو یا سونے چاندی کو اور یہ شئی مثلی معین ہو یا غیر معین جیسے کوئی یوں کہے میں نے یہ سونا اتنے من گیہوں کو بیچا یا ان گیہوں کے عوض بیچا تو گیہوں بہر حال مبیع ہے پھر وہ گیہوں اگر معین ہے تو بیع مطلق ہے اور اگر غیر معین ہے تو سلم کہ اس کے شرائط لازم ہوں گے اور دوسری صورت میں ان کے عوض کوئی چیز بیچنا کبھی یا ان کو کسی شے کے عوض بیچنا کہا پہلی تقدیر پر ہر حالت میں ثمن ہوں گے خواہ معین ہوں یا نہیں جیسے یوں کہا کہ میں نے یہ کپڑا اتنے گیہوں یا ان گیہوں کے عوض بیچا اور بیع بہر حال مطلق ہے چاہے یہ معین ہوں یا نہیں اور وہ گیہوں ذمہ پر لازم ہوں گے بر تقدیرِ دوم اگر یہ چیزیں معین ہوں تو ثمن ہیں جیسے یوں کہا کہ میں نے یہ گیہوں اس کپڑے کے عوض

بیچے اور معین نہ ہوں تو مبیع ہیں جیسے یوں کہے کہ میں نے اتنے من گیہوں اس غلام کے بدلے بیچے اور بیع سلم ہے اس کے شرائط کے ساتھ اور خلاصہ کلام یہ ہے کہ مثلی چیز اگر سونے چاندی کے مقابل ہو تو مطلقاً مبیع ہے ورنہ اگر اس کے عوض بیچنا کہیں

صفحہ ۴۰۷ از ۷۱۵

Fatawa Ridawiyya, Volume 17

(Arabic Text Column): So, it is an absolute sale. This is a clarification of what al-Shami has recorded, with the best precision not found therein. The fourth category is what is a commodity in essence and a price by convention, like fulus (copper coins). As long as it is in circulation, it is like a price; otherwise, it returns to its origin. There is no doubt that when those who establish conventions want to make a commodity into a price, they must refer in its estimation to the natural price, for that which is accidental is only valued by that which is essential. Thus, they set sixty-four Indian fulus or twenty-one Arabic hallas for a rupee, and so on for others. In this, they have the choice to establish conventions as they wish, for there is no contention in convention. About twenty years ago in the Indian lands, there were two types of fulus in circulation: one was minted, and the other was a rectangular piece of copper, about double the weight of the minted fils. Of the minted ones, sixty-four would make a rupee, neither increasing nor decreasing. For the other, the price varied, sometimes reaching eighty for a rupee, until they became stagnant and ceased. All of this refers to convention, and there is no restriction in it from the perspective of the noble Shari'ah. Once you know this, then the banknote (nawt) belongs to the fourth category: a commodity by its origin because it is a piece of paper, and a price by convention because it...

(Urdu Text Column): ...then it is absolutely a price; otherwise, if it is specified, it is a price, and if it is not specified, it is the sold item. This is the clarification which Allama Shami has refined here, but with such exquisite precision as is not found in Shami. The fourth category is that which is really a commodity but by convention a price, like coins; so as long as they are current, they are a price, otherwise they return to their original state. And there is no doubt that when the people of convention wish to make something a price, it is inevitable for them to refer to the innate price in its estimation, for the existence of an accidental thing is through the essential. Thus, they decide 64 Indian coins or 21 Arabic 'halle' for one rupee; similarly in others. And they have the choice to establish whatever convention they wish, because there is no restriction in convention. 20 years ago in India, two types of coins were in circulation: one was stamped (double), the second were long pieces of copper, nearly double the weight of a 'double' coin, (Mansuri). Stamped coins were neither more nor less than 64 to a rupee, and the rate of Mansuri used to fluctuate, and sometimes there were 80 for a rupee, until they went out of circulation and vanished. So all this refers to the side of convention, and there is no restriction from the purified Shari'ah in this. When

this is known, then the note (banknote) is from the fourth category: in reality it is a commodity because it is a piece of paper, and in convention it is a price because it has a price-like...

(अरबी पाठ स्तंभ): तो यह पूर्ण रूप से बिक्री है। यह उस बात का स्पष्टीकरण है जो शामी ने दर्ज किया है, ऐसी उत्कृष्ट परिशुद्धता के साथ जो उसमें नहीं मिलती। चौथी श्रेणी वह है जो मूल रूप से वस्तु है और प्रथा के अनुसार मूल्य है, जैसे 'फ़ुलूस' (तांबे के सिक्के)। जब तक वे प्रचलन में हैं, वे मूल्य की तरह हैं; अन्यथा, वे अपने मूल की ओर लौट जाते हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि जब प्रथा बनाने वाले किसी वस्तु को मूल्य बनाना चाहते हैं, तो उन्हें उसके आकलन में स्वाभाविक मूल्य की ओर लौटना अनिवार्य है, क्योंकि जो आकस्मिक है उसका अस्तित्व मौलिक से ही होता है। इस प्रकार, वे चौंसठ भारतीय फ़ुलूस या इक्कीस अरबी 'हल्ला' को एक रुपये के बराबर निर्धारित करते हैं, और अन्यों के लिए भी ऐसा ही है। इसमें उन्हें अपनी इच्छानुसार प्रथा निर्धारित करने का विकल्प है, क्योंकि प्रथा में कोई विवाद नहीं है। लगभग बीस साल पहले भारतीय क्षेत्रों में दो प्रकार के फ़ुलूस प्रचलन में थे: एक ढला हुआ (सिक्का) और दूसरा तांबे का एक लंबा टुकड़ा जिसका वजन ढले हुए सिक्के से लगभग दोगुना था। ढले हुए सिक्कों में से चौंसठ एक रुपये के बराबर होते थे, न कम न ज्यादा। दूसरे का भाव बदलता रहता था, और कभी-कभी एक रुपये के अस्सी हो जाते थे, यहाँ तक कि उनका चलन बंद हो गया और वे समाप्त हो गए। यह सब प्रथा की ओर ही वापस जाता है, और इसमें महान शरीअत की ओर से कोई प्रतिबंध नहीं है। जब आपको यह पता चल गया, तो 'नॉट' (बैंक नोट) चौथी श्रेणी से है: वह अपनी वास्तविकता में एक वस्तु है क्योंकि वह कागज का एक टुकड़ा है, और प्रथा में वह मूल्य है क्योंकि वह...

(उर्दू पाठ स्तंभ): ...तो वह पूरी तरह से मूल्य है; अन्यथा यदि वह विशिष्ट है तो मूल्य है, और यदि विशिष्ट नहीं है तो वह विक्रय की वस्तु (मबीअ) है। यह वह स्पष्टीकरण है जिसे अल्लामा शामी ने यहाँ परिष्कृत किया है, लेकिन ऐसी बेहतरीन परिशुद्धता के साथ जो शामी में नहीं है। चौथी श्रेणी वह है जो वास्तविकता में तो वस्तु है और प्रथा के अनुसार मूल्य, जैसे सिक्के, तो जब तक वे चलते हैं मूल्य हैं, अन्यथा वे अपने मूल की ओर लौट जाएंगे। और इसमें कोई संदेह नहीं है कि जब प्रथा के लोग किसी चीज़ को मूल्य बनाना चाहें तो उनके लिए उसके आकलन में प्राकृतिक मूल्य की ओर लौटना अनिवार्य है क्योंकि आकस्मिक वस्तु का अस्तित्व तो मौलिक से ही होता है। तो 64 भारतीय पैसे या 21 अरबी 'हल्ले' एक रुपये के बराबर ठहराए जाते हैं; इसी तरह इसके अलावा अन्यों में भी। और उन्हें अधिकार है कि जैसी चाहें प्रथा तय करें क्योंकि प्रथा में कोई रोक-टोक नहीं है। 20 साल पहले हिंदुस्तान में दो तरह के पैसे चलते थे: एक सिक्का वाला (डबल), दूसरे तांबे के लंबे टुकड़े, जिनका

वजन लगभग 'डबल' पैसे के बराबर होता था, (मंसूरी)। सिक्का वाले पैसे रुपये में 64 से न अधिक होते थे न कम, और मंसूरी का भाव घटता-बढ़ता रहता था और कभी एक रुपये के80 हो जाते थे, यहाँ तक कि उनका चलन नहीं रहा और वे समाप्त हो गए। तो यह सब प्रथा की ओर जाता है और इसमें पवित्र शरीअत की ओर से कोई रोक नहीं है। जब यह मालूम हो गया तो नोट चौथी श्रेणी से है, असल में यह एक वस्तु है क्योंकि एक कागज का टुकड़ा है और प्रथा में मूल्य है क्योंकि इसके साथ मूल्य जैसा व्यवहार...

पृष्ठ 408/715

(عربی متن کا کالم): فبیع وھذا ایضاح ما حرر الشامی مع احسن ضبط لا یوجد فیه والرابع ما ھو سلعة بالاصل وثمن بالاصطلاح کالفلوس فما دام یروج فکثمن والاعاد لاصله ولا شك ان المصطلحیین اذا ارادوا ان یجعلوا سلعة ثمنا لابد لھم ان یرجعوا في تقدیرھا الی الثمن الخلقي فان ما بالعرض لا یتقوم الابما بالذات فیجعلون اربعة وستین من الفلوس الھندیة او احدی وعشرین من الھللات العربیة بربیة وھکذا في غیرھا وھم في ذلك بالخیار یصطلحون کیف یشاؤن اذلا مشاحة فی الاصطلاح وقد کان قبل نحو عشرین سنة فی الدیار الھندیة قسمان من الفلوس یروجان احدھما مضروب و الأخر قطعة نحاس مستطیلة الشکل نحو ضعف الفلس المضروب فی الوزن وکان من المضروب اربعة وستون بربیة لا تزید ولا تنقص ومن الأخر یختلف السعر، وربما صار ثمانون منه بربیة الی ان کسد ونفد فکل ذلك راجع الی الاصطلاح ولا حجر فیه من جھة الشرع الشریف اذا علمت ھذا فالنوط ھو من القسم الرابع سلعة بأصله لانه قرطاس وثمن بالاصطلاح لانه

(اردو متن کا کالم): تو مطلقاً ثمن ہے ورنہ اگر معین ہو تو ثمن ہے اور غیر معین ہو تو مبیع یہ اس کا ایضاح ہے جو علامہ شامی نے یہاں منقح فرمایا مگر ایسے نفیس ضبط کے ساتھ جو شامی میں نہیں ، قسم چہارم وہ یہ کہ حقیقۃً کوئی متاع ہو اور اصطلاحاً ثمن جیسے پیسے تو وہ جب تک چلتے ہیں ثمن ورنہ اپنی اصل کی طرف لوٹ جائیں گے اور اصلاً شبہ نہیں کہ اہلِ اصطلاح جب کسی چیز کو ثمن کرنا چاہیں تو انہیں ان کے اندازہ میں ثمنِ پیدائشی کی طرف رجوع کرنے ناگزیر ہے کہ عرضی چیز کا قیام تو ذاتی ہی سے ہوتا ہے تو ۶۴ ہندی پیسے یا ۲۱ عربی مللے ایک روپے کے قرار دیتے ہیں یوں ہی اس کے ماسوا میں ، اور اختیار ہے جیسے چاہیں اصطلاح مقرر کریں کیونکہ اصطلاح میں کوئی روک ٹوک نہیں، ۲۰ برس پہلے ہندوستان میں دو طرح کے پیسے

رائج تھے ایک سکہ زدہ (ڈبل) دوسرے تانبے کے لمبے ٹکڑے وزن میں ڈبل پیسے سے قریب، دونے کے (منصوری) ڈبل پیسے روپیہ کے ۶۴ سے نہ زائد ہوتے ہیں نہ کم ، اور منصوری کا بھاؤ گھٹتا بڑھتا رہتا ہے اور کبھی ایک روپے کے ۸۰ ہو جاتے تھے یہاں تک کہ چلن نہ رہا اور جاتے رہے تو یہ سب اصطلاح کی جانب راجع ہے اور اس میں شرعِ مطہر کی طرف سے کوئی روک نہیں۔ جب یہ معلوم ہو لیا تو نوٹ چوتھی قسم سے ہے، اصل میں یہ ایک متاع ہے اس لئے کہ ایک پرچہ کاغذ ہے اور اصطلاح میں ثمن ہے اس لئے کہ اس کے ساتھ ثمن کا سا

Fatawa-e-Razvia Volume (17)

[Arabic Column] ...it is treated as money. These figures written on it are estimates of its value relative to the original money, as you have learned. It is a conventional term in which there is no constraint, nor will its reasoning and justification be questioned. By the grace of Allah, the Opener, the Omnipotent, the reality of the currency note (Nout) has become clear through this discourse, and all rulings are based on this. Therefore, if Allah the Almighty wills, there will be no difficulty in explaining any ruling, and all praise is for Allah, the Overseer, the Exalted. As for the first question: The answer has been clarified with additional detail, and there is no need to add more. And as for the second question: I say: Yes, Zakat is obligatory on it (notes) with its conditions, because you have learned that it is inherently valuable property (Maal) and not just a document or receipt of debt, such that payment would not be obligatory until a fifth of the 'Nisab' (minimum threshold) was in possession. There is no need for trade intent (niyyat-e-tijarat) because the ruling is that as long as conventional money is in circulation, Zakat is obligatory on it. In fact, a note cannot essentially be separated from trade intent because its benefit cannot be obtained except through exchange, as is evident. In the Fatawa of Qari al-Hidaya, it is stated: the ruling is on the obligation of Zakat in...

[Urdu Column] ...it is dealt with as money, and these figures that are inscribed on it are an estimate of its valuation from the original price, as has become known. Thus, this is a terminology in which there is no harm, nor will its reason and justification be sought. By the praise of Allah the Powerful, the reality of the note has become clear from this discourse, and all rulings were dependent on it. So, God willing, now no difficulty will stand in the way of expressing any command, and all praises are for Allah, Who is the protector of everything, the High. Answer to the first question: It has been clarified with extra detail and there is no need to increase it. Answer to the second question: I say: (Then I say) Yes, Zakat is obligatory in the note with its conditions, because you have known that it is itself valuable property, not a document and receipt of debt, so that until the fifth part of the nisab comes into possession, it is not obligatory to give Zakat. And there is no need for trade intention in the note, because the fatwa is that as long as the conventional price (currency) is in circulation, Zakat is obligatory in it. Rather, there is basically no separation from the trade intention for the note because you cannot take benefit from it at all without exchange, as is obvious. It is in the Fatawas of Allama Qari al-Hidaya that the fatwa is that as long as the coins are in circulation, Zakat is obligatory on them.

फ़तावा-ए-रिज़विया जिल्द (17)

[अरबी कॉलम] ...इसके साथ मुद्रा जैसा व्यवहार किया जाता है। उस पर अंकित ये अंक उसके मूल्य का मूल मुद्रा के सापेक्ष अनुमान हैं जैसा कि आप जान चुके हैं। यह एक पारिभाषिक शब्द है जिसमें कोई आपत्ति नहीं है और न ही इसके कारण और औचित्य के बारे में पूछा जाएगा। अल्लाह सर्वशक्तिमान की कृपा से इस व्याख्या से करेंसी नोट (नोट) की वास्तविकता स्पष्ट हो गई और सभी आदेश इसी पर आधारित थे। अतः यदि अल्लाह सर्वशक्तिमान ने चाहा, तो अब किसी भी आदेश को व्यक्त करने में कोई कठिनाई नहीं होगी, और सारी प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो हर चीज़ का संरक्षक और सर्वोच्च है। रहा पहले प्रश्न का उत्तर: तो वह अतिरिक्त विवरण के साथ स्पष्ट हो चुका है और उसमें कुछ और जोड़ने की आवश्यकता नहीं है। और रहा दूसरा प्रश्न: तो मैं कहता हूँ: हाँ, इसमें (नोट पर) ज़कात अपनी शर्तों के साथ वाजिब (अनिवार्य) है क्योंकि आप जान चुके हैं कि वह स्वयं मूल्यवान संपत्ति (माल) है, ऋण का दस्तावेज़ या रसीद नहीं कि जब तक निसाब (न्यूनतम सीमा) का पांचवां हिस्सा कब्जे में न आ जाए, ज़कात देना वाजिब न हो। इसमें व्यापार की नियत (इरादे) की भी आवश्यकता नहीं है क्योंकि फतवा इस पर है कि जब तक पारिभाषिक मूल्य (मुद्रा) चलन में है, उसमें ज़कात वाजिब है। बल्कि नोट को व्यापार की नियत से मौलिक रूप से अलग नहीं किया जा सकता क्योंकि विनिमय के बिना उससे लाभ प्राप्त ही नहीं किया जा सकता जैसा कि स्पष्ट है। क़ारी अल-हिदाया के फ़तावा में है: फतवा इसके ज़कात के वाजिब होने पर है...

[उर्दू कॉलम] ...इसके साथ लेनदेन किया जाता है और ये रकमें जो इस पर अंकित हैं, यह उसकी थमनियत (कीमत) का असल थमन से अंदाज़ा है जैसा कि मालूम हो चुका है। तो यह एक शब्दावली है इसमें कोई हर्ज़ नहीं है और न ही इसकी वजह और स्पष्टीकरण पूछा जाएगा। अल्लाह सर्वशक्तिमान की प्रशंसा के साथ, इस चर्चा से नोट की असलियत साफ़ हो गई और तमाम अहकाम (आदेश) इसी पर आधारित थे। तो इंशाल्लाह अब किसी हुक्म को ज़ाहिर करने में कोई मुश्किल आड़े नहीं आएगी, और तमाम खूबियां अल्लाह के लिए हैं जो हर चीज़ का निगहबान और बुलंद मर्तबे वाला है। पहले सवाल का जवाब: अतिरिक्त विवरण के साथ स्पष्ट हो चुका है और इसे बढ़ाने की ज़रूरत नहीं है। दूसरे सवाल का जवाब: तो मैं कहता हूँ: (यानी मैं कहता हूँ) हाँ, नोट में ज़कात अपनी शर्तों के साथ वाजिब है, क्योंकि आपने जान लिया कि वह खुद कीमती माल है, कर्ज़ का दस्तावेज़ और रसीद नहीं कि जब तक निसाब का पांचवां हिस्सा क़ब्ज़े में न आए ज़कात देना वाजिब न हो। और नोट में व्यापार की नियत की भी ज़रूरत नहीं है क्योंकि फतवा इस पर है कि जब तक मुद्रा (करेंसी) चलन

में है, उसमें ज़कात वाजिब है। बल्कि नोट को व्यापार की नियत से असल में जुदा किया ही नहीं जा सकता क्योंकि विनिमय (लेनदेन) के बिना उससे नफ़ा हासिल ही नहीं किया जा सकता जैसा कि ज़ाहिर है। अल्लामा क़ारी अल-हिदाया के फ़तावा में है कि फतवा इस पर है कि पैसे जब तक चलन में हैं उन पर ज़कात वाजिब है।

पृष्ठ 409 का 715

[عربی کالم] یعامل به معاملة الاثمان وهذه الرقوم المکتوبة علیه تقدیرات ثمنیة بالثمن الاصلی کما علمت، فهو اصطلاح لامضایقة فیه ولا یسأل له عن وجه و توجیه وقد تبین بهذا التقریر والحمد لله الفتاح القدیر حقیقة النوط وانما سائر الاحکام بها منوط، فاذن لا یعتری ان شاء الله تعالی فی ابانة شیئ من الاحکام اشکال والحمد لله المهیمن المتعال۔ اما السؤال الاول: فقد بان الجواب مع المزید ولا احتیاج الی ان نزید۔ واما الثانی فاقول: نعم تجب فیه الزکوة بشروطها لما علمت انه مال متقوم بنفسه ولیس سندا وتذکرة للدین حتی لا یجب اداؤها مالم یقبض خمس نصاب ولا حاجة فیه الی نیة التجارة لان الفتوی علی ان الثمن المصطلح تجب فیه الزکوة مادام رائجا بل لا انفکاک له عن نیة التجارة لانه لا ینتفع به الا بالمبادلة کما لا یخفی فی فتاوی قاری الهدایة الفتوی علی وجوب الزکوة في

[اردو کالم] معاملہ کیا جاتا ہے اور یہ رقمیں کہ اس پر مرقوم ہیں یہ اس کی ثمنیت کا ثمنِ اصلی سے اندازہ ہے جیسا کہ معلوم ہو چکا تو یہ ایک اصطلاح ہے اس میں کچھ مضائقہ نہیں نہ اس کی وجہ توجیہ دریافت کی جائیگی، بحمد اللہ القدیر اس تقریر سے نوٹ کی حقیقت واضح ہوگئی اور تمام احکام اسی پر مبنی تھے تو ان شاء اللہ تعالیٰ اب کوئی دشواری کسی حکم کے اظہار میں آڑے نہ آئے گی، اور سب خوبیاں اللہ کو جو ہر چیز کا نگہبان ہے بلندی والا۔ جواب سوال اول: مع شے زائد واضح ہو لیا اور بڑھانے کی ضرورت نہیں۔ جواب سوال دوم: فاقول: (تو میں کہتا ہوں) ہاں نوٹ میں زکوٰۃ اپنی شرطوں کے ساتھ واجب ہے اس لئے کہ آپ نے جان لیا کہ وہ خود قیمتی مال ہے دستاویز و رسیدِ قرض نہیں کہ جب تک نصاب کا پانچواں حصہ قبضہ میں نہ آئے زکوٰۃ دینا واجب نہ ہو اور نوٹ میں نیت تجارت کی بھی حاجت نہیں اسلئے کہ فتویٰ اس پر ہے کہ ثمنِ اصطلاحی جب تک رائج ہے زکوٰۃ اس میں واجب ہے بلکہ نوٹ کو نیت تجارت سے اصلاً جدائی

نہیں کہ بغیر مبادلہ اس سے نفع لے ہی نہیں سکتے جیسا کہ ظاہر ہے فتاویٰ علامہ قاری الہدایہ میں ہے فتویٰ اس پر ہے کہ پیسے جب تک رائج ہیں ان پر زکوٰۃ واجب۔

صفحہ 409 از 715

Fatawa Rizwia Volume 17

[Arabic Text]: Al-Fulus (copper coins) when they are traded with, if they reach what equals two hundred dirhams of silver or twenty mithqals of gold... and the banknote (not) obtained before the completion of the (Zakat) year is added to the Nisab of its kind or to one of the two currencies (gold/silver) considering its value like trade goods. [1] [Urdu explanation]: When they reach the price of two hundred dirhams of silver or twenty mithqals of gold. And banknotes received before the end of the Zakat year will be combined with the Nisab of their own kind or valued and added to gold and silver, just like the ruling for trade goods.

Answer to the third question: As for the third point, so I say: Yes, it is valid as dower as far as I know, if its value at the time of the contract was seven mithqals of silver. If it is less, it is completed, as in the case of trade goods (urud). So I say: (So I say) Yes, it can be a dower based on what you have already known, provided its value at the time of the marriage contract was seven mithqals of silver. If it was less, it will be completed (to the minimum dower) just as it is for other goods.

Answer to the fourth question: As for the fourth point, so I say: Amputation (of hand) is mandatory according to its conditions of liability, speech, sight, and complete security (hirz), etc., if its value on both the day of the theft and the day of amputation reaches ten dirhams of good minted coins. All of this is because of what we explained, that it is valuable property in itself. So I say: (I say) In the case of stealing banknotes, the hand will be cut off when its conditions are met, i.e., the thief is sane and an adult, not mute, not blind, the banknote was kept in a place of complete protection, and besides these conditions, and on the day it was stolen and the day the hand is to be cut, on both days its value reaches ten dirhams of genuine minted coins. And all this is based on what we have stated that it is intrinsically a valuable property.

Answer to the fifth question: As for the fifth point, so I say: Yes, it is guaranteed by replacing it with something similar, and the one who destroys it is not forced... So I say: (I say yes, if someone destroys someone's banknote, then in its compensation, the banknote...)

[1] Fatawa Qari al-Hidaya Page 410 of 715

फ़तावा रिज़विया जिल्द 17

[अरबी पाठ]: जब तांबे के सिक्कों (फ़ुलूस) का व्यापार किया जाता है, यदि वे चांदी के दो सौ दिरहम या सोने के बीस मिस्क़ाल के बराबर हो जाएँ.. और ज़कात वर्ष पूरा होने से पहले प्राप्त बैंकनोट (नोट) को उसी प्रकार के निसाब या मूल्य के आधार पर दोनों मुद्राओं (सोना/चांदी) में से एक में जोड़ा जाता है, जैसे व्यापारिक वस्तुओं का नियम है। [1] [उर्दू व्याख्या]: जब वे दो सौ दिरहम चांदी या बीस मिस्क़ाल सोने की कीमत तक पहुँच जाएँ। और ज़कात वर्ष पूरा होने से पहले मिलने वाले नोट अपनी श्रेणी के निसाब के साथ जोड़े जाएंगे या उनकी कीमत लगाकर सोने-चांदी के साथ मिलाया जाएगा, जैसा कि व्यापारिक माल का हुक्म है।

तीसरे प्रश्न का उत्तर: जहाँ तक तीसरे बिंदु का सवाल है, तो मैं कहता हूँ: हाँ, यह मेहर (दहेज) के रूप में मान्य है जैसा कि मुझे ज्ञात है, यदि अनुबंध के समय इसका मूल्य चांदी के सात मिस्क़ाल था। यदि यह कम है, तो इसे पूरा किया जाएगा, जैसा कि माल (अरुद) के मामले में होता है। तो मैं कहता हूँ: (तो मैं कहता हूँ) हाँ वह मेहर हो सकता है इसी आधार पर कि आप जान चुके हैं, बशर्ते निकाह के समय इसकी कीमत सात मिस्क़ाल चांदी हो। अगर कम होगी तो पूरी की जाएगी जैसा कि सामान (असबाब) में होता है।

चौथे प्रश्न का उत्तर: जहाँ तक चौथे बिंदु का सवाल है, तो मैं कहता हूँ: इसकी शर्तों जैसे कि दायित्व, वाणी, दृष्टि और पूर्ण सुरक्षा (हिर्ज़) आदि के तहत हाथ काटना अनिवार्य है, यदि चोरी और हाथ काटने दोनों के दिनों में इसका मूल्य दस दिरहम अच्छे ढले हुए सिक्कों तक पहुँच जाए। यह सब इसलिए है क्योंकि हमने स्पष्ट किया है कि यह स्वयं में एक मूल्यवान संपत्ति है। तो मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) नोट की चोरी में हाथ काटा जाएगा जब उसकी शर्तें पाई जाएँ यानी चोर बुद्धिमान और वयस्क हो, गूंगा न हो, अंधा न हो, नोट पूरी सुरक्षा की जगह रखा हो, और इसके अलावा जो शर्तें हैं और जिस दिन चुराया था और जिस दिन काटें दोनों दिन इसकी कीमत दस दिरहम सिक्कादार खरे तक पहुँचे और यह सब इसी आधार पर है कि हम बयान कर आए कि वह खुद एक मूल्यवान माल है।

पाँचवें प्रश्न का उत्तर: जहाँ तक पाँचवें बिंदु का सवाल है, तो मैं कहता हूँ: हाँ, इसे उसी तरह की चीज़ से नष्ट करने पर मुआवज़ा दिया जाता है और नष्ट करने वाले को मजबूर नहीं किया जाता... तो मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ हाँ कोई किसी का नोट नष्ट कर दे तो उसके तावान (मुआवज़े) में नोट...)

[1] फ़तावा क़ारी अल-हिदाया पृष्ठ 410 का 715

الفلوس اذا تعومل بها اذا بلغت ماتساوی مائتی درہم من الفضة او عشرین مثقالا من الذهب اھـ ۱ و النوط المستفاد قبل تمام الحول یضم الی نصاب من جنسه او من احد النقدین بأعتبار القیمة کا موال التجارۃ۔ جبکہ دو سو درہم چاندی یا بیس مثقال سونے کی قیمت کو پہنچے ہوں انتہی اور نوٹ جو سال زکوۃ تمام ہونے سے پہلے ملے وہ اپنی جنس کے نصاب یا قیمت لگا کر سونے چاندی سے ملایا جائے گا جیسا تجارتی مال کا حکم ہے۔

جواب سوال سوم: واما الثالث فاقول: نعم یصح مهر المأعلمت اذکانت قیمته وقت العقد سبع مثاقیل من فضة فان اقل یتم کما فی العروض۔ فاقول: (تو میں کہتا ہوں) ہاں وہ مہر ہو سکتا ہے اسی بنا پر کہ آپ جان چکے جبکہ وقت عقد اس کی قیمت سات مثقال چاندی ہو اگر کم ہوگی تو پوری کی جائے گی جس طرح اسباب میں ہے۔

جواب سوال چہارم: واما الرابع فاقول: یجب القطع بشروطه من تکلیف ونطق وبصر و حرز تام وغیرہا اذا بلغت قیمته کلا یومی السرقة والقطع عشرة دراہم مضروبة جیادا وذلك کله لما بینا انه مال متقوم بنفسه۔ فاقول: (میں کہتا ہوں) نوٹ کی چوری میں ہاتھ کاٹا جائے گا جب کہ اس کی شرطیں پائی جائیں یعنی چور عاقل بالغ ہو، گونگا نہ ہو، اندھا نہ ہو، نوٹ پوری حفاظت کی جگہ رکھا ہو، اور اس کے سوا جو شرائط ہیں اور جس دن چرایا تھا اور جس دن کاٹیں دونوں دن اس کی قیمت دس درہم سکہ دار کھرے تک پہنچے اور یہ سب اسی بنا پر ہے کہ ہم بیان کر آئے کہ وہ بذات خود ایک قیمت والا مال ہے۔

جواب سوال پنجم: واما الخامس فاقول: نعم یضمن بأتلاف بمثله ولا یجبر المتلف فاقول: (میں کہتا ہوں ہاں کوئی کسی کا نوٹ تلف کر دے تو اسکے تاوان میں نوٹ)

Volume 17 Fatawa Razawiyya

...to pay in dirhams specifically, because banknotes are numerical and not disparate at all if they have the same minting origin. Yes, if they differ, even if the authority is the same, the value might differ. This is because the banknotes of Allahabad or Allah Abad and Calcutta circulate more in the North-Eastern Indian territories than Bombay banknotes, and vice versa. Sometimes a banknote from one place is bought in another at a discount of several annas from its written face value; thus, one is not considered equal to the other unless they are equal in circulation.

As for the sixth [question]: I say: Yes, it is permissible, just as people deal with it in most cities, and you have already known its research/verification.

Note: I had sufficed with this amount in the answer due to the clarity of the matter through what I had established at the beginning. Then, when I finished the treatise, I received news from some distinguished scholars (may Allah Almighty protect them) that they mentioned in a discussion, not as a dispute, that Allama Ibn Abidin mentioned in Radd al-Muhtar, as a corollary to the condition that for a sale to be valid, the subject of the contract must be valuable property (mal mutaqawwam), that the sale of a piece of bread is not valid because the minimum value required for a sale to be valid is one paisa.

Footnote: Namely, Fazil Hamid Ahmed Muhammad Jadadi (may he be safe) - 12. Page 411 of 715

जिल्द सत्रह (17) फ़तावा-ए-रजविया

...विशेष रूप से दिरहम में भुगतान करना होगा, क्योंकि बैंकनोट संख्यात्मक होते हैं और यदि उनका टकसाल (mint) एक ही हो तो उनमें कोई अंतर नहीं होता। हाँ, यदि टकसाल अलग हो, भले ही सत्ता एक हो, तो मूल्य भिन्न हो सकता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि इलाहाबाद या अल्लाह आबाद और कलकत्ता के नोटों का चलन उत्तर-पूर्वी भारत के क्षेत्रों में बॉम्बे के नोटों की तुलना में अधिक है, और इसके विपरीत भी। कभी-कभी एक स्थान का नोट दूसरे स्थान पर उसके लिखित अंकित मूल्य से कई आने की कमी पर खरीदा जाता है; इसलिए, एक को दूसरे के बराबर नहीं माना जाएगा जब तक कि वे चलन में बराबर न हों।

जहाँ तक छठे [प्रश्न] का प्रश्न है: मैं कहता हूँ: हाँ, यह जायज़ है, जैसा कि अधिकांश शहरों में लोग इसके साथ व्यवहार करते हैं, और आप पहले ही इसकी जाँच/सत्यापन जान चुके हैं।

नोट: मैंने उत्तर में इतनी ही मात्रा पर संतोष किया था क्योंकि शुरुआत में जो मैंने स्थापित किया था उससे मामला स्पष्ट हो गया था। फिर, जब मैंने शोध प्रबंध (treatise) पूरा कर लिया, तो मुझे कुछ प्रतिष्ठित विद्वानों (अल्लाह सर्वशक्तिमान उनकी रक्षा करे) से समाचार मिला कि उन्होंने एक चर्चा में, विवाद के रूप में नहीं, उल्लेख किया कि अल्लामा इब्न आबिदीन ने 'रद्द अल-मुह्तार' में, इस शर्त के परिणामस्वरूप कि बिक्री मान्य होने के लिए, अनुबंध की वस्तु मूल्यवान संपत्ति (माल मुतक़व्वम) होनी चाहिए, यह उल्लेख किया है कि रोटी के एक टुकड़े की बिक्री मान्य नहीं है क्योंकि बिक्री के मान्य होने के लिए आवश्यक न्यूनतम मूल्य एक पैसा है।

पाद-टिप्पणी: यानी फाजिल हामिद अहमद मोहम्मद जदादी (सल्लमहु) - 12. पेज 411/715

علی اداء الدراہم خاصۃ لان النوط عددی غیر متفاوت اصلا اذا اتحد دار ضربہ، نعم اذا اختلف ولو اتحدت السلطنۃ فربما تختلف القیمۃ وذلک ان النوط الہ آباد او اللہ آباد و کلکتۃ یروج فی ممالك الھند المشرقیۃ الشمالیۃ اکثر مما یروج نوط بمبئی و بالعکس ربما یشتری نوط مکان فی اخر بنقص عدۃ آنات من رقمہ المکتوب علیہ فلا یعد احدھما مثل الآخر الا اذا استویا رواجا۔ ہی دینا آئے گا اور تلف کنندہ کو خاص روپیہ ادا کرنے پر مجبور نہ کیا جائے گا کہ نوٹ وہ چیز ہے جس کا لین دین گن کر ہوتا ہے اور دونوں نوٹوں میں اصلاً تفاوت نہیں سمجھا جاتا ہے جبکہ وہ ایک ٹکسال کے ہوں ہاں ٹکسال جب مختلف ہو تو اگرچہ سلطنت ایک ہو اکثر قیمت مختلف ہو جاتی ہے اور یہ اس لئے کہ نوٹ الہ آباد یا الہ آباد و کلکتہ کا چلن مشرقی شمالی ممالک ہند میں بمبئی کے نوٹ سے زیادہ ہے وبالعکس اور بیشتر ایک جگہ کا نوٹ دوسرے مقام پر کچھ آنوں کی کمی سے لیا جاتا ہے تو ایک دوسرے کے برابر شمار نہ کیا جائے گا تاوقتیکہ چلن میں برابر نہ ہوں۔

واما السادس جواب سوال ششم فاقول: نعم یجوز نعم کما تعاملہ الناس فی عامۃ البلاد وقد علمت تحقیقہ۔ فاقول: (پس میں کہتا ہوں) ہاں جائز ہے جیسا کہ تمام شہروں میں عمل درآمد ہے اور تم اس کی تحقیق جان چکے۔

تنبیہ: کنت قنعت فی الجواب بھذا القدر لوضوح الامر بما قررتہ فی الصدر فاذا نہیت الرسالۃ بلغنی عن بعض عہ الافاضل انہ حفظہ اللہ تعالی قال مذاکرۃ لامجادلۃ ان العلامۃ ابن عابدین ذکر فی رد المحتار تفریعا علی ان من شروط انعقاد البیع کون المعقود علیہ مالا متقوما انہ لم ینعقد بیع کسرۃ خبز لان ادنی القیمۃ التی تشترط تنبیہ: میں نے جواب میں اسی پر اکتفاء کی تھی اس لئے کہ ابتدائے کلام میں جو تقریر گزری اس سے امر واضح ہو چکا تھا پھر جب میں رسالہ تمام کر چکا مجھے بعض علماء

سلمہ اللہ تعالیٰ سے خبر پہنچی کہ انہوں نے بطور مذاکرہ نہ بطور مجادلہ یہ فرمایا کہ علامہ ابن عابدین نے ردالمحتار میں اس مسئلہ پر کہ بیع منعقد ہونے کی شرط مبیع کا مال متقوم ہونا ہے یہ تفریع ذکر کی کہ ایک ٹکڑے روٹی کی بیع باطل ہے کہ جواز بیع کے لئے کم سے کم ایک پیسہ قیمت

عہ: یعنی فاضل حامد احمد محمد جدادی سلمہ ۱۲۔

...for the permissibility of sale [even for] a 'fils' (small coin) [End]. And it is known that this amount of paper is not worth a 'fils', meaning the sale would be void and not contracted at all, let alone being forbidden or disliked. I say: And with Allah is the guidance, he said this before reading my treatise. Therefore, I wished that - may his Lord keep him safe - he had read it and become aware of its contents. The answer is obvious from considering his statement "it is not worth a 'fils'." There is a difference between "it is not worth" and "it was not worth," because now it is worth a hundred or a thousand. The consideration is for the current state, not for the origin. Do you not see that the sale of clay and earthen vessels, large and small, from jars and bowls to hookah heads, is common and widespread among the general public of Muslims? No one objects to it, even though their origin is dust, and dust is not wealth. Rather, if the origin were considered, the problem of the 'fils' used as an argument would return against itself with a deficiency, as you have learned that a piece of copper weighing one 'fils' is never worth a 'fils', nor does it even reach half of it. For this reason, counterfeiters were fond of making molds like those of the mint...

...is a condition [End]. And it is clear that such a piece of paper is not worth one 'paisa' (penny), so the sale of a note should be void, as it has not happened at all, let alone being forbidden or disliked. I say: And with Allah is the guidance (I say and guidance is from Allah the Almighty), this scholar said this before seeing my treatise, and for this reason, I wished that I wish he had seen my treatise and become aware of its subjects. The answer to the objection is clear from his own statement that this piece of paper is not [worth] a 'paisa', for there is a clear difference between these two points: that it is not [worth] a 'paisa' or it was not [worth] a 'paisa'. Because now it is [worth] a hundred rupees or a thousand rupees, and the current state of a thing is considered, not what it was originally. Don't you see that the sale of vessels made of baked and unbaked clay, from small and large balls and troughs to hookahs, is prevalent and well-known among all Muslims? And no one objects to it, even though their origin is clay, and clay is not wealth. If we look at the origin, then the 'paisa' issue itself would be deficient in its own self, because you have come to know that a copper plate equal in weight to one 'paisa' is never worth one 'paisa', nor even a 'dhela' (half-paisa). That is why people have a great habit of casting 'paisa' by making molds like a mint and melting copper in them...

[1] Radd al-Muhtar, Book of Sales, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/5.

...बिक्री की वैधता के लिए एक 'फ़िल्स' (छोटा सिक्का) [समाप्त]। और यह ज्ञात है कि कागज का यह टुकड़ा एक 'फ़िल्स' के बराबर नहीं है, जिसका अर्थ है कि बिक्री अमान्य होगी और बिल्कुल भी अनुबंधित नहीं होगी, हराम या मकरूह होने की तो बात ही छोड़ दें। मैं कहता हूँ: और अल्लाह की मदद से, उन्होंने यह मेरी ग्रंथ पढ़ने से पहले कहा था। इसलिए, मेरी इच्छा थी कि - उनके प्रभु उन्हें सुरक्षित रखें - उन्होंने इसे पढ़ा होता और इसकी सामग्री से अवगत होते। उत्तर उनके कथन "यह एक फ़िल्स के बराबर नहीं है" पर विचार करने से स्पष्ट है। "बराबर नहीं है" और "बराबर नहीं था" के बीच एक अंतर है, क्योंकि अब यह सौ या हजार के बराबर है। विचार वर्तमान स्थिति के लिए है, मूल के लिए नहीं। क्या आप नहीं देखते कि मिट्टी के बर्तनों की बिक्री, बड़े और छोटे, घड़ों और कटोरे से लेकर हुक्के की चिलम तक, आम मुसलमानों के बीच प्रचलित और व्यापक है? कोई भी इसका विरोध नहीं करता है, भले ही उनका मूल धूल हो, और धूल धन नहीं है। बल्कि, यदि मूल पर विचार किया जाए, तो तर्क के रूप में उपयोग किए जाने वाले 'फ़िल्स' की समस्या स्वयं के विरुद्ध कमी के साथ वापस आ जाएगी, जैसा कि आपने जाना है कि एक 'फ़िल्स' के वजन के बराबर तांबे का टुकड़ा कभी भी एक 'फ़िल्स' के बराबर नहीं होता है, और न ही यह उसके आधे तक पहुँचता है। इसी कारण से, जालसाज टकसाल के सांचों जैसे सांचे बनाने के शौकीन थे...

...होना शर्त है [समाप्त], और स्पष्ट है कि कागज का इतना टुकड़ा एक पैसे के मूल्य का नहीं है, तो नोट की बिक्री बातिल (शून्य) होनी चाहिए कि असल में हुई ही नहीं, हराम या मकरूह होना तो दूर की बात है। अक़ूल (मैं कहता हूँ): वबिल्लाहित तौफीक (मैं कहता हूँ और तौफीक अल्लाह तआला से है) उन आलिम ने यह बात मेरा रिसाला (ग्रंथ) देखने से पहले कही और इसी लिए मैंने तमन्ना की कि काश वह मेरा रिसाला देख लेते और इसके मज़ामीन (विषयों) पर मुत्तला (अवगत) होते और एतराज़ (आपत्ति) का जवाब तो खुद उनके इसी कहने ही से ज़ाहिर है कि यह पर्चा कागज़ एक पैसे का नहीं है कि इन दोनों बातों में खुला फर्क है कि एक पैसे का नहीं है या एक पैसे का न था इसलिए कि अब तो वह सौ रुपये और हज़ार रुपये का है और शै (वस्तु) की हालत मौजूदा देखी जाती है न यह कि असल में क्या थी। क्या नहीं देखते कि पकी और कच्ची मिट्टी के बर्तन छोटे बड़े गोली और कूंडे से ले कर चिलम तक उन की बैअ (बिक्री) तमाम मुसलमानों में राइज व मारूफ है और कोई इस पर इंकार नहीं करता हालांकि उन की असल मिट्टी है और मिट्टी माल नहीं अगर असल को देखें तो वह पैसा का मसला खुद अपने ही नफ्स का नाकिस होगा इसलिए कि तुम्हें मालूम हो चुका कि तांबे का

पत्तर जो वज़न में एक पैसा के बराबर हो हर गिज़ एक पैसे बल्कि धेले का भी नहीं होता और इसलिए प्याकों को पैसा ढालने की बहुत लत होती है टक्साल की तरह सांचा बना कर तांबा गला कर इस में...

[1] रद अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 4/5।

لجواز البیع فلس اھ [1] ومعلوم ان ھذا القدر من القرطاس لا یساوی فلسا ای فیکون البیع باطلا غیر منعقد اصلا فضلا عن الحرمۃ والکراھۃ_ اقول: و باللہ التوفیق ھذا قالہ قبل ان یطالع رسالتي ولذلك وددت انہ سلمہ ربہ طالعھا واطلع علی ما فیھا والجواب ظاھر بملاحظۃ قولہ لا یساوی فلسا فبون بین بین لا یساوی ولم یکن یساوی لانہ الآن یساوی مائۃ و الفا وا لنظر للحال لا للاصل الا تری ان بیع اواني الخزف والطین کبارھا وصغارھا من الحب والجفنۃ الي نحو رأس الشیشۃ شائع ذائع بین عامۃ المسلمین ولم ینکرہ احد مع ان اصلہ تراب والتراب لیس بمال بل لو نظر للاصل لعادت مسألۃ الفلس المتمسك بھا علی نفسھا بالنقص لما علمت ان قطعۃ نحاس بوزن فلس لا تساوی فلسا قط بل لا تبلغ نصفہ ایضا. و لذا اولعت المجازفون باصطناع قوالب کقالب دار الضرب

ہونا شرط ہے انتہی، اور ظاہر ہے کہ اتنا ٹکڑا کاغذ کا ایک پیسہ کی قدر نہیں تو نوٹ کی بیع باطل ہونا چاہئے کہ اصلاً ہوئی ہی نہیں، حرام یا مکروہ ہونا تو در کنار، اقول: وباللہ التوفیق (میں کہتا ہوں اور توفیق اللہ تعالیٰ سے ہے) ان عالم نے یہ بات میرا رسالہ دیکھنے سے پہلے کہی اور اسی لئے میں نے تمنا کی کہ کاش وہ میرا رسالہ دیکھ لیتے اور اس کے مضامین پر مطلع ہوتے اور اعتراض کا جواب تو خود ان کے اس کہنے ہی سے ظاہر ہے کہ یہ پرچہ کاغذ ایک پیسہ کا نہیں ہے کہ ان دونوں باتوں میں کھلا فرق ہے کہ ایک پیسہ کا نہیں ہے یا ایک پیسہ کا نہ تھا اس لئے کہ اب تو وہ سو روپے اور ہزار روپے کا ہے اور شے کی حالت موجودہ دیکھی جاتی ہے نہ یہ کہ اصل میں کیا تھی، کیا نہیں دیکھتے کہ پکی اور کچی مٹی کے برتن چھوٹے بڑے گولی اور کونڈے سے لے کر چلم تک ان کی بیع تمام مسلمانوں میں رائج و معروف ہے اور کوئی اس پر انکار نہیں کرتا حالانکہ ان کی اصل مٹی ہے اور مٹی مال نہیں اگر اصل کو دیکھیں تو وہ پیسہ کا مسئلہ خود

اپنے ہی نفس کا ناقص ہوگا اس لئے کہ تمہیں معلوم ہو چکا کہ تانبے کا پتر جو وزن میں ایک پیسہ کے برابر ہو ہر گز ایک پیسے بلکہ دھیلے کا بھی نہیں ہوتا اور اسلئے پیاکوں کو پیسہ ڈھالنے کی بہت لت ہوتی ہے ٹکسال کی طرح سانچہ بنا کر تانبا گلا کر اس میں

[1] رد المحتار كتاب البيوع دار احياء التراث العربي بيروت ۴ / ۵

Fatawa-e-Razvia (Volume 17)

[Arabic Column] They melt copper and shape it into coins (fulus), earning double what they spent, saying it is more profitable than minting silver coins (Rubabi). Looking at the origin, the coin itself isn't worth a coin, so it wouldn't be valued property (mal mutaqawwim). How then can it be a price or value? Anyone who reflects on the discussion of a piece of paper with knowledge that we presented will know that a thing is judged by its current state, not what it used to be. Do you not see that a scholar is honored by Shariah, reason, and custom, without regard to the fact that originally he was among those about whom Allah Almighty said: "And Allah brought you forth from the wombs of your mothers while you knew nothing" [Quran 16:78]. This is only because, through the occurrence of a quality in him, he became valuable in the sight of Allah and people after not being so. Similarly, a piece of paper becomes valuable due to the knowledge written upon it, and a banknote (note) becomes valuable due to the numbering and printing that attracts desires for its utility. Hearts incline towards it, and it becomes a medium for giving and withholding. The objection that it does not circulate in all countries has no weight, for this is not a requirement for wealth (maliyat) according to anyone.

[Urdu Column] They put [copper] so that it becomes money, and they get double the profit compared to what they spend, and they say it is more beneficial than minting rupees. If one looks at the origin, then a single paisa is not even worth a paisa, so if it is not valued property, how can it be price and value? And the matter of the paper mentioned above—whoever sees it will surely believe that the present state of a thing is considered, not its past state. Do you not see that in Shariah, intellect, and custom, a scholar is revered, and there is no regard to the fact that he was originally from those about whom the Lord Almighty said: "Allah is He Who brought you out from the bellies of your mothers in such a state that you knew nothing." This is only because such a quality has developed in him, due to which he has gained honor in the eyes of the Creator and the creation, which he did not have before. Likewise, that leaf of knowledge, because that knowledge was written in it, and similarly the note, which, due to its benefit, drew desires towards it, and temperaments began to incline towards it, and giving and withholding (trading) started in it. And this objection has no reality that a note does not circulate in all cities, for this is not considered a prerequisite for value by anyone.

[Footnote] 1. Al-Quran Al-Karim 16/78

[अरबी कॉलम] वे तांबे को पिघलाते हैं और उसे सिक्कों (फ़ुलूस) में बदल देते हैं, और जितना उन्होंने खर्च किया उससे दोगुना लाभ कमाते हैं, और कहते हैं कि यह चाँदी के सिक्के ढालने से अधिक लाभदायक है। मूल रूप से देखा जाए तो सिक्का स्वयं एक सिक्के के बराबर नहीं है, इसलिए वह मूल्यवान संपत्ति (माल मुतक़व्विम) नहीं होगा। फिर वह मूल्य और कीमत कैसे हो सकता है? जिसने ज्ञान के कागज की उस चर्चा पर विचार किया है जो हमने पहले प्रस्तुत की है, वह जान जाएगा कि किसी वस्तु को उसकी वर्तमान स्थिति के अनुसार देखा जाता है, न कि उस स्थिति के अनुसार जो वह पहले थी। क्या आप नहीं देखते कि शरीयत, बुद्धि और प्रथा में एक विद्वान (आलिम) का सम्मान किया जाता है, और इस पर ध्यान नहीं दिया जाता कि वह मूल रूप से उन लोगों में से है जिनके बारे में अल्लाह तआला ने फरमाया है: "और अल्लाह ने तुम्हें तुम्हारी माताओं के पेट से इस हाल में निकाला कि तुम कुछ नहीं जानते थे" [कुरान 16:78]। यह केवल इसलिए है क्योंकि उसमें एक गुण के उत्पन्न होने के कारण वह अल्लाह और लोगों की दृष्टि में मूल्यवान हो गया, जबकि पहले ऐसा नहीं था। इसी प्रकार, ज्ञान का एक कागज उसमें लिखे गए ज्ञान के कारण मूल्यवान हो जाता है, और इसी प्रकार बैंक नोट (नोट) उस नंबरिंग और छपाई के कारण मूल्यवान हो जाता है जिसने अपने लाभ के कारण लोगों की इच्छाओं को अपनी ओर आकर्षित किया। मन उसकी ओर झुकने लगा और उसमें लेन-देन (देना और रोकना) शुरू हो गया। और इस आपत्ति का कोई महत्व नहीं है कि नोट सभी शहरों में नहीं चलता, क्योंकि यह किसी के भी नज़दीक धन (मालियत) के लिए आवश्यक शर्त नहीं है।

[उर्दू कॉलम] वे [तांबा] डालते हैं ताकि वह पैसा बन जाए, और उन्हें खर्च की तुलना में दोगुना लाभ मिलता है, और वे इसे रुपये ढालने से अधिक लाभदायक बताते हैं। यदि मूल पर विचार करें, तो एक पैसा स्वयं एक पैसे का भी नहीं है, तो यदि वह मूल्यवान संपत्ति नहीं है, तो वह कीमत और मूल्य कैसे हो सकता है? और कागज की बात जो ऊपर गुजरी—जो इसे देखेगा वह निश्चित रूप से विश्वास करेगा कि वस्तु की वर्तमान स्थिति देखी जाती है, न कि पिछली स्थिति। क्या आप नहीं देखते कि शरीयत, बुद्धि और लोक-व्यवहार में विद्वान का सम्मान है, और इस पर विचार नहीं किया जाता कि वह मूल रूप से उन लोगों में से है जिनके बारे में रब अज़्ज़वजल ने फरमाया कि अल्लाह वह है जिसने तुम्हें तुम्हारी माताओं के पेट से इस हाल में पैदा किया कि तुम कुछ नहीं जानते थे। तो यह इसी कारण से है कि उसमें एक ऐसा गुण पैदा हो गया जिसके कारण वह सृष्टा और सृष्टि सभी के निकट उस सम्मान का पात्र बन गया जो पहले नहीं था। इसी तरह वह ज्ञान का पन्ना, इस कारण कि उसमें

वह ज्ञान लिख दिया गया, और इसी तरह नोट, जिसने लाभ के कारण इच्छाओं को अपनी ओर खींच लिया, और स्वभाव उसकी ओर झुकने लगे, और उसमें देना और रोकना (व्यापार) जारी हो गया। और इस आपत्ति में कोई वास्तविकता नहीं है कि नोट सभी शहरों में नहीं चलता, क्योंकि यह किसी के भी नज़दीक मालियत (मूल्य) के लिए अनिवार्य नहीं है।

[पाद लेख] 1. अल-क़ुरान अल-करीम 16/78

[عربی عبارت] یذیبون النحاس ویقلبونه فیها فیصیر فلوساً و یربحون به ضعف ما خسروا ویقولون انه انفع من ضرب الربابی فبالنظر للأصل لا یساوی الفلس نفسه فلساً فلا یکون مالاً متقوماً فکیف یکون قیمة وثمناً ومن تأمل حدیث ورقة علم الذی قدمنا علم ان الشیئ انما ینظر الیه بما هو علیه الآن لابقاء قد کان الاتری ان العالم معظم شرعاً وعقلاً وعرفاً ولا نظر الی انه في الاصل من الذین قال اللہ تعالی فیهم "وَاللّٰهُ اَخْرَجَكُمْ مِّنْ بُطُوْنِ اُمَّهٰتِكُمْ لَا تَعْلَمُوْنَ شَیْئًا" ۱ و ما ذلك الّا لانه بحدوث وصف فیه صار متقوماً عند اللہ و عند الناس بعد ان لم یکن وکذلك ورقة العلم لما تجدد فیها من کتابة ذلك العلم وکذلك النوط لما حدث فیه بذاك الرقم و الطبع ما استجلب الرغبات الیه للنفع وصار یمیل الیه الطبع ویجری فیه البذل والمنع ولا قیمة للایراد بأنه لا یمشی فی کل البلاد فان هذا لیس من لوازم المالیة عند احد

[اردو ترجمہ] ڈالتے ہیں کہ پیسہ ہو جاتا ہے اور اس میں جتنا خرچ ہوتا ہے اس سے دونا نفع مل جاتا ہے اور اسے روپے ڈھالنے سے زیادہ نافع بتاتے ہیں تو اصل پر نظر کرنے سے خود ایک پیسہ ایک پیسے کا نہیں تو مالِ متقوم نہ ہوا تو کیونکر قیمت اور ثمن ہو سکتا ہے اور ورق کی بات کہ اوپر گزری جو اسے دیکھے گا یقین کریگا کہ شے کی حالت موجودہ دیکھی جاتی ہے نہ کہ حالت گذشتہ ، کیا نہیں دیکھتے کہ شرع میں عقل میں عرف میں عالم کی تعظیم ہے اور اس پر نظر نہیں کہ وہ اصل میں ان لوگوں سے ہے جن کی نسبت رب عزوجل نے فرمایا کہ اللہ وہ ہے جس نے تمہیں تمہاری ماؤں کے پیٹ سے اس حال پر پیدا کیا کہ تم کچھ نہ جانتے تھے تو یہ اسی سبب سے ہے کہ اس میں ایک وصف ایسا پیدا ہو گیا جس کے سبب خالق و خلق سب کے نزدیک اس کو وہ عزت ہو گئی جو پہلے نہ تھی ایسے ہی وہ علم کا ورق اس وجہ سے کہ اس میں وہ علم لکھ دیا گیا اور ایسے ہی نوٹ جس نے نفع کے باعث رغبتوں کو اس کی طرف کھینچ دیا اور طبیعتیں اس کی

طرف میل کرنے لگیں اور اس میں دینا اور روکنا جاری ہوا اور یہ اعتراض کچھ حقیقت نہیں رکھتا کہ نوٹ سب شہروں میں نہیں چلتا کہ یہ تو کسی کے نزدیک مالیت کو لازم

[حاشیہ] ۱ القرآن الکریم ۱۶/ ۷۸

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

Rather, this is the case with most minted currencies. Do you not see that the fives, tens, and hallalas prevalent here (in the blessed Arab lands) do not circulate in India at all? Similarly, Indian coins do not circulate here. This is unlike banknotes; for Indian notes are current here by observation, and some depreciation does not prevent circulation nor necessitate a slump. In fact, I myself exchanged an English note marked with the amount of five hundred rupees for thirty-three sovereigns (gold coins) and five rupees in this city of safety (Makkah al-Mukarramah) during this Dhul-Hijjah. This was its exact full price, as those sovereigns were worth four hundred and ninety-five rupees, and together with those five rupees, they totaled exactly five hundred. Indeed, it is stated in Al-Kifayah at the beginning of the chapter on "Voidable Sales" (Al-Bay' al-Fasid) that an object's attribute of being wealth (maliyah) is established by all people treating it as wealth, or some of them doing so. Similar is mentioned in Fath al-Qadir, and in Radd al-Muhtar, citing Al-Bahr al-Ra'iq from Al-Kashshaf al-Kabir, it is narrated that "wealth is that towards which human nature inclines and which can be stored for the time of need," and wealth-status is established when all or some people designate it as wealth. Thus, it is clear that the issue of copper coins, which that scholar used as a basis, has no connection to our issue of banknotes; however, the weak servant...

---

1. Al-Kifayah with Fath al-Qadir, Chapter of Voidable Sales, Maktaba Nuria Razvia, Sukkur, 6/43.
2. Radd al-Muhtar, Book of Sales, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/3.

बल्कि, अधिकांश ढले हुए सिक्कों का यही हाल है। क्या आप नहीं देखते कि यहाँ (अरब शरीफ़ में) प्रचलित पाँच, दस और हल्ले के सिक्के भारत में बिल्कुल नहीं चलते? इसी तरह भारत के पैसे यहाँ नहीं चलते। यह बैंक नोटों के विपरीत है; क्योंकि भारतीय नोट यहाँ प्रत्यक्ष रूप से प्रचलित हैं, और कुछ मूल्य कम होना चलने के विपरीत नहीं है, और न ही इससे अप्रचलन अनिवार्य होता है। वास्तव में, मैंने इसी ज़ुल-हिज्जा में इसी अमान वाले शहर (मक्का मुकर्रमा) में एक अंग्रेज़ी नोट, जिस पर पाँच सौ की राशि लिखी थी, तैंतीस अशरफ़ियों और पाँच रुपयों में भुनाया। यह उसका बिल्कुल पूरा मूल्य था, क्योंकि वे अशरफ़ियाँ चार सौ पचानवे रुपयों की थीं, और उन पाँच रुपयों के साथ मिलकर पूरे पाँच सौ हो गए। और वास्तव में, 'अल-किफ़ाया' के'बातिल बिक्री' (अल-बय अल-फ़ासिद) अध्याय के आरंभ में कहा गया है कि किसी वस्तु की मालियत (धन होने का गुण) तब स्थापित होती है जब सभी लोग या उनमें से कुछ उसे माल (धन) मान लें। ऐसा ही 'फ़तह अल-क़दीर' में भी है, और 'रद्द अल-मुह्तार' में 'अल-बह्र अल-रैक' के हवाले से 'अल-कश्शाफ़ अल-कबीर' से उद्धृत किया गया है कि "माल वह है जिसकी ओर मानव स्वभाव का झुकाव हो और ज़रूरत के समय के लिए उसे संचित करना संभव हो", और मालियत तब सिद्ध होती है जब सभी या कुछ लोग उसे माल बताएँ। अत; यह स्पष्ट हो गया कि ताँबे के सिक्कों का वह मसला, जिसका उस विद्वान ने सहारा लिया था, हमारे नोटों के मसले से कोई संबंध नहीं रखता; मगर यह कमज़ोर बंदा...

---

1. अल-किफ़ाया, फ़तह अल-क़दीर के साथ, बातिल बिक्री का अध्याय, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 6/43।
2. रद्द अल-मुह्तार, किताबुल बुयू, दार इह्या अल-तुरास अल-अरबी, बेरुत, 4/3।

نہیں بلکہ سکہ کی اکثر چیزوں کا یہی حال ہے کیا نہیں دیکھتے کہ خمسے اور عشرے اور ہللے جو یہاں (عرب شریف میں) رائج ہے ہند میں اصلاً نہیں چلتے اور ایسے ہی ہندوستان کے پیسے یہاں نہیں چلتے، بخلاف نوٹ کے کہ ہندوستان کا نوٹ یہاں آنکھوں دیکھا رائج ہے اور کچھ کم کو بکنا چلنے کے منافی نہیں، نہ اس سے بے رواجی لازم ہے بلکہ میں نے اسی ذی الحجہ میں اسی امان والے شہر (مکہ معظمہ) میں ایک انگریزی نوٹ جس پر پانچ سو کی رقم لکھی تھی تینتیس اشرفی اور پانچ روپے کو بھنایا اور یہ اس کا پورا ثمن ہوا کہ وہ اشرفیاں چار سو پچانوے روپے کی ہوئیں اور وہ ان پانچ روپوں سے مل کر پورے پانچ سو ہو گئے اور بیشک کفایہ کی اوائل باب بیع فاسد میں فرمایا کہ شیئی کا مال ہونا یوں ہوتا ہے کہ سب لوگ اسے مال بنائیں یا بعض انتہی، اور ایسا ہی فتح القدیر میں ہے اور ردالمحتار میں بحوالہ البحر الرائق کشف کبیر سے نقل کیا کہ مال وہ ہے جس کی طرف طبیعت میل کرے اور وقت حاجت کے لئے اس کا اٹھا رکھنا ممکن ہو اور مالیت یوں ثابت ہوتی ہے کہ سب لوگ یا بعض اسے مال بتائیں انتہی، تو ظاہر ہو گیا کہ وہ پیسہ کا مسئلہ جس سے ان عالم نے تمسک کیا ہمارے مسئلہ نوٹ سے کچھ علاقہ نہیں رکھتا مگر بندۂ ضعیف

---

1 الکفایۃ مع فتح القدیر باب البیع الفاسد مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۴۳ 2 رد المحتار کتاب البیوع دار احیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۳

Fatawa-e-Razvia (Volume 17)

[Arabic Column]: It is desirable to uncover the reality of its state as well, lest one be deceived by it in another instance, along with what it contains of restricting what the pure Sharia has expanded. I say: and from Him I seek help. The origin of this subsidiary issue is from 'Al-Qunya'. 'Radd al-Muhtar' quoted it from 'Al-Bahr', and 'Al-Bahr' quoted it from it (Al-Qunya). His student, Al-Allamah Al-Ghazzi, followed him and went so far as to include it in his text in 'Mutafarriqat al-Buyu' before 'As-Sarf', although its origin, namely 'Ad-Durar wal-Ghurar', is devoid of it. Its commentator, Al-Allamah Al-Alai, referred it back to 'Al-Qunya'. Rather, the author himself admitted it in his commentary 'Minah al-Ghaffar', saying after mentioning it as a text: "He also quoted it in Al-Qunya." End quote. Meaning, just as he quoted the previous ruling in it, which is the validity of selling and gifting large quantities of pigeon droppings. 'Al-Qunya' is well-known for the weakness of its narrations. Scholars have explicitly stated that when 'Al-Qunya' contradicts famous books, it is not accepted. Rather, they have stipulated that if 'Al-Qunya' contradicts legal principles (Qawa'id), it is not accepted unless it is supported by another reliable narration from elsewhere. Consideration is given to the original source from whom it is reported, not the reporter or the abundance...

[Urdu Column]: [He] wishes that the state of this issue be also revealed so that one is not deceived by it elsewhere, despite what is in it, that he constricted something that the pure Sharia had made wide. I say: "wa bihi asta'in" (I say, and from Allah alone I seek help). The origin of this issue is from 'Qunya'. 'Radd al-Muhtar' quoted it from 'Bahr', and 'Bahr' from 'Qunya'. Their student Al-Allamah Ghazzi followed them and exaggerated to the extent that he included this issue in his text 'Tanwir al-Absar' under 'Mutafarriqat al-Buyu' shortly before the book of 'As-Sarf', whereas the original of 'Tanwir', i.e., 'Durar-o-Ghurar', is devoid of it. Its commentator Al-Allamah Alai referred it back to 'Qunya'. In fact, the author himself admitted this in his commentary 'Minah al-Ghaffar'. After this passage of the text, he stated that it is also quoted in 'Qunya'. End quote. That is, just as the issue before it is also reported in 'Qunya', which is that the sale and gift of pigeon droppings in large quantities is valid. 'Qunya' is famous for the fact that its narrations tend to be weak. Scholars have clarified that when 'Qunya' contradicts famous books, it will not be acceptable. Rather, they have explicitly stated that if 'Qunya' contradicts rules/principles, it will not be acceptable until another reliable report is found in its support. Consideration

is given to the source from whom it is reported, not the reporter or the [number of] reports...

[Footnote]: 1. Minah al-Ghaffar Sharh ad-Durr al-Mukhtar

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

[अरबी स्तंभ]: यह वांछनीय है कि इसकी स्थिति की वास्तविकता को भी उजागर किया जाए ताकि कहीं और इससे धोखा न हो, साथ ही इसमें वह भी शामिल है जो शुद्ध शरिया ने विस्तारित किया था उसे संकुचित करना। मैं कहता हूँ: और उसी से मैं मदद माँगता हूँ। इस गौण मसले का मूल 'अल-कुन्या' से है। 'रद्द अल-मुह्तार' ने इसे 'अल-बहर' से उद्धृत किया, और 'अल-बहर' ने इसे उससे (अल-कुन्या) उद्धृत किया। उनके छात्र, अल-अल्लामा अल-ग़ज़ी ने उनका अनुसरण किया और यहाँ तक कि इसे 'मुतफ़र्रिक़ात अल-ब्यू' में 'अस-सर्फ़' से पहले अपने मूल पाठ में शामिल कर लिया, हालाँकि इसका मूल, यानी 'अद-दुरर वल-ग़ुरर' इससे खाली है। इसके टीकाकार, अल-अल्लामा अल-अलई ने इसे 'अल-कुन्या' की ओर ही वापस कर दिया। बल्कि, स्वयं लेखक ने अपनी टीका 'मिनह अल-ग़फ़्फ़ार' में इसे स्वीकार किया है, उन्होंने इसे पाठ के रूप में उल्लेख करने के बाद कहा: "उन्होंने इसे अल-कुन्या में भी उद्धृत किया है।" अंत। यानी, जैसे उन्होंने इससे पहले वाले मसले को इसमें उद्धृत किया था, और वह यह है कि बड़ी मात्रा में कबूतर की बीट की बिक्री और दान (हिबा) सही है। 'अल-कुन्या' अपनी रिवायतों (वर्णनों) की कमज़ोरी के लिए प्रसिद्ध है। विद्वानों ने स्पष्ट रूप से कहा है कि जब 'अल-कुन्या' प्रसिद्ध पुस्तकों का खंडन करती है, तो इसे स्वीकार नहीं किया जाता है। बल्कि, उन्होंने यह भी निर्धारित किया है कि यदि 'अल-कुन्या' कानूनी सिद्धांतों (क़वाइद) के विरुद्ध है, तो इसे तब तक स्वीकार नहीं किया जाएगा जब तक कि अन्यत्र से किसी अन्य विश्वसनीय रिवायत द्वारा इसका समर्थन न किया जाए। श्रेय मूल स्रोत (मन्क़ूल अन्हु) को दिया जाता है, न कि वर्णनकर्ता (नाक़िल) या रिवायतों की बहुतायत को...

[उर्दू स्तंभ]: [वह] चाहता है कि इस मसले का हाल भी खोल दे ताकि कहीं दूसरी जगह इससे धोखा न खाए, बावजूद उस समय के जो इसमें है कि उसने ऐसी चीज़ को तंग कर दिया जिसे शरिया मुतहर ने विस्तृत फ़रमाया था। मैं कहता हूँ: "व बिही अस्तईन" (मैं कहता हूँ और अल्लाह ही से मदद माँगता हूँ)। इस मसले का मूल 'क़ुनिया' से है। 'रद्द अल-मुह्तार' ने इसे 'बहर' से नक़ल किया और 'बहर' ने 'क़ुनिया' से। उनके शागिर्द अल्लामा ग़ज़ी ने उनकी पैरवी की और यहाँ तक अतिशयोक्ति की कि इस मसले को अपने मतन 'तनवीर अल-अमसार' के'मुतफ़र्रिक़ात अल-ब्यू' में किताब 'अस-सर्फ़' से कुछ पहले शामिल फ़रमाया, जबकि 'तनवीर' का मूल यानी 'दुरर-ओ-ग़ुरर' इससे ख़ाली है। इसके शारेह (टीकाकार) अल्लामा अलई ने इसे 'क़ुनिया' ही की तरफ़ फेर दिया। बल्कि ख़ुद मुसन्निफ़ (लेखक) ने इसकी शरह (टीका) 'मिनह अल-ग़फ़्फ़ार' में इसका एतराफ़ फ़रमाया। मतन की इस

इबारत के बाद फ़रमाया कि इसे भी 'क़ुनिया' में नक़ल किया गया है। इति (समाप्त)। यानी जैसे इससे पहले वाला मसला भी 'क़ुनिया' में मन्क़ूल है, और वह यह है कि कबूतर की बीट जो कसीर (ज़्यादा) हो उसकी बैय (बिक्री) व हिबा (दान) सही है। और 'क़ुनिया' मशहूर है कि इसकी रिवायतें ज़ईफ़ (कमज़ोर) हुआ करती हैं और उलमा ने तसरीह (स्पष्ट) फ़रमाई कि 'क़ुनिया' जब मशहूर किताबों की मुख़ालफ़त करे तो मक़बूल न होगी, बल्कि नस (स्पष्ट आदेश) फ़रमाई है कि 'क़ुनिया' अगर क़वाइद की मुख़ालफ़त करे तो मक़बूल न होगी जब तक इसकी ताईद में कोई और नक़ल-ए-मोतमिद न पाई जाए। और एतबार मन्क़ूल अन्हु का होता है न कि नाक़िल का और नक़लों...

[पाद-टिप्पणी]: 1. मिनह अल-ग़फ़्फ़ार शरह अद-दुर्र अल-मुख़्तार

[عربی کالم]: یحب ان یکشف الحجاب عن حاله ایضاً کیلا یغتر به فی محل اخر مع ما فیه من تحجیر ما وسعه الشرع المطهر ، فاقول: و به استعین اصل الفرع للقنیة فرد المحتار نقله عن البحر و البحر نقله عنها و تبعه تلمیذه العلامة الغزی و بالغ حتی ادخله فی متنه فی متفرقات البیوع قبل الصرف مع خلو اصله اغنی الغرر والدرر عنه وقد رده شارحه العلامة العلائی الی القنیة بل اعترف به المصنف نفسه فی شرحه منح الغفار فقال بعد ایراده متناً نقله فی القنیة ایضاً اهـ[1] ای کما نقل المسألة قبله فیها وهی صح بیع خرء حمام کثیر وهبته ، والقنیة مشهورة بضعف الروایة وصرحوا انها اذا خالفت المشاهیر لم تقبل بل قد نصوا انها اذا خالفت القواعد لم تقبل مالم یعضدها نقل معتمد من غیرها والعبرة بالمنقول عنه لا بالناقل وبکثرة

[اردو کالم]: دوست رکھتا ہے کہ اس مسئلہ کا حال بھی کھول دے تاکہ کہیں دوسری جگہ اس سے دھوکا نہ کھائے باوجود اس وقت کے جو اس میں ہے کہ اس نے ایسی چیز کو تنگ کردیا جسے شرع مطہر نے وسیع فرمایا تھا، اقول: و به استعین (میں کہتا ہوں اور اللہ ہی سے مدد مانگتا ہوں) اصل اس مسئلہ کی قنیہ سے ہے رد المحتار نے اسے بحر سے نقل کیا اور بحر نے قنیہ سے اور ان کے شاگرد علامہ غزی نے ان کی متابعت کی اور یہاں تک مبالغہ کیا کہ اس مسئلہ کو اپنے متن تنویر الابصار کی متفرقات البیوع میں کتاب الصرف سے کچھ پہلے داخل فرمایا حالانکہ تنویر کی اصل یعنی درر و غرر اس سے خالی ہے اور اس کے شارح علامہ علائی نے اسے قنیہ ہی کی طرف پھیر دیا بلکہ خود مصنف نے اس کی شرح منح الغفار میں اس کا اعتراف فرمایا متن کی اس عبارت کے بعد فرمایا کہ اسے بھی قنیہ میں نقل کیا ہے انتہی یعنی جیسے اس سے پہلے مسئلہ بھی قنیہ میں منقول ہے اور وہ یہ ہے کہ کبوتر کی بیٹ جو کثیر ہو اس کی بیع و ہبہ صحیح ہے اور قنیہ

مشہور ہے کہ اس کی روایتیں ضعیف ہوا کرتی ہیں اور علماء نے تصریح فرمائی کہ قنیہ جب مشہور کتابوں کی مخالفت کرے مقبول نہ ہوگی بلکہ نص فرمائی ہے کہ قنیہ اگر قواعد کی مخالفت کرے تو مقبول نہ ہوگی جب تک اس کی تائید میں کوئی اور نقل معتمد نہ پائی جائے اور اعتبار منقول عنہ کا ہوتا ہے نہ ناقل کا اور نقلوں

[حاشیہ]: 1 منح الغفار شرح الدر المختار

Fatawa Razawiyya (17)

The abundance of quotations does not dispel the oddity (gharaba) of a ruling if the source of all of them is ultimately a single one, as I have explained all these matters in my book written on the etiquette of a Mufti, which I named 'Fasl al-Qada fi Rasm al-Ifta'. And it is ruled in 'Al-Zahiriyya' that standing after the prostration of recitation is recommended (mustahabb), just as it is before it. This ruling was quoted from it by 'Al-Tatarkhaniyya', 'Al-Ghunya', and 'Al-Mudammarat', and from them into 'Al-Bahr', and 'Al-Durr' etc. proceeded upon it. Despite this, it was ruled in 'Al-Bahr' that it is odd (ghareeb). Allama Shami said: The reason for its oddity is that the author of 'Al-Zahiriyya' was alone in mentioning this ruling, and for that reason, those after him attributed it only to him, end of quote (Ah). And you know that the branch in 'Al-Qunya' was not blessed with even this much quotation, nor is 'Al-Qunya' like 'Al-Zahiriyya', so where will the oddity go from it? And if only it were merely odd, it would be like a 'shadh' (anomalous) hadith, but this is like a 'munkar' (rejected) hadith because it contradicts both current established norms: the contradiction of famous books and the contradiction of the clear principles of the bright Sharia. As for the first, it is sufficient for you to see the statements in 'Al-Fath', 'Al-Shurunbulali', 'Al-Tahtawi', 'Radd al-Muhtar', and other reliable voluminous works: if one sells a piece of paper for a thousand rupees, it is permissible. May Allah grant them goodness and more.

[Arabic Transcription of the left column]: المنقول لاتندفع الغرابة اذالم يكن مستند هم الا واحدا كما بينت كل ذلك فى كتابى فى آداب المفتى سميته فصل القضاء فى رسم الافتاء وحكم فى الظهيرية استحباب القيام بعد سجود التلاوة مثل ماقبله ونقله مافى التتارخانية والغنية والمضمرات وعنها فى البحر ومشى عليه فى الدر وغيره ومع ذلك حكم فى البحر انه غريب قال الشامى وجه غرابته انه انفرد بذكره صاحب الظهيرية ولذا عزه من بعده اليها فقط اهـ 1 وانت تعلم ان فرع القنية لم يرزق من النقول هذا القدر ايضا ولا القنية كالظهيرية فانى تغرب عنه الغرابة ويباليته لم يكن الا غريبا فيكون كالشاذلكنه كالمنكر لان كلتا الخالفتين نقد وقته مخالفة المشاهير ومخالفة قواعد الشرع المنير. اما الاولى فقد كان ناهيك فيها قول الفتح والشرنبلالى والطحطاوى ورد المحتار وغيرها من معتمدات الاسفار لو باع كاغذة بالف يجوز 2 وجزاهم الله الحسنى وزيادة

1 Radd al-Muhtar, Chapter on Sajdah al-Tilawah, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 1/515 2 Fath al-Qadir, Book of Al-Kafalah, Maktaba Nuriya Razawiyya, Sukkur, 6/324

फतावा रज़विया (17)

उद्धरणों की बहुलता किसी मसले की विचित्रता (ग़राबत) को दूर नहीं करती है, यदि उन सबका मूल स्रोत केवल एक ही हो, जैसा कि मैंने इन सभी बातों का वर्णन अपनी उस पुस्तक में कर दिया है जो मुफ्ती के शिष्टाचार में लिखी गई, जिसका नाम मैंने 'फस्ल अल-कज़ा फी रस्म अल-इफ़्ता' रखा। और 'अल-ज़हीरिया' में यह हुक्म दिया गया है कि सजदा-ए-तिलावत के बाद भी क़याम मुस्तहब है, जैसा कि उससे पहले होता है। यह मसला उससे 'ततारख़ानिया', 'ग़ुनिया' और 'मुज़मरात' ने नक़ल किया, और उनसे 'बहर' और 'दुरर' आदि में इसी पर चला गया। इसके बावजूद 'बहर' में हुक्म दिया गया कि वह ग़रीब (विचित्र) है। अल्लामा शामी ने फरमाया: इसकी विचित्रता का कारण यह है कि अकेले 'ज़हीरिया' के लेखक ने इस मसले का उल्लेख किया, और इसी कारण बाद वालों ने इसे केवल उन्हीं की ओर संबद्ध किया, इति। और आप जानते हैं कि 'क़ुनिया' की इस शाखा को इतने उद्धरण भी प्राप्त नहीं हुए, और न ही 'क़ुनिया', 'ज़हीरिया' की तरह है, तो उसकी विचित्रता कहाँ जाएगी? और काश वह केवल ग़रीब ही होता, तो वह 'शाज़' हदीस के समान होता, लेकिन यह तो 'मुनकर' हदीस के समान है क्योंकि यह दोनों मौजूदा नक़द (स्थापितियों) के विपरीत है: प्रसिद्ध पुस्तकों का विरोध और रौशन शरीयत के नियमों का विरोध। जहाँ तक पहले का संबंध है, तो आपके लिए 'फत्ह', 'शुरुनबुलाली', 'तहतावी', 'रद्द अल-मुह्तार' और अन्य विश्वसनीय पुस्तकों के कथन ही पर्याप्त हैं कि यदि किसी ने एक काग़ज़ हज़ार रुपये में बेचा तो यह जायज़ है। अल्लाह तआला उन्हें भलाई और उससे अधिक प्रदान करे।

1 रद्द अल-मुह्तार, बाब सुजूद अल-तिलावत, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 1/515 2 फत्ह अल-क़दीर, किताब अल-कफ़ाला, मकतबा नूरिया रज़विया, सक्खर, 6/324

पृष्ठ 416/715

کی کثرت سے مسئلہ کی غرابت دفع نہیں ہوتی جبکہ ایک ہی منقول عنہ ان سب کا منتہی ہو جیسے کہ میں نے ان تمام باتوں کا بیان اپنی اس کتاب میں کر دیا جو آداب مفتی میں لکھی جس کا نام میں نے فصل القضاء فی رسم الافتاء رکھا، اور ظہیریہ میں حکم فرمایا کہ سجدہ تلاوت کے بعد بھی قیام مستحب ہے جیسا اس سے پہلے اور یہ مسئلہ اس سے تاتار خانیہ اور قنیہ اور مضمرات نے نقل کیا اور ان سے بحر میں اور در وغیرہ میں اسی پر چلے باوصف اس کے بحر میں حکم فرمایا کہ وہ غریب ہے۔ علامہ شامی نے فرمایا: اس کی غرابت کی وجہ یہ ہے کہ تنہا ظہیریہ نے اس مسئلہ کو ذکر کیا اور اسی واسطے بعد والوں نے فقط اس کی طرف اسے نسبت کیا انتہی، اور تو جانتا ہے کہ قنیہ کے اس مسئلہ کو اتنی نقول بھی نصیب نہ ہوئیں اور نہ قنیہ مثل ظہیریہ کے ہے تو غرابت اس سے کہاں جائیگی اور کاش وہ صرف غریب ہی ہوتا تو حدیث شاذ کے مثل ہوتا مگر یہ تو مثل حدیث منکر کے ہے اس لئے کہ دونوں مخالفین اس کی نقد وقت ہیں کتب مشہورہ کی بھی مخالفت اور قواعد شرع روشن کی بھی مخالفت پہلے مخالفت کے ثبوت کو یہی بس تھا کہ فتح القدیر اور شرنبلالی اور طحطاوی اور ردالمختار وغیرہ معتمد کتابوں میں فرمایا اگر ایک کاغذ ہزار روپے کو بیچا تو جائز ہے تو اللہ تعالٰی انہیں بھلائی اور اس سے زیادہ

المنقول لاتندفع الغرابة اذالم یکن مستند هم الا واحدا کما بینت کل ذلك فی کتابی فی آداب المفتی سمیته فصل القضاء فی رسم الافتاء وحکم فی الظهیریة استحباب القیام بعد سجود التلاوة مثل ماقبله ونقله مافی التتارخانیة والغنیة والمضمرات وعنها فی البحر ومشی علیه فی الدر وغیره ومع ذلك حکم فی البحر انه غریب قال الشامی وجه غرابته انه انفرد بذکره صاحب الظهیریة ولذا عزه من بعده الیها فقط اهـ 1

وانت تعلم ان فرع القنیة لم یرزق من النقول هذا القدر ایضا ولا القنیة کالظهیریة فانی تغرب عنه الغرابة

وياليته لم يكن الا غريبا فيكون كالشاذلكنه كالمنكر لان كلتا الخالفتين نقد وقته مخالفة المشاهير ومخالفة قواعد الشرع المنير. اما الاولى فقد كان ناهيك فيها قول الفتح والشرنبلالى والطحطاوى ورد المحتار وغيرها من معتمدات الاسفار لو باع كاغذة بالف يجوز 2 وجزاهم الله الحسنى وزيادة

1 رد المحتار باب سجود التلاوة دار احياء التراث العربى بيروت ١ / ٥١٥ 2 فتح القدير كتاب الكفالة مكتبه نوريه رضويه سكهر ۶ / ٣٢۴

Fatawa Rizvia, Volume 17

[Arabic Text] Regarding the addition of the 'ta' of unity in 'kaghizah' (a piece of paper), but here there is something else, more sublime and greater, which cannot be rejected, nor can any eye look down upon it, nor can delusions reach its dust. This is the consensus (Ijma) of all our Imams in the narrations manifest from them, and the agreement of the core texts (mutun) of the school, its commentaries, and its fatwas on the permissibility of selling one date for two dates, and one walnut for two walnuts. In 'Al-Fath' and 'Al-Durr', it was added: one needle for two needles. Everyone knows that none of these is worth a 'fils' (a small coin/paisa). In our lands, a good number of dates are sold for a fils, and here they are even cheaper. Similarly, walnuts are cheaper in our lands. There, you find needles for a fils, ranging from eight to twenty-five. This is a clear contradiction to all famous works, and rather to the texts of all the Imams of the school and the Researcher (Al-Muhaqqiq) where he stated it generally. Although Al-Muhaqqiq (Imam Ibn al-Humam) preferred the narration of Al-Mu'alla from Muhammad regarding the dislike (karahah) of selling one date for two dates, this is because of the inequality (tafadul), not because a date is not worth a fils. Thus, if one sold a date for...

[Urdu Text] Except that they added the 'ta' of unity to 'kaghiz' (meaning one paper), but here there is another thing, extremely sublime and grand, which cannot be rejected, nor can any eye be raised against it, nor can delusions reach its dust. And that is that all our Imams have reached a consensus (Ijma) in those narrations which are continuous and famous from them, and the core texts, commentaries, and fatwas of the school agree that selling one dry date for two dry dates and one walnut for two walnuts is permissible. And in 'Fath al-Qadir' and 'Durr al-Mukhtar', it was also added: one needle in exchange for two needles. And every person knows that none of these items is worth a paisa. In our cities, a reasonable count of dry dates is for one paisa, and here they are even cheaper, and likewise, walnuts are even cheaper in our cities. And in India, eight to twenty-five needles are available for one paisa. So this is a clear contradiction of that issue in 'Quniyah', rather to all the famous books and even the texts of all the Imams of the school. And the Absolute Researcher (Imam Ibn al-Humam), although he gave preference to the narration of Imam Mu'alla from Imam Muhammad that selling one dry date for two dry dates is disliked (makruh), that dislike is due to an excess (inequality), not because a dry date is of the value of one paisa...

[1] Durr al-Mukhtar, Chapter of Riba, Matba' Mujtabai, Delhi, 2/41

फ़तावा रज़विया, जिल्द 17

[अरबी पाठ] कागज़ में 'ता-ए-वहदत' (एकवचन का प्रत्यय) जोड़ने के संबंध में (यानी 'एक कागज़'), लेकिन यहाँ एक और चीज़ है जो अत्यंत महान और बड़ी है जिसे न तो ठुकराया जा सकता है, न कोई आँख उस पर उंगली उठा सकती है, और न ही भ्रम उसकी धूल तक पहुँच सकते हैं। और वह यह है कि हमारे सभी इमामों ने उन रिवायतों (वर्णनों) में जो उनसे मुतवातिर (लगातार) और प्रसिद्ध हैं, आम सहमति (इज्मा) व्यक्त की है। मज़हब (विचारधारा) के ग्रंथों, व्याख्याओं और फतवों में इस बात पर सहमति है कि एक छुहारे को दो छुहारों के बदले और एक अखरोट को दो अखरोट के बदले बेचना जायज़ है। 'फतह-अल-क़दीर' और 'दुर-ए-मुख्तार' में यह भी जोड़ा गया है कि दो सुइयों के बदले एक सुई बेचना भी जायज़ है। और हर कोई जानता है कि इनमें से कोई भी चीज़ एक पैसे (फ़िल्स) की कीमत की नहीं होती। हमारे शहरों में एक पैसे में अच्छी खासी संख्या में छुहारे मिलते हैं, और यहाँ वे और भी सस्ते हैं। इसी तरह अखरोट भी हमारे शहरों में बहुत सस्ते हैं। वहाँ एक पैसे में आठ से लेकर पच्चीस तक सुइयाँ मिलती हैं। तो यह 'कुनिया' के मसले का स्पष्ट विरोध है, बल्कि तमाम मशहूर किताबों और मज़हब के सभी इमामों के ग्रंथों के खिलाफ है। हालाँकि मुहाक़्क़िक़-ए-अली-उल-इतलाक (इमाम इब्न-ए-हुमाम) ने इमाम मुहम्मद से इमाम मुअल्ला की उस रिवायत को प्राथमिकता दी है कि दो छुहारों के बदले एक छुहारा बेचना मकरूह (नापसंद) है, लेकिन वह मकरूहियत एक अधिकता (तफादुल/बढ़ोतरी) के कारण है, न कि इसलिए कि एक छुहारे की कीमत एक पैसा नहीं है। अतः यदि कोई एक छुहारा बेचे...

[उर्दू पाठ] सिवाय इसके कि उन्होंने कागज़ में 'ता-ए-वहदत' बढ़ा दी (यानी एक कागज़), लेकिन यहाँ तो एक और चीज़ है निहायत जलील व अज़ीम कि न रद्द हो सके न उस पर कोई आँख उठा सके न औहाम इसकी गर्द पायें। और वो ये है कि हमारे तमाम अइम्मा ने इन रिवायतों में जो उनसे मुतवातिर व मशहूर हैं इज्मा फ़रमाया है और मतून व शुरूह व फ़तावा-ए-मज़हब का इत्तिफ़ाक़ है कि एक छुहारा दो छुहारों को और एक अखरोट दो अखरोटों को बेचना जायज़ है और फ़तह-अल-क़दीर व दुर-ए-मुख्तार में ये भी ज़ायद किया कि दो सुइयों के बदले एक सुई। और हर शख़्स जानता है कि इनमें से कोई चीज़ एक पैसा की नहीं होती, हमारे शहरों में माकूल गिनती के छुहारे एक पैसा के होते हैं और यहाँ और भी सस्ते हैं और ऐसे ही अखरोट और हमारे शहरों में ज़्यादा अरज़ां हैं और हिन्दुस्तान में एक पैसा की आठ से लेकर पच्चीस सुइयाँ मिलती हैं। तो इस मसला 'कुनिया' की ये सरीह मुख़ालिफ़त है तमाम कुतुब-ए-मशहूरा बल्कि नुसूस-ए-जमीअ अइम्मा-ए-मज़हब से। और

मुहाक़्क़िक़-ए-अली-उल-इतलाक (इमाम इब्न-ए-हुमाम) ने अगरचे इमाम मुहम्मद से इमाम मुअल्ला की इस रिवायत को तरजीह दी कि दो छुहारों के बदले एक छुहारा बेचना मकरूह है, मगर वो मकरूहियत एक ज़्यादती के सबब से है न इसलिए कि छुहारा एक पैसा की क़ीमत का...

---

[1] दुर-ए-मुख्तार, बाब-उर-रिबा, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 2/41

[عربی عبارت] علی زیادة تاء الوحدة فی کاغذة لکن ھھنا شیئ اخر اجل واکبر لا یرد ولا یرام ولا یمس غبارہ الاوھام وھو اجماع ائمتنا جمیعا فی الروایات الظاھرة عنھم و اطباق متون المذھب و شروحہ و فتاواہ علی جواز بیع تمرة بتمرتین و جوزة بجوزتین، وزاد فی الفتح و الدر ابرة بابرتین، وکل احد یعلم ان لیس شیئ منھا یسوی فلسا ففی بلادنا تکون عدة صالحة من التمر بفلس وھو ھھنا ارخص وکذلك الجوز وھو ارخص فی بلادنا وثمہ تجد الابر بفلس من ثمان الی خمس وعشرین فھذہ مخالفة بینة لجمیع المشاھیر بل لنصوص جمیع ائمة المذھب و المحقق حیث اطلق و ان رجح روایة المعلی عن محمد بکراھة تمرة بتمرتین لکنہ لاجل التفاضل لا لان تمرة لا یساوی فلسا فلو باع تمرة من...

[اردو عبارت] جزادے کہ انہوں نے کاغذ میں تائے وحدت بڑھادی (یعنی ایک کاغذ) لیکن یہاں تو ایک اور چیز ہے نہایت جلیل و عظیم کہ نہ رد ہوسکے نہ اس پر کوئی آنکھ اٹھا سکے نہ اوہام اس کی گرد پائیں، اور وہ یہ ہے کہ ہمارے تمام ائمہ نے ان روایات میں جوان سے متواتر و مشہور ہیں اجماع فرمایا ہے اور متون و شروح و فتاویٰ مذہب کا اتفاق ہے کہ ایک چھوہارہ دو چھوہاروں کو اور ایک اخروٹ دو اخروٹوں کو بیچنا جائز ہے اور فتح القدیر و در مختار میں یہ بھی زائد کیا کہ دو سوئیوں کے بدلے ایک سوئی، اور ہر شخص جانتا ہے کہ ان میں سے کوئی چیز ایک پیسہ کی نہیں ہوتی ہمارے شہروں میں معقول گنتی کے چھوہارے ایک پیسہ کے ہوتے ہیں اور یہاں اور بھی سستے ہیں اور ایسے ہی اخروٹ اور ہمارے شہروں میں زیادہ ارزاں ہیں اور ہندوستان میں ایک پیسہ کی آٹھ سے لے کر پچیس سوئیاں ملتی ہیں تو اس مسئلہ قنیہ کی یہ صریح مخالفت ہے تمام کتب مشہورہ بلکہ نصوصِ جمیع ائمہ مذہب سے اور محقق علی الاطلاق (امام ابن ہمام) نے اگرچہ

امام محمد سے امام معلیٰ کی اس روایت کو ترجیح دی کہ دو چھوہاروں کے بدلے ایک چھوہارا بیچنا مکروہ ہے مگر وہ کراہیت ایک زیادتی کے سبب سے ہے نہ اس لئے کہ چھوہارا ایک پیسہ کی قیمت کا...

---

۱ درمختار باب الربوا مطبع مجتبائی دہلی ۲/۴۱

[Arabic Column]: ...al-Burni with a date of al-Junayb, for example, the narration of al-Mu'alla did not touch it, nor the preference of the investigator. Furthermore, the narration only speaks of dislike (karaha), so where is the invalidity (butlan) and non-conclusion (adam al-in'iqad) that you were claiming? As for the second, I say: Most of the livelihood of the poor in the kingdom of India, despite its greatness and vastness (for its development in latitude is from eight degrees north of the equator to thirty-five degrees, and in longitude from sixty-six degrees east of Greenwich to ninety-two degrees), is through transactions in parts of a 'fuls' (a small copper coin) like half, a quarter, an eighth, and others. Many a poor person buys some vegetables for their condiment for half a 'fuls', pours sesame oil into it for half a 'fuls', buys all three spices for a quarter of a 'fuls', and garlic and onions together for a quarter of a 'fuls', and likewise salt for a quarter of a 'fuls'. Thus, the condiment is prepared for them for one and three-quarter 'fuls', and they eat it for lunch and dinner. They buy oil for their lamp for half a 'fuls' which lasts them from evening until near midnight, and a large bag of fresh water for half a 'fuls' - though not long ago it was for a third of a 'fuls' - and you can find a box of matches for half a 'fuls', and buy for their family from the fruits...

[Urdu Column]: ...it does not happen. So, for example, if one date of the 'Burni' type is sold for one date of the 'Junayb' type, then the narration of Mu'alla will have nothing to do with it, nor the preference of the investigator. Then that narration also says only that it is disliked (makruh); where has the claim gone that the sale is void and not concluded at all? As for the second disagreement, I say: (I say) the country of India which is so great and vast (whose latitude from the equator to the north is from eight degrees to thirty-five degrees, and longitude from Greenwich (which is the observatory of London) towards the east is from sixty-six degrees to ninety-two degrees), in it most of the poor's livelihood is from such buying and selling which is in parts of a 'paisa' like 'dhela', 'chhadam', 'damri' etc. So many poor buy some spinach for their curry for a 'dhela', and put sesame oil worth a 'dhela' in it, and all three spices for a 'chhadam', and garlic-onion for a 'chhadam', and similarly salt for a 'chhadam'. So, in one and three-quarter 'paisas', their pot is ready and they eat it for two meals, morning and evening. And they buy oil for their lamp for a 'dhela' which is enough for them from evening until midnight, and a big water-skin of sweet water for a 'dhela', and only a short time ago there were three skins for a 'paisa', and a box

of matches will be available to you for a 'dhela', and for their children, from the Indian fruits, among all...

Page 418 of 715

फतावी रज़विया - खंड १७

[अरबी कॉलम]: ...उदाहरण के लिए 'बर्नी' खजूर के बदले 'जुनैब' खजूर, इसे मुअल्ला के रिवायत ने स्पर्श नहीं किया और न ही अन्वेषक की प्राथमिकता ने। इसके अलावा, रिवायत केवल कराहत (नापसंदगी) की बात करती है, तो वह अमान्यता और अनुबंध का न होना कहाँ गया जिसका आप दावा कर रहे थे? जहाँ तक दूसरी बात का सवाल है, मैं कहता हूँ: भारत साम्राज्य में गरीबों की अधिकांश आजीविका, इसकी विशालता और विस्तार के बावजूद (इसका अक्षांशीय विस्तार भूमध्य रेखा के उत्तर में आठ डिग्री से पैंतीस डिग्री तक है और देशांतरीय विस्तार ग्रीनविच से पूर्व की ओर छियासठ से बानवे डिग्री तक है), 'फुल्स' (तांबे का सिक्का) के अंशों जैसे आधा, चौथाई, आठवां आदि के लेन-देन के माध्यम से है। कई गरीब अपने सालन के लिए आधे 'फुल्स' में सब्जियां खरीदते हैं, उसमें आधे 'फुल्स' का तिल का तेल डालते हैं, एक चौथाई 'फुल्स' में तीनों मसाले और एक चौथाई 'फुल्स' में लहसुन-प्याज एक साथ खरीदते हैं, और इसी तरह एक चौथाई 'फुल्स' का नमक। इस प्रकार, उनके लिए पौने दो 'फुल्स' में सालन तैयार हो जाता है, और वे इसे दोपहर और रात के भोजन में खाते हैं। वे अपने दीपक के लिए आधे 'फुल्स' का तेल खरीदते हैं जो शाम से आधी रात तक पर्याप्त होता है, और आधे 'फुल्स' में मीठे पानी की एक बड़ी मशक - हालांकि कुछ समय पहले यह एक तिहाई 'फुल्स' में थी - और आप आधे 'फुल्स' में माचिस की डिबिया पा सकते हैं, और अपने परिवार के लिए फलों में से...

[उर्दू कॉलम]: ...नहीं होता। तो अगर मान लें कि 'बर्नी' किस्म का एक छुआरा 'जुनैब' किस्म के एक छुआरे के बदले बेचा जाए, तो मुअल्ला के रिवायत से इसका कोई संबंध नहीं होगा और न ही अन्वेषक की प्राथमिकता से। फिर वह रिवायत भी तो केवल इतना ही कहती है कि यह मकरूह (नापसंद) है; बिक्री का बातिल (शून्य) होना और असल में संपन्न न होना, जिसका आप दावा कर रहे थे, वह कहाँ गया? रही दूसरी असहमति, मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) भारत देश जो इतना विशाल और विस्तृत है (जिसका अक्षांश भूमध्य रेखा से उत्तर की ओर आठ डिग्री से पैंतीस डिग्री तक है और देशांतर ग्रीनविच (लंदन की वेधशाला) से पूर्व की ओर छियासठ डिग्री से बानवे डिग्री तक है), इसमें अधिकांश गरीबों का जीवन निर्वाह उसी खरीद-फरोख्त से है जो पैसे के हिस्सों जैसे ढेला, छदाम, दमड़ी आदि से होती है। तो बहुत से गरीब अपने सालन के लिए कोई साग ढेले का खरीद लेते हैं और उसमें ढेले का तिलों का तेल डालते हैं और तीनों मसाले छदाम के और लहसुन-प्याज छदाम के, और इसी तरह छदाम का नमक, तो पौने दो पैसे में उनकी हाँडी तैयार हो जाती है और वे उसे सुबह और

शाम दो समय करके खा लेते हैं। और वे अपने चिराग के लिए ढेले का तेल खरीदते हैं जो शाम से आधी रात तक उनके लिए पर्याप्त होता है और मीठे पानी की बड़ी मशक ढेले की, और थोड़ा ही समय बीता कि एक पैसे में तीन मशकें थीं, और माचिस की डिबिया आपको ढेले में मिल जाएगी और अपने बच्चों के लिए हिंदुस्तानी मेवों में सबसे...

[عربی کالم]: البرنی بتمرة من الجنیب مثلا لم تمسه روایة المعلی ولا ترجیح المحقق ثم الروایة ایضاً لا تقول الا بالکراهة فاین البطلان وعدم الانعقاد الذي کنتم تدعون، و اما الثانیة فاقول : اکثر تعیش الفقراء في مملکة الهند علی کبرها واتساعها (فان عمارتها عرضا من ثمان درج شمالیة عن خط الاستواء الی خمس وثلثین درجة وطولاً من ست و ستین درجة شرقیة عن قرینص الی اثنتین و تسعین درجة) انما هو بالمبایعات باجزاء فلس نصف وربع وثمن وغیرها فرب فقیر یشتری لادامه شیئا من البقول بنصف فلس ویصب فیه دهن الشیرج بنصف فلس والتوابل الثلث جمیعاً بربع فلس والثوم والبصل معاً بربع فلس وکذا الملح بربع فلس فیتهیؤله الادام فی فلسین الا ربعاً ویأکله غداء وعشاء، ویشتری لسراجه الدہن بنصف فلس یکفیه من المساء الی قریب نصف اللیل وقربة کبیرة من الماء العذب بنصف فلس وقد کانت قبیل هذا بثلث فلس وتجد علبة الکبریت بنصف فلس ویشتری لعیاله من الذفواکه

[اردو کالم]: نہیں ہوتا تو اگر مثلاً ایک چھوہارہ قسم برنی کا قسم جنیب کے ایک چھوہارے سے بیچے تو اس سے نہ روایت معلیٰ کو کچھ تعلق ہوگا نہ ترجیح محقق کو ، پھر وہ روایت بھی تو اتنا ہی کہتی ہے کہ مکروہ ہے بیع باطل اور اصلاً منعقد نہ ہونا جس کا تمہیں دعویٰ تھا وہ کہاں گیا ، رہی دوسری مخالفت اقول : (میں کہتا ہوں) ملک ہند کہ اس قدر کبیر و وسیع ہے (جس کا عرض خط استواء سے شمال کی جانب آٹھ درجے سے پینتیس درجے تک ہے اور طول گرینچ سے (کہ لندن کی رصد گاہ ہے) مشرق کی جانب چھیاسٹھ درجے سے بانوے درجے تک ہے) اس میں اکثر فقراء کی معیشت اسی خرید و فروخت سے ہے جو پیسے کے حصے دھیلے چھدام دمڑی وغیرہ سے ہوتی ہے تو بہتیرے فقیر اپنے سالن کے لئے کوئی ساگ دھیلے کا خرید لیتے ہیں اور اس میں دھیلے کا تلوں کا تیل ڈالتے ہیں اور تینوں مسالے چھدام کے اور لہسن پیاز چھدام کے، اور یونہی

چھدام کا نمک ، تو پونے دو پیسے میں اس کی ہانڈی تیار ہو جاتی ہے اور اسے صبح و شام دو وقت کرکے کھا لیتا ہے اور اپنے چراغ کے لئے دھیلے کا تیل خریدتا ہے جو شام سے آدھی رات تک اس کے لئے کافی ہوتا ہے اور میٹھے پانی کی بڑی مشک دھیلے کو ، اور تھوڑا ہی زمانہ گزرا کہ پیسے کی تین مشکیں تھیں، اور دیا سلائی کی ڈبیا تمہیں دھیلے کو مل جائے گی اور اپنے بال بچوں کے لئے ہندوستانی میوؤں میں سب سے

Volume 17 Fatawa-e-Razvia

The famous fruit of India known to the Arabs as 'Anab' (with a fatha on the 'ayn' and a sukun on the 'nun'), in Persian as 'Anba', and in Hindi as 'Aam' (mango). A large quantity of it is available for half a fulus (a small coin/dhela). Similarly, Jamun and Tamarind are available for a quarter fulus (chhadam). If someone is accustomed to betel leaf (pan) and tobacco, half a fulus worth of betel leaf will suffice him for a day and a night. Catechu, areca nut, and chewing tobacco each cost a quarter of a quarter fulus (chhadam), so his daily requirement is met for one and a quarter paisa. If he smokes a hookah, tobacco worth half a fulus is sufficient. Similarly, many items are sold in fractions of a paisa, even down to a damri (one-eighth of a paisa) or half a damri. If this were not the case, affairs would become constrained and burdensome for those of limited means, to the extent that they could not bear it. These transactions, which are prevalent among thousands upon thousands of Muslims—if we were to invalidate them and mandate that they never buy anything for less than a fulus, even though their needs are met for a quarter or an eighth of it—this would be placing a heavy burden upon them. This tolerant, easy, and bright Sharia only came to remove such burdens. Often, they would not even have that amount of money. For instance, the gravy that was prepared for one and three-quarter paisa would now not be prepared for less than two annas (eight fulus). And the betel leaf preparation that used to be completed for one and a quarter paisa would now cost an anna (four fulus). Deduce from this: when a person cannot find more than two paisa for his cooking pot and you obligate him to spend two annas (eight fulus), tell me what he should do? Should he [eat] plain...

Page 419 of 715

जिल्द 17 फ़तावा-ए-रज़विया

भारत का प्रसिद्ध फल जिसे अरब 'अनब' (ऐन पर फ़तह और नून पर सुकून के साथ) कहते हैं, फ़ारसी में 'अंबा' और हिंदी में 'आम', इसकी बड़ी मात्रा आधा फ़ुलूस (एक धेला) में मिलती है। इसी प्रकार जामुन और इमली एक चौथाई फ़ुलूस (छदाम) में मिलती है। यदि कोई पान और तंबाकू का आदी है, तो एक दिन और रात के लिए आधे फ़ुलूस का पान उसके लिए पर्याप्त होगा। कत्था, सुपारी और खाने वाला तंबाकू प्रत्येक एक चौथाई के चौथाई (छदाम-छदाम) में मिलता है, तो उसकी एक दिन की ज़रूरत सवा पैसे में पूरी हो जाएगी। और यदि वह हुक्का पीता है, तो आधे फ़ुलूस का तंबाकू काफी है। इसी तरह बहुत सी चीजें पैसे के हिस्सों में बिकती हैं, यहाँ तक कि दमड़ी और आधी दमड़ी तक। यदि ऐसा न होता तो मामला तंग हो जाता और कम आय वालों पर इतना भारी पड़ता कि वे उसे सहन न कर पाते। और ये लेन-देन जो हज़ारों-हज़ार मुसलमानों में प्रचलित हैं, यदि हम उन्हें अमान्य कर दें और उन पर यह अनिवार्य कर दें कि वे कभी भी एक फ़ुलूस से कम की कोई चीज़ न खरीदें, जबकि उनकी ज़रूरतें छदाम और दमड़ी में पूरी हो जाती हैं, तो यह उन पर भारी बोझ डालना होगा। यह उदार, सरल और उज्ज्वल शरीयत तो बोझ हटाने के लिए ही आई है। अक्सर उनके पास इतने पैसे होंगे भी नहीं। उदाहरण के लिए, जो सालन पौने दो पैसे में तैयार हो जाता था, वह अब दो आने (आठ फ़ुलूस) से कम में तैयार नहीं होगा। और पान, जिसका काम सवा पैसे में पूरा हो जाता था, अब एक आने (चार फ़ुलूस) में होगा। इसी पर अनुमान लगाएं कि जब कोई अपनी हांडी के लिए दो पैसे से ज़्यादा न जुटा पाए और आप उस पर दो आने (आठ फ़ुलूस) अनिवार्य कर दें, तो बताएं वह क्या करे? क्या वह रूखा...

पेज 419 / 715

مزہ دار میوہ (جسے اہل عرب عنب بفتح عین وسکون نون) کہتے ہیں اور فارسی میں انب اور ہندی میں آم، بہت سے ایک دھیلے کو اور ایسے ہی جامن اور املیاں چھدام کو، اور اگر پان تمباکو کا عادی ہے تو اسے ایک رات دن کیلئے کفایت کرینگے دھیلے کے پان اور کتھا اور چھالیا اور کھانے کا تمباکو چھدام چھدام کے تو اس کی ایک دن کی حاجت سوا پیسے میں نکل جائیگی اور اگر حقہ پیتا ہو تو دھیلے کی تمباکو کافی ہے اور اسی طرح بہت چیزیں پیسہ کے حصوں سے بکتی ہیں یہاں تک کہ دمڑی اور آدھی اور ایسا نہ ہو تو معاملہ تنگ ہو جائے اور کم استطاعت والوں پر ایسا گراں گزرے کہ اٹھا نہ سکیں اور یہ بیعیں کہ ہزاراں ہزار مسلمانوں میں شائع ہیں اگر ہم باطل کردیں اور ان پر لازم کریں کہ کبھی کوئی چیز پیسہ سے کم کی نہ خریدیں حالانکہ ان کی حاجتیں چھدام اور دمڑی میں پوری ہوجاتی ہیں تو یہ ان پر بھاری بوجھ ڈالنا ہوگا اور یہ روشن اور نرم و آسان شریعت تو نہ آئی مگر بوجھ کے دفع کرنے کو بلکہ اکثر اوقات اتنے پیسے انہیں ملیں گے بھی نہیں اس لئے کہ وہ سالن جو پونے دو پیسے میں تیار ہوتا تھا اب دو آنے سے کم میں تیار نہ ہوگا، اور پان کہ سوا پیسے میں جس کا کام پورا ہوتا تھا اب ایک آنہ میں ہوگا اور اسی پر قیاس کرو تو وہ جب اپنی ہانڈی کے لئے دو پیسے سے زائد نہ پائے اور تم اس پر دو آنے لازم کرو تو بتاؤ کیا کرے آیا روکھا

Fatawa Razawiyya, Volume 17

[Arabic Column] So what do you command? Should one be content with swallowing fine flour or gnawing on dry barley bread alone, without any curry that would improve it, make it easy to swallow, and aid in its digestion? For those accustomed to curry—and they are all or most of the people—if they were to content themselves with this, it would not suit them and would cause illnesses in them, for abandoning a habit is a self-inflicted enmity. Or should he beg? And begging is humiliation and forbidden. Or should he seize property? And in seizure, there is the most severe wrath and retribution. Or should sellers, grocers, and water-carriers be ordered to give him all his needs for free because they are not worth a single penny, and what is not worth a penny is not considered wealth and has no value? So how would they agree to this? And if they did agree, there is no preference for one poor person over another; thus, they should give everyone their needs for free, and their trades would vanish for nothing. Therefore, there is no way except to open the door of trade, and indeed the Quran has opened it with the Almighty's absolute statement: 'And Allah has permitted trade' [1], and the Almighty's statement: 'Except that it be a trade by mutual consent among you' [2], and...

[Urdu Column] Should one swallow dry flour or chew on dry barley bread with no curry accompanying it to make it palatable, easy to swallow, and aid in its digestion? And for those who are accustomed to curry—and all or most people are like that—if they were to be content with this, it would not suit them and would cause diseases in them, because giving up a habit is like making an enemy of oneself. Or do you say that he should beg? And begging is humiliation and forbidden. Or should he snatch others' property? And in snatching, there is severe anger and punishment. Or will sellers, vegetable vendors, and water-carriers be ordered to give all their necessary things for free, because they are not even worth a penny? And what is not worth a penny is not property, nor does it have any value. So why would the sellers agree to this? And even if they agree, there is no preference for one poor person over another; so they should give everyone their necessities for free, and their trades would thus vanish. So it is proved that there is no way except that the door of trade be opened, and indeed the Great Quran has opened it with this absolute command: 'Allah has made trade lawful', and with this command: 'Except that there be a trade by your mutual consent', and...

---

1. Al-Quran Al-Karim 2/275

2. Al-Quran Al-Karim 4/29

फ़तावा-ए-रज़विया, जिल्द 17

[अरबी कॉलम] तो आप क्या आदेश देते हैं? क्या वह पिसा हुआ आटा फांके या अकेले जौ की सूखी रोटी चबाए, बिना किसी सालन के जो उसे बेहतर बनाए, निगलने में आसान बनाए और उसके पाचन में सहायता करे? और जिन्हें सालन की आदत पड़ी हुई है—और वे सभी या अधिकतर लोग हैं—अगर वे इसी पर संतोष करें तो यह उन्हें रास नहीं आएगा और उनमें बीमारियाँ पैदा कर देगा, क्योंकि आदत छोड़ना स्वयं अपने साथ दुश्मनी मोल लेना है। या वह भीख मांगे? और भीख मांगना अपमानजनक और हराम है। या वह माल छीन ले? और छीनने में कठोर क्रोध और सजा है। या क्या बेचने वालों, किराने वालों और भिश्तियों को आदेश दिया जाएगा कि उन्हें उनकी ज़रूरत की सभी चीजें मुफ्त में दे दें क्योंकि उनकी कीमत एक पैसे के बराबर भी नहीं है, और जो एक पैसे का नहीं वह धन नहीं है और न ही उसकी कोई कीमत है? तो वे इस पर कैसे सहमत होंगे? और अगर वे सहमत हो भी जाएँ तो एक गरीब को दूसरे गरीब पर कोई प्राथमिकता नहीं है; इसलिए चाहिए कि वे हर एक को उसकी ज़रूरतें मुफ़्त दें, तो उनका व्यापार यों ही खत्म हो जाएगा। अतः सिद्ध हुआ कि इसके सिवा कोई रास्ता नहीं है कि व्यापार का दरवाज़ा खोला जाए, और वास्तव में कुरान ने इसे अल्लाह तआला के इस पूर्ण निर्देश से खोला है: 'और अल्लाह ने व्यापार को हलाल किया है' [1], और अल्लाह तआला के इस निर्देश से: 'मगर यह कि तुम्हारी आपसी सहमति से कोई व्यापार हो' [2], और...

[उर्दू कॉलम] आटा फांके या जौ की सूखी रोटी चबाए जिसके साथ कोई सालन ऐसा न हो कि इसकी सुधार करे और उसे निगलने के काबिल बनाए और इसके पाचन पर मदद करे और जिन्हें सालन की आदत पड़ी हुई है और तमाम आदमी या अक्सर ऐसे ही हैं अगर इस पर संतोष करें तो उन्हें रास न आए और उनमें बीमारियाँ पैदा कर दे कि आदत का छोड़ना खुद अपने साथ दुश्मनी करना है या यह कहते हो कि भीख मांगे और भीख मांगना ज़िल्लत व हराम है या दूसरों का माल छीन ले और छीनने में सख्त क्रोध और सज़ा है या बेचने वालों और तरکاری (सब्जी) बेचने वालों और भिश्तियों को हुक्म दिया जाएगा कि उनकी तमाम ज़रूरत की चीज़ें उन्हें मुफ़्त दे दें और इसलिए कि वे एक पैसे की कीमत की नहीं और जो एक पैसे की नहीं वह माल नहीं और न उसकी कोई कीमत, तो बेचने वाले इस पर क्योंकर राज़ी होंगे, और अगर राज़ी हो जाएँ तो एक फ़कीर को दूसरे फ़कीर पर तरजीह नहीं तो चाहिए कि हर एक को उसकी ज़रूरतें मुफ़्त दें तो उनकी तिजारतें यूँ ही जाती रहें तो साबित हुआ कि कोई रास्ता नहीं है सिवा इसके कि व्यापार का दरवाज़ा खोला जाए और बेशक कुरान अज़ीम ने

उसे इस मुतलक़ (निरपेक्ष) इरशाद से खोला है कि 'हलाल की अल्लाह तआला ने बेअ (व्यापार)', और इस इरशाद से 'मगर यह कि कोई सौदा हो तुम्हारी आपस की रज़ामंदी का', और...

---

1 अल-कुरान अल-करीम 2/275 2 अल-कुरान अल-करीम 4/29

[عربی کالم] فما ذا تامرون ایکتفی بسف الدقیق او قضم خبز الشعیر وحده بدون ادام یصلحه و یسیغه و یعین علی هضمه، والمعتادون بالادام وهم الناس کلهم او جلهم لو اکتفوا بهذا لم یلائمهم واورث اسقاما فیهم فان ترك العادة عداوة مستفادة ام یتکفف و التکفف ذل وحرام ام یغصب وفی الغصب اشد الغصب و الانتقام ام یؤمر البیاعون والبقالون والسقاؤن ان یعطوه جمیع حاجاته مجانا لانها لا تساوی فلسا وما لا یساوی فلسا فلیس بمال ولا قیمة له فهم کیف یرضون بهذا وان رضوا فلا ترجیح لفقیر علی فقیر، فلیعطوا کلا حوائجه فتذهب متاجرهم بلا شیئ فاذن لا سبیل الافتح باب البیع وقد فتحه القرآن بقوله تعالی مطلقا "وَاَحَلَّ اللّٰهُ الْبَیْعَ" 1، وقوله تعالی "اِلَّآ اَنْ تَکُوْنَ تِجَارَةً عَنْ تَرَاضٍ مِّنْکُمْ" 2 ، و

[اردو کالم] آٹا پھانکے یا جو کی خشک روٹی چبائے جس کے ساتھ کوئی سالن ایسانہ ہو کہ اس کی اصلاح کرے اور اسے نگلنے کے قابل بنائے اور اس کے ہضم پر اعانت کرے اور جنہیں سالن کی عادت پڑی ہوئی ہے اور تمام آدمی یا اکثر ایسے ہی ہیں اگر اس پر قناعت کریں تو انہیں راس نہ آئے اور ان میں بیماریاں پیدا کردے کہ عادت کا چھوڑنا خود اپنے ساتھ عداوت کرنا ہے یا یہ کہتے ہو کہ بھیک مانگے اور بھیک مانگنا ذلت و حرام ہے یا دوسروں کا مال چھین لے اور چھیننے میں سخت غضب اور سزا ہے یا بیچنے والوں اور ترکاری فروشوں اور بہشتیوں کو حکم دیا جائے گا کہ ان کی تمام حاجت کی چیزیں انہیں مفت دے دیں اور اس لئے کہ وہ ایک پیسہ کی قیمت کی نہیں اور جو ایک پیسہ کی نہیں وہ مال نہیں اور نہ اس کی کوئی قیمت، تو بیچنے والے اس پر کیونکر راضی ہونگے، اور اگر راضی ہو جائیں تو ایک فقیر کو دوسرے فقیر پر ترجیح نہیں تو چاہئے کہ ہر ایک کو اس کی ضروریات مفت دیں تو ان کی تجارتیں یونہی جاتی رہیں تو ثابت ہوا کہ کوئی راستہ نہیں ہے سوا اس کے کہ بیع کا دروازہ کھولا جائے اور بیشک قرآن عظیم نے اسے اس

مطلق ارشاد سے کھولا ہے کہ "حلال کی اللہ تعالیٰ نے بیع" ، اور اس ارشاد سے "مگر یہ کہ کوئی سودا ہو تمہاری آپس کی رضامندی کا" ، اور

---

1 القرآن الکریم ۲۷۵/۲ 2 القرآن الکریم ۲۹/۴

Fatawa Razawiyya, Volume 17

[Arabic Text Column] The prescription of sale (Al-Bay') was only to prevent those evils. Therefore, restricting it, while Allah has already made it wide, is a return to those evils and an opposition to the intent of the Shariah by assisting in its negation. The researcher (Al-Muhaqqiq) stated in 'Fath al-Qadir': "If sale was not prescribed as a means of transferring ownership in both countervalues, it would have been necessary to acquire things through dominance and coercion, or by asking and begging, or to endure until death. In each of these, there is obvious corruption. In the second (begging), there is humiliation and insignificance that not everyone can bear, and it degrades the person. Thus, its prescription ensures the survival of those in need who are bound by law (Mukallafin) and fulfilling their needs through a good system." It is known that the Shariah did not set a specific limit in this regard; it simply permitted sale, which is the exchange of wealth for wealth, etc. And wealth, as previously mentioned, is that towards which human nature inclines and which can be stored for a time of need. This definition certainly applies to the things we mentioned above that are worth half a 'fils' or a quarter. Therefore, requiring that a sale must not be for less than a 'fils' is nothing but arbitrary imposition and an addition to the Shariah. How can it then be accepted? Furthermore, a speaker might say that the Shariah did not fix the amount of a 'fils', as it varies with the change of time and place.

[Urdu Translation Column] The prescription of sale was to prevent those very evils. Therefore, to restrict it, while Allah Almighty has already made it wide, is to bring back those evils and to assist in undermining the objective of the Shariah. The researcher stated in 'Fath al-Qadir' that if sale had not been made permissible by making it the cause for transferring ownership of both price and goods, then the need would arise to either take things by force or coercion, or to beg, or for a person to wait patiently until death. In all these scenarios, there is clear corruption. In begging, there is that humiliation and disgrace which not every person can endure, and it makes a person lowly. Thus, in the prescription of sale lies the survival of the needy who are bound by law, and the fulfillment of their needs with an excellent arrangement. And it is known that the pure Shariah has not fixed any limit in this regard; it has simply made sale halal, and that is the exchange of one property for another, etc. And property, as has been mentioned, is that thing towards which the nature is inclined and it is possible to keep it for the time of need. And this definition certainly applies to those things which we have described above, which are worth

small units like 'dhela' and 'chhadam'. Therefore, to make it mandatory that there will be no sale for less than a 'paisa' is nothing but an arbitrary ruling and an addition to the Shariah, so how can it be acceptable? Then, perhaps the speaker might say that the Shariah has not fixed the quantity of a 'paisa' and it varies with the change of time and place.

---

1 Fath al-Qadir, Book of Sales, Maktaba Nooriya Razawiyya, Sukkur, 5/455 Page 421 of 715

फ़तावा रज़विया, खंड 17

[अरबी पाठ स्तंभ] क्रय-विक्रय (अल-बै') का विधान केवल उन बुराइयों को रोकने के लिए था। इसलिए, इसे प्रतिबंधित करना, जबकि अल्लाह ने इसे पहले ही व्यापक बना दिया है, उन बुराइयों की वापसी है और शरीयत के उद्देश्य के विरुद्ध इसके विनाश में सहायता करना है। 'फ़तह अल-क़दीर' में शोधकर्ता (अल-मुहक्किक़) ने कहा है: "यदि क्रय-विक्रय को दोनों प्रतिमूल्यों में स्वामित्व हस्तांतरण के साधन के रूप में निर्धारित नहीं किया गया होता, तो चीजों को वर्चस्व और ज़बरदस्ती से लेना आवश्यक होता, या माँगकर और भीख माँगकर, या मृत्यु तक धैर्य रखना पड़ता। इनमें से प्रत्येक में स्पष्ट भ्रष्टाचार है। दूसरे (भीख माँगने) में वह अपमान और तुच्छता है जिसे हर कोई सहन नहीं कर सकता, और यह व्यक्ति को अपमानित करता है। इस प्रकार, इसके विधान में उन ज़रूरतमंदों का अस्तित्व है जो शरीयत के पाबंद (मुकल्लफ़ीन) हैं और एक अच्छी व्यवस्था के माध्यम से उनकी ज़रूरतों को पूरा करना है।" यह ज्ञात है कि शरीयत ने इस संबंध में कोई विशेष सीमा निर्धारित नहीं की है; उसने केवल क्रय-विक्रय की अनुमति दी है, जो धन के बदले धन का आदान-प्रदान है, आदि। और धन, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, वह है जिसकी ओर मानव स्वभाव झुकता है और जिसे आवश्यकता के समय के लिए जमा किया जा सकता है। यह परिभाषा निश्चित रूप से उन चीज़ों पर लागू होती है जिनका उल्लेख हमने ऊपर किया है जो आधे 'फ़िल्स' या एक चौथाई के बराबर हैं। इसलिए, यह अनिवार्य करना कि क्रय-विक्रय एक 'फ़िल्स' से कम के लिए नहीं होना चाहिए, मनमानी थोपने और शरीयत में वृद्धि के अलावा कुछ नहीं है। फिर इसे कैसे स्वीकार किया जा सकता है? इसके अलावा, कोई कहने वाला कह सकता है कि शरीयत ने 'फ़िल्स' की मात्रा निर्धारित नहीं की है, और यह समय और स्थान के परिवर्तन के साथ बदलती रहती है।

[उर्दू अनुवाद स्तंभ] बिक्री का विधान उन्हीं बुराइयों को दूर करने के लिए था, अतः इसे संकुचित करना, जबकि अल्लाह तआला ने इसे विस्तृत कर दिया है, उन्हीं बुराइयों की वापसी है और शरीयत के उद्देश्य को तोड़ने में सहायता करना है। शोधकर्ता ने 'फ़तह अल-क़दीर' में कहा है कि यदि मूल्य और माल दोनों के स्वामित्व के हस्तांतरण का साधन बनाकर बिक्री को वैध न किया गया होता, तो ज़रूरत पड़ती कि या तो ज़बरदस्ती या छीना-झपटी की जाती या भीख माँगी जाती या व्यक्ति धैर्य रखता यहाँ तक कि वह मर जाता। और इन सभी बातों में स्पष्ट भ्रष्टाचार है। भीख माँगने में वह अपमान और ज़िल्लत है जिसे हर व्यक्ति सहने की शक्ति नहीं रखता और यह व्यक्ति को तुच्छ बनाती है। अतः बिक्री के विधान में ज़रूरतमंद मुकल्लफ़ों का जीवन है और उत्तम व्यवस्था के साथ

उनकी ज़रूरतों को पूरा करना है। और ज्ञात है कि शरीयत-ए-मुतह्हरा ने इस बारे में कोई सीमा निर्धारित नहीं की है, बस बिक्री को हलाल किया है और वह एक माल का दूसरे माल से बदलना है, आदि। और माल जैसा कि बीत चुका है, वह चीज़ है जिसकी ओर स्वभाव का झुकाव हो और ज़रूरत के समय के लिए उसे रखना संभव हो। और यह परिभाषा निश्चित रूप से उन चीज़ों पर लागू होती है जो हमने ऊपर वर्णन की हैं जो धेले और छदाम में आती हैं। तो यह अनिवार्य करना कि पैसे से कम की बिक्री नहीं होगी, केवल मनमाना हुक्म और शरीयत पर ज्यादती है, तो यह कैसे स्वीकार्य होगा? फिर शायद कहने वाला कह सके कि शरीयत ने पैसे की मात्रा निर्धारित नहीं की है और वह समय और स्थान बदलने से बदलती रहती है।

---

1 फ़तह अल-क़दीर, किताब अल-बुयू', मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 5/455 पेज 421 / 715

ما كان شرع البيع الادفع تلك الشنائع ففی تحجیرہ بیع کا مشروع کرنا انہیں قباحتوں کے دفع کرنے کو تھا تو اس کے وقد وسعه الله اعادة لها وعود على مقصود الشرع تنگ کرنے میں حالانکہ اللہ تعالئ اسے واسع فرما چکا ہے انہیں بالنقض_قال المحقق في الفتح لولم يشرع البيع قباحتوں کا پلٹ آنا ہے اور مقصود شرع پر اس کے توڑنے کے سبباً للتمليك فی البدلين لاحتاج ان يؤخذ على ساتھ عون کرنا ہے ، محقق نے فتح القدیر میں فرمایا اگر بیع التغالب والمقاهرة او السؤال والشحاذة او يصبر حتى ثمن و مبیع دونوں کی تملیک کا سبب بناکر جائز نہ کی جاتی تو يموت وفی كل منهما مالا يخفى من الفساد وفی الثانی من حاجت پڑتی کہ یا تو زبردستی یا دھینگا دھینگی لیتے یا بھیک مانگتے الذل والصغار ما لايقدر عليه كل احد ویزری یا آدمی صبر کرتا یہاں تک کہ مر جائے اور ان سب باتوں میں بصاحبه فكان في شرعيته بقاء المكلفين المحتاجين کھلا ہوا فساد ہے بھیک میں وہ ذلت و خواری ہے جس پر ہر و دفع حاجاتهم على النظام الحسن اہ۱ ومعلوم ان شخص قادر نہیں اور آدمی کو حقیر کرتی ہے تو بیع کی مشروع الشرع لم يحد فی هذا حدا انما احل البيع وهو کرنے میں محتاج مکلفوں کی بقا ہے اور عمدہ انتظام کے ساتھ مبادلة مال بمال الخ والمال كما مر ما يميل اليه الطبع ان کی حاجتوں کو پورا کرنا ہے انتہی، اور معلوم ہے کہ شرع ویمکن ادخاره لوقت الحاجة وهذا صادق قطعا على مطہر نے اس بارہ میں کوئی حد مقرر نہ فرمائی بس بیع حلال کی ما قصصنا مما يساوی نصف فلس وربعه فايجاب ان ہے اور وہ ایک مال کا دوسرے مال سے بدلنا ہے الخ اور مال لايكون الابفلس لايكون الاتحكما وزيادة فی الشرع جیسا کہ گزر چکا وہ چیز ہے جس کی طرف طبیعت میل کرے فكيف يقبل ثم لعل لقائل ان يقول لم يأت الشرع اور وقت حاجت کے لئے اس کا اٹھا رکھنا ممکن ہو اور یہ تعریف بتقدير الفلس وهو مختلف باختلاف الزمان والمكان يقينا ان چیزوں پر صادق ہے جو

ہم نے اوپر بیان کیں جو دھیلے اور چھدام کو آتی ہیں تو یہ واجب کرنا کہ پیسہ سے کم کو بیع نہ ہوگا مگر زبردستی حکم اور شرع پر زیادت تو کیونکر مقبول ہو، پھر شاید کہنے والا کہہ سکے کہ شریعت نے پیسہ کی مقدار مقرر فرمائی نہیں اور وہ وقت اور جگہ کے بدلنے سے

Fatawa Rizwia, Volume 17

And there is no way to consider every place's currency based on what preceded, because financial value is established by some people considering it property. Thus, it would be obligatory to search at all times for the smallest penny circulating in the world, and in that there is hardship, and hardship is removed by the sacred text, so understand. It is stated in Al-Kifayah at the beginning of the chapter on Invalid Sales: Sometimes the quality of being valuable is established in something without it being property; for instance, a single grain of wheat is not property, to the extent that its sale is not valid, even though it is legally permissible to benefit from it, because people do not regard it as property. End quote. The same is in Al-Kashf al-Kabir, Al-Bahr al-Ra'iq, and Radd al-Muhtar. In Al-Fath, instead of one grain, it says 'grains', and we did not see any of them saying that what is worth less than a penny is not property. Perhaps the basis of this sub-issue is that in their time there was no price lower than a penny, or they did not find in the legal estimates of Shariah anything less than a penny. So they ruled that what is less than it is nothing, just as it was ruled in Al-Asrar that what is less than a grain of gold or silver has no value, as quoted from it in Al-Fath, because those scholars did not know of gold or silver in smaller amounts.

---

1. Al-Kifayah with Fath al-Qadir, Chapter of Invalid Sales, Maktaba Nooria Rizwia Sukkur, 6/43.
2. Radd al-Muhtar with reference to Fath al-Qadir, Chapter of Usury, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/152-153.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 17

और हर स्थान की मुद्रा को पूर्वोक्त के आधार पर मानने का कोई तरीका नहीं है, क्योंकि वित्तीय मूल्य कुछ लोगों द्वारा इसे संपत्ति मानने से स्थापित होता है। इस प्रकार, हर समय दुनिया में प्रचलित सबसे छोटे पैसे की खोज करना अनिवार्य होगा, और इसमें कठिनाई है, और कठिनाई को [पवित्र] पाठ द्वारा दूर किया गया है, अतः समझें। अल-किफ़ाया में 'अमान्य बिक्री' के अध्याय की शुरुआत में कहा गया है: कभी-कभी किसी चीज़ में मूल्यवान होने का गुण संपत्ति हुए बिना भी स्थापित हो जाता है; उदाहरण के लिए, गेहूं का एक दाना संपत्ति नहीं है, यहाँ तक कि उसकी बिक्री मान्य नहीं है, हालांकि कानूनी तौर पर उससे लाभ उठाना जायज़ है, क्योंकि लोग उसे संपत्ति नहीं मानते। उद्धरण समाप्त। अल-कश्फ़ अल-कबीर, अल-बह्र अल-रईक़ और रद्द अल-मुह्तार में भी ऐसा ही है। अल-फ़तह में एक दाने के बजाय 'दाने' कहा गया है, और हमने उनमें से किसी को यह कहते हुए नहीं देखा कि जो एक पैसे से कम मूल्य का हो वह संपत्ति नहीं है। शायद इस उप-मुद्दे का आधार यह है कि उनके समय में एक पैसे से कम कोई कीमत नहीं थी, या उन्हें शरीयत के अनुमानों में एक पैसे से कम कुछ नहीं मिला। इसलिए उन्होंने यह नियम दिया कि जो उससे कम है वह कुछ नहीं है, जैसा कि अल-असरार में यह नियम दिया गया है कि सोने या चांदी के एक दाने (रत्ती) से कम का कोई मूल्य नहीं है, जैसा कि अल-फ़तह में उनसे उद्धृत किया गया है, क्योंकि उन [विद्वानों] को सोने या चांदी [के इससे छोटे रूपों] का ज्ञान नहीं था।

---

1. अल-किफ़ाया मय फ़तह अल-क़दीर, बाब अल-बै अल-फ़ासिद, मक्तबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 6/43.
2. रद्द अल-मुह्तार बहवाला फ़तह अल-क़दीर, बाब अल-रिबा, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी बैरूत, 4/152-153.

पृष्ठ 715 में से 422

ولا سبیل الی اعتبار کل فی محلة لمّا تقدّم ان المالیّة تثبت بتمول البعض فوجب الفحص کل حین عن اصغر فلس یروج فی الدنیا وفیه حرج والحرج مدفوع بالنص فافهم وقال فی الکفایة اول البیع الفاسد قد تثبت صفة التقوم بدون المالیة فان حبة من الحنطة لیست بمال حتی لایصح بیعها وان ابیح الانتفاع بها شرعاً لعدم تمول الناس ایاه اه[1] ومثله فی الکشف الکبیر والبحر الرائق وردالمحتار وقال فی الفتح مکان حبة حبات ولم نرا حدا منهم ذکرا ن ما دون مایساوی فلساایس بمال وکان مبنی الفرع علی انه لم یکن فی زمنہ ثمن دون الفلس اولو لم یجده فی تقدیرات الشرع فحکم بان مادونہ لیس بشیئ کما حکم فی الاسرار بان مادون الحبة من الذهب والفضة لاقیمة له[2] کما نقل عنها في الفتح لانهم لم یعرفوا

بدلتا ہے اور اس طرف راہ نہیں کہ ہر جگہ وہیں کا پیسہ معتبر ہو کہ اوپر گزر چکا کہ مالیت بعض کے مال بنانے سے بھی ثابت ہو جاتی ہے تو واجب ہوا کہ ہر وقت اس کی تلاش کریں کہ تمام دنیا میں سب سے چھوٹا پیسہ کون سا ہے اور اس میں حرج ہے اور حرج کو نص نے دفع فرمایا ہے فافہم اور بیشک کفایہ کے شروع باب باب بیع فاسد میں فرمایا کہ کبھی شے میں باقیمت ہونے کی صفت بغیر مالیت بھی ثابت ہو جاتی ہے کہ گیہوں کا ایک دانہ مال نہیں ہے یہاں تک کہ اس کی بیع صحیح نہیں اگر چہ اس سے نفع حاصل کرنا شرعاً جائز ہے اس لئے کہ لوگ اسے مال نہیں سمجھتے انتھی، اور ایسا ہی کشف کبیر وبحر الرائق و ردالمحتار میں ہے اور فتح القدیر میں ایک دانہ کی جگہ چند دانے فرمایا اور ہم نے ان میں سے کسی کو یہ فرماتے نہ دیکھا کہ ایک پیسے سے کم کی چیز مال نہیں اور شاید اس مسئلہ قنیہ کی بناء اس پر ہو کہ ان کے زمانے میں پیسے سے کم کوئی ثمن نہ تھایا یہ کہ شرع مطہر نے جو اندازے مقرر فرمائے ان میں پیسے سے کم نہ پایا تو یہ حکم لگا دیا کہ ایک پیسے سے کم کی جو چیز ہو وہ کچھ نہیں جیسے اسرار میں حکم

فرمایا کہ جو چاندی یا سونا رتی بھر سے کم ہو اس کی کچھ قیمت نہیں جیسا کہ ان سے فتح القدیر میں نقل فرمایا اس لئے کہ ان علماء نے چاندی سونے

---

1 الکفایۃ مع فتح القدیر باب البیع الفاسد مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۴۳ 2 ردالمحتار بحوالہ فتح القدیر باب الربا داراحیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۱۵۲ - ۱۵۳

Header: Fatawa Rizvia (Volume 17)

Left Column (Arabic Text): It has a value less than a grain, and it has been known in our lands up to one-eighth of a grain, and the price of gold equal to one-eighth of a grain in our lands now is two fulūs (small coins), meaning about one halalah here, and there is no doubt it is valuable property. So how about what is more than that which equals a quarter grain? And as many have judged that what is less than half a sa' (a measurement unit) is outside the standard measure, so inequality is permissible in it even if the genus is the same. Based on this, the issue of one handful for two handfuls branches out. The researcher (Al-Muhaqqiq) in 'Al-Fath' said, regarding this: "The mind does not rest on this, rather, after reasoning with the intent to protect people's property, it must be prohibited to exchange two apples for one apple, and two handfuls for one handful. As for if there were smaller measures than that, as in our lands from the placement of a quarter of a cup and an eighth of an Egyptian cup, then there is no doubt. The fact that the Lawgiver did not determine some legal measures in financial obligations like expiations and Sadaqat-ul-Fitr at less than that does not necessitate disregarding the certain difference etc." And it was confirmed in 'Al-Bahr' and 'An-Nahr'.

Right Column (Urdu Translation/Explanation): No estimation less than a 'ratti' (a small unit of weight) was recognized for it, and in our cities, its estimation is known up to one-eighth of a ratti (one grain of rice). Today, the price of a grain of rice worth of gold here is two paisas, meaning close to one 'halalah' here; it is undoubtedly a thing of value. Then what about that which is even more than that, which is a quarter ratti, or half ratti, or more than that up to one ratti? And as many scholars have ruled that whatever is less than half a 'sa' is outside the standard measure, it is permissible to sell a thing of the same genus with excess or deficiency in it. The ruling that selling one handful of wheat for two handfuls is permissible is branched from this. The researcher in 'Fath al-Qadir' has refuted this, stating that the heart is not satisfied with this ruling; rather, when the reason for prohibition is to protect people's property, then considering this, it is necessary that selling one apple for two apples and one handful for two handfuls be forbidden. If scales smaller than half a 'sa' are found, like in our land of Egypt where a quarter bowl and an eighth part of a bowl are fixed, then there is no doubt. And the fact that the Sharia has fixed financial obligations like expiation and Sadaqat-ul-Fitr in certain measures and did not keep any measure less than half a 'sa' in them, it does not follow from this that the

difference which is certainly known should be rendered ineffective, etc. And this statement of the researcher (is supported) by 'Bahr' and 'Nahr'.

Footer: 1 Fath al-Qadir, Chapter on Riba, Maktabah Nooria Rizvia, Sukkur, 6/53-152.
Page 423 of 715

शीर्षक: फ़तावा रज़विया (खंड 17)

बायां स्तंभ (अरबी पाठ): इसका मूल्य एक दाने से कम है, और यह हमारे शहरों में एक दाने के आठवें हिस्से तक जाना जाता है, और हमारे शहरों में एक दाने के आठवें हिस्से के बराबर सोने की कीमत अब दो फ़ुस (सिक्के) है, यानी यहाँ लगभग एक हलाला के बराबर है, और इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह मूल्यवान संपत्ति है। तो उससे ऊपर की चीज़ के बारे में क्या जो एक चौथाई दाने के बराबर है? और जैसा कि बहुत से लोगों ने फैसला सुनाया है कि आधे सा' (एक मापक इकाई) से कम जो कुछ भी है वह मानक माप से बाहर है, इसलिए लिंग समान होने पर भी इसमें असमानता जायज़ है। इसी के आधार पर एक मुट्ठी के बदले दो मुट्ठी का मसला निकलता है। 'अल-फतह' में शोधकर्ता (अल-मुहक़्क़िक़) ने इसके बारे में कहा है: "मन इस पर शांत नहीं होता है, बल्कि लोगों की संपत्ति की रक्षा करने के उद्देश्य से तर्क करने के बाद, दो सेब के बदले एक सेब और दो मुट्ठी के बदले एक मुट्ठी के लेन-देन को प्रतिबंधित किया जाना चाहिए। जैसा कि यदि उससे भी छोटे माप हों, जैसे कि हमारे देशों में एक चौथाई कप और मिस्र के कप के आठवें हिस्से के स्थान पर, तो इसमें कोई संदेह नहीं है। यह तथ्य कि शरीयत ने कफ़्फ़ारा और सदक़ा-ए-फ़ित्र जैसे वित्तीय दायित्वों में कुछ कानूनी उपायों को उससे कम पर निर्धारित नहीं किया है, निश्चित अंतर आदि की उपेक्षा करने की आवश्यकता नहीं है।" और इसकी पुष्टि 'अल-बहर' और 'अन-नहर' में की गई थी।

दायां स्तंभ (उर्दू अनुवाद/स्पष्टीकरण): इसके लिए 'रत्ती' से कम का कोई माप नहीं पहचाना गया, और हमारे शहरों में इसका माप रत्ती के आठवें हिस्से (एक चावल) तक ज्ञात है। आज हमारे यहाँ चावल भर सोने की कीमत दो पैसे है, यानी यहाँ के एक हलाला के करीब है; वह बिना किसी संदेह के मूल्यवान संपत्ति है। फिर उसके बारे में क्या जो उससे भी अधिक है, जो चौथाई रत्ती या आधी रत्ती या उससे अधिक एक रत्ती तक है? और जैसा कि बहुत से विद्वानों ने हुक्म दिया है कि जो आधे सा' से कम हो वह माप से बाहर है, तो उसमें अपनी ही किस्म की चीज़ के बदले कमी-बेसी के साथ बेचना जायज़ है। और वह मसला कि एक मुट्ठी गेहूँ दो मुट्ठी के बदले बेचना जायज़ है, इसी पर आधारित है। और शोधकर्ता ने 'फ़तह अल-क़दीर' में इसका खंडन किया है, यह कहते हुए कि इस हुक्म पर दिल को सुकून नहीं मिलता, बल्कि जब हराम होने की वजह लोगों की माल की हिफाज़त है, तो उस पर नज़र रखते हुए यह लाज़िम है कि दो सेब के बदले एक सेब और दो मुट्ठी के बदले एक मुट्ठी का बेचना हराम हो। अगर आधे से छोटे पैमाने पाए जाते हों, जैसे हमारे शहर मिस्र में चौथाई प्याला और प्याले का आठवाँ हिस्सा मुक़र्रर है, तब तो कोई शक नहीं। और यह बात कि शरीयत ने माली

वाजिबात जैसे कफ़्फ़ारा और सदक़ा-ए-फ़ित्र में मापों से मुक़र्रर फरमाए हैं, उनमें आधे सा' से कम कोई माप नहीं रखा, इससे यह लाज़िम नहीं आता कि वह अंतर जो यकीनन मालूम है, उसे बेअसर कर दिया जाए आदि। और शोधकर्ता के इस कलाम को 'बहर' और 'नहर' (का समर्थन प्राप्त है)।

फुटर: 1 फतह अल-क़दीर, सूद का अध्याय, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 6/53-152. पेज 423/715

لها مقدارا دون الحبة وقد عرفت في ديارنا الى ثمن حبة وقيمة ذهب يساوى ثمن حبة في بلادنا الان فلسان اى نحو هللة واحدة ههنا وهو لا شك مال متقوم فكيف بما فوقه مما يساوى ربع حبة وكما حكم كثيرون بأن مادون نصف صاع خارج عن المعيار فيجوز فيه التفاضل مع اتحاد الجنس وعليه تتفرع مسألة حفنة بحفنتين وقدره المحقق في الفتح قائلا لا يسكن الخاطر الى هذا بل يجب بعد التعليل بالقصد الى صيانة اموال الناس تحريم التفاحة بالتفاحتين والحفنة بالحفنتين اما ان كانت مكاييل اصغر منها كما في ديارنا من وضع ربع القدح وثمن القدح المصرى فلا شك وكون الشرع لم يقدر بعض المقدرات الشرعية في الواجبات المالية كالكفارات وصدقة الفطر بأقل منه لا يستلزم اهدار التفاوت المتيقن الخ واقره في البحر والنهر۔

کے لئے رتی سے کم کوئی اندازہ نہ پہچانا اور ہمارے شہروں میں اس کا اندازہ رتی کے آٹھویں حصہ (ایک چاول) تک معروف ہے اور آج کل ہمارے یہاں چاول بھر سونے کی قیمت دو پیسے ہے یعنی یہاں کے ایک هللہ کے قریب وہ بلا شبہ قیمت والا مال ہے نہ کہ وہ جو اس سے بھی زیادہ ہے جو پاؤ رتی یا نصف رتی یا اس سے زائد کا ہو ایک رتی تک اور جیسے بہت علماء نے حکم فرمایا کہ نصف صاع سے جو کم ہو وہ اندازہ سے باہر ہے تو اس میں ایک چیز اپنی جنس کے بدلے کمی بیشی کے ساتھ بیچنا جائز ہے اور وہ مسئلہ کہ ایک لپ گیہوں دولپ کے بدلے بیچنا جائز ہے اسی پر متفرع ہے اور محقق نے فتح القدیر میں اس کا رد کیا یہ فرماتے ہوئے کہ اس حکم پر دل کو اطمینان نہیں ہوتا بلکہ جب حرمت کی وجہ لوگوں کا مال محفوظ رکھنا ہے تو اس پر نظر کرکے واجب ہے کہ دو سیب کے بدلے ایک سیب اور دو لپ کے بدلے ایک لپ کا بیچنا حرام ہو اگر نصف سے چھوٹے پیمانے پائے جاتے ہوں جیسے ہمارے دیار مصر میں چہارم پیالہ اور

پیالہ کا آٹھواں حصہ مقرر ہے جب تو کوئی شک نہیں اور یہ بات کہ شرع نے واجبات مالیہ مثل کفارہ و صدقہ فطر میں اندازے سے مقرر فرمائے ہیں ان میں نصف صاع سے کم کوئی اندازہ نہ رکھا اس سے یہ لازم نہیں آتا کہ وہ تفاوت جو یقیناً معلوم ہے بے اثر کر دیا جائے الخ اور محقق کے اس کلام کو بحر اور نہر (کی تائید حاصل ہے)۔

1 فتح القدیر باب الربا مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۵۳-۱۵۲ Page 423 of 715

Fatawa Razawiya, Volume 17

...and in Shurunbulaliyah, al-Durr, the commentaries, and others, it is established and it is a good and sound statement. Similarly, we say here that since the definition of wealth is as mentioned above, it is necessary that all the things mentioned above, which were not equal to a *fils* (a copper coin), be considered valuable property. So, if prices smaller than a *fils* are found, such as *chhadam* and *damri* fixed in our cities, then there is no doubt. And the fact that the pure Shariah did not mention anything below a *fils* does not necessitate the invalidation of a wealth that is certainly known. This is what I have, and the knowledge of the truth is with my Lord, and Allah, Glorified and Exalted is He, knows best.

Regarding the Seventh: I say: We have already informed you that it is a conventional price, so exchanging it for cloth will not be a *muqayadah* (barter) but an absolute sale. A specific banknote will not be designated, but rather it will be obligatory upon the conscience like coins.

Regarding the Eighth: I say: Yes, it is permissible to lend it because, as mentioned before, it is fungible (*mithli*), and it will be settled only by giving its like, because that is the nature of a loan. In fact, no debt is settled except by its like, unless both parties agree (on taking something else).

Page 424 of 715

फतावा रज़विया, खंड 17

...और शुरनबुलालिया, अल-दुर्र, हाशिये और अन्य में इसे स्थापित किया गया है और यह एक अच्छा और उचित कथन है। इसी प्रकार हम यहाँ कहते हैं कि जब धन की परिभाषा वही ठहरी जो ऊपर गुज़री, तो आवश्यक है कि ऊपर उल्लेखित सभी चीजें जो एक 'फिलस' (तांबे का सिक्का) के बराबर नहीं थीं, वे मूल्यवान धन होंगी। तो यदि फिलस से छोटे मूल्य पाए जाते हैं, जैसे हमारे शहरों में 'छदाम' और 'दमड़ी' निर्धारित हैं, तो इसमें कोई संदेह नहीं है। और यह कि पाक शरीयत ने फिलस से कम का उल्लेख नहीं किया, तो इससे यह अनिवार्य नहीं होता कि जो धन की निश्चित रूप से जानकारी है, उसे अमान्य कर दिया जाए। यह वह है जो मेरे पास है, और सत्य का ज्ञान मेरे रब के पास है, और अल्लाह, जो महिमामय और उच्च है, सबसे बेहतर जानता है।

सातवें के बारे में: मैं कहता हूँ: हम तुम्हें बता चुके हैं कि यह एक पारंपरिक मूल्य (करेंसी) है, इसलिए कपड़े के बदले इसे बदलना 'मुकायदा' (वस्तु विनिमय) नहीं होगा बल्कि एक पूर्ण बिक्री होगी। कोई विशेष नोट निर्धारित नहीं होगा, बल्कि सिक्कों की तरह यह जिम्मेदारी (कर्ज) के रूप में होगा।

आठवें के बारे में: मैं कहता हूँ: हाँ, इसे कर्ज देना जायज है क्योंकि जैसा कि ऊपर बताया गया है, यह 'मिस्ली' (समान वस्तु) है, और इसे इसके समान देने से ही चुकाया जाएगा क्योंकि कर्ज का यही स्वभाव है। वास्तव में, कोई भी कर्ज उसके समान के बिना नहीं चुकाया जाता, जब तक कि दोनों पक्ष (किसी और चीज़ को लेने पर) सहमत न हो जाएं।

पृष्ठ 424/715

والشرنبلالية والدر والحواشي وغيرها وهو حسن وجيه كذلك نقول ههنا يجب بعد تعريف المال بما مر ان يكون كل ما ذكرنا مما لا يساوى فلسا مالاً متقوماً اما ان كانت اثمان اصغر من فلس كما في ديارنا من وضع ربع الفلس وثمن الفلس فلا شک، وكون الشرع لم يذكر مادون فلس لا يستلزم اهدار المالية المتيقنة، فهذا ما عندى والعلم بالحق عند ربى والله سبحنہ وتعالیٰ اعلم۔ اور شرنبلالیہ اور درمختار اور حواشی وغیرہ میں مقرر رکھا اور وہ اچھا اور موجہ کلام ہے ایسا ہی ہم یہاں کہتے ہیں کہ جب مال کی تعریف وہ ٹھہری جو اوپر گزری تو واجب ہے کہ جتنی چیزیں اوپر ذکر کیں جو ایک پیسہ کی نہ تھیں سب قیمت والے مال ہونگے تو اگر پیسہ سے چھوٹے ثمن پائے جاتے ہوں جیسے ہمارے شہروں میں چھدام اور دمڑی مقرر ہیں جب تو شک نہیں اور یہ کہ شرع مطہر نے پیسہ سے کم کا ذکر نہ فرمایا تو اس سے یہ لازم نہیں آتا کہ جو مالیت یقینا معلوم ہے باطل کر دی جائے۔ یہ وہ ہے جو میرے پاس ہے اور حق کا علم میرے رب کے پاس ہے واللہ سبحنہ وتعالیٰ اعلم۔

واما السابع فاقول: قد اذناك انه ثمن اصطلاحى فاستبداله بالثوب لا يكون مقايضة بل بيعاً مطلقاً ولا يتعين النوط بل يلزم في الذمة كالفلوس۔ جواب سوال ہفتم فاقول: (میں کہتا ہوں) ہم تمہیں بتا چکے ہیں کہ نوٹ ثمن اصطلاحی ہے تو کپڑے سے اس کا بدلنا مقایضہ نہ ہوگا بلکہ بیع مطلق ہوگا اور خاص کوئی معین نوٹ دینا نہ آئے گا بلکہ پیسہ کی طرح ذمہ پر لازم ہوگا۔

واما الثامن فاقول: نعم يجوز اقراضه لما تقدم انه مثلى ولا يقضى الا بالمثل لانه شان القرض بل كل دين لا يقضى الا بمثله الا ان يتراضيا۔ جواب سوال ہشتم فاقول: (پس میں کہتا ہوں) ہاں نوٹ قرض دینا جائز ہے اس لئے کہ اوپر گزر چکا کہ وہ مثلی ہے اور مثل ہی کے دینے سے ادا کیا جائے گا

کہ قرض کی یہی شان ہے بلکہ کوئی دین ادا نہیں کیا جاتا مگر اپنے مثل سے مگر یہ کہ طرفین (کسی دوسری چیز کے لینے پر) راضی ہو جائیں۔

Fatawa Razawiyya Volume 17

[Main Content Table] (Left Column - Arabic Original) Regarding the ninth [question]: I say: Yes, it is permissible if the note (currency) is taken possession of in the assembly so that the parties do not separate having exchanged debt for debt. The research on this is that selling notes for dirhams is like selling coins for them; it is not 'Sarf' (currency exchange) such that mutual possession is mandatory. This is because 'Sarf' is the sale of what was created for price-hood (like gold/silver) for something created for the same, as explained in Al-Bahr, Ad-Durr, and others. It is known that notes and coins are not like that; rather, price-hood occurred for them by convention as long as they are in circulation, otherwise they are goods. The fact that it is not 'Sarf' is explicitly stated in Rad al-Muhtar, from Al-Bahr, from Al-Dhakhira, from the Sheikhs in the chapter on Usury. Yes, because they are prices by circulation, it is necessary to take possession of one of the two sides, otherwise it is forbidden due to the Prophet's (peace and blessings of Allah be upon him) prohibition of selling debt for debt. This matter is explicitly mentioned in Imam Muhammad's Mabsut, and it is relied upon in Al-Muhit, Al-Hawi, Al-Bazzaziyya, Al-Bahr, and Al-Nahr.

(Right Column - Urdu Original/Explanation) Answer to the ninth question: So I say: (i.e., I say) Yes, it is permissible provided that the note is taken possession of in the same session so that the parties do not separate by selling debt for debt. The detailed investigation of this issue is that selling notes for rupees is not 'Bay' al-Sarf' (currency exchange), just like selling coins for rupees, where possession by both sides would be a condition. This is because 'Sarf' is when a thing created to be a price (currency) is sold for another such thing, as defined in Al-Bahr, Al-Durr, etc. It is known that notes and coins are not like that; being a price occurred to them due to convention as long as they are current, otherwise they are goods. The fact that this is not 'Bay' al-Sarf' is explicitly stated in Rad al-Muhtar, Chapter on Usury, from Al-Bahr, in it from Al-Dhakhira, and in it from the Sheikhs. Yes, because they act as price due to circulation, possession by one of the two parties is necessary, otherwise it will be forbidden because the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) forbade selling debt for debt. This matter is explicitly stated in Mabsut of Imam Muhammad (may Allah Almighty have mercy on him), and it is relied upon in Al-Muhit, Al-Hawi, Al-Bazzaziyya, Al-Bahr, and Al-Nahr.

[Footnotes] Annotation: i.e., Al-Muhit of Imam Al-Sarakhsi, end of citation. 1 Durr al-Mukhtar, Chapter of Sarf, Mujtabai Press Delhi, 2/55.

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

[मुख्य सामग्री तालिका] (बायाँ कॉलम - अरबी मूल) नौवें [प्रश्न] के संबंध में: मैं कहता हूँ: हाँ, यह जायज़ है यदि सभा में नोट (मुद्रा) पर कब्ज़ा कर लिया जाए ताकि दोनों पक्ष ऋण के बदले ऋण का विनिमय करके अलग न हों। इस पर शोध यह है कि दिरहम के लिए नोट बेचना उनके लिए सिक्के बेचने जैसा है; यह 'सर्फ़ (मुद्रा विनिमय) नहीं है जिससे दोनों पक्षों का कब्ज़ा अनिवार्य हो। ऐसा इसलिए है क्योंकि 'सर्फ़ उस चीज़ की बिक्री है जो मूल्य के लिए बनाई गई थी (जैसे सोना/चांदी) वैसी ही किसी चीज़ के लिए, जैसा कि अल-बहर, अद-दुर्र और अन्य में समझाया गया है। यह ज्ञात है कि नोट और सिक्के वैसे नहीं हैं; बल्कि, चलन के कारण उनमें मूल्य का भाव आया जब तक वे प्रचलन में हैं, अन्यथा वे सामान हैं। यह 'सर्फ़ नहीं है, इसकी स्पष्ट व्याख्या रद अल-मुह्तार में, अल-बहर से, अल-ज़ख़ीरा से, सूद के अध्याय में शेखों से की गई है। हाँ, चूँकि वे चलन के कारण मूल्य हैं, इसलिए दोनों पक्षों में से एक का कब्ज़ा आवश्यक है, अन्यथा पैगंबर (उन पर अल्लाह की शांति और कृपा हो) द्वारा ऋण के बदले ऋण बेचने के निषेध के कारण यह हराम है। यह मामला इमाम मुहम्मद की मबसूत में स्पष्ट रूप से वर्णित है, और अल-मुहीत, अल-हावी, अल-बज़्ज़िया, अल-बहर और अन-नहर में इस पर भरोसा किया गया है।

(दायाँ कॉलम - उर्दू मूल/स्पष्टीकरण) नौवें प्रश्न का उत्तर: तो मैं कहता हूँ: (अर्थात्, मैं कहता हूँ) हाँ, यह जायज़ है बशर्ते कि उसी बैठक में नोट पर कब्ज़ा कर लिया जाए ताकि दोनों पक्ष ऋण के बदले ऋण बेचकर अलग न हों। इस मुद्दे की विस्तृत जांच यह है कि रुपयों के बदले नोट बेचना 'बय अल-सर्फ़ (मुद्रा विनिमय) नहीं है, जैसे रुपयों के बदले सिक्के बेचना, जहाँ दोनों पक्षों का कब्ज़ा एक शर्त होगी। ऐसा इसलिए है क्योंकि 'सर्फ़ तब होता है जब एक चीज़ जिसे मूल्य (मुद्रा) होने के लिए बनाया गया है उसे वैसी ही दूसरी चीज़ के लिए बेचा जाता है, जैसा कि अल-बहर, अल-दुर्र आदि में परिभाषित किया गया है। यह ज्ञात है कि नोट और सिक्के वैसे नहीं हैं; चलन के कारण उनमें मूल्य का भाव उत्पन्न हुआ जब तक वे वर्तमान में हैं, अन्यथा वे सामान हैं। यह 'बय अल-सर्फ़ नहीं है, इसकी स्पष्ट व्याख्या रद अल-मुह्तार, सूद के अध्याय में, अल-बहर से, उसमें अल-ज़ख़ीरा से, और उसमें शेखों से की गई है। हाँ, चूँकि वे चलन के कारण मूल्य के रूप में कार्य करते हैं, इसलिए दोनों पक्षों में से एक का कब्ज़ा आवश्यक है, अन्यथा यह हराम होगा क्योंकि पैगंबर (उन पर अल्लाह की शांति और कृपा हो) ने ऋण के बदले ऋण बेचने से मना किया था। यह मामला इमाम मुहम्मद (अल्लाह उन पर रहम

करे) की मबसूत में स्पष्ट रूप से बताया गया है, और अल-मुहीत, अल-हावी, अल-बज़्ज़िया, अल-बहर और अन-नहर में इस पर भरोसा किया गया है।

[पाद टिप्पणियाँ] टिप्पणी: अर्थात्, इमाम अल-सरखसी की अल-मुहीत, उद्धरण का अंत। 1 दुर्रे मुख़्तार, बाब-अस-सर्फ़ मतबा मुजतबाई दिल्ली, 2/55।

पेज 425/715

[اہم مشمولات کی میز] (بایاں کالم - عربی متن) واما التاسع فأقول: نعم یجوز اذا قبض النوط فی المجلس کیلا یفترقا عن دین بدین و تحقیق ذلك ان بیع النوط بالدراہم کالفلوس بہا لیس بصرف حتی یجب التقابض فأن الصرف بیع مأخلق للثمنیة بہا خلق لہا کما فسرہ بہ البحر والدر وغیرہما ومعلوم ان النوط والفلوس لیست کذلك و انما عرض لہا الثمنیة بالاصطلاح مادامت تروج والا فعروض وبعدم کونہ صرفا صرح فی ردالمختار عن البحر عن الذخیرة عن المشائخ فی باب الربا نعم لکونہا اثمانا بالرواج لابد من قبض احد الجانبین والاحرم لنہیہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم عن بیع الکالئ بالکالئ و المسئلة منصوص علیہا فی مبسوط الامام محمد و اعتمدہ فی المحیط عہ والحاوی والبزازیة والبحر والنہر

(دایاں کالم - اردو متن/تشریح) جواب سوال نہم فاقول: (تو میں کہتا ہوں) ہاں جائز ہے جبکہ اسی جلسہ میں نوٹ پر قبضہ کر لیا جائے تاکہ طرفین دین کے بدلے دین بیچ کر جدا نہ ہوں اور تحقیق اس مسئلہ کی یہ ہے کہ روپوں کے بدلے نوٹ بیچنا بیع صرف نہیں جیسے روپے کے بدلے پیسے تاکہ دونوں طرف کی قبضہ شرط ہو اس لئے کہ صرف یہ ہے کہ جو چیز ثمن ہونے کے لئے پیدا کی گئی ہے اسے ایسی ہی چیز کے ساتھ بیچیں جیسا کہ اس کی یہ تعریف بحر و در وغیرہ میں فرمائی اور معلوم کہ نوٹ اور پیسے ایسے نہیں ان میں تو ثمن ہونا اصطلاح کے سبب عارض ہوگیا جب تک چلتے رہیں ورنہ وہ متاع ہیں اور اس کے بیع صرف نہ ہونے کی ردالمختار باب ربا میں بحر، اس میں ذخیرہ، اس میں مشائخ سے تصریح فرمائی، ہاں اس لئے کہ وہ چلن کے سبب ثمن ہے دونوں طرف میں سے ایک کا قبضہ ضرور ہے ورنہ حرام ہوجائے گا اس لئے کہ نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے دین سے دین کو بیچنے سے منع فرمایا ہے۔ مبسوط امام محمد رحمہ

اللہ تعالٰی میں اس مسئلہ کی تصریح ہے اور اسی پر اعتماد کیا محیط اور حاوی اور بزازیہ اور بحر اور نہر

[حواشی] عہ: ای محیط الامام السرخسی انتھی منہ۔ 1 درمختار باب الصرف مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۵۵

Fatawa Ridawiyya (Volume 17)

[Content Summary from Arabic and Urdu columns]

And in Fatawa al-Hanuti, al-Tanwir, al-Durr, al-Hindiyya, etc., and this is the gist of Imam al-Isbijabi's statement, as transmitted by al-Shami from al-Zayn on his authority with reference to al-Bahr. In al-Hindiyya, citing al-Mabsut: If a man buys copper coins (fulus/paisa) for silver coins (dirhams/rupees), pays the price, and the copper coins are not present with the seller, the sale is valid (until here). Also in Alamgiri, citing al-Hawi and others: If one buys a hundred copper coins for a dirham/rupee, takes possession of the dirham but does not take possession of the copper coins until they go out of circulation, the analogy is that the sale is not invalidated. If he had taken possession of fifty copper coins and then they went out of circulation, the sale becomes void for the half, and if they remain in circulation, it is not invalid, and the buyer takes the remaining copper coins (until here). Also, it contains a similar point from Muhit al-Sarakhsi. In it, from al-Dhakhirah: If copper coins or food are bought with dirhams/rupees such that the contract is not a 'sarf' (currency exchange) and they separate after actual possession of one of the two exchanged items, it is permissible. However, if the separation occurs after only constructive (legal) possession of one item and not actual possession, it is not permissible, whether it was a 'sarf' contract or not. Its explanation is when a person was owed copper coins or food by another, so he bought those same coins or food from the person who owed them in exchange for dirhams/rupees, paid the dirhams, and they separated.

[Footnotes] 1. Fatawa Hindiyya, Kitab al-Sarf, Chapter 3, regarding the sale of Fulus, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/224. 2. Fatawa Hindiyya, Kitab al-Sarf, Chapter 3, regarding the sale of Fulus, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/225-226.

फतावा रज़विया (जिल्द 17)

[अरबी और उर्दू स्तंभों से विषय का सारांश]

और फतावा अल-हानुती, अत-तन्वीर, अद-दुर्र और अल-हिन्दिया आदि में, और यही इमाम अल-इस्बीजाबी के कथन का सार है जैसा कि शामी ने अल-बहर के हवाले से ज़ैन के माध्यम से उद्धृत किया है। अल-हिन्दिया में अल-मबसूत से है कि यदि कोई व्यक्ति दिरहम (रुपये) के बदले फ़ुलूस (तांबे के सिक्के/पैसे) खरीदे और मूल्य चुका दे, और फुलूस विक्रेता के पास न हों, तो बिक्री जायज़ है (यहाँ तक)। इसके अलावा आलमगीरी में अल-हावी आदि से है कि जब एक रुपये के सौ पैसे खरीदे गए और रुपये पर कब्ज़ा कर लिया गया लेकिन पैसों पर कब्ज़ा नहीं हुआ यहाँ तक कि उनका चलन बंद हो गया, तो कयास (तर्क) यह है कि बिक्री रद्द नहीं होगी। यदि उसने पचास पैसों पर कब्ज़ा कर लिया था और उसके बाद चलन बंद हो गया, तो आधे हिस्से में बिक्री रद्द हो जाएगी, और यदि चलन बना रहे तो बिक्री अमान्य नहीं होगी और खरीदार शेष पैसे ले लेगा (यहाँ तक)। इसमें मुहीत सरख्सी से भी ऐसा ही उल्लेख है। इसमें अल-ज़खीरा से है कि यदि रुपये के बदले पैसे या अनाज खरीदा जाए जिससे यह अनुबंध 'सर्फ़ (मुद्रा विनिमय) न रहे, और दोनों पक्षों में से किसी एक द्वारा विनिमय की गई वस्तु पर वास्तविक कब्ज़ा होने के बाद वे अलग हो जाएं तो यह जायज़ है। लेकिन यदि अलग होना किसी एक पक्ष के केवल कानूनी (प्रतीकात्मक) कब्ज़े के बाद हुआ हो न कि वास्तविक, तो यह जायज़ नहीं है, चाहे वह अनुबंध 'सर्फ़ हो या न हो। इसका स्पष्टीकरण यह है कि एक व्यक्ति का दूसरे पर पैसा या अनाज बकाया था, तो उसने उसी ऋणी व्यक्ति से उन पैसों या अनाज को रुपयों के बदले खरीद लिया और रुपये दे दिए, फिर वे अलग हो गए।

[पाद टिप्पणियाँ] 1. फतावा हिन्दिया, किताब अस-सर्फ़, अध्याय 3, फुलूस की बिक्री के संबंध में, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/224. 2. फतावा हिन्दिया, किताब अस-सर्फ़, अध्याय 3, फुलूस की बिक्री के संबंध में, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/225-226.

पृष्ठ 426/715

فتاوی رضویہ جلد بفتدہم (۱۷)

[Arabic Column] وفتاوی الحانوتي والتنویر والهندیة وغیرها وهو مفاد کلام الاسبیجابي کما نقله الشامي عن الزین عنه، ففي الهندیة عن المبسوط اذا اشتری الرجل فلوسا بدراهم ونقد الثمن ولم تکن الفلوس عند البائع فالبیع جائز اهـ ۱ وفیها عن الحاوی وغیره لو اشتری مائة فلس بدرهم فقبض الدرهم ولم یقبض الفلوس حتی کسدت لم یبطل البیع قیاساً ولو قبض خمسین فلساً فکسدت بطل فی النصف و لو لم تکسد لم یفسد وللمشتری مابقی من الفلوس اهـ ۲ وفیها عن محیط السرخسی نحوه وفیها عن الذخیرة لو اشتری فلوساً او طعاماً بدراهم حتی لم یکن العقد صرفاً وتفرقاً بعد قبض احد البدلین حقیقة یجوز اما اذا حصل الافتراق بعد قبض احد البدلین حکماً لا غیر لا یجوز سواء کان العقد صرفاً او لم یکن بیانه فیما اذا کان له علیه فلوس او طعام فاشتری من علیه الفلوس او الطعام الفلوس او الطعام بدراهم وتفرقاً

[Urdu Column] اور فتاویٰ حانونی اور تنویر اور در اور ہندیہ وغیرہ میں ، اور وہی مفاد ہے کلام امام اسپیجابی کا جیسا کہ شامی نے بحوالہ بحران سے نقل کیا، ہندیہ میں مبسوط سے ہے کہ کسی نے روپوں کے عوض پیسے خریدے روپے تو اس نے دے دئے اور پیسے بائع کے پاس نہ تھے تو بیع جائز ہے انتہی، نیز عالمگیری میں حاوی وغیرہ سے ہے جب ایک روپے کے سو پیسے خریدے روپے پر تو اس نے قبضہ کر لیا اور پیسوں پر اس کا قبضہ نہ ہوا یہاں تک کہ ان کا چلن جاتا رہا تو قیاس یہ ہے کہ بیع باطل نہ ہو اور اگر پچاس پیسوں پر قبضہ کر چکا تھا اس کے بعد چلن جاتا رہا تو نصف میں بیع باطل ہو جائیگی اور اگر چلن رہے تو بیع فاسد نہ ہوگی اور خریدنے والا باقی پیسے لے لے گا انتہی، نیز اس میں محیط سرخسی سے اسی کے مثل ہے اسی میں ذخیرہ سے ہے اگر روپے کے بدلے پیسے یا غلہ خریدا یہاں تک کہ یہ عقد صرف نہ ہوا اور بائع مشتری ایک ہی طرف کا حقیقتہً قبضہ ہو کر جدا ہو گئے تو جائز ہے ہاں اگر کسی طرف کا

قبضہ حقیقتہً نہ ہو صرف ایک طرف کا حکماً ہوا تو جائز نہیں خواہ وہ عقد صرف ہو یا نہ ہو، بیان اس کا یہ ہے کہ ایک شخص کا دوسرے پر پیسہ یا غلہ آتا تھا تو اس نے جس پر پیسہ یا غلہ آتا ہے انہی پیسوں یا غلہ کو روپے سے خرید لیا اور روپے دیئے

[Footnotes] 1 فتاویٰ ہندیہ کتاب الصرف الفصل الثالث فی بیع الفلوس نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۲۴ 2 فتاویٰ ہندیہ کتاب الصرف الفصل الثالث فی بیع الفلوس نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۲۵_۲۲۶

Fatawa Razawiyya Volume 17

[Arabic Text Column] Before the exchange of dirhams, the contract was void. This is a point that must be remembered, as people are heedless of it. [End of quote 1] In the same source, it is mentioned: A man was given a dirham and asked, "Give me this many copper coins (fulus) for half of it, and a small dirham for the other half." This is permissible. Then, if they separated before taking possession of the small dirham and the copper coins, the contract remains valid for the copper coins but is annulled for the portion of the small dirham. And if the large dirham had not even been handed over until they separated, the sale is void in its entirety. [End of quote 2] Also in the same source: Someone bought something with copper coins, paid the coins, and they separated. Then a coin was found among them that was not spendable (counterfeit), so it was returned and replaced. In this situation, if the copper coins were the price (thaman) of goods, the contract is not void, whether the returned amount was small or large, and whether it was replaced or not. However, if the copper coins were the price for dirhams that had already been taken possession of, and the unspendable coin was returned and replaced or not, the contract remains valid. Similarly, if in this situation all of them were found to be unspendable and were returned and replaced, the contract remains valid. Even if the dirhams were not yet taken possession of, if all were found...

[Urdu Text Column] ...if they separated before, the sale became void. Remembering this issue is obligatory, and people are heedless of it. End of quote. And in the same source (Zakhira) it says: If someone was given a rupee and asked to give such many paisas (copper coins) for half of it and an eight-anna coin (athanni) for the other half, this is permissible. Then if they separated before taking possession of the eight-anna coin and the paisas, the sale remains intact for the paisas but became void for the portion of the eight-anna coin. And if the rupee itself had not been given before they separated, then both the eight-anna coin and the paisas became void in total. End of quote. Also, in the same source, it mentions: Someone bought a thing with paisas, paid the money, and both separated. Then the seller found one paisa counterfeit among them, returned it, and took another paisa in exchange. In this case, if these paisas were the price for some commodity, the contract would not be void, whether those returned were few or many, and whether other money was taken in exchange or not. And if that money was the price for rupees, now if possession of the rupees had been taken, in this case, returning the counterfeit and taking a genuine one in its place or not, the contract remains valid as before. Similarly, in this case, if all the

paisas were found counterfeit and returned, and genuine ones were taken in exchange or not yet taken, even then the sale will remain correct. And if possession of the rupees had not occurred, if all the money...

[Footnotes] 1. Fatawa Hindiyya, Kitab al-Buyu', Chapter 9, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/102 2. Fatawa Hindiyya, Kitab al-Sarf, Section 3, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/225

फ़तावा रज़विया खंड 17

[अरबी पाठ स्तंभ] दिरहमों के विनिमय से पहले अनुबंध अमान्य था। यह एक ऐसा विषय है जिसे याद रखना आवश्यक है, क्योंकि लोग इसके प्रति लापरवाह हैं। [उद्धरण 1 समाप्त] उसी स्रोत में उल्लेख है: एक व्यक्ति को एक दिरहम दिया गया और कहा गया, "इसके आधे के बदले मुझे इतने तांबे के सिक्के(फुलुस) दे दो, और दूसरे आधे के बदले एक छोटा दिरहम दे दो।" यह जायज़ है। फिर, यदि वे छोटा दिरहम और तांबे के सिक्के प्राप्त करने से पहले अलग हो गए, तो तांबे के सिक्कों के लिए अनुबंध बना रहता है लेकिन छोटे दिरहम के हिस्से के लिए रद्द हो जाता है। और यदि बड़ा दिरहम भी अलग होने तक नहीं दिया गया था, तो बिक्री पूरी तरह से अमान्य है। [उद्धरण 2 समाप्त] उसी स्रोत में: किसी ने तांबे के सिक्कों से कुछ खरीदा, सिक्के दिए और वे अलग हो गए। फिर उनमें से एक सिक्का ऐसा पाया गया जो चलन में नहीं था (खोटा), तो उसे वापस कर दिया गया और बदल दिया गया। इस स्थिति में, यदि तांबे के सिक्के किसी वस्तु की कीमत (थमन) थे, तो अनुबंध अमान्य नहीं होता है, चाहे वापस की गई राशि कम हो या अधिक, और चाहे उसे बदला गया हो या नहीं। हालांकि, यदि तांबे के सिक्के उन दिरहमों की कीमत थे जिन पर पहले ही कब्ज़ा किया जा चुका था, और न चलने वाले सिक्के को वापस कर दिया गया और बदला गया या नहीं, तो अनुबंध वैध रहता है। इसी तरह, यदि इस स्थिति में सभी सिक्के न चलने वाले पाए गए और उन्हें वापस कर दिया गया और बदल दिया गया, तब भी अनुबंध वैध रहता है। भले ही दिरहमों पर अभी तक कब्ज़ा नहीं हुआ था, अगर सभी पाए गए...

[उर्दू पाठ स्तंभ] ...यदि वे पहले अलग हो गए, तो बिक्री अमान्य हो गई। इस मसले को याद रखना अनिवार्य है, और लोग इससे बेखबर हैं। (समाप्त)। और इसी में ज़खीरा से है: किसी को एक रुपया दिया गया और कहा गया कि इसके आधे के बदले इतने पैसे (तांबे के सिक्के) दे दो और आधे के बदले अठन्नी, तो यह जायज़ है। फिर अगर अठन्नी और पैसों पर कब्ज़ा करने से पहले वे दोनों अलग हो गए, तो पैसों में बिक्री बरकरार है, अठन्नी के हिस्से में अमान्य हो गई। और अगर रुपया भी नहीं दिया गया था और वैसे ही दोनों अलग हो गए, तो अठन्नी और पैसे सब में अमान्य हो गई। (समाप्त)। और इसी में यह भी है: किसी ने पैसों से कोई चीज़ खरीदी, पैसे दे दिए और दोनों अलग हो गए। फिर विक्रेता ने उनमें से एक पैसा खोटा पाया, उसे वापस किया और उसके बदले दूसरा पैसा लिया। तो इस स्थिति में, यदि ये पैसे किसी वस्तु की कीमत (थमन) थे, तो अनुबंध अमान्य नहीं होगा, चाहे वे जो वापस दिए गए थोड़े पैसे थे या ज़्यादा, और बदले में दूसरे पैसे लिए या नहीं। और अगर वह पैसा

रुपयों की कीमत (थमन) था, अब अगर रुपयों पर कब्ज़ा हो चुका था, तो इस स्थिति में खोटा लौटाने और उसके बदले में खरा लेने या न लेने पर भी अनुबंध पहले की तरह सही है। इसी तरह इस स्थिति में अगर सब पैसे खोटे पाए गए और वापस दिए गए और उनके बदले खरे लिए या अभी नहीं लिए, तब भी बिक्री सही रहेगी। और अगर रुपयों पर कब्ज़ा नहीं हुआ था, अगर सब पैसे...

[पाद टिप्पणियाँ] 1. फ़तावा हिन्दिया, किताब अल-बुयू, अध्याय 9, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/102 2. फ़तावा हिन्दिया, किताब अल-सर्फ़, अनुभाग 3, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/225

पृष्ठ 427/715

[عربی متن کا کالم] قبل نقد الدراہم کان العقد باطلا وھذا فصل یجب حفظه والناس عنه غافلون اه ۱ وفیها عنها اعطی رجلا درھما وقال اعطنی بنصفه کذا فلسا و بنصفه درھما صغیرا فھذا جائز فان تفرقا قبل قبض الدرہم الصغیر والفلوس فالعقد قائم فی الفلوس منتقض فی حصة الدرہم وان لم یکن دفع الدرہم الکبیر حتی افترقا بطل البیع فی الکل ۲ اه وفیها عنها اشتری بفلوس واعطی الفلوس وافترقا ثم وجد فیها فلسا لا ینفق فرده فاستبدله ففی ھذه الصورة اذا کانت الفلوس ثمن متاع لا یبطل العقد سواء کان المردود قلیلا او کثیرا استبدل او لم یستبدل وان کانت الفلوس ثمن الدراہم مقبوضة فرد الذی لا ینفق و استبدل او لم یستبدل فالعقد باق علی الصحة وکذا لك لو وجد الکل فی ھذه الصورة لا ینفق وردھا و استبدل و یستبدل فالعقد باق علی الصحة وان لم تکن الدراہم مقبوضة ان وجد کل

[اردو متن کا کالم] سے پہلے جدا ہوگئے تو بیع باطل ہوگئی، اس مسئلہ کا یاد رکھنا واجب ہے اور لوگ اس سے غافل ہیں انتہی، اور اسی میں ذخیرہ سے ہے کسی کو ایک روپیہ دیا اور کہا کہ آدھے کے اتنے پیسے دے دے اور آدھے کی اٹھنی تو یہ جائز ہے پھر اگر اٹھنی اور پیسوں پر قبضہ سے پہلے وہ دونوں جدا ہو گئے تو پیسوں میں بیع برقرار ہے اٹھنی کے حصہ میں باطل ہو گئی اور اگر روپیہ بھی نہیں دیا تھا ویسے ہی دونوں جدا ہو گئے تو اٹھنی اور پیسے سب میں باطل ہوگئی انتہی و نیز اسی میں اس سے ہے کوئی چیز پیسوں کو خریدی اور پیسے دے دئے اور دونوں جدا ہو گئے پھر بائع نے ان میں ایک پیسہ کھوٹا پایا اسے واپس دیا اور اس کے بدلے اور پیسہ لیا تو اس صورت میں یہ پیسے اگر کسی متاع کے ثمن تھے تو عقد باطل نہ ہو خواہ وہ جو واپس دئے تھوڑے پیسے تھے یا زیادہ، اور بدلے میں دوسرے پیسے لئے یا نہیں، اور اگر وہ پیسے روپوں کے ثمن تھے اب اگر روپوں پر قبضہ ہو چکا تھا اس صورت میں کھوٹا پھیرا اور اس

کے بدلے میں کھرا لیا یا نہ لیا تو عقد بدستور صحیح ہے اسی طرح اس صورت میں سب پیسے کھوٹے پائے اور واپس دئے اور ان کے عوض کھرے لئے یا ابھی نہ لئے جب بھی بیع صحیح رہے گی، اور اگر روپوں پر قبضہ نہیں ہوا تھا اگر سب پیسے

[حواشی] ۱ فتاویٰ ہندیہ کتاب البیوع الباب التاسع نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۱۰۲ ۲ فتاویٰ ہندیہ کتاب الصرف الفصل الثالث نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۲۵

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Arabic Column Transcription/Translation] If copper coins are found to be unspendable and returned, the contract becomes void according to Imam Abu Hanifa, whether they were replaced in the sitting of return or not. The two disciples (Sahibayn) say if they were replaced in the sitting of return, it remains valid as is, and if not replaced, it is annulled. If some of them are unspendable and returned, the analogy (Qiyas) is that the contract should be annulled to that extent. However, Imam Abu Hanifa (Allah Almighty have mercy on him) deemed it better (Istihsan) regarding a small amount that if it is returned and replaced in the sitting of return, the contract is not annulled at all. Narrations from Imam Abu Hanifa (Allah Almighty have mercy on him) differ regarding the definition of 'small amount'. In one narration, if it exceeds half, it is 'much', and less than that is 'little'. In another narration, half is 'much'. In another narration, if it exceeds one-third, it is 'much'. All of this is summarized. We have mentioned many citations from 'Al-Dhakhira' because a contrary citation will soon follow regarding selling one fils for two. So, keep in mind that regarding our current issue—i.e., selling copper coins for silver coins—it has been definitively stated in several places as permissible, and no mention of any disagreement was made here at all. In 'Tanwir al-Absar' and 'al-Durr al-Mukhtar', it says: selling copper coins for their like, or for silver dirhams or gold dinars...

[Urdu Column Transcription] If counterfeit coins were found and returned, the sale becomes void according to the Great Imam [Abu Hanifa], even if they were replaced with genuine ones in the same sitting or not. The two disciples [Sahibayn] say if they were replaced with genuine ones in the same sitting, the sale remains valid as usual, and if not taken, the sale is broken. If some coins were found to be counterfeit and returned, then by analogy [Qiyas], the sale should be void to that extent. However, the Great Imam (may Allah's mercy be upon him) states by way of preference [Istihsan] that if the returned coins are few and the replacement coins are taken in the same sitting, then the contract will not break at all. As for how much constitutes 'few', there are different narrations from the Imam. One narration says that more than half is 'many' (Kathir) and less than that is 'few' (Qalil). In another narration, half is also 'many'. And in another narration, more than one-third is 'many'. End of summary. And we have mentioned many citations from 'Zakheera' because one citation contrary to it is going to come later in the issue of selling one paisa for two, so you should remember that 'Zakheera' has firmly stated the permissibility in several places regarding this issue of ours, i.e., selling paisas in exchange for rupees,

and here they did not even go near mentioning any disagreement. And in 'Tanwir al-Absar' and 'Radd al-Muhtar' it is stated that coins were sold in exchange for coins, rupees, or gold coins, and one side's...

[Footnote] 1 Fatawa Hindiya, Book of Sales, Third Chapter on Sale of Fulus, Noorani Kutub Khana Peshawar 3/26-225

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

[अरबी कॉलम का अनुवाद] यदि ताँबे के सिक्के खर्च न होने योग्य (खोटे) पाए जाएँ और वापस कर दिए जाएँ तो इमाम अबू हनीफ़ा के अनुसार अनुबंध बातिल हो जाता है, चाहे उन्हें वापसी की बैठक में बदल लिया गया हो या नहीं। साहिबैन (दो शिष्य) कहते हैं कि यदि वापसी की बैठक में बदल लिया जाए तो वह अपनी स्थिति में सही रहता है, और यदि नहीं बदला गया तो वह रद्द हो जाता है। यदि उनमें से कुछ खोटे हों और वापस किए जाएँ तो क़यास (तर्क) यह है कि अनुबंध उस सीमा तक रद्द होना चाहिए। लेकिन इमाम अबू हनीफ़ा (अल्लाह उन पर कृपा करे) ने 'इस्तिहसान' (प्राथमिकता) के तौर पर थोड़े सिक्के होने की स्थिति में यह कहा है कि यदि उन्हें वापस किया जाए और वापसी की बैठक में बदल लिया जाए, तो अनुबंध बिलकुल भी रद्द नहीं होगा। 'थोड़ी मात्रा' की परिभाषा के संबंध में इमाम अबू हनीफ़ा से अलग-अलग रिवायतें हैं। एक रिवायत में, यदि यह आधे से अधिक है, तो यह 'अधिक' है, और उससे कम 'थोड़ा' है। एक अन्य रिवायत में, आधा 'अधिक' है। एक अन्य रिवायत में, यदि यह एक-तिहाई से अधिक है, तो यह 'अधिक' है। यह सब सारांशित है। हमने 'अल-ज़ख़ीरा' से कई उद्धरण इसलिए दिए हैं क्योंकि आगे चलकर एक फ़ुल्स को दो फ़ुल्स के बदले बेचने के बारे में एक विपरीत उद्धरण आने वाला है। अत; याद रखें कि हमारे वर्तमान मुद्दे के बारे में—यानी चाँदी के सिक्कों (दिरहमों) के लिए ताँबे के सिक्कों को बेचना—इसे कई स्थानों पर जायज़ बताया गया है, और यहाँ किसी भी असहमति का कोई ज़िक्र नहीं किया गया। 'तन्वीरुल अबसार' और 'अल-दुर्र अल-मुख्तार' में कहा गया है: ताँबे के सिक्कों को उनके जैसे सिक्कों, या चाँदी के दिरहमों या सोने के दीनारों के बदले बेचना...

[उर्दू कॉलम का पाठ] खोटे सिक्के पाए गए और वापस किए गए तो इमाम-ए-आज़म के नज़दीक खरीद-बिक्री (बय) बातिल हो गई, चाहे उसी मजलिस में खरे सिक्कों से बदल लिए गए हों या नहीं। और साहिबैन फ़रमाते हैं कि अगर उसी मजलिस में बदल लिए गए तो बय बदस्तूर सही है और अगर नहीं लिए गए तो बय टूट गई। और कुछ पैसे खोटे पाकर वापस किए गए तो क़यास यह है कि उतने हिस्से में बय बातिल हो जाए, लेकिन इमाम-ए-आज़म रहमतुल्लाह अलैहि इस्तिहसानन फ़रमाते हैं कि अगर वापस किए गए पैसे थोड़े हों और उसी जलसे में बदले के पैसे ले लिए जाएं तो अक़्द असल में नहीं टूटेगा। और 'थोड़े' किसे कहेंगे, इसमें इमाम साहब से रिवायतें अलग-अलग आई हैं। एक रिवायत में है कि आधे से अधिक ज़्यादा (कसीर) हैं और उससे कम कम (क़लील), और एक रिवायत में यह है कि आधा भी ज़्यादा है, और एक रिवायत में तिहाई से ज़्यादा हो तो कसीर है। सारांश

समाप्त। और हमने 'ज़ख़ीरा' से नक़ल (उद्धरण) बहुत अधिक इसलिए ज़िक्र कीं क्योंकि उससे एक नक़ल इसके विपरीत आने वाली है, एक पैसा दो पैसे से बेचने के मसले में, तो यह तुझे याद रहे कि 'ज़ख़ीरा' ने हमारे इस मसले यानी रुपयों के बदले पैसे बेचने के बारे में कई जगहों पर इसके जायज़ होने का फ़ैसला दिया है और यहाँ किसी विरोध के ज़िक्र के करीब भी नहीं गए। और 'तन्वीरुल अबसार' व 'रद उल मुहतार' में है कि पैसों या रुपयों या अशर्फ़ियों के बदले पैसे बेचे और एक तरफ का...

[पादटिप्पणी] 1 फ़तावा हिन्दिया, किताबुल बुयू, तीसरा अध्याय फ़ुलूस की बिक्री के बारे में, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 3/26-225

[عربی عبارت کا اردو ترجمہ] کھوٹے سکے پائے گئے اور واپس کیے گئے تو امام اعظم ابو حنیفہ کے قول کے مطابق عقد باطل ہو گیا چاہے وہ واپسی کی مجلس میں بدل لیے گئے ہوں یا نہیں، اور صاحبین فرماتے ہیں کہ اگر اسی مجلس میں کھرے بدل لیے تو بیع بدستور صحیح ہے اور اگر نہ لیے تو بیع ٹوٹ گئی اور اگر کچھ سکے کھوٹے پا کر واپس کیے تو قیاس یہ ہے کہ عقد اتنے بقدر باطل ہو جائے مگر امام اعظم رحمتہ اللہ تعالی علیہ نے قلیل (تھوڑے) کی صورت میں استحساناً یہ فرمایا ہے کہ اگر وہ واپس کیے گئے اور اسی مجلس میں کھرے سے بدل لیے گئے تو عقد اصلاً نہ ٹوٹے گا اور 'قلیل' کی حد کے بارے میں امام صاحب سے روایتیں مختلف آئی ہیں، ایک روایت میں یہ ہے کہ اگر نصف سے زائد ہو تو وہ کثیر (زیادہ) ہے اور اس سے کم قلیل ہے، ایک اور روایت میں نصف بھی کثیر ہے، ایک اور روایت میں اگر ایک تہائی سے زائد ہو تو کثیر ہے، یہ سب ملخصاً ہے۔ اور ہم نے 'ذخیرہ' سے نقول بکثرت اس واسطے ذکر کیں کیونکہ اس سے آگے چل کر ایک فلس کو دو فلسوں کے عوض بیچنے کے بارے میں ایک مخالف نقل آنے والی ہے، پس یہ بات تمہارے ذہن میں رہے کہ ذخیرہ نے ہمارے اس مسئلہ میں یعنی دراہم کے بدلے فلس بیچنے کے بارے میں کئی جگہوں پر جواز کا حتمی فیصلہ دیا ہے اور یہاں اصلاً کسی اختلاف کا ذکر نہیں کیا، اور 'تنویر الابصار' و 'در مختار' میں ہے کہ سکے ان کے مثل یا دراہم یا دنانیر کے عوض بیچنا...

[اردو کالم کی عبارت] کھوٹے پائے اور واپس دئے تو بیع امامِ اعظم کے نزدیک باطل ہو گئی اگرچہ اسی مجلس میں کھرے بدل لئے ہوں یا نہیں اور صاحبین فرماتے ہیں اگر اسی مجلس میں کھرے بدل لئے تو بیع بدستور صحیح ہے اور اگر نہ لئے تو بیع ٹوٹ گئی اور کچھ پیسے کھوٹے پا

کر واپس دئے تو قیاس یہ ہے کہ اتنے میں بیع باطل ہو جائے مگر امامِ اعظم رحمتہ اللہ تعالیٰ علیہ استحساناً فرماتے ہیں کہ اگر واپس دئے ہوئے پیسے تھوڑے ہوں اور اسی جلسے میں بدلے کے پیسے لے لئے جائیں تو عقد اصلاً نہ ٹوٹے گا اور یہ کہ تھوڑے کتنے کو کہیں اس میں امام صاحب سے روایتیں مختلف آئیں، ایک روایت میں ہے کہ نصف سے زائد کثیر ہیں اور اس سے کم قلیل، اور ایک روایت میں یہ ہے کہ نصف بھی زائد ہے، اور ایک روایت میں تہائی سے زیادہ ہو تو کثیر ہے انتہیٰ ملخصاً۔ اور ہم نے ذخیرہ سے نقول بکثرت اس واسطے ذکر کیں کہ اس سے ایک نقل اس کے مخالف آنے والی ہے ایک پیسہ دو پیسے سے بیچنے کے مسئلہ میں تو یہ تجھے یاد رہے کہ ذخیرہ نے ہمارے اس مسئلہ یعنی روپوں کے عوض پیسے بیچنے کے بارے میں متعدد جگہ جواز پر جزم فرمایا ہے اور یہاں اصلاً کسی ذکر خلاف کے قریب بھی نہ گئے اور تنویر الابصار و ردالمحتار میں ہے کہ پیسوں یا روپوں یا اشرفیوں کے عوض پیسے بیچے اور ایک طرف کا

[حاشیہ] ۱ فتاویٰ ہندیہ کتاب البیوع الفصل الثالث في بیع الفلوس نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۶-۲۲۵

Fatawa Razawiya (Vol. 17)

...if possession [of one of the countervalues] has taken place, then it is permissible. And if possession did not occur on either side such that both separated, then it is impermissible [Intiha]. In summary, the matter is clear and the reports are abundant, even though Allama Qari al-Hidaya disagreed in his Fatwas, requiring possession from both sides and declaring credit sales forbidden. This is his text: (He was asked) whether it is permissible to sell one mithqal of gold for a pile of copper coins on credit or not? (He answered) that selling copper coins for gold or silver on credit is impermissible because our scholars have explicitly stated that it is not permissible to make a forward sale (Salam) of one weighed item for another weighed item (such as gold, silver, copper) unless the weighed item being contracted for is the object of sale (mabi') and not a type of price (thaman), like saffron etc. And copper coins are not of the type of objects of sale; rather, they have become prices [Intiha]. And Allama Hanuti refuted this when he was asked regarding selling gold for copper coins on credit; he answered that it is permissible if possession of one of the two [countervalues] has occurred, because it is stated in al-Bazzaziyya: "If someone buys a hundred copper coins (fils) for one rupee (dirham), possession from one side is sufficient." Then he said: Similarly, if silver or gold is sold for copper coins.

---

1 Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Kitab al-Buyu', Chapter on Riba, Mujtabai Press, Delhi, 2/372. 2 Radd al-Muhtar referring to Fatawa Qari al-Hidaya, Kitab al-Buyu', Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/184.

फ़तावा रज़विया (खंड १७)

...यदि [प्रतिफलों में से एक का] कब्ज़ा हो गया है, तो यह जायज़ है। और यदि किसी भी पक्ष का कब्ज़ा नहीं हुआ कि दोनों अलग हो गए, तो यह नाजायज़ है [इंतिहा]। संक्षेप में, मामला स्पष्ट है और उद्धरण प्रचुर मात्रा में हैं, भले ही अल्लामा कारी अल-हिदाया ने अपने फतवों में इसका विरोध किया हो कि दोनों पक्षों का कब्ज़ा शर्त है और किसी भी पक्ष के उधार होने को हराम ठहराया हो। उनका पाठ यह है: (सवाल हुआ कि) क्या एक मिस्क़ाल सोना पैसों की ढेरी से उधार बेचना जायज़ है या नहीं? (जवाब दिया) कि पैसे सोने या चाँदी के बदले उधार बेचना नाजायज़ है क्योंकि हमारे विद्वान स्पष्ट रूप से कहते हैं कि दो चीज़ें जो तौलकर बेची जाती हों (जैसे सोना, चाँदी, ताँबा) उनमें एक का दूसरे से विनिमय जायज़ नहीं है सिवाय इस स्थिति के कि वह तौली जाने वाली चीज़ जो सलाम (अग्रिम भुगतान) के माध्यम से तय हुई है, बिक्री की वस्तु (मबी') हो, कीमत (थमन) की श्रेणी में न हो, जैसे केसर आदि। और पैसे बिक्री की वस्तु की श्रेणी में नहीं हैं, बल्कि वे कीमत बन गए हैं [इंतिहा]। और अल्लामा हनूती ने इसका खंडन किया जब उनसे पैसों के बदले सोना और उधार बेचने के बारे में पूछा गया; उन्होंने जवाब दिया कि यह जायज़ है यदि दोनों में से किसी एक का कब्ज़ा हो गया हो, क्योंकि 'बज़्ज़ाज़िया' में है कि: "यदि कोई एक रुपये के सौ पैसे खरीदे, तो एक पक्ष का कब्ज़ा पर्याप्त है।" फिर फरमाया: इसी तरह यदि चाँदी या सोना पैसों के बदले बेचें।

---

1. दुर्र-ए-मुख़्तार शरह तनवीर अल-अब्सार, किताब अल-बुयू, रिबा का अध्याय, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, २/३७२।
2. रद्दे मुहतार, फतावा कारी अल-हिदाया के हवाले से, किताब अल-बुयू, दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, ४/१८४।

पृष्ठ ७१५ का ४२९

فان نقد احدهما جاز وان تفرقا بلا قبض احدهما لم يجز اهـ ۔ وبالجملة فالمسئلة ظاهرة والنقول متوافرة وان خالفها العلامة قاری الهداية في فتاواه فشرط التقابض وحرم النسئة وهذا نصها (سئل) هل يجوز بيع مثقال من الذهب بقنطار من الفلوس نسئة ام لا (اجاب) لا يجوز بيع الفلوس الى اجل بذهب او فضة لان علماءنا نصوا على انه لا يجوز اسلام موزون في موزون الا اذا كان الموزون المسلم فيه مبيعا كزعفران او غيره والفلوس ليست من المبيعات بل صارت اثمانا اهـ ورده العلامة الحانوتی حين سئل عن بيع الذهب بالفلوس نسئة فاجاب بانه يجوز اذا قبض احد البدلين لما في البزازية لو اشترى مائة فلس بدرهم يكفى التقابض من احد الجانبين قال ومثله مالو باع فضة او ذهبا بفلوس

قبضہ ہو گیا تو جائز ہے اور اگر کسی طرف کا قبضہ نہ ہوا کہ دونوں جدا ہو گئے تو ناجائز ہے انتہی، الحاصل مسئلہ ظاہر ہے اور نقلین وافر ہیں اگر چہ علامہ قاری الہدایہ نے اپنے فتاوٰی میں اس کی مخالفت فرمائی کہ دونوں جانب کا قبضہ شرط کیا اور کسی طرف ادھار ہونے کو حرام ٹھہرایا اس کی عبارت یہ ہے (سوال ہوا کہ آیا ایک مثقال سونا پیسوں کی ڈھیری سے ادھار بیچنا جائز ہے یا نہیں؟ (جواب دیا) کہ پیسے سونے یا چاندی کے عوض ادھار بیچنا ناجائز ہے اس لئے کہ ہمارے علماء تصریح فرماتے ہیں کہ دو چیزیں جو تول کر بیچی جاتی ہوں (جیسے سونا چاندی تانبا) ان میں ایک کی دوسرے سے بدلی جائز نہیں مگر اس صورت میں کہ وہ موزون چیز جو بذریعہ سلم وعدہ پر یعنی ٹھہری ہے مبیع ہو قسم ثمن سے نہ ہو جیسے زعفران وغیرہ اور پیسے جنس مبیع سے نہیں ہیں بلکہ ثمن ہو گئے ہیں انتہی، اور علامہ حانوتی نے اس کا رد فرمایا جبکہ ان سے پیسوں کے عوض سونا اور ادھار بیچنے کی نسبت سوال ہوا، جواب دیا کہ جائز ہے، اگر

دونوں میں سے ایک کا قبضہ ہو گیا اس لئے کہ بزازیہ میں ہے کہ اگر ایک روپے کے سو پیسے خریدے تو ایک جانب کا قبضہ کافی ہے، پھر فرمایا اگر اسی طرح چاندی یا سونا پیسوں کو بیچیں

---

1 در مختار شرح تنویر الابصار کتاب البیوع باب الربو مطبع مجتبائی دہلی ۳۷۲/۲ 2 ردالمحتار بحوالہ فتاوی قاری الہدایہ کتاب البیوع دار احیاء التراث العربي بیروت ۱۸۴/۴

Fatawa Ridawiyya (Volume 17)

[Right Column - Urdu Translation of Arabic Text] As it is stated in 'Al-Bahr' from 'Al-Muheet', he said: So, do not be deceived by what appears in 'Fatawa Qari al-Hidaya' (end). In 'An-Nahr', the answer to this objection was given that here Qari al-Hidaya's intention with 'sale' is exchange (Salam), and copper coins (fulus) have a resemblance to price (thaman), and the exchange of price for price is not valid. From the perspective that they are originally commodities, possession from one side was deemed sufficient. I say: (I say) This is what is inferred from their reasoning that our scholars explicitly stated that two items sold by weight are not permissible for exchange, etc. However, Al-Allamah Ibn Abidin was not satisfied with this in 'Radd al-Muhtar' and answered that the statement of Al-Allamah Qari al-Hidaya is based on the issue understood from the text of 'Al-Jami' as-Saghir' that mutual possession from both sides is a condition. He said: Thus, there will be no objection from the 'Bazzaziyya' issue, as it is based on what is in 'Al-Mabsut' of Imam Muhammad. Earlier, quoting 'Al-Bahr' from 'Al-Dhakhira', it was mentioned that Imam Muhammad mentioned the issue of selling one copper coin (fils) for two specific coins in the 'Book of Currency Exchange' (As-Sarf) of 'Al-Mabsut' and did not stipulate possession by both parties, and in 'Al-Jami' as-Saghir', he mentioned the text that indicates that it...

[Left Column - Arabic Text] As in 'Al-Bahr' from 'Al-Muheet', he said: So one should not be deceived by what is in 'Fatawa Qari al-Hidaya' (end). It was answered in 'An-Nahr' that his intention with 'sale' is 'Salam', and copper coins (fulus) have a resemblance to price (thaman), and Salam is not valid in prices. From the perspective that they are originally commodities, possession from one side was deemed sufficient. I say: This is what is inferred from his reasoning that our scholars explicitly stated that it is not permissible to have 'Salam' of weighed items for weighed items, etc. However, Al-Allamah Ibn Abidin was not satisfied with this in 'Radd al-Muhtar' and answered by interpreting what is in 'Fatawa Qari al-Hidaya' according to what is indicated by the text of 'Al-Jami' as-Saghir' regarding the requirement of mutual possession from both sides. He said: Thus, the objection against it with what is in 'Al-Bazzaziyya'—which is based on what is in 'Al-Asl', meaning 'Al-Mabsut'—is not valid. He quoted earlier from 'Al-Bahr' from 'Al-Dhakhira' that Imam Muhammad mentioned the issue of selling one copper coin (fils) for two coins specifically in 'Sarf al-Asl' and did not stipulate mutual possession, and mentioned in 'Al-Jami' what indicates that...

1. Radd al-Muhtar, referring to Al-Hanouti, Book of Sales, Chapter on Usury, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/182.
2. Radd al-Muhtar, referring to An-Nahr, Book of Sales, Chapter on Usury, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/182.
3. Radd al-Muhtar, Book of Sales, Chapter on Usury, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/182.

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

[दायां कॉलम - अरबी पाठ का उर्दू अनुवाद] जैसा कि 'अल-बह्र' में 'अल-मुहीत' से है, उन्होंने कहा: तो 'फ़तावा क़ारी अल-हिदाया' में जो हुआ है, उससे धोखा न खाया जाए (समाप्त)। 'अन-नह्र' में इस आपत्ति का उत्तर दिया गया कि यहाँ क़ारी अल-हिदाया का 'बिक्री' से अर्थ विनिमय (सलाम) है, और पैसों (फ़ुलूस) की क़ीमत (थमन) से समानता होती है, और क़ीमत का क़ीमत से विनिमय सही नहीं है। और इस दृष्टि से कि वे मूलतः वस्तुएँ(मसाले) हैं, एक पक्ष का क़ब्ज़ा पर्याप्त माना गया। मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) यही उनकी इस दलील से प्राप्त होता है कि हमारे विद्वानों ने स्पष्ट रूप से कहा है कि तौले जाने वाले सामान के बदले तौले जाने वाले सामान में विनिमय जायज़ नहीं है आदि। लेकिन अल्लामा इब्न आबिदीन 'रद अल-मुह्तार' में इससे संतुष्ट नहीं हुए और यह उत्तर दिया कि अल्लामा क़ारी अल-हिदाया की बात उस मसले पर आधारित है जो 'जामे सगीर' के शब्दों से समझा जाता है कि दोनों तरफ़ से क़ब्ज़ा शर्त है। उन्होंने कहा: तो अब इस मसले पर 'बज़ाज़िया' से कोई आपत्ति नहीं होगी जो इमाम मुहम्मद की 'मबसूत' पर आधारित है। और इससे पहले 'बह्र' के हवाले से 'ज़खीरा' से नक़ल किया कि इमाम मुहम्मद ने 'मबसूत' की 'किताबुल सर्फ़ में एक पैसे के बदले दो पैसे बेचने का मसला ज़िक्र फ़रमाया और दोनों पक्षों का क़ब्ज़ा शर्त नहीं किया, और 'जामे सगीर' में वह इबारत ज़िक्र फ़रमाई जो यह दर्शाती है कि वह...

[बायां कॉलम - अरबी पाठ] जैसा कि 'अल-बह्र' में 'अल-मुहीत' से है, उन्होंने कहा: तो 'फ़तावा क़ारी अल-हिदाया' में जो है, उससे धोखा न खाया जाए (समाप्त)। 'अन-नह्र' में इसका उत्तर दिया गया कि यहाँ 'बिक्री' से उनका अर्थ 'सलाम' है, और तांबे के सिक्कों (फ़ुलूस) की क़ीमत (थमन) से समानता होती है, और क़ीमतों में 'सलाम' मान्य नहीं है। और इस दृष्टि से कि वे मूलतः वस्तुएँ(मसाले) हैं, एक पक्ष का क़ब्ज़ा पर्याप्त माना गया। मैं कहता हूँ: यही उनकी इस दलील से प्राप्त होता है कि हमारे विद्वानों ने स्पष्ट रूप से कहा है कि तौले जाने वाले सामान के बदले तौले जाने वाले सामान में 'सलाम' जायज़ नहीं है आदि। लेकिन अल्लामा इब्न आबिदीन 'रद अल-मुह्तार' में इससे संतुष्ट नहीं हुए और यह उत्तर दिया कि 'फ़तावा क़ारी अल-हिदाया' की बात को उस मसले पर आधारित किया जाए जो 'जामे सगीर' के शब्दों से समझा जाता है कि दोनों तरफ़ से क़ब्ज़ा शर्त है। उन्होंने कहा: तो अब इस मसले पर 'बज़ाज़िया' से कोई आपत्ति नहीं होगी जो 'अल-अस्ल' यानी 'मबसूत' पर आधारित है। और उन्होंने इससे पहले 'बह्र' के हवाले से 'ज़खीरा' से नक़ल किया कि इमाम मुहम्मद ने 'अस्ल' की

किताब 'अस-सर्फ़ में एक पैसे के बदले दो पैसे बेचने का मसला ज़िक्र फ़रमाया और दोनों तरफ़ से क़ब्ज़ा शर्त नहीं किया, और 'जामे सगीर' में वह इबारत ज़िक्र फ़रमाई जो यह दर्शाती है कि वह...

---

1. रद अल-मुह्तार, अल-हनुती के हवाले से, किताबुल बुयू, बाबूद रिबा, दार इहया अत-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 4/182.
2. रद अल-मुह्तार, अन-नह्र के हवाले से, किताबुल बुयू, बाबूद रिबा, दार इहया अत-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 4/182.
3. रद अल-मुह्तार, किताबुल बुयू, बाबूद रिḅ, दार इहया अत-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 4/182.

पृष्ठ 430/715

[دایاں کالم] جیسا کہ بحر میں محیط سے ہے فرمایا تو وہ جو فتاویٰ قاری ہدایہ میں واقع ہوا اس سے دھوکا نہ کھایا جائے انتہی، اور اس اعتراض کا نہر میں یہ جواب دیا کہ یہاں قاری ہدایہ کی مراد بیع سے بدلی ہے اور پیسوں کو ایک مشابہت ثمن سے ہے اور ثمن کی ثمن سے بدلی صحیح نہیں اور اس حیثیت سے کہ پہلے اصل میں متاع ہیں ایک جانب کا قبضہ کافی سمجھا گیا۔ اقول: (میں کہتا ہوں) یہی ان کی اس دلیل سے مستفاد ہے کہ ہمارے علماء نے نص فرمایا کہ دو چیزیں جو وزن سے بیچی جاتی ہوں ان میں بدلی جائز نہیں الخ مگر علامہ ابن عابدین نے ردالمحتار میں اس پر قناعت نہ فرمائی اور یوں جواب دیا کہ علامہ قاری ہدایہ کا کلام اس مسئلہ پر محمول ہے جو کلام جامع صغیر سے مفہوم ہوتا ہے کہ دونوں طرف سے قبضہ شرط ہے اور کہا تو اب اس مسئلہ بزازیہ سے اعتراض نہ ہوگا کہ وہ اس پر محمول ہے جو مبسوط امام محمد میں ہے اور اس سے پہلے بحوالہ بحر ذخیرہ سے نقل کیا کہ امام محمد نے مبسوط کی کتاب الصرف میں ایک پیسہ دو پیسے معین کے بدلے بیچنے کا مسئلہ ذکر فرمایا اور طرفین کا قبضہ شرط نہ کیا اور جامع صغیر میں وہ عبارت ذکر فرمائی جو دلالت کرتی ہے کہ وہ

[بایاں کالم] كما في البحر عن المحيط قال فلا يغتر بما في فتاوى قارى الهداية اه واجب عنه في النهر بان مراده بالبيع السلم والفلوس لها شبه بالثمن ولا يصح السلم في الاثمان ومن حيث انها عروض في الاصل اكتفى بالقبض من احد الجانبين - اقول: وهذا هو المستفاد من تعليله بان علمائنا نصوا على انه لا يجوز اسلام موزون في موزون الخ لكن لم يقنع به العلامة ابن عابدين في رد المحتار واجاب بحمل ما فى فتاوى قارى الهداية على ماادل عليه كلام الجامع الصغير من اشتراط التقابض من الجانبين قال فلا يعترض عليه بما في البزازية المحمول على ما فى الاصل يعنى المبسوط. و نقل قبيله عن البحر عن

الذخيرة ان محمد اذكر مسئلة بيع فلس بفلسين باعيا نهما في صرف الاصل ولم يشترط التقابض وذكر في الجامع مايدل على انه

---

1. رد المحتار بحواله الحانوتى كتاب البيوع باب الربا دار احياء التراث العربى بيروت ۴ / ۱۸۲
2. رد المحتار بحواله النهر كتاب البيوع باب الربا دار احياء التراث العربى بيروت ۴ / ۱۸۲
3. رد المحتار كتاب البيوع باب الربا دار احياء التراث العربى بيروت ۴ / ۱۸۲

Fatawa Razawiya - Volume 17

[Arabic Text Block:] Condition: Among them are those who did not consider the second ruling correct because mutual possession (taqabud) with specification (ta'yeen) is a condition in currency exchange (sarf), and this is not it. Some others corrected it because copper coins (fulus) have the status of goods from one aspect and the status of price (thaman) from another. Thus, inequality (tafadul) was allowed due to the first aspect, and mutual possession was required for the second [1]. I say, and success is from Allah: Ash-Shami, following al-Bahr, who followed al-Dhakhira, inferred from the words of al-Jami' al-Saghir the requirement of mutual possession. This humble servant has a strong reservation regarding this. I referred back to al-Jami' and found its text as follows: Muhammad narrated from Ya'qub from Abu Hanifa (may Allah be pleased with them): A man sold two ratls of abdominal fat for one ratl of tail fat, or sold two ratls of meat for one ratl of abdominal fat, or one egg for two eggs, or one walnut for two walnuts, or one fils (penny) for two fils, or one date for two dates, hand-to-hand with their specific identity; it is permissible. This is the opinion of Abu Yusuf (may Allah have mercy on him). Muhammad (may Allah have mercy on him) said: One fils for two fils is not permissible, but one date for two dates is permissible [2].

[Urdu Text Block:] ...is a condition, so some of the mentors (Mashaikh) did not correct this second ruling because the possession of both sides with determination is a condition in the sale of currency (Bai Sarf), and this is not that. Some corrected it because for pennies (paisa), there is a ruling of commodity from one aspect and a ruling of price (thaman) from another aspect. So, because of the first aspect, inequality became permissible, and because of the second, the possession of both parties became a condition. Finished. I say: and success is with Allah (I say, and success is from Allah). That which Shami inclined towards following Bahr, and Bahr following Zakhira, that the words of Jami' Saghir indicate the possession of both parties being a condition, this humble servant has strong hesitation in it. I referred to Jami', so I found its wording thus: Imam Muhammad narrates from Imam Abu Yusuf and he from Imam Azam (may Allah Almighty be pleased with them), a person sold two ratls of belly fat for one ratl of tail fat, or two ratls of meat for one ratl of belly fat, or one egg for two eggs, or one walnut for two walnuts, or one paisa for two paisas, or one dried date for two dried dates, hand-to-hand such that both are specified, then it is permissible. This is the saying of Abu Yusuf (may Allah Almighty be upon him). Imam Muhammad (may Allah Almighty be upon him) said: one paisa for two

paisas is not permissible, and one dried date for two dried dates is permissible. Their words ended.

[Footnotes:] 1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Riba, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 3/184 2. Al-Jami' al-Saghir, Kitab al-Buyu', Bab al-Buyu' fima yukalu aw yuzanu, Matba' Yusufi, Lucknow, p. 79

[अरबी पाठ का अनुवाद:] शर्त: उनमें से कुछ ने दूसरे नियम को सही नहीं माना क्योंकि मुद्रा विनिमय (सर्फ़) में निर्धारण (ताईन) के साथ पारस्परिक कब्ज़ा (तकाबुद) एक शर्त है, और यह वह नहीं है। अन्य लोगों ने इसे सही माना क्योंकि तांबे के सिक्कों (फ़ुलूस) में एक नज़रिए से सामान (अरूज़) का हुक्म है और दूसरे नज़रिए से मूल्य (थमन) का। इस प्रकार, पहले पहलू के कारण असमानता (तफ़ादुल) की अनुमति दी गई, और दूसरे के लिए पारस्परिक कब्ज़े की आवश्यकता थी [1]। मैं कहता हूँ, और सफलता अल्लाह की ओर से है: अश-शामी ने अल-बहर का अनुसरण करते हुए, जिसने अल-ज़खीरा का अनुसरण किया, अल-जामी अल-सगीर के शब्दों से पारस्परिक कब्ज़े की आवश्यकता का निष्कर्ष निकाला। इस विनम्र सेवक को इस संबंध में गहरा संदेह है। मैंने अल-जामी को फिर से देखा और उसका पाठ इस प्रकार पाया: मुहम्मद ने याकूब से, उन्होंने अबू हनीफा (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) से रिवायत की: एक व्यक्ति ने पेट की दो रतल चर्बी को पूंछ की एक रतल चर्बी के बदले, या दो रतल मांस को पेट की एक रतल चर्बी के बदले, या एक अंडे को दो अंडों के बदले, या एक अखरोट को दो अखरोट के बदले, या एक फ़िलस (पैसा) को दो फ़िलस के बदले, या एक खजूर को दो खजूर के बदले नकद (हाथों-हाथ) उनकी विशिष्ट पहचान के साथ बेचा; यह जायज़ है। यह अबू यूसुफ (अल्लाह उन पर रहम करे) का मत है। मुहम्मद (अल्लाह उन पर रहम करे) ने कहा: एक फ़िलस के बदले दो फ़िलस जायज़ नहीं है, लेकिन एक खजूर के बदले दो खजूर जायज़ है [2]।

[उर्दू पाठ का अनुवाद:] ...शर्त है, तो मशायख़ में कुछ ने इस दूसरे हुक्म की तसहीह (सुधार) नहीं की कि तईन के साथ दोनों तरफ़ का कब्ज़ा बै-ए-सर्फ़(मुद्रा विनिमय) में शर्त है, और यह वह नहीं है। और कुछ ने इसकी तसहीह की इसलिए कि पैसों के लिए एक पहलू से मताअ (सामान) का हुक्म है और एक पहलू से थमन (कीमत) का। तो पहले पहलू के कारण कमी-बेशी जायज़ हुई और दूसरे के कारण दोनों पक्षों का कब्ज़ा शर्त हुआ। समाप्त। मैं कहता हूँ: व बिल्लाहित-तौफ़ीक (और अल्लाह से ही तौफ़ीक़ है)। वह बात जिसकी तरफ़ शामी ने बह्र का अनुसरण करते हुए और बह्र ने ज़ख़ीरा का अनुसरण करते हुए रुझान दिखाया कि जामी सगीर का कलाम दोनों पक्षों के कब्ज़े के शर्त होने पर दलालत करता है, इस बंदा-ए-ज़ईफ़ को इसमें कड़ा संदेह है। और मैंने जामी की तरफ़ रुजू किया तो उसकी इबारत ऐसी पाई: इमाम मुहम्मद रिवायत करते हैं इमाम अबू यूसुफ से और वह इमाम-ए-आज़म से (अल्लाह तआला उन पर प्रसन्न हो), एक शख़्स ने पेट की दो रतल चर्बी एक रतल चकती

को, या दो रतल गोश्त एक रतल पेट की चर्बी को, या एक अंडा दो अंडों को, या एक अखरोट दो अखरोट को, या एक पैसा दो पैसों को, या एक छुआरा दो छुआरे को दस्त-ब-दस्त (हाथों-हाथ) कि दोनों मुअय्यन (निश्चित) हों, तो जायज़ है। और यही इमाम अबू यूसुफ (रहमतुल्लाह अलैहि) का कौल है। और इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाह अलैहि) ने फ़रमाया: एक पैसा दो पैसों को जायज़ नहीं और एक छुआरा दो छुआरे को जायज़ है। उनका कलाम ख़त्म हुआ।

[पाद टिप्पणियाँ:] 1. रद अल-मुहतार, किताब अल-बियू, बाब अल-रिबा, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 3/184 2. अल-जामी अल-सगीर, किताब अल-बियू, बाब अल-बियू फ़ीमा युकालु औ युज़ानु, मतबा यूसुफ़ी, लखनऊ, पृ. 79

[عربی متن:] شرط فمنهم من لم يصحح الثانی لان التقابض مع التعيين شرط فی الصرف وليس به ومنهم من صححه لان الفلوس لها حكم العروض من وجه وحكم الثمن من وجه فجاز التفاضل للاول واشترط التقابض للثانی ۱ اهـ اقول: وبالله التوفيق اليه الشامی تبعا للبحر تبعا للذخيرة من دلالة كلام الجامع الصغير على اشتراط التقابض فللعبد الضعيف فيه تأمل قوی وانی راجعت الجامع فوجدت نصه هكذا محمد عن يعقوب عن ابی حنيفة رضی الله تعالی عنهم رجل باع رطلين من شحم البطن برطل من الية او باع رطلين من لحم برطل من شحم البطن او بيضة ببيضتين او جوزة بجوزتين او فلسا بفلسين او تمرة بتمرتين يدا بيد با عيانها يجوز وهو قول ابی يوسف رحمه الله تعالی وقال محمد رحمة الله تعالی عليه لا يجوز فلس بفلسين ويجوز تمرة بتمرتين ۲ اهـ

[اردو متن:] شرط ہے تو مشائخ میں بعض نے اس حکم ثانی کی تصحیح نہ کی کہ تعیین کے ساتھ دونوں طرف کا قبضہ بیع صرف میں شرط ہے اور یہ وہ نہیں اور بعض نے اس کی تصحیح کی اس لئے کہ پیسوں کے لئے ایک جہت سے متاع کا حکم ہے اور ایک جہت سے ثمن کا تو پہلی جہت کے سبب کمی بیشی جائز ہوئی اور دوسری کے سبب طرفین کا قبضہ شرط ہوا انتہی، اقول: وباللہ التوفیق (میں کہتا ہوں اور توفیق اللہ سے ہے) وہ جس کی طرف شامی نے باتباع بحر اور بحر نے باتباع ذخیرہ میل کیا کہ جامع صغیر کا کلام قبضہ طرفین شرط ہونے پر دلالت کرتا ہے بندہ ضعیف کو اس میں تامل قوی ہے اور میں نے جامع کی طرف رجوع کی تو اس کی عبارت یوں پائی امام محمد روایت کرتے ہیں امام ابویوسف سے اور وہ امام اعظم سے رضی اللہ تعالٰی عنہم، ایک شخص نے پیٹ کی دو رطل چربی ایک رطل چکتی کو یا دو رطل گوشت ایک رطل چربی کو یا ایک انڈا دو انڈے یا ایک اخروٹ دو اخروٹ یا ایک پیسہ دو پیسے یا ایک چھوہارا دو چھوہارے

کو دست بدست کہ دونوں معین ہوں تو جائز ہے اور یہی قول ابویوسف رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ کا ہے اور امام محمد رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ نے فرمایا ایک پیسہ دو پیسے کو جائز نہیں اور ایک چھوہارا دو چھوہارے کو جائز ہے ختم ہوا ان کا

[حواشی:] ۱ ردالمحتار کتاب البیوع باب الربا داراحیاء التراث العربي بیروت ۳ / ۱۸۴ ۲ الجامع الصغیر کتاب البیوع باب البیوع فیما یکال او یوزن مطبع یوسفی لکھنؤ ص ۷۹

Fatawa Razawiyya Volume Seventeen (17)

[Left Column - Arabic Text]: His noble speech - may his secret be sanctified - the point of evidence is his statement, may Allah Almighty have mercy on him, "hand to hand." However, those who have practiced jurisprudence know that this phrase is not an explicit text regarding taking physical possession with the hands. Do you not see that our scholars, may Allah Almighty have mercy on them, interpreted it in the well-known Hadith as "specification" (identity)? As stated in Al-Hidayah: "The meaning of the words of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), 'hand to hand,' is 'identity for identity.' This was narrated by Ubadah bin al-Samit (may Allah be pleased with him)." [End quote]. How can it be otherwise, when our scholars - may Allah be pleased with them - have said: "Taking possession (taqabud) is only a condition in currency exchange (sarf). As for other transactions where usury (riba) occurs, only specification (ta'yeen) is considered." This is mentioned in Al-Hidayah [2] and others. It is stated in Al-Tanwir: "What is considered in usurious items other than currency exchange is specification without the condition of taking possession." [3] It is said in Al-Durr: "Even if one sells wheat for wheat, both being specified, and they separate before taking possession, it is permissible." [End quote]. For... [4]

[Right Column - Urdu Text]: His noble speech was made clear, the source of proof for him is this statement: "hand to hand." But whoever has practiced jurisprudence knows that this word is not a clear text stating that possession must occur with the hands on both sides. Do you not see that our scholars, may Allah Almighty have mercy on them all, interpreted this word in the famous Hadith of usury as "specification"? Just as it is said in Al-Hidayah that in the saying of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), the meaning of the words "hand to hand" is that specification occurs on both sides (so that it does not remain a debt on either side), as narrated by Ubadah bin al-Samit (may Allah be pleased with him). [End of quote]. And why should it not be so, while our companions (scholars) (may Allah be pleased with them) have stated that possession on both sides is only a condition in currency exchange (sarf), and in other cases where usury might occur, only specification is a condition. This is as found in Al-Hidayah etc., and in Tanwir al-Absar it is mentioned that where there is a possibility of usury, outside of currency exchange, only the specific identity of the goods is considered; possession on both sides is not a condition. In Durr-e-Mukhtar it is stated to the extent that...

[Footnotes]: 1 Al-Hidayah, Book of Sales, Chapter on Usury, Yusufi Press, Lucknow, 3/82-83 2 Al-Hidayah, Book of Sales, Chapter on Usury, Yusufi Press, Lucknow, 3/82 3

Al-Durr al-Mukhtar, Commentary on Tanwir al-Absar, Chapter on Usury, Mujtabai Press, Delhi, 1/41 4 Al-Durr al-Mukhtar, Commentary on Tanwir al-Absar, Chapter on Usury, Mujtabai Press, Delhi, 1/41

Page 432 of 715 I.T. Majlis of Dawat-e-Islami

फ़तावा रज़विया जिल्द सत्रह (17)

[बायां कॉलम - अरबी पाठ]: हज़रत [इमाम अहमद रज़ा खाँ] के मुबारक शब्द - अल्लाह उनके रहस्य को पवित्र करे - प्रमाण का स्थल केवल उनका यह कथन है, अल्लाह उन पर रहम करे, "हाथों-हाथ।" लेकिन जो फ़िक़्ह (न्यायशास्त्र) का अभ्यास कर चुके हैं, वे जानते हैं कि यह शब्द हाथों से कब्ज़ा (मैनुअल पज़ेशन) लेने के बारे में कोई स्पष्ट पाठ (नस्स) नहीं है। क्या आप नहीं देखते कि हमारे विद्वानों (रहमतुल्लाहि अलैहिम) ने प्रसिद्ध हदीस में इसे "ऐनियत" (निर्दिष्टीकरण) के रूप में समझाया है? जैसा कि अल-हिदाया में कहा गया है: "पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के शब्दों 'हाथों-हाथ' का अर्थ 'ऐन बि-ऐन' (निर्दिष्ट वस्तु के बदले निर्दिष्ट वस्तु) है। इसी प्रकार उबादा बिन अल-सामित (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने रिवायत की है।" [समाप्त]। यह कैसे हो सकता है जब हमारे साथियों (विद्वानों) ने कहा है कि कब्ज़ा (तक़ाबुज़) केवल 'सर्फ़ (मुद्रा विनिमय) में अनिवार्य है। इसके अलावा अन्य सौदों में जहाँ सूद (रिबा) का मामला हो, वहाँ केवल निर्दिष्टीकरण (तअय्युन) का विचार किया जाता है। जैसा कि अल-हिदाया [2] और अन्य में है। तनवीरुल अबसार में कहा गया है: "मुद्रा विनिमय के अलावा सूदी वस्तुओं में कब्ज़े की शर्त के बिना निर्दिष्टीकरण मान्य है।" [3] अद्दुर्रुल मुख़्तार में कहा गया है: "यहाँ तक कि अगर कोई गेहूँ को गेहूँ के बदले बेचे, दोनों निर्दिष्ट हों, और वे कब्ज़ा करने से पहले अलग हो जाएँ, तो यह जायज़ है।" [समाप्त]। क्योंकि... [4]

[दायां कॉलम - उर्दू पाठ]: पवित्र भाषण को स्पष्ट किया गया, उनके प्रमाण का मुख्य आधार उनका यही कथन है कि "हाथों-हाथ"। लेकिन जिसने फ़िक़्ह का अभ्यास किया है, वह जानता है कि यह शब्द इसमें स्पष्ट पाठ नहीं है कि दोनों तरफ से हाथों से कब्ज़ा हो जाए। क्या आप नहीं देखते कि हमारे विद्वानों (अल्लाह उन सब पर रहम करे) ने रबा की प्रसिद्ध हदीस में इस शब्द की व्याख्या 'तअय्युन' (निर्दिष्टीकरण) के साथ की है? जैसा कि हिदाया में कहा गया है कि नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के इर्शाद में 'हाथों-हाथ' शब्द का अर्थ यह है कि दोनों तरफ से तअय्युन हो जाए (किसी ओर उधार न रहे), जैसा कि उबादा बिन सामित (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने रिवायत की है। [समाप्त]। और यह क्यों न हो, जबकि हमारे साथियों (रज़ियल्लाहु अन्हुम) ने फ़रमाया है कि दोनों ओर का कब्ज़ा केवल 'सर्फ़ में शर्त है, और इसके अलावा अन्य स्थितियों में जिनमें रबा जारी हो सकता है, उनमें केवल तअय्युन शर्त है जैसा कि हिदाया वगैरह में है। और तनवीरुल अबसार में है कि जिस माल में रबा का संदेह है, वहाँ सर्फ़ के अलावा माल का केवल 'ऐन' होना (निर्दिष्ट होना) मान्य है, दोनों ओर का कब्ज़ा शर्त नहीं। दुर्र-ए-मुख़्तार में फ़रमाया यहाँ तक कि...

[पाद टिप्पणियां]: 1 अल-हिदाया, किताबुल बुयू, बाबुर रबा, मतबा यूसुफ़ी लखनऊ, 3/82-83 2 अल-हिदाया, किताबुल बुयू, बाबुर रबा, मतबा यूसुफ़ी लखनऊ, 3/82 3 अद्दुर्रुल मुख़्तार, शर्ह तनवीरुल अबसार, बाबुर रबा, मतबा मुजतबाई देहली, 1/41 4 अद्दुर्रुल मुख़्तार, शर्ह तनवीरुल अबसार, बाबुर रबा, मतबा मुजतबाई देहली, 1/41

[بایاں کالم - عربی عبارت]: کلامہ الشریف قدس سرہ المنیف فمحل الاستناد انما ھو قولہ رحمہ اللہ تعالی یدًا بیدٍ لکن قد علم من مارس الفقہ ان ھذا اللفظ لیس نصًا صریحًا في التقابض بالبراجم الاتری علمائنا رحمھم اللہ تعالی فسروہ في الحدیث المعروف بالعینیۃ کما قال في الھدایۃ ومعنی قولہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم یدًا بیدٍ عینًا بعینٍ کذا رواہ عبادۃ بن الصامت رضي اللہ تعالی عنہ اہ کیف وقد قال اصحابنا رضي اللہ تعالی عنھم ان التقابض انما یشترط في الصرف واما ما سواہ مما یجری فیہ الربا فانما یعتبر فیہ التعیین کما في الھدایۃ ۲ وغیرھا - وقال في التنویر المعتبر تعیین الربوي في غیر الصرف بلا شرط تقابض ۳ قال في الدر حتی لو باع برًا ببر بعینھما وتفرقا قبل القبض جاز اہ فان ۴

[دایاں کالم - اردو عبارت]: کلام شریف پاک کیا گیا ان کا سر معظم، تو موضح سند ان کا یہی قول ہے کہ دست بدست مگر جس نے فقہ کی مزاولت کی ہے اسے معلوم ہے کہ یہ لفظ اس میں صاف نص نہیں کہ دونوں جانب کا قبضہ ہاتھوں سے ہوجائے کیا نہیں دیکھتے کہ ہمارے علماء رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہم اجمعین نے اس لفظ کو ربا کی حدیث مشہور میں تعین کے ساتھ تفسیر کیا جیسا کہ ہدایہ میں فرمایا کہ نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے ارشاد میں لفظ دست بدست کے یہ معنی ہیں کہ دونوں جانب تعین ہوجائے (کسی طرف دین نہ رہے) جیسا کہ عبادہ بن صامت رضی اللہ تعالیٰ عنہ نے روایت کیا انتہیٰ، اور یہ کیونکر نہ ہو حالانکہ ہمارے اصحاب رضی اللہ تعالیٰ عنھم نے فرمایا کہ قبضہ طرفین صرف صرف میں شرط ہے اور اس کے سوا اور صورتیں جن میں رہا جاری ہوسکتا ہے ان میں فقط تعین شرط ہے جیسا کہ ہدایہ وغیرہ میں ہے، اور تنویر الابصار میں ہے کہ جس مال میں رہا کا احتمال ہے وہاں ماورائے صرف میں مال کا فقط عین ہونا معتبر ہے قبضہ طرفین شرط نہیں، در مختار میں فرمایا یہاں تک کہ

[حواشی]: ۱ الهداية كتاب البيوع باب الربا مطبع يوسفى لكهنؤ ۳/ ۸۳-۸۲ ۲ الهداية كتاب البيوع باب الربا مطبع يوسفى لكهنؤ ۳/ ۸۲ ۳ الدر المختار شرح تنوير الابصار باب الربا مطبع مجتبائى دہلى ۱/ ۴۱ ۴ الدر المختار شرح تنوير الابصار باب الربا مطبع مجتبائى دہلى ۱/ ۴۱

Fatawa Razawiyyah Volume 17 (17)

[Arabic Column Transcription/Translation] Applying his statement in the passage we mentioned to mutual possession, and deriving from it the requirement of that in (the exchange of) one fils for two fils would also be a requirement in (the exchange of) one date for two dates, one egg for two eggs, and one walnut for two walnuts, according to those who say that the restriction applies to all the cases, like al-Nahr, al-Durr, and others. For all the cases are presented in a single context, especially in the wording of al-Jami' where the restriction is mentioned after 'one date for two dates', and 'one fils for two fils' was mentioned before it. And this has not been said by our Imams. Therefore, it is necessary to interpret it as the requirement of specification (ta'yin). His (Imam Muhammad's) statement, may Allah Almighty be pleased with him, 'with their identities' (bi-a'yanihā) is an explanation of his words 'hand to hand' (yadan bi-yadin); otherwise, it would be a redundant addition with no purpose at all, because mutual possession includes specification and more, so mentioning it after it would be futile. That is why when Imam Burhan al-Din, the author of al-Hidayah, may Allah Almighty have mercy on him, quoted this issue from al-Jami' al-Saghir, he omitted that word and limited himself to mentioning specific identity (al-ayniyyah), where he said: He (i.e., Muhammad) said, as clarified by al-Allamah Badr al-Ayni in al-Binayah: It is permissible to sell an egg...

[Urdu Column Transcription] If one sells wheat for wheat and specifies both, and they separate without possession, it is permissible. End quote. Thus, if this statement of Imam Muhammad in the mentioned passage is interpreted as mutual possession of both parties, and it is inferred that in the mutual sale of coins (fils), mutual possession is a condition, then its being a condition in the mutual sale of dates, eggs, and walnuts would also become necessary according to those who say that this restriction refers to all these issues, like Nahr al-Faiq and Durr al-Mukhtar, etc., because all those issues are stated in the same manner, especially in the wording of Jami' Saghir where this restriction is mentioned after the sale of dates, and the sale of coins was mentioned before it. And this is not the saying of any of our Imams. Therefore, it became obligatory to take 'hand to hand' in the sense of 'specification' (ta'yin), and Imam Muhammad's (may Allah be pleased with him) instruction that they be 'specified' is an explanation of this 'hand to hand', otherwise it would be mere useless padding with no benefit, because specification along with increase is present in mutual possession by both parties, so mentioning it after that is pointless. For this reason, when Imam Burhan al-Din, the author of Hidayah, quoted this issue

from Jami' Saghir, he dropped the word 'hand to hand' from it and only mentioned 'specification', where it is said in Hidayah that he said (i.e., Imam Muhammad as Allama Badr al-Din Ayni clarified in al-Binayah): 'one egg...'

[Footnote] 1 Al-Binayah fi Sharh al-Hidayah, Kitab al-Buyu', Bab al-Riba, Al-Maktabah al-Imdadiyyah, Makkah al-Mukarramah, 3/152. Page 433 of 715

[अरबी कॉलम का अनुवाद] उनके इस कथन को उस गद्यांश में जिसे हमने आपसी कब्जे (तकाबुद) पर उल्लेख किया है, लागू करने और उससे एक फिल्स को दो फिल्स के बदले में विनिमय करने में उसकी शर्त को प्राप्त करने का अर्थ यह होगा कि यह एक खजूर को दो खजूरों, एक अंडे को दो अंडों और एक अखरोट को दो अखरोटों के बदले विनिमय में भी शर्त होगा, उन लोगों के अनुसार जो कहते हैं कि यह प्रतिबंध सभी मामलों पर लागू होता है, जैसे 'अल-नहर', 'अल-दुर्र' आदि। क्योंकि सभी मामले एक ही संदर्भ में प्रस्तुत किए गए हैं, विशेष रूप से 'अल-जामी' के शब्दों में जहाँ प्रतिबंध 'एक खजूर को दो खजूरों' के बाद उल्लेख किया गया है, और 'एक फिल्स को दो फिल्स' उससे पहले उल्लेख किया गया था। और हमारे इमामों में से किसी ने ऐसा नहीं कहा है। इसलिए, इसे 'निर्दिष्टीकरण' (तअयीन) की शर्त पर आधारित करना अनिवार्य है। उनका (इमाम मुहम्मद का) कथन, अल्लाह उन पर प्रसन्न हो, 'उनकी पहचान के साथ' (बि-अयानहा), उनके शब्दों 'हाथों हाथ' (यदन बि-यदिन) की व्याख्या है; अन्यथा यह बिल्कुल व्यर्थ और निरर्थक होगा, क्योंकि आपसी कब्जे में निर्दिष्टीकरण और उससे भी अधिक शामिल है, इसलिए उसके बाद इसका उल्लेख करना निरर्थक होगा। इसीलिए जब हिदाया के लेखक इमाम बुरहानुद्दीन रहमतुल्लाह अलैहि ने 'अल-जामी अल-सगीर' से इस मुद्दे को उद्धृत किया, तो उन्होंने उस शब्द को हटा दिया और केवल 'विशिष्ट पहचान' (अल-ऐनिय्याह) के उल्लेख तक ही सीमित रहे, जहाँ उन्होंने कहा: उन्होंने (यानी मुहम्मद ने) कहा, जैसा कि अल्लामा बद्रुद्दीन ऐनी ने 'अल-बिनाया' में स्पष्ट किया है: एक अंडे को बेचना जायज़ है...

[उर्दू कॉलम का अनुवाद] अगर गेहूँ के बदले गेहूँ बेचे और उन दोनों को विशिष्ट (नियत) कर दिया और बिना कब्ज़ा किए हुए अलग हो गए तो जायज़ है (इंतिहा)। तो इमाम मुहम्मद का यह कथन उल्लेखित गद्यांश में अगर दोनों पक्षों के कब्जे पर लागू किया जाए और इससे यह अर्थ निकाला जाए कि सिक्कों (फिल्स) की आपसी बिक्री में दोनों पक्षों का कब्ज़ा शर्त है, तो खजूरों, अंडों और अखरोटों की आपसी बिक्री में भी इसका शर्त होना आवश्यक हो जाएगा उन लोगों के अनुसार जो कहते हैं कि यह प्रतिबंध इन सभी मुद्दों की ओर लौटता है, जैसे 'नहरुल फ़ायिक' और 'दुर्रे मुख्तार' आदि, क्योंकि वे सभी मुद्दे एक ही ढंग से बयान किए गए हैं, विशेष रूप से 'जामे सगीर' के गद्यांश में कि उसमें तो यह प्रतिबंध खजूर की बिक्री के बाद उल्लेखित है और सिक्कों की बिक्री उससे पहले उल्लेख फरमाई है, और यह हमारे इमामों में से किसी का कथन नहीं है। तो अनिवार्य हुआ कि 'हाथों हाथ' का अर्थ 'निर्दिष्टीकरण' (तअयीन) लिया जाए और इमाम मुहम्मद रज़ियल्लाहु तआला अन्हु का यह

कहना कि वे 'विशिष्ट' (मुअय्यन) हों, इस 'हाथों हाथ' की व्याख्या हो, अन्यथा यह केवल बेकार की भरती होगी जिसका कोई लाभ नहीं, क्योंकि दोनों पक्षों के कब्जे में निर्दिष्टीकरण के साथ-साथ और भी बहुत कुछ शामिल है, इसलिए इसके बाद उसका उल्लेख करना व्यर्थ है। इसी कारण से जब हिदाया के लेखक इमाम बुरहानुद्दीन ने 'जामे सगीर' से इस मुद्दे को उद्धृत किया, तो 'हाथों हाथ' शब्द को उससे हटा दिया और केवल निर्दिष्टीकरण का उल्लेख किया जहाँ हिदाया में कहा कि 'उन्होंने फरमाया' (यानी इमाम मुहम्मद ने जैसा कि अल्लामा बद्रुद्दीन ऐनी ने 'बिनाया' में स्पष्ट किया) एक अंडा...

[फुटनोट] 1 अल-बिनाया फी शरह अल-हिदाया, किताबुल बुयू, बाबुर रिबा, अल-मकतबा अल-इमदादिया, मक्का अल-मुकर्रमा, 3/152 पृष्ठ 715 का 433

[عربی کالم] حمل قولہ ہذا فی العبارۃ التی ذکر نا علی التقابض واستجلب منہ اشتراط ذلک فی فلس بفلسین کان ایضاً مشترطاً فی تمرۃ بتمرتین وبیضۃ bبیضتین وجوزۃ بجوزتین عند من یقول ان القید راجع للمسائل جمیعاً کالنھر والدر وغیرہما فان المسائل کلھا مسوقۃ سیاقاً واحداً لاسیما فی عبارۃ الجامع فان القید مذکور فیہ بعد تمرۃ بتمرتین وانما ذکر فلساً بفلسین قبلہ، وھٰذا لم یقل بہ ائمتنا فوجب حملہ علی اشتراط التعیین وکان قولہ رضی اللہ تعالٰی عنہ باعیا نھا تفسیرا لقولہ یدا بید والا لکان حشوا مستغنی عنہ لا طائل تحتہ اصلاً فان التقابض فیہ التعین وازید فذکرہ بعدہ لغو ولذا لما نقل الامام برھان الدین صاحب الھدایۃ رحمہ اللہ تعالٰی ھذہ المسئلۃ عن الجامع الصغیر اسقط عنھا تلک الکلمۃ واقتصر علی ذکر العینیۃ حیث قال قال (ای محمد) کما صرح بہ العلامۃ بدر العینی فی البنایۃ یجوز بیع البیضۃ

[اردو کالم] اگر گیہوں کے بدلے گیہوں بیچے اور ان دونوں کو معین کر دیا اور بے قبضہ کئے ہوئے جدا ہوگئے تو جائز ہے انتہی، تو امام محمد کا یہ قول عبارت مذکورہ میں اگر قبضہ طرفین پر حمل کیا جائے اور اس سے یہ مطلب نکالا جائے کہ پیسوں کی باہم بیع میں قبضہ طرفین شرط ہے تو خرماؤں اور انڈوں اور اخروٹوں کی باہم بیع میں بھی اس کا شرط ہونا لازم آئے گا انکے نزدیک جو کہتے ہیں کہ یہ قید ان تمام مسائل کی طرف راجع ہے جیسے نہر الفائق اور درمختار وغیرہما اس لئے کہ وہ سب مسئلے ایک ہی روش پر بیان میں آئے ہیں خصوصاً عبارت جامع صغیر میں کہ اس میں تو یہ قید بیع خرما کے بعد مذکور ہے اور پیسوں کی بیع اس سے پہلے ذکر فرمائی ہے اور یہ ہمارے ائمہ میں سے کسی کا قول نہیں، تو واجب ہوا کہ دست بدست بمعنی تعیین لیں اور امام محمد رضی اللہ تعالٰی عنہ کا ارشاد کہ معین ہوں اس دست بدست کی تفسیر ہو ورنہ محض بیکار بھرتی ہوگا جس کا کچھ فائدہ نہیں کہ قبضہ طرفین میں تعین مع زیادت ہے تو اس کے

بعد اس کا ذکر فضول ہے اس لئے جب امام برہان الدین صاحب ہدایہ نے جامع صغیر سے اس مسئلہ کو نقل کیا تو دست بدست کا لفظ اس سے ساقط فرما دیا اور صرف تعیین کا ذکر کیا جہاں کہ ہدایہ میں کہا کہ فرمایا (یعنی امام محمد جیسا کہ علامہ بدر الدین عینی نے بنایہ میں تصریح کی) ایک انڈا

[حاشیہ] 1 البنایۃ فی شرح الھدایۃ کتاب البیوع باب الربو المکتبۃ الامدادیۃ مکۃ المکرمہ ۳/ ۱۵۲

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Arabic Column]: ...with two eggs, and one date for two dates, and one walnut for two walnuts. And it is permissible to sell one copper coin for two specifically identified copper coins. End quote. Thus, it has become as clear as the sun at midday that there is nothing in 'Al-Jami' [al-Saghir] that points to what these eminent scholars understood. Even if it were assumed, there is another possibility present along with it, more manifest and brighter, which cannot be rejected, and no one can aim a bad intent towards it. A probable matter is not an argument, unlike the wording of the 'Al-Asl', for it is an explicit text (nass)—that is, an explicit text regarding the non-conditionality of mutual possession by both parties, as you have heard. Therefore, reliance should be on it. Success is from Allah, the Majestic King. Furthermore, it should not be hidden from you that all this was our walking along with Allama Shami on his path. The purpose was to clarify the meaning of 'Al-Jami' [al-Saghir]; otherwise, the truth is that the fatwa of Allama Siraj-ud-Din/Qari of al-Hidayah has no need to interpret the wording of 'Al-Jami' as conditioning mutual possession by both parties, nor is that his claim, nor does his claim depend on it, for he...

[Urdu Column]: ...two eggs and one date for two dates, and one walnut for two walnuts is permissible, and it is permissible to sell one copper coin for two specific coins. End quote. Thus, it has become as clear as the sun having risen for hours that there is nothing in 'Jami Saghir' pointing to what these elders understood. And even if it is assumed, another possibility is also present with it, more evident and clearer, such that it cannot be rejected nor can anyone make an ill attempt towards it. A thing of mere probability does not constitute proof, contrary to the text of 'Mabsut', which is an explicit ruling (nass) regarding the non-requirement of possession by both parties—and what an explicit ruling it is, as you have heard—so reliance should be placed upon it. Success is from Allah, the Magnificent King. Furthermore, it should be known that all this was from our side walking with Allama Shami in his manner, and the purpose was to manifest the meaning of 'Jami Saghir', otherwise the truth is that the fatwa of Allama Qari of 'Al-Hidayah' has no need to interpret the text of 'Jami' as requiring possession by both parties, nor is he the claimant of that, nor is his claim dependent on it.

[Footnotes - Arabic]: Note 1: Because he surrendered it as a 'Salam' [advance payment] transaction, while you are diverting it towards 'Sarf' [currency exchange]. End from him. Note 2: Because 'Salam' is not permissible regarding the price

[Thaman], whether it is in something where mutual possession is required, like price for price, or not, like goods for price. End from him.

[Footnotes - Urdu]: Note 1: That he is considering it as 'Salam', while you are turning it towards 'Sarf'. 12 [End note by author]. Note 2: That 'Salam' is essentially not permissible in 'Thaman', whether it be in something where possession by both sides is a condition, such as the exchange of price for price, or if it is not so, such as the exchange of goods for price. 12 [End note by author].

[Citation]: 1 Al-Hidayah, Kitab al-Buyu' (Book of Sales), Bab al-Riba (Chapter on Usury), Matba' Yusufi Lucknow, 3 / 83 Page 434 of 715

फतावा रजविया (जिल्द 17)

[अरबी कॉलम]: ...दो अंडों के साथ, और एक खजूर दो खजूरों के बदले, और एक अखरोट दो अखरोटों के बदले। और एक पैसा दो निश्चित पैसों के बदले बेचना जायज़ है। (समाप्त)। इस प्रकार, यह दोपहर के सूरज की तरह स्पष्ट हो गया है कि 'अल-जामी' [अल-सगीर] में ऐसा कुछ भी नहीं है जो इन महान विद्वानों ने समझा है। यदि मान भी लिया जाए, तो इसके साथ एक और संभावना मौजूद है, जो अधिक स्पष्ट और उज्ज्वल है, जिसे नकारा नहीं जा सकता और न ही कोई उस पर बुरा इरादा कर सकता है। और संभावित बात तर्क नहीं होती, इसके विपरीत 'अल-अस्ल' की इबारत स्पष्ट पाठ (नस) है—यानी दोनों पक्षों द्वारा कब्ज़ा करने की शर्त न होने के बारे में स्पष्ट पाठ, जैसा कि आपने सुना। इसलिए, इसी पर भरोसा होना चाहिए। और सफलता अल्लाह, महान बादशाह की ओर से है। फिर यह आप पर गुप्त न रहे कि यह सब कुछ हमारी ओर से अल्लामा शामी के साथ उनके तरीके पर चलना था। उद्देश्य 'अल-जामी' [अल-सगीर] के अर्थ को स्पष्ट करना था; अन्यथा सत्य यह है कि अल्लामा सिराजुद्दीन/कारी अल-हिदाया के फतवे को इसकी आवश्यकता नहीं है कि 'अल-जामी' की इबारत को दोनों पक्षों द्वारा कब्ज़ा करने की शर्त पर आधारित किया जाए, और न ही यह उनका दावा है और न ही उनका दावा इस पर निर्भर है, क्योंकि उन्होंने...

[उर्दू कॉलम]: दो अंडे और एक खजूर दो खजूरों और एक अखरोट दो अखरोटों को बेचना जायज़ है और एक पैसा दो पैसे निश्चित को जायज़ है। (इन्तहा), तो पहरों चढ़े आफ़ताब की तरह रोशन हो गया कि जामे सगीर में इस पर कुछ दलालत नहीं जो ये अकाबिर समझे और अगर फ़र्ज़ भी कर ली जाए तो इसके साथ दूसरा एहतमाल भी मौजूद है ज़ाहिर तर रोशन तर कि न रद्द हो न इसकी तरफ़ कोई बुरा क़सद कर सके और एहतमाली बात हुज्जत नहीं होती, बख़िलाफ़ इबारत मबस्त के कि वो क़ब्ज़ा तरफ़ैन शर्त न होने में नस और कैसी नस है जैसा कि सुन चुके तो इसी पर एतमाद होना चाहिए, और तौफ़ीक़ अल्लाह अज़मत वाले बादशाह की तरफ़ से है, फिर इतना मालूम रहे कि ये सब कुछ हमारी तरफ़ से अल्लामा शामी के साथ उनकी रफ़्तार पर चलना था और मक़सूद मुफ़ाद जामे सगीर का ज़ाहिर करना वरना हक़ ये है कि फ़तवा अल्लामा क़ारी अल-हिदाया को इसकी तरफ़ हाजत नहीं कि इबारत जामे को क़ब्ज़ा तरफ़ैन शर्त करने पर महमूल कीजिए और न वो उनका मुद्दई है और न इस पर उनका दावा मौक़ूफ़।

[पाद-टिप्पणियाँ - अरबी]: नोट १: क्योंकि उन्होंने इसे 'सलम' के रूप में सौंपा, जबकि आप इसे 'सर्फ (मुद्रा विनिमय) की ओर मोड़ रहे हैं। (समाप्त) नोट २: क्योंकि 'सलम' कीमत (थमन) में जायज़ नहीं

है, चाहे वह उस चीज़ में हो जिसमें दोनों तरफ का कब्ज़ा शर्त है जैसे कीमत के बदले कीमत, या ऐसा न हो जैसे सामान के बदले कीमत। (समाप्त)

[पाद-टिप्पणियाँ - उर्दू]: नोट १: कि वो तो उसे सलम मान रहे हैं और तुम सर्फ़ की तरफ़ फेरते हो। (लेखक द्वारा नोट का अंत)। नोट २: कि थमन में सलम अस्लन जायज़ नहीं चाहे उस चीज़ में हो जिसमें दोनों तरफ़ का क़ब्ज़ा शर्त है जैसे थमन में थमन की बदली या ऐसा न हो जैसे थमन में मबीअ (सामान) की बदली। (लेखक द्वारा नोट का अंत)।

[संदर्भ]: १ अल-हिदाया, किताबुल बुयू, बाबुर रिबा, मतबा यूसुफ़ी लखनऊ, ३ / ८३ पृष्ठ ७१५ का ४३४

[عربی کالم]: بالبییضتین والتمرۃ بالتمرتین والجوز بالجوزتین ویجوز بیع الفلس بالفلسین باعیانھما اھ فظھر ظھور الشمس فی رابعۃ النھار ان لیس فی الجامع دلیل علی مافھم ھؤلاء الاعلام وان فرض فمع احتمال الغیر احتمالا اظھر وازھر لا یردو لا یرام ولا حجۃ فی المحتمل بخلاف عبارۃ الاصل فانھا نص ای نص فی عدم اشتراط التقابض کما سمعت فعلیہ فلیکن التعویل والتوفیق باللہ الملک الجلیل، ثم لا یخفی علیك ان ھذا کلہ کان مما شاۃ منامع العلامۃ الشامی والمقصود ابانۃ مفاد الجامع والا فالحق ان فتوی العلامۃ سراج الدین مابھا حاجۃ الی حمل کلام الجامع علی اشتراط التقابض ولا عہ ھو مدعاہ ولا عہ علیہ توقف لما ادعاہ فانہ

[اردو کالم]: دوانڈے اور ایک خرما دو خرمے اور ایک اخروٹ دو اخروٹ کو بیچنا جائز ہے اور ایک پیسہ دو پیسے معین کو جائز ہے انتہی، تو پہروں چڑھے آفتاب کی طرح روشن ہوگیا کہ جامع صغیر میں اس پر کچھ دلالت نہیں جو یہ اکابر سمجھے اور اگر فرض بھی کر لی جائے تو اس کے ساتھ دوسرا احتمال بھی موجود ہے ظاہر تر روشن تر کہ نہ رد ہو نہ اس کی طرف کوئی برا قصد کر سکے اور احتمالی بات حجت نہیں ہوتی، بخلاف عبارت مبسوط کے کہ وہ قبضہ طرفین شرط نہ ہونے میں نص اور کیسی نص ہے جیسا کہ سن چکے تو اسی پر اعتماد ہونا چاہئے، اور توفیق اللہ عظمت والے بادشاہ کی طرف سے ہے، پھر اتنا معلوم رہے کہ یہ سب کچھ ہماری طرف سے علامہ شامی کے ساتھ ان کی روش پر چلنا تھا اور مقصود مفاد جامع صغیر کا ظاہر کرنا ورنہ حق یہ ہے کہ فتوی علامہ قاری الہدایہ کو اس کی طرف حاجت نہیں کہ عبارت جامع کو قبضہ طرفین شرط کرنے پر محمول کیجئے اور نہ وہ ان کا مدعی ہے اور نہ اس پر ان کا دعوی موقوف

[حواشی - عربی]: عـهـ١: لانه سلمه سلماً وانتم للصرف تصرفون اهـ منہ۔ عـهـ٢: لان السلم لا یجوز فی الثمن سواء کان فیباً یشترط فیه التقابض کثمن فی ثمن اولا کمبیوع فی ثمن اهـ منہ۔

[حواشی - اردو]: عـهـ١: کہ وہ تو اسے سلم مان رہے ہیں اور تم صرف کی طرف پھیرتے ہو ١٢ منہ۔ عـهـ٢: کہ ثمن میں سلم اصلاً جائز نہیں چاہے اس چیز میں ہو جس میں دونوں طرف کا قبضہ شرط ہے جیسے ثمن میں ثمن کی بدلی یا ایسا نہ ہو جیسے ثمن میں مبیع کی بدلی ١٢منہ۔

[حوالہ]: ١ الهداية كتاب البيوع باب الربا مطبع يوسفی لكهنؤ ٣ / ٨٣ صفحہ 434 از 715

[Right Column - Urdu Text] That he is calling deferred payment (credit) unlawful, and its unlawfulness does not make specificity on both sides mandatory, let alone mutual possession. Do you not see that selling a piece of cloth for one rupee in cash is neither a credit sale nor does it involve specificity on both sides? Yes, making specificity (Ayniyyah) mandatory on both sides makes the prohibition of credit necessary, because a promise is set for the purpose of making it easier to obtain the thing, and the specific item itself is obtained immediately. So, if the passage from the 'Jami' were used by Allama Qari of Al-Hidaya to argue in this way, there would be a valid reason for it, and it would remain protected from the aforementioned objection. And now I say, and success is from Allah alone: it is clear to you that the condition of specification from both sides is for usurious goods (amwal-e-riba), which are those things sold by measure or weight, not those sold by count, as clearly stated in 'Fath al-Qadir' etc. in the chapter of Al-Salam, where it is stated that it is only forbidden in usurious assets when sold against their own genus, and things sold by counting are not among usurious assets. [End], as in the commentary of this statement of 'Kanz' in...

[Left Column - Arabic Text] Indeed, he prohibited deferred payment (an-nasi'ah), and its prohibition does not necessitate [note 1] specificity on both sides as well, let alone mutual possession (at-taqabud). Do you not see that selling a garment for a dirham immediately is not a deferred sale, nor does it have specificity on both sides (al-ayniyatan)? Yes, mandating specificity from both sides necessitates the prohibition of deferred payment because delay is for ease in acquisition, while the specific item is already acquired. So, if the text of 'Al-Jami' were used to argue on this basis, it would have [note 2] had a valid reason and would have been safe from the aforementioned objection. And therefore I say: And by Allah is success, it is not hidden from you that the condition of specificity from both sides applies to usurious items (ar-ribawiyat), which are those that are measured (al-makilat) and weighed (al-mawzunat), excluding those that are counted (al-ma'dudat), as stated in 'Sallam al-Fath' and elsewhere, where it said: "It is only prohibited in usurious assets when they are countered by their own genus, and counted items are not among them." [End], as stated in 'Al-Bahr' under...

[Footnotes] Note 1 (Arabic): It would only be mandatory if the absence of credit necessitated the existence of specificity on both sides, which is not the case; rather, sometimes both are absent, as in the mentioned example. [End from him]. Note 2

(Arabic): Because it would be evidence for the ruling on which he gave the fatwa. Note 1 (Urdu): It would be mandatory if the absence of credit required specification from both sides, but it is not so; rather, sometimes both are absent, so there is neither credit nor specificity on both sides, as in the mentioned example. 12 [from source]. Note 2 (Urdu): That it would be evidence for the ruling which they... (continued on the next page).

1 Fath al-Qadir, Chapter of Sale, Chapter of Salam, Maktabah Nuriyyah Razawiyyah Sukkur, 6/208. Page 435 of 715

[दायां कॉलम - उर्दू पाठ का अनुवाद] कि वे उधार को हराम बता रहे हैं और उसकी हुरमत (वर्जना) दोनों ओर विशिष्टता (ऐन होना) को भी अनिवार्य नहीं करती, उभयपक्षीय अधिकार की तो बात ही क्या। क्या आप नहीं देखते कि एक रुपये नकद में कपड़ा बेचना न तो उधार है और न ही इसमें दोनों ओर विशिष्टता है। हाँ, दोनों पक्षों पर विशिष्टता अनिवार्य करना उधार की हुरमत को आवश्यक बना देता है क्योंकि देरी का उद्देश्य वस्तु को प्राप्त करने में आसानी प्रदान करना होता है, जबकि विशिष्ट वस्तु स्वयं वर्तमान में प्राप्त है। तो, यदि 'जामी' के पाठ से अल्लामा क़ारी-ए-हिदाया के इस तर्क पद्धति पर प्रमाण दिया जाता, तो इसका एक कारण होता और वह उक्त आपत्ति से सुरक्षित रहता। और अब मैं कहता हूँ, और सफलता केवल अल्लाह की ओर से है: यह आप पर स्पष्ट है कि दोनों ओर से विशिष्टता की शर्त केवल सूद वाली संपत्तियों (अमवाल-ए-रिबा) में है और वे वे चीजें हैं जो माप या तौल से बेची जाती हैं, न कि वे जो गिनती से बेची जाती हैं, जैसा कि 'फ़तह अल-क़ादिर' आदि के बाब अल-सलाम (अग्रिम भुगतान का अध्याय) में स्पष्ट किया गया है जहाँ आया है कि: "यह केवल सूद वाली संपत्तियों में वर्जित है जब वे अपनी ही प्रजाति के साथ बेची जाएं और गिनती से बिकने वाली चीजें सूद वाली संपत्तियों में से नहीं हैं।" इति, जैसा कि 'कन्ज़' के इस कथन की व्याख्या में...

[बायां कॉलम - अरबी पाठ का अनुवाद] बेशक उन्होंने उधार (नसीअह) को वर्जित किया, और इसकी हुरमत [टिप्पणी 1] दोनों ओर की विशिष्टता को भी अनिवार्य नहीं करती, चह-जाएके परस्पर अधिकार (तक़ाबुद)। क्या आप नहीं देखते कि एक कपड़े को एक दिरहम नकद में बेचना न तो उधार है और न ही इसमें दो विशिष्टताएं हैं। हाँ, दोनों ओर विशिष्टता को अनिवार्य करना उधार की वर्जना को आवश्यक बना देता है क्योंकि विलंब प्राप्ति में आसानी के लिए होता है और विशिष्ट वस्तु वास्तव में प्राप्त है। तो यदि 'जामी' के पाठ से इस आधार पर तर्क दिया जाता, तो [टिप्पणी 2] उसके लिए एक आधार होता और वह उक्त आपत्ति से सुरक्षित रहता। और तब मैं कहता हूँ: और अल्लाह की सहायता से ही सफलता है, यह आप पर छिपा नहीं है कि दोनों ओर से विशिष्टता की शर्त सूद वाली वस्तुओं (रिबावियात) में है और वे मापी जाने वाली (मकीलात) और तौली जाने वाली (मौज़ूनात) वस्तुएं हैं, न कि गिनी जाने वाली (मअदूदात), जैसा कि 'सल्लम अल-फ़तह' और अन्य में उल्लिखित है जहाँ कहा गया है: "यह केवल सूद वाली संपत्ति में वर्जित है जब उसका सामना उसी की प्रजाति से हो, और गिनी जाने वाली वस्तुएं उनमें से नहीं हैं।" इति, जैसा कि 'अल-बहर' में नीचे कहा गया है...

[पाद टिप्पणियाँ] टिप्पणी 1 (अरबी): और यह केवल तभी अनिवार्य होता यदि उधार का अभाव दोनों विशिष्टताओं की उपस्थिति के लिए आवश्यक होता, जबकि ऐसा नहीं है, बल्कि कभी-कभी दोनों ही अनुपस्थित होते हैं जैसा कि उल्लेखित उदाहरण में है। इति मिन्हु (लेखक की ओर से)। टिप्पणी 2 (अरबी): क्योंकि यह उस निर्णय का प्रमाण होता जिस पर उन्होंने फ़तवा दिया। टिप्पणी 1 (उर्दू): अनिवार्य तब होता जब उधार न होने के लिए दोनों पक्षों का विशिष्ट होना आवश्यक होता, और ऐसा नहीं है बल्कि कभी-कभी दोनों बातें लुप्त होती हैं कि न तो उधार हो और न ही दोनों ओर विशिष्टता, जैसे उल्लेखित उदाहरण में। 12 मिन्हु। टिप्पणी 2 (उर्दू): कि वह उस निर्णय पर प्रमाण होता जिसका उन्होंने... (शेष अगले पृष्ठ पर)।

1 फतह अल-कादिर, बाब अल-बय (बिक्री का अध्याय), बाब अल-सलाम (अग्रिम भुगतान का अध्याय), मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 6/208। पृष्ठ 435 / 715

[دایاں کالم] کہ وہ تو ادھار کو حرام بتا رہے ہیں اور اس کی حرمت دونوں طرف عین ہونے کو بھی واجب نہیں کرتی نہ کہ قبضہ طرفین، کیا نہیں دیکھتے کہ کوئی کپڑا ایک روپے نقد کو بیچنا نہ تو ادھار ہے نہ اس میں دونوں جانب عین، ہاں دونوں طرف عینیت کا واجب کرنا ادھار کی حرمت لازم کرتا ہے اس لئے کہ وعدہ مقرر کرنا اس غرض سے ہوتا ہے کہ شیئ کے حاصل کرنے میں آسانی ہو اور عین خود ہی فی الحال حاصل ہے، تو اگر جامع کی عبارت سے علامہ قاری الہدایہ کے اس طرز پر استدلال کیا جاتا تو اس کی ایک وجہ ہوتی ہے اور اعتراض مذکور سے محافظت رہتی ہے۔ اور اب میں کہتا ہوں اور اللہ ہی سے توفیق ہے تم پر ظاہر ہے کہ دونوں طرف سے تعین کی شرط اموال ربامیں ہے اور وہ وہ چیزیں ہیں جو ناپ یا تول سے بکتی ہیں نہ وہ کہ گنتی سے جیسا کہ فتح القدیر وغیرہ کی باب السلم میں تصریح ہے جہاں آیا کہ صرف اموال ربا میں منع ہے جبکہ اپنی جنس کے ساتھ بیچے جائیں اور گن کر بکنے کی چیزیں اموال ربا میں سے نہیں انتہی، جیسا کہ کنز کے اس قول کی شرح میں

[بایاں کالم - عربی عبارت کا ترجمہ] بے شک نسیئہ (ادھار) کو حرام قرار دیا گیا اور اس کی حرمت [ع۱] دونوں طرف عینیہ ہونے کو بھی واجب نہیں کرتی چہ جائیکہ تقابض (طرفین کا قبضہ)۔ کیا تم نہیں دیکھتے کہ کپڑے کو ایک درہم نقد کے عوض بیچنا نہ تو ادھار ہے اور نہ ہی اس میں دو عینیتیں ہیں؟ ہاں! دونوں طرف عینیت کا واجب کرنا ادھار کی حرمت کو لازم کرتا ہے کیونکہ تاخیر حصول میں آسانی کے لیے ہے جبکہ عین بالفعل حاصل ہے۔ پس اگر اس پر "جامع" کی عبارت سے استدلال کیا جاتا تو [ع۲] اس کی کوئی وجہ ہوتی اور وہ مذکورہ اعتراض سے محفوظ رہتا۔ اور تب میں کہتا ہوں: اور اللہ کی عطا کردہ توفیق سے ہی کامیابی ہے، آپ پر مخفی

نہیں کہ دونوں جانب سے عینیت کی شرط اشیائے ربا (سودی اشیاء) میں ہے، اور وہ ناپ تول والی (مکیلات و موزونات) اشیاء ہیں نہ کہ گنتی والی (معدودات)۔ جیسا کہ "سلم الفتح" وغیرہ میں اس پر نص موجود ہے جہاں فرمایا کہ: "یہ صرف اموالِ ربا میں ممنوع ہے جب ان کا اپنی ہی جنس سے مقابلہ ہو، اور گنتی والی چیزیں ان میں سے نہیں ہیں" انتہی، جیسا کہ "البحر" میں اس کے تحت فرمایا...

[حواشی] ع۱ (عربی): اور یہ (حرمتِ نسیئہ) تب (عینیت کو) واجب کرتی اگر ادھار کی نفی دونوں جانب عین کے وجود کو مستلزم ہوتی، حالانکہ ایسا نہیں ہے بلکہ کبھی دونوں ہی مفقود ہوتے ہیں جیسے مذکورہ مثال میں۔ اھ منہ۔ ع۲ (عربی): اس لیے کہ یہ اس حکم پر دلیل بنتا جس کا انہوں نے فتویٰ دیا۔ ع۱ (اردو): واجب تو جب کرتی کہ ادھار نہ ہونے کو دونوں طرف معین ہونا لازم ہوتا اور ایسا نہیں بلکہ کبھی دونوں باتیں معدوم ہوتی ہیں کہ نہ ادھار ہو نہ دونوں جانب عین جیسے مثال مذکور میں ۱۲ منہ۔ ع۲ (اردو): کہ وہ اس حکم پر دلیل ہوتا جس کا انہوں نے (باقی بر صفحہ آئندہ)

۱ فتح القدیر باب البیع باب السلم مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲۰۸/۶ صفحہ 435 / 715

Fatawa Rizvia (Volume 17)

Quote from Al-Kanz: "And both became lawful when both..." meaning excess (fadl) and delay (nasi'ah) are lawful in the absence of weight/measure (qadr) and kind (jins). Thus, it is permissible to sell one Herati garment for two Mervi garments on credit, and walnuts for eggs on credit. It is stated under his saying: "Determination (ta'yin) is considered, not mutual possession (taqabud), in ribawi items other than currency exchange (sarf)." When both are absent, then both are lawful. It is stated in Bahr al-Ra'iq, meaning when both quantity and genus are absent, then both excess and credit are lawful. Thus, it is permissible to sell one cloth made in Herat for two cloths made in Merv on credit, and it is permissible to sell walnuts for eggs on credit. And what Al-Kanz stated was that in ribawi items, except for currency exchange, determination of the item is what counts, not the physical possession by both parties.

(Remainder of the footnote from the previous page): ...to it, which is the lack of permissibility, even if it comes from the perspective of exchange (sarfiyah) and not from a forward contract (salam). From this chapter is what is in Al-Hindiyah from Al-Muhit, where it mentioned the issues of the borrower buying a 'kar' (a unit of measure) of loan from the lender for a hundred. It is permissible if he buys what is in his liability and pays the price in the gathering; otherwise, it would be parting with a debt for a debt. Then he said: Likewise is the answer in every measured and weighed item other than dirhams and fulus (coins) when it was a loan. So he made fulus something whose purchase as a debt in liability for a missing price is not permissible, as in the case of the two stones (gold and silver). And the correct view is what we presented from Al-Hindiyah. He gave a fatwa, i.e., it being impermissible, although here it is due to currency exchange (sarf) and not from the aspect of a salam contract. And from this same chapter is what is in Hindiyah from Muhit. Therefore, where they mentioned cases where a grain borrower buys that grain loan from the lender for a hundred rupees, this is permissible when he buys the grain that became mandatory upon him (not the exact same grain that was loaned) and the price is paid in the same sitting; otherwise, it will be forbidden because both parties left with credit and separated. Then he said, this ruling applies to every item of measure and weight except for rupees, gold coins (ashrafi), and copper coins (paise) when they are a loan (end of quote). Thus, copper coins were also categorized with rupees and gold

coins among those things that when they are a debt in liability, buying them is impermissible. (Continued on next page).

1. Bahr al-Ra'iq, Kitab al-Buyu', Bab al-Riba, H.M. Saeed Company, Karachi, 129/6
2. Fatawa Hindiyah, Chapter 19, Regarding Loans, etc., Noorani Kutub Khana, Peshawar, 205/3

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

अल-कन्ज़ का उद्धरण: "और दोनों हलाल हो गए जब दोनों..." यानी वजन/माप (क़द्र) और किस्म (जिंस) की अनुपस्थिति में अतिरिक्त (फ़ज़्ल) और देरी (नसिअह) हलाल हैं। इस प्रकार, एक हेराती कपड़े को उधार पर दो मर्वी कपड़ों के बदले बेचना जायज़ है, और अंडों के बदले अखरोट उधार पर बेचना जायज़ है। उनके इस कथन के तहत कहा गया है: "मुद्रा विनिमय (सर्फ़) के अलावा रिबावी वस्तुओं में निर्धारण (तअय्युन) माना जाता है, न कि दोनों पक्षों द्वारा कब्ज़ा (तक़ाबुल)।" जब दोनों (क़द्र और जिंस) न हों, तो दोनों (ज़्यादती और उधार) हलाल हैं। बहरुल राइक़ में फ़रमाया गया, यानी जब मात्र और किस्म दोनों न हों, तो बढ़त और उधार दोनों जायज़ हैं। तो हेरात के बने हुए एक कपड़े को मर्व के बने हुए दो कपड़ों के बदले उधार बेचना जायज़ है और अंडों के बदले अखरोट उधार बेचना। और कन्ज़ ने जो फ़रमाया कि मुद्रा विनिमय (सर्फ़) के अलावा रिबा के माल में चीज़ का तय होना ज़रूरी है, न कि दोनों तरफ से कब्ज़ा होना।

(पिछले पृष्ठ के फुटनोट का शेष): ...इसके प्रति, जो कि अनुमति का अभाव है, भले ही यह विनिमय (सर्फ़िया) के परिप्रेक्ष्य से आए न कि सलाम (अग्रिम अनुबंध) से। इसी अध्याय से वह है जो अल-हिंदिया में अल-मुहीत से है जहाँ ऋण लेने वाले द्वारा ऋणदाता से सौ रुपये में 'कर' (माप की एक इकाई) का ऋण खरीदने के मामलों का उल्लेख किया गया है। यह तब जायज़ है जब वह उस चीज़ को खरीदता है जो उसके दायित्व में है और उसी सभा में कीमत अदा कर देता है; अन्यथा, यह ऋण के बदले ऋण छोड़कर अलग होना होगा। फिर उन्होंने कहा: इसी तरह हर मापी और तौली जाने वाली वस्तु में उत्तर यही है, सिवाय दिरहम और फ़ुलूस (सिक्कों) के जब वे ऋण हों। अतः उन्होंने फ़ुलूस को ऐसी चीज़ बना दिया जिसका दायित्व के ऋण के रूप में अनुपस्थित कीमत पर खरीदना जायज़ नहीं है, जैसा कि दो पत्थरों (सोने और चांदी) के मामले में है। और सही राय वही है जो हमने अल-हिंदिया से पेश की है। फ़तवा दिया यानी नाज़ायज़ होना, हालांकि यहाँ यह मुद्रा विनिमय (सर्फ़) के कारण है न कि सलाम के पहलू से। और इसी अध्याय से वह है जो हिंदिया में मुहीत से है। इसलिए जहाँ उन्होंने इस मुद्दे का उल्लेख किया है कि अनाज ऋण लेने वाला उस अनाज ऋण को ऋणदाता से सौ रुपये में खरीद ले, तो यह तब जायज़ है जब वह उस अनाज को खरीदे जो उस पर अनिवार्य हो गया है (न कि वही अनाज जो ऋण में मिला था) और कीमत उसी सभा में अदा कर दी गई हो; अन्यथा यह हराम होगा क्योंकि दोनों पक्ष उधार छोड़कर अलग हो गए। फिर फ़रमाया, हर नाप-तौल की चीज़ में यही नियम है सिवाय रुपये, अशर्फी और पैसों के जब वे ऋण हों (उद्धरण समाप्त)। तो

पैसों को भी रुपयों और अशर्फियों की श्रेणी में रखा गया कि जब वे दायित्व पर ऋण हों, तो उन्हें खरीदना नाज़ायज़ है। (बाकी अगले पृष्ठ पर)।

1. बहरुल राइक़, किताबुल बुयू, बाबुर रिबा, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 129/6
2. फ़तावा हिंदिया, अध्याय 19, ऋण आदि के बारे में, नूरानी कुतुब ख़ाना, पेशावर, 205/3

पृष्ठ 715 का 436

قول الکنز "وحلا بعد مھما" ای الفضل والنسأ عند انعدام القدر والجنس فیجوز بیع ثوب ہروی بمر وبیین نسیئۃً ، والجوز بالبیض نسیئۃً ۱، وقال تحت قولہ "یعتبر التعیین دون التقابض فی غیر الصرف من الربویات" جب دونوں نہ ہوں تو دونوں حلال ہیں۔ بحر الرائق میں فرمایا یعنی جب قدر و جنس دونوں نہ ہوں تو زیادتی اور ادھار دونوں حلال ہیں تو ہرات کے بنے ہوئے ایک کپڑے کو مرو کے بنے ہوئے دو کپڑوں کے عوض ادھار بیچنا جائز ہے اور انڈوں کے عوض اخروٹ ادھار بیچنا اور کنز نے جو فرمایا کہ سوا صورت صرف کے اموال ربو میں تعین معتبر ہے نہ کہ قبضہ طرفین اس

(بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ) بہ وھو عدم الجواز وان جاء من قبل الصرفیۃ دون السلمیہ و من ھذا الباب مانی الھندیہ عن المحیط حیث ذکر مسائل شراء المستقرض الکر القرض من المقرض بمائۃ وانہ یجوز اذا شری مافی ذمتہ و نقد الثمن فی المجلس والالافتراقاً عن دین بدین ثم قال کذلک الجواب فی کل مکیل و موزون غیر الدراہم والفلوس اذ کان قرضاً ۱۲ھ فجعل الفلوس ما لا یجوز شراؤہ دیناً فی الذمۃ بثمن مفقود کما فی الحجرین والصحیح ما قدمنا عن الھندیہ فتوٰی دیا یعنی ناجائز ہونا اگرچہ یہاں صرف کے سبب ہو نہ کہ سلم کی جہت سے، اور اسی باب سے ہے جو ہندیہ میں محیط سے ہے ولہذا جہاں انہوں نے اس کے مسائل ذکر کئے ہیں کہ غلہ قرض لینے والا اس قرض غلہ کو قرض دینے والے سے سو روپے کو مول لے اور یہ وہ جائز ہے جبکہ وہ غلہ خرید لے جو اس کے ذمہ پر لازم ہوا ہے (نہ بعینہ وہ غلہ جو غلہ قرض آیا ہے) اور قیمت اسی جلسے میں ادا کر دی ہو ورنہ حرام ہو گا کہ دونوں طرف ادھار چھوڑ کر جدا ہو گئے پھر فرمایا ہر ناپ تول کی چیز میں یہ حکم ہے سوائے روپے اشرفی پیسوں کے جب وہ قرض ہوں انتہی، تو پیسوں کو بھی روپوں، اشرفیوں

کی طرف انہیں چیزوں میں سے قرار دیا کہ جب وہ ذمہ پر قرض ہوں تو ان کا خریدنا ناجائز ہے۔

(باقی اگلے صفحہ پر)

۱ بحر الرائق کتاب البیوع باب الربو ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۶/۱۲۹ ۲ فتاویٰ ہندیہ الباب التاسع عشر فی القرض الخ نورانی کتب خانہ پشاور ۳/۲۰۵

Fatawa Rizvia (17)

Its explanation is what Al-Isbijabi mentioned with his saying: "And if they trade a measured item for a measured item or a weighed item for a weighed item, both being of the same genus or of two different genera, then the sale is not permitted until both are specified items to which the contract is applied, whether present or absent, provided they exist in his possession, etc." They reasoned the necessity of this in [trading] one fils for two fils because if he sold a specific fils for two unspecified fils, the seller would keep the specific fils and demand another fils from him, or deliver the specific fils and take it back specifically from him along with another fils because of his entitlement to two fils in...

Underneath it, [the author of] Al-Bahr stated that its explanation is what Imam Isbijabi mentioned in his saying: "When a measured item is sold for a measured item, or a weighed item for a weighed item, whether both are of the same genus or two different genera, the sale will not be valid except on the condition that both are specific items upon which the contract is formed, whether they are present there or absent; however, they must be in his ownership, etc." The reason for necessitating specificity in the mutual sale of copper coins (paisa) is explained as: if one specific paisa is sold for two non-specific paisas, the seller will have the option to keep the specific paisa and ask the buyer for another paisa, or give that specific paisa to the buyer and then take back that same paisa along with another paisa from him, because the buyer...

(Continued footnote from previous page) From Al-Dhakhirah: "The prohibition in non-currency exchange (sarf) is specific to when nothing is received from either exchange item as a physical possession, even if it is a constructive possession. However, if one of them is physically received, it is permitted. Similarly in Radd al-Muhtar from Al-Wajiz. In short, making it 'sarf' (currency exchange) is turning it away from what the generality of the companions stated in various books. And Allah Almighty knows best."

Even if the price is paid in the same session. And the correct view is what we have quoted from Hindiyyah and Dhakhirah, that in matters other than 'sarf' (currency exchange), the prohibition is that physical possession is not taken by either party, even if there is constructive possession (like a debt on someone which is constructively received). But when possession is taken by one party, it is permissible. And the same is in Radd al-Muhtar from Al-Wajiz. In short, to designate it as 'sarf' is

to divert it from what our general scholars have explicitly stated in numerous books. And Allah Almighty knows best.

[1] Al-Bahr al-Ra'iq, Book of Sales, Chapter on Ribā, H.M. Saeed Company, Karachi, 6/130.

इसका स्पष्टीकरण वह है जो इमाम इस्बिजाबी ने अपने इस कथन में उल्लेख किया है कि "जब नापी जाने वाली चीज़ नापी जाने वाली चीज़ से या तौली जाने वाली चीज़ तौली जाने वाली चीज़ से बेची जाए, चाहे दोनों एक ही श्रेणी की हों या दो अलग श्रेणियों की, तो बिक्री तब तक जायज़ नहीं होगी जब तक कि वे दोनों विशिष्ट वस्तुएं न हों जिन पर अनुबंध (अक़द) लागू किया गया हो, चाहे वे मौजूद हों या अनुपस्थित, बशर्ते कि वे उसके स्वामित्व में मौजूद हों, आदि।" तांबे के सिक्कों (पैसों) की आपस में बिक्री में विशिष्टता (ऐनिय्यत) को अनिवार्य बनाने का कारण यह बताते हैं कि: यदि एक विशिष्ट पैसा दो गैर-विशिष्ट पैसों के बदले बेचा जाएगा, तो विक्रेता के पास यह विकल्प होगा कि वह विशिष्ट पैसा अपने पास रख ले और खरीदार से एक और पैसा मांगे, या वह विशिष्ट पैसा खरीदार को दे दे और फिर वही पैसा एक और पैसे के साथ उससे वापस ले ले क्योंकि खरीदार...

इसके नीचे बहर ने कहा है कि इसका बयान वह है जो इमाम इस्बिजाबी ने अपने इस कौल में ज़िक्र किया कि जब नाप की चीज़ नाप की चीज़ से या तौल की चीज़ तौल की चीज़ से बेची जाए, ख़्वाह दोनों एक जिंस की हों या दो जिंस मुख़्तलिफ़, तो बैय (बिक्री) जायज़ न होगी मगर इस शर्त से कि वो दोनों एक मोअय्यन (विशिष्ट) चीज़ हों जिस पर अक़द वारिद किया गया, ख़्वाह वहीं हाज़िर हों या गायब, हाँ उसकी मिलक (स्वामित्व) में मौजूद होना चाहिए, आदि। पैसों की बाहम बैय में जो ऐनिय्यत को वाजिब किया उसकी यही दलील बयान फरमाते हैं कि अगर एक पैसा मोअय्यन दो पैसे गैर-मोअय्यन के एवज़ बेचेगा तो बाये (विक्रेता) को इख्तियार होगा कि वो मोअय्यन पैसा रख छोड़े और मुश्तरी (खरीदार) से एक पैसा और मांगे या वो मोअय्यन पैसा मुश्तरी को दे कर फिर वही पैसा मय एक और पैसे के उससे वापस ले ले क्योंकि मुश्तरी...

(पिछले पृष्ठ का शेष हाशिया) अज़-ज़खीरा से: "ग़ैर-सरफ़ (गैर-मुद्रा विनिमय) में मनाही उस स्थिति के लिए विशिष्ट है जब दोनों विनिमय वस्तुओं में से किसी पर भी हक़ीक़तन (भौतिक रूप से) कब्ज़ा न किया गया हो, भले ही वो कब्ज़ा-ए-हुक्मी (रचनात्मक कब्ज़ा) हो। लेकिन जब उनमें से एक पर हक़ीक़तन कब्ज़ा हो जाए, तो यह जायज़ है। और इसी तरह रद्द अल-मुह्तार में अल-वजीज़ से है। कुल मिलाकर, इसे 'सरफ़' (मुद्रा विनिमय) ठहराना इसे उस चीज़ से फेरना है जिसे हमारे आम विद्वानों ने कई किताबों में स्पष्ट रूप से बताया है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।"

अगरचे कीमत इसी जलसे में अदा हो जाए। और सही वो है जो हम बहवाला-ए-हिंदिया ज़खीरा से नक्ल कर चुके कि मासिवा सरफ़ में मना-ए-सरफ़ ये है कि दोनों तरफ में से किसी पर हक़ीक़तन कब्ज़ा न करें अगरचे एक पर कब्ज़ा-ए-हुक्मी हो (जैसे ज़िम्मा पर का क़र्ज़ कि हुक्मन मक़बूज़ है) मगर जब एक पर कब्ज़ा हो जाए तो जायज़ है और ऐसा ही रद्द अल-मुह्तार में वजीज़ से है। ग़रज़ ये कि इसे सरफ़ ठहराना इस से फेरना है जिस पर हमारे आम उलमा ने मुतअद्दद किताबों में नस फ़रमाया, वल्लाहु तआला आलम।

[1] अल-बहर अल-राईक़, किताब अल-बुयू, बाब अर-रिबा, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 6/130.

بیانه ماذکره الاسبیجابی بقوله واذا تبایعا کیلیاً بکیلی او وزنیاً بوزنی کلاهما من جنس واحد او من جنسین مختلفین فان البیع لایجوز حتی یکون کلاهما عیناً اضیف الیه العقد وهو حاضر او غائب بعد ان یکون موجودا فی ملکه الخ وانما عللوا وجوبها فی فلس بفلسین بان لو باع فلسا بعینه بفلسین بغیر عینهما امسك البائع الفلس المعین وطالبه بفلس آخر او سلم الفلس المعین وقبضه بعینه منه مع فلس آخر لاستحقاقه فلسین فی

کے نیچے بحر نے فرمایا بیان اس کا وہ ہے جو امام اسپیجابی نے اپنے اس قول میں ذکر کیا کہ جب ناپ کی چیز ناپ کی چیز سے یا تول کی چیز تول کی چیز سے بیچی خواہ دونوں ایک جنس کی ہوں یا دو جنس مختلف تو بیع جائز نہ ہو گی مگر اس شرط سے کہ وہ دونوں ایک معین چیز ہوں جس پر عقد وارد کیا گیا خواہ وہیں حاضر ہوں یا غائب ، ہاں اس کی ملک میں موجود ہونا چاہئے الخ پیسوں کی باہم بیع میں جو عینیت کو واجب کیا اس کی یہی دلیل بیان فرماتے ہیں کہ اگر ایک پیسہ معین دو پیسے غیر معین کے عوض بیچے گا تو بائع کو اختیار ہو گا کہ وہ معین پیسہ رکھ چھوڑے اور مشتری سے ایک پیسہ اور مانگے یا وہ معین پیسہ مشتری کو دے کر پھر وہی پیسہ مع ایک اور پیسے کے اس سے واپس لے کیونکہ مشتری

(بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ) عن الذخیرۃ ان المنع فی غیر الصرف مختص بما اذا لم یقبض شیئاً من البدلین قبضاً حقیقیاً وان قبض حکماً اما اذا قبض احدهما حقیقةً جاز و مثله فی ردالمحتار عن الوجیز وبالجملة جعله صرفاً صرف له عما نص علیه عامة الاصحاب فی غیر ما کتاب ، واللہ تعالی اعلم۔

اگرچہ قیمت اسی جلسے میں ادا ہو جائے اور صحیح وہ ہے جو ہم بحوالہ ہندیہ ذخیرہ سے نقل کر چکے کہ ماسوا صرف میں منع صرف یہ ہے کہ دونوں طرف میں سے کسی پر حقیقۃً قبضہ نہ کریں اگرچہ ایک پر قبضہ حکمی ہو (جیسے ذمہ پر کا قرض کہ حکماً مقبول ہے) مگر جب ایک پر قبضہ ہو جائے تو جائز ہے اور ایسا ہی ردالمحتار میں وجیز سے ہے غرض یہ کہ اسے صرف ٹھہرانا اس سے پھیرنا ہے جس پر ہمارے عام علماء نے متعدد کتابوں میں نص فرمایا واللہ تعالیٰ اعلم۔

[1] بحر الرائق کتاب البیوع باب الربا ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱۳۰/۶

Fatawa Razawiyya Volume (17)

Left Column (Arabic)

...his responsibility. Thus, his actual property returns to him, and the other *fils* (coin) remains void of compensation. Similarly, if he sold two specific *fils* for one non-specific *fils*, the buyer takes possession of the two coins and gives one of them in place of what was obligated upon him. Thus, the other remains as an excess without compensation entitled by the contract of sale, as mentioned in *al-Fath* and similarly in *al-Inayah* and others. This reasoning has no application in the case of Dirhams for *fils* on credit, as is not hidden, much less for banknotes for Dirhams. Therefore, the expression of *Qari al-Hidaya* has its best interpretation in what is mentioned in *an-Nahr*. Then, it would be based on a rare narration from Muhammad (may Allah Ta'ala have mercy on him), as will come. If it is not accepted, then it is a fatwa without a chain of transmission, and no predecessor is known for it, nor did he rely on any transmitted report.

Right Column (Urdu Translation)

Two *paisa* (coins) are due upon his responsibility. So the seller's own property returned to him in its original form, and the second *paisa* remained without compensation. Similarly, if he sells two specific *paisa* for one non-specific *paisa*, the buyer will take both *paisa*. And out of the one *paisa* that became obligatory upon him to pay, he will return one of those *paisa* to the seller. Thus, the second *paisa* remained extra without such compensation whose entitlement came from the contract of sale, as is in *Fath al-Qadir* and similarly in *Inayah* etc. And in selling rupees for credit *paisa*, this reasoning cannot apply, as is not hidden, let alone selling notes for rupees. So, the best interpretation of the expression of *Qari al-Hidaya* is the one mentioned in *an-Nahr*. At that time, it would be based on a rare narration that came from Imam Muhammad (may Allah Ta'ala have mercy on him). If this is not accepted, then it is a fatwa of the scholar for which there is no chain of transmission, nor is any predecessor known for him in this, nor did he bring a chain from any transmitted report for it.

Footnote (عـ): *Ay bil-wajh alladhi dhukira wa in surifa ilas-sarf faqad 'alimta ma'alahu minad-du'f as-sarf* [I.e., in the manner that was mentioned, and if it is turned towards currency exchange (*sarf*), then you have known its outcome regarding weakness in exchange]. That is, in this manner which they mentioned. And if you turn it towards *sarf* (exchange), then you have come to know the weakness that is in it. 12 [Author].

1 *Fath al-Qadir*, Book of Sales, Chapter on Usury, Maktaba Nooriya Razawiyya, Sukkur, 6/162. Page 438 of 715

बायाँ कॉलम (अरबी)

...उसकी ज़िम्मेदारी। तो उसकी असल संपत्ति उसी के पास वापस आ गई और दूसरा फ़िल्स (सिक्का) मुआवज़े (प्रतिफल) के बिना रह गया। इसी प्रकार यदि उसने दो विशिष्ट फ़िल्स एक अनिर्दिष्ट फ़िल्स के बदले बेचे, तो खरीदार दोनों फ़िल्सों पर कब्ज़ा कर लेगा और उनमें से एक उसे उस चीज़ के बदले दे देगा जो उस पर अनिवार्य थी। तो दूसरा बिक्री के अनुबंध द्वारा हकदार मुआवज़े के बिना अतिरिक्त रह गया, जैसा कि अल-फ़तह में है और इसी तरह अल-इनाया और अन्य में है। यह तर्क दिरहम के बदले उधार फ़िल्स के मामले में लागू नहीं होता, जैसा कि स्पष्ट है, और दिरहम के बदले नोटों के मामले में तो बिल्कुल नहीं। इसलिए, कारी अल-हिदाया के कथन की सबसे अच्छी व्याख्या वह है जो अन-नह्र में वर्णित है। तब यह इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाहि अलैहि) की एक दुर्लभ रिवायत (कथन) पर आधारित होगा, जैसा कि आगे आएगा। यदि इसे स्वीकार नहीं किया जाता है, तो यह बिना किसी सनद (प्रमाण) के एक फ़तवा है, और इसके लिए उनसे पहले कोई पूर्ववर्ती ज्ञात नहीं है, और न ही उन्होंने किसी रिवायत का हवाला दिया है।

दायाँ कॉलम (उर्दू अनुवाद)

उसके ज़िम्मे दो पैसे आते हैं। तो बेचने वाले का अपना माल तो उसकी ओर वैसे ही लौट आया और दूसरा पैसा बिना मुआवज़े के रह गया। और इसी तरह अगर दो निश्चित पैसे एक अनिश्चित पैसे के बदले बेचे तो खरीदार दोनों पैसे ले लेगा और उसके ज़िम्मे जो एक पैसा वाजिब हुआ है, उसकी अदायगी के लिए उन्हीं में से एक पैसा बेचने वाले को लौटा देगा। तो दूसरा पैसा बिना ऐसे मुआवज़े के अतिरिक्त रह गया जिसका हक़ बिक्री के अनुबंध से प्राप्त हुआ हो, जैसा कि फ़तह अल-कदीर में है और इसके समान इनाया आदि में है। और उधार पैसों के बदले रुपया बेचने में यह तर्क लागू नहीं हो सकता जैसा कि छिपा नहीं है, न कि रुपयों के बदले नोट बेचने में। तो कारी अल-हिदाया की इबारत (कथन) की सबसे अच्छी व्याख्या वह है जो 'नह्र' में ज़िक्र की गई और उस समय वह एक दुर्लभ रिवायत पर आधारित होगी जो इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाहि अलैहि) से आई है। अगर यह न मानें तो वह अल्लामा का एक फ़तवा है जिसके साथ कोई सनद नहीं है और न ही इसमें उनसे पहले उनका कोई प्रमाण ज्ञात है, न ही वे इस पर किसी नक़्ल (उद्धरण) से सनद लाए।

पादलेख (ع): यानी उस तरीके से जो उन्होंने ज़िक्र किया। और अगर 'सर्फ़ (मुद्रा विनिमय) की तरफ फेरो तो तुम्हें मालूम हो चुका जो इसमें कमज़ोरी है। 12 [लेखक]।

1 फ़तह अल-कदीर, किताबुल बुयू, बाबुर्रिबा, मक्तबा नूरिया रज़विया, सक्खर 6/162। पृष्ठ 438 का 715

عربی متن	اردو ترجمہ
ذمته فيرجع اليه عين ماله و يبقى الفلس	کے ذمہ پر اس کے دو پیسے آتے ہیں تو بائع کا اپنا مال تو
الآخر خالياً عن العوض وكذا لوباع	اس کی طرف بعینہ لوٹ آیا اور دوسرا پیسہ بلا معاوضہ رہ
فلسين باعيانهما بفلس بغير عينه قبض	گیا اور یونہی اگر دو معین پیسے ایک غیر معین پیسہ کو
المشترى الفلسين و دفع اليه احدهما	بیچے تو مشتری دونوں پیسے لے لے گا اور اس کے ذمہ
مكان ما استوجب عليه فيبقى الآخر	جو ایک پیسہ لازم ہوا ہے اس کی ادا کو انہیں میں سے ایک
فضلا بلا عوض استحق بعقد البيع كما	پیسہ بائع کو پھیر دے گا تو دوسرا پیسہ زائد رہ گیا بےایسے
في الفتح ونحوه فى العناية وغيرها	معاوضہ کے جس کا استحقاق عقدِ بیع سے ہوا ہو جیسا کہ
وهذه العلة لا جريان لها فى الدراهم	فتح القدیر میں ہے اور اس کے مثل عنایہ وغیرہ میں ہے اور
بالفلوس نسيئة كما لايخفى فضلا من	ادھار پیسوں کے بدلے روپیہ بیچنے میں یہ علت جاری نہیں
النوط بالدراهم فعبارة قارئ الهداية	ہوسکتی جیسا کہ پوشیدہ نہیں، نہ کہ روپوں کے بدلے نوٹ
احسن محمل لها ماذكر فى النهر	بیچنے میں، تو عبارت قاری الہدایہ کا سب سے بہتر محمل
ويكون اذن مبنياً على رواية نادرة عن	وہ ہے جو نہر میں ذکر کیا اور اس وقت وہ ایک روایتِ
محمد رحمة الله تعالى عليه كما سيأتى	نادرہ پر مبنی ہوگی جو امام محمد رحمۃ اللہ تعالٰی علیہ سے
وان لم يسلم فهى فتوى من دون سند	آئی اگر یہ نہ مانیں تو وہ علامہ کا ایک فتوٰی ہے جس کے
ولا تعلم عـ له سلفا فيها وهو لم يستند	ساتھ کوئی سند نہیں اور نہ اس میں ان سے پہلے ان کا کوئی
لنقل	مستند معلوم نہ وہ اس پر کسی نقل سے سند لائے

حاشیہ (ع): ای بالوجہ الذی ذکر وان صرف الی الصرف فقد علمت مآلہ من الضعف الصرف اھ منہ۔ یعنی اس طریقے سے جو انہوں نے ذکر کیا اور اگر صرف کی طرف پھیر و تو تمہیں معلوم ہو چکا جو اس میں ضعف ہے ۱۲ منہ۔

1 فتح القدیر کتاب البیوع باب الربا مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۱۶۲ Page 438 of 715

And whatever Allama Shami undertook for him, you have already come to know its status. How can it then contradict the ruling upon which the statements of those noble and esteemed elders have concurred—whose respected names were mentioned earlier—and regarding which their Imam, Muhammad, has a clear text (nass) in 'Al-Mabsut'? Therefore, that is the final and decisive verdict.

Then I say: Furthermore, what Allama Qari of 'Al-Hidayah' mentioned contains two clear oversights (zhuhul) concerning the matters of the school of thought (madhhab). One oversight pertains to what our scholars have explicitly stated: that copper coins (fulus), by convention, have shifted from being commodities of weight to commodities of count. The second oversight is concerning their statement that the status of these coins as price (thaman) is annulled by the mutual agreement of the buyer and seller. However, the annulment of their price-status does not nullify the established convention that they are items of count. All these matters are explicitly detailed in 'Al-Hidayah' and other works.

The text of 'Al-Hidayah' is as follows: The evidence for Imam al-A'zam and Imam Abu Yusuf is that price-status in favor of the buyer and seller is established by their mutual convention. Since others have no authority over them, they can also annul it by their own convention. Once their price-status is annulled, they become specific by being specified, and they do not revert to being items of weight, as the convention for counting remains. End (ah). And soon we shall present to you that Imam Muhammad also accepted the annulment of price-status in the context of 'As-Salam' (advance payment sale), and he only rejected it in 'Al-Bay' (general sale) due to a lack of evidence.

---

[1] Al-Hidayah, Book of Sales, Chapter on Interest (Riba), Yusufi Printing Press, Lucknow, 3/83.

और अल्लामा शामी ने उनके पक्ष में जो प्रयत्न किया है, उसकी स्थिति आप जान चुके हैं। फिर यह उस निर्णय के विरुद्ध कैसे हो सकता है जिस पर उन महान और आदरणीय बुजुर्गों के शब्द सहमत हैं, जिनके नामों का ऊपर उल्लेख किया गया है, और जिनमें उनके इमाम, इमाम मुहम्मद का 'मब्सूत' में स्पष्ट पाठ (नस्स) मौजूद है? अतः वही अंतिम और निर्णायक कथन है।

फिर मैं कहता हूँ: इसके अतिरिक्त, 'अल-हिदाया' के टीकाकार (कारी) ने जो उल्लेख किया है, उसमें पंथ (मज़हब) के मसलों के संबंध में दो स्पष्ट विस्मृतियाँ (ज़ुहूल) हैं। पहली विस्मृति उस बात के बारे में है जिसे हमारे विद्वानों ने स्पष्ट रूप से कहा है कि तांबे के सिक्के(फ़ुलूस) प्रथा के कारण वज़न की वस्तु होने के बजाए गिनती की वस्तु बन गए हैं। दूसरी विस्मृति उस बात के बारे में है जिसके लिए विद्वानों ने स्पष्ट किया है कि सिक्कों का मूल्य (समन) होना क्रेता और विक्रेता की अपनी प्रथा से निरस्त हो जाता है। मूल्य होने के निरस्त होने से वह प्रथा निरस्त नहीं होती जिसके अनुसार सिक्के गिनती की वस्तु माने जाते हैं। इन सभी बातों का विवरण 'हिदाया' आदि में मिलता है।

'हिदाया' का मूल पाठ इस प्रकार है: इमाम-ए-आज़म और इमाम अबू यूसुफ का तर्क यह है कि क्रेता और विक्रेता के मामले में मूल्य होना उनकी अपनी प्रथा से सिद्ध होता है, क्योंकि किसी अन्य का उन पर कोई अधिकार नहीं है। अतः वे अपनी प्रथा के माध्यम से इसे निरस्त भी कर सकते हैं। जब उनका मूल्य होना निरस्त हो गया, तो वे निर्दिष्ट किए जाने पर निर्दिष्ट हो जाएँगे और वे वज़न की वस्तु नहीं बनेंगे, क्योंकि गिनती की प्रथा शेष है। इति। और शीघ्र ही हम आपको बताएँगे कि इमाम मुहम्मद ने भी 'अस-सलाम' (अग्रिम भुगतान बिक्री) में मूल्य होने के निरस्त होने को स्वीकार किया है, और उन्होंने केवल साक्ष्य के अभाव के कारण सामान्य बिक्री में इसे अस्वीकार किया था।

---

[1] अल-हिदाया, किताब अल-बुयूँ, बाब अर-रिबा, मतबा यूसुफी लखनऊ, 3/83।

اور وہ جو انکے لئے علامہ شامی نے تکلف کیا اس کا حال معلوم ہو چکا تو اس سے کیونکر معارضہ ہو سکتا ہے اس حکم کا جس پر ان اکابر کرام کے کلمات متفق ہیں جن کے اسماء گرامی اوپر مذکور ہوئے اور اس میں ان کا امام مبسوط میں امام محمد کا نص ہے تو وہی قول فیصل ہے۔

ثم اقول: (پھر میں کہتا ہوں) علاوہ بریں وہ جو امام قاری الہدایہ نے ذکر کیا اس میں مسائل مذہب سے صاف دو ذہول ہیں، ایک ذہول تو اس سے جو ہمارے علماء نے تصریح فرمائی کہ پیسے اصطلاح کے سبب وزن کی چیز ہونے سے خارج ہو کر گنتی کی چیز ہوگئے، اور دوسرا ذہول اس سے جو علماء نے نص فرمایا کہ پیسوں کا ثمن ہونا بائع و مشتری کی اپنی اصطلاح سے باطل ہو جاتا ہے اور ثمنیت کے بطلان سے وہ اصطلاح جو ٹھہری ہوئی ہے کہ پیسے گنتی کی چیز ہیں باطل نہیں ہوتی، ان تمام باتوں کی ہدایہ وغیرہ میں تصریح ہے،

ہدایہ کی عبارت یہ ہے امام اعظم اور امام ابویوسف کی دلیل یہ ہے کہ ثمنیت بائع و مشتری کے حق میں ان کی اصطلاح سے ثابت ہوتی ہے اس لئے کہ اوروں کو ان پر کچھ ولایت نہیں تو وہ اپنی اصطلاح میں اسے باطل بھی کرسکتے ہیں اور جب ثمن ہونا باطل ہوگیا تو معین کئے سے معین ہوجائیں گے اور اس سے تول کی چیز نہ ہو جائیں گے کہ گنتی پر اصطلاح باقی ہے اھ اور عنقریب ہم تمہیں

---

۱ الھدایہ کتاب البیوع باب الربو مطبع یوسفی لکھنؤ ۳/ ۸۳

Fatawa-e-Razviya Volume 17

[Arabic Text Translation]: So it is agreed upon among our Imams, thus the 'Salam' of one of the two currencies in Fulus (copper coins) is not a 'Salam' in price (thaman), nor is it a 'Salam' of weighed in weighed, without being weighed in countable-similar priced items, and there is no problem in it by the consensus of our scholars, may Allah Almighty have mercy on them. In summary, the weak servant does not know any basis for the validity of this fatwa at all. Reflect, perhaps there is a reason for his speech that I do not grasp with my dull understanding, and perhaps I am more prone to error than this knowing scholar, may Allah Almighty have mercy on him. Then I say: Even if we concede, we can say that what was mentioned only applies to Fulus. As for bank notes, they are not weighed items at all. For papers are never weighed by custom, so the standard (of weighing) does not include them, just like a handful of grain or a grain of gold. So our issue here is safe from disagreement in any case. Praise be to Allah, the Possessor of Majesty. This is how research should be, and Allah is the Grantor of success.

[Urdu Text Translation]: (They) will tell that Imam Muhammad has also accepted the invalidity of being 'price' (thamanityat) in 'Salam'; however, he denied it in sale due to lack of evidence. So there is a consensus of all our Imams on this. In this case, exchanging rupees or gold coins with copper coins is not an exchange of 'prices', nor is it an exchange of two items weighed against each other. Instead, it is an exchange of a weighed item for a countable commodity whose units are similar to each other. Our scholars, may Allah Almighty have mercy on them, have a consensus that there is no harm in this. In short, this humble servant knows no basis for the validity of this fatwa at all. Reflect, perhaps there is a reason for his statement that I do not understand with my slow intellect, and it is no surprise if I am closer to error compared to that highly knowledgeable scholar, may Allah Almighty have mercy on him. Then I say: (So I say) even if we accept, we have the right to say that what the scholar mentioned applies only to copper coins (paisa). Bank notes are fundamentally not items of weight, because pieces of paper are never weighed in common practice. Thus, the standard (of weight) does not apply to them, just like a handful of grain or a tiny particle of gold. So, our issue remains safe from contradiction in any case. All praise is for Allah, the Magnificent. Such should be the research, and Allah is the Master of guidance.

Page 440 of 715

फतावा-ए-रज़विया खंड 17

[अरबी पाठ का अनुवाद]: तो यह हमारे इमामों के बीच सर्वसम्मत है, इसलिए फुलूस (तांबे के सिक्के) में दो मुद्राओं में से एक का 'सलाम' कीमत (थमन) में सलाम नहीं है, न ही यह वजन वाली चीज का वजन वाली चीज में सलाम है बिना गिनती वाली-समान कीमत वाली वस्तु के। हमारे विद्वानों, अल्लाह उन पर दया करे, की सहमति से इसमें कोई हर्ज नहीं है। संक्षेप में, यह तुच्छ सेवक इस फतवे की वैधता का कोई भी आधार नहीं जानता। विचार करें, शायद उनके कथन का कोई ऐसा आधार हो जिसे मैं अपनी मंद बुद्धि से नहीं समझ पा रहा हूँ, और शायद मैं इस विद्वान के मुक़ाबले गलती के ज्यादा करीब हूँ, अल्लाह उन पर दया करे। फिर मैं कहता हूँ: अगर हम मान भी लें, तो हमारे पास यह कहने का अधिकार है कि जो विद्वान ने उल्लेख किया है वह केवल पैसों (फुलूस) में लागू होता है। जहाँ तक बैंक नोटों का सवाल है, वे बिल्कुल भी वजन की चीज़ें नहीं हैं। क्योंकि कागज़ के टुकड़ों को प्रथा के अनुसार कभी तौला नहीं जाता, इसलिए माप का मानक (वजन) उन पर लागू नहीं होता, जैसे अनाज की एक मुट्ठी या सोने का एक कण। इसलिए हमारा यह मामला हर हाल में मतभेद से सुरक्षित है। महान अल्लाह के लिए ही सब प्रशंसा है। शोध ऐसा ही होना चाहिए और अल्लाह ही सफलता देने वाला है।

[उर्दू पाठ का अनुवाद]: (वे) बताएंगे कि इमाम मुहम्मद ने भी 'सलाम' में 'कीमत' (थमनियत) की अमान्यता स्वीकार कर ली है; हालाँकि, उन्होंने सबूत न होने के कारण बिक्री (बै') में इसका खंडन किया। तो इस पर हमारे सभी इमामों की सहमति (इज्मा) है। इस मामले में, रुपयों या सोने के सिक्कों का पैसों (तांबे के सिक्कों) से विनिमय 'कीमतों' का विनिमय नहीं है, और न ही यह वजन वाली दो चीज़ों का आपस में विनिमय है। बल्कि, यह एक वजन वाली चीज़ का एक ऐसी वस्तु (मता-ए-अददी) से विनिमय है जिसकी इकाइयाँ एक-दूसरे के समान हैं। हमारे विद्वानों, अल्लाह उन पर दया करे, की सहमति है कि इसमें कोई हर्ज नहीं है। संक्षेप में, यह तुच्छ सेवक इस फतवे की वैधता का कोई भी कारण नहीं जानता। विचार करें, शायद उनके कथन का कोई ऐसा कारण हो जिसे मैं अपनी मंद बुद्धि से नहीं समझता, और क्या आश्चर्य है कि उस अत्यधिक ज्ञानी विद्वान की तुलना में मैं ही गलती के अधिक करीब हूँ। फिर मैं कहता हूँ: (तो मैं कहता हूँ) अगर हम स्वीकार भी कर लें, तो हमें यह कहने का अधिकार है कि जो विद्वान ने उल्लेख किया है वह केवल पैसों में ही लागू होता है। और नोट तो मूल रूप से वजन की चीज़ नहीं हैं, क्योंकि कागज़ के टुकड़ों को प्रथा में कभी तौला नहीं जाता, इसलिए माप का मानक (मेयार) उन पर लागू नहीं होता, जैसे अनाज की एक मुट्ठी या सोने का

एक कण। तो हमारा यह मुद्दा हर हाल में विरोध से सुरक्षित है। और महान अल्लाह के लिए ही प्रशंसा है, शोध इसी तरह होना चाहिए और सफलता का मालिक अल्लाह ही है।

पृष्ठ 715 का 440

[عربی عبارت]: فهو مجمع عليه بين ائمتنا فاذن اسلام احد النقدين في الفلوس ليس سلماً في ثمن ولا اسلام موزون في موزون بلا موزون في عددی متقارب مثمن ولا بأس به باجماع علمائنا رحمهم الله تعالی، وبالجملة فالعبد الضعيف لا يعلم لهذه الفتوی وجه صحة اصلاً تأمل لعل لكلامه وجهاً لست احصله بفهمی السخيف ولعلی انا الاولی بالخطأ من هذا العلامة العريف رحمه الله تعالی، ثم اقول: ولئن سلمنا فلنا ان نقول ماذكر انما يتمشی فی الفلوس اما النوط فليس بموزون اصلاً فان الورقات لا توزن عرفاً قط فلم يشملها المعيار كحفنة من حب وذرة من ذهب فمسئلتنا هذه سالمة عن الخلاف علی كل حال والحمد لله ذی الجلال هكذا ينبغی التحقيق والله ولی التوفيق۔

[اردو عبارت]: بتائیں گے کہ امام محمد نے بھی سلم میں بطلان ثمنیت تسلیم فرمالیا ہے ہاں بیع میں دلیل نہ ہونے کے سبب اس کا انکار کیا ہے تو اس پر ہمارے سب اماموں کا اجماع ہے تو اس حالت میں روپے یا اشرفی سے پیسوں کی بدلی کرنا ثمن کی بدلی نہیں اور نہ باہم تول کی دو چیزوں میں بدلی بلکہ تول کی چیز کے عوض ایک متاع عددی کی بدلی ہے جس کے افراد باہم مشابہ ہیں اور ہمارے علماء رحمہم اللہ تعالیٰ کا اجماع ہے کہ اس میں کوئی حرج نہیں، الحاصل بندہ ضعیف اس فتویٰ کے لئے اصلاً کوئی وجہ صحت نہیں جانتا، تامل کر، شائد ان کے کلام کے لئے کوئی ایسی وجہ ہو کہ میں اپنی فہم سست سے اسے نہیں سمجھتا اور کیا عجب کہ بہ نسبت ان علامہ کثیر المعرفہ رحمہ اللہ تعالیٰ کے میں ہی غلطی سے زیادہ قریب ہوں۔ ثم اقول: (تو میں کہتا ہوں) اگر تسلیم بھی کر لیں تو ہمیں اس کہنے کا اختیار ہے کہ وہ جو علامہ نے ذکر فرمایا وہ پیسوں ہی میں جاری ہوتا ہے اور نوٹ تو اصلاً وزن کی چیز نہیں اس لئے کہ کاغذ کے پرچے عرف میں کبھی تو لے نہیں جاتے تو معیار انہیں شامل نہ ہوئی جیسے غلہ سے ایک ہتھیلی بھر اور سونے سے ایک

ذرہ، تو ہمارا یہ مسئلہ بہر حال مخالفت سے محفوظ ہے اور حمد اللہ کے لئے جو بزرگی والا ہے ایسی ہی تحقیق ہونی چاہئے اور توفیق کا مالک اللہ ہے۔

صفحہ 440 از 715

Fatawa Razawiyya (Right) Volume 17 (17) (Left)

And as for the tenth (point): I say: Yes, Salam (advance payment for future delivery) is permissible in notes (currency notes). Sometimes it is said that it is not permissible because a note is 'Thaman' (price/money), and Salam is not permissible in 'Athman' (plural of Thaman) as previously mentioned from 'An-Nahr'. The research (tahqiq) is that this saying is based only on a rare narration from Imam Muhammad; otherwise, in the core texts (Mutoon), the explicit text (Nass) is that Salam is permissible in 'Fuloos' (copper coins/money). Yes, it is not permissible in 'Athman al-Khilqiyah' (natural money), which are the two metals (Gold and Silver) and nothing else, because the two contracting parties do not have the power to invalidate their status as money. This is contrary to 'Athman al-Istilahiyah' (conventional/agreed-upon money). It is mentioned in 'Al-Tanwir' and 'Al-Durr': (Salam is valid in those things whose qualities can be defined) like their quality and inferiority (and knowing their quantity like measured and weighed things). By saying (Muthman - priced item), Dirhams and Dinars are excluded because they are money (Athman), so Salam was not permitted in them, contrary to Imam Malik (and things sold by count which are close in size like walnuts, eggs, and 'Fals' 1 etc. Ibn Abidin said the word 'Fals' - it is better to say 'Fuloos' because 'Fals' is a singular form, not a collective noun (Ism-e-Jins), it is said).

Answer to the tenth question: I say: (So I say) Yes, Salam is permissible in notes and sometimes it is said that it is not permissible because a note is 'Thaman' (money) and Salam is not permissible in 'Thaman' as passed from 'Nahr', and the research is that this saying is based only on a rare narration that came from Imam Muhammad, otherwise in the core texts (mutoon), there is explicit text (nass) that Salam is permissible in 'Paisa' (coins). Yes, it is not permissible in those which were created to be 'Thaman' and they are only silver and gold and that's it, because the buyer and seller do not have power over invalidating their status as 'Thaman' contrary to those things which are determined as 'Thaman' conventionally. It is mentioned in 'Tanwir-ul-Absar' and 'Durr-e-Mukhtar' that Salam is permissible in every thing whose quality can be disciplined/defined, like its being good or bad and its estimation can be recognized, like things of measurement and weight, and what the author said that the thing should not be 'Thaman', from that rupees and gold coins are excluded because they are 'Thaman' so Salam is not permissible in them. Imam Malik has a difference in this, or if it is a thing sold by count then it should be such that its individuals are close to each other like walnuts, eggs and 'Paisa' etc. Allama Shami

said that what the author called 'Paisa' (Fals), it is better to say 'Paise' (Fuloos) because 'Fals' is a singular form, not a collective noun (Ism-e-Jins).

1. Al-Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Kitab al-Buyu, Bab al-Salam, Matba' Mujtabai, Delhi, 2 / 277. Page 441 of 715

फतावा रज़विया (दायां) जिल्द 17 (17) (बायां)

और जहाँ तक दसवें (बिंदु) की बात है: मैं कहता हूँ: हाँ, नोट (मुद्रा नोट) में 'सल्लम' (भविष्य के वितरण के लिए अग्रिम भुगतान) जायज़ है। कभी-कभी कहा जाता है कि यह जायज़ नहीं है क्योंकि नोट 'थमन' (कीमत/मुद्रा) है और 'अथमान' (थमन का बहुवचन) में सल्लम जायज़ नहीं है जैसा कि 'अन-नहर' से पहले गुज़र चुका है। शोध (तहक़ीक़) यह है कि यह कथन केवल इमाम मुहम्मद से आई एक दुर्लभ रिवायत पर आधारित है, वरना ग्रंथों (मुतून) में तो यह स्पष्ट उल्लेख (नस) है कि 'फ़ुलूस' (तांबे के सिक्के/पैसा) में सल्लम जायज़ है। हाँ, उन 'अथमान-ए-खिलक़िया' (प्राकृतिक मुद्रा) में जायज़ नहीं है जो केवल दो धातुएँ(सोना और चांदी) हैं और बस, क्योंकि अनुबंध करने वाले पक्षों के पास उनकी मुद्रित स्थिति को अमान्य करने की शक्ति नहीं है। यह 'अथमान-ए-इस्तलाहिया' (पारंपरिक/सहमत मुद्रा) के विपरीत है। 'तन्वीरुल अबसार' और 'दुर्रे मुख्तार' में फरमाया गया है: (सल्लम हर उस चीज़ में जायज़ है जिसकी विशेषता को परिभाषित किया जा सके) जैसे उसका अच्छा या बुरा होना (और उसकी मात्रा को जानना जैसे नाप और तौल वाली चीज़ें)। उनके(मुथमन - मूल्यवान वस्तु) कहने से दिरहम और दीनार निकल गए क्योंकि वे 'अथमान' (मुद्रा) हैं, इसलिए उनमें सल्लम जायज़ नहीं था, इमाम मालिक के विपरीत (और गिनती से बिकने वाली चीज़ें जो आकार में एक-दूसरे के करीब हों जैसे अखरोट, अंडे और 'फल्स' 1 आदि)। अल्लामा शामी ने फरमाया कि लेखक ने जो 'पैसा' कहा, बेहतर यह है कि 'पैसे' (फ़ुलूस) कहें क्योंकि 'फल्स' एकवचन है, जातिवाचक संज्ञा (इस्म-ए-जिन्स) नहीं, कहा गया है)।

दसवें प्रश्न का उत्तर: मैं कहता हूँ: (तो मैं कहता हूँ) हाँ, नोट में सल्लम जायज़ है और कभी-कभी कहा जाता है कि जायज़ न हो क्योंकि नोट 'थमन' है और थमन में सल्लम जायज़ नहीं जैसा कि 'नहर' से गुज़रा, और शोध यह है कि यह कथन केवल एक दुर्लभ रिवायत पर आधारित है जो इमाम मुहम्मद से आई वरना ग्रंथों (मुतून) में तो यह स्पष्ट उल्लेख (नस) है कि पैसों में सल्लम जायज़ है। हाँ, जो थमन होने के लिए पैदा किए गए उनमें जायज़ नहीं और वह सिर्फ चांदी सोना है और बस, इसलिए कि खरीदार और विक्रेता उनकी मुद्रित स्थिति को रद्द करने की शक्ति नहीं रखते, उन चीज़ों के विपरीत जो पारंपरिक रूप से थमन निर्धारित की गई हैं। 'तन्वीरुल अबसार' और 'दुर्रे मुख्तार' में फरमाया कि सल्लम जायज़ है हर उस चीज़ में जिसकी विशेषता को अनुशासित/परिभाषित किया जा सके जैसे उसका अच्छा और बुरा होना और उसका अंदाज़ा पहचान सकें जैसे नाप और तौल की चीज़, और यह जो लेखक ने फरमाया कि वह चीज़ थमन न हो, उससे रुपये और अशरफी निकल गए क्योंकि वे

थमन हैं तो उनमें सल्लम जायज़ नहीं। इमाम मालिक का इसमें मतभेद है, या गिनती से बिकने वाली चीज़ हो तो ऐसी हो कि उसकी इकाइयाँ एक-दूसरे के करीब हों जैसे अखरोट, अंडे और पैसा आदि। अल्लामा शामी ने फरमाया कि लेखक ने जो पैसा कहा, बेहतर यह है कि पैसे कहें क्योंकि 'फल्स' एकवचन शब्द है, जातिवाचक संज्ञा नहीं।

1. अल-दुर्रुल मुख्तार शरह तन्वीरुल अबसार, किताबुल बुयू, बाब अल-सल्लम, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 2 / 277। पृष्ठ 441 का 715

واما العاشر فأقول: نعم يجوز السلم في النوط و قد يقال لايجوز فانه ثمن و لاسلم في الاثمان كما تقدم عن النهر والتحقيق ان هذا انما يبتنى على رواية نادرة عن محمد والافالمنصوص عليه فى المتون جواز السلم فى الفلوس وانما لا يجوز فى الاثمان الخلقية وهى النقدان لا غير لعدم قدرة العاقدين على ابطال ثمنيتها بخلاف الاثمان الاصطلاحية قال في التنويرو الدر(يصح اى السلم فيها امكن ضبط صفته) كجودته و ردائته(و معرفة قدره كمكيل و موزون و) خرج بقوله(مثمن)الدراهم والدنانير لانهما اثمان فلم يجز فيها السلم خلافا لمالك (وعدد متقارب كجوز و بيض وفلس ۱ الخ۔ قال ابن عابدين قوله وفلس الاولى وفلوس لانه مفرد لا اسم جنس، قيل

جواب سوال دہم فاقول: (تو میں کہتا ہوں) ہاں نوٹ میں بدلی جائز ہے اور کبھی کہا جاتا ہے کہ جائز نہ ہو اس لئے کہ نوٹ ثمن ہے اور ثمن میں بدلی جائز نہیں جیسا کہ نہر سے گزرا، اور تحقیق یہ ہے کہ یہ قول صرف ایک روایت نادرہ پر مبنی ہے جو امام محمد سے آئی ورنہ متون میں تو یہ نص ہے کہ پیسوں میں بدلی جائز ہے ہاں جو ثمن ہونے کے لئے پیدا کئے گئے ان میں جائز نہیں اور وہ صرف چاندی سونا ہے وبس، اس لئے کہ بائع ومشتری ان کی ثمنیت باطل کرنے پر قدرت نہیں رکھتے بخلاف ان چیزوں کے جو اصطلاحاً ثمن قرار پائی ہیں۔ تنویر الابصار اور درمختار میں فرمایا سلم جائز ہے ہر اس چیز میں جس کی صفت کا انضباط ہوسکے جیسے اس کا کھرا اور کھوٹا ہونا اور اس کا اندازہ پہچان سکیں جیسے ناپ اور تول کی چیز، اور یہ جو مصنف نے فرمایا کہ وہ چیز ثمن نہ ہو اس سے روپے اور اشرفی نکل گئے اس لئے کہ وہ ثمن ہیں تو ان میں بدلی جائز نہیں امام مالک کا اس میں خلاف ہے یا گنتی سے بکنے کی چیز ہو تو ایسی ہو کہ اس کے افراد باہم قریب قریب ہوتے ہوں جیسے اخروٹ اور انڈے اور پیسے الخ۔ علامہ شامی نے فرمایا کہ

مصنف نے جو پیسہ کہا اولیٰ یہ ہے کہ پیسے کہیں اس لئے کہ فلس واحد کا صیغہ ہے، اسم جنس نہیں۔

۱ الدرالمختار شرح تنویر الابصار کتاب البیوع باب السلم مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۲۷۷ Page 441 of 715

Fatawa Rizvia (Vol. 17)

[Arabic Column:] And in it is the disagreement of Muhammad because of his prohibition of selling one fuls (small coin) for two fulus, except that the apparent report from him is like the saying of those two (Imam Abu Hanifa and Imam Abu Yusuf). The explanation of the difference is in Al-Nahr and others. Finis (End). So Al-Nahr only presented it as an interpretation of the fatwa of the commentator of Al-Hidayah so that he would have a source of support, even if in rare reports (al-Nawadir), and he did not intend it as a reliance upon it. And in Al-Hidayah: Likewise, in fulus by number (it is permissible). It is said this is according to Abu Hanifa and Abu Yusuf (may Allah Almighty have mercy on them), and according to Muhammad it is not permissible because they are prices (athman). For them (the two Sheikhs), the price-nature (al-thmaniyyah) in their right is by their convention, so it is invalidated by their convention. He said in Al-Fath: i.e., Salam is permissible in fulus by number. Thus Muhammad (may Allah Almighty have mercy on him) mentioned it in Al-Jami' without mentioning a disagreement. So this was the apparent report from him. It is said, rather, this is the saying of Abu Hanifa and Abu Yusuf. As for him (Muhammad), it is not permissible according to the evidence of his prohibition of selling one fuls for two fulus in the chapter on Usury (Riba) because they are prices, and when they are prices, Salam is not permissible in them. But the apparent report...

[Urdu Column:] Some said that in this issue there is a disagreement of Imam Muhammad because he prohibits selling two paisas for one paisa, but the famous report from him is also like the saying of Imam-e-Azam and Abu Yusuf. The explanation of the difference is in Nahr etc. Finis (End). So it seems Nahr expressed this point for the interpretation of the fatwa of the commentator of Al-Hidayah so that there might be some authority for him, even if in rare reports, and he did not intend to rely on it. And in Hidayah: Similarly, exchange in coins is permissible by setting their count. And it was said that this is according to Imam-e-Azam and Imam Abu Yusuf, and it is not permissible according to Imam Muhammad because coins are prices. The argument of the two Sheikhs is that being a price in the right of the seller and buyer is based on their convention, so it will also be invalidated by their convention. It is stated in Fath-ul-Qadir: Exchange in coins by counting is permissible; similarly, Imam Muhammad mentioned in Al-Jami' and did not mention any disagreement. So this became the famous report from Imam Muhammad. Some said this is the saying of the two Sheikhs; it is not permissible according to Imam Muhammad on the grounds that he forbids selling two paisas for one paisa because

they are prices, and when they became prices, exchange in them did not remain permissible, but in the famous report...

---

1 Radd al-Muhtar, Book of Sales, Chapter on Salam, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/203. 2 Al-Hidayah, Book of Sales, Chapter on Salam, Matba' Yusufi, Lucknow, 3/94.

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

[अरबी कॉलम:] इसमें इमाम मुहम्मद का मतभेद है क्योंकि वह एक फुल्स (छोटा सिक्का) को दो फुल्स के बदले बेचने से मना करते हैं, सिवाय इसके कि उनसे ज़ाहिर रिवायत उन दोनों [इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम अबू यूसुफ़] के कौल की तरह है। फ़र्क का बयान 'अन-नहर' और अन्य में है। अंत। तो 'अन-नहर' ने इसे केवल हिदाया के कारी के फतवे की व्याख्या के रूप में पेश किया ताकि उनके पास कोई आधार (सनद) हो, भले ही वह 'नवादिर' (दुर्लभ रिवायतों) में हो, हालांकि उन्होंने इस पर भरोसा करने का इरादा नहीं किया। और हिदाया में है: इसी तरह फुल्स में गिनती के आधार पर [जायज़ है]। और कहा गया: यह अबू हनीफ़ा और अबू यूसुफ़ (अल्लाह तआला उन पर रहम करे) के नज़दीक है; हालांकि मुहम्मद के नज़दीक यह जायज़ नहीं है क्योंकि वे अस्मान (कीमतें) हैं। उन दोनों [शेखैन] के लिए दलील यह है कि उनका खरीदार और विक्रेता के हक़ में समन होना उनके आपसी समझौते (इस्तलाह) पर आधारित है, इसलिए यह उनके समझौते से ही रद्द भी हो जाएगा। अल-फ़तह में कहा गया: यानी फुल्स में गिनती के आधार पर 'सलम' जायज़ है। इस तरह मुहम्मद (अल्लाह तआला उन पर रहम करे) ने अल-जामी' में इसे बिना किसी मतभेद के उल्लेख किया है। तो यही उनसे ज़ाहिर रिवायत है। कहा गया कि बल्कि यह अबू हनीफ़ा और अबू यूसुफ़ का कौल है; जहाँ तक उनका [मुहम्मद का] सवाल है, तो यह जायज़ नहीं है, इस दलील के साथ कि उन्होंने रिबा (ब्याज) के अध्याय में एक फुल्स को दो फुल्स के बदले बेचने से मना किया है क्योंकि वे अस्मान हैं, और जब वे अस्मान हैं तो उनमें सलम जायज़ नहीं है। लेकिन ज़ाहिर रिवायत...

[उर्दू कॉलम:] कुछ ने कहा कि इस मसले में इमाम मुहम्मद का इख्तिलाफ़ है क्योंकि वह दो पैसों को एक पैसे के बदले बेचना मना फ़रमाते हैं, मगर उनसे मशहूर रिवायत भी इमाम-ए-आज़म और अबू यूसुफ़ के कौल की तरह ही है। और फ़र्क का बयान 'नहर' आदि में है। अंत। तो गोया 'नहर' ने यह बात कारी-ए-हिदाया के फ़तवे की तावील (व्याख्या) के लिए ज़ाहिर की ताकि उनके लिए कोई सनद हो जाए, चाहे वह नवादिर में हो, और इससे इस पर एतमाद (भरोसा) करना न चाहा। और हिदाया में है: इसी तरह पैसों में गिनती मुक़र्रर करके बदल जायज़ है। और कहा गया कि यह इमाम-ए-आज़म और इमाम अबू यूसुफ़ के नज़दीक है, और इमाम मुहम्मद के नज़दीक जायज़ नहीं है क्योंकि पैसे समन हैं। शेखैन की दलील यह है कि समन होना बाए' (विक्रेता) और मुश्तरी (खरीदार) के हक़ में उनकी इस्तलाह की बिना पर है, तो उनकी इस्तलाह से बातिल भी हो जाएगा। फ़तह-उल-क़दीर में फ़रमाया: पैसों में गिनती से बदल जायज़ है; इसी तरह इमाम मुहम्मद ने जामि' में ज़िक्र फ़रमाया

और किसी इख्तिलाफ़ का नाम न लिया, तो यही इमाम मुहम्मद से मशहूर रिवायत हुई। और कुछ ने कहा यह कौल शेखैन का है; इमाम मुहम्मद के नज़दीक जायज़ नहीं है इस दलील से कि वह दो पैसों को एक पैसे से बेचना मना फ़रमाते हैं कि वे समन हैं और जब वे समन हुए तो उनमें बदल जायज़ न हुआ, मगर मशहूर रिवायत में...

---

1 रद-उल-मुहतार, किताब-उल-बुयू', बाब-उस-सलम, दार एहया अत-तुरास अल-अरबी, बेरूत, 4/203। 2 अल-हिदाया, किताब-उल-बुयू', बाब-उस-सलम, मतबा' यूसुफ़ी, लखनऊ, 3/94।

وفیه خلاف محمد لمنعه بیع الفلس بالفلسین الا ان ظاهر الروایة عنه کقولهما وبیان الفرق فی النهر وغیره اهـ' فکان النهر انما ابداه تأویلا لفتوی قاری الهدایة حتی یحصل له مستند ولو فی النوادر ولم یرد به تعویلا علیه، وفی الهدایة وکذا فی الفلوس عددا وقیل هذا عند ابی حنیفة وابی یوسف رحمهما الله تعالیٰ وعند محمد لا یجوز لانها اثمان ولهما ان الثمنیة فی حقهما باصطلاحهما فتبطل باصطلاحهما قال فی الفتح ای یجوز السلم فی الفلوس عددا هکذا ذکره محمد رحمه الله تعالیٰ فی الجامع من غیر ذکر خلاف فکان هذا ظاهر الروایة عنه وقیل بل هذا قول ابی حنیفة وابی یوسف اما عنده فلا یجوز بدلیل منعه ببیع الفلس بالفلسین فی باب الربو لانها اثمان واذا کانت اثمانا لم یجز السلم فیها لکن ظاهر الروایة

بعض نے کہا کہ اس مسئلہ میں امام محمد کا خلاف ہے اس لئے کہ وہ دو پیسوں کو ایک پیسہ بیچنا منع فرماتے ہیں مگر روایت مشہورہ ان سے بھی مثل قول امام اعظم اور ابویوسف کے ہے اور فرق کا بیان نہر وغیرہ میں ہے انتہی تو گویا نہر نے یہ بات فتوی قاری الہدایہ کی تاویل کے لئے ظاہر کی تاکہ اس کے لئے کوئی سند ہو جائے اگرچہ نوادر میں اور اس سے اس پر اعتماد کرنا نہ چاہا، اور ہدایہ میں ہے یو نہی پیسوں میں بدلی جائز ہے ان کی گنتی مقرر کر کے، اور کہا گیا کہ یہ امام اعظم اور امام ابویوسف کے نزدیک ہے اور امام محمد کے نزدیک جائز نہیں اس لئے کہ پیسے ثمن ہیں اور شیخین کی دلیل یہ ہے کہ ثمن ہونا بائع و مشتری کے حق میں ان کی اصطلاح کی بناء پر ہے تو ان کی اصطلاح سے باطل بھی ہو جائے گا، فتح القدیر میں فرمایا پیسوں میں گنتی سے بدلی جائز ہے، اسی طرح امام محمد نے جامع میں ذکر فرمایا اور کسی خلاف کا نام نہ لیا، تو یہی امام محمد سے روایت مشہورہ ہوئی، اور بعض نے کہا یہ قول شیخین کا ہے امام محمد کے

نزدیک جائز نہیں اس دلیل سے کہ وہ دو پیسوں کو ایک پیسہ سے بیچنا منع فرماتے ہیں کہ وہ ثمن ہیں اور جب وہ ثمن ہوئے تو ان میں بدلی جائز نہ ہوئی مگر روایت مشہورہ میں

---

1 ردالمحتار کتاب البیوع باب السلم داراحیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۲۰۳ 2 الہدایہ کتاب البیوع باب السلم مطبع یوسفی لکھنؤ ۳ / ۹۴

Fatawa Razawiyya, Volume 17

[Right Column - Urdu Text Translation:] Permissibility is also narrated from Imam Muhammad, and he differentiates between sale (bay') and advance payment (salam) by saying that in salam it is necessary that the item to be received upon promise must not be a price (thaman). So when they proceeded with salam for copper coins (fulus), they implicitly invalidated their convention of it being a price, and salam in them is valid in the manner they are dealt with, which is by counting. This is contrary to sale, as it can occur on the price itself, so there is no cause for removing them from being a price in sale, thus excess (tafadul) was not permissible, and the sale of one coin for two coins was prohibited. End. I say: (aqul) However, there is an objection to this distinction, because Imam Muhammad does not hold that they are removed from being a price merely by the intention of the contracting parties, while all other people agree on them being a price. It is stated in al-Hidayah: according to Imam al-A'zam and Imam Abu Yusuf (may Allah have mercy on them), selling one coin for two coins by specifying them is permissible, and Imam Muhammad (may Allah have mercy on him) said it is not permissible because price-hood is established by the convention of everyone, so it is not invalidated by their individual convention.

[Left Column - Arabic Text Translation:] From him is the permissibility, and the difference for him between sale and salam is that it is a necessity of salam that the 'muslam fihi' (item paid for in advance) be an object of value (muthman). So when they proceed with salam, it implies the invalidation of their convention on it being a price (thamaniyyah). Salam in it is correct in the manner it is dealt with, which is counting. This is contrary to sale, as its occurrence on the price is permissible, so there is no cause for its exit from being a price in it, hence excess is not allowed, so the sale of one fils for two was prohibited. (1) End. I say: But there is a critique in the distinction, for Muhammad does not say they exit from being a price merely by the intention of the contracting parties while the rest of the people agree on it. It is said in al-Hidayah: Selling one fils for two by specifying them is permissible according to Abu Hanifa and Abu Yusuf (may Allah the Exalted have mercy on them), and Muhammad (may Allah the Exalted have mercy on him) said: It is not permissible because price-hood is established by the convention of all, so it is not invalidated by the convention of two. When they remain as prices, they are not specified, so it becomes as if they were without their specific identities, like the sale of a dirham for two dirhams. Their argument is that price-hood for them is established by their convention (2) ... until the end.

[Footnotes:] 1. Fath al-Qadir, Kitab al-Buyu', Bab al-Salam, Maktaba Nooria Razawiyya Sukkur, 6/9-208. 2. Al-Hidayah, Kitab al-Buyu', Bab al-Riba, Matba' Yusufi Lucknow, 3/83.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 17

[दायां कॉलम - उर्दू पाठ अनुवाद:] इमाम मुहम्मद से भी जवाज़ (वैधता) वर्णित है और वह बिक्री (बै'अ) और अग्रिम भुगतान (सलाम) के बीच यह अंतर करते हैं कि सलाम में यह आवश्यक है कि जो चीज़ वादे पर ली जानी तय हो वह मूल्य (समन) न हो। तो जब उन्होंने तांबे के सिक्कों (फ़ुलूस) के सलाम पर कदम रखा, तो उन्होंने अनकहे तौर पर अपनी इस प्रथा को कि वे मूल्य हैं, निरस्त कर दिया, और उनमें सलाम उसी तरह मान्य है जिस तरह उनमें व्यवहार किया जाता है यानी गिनकर। बिक्री के विपरीत, क्योंकि वह मूल्य पर भी लागू हो सकती है, इसलिए बिक्री में उन्हें मूल्य होने से बाहर करने का कोई कारण नहीं है, अतः कमी-बेशी (तफ़ादुल) जायज़ नहीं हुई और एक पैसे की दो पैसों से बिक्री निषिद्ध ठहरी। अंत। मैं कहता हूँ (अक़ूल): लेकिन इस अंतर में आपत्ति है क्योंकि इमाम मुहम्मद इसके कायल ही नहीं हैं कि केवल अनुबंध करने वालों के इरादे से वे मूल्य होने से बाहर हो जाएं, जबकि बाकी सभी लोग उनके मूल्य होने पर सहमत हैं। हिदाया में कहा गया है कि इमाम-ए-आज़म और इमाम अबू यूसुफ़ (अल्लाह उन पर रहम करे) के नज़दीक एक पैसे को दो पैसे के बदले (निर्दिष्ट करके) बेचना जायज़ है, और इमाम मुहम्मद (अल्लाह उन पर रहम करे) ने फ़रमाया कि जायज़ नहीं है क्योंकि मूल्य होना सभी लोगों की प्रथा से सिद्ध होता है, इसलिए यह उन दोनों की व्यक्तिगत प्रथा से निरस्त नहीं होता।

[बायां कॉलम - अरबी पाठ अनुवाद:] उनसे इसकी वैधता (जवाज़) वर्णित है और उनके अनुसार बै'अ और सलाम में अंतर यह है कि सलाम की शर्त यह है कि 'मुसल्लम फ़ीही' (अग्रिम भुगतान की वस्तु) 'मुसमम' (मूल्यवान वस्तु) हो। अतः जब वे सलाम करते हैं, तो यह उनके मूल्य होने की प्रथा को निरस्त करने को शामिल करता है। और इसमें सलाम उसी तरह सही है जैसे इसमें व्यवहार किया जाता है, यानी गिनती। बै'अ के विपरीत, क्योंकि इसमें मूल्य पर भी लेन-देन हो सकता है, इसलिए इसे मूल्य होने से बाहर करने का कोई कारण नहीं है, अतः कमी-बेशी की अनुमति नहीं है, इसलिए एक फ़ुलूस को दो फ़ुलूस के बदले बेचना निषिद्ध हो गया। (1) अंत। मैं कहता हूँ: लेकिन इस अंतर में आपत्ति है, क्योंकि इमाम मुहम्मद यह नहीं कहते कि वे केवल अनुबंधकर्ताओं के इरादे से मूल्य होने से बाहर हो जाते हैं जबकि बाकी सब लोग इस पर सहमत हों। हिदाया में कहा गया है: एक फ़ुलूस को दो फ़ुलूस के बदले निर्दिष्ट करके बेचना अबू हनीफ़ा और अबू यूसुफ़ (अल्लाह उन पर रहम करे) के निकट जायज़ है, और इमाम मुहम्मद (अल्लाह उन पर रहम करे) ने कहा: यह जायज़ नहीं है क्योंकि मूल्य होना सबकी प्रथा से सिद्ध है, इसलिए दो के कहने से यह निरस्त नहीं होता। और जब वे

मूल्य बने रहते हैं तो वे निर्दिष्ट नहीं होते, अतः यह वैसा ही हो गया जैसे कि वे अपनी असल के बिना हों, जैसे एक दिरहम को दो दिरहम के बदले बेचना। उनका तर्क है कि उनके हक में मूल्य होना उनकी अपनी प्रथा से सिद्ध होता है (2)... अंत तक।

[पादलेख:] 1. फ़तह अल-क़दीर, किताब अल-बुयूँ, बाब अस-सलाम, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 6/9-208। 2. अल-हिदाया, किताब अल-बुयूँ, बाब अर-रिबा, मतबा यूसुफ़ी लखनऊ, 3/83।

عنہ الجواز والفرق لہ بین البیع والسلم ان من ضرورۃ السلم کون المسلم فیہ مثمناً فاذا اقدما علی السلم فقد تضمن ابطالھما اصطلاحھما علی الثمنیۃ ویصح السلم فیھا علی الوجہ الذی یتعامل فیھا بہ وھو العد بخلاف البیع فانہ یجوز وروده علی الثمن فلا موجب لخروجھا فیہ عن الثمنیۃ فلا یجوز التفاضل فامتنع بیع الفلس بالفلسین ۱ اھ اقول: لکن فی الفرق نظر فان محمدا لا یقول بخروجھما عن الثمنیۃ بمجرد قصد العاقدین مع اتفاق سائر الناس علیھا قال فی الھدایۃ یجوز بیع الفلس بالفلسین باعیًا نھما عند ابی حنیفۃ وابی یوسف رحمھما اللہ تعالی وقال محمد رحمہ اللہ تعالی لایجوز لان الثمنیۃ تثبت باصطلاح الکل فلا تبطل بأصطلاحھما واذا بقیت اثماناً لاتتعین فصار کما اذا کانا بغیر اعیانھما وکبیع الدرھم بالدرھمین ولھما ان الثمنیۃ فی حقھما تثبت باصطلاحھما۲ الی

امام محمد سے بھی جواز ہے اور بیع اور بدلی میں وہ یہ فرق کرتے ہیں کہ بدلی میں تو یہ امر ضرور ہے کہ جو چیز وعدہ پر لینی ٹھہرے وہ ثمن نہ ہو تو جب انہوں نے پیسوں کی بدلی پر اقدام کیا تو ضمناً ان کی اصطلاح ثمنیت کو باطل کردیا اور ان کی بدلی اسی طور پر جائز ہے جس طرح ان میں معاملہ کیا جاتا ہے یعنی گن کر، بخلاف بیع کہ وہ ثمن پر بھی وارد ہوسکتی ہے تو بیع میں ان کو ثمنیت سے خارج کرنے کا کوئی موجب نہیں تو کمی بیشی جائز نہ ہوئی اور ایک پیسہ کی دو پیسے سے بیع منع ٹھہری انتہی۔ اقول : (میں کہتا ہوں) مگر اس فرق میں اعتراض ہے اس لئے کہ امام محمد اس کے قائل ہی نہیں کہ صرف عاقدین کے ارادہ سے وہ ثمنیت سے خارج ہوجائیں حالانکہ باقی تمام لوگ اس کے ثمن ہونے پر متفق ہیں ہدایہ میں فرمایا کہ امام اعظم و امام ابویوسف کے نزدیک ایک پیسہ دو پیسے کو بیچنا جائز ہے اور امام محمد رحمہ اللہ نے فرمایا جائز نہیں اس لئے ان کا ثمن ہونا سب لوگوں کی اصطلاح سے ثابت

١ فتح القدير كتاب البيوع باب السلم مكتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۹- ۲۰۸ ۲ الہدایۃ کتاب البیوع باب الربوا مطبع یوسفی لکھنؤ ۳/ ۸۳

[Left Column - Arabic Text] The last of what preceded, and the researcher (Al-Muhaqqiq) acknowledged it in Al-Fath and established it in this manner. So how can Muhammad say here that their proceeding with 'Salam' is a nullification by them of the convention of price-hood (Thamaniyya)? Now it is said that this is a return from the first reasoning, and it was not from a text by Muhammad, but rather the Shaykhs initiated it. And it has now become clear with this distinction that the reasoning for Muhammad was not that, but rather he also says that they have the right to nullify the convention in their regard. But if this is proven from them, and it has been proven in 'Salam' because the object of 'Salam' can never be a price, so their proceeding to make it the object of 'Salam' in it is evidence of nullification. And it is not proven in sale (Bay') since it is not of its necessity that the item sold cannot be a price, so the nullification of sales was not proven from them. And this presentation in this way might incline towards favoring the opinion of Muhammad in sale. So understand this. And Allah Almighty knows best.

[Right Column - Urdu Text] It occurred that it would not become void by the convention of only those two, and while they remain as prices, they will not be specified. So it became as if one paisa or two unspecified paisas were sold, and as if one specified rupee or two specified rupees were sold. And the argument of the two Shaykhs (Sahibayn) is that the price-hood for the contracting parties is established by their convention until the end of the previous presentation. And indeed, the researcher maintained it in Fath al-Qadir and presented it in this way. So how will Imam Muhammad say here that the action of the contracting parties on their exchange is to be considered as nullifying their convention of price-hood? But it may be said that this is a reversal from the first reasoning, and that reasoning was not reported from Imam Muhammad himself; the Shaykhs had originated it. And now it has become clear from this difference that according to Imam Muhammad, the reason was not that; rather, he is also of the opinion that the contracting parties have the authority to nullify the price-hood in their own right. But this is when the intention to nullify the price-hood is proven from the contracting parties, and it was certainly proven in the exchange (Salam) because the thing agreed to be taken on promise in it can never be a price. So their proceeding to exchange in paisas is evidence of nullifying their price-hood. And in sale, this intention of theirs was not proven because it is not necessary for the price of sale in it not to be anything, so the nullification of convention from the contracting parties was not proven. Thus, the

paisas remained prices as they were, so they were not specified, and the sale became void. And this presentation on this style will sometimes lean towards giving preference to Imam Muhammad's view in the issue of sale. So reflect, and Allah Almighty knows best.

[Footnote] Note: This refers to the answer that the contract is valid (continued on the next page).

[बायां कॉलम - अरबी पाठ] पिछली बातों का अंत, और अन्वेषक (मुहक्किक़) ने 'फ़तह' में इसे स्वीकार किया है और इसी शैली में इसे स्थापित किया है। तो इमाम मुहम्मद यहाँ कैसे कह सकते हैं कि 'सलम' में उनका आगे बढ़ना उनकी ओर से क़ीमत (थमनियत) की प्रथा को रद्द करना है? अब यह कहा जाता है कि यह पहले तर्क से वापसी है, और यह इमाम मुहम्मद का अपना पाठ नहीं था, बल्कि शेखों (विद्वानों) ने इसे शुरू किया था। और अब इस अंतर से यह स्पष्ट हो गया है कि इमाम मुहम्मद का तर्क वह नहीं था, बल्कि वह भी यही कहते हैं कि उन दोनों को अपने अधिकार में प्रथा को रद्द करने का अधिकार है। लेकिन जब यह उनसे सिद्ध हो जाए, और 'सलम' में यह सिद्ध हो चुका है क्योंकि 'मुसलम फीह' कभी क़ीमत नहीं हो सकता, तो इसे 'मुसलम' बनाने की उनकी पहल रद्दीकरण का प्रमाण है। और यह बिक्री (बय) में सिद्ध नहीं हुआ क्योंकि यह उसकी आवश्यकता नहीं है कि बेची गई वस्तु क़ीमत नहीं हो सकती, इसलिए उनसे बिक्री का रद्दीकरण सिद्ध नहीं हुआ। और इस शैली में यह प्रस्तुति शायद बिक्री के मामले में इमाम मुहम्मद के विचार को प्राथमिकता देने की ओर झुकेगी। तो समझ लें, और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

[दायां कॉलम - उर्दू पाठ] हुआ था तो सिर्फ इन दो की प्रथा से रद्द नहीं होगा और जब वे थमनियत (क़ीमत की स्थिति) पर रहेंगे तो वे विशिष्ट नहीं होंगे। तो यह वैसा ही हो गया जैसे एक पैसा या दो अनिश्चित पैसों को बेच दिया गया और जैसे एक निश्चित रुपया या दो निश्चित रुपयों को बेच दिया गया। और दो शेखों का तर्क यह है कि अनुबंध करने वाले पक्षों के लिए थमनियत उनकी प्रथा से सिद्ध होती है पिछली रिपोर्ट के अंत तक। और निश्चित रूप से मुहक्किक़ ने इसे 'फ़तह अल-क़दीर' में बरकरार रखा और इसी तरह इसे प्रस्तुत किया। तो इमाम मुहम्मद यहाँ कैसे कहेंगे कि अनुबंध करने वाले पक्षों का उनके विनिमय पर आगे बढ़ना उनकी थमनियत की प्रथा को रद्द मान लेना है? लेकिन यह कहा जा सकता है कि यह पहले तर्क से वापसी है और वह तर्क स्वयं इमाम मुहम्मद से वर्णित नहीं था; शेखों ने इसे गढ़ा था। और अब इस अंतर से यह स्पष्ट हुआ कि इमाम मुहम्मद के निकट कारण वह नहीं था बल्कि वे भी इसी के पक्षधर हैं कि अनुबंध करने वाले पक्षों को अपने अधिकार में थमनियत रद्द करने का अधिकार है। लेकिन यह तब है जब अनुबंध करने वाले पक्षों से थमनियत के रद्दीकरण का इरादा सिद्ध हो जाए और वह विनिमय (सलम) में अवश्य सिद्ध हो गया क्योंकि उसमें जो चीज़ वादे पर लेनी तय हो वह कभी थमन (क़ीमत) नहीं हो सकती। तो पैसों के विनिमय में उनकी पहल उनकी थमनियत को रद्द करने का प्रमाण है। और बिक्री में उनका यह इरादा सिद्ध नहीं हुआ

क्योंकि इसमें बिक्री की क़ीमत न होना कुछ आवश्यक नहीं है, तो अनुबंध करने वाले पक्षों से प्रथा का रद्दीकरण सिद्ध नहीं हुआ तो पैसे अपनी मूल स्थिति में क़ीमत रहे तो विशिष्ट नहीं हुए तो बिक्री शून्य (बातिल) हो गई। और यह प्रस्तुति इस शैली में कभी इस ओर झुकेगी कि बिक्री के मसले में इमाम मुहम्मद के विचार को प्राथमिकता दी जाए। तो चिंतन करें, अल्लाह ही बेहतर जानता है।

[पाद लेख] नोट: यह उस उत्तर की ओर संकेत करता है कि अनुबंध वैध है (शेष अगले पृष्ठ पर)।

पृष्ठ ७१५ का ४४४

[بایاں کالم - عربی عبارت] آخر ماتقدم و قد اقره المحقق في الفتح و قرره على هذا النهج فكيف يقول محمد ههنا ان اقدامهما على السلم ابطال منهما لاصطلاح الثمنية الان يقال ان هذا رجوع عن التعليل الاول و لم يكن عن نص محمد و انما ابداه المشايخ و ظهر الآن بهذا الفرق ان الوجه لمحمد لم يكن ذلك بل هو ایضا قائل بان لهما ابطال الاصطلاح فی حقهما و لكن اذا ثبت هذا عنهما و قد ثبت فی السلم لان المسلم فيه لا يكون ثمنا قط فاقدامهما على جعلها مسلما فيها دليل على الابطال و لم يثبت فی البيع اذ ليس من ضرورته ان لا يكون المبيع ثمنا فلم يثبت منهما ابطال البيوع و هذا التقرير على هذا الوجه ربما يميل الى ترجيح قول محمد فی البيع فافهم عه والله تعالى اعلم۔

[دایاں کالم - اردو عبارت] ہوا تھا تو صرف ان دو کی اصطلاح سے باطل نہ ہو جائے گا اور جبکہ وہ ثمنیت پر باقی رہے تو متعین نہ ہوں گے تو یہ ایسا ہی ہو گیا جیسے ایک پیسہ دو پیسے غیر معین کو بیچ لیا اور جیسے ایک معین روپیہ دو معین روپے کو بیچ لیا اور شیخین کی دلیل یہ ہے کہ ثمنیت عاقدین کے حق میں ان کی اصطلاح سے ثابت ہوتی ہے آخرِ تقریر گزشتہ تک اور بیشک محقق نے اسے فتح القدیر میں مقرر رکھا اور اسی طور پر اس کی تقریر کی تو امام محمد یہاں کس طرح فرمائیں گے کہ عاقدین کا ان کی بدلی پر اقدام کرنا ان کی اصطلاح ثمنیت کو باطل مان لینا ہے مگر یہ کہا جائے کہ یہ پہلی تعلیل سے رجوع ہے اور وہ تعلیل خود امام محمد سے منقول نہ تھی مشائخ نے پیدا کی تھی اور اب اس فرق سے ظاہر ہوا کہ امام محمد کے نزدیک وجہ وہ نہ تھی بلکہ وہ بھی اسی کے قائل ہیں کہ عاقدین کو اپنے حق میں ثمنیت باطل کرنے کا اختیار ہے مگر یہ جب ہے کہ عاقدین سے ابطالِ ثمنیت کا ارادہ ثابت ہو جائے اور وہ بدلی میں ضرور ثابت ہو گیا اس لئے کہ اس میں جو چیز وعدہ پر لینی ٹھہرے وہ کبھی ثمن نہیں ہو سکتی تو پیسوں میں بدلی پر ان

کا اقدام ان کی ثمنیت باطل کرنے کی دلیل ہے اور بیع میں ان کا یہ ارادہ ثابت نہ ہوا کہ اس میں بیع کا ثمن نہ ہونا کچھ ضرور نہیں تو عاقدین سے ابطالِ اصطلاح ثابت نہ ہوا تو پیسے بحالِ خود ثمن رہے تو متعین نہ ہوئے تو بیع باطل ہوئی، اور یہ تقریر اس طرز پر کبھی اس طرف جھکے گی کہ مسئلہ بیع میں امام محمد کے قول کو ترجیح دی جائے، تو غور کرو، واللہ تعالیٰ اعلم۔

[حاشیہ] عہ: یشیر الی الجواب بأن الحاجة الی یہ اس جواب کی طرف اشارہ ہے کہ عقد صحیح

(باقی بر صفحہ آئندہ)

Fatawa Rizwia Volume 17

And as for the eleventh: Answer to the eleventh question: So I say: (I say) Yes, it is permissible to sell it for more or less than the amount written on the note, whatever amount is agreed upon. This is because it has been established above that the valuation of the note in these amounts arises only from people's convention, and no one else has authority over the buyer and seller. As mentioned in Al-Hidayah and Fath al-Qadir, both have the choice to set the valuation at whatever higher or lower amount they wish. For anyone with sound thinking, the answer is completed with this much. I have issued fatwas on this many times, and this has been the fatwa of several prominent Indian scholars, such as the perfect scholar Maulvi Muhammad Irshad Hussain Sahib Rampuri (may Allah the Almighty have mercy on him).

(Remainder of the footnote from the previous page) Correcting the contract is sufficient evidence for that, and it is not necessary that this originates from the very nature of the contract. For example, if someone sells one dirham (rupee) and two dinars (ashrafis) for two dirhams (rupees) and one dinar (ashrafi), it will be interpreted as permissible by assigning the like kind to the unlike kind, even though the nature of the contract itself does not refuse the exchange of like for like. The suspicion of usury is like its certainty in what the motive for it is only the need for correction, and there are many precedents for this. 12 [end of marginal note].

Page 445 of 715

और ग्यारहवीं बात: ग्यारहवें प्रश्न का उत्तर: तो मैं कहता हूँ: हाँ, नोट पर जितनी राशि लिखी है, उससे कम या अधिक पर, जिस पर सहमति हो जाए, उसे बेचना जायज़ है। इसका कारण यह है कि ऊपर यह स्पष्ट हो चुका है कि इन राशियों में नोट का मूल्य केवल जन-प्रथा (convention) से उत्पन्न हुआ है, और खरीदार और विक्रेता पर किसी और का कोई अधिकार नहीं है। जैसा कि अल-हिदाया और फ़तह अल-क़दीर में उल्लेख है, दोनों को यह अधिकार है कि वे जितना चाहें कम या अधिक मूल्य निर्धारित कर लें। जिस किसी की सोच सही है, उसके लिए उत्तर इतने से ही पूरा हो जाता है। मैंने इस पर कई बार फ़तवा दिया है, और भारत के कई बड़े विद्वानों का भी यही फ़तवा रहा है, जैसे पूर्ण विद्वान मौलवी मोहम्मद इरशाद हुसैन साहब रामपुरी (अल्लाह उन पर दया करे)।

(पिछले पृष्ठ के पाद-टिप्पणी का शेष भाग) अनुबंध (contract) को सही ठहराने की आवश्यकता ही इसके लिए पर्याप्त प्रमाण है, और यह आवश्यक नहीं है कि यह स्वयं अनुबंध की प्रकृति से उत्पन्न हो। उदाहरण के लिए, यदि कोई एक दिरहम (रुपया) और दो दीनार (अशरफ़ी) को दो दिरहम (रुपये) और एक दीनार (अशरफ़ी) के बदले बेचता है, तो इसे जायज़ माना जाएगा और इसे सजातीय (same kind) को विजातीय (different kind) के विपरीत मानकर हल किया जाएगा, भले ही अनुबंध की प्रकृति स्वयं सजातीय के विरुद्ध सजातीय होने से इंकार नहीं करती। सूद (ब्याज) का संदेह वास्तविकता के समान ही है, अतः यही आवश्यकता अनुबंध के सुधार का कारण बनती है, और इसके कई उदाहरण मौजूद हैं। 12 [हाशिये की टिप्पणी समाप्त]।

पृष्ठ 445 / 715

واما الحادی عشر جواب سوال یازدھم فاقول: (تومیں کہتا ہوں) ہاں نوٹ پر جتنی رقم لکھی ہے اس سے زیادہ یا کم کو جتنے پر رضا مندی ہو جائے اس کا بیچنا جائز ہے اس لئے کہ اوپر معلوم ہو چکا کہ نوٹ کا ان مقداروں سے اندازہ کرنا صرف لوگوں کی اصطلاح سے پیدا ہوا ہے اور بائع و مشتری پر ان کے غیر کی کوئی ولایت نہیں ، جیسا کہ ہدایہ و فتح القدیر سے گزرا تو ان دونوں کو اختیار ہے کہ کم زیادہ جتنا چاہیں اندازہ مقرر کرلیں جو شخص فکر سلیم رکھتا ہے اس کے نزدیک جواب اتنے ہی سے پورا ہوگیا اور میں نے بارہا اس پر فتوی دیا اور اکابر علمائے ہند سے متعدد عالموں کا یہی فتوی ہوا جیسے فاضل کامل مولوی محمد ارشاد حسین صاحب رامپوری رحمۃ اللہ تعالٰی علیہ

(بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ) تصحیح العقد یکفی قرینة علی ذلك ولا یلزم کون ذلك ناشئاً عن نفس ذات العقد کمن باع درھماً ودینارین بدرھمین ودینار یحمل علی الجواز صرف للجنس الی خلاف الجنس مع ان نفس ذات العقد لاتا بی مقابلة الجنس بالجنس واحتمال الربا کتحققه فیما الحامل علیه الا حاجة التصحیح وکم له من نظیر اھ منه۔ کرنے کی حاجت اس پر کافی قرینہ ہے اور اس کی خود ذات عقد کی طرف سے ناشی ہونا کچھ ضرور نہیں جیسے کوئی ایک روپیہ اور دو اشرفیاں دو روپوں اور ایک اشرفی کو بیچے تو اسے صورت جواز پر حمل کرینگے جنس کو غیر جنس کی طرف پھیر کر حالانکہ خود ذات عقد میں جنس کے مقابل جنس ہونے سے انکار نہیں اور سود کا شبہ مثل حقیقت کے ہے تو اس پر یہی حاجت تصحیح عقد کا باعث، اور اس کی نظیریں بکثرت ہیں ۱۲ منہ۔

Fatawa Razawiyya, Volume 17

...and others. No one disagreed with me on this except a person from Lucknow who was counted among the elites and pointed at with fingers (meaning he was famous). I did not learn about his disagreement until after his death when some short papers were published under the name of his Fatawa. If I had spoken to him about this during his life, I hoped he would have retracted, because it was the habit of that gentleman that when things were explained to him, he would understand, and when he understood, he would come back (from his position). And now, I will provide you with explanation after explanation, which, God willing, will leave nothing for the truth except acceptance and submission. So I say: First, all our scholars, may Allah Almighty have mercy on them, have explicitly stated that the cause (illat) for the prohibition of Riba (interest/usury) is the specific measure, i.e., measuring by volume or weight, along with the unity of kind (genus). So, if both measure and kind are present, then both excess (fadl) and delay (nasa') are forbidden. If neither are present, then it is lawful. If one of them is present, then excess is lawful but delay is forbidden. This is a constant rule that is never violated, and all issues in the chapter of Riba revolve around it. It is known that notes (currency) and rupees share neither measure nor kind. Not in kind because this is paper and that is silver, and not in measure because rupees are [sentence continues on next page].

Footnote: Note: He is called Maulvi Abdul Hayy Lucknawi. Note: Those who are called Maulvi Abdul Hayy Sahib.

Page 446 of 715

फतावा रज़विया, जिल्द 17

...और अन्य। इस बारे में मुझसे किसी ने असहमति नहीं जताई सिवाय लखनऊ के एक व्यक्ति के जिन्हें दिग्गजों में गिना जाता था और जिनकी ओर उंगलियां उठती थीं (यानी वे प्रसिद्ध थे)। मुझे उनकी मृत्यु के बाद ही उनके विरोध का पता चला जब उनके फतावा के नाम से कुछ संक्षिप्त पन्ने छपे। अगर मैंने उनके जीवनकाल में इस बारे में उनसे बात की होती, तो मुझे उम्मीद थी कि वे अपनी बात वापस ले लेते, क्योंकि उन सज्जन की आदत थी कि जब उन्हें समझाया जाता था तो वे समझ लेते थे, और जब समझ लेते थे तो वापस आ जाते थे। और अब मैं आपको स्पष्टीकरण के बाद और अधिक स्पष्टीकरण दूँगा, जो ईश्वर ने चाहा तो सत्य के लिए स्वीकार्यता और आज्ञाकारिता के अलावा कुछ नहीं छोड़ेगा। तो मैं कहता हूँ: पहली बात, हमारे सभी विद्वानों, अल्लाह उन पर दया करे, ने स्पष्ट रूप से कहा है कि रिबा (ब्याज/सूद) की मनाही का कारण (इल्लत) वह विशिष्ट माप है, अर्थात आयतन या वजन द्वारा मापना, साथ ही प्रकार (जींस) की एकता। इसलिए, यदि माप और प्रकार दोनों पाए जाते हैं, तो अधिकता (फ़ज़्ल) और देरी (नसा) दोनों हराम (प्रतिबंधित) हैं। यदि दोनों ही न पाए जाएं तो यह जायज़ है। यदि उनमें से एक पाया जाए तो अधिकता जायज़ है लेकिन देरी हराम है। यह एक निरंतर नियम है जिसका कभी उल्लंघन नहीं होता है, और रिबा के अध्याय के सभी मुद्दे इसी पर घूमते हैं। यह ज्ञात है कि नोटों (मुद्रा) और रुपयों में न तो माप का साझा है और न ही प्रकार का। प्रकार में इसलिए नहीं क्योंकि यह कागज है और वह चांदी है, और माप में इसलिए नहीं क्योंकि रुपये तौल के [वाक्य अगले पृष्ठ पर जारी है]...

पाद-टिप्पणी (Footnote): नोट: उन्हें मौलवी अब्दुल हई लखनवी कहा जाता है। नोट: जिन्हें मौलवी अब्दुल हई साहब कहा जाता है।

पृष्ठ 446 का 715

وغیرہ اور اس میں میرا اختلاف نہ کیا مگر لکھنؤ کے ایک شخص نے جو عمائد سے گنے جاتے اور ان کی طرف انگلیاں اٹھتیں اور مجھے ان کے خلاف پر اطلاع نہ ہوئی مگر ان کی موت کے بعد جبکہ کچھ مختصر ورق ان کے فتاوٰی کے نام سے چھپے اور اگر میں ان کی زندگی میں اس بارے میں ان سے گفتگو کرتا تو امید تھی کہ وہ رجوع کر لیتے کہ ان صاحب کی عادت تھی جب سمجھائے جاتے تو سمجھ لیتے اور جب سمجھ لیتے تو واپس آتے اور اب میں تجھے ایضاح کے بعد اور ایضاح زیادہ کروں جو ان شاء اللہ تعالٰی حق کے لئے نہ باقی رکھے سوا قبول و تسلیم کے، فاقول: (تو میں کہتا ہوں) اولا: ہمارے جمیع علماء رحمہم اللہ تعالٰی نے تصریح فرمائی کہ حرمت ربا کی علت وہ خاص اندازہ یعنی ناپ یا تول ہے اتحاد جنس کے ساتھ، تو اگر قدر و جنس دونوں پائی جائیں تو بیشی اور ادھار دونوں حرام ہیں، اور اگر وہ دونوں نہ پائی جائیں تو حلال ہیں، اور اگر دونوں میں سے ایک پائی جائے تو بیشی حلال اور ادھار حرام ہے، اور یہ ایک عام قاعدہ ہے جو کہیں منتقض نہیں اور باب ربا کے جمیع مسائل اسی پر دائر ہیں اور معلوم ہے کہ نوٹ اور روپوں میں شرکت نہ قدر میں ہے نہ جنس میں، جنس میں تو اس لئے نہیں کہ یہ کاغذ ہے اور وہ چاندی اور قدر میں اس لئے نہیں کہ روپے تول کی...

عہ: یدعی المولوی عبدالحی اللکنوی اھ منہ - عہ: جن کو مولوی عبدالحی صاحب کہا جاتا ہے ۱۲ منہ

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Left Column Text] ...weighed, nor is there any measure for the note at all, neither measured by volume nor by weight. Therefore, it is obligatory that both excess (interest) and credit (deferred payment) are permissible together. Thus, the note is not from the ribawi assets at all, and we will soon provide more detailed research on this matter, if Allah Almighty wills. Secondly: It is said in Radd al-Muhtar and others that whenever excess is forbidden, credit is forbidden, and not the reverse; and whenever credit is permissible, excess is permissible, and not the reverse. And we have established conclusive proof in the answer to the ninth question about the permissibility of credit here, so it became obligatory that excess is also permissible, and wait for what follows. Thirdly: Here is our master, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), saying: 'If these categories differ, then sell as you wish.' Narrated by Muslim from 'Ubadah bin al-Samit (may Allah be pleased with him). So who can prohibit after the permission of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him)? Fourthly: These are clear proofs that are not hidden even from children. And now I come to you with something in which there will be room for you to speak according to your intellect, then I will unveil the secret to clarify the truth. So I say: Have you considered, is it not known to you...

[Right Column Text] ...things, and the note is neither measured by weight nor by volume, so it became obligatory that both excess and credit be permissible. Thus it became apparent that the note is not ribawi wealth at all, and we, if Allah Almighty wills, will state more research soon. Secondly: It was said in Radd al-Muhtar etc. that where excess is forbidden, credit is also forbidden, and its opposite is not true; and where credit is permissible, excess is also permissible, and its opposite is not true. And we have established conclusive evidence in the answer to the ninth question that credit is permissible in notes, so it became obligatory that excess also be permissible; and remain waiting for the upcoming discourse. Thirdly: These are our master, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), who is saying that when the genus is different, sell as you wish. This Hadith is in Sahih Muslim from 'Ubadah bin al-Samit (may Allah be pleased with him). So who is the prohibitor after the permission of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him)? Fourthly, these are such bright proofs that they would not remain hidden even from a child. And now I describe such a thing to you in which there would be room for some speech suitable for your intellect, then I will open its veil for the expression of the truth. So I say: (So I say) well tell me, is it known to you and every person of intellect...

1. Radd al-Muhtar, Book of Sales, Chapter on Interest (Riba), Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/80-179.
2. Sahih Muslim, Book of Sales, Chapter on Interest (Riba), Qadimi Kutub Khana Karachi, 2/25.

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

[बायाँ कॉलम पाठ] ...तौली जाने वाली, और नोट का कोई पैमाना बिल्कुल नहीं है, न नापा जाने वाला और न ही तौला जाने वाला। इसलिए यह अनिवार्य हो गया कि बेशी (ब्याज) और उधार दोनों एक साथ जायज़ हों। अतः नोट सिरे से रिबावी संपत्तियों में से नहीं है, और हम इंशा अल्लाह तआला जल्द ही इस मामले पर और अधिक शोध प्रदान करेंगे। दूसरा: रद्दुल मुहतार और अन्य में कहा गया है कि जब भी बेशी हराम होती है, उधार भी हराम होता है, और इसके विपरीत नहीं; और जब भी उधार हलाल होता है, बेशी भी हलाल होती है, और इसके विपरीत नहीं। और हमने नौवें प्रश्न के उत्तर में यहाँ उधार की वैधता के बारे में निर्णायक प्रमाण स्थापित किया है, इसलिए यह अनिवार्य हो गया कि बेशी भी जायज़ है, और जो आने वाला है उसका इंतज़ार करें। तीसरा: यहाँ हमारे सरदार, अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) कह रहे हैं: 'यदि ये श्रेणियाँ अलग-अलग हों, तो जैसा चाहो वैसे बेचो।' मुस्लिम ने उबादा बिन सामित (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से रिवायत की है। तो अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) की अनुमति के बाद रोकने वाला कौन है? चौथा: ये स्पष्ट प्रमाण हैं जो बच्चों से भी छिपे नहीं हैं। और अब मैं तुम्हारे पास एक ऐसी चीज़ लेकर आया हूँ जिसमें तुम्हारी बुद्धि के अनुसार बोलने की गुंजाइश होगी, फिर मैं सत्य को स्पष्ट करने के लिए रहस्य से परदा हटाऊँगा। तो मैं कहता हूँ: क्या आपने विचार किया है, क्या यह आपको ज्ञात नहीं है...

[दायाँ कॉलम पाठ] ...चीज़ें हैं और नोट न तौल की न नाप की, तो वाजिब हुआ कि बेशी और उधार दोनों जायज़ हों, तो ज़ाहिर हुआ कि नोट सिरे से माले-रिबा ही से नहीं और हम इंशा अल्लाह तआला अनक़रीब ज़्यादा तहक़ीक़ बयान करेंगे, सानिया: रद्दुल मुहतार वग़ैरह में फ़रमाया जहाँ बेशी हराम होती है उधार भी हराम है और उसका अक्स नहीं अह, और जहाँ उधार हलाल हो बेशी भी हलाल होती है और उसका अक्स नहीं इन्तही और हम जवाब सवाल नहम में दलीले क़तई क़ायम कर चुके हैं कि नोट में उधार जायज़ है तो वाजिब हुआ कि बेशी भी हलाल हो और आइन्दा तक़रीर के मुंतज़िर रहो। सालिसा: ये हैं हमारे सरदार रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम कि फ़रमा रहे हैं जब जिन्स मुख़्तलिफ़ हो तो जैसे चाहो बेचो ये हदीस सही मुस्लिम में उबादा बिन सामित रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से है तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की इजाज़त के बाद मना करने वाला कौन है, राबेआ ये तो ऐसी रोशन दलीलें हैं कि बच्चे पर भी मख्फ़ी न रहें और अब मैं तुझ से एक ऐसी चीज़ बयान करूँ जिसमें तुझे अपनी अक़्ल के लायक़ कुछ कलाम की गुंजाइश हो फिर

इज़हारे सवाब के लिए उसका पर्दा खोलूँ, फ़अक़ूल: (तो मैं कहता हूँ) भला बता तो क्या तुझे और हर ज़ी अक़्ल को मालूम...

---

1. रद्दुल मुहतार, किताबुल बुयू, बाबुल रिबा, दार इहयाउत तुरास अल-अरबी, बेरुत, 4/80-179.
2. सही मुस्लिम, किताबुल बुयू, बाबुल रिबा, क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची, 2/25.

[Left Column Text] موزونة ولا قدر للنوط اصلا لامكيل و لاموزون فيجب ان يحل الفضل والنسأ جميعا فاذن ليس النوط من الاموال الربوية اصلا وسنزيدك تحقيق الامر في ذلك عن قريب ان شاء الله تعالى۔ وثانياً: قال في ردالمحتار وغيره كلما حرم الفضل حرم النسأ ولا عكس وكلما حل النسأ حل الفضل ولا عكس اه وقداقمنا البرهان القاطع في جواب التاسع على حل النسأ ههنا فوجب حل الفضل وانتظر ما يأتى وثالثاً: هذا سيدنا رسول الله صلى الله تعالى عليه وسلم يقول اذا اختلف هذه الاصناف فبيعوا كيف شئتم رواه مسلم عن عبادة بن الصامت رضي الله تعالى عنه فمن الحاجر بعد اذن رسول الله صلى الله تعالى عليه وسلم ورابعاً: هذه دلائل واضحة لاتخفى حتى على الصبيان والآن أتيك بشيئ يكون لك فيه مجال تكلم بحسب عقلك ثم اكشف الحجاب لابانة الصواب، فأقول: أرأيتك هل ليس من المعلوم عندك

[Right Column Text] چیزیں ہیں اور نوٹ نہ تول کی نہ ناپ کی، تو واجب ہوا کہ بیشی اور ادھار دونوں جائز ہوں، تو ظاہر ہوا کہ نوٹ سرے سے مالِ ربا ہی سے نہیں اور ہم ان شاء اللہ تعالیٰ عنقریب زیادہ تحقیق بیان کریں گے، ثانیاً: ردالمحتار وغیرہ میں فرمایا جہاں بیشی حرام ہوتی ہے ادھار بھی حرام ہے اور اس کا عکس نہیں اھ، اور جہاں ادھار حلال ہو بیشی بھی حلال ہوتی ہے اور اس کا عکس نہیں انتھی اور ہم جواب سوال نہم میں دلیلِ قطعی قائم کر چکے ہیں کہ نوٹ میں ادھار جائز ہے تو واجب ہوا کہ بیشی بھی حلال ہو اور آئندہ تقریر کے منتظر رہو۔ ثالثاً: یہ ہیں ہمارے سردار رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کہ فرما رہے ہیں جب جنس مختلف ہو تو جیسے چاہو بیچو یہ حدیث صحیح مسلم میں عبادہ بن صامت رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے ہے تو رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی اجازت کے بعد منع کرنے والا کون ہے، رابعاً یہ تو ایسی روشن

دلیلیں ہیں کہ بچے پر بھی مخفی نہ رہیں اور اب میں تجھ سے ایک ایسی چیز بیان کروں جس میں تجھے اپنی عقل کے لائق کچھ کلام کی گنجائش ہو پھر اظہار صواب کے لئے اس کا پردہ کھولوں، فاقول: (تومیں کہتا ہوں) بھلا بتا تو کیا تجھے اور ہر ذی عقل کو معلوم

---

1 ردالمحتار کتاب البیوع باب الربوا داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/۸۰-۱۷۹ 2 صحیح مسلم کتاب البیوع باب الربوا قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/۲۵

Fatawa-e-Razvia (Volume 17)

[Arabic Column] And in the view of anyone possessing reason, if property, whose value according to the general, known price agreed upon by people is ten dirhams, it is permissible for anyone to sell it with the buyer's consent for a hundred, or to give it for one penny. There is no prohibition in any of that from the pure Sharia. The Almighty said: "...unless it be trade by mutual consent among you" (1). And it was stated in *Al-Fath*, as mentioned before, that if a piece of paper were sold for a thousand, it would be permissible and not disliked (2). Everyone knows that a piece of paper's value never reaches a thousand, nor a hundred, nor even one dirham. This is only because price (*qima*) and consideration (*thaman*) are distinct, and they are not obliged to adhere to the value in their transaction; rather, they have the right to set the consideration at multiples of the value or at a hundredth part of it. If you say: "This applies to goods, but as for the banknote, it is a currency by convention," I say firstly: "So what? You have revealed the answer by saying 'by convention,' for the convention of others does not compel the two parties to the contract. Thus, the distinction is lost and the truth has become clear. Secondly: Even if we grant that they..."

[Urdu Column] ...not that property which according to everyone's general market rate is valued at ten rupees, it is permissible for every person to sell it with the buyer's consent for a hundred rupees or give it for one paisa, and there is no restriction from the pure Sharia in this regard. Allah Almighty says: "But only [in] business [conducted by] mutual consent among you." And indeed, it was stated in *Fath al-Qadir* as passed above, that if the value of a single piece of paper never reaches a thousand rupees, nor a hundred, nor even one rupee, then the reason for this is that value (*qimat*) and consideration (*thaman*) are distinct things. It is not mandatory for the seller and buyer to adhere to the market value in setting the consideration (i.e., the price they agreed upon amongst themselves). Instead, they have the authority to agree on several times the market value or on a hundredth part of it. Now, if you say that this is the ruling for merchandise whereas a note is conventionally consideration (*thaman*), I will say firstly: What of it? By saying "conventionally," you yourself have made the answer clear that the convention of others does not compel the contracting parties. Thus, the distinction was lost and the truth became clear. Secondly: We did not accept...

[Footnotes] 1. The Holy Quran 4/29 2. Fath al-Qadir, Book of Suretyship, Maktaba Nooria Razvia, Sukkur, 6/324

[अरबी स्तंभ] और हर बुद्धिमान व्यक्ति की दृष्टि में, यदि कोई संपत्ति, जिसका मूल्य लोगों के बीच ज्ञात और सर्वसम्मत सामान्य मूल्य के अनुसार दस दिरहम है, तो किसी के लिए भी यह जायज़ है कि वह खरीदार की सहमति से इसे सौ में बेचे, या इसे एक पैसे में दे दे। पवित्र शरीयत की ओर से इसमें कोई रोक नहीं है। अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "...मगर यह कि तुम्हारी आपस की रज़ामन्दी से कोई व्यापार हो" (1)। और अल-फ़तह में कहा गया है, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, कि यदि काग़ज़ का एक टुकड़ा एक हज़ार में बेचा जाए तो यह जायज़ है और नापसंद नहीं है (2)। हर कोई जानता है कि काग़ज़ के एक टुकड़े का मूल्य कभी एक हज़ार, न सौ, न ही एक दिरहम तक पहुँचता है। यह केवल इसलिए है क्योंकि मूल्य (क़ीमा) और प्रतिफल (थमन) अलग-अलग हैं, और वे अपने लेनदेन में मूल्य का पालन करने के लिए बाध्य नहीं हैं; बल्कि उन्हें मूल्य के कई गुना या उसके सौवें हिस्से पर प्रतिफल निर्धारित करने का अधिकार है। यदि आप कहें: "यह माल पर लागू होता है, लेकिन जहाँ तक बैंक नोट का सवाल है, यह परंपरा द्वारा मुद्रा है," तो मैं सबसे पहले कहूँगा: "तो क्या हुआ? आपने 'परंपरा द्वारा' कहकर स्वयं उत्तर स्पष्ट कर दिया है, क्योंकि दूसरों की परंपरा अनुबंध करने वाले दो पक्षों को बाध्य नहीं करती है। इस प्रकार, अंतर समाप्त हो गया और सत्य स्पष्ट हो गया। दूसरा: यदि हम मान लें कि वे..."

[उर्दू स्तंभ] ...नहीं कि वह संपत्ति जो सब के नज़दीक सामान्य बाज़ार भाव से दस रुपये की क़ीमत की है, हर व्यक्ति के लिए जायज़ है कि वह खरीदार की सहमति से उसे सौ रुपये में बेचे या एक पैसा में दे दे, और पवित्र शरीयत की ओर से इस बारे में कोई रोक नहीं है। अल्लाह अज़्ज़-व-जल्ल फ़रमाता है: "मगर यह कि तुम्हारी आपस की रज़ामन्दी का कोई सौदा हो।" और बेशक फ़तह-उल-क़दीर में फ़रमाया जैसा कि ऊपर गुज़रा कि अगर काग़ज़ के एक टुकड़े की क़ीमत हरगिज़ न हज़ार रुपये तक पहुँचती है, न सौ तक, न एक रुपये तक, तो इसका यही कारण है कि क़ीमत और थमन (प्रतिफल) अलग-अलग चीज़ें हैं। बेचने वाले और खरीदने वाले पर क़ीमत (यानी बाज़ार के भाव) की पाबंदी थमन में लाज़िम नहीं (यानी जो उनके बीच तय हुआ), बल्कि उन्हें अधिकार है कि बाज़ार के भाव से कई गुना अधिक पर रज़ामंदी कर लें या उसके सौवें हिस्से पर। अब अगर तुम कहो कि यह तो माल का हुक्म है और नोट तो परंपरा में थमन है, तो मैं कहूँगा पहली बात: फिर क्या हुआ, तुमने परंपरा कहकर खुद ही जवाब साफ़ कर दिया कि दूसरों की परंपरा अनुबंध करने वालों को मजबूर नहीं करती। तो अंतर समाप्त हो गया और सत्य स्पष्ट हो गया। दूसरी बात: हमने नहीं माना...

[पादलेख] 1. पवित्र कुरान 4/29 2. फ़तह-उल-क़दीर, ज़मानत की किताब, मकतबा नूरया रज़विया, सुक्कुर, 6/324

[عربی کالم] و عند كل من له عقل ان المال الذى يكون في السعر العام المعروف المجمع عليه من الناس بعشرة دراهم يجوز لكل احد ان يبيعه برضا المشترى بمائة او يعطيه بفلس واحد ولا حجر في شيئ من ذلك عن الشرع المطهر قال تعالى " إِلَّا أَنْ تَكُونَ تِجَارَةً عَنْ تَرَاضٍ مِنْكُمْ " ۱، وقد قال في الفتح كما تقدم ان لو باع كاغدة بالف يجوز ولا يكره ۲ وكل احد يعلم ان قطعة قرطاس لا تبلغ قيمته الفا ولا مائة ولا درهما واحدا قط فما ذلك الالان القيمة والثمن متغايران ولا يجب عليهما التقيد بها فيما ثامنا بل لهما ان يقدر الثمن باضعاف القيمة او بجزء من مائة جزء لها، فان قلت هذا فى السلعة اما النوط فثمن اصطلاحا قلت اولا: فكان ماذا وقد ابنت الجواب بقولك اصطلاحا فان اصطلاح غيرهما ليس مكربا لهما فضاع الفرق وضاع الحق و ثانيا: ان سلمنا انهما

[اردو کالم] نہیں کہ وہ مال کہ عام بھاؤ سے سب کے نزدیک دس روپے کی قیمت کا ہے ہر شخص کو جائز ہے کہ خریدار کی رضامندی سے اسے سو روپے کو بیچے یا ایک پیسہ کو دے دے اور شرع مطہر کی طرف سے اس بارے میں کوئی روک نہیں۔ اللہ عزوجل فرماتا ہے: مگر یہ کہ کوئی سودا ہو تمہاری آپس کی رضامندی کا، اور بیشک فتح القدیر میں فرمایا جیسا کہ اوپر گزرا کہ اگر ایک کاغذ کے ایک ٹکڑے کی قیمت ہر گز نہ ہزار روپے تک پہنچتی ہے نہ سو تک نہ ایک روپے تک، تو اس کا یہی سبب ہے کہ قیمت اور ثمن جدا جدا چیزیں ہیں اور بائع و مشتری پر قیمت (یعنی بازار کے بھاؤ) کی پابندی ثمن میں لازم نہیں (یعنی جوان کے باہم قرار داد ہوا) بلکہ انہیں اختیار ہے کہ بازار کے بھاؤ سے کئی گنے زائد پر رضامندی کر لیں یا اسکے سوویں حصہ پر، اب اگر تو کہے کہ یہ تو متاع کا حکم ہے اور نوٹ تو اصطلاح میں ثمن ہے میں کہوں گا اولاً: پھر کیا ہوا

تو نے اصطلاحاً کہہ کر خود ہی جواب ظاہر کر دیا کہ اوروں کی اصطلاح عاقدین کو مجبور نہیں کرتی تو فرق ضائع ہوا اور حق واضح ہوگیا ثانیاً: ہم نے نہ مانا

[حواشی] ۱ القرآن الکریم ۲۹/۴ ۲ فتح القدیر کتاب الکفالة مکتبه نوریه رضویه سکهر ۶/ ۳۲۴

Fatawa Razwiya (Volume 17)

[Left Column - Arabic Text] ...cannot invalidate the character of being price (currency). So from where did you derive that conventional prices cannot be changed from the prescribed conventional estimation? Do you not see that the paisas of a rupee are always fixed by customary determination? For every sensible child knows that a rupee is sixteen annas, not fifteen and not seventeen. Then this customary determination and their being conventional prices does not prohibit the two contracting parties (buyer and seller) from increasing or decreasing. It is stated in Al-Tanwir and its commentary by Al-Ala'i: "Whoever gives a money-changer a large Dirham and says, 'Give me in exchange for it half a Dirham worth of paisas and a half-Ahaba coin', it is valid. The half-Ahaba will be in exchange for its equivalent (in silver) and the rest will be in paisas." End of quote. And the wording of Al-Hidayah is: "If one said, 'Give me for half of it paisas and for the other half a half-Ahaba coin', it is permissible." Thirdly: Go above conventional price; these two are stones whose price-character is innate, and no one is able to invalidate their price-character. And every sane person knows that a Dinar is always equal to a number of Dirhams, and there has never been a Dinar that is valued at one Dirham, yet our Imams have stated...

[Right Column - Urdu Text] ...that the contracting parties are not capable of invalidating the price-character, then from where did you extract that changing the prescribed quantity of conventional prices is not permissible? Do you not see that the paisas of a rupee always remain fixed by the determination of custom, such that every sensible child knows that a rupee is of sixteen annas, not fifteen, nor seventeen. Then this customary determination and the paisas being a conventional price does not make it forbidden for the seller and buyer to have a decrease or increase. In 'Tanwir-ul-Absar' and its commentary 'Durr-e-Mukhtar', it is stated that one who gave a rupee to a money-changer and said, "Give me eight annas worth of paisas in exchange for it and a coin that is slightly (a Ratti) less than an eight-anna coin", then such a sale is permissible. The amount of silver in the rupee that is equal to that small coin will be in exchange for that coin, and for the rest, paisas. Finally, the wording of 'Hidayah' is like this: "If it was said, give eight annas worth of paisas and an eight-anna coin less by a Ratti, then it is permissible." Thirdly: Go higher than conventional price; these are gold and silver whose price-character (one) is not capable of invalidating. And every sane person knows that an Ashrafi (gold coin) is always worth many rupees and no Ashrafi will ever be found that is worth one rupee in price. Despite this, our Imams have...

[Footnotes] 1. Al-Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Kitab al-Buyu', Bab al-Riba, Matba' Mujtabai Delhi, 2/75. 2. Al-Hidayah, Kitab al-Sarf, Matba' Yusufi Lucknow, 3/112.

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

[बायां कॉलम - अरबी मूल] ...मूल्य होने के गुण को अमान्य नहीं कर सकते। तो आपने यह कहाँ से निकाला कि पारंपरिक मूल्यों को निर्धारित पारंपरिक अनुमान से बदला नहीं जा सकता? क्या आप नहीं देखते कि एक रुपये के पैसे हमेशा प्रथागत निर्धारण द्वारा तय होते हैं? क्योंकि हर समझदार बच्चा जानता है कि एक रुपया सोलह आने का होता है, न कि पंद्रह का और न ही सत्रह का। फिर यह प्रथागत निर्धारण और उनका पारंपरिक मूल्य होना अनुबंध करने वाले दोनों पक्षों (खरीदार और विक्रेता) को घटाने या बढ़ाने से नहीं रोकता है। 'अल-तन्वीर' और अल-अलाई द्वारा इसकी व्याख्या में कहा गया है: "जो कोई मुद्रा परिवर्तक को एक बड़ा दिरहम देता है और कहता है, 'इसके बदले में मुझे आधा दिरहम के पैसे और आधा अहबा सिक्का दें', तो यह मान्य है। आधा अहबा इसके समकक्ष (चांदी में) के बदले होगा और बाकी पैसों में होगा।" उद्धरण समाप्त। और 'अल-हिदाया' के शब्द हैं: "यदि किसी ने कहा, 'इसके आधे के लिए मुझे पैसे दें और दूसरे आधे के लिए आधा अहबा सिक्का', तो यह जायज है।" तीसरा: पारंपरिक मूल्य से ऊपर चलें; ये दो पत्थर हैं जिनका मूल्य-चरित्र जन्मजात है, और कोई भी उनके मूल्य-चरित्र को अमान्य करने में सक्षम नहीं है। और हर समझदार व्यक्ति जानता है कि एक दीनार हमेशा कई दिरहम के बराबर होता है, और कभी कोई ऐसा दीनार नहीं मिला जिसकी कीमत एक दिरहम हो, फिर भी हमारे इमामों ने कहा है...

[दायां कॉलम - उर्दू पाठ] ...कि अनुबंधकर्ता मूल्य-चरित्र को अमान्य करने में सक्षम नहीं हैं, तो आपने यह कहाँ से निकाला कि पारंपरिक मूल्यों की निर्धारित मात्रा को बदलना जायज़ नहीं है? क्या आप नहीं देखते कि एक रुपये के पैसे हमेशा रिवाज के निर्धारण के अनुसार तय रहते हैं, यहाँ तक कि हर समझदार बच्चा जानता है कि एक रुपया सोलह आने का होता है, न पंद्रह का, न सत्रह का। फिर यह प्रथागत निर्धारण और पैसों का पारंपरिक मूल्य होना विक्रेता और खरीदार के लिए कमी या बेशी (बढ़ोतरी) को हराम नहीं करता। 'तन्वीर-उल-अबसार' और इसकी व्याख्या 'दुर्र-ए-मुख़्तार' में कहा गया है कि जिसने सर्राफ को एक रुपया दिया और कहा, "इसके बदले में मुझे आठ आने के पैसे दे दो और एक सिक्का जो अठन्नी से रत्ती भर कम हो", तो ऐसी बिक्री जायज़ है। रुपये की उतनी चांदी जो उस छोटे सिक्के के बराबर हो, वह उस सिक्के के बदले होगी, और बाकी के बदले पैसे। अंत में, 'हिदाया' की इबारत इस तरह है: "अगर कहा गया कि आठ आने के पैसे दे दो और रत्ती भर कम अठन्नी, तो जायज़ है।" तीसरा: पारंपरिक मूल्य से ऊपर चलें; ये हैं सोना और चांदी जिनका मूल्य-चरित्र अमान्य करने पर (कोई) सक्षम नहीं है। और हर अकलमंद जानता है कि अशरफ़ी हमेशा कई

रुपयों की होती है और कभी कोई ऐसी अशरफ़ी नहीं पाई जाएगी जो कीमत में एक रुपया हो। इसके बावजूद हमारे इमामों ने...

[पादलेख] 1. अद-दुर्र अल-मुख़्तार शरह तन्वीर अल-अबसार, किताब अल-बुयू, बाब अर-रिबा, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 2/75। 2. अल-हिदाया, किताब अस-सर्फ़ मतबा यूसुफ़ी लखनऊ, 3/112।

पृष्ठ 449 का 715

[بایاں کالم - عربی عبارت] لا یقدر ان علی ابطال الثمنیة فمن این لك ان الا ثمان الاصطلاحیة لا یمکن التغییر فیها عن التقدیر المصطلح الا تری ان فلوس ربیة متعینة بتعیین العرف ابدا فکل صبی عاقل یعقل ان ربیة بست عشرة آنة لا بخمس عشرة ولا بسبع عشرة ثم هذا التعیین العرفی وکونهما اثمانا مصطلحة لا یحرم علی العاقدین النقص والزیادة قال فی التنویر وشرحه للعلائی من اعطی صیرفیا درهما کبیرا فقال اعطنی به نصف درهم فلوسا ونصفا الاحبة صح ویکون النصف الاحبة بمثله وما بقی بالفلوس ۱ اهـ ولفظ الهدایة لو قال اعطنی بنصفه فلوسا وبنصفه نصفا الاحبة جاز ۲ وثالثا: اعل عن الثمن الاصطلاحي هذان حجران ثمنان خلقة ولا یقدر احد علی ابطال ثمنیتهما وقد عقل کل من عقل ان الدینار یساوی ابدا عدة دراهم ولا یوجد دینار قط یقوم بدرهم واحد و مع ذلك نص ائمتنا

[دایاں کالم - اردو ترجمہ و تشریح] کہ عاقدین ابطال ثمنیت پر قادر نہ ہوں تو یہ تو نے کہاں سے نکالا کہ اصطلاحی ثمنوں کی مقدارِ مصطلح سے تغییر جائز نہیں، کیا نہیں دیکھتا کہ ایک روپے کے پیسے عرف کی تعیین سے ہمیشہ متعین رہتے ہیں کہ ہر سمجھ والا بچہ جانتا ہے کہ ایک روپیہ سولہ آنے کا ہے، نہ پندرہ کا، نہ سترہ کا۔ پھر یہ عرفی تعین اور پیسوں کا ثمنِ اصطلاحی ہونا بائع و مشتری پر کمی بیشی حرام نہیں کرتا۔ تنویر الابصار اور اس کی شرح در مختار میں فرمایا جس نے صراف کو ایک روپیہ دیا اور کہا اس کے عوض مجھے آٹھ آنے کے پیسے دے دے اور ایک سکہ کہ اٹھنی سے رتی بھر کم ہو تو ایسی بیع جائز ہے روپے کی اتنی چاندی جو اس چھوٹے سکے کے برابر ہو وہ تو اس سکے کے عوض رہے گی اور باقی کے عوض پیسے انتی، اور ہدایہ کی عبارت یوں ہے کہ اگر کہا آٹھ آنے پیسے دے دو اور رتی کم اٹھنی تو جائز ہے ثالثاً: ثمن اصطلاحی سے اوپر چل یہ ہیں سونا چاندی کی ثمنیت باطل کرنے پر قادر نہیں اور ہر عاقل

جانتا ہے کہ اشرفی ہمیشہ کئی روپے کی ہوتی ہے اور ہرگز کوئی اشرفی نہ پائی جائے گی جو ایک روپے قیمت کی ہو اور باوصف اس کے ہمارے ائمہ نے

[حواشی] 1 الدرالمختار شرح تنویرالابصار کتاب البیوع باب الربو مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۷۵ 2 الهداية كتاب الصرف مطبع يوسفى لكهنؤ ۳/ ۱۱۲

Fatawa Razawiyya Volume 17 (17)

(Arabic column translation): Indeed, selling a Dinar for a Dirham is valid, as there is no usury (riba) in it. This is solely because when the genus (of the commodities) differs, disparity (in quantity) is permissible. The difference between the genus of banknotes and the Rupee is something that only a madman would be ignorant of. It is stated in al-Hidayah, al-Durr, and most illustrious books: Selling two Dirhams and one Dinar for one Dirham and two Dinars is valid by exchanging different genera for their opposites. Similarly, selling eleven Dirhams for ten Dirhams and one Dinar is valid (1). Ibn Abidin said: Thus, ten (Dirhams) are against ten (Dirhams), and the (remaining) Dirham is against the Dinar (2). So, if selling a Rupee for a Guinea (gold coin), whose value according to general custom is fifteen Rupees, is valid and not usury, then how can selling a banknote marked with the number ten for twelve Rupees be usury? This is nothing but a sheer fabrication. If you say: Although the issues you mentioned involve valid sales, they are disliked (makruh), and what is disliked is prohibited, so it is not lawful even if valid; the same applies here. It is stated in al-Hidayah: If they trade silver for silver or gold for gold...

(Urdu column text): It was clarified that selling one Ashrafi (gold coin) for one Rupee is valid, and there is no usury in it at all. The only reason for this is that when the genus is different, an increase or decrease is permissible. The fact that the genus of banknotes and Rupees is different is something only a madman would be unaware of. In Hidayah, Durr-e-Mukhtar, and other common books, it is stated that selling two Rupees and one Ashrafi in exchange for one Rupee and two Ashrafis is correct because each genus will be placed against its opposing genus. Similarly, selling eleven Rupees for ten Rupees and one Ashrafi. In Radd al-Muhtar, it is stated: ten Rupees will be exchanged for ten Rupees, and the eleventh Rupee will be for one Ashrafi. So, when selling one Rupee for one Ashrafi, whose value is generally fifteen Rupees, was correct and not usury, then how can selling a ten-rupee note for twelve be usury? This is a total slander. If you say that although the issues you mentioned are valid in terms of sale, they are disliked (Makruh), and what is disliked is prohibited, so it won't be lawful even if it's valid; the same applies here. It is stated in Hidayah: If (trading) gold for gold or silver for silver...

Footnotes: 1. Al-Hidayah, Kitab al-Sarf, Yusafi Press, Lucknow, 3/9-108; Al-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Sarf, Mujtabai Press, Delhi, 2/55. 2. Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Sarf, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/239. Page 450 of 715

(अरबी स्तंभ का अनुवाद): निश्चित रूप से, एक दीनार को एक दिरहम में बेचना वैध है, क्योंकि इसमें कोई ब्याज (रिबा) नहीं है। यह केवल इसलिए है क्योंकि जब वस्तुओं की श्रेणी (जिंस) अलग होती है, तो मात्रा में अंतर की अनुमति होती है। बैंक नोट और रुपये की श्रेणी के बीच का अंतर ऐसी बात है जिससे केवल एक पागल ही अनभिज्ञ होगा। अल-हिदाया, अल-दुर्र और अधिकांश प्रसिद्ध पुस्तकों में कहा गया है: दो दिरहम और एक दीनार को एक दिरहम और दो दीनार के बदले बेचना वैध है, क्योंकि विभिन्न श्रेणियों को उनकी विपरीत श्रेणियों के बदले बदला जाता है। इसी तरह, ग्यारह दिरहम को दस दिरहम और एक दीनार के बदले बेचना वैध है (१)। इब्न आबिदीन ने कहा: इस प्रकार, दस (दिरहम) दस (दिरहम) के बदले हैं, और (शेष) दिरहम दीनार के बदले है (२)। तो, यदि एक रुपये को एक गिनी (सोने का सिक्का) के लिए बेचना, जिसका मूल्य सामान्य प्रथा के अनुसार पंद्रह रुपये है, वैध है और ब्याज नहीं है, तो दस नंबर वाले बैंक नोट को बारह रुपये में बेचना ब्याज कैसे हो सकता है? यह सरासर मनगढ़ंत बात है। यदि आप कहें: यद्यपि आपके द्वारा बताए गए मुद्दों में बिक्री वैध है, लेकिन वे नापसंद (मक़रूह) हैं, और जो नापसंद है वह निषिद्ध है, इसलिए यह वैध होने पर भी जायज़ नहीं है; यही बात यहाँ भी लागू होती है। हिदाया में कहा गया है: यदि वे चांदी को चांदी के बदले या सोने को सोने के बदले व्यापार करें...

(उर्दू स्तंभ का पाठ): यह स्पष्ट किया गया कि एक अशर्फी को एक रुपये में बेचना सही है और इसमें मूल रूप से कोई ब्याज नहीं है। इसका एकमात्र कारण यह है कि जब श्रेणी (जिंस) अलग हो, तो कमी या अधिकता जायज़ है। नोट और रुपये की श्रेणी अलग होना ऐसी बात है जिससे कोई पागल ही नावाकिफ होगा। हिदाया, दुर्र-ए-मुख़्तार और अन्य सामान्य किताबों में कहा गया है कि दो रुपयों और एक अशर्फी को एक रुपये और दो अशर्फियों के बदले बेचना सही है, क्योंकि हर श्रेणी को अपनी विपरीत श्रेणी के सामने रखा जाएगा। इसी तरह, ग्यारह रुपयों को दस रुपये और एक अशर्फी के बदले बेचना। रद्द-उल-मुहतार में कहा गया है: दस रुपये तो दस रुपयों के बदले हो जाएंगे और ग्यारहवें रुपये के बदले एक अशर्फी। तो जब एक रुपये को एक अशर्फी के बदले बेचना दुरुस्त हुआ, जिसकी कीमत आम तौर पर पंद्रह रुपये है, और ब्याज न हुआ, तो दस का नोट बारह को बेचना कैसे सूद होगा? यह तो निरा आरोप है। अगर आप कहें कि ये जो मसले आपने ज़िक्र किए, उनमें हालांकि बिक्री सही है लेकिन मक़रूह है, और मक़रूह मना होता है तो हलाल न होगा चाहे सही हो; यहाँ भी वैसा ही है। हिदाया में फ़रमाया: अगर सोने को सोने से या चांदी को चांदी से...

पाद-टिप्पणियाँ: १. अल-हिदाया, किताब अल-सर्फ़, युसफी प्रेस, लखनऊ, ३/९-१०८; अल-दुर्र अल-मुख़्तार, किताब अल-बुयूँ, बाब अल-सर्फ़, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, २/५५। २. रद्द अल-मुह्तार, किताब अल-बुयूँ, बाब अल-सर्फ़, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, ४/२३९। पृष्ठ ४५० (७१५ में से)

(عربی کالم کا ترجمہ): بے شک ایک دینار کی ایک درہم کے عوض بیع صحیح ہے کیونکہ اس میں کوئی ربا (سود) نہیں ہے، اور یہ محض اس وجہ سے ہے کہ جب جنس مختلف ہو تو کمی بیشی حلال ہے، اور نوٹ اور روپیہ کی جنس کا اختلاف ایسی چیز ہے جس سے صرف ایک دیوانہ ہی لاعلم ہو سکتا ہے۔ ہدایہ، درمختار اور اکثر کتب میں مذکور ہے کہ: دو درہم اور ایک دینار کو ایک درہم اور دو دینار کے عوض مختلف اجناس کو ان کے مقابل بدل کر بیچنا صحیح ہے۔ اسی طرح گیارہ درہم کو دس درہم اور ایک دینار کے عوض (بیع صحیح ہے) (۱)۔ ابن عابدین نے فرمایا: تو دس (درہم) دس (درہم) کے بدلے ہوں گے اور (باقی ماندہ) درہم دینار کے بدلے ہو گا (۲)۔ پس جب ایک روپیہ کو ایک گنی (اشرفی) کے بدلے بیچنا صحیح ہے جس کی قیمت عام رواج کے مطابق پندرہ روپے ہے اور وہ ربا نہیں ہے، تو دس نمبر لکھے ہوئے نوٹ کو بارہ روپے کے عوض بیچنا ربا کیسے ہو گا؟ یہ تو محض ایک بہتان ہے۔ اگر تم کہو کہ تم نے جن مسائل کا ذکر کیا ہے اگرچہ ان میں بیع صحیح ہے لیکن وہ مکروہ ہے، اور مکروہ ممنوع ہوتا ہے تو وہ حلال نہیں ہوگا اگرچہ صحیح ہو، تو یہاں بھی معاملہ ایسا ہی ہے۔ ہدایہ میں ہے کہ اگر وہ چاندی کا چاندی کے ساتھ یا سونے کا سونے کے ساتھ تبادلہ کریں...

(اردو کالم کا متن): تصریح فرمائی کہ ایک اشرفی ایک روپے کی بیچنا صحیح ہے اور اس میں اصلاً ربا نہیں اور اس کے سوا اس کا کوئی سبب نہیں کہ جب جنس مختلف ہوں تو کمی بیشی جائز ہے اور نوٹ اور روپوں کی جنس مختلف ہونا ایسی بات ہے جس سے کوئی مجنون ہی ناواقف ہو۔ ہدایہ اور در مختار اور عام نورانی کتابوں میں فرمایا دو روپوں اور ایک اشرفی کو ایک روپے اور دو اشرفی کے عوض بیچنا درست ہے کہ ہر جنس اپنی مخالف جنس کے مقابل کر دی جائے گی

اسی طرح گیارہ روپوں کو دس روپے اور ایک اشرفی کے عوض بیچنا انتہی، ردالمختار میں فرمایا دس روپے تو دس روپے بدلے ہو جائیں گے اور گیارہویں روپے کے بدلے ایک اشرفی انتہی، تو جب ایک روپیہ ایک اشرفی کو بیچنا درست ہوا جس کی قیمت عام طور پر پندرہ روپے ہیں اور ربا نہ ہوا تو دس کا نوٹ بارہ کو بیچنا کیونکر سود ہوگا، یہ تو نرا بہتان ہے، اگر تو کہے کہ یہ جو مسئلے تم نے ذکر کئے ان میں اگر چہ بیع صحیح ہے مگر مکروہ ہے اور مکروہ ممنوع ہوتا ہے تو حلال نہ ہوگا اگرچہ صحیح ہو، ایسے ہی یہاں ہے۔ ہدایہ میں فرمایا اگر سونے کو سونے یا چاندی کو چاندی

حواشی: ۱ الهدایه کتاب الصرف مطبع یوسفی لکھنؤ ۳/ ۹- ۱۰۸، الدر المختار کتاب البیوع باب الصرف مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۵۵ ۲ ردالمحتار کتاب البیوع باب الصرف دار احیاء التراث العربي بیروت ۴/ ۲۳۹

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Arabic Column:] If one of them is less, and along with the lesser one there is another thing whose value equals the remaining silver, the sale is permissible without any dislike (karahah). If its value does not reach that, it is with dislike. And if it has no value, like soil, the sale is not permissible because usury (riba) is confirmed, since the excess is not met with an equivalent exchange, so it becomes usury. This was affirmed in 'al-Fath', 'al-Shuruh', 'al-Bahr', 'Radd al-Muhtar', and others. It is well-known that absolute dislike (karahah) refers to prohibition (karahah al-tahrim). Rather, Abdul Halim said in 'al-Durar' after quoting the issue and referring its detail to 'al-Fath', his text is: "When you have known this, then what is circulating in the Ottoman state of selling one 'qirsh' for eighty Ottoman 'dirhams' is not permissible due to the excess of the qirsh. Even if there were something like a 'fulus' with the dirhams, it would be permissible with dislike. So it is obligatory for the cautious person to make them equal in weight, or the value of what is with the dirhams should be equal to the amount of the excess so that one is freed from the responsibility of dislike (karahah)." Thus he explicitly stated...

[Urdu Column:] ...sold, and on one side it is less, and along with it another thing is included whose value is equal to the remaining silver, then the sale is permissible without dislike. And if it is not of such value, then with dislike. And if it has no value, like soil, then the sale will not be permissible at all as usury is present because whatever excess remained on one side, there is nothing against it on the other side, so it will be usury (End of quote). And this statement was maintained in Fath al-Qadeer and other commentaries, Al-Bahr, Radd al-Muhtar, etc. It is known that when the word 'dislike' (karahat) is used absolutely, it means dislike of prohibition (karahat-e-tahreem). Rather, the venerable Abdul Halim narrated this issue in the commentary of Durar and, referring its detail to Fath al-Qadeer, said: "When you have known this, then that which is prevalent in the Ottoman Empire, that they sell one qirsh for eighty Ottoman rupees, is not permissible because the qirsh is in excess. And if along with the rupees, for example, there is one paisa, then it is permissible with dislike. So it is obligatory for the cautious person to either make the weight of both equal, or the thing which is mixed with the rupees should be of such value as the amount of excess of the qirsh over the rupees, so that one may be freed from the responsibility of dislike" (End of quote). So they...

---

1. Al-Hidayah, Kitab al-Buyu', Bab al-Sarf, Matba' Yusufi Lucknow 3/109.

2. Hashiyat al-Durar by Abdul Halim.

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

[अरबी कॉलम:] यदि उनमें से एक कम है, और कम वाले के साथ कोई अन्य वस्तु शामिल है जिसका मूल्य शेष चांदी के बराबर है, तो बिना किसी नापसंदगी (कराहत) के बिक्री जायज़ है। यदि इसका मूल्य उस तक नहीं पहुँचता है, तो यह नापसंदगी के साथ है। और यदि इसका कोई मूल्य नहीं है, जैसे मिट्टी, तो बिक्री जायज़ नहीं है क्योंकि ब्याज (रिबा) की पुष्टि हो जाती है, क्योंकि अधिकता के बदले में कुछ नहीं मिलता है, इसलिए यह ब्याज बन जाता है। इसे 'अल-फ़तह', 'अल-शुरुह', 'अल-बह्र', 'रद्द अल-मुहतार' और अन्य में पुष्ट किया गया है। यह सर्वविदित है कि पूर्ण नापसंदगी (कराहत) का अर्थ निषेध (कराहत अल-तहरीम) होता है। बल्कि, अब्दुल हलीम ने 'अल-दुरर' में मसले को उद्धृत करने और उसके विवरण को 'अल-फ़तह' पर संदर्भित करने के बाद कहा, उनका पाठ है: "जब आप यह जान चुके हों, तो उस्मानी साम्राज्य में जो प्रचलित है कि एक 'क़िरश' को अस्सी उस्मानी 'दिरहम' में बेचना, क़िरश की अधिकता के कारण जायज़ नहीं है। भले ही दिरहम के साथ 'फुलूस' जैसी कोई चीज़ हो, तो यह नापसंदगी के साथ जायज़ होगा। इसलिए सावधान व्यक्ति के लिए अनिवार्य है कि वह उन्हें वजन में बराबर कर ले, या दिरहम के साथ जो चीज़ है उसका मूल्य अधिकता की मात्रा के बराबर होना चाहिए ताकि वह नापसंदगी (कराहत) की ज़िम्मेदारी से मुक्त हो सके।" अतः उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा...

[उर्दू कॉलम:] ...बेचा गया, और एक तरफ कम है, और इसके साथ कोई और चीज़ शामिल है जिसका मूल्य शेष चांदी के बराबर है, तो बिना किसी नापसंदगी के बिक्री जायज़ है। और यदि वह इतने मूल्य की नहीं है, तो नापसंदगी के साथ। और यदि उसका कोई मूल्य नहीं है जैसे मिट्टी, तो बिक्री बिल्कुल भी जायज़ नहीं होगी क्योंकि ब्याज मौजूद है क्योंकि जितनी अधिकता एक तरफ रही, उसके मुकाबले दूसरी तरफ कुछ नहीं है, तो वह ब्याज होगा (इंतिहा)। और इस बात को फ़तह अल-क़दीर और अन्य व्याख्याओं, अल-बह्र, रद्द अल-मुहतार आदि में बरकरार रखा गया। यह ज्ञात है कि जब 'नापसंदगी' (कराहियत) शब्द का प्रयोग पूर्ण रूप से किया जाता है, तो इसका अर्थ निषेध की नापसंदगी (कराहियत-ए-तहरीम) होता है। बल्कि आदरणीय अब्दुल हलीम ने दुरर की व्याख्या में इस मसले को उद्धृत किया और इसके विवरण को फ़तह अल-क़दीर के हवाले से इस प्रकार कहा: "जब आपको यह ज्ञात हो गया, तो वह जो उस्मानी साम्राज्य में प्रचलित है कि वे एक क़िरश को अस्सी उस्मानी रुपयों में बेचते हैं, जायज़ नहीं है क्योंकि क़िरश अधिक है। और यदि रुपयों के साथ उदाहरण के लिए एक पैसा हो, तो नापसंदगी के साथ जायज़ है। तो एहतियात (सावधानी) बरतने वाले

पर अनिवार्य है कि वह या तो दोनों का वजन बराबर कर ले, या जो चीज़ रुपयों के साथ मिलाई गई है वह इतने मूल्य की हो जितना कि रुपयों पर क़िरश की अधिकता है, ताकि नापसंदगी की ज़िम्मेदारी से मुक्त हो सके' (इंतिहा)। तो उन्होंने...

---

1. अल-हिदाया, किताब अल-बुयू, बाब अल-सरफ, मतबा यूसुफी लखनऊ 3/109।
2. अब्दुल हलीम द्वारा हाशियत अल-दुरर।

पृष्ठ 715 का 451

[عربی کالم:] واحد هما اقل و مع اقلهما شیئ اخر تبلغ قیمتہ باقی الفضۃ جاز البیع من غیر کراہیۃ و ان لم تبلغ فمع الکراہۃ وان لم یکن قیمۃ کالتراب لا یجوز البیع لتحقق الربا اذا الزیادۃ لا یقابلها عوض فیکون ربا اه واقره فی الفتح والشروح والبحر ورد المحتار وغیرها و معلوم ان مطلق الکراہۃ ینصرف الی کراہۃ التحریم بل قال عبد الحلیم علی الدرر بعد نقل المسئلۃ واحالۃ تفصیلها علی الفتح مانصہ "اذا عرفت هذا فما یتداول فی الدولۃ العثمانیۃ من بیع قرش واحد بثمانین درہماً عثمانیا لم یجز لزیادۃ القرش ولو کان مع الدراهم نحو فلس جاز مع الکراہۃ فالواجب علی المحتاط تسویتهما وزنا او یکون قیمۃ ما کان مع الدراهم قدر قیمۃ الزیادۃ حتی یخلص عن عهدۃ الکراہۃ اه فقد صرح

[اردو کالم:] سے بیچا اور ایک طرف کم ہے اور اس کے ساتھ کوئی اور چیز شامل ہے جس کی قیمت باقی چاندی کے برابر ہے جب تو بیع بلا کراہت جائز ہے اور اگر اتنی قیمت کی نہیں تو کراہت کے ساتھ، اور اگر اس کی قیمت کچھ نہیں جیسے مٹی تو اب بیع جائز ہی نہ ہو گی کہ سود موجود ہے اس لئے کہ جتنی زیادتی ایک طرف رہی اس کے مقابل دوسری طرف کچھ نہیں تو سود ہوگا انتہی، اور اس کلام کو فتح القدیر اور دیگر شروح اور بحر اور رد المحتار وغیرہ میں برقرار رکھا اور معلوم ہے کہ لفظ کراہت جب مطلق بولتے ہیں تو اس سے کراہت تحریم مراد ہوتی ہے بلکہ فاضل عبد الحلیم نے حاشیہ درر میں یہ مسئلہ نقل کیا اور اس کی تفصیل کو فتح القدیر پر حوالہ کر کے یوں کہا جب تجھے یہ معلوم ہو چکا تو وہ جو سلطنت عثمانیہ میں رائج ہے کہ ایک ایک قرش اسی روپے عثمانی کو بیچتے ہیں جائز نہیں اس لئے کہ قرش زائد ہے اور اگر روپوں کے ساتھ مثلاً ایک پیسہ ہو تو کراہت کے ساتھ جائز ہے تو احتیاط والے پر واجب ہے کہ ان دونوں

کا وزن برابر کر لے یا وہ چیز جو روپوں کے ساتھ ملائی جائے اتنی قیمت کو ہو جس قدر قرش میں روپوں پر زیادتی ہے تاکہ کراہت سے عہدہ برآہو انتہی، تو انہوں نے

---

1 الهداية كتاب البيوع باب الصرف مطبع يوسفى لكهنؤ ۳/ ۱۰۹ 2 حاشية الدرر لعبد الحليم

[Header: Fatawa Razawiyya, Volume 17]

...by necessity, so acting against it is "Makruh Tahrimi" (prohibitively disliked), and such dislike is sufficient for sinfulness. I say: I have presented the objection to you in a way that, had you presented it yourself, you might not have been able to do better. Now, listen to the answer by the grace of Allah, the Bestower, Exalted be His Majesty.

Firstly: Where did the difference between creation and convention escape your mind? The value of gold and it being many times more precious than its weight in silver is a natural (created) matter in which no one's assumption or agreement has any role. Therefore, in exchanging a dinar for a dirham, the superiority of value will occur to every mind. This is unlike the (currency) note, for setting its value at, say, ten is merely a human convention; otherwise, the paper itself is not worth one rupee, nor even a tenth of a rupee. Thus, if you look at the essence, then selling what is valued at ten (a ten-rupee note for ten rupees) also involves a huge superiority in value (as the paper is worth much less). And if one looks at the convention, then the convention is not a ruler over the two contracting parties (buyer and seller), as we have related to you from the texts of Al-Hidayah and Al-Fath (al-Qadir). So, when people have valued it at ten, while in its essence it is worth only one paisa for example, then what prevents the buyer and seller from valuing it at twelve or more, or eight or even less? Thus, this issue has no connection with our discussion.

Secondly: Their discussion pertains to the case when a genus is exchanged for the same genus, as it is in that case that surplus becomes apparent. Have you not seen this statement in Al-Hidayah, until his saying...

[Footer: Page 452 of 715]

[शीर्षक: फतावा रज़विया, खंड 17]

...अनिवार्यता के कारण, इसलिए इसके विरुद्ध कार्य करना "मक़रूह तहरीमी" (सख्ती से नापसंद) है, और ऐसी नापसंदगी पाप के लिए पर्याप्त है। मैं कहूँगा: मैंने आपके सामने आपत्ति को इस तरह प्रस्तुत किया है कि यदि आपने इसे स्वयं प्रस्तुत किया होता, तो शायद आप इससे बेहतर नहीं कर पाते। अब, अल्लाह, दाता, की कृपा से उत्तर सुनें, उसकी महिमा महान है।

पहला: सृजन और प्रथा (कन्वेंशन) के बीच का अंतर आपके दिमाग से कहाँ निकल गया? सोने का मूल्य और उसका चांदी के वजन से कई गुना अधिक कीमती होना एक प्राकृतिक (सृजित) मामला है जिसमें किसी की धारणा या समझौते की कोई भूमिका नहीं है। इसलिए, एक दीनार को एक दिरहम में बदलने में, मूल्य की श्रेष्ठता हर दिमाग में आएगी। यह (मुद्रा) नोट के विपरीत है, क्योंकि इसका मूल्य मान लीजिए दस निर्धारित करना केवल एक मानवीय प्रथा है; अन्यथा, कागज स्वयं एक रुपये का नहीं है, और न ही रुपये के दसवें हिस्से का। इस प्रकार, यदि आप सार को देखते हैं, तो जो दस का मूल्य है उसे बेचना (दस रुपये के नोट को दस रुपये में) भी मूल्य में एक बड़ी श्रेष्ठता शामिल करता है (क्योंकि कागज का मूल्य बहुत कम है)। और यदि कोई प्रथा को देखता है, तो प्रथा दो अनुबंध करने वाले पक्षों (खरीदार और विक्रेता) पर शासक नहीं है, जैसा कि हमने आपको अल-हिदाया और अल-फथ (अल-कादिर) के ग्रंथों से सुनाया है। तो, जब लोगों ने इसका मूल्य दस माना है, जबकि इसके सार में यह उदाहरण के लिए केवल एक पैसे का है, तो खरीदार और विक्रेता को इसे बारह या उससे अधिक, या आठ या उससे भी कम मूल्य देने से कौन रोकता है? इस प्रकार, इस मुद्दे का हमारी चर्चा से कोई संबंध नहीं है।

दूसरा: उनकी चर्चा उस मामले से संबंधित है जब एक ही प्रकार (जीनस) का विनिमय उसी प्रकार के साथ किया जाता है, क्योंकि उसी मामले में अतिरिक्त मूल्य स्पष्ट हो जाता है। क्या आपने अल-हिदाया में यह कथन नहीं देखा, उसके कहने तक...

[पाद लेख: पृष्ठ 715 में से 452]

[سرخی: فتاویٰ رضویہ، جلد ہفدہم (۱۷)]

وجوب کی تصریح کر دی تو اس کا خلاف مکروہ تحریمی ہوا اور گناہ کے لئے کراہت تحریم کافی ہے ، میں کہوں گا کہ تیرے لئے میں نے اس اعتراض کی اس طور پر تقریر کر دی کہ اگر تو اپنی طرف سے کرتا تو شاید اس سے بہتر نہ کر سکتا اور اب وہاب جل جلالہ کی توفیق سے جواب سن اولاً : پیدائش اور اصطلاح کا فرق تیرے ذہن سے کدھر جاتا رہا کہ سونے کی مالیت اور اس کا چاندی سے کئی گنا ہونا ایک خلقی بات ہے جس میں کسی کے فرض و قرارداد کو دخل نہیں تو ایک اشرفی ایک روپے سے بدلنے میں مالیت کی زیادتی ہر ذہن میں آجائے گی ، بخلاف نوٹ کے کہ مثلاً اس کی قیمت دس روپے ہونا صرف لوگوں کی اصطلاح سے ہے ورنہ خود کاغذ تو نہ ایک روپیہ کا ہے نہ روپے کے دسویں حصہ کا ، تو اگر تو اصل کو دیکھے تو دس کا نوٹ دس کو بیچنے میں بھی مالیت میں زیادتی ہے اور اگر اصطلاح کو دیکھیں تو اصطلاح بائع و مشتری پر حاکم نہیں جیسا کہ ہم نے تجھ کو ہدایہ وفتح القدیر کا نص سنا دیا تو جب لوگوں نے اسے دس کا قرار دے لیا اور وہ اپنی اصل میں مثلاً ایک ہی پیسے کا ہے تو بائع و مشتری کو اس سے کون منع کرتا ہے وہ اسے بارہ یا زیادہ یا آٹھ یا اس سے بھی کم کا ٹھہرالیں تو اس مسئلہ کو ہماری مبحث سے کوئی علاقہ نہیں ، ثانیاً: ان کا کلام اس صورت میں ہے جب جنس کے بدلے جنس ہو کہ اسی میں زیادتی ظاہر ہوتی ہے تو کیا تو نے ہدایہ کا یہ قول نہ دیکھا

[صفحہ 452 از 715]

Fatawa Rizvia (Volume 17)

[Arabic Text]: Two people traded silver for silver or gold for gold, and one of them was less [in quantity][1]. It was not said that they traded silver for gold and one side's value was less according to the prevailing market price. When gold is compared with an equal amount of gold, the excess becomes apparent, and then the intellect distinguishes whether the addition reaches the amount of this excess or not. This is contrary to trading banknotes for dirhams, for they are two different species, so where would the excess appear? And when would the branch correspond to the root? It is said in Al-Fath: Riba (interest) is the excess deserved by one of the contracting parties in an exchange transaction that is devoid of any stipulated counter-value in the contract. And you have known that being devoid of counter-value in an exchange is only realized when compared within the same species. Our master, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), said: "When the two types differ, then sell as you wish"[3]. This is a general declaration from him (peace and blessings of Allah be upon him), and he is the Lawgiver, and to him is the ultimate return and the sanctuary.

[Urdu Text]: When silver is sold for silver or gold for gold and there is a deficiency on one side, and it was not said that gold was sold for silver and the value is less on one side according to the known market rate, then when the gold is compared to equal gold, the excess will become apparent. At that time, the intellect will distinguish whether that thing which was added to the lesser amount reaches the value of this excess or not. This is unlike selling notes for rupees, as they are two different species, so where would the excess be manifest? And how would this branch correspond to that principle? In Fath al-Qadir, it is stated: Riba is that excess which one of the contracting parties in an exchange contract is made entitled to, and for which no compensation is stipulated in that contract. And it has become known to you that being void of compensation will only be realized when a thing is compared with its own genus (end of quote). And indeed, our Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "When two things are of different types, sell them however you wish." So, this is permission from the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), and His Highness is the Lawgiver, and to His Highness is the return and to His Highness is the refuge.

Footnotes: 1. Al-Hidaya, Book of Exchange, Yusufi Press, Lucknow, 3/109. 2. Fath al-Qadir, Book of Sales, Chapter on Interest, Nooriya Rizvia Library, Sukkur, 6/151. 3.

Nasb al-Raya for the Hadiths of Al-Hidaya, Book of Sales, Al-Maktaba al-Islamiya, Riyadh, 4/4.

Page 453 of 715

फ़तावा रिज़विया (जिल्द 17)

[अरबी पाठ]: दो लोगों ने चाँदी के बदले चाँदी या सोने के बदले सोना बेचा और उनमें से एक कम था[1]। यह नहीं कहा गया कि उन्होंने चाँदी के बदले सोना बेचा और प्रचलित बाज़ार मूल्य के अनुसार एक पक्ष का मूल्य कम था। जब सोने की तुलना समान मात्रा में सोने से की जाती है, तो अतिरिक्त (ज़्यादती) स्पष्ट हो जाती है, और तब बुद्धि यह भेद करती है कि क्या अतिरिक्त वस्तु इस ज़्यादती की मात्रा तक पहुँचती है या नहीं। यह दिरहम के बदले बैंकनोटों के व्यापार के विपरीत है, क्योंकि वे दो अलग-अलग प्रजातियाँ हैं, तो ज़्यादती कहाँ दिखाई देगी? और शाखा मूल के अनुरूप कब होगी? 'अल-फ़तह' में कहा गया है: रिबा (ब्याज) वह अधिकता है जिसका विनिमय अनुबंध में अनुबंध करने वाले पक्षों में से एक हकदार होता है, जो अनुबंध में निर्धारित किसी भी प्रतिफल से रहित हो। और आप जान गए हैं कि विनिमय में प्रतिफल से रहित होना केवल तभी सिद्ध होता है जब उसी प्रजाति के भीतर तुलना की जाती है। हमारे स्वामी, अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "जब दो प्रकार भिन्न हों, तो जैसा चाहो बेचो"[3]। यह उनकी ओर से (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) एक सामान्य घोषणा है, और वे ही शरीयत निर्माता हैं, और उन्हीं की ओर लौटना है और उन्हीं की शरण है।

[उर्दू पाठ]: जब चाँदी को चाँदी से या सोने को सोने से बेचा गया और एक तरफ कमी है, और ऐसा नहीं कहा गया कि सोने को चाँदी से बेचा गया और प्रचलित दर के अनुसार एक तरफ मालियत कम है, तो सोने को अपनी बराबर के सोने के बराबर जब किया जाएगा तो ज़्यादती ज़ाहिर हो जाएगी। और उस समय अक्ल यह तमीज़ करेगी कि वह चीज़ जो कम के साथ मिलाई गई है, वह इस ज़्यादती की कद्र (मूल्य) को पहुँचती है या नहीं। इसके विपरीत कि नोटों को रुपयों के बदले बेचें, क्योंकि वे दो अलग-अलग जिन्स (प्रकार) हैं, तो ज़्यादती कहाँ से ज़ाहिर होगी? और यह फ़ुरअ (शाखा) इस अस्ल (मूल) के कैसे मुताबिक़ आएगी? फ़तह अल-क़दीर में फ़रमाया: रिबा वह ज़्यादती है कि अक़्द-ए-मुआविज़ा (विनिमय अनुबंध) में अक़िदैन (अनुबंध करने वालों) में से किसी को उसका मुस्तहिक़ (हकदार) क़रार दिया जाए और इस ज़्यादती के मुक़ाबले कोई इवज़ (प्रतिफल) उस अक़्द में शर्त न किया गया हो। और तुझे मालूम हो गया कि इवज़ से खाली होना उसी वक्त मुतहक़्क़िक़ (सिद्ध) होगा जबकि शै (वस्तु) का उसके जिन्स से मुक़ाबला किया जाए (इन्तिहा)। और बेशक हमारे रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: जब दो चीज़ें मुख़्तलिफ़ क़िस्म की हों तो जैसे चाहो बेचो।

तो यह नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की तरफ से इजाज़त है और हुज़ूर ही साहिब-ए-शरअ हैं और हुज़ूर ही की तरफ रुजू और हुज़ूर ही के यहाँ पनाह, तो

पाद टिप्पणियाँ: 1. अल-हिदाया, किताब अल-सर्फ़, मतबा यूसुफ़ी, लखनऊ, 3/109। 2. फ़तह अल-क़दीर, किताब अल-बुयू, बाब अर-रिबा, मकतबा नूरिया रिज़विया, सक्खर, 6/151। 3. नसब अल-राया लि-अहादीस अल-हिदाया, किताब अल-बुयू, अल-मकतबा अल-इस्लामिया, रियाद, 4/4।

पृष्ठ 453/715

تبایعا فضۃ بفضۃ او ذھبا بذھب واحدھما اقل[1] ولم یقل تبایعا فضۃ بذھب واحدھما اقل مالیۃ بالسعر المعھود فاذا قوبل الذھب بالذھب المساوی لہ ظھر الفضل وحینئذ یمیز العقل ان المضاف ھل یبلغ مقدار ھذا الفضل اولا بخلاف النوط بالدراھم فانھما جنسان مختلفان فأني یظھر الفضل، ومتی یطابق الفرع الاصل قال في الفتح الربا ھو الفضل المستحق لاحد المتعاقدین فی المعاوضۃ الخالی عن عوض شرط في العقد ، وعلمت ان الخلو في المعاوضۃ لا یتحقق الاعند المقابلۃ بالجنس اھ [2]. وقد قال سیدنا رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم اذا اختلف النوعان فبیعوا کیف شئتم[3]، فھذا اطلاق منہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم وھو الشارع والیہ المرجع والیہ المفزع

جب چاندی چاندی سے یا سونا سونے سے بیچا اور ایک طرف کمی ہے ، اور یوں نہ فرمایا کہ سونے چاندی سے بیچا اور نرخ معروف کے اعتبار سے ایک طرف مالیت کم ہے تو سونا اپنی برابر کے سونے کے برابر جب کیا جائے گا زیادتی ظاہر ہو جائیگی اور اس وقت عقل یہ تمیز کرے گی کہ وہ چیز جو کم کے ساتھ ملائی گئی ہے اس زیادت کے قدر کو پہنچتی ہے یا نہیں۔ بخلاف اس کے کہ نوٹ روپوں کو بیچیں کہ وہ دو جنس مختلف ہیں تو زیادتی کدھر سے ظاہر ہوگی اور یہ فرع اس اصل کے کیونکر مطابق آئے گی ، فتح القدیر میں فرمایا : ربادہ زیادتی ہے کہ عقدِ معاوضہ میں عاقدین میں سے کسی کو اس کا مستحق قرار دیا جائے اور اس زیادتی کے مقابل کوئی عوض اس عقد میں شرط نہ کیا گیا ہو اور تجھے معلوم ہوگیا کہ عوض سے خالی ہونا اسی وقت متحقق ہوگا جبکہ شے کا اس کے جنس سے مقابلہ کیا جائے انتہی۔ اور بیشک ہمارے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا جب دو چیزیں مختلف قسم کی ہوں تو جیسے چاہو

بیچو۔ تو یہ نبی کریم صلی اللہ تعالیٰ کی طرف سے اجازت ہے اور حضور ہی صاحبِ شرع ہیں اور حضور ہی کی طرف رجوع اور حضور ہی کے یہاں پناہ ، تو

[1] الھدایہ کتاب الصرف مطبع یوسفی لکھنو ۳/ ۱۰۹ [2] فتح القدیر کتاب البیوع باب الربا مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶/ ۱۵۱ [3] نصب الرایۃ لأحادیث الھدایۃ کتاب البیوع المکتبۃ الاسلامیۃ لصاحبھا الریاض ۴/ ۴

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Arabic Column] So whoever prohibits what he [the Prophet] allowed after him, it shall be rejected back to him and not be heard. And thirdly: The dislike (karahah) in a case where the added item does not reach the value of the excess was only reported from Muhammad. As for the Greatest Imam (Al-Imam al-A'zam), the earliest valiant, and the master of the most noble school of thought, may Allah Almighty be pleased with him, he explicitly stated the absence of dislike in it. It is stated in al-Fath, after mentioning the issue: It was said to Muhammad, "How do you find it in your heart?" He said, "Like a mountain." And dislike was not reported from Abu Hanifa; rather, it was explicitly stated in al-Idah that there is no harm in it according to Abu Hanifa [End]. And similar to this will come from al-Bahr, citing al-Qunya from al-Baqali, that the absence of dislike is the school of thought of both Abu Hanifa and Abu Yusuf, may Allah Almighty be pleased with both. And in al-Hindiyya, just before the chapter on Suretyship (al-Kafala), citing al-Muhit of al-Sarakhsi from Muhammad, may Allah Almighty have mercy on him, he said: "If a dirham was sold for a dirham, and one of them has an excess in terms of weight, and the other has copper coins (fulus) with it, it is permissible, but I dislike it because people become accustomed to transacting like this and use it in what is not permissible." And Abu Hanifa, may Allah Almighty have mercy on him, said there is no harm in it because...

[Urdu Column] Whoever forbids a thing permitted by the Prophet, peace and blessings of Allah be upon him, his prohibition will be rejected back to him and will not be heard. Thirdly, in the state where the value of the thing added to the lesser amount does not reach the amount of excess, the ruling of dislike (karahat) is only narrated from Imam Muhammad. And Imam Azam, the foremost valiant, the master of the most noble school, may Allah Almighty be pleased with him, has explicitly stated that there is no dislike in it. In Fath al-Qadir, after mentioning this issue, it is stated that it was submitted to Imam Muhammad: "How do you find this in your heart?" He said, "Heavy like a mountain." And dislike is not narrated from Imam Azam; rather, it is explicitly stated in al-Idah that there is no harm in it according to Imam Azam. [End]. And in a similar case, it will soon come from al-Bahr via Qunya that Imam Baqali said: "The absence of dislike is the school of thought of both Imam Azam and Imam Abu Yusuf, may Allah Almighty be pleased with them both." And in Fatawa Alamgiri, slightly before the chapter on Suretyship (Kafalat), citing Muhit of Imam Sarakhsi, from Imam Muhammad, it is stated: "If one rupee was sold for one rupee, and one is more in weight, and the one with less weight has some coins with

it, then it is permissible, but I consider it disliked (makruh) so that people do not become accustomed to this kind of transaction and then start doing the same in impermissible places." And Imam Azam said there is no harm in it, and for this reason, he...

1. Fath al-Qadir, Kitab al-Sarf, Maktaba Nooriya Razawiyya Sukkur, 6/471

फतावा रज़विया (खंड १७)

[अरबी स्तंभ] अतः जो व्यक्ति नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के बाद उस चीज़ को मना करे जिसे उन्होंने वैध किया था, तो उसका मना करना उसी पर वापस कर दिया जाएगा और नहीं सुना जाएगा। तीसरा: वह नापसंदगी (कराहियत) जहाँ साथ मिलाई गई चीज़ का मूल्य वृद्धि की मात्रा तक न पहुँचे, केवल इमाम मुहम्मद से वर्णित है। जहाँ तक इमाम-ए-आज़म, सबसे महान वीर और सबसे श्रेष्ठ पंथ के स्वामी (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) का प्रश्न है, उन्होंने स्पष्ट रूप से इसमें नापसंदगी न होने का उल्लेख किया है। 'अल-फ़तह' में इस मसले के उल्लेख के बाद कहा गया है: इमाम मुहम्मद से पूछा गया, "आप इसे अपने दिल में कैसा पाते हैं?" उन्होंने कहा, "पहाड़ की तरह भारी।" और इमाम अबू हनीफ़ा से नापसंदगी वर्णित नहीं है; बल्कि 'अल-ईदाह' में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि अबू हनीफ़ा के नज़दीक इसमें कोई हर्ज नहीं है [समाप्त]। और इसी तरह का मामला जल्द ही 'अल-बह्र' से 'अल-कुन्या' के हवाले से 'अल-बकाली' से आएगा कि नापसंदगी का न होना इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम अबू यूसुफ़ (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा) दोनों का पंथ है। और 'अल-हिंदिया' में 'कफ़ालत' (ज़मानत) के अध्याय से ठीक पहले, इमाम सरख़सी की 'मुहीत' के हवाले से इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाहि अलैहि) से वर्णित है: "यदि एक दिरहम को दूसरे दिरहम के बदले बेचा गया और उनमें से एक वज़न में अधिक है, और दूसरे के साथ कुछ ताँबे के सिक्के(फ़ुलूस) हैं, तो यह जायज़ है, लेकिन मैं इसे नापसंद करता हूँ क्योंकि लोग इस तरह के लेनदेन के आदी हो जाते हैं और इसे उन चीज़ों में इस्तेमाल करते हैं जो जायज़ नहीं हैं।" और अबू हनीफ़ा (रहमतुल्लाहि अलैहि) ने फरमाया कि इसमें कोई हर्ज नहीं है क्योंकि...

[उर्दू स्तंभ] जो व्यक्ति नबी सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की जायज़ की हुई चीज़ को मना करे, तो उसका मना करना उसी पर रद्द कर दिया जाएगा और मसमूअ (सुना) न होगा। तीसरा, जिस हालत में कम के साथ मिलाई हुई चीज़ की कीमत मिक़दार-ए-ज़्यादत (वृद्धि की मात्रा) को न पहुँचे, हुक्म-ए-कराहत (नापसंदगी का हुक्म) सिर्फ इमाम मुहम्मद से मरवी (वर्णित) है। और इमाम-ए-आज़म, हम्माम-ए-अक़दम, साहिब-ए-मज़हब-ए-अकरम रज़ियल्लाहु तआला अन्हु ने तसरीह (स्पष्ट व्याख्या) फरमाई कि इसमें कुछ कराहत नहीं। फ़तह अल-क़दीर में इस मसले का ज़िक्र करके फरमाया, इमाम मुहम्मद से अर्ज़ की गई कि "इसको आप अपने नज़दीक कैसा पाते हैं?" फरमाया, "पहाड़ की तरह गिरां (भारी)।" और इमाम-ए-आज़म से कराहत मरवी नहीं बल्कि 'ईदाह' में तसरीह फरमाई कि इसमें इमाम-ए-आज़म के नज़दीक कुछ हर्ज नहीं। [इन्तेहा]। और इस सूरत के मिस्ल

(समान) में अनक़रीब 'बहर' से बहवाला 'कुनिया' आता है कि इमाम बक़ाली ने फरमाया कि इसमें कराहत न होना इमाम-ए-आज़म और इमाम अबू यूसुफ़ रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा दोनों का मज़हब है। और फ़तावा आलमगीरी में 'कफ़ालत' से कुछ पहले बहवाला 'मुहीत' इमाम सरख़सी, इमाम मुहम्मद से है कि "अगर एक रुपया एक रुपये को बेचा और एक वज़न में ज़्यादा है और कम वज़न वाले के साथ कुछ पैसे हैं तो जायज़ है, मगर मैं इसे मकरूह (नापसंद) समझता हूँ कि लोग इस किस्म के मामले के आदी हो जाएँगे फिर नाजायज़ जगह भी यह कार्रवाई करने लगेंगे।" और इमाम-ए-आज़म ने फरमाया इसमें कुछ हर्ज नहीं और इस वास्ते कि इसे यूँ...

1. फ़तह अल-क़दीर, किताब अल-सर्फ़, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, ६/४७१

पृष्ठ ४५४ / ७१५

[عربی کالم] فمن حجره بعده ما سوغه فيرد عليه ولا يسمع، واما ثالثا: فان الكراهة فيما اذا لم يبلغ المضموم قيمة الفضل انما اثرت عن محمد اما الامام الاعظم والهمام الاقدم وصاحب المذهب الاكرم رضی اللہ تعالیٰ عنہ فد نص على عدم الكراهة فيه قال في الفتح بعد ذكر المسألة قيل لمحمد كيف تجده في قلبك قال مثل الجبل ولم ترو الكراهة عن ابي حنيفة بل صرح في الايضاح انه لا بأس به عند ابي حنيفة^1 اهـ و سيأتی فی مثله عن البحر عن القنية عن البقالي ان عدم الكراهة هو مذهب ابي حنيفة وابی يوسف معا رضی اللہ تعالی عنهما وفی الهندية قبيل الكفالة عن محيط السرخسی عن محمد رحمه اللہ تعالی انه قال لو باع الدرهم بالدرهم وفی احدهما فضل من حيث الوزن وفی الآخر فلوس جاز ولكن اكرهه لان الناس يعتادون التعامل بمثل هذا ويستعملونه فيما لا يجوز، وقال ابو حنيفة رحمه اللہ تعالی لا بأس به لانه

[اردو کالم] نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی جائز کی ہوئی چیز کو جو منع کرے تو اس کا منع کرنا اسی پر رد کر دیا جائے گا اور مسموع نہ ہوگا، ثالثاً جس حالت میں کم کے ساتھ ملائی ہوئی چیز کی قیمت مقدار زیادت کو نہ پہنچے حکم کراہت صرف امام محمد سے مروی ہے اور امام اعظم ہمام اقدم صاحب مذہب اکرم رضی اللہ تعالیٰ عنہ نے تصریح فرمائی کہ اس میں کچھ کراہت نہیں، فتح القدیر میں اس مسئلہ کو ذکر کر کے فرمایا امام محمد سے عرض کی گئی کہ اس کو آپ اپنے نزدیک کیسا پاتے ہیں؟ فرمایا پہاڑ کی طرح گراں، اور امام اعظم سے کراہت مروی نہیں بلکہ ایضاح میں تصریح فرمائی کہ اس میں امام اعظم کے نزدیک کچھ حرج نہیں انتہی۔ اور اس صورت کے مثل میں عنقریب بحر سے بحوالہ قنیہ آتا ہے کہ امام بقالی نے فرمایا کہ اس میں کراہت نہ ہونا امام اعظم اور امام ابو یوسف رضی اللہ تعالیٰ عنہما دونوں کا مذہب ہے اور فتاویٰ عالمگیری میں

کفالت سے کچھ پہلے بحوالہ محیط امام سرخی امام محمد سے ہے کہ اگر ایک روپیہ ایک روپیہ کو بیچا اور ایک وزن میں زیادہ ہے اور کم وزن والے کے ساتھ کچھ پیسے ہیں تو جائز ہے مگر میں اسے مکروہ سمجھتا ہوں کہ لوگ اس قسم کے معاملے کے عادی ہو جائیں گے پھر ناجائز جگہ بھی یہ کارروائی کرنے لگیں گے اور امام اعظم نے فرمایا اسمیں کچھ حرج نہیں اور اس واسطے کہ اسے یوں

1 فتح القدیر کتاب الصرف مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶/ ۴۷۱

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Top Section] It is possible to validate it by making the excess correspond to the Fuloos (copper coins). In short, the narration from the Imam is widespread and well-known, and it is known that practice and legal ruling (fatwa) are absolutely based on the Imam's opinion, except in cases of necessity, such as when the common practice of Muslims has shifted against it, or something similar. We have explained this in detail in the Book of Marriage in Al-Ataya al-Nabawiyya, such that no further explanation is needed. Fourthly—and this is the distinguished hallmark—the truth is that this dislike (karahat) is only a tanzihi (light) dislike, regarding...

[Middle Section] I say: Muhammad—and what do you know who Muhammad is? Muhammad is a leader, appointed as a leader, the writer and summarizer of the upright school of law. He states in Al-Jami' al-Kabir (which is among the books of Zahir al-Riwayah): "When these dirhams are of different types—some containing two-thirds silver, some two-thirds copper/brass, and some half silver—there is no harm in selling one type for another with disparity (different amounts), provided it is hand-to-hand (immediate exchange). This is because we would consider the silver of one being sold for the copper/brass of the other, and vice-versa, as if someone sells copper/brass and silver for copper/brass and silver. However, selling on credit is not permissible because weight is a common factor to both, and both serve as currency (thaman), so credit is prohibited. As for [selling] a type of rupee among them... (continued on the next page)"

[Footnote] [1] Fatawa Hindiyya, Book of Sales, Chapter Six, Nurani Kutub Khana Peshawar, 3/251.

फतवा रज़विया (खंड 17)

[शीर्ष अनुभाग] इसे सही ठहराना संभव है कि वह अधिकता 'फ़ुलूस' (तांबे के सिक्कों) के बदले हो जाए। संक्षेप में, इमाम से यह रिवायत बहुत प्रसिद्ध और ज्ञात है, और यह विदित है कि अमल और फ़तवा हमेशा इमाम के मत पर ही होता है, सिवाय किसी ज़रूरत के, जैसे कि मुसलमानों का व्यवहार उसके खिलाफ हो गया हो, या इसी तरह की कोई बात। हमने 'अल-अताया अल-नबविया' की निकाह की किताब में इसका इतना विस्तृत वर्णन किया है कि उससे अधिक किसी वर्णन की आवश्यकता नहीं। चौथा—और यही सबसे चमकती बात है—सच्चाई यह है कि यह कराहत (नापसंदगी) केवल कराहत-ए-तंजीही (हल्की नापसंदगी) है, कराहत के..

[मध्य अनुभाग] मैं कहता हूँ: मुहम्मद—और आपने क्या जाना कि मुहम्मद कौन हैं? मुहम्मद सरदार हैं, सरदार बनाए गए हैं, सीधे मज़हब (विचारधारा) की तहरीर और सारांश लिखने वाले। वे 'जामे कबीर' में (जो 'ज़ाहिर-उर-रिवायत' की किताबों में से है) फरमाते हैं कि जब खोटे रुपये अलग-अलग प्रकार के हों—किसी में दो-तिहाई चाँदी हो, किसी में दो-तिहाई पीतल, किसी में आधी चाँदी—तो उनमें एक प्रकार के रुपये को दूसरे प्रकार के रुपये से कम-ज़्यादा मात्रा के साथ बेचने में कोई हर्ज नहीं है, जब तक कि वह हाथों-हाथ (तुरंत) हो। ऐसा इसलिए क्योंकि हम उसकी चाँदी को उसके पीतल के बदले बेचना मान लेंगे और उसकी चाँदी को उसके पीतल के बदले, जैसे कोई व्यक्ति पीतल और चाँदी को पीतल और चाँदी के बदले बेचे। हाँ, उधार बेचना जायज़ नहीं होगा क्योंकि दोनों में वज़न शामिल है और दोनों 'समन' (मुद्रा) हैं, इसलिए उधार हराम है। रहा उनमें किसी प्रकार का रुपया... (अगले पृष्ठ पर जारी)"

[पाद लेख] [1] फतवा हिंदिया, किताबुल बुयूअ (बिक्री की पुस्तक), छठा अध्याय, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/251.

पृष्ठ 715 का 455

[اوپری حصہ] امکن تصحیحہ بان یجعل الفضل بازاء الفلوس[1] صحیح ٹھہرانا ممکن ہے کہ وہ زیادتی پیسوں کے مقابل ہو جائے، وبالجملۃ النقل عن الامام فاش مستفیض و معلوم بالجملہ امام سے یہ روایت مشہور و معروف ہے اور معلوم ہے ان العمل والفتوی علی قول الامام علی الاطلاق الا کہ عمل وفتویٰ ہمیشہ قول امام پر ہے مگر کسی ضرورت لضرورۃ کتعامل بخلافہ ونحوہ وقد فصلناہ فی کتاب سے، جیسے کہ عمل درآمد مسلمانوں کا اس کے خلاف پر ہو گیا النکاح من العطایا النبویۃ بما لا مزید علیہ، واما ہو، اور ایسی ہی بات ہم نے العطایا النبویۃ کی کتاب النکاح میں رابعاً وھو الطراز المعلم فلان الحق ان ھذہ الکراھۃ ایسی مفصل بیان کی ہے جس سے زیادہ کوئی بیان نہیں۔ رابعاً عہ لیست الاکراھۃ تنزیہ اور وہی سب سے زیادہ چمکتی بات ہے حق یہ کہ کراہت صرف کراہت تنزیہی ہے کراہت کے

[درمیانی حصہ] عہ: اقول: محمد وما ادرک ما محمد، محمد سید اقول: (میں کہتا ہوں) محمد، اور تو نے کیا جانا کیا محمد، محمد سردار ہیں، مسود محرر المذھب المسدد قال فی الجامع الکبیر الذی سردار کئے گئے ، مذہب مستقیم کی تحریر و تلخیص فرمانے والے، وہ ھو من کتب ظاہر الروایۃ اذا کانت ھذہ الدراہم صنوفاً جامع کبیر میں (کہ کتب ظاہر الروایت میں سے ہے) فرماتے ہیں کہ مختلفۃ منھا ماثلثاھا فضۃ ومنھا ما ثلثاھا صفر و منھا جب کھوٹے روپے مختلف قسم کے ہوں کسی میں دو تہائی چاندی نصفھا فضۃ فلا باس ببیع احدھا بالاخر متفاضلاً ید ہو، کسی میں دو تہائی پیتل، کسی میں آدھوں آدھ چاندی، تو ان بید بصرف فضۃ ھذا الی صفر ذلک وبالعکس کما لو باع میں ایک قسم کا روپیہ دوسری قسم کے روپے سے کمی بیشی کے صفراً و فضۃ بصفر و فضۃ ولا یجوز نسیئۃ لانہ یجمعھما ساتھ بیچنے میں کچھ حرج نہیں جبکہ دست بدست ہو اس لئے کہ الوزن وھما ثمنان

فیحرم النسأ واما اذا باع جنساً منها اس کی چاندی اس کے پیتل سے بیچنا قرار دیں گے اور اسکی چاندی بذلک الجنس متفاضلاً اس کے پیتل سے جیسے کوئی شخص پیتل اور چاندی ، پیتل اور چاندی کے بدلے بیچے، ہاں ادھار بیچنا روانہ ہوگا کہ دونوں کو وزن شامل ہے اور دونوں ثمن ہیں تو ادھار حرام ہے۔ رہا ان میں کسی قسم کا روپیہ (باقی بر صفحہ آئندہ)

[حاشیہ] [1] فتاویٰ ہندیہ کتاب البیوع الباب السادس نورانی کتب خانہ پشاور ۳ / ۲۵۱

Fatawa Razawiya (Volume 17)

Quote: "Do not be deceived by general terms, for they often use them loosely." | "Do not be misled by general statements, for jurists often use them in a broad sense."

(Remaining footnote from previous page) Selling such types of coins with increase or decrease (unequal exchange) - if the silver content in that coin is more, then it is not permissible. This is because the lesser part is disregarded, so it is as if it is pure silver; therefore, it would only be permissible to sell it for an equal amount. If copper is more, or if both are equal, then increase or decrease is permissible. Similarly, the silver of each will be countered against the copper of the other, and it must be hand-to-hand (immediate exchange) because there is silver on both sides, not just copper. That is, specifying the coins by sight would be a condition. This was cited in the book 'Al-Buyu' (Sales), the sixth chapter of 'Fatawa Dhakhira', and it was said that based on this, the scholars stated that in our time, the debased coins called 'Adli' which are in circulation - it is permissible to sell one such rupee for two rupees hand-to-hand. End. I say (the author): when inequality is permissible, then just as selling one rupee for two is allowed, so is selling for a hundred or thousands. Now suppose that a rupee which is two-thirds copper is three-quarters of the weight of a rupee which is half silver. Then two-thirds of the former and half of the latter will be equal in weight. One rupee of the former can be sold for ten thousand rupees of the latter hand-to-hand, and it is necessary that... (Continued on the next page)

---

[1] Al-Jami' al-Kabir [2] Fatawa Dhakhira, Book of Sales, Chapter Six

फ़तावा रज़विया (खंड १७)

उद्धरण: "सामान्य शब्दों से धोखा न खाएं क्योंकि वे अक्सर उन्हें शिथिल रूप से उपयोग करते हैं।" | "सामान्य बयानों से गुमराह न हों, क्योंकि फकीह (न्यायविद) अक्सर उनका व्यापक अर्थ में उपयोग करते हैं।"

(पिछले पृष्ठ का शेष पादलेख) इस प्रकार के रुपयों को कमी या बेशी (असमान विनिमय) के साथ बेचना - यदि उस रुपये में चांदी का हिस्सा अधिक है, तो यह जायज़ नहीं है। ऐसा इसलिए क्योंकि कम मात्रा वाले हिस्से का कोई महत्व नहीं रहता, इसलिए यह मानो शुद्ध चांदी है; अतः इसे केवल समान मात्रा में बेचना ही जायज़ होगा। यदि पीतल अधिक है, या दोनों बराबर हैं, तो कमी-बेशी जायज़ है। इसी तरह, प्रत्येक की चांदी दूसरे के पीतल के सामने होगी, और हाथ-दर-हाथ (तत्काल विनिमय) होना अनिवार्य होगा क्योंकि दोनों पक्षों में चांदी है, केवल पीतल नहीं। यानी देखकर सिक्कों का निर्धारण करना शर्त होगी। इसे 'फ़तावा जखीरा' की किताब 'अल-बुयू' (बिक्री) के छठे अध्याय में उद्धृत किया गया है और कहा गया है कि इसी आधार पर विद्वानों ने कहा है कि हमारे समय में 'अदली' नाम के जो खोटे रुपये चलते हैं, उनमें से एक रुपया दो रुपयों के बदले हाथ-दर-हाथ बेचना जायज़ है। इति। मैं (लेखक) कहता हूँ: जब असमानता जायज़ हो गई, तो जैसे एक रुपया दो रुपयों को बेचना, वैसे ही सौ, वैसे ही हजारों को। अब मान लीजिये कि वह रुपया जिसमें दो-तिहाई पीतल है, वजन में उस रुपये का तीन-चौथाई है जिसमें आधी चांदी है। तो पहले का दो-तिहाई और दूसरे का आधा वजन में बराबर होंगे। उनमें से एक रुपया उनके दस हज़ार रुपयों के बदले हाथ-दर-हाथ बेचा गया और यह ज़रूरी है कि... (अगले पृष्ठ पर जारी)

---

1. अल-जामी अल-कबीर
2. फ़तावा जखीरा, किताब अल-बुयू, अध्याय छह

पृष्ठ ४५६ / ७१५

ولا تغتر بالإطلاق فإنهم ربما يطلقون | مطلق چھوڑنے سے دھوکا نہ کھانا کہ فقہاء بارہا اسے

(بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ) اسی قسم کے روپوں سے کمی بیشی کو بیچنا اس میں اگر اس روپے میں چاندی کا حصہ زیادہ ہے تو جائز نہیں کہ مغلوب اعتبار سے ساقط ہے تو گویا وہ نری چاندی ہے تو برابر ہی کو بیچنی جائز ہوگی اور اگر پیتل زیادہ یا دونوں برابر ہیں تو کمی بیشی جائز ہوگی، اسی طرح کہ ہر ایک کی چاندی دوسرے کے پیتل کے مقابلہ کریں گے اور دست بدست ہونا ضروری ہوگا کہ دونوں طرف چاندی بھی ہے فقط پیتل نہیں کہ باعینا نہ ہونا یعنی تعین شرط ہوگی اسے فتاوی ذخیرہ کی کتاب البیوع فصل ششم میں نقل کیا اور کہا اسی بنا پر مشائخ نے فرمایا کہ ہمارے زمانے میں جو کھوٹے روپے عدلی نام سے چلتے ہیں ان میں ایک روپیہ دو روپوں سے دست بدست بیچنا جائز ہے انتہی۔ اقول: (میں کہتا ہوں) اور جب کمی بیشی روا ہوئی تو جیسے ایک روپیہ دو روپے کو بیچنا ویسے ہی سو، ویسے ہی ہزاروں کو۔ اب فرض کیجئے کہ وہ روپیہ جس میں دو تہائی پیتل ہے تول میں اس روپے کا پونا ہے جس میں آدھی چاندی ہے تو اس کی دو تہائی اور اسکا آدھا تول میں برابر ہونگے اور ان میں کا ایک روپیہ ان میں کے دس ہزار روپوں کو دست بدست بیچا اور یہ ضرور ہے کہ (باقی بر صفحہ آیندہ)

---

1 الجامع الکبیر 2 فتاوی ذخیرۃ کتاب البیوع فصل ششم

Volume 17 Fatawa Rizwia

They leave it absolute and mean a meaning that encompasses both Tanzīhī (mildly disliked) and Taḥrīmī (prohibitively disliked) macrooh (disliked acts). Often, they use the term in an absolute sense while intending only Tanzīhī macrooh. This is not hidden from anyone who has spent time with the exquisite 'brides' (subtleties) of their words. Scholars have explicitly stated this meaning in several places. In Rad al-Muhtar, just before the chapter on martyrs, it is mentioned what others (i.e., other than Imam al-Tahtawi) stated regarding the macrooh nature of stepping on or sitting on graves, etc. It is intended to be Tanzīhī macrooh in cases other than relieving oneself. And at most...

(Continued from the previous page's footnote) If one compares one genus against a different genus, for example, ten thousand silver pieces for one brass piece, what more increase in value could one want? And he is the scribe of the madhhab (school of thought) who clearly states that there is no harm in it. Therefore, it becomes necessary that if there is any dislike, it should only be Tanzīhī macrooh. After the explicit statement of the author of the madhhab himself, what room is there for any discussion? So, stick to this, and success is from Allah alone. 12 (Author).

Annotation: This is the ruling towards which Allama Shami was inclined here. However, the truth is that stepping on or sitting on a grave is macrooh taḥrīmī (prohibitively disliked), as I have researched in my treatise (continued on next page).

[Arabic side text]: And they mean by it what is more general than Tanzīh and Taḥrīm. Sometimes they use it absolutely and only mean Tanzīhī macrooh, as is not hidden from someone who has lived with the fine brides of their words. They have explicitly stated it in other places. He said in Rad al-Muhtar, just before the chapter on martyrs: What others mentioned (i.e., other than Imam al-Tahtawi) regarding the macrooh nature of treading and sitting, i.e., on graves etc., Tanzīhī macrooh is intended by it, in cases other than relieving oneself, and to the utmost...

12 (Author).

Annotation: This is what he inclined to here, but the truth is it is macrooh taḥrīmī, as established in my treatise 'Al-Amr bi-Ihtiram al-Maqabir' (The Command to Respect Graves), and he admitted it...

जिल्द 17 फ़तावा रज़विया

वे इसे मुतलक़ (निरपेक्ष) छोड़ देते हैं और इससे उनका तात्पर्य वह अर्थ होता है जो मकरूह तंज़ीही (हल्की नापसंदगी) और तहरीमी (सख्त नापसंदगी) दोनों के लिए सामान्य है। अक्सर वे मुतलक़ बोलते हैं लेकिन केवल तंज़ीही नापसंदगी ही मुराद लेते हैं। जैसा कि उस व्यक्ति पर यह बात छिपी नहीं है जिसने उनके शब्दों की नफीस 'दुल्हनों' (सूक्ष्मताओं) के साथ समय बिताया है। विद्वानों ने कई स्थानों पर इस अर्थ को स्पष्ट किया है। रद अल-मुह्तार में 'बाब शहीद' से ठीक पहले, दूसरों ने (अर्थात इमाम अल-तह्तावी के अलावा) कब्रों पर पैर रखने या बैठने की जो नापसंदगी बताई है, उससे मुराद शौच करने के अलावा अन्य स्थितियों में तंज़ीही नापसंदगी है और अधिक से अधिक...

(पिछले पृष्ठ के फुटनोट का शेष भाग) यदि आप एक श्रेणी की तुलना दूसरी भिन्न श्रेणी से करते हैं, जैसे दस हज़ार चाँदी के बदले एक पीतल, तो आप मूल्य में इससे अधिक क्या वृद्धि चाहते हैं? और वे इस पंथ के लेखक हैं जो स्पष्ट कह रहे हैं कि इसमें कोई हर्ज नहीं है। इसलिए यह आवश्यक हो गया कि यदि इसमें कोई मकरूहियत है, तो वह केवल तंज़ीही मकरूहियत होनी चाहिए। पंथ के प्रणेता के स्वयं के स्पष्टीकरण के बाद किसी बहस की क्या गुंजाइश बचती है? इसलिए इसी पर अडिग रहें और सफलता केवल अल्लाह की ओर से है। 12 (लेखक)।

अनुवाद टिप्पणी: यह वह हुक्म है जिसकी ओर अल्लामा शामी यहाँ प्रवृत्त हुए हैं। जबकि सच यह है कि कब्र पर पैर रखना या बैठना 'मकरूह तहरीमी' (सख्त नापसंद) है, जैसा कि मैंने अपने शोध पत्र में सिद्ध किया है (अगले पृष्ठ पर जारी)।

[अरबी भाग]: और वे इससे तंज़ीह और तहरीम से भी अधिक व्यापक अर्थ लेते हैं, और कभी-कभी वे इसे मुतलक़ कहते हैं और केवल तंज़ीही नापसंदगी ही मुराद लेते हैं, जैसा कि उनके शब्दों की सूक्ष्मताओं से परिचित व्यक्ति से छिपा नहीं है। उन्होंने अन्य स्थानों पर भी इसे स्पष्ट किया है। रद अल-मुह्तार में शहीद के अध्याय से पहले कहा गया है: जो दूसरों ने (इमाम तह्तावी के अलावा) कब्रों पर चलने और बैठने की नापसंदगी के बारे में उल्लेख किया है, उससे मुराद शौच की स्थिति के अलावा तंज़ीही नापसंदगी है।

12 (लेखक)।

अनुवाद टिप्पणी: यहाँ उनका झुकाव इसी ओर है, लेकिन सत्य 'कराहते तहरीम' है, जैसा कि मैंने अपनी पुस्तक "अल-अम्र बि-एहतराम अल-मक़ाबिर" (कब्रों के सम्मान का आदेश) में प्रमाणित किया है और उन्होंने इसे स्वीकार किया है...

مطلق چھوڑتے ہیں اور اس سے مراد وہ معنی ہوتے ہیں جو کراہت تنزیہی اور تحریمی دونوں کو عام ہیں اور بارہا مطلق بولتے ہیں اور اس سے صرف کراہت تنزیہیہ مراد لیتے ہیں جیسا کہ اس پر پوشیدہ نہیں جس نے ان کے کلمات کی نفیس دلہنوں کے ساتھ زندگی بسر کی ہے، اور علماء نے اس معنی کی متعدد مواضع میں تصریح فرمائی ردالمحتار میں باب شہید جو قبروں پر پاؤں رکھنے اور بیٹھنے کی کراہت ذکر فرمائی ہے الخ قضائے حاجت کے سوا اور صورتوں میں اس سے کراہت تنزیہ مراد ہے اور زیادہ سے زیادہ

(بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ) جنس کو خلاف جنس کے مقابل ٹھہرائیں تو چاندی کے دس ہزار پیتل کے ایک کو بکے اس سے زیادہ مالیت میں اور کیا بیشی چاہتا ہے اور یہ محرر مذہب ہیں کہ صاف فرمارہے ہیں کہ اس میں کوئی حرج نہیں تو واجب ہوا کہ اس میں اگر کراہت ہو تو صرف کراہت تنزیہ ہو اور خود صاحب مذہب کی تصریح کے بعد کسی کو کلام کی کیا گنجائش ہے تواسی پر جم جاؤ اور اللہ ہی کی طرف سے توفیق ہے ۱۲ منہ۔

عہ: یہ وہ حکم ہے جس کی طرف علامہ شامی یہاں مائل ہوئے اور حق یہ ہے کہ قبر پر پاؤں رکھنا یا بیٹھنا مکروہ تحریمی ہے جیسا کہ میں نے اپنے رسالہ (باقی برصفحہ آیندہ)

ویریدون به ماهواعم من التنزیه والتحریم وربما یطلقون ولا یریدون به الاکراهة تنزیه کما لا یخفی من عاشر نفائس عرائس کلماتهم، وقد نصوا علیه في غیر موضع قال في رد المحتار قبیل باب الشهید ماذکره غیره (ای غیر الامام الطحطاوی) من کراهة الوطء والقعود ای علی القبور الخ یرادبه کراهة التنزیه عه في غیر قضاء الحاجة وغایة

١٢ منه.

عه: هذ اما مال اليه هنا فالحق كراهة التحريم كما حققه في رسالتي "الامر باحترام المقابر" وقد اعترف به

Fatawa Razawiya, Volume 17

[Right Column - Urdu Explanation] In this text, 'dislikeness' (karahah) is used in a meaning that includes both prohibition (tahrīm) and minor dislike (tanzīh). This usage is frequent in their discourse. From the same category is when jurists mention 'disliked acts of prayer' (makruhat-e-namaz). In fact, in the section on istinja (cleansing) in 'al-Durr al-Mukhtar', under the author's statement that it is disliked for a woman to hold a small child facing the Qiblah for urination etc., it is stated that 'dislikeness' is general to both prohibition and minor dislike. Imam Shami mentioned regarding the disliked acts of wudhu (ablution) that absolute 'dislikeness' is not always directed towards prohibition. And shortly before that, where the author mentioned 'these are the disliked acts of wudhu,' he said that 'makruh' is the opposite of 'beloved' (mahboob). It is sometimes used for haram, sometimes for makruh tahrīmī (prohibition-like dislike), and sometimes for makruh tanzīhī (minor dislike). Then he quoted from 'al-Bahr al-Raiq' that 'makruh' in this chapter is of two types: one is makruh tahrīmī and when...

[Left Column - Arabic Text] "...and there is the application of the term 'dislikeness' (karahah) to what includes both meanings. This is frequent in their discourse, and from it is their saying 'disliked acts of prayer' (makruhat al-solah) etc. In fact, it is said in 'al-Durr al-Mukhtar' in the section on cleansing, under the text's statement: 'it is disliked for a woman to hold a small child for urination towards the Qiblah etc.', this covers both the prohibited (tahrīmī) and the minor (tanzīhī) types. Shami said in 'disliked acts of wudhu': 'dislikeness' is not exclusively directed towards prohibition (tahrīm) in an absolute sense. And he said a little before it under his words 'and its disliked acts are the opposite of what is beloved': it may be applied to what is forbidden (haram), to prohibited-like dislike (makruh tahrīmī), and to minor dislike (makruh tanzīhī). Then he quoted from 'al-Bahr' that 'makruh' in this chapter is of two types: what is disliked..."

[Bottom Section - Footnote Urdu/Arabic] (Remaining footnote from the previous page) This researcher, meaning Imam Shami, in this book of his in the section on cleansing, since he said they (the scholars) explicitly stated that passing through a new path made in graveyards is haram. In "Al-Amr bi-ihtiram al-Maqabir (1298 AH)", this was investigated, and indeed, researcher Shami himself in the section on cleansing of his book acknowledged this, saying that scholars have clearly stated that walking on a new path created within cemeteries is haram.

[Citations] 1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Solah, Bab Solat al-Jana'iz, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 1/606 2. Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Fasl al-Istinja, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/57 3. Radd al-Muhtar, Kitab al-Taharah, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 1/90 4. Radd al-Muhtar, Kitab al-Taharah, Fasl fi al-Istinja, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 1/229

फतावा रज़विया, जिल्द 17

[दायां कॉलम - उर्दू विवरण] इस पाठ में, 'कराहह' (नापसंदगी) शब्द का प्रयोग ऐसे अर्थ में किया गया है जिसमें 'तहरीम' (निषेध) और 'तन्ज़ीह' (मामूली नापसंदगी) दोनों शामिल हैं। उनके शब्दों में यह बहुत आम है। इसी श्रेणी से है जब फ़ुक़हा (न्यायविद्) 'नमाज़ की मकरूहात' (नमाज़ में नापसंद कार्य) का उल्लेख करते हैं। वास्तव में, 'अल-दुर अल-मुख्तार' के'इस्तिंजा' (शौच के बाद सफाई) के अध्याय में, लेखक के इस कथन के नीचे कि एक महिला के लिए बच्चे को पेशाब कराने के लिए क़िबला की ओर बिठाना मकरूह है, यह कहा गया है कि यहाँ कराहह तहरीमी और तन्ज़ीही दोनों के लिए सामान्य है। इमाम शामी ने वज़ू की मकरूहात के बारे में उल्लेख किया है कि पूर्ण 'कराहह' हमेशा निषेध की ओर ही संकेत नहीं करती। और इससे कुछ पहले, जहाँ लेखक ने कहा कि 'ये वज़ू के मकरूह कार्य हैं', उन्होंने कहा कि 'मकरूह' उस चीज़ का विलोम है जो 'महबूब' (पसंदीदा) है। इसका उपयोग कभी 'हराम' के लिए, कभी 'मकरूह तहरीमी' (निषेध के करीब) के लिए और कभी 'मकरूह तन्ज़ीही' (हल्की नापसंदगी) के लिए किया जाता है। फिर 'बहर-उर-रैक' से उद्धृत किया गया कि इस अध्याय में 'मकरूह' दो प्रकार के हैं: एक मकरूह तहरीमी और जब...

[बायां कॉलम - अरबी पाठ] अरबी पाठ का अनुवाद भी इसी विषय पर चर्चा करता है कि 'कराहह' शब्द का व्यापक उपयोग कैसे किया जाता है और विद्वानों ने इसे विभिन्न संदर्भों में कैसे परिभाषित किया है।

[निचला हिस्सा - पादलेख] (पिछले पृष्ठ के पादलेख का शेष भाग) इस शोधकर्ता, यानी इमाम शामी ने अपनी पुस्तक के इस्तिंजा के अध्याय में कहा है कि विद्वानों ने स्पष्ट किया है कि कब्रिस्तानों में बने नए रास्तों से गुजरना हराम है। "अल-अम्र बि-इहतराम अल-मक़ाबिर (1298 हिजरी)" में इसकी जाँच की गई और वास्तव में, शोधकर्ता शामी ने स्वयं अपनी पुस्तक के इस्तिंजा अध्याय में इसे स्वीकार किया और कहा कि विद्वानों ने स्पष्ट रूप से फरमाया है कि कब्रों के बीच जो नया रास्ता निकाला गया हो, उस पर चलना हराम है।

[संदर्भ] रद्द अल-मुह्तार और दुर अल-मुख्तार जैसी प्रसिद्ध इस्लामी न्यायशास्त्र की पुस्तकों के संदर्भ नीचे दिए गए हैं।

पृष्ठ 458/715

اس متن میں یہ ہوا کہ کراہت ایک ایسے معنی پر بولی گئی جو تحریم و تنزیہ دونوں کو شامل ہے اور یہ ان کے کلام میں بکثرت ہے اسی باب سے ہے فقہاء کا مکروہات نماز فرمانا انتہی، بلکہ در مختار کی فصل استنجاء میں مصنف کے اس قول کے نیچے کہ عورت کو مکروہ ہے کہ بچے کو پیشاب کے لئے قبلہ کی طرف بٹھائے الخ یہ فرمایا کہ کراہت تحریم و تنزیہ یہ دونوں کو عام ہے انتہی، اور شامی نے مکروہات وضو میں فرمایا کراہت مطلقاً تحریم ہی کی طرف نہیں پھیری جاتی انتہی، اور اس سے کچھ پہلے جہاں مصنف نے کہا کہ وضو کے مکروہ یہ ہیں یہ فرمایا کہ مکروہ ضد ہے محبوب کی، اور وہ کبھی حرام پر بولا جاتا ہے اور کبھی مکروہ تحریمی پر اور کبھی مکروہ تنزیہی پر، پھر بحر الرائق سے نقل کیا کہ مکروہ اس باب میں دو قسم ہیں ایک مکروہ تحریمی اور جب

مافیہ اطلاق الکراھة علی ما یشمل المعنیین وھذا کثیر في کلامھم ومنه قولھم مکروھات الصلوٰة اھـ[1]، بل قال في الدر المختار في فصل الاستنجاء تحت قول المآتن یکرہ للمرأة امساك صغیر لبول نحو القبلة الخ ھذہ تعم التحریمیة والتنزیة ۲ اھـ وقال الشامی في مکروھات الوضوء لیست الکراھة مصروفة الی التحریم مطلقا ۳ اھـ، وقال قبلہ بقلیل تحت قولہ و مکروھہ ھو ضد المحبوب قد یطلق علی الحرام وعلی المکروہ تحریما وعلی المکروہ تنزیھا ثم نقل عن البحر ان المکروہ فی ہذا الباب نوعان ما کرہ

(بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ) ھذا المحقق اعني الشامي في کتابہ ھذا في فصل الاستنجاء اذ قال انھم نصوا علی ان المرور في سکة حادثة في المقابر حرام اھـ منہ ۱۲ منہ۔ "الامر باحترام المقابر ۱۲۹۸ھ" میں اس کی تحقیق کی اور بیشک محقق شامی خود اپنی کتاب کی فصل استنجاء میں اس کے معترف

ہوئے کہ فرمایا علماء نے تصریح فرمائی ہے کہ قبروں میں جو نیا راستہ نکلا ہو اس میں چلنا حرام ہے ۱۲ منہ۔

1 رد المحتار كتاب الصلوٰة باب صلوٰة الجنائز دار احياء التراث العربي بيروت ۱ / ۶۰۶ 2 درمختار شرح تنوير الابصار فصل الاستنجاء مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۵۷ 3 رد المحتار كتاب الطهارة دار احياء التراث العربي بيروت ۱ / ۹۰ 4 رد المحتار كتاب الطهارة فصل في الاستنجاء دار احياء التراث العربي بيروت ۱ / ۲۲۹

Volume 17 - Fatawa-e-Razvia

[Left Column - Arabic Text] Tahriman (prohibitively), and this is the meaning carried when they mention 'dislike' or 'disliked' absolutely. The second is 'tanziha' (mildly), and they often use it absolutely as well, as in Sharh al-Munyah. Thus, when they mention something as disliked, it is necessary to look into its evidence. If it is a presumptive prohibition, it is ruled as 'karahah al-tahrim' (prohibitive dislike), unless there is a diverting factor. If it is not a prohibition but rather indicates a non-binding abandonment, it is 'karahah tanzihiyya' - summary ends. I say: From the latter category is the statement of the standard texts like Al-Tanwir and others that 'the leadership (imamah) of a slave is disliked'. In Al-Durr, it is stated as 'tanzihi'. Ibn Abidin said it is because it is mentioned in Al-Asl that 'the leadership of others is more beloved to me' - from Al-Bahr via Al-Mujtaba and Al-Mi'raj. When you have understood this, it becomes obligatory to investigate which of the two types of dislike the evidence leans towards, as Al-Bahr pointed out in Al-Bahr. Thus, we see them arguing for the aforementioned dislike based on two reasons, neither of which indicates 'karahah al-tahrim' (prohibitive dislike); rather, they only...

[Right Column - Urdu Translation/Explanation] They keep 'dislike' absolute, so it is carried upon that [tahrim]; the second is 'makruh tanzihi', and they often leave it absolute as well, as in Sharh al-Munyah. Since this is the case, when the jurists call something disliked, it is necessary to look at its evidence. If that evidence is a presumptive prohibition, they will rule it as prohibitive dislike, unless another evidence diverts it. And if that evidence is not a prohibition but suggests a non-decisive abandonment, then it is 'karahat tanzihi' - summary ends. I say: The latter case applies to the statement of texts like Tanwir etc. that 'the leadership of a slave is disliked'. In Durr-e-Mukhtar, it is called 'tanzihi'. Shami said the reason for it being 'tanzihi' is that the Imam stated in Mabsut: 'I prefer the leadership of others besides them.' This is in Bahr-ur-Raiq from Mujtaba and Mi'raj. Once you have come to know this, it becomes mandatory to seek the evidence to see which of the two dislikes it leans towards, as the 'Ocean of Knowledge' indicated in Bahr-ur-Raiq. Now we have seen that scholars argue for this dislike based on two reasons, and neither of them provides the benefit of prohibitive dislike; their ultimate...

[Footnotes] 1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Taharah, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 1/89 2. Al-Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Kitab al-Salah, Bab al-Imamah, Matba' Mujtabai Delhi, 1/83 3. Al-Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Kitab al-

Salah, Bab al-Imamah, Matba' Mujtabai Delhi, 1/83 4. Radd al-Muhtar, Kitab al-Salah, Bab al-Imamah, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 1/376

जिल्द सत्रह (17) - फतावा-ए-रज़विया

[बायाँ कॉलम - अरबी पाठ] तहरीमन (निषिद्ध रूप से), और यही अर्थ लिया जाता है जब वे बिना किसी शर्त के'नापसंदगी' (कराहियत) या 'मक़रूह' का उपयोग करते हैं। दूसरा 'तन्ज़ीहा' (हल्की नापसंदगी) है, और वे अक्सर इसे भी बिना किसी शर्त के उपयोग करते हैं जैसा कि 'शरह अल-मुन्याह' में है। अत; जब वे किसी चीज़ को मक़रूह कहें, तो उसकी दलील (प्रमाण) को देखना आवश्यक है। यदि वह दलील कोई 'नही-ए-ज़न्नी' (अनुमानित मनाही) है, तो उसे 'कराहियत-ए-तहरीम' का हुक्म दिया जाएगा, जब तक कि कोई अन्य प्रमाण उसे बदल न दे। यदि वह मनाही नहीं है बल्कि केवल गैर-हठपूर्ण ढंग से छोड़ने का संकेत देती है, तो वह 'कराहियत तन्ज़ीहिया' है - सारांश समाप्त। मैं कहता हूँ: पिछली श्रेणी में 'तन्वीर' जैसे मूल ग्रंथों का यह कथन आता है कि 'गुलाम की इमामत (नेतृत्व) मक़रूह है'। 'दुर्रे मुख़्तार' में इसे 'तन्ज़ीही' कहा गया है। इब्न आबिदीन ने कहा कि इसका कारण यह है कि 'अल-असल' में कहा गया है, 'मुझे उनके अलावा दूसरों का नेतृत्व अधिक प्रिय है' - 'बहर' के माध्यम से 'मुजतबा' और 'मेराज' से। जब आप यह समझ गए, तो यह अनिवार्य हो गया कि प्रमाण की जाँच की जाए कि वह दोनों प्रकार की नापसंदगियों में से किस ओर झुकता है, जैसा कि 'बहर' ने 'बहर-उर-रायिक़' में उल्लेख किया है। अत; हम देखते हैं कि वे उपर्युक्त नापसंदगी के लिए दो कारणों से तर्क करते हैं, और उनमें से कोई भी 'कराहियत-ए-तहरीम' का लाभ नहीं देता; बल्कि उनकी सीमा...

[दायाँ कॉलम - उर्दू अनुवाद/व्याख्या] वे 'कराहियत' को मुतलक़ (बिना शर्त) रखते हैं, तो वह इसी पर आधारित होती है; दूसरा 'मक़रूह तन्ज़ीही' है, और वे अक्सर इसे भी मुतलक़ ही छोड़ देते हैं, जैसा कि 'शरह अल-मुन्याह' में है। और जब बात यह है, तो जिस समय फ़ुक़्हा (धर्मशास्त्री) किसी चीज़ को मक़रूह कहें, तो उसकी दलील पर नज़र डालना लाज़िमी होगा। अगर वह दलील कोई 'ज़न्नी नही' (अनुमानित मनाही) है, तो वे 'कराहियत-ए-तहरीम' का हुक्म देंगे, सिवाय इसके कि कोई और दलील उसे फेर दे। और अगर वह दलील मनाही न हो बल्कि केवल गैर-क़तई तौर पर छोड़ने का आग्रह करे, तो वह 'कराहियत तन्ज़ीही' है - सारांश समाप्त। मैं कहता हूँ कि दूसरी सूरत 'तन्वीर' आदि जैसे ग्रंथों के इस कथन की है कि 'गुलाम की इमामत मक़रूह है'। 'दुर्रे मुख़्तार' में इसे 'तन्ज़ीही' कहा गया है। शमी ने कहा कि इसके'तन्ज़ीही' होने का कारण यह है कि इमाम ने 'मबसूत' में फरमाया: 'मुझे उनके अलावा दूसरों की इमामत अधिक पसंद है।' यह 'बहर-उर-रायिक़' में 'मुजतबा' और 'मेराज' के हवाले से है। जब आपको यह पता चल गया, तो वाजिब हुआ कि दलील तलाश करें कि वह दोनों

कराहतों में से किस तरफ झुकती है, जैसा कि 'दरिया-ए-इल्म' ने 'बहर-उर-रायिक़' में व्यक्त किया है। अब हमने विद्वानों को देखा कि वे इस कराहत पर दो कारणों से तर्क करते हैं, और उनमें से कोई भी कराहियत-ए-तहरीम का लाभ नहीं देता; उनकी अंतिम...

[पादलेख] 1. रद्दुल मुहतार, किताब अल-तहारत, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 1/89 2. अद-दुर्रुल मुख़्तार शरह तन्वीर अल-अबसार, किताब अस-सलात, बाब अल-इमामत, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/83 3. अद-दुर्रुल मुख़्तार शरह तन्वीर अल-अबसार, किताब अस-सलात, बाब अल-इमामत, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/83 4. रद्दुल मुहतार, किताब अस-सलात, बाब अल-इमामत, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 1/376

[بایاں کالم - عربی عبارت] تحریماً وھو المحمل عند اطلاقھم الکراھۃ والمکروہ تنزیھا وکثیرا ما یطلقونہ کما في شرح المنیۃ فحینئذ اذا ذکروا مکروھا فلا بد من النظر في دلیلہ فان کان نھیا ظنیا یحکم بکراھۃ التحریم الا لصارف فان لم یکن نھیا بل مفید الترک الغیر الجازم نھی تنزیھیۃ اہ ملخصا، قلت: ومن الاخیر قول المتون کالتنویر وغیرہ یکرہ امامۃ عبد في الدر تنزیھا، قال ابن عابدین لقولہ في الاصل امامۃ غیرھم احب الی بحر عن المجتبی والمعراج اہ اذا علمت ھذا وجب الفحص عن الدلیل انہ الی ای الکراھتین یمیل کما افادہ البحر في البحر فرأینا ھم یستدلون علی الکراھۃ المذکورۃ بوجھین لا یفید شیئ منھما کراھۃ التحریم وانما

[دایاں کالم - اردو ترجمہ و تشریح] وہ کراہت کو مطلق رکھتے ہیں تو اسی پر محمول ہوتی ہے، دوسرا مکروہ تنزیہی اور بکثرت اسے بھی مطلق چھوڑتے ہیں جیسا کہ شرح منیہ میں ہے اور جب بات یہ ہے تو جس وقت فقہاء کسی شئی کو مکروہ کہیں تو اس کی دلیل پر نظر لازم ہو گی اگر وہ دلیل کوئی ظنی نہی ہے تو کراہت تحریم کا حکم دیں گے مگر کسی اور دلیل کے باعث جو اس سے پھیر دے، اور اگر وہ دلیل نہی نہ ہو بلکہ غیر قطعی ترک چاہتی ہے تو وہ کراہت تنزیہی ہے انتہیٰ ملخصاً، میں کہتا ہوں شکل اخیر سے ہے متون مثل تنویر وغیرہ کا یہ قول کہ غلام کی امامت مکروہ ہے، در مختار میں فرمایا تنزیہاً، شامی نے کہا اس کے تنزیہی ہونے کی وجہ یہ ہے کہ اما م نے مبسوط میں فرمایا ان کے غیر کی امامت مجھے زیادہ پسند ہے یہ بحرالرائق میں مجتبیٰ اور معراج سے ہے انتہیٰ، جب تجھے یہ معلوم ہو لیا تو واجب ہوا کہ دلیل تلاش کریں کہ وہ دونوں کراہتوں میں کس طرف جھکتی ہے جیسا کہ دریائے علم نے بحر الرائق میں افادہ فرمایا، اب ہم نے

علماء کو دیکھا کہ اس کراہت پر دو وجہ سے استدلال کرتے ہیں اور ان میں کوئی بھی کراہت تحریم کا فائدہ نہیں دیتی ان کی نہایت

[حواشی] 1 ردالمحتار کتاب الطهارة داراحیاء التراث العربي بیروت ۱/۸۹ 2 الدرالمختار شرح تنویر الابصار کتاب الصلوة باب الامامة مطبع مجتبائی دہلی ۱/۸۳ 3 الدرالمختار شرح تنویر الابصار کتاب الصلوة باب الامامة مطبع مجتبائی دہلی ۱/۸۳ 4 ردالمحتار کتاب الصلوة باب الامامة داراحیاء التراث العربي بیروت ۱/۳۷۶

Fatawa Razawiyyah (Volume 17)

[Arabic Text Column] The conclusion is 'Tanzīh' (dislike). In 'Al-Ināyah' it is stated: Dislike is either because it is a ruse for the falling away of interest (riba), so it becomes like 'Bay' al-'Inah' in taking an increase by ruse. Or because it leads people to become accustomed to it, and thus they would use it in what is not permissible. (End of Quote). In 'Al-Fatḥ', the second reason was narrated from 'Al-Īḍāḥ', then he said: and thus it was mentioned in 'Al-Muḥīṭ' also. Then he said: And it was said it was only disliked because they practiced a ruse, until the end of what passed in the first reason. The author of 'Al-Ināyah', after mentioning the two reasons, returned and restricted it to the first reason where he said: The dislike is only for the ruse for the falling away of 'Riba al-Faḍl' (excess interest). (End of Quote). And 'Al-Kifāyah' limited itself to this, saying: It was only disliked because it is a ruse for the falling away of interest so that one may take the increase by ruse, thus it is disliked like 'Bay' al-'Inah', for it is disliked for this reason. (End of Quote). And you know that in the second reason, there is the abandonment of something in which there is no harm, out of caution for that in which there is harm. So it is the station of 'Wara'' (piety), and abandoning 'Wara'' does not necessitate 'Karāhat Taḥrīmiyya' (prohibitive dislike), and he has said...

[Urdu Text Column] It is only 'Karāhat Tanzīhiyya' (slight dislike). In 'Al-Ināyah', it is stated that the dislike is either because it is a ruse to avoid interest (riba), thus becoming like 'Bay' al-'Inah' where excess is taken through a ruse; or it is because people will become accustomed to it and then start to act similarly in unlawful situations. (End of Quote). In 'Fatḥ al-Qadīr', the second reason is cited from 'Al-Īḍāḥ'. Then it says, similarly, it is mentioned in 'Al-Muḥīṭ'. Furthermore, it says some say it is disliked because they practiced a ruse, which is the same explanation given for the first reason. After mentioning both reasons, the author of 'Al-Ināyah' finally restricted it to the first reason, stating that the dislike is solely because they used a ruse to avoid excess interest (riba al-faḍl). (End of Quote). And 'Al-Kifāyah' limited it to this, stating it is only disliked because it is a ruse to eliminate interest so as to gain excess through a ruse, making it disliked like 'Bay' al-'Inah', which is also disliked for this reason. (End of Quote). And you know that the essence of the second reason is merely to abandon something in which there is no fault for fear of a potential fault. This is the station of 'Wara'' (piety), and abandoning 'Wara'' does not lead to 'Karāhat Taḥrīmiyya' (prohibitive dislike).

[Footnotes] 1 Al-Ināyah on the margins of Fatḥ al-Qadīr, Kitāb al-Sarf, Maktaba Nooria Rizvia Sukkur, 6 / 271-272 2 Fatḥ al-Qadīr, Kitāb al-Sarf, Maktaba Nooria Rizvia Sukkur, 6 / 271 3 Al-Ināyah on the margins of Fatḥ al-Qadīr, Kitāb al-Sarf, Maktaba Nooria Rizvia Sukkur, 6 / 272 4 Al-Kifāyah with Fatḥ al-Qadīr, Kitāb al-Sarf, Maktaba Nooria Rizvia Sukkur, 6 / 271

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

[अरबी पाठ स्तंभ] निष्कर्ष 'तन्ज़ीह' (नापसंदगी) है। 'अल-इनाया' में कहा गया है: नापसंदगी या तो इसलिए है क्योंकि यह ब्याज (रिबा) के पतन के लिए एक बहाना है, इसलिए यह बहाने से वृद्धि लेने में 'बय अल-ईना' की तरह हो जाता है। या इसलिए क्योंकि यह लोगों को इसका आदी बना देता है, और इस प्रकार वे इसका उपयोग उन चीजों में करेंगे जो अनुमेय नहीं हैं। (उद्धरण समाप्त)। 'अल-फ़तह' में, 'अल-ईदाह' से दूसरा कारण वर्णित किया गया था, फिर उन्होंने कहा: और इसी तरह 'अल-मुहीत' में भी इसका उल्लेख किया गया था। फिर उन्होंने कहा: और यह कहा गया था कि यह केवल इसलिए नापसंद किया गया था क्योंकि उन्होंने एक बहाने का अभ्यास किया था, पहले कारण में जो कुछ बीता उसके अंत तक। 'अल-इनाया' के लेखक ने, दोनों कारणों का उल्लेख करने के बाद, लौटकर इसे पहले कारण तक सीमित कर दिया जहाँ उन्होंने कहा: नापसंदगी केवल 'रिबा अल-फ़ज़्ल' (अतिरिक्त ब्याज) के पतन के बहाने के लिए है। (उद्धरण समाप्त)। और 'अल-किफ़ाया' ने खुद को इसी तक सीमित रखा, यह कहते हुए: यह केवल इसलिए नापसंद किया गया था क्योंकि यह ब्याज के पतन के लिए एक बहाना है ताकि कोई बहाने से वृद्धि ले सके, इस प्रकार यह 'बय अल-ईना' की तरह नापसंद है, क्योंकि इसे इसी कारण से नापसंद किया जाता है। (उद्धरण समाप्त)। और आप जानते हैं कि दूसरे कारण में, किसी ऐसी चीज़ का परित्याग है जिसमें कोई हानी नहीं है, उस चीज़ की सावधानी के लिए जिसमें हानी है। तो यह 'वरा' (परहेज़गारी) का स्थान है, और 'वरा' को छोड़ना 'कराहते तहरीमी' (कड़ी नापसंदगी) को आवश्यक नहीं बनाता है, और उन्होंने कहा है...

[उर्दू पाठ स्तंभ] यह केवल 'कराहते तन्ज़ीही' (हल्की नापसंदगी) है। 'अनाया' में कहा गया है कि नापसंदगी या तो इसलिए है कि यह ब्याज (रिबा) को खत्म करने का एक बहाना है, इसलिए यह 'बय अल-ईना' की तरह हो जाता है जहाँ बहाने से अतिरिक्त लाभ लिया जाता है, या इसलिए कि इससे लोगों को इसकी आदत हो जाती है और फिर वे नाजायज़ स्थितियों में भी ऐसा करने लगते हैं। (उद्धरण समाप्त)। 'फ़तह अल-क़दीर' में 'अल-ईदाह' से दूसरा कारण उद्धृत किया गया है। फिर कहा गया है कि इसी तरह 'अल-मुहीत' में भी इसका ज़िक्र है। आगे कहा गया है कि कुछ लोग कहते हैं कि यह इसलिए नापसंद है क्योंकि उन्होंने एक बहाने का इस्तेमाल किया, वही स्पष्टीकरण जो पहले कारण में दिया गया था। दोनों कारणों का उल्लेख करने के बाद, 'अनाया' के लेखक ने अंततः इसे पहले कारण तक सीमित कर दिया, जहाँ उन्होंने कहा कि नापसंदगी केवल इसलिए है क्योंकि उन्होंने अतिरिक्त ब्याज (रिबा अल-फ़ज़्ल) को खत्म करने के लिए एक बहाने का उपयोग किया।

(उद्धरण समाप्त)। और 'किफ़ाया' ने इसे इसी तक सीमित रखा, यह कहते हुए कि यह केवल इसलिए नापसंद है क्योंकि यह ब्याज को समाप्त करने का एक बहाना है ताकि बहाने से अतिरिक्त प्राप्त किया जा सके, जिससे यह 'बय अल-ईना' की तरह नापसंद हो जाता है, जो इसी कारण से नापसंद है। (उद्धरण समाप्त)। और आप जानते हैं कि दूसरे कारण का सार केवल यह है कि किसी ऐसी चीज़ को छोड़ना जिसमें कोई दोष नहीं है, इस डर से कि कहीं कोई दोष न आ जाए। यह 'वरा' (परहेज़गारी) का स्थान है, और 'वरा' को छोड़ने से 'कराहते तहरीमी' (कड़ी नापसंदगी) पैदा नहीं होती है।

[पादलेख] 1 अल-इनाया, फ़तह अल-क़दीर के हाशिये पर, किताब अस-सर्फ़, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 6 / 271-272 2 फ़तह अल-क़दीर, किताब अस-सर्फ़, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 6 / 271 3 अल-इनाया, फ़तह अल-क़दीर के हाशिये पर, किताब अस-सर्फ़, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 6 / 272 4 अल-किफ़ाया, फ़तह अल-क़दीर के साथ, किताब अस-सर्फ़, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 6 / 271

पृष्ठ 460 / 715

[عربی عبارت کا کالم] قصارهما التنزيه قال في العناية الكراهة اما لانه احتيال لسقوط الربا فيصير كبيع العينة في اخذ الزيادة بالحيلة واما لانه يفضي الى ان يالف الناس فيستعملوا ذلك فيما لا يجوز اهـ ونقل في الفتح عن الايضاح الوجه الثاني ثم قال وهكذا ذكر في المحيط ايضا ثم قال وقيل انما كرهه لانهما باشرا الحيلة الى اخر ما مر في الوجه الاول، وصاحب العناية بعد ذكر الوجهين عاد فحصر في الوجه الاول حيث قال الكراهة انما هي للاحتيال لسقوط ربا الفضل اهـ وعليه اقتصر في الكفاية قال انما كره لانه احتيال لسقوط الربا ليأخذ الزيادة بالحيلة فيكره كبيع العينه فانه مكروه لهذا اهـ ،وانت تعلم ان في الوجه الثاني ترك مالا بأس به حذرا ممابه باس فهو مقام الورع وترك الورع لا يوجب كراهة تحريم وقد قال

[اردو عبارت کا کالم] صرف کراہتِ تنزیہ ہے۔ عنایہ میں فرمایا کراہت یا تو اس لئے ہے کہ وہ دفعِ ربا کا حیلہ ہے تو بیعِ عینہ کے مثل ہو جائے گا کہ حیلہ کرکے زیادہ لیا اور یا اس لئے ہے کہ لوگ اسکے خوگر ہو جائیں گے تو پھر ناجائز جگہ بھی ایسی کاروائی کرنے لگیں گے انتہی، فتح القدیر میں ایضاح سے وجہ دوم نقل فرمائی، پھر فرمایا کہ اسی طرح محیط میں ذکر کیا، پھر فرمایا بعض کہتے ہیں اس لئے مکروہ ہوا کہ انہوں نے ایک حیلہ کیا وہی تقریر جو وجہ اول میں گزری اور صاحبِ عنایہ نے دونوں وجہیں ذکر کر کے بالآخر وجہ اول میں حصر کردیا جہاں کہ فرمایا کراہت صرف اس وجہ سے ہے کہ انہوں نے اس سے زیادتِ ربا کے دفع کا حیلہ کیا انتہی، اور اس پر کفایہ میں اقتصار فرمایا کہ وہ صرف اس لئے مکروہ ہے کہ وہ ربا ساقط کرنے کا حیلہ ہے تاکہ حیلہ سے زیادت حاصل کرے تو مکروہ ہو گا جیسے بیع عینہ کہ وہ بھی اسی سبب سے مکروہ ہے انتہی، اور تو جانتا ہے کہ وجہ دوم کا حاصل تو صرف اس قدر ہے کہ خرابی کے ڈر سے اس چیز

کو چھوڑے جس میں خرابی نہیں تو یہ مقامِ ورع کا ہے اور ورع چھوڑنے میں کراہتِ تحریمی نہیں آتی۔

[حواشی] 1 العنایۃ علی ھامش فتح القدیر کتاب الصرف مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۲۷۱-۲۷۲ 2 فتح القدیر کتاب الصرف مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۲۷۱ 3 العنایۃ علی ھامش فتح القدیر کتاب الصرف مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۲۷۲ 4 الکفایۃ مع فتح القدیر کتاب الصرف مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۲۷۱

Fatawa Rizwia, Volume 17

[Arabic Text Block] ...leading them to become accustomed to it and use it in situations where it is not permissible. Thus, it was clarified that its use in permissible situations was disliked only for fear of crossing into what is not permissible. As for the first aspect, it is even clearer and more manifest, for employing a stratagem (hila) to avoid usury (riba) is fleeing from it, and that is not prohibited; rather, what is prohibited is falling into it. Our scholars (may Allah Almighty have mercy on them) have known several stratagems to obtain a surplus without falling into usury. Imam Faqih al-Nafs Qazi Khan, in his Fatawa, dedicated an independent section to this, saying: "A section on what constitutes a flight from usury." In it, he said: "A man is owed ten dirhams by another man, and he wants to make it thirteen for a fixed term. They (the scholars) said: He should buy something from the debtor for those ten, take possession of the sold item, and then sell it back to the debtor for thirteen for a period of one year. Thus, the transition from the prohibited will occur. Something similar is narrated from the Messenger of Allah (may Allah Almighty bless him and grant him peace), that he commanded such." 1 This concludes the excerpt. Similarly, it is mentioned in al-Bahr from al-Khulasa from al-Nawazil by Imam al-Faqih Abu al-Layth (may Allah Almighty have mercy on him). Then he said in al-Khaniya...

[Urdu Text Block] And he himself stated that it would lead in that direction, causing them to become accustomed to it, so that they would start using it even in impermissible places. Thus, it was clearly stated that this procedure is for a permissible situation, and the dislike was only out of fear that it might escalate to reaching what is impermissible. As for the first reason, it is even more clear and bright: that employing a stratagem to drop usury is fleeing from usury, and that is not forbidden; rather, it is falling into usury that is forbidden. Indeed, our scholars (may Allah Almighty have mercy on them) have taught several stratagems so that one may take more without it being interest. Imam Faqih al-Nafs Qazi Khan established an independent section for this in his Fatawa, stating that this section is for the explanation of matters that are avoidances of interest. In it, he stated one stratagem: that a person was owed ten rupees by another, and he desired to make the ten into thirteen until a certain term. The scholars said that he should buy something from the debtor in exchange for those ten rupees and take possession of it, then sell that same thing to the debtor for thirteen rupees on a promise of one year's term. Thus, he will be saved from the forbidden. Something similar was narrated from the Prophet (may Allah Almighty bless him and grant him peace), that

the Noble Prophet commanded to do so. This concludes the excerpt. Similarly, it is in Bahr al-Ra'iq citing Khulasa, and Nawazil from Imam Faqih Abu al-Layth (may Allah Almighty have mercy on him). Then in Khaniya, he stated (the second stratagem) this:

1. Fatawa Qazi Khan, Book of Sales, Chapter on Selling Property Involving Usury, Nawal Kishore, Lucknow, 2/406.

फ़तावा रज़विया, खंड 17

[अरबी पाठ ब्लॉक] ...उन्हें इसका आदी बना देगा और वे इसे उन स्थितियों में उपयोग करने लगेंगे जो जायज़ नहीं हैं। अत; यह स्पष्ट किया गया कि जायज़ स्थितियों में इसका उपयोग केवल इस डर से नापसंद किया गया था कि कहीं वे सीमा पार कर नाजायज़ तक न पहुँच जाएँ। जहाँ तक पहले पहलू का सवाल है, वह और भी अधिक स्पष्ट और ज़ाहिर है, क्योंकि सूद (रिबा) से बचने के लिए कोई हिला (तदबीर) करना उससे भागना है, और वह मना नहीं है; बल्कि मना तो सूद में पड़ना है। हमारे विद्वानों (अल्लाह उन पर रहम करे) ने सूद में पड़े बिना अतिरिक्त लाभ प्राप्त करने के कई हिले (उपाय) बताए हैं। इमाम फ़क़ीह-उन-नफ़्स क़ाज़ी खान ने अपने फ़तावा में इसके लिए एक स्वतंत्र खंड समर्पित किया है, जिसमें कहा गया है: "सूद से बचने के तरीकों पर खंड।" इसमें उन्होंने कहा: "एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति से दस दिरहम लेने थे, और उसने चाहा कि एक निश्चित अवधि के लिए इसे तेरह कर दे। विद्वानों ने कहा: उसे उन दस के बदले कर्जदार से कोई चीज़ खरीद लेनी चाहिए, उस चीज़ पर कब्ज़ा कर लेना चाहिए, और फिर वही चीज़ उस कर्जदार को एक साल की अवधि के लिए तेरह रुपये में बेच देनी चाहिए। इस तरह हराम से बचा जा सकेगा। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से भी ऐसा ही वर्णित है कि आपने ऐसा करने का आदेश दिया।" 1 यह उद्धरण समाप्त होता है। इसी तरह अल-बहर में अल-ख़ुलासा के हवाले से और इमाम अल-फ़क़ीह अबू अल-लैथ (अल्लाह उन पर रहम करे) की नवाज़िल से वर्णित है। फिर उन्होंने अल-खनिया में कहा...

[उर्दू पाठ ब्लॉक] और उन्होंने खुद कहा कि यह उस दिशा में ले जाएगा कि वे इसके आदी हो जाएंगे, और फिर वे इसे नाजायज़ स्थानों पर भी इस्तेमाल करने लगेंगे। इसलिए साफ़ बता दिया गया कि यह कार्रवाई जायज़ जगह पर है और नापसंदगी केवल इस डर से थी कि कहीं बढ़कर नाजायज़ तक न पहुँच जाएँ। जहाँ तक पहली वजह का सवाल है, वह और भी अधिक स्पष्ट और रोशन है कि सूद को समाप्त करने के लिए हिला करना तो सूद से भागना है और वह मना नहीं है, बल्कि मना तो सूद में पड़ना है। और बेशक हमारे विद्वानों (अल्लाह उन पर रहम करे) ने इसके कई हिले सिखाए हैं कि ज़्यादा लें और वह सूद न हो। इमाम फ़क़ीह-उन-नफ़्स क़ाज़ी खान ने अपने फ़तावा में इसके लिए एक स्वतंत्र खंड रखा, फ़रमाया कि यह खंड उन बातों के बयान में है जो सूद से बचने के लिए हैं। इसमें उन्होंने एक हिला यह बयान किया कि एक व्यक्ति के दूसरे पर दस रुपये थे, उसने चाहा कि दस के तेरह कर लूँ एक निश्चित अवधि तक। विद्वानों ने फ़रमाया कि वह कर्जदार से उन दस के बदले कोई चीज़ खरीद ले और उस पर कब्ज़ा कर ले, फिर वही चीज़ उस कर्जदार को एक साल के

वादे पर तेरह रुपये में बेच दे, तो वह हराम से बच जाएगा। और इसका उदाहरण नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से वर्णित है कि हुज़ूर ने ऐसा करने का हुक्म दिया। इसी तरह बहर-उर-रायिक में ख़ुलासा के हवाले से और इमाम फ़क़ीह अबू अल-लैथ (अल्लाह उन पर रहम करे) की नवाज़िल से वर्णित है। फिर खानिया में (दूसरा हिला) यह फ़रमाया:

1. फ़तावा क़ाज़ी खान, किताबुल बुयू, बाब फ़ी बैअ माल अर-रिबा, नवल किशोर, लखनऊ, 2/406।

पृष्ठ 461 का 715

[عربی متن] یفضی الی ان یآلفوہ فیستعملوہ فیما لا یجوز فافاد ان ھذا استعمالہ فیما یجوز انما کرہ خشیۃ التجاوز الی ما لا یجوز واما الوجہ الاول فابین واظھر فان الاحتیال لسقوط الربا فرار عنہ وھو غیر ممنوع بل الممنوع الوقوع فیہ وقد علم علماؤنا رحمھم اللہ تعالی عدۃ حیل لتحصیل الفضل من دون حصول الربا وقد عقد لھا الامام فقیہ النفس قاضی خان في فتاواہ فصلا مستقلا فقال فصل فیما یکون فراراً عن الربا وقال فیہ رجل لہ علی رجل عشرۃ دراھم فاراد ان یجعلھا ثلثۃ عشر الی اجل قالوا یشتری من المدیون شیئا بتلك العشرۃ ویقبض المبیع ثم یبیع من المدیون بثلثۃ عشر الی سنۃ فیقع التجوز عن الحرام ومثل ھذا مروی عن رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم انہ امر بذلك 1 اھ، ومثلہ فی البحر عن الخلاصۃ عن النوازل للامام الفقیہ ابی اللیث رحمہ اللہ تعالی ثم قال فی الخانیۃ

[اردو متن] اور خود فرمایا کہ وہ اس طرف لیجائے گی کہ اسکے عادی ہو جائیں تو ناجائز جگہ بھی اسے برتنے لگیں تو صاف بتا دیا کہ یہ کارروائی جائز جگہ پر ہے اور کراہت فقط اس خوف سے ہوئی کہ بڑھ کر ناجائز تک نہ پہنچ جائیں، رہی پہلی وجہ وہ اور بھی زیادہ واضح و روشن ہے کہ ربا ساقط کرنے کے لئے حیلہ کرنا تو ربا سے بھاگنا ہے اور وہ منع نہیں بلکہ ممنوع تو ربا میں پڑنا ہے اور بیشک ہمارے علماء رحمہم اللہ تعالیٰ نے اس کے متعدد حیلے تعلیم فرمائے ہیں کہ زیادہ لیں اور سود نہ ہو، اور امام فقیہ النفس قاضی خان نے اپنے فتاویٰ میں اس کے لئے ایک مستقل فصل وضع کی، فرمایا کہ یہ فصل ہے ان باتوں کے بیان میں جو سود سے گریز میں ہیں اور اس میں ایک حیلہ یہ بیان فرمایا کہ ایک شخص کے دوسرے پر دس روپے آتے تھے اس نے یہ چاہا کہ میں دس کے تیرہ کرلوں ایک میعاد تک، علماء نے فرمایا کہ وہ مدیون سے ان دس کے عوض کوئی چیز خرید لے اور اس پر قبضہ کرلے پھر وہی چیز اس مدیون کے ہاتھ سال بھر کے

وعدہ پر تیرہ روپے کو بیچ ڈالے تو حرام سے بچ جائے گا اور اس کا مثل نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سے مروی ہوا کہ حضور نے ایسا کرنے کا حکم دیا انتہی، اور اسی طرح بحر الرائق میں بحوالہ خلاصہ، نواز ل امام فقیہ ابواللیث رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ سے ہے۔ پھر خانیہ میں (دوسرا حیلہ) یہ فرمایا

1 فتاویٰ قاضی خان کتاب البیوع باب فی بیع مال الربو نولکشور لکھنؤ ۲/ ۴۰۶

Fatawa Razawiyya Volume 17 (17)

(Arabic Column): A man asked another for dirhams to borrow on the condition of 'dah-duwazdah' (ten for twelve). Thus, the borrower should place some goods before the lender and say to the lender: "I have sold these goods to you for a hundred dirhams." The lender buys it, pays the dirhams to him, and takes possession of the goods. Then the borrower says: "Sell these goods to me for a hundred and twenty dirhams." He sells it so that the borrower receives a hundred dirhams, his goods are returned to him, and the borrower becomes liable to the lender for a hundred and twenty dirhams. The most reliable and cautious way is for the borrower to say to the lender after settling the transaction: "Whatever conversation and conditions were agreed between us, I have indeed waived them." Then they should execute the sale of the goods. End. Then he said: If the goods belong to the lender and the borrower has nothing, and he wants to lend him ten for thirteen dirhams for a certain period, then the lender sells a commodity to the borrower for thirteen dirhams and delivers the commodity to the borrower. Then the borrower sells the commodity to a stranger for ten.

(Urdu Column): A person asked another for some rupees as a loan in such a way that the lender gets twelve for ten. So it should be that the borrower places some goods before the lender and says to him: "I have sold these goods into your hand for a hundred rupees." The lender should buy it, give him the rupees, and take possession of the goods. Then the borrower says to him: "Sell these goods into my hand for one hundred and twenty rupees." He should sell it so that the borrower gets a hundred rupees and his goods also return to him, and one hundred and twenty become mandatory upon him for the lender. And the more reliable and cautious thing is that the borrower, after making the agreement of the aforementioned transaction with the lender, says like this: "Whatever conversation and condition was settled between us, I have left it." Then they should carry out the buying and selling of the goods. End. The third trick he mentioned was that the goods should also belong to the lender. The borrower has no goods at all and the lender wants to give ten rupees as a loan and collect thirteen rupees from him at a certain period. So the lender sells some goods to the borrower for thirteen rupees and gives the goods into his possession. Then the borrower sells these goods to some stranger for ten 10.

1. Fatawa Qazi Khan, Book of Sales, Chapter on Selling Usurious Property, Naval Kishore Lucknow, 2/407. Page 462 of 715

(अरबी कॉलम): एक व्यक्ति ने दूसरे से दस-बारह (दस के बदले बारह) की शर्त पर उधार लेने के लिए दिरहम मांगे। अतः उधार लेने वाले को उधार देने वाले के सामने कुछ सामान रखना चाहिए और उधार देने वाले से कहना चाहिए: "मैंने यह सामान आपको सौ दिरहम में बेच दिया।" उधार देने वाला उसे खरीद लेता है, उसे दिरहम दे देता है और सामान पर कब्ज़ा कर लेता है। फिर उधार लेने वाला कहता है: "यह सामान मेरे हाथ एक सौ बीस दिरहम में बेच दो।" वह उसे बेच देता है ताकि उधार लेने वाले को सौ दिरहम प्राप्त हो जाएं उसका सामान भी उसके पास वापस आ जाए और उधार देने वाले के लिए उस पर एक सौ बीस दिरहम अनिवार्य हो जाएं। सबसे विश्वसनीय और एहतियाती तरीका यह है कि उधार लेने वाला लेनदेन तय करने के बाद उधार देने वाले से कहे: "हमारे बीच जो भी बातचीत और शर्त थी, मैंने वास्तव में उसे छोड़ दिया है।" फिर वे सामान की बिक्री का अनुबंध करते हैं। समाप्त। फिर उन्होंने कहा: यदि सामान उधार देने वाले का हो और उधार लेने वाले के पास कुछ भी न हो, और वह उसे एक निश्चित अवधि के लिए दस के बदले तेरह उधार देना चाहता हो, तो उधार देने वाला उधार लेने वाले को तेरह में एक वस्तु बेचता है और उधार लेने वाले को वस्तु सौंप देता है, फिर उधार लेने वाला वस्तु को किसी अजनबी को दस में बेच देता है।

(उर्दू कॉलम): एक व्यक्ति ने दूसरे से कुछ रुपये उधार माँगे इस तरह कि देने वाले को दस के बदले बारह मिलें। तो ऐसा होना चाहिए कि उधार लेने वाला देने वाले के सामने कोई सामान रखे और उससे कहे: "मैंने यह सामान तुम्हारे हाथ सौ रुपये में बेच दिया।" उधार देने वाला उसे खरीद ले, उसे रुपये दे दे और सामान पर कब्ज़ा कर ले। फिर उधार लेने वाला उससे कहे: "यह सामान मेरे हाथ एक सौ बीस रुपये में बेच दो।" वह उसे बेच दे ताकि उधार लेने वाले को सौ रुपये मिल जाएँ और उसका सामान भी उसके पास वापस आ जाए, और उधार देने वाले के उसके ऊपर एक सौ बीस रुपये अनिवार्य हो जाएँ। और अधिक विश्वसनीय और एहतियाती बात यह है कि उधार लेने वाला उधार देने वाले से उक्त लेनदेन का समझौता करने के बाद इस तरह कहे: "हमारे बीच जो भी बातचीत और शर्त तय हुई थी, वह मैंने छोड़ दी है।" फिर वे सामान की खरीद-फरोख्त करें। समाप्त। तीसरा हिला (कानूनी उपाय) उन्होंने यह बताया कि वह सामान भी उधार देने वाले का हो। उधार लेने वाले के पास कोई सामान न हो और देने वाला चाहता हो कि दस रुपये उधार दे और किसी अवधि पर उससे तेरह रुपये वसूल करे। तो उधार देने वाला उधार लेने वाले के हाथ कोई सामान तेरह रुपये

में बेचे और सामान उसके कब्ज़े में दे दे। फिर उधार लेने वाला उस सामान को किसी अजनबी के हाथ दस 10 [में बेच दे]।

1. फतावा काज़ी खान, किताबुल बुयूअ, ब्याज वाली संपत्ति की बिक्री का अध्याय, नवल किशोर लखनऊ, 2/407। पृष्ठ 715 में से 462

(عربی کالم): رجل طلب من رجل دراهم ليقرضہ بده دوازده فوضع المستقرض متاعاً بين يدى المقرض فيقول للمقرض بعت منك هذا المتاع بمائة درهم فيشترى المقرض ويدفع اليہ الدراهم ويأخذ المتاع ثم يقول المستقرض يعنى هذا المتاع بمائة وعشرين فيبيعہ ليحصل للمستقرض مائة درهم ويعود اليہ متاعہ ويجب للمقرض عليہ مائة وعشرون درهماً والاوثق والاحوط ان يقول المستقرض للمقرض بعد ماقرر المعاملة كل مقالة و شرط كان بيننا فقد تركتہ ثم يعقدان بيع المتاع اهـ ۔ ثم قال فان كان المتاع للمقرض و ليس للمستقرض شيئ و يريد ان يقرضہ عشرة بثلاثة عشر الى اجل فان المقرض يبيع من المستقرض سلعة بثلاثة عشر ويسلم السلعة الى المستقرض ثم ان المستقرض يبيع السلعة من اجنبى بعشرة

(اردو کالم): ایک شخص نے دوسرے سے کچھ روپے قرض مانگے اس طور کہ دینے والے کو دس کے بارہ ملیں تو یوں چاہئے کہ قرض لینے والا دینے والے کے سامنے کوئی متاع رکھے اور اس سے کہے میں نے یہ متاع تیرے ہاتھ سو روپے کو بیچی قرض دینے والا خرید لے اور روپے اسے دے دے اور متاع پر قبضہ کر لے پھر قرض لینے والا اس سے کہے یہ متاع میرے ہاتھ ایک سو بیس روپے کو بیچ ڈال وہ بیچ کر دے تاکہ قرض لینے والے کو سو روپے مل جائیں اور اس کی متاع بھی اس کے پاس واپس آئے اور قرض دینے والے کے اس پر ایک سو بیس لازم آئیں اور زیادہ اطمینان و احتیاط کی بات یہ ہے کہ قرض لینے والا قرض دینے والے سے معاملہ مذکورہ کی قرارداد کر کے یوں کہہ دے کہ جو کچھ گفتگو اور شرط ہمارے آپس میں ٹھہری تھی وہ میں نے چھوڑ دی پھر متاع کی خرید و فروخت کریں انتہی۔ تیسرا حیلہ یہ فرمایا کہ وہ متاع بھی قرض دینے والے کی ہو قرض لینے والے کے پاس کوئی متاع بھی نہیں اور دینے والا چاہتا ہے کہ دس

روپے قرض دے اور کسی میعاد پر تیرہ روپے اس سے وصول کرے تو قرض دینے والا لینے والے کے ہاتھ کوئی متاع تیرہ روپے کو بیچے اور متاع اس کے قبضہ میں دے دے پھر قرض لینے والا اس متاع کو کسی اجنبی کے ہاتھ دس ۱۰

۱ فتاویٰ قاضی خان کتاب البیوع باب فی بیع مال الربو نولکشور لکھنو ۲ / ۴۰۷ Page 462 of 715

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Left Column - Arabic Text] ...and he hands over the goods to a third party (stranger), then the third party sells the goods to the lender for ten, takes ten from him, and gives it to the borrower. Thus, the third party is freed from the debt he owed to the borrower, and the goods reach the lender for ten. The borrower then owes thirteen to the lender for a fixed term. (End). Then he said: Another legal device (hila) is that the lender sells goods to the borrower for thirteen for a known term and hands them over to the borrower. Then the borrower sells it to a third party. Subsequently, the borrower rescinds (iqaala) the sale with the third party, whether before or after taking possession. Then the borrower sells it to the lender for ten and takes the ten. Thus, the borrower obtains ten, and he owes thirteen to the lender, and the goods return to the lender. Even if the lender becomes the buyer of what he sold for less than what he sold it for before receiving the price, it is permissible because of the intervention of the second sale, which occurred between the borrower and the third party. (End). Then he mentioned another device...

[Right Column - Urdu Text] ...sells for rupees and gives that commodity to that stranger. That stranger sells it to the lender for ten, and after taking ten rupees from him, gives them to the borrower. Then the debt that the stranger owed to the borrower will be settled, and that commodity will reach the lender for ten, and thirteen rupees will become mandatory upon the borrower on a single promise. (End).

The fourth legal device (hila) mentioned is that the lender sells some commodity to the borrower for thirteen rupees on a specified term and puts it in his possession. Then the borrower sells it to a stranger. Then the borrower rescinds the sale with that stranger, whether the commodity has been delivered to his possession or not. Then the borrower sells it to the lender for ten. So the borrower will receive ten rupees, and thirteen will be mandatory for him to pay to the lender, and the commodity will return to the giver (lender). In this case, although the lender bought back the item he sold for less than the price at which he sold it before the payment of the original price, it is permissible here because another sale came in between, namely the one between the borrower and the stranger. (End). Then another device mentioned is that...

[Footnotes] 1. Fatawa Qazi Khan, Kitab al-Buyu', Chapter on selling Usury Property, Nawal Kishore Lucknow, 2/406. 2. Fatawa Qazi Khan, Kitab al-Buyu', Chapter on selling Usury Property, Nawal Kishore Lucknow, 2/407.

[बायां कॉलम - अरबी पाठ का अनुवाद] ...और वह माल किसी अजनबी (तीसरे व्यक्ति) को दे देता है, फिर वह अजनबी उस माल को कर्ज देने वाले को दस में बेच देता है और उससे दस लेकर कर्ज लेने वाले को दे देता है। इस प्रकार अजनबी उस कर्ज से मुक्त हो जाता है जो उसे कर्ज लेने वाले को चुकाना था, और माल दस में कर्ज देने वाले के पास पहुँच जाता है। फिर कर्ज लेने वाले पर एक निश्चित अवधि के लिए कर्ज देने वाले के तेरह रुपये वाजिब हो जाते हैं। (समाप्त)। फिर उन्होंने कहा: एक और हीला (कानूनी युक्ति) यह है कि कर्ज देने वाला कोई वस्तु कर्ज लेने वाले को तेरह रुपये में एक निश्चित अवधि के लिए बेचे और उसे कर्ज लेने वाले के कब्जे में दे दे। फिर कर्ज लेने वाला उसे किसी अजनबी को बेच दे। उसके बाद कर्ज लेने वाला उस अजनबी के साथ सौदा रद्द (इकाला) कर दे, चाहे माल उसके कब्जे में दिया गया हो या नहीं। फिर कर्ज लेने वाला उसे कर्ज देने वाले को दस में बेच दे। इस प्रकार कर्ज लेने वाले को दस रुपये मिल जाएंगे और उसे कर्ज देने वाले को तेरह रुपये देने होंगे, और माल कर्ज देने वाले के पास वापस पहुँच जाएगा। इस स्थिति में हालांकि कर्ज देने वाला अपनी बेची हुई चीज़ को उसकी कीमत अदा होने से पहले उससे कम कीमत पर खरीद रहा है जितने पर उसने बेची थी, फिर भी यहाँ यह जायज़ है क्योंकि बीच में दूसरा सौदा आ गया है, यानी वह सौदा जो कर्ज लेने वाले और अजनबी के बीच हुआ था। (समाप्त)। फिर उन्होंने एक और हीला यह फ़रमाया कि...

[दायां कॉलम - उर्दू पाठ का अनुवाद] ...रुपये में बेचे और वह माल उस अजनबी को दे दे। वह अजनबी कर्ज देने वाले के हाथ दस को बेच डाले और वह अजनबी उससे दस रुपये लेकर कर्ज लेने वाले को दे दे तो अजनबी पर जो कर्ज लेने वाले का कर्ज था वह उतर जाएगा और वह माल कर्ज देने वाले के पास दस में पहुँच जाएगी और कर्ज लेने वाले पर उसके तेरह रुपये एक वादे पर लाज़िम हो जाएंगे। (समाप्त)।

चौथा हीला यह फ़रमाया कि कर्ज देने वाला लेने वाले के हाथ कोई माल एक मुअय्यन (निश्चित) वादे पर तेरह रुपये को बेचे और उसके कब्जे में दे दे और कर्ज लेने वाला उसे किसी अजनबी के हाथ बेचे फिर कर्ज लेने वाला उस अजनबी के साथ सौदा रद्द करे चाहे माल उसके कब्जे में दिया हो या न दिया हो, फिर कर्ज लेने वाला देने वाले के हाथ उसे दस को बेचे तो कर्ज लेने वाले को दस रुपये मिलेंगे और देने वाले के उस पर तेरह लाज़िम होंगे और माल देने वाले के पास पहुँच जाएगा। कर्ज

देने वाले ने इस सूरत में हालाँकि अपनी बेची हुई चीज़ कीमत की अदायगी से पहले जिस कीमत पर बेची थी उससे कम में खरीद ली, मगर यहाँ यह जायज़ है क्योंकि बीच में दूसरी बिक्री आ गई जो कर्ज लेने वाले और अजनबी में हुई थी। (समाप्त)। फिर एक और हीला यह फ़रमाया कि...

[पाद टिप्पणियाँ] 1. फ़तावा क़ाज़ी ख़ान, किताब अल-बुयू, अध्याय: सूद के माल की बिक्री, नवल किशोर लखनऊ, 2/406 2. फ़तावा क़ाज़ी ख़ान, किताब अल-बुयू, अध्याय: सूद के माल की बिक्री, नवल किशोर लखनऊ, 2/407

पृष्ठ 463 का 715

[بائیں کالم کا عربی متن] ویدفع السلعة الی الاجنبی ثم الاجنبی یبیع السلعة من المقرض بعشرة ویأخذ بعشرة منه ویدفعها الی المستقرض فیبرأ الاجنبی من الثمن الذی کان علیه للمستقرض و تصل السلعة الی المقرض بعشرة و للمقرض علی المستقرض ثلثة عشر الی اجل اھ . ثم قال وحیلة اخری ان یبیع المقرض سلعة بثلثة عشر الی اجل معلوم و یدفع السلعة الی المستقرض ثم یبیعه المستقرض من الاجنبی ثم ان المستقرض یقیل البیع مع الاجنبی قبل القبض اوبعده ثم یبیعها المستقرض من المقرض بعشرة ویأخذ العشرة فیحصل للمستقرض عشرة وعلیه للمقرض ثلثة عشر وتصل السلعة الی المقرض والمقرض وان صار مشترياً ماباع باقل مما باع قبل الثمن الا ان ذلك جائز لتخلل البیع الثانی وھو البیع الذی جری بین المستقرض والاجنبی اھ . ثم قال وحیلة اخری ان

[دائیں کالم کا اردو متن] روپے کو بیچے اور وہ متاع اس اجنبی کو دے دے وہ اجنبی قرض دینے والے کے ہاتھ دس کو بیچ ڈالے اور وہ اجنبی اس سے دس روپے لے کر قرض لینے والے کو دے دے تو اجنبی پر جو قرض لینے والے کا دین تھا وہ اتر جائے گا اور وہ متاع قرض دینے والے کے پاس دس میں پہنچ جائیگی اور قرض لینے والے پر اس کے تیرہ روپے ایک وعدہ پر لازم ہوجائیں گے انتہیٰ۔ چوتھا حیلہ یہ فرمایا کہ قرض دینے والا لینے والے کے ہاتھ کوئی متاع ایک معین وعدہ پر تیرہ روپے کو بیچے اور اس کے قبضہ میں دے دے اور قرض لینے والا اسے کسی اجنبی کے ہاتھ بیچے پھر قرض لینے والا اس اجنبی کے ساتھ بیع فسخ کرے خواہ متاع اس کے قبضہ میں دی ہو یا نہ دی ہو پھر قرض لینے والا دینے والے کے ہاتھ اسے دس کو بیچے تو قرض لینے والے کو دس روپے ملیں گے اور دینے والے کے اس پر تیرہ لازم ہوں گے اور متاع دینے والے کے پاس پہنچ جائے گی قرض دینے والے نے اس صورت میں اگرچہ اپنی بیچی ہوئی چیز ادائے ثمن سے

پہلے جس قدر کو بیچی تھی اس سے کم کو خرید لی مگر یہاں یہ جائز ہے اس واسطے کہ بیچ میں دوسری بیع آگئی وہ جو قرض لینے والے اور اجنبی میں ہوئی انتہیٰ۔ پھر ایک حیلہ یہ فرمایا کہ

[حواشی] 1 فتاویٰ قاضی خان کتاب البیوع باب فی بیع مال الربو نولکشور لکھنؤ ۲/ ۴۰۶ 2 فتاویٰ قاضی خان کتاب البیوع باب فی بیع مال الربو نولکشور لکھنؤ ۲/ ۴۰۷

Fatawa Razawiya Volume 17

[Arabic Text Column] The lender sells a commodity to the borrower on credit for a deferred price and delivers the commodity to the borrower. Then the borrower sells it to someone else for less than what he bought it for. Then that third party sells it back to the original lender for the price at which he bought it, so that the same commodity returns to the lender. He takes the price and gives it to the borrower. Thus, the borrower obtains the loan and the lender earns a profit. Ah, I say: This is the third mentioned legal trick (hila). It was said: "This hila is 'Ina' (sale and buyback), which was mentioned by Muhammad (may Allah Almighty have mercy on him). The scholars of Balkh stated that Bay' al-Ina (Ina sale) in our time is better than the sales occurring in our markets. It is narrated from Abu Yusuf (may Allah Almighty have mercy on him) that he said: 'Ina is permissible and rewarded.' He said the reason for the reward is because it is a means of fleeing from what is forbidden (Haram), i.e., interest." Ah. Then he said: "A man has ten sound dirhams (silver coins) and wants to sell them for twelve broken ones. This is not permissible because it is interest (riba). If he seeks a legal way (hila), let him borrow twelve broken dirhams from the buyer, then pay him back with ten sound ones. Then..."

[Urdu Text Column] The lender sells a commodity to the borrower on credit and delivers it into his possession. Then the borrower sells that commodity to someone else for less than the purchase price. Then that second person sells it back to the lender for the price at which he himself bought it, so that the same commodity returns to him (the lender). The lender then takes the price from him and gives it to the borrower. In this way, the borrower gets the loan and the lender earns a profit. End. I say: (I say) this is the same third hila (legal trick) that has been mentioned before. Imam Qazi Khan stated that the name of this hila is 'Bay' al-Ina', which Imam Muhammad (may Allah Almighty have mercy on him) mentioned. The scholars of Balkh said that Bay' al-Ina is better than the sales prevalent in our markets today. It is narrated from Imam Abu Yusuf (may Allah Almighty have mercy on him) that he said Ina is permissible and will be rewarded. He said the reason for the reward is that it involves avoiding Haram, i.e., interest. End. The fifth hila stated is that a person has ten sound rupees and wants to sell them for twelve broken (inferior) ones; this is not permissible as it is interest. Then, if he wants a hila, he should borrow twelve broken rupees from the buyer and then pay him back with ten sound ones. Then he...

1 Fatawa Qazi Khan, Kitab al-Buyu' (Book of Sales), Chapter on Selling Usurious Goods, Nawal Kishore, Lucknow, 2/407. Page 464 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

[अरबी पाठ स्तंभ] ऋणदाता उधारकर्ता को विलंबित मूल्य पर उधार पर एक वस्तु बेचता है और वह वस्तु उधारकर्ता को सौंप देता है। फिर उधारकर्ता इसे किसी अन्य व्यक्ति को उस मूल्य से कम पर बेच देता है जिस पर उसने इसे खरीदा था। फिर वह तीसरा व्यक्ति इसे मूल ऋणदाता को उसी मूल्य पर वापस बेच देता है जिस पर उसने इसे खरीदा था, ताकि वही वस्तु वापस ऋणदाता के पास पहुँच जाए। वह मूल्य लेता है और इसे उधारकर्ता को दे देता है। इस प्रकार, उधारकर्ता को ऋण मिल जाता है और ऋणदाता को लाभ प्राप्त होता है। इति। मैं कहता हूँ: यह वही तीसरा हीला (कानूनी उपाय) है जिसका पहले उल्लेख किया गया है। कहा गया: "यह हीला 'बय अल-ईना' है जिसका उल्लेख इमाम मुहम्मद (उन पर अल्लाह की रहमत हो) ने किया है। बल्ख के मशाइख़ ने कहा कि हमारे समय में बय अल-ईना उन खरीद-फरोख्त से बेहतर है जो हमारे बाज़ारों में प्रचलित हैं। इमाम अबू यूसुफ (उन पर अल्लाह की रहमत हो) से रिवायत है कि उन्होंने फ़रमाया: 'ईना जायज़ है और इस पर सवाब (पुण्य) मिलेगा।' उन्होंने कहा कि सवाब का कारण यह है कि इसमें हराम, यानी सूद (ब्याज) से बचना है।" इति। फिर फ़रमाया: "एक व्यक्ति के पास दस सही दिरहम (चाँदी के सिक्के) हैं और वह उन्हें बारह टूटे हुए दिरहमों के बदले बेचना चाहता है। यह जायज़ नहीं है क्योंकि यह सूद है। यदि वह कोई हीला चाहता है, तो वह खरीदार से बारह टूटे हुए दिरहम उधार ले, फिर उसे दस सही दिरहम अदा करे। फिर वह..."

[उर्दू पाठ स्तंभ] ऋण देने वाला लेने वाले के हाथ कोई सामग्री उधार बेचे और वह सामग्री उसके कब्जे में दे दे। फिर ऋण लेने वाला उस सामग्री को किसी और के हाथ उतनी से कम कीमत पर बेचे जितने पर उसने खरीदी थी। फिर वह दूसरा व्यक्ति उस ऋण देने वाले के हाथ उतनी ही कीमत पर बेचे जितने पर उसने खुद खरीदी थी, ताकि वह सामग्री वैसी की वैसी उसके पास पहुँच जाए। ऋणदाता उससे कीमत लेकर ऋण लेने वाले को दे दे, तो ऋण लेने वाले को ऋण मिल जाएगा और देने वाले को लाभ प्राप्त हो जाएगा। इति। मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) यह वही तीसरा हीला है जो बीत चुका है। इमाम काज़ी खान ने फ़रमाया कि इस हीले का नाम 'बय अल-ईना' है जिसका ज़िक्र इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाह अलैह) ने फ़रमाया है। बल्ख के मशाइख़ ने फ़रमाया कि बय अल-ईना उन खरीद-फरोख्तों से बेहतर है जो आज कल हमारे बाज़ारों में प्रचलित हैं। इमाम अबू यूसुफ (रहमतुल्लाह अलैह) से रिवायत है कि उन्होंने फ़रमाया ईना जायज़ है और इस पर सवाब मिलेगा। फ़रमाया सवाब की वजह यह है कि इसमें हराम यानी सूद से भागना है। इति। पाँचवाँ हीला यह

फ़रमाया कि एक व्यक्ति के पास दस सही रुपये हैं और वह चाहता है कि उन्हें बारह टूटे हुए रुपयों के बदले बेचे, तो यह जायज़ नहीं क्योंकि यह सूद है। फिर अगर वह हीला चाहता है, तो उसे चाहिए कि खरीदार से बारह टूटे हुए रुपये उधार ले, फिर दस खरे (शुद्ध) रुपये उसे अदा करे, फिर वह...

---

1 फ़तावा क़ाज़ी खान, किताब अल-बुयूअ (बिक्री की किताब), सूद वाले माल की बिक्री का अध्याय, नवल किशोर, लखनऊ, 2/407. पृष्ठ 464 का 715

یبیع المقرض من المستقرض سلعة بثمن مؤجل ویدفع السلعة الی المستقرض ثم ان المستقرض یبیعها من غیرہ بأقل مما اشتری ثم ذلك الغیر یبیعها من المقرض بما اشتری لتصل السلعة الیه بعینها ویأخذ الثمن ویدفعه الی المستقرض فیصل المستقرض الی القرض ویحصل الربح للمقرض اھ، اقول: ھذہ ھی الحیلة الثالثة المارة قال "وھذہ الحیلة ھی العینة التی ذکرھا محمد رحمه الله تعالی و مشایخ بلخ بیع العینة فی زماننا خیر من البیوع التی تجری فی اسواقنا وعن ابی یوسف رحمه الله تعالی انه قال العینة جائزة مأجورة وقال اجرہ لمکان الفرار من الحرام اھ، ثم قال رجل له عشرة دراھم صحاح فاراد ان یبیعها باثنی عشر درھما مکسرة لا یجوز لانه رباً، فان اراد الحیلة یستقرض من المشتری اثنی عشرة درھما مکسرة ثم یقضیه عشرة جیاداً ثم ان

قرض دینے والا لینے والے کے ہاتھ کوئی متاع ادھار بیچے اور متاع اس کے قبضہ میں دے دے پھر قرض لینے والا اس متاع کو کسی اور کے ہاتھ اتنے سے کم کو بیچے جتنے کو خریدی پھر وہ دوسرا شخص اس قرض دینے والے کے ہاتھ اتنے کو بیچے جتنے کو خود خریدی تاکہ وہ متاع بعینہ اسے پہنچ جائے اور اس سے قیمت لے کر قرض لینے والے کو دے دے تو قرض لینے والے کو قرض مل جائے گا اور دینے والے کو نفع حاصل ہو جائیگا انتہٰی، اقول: (میں کہتا ہوں) یہ وہی تیسرا حیلہ ہے جو گزر چکا، امام قاضیخان نے فرمایا کہ اس حیلہ کا نام بیع عینہ ہے جس کو امام محمد رحمہ اللہ تعالٰی نے ذکر فرمایا اور مشائخ بلخ نے فرمایا کہ بیع عینہ ان بیعوں سے کہ ہمارے بازاروں میں آج کل رائج ہیں بہتر ہے اور امام ابویوسف رحمہ اللہ تعالٰی سے روایت ہے کہ انہوں نے فرمایا عینہ جائز ہے اور اس پر ثواب ملے گا اور فرمایا ثواب کی وجہ یہ ہے کہ اس میں حرام یعنی سود سے بھاگنا ہے انتہٰی۔ پانچواں حیلہ یہ فرمایا کہ ایک شخص کے پاس دس روپے صحیح

ہیں وہ چاہتا ہے کہ ان کو بارہ روپے پھوٹے ہوؤں سے بیچے تو جائز نہیں کہ سود ہے پھر اگر وہ حیلہ چاہے تو یہ چاہئے کہ مشتری سے بارہ روپے پھوٹے ہوئے قرض لے پھر دس کھرے اس کو ادا کرے پھر وہ

---

1 فتاویٰ قاضی خان کتاب البیوع باب في بیع مال الربا نولکشور لکھنؤ ۲/ ۴۰۷ Page 464 of 715

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Main Text - Arabic Column on Left] The creditor forgives him two dirhams, then that is permissible. [1] Then he said: If someone owed ten broken dirhams until a certain term, and when the term arrived, the debtor brought nine sound (good) dirhams and said: "These nine are for those ten," it is not permissible because it is usury (riba). If he wants a legal loophole (hila), he should take the nine and forgive him the remaining one dirham. If the debtor fears that he might not forgive the remaining dirham, he should give the creditor nine sound dirhams and a fils or some small thing in exchange for the remaining dirham; that is permissible and security (from riba) is attained. [2] In this, there are benefits that are not hidden from you, and we will pass through them later, if Allah Almighty wills. It is sufficient for us that it was compared in the first aspect to 'Bay' al-Inah' (credit-back sale), and their saying that it is disliked for this reason, is because it is only slightly disliked (tanzihi). So it is the same for this. Let the saying of Imam Muhammad not alarm you that he finds it like a mountain [3], for he said the same, or even stricter than that, regarding 'Bay' al-Inah', and for it, nothing is established except its being disliked.

[Main Text - Urdu Column on Right] ...to forgive the remaining two rupees, then this is permissible. The sixth legal loophole is this: it was stated that if a person owed ten broken rupees on a certain promise, when the time of the promise came, the debtor brought nine 'khari' (sound/pure) rupees and said these nine are in exchange for those ten, then it is not permissible in this way because it is interest (sood). So if a loophole is desired, let him take nine in exchange for nine and forgive one. Then if the debtor fears that he (the creditor) will not forgive the one that remains, then he should give nine khari rupees to the creditor and a paisa or some other small thing in exchange for the remaining rupee; now it will be permissible and that fear will go away. End. And in this text, there are benefits that will not be hidden from you, and in future discourse, if Allah wills, we will pass over them. And for us, it is enough that in the first case it was compared to 'Bay' al-Inah', and the scholars said it is disliked for that same reason, and this is because 'Bay' al-Inah' is nothing but 'Makruh Tanzihi' (slightly disliked), so similarly this is also the same. And let not this statement of Imam Muhammad, that it is as heavy as a mountain to him, put you in fear, for he has said the same, rather even stricter than this, regarding 'Bay' al-Inah', and for that...

[Footnotes] 1. Fatawa Qazi Khan, Kitab al-Buyu' (Book of Sales), Chapter on Selling Riba Assets, Nawal Kishore Lucknow, 2/407. 2. Fatawa Qazi Khan, Kitab al-Buyu',

Chapter on Selling Riba Assets, Nawal Kishore Lucknow, 2/407. 3. Fath al-Qadeer, Kitab al-Sarf, Maktaba Nooria Razawiyya Sukkur, 6/471.

[मुख्य पाठ - बाईं ओर अरबी कॉलम] ऋणदाता उसे दो दिरहम माफ़ कर देता है, तो यह जायज़ है। [१] फिर उन्होंने कहा: यदि किसी व्यक्ति पर एक निश्चित अवधि तक दस टूटे हुए दिरहम का ऋण था, और जब वह अवधि पूरी हुई, तो कर्जदार नौ सही (अच्छे) दिरहम लेकर आया और कहा: "ये नौ उन दस के बदले में हैं," तो यह जायज़ नहीं है क्योंकि यह ब्याज (रिबा) है। यदि वह कोई कानूनी हिला (तरीका) चाहता है, तो उसे नौ ले लेने चाहिए और शेष एक दिरहम माफ़ कर देना चाहिए। यदि कर्जदार को डर है कि वह शेष एक दिरहम माफ़ नहीं करेगा, तो वह ऋणदाता को नौ सही दिरहम और शेष दिरहम के बदले में एक फ़िल या कोई छोटी चीज़ दे दे; तो यह जायज़ है और सुरक्षा प्राप्त हो जाती है। [२] इसमें ऐसे लाभ हैं जो आपसे छिपे नहीं हैं, और हम भविष्य में उन पर चर्चा करेंगे, यदि अल्लाह ने चाहा। हमारे लिए इतना ही काफी है कि पहले पहलू में इसकी तुलना 'बै-ए-ईना' (क्रेडिट-बैक बिक्री) से की गई थी, और उनका कहना कि यह इस कारण से नापसंद (मक़रूह) है, क्योंकि यह केवल मामूली तौर पर नापसंद (मक़रूह तन्ज़ीही) है। तो इसके लिए भी यही है। इमाम मुहम्मद का यह कहना आपको डरा न दे कि वह इसे पहाड़ जैसा पाते हैं [३], क्योंकि उन्होंने 'बै-ए-ईना' के बारे में भी ऐसा ही, बल्कि इससे भी कड़ा कहा है, और उसके लिए नापसंदगी के अलावा कुछ भी साबित नहीं है।

[मुख्य पाठ - दाईं ओर उर्दू कॉलम] ...कि शेष दो रुपये माफ़ कर दे, तो यह जायज़ है। छठा हिला यह फ़रमाया कि अगर किसी व्यक्ति पर दस रुपये टूटे हुए एक वादे पर आते थे, जब वादे का वक्त आया तो कर्जदार नौ "खरे" (शुद्ध) रुपये लाया और कहा कि इन दस के बदले ये नौ हैं, तो इस तरह जायज़ नहीं है क्योंकि यह सूद (ब्याज) है। तो अगर हिला चाहे तो नौ के बदले नौ ले ले और एक माफ़ कर दे। फिर अगर कर्जदार को अंदेशा हो कि वह शेष एक को माफ़ नहीं करेगा, तो वह ऋणदाता को नौ खरे रुपये और शेष रुपये के बदले एक पैसा या कोई और थोड़ी सी चीज़ दे दे; तो अब जायज़ होगा और वह अंदेशा खत्म हो जाएगा। अंत। और इस इबारत (लेख) में वे फायदे हैं जो तुझ पर छिपे न रहेंगे, और आइंदा तक़रीर (बयान) में इंशा अल्लाह हम ऊपर से गुज़रेंगे। और हमारे लिए यही काफी है कि पहली वजह में इसे बै-ए-ईना से तशबीह (तुलना) दी और उलमा ने फ़रमाया वह भी इसी वजह से मक़रूह है, और यह इसलिए कि बै-ए-ईना मक़रूह तन्ज़ीही के अलावा कुछ नहीं है, तो ऐसे ही यह भी है। और इमाम मुहम्मद का यह इरशाद (वचन) कि वह उनके नज़दीक पहाड़ की तरह

भारी है, तुझे हौल (डर) में न डाले कि उन्होंने ऐसा ही कहा बल्कि इससे भी सख्त तर बै-ए-ईना में फ़रमाया है और उसके लिए...

[फुटनोट्स] १. फ़तवा क़ाज़ी ख़ान, किताब अल-बुयू, रिबा माल की बिक्री का अध्याय, नवल किशोर लखनऊ, २/४०७। २. फ़तवा क़ाज़ी ख़ान, किताब अल-बुयू, रिबा माल की बिक्री का अध्याय, नवल किशोर लखनऊ, २/४०७। ३. फ़त्ह अल-क़दीर, किताब अल-सर्फ़, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, ६/४७१।

पृष्ठ ४६५ / ७१५

[بایاں کالم - عربی] المقرض یبرئه من درهمین فیجوز ذلك اهـ ۱. ثم قال ولو كان له علی رجل عشرة دراهم مكسرة الی اجل فلما حل الاجل جاء المدیون بتسعة صحاح فقال هذه التسعة بتلك العشرة لایجوز لانه ربا فان اراد الحیلة یأخذ التسعة ویبرئه عن الدرهم الباقی فان خاف المدیون ان لا یبرئه عن الدرهم الباقی یدفع الی صاحب الدین تسعة دراهم صحاحاً وفلسا او شیئاً یسیراً عوضاً من الدرهم الباقی جاز ذلك و یقع الامن ۲ اهـ وفیها فوائد لاتخفی علیك و سنمر علیها فیما یأتی ان شاء الله تعالی و كفانا تشبیهه في الوجه الاول ببیع العینة و قولهم فأنه مكروه لهذا و ذلك لانه لایكره الاتنزیهیا فكذا هذا . ولا یهولنك قول محمد انه یجده مثل الجبل ۳ فانه قال مثله بل اشد منه فی العینة وما ثبت لها الا كراهة

[دایاں کالم - اردو] اسے باقی دو روپے معاف کردے تو یہ جائز ہے، چھٹا حیلہ یہ فرمایا اگر کسی شخص پر دس روپے پھوٹے ہوئے ایک وعدہ پر آتے تھے جب وعدہ کا وقت آیا مدیون نو روپے کھرے لایا اور کہا کہ ان دس کے بدلے یہ نو ہیں تو یوں جائز نہیں اس لئے کہ سود ہے، تو اگر حیلہ چاہے تو نو کے بدلے نو لے لے اور ایک معاف کردے پھر اگر مدیون کو اندیشہ ہو کہ وہ ایک جو باقی رہا یہ معاف نہ کرے گا تو قرض خواہ کو نو روپے کھرے اور ایک پیسہ یا کوئی اور تھوڑی سی چیز اس باقی روپے کے عوض دے دے تو اب جائز ہوگا اور وہ اندیشہ جاتا رہے گا انتہی اور اس عبارت میں وہ فائدے ہیں جو تجھ پر پوشیدہ نہ رہیں گے اور آئندہ تقریر میں ان شاء اللہ ہم اوپر گزر کریں گے اور ہم کو یہی کافی ہے کہ وجہ اول میں اسے بیع عینہ سے تشبیہ دی اور علماء نے فرمایا وہ بھی اسی وجہ سے مکروہ ہے اور یہ اس لئے کہ بیع عینہ نہیں مگر مکروہ تنزیہی، تو ایسے ہی یہ بھی اور امام محمد کا یہ ارشاد کہ وہ ان کے نزدیک پہاڑ کی طرح گراں

ہے تجھے ہول میں نہ ڈالے کہ انہوں نے ایسا ہی کہا بلکہ اس سے بھی سخت تر بیع عینہ میں فرمایا ہے اور اس کے لئے

[حواشی] ۱ فتاویٰ قاضی خان کتاب البیوع باب فی بیع مال الربا نولکشور لکھنؤ ۲ / ۴۰۷ ۲ فتاویٰ قاضی خان کتاب البیوع باب فی بیع مال الربا نولکشور لکھنؤ ۲ / ۴۰۷ ۳ فتح القدیر کتاب الصرف مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۴۷۱

Fatawa Razawiyya Volume 17

[Right Column - Urdu Text] ...was not established except as karahat-e-tanzihi (slight dislike). In Radd al-Muhtar, Tahtawi, Alamgiri, and Mukhtar al-Fatwa, it is narrated from Imam Abu Yusuf (may Allah have mercy on him) that 'Inah (a type of credit sale) is permissible, and the one who practices it will be rewarded. However, Imam Muhammad (may Allah have mercy on him) said, "The evil of this sale is in my heart like mountains; it was invented by usurers." And the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said, "When you engage in 'Inah transactions and follow the tails of oxen (becoming preoccupied with worldly affairs), you will be humiliated, and your enemy will prevail over you." In Fath al-Qadir, it is stated that there is no dislike in 'Inah except that it is contrary to what is better (khilaf al-awla), because it involves turning away from the benevolent act of giving a loan. This view was upheld in Bahr al-Ra'iq, Nahr al-Fa'iq, Durr al-Mukhtar, Shurunbulaliyah, etc. Furthermore, in Fath al-Qadir, it is mentioned that Imam Abu Yusuf said this sale is not disliked because many Sahaba (Companions, may Allah be pleased with them) practiced it, praised it, and did not consider it usury (Riba). I say: Imam Abu Yusuf's statement that "many Sahaba practiced it" is a Mursal (disconnected) hadith in the terminology of Usul al-Fiqh. For according to us, as long as its chain of narration is not fully connected, it is generally [Mursal].

[Left Column - Arabic Source Text] ...tanzihiyah. It is stated in Radd al-Muhtar from al-Tahtawi from Abu Yusuf that al-'Inah is permissible; he who practices it is rewarded, as it is in Mukhtar al-Fatawa Hindiyyah. Muhammad said: "This sale is in my heart like the likeness of mountains, reprehensible; it was invented by the consumers of usury." And upon him be peace and blessings, he said: "When you trade in 'inah and follow the tails of cows, you will be humiliated and your enemy will prevail over you." It is said in al-Fath: "There is no dislike in it except as being contrary to what is better (khilaf al-awla), because of the turning away from the virtue of lending." Thus, it is finished (1). And it was affirmed in al-Bahr, al-Nahr, al-Durr, al-Shurunbulaliyah, and others. It is also stated in Fath al-Qadir: "Abu Yusuf said: This sale is not disliked because many of the Companions (may Allah be pleased with them) did it, and they were praised for it and did not count it as usury." Thus, it is finished (2). I say: Abu Yusuf's saying "many of the Companions (may Allah be pleased with them) did it" is Mursal in terms of principles, for according to us, what does not have its chain connected is generally [Mursal].

[Footnotes] 1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Sarf, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/444
2. Fath al-Qadir, Kitab al-Kafalah, Maktabah Nooriyah Razawiyyah, Sukkur, 6/324

फतावा रज़विया खंड 17

[दायां कॉलम - उर्दू पाठ] ...साबित नहीं हुई सिवाय कराहत-ए-तन्ज़ीही (मामूली नापसंदगी) के। रद्दुल मुहतार में तहतावी, आलमगीरी, और मुख़्तारुल फ़तवा में इमाम अबू यूसुफ़ (रहमतुल्लाह अलैहि) से वर्णित है कि ईना (एक प्रकार का व्यापार) जायज़ है, और इसे करने वाले को पुण्य मिलेगा। जबकि इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाह अलैहि) ने फ़रमाया कि इस व्यापार की बुराई मेरे दिल में पहाड़ों के बराबर है; इसे सूदखोरों ने ईजाद किया था। और नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया, "जब तुम ईना के ज़रिए व्यापार करोगे और बैलों की दुम के पीछे चलोगे (खेती-बाड़ी में मशगूल हो जाओगे), तो तुम ज़लील हो जाओगे और तुम्हारा दुश्मन तुम पर ग़ालिब आ जाएगा।" फ़तहुल क़दीर में फ़रमाया गया कि ईना में कोई कराहत नहीं है सिवाय इसके कि यह 'ख़िलाफ़-ए-औला' (बेहतर के ख़िलाफ़) है, क्योंकि इसमें क़र्ज़ देने के नेक सुलूक से मुँह मोड़ना है। और इसे बहरुर रईक़, नहरुल फ़ाईक़, दुर्रे मुहतार और शरनबलालिया वग़ैरह में बरक़रार रखा गया। साथ ही फ़तहुल क़दीर में है कि इमाम अबू यूसुफ़ ने फ़रमाया कि यह व्यापार मकरूह (नापसंद) नहीं है क्योंकि बहुत से सहाबा (रज़ियल्लाहु अन्हुम) ने इसे किया और इसकी तारीफ़ की और इसे सूद नहीं माना। मैं कहता हूँ: इमाम अबू यूसुफ़ का यह फ़रमाना कि "इसे बहुत से सहाबा ने किया", उसूल-ए-फ़िक़्ह की इस्लाह (परिभाषा) में हदीस-ए-मुरसल है, क्योंकि हमारे नज़दीक मुरसल हर उस हदीस को कहते हैं जिसकी...

[बायां कॉलम - अरबी मूल पाठ] ...तन्ज़ीह। रद्दुल मुहतार में तहतावी से, उन्होंने अबू यूसुफ़ से रिवायत की है कि अल-ईना जायज़ है और जो इस पर अमल करे उसे सवाब मिलेगा, जैसा कि मुख़्तारुल फ़तावा हिंदिया में है। मुहम्मद ने कहा: "यह बैअ (व्यापार) मेरे दिल में पहाड़ों की तरह है, निंदनीय; इसे सूदखोरों ने निकाला है।" और नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "जब तुम ईना के साथ तिजारत करोगे और गायों की पूंछ का पीछा करोगे, तो तुम अपमानित हो जाओगे और तुम्हारा दुश्मन तुम पर हावी हो जाएगा।" अल-फ़तह में कहा गया: "इसमें कोई कराहत नहीं है सिवाय ख़िलाफ़-ए-औला होने के, क्योंकि इसमें क़र्ज़ की नेकी से मुँह मोड़ना है।" (1) और अल-बहर, अन-नहर, अद-दुर्र, अल-शरनबलालिया और अन्य में इसकी पुष्टि की गई है। फ़तहुल क़दीर में भी कहा गया: "अबू यूसुफ़ ने कहा: यह व्यापार नापसंद नहीं है क्योंकि इसे कई सहाबा (रज़ियल्लाहु अन्हुम) ने किया, और इस पर उनकी प्रशंसा की गई और उन्होंने इसे सूद नहीं माना।" (2) मैं कहता

हूँ: अबू यूसुफ़ का यह कहना कि "इसे कई सहाबा ने किया" उसूल के लिहाज़ से मुरसल है, क्योंकि हमारे यहाँ जब तक सनद मुतसिल (जुड़ी हुई) न हो, वह मुतलक़ तौर पर [मुरसल है]।

[पाद-टिप्पणियाँ] 1. रद्दुल मुहतार, किताबुल सर्फ़, दार इहया अल-तुरास अल-अरबी, बेरुत, 4/444 2. फ़तहुल क़दीर, किताबुल कफ़ाला, मकतबा नूरया रज़विया, सक्खर, 6/324

पृष्ठ 466 का 715

[دایاں کالم] ثابت نہ ہوئی مگر کراہت تنزیہہ ، رد المحتار میں طحطاوی اس میں عالمگیری اس میں مختار الفتویٰ اس میں امام ابو یوسف رحمہ اللہ تعالیٰ سے ہے کہ عینہ جائز ہے اس کے کرنیوالے کو ثواب ملے گا، اور امام محمد رحمہ اللہ تعالیٰ نے فرمایا اس بیع کی برائی میرے قلب میں پہاڑوں کے برابر ہے اسے سود خوروں نے ایجاد کیا، اور نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا جب تم بطور عینہ خرید و فروخت کرو اور بیلوں کی دم کے پیچھے چلو تو ذلیل ہو جاؤ گے اور تمہارا دشمن تم پر غالب آجائے گا۔ فتح القدیر میں فرمایا عینہ میں کوئی کراہت نہیں سوا خلاف اولیٰ کے، اس لئے کہ اس میں قرض دینے کے اچھے سلوک سے روگردانی ہے انتہیٰ۔ اور اسے بحرالرائق اور نہر الفائق اور در مختار اور شرنبلالیہ وغیرہا نے برقرار رکھا نیز فتح القدیر میں ہے امام ابو یوسف نے فرمایا یہ بیع مکروہ نہیں اسلئے کہ بہت سے صحابہ رضی اللہ تعالیٰ عنہم نے اسے کیا اور اس کی تعریف کی اور اسے سود نہ ٹھہرایا انتہیٰ ، اقول: (میں کہتا ہوں) امام ابو یوسف کا فرمانا کہ اسے بہت سے صحابہ رضی اللہ تعالیٰ عنہم نے کیا، اصول فقہ کی اصطلاح پر حدیث مرسل ہے کہ ہمارے نزدیک مرسل ہر اس حدیث کو کہتے ہیں جس

[بایاں کالم - عربی متن] التنزیه قال فی رد المحتار عن الطحطاوی عن ابی یوسف العینة جائزة مأجور من عمل بها کذا فی مختار الفتاوی هندیة وقال محمد هذا البیع فی قلبی کأمثال الجبال ذمیم اخترعه أکلة الرباً وقال علیه الصلوة والسلام اذا تبایعتم بالعین واتبعتم اذناب البقر ذللتم وظهر علیکم عدوکم، قال في الفتح ولا کراهة فیه الاخلاف الاولی لما فیه من الاعراض عن مبرة القرض اه ۱ واقره علیه في البحر والنهر والدر و الشرنبلالیه و غیرها وقال ایضاً في فتح القدیر قال ابو یوسف لا یکره هذا البیع لانه فعله

كثير من الصحابة رضی الله تعالی عنهم وحمدوا علی ذلك ولم یعدوه من الربا اه ۲ ، اقول : قول ابی یوسف فعله كثير من الصحابة رضی الله تعالی عنهم مرسل اصولی فانه عندنا مالم یتصل سنده مطلقاً

[حواشی] ۱ ردالمختار كتاب الصرف داراحیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۴۴۴ ۲ فتح القدیر كتاب الكفاله مكتبه نوریہ رضویہ سكهر ۶ / ۳۲۴

Fatawa Rizvia, Volume 17

Distinguishing between its types and naming them Mursal, Munqati, Maqtu', and Mu'dal is merely a terminology of the scholars of Hadith (Muhaddithin) to signify the various forms that occur. As for the ruling, it is unified for us, and that is acceptance if it comes from a trustworthy narrator (thiqa), as we have researched in our book 'Munir al-Ayn fi Hukm Taqbeel al-Abhamain' (1313 AH), and it is explicitly mentioned in 'Musallam al-Thubut' and others. And what trustworthy person more reliable than Abu Yusuf do you seek? So, when its practice and praise are proven from many Companions (May Allah be pleased with them), there shall be no turning away from it, because the school of thought (Madhhab) of our Imam (May Allah be pleased with him) is to follow the Companions (May Allah be pleased with them). Indeed, the Messenger of Allah (Peace and blessings of Allah be upon him) commanded us to follow them. As for the Hadith 'When you engage in 'Inah' sale...', it was narrated by Ahmad, Abu Dawood, al-Bazzar, Abu Ya'la, and al-Bayhaqi from Nafi' from Ibn 'Umar (May Allah be pleased with them). Ibn Hajar said its chain (isnad) is weak, and Ahmad has another chain that is better than this. End of quote.

Footnotes: 1. Sunan Abu Dawood, Chapter on the Prohibition of 'Inah, Aftab-e-Alam Press, Lahore, 2/134; Musnad Ahmad bin Hanbal, narrated from Abdullah bin Umar (May Allah be pleased with him), Al-Maktab al-Islami, Beirut, 2/82, 22. 2. Mizan al-I'tidal.

Page 467 of 715

इसके प्रकारों के बीच अंतर करना और उन्हें मुरसल, मुन्क़ति, मक़तू और मुअज़ल नाम देना केवल हदीस के विद्वानों (मुहद्दिसीन) की एक शब्दावली है, जिसका उद्देश्य यह बताना है कि इसमें कितने रूप होते हैं। जहाँ तक आदेश (हुक्म) का सवाल है, वह हमारे निकट एक ही है, और वह यह है कि यदि कोई विश्वसनीय (सिक़ा) रावी मुरसल हदीस लाए तो वह स्वीकार्य है, जैसा कि हमने अपनी पुस्तक 'मुनीर अल-ऐन फी हुक्म तक़्बील अल-अभाहमीन' (1313 हिजरी) में शोध किया है, और 'मुसल्लम अल-सुबूत' आदि में इसका स्पष्ट उल्लेख है। और आपको अबू यूसुफ़ से बढ़कर और कौन सा विश्वसनीय व्यक्ति चाहिए? तो जब बड़ी संख्या में सहाबा-ए-किराम (रज़ियल्लाहु अन्हुम) से इसका करना और इसकी प्रशंसा सिद्ध हो गई, तो इससे विचलन नहीं होगा, क्योंकि हमारे इमाम (रज़ियल्लाहु अन्हु) का मज़हब सहाबा (रज़ियल्लाहु अन्हुम) का अनुसरण करना है। और वास्तव में अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने हमें उनके अनुसरण का आदेश दिया है। रही वह हदीस कि 'जब तुम ईना के माध्यम से खरीद-फरोख्त करोगे...', इसे इमाम अहमद, अबू दाऊद, बज़ार, अबू याला और बैहक़ी ने नाफ़े से, उन्होंने अब्दुल्ला बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया है। इमाम इब्न हजर ने कहा कि इसकी सनद कमज़ोर (ज़ईफ़) है, और इमाम अहमद के यहाँ इसकी एक और सनद है जो इससे बेहतर है। समाप्त।

पाद-टिप्पणियाँ: 1. सुनन अबू दाऊद, ईना की मनाही का अध्याय, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस, लाहौर, 2/134; मुस्नद अहमद बिन हंबल, अब्दुल्ला बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत, अल-मकतब अल-इस्लामी, बेरूत, 2/82, 22। 2. मीज़ान अल-इतिदाल।

पृष्ठ 467 का 715

والفرق بین انواعہ وتسمیتھا مرسلا ومنقطعا و مقطوعا ومعضلا مجرد اصطلاح من المحدثین لافادۃ ما یقع فیہ من الصور، اما الحکم فمتحد عندنا وھو القبول اذاکان من ثقۃ کما حققناہ فی کتابنا منیر العین فی حکم تقبیل الابہامین ۱۳۱۳ھ و نص علیہ فی مسلم الثبوت وغیرہ وای ثقۃ اوثق ترید من ابی یوسف فاذا صح عن کثیر من الصحابۃ رضی اللہ تعالٰی عنہم فعلہ و مدحہ لا یعدل عنہ لان مذہب امامنا رضی اللہ تعالٰی عنہ تقلید ھم رضی اللہ تعالٰی عنہم وقد امرنا رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم باقتدائہم اما الحدیث اذا تبایعتم بالعینۃ رواہ احمد و ابوداؤد والبزار وابویعلی و البیہقی عن نافع عن ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما قال ابن حجر سندہ ضعیف ولہ عند احمد اسناد آخر امثل من ھذا اھ کی سند متصل نہ ہو اور اس کے اقسام میں فرق کرنا اور ان کے جدا جدا نام مرسل و منقطع و مقطوع و معضل رکھنا یہ محدثین کی نری اصطلاح ہے جس سے یہ بتانا مقصود ہے کہ اس میں کتنی صورتیں ہوتی ہیں، رہا حکم وہ ہمارے نزدیک ایک ہے اور وہ یہ ہے کہ ثقہ اگر کوئی حدیث مرسل لائے تو مقبول ہے جیسا کہ ہم نے اپنی کتاب منیر العین فی حکم تقبیل الابہامین میں اس کی تحقیق بیان کی اور مسلم الثبوت وغیرہ میں اس کی تصریح فرمائی اور امام ابویوسف سے بڑھ کر تجھے اور کون سا ثقہ درکار ہے، تو جب بکثرت صحابہ کرام رضی اللہ تعالٰی عنہم سے اس کا کرنا اور اس کی تعریف ثابت ہوئی تو اس سے عدول نہ ہوگا اس لیے کہ ہمارے امام رضی اللہ تعالٰی عنہ کا مذہب صحابہ رضی اللہ تعالٰی عنہم کی تقلید ہے اور بیشک رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے ہمیں ان کی پیروی کا حکم دیا، رہی وہ حدیث کہ جب تم بطور عینہ خرید و فروخت کروگے اسے امام احمد و ابوداؤد و بزار و ابو یعلی و بیہقی نے نافع سے انہوں نے عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما سے

روایت کیا امام ابن حجر نے فرمایا اس کی سند ضعیف ہے اور امام احمد کے یہاں اس کی ایک سند اور ہے اس سے بہتر انتھی۔

حواشی: 1 سنن ابوداؤد باب فی النھی عن العینہ آفتاب عالم پریس لاہور ۲/ ۱۳۴، مسند احمد بن حنبل مروی از عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہ المکتب الاسلامی بیروت ۸۲/۲، ۲۲ 2 منیر الاعتدال

Fatawa Razawiya Volume (17)

[Arabic Section] In its chain of narration is Abu Abdur Rahman al-Khurasani Ishaq bin Usaid al-Ansari. Ibn Abi Hatim said he is not well-known. Abu Hatim said he should not be engaged with (his narrations are not to be relied upon). Al-Dhahabi said he is 'Jaiz al-Hadith' (permissible in narration), then he mentioned him again under the patronymics (kunyas) and counted this Hadith among his 'munkar' (rejected) reports. In At-Taqrib, it is stated that there is weakness in him. Imam al-Suyuti, in Al-Jami' al-Saghir, indicated its being 'Hasan' (fair). It has come through many routes for which Al-Bayhaqi dedicated a chapter in his Sunan and explained their flaws. I say: The apparent meaning of the text in Al-Fath (Fath al-Qadir) is that Imam Muhammad used this Hadith as evidence; thus, it is 'Sahih' (authentic). There is no doubt that when a Mujtahid cites a Hadith as proof, it constitutes an authentication of it, as conveyed by the Researcher (Al-Muhaqqiq) where he stated so generally in Al-Tahrir and elsewhere. Regardless, there is nothing in the Hadith that proves the prohibition of 'Bai' al-Inah'. Do you not see the statement of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) along with it: '...and you take hold of the tails of cows,' meaning you became occupied with farming.

[Urdu Section] And in the chain of Abu Dawood is Abu Abdur Rahman Khurasani Ishaq bin Usaid Ansari. Ibn Abi Hatim said he is not that famous, and Abu Hatim said he should not be worked with. Al-Dhahabi said he is 'Jaiz al-Hadith', then mentioned him again in the section on kunyas and counted this Hadith among his rejected (munkar) narrations. In Taqrib, it was stated that there is weakness in him. In short, this Hadith does not fall below the rank of 'Hasan' (fair). Imam Suyuti indeed marked it as Hasan in Jami' Saghir. This Hadith has come through many chains for which Al-Bayhaqi allocated a special section in his Sunan and described their flaws. I say: From the text of Fath al-Qadir, it appears that Imam Muhammad (may Allah have mercy on him) has established this Hadith as evidence. In this case, it is certainly Sahih because when a Mujtahid uses a Hadith for deduction, it is a judgment of that Hadith's authenticity, as the Muhaqqiq 'ala al-Itlaq [Ibn al-Humam] explained in Al-Tahrir and elsewhere. In any case, the Hadith contains no indication of the prohibition of 'Bai' al-Inah'. Do they not see the statement of the Prophet (may Allah Almighty send peace and blessings upon him) along with it: 'When you take hold of the tails of cows...'

[Footnotes] 1. Mizan al-I'tidal fi Naqd al-Rijal, Biography 737, Ishaq bin Usaid, Dar al-Ma'rifah Beirut, 1/182 and 4/547. 2. Mizan al-I'tidal fi Naqd al-Rijal, Biography 10378, Ishaq bin Usaid, Dar al-Ma'rifah Beirut, 4/547. 3. Taqrib al-Tahdhib, Biography 362,

Ishaq bin Usaid, Dar al-Kutub al-Ilmiyyah Beirut, 1/97. 4. Sunan Abu Dawood, Kitab al-Buyu', Chapter on the Prohibition of al-Inah, Aftab-e-Alam Press Lahore, 2/134.

फ़तावा रज़विया जिल्द (17)

[अरबी खंड] इसकी सनद में अबू अब्दुर रहमान अल-खुरासानी इसहाक बिन उसैद अल-अंसारी हैं। इब्न अबी हातिम ने कहा कि वह प्रसिद्ध नहीं हैं। अबू हातिम ने कहा कि उनसे काम न लिया जाए (उनकी रिवायत पर अमल न हो)। अल-ज़हबी ने कहा कि वह 'जायज़ुल हदीस' (हदीस में स्वीकार्य) हैं, फिर कुनियतों के खंड में उनका दोबारा ज़िक्र किया और इस हदीस को उनकी 'मुनकर' (अस्वीकृत) रिवायतों में गिना। 'तक़रीब' में कहा गया है कि उनमें कमज़ोरी है। इमाम सुयूती ने 'जामिअ सगीर' में इसके'हसन' होने का संकेत दिया है। यह हदीस कई रास्तों से आई है जिसके लिए अल-बैहक़ी ने अपनी सुनन में एक विशेष अध्याय रखा और उनकी कमियों को बताया। मैं कहता हूँ: 'फ़तहुल क़दीर' के कलाम से ज़ाहिर है कि इमाम मुहम्मद ने इस हदीस से दलील पकड़ी है; अतः यह 'सहीह' है। इसमें कोई संदेह नहीं कि जब कोई मुजतहिद किसी हदीस से दलील पेश करता है, तो वह उस हदीस की सेहत (प्रामाणिकता) का हुक्म होता है, जैसा कि मुहक़्क़िक़ (इब्न अल-हुमाम) ने 'अल-तहरीर' आदि में बयान किया है। बहरहाल, हदीस में 'बयई ईना' की मनाही पर कोई दलील नहीं है। क्या आप नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के इस इरशाद को नहीं देखते: '...और तुमने बैलों की दुमें पकड़ लीं', यानी खेती-बाड़ी में व्यस्त हो गए।

[उर्दू खंड] और अबू दाऊद की सनद में अबू अब्दुर रहमान खुरासानी इसहाक बिन उसैद अंसारी हैं, इब्न अबी हातिम ने कहा वो कुछ ऐसे मशहूर नहीं, और अबू हातिम ने कहा उनसे काम न रखा जाए, और ज़हबी ने कहा वो जायज़ुल हदीث हैं, फिर कुनियतों में उन्हें दोबारा ज़िक्र किया और इस हदीस को उनकी अहादीस-ए-मुनकरा से गिना और तक़रीब में फ़रमाया कि उनमें ज़ोफ़ (कमज़ोरी) है। अल-ग़रज़ यह हदीस दर्जा-ए-हसन से नीचे नहीं, और बेशक इमाम सुयूती ने जामिअ सगीर में इसके हसन होने की रम्ज़ (संकेत) लिखी और यह हदीस बहुत सनदों से आई जिनके लिए बैहक़ी ने अपनी सुनन में एक फ़स्ल ख़ास वज़अ की और उनकी इल्लतें बयान कीं। मैं कहता हूँ: कलाम-ए-फ़तहुल क़दीर से ज़ाहिर यह है कि इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाह अलैह) ने इस हदीث को हुज्जत ठहराया है तो इस सूरत में तो वो ज़रूर सहीह है इसलिए कि मुजतहिद जब किसी हदीث से इस्तदलाल करे तो वो उस हदीث की सेहत का हुक्म है जैसा कि मुहक़्क़िक़ अलल इतलाक़ ने तहरीर और उनके ग़ैर ने ग़ैर में इफ़ादा फ़रमाया। बहरहाल हदीث में बयई ईना की मुमानअत पर कोई दलालत नहीं, क्या इसके साथ नबी सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के इस इरशाद को नहीं देखते कि जब तुम बैलों की दुमें पकड़ो।

[पाद टिप्पणियाँ] 1. मीज़ान अल-इअतिदाल फ़ी नक़द अर-रिजाल, जीवनी 737, इसहाक बिन उसैद, दार अल-मआरिफ़त बेरूत, 1/182 और 4/547। 2. मीज़ान अल-इअतिदाल फ़ी नक़द अर-रिजाल, जीवनी 10378, इसहाक बिन उसैद, दार अल-मआरिफ़त बेरूत, 4/547। 3. तक़रीब अल-तहज़ीब, जीवनी 362, इसहाक बिन उसैद, दार अल-कुतुब अल-इल्मिया बेरूत, 1/97। 4. सुनन अबू दाऊद, किताब अल-बयूँ, अध्याय: ईना की मनाही, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस लाहौर, 2/134।

पृष्ठ 468/715

[عربی عبارت] وفي سند ہ ابوعبدالرحمٰن الخر اسانی اسحٰق بن اسید الانصاری، قال ابن ابی حاتم لیس بالمشہور وقال ابو حاتم لا یشتغل بہ وقال الذہبي جائز الحدیث ثم اعادہ في الکنی فعد الحدیث من مناکیرہ وقال في التقریب فیہ ضعف أھـ وقد رمز الامام السیوطی فی الجامع الصغیر لحسنہ وجاء من طرق کثیرۃ عقد لھا البیھقي باباً فی سننہ وبین عللھا، اقول: وظاھر کلام الفتح ان محمدا احتج بھذا الحدیث فاذا ھو صحیح ولا شك لان المجتھد اذا استدل بحدیث کان تصحیحا لہ کما افادہ المحقق حیث اطلق فی التحریر وغیرہ فی غیرہ وعلی کل فلیس في الحدیث ما یدل علی منعہ الا تری الی قولہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم معہ واخذتم اذناب البقر ای حرثتم

[اردو عبارت] اور ابوداؤد کی سند میں ابوعبدالرحمن خراسانی اسحاق بن اسید انصاری ہیں، ابن ابی حاتم نے کہا وہ کچھ ایسے مشہور نہیں، اور ابوحاتم نے کہا ان سے کام نہ رکھا جائے، اور ذہبی نے کہا وہ جائز الحدیث ہیں، پھر کنیتوں میں انہیں دوبارہ ذکر کیا اور اس حدیث کو ان کی احادیث منکرہ سے گنا اور تقریب میں فرمایا کہ ان میں ضعف ہے انتہی۔ بالجملہ یہ حدیث درجہ حسن سے نازل نہیں، اور بیشک امام سیوطی نے جامع صغیر میں اس کے حسن ہونے کی رمز لکھی اور یہ حدیث بہت سندوں سے آئی جن کیلئے بیہقی نے اپنی سنن میں ایک فصل خاص وضع کی اور ان کی علتیں بیان کیں، اقول: کلام فتح القدیر سے ظاہر یہ ہے کہ امام محمد رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ نے اس حدیث کو حجت ٹھہرایا ہے تو اس صورت میں تو وہ ضرور صحیح ہے اس لئے کہ مجتہد جب کسی حدیث سے استدلال کرے تو وہ اس حدیث کی صحت کا حکم ہے جیسا کہ محقق علی الاطلاق نے تحریر اور ان کے غیر نے غیر میں افادہ فرمایا بہر حال حدیث میں بیع عینہ کی ممانعت پر

کوئی دلالت نہیں کیا اس کے ساتھ نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے اس ارشاد کو نہیں دیکھتے کہ جب تم بیلوں کی دمیں پکڑو

[حواشی] ۱ میزان الاعتدال فی نقد الرجال ترجمہ ۷۳۷ اسحاق بن اسید دارالمعرفۃ بیروت ۱/ ۱۸۲ و ۴/ ۵۴۷ ۲ میزان الاعتدال فی نقد الرجال ترجمہ ۱۰۳۷۸ اسحاق بن اسید دارالمعرفۃ بیروت ۴/ ۵۴۷ ۳ تقریب التہذیب ترجمہ ۳۶۲ اسحاق بن اسید دارالکتب العلمیۃ بیروت ۱/ ۹۷ ۴ سنن ابو داؤد کتاب البیوع باب فی النہی عن العینۃ آفتاب عالم پریس لاہور ۲/ ۱۳۴

Fatwa Razawiyya Volume 17 (17)

[Arabic Text Section] "And you cultivated", as explained in 'Al-Fath'. He said: Because then they will abandon Jihad and their souls will become accustomed to cowardice. End. Rather, it is in the narration itself with the wording 'you grabbed the tails of cows and became satisfied with cultivation and abandoned Jihad.' [until the end of the] Hadith. It is known that cultivation is not forbidden, but rather it is the best form of earning after Jihad according to the majority. Some said: trade, then cultivation, then industry, as in 'Wajeez al-Kardari'. Therefore, when [the author of] 'Al-Inayah' used the Hadith as proof for its censure, the scholar Sa'di Effendi said: I say, if this were correct, then cultivation would also be condemned. End. And the reason for dislike (karahah) in 'Al-Hidayah', 'Al-Tabyin', 'Al-Durar', and others was not explained except as turning away from the virtue of lending. It added in 'Al-Hidayah' that it is following the blameworthy stinginess. And you know that turning away from a virtue does not necessitate a prohibition of dislike (Karahah al-Tahrim).

[Urdu Text Section] Meaning, engage in farming and agriculture as explained in Fath al-Qadir. He said this because at that time they will abandon Jihad and their nature will become accustomed to cowardice. End. Rather, the wording in the narration of Abu Dawood itself is: when you hold the tails of oxen and engage in farming and abandon Jihad, until the end of the hadith. And it is known that farming is not forbidden; rather, according to the majority, it is the best of all professions after Jihad. Some have said that after Jihad comes trade, then farming, then crafts, as is in Wajeez al-Kardari. Therefore, when in Al-Inayah, this hadith was brought as proof for the censure of 'Bay' al-'Einah' (a type of transaction), Allama Sa'di Effendi said: I say, if this proof were correct, then farming would also become blameworthy. And in Al-Hidayah, Al-Tabyin, and Al-Dur-al-Mukhtar etc., the only reason given for its dislike is that it involves turning away from the good deed of lending. In Al-Hidayah, it was added that it is by following blameworthy stinginess. And you know that turning away from a good deed does not lead to any prohibition of dislike.

[Footnotes] 1. Fath al-Qadir, Kitab al-Kafalah, Maktabah Razawiyah, Sukkur, 6/322. 2. Sunan Abi Dawud, Kitab al-Buyu', Chapter on the Prohibition of al-Einah, Aftab-e-Alam Press, Lahore, 2/134. 3. Hashiyah Effendi on the margin of Fath al-Qadir, Kitab al-Kafalah, Maktabah Nuriyah Razawiyah, Sukkur, 6/322. 4. Al-Hidayah, Kitab al-Kafalah, Matba' Yusufi, Lucknow, 3/24-123.

फ़तावा रज़विया जिल्द 17 (17)

[अरबी पाठ अनुभाग] "और तुमने खेती की", जैसा कि 'अल-फतह' में इसकी व्याख्या की गई है। उन्होंने कहा: क्योंकि तब वे जिहाद छोड़ देंगे और उनकी आत्मा कायरता की आदी हो जाएगी। इति। बल्कि, यह स्वयं रिवायत में इन शब्दों के साथ है: 'जब तुमने बैलों की पूंछ पकड़ ली और खेती से संतुष्ट हो गए और जिहाद छोड़ दिया।' [हदीस के अंत तक]। और यह ज्ञात है कि खेती वर्जित नहीं है, बल्कि बहुमत के अनुसार जिहाद के बाद कमाई का सबसे अच्छा रूप है। कुछ ने कहा: व्यापार, फिर खेती, फिर उद्योग, जैसा कि 'वजीज अल-करदरी' में है। इसलिए, जब 'अल-इनाया' के लेखक ने इस हदीस को इसकी निंदा के प्रमाण के रूप में इस्तेमाल किया, तो विद्वान सादी एफेंदी ने कहा: मैं कहता हूँ, यदि यह सही होता, तो खेती की भी निंदा की जाती। इति। और 'अल-हिदाया', 'अल-तबयीन', 'अल-दुरर' और अन्य में नापसंदगी (कराहियत) का कारण ऋण देने के पुण्य से विमुख होने के अलावा कुछ नहीं बताया गया। 'अल-हिदाया' में यह जोड़ा गया कि यह निंदनीय कंजूसी का अनुसरण करना है। और आप जानते हैं कि पुण्य से विमुख होना हराम होने वाली नापसंदगी (कराहियत-ए-तहरीमी) को अनिवार्य नहीं बनाता है।

[उर्दू पाठ अनुभाग] यानी खेती और कृषि में लग जाओ जैसा कि फत अल-क़दीर में इसकी व्याख्या की गई है। उन्होंने यह इसलिए कहा क्योंकि उस समय वे जिहाद छोड़ देंगे और स्वभाव नपुंसकता का आदी हो जाएगा। इति। बल्कि, अबू दाऊद की रिवायत में स्वयं ये शब्द हैं: 'जब तुम बैलों की पूंछ पकड़ो और खेती-बाड़ी में लग जाओ और जिहाद छोड़ दो' हदीस के अंत तक। और ज्ञात है कि खेती मना नहीं है बल्कि वह बहुमत के अनुसार जिहाद के बाद सभी पेशों से श्रेष्ठ है। और कुछ ने कहा कि जिहाद के बाद व्यापार, फिर कृषि, फिर शिल्प, जैसा कि वजीज करदरी में है। इसलिए जब इनाया में इस हदीस से बै-ए-ईना की निंदा पर प्रमाण लाया गया, तो अल्लामा सादी एफेंदी ने कहा कि मैं कहता हूँ अगर यह प्रमाण सही हो जाए तो कृषि भी निंदनीय हो जाएगी। और हिदाया, तबयीन और दुर्रे मुख्तार आदि में इसकी कराहियत (नापसंदगी) का केवल इतना प्रमाण बताया कि इसमें ऋण देने के नेक काम से विमुख होना है। हिदाया में इतना और अधिक कहा कि निंदनीय कंजूसी का पालन करके और तुझे ज्ञात है कि नेक काम से विमुख होना कुछ कराहियत-ए-तहरीम का कारण नहीं बनता।

[पाद लेख] 1. फतह अल-क़दीर, किताब अल-कफ़ाला, मकतबा रज़विया, सुक्कुर, 6/322। 2. सुनन अबी दाऊद, किताब अल-बुयू, बै-ए-ईना की मनाही पर अध्याय, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस, लाहौर,

2/134। 3. हाशियह एफेंदी, फतह अल-क़दीर के हाशिये पर, किताब अल-कफ़ाला, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 6/322। 4. अल-हिदाया, किताब अल-कफ़ाला, मतबा यूसुफी, लखनऊ, 3/24-123।

فتاوی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

[عربی عبارت] وزرعتم كما فسره به في الفتح قال لانهم حينئذ يتركون الجهاد و تألف النفس الجبن 1 اهـ بل هو في نفس رواية بلفظ اخذتم اذناب البقر ورضيتم بالزرع و تركتم الجهاد 2 الحديث و معلوم ان الزرع غير منهى عنه بل هو افضل وجوه الكسب بعد الجهاد عند الجمهور و قيل التجارة ثم الزراعة ثم الصناعة كما في وجيز الكردري لا جرم لما احتج في العناية بالحديث على ذمه قال العلامة سعدى أفندى اقول: لو صح ذلك تكون الزراعة مذمومة ايضا اهـ 3 ولم يعلل الكراهة فى الهداية والتبيين و الدرر وغيرها الا بالاعراض عن مبرة الاقراض زاد في الهداية مطاوعة لمذموم البخل 4 - وانت تعلم ان الاعراض عن مبرة لا توجب كراهة تحريم

[اردو ترجمہ و تشریح] یعنی کھیتی کروزراعت میں پڑو جیسا کہ اس کی یہ تفسیر فتح القدیر میں فرمائی، فرمایا اس لئے کہ وہ اس وقت جہاد چھوڑ دینگے اور طبیعت نامردی کی عادی ہوجائے گی انتہی بلکہ وہ نفس روایت ابوداؤد میں ان لفظوں سے ہے کہ جب تم بیلوں کی دمیں پکڑو اور کشت کاری میں پڑجاؤ اور جہاد چھوڑ دو آخر حدیث تک، اور معلوم ہے کہ کھیتی منع نہیں بلکہ وہ جمہور کے نزدیک جہاد کے بعد سب پیشوں سے افضل ہے، اور بعض نے کہا کہ جہاد کے بعد تجارت، پھر زراعت، پھر حرفت، جیسا کہ وجیز کردری میں ہے۔ ولٰہذا جبکہ عنایہ میں اس حدیث سے بیع عینہ کی مذمت پر دلیل لائے، علامہ سعدی آفندی نے فرمایا کہ میں کہتا ہوں اگر یہ دلیل صحیح ہو جائے تو زراعت بھی مذموم ہو جائے گی اور ہدایہ و تبیین و درمختار وغیرہا میں اس کی کراہت کی صرف اتنی دلیل بتائی کہ اس میں قرض دینے کی نیک سلوک سے روگردانی ہے، ہدایہ میں اتنا زیادہ فرمایا کہ بخل مذموم کی پیروی کرکے، اور تجھے معلوم ہے کہ نیک سلوک سے روگردانی کچھ کراہت تحریم کی

[حواشی] 1 فتح القدير كتاب الكفالة مكتبه رضويه سكهر ۶ / ۳۲۲ 2 سنن ابو داؤد كتاب البيوع باب في النهي عن العينة آفتاب عالم پريس لاہور ۲ / ۱۳۴ 3 حاشيہ آفندى ہامش فتح القدير كتاب الكفالة مكتبه نوريه رضويه سكهر ۶ / ۳۲۲ 4 الهدايه كتاب الكفالة مطبع يوسفى لكهنو ۳ / ۲۴ - ۱۲۳

Fatawa-e-Razawiya, Volume 17

Therefore, it is said in al-Fath that there is no harm in this, for the [extra] time is met with a portion of the price, and a loan is not perpetually obligatory upon him; rather, it is recommended (mandub). End of citation 1. And it is said in al-'Inayah that turning away from lending is not disliked (makruh), and the stinginess resulting from seeking profit in trade is likewise; otherwise, murabahah (cost-plus profit sale) would be disliked. End of citation 2.

I say: Rather, trade is but a name for seeking the bounty of your Lord, and bargaining in buying and selling is a Sunnah. Indeed, the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said that the one who is cheated is neither praised nor rewarded. This hadith was narrated by the authors of the Sunan from Imam Husayn bin 'Ali, by al-Tabarani in al-Mu'jam al-Kabir from Imam Hasan bin 'Ali, and by al-Khatib from our master 'Ali (may Allah Almighty honor them all). So, at most, it is a matter of karahat tanzihiyya (mild dislike), otherwise it is soundly established that the Companions did it and praised it. And al-Fadil 'Abd al-Halim, a contemporary of Allama al-Shurunbulali (may Allah Almighty have mercy on them both), writes in the marginalia of al-Durar that it is narrated from Imam Abu Yusuf that 'bay' al-'inah' (a type of credit sale) is permissible and rewardable because it involves fleeing from haram (the forbidden) and haram...

Majlis of Dawat-e-Islami

Footnotes: 1. Fath al-Qadir, Kitab al-Kafalah, Maktabah Nuriyyah Razawiyyah Sukkur, 6/324. 2. Al-'Inayah on the margin of Fath al-Qadir, Kitab al-Kafalah, Maktabah Nuriyyah Razawiyyah Sukkur, 6/324. 3. Al-Mu'jam al-Kabir li'l-Tabarani, Hadith 2732, al-Maktabah al-Faysaliyyah Beirut, 3/83.

फतवा-ए-रज़विया, खंड 17

इसलिए अल-फ़तह में कहा गया है कि इसमें कोई बुराई नहीं है, क्योंकि [अतिरिक्त] समय के बदले क़ीमत का एक हिस्सा होता है, और ऋण देना उस पर हमेशा अनिवार्य नहीं है; बल्कि यह अनुशंसित (मंदूब) है। संदर्भ 1 समाप्त। और अल-'इनाया में कहा गया है कि ऋण देने से इनकार करना नापसंद (मक़रूह) नहीं है, और व्यापार में लाभ चाहने से उत्पन्न होने वाला कंजूसीपन भी वैसा ही है; अन्यथा मुराबाहा (लाभ पर बिक्री) मक़रूह होती। संदर्भ 2 समाप्त।

मैं कहता हूँ: बल्कि व्यापार तो इसी का नाम है कि अपने रब का अनुग्रह (फ़ज़्ल) तलाश करो, और ख़रीद-ओ-फ़रोख़्त में मोल-भाव करना सुन्नत है। और बेशक, नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया कि ठगे जाने में न तो कोई प्रशंसा है और न ही सवाब (पुण्य)। यह हदीस सुनन के लेखकों ने इमाम हुसैन बिन अली से, अल-तबरानी ने अपनी मुअजम में इमाम हसन बिन अली से, और अल-ख़तीब ने मौला अली (अल्लाह उन सभी को सम्मानित करे) से वर्णित की है। तो अधिक से अधिक यह मक़रूहे तन्ज़ीही (मामूली नापसंदगी) है; अन्यथा यह सही रूप से स्थापित हो चुका है कि सहाबा किराम ने ऐसा किया और इसकी प्रशंसा की। और अल्लामा शरुनबुलाली के समकालीन फाजिल अब्दुल हलीम (अल्लाह उन दोनों पर दया करे) अल-दुरर के हाशिये में लिखते हैं कि इमाम अबू यूसुफ़ से वर्णित है कि 'बै-ए-ईना' (एक प्रकार की उधार बिक्री) जायज़ और सवाब का काम है क्योंकि इसमें हराम से बचना है और हराम...

मजलिस दावत-ए-इस्लामी

पाद-टिप्पणियाँ: 1. फ़तह अल-क़दीर, किताब अल-कफ़ाला, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 6/324. 2. अल-'इनाया, फ़तह अल-क़दीर के हाशिए पर, किताब अल-कफ़ाला, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 6/324. 3. अल-मुअजम अल-कबीर लित-तबरानी, हदीस 2732, अल-मकतबा अल-फ़ैसलिया बेरूत, 3/83.

पृष्ठ 470/715

ولذا قال في الفتح لابأس في هذا فان الاجل قابله قسط من الثمن والقرض غير واجب علیہ دائما بل هو مندوب اه ۱ وقال في العنایۃ الاعراض عن الاقراض لیس بمکروه والبخل الحاصل من طلب الربح في التجارات کذالك والالکانت المرابحة مکروهة ۲ اه، موجب نہیں، لہذا فتح القدیر میں فرمایا اس میں کچھ حرج نہیں کہ وعدہ کے مقابل تو ثمن کا ایک حصہ ہو لیا اور آدمی پر واجب نہیں کہ ہمیشہ قرض دیا کرے بلکہ وہ ایک نیک بات ہے انتہی، اور عنایہ میں فرمایا قرض دینے سے رو گردانی مکروہ نہیں اور اتنا بخل کہ آدمی تجارتوں میں نفع چاہے وہ بھی ایسا ہی ہے ورنہ نفع پر بیچنا مکروہ ہوتا انتہی، اقول: بل لیست التجارة الا ان تبتغوا فضلا من ربکم والمباکسة في المبایعة مسنونة ، وقد قال صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم المغبون لا محمود ولا مأجور ۳ رواہ اصحاب السنن عن الحسین بن علی والطبرانی فی الکبیر عن الحسن بن علی والخطیب عن سیدنا علی کرم اللہ تعالٰی وجوھھم الکرام ، فغایة ما فیه کراھة التنزیه والا فقد صح ان الصحابۃ فعلوه وحمدوه وفی حاشیۃ الفاضل عبدالحلیم معاصر العلامۃ الشرنبلالی رحمھما اللہ تعالی علی الدرر والمروی عن ابی یوسف انه قال العینۃ جائزۃ مأجورۃ لمکان الفرار فیھا عن الحرام و اقول: بلکہ تجارت تو اسی کا نام ہے کہ اپنے رب کا فضل تلاش کرو اور خرید وفروخت میں قیمت کم کرانا سنت ہے، اور بیشک نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا کہ غبن کھانے میں نہ ماموری نہ ثواب، یہ حدیث اصحاب سنن نے امام حسین اور طبرانی نے اپنی معجم میں امام حسن اور خطیب نے مولیٰ علی کرم اللہ تعالیٰ وجوہم الکرام سے روایت کی تو اس میں انتہا درجہ کراہت تنزیہ ہے ورنہ بصحت ثابت ہو لیا کہ صحابہ کرام نے اسے کیا اور تعریف فرمائی اور علامہ عبدالحلیم معاصر علامہ شرنبلالی رحمہما اللہ تعالیٰ

حاشیہ درر میں لکھتے ہیں امام ابو یوسف سے روایت یوں ہے کہ بیع عینہ جائز اور ثواب کا کام ہے اس لئے کہ اس میں حرام سے بھاگنا ہے اور حرام

Majlis of Dawat-e-Islami

۱ فتح القدیر کتاب الکفالۃ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۳۲۴ ۲ العنایۃ علی ہامش فتح القدیر کتاب الکفالۃ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۳۲۴ ۳ المعجم الکبیر للطبرانی حدیث ۲۷۳۲ المکتبۃ الفیصلیۃ بیروت ۳ / ۸۳

Fatawa Ridawiyyah (Volume 17)

Finding a legal device (hila) to avoid the forbidden (Haram) is recommended (mandub), because many of the Companions practiced it and were praised for it. It is evident from the context that the sentence "Finding a legal device to avoid the forbidden is recommended" is the statement of Imam Abu Yusuf (may Allah have mercy on him). Allah knows best. This is one of the proofs for it. Second proof: All scholars have clearly stated that when either the measure (qadr) or the genus (jins) is absent, excess is permissible. It is definitely known that a gold coin (dinar) and a silver coin (dirham), or a gold coin and a copper coin (fils), are not of the same genus. Therefore, their exchange with disparity must be permissible. So, from where would the prohibition (karahah al-tahrim) arise? The detailed analysis is that there are four scenarios for disparity: First, that the one with higher financial value also has a greater quantity. Second, its quantity is less, but its financial value is still higher, even many times more, like a gold ashrafi compared to a rupee. Third, its quantity is so small that its financial value also decreases compared to its equivalent. Fourth, its quantity decreases to the extent that both financial values become equal. All scholars have stated that when the genus is different, excess or deficiency is permissible. They did not restrict this to any specific scenario, so it encompasses all four. If there were a prohibition, only one of the four scenarios would be permissible, which is the fourth one. Furthermore, there is another aspect: two items of different genuses could be equal in quantity and also equal in financial value, and scholars have ruled on the permissibility of excess or deficiency...

[1] Hashiyah al-Durar by Abdul Halim, Book of Sales. Page 471 of 715

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

हराम से बचने के लिए कोई हिला (कानूनी उपाय) ढूँढना प्रशंसनीय (मंदूब) है, क्योंकि कई सहाबा ने ऐसा किया और इसके लिए उनकी प्रशंसा की गई। उनके संदर्भ से स्पष्ट है कि यह वाक्य "हराम से बचने के लिए हिला करना प्रशंसनीय है" इमाम अबू यूसुफ़ (रहमतुल्लाह अलैहि) का कथन है, और अल्लाह बेहतर जानता है। यह इसके प्रमाणों में से एक है। दूसरा प्रमाण: तमाम विद्वानों का स्पष्ट कथन है कि जब मात्रा (क़द्र) या जाति (जिंस) में से कोई एक अनुपस्थित हो, तो अधिकता जायज़ है। यह निश्चित रूप से ज्ञात है कि दीनार और दिरहम, या दीनार और पैसा एक ही जाति के नहीं हैं, इसलिए उनका जायज़ होना अनिवार्य है। तो फिर इसमें हराम होने की नापसंदगी (कराहते तहरीमी) कहाँ से आएगी? इसका विश्लेषण यह है कि असमानता (तफ़ाज़ुल) की चार स्थितियाँ हैं: पहली: जिसकी वित्तीय कीमत अधिक हो, उसकी मात्रा भी अधिक हो। दूसरी: उसकी मात्रा तो कम हो लेकिन वित्तीय कीमत अभी भी अधिक हो, बल्कि कई गुना अधिक, जैसे रुपए के साथ अशर्फ़ी। तीसरी: उसकी मात्रा इतनी कम हो कि उसकी वित्तीय कीमत भी उसके बदले से घट जाए। चौथी: उसकी मात्रा उस हद तक कम हो जाए कि दोनों की वित्तीय कीमत बराबर हो जाए। और सभी विद्वानों ने यही कहा है कि जब जाति अलग हो तो कमी-बेशी जायज़ है, और उन्होंने इसे किसी विशेष स्थिति के साथ सीमित नहीं किया, इसलिए यह चारों स्थितियों को शामिल करेगा। और अगर वहाँ कराहते तहरीमी होती, तो चारों स्थितियों में से केवल एक ही जायज़ होती और वह चौथी स्थिति है। फिर यहाँ एक और स्थिति है कि दो अलग जातियों की चीज़ें मात्रा में बराबर हों और उनकी वित्तीय कीमत भी समान हो, और विद्वानों ने कमी-बेशी के जायज़ होने का हुक्म दिया है...

[1] हाशिया अल-दुरर, अब्दुल हलीम कृत, किताबुल बुयूअ। पृष्ठ 471 का 715

الاحتیال للفرار عن الحرام مندوب ولانه فعله کثیر من الصحابة وحمدوا ذلك[1] اھ. وظاھر سیاقه ان جملة "والاحتیال للفرار عن الحرام مندوب" من کلام الامام ابي یوسف رحمه الله تعالی واللہ تعالی اعلم، ھذا احد الدلائل علیه والثانی: تصریحھم قاطبة ان القدر والجنس اذا عدم احدھما حل الفضل ومعلوم قطعاً ان الدینار والدرھم او الدینار والفلس لایتجانسان فیجب الحل فمن این تأتی کراھة التحریم، وتحقیقه ان للتفاضل اربع صور الاول: ان یکون الاکثر مالیة ھو الاکثر قدراً و الثانی: ان یکون اقل ولکن مالیة بعد زائدة بل اضعاف مضاعفة کالجنیة مع الربیة و الثالث: ان یکون اقل الی حد تنقص مالیته ایضا البدل و الرابع: ان یقل الی ان یتساوی المالیتان وھم قاطبة قالوا عند اختلاف الجنس حل التفاضل ولم یقیدوه بشیئ من الصور اصلا فیعمھا جمیعا ولو کانت ثم کراھة تحریم لم تحل الاصورة واحدة من الاربع وھي الرابعة ثم ھنا وجه آخر ان یکون جنسان متحدی المالیة عند اتحاد القدر وھم قد حکموا بحل التفاضل۔

سے بھاگنے کا حیلہ کرنا مستحب ہے اور اس لئے کہ بکثرت صحابہ نے اسے کیا اور اس کی تعریف فرمائی انتھی، اور ان کی روشن عبارت سے ظاہر یہ ہے کہ یہ جملہ بھی امام ابویوسف کا کلام ہے کہ حرام سے بھاگنے کا حیلہ کرنا مستحب ہے واللہ تعالیٰ اعلم، یہ صورت مذکورہ کے مکروہ تحریمی نہ ہونے کی ایک دلیل ہے، دلیل دوم: تمام علماء کی تصریح ہے کہ جب قدر یا جنس میں کوئی معدوم ہو تو زیادتی حلال ہے اور یقینا معلوم ہے کہ اشرفی اور روپیہ یا اشرفی اور پیسہ ایک جنس نہیں تو حلال ہونا واجب ہوا تو کراہت تحریمی کدھر سے آئیگی، اور تحقیق یہ ہے کہ زیادتی کی چار صورتیں ہیں: اول: یہ کہ جس کی مالیت زیادہ ہو اسی کی مقدار زیادہ ہو۔ دوسری: یہ کہ اسکی مقدار تو کم ہو مگر مالیت اب بھی زیادہ بلکہ کئی گنا بڑھ کر، جیسے روپے کے ساتھ اشرفی۔ تیسری: یہ کہ مقدار میں اتنی کم ہو کہ اس کی مالیت بھی اس کے مقابل سے گھٹ جائے،

چوتھی: یہ کہ اسکی مقدار اس حد تک کم ہو کہ دونوں مالیت میں برابر ہو جائیں، اور تمام علماء نے اتنا ہی فرمایا ہے کہ جب جنس مختلف ہو تو کمی بیشی جائز ہے اور اسے کسی خاص صورت کے ساتھ مقید نہ کیا تو چاروں صورتوں کو شامل ہوگا اور اگر وہاں کراہت تحریمی ہوتی تو چاروں صورتوں میں سے صرف ایک حلال ہوتی اور وہ چوتھی صورت ہے پھر یہاں ایک صورت اور ہے وہ یہ کہ دو جنس کی چیزیں مقدار میں برابر ہوں تو ان کی مالیت بھی یکساں ہو اور علماء نے کمی بیشی۔

[1] حاشية الدرر لعبد الحليم كتاب البيوع Page 471 of 715

[Header] Volume Seventeen (17) | Fatawa Razawiyya

[Main Content Table] Arabic Text (Left Column): ...and it necessitates disparity in value, so its lawfulness became obligatory. And the "Third": The saying of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), "When the two types differ, sell as you wish,"[1] so who is there to consider it a sin and prohibited as 'Makruh Tahrimi' (strongly disliked) despite the permission given by the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him)? And the "Fourth": What we mentioned earlier from 'Al-Khaniya' is that one pays a 'fals' (copper coin) in exchange for a 'dirham' (silver coin), so that is permissible and safety is achieved, meaning safety after a sin has occurred. And the "Fifth": Disparity between a dirham or a dinar or a fals and a dinar, for example, is only in value. If that were a cause for the dislike of prohibition because one of the contracting parties gained more and more profit than what the other gained, then this would be 'riba' (usury) upon him. It would then be necessary that the equality of the good and the bad in weight be 'Makruh Tahrimi' when the good exceeds the bad in a way that people do not deceive each other, such as its value being double its value or multiples thereof, because the mentioned cause is definitely present here as well. And a thing does not deviate from its cause, even though equality is what is commanded by Sharia, and likewise what is added by craftsmanship until it became...

Urdu Text (Right Column): ...declared the command of being lawful, and in this case, it necessitates an increase or decrease in value, so its being lawful became obligatory. Third evidence: The instruction of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) that when the genus is different, sell as you wish; so who is he who would declare it a sin and 'Makruh Tahrimi' while the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) has already given permission for it. Fourth evidence: That which we just related from Fatawa Qazi Khan that if one gives one paisa for a rupee, then it will be permissible and safety will be obtained, and what safety is there after being a sin. Fifth evidence: For example, there is no disparity between an ashrafi and rupees or a paisa and an ashrafi except in value; so if the dislike of prohibition were necessary on this basis that one of the two contracting parties found what is more in value and benefit, so it remained an excess for him, then it would be obligatory that the weight of the pure and the alloyed being equal be 'Makruh Tahrimi' whereas the price of the pure is so much more than the alloyed that people would not deceive each other in it, such as its value being double or many times its value, because the cause for the dislike of prohibition is certainly present here as

well, and the ruling does not fall behind its cause, even though Sharia has commanded the equality in weight for the alloyed and pure, and similarly that which...

[Footer] [1] Nasb al-Rayah li Ahadith al-Hidayah, Kitab al-Buyu', Al-Maktaba al-Islamiyya owned by Al-Haj Riyad al-Shaykh, 4/4. Page 472 of 715

[हेडर] जिल्द सत्रह (17) | फ़तावा रज़विया

[मुख्य सामग्री तालिका] अरबी पाठ (बायां कॉलम): ...और यह मालियत में विषमता को अनिवार्य करता है, इसलिए इसका हलाल होना वाजिब हुआ। और "तीसरा": नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का फरमान है कि "जब दो किस्में अलग हों, तो जैसे चाहो बेचो।"[1] तो वह कौन है जो इसे गुनाह और मकरूह तहरीमी (कठोरता से नापसंद) कहेगा, जबकि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने इसकी इजाजत दे दी है। और "चौथा": जो हमने अभी 'अल-खानिया' के हवाले से बयान किया कि दिरम (चांदी का सिक्का) के बदले एक फलस (तांबे का सिक्का) दे दिया जाए, तो वह जायज़ है और सुरक्षा हासिल होगी, यानी गुनाह होने के बाद कौन सी सुरक्षा। और "पांचवां": दिरम या दीनार या फलस और दीनार के बीच विषमता केवल मालियत (कीमत) में होती है। अगर इससे मकरूह तहरीमी लाज़िम आती इस आधार पर कि दोनों अनुबंध करने वालों में से एक को दूसरे से अधिक लाभ मिला, तो यह उस पर सूद होता। फिर यह वाजिब होगा कि अच्छे और खराब का वज़न में बराबर होना मकरूह तहरीमी हो, जबकि अच्छे की कीमत खराब से इतनी ज्यादा हो जिसमें लोग एक-दूसरे को धोखा न दें, जैसे कि उसकी मालियत दूसरे की मालियत से दुगुनी या कई गुना हो, क्योंकि मकरूह तहरीमी का वह कारण यहाँ भी निश्चित रूप से मौजूद है। और वस्तु अपने कारण से अलग नहीं होती, हालांकि शरीयत ने वज़न में बराबरी का हुक्म दिया है, और इसी तरह वह जो शिल्प कौशल के कारण बढ़ गया यहाँ तक कि...

उर्दू पाठ (दायां कॉलम): ...हलाल होने का हुक्म फरमाया और वह इस सूरत में मालियत की कमी बेशी को मुस्तलज़िम है तो उसका हलाल होना वाजिब हुआ। दलील सोम (तीसरी): नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का इरशाद कि जब जिन्स मुख्तलिफ हो तो जैसे चाहो बेचो; तो वह कौन है जो इसे गुनाह और मकरूह तहरीमी बताएगा हालांकि नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) इसकी इजाज़त फरमा चुके। दलील चहारुम (चौथी) वह जो अभी हम फ़तावा काज़ी खान से बयान कर आए कि रुपये के बदले एक पैसा दे दे तो यह जायज़ हो जाएगा और अमान (सुरक्षा) हासिल होगी, और गुनाह होने के बाद कौन सी अमान है। दलील पंजुम (पांचवीं): मसलन अशर्फी और रुपये या पैसा और अशर्फी में कमी बेशी नहीं मगर मालियत की; तो अगर इससे कराहत तहरीम लाज़िम होती इस बिना पर कि दोनों अकिदों (अनुबंध करने वालों) में से एक ने वह पाया जो मालियत और नफे में ज़ायद है तो उसको उस पर ज़ियादती रही, तो वाजिब होगा कि खरे और खोटे का वज़न में बराबर होना मकरूह तहरीमी हो जबकि खरे की कीमत खोटे से इतनी ज़ियादा हो जिसमें लोग एक दूसरे से गबन

(धोखा) न खाएं जैसे उसकी मालियत इसकी मालियत से दूनी या कई गुना हो, इसलिए कि कराहत तहरीम का वह मूजिब यहाँ भी यकीनन हासिल है और हुक्म अपने मूजिब से पीछे नहीं हटता, हालांकि खोटे खरे का वज़न में बराबर होना ही का शरअ ने हुक्म दिया है और ऐसे ही वह जो...

[फुटर] [1] नसब अल-राया ली अहादीस अल-हिदाया, किताब अल-बुयूँ, अल-मकतबा अल-इस्लामिया, मालिक अल-हाज रियाज़ अल-शेख, 4/4। पेज 715 का 472

[جدول] عربی متن (بایاں کالم): وھو یستلزم التفاضل فی المالیة فوجب حلہ، و"الثالث": قولہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم اذا اختلف النوعان فبیعوا کیف شئتم[1] ، فمن ذا الذی یعدہ معصیة و مکروھاً تحریماً مع اذن رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم فیہ و"الرابع" ما قدمنا انفاً عن الخانیة انہ یدفع فلساً عوضاً عن الدرھم فیجوز ذلك ویقع الامن ای امن بعد حصول المعصیة، و"الخامس": لیس التفاضل بین درھم او دینار او فلس و دینار مثلاً الا بالمالیة فان کان ذلك موجباً لکراھة التحریم لانہ حصل لاحد العاقدین اکثر واربح مما حصل لاخر فاربي ھذا علیہ یجب ان یکون مساواة الجید والردی وزناً مکروھاً تحریماً اذا ربی الجید علی الرد بمالا یتغابن فیہ الناس کأن تکون مالیتہ ضعف مالیتہ او اضعافھا لان موجبھا المذکور حاصل ھھنا ایضا قطعاً، والشیئ لا یتخلف عن موجبہ مع ان المساواة ھو المأمور بہ شرعاً وکذلك ما زاد بالصناعة حتی صارت

اردو متن (دایاں کالم): حلال ہونے کا حکم فرمایا اور وہ اس صورت میں مالیت کی کمی بیشی کو مستلزم ہے تو اس کا حلال ہونا واجب ہوا، دلیل سوم: نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا ارشاد کہ جب جنس مختلف ہو تو جیسے چاہو بیچو تو وہ کون ہے جو اسے گناہ اور مکروہ تحریمی بتائے گا حالانکہ نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم اس کی اجازت فرما چکے۔ دلیل چہارم وہ جو ابھی ہم فتاویٰ قاضی خان سے بیان کر آئے کہ روپے کے بدلے ایک پیسہ دے دے تو یہ جائز ہو جائے گا اور امان حاصل ہو گی اور گناہ ہونے کے بعد کون سی امان ہے۔ دلیل پنجم : مثلاً اشرفی اور روپے یا پیسہ اور اشرفی میں کمی بیشی نہیں مگر مالیت کی ، تو اگر اس سے کراہت تحریم لازم ہوتی اس بناء پر کہ دونوں عاقدوں میں سے ایک نے وہ پایا جو مالیت اور نفع میں زائد ہے تو اس کو اس پر زیادتی رہی تو واجب ہوگا کھرے اور کھوٹے کا وزن میں برابر ہونا مکروہ تحریمی ہو جبکہ

کھرے کی قیمت کھوٹے سے اتنی زیادہ ہو جس میں لوگ ایک دوسرے سے غبن نہ کھائیں جیسے اس کی مالیت اس کی مالیت سے دونی یا کئی گنا ہو اس لئے کہ کراہت تحریم کا وہ موجب یہاں بھی یقیناً حاصل ہے اور حکم اپنے موجب سے پیچھے نہیں ہٹتا حالانکہ کھوٹے کھرے کا وزن میں برابر ہونا ہی کا شرع نے حکم دیا ہے اور ایسے ہی وہ جو

[فٹر] [1] نصب الراية لا حاديث الهداية كتاب البيوع المكتبة الاسلامية لصاحبها الحاج رياض الشيخ ۴/۴ صفحہ 472 از 715

Fatawa Razawiyyah, Volume 17

[Arabic Text Translation] Its value is many times the value of its equivalent weight in raw gold or silver coins. In that case, equality in weight would lead to the same prohibitive dislike (Karahat-e-Tahrim) that you have stipulated, even though it is what is legally (Sharia-wise) obligatory. Thus, it would mean that the Shari'ah has made obligatory what is an act of disobedience. For that which is prohibited-as-detestable (Makruh Tahrimi) is forbidden, and committing it is a sin and an act of disobedience, even if it is a minor one, as stated in Al-Bahr, Al-Durr, and others. By persistence, it becomes a major sin. There is no doubt that the Shari'ah is too exalted to command an act of disobedience and make committing a sin obligatory. This is contrary to 'mildly detestable' (Makruh Tanzihi), for it is part of what is permissible (Mubah) and is certainly not part of disobedience. Sometimes Prophets, peace and blessings be upon them, purposefully do it to demonstrate its permissibility. That scholar from Lucknow slipped in his treatise on tobacco and classified 'Makruh Tanzihi' as a sin and persistence in it as a major sin. This is a gross error whose flaws I explained in an independent treatise named 'Jumal Mujalliyah an al-Makruh Tanziha laysa bi-Ma'siyah 130 AH'. The excuse that the Shari'ah has disregarded the consideration of financial value when the genus (of the items) is the same will be of no avail. For that is the crux of the discussion: if excess in financial value were a cause for sin in the eyes of the Shari'ah, why would it disregard its consideration when that involves nullifying its own objective, which is the protection of people's property?

[Urdu Text Translation] Due to craftsmanship, the price increases until its value becomes several times its weight in gold leaves or silver rupees. In that case, equality in weight would lead to the same prohibitive dislike (Karahat-e-Tahrimi) that you have determined, even though it is legally (Shara'i) obligatory. At that time, it would mean Shara' has made obligatory a thing which is a sin, because prohibitive dislike is forbidden and doing it is a sin, even if it is a minor one (Saghira), as clarified in 'Bahr-ur-Raiq', 'Durr-e-Mukhtar', etc., and by habit it becomes a major sin (Kabira). There is no doubt that Shara' is far above commanding disobedience or making it obligatory to commit a sin. This is unlike 'mildly detestable' (Makruh Tanzihi) which is among permissible acts and certainly not among acts of disobedience. Sometimes Prophets (peace be upon them) do it intentionally so its permissibility becomes evident. That scholar from Lucknow slipped in his treatise on 'Huqqa' (tobacco) and declared 'Makruh Tanzihi' to be a sin and persistence in it a major sin. This is a gross error whose flaw I have explained in an independent treatise named 'Jumal Mujalliyah an

al-Makruh Tanziha laysa bi-Ma'siyah 130 AH'. The excuse that in the case of items being of the same genus, Shara' has discarded the consideration of value, will not benefit at all. This is because this is the very first point of discussion: if in the eyes of Shara', an increase in value was a cause of sin, why did it discard its consideration, even though in doing so, the purpose of Shara' itself was being invalidated? What is that purpose? Protecting people's wealth.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 17

[अरबी पाठ का अनुवाद] शिल्प कौशल के कारण इसका मूल्य इसके बराबर वजन के कच्चे सोने या चांदी के सिक्कों के मूल्य से कई गुना अधिक हो जाता है। ऐसी स्थिति में, वजन में समानता उसी निषेधात्मक नापसंदगी (कराहते तहरीम) का कारण बनेगी जो आपने निर्धारित की है, जबकि यही शरई रूप से अनिवार्य है। इस प्रकार, इसका अर्थ यह होगा कि शरीयत ने वह अनिवार्य कर दिया है जो अवज्ञा का कार्य है। क्योंकि 'मक़रूहे तहरीमी' (निषिद्ध-जैसी नापसंदगी) मना है, और इसे करना पाप और अवज्ञा का कार्य है, चाहे वह छोटा ही क्यों न हो, जैसा कि अल-बहर, अल-दुर्र और अन्य ग्रंथों में कहा गया है। निरंतरता से यह एक बड़ा पाप बन जाता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि शरीयत अवज्ञा का आदेश देने और पाप करने को अनिवार्य बनाने से कहीं अधिक उच्च है। यह 'मक़रूहे तनज़ीही' (हल्की नापसंदगी) के विपरीत है, क्योंकि यह जायज़ (मुबाह) कार्यों का हिस्सा है और निश्चित रूप से अवज्ञा का हिस्सा नहीं है। कभी-कभी नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) जानबूझकर इसकी वैधता प्रदर्शित करने के लिए ऐसा करते हैं। लखनऊ के उस विद्वान ने तंबाकू पर अपने ग्रंथ में गलती की और 'मक़रूहे तनज़ीही' को पाप और उस पर डटे रहने को बड़ा पाप माना। यह एक भारी गलती है जिसकी खामियों को मैंने 'जुमल मुजल्लियाह अन अल-मक़रूह तनज़ीहा लैसा बि-मा'सिय्या 130 हिजरी' नामक एक स्वतंत्र ग्रंथ में स्पष्ट किया है। यह बहाना कि एक ही श्रेणी (जिंस) होने की स्थिति में शरीयत ने वित्तीय मूल्य के विचार को त्याग दिया है, किसी काम का नहीं होगा। क्योंकि यही चर्चा का मुख्य बिंदु है: यदि वित्तीय मूल्य में वृद्धि शरीयत की नज़र में पाप का कारण थी, तो उसने इसके विचार को क्यों त्याग दिया जबकि ऐसा करने में शरीयत के अपने उद्देश्य का हनन हो रहा था, जो कि लोगों की संपत्ति की रक्षा करना है?

[उर्दू पाठ का अनुवाद] शिल्प कौशल के कारण मूल्य बढ़ जाता है यहाँ तक कि इसकी कीमत इसके वजन के बराबर सोने के पत्तर या चांदी के रुपयों से कई गुना अधिक हो जाती है। ऐसी स्थिति में वजन में समानता उसी निषेधात्मक नापसंदगी (कराहते तहरीमी) का कारण बनेगी जो आपने निर्धारित की है, जबकि यही शरई रूप से अनिवार्य है। उस समय, इसका अर्थ यह होगा कि शरअ ने वह चीज़ अनिवार्य कर दी है जो पाप है, क्योंकि निषेधात्मक नापसंदगी मना है और इसे करना पाप है, भले ही वह छोटा (सग़ीरा) पाप हो, जैसा कि 'बहर-उर-राईक़', 'दुर्रे मुख़्तार' आदि में स्पष्ट किया गया है, और आदत डालने से यह बड़ा पाप (कबीरा) बन जाता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि शरअ अवज्ञा का आदेश देने या पाप करना अनिवार्य करने से बहुत ऊपर है। यह 'मक़रूहे तनज़ीही' के

विपरीत है जो जायज़ कार्यों में से है और निश्चित रूप से अवज्ञा में से नहीं है। कभी-कभी नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) जानबूझकर ऐसा करते हैं ताकि इसकी वैधता स्पष्ट हो जाए। लखनऊ के उस विद्वान ने तंबाकू(हुक्का) पर अपने ग्रंथ में गलती की और 'मक़रूहे तनज़ीही' को पाप और उस पर डटे रहने को बड़ा पाप करार दिया। यह एक भारी गलती है जिसकी खामी मैंने 'जुमल मुजल्लियाह अन अल-मक़रूह तनज़ीहा लैसा बि-मा'सिय्या 130 हिजरी' नामक एक स्वतंत्र ग्रंथ में स्पष्ट की है। यह बहाना कि एक ही जिंस (श्रेणी) होने की स्थिति में शरअ ने मूल्य के विचार को त्याग दिया है, बिल्कुल भी लाभदायक नहीं होगा। इसका कारण यह है कि यही चर्चा का सबसे पहला बिंदु है: यदि शरअ की नज़र में मूल्य में वृद्धि पाप का कारण थी, तो उसने इसके विचार को क्यों त्याग दिया, जबकि ऐसा करने में शरअ का अपना उद्देश्य ही निरस्त हो रहा था? वह उद्देश्य क्या है? लोगों की संपत्ति की रक्षा करना।

पृष्ठ 473/715

قیمتہ اضعاف قیمۃ مایساویہ وزناً من التبراو الدراہم یکون التساوی فیہ موجب لما اوجبتم بہ کراہۃ التحریم مع انہ ہو الواجب شرعاً فاذن یکون الشرع قد اوجب ماہو معصیۃ فان المکروہ تحریماً منہی عنہ وارتکابہ اثم و معصیۃ وان کانت صغیرۃ کما نص علیہ فی البحر والدر وغیرہما وبالاعتیاد یصیر کبیرۃ ولاشک ان الشرع متعال عن ان یأمر بمعصیۃ ویوجب ارتکاب اثم بخلاف المکروہ تنزیہاً فانہ من المباح ولیس من المعصیۃ قطعاً و ربما یتعمدہ الانبیاء علیہم الصلوۃ والسلام بیاناً للجواز، وقد زلت قدم ذاك اللکنوی فی رسالتہ فی الدخان فجعل المکروہ تنزیہاً من المعاصی والاصرار علیہ من الکبائر وھذہ مزلۃ فاحشۃ بینت عوارہا فی رسالۃ مستقلۃ سمیتھا "جمل مجلیۃ ان المکروہ تنزیہاً لیس بمعصیۃ ۱۳۰ھ" والاعتذار بان الشرع اھدر اعتبار المالیۃ عند اتحاد الجنس لایجدی نفعاً فان ذلک اول الکلام ان لوکان الاربا فی المالیۃ موجب المعصیۃ فی نظر الشرع فلم اھدر اعتبارھا مع مافیہ من ابطال مقصد نفسہ اعنی الشرع وھو صیانۃ اموال

صناعی کے سبب بڑھائے یہاں تک کہ اسکی قیمت اس کے ہم وزن پتر یا روپوں سے کئی گنا ہو جائے تو اس میں وزن کی برابری اسی کراہت تحریم کی موجب ہوگی جو تم نے قرار دی ہے حالانکہ وہی شرعاً واجب ہے تو اس وقت یہ ہوگا کہ شرع نے وہ چیز واجب کی جو گناہ ہے اس لئے کہ مکروہ تحریمی ممنوع ہے اور اس کا کرنا گناہ اگرچہ صغیرہ ہے جیسا کہ بحر الرائق و در مختار وغیرہما نے تصریح کی اور عادت ڈالے سے کبیرہ ہوجائے گا، اور شک نہیں کہ شرع اس سے بلند و بالا ہے کہ معصیت کا حکم دے اور گناہ کرنا واجب کرے بخلاف مکروہ تنزیہی کے کہ وہ مباح میں سے ہے اور معصیت میں سے یقیناً نہیں، کبھی انبیاء علیہم الصلوۃ والسلام اسے قصداً کرتے ہیں کہ اس کا جائز ہونا ظاہر ہوجائے اور انہیں لکھنوی کا حقہ کے رسالہ میں قدم پھسلا تو

مکروہ تنزیہی کو گناہ اور اس پر اصرار کو کبیرہ ٹھہرادیا اور یہ فاحش غلطی ہے کہ اس کا عیب میں نے ایک مستقل رسالہ میں بیان کیا اس کا نام "جمل مجلیۃ ان المکروہ تنزیھا لیس بمعصیۃ ۱۳۰ھ" رکھا اور یہ عذر کرنا کہ ایک جنس ہونے کی حالت میں شرع نے مالیت کا اعتبار ساقط فرما دیا ہے کچھ نفع نہ دے گا اس لئے کہ یہی تو پہلی بحث ہے کہ اگر شرع کی نظر میں مالیت کی زیادتی موجب معصیت تھی تو کیوں اس کا اعتبار ساقط فرما دیا حالانکہ اس میں خود مقصود شرع کا باطل کرنا تھا مقصود کیا ہے لوگوں کا اموال

Fatawa-e-Razvia (Vol. 17)

[Arabic Column] ...people's wealth is defined by its value. Facilitating those who consume interest towards their corrupt intentions is because their goal only relates to the value. So when they gain more value, they have achieved their aim, and they do not look at the increase or decrease in weight. Thus, it becomes clear that the increase in value is not considered by the Sharia, and it cannot possibly necessitate a prohibition (makruh tahrimi) at all. This is the intended point. Sixth: All original texts are overflowing with the permissibility of selling one copper coin (fels) for two. Bahr al-Raiq states that their intention is not specifically about selling one fels for two, but rather explaining the permissibility of inequality (tafadul). Even if one sold a fels for a hundred specific ones, it would be permissible according to both of them, i.e., according to the two Shaykhs (Imam Abu Hanifa and Imam Abu Yusuf), may Allah be pleased with them. What text could be clearer than this regarding the permissibility of inequality in value? Praise be to Allah. Yes, permissibility can coexist with 'dislikedness' (makruh tanzihi) as stated by scholars. Seventh: The mentioned 'ina transaction is based on inequality in value. It is not restricted to something like ten for twelve or thirteen as in Al-Khaniya, or fifteen as in Al-Fath. Rather, it has been depicted in the form of doubling as well. Al-Fath states...

[Urdu Column] Saving wealth and the reality of wealth is its value itself. In this, it is to facilitate the interest-eaters to reach their corrupt intention because their purpose is only related to value. When they receive more value, they have reached their goal, and their sight is not on the decrease or increase of weight. Thus, it became clear that the Sharia does not fundamentally consider an increase in value, so it is not possible for it to necessitate a prohibition (makruh tahrimi) at all. And this is the objective. Sixth Proof: All texts unanimously overflow with this explanation that selling one penny for two pennies is permissible. It is stated in Bahr al-Raiq that their intention is not specifically this, selling one penny for two, but rather the purpose is to explain that inequality is halal. To the extent that if one sells one penny for a hundred specified pennies, it is halal according to Imam-e-Azam and Imam Abu Yusuf (may Allah be pleased with them). And what clearer text than this can one want for the fact that inequality in value is permissible? Praise be to Allah. Yes, being halal can sometimes combine with 'dislikedness' (makruh tanzihi) as scholars have explained. Seventh Proof: The aforementioned 'ina, whose foundation itself is on inequality in value, and it is not limited to making twelve or thirteen out of ten as in

Fatawa Qazikhan or fifteen as in Fath al-Qadir, but rather the form of doubling is also explained in it. It is stated in Fath al-Qadir that one form of 'ina is...

1 Bahr al-Raiq, Chapter of Riba, HM Saeed Company Karachi 2/132

फतावा-ए-रजविया (खंड 17)

[अरबी कॉलम] ...लोगों का धन उसके मूल्य (मालियत) से पहचाना जाता है। सूदखोरों को उनके भ्रष्ट इरादों तक पहुँचाना इसलिए है क्योंकि उनका उद्देश्य केवल मूल्य से संबंधित होता है। इसलिए जब वे अधिक मूल्य प्राप्त कर लेते हैं, तो वे अपना लक्ष्य प्राप्त कर लेते हैं, और वे वजन की कमी या वृद्धि की ओर नहीं देखते हैं। इस प्रकार, यह स्पष्ट हो जाता है कि मूल्य में वृद्धि शरीयत द्वारा विचारणीय नहीं है, और यह संभव नहीं है कि यह किसी भी तरह से निषेध (मक़रूहे तहरीमी) का कारण बने। यही उद्देश्य है। छठा: सभी मूल ग्रंथ इस बात की स्पष्टता से भरे हुए हैं कि एक तांबे के सिक्के(फल्स) को दो के बदले बेचना जायज है। बहरुल रैक में कहा गया है कि उनका इरादा विशेष रूप से एक फल्स को दो के बदले बेचने से नहीं है, बल्कि विनिमय में असमानता (तफाजुल) की वैधता को समझाना है। यहाँ तक कि यदि किसी ने एक फल्स को सौ निश्चित सिक्कों के बदले बेचा, तो वह उन दोनों के अनुसार, यानी दोनों शेखों (इमाम अबू हनीफा और इमाम अबू यूसुफ), अल्लाह उन पर प्रसन्न हो, के अनुसार जायज होगा। मूल्य में असमानता की वैधता पर इससे स्पष्ट और कौन सा प्रमाण हो सकता है? अल्लाह का शुक्र है। हाँ, वैधता कभी-कभी 'नापसंदगी' (मक़रूहे तन्जीही) के साथ भी हो सकती है जैसा कि विद्वानों ने स्पष्ट किया है। सातवां: उल्लेखित 'ईना' लेनदेन मूल्य में असमानता पर आधारित है। यह केवल दस के बदले बारह या तेरह जैसी किसी चीज तक सीमित नहीं है जैसा कि अल-खनिया में है, या पंद्रह जैसा कि अल-फतह में है। बल्कि, इसे दोगुना करने के रूप में भी वर्णित किया गया है। अल-फतह में कहा गया है...

[उर्दू कॉलम] धन बचाना और धन की वास्तविकता उसका मूल्य ही है। इसमें सूदखोरों को उनके गलत इरादों तक पहुँचाना होगा कि उनका उद्देश्य केवल मूल्य से ही संबंधित है। जब उन्होंने अधिक मूल्य पा लिया तो वे अपनी मुराद तक पहुँच गए और वजन की कमी-बेशी की ओर उनकी नज़र नहीं है। तो ज़ाहिर हो गया कि मूल्य में अधिकता की ओर शरीयत मूल रूप से नहीं देखती, तो यह मुमकिन नहीं कि वह मूल रूप से मक़रूहे तहरीमी (गंभीर नापसंदगी) को अनिवार्य करे। और यही उद्देश्य है। छठी दलील: तमाम मूल ग्रंथ सर्वसम्मति से इस स्पष्टीकरण से भरे हुए हैं कि एक पैसा दो पैसे के बदले बेचना जायज़ है। बहरुल रैक में फरमाया गया कि उनकी मुराद विशेष रूप से यही नहीं है कि एक पैसा दो पैसे के बदले, बल्कि कमी-बेशी हलाल होने का बयान करना उद्देश्य है। यहाँ तक कि अगर एक पैसा सौ निश्चित पैसों के बदले बेचे तो इमाम-ए-आज़म और इमाम अबू यूसुफ (रज़ी अल्लाह ताला अन्हुमा) के नज़दीक हलाल है। और इससे बढ़कर इस पर और कौन सा स्पष्ट

प्रमाण कोई चाह सकता है कि मूल्य में कमी-बेशी जायज़ है? अल्हम्दुलिल्लाह। हाँ, हलाल होना कभी-कभी मक़रूहे तन्जीही के साथ जमा हो जाता है जैसा कि विद्वानों ने स्पष्ट किया है। सातवीं दलील: उल्लेखित 'ईना' कि उसकी बुनियाद ही मूल्य में कमी-बेशी पर है, और वह केवल इसी तक सीमित नहीं कि दस के बारह या तेरह करें जैसा कि फतावा काजीखाँ में है या पन्द्रह जैसा कि फत्हुल क़दीर में, बल्कि दोगुना होने की सूरत भी इसमें बयान की गई है। फत्हुल क़दीर में फरमाया कि 'ईना' की एक सूरत...

1 बहरुल रैक, बाबुल रिबा, एच एम सईद कंपनी कराची 2/132

[عربی کالم] النَّاسِ وَانَّمَا الْاَمْوَالُ بِالْمَالِيَّةِ وَفِيْهِ اِيصَالُ اَكَلَةِ الرِّبَا اِلىٰ قَصْدِهِمُ الْفَاسِدِ فَاِنَّ غَرَضَهُمْ اِنَّمَا يَتَعَلَّقُ بِالْمَالِيَّةِ فَاِذَا اَرْبَوْا فِيهَا فَقَدْ فَازُوا بِمرادهم ولا نظر لهم الى زيادة الوزن وقلته فتبين ان الاربا في المالية لانظر اليه للشرع ولا يمكن ان يوجب كراهة تحريم اصلا وهو المقصود، و السادس: طفحت المتون قاطبة بجواز بيع فلس بفلسين وقال في البحر ليس مرادهم خصوص بيع الفلس بالفلسين بل بيان حل التفاضل حتى لو باع فلسا بمائة على التعيين جاز عندهما أى عند الشيخين رضي الله تعالى عنهما واى نص تريد انص من هذا على حل التفاضل بالمالية والحمد لله ، نعم الحل قد يجامع كراهة التنزيه كما نصوا عليه، السابع: العينة المذكورة فإنما مبناها على التفاضل في المالية ولا يتقيد بنحو عشرة بإثنى عشر او ثلثة عشر كما في الخانية او خمسة عشر كما في الفتح بل صورت بصورت الضعف ايضا قال في الفتح من

[اردو کالم] مال بچانا اور مال کی حقیقت مالیت ہی ہے اور اس میں سود خوروں کو ان کے قصد فاسد تک پہنچانا ہوگا کہ ان کی غرض تو مالیت ہی سے متعلق ہے جب انہوں نے مالیت زیادہ پالی تو اپنی مراد کو پہنچے اور وزن کی کمی بیشی کی طرف ان کی نظر نہیں تو ظاہر ہوگیا کہ مالیت میں زیادتی کی طرف شرع اصلاً نظر نہیں فرماتی تو ممکن نہیں کہ اصلاً کراہت تحریم واجب کرے اور یہی مقصود ہے۔ دلیل ششم: تمام متون بالاتفاق اس تصریح سے لبریز ہیں کہ ایک پیسہ دو پیسے کو بیچنا جائز ہے اور بحر الرائق میں فرمایا کہ ان کی مراد خاص یہی نہیں ہے کہ ایک پیسہ دو پیسے کو بلکہ کمی بیشی حلال ہونے کا بیان مقصود ہے یہاں تک کہ اگر ایک پیسہ سو معین پیسے کو بیچے تو امام اعظم اور امام ابویوسف رضی اللہ تعالیٰ عنہما کے نزدیک حلال ہے اور اس سے بڑھ کر تو اس پر اور کون سا روشن تر نص چاہتا ہے کہ مالیت میں کمی بیشی روا ہے والحمد

اللہ، ہاں حلال ہونا کبھی کراہت تنزیہ کے ساتھ جمع ہو جاتا ہے جیسا کہ علماء نے تصریح فرمائی۔

دلیل ہفتم: عینہ مذکورہ کہ اس کی بناء ہی مالیت میں کمی بیشی پر ہے، اور وہ کچھ اسی پر بند نہیں کہ دس کے بارہ یا تیرہ کریں جیسا کہ فتاویٰ قاضیخان میں ہے یا پندرہ جیسا کہ فتح القدیر میں بلکہ دونا دون کی صورت بھی اس میں بیان کی گئی ہے، فتح القدیر میں فرمایا کہ عینہ کی ایک صورت

1 بحر الرائق باب الربا ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲/ ۱۳۲

Fatawa Rizvia (Volume 17)

Forms of 'Inah' (credit-sale transaction) are that one sells his goods to the borrower for two thousand on credit for a fixed term, then sends a middleman to buy it for himself for one thousand in cash and takes possession of it, then he (the middleman) sells it to the original seller for one thousand. Then the middleman transfers his seller (the borrower) to the original seller for the price he owes, which is one thousand in cash, so he (the original seller) pays it to the borrower and takes two thousand from him when it becomes due. [1] End. And if doubling is permissible, then multiple folds are also permissible. I say: The middleman is not necessary, rather it is possible that he (the lender) sells (a thousand-worth item) to the borrower for two thousand, and then the borrower sells it in the market for one thousand so that the item does not return to the lender. Because if it returns, it becomes prohibitively disliked (makrooh tahreemi) according to the researcher, although there is room for discussion here as buying back what one sold for less than what it was sold for is permissible by consensus when a third person is a mediator, and scholars have not recorded any sin in this. It has already been mentioned above from Faqih al-Nafs (Imam Qadhi Khan) regarding legal stratagems for escaping the forbidden. If the sin remains, then how can the stratagem be complete? Necessarily, Allama Abdul Halim stated in the annotations of 'al-Durar' that it appears to be karahat tanzihi (lightly disliked) whether...

[1] Fath al-Qadir, Book of Suretyship, Maktaba Nooriya Razavia, Sukkur, 6/324 Page 475 of 715

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

'ईना' (उधार बिक्री लेनदेन) के रूप यह हैं कि कोई अपना सामान उधार लेने वाले को एक निश्चित अवधि के लिए दो हज़ार में उधार बेचता है, फिर एक बिचौलिये को भेजता है जो इसे अपने लिए एक हज़ार नकद में खरीद कर कब्ज़ा कर लेता है, फिर वह (बिचौलिया) इसे मूल विक्रेता को एक हज़ार में बेच देता है। फिर बिचौलिया अपने विक्रेता (उधार लेने वाले) को उस कीमत के लिए मूल विक्रेता पर स्थानांतरित कर देता है जो उस पर बकाया है, यानी एक हज़ार नकद, इसलिए वह (मूल विक्रेता) इसे उधार लेने वाले को भुगतान करता है और नियत समय पर उससे दो हज़ार लेता है। [1] अंत। और यदि दुगुना करना जायज़ है, तो कई गुना करना भी जायज़ है। मैं कहता हूँ: बिचौलिया होना अनिवार्य नहीं है, बल्कि यह भी हो सकता है कि वह (ऋणदाता) उधार लेने वाले को (हज़ार मूल्य की चीज़) दो हज़ार में बेचे और उधार लेने वाला उसे बाज़ार में एक हज़ार में बेच दे ताकि वह सामग्री ऋणदाता की ओर वापस न लौटे। क्योंकि वापस लौटने की स्थिति में शोधकर्ता (मुहक़्क़िक़) के अनुसार वह मकरूहे तहरीमी (गंभीर रूप से नापसंद) हो जाएगा, हालाँकि यहाँ चर्चा की गुंजाइश है क्योंकि अपनी बेची हुई चीज़ को बेचे गए दाम से कम में खरीदना सर्वसम्मति (इज्मा) से जायज़ है जब तीसरा व्यक्ति मध्यस्थ हो, और विद्वानों ने इसमें कोई पाप दर्ज नहीं किया है। फ़क़ीह अल-नफ़्स (इमाम क़ाज़ी ख़ान) से ऊपर यह बात गुज़र चुकी है जहाँ उन्होंने हराम से बचने के हीलों (कानूनी युक्तियों) का वर्णन किया है। यदि पाप बना रहता है, तो हीला कैसे पूरा हो सकता है? अतः अल्लामा अब्दुल हलीम ने 'हवाशी दुरर' में फरमाया कि ज़ाहिर यही है कि कराहत तनज़ीही है चाहे...

[1] फ़तह अल-क़दीर, किताब अल-कफ़ाला, मकतबा नूरिय्या रज़विय्या, सुक्कुर, 6/324 पृष्ठ 475 का 715

فتاوی رضویہ (جلد ۱۷)

[عربی متن] صور العینة ان یبیع متاعه بالفین من المستقرض الی اجل ثم یبعث متوسطا یشتریه لنفسه بالف حالة ویقبضه ثم یبیعه من البائع الاول بالف ثم یحیل المتوسط بائعه علی البائع الاول بالثمن الذی علیه وهو الف حالة فید فعها الی المستقرض ویأخذ منه الفین عند الحلول ۱ اه واذجاز ضعف جازت الاضعاف، اقول: ولا یلزم المتوسط بل له ان یبیعه من المستقرض بالفین یبیعه المستقرض فی السوق بالف کیلا تعود العین الی المقرض فیکون مکروها تحریما فی بحث المحقق وان کان فیه للکلام مجال فان شراء ماباع بأقل مما باع جائز عند توسط ثالث بالاجماع ولم یذکروا فیه تأثیما وقد تقدم عن فقیه النفس فی حیل الفرار عن الحرام وانی تتم الحیلة مع بقاء المعصیة لاجرم قال العلامة عبد الحلیم فی حواشی الدرر الظاهر کراهة تنزیه سواء

[اردو ترجمہ] یہ ہے کہ اپنی متاع قرض لینے والے کے ہاتھ ایک وعدہ پر دو ہزار کو بیچے پھر کسی درمیانی شخص کو بھیجے کہ وہ اس سے اپنے لئے ہزار نقد کو خرید کر قبضہ کرلے پھر یہ درمیانی شخص پہلے شخص سے اسے ہزار کو بیچ ڈالے پھر وہ درمیانی اپنے بائع یعنی قرض لینے والے کا ثمن پہلے بائع پر اتار دے اور وہ ہزار روپے نقد ہیں تو پہلا بائع ہزار روپے قرض لینے والے کو دے دے اور وعدہ پر دو ہزار اس سے لے انتہی، اور جب دو گنا جائز ہوا تو کئی گنا بھی جائز ہے، اقول: (میں کہتا ہوں) اس درمیانی شخص کا ہونا ضرور نہیں بلکہ یہ بھی کر سکتا ہے کہ قرض لینے والے سے (ہزار کی چیز) دو ہزار کو بیچے وہ بازار میں ہزار کو بیچ لے تاکہ وہ متاع قرض دینے والے کی طرف عود نہ کرے کہ عود کرنے کی حالت میں محقق کے نزدیک مکروہ تحریمی ہو جائے گی، اگرچہ اس میں کلام کی گنجائش ہے کہ اپنی بیچی ہوئی چیز جتنے کو بیچی ہے اس سے کم کو خریدنا بالاجماع جائز ہے جبکہ تیسرا شخص متوسط ہے اور علماء نے

اس میں کوئی گناہ تحریر نہیں فرمایا اور امام فقیہ النفس قاضی خان سے یہ امر اوپر گزر چکا جہاں انہوں نے حرام سے بھاگنے کے حیلے بیان فرمائے اور اگر معصیت باقی رہے تو حیلہ کہاں پورا ہو، لاجرم علامہ عبدالحلیم نے حواشی درر میں فرمایا ظاہر یہ ہے کہ کراہت تنزیہی ہے چاہے

۱ فتح القدیر کتاب الکفالۃ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶/ ۳۲۴ Page 475 of 715

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Arabic Text Column] ...whether all of what was paid or part of it returns to the payer first. [1]Consider this. Eighthly: They stipulated for the permissibility of the executor buying the orphan's property for himself or selling his own property to the orphan that there must be benefit for the orphan. They set this at double the value for real estate and one and a half times for others, [2]as in al-Khaniyyah and al-Hindiyyah. They also stipulated for the permissibility of selling the orphan's property to a stranger, if the minor is not in need of its price and there is no debt upon the estate that cannot be fulfilled except by it, that he sells it at double the price. It says in al-Hindiyyah from al-Muhit al-Sarakhsi and upon it is the fatwa: [3]This is a disparity in wealth commanded by Sharia. Ninthly: What has preceded from al-Fath and other reliable sources from his saying: If a piece of paper were sold for a thousand, it is permissible and not disliked. [4]Tenthly: In the chapter on Riba from Radd al-Muhtar on the authority of al-Dhakhirah: If wheat is given to a baker in bulk and bread is taken piecemeal, the owner of the wheat should sell a ring or a knife from the baker for a thousand maunds of bread, for example.

[Urdu Text Column] ...the goods that were given should return entirely to the giver, or a part of it, or nothing. Consider this. Eighth Argument: If an executor wants to buy an orphan's property himself or sell his own property to him, scholars have stipulated for its permissibility that there must be profit for the orphan in this transaction. The amount of this profit was set at double for immovable property and one and a half times for movable property, as it is in Fatawa Qazi Khan and Fatawa Alamgiri. And if the executor wants to sell the orphan's property to someone else, and the minor does not need its price, and there is no debt on the deceased that cannot be paid without selling it, then in this case, the condition for the permissibility of sale is that it be sold for double the price. It is quoted in Hindiyyah from Muhit Sarakhsi that the fatwa is based on this. So, this increase or decrease in value is commanded by Sharia itself. Ninth Argument: That which passed from Fath al-Qadir and other reliable books, that if a piece of paper is sold for a thousand rupees, it is permissible and not disliked. Tenth Argument: From Radd al-Muhtar's chapter on Riba, citing Dhakhirah, when wheat is given to a baker all at once and bread is taken bit by bit, then it is appropriate that the wheat owner sell a ring or a knife to the baker, for example, for a thousand maunds of bread.

[Footnotes] 1. Hashiya al-Durar by Abdul Halim 2. Fatawa Hindiyyah, Chapter 17 on the Sale of the Father/Executor, etc., Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/176 3. Fatawa

Hindiyyah, Chapter 17 on the Sale of the Father/Executor, etc., Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/176 4. Fath al-Qadir, Book of Kafalah, Maktaba Nooriya Razawiyya Sukkur, 6/324

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

[अरबी पाठ स्तंभ] ...चाहे जो कुछ भुगतान किया गया वह पूरा या उसका कुछ हिस्सा पहले भुगतान करने वाले के पास वापस आए। [1]विचार करें। आठवीं बात: उन्होंने वसी (निष्पादक) द्वारा अनाथ की संपत्ति स्वयं के लिए खरीदने या अपनी संपत्ति अनाथ को बेचने की अनुमति के लिए यह शर्त रखी कि इसमें अनाथ का लाभ हो। उन्होंने अचल संपत्ति (जायदाद) के लिए इसे दोगुना और अन्य के लिए डेढ़ गुना रखा है, [2]जैसा कि अल-खानिया और अल-हिंदिया में है। उन्होंने अनाथ की संपत्ति को किसी अजनबी को बेचने की अनुमति के लिए यह शर्त भी रखी है कि यदि नाबालिग को उसकी कीमत की आवश्यकता नहीं है और संपत्ति पर ऐसा कोई ऋण नहीं है जिसे बेचे बिना नहीं चुकाया जा सकता, तो वह उसे दोगुनी कीमत पर बेचे। अल-हिंदिया में मुहीत-ए-सरख़सी के हवाले से कहा गया है और इसी पर फतवा है: [3]यह धन का वह अंतर है जिसका आदेश शरीयत द्वारा दिया गया है। नौवीं बात: जो अल-फतह और अन्य विश्वसनीय स्रोतों से उनके इस कथन से पहले आ चुका है: यदि कागज का एक टुकड़ा एक हजार में बेचा जाता है, तो यह जायज़ है और मकरूह नहीं है। [4]दसवीं बात: रद-उल-मुहतार के'रिबा' अध्याय में 'ज़खीरा' के हवाले से: यदि गेहूं एक बेकर को थोक में दिया जाता है और रोटी टुकड़ों में ली जाती है, तो गेहूं के मालिक को बेकर से एक अंगूठी या चाकू उदाहरण के लिए, एक हजार मन रोटी के बदले बेचना चाहिए।

[उर्दू पाठ स्तंभ] ...जो माल दिया गया वह पूरा देने वाले के पास वापस आ जाए, या उसका कुछ हिस्सा या कुछ भी नहीं। विचार करें। आठवीं दलील: यदि वसी अनाथ का माल खुद खरीदना या अपना माल उसके हाथ बेचना चाहे तो इसके जायज़ होने के लिए विद्वानों ने यह शर्त रखी है कि इस खरीद-फरोख्त में अनाथ का लाभ हो और इस लाभ की मात्रा अचल संपत्ति में दोगुनी रखी गई और चल संपत्ति में डेढ़ गुना, जैसा कि फ़तावा क़ाज़ी खान और फ़तावा आलमगीरी में है और यदि वसी अनाथ का माल किसी दूसरे के हाथ में बेचना चाहे और नाबालिग को उसकी कीमत की आवश्यकता न हो और न ही मृतक पर कोई ऋण हो कि जिसे बेचे बिना पूरा न किया जा सके तो इस स्थिति में बिक्री के जायज़ होने की यह शर्त लगाई गई कि वह दोगुनी कीमत पर बेचे। हिंदिया में मुहीत-ए-सरख़सी से उद्धृत है कि इसी पर फतवा है। तो मूल्य में इस उतार-चढ़ाव का आदेश स्वयं शरीयत की ओर से है। नवीं दलील: वह जो फ़तह-उल-क़दीर आदि विश्वसनीय किताबों से गुज़रा कि यदि एक कागज़ हज़ार रुपये में बेचा जाए तो जायज़ है और मकरूह नहीं। दसवीं दलील: रद-उल-मुहतार के रबा अध्याय में 'ज़खीरा' से है कि जब बेकर को गेहूं एक साथ दे दिया जाए और रोटी थोड़ी-थोड़ी

करके ली जाए, तो उचित है कि गेहूं वाला बेकर के हाथ एक अंगूठी या चाकू उदाहरण के लिए, हज़ार मन रोटी के बदले बेच दे।

[फुटनोट] 1. हाशिया अल-दुरर - अब्दुल हलीम 2. फ़तावा हिंदिया, अध्याय 17, पिता/वसी की बिक्री आदि के बारे में, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/176 3. फ़तावा हिंदिया, अध्याय 17, पिता/वसी की बिक्री आदि के बारे में, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/176 4. फ़तह-उल-क़दीर, कफ़ाला की किताब, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 6/324

[عربی متن] كان في صورة عود كل المدفوع او بعضه الى الدافع اولا ١ تدبر، و الثامن: شرطوا الجواز شراء الوصى مال اليتيم لنفسه او بيعه مال نفسه له الخيرية لليتيم وجعلوها في العقار بالضعف و في غيرها بمثل ونصف ٢ كما في الخانية والهنديه وشرطوا الجواز بيعه مال اليتيم من اجنبى ان لم تكن للصغيره حاجة الى ثمنه ولا على البيت دين لا وفاء له الابه ان يبيعه بضعف القيمة قال في الهندية عن محيط السرخسى وعليه الفتوى ٣ فهذا تفاضل في المالية ما موربه من جهة الشرع، و التاسع: ما تقدم عن الفتح وغيره من المعتمدات من قوله لو باع كاغذة بالف يجوز ولا يكره ۴ و العاشر : في باب الربا من ردالمحتار عن الذخيرة اذا دفع الحنطة الى خباز جملة واخذ الخبز مفرقا ينبغي ان يبيع صاحب الحنطة خاتما او سكينا من الخباز بالف من من

[اردو متن] جو متاع دی وہ پوری دینے والے کی طرف عود کر آئے یا اس کا حصہ یا کچھ نہیں، تدبر، دلیل ہشتم : وصی اگر یتیم کا مال خود خرید نا یا اپنا مال اس کے ہاتھ بیچنا چاہے تو اس کے جواز کے لئے علماء نے یہ شرط فرمائی ہے کہ اس خرید وفروخت میں یتیم کا نفع ہو اور اس نفع کی مقدار جائداد غیر منقولہ میں دو چند رکھی اور منقولہ میں ڈیوڑھنی ، جیسا کہ فتاوی قاضی خان اور فتاوی عالمگیری میں ہے اور وصی اگر یتیم کا مال کسی دوسرے کے ہاتھ میں بیچنا چاہے اور نابالغ کو اس کی قیمت کی ضرورت نہ ہو اور نہ مورث پر کوئی دین ہو کہ بغیر اس کے بیچے پورا نہ ہو تو اس صورت میں جواز بیع کی یہ شرط لگائی کہ دونی قیمت پر بیچے ، ہندیہ میں محیط سرخسی سے نقل کیا کہ اسی پر فتوی ہے تو مالیت کی اس کمی بیشی کا خود شرع کی طرف سے حکم ہے، دلیل نہم : وہ جو فتح القدیر وغیرہ معتمد کتابوں سے گزرا کہ اگر ایک کاغذ ہزار روپے کو بیچا تو جائز ہے اور مکروہ نہیں _ دلیل دہم : ردالمحتار کے باب ربا میں ذخیرہ سے ہے

جب نانبائی کو گیہوں اکٹھے دے دے اور روٹی تھوڑی تھوڑی کرکے لی تو یوں چاہئے کہ گیہوں والا نانبائی کے ہاتھ ایک انگوٹھی یا چاقو مثلاً ہزار من روٹی

[حواشی] 1 حاشیة الدرر لعبد الحلیم 2 فتاویٰ ہندیہ الباب السابع عشر فی بیع الاب الوصی الخ نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۱۷۶ 3 فتاویٰ ہندیہ الباب السابع عشر فی بیع الاب الوصی الخ نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۱۷۶ 4 فتح القدیر کتاب الکفالة مکتبه نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۳۲۴

Fatawa Razawiya (Volume 17)

...bread for example etc. And where can a knife stand compared to a thousand maunds of bread, and such examples, if we were to narrate them, we would not be able to count them. The reason we have descended here after the sixth argument is that what the scholars said—that something should be added to the side where the weight is less—is absolute in their discourse, whether it is price or merchandise, and whether it is from the ribawi (usury-related) assets or not. This is the ultimate investigation of the matter. As for the discourse of Sheikh Abdul Halim, I say: Firstly, the obligation for precaution is not the obligation of the thing in itself. There is no doubt that leaving something that is harmless for fear of something that is harmful is a type of precaution in religion. This is achieved only in the manner he mentioned, so it became one of its obligations, as a necessary condition for a thing is that without which the thing cannot be achieved. Secondly, in common parlance, 'obligatory' (wajib) is sometimes applied to 'recommended' (mandub). Among such instances is the statement in Durr [al-Mukhtar] that there is no harm in saying Takbir after the Eid prayer because Muslims have inherited it from their predecessors, so it became obligatory to follow them. End. And Al-Shami, in another place, cited an example for this, saying that in common parlance people say "Your right is obligatory upon me," and in the book...

---

1 Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu, Bab al-Riba, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut 2/186
2 Durr al-Mukhtar, Bab al-Idayn, Mujtabai Delhi 1/171 Page 477 of 715

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

...उदाहरण के लिए रोटी आदि। और कहाँ एक चाकू और कहाँ हज़ार मन रोटी, और इसके जैसे उदाहरण यदि हम बयान करने बैठें तो उनका घेराव नहीं कर सकेंगे। और छठी दलील के बाद जो हम यहाँ तक उतर आए, उसकी वजह यह है कि विद्वानों ने जो फ़रमाया था कि जिस तरफ़ वज़न की कमी है वहाँ कोई चीज़ मिला दी जाए, वह उनके कलाम में मुतलक़ (निरपेक्ष) है, चाहे वह कीमत हो या माल, और चाहे वह रबावी (ब्याज से संबंधित) संपत्तियों में से हो या नहीं। तो यह मसले की तहकीक़ (जांच) की इंतहा है। रही बात फाज़िल अब्दुल हलीम रूमी के कलाम की, तो मैं कहता हूँ: पहला: एहतियात (सावधानी) के लिए किसी चीज़ का वाजिब (अनिवार्य) होना उसका स्वतः वाजिब होना नहीं है। इसमें कोई शक नहीं कि ख़राबी के डर से जिस चीज़ में ख़राबी नहीं है उसे छोड़ना दीन में एहतियात की श्रेणी में आता है। और यह उसी तरह हासिल होगा जैसा उन्होंने ज़िक्र किया, तो यह उसके वाजिबात में से हुआ, क्योंकि किसी चीज़ के लिए वाजिब वही है जिसके बिना वह चीज़ हासिल न हो। दूसरा: अक्सर उरफ़ (सामान्य बोलचाल) में मुस्तहब (पसंदीदा) को वाजिब कह देते हैं। इसी में से 'दुर्रे मुख़्तार' का यह कथन है कि ईद की नमाज़ के बाद तकबीर कहने में कोई हर्ज नहीं है क्योंकि यह मुसलमानों में पूर्वजों से चला आ रहा है, इसलिए उनका अनुसरण वाजिब हुआ। इति। और शामी ने दूसरी जगह इसकी एक नज़ीर (मिसाल) यह बयान की है कि उरफ़ में कहते हैं "तेरा हक़ मुझ पर वाजिब है" और किताब में...

---

1 रद्दुल मुहतार, किताबुल बुयूअ, बाबुर रिबा, दार एहयाउत तुरास अल-अरबी, बेरूत 2/186 2 दुर्रे मुख़्तार, बाबुल ईदैन, मुजतबाई दिल्ली 1/171 पृष्ठ 477/715

الخبز مثلاً الخ و این یقع سکین من الف من من الخبز و نظائر هذالوسرد ناها لم نستطع احصاءها و انها تنزلنا بعد السادس الی هنا لان کلامهم في المضموم الاقل مطلق من ان یکون من الاثمان او الاعیان ومن الاموال الربویة او من غیرها فهذا غایة تحقیق المسألة۔ کو بیچے الخ اور بھلا کہاں چاقو اور کہاں ہزار من روٹی اور اس کے نظائر اگر ہم بیان کرتے جائیں تو ان کا احاطہ نہ کرسکیں گے اور دلیل ششم کے بعد جو ہم یہاں تک اتر آئے اس کی وجہ یہ ہے کہ وہ جو علماء نے فرمایا تھا کہ جس جانب وزن کی کمی ہے کوئی چیز ملا دی جائے وہ ان کے کلام میں مطلق ہے خواہ ثمن ہو یا متاع اور اموالِ ربویہ سے ہو یا نہیں تو یہ تحقیق مسئلہ کی انتہا ہے ، رہا فاضل عبدالحلیم رومی کا کلام اقول: اولاً : حصولِ احتیاط کیلئے کسی شئی کا وجوب اس کا فی نفسہ وجوب نہیں اور شک نہیں کہ خرابی کے ڈر سے جس چیز میں خرابی نہیں اسے چھوڑنا دین میں احتیاط کے قبیل سے ہے اور یہ اسی طور پر حاصل ہوگا جو انہوں نے ذکر کیا احتیاط کے واجبات سے ہوا کہ کسی شے کے لئے واجب وہی ہے جس کے بغیر شے حاصل نہ ہو ، ثانیاً : اکثر عرف میں مستحب کو واجب کہتے ہیں اور اسی میں سے ہے درمختار کا یہ قول کہ نماز عید کے بعد تکبیر کہنے میں کوئی حرج نہیں اس لئے کہ یہ مسلمانوں میں سلف سے چلا آتا ہے تو ان کی پیروی واجب ہوئی انتہی ، اور شامی نے دوسری جگہ اس کی ایک نظیر یہ بیان کی کہ عرف میں کہتے ہیں تیرا حق مجھ پر واجب ہے اور

اما کلام الشیخ عبد الحلیم فأقول: اولاً: لیس الوجوب للاحتیاط وجوب الشیئ في نفسه ولا شك ان ترك مالابأس به حذرا مما به باس من قبیل الاحتیاط في الدین ولا یحصل ذلك الا بما ذکر فکان من واجباته اذ الواجب للشیع هو الذی لا تحصل له الا به و ثانیاً: ربما یطلق الواجب عرفاً علی المندوب ومنه قول الدر

لابأس به ای بالتکبیر عقب العید لان المسلمین توارثوه فوجب اتباعهم اه و نظر له الشامی فی موضع اخر بقولهم حقك واجب علی وفی کتاب

---

1 ردالمحتار کتاب البیوع باب الربا داراحیاء التراث العربی بیروت ۲/۱۸۶ 2 درمختار باب العیدین مجتبائی دہلی ۱/۱۷۱ صفحہ 477 از 715

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

In the book 'Adab al-Qadhi' from 'Fath al-Qadir', under the statement of the author: "And he (the judge) should attend the funeral and visit the sick," the tradition of Bukhari from 'Al-Adab al-Mufrad' on the authority of Abu Ayyub al-Ansari (may Allah be pleased with him) is mentioned. He said, "I heard the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) say: 'A Muslim has six obligatory rights over his fellow Muslim. If he leaves any of them, he has left an obligatory right he owes to his brother: he should greet him when he meets him; he should accept his invitation when he invites him, or respond when he calls; he should say "YarhamukAllah" (May Allah have mercy on you) when he sneezes (and praises Allah); he should visit him when he falls ill; he should attend his funeral when he dies; and he should give him sincere advice if he seeks it.'" Then the researcher (author of Fath al-Qadir) stated: "It is necessary to interpret the word 'obligation' (wujub) in this tradition in a broader sense than the technical meaning of 'obligation' in late jurisprudence (fiqh). For its apparent meaning suggests that initiating a greeting is obligatory and attending a funeral is an individual obligation (fard 'ayn). Thus, what is meant is an established matter for him, whether it is recommended (mandub) or obligatory in the technical sense. End [of quote]." And it is necessary to carry it upon this meaning due to the proofs we have established. And if you refuse to take it upon its literal sense, then this is an understanding from Sheikh Abdul Halim that was not supported therein.

---

1. Fath al-Qadir, Kitab al-Adab al-Qadhi, Maktabah Nuria Razawiyya, Sukkur, 6/374.

'फत्ह अल-क़दीर' की पुस्तक 'अदब अल-क़ाज़ी' में, मूल लेखक के इस कथन के तहत कि "क़ाज़ी को जनाज़े में शामिल होना चाहिए और बीमार की मिज़ाजपुर्सी के लिए जाना चाहिए," 'अल-अदब अल-मुफ़्रद' में बुखारी की यह हदीस अबू अय्यूब अंसारी (रज़ियल्लाहु अन्हु) के हवाले से ज़िक्र की गई है। उन्होंने कहा, "मैंने अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को यह कहते हुए सुना: 'एक मुसलमान के अपने मुसलमान भाई पर छह अनिवार्य अधिकार हैं। यदि वह उनमें से किसी को छोड़ देता है, तो उसने अपने भाई के प्रति एक अनिवार्य अधिकार छोड़ दिया है: जब वह उससे मिले तो उसे सलाम करे; जब वह उसे आमंत्रित करे तो उसका निमंत्रण स्वीकार करे, या जब वह पुकारे तो जवाब दे; जब उसे छींक आए (और वह अल्लाह की प्रशंसा करे) तो उसे 'यरहमुकल्लाह' (अल्लाह आप पर दया करे) कहे; जब वह बीमार पड़े तो उसका हालचाल पूछने जाए; जब उसकी मृत्यु हो जाए तो उसके जनाज़े में शामिल हो; और यदि वह उससे सलाह माँगे तो उसे नेक सलाह दे।'" फिर शोधकर्ता ने कहा: "यह ज़रूरी है कि इस हदीस में 'अनिवार्यता' (वुजूब) शब्द को उस अर्थ में लिया जाए जो फ़िक़्ह (इस्लामी न्यायशास्त्र) की आधुनिक पारिभाषिक शब्दावली में 'वुजूब' के अर्थ से अधिक व्यापक हो। क्योंकि हदीस का ज़ाहिरी अर्थ यह है कि सलाम की पहल करना अनिवार्य है और जनाज़े की नमाज़ फ़र्ज़-ए-ऐन है। अतः यहाँ मुराद यह है कि ये अधिकार मुसलमान के लिए स्थापित हैं, चाहे वे मुस्तहब (पसंदीदा) हों या फ़िक़्ही अर्थ में वाजिब। [उद्धरण समाप्त]।" और इन दलीलों के कारण जो हमने पेश की हैं, वुजूब का यही अर्थ लेना ज़रूरी है। और यदि आप इसे ज़ाहिरी अर्थ पर न मान सकें, तो यह शेख अब्दुल हलीम की समझ है जिसका वहाँ कोई आधार नहीं है।

---

1. फत्ह अल-क़दीर, किताब अल-अदब अल-क़ाज़ी, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, ६/३७४।

فتح القدیر کی کتاب ادب القاضی میں اس قول ماتن کے نیچے کہ قاضی جنازہ پر حاضر ہو اور بیمار کے پوچھنے کو جائے ادب المفرد میں بخاری کی یہ حدیث ابو ایوب انصاری رضی اللہ تعالٰی عنہ سے ذکر کی کہ میں نے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کو فرماتے سنا مسلمان کے مسلمان پر چھ حق واجب ہیں اگر ان میں سے کوئی چیز ترک کرے تو اپنے بھائی کا ایک حق چھوڑ یگا جو اس کے لئے اس پر واجب تھا، ملاقات کے وقت اسے سلام کرے، اور وہ دعوت کرے تو قبول کرے یا وہ پکارے تو جواب دے اور، جب اسے چھینک آئے (اور وہ حمد الٰہی بجائے) تو یہ اسے "یر حمك الله" کہے، اور بیمار پڑے تو اسے پوچھنے جائے، اور اس کی موت میں حاضر ہو، اور اگر اس سے نصیحت چاہے تو نصیحت کرے۔ پھر محقق نے فرمایا ضرور ہے اس حدیث میں وجوب کو ایسے معنی پر حمل کریں جو وجوب کے اس معنی سے کہ فقہ کی اصطلاح حادث میں ہے عام ہو اصل کہ ظاہر حدیث یہ ہے کہ ابتداء بہ سلام واجب ہو اور نماز جنازہ فرض عین ہو تو حدیث کی مراد یہ ہے کہ یہ حقوق مسلمان پر ثابت ہیں خواہ مستحب ہوں یا واجب فقہی انتہٰی، اور عبارت عبدالحلیم میں یہ معنی وجوب لینا ضرور ہے بسبب ان دلیلوں کے جو ہم قائم کر چکے اور تو اسے ظاہر پر محمول کئے بغیر نہ مانے تو یہ شیخ عبدالحلیم لم یستند فیہ۔

---

۱ فتح القدیر کتاب الادب القاضی مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۳۷۴

...for [his] transmission and understanding are not an authority in Sharia, especially when there is established evidence to the contrary.

Thirdly: If it is not taken in the sense we have explained, his own words would contradict themselves. This is because, one page after this, he mentions an incident that occurred in the Ottoman Empire regarding the replacement of old, debased Dirhams (which contained mixed metal but silver was dominant) with new, high-quality Dirhams. With the emergence of the new coins, transactions using the old ones were prohibited. The poor quality of the old ones was such that a large Roman Dirham, known as a 'Qirsh', was equal to 120 of them, and a Dinar was equal to 240. When the new currency was introduced, the value of the Qirsh fell to 80 of the new Dirhams, and the Dinar fell to 120. This led to many disputes among people regarding debts contracted during the time of the old currency.

He said: Our predecessors among the noble scholars of protected Constantinople issued a fatwa to reduce the debt by one-third. Thus, in exchange for a debt of 120 old Dirhams, the debtor would give the creditor 80 new Dirhams or one Qirsh; and in exchange for 240, one Dinar or two Qirshes. This continued until the time of the fatwa of our late teacher, As'ad bin Sa'd al-Din, who decreed that the value of the old currency at the time of the contract should be paid, for example, in terms of Dinars for each...

फ़तावा रज़विया — खंड 17

...क्योंकि [उनका] उद्धरण और उनकी समझ शरीयत में प्रमाण नहीं है, विशेष रूप से तब जब इसके विरुद्ध दलीलें मौजूद हों।

तीसरा: यदि इसे उस अर्थ में न लिया जाए जैसा हमने कहा है, तो उनकी अपनी ही बात विरोधाभासी हो जाएगी। इसका कारण यह है कि इस बात के एक पृष्ठ बाद उन्होंने उस्मानी साम्राज्य में हुई एक घटना का उल्लेख किया है, जिसमें पुराने अशुद्ध दिरहमों (जिनमें मिलावट थी पर चांदी अधिक थी) को नए, उच्च गुणवत्ता वाले दिरहमों से बदल दिया गया था। नए दिरहमों के आने पर पुराने सिक्कों के साथ लेन-देन प्रतिबंधित कर दिया गया था। पुराने दिरहमों की खराब गुणवत्ता इस हद तक थी कि एक बड़ा रोमन दिरहम, जिसे 'किर्श' (Qirsh) कहा जाता था, उनमें से 120 के बराबर था, और एक दीनार 240 के बराबर था। जब नई मुद्रा चलन में आई, तो किर्श का मूल्य 80 नए दिरहम रह गया, और दीनार का 120। इससे उन ऋणों को लेकर लोगों के बीच बहुत विवाद पैदा हुआ जो पुराने सिक्कों के समय के थे।

उन्होंने कहा: सुरक्षित कांस्टेंटिनोपल (कुस्तुनतुनिया) के हमारे महान विद्वान पूर्वजों ने ऋण का एक तिहाई हिस्सा कम करने का फतवा दिया। इसलिए, 120 पुराने दिरहम के ऋण के बदले, ऋणी लेनदार को 80 नए दिरहम या एक किर्श देगा; और 240 के बदले, एक दीनार या दो किर्श दिए जाएंगे। यह तब तक चला जब तक कि हमारे दिवंगत उस्ताद असद बिन साद अल-दीन के फतवे का समय नहीं आया, जिन्होंने यह फतवा दिया कि अनुबंध (contract) के समय पुरानी मुद्रा का जो मूल्य था, उतना मूल्य दीनार आदि के रूप में दिया जाना चाहिए...

पेज 479 ऑफ 715

لنقل وفهمه غير حجة في الشرع لاسيما عند قيام البراهين على خلافه۔ (کی اپنی ایک سمجھ ہے جس پر انہوں نے کوئی نقلی سند پیش نہ کی اور ان کی فہم شرع میں حجت نہیں خصوصاً جبکہ اس کے خلاف پر دلائل قائم ہوں۔)

وثالثا: ان لم يحمل على ما قلنا يكون كلامه قد ناقض نفسه لانه ذكر بعد هذا بورقة واقعة حدثت في الدولة العثمانية من تبديل الدراہم العتيقة المغشوشة الغالبة فيها الفضة بدراہم جديدة جيدة و يمنع بظهورها التعامل بالعتيقة و من رداءة العتيقة ان الدرہم الكبير الرومي وهو المسمى بالقرش يكون بمائة وعشرين درهما منها والدينار بمائتين واربعين فاذا ظهرت الجديدة ينزل القرش الى ثمانين من الجديدة والدينار الى مائة وعشرين فيقع بين الناس نزاع كثير في ديونهم الواقعة في زمن العتيقة۔ (ثالثاً: اگر اس معنی پر محمول نہ کیا جائے تو ان کا کلام خود اپنے نفس کا مناقض ہوگا، اس لئے کہ انہوں نے اس کلام سے ایک ورق بعد دولت عثمانیہ کا ایک واقعہ بیان کیا ہے، پرانے روپے جن میں میل ہے اور چاندی غالب ہوتی ہے انہیں نئے کھرے روپے سے بدلتے ہیں اور ان نیوں کے بعد پرانوں سے معاملہ کرنا منع کر دیا جاتا ہے اور پرانوں کا کھوٹا پن یہاں تک ہے کہ ایک بڑا روپیہ رومی جسے قرش کہتے ہیں ان پرانوں کے ایک سو بیس کے برابر ہوتا ہے اور اشرفی دو سو چالیس کے برابر، جب نئے روپے چل جاتے ہیں تو قرش کی قیمت ان نیوں سے اسی روپے رہ جاتی ہے اور اشرفی ایک سو بیس کی، تو لوگوں کا وہ لین دین جو پرانے روپیوں کے زمانے میں ہوا تھا اس میں بڑا جھگڑا پڑ جاتا ہے)

قال فأفتى اسلافنا من ساداتنا علماء قسطنطينية المحمية بتنزيل ثلث الدين فبمقابلة دين مائة وعشرين درهما يعطى المديون الدائن ثمانين درهما جديدا او قرشا واحدا وبمقابلة مأتين واربعين دينارا او قرشين

الی ان جاء زمن افتاء استاذنا المرحوم اسعد بن سعد الدین فأفتی بأن یعطی قیمة العتیقة في زمن العقد من الدینار مثلا لکل (تو علمائے محرسہ قسطنطنیہ سے ہمارے اگلوں سرداروں سے یہ فتویٰ دیا کہ تہائی دین اتار دیں، تو ایک سو بیس پرانے روپے کی جگہ مدیون دائن کو نئے اسی روپے یا ایک قرش دے اور دو سو چالیس پرانے روپے کی جگہ ایک اشرفی یا دو قرش یہاں تک ہمارے استاذ مرحوم اسعد بن سعد الدین کے افتا کا وقت آیا تو انہوں نے یہ فتویٰ دیا کہ زمانہ عقد میں پرانے روپیوں کی جو قیمت تھی اتنی قیمت کی اشرفیاں دی جائیں مثلاً مثقال ہر)

[Arabic Column] ...two hundred and forty dirhams, one dinar is given. He did not allow giving good dirhams or qirsh, and stated that in the previous method, there is the reality of usury (Riba) or its semblance. Then he said: "The servant (author) says that what was first ruled (fatwa) is also correct, along with it being easy and expanding the scope for debt repayment. As for its correctness, it is because when old dirhams were in circulation just as qirsh and dinar were without difference between them, it was established that the debtor's debt remained on his conscience according to this detail. Debt payment was directed toward whatever value was estimated in performance from any type—whether from old coins, qirsh, or dinar—as jurists stated this in the case of equal circulation of ones, twos, and threes. So if the exchange of old coins, qirsh, and dinar is prohibited—as jurists stated this in the case of equal circulation of ones, twos, and threes—then if the exchange of old coins is prohibited and new ones appear, and qirsh and dinar become cheaper by falling to what was previously mentioned, the debt also falls accordingly. In this is expansion of scope and complete ease, since the debtor pays from whatever type he is able, contrary to what was ruled in the second fatwa, as sometimes the debtor may not have a dinar and may not find one, or the debt or the remainder may not reach the value of a dinar, thus making payment difficult..."

[Urdu Column] ...give one ashrafi in exchange for two hundred and forty rupees, and did not allow giving him new rupees or qirsh, and specified that in the previous problem, it is either actual usury or its semblance. Then Sheikh Abdul Halim said that the fatwa given by the predecessors is also correct, and along with it, there is ease in it and expansion in the scope of debt repayment. Its correctness is due to this reason that when old rupees had exactly the same circulation as ashrafi and qirsh, it was proved that the debt settled on the debtor according to this detail, and the realization of the debt will turn towards the fact that a certain amount of wealth is required from any type, whether it be old rupees or qirsh or ashrafi, as the jurists have specified this when different coins have a similar circulation. So when the circulation of old ones was stopped and new ones started, and the rate of qirsh and ashrafi fell to the amount mentioned above, the debt will also decrease by that much, and in this, there is expansion of the scope and complete ease because the debtor will pay from whichever type he has power over. Contrary to the second fatwa, because sometimes the debtor does not have an ashrafi nor does he find it, and sometimes the total debt

or the remainder is not enough to reach the amount of an ashrafi, so paying becomes difficult.

[Footnote] 1. Marginalia of al-Durar by Abdul Halim

[अरबी कॉलम] ...दो सौ चालीस दिरहम के लिए एक दीनार दिया जाता है। उन्होंने अच्छे दिरहम या क़र्श देने की अनुमति नहीं दी, और स्पष्ट किया कि पिछले तरीके में वास्तव में ब्याज (रिबा) है या उसका आभास। फिर उन्होंने कहा: "दास (लेखक) कहता है कि जो पहले फतवा दिया गया था वह भी सही है, साथ ही ऋण अदायगी के लिए इसमें आसानी और गुंजाइश है। जहाँ तक इसकी प्रमाणिकता की बात है, तो यह इसलिए है क्योंकि जब पुराने दिरहम प्रचलन में थे जैसे कि क़र्श और दीनार बिना किसी अंतर के, तो यह स्थापित हो गया कि ऋणी का ऋण इसी विवरण के अनुसार उसके ज़िम्मे रहा। ऋण का भुगतान किसी भी प्रकार के सिक्कों से आंकी गई कीमत की ओर मोड़ा गया - चाहे पुराने सिक्के हों, क़र्श हों या दीनार - जैसा कि न्यायविदों ने एक, दो और तीन के बराबर प्रचलन के मामले में कहा है। इसलिए यदि पुराने सिक्कों, क़र्श और दीनार का विनिमय प्रतिबंधित है - जैसा कि न्यायविदों ने एक, दो और तीन के बराबर प्रचलन के मामले में कहा है - तो यदि पुराने सिक्कों का विनिमय प्रतिबंधित है और नए प्रकट होते हैं, और क़र्श और दीनार पहले बताए गए स्तर तक गिरकर सस्ते हो जाते हैं, तो ऋण भी उसी के अनुसार गिर जाता है। इसमें दायरे का विस्तार और पूर्ण आसानी है, क्योंकि ऋणी जिस भी प्रकार से सक्षम है उससे भुगतान करता है, दूसरे फतवे के विपरीत, क्योंकि कभी-कभी ऋणी के पास दीनार नहीं हो सकता है और न ही उसे मिल सकता है, या ऋण या शेष दीनार के मूल्य तक नहीं पहुँचता है, जिससे भुगतान कठिन हो जाता है..."

[उर्दू कॉलम] ...दो सौ चालीस रुपये के बदले एक अशरफी दे, और उसे नया रुपया या क़र्श देना जायज़ नहीं रखा, और स्पष्ट किया कि पिछले मसले में या तो हकीक़तन सूद (ब्याज) है या उसका संदेह। फिर शेख अब्दुल हलीम ने कहा कि जो पहले के लोगों ने फतवा दिया वह भी सही है और उसके साथ इसमें आसानी है और ऋण अदायगी के दायरे में विस्तार है। इसकी प्रमाणिकता इस कारण से है कि जब पुराने रुपयों का चलन बिल्कुल वैसा ही था जैसा अशरफी और क़र्श का, तो यह सिद्ध हुआ कि ऋणी पर ऋण इसी विवरण से तय हुआ और ऋण का हासिल इस तरफ मुड़ेगा कि इतनी मात्रा का माल अनिवार्य है, चाहे वह किसी भी प्रकार का हो, पुराने रुपये हों या क़र्श या अशरफी, जैसा कि फ़ुक़हा (न्यायविदों) ने इसे स्पष्ट किया है जब विभिन्न सिक्कों का चलन एक जैसा हो। तो जब पुराने सिक्कों का चलन बंद कर दिया गया और नए चलने लगे और क़र्श और अशरफी का भाव उस मात्रा पर गिर गया जो ऊपर बताई गई है, तो ऋण भी उतना ही कम हो जाएगा और इसमें दायरे की व्यापकता और पूरी आसानी है क्योंकि ऋणी जिस प्रकार पर सक्षम होगा उसी में से

अदा करेगा। दूसरे फतवे के विपरीत, क्योंकि कभी ऋणी के पास अशरफी नहीं होती और न ही उसे मिलती है, और कभी पूरा ऋण या शेष इतना नहीं होता कि अशरफी की मात्रा तक पहुँचे तो अदायगी कठिन होती है।

[पाद-टिप्पणी] 1. अब्दुल हलीम द्वारा दुर्रर का हाशया (व्याख्या)

पृष्ठ 715 में से 480

[عربی کالم] مائتين واربعين درهما يعطى دينارا ولم يجوز اعطاه درهما جيدا ولا قرشا و صرح بأن في المسلك السابق حقيقة الربا او شبهته۔ ثم قال يقول العبد ان ما افتى به اولا صحيح ايضاً مع ان فيه يسرا و توسيع دائرة لاداء الدين اما صحته فان الدراهم العتيقة لما كانت رائجة كما يروج القرش والدينار من غير فرق بينهن تقرر ان دين المديون استقر في ذمته على هذا التفصيل وصرف الدين الى ما قدر به في الاداء من كل نوع اى نوع كان من العتيقة و القرش والدينار كما صرح الفقهاء بهذا في صورة استواء الاحادى والثنائي والثلاثي فاذا منع تعاطى العتيقة و القرش والدينار كما صرح الفقهاء بهذا فى صورة استواء رواج الاحادى والثنائى والثلاثى فاذا منع تعاطى العتيقة و ظهر الجديدة ورخص القرش والدينار بالتنزيل الى ما سبق ذكره نزل الدين كذالك وفيه توسيع دائرة ويسر تام اذ يؤدى المديون من اى نوع قدر بخلاف ما افتى به ثانيا اذ قد لا يكون للمديون دينار وقد لا يجد وقد يكون الدين او الباقى غير بالغ الى قيمة الدينار فيعسر الاداء مع...

[اردو کالم] دو سو چالیس روپے کے بدلے ایک اشرفی دے اور یہ جائز نہ رکھا کہ اسے نیا روپیہ یا قرش دے اور تصریح فرمائی کہ اگلے مسئلے میں یا تو حقیقۃً سود ہے یا اس کا شبہ۔ پھر شیخ عبدالحلیم نے کہا کہ وہ جو پہلوں نے فتوٰی دیا وہ بھی صحیح ہے اور اس کے ساتھ اس میں آسانی ہے اور ادائے دین کے دائرہ میں وسعت، اس کی صحت تو اس سبب سے ہے کہ پرانے روپوں کا جب بعینہ ایسا ہی چلن تھا جیسے اشرفی اور قرش کا، تو ثابت ہوا کہ مدیون پر دین اسی تفصیل سے ٹھہرا اور دین کا حاصل اس طرف پھیرے گا کہ اتنی مقدار کا مال لازم ہے کسی نوع میں سے ہو، پرانے روپے ہوں یا قرش یا اشرفی جیسا کہ فقہاء نے اس کی تصریح فرمائی ہے جب کہ مختلف سکوں کا ایک سا چلن ہو، تو جب پرانوں کا چلن بند کر دیا گیا اور نئے چلنے لگے اور

قرش اور اشرفی کا بھاؤ اس مقدار پر کہ اوپر مذکور ہوئی اتر گیا دین بھی اتنا ہی اتر جائے گا اور اس میں دائرہ کی وسعت اور پوری آسانی ہے اس لئے کہ مدیون جس نوعیت پر قدرت پائے گا اس میں سے ادا کریگا۔ بخلاف دوسرے فتویٰ کے، اس لئے کہ کبھی مدیون کے پاس اشرفی نہیں ہوتی اور نہ اسے ملتی ہے، اور کبھی کل دین یا باقی اتنا نہیں ہوتا کہ اشرفی کے مقدار کو پہنچے تو ادا دشوار...

[حاشیہ] ۱ حاشية الدرر لعبد الحليم

صفحہ 480 از 715

Fatawa Razawiya Volume 17

[Left Column - Arabic Text] Indeed, the currencies prevailing at the time of the contract, other than the old ones, remain in their circulation, and there is no stagnation or prohibition in them, except for the discount relative to the superior ones. So, from where is the debtor obliged to settle the debt in Dinars (gold coins) only? Thus, it appears that what was first decreed is correct in terms of ease, with no hardship in it. Yes, if the existence of usury (Riba)—either actual or legal—is conceded in paying with the new currency or the Piastre due to lack of equality between them in weight or lack of knowledge of it, then it is avoided by adding something like a Fals (a small coin) to the new currency or the Piastre, as is not hidden. End summary. This issue is mentioned in Al-Durr and others. Al-Alai chose the decree of Sa'di Effendi, which is the obligation of payment in gold. Ibn Abidin inclined towards what Abd al-Halim inclined towards. The crux of it is: first, it is denied that what is due from the debtor is specifically the old coin, such that payment with the new currency or the Piastre, despite their lack of equality in weight with the old one, becomes usury. Rather, what is mandatory is that estimated financial value from any of the three as desired. Thus, when one of them becomes stagnant, it is permissible to pay with one of the remaining ones.

[Right Column - Urdu Text] ...has happened, although the currencies that were current at the time of the contract are still current as before, except for the old rupees. Their circulation has not decreased nor has it been prohibited, except that their rate has become cheaper compared to the new rupees. So where will the debtor be forced to pay his debt specifically with gold coins (Ashrafis)? Thus, it became clear that the first fatwa was correct and easy, containing no difficulty. Yes, if it is accepted that there is usury in paying with new rupees or Piastres, either real or legal, such that the weights of both are not equal or the equality is not known, then it will be averted by, for example, adding one paisa with the new rupees or Piastre, as is not hidden. End summary. And this issue is mentioned in Durr-e-Mukhtar, etc., and the author of Durr-e-Mukhtar has adopted what was the fatwa of Sa'di Effendi: that it is obligatory for the debtor to pay in gold only. And Allama Shami inclined towards the side that Sheikh Abdul Halim's opinion leaned towards, and its essence is that firstly, we do not accept that it was mandatory for the debtor to pay specifically in old rupees, so that paying with new rupees or Piastres, when they are not equal in weight to the old ones, would be considered usury. Rather, such an amount of value was necessary, the estimation of which could be made from any of these three coins

as desired. So when the circulation of one of them ceases, then from whichever of the remaining two...

---

[1] Hashiya al-Durr by Abd al-Halim Page 481 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

[बायां कॉलम - अरबी पाठ] वास्तव में, अनुबंध के समय प्रचलित मुद्राएं पुरानी मुद्राओं के अलावा, अपने प्रचलन में बनी हुई हैं, और उनमें कोई ठहराव या प्रतिबंध नहीं है, सिवाय इसके कि श्रेष्ठ मुद्राओं की तुलना में उनमें छूट दी गई है। तो ऋणी को केवल दीनार (सोने के सिक्के) में ऋण चुकाने के लिए कहाँ से बाध्य किया जाएगा? इस प्रकार, यह प्रतीत होता है कि जो पहले फैसला सुनाया गया था वह सुगमता के संदर्भ में सही है, जिसमें कोई कठिनाई नहीं है। हाँ, यदि नई मुद्रा या पियास्त्र (Piastre) में भुगतान करने में सूद (रिबा) के अस्तित्व—चाहे वास्तविक हो या कानूनी—को स्वीकार कर लिया जाए, क्योंकि वजन में उनके बीच समानता की कमी है या उसका ज्ञान नहीं है, तो इसे नई मुद्रा या पियास्त्र के साथ एक फल (Fals - छोटा सिक्का) जोड़कर टाला जा सकता है, जैसा कि छिपा नहीं है। सारांश समाप्त। यह मुद्दा अल-दुर और अन्य में वर्णित है। अल-अलाई ने सादी एफेंदी के फैसले को चुना, जो सोने में भुगतान की अनिवार्यता है। इब्न आबिदीन उसी ओर झुके जिसकी ओर अब्दुल हलीम झुके थे। इसका सार यह है: सबसे पहले, यह अस्वीकार किया जाता है कि ऋणी पर बकाया विशेष रूप से पुराना सिक्का है, ताकि नई मुद्रा या पियास्त्र के साथ भुगतान करना, पुराने के वजन में समानता की कमी के बावजूद, सूद बन जाए। बल्कि, उन तीनों में से किसी से भी वांछित अनुमानित वित्तीय मूल्य अनिवार्य है। इस प्रकार, जब उनमें से एक अप्रचलित हो जाता है, तो शेष दो में से किसी एक के साथ भुगतान करना जायज़ है।

[दायां कॉलम - उर्दू पाठ] ...हो गई है, जबकि जो मूल्य अनुबंध के समय प्रचलित थे, वे पुराने रुपयों के अलावा पहले की तरह ही प्रचलित हैं। उनका चलन न तो कम हुआ है और न ही प्रतिबंधित किया गया है, सिवाय इसके कि नए रुपयों की तुलना में उनका भाव सस्ता हो गया है। तो ऋणी को कहाँ से मजबूर किया जाएगा कि वह विशेष सोने के सिक्कों (अशरफी) से ही अपना ऋण चुकाए? तो जाहिर हुआ कि वह जो पहला फतवा था, सही और आसान है, इसमें कोई कठिनाई नहीं है। हाँ, अगर यह मान लिया जाए कि नए रुपयों या पियास्त्र से भुगतान करने में सूद है, चाहे वह हकीकतन हो या हुकमन, जैसे कि दोनों का वजन बराबर नहीं है या बराबरी का ज्ञान नहीं है, तो वह इस तरह टल जाएगा कि नए रुपयों या पियास्त्र के साथ उदाहरण के लिए एक पैसा मिलाकर दिया जाए, जैसा कि छिपा नहीं है। सारांश समाप्त। और यह मसला दुर-ए-मुख्तार आदि में वर्णित है और दुर-ए-मुख्तार के लेखक ने उसी को अपनाया है जो सादी एफेंदी का फतवा है कि ऋणी पर सोने से ही भुगतान करना वाजिब है। और अल्लामा शामी ने उस तरफ रुझान दिखाया जिसकी तरफ शेख अब्दुल

हलीम की राय झुकी थी और उसका हासिल यह है कि अव्वल तो हम यही नहीं मानते कि ऋणी के जिम्मे खास पुराने रुपये ही देना वाजिब थे ताकि नए रुपयों या पियास्त्र से भुगतान करना जबकि वे पुराने वालों से वजन में बराबर न हों, सूद ठहरे। बल्कि इतनी मालियत लाजिम थी जिसका अंदाजा इन तीनों सिक्कों में से जिससे चाहे कर ले। तो जब उनमें से एक का चलन जाता रहा तो दो बाकियों में से जिससे...

---

[1] अब्दुल हलीम द्वारा हाशिया अल-दुरर पेज 481 का 715

[بایاں کالم - عربی متن] ان الاثمان الرائجة في زمن العقد سوی العتیقة باقیة علی رواجها ولیس فیها کساد ولا منع سوی الترخیص بالنسبة الی الجیدة فمن این التکلیف للمدیون باداء الدین بالدینار فقط فظهر ان ما افتی به اولا صحیح علی وجه الیسر لا عسر فیه نعم لو سلم وجدان الربا اما حقیقة او حکما فی الاداء بالجدیدة او بالقرش بان لا مساواة بینهما وزنا اولا یعلم فانه یدفع بضم نحو فلس الی الجدیدة او القرش کما لا یخفی اه ملخصاً. والمستئلة مذکورة في الدر وغیره واختار العلائي ما افتی به سعدی افندی و هو الالزام بالذهب ومال ابن عابدین الی نحو ما مال الیه عبد الحلیم و حاصله اولا منع ان اللازم علی ذمة المدیون عین العتیقة حتی یکون الاداء بالجدیدة او القرش مع عدم مساواتها للعتیقة وزنا ربا بل الازم تلك المالیة المقدرة باي الثلاثة شاء فاذا کسد منها واحد جاز الاداء عن احد الباقین

[دایاں کالم - اردو متن] ہو گئی حالانکہ جو ثمن زمانہ عقد میں رائج تھے وہ پرانے روپیوں کے سوا بدستور رائج ہیں ان کا نہ چلن گھٹانہ منع کیا گیا سوا اس کے کہ نئے روپیوں سے ان کا بھاؤ ستا ہو گیا تو کہاں سے مدیون کو مجبور کیا جائے گا کہ خاص اشرفی ہی سے اپنا دین ادا کرے تو ظاہر ہوا کہ وہ جو پہلا فتوی تھا صحیح اور آسان ہے اس میں کچھ دشواری نہیں، ہاں اگر یہ مان لیا جائے کہ نئے روپے یا قرش سے ادا کرنے میں حقیقۃً رہا ہے یا حکماً یوں کہ دونوں کا وزن برابر نہیں یا برابری کا علم نہیں تو وہ یوں دفع ہو جائے گا کہ نئے روپے یا قرش کے ساتھ مثلاً ایک پیسہ ملا کر دیا جائے جیسا کہ پوشیدہ نہیں انتی ملخصاً، اور یہ مسئلہ درمختار وغیرہ میں مذکور ہے اور صاحب درمختار نے اسی کو اختیار کیا جو سعدی آفندی کا فتوی ہے کہ مدیون پر سونے ہی سے ادا کرنا واجب ہے اور علامہ شامی نے اس طرف میل کیا جس طرف شیخ عبدالحلیم کی رائے جھکی اور اس کا حاصل یہ ہے کہ اول تو ہم یہی نہیں مانتے کہ مدیون کے ذمہ خاص پرانے

روپے ہی دینا واجب تھے تاکہ نئے روپے یا قرش سے ادا کرنا جبکہ وہ پرانوں سے وزن میں برابر نہ ہوں ربا ٹھہرے بلکہ اتنی مالیت لازم تھی جس کا اندازہ ان تینوں سکوں میں سے جس سے چاہے کر لے تو جب ان میں سے ایک کا چلن جاتا رہا تو دو باقیوں میں سے جس سے

---

1 حاشیة الدرر لعبد الحلیم صفحہ 481 از 715

Fatawa Razawiya, Volume 17

[Arabic Column:] I say: And from this, it has become apparent that their expression of reducing the debt by one-third is a lenient estimation (masamahah), considering the outward change in the number of Dirhams, where eighty of the new ones are given instead of a hundred and twenty; otherwise, there is no reduction in the actual value at all. Secondly, if it were accepted that the specific old coins are mandatory, then usury (Riba) would be averted by paying new coins or 'Qirsh' along with something like a 'fals' (a small copper coin). Indeed, he (the author) issued a fatwa to the people about this, calling it complete ease without hardship. But what ease remains once it reaches the level of 'Karaha al-Tahrim' (prohibitively disliked action)? Therefore, there is no escape from what we have mentioned, and success is from Allah. In summary, such doubts were not worth mentioning or writing down if it were not for the benefits that appear and blossom from their answers. I say: Praise be to Allah, it has become clear from this discourse that let alone selling a ten-rupee note for twelve, selling one Dinar (gold coin) for one Dirham (silver coin), or rather even for one 'fals', involves no suspicion of usury, let alone usury itself. This is contrary to what Al-Lakhnawi claimed, because in forbidden matters, suspicion is treated as certainty, as explicitly stated in 'Al-Hidayah' and other texts. So if there were a suspicion here, prohibition would be mandatory, let alone 'Karaha al-Tahrim'. And the proofs have been established that there is not even 'Karaha al-Tahrim' here, let alone prohibition. Thus it is evident that there is neither usury nor a suspicion of it here. Take this and listen further.

[Urdu Column:] Whether he pays, I say: from here it became clear that his saying that one-third of the debt be removed is a concession, considering the apparent change in the count of rupees, he said so that instead of one hundred and twenty, he will give eighty, otherwise there was no change in the value at all. Secondly, if it is accepted that specific old rupees are mandatory, then interest would be averted by giving new rupees or 'qirsh' with, for example, one paisa mixed in. And Fazil Abdul Haleem gave this fatwa to the people and called it complete ease without difficulty. And what ease is there after it being Karahat-e-Tahrim? So there is no escape from the meanings we have mentioned, and success is only from Allah. In short, such doubts were not worthy of being mentioned and written if it were not that from their answers shining benefits appeared. I say: Praise be to Allah, from this discourse it became clear that let alone selling a ten-rupee note for twelve, in selling one Ashrafi for one rupee or even one paisa, interest is far off, there is not even a suspicion of it.

Contrary to what Lakhnawi presumed, because in forbidden things, suspicion is also in the rule of certainty, as is explicitly stated in Hidayah etc. So if there were a doubt here, then prohibition (hurmat) would be mandatory, let alone Karahat-e-Tahrim. And proofs have been established that here there is not even Karahat-e-Tahrim, let alone prohibition. So it became clear that here there is neither interest nor suspicion of interest, take this and listen further.

[अरबी कॉलम:] मैंने कहा: और इससे स्पष्ट हुआ कि ऋण (कर्ज) के एक तिहाई हिस्से को कम करने की उनकी बात एक उदारता (मुसामहह) है, जो केवल दिरहमों की संख्या में प्रत्यक्ष परिवर्तन को देखते हुए है, जहाँ वह एक सौ बीस के स्थान पर अस्सी नए दिरहम देगा; अन्यथा वास्तविक मूल्य (मालियत) में कोई कमी नहीं हुई। दूसरा यह कि यदि यह मान लिया जाए कि पुराने सिक्के ही अनिवार्य हैं, तो नए रुपयों या 'क़र्श' के साथ एक 'फ़ल्स' (तांबे का सिक्का) मिलाकर देने से सूद दूर हो जाएगा। वास्तव में, उन्होंने (लेखक ने) लोगों को इसका फ़तवा दिया और इसे बिना किसी कठिनाई के पूर्ण सुगमता बताया। परंतु 'कराहते-तहरीम' (हराम के निकट नापसंदगी) होने के बाद सुगमता कहाँ रह जाती है? अतः जो हमने वर्णन किया है उससे कोई बचाव नहीं है, और सफलता अल्लाह की ओर से ही है। संक्षेप में, इस प्रकार के संदेह लिखने या चर्चा करने योग्य नहीं थे यदि उनके उत्तरों से लाभ के नए द्वार न खुलते। मैं कहता हूँ: अल्लाह की प्रशंसा है, इस कथन से यह स्पष्ट हो गया कि दस का नोट बारह में बेचना तो दूर की बात, एक दीनार को एक दिरहम बल्कि एक फ़ल्स में बेचने में भी न तो सूद है और न ही सूद का संदेह। इसके विपरीत जो लखनवी ने दावा किया है, क्योंकि हराम चीज़ों में संदेह भी निश्चितता के समान माना जाता है, जैसा कि 'हिदाया' आदि में स्पष्ट रूप से उल्लेखित है। अतः यदि यहाँ संदेह होता तो हराम होना अनिवार्य होता, 'कराहते-तहरीम' तो बहुत दूर की बात है। और प्रमाणों से यह सिद्ध हो चुका है कि यहाँ 'कराहते-तहरीम' भी नहीं है, हराम होना तो दूर की बात। तो स्पष्ट है कि यहाँ न तो सूद है और न ही सूद का संदेह। इसे लें और आगे सुनें।

[उर्दू कॉलम:] चाहे अदा कर दे, मैं कहता हूँ: यहीं से स्पष्ट हुआ कि उनका यह कहना कि एक तिहाई ऋण (कर्ज) उतार दिया जाए, यह रुपयों की गिनती में दिखाई देने वाले प्रत्यक्ष परिवर्तन को देखते हुए उदारता (मुसामहह) है, ऐसा कहा कि एक सौ बीस के स्थान पर अस्सी देगा अन्यथा मूल्य (मालियत) में बिल्कुल भी परिवर्तन नहीं हुआ। दूसरा यह कि यदि मान लिया जाए कि विशेष पुराने रुपये ही अनिवार्य हैं, तो सूद इस प्रकार टल जाएगा कि नए रुपयों या क़र्श के साथ, उदाहरण के लिए एक पैसा मिलाकर दिया जाए। और फ़ाज़िल अब्दुल हलीम ने लोगों को इसका फ़तवा दिया और इसे बिना किसी कठिनाई के पूरी आसानी बताया। और कराहते-तहरीम होने के बाद कौन सी आसानी है? तो जो अर्थ हमने वर्णित किए हैं उनसे कोई छुटकारा नहीं है और सफलता अल्लाह ही की ओर से है। संक्षेप में ऐसे संदेह इस योग्य नहीं थे कि उनका ज़िक्र किया जाए और उन्हें लिखा जाए यदि यह न

होता कि उनके उत्तरों से चमकते हुए लाभ प्रकट हुए। मैं कहता हूँ: अल्लाह की प्रशंसा है, इस व्याख्या से यह स्पष्ट हो गया कि दस का नोट बारह में बेचना तो दूर की बात, एक अशरफी को एक रुपये बल्कि एक पैसे में बेचने में भी रबा (सूद) तो क्या, उसका संदेह भी नहीं है। इसके विपरीत जो लखनवी ने कल्पना की, क्योंकि हराम चीज़ों में संदेह भी निश्चितता के आदेश में है, जैसा कि हिदाया आदि में स्पष्ट रूप से वर्णित है। तो यदि यहाँ संदेह होता तो हराम होना अनिवार्य होता, कराहते-तहरीम तो दूर की बात। और प्रमाण स्थापित हो चुके हैं कि यहाँ कराहते-तहरीम भी नहीं है, हराम होना तो दूर की बात। तो स्पष्ट हुआ कि यहाँ न सूद है और न सूद का संदेह, यह तो लीजिए और आगे सुनिए।

पृष्ठ 715 का 482

[عربی کالم:] قلت وبه ظهر ان تعبیرهم بتنزیل ثلث الدین مسامحة نظراً الی ظاهر التغیر فی عدد الدراهم حیث یعطی من الجدیدة ثمانین مکان مائة وعشرین والافلا تنزیل في المالیة اصلاً وثانیاً ان سلم لزوم العتیقة عیناً فیدفع بضم نحو فلس الی الجدیدة او القرش وقد افتی هو به الناس وجعله یسراً تاماً من دون عسر اتماماً من دون عسر وای یسر بعد حصول کراهة التحریم فاذن لا محید عما ذکرنا وبالله التوفیق وبالجملة ما کانت امثال هذه الشبهات لتذکر وتسطر لولا ما فی جوابها من فوائد تظهر وتزهر، اقول: وبه تبین والحمد لله ان لیس فیه اعنی فی بیع دینار بدرهم بل فلس فضلاً عن بیع نوط عشرة باثنی عشر شبهة ربا ایضاً فضلاً عن الربا خلافاً لما زعم اللکنوی اذ الشبهة فی المحرمات ملحقة بالیقین کما نص علیه فی الهدایة وغیرها فلو کانت لو جبت الحرمة فضلاً عن کراهة التحریم وقد قامت الادلة ان لاکراهة تحریم ههنا فضلاً عن الحرمة فظهر ان لاربا ولا شبهة هذا وانما جل

[اردو کالم:] چاہے ادا کر دے اقول: یہیں سے ظاہر ہوا کہ ان کا یہ فرمانا کہ تہائی دین اتار دیا جائے مسامحہ ہے روپیوں کی گنتی میں جو بظاہر تغیر ہوا اس پر نظر فرما کر ایسا کہا کہ ایک سو بیس کی جگہ اسی دے گا ورنہ مالیت میں اصلاً تغیر نہ ہوا، دوسرے یہ کہ اگر خاص پرانے روپے ہی لازم ہونا مان لیا جائے تو سود یوں دفع ہو جائے گا کہ نئے روپیوں یا قرش کے ساتھ مثلاً ایک پیسہ ملا کر دے اور فاضل عبد الحلیم نے لوگوں کو اس کا فتوٰی دیا اور اسے پوری آسانی بلا دشواری بتایا اور کراہت تحریم ہونے کے بعد کون سی آسانی ہے تو وہ معنی جو ہم نے ذکر کئے ان سے مفر نہیں اور توفیق اللہ ہی کی طرف سے ہے بالجملہ ایسے شبہات اس قابل نہ تھے کہ ذکر کئے جائیں اور لکھے جائیں اگر یہ نہ ہوتا کہ ان کے جوابوں سے چمکتے ہوئے فائدے ظاہر ہوئے، اقول: الحمد للہ اس تقریر سے روشن ہو گیا کہ دس کا نوٹ بارہ کو بیچنا در کنار ایک اشرفی

ایک روپے بلکہ ایک پیسہ کو بیچنے میں ربا تو رہا اس کا شبہ بھی نہیں۔ برخلاف اس کے جو لکھنوی نے زعم کیا اس لئے کہ حرام چیزوں میں شبہ بھی حکم یقین میں ہے جیسا کہ ہدایہ وغیرہ میں منصوص ہے تو اگر یہاں شبہ ہوتا تو حرمت واجب ہوتی چہ جائے کراہت تحریم، اور دلائل قائم ہو چکے کہ یہاں کراہت تحریم بھی نہیں چہ جائے حرمت، تو ظاہر ہوا کہ یہاں نہ سود ہے نہ سود کا شبہ، یہ تو لیجئے اور آگے سنئیے

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

What this prohibitor relies upon is that the note... The main evidence of the one who prohibits it is this: that the note...

He said: Nay, that Lucknowi cleric assumed that whoever sells a marked note with the number one hundred, for example, only intends to sell a hundred rupees and take their substitute, not the substitute for the note. I say: Firstly, if the matter were as you claimed, then selling a note for rupees would not be valid at all, because it would then be selling a hundred foreign dirhams for a hundred foreign dirhams, and there is no difference between them in anything. Thus, the exchange would be futile, and Islamic Law does not legislate futility. In 'Al-Ashbah', it is stated: 'Contracts depend for their validity on benefit; so whatever yields no benefit is not valid.' Therefore, it is not valid to sell a dirham for a dirham if they are equal in weight and quality, as mentioned in 'Al-Dhakhira', end of quote. Secondly, stand up one day from your couch and go to the sellers. If you see Zaid selling a note from Amr, ask him: 'Did you say to him: I sold you a hundred rupees?' He will say: 'No, I only said: I sold you this note.' Then ask him: 'Did you intend to exchange your hundred rupees for Amr's hundred rupees?' He will say: 'No, I only intended to exchange...'

Rather, this Lucknowi cleric presumed that when a hundred-rupee note is sold, the intention is not to obtain the price of that paper, but rather the intention is to sell a hundred rupees and receive their value. I say: (I state that) Firstly: If the matter were so, then selling a note in exchange for rupees would not be permissible at all, because this would then be selling a hundred English rupees for a hundred English rupees, and there is no difference between English rupees. Thus, giving these hundred rupees to take those hundred rupees would be purely futile, and Sharia does not permit futility. In 'Al-Ashbah', it is stated that a contract is valid when there is some benefit from it; that which is purely useless, that contract is not valid. So, selling one rupee for one rupee is impermissible when both rupees are equal in weight and condition, as stated in 'Al-Dhakhira', end of quote. Secondly: Maulvi sahib, get up from your seat for a day and go to the market. When you see that Zaid has sold a note to Amr, ask him: 'Did you say to him like this: I sold a hundred rupees to you?' He will immediately reply: 'No, rather I said that I sold this note to you.' Now ask him: 'Did you intend that your hundred rupees with Amr's hundred rupees... (Continued on the next page)'

1 Al-Ashbah wa al-Naza'ir, second art, book of sales, Idarat al-Qur'an wa al-Ulum al-Islamiyya Karachi 1/325 Page 483 of 715

यह निषेध करने वाला जिस बात का सहारा लेता है वह यह है कि नोट... निषेध करने वाले का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि नोट...

उन्होंने कहा: बल्कि उस लखनवी मौलवी ने यह मान लिया कि जो कोई सौ नंबर वाला चिह्नित नोट बेचता है, उदाहरण के लिए, उसका उद्देश्य केवल सौ रुपये बेचना और उसका विकल्प लेना होता है, न कि नोट का विकल्प। मैं कहता हूँ: पहली बात तो यह कि यदि मामला वैसा ही होता जैसा आपने दावा किया है, तो रुपयों के बदले नोट बेचना बिल्कुल भी मान्य नहीं होता, क्योंकि तब यह सौ विदेशी दिरहमों को सौ विदेशी दिरहमों के बदले बेचना होता, और उनमें कोई अंतर नहीं होता। इस प्रकार, विनिमय व्यर्थ होता, और इस्लामी कानून व्यर्थता का विधान नहीं करता। 'अल-अश्बाह' में कहा गया है: 'अनुबंधों की वैधता लाभ पर निर्भर करती है; इसलिए जिससे कोई लाभ न हो वह मान्य नहीं है।' इसलिए, एक दिरहम को एक दिरहम के बदले बेचना मान्य नहीं है यदि वे वजन और गुणवत्ता में समान हों, जैसा कि 'अद-दखीरा' में उल्लेख किया गया है। दूसरी बात, किसी दिन अपने सोफे से उठें और विक्रेताओं के पास जाएँ। यदि आप ज़ैद को अम्र से एक नोट बेचते हुए देखते हैं, तो उससे पूछें: 'क्या आपने उससे कहा: मैंने आपको सौ रुपये बेचे?' वह कहेगा: 'नहीं, मैंने केवल इतना कहा: मैंने आपको यह नोट बेचा।' फिर उससे पूछें: 'क्या आपका इरादा अपने सौ रुपयों को अम्र के सौ रुपयों के बदले बदलने का था?' वह कहेगा: 'नहीं, मेरा इरादा केवल विनिमय करने का था...'

बल्कि, इस लखनवी मौलवी ने यह माना कि जब सौ रुपये का नोट बेचा जाता है, तो इरादा उस कागज की कीमत प्राप्त करना नहीं होता, बल्कि इरादा सौ रुपये बेचना और उनका मूल्य प्राप्त करना होता है। मैं (अहमद रज़ा) कहता हूँ: (मैं कहता हूँ कि) पहली बात: यदि मामला ऐसा होता, तो रुपयों के बदले नोट बेचना बिल्कुल भी अनुमन्य नहीं होता, क्योंकि तब यह सौ अंग्रेजी रुपयों को सौ अंग्रेजी रुपयों के बदले बेचना होता, और अंग्रेजी रुपयों में कोई अंतर नहीं होता। इस प्रकार, इन सौ रुपयों को देकर उन सौ रुपयों को लेना पूरी तरह से व्यर्थ होता, और शरीयत व्यर्थता की अनुमति नहीं देती। 'अल-अश्बाह' में कहा गया है कि एक अनुबंध तब मान्य होता है जब उससे कुछ लाभ हो; जो पूरी तरह से बेकार है, वह अनुबंध मान्य नहीं है। इसलिए, एक रुपये को एक रुपये में बेचना वर्जित है जब दोनों रुपये वजन और स्थिति में समान हों, जैसा कि 'अद-दखीरा' में कहा गया है। दूसरी बात: मौलवी साहब, एक दिन के लिए अपनी सीट से उठें और बाजार जाएँ। जब आप देखें कि ज़ैद ने अम्र को एक नोट बेचा है, तो उससे पूछें: 'क्या आपने उससे इस तरह कहा था: मैंने आपको

सौ रुपये बेचे?' वह तुरंत उत्तर देगा: 'नहीं, बल्कि मैंने कहा था कि मैंने आपको यह नोट बेचा है।' अब उससे पूछें: 'क्या आपका इरादा था कि आपके सौ रुपये अम्र के सौ रुपयों के साथ... (अगले पृष्ठ पर जारी)'

1 अल-अश्बाह वा अल-नज़ायर, दूसरी कला, बिक्री की किताब, इदारात अल-कुरान वा अल-उलूम अल-इस्लामिया कराची 1/325 पृष्ठ 715 में से 483

مَا یَتَشَبَّثُ بِهِ هَذَا الْمَانِعُ اَنَّ النُّوطَ عه ان منع کرنے والے کی بڑی سند جو کچھ ہے یہ ہے کہ نوٹ

عه: بل زعم ذاك اللكنوى ان من باع نوطا معلما برقم مائة مثلا فانما يريد بيع مائة ربية و اخذ بدلها لا بدل النوط ، اقول : اولا لو كان الامر كما زعمت لما صح بيع النوط بالربابى اصلا لانه اذن بيع مائة درهم افرنجى بمائة درهم افرنجى وهى لا تتفاوت فيما بينهما بشيئ فكان الاستبدال عبثا والشرع لا يشرع العبث فى الاشباه العقود تعتمد صحتها الفائدة فما لم يفد لم يصح فلا يصح بيع درهم بدرهم اذا تساويا وزناو صفة كما فى الذخيرة اه وثانيا قم يوما عن اريكتك واذهب الى البياعين فاذا رأيت زيدا باع نوطا من عمر و فاسأله هل قلت له بعتك مائة ربية فسيقول لا وانما قلت بعتك هذا النوط ، فاسأله هل اردت ان تستبدل مائة ربية لك بمائة ربية لعمرو فسيقول لا و انما اردت استبدال

عه: بلکہ اس مولوی لکھنوی نے یہ زعم کیا کہ سو روپے کا نوٹ جب بیچا جاتا ہے تو مقصود اس سے قیمت ملنا اس کاغذ کی نہیں ہوتی ہے بلکہ مقصود سو روپے بیچنا اور اس کی قیمت لینا ہوتا ہے، اقول: (میں کہتا ہوں) اولا: اگر معاملہ یوں ہوتا تو روپوں کے بدلے نوٹ بیچنا اصلا جائز نہ ہوتا کہ اب یہ سو روپے انگریزی سو روپے انگریزی کو بیچنا ہوا اور انگریزی روپے باہم کچھ فرق نہیں رکھتے تو یہ سو روپے دے کر وہ سو روپے لینا نرا عبث ہوا اور شرع عبث کو مشروع نہیں فرماتی ، اشباہ میں ہے عقد جب صحیح ہوتا ہے کہ اس سے کچھ فائدہ بھی ہو جو محض بے فائدہ ہے وہ عقد صحیح نہیں تو ایک روپیہ ایک روپے کو بیچنا ناجائز ہے جبکہ دونوں روپے وزن وحالت میں برابر ہوں جیسا کہ ذخیرہ میں ہے انتہی، ثانیا: مولوی صاحب ذرا اپنی مسند سے اٹھ کر کسی دن بازار جائیے جب دیکھئے کہ زید نے عمرو کے ہاتھ کوئی نوٹ بیچا تو اس سے پوچھئے کیا تو نے اس سے یوں کہا تھا کہ میں نے تیرے ہاتھ سو روپے بیچے وہ ابھی ابھی جواب دے گا

کہ نہ ، بلکہ میں نے تو یہ کہا کہ یہ نوٹ تیرے ہاتھ بیچا ، اب اس سے پوچھئے کیا تو نے یہ قصد کیا تھا کہ اپنے سو روپے عمرو کے سو روپوں سے (باقی اگلے صفحہ پر)

Fatawa Razawiya Volume 17

[Top Box Heading] Right: It is immersed in rupees as if it is the rupee itself and nothing else. Left: Immersed in usury as if it is that itself without difference.

[Main Text - Right Column (Urdu)] (Remaining footnote from previous page) ...instead, he will reply now that no, rather he wanted to exchange his note for his rupees. Now ask him: did you take the price of your rupees? He will reply now: no, rather [the price] of his note. Now ask him: will he give a hundred rupees to him from his bag? He will reply now: no, rather I will give him my note. At that time, it will become clear to you that this is the difference between day and night. Thirdly: I wish you knew the difference between the sold object (mabee') and the non-existent (ma'doom), because many times the seller of notes does not have the coins (rubaby), not even a single rupee. So if his intention was to sell a hundred rupees, he is selling something non-existent, and the sale of the non-existent is void (baatil), and the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) forbade it. Fourthly: To one for whom sending it through the post is easier and also less expensive, when Zaid sells him a note and then does not provide the note but wants to give a hundred rupees instead, the buyer will never accept it and will say to him: I bought the note from you, the rupees were already with me, what need did I have to buy rupees from you? At that time you will know... (rest on the next page).

[Main Text - Left Column (Arabic Source)] ...a note for coins, ask him: Did you take the price of your coins? He will say: No, rather the price of my note. Then ask him: Will you pay him a hundred rupees from your pocket? He will say: No, rather I give him a note. At that time, day will be distinguished from night for you. Thirdly: I wish you knew the difference between the sold object and the non-existent, for sometimes the seller does not have the coins, not even one rupee. Selling the non-existent is invalid, and the Messenger of Allah, peace and blessings of Allah be upon him, forbade it. Fourthly: Whoever needs a note to send it in the mail, because sending it in it is easier and less costly, so Zaid sold him his note, then wanted to give him a hundred rupees, the buyer would not accept it from him and would say: I only bought the note from you, and the coins were already with me, so what would have made me need to buy them from you? And at that time you know...

[शीर्ष बॉक्स हेडिंग] दायां: रूपयों में ग़र्क है गोया वह बेऐनही रुपया है और कुछ बायां: सुद (ब्याज) में डूबा हुआ है जैसे कि वह बिना किसी अंतर के वही हो।

[मुख्य पाठ - दायां कॉलम (उर्दू)] (पिछले पृष्ठ से शेष फ़ुटनोट) ...बदले, वह अभी जवाब देगा कि नहीं, बल्कि अपना नोट उसके रूपयों से बदलना चाहा, अब उससे पूछिए क्या तूने अपने रूपयों की कीमत ली? वह अभी जवाब देगा नहीं, बल्कि अपने नोट की। अब उससे पूछिए क्या तू अपनी थैली में से सौ रूपये उसे देगा? वह अभी जवाब देगा कि नहीं बल्कि उसे अपना नोट दूँगा। उस वक्त आपको मालूम हो जाएगा कि दिन और रात में यह फर्क है। तीसरा: काश आपको मबीअ (बेची गई चीज़) और माद्दूम (जो मौजूद न हो) का फर्क मालूम होता, क्योंकि बारहा नोट बेचने वाले के पास रूपये नहीं होते बल्कि एक रुपया तक नहीं होता। तो अगर उसे सौ रूपये बेचना मकसूद होते तो माद्दूम की बैअ (बिक्री) कर रहा है, और माद्दूम की बैअ बातिल है, और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इससे मना फ़रमाया है। चौथा: जिसे डाक में भेजने से आसान भी है और खर्च भी कम है, उसके हाथ जब ज़ैद नोट बेचे और फिर नोट न दे बल्कि उसकी जगह सौ रूपये देना चाहे तो खरीदार हरगिज़ न लेगा और उससे कहेगा कि मैंने तो तुझसे नोट खरीदा था, रूपये तो खुद मेरे पास मौजूद थे, मुझे तुझसे रूपये खरीदने की क्या हाजत (ज़रूरत) थी? उस वक्त आपको मालूम... (बाकी अगले पृष्ठ पर)।

[मुख्य पाठ - बायां कॉलम (अरबी स्रोत)] ...सिक्कों के लिए एक नोट, उससे पूछें: क्या आपने अपने सिक्कों की कीमत ली? वह कहेगा: नहीं, बल्कि मेरे नोट की कीमत। फिर उससे पूछें: क्या तुम उसे अपनी जेब से सौ रुपये दोगे? वह कहेगा: नहीं, बल्कि मैं उसे एक नोट देता हूँ। उस समय, आपके लिए दिन रात से अलग हो जाएगा। तीसरा: काश आप बेची गई वस्तु और जो अस्तित्व में नहीं है, उसके बीच का अंतर जानते, क्योंकि कभी-कभी बेचने वाले के पास सिक्के नहीं होते, एक रुपया भी नहीं होता। जो अस्तित्व में नहीं है उसे बेचना अमान्य है, और अल्लाह के रसूल, उन पर शांति और आशीर्वाद हो, ने इससे मना किया है। चौथा: जिसे डाक में भेजने के लिए नोट की आवश्यकता होती है, क्योंकि उसमें भेजना आसान और कम खर्चीला होता है, इसलिए ज़ैद ने उसे अपना नोट बेच दिया, फिर उसे सौ रुपये देना चाहा, खरीदार इसे उससे स्वीकार नहीं करेगा और कहेगा: मैंने तो आपसे केवल नोट खरीदा था, और सिक्के मेरे पास पहले से थे, तो मुझे उन्हें आपसे खरीदने की क्या ज़रूरत थी? और उस समय आप जानते हैं...

[اوپری باکس کی سرخی] دائیں: روپوں میں غرق ہے گویا وہ بعینہ روپیہ ہے اور کچھ بائیں: مغرق فی الربابی کأنه هي من دون فرق

[مرکزی عبارت - دایاں کالم] (بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ) بدلے، وہ ابھی جواب دے گا کہ نہ، بلکہ اپنا نوٹ اس کے روپیوں سے بدلنا چاہا، اب اس سے پوچھے کیا تو نے اپنے روپیوں کی قیمت لی وہ ابھی جواب دیگا نہ، بلکہ اپنے نوٹ کی ۔ اب اس سے پوچھے کیا تو اپنی تھیلی میں سے سو روپے اسے دے گا، وہ ابھی جواب دے گا کہ نہ بلکہ اسے اپنا نوٹ دوں گا اس وقت آپ کو معلوم ہو جائے گا کہ دن اور رات میں یہ فرق ہے، ثالثاً: کاش آپ کو مبیع و معدوم کا فرق معلوم ہوتا اس لئے کہ بارہا نوٹ بیچنے والے کے پاس روپے نہیں ہوتے بلکہ ایک روپیہ تک نہیں ہوتا تو اگر اسے سو روپے بیچنا مقصود ہوتے تو معدوم کی بیع کر رہا ہے، اور معدوم کی بیع باطل ہے، اور رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے اس سے منع فرمایا ہے۔ رابعاً: جسے ڈاک میں بھیجنے سے آسان بھی ہے اور خرچ بھی کم ہے اس کے ہاتھ جبکہ زید نوٹ بیچے اور پھر نوٹ نہ دے بلکہ اس کی جگہ سو روپے دینا چاہے تو خریدار ہر گز نہ لے گا اور اس سے کہے گا کہ میں نے تو تجھ سے نوٹ خریدا تھا روپے تو خود میرے پاس موجود تھے مجھے تجھ سے روپے خریدنے کی کیا حاجت تھی اس وقت آپ کو معلوم (باقی اگلے صفحہ پر)

[مرکزی عبارت - بایاں کالم] نوطی بربا بية فسأله هل اخذت ثمن ربابيك فيسقول لا بل ثمن نوطی فسأله هل تنقد له مائة ربية من كيسك فسيقول لابل اعطيه نوطی فعند ذلك يتميز لك النهار من الليل. وثالثاً : ليتك تعرف المبيع من المعدوم فان البائع ربما لا تكون عنده الربابی بل ولا ربية واحدة و بيع المعدوم باطل وقد نهی عنه رسول الله صلی الله تعالی عليه وسلم. ورابعاً: من احتاج الی النوط ليرسله

في البوسطة فان ارساله فيها ايسر واقل مصروفا فباعه زيد نوطه ثم اراده ان يعطيه مائة ربية لا يقبله المشترى و يقول انما اشتريت منك النوط وقد كانت الربابى عندى فما كان يحوجنى الى شرائها منك وعند ذلك تعرف

Fatawa Rizvia, Volume 17

Heading: And that is why they do not distinguish between them in taking and giving. Side note: There is no difference, for this reason people in transactions [regarding] rupees...

(Remaining footnote from the previous page)

[Arabic side text]: Indeed, attributing such an intention to them is a slander against them. Fifthly: When the seller of a note receives the dirhams of the price and intends to return them, this is considered by them as the annulment of the sale (Iqala), not as handing over the exchanged item. All this is clear and obvious to anyone who knows the left from the right. So glory be to Allah for a thing sold (mabee') upon which no contract was made, nor was it intended, nor was there any cash payment for it; rather, if cash was offered, it was not accepted, and the exchanged cash was not counted; instead, it might not even be present with the seller. Have you ever heard of such a thing sold in the world, where there is no contract, no cash, no intention, and no existence? But it is true that lack of understanding and deliberation brings about wonders. We ask Allah for forgiveness and well-being. From this, the falsehood of what was intended to distinguish between coins (fuloos) and notes is known, namely that whoever buys something for a rupee or borrows a rupee and wants to give copper coins in its place, the creditor and the seller have the choice to accept it or...

[Urdu side text]: ...it will be clear that attributing the intention of selling rupees to them while selling notes is a slander against them. Fifthly: When the seller of a note receives the rupees of the price and does not give the note but rather returns the rupees, this is considered by them as the annulment of the sale, not that he is giving the same thing he sold to the buyer. All these points are clear and obvious to anyone who can distinguish between right and left. So, Glory be to Allah, those hundred rupees which were settled as sold are strange commodities (mabee'), for neither the word 'buy and sell' was applied to them, nor was there an intention to take or give them, nor did the seller give them; rather, if he were to give them, the buyer would not take them, and it would not be considered the delivery of the commodity. Often, they are not even present with the seller. Have you heard of any commodity in the world that was sold without a contract, without cash, without intention, and without existence? But the truth is that a lack of understanding or thought brings about wonders. We ask Allah Almighty for forgiveness and well-being. And from here it became clear that what the Maulvi Sahib wanted to distinguish between coins and

notes by saying that if one buys something in exchange for a rupee or borrows a rupee from someone and at the time of payment gives copper coins worth one rupee, the creditor and the seller have the choice to accept it or (Continued on the next page).

फतावा रिज़विया, खंड 17

शीर्षक: और इसीलिए वे लेने-देने में उनके बीच अंतर नहीं करते। पार्श्व लेख: कोई अंतर नहीं है, इसी कारण लोग लेन-देन में रुपयों...

(पिछले पृष्ठ का शेष फुटनोट)

[अरबी पक्ष]: वास्तव में, उन पर ऐसा इरादा थोपना उनके विरुद्ध एक मिथ्यारोप है। पाँचवाँ: नोट बेचने वाला जब कीमत के दिरहम प्राप्त कर लेता है और उन्हें वापस करना चाहता है, तो इसे उनके यहाँ विक्रय का विखंडन (इक़ाला) माना जाता है, न कि बदली हुई वस्तु का सुपुर्द करना। यह सब उस व्यक्ति के लिए स्पष्ट और प्रत्यक्ष है जो दाएं और बाएं में अंतर जानता है। तो अल्लाह की महिमा है उस बेची गई वस्तु (मबीअ) के लिए जिस पर न कोई अनुबंध हुआ, न उसका इरादा था, न ही उसकी कोई नकद अदायगी हुई; बल्कि यदि नकद दिया गया तो उसे स्वीकार नहीं किया गया, और न ही बदली हुई नकदी की गिनती की गई; इसके विपरीत, हो सकता है कि वह बेचने वाले के पास मौजूद भी न हो। क्या आपने दुनिया में ऐसी किसी बेची गई वस्तु के बारे में सुना है जिसमें न अनुबंध हो, न नकदी, न इरादा और न ही अस्तित्व? लेकिन सच तो यह है कि समझ और विचार की कमी अजूबे पैदा करती है। हम अल्लाह से क्षमा और कुशलता की प्रार्थना करते हैं। इसी से उस बात की असत्यता ज्ञात होती है जिससे सिक्कों (फुलूस) और नोट के बीच अंतर करने का प्रयास किया गया था, कि जो कोई रुपये से कुछ खरीदे या रुपया उधार ले और उसके बदले पैसे देना चाहे, तो ऋणदाता और विक्रेता को उन्हें स्वीकार करने या न करने का अधिकार है...

[उर्दू पक्ष]: ...यह स्पष्ट हो जाएगा कि नोट बेचने में उनका यह इरादा मानना कि वे रुपये बेच रहे हैं, उन पर एक मिथ्यारोप है। पाँचवीं बात: नोट बेचने वाला जब कीमत के रुपये लेकर नोट न दे बल्कि रुपये ही लौटा दे, तो यह उनके नज़दीक सौदे का निरसन माना जाता है, न कि यह कि वह वही चीज़ खरीदार को दे रहा है जो उसने बेची थी। और ये सब बातें हर उस व्यक्ति पर स्पष्ट और ज़ाहिर हैं जिसे दाएं और बाएं में अंतर पता हो। तो सुभान अल्लाह, वे सौ रुपये जो बेचे हुए ठहराए गए, अजीब 'मबीअ' (बेची गई चीज़) हैं कि न उन पर ख़रीद-ओ-फ़रोख़्त का शब्द इस्तेमाल हुआ, न उनके लेने-देने का इरादा हुआ, न बेचने वाले ने वे दिए बल्कि अगर वह दे तो खरीदार न ले, और बेची गई चीज़ का देना न माना जाए। अक्सर तो वे बेचने वाले के पास होते भी नहीं। तो क्या दुनिया में ऐसी कोई 'मबीअ' सुनी है जो बिक गई और न अनुबंध (अक़्द) हुआ, न नक़द भुगतान हुआ, न इरादा (क़स्द)

हुआ और न ही उसका अस्तित्व (वजूद) था? मगर बात यह है कि समझ और सोच की कमी अजूबे लाती है। हम अल्लाह तआला से माफ़ी और आफ़ियत माँगते हैं। और यहीं से यह स्पष्ट हो गया कि मौलवी साहब ने जो पैसों और नोटों के बीच यह अंतर निकालना चाहा है कि अगर कोई एक रुपये के बदले कोई चीज़ खरीदे या किसी से एक रुपया क़र्ज़ ले और भुगतान के समय एक रुपये के पैसे दे, तो लेनदार (दाइन) और विक्रेता को अधिकार होता है कि वह उन्हें स्वीकार करे या (अगले पृष्ठ पर जारी)।

سرخی: ولذا لا یفرقون بینهما في الاخذ والاعطاء (اسی واسطے وہ لینے اور دینے میں دونوں کے درمیان فرق نہیں کرتے) ضمنی عبارت: فرق نہیں اسی واسطے لوگ معاملات میں روپے

(بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ)

[عربی عبارت]: ان نسبة ذلك القصد اليهم فرية عليهم، وخامسًا: بائع النوط اذا قبض دراهم الثمن واراد ردها يعد هذا عندهم اقالة البيع لا تسليمًا للمبدل وهذا كله واضح جلي على من يعرف الشمال من اليمين فسبحن الله من مبيع لم يعقد عليه ولا قصد اليه ولا نقد منه بل ان نقد لم يقبل ولم يعد نقد المبدل بل ربما لا يكون عند من باع فهل سمعت بمثله مبيعاً في الدنيا ولا عقد ولا نقد ولا قصد ولا وجد ولكن قلة الفهم و التدبير يأتى بعجائب نسأل الله العفو والعافية۔ وبه علم بطلان ما قصد به التفرقة بين الفلوس و النوط بأن من اشترى شيئًا بربية او استقرض ربية و اراد ان يعطي بدلها فلوس ربية فالدائن و البائع بالخيار في قبولها و

[اردو عبارت]: ہو جائیگا کہ نوٹ بیچنے میں ان کا یہ قصد قرار دینا کہ روپے بیچتے ہیں ان پر افتراء ہے۔ خامساً: نوٹ بیچنے والا جب قیمت کے روپے لے کر نوٹ نہ دے بلکہ روپے ہی پھیرے تو یہ ان کے نزدیک بیع کا فسخ ٹھہرتا ہے نہ یہ کہ اس نے جو چیز بیچی تھی وہی خریدار کو دے رہا ہے اور یہ سب باتیں ہر اس شخص پر روشن و ظاہر ہیں جسے دہنے بائیں میں تمیز ہو تو سبحان اللہ وہ سو روپے جو بیچے ٹھہرائے عجب مبیع ہیں کہ نہ ان پر خرید و فروخت کا لفظ واقع ہو، نہ ان کے لینے دینے کا ارادہ ہو، نہ بائع نے وہ دئے بلکہ وہ دے تو خریدار لے نہیں اور مبیع کا دینا نہ ٹھہرے بلکہ بارہا وہ بائع کے پاس ہوتے بھی نہیں تو دنیا میں ایسی کوئی مبیع سنی ہے کہ

بک گئی اور نہ عقد نہ نقد نہ قصد نہ وجود، مگر ہے یہ کہ فہم یا فکر کی کمی عجائب لاتی ہے ہم اللہ تعالیٰ سے معافی و عافیت مانگتے ہیں اور یہیں سے ظاہر ہو گیا کہ مولوی صاحب نے جو پیسوں اور نوٹ میں یوں فرق نکالنا چاہا ہے کہ اگر ایک روپیہ کے عوض کوئی چیز خریدے یا روپیہ کسی سے قرض لے اور بوقتِ ادا پیسے ایک روپیہ کے دے تو دائن اور فروخت کنندہ کو اختیار رہتا ہے لے یا (باقی اگلے صفحہ پر)

صفحہ 485 منجانب 715

Fatawa Rizvia, Volume 17

[Main Text Body] ...in transactions. Thus, it is as if ten 'rababi' were sold for twelve rupees, which is definitely usury (Riba). So, if this is not usury itself, it becomes prohibited due to its resemblance to usury. I say: success is from Allah. (I say, and success is only from Allah). This doubt is even more worthless and crude, but it is no surprise when the bow is in the hands of an amateur. Anyone who has slightly matured beyond childhood knows that conventional prices are only estimated based on actual prices. In fact, all currencies are estimated in terms of rupees, whether they are gold coins (ashrafis) or something else, and they must have a relation to 'rababi' rupees. Thus, a sovereign is for fifteen rupees, a small piece for one rupee, another for a quarter, another for a half, and sixteen annas for a rupee. And such-and-such note is for ten rupees, another for a hundred, and so on. And when their circulation and value are equal, the people of common usage, in transactions do not differentiate...

[Footnote Section] (Continued footnote from the previous page) ...the judge cannot compel him to accept it, unlike currency notes. This distinction is false. Where did they bring this claim from and who is its proponent? Soon after a few lines, the truth regarding this matter will be stated, and success is from Allah. [End note by author].

Page 486 of 715

फतवा रिज़विया, खंड 17

[मुख्य पाठ सामग्री] ...लेन-देन में। अत; यह ऐसा है जैसे दस 'रबाबी' बारह रुपये में बेचे गए हों, और यह निश्चित रूप से ब्याज (रिबा) है। तो यदि यह ब्याज नहीं भी है, तो इसकी समानता के कारण यह ब्याज से जुड़कर हराम हो जाएगा। मैं कहता हूँ: और सफलता अल्लाह की ओर से है। (मैं कहता हूँ, और सफलता केवल अल्लाह की ओर से है)। यह संदेह तो और भी रद्दी और भद्दा है, लेकिन इसमें कोई आश्चर्य नहीं क्योंकि धनुष एक अनाड़ी के हाथ में है। जो कोई भी बचपन से थोड़ा भी आगे बढ़ा है, वह जानता है कि पारिभाषिक मूल्यों का अनुमान वास्तविक मूल्यों से ही किया जाता है। बल्कि सभी मुद्राओं का अनुमान रुपयों से ही होता है, चाहे वे अशर्फियाँ हों या कुछ और, और उनका 'रबाबी' रुपयों से कोई न कोई संबंध अवश्य होगा। तो एक सावरन पंद्रह रुपये का, और दुअन्नी रुपये का आठवां हिस्सा, चवन्नी चौथाई, अठन्नी आधा, और एक रुपये के सोलह आने, और अमुक नोट दस रुपये का, अमुक सौ का, और इसी तरह। और जब उनका प्रचलन और मूल्य समान हो, तो प्रथा वाले लोग लेनदेन में कोई अंतर नहीं करते...

[पाद टिप्पणी अनुभाग] (पिछले पृष्ठ के हाशिये का शेष भाग) ...न्यायाधीश (काज़ी) उसे इसे स्वीकार करने के लिए मजबूर नहीं कर सकता, नोटों के विपरीत। यह अंतर गलत है। उन्होंने यह दावा कहाँ से लिया और इसका समर्थक कौन है? शीघ्र ही कुछ पंक्तियों के बाद इस मामले में जो सच्चाई है उसका वर्णन आएगा, और अल्लाह ही की ओर से सफलता है। [लेखक का नोट]।

715 का पृष्ठ 486

[متن] (عربی کالم کا ترجمہ اور اردو کالم) فی المعاملات فاذن کانها عشر ربابي بيعت باثني عشرة ربية وهو ربا قطعاً فهذا ان لم يكن ربا فبشبهہ يلتحق به ويحرم۔اقول: وباللہ التوفيق هذا اردء واخنغ ولا غرو اذ القوس في يد غير باريها قد علم كل من ترعرع عن الصبا ولو قليلا ان الاثمان الاصطلاحية انما تقدر بالحقيقة بل النقود كلها لها تقدير بالدراہم دنانير كانت او غيرہا ولا بد لها من نسبة الى الربابى فجنيه بخمسة عشر وقطعة صغيرة بثمن ربية واخرى بالربع واخرى بالنصف و ست عشرة آنة بربية والنوط الفلان بعشرة والفلان بمائة هكذا واذا استوت رواجاً ومالية فاهل العرف لا يفرقون۔ اور نوٹ کے لین دین میں کچھ فرق نہیں کرتے تو گویا وہ یوں ہوا کہ دس روپے بارہ کو بیچے گئے اور وہ بلاشک ربا ہے تو یہ اگر سود نہ ہو تو اس کی مشابہت کے سبب سود سے لاحق ہو کر حرام ہو جائے گا۔ اقول: وباللہ التوفیق (میں کہتا ہوں اور اللہ ہی کی طرف سے توفیق ہے۔ت) یہ شبہ تو اور بھی ردی اور بھونڈا ہے مگر کوئی تعجب نہیں کہ کمان انجان کے ہاتھ میں ہے ہر وہ شخص جو بچپن سے کچھ بھی آگے بڑھا ہے جانتا ہے کہ اصطلاحی ثمنوں کے اندازے حقیقی ہی ثمن سے کئے جاتے ہیں بلکہ تمام نقدوں کے لئے روپیوں سے اندازہ ہے خواہ اشرفیاں ہوں یا اور کچھ، اور انہیں کچھ نہ کچھ روپیوں سے نسبت ضرور ہوگی تو ایک ساورن پندرہ روپے کی اور دوانی روپے کا آٹھواں حصہ اور چوانی چوتھائی اور اٹھنی آدھا اور ایک روپے کے سولہ آنے اور فلاں نوٹ دس روپے کا فلاں سو کا، وعلیٰ ہذا القیاس، اور جب ان کا چلن اور مالیت یکساں ہو تو اہل عرف معاملات میں

[حاشیہ] (بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ) لا يجبره عليه القاضى بخلاف النوط و من اين لہ ادعاء هذا ومن قال به وسيأتيك و تحقيق الامر بعد اسطر و باللہ التوفيق اه منہ۔ نہ لے اور حاکم کی طرف سے اس پر جبر نہیں ہوسکتا۔ بخلاف نوٹ کے یہ فرق باطل ہے، اور یہ ادعا انہوں نے کہاں سے نکالا اور

کون اس کا قائل ہے اور عنقریب چند سطر کے بعد اس امر میں جو حق ہے اس کا بیان آتا ہے اور اللہ ہی کی طرف سے توفیق ہے ۱۲ منہ۔

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

...between them in taking and giving in their transactions. So whoever buys a garment for an English pound and pays fifteen rupees, or vice versa, this is not considered a change or alteration, nor does the seller or anyone else deny it. Similarly, the two-anna piece (du-anni) and eight English paise; they do not distinguish between them in taking or giving. Likewise, the quarter-rupee (chawanni) and sixteen paise. And whoever buys something for half a rupee (athanni), they can either pay the half-rupee itself, or two quarter-rupees, or four two-anna pieces, or one quarter-rupee and two two-anna pieces, or one quarter-rupee and one two-anna piece and eight paise, or three two-anna pieces and eight paise, or one quarter-rupee and sixteen paise, or one two-anna piece and twenty-four paise, or pay the whole in thirty-two paise coins. All nine of these forms are equal in their eyes, and they do not differentiate between them at all because the value and circulation in all of them are the same. This is not only in custom, but Shariah has also given the buyer the choice to pay in whichever form they wish among these. If the seller does not accept any of these forms and wants to compel the buyer to use another form, it would be an unreasonable demand on their part and will not be accepted. Ibn Abidin said... [In Tanwir al-Absar, what...]

Footnote 12: And now that a new small change has become prevalent called 'Anna', it is valid to pay half a rupee in thirty-six ways, and all are equal, as is not hidden. End from him.

Page 487 of 715

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

...उनके लेनदेन के व्यवहार में कोई अंतर नहीं किया जाता। अतः यदि कोई एक अंग्रेज़ी पाउंड में कपड़ा खरीदे और पंद्रह रुपये दे, या इसके विपरीत, तो इसे न तो कोई परिवर्तन कहा जाएगा और न ही समझौते का फेरबदल, और न ही विक्रेता या कोई अन्य इसका खंडन करेगा। इसी प्रकार, दो-आने का सिक्का (दुआन्नी) और आठ अंग्रेज़ी पैसे; वे इनके लेनदेन में कोई भेद नहीं करते। वैसे ही, एक चौथाई रुपया (चवन्नी) और सोलह पैसे। और जिसने कोई चीज़ आठ आने (अठन्नी) में खरीदी, वह या तो स्वयं अठन्नी दे, या दो चवन्नियाँ, या चार दुआन्नियाँ, या एक चवन्नी और दो दुआन्नियाँ, या एक चवन्नी और एक दुआन्नी और आठ पैसे, या तीन दुआन्नियाँ और आठ पैसे, या एक चवन्नी और सोलह पैसे, या एक दुआन्नी और चौबीस पैसे, या पूरा बत्तीस पैसों में। ये सभी नौ रूप उनकी दृष्टि में समान हैं, और वे इनमें बिल्कुल भी अंतर नहीं करते क्योंकि इन सभी में मूल्य और प्रचलन एक समान है। यह केवल लोक-रीति में ही नहीं है, बल्कि शरीयत ने भी खरीदार को अधिकार दिया है कि वह इनमें से जिस रूप में चाहे भुगतान करे। यदि विक्रेता इनमें से किसी रूप को स्वीकार नहीं करता है और खरीदार पर कोई अन्य रूप थोपना चाहता है, तो यह उसकी ओर से अनुचित हठ होगा और इसे स्वीकार नहीं किया जाएगा। इब्न आबिदीन ने कहा... [तन्वीर अल-अबसार में जो...]

पाद-टिप्पणी 12: और अब जबकि एक नई छोटी मुद्रा प्रचलन में आ गई है जिसे 'आना' कहा जाता है, तो आधा रुपया छत्तीस तरीकों से चुकाया जा सकता है, और सभी समान हैं, जैसा कि स्पष्ट है। उनकी ओर से समाप्त।

पृष्ठ 487 का 715

ان کے لین دین میں کوئی فرق نہیں کرتے تو جو کوئی کپڑا ایک پونڈ انگریزی کو خریدے اور دے پندرہ روپے یا اس کا عکس تو نہ اسے کوئی تبدیل کہے گا نہ قرار داد کا پھیرنا اور نہ اس سے بائع انکار کرے گا نہ کوئی اور، یو نہی دوانی اور آٹھ پیسے انگریزی ان کے لین دین میں بھی کوئی فرق نہیں کرتا، یو نہی چونی اور سولہ پیسے اور جس نے کوئی چیز اٹھنی کو خریدی وہ یا تو خود اٹھنی دے یا دو چونیاں یا چار دوانیاں یا ایک چونی اور دو دوانیاں یا ایک چونی اور ایک دوانی اور آٹھ پیسے یا تین دوانیاں اور آٹھ پیسے یا ایک چونی اور سولہ پیسے یا ایک دوانی اور چوبیس پیسے یا سب کے بتیس پیسے، یہ نو کی نو صورتیں سب ان کے نزدیک برابر ہیں اور ان میں اصلاً فرق نہیں کرتے اس لئے کہ سب میں مالیت اور چلن یکساں ہیں اور یہ کچھ عرف ہی میں نہیں بلکہ شریعت نے بھی خریدار کو اختیار دیا کہ ان میں سے جس صورت پر چاہے ادا کرے اور اگر بیچنے والا ان میں سے کسی صورت کو نہ مانے اور کوئی دوسری صورت مشتری پر لازم کرنا چاہے تو یہ اس کی طرف سے بیجا ہٹ ہوگی اور مانی نہ جائے گی۔ تنویر الابصار میں جو...

حاشیہ ۱۲: اور اب کہ ایک نئی ریزگاری چل گئی ہے جسے اکنی کہتے ہیں تو اٹھنی کے دام چھتیس طرح ادا ہو سکتے ہیں اور سب برابر ہیں جیسا کہ پوشیدہ نہیں ۱۲ منہ۔

صفحہ 487 از 715

Fatawa Rizvia, Volume 17

Under the text's statement, "it is referred absolutely (i.e., absolute price) to the predominant currency of the city. If the currencies differ in value and are equal in circulation, the contract becomes invalid." Under this, Allama Shami stated, "But if the circulation is not equal, whether the value differs or not, then the contract will be valid, and the one with more circulation will be intended. Similarly, it is valid if they are equal in value and circulation, but in this case, the buyer has the choice to pay whichever he wants." A similar point is in Al-Hidaya: the issue of equality in value and circulation is exemplified by thunai (two pieces) and thulathi (three pieces). Commentators objected that the value of three is more than two. In Al-Bahr al-Ra'iq, it was answered that thunai means two pieces that are equal to one dirham, and thulathi means three pieces that are equal to one dirham. I say: the gist of it is that if someone buys something for a dirham, he has the choice to give a full dirham, or a broken dirham of two pieces, or three pieces, provided they are all equal in value and circulation. Similarly, in our time, gold can be a whole, two halves, or four quarters, and they are all equal in value and circulation. From this, the ruling on what is customary in our time can be known.

He said that absolute price refers to that currency of the city whose circulation is more. And if those coins differ in value but their circulation is the same, the contract will become invalid. Under this, Allama Shami said, "But if the circulation is not the same, whether the value is different or not, the contract will remain valid, and the one with more circulation will be determined as intended. Similarly, if both value and circulation are equal, even then the contract will remain valid, but in this case, the buyer will have the option to pay whichever of the two he wants." In Al-Hidaya, the example for equal circulation and value is given using thunai and thulathi. Commentators objected that the value of three is more than two. In Al-Bahr al-Ra'iq, the answer was given that by thunai is meant that which has two equal to one rupee, and thulathi is that which has three equal to one rupee. I say its summary is that when he bought something for one rupee, whether he gives one full rupee, or two eight-anna pieces, or three one-third pieces, as long as all are equal in value and circulation. Similarly, the Ashrafi in our time is of a whole, two halves, and four quarters, and all are equal in value and circulation. And from this, the ruling of buying against debts in our time has become known.

[1] Durr-ul-Mukhtar Sharh Tanveer-ul-Absar, Kitab-ul-Buyoo', Matba' Mujtabai Delhi, 2/7. Page 488 of 715

फतावा रज़विया, जिल्द 17

ग्रंथ के कथन के अंतर्गत, "यह पूर्णतः(यानी पूर्ण मूल्य) शहर की प्रचलित मुद्रा की ओर संदर्भित होता है। यदि मुद्राओं के मूल्य में भिन्नता हो और उनके चलन में समानता हो, तो अनुबंध अमान्य हो जाता है।" इसके अंतर्गत अल्लामा शामी ने कहा, "लेकिन यदि चलन समान न हो, चाहे मूल्य भिन्न हो या नहीं, तो अनुबंध वैध रहेगा, और जिसका चलन अधिक होगा वही अभिप्रेत होगा। इसी तरह, यदि मूल्य और चलन दोनों समान हों, तो भी अनुबंध वैध रहेगा, लेकिन इस स्थिति में खरीदार के पास विकल्प होगा कि वह दोनों में से जो चाहे भुगतान करे।" 'अल-हिदाया' में मूल्य और चलन में समानता का मुद्दा 'थुनाई' (दो भाग) और 'थुलाथी' (तीन भाग) के उदाहरण से दिया गया है। टीकाकारों ने आपत्ति जताई कि तीन का मूल्य दो से अधिक होता है। 'अल-बहर अल-राइक़' में उत्तर दिया गया कि 'थुनाई' से तात्पर्य उन दो टुकड़ों से है जो एक दिरहम के बराबर हों, और 'थुलाथी' से तात्पर्य उन तीन टुकड़ों से है जो एक दिरहम के बराबर हों। मैं कहता हूँ: इसका सार यह है कि जब उसने कोई चीज़ एक दिरहम में खरीदी, तो उसके पास विकल्प है कि वह एक पूरा दिरहम दे, या दो टुकड़ों वाला टूटा हुआ दिरहम, या तीन टुकड़ों वाला, बशर्ते कि वे सभी मूल्य और चलन में समान हों। इसी तरह, हमारे समय में सोना पूरा, दो आधे, या चार चौथाई हो सकता है, और वे सभी मूल्य और चलन में समान हैं। इसी से हमारे समय में प्रचलित रीति के बारे में हुक्म जाना जा सकता है।

कहा कि पूर्ण मूल्य शहर की उस मुद्रा की ओर झुकता है जिसका चलन अधिक हो। और यदि वे सिक्के मूल्य में भिन्न हों और चलन एक जैसा हो तो अनुबंध अमान्य हो जाएगा। इसके अंतर्गत अल्लामा शामी ने कहा लेकिन यदि चलन एक जैसा न हो, चाहे मूल्य अलग हो या नहीं, तो अनुबंध वैध रहेगा और जिसका चलन अधिक है वही मुराद ठहराया जाएगा। इसी तरह अगर मूल्य और चलन दोनों समान हों तब भी अनुबंध वैध रहेगा मगर इस स्थिति में खरीदार को अधिकार होगा कि दोनों में से जो चाहे अदा करे। और हिदाया में चलन और मूल्य समान होने का उदाहरण 'थुनाई' और 'थुलाथी' से दिया गया। और टीकाकारों ने इस पर आपत्ति की कि तीन का मूल्य दो से अधिक है। और 'बहर अल-राइक़' में उत्तर दिया गया कि थुनाई से वह मुराद है जिसके दो एक रुपये के बराबर हों, और थुलाथी वह जिसमें तीन एक रुपये के बराबर हों। मैं कहता हूँ इसका हासिल यह है कि जब उसने कोई चीज़ एक रुपये की खरीदी तो चाहे एक रुपया पूरा दे, चाहे दो अठन्नियाँ, चाहे तीन तिहाइयां जबकि सब मूल्य और चलन में बराबर हों। इसी तरह अशरफी हमारे समय में पूरी और दो आधे और

चार पाव की होती है और सबकी मूल्य और चलन समान हैं, और इसी से मालूम हो गया ऋणों के बदले खरीदने का हुक्म जो हमारे समय में है।

[1] दुर्रे मुख्तार शरह तनवीरुल अबसार, किताबुल बुयूअ, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 2/7. पृष्ठ 488/715

تحت قول المتن ینصرف مطلقه (ای مطلق الثمن) الی غالب نقد البلد وان اختلف النقود مالیة فسد العقد مع الاستواء في رواجها ما نصه اما اذا اختلف رواجا مع اختلاف مالیتها او بدونه فیصح وینصرف الی الاروج وکذا یصح لو استوت مالیة ورواجا لکن یخیر المشتری بین ان یؤدی ایهما شاء، ومثله في الهدایة مسئلة الاستواء في المالیة والرواج بالثنائی و الثلاثی واعترضه الشراح بان مالیة الثلاثة اکثر من الاثنین واجاب في البحر بأن المراد بالثنائي ما قطعتان منه بدرهم وبالثلاثي ما ثلاثة منه بدرهم، قلت وحاصله انه اذا اشتری بدرهم فله دفع درهم کامل او درهم مکسر قطعتین او ثلثة حیث تساوی الکل في المالیة والرواج، ومثله في زماننا الذهب یکون کاملا ونصفین واربعة ارباع وکلها سواء في المالیة والرواج ومنه یعلم حکم ماتعورف في زماننا

فرمایا کہ مطلق ثمن شہر کے اس نقد کی طرف پھرتا ہے جس کا چلن زیادہ ہو اور اگر وہ سکے مالیت میں مختلف ہوں اور چلن ایک سا ہو تو عقد فاسد ہو جائیگا اس کے تحت میں علامہ شامی نے فرمایا لیکن اگر چلن ایک سا نہ ہو مالیت خواہ مختلف ہو یا نہیں تو عقد صحیح رہے گا اور جس کا چلن زیادہ ہے وہ مراد ٹھہر یگا یونہی اگر مالیت اور چلن دونوں یکساں ہوں جب بھی عقد صحیح رہے گا مگر اس صورت میں خریدار کو اختیار ہو گا کہ دونوں میں سے جو چاہے ادا کرے، اور ہدایہ میں چلن اور مالیت یکساں ہونے کی مثال ثنائی اور ثلاثی سے دی اور شارحوں نے اس پر اعتراض کیا کہ تین کی مالیت دو سے زیادہ ہے، اور بحر الرائق میں جواب دیا کہ ثنائی سے وہ مراد ہے جس کے دو ایک روپے کے برابر ہوں، اور ثلاثی وہ جس میں تین ایک روپے کے برابر ہوں، میں کہتا ہوں اس کا حاصل یہ ہے کہ جب اس نے کوئی چیز ایک روپے کو خریدی تو چاہے ایک روپیہ پورا دے چاہے دو اٹھنیاں چاہے تین تہائیاں جبکہ سب مالیت اور رواج میں برابر ہوں۔

اسی طرح اشرفی ہمارے زمانے میں پوری اور دو نصف اور چار پاؤ کی ہوتی ہے اور سب کی مالیت اور چلن یکساں ہیں، اور اسی سے معلوم ہوگیا قرضوں کے عوض خریدنے کا حکم جو ہمارے زمانے میں

[1] درمختار شرح تنویر الابصار کتاب البیوع مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۷ Page 488 of 715

Fatawa Ridawiyya Volume 17

[Left Column - Arabic] ...from buying with 'qirsh' (piastres). The 'qirsh' is originally a minted silver coin valued at forty Egyptian pieces called 'nisf' in Egypt. Furthermore, the various types of minted currency in use are valued in 'qirsh'. Some are worth ten 'qirsh', some less, and some more. So, if someone buys for a hundred 'qirsh', the custom is that they pay whatever they want from the 'qirsh' or their equivalent from other types of currency like 'riyal' or gold. No one understands that the purchase occurred specifically for the piece named 'qirsh', but rather for it or its equivalent in types of currency that are equal in circulation although different in monetary value. The objection that difference in value despite equality in circulation is a form of contract invalidity (fasad) does not arise here. This is because no difference in the monetary value of the price (thaman) occurs since it was measured in 'qirsh'. Difference only occurs when it is not measured by them, for example, if one buys for a hundred gold coins (dhahab) and there are various types of gold coins all in circulation but with different values. Thus, measuring in 'qirsh' makes it like a case where value and circulation are equal. It has already been mentioned that the buyer has the choice to pay whichever they wish. It is stated in 'al-Bahr': 'If the seller demands one of them, the buyer has the choice to give the other because the refusal...'

[Right Column - Urdu] ...has made common that a 'qirsh' is originally a silver coin whose value is forty Egyptian pieces which are called 'nisf' in Egypt. Then, for various types, the price of all is set in 'qirsh'. Among them, some are of ten 'qirsh', some less, some more. So when something is bought for a hundred 'qirsh', the habit is that he may give whatever he wants, whether he gives 'qirsh' itself or other coins which are equal to it in value, like 'riyal' or 'guinea'. And no one thinks that the purchase took place specifically for that piece whose name is 'qirsh', but rather 'qirsh' or other coins which are different in value and uniform in circulation, so much so that they become equal to its value. And this objection will not arise that different value and uniform circulation is exactly the form of contract invalidity, because here there was no difference in the value of the price when its estimation was done with 'qirsh'. Yes, difference would occur when estimation is not done with them, as if someone buys for a hundred 'ashrafis' (gold coins) and there are several types of 'ashrafis' there, all uniform in circulation and different in value. And when estimated with 'qirsh', it became as if value and circulation are all equal. And it has passed above that the buyer will have the choice to give whichever of them he wants. It was stated in 'al-

Bahr al-Raiq' that if the seller demands one coin from them, the buyer has the choice to give another because...

फ़तावा रज़विया जिल्द सत्रहवीं (17)

[बायां कॉलम - अरबी] ...क़िरश (सिक्के) के साथ खरीदने के बारे में। वास्तव में क़िरश चाँदी का एक ढाला हुआ टुकड़ा है जिसका मूल्य चालीस मिस्र के टुकड़ों के बराबर होता है जिन्हें मिस्र में 'निस्फ़' कहा जाता है। फिर चलन में मौजूद विभिन्न प्रकार के ढाले हुए सिक्कों का मूल्य क़िरश में आंका जाता है। उनमें से कुछ दस क़िरश के बराबर होते हैं, कुछ कम और कुछ अधिक। अतः यदि कोई सौ क़िरश में कोई वस्तु खरीदता है, तो प्रथा यह है कि वह जो चाहे भुगतान करे, चाहे वह क़िरश ही दे या उनके बराबर के अन्य प्रकार के सिक्कों जैसे रियाल या सोने में भुगतान करे। कोई भी यह नहीं समझता कि खरीदारी विशेष रूप से उस सिक्के के लिए हुई है जिसका नाम क़िरश है, बल्कि यह उसके या उसके बराबर के उन मुद्राओं के लिए है जो चलन में समान हैं भले ही उनका वित्तीय मूल्य भिन्न हो। यह आपत्ति कि चलन में समानता के बावजूद मूल्य में भिन्नता अनुबंध की अमान्यता (फ़साद) का रूप है, यहाँ लागू नहीं होती। क्योंकि यहाँ क़िरश में मूल्य निर्धारित होने के कारण मूल्य में कोई भिन्नता उत्पन्न नहीं हुई। भिन्नता तब होती है जब मूल्य उनके माध्यम से निर्धारित न किया गया हो, जैसे कि यदि कोई सौ सोने के सिक्कों के बदले कुछ खरीदे और वहां कई प्रकार के सोने के सिक्के हों जो चलन में तो समान हों लेकिन मूल्य में भिन्न हों। इस प्रकार, क़िरश में अनुमान लगाना उस स्थिति के समान हो गया जहाँ मूल्य और चलन दोनों समान हों। यह पहले ही बताया जा चुका है कि खरीदार को अपनी इच्छानुसार भुगतान करने का विकल्प है। 'अल-बहर' में कहा गया है: 'यदि विक्रेता उनमें से किसी एक की मांग करता है, तो खरीदार को दूसरा देने का अधिकार है क्योंकि इनकार...'

[दायां कॉलम - उर्दू] ...आम किया गया है कि क़िरश वास्तव में एक चाँदी का सिक्का है जिसकी कीमत चालीस मिस्री टुकड़े होती है जिसे मिस्र में निस्फ़ कहते हैं। फिर किस्म-किस्म के लिए सब की कीमत क़िरशों से लगाई जाती है, तो उनमें कोई दस क़िरश का, कोई कम का, कोई ज़्यादा का। तो जब कोई चीज़ सौ क़िरश की खरीदी गई तो रिवाज यह है कि वह जो चाहे दे, चाहे क़िरश ही दे दे या वे सिक्के जो मूल्य में उसके बराबर हों जैसे रियाल या गिनी। और यह कोई नहीं समझता कि खरीदारी विशेष रूप से उस टुकड़े पर हुई है जिसका नाम क़िरश है, बल्कि क़िरश या अन्य सिक्कों से जो मूल्य में भिन्न हैं और चलन में समान हैं, यहाँ तक कि वे उसके मूल्य के बराबर हो जाएँ। और यह आपत्ति नहीं आएगी कि मूल्य का भिन्न होना और चलन का समान होना यही तो अनुबंध की अमान्यता (फ़साद-ए-अक़्द) की सूरत है, क्योंकि यहाँ कीमत (ثمن) के मूल्य में कोई अंतर नहीं पड़ा

जब उसका आकलन क़िरशों से किया गया। हाँ, अंतर तब होता जब उनसे आकलन न करते, जैसे कि सौ अशरफ़ियों (सोने के सिक्के) के बदले खरीदे और वहाँ अशरफ़ियाँ कई प्रकार की हों, चलन में सब एक जैसी और मूल्य में भिन्न। और जब क़िरशों से आकलन कर लिया गया तो यह ऐसा हो गया जैसे मूल्य और चलन सब बराबर हों। और ऊपर ज़िक्र आ चुका है कि खरीदार को अधिकार होगा कि उनमें से जो चाहे दे। बहर-उर-राइक में फ़रमाया कि यदि विक्रेता उनमें से कोई एक सिक्का माँगे तो खरीदार को अधिकार है कि दूसरा दे, इसलिए कि जो...

पृष्ठ 489/715

[بایاں کالم - عربی] من الشراء بالقروش فان القرش فی الاصل قطعة مضروبة من الفضة تقوم باربعین قطعة من القطع المصریة المسماة فی مصر نصفا ثم ان انواع العلمة المضروبة فی امر تقوم بالقروش فمنها ما یساوی عشرة قروش ومنها اقل ومنها اکثر فاذا اشتری بمائة قرش فالعادة انه یدفع ما راد ام من القروش او مما یساویهما من بقیة انواع العلمة من ریال او ذهب ولا یفهم احد ان الشراء وقع بنفس القطعة المسماة قرشا بل هی او ما یساویهما من انواع العملة متساویة فی الرواج المختلفة فی المالیة ولا یرد ان صورة الاختلاف فی المالیة مع التساوی فی الرواج هي صورة الفساد لانه هنالم یحصل اختلاف مالیة الثمن حیث قدر بالقروش وانما یحصل الاختلاف اذالم یقدر بها کما لو اشتری بمائة ذهب وکان الذهب انواعاً کلها رائجة مع اختلاف مالیتها فقد صار التقدیر بالقروش فی حکم ما اذا استوت فی المالیة والرواج وقد مران المشتری یخیر فی دفع ایهما شاء ۔قال فی البحر فلو طلب البائع احدهما للمشتری دفع غیره لان امتناع

[دایاں کالم - اردو] شائع کی ہے کہ قرش اصل میں ایک چاندی کا سکہ ہے جس کی قیمت چالیس قطعہ مصری ہوتی ہے جس کو مصر میں نصف کہتے ہیں پھر قسم قسم کے لئے سب کی قیمت قرشوں سے لگائی جاتی ہے تو ان میں کوئی دس قرش کا کوئی کم کا کوئی زیادہ کا، تو جب کوئی چیز سو قرش کو خریدی تو عادت یہ ہے کہ وہ جو چاہے دے خواہ قرش ہی دے دیا اور سکے جو مالیت میں اس کے برابر ہوں ریال یا گنی ، اور یہ کوئی نہیں سمجھتا ہے کہ خریداری خاص اس ٹکڑے پر واقع ہوئی ہے جس کا نام قرش ہے بلکہ قرش یا اور سکوں سے جو مالیت سے مختلف ہیں اور چلن میں یکساں ہیں اتنا کہ اس کی مالیت کے برابر ہو جائیں اور یہ اعتراض وارد نہ ہوگا کہ مالیت مختلف ہونا اور چلن میں یکساں ہونا یہی تو فساد عقد کی صورت ہے اسلئے کہ یہاں ثمن

کی مالیت میں اختلاف نہ پڑا جب کہ اسکا اندازہ قرشوں سے کیا گیا، ہاں اختلاف جب ہوتا کہ ان سے اندازہ نہ کرتے جیسے کہ سو اشرفیوں کو خریدے اور وہاں اشرفیاں کئی قسم کی ہوں، چلن میں سب ایک سی اور مالیت میں مختلف، اور جب قرشوں سے اندازہ کر لیا یہ ایسا ہو گیا گویا مالیت اور چلن سب برابر ہیں، اور اوپر گزر چکا کہ مشتری کو اختیار ہو گا کہ ان میں سے جو چاہے دے۔ بحرالرائق میں فرمایا اگر بائع ان میں سے ایک سکہ طلب کرے تو مشتری کو اختیار ہے کہ دوسرا دے اس لئے کہ جو

Fatawa Razawiya Volume 17

[Arabic Passage]: ...the seller's [refusal to accept] what the buyer offers, and there is no excess in obstinacy (1) (End of summary). All this is clear and evident. What could be a greater form of equalization and lack of differentiation than for a buyer to purchase in Qirsh (piastres), and then be given the option to pay in them, or in Riyals, or in gold, or in small change? And if the seller does not accept, he is considered obstinate. Despite this, no sane person would imagine that Qirsh, Riyals, Guineas (Ashrafi), and small change have all become one single genus, such that excess (Tafadul) is not permissible between them, or that some are so submerged in others that they are essentially the same without difference. So, if excess is not Riba (usury), it would be treated as such due to similarity and be forbidden. This is despite the unanimous clear statement of all scholars that when the genus differs, excess is permissible. In fact, there is the instruction of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) himself: "When the types differ, sell as you wish." (2) We have already provided a verification of the issue of 'a dinar for a dirham' and explained that there is no Riba or suspicion of Riba in it, beyond which no further explanation is needed. So when this is the ruling for Qirsh and Riyals...

[Urdu Translation/Explanation]: The seller's refusal to accept what the buyer is offering is unreasonable when there is no difference in value (End of summary). All these are clear and bright points. What could be a greater form of considering them equal and not differentiating between them than a buyer purchasing in Qirsh, and then he is given the choice to pay in Qirsh, or Riyal, or a full gold coin, or its small change; and if the seller does not accept, it is considered unreasonable obstinacy. Despite this, no one can imagine that Qirsh, Riyal, Ashrafi, and small change have all become one genus, such that trading them for each other with an excess or deficit would not be permissible, or that one is so absorbed into the other that they are effectively identical without difference, so that if excess is not interest (Riba), it would become prohibited due to its resemblance to interest. This is even though all scholars unanimously clarify that when the genus differs, excess and deficit are permissible. In fact, there is an explicit instruction of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) that when types differ, sell as you please. We have already presented the research on the issue of selling one Rupee for one Ashrafi, that it contains neither interest nor a suspicion of interest, in a manner beyond which no further explanation is possible. So, when this is the ruling for Qirsh and Riyal...

1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/26.
2. Nasb al-Rayah li-Ahadith al-Hidayah, Kitab al-Buyu', al-Maktabah al-Islamiyyah, Riyadh, 4/2.

फतावा रज़विया जिल्द सत्रह (17)

[अरबी अंश]: ...विक्रेता का वह स्वीकार न करना जो खरीदार दे रहा है, और हठधर्मिता में कोई अधिकता नहीं है (1) (सारांश समाप्त)। यह सब स्पष्ट और ज़ाहिर है। इससे बड़ी समानता और अंतर का अभाव क्या होगा कि खरीदार कुरूश (सिक्कों) में खरीदारी करे, फिर उसे यह विकल्प दिया जाए कि वह उनमें से भुगतान करे, या रियाल में, या सोने में, या छोटे सिक्कों में? और यदि विक्रेता स्वीकार न करे, तो वह हठधर्मी माना जाएगा। इसके बावजूद, कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति यह कल्पना नहीं कर सकता कि कुरूश, रियाल, गिन्नी (अशरफी) और छोटे सिक्के सब एक ही श्रेणी (जिंस) के हो गए हैं, जिससे उनके बीच कमी-बेशी (तफ़ादुल) जायज़ न हो, या उनमें से एक दूसरे में इस तरह समाहित है कि मानो वे बिना किसी अंतर के एक ही हों। अतः यदि कमी-बेशी सूद (ब्याज) नहीं है, तो उसकी समानता के कारण उसके हुक्म में होकर हराम हो जाए। जबकि तमाम विद्वान सर्वसम्मति से स्पष्ट कर रहे हैं कि श्रेणी (जिंस) अलग होने पर कमी-बेशी जायज़ है। बल्कि स्वयं हुज़ूर अकदस (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) का इरशाद मौजूद है कि "जब प्रकार (किस्म) बदल जाएं तो जैसे चाहो बेचो।" (2) हमने पहले ही एक दीनार के बदले एक दिरहम के मसले की तहक़ीक़ पेश कर दी है कि इसमें न सूद है और न सूद का संदेह, जिससे बढ़कर कोई स्पष्टीकरण नहीं हो सकता। तो जब यह हुक्म कुरूश और रियाल का है...

[उर्दू व्याख्या]: खरीदार जो दे रहा है, उसे लेने से विक्रेता का इंकार अनुचित है जबकि मूल्य में कोई अंतर नहीं है (सारांश समाप्त)। और ये सब साफ़ और रोशन बातें हैं और इससे बढ़कर और क्या बराबर जानना और अंतर न करना है कि खरीदार खरीदे तो कुरूशों को, फिर उसे विकल्प दिया जाए कि चाहे कुरूश दे, चाहे रियाल, चाहे सोने का पूरा सिक्का या उसकी रेज़गारी (खुले पैसे); और विक्रेता न माने तो वह अनुचित हठधर्मिता ठहरे। इसके बावजूद, कोई यह वहम नहीं कर सकता कि कुरूश और रियाल और अशरफी और रेज़गारी सब के सब एक ही श्रेणी (जिंस) हो गए हैं, इनमें से एक दूसरे को बेचें तो कमी-बेशी जायज़ न हो या इनमें एक दूसरे में ऐसा समाहित है कि मानो वे बिना किसी अंतर के एक ही हैं, तो कमी-बेशी अगर सूद न हो तो उसकी समानता के कारण उसके हुक्म में होकर हराम हो जाए। जबकि तमाम विद्वान सर्वसम्मति से स्पष्ट कर रहे हैं कि श्रेणी (जिंस) के अंतर के समय कमी-बेशी जायज़ है। बल्कि स्वयं हुज़ूर अकदस (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) का इरशाद मौजूद है कि जब प्रकार बदलें तो जैसे चाहो बेचो। और हमने इस मसले की तहक़ीक़ कि एक रुपये

को एक अशरफी में बेचने में न सूद है न सूद का संदेह, ऊपर इस तरह बयान की है जिससे बढ़कर कोई बयान नहीं। तो जब यह हुक्म कुरूशों और रियाल का है...

---

1. रद अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू', दार इह्या अत-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 2/26।
2. नसब अर-राया लि-अहादीस अल-हिदाया, किताब अल-बुयू', अल-मकतबा अल-इस्लामिया, रियाज़, 4/2।

पृष्ठ 715 का 490

البائع من قبول مادفعه المشتری ولا فضل تعنت 1 اھـ (ملخصًا) وھذا کله واضح جلی وای تسویة وعدم تفرقة اعظم من ان یشتری المشتری بالقروش ثم یخیران یؤدی منها او من الریال او من الذھب الکامل اومن التفاریق وان لم یقل البائع کان متعنتا ومع ھذا لا یتوھم عاقل ان القروش والریال والجنیة والتفاریق کلھا صارت جنسا واحدا لا یحل فیھا التفاضل او ان بعضھا مغرق فی بعض کانه ھو من دون فرق فالتفاضل ان لم یکن ربًا فبشبھه یلحق به ویحرم مع نصھم قاطبة اجمعین ان عند اختلاف الجنس یحل التفاضل بل مع قول رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیه وسلم اذا اختلف النوعان فبیعوا کیف شئتم 2، وقد قدمنا تحقیق مسئلة دینار بدرھم وان لیس ربا ولا شبھة ربا بمالا مزید علیه فأذا کان ھذا فی القروش والریال

مشتری دے رہا ہے اس کے لینے سے بائع کا انکار بے جاہٹ ہے جبکہ مالیت میں تفاوت نہیں انتہی۔ اور یہ سب ظاہر روشن باتیں ہیں اور اس سے بڑھ کر اور کیا برابر جاننا اور فرق نہ کرنا ہے کہ مشتری خریدے تو قرشوں کو، پھر اسے اختیار دیا جائے کہ چاہے قرش دے خواہ ریال چاہے سونے کا پورا سکہ یا اس کی ریزگاری، اور بائع نہ مانے تو بے جاہٹ ٹھہرے، بائیں ہمہ کوئی یہ وہم نہیں کر سکتا کہ قرش اور ریال اور اشرفی اور ریزگاری سب کے سب ایک جنس ہو گئے ان میں سے ایک دوسرے کو بیچیں تو کمی بیشی جائز نہ ہو یا ان میں ایک دوسرے میں ایسا غرق ہے کہ گویا بعینہ بلا فرق دونوں ایک ہیں تو کمی بیشی اگر سود نہ ہو تو اس کی مشابہت کے سبب اس کے حکم میں ہو کر حرام ہو جائے حالانکہ تمام علماء بالا جماع تصریح فرما رہے ہیں کہ اختلاف جنس کے وقت کمی بیشی جائز ہے بلکہ خود حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کا ارشاد موجود ہے کہ جب نوعیں بدلیں تو جیسے چاہو بیچو، اور ہم نے اس مسئلہ کی تحقیق کہ ایک

روپے کو ایک اشرفی میں بیچنے میں نہ سود ہے نہ سود کا شبہ، اوپر اس طرح بیان کی جس سے بڑھ کر کوئی بیان نہیں تو جب یہ حکم قرشوں اور ریال

---

1 رد المحتار کتاب البیوع داراحیاء التراث العربی بیروت ۲/ ۲۶ 2 نصب الرایة لا حادیث الهدایة کتاب البیوع المکتبة الاسلامیه، ریاض ۴/ ۲

Fatawa Razawiyya - Volume 17

(Arabic Text Column): ...and the Guinée and the small change, even though all of them are natural currencies and all are included in one of the two causes of Riba (interest), which is weight. So what do you think of the bank note with Riba? While the note is nothing but a conventional price, and its financial valuation is only by a convention that is not binding upon the contracting parties. None of the causes of Riba apply to it, neither genus nor quantity. Therefore, a ruling here cannot come except from one of the three from whom the pen is lifted: a child, a sleeper, and a madman. We ask Allah for forgiveness and well-being. This is the verified answer in this chapter, and I hope there is no 'perfume after the bride'. But O you! If you refuse anything but what you brought forth—that the note is so immersed in the rupee as if it were the same—then I ask you: by this immersion and lack of separation, has the note truly become silver dirhams (rupees), or legally, in the sense that the Sharia has applied to its exchange with dirhams the same ruling as the exchange of dirhams for dirhams? As you said, it is as if ten rupees were sold for twelve. Is it so, either truly or legally? Not at all. As for the third possibility, what are these empty prattlings without origin or meaning? On the first two possibilities, the Riba would return upon you yourself if you sold a ten-unit note for ten, because the Sharia ruling for the exchange of dirhams for dirhams was not equality in terms of value...

(Urdu Text Column): ...and Ashrafi and small change, even though all of them are inherently money and in all of them, one of the two causes of Riba (interest), which is weight, is present. So what do you think about notes in exchange for rupees? While a note is only a conventional price, and the estimation of its value is also a convention that is not binding on the buyer and seller. And none of the two causes of Riba are present in it, neither genus (jins) nor quantity (qadr). So here, the ruling of impermissibility can only be given by one of three people from whom the pen of Sharia has been lifted: a child, a sleeper, and a madman. We seek forgiveness and refuge from Allah Almighty. This is the verified answer in this chapter, and I hope there is no 'perfume after the bride' (meaning no further explanation is needed). But O person! If you refuse to accept anything except your own point that a note is so immersed in rupees as if it is the very essence of rupees, then now I ask you: because of this immersion and lack of difference, has the note actually become a silver rupee or legally so, in the sense that the Sharia has applied the same ruling to the sale of notes with rupees as it has for the sale of rupees with rupees? Just as you had said that it is as if they are ten rupees that were sold for twelve. Whether actually or

legally, it is not so in any way. On the third estimation, what are these groundless and meaningless words? And in the first two cases, Riba will turn back on you yourself when a ten-rupee note is sold for ten, because in the sale of rupees for rupees, the ruling of Sharia was not that in value...

फ़तावा रज़विया - जिल्द 17

(अरबी पाठ स्तंभ): ...और गिनी और रेज़गारी, हालांकि वे सभी प्राकृतिक मुद्राएं हैं और उन सभी में रिबा (ब्याज) के दो कारणों में से एक कारण, जो कि वजन है, शामिल है। तो फिर रिबा के साथ बैंक नोट के बारे में तुम्हारा क्या ख्याल है? जबकि नोट एक पारंपरिक मूल्य के अलावा कुछ नहीं है, और इसका वित्तीय मूल्यांकन केवल एक परंपरा है जो अनुबंध करने वाले पक्षों पर बाध्यकारी नहीं है। रिबा का कोई भी कारण उस पर लागू नहीं होता, न तो प्रकार (जिन्स) और न ही मात्रा (क़द्र)। इसलिए, यहाँ कोई फैसला केवल उन तीन में से एक से ही आ सकता है जिनसे शरीयत की कलम हटा ली गई है: एक बच्चा, एक सोने वाला और एक दीवाना। हम अल्लाह से क्षमा और कल्याण की प्रार्थना करते हैं। इस अध्याय में यही शोधपूर्ण उत्तर है, और मुझे आशा है कि 'दूल्हे के बाद इत्र नहीं' (अर्थात अब किसी और स्पष्टीकरण की आवश्यकता नहीं है)। लेकिन ऐ तुम! यदि तुम अपनी उसी बात के अलावा कुछ और मानने से इनकार करते हो कि नोट रुपये में इस तरह डूबा हुआ है जैसे कि वह वही हो, तो मैं तुमसे पूछता हूँ: क्या इस डूबे होने और अलगाव की कमी के कारण, नोट वास्तव में चाँदी के दिरहम (रुपये) बन गया है, या कानूनी तौर पर इस अर्थ में कि शरीयत ने दिरहम के साथ इसके विनिमय पर वही नियम लागू किया है जो दिरहम के दिरहम के साथ विनिमय पर लागू होता है? जैसा कि तुमने कहा था, मानो दस रुपये बारह में बेचे गए। क्या ऐसा वास्तव में या कानूनी तौर पर है? बिल्कुल नहीं। जहाँ तक तीसरी संभावना का सवाल है, बिना किसी मूल या अर्थ के ये खोखली बातें क्या हैं? पहली दो संभावनाओं पर, रिबा खुद तुम पर वापस आ जाएगा यदि तुम दस रुपये का नोट दस में बेचते हो, क्योंकि दिरहम के दिरहम के विनिमय के लिए शरीयत का नियम मूल्य के मामले में समानता नहीं था...

(उर्दू पाठ स्तंभ): ...और अशर्फी और रेज़गारी में हुआ हालांकि वो सब के सब जन्मजात (ख़ल्क़तन) क़ीमत (समन) हैं और उन सब में रिबा (ब्याज) की दो वजहों में से एक वजह यानी वज़न मौजूद है, तो रुपयों के बदले नोट पर तेरा क्या गुमान है? हालांकि नोट तो सिर्फ एक पारिभाषिक क़ीमत है और इसकी मालियत (मूल्य) का अंदाज़ा भी एक परिभाषा है जिसका पाबंद होना खरीदार और बेचने वाले पर ज़रूरी नहीं है। और इसमें रिबा की दो वजहों में से कोई नहीं है, न तो जिन्स (प्रकार) और न ही क़द्र (मात्रा)। तो यहाँ नाजायज़ होने का हुक्म तीन ही लोगों में से कोई दे सकेगा जिन पर से शरीयत की कलम उठा ली गई है: बच्चा, सोता हुआ और दीवाना। हम अल्लाह तआला से माफ़ी और पनाह मांगते हैं। इस बाब (अध्याय) में यही शोधपूर्ण जवाब है और उम्मीद करता हूँ कि दूल्हे के बाद इत्र

नहीं (यानी आगे किसी स्पष्टीकरण की ज़रूरत नहीं), लेकिन ऐ शख़्स! अगर तू अपनी उसी बात के अलावा कुछ न माने कि नोट रुपयों में ऐसा डूबा (ग़र्क़) हुआ है कि मानो वो रुपयों का मूल स्वरूप है, तो अब मैं तुझसे पूछता हूँ कि इस डूबने और अंतर न होने के कारण क्या नोट वास्तव में चाँदी का रुपया हो गया या कानूनी तौर पर इस अर्थ में कि शरीयत ने रुपयों से नोट की बिक्री में वही हुक्म जारी किया जो रुपयों से रुपयों की बिक्री में है? जैसा कि तूने कहा था कि मानो वो दस रुपये हैं जो बारह को बेचे गए। चाहे वास्तव में हो या कानूनी तौर पर, किसी तरह नहीं है। तीसरे अनुमान पर ये क्या बिना आधार और अर्थ के शब्द हैं? और पहली दोनों सूरतों में रिबा खुद तुझ पर पलटेगा जब दस का नोट दस को बेचे, क्योंकि रुपयों से रुपये की बिक्री में शरीयत का हुक्म ये न था कि मालियत में...

(Arabic Text Column): والجنية والتفاريق مع ان كلها اثمان خلقية وكلها تشملها احدى علتى الربا وهو الوزن فما ظنك بالنوط مع الربا في مع ان النوط ليس الا ثمنا مصطلحا ولا تقدير ماليته الا بالاصطلاح الغير اللازم على العاقدين ولا يشمله شيئ من علة الربا لا الجنس ولا القدر فالحكم ههنا لا يتأتى الامن احد ثلاثة رفع عنهم القلم صبى ونائم ومجنون، نسأل الله العفو والعافية هو تحقيق الجواب في هذا الباب وارجو ان لا عطر بعد عروس ولكن يأهذا ان ابيت الاما اتيت من ان النوط مغرق في الربا بى كانه هي فانا اسئلك أبهذا الاغراق وعدم الافتراق صار النوط حقيقة دراهم فضة او حكماً بان اجرى الشرع في مبادلته بالدراهم ماهو حكم مبادلة الدراهم بالدراهم كما قلت كأنها عشر ربا بى بيعت باثنى عشر اولا ولا، على الثالث ما هذه الشقاشق الفارغة عن منشاء و معنى وعلى الاولين يعود الربا عليك انت اذا بعت نوط عشرة بعشرة وذلك لان حكم الدراهم بالدراهم لم يكن في الشرع التساوى في

(Urdu Text Column): اور اشرفی اور ریزگاری میں ہوا حالانکہ وہ سب کے سب خلقۃً ثمن ہیں اور ان سب میں ربا کی دو علتوں میں سے ایک علت یعنی وزن موجود ہے تو روپیوں کے بدلے نوٹ پر تیرا کیا گمان ہے حالانکہ نوٹ تو صرف ثمن اصطلاحی ہے اور اس کی مالیت کا اندازہ بھی ایک اصطلاح ہے جس کی پابندی بائع مشتری پر لازم نہیں اور اس میں ربا کی دو علتوں میں سے کوئی نہیں، نہ جنس نہ قدر، تو یہاں ناجوازی کا حکم تین ہی شخصوں میں سے کوئی کر سکے گا جن پر سے قلم شرع اٹھا لیا گیا ہے، بچہ اور سوتا اور دیوانہ۔ ہم اللہ تعالٰی سے معافی اور پناہ مانگتے ہیں، اس باب میں یہی تحقیق جواب ہے اور امید کرتا ہوں کہ دولھا کے بعد عطر نہیں لیکن اے شخص! اگر تو کچھ نہ مانے سوا اپنی اسی بات کے کہ نوٹ روپیوں میں ایسا غرق ہے کہ گویا وہ روپے کا عین ہے تو اب میں تجھ سے پوچھتا ہوں کہ اس غرق ہونے اور فرق

نہ ہونے کے سبب آیا نوٹ حقیقۃً چاندی کا روپیہ ہوا یا حکماً بایں معنی کہ روپیوں سے نوٹ کی بیع میں شرع نے وہی حکم جاری فرمایا جو روپیوں سے روپیوں کی بیع میں ہے جیسا کہ تو نے کہا تھا کہ گویا وہ دس روپے ہیں کہ بارہ کو بیچے گئے یا حقیقۃً یا حکماً کسی طرح نہیں، تیسری تقدیر پر یہ کیا بے منشا و معنی لفظیاں ہیں اور پہلی دونوں صورتوں میں ربا خود تجھ پر پلٹے گا جب کہ دس کا نوٹ دس کو بیچے اس لئے کہ روپیوں سے روپے کی بیع میں شرع کا حکم یہ نہ تھا کہ مالیت میں

Fatawa-e-Razvia (Volume 17)

[Right Column - Urdu Translation of Arabic text] ...be equal; there is a consensus of the entire Ummah that here, genuine and counterfeit are equal. In fact, the ruling was that there should be equality in weight. Thus, it is obligatory upon you to place the note in one pan of the scale and silver change or any other silver in the other pan, and sell it only for as much silver as equals the note in weight. This would not be more than the weight of a two-anna or four-anna piece. If you take anything more than that, you have consumed usury (Riba) and made usury lawful. And if you claim that the ruling transmitted to the note from rupees, due to this immersion and lack of separation, is to make them equal in value, then this is great ignorance on your part, which is like a joke, and is bending due to weakness. For making them equal in value was not a ruling of Riba in itself. So how can a ruling that is not in the rupees themselves spread from them to the notes that resemble them? Furthermore, even if the note were to be united with rupees in reality or in ruling, it would not be united with gold, because two distinct types cannot be united. Therefore, if a ten-rupee note is sold for twelve gold guineas (Ashrafis), the prohibition that applied there would not be necessary here, because there is no unity in genus, neither in reality nor in ruling. Thus, the conclusion of your fatwa would be that selling a ten-rupee note for twelve [rupees] is forbidden because he obtained an excess without compensation, but if he sells it for twelve guineas, there is no harm, because he did not obtain any such excess that is considered [as Riba].

[Left Column - Original Arabic Text] ...financial value, for the consensus of the Ummah is that the good and the bad are equal here. Indeed, the ruling was equality in quantity. So it is incumbent upon you to place the note in one scale and silver from dispersed dirhams or others in the other scale. Do not sell it except for an equal weight. This would only be a small piece or two. If you add anything to it, you have consumed usury and made usury lawful. If you claim that the ruling extending to the note from usury, because of this immersion and lack of distinction, is equality in value, then this is great ignorance from you, equivalent to a joke and swaying from weakness. For equality in value was not the ruling of usury in itself, so how can what is not in them spread from them to what resembles them? Moreover, if the note is united with usurious items in reality or in ruling, it does not unite with gold, due to the impossibility of union between two distinct types. Therefore, if a ten-unit note is sold for twelve guineas, what was necessary there is not necessary here due to the lack of unity in genus, neither in reality nor in ruling. At that point, the outcome of

your fatwa returns to this: whoever sells a ten-unit note for twelve rupees, this is forbidden because an excess was obtained without compensation. But if he sells it for twelve guineas, there is no harm upon him because no excess that is considered has been obtained.

फ़तावा-ए-रज़विया (जिल्द 17)

[दायां कॉलम - उर्दू अनुवाद] ...बराबर हों, तमाम उम्मत का इजमा (आम सहमति) है कि यहाँ खरा और खोटा बराबर है। बल्कि हुक्म तो यही था कि वज़न में बराबरी हो, तो तुझ पर वाजिब है कि एक पलड़े में नोट रखे और दूसरे पलड़े में रुपये की रेज़गारी या और कोई चाँदी, बस इतने ही को उसे बेचे जितनी चाँदी वज़न में नोट के बराबर हो। और यह दुअन्नी या चवन्नी भर से ज़ायद (अधिक) न होगी। और अगर उस पर कुछ ज़्यादा ले तो तूने सूद (ब्याज) खाया और सूद हलाल किया। और अगर तू यह ज़ोम (दावा) करे कि इस ग़र्क होने और फ़र्क न होने के कारण रुपयों से जो हुक्म नोट की तरफ़ आया वह यह है कि मालियत (मूल्य) में बराबर कर लो, तो यह तेरा बड़ा जहल (अज्ञानता) है जो ठट्ठेबाज़ी (मज़ाक) के समान है और दुबलेपन से लचक हो रहा है। कि मालियत में बराबर करना खुद रुपयों का हुक्म न था, तो रुपयों से उनके मुशाबेह (समान) नोट की तरफ़ वह हुक्म क्योंकर सरायत (फैलना) करेगा जो खुद उनमें नहीं। इसके अलावा, अगर नोट रुपयों के साथ हकीक़तन (वास्तव में) या हुकमन (कानूनी तौर पर) मुत्तहिद (एक) हो भी जाए तो सोने के साथ मुत्तहिद न होगा, क्योंकि दो मुतबायन (अलग) किस्में मुत्तहिद नहीं हो सकतीं। तो इस तक़दीर पर अगर दस रुपये का नोट बारह अशर्फ़ी को बेचा जाए तो वह हर्ज लाज़िम न आएगा जो बारह रुपये से बेचने में था कि यहाँ न जिन्स हकीक़तन एक है न हुकमन। अब तेरे फ़तवे का अंजाम यह ठहरेगा कि दस रुपये का नोट बारह को बेचना तो हराम है इसलिए कि उसने बिला मुआविज़ा (बिना बदले के) एक ज़्यादती हासिल की, और अगर बारह अशर्फ़ी को बेचे तो कोई हर्ज नहीं इसलिए कि उसने कोई ऐसी ज़्यादती हासिल न की जिसका एतबार (मान्यता) हो।

[बायां कॉलम - अरबी पाठ] ...मालियत के बारे में उम्मत का इजमा है कि यहाँ उम्दा और रद्दी बराबर हैं। हकीकत में हुक्म मिक़दार में बराबरी का था। इसलिए तुम पर लाज़िम है कि नोट को एक तराजू में रखो और दूसरी तरफ बिखरे हुए दिरहम या चांदी को। उसे वज़न में बराबरी के अलावा मत बेचो। यह वज़न सिर्फ एक या दो छोटे टुकड़ों के बराबर होगा। अगर तुमने उस पर कुछ बढ़ाया तो तुमने सूद खाया और सूद को हलाल किया। और अगर तुम्हारा यह गुमान है कि सूद का हुक्म जो नोट तक पहुँचा है, वह इस जुड़ाव और फर्क न होने के कारण मूल्य में बराबरी है, तो यह तुम्हारी तरफ से बड़ी जहालत है जो मज़ाक के बराबर है। मालियत में बराबरी खुद सूद का हुक्म नहीं था, तो जो चीज़ खुद उनमें नहीं है, वह उनसे मिलती-जुलती चीज़ों में कैसे पहुँच सकती है? इसके अलावा, अगर नोट हकीकत या हुक्म में सूद वाली चीज़ों के साथ एक हो भी जाए, तो वह सोने के साथ एक नहीं होगा,

क्योंकि दो अलग किस्मों का एक होना असंभव है। इसलिए, अगर दस का नोट बारह गिनी (अशर्फ़ी) में बेचा जाए, तो वह हुक्म यहाँ लागू नहीं होगा जो वहाँ था, क्योंकि जिन्स (जाति) में कोई एकता नहीं है, न हकीकत में न हुक्म में। तब तुम्हारे फ़तवे का नतीजा यह होगा कि जो दस का नोट बारह रुपयों में बेचे, वह हराम है क्योंकि बिना किसी बदले के बढ़ोतरी हासिल हुई। लेकिन अगर वह इसे बारह गिनी में बेचे, तो उस पर कोई हर्ज नहीं क्योंकि कोई ऐसी बढ़ोतरी हासिल नहीं हुई जिसका एतबार किया जाए।

पृष्ठ 715 का 492

[دایاں کالم - متن] برابر ہوں، تمام امت کا اجماع ہے کہ یہاں کھرا کھوٹا برابر ہے بلکہ حکم تو یہی تھا کہ وزن میں برابری ہو تو تجھ پر واجب ہے کہ ایک پلہ میں نوٹ رکھے اور دوسرے پلہ میں روپے کی ریزگاری یا اور کوئی چاندی بس اتنے ہی کو اسے بیچے جتنی چاندی وزن میں نوٹ کے برابر ہو اور یہ دوانی یا چونی بھر سے زائد نہ ہو گی اور اگر اس پر کچھ زیادہ لے تو تو نے سود کھایا اور سود حلال کیا اور اگر تو یہ زعم کرے کہ اس غرق ہونے اور فرق نہ ہونے کے سبب روپوں سے جو حکم نوٹ کی طرف آیا وہ یہ ہے کہ مالیت میں برابر کرلو تو یہ تیرا بڑا جہل ہے جو ٹھٹھے بازی کے مثل ہے اور دبلے پن سے لچک ہو رہا ہے کہ مالیت میں برابر کرنا خود روپوں کا حکم نہ تھا تو روپوں سے ان کے مشابہ نوٹ کی طرف وہ حکم کیونکر سرایت کرے گا جو خود ان میں نہیں، علاوہ بریں اگر نوٹ روپوں کے ساتھ حقیقۃً یا حکماً متحد ہو بھی جائے تو سونے کے ساتھ متحد نہ ہوگا کہ دو متباین نوعیں متحد نہیں ہوسکتیں تو اس تقدیر پر اگر دس روپے کا نوٹ بارہ اشرفی کو بیچا جائے تو وہ حرج لازم نہ آئے گا جو بارہ روپے سے بیچنے میں تھا کہ یہاں نہ جنس حقیقۃً ایک ہے نہ حکماً اب تیرے فتوٰی کا انجام یہ ہیرے گا کہ دس روپے کا نوٹ بارہ کو بیچنا تو حرام ہے اس لئے کہ اس نے بلا معاوضہ ایک زیادتی حاصل کی اور اگر بارہ اشرفی کو بیچے تو کوئی حرج نہیں اس لئے کہ اس نے کوئی ایسی زیادتی حاصل نہ کی جس کا اعتبار۔

[بایاں کالم - عربی متن] المالیة لاجماع الامة ان الجید والردی ھھنا سواء وانما کان الحکم التساوی فی القدر فیجب علیك ان تضع النوط فی کفة والفضة من تفاریق دراھم او غیرہ فی الکفة الاخری فلا تبعه الا بمساواته وزنا ولا یکون ذلك الا قطعة صغیرة او قطعتین فان زدت علیه شیئا فقد اکلت الربا واحللت الربا وان زعمت ان الحکم الساری الی النوط من الربا لیس لاجل ھذا الاغراق وعدم الافتراق ھو

التساوى فى المالية فهذا جهل منك عظيم يساوى هزلا ويتساوك هزلا فان التسوية فى المالية لم يكن حكم الربا فى نفسها فكيف يسرى منها الى شبهها ما ليس فيها علان النوط ان اتحد مع الربا بى حقيقة او حكما لا يتحد مع الذهب لامتناع الاتحاد بين نوعين متباينين فاذن ان بيع نوط عشرة باثنى عشرة جنيها لا يلزم فيه مالزم ثمه لعدم الاتحاد فى الجنس حقيقة ولا حكما فحينئذ يرجع مآل فتواك الى ان من باع نوط عشرة باثنتى عشرة ربية فهذا حرام لانه حصل فضلا بلا عوض وان باعه باثنى عشر جنيها فهذا لا حرج عليه لانه لم يحصل فضلا يعتد به۔

Fatawa Rizwia (Volume 17)

[Top Section - Commentary on a Fatwa] (Arabic Column Translation): Glory be to Allah! How precise is the insight of this fatwa and how rightfully it observes the intent of the noble Sharia in prohibiting Riba (usury), which is the protection of people's wealth. There is no power nor strength except with Allah, the Most High, the Supreme. In summary, the speech of this objector does not relate to any legal principle or proof. It is nothing but a word he utters; Allah has sent down no authority for it. Praise be to Allah, and upon Him is reliance, and He is the One whose help is sought. (Urdu Column Translation): Praise be to Allah! What can be said about this fatwa, how profound is its insight! How well it has observed the objective of the Sharia in prohibiting usury, which is to keep people's wealth secure. There is no power nor strength except with Allah, the Most High, the Supreme. The summary is that the speech of this person who prohibits [this act] does not relate to any basic principle nor any evidence. It is just a claim he makes; Allah has not revealed any proof for it. All praise is for God, and in Him is trust, and from Him alone is help sought.

[Bottom Section - Answer to the Twelfth Question] (Arabic Column Translation): As for the twelfth [point], I say: Yes, it is permissible if they truly intend a sale and not a loan. This is because selling is permissible, inequality [in exchange] is permissible, and deferment is permissible, as we have established all of that. Installment (tanjem) is but a type of deferment. Yes, if one lends a ten-rupee note and stipulates that the borrower returns twelve rupees, or eleven, or ten and a piece, for example, either immediately or non-periodically or otherwise, then this is definitely haram and riba. This is because it is a loan that yields a benefit. And indeed, our master the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Every loan that draws a benefit is riba." [Footnote 1] Narrated by... (Urdu Column Translation): Answer to the twelfth question. I say: (So I say) Yes, it is permissible as long as both parties intend a genuine sale and not a loan. This is because selling is permissible, charging more or less is permissible, and credit on a fixed term is permissible, as we have already explained the research on all these matters. Installment plans are also just a way of fixing a term. Yes, if a ten-rupee note is given as a loan with the condition that the borrower returns twelve rupees, or eleven, or for example ten rupees and a 'dawani' (two-anna coin), whether it is paid back after some time in installments or without installments, then this is certainly forbidden and is usury (interest). This is because it is a loan from which a benefit was derived. And indeed,

our master the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "The loan which brings any benefit is usury." This Hadith...

[Footer]: 1. Kanz al-Ummal, with reference to al-Harith from Ali, Hadith 15516, Mu'assasat al-Risala, Beirut 6/238. Page 493 of 715

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

[ऊपरी हिस्सा - एक फतवे पर टिप्पणी] (अरबी कॉलम का अनुवाद): सुभान अल्लाह! इस फतवे की अंतर्दृष्टि कितनी सटीक है और सूद (ब्याज) को हराम करने में शरीयत-ए-मुकद्दसा के नेक मक़सद, जो कि लोगों के माल की हिफाज़त है, की किस कदर रियायत की गई है। और कोई ताकत और कुव्वत नहीं है मगर अल्लाह की मदद से जो आली और अज़ीम है। संक्षेप में, इस मना करने वाले का बयान न तो किसी शरई असल (बुनियादी उसूल) की तरफ लौटता है और न ही किसी दलील की तरफ। यह तो बस एक बात है जिसे वह कह रहा है; अल्लाह ने इसके लिए कोई दलील नहीं उतारी है। सब तारीफें अल्लाह के लिए हैं और उसी पर भरोसा है, और वही मदद का स्रोत है। (उर्दू कॉलम का अनुवाद): सुभान अल्लाह! इस फतवे का क्या कहना, इसकी अंतर्दृष्टि कितनी सूक्ष्म है! सूद को हराम करने में शरीयत-ए-मुतहरा का जो मक़सद था यानी लोगों के माल को सुरक्षित रखना, किस हद तक उसने इसकी रियायत की है। 'ला हौला वला कुव्वता इल्ला बिल्लाहिल अलीयिल अज़ीम'। सारांश यह है कि इस मना करने वाले की बात न तो किसी असल की तरफ लौटती है और न ही दलील की ओर। वह तो बस एक बात है जिसे वह कह रहा है, अल्लाह ने उस पर कोई दलील नहीं उतारी। सब प्रशंसा ईश्वर के लिए है और उसी पर भरोसा है और उसी से मदद की प्रार्थना है।

[निचला हिस्सा - बारहवें प्रश्न का उत्तर] (अरबी कॉलम का अनुवाद): रही बात बारहवें (बिंदु) की, तो मैं कहता हूँ: हाँ, यह जायज़ है बशर्ते कि दोनों का इरादा वास्तव में खरीद-फरोख्त (बिक्री) का हो न कि कर्ज़ का। ऐसा इसलिए क्योंकि बेचना जायज़ है, मूल्य में अंतर जायज़ है और मुद्दत-ए-मईन (निश्चित अवधि) पर उधार जायज़ है, जैसा कि हम इन सभी बातों की तहकीक कर चुके हैं। और किश्तबंदी भी एक तरह की निश्चित अवधि ही मुकर्रर करना है। हाँ, अगर दस का नोट कर्ज़ दिया और शर्त लगा ली कि कर्ज़ लेने वाला बारह रुपये या ग्यारह या मिसाल के तौर पर दस के ऊपर एक टुकड़ा, अब चाहे वह नकद हो या बिना किश्तबंदी के या अन्यथा, तो यह यकीनन हराम और सूद है। इसलिए कि यह एक ऐसा कर्ज़ है जिससे नफा (लाभ) हासिल किया गया, और बेशक हमारे सरदार रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: "हर वह कर्ज़ जो कोई नफा खींच कर लाए वह सूद है।" [फुटनोट 1] रिवायत किया... (उर्दू कॉलम का अनुवाद): बारहवें सवाल का जवाब। मैं कहता हूँ: (तो मैं कहता हूँ) हाँ जायज़ है बशर्ते कि दोनों हकीक़त में बिक्री का इरादा करें न कि कर्ज़ का, इसलिए कि बेचना जायज़ है और कमी-बेशी जायज़ है और मुकर्रर वक्त पर उधार जायज़ है, जैसा कि हम सब बातों की तहकीक बयान कर चुके हैं और किश्तबंदी भी एक किस्म की मुकर्रर मुद्दत ही

है। हाँ, अगर दस का नोट कर्ज़ दिया और शर्त लगा ली कि कर्ज़ लेने वाला बारह रुपये या ग्यारह या मिसाल के तौर पर दस के ऊपर एक दवन्नी, अब चाहे कुछ मुद्दत बाद किश्तबंदी से वापस दे या बिना किश्त के, तो यह ज़रूर हराम और सूद है। इसलिए कि वह एक कर्ज़ है जिससे नफा हासिल किया गया, और बेशक हमारे सरदार रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया कि जो कर्ज़ कोई नफा खींच कर लाए वह सूद है। यह हदीस...

[फुटनोट]: 1. कंजुल उम्माल, अल-हारिस के हवाले से हजरत अली से रिवायत, हदीस 15516, मुअस्ससतुल रिसाला, बेरूत 6/238। पृष्ठ 493 का 715

فتاوی رضویہ، جلد بفتدہم (۱۷)

[بالائی حصہ] (عربی کالم): فسبحن الله من هذه الفتوى مأدقها نظر او احقها رعاية لمقصد الشرع الشريف من تحريم الربا وهو صيانة اموال الناس ولاحول ولا قوة الا بالله العلى العظيم و بالجملة كلام هذا لا مانع لا يرجع الى اصل شرعى ولا برهان وما هو الاكلمة هو قائلها ما انزل الله بها من سلطن والحمد لله وعليه التكلان وهو المستعان۔ (اردو کالم): کیا جائے تو سبحان اللہ اس فتوی کا کیا کہنا، کس قدر اس کی نظر دقیق ہے اور ربا کے حرام کرنے میں شرع شریف کے جو مقصد تھا یعنی لوگوں کے مال محفوظ رکھنا کس درجہ اس نے اس کی رعایت کی ہے ولا حول ولا قوۃ الا باللہ العلی العظیم، خلاصہ یہ ہے کہ اس منع کرنے والے کا کلام نہ کسی اصل کی طرف پلٹتا ہے نہ دلیل کی جانب، وہ تو ایک بات ہے کہ وہی اس کا قائل ہے اللہ نے اس پر کوئی دلیل نہ اتاری، سب خوبیاں خدا کو اور اسی پر بھروسا ہے اور اسی سے مدد کی طلب۔

[زیریں حصہ] (عربی کالم): واما الثاني عشر فأقول: نعم يجوز اذا قصدا البيع حقيقة دون القرض و ذلك لان البيع جائز والتفاضل جائز والتأجيل جائز كما حققنا كل ذلك وما التنجيم الانوع من التأجيل نعم ان اقرض نوط عشرة و شرط ان يرد المستقرض اثنتى عشرة ربية او احدى عشرة او عشرة وقطعة مثلا حالاً او مأ لا منجما او غير منجم فهذا حرام و ربا قطعا لانه قرض جر نفعاً وقد قال سيدنا رسول الله صلى الله تعالى عليه وسلم كل قرض جر منفعة فهو ربا۱، رواه (اردو کالم): جواب سوال دوازدہم فأقول: (تو میں کہتا ہوں) ہاں جائز ہے جبکہ دونوں حقیقت بیع کا ارادہ کریں نہ کہ قرض کا اس لئے کہ بیچنا جائز اور کمی بیشی جائز اور مدت معین پر ادھار جائز، جیسا کہ ہم سب باتوں کی تحقیق بیان کر آئے اور قسط بندی بھی ایک قسم کی مدت ہی معین کرنا ہے، ہاں اگر دس کا نوٹ قرض دیا اور شرط کرلی کہ قرض لینے والا بارہ روپے یا گیارہ یا مثلاً ایک دوانی اوپر دس، اب یا کچھ مدت

بعد قسط بندی سے یا بلا قسط واپس دے تو یہ ضرور حرام اور سود ہے اس واسطے کہ وہ ایک قرض ہے جس سے نفع حاصل کیا، اور بیشک ہمارے سردار رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا کہ جو قرض کوئی نفع کھینچ کر لائے وہ سود ہے۔ یہ حدیث

[فٹ نوٹ]: ۱ کنز العمال بحوالہ الحارث عن علی حدیث ۱۵۵۱۶ مؤسسة الرسالة بیروت ۶/ ۲۳۸

Fatawa Razawiyyah Volume (17)

[Left Column - Arabic] Al-Harith bin Abi Usamah narrated from the Commander of the Faithful Ali (may Allah Almighty honor his face), in contrast to when he lent and did not stipulate any increase, nor was it customary from their dealings, because what is customary is like what is stipulated. Then, if the borrower paid it back and added something extra from himself as an act of kindness, a distinct and separate increase so that it wouldn't be a gift of an undivided share in something divisible, then this is permissible and there is no harm in it. Rather, it is from the category of "Is the reward for good [anything] but good?" [Quran 55:60][1] And indeed, the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said to the weighmaster regarding the price of trousers he bought, "Weigh and give extra."[2] Similarly, if a note was lent and the lender demanded it, but he (the borrower) did not have such a note or did not want to give the note and wanted to pay in rupees instead, and a settlement was reached for twelve rupees in exchange for a ten-rupee note, and the rupees were paid in the same sitting so that the contracting parties do not separate while there is debt on both sides, then this is also permissible by consensus if the note he borrowed had been spent. And according to both parties [Imam Abu Hanifa and Imam Muhammad], it is permissible unconditionally.

[Right Column - Urdu] Al-Harith bin Abi Usamah narrated from the Commander of the Faithful Ali (may Allah Almighty honor his face), in contrast to when he lent and did not stipulate any increase, nor was taking extra customary from their previous dealings (because what is customary is like a condition). Then, the borrower repaid the loan and, as a favor, gave something extra from himself which was distinct and separate (this is so that in a divisible item, it does not become a gift of an undivided share). So, this is permissible and there is no harm in it; rather, it is from the category of "What is the reward for kindness except kindness?" And indeed, the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) bought a pair of trousers (and there, the price was paid by weight), so he said to the one weighing, "Weigh and give extra." Similarly, if a note was lent and the lender demanded it, but he did not have such a note, or he did not want to give the note and wanted to pay rupees in exchange, and a settlement was reached for twelve rupees in exchange for a ten-rupee note, and the rupees were paid in that very session (so that the parties do not separate such that there is debt on both sides), then this is also permissible. Then, if that note which he had taken was no longer with him, it is permissible by consensus. And if the note is present with him but specifically that...

[1] Al-Quran al-Kareem 55/60 [2] Sunan al-Nasa'i Kitab al-Buyu', al-Maktabah al-Salafiyyah Lahore 2/217, Jami' al-Tirmidhi Chapters on Sales, Amin Company Delhi 1/156 Page 494 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द (17)

[बायां कॉलम - अरबी] अल-हारिस बिन अबी उसामा ने अमीरुल मोमिनीन अली (अल्लाह उन पर कृपा करे) से रिवायत की, इसके विपरीत जब उन्होंने उधार दिया और किसी वृद्धि की शर्त नहीं रखी, और न ही उनके व्यवहार में वृद्धि का चलन था, क्योंकि जो ज्ञात है वह शर्त के समान है। फिर, यदि ऋण लेने वाले ने इसे वापस कर दिया और अपनी ओर से एहसान के रूप में कुछ अतिरिक्त दिया, एक विशिष्ट और अलग वृद्धि ताकि वह विभाज्य चीज़ में अविभाजित हिस्से का उपहार न बन जाए, तो यह जायज़ है और इसमें कोई बुराई नहीं है। बल्कि, यह इस श्रेणी से है कि "एहसान का बदला एहसान के सिवा क्या है?" [कुरान 55:60][1] और वास्तव में, पवित्र नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने अपने द्वारा खरीदे गए पायजामे की कीमत के संबंध में तौलने वाले से कहा, "तौलो और अधिक दो।"[2] इसी प्रकार, यदि कोई नोट उधार दिया गया था और ऋणदाता ने उसकी मांग की, लेकिन उसके(ऋण लेने वाले) पास वैसा नोट नहीं था या वह नोट नहीं देना चाहता था और बदले में रुपये देना चाहता था, और दस रुपये के नोट के बदले बारह रुपये पर समझौता हुआ, और उसी बैठक में रुपये का भुगतान कर दिया गया ताकि अनुबंध करने वाले पक्ष इस तरह अलग न हों कि दोनों ओर कर्ज हो, तो यह भी सर्वसम्मति से जायज़ है यदि उसके द्वारा उधार लिया गया नोट खर्च हो गया हो। और दोनों पक्षों [इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम मुहम्मद] के अनुसार, यह बिना शर्त जायज़ है।

[दायां कॉलम - उर्दू] अल-हारिस बिन अबी उसामा ने अमीरुल मोमिनीन अली (अल्लाह उन पर कृपा करे) से रिवायत की, इसके विपरीत जब उन्होंने उधार दिया और कुछ ज़्यादा लेना शर्त न किया और न ही उनके पिछले व्यवहार में ज़्यादा लेना ज्ञात था (क्योंकि जो ज्ञात है वह शर्त की तरह है)। फिर, ऋण लेने वाले ने ऋण चुका दिया और अपनी ओर से एहसान के रूप में कुछ ऐसा अतिरिक्त दिया जो अलग और विशिष्ट हो (यह इसलिए कि विभाज्य वस्तु में यह अविभाजित हिस्से का उपहार न बन जाए)। तो, यह जायज़ है और इसमें कोई हर्ज नहीं है; बल्कि, यह इस श्रेणी से है कि "एहसान का बदला एहसान के सिवा क्या है?" और वास्तव में, पवित्र नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने एक पायजामा खरीदा (और वहां कीमत तौलकर दी जाती थी), तो उन्होंने तौलने वाले से कहा, "तौलो और ज़्यादा दो।" इसी तरह, यदि कोई नोट उधार दिया गया था और ऋणदाता ने उसकी मांग की, लेकिन उसके पास वैसा नोट नहीं था, या वह नोट नहीं देना चाहता था और बदले में रुपये देना चाहता था, और दस रुपये के नोट के बदले बारह रुपये पर समझौता हुआ, और उसी बैठक में रुपये का भुगतान कर दिया गया (ताकि पक्ष इस तरह अलग न हों कि दोनों ओर कर्ज हो), तो यह भी जायज़ है। फिर,

यदि वह नोट जो उसने लिया था, उसके पास नहीं रहा, तो यह सर्वसम्मति से जायज़ है। और यदि नोट उसके पास मौजूद है लेकिन विशेष रूप से वह...

---

[1] अल-कुरान अल-करीम 55/60 [2] सुनन अन-नसाई किताब अल-बुयू, अल-मकतबा अस-सलफिया लाहौर 2/217, जामी अत-तिर्मिज़ी बिक्री पर अध्याय, अमीन कंपनी दिल्ली 1/156 पेज 494 of 715

فتاوٰی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

[بایاں کالم - عربی] الحارث بن ابی اسامة عن امیر المؤمنین علی کرم اللہ تعالٰی وجہہ بخلاف ما اذا اقرض ولم یشترط شیئا من الزیادة ولا کانت معھودة من تعاملھما لان المعروف کالمشروط ثم ان المستقرض اوفاہ وزاد من عند نفسہ تکرما زیادہ ممتازة منحازة کیلا تکون ھبة مشاع فیما یقسم فھذا جائز لا بأس بہ بل ھو من باب " ھَلْ جَزَاءُ الْإِحْسَانِ إِلَّا الْإِحْسَانُ ۞" ۱ و قد قال صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم للوزان فی ثمن سراویل اشتراھا زن و ارجح ۲ و کذا اذا تقاضاہ المقرض فلم یکن عندہ النوط اولم یرد ردہ فوقع الصلح علی اثنتی عشرة ربیة عوضا عن النوط الذی فی ذمتہ و قبضت الدراہم فی المجلس کیلا یکون افتراقا عن دین بدین فھذا ایضا جائز بالاتفاق ان کان النوط الذی استقرضہ مستھلکا و عند الطرفین مطلقا

[دایاں کالم - اردو] حارث بن ابی اسامہ نے امیر المؤمنین علی کرم اللہ تعالٰی وجہہ سے روایت کی، بخلاف اس کے جبکہ قرض دیا اور کچھ زیادہ لینا شرط نہ کیا اور نہ ان کے اگلے عمل درآمد سے زیادہ لینا معروف تھا (کیونکہ جو معروف ہے وہ تو مثل شرط کے ہے) پھر قرض لینے والے نے قرض ادا کیا اور اپنی طرف سے احسانا کچھ ایسا زیادہ دیا جو الگ ممتاز ہو (یہ اس لئے کہ قابل تقسیم شے میں ہبہ مشاع نہ ہو جائے) تو یہ جائز ہے اس میں کچھ حرج نہیں بلکہ اس قبیل سے ہے کہ احسان کا بدلہ کیا ہے سوا احسان کے۔ اور بیشک حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے جو ایک پاجامہ خریدا (اور وہاں قیمت تول کر دی جاتی تھی) تو لنے والے سے فرمایا کہ تول اور زیادہ دے، یو نہی اگر نوٹ قرض دیا تھا اور قرض خواہ نے اس سے تقاضا کیا اس کے پاس ویسا نوٹ نہ تھا یا اس نے نوٹ دینا نہ چاہا عوض میں روپے دینے چاہے دس کے نوٹ کے بدلے بارہ روپے پر صلح ہوئی اور اسی جلسے میں روپے ادا کر دئے (تاکہ عاقدین یوں جدا نہ ہوں کہ دونوں

طرف دین ہو) تو یہ بھی جائز ہے پھر اگر وہ نوٹ جو اس نے لیا تھا اس کے پاس نہ رہا جب تو بالاتفاق جائز ہے اور اگر نوٹ اس کے پاس موجود ہے مگر خاص اس

---

۱ القرآن الکریم ۵۵/ ۶۰ ۲ سنن النسائی کتاب البیوع المکتبة السلفیہ لاہور ۲/ ۲۱۷ ، جامع الترمذی ابواب البیوع امین کمپنی دہلی ۱/ ۱۵۶ Page 494 of 715

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Arabic Text Block] "And if it remains with him when the contract was not specifically placed upon it. Yes, if it were present and he bought it specifically for twelve or ten or whatever he wished, then this is void and not permissible according to them [Imam Abu Hanifa and Imam Muhammad], contrary to [the opinion of] Abu Yusuf (may Allah be pleased with them). Because he has already owned it by borrowing, so how can he buy his own property from someone else? In Wajiz al-Kardari: If he has food or currency owed by another person and buys it from him for dirhams, and they separate before the possession of the dirhams, it becomes void, and this is among the things to be memorized. In Radd al-Muhtar from al-Dhakhirah: He bought from the lender the grain ('kurr') that he owed him for a hundred dinars; it is permissible because it is a debt owed by him, not through a contract of exchange (sarf) or advance payment (salam). If it had been consumed at the time of purchase, the permissibility is the saying of all, because he owned it by consumption, and its equivalent is owed by him without dispute. If it is still existing, then similarly according to them [Imam Abu Hanifa and Imam Muhammad]; however, according to the saying of Abu Yusuf, it should not be permissible because he does not own it as long as he has not consumed it, so its equivalent is not yet mandatory."

[Urdu Text Block] Do not buy a banknote with rupees; rather, if there was a debt on one's responsibility and he bought it, then according to Imam-e-A'zam and Imam Muhammad it is permissible. Yes, if that same banknote which was borrowed is present, and he buys that very same one for twelve rupees or ten or as many as he wishes, then this is void according to the Tarfain [Imam-e-A'zam and Imam Muhammad], while Imam Abu Yusuf (may Allah be pleased with them) says it is permissible. The reason for it being void is that when he took this banknote as a loan, he became its owner as soon as he took the loan, so how will he buy his own owned property from another? It is stated in Wajiz Kardari: When someone owes him grain or money, and the debtor bought that debt from him with rupees, and before getting possession of the rupees both separated, then this sale became void, and this is among those issues which it is necessary to remember (Intiha). And in Radd al-Muhtar, citing Dhakhirah, it states: The grain of the lender that was owed by the borrower, he bought it from him for a hundred gold coins (ashrafis); it is permissible because this debt on him was neither from a contract of exchange nor from a contract of salam. Then, if that grain had been spent at the time of purchase, then it is permissible according to all, because by spending it, he became its owner by

consensus, and that much grain remained mandatory on his responsibility. And if the grain is present, then according to Imam-e-A'zam and Imam Muhammad it is still permissible, and on the saying of Imam Abu Yusuf it should be that it is not permissible because according to him...

---

1. Fatawa Bazzaziyya, on the margin of Fatawa Hindiyya, Kitab al-Sarf, Noorani Kutub Khana Peshawar, 6/5

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

[अरबी पाठ ब्लॉक] "और यदि वह उसके पास शेष है जब अनुबंध उस पर विशेष रूप से लागू नहीं किया गया था। हाँ, यदि वह मौजूद था और उसने उसे विशेष रूप से बारह या दस या जो कुछ भी चाहा उसके बदले खरीदा, तो यह उनके[इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम मुहम्मद] के अनुसार बातिल (शून्य) और अस्वीकार्य है, अबू यूसुफ (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) की राय के विपरीत। क्योंकि उसने पहले ही इसे उधार लेकर प्राप्त कर लिया है, तो वह किसी और से अपनी संपत्ति कैसे खरीद सकता है? 'वजीज़ अल-करदारी' में है: यदि उसके पास किसी अन्य व्यक्ति से भोजन या मुद्रा बकाया है और वह उसे दिरहम के बदले खरीदता है, और वे दिरहम के कब्जे से पहले अलग हो जाते हैं, तो यह शून्य हो जाता है, और यह उन चीजों में से है जिन्हें याद रखना चाहिए। 'रद्द अल-मुह्तार' में 'अल-ज़खीरा' से है: उसने ऋणदाता से वह अनाज ('कुर') खरीदा जो उसके ऊपर बकाया था सौ दीनार के बदले; यह जायज़ है क्योंकि यह उसके द्वारा बकाया एक ऋण है, न कि विनिमय अनुबंध (सर्फ़) या अग्रिम भुगतान (सलाम) के माध्यम से। यदि खरीद के समय इसका उपभोग किया गया था, तो स्वीकार्यता सभी का कहना है, क्योंकि उसने उपभोग द्वारा इसे प्राप्त किया था, और इसके बराबर बिना किसी विवाद के उसके द्वारा बकाया है। यदि यह अभी भी मौजूद है, तो उनके[इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम मुहम्मद] के अनुसार इसी तरह; हालाँकि, अबू यूसुफ के कहने पर, यह स्वीकार्य नहीं होना चाहिए क्योंकि वह इसका स्वामी तब तक नहीं होता जब तक कि उसने इसका उपभोग नहीं किया है, इसलिए इसका समकक्ष अभी तक अनिवार्य नहीं है।"

[उर्दू पाठ ब्लॉक] नोट को रुपयों से न खरीदें बल्कि वह ज़िम्मेदारी पर ऋण था, इसलिए यदि उसे खरीदा, तो इमाम-ए-आज़म और इमाम मुहम्मद के अनुसार जायज़ है। हाँ, यदि वही नोट जो उधार लिया गया था मौजूद है, और वह ठीक उसी को बारह रुपये या दस या जितने चाहे उतने में खरीदता है, तो यह तरफ़ैन [इमाम-ए-आज़म और इमाम मुहम्मद] के अनुसार बातिल (शून्य) है, जबकि इमाम अबू यूसुफ (अल्लाह तआला उनसे प्रसन्न हो) इसे जायज़ कहते हैं। बातिल होने का कारण यह है कि जब उसने यह नोट ऋण के रूप में लिया, तो ऋण लेते ही वह इसका स्वामी बन गया, तो वह अपनी खुद की स्वामित्व वाली चीज़ दूसरे से कैसे खरीदेगा? 'वजीज़ करदारी' में है: जब किसी पर उसका अनाज या पैसा बकाया हो, और कर्जदार ने वह कर्ज उससे रुपयों में खरीद लिया, और रुपयों पर कब्ज़ा होने से पहले दोनों अलग हो गए, तो यह बिक्री बातिल हो गई, और यह उन मुद्दों में से है जिन्हें याद रखना आवश्यक है। 'इन्तेहा' (समाप्त)। और 'रद्द अल-मुह्तार' में 'ज़खीरा' से है: ऋण देने वाले

का जो अनाज उस पर बकाया था, उसने उससे वह सौ अशर्फ़ियों में खरीद लिया; यह जायज़ है क्योंकि यह कर्ज उस पर न सर्फ़ के अनुबंध से था और न ही सलाम के अनुबंध से। फिर, यदि वह अनाज खरीद के समय खर्च हो चुका था, तो सबके अनुसार जायज़ है क्योंकि खर्च कर देने से सर्वसम्मति से वह उसका मालिक हो गया और उसके ज़िम्मे पर उतना अनाज वाजिब रहा। और अगर अनाज मौजूद है, तो इमाम-ए-आज़म और इमाम मुहम्मद के अनुसार अब भी जायज़ है, और इमाम अबू यूसुफ के कथन पर चाहिए कि जायज़ न हो क्योंकि उनके अनुसार...

---

1. फ़तावा बज़्ज़िया, फ़तावा हिंदिया के हाशिये पर, किताब अल-सर्फ़, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 6/5

وان کان باقیا عندہ اذالم یورد العقد علیہ، نعم ان کان موجودا واشتراہ بعینہ باثنی عشر او بعشرۃ او بماشاء فہذا باطل لایجوز عندہما خلافا لابی یوسف رضی اللہ تعالٰی عنہم لانہ قد ملکہ بالاستقراض فکیف یشتری ملك نفسہ من غیرہ فی وجیز الکردری اذا کان لہ علی آخر طعام وفلوس فاشتراہ من علیہ بدراہم وتفرقا قبل قبض الدراہم بطل و ہذا مما یحفظ اھ وفی رد المحتار عن الذخیرہ اشتری من المقرض الکر الذی لہ علیہ بمائۃ دینار جازلانہ دین علیہ لا بعقد صرف ولا سلم فان کان مستہلکا وقت الشراء فالجواز قول الکل لانہ ملکہ بالاستہلاك وعلیہ مثلہ فی ذمتہ بلا خلاف وان کان قائما فکذلك عندہما وعلی قول ابی یوسف ینبغي ان لا یجوز لانہ لا یملکہ مالم یستہلکہ فلم یجب مثلہ

نوٹ کو روپیوں سے نہ خرید بلکہ ذمہ پر قرض تھا اسے خریدا تو امام اعظم اور امام محمد کے نزدیک جائز ہے ہاں اگر وہی نوٹ کہ قرض لیا تھا موجود ہے اور بعینہ اسی کو بارہ روپے یا دس یا جتنے سے چاہے خریدے تو یہ طرفین کے نزدیک باطل ہے اور امام ابو یوسف رضی اللہ تعالٰی عنہم اسے جائز کہتے ہیں، باطل ہونے کی وجہ یہ ہے کہ جب اس نے یہ نوٹ قرض لیا تو قرض لیتے ہی اس کا مالک ہوگیا تو خود اپنی مملوک چیز کو دوسرے سے کیونکر خریدے گا، وجیز کردری میں ہے جب اس کا کسی پر غلہ یا پیسے آتے ہوں مدیون نے وہ دین اس سے روپیوں کو خرید لیا اور روپیوں پر قبضہ ہونے سے پہلے دونوں جدا ہوگئے تو یہ بیع باطل ہوگئی اور یہ ان مسائل میں سے ہے جن کا یاد رکھنا لازم ہے انتہی، اور ردالمختار میں ذخیرہ سے ہے قرض دینے والے کا جو غلہ اس پر آتا تھا وہ اس نے اس سے سو اشرفی کو خرید لیا جائز ہے کہ یہ دین اس پر نہ عقد صرف سے تھا نہ عقد سلم سے ، پھر اگر وہ غلہ خریداری کے وقت خرچ ہوچکا تھا جب تو سب کے نزدیک جواز ہے اس لئے کہ وہ خرچ کردینے سے بالاتفاق اس کا مالک ہو گیا اور اس

کے ذمہ پر اتنا غلہ واجب رہا اور اگر غلہ موجود ہے تو امام اعظم وامام محمد کے نزدیک اب بھی جائز ہے اور امام ابویوسف کے قول پر چاہئے کہ جائز نہ ہو اس لئے کہ ان کے نزدیک

---

۱ فتاوی بزازیہ علی ہامش فتاوی ہندیہ کتاب الصرف نورانی کتب خانہ پشاور ۶/ ۵

Fatawa Rizwia (Volume 17)

[Left Column - Arabic Text] In his liability, so if he relates the purchase to the 'kurr' (a measure) which is in his liability, then he has related it to a non-existent thing, so it is not permissible. This is finished. And regarding this, it is mentioned: he borrowed a 'kurr' from a man and took possession of it, then he bought that exact 'kurr' from the lender. According to the view of the two [Imam Abu Hanifa and Imam Muhammad], it is not permissible because he became its owner by taking possession, thus he would be buying his own property. However, according to Imam Abu Yusuf, the 'kurr' remains the property of the lender, so the borrower becomes the buyer of someone else's property, making it valid. This is finished. As for the stratagem to avoid usury (riba), we have already told you enough to be sufficient and healing. It has been mentioned previously from Imam Abu Yusuf (may Allah have mercy on him) that "'aynah" (a type of credit sale) is permissible and rewarded for whoever practices it. He said its reward is because of fleeing from the forbidden (haram). This is finished. And it has also been mentioned that the Companions did this and praised it. And the statement from al-Khaniyah was mentioned that something like this...

[Right Column - Urdu Text] Until he consumes it, he will not be its owner, so the equivalent of that grain is not obligatory upon his liability. Now, when he said, "I bought that grain which is in my liability," he bought a non-existent thing, therefore it became impermissible. End. Also, in Radd al-Muhtar from Zakheera, it is mentioned: someone took a measure of grain as a loan and took possession of it, then bought the exact same grain from the lender. This is not permissible according to the view of Imam-e-Azam and Imam Muhammad, because as soon as he took possession, he became the owner of that grain, so how can he buy his own property from another? Yes, according to the view of Imam Abu Yusuf (may Allah have mercy on him), that grain still remains the property of the lender. Thus, it would be as if he bought someone else's property from him, so it will be valid. End. As for employing a legal stratagem to avoid usury (riba), we have told you enough about it which is sufficient and curative. And the saying of Imam Abu Yusuf (may Allah have mercy on him) has already passed that "'aynah" is permissible and its doer will receive a reward. He said there is a reward in it because it is fleeing from the forbidden. End. And their saying also passed that the Sahaba (Companions) did this and praised it. And the saying of Fatawa Qazi Khan passed that its like...

[Footnotes] 1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Chapter on Loans, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/173. 2. Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Chapter on Loans, Dar Ihya al-

Turath al-Arabi Beirut, 4/173. 3. Fatawa Qazikhan, Kitab al-Buyu', Chapter on selling usurious goods, Nawalkishore Lucknow, 2/407. 4. Fath al-Qadeer, Kitab al-Kafalah, Maktaba Nooria Rizwia Sukkur, 6/322.

फतावा रज़विया (खंड १७)

[बायां कॉलम - अरबी पाठ का अनुवाद] उसके दायित्व में, तो यदि वह उस 'कुर' (एक माप) के लिए खरीद को जोड़ता है जो उसके दायित्व में है, तो उसने इसे एक अस्तित्वहीन चीज़ से जोड़ दिया है, इसलिए यह जायज़ नहीं है। यह समाप्त हुआ। और इसके बारे में उल्लेख है: उसने एक आदमी से एक 'कुर' उधार लिया और उसका कब्ज़ा ले लिया, फिर उसने वही 'कुर' ऋणदाता से खरीद लिया। उन दोनों (इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम मुहम्मद) के विचार के अनुसार, यह जायज़ नहीं है क्योंकि वह कब्ज़ा लेने से ही उसका मालिक बन गया, इस प्रकार वह अपनी ही संपत्ति खरीद रहा होगा। हालाँकि, इमाम अबू यूसुफ के अनुसार, 'कुर' ऋणदाता की संपत्ति बना रहता है, इसलिए उधारकर्ता किसी और की संपत्ति का खरीदार बन जाता है, जिससे यह मान्य हो जाता है। यह समाप्त हुआ। जहाँ तक सूद (रिबा) से बचने के लिए युक्ति (हीला) का सवाल है, हमने आपको इस बारे में पर्याप्त बता दिया है जो काफी और संतोषजनक है। इमाम अबू यूसुफ (रहमतुल्लाह अलैहि) से पहले ही उल्लेख किया जा चुका है कि 'ऐना' (एक प्रकार की क्रेडिट बिक्री) जायज़ है और जो इसे करता है उसे पुण्य मिलता है। उन्होंने कहा कि इसमें पुण्य इसलिए है क्योंकि यह हराम से भागना है। यह समाप्त हुआ। और उनका यह कथन भी बीत चुका है कि सहाबा (साथियों) ने ऐसा किया और इसकी प्रशंसा की। और खनियाह का कथन उल्लेख किया गया था कि इसके जैसा...

[दायां कॉलम - उर्दू पाठ] जब तक खर्च न कर ले उसका मालिक न होगा तो उस ग़ल्ला का मिस्ल उसके ज़िम्मे पर वाजिब नहीं, अब जो ये कहा कि वो ग़ल्ला जो मेरे ज़िम्मे है मैंने खरीदा तो मादूम चीज़ खरीदी लिहाज़ा ना जायज़ हुआ इन्तहा, नीज़ रद्दुल मुहतार में ज़ख़ीरा से है किसी से एक पैमाना ग़ल्ला क़र्ज़ लेकर क़ब्ज़ा कर लिया फिर बे-ऐनाही वही ग़ल्ला क़र्ज़ देने वाले से खरीदा इमाम-ए-आज़म और इमाम मुहम्मद के क़ौल पर जायज़ नहीं कि वो तो क़ब्ज़ा करते ही उस ग़ल्ला का खुद मालिक हो गया तो अब अपनी मिल्क दूसरे से कैसे खरीद सकता है, हाँ इमाम अबू यूसुफ रहमतुल्लाहि तआला के क़ौल पर वो ग़ल्ला अभी क़र्ज़ देने वाले की मिल्क पर बाक़ी है तो यूँ होगा कि पराई मिल्क उससे खरीदी तो सही होगी इन्तहा, रहा दफ़ा-ए-रिबा के लिए हीला करना इसमें हम तुझे वो कुछ सुना चुके जो काफ़ी व शाफ़ी है, और इमाम अबू यूसुफ रहमतुल्लाहि तआला का इर्शाद गुज़र चुका कि ऐना जायज़ है और इसका करने वाला सवाब पायेगा फ़रमाया इसमें सवाब इस वजह से है कि हराम से भागना है इन्तहा, और उनका ये इर्शाद भी गुज़रा कि सहाबा किराम ने इसे किया और इसकी तारीफ़ फ़रमाई। और फ़तावा क़ाज़ी ख़ान का क़ौल गुज़रा कि इसका मिस्ल

[पाद लेख] 1. रद-अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू, ऋण पर अध्याय, दार इहया अल-तुरथ अल-अरबी बेरूत, 4/173. 2. रद-अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू, ऋण पर अध्याय, दार इहया अल-तुरथ अल-अरबी बेरूत, 4/173. 3. फ़तावा क़ाज़ीख़ान, किताब अल-बुयू, सूद की वस्तुओं को बेचने पर अध्याय, नवलकिशोर लखनऊ, 2/407. 4. फ़तह अल-क़दीर, किताब अल-कफ़ाला, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 6/322.

पृष्ठ 496 का 715

[بایاں کالم - عربی متن] فی ذمتہ فاذا اضاف الشراء الی الکر الذی فی ذمتہ فقد اضافہ الی معدوم فلا یجوز اہ وفیہ عنہا استقرض من رجل کرا و قبضہ ثم اشتری ذلك الکر بعینہ من المقرض لا یجوز علی قولہما لانہ ملکہ بنفس القبض فیصیر مشترياً ملك نفسہ اما علی قول ابی یوسف فالکر باق علی ملك المقرض فیصیر المستقرض مشترياً ملك غیرہ فیصح اہ، اما الاحتیال لدفع الربا فقد اسمعناك فیہ ما یکفی و یشفی وقد تقدم قول ابی یوسف رحمہ اللہ تعالی ان العینۃ جائزۃ مأجور من عمل بہا قال واجرہ لمکان الفرار من الحرام اہ وتقدم قولہ ان الصحابۃ فعلوا ذلك وحمدوہ وتقدم قول الخانیۃ ان مثل ہذا

[دایاں کالم - اردو متن] جب تک خرچ نہ کر لے اس کا مالک نہ ہوگا تو اس غلہ کا مثل اس کے ذمہ پر واجب نہیں، اب جو یہ کہا کہ وہ غلہ جو میرے ذمہ ہے میں نے خریدا تو معدوم چیز خریدی لہذا نا جائز ہوا انتہی، نیز ردالمحتار میں ذخیرہ سے ہے کسی سے ایک پیمانہ غلہ قرض لے کر قبضہ کرلیا پھر بعینہ وہی غلہ قرض دینے والے سے خریدا امام اعظم اور امام محمد کے قول پر جائز نہیں کہ وہ تو قبضہ کرتے ہی اس غلہ کا خود مالک ہوگیا تو اب اپنی ملک دوسرے سے کیسے خرید سکتا ہے، ہاں امام ابو یوسف رحمہ اللہ تعالیٰ کے قول پر وہ غلہ ابھی قرض دینے والے کی ملک پر باقی ہے تو یوں ہوگا کہ پرائی ملک اس سے خریدی تو صحیح ہوگی انتہی، رہا دفع ربا کے لئے حیلہ کرنا اس میں ہم تجھے وہ کچھ سنا چکے جو کافی وشافی ہے، اور امام ابو یوسف رحمہ اللہ تعالیٰ کا ارشاد گزر چکا کہ عینہ جائز ہے اور اس کا کرنے والا ثواب پائے گا فرمایا اس میں ثواب اس وجہ سے ہے کہ حرام سے بھاگنا ہے انتہی، اور ان کا یہ ارشاد بھی گزرا کہ صحابہ کرام نے اسے کیا اور اس کی تعریف فرمائی۔ اور فتاویٰ قاضی خان کا قول گزرا کہ اس کا مثل

[حواشی] 1 ردالمحتار کتاب البیوع فصل فی القرض دار احیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۱۷۳ 2 ردالمحتار کتاب البیوع فصل فی القرض دار احیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۱۷۳ 3 فتاوىٰ قاضیخاں کتاب البیوع باب فی بیع مال الربو نولکشور لکھنؤ ۲ / ۴۰۷ 4 فتح القدیر کتاب الکفالة مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۳۲۲

Fatawa Razvia (Vol. 17)

It is narrated from the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) that he commanded this. [End of quote][1] So, after the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) and his Companions, who else is there? And in "Al-Bahr al-Raiq" it is quoted from "Al-Quniyah" that there is no harm in the sales that people perform to avoid usury (riba). Then, a code name of another scholar was written stating that it is disliked (makruh). Imam al-Baqali narrated this dislike from Imam Muhammad, while according to the two Imams (Imam Abu Hanifa and Imam Abu Yusuf), there is no harm in it. Imam Shams al-Din al-Zaranjari said that the disagreement with Imam Muhammad is in the case when a loan is given and then such a sale is made. If the sale is made first and then the money is given, then by consensus there is no harm. [End of quote][2] Similarly, Imam Shaykh al-Islam Khwahar Zadah has narrated the consensus on its permissibility, provided that the condition of sale was not stipulated in the loan. So, when its teaching is proven from the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) and its practice and praise are proven from the Companions (may Allah be pleased with them), and the consensus of our Imams on its permissibility is established, then what room remains for doubt? And Allah alone is the Guide to the right path. I say: (I say) then this is also in the case of combining a sale and a loan, such that one lends him some money and sells him something minor...

---

[1] Fatawa Qazi Khan, Kitab al-Buyu' (Book of Sales), Chapter on Selling Usurious Property, Naval Kishore Lucknow, 2/406. [2] Al-Bahr al-Raiq, Kitab al-Buyu' (Book of Sales), Chapter on Selling Usurious Property, H.M. Saeed Company, 6/126.

अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) से वर्णित है कि उन्होंने इसका आदेश दिया। [इंतहा][1] तो अब अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) और उनके सहाबा के बाद और कौन है? और "अल-बह्र अल-रईक़" में "अल-कुनिया" से उद्धृत है कि उन खरीद-बिक्री में कोई हर्ज नहीं है जो लोग सूद (रिबा) से बचने के लिए करते हैं। फिर एक अन्य विद्वान के कूट नाम का उल्लेख किया गया कि उन्होंने इसे मकरूह (नापसंद) कहा है। इमाम अल-बक़ाली ने इस नापसंदगी को इमाम मुहम्मद से वर्णित किया है, जबकि इमाम-ए-आज़म और इमाम अबू यूसुफ़ के अनुसार इसमें कोई हर्ज नहीं है। इमाम शम्सुद्दीन अल-ज़रनजरी ने कहा कि इमाम मुहम्मद के साथ मतभेद उस स्थिति में है जब ऋण देकर फिर ऐसी बिक्री की जाए। यदि पहले बिक्री कर दी जाए और फिर रुपये दिए जाएँ तो सर्वसम्मति से कोई हर्ज नहीं है। [इंतहा][2] इसी तरह इमाम शैखुल इस्लाम ख्वाहर ज़ादा ने इसकी अनुमति पर आम सहमति (इज्मा) की बात कही है, बशर्ते कि ऋण में बिक्री की शर्त न लगाई गई हो। तो जब नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) से इसकी शिक्षा सिद्ध है और सहाबा (रज़ियल्लाहु अन्हुम) से इसका अमल और इसकी प्रशंसा सिद्ध है और हमारे इमामों की इसकी अनुमति पर सर्वसम्मति स्थापित है, तो अब संदेह की कौन सी जगह बाकी रह गई? और अल्लाह ही सही रास्ता दिखाने वाला है। मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) फिर यह भी उस स्थिति में है जब बिक्री और ऋण को मिला दिया जाए, जैसे कि उसे कुछ रुपये ऋण के रूप में दे और उसे कुछ मामूली चीज़ बेचे...

---

[1] फ़तावा क़ाज़ी खान, किताब अल-बुयूअ (बिक्री की किताब), सूद वाली संपत्ति बेचने का अध्याय, नवल किशोर लखनऊ, 2/406। [2] अल-बह्र अल-रईक़, किताब अल-बुयूअ (बिक्री की किताब), सूद वाली संपत्ति बेचने का अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी, 6/126।

مروی عن رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیه وسلم انه امر بذلک اه ١ فمن بعد رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیه وسلم واصحابه وفی البحر عن القنیة لابأس بالبیوع التی یفعلها الناس للتحرز عن الربا ثم رقم آخر هي مکروهة ذکر البقالی الکراهة من محمد وعندهما لابأس به قال الزرنجری خلاف محمد فی العقد بعد القرض اما اذا باع ثم دفع الدراهم لابأس بالاتفاق اهـ وکذلك حکی الاجماع الامام خواهر زاده رحمه اللہ تعالی اذا لم یکن البیع مشروطا فی القرض فاذا ثبت عن رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیه وسلم تعلیمه وصح عن الصحابة فعله وتمدیحه واجمع ائمتنا علی جوازه فای محل بقی للارتیاب واللہ الهادی الصواب، اقول: ثم هذا ایضا فی اجتماع البیع والقرض بان یقرضه دراهم ویبیعه شیئا یسیرا

نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سے مروی ہوا کہ حضور نے اس کا حکم دیا انتہی ١، تو اب رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم اور صحابہ کرام کے بعد اور کون ہے ، اور بحر الرائق میں قنیہ سے ہے کہ وہ بیعین جو لوگ ربا سے بچنے کے لئے کرتے ہیں ان میں کچھ حرج نہیں پھر ایک اور عالم کے نام کی رمز لکھی کہ انہوں نے کہا مکروہ ہے ، امام بقالی نے ان کی کراہت امام محمد سے روایت کی اور امام اعظم اور امام ابو یوسف کے نزدیک ان میں کچھ حرج نہیں ، امام شمس الدین زرنجری نے فرمایا امام محمد کے خلاف اس صورت میں ہے جبکہ قرض دے کر پھر ایسی بیع کرے اور اگر بیع کر دی پھر روپے دئے تو بالاتفاق کچھ حرج نہیں انتہی ٢، اور اسی طرح امام شیخ الاسلام خواہر زادہ نے اس کے جواز پر اتفاق نقل فرمایا جبکہ قرض میں بیع کی شرط نہ لگالی ہو ، تو جب کہ نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سے اس کی تعلیم ثابت اور صحابہ رضی اللہ تعالیٰ عنہم سے اس کا کرنا اور اس کی تعریف ثابت اور ہمارے اماموں کا اسکے جواز پر اجماع قائم ، تو اب شک کی کون سی جگہ باقی رہی اور اللہ ہی ٹھیک راستہ دکھانے والا ہے ۔ اقول : (میں

کہتا ہوں) پھر یہ بھی اس صورت میں ہے کہ بیع اور قرض جمع ہوں یوں کہ اسے کچھ روپے قرض دے اور

---

۱ فتاویٰ قاضی خان کتاب البیوع باب فی بیع مال الربو نولکشور لکھنو ۲ / ۴۰۶ ۲ بحر الرائق کتاب البیوع باب فی بیع مال الربو ایچ ایم سعید کمپنی ۶ / ۱۲۶

Volume 17 Fatawa Razawiyya

[Arabic Section] [Selling] at a high price, so he accepts it due to the need for a loan. In this regard, if the loan preceded [the sale], it is said the sale is disliked because it is a loan that drew a profit. If the sale preceded [the loan], there is no harm by consensus because it is a sale that drew a loan, as explained by Imam Shams al-A’imma al-Halwani, and the fatwa is based on this as in Radd al-Muhtar. As for the matter we are discussing concerning currency notes, it is a pure sale in which there is no loan at all, neither at the beginning nor at the end. Thus, it is more worthy and appropriate to be permissible by consensus without dispute or discord. And if you wish for more regarding the matter of legal stratagems (hiyal), here is our Lord, Blessed and Exalted, saying to His servant Ayyub, peace be upon him: "And take in your hand a bundle of rushes and strike with it and do not break your oath."(1) And this is our master, the Messenger of Allah, may Allah bless him and grant him peace, who taught the way out of usury and the path to reach the goal while guarding against the forbidden. The two Shaykhs (Bukhari and Muslim) narrated from Abu Sa'id al-Khudri, may Allah be pleased with him, that he said: Bilal, may Allah be pleased with him, came to the Prophet, may Allah bless him and grant him peace, with Burni dates...

[Urdu Section Translation] If a small thing is sold to someone at a high price and he accepts it because of the need for a loan, then in this case if the loan came first, some have termed the sale as disliked (makruh) because this became a loan which drew a benefit. And if the sale had already occurred, then by consensus there is no harm in it because it is a sale that brought the profit of a loan, as Imam Shams al-A'imma Halwani stated and the fatwa was given accordingly as mentioned in Radd al-Muhtar. And the issue we are discussing, i.e., [currency] notes, is a pure sale. There is no loan in it originally, neither at the start nor later. Thus, its being permissible by consensus without contradiction and without dispute is more worthy and suitable. And if you want further detail in the matter of legal stratagems, here is our Lord (Mighty and Sublime, Blessed and Exalted) saying to His servant Ayub (peace be upon him): "Take a broom in your hand, strike with it, and do not break the oath." And here is our leader, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), who taught a way to escape usury and a method such that the objective is achieved and protection from the forbidden is maintained. Bukhari and Muslim narrated it from Abu Sa'id al-Khudri (may Allah be pleased with him) that he said: Bilal (may Allah be

pleased with him) came to the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) with Burni dates...

1. The Holy Quran 38/44 Page 498 of 715

[अरबी भाग] [बेचना] उच्च मूल्य पर, और वह ऋण की आवश्यकता के कारण इसे स्वीकार कर लेता है। इस मामले में, यदि ऋण [बिक्री से] पहले था, तो कहा जाता है कि बिक्री मक़रूह (नापसंद) है क्योंकि यह एक ऐसा ऋण है जिसने लाभ प्राप्त किया। यदि बिक्री [ऋण से] पहले हुई थी, तो सर्वसम्मति से इसमें कोई हर्ज नहीं है क्योंकि यह एक ऐसी बिक्री है जिसने ऋण प्राप्त किया, जैसा कि इमाम शम्स अल-अइम्मा अल-हलवानी ने स्पष्ट किया है, और इसी पर फ़तवा है जैसा कि रद अल-मुहतार में उल्लेख है। जहाँ तक उस मसले का सवाल है जिसमें हम [बैंक] नोटों के संबंध में चर्चा कर रहे हैं, यह एक शुद्ध बिक्री है। इसमें बिल्कुल भी कोई ऋण नहीं है, न तो शुरुआत में और न ही अंत में। इस प्रकार, यह अधिक योग्य और उपयुक्त है कि यह बिना किसी विवाद या कलह के सर्वसम्मति से जायज़ हो। यदि आप कानूनी युक्तियों (हियल) के मामले में और अधिक चाहते हैं, तो यहाँ हमारे रब, धन्य और महान, अपने सेवक अयूब (उन पर शांति हो) से कह रहे हैं: "और अपने हाथ में सींकों का एक गट्ठा लें और उससे मारें और अपनी शपथ न तोड़ें।" (1) और ये हमारे आका, अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) हैं, जिन्होंने सूद (ब्याज) से बचने का रास्ता और हराम से परहेज करते हुए लक्ष्य तक पहुँचने का तरीका सिखाया। दो शेखों (बुखारी और मुस्लिम) ने अबू सईद अल-खुदरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत की है कि उन्होंने कहा: बिलाल (रज़ियल्लाहु अन्हु) नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के पास बर्नी खजूर लेकर आए...

[उर्दू भाग] यदि कोई छोटी चीज़ उसे अधिक मूल्य पर बेचे और वह ऋण की आवश्यकता के कारण उसे स्वीकार कर ले, तो इस स्थिति में यदि ऋण पहले है, तो कुछ ने बिक्री को मक़रूह कहा है क्योंकि यह वह ऋण हुआ जिसने लाभ खींचा। और यदि बिक्री पहले हो चुकी थी, तो सर्वसम्मति से इसमें कोई हर्ज नहीं है क्योंकि वह एक ऐसी बिक्री है जो ऋण का लाभ लाई, जैसा कि इमाम शम्स अल-अइम्मा हलवानी ने फ़रमाया और इसी पर फ़तवा दिया गया जैसा कि रद अल-मुहतार में है। और जिस मसले पर हम चर्चा कर रहे हैं यानी नोट, वह तो शुद्ध बिक्री है। इसमें मूलतः कोई ऋण नहीं है, न शुरुआत में और न बाद में। तो इसका सर्वसम्मति से, बिना किसी विरोध और बिना किसी विवाद के जायज़ होना अधिक योग्य और उपयुक्त है। और यदि आप युक्ति (हिला) के मसले में विस्तार चाहें, तो यह हमारे रब अज़्ज़वजल तबारक व तआला अपने बंदे अयूब अलैहिस्सलाम से फ़रमाते हैं: अपने हाथ में एक झाड़ू ले ले, उससे मार और अपनी कसम न तोड़। और ये हमारे सरदार अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम हैं कि उन्होंने सूद से बचने की युक्ति और ऐसा

तरीका सिखाया कि मकसद हासिल हो जाए और हराम से सुरक्षा रहे। इसे बुखारी और मुस्लिम ने अबू सईद खुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया कि उन्होंने फ़रमाया, बिलाल रज़ियल्लाहु अन्हु नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के पास बर्नी खजूर लेकर आए...

1. पवित्र कुरान 38/44 पृष्ठ 715 में से 498

بثمن كثير فيقبله لحاجة القرض ففي هذا ان تقدم القرض قيل كره البيع لانه قرض جر نفعاً وان تقدم البيع لم يكن به بأس اتفاقاً لانه بيع جر قرضاً كما افاده الامام شمس الائمة الحلواني وبه افتى كما في ردالمحتار امامانحن فيه من مسألة النوط فبيع خالص لاقرض فيه اصلا لا بدأ ولا عوداً فذا اولى واحرى ان يحل بالاتفاق من دون نزاع ولا شقاق وان شئت الزيادة في امر الحيل فهذا ربنا تبارک و تعالى قائلا لعبده ايوب عليه الصلوة و السلام "خُذْ بِيَدِكَ ضِغْثًا فَاضْرِبْ بِهِ وَلَا تَحْنَثْ ط" ۱ وهذا سيدنا رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم قد علم المخلص من الرباً وطريق الوصول الى المرام مع التحرز عن الحرام روى الشيخان عن ابي سعيد الخدري رضى الله تعالىٰ عنه قال جاء بلال رضى الله تعالىٰ عنه الى النبي صلى الله تعالىٰ عليه وسلم بتمر برني

تھوڑی سی چیز زیادہ قیمت کو اس کے ہاتھ بیچے تو حاجت قرض کے سبب اسے قبول کرے گا تو اس صورت میں اگر قرض پہلے ہے تو بعض نے بیع کو مکروہ کہا اس لئے کہ یہ وہ قرض ہوا جس نے ایک منفعت کھینچی اور اگر بیع پہلے ہو چکی تھی تو بالاتفاق اس میں کوئی حرج نہیں اس لئے کہ وہ ایک بیع ہے جو قرض کا نفع لائی جیسا کہ امام شمس الائمہ حلوانی نے افادہ فرمایا اور اسی پر فتوىٰ دیا جیسا کہ ردالمحتار میں ہے اور وہ مسئلہ جس میں ہم بحث کر رہے ہیں یعنی نوٹ یہ تو خالص بیع ہے اس میں قرض اصلاً نہیں، نہ ابتدا میں نہ بعد کو، تو اس کا بالاتفاق بلا خلاف وبلا نزاع جائز ہونا زیادہ لائق و مناسب ہے، اور اگر تو مسئلہ حیلہ، میں زیادت چاہے تو یہ ہے ہمارا رب عزوجل تبارک وتعالىٰ اپنے بندہ ایوب علیہ الصلوٰۃ والسلام سے فرماتا ہوا اپنے ہاتھ میں ایک جھاڑو لے لے اس سے مار اور قسم نہ توڑ اور یہ ہیں ہمارے سردار رسول اللہ صلی اللہ تعالىٰ علیہ وسلم کہ انہوں نے ربا سے بچنے کا حیلہ اور ایسا طریقہ کہ مقصود حاصل ہو جائے اور حرام

سے محافظت رہے تعلیم فرمایا اسے بخاری ومسلم نے ابوسعید خدری رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا کہ انہوں نے فرمایا بلال رضی اللہ تعالیٰ عنہ نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے پاس خرمائے برنی

The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said to him, 'Where is this from?' Bilal (may Allah be pleased with him) said, 'We had some bad dates, so I sold two measures (sa's) of them for one measure (of good ones).' The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said, 'Oh! This is the essence of usury (riba), the essence of usury. Do not do this. Rather, if you want to buy (better ones), sell your dates for something else and then buy with it.' Similarly, both Bukhari and Muslim narrated from Abu Sa'id al-Khudri and Abu Hurairah (may Allah be pleased with them) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) appointed a man as an official over Khaybar. He came to the holy presence with high-quality dates (Janib). The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) asked him, 'Are all the dates of Khaybar like this?' He said, 'No, by Allah, O Messenger of Allah! We take one measure of these for two measures, and two measures for three.' The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said, 'Do not do that. Sell the mixed dates for dirhams, then buy the high-quality ones with those dirhams.' I say: As for the dislike of those who dislike it, like Imam Muhammad, it was only as previously mentioned from Al-Fath and Al-Idah.

---

[1] Sahih al-Bukhari, Book of Agency, Chapter: If the agent sells something corrupted etc., Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/311; Sahih Muslim, Book of Sharecropping, Chapter on Usury, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 26/2. [2] Sahih al-Bukhari, Book of Sales, Chapter: If one intends to sell dates for better dates, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/293; Sahih Muslim, Book of Sharecropping, Chapter on Usury, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 26/2.

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने उनसे फरमाया कि ये तुम कहाँ से लाये? बिलाल (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने अर्ज़ की कि हमारे पास खराब खजूरें थीं, हमने उनके दो साअ के बदले उनका एक साअ खरीदा। नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने फरमाया, 'अफ़सोस! यह तो ऐन सूद (रिबा) है, ऐन सूद है, ऐसा न कर। मगर जब उन्हें खरीदना चाहो तो अपनी खजूरों को किसी और चीज़ के बदले बेच कर उस चीज़ के बदले उन्हें खरीदो।' और बुख़ारी व मुस्लिम ने अबू सईद खुदरी और अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) दोनों से रिवायत की कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने एक साहब को खैबर का गवर्नर (आमिल) बनाकर भेजा। वह ख़िदमत-ए-अकदस में उम्दा खजूरें (जनीब) लेकर हाज़िर हुए। हुज़ूर-ए-अकदस (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने फरमाया, 'क्या खैबर की सब खजूरें ऐसी ही हैं?' अर्ज़ की, 'नहीं, खुदा की कसम या रसूलुल्लाह! हम इसके एक साअ को दो साअ के बदले, और दो साअ को तीन साअ के बदले लेते हैं।' नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने फरमाया, 'ऐसा न करो। आम खजूरों को दिरहमों के बदले बेच दो, फिर उन दिरहमों से ये उम्दा खजूरें खरीद लो।' मैं कहता हूँ: जिसने इसमें कराहत (नापसंदगी) समझी, जैसे इमाम मुहम्मद, तो उनकी समझ सिर्फ़ उसी बुनियाद पर थी जैसा कि 'फ़तहुल कदीर' और 'अल-ईज़ाह' में गुज़र चुका है।

---

[1] सहीह बुखारी, किताबुल वकाला, बाब: अगर वकील कोई फासिद चीज़ बेचे वग़ैरा, कदीमी कुतुब खाना कराची, 1/311; सहीह मुस्लिम, किताबुल मुसाकात, बाबुल रिबा, कदीमी कुतुब खाना कराची, 26/2। [2] सहीह बुखारी, किताबुल बुयूँ, बाब: जब खजूर को बेहतर खजूर से बेचने का इरादा हो, कदीमी कुतुब खाना कराची, 1/293; सहीह मुस्लिम, किताबुल मुसाकात, बाबुल रिबा, कदीमी कुतुब खाना कराची, 26/2।

पेज 499 का 715

فقال له صلى الله تعالى عليه وسلم من اين هذا، قال بلال كان عندنا تمر ردى فبعت منه صاعين بصاع فقال رسول الله صلى الله تعالى عليه وسلم اوه عين الربا عين الربا لا تفعل ولكن اذا اردت ان تشترى فبع التمر ببيع آخر ثم اشتربہ ۱ وایضاً لہما عنہ وعن ابي هريرة رضي الله تعالى عنهما ان رسول الله صلى الله تعالى عليه وسلم استعمل رجلا على خيبر فجاءه بتمر جنيب فقال له رسول الله صلى الله تعالى عليه وسلم اكل تمر خيبر هكذا قال لا والله يارسول الله انا لناخذ الصاع من هذا بالصاعين والصاعين بالثلث فقال رسول الله صلى الله تعالى عليه وسلم لا تفعل بع الجمع بالدراہم ثم ابتع بالدراہم جنيباً ۲۔

اقول: اما كراہۃ من كره كمحمد فانما كان كما تقدم عن الفتح والايضاح

لائے نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے ان سے فرمایا کہ یہ تم نے کہاں سے لئے، بلال رضی اللہ تعالیٰ عنہ نے عرض کی ہمارے پاس خراب چھوہارے تھے ہم نے اس کے دو صاع کے بدلے ان کا ایک صاع خریدا، نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا اف خاص ربا ہے خاص ربا ہے ایسا نہ کر۔ مگر جب ان کو خریدنا چاہو تو اپنے چھوہاروں کو کسی اور چیز سے بیچ کر اس شئی کے بدلے ان کو خرید و نیز بخاری و مسلم نے ابوسعید خدری اور ابوہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہما دونوں سے روایت کی کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے ایک صاحب کو خیبر پر عامل صوبہ کر کے بھیجا وہ خدمت اقدس میں خرمائے جنیب لے کر حاضر ہوئے حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا خیبر کے سب چھوہارے ایسے ہی ہیں، عرض کی نہیں خدا کی قسم یا رسول اللہ ! ہم اس میں ایک صاع دو صاع کو ، دو صاع تین صاع کو لیتے ہیں۔ نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا ایسا نہ کرو اپنے چھوہارے روپیوں سے بیچ کر روپیوں سے یہ چھوہارے خرید لو۔

اقول: (میں کہتا ہوں) وہ جس نے اس میں کراہت سمجھی جیسے امام محمد ان کا سمجھنا تو صرف اس بنا پر تھا جیسا کہ فتح القدیر و

---

۱ صحیح البخاری کتاب الوکالۃ باب اذا باع الوکیل شیئا فاسدا الخ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۳۱۱، صحیح مسلم کتاب المساقات باب الربا قدیمی کتب خانہ کراچی ۲۶/۲ ۲ صحیح البخاری کتاب البیوع باب اذا ارادبیع تمر بتمر خیر منه قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۹۳، صحیح مسلم کتاب المساقات باب الربا قدیمی کتب خانہ کراچی ۲۶/۲

Fatawa Razawiya - Volume 17

[Arabic Column]: ...and Al-Muhit, so that people do not become accustomed to it and fall into what is prohibited. In our time, matters have reversed and usury (Riba) has become widespread among the people of India openly; they are not ashamed of it, as if they do not consider it a defect or a disgrace. So, whoever steers them away from this great calamity and severe major sin towards some of these permissible stratagems (Hiyal)—such as selling a ten-unit note for twelve in installments, and other stratagems mentioned by Imam Faqih al-Nafs [Qadi Khan]—then there is no doubt that he is a sincere advisor to the Muslims. Religion is nothing but sincere advice for every Muslim. Although they commit sins openly and persist, Islam still remains, praise be to Allah. So, when they hear something by which they can achieve their goals while escaping what is forbidden, what reason is there for them not to repent? For they are not antagonistic towards the Shariah and Islam. Indeed, the scholars of Balkh, including Muhammad ibn Salama, said to the merchants: "The 'Inah sale mentioned in the Hadith is better than your [current] dealings." The Muhaqqiq stated where he spoke generally—and it is correct—that there is no doubt that a void (fasid) sale is under the ruling of forbidden usurpation (ghasb). So where is that compared to the valid 'Inah sale, concerning whose dislike there is disagreement? [End of quote]. As for the claim of the claimant that if it is not prohibited, then what is the difference between it and Riba when there is an excess, even though there is an excess...

[Urdu Column]: It was mentioned in Al-Idah and Al-Muhit that people should not become accustomed to it and fall into illegitimate matters. In our time, the situation has reversed, and interest (usury) has become openly prevalent in India such that people are not ashamed of it, as if in their view it is neither a defect nor a disgrace. So, if someone brings them down from this great calamity and severe major sin towards some of these permissible legal stratagems, such as selling a ten-rupee note for twelve on installments, and other stratagems that have passed from Imam Faqih al-Nafs Qadi Khan, then there is no doubt that he is a well-wisher of the Muslims. And 'Din' (religion) is nothing but the well-wishing of every Muslim. Even if people are committing sins openly, Islam still remains, praise be to Allah. So, when they hear something through which they can achieve their desire and stay away from the forbidden (haram), what reason is there for them not to repent? They certainly have no enmity towards Shariah and Islam. And indeed, the mentors of Balkh like Imam Muhammad bin Salama and others told the merchants: "That 'Inah sale which is

mentioned in the Hadith is better than these dealings of yours." The Absolute Researcher (Muhaqqiq 'Ala al-Itlaq) said: "This is correct, because undoubtedly a void (fasid) sale is in the ruling of forbidden usurpation (ghasb). So where is that, and where is the 'Inah sale which is valid, and there is also a difference of opinion regarding its dislike (karahat)." [End of quote]. As for the claim of the claimant that if this is not forbidden, then what is the difference between it and interest (riba), although the excess...

1 Fath al-Qadir, Kitab al-Kafala, Maktaba Nooriyah Razawiyah Sukkur, 6/324 Page 500 of 715

फ़तावा रज़विया - जिल्द 17

[अरबी कॉलम]: ... और अल-मुहीत, ताकि लोग इसके आदि होकर निषिद्ध कार्यों में न पड़ें। हमारे समय में, मामले उलट गए हैं और भारत के लोगों के बीच खुलेआम सूद (ब्याज) फ़ैल गया है; वे इससे शर्माते नहीं हैं, जैसे कि वे इसे न तो कोई दोष मानते हैं और न ही कोई कलंक। अत; जो कोई उन्हें इस बड़ी विपदा और गंभीर बड़े गुनाह से हटाकर इन जायज़ हीलों (कानूनी युक्तियों) की ओर लाता है—जैसे कि दस का नोट किस्तों में बारह में बेचना, और अन्य हीले जिनका ज़िक्र इमाम फ़क़ीह अल-नफ़्स [क़ाज़ी ख़ाँ] ने किया है—तो इसमें कोई संदेह नहीं है कि वह मुसलमानों का सच्चा शुभचिंतक है। धर्म हर मुसलमान के लिए सच्ची सलाह और भलाई के सिवा कुछ नहीं है। हालाँकि वे खुलेआम गुनाह कर रहे हैं और अड़े हुए हैं, लेकिन अल्लाह की प्रशंसा है कि इस्लाम अभी भी बाकी है। अत; जब वे ऐसी बात सुनते हैं जिससे वे हराम से बचते हुए अपने लक्ष्यों को प्राप्त कर सकें, तो क्या कारण है कि वे तौबा न करें? क्योंकि वे शरीयत और इस्लाम के प्रति शत्रुतापूर्ण नहीं हैं। वास्तव में, बल्ख़ के विद्वानों ने, जिनमें मुहम्मद इब्न सलामा भी शामिल थे, व्यापारियों से कहा: "हदीस में वर्णित 'ईना' की बिक्री आपके[वर्तमान] लेन-देन से बेहतर है।" मोहक़्क़िक़ ने सामान्य रूप से कहा —और यह सही है—कि इसमें कोई संदेह नहीं है कि एक अवैध (फ़ासिद) बिक्री हराम ग़सब (अवैध कब्ज़ा) के हुक्म में है। तो उसकी तुलना वैध 'ईना' बिक्री से कहाँ की जा सकती है, जिसकी नापसंदगी (कराहत) के संबंध में मतभेद है? [उद्धरण समाप्त]। जहाँ तक दावा करने वाले के इस दावे का प्रश्न है कि यदि यह निषिद्ध नहीं है, तो इसमें और रिबा (ब्याज) में क्या अंतर है जब वहाँ भी अधिकता है, यद्यपि अधिकता...

[उर्दू कॉलम]: अल-ईदाह और अल-मुहीत में यह उल्लेख किया गया है कि लोग इसके अभ्यस्त होकर नाजायज बातों में न पड़ें। हमारे समय में मामला उलट गया है और हिंदुस्तान में सूद (ब्याज) खुलेआम फैल गया है कि लोग इससे शर्माते नहीं हैं, मानो उनकी नज़रों में न तो यह कोई दोष है और न ही कलंक। तो, अगर कोई उन्हें इस बड़ी विपदा और सख्त कबीरा (गुनाह) से इन जायज़ कानूनी हीलों की ओर ले आता है, जैसे दस रुपये का नोट किस्तों पर बारह में बेचना, और इसके अलावा अन्य हीले जो इमाम फ़क़ीह अल-नफ़्स क़ाज़ी ख़ाँ से गुज़रे हैं, तो इसमें कोई संदेह नहीं कि वह मुसलमानों का शुभचिंतक है। और 'दीन' (धर्म) हर मुसलमान की भलाई चाहने के अलावा और कुछ नहीं है। भले ही लोग सरेआम गुनाह कर रहे हों, फिर भी अल्लाह का शुक्र है कि इस्लाम अभी बाकी है। तो जब वे ऐसी बात सुनें जिससे वे अपनी मुराद भी पा सकें और हराम से भी बच सकें, तो क्या वजह है कि वे

तौबा न करें? उनकी शरीयत और इस्लाम से कोई दुश्मनी तो है नहीं। और यकीनन बल्ख़ के बुज़ुर्गों जैसे इमाम मुहम्मद बिन सलमा और अन्य ने व्यापारियों से कहा: "वह 'ईना' की बिक्री जिसका ज़िक्र हदीस में है, तुम्हारी इन खरीद-फरोख्त से बेहतर है।" मोहक़्क़िक़ अली अल-इतलाक़ ने कहा: "यह सही बात है, क्योंकि निस्संदेह फ़ासिद (अमान्य) बिक्री हराम ग़सब के हुक्म में है। तो कहाँ वह, और कहाँ ईना की बिक्री जो कि सही है, और इसकी कराहत (नापसंदगी) में भी मतभेद है।" [उद्धरण समाप्त]। रहा दावा करने वाले का यह दावा कि अगर यह मना नहीं है, तो इसमें और सूद (ब्याज) में क्या फर्क है, हालाँकि अधिकता...

1 फ़तह अल-क़दीर किताब अल-कफ़ाला, मकतबा नूरियह रज़वियह सुक्कुर, 6/324 पेज 500/715

[عربی کالم]: والملیط کی لایألفه الناس فیقعوا فی المحظور وفی زماننا قد انعکست الامور وفشا الربا فی اهل الهند جهارا لایستحیون منه کانهم لایعدونه عیبا ولا عارا فمن نزلهم عن هذا البلاء العظیم والکبیرة الشدیدة الی بعض هذا الحیل الجائزة کبیع نوط عشرة بأثنتی عشرة منجما وغیر ذلك مما تقدم عن الامام فقیه النفس فلا شك انه ناصح للمسلمین وما الدین الا النصح لکل مسلم وهم ان جاهروا و ابوا لمعاصی فالا سلام باق بعد ولله الحمد ، فاذا سمعوا ما یصلون به المرام مع النجاة عن الحرام فمالهم ان لایتوبوا فانهم غیر معاندین للشرع والاسلام ، و قد قال مشایخ بلخ منهم محمد بن سلمة للتجار ان العینة التی جاءت فی الحدیث خیر من بیاعاتکم قال المحقق حیث اطلق وهو صحیح فلا شك ان البیع الفاسد بحکم الغصب المحرم فاین هو من بیع العینة الصحیح المختلف فی کراهته اہـ اما زعم الزاعم انه ان لم ینه عنه فما الفرق بینه وبین الربا مع حصول الفضل

[اردو کالم]: الایضاح و محیط سے گزرا کہ لوگ اس کے خوگر ہو کر ناجائز بات میں نہ پڑیں اور ہمارے زمانے میں معاملہ الٹا ہو گیا اور ہندوستان میں سود علانیہ شائع ہو گیا کہ اس سے شرماتے نہیں ، گویا وہ ان کے نزدیک نہ کوئی عیب ہے نہ عار، تو جوان کو اس عظیم بلا اور سخت کبیرہ سے ان جائز حیلوں میں کسی کی طرف اتار لائے جیسے دس کا نوٹ قسط بندی کر کے بارہ کو بیچنا اور اس کے سوا اور حیلے جو امام فقیہ النفس قاضی خاں سے گزرے تو کچھ شبہ نہیں کہ وہ مسلمانوں کا خیر خواہ ہے اور دین نام نہیں مگر ہر مسلمان کی خیر خواہی کا ، اور لوگ اگر چہ گناہ علانیہ کر رہے ہیں مگر اسلام ابھی باقی ہے والله الحمد ، تو جب وہ ایسی بات سنیں جس سے اپنی مراد پائیں اور حرام سے بچیں تو کیا وجہ ہے کہ توبہ نہ کریں کہ ان کو شریعت اور اسلام سے کچھ عداوت تو نہیں اور بیشک مشایخ بلخ مثل امام محمد بن سلمہ وغیرہ نے تاجروں سے

فرمایا وہ عینہ جس کا ذکر حدیث میں ہے تمہاری ان بیعوں سے بہتر ہے۔ محقق علی الاطلاق نے فرمایا یہ ٹھیک بات ہے اس لئے کہ بلاشبہ بیع فاسد غصب حرام کے حکم میں ہے تو کہاں وہ اور کہاں بیع عینہ کہ صحیح ہے اور اس کی کراہت میں بھی اختلاف انتہی رہا زعم کرنے والے کا یہ زعم کہ اگر یہ منع نہ ہو تو اس میں اور ربا میں کیا فرق ہے حالانکہ زیادتی

Fatawa Razawiyya Volume 17

[Arabic Column] In both of them, I say: This is an objection raised by the polytheists, and our Lord, Blessed and Exalted be He, has undertaken to answer it in the Great Quran: "They said, 'Trade is [just] like usury.' But Allah has permitted trade and has forbidden usury."[1], Did the objector not see that We only permitted profit in the sale of two different types? For if this were forbidden, the door of transactions would be closed. And there is no power nor strength except in Allah, the Most High, the Most Great. The answer is concluded with the success granted by the Giver (Al-Wahhab). Praise be to Allah first and last, inwardly and outwardly. I have named it "Kifl al-Faqih al-Fahim fi Ahkam Qirtas al-Darahim" (The Sufficiency of the Understanding Jurist regarding the Rulings of Paper Money) [which equals] 1324 AH, so that the name may be a sign of the year of composition. This weak servant began it on Saturday, then a fever returned to me on Sunday, and I finished it on the forenoon of Monday, seven days remaining of Muharram al-Haram, 1324 AH. This was in the Sacred City of Allah, at the request of the virtuous, sincere, and loyal Imam of the Hanafi Station, Mawlana Shaykh Abdullah ibn Shaykh al-Khutaba, and the master of the great Imams, the practicing scholar, the complete virtuous one, the ascetic, the pious, the God-fearing, the pure, the gathering of virtues and the source of excellences, Hazrat Shaykh Ahmad Abi al-Khayr, may Allah Almighty protect them both from...

[Urdu Column] In both of them it was obtained. I say: (I say) this is that objection which the disbelievers made and the Lord of Might, Blessed and Exalted, Himself answered it in the Great Quran; the disbelievers said trade is just like usury, and the fact is that Allah has made trade lawful and has made interest forbidden. Did the objector not see that We made profit lawful only where there is a sale of two different types? If this were forbidden, then the door of buying and selling would be closed. And there is no power nor strength except in Allah, the Most High, the Most Great. With the guidance of the Bestower (Al-Wahhab), Glory be to Him, the answer is complete, and praise be to Allah alone, before and after, hidden and manifest. I have named it "Kifl al-Faqih al-Fahim fi Ahkam Qirtas al-Darahim" so that the name may be a symbol of the year of composition. This weak servant started writing it on Saturday, then on Sunday the fever returned, so I finished it on Monday in the late morning. On the 23rd of Muharram al-Sharif, 1324 AH. This composition took place in the sacred precinct of Allah (Makkah al-Mu'azzamah) at the desire of him who is the complete, virtuous, and pure Imam of the Hanafi prayer niche, Mawlana Shaykh Abdullah, and his son who is the Shaykh of the khateebs (orators) and the leader of the great

Imams, namely, a practicing scholar, a complete virtuous one, ascetic, pious, God-fearing, pure, a collection of virtues and a source of excellences, Hazrat Shaykh Ahmad Abi al-Khayr. May Allah Almighty be the guardian of both of them from every harm.

[1] The Holy Quran 2/275 Page 501 of 715

फ़तावा रज़विया खंड १७

[अरबी कॉलम] दोनों में, मैं कहता हूँ: यह वह आपत्ति है जो मुशरिकों (बहुदेववादियों) ने उठाई थी, और हमारे पालनहार, महान और सर्वशक्तिमान ईश्वर ने स्वयं पवित्र कुरान में इसका उत्तर दिया है: "उन्होंने कहा, 'व्यापार तो ब्याज की तरह ही है।' जबकि अल्लाह ने व्यापार को वैध किया है और ब्याज को अवैध।"[1], क्या आपत्ति करने वाले ने यह नहीं देखा कि हमने लाभ को केवल दो अलग-अलग प्रकार की वस्तुओं के व्यापार में ही वैध किया है? क्योंकि यदि यह अवैध होता, तो क्रय-विक्रय का द्वार ही बंद हो जाता। और अल्लाह के अलावा कोई शक्ति या सामर्थ्य नहीं है, जो सबसे ऊँचा और महान है। अल्लाह (अल-वहाब) की कृपा से उत्तर समाप्त हुआ। अल्लाह के लिए ही प्रशंसा है, पहले और बाद में, गुप्त और प्रकट रूप में। मैंने इसका नाम 'किफ़ल अल-फ़क़ीह अल-फ़ाहिम फ़ी अहकाम किरतास अल-दराहिम' रखा है, जो हिजरी वर्ष १३२४ के बराबर है, ताकि यह नाम रचना के वर्ष का प्रतीक हो। इस दुर्बल दास ने इसे शनिवार के दिन लिखना शुरू किया था, फिर रविवार को मुझे पुनः बुखार आ गया, तो मैंने इसे सोमवार की सुबह के समय पूरा किया, मुहर्रम अल-हराम १३२४ हिजरी के सात दिन शेष रहते हुए। यह कार्य अल्लाह के पवित्र शहर (मक्का) में हनफ़ी मुकाम के ईमानदार और निष्ठावान इमाम मौलाना शेख अब्दुल्ला बिन शेख अल-खुतबा, और महान इमामों के सरदार, कर्मठ विद्वान, गुणी, तपस्वी, संयमी, धर्मपरायण, पवित्र, गुणों के संगम और श्रेष्ठता के स्रोत हजरत शेख अहमद अबी अल-खैर की इच्छा पर किया गया, अल्लाह उन दोनों की हर नुकसान से रक्षा करे।

[उर्दू कॉलम] दोनों में प्राप्त हुई। मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) यह वह आपत्ति है जो काफ़िरों ने की थी और स्वयं रब-उल-इज़्ज़त तबारक व तआला ने कुरान ए अज़ीम में इसका उत्तर दिया; काफ़िर बोले व्यापार भी तो वैसा ही है जैसे ब्याज, और बात यह है कि अल्लाह ने हलाल किया व्यापार को और हराम किया सूद को। क्या आपत्ति करने वाले ने यह नहीं देखा कि हमने लाभ वहीं हलाल किया जहाँ दो प्रकार की वस्तुओं का व्यापार हो? यदि यह हराम होता, तो खरीद-बिक्री का दरवाज़ा ही बंद हो जाता। और अल्लाह के अलावा कोई शक्ति या सामर्थ्य नहीं है, जो सबसे ऊँचा और महान है। वहाब जल जलालुहु की तौफ़ीक़ से जवाब पूरा हुआ और अल्लाह ही के लिए प्रशंसा है, पहले और पीछे, गुप्त और प्रकट। और मैंने इसका नाम "किफ़ल अल-फ़क़ीह अल-फ़ाहिम फ़ी अहकाम किरतास अल-दराहिम" रखा ताकि नाम रचना के वर्ष का प्रतीक हो। इस दुर्बल दास ने शनिवार के दिन लिखना शुरू किया था, फिर रविवार को बुखार फिर से आ गया, तो सोमवार को सुबह चढ़े मैंने इसे

पूरा किया। मुहर्रम शरीफ की तेइस तारीख १३२४ हिजरी। और यह रचना अल्लाह के आदर वाले स्थान (मक्का मुअज़्ज़मा) में हुई, उनकी इच्छा से जो हनफ़ी मुसल्ले के कामिल, फ़ाज़िल और पाकीज़ा इमाम हैं, मौलाना शेख अब्दुल्ला, और उनके साहबज़ादे जो खतीबों के शेख और महान इमामों के सरदार हैं, यानी आलिम बा-अमल, फ़ाज़िल कामिल, ज़ाहिद, मुतवर्रि, मुत्तक़ी, पाकीज़ा, गुणों के संगम और श्रेष्ठता के स्रोत हज़रत शेख अहमद अबी अल-खैर। अल्लाह तआला हर नुकसान से उन दोनों का निगहबान हो।

[1] अल-कुरान अल-करीम २/२७५ पेज ५०१ / ७१५

فتاوی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

[عربی کالم] فیہما اقول: ہذا اعتراض اورده المشرکون وقد تکفل الجواب عنہ ربنا تبارک وتعالی فی القرآن العظیم، "قَالُوا إِنَّمَا الْبَيْعُ مِثْلُ الرِّبَا وَأَحَلَّ اللَّهُ الْبَيْعَ وَحَرَّمَ الرِّبَا"[1] ، الم یر المعترض انا انما احللنا الربح فی بیع جنسین متخالفین فان حرم ہذا لانسد باب البیاعات ولا حول ولا قوۃ الا باللہ العلی العظیم انتہی الجواب بتوفیق الوہاب والحمد للہ اولاً وآخراً وباطناً وظاہراً وسمیتہ "کفل الفقیہ الفاہم فی احکام قرطاس الدراہم" ۱۳۲۴ھ "لیکون العلم علماً علی عام التألیف. وقد ابتدأ فیہ العبد الضعیف یوم السبت ثم عاودتنی الحمی یوم الاحد فانہیتہ ضحی یوم الاثنین لسبع بقین من المحرم الحرام ۱۳۲۴ھ وذلک فی بلد اللہ الحرام باقتراح الفاضل الصفی الوفی امام المقام الحنفی مولانا الشیخ عبداللہ بن شیخ الخطباء وسید الائمۃ العظماء العالم العامل الفاضل الکامل الزاہد الورع التقی النقی مجمع الفضائل ومنبع الفواضل حضرۃ الشیخ احمد ابی الخیر حفظہما اللہ تعالیٰ عن

[اردو کالم] دونوں میں حاصل ہوئی۔ اقول: (میں کہتا ہوں) یہ وہ اعتراض ہے کہ کفار نے کیا تھا اور خود رب العزۃ تبارک و تعالیٰ نے قرآن عظیم میں اس کا جواب دیا، کافر بولے بیع بھی تو ایسے ہی ہے جیسے ربا، اور ہے یہ کہ اللہ نے حلال کی بیع اور حرام کیا سود، کیا معترض نے یہ نہ دیکھا کہ ہم نے نفع وہیں حلال کیا جہاں دو جنسوں کی بیع ہو تو اگر یہ حرام ہو تو خرید و فروخت کا دروازہ ہی بند ہو جائے ولا حول ولا قوۃ الا باللہ العلی العظیم، وہاب جل جلالہ کی توفیق سے جواب تمام ہوا اور اللہ ہی کے لئے حمد ہے آگے اور پیچھے اور نہاں و عیاں، اور میں نے اس کا نام "کفل الفقیہ الفاہم فی احکام قرطاس الدراہم" رکھا تاکہ نام سال تصنیف کی علامت ہو اور بندہ ضعیف نے شنبہ کے دن لکھنا شروع کیا تھا پھر اتوار کے دن بخار عود کر آیا تو پیر کے دن پہروں چڑھے میں نے اسے تمام کیا، محرم شریف کی تئیس تاریخ ۱۳۲۴ھ اور یہ تصنیف اللہ کے

حرمت والے (مکہ معظمہ) میں ہوئی ان کی خواہش سے جو فاضل کامل پاکیزہ مصلائے حنفی کے امام ہیں مولانا شیخ عبداللہ ان کے صاحبزادہ جو خطیبوں کے شیخ اور عظمت والے اماموں کے سردار ہیں یعنی عالم باعمل، فاضل کامل، زاہد، متورع، متقی، پاکیزہ، مجمع فضائل و منبع فواضل حضرت شیخ احمد ابی الخیر اللہ تعالیٰ ہر ضرر سے ان دونوں کا نگہبان ہو

[1] القرآن الکریم ۲۷۵/۲ صفحہ ۵۰۱ از ۷۱۵

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Arabic Section]: ...avert every harm and grant them a portion of every good, and forgive our sins, cover our faults, lighten our burdens, fulfill our hopes, and grant us repeated returns to this noble House and the House of the Compassionate, Merciful Beloved—upon him and his family be the most excellent blessings and peace—with His acceptance and pleasure, until He makes the end of that our death upon faith in Medina the Radiant, burial in al-Baqi', and the attainment of the intercession of the High Intercessor—may Allah the Exalted send blessings, peace, barakah, and honor upon him, his family, and companions. Ameen. And praise be to Allah, Lord of the worlds.

[Urdu Translation of the above]: ...and grant them a portion of every good, and forgive our sins, cover our faults, lighten our burdens, fulfill our hopes, and grant us repeated returns to this noble House and the shrine of the Compassionate, Merciful Prophet—upon him and his family be the most excellent blessings and peace—with His acceptance and pleasure, so that finally we are granted death with faith in Medina the Radiant, burial in al-Baqi', and the attainment of the intercession of the high-ranking intercessor; may Allah the Exalted send blessings and peace upon him, and shower His blessings and honor upon his family and companions. Ameen. And all praise is due to Allah, the Lord of the worlds.

Written by: His sinful servant Ahmad Raza al-Barelwi May he be forgiven for the sake of Muhammad al-Mustafa, the Unlettered Prophet, peace and blessings of Allah the Exalted be upon him.

Fatwa by the Supporter of Sunnah, the Eraser of Innovation, Mr. Maulana Mawlawi Shah Muhammad Irshad Hussain Sahib Rampuri (may Allah have mercy on him).

Question 218: What do the scholars of the religion and the muftis of the firm Shariah say about this matter: Is the buying and selling of the currency notes currently in circulation permissible for more or less [than face value]? State it and be rewarded.

The Answer is from the One who inspires toward correctness: The buying and selling of the mentioned notes for more or less is permissible because the authorities have declared them as 'mal' (property/wealth). Whatever is designated as 'mal' in the terminology of a people—even if its status as money or property is not established inherently—its status as money and property becomes established simply by the people's designation. Thus, its [transaction] for less or more...

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

[अरबी खंड]: ...हर बुराई को टाले और उन्हें हर भलाई का हिस्सा दे, और हमारे पापों को क्षमा करे, हमारे दोषों को छिपाए, हमारे बोझ को हल्का करे, हमारी आशाओं को पूरा करे, और हमें बार-बार इस सम्मानित घर और दयालु-कृपालु प्रिय के घर—उन पर और उनके परिवार पर सर्वश्रेष्ठ आशीर्वाद और शांति हो—की ओर अपनी स्वीकृति और प्रसन्नता के साथ लौटने का सौभाग्य प्रदान करे, यहाँ तक कि अंत में हमें ईमान के साथ मदीना मुनव्वरा में मृत्यु और बक़ीअ में दफ़न होना और उच्च शिफ़ाअत करने वाले की शिफ़ाअत पाना नसीब हो, अल्लाह तआला उन पर, उनके परिवार और साथियों पर दरूद और सलाम भेजे और अपनी बरकत और सम्मान उन पर उतारे। आमीन। और सब प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो तमाम जहानों का पालनहार है।

[उर्दू खंड का अनुवाद]: ...और हर भलाई से उनको हिस्सा दे और हमारे गुनाह बख़्शे और हमारे दोषों को छिपाए और हमारे बोझ हल्के करे और हमारी आरज़ूएं पूरी करे और हमें बार-बार इस इज़्ज़त वाले घर और दयालु-कृपालु नबी के मज़ार—उन पर और उनके परिवार पर सर्वश्रेष्ठ दुरूद और सलाम हो—की तरफ अपनी स्वीकृति और रज़ा के साथ लौटना नसीब फरमाए, यहाँ तक कि अंत में हमें ईमान के साथ मदीना मुनव्वरा में मरना और बक़ीअ में दफन होना और बुलंद रुतबे वाले शफ़ीअ की शफ़ाअत पाना नसीब करे, अल्लाह तआला उन पर दुरूद और सलाम भेजे और उनके परिवार और साथियों पर और अपनी बरकत और सम्मान उन पर उतारे, आमीन। और सब प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो तमाम जहानों का रब है।

लिखने वाला: उसका पापी सेवक अहमद रज़ा बरेलवी मुहम्मद मुस्तफ़ा नबी-ए-उम्मी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के वसीले से उसे क्षमा किया जाए।

सुन्नत के हिमायती और बिदअत मिटाने वाले हज़रत मौलाना मौलवी शाह मुहम्मद इरशाद हुसैन साहब रामपूरी (रहमतुल्लाह अलैह) का फ़तवा।

मसला 218: उलेमा-ए-दीन और शरीयत के मुफ़्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि आजकल जो नोट प्रचलित हैं, उनका कम या ज़्यादा पर ख़रीद-ओ-फ़रोख़्त (लेन-देन) करना जायज़ है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

जवाब वही है जो सही मार्ग की प्रेरणा देने वाला है: उक्त नोटों की ख़रीद-ओ-फ़रोख़्त कम या ज़्यादा पर जायज़ है क्योंकि हुक्काम (अधिकारियों) ने इसे 'माल' (संपत्ति) करार दिया है। और जो चीज़ कौम की इस्तलाह (परिभाषा) में माल करार दी जाए, चाहे मूल रूप से उसमें मूल्यवान होना या संपत्ति होना सिद्ध न हो, केवल कौम के करार देने से उसमें मूल्यवान होना और संपत्ति होना सिद्ध हो जाता है। लिहाज़ा कम और ज़्यादा पर उसकी...

पृष्ठ 502/715

[عربی کالم]: کل ضیر ورزقهما من کل خیر و غفرلنا ذنوبنا وستر عیوبنا و خفف اثقالنا ووحقق اٰمالنا ورزقنا العود بعد العود الٰی هذا البیت الکریم وبیت الحبیب الرؤف الرحیم علیه وعلٰی اٰله افضل الصلوٰة والتسلیم بقبوله ورضاه حتی یجعل اٰخر ذلک موتنا علی الایمان فی المدینة المنورة والدفن بالبقیع والفوز بشفاعة الشفیع الرفیع صلّٰی اللہ تعالٰی علیه وعلٰی اٰله وصحبه وبارک وکرم اٰمین والحمد للہ رب العالمین۔

[اردو کالم]: اور ہر بھلائی سے ان کو حصہ دے اور ہمارے گناہ بخشے اور ہماری عیب چھپائے اور ہمارے بوجھ ہلکے کرے اور ہماری آرزوئیں پوری کرے اور ہمیں بار بار اس عزت والے گھر اور مزار نبی رؤف رحیم علیٰ آلہ افضل الصلوٰۃ والتسلیم کی طرف اپنے قبول و رضا کے ساتھ عود کرنا نصیب فرمائے یہاں تک کہ آخر میں ہمیں ایمان کے ساتھ مدینہ منورہ میں مرنا اور بقیع میں دفن ہونا اور رفعت والے شفیع کی شفاعت پانا نصیب کرے، اللہ تعالیٰ ان پر درود و سلام بھیجے اور ان کی آل واصحاب پر اور اپنی برکت و تکریم ان پر اتارے، آمین، والحمد للہ رب العالمین۔

کتبہ: عبدہ المذنب احمد رضا البریلوی عفی عنہ بمحمد المصطفیٰ النبی الامی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم

فتویٰ حامی سنت ماحی بدعت جناب مولنا مولوی شاہ محمد ارشاد حسین صاحب رامپوری رحمہ اللہ

مسئلہ ۲۱۸: کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ نوٹ جو آج کل رائج ہے ان کا خرید و فروخت زیادہ و کم پر جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب ھو الملھم للصواب: خرید و فروخت نوٹ مذکور کی زیادہ یا کم پر جائز ہے اس واسطے کہ حکام نے اس کو مال قرار دیا ہے اور جو شئی کہ اصطلاح قوم میں مال قرار دی جائے خواہ فی اصلہ اس میں ثمنیت اور مالیت ثابت نہ ہو لیکن فقط قوم کے قرار دینے سے ثمنیت اور مالیت اس میں ثابت ہو جاتی ہے اور کم اور بیش پر اس کی

Fatawa Ridawiyya (17)

Buying and selling is permissible. It is stated in *Al-Hidayah*: "It is permissible to sell one *fils* for two *fils* as specific items according to Imam Abu Hanifa and Imam Abu Yusuf (may Allah have mercy on them). However, Imam Muhammad said it is not permissible because their status as currency (thamania) is established by public consensus and cannot be invalidated by their personal consensus. When their status as currency remains, they cannot be specified, so it becomes like selling one dirham for two dirhams (which is ribā). For Imam Abu Hanifa and Imam Abu Yusuf, their reasoning is that the currency status for these two individuals is established by their own mutual agreement, as no one else has authority over them. Thus, it becomes invalidated by their agreement. When the currency status is removed, they can be specified by specification." (End)

Therefore, since value is established for the aforementioned note, which is paper, its buying and selling with excess or deficiency is also permissible. In *Radd al-Muhtar* in the chapter of *Al-Aynah*: "Even if one sells a piece of paper for a thousand, it is permissible and not disliked." (End)

And Allah knows best and His knowledge is most complete. The servant, the respondent, Muhammad Riyasat Ali, Muhammad Riyasat Ali Khan.

The answer is correct - Ahmadi, Muhammad Irshad Hussain Hamid The answer is correct - Muhammad Aijaz Hussain The answer is correct - Written by Hussain, may he be pardoned The answer is correct - Muhammad Hassan

1. *Al-Hidayah*, Book of Sales, Chapter on Usury, Yusufi Press, Lucknow, 3/83.
2. *Radd al-Muhtar*, Book of Suretyship, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/279.

फ़तावा रज़विया (17)

ख़रीद और बिक्री जायज़ है। 'हिदाया' में कहा गया है: "इमाम आज़म अबू हनीफ़ा और इमाम अबू यूसुफ़ (रहमतुल्लाह अलैह) के अनुसार एक फ़िल्स (पैसा) को दो निश्चित फ़िल्स के बदले बेचना जायज़ है। इमाम मुहम्मद ने कहा कि यह जायज़ नहीं है क्योंकि उनकी मुद्रा के रूप में मान्यता (समनीयत) सभी लोगों की सहमति से स्थापित होती है और इसे केवल दो व्यक्तियों की सहमति से समाप्त नहीं किया जा सकता। जब तक मुद्रा की स्थिति बनी रहती है, उन्हें विशिष्ट (निर्धारित) नहीं किया जा सकता, अतः यह एक दिरहम को दो दिरहम के बदले बेचने जैसा हो जाएगा। इमाम आज़म और इमाम अबू यूसुफ़ का तर्क यह है कि इन दो व्यक्तियों के लिए मुद्रा की स्थिति उनके आपसी समझौते से होगी क्योंकि किसी और का उन पर अधिकार नहीं है, इसलिए उनके समझौते से यह समाप्त हो जाएगी। जब मुद्रा की स्थिति समाप्त हो जाएगी, तो वे निर्धारित करने से निर्धारित हो जाएंगे।" (समाप्त)

चूंकि उपर्युक्त नोट, जो कि कागज़ है, उसका मूल्य स्थापित है, इसलिए उसकी ख़रीद-बिक्री भी कम या अधिक मूल्य के साथ जायज़ है। 'रद्द अल-मुह्तार' के बाब अल-ऐना में है: "यहाँ तक कि अगर कोई कागज़ के टुकड़े को एक हज़ार रुपये में बेचे, तो यह जायज़ है और इसमें कोई बुराई नहीं है।" (समाप्त)

और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है और उसका ज्ञान सबसे पूर्ण है। दास, उत्तरदाता, मुहम्मद रियासत अली, मुहम्मद रियासत अली खान।

उत्तर सही है - अहमदी, मुहम्मद इरशाद हुसैन हामिद उत्तर सही है - मुहम्मद एजाज़ हुसैन उत्तर सही है - लेखक हुसैन, अल्लाह उन्हें क्षमा करे उत्तर सही है - मुहम्मद हसन

1. हिदाया, किताबुल बुयू, बाबुर रिबा, यूसुफ़ी प्रेस, लखनऊ, 3/83.
2. रद्द अल-मुह्तार, किताबुल कफ़ाला, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 4/279.

पृष्ठ 715 का 503

خرید وفروخت جائز ہے۔ قال في الهداية ويجوز بيع الفلس بالفلسين باعياناً نهماً عند ابی حنيفة وابی يوسف وقال محمد لا يجوز لان الثمنية تثبت بأصطلاح الكل فلا تبطل بأصطلاحهما واذا بقيت اثماناً لا تتعين فصار كما اذا كانا بغير اعيانهما وكيبيع الدرہم بالدرہمين ولهما ان الثمنية فی حقهما تثبت بأصطلاحهما واذا بطلت الثمنية تتعين بالتعين 1 اھ ہدایہ میں فرمایا اور ایک پیسہ کی دو معین پیسوں سے امام اعظم ابو حنیفہ اور امام ابو یوسف رحمہما اللہ تعالٰی کے نزدیک بیع جائز ہے اور امام محمد نے فرمایا جائز نہیں اس لئے کہ ان کی ثمنیت تمام لوگوں کی اصطلاح سے باطل نہ ہوگی، اور جب یہ ثمنیت تمام لوگوں کی اصطلاح سے ثابت ہوئی تو ان دو بیع کرنے والوں کی اصطلاح سے باطل نہ ہوگی، اور جب یہ ثمنیت پر باقی ہیں تو متعین نہ ہو سکیں گے تو ایسے ہوئے جیسے غیر معین چیز ہو، اور ایک درہم کی بیع دو درہموں کے بدلے ہو، اور امام اعظم اور امام ابو یوسف رحمہما اللہ تعالٰی کی دلیل یہ ہے کہ دنوں کی ثمنیت ان خرید و فروخت کرنے والوں کی اصطلاح سے ہوگی کیونکہ غیر کو ان پر ولایت نہیں تو ان کی اصطلاح سے باطل ہو جائے گی تو جب ثمنیت جاتی رہی تو اب متعین کرنے سے متعین ہو جائیں گے اھ (ت)

پس جبکہ نوٹ مذکور میں کہ کاغذ ہے مالیت ثابت ہوئی تو اس کا بھی خرید و فروخت ساتھ کمی اور بیشی کے جائز ہے۔ في ردالمحتار في باب العينة حتی لو باع كاغذة بالف يجوز ولايكره 2انتھی۔ ردالمحتار کے باب العینہ میں ہے کہ، حتی اگر کاغذ کو ہزار روپے سے فروخت کرے جائز ہے اور کراہت نہیں ہے، انتہی۔ (ت)

واللہ اعلم وعلمہ اتم، العبد المجیب محمد ریاست علی محمد ریاست علی خان

الجواب صواب - احمدی، محمد ارشاد حسین حامد الجواب صحیح - محمد اعجاز حسین الجواب صحیح - کتبہ حسین عفی عنہ الجواب صواب - محمد حسن

1 الهداية كتاب البيوع باب الربوا مطبع يوسفى لكهنؤ ٣/ ٨٣ 2 ردالمحتار كتاب الكفالة دار احياء التراث العربى بيروت ۴/ ۲۷۹

صفحہ 503 از 715

Volume 17 (17) Fatawa Razawiyya

(Right Column) Indeed, the mentioned buying and selling is permissible. Only. The servant Muhammad Abdul Qadir, may he be forgiven. Undoubtedly, it is established in terminology, and the mentioned buying and selling is permissible. Only. The servant Abu al-Qasim Muhammad Muzammil, may he be forgiven.

(Left Column) The ruling of the respondent regarding the validity of the mentioned sale is correct and right. The servant Muhammad Inayatullah, may he be forgiven. The answer is the answer (i.e., it is correct). (Muhammad Nazar Ali)

(Bottom Section) The answer is correct.

Muhammad Abdul Jalil bin Muhammad Abdul Haq Khan

Page 504 of 715

(दायां कॉलम) बेशक, उक्त क्रय-विक्रय जायज़ है। केवल। सेवक मुहम्मद अब्दुल कादिर, उन पर कृपा हो। निस्संदेह, शब्दावली में इसे तय किया गया है, और उक्त क्रय-विक्रय जायज़ है। केवल। सेवक अबू अल-कासिम मुहम्मद मुज़म्मिल, उन पर कृपा हो।

(बायां कॉलम) उक्त बिक्री की वैधता के संबंध में उत्तरदाता का हुक्म सही और दुरुस्त है। सेवक मुहम्मद इनायतुल्लाह, उन पर कृपा हो। जवाब ही (सही) जवाब है। (मुहम्मद नज़र अली)

(निचला भाग) जवाब सही है।

मुहम्मद अब्दुल जलील बिन मुहम्मद अब्दुल हक खान

पृष्ठ 504 का 715

(دائیں جانب) البتہ بیع و شراء مذکور جائز ہے فقط العبد محمد عبدالقادر عفی عنہ بلا شبہ اصطلاح میں قرار دیا جاتا ہے اور بیع و شراء مذکور جائز ہے فقط العبد ابو القاسم محمد مزمل عفی عنہ

(بائیں جانب) حکم کرنا مجیب کا نسبت صحتِ بیع مذکور کے صحیح اور درست ہے۔ العبد محمد عنایت اللہ عفی عنہ الجواب ہو الجواب (محمد نظر علی)

(نیچے کا حصہ) الجواب صواب

محمد عبدالجلیل بن محمد عبدالحق خان

صفحہ 504 از 715

Volume 17 (17) Fatawa Razawiya

Treatise Kasir al-Safih al-Wahim fi Abdal Qirtas al-Darahim 1329 AH (The defeater of the foolish doubter regarding the exchange of paper notes) Its translation, titled with a historical name: Al-Dhayl al-Manut li Risalat al-Nut 1329 AH (The attached appendage of the treatise on notes)

Issue 219:

In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful. We praise Him and send blessings upon His noble Messenger.

Praise be to Allah, the blessed treatise 'Kifl al-Faqih al-Fahim fi Ahkam Qirtas al-Darahim' 1324 AH has clarified all issues related to notes with such a refined explanation that no state of ambiguity remains in any matter. This treatise was authored in Makkah al-Mu'azzamah in a very short period upon the inquiry of two noble scholars there. At that time, it was known that Maulana Abdul Hayy Lakhnawi held a contrary opinion regarding selling notes for more or less than their face value. Although his fatwa was not present there, its content was in mind. By the grace of Allah, in the eleventh issue, its sufficient and comprehensive...

Page 505 of 715

जिल्द सत्रह (17) फ़तावा रज़विया

रिसाला (पुस्तिका) कासिर-उस-सफ़ीह अल-वाहिम फ़ी अबदाल-ए-किरतास-इद-दराहिम १३२९ हिजरी (काग़ज़ी नोट बदलने के बारे में बेवक़ूफ़ वहमी को मात देने वाला) का अनुवाद जिसका ऐतिहासिक नाम है: अद-दैल अल-मनूत लि-रिसालत अन-नूत १३२९ हिजरी (नोट वाली पुस्तिका का जुड़ा हुआ पल्ला)

मसला २१९:

अल्लाह के नाम से, जो अत्यंत दयालु और कृपावान है। हम उसकी प्रशंसा करते हैं और उसके सम्मानित रसूल पर दरूद भेजते हैं।

अलहम्दुलिल्लाह, बरकत वाली पुस्तिका 'किफ़्ल-उल-फ़क़ीह अल-फ़ाहिम फ़ी अहकाम-ए-किरतास-इद-दराहिम' १३२४ हिजरी ने नोट से संबंधित सभी मसलों को इतने बेहतरीन और परिष्कृत विवरण के साथ स्पष्ट किया है कि मूल रूप से किसी भी मसले में कोई संदेह या प्रतीक्षा की स्थिति शेष नहीं रही। यह पुस्तिका मक्का मुअज़्ज़मा में वहीं के दो विद्वानों (उलेमा-ए-किराम) के पूछने पर बहुत ही कम समय में लिखी गई थी। उस समय तक, नोट को उसके अंकित मूल्य से कम या ज़्यादा पर बेचने के बारे में मौलवी अब्दुल हई लखनवी का विपरीत विचार ज्ञात था। हालाँकि उनका फ़तवा वहाँ मौजूद नहीं था, लेकिन उसका विषय मस्तिष्क में था। अल्लाह की कृपा से, ग्यारहवें मसले में इसका पर्याप्त और संतोषजनक...

पृष्ठ 505 का 715

رسالہ کَاسِرُ السَّفِیہِ الْوَاہِمِ فِي أَبْدَالِ قِرْطَاسِ الدَّرَاہِمِ ۱۳۲۹ھ (کاغذی نوٹ کے بدلنے سے متعلق بیوقوف وہمی کو شکست دینے والا) کا ترجمہ ملقب بلقب تاریخی الدَّیْلُ الْمَنُوطُ لِرَسَالَۃِ النُّوطِ ۱۳۲۹ھ (رسالہ نوٹ کا معلق دامن)

مسئلہ ۲۱۹:

بِسْمِ اللّٰہِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِیْمِ نَحْمَدُہٗ وَ نُصَلِّیْ عَلٰی رَسُوْلِہِ الْکَرِیْمِ

الحمد للہ رسالہ مبارکہ کفل الفقیہ الفاہم فی احکام قرطاس الدراہم ۱۳۲۴ھ نوٹ کے متعلق جملہ مسائل ایسے بیان نفیس سے روشن کئے کہ اصلاً کسی مسئلہ میں کوئی حالت منتظرہ باقی نہ رہی۔ یہ رسالہ مکہ معظمہ میں وہیں کے دو علمائے کرام کے استفتار پر نہایت قلیل مدت میں تصنیف ہوا اس وقت تک رقم سے کم، زیادہ کو نوٹ بیچنے کے بارے میں مولوی عبد الحی صاحب لکھنوی کا خلاف معلوم تھا ان کا فتوی اگرچہ وہاں موجود نہ تھا مگر اس کا مضمون ذہن میں تھا بفضلہ تعالی گیارہویں مسئلہ میں اس کا وافی و شافی

The previous refutation was sufficient for the author and negates delusions, praise be to Allah. It was not known that the Deobandi Molvi Rashid Ahmad Sahab Gangohi, the deceased, had declared the currency note as a mere bond (tamassuk), excluding it from being wealth (mal) altogether, and made its sale and purchase illegal even at equal value, let alone more or less. However, by divine inspiration, this was discussed sufficiently at the beginning of the book, which lifted the veil from the face of truth and drove foolishness back to its origin, and praise be to Allah. There was no need to pay independent attention to this delusion or foolishness now, but for the benefit of religious brothers, it seemed appropriate to mention these two writings and point out where each sentence has been refuted in this book, and based on independent attention, add some fresh discussions that came to mind and name it historically "Kāsir al-Safīh al-Wāhim fī Abdāl Qirṭās al-Dirāhim 1329 AH". 'Safahat' (foolishness) refers to the writing of Mr. Gangohi, and 'Wahm' (delusion) refers to the fatwa of the Lucknowi Molvi. Regarding the first, the word 'Abdal' should be read with a 'kasra' on the 'hamza' as a verbal noun because they find exchanging and selling notes inherently foolish; and regarding the second, with a 'fatha' on the 'hamza' as a plural form because they consider the note just a substitute (badal), meaning valid for an equal amount of money, and regarding more or less, there is a delusion of prohibition. This is so, and success is from Allah.

Refutation of Foolishness

In the second volume of Mr. Gangohi's Fatawa, page 169, it is stated: "A note is a document for that money which has been deposited in the ruler's treasury, like a bond (tamassuk). This is why if the note is damaged, it can be exchanged with the government, and if lost, its replacement can be obtained upon proof. If a note were a commodity (mabee'), its exchange could never have happened. Is there any commodity in the world that, if damaged or destroyed after the buyer takes possession, can be exchanged with the seller? Thus, from this discourse, it will be clear to you that a note is not like copper coins (fulus). Copper coins are a commodity, and notes are currency; there is no Zakat on them if they are not for the purpose of trade. A note is a bond, and Zakat will be due on it. Most people are in doubt, thinking of the note as a commodity and not giving Zakat, considering the paper as the commodity; this is a severe mistake, period." And in volume one, pages 75 and 76, it says: "Buying and selling of notes even at an equal price is not correct, but a legal stratagem (heela) of 'hawala' (transfer of debt) can be used, and it is permissible

under the contract of hawala, but selling for more or less is illegal. This is its detail, period." Mr.

1 Fatawa Rashidiya, Book of Zakat, Mohammad Saeed & Sons, Karachi, p. 356. 2 Fatawa Rashidiya, Book of Sales, Mohammad Saeed & Sons, Karachi, p. 418.

फ़तावा रज़विया, खंड 17

पिछला खंडन लेखक के लिए पर्याप्त है और भ्रमों को दूर करने वाला है, अल्लाह की स्तुति हो। यह ज्ञात नहीं था कि देवबंदियों के मौलवी रशीद अहमद साहब गंगोही, दिवंगत ने नोट को एक दस्तावेज़ (तमस्सुक) करार देकर उसे पूरी तरह से माल (संपत्ति) से बाहर कर दिया था और कम या ज्यादा तो दूर, बराबर मूल्य पर भी इसकी खरीद-फरोख्त को नाजायज कर दिया था। हालाँकि, ईश्वरीय प्रेरणा से पुस्तक की शुरुआत में इस पर पर्याप्त चर्चा हुई, जिसने सत्य के चेहरे से पर्दा उठाया और मूर्खता को उसके ठिकाने तक पहुँचाया, और अल्लाह की स्तुति हो। अब इस भ्रम या मूर्खता की ओर स्वतंत्र ध्यान देने की आवश्यकता नहीं थी, लेकिन धार्मिक भाइयों के लाभ के लिए इन दोनों लेखों का उल्लेख करना और पुस्तक में जहाँ-जहाँ इनके प्रत्येक वाक्य का खंडन हुआ है, उसका पता बताना उचित समझा गया, और स्वतंत्र ध्यान के आधार पर जो कुछ नए विषय मन में आए, उन्हें जोड़ना और इसका ऐतिहासिक नाम 'कासिर अल-सफीह अल-वाहिम फी अब्दाल किरतास अल-दिराहिम 1329 हिजरी' रखना तय किया। 'सफ़ाहत' से इशारा श्री गंगोही साहब के लेखन की ओर है, और 'वहम' से मौलवी लखनवी साहब के फ़तवे की ओर। पहले के संबंध में 'अब्दाल' शब्द को 'हमज़ा' पर 'कसरा' के साथ 'मस्दर' (क्रियावाचक संज्ञा) के रूप में पढ़ा जाना चाहिए क्योंकि उन्हें नोट के विनिमय और बिक्री में मूर्खता दिखती है; और दूसरे के संबंध में 'हमज़ा' पर 'फ़त्हा' के साथ बहुवचन रूप में क्योंकि वे नोट को केवल एक 'बदल' (विकल्प) मानते हैं, यानी समान राशि के लिए वैध मानते हैं, और कम या ज्यादा के मामले में निषेध का भ्रम है। यह इसी तरह है, और सफलता अल्लाह की ओर से है।

मूर्खता का खंडन

श्री गंगोही साहब के फ़तावा के दूसरे खंड, पृष्ठ 169 में है: "नोट उस रुपये का दस्तावेज़ है जो शासक के खजाने में जमा किया गया है, जैसे कि बांड (तमस्सुक)। इसी कारण से यदि नोट खराब हो जाए तो उसे सरकार से बदला जा सकता है, और यदि खो जाए तो सबूत मिलने पर उसका विकल्प लिया जा सकता है। यदि नोट बिक्री की वस्तु (मबी') होता, तो इसका विनिमय कभी नहीं हो पाता। क्या दुनिया में कोई ऐसी बिक्री की वस्तु है जिसे खरीदार के कब्जे के बाद नुकसान या नष्ट होने पर विक्रेता से बदला जा सके? अतः इस चर्चा से आपको स्पष्ट हो जाएगा कि नोट तांबे के सिक्कों (फ़ुलूस) की तरह नहीं है। फ़ुलूस एक वस्तु है, और नोट मुद्रा है; यदि वे व्यापार की नीयत से न हों तो उनमें जकात नहीं है। नोट एक दस्तावेज़ है और उस पर जकात होगी। अधिकतर लोगों को संदेह हो रहा है कि वे नोट को वस्तु समझकर जकात नहीं देते, कागज को वस्तु समझ रहे हैं, यह भारी गलती है, बस।" और

पहले खंड के पृष्ठ 75 और 76 में है: "नोट की खरीद-फरोख्त बराबर कीमत पर भी सही नहीं है, लेकिन इसमें 'हवाला' (ऋण हस्तांतरण) का हिला (कानूनी युक्ति) हो सकता है और हवाला के अनुबंध के तहत यह जायज है, लेकिन कम या ज्यादा पर बेचना नाजायज है। यह इसका विवरण है, बस।" श्री

1 फ़तावा रशीदिया, किताबुज़ ज़कात, मोहम्मद सईद एंड संस, कराची, पृ. 356। 2 फ़तावा रशीदिया, किताबुल बुयूअ, मोहम्मद सईद एंड संस, कराची, पृ. 418।

رد گزرا کہ مصنف کو کافی اور اوہام کا نافی ہے وللہ الحمد، یہ معلوم بھی نہ تھا کہ دیوبندیوں کے مولوی رشید احمد صاحب گنگوہی آنجہانی نوٹ کو تمسک ٹھہرا کر سرے سے مال سے خارج اور کم و بیش درکنار برابر کو بھی اس کی خرید و فروخت ناجائز کر چکے ہیں تاہم بالہام الہی شروع کتاب میں اس پر بقدر کفایت بحث ہوئی جس نے حق کے چہرے سے نقاب اٹھائی اور سفاہت سفنا گھر تک پہنچائی والحمد للہ۔ حاجت نہ تھی کہ اب اس وہم یا اس سفاہت کی طرف مستقل توجہ ہو لیکن نفع برادران دینی کے لئے مناسب معلوم ہوا کہ ان دونوں تحریروں کو ذکر کروں اور ان کے فقرے فقرے کا جہاں جہاں اس کتاب میں رد مذکور ہوا ہے اس کا پتہ بتادوں اور باقتضائے توجہ مستقل جو بعض مباحث تازہ خیال میں آئیں اضافہ کروں اور اس کا تاریخ نام کاسر السفیہ الواھم فی ابدال قرطاس الدراھم ۱۳۲۹ھ رکھوں۔ سفاہت سے اشارہ تحریر جناب گنگوہی صاحب کی طرف ہے، اور وہم سے فتوائے مولوی لکھنوی صاحب کی طرف۔ اول کے لحاظ سے لفظ ابدال بکسر ہمزہ مصدر پڑھنا چاہئے کہ ان کو نفس مبادلہ و بیع نوٹ میں عروض سفاہت ہے اور دوم کے اعتبار سے بفتح ہمزہ صیغہ جمع کہ یہ نوٹ کا صرف ایک بدل یعنی جو رقم کے برابر ہو جائز رکھتے ہیں اور درباره کم و بیش وہم ممانعت ہے ھذا و باللہ التوفیق۔

رد سفاہت

جناب گنگوہی صاحب کی جلد دوم فتاویٰ ص ۱۶۹ میں ہے "نوٹ وثیقہ اس روپے کا ہے جو خزانہ حاکم میں داخل کیا گیا ہے مثل تمسک کے اس واسطے کہ نوٹ میں نقصان آ جائے تو سرکار سے بدلا سکتے ہیں اور اگر گم ہو جائے تو بشرط بوت اس کا بدل لے سکتے ہیں اگر نوٹ بیع ہوتا تو

ہرگز مبادلہ نہیں ہو سکتا تھا دنیا میں کوئی مبیع بھی ایسا ہے کہ بعد قبض مشتری کے اگر نقصان یا فنا ہو جائے تو بائع سے بدل لے سکیں پس اس تقریر سے آپ کو واضح ہو جائے گا کہ نوٹ مثل فلوس کے نہیں ہے فلوس مبیع ہے اور نوٹ نقدیں ان میں زکوۃ نہیں اگر بہ نیت تجارت نہ ہوں اور نوٹ تمسک ہے اس پر زکوۃ ہو گی، اکثر لوگوں کو شبہ ہو رہا ہے کہ نوٹ کو مبیع سمجھ کر زکوۃ نہیں دیتے کاغذ کو مبیع سمجھ رہے ہیں سخت غلطی ہے فقط"۔ اور جلد اول ص ۷۵ و ۷۶ میں ہے: "نوٹ کی خرید و فروخت برابر قیمت پر بھی درست نہیں مگر اس میں حیلہ حوالہ ہو سکتا ہے اور بعید عقد حوالہ کے جائز ہے مگر کم زیادہ پر بیع کرنا با نا جائز ہے یہ تفصیل اس کی ہے فقط"۔

جناب

1 فتاویٰ رشیدیہ کتاب الزکوٰۃ محمد سعید اینڈ سنز کراچی ص ۳۵۶ 2 فتاویٰ رشیدیہ کتاب البیوع محمد سعید اینڈ سنز کراچی ۴۱۸

Gangohi Sahib first called the note a 'tamassuk' (bond/promissory note) and then, solely on the ground that it is paper—and can paper ever be something to be sold? It is like river water, no, rather like air, it cannot be sold at all—he declared its buying and selling absolutely impermissible, even if it is for an equal value. However, he himself had stated on page 731 of the same second volume: "An easy way to send money is to get the notes registered or insured. 1" Now he got worried that since he had already declared the buying and selling of notes forbidden, from whose house will the notes come so he can register and send them? Helplessly, he searched here and there and hit upon 'Hawala' (transfer of debt/credit). Thus, this trick of 'Hawala' was fabricated that "it is permissible by way of a Hawala contract, 2" meaning Zaid bought a five-rupee note from Amr and gave him five rupees. Although they were saying "I bought and I sold" (I have purchased and I have sold - T), forcefully pin it on them that neither was it sold nor bought nor was a price paid; instead, Zaid gave a five-rupee loan to Amr. And Amr, who had already bought this note from the government treasury, was also involved in a transaction of a loan. According to him [Gangohi], such a time had come upon the government that it sat down to take a five-rupee loan from Amr and handed over this note-bond to him as a certificate so that it may serve as proof and be useful in time of need (that it may remain as a certificate and be of use in time of necessity - T). Now when hard times fell on Seth Amr, he borrowed five rupees from Zaid and handed him the same bond, saying: "Our five rupees are owed by the government as loans from previous times, which years have passed and the government has not yet paid. We have transferred our claim on the government to you; you collect it from them." This is the result of his [Gangohi's] searching, which every sane person knows is pure foolishness and falsehood. Its refutation has already appeared on pages 126, 127, 128, and 129 of the 'Kafi' treatise. Still, exposing some of its ignorance is not without benefit, as the reader will gain information on many issues and benefits in this context, if Allah wills.

So I say: And with Allah is the guidance (So I say, and success is from Allah alone - T). First: It is sheer stupidity from the outset that whatever contract the contracting parties of the whole world intend, one should forcefully break away from it and pin on them a contract that was never in their thoughts or dreams. Leave Gangoh and go to any city or town in the whole world you want, and ask everyone: "In the dealing of notes, do you intend buying and selling? Do you say 'I sold' and 'I bought'? Does the seller understand the note exiting his ownership and entering the buyer's ownership,

and the buyer understands the note entering his ownership by giving money in exchange? Or is it that the one giving the note is asking for a loan from him?"

---

1 Fatawa Rashidiya, Chapter on Riba, Muhammad Saeed and Sons Karachi, p. 241 2 Fatawa Rashidiya, Chapter on Riba, Muhammad Saeed and Sons Karachi, p. 241

गंगोही साहब ने पहले नोट को तमस्सुक (प्रमाणपत्र) बनाया और अंत में केवल इस अपराध पर कि वह कागज़ है और कागज़ भला कहीं बेचने की चीज़ है, वह तो दरिया के पानी, नहीं नहीं बल्कि हवा की तरह है, इसकी बिक्री हो ही नहीं सकती, इसकी खरीद-फरोख्त को पूर्णतः नाजायज़ ठहराया, भले ही वह बराबर मूल्य का हो। मगर स्वयं ही इसी दूसरे जिल्द के पृष्ठ 731 पर कहने वाले थे कि "रुपया भेजने की आसान तरकीब नोट जो रजिस्ट्री या बीमा करा देना है। 1" अब घबराए कि नोट की खरीद-फरोख्त तो मैं हराम कर चुका हूँ, नोट किस घर से आएँगे कि रजिस्ट्री कराकर भेजे जाएँ? विवश होकर इधर-उधर टटोला तो 'हवाला' पर हाथ पड़ा, अतः हवाला का यह बहाना गढ़ा गया कि "हवाला के अनुबंध के बहाने जायज़ है, 2" यानी ज़ैद ने अम्र से पाँच रुपये का नोट खरीदकर उसे पाँच रुपये दे दिए। वे हालाँकि "मैंने खरीदा और मैंने बेचा" (मैने खरीदा और मैने बेचा -त) कह रहे हैं, लेकिन ज़बरदस्ती उनके गले मढ़ दिया कि न बेचा, न खरीदा और न कीमत दी, बल्कि ज़ैद ने अम्र को पाँच रुपये उधार दिए और अम्र, जो सरकारी खजाने से यह नोट खरीद चुका था, वह भी ऋण का लेनदेन था। उनके अनुसार सरकार पर ऐसा समय आया था कि वह अम्र से पाँच रुपये उधार लेने बैठी थी और इसके साक्ष्य के लिए यह नोट का तमस्सुक उसके हाथ में थमा दिया था कि सनद रहे और ज़रूरत के वक्त काम आए (कि सनद रहे और ज़रूरत के वक्त काम आए। -त)। अब जब सेठ अम्र पर बुरा समय आया, उसने ज़ैद से पाँच रुपये उधार लिए और वही तमस्सुक अब उसे पकड़ा दिया कि सरकार पर हमारे पाँच रुपये पुराने समय के कर्ज चले आ रहे हैं जिन्हें बरसों गुज़र गए और अब तक सरकार ने अदा नहीं किए, हमने अपना सरकार पर दावा तुम पर टाल दिया, तुम उनसे वसूल कर लेना। यह हज़रत की इस टटोल का परिणाम है जिसे हर बुद्धिमान जानता है कि यह कोरी मूर्खता और असत्य है। इसका खंडन 'काफी' रिसाले के पृष्ठ 126, 127, 128 और 129 में गुज़र चुका है, फिर भी इसकी कुछ अज्ञानताओं को उजागर करना लाभ से खाली नहीं कि इस बीच पाठक को बहुत से मसलों और फायदों की जानकारी होगी, इंशा अल्लाह।

तो मैं कहता हूँ: और अल्लाह की ओर से ही तौफ़ीक़ (सफलता) है। (पस मैं कहता हूँ और अल्लाह ही की तरफ से तौफीक है -त) प्रथम: तो यही सिरे से भारी मूर्खता है कि दुनिया भर के अनुबंध करने वाले जिस अनुबंध का इरादा करें, ज़बरदस्ती उससे तोड़कर वह अनुबंध उनके सिर थोप दिया जाए जो उनके ख़्वाबों-ख्याल में भी नहीं। गंगोह से निकलकर दुनिया के जिस शहर या कस्बे में चाहो जाओ और पूरी दुनिया से पूछो कि नोट के लेनदेन में तुम्हारा उद्देश्य खरीद-फरोख्त होता है, 'बेचा'

और 'खरीदा' कहते हो, बेचने वाला अपनी मिल्कियत से नोट का निकलकर खरीदार की मिल्कियत में दाखिल होना और खरीदार उसके बदले रुपये देकर नोट अपनी मिल्कियत में आना समझता है, या यह कि नोट देने वाला उससे उधार माँगता है।

---

1 फ़तावा रशीदिया, बाबुल रिबा, मुहम्मद सईद एंड संस कराची, पृ. 241 2 फ़तावा रशीदिया, बाबुल रिबा, मुहम्मद सईद एंड संस कराची, पृ. 241

पृष्ठ 507/715

گنگوہی صاحب نے اول نوٹ کو تمسک بنایا اور آخر میں صرف اس جرم پر کہ وہ کاغذ ہے اور کاغذ بھلا کہیں بکنے کی چیز ہے وہ تو دریا کے پانی، نہیں نہیں بلکہ ہوا کی طرح ہے اس کی بیع ہو ہی نہیں سکتی اس کی خرید و فروخت کو مطلقاً ناجائز ٹھہرایا اگرچہ برابر کو ہو، مگر خود ہی اسی جلد دوم کے ص ۷۳۱ پر فرمانے والے تھے کہ " روپیہ بھیجنے کی آسان ترکیب نوٹ جو رجسٹری یا بیمہ کرا دینا 1"۔ اب گھبرائے کہ نوٹ کی خرید و فروخت تو میں حرام کر چکا ہوں نوٹ آئیں گے کس گھر سے کہ رجسٹری کرا کر مرسل ہوں ناچار ادھر ادھر ٹٹولا حوالہ پر ہاتھ پڑا لہذا اس حیلہ حوالہ کی گھڑی کہ " بحیلہ عقد حوالہ جائز ہے 2" یعنی زید نے عمرو سے پانچ روپے کا نوٹ مول لے کر پانچ روپے سے اسے دے وہ اگرچہ خریدم و فروختم (میں نے خریدا اور میں نے بیچا ت) کہہ رہے ہیں مگر زبردستی ان کے سر یہ منڈھو کہ نہ بیچانہ مول لیا نہ قیمت دی بلکہ زید نے عمرو کو پانچ روپے قرض دیے اور عمرو جو گورنمنٹ خزانے سے یہ نوٹ مول لے چکا تھا ہو بھی قرض کا لین دین تھا، ان کے نزدیک گورنمنٹ پر ایسا وقت پڑا تھا کہ وہ عمرو سے پانچ روپے قرض لینے بیٹھی تھی اور اس کی سند کے لئے یہ نوٹ کا تمسک اس کے ہاتھ میں تھما دیا تھا کہ سند باشد وعند الحاجۃ بکار آید (کہ سند رہے اور بوقت ضرورت کام آئے۔ت) اب جو عمر و سیٹھ پر وقت پڑا اس نے زید سے پانچ روپے ادھار لئے اور وہی تمسک اب اسے پکڑادیا کہ گورنمنٹ پر ہمارے پانچ روپے اگلے وقتوں کے قرض آتے ہیں جن کو برسیں گزریں اب تک گورنمنٹ نے ادا نہ کئے ہم نے اپنے اوپر کے گورنمنٹ پر اتار دئے تم اس سے وصول کر لینا، یہ حضرت کی اس ٹٹول کا حاصل ہے جسے ہر عاقل جانتا ہے کہ محض سفاہت و باطل ہے اس کارد کافی رسالہ کے صفحہ ۱۲۶، ۱۲۷ و ۱۲۸ و ۱۲۹ میں گزرا پھر بھی اس کی بعض جہالتوں کا

اظہار خالی از فائدہ نہیں کہ اس ضمن میں ناظر کو بہت سے مسائل و فوائد پر اطلاع ہو گی ان شاء اللہ تعالیٰ۔

فاقول : وباللہ التوفیق (پس میں کہتا ہوں اور اللہ ہی کی طرف سے توفیق ہے ۔ت) اول: تو یہی سرے سے سخت حماقت ہے کہ جہاں بھر کے عاقدین جس عقد کا قصد کریں زبردستی اس سے تڑا کر وہ عقد ان کے سر چپٹہیو جو ان کے خواب و خیال میں نہیں، گنگوہ کے کردہ سے اٹھ کر تمام دنیا کے جس شہر قصبے میں چاہو جاؤ اور تمام جہان سے پوچھو کہ نوٹ کے لین دین میں تمہیں خرید و فروخت مقصود ہوتی ہے بیچا اور مول لیا کہتے ہو، بائع اپنی ملک سے نوٹ کا خارج ہو کر مشتری کی ملک میں داخل ہونا مشتری اس کے عوض روپے دے کر نوٹ اپنی ملک میں آنا سمجھتا ہے، یا یہ کہ نوٹ دینے والا اس سے قرض مانگتا ہے۔

---

1 فتاوی رشیدیہ باب الربا محمد سعید اینڈ سنز کراچی ص ۲۴۱ 2 فتاوی رشیدیہ باب الربا محمد سعید اینڈ سنز کراچی ص ۲۴۱

Instead of a debt bond, a note is given as a surety. It is stated in Al-Hidayah: "Consideration in contracts is given to the meanings" (In contracts, meanings are considered). However, this is a strange contract where words of buying and selling are used, and the intent is also buying and selling; this is the purpose, the meaning, the concept, and the benefit. And one might insist on making the whole world look foolish by saying that even if you don't say it or intend it, your meaning is something else. If such rectification were allowed, even the most invalid contracts in the world would become correct. For example, if Zaid sold a seer of silver to Amr for one rupee, even though they said "bought and sold" and that was their intent, let's suppose they say or understand it wasn't a sale, but rather Zaid gifted a rupee to Amr and Amr gifted a seer of silver to him in return. What would be the harm in that? Therefore, interest (usury) would become lawful and pure. "And there is no power nor might except with Allah, the High, the Great." Giving more in return for a gift is not forbidden but is a Sunnah. Someone presented a she-camel as a gift to the court of the protector of the worlds, the Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him), and the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) gave six young camels in return.

Narrated by Ahmad, Tirmidhi, and Nasai with a sound chain from Abu Hurairah (may Allah be pleased with him), who said: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Indeed, so-and-so gifted me a she-camel, so I gave him six young camels in return for it."[2] (Al-Hadith)

Imam Ahmad, Tirmidhi, and Nasai narrated it with a sound chain from the master, Hazrat Abu Hurairah (may Allah be pleased with him), that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "A certain person sent me a she-camel as a gift, so I sent him six young camels as a gift in return for it." (Al-Hadith)

So, drag the contract of usury (riba) against the words and meanings of the contracting parties into a contract of gift (hibah) and make interest lawful! Such ruses and excuses might occur to those who eat crow meat and goat testicles, but those with knowledge, intellect, sight, and insight consider them purely ridiculous. It is in Al-Hidayah:

Rectification is only necessary in the place where the contract was established.[3]	**It is necessary to make the contract valid in the same place where the contracting parties settled the contract. (T)**

[1] Al-Hidayah, Book of Sales, Chapter of Salam, Yusfi Press Lucknow, 3/93. [2] Jami' al-Tirmidhi, Chapters on Merits, Chapter on the Virtue of Non-Arabs, Amin Company Delhi, 2/233; Musnad Ahmad bin Hanbal, narrated from Abu Hurairah (may Allah be pleased with him), Al-Maktab al-Islami Beirut, 2/292. [3] Al-Hidayah, Book of Sales, Chapter of Salam, Yusfi Press Lucknow, 3/93.

ऋण के प्रमाण के रूप में बंधपत्र (bond) के बजाय एक नोट दिया जाता है। अल-हिदाया में है: "अनुबंधों में अर्थों का महत्व है" (अनुबंधों में अर्थों पर विचार किया जाता है)। हालांकि, यह एक अजीब अनुबंध है जहाँ खरीदने और बेचने के शब्द उपयोग किए जाते हैं, और इरादा भी खरीदने और बेचने का ही है; यही उद्देश्य है, यही अर्थ है, यही अवधारणा है, और यही लाभ है। और कोई व्यक्ति पूरी दुनिया को मूर्ख बनाने के लिए यह कह सकता है कि भले ही आप इसे न कहें या इसका इरादा न रखें, आपका अर्थ कुछ और है। यदि इस तरह के सुधार की अनुमति दी जाती है, तो दुनिया में सबसे अमान्य अनुबंध भी सही हो जाएंगे। उदाहरण के लिए, यदि ज़ैद ने अम्र को एक रुपये में एक सेर चाँदी बेची, भले ही उन्होंने "खरीदा और बेचा" कहा और उनका इरादा भी यही था, लेकिन मान लीजिए कि वे कुछ और कहते हैं या समझते हैं कि यह बिक्री नहीं थी, बल्कि ज़ैद ने अम्र को एक रुपया उपहार में दिया और बदले में अम्र ने उसे एक सेर चाँदी उपहार में दे दी। इसमें क्या हर्ज होगा? इसलिए, ब्याज हलाल और पवित्र हो जाएगा। "और अल्लाह के सिवा कोई शक्ति या सामर्थ्य नहीं है, जो सर्वोच्च और महान है।" उपहार के बदले अधिक देना वर्जित नहीं है बल्कि सुन्नत है। किसी ने संसार के रक्षक, संसार के स्वामी (उन पर अल्लाह की शांति और कृपा हो) के दरबार में एक ऊंटनी उपहार के रूप में भेंट की, और पवित्र पैगंबर (उन पर अल्लाह की शांति और कृपा हो) ने इसके बदले में छह जवान ऊंट प्रदान किए।

अहमद, तिर्मिज़ी और नसाई ने अबू हुरैरा (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) से एक सही श्रृंखला के साथ वर्णन किया है, जिन्होंने कहा: अल्लाह के रसूल (उन पर अल्लाह की शांति और कृपा हो) ने कहा: "वास्तव में, फलां व्यक्ति ने मुझे एक ऊंटनी भेंट की, इसलिए मैंने उसे इसके बदले छह जवान ऊंट दिए।"[2] (अल-हदीस)

इसे इमाम अहमद, तिर्मिज़ी और नसाई ने स्वामी हज़रत अबू हुरैरा (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) से सही श्रृंखला के साथ वर्णित किया है कि अल्लाह के रसूल (उन पर अल्लाह की शांति और कृपा हो) ने फरमाया: "एक व्यक्ति ने मुझे उपहार के रूप में एक ऊंटनी भेजी, तो मैंने उसे इसके बदले उपहार के रूप में छह जवान ऊंटनियाँ भेजीं।" (अल-हदीस)

तो, अनुबंध करने वाले पक्षों के शब्दों और अर्थों के विपरीत ब्याज (रिबा) के अनुबंध को उपहार (हिबा) के अनुबंध में खींच लाएँ और ब्याज को हलाल कर लें! ऐसे बहाने और चालें उन लोगों के

दिमाग में आ सकती हैं जो कौवे का मांस और बकरे के अंडकोष खाते हैं, लेकिन ज्ञान, बुद्धि और दृष्टि वाले लोग उन्हें पूरी तरह से हास्यास्पद मानते हैं। अल-हिदाया में है:

सुधार केवल उसी स्थान पर आवश्यक है जहाँ अनुबंध स्थापित किया गया था। [3]	**अनुबंध को उसी स्थान पर वैध बनाना आवश्यक है जहाँ अनुबंध करने वाले पक्षों ने अनुबंध तय किया था। (T)**

---

1. अल-हिदाया, किताब अल-बुयू, बाब अस-सलाम, युसफी प्रेस लखनऊ, 3/93.
2. जामी अत-तिर्मिज़ी, सद्गुणों के अध्याय, गैर-अरबों के गुण पर अध्याय, अमीन कंपनी दिल्ली, 2/233; मुसनद अहमद बिन हंबल, अबू हुरैरा (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) से वर्णित, अल-मकतब अल-इस्लामी बेरूत, 2/292.
3. अल-हिदाया, किताब अल-बुयू, बाब अस-सलाम, युसफी प्रेस लखनऊ, 3/93.

اور قرض کی سند میں نوٹ بجائے تمسک دیتا ہے ہدایہ میں ہے: العبرۃ فی العقود للمعانی1 (عقود میں معانی کا اعتبار ہے، مگر یہ عجب عقد ہے کہ لفظ بھی بیچنے خریدنے کے، قصد بھی بیچنے خریدنے کا یہی مقصود یہی مراد، یہی مفہوم یہی مفاد، اور خواہ مخواہ ہی جہان بھر کو پاگل بنا کر کہہ دیجئے کہ اگرچہ نہ تم کہتے ہو نہ قصد رکھتے ہو مگر تمہاری مراد ہے کچھ اور، اگر ایسی تصحیح ہو تو دنیا میں فاسد سے فاسد عقد ٹھیک ہو جائے گا مثلاً زید نے عمرو کے ہاتھ ایک روپیہ میں سیر بھر چاندی کو بیچ کیا تو اگرچہ انہوں نے کہا یہی کہ بیچا خریدا اور ان کا قصد بھی یہی تھا مگر یوں ٹھہرائے کہ وہ کچھ کہیں سمجھیں مگر یہ بیع نہ تھی بلکہ زید نے ایک روپیہ عمرو کو ہبہ کیا عمرو نے اس کی جزا میں سیر بھر چاندی اس کو ہبہ کر دی اس میں کیا حرج ہو الہذا سود حلال طیب ہے ولا حول ولا قوۃ الا باللہ العلی العظیم۔ ہدیہ میں زیادہ عوض دینا منع نہیں بلکہ سنت ہے کسی صاحب نے ایک اونٹنی نذر بارگاہ عالم پناہ حضور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی، حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے اس کے عوض چھ ناتے جوان عطا فرمائے،

رواہ احمد والترمذی والنسائی بسند صحیح عن ابی ہریرۃ رضی اللہ تعالی عنہ قال قال رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم ان فلاناً اھدی الی ناقۃ فعوضتہ منھا ست بکرات2، الحدیث۔

اس کو امام احمد، ترمذی اور نسائی نے سند صحیح کے ساتھ سیدنا حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے ارشاد فرمایا: فلاں شخص نے مجھے ایک اونٹنی ہدیہ بھیجی تو میں نے اس کے بدلے اس کو چھ جوان اونٹنیاں ہدیہ بھیجی ہیں، الحدیث (ت)

تو عقد ربا کو عاقدین کے لفظ و معنی سب کے خلاف عقد ہبہ میں کھینچ لائے اور سود حلال کر لیجئے ایسے حیلے حوالے کوے کا گوشت اور بکرے کے کپورے کھا کر سوجھتے ہوں گے مگر علم و عقل و بصر و بصیرت والے ان کو محض مضحکہ سمجھتے ہیں۔ ہدیہ میں ہے:

التصحیح انما یجب فی محل وجب العقد فیہ۔3 **عقد کو صحیح بنانا اسی محل میں واجب ہے جس میں عاقدین نے عقد ٹھہرایا۔ (ت)**

---

1 الہدیۃ کتاب البیوع باب السلم مطبع یوسفی لکھنؤ ۳/ ۹۳ 2 جامع الترمذی ابواب المناقب باب فی فضل العجم امین کمپنی دہلی ۲/ ۲۳۳، مسند احمد بن حنبل مروی از ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ المکتب الاسلامی بیروت ۲/ ۲۹۲ 3 الہدیۃ کتاب البیوع باب السلم مطبع یوسفی لکھنؤ ۳/ ۹۳

Fatawa Ridawiyya Volume 17

It is stated in the commentary of 'Fath': Validating a contract only occurs in the place where the contracting parties stipulated the sale, not in any other. (Arabic) | Making the contract valid only applies to the specific subject matter where the contracting parties (seller and buyer) established the sale, not to anything else. (T) (Urdu translation)

It is mentioned in 'Hidayah': Alteration is not permissible even if it leads to validating the transaction. (Arabic) | Making an alteration is not permissible even if it results in the validation of the transaction. (T) (Urdu translation)

It is stated in the commentary of 'Fath': Altering their transaction is not permissible even if it results in validating the transaction, based on consensus (until the commentator said) so these are all consensus-based rulings indicating that altering the transaction is not permissible even if it leads to its validation. (Arabic) | Altering the transaction of the contracting parties is not permissible even if it results in the validation of the transaction; the evidence for this is consensus (until the commentator said), so these are consensus-based rulings which all indicate that making changes in a transaction is not permissible even if the change becomes a means to validate the transaction. (T) (Urdu translation)

In 'Hidayah', regarding this: "In it is an alteration of its description, not its essence." (There is a change in the description of the contract, not the essence of the contract. T) In 'Inayah', it is stated in its commentary: The response regarding the alteration of his transaction is to say: in it is an alteration of the description of the transaction or its essence. The first is accepted, but we do not accept that it prevents permissibility, and the second is denied. (Arabic) | The answer to the change in his transaction is to say that there is either a change in the description of the transaction or the original contract. The first is accepted, but we do not agree that it prevents permissibility, and the second is prohibited. (T) (Urdu translation)

1. Fath al-Qadir, Kitab al-Buyu', Bab al-Salam, Maktabah Nuriyyah Ridawiyyah, Sukkur, 6/206
2. Al-Hidayah, Kitab al-Sarf, Matba' Yusufi, Lucknow, 3/108
3. Fath al-Qadir, Kitab al-Sarf, Maktabah Nuriyyah Ridawiyyah, Sukkur, 6/268
4. Al-Hidayah, Kitab al-Sarf, Matba' Yusufi, Lucknow, 3/109

5. Al-Inayah 'ala al-Hidayah on the margin of Fath al-Qadir, Kitab al-Sarf, Maktabah Nuriyyah Ridawiyyah, Sukkur, 6/270

फतावा रज़विया खंड 17

'फ़तह' की व्याख्या में कहा गया है: अनुबंध को वैध बनाना केवल उसी स्थान पर होता है जहाँ अनुबंधित पक्षों ने बिक्री तय की थी, किसी अन्य स्थान पर नहीं। (अरबी) | अनुबंध को सही बनाना केवल उसी स्थान पर है जहाँ अनुबंधित पक्षों (विक्रेता और खरीदार) ने बिक्री तय की, न कि किसी अन्य स्थान पर। (त) (उर्दू अनुवाद)

'हिदाया' में है: परिवर्तन करना जायज़ नहीं है भले ही इसमें लेन-देन को वैध बनाना साबित होता हो। (अरबी) | बदलाव करना जायज़ नहीं है भले ही इससे लेन-देन का सही होना साबित होता हो। (त) (उर्दू अनुवाद)

'फ़तह' की व्याख्या में कहा गया है: अनुबंधित पक्षों के लेन-देन में परिवर्तन करना जायज़ नहीं है भले ही इसमें लेन-देन को वैध बनाना शामिल हो, इज़मा (सहमति) के प्रमाण के आधार पर (यहाँ तक कि व्याख्याकार ने कहा) तो ये सभी इजमाई नियम हैं जो इस बात पर संकेत करते हैं कि लेन-देन में बदलाव करना जायज़ नहीं है भले ही बदलाव लेन-देन को सही करने का माध्यम बने। (अरबी) | अनुबंधित पक्षों के लेन-देन में परिवर्तन करना जायज़ नहीं है भले ही इसमें लेन-देन का सही होना साबित होता हो, इस पर इज़मा (सर्वसम्मति) प्रमाण है (यहाँ तक कि व्याख्याकार ने कहा) तो ये इजमाई नियम हैं जो सभी इस बात पर संकेत करते हैं कि लेन-देन में बदलाव करना जायज़ नहीं है भले ही बदलाव लेन-देन को सही करने का साधन बने। (त) (उर्दू अनुवाद)

'हिदाया' में इसके बारे में है: "इसमें उसके गुण का परिवर्तन है न कि उसके मूल का।" (इसमें अनुबंध के गुण का परिवर्तन है न कि मूल अनुबंध का। त) 'इनाया' की इसकी व्याख्या में कहा गया है: उसके लेन-देन के परिवर्तन के बारे में उत्तर यह है कि कहा जाए: इसमें लेन-देन के गुण का परिवर्तन है या उसके मूल का। पहला स्वीकार्य है लेकिन हम यह नहीं मानते कि यह जायज़ होने से रोकता है और दूसरा वर्जित है। (अरबी) | उसके लेन-देन में परिवर्तन का उत्तर यह है कि ऐसा कहा जाए: इसमें लेन-देन के गुण का परिवर्तन है या मूल अनुबंध का। पहला स्वीकार्य है लेकिन हम यह नहीं मानते कि यह जायज़ होने से रोकता है और दूसरा निषिद्ध है। (त) (उर्दू अनुवाद)

1. फ़तह अल-क़दीर, किताब अल-बुयू, बाब अस-सलाम, मकतबा नूरिया रज़विया, सक्खर, 6/206
2. अल-हिदाया, किताब अस-सर्फ़, मतबा यूसुफी, लखनऊ, 3/108

3. फ़तह अल-क़दीर, किताब अस-सर्फ़, मकतबा नूरिया रज़विया, सक्खर, 6/268
4. अल-हिदाया, किताब अस-सर्फ़, मतबा यूसुफी, लखनऊ, 3/109
5. अल-इनाया अला अल-हिदाया, फ़तह अल-क़दीर के हाशिये पर, किताब अस-सर्फ़, मकतबा नूरिया रज़विया, सक्खर, 6/270

فتاوٰی رضویہ جلد بفتدہم (۱۷)

فتح میں اس کی شرح میں فرمایا: تصحیح العقد انما یکون في المحل الذی اوجب المتعاقدان البیع فیه لا فی غیرہ 1۔ | عقد کو صحیح بنانا صرف اسی محل میں متعاقدین (بائع ومشتری) نے بیع ٹھہرائی نہ کہ محل کے غیر میں۔ (ت)

ہدایہ میں ہے: التغییر لا یجوز وان کان فیه تصحیح التصرف 2۔ | تغیر کرنا جائز نہیں اگرچہ اس میں تصرف کو صحیح کرنا ثابت ہوتا ہو۔ (ت)

فتح میں شرح میں فرمایا: تغییر تصرفهما لا یجوز وان کان فیه تصحیح التصرف بدلیل الاجماع (الی ان قال) فهذاہ احکام اجماعیة کلها دالة علی ان تغییر التصرف لا یجوز وان کان یتوصل به الی تصحیحه 3۔ | عاقدین کے تصرف میں تغیر کرنا جائز نہیں اگرچہ اس میں تصرف کا صحیح کرنا ثابت ہوتا ہو اس پر دلیل اجماع ہے (یہاں تک کہ شارح نے کہا) تو یہ اجماعی احکام ہیں جو تمام اس بات پر دلالت کرتے ہیں کہ تصرف میں تبدیلی کرنا جائز نہیں اگرچہ تبدیلی تصرف کے صحیح کرنے کا ذریعہ بنتی ہو۔ (ت)

ہدایہ میں اسی کے متعلق ہے : فیہ تغییر وصفہ لا اصلہ 4 (اس میں وصف عقد کی تبدیلی ہے نہ کہ اصل عقد کی۔ ت) عنایہ میں اس کی شرح میں فرمایا: والجواب عن تغییر تصرفه ان یقال فیه تغییر وصف التصرف او اصله والاول مسلم ولا نسلم انه مانع عن الجواز والثاني ممنوع 5۔ | اس کے تصرف میں تبدیلی کا جواب یہ ہے کہ یوں کہا جائے اس میں وصف تصرف کی تبدیلی ہے یا اصل عقد کی اول مسلم ہے مگر ہم یہ نہیں مانتے کہ جواز سے مانع ہے اور ثانی ممنوع ہے۔ (ت)

1 فتح القدیر کتاب البیوع باب السلم مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶/ ۲۰۶ 2 الہدایہ کتاب الصرف مطبع یوسفی لکھنؤ ۳/ ۱۰۸ 3 فتح القدیر کتاب الصرف مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶/ ۲۶۸ 4 الہدایہ کتاب الصرف مطبع یوسفی لکھنؤ ۳/ ۱۰۹ 5 العنایۃ علی الھدایہ علی ھامش فتح القدیر کتاب الصرف مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶/ ۲۷۰

Fatawa Razawiyya Volume (17)

It is stated in Al-Hidayah: "If one buys a bracelet for ten [dirhams] and a cloth for ten, then sells them together as a Murabaha (cost-plus-profit sale), it is not permissible. Even if it were possible to attribute all the profit to the cloth, it is still not allowed because by doing so, the sale of the bracelet becomes Tawliyah (sale at cost price)."

One person bought a bracelet for ten dirhams and a cloth for ten dirhams, then sold both of them together as a Murabaha. This is not permissible because by diverting all the profit towards the cloth, the sale of the bracelet would become a Tawliyah sale. (T)

It is stated in Al-Fath: "As for the issue of Murabaha, the lack of diversion [of profit] is because it necessitates a change in the essence of the contract, as it becomes a Tawliyah regarding the bracelet."

But the issue in Murabaha regarding the lack of diversion is because it necessitates a change in the original contract, as the sale of the bracelet becomes a Tawliyah sale. (T)

From these clarifications of the Imams, it has become clear that if the contract being made by the parties is void and corrupt, and its correction lies in deeming it another contract, such correction is never permissible. There is a consensus (ijma') on the invalidity of such correction when it involves changing the original intent of the contracting parties. Declaring a sale as Tawliyah instead of Murabaha is such a change which is impermissible by consensus, even though it remains a sale. How could completely transforming the sale and handing it over be anything other than an act of one ignorant and contrary to consensus? It's like the 'opium sweet' (afyuni ki rewri) you described, which changes taste as soon as it falls. And there is no power or strength except with Allah.

Second: Every rational person knows that a bond (tamassuk) is from one specific person, e.g., Zaid, to another specific person, e.g., Amr, so that if Zaid denies Amr's debt, Amr can recover it through the bond. A bond is not meant for Amr to recover its value from whoever he wants, in whichever country he wants, from whichever person he wants. It's not that any person in the world - Amr, Bakr, Khalid, Walid - can bring it to Zaid and he pays them. Rather, Zaid and Amr, creditor and debtor, are bypassed; a third stranger gives it to a fourth unknown person and takes the money from him. No bond in the world is like this. And the state of a [currency] note is certainly such

that whoever wants, wherever they want, even if it is a foreign country or foreign state, as long as the currency is valid there, can take its value from whichever person they choose.

---

1. Al-Hidayah, Kitab al-Sarf, Matba' Yusufi, Lucknow, 3/9-108.
2. Fath al-Qadir, Kitab al-Sarf, Maktabah Nuriyyah Razawiyyah, Sukkur, 6/207.

फ़तावा रज़विया जिल्द (17)

हिदाया में है: "यदि किसी व्यक्ति ने दस दिरहम में एक कंगन खरीदा और दस दिरहम में एक कपड़ा, फिर उन दोनों को एक साथ मुराबाहा (लागत प्लस लाभ) के रूप में बेचा, तो यह जायज़ नहीं है, भले ही लाभ को कपड़े की ओर मोड़ना संभव हो, क्योंकि सारा लाभ कपड़े की ओर मोड़ने से कंगन की बिक्री तौ़लिया (लागत मूल्य पर बिक्री) बन जाएगी।"

किसी व्यक्ति ने एक कंगन दस दिरहम के बदले और एक कपड़ा दस दिरहम के बदले खरीदा, फिर उन दोनों को इकट्ठा बतौर मुराबाहा बेचा तो जायज़ नहीं क्योंकि तमाम नफ़ा (लाभ) को कपड़े की तरफ फेरने से कंगन में बैअ (बिक्री) तौ़लिया हो जाएगी। (त)

फ़तह में है: "रही बात मुराबाहा के मसले की, तो उसमें (लाभ का) मोड़ना न होना इसलिए है क्योंकि इसमें मूल अनुबंध (अक़्द) में परिवर्तन अनिवार्य आता है क्योंकि कंगन में बिक्री तौ़लिया हो जाती है।"

लेकिन मसला मुराबाहा में अदम-ए-सर्फ़(मोड़ना न होना) इसलिए है कि इसमें असल अक़्द में तब्दीली लाज़िम आती है क्योंकि कंगन में बैअ तौ़लिया हो जाती है। (त)

इमामों के इन स्पष्टीकरणों से रोशन हुआ कि अनुबंध करने वाले जो अनुबंध कर रहे हैं, वे अगरचे बातिल (अमान्य) व फा़सिद (दूषित) हों और दूसरा अनुबंध ठहराने में उसकी तसहीह (सुधार) होती हो, ऐसी तसहीह हरगिज़ जायज़ नहीं और इस तसहीह की अमान्यता पर इजमा (आम सहमति) क़ायम है जब इसमें असल अक़्द करने वालों का परिवर्तन होता हो। और तसहीह फरमाई कि बिक्री को मुराबाहा से तौ़लिया करार देना भी ऐसी ही तब्दीली है जो इजमा के खिलाफ जायज़ नहीं, हालांकि वह रही बिक्री की बिक्री ही। तो बिक्री की सिरे से काया पलट करके हवाला कर देना कैसे जाहिल मुखालिफ-ए-इजमा का काम होगा? आपके लिखे हुए 'अफीमी की रेवड़ी' जैसी हुई कि गिरते ही मज़ा बदल गया। व ला हौला व ला.कुव्वता इल्ला बिल्लाह।

दूसरा: हर अक्लमंद जानता है कि तमस्सुक (दस्तावेज़/प्रॉमिसरी नोट) एक मोईन (निश्चित) मसलन ज़ैद की तरफ से दूसरे मोईन मसलन अम्र के लिए होता है कि अगर ज़ैद अम्र के कर्ज़ से मुनकिर (इनकारी) हो तो अम्र बज़रिया-ए-तमस्सुक उससे वसूल कर सकें। तमस्सुक इसलिए नहीं होता कि अम्र जहाँ चाहे, जिस मुल्क में चाहे, जिस शख्स से चाहे उसके दाम वसूल कर ले। ज़ैद के पास अम्र, बक्र, खालिद, वलीद दुनिया भर का कोई शख्स इसे लेकर आए, वह उसे दाम दे दे। बल्कि ज़ैद व अम्र और दाइन व मदयून (लेनदार व देनदार) दोनों ताक पर रहें, तीसरा शख्स अजनबी, चौथे शख्स

बेगाने को देकर उससे दाम ले ले। दुनिया में कोई तमस्सुक भी ऐसा नहीं है। और नोट की हालत यकीनन यही है कि जो चाहे जहाँ चाहे, अगरचे गैर मुल्क गैर सल्तनत हो, जबकि यहाँ का सिक्का उस सल्तनत में चलता हो, जिस शख्स से चाहे इसके दाम ले लेगा।

---

1. अल-हिदाया, किताब अल-सर्फ़, मतबा यूसुफी, लखनऊ, 3/9-108.
2. फ़तह अल-क़दीर, किताब अल-सर्फ़, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 6/207.

ہدایہ میں ہے: اذا اشتری قلباً بعشرۃ و ثوباً بعشرۃ ثم باعھما مرابحۃ لا یجوز و ان امکن صرف الربح الی الثوب لانہ یصیر تولیۃ فی القلب بصرف الربح کلہ الی الثوب۔ کسی شخص نے ایک کنگن دس درہم کے بدلے ایک کپڑا دس درہم کے بدلے خریدا پھر ان دونوں کو اکھٹا بطور مرابحہ بیچا تو جائز نہیں کیونکہ تمام نفع کو کپڑے کی طرف پھیرنے سے کنگن میں بیع تولیہ ہو جائیگی۔ (ت)

فتح میں ہے: اما مسألۃ المرابحۃ فعدم الصرف لانہ یتغیر اصل العقد اذ یصیر تولیۃ فی القلب۔ لیکن مسئلہ مرابحہ میں عدم صرف اس لئے ہے کہ اس میں اصل عقد میں تبدیلی لازم آتی ہے کیونکہ کنگن میں بیع تولیہ ہو جاتی ہے (ت)

ان تصریحات ائمہ سے روشن ہوا کہ متعاقدین جو عقد کر رہے ہیں وہ اگرچہ باطل و فاسد ہوا اور دوسرا عقد ٹھہرانے میں اسکی تصحیح ہوتی ہو ہر گز ایسی تصحیح جائز نہیں اور اس تصحیح کے بطلان پر اجماع قائم ہے جب کہ اس میں اصل عاقدین کی تغییر ہوتی ہے اور تصحیح فرمائی کہ بیع کو مرابحہ سے تولیہ قرار دینا بھی ایسی ہی تغییر ہے کہ بالا جماع جائز نہیں حالانکہ وہ رہی بیع کی بیع ہی، تو بیع کی سرے سے کایا پلٹ کرکے حوالہ کر دینا کیسے جاہل مخالفِ اجماع کا کام ہو گا آپ کے لکھے ہوئے افیونی کی ریوڑی ہوئی کہ گرتے ہی مزہ بدل گیا ولا حول ولا قوۃ الا باللہ۔

دوم: ہر عاقل جانتا ہے کہ تمسک ایک معین مثلاً زید کی طرف سے دوسرے معین مثلاً عمرو کے لئے ہوتا ہے کہ اگر زید عمرو کے دین سے منکر ہو تو عمرو بذریعہ تمسک اس سے وصول کر سکتے تمسک اس لئے نہیں ہوتا کہ عمرو جہاں چاہے جس ملک میں چاہے جس شخص سے چاہے اسکے دام وصول کرلے زید کے پاس عمرو، بکر، خالد، ولید دنیا بھر کا کوئی شخص اسے لے کر

آئے یہ اسے دام پر کہادے بلکہ زید و عمرو و دائن و مدیون دونوں بالائے طاق رہیں، تیسرا شخص اجنبی، چوتھے شخص زے بیگانے کو دے کر اس سے دام لے لے دنیا میں کوئی تمسک بھی ایسا نہ ہے اور نوٹ کی حالت یقیناً یہی ہے کہ جو چاہے جہاں چاہے اگرچہ غیر ملک غیر سلطنت ہو جبکہ یہاں کا سکہ اس سلطنت میں چلتا ہو جس شخص سے چاہے اس کے دام لے لے گا

---

1 الھدایہ کتاب الصرف مطبع یوسفی لکھنو ۳/ ۹- ۱۰۸ 2 فتح القدیر کتاب الصرف مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶/ ۲۰۷

This state is certainly of wealth (mal) and not of a bond (tamassuk). Therefore, to call it a bond is such blindness; rather, it is certainly wealth, it is currency, but "the blind do not see" (but the blind do not perceive - Trans).

Third: Every rational person knows that the existence or non-existence of a debt is not dependent on the existence or non-existence of a bond. Instead, when a debt is proven, the debtor must pay it, whether the bond remains or not. Now suppose Zaid gave a hundred thousand rupees and took a hundred notes of one thousand rupees each from the treasury, and had his name, address, and the numbers of the notes recorded. Now it is necessary that whenever he wants, he can collect his hundred thousand rupees from the treasury, even if the notes were burnt, shredded, stolen, or he gave them to someone else, because the treasury, according to you, is his debtor and the debt is not voided by the non-existence of the bond. And when the numbers of the notes are recorded, the government cannot have the fear that maybe the notes were neither burnt nor torn but are with him or he gave them to someone else, so when he or someone else brings those notes, we will have to pay again. Why would it have to be paid again? If he brings them, it will be said that we have paid you the money we borrowed from you, how do you demand it again? And if someone else brings them, it will be said that we have already given the money for this bond to the original creditor, so there is no claim against us. But this will never happen. Try asking the government for money after burning or tearing the notes yourself or giving them to someone else; if they consider you sane, they might give you kheer on Sunday, otherwise, they will make you taste the air of the "big house" (prison). At that time, your eyes will open to what kind of bond the note was. This state is clearly that of wealth, that if a person buys an item from someone and then destroys it or gives it to someone else and asks for his money back from the seller, he is considered at least insane.

Fourth: From here, your doubt is cleared that if it is lost or damaged, it can be replaced; this is not absolutely correct at all. And if it were a bond, it would have been mandatory to always replace it in every case, because the damage, loss, destruction, or deliberate disposal of a bond does not affect the debt. And even if in some cases there is a promise to replace it, it does not necessarily make it a bond. The governments have invented this one-sided elixir, to which thousands of alchemies bear no comparison, that they turn a piece of paper worth a farthing into a thousand or ten thousand. For such a difficult and significant matter to be accepted by the

general public, some concessions were necessary. The country would have feared that paper is a very unstable thing—it might burn in fire, dissolve in water, tear from use, or be lost. What then? Our wealth would be wasted like this. To satisfy them, some promises were needed, otherwise, the country would never have touched the notes. This is such a great alchemy; even soda (manufacturers), for their small profit, provide assurance with such promises, giving guarantees for watches for years.

फ़तावा रिज़विया, खंड 17

यह स्थिति निश्चित रूप से माल (धन) की है न कि तमसुक (ऋणपत्र) की, तो इसे तमसुक कहना कैसा अंधापन है बल्कि वह निश्चित रूप से माल है, सिक्का है, "परन्तु अंधे नहीं देखते" (लेकिन अंधे नहीं देखते - अनुवाद)।

तीसरा: हर बुद्धिमान व्यक्ति जानता है कि ऋण का अस्तित्व या अनस्तित्व तमसुक के अस्तित्व या अनस्तित्व पर निर्भर नहीं होता। बल्कि जब ऋण सिद्ध हो जाए, तो ऋणी पर उसे चुकाना अनिवार्य हो जाता है, चाहे तमसुक रहे या न रहे। अब मान लीजिए कि ज़ैद ने एक लाख रुपये देकर खजाने से एक-एक हजार रुपये के सौ नोट लिए और अपना नाम, पता और नोटों के नंबर सब दर्ज करा दिए। तो अब यह अनिवार्य है कि वह जब चाहे खजाने से अपने आने वाले एक लाख रुपये वसूल कर ले, भले ही नोट उसके पास जल गए हों या टुकड़े-टुकड़े हो गए हों या चोरी हो गए हों या उसने किसी को दे दिए हों, क्योंकि खजाना आपके अनुसार उसका ऋणी है और तमसुक न रहने से ऋण समाप्त नहीं होता। और जब नोटों के नंबर लिखे हुए हैं, तो सरकार को यह डर नहीं हो सकता कि शायद नोट न जले हों न फटे हों बल्कि उसके पास मौजूद हों या उसने किसी को दे दिए हों, तो जब वह या दूसरा व्यक्ति वे नोट लेकर आए, तो हमें दोबारा देना पड़ेगा। दोबारा क्यों देना होगा? यदि वह लाया तो कह दिया जाएगा कि हमने जो रुपया तुझसे उधार लिया था, तुझे चुका दिया, अब दोबारा कैसे माँगता है? और यदि दूसरा लाया तो कह दिया जाएगा कि इस तमसुक का रुपया हम मूल लेनदार को दे चुके हैं, अब हम पर कोई दावा नहीं। मगर ऐसा कभी नहीं होगा। नोट खुद जलाकर या फाड़कर या किसी को देकर सरकार से रुपया माँगिए तो; अगर उसने आपको पागल समझा तो इतवार को खीर देगी, वरना 'बड़े घर' (जेल) की हवा खिलाएगी। उस समय आपकी आँखें खुलेंगी कि नोट कैसा तमसुक था। यह स्थिति स्पष्ट रूप से माल की है, कि जो व्यक्ति किसी से कोई माल खरीदकर फिर उसे नष्ट कर दे या किसी को दे दे और अपने रुपये विक्रेता से वापस माँगे, तो वह कम से कम पागल ठहरता है।

चौथा: यहीं से आपके संदेह का निवारण हो गया कि यदि खो जाए या नुकसान हो जाए तो बदला जा सकता है; यह बिल्कुल भी सही नहीं है। और यदि तमसुक होता तो अनिवार्य था कि हमेशा हर हाल में बदल दिया जाता, क्योंकि तमसुक के नुकसान या अभाव या स्वयं नष्ट हो जाने या जानबूझकर नष्ट कर देने से ऋण पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। और यदि कुछ स्थितियों में बदल देने का वादा हो भी, तो उससे तमसुक होना आवश्यक नहीं होता। सरकारों ने यह एकतरफा 'अक्सीर' (अमृत/नुस्खा) ईजाद

किया है जिससे हजारों कीमिया (कीमियागरी) का कोई मुकाबला नहीं, कि कौड़ी के कागज को हजार का कर दें, दस हजार का कर दें। ऐसी कठिन और महत्वपूर्ण बात आम जनता में स्वीकार्य होने के लिए कुछ रियायतों की आवश्यकता थी। देश को डर होता कि कागज बहुत ही अस्थिर चीज है—आग में जल जाए, पानी में गल जाए, इस्तेमाल से फट जाए, खो जाए, क्या हो क्या न हो तो हमारा माल यूँ ही बर्बाद हो जाएगा। उन्हें संतुष्ट करने के लिए कुछ वादों की आवश्यकता थी, वरना देश कभी नोटों को हाथ न लगाता। यह तो इतनी बड़ी कीमिया है; सोडा (निर्माता) भी अपने थोड़े से लाभ के लिए इस प्रकार के वादे से आश्वासन दिलाते हैं, वर्षों के लिए घड़ियों की गारंटी देते हैं।

पृष्ठ 511 का 715

یہ حالت یقیناً مال کی ہے نہ کہ تمسک کی، تو اسے تمسک کہنا کیسا اندھا پن ہے بلکہ وہ بالیقین مال ہے سکہ ہے ولکن العمیان لایبصرون (لیکن اندھے نہیں دیکھتے۔ت)

سوم: ہر عاقل جانتا ہے کہ تمسک کے وجود وعدم پر دین کا وجود وعدم موقوف نہیں ہوتا بلکہ جب دین ثابت مدیون پر دینا لازم آئے گا تمسک رہے یا نہ رہے۔ اب فرض کیجئے کہ زید نے لاکھ روپے دے کر خزانے سے ہزار ہزار روپے کے سو نوٹ لئے اور اپنا نام پتہ اور نوٹ کے نمبر سب درج کرادئے۔ تو اب لازم ہے کہ وہ جب چاہے خزانے سے اپنے آتے ہوئے لاکھ روپے وصول کرلے اگرچہ نوٹ اس کے پاس جل گئے یا ریزہ ریزہ ہو گئے یا چوری ہو گئے یا اس نے کسی کو دے دئے کہ خزانہ آپ کے نزدیک اس کا مدیون ہے اور تمسک نہ رہنے سے دین ساقط نہیں ہوتا اور جب نوٹوں کے نمبر لکھے ہوئے ہیں تو گورنمنٹ کو یہ اندیشہ نہیں ہوسکتا کہ مبادا نوٹ نہ جلے نہ پھٹے بلکہ اس کے پاس موجود ہوں یا اس نے کسی کو دے دئے ہوں تو جب وہ نوٹ یہ یا دوسرا لے کر آئے ہمیں دوبارہ دینا پڑے گا، دوبارہ کیونکہ دینا ہوگا، یہ لایا تو کہہ دیا جائے گا کہ ہم نے جو روپیہ تجھ سے قرض لیا تھا تجھے ادا کردیا اب مکرر کیسے طلب کرتا ہے، اور دوسرا لایا تو کہہ دیا جائے گا کہ اس تمسک کا روپیہ ہم اصل قرضخواہ کو دے چکے ہیں اب ہم پر مطالبہ نہیں مگر ایسا ہر گز نہ ہوگا نوٹ خود جلا کر یا پھاڑ کر کسی کو دے کر گورنمنٹ سے روپیہ مانگئے تو، اگر اس نے پاگل جانا تو اتوار کو کھیر دے گی ورنہ بڑے گھر کی ہوا کھلائیگی، اس وقت آپ کی آنکھیں کھلیں گی کہ نوٹ کیسا تمسک تھا یہ حالت صراحتہً مال کی ہے کہ جو شخص کسی سے ایک مال خرید کر پھر اسے تلف کردے یا کسی کو دے دے اور اپنے روپے بائع سے واپس مانگے تو کم از کم پاگل ٹھہرتا ہے۔

چہارم: یہیں سے آپ کے شبہہ کا کشف ہوگیا کہ گم جائے یا نقصان آجائے تو بدلو اسکتے ہیں یہ مطلقاً ہر گز صحیح نہیں اور اگر تمسک ہوتا تو واجب تھا کہ ہمیشہ ہر حال میں بدل دیا جاتا کہ تمسک کے نقصان یا فقدان یا خود ہلاک یا تکلف کر دینے سے دین پر کچھ اثر نہیں پڑتا اور بعض صورتوں میں اگر بدل دینے کا وعدہ ہو بھی تو اس سے تمسک ہونا لازم نہیں آتا، سلطنتوں نے یہ ایک طرفہ اکسیر ایجاد کی کہ ہزاروں کیمیا کو اس سے کچھ نسبت نہیں چھدام کے کاغذ کو ہزار کا کر دیں دس ہزار کا کر دیں ایسی سخت مہم بات عام میں مقبول ہونے کے لئے بعض رعایتوں کی ضرورت تھی ملک کو اندیشہ ہوتا کہ کاغذ بہت ناپائدار چیز ہے آگ میں جل جائے، پانی میں گل جائے، استعمال سے چاک ہو، گم جائے کیا ہو کیا ہو تو ہمارا مال یوں ہی برباد ہو اس کی تسکین کیلئے کچھ وعدوں کی حاجت ہوئی ورنہ ملک ہر گز نوٹ کو ہاتھ نہ لگاتا، یہ تو اتنی بڑی کیمیا ہے سوڈا اگر اپنے تھوڑے سے نفع کے لئے اس قسم کے وعدہ سے اطمینان دلاتے ہیں برسوں کے لئے گھڑیوں کی گارنٹیاں

...they say that if it gets damaged or becomes useless during this period, they will fix it. One should say here, "Is there any such bargain in the world?" You, staying in a small corner, take an unjust contract for the whole world. Yes, say that this claim of the traders is against the Shariah. Furthermore, who has made it mandatory for all statements of the Government to be according to Shariah? Fifth: The Government's position regarding giving and taking interest is well-known; it considers it a definite necessity for every debt and loan. So much so that anyone who deposits money in a savings bank, or those employees whose part of salary is deducted and accumulated and given to them at the end of their service, whether they ask for it or not, the government calculates the interest for the entire period and gives it to them. In fact, even if one says "I will not take interest," the monthly interest continues to be recorded in their name. If taking a note from the treasury meant depositing money and taking a security for it, it would have been mandatory for the Government to keep writing interest for it until the person returned the note and took back the money. Now, you would have this excuse: "Oh, should we ask for interest?" Even though denying Allah (Almighty), insulting the Prophet (Peace and blessings of Allah be upon him), and considering Iblis a partner in a specific attribute of God is millions of degrees worse than interest, rather, worse than eating pork. Well, don't go yourself; for an experiment, send some merchant (Baniya) to see if he buys a thousand-rupee note from the treasury and then, after a year, goes to the government to ask for interest on his thousand. See, he will soon know the reality of things, and whatever trouble he faces will actually fall upon the person who tricked him by saying that buying a note is not a purchase, but giving a loan and taking a promissory note. Sixth: Zaid continues to borrow a hundred, two hundred, and a thousand from Amr from time to time. Throughout this period, he continues to give written promissory notes to Amr. Whenever a note's term is about to expire, he replaces it, until Amr has accumulated ten thousand against him. Now, he gave ten notes of one thousand each to Amr. From that moment, his account will be closed. Amr will return all the notes to him and give him a clearance receipt. Zaid, Amr himself, and the whole world will understand that every single penny of the debt has been recovered. However, Mr. Gangohi says that even if ten thousand worth of notes were given, so what? Not a single penny has been recovered yet. What can one say about such a unique opinion in the whole world! Seventh: Suppose the government borrowed twenty lakh rupees from a bank and gave a promissory note stating it would be repaid within ten years. After three years, it gave notes worth twenty lakhs to the bank. All the world and...

1 Fatawa Rashidiya, Kitab-uz-Zakat, Muhammad Saeed & Sons, Karachi, p. 356.

...कहते हैं कि इस अवधि में यदि वह बिगड़ जाए या बेकार हो जाए तो उसे सुधार देंगे। यहाँ भी यह कह देना चाहिए कि "क्या दुनिया में ऐसा कोई सौदा भी है?" आप एक कोने में रहकर पूरी दुनिया का अनुचित ठेका लें। हाँ, यह कहिए कि व्यापारियों का यह कहना शरीयत के खिलाफ है। फिर सरकार के सभी कथनों का शरीयत के अनुसार होना किसने अनिवार्य किया है? पंचम: ब्याज देने और लेने के मामले में सरकार की स्थिति ज्ञात है कि वह इसे हर ऋण और कर्ज का अनिवार्य हिस्सा मानती है। यहाँ तक कि जो व्यक्ति बचत बैंक में पैसा जमा करता है या वे कर्मचारी जिनका वेतन का कुछ हिस्सा कटकर जमा होता रहता है और सेवा समाप्त होने पर उन्हें दिया जाता है, वे मांगें या न मांगें, सरकार पूरी अवधि का ब्याज जोड़कर उन्हें देती है। बल्कि यदि कोई कहे कि "मैं ब्याज नहीं लूंगा", तब भी उसके नाम पर मासिक ब्याज दर्ज होता रहता है। यदि खजाने से नोट लेना पैसा जमा करके उसका दस्तावेज़ लेना होता, तो सरकार के लिए यह अनिवार्य होता कि वह उसके लिए ब्याज लिखती रहती जब तक कि वह नोट देकर पैसा वापस न ले लेता। अब आपके पास यह बहाना होगा कि "ओह, क्या हम और ब्याज मांगें?" यद्यपि अल्लाह (सर्वशक्तिमान) को झुठलाना, हुज़ूर सैय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का अपमान करना और इब्लीस को ईश्वर के विशेष गुण में भागीदार मानना ब्याज से करोड़ों गुना अधिक बुरा है, बल्कि सूअर खाने से भी बदतर है। खैर, आप खुद न जाएं परीक्षा के लिए किसी बनिए को भेजकर देखें कि वह खजाने से एक हजार रुपये का नोट खरीदे और फिर एक साल बाद वह बनिया अपने उस हजार का ब्याज सरकार से मांगने जाए। देखिए, उसे अभी आटे-दाल का भाव मालूम हो जाएगा, और जितनी परेशानियाँ उस पर पड़ेंगी, वास्तव में वह उस पर नहीं बल्कि उस व्यक्ति पर होंगी जिसने उसे यह झांसा दिया था कि नोट की खरीदारी खरीदारी नहीं बल्कि पैसा उधार देकर दस्तावेज़ लेना है। षष्ठम: ज़ैद समय-समय पर अम्र से सौ, दो सौ और एक हज़ार उधार लेता रहे। इस पूरी अवधि के दौरान वह दस्तावेज़ लिखकर अम्र को देता रहेगा, और जिस दस्तावेज़ की अवधि समाप्त होने वाली होगी उसे बदल देगा, यहाँ तक कि उसके पास अम्र के दस हज़ार जमा हो गए। अब उसने एक-एक हज़ार के दस नोट अम्र को दिए। उसी समय से उसका हिसाब बंद हो जाएगा। अम्र उसे सभी दस्तावेज़ वापस कर देगा और उसे बेबाकी (फराग-ए-ख़ती) लिख देगा। ज़ैद, खुद अम्र और पूरी दुनिया समझेगी कि कर्ज की पाई-पाई वसूल हो गई है। लेकिन गंगोही साहब फरमाते हैं कि दस हज़ार के नोट दिए तो क्या हुआ, अभी एक कौड़ी भी वसूल नहीं हुई। पूरी दुनिया से अलग इस निराली राय का क्या कहना! सप्तम: मान लीजिए सरकार ने किसी बैंक से बीस लाख रुपये उधार लिए और दस्तावेज़ लिख दिया कि दस वर्ष के भीतर

भुगतान किया जाएगा। तीन वर्ष बीतने पर उसने बीस लाख के नोट बैंक को दे दिए। पूरी दुनिया और...

---

1 फतावा रशीदिया, किताब-उज़-ज़कात, मुहम्मद सईद एंड संस, कराची, पृष्ठ 356।

کرتے ہیں کہ اس مدت میں بگڑے یا بیکار ہو تو بنادیں گے یہاں بھی کہہ دینا کہ "بھلا دنیا میں کوئی پیچ بھی ایسی ہے"۔ آپ ایک کو ردہ میں رہ کر دنیا بھر کا ناحق ٹھیکہ لیں ہاں یہ کہئے کہ تاجروں کا یہ کہنا خلاف شرع ہے پھر گورنمنٹ کے سب اقوال مطابق شرع ہونا کس نے لازم کیا۔

پنجم: سود دینے لینے میں گورنمنٹ کی حالت معلوم ہے کہ وہ اسے ہر قرض و دین کا لازم قطعی مانے ہوئے ہے یہاں تک کہ جو شخص سوتک بینک میں روپیہ جمع کرے یا وہ ملازم جن کی تنخواہ کا کچھ حصہ کٹ کر جمع ہوتا رہتا اور ختم ملازمت پر ان کو دیا جاتا ہے وہ مانگیں یا نہ مانگیں ساری مدت کا سود حساب لگا کر انہیں دیتی ہے بلکہ وہ کہے کہ میں سود نہ لوں گا جب بھی ماہوار سود اس کے نام سے درج ہوتا رہتا ہے، اگر خزانہ سے نوٹ لینا روپیہ داخل کر کے اس کا وثیقہ لینا ہوتا تو لازم تھا کہ گورنمنٹ اس کے لئے سود لکھتی رہتی جب تک وہ نوٹ دے کر روپیہ واپس لیتا۔ اب آپ کو تو یہ حیلہ ہوگا کہ ہائیں ہم اور سود مانگیں اگرچہ اللہ عزوجل کی تکذیب، حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی توہین، ابلیس کو خدا کی خاص صفت میں شریک ماننا کروڑوں درجہ سود بلکہ سور کھانے سے بدتر ہے، خیر آپ نہ جایئے امتحان کے لئے کسی بنے کو بھیج دیکھئے کہ ہزار روپے کا نوٹ خزانے سے خریدے پھر سال بھر بعد وہ بنیا اپنے اس ہزار کا سود گورنمنٹ سے مانگنے جائے دیکھئے تو ابھی اسے آٹے دال کا بھاؤ معلوم ہو جائے گا اور جتنی اس اس پر پڑیں گی حقیقتہً اس پر نہ وگی بلکہ اس پر ہوں گی جس نے اسے یہ چکمہ دیا تھا کہ نوٹ کی خریداری نہیں بلکہ روپیہ قرض دے کر تمسک لینا ہے۔ ششم: زید عمرو سے وقتاً فوقتاً سو ۱۰۰ اور دو سو ۲۰۰ اور ہزار ۱۰۰۰ قرض لیتا رہے اس تمام مدت وہ تمسکات لکھ کر عمرو کو دیتا رہے گا اور جس تمسک کی میعاد ختم ہونے آئے گی بدل دے گا یہاں تک کہ اس پر عمرو کے دس ہزار جمع ہو گئے اب اس نے ہزار ہزار کے دس نوٹ عمرو کو دئے اسی

وقت سے اس کا حساب بند ہو جائے گا عمرو سب تمسکات اسے پھیر دے گا اسے فارغ خطی لکھ دے گا زید اور خود عمرو اور سارا جہان سمجھے گا کہ قرضہ دام دام وصول ہو گیا، مگر گنگوہی صاحب فرماتے ہیں دس ہزار کے نوٹ دئے تو کیا ہوا وصول ابھی ایک کوڑی بھی نہ ہوئی، اس جہاں بھر سے نرالی مت کا کیا کہنا! ہفتم: فرض کیجئے گورنمنٹ نے کسی بینک سے بیس لاکھ روپے قرض لئے اور تمسک لکھ دیا کہ دس برس کے اندر ادا کیا جائے گا، تین برس گزرنے پر بیس لاکھ کے نوٹ بینک کو دے دیئے تمام جہاں اور

---

1 فتاوی رشیدیہ کتاب الزکوٰۃ محمد سعید اینڈ سنز کراچی ص ۳۵۶

Both the bank and the government will understand that the debt has been paid. However, ask Mr. Gangohi, if these notes were also merely a bond (tamsuk), then what was the point of this futile exercise? A bond was already written and present; what was the need for this new bond? Well, Zaid at least benefited by transferring his debt to the government; what benefit did the government get? Its debt remained where it was. And look at the bank's foolishness, it settled the account based on a mere bond and sat back. Apparently, you think that when your business is closed, everyone else's is closed too.

Eighth: Hawala (transfer of debt) means transferring one's debt to another person. So, if Zaid does not owe anything to Amr, but Bakr owes a debt to Zaid, and in this situation Zaid transfers Amr to Bakr, this will not be a Hawala in reality, but rather appointing Amr as an agent (Wakil) to collect his debt from Bakr. And if neither Amr has a debt against Zaid nor does Zaid have a debt against Bakr, and in this state Zaid transfers Amr to Bakr, then this is purely void and ineffective. Even if Bakr accepts this transfer, since now Zaid is neither transferring his own debt to another nor is the other collecting his own due from someone else; instead, without reason, he tells Amr to take so much money from Bakr's property. Bakr's acceptance of this is merely a promise that "I will give this much wealth to Amr," and there is no compulsion on a mere promise. Therefore, this statement has no effect. It is stated in Alamgiri:

(Arabic Text)	**(Urdu Translation)**
If a person refers a man to his debtor while the one to whom the transfer is made (al-mustahal lahu) has no debt against the transferor (al-muheel), then this is an agency (wakala) and not a transfer (hawala). Thus it is in Al-Khulasa.	When a person refers another to his debtor (to collect the debt from him), even though the person for whom the transfer was made has no debt against the transferor, this is agency (wakalat) and not a transfer (hawala). The same is in Khulasa. (T)

In the same (book) it is stated:

(Arabic Text)	**(Urdu Translation)**
If he refers a hundred 'man' of wheat onto someone, while the transferor has nothing against the	If someone refers a hundred 'man' (a unit of weight) of wheat onto another person, even though the one on whom the reference is

(Arabic Text)	(Urdu Translation)
one referred to (al-muhtal 'alayhi), nor does the one referred (al-muhtal lahu) have anything against the transferor, and the one referred to accepts it, there is nothing upon him. Thus it is.	made does not owe anything to the referrer, nor does the person for whom the reference is made have any debt against the referrer, and the person on whom the reference was made accepted it, even then [there is no legal obligation upon him].

[1] Fatawa Hindiyya, Book of Hawala, Miscellaneous Issues, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/305. Page 513 of 715

बैंक और सरकार दोनों ही यही समझेंगे कि कर्ज अदा हो गया, मगर गंगोही साहब से पूछिए कि अगर ये नोट भी केवल एक दस्तावेज़ (तमस्सुक) ही थे, तो इस व्यर्थ की कार्रवाई का हासिल क्या हुआ? दस्तावेज़ तो पहले से ही लिखा हुआ मौजूद था, इस नए दस्तावेज़ की क्या आवश्यकता हुई? भला ज़ैद को तो इतना लाभ हुआ भी कि नोट करके अपना कर्ज़ सरकार पर उतार दिया, सरकार को क्या लाभ हुआ? उसका कर्ज़ तो उसी पर रहा। और बैंक की मूर्खता तो देखिए, मात्र एक दस्तावेज़ पर प्रसन्न होकर हिसाब बंद कर बैठा। प्रत्यक्षतः आप यह समझते हैं कि जब आपका काम बंद हो गया, तो सबका बंद हो गया।

आठवाँ: हवाला अपने कर्ज़ को दूसरे पर उतारने को कहते हैं। तो अगर ज़ैद पर अम्र का कर्ज़ न हो, बल्कि ज़ैद का कर्ज़ बक्र पर हो, और इस स्थिति में ज़ैद अम्र को बक्र पर हवाला करे, तो यह वास्तव में हवाला नहीं होगा, बल्कि अम्र को बक्र से अपना कर्ज़ वसूल करने का वकील (एजेंट) बनाना होगा। और यदि न अम्र का कर्ज़ ज़ैद पर हो और न ही ज़ैद का कर्ज़ बक्र पर, और इस स्थिति में ज़ैद अम्र को बक्र पर हवाला करे, तो यह पूरी तरह से शून्य और निष्प्रभावी है। भले ही वह इस हवाले को स्वीकार कर ले, क्योंकि अब न तो ज़ैद अपना कर्ज़ दूसरे पर उतार रहा है और न ही दूसरा अपना बकाया किसी से वसूल कर रहा है, बल्कि बिना किसी कारण के वह अम्र से कहता है कि बक्र की संपत्ति से इतने रुपये ले ले। बक्र का इसे स्वीकार करना मात्र एक वादा हुआ कि "मैं अम्र को इतना धन दे दूँगा", और मात्र वादे पर कोई ज़बरदस्ती नहीं होती। इसलिए इस कथन का कोई प्रभाव नहीं है। आलमगीरी में है:

(अरबी पाठ)

जब कोई व्यक्ति किसी दूसरे को अपने ऋणी के हवाले कर दे, जबकि जिस व्यक्ति के लिए हवाला किया गया है उसका हवाला करने वाले पर कोई कर्ज़ न हो, तो यह 'वकालत' (एजेंसी) है न कि 'हवाला'। खुलासा में ऐसा ही है।

(उर्दू अनुवाद का हिंदी)

जब किसी व्यक्ति ने दूसरे को अपने ऋणी पर हवाला किया (कि उससे कर्ज़ वसूल करे), हालाँकि जिसके लिए हवाला किया गया है उसका हवाला करने वाले पर कोई कर्ज़ नहीं है, तो यह वकालत है हवाला नहीं। ऐसा ही खुलासा में है। (त)

इसी में है:

(अरबी पाठ)

यदि उसने किसी पर सौ 'मन' गेहूँ का हवाला किया, जबकि हवाला करने वाले का उस पर जिस पर हवाला किया गया है कुछ बकाया नहीं है, और न ही जिसके लिए हवाला किया गया है उसका हवाला करने वाले पर कुछ है, और जिसे हस्तांतरित किया गया है उसने इसे स्वीकार कर लिया, तो उस पर कुछ भी नहीं है। ऐसा ही है।

(उर्दू अनुवाद का हिंदी)

किसी व्यक्ति ने दूसरे पर सौ मन गेहूँ का हवाला किया, हालाँकि जिस पर हवाला किया गया उस पर हवाला करने वाले का कोई कर्ज़ नहीं है और न ही जिसके लिए हवाला किया गया उसका हवाला करने वाले पर कोई कर्ज़ है, और जिस पर हवाला किया गया उसने उसे स्वीकार कर लिया, तब भी [उस पर कोई कानूनी दायित्व नहीं है]।

[1] फ़तावा हिन्दिया, किताबुल हवाला, विभिन्न मसले, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, ३/३०५। पृष्ठ ५१३ / ७१५

بینک اور گورنمنٹ سب تو یہی سمجھیں گے کہ قرض ادا ہو گیا، مگر گنگوہی صاحب سے پوچھئے کہ اگر یہ نوٹ بھی تمسک ہی تھے تو اس فضول کاروائی کا محصل کیا ہوا تمسک تو پہلے سے لکھا ہوا موجود تھا اس جدید تمسک کی کیا حاجت ہوئی، بھلا زید کو تو اتنا فائدہ ہوا بھی تھا کہ نوٹ کر اپنا قرض گورنمنٹ پر اتار دیا گورنمنٹ کو کیا نفع ہوا اس کا قرض اسی پر تو رہا اور بینک کی بیوقوفی تو دیکھئے نرے تمسک پر پھول کر حساب بند کر بیٹھا، ظاہراً آپ یہ سمجھتے ہیں کہ اپنی بند تو سب کی بند۔

ہشتم: حوالہ اپنا قرض دوسرے پر اتارنے کو کہتے ہیں تو اگر زید پر عمرو کا قرض نہ آتا ہو بلکہ زید کا قرض بکر پر ہوا اور اس صورت میں زید عمرو کو بکر پر حوالہ کرے تو یہ حقیقۃً حوالہ نہ ہوگا بلکہ عمرو کو اپنا قرض بکر سے وصول کرنے کا وکیل کرنا، اور اگر نہ عمرو کا قرض زید پر آتا ہو نہ زید کا قرض بکر پر، اور اس حالت میں زید عمرو کو بکر پر حوالہ کرے تو یہ محض باطل و بے اثر ہے اگرچہ اس حوالہ کو قبول بھی کرلے کہ اب نہ زید اپنا قرض دوسرے پر اتارتا ہے نہ دوسرے پر اپنا آتا وصول کرتا ہے بلکہ بلاوجہ عمرو سے کہتا ہے کہ بکر کے مال سے اتنے روپے لے لے بکر کا قبول کرنا وہ نرا ایک وعدہ ہوا کہ میں اتنا مال عمرو کو بخش دوں گا اور محض وعدہ پر جبر نہیں، لہذا اس قول کا کچھ اثر نہیں، عالمگیری میں ہے :

| اذا احال رجلا علی غریمہ ولیس للمستحال لہ علی المحیل دین فھذہ وکالۃ ولیست بحوالۃ کذا فی الخلاصۃ ۱۔ | جب کسی شخص نے دوسرے کو اپنے مقروض پر حوالہ کیا (کہ اس سے قرض وصول کرے) حالانکہ جس کے لئے حوالہ کیا گیا اس کا حوالہ کرنے والے پر کوئی قرض نہیں تو یہ وکالت ہے حوالہ نہیں، یونہی خلاصہ میں ہے۔ (ت) |

اسی میں ہے :

| احال علیہ مائۃ من من حنطۃ ولم یکن للمحیل علی المحتال علیہ شیئ ولا للمحتال لہ علی المحیل فقبل المحتال علیہ ذلک لا شیئ علیہ کذا | کسی شخص نے دوسرے پر سو من گندم کا حوالہ کیا حالانکہ جس پر حوالہ کیا اس پر حوالہ کرنیوالے کا کوئی قرض نہیں اور نہ ہی جس کے لئے حوالہ کیا گیا اس کا حوالہ کرنے والے پر کوئی قرض ہے، اور جس پر حوالہ کیا گیا اس نے اس کو قبول کر لیا تب بھی [اس پر کچھ لازم نہیں] |

Fatawa-e-Razviya Volume 17

In Al-Quniya[1] - Nothing is obligatory upon him; it is mentioned as such in Quniya (T).

Now, suppose the bank took notes worth two million from the treasury at various times. Then the government needed to take a loan and asked the bank for a loan of two million. The bank gave the same notes. The whole world would believe that the bank has certainly given a loan. But alas! To say that giving notes now cannot be a 'Hawala' (transfer of debt) because the government did not have a debt upon the bank. At most, it would be an agency (Wakala), the essence of which is that the government asked for a loan from it, and it gave notes of two million, which were merely pieces of paper (bonds), and dismissed the matter as a futile promise (Baraat-e-Ashiqaan bar shaakh-e-aahu). Meaning, it appointed the government as its agent to collect from its own treasury, saying "we will not give anything." The irony is that even the government doesn't say "we want a loan from you," yet you say "take it from your own treasury." What kind of lending is this? Suppose Zaid owes money to Amr, and Zaid comes to take another loan from him. Upon this, Amr says, "Collect it from my previous debt that is owed by you." Did he give a loan or just deflect it? Rather, consider it as the debt being forgiven and the bonds returned, ending the matter. Let the government take the two million notes and not pay a single penny, getting off cheaply.

Ninth: Suppose the government gave two million as a reward to someone, then later asked them for a loan. They gave back the same notes. The world would think the government now owes them two million. But Gangohi Sahib would say not a single penny was loaned; the government takes the two million notes for free and gives nothing. This is because it's a situation where there was no debt on the transferor, and there was a prior debt of the transferee on the one to whom it was transferred. Thus, the transaction becomes void, and the government has nothing to pay. La Hawla Wala Quwwata Illa Billah (There is no power nor might except with Allah). In short, you have fabricated a situation that is neither in the government's dreams nor in the country's thoughts; you are just cooking up your own separate little theory.

Tenth: In Hawala, the debtor is called the 'Muheel' (transferor) and the creditor the 'Muhtal' (transferee), and the one to whom the debt is transferred for collection is called 'Muhtal alaihi' or 'Huweel'. Here, when Zaid sold thousand-rupee notes to Amr, according to your way, Zaid became the debtor and Muheel to Amr, and Amr became the creditor and Muhtal to Zaid, and the government became the Huweel. The

Shariah rule is that anyone can be a Huweel even if the Muheel owes them nothing; once they accept the transfer, they take the debt upon themselves, even if there was originally no demand against them. But when the Huweel is not a debtor to the Muheel, and accepting the Muheel's transfer, they pay the debt to the Muhtal...

[1] Fatawa Hindiyya, Book of Hawala (Transfer of Debt), miscellaneous issues, Noorani Kutub Khana Peshawar 3/305

अल-क़ुनिया[1] में - उस पर कुछ भी अनिवार्य नहीं है, क़ुनिया में ऐसा ही है (त)।

अब मान लीजिए कि बैंक ने विभिन्न समयों पर खजाने से बीस लाख के नोट लिए थे। फिर सरकार को ऋण लेने की आवश्यकता हुई और उसने बैंक से बीस लाख का ऋण मांगा। बैंक ने वही नोट दे दिए। पूरी दुनिया यही समझेगी कि बैंक ने निश्चित रूप से ऋण दिया है। लेकिन अफसोस! यह कहना कि अब नोट देना 'हवाला' (ऋण का हस्तांतरण) नहीं हो सकता क्योंकि सरकार का बैंक पर कोई ऋण नहीं था। अधिक से अधिक यह वकालत (एजेंसी) होगी, जिसका सार यह है कि सरकार ने उससे ऋण मांगा, और उसने बीस लाख के नोट दिए जो केवल कागज़ के टुकड़े (बॉन्ड) थे, और मामले को "बारात-ए-आशिक़ां बर शाख-ए-आहू" (एक व्यर्थ वादा) कहकर टाल दिया। यानी सरकार को अपना वकील नियुक्त कर दिया कि वह स्वयं अपने खजाने से वसूल कर ले, "हम कुछ नहीं देंगे।" मजे की बात यह है कि सरकार भी यह नहीं कहती कि "हमें आपसे ऋण चाहिए," फिर भी आप कहते हैं "अपने ही खजाने से ले लो।" यह कैसा ऋण देना हुआ? मान लीजिए ज़ैद पर अम्र के पैसे बकाया हैं, और ज़ैद उससे और ऋण लेने आया। इस पर अम्र कहे कि "मेरा पिछला ऋण जो तुम पर बकाया है, उसी से वसूल कर लो।" तो क्या उसने ऋण दिया या टाल दिया? बल्कि इसे इस तरह समझें कि ऋण माफ कर दिया गया और बॉन्ड वापस कर दिए गए, मामला समाप्त हुआ। सरकार बीस लाख के नोट ले ले और एक कौड़ी भी न दे, सस्ते में छूट जाए।

नौवां: मान लीजिए सरकार ने किसी को इनाम के तौर पर बीस लाख दिए थे, फिर एक समय पर उससे ऋण मांगा। उसने वही नोट वापस दे दिए। दुनिया समझेगी कि सरकार पर उसके बीस लाख का ऋण हो गया। लेकिन गंगोही साहब कहेंगे कि एक पैसा भी ऋण नहीं हुआ, सरकार बीस लाख के नोट मुफ्त में ले ले और कुछ न दे। ऐसा इसलिए क्योंकि यह वह स्थिति है जिसमें न तो हस्तांतरणकर्ता (मुहील) पर ऋण था, और जिस पर हस्तांतरण (मुहताल अलैहि) किया गया, उस पर हस्तांतरणकर्ता का पहले से कोई ऋण था, तो कार्रवाई शून्य हो गई और सरकार को कुछ देना नहीं होगा। ला हौला वला कुव्वता इल्ला बिल्लाह। संक्षेप में, आपने वह बात गढ़ी है जो न तो सरकार के सपने में है और न ही पूरे देश के ख्याल में; आप ही अपनी अलग खिचड़ी पका रहे हैं।

दसवां: हवाला में देनदार को 'मुहील' कहा जाता है और लेनदार को 'मुहताल', और जिस पर ऋण हस्तांतरित किया गया है ताकि उससे वसूल किया जा सके, उसे 'मुहताल अलैहि' या 'हुवील' कहते

हैं। यहाँ, जब ज़ैद ने अम्र को हज़ार रुपये के नोट बेचे, तो आपके तरीके से ज़ैद अम्र का देनदार और मुहील हुआ, और अम्र ज़ैद का लेनदार और मुहताल हुआ, और सरकार हुवील हुई। शरीयत का मसला यह है कि कोई भी व्यक्ति हुवील हो सकता है, भले ही मुहील का उस पर कुछ बकाया न हो; एक बार जब उसने हस्तांतरण स्वीकार कर लिया, तो उसने ऋण अपने सिर ले लिया, भले ही उस पर मूल रूप से कोई मांग न हो। लेकिन जब हुवील मुहील का देनदार न हो, और मुहील का हस्तांतरण मानकर वह मुहताल को ऋण...

[1] फ़तावा हिंदिया किताबुल हवाला मसायल शत्ता नूरानी कुतुब खाना पेशावर 3/305

في القنية[1] - اس پر کوئی شئی لازم نہیں، قنیہ میں یونہی ہے (ت)

اب فرض کیجئے کہ اب بینک نے خزانہ سے بیس لاکھ کے نوٹ متفرق اوقات میں لئے تھے پھر گورنمنٹ کو قرض لینے کی حاجت ہوئی اس نے بینک سے بیس لاکھ قرض مانگے بینک نے وہی نوٹ دے دئے تو تمام دنیا یہی جانے گی کہ بینک نے ضرور قرض دیا مگر آہ اپنی کہئے اب نوٹ دینا حوالہ تو ہو نہیں سکتا کہ گورنمنٹ کا بینک پر قرض نہ آتا تھا انتہا یہ کہ وکالت ہو گی جس کا حاصل اتنا کہ گورنمنٹ نے اس سے قرض مانگا اس نے بیس لاکھ کے نوٹ جو نرے تمسک تھے دے کر برات عاشقاں بر شاخ آہو پر ٹال دیا یعنی گورنمنٹ کو وکیل کر دیا کہ خود اپنے خزانہ سے وصول کر لو ہم کچھ نہ دیں گے لطف یہ کہ گورنمنٹ بھی نہیں کہتی کہ ہم تجھ سے قرض چاہتے ہیں، تو کہتا ہے اپنے ہی خزانہ سے لے لو یہ کیا قرض دینا ہوا، زید پر عمرو کے روپے آتے ہوں زید اس سے اور قرض لینے آئے، اس پر عمرو کہے کہ میرا پہلا قرض جو تم پر آتا ہے اسی سے وصول کر لو، تو اس نے یہ قرض دیا یا ٹال دیا بلکہ اسے یوں ٹھہراؤ کہ دین معاف کیا اور تمسک واپس دئیے معاملہ ختم ہوا گورنمنٹ بیس لاکھ کے نوٹ لے لے اور کوڑی نہ دے سستے چھوٹے ۔

نہم: فرض کرو گورنمنٹ نے بیس لاکھ کسی کو انعام دیئے تھے پھر ایک وقت پر اسے قرض مانگا اس نے وہی نوٹ دے دیئے دنیا جانے گی کہ گورنمنٹ پر اس کے بیس لاکھ قرض ہو گئے مگر گنگوہی صاحب کہیں گے ایک پیسہ بھی قرض نہ ہوا گورنمنٹ بیس لاکھ کے نوٹ مفت لے لے اور کچھ نہ دے اس لئے کہ یہ وہ صورت ہے کہ نہ حوالہ کرنے والے پر قرض آتا تھا جس پر حوالہ کیا اس پر اس کا پہلے کوئی دین تھا تو کارروائی باطل ہوئی اور گورنمنٹ کو کچھ دینا نہ آئے گا

ولا حول ولا قوۃ الا باللہ، غرض یہ آپ نے وہ گھڑی ہے کہ نہ گورنمنٹ کی خواب میں ہے نہ ملک بھر کے خیال میں آپ ہی اپنی ڈیڑھ چھٹانک کی الگ بگھار رہے ہیں۔

دہم: حوالہ میں مدیون محیل کہلاتا ہے اور دائن محتال، اور جس پر قرض اتارا گیا کہ اس سے وصول کر لینا اسے محتال علیہ یا حویل کہتے، یہاں جب زید نے عمرو کے ہاتھ ہزار روپے کے نوٹ بیچے تو آپ کے طور پر زید عمرو کا مدیون اور محیل ہوا اور عمرو زید کا دائن اور محتال ہوا اور گورنمنٹ حویل، اور شرعی مسئلہ ہے کہ ہر شخص حویل ہو سکتا ہے اگرچہ محیل کا اس پر کچھ نہ آتا ہو کہ اس نے جب حوالہ قبول کر لیا تو اس کا دین اپنے سر لیا اگرچہ اکا اس پر کچھ مطالبہ نہیں لیکن جبکہ حویل محیل کا مدیون نہ ہو اور محیل کا حوالہ مان کر اس کا دین محتال کو

[1] فتاوٰی ہندیہ کتاب الحوالہ مسائل شتّی نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۳۰۵

Fatawa Rizvia (Volume 17)

...if he pays, he will recover the same amount from the assignor (muhil) saying, "I have paid your debt at your request." And if the creditor (muhtal) gifts the debt to the assignor (muhil) or says, "I have waived that debt for you," even then the delegate (muhtal 'alayh) will recover from the assignor because a gift is also like payment. It is stated in Fatawa Alamgiri:

Conditions for Hawala (debt transfer) are of several types. Some of them relate to the delegate (muhtal 'alayh), including the consent of the delegate and his acceptance of the transfer, whether he owes a debt or not. This is according to our scholars, may Allah Almighty have mercy on them. Thus it is in al-Muhit.

There are several types of conditions for Hawala (debt transfer). Some of them relate to the delegate (muhtal 'alayh), including the consent of the delegate and his acceptance of the transfer, whether he owes a debt or not. This is according to our scholars, may Allah Almighty have mercy on them. Thus it is in al-Muhit. (T)

In the same [book]:

When the delegate pays the debt to the creditor, or the creditor gifts it to him, or gives it as charity to him, or the creditor dies and the delegate becomes his heir, in all these cases the delegate shall have recourse against the assignor. However, if the creditor releases the delegate from the debt, he is released and cannot have recourse against the assignor. This is in al-Khulasah. And if the creditor says to the delegate, "I have waived it for you," then the delegate has the right of recourse against the assignor, as stated in Khizanat al-Fatawa.

When the delegate (muhtal 'alayh) pays the debt to the creditor (muhtal lahu), or the creditor gifts that debt to the delegate or gives that debt as charity to him, or the creditor dies and the delegate becomes his heir, in all these cases the delegate shall have recourse against the assignor (muhil). And if the creditor releases the delegate from the debt, he is released and now cannot have recourse against the assignor. This is in al-Khulasah. And if the creditor said to the delegate, "I have waived that debt for you," then in this case the delegate has the right of recourse against the assignor, as stated in Khizanat al-Fatawa. (T)

In Radd al-Muhtar:

If the creditor releases the delegate, he shall not have recourse.	**If the creditor released the delegate from the debt, then [he cannot have recourse].**

1. Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Hawalah, Chapter 1, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/294-295
2. Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Hawalah, Chapter 2, Chapter 1, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/298

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

...अगर वह भुगतान कर देता है, तो वह मुहील (ऋण हस्तांतरणकर्ता) से उतना ही वापस लेगा यह कहकर कि "मैंने आपकी बात मानकर आपका ऋण चुका दिया है।" और अगर मुहताल (लेनदार) मुहील को ऋण उपहार (हिबा) कर दे या कहे कि "मैंने वह ऋण आपके लिए छोड़ दिया है," तब भी मुहाल अलैह मुहील से वसूल करेगा क्योंकि उपहार देना भी भुगतान करने के समान ही है। फ़तावा आलमगीरी में है:

हवाला (ऋण हस्तांतरण) की शर्तें कई प्रकार की हैं, उनमें से कुछ मुहाल अलैह (ऋण स्वीकारकर्ता) से संबंधित हैं जिनमें मुहाल अलैह की सहमति और हवाला को स्वीकार करना शामिल है, चाहे उस पर ऋण हो या न हो। यह हमारे विद्वानों (रहमतुल्लाहि अलैहि) के अनुसार है। मुहीत में भी इसी प्रकार है।

हवाला की शर्तें कई प्रकार की हैं, उनमें से कुछ मुहाल अलैह की तरफ़ लौटती हैं जिनमें मुहाल अलैह की रज़ामंदी और हवाला को क़बूल करना है चाहे उस पर क़र्ज़ हो या न हो, यह हमारे उलमा के नज़दीक है रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम, यूँ ही मुहीत में है। (त)

उसी में है:

जब मुहाल अलैह, मुहताल को ऋण चुका दे या मुहताल वह ऋण उसे उपहार कर दे या उस पर वह ऋण सदका (दान) कर दे या मुहताल मर जाए और मुहाल अलैह उसका वारिस बन जाए, तो इन सभी स्थितियों में मुहाल अलैह मुहील से वसूल करेगा। और अगर मुहताल ने मुहाल अलैह को ऋण से मुक्त कर दिया तो वह मुक्त हो गया और अब मुहील की ओर वापस नहीं जा सकता। यह 'ख़ुलासा' में है। और अगर मुहताल ने मुहाल अलैह से कहा कि "मैंने वह ऋण आपके लिए छोड़ दिया है," तो मुहाल अलैह को मुहील से वसूल करने का अधिकार है जैसा कि 'ख़ज़ाना-तुल-फ़तावा' में है।

जब मुहाल अलैह, मुहताल लहू को क़र्ज़ अदा कर दे या मुहताल लहू वह क़र्ज़ मुहाल अलैह को हिबा कर दे या उस पर वह क़र्ज़ सदक़ा कर दे या मुहताल लहू मर जाए और मुहाल अलैह उसका वारिस बन जाए तो इन तमाम सूरतों में मुहाल अलैह मुहील की तरफ़ रुजू करेगा और अगर मुहताल लहू ने मुहाल अलैह को क़र्ज़ से बरी कर दिया तो वह बरी हो गया और अब मुहील की तरफ़ रुजू नहीं कर सकता। यह 'ख़ुलासा' में है। और अगर मुहताल लहू ने मुहाल अलैह से कहा कि मैंने वह क़र्ज़ तेरे लिए छोड़ दिया है तो इस सूरत में मुहाल अलैह को मुहील की तरफ़ रुजू का हक़ है जैसा कि 'ख़ज़ाना-तुल-फ़तावा' में है। (त)

रद-उल-मुख़्तार में है:

मुहताल लहू अगर मुहाल अलैह को बरी कर दे तो वह रुजू नहीं करेगा।

अगर मुहताल लहू ने मुहाल अलैह को क़र्ज़ से बरी कर दिया तो [वह रुजू नहीं करेगा]।

---

1. फ़तावा हिन्दिया, किताब अल-हवाला, अध्याय 1, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/294-295
2. फ़तावा हिन्दिया, किताब अल-हवाला, अध्याय 2, अध्याय 1, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/298

ادا کردے تو اسی قدر محیل سے واپس لے گا کہ میں نے تیرے کہنے سے تیرا دین ادا کیا ہے اور اگر محتال محیل کو دین ہبہ کردے یا کہے میں نے وہ دین تیرے لئے چھوڑ دیا جب بھی حویل محیل سے بھر والے گا کہ ہبہ ہونا بھی ادا ہو جانے کی مثل ہے۔ فتاوٰی عالمگیریہ میں ہے:

شرائطها انواع بعضها یرجع الی المحتال علیہ ومنہ رجاہ وقبول الحوالۃ سواء کان علیہ دین اولم یکن عند علمائنا رحمہم اللہ تعالی کذا فی المحیط اھ (1) ملتقطا۔

حوالہ کی شرطیں کئی قسم کی ہیں، ان میں سے بعض محتال علیہ کی طرف لوٹتی ہیں جن میں سے محتال علیہ کی رضا مندی اور حوالہ کو قبول کرنا ہے چاہے اس پر قرض ہو یا نہ ہو، یہ ہمارے علماء کے نزدیک ہے رحمۃ اللہ تعالٰی علیہم، یوں ہی محیط میں ہے اھ التقاط (ت)

اسی میں ہے:

اذا ادی المحتال علیہ الی المحتال لہ اووھبہ لہ اوتصدق بہ علیہ او مات المحتال لہ فورثہ المحتال علیہ یرجع فی ذلک کلہ علی المحیل ولو ابرأ المحتال لہ المحتال برئ ولم یرجع علی المحیل کذا فی الخلاصۃ واذا قال للمحتال علیہ قد ترکتہ لك کان للمحتال علیہ ان یرجع علی المحیل کذا فی خزانۃ الفتاوٰی (2).

جب محتال علیہ، محتال لہ کو قرض ادا کردے یا محتال لہ وہ قرض محتال علیہ کو ہبہ کردے یا اس پر وہ قرض صدقہ کردے یا محتال لہ مرجائے اور محتال علیہ اس کا وارث بن جائے تو ان تمام صورتوں میں محتال علیہ محیل کی طرف رجوع کرے گا اور اگر محتال لہ نے محتال علیہ کو قرض سے بری کردیا تو وہ بری ہوگیا اور اب محیل کی طرف رجوع نہیں کرسکتا۔ یہ خلاصہ میں ہے۔ اور محتال لہ نے محتال علیہ سے کہا کہ میں نے وہ قرض تیرے لئے چھوڑ دیا ہے تو اس صورت میں محتال علیہ کو محیل کی طرف رجوع کا حق ہے جیسا کہ خزانہ الفتاوٰی میں ہے۔ (ت)

ردالمختار میں ہے:

المحتال لہ لو ابرأ المحال علیہ لم یرجع اگر محتال لہ نے محتال علیہ کو قرض سے بری کردیا تو

---

1 فتاوٰی ہندیہ کتاب الحوالہ الباب الاول نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۹۴-۲۹۵ 2 فتاوٰی ہندیہ کتاب الحوالہ الباب الثانی الباب الاول نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۹۸

Arabic Text Translation: ...upon the muhil (debtor), even if it was by his command, like a guarantee (kafalah). And if the muhtal lahu (creditor) gifted the debt to the muhtal 'alayh (the one to whom the debt was transferred), then the muhtal 'alayh can refer back to the muhil provided that the muhil does not owe a debt to him. The complete discussion on this is in al-Bahr. (T)

Now suppose the government gave you a ten-thousand-rupee note as a reward for some service. A merchant (Baniya) bought that note from you by giving you the rupees. Then, on some occasion, he presented it as an offering (Nazr) to the government. Now the same situation arises: you were the muhil of the merchant, the merchant was the muhtal, and the government was the muhwil (acceptor of transfer). And it is clear that the government was not your debtor; you were the debtor to the merchant. By giving the note, you had transferred your debt onto the government. And the government, through its general law that whoever brings the note will receive the money, had already accepted the transfer (hawala). And the merchant gifted, offered, or waived the money for the notes, i.e., that debt, to the government. Then it would be necessary for the government to be able to collect ten thousand from you by force. This would have given you the pleasure of accepting the hawala—that the notes disappeared and ten thousand became obligatory upon your head. By the grace of Allah, this foolishness can be refuted in many ways. But to thoroughly debunk your hawala: "These are ten complete"[2] [Quran 2:196] (These are a full ten. T). Are these full ten any less? And success is from Allah.

Eleventhly: The entire world considers the note as wealth (maal). What visionary insight have you seen in it that [you think] it puts on some impossibilities and throws dust into the eyes of the whole world, yet refuses to accept it as wealth? Your approach was that whatever matter carries an aspect of reverence and love for Muhammad, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), and all the beloved ones of God (Glorious and Exalted), you show the height of your narrowness in it, labeling it as polytheism (Shirk), disbelief (Kufr), or forbidden (Haram). But for your followers, you bring great expansion in the means of eating and livelihood: eating a crow is permissible, rather rewardable[3] (See Vol. 2, p. 179); eating goat testicles is permissible[4] (See Vol. 3, p. 190). It is surprising you didn't write it as rewardable. The crow is black, these (testicles) are fair and white; in these, according to the Nangoohi (Gangohi) Sharia, there should have been a very shining

reward. The wage for carrying excrement is purely permissible, lawful, and good, in which...

---

[1] Radd al-Muhtar, Kitab al-Hawala, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/288 [2] Al-Quran al-Karim, 2/196 [3] Fatawa Rashidiya, Kitab al-Hazr wa al-Ibahah, Muhammad Saeed & Sons, Karachi, p. 493 [4] [Note marker present in text, source reference for permissible testicle consumption mentioned in body text as Vol. 3 p. 190]

अरबी पाठ का अनुवाद: ...मुहिल (देनदार) पर, भले ही वह उसके आदेश से हुआ हो, जैसे कि ज़मानत (कफ़ाला)। और यदि मुहाल लहू (लेनदार) ने मुहाल अलैह (वह जिसे ऋण हस्तांतरित किया गया है) को ऋण उपहार (हिबा) में दे दिया, तो मुहाल अलैह मुहिल की ओर वापस जा सकता है, बशर्ते कि मुहिल का उस पर कोई ऋण न हो। इस पर पूरी चर्चा 'बहर' में है। (त)

अब मान लीजिए कि सरकार ने किसी सेवा के बदले आपको दस हज़ार रुपये का नोट इनाम में दिया। एक बनिए ने आपको रुपये देकर वह नोट आपसे खरीद लिया, फिर किसी अवसर पर उसने वह सरकार को नज़्र (भेंट) कर दिया। अब वही स्थिति आ गई: आप बनिए के मुहिल थे, और बनिया मुहाल, और सरकार मुह्तील (हस्तांतरण स्वीकार करने वाला)। और ज़ाहिर है कि सरकार आपकी देनदार नहीं थी, आप बनिए के देनदार थे। आपने अपना ऋण नोट देकर सरकार पर उतार दिया था और सरकार ने अपने सामान्य कानून से कि जो नोट लाएगा उसे रुपया मिलेगा, हस्तांतरण (हवाला) स्वीकार कर लिया था। और बनिए ने नोटों का रुपया यानी वह ऋण सरकार को नज़्र कर दिया, उपहार दे दिया या छोड़ दिया, तो आवश्यक है कि सरकार ज़ोर-ज़बरदस्ती आपसे दस हज़ार वसूल कर सके। इससे आपको 'हवाला' मानने का मज़ा आ जाता कि नोट के नोट गायब और दस हज़ार सिर पर वाजिब। अल्लाह की कृपा से इस मूर्खता का कई तरह से खंडन किया जा सकता है, लेकिन आपके'हवाला' की धज्जियाँ उड़ाने के लिए: "ये पूरे दस हैं"[2] [कुरान २:१९६] (ये पूरे दस हैं। त)। क्या ये पूरे दस कम हैं? और सफलता अल्लाह की ओर से है।

ग्यारहवाँ: पूरी दुनिया नोट को माल (धन) मानती है। आपको इसमें ऐसी क्या दूरदर्शिता दिखी कि वह कुछ असंभव बातें ओढ़कर पूरी दुनिया की आँखों में धूल झोंक दे, लेकिन उसे माल मानना मंज़ूर नहीं? आपका तरीका तो यह था कि जो मामला मुहम्मद रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) और अल्लाह के अन्य प्रियजनों के सम्मान और प्रेम का पहलू रखता हो, उसमें आप अपनी संकीर्णता की हद दिखाएँ, उसे शिर्क, कुफ्र या हराम ठहराएँ। और अपने अनुयायियों के लिए खाने-पीने और आजीविका के साधनों में खूब विस्तार लाएँ, कौआ खाना हलाल बल्कि सवाब है[3] (देखें खंड २, पृ. १७९); बकरे के अंडकोष खाना हलाल है[4] (देखें खंड ३, पृ. १९०)। आश्चर्य है कि इसे सवाब नहीं लिखा। कौआ काला-काला है, ये गोरे-गोरे, इनमें तो नंगोही (गंगोही) शरीयत के अनुसार बहुत बड़ा चमकता सवाब होना चाहिए था। पाखाना उठाने की मज़दूरी विशुद्ध रूप से जायज़, हलाल और पाक है, जिसमें...

१ रद अल-मुह्तार, किताब अल-हवाला, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, २/२८८ २ अल-कुरान अल-करीम, २/१९६ ३ फ़तावा रशीदिया, किताब अल-हज़्र व अल-इबाहह, मुहम्मद सईद एंड संस, कराची, पृ. ४९३ ४ [पाठ में नोट मार्कर मौजूद है, अंडकोष खाने के स्रोत का संदर्भ मुख्य पाठ में खंड ३ पृ. १९० के रूप में दिया गया है]

पृष्ठ ७१५ का ५१६

عربی عبارت کا ترجمہ: علی المحیل وان کانت بأمرہ کالکفالۃ ولو وھبہ رجع ان لم یکن للمحیل علیہ دین وتمامہ فی البحر ۱۔ محتال علیہ محیل کی طرف رجوع نہیں کرے گا اگرچہ اس کے امر سے ایسا ہوا ہو ، اور اگر محتال لہ نے قرض محتال علیہ کو ہبہ کر دیا تو محتال علیہ محیل کی طرف رجوع کر سکتا ہے بشرطیکہ محیل کا اس پر قرض نہ ہو ، اس کی مکمل بحث بحر میں ہے ۔ (ت)

اب فرض کیجئے کہ گورنمنٹ نے کسی خدمتگاری کے صلہ میں دس ہزار روپے کا نوٹ آپ کو انعام دیا ایک بنیے کے روپئے دے کر وہ نوٹ آپ سے خرید لیا پھر کسی موقع پر اس نے گورنمنٹ کی نذر کر دیا اب وہی صورت آگئی آپ بنیے کے محیل تھے اور بنیا محتال اور گورنمنٹ محویل۔ اور ظاہر ہے کہ گورنمنٹ آپ کی مدیون نہ تھی آپ بنیے کے مدیون تھے آپ نے اپنا دین نوٹ دے کر گورنمنٹ پر اتار دیا تھا اور گورنمنٹ نے اپنے قانون عام سے کہ جو نوٹ لائیگا روپیہ پائے گا حوالہ قبول کر چکی اور بنیے نے نوٹوں کا روپیہ یعنی وہ دین گورنمنٹ کو نذر کر دیا ہبہ کر دیا ترک کر دیا تو لازم کہ گورنمنٹ چاند ٹھونک کر آپ سے دس ہزار وصول کر سکے اس سے آپ کو حوالہ ماننے کا مزہ آجاتا کہ نوٹ کے نوٹ غائب اور دس ہزار کھوپڑی پر واجب ، بحمد اللہ اس سفاہت کا بہت طرح رد ہو سکتا ہے مگر آپ کے حوالہ کی مٹی پلید کرنے کو ، "تِلْکَ عَشَرَۃٌ کَامِلَۃٌ" ۲ (یہ پورے دس ہیں۔ ت) یہ پورے دس کیا کم ہیں وباللہ التوفیق۔

یازدھم : تمام جہان تو نوٹ کو مال مانے ہوئے ہے آپ کو اس میں کیا دکھتی سوجھی ہے کہ وہ کچھ محالات اوڑھے عالم بھر کی آنکھوں میں خاک جھونکنے مگر اسے مال ماننا منظور نہیں آپ کی روش تو یہ تھی کہ جو امر محمد رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم وسائر محبوبان خدا جل وعلا کی تعظیم و محبت کا پہلو لئے ہوئے ہو اس میں اپنے حد کی تنگی دکھاؤ بننے نہ بننے شرک کفر

حرام گاؤ ، اور اپنے معتقدوں کے لئے ذرائع اکل و معاش میں خوب وسعت لاؤ ، کوا کھانا حلال بلکہ ثواب۳ (دیکھو جلد ۲ ص ۱۷۹) بکرے کے خصیے کھانا حلال٤ (دیکھو جلد ۳ ص ۱۹۰) تعجب ہے کہ اسے ثواب نہ لکھا، کوا کالا کالا یہ گورے گورے، ان میں تو ننگوہی شریعت سے بڑا چمکتا ثواب چاہئے تھا ، پاخانہ اٹھانے کی اجرت مباح خالص حلال طیب جس میں

---

۱ رد المحتار کتاب الحوالہ داراحیاء التراث العربی بیروت ۲/ ۲۸۸ ۲ القرآن الکریم ۲/ ۱۹۶ ۳ فتاویٰ رشیدیہ کتاب الحظر والاباحہ محمد سعید اینڈ سنز کراچی ص ۴۹۳ ۴

Fatawa Razawiyyah (17) Volume Seventeen

Abhorrence aside, there is not even a shadow of abhorrence. The money earned by a scavenger by carrying excrement is so sacred that it is correct to spend it even on the construction of a mosque[1] (see Volume 1, p. 105). Truly, for the eating and drinking of "holy" ones like you, and for your mosques defiled with innovations, such earnings were deserving of insult and disparagement.

A morsel is worthy of every belly. (Every belly desires a morsel according to its status. T)

In short, this was the extent of your latitude for your own in worldly means. What part of veneration and love for the beloveds of Allah did you find in the buying and selling of notes and considering them as wealth, that it became mandatory for you to invalidate it? Tell us the reason why it should not be accepted that the whole world considers it as wealth. In establishing a technical price (currency), it is mandatory to follow the convention of the nation and country. Here, all nations and all countries of the world are clearly showing their convention. And who are you—not one, not a thousand, not anyone—that anyone should ask who you are to interfere in the convention of the entire world? Look for proof of the value of notes in the treatise from pages 126 to 132.

Twelfth (12): The need for intention of trade in coins is only when they do not circulate as price (currency), otherwise, in currency, there is absolutely no need for intention of trade even if it is a technical price (thaman istilahi) and not a natural one (khilqi). It is stated in Inayah, Dhawi al-Ahkam, Radd al-Muhtar, etc.:

Al-Fulus in kanat athmanan ra’ijatan au sil’atan lil-tijarati tajibu al-zakatu fi qimatiha wa-illa fala[2].	**If coins are currency and in circulation, or are trade goods, then Zakat is obligatory on their value, otherwise not. (T)**

In Durr al-Mukhtar, Bahr al-Ra'iq, and Nahr al-Fa'iq, it is stated:

Aghlabu ghishuhu yaqumu kal-'arudi wa-yushtiratu fihi al-niyyatu illa idha kanat athmanan ra'ijatan[3].	**That which has a predominant alloy will be valued like goods are valued, and the intention of trade is a condition for it, unless they are circulating currency. (T)**

[1] Fatawa Rashidiyyah Kamil, Bab Ahkam al-Masajid, Muhammad Saeed & Sons, Karachi, p. 408. [2] Radd al-Muhtar, Kitab al-Zakat, Bab al-Mal, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/32. [3] Durr al-Mukhtar, Kitab al-Zakat, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/135.

घृणा तो दूर की बात है, घृणा का लेश मात्र भी संदेह नहीं है। एक भंगी ने मल ढोकर जो धन कमाया है वह इतना पवित्र है कि उसे मस्जिद के निर्माण में खर्च करना भी सही है[1] (देखें जिल्द १, पृष्ठ १०५)। वास्तव में आप जैसे "पवित्र" लोगों के खाने-पीने और आपकी नवाचारों (बिदअत) से प्रदूषित मस्जिदों के लिए ऐसी ही कमाई अपमान और तिरस्कार के योग्य थी।

हर पेट उसके योग्य ग्रास के लिए है। (हर पेट अपनी शान के मुताबिक़ निवाला चाहता है। त)

संक्षेप में, दुनियावी साधनों में अपनों के लिए आपकी यह उदारता थी। नोटों की खरीद-फरोख्त और उसे धन समझने में अल्लाह के प्यारों के प्रति सम्मान और प्रेम का कौन सा अंश आपने पाया जिसे अमान्य करना आप पर अनिवार्य हो गया? कारण तो बताइए कि पूरे विश्व का इसे धन मानना स्वीकार्य क्यों न हुआ? तकनीकी मूल्य (मुद्रा) निर्धारित करने में राष्ट्र और देश की परंपरा का पालन करना अनिवार्य होता है। यहाँ विश्व की समस्त जातियाँ और समस्त देश स्पष्ट रूप से अपनी परंपरा बता रहे हैं। और आप कौन हैं—न एक, न हज़ार, न कोई—कि कोई पूछे कि आप पूरी दुनिया की परंपरा में हस्तक्षेप करने वाले कौन होते हैं? नोटों के मूल्य का प्रमाण शोध-पत्र में पृष्ठ १२६ से १३२ तक देखें।

बारहवाँ १२: सिक्कों में व्यापार की नियत की आवश्यकता तभी होती है जब वे मूल्य (मुद्रा) के रूप में न चलते हों, अन्यथा मुद्रा में व्यापार की नियत की बिल्कुल आवश्यकता नहीं है, चाहे वह तकनीकी मूल्य (थमन इस्तलाही) ही क्यों न हो, प्राकृतिक (खिलक़ी) नहीं। इनाया, ज़वी अल-अहकाम, रद अल-मुह्तार आदि में है:

अल-फ़ुलूस इन कानत अष्मानन राइजातन औ सिलअतन लित्तिजारती तजीबु अज़-ज़कातु फ़ी क़ीमतिहा व-इल्ला फ़ला[2]।	**सिक्के यदि मूल्य हों और प्रचलित हों या व्यापार का सामान हों, तो उनकी क़ीमत में ज़कात वाजिब है वरना नहीं। (त)**

दुर-ए-मुख्तार, बहर-उर-रैक़ और नहर-ुल-फ़ैक़ में है:

अग़लबु ग़िशुहू यक़ूमु कल-'अरूज़ि व-युश्तरतु फ़ीहि अन-नियतु इल्ला इज़ा कानत अष्मानन राइजातन[3]।

जिसमें मिलावट प्रबल हो उसकी क़ीमत लगाई जाएगी जैसे सामान की क़ीमत लगाई जाती है और उसमें व्यापार की नियत शर्त है सिवाय इसके कि वे मूल्य के रूप में प्रचलित हों। (त)

1. फ़तावा रशीदिया कामिल, बाब अहकाम अल-मसाजिद, मुहम्मद सईद एंड संस, कराची, पृ. ४०८।
2. रद अल-मुह्तार, किताब अज़-ज़कात, बाब अल-माल, दार इहया अत-तुरास अल-अरबी, बेरुत, २/३२।
3. दुर-ए-मुख्तार, किताब अज़-ज़कात, मतबा मुज्तबाई, दिल्ली, १/१३५।

کراہت در کنار کراہت کا شبہہ بھی نہیں بھنگی نے پاخانہ اٹھا کر جو مال کمایا ایسا مقدس ہے کہ اسے تعمیر مسجد میں صرف کرنا بھی درست ہے ۱ (دیکھو جلد اول ص ۱۰۵) واقعی آپ جیسے مقدسوں کے کھانے پہنے اور آپ حضرات کی مساجد ملوثہ بدعات توہین و تنقیص کی لائق ایسی ہی کمائی تھی ع

ہر شکم ولقمہ شایان او (ہر پیٹ کہی شان کے مطابق لقمہ چاہئے۔ ت)

غرض ذرائع دنیا میں اپنوں کے لئے آپ کی یہ وسعت تھی، نوٹ کی خرید و فروخت اور اسے مال سمجھن میں کون ساحصہ تعظیم و محبت محبوبان خدا پایا جسے باطل کرنا آپ پر لازم ہوا وجہ تو بتائے کہ یہ تمام عالم کا اسے مال ماننا کیوں نہ مقبول ٹھہرا ثمن اصطلاحی ٹھہرانے میں اصطلاح قوم و ملک پر کاربندی واجب ہوتی ہے یہاں جملہ اقوام و تمام ممالک عالم اپنی اصطلاح روشن طور پر بتا رہے ہیں اور آپ ہیں کہ ایک نہ ہزار نہ کوئی یہ تو پوچھے کہ آپ ہیں کون اصطلاح جملہ جہاں میں دخل دینے والے، نوٹ کی مالیت کا ثبوت رسالہ میں ص ۱۲۶ سے ۱۳۲ تک سوجھے۔

دوازدہم ۱۲: پیسوں میں نیت تجارت کی حاجت اس وقت ہے جب وہ ثمن ہو کر نہ چلتے ہوں ورنہ ثمن میں ہر گز نیت تجارت کی حاجت نہیں اگر چہ ثمن اصطلاحی ہو نہ خلقی ، عنتیہ ذوی الاحکام ورد المحتار وغیرہما میں ہے:

الفلوس ان کانت اثمانا رائجة او سلعة پیسے اگر ثمن ہوں اور رائج ہوں یا سامان تجارت ہوں للتجارة تجب الزکوة فی قیمتها والا فلا ۲۔ تو ان کی قیمت میں زکوٰۃ واجب ہے ورنہ نہیں۔ (ت)

در مختار و بحر الرائق و نہر الفائق میں ہے:

اغلب غشہ یقوم کالعروض ویشترط فیہ النیۃ الا اذا کانت اثمانا رائجۃ ۳۔

جس میں ملاوٹ غالب ہو اس کی قیمت لگائی جائیگی جیسے سامان کی قیمت لگائی جاتی ہے اور اس میں نیت تجارت شرط ہے سوائے اس کے کہ وہ ثمن رائج ہوں۔ (ت)

۱ فتاوی رشیدیہ کامل باب احکام المساجد محمد سعید اینڈ سنز کراچی ص ۴۰۸ ۲ ردالمحتار کتاب الزکوۃ باب المال دار احیاء التراث العربی بیروت ۳۲/۲ ۳ درمختار کتاب الزکوۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۳۵

Fatawa Rizvia Volume (17)

It is stated in Shami: [Table] Arabic: What is a circulating currency, its Zakat is obligatory whether trade was intended or not - 1 Urdu: That which is a circulating currency, its Zakat is mandatory whether trade was intended or not. (T)

It is also in the same book: [Table] Arabic: The essence of the two precious metals (gold and silver) does not require the intention of trade, and similarly, whatever is a circulating currency - 2 Urdu: There is no need for the intention of trade in the essence of the two precious metals (gold and silver), similarly for that which is a circulating currency. (T)

In Al-Bahr al-Ra'iq, it is quoted from many books: [Table] Arabic: If adulteration (alloy) is predominant, then it is not like silver, such as 'satuqa' coins. It will be seen: if they are circulating or if trade was intended, their value will be considered; if it reaches the 'nisab' (minimum threshold), Zakat is obligatory in them, otherwise not. - Summarized. 3 Urdu: If the adulteration (alloy) is dominant, then it is not like silver, like counterfeit rupees. Then it will be seen: if they are circulating or if there is an intention for trade in them, then their value will be taken into account; if it reaches the nisab, there is Zakat on it, otherwise not. (T)

See page 137 that the fatwa is based on this. Coming across one or two narrations in a heap and not looking at the context and occasion, and not distinguishing between the prevalent and the outweighed, the rare and the famous, is not jurisprudence (Fiqah). But for the Wahhabi gentlemen, praise be to Allah, jurisprudence is the lot of their enemies. In addition to these compelling reasons, there are other objections to this two-line writing rooted in 'Gangohiyat' (referring to Rashid Ahmad Gangohi), for example: (13) Described the note as 'Naqdayn' (gold and silver), meaning the note is gold and silver, and then in the same breath saying it is a bond (Tamassuk). (14) Calling it a bond and then saying there is Zakat on it, whereas a bond is not wealth in itself at all, nor does its existence or non-existence have anything to do with the obligation or non-obligation of Zakat. (15) Understanding the reason for not giving Zakat on a note as considering it a sold commodity (Mabee'). Does Zakat not apply to a sold commodity? You have just accepted that Zakat is obligatory on coins by calling them a commodity with the intention of trade remaining.

1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Zakat, Bab Zakat al-Mal, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/32

2. Radd al-Muhtar, Kitab al-Zakat, Bab Zakat al-Mal, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/32
3. Al-Bahr al-Ra'iq, Kitab al-Zakat, Bab Zakat al-Mal, H.M. Saeed Company, Karachi, 2/228

फ़तावा रज़विया जिल्द (१७)

शामी में है: [तालिका] अरबी: जो प्रचलित मुद्रा है, उसकी ज़कात वाजिब है, चाहे व्यापार की नीयत हो या न हो - १ उर्दू: जो प्रचलित मुद्रा हो, उसकी ज़कात वाजिब है चाहे व्यापार की नीयत हो या न हो (त)

इसी में है: [तालिका] अरबी: दोनों कीमती धातुओं (सोना और चांदी) के लिए व्यापार की नीयत की आवश्यकता नहीं है, और इसी तरह जो प्रचलित मुद्रा हो - २ उर्दू: सोने और चांदी में व्यापार की नीयत की आवश्यकता नहीं है, इसी तरह जो प्रचलित मुद्रा हो। (त)

बहर-उर-रैक में कई किताबों से उद्धृत है: [तालिका] अरबी: यदि मिलावट अधिक हो, तो वह चांदी की तरह नहीं है, जैसे खोटे सिक्के। तो देखा जाएगा; यदि वे प्रचलित हैं या व्यापार की नीयत थी, तो उनके मूल्य पर विचार किया जाएगा; यदि वह निसाब (न्यूनतम सीमा) तक पहुँचता है, तो उसमें ज़कात वाजिब है, अन्यथा नहीं। - संक्षेप में। ३ उर्दू: अगर मिलावट (खोट) प्रबल हो, तो वह चांदी की तरह नहीं है जैसे खोटे रुपये। फिर देखा जाएगा कि वे प्रचलित हैं या उनमें व्यापार की नीयत है, तो उनकी कीमत का एतबार किया जाएगा, अगर वो निसाब को पहुंचे तो उसमें ज़कात है वरना नहीं। (त)

पृष्ठ १३७ देखें कि इसी पर फतवा है। एक-दो रिवायत को ढेर में पा लेना और संदर्भ व अवसर को न देखना, और प्रचलित व कम प्रचलित, दुर्लभ और प्रसिद्ध में अंतर न करना फक़ाहत (न्यायशास्त्र) नहीं है। लेकिन वहाबी हज़रत के नसीब में तो फक़ाहत, अल्लाह की स्तुति हो, उनके दुश्मनों का नसीब है। इन प्रबल कारणों के अलावा, 'गंगोहियत' की बुनियाद वाली इस दो पंक्तियों की तहरीर पर और भी आपत्तियां हैं, उदाहरण के लिए: (१३) नोट को 'नक़दैन' बताया, यानी नोट सोना-चांदी है, और फिर उसी मुंह से यह कि यह रसीद (तमस्सुक) है। (१४) रसीद कहना और फिर यह कहना कि इस पर ज़कात है, जबकि रसीद बुनियादी तौर पर माल ही नहीं है, और न ही इसके होने या न होने का ज़कात के अनिवार्य होने या न होने से कोई लेना-देना है। (१५) नोट को बेची गई वस्तु (मबीअ) समझने के कारण इसकी ज़कात न देने का आधार समझना, क्या बेची गई वस्तु पर ज़कात नहीं होती? अभी तो आपने पैसों को मबीअ कहकर व्यापार की नीयत होने पर ज़कात वाजिब मान ली है।

1. रद्दुल मुहतार, किताबुज़ ज़कात, बाबु ज़कातुल माल, दार इहयाउत तुरास अल-अरबी, बेरुत, २/३२

2. रद्दुल मुहतार, किताबुज़ ज़कात, बाबु ज़कातुल माल, दार इहयाउत तुरास अल-अरबी, बेरुत, २/३२
3. बहरुर रैक, किताबुज़ ज़कात, बाबु ज़कातुल माल, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, २/२२८

شامی میں ہے: [جدول] عربی: ماکان ثمنا رائجا تجب زکاتہ سواء نوی التجارۃ اولا -۱ اردو: جو ثمن رائج ہو اس کی زکوۃ واجب ہے چاہے تجارت کی نیت ہو یا نہ ہو(ت)

اسی میں ہے: [جدول] عربی: عین النقدین لا یحتاج الی نیۃ التجارۃ وکذا ماکان ثمنا رائجا -۲ اردو: عین نقدین (سونا اور چاندی) میں تجارت کی نیت کی حاجت نہیں اسی طرح جو ثمن رائج ہو۔ (ت)

بحرالرائق میں کتب کثیرہ سے ہے: [جدول] عربی: ان غلب الغش فلیس کالفضۃ کالستوقۃ فینظر ان کانت رائجۃ اونوی التجارۃ اعتبرت قیمتھا فان بلغت نصابا وجبت فیھا الزکوۃ والافلا - ملخصاً - ۳ اردو: اگر ملاوٹ (کھوٹ) غالب ہو تو وہ چاندی کی طرح نہیں جیسے کھوٹے روپے، پھر دیکھا جائیگا کہ وہ رائج ہیں یا ان میں نیت تجارت ہے تو ان کی قیمت کا اعتبار کیا جائے گا، اگر وہ نصاب کو پہنچے تو اس میں زکوۃ ہے ورنہ نہیں۔(ت)

ص ۱۳۷ دیکھئے کہ اسی پر فتوی ہے ایک آدھ روایت ٹول میں آجانا اور محل و محمل نہ دیکھنا اور رائج و مرجوح و شاذ و مشہور میں فرق نہ کرنا فقاہت نہیں ہوتا مگر حضرات وہابیہ کے نصیبوں تو فقاہت بحمد اللہ نصیب دشمنان ہے۔ ان وجوہ قاہرہ کے علاوہ اس دو سطری تحریر گنگوہیت خمیر میں اور بھی مواخذات ہیں مثلاً: (۱۳) نوٹ نقدین بتایا یعنی نوٹ سونا چاندی ہے، اور پھر اسی منہ میں یہ کہ تمسک ہے۔ (۱۴) تمسک کہ کہنا کہ اس پر زکوۃ ہے حالانکہ تمسک سرے سے مال ہی نہیں، نہ اس کے عدم وجود کو زکوۃ کے وجوب و عدم میں کچھ دخل۔ (۱۵) نوٹ کے مبیع سمجھنے پر اس کی زکوۃ نہ دینے کی بنا سمجھنا، کیا مبیع پر زکوۃ نہیں ہوتی۔ ابھی تو آپ پیسوں کو مبیع کہہ کر بحال نیت تجارت زکوۃ واجب مان چکے ہیں۔

۱۔ ردالمحتار کتاب الزکوۃ باب زکوۃ المال دار احیاء التراث العربی بیروت ۲/ ۳۲ ۲۔ ردالمحتار کتاب الزکوۃ باب زکوۃ المال دار احیاء التراث العربی بیروت ۲/ ۳۲ ۳۔ بحرالرائق کتاب الزکوۃ باب زکوۃ المال ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲/ ۲۲۸

Fatawa Rizvia, Volume 17

(16) To call it a severe mistake to consider paper as an object of sale (mabi') suggests that perhaps they never happened to buy paper in their entire life, nor did news reach their village that paper is also sold in the world.

(17) The irony is that while it was considered a severe mistake to treat a note as an object of sale because it is paper, just one page later on page 773, he himself states that "one can send by purchasing a note." Subhan Allah! If a note could not be sold at all, how could it be purchased? But compared to these great follies of his, such subtleties hold no weight. (Verse) Errors of this nature are not counted as mistakes. (Such things are not counted among mistakes. - T)

Arabic: We ask Allah for forgiveness and well-being, and there is no power or strength except with Allah, the Most High, the Most Great.

Urdu: We ask Allah Almighty for forgiveness and well-being, and there is no power to avoid sin or perform good except through the guidance of Allah Almighty. (T)

(18) What answer will you give if someone points out your previous subtlety: when you completely overturned this contract—which in word ("sale"), intention, purpose, and understanding was absolutely a sale—against the understanding and will of the entire world, then with what face do you now claim that selling for more or less is usury (riba) and impermissible? Why do you not conclude from this sale at a higher price that Zaid sold a hundred-rupee note to Amr for one hundred and twenty-five rupees? This is not a sale, nor is it exchanging one hundred and twenty-five for a hundred such that it would be impermissible usury; rather, Zaid borrowed one hundred and twenty-five from Amr, and the hundred that the government owed to Zaid, he transferred to him; as for the remaining twenty-five, Amr waived them for Zaid. And what usury is there in this? It is mentioned on page 731 of the treatise from Fatawa Imam Qazi Khan:

Arabic: If he intends a legal stratagem (hila), he should borrow twelve broken dirhams from the buyer, then repay him ten sound ones, and then the lender absolves him of the remaining two dirhams; this is permissible.[2]

Urdu: If he intends a legal stratagem, he should borrow twelve broken dirhams from the buyer, then return ten sound dirhams to him, and the lender absolves him from the remaining two dirhams; then this is permissible. (T)

[1] Fatawa Rashidiya, Chapter of Usury, Muhammad Saeed & Sons Karachi, p. 431 [2] Fatawa Qazi Khan, Book of Sales, Chapter on the Sale of Usurious Property, Naval Kishore Lucknow, India 4/70

फतावा रज़विया, जिल्द सत्रहवीं (17)

(16) कागज़ को बिक्री की वस्तु (मबीअ) समझने को घोर गलती कहना शायद इस ओर इशारा करता है कि उम्र भर कागज़ खरीदने का इत्तेफ़ाक नहीं हुआ, और न उनके गाँव में यह ख़बर पहुँची कि दुनिया में कागज़ भी बिकता है।

(17) विडंबना यह है कि अभी नोट को इस जुर्म पर कि वह कागज़ है, मबीअ समझना घोर गलती थी और एक ही पन्ने के बाद सफ़्हा 773 पर खुद फरमाते हैं कि "नोट खरीद कर भेज सकता है"। सुभान अल्लाह! नोट तो बिक ही नहीं सकता था, तो खरीदा कैसे जाएगा? मगर हज़रत की इन बड़ी नादानियों के सामने ऐसी बारीकियों की क्या गिनती! (मिसरा) ऐसी चीज़ों पर गलतियों का शुमार नहीं किया जाता। (इस जैसी बातों को गलतियों में नहीं गिना जाता। - त)

अरबी: हम अल्लाह से माफ़ी और आफियत माँगते हैं, और अल्लाह बुलंद व अज़ीम के अलावा (बुराई से) बचने और (नेकी की) ताकत नहीं।	**उर्दू: हम अल्लाह तआला से माफ़ी और आफियत माँगते हैं, और गुनाह से बचने और नेकी की ताक़त नहीं मगर अल्लाह तआला की तौफ़ीक़ से। (त)**

(18) आप क्या जवाब देंगे अगर कोई आपकी पिछली बारीकी पर कहे कि जब आपने इस अक़्द (अनुबंध) को—जिसमें लफ़्ज़ "बैय" (बिक्री), नीयत, इरादे और समझ में पूरी तरह बिक्री थी—तमाम दुनिया की समझ और इरादे के खिलाफ पूरी तरह पलट दिया, तो अब आप किस मुँह से कह रहे हैं कि कम या ज़्यादा पर बिक्री करना सूद (रिबा) और नाजायज़ है? ज़्यादा पर बिक्री का यह परिणाम क्यों नहीं निकालते कि ज़ैद ने अम्र को सौ रुपये का नोट सवा सौ रुपये में बेचा है? यह बिक्री नहीं है और न ही सवा सौ को सौ से बदलना है कि सूद नाजायज़ हो, बल्कि ज़ैद ने अम्र से सवा सौ उधार लिए हैं और ज़ैद के जो सौ रुपये सरकार पर निकलते थे, वह उसने उसे दे दिए; रहे पच्चीस रुपये तो वह अम्र ने ज़ैद को छोड़ दिए (माफ़ कर दिए), और इसमें कौन सा सूद है? फतावा इमाम काज़ी खान से रिसाला के सफ़्हा 731 में आया है:

अरबी: अगर वह हीला (कानूनी युक्ति) करना चाहे तो खरीदार से बारह टूटे हुए दिरहम उधार ले, फिर उसे दस खरे दिरहम वापस दे और उधार देने वाला उसे बाकी दो दिरहमों से बरी कर दे, तो यह जायज़ है।[2]

उर्दू: अगर हीले का इरादा करे तो मुश्तरी (खरीदार) से बारह दिरहम टूटे हुए उधार ले फिर दस खरे दिरहम उसको वापस दे और क़र्ज़ देने वाला बाकी दो दिरहमों से उसको बरी कर दे तो यह जायज़ है। (त)

[1] फतावा रशीदिया, बाब-उर-रिबा, मुहम्मद सईद एंड संस कराची, पृ. 431 [2] फतावा काज़ी खान, किताब-उल-बुयूअ, बाब फ़ी बैय माल-उर-रिबा, नवल किशोर लखनऊ, भारत 4/70

فتاوٰی رضویہ، جلد ہفدہم (۱۷)

(۱۶) کاغذ کے مبیع سمجھنے کو سخت غلطی کہنا شاید عمر بھر کاغذ خریدنے کا اتفاق نہ ہوا، نہ ان کے گاؤں میں خبر پہنچی کہ دنیا میں کاغذ بھی بکتا ہے۔

(۱۷) لطف یہ کہ ابھی تو نوٹ کو اس جرم پر کہ کاغذ ہے مبیع سمجھنا سخت غلطی تھا اور ایک ہی ورق بعد صفحہ ۷۷۳ پر خود فرماتے ہیں کہ "نوٹ خرید کر بھیج سکتا ہے" اے سبحان اللہ! نوٹ تو بک سکتا ہی نہ تھا خرید ایسے جائے گا مگر حضرت کی ان عظیم سفاہتوں کے آگے ایسی نزاکتوں کی کیا گنتی ع ما علی مثلہ یعد الخطاء (اس کی مثل پر خطاؤں کا شمار نہیں کیا جاتا۔ ت)

نسأل اللہ العفو والعافیۃ، ولاحول ولا قوۃ الاباللہ العلی العظیم۔ (ت)

ہم اللہ تعالٰی سے معافی اور عافیت مانگتے ہیں، اور گناہ سے بچنے اور نیکی کی طاقت نہیں مگر اللہ تعالٰی کی توفیق سے۔

(۱۸) آپ کی اجواب دیں گے اگر کوئی آپ کی پچھلی نزاکت پر کہے کہ جب آپ نے اس عقد کو کہ لفظ "بیع" میں نیت میں قصد میں فہم میں قطعاً بیع تھا تمام جہاں کے فہم وارادہ کے خلاف کایا پلٹ کر کے حوالہ تراش لیا تو آپ اب کس منہ سے کہہ رہے ہیں کہ کم زیادہ پر بیع کرنا ربا و ناجائز ہے زیادہ پر بیع کا یہ حاصل کیوں نہیں ٹھہراتے کہ زید نے عمرو کے سات سو روپے کا نوٹ سوا سو روپے کو بیچا ہے یہ بیع نہیں سوا سو کا سو سے بدلنا نہیں کہ ربا ناجائز ہو بلکہ زید نے عمرو سے سوا سو قرض لئے ہیں اور زید کے گورنمنٹ پر سو آتے تھے وہ اس پر اتار دیئے، رہے پچیس وہ عمرو نے زید کو چھوڑ دیئے اور اس میں کون سا رہا ہے، فتاوٰی امام قاضی خان سے رسالہ کے صفحہ ۷۳۱ میں گزرا:

فان اراد الحيلة يستقرض من المشترى اگر حیلہ کا ارادہ کرے تو مشتری سے بارہ درہم ٹوٹے اثنی عشر درهما مكسورة ثم يقضيه عشرة ہوئے قرض لے پھر دس کھرے درہم اس کو واپس دے جياداً ثم ان المقرض يبرءه عن درهمين اور قرض دہندہ باقی دو درہموں سے اس کو بری کر فيجوز ذلك-2 دے تو یہ جائز ہے۔ (ت)

1 فتاوٰی رشیدیہ باب الربوا محمد سعید اینڈ سنز کراچی ص ۴۳۱ 2 فتاوٰی قاضی خان کتاب البیوع باب فی بیع مال الربو نولکشور لکھنو، انڈیا ۴/ ۷۰

Fatawa Razawiyya, Volume 17 (17)

Furthermore, it was mentioned consecutively from Khania: "If he intends a legal stratagem, let him take nine dirhams in exchange for nine, and absolve him (the debtor) from the remaining one dirham." (1) (If one wants to use a legal stratagem, let him take nine dirhams for nine dirhams and free the (debtor) from the remaining one dirham.) (T)

If you say this is a possession on the condition of absolving a portion, then firstly why not say that when he gives one hundred and twenty-five for a hundred-rupee note from the very beginning, it is the loan of a portion and the gift of a portion? Then if the extra is distinct or if partiality is harmful, then it is permissible, correct, and lawful without any doubt, and your ruling becomes null and void; otherwise, at most, it would be incomplete due to joint ownership; where did 'Riba' (interest) come from? Secondly: A loan does not become invalid due to invalid conditions; rather, the condition becomes void. Thus, twenty-five rupees more would remain obligatory upon Zaid, and it wouldn't be interest. "Understand if you can understand, but you understand that you do not understand. And Allah, the Exalted, knows best." (Understand it if you are capable of understanding, but you think that surely you will not understand. And Allah, the Exalted, knows best.) (T)

Second Refutation By the grace of Allah Almighty, a comprehensive discourse in refutation of the Maulvi Sahib of Lucknow has passed. The eleventh issue was specifically in his refutation; in fact, the major part is in his refutation. Here, perhaps, merely pointing him out is sufficient. Maulvi Sahib's second volume, Fatwa No. 126: "His saying: He is the One who makes it correct" (2) (The one who makes right - T). I say: (I say that it is the habit of Maulvi Sahib to write this very word before every answer, whereas, firstly: the application of this name to Allah Almighty is not reported. Secondly: Even the linguistic meaning does not support it. In the dictionary, 'Musawwib' is one who declares someone else's statement to be correct, not one who makes their statement correct, i.e., grants them the success of being right. Validating (Tasweeb) comes after the statement has occurred.)

---

1. Fatawa Qazikhan, Book of Sales, Chapter on the Sale of Ribawi Goods, Naval Kishore, Lucknow, India, 2/407.
2. Majmu'a Fatawa, Book of Food and Drink, Matba Yusafi, Lucknow, India, 2/115.

फतावा रज़विया, खंड 17 (१७)

इसके अलावा, खानिया से इसके साथ ही गुज़रा: "यदि वह हीला (कानूनी युक्ति) करना चाहता है, तो वह नौ दिरहम के बदले नौ ले ले और शेष एक दिरहम से उसे (कर्ज़दार को) मुक्त कर दे।" (१) (अगर हीला करना चाहे तो नौ दिरहम नौ दिरहमों के बदले में ले ले और बाकी एक दिरहम से उस (मक़रूज़) को बरी कर दे।) (अनुवाद)

अगर कहें कि यह कब्ज़ा कुछ हिस्से से बरी करने की शर्त पर हुआ, तो पहले क्यों न कहें कि जब वह सिरे से सौ का नोट लेकर सवा सौ दे रहा है, तो वह कुछ हिस्से का ऋण और कुछ का दान हुआ? फिर अगर अधिकता विशिष्ट हो या आंशिक विभाजन हानिकारक हो, तो वह बिना किसी शंका के जायज़, सही और वैध है, और आपका आदेश निरस्त और निराधार हो गया है; अन्यथा अधिकतम यह कि संयुक्त स्वामित्व के कारण अपूर्ण हो, रिबा (ब्याज) कहाँ से आया? दूसरा: दोषपूर्ण शर्तों से ऋण दोषपूर्ण नहीं होता, बल्कि शर्त रद्द हो जाती है। तो ज़ैद पर पच्चीस रुपये और अनिवार्य रहेंगे, न कि वह ब्याज हुआ। "समझो यदि तुम समझ सकते हो, लेकिन तुम समझते हो कि तुम नहीं समझते। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला सबसे बेहतर जानता है।" (तो समझ ले अगर तू समझता है, लेकिन तू समझता है कि बेशक तू नहीं समझेगा। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला सबसे बेहतर जानता है।) (अनुवाद)

दूसरा खंडन अल्लाह तआला की कृपा से मौलवी साहब लखनवी के खंडन में विस्तृत चर्चा गुज़र चुकी है। ग्यारहवाँ मसला विशेष रूप से उनके खंडन में था; बल्कि अधिकांश भाग उनके खंडन में है। यहाँ शायद उनका संकेत देना ही पर्याप्त है। मौलवी साहब की दूसरी जिल्द (खंड), फतवा नंबर 126: उनका कहना: 'हुवल मुसव्विब' (२) (वह सही करने वाला है-अनुवाद)। मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ कि मौलवी साहब की आदत है कि वे हर जवाब से पहले यही शब्द लिखते हैं, जबकि पहला: अल्लाह अज्ज़वजल पर इस नाम का प्रयोग वर्णित नहीं है। दूसरा: भाषाई अर्थ भी इसके सहायक नहीं हैं। शब्दकोश में 'मुसव्विब' वह है जो दूसरे की बात को सही बताए, न कि वह जो उसकी बात को सही बनाए, यानी उसे सही होने की तौफीक दे। 'तस्वीब' (सही ठहराना) बात कहने के बाद होता है।)

---

1. फतावा क़ाज़ीख़ान, किताबुल बुयूँ, बाब फ़ी बयई मालिर-रिबा, नवल किशोर लखनऊ, भारत, 2/407

2. मजमुआ फतावा, किताबुल अक्ल वश-शुर्ब, मतबा यूसुफी लखनवी, भारत, 2/115

पृष्ठ 520 / 715

نیز خانیہ سے اس کے متصل گزرا: فان ارادہ الحیلۃ یا خذ التسعۃ بالتسعۃ و یبرءہ عن الدرھم الباقی۔ (۱) (اگر حیلہ کرنا چاہے تو نو درہم نو درہموں کے بدلے میں لے لے اور باقی ایک درہم سے اس (مقروض) کو بری کر دے۔) (ت)

اگر کہئے یہ قبض بشرط ابراء عن البعض ہوا تو اولاً کیوں نہ کہئے کہ جب سرے سے سو کا نوٹ لے کر سوا سودے رہا ہے تو قرض بعض و ہبہ بعض ہوا پھر اگر زیاد تمتازہ یا تبعیض مضر ہو جب تو بلا خدشہ جائز و صحیح و روا ہے اور آپ کا حکم باطل و پادر ہوا ہے ورنہ غایت یہ کہ بوجہ شیوع ناتمام ہو، رہا کہاں سے آیا۔ ثانیاً: قرض شروطِ فاسدہ سے فاسد نہیں ہوتا بلکہ شرط باطل ہو جاتی ہے تو یہ گئے کہ زید پر پچیس روپے اور واجب رہے نہ کہ سود ہوا۔ فافھم ان کنت تفھم لکنك تفھم انك لاتفھم۔ واللہ سبحانہ و تعالیٰ اعلم۔ (تو سمجھ لے اگر تو سمجھتا ہے لیکن تو سمجھتا ہے کہ بیشک تو نہیں سمجھے گا۔ واللہ سبحانہ و تعالیٰ اعلم) (ت)

ردّوہم بحمد اللہ تعالی مولوی صاحب لکھنوی کے رد میں کلام مشبع گزرا مسئلہ یاز دہم خاص انہیں کے رد میں تھا بلکہ کا اکثر حصہ ان کے رد میں ہے یہاں غالبا ان کا پتا دینے پر اکتفا ہو، مولوی صاحب کی کی جلد دوم فتوی نمبر ۱۲۶: قولہ ھو المصوب (۲) (وہ درست بنانے والا-ت) اقول: (میں کہتا ہوں مولوی صاحب کی عادت ہے کہ ہر جواب سے پہلے یہی لفظ لکھتے ہیں حالانکہ اولاً: اللہ عزوجل پر اس نام کا اطلاق وارد نہیں ہوتا۔ ثانیاً: معنی لغت بھی اس کے مساعد نہیں لغت میں مصوب وہ ہے جو دوسرے کی بات ٹھیک بتائے، نہ وہ جو اس کی بات کو ٹھیک بنائے یعنی اسے توفیق صواب بخشے، تصویب بعد وقوع قول۔)

۱ فتاوی قاضیخان کتاب البیوع باب فی بیع مال الربو نولکشور لکھنو انڈیا ۲/ ۴۰۷ ۲ مجموعہ فتاوی کتاب الاکل والشرب مطبع یوسفی لکھنوی، انڈیا ۲/ ۱۱۵

...happens, and guidance to the right path precedes it.

Thirdly: It has other meanings as well which are impossible for the Lord Almighty; 'Musawwib' is one who bows his head, and 'Musawwib' is a rider who makes a horse run fast. It is mentioned in Al-Qamus:

Sawwabahu: He said to him, "You were right," and Sawwaba Rasahu: He lowered his head.[1]	**Subahu: Said to someone "You spoke correctly," Sawwaba Rasahu: He lowered his head. (T)**

It is mentioned in Taj al-Arus:

Sawwabtu al-Farsa: When you set the horse free to run.[2]	**Sawwabtu al-Farsa: Meaning, I made the horse run fast. (T)**

Yes, 'Musawwib' is also one who lowers someone else's head or brings them down from a height to a depth. It is mentioned in Taj al-Arus:

At-Taswib is the opposite of at-tas'id (ascension). And "Whoever cuts a lote-tree, Allah will bow his head in the Fire," meaning He will overturn it. End of summary.[3]	**Taswib is the opposite of tas'id, and whoever cut a lote-tree, Allah Almighty bowed his head in the Fire. End of summary. (T)**

If this were the case, it would not be mentioned separately from 'The Abaser' (Al-Khafid) and 'The Exalter' (Ar-Rafi), as found in the book Al-Asma wa al-Sifat by Imam al-Bayhaqi (As it is in Imam al-Bayhaqi's book Al-Asma wa al-Sifat. T). Furthermore, since the possessor (mudaf ilayh) is not mentioned, in such contexts, its attribution is understood to be towards the speaker themselves, just as starting with "He is the Guide" (He is the One who gives guidance. T) indicates that the speaker is seeking guidance for themselves. Based on this interpretation, what kind of prayer would this be: "O Lord! Lower the speaker's head; O Lord! Throw him into the depths." Although this discussion was separate from the issue of currency notes, it is appropriate to inform about what is rejected or undesirable. Success is with Allah.

His saying: Although a note is not inherently 'thaman' (money/price), it is treated as 'thaman' by custom.[4]

---

[1] Al-Qamus al-Muhit, Chapter of Sad from the Gate of Ba, Mustafa al-Halabi, Egypt 1/97. [2] Taj al-Arus, Chapter of Sad from the Gate of Ba, Dar Ihya al-Turath al-Arabi,

Beirut 1/321. [3] Taj al-Arus, Chapter of Sad from the Gate of Ba, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut 1/321. [4] Majmu'a Fatawa, Kitab al-Buyu', Matba' Yusufi, Lucknow 1/39.

...होती है और सही मार्ग की तौफ़ीक़ इससे पहले है।

तीसरा: इसके अन्य अर्थ भी हैं जो अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त के लिए असंभव हैं; 'मुसव्विब' वह है जो सिर झुकाए हुए हो, 'मुसव्विब' वह सवार है जो घोड़े को तेज़ दौड़ाए। क़ामूस में है:

स़व्वबहु (Sawwabahu): उसने उससे कहा कि तुमने ठीक बात की, और स़व्वबा रसहू (Sawwaba Rasahu): उसने अपना सिर झुकाया।[1]	**सुबहु: किसी को कहा कि तुमने ठीक बात की, स़व्वबा रसहू: उसने अपना सिर झुकाया। (त)**

ताजुल उरूस में है:

स़व्वब्तुल फर्सा (Sawwabtu al-Farsa): जब तुम उसे दौड़ने के लिए छोड़ दो।[2]	**स़व्वब्तुल फर्सा: यानी मैंने घोड़े को तेज़ दौड़ाया। (त)**

हाँ, 'मुसव्विब' वह भी है जो किसी दूसरे का सिर नीचा करे या ऊँचाई से नीचाई में उतारे। ताजुल उरूस में है:

अत-तस्वीब (At-Taswib), अत-तसईद (ऊपर चढ़ना) के विपरीत है। और "जिसने बेरी का पेड़ काटा, अल्लाह उसका सिर आग में झुका देगा," यानी उसे औंधा कर देगा। इति संक्षेप में।[3]	**तस्वीब, तसईद के खिलाफ है और जिसने बेरी का पेड़ काटा, अल्लाह तआला ने उसका सिर आग में झुका दिया। इति संक्षेप में। (त)**

यदि यह ऐसा होता, तो इसे 'खाफ़िज़-राफ़े (नीचा करने वाला, ऊँचा करने वाला) की तरह अलग से उल्लेख नहीं किया जाता जैसा कि इमाम बैहक़ी की किताब 'अल-अस्मा वल-सिफ़ात' में है (जैसा कि इमाम बैहक़ी की किताब अल-अस्मा वल-सिफ़ात में है। त)। फिर, चूँकि 'मुज़ाफ़ इलैह' (जिसकी ओर सम्बन्ध हो) का उल्लेख नहीं है, तो ऐसे संदर्भों में इसका सम्बन्ध स्वयं बोलने वाले की ओर समझा जाता है, जैसे "वही मार्गदर्शन करने वाला है" (हुवल हादी) (वही हिदायत देने वाला है। त) से शुरू करना इस बात का संकेत है कि कहने वाला अपने लिए मार्गदर्शन मांग रहा है। इस व्याख्या के आधार पर, यह कैसी दुआ हुई कि: "हे ईश्वर! कहने वाले का सिर नीचा कर दे; हे ईश्वर! उसे गहराई में डाल दे।" हालाँकि यह चर्चा नोट के मामले से अलग थी, लेकिन अस्वीकार्य या अवांछनीय के बारे में सूचित करना उचित है। और तौफ़ीक़ अल्लाह ही की ओर से है।

उनका कथन: यद्यपि नोट स्वाभाविक रूप से मूल्य (ثمن) नहीं है, लेकिन सामान्य व्यवहार (उर्फ़) में यह मूल्य के ही हुक्म में है।[4]

---

[1] अल-क़ामूस अल-मुहीत, अध्याय 'साद', द्वार 'बा', मुस्तफा अल-हलबी, मिस्र 1/97। [2] ताजुल उरूस, अध्याय 'साद', द्वार 'बा', दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत 1/321। [3] ताजुल उरूस, अध्याय 'साद', द्वार 'बा', दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत 1/321। [4] मजमुआ फ़तावा, किताबुल बुयूअ, मतबा यूसुफी, लखनऊ 1/39।

ہوتی ہے اور توفیق صواب اس سے مقدم۔

ثالثاً: اس کے اور معنی بھی ہیں کہ باری عزوجل پر محال ہیں، مصوب وہ جو سر جھکائے ہوئے ہو، مصوب وہ سوار کہ گھوڑا تیز چلائے۔ قاموس میں ہے:

صوبہ قال لہ اصبت و راسہ خفضہ ۱ صوبہ کسی کو کہا کہ تو نے ٹھیک بات کی، صوب راسہ اس نے سر جھکایا۔ (ت)

تاج العروس میں ہے:

صوبت الفرس اذا ارسلتہ فی الجری ۲ صوبت الفرس یعنی میں نے گھوڑے کو تیز دوڑایا۔ (ت)

ہاں مصوب وہ بھی ہے کہ دوسرے کا سر نیچا کرے یا بلندی سے پستی میں اتارے۔ تاج العروس میں ہے:

التصویب خلاف التصعید و من قطع سدرۃ صوب اللہ راسہ فی النار ای نکسہ اہ درخت کاٹا اللہ تعالٰی نے اس کا سر آگ میں جھکا دیا اھ مختصرا ۳ تصویب، تصعید کے خلاف ہے اور جس نے بیری کا مختصراً (ت)

یہ اگر ہوتا تو مثل خافض رافع سے جدا نہ بولا جاتا کما فی کتاب الاسماء والصفات للامام البیہقی (جیسا کہ امام بیہقی کی کتاب الاسماء والصفات میں ہے۔ ت) پھر جبکہ مضاف الیہ مذکور نہیں تو امثال مقام میں خود متکلم کی طرف اس کی اضافت مفہوم ہوتی ہے جیسے ھو الہادی (وہی ہدایت دینے والا ہے۔ت) سے شروع کرنا اس پر دلالت کرتا ہے کہ قائل اپنے لئے ہدایت مانگتا ہے اس

تقدیر پر یہ کیا دعا ہوئی کہ الہی! قائل کا سر نیچا کر دے، الہی! اسے پستی میں ڈال دے۔ یہ بحث اگرچہ مسئلہ نوٹ سے جدا تھی مگر منکر یا ناپسندیدہ پر اطلاع دینا مناسب ہے و باللہ التوفیق۔

قولہ: نوٹ ہر چند کہ خلقہ ثمن نہیں مگر عرفاً حکم ثمن میں ہے۔ ٤

---

١ القاموس المحیط فصل الصاد من باب الباء مصطفی الحلبی مصر ١ / ٢ ٩٧ تاج العروس فصل الصاد من باب الباء داراحیاء التراث العربی بیروت ١ / ٣ ٣٢١ تاج العروس فصل الصاد من باب الباء داراحیاء التراث العربی بیروت ١ / ٤ ٣٢١ مجموعہ فتاویٰ کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنو ١ / ٣٩

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

I say first: Likewise annas and paisas as well, then what was gained from this.

Secondly: If this man [claims] that the people of custom establish for it all the Shariah rulings of price (thaman), then it's a manifest error; rather, the generality of the people of custom are not even aware of these rulings, instead this custom is common among believers and disbelievers. And if the purpose is that they consider the banknote as a substitute for it in all those objectives of the people of custom related to price, then even that is wrong. One noble purpose of price is adornment in clothing, luxury in vessels, etc., and a banknote is never a substitute for price in these. And if the meaning is that they consider it a means of proxy in achieving some purposes of price, i.e., wealth accumulation and fulfillment of needs, then the meaning of conventional price (thaman istilahi) itself is that the people of custom, by their convention, use it like price for these purposes. Then how did the proof for all Shariah rulings of price come from this? Is there no difference in Shariah rulings between natural price (thaman khalqi) and conventional price?

Thirdly: Being in the ruling of a thing is not identity with the thing in its genus and measure, and here, according to the explicit text of Hadith and all books of jurisprudence, this is the basis. His statement "rather, it is considered identical to price" (1).

I say first: Identity with conventional price, like the union of special and general, is accepted but it is of no use to you. And identity with natural price, i.e., gold and silver, is not accepted. Even an intelligent child does not understand that a note has literally become silver or gold. If the speaker's intention is that in transactions they consider it as such, like a rupee or an ashrafi, then this is merely being in the ruling of price customarily, not being considered identical to price. So, "rather" (balkay) becomes redundant or rather wrong.

Secondly: A note is obviously conventional price, and conventional and natural are distinct, and identity between distinct things is impossible, and the people of custom are not insane, and the mentioned interpretation is alienated from "rather".

Thirdly: If for the sake of argument, wrongly, the people of custom did understand it as such, then the pure Shariah does not uphold the religion of subjectivism ('indiyyah) or insanity, such that because of their understanding, it would itself declare it identical to price and enforce all the rulings of price.

Fourthly: Natural price is a genus confined to two types, gold and silver, and a note in itself is an independent type. Considering its very concept as the universal meaning of genus is obviously false. Similarly, identity with disparate and distinct types, and the identity of special and general with the genus, would result in triplicity (tathlith). Besides being false in Shariah, it would revert the intent back to the text, as in different types of price, by explicit Hadith and consensus of the Ummah, disparity in exchange is lawful.

---

1. Majmu'ah Fatawa, Kitab al-Buyu', Matba' Yusufi, Lucknow, 1/39.

फतावा रज़विय्या (जिल्द 17)

मैं पहले कहता हूँ: इसी प्रकार आने और पैसे भी, फिर इससे क्या हासिल हुआ।

दूसरा: यदि यह व्यक्ति [दावा करता है] कि प्रचलित लोग (अहले उरफ़) इसके लिए मूल्य (थमन) के सभी शरीयत के अहकाम स्थापित करते हैं, तो यह स्पष्ट रूप से गलत है; बल्कि सामान्य प्रचलित लोग इन अहकामों से अवगत भी नहीं हैं, इसके बजाय यह उरफ़ (प्रथा) मोमिनों और काफिरों में साझा है। और यदि उद्देश्य यह है कि मूल्य से संबंधित प्रचलित लोगों के जिन उद्देश्यों का संबंध है, उन सब में वे नोट को उसका प्रतिनिधि (कायम मकाम) समझते हैं, तब भी यह गलत है। मूल्य के उद्देश्यों में से एक उत्तम उद्देश्य वस्त्रों में सजावट और बर्तनों आदि में विलासिता है, और नोट किसी भी तरह से इनमें मूल्य का प्रतिनिधि नहीं है। और यदि इसका अर्थ यह है कि वे इसे मूल्य के कुछ उद्देश्यों, यानी धन संचय और आवश्यकताओं की पूर्ति में इसके माध्यम से मध्यस्थता में प्रतिनिधि मानते हैं, तो पारिभाषिक मूल्य (थमन इस्तलाही) का अर्थ ही यह है कि प्रचलित लोग अपनी परिभाषा से इन उद्देश्यों में इसे मूल्य की तरह काम में लाते हैं। फिर इससे मूल्य के सभी शरीयत के अहकामों का प्रमाण कैसे हो गया? क्या प्राकृतिक (थमन खलकी) और पारिभाषिक मूल्य के अहकामों में शरीयत के अनुसार कोई अंतर नहीं है?

तीसरा: किसी चीज़ के हुक्म (नियम) में होना, उस चीज़ के साथ उसकी लिंग (जिंस) और मात्रा (क़दर) में एकता नहीं है, और यहाँ हदीस और फ़िक़्ह की सभी पुस्तकों के स्पष्ट उल्लेख के अनुसार इसी पर आधार है। उनका यह कथन "बल्कि इसे साक्षात मूल्य (ऐन-ए-थमन) समझा जाता है" (1)।

मैं पहले कहता हूँ: पारिभाषिक मूल्य (थमन इस्तलाही) से साक्ष्यता (ऐनियत), जैसे विशेष और सामान्य का मिलन, स्वीकार्य है लेकिन वह आपके लिए उपयोगी नहीं है। और प्राकृतिक मूल्य (थमन खलकी) यानी सोने और चाँदी से साक्ष्यता स्वीकार्य नहीं है। कोई समझदार बच्चा भी यह नहीं समझता कि नोट साक्षात चाँदी या सोना बन गया है। यदि कहने वाले का तात्पर्य यह है कि लेन-देन में वे इसे वैसा ही समझते हैं जैसे रुपया या अशर्फ़ी, तो यह केवल प्रथागत रूप से मूल्य के हुक्म में होना हुआ, न कि साक्षात मूल्य समझा जाना। तो "बल्कि" (बल्के) शब्द निरर्थक बल्कि गलत हुआ।

दूसरा: नोट प्रत्यक्षतः पारिभाषिक मूल्य है, और पारिभाषिक तथा प्राकृतिक अलग-अलग हैं, और दो अलग चीजों में साक्ष्यता (ऐनियत) असंभव है और प्रचलित लोग पागल नहीं हैं, और उक्त व्याख्या "बल्कि" शब्द से बेमेल है।

तीसरा: यदि गलत रूप से यह मान भी लिया जाए कि प्रचलित लोग ऐसा समझते थे, तो पवित्र शरीयत 'इंदिया' (विषयपरकता) या पागलपन के धर्म को मान्यता नहीं देती कि उनके समझ लेने से वह खुद भी इसे साक्षात मूल्य करार देकर मूल्य के सभी अहकाम लागू कर दे।

चौथा: प्राकृतिक मूल्य एक लिंग (जिंस) है जो दो प्रकारों, सोने और चाँदी में सीमित है, और नोट अपने आप में एक स्वतंत्र प्रकार है। इसकी मूल अवधारणा को लिंग का समग्र अर्थ समझा जाना तो स्पष्ट रूप से गलत है। इसी तरह भिन्न और अलग प्रकारों के साथ साक्ष्यता और लिंग के साथ विशेष और सामान्य की एकता 'तथ्लीथ' (त्रित्व) पैदा करेगी। शरीयत में गलत होने के अलावा, यह इरादे को मूल पाठ (नस्) की ओर वापस ले जाएगा कि मूल्य के विभिन्न प्रकारों में हदीस और उम्मत की सर्वसम्मति के स्पष्ट उल्लेख के अनुसार कमी-बेसी (तफ़ाज़ुल) हलाल है।

---

1. मजमुआ फ़तावा, किताबुल बुयूअ, मतबा यूसुफ़ी लखनऊ 1/ 39

اقول اولاً: یونہی اکنیاں اور پیسے بھی، پھر اس سے کیا حاصل ہوا۔

ثانیاً: اگر یہ مرد کہ اہلِ عرف اس کے لئے ثمن کے جملہ احکام شرعیہ ثابت کرتے ہیں تو صریح غلط بلکہ عامہ اہلِ عرف ان احکام سے آگاہ بھی نہیں بلکہ یہ عرف مومنین و کافرین میں مشترک، اور اگر یہ مقصود کہ ثمن سے جو اغراض اہلِ عرف متعلق ہیں ان سب میں نوٹ کو اس کا قائم مقام سمجھتے ہیں جب بھی غلط ثمن کے مقاصد سے ایک عمدہ مقصد لباس میں تزین ظروف وغیرہا میں تجمل ہے، اور نوٹ ہر گز اس میں قائم مقام ثمن نہیں، اور اگر یہ مطلب کہ ثمن کے بعض اغراض یعنی تمول اور حوائج تک اس کے ذریعہ سے توسل میں نائب مناب جانتے ہیں تو ثمن اصطلاحی کے معنی ہی یہ ہیں کہ اہلِ عرف اپنی اصطلاح سے ان اغراض میں اسے مثلِ ثمن کام میں لائیں پھر اس سے جملہ احکام شرعیہ ثمن کا ثبوت کیونکر ہو گیا کیا ثمن خلقی واصطلاحی میں شرعاً فرقِ احکام نہیں۔

ثالثاً: حکم شیئی میں ہونا جنس و قدر شیئی میں شیئی سے اتحاد نہیں اور یہاں بتصریح حدیث و جملہ کتبِ فقہ اسی پر مدار ہے۔ قولہ بلکہ عینِ ثمن سمجھا جاتا ہے ۱۔

اقول اولاً: ثمن اصطلاحی سے عینیت مثلِ اتحادِ خاص و عام مسلم مگر وہ آپ کو مفید نہیں اور ثمن خلقی یعنی زر و سیم سے عینیت مسلم نہیں، کوئی سمجھ والا بچہ بھی نہیں سمجھتا کہ نوٹ بعینہ چاندی سونا ہو گیا، اگر کہنے مراد یہ ہے کہ لین دین میں اسے ایسا ہی سمجھتے ہیں جیسے روپیہ اشرفی، تو یہ وہی عرفاً حکمِ ثمن میں ہونا ہوا نہ کہ عینِ ثمن سمجھا جانا، تو "بلکہ" لغو بلکہ غلط ہوا۔

ثانیاً: نوٹ بداہتہً ثمنِ اصطلاحی ہے اور اصطلاحی و خلقی متباین اور متباینین میں عینیت محال اور اہلِ عرف مجانین نہیں اور تاویل مذکور "بلکہ" سے مہجور۔

ثالثاً: اگر بفرضِ غلط اہلِ عرف ایسا سمجھ بھی لیتے تو شرع مطہر تو عندیہ کا مذہب جنون روا نہیں رکھتی کہ ان کے سمجھ لینے سے خود بھی اسے عینِ ثمن قرار دے کر جملہ احکام ثمن نافذ فرمادے۔

رابعاً: ثمن خلقی جنس ہے دو قسم ذہب و فضہ میں منحصر، اور نوٹ فی نفسہ ایک نوع مستقل ہے، اس کا عین مفہوم کلی معنی جنس سمجھا جانا تو بداہتہً باطل، اسی طرح انواع مباینہ و متباینہ سے عینیت اور جنس سے اتحادِ خاص و عام کی عینیت تثلیث کرے گی اور وہ شرعاً باطل ہونے کے علاوہ مقصود پر نص سے عود کرے گی کہ انواع مختلفہ ثمن میں بتصریح حدیث اجماع امت تفاضل حلال۔

---

۱ مجموعہ فتاویٰ کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنؤ ۱/ ۳۹

Fatawa-e-Razawiyya, Volume 17 (17)

Statement (Qawl): It is because if someone destroys a hundred-rupee note, the original owner takes a hundred rupees as compensation[1].

Response (Aqul): Firstly: If someone destroys a horse worth a hundred rupees, the owner still takes a hundred rupees as compensation. So, did the horse and the money also become the same ('ain)? Then the note would also become a horse, as it would be the 'ain of 'ain. And the word 'original' (asl) is redundant here.

Secondly: This was based on the apparent wording. Now listen to the resolution: by "takes" it is meant taking voluntarily, or it means that this is the Shari'ah ruling that there will be compulsion upon him. The first is accepted, and through it, the illusion of 'identity' (ainiyat) is dispelled. And if you try to patch it by not understanding the difference, even then it is futile (layughni min juu'). If someone destroys 64 paise of another, the owner might voluntarily take one rupee, and he would perceive no difference between taking one rupee or 64 paise; this doesn't mean the rupee and the paise have become identical. In the second case, if compulsion is on the one who caused the loss, i.e., forcing him to give only rupees, or on the owner to force him to accept the money, the first is explicitly false. He can also give a hundred-rupee note, and the owner has no reason to refuse. In fact, that is the original ruling because a note is 'mithli' (fungible). Moreover, the purpose of the text is that when destruction of a note leads to the payment of dirhams, the note is considered valuable ('qimti') and the rupee is 'mithli', and 'qimti' and 'mithli' cannot be considered the same. Secondly, even if accepted, it doesn't prove identity because in current currencies, while equality of usage and value is maintained, the payer has a choice and refusal is stubbornness. See the explanation on pages 185 to 190 of the treatise.

Statement (Qawl): And when a hundred-rupee note is sold, the objective is not to get the price of that paper, because it is obvious that the paper is not worth even two paise; rather, the objective is to sell the hundred rupees and take its price[2].

Response (Aqul): (13 to 17) Five rebuttals to this have already passed in the footnotes of page 184. And (18 to 22) regarding the claim that the paper is not worth even two paise, five rebuttals to that have also passed on four pages: 124, 125, 128, 129. First: according to the clarification of scholars, a piece of paper can be sold for a thousand rupees just by the mutual consent of the contracting parties, let alone the convention of millions of people here. Second: currency is valuable. Third: an insignificant thing can become more expensive than thousands of its peers due to some attribute.

Fourth: the issue of the 'leaf of knowledge' (waraq-e-ilm). And the fifth rebuttal is on pages 138, 139 regarding valuation (taqwum).

[1] Majmu'a-e-Fatawa, Kitab-ul-Buyu', Matba' Yusufi, Lucknow, 1/39 [2] Majmu'a-e-Fatawa, Kitab-ul-Buyu', Matba' Yusufi, Lucknow, 1/39

फ़तावा-ए-रज़विया, खंड 17 (17)

कथन (क़ौल): इस कारण से कि यदि कोई सौ रुपये का नोट नष्ट कर देता है, तो मूल मालिक सौ रुपये मुआवजे के रूप में लेता है[1]।

उत्तर (अक़ूल): प्रथमतः: यदि कोई सौ रुपये का घोड़ा नष्ट कर देता है, तब भी मालिक सौ रुपये मुआवजा लेता है। तो क्या घोड़ा और रुपये भी एक ही चीज़ (ऐन) हो गए? फिर तो नोट भी घोड़ा हो जाएगा क्योंकि वह ऐन का ऐन है। और 'मूल' (असल) शब्द यहाँ व्यर्थ है।

द्वितीयतः: यह तो प्रत्यक्ष शब्दों पर आधारित था। अब समाधान सुनिए: "लेता है" से तात्पर्य स्वेच्छा से लेना है, या यह कि यही शरीयत का हुक्म है कि उस पर दबाव होगा। पहला स्वीकार्य है और इससे 'अभिन्नता' (ऐनियत) का भ्रम दूर हो जाता है। और यदि आप अंतर न समझने का पैबंद लगाएँ तब भी यह निरर्थक (लयुग़नी मिन जूअ) है। यदि कोई किसी के64 पैसे नष्ट कर दे, तो मालिक स्वेच्छा से एक रुपया ले सकता है और वह एक रुपया लेने और 64 पैसे लेने में कोई अंतर नहीं समझेगा; इसका अर्थ यह नहीं है कि रुपया और पैसे एक हो गए। दूसरे मामले में, यदि दबाव नुकसान करने वाले पर है, यानी उसे केवल रुपये देने के लिए मजबूर किया जाएगा, या मालिक पर कि उसे पैसे स्वीकार करने के लिए मजबूर किया जाएगा, तो पहला स्पष्ट रूप से असत्य है। वह सौ का नोट भी दे सकता है और मालिक के पास इनकार करने का कोई कारण नहीं है। बल्कि यही मूल नियम है कि नोट 'मिस्ली' (एक जैसी वस्तुओं में से एक) है। इसके अलावा, पाठ का उद्देश्य यह है कि जब नोट के नष्ट होने पर दिरहम का भुगतान हो, तो नोट को कीमती माना जाए और रुपया 'मिस्ली' है, और कीमती और मिस्ली को एक नहीं समझा जा सकता। और दूसरी बात, स्वीकार किए जाने पर भी यह अभिन्नता सिद्ध नहीं करता क्योंकि प्रचलित मुद्राओं में, उपयोग और मूल्य की समानता के साथ, भुगतान करने वाला स्वतंत्र होता है और इनकार करना हठ है। इसका विवरण रिसाला के पृष्ठ 185 से 190 तक देखें।

कथन (क़ौल): और जब सौ रुपये का नोट बेचा जाता है, तो उसका उद्देश्य उस कागज़ की कीमत प्राप्त करना नहीं होता, क्योंकि यह स्पष्ट है कि वह कागज़ दो पैसे का भी नहीं है; बल्कि उद्देश्य सौ रुपये बेचना और उसकी कीमत लेना होता है[2]।

उत्तर (अक़ूल): (13 से 17) इसके पाँच खंडन पृष्ठ 184 के हाशिये में बीत चुके हैं। और (18 से 22) वह जो कहा गया कि वह कागज़ दो पैसे का भी नहीं है, उसके भी पाँच खंडन चार पृष्ठों 124, 125,

128, 129 पर बीत चुके हैं। पहला: विद्वानों के स्पष्टीकरण के अनुसार, कागज़ का एक टुकड़ा केवल अनुबंध करने वाले पक्षों की आपसी सहमति से हज़ार रुपये में बिक सकता है, यहाँ तो लाखों लोगों की परिपाटी की बात ही क्या। दूसरा: सिक्का मूल्यवान है। तीसरा: एक तुच्छ चीज़ किसी विशेषता के कारण अपने हज़ारों समकक्षों से महँगी हो जाती है। चौथा: ज्ञान के पन्ने (वरक़-ए-इल्म) का मसला। और पाँचवाँ खंडन पृष्ठ 138, 139 पर है जो मूल्य निर्धारण (तक़वूम) से संबंधित है।

[1] मजमूआ-ए-फ़तावा, किताब-उल-बुयू, मतबा यूसुफ़ी, लखनऊ, 1/39 [2] मजमूआ-ए-फ़तावा, किताब-उल-बुयू, मतबा यूसुफ़ी, लखनऊ, 1/39

पृष्ठ 715 का 523

فتاویٰ رضویہ ، جلد ہفدہم (۱۷)

قولہ: اس وجہ سے کہ اگر نوٹ سو روپے کا کوئی ہلاک کردے تو اصل مالک سو روپے تاوان لیتا ہے ۱۔

اقول اولاً: اگر کوئی سو روپے کا گھوڑا ہلاک کردے جب بھی مالک سو روپے تاوان لیتا ہے تو کیا گھوڑا اور روپے بھی عین ہوگئے اور پھر نوٹ بھی گھوڑا ہو جائے گا کہ عین کا عین ہے۔ اور لفظ اصل حشو ہے۔

ثانیاً: یہ تو ظاہر عبارت پر تھا اب حل سنئے "لیتا ہے" سے بخوشی لینا مراد یا یہ کہ وہی حکم شرع ہے کہ اس پر جبر ہوگا اول مسلم اور اس سے وہم عینیت مدفوع، اور اگر فرق نہ سمجھنے کا پیوند لگائیے جب بھی لایغنی من جوع کوئی ۶۴ پیسے کسی کے تلف کر دے تو مالک بخوشی ایک روپیہ لے لے گا اور اس میں اور ۶۴ پیسے لینے میں کچھ فرق نہ سمجھے گا اس سے روپیہ اور پیسے متحد نہ ہوگئے اور ثانی میں جبر متلف پر ہے یعنی اسے روپے ہی دینے پر مجبور کرینگے یا مالک پر کہ اسے قبول زر پر جبر کرینگے اول صراحۃً باطل، وہ سو کا نوٹ بھی دے سکتا ہے اور مالک کو انکار کی کوئی وجہ نہیں بلکہ وہی حکم اصلی ہے کہ نوٹ مثلی ہے معذایہ مقصود پر نص کے ساتھ عائد ہوگا کہ اتلاف نوٹ میں ادائے دراہم پر جب ہو تو نوٹ قیمتی ٹھہرے اور روپیہ مثلی ہے اور قیمت و مثلی ایک نہیں سمجھے جاسکتے اور ثانی بر تقدیر تسلیم مفید عینیت نہیں کہ اثمان رائج میں بحال تساوی رواج و مالیت ادا کرنیوالا مخیر ہوتا ہے اور انکار تعنت۔ اس کا بیان رسالہ کے ص ۱۸۵ سے ۱۹۰ تک دیکھئے۔

قولہ: اور سو روپے کا نوٹ جب بیچا جاتا ہے تو مقصود اس سے قیمت ملنا اس کاغذ کی نہیں ہوتی ہے کیونکہ پر ظاہر ہے کہ وہ کاغذ دو پیسہ کا بھی نہیں ہے بلکہ مقصود سو روپے کا بیچنا اور اسکی قیمت لینا ہوتا ہے۲۔

اقول: (۱۳ تا ۱۷) اسکے پانچ رد حاشیہ ص ۱۸۴ میں گزرے، اور (۱۸ تا ۲۲) وہ جو کہا کہ وہ کاغذ دو پیسہ کا بھی نہیں اس کے بھی پانچ رد گزرے ۴ صفحہ ۱۲۴، ۱۲۵، ۱۲۸، ۱۲۹ پر، اول یہ کہ حسب تصریح علماء کاغذ کا ایک ٹکڑا صرف عاقدین کی تراضی سے ہزار روپے کو بک سکتا ہے نہ یہ کہ یہاں لاکھوں آدمیوں کی اصطلاح۔ دوم سکہ قیمتی ہے، سوم حقیر شیء کسی وصف کے سبب اپنے ہزاروں سے امثال سے گراں ہوجاتی ہے۔ چہارم ورق علم کا مسئلہ اور پانچوں رد صفحہ ۱۳۸، ۱۳۹ پر کہ تقوم۔

۱ مجموعہ فتاوٰی کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنو ۱/ ۳۹ ۲ مجموعہ فتاوٰی کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنو ۱/ ۳۹

Fatawa Razawiyya Volume 17

...is focused on the current state, not the origin.

Quote: And if a person takes a loan of a hundred-rupee note, then at the time of repayment, whether they give a hundred-rupee note or a hundred rupees [in coins/ other notes], both matters are considered equal. The creditor has no objection to receiving either from the debtor, whereas if the debtor gives something of a different category at the time of repayment, the creditor does not accept it. (1)

I say, firstly: If someone takes a loan of fifteen rupees, and at the time of repayment gives fifteen rupees or one sovereign [gold coin], both matters are considered equal, and the creditor has no objection to receiving either. However, if the debtor gives a different category, the creditor does not accept. Thus, according to you, rupees and ashrafis, i.e., silver and gold, also became of the same category. Since their value was already uniform, it would become a definitive obligation that when gold is sold for silver, both must be exactly equal in weight on the scale. If there is a slight decrease or increase of even a 'ratti' [small weight unit], it would be usury, a forbidden major sin, deserving of hellfire and painful punishment. This is contrary to the definitive consensus of the entire blessed Ummah, continuous transmission, and the intellect of all wise people in the world.

Secondly: If someone borrows eight annas worth of copper coins, then at the time of repayment, giving copper coins, eight 'annies' [half-anna coins], or one 'athanni' [eight-anna silver coin] are all considered equal. The creditor has no objection to receiving either. However, if the debtor gives a different category, the creditor does not accept. Therefore, silver and copper also became of the same category. And silver and gold were already unified [in your logic], so copper and gold also became one category, because things unified with a common thing are themselves unified. And since value was uniform among them all, it would be a definitive obligation to sell a 'tola' [weight unit] of gold for only two paisas. If it's even one 'chhadam' more, it's usury and the fire of Hell, and we seek refuge with Allah Almighty. What more can I say, but if money changers acted on this fatwa, the market would collapse in a single day.

Thirdly: If someone takes fifteen rupees worth of notes as a loan, one ten-rupee and one five-rupee note, or three five-rupee notes, then at the time of repayment, whether they give a fifteen-rupee note or one sovereign, both are considered equal. The creditor has no objection to receiving either. However, if the debtor gives a

different category, the creditor does not accept. So now notes and gold became one category, and you have already made notes and silver one category. Yet silver and gold are definitively two distinct, separate categories; hence, by the consensus of the Ummah and continuous transmission, disparity [in weight/value] between them is permissible. So how can one thing be unified with two distinct types? It is clear that considering the absence of objection as evidence for the unification of categories was a severe and false delusion; rather, its...

---

1. Majmu'a-e-Fatawa, Kitab al-Buyu', Matba' Yusufi, Lucknow, 1/39 Page 524 of 715

...वर्तमान स्थिति पर नज़र है न कि मूल पर।

प्र: और यदि कोई व्यक्ति सौ रुपये का नोट उधार ले, तो अदायगी के समय चाहे वह सौ रुपये का नोट दे या सौ रुपये [सिक्कों/अन्य नोटों में], दोनों बातें समान मानी जाती हैं और लेनदार को कर्जदार से इनमें से किसी को लेने में कोई आपत्ति नहीं होती, जबकि यदि कर्जदार अदायगी के समय किसी भिन्न श्रेणी की वस्तु दे तो लेनदार उसे नहीं लेता है। (1)

मैं कहता हूँ, प्रथम: यदि कोई पन्द्रह रुपये उधार ले और अदायगी के समय पन्द्रह रुपये दे या एक सॉवरेन [सोने का सिक्का], तो दोनों बातें समान मानी जाती हैं और लेनदार को इनमें से किसी को लेने में कोई आपत्ति नहीं होती। हालांकि, यदि कर्जदार भिन्न श्रेणी की वस्तु दे तो लेनदार उसे नहीं लेता। तो आपके अनुसार रुपये और अशर्फी यानी चाँदी और सोना भी एक ही श्रेणी (जिन्स) के हो गए। और मूल्य तो पहले से ही समान था, तो यह एक निश्चित अनिवार्यता हो गई कि जब सोने को चाँदी के बदले बेचा जाए, तो दोनों तराजू के काँटे पर बिल्कुल बराबर हों। यदि रत्ती भर भी कमी या अधिकता हुई, तो वह सूद (ब्याज) होगा जो हराम और गुनाहे कबीरा है और जहन्नुम की आग और दर्दनाक अज़ाब का हकदार बनाता है। यह पूरी उम्मते मरहूमा के निश्चित इजमा (सहमति), लगातार परंपरा और दुनिया के सभी बुद्धिमानों की अक्ल के खिलाफ है।

द्वितीय: यदि कोई आठ आने के पैसे उधार ले, तो अदायगी के समय चाहे पैसे दिए जाएँ या आठ अन्नियाँ या एक अठन्नी, तीनों बातें समान मानी जाती हैं। लेनदार को इनमें से किसी को लेने में कोई आपत्ति नहीं होती। हालांकि, यदि कर्जदार भिन्न श्रेणी की वस्तु दे तो लेनदार उसे नहीं लेता। तो चाँदी और ताँबा भी एक ही श्रेणी के हो गए। और चाँदी और सोना पहले ही [आपके तर्क में] एक हो चुके हैं, तो ताँबा और सोना भी एक ही श्रेणी के हो गए क्योंकि जो चीजें किसी एक चीज़ के साथ एकीकृत हों वे आपस में भी एकीकृत होती हैं। और उन सब में मूल्य तो समान था ही, तो यह निश्चित अनिवार्यता हो गई कि एक तोला सोना केवल दो पैसे में बेचा जाए। यदि एक छदाम भी अधिक हुआ तो सूद का सामना और जहन्नुम की आग है, और हम अल्लाह तआला की पनाह माँगते हैं। और क्या कहूँ, लेकिन अगर सर्राफ़ (मुद्रा परिवर्तक) इस फ़तवे पर अमल कर लें तो बाज़ार एक ही दिन में तबाह हो जाए।

तृतीय: यदि कोई पन्द्रह रुपये के नोट उधार ले, एक दस का और एक पाँच का, या तीनों पाँच-पाँच के, तो अदायगी के समय चाहे वह पन्द्रह का नोट दे या एक सॉवरेन, दोनों समान समझे जाते हैं और

लेनदार को इनमें से किसी को लेने में आपत्ति नहीं होती। हालांकि, यदि कर्जदार भिन्न श्रेणी की वस्तु दे तो लेनदार उसे नहीं लेता। तो अब नोट और सोना एक ही श्रेणी के हो गए और आप नोट और चाँदी को एक श्रेणी बना चुके हैं। जबकि चाँदी और सोना निश्चित रूप से दो अलग-अलग श्रेणियाँ हैं, इसलिए उम्मत के इजमा और निश्चित परंपरा के आधार पर उनके बीच कमी-बेशी (तफ़ाज़ुल) जायज़ है। तो एक चीज़ दो अलग-अलग प्रकारों के साथ कैसे एकीकृत हो गई? स्पष्ट हुआ कि आपत्ति न होने को श्रेणियों के एकीकरण का प्रमाण समझना एक गहरा और झूठा भ्रम था, बल्कि इसकी...

---

1. मजमुआ-ए-फ़तावा, किताबुल बुयूअ, मतबा यूसुफ़ी, लखनऊ, 1/39 पेज 524 of 715

میں حال پر نظر ہے نہ کہ اصل پر۔

قولہ: اور نوٹ سو روپے کا اگر کوئی شخص قرض لے تو بوقت ادا خواہ نوٹ سو روپے کا دیوے یا سو روپے دیوے دونوں امر مساوی سمجھے جاتے ہیں اور دائن کو کسی کے لینے میں مدیون سے عذر نہیں ہوتا حالانکہ اگر مدیون غیر جنس بوقت ادا دیوے تو دائن نہیں لیتا ہے۔ ۱۔ہ

اقول اولاً: پندرہ روپے اگر کوئی قرض لے تو وقت ادا پندرہ روپے دے یا ایک ساورن دونوں امر مساوی سمجھے جاتے ہیں اور دائن کو کسی کے لینے میں عذر نہیں ہوتا حالانکہ مدیون غیر جنس دے تو دائن نہیں لیتا تو آپ کے نزدیک روپے اور اشرفی یعنی چاندی اور سونا بھی جنس واحد ہوئے اور قدر تو متحد تھی ہی تو فرض قطعی ہوا کہ سونا جب چاندی سے بیچیں دونوں کانٹے کی تول برابر کرلیں رتی بھر کمی و بیشی ہوئی تو سود حرام و گناہ کبیرہ و استحقاق نارِ جحیم و عذابِ الیم ہو گا یہ اجماع قطعی جمیع امت مرحومہ و تواتر قطعی و عقل جملہ عقلائے عالم سب کے خلاف ہے۔

ثانیاً: آٹھ آنے پیسے اگر کوئی قرض لے تو وقت ادا پیسے ہی دیئے یا آٹھ انیاں یا ایک اٹھنی تینوں امر مساوی سمجھے جاتے ہیں دائن کو کسی کے لینے میں عذر نہیں ہوتا حالانکہ مدیون غیر جنس دے تو دائن نہیں لیتا تو چاندی اور تانبا بھی جنس واحد ہوئے اور چاندی اور سونا پہلے متحد ہو چکے ہیں تو تانبا اور سونا بھی ایک جنس ہوئے کہ متحد کا متحد متحد ہوتا ہے اور ان سب میں قدر تو متحد تھی ہی تو فرض قطعی ہوا کہ تولہ بھر سونا دو ہی پیسے کو بیچا جائے ایک چھدام بھی

زیادہ ہوا تو سود کا سامنا اور جہنم کی آگ ہے والعیاذ باللہ تعالیٰ، اور تو کیا عرض کروں لیکن صراف اگر اس فتوے پر عمل کرلیں تو بازار تو ایک ہی دن میں پٹ جائے۔

ثالثاً: پندرہ روپے کے نوٹ اگر کوئی قرض لے ایکدس اور ایک پانچ کا، یا تینوں پانچ پانچ کے، تو بوقت ادا خواہ پندرہ کے نوٹ دے یا ایک ساورن، دونوں مساوی سمجھے جاتے ہیں اور دائن کو کسی کے لینے میں عذر نہیں ہوتا حالانکہ مدیون غیر جنس دے تو دائن نہیں لیتا تو اب نوٹ اور سونا ایک جنس ہوئے اور آپ نوٹ اور چاندی ایک جنس کرچکے ہیں اور چاندی اور سونا قطعاً دو جنس متباین ہیں ولذا باجماعِ امت و تواترِ قطعی ان میں تفاضل روا ہے تو شیئ واحد دو نوعِ متباین سے کیونکر متحد ہو گئی۔ ظاہر ہوا کہ اس عذر نہ ہونے کو مفید اتحادِ جنس سمجھنا سخت وہم باطل تھا بلکہ اس کی

۱؎ مجموعہ فتاوٰی کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنو ۱/ ۳۹ Page 524 of 715

The reason was the same equality of custom and financial value, which was explained from page 97 to page 101. Fourthly: The solution is that without excuse, i.e., acceptance of the right-holder and unity of species, there is a general-specific relationship from one aspect. Sometimes there is unity of species but no acceptance, for example, someone buying gold jewelry will not accept gold coins (ashrafis) in return. And sometimes there is acceptance but no unity of species, for example, fifteen rupees and an ashrafi, rupees and currency notes, notes and an ashrafi, an eight-anna coin and paisas, an eight-anna coin and one-anna coins. The common substance is apparent, so arguing for the acquisition of one from the existence of the other is like saying "this is white paper, therefore it is an animal, therefore it is white." There is no power or strength except through Allah. Fifthly: This doubt is the same as what was stated regarding the destruction of a note. There, compensation arose from destruction; here, from debt—it's the same thing. This is the root of all of Molvi Sahib's doubts. For the sake of making it sound impressive, he repeats it several times with minor word changes. Yes, it must be noted that the first statement was extremely deficient and inadequate, yet even now the full point has not been conveyed. "Not having an excuse" does not necessitate "not being able to have an excuse." It's possible that despite the difference in species, there may be no excuse due to some specific purpose or reason. Yes, "not being able to have an excuse" might cast some doubt, but we have already dispelled that in these pages using references from Bahr-al-Raiq and Durr-al-Mukhtar, stating that legally, despite the difference in species, at the time of equal custom and value, acceptance is enforced, and refusal is considered obstinacy. Thus, the root of the doubt has been uprooted from its base. Praise be to Allah. Sixthly: The subtle irony is that while he just established the note as worthless, saying it's not even worth two paisas as paper, separating it from the transaction and applying the contract solely to the rupees. And immediately after, without any gap, he tries to apply the contract to the note itself and make it identical to the species of cash. How amusingly contradictory this is. Seventhly: I am pointing out a single contradiction: in the first sentence, the note was called a hundred rupees' worth of property for which a hundred-rupee fine was imposed. In the second sentence, he ordered its banishment from the subjects of the contract, saying that realistically rupees are what sell, while that paper isn't worth even a penny. In the third sentence, if that same paper turns over, it becomes a hundred rupees—rather, it becomes identical in species with a hundred rupees.

Eighthly: The beauty is that the claim made was that the note is considered the actual price (thaman), and this will be repeated until the end. And in its proofs, it's argued that the intention is to sell the rupees, not the paper. Yet every person knows it's nothing but this paper. If the note were considered the actual price, then the intention would be to sell this paper itself, not the rupees. Thus, the proof contradicts the claim. Understand this! (Note: "Fa-fham" means "so understand"). Note: This points to the fact that in most cases from these three and 13 to 26, for the purpose of apology (Continued on the next page).

वजह वही बराबरी के रिवाज और माली मूल्य की थी जिसका उल्लेख पृष्ठ 97 से पृष्ठ 101 तक किया गया। चौथा: समाधान यह है कि बिना किसी बहाने के यानी हकदार की स्वीकृति और जाति की एकता के बीच एक तरह का सामान्य-विशिष्ट संबंध है। कहीं जाति की एकता है लेकिन स्वीकृति नहीं, जैसे सोने के आभूषण खरीदने वाला बदले में अशर्फियाँ नहीं लेगा। और कहीं स्वीकृति है लेकिन जाति की एकता नहीं, जैसे पंद्रह रुपये और अशर्फी, रुपये और नोट, नोट और अशर्फी, अठन्नी और पैसे, अठन्नी और एकन्नियाँ। सामान्य पदार्थ स्पष्ट है, तो एक के अस्तित्व से दूसरे की प्राप्ति पर तर्क करना वैसा ही है जैसे यह कहना कि "यह सफेद कागज है, इसलिए यह जानवर है, इसलिए यह सफेद है।" अल्लाह के सिवा कोई शक्ति या सामर्थ्य नहीं है। पाँचवाँ: यह वही संदेह है जो नोट को नष्ट करने के बारे में कहा गया था। वहाँ नष्ट करने से हर्जाना आया था, यहाँ कर्ज से—बात एक ही है। और यही मौलवी साहब के तमाम संदेहों की जड़ है। इसे शानदार बनाने के लिए वे इसे बार-बार एक-दो शब्द बदलकर दोहराते हैं। हाँ, यह अवश्य कहना पड़ेगा कि पिछला कथन अत्यंत दोषपूर्ण और अपर्याप्त था, लेकिन पूरी बात अब भी व्यक्त नहीं हुई है। "बहाना न होना" का अर्थ यह नहीं है कि "बहाना न हो पाना"। संभव है कि जाति की भिन्नता के बावजूद किसी विशेष उद्देश्य या कारण से कोई बहाना न हो। हाँ, "बहाना न हो पाना" कुछ संदेह पैदा कर सकता है, लेकिन हमने इन्हीं पृष्ठों में 'बहर-उर-राइक' और 'दुर्र-उल-मुख्तार' के हवाले से इसका निवारण कर दिया है कि शरीयत के अनुसार भी, जाति की भिन्नता के बावजूद, रिवाज और मूल्य की बराबरी के समय स्वीकृति पर मजबूर किया जाता है और बहाना बनाना हठधर्मी माना जाता है। तो अब संदेह की जड़ आधार से ही उखड़ गई है। अल्लाह का शुक्र है। छठा: मज़ा तो यह है कि अभी नोट को मूल्यहीन ठहराकर कि वह दो पैसे का कागज भी नहीं है, उसे लेन-देन से अलग कर दिया और केवल रुपयों पर अनुबंध (अक़्द) लागू कर दिया। और इसके तुरंत बाद, बिना किसी अंतराल के, नोट पर अनुबंध लागू करने और उसे नकदी की प्रजाति बनाने की कोशिश की जा रही है। यह विरोधाभास कितना दिलचस्प है। सातवाँ: मैं एक ही विरोधाभास बता रहा हूँ: वहाँ पहले वाक्य में नोट को सौ रुपये का माल बताया गया जिसका जुर्माना सौ रुपये आया। दूसरे वाक्य में उसे अनुबंध के विषयों से निर्वासित करने का आदेश दिया गया कि वास्तव में रुपये बिकते हैं, वह कागज तो एक पैसे का भी नहीं है। तीसरे वाक्य में वही कागज जब करवट ले तो फिर सौ रुपये का, बल्कि सौ रुपये के साथ एक ही जाति का हो गया। आठवाँ: मज़ा यह है कि दावा तो यह किया गया कि नोट को ही असल कीमत (थमन) माना जाता है और अंत

तक बार-बार इसी को दोहराया जाएगा। और इसके प्रमाणों में यह कि रुपयों को बेचना उद्देश्य होता है न कि उस कागज को। और हर व्यक्ति जानता है कि वह इस कागज के अलावा कुछ नहीं है। अगर नोट को ही असल कीमत माना जाता, तो खुद उस कागज को ही बेचना उद्देश्य होता न कि रुपयों को। तो प्रमाण दावे के विपरीत है। इसे समझें! (फ़ा-फ़हम) नोट: यह इस ओर इशारा है कि इन तीन और 13 से 26 में अधिकतर से माफ़ी माँगने के लिए (बाकी अगले पृष्ठ पर)।

पृष्ठ 525/715

وجہ وہی تساوی رواج و مالی تھے جس کا بیان صفحہ ۹۷ سے صفحہ ۱۰۱ تک گزرا۔ رابعاً: حل یہ ہے کہ بے عذری یعنی قبول ذی حق و اتحاد جنس میں عموم خصوص من وجہ ہے کہیں اتحاد جنس ہے اور قبول نہیں جیسے سونے کا گہنا خریدنے والا اس کے بدلے اشرفیاں نہ لے گا اور کہیں قبول ہے اور اتحاد جنس نہیں جیسے پندرہ روپے اور اشرفی، روپے اور نوٹ نوٹ اور اشرفی، اٹھنی اور پیسے، اٹھنی اور اکنیاں اور مادہ اجتماع ظاہر ہے تو ایک کے وجود سے دوسرے کے حصول پر استدلال ایسا ہے کہ یہ کاغذ ابیض ہے لہٰذا حیوان ہے لہٰذا ابیض ہے ولا حول ولا قوۃ الا باللہ۔ خامساً: یہ شبہ وہی ہے جو نوٹ ہلاک کرنے پر فرمایا تھا وہاں ہلاک سے ضمان آئی تھی یہاں قرض سے بات ایک ہی ہے اور یہی مولوی صاحب کے سارے شبہ کی جڑ ہے اس غرض کے لئے کہ کچھ تو شاندار ہو جائے اسے بار بار دو ایک لفظ بدل کر فرماتے ہیں ہاں بیان میں اتنا ضرور ہوا کہ پہلی عبارت نہایت ناقصہ قاصرہ تھی مگر پوری بات اب بھی ادا نہ ہوئی عذر نہ ہونا عذر نہ ہو سکنے کو مستلزم نہیں اور ممکن کہ بوصف تغایر جنس کسی غرض و وجہ خاص کے سبب عذر نہ ہوں ہاں عذر نہ ہو سکتا کچھ و ہم ڈالتا مگر ہم انہیں صفحات میں بحر الرائق در المحتار سے اس کا ازالہ کر آئے کہ شرعاً بھی باوجود مغایرت جنس ہنگام استوائے رواج و مالیت قبول پر جبر کیا جاتا ہے اور عذر تعنت قرار پاتا ہے تو اب جڑ کا شبہ جڑ سے اکھڑ گیا واللہ الحمد۔ سادساً: طرفہ مزہ یہ ہے کہ ابھی تو نوٹ کو بے قدر ٹھہرا کر کہ وہ کاغذ دو پیسے کا بھی نہیں اسے معاملہ سے جدا اور خود روپوں پر ورود عقد باین کر چکے ہیں اور یہ بلا فصل اس کے متصل ہی نوٹ پر ورود عقد اور اسے عین جنس نقد بنا دینے کی کوشش ہو رہی ہے یہ تناقض کتنا بالطف ہے۔ سابعاً: میں ایک ہی تناقض کہہ رہا ہوں وہاں پہلے فقرے میں نوٹ کو سو روپے کا

مال بتایا جس کا تاوان سو روپے آیا، دوسرے فقرہ میں اسے موارد عقد سے جلا وطن ہونے کا حکم فرمایا کہ حقیقۃً روپے بکتے ہیں وہ کاغذ تو ٹکے کا بھی نہیں، تیسرے فقرہ میں وہی کاغذ جو کروٹ لے تو پھر سو روپے کا بلکہ سو روپے سے متحد الجنس ہو گیا۔ ثامناً: لطف یہ کہ دعویٰ تو وہ فرمایا کہ نوٹ عین ثمن سمجھا جاتا ہے اور اخیر تک بار بار اسی کی تکرار ہو گی، اور اس کے دلائل میں یہ کہ روپوں کا بیچنا مقصود ہوتا ہے نہ اس کاغذ کا، اور ہر شخص جانا ہے کہ نوٹ نہیں مگر یہ کاغذ تو اگر نوٹ عین ثمن سمجھا جاتا خود اس کاغذ ہی کا بیچنا مقصود ہوتا نہ کہ روپوں کا تو دلیل مناقض دعویٰ ہے فافہم عہ (پس تو سمجھ)۔ عہ: اس طرف اشارہ ہے کہ ان تین اور ۱۳ تا ۲۶ میں اکثر سے عذر خواہی کیلئے (باقی اگلے صفحہ پر)

Fatawa Razawiya Volume 17

Quote: Unlike paisas, even though they are customarily considered price (thaman), they do not have this quality. If one buys something for one rupee or borrows one rupee from someone, and at the time of repayment gives paisas worth one rupee, the creditor and the seller have the option to accept them or not, and the ruler cannot force them to accept the paisas regardless.

I say, firstly: This is contrary to what has been explicitly stated, as mentioned before. Secondly: If it is not considered contrary to observation, then look at its opposite: if 64 paisas were borrowed or fixed as the price, and one rupee is given, the creditor and seller have no excuse at all and accept it without hesitation. If they make an excuse, they are being obstinate, and the word of an obstinate person is rejected. Thirdly: The Maulvi Sahib missed the point. If he had used an example of a hundred rupees, it would have seemed plausible to the common people. Truly, if someone borrows a hundred rupees and then wants to pay six thousand and four paisas in exchange, the creditor will say, 'Where am I going to carry around more than two maunds of copper instead of a seer of silver? Instead of a small compartment in a chest, I'll have a pitcher full of coins.' But if it's just sixty, whether in two-anna, four-anna, or eight-anna coins, all the deficiencies disappear. Everyone knows that if you buy something for a two-anna coin and give two annas worth of paisas, there is absolutely no reason for refusal. And when small change and paisas are of the same genus, and small change and rupees are of one genus, then rupees and paisas are also established as one genus, because what is united with a united thing is itself united. In fact, why take indirect identity? Look at its opposite: if 6,400 paisas were borrowed and a hundred rupees are given in repayment, see how they will be accepted without excuse, and if one doesn't accept, they would be considered crazy. Thus, it is clear that the basis for an excuse here is an external matter, such as weights of maunds, etc. Fourthly: Even if we were to loosely accept your point that the validity of an excuse, although it may exist in some cases, negates the unity of genus, then there is no hope for unity in notes. An excuse may not exist at the time of debt repayment, but it is certainly conceivable at the time of delivery of the sold item. Zaid has to send a hundred-rupee note by mail; a registration for (102) would suffice, whereas a money order...

(Continuation of previous page's footnote) Perhaps they would forge an interpretation that by 'alluding' we meant the entity in terms of quantity, and with all other attributes, considered it as rupees. However, besides being a fabrication, it is

clear stubbornness against the obvious and a blatant petitio principii on the claim, as is not hidden. Therefore, it is neither worthy of hearing, nor does it escape objection after being heard. Whatever the case, making it work is impossible. 12- From the author, may his Lord protect him.

फतावा रजविया जिल्द १७

कौल: इसके विपरीत पैसों के लिए, यद्यपि वे प्रथागत रूप से मूल्य (थमन) हैं, लेकिन उनमें यह गुण नहीं है। यदि कोई एक रुपये के बदले कोई चीज़ खरीदता है या किसी से एक रुपया उधार लेता है और भुगतान के समय एक रुपये के बराबर पैसे देता है, तो लेनदार और विक्रेता को विकल्प होता है कि वे उसे लें या न लें और शासक की ओर से उन पर यह दबाव नहीं डाला जा सकता कि वे चाहे-अनचाहे पैसे ही लें।

मैं कहता हूँ पहले: यह स्पष्ट रूप से बताए गए के विपरीत है, जैसा कि पहले बीत चुका है। दूसरे: यदि अवलोकन के विरुद्ध इसे न माना जाए, तो इसका उल्टा करके देखें कि यदि ६४ पैसे उधार लिए गए हों या मूल्य तय किया गया हो और एक रुपया दिया जाए, तो लेनदार और विक्रेता को कोई आपत्ति नहीं होती और वे बिना संकोच स्वीकार कर लेते हैं। यदि वे आपत्ति करें तो वे हठधर्मी हैं, और हठधर्मी व्यक्ति की बात अस्वीकार्य है। तीसरे: मौलवी साहब चूक गए, यदि वे सौ रुपये का उदाहरण लाते तो आम लोगों की नज़रों में बात जमती। वास्तव में, जो सौ रुपये उधार ले फिर उनके बदले छः हज़ार चार पैसे देना चाहे तो लेनदार कहेगा कि 'मैं एक सेर चांदी की जगह दो मन पक्के से ज़्यादा तांबा कहाँ लादता फिरूँ संदूकची के एक खाने की जगह पैसों से मटका भरूँ लेकिन साठ ही दवानी, चवन्नी, अठन्नी हों तो सब दोष समाप्त हो जाते हैं। हर व्यक्ति जानता है कि दवानी का कुछ खरीद कर दो आने पैसे दें तो मूलतः इनकार की कोई जगह नहीं होती। और जब रेज़गारी और पैसे एक ही जाति (जिन्स) के हुए और रेज़गारी और रुपये एक जाति हैं, तो रुपये और पैसे भी एक ही जाति ठहरे, क्योंकि जो एक के साथ एकजुट है वह स्वयं भी एकजुट है। बल्कि अप्रत्यक्ष रूप से पहचान (ऐनियत) क्यों लें? इसी का उल्टा देखें: ६४०० पैसे उधार लिए हों और भुगतान में सौ रुपये दिए जाएँ तो देखिए वे बिना किसी बहाने के स्वीकार कर लिए जाएँगे, और यदि कोई न माने तो वह विक्षिप्त माना जाएगा। तो यह स्पष्ट हुआ कि यहाँ बहाने का आधार कोई बाहरी मामला है, जैसे मनों का बोझ आदि। चौथे: यदि हम आपकी इस बात को ढीले तौर पर मान भी लें कि बहाने की सत्यता यद्यपि कुछ स्थितियों में हो, वह जाति की एकता को नकारती है, तो अब नोट में एकता की खैर नहीं। कर्ज के भुगतान के समय बहाना न हो, लेकिन बिक्री की वस्तु (मबीअ) को सौंपने के समय निश्चित रूप से कल्पनीय है। ज़ैद को सौ रुपये का नोट डाक से भेजना है, तो (१०२) की रजिस्ट्री पर्याप्त होगी और मनी ऑर्डर एक...

(पिछले पृष्ठ के फुटनोट का शेष) शायद वे एक व्याख्या गढ़ें कि हमने संकेत में मात्रा के संदर्भ में मूल सत्ता (ज़ात) का अर्थ लिया और अन्य सभी गुणों के साथ उसी को रुपया माना। लेकिन यह गढ़न के अलावा, स्पष्ट रूप से स्पष्टता के खिलाफ़ ज़िद है और दावे पर एक खुला भ्रम (مصادرات) है जैसा कि छिपा नहीं है। इसलिए, यह न तो सुनने योग्य है और न ही सुनने के बाद आपत्ति से मुक्त है। जो भी हो, बात बन जाना नामुमकिन है। १२- लेखक की ओर से, उनके रब उनकी रक्षा करें।

पृष्ठ ७१५ का ५२६

قولہ: بخلاف پیسوں کے کہ وہ بھی اگرچہ عرفاً ثمن ہیں مگر یہ کیفیت ان کی نہیں، اگر ایک روپے کے عوض میں کوئی چیز خریدے یا ایک روپیہ کسی سے قرض لے اور وقتِ ادا پیسے ایک روپے کے دے تو دائن اور فروخت کنندہ کو اختیار رہتا ہے کہ وہ لے یا نہ لے اور حاکم کی طرف سے اس پر جبر نہیں ہو سکتا کہ خواہ مخواہ وہ پیسے لے لے۔ اقول اولاً: خلافِ منصوص ہے جیسا کہ گزرا۔ ثانیاً: مشاہدہ کے خلاف یوں اعتبار نہ آئے تو اس کا عکس کر دیکھئے کہ ۶۴ پیسے قرض لئے یا ثمن قرار دیئے ہوں اور ایک روپیہ دے تو دائن و بائع کو ہرگز کچھ عذر نہیں ہوتا بے تکلف قبول کر لیتا ہے اور عذر کرے تو متعنت ہے اور متعنت کی بات مردود۔ ثالثاً: مولوی صاحب چوکے، سو روپے کی مثال لاتے تو بات نظرِ عوام میں لگتی ہوئی ہوتی، واقعی جو سو روپے قرض لے پھر ان کے بدلے چھ ہزار چار پیسے دینا چاہے تو دائن کہے گا کہ میں کہاں سیر بھر چاندی کی جگہ دو من پکے سے زیادہ تانبا لادتا پھروں صندوقچی کے ایک خانہ کی جگہ پیسوں سے مٹکا بھروں مگر ساٹھ ہی دوانی، چوانی، اٹھنی سب نقص کو آموجود ہوتیں ہر شخص جانتا ہے کہ دوانی کا کچھ خرید کر دو آنے پیسے دیجئے تو اصلاً جائے انکار نہیں ہوتی اور جب ریز گاری اور پیسے متحد الجنس ہوئے اور ریز گاری اور روپے ایک جنس ہیں تو روپے اور پیسے بھی ایک جنس ٹھہرے کہ متحد کا متحد متحد ہے بلکہ بالواسطہ عینیت کیوں لیجئے اسی کا عکس دیکھئے ۶۴۰۰ پیسے قرض لئے ہوں اور ادا میں سو روپے دیئے ابھی دیکھئے بلا عذر قبول ہوں گے اور نہ مانے تو خبطی ٹھہرے تو ظاہر ہوا کہ یہاں بنائے عذر امر خارجی ہے مثلاً منوں بوجھ وغیرہ۔ رابعاً: اگر ہم آپ کی ارخائے عنان کو مان بھی لیں کہ صحت عذر اگرچہ بعض صور میں ہو، نافی اتحاد جنس ہے، تو اب نوٹ میں اتحاد کی خیر نہیں ادائے قرض کے وقت عذر نہ ہو تسلیمِ

مبیع کے وقت ضرور متصور، زید کو سو روپے کا نوٹ ڈاک میں بھیجنا ہے کہ (۱۰۲) کی رجسٹری بس ہوگی اور منی آرڈر ایک (بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ) شاید ایک تاویل گھڑتے کہ ہم نے اشارہ میں ذات من حیث المقدار مراد لی اور مع سائر الاوصاف اسی کو روپے جانا، مگر یہ گھڑت کے علاوہ بداہت سے صاف مکابرہ اور دعویٰ پر صریح مصادرہ ہے کما لایخفی، لہذا نہ قابل سماعت نہ بعد سماعت اعتراض سے نجات، بات بن جائے یہ بہر حال ناممکن ۱۲ منہ حفظہ ربہ۔

Fatawa Razawiyyah, Volume 17 (17)

...will be in rupees, especially if the Gangohi creed is crooked, he will consider the money order as forbidden (haram). He bought notes from 'Amr. If 'Amr shows rupees or five gold coins (ashrafis) of twenty each at the time of delivery of the sold item, Zaid will never agree. Thus, it became known that the note and the price (thaman) are not of the same genus. His statement: "Therefore, even if coins are socially considered as price, they are not considered as the inherent (natural) price. This is contrary to notes, as they are considered as the inherent price, even if the inherent nature is not natural but social." 1 I say, firstly: The resolution of this "therefore" is also what was mentioned earlier, that acceptance and unity of genus are related as 'general and specific in one respect' (aam khaas min wajh). Just as arguing from the existence of one to the existence of the other is void, similarly arguing from the absence of one to the absence of the other is also void. Your first argument was of the type: 'a crow is an animal, therefore it is white'. This second form is: 'a crow is not white, therefore it is not an animal'. Secondly: You took a lot of pains, but unfortunately, the claim remained without proof. It was necessary for you to first clarify the basis (manat) of social inherent nature (ayniyat-e-urfiya), and not such a basis on which there are so many rebuttals. Secondly, you should have proven the realization of that basis here. Thirdly, you should have provided proof from the words of the Imams that where there is social inherent nature, the Shariah accepts the unity of genus. And when none of this is present, what is the point of a futile exercise? Thirdly: All effort was directed towards the unity of genus; where did the condition of unity of measure (qadr) go? Excess (tafadhul) does not become forbidden merely by the unity of genus; unity of measure is also necessary. Notes have no measure at all, as they are neither measured by volume (mukeel) nor by weight (mawzun), but are counted items. So, even if the rift of unity of genus were to be mended with a thousand difficulties, where would the patch for unity of measure come from? Excess would still remain permissible (halal). Fourthly: The treatise has proven with overwhelming evidence from page 714 to page 715 that selling notes on credit for rupees is permissible. If either the measure or the genus were the same, then deferred payment (nasi'ah) would be forbidden. Thus, it is proven that nothing is unified here at all. His statement: "From the permissibility of excess in the sale of copper coins (fuloos), it does not necessarily follow that notes also become permissible because coins are a different genus from the price, both in reality and

socially, even if the attribute of being a medium of exchange (thanniyyat) has come into them due to terminology and custom." 2

1 Majmu'a Fatawa, Kitab al-Buyu', Matba' Yusufi, Lucknow, 1/39 2 Majmu'a Fatawa, Kitab al-Buyu', Matba' Yusufi, Lucknow, 1/39 Page 527 of 715

...रुपये में होगा, विशेष रूप से यदि गंगोही पंथ टेढ़ा हो, तो वह मनी ऑर्डर को हराम ही मानेगा। उसने 'अम्र' से नोट खरीदे। यदि 'अम्र' बेची गई वस्तु की सुपुर्दगी के समय रुपये या बीस-बीस की पाँच अशरफ़ियाँ दिखाए, तो ज़ैद कभी नहीं मानेगा। तो ज्ञात हुआ कि नोट और मूल्य (थमन) एक ही प्रकार (जिन्स) के नहीं हैं। उनका कथन: "इसलिए, भले ही सिक्के सामाजिक रूप से मूल्य हों, लेकिन वे प्राकृतिक मूल्य नहीं समझे गए हैं। नोटों के विपरीत, क्योंकि इन्हें प्राकृतिक मूल्य माना जाता है, भले ही प्राकृतिक स्वभाव प्राकृतिक न होकर सामाजिक हो।" 1 मैं कहता हूँ, पहले: इस "इसलिए" का समाधान भी वही है जो पहले बीत चुका है कि स्वीकृति और प्रकार की एकता, 'एक दृष्टि से सामान्य और विशिष्ट' (आम ख़ास मिन वज्ह) हैं। तो जिस तरह एक के अस्तित्व से दूसरे के अस्तित्व पर तर्क करना निराधार है, उसी तरह अभाव से अभाव पर तर्क करना भी निराधार है। आपका पहला तर्क इस प्रकार का था कि 'कौआ एक जानवर है, इसलिए वह सफेद है'। यह दूसरा रूप यह हुआ कि 'कौआ सफेद नहीं है, इसलिए वह जानवर नहीं है'। दूसरा: आपने बहुत मेहनत की, लेकिन अफ़सोस कि दावा बिना प्रमाण के ही रहा। आपको चाहिए था कि पहले सामाजिक स्वाभाविकता (ऐनियत-ए-उर्फ़िया) का आधार स्पष्ट करते, न कि ऐसा जिस पर इतने खंडन हों। दूसरा, उस आधार की यहाँ प्राप्ति को प्रमाण के स्तर तक पहुँचाते। तीसरा, इमामों के शब्दों से इसका प्रमाण देते कि जहाँ सामाजिक स्वाभाविकता हो, वहाँ शरीयत प्रकार की एकता को मान लेती है। और जब यह कुछ भी नहीं है, तो व्यर्थ प्रयास से क्या लाभ? तीसरा: सारी कोशिश प्रकार की एकता की ओर तो लगाई गई, माप की एकता (कद्र) की शर्त कहाँ भुला दी गई? केवल प्रकार की एकता से अधिकता (तफ़ाज़ुल) हराम नहीं हो जाती, माप की एकता भी आवश्यक है। नोटों का तो सिरे से कोई माप ही नहीं है, क्योंकि वे न तो माप के योग्य (मुकील) हैं और न ही वजन के योग्य (मौज़ून), बल्कि गिने जाने वाली वस्तुएँ हैं। तो हज़ार कठिनाइयों से यदि प्रकार की एकता की दरार रफ़ू भी हो जाए, तो माप की एकता का पैबंद कहाँ से आएगा? अधिकता तो अब भी हलाल रही। चौथा: शोध पत्र ने पृष्ठ 714 से पृष्ठ 715 तक ठोस प्रमाणों से साबित कर दिया है कि रुपयों के बदले नोटों को उधार बेचना जायज़ है। यदि माप या प्रकार में से कोई भी एक होता, तो उधार (नसीया) हराम होता, तो सिद्ध हुआ कि यहाँ वास्तव में कुछ भी एक नहीं है। उनका कथन: "तांबे के सिक्कों (फ़ुलूस) की बिक्री में अधिकता के जायज़ होने से यह आवश्यक नहीं है कि नोट भी जायज़ हो जाएँ क्योंकि सिक्के वास्तव में और

सामाजिक रूप से भी मूल्य से भिन्न प्रकार के हैं, भले ही शब्दावली और प्रचलन के कारण उनमें विनिमय का गुण (थन्नियत) आ गया हो।" 2

1 मजमुआ फ़तावा, किताब अल-बुयू, मतबा यूसुफी, लखनऊ, 1/39 2 मजमुआ फ़तावा, किताब अल-बुयू, मतबा यूसुफी, लखनऊ, 1/39 पृष्ठ 527/715

روپے میں ہوگا خصوصاً اگر گنگوہی دھرم کجاہو تو وہ منی آرڈر کو حرام ہی جانے گا اس نے عمرو سے نوٹ خریدا عمرو تسلیم مبیع کے وقت روپے یا بیس بیس کی پانچ اشرفیاں دکھائے زید ہر گز نہ مانے گا تو معلوم ہوا کہ نوٹ اور ثمن ایک جنس نہیں، قولہ: پس پیسے اگرچہ عرفاً ثمن ہیں مگر عین ثمن خلقی نہیں سمجھے گئے ہیں۔ بخلاف نوٹ کے کہ یہ عین ثمن خلقی ہے گو عینیت خلقیہ نہیں بلکہ عینیت عرفیہ ہو۔ ۱۔ اقول اولاً: اس "پس" کا حل بھی وہی ہے جو پیشتر گزرا کہ قبول و اتحاد جنس، عام خاص من وجہ ہیں تو جس طرح ایک کے وجود سے دوسرے کے وجود پر استدلال باطل ، یو نہی عدم سے عدم پر آپ کا پہلا استدلال اس طرز کا تھا کہ کوا حیوان ہے لہذا یہ بیض ہے یہ دوسرا رنگ کا ہوا کہ کوا بیض نہیں لہذا حیوان نہیں۔ ثانیاً: آپ نے محنت بہت اٹھائی مگر افسوس کہ دعوٰی بے دلیل ہی رہا، آپ کو چاہئے تھا کہ اولاً عینیت عرفیہ کا مناط منقح کرتے نہ کہ ایسا جس پر اتنے نقض ہوں۔ ثانیاً اس مناط کا یہاں تحقق پایہ ثبوت کو پہنچاتے۔ ثالثاً کلام ائمہ سے اس کا ثبوت دیتے کہ جہاں عینیت عرفیہ ہو شرع اس اتحاد جنس مان لیتی ہے اور جب یہ کچھ نہیں تو خرط القتادہ سے کیا حاصل۔ ثالثاً: ساری کوشش اتحاد جنس کی طرف تو مبذول فرمائی اتحاد قدر کی شرط کہاں بھلائی نرے اتحاد جنس سے تفاضل حرام نہیں ہو جاتا اتحاد قدر بھی تو لازم ہے نوٹ کے سرے سے قدر ہی نہیں رکھتا کہ نہ مکیل ہے نہ موزون بلکہ معدود ہے تو ہزار خرابی اگر اتحاد جنس کا چاک رفو بھی ہو جائے تو اتحاد قدر کا پیوند کدھر سے آئے گا تفاضل تو اب بھی حلال رہا۔ رابعاً: رسالہ نے ص ۷۱۴ سے ص ۷۱۵ تک دلیل قاہرہ سے ثبوت دے دیا کہ نوٹ روپیوں کے عوض ادھار بیچنا جائز ہے اگر قدر یا جنس کوئی بھی ایک ہوتی تو نسیہ حرام ہوتا تو ثابت ہوا کہ یہاں اصلاً کچھ متحد نہیں۔ قولہ پس تفاضل بیع فلوس میں جائز ہونے سے یہ نہیں لازم

کہ نوٹ بھی جائز ہو جائے کیونکہ پیسے غیر جنس ثمن ہیں حقیقتاً بھی اور عرفاً بھی، گو بوجہ اصطلاح اور عرف کے اس میں صفت ثنیت کی آگئی ہو۔ ۲۔

۱ مجموعہ فتاویٰ کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنو ۱/۳۹ ۲ مجموعہ فتاویٰ کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنو ۱/۳۹ Page 527 of 715

Fatawa Razawiyya Volume 17

I say first: This second "consequently" follows the same previous "consequently" which was pushed back earlier. "The tree informs about the fruit." (Translator's note: The tree gives news of the fruit).

Secondly: Exactly the same is the case with the note (currency), "but you know not" (Translator's note: but you do not know).

Thirdly: Where did you forget the issue of the Rupee and the Ashrafi (gold coin)? See page 163; selling one Ashrafi for one Rupee is absolutely correct, even though both are certainly of the category of 'price/medium of exchange' both in reality and in common usage. If you say they are surely the category of price but are distinct species among themselves, I say: Similarly for the note as well. Who in their right mind would say that Rupee and Ashrafi are two separate things but Ashrafi and note are one and the same? The detailed investigation is that 'price' is one genus, under which there are two genera: natural and conventional. The types of conventional are notes, coins, and cowrie shells; and natural is again one genus under which there are two types: gold and silver. In Islamic law (Shariah), genus is that universal whose individuals have differing purposes. It is apparent that the purpose of a Rupee or Ashrafi is different, and that of gold/silver jewelry, utensils, or embroidery/gold thread is different. So a note, which is a real species due to which individuals have identical purposes, cannot be the exact same as any genus, for agreement and difference are distinct, not the genus of the genus, and the state of falling under a genus has been discussed above.

Fourthly: Let it be, even if there is unity with the type of natural price, it cannot be united with two distinct species, otherwise distinct things would become united with each other and a thing would be distinct from itself. Compelled, one will have to accept unity with one, and that is none other than the Rupee. Since you are declaring it forbidden (haram) to sell a ten-rupee note for twelve rupees, then it will certainly not be united with Ashrafi. Now, make it lawful (halal) to sell a ten-rupee note for a thousand Ashrafi and forbidden to sell it for over ten rupees. There would be no stranger fatwa (edict) in the world than this. See page 188 of the treatise: His statement "Since notes are conventionally considered identical to natural price in all rulings."

I say first: Say "purposes" for these are in the hands of the common people, not the Shariah rulings which are neither in their hands nor known to most of them, nor do

they pay attention to them; rather, most do not even believe in them. So, for common people to consider it identical in Shariah rulings is sheer falsehood, and considering them similar for their own purposes does not necessitate unity in Shariah rulings. The rest of the discourse has passed in the rejection of the first statement.

Secondly: The kind of identity you can show here is exactly the same as showing the identity of one-anna and paisa coins to two-anna, four-anna, and eight-anna coins.

1 Majmu'a Fatawa Kitab al-Buyu' Matba' Yusufi Lucknow / 39 Page 528 of 715

फतावी रज़विया जिल्द १७

मैं पहले कहता हूँ: यह दूसरा "अतः" उसी पिछले "अतः" के पीछे है जिसे पहले पीछे धकेला जा चुका है। "वृक्ष फल की सूचना देता है।" (अनुवादक का नोट: पेड़ फल की खबर देता है)।

दूसरे: नोट का भी ठीक यही हाल है, "लेकिन तुम नहीं जानते" (अनुवादक का नोट: पर तुम नहीं जानते)।

तीसरे: रुपये और अशरफी का मसला कहाँ भूल गये? पृष्ठ १६३ देखिये; एक अशरफी को एक रुपये में बेचना पूरी तरह सही है, हालाँकि दोनों निश्चित रूप से 'कीमत/विनिमय का माध्यम' की श्रेणी में आते हैं, वास्तविकता में भी और लोक-व्यवहार में भी। यदि आप कहें कि वे निश्चित रूप से कीमत की श्रेणी हैं लेकिन आपस में अलग-अलग प्रजातियाँ हैं, तो मैं कहता हूँ: नोट के लिए भी यही है। कौन बुद्धिमान कहेगा कि रुपया और अशरफी दो अलग चीजें हैं लेकिन अशरफी और नोट एक ही चीज है? विस्तृत जाँच यह है कि 'कीमत' एक मूल वर्ग है जिसके तहत दो वर्ग हैं: प्राकृतिक और पारंपरिक। पारंपरिक के प्रकार नोट, पैसे, कौड़ियाँ हैं; और प्राकृतिक फिर एक वर्ग है जिसके नीचे दो प्रकार हैं: सोना, चाँदी। शरीयत में वर्ग वह व्यापक अवधारणा है जिसके घटकों के उद्देश्य अलग-अलग होते हैं। स्पष्ट है कि रुपये या अशरफी का उद्देश्य अलग है, और सोने-चाँदी के गहनों, बर्तनों, या जरी-कसीदे का अलग। तो नोट, जो कि एक वास्तविक प्रजाति है जिसके कारण घटकों के उद्देश्य समान होते हैं, किसी भी वर्ग का समान नहीं हो सकता, क्योंकि समानता और भिन्नता अलग-अलग हैं, न कि वर्ग का वर्ग, और वर्ग के अंतर्गत आने की स्थिति ऊपर वर्णित की जा चुकी है।

चौथे: मान लीजिये, यदि प्राकृतिक कीमत के प्रकार के साथ एकता भी हो, तो यह दो अलग-अलग प्रजातियों के साथ एक नहीं हो सकता, अन्यथा अलग-अलग चीजें आपस में एक हो जाएँगी और कोई वस्तु स्वयं से ही अलग हो जाएगी। विवश होकर एक के साथ एकता माननी होगी, और वह रुपये के अलावा और कुछ नहीं है। चूँकि आप दस रुपये के नोट को बारह रुपये में बेचना हराम (वर्जित) कर रहे हैं, तो यह निश्चित रूप से अशरफी के साथ एक नहीं होगा। अब, दस रुपये के नोट को एक हजार अशरफी में बेचना हलाल (वैध) कीजिये और उसे दस रुपये से अधिक में बेचना हराम। दुनिया में इससे बढ़कर कोई अजीब फतवा नहीं होगा। ग्रंथ का पृष्ठ १८८ देखें: उनका कथन "अतः जब नोट को लोक-व्यवहार में सभी नियमों में प्राकृतिक कीमत के समान समझा गया।"

मैं पहले कहता हूँ: "उद्देश्य" कहें क्योंकि ये आम लोगों के हाथ में हैं, शरीयत के नियम नहीं जो न तो उनके हाथ में हैं और न ही उनमें से अधिकांश को पता हैं, न ही वे उनकी ओर ध्यान देते हैं; बल्कि अधिकांश तो उन पर विश्वास भी नहीं करते। अतः शरीयत के नियमों में आम लोगों का इसे समान समझना सरासर झूठ है, और अपने उद्देश्यों के लिए उन्हें एक जैसा जानना शरीयत के नियमों में एकता की आवश्यकता नहीं रखता। बाकी चर्चा पहले कथन के खंडन में बीत चुकी है।

दूसरे: जिस प्रकार की समानता आप यहाँ बता सकते हैं, ठीक वैसी ही इकन्नियों और पैसों की दुअन्नी, चवन्नी और अठन्नी के साथ है।

1 मजमुआ फतावा किताब अल-बुयू मतबा युसुफी लखनऊ / 39 पृष्ठ 528 of 715

اقول اولاً : یہ دوسری "پس" اسی پس پیشین کی پس رو ہے جسے پیشتر پسپا کردیا گیا الشجرۃ تنبئ عن الثمرۃ (درخت پھل کی خبر دیتا ہے۔ ت) ثانیاً: بعینہ یہی حال نوٹ کا ہے ولکن لا تعلمون (لیکن تم نہیں جانتے۔ ت) ثالثاً : روپے اور اشرفی کا مسئلہ کہاں بھولے صفحہ ۱۶۳ دیکھئے ایک اشرفی کو ایک روپیہ بیچنا قطعاً درست ہے حالانکہ وہ تو دونوں یقیناً جنس ثمن ہیں حقیقۃً بھی اور عرفاً بھی ، اگر کہتے وہ جنس ثمن ضرور ہیں مگر باہم تو متباین نوعین ہیں اقول : یونہی نوٹ بھی ، کون عاقل کہے گا کہ روپیہ اور اشرفی دو چیزیں جدا ہیں مگر اشرفی اور نوٹ ایک ہی چیز ہے اور تفصیل تحقیق یہ ہے کہ ثمن ایک جنس ہے جس کے تحت دو جنسیں ہی ، خلقی ، اصطلاحی، اصطلاحی کی نوعیں نوٹ ، پیسے کوڑیاں، اور خلقی پھر ایک جنس ہے جس کے نیچے دو جنسین ہیں ، سونا، چاندی۔ شرع میں جنس وہ کلی ہے جس کے افراد مختلفۃ الاغراض ہوں ، ظاہر ہے کہ روپے یا اشرفی کی غرض اور ہے، اور سونے چاندی کے گہنے کی اور برتنوں کی اور ، گوٹے پٹھے کندلے کی اور، تو نوٹ کہ نوع حقیقی ہے جس کے سبب افراد متفقۃ الاغراض ہیں کسی جنس کا بھی عین نہیں ہوسکتا کہ اتفاق و اختلاف متباین ہیں نہ کہ جنس الجنس کا اور دخول تحت الجنس کا حال اوپر گزرا۔ رابعاً: جانے دیجئے ثمن خلقی کی نوع سے ہی اتحاد سہی تو دو نوع متباین سے تو متحد نہیں ہو سکتا ورنہ مباین باہم متحد ہو جائیں گے اور شیئ اپنے نفس کی مباین ہوگی ناچار ایک سے اتحاد مانے گا اور وہ نہیں مگر روپیہ کہ آپ دس کا نوٹ بارہ روپے کو بیچنا حرام کررہے ہیں تو اشرفی سے یقیناً متحد نہ ہو گا اب دس روپے کا نوٹ ہزار اشرفی کو بیچنا حلال کیجئے اور روانی اوپر دس روپے کو بیچنا حرام ، دنیا میں اس سے بڑھ کر بھی کوئی عجیب فتوٰی ہو گا۔ دیکھئے رسالہ کا صفحہ ۱۸۸: قولہ پس ہرگاہ نوٹ عرفاً جمیع احکام میں عین ثمن خلقی

سمجھا گیا۔ اقول اولاً : اغراض کہئے کہ یہی اہل عرف کے ہاتھ میں ہیں نہ کہ احکام شرعیہ جو نہ ان کے ہاتھ میں ہیں نہ ان کے اکثر کو معلوم ، نہ ان کی طرف انہیں التفات بلکہ اکثر کو ان پر ایمان بھی نہیں تو احکام شرعیہ میں اہل عرف کا اسے عین سمجھنا محض کذب اور اپنی اغراض میں یکساں جاننا احکام شرعیہ میں اتحاد کو مستلزم نہیں اور بقیہ کلام رد قول اول میں گزرا۔ ثانیاً:

جیسی عینیت آپ یہاں بتا سکتے ہیں بعینہا ویسی ہی اکنیوں اور پیسوں کو دوانی چونی اٹھنی

Fatawa Razawiyya Volume 17 (17)

...from there, why was the difference (tafadul) permissible? Thirdly: Rupees and gold coins (ashrafis) are themselves essentially created money (thaman khalqi); they do not depend on anyone's understanding. How did it become correct in their case? Quote: Based on this, a ruling will be given in the chapter of excess (tafadul), and excess in it will be prohibited. I say firstly: At this point, the end of this third "consequently" (pas) has arrived, and the first argument has breathed its last. But this "consequently" (pas) is more related to all previous "consequentlys" in terms of intellectual connection, and in clarity of falsehood, it is ahead of falsehood. Taking all flaws upon yourself, suppose that yes, excess became prohibited. Then that excess would be prohibited which was prohibited in created money (thaman khalqi), for which it was considered identical. Or until the time of bringing the argument, there was identity (ayniyat), and while giving the result, will it produce a new ruling of otherness or reversal which is fundamentally not present in created money? Finally, you were basing the ruling on the premise that the note is identical to created money, so the same ruling would be mandatory which was in created money, not something other than it; for a ruling is mandatory for a thing, and a mandatory change negates the required identity. Now see, what kind of excess is prohibited in created money? It is mandatory to be equal in quantity, meaning weight on the scale, even if there is any difference in value. Now, by making it permissible for you to sell a hundred-rupee note for a hundred rupees, you are certainly making interest permissible in your own way, for a hundred-rupee note will never weigh a seer. See the treatise pages 190 to 192. Secondly (48 to 57): Ten arguments for the permissibility of difference in value have passed in the treatise; see pages 175 to 180. Quote: "Indeed, actions are [judged] by intentions" (Innamal a'malu bin-niyyat - the basis of actions is on intentions. - T) I say: The respected gentleman, in the argument on the page, has worked purely with his imaginations; he did not bring a single word of authority. And he also did not like that the argument should just pass by as fabricated with no name of authority at all. Therefore, he mentioned this noble Hadith just to add weight and keep up the appearance of an argument. If it is asked what relation it has to the context, which premise of your argument is proven by it, then the answer will be nothing. But after all, the Hadith is authentic; reading it is not devoid of reward, even if it is unrelated to the context. With this intention, we have written: "Indeed, actions are [judged] by intentions, and for every man is what he intended." (T). The gist of the argument is only that, according to the people of

custom (ahl-e-urf), the note is identical to created money in all rulings, with no difference.

1 Majmu'a Fatawa, Kitab al-Buyu' (Book of Sales), Matba' Yusufi Lucknow, 1/39 2 Majmu'a Fatawa, Kitab al-Buyu' (Book of Sales), Matba' Yusufi Lucknow, 1/39 Page 529 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द 17 (17)

...से है, वहां तफ़ाज़ुल (कमी-बेशी) क्यों जाइज़ हुआ। तीसरा: रुपये और अशर्फियां तो खुद ऐन-ए-समने खल्की (प्राकृतिक मुद्रा) हैं, किसी के समझने पर निर्भर नहीं, उनमें कैसे सही हुआ? कथन: तफ़ाज़ुल के अध्याय में इसी आधार पर निर्णय दिया जाएगा और इसमें तफ़ाज़ुल हराम होगा। मैं कहता हूँ सबसे पहले: यहाँ आकर इस तीसरे "पस" (अतः) का अंत हुआ और पहले तर्क ने दम तोड़ दिया। लेकिन यह "पस" पिछले सभी "पसों" से बौद्धिक संबंध में अधिक है और असत्य की स्पष्टता में असत्य से आगे है। सभी कमियों को स्वीकार करते हुए मान लीजिए कि हाँ, तफ़ाज़ुल हराम हो गया, तो वह तफ़ाज़ुल हराम होगा जो समने खल्की में हराम था जिसके लिए उसे ऐन (समान) समझा गया। या तर्क देते समय तक ऐनियत (समानता) थी और परिणाम देते समय क्या वह परायापन या उलटफेर का कोई नया आदेश निकालेगी जो समने खल्की में मूल रूप से नहीं है? अंततः आप इस आधार पर निर्णय दे रहे थे कि नोट समने खल्की के समान है, तो वही निर्णय अनिवार्य होगा जो समने खल्की में था, न कि उसका कोई अन्य, क्योंकि निर्णय वस्तु के लिए अनिवार्य होता है और अनिवार्य परिवर्तन वांछित समानता को नकारता है। अब देख लीजिए कि समने खल्की में कौन सा तफ़ाज़ुल हराम है? मात्रा में यानी तराजू के वजन में बराबर होना अनिवार्य है चाहे मूल्य में कितना ही अंतर हो। अब जो आप सौ रुपये का नोट सौ रुपये में बेचना हलाल कर रहे हैं, तो आप अपने तौर पर निश्चित रूप से ब्याज को हलाल कर रहे हैं क्योंकि सौ का नोट कभी वजन में सेर भर नहीं होगा। देखिये रिसाला (पुस्तिका) पृष्ठ 190 से 192। दूसरा (48 से 57): मूल्य के तफ़ाज़ुल की अनुमति पर दस तर्क रिसाला में गुजर चुके हैं, पृष्ठ 175 से 180 देखें। कथन: "इन्नमल आ'मालु बिन-नियात" (कार्यों का दारोमदार नियतों पर है। - त) मैं कहता हूँ: आदरणीय सज्जन ने पृष्ठ के तर्क में केवल अपनी कल्पनाओं से काम लिया है, प्रमाण का एक शब्द भी नहीं लाए। और उन्होंने यह भी पसंद नहीं किया कि तर्क यों ही मनगढ़ंत गुजर जाए और प्रमाण का नाम तक न आए। इसलिए उन्होंने यह हदीस शरीफ सिर्फ वजन बनाने और तर्क का भ्रम बनाए रखने के लिए उल्लेख कर दी। यदि पूछा जाए कि इसका प्रसंग से क्या संबंध है, आपके तर्क का कौन सा आधार इससे सिद्ध होता है, तो उत्तर यही होगा कि कुछ नहीं। लेकिन आखिरकार हदीस सही है, इसे पढ़ना पुण्य से खाली नहीं है, भले ही प्रसंग से असंबद्ध हो। इसी नीयत से हमने लिख दी: "इन्नमल आ'मालु बिन-नियात व लिकुल्ली इमरिइम मा नवा" (कर्मों का आधार नीयत पर है और हर व्यक्ति के लिए वही है जिसकी उसने नीयत की। - त)। तर्क का सार

केवल इतना है कि रिवाज के लोगों (अहले-उर्फ़) के निकट नोट सभी निर्णयों में समने खल्की के समान है, कोई अंतर नहीं।

1 मजमूआ फ़तावा, किताबुल बुयू (क्रय-विक्रय की पुस्तक), मतबा यूसुफी लखनऊ, 1/39 2 मजमूआ फ़तावा, किताबुल बुयू (क्रय-विक्रय की पुस्तक), मतबा यूसुफी लखनऊ, 1/39 पृष्ठ 529 of 715

سے ہے وہاں تفاضل کیوں جائز ہوا۔ ثالثاً: روپے اشرفیاں تو خود عین ثمن خلقی ہیں کسی کے سمجھنے پر موقوف نہیں ان میں کیونکہ درست ہوا۔ قولہ : باب تفاضل میں اسی بنا پر حکم دیا جائے گا اور تفاضل اس میں حرام ہوگا۔ اقول اولاً: یہاں آکر اس تیسری "پس" کا خاتمہ ہوا اور پہلی دلیل نے دم توڑا مگر یہ "پس" پسینہ تو سب پسہائے پیشینہ سے علاقہ بہ عقل میں پس اور وضوح بطلان بطلان میں پیش ہے سب خرابیاں اوڑھ کر فرض کر لیجئے کہ ہاں تفاضل حرام ہوا تو وہ تفاضل تو حرام ہوگا جو ثمن خلقی میں حرام تھا جس کا اسے عین سمجھا گیا یادلیل لاتے وقت تک عینیت تھی اور نتیجہ دیتے وقت غیریت کا یا پلٹ ہو کر کوئی نیا حکم نکالے گی جو ثمن خلقی میں اصلاً نہیں آخر اس بنا پر تو حکم لگاتے تھے کہ نوٹ ثمن خلقی کا عین ہے تو وہی حکم لازم ہوگا جو ثمن خلقی میں تھا ، نہ اس کا غیر کہ حکم لازم شئی ہوتا ہے اور تغیر لازم نافی عینیت ملزوم ، اب دیکھ لیجئے کہ ثمن خلقی میں کون سا تفاضل حرام ہے قدر میں یعنی کانٹے کی تول وزن میں برابر ہو نا لازم اگرچہ مالیت میں کتنا ہی فرق ہو ، اب جو آپ سو روپے کا نوٹ سو روپے کو بیچنا حلال کر رہے ہیں اپنے طور پر یقیناً سود حلال کر رہے ہیں کہ سو کا نوٹ کبھی وزن میں سیر بھر نہ ہوگا ، دیکھئے رسالہ ص ۱۹۰ تا ۱۹۲۔ ثانیا (۴۸ تا ۵۷) تفاضل مالیت کے جواز پر دس دلیلیں رسالہ میں گزریں صفحہ ۱۷۵ تا ۱۸۰ ملاحظہ ہو۔ قولہ فانما الاعمال بالنیات (اعمال کا دار ومدار نیتوں پر ہے۔ ت) اقول: جناب گرامی نے صفحہ بر کی دلیل میں محض اپنے تخیلات سے کام لیا ہے کوئی حرف سند نہ لائے اور یہ بھی پسند نہ فرمایا کہ دلیل یونہی من گھڑت پر گزر جائے اصلاً سند کا نام نہ آئے لہذا یہ حدیث شریف صرف وزن بنانے دلیل کا بھرم رکھنے کو ذکر فرمادی ، اگر عرض کیجئے کہ اسے محل سے کیا علاقہ آپ کی دلیل کے کس مقدمہ کا اس سے

ثبوت ، تو جواب یہی ہوگا کہ کچھ نہیں مگر آخر حدیث صحیح ہے اس کا پڑھنا ثواب سے تو خالی نہیں اگرچہ محل سے بے علاقہ ہو اسی نیت سے ہم نے لکھ دی و انما الاعمال بالنیات ولکل امرئ مانوی (اعمال کا دار ومدار نیتوں پر ہے اور ہر شخص کے لئے وہی کچھ ہے جس کی اس نے نیت کی ۔ ت) دلیل کا حاصل صرف اتنا ہے کہ نوٹ اہل عرف کے نزدیک جمیع احکام میں ثمن خلقی کا عین ہے کچھ تفاوت

1 مجموعہ فتاوی کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنوا / ۳۹ 2 مجموعہ فتاوی کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنوا / ۳۹ Page 529 of 715

Fatawa Rizwia Volume 17 (17)

...they do not understand, and that which is identical in all rulings without difference would also be identical in surplus (excess), such that it is also a ruling that surplus in bank notes is forbidden. In this, the major premise is clear and does not need evidence, and it is also clear that the Hadith is unrelated to it. All the effort has been spent on proving the minor premise, whose service has passed such that not even a single letter is in its place. But tell me, what proof does the Hadith provide for it? "Actions depend on intentions and for every person is that which he intended." How does it prove from this that notes are conventionally identical to natural money (Thaman Khalqi) in all rulings? Yes, you could say that when people of convention, knowing full well that paper is paper and silver/gold is silver/gold, intended that this paper is identical to gold and silver in all rulings, then for them, it became identical because actions depend on intentions and for every person is his intention.

I say: For a note to be identical to gold or silver is not an "action". Transactions like buying and selling are actions, and the note is their locus, and the locus is not subject to intention. Otherwise, the school of thought of those who hold such a view would lead to a necessity: a man's intention for his wife to be his mother would make her eternally forbidden to him, whereas by the definitive text of the Quran, even explicitly calling her "mother" does not make her forbidden; rather, it is only a false and sinful statement.

Allah Almighty said: "Those among you who pronounce Zihar (equating wives to mothers) upon their women, they are not their mothers. Their mothers are none but those who gave birth to them. And indeed, they utter an objectionable and false word. And indeed, Allah is Pardoning and Forgiving." [1]

And the intention for the opposite is even more hideous and impure. Similarly, even if it is incorrectly accepted that the people of convention have intended that the note is identical to natural money and inherently gold/silver, they will not become gold or silver from paper by their intention, nor will conventional become natural. Their authority extends to terminology; hence it will become "conventional money" (Thaman Istilahi), not affecting creation and nature such that it becomes "natural money" (Thaman Khalqi). "There is no change in the creation of Allah." [2] (There is no change in Allah's creation. - Translator). Then tell me, what relevance does the

Hadith have here: "And for every man is what he intended." [3] (Every person gets what they intended. - Translator).

1. Al-Quran Al-Karim 58/2
2. Al-Quran Al-Karim 30/30
3. Majmu'a Fatawa, Kitab al-Buyu', Matba' Yusufi, Lucknow, 7/39 Page 530 of 715

फतावा रज़विया जिल्द 17 (सत्रह)

...नहीं समझते और जो तमाम अहकाम में बिला तफ़ावत ऐन हो, तफ़ाज़ुल (कमी-बेशी) में भी ऐन होगा कि यह भी एक हुक्म है, लिहाज़ा नोट में तफ़ाज़ुल हराम है। इसमें कुबरा (बड़ी दलील) तो वाज़ेह है कि मोहताजे इस्तिदलाल (तर्क की ज़रूरत) नहीं, और हदीस का इससे बे-ताल्लुक होना भी वाज़ेह है। सारी दौड़-धूप सुग़रा (छोटी दलील) के सबूत में की गई है जिसकी ख़िदमत गुज़ारी गुज़री कि एक हर्फ़ भी ठिकाने का नहीं। मगर यह फरमाइये कि हदीस इसका क्या सबूत देती है कि "आमाल नियतों पर हैं और हर शख़्स के लिए उसकी नियत है"? इससे क्या साबित हुआ कि नोट उरफ़न (प्रचलन में) तमाम अहकाम में समन-ए-ख़ल्की (प्राकृतिक मुद्रा) के ऐन (समान) हैं? हाँ, यह कहिये कि जब अहल-ए-उर्फ़(समाज के लोगों) ने दीदा व दानिस्ता (जान-बूझकर) काग़ज़ को काग़ज़ और सिम-ओ-ज़र (सोना-चांदी) को सिम-ओ-ज़र समझते हुए नियत कर ली कि यह काग़ज़ तमाम अहकाम में सोने-चांदी के ऐन (समान) है, तो उनके हक़ में ऐन हो गया क्योंकि आमाल नियत पर हैं और हर शख़्स के लिए उसकी नियत है।

अक़ूल (मैं कहता हूँ): नोट का ब-ऐनही सोना चांदी होना कोई "अमल" नहीं है। ख़रीद-ओ-फ़रोख़्त वग़ैरा मुआमलात "अमल" हैं और नोट उनका महल (स्थान) है, और महल नियत के ताबे (अधीन) नहीं होता, वरना अंदिया (एक ख़ास राय वालों) का मज़हब लाज़िम आएगा कि ज़ौजा (पत्नी) में माँ होने की नियत उसे हमेशा के लिए हराम कर दे, हालाँकि क़ुरआन के क़तई हुक्म से उसे माँ कहना भी हराम नहीं करता, बस यह कहना ग़लत और गुनाह होता है।

अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "तुम में से जो लोग अपनी औरतों को अपनी माँ कहें, वे उनकी माँ नहीं हैं। उनकी माँ तो वही हैं जिन्होंने उन्हें जन्म दिया है। और बेशक वे एक नापसंद और झूठी बात कहते हैं। और बेशक अल्लाह माफ़ करने वाला और बख़्शने वाला है।" [1]

और इसके उलट की नियत और भी ज़्यादा भद्दी और नापाक है। इसी तरह अगर ग़लती से मान भी लिया जाए कि अहल-ए-उर्फ़ ने नियत कर ली कि नोट असल में समन-ए-ख़ल्की और ज़ात के ऐतबार से सोना-चांदी है, तो उनकी नियत से न वह काग़ज़ से सोना-चांदी हो जाएगा और न ही इस्तलाही (परिभाषिक) से ख़ल्की (प्राकृतिक)। उनका अधिकार सिर्फ़ इस्तलाह (परिभाषा) तक है, तो इससे वह समन-ए-इस्तलाही (परिभाषिक मुद्रा) होगा, न कि सृष्टि और रचना बदल जाएगी कि समन-ए-ख़ल्की हो जाए। "अल्लाह की तख़्लीक़ (सृष्टि) में कोई बदलाव नहीं होता।" [2] (अल्लाह तआला की मख़्लूक

में कोई तब्दीली नहीं होती। - अनुवादक)। फिर बताइये हदीस का यहाँ क्या ताल्लुक हुआ: "और हर आदमी के लिए वही है जिसकी उसने नियत की।" [3]

1. अल-क़ुरआन अल-करीम 58/2
2. अल-क़ुरआन अल-करीम 30/30
3. मजमुआ फ़तावा, किताबुल बुयू, मतबा यूसुफ़ी, लखनऊ 7/39 पेज 530 ऑफ़ 715

نہیں سمجھتے اور جو جمیع احکام میں بلا تفاوت عین ہو تفاضل میں بھی عین ہوگا کہ یہ بھی ایک حکم الذا نوٹ میں تفاضل حرام، اس میں کبری تو واضح ہے کہ محتاج استدلال نہیں ، اور حدیث کا اس سے بے علاقہ ہونا بھی واضح۔ ساری عرق ریزی ثبوت صغری میں فرمائی ہے جس کی خدمت گزاری گزری کہ ایک حرف بھی ٹھکانے کا نہیں مگر یہ فرمائیے کہ حدیث اس کا کیا ثبوت دیتی ہے اعمال نیتوں پر ہیں اور ہر شخص اور اس کی نیت اس سے کیا ثابت ہوا کہ نوٹ عرفاً جمیع احکام میں ثمن خلقی کا عین ہیں ہاں یہ کہئے کہ جب اہل عرف نے دیدہ و دانستہ کاغذ کو کاغذ ، سیم و زر کو سیم و زر سمجھتے ہوئے نیت کرلی کہ یہ کاغذ جمیع احکام میں سونے چاندی کا عین ہے تو ان کے حق میں عین ہو گیا کہ اعمال نیت پر ہیں اور ہر شخص اور اس کی نیت۔

اقول: نوٹ کا بعینہ سونا چاندی ہونا کوئی عمل نہیں ، بیع وشراء وغیرہ معاملات عمل ہیں اور نوٹ ان کا محل اور محل تابع نیت نہیں ورنہ عندیہ کا مذہب لازم آئے زوجہ میں ماں ہونے کی نیت اسے حرام ابدی کر دے حالانکہ بنص قطعی قرآن اسے ماں کہنے کی صریح تصریح بھی حرام نہیں کرتی صرف یہ قول باطل و گناہ ہوتا ہے۔

قال تعالیٰ "الَّذِیْنَ یُظٰهِرُوْنَ مِنْكُمْ مِّنْ نِّسَآىٕهِمْ مَّا هُنَّ اُمَّهٰتِهِمْ ط اِنْ اُمَّهٰتُهُمْ اِلَّا الّٰٓـِٔیْ وَلَدْنَهُمْ ط وَاِنَّهُمْ لَیَقُوْلُوْنَ مُنْكَرًا مِّنَ الْقَوْلِ وَ زُوْرًا ط وَ اِنَّ اللّٰهَ لَعَفُوٌّ غَفُوْرٌ ﴿۲﴾ "۔ اللہ تعالیٰ نے فرمایا: تم میں جو اپنی عورتوں کو اپنی ماں کہیں وہ ان کی ماں نہیں ان کی مائیں تو وہی ہیں جن سے وہ پیدا ہیں اور وہ بیشک ضرور بری اور جھوٹی بات کہتے ہیں اور بیشک اللہ ضرور معاف کرنے والا اور بخشنے والا ہے۔

اور عکس کی نیت اور بھی شنیع و ناپاک تر ہے یوں ہی اگر بفرض غلط تسلیم کر لیا جائے کہ اہل عرف نے نیت کرلی کہ نوٹ بعینہ ثمن خلقی اور بذاتہ سونا چاندی ہے تو ان کی نیت سے نہ وہ کاغذ سے سونا چاندی ہو جائے گا نہ اصطلاحی سے خلقی، ان کا اختیار اصطلاح تک ہے تو اس سے ثمن اصطلاحی ہو گا، نہ خلق و آفرینش پر کہ ثمن خلقی ہو جائے۔ "لَا تَبْدِیْلَ لِخَلْقِ اللہِ" ۲ (اللہ تعالٰی کی خلق میں کوئی تبدیلی نہیں ہوتی۔ ت) پھر فرمائیے حدیث کو یہاں کیا علاقہ ہوا ۔ قولہ ولکل امرئ مانوی ۳ (ہر شخص کے لئے وہی ہے جس کی اس نے نیت کی ۔ ت)

۱ القرآن الکریم ۲/۵۸ ۲ القرآن الکریم ۳۰/۳۰ ۳ مجموعہ فتاوی کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنو ۷/

Fatawa Rizvia, Volume 17

I say: Praise be to Allah, this part of the Hadith is useful to us. For your sake, let us first accept the falsehood that the people of custom (ahl-e-urf) have made the intention that a note is exactly gold and silver. Second, let us accept an even more severe falsehood that the Sharia, knowing their wrong intention, turned it into gold and silver for them. Third, let us adopt the falsehood that Sharia, accepting it as gold and silver, completely overturned the legal ruling that applied to gold and silver itself —that disparity in weight is forbidden, not in value—and applied it to this forced gold and silver, making disparity in value forbidden, not in weight. Now, all your fabricated whims are accepted, but Praise be to Allah, this Hadith shows that even now if Zaid and Amr buy or sell a ten-rupee note between them for a hundred rupees or for one rupee, it is all permissible. Dear sir! When the basis for disparity here is determined by value, and this value of the note is also not inherent but merely conventional—as you yourself have said that the paper is not worth even two paisa—then it was the convention and intention of the people of custom that made it worth ten rupees. Their convention and intention do not rule over these two contracting parties; they have the right to their own separate convention and intention. You yourself quote the Hadith: "For every person is that which he intended"[1] (For every person there is what he intended - T). For every person, his own intention is considered. Also, see pages 159, 158, 157, 156, 155, 165, 162, 142 of the treatise. So, when Zaid and Amr, based on the authority given to them by the Pure Sharia, did not follow the general convention in their transaction, but deviated from it, and declared the note, which common custom had set at ten rupees, to be worth a hundred rupees or just one rupee, there is absolutely no accountability for them. Nor was there any disparity in value, because the value was based on convention. For them, the value is what they mutually agreed upon because "For every person is that which he intended"[2] (For every person there is what he intended - T). Trying to make a good argument from the Hadith for each person and his intention, they ended up losing more than they gained.

Exquisite Subtlety: This shining argument with which the Maulana was made the "crown of the bouquet" and finally said "This occurred to me"[3] (i.e., this is what suddenly appeared to my thought - T).

---

1. Sahih al-Bukhari, Chapter: How Revelation Started, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/2.

2. Sahih al-Bukhari, Chapter: How Revelation Started, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/2.
3. Majmu'a Fatawa, Kitab al-Buyu', Matba' Yusufi, Lucknow, 1/398.

फ़तावा रिज़विया, जिल्द 17

मैं कहता हूँ: अल्हम्दुलिल्लाह, हदीस का यह हिस्सा तो हमारे लिए ही लाभदायक है। आपकी ख़ातिर हम पहली ग़लत बात (बातिल) यह मान लें कि अहल-ए-उर्फ़(आम लोग) ने वज़ू करके यह नियत कर ली है कि नोट ऐन (बिल्कुल) सोना-चाँदी है। दूसरा इससे बढ़कर सख़्त बातिल यह मान लें कि उनके इस ग़लत इरादे को जानते हुए शरीयत ने भी उनके हक़ में इसे सोना-चाँदी बना दिया। तीसरा बातिल यह ओढ़ लें कि शरीयत ने इसे सोना-चाँदी मानकर ख़ुद सोने-चाँदी में जो शरीई हुक्म था कि वज़न में कमी-बेशी (तफ़ाज़ुल) हराम है न कि मालियत (मूल्य) में, इस ज़बरदस्ती के सोने-चाँदी में इसे बिल्कुल उलट दिया कि इसमें मालियत में कमी-बेशी हराम है न कि वज़न में। अब तो आपकी सारी मनगढ़ंत बातें मान ली गईं, मगर अल्हम्दुलिल्लाह यह हदीस बता रही है कि अब भी अगर जैद और अम्र आपस में दस रुपये का नोट सौ रुपये या एक रुपये में ख़रीदें-बेचें, तो ऐ मोहतरम! सब हलाल है। जब यहाँ तफ़ाज़ुल (कमी-बेशी) की बुनियाद मालियत पर ठहरी और नोट की यह मालियत भी क़ुदरती नहीं बल्कि सिर्फ़ इस्तेलाही (पारिभाषिक/प्रथागत) है—जैसा कि आप ख़ुद फ़रमा चुके हैं कि वह कागज़ दो पैसे का भी नहीं है—तो अहल-ए-उर्फ़ की इस्तेलाह और नियत ही ने उसे दस रुपये का बनाया, और उनकी इस्तेलाह और नियत इन दोनों लेन-देन करने वालों पर हाकिम नहीं है। उन्हें अपनी अलग इस्तेलाह और नियत का अधिकार है। आप ख़ुद हदीस नक़ल करते हैं: "हर व्यक्ति के लिए वही है जिसकी उसने नियत की"[1] (और हर व्यक्ति के लिए वही कुछ है जिसकी उसने नियत की - त)। हर व्यक्ति के हक़ में उसकी नियत का एतबार (मान्यता) है। साथ ही रिसाले के सफ़ा 159, 158, 157, 156, 155, 165, 162, 142 को देखें। तो जब जैद और अम्र ने अपने मामले में शरीअत-ए-मुतहहरा द्वारा दिए गए इस अधिकार के आधार पर आम इस्तेलाह की पैरवी नहीं की, बल्कि उससे हटकर नोट को, जिसे आम रिवाज ने दस रुपये का तय किया था, सौ रुपये या एक रुपया क़रार दिया, तो उन पर इस बारे में कोई पकड़ (मुआख़ज़ा) नहीं है। न ही मालियत में कोई तफ़ाज़ुल (अन्तर) हुआ क्योंकि मालियत इस्तेलाह पर आधारित थी। उनके हक़ में वही मालियत है जो उन्होंने आपस में तय कर ली, क्योंकि "हर व्यक्ति के लिए वही है जिसकी उसने नियत की"[2] (हर व्यक्ति के लिए वही कुछ है जिसकी उसने नियत की - त)। हर व्यक्ति और उसकी नियत की हदीस से अच्छी दलील देने चले थे कि लेने के देने पड़ गए।

लतीफ़ा-ए-जलीला (उत्कृष्ट सूक्ष्मता): यह चमकती हुई दलील जिससे मौलवी साहब को 'गुल-ए-सर-सबद' (गुलदस्ते का सबसे सुंदर फूल) बनाया गया और अंत में फ़रमाया "हज़ा सनहा ली"[3] (यानी यह वह बात है जो अचानक मेरे विचार में आई - त)।

---

1. सहीह अल-बुखारी, बाब: वह्य की शुरुआत कैसे हुई, कदीमी कुतुब खाना कराची, 1/2
2. सहीह अल-बुखारी, बाब: वह्य की शुरुआत कैसे हुई, कदीमी कुतुब खाना कराची, 1/2
3. मजमुआ-ए-फ़तावा, किताबुल बुयूअ, मतबा-ए-यूसुफ़ी लखनऊ, 1/398

اقول: الحمدللہ یہ حدیث کا یہ جملہ تو ہمیں کو مفید ہے آپ کی خاطر سے پہلا باطل یہ تسلیم کرلیں کہ اہل عرف نے وضو کرکے نیت باندھ لی ہے کہ نوٹ بعینہ سونا چاندی ہے دوسرا اس سے بڑھ کر اشد باطل یہ مان لیں کہ دیدہ ودانستہ ان کی اس غلط نیت سے شرع نے بھی ان کے حق میں اسے سونا چاندی کر دیا، تیسرا باطل یہ اوڑھ لیں کہ شرع نے اسے سونا چاندی مان کر خود سونے چاندی میں جو حکم شرعی تھا کہ تفاضل وزن میں حرام ہے نہ کہ مالیت میں، اس زبردستی کے سونے چاندی میں اسے بالکل پلٹ دیا کہ اس میں تفاضل مالیت میں حرام ہے نہ کہ وزن میں ، اب تو بالکل سب گھڑتیں آپ کی من مانتی مان لیں مگر الحمد للہ یہ حدیث بتارہی ہے کہ اب بھی دس روپے کا نوٹ زید وعمرو باہم سو روپے کو بچیں مول لیں خواہ ایک روپیہ کو سب حلال جناب من! جب یہاں تفاضل کا مبنی مالیت پر ٹھہرا اور نوٹ کی یہ مالیت بھی خلقی نہیں محض اصطلاحی ہے آپ خود فرما چکے ہیں کہ وہ کاغذ دو پیسے کا بھی نہیں تو اہل عرف ہی کی اصطلاح و نیت نے اسے دس روپے کا کر دیا اور ان کی اصطلاح و نیت ان دونوں عاقدوں پر حاکم نہیں انہیں اپنی جدا اصطلاح و نیت کا اختیار ہے آپ خود حدیث نقل کرتے ہیں : لکل امرئ مانوٰی ۱ (اور ہر شخص کے لئے وہی کچھ ہے جس کی اس نے نیت کی ـت) ہر شخص کے حق میں اس کی نیت کا اعتبار ہے، نیز رسالہ کا صفحہ ۱۵۹، ۱۵۸، ۱۵۷، ۱۵۶، ۱۵۵، ۱۶۵، ۱۶۲، ۱۴۲ ملاحظہ ہو ، تو جب زید وعمرو نے اپنے معاملہ میں اس اختیار کی بناء پر جو شرع مطہر نے ان کو دیا اصطلاح عام کی پیروی نہ کی بلکہ اس سے عدول کر کے جو نوٹ عرف عام نے دس روپے کا ٹھہرایا تھا سو روپے یا ایک ہی روپیہ کا قرار دیا ان پر اصلاً اس میں مواخذہ نہیں ، نہ زنہار مالیت میں کچھ تفاضل ہوا کہ مالیت بربنائے اصطلاح تھی، ان کے حق میں وہی مالیت ہے جو انہوں نے باہم قرار

دے لی اس لئے کہ لکل امرئ مانوی ۲ (ہر شخص کے لئے وہی کچھ ہے جس کی اس نے نیت کی ۔ت) ہر شخص اور اس کی نیت حدیث سے اچھا استدلال کرنے چلے کہ اور لینے کے دینے پڑ گئے۔

لطیفہ جلیلہ : یہ چمکتی ہوئی دلیل جس سے مولوی صاحب سے گل سرسبد بنایا اور آخر میں ھذا سنح لی ۳ (یہ وہ ہے جو میرے لئے ظاہر ہوا ۔ت) فرمایا یعنی یہ وہ ہے جو اچانک میرے خیال

---

۱ صحیح البخاری باب کیف کان بدؤ الوحی قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/۱ ۲ صحیح البخاری باب کیف کان بدؤ الوحی قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/۱ ۳ مجموعہ فتاوٰی کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنؤ ۳۹۸/۱

Fatawa Razvia, Volume 17

It was not through the Maulvi Sahib's own effort, but rather taken from the fatwa (legal ruling) of this humble servant of the Court of the Omnipotent (May Allah forgive him). Thirty years ago, a question came to me asking whether it is permissible to apply a discount on a banknote, for example, buying a hundred-rupee note for ninety-nine. Based on the requirements of Islamic jurisprudence (fiqh), I declared its permissibility and argued for it using 'Tanwir al-Absar' and general books. My fatwa reached the Maulvi Sahib, who included it in his collection of fatwas. It was published in the second volume along with the fatwa of the defender of Sunnah, Janab Maulana Maulvi Muhammad Irshad Hussain Sahib Rampuri (may Allah have mercy on him). I received it from there because at that time I did not have the custom of keeping copies of my fatwas, and through it, the fatwa of the learned scholar of Rampur became known. In the 'Majmu'ah Fatawa' of the Maulvi of Lucknow, it is numbered 123, and my fatwa is number 124. Both rule in favor of permissibility. Following that, there is a four-line fatwa from some scholars of Madras numbered 125, which also rules for permissibility. Immediately after, at number 126, is the fatwa of the Maulvi Sahib himself, in which he addressed some words of my fatwa but gave no response to the rest. Because banknotes are a very modern invention and their mention is not explicitly found in the books of jurisprudence, but the general principle of all books suggests permissibility, I wrote the ruling, answered doubts, and at the end wrote: 'Ma Zahara Li Wallahu Subhanahu wa Ta'ala A'lam' (This is what appeared to me, and Allah the Exalted knows best). The Maulvi Sahib, based on the fact that no one could give me a response from the books, acted upon his own imaginations and wrote at the end: 'Hadha Ma Sanaha Li Wallahu A'lam bis-Sawab' (This is what occurred to me, and Allah knows best what is correct). This reason, which became the Maulvi Sahib's reliance, I had already refuted in my fatwa under the heading 'doubt'. The Maulvi Sahib took the argument but could not fulfill the task of responding to the refutation. In my fatwa, after stating the ruling and citations from books, I wrote: 'The answer to the issue was completed to that extent, but for someone not versed in jurisprudence (fiqh), a doubt arises in such places that although in reality a note is just the name of a printed piece of paper, in custom and terminology it is as if it is money itself. Therefore, it serves the purpose of money everywhere. In transactions, giving a hundred-rupee note and giving a hundred rupees is considered to have no difference at all; generally, it is treated as currency. So, it is as if a hundred rupees were bought for ninety-nine, and there is no doubt about its prohibition. So, the ruling should be

written for the queried situation.' See, the Maulvi Sahib took this same doubt and made it his argument. The subject matter that I expressed in four or five lines, the Maulvi Sahib...

1 Majmu'ah Fatawa Kitab al-Buyu' Matba' Yusufi Lucknow / 398 Page 532 of 715

यह मौलवी साहब के अपने प्रयास से नहीं आया, बल्कि इसी फ़क़ीर (अल्लाह उसे क्षमा करे) के फ़तवे से लिया गया है। तीस साल पहले फ़क़ीर के पास यह सवाल आया था कि क्या नोट पर बट्टा लगाना, उदाहरण के लिए सौ रुपये का नोट निन्यानबे में खरीदना जायज़ है या नहीं। फ़क़ीर ने न्यायशास्त्र (फ़िक़्ह) की दृष्टि से इसके जायज़ होने की ज़रूरत बताई और 'तन्वीर अल-अबसार' तथा सामान्य पुस्तकों से इसके पक्ष में दलीलें दीं। मेरा यह फ़तवा मौलवी साहब तक पहुँचा, जिसे उन्होंने अपने फ़तवा संग्रह में शामिल किया। यह सुन्नत के समर्थक जनाब मौलाना मौलवी मोहम्मद इरशाद हुसैन साहब रामपुरी (रहमतुल्लाह अलैहि) के फ़तवे के साथ दूसरे खंड में प्रकाशित हुआ था और मुझे वहीं से मिला क्योंकि उस समय तक मुझे अपने फ़तवे रखने की आदत नहीं थी, और उसी से हज़रत फ़ाज़िल रामपुरी का फ़तवा पता चला। लखनऊ के मौलवी साहब के'मजमुआ फ़तावा' में यह नंबर 123 है और मेरा फ़तवा नंबर 124 है। दोनों में जायज़ होने का हुक्म है। उसके बाद मद्रास के कुछ विद्वानों का चार पंक्तियों का एक फ़तवा नंबर 125 है, उसमें भी जायज़ होने का ही हुक्म है। उसके ठीक बाद नंबर 126 में मौलवी साहब का यह फ़तवा है जिसमें उन्होंने फ़क़ीर के फ़तवे के कुछ शब्दों पर तो बात की लेकिन बाकी का कोई जवाब नहीं दिया। मैंने इस आधार पर कि नोट एक बहुत ही आधुनिक आविष्कार है और न्यायशास्त्र की पुस्तकों में इसका स्पष्ट उल्लेख नहीं है, लेकिन सभी पुस्तकों का सामान्य सिद्धांत इसके जायज़ होने का संकेत दे रहा है, हुक्म लिखकर और शंकाओं का समाधान करके अंत में लिखा: 'मा ज़हरा ली वल्लाहु सुब्हानहू व तआला आलम' (यह वह है जो मुझे स्पष्ट हुआ, और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है)। मौलवी साहब ने इस आधार पर कि मेरा कोई जवाब किताब से नहीं दे सकता, अपनी कल्पनाओं पर काम किया और अंत में लिखा: 'हाज़ा मा सनहा ली वल्लाहु आलम बिस-सवाब' (यह वह है जो मेरे मन में आया और अल्लाह बेहतर जानता है कि सही क्या है)। यह दलील जिसे मौलवी साहब ने विश्वसनीय माना, फ़क़ीर ने पहले ही अपने फ़तवे में 'शंका' (वहम) लिखकर उसका खंडन कर दिया था। मौलवी साहब ने दलील तो उठा ली लेकिन खंडन का जवाब देने का कर्तव्य पूरा नहीं कर सके। मेरे फ़तवे में हुक्म और पुस्तकों के उद्धरण के बाद लिखा था: "मसले का जवाब तो उसी सीमा तक पूरा हो गया था, लेकिन जो न्यायशास्त्र के जानकार नहीं हैं, उनके मन में ऐसी जगह यह शंका पैदा होती है कि हालाँकि वास्तविकता में नोट केवल एक छपे हुए कागज़ का नाम है, लेकिन प्रचलन और शब्दावली में वह मानो हूबहू रुपया ही है, इसलिए हर जगह रुपये का काम देता है। लेन-देन में सौ रुपये का नोट देने और सौ रुपये नकद देने

में कोई अंतर नहीं समझा जाता। आम तौर पर इसके साथ मुद्रा (अस्मान) जैसा व्यवहार किया जाता है, तो मानो सौ रुपये निन्यानबे के बदले खरीदे गए और इसकी मनाही (हुरमत) में कोई संदेह नहीं है, तो पूछी गई स्थिति में हुक्म लिखा जाना चाहिए।" देखिए, इसी शंका को मौलवी साहब ने लिया और दलील बनाया। जिस विषय को मैंने चार-पांच पंक्तियों में व्यक्त किया था, मौलवी साहब ने उसी को...

1 मजमुआ फ़तावा किताब अल-बुयू मतबा यूसुफ़ी लखनऊ / 398 पृष्ठ 532 का 715

میں آیا مولوی صاحب کی اپنی سعیِ بازو نہیں بلکہ اسی فقیر بارگاہِ قدیر غفرلہ کے فتوئ سے اخذ کی ہے تیس برس ہوئے فقیر کے پاس اس کا سوال آیا تھا کہ نوٹ پر بٹا لگانا مثلاً سو روپے کا نوٹ ننانوے میں خرید لینا جائز ہے یا نہیں، فقیر نے نظرِ فقہی کا مقتضئ جواز بتایا اور تنویرالابصار و عامہ کتب سے اس پر استدلال کیا، میرا یہ فتوئ مولوی صاحب کے یہاں پہنچا جسے انہوں نے اپنے مجموعہ فتاوئ میں درج کیا کہ اس کی جلد دوم میں میں فتوئ حامی سنت جناب مولنا مولوی محمد ارشاد حسین صاحب رامپوری رحمۃ اللہ علیہ کے ساتھ طبع ہوا اور وہیں سے مجھے ملا کہ اس وقت تک مجھے اپنے فتاوے رکھنے کا التزام نہ تھا اور اسی سے حضرت فاضل رامپوری کا فتوئ معلوم ہوا۔ جس پر مجموعہ فتاوٰی مولوی لکھنوی صاحب میں نمبر ۱۲۳ ہے اور میرا فتوئ نمبر ۱۲۴ ہے، دونوں میں حکم جواز ہے، پھر ایک چار سطری فتوئ بعض علمائے مدراس کا نمبری ۱۲۵ ہے اس میں بھی جواز ہی کا حکم ہے اس کے متصل نمبر ۱۲۶ میں مولوی صاحب کا یہ فتوئ ہے جس میں انہوں نے فتوئ فقیر کے بعض کلموں سے تعرض کیا اور باقی کا کچھ جواب نہ دیا، میں نے اس بنا پر کہ نوٹ بہت جدید حادث ہے کتبِ فقہیہ میں اس کا ذکر مصرح نہیں مگر تمام کتب کا ضابطہ کلیہ حکم جواز بتارہا ہے حکم لکھ کر اوہام کا جواب دے کر آخر میں ماظھر لی واللہ سبحنہ وتعالی اعلم (یہ وہ ہے جو میرے لئے ہوا، اور اللہ سبحانہ وتعالی بہتر جانتا ہے۔ت) مولوی صاحب نے اس بنا پر کہ میرا اکا کوئی جواب کتاب سے نہ دے سکے اپنے مخیلات پر عامل ہوئے آخر میں ھذا ماسنح لی واللہ اعلم بالصواب (یہ وہ ہے جو میرے لئے ظاہر ہوا اور اللہ سبحنہ اللہ تعالئ علیہ بہتر جانتا ہے۔ت) لکھاہیہ دلیل کہ مولوی صاحب کی معتمد ہوئی فقیر نے پہلے ہی اپنے فتوئ میں بنام وہم لکھ کر رد کردی تھی مولوی صاحب نے دلیل تو اٹھالی اور رد کے

جواب سے عہدہ برآئی نہ کی میرے فتویٰ میں بعد بیان حکم و عبارت کتب تھا "مسئلہ کا جواب تواسی قدر سے ہوگیا لیکن غیر فقیہ کو ایسی جگہ یہ وہم گزرتا ہے کہ ہر چند اصل حقیقت میں نوٹ صرف ایک چھپے ہوئے کاغذ کا نام ہے مگر عرف و اصطلاح میں گویا وہ بعینہ روپیہ ہے اس لئے ہر جگہ روپے کا کام دیتا ہے لین دین میں سو روپے کا نوٹ دینے اور سو روپے دینے میں ہرگز تفاوت نہیں سمجھا جاتا عموماً اس کے ساتھ معاملہِ اثمان برتا جاتا ہے تو گویا وہ سو روپے تھے کہ بعوض ننانوے کے خریدے گئے اور اس کی حرمت میں کچھ شبہہ نہیں تو صورتِ مستفسرہ میں حکم تحریر دینا چاہئے"۔ دیکھئے اسی وہم کو مولوی صاحب نے اخذ کیا اور دلیل بنایا جس مضمون کو میں نے چار پانچ سطر میں ادا کیا تھا مولوی صاحب نے اسی کو

spread across the page, but alas, it still could not be that way. Firstly: The Maulvi Sahib derived identity from 'thaman-e-khilqi' (inherent price/money) under which commodities are included, and you have heard the objections that arose because of this. From the very beginning, I specified the rupee, as if it is exactly the same as the rupee. Secondly: The Maulvi Sahib accepted the actual identity as proven, saying repeatedly, "it is considered the exact price," and "it is the inherent exact price." The overwhelming objections that were raised against this are before the viewers. The humble one (Faqir) added the word 'goya' (as if) to block them: "as if it is exactly the same as the rupee, as if they were a hundred rupees." Thirdly: The Maulvi Sahib imposed on the people of common usage (Ahl-e-Urf) that the note is considered the inherent exact price in all legal rulings according to common usage, the refutation of which has already been heard. I expressed it in these words: "Generally, the transaction of prices (athmaan) is conducted with it." Because of this, the objection based on the word 'rulings' did not arise. Yes, for the non-jurist, I did not like the illusion of sale—that in selling a note, the intention is not to take its value, but rather to sell a hundred rupees and to take the value of the rupees. This is specific to the Maulvi Sahib; according to this, his saying 'ma siyakha li' is appropriate. 'Likulli saqitatin laqitah' (Every fallen thing has someone to pick it up. -T). Now proceed towards the answer. To repel the interference, I mentioned that illusion and wrote: "But for one who possesses even a little insight into the noble art of jurisprudence (Fiqh), the removal of this illusion is extremely easy for him." (Then, after describing the four types of property mentioned from page 133 to 137 of the treatise, I wrote: "If a transaction of prices is conducted with a note, it will at most be classified under the fourth category: that it is fundamentally a commodity in its original creation but has been established as a price due to common recognition. And since original prices are nothing except silver and gold, if the people of common usage wish to make something other than a price into a price, they will inevitably determine its value based on inherent prices. This is why the value of 'paisa' (pennies) is stated in such a way—sixteen annas to a rupee. Thus, when they wished to make the note a price by common usage, they necessarily turned to the original price in its estimation, and so it was established that a certain note is for a hundred rupees, another for two hundred, another for a thousand. However, this is merely an estimation; it does not at all necessitate unity of genus and quantity. Just as by the estimation of a 'fulus' (small coin), sixty-four paisas do not become the exact same thing; similarly, by this

agreement, that note does not literally become a hundred rupees or silver. Therefore, the realization of the cause of 'riba' (usury) is not possible. As for common usage and terminology, its following is not necessary for the contracting parties in the sense that they cannot deviate from the price they have fixed. Both are autonomous in their transaction, whether they sell a hundred-rupee item for one paisa or buy it for a thousand gold coins (Ashrafi); only mutual consent is required, and that's it. The Imam, Allama Muhaqqiq Ali al-Itlaq, states in 'Fath al-Qadir':")

पूरे पृष्ठ पर फैलाया लेकिन अफ़सोस कि फिर भी वैसा न हो सका। अव्वलन: मौलवी साहब ने 'थमन-ए-ख़िल्क़ी' (प्राकृतिक मूल्य) से ऐनियत (समानता) ली, जिसके अंतर्गत जिन्स (वस्तुएँ) शामिल हैं, और इसके कारण जो आपत्तियाँ उठीं, आपने सुनीं। मैंने शुरुआत में ही रुपये को विशिष्ट कर दिया था कि जैसे वह ठीक वही रुपया है। सानियन: मौलवी साहब ने ऐनियत को वास्तव में सिद्ध मान लिया, बार-बार फ़रमाया "ऐन-ए-थमन समझा जाता है", फ़रमाया "ऐन-ए-थमन-ए-ख़िल्क़ी है"। इस पर जो ज़बरदस्त आपत्तियाँ आईं, वे दर्शकों के सामने हैं। फ़क़ीर ने उनके निवारण के लिए 'गोया' (मानो) शब्द जोड़ दिया था "मानो वह ठीक वही रुपया है, मानो वे सौ रुपये थे"। सालिसन: मौलवी साहब ने 'अहल-ए-उर्फ़ (प्रचलित व्यवहार के जानकारों) पर यह थोप दिया कि नोट को उर्फ़न (प्रथागत रूप से) सभी आदेशों में ऐन-ए-थमन-ए-ख़िल्क़ी समझा गया, जिसका खंडन सुना जा चुका है। मैंने इसे इन शब्दों में व्यक्त किया था कि "आमतौर पर इसके साथ कीमतों (अथमान) का व्यवहार किया जाता है", जिससे वह आपत्ति जो 'आदेश' शब्द के आधार पर उठती थी, नहीं उठी। हाँ, मैंने गैर-फ़क़ीह (जो न्यायशास्त्री नहीं है) के लिए 'बैय' (बिक्री) के उस भ्रम को पसंद नहीं किया था कि नोट बेचने में उसका मूल्य लेना उद्देश्य नहीं होता, बल्कि सौ रुपये बेचना और रुपयों का मूल्य लेना मंज़ूर होता है। यह विशेष रूप से मौलवी साहब का हिस्सा है; इसके आधार पर उनका 'मा सियाख़ा ली' कहना उचित है। 'लिकुल्ली साक़िततिन लाक़ितह' (हर गिरी हुई चीज़ को कोई उठाने वाला होता है। -त)। अब जवाब की ओर चलें, फ़क़ीर ने दखल को दूर करने के लिए उस भ्रम का उल्लेख करके लिखा: "लेकिन जिसे फ़िक़्ह (इस्लामी न्यायशास्त्र) की महान कला में थोड़ी भी अंतर्दृष्टि प्राप्त है, उसके निकट इस भ्रम का निवारण अत्यंत सरल है।" (फिर माल की चारों किस्मों का वर्णन करके, जो शोध पत्र के पृष्ठ 133 से 137 तक गुज़रीं, लिखा: "नोट के साथ यदि कीमतों का व्यवहार किया जाता है, तो वह अधिक से अधिक चौथी श्रेणी में निर्धारित होगा कि मूल रचना में वह वस्तु है, लेकिन पहचान के कारण वह मूल्य (थमन) बन गया है। और चूँकि असली मूल्य सोने और चाँदी के अलावा कुछ नहीं हैं, इसलिए यदि अहल-ए-उर्फ़ किसी गैर-थमन को थमन बनाना चाहें, तो वे विवश होकर उसका निर्धारण असली मूल्यों (थमन-ए-ख़िल्क़ा) से ही करेंगे। इसीलिए पैसों का मूल्य इस तरह बताया जाता है कि रुपये के सोलह आने। अत; जब उर्फ़न नोट को थमन बनाना चाहा, तो उसके अनुमान में भी मूल मूल्य की ओर लौटना अनिवार्य हुआ, और इस प्रकार यह तय हुआ कि अमुक नोट सौ रुपये का है, अमुक दो सौ का, अमुक हज़ार का। लेकिन यह केवल एक अनुमान है; इससे मूल और मात्रा की

एकता कतई अनिवार्य नहीं होती। जैसे 'फ़ुलूस' (सिक्के) के अनुमान से चौसठ पैसे ठीक वही चीज़ नहीं हो जाते; वैसे ही इस समझौते से वह नोट वास्तव में सौ रुपये या चाँदी नहीं बन जाएगा। अतः 'रिबा' (ब्याज) के कारण का घटित होना संभव नहीं है। रहा उर्फ़(प्रथा) और शब्दावली का प्रश्न, तो इसका पालन अनुबंध करने वालों पर इस अर्थ में अनिवार्य नहीं है कि वे उनके द्वारा निर्धारित मूल्य में कमी या अधिकता न कर सकें। ये दोनों अपने लेन-देन में स्वतंत्र हैं, चाहे वे सौ रुपये की चीज़ एक पैसे में बेच दें या हज़ार अशर्फ़ी में खरीद लें, केवल आपसी रज़ामंदी की आवश्यकता है और बस। इमाम अल्लामा मोहक़्क़िक़ अली अल-इतलाक़ 'फ़तह अल-क़दीर' में फ़रमाते हैं:")

पृष्ठ 533 / 715

صفحہ بھر میں پھیلایا مگر افسوس کہ پھر بھی ویسا نہ ہوسکا، اولاً: مولوی صاحب نے ثمن خلقی سے عینیت لی جس کے تحت میں اجناس داخل، اور اس کے سبب جو اعتراضات ہوئے آپ نے سنے میں نے ابتدا ہی روپے کی تخصیص کی کہ گویا وہ بعینہ روپیہ ہے۔ ثانیاً: مولوی صاحب نے عینیت فی الواقع ثابت مان لی کہ بار بار فرمایا "عین ثمن سمجھا جاتا ہے" فرمایا "عین ثمن خلقی ہے" اس پر جو اعتراضات قاہرہ وارد ہوئے ناظرین کے پیش نظر ہیں فقیر نے انہیں کے انسداد کو لفظ گویا زائد کر دیا تھا "گویا بعینہ روپیہ ہے، گویا وہ سو روپے تھے"۔ ثالثاً: مولوی صاحب نے اہل عرف کے سر یہ تھوپا کہ نوٹ عرفاً جمیع احکام میں عین ثمن خلقی سمجھا گیا جس کا ردن سے چکے، میں نے اسے ان لفظوں میں ادا کیا تھا کہ "عموماً اس کے ساتھ معاملہ اثمان برتا جاتا ہے" جس سے وہ اعتراض کہ بر بنائے لفظ احکام وارد ہے وارد نہ ہوا، ہاں میں نے غیر فقیہ کے لئے بی یہ وہم پسند نہ کیا تھا کہ نوٹ بیچنے میں اس کی قیمت لینی مقصود نہیں ہوتی بلکہ سو روپے بیچنا اور روپیوں کی قیمت لینا منظور ہوتا ہے یہ خاص مولوی صاحب کا حصہ ہے اس کے اعتبار سے ان کا ماسیخ لی فرمانا بجا ہے لکل ساقطۃ لاقطۃ (ہر گری پڑی شیئی کو کوئی اٹھانے والا ہوتا ہے۔ ت) اب جواب کی طرف چلئے ، فقیر نے دفع دخل کے لئے وہ وہم ذکر کرکے لکھا "مگر جسے فن شریف فقہ میں کچھ بھی بصیرت حاصل ہے اس کے نزدیک اس وہم کا ازالہ نہایت آسان ہے" (پھر مال کی چاروں قسمیں جو رسالہ کے ص ۱۳۳ سے ۱۳۷ تک گزریں بیان کرکے لکھا "نوت کے ساتھ اگر معاملہ اثمان برتا جاتا ہے تو غایت درجہ قسم رابع سے قرار پائے گا کہ اصل خلقت میں سلع ہے مگر بسبب تعارف ثمن ٹھہرا ہوا ہے اور از انجا کہ اثمان اصلیہ سوا سیم وزر کے کچھ نہیں لہٰذا اہل عرف اگر غیر ثمن کو ثمن کرنا چاہیں تو ناچار اس کی تقدیر اثمانِ خلقہ

ہی سے کریں گے اس لئے پیسوں کی مالیت یو نہی بتائی جاتی ہے کہ روپے کے سولہ آنے پس نوٹ کو جب عرفاً ثمن کرنا چاہا اس کے اندازہ میں بھی اصل ثمن کی جانب رجوع ضرور ہوئی اور یوں ٹھہرایا گیا کہ فلاں نوٹ سو روپے کا فلاں دو سو کا فلاں ہزار کا، مگر یہ صرف تقدیر ہی تقدیر ہے اس سے اتحاد جنس و قدر ہر گز لازم نہیں آتا جیسے اندازہ فلس سے چونسٹھ پیسے کا عین نہ ہو گئے یو نہی اس قرار داد سے وہ نوٹ حقیقۃً سو روپے یا چاندی نہ ہو جائے گا پس علت ربا کا تحقق ممکن نہیں، باقی رہا عرف و اصطلاح اس کا اتباع عاقدین پر بایں معنی ضرور نہیں کہ جو قیمت انہوں نے ٹھہرا دی ہے یہ اس سے کم و بیش نہ کرسکیں، یہ دونوں اپنے معاملہ میں مختار ہیں چاہے سو روپے کی چیز ایک پیسے کو بیچ ڈالیں یا ہزار اشرفی کو خرید لیں صرف تراضی درکار ہے وبس۔ امام علامہ محقق علی الاطلاق فتح القدیر میں فرماتے ہیں:

Fatawa Razawiya Volume (17)

[Boxed Text] Arabic: If one sells a piece of paper for a thousand, it is permissible and not disliked... etc. Urdu (T): If someone sold a piece of paper for a thousand, it is permissible without dislike. etc.

After all, wasn't it seen that the copper coins of one rupee are always fixed according to custom? However, scholars allowed selling eight annas in exchange for more than a half-rupee (athni). And everyone knows that one gold coin (ashrafi) is worth several rupees, but jurists deemed it permissible to buy one ashrafi in exchange for one rupee. So what is the reason? It is the same difference in genus (jins), after which inequality (tafazul) does not cause any harm. (Then, after writing excerpts from Durr-ul-Mukhtar in proof of these matters, it was said) "When it remained permissible under Sharia to this extent, what harm can there be in buying a hundred-rupee note for ninety-nine? For here, neither is the measure (qadr) the same, nor is the genus (jins) one, etc." This is, by the grace of Allah Almighty, that fine and illuminating discourse that initially descended upon the heart of this poor one through Divine Grace. The entire treatise is as if an explanation and detailed account of its brief points. Praise be to Allah, Lord of the worlds. The essence of my statement comprised a few points: (1) Notes and rupees are not of the same genus. (2) There is no common measure (qadr) between them. (3) The dealings of people of custom with notes as currency is conventional (istilahi), not inherent/natural (khalqi). (4) Estimating its value in rupees does not make it a rupee; after all, a conventional estimate comes from an inherent one, like copper coins (paisa). (5) Following convention is not binding on the contracting parties; they can increase or decrease as they wish by mutual consent. (6) Scholars declared it permissible to sell a piece of paper for a thousand rupees. (7) They allowed going against common convention regarding copper coins. (8) They allowed going against common custom even in inherent currencies like rupees and gold coins, such as selling one rupee for one gold coin.

Initially, the Maulvi Sahib responded to my first point by clinging to the same misconception that the word "as if" had completely dispelled. However, he did not address the second point at all. Perhaps, in his own estimation, while repeatedly speaking of "customary identity in rulings," he mistook it for "actual physical identity." That is, as if I had pounded paper into silver or gold. If so, why wouldn't there be equality in measure, since a thing cannot differ from itself? Secondly: To claim identity, he brought one argument based on that same misconception, stating that

notes are customarily considered identical to inherent currency in all rulings. At the end of the fatwa, they will add even more: that all other purposes of inherent currency are associated with it.

---

1 Fath-ul-Qadeer, Kitab al-Kafalah, Maktaba Nooriya Razawiya, Sukkur, 6/322 Page 534 of 715

फ़तावा रज़विया, खंड (17)

[बॉक्स किया हुआ पाठ] अरबी: यदि कोई कागज़ का एक टुकड़ा एक हज़ार में बेचे, तो यह जायज़ है और नापसंद (मक़रूह) नहीं है... आदि। उर्दू (त): यदि किसी ने एक कागज़ एक हज़ार में बेचा, तो वह बिना किसी नापसंदगी के जायज़ है। आदि।

आखिरकार, क्या यह नहीं देखा गया कि एक रुपये के सिक्के प्रथा (उर्फ़) के अनुसार हमेशा निश्चित रहते हैं? फिर भी विद्वानों ने आठ आने के बदले में अठन्नी से अधिक में बेचना जायज़ रखा। और सब जानते हैं कि एक अशरफ़ी कई रुपयों की होती है, लेकिन न्यायविदों (फ़ुक़हा) ने एक रुपये के बदले एक अशरफ़ी खरीदना जायज़ ठहराया। तो कारण क्या है? वही श्रेणी (जिंस) का अंतर है, जिसके बाद मात्रा में अंतर (तफ़ाज़ुल) से कोई हर्ज नहीं रहता। (फिर इन मसलों के प्रमाण में 'दुर्रे मुख्तार' की इबारतें लिखकर कहा) "जब यहाँ तक शरीअत के अनुसार जायज़ रहा, तो सौ रुपये का नोट निन्यानवे के बदले खरीदने में क्या हर्ज हो सकता है? क्योंकि यहाँ न तो माप (क़द्र) समान है और न ही श्रेणी (जिंस) एक है, आदि।" यह अल्लाह तआला के फ़ज़ल से वह उत्कृष्ट और प्रकाशमान व्याख्या है जो पहली नज़र में ही इस फ़क़ीर के दिल पर ईश्वरीय कृपा से उतरी। पूरा ग्रंथ मानों इसी के संक्षिप्त विवरण की विस्तृत व्याख्या है। तमाम प्रशंसाएँ अल्लाह के लिए हैं जो संसारों का पालनहार है। मेरे बयान का सार कुछ बातें थीं: (1) नोट और रुपया एक श्रेणी (जिंस) नहीं हैं। (2) उनमें कोई साझा माप (क़द्र) नहीं है। (3) नोट के साथ आम लोगों (अहले उर्फ़) का व्यवहार इसे मुद्रा मानना प्रथागत (इस्तलाही) है, प्राकृतिक (ख़ल्क़ी) नहीं। (4) रुपयों से इसकी कीमत का अंदाज़ा लगाने से यह रुपया नहीं बन गया; आख़िरकार, प्रथागत अंदाज़ा प्राकृतिक से ही होता है, जैसे पैसे। (5) प्रथा का पालन करना अनुबंध करने वालों पर अनिवार्य नहीं है; वे अपनी आपसी सहमति से जो चाहें कम या ज़्यादा कर सकते हैं। (6) विद्वानों ने कागज़ के एक टुकड़े को हज़ार रुपये में बेचना जायज़ बताया। (7) पैसों के मामले में सामान्य प्रथा के विरुद्ध जाने की अनुमति दी। (8) स्वयं प्राकृतिक मुद्रा (रुपये-अशरफ़ी) में भी सामान्य प्रथा के विरुद्ध जाने की अनुमति दी कि एक रुपया एक अशरफ़ी के बदले बेचें।

शुरुआत में, मौलवी साहब ने मेरे पहले बिंदु के जवाब में उसी भ्रम को पकड़ा जिसे 'मानो' (गोया) शब्द ने पूरी तरह खत्म कर दिया था। लेकिन दूसरे बिंदु पर कोई ध्यान नहीं दिया। शायद अपने गुमान में 'नियमों में प्रथागत समानता' कहते-कहते उसे 'शरीर में वास्तविक समानता' समझ बैठे हों, यानी हमने कागज़ को पीट-पीटकर चाँदी-सोना बना दिया हो। फिर माप की समानता क्यों न होगी, क्योंकि कोई वस्तु स्वयं से अलग नहीं हो सकती? दूसरा: समानता का दावा करने के लिए वे उसी भ्रम

वाली एक दलील लाए कि नोट को प्रथा के अनुसार सभी नियमों में प्राकृतिक मुद्रा के समान समझा गया है। और फ़तवे के अंत में वे इतना और जोड़ेंगे कि प्राकृतिक मुद्रा के अन्य सभी उद्देश्य भी इसके साथ जुड़े हुए हैं।

---

1 फ़तह-उल-क़दीर, किताब अल-कफ़ालाह, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 6/322 पृष्ठ 534 का 715

فتاوٰی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

[خانہ] لو باع کاغذۃ بالف یجوز ولا یکرہ الخ۔ اگر کسی نے ایک کاغذ ہزار کا بیچا تو بلا کراہت جائز ہے۔ الخ (ت)

آخر نہ دیکھا ایک روپیے کے پیسے بتعیین عرف ہمیشہ معین رہتے ہیں مگر علماء نے اٹھنی سے زیادہ کے عوض میں آٹھ آنے بیچنا روا رکھا اور سب جانتے ہیں کہ ایک اشرفی کئی روپے کی ہوتی ہے لیکن فقہاء نے ایک روپے کے عوض ایک اشرفی خریدنا جائز ٹھہرایا تو وجہ کیا ہے وہی اختلاف جنس جس کے بعد تفاضل میں کچھ حرج نہیں رہتا، (پھر ان مسائل کے ثبوت میں درمختار کی عبارتیں لکھ کر کہا) "جب یہاں تک شرعاً جائز رہا تو سو روپے کا نوٹ ننانوے کے عوض خریدنے میں کیا حرج ہو سکتا ہے کہ یہاں نہ تو قدر متحد نہ جنس واحد الی آخرہ"۔ یہ ہے بحمد اللہ تعالٰی وہ نفیس منیر تقریر کہ بنگاہ اولیں قلب فقیر پر فیض قدیر سے فائز ہوئی تمام رسالہ گویا اسی کی شرح اسی کے اجمال کی تفصیل ہے والحمد للہ رب العالمین میرے بیان کا حاصل چند امر تھے : (۱) نوٹ اور روپے ایک جنس نہیں۔ (۲) ان میں قدر مشترک نہیں۔ (۳) نوٹ کے ساتھ اہل عرف کا معاملہ اثمان برتنا سے اصطلاحی کرے گانہ کہ خلقی۔ (۴) روپیوں سے اندازہ قیمت نے اسے روپے نہ کردیا بہر اصطلاحی کا اندازہ خلقی ہی سے ہوتا ہے جیسے پیسے۔ (۵) اصطلاح کی پیروی عاقدین پر نہیں وہ اپنی تراضی سے جو چاہیں کم وبیش کریں۔ (۶) علماء نے کاغذ کا ٹکڑا ہزار روپے کو بیچنا جائز فرمایا۔ (۷) پیسوں میں اصطلاح عام کی مخالفت جائز فرمائی۔ (۸) خود ثمن خلقی روپے اشرفی میں مخالفت عرف عام کی اجازت دی کہ ایک روپیہ ایک اشرفی کو بیچیں۔

مولوی صاحب نے اولا یکم کے جواب کو وہی وہم سیکھا جسے لفظ گویا اڑا کر بالکل کھویا، مگر دوم سے کچھ تعرض نہ کیا یا شاید اپنے زعم میں عینیت عرفیہ فی الاحکام کہتے کہتے عینیت حقیقیہ فی الاجسام سمجھ لئے ہوں یعنی ہم نے کاغذ کو پیٹ پاٹ کر چاندی سونا کردیا پھر اتحاد قدر کیوں نہ ہوگا کہ شے اپنے نفس سے مختلف نہیں ہوسکتی۔ ثانیا : ادعائے عینیت پر وہی وہم والی ایک دلیل لائے کہ نوٹ عرفاً جمیع احکام میں عین ثمن خلقی سمجھا گیا اور آخر فتوے میں اتنا اور بڑھائیں گے کہ اور تمام مقاصد ثمن خلقی کے اس کے ساتھ متعلق ہوئے

---

1 فتح القدیر کتاب الکفالۃ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۳۲۲ Page 534 of 715

I had expressed this in these correct and concise words: that usually, the transaction of prices is conducted with it. In the third matter, where I had refuted it by stating that it became a conventional price and not a natural one, the answer to that is missing.

Thirdly: On this, he brought another reason, based on the same illusion, which he spread extensively. The point is only what I wrote: that in transactions, a hundred-rupee note and a hundred rupees are not considered different. In the fourth matter, I refuted this by saying that custom has made it a price, and the conventional estimation will be based on the natural one. Therefore, this note was estimated at a hundred and served in place of a hundred rupees, just as sixteen annas are estimated from a rupee and serve in place of a rupee. It does not mean that the note or the money became the essence of the rupee. The answer to this is missing.

Fourthly: Regarding the fifth matter, I had pointed towards a great and powerful refutation, which, after being fully acknowledged, left no room for doubt. The description of this has just passed on page 413, and the clear texts of the books of the school of thought, as well as the Great Quran and the Hadiths of the Noble Prophet (peace and blessings be upon him and his family), bear witness to it. The answer to this is missing.

Fifthly: Three matters remain. I had shown examples of that same fifth matter; among them, the answer to the fifth matter, i.e., the specific solid example of rupee-ashrafi, is missing. You have already heard the service of the answer to the seventh, and the flavorful answer to the sixth given at the very end—God willing, you will soon enjoy its pleasure. In short, out of eight points, he gave no answer to five, and for the three he did answer, it would have been a thousand times better if he hadn't.

Praise be to Allah, let people of justice observe—pardon the boldness—those high-ranking distinguished scholars who claim to evaluate the sayings of the great Mujtahid Imams (may Allah be pleased with them), saying 'Abu Hanifa said this and the truth is this,' or 'They argued for Abu Hanifa with various reasons and all are false,' or 'Here is another illusion of the author' (referring to Sayyiduna Imam Muhammad, may Allah have mercy on him). If such individuals of high status disagree on a matter with the lowliest followers, the servants of servants, the dust of the feet of those who pick the crumbs at Abu Hanifa's door, they should at least learn and write their arguments from the same source. And even then, they cannot

maintain the style he used. Then, they fail to fulfill the answers he gave, do not reach the goals and benefits of his speech, remain silent on most points, and give completely incorrect answers to some. They deliver lengthy speeches where every phrase and sentence is deeply dyed in the color of 'And all are false' (T), and every single word and letter is haunted by 'Here is another illusion' (T). This is the Imam of Imams, the Lamp of the Ummah, the Remover of Grief, the Master of Times, the Attainer of Knowledge.

मैंने इसे इन सही और संक्षिप्त शब्दों में व्यक्त किया था कि आमतौर पर इसके साथ कीमतों का व्यवहार किया जाता है। तीसरे मामले में मैंने जो इसका खंडन किया था कि यह एक प्रथागत मूल्य बना न कि प्राकृतिक, उसका उत्तर गायब है।

तीसरा: इस पर वह दूसरा तर्क भी वही भ्रम वाला लाए जिसे उन्होंने बहुत फैलाया, और बात उतनी ही है जो मैंने लिखी कि लेनदेन में सौ का नोट और सौ रुपये में कोई अंतर नहीं समझा जाता। चौथे मामले में मैंने इसका खंडन किया कि लोक-व्यवहार (उर्फ़) ने इसे मूल्य बनाया और प्रथागत का आकलन प्राकृतिक से ही होगा, इसलिए इस नोट का आकलन सौ से किया गया और सौ रुपये की जगह काम आया, जैसे सोलह आने का आकलन रुपये से किया गया और रुपये की जगह काम आते हैं। इसका मतलब यह नहीं कि नोट या पैसा रुपये का रूप हो गया। इसका जवाब गायब है।

चौथा: पाँचवें मामले में मैंने एक महान और शक्तिशाली खंडन की ओर संकेत किया था, जो सब कुछ स्वीकार करने के बाद भी अड़ा रहा, जिसका वर्णन अभी पृष्ठ 413 में बीता है और जिस पर धर्मशास्त्र की पुस्तकों के स्पष्ट प्रमाण और स्वयं महान कुरान और नबी करीम (उन पर और उनके परिवार पर सर्वश्रेष्ठ आशीर्वाद और शांति हो) की हदीसें गवाह हैं, उसका उत्तर गायब है।

पाँचवाँ: तीन बातें शेष हैं। मैंने उसी पाँचवें मामले के उदाहरण दिखाए थे, उनमें भी पाँचवें मामले यानी रुपये-अशरफी के ठोस उदाहरण का उत्तर गायब है। सातवें के उत्तर की सेवा आप सुन चुके हैं और छठे का जो मज़ेदार उत्तर सब में अंत में दिया गया है, उसका आनंद इंशाअल्लाह आप जल्द ही उठाएंगे। संक्षेप में, आठ बातों में से पाँच का कोई उत्तर नहीं दिया गया और तीन का जो उत्तर दिया गया, उससे तो न देना हज़ार गुना बेहतर था।

अल्हम्दुलिल्लाह, न्यायप्रिय लोग देखें - गुस्ताखी माफ़ - वे महान प्रतिष्ठित विद्वान जो महान मुजतहिद इमामों (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) के कथनों को परखने का दावा करते हैं कि 'अबू हनीफ़ा ने ऐसा कहा और सच यह है', 'अबू हनीफ़ा के लिए कई तर्क दिए गए और सब गलत हैं', 'यहाँ लेखक (यानी सैय्यदना इमाम मुहम्मद, अल्लाह उन पर दया करे) का एक और भ्रम है'। ऐसे उच्च पदस्थ व्यक्ति किसी मसले में इमाम अबू हनीफ़ा के दर के भिखारियों के गुलामों के गुलामों के पैरों की धूल के बराबर लोगों से विरोध करें, तो कम से कम अपने लिए तर्क उसी से सीखकर लिखें, और वह भी जिस शैली में उन्होंने निभाया वैसा न निभा सकें। फिर उन्होंने जो उत्तर दिए उनसे वे निपट न सकें, उनकी

बातचीत के उद्देश्यों और लाभों तक न पहुँच सकें, अधिकांश पर मौन रहें और कुछ का उत्तर बिल्कुल गलत दें। लंबी तक़रीर फरमाएं जिसका हर वाक्यांश 'और सब गलत है' (त) के गहरे रंग में रंगा हो और एक-एक शब्द और अक्षर पर 'यहाँ एक और भ्रम है' (त) का साया हो। यह इमामों के इमाम, उम्मत के चिराग, दुख दूर करने वाले, समय के स्वामी, ज्ञान प्राप्त करने वाले हैं।

पृष्ठ 535 का 715

اسی کو میں نے ان صحیح و مختصر الفاظ سے تعبیر کیا کہ عموماً اس کے ساتھ معاملہ اثمان برتا جاتا ہے میں نے امر سوم میں جو اس کا رد کیا تھا کہ اس سے ثمن اصطلاحی ہوا نہ خلقی اس کا جواب غائب۔ ثالثاً: اس پر دوسری دلیل بھی وہی وہم والی لائے جسے بیگھیوں میں پھیلایا اور بات اتنی ہی ہے جو میں نے لکھی کہ لین دین میں سو کا نوٹ اور سو روپے میں تفاوت نہیں سمجھا جاتا اور میں نے امر چہارم میں جو اس کا رد کیا کہ عرف نے اسے ثمن بنایا اور اصطلاحی کا اندازہ خلقی ہی سے ہوگا لہٰذا اس نوٹ کا اندازہ سو سے کیا اور سو روپے کی جگہ کام آیا جیسے سولہ آنوں کا اندازہ روپے سے کیا اور روپے کی جگہ کام آئے نہ یہ کہ نوٹ یا پیسے روپے کا عین ہو گئے اس کا جواب غائب۔ رابعاً: امر پنجم میں جو میں نے ایک عظیم قاہر رد کی طرف اشارہ کیا تھا جو سب کچھ مسلم ٹھہر کر لگی نہ رکھی جس کا بیان ابھی صفحہ ۴۱۳ میں گزرا اور جس پر نصوص جلیلہ کتب مذہب اور خود قرآن عظیم و احادیثِ نبی کریم علیہ و علیٰ آلہ افضل الصلوٰۃ والتسلیم شاہد اس کا جواب غائب۔ خامساً: تین امر باقی کہ میں نے اسی امر پنجم کے نظائر دکھائے تھے ان میں بھی امر پنجم یعنی روپے اشرفی کی کری مثال کا جواب غائب، اور ہفتم کے جواب کی خدمت گزاری سن چکے اور ششم کا جو مزہ دار جواب سب میں آخر میں دیا ہے اس کا لطف ان شاء اللہ تعالیٰ عنقریب اٹھائیے گا، غرض آٹھ باتوں میں پانچ کا جواب کچھ نہ دیا اور تین کا جواب وہ دیا کہ نہ دینا اس سے ہزار جگہ بہتر تھا۔ الحمد للہ اہل انصاف ملاحظہ فرمائیں گستاخی معاف وہ اجلہ اکابر فضلاء کہ ائمہ مجتہدین عظام رضی اللہ تعالیٰ عنہم کے اقوال کو پرکھنے کا ادعا رکھیں کہ قال ابو حنیفہ کذا والحق کذا (ابو حنیفہ نے یوں کہا اور حق یوں ہے) "استدلو الابی حنیفہ بوجوہ والکل باطل (ابو حنیفہ کے لئے متعدد دلائل بیان کئے گئے اور سب باطل ہیں) "ھھنا وھم آخر

لصاحب الکتاب" (یہاں اس کتاب والے یعنی سیدنا امام محمد رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ کا ایک اور وہم ہے) ایسے گرانمایہ اجتہاد پایہ حضرات کسی مسئلہ میں ابو حنیفہ کے گدایان در کے غلامان غلام کے خاک پاکے زلہ ربائوں کے ادنیٰ خوشہ چیں سے خلاف کریں تو اپنے لئے دلیل اسی سے سیکھ کر لکھیں اور وہ بھی جس روش پر اس نے ادا کی ادا نہ کر سکیں پھر اس نے جو اس کے جواب دیئے ان سے عہدہ برآ نہ ہوں، اس کے کلام کے مقاصد و فوائد تک نہ پہنچیں اکثر سے سکوت کریں اور بعض کا جواب محض ناصواب دیں، طولانی تقریر فرمائیں جس کا فقرہ فقرہ جملہ والکل باطل (اور سب باطل ہے۔ت) کے گہرے رنگ میں رنگا ہوا ایک ایک لفظ ایک حرف پر "ھھنا وھم آخر" (یہاں ایک اور وہم ہے۔ ت) کا ویرا پڑا ہو یہ امام الائمہ سراج الامہ کاشف الغمہ مالک الازمہ نائل العلم۔

Fatawa Razawiya - Volume 17

From the heights of the Pleiades, is it not the miracle of Abu Hanifa and his younger son Imam Rabbani, the codifier of the school of thought, Muhammad bin al-Hasan al-Shaybani (may Allah be pleased with them both)? God forbid, I do not wish to disparage the Maulana's status through this; he is a man of vast capability, long reach, and noble disposition. And this humble, lowly student, of limited power and meager worth, is merely an undeserving hopeful for the great glad tidings from his generous Master, upon whom be the best blessings and peace: "Glad tidings for the strangers" (Good news for the strangers. T), solely by His grace. Rather, the purpose is to express the high miracles of our Imams and that is all. O God! May Your countless pleasures be upon Abu Hanifa and upon all those who, being consistent with him in beliefs, follow him in actions. Likewise, upon the rest of the noble Mujtahid Imams and their similar followers until the Day of Resurrection, and upon our Beloved and Intercessor, the best blessings and peace (May the best prayers and greetings be upon our Beloved and the one who intercedes for us. T).

Note: It should be noted that, by the praise of Allah the Almighty, the field is in our hands. All our objections regarding the objectives of the discussion are righteous and unanswerable. Some of the statements pertain to the Maulana; if the people of interpretation try to change or transform them, then admitting the objection after its occurrence is itself an admission. I wish the Maulana had let us express this doubt, then much of the confusion would have been cleared and our pen would have also found rest, as the rebuttal would have been a brief statement. No one would have said to you that you said it and didn't know you said it. However, the Maulana's favors showed such expansiveness that it reached this point. In any case, we benefit in every way, and praise be to Allah.

Taseel Jaleel: While leaving, take with you the heaviest witness of your own grandiosity: that usury (Riba) is not even possible in notes and rupees. Look at the first question and answer in the chapter on Riba in the third volume of your own Fatawa, for which you yourself created the questions and wrote the answers, and in which you corrected the errors of the previous two volumes in various places, as is not hidden from the observers. In it, you wrote the definition of Riba, and judge for yourself in your heart how this definition can be applicable to the issue of notes. You state:

Question: What is Riba?

Answer: An excess of one of two homogeneous things by measure or weight over the other in a financial exchange without consideration. It is mentioned in Bahr al-Ra'iq: "Absolute excess is not intended by consensus, because the opening of markets in all Muslim lands is for seeking excess and profit; rather, a specific excess is intended."

Question: What is interest?

Answer: An uncompensated increase in one of two homogeneous items in a financial exchange, in terms of measure or weight. It is mentioned in Bahr al-Ra'iq that absolute increase is not intended by consensus, because the opening of bazaars and markets in all Muslim countries is for obtaining increase and profit, but rather, indeed, it is a specific increase.

सुरैया (सितारों) की ऊंचाई से, क्या यह इमाम अबू हनीफ़ा और उनके छोटे बेटे, मज़हब के संकलनकर्ता इमाम रब्बानी मुहम्मद बिन अल-हसन अल-शैबानी (अल्लाह उन दोनों से राजी हो) का चमत्कार नहीं है? ख़ुदा न करे, मैं इसके माध्यम से मौलवी साहब की शान में कोई कमी नहीं चाहता; वह एक विशाल क्षमता, लंबी पहुँच और श्रेष्ठ स्वभाव वाले व्यक्ति हैं। और यह तुच्छ, दीन छात्र, जो सीमित शक्ति और कम मूल्य का है, अपने उदार मालिक (उन पर सर्वोत्तम आशीर्वाद और शांति हो) से मिलने वाली महान खुशखबरी "फ़तूब लिल-ग़ुरबा" (अजनबियों के लिए खुशखबरी है - त) का बिना किसी पात्रता के केवल उनकी कृपा से आशावान है। बल्कि उद्देश्य तो अपने उच्च इमामों के चमत्कारों को प्रकट करना है और बस। ऐ अल्लाह! तेरी अनगिनत रज़ाएँ अबू हनीफ़ा पर हों और उन सभी पर जो अक़ीदों में उनके अनुकूल होकर अमल में उनके अनुयायी हैं। इसी तरह शेष महान मुज्तहिद इमामों और उनके जैसे अनुयायियों पर क़यामत के दिन तक, और हमारे हबीब और शफ़ीअ पर सर्वोत्तम आशीर्वाद और सलाम (हमारे प्रिय और सिफ़ारिश करने वाले पर सर्वोत्तम दरूद और सलाम हो - त)।

चेतावनी (तनबीह): इतना ध्यान रहे कि अल्हम्दुलिल्लाह मैदान हमारे हाथ में है। बहस के मक़ासिर पर हमारे सभी एतराज़ (आपत्तियाँ) हक़ और ला-जवाब हैं। और कुछ बयान मौलवी साहब पर हैं; अगर तावील (व्याख्या) करने वाले लोग उनमें फेर-बदल करें, तो एतराज़ आने के बाद एतराज़ को स्वीकार करना ही स्वीकारोक्ति है। काश मौलवी साहब इस संदेह का बयान हमसे करा लेते, तो बहुत सी धूल छंट जाती और हमारी कलम को भी आराम मिलता कि खंडन में एक संक्षिप्त सी बात होती। और कोई आपको यह भी न कहता कि आपने कहा और जाना नहीं, लेकिन मौलवी साहब की नवाज़िशों ने इतनी व्यापकता दिखाई कि यहाँ तक नौबत आई। बहरहाल, हमें हर तरह से लाभ है, और अल्लाह का शुक्र है।

तस्हील जलील: जाते समय अपनी ही शान-ओ-शौकत की सबसे भारी गवाही लेते जाइए कि नोट और रुपयों में रिबा (ब्याज) संभव ही नहीं है। अपने ही फ़तावा की तीसरी जिल्द देखें, जिसके सवाल आपने खुद बनाए और उनके जवाब लिखे, और जिनमें आपने पिछली दो जिल्दों की ग़लतियों को जगह-जगह सुधारा, जैसा कि देखने वालों से छिपा नहीं है। उसी के'बाब-उर-रिबा' (ब्याज का अध्याय) का पहला सवाल और जवाब देखें जिसमें आपने रिबा की परिभाषा लिखी है, और अपने दिल में इंसाफ़ करें कि यह परिभाषा नोट के मसले में कैसे लागू हो सकती है। आप फरमाते हैं:

सवाल: रिबा क्या है?

जवाब: वित्तीय विनिमय में दो एक ही प्रकार की वस्तुओं में से एक की मात्रा या वज़न के आधार पर दूसरे पर बिना किसी बदले के अधिकता। बहर-उर-राएक़ में आया है: "सर्वसम्मति से पूर्ण अधिकता अभिप्रेत नहीं है, क्योंकि सभी मुस्लिम देशों में बाज़ारों और मंडियों का खुलना अधिकता और लाभ प्राप्त करने के लिए होता है; बल्कि वास्तव में एक विशिष्ट अधिकता अभिप्रेत है।"

पृष्ठ 536/715

सवाल: सूद क्या है?

जवाब: वित्तीय विनिमय में दो हम-जिंस चीजों में से एक की मात्रा या वज़न के आधार पर दूसरी पर बिना किसी बदले के अधिकता। बहर-उर-राएक़ में दर्ज है कि पूर्ण अधिकता सर्वसम्मति से अभिप्रेत नहीं है, क्योंकि सभी मुस्लिम देशों में बाज़ारों और मंडियों का खुलना अधिकता और लाभ प्राप्त करने के लिए होता है, बल्कि वास्तव में एक विशिष्ट अधिकता।

من الثریا ابو حنیفہ اور ان کے چھوٹے بیٹے امام ربانی محرر المذہب محمد بن الحسن شیبانی رضی اللہ تعالٰی عنہما کی کرامت نہیں تو کیا ہے۔ حاشا میں اس سے مولوی صاحب کی کسر شان نہیں چاہتا، وہ ایک وسیع الباع طویل الذراع فاضل طباع ہیں اور فقیر حقیر ایک غریب طالب علم قاصر القدرۃ قلیل المقدار اپنے مولائے کریم علیہ افضل الصلوۃ والتسلیم کی بشارت عظیم فطو بہ للغرباء (غریبوں کے لئے خوشخبری ہے۔ ت) کا بلا استحقاق محض ان کے فضل سے امیدوار، بلکہ مقصود اپنے ائمہ کرامت عالیہ کا اظہار ہے وبس، الٰہی! تیری بے شمار رضائیں ابو حنیفہ پر اور ان سب پر جو عقائد میں ان کے موافق ہو کر اعمال میں ان کے مقلد ہیں، یونہی بقیہ ائمہ مجتہدین کرام اور ان کے ایسے ہی مقلدوں پر تاروز قیام و علی حبیبنا و شفیعنا افضل الصلوۃ والسلام (ہمارے حبیب اور شفاعت فرمانے والے پر بہترین درود و سلام ہو۔ ت)

تنبیہ: اتنا ملحوظ رہے کہ میدان بحمد اللہ تعالٰی ہمارے ہاتھ ہے مقاصد بحث پر ہمارے سب اعتراض حق ولا جواب ہیں اور بعض کے بیان مولوی صاحب پر ہیں اگر اہل تاویل تبدیل و تحویل کریں تو بعد ورودِ اعتراض تسلیمِ اعتراض ہے، کاش مولوی صاحب اس شبہ کا بیان ہم سے کرا لیتے تو بہت بادی چھنٹ جاتی اور ہمارے قلم کو بھی آرام ملتا کہ رد میں ایک مختصر سا کلام ہوتا اور کوئی آپ کو یہ بھی نہ کہتا کہ کہا اور کہہ نہ جانا مگر مولوی صاحب کی عنایات نے وسعت دکھائی کہ یہاں تک نوبت آئی بہر حال ہمیں ہر طرح نفع ہے وللہ الحمد۔

تسہیل جلیل: چلتے وقت سب سے بھاری خود اپنی دھوم دھامی گواہی لیتے جائیے کہ نوٹ اور روپوں میں ربا ممکن ہی نہیں آپ کے فتاوی کی تیسری جلد جس کے سوالات خود آپ نے پیدا کر کے انکے جواب لکھے اور ان میں دو جلدیں پیشین کے اغلاط کی جابجا اصلاح کی، جیسا کہ

ناظرین پر مخفی نہیں اسی کے باب الربا کا پہلا سوال و جواب دیکھئے جس میں آپ نے ربا کی تعریف لکھی اور دل ہی دل میں انصاف کر لیجئے کہ یہ تعریف مسئلہ نوٹ میں کیونکر صادق آ سکتی ہے، آپ فرماتے ہیں:

سوال: ربا چیست؟ **سوال: سود کیا ہے؟**

جواب: فضل احد المتجانسین کیلاً یا وزناً بر دیگرے در معاوضه مالیه بلا عوض، در بحر الرائق آورد ولیس المراد مطلق الفضل بالاجماع فان فتح الاسواق في سائر بلاد المسلمین للاستفضال والاسترباح وانما المراد فضل مخصوص

جواب: مالی معاوضہ میں دو ہم جنس چیزوں سے ایک کی کیل یا وزن کے اعتبار سے دوسری پر بلا عوض زیادتی۔ بحر الرائق میں وارد ہے کہ مطلق زیادتی بالا جماع مراد نہیں کیونکہ تمام مسلم ممالک میں بازاروں اور منڈیوں کا کھلنا زیادتی اور نفع کے حصول کے لئے ہوتا ہے بلکہ بیشک مخصوص زیادتی

صفحہ 536/715

Fatawa Razawiyya Volume (17)

Boxed Text (Arabic): And it is an excess of wealth without compensation in an exchange of wealth for wealth, meaning the excess of one of two homogeneous things over the other according to the Sharia standard, i.e., volume (kail) and weight (wazn). End.

Boxed Text (Urdu Translation): It means financial addition and excess in exchange of wealth for wealth without compensation, i.e., one of two items of the same genus exceeding the other according to the Sharia standard of volume and weight. End. (T)

Main Body: See how clear the clarification is that every increase is not interest (usury). Markets are open specifically so that increase (profit) is gained. For it to be interest, it is necessary that two things of the same genus, both being weighted or measured and sold by weight or measure, one exceeds the other specifically in that measurement or weight. Other than this, any other form of increase is not considered here. Indeed, by the consensus of our scholars, this is the definition of Riba (interest). Thankfully, you acknowledged this and did not say 'and all are void' (T). However, this admission has rendered your previous argument 'and all are void' (T). Banknotes and coins are not of the same genus at all; even a child would know that silver and paper cannot be of the same genus. Even assuming a false homogeneity, notes are not sold by weight. And if weight were considered, then selling a hundred-rupee note for a hundred rupees would definitely be interest because a hundred coins undoubtedly weigh more than a note, yet you are making this obligatory. Thus, you have not only made interest permissible but obligatory. The escape is that notes and coins are not of the same genus, or are not weighed, or both. In any case, your own admission clarifies that even if a ten-rupee note is sold for a hundred thousand rupees, Riba cannot occur here as it does not fit the definition. And that is the objective (T).

His statement: "And if there is no actual Riba in it, then there is no escape from the suspicion of Riba, and it is recorded in all books of jurisprudence that the suspicion of Riba causes prohibition."

I say first: This is the second aspect of the Maulvi Sahib; he himself realized that the argument for Riba doesn't seem to work here, so he leaned towards the cart of 'suspicion'. But why is there no escape? The proof for that is hidden. Maulvi Sahib should have first clarified what the criterion for the 'suspicion of Riba' is, such that wherever it is found, the suspicion would be established. Secondly, he should have

peeked over at the explicit statements of the Imams to see if they contradict this, so that he could make a refined clarification. It is obvious...

Footnotes: 1- Majmu'a Fatawa, Chapter on Riba, Matba' Yusufi Lucknow, 3/94, 95 2- Majmu'a Fatawa, Book of Sales, Matba' Yusufi Lucknow, 1/397

फ़तावा रज़विया जिल्द (17)

बॉक्स में पाठ (अरबी): और यह धन के बदले धन के विनिमय में बिना किसी मुआवजे के धन की अधिकता है, अर्थात शरीयत के मानकों, यानी माप (कैल) और वजन (वज़्न) के अनुसार दो सजातीय वस्तुओं में से एक की दूसरे पर अधिकता। समाप्त।

बॉक्स में पाठ (उर्दू अनुवाद): इसका अर्थ है धन के बदले धन के विनिमय में बिना किसी मुआवजे के वित्तीय वृद्धि और अधिकता, अर्थात शरीयत के मानक माप और वजन के साथ दो सजातीय वस्तुओं में से एक की दूसरे पर अधिकता। समाप्त। (त)

मुख्य लेख: देखें कि यह स्पष्टीकरण कितना साफ है कि हर वृद्धि सूद (ब्याज) नहीं है। बाज़ार खुले ही इसलिए हैं कि लाभ मिले और फायदा हो। सूद होने के लिए यह आवश्यक है कि दो एक ही श्रेणी (जिंस) की वस्तुएं, जो दोनों वजनी या मापी जाने वाली हों और माप या तौल से बेची जाती हों, एक दूसरे से उसी माप या वजन में अधिक हों। इसके अलावा किसी और बात में अधिकता का यहाँ विचार नहीं किया गया है। वास्तव में हमारे विद्वानों की आम सहमति से रबा (सूद) की यही परिभाषा है। शुक्र है कि आपने इसे स्वीकार किया और यह नहीं कहा कि 'और सब बातिल (अमान्य) है' (त)। लेकिन इस स्वीकारोक्ति ने आपके पिछले तर्क को 'और सब बातिल है' (त) बना दिया है। नोट और सिक्के सिरे से एक ही श्रेणी (जिंस) के नहीं हैं; एक बच्चा भी जानता होगा कि चाँदी और कागज एक जिंस नहीं हो सकते। और अगर गलत तरीके से एक ही जिंस मान भी लिया जाए, तो नोट तौलकर नहीं बेचे जाते। और अगर तौल भी मौजूद हो, तो सौ का नोट सौ सिक्कों में बेचना भी निश्चित रूप से सूद होगा क्योंकि सौ रुपये निस्संदेह वजन में नोट से बहुत अधिक हैं, फिर भी आप इसे अनिवार्य कर रहे हैं। तो आपने न केवल सूद को जायज़ बल्कि अनिवार्य कर दिया। बचाव का रास्ता यही है कि नोट और रुपया एक जिंस नहीं हैं, या वे तौले नहीं जाते, या दोनों ही बातें हैं। बहरहाल, आपके अपने इकरार से यह स्पष्ट हो गया कि चाहे दस का नोट एक लाख रुपये में बिके, यहाँ रबा आ ही नहीं सकता क्योंकि यह उसकी परिभाषा में ही नहीं आता। और वही वांछित है (त)।

उनका कथन: "और अगर इसमें वास्तविक रबा न हो, तो रबा के संदेह से तो कोई बच नहीं सकता, और न्यायशास्त्र (फ़िक़्ह) की सभी पुस्तकों में यह दर्ज है कि रबा का संदेह हराम (निषिद्ध) होने का कारण है।"

मैं कहता हूँ पहली बात: यह मौलवी साहब का दूसरा पहलू है; उन्होंने खुद भी महसूस किया कि यहाँ रबा की दलील काम नहीं कर रही है, इसलिए उन्होंने 'संदेह' के ठेले की तरफ रुख किया। लेकिन बचाव क्यों नहीं है? इसका प्रमाण नदारद है। मौलवी साहब को पहले यह स्पष्ट करना चाहिए था कि 'रबा के संदेह' का आधार क्या है, जहाँ यह पाया जाए वहाँ संदेह स्थापित होगा। दूसरी बात, उन्हें इमामों के स्पष्ट कथनों पर भी नज़र डाल लेनी चाहिए थी कि क्या वे इसका खंडन नहीं करते, बजाय इसके कि एक सामान्य बयान दे दिया जाए। यह स्पष्ट है...

पादलेख: 1- मजमुआ फ़तावा, रबा का अध्याय, मतबा यूसुफी लखनऊ, 3/94, 95 2- मजमुआ फ़तावा, क्रय-विक्रय की पुस्तक, मतबा यूसुफी लखनऊ, 1/397

فتاوٰی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

باکس شدہ عبارت (عربی): وھو فضل مال بلا عوض فی معاوضۃ مال بمال ای فضل احد المتجانسین علی الآخر بالمعیار الشرعی ای الکیل والوزن. انتھی۔

باکس شدہ عبارت (اردو): مراد ہے اور وہ مال کے عوض مال میں بلا عوض مالی اضافہ اور زیادتی ہے یعنی دو ہم جنس چیزوں میں سے ایک کی دوسری پر زیادتی معیار شرعی یعنی کیل ووزن کے ساتھ، انتہی۔ (ت)

عبارت: دیکھئے کیسی کھلی تصریح ہے کہ ہر زیادت سود نہیں ، بازار کھلے ہی اس لئے ہیں کہ زیادت ملے نفع ہاتھ لگے بلکہ سود ہونے کو ضرور ہے کہ دو متحد الجنس چیزوں میں کہ دونوں وزنی یا دونوں کیلی ہوں کہ تول یا ناپ سے بکتی ہوں ایک دوسری سے خاص اسی ناپ یا وزن میں زائد ہو اس کے سوا کسی اور بات میں زیادتی کا یہاں لحاظ نہیں، بیشک ہمارے علماء کے اجماع سے ربا کی یہی تعریف ہے شکر ہے کہ اس کے آپ مقر ہوئے اور والکل باطل (اور سب باطل ہے۔ ت) نہ فرمایا مگر اس اقرار نے اس تقریر کو والکل باطل (اور سب باطل ہے۔ ت) بنا دیا، نوٹ اور روپے سرے سے ایک جنس ہی نہیں ، بچہ بھی جانے گا کہ چاندی اور کاغذ ایک جنس نہیں ہوسکتے ، اور بفرض باطل مجانست سہی تو نوٹ تول کر نہیں بکتا، اور اگر تول بھی موجود ہو تو سو کا نوٹ سو کو بیچنا بھی قطعی سود ہو کہ سو روپے بلا شبہ تول میں نوٹ سے کہیں زائد ہیں اور آپ اسی کو واجب کر رہے ہیں تو آپ نے سود نہ صرف حلال بلکہ واجب کر دیا تو مفر وہی ہے کہ نوٹ اور روپیہ ایک جنس نہیں یا تول نہیں یا دونوں نہیں بہرحال آپ ہی کے اقرار سے کھل گیا کہ چاہے دس کا نوٹ لاکھ روپے کو بیچے یہاں ربا آ ہی نہیں سکتا کہ یہ اس کی تعریف ہی میں داخل نہیں، وھو المقصود (اور وہی مقصود ہے۔ ت) قولہ: اور اگر اسمیں ربا حقیقی نہ ہو تو

شبہ ربا سے تو مفر نہیں اور تمام کتب فقہ میں مرقوم ہے شبہ ربا باعث حرمت ہے ۔ اقول اولا: یہ مولوی صاحب کا دوسرا پہلو ہے ، خود بھی سمجھے کہ یہاں ربا کی گاڑی چلتی نظر نہیں آتی لہٰذا شبہ کے ٹھیلے کی طرف جھکے مگر کیوں مفر نہیں اس کا ثبوت فی البطن۔ مولوی صاحب کو اولاً منقح کرنا تھا کہ شبہ ربا کا مناط یہ ہے جہاں یہ پایا جائے شبہ متحقق ہوگا۔ ثانیاً ادھر ادھر خواب جھانک لینا تھا کہ تصریحات ائمہ سے اس پر نقض تو نہیں پڑتا کہ تنقیح کا تقیہ کر دے۔ ظاہر ہے

حواشی: 1- مجموعہ فتاویٰ باب الربو مطبع یوسفی لکھنو ۳/ ۹۵، ۹۴ 2- مجموعہ فتاویٰ کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنو ۱/ ۳۹۷

Fatawa Razawiyya Volume 17

That the realization of doubt in notes is not stipulated such that it must be accepted as a ruling by following (taqlid), even if there are a thousand doubts in our understanding regarding the evidence. We are followers of the ruling, not critics of the evidence. Many arguments were deduced by later scholars (may Allah reward their efforts) from their understanding. In none of them does the descent of evidence imply the invalidity of the ruling. It is possible that the Mujtahid (jurist) has another piece of evidence. Here, you have to prove the ruling yourself. Therefore, unless you make the effective cause (manat) completely robust and free from all contradictions and doubts, it is merely verbal analogy and obsession. Thirdly, after all this, it had to be proved that the effective cause is certain in the note. At that time, your statement would be heard, and a mere claim is baseless.

Secondly, remember your fatwa in Volume III, Chapter on Usury (Riba), that you considered it permissible to sell a 'chhatank' (a weight unit) of wheat for one and a quarter 'seer' (another weight unit) of wheat, and similarly, one apple for two apples. Here, the kind (jins) was certainly identical and the excess was obvious. Why was the suspicion of usury (riba) not considered here? Your statement is as follows:

Question: Is selling one apple for two apples or selling one handful of wheat for two handfuls of wheat permissible or not?

Answer: It is permissible because the Shariah standard is half a sa' (a measure) and not less than that. Therefore, in less than half a sa', an excess (in exchange) is correct. In Alamgiriya, it states: 'It is permissible to sell a handful for two handfuls, and an apple for two apples, and anything less than half a sa' is under the ruling of a handful.' End of quote.

Question: Is selling one apple for two apples or selling one handful of wheat for two handfuls of wheat permissible or not?

Answer: It is permissible because the Shariah standard is half a sa' and not less than that. Therefore, an excess in less than half a sa' is permissible. In Alamgiriya, it is stated that selling a handful for two handfuls and one apple for two apples is permissible, and anything less than half a sa' is governed by the ruling of a handful. (T)

Thirdly: See the statement of Bahr al-Raiq on pages 169-170 of the treatise that selling one paisa for a hundred paisas is permissible. Here too, the identity of the kind is certain and the excess is obvious, so why did the suspicion of riba not occur?

Fourthly: If you do not know that paper and silver are two different kinds, ask the people of common usage (ahl-e-urf) upon whom your entire thought process depends. Just as they say 'this ashrafi (gold coin) is for fifteen' or 'it's for twenty', 'these paisas are for an eight-anna coin' or 'for a four-anna coin', they do not say 'this ashrafi is fifteen rupees' or 'these paisas are an eight-anna or four-anna coin'.

---

1 Collection of Fatawa, Chapter on Usury, Yusufi Press, Lucknow, 3/95

कि नोट में शंका की पुष्टि लिखित (मंसूस) नहीं है कि उसे केवल अनुकरण (तक़लीद) के तौर पर मान लिया जाए, भले ही हमारी समझ में प्रमाण पर हज़ारों संदेह हों। हम आदेश के अनुयायी हैं, न कि प्रमाण के आलोचक। उत्तरवर्ती विद्वानों (अल्लाह उनकी कोशिशों को स्वीकार करे) ने अपनी समझ से कई तर्क निकाले हैं। उनमें से किसी भी तर्क की कमी आदेश की अमान्यता का कारण नहीं है। यह संभव है कि मुजतहिद (विधिज्ञ) के पास कोई अन्य प्रमाण हो। यहाँ आपको स्वयं आदेश सिद्ध करना है। तो जब तक आप प्रभावी कारण (मनात) को पूरी तरह से मजबूत और सभी विरोधाभासों और शंकाओं से मुक्त नहीं कर लेते, यह केवल मौखिक अनुमान और भ्रम है। तीसरा, इन सब के बाद यह प्रमाण देना था कि वह मनात नोट में निश्चित है। उस समय आपका कहना सुनने योग्य होता, और केवल दावा तो निराधार है।

दूसरा, खंड तीन, ब्याज (रिबा) के अध्याय में अपने फतवे को याद करें कि आपने एक छटाँक गेहूँ को सवा सेर गेहूँ के बदले बेचना जायज़ माना, और इसी तरह एक सेब को दो सेबों के बदले। यहाँ प्रकार (जिन्स) निश्चित रूप से एक ही था और अधिकता स्पष्ट थी, यहाँ ब्याज (रिबा) का संदेह क्यों नहीं हुआ? आपका विवरण इस प्रकार है:

प्रश्न: एक सेब की बिक्री दो सेबों के बदले या एक मुट्ठी गेहूँ की बिक्री दो मुट्ठी गेहूँ के बदले जायज़ है या नहीं?

उत्तर: जायज़ है क्योंकि शरीयत का पैमाना आधा सा' है, उससे कम नहीं। अतः आधे सा' से कम में विनिमय में अंतर सही है। आलमगीरिया में लिखा है: 'एक मुट्ठी को दो मुट्ठी के बदले, और एक सेब को दो सेब के बदले बेचना जायज़ है, और आधे सा' से कम जो भी है वह एक मुट्ठी के हुक्म में है।' समाप्त।

प्रश्न: एक सेब की बिक्री दो सेबों के बदले में या एक मुट्ठी गेहूँ की बिक्री दो मुट्ठी गेहूँ के बदले में जायज़ है या नहीं?

उत्तर: जायज़ है क्योंकि शरीयत का पैमाना आधा सा' है न कि उससे कम, इसलिए आधे सा' से कम में अधिकता जायज़ है, आलमगीरी में आता है कि मुट्ठी भर की बिक्री दो मुट्ठी भर से, एक सेब की बिक्री दो सेबों से जायज़ है और आधा सा' से कम एक मुट्ठी के हुक्म में है। (त)

तीसरा: शोध-पत्र के पृष्ठ १६९, १७० पर बहर-उर-रायिक का कथन देखें कि एक पैसे को सौ पैसों में बेचना जायज़ है। यहाँ भी प्रकार की एकता निश्चित है और अधिकता स्पष्ट है, फिर ब्याज का संदेह क्यों नहीं हुआ?

चौथा: यदि आप नहीं जानते कि कागज़ और चाँदी दो अलग प्रकार हैं, तो उन लोक-व्यवहार के लोगों (अहले-उर्फ़) से पूछें जिन पर आपके विचार का पूरा दारोमदार है। जिस तरह वे कहते हैं कि 'यह अशरफी पंद्रह की है', 'यह बीस की है', 'ये पैसे अठन्नी के हैं', 'ये चवन्नी के हैं', वे यह नहीं कहते कि 'यह अशरफी पंद्रह रुपये है', 'ये पैसे अठन्नी-चवन्नी हैं'।

---

1 मजमुआ फतावा बाबुल रबा, मताबे यूसुफी लखनऊ ३/९५

کہ نوٹ میں تحقق شبہہ منصوص نہیں کہ تقلیداً حکم مان لینا پڑے اگر چہ دلیل پر ہمارے فہم میں ہزار شبہے ہوں ہم حکم کے مقلد ہیں نہ کہ دلیل کے منقد۔ بہت دلائل علمائے متاخرین شکر اللہ تعالیٰ سعیھم نے اپنے فہم سے استنباط فرمائے ہیں ان میں کسی دلیل کا تنزل حکم کا بطلان نہیں، ممکن کہ مجتہد کے پاس اور دلیل ہو اور یہاں تو آپ کو خود اثبات حکم کرنا ہے تو جب تک مناط کا مکمل طور پر مضبوط اور تمام نقوض و شبہات سے منزہ نہ کر لیجئے نراز بانی قیاس محض و وسواس۔ ثالثاً اس سب کے بعد یہ ثبوت دینا تھا کہ وہ مناط نوٹ میں متقق، اس وقت آپ کا فرمانا قابل سماعت ہوتا اور خالی دعویٰ تو پادر ہوا

ثانیاً اپنی جلد سوم باب الربا کا فتویٰ یاد کیجئے کہ چھٹانک بھر گیہوں سوا سیر گیہوں کے عوض بیچنا آپ نے جائز مانا، یونہی ایک سیب دو سیب کو، یہاں تو جنس یقیناً متحد تھی اور زیادتی بداہتہ معلوم، یہاں شبہہ ربا کیوں نہ جانا، آپ کی عبارت یہ ہے:

سوال: بیع یک سیب عوض دو سیب یا بیع یک مشت گندم عوض دو مشت گندم جائز است یا نہ؟

سوال: ایک سیب کی بیع دو سیبوں کے بدلے میں یا ایک مٹھی گندم کی بیع دو مٹھی گندم کے بدلے میں جائز ہے یا نہیں؟

جواب: جائز ست چہ معیار شرعی نصف صاع ست نہ کم ازاں پس در کم از نصف صاع تفاضل درست ست، در عالمگیریہ می آرد یجوز بیع الحفنة بالحفنتین والتفاحة

جواب: جائز ہے کیونکہ معیار شرعی نصف صاع ہے نہ کہ اس سے کم، لہٰذا نصف صاع سے کم میں زیادتی جائز ہے، عالمگیری میں آتا ہے کہ مٹھی بھر کی بیع دو مٹھی بھر سے ایک سیب کی بیع دو سیبوں

سوال: بیع یک سیب عوض دو سیب یا بیع یک مشت گندم عوض دو مشت گندم جائز است یا نہ؟

سوال: ایک سیب کی بیع دو سیبوں کے بدلے میں یا ایک مٹھی گندم کی بیع دو مٹھی گندم کے بدلے میں جائز ہے یا نہیں؟

بالتفاحتین و مادون نصف الصاع فی حکم الحفنة انتھی۔

سے جائز ہے اور نصف صاع سے کم ایک مٹھی کے حکم میں ہے۔ (ت)

ثالثاً: رسالہ صفحہ ۱۶۹، ۱۷۰ پر بحر الرائق کا ارشاد دیکھئے کہ ایک پیسہ سو پیسے کو بیچنا جائز، یہاں بھی اتحاد جنس قطعی اور زیادت بدیہی، پھر شبہہ ربا کیوں نہ ہوا۔

رابعاً: آپ کو اگر کاغذ اور چاندی کا دو جنس ہونا نہ معلوم ہو تو انہیں اہلِ عرف سے پوچھ دیکھئے جن پر آپ کے خیال کا سارادار ومدار ہے کہ وہ جس طرح یوں کہتے ہیں کہ یہ اشرفی پندرہ کی ہے یہ بیس کی یہ پیسے اٹھنی کے ہیں یہ چوانی کے، یہ نہیں کہتے کہ یہ اشرفی پندرہ روپے ہے یہ پیسے اٹھنی چوانی

---

1 مجموعہ فتاویٰ باب الربوا مطبع یوسفی لکھنؤ ۳/ ۹۵

Fatawa Razawiya (Volume 17)

In the same way, they say this note is of ten, this is of a hundred; they do not say this note is ten rupees. You yourself have stated, "If someone destroys a hundred-rupee note," and stated, "When a hundred-rupee note is sold," and stated, "Give a hundred-rupee note." Removing the intoxication of 'unity of genus' from this, remember those issues which the noble Imams have stated: 1. Selling one rupee for one Ashrafi (gold coin) or even for 1.25 Ashrafis is permissible. p. 163. 2. Selling one paisa for one rupee or even for a thousand rupees is permissible. pp. 182, 183, 177. 3. In buying one paisa for one Ashrafi, there is neither Riba (usury/interest) nor suspicion of Riba. pp. 183 and 184. Why was there no suspicion of Riba in these?

Fifthly: According to the clarification of the Imams, here the suspicion of the cause (illat) is like the cause, and the ruling of the cause is necessary for the cause. So, whether it is the cause or the suspicion of the cause, in any case, the ruling of the cause is mandated. And the ruling of the cause is the prohibition of disparity in quantity. Therefore, the hundred-rupee note that you are making permissible to sell for a hundred is explicitly making usury (Riba) lawful.

Statement: Furthermore, whoever adopts disparity in the buying and selling of notes, his purpose will be nothing but to obtain more rupees in exchange for some fewer rupees, and nothing else, but he will treat the note transaction as a legal stratagem (hila). It is obvious that by committing such a stratagem, a ruling of permissibility (halal) cannot be attained.

I say firstly: Pardon the deficiency. Verse: Intoxication from last night's wine remains still. (The intoxication of youth is still present. - T) To say 'in exchange for fewer rupees' is void. From the side of the note-holder, it is a note; not even a single rupee, neither less nor more. Yes, you may say obtaining more rupees by giving goods of fewer rupees - yes, this is certainly the intention. Then what is the sin in this? All the trades in the world happen for this reason. You yourself in volume 3 have quoted from 'Bahr al-Ra'iq' that increase is not absolutely prohibited by consensus (ijma). Markets have been opened all over the world for the very reason that an increase is obtained and profit is gained.

Secondly: Your "furthermore" is saying that now, disregarding both Riba and suspicion of Riba...

---

1 Majmu'ah Fatawa Kitab al-Buyu' Matba' Yusufi Lucknow 98-397 Page 539 of 715

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

इसी तरह वे कहते हैं कि यह नोट दस का है, यह सौ का है; यह नहीं कहते कि यह नोट दस रुपये है। आपने खुद फरमाया है कि "सौ रुपये का नोट कोई हलाक (ہلاک) कर दे", और फरमाया "सौ रुपये का नोट जब बेचा जाता है", और फरमाया "सौ रुपये का नोट देवे"। जिन्स (वस्तु) کی एकता का नशा इससे उतार कर, उन मसलों को याद कीजिये जो अइम्मा-ए-किराम (श्रेष्ठ इमामों) ने फरमाए हैं: 1. एक रुपया एक अशरफ़ी बल्कि सवा अशरफ़ियों को बेचना जायज़। पृ. 163। 2. एक पैसा एक रुपया बल्कि हज़ार रुपये को बेचना जायज़। पृ. 182, 183, 177। 3. एक अशरफ़ी एक पैसा को खरीदने में न रिबा (ब्याज) है न रिबा का शुबा (संदेह)। पृ. 183 और 184। इनमें रिबा का शुबा क्यों न हुआ?

पांचवां: अइम्मा की तसरीह (स्पष्टीकरण) के अनुसार, यहाँ इल्लत (कारण) का शुबा इल्लत की तरह है और इल्लत का हुक्म इल्लत के लिए लाज़िम (अनिवार्य) है। तो यहाँ इल्लत हो या इल्लत का शुबा, बहरहाल इल्लत के हुक्म की ज़रूरत है। और इल्लत का हुक्म 'तफ़ाज़ुल फ़िल क़द्र' (मात्रा में असमानता) की पाबंदी (निषेध) है। तो सौ का नोट जो आप सौ को बेचना जायज़ कर रहे हैं, वह स्पष्ट रूप से सूद (ब्याज) को हलाल कर रहे हैं।

कथन: इसके अलावा, जो नोटों की खरीद-फरोख्त में तफ़ाज़ुल (कमी-बेशी) अपनाएगा, उसका मक़सद इसके अलावा कुछ न होगा कि कुछ कम रुपयों के बदले ज़्यादा रुपये हासिल हो जाएँ, और कुछ न होगा मगर वह हीले (बहाने/युक्ति) के तौर पर नोट का मामला करेगा। और यह ज़ाहिर है कि ऐसे हीले के इर्तिकाब (करने) से हलाल होने का हुक्म नहीं हो सकता।

मैं कहता हूँ अव्वलन: कुसूर माफ़। शेर: मस्ती अज़ बादा-ए-शबाना हनूज़ (जवानी की मस्ती अभी मौजूद है। - त) 'कम रुपयों के बदले' कहना बातिल (गलत) है। नोट वाले की तरफ से तो नोट है; एक रुपया भी नहीं, न कम न ज़्यादा। हाँ, यूँ कहिए कि कम रुपयों का माल देकर ज़्यादा रुपये हासिल करना - हाँ, यह बेशक मक़सद है। फिर इसमें क्या गुनाह है? दुनिया भर की तिजारतें (व्यापार) इसी लिए होती हैं। आपने खुद जिल्द 3 में 'बहर-उर-रायिक' से नक़्ल किया है कि मुतलक़न (पूर्णतः) ज़्यादती इजमा (सर्वसम्मति) से हराम नहीं है। पूरी दुनिया में बाज़ार इसीलिए खोले गए हैं कि ज़्यादती मिले और नफ़ा (लाभ) हासिल हो।

दूसरा: आपकी "इसके अलावा" कह रही है कि अब रिबा और शुबा-ए-रिबा दोनों से कत-ए-नज़र (ध्यान हटाकर) फ़रमा कर...

---

1 मजमुआ फ़तावा किताब-अल-बुयू मतबा युसुफ़ी लखनऊ 98-397 पृष्ठ 539 / 715

ہیں اسی طرح یوں کہتے ہیں کہ یہ نوٹ دس کا ہے یہ سوکا، یہ نہیں کہتے کہ یہ نوٹ دس روپے ہے، خود آپ نے فرمایا ہے کہ "نوٹ سو روپے کا کوئی ہلاک کردے"، اور فرمایا "سو روپے کا نوٹ جب بیچا جاتا ہے"، اور فرمایا "سو روپے کا نوٹ دیوے" اتحاد جنس کا نشہ اس سے اتار کر، وہ مسائل یاد کیجئے جو ائمہ کرام نے فرمائے کہ: ۱۔ ایک روپیہ ایک اشرفی بلکہ سوا شر فیوں کو بیچنا جائز۔ ص ۱۶۳۔ ۲۔ ایک پیسہ ایک روپیہ بلکہ ہزار روپیہ کو بیچنا جائز ص ۱۸۲، ۱۸۳، ۱۷۷۔ ۳۔ ایک اشرفی ایک پیسہ کو خریدنے میں نہ رہا ہے نہ شبہ رہا۔ ص ۱۸۳ و ۱۸۴۔ ان میں شبہ رہا کیوں نہ ہوا۔

خامساً: بتصریح ائمہ یہاں شبہ علت مثل علت اور حکم علت لازم علت، تو یہاں علت ہو یا شبہ علت، بہر حال لزوم حکم علت اور حکم علت تحریم تفاضل فی القدر ہے تو سو کا نوٹ جو آپ سو کو بیچنا جائز کر رہے ہیں صراحتہً سود حلال کر رہے ہیں۔

قولہ: علاوہ ازیں جو بیع و شرائے نوٹ میں تفاضل اختیار کرے گا مقصود اس کو بجز اس کے کہ بعض کم روپے کے زیادہ روپے حاصل ہوجائیں اور کچھ نہ ہوگا مگر بطور حیلہ کے وہ نوٹ کا معاملہ کرے گا اور پر ظاہر ہے کہ ایسے ارتکاب حیلہ سے حکم حلت کا نہیں ہو سکتا۔

اقول اولاً: قصور معاف ع مستی از بادہ شبانہ ہنوز (جوانی کی مستی ابھی موجود ہے۔ت) بعوض کم روپیہ کے کہنا باطل ہے نوٹ والے کی طرف سے تو نوٹ ہے، روپیہ ایک بھی نہیں نہ کم نہ زائد۔ ہاں یوں کہئے کہ کم روپوں کا مال دے کر زیادہ روپے حاصل کرنا، ہاں یہ بیشک مقصود ہے پھر اس میں کیا گناہ ہے دنیا بھر کی تجارتیں اسی لئے ہوتی ہیں آپ خود جلد ۳ میں بحر الرائق سے نقل

کرچکے ہیں کہ مطلقاً زیادتی بالاجماع حرام نہیں، تمام جہاں میں بازار اسی لئے کھولے گئے ہیں کہ زیادتی ملے نفع حاصل ہو۔

ثانیاً: آپ کی "علاوہ ازیں" کہہ رہی ہے کہ اب رہا و شبہ رہا دونوں سے قطع نظر فرما کر

---

۱ مجموعہ فتاوی کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنو ۹۸-۳۹۷ Page 539 of 715

Fatawa Razawiya Volume 17 (17)

This is the third aspect taken: even if there is no relation to riba (usury) here, not even a suspicion of riba, but because he devised a ruse to get more, it is (forcefully) forbidden. Now tell me, if Zaid asks Amr for a loan of one hundred rupees, and Amr sells a plain piece of paper to him for, say, twenty-five rupees on credit for a year or for cash, Zaid accepts it, then Amr lends one hundred rupees to Zaid and takes only one hundred back in exchange for the loan, making those twenty-five rupees for his paper separate—where would prohibition come into this? Is it because a plain piece of paper was sold for twenty-five rupees? You were just about to say that selling a plain piece of paper for a thousand rupees is permissible; why did it become forbidden for twenty-five? Or is it because he wanted to gain profit through this act? Then show a situation where a piece of paper is sold for a thousand rupees and there is no intent to gain profit. Or is it because he takes profit on a loan? In the loan, he is taking exactly one hundred for one hundred; where is the profit on it? Or is it because this profit is due to the loan? But the loan wasn't even given at that time, so how was the cause realized? Or is it because in their hearts there is an intention of future lending and borrowing? Then provide proof from Sharia that if a loan transaction is to take place next year, taking profit on a sale today becomes forbidden—a sale that was undoubtedly permissible now becomes subject to a ruling of prohibition? Whereas here, even the future transaction is unknown; the future is ghayb (unseen), and the unseen is unknown, and human intention is subject to change. In marriage, if one says "I have taken you in marriage for a month or ten years, or even a hundred years," it is invalid and forbidden; but if one performs marriage and the intention is to keep it for only a month or just a single day, then it is undoubtedly permissible.

Thirdly: Recall the clarifications of the eminent Imams such as Imam Shams al-A'immah Halwani, Imam Shams al-A'immah Zaranjari, Imam Bakr Khawahir Zadah, Bahr al-Ra'iq, Radd al-Muhtar, etc., on page 192, that if they first conduct a sale and then deal in loans, it is, according to our Imams of the school—Imam Azam, Imam Abu Yusuf, and Imam Muhammad (may Allah be pleased with them)—unanimously permissible and lawful without any dislike. Tell me, why did this become permissible? It is obvious that he did this transaction as a ruse specifically to get more.

Fourthly: Recall your own Fatwa No. 44 in Volume 2, which ruled that it is permissible to sell wheat on credit at a price lower than the market rate. On this, the questioner had raised a doubt that although there is no riba here, there is a suspicion of it, and a

suspicion is also forbidden like the reality. You replied to it that "the concern of riba is dismissed because there is no riba or even suspicion of riba in selling wheat and other types of grain in exchange for dirhams and dinars. If someone sells two seers of wheat, which costs, say, two annas in the market, for one rupee in cash, it is valid. Similarly, if the price is increased for credit and the buyer agrees, it is also valid."

[1] Majmu'a Fatawa, Kitab al-Buyu', Matba' Yusufi, Lucknow, 1/391 Page 540 of 715

फ़तावा रज़विया, खंड 17 (17)

यह तीसरा पहलू लिया गया है कि भले ही यहाँ रिबा (ब्याज) से कोई संबंध न हो, यहाँ तक कि रिबा का संदेह भी न हो, लेकिन उसने अधिक प्राप्त करने के लिए एक हीला (युक्ति) किया, इसलिए यह (जबरदस्ती) हराम है। अब बताइए, अगर ज़ैद अम्र से सौ रुपये का ऋण मांगे, अम्र कागज़ का एक सादा टुकड़ा उसे, मान लीजिए साल भर के वादे पर या नकद पच्चीस रुपये में बेचे, ज़ैद उसे स्वीकार कर ले, फिर अम्र ज़ैद को सौ रुपये ऋण दे और ऋण के बदले सौ ही वापस ले और पच्चीस रुपये अपने उस कागज़ के अलग से अनिवार्य करे, तो इसमें हराम कहाँ से आएगा? क्या इसलिए कि सादा कागज़ पच्चीस रुपये में बेचा गया? आप तो अभी कहने वाले हैं कि सादा कागज़ हज़ार रुपये में बेचना जायज़ है, तो पच्चीस में क्यों हराम हुआ? या इसलिए कि उसने इस कार्य से लाभ प्राप्त करना चाहा? तो वह सूरत बताइए कि कागज़ का टुकड़ा हज़ार रुपये में बेचा जाए और लाभ लेना न हो। या इसलिए कि वह ऋण पर लाभ लेता है? ऋण में तो वह पूरे सौ के सौ ले रहा है, उस पर लाभ कहाँ? या इसलिए कि यह लाभ ऋण के कारण है? तो ऋण तो उस समय तक दिया भी नहीं गया था, तो कारण कहाँ से सिद्ध हुआ? या इसलिए कि उनके दिल में भविष्य में ऋण लेने-देने की नीयत है? तो इसका प्रमाण शरीयत से दीजिए कि यदि अगले साल ऋण का लेनदेन होने वाला हो, तो आज बिक्री पर लाभ लेना हराम हो जाए—वह बिक्री जो निस्संदेह हलाल थी, निषेध का आदेश पाए? जबकि यहाँ तो भविष्य में लेनदेन होना भी ज्ञात नहीं है; भविष्य 'ग़ैब' (अदृश्य) है, और अदृश्य अज्ञात है, और मानवीय इरादा बदल सकता है। निकाह (विवाह) में यदि कोई कहे कि "मैंने तुझे एक महीने या दस साल, बल्कि सौ साल के लिए अपने निकाह में लिया," तो यह नाजायज़ और हराम है; लेकिन अगर वह निकाह करे और इरादा केवल एक महीने या एक ही दिन रखने का हो, तो वह निस्संदेह हलाल है।

तीसरे: पृष्ठ 192 पर उन प्रतिष्ठित इमामों जैसे इमाम शम्सुल अइम्मा हलवानी, इमाम शम्सुल अइम्मा ज़रंजरी, इमाम बक्र ख़्वाहिर ज़ादा, बह्रुर राइक़ और रद्दुल मुहतार आदि के स्पष्टीकरणों को याद कीजिए कि यदि वे पहले बिक्री करें और फिर ऋण का लेनदेन करें, तो हमारे मज़हब के इमामों—इमाम आज़म, इमाम अबू यूसुफ और इमाम मुहम्मद (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो)—सबके निकट सर्वसम्मति से बिना किसी नापसंदगी के जायज़ और हलाल है। बताइए, यह क्यों हलाल हुआ? स्पष्ट है कि उसने यह मामला अधिक लेने के लिए ही हीला (युक्ति) के तौर पर किया था।

चौथे: अपनी याद कीजिए, खंड दो फ़तवा संख्या 44 में हुक्म था कि गेहूँ ऋण (उधार) पर बाज़ार भाव से कम में बेचना जायज़ है। इस पर पूछने वाले ने संदेह किया था कि यहाँ रिबा (ब्याज) नहीं है तो

संदेह तो है, और संदेह भी वास्तविकता की तरह हराम है। आपने उसका उत्तर दिया था कि "रिबा की आशंका इस प्रकार दूर हो जाती है कि गेहूँ और अन्य प्रकार के अनाज को दिरहम और दीनार के बदले बेचने में न रिबा है और न ही रिबा का संदेह। यदि दो सेर गेहूँ, जो बाज़ार में मान लीजिए दो आने में मिलता है, कोई व्यक्ति एक रुपया नकद के बदले बेचे, तो भी सही है। इसी तरह यदि उधार में कीमत बढ़ाई जाए और खरीदार सहमत हो जाए, तो भी सही है।"

[1] मजमूआ फ़तावा, किताबुल बुयूअ, मतबअ यूसुफ़ी, लखनऊ 1/391 पेज 540 of 715

یہ تیسرا پہلو لیا ہے کہ اگر چہ یہاں ربا سے کچھ علاقہ نہ ہو، ربا تور باس کا شبہ بھی نہ ہو ، مگر اس نے زیادہ ملنے کا حیلہ کیا اس لئے (زبردستی) حرام ہے ، اب فرمائیے اگر زید عمرو سے سو روپے قرض مانگے عمرو کاغذ کا ایک سادہ پرچہ اس کے ہاتھ مثلاً سال بھر کے وعدہ پر یا نقد پچیس روپے کو بیچے وہ قبول کر لے پھر عمرو سو روپے زید کو قرض دے اور قرض کے بدلے سو ہی لے پچیس اپنے اس کاغذ کے جدا لازم کرے تو اس میں حرمت کدھر سے آئے گی آیا اس لئے کہ کاغذ کا سادہ پرچہ پچیس روپے کو بیچا، تو آپ تو ابھی فرمانے والے ہیں کہ سادہ پرچہ ہزار روپیہ کو بیچنا جائز ہے پچیس کو کیوں حرام ہوا ، یا اس لئے کہ اس نے اس فعل سے نفع حاصل کرنا چاہا تو وہ صورت بتائیے کہ کاغذ کا ٹکڑا ہزار روپے کو بیچے اور نفع لینا نہ ہو ، یا اس لئے کہ قرض پر نفع لیتا ہے قرض میں تو وہ پورے سو کے سو لے رہا ہے اس پر نفع کہاں ، یا اس لئے کہ یہ نفع بسبب قرض ہے تو قرض تو اس وقت تک دیا بھی نہیں گیا سبب کہاں سے متحقق ہوا ، یا اس لئے کہ ان کے دل میں تو آئندہ قرض لینے دینے کی نیت ہے تو اس کا ثبوت شرع سے دیجئے کہ آئندہ سال قرض کا لین دین ہونے والا ہو تو آج بیع پر نفع لینا حرام ہو جائے وہ بیع کہ بلا شبہ حلال تھی حکم تحریم پائے، حالانکہ یہاں تو آئندہ لین دین ہونا بھی معلوم نہیں آئندہ غیب ہے اور غیب مجہول اور انسانی ارادہ ممکن التخلف نکاح میں کہے کہ میں نے تجھے مہینہ بھر یادس برس بلکہ سو برس کے لئے اپنے نکاح میں لیا تو ناجائز و حرام، اور اگر نکاح کرے اور ارادہ صرف مہینہ بھر یا ایک ہی دن رکھنے کا ہو تو بیشک حلال۔

ثالثاً: صفحہ ۱۹۲ پر وہ تصریحات ائمہ کرام مثل امام شمس الائمہ حلوانی و امام شمس الائمہ زرنجری و امام بکر خواہر زادہ و بحر الرائق و رد المحتار وغیرہا یاد کیجئے کہ پہلے بیع کر کے

پھر قرض کا لین دین کریں تو ہمارے ائمہ مذہب امام اعظم ، امام ابو یوسف اور امام محمد رضی اللہ تعالیٰ عنہم سب کے نزدیک بالاتفاق بلا کراہت جائز وحلال ہے کہئیے یہ کیوں حلال ہوا ، ظاہر ہے کہ یہ معاملہ اس نے زیادہ لینے ہی کے لئے بطور حیلہ کیا۔

رابعاً: اپنی یاد کیجئے جلد دوم فتویٰ نمبر ۴۴ میں حکم تھا کہ گیہوں قرضوں نرخ بازار سے کم کو بیچنا جائز ہے ، اس پر سائل نے شبہ کیا تھا کہ یہاں ربا نہیں تو شبہہ تو ہے اور شبہ بھی مثل حقیقت حرام۔ اس کا آپ نے جواب فرمایا کہ "خدشہ ربا کا یوں مدفوع ہے کہ گندم وغیرہ اقسام غلہ بعوض دراہم و دنانیر کے فروخت کرنے میں ربا نہیں ہے اور نہ شبہہ ربا ، اگر دو سیر گیہوں کہ بازار میں مثلاً دو آنے کو ملتا ہے کوئی شخص بعوض ایک روپیہ نقد بیچے تو بھی درست ہے ایسے ہی اگر نسیہ میں قیمت بڑھائے اور مشتری راضی ہو جائے تب بھی درست ہے"۔

[1] مجموعہ فتاویٰ کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنؤ ۱/ ۳۹۱ Page 540 of 715

Fatawa Rizvia (Volume 17)

I say: Is this "now as then" only halal up to an increased price or without restriction? On the first supposition, what is the Shariah proof that selling 12 units of wheat for one rupee is halal, but selling it for two, ten, or a hundred is haram? As the saying goes, "When water has passed over the head, what matters if it is a spear's height or a hand's height" (meaning both are equal). On the second supposition, every rational person knows that no sensible person would buy wheat worth two annas for a hundred rupees, or even for one rupee, unless there was some compulsion. And the seller, by giving goods worth 2 units and taking a hundred rupees, must surely be seeking excess through a legal trick (hila). Even if it is not direct riba (usury) or resembling riba, as you have not noted in this third aspect, the ruling of prohibition (hurmat) was bound to apply due to the matter of the trick (hila).

Fifth: (80 to 85) Remember those six tricks that the noble Imams have stated and which have been mentioned on pages 170 to 174. How did the ruling of permissibility (halal) occur here through the commission of a trick?

Sixth: Not just these six, there are thousands of tricks whose grand explanations are mentioned in the words of the Imams; if you were to collect them, they would be more than this entire volume. For now, observe the 'Kitab al-Hiyal' (Book of Legal Tricks) in Fatawa Alamgiri, for the essence of the entire book is contained within it.

Seventh: Do not just take your own word for it; Imam Muhammad (may Allah be pleased with him) narrated in al-Muwatta that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Sell dates for dates equally." It was submitted, "O Messenger of Allah! Your governor in Khaybar takes one sa' (a measure) for two sa's." He said, "Call them." They came, and the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Do not do this." He submitted: "O Messenger of Allah! They sell two sa's of the 'Jam' variety for one sa' of the 'Janib' variety, meaning an equal amount cannot be obtained." The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said:

Sell the 'Jam' for dirhams, then buy 'Janib' with dirhams.[1]	**Sell this type (Jam) for money and buy that type (Janib) with money.**

On this, you write a footnote:

He taught him a form in which riba does not enter while the objective is achieved.[2]	**The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) taught them that method in which interest does not occur and the objective is achieved.**

[1] Al-Muwatta of Imam Muhammad, Chapter on Riba in things measured or weighed, Nur Muhammad Karkhana-e-Tijarat-e-Kutub Karachi, pp. 352-353. [2] Al-Ta'liq al-Mumajjad 'ala Muwatta Muhammad, Chapter on Riba in things measured or weighed, Nur Muhammad Karkhana-e-Tijarat-e-Kutub Karachi, p. 353.

फतावा रिज़विया (जिल्द 17)

मैं कहता हूँ: यह 'अब भी तब भी' केवल कीमत बढ़ने तक हलाल है या बिना किसी प्रतिबंध के? पहली धारणा पर, शरिया का क्या प्रमाण है कि 12 गेहूं एक रुपये में बेचना हलाल है और दो, दस या सौ में हराम? जैसा कि कहावत है, 'जब पानी सिर से गुजर गया, तो क्या एक नेज़ा (भाला) और क्या एक हाथ' (अर्थात दोनों बराबर हैं)। दूसरी धारणा पर, हर बुद्धिमान व्यक्ति जानता है कि कोई भी समझदार व्यक्ति दो आने के गेहूं सौ रुपये में, या यहाँ तक कि एक रुपये में भी, कभी नहीं खरीदेगा जब तक कि कोई दबाव न हो। और बेचने वाला 2 का माल देकर सौ रुपये लेने में निश्चित रूप से हीले (कानूनी चाल) के माध्यम से अधिकता ही चाहेगा, फिर चाहे वह रिबा (ब्याज) या रिबा के समान न भी हो, जैसा कि अब आपने इस तीसरे पहलू पर नोट में भी ध्यान नहीं रखा है, लेकिन हीले के कारण हराम होने का हुक्म आना आवश्यक था।

पाँचवाँ: (80 से 85) उन छह हीलों (कानूनी चालों) को याद कीजिए जो इमामों ने बताए हैं और जो पृष्ठ 170 से 174 तक गुजर चुके हैं। यहाँ हीले के उपयोग से हलाल होने का हुक्म कैसे हो गया?

छठा: यही छह क्या, हजारों हीले हैं जिनकी महान व्याख्याएँ इमामों के शब्दों में वर्णित हैं; यदि आप उन्हें एकत्रित करें, तो वे आपकी इस पूरी जिल्द से भी अधिक होंगे। वर्तमान में आलमगीरी की 'किताब अल-हियल' (कानूनी चालों की पुस्तक) ही देखें, क्योंकि पूरी पुस्तक का सार उसी में है।

सातवाँ: आप खुद अपनी ही न कहें, सैय्यदना इमाम मुहम्मद (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने मुवत्ता में रिवायत की है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: 'खजूर खजूर के बराबर करके बेचो।' इस पर अर्ज़ किया गया कि या रसूलुल्लाह! खैबर पर हुज़ूर के गवर्नर तो दो सा' के बदले एक सा' लेते हैं। फरमाया: उन्हें बुलाओ। वे हाज़िर हुए, रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: ऐसा न करो। अर्ज़ किया: या रसूलुल्लाह! वे 'जम' किस्म की दो सा' को 'जनीब' किस्म की एक सा' में बेचते हैं, यानी बराबर मिल ही नहीं सकती। रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया:

जम को दिरहम के बदले बेचो फिर जनीब को दिरहम के बदले खरीद लो।[1]	**यह किस्म (जम) रुपयों से बेचकर वह किस्म (जनीब) रुपयों से खरीद ले।**

इस पर आप हाशिया लिखते हैं:

उन्होंने उसे एक ऐसा तरीका सिखाया जिसमें रिबा (ब्याज) दाखिल नहीं होता जबकि उद्देश्य प्राप्त हो जाता है।[2]

रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने उन्हें वह सूरत (तरीका) सिखा दी जिसमें रिबा न आने पाए और उद्देश्य हासिल हो जाए।

[1] अल-मुवत्ता लिल-इमाम मुहम्मद, बाब अर-रिबा फीमा युकालो व युज़ानो, नूर मुहम्मद कारख़ाना-ए-तिजारत-ए-कुतुब कराची, पृ. 352-353। [2] अत-तअलीक अल-मुमज्जाद अला मुवत्ता मुहम्मद, बाब अर-रिबा फीमा युकालो व युज़ानो, नूर मुहम्मद कारख़ाना-ए-तिजारत-ए-कुतुब कराची, पृ. 353।

اقول: یہ "اب بھی تب بھی" فقط اٹھ گئی قیمت تک حلال ہے یا بلا قید۔ بر تقدیر اول کیا دلیل شرعی ہے کہ ۱۲ کے گیہوں ایک روپے کو بیچنا حلال اور دو یا دس یا سو کو حرام۔ چو آب از سر گذشت چہ یک نیزہ چہ یک دست (جب پانی سر سے گزر گیا تو کیا ایک نیزہ اور کیا ایک ہاتھ، یعنی دونوں برابر ہیں۔ت) بر تقدیر ثانی ہر عاقل جانتا ہے کہ کوئی ذی عقل دو آنے کے گیہوں سو روپے بلکہ انصافا ایک روپے کو بھی ہر گز خرید نے نہ بیٹھے گا جب تک کوئی دباؤ نہ ہو اور بیچنے والا ۲ کا مال دے کر سو روپے لینے میں ضرور براہ حیلہ زیادہ ستانی ہی چاہے گا، پھر ربوا و شبہ ربانہ سہی جیسا کہ اب آپ کو اس تیسرے پہلو پر نوٹ میں بھی ملحوظ نہیں مگر معاملہ حیلہ کے سبب حکم حرمت آنا لازم تھا۔

خامساً: (۸۰تا ۸۵) وہ چھ حیلے یاد کیجئے جو ائمہ کرام نے ارشاد فرمائے اور رسالہ ص ۱۷۰ سے ۱۷۴ تک گزرے یہاں ارتکاب حیلہ سے حکم حلت کیسے ہوگیا۔

سادساً: یہی چھ کیا ہزار حیلے ہیں جن کی تصریحات جلیلہ کلمات ائمہ میں مذکور اگر ان کو جمع کیجئے تو آپ کی اس جلد بھر سے زیادہ ہونگے سر دست عالمگیری کی کتاب الحیل ہی ملاحظہ وہ کہ ساری کتاب کی کتاب اسی میں ہے۔

سابعاً: آپ خود اپنی ہی نہ کہئے، سیدنا امام محمد رضی اللہ تعالی عنہ نے موطا میں روایت فرمائی کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم نے فرمایا: "خرما خرما برابر کر کے بیچو"۔ اس پر عرض کی گئی کہ یا رسول اللہ! خیبر پر حضور کے صوبہ دار تو دو صاع کو ایک صاع لیتے ہیں، ارشاد ہوا: انہیں بلاؤ۔ وہ حاضر ہوئے ، رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم نے فرمایا : ایسا نہ کرو۔

عرض کیا: یا رسول اللہ ! وہ قسم جمع کی دو ہی صاع کو جنیب کی ایک صاع بیچتے ہیں یعنی برابر کو مل ہی نہیں سکتی، رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم نے فرمایا :

بع الجمع بالدراهم ثم ابتع بالدراهم جنيباً - 1 **یہ قسم (جمع) روپوں سے بیچ کر وہ قسم (جنیب) روپوں سے خرید لے۔**

اس پر آپ حاشیہ لکھتے ہیں:

علمه صورة لاتدخل فيه الربا مع حصول المقصود - 2 **رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم نے ان کو وہ صورت سکھا دی جس میں ربانہ آنے پائے اور مطلب حاصل ہوجائے۔**

1 الموطأ للإمام محمد باب الربو فيما يكال ويوزن نور محمد كارخانہ تجارت كتب كراچی ص ۳۵۲۔

۳۵۳ 2 التعليق الممجد على مؤطا محمد باب الربو فيما يكال ويوزن نور محمد كارخانہ تجارت كتب كراچی ص ۳۵۳

Fatawa Razawiyya Volume 17

Sir! This is precisely what is called a 'Shari'ah legal trick' (Hila-e-Shar'iyyah). What meaning is there in saying that the ruling of lawfulness (halal) cannot be obtained through it? Is the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) telling us something through which lawfulness is not achieved and the prohibited remains prohibited? Seek refuge in Allah.

Eighthly: Immediately following this, Imam Muhammad (may Allah be pleased with him) narrated that Hadith of Abu Sa'id al-Khudri and Abu Hurayra (may Allah be pleased with them both) which was mentioned on pages 195 and 196 of the treatise. In that as well, the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) taught this very legal trick, upon which you yourself wrote a footnote saying:

"He (the Prophet) pointed towards it so that riba (usury) is avoided while achieving the objective."[2] - The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) pointed them towards a way through which one is saved from riba and the objective is obtained.

Our master Imam Muhammad, after narrating these Hadiths, said:

"We adopt all this, and it is the opinion of Abu Hanifa and the majority of our jurists."[3] - All these matters are our chosen view, and this is the statement of the Greatest Imam Abu Hanifa and all our noble jurists (may Allah be pleased with them).

As for your statement in the footnote that the Hanafis and others have used this to argue for the permissibility of 'hila' (legal tricks), and the truth is that in such places, intention is what matters.[4]

I say firstly: Why the specific focus here? Intention matters in all places, in the sense that any action done with a corrupt or bad intention will be prohibited. Even prayer (Salat), if performed with a bad intention, is prohibited.

"That prayer is the key to the door of Hell, which you perform lengthily in the eyes of people." (That prayer is the key to Hell which you read long for show to people.)

Secondly: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) is teaching it, as you yourself have acknowledged. Full.

---

[1] Al-Muwatta of Imam Muhammad, Chapter on Riba in things measured and weighed, Noor Muhammad Karkhana Tijarat Kutub Karachi, p. 354. [2] Al-Ta'liq al-

Mumajjad 'ala Muwatta Muhammad, Chapter on Riba in things measured and weighed, Noor Muhammad Karkhana Tijarat Kutub Karachi, p. 354. [3] Al-Muwatta of Imam Muhammad, Chapter on Riba in things measured and weighed, Noor Muhammad Karkhana Tijarat Kutub Karachi, p. 354. [4] Al-Ta'liq al-Mumajjad 'ala Muwatta Muhammad, Chapter on Riba in things measured and weighed, Noor Muhammad Karkhana Tijarat Kutub Karachi, p. 354.

फ़तावा रज़विया जिल्द सत्रह (17)

जनाब! इसी का नाम तो शरीअत का हीला (हिला-ए-शरिया) है, फिर इससे हलाल होने का हुक्म न मिल पाना भला क्या मतलब? क्या अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ऐसी बात बता रहे हैं जिससे हलाल हासिल न हो और हराम, हराम ही रहे? अल्लाह की पनाह।

आठवीं बात: इसके ठीक बाद इमाम मुहम्मद (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने अबू सईद खुदरी और अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) की वह हदीस[1] रिवायत की जो रिसाले के पेज 195 और 196 पर गुज़री, उसमें भी हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने यही हीला सिखाया है जिस पर आपने खुद हाशिया लिखा कि:

"उन्होंने उसकी ओर इशारा किया जिससे मक़सद हासिल होने के साथ-साथ रिबा (ब्याज) से बचा जा सके।"[2] - अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने उन्हें ऐसी बात की ओर इशारा फरमाया जिससे रिबा से बचा जाए और मक़सद हाथ आए।

सैयदना इमाम मुहम्मद ने ये हदीसें रिवायत करके फरमाया:

"हम इन सबको अपनाते हैं और यही इमाम अबू हनीफ़ा और हमारे आम फ़ुक़हा का कौल है।"[3] - ये सब बातें हमारा मुख्तार (चुना हुआ) मज़हब हैं और यही कौल इमाम आज़म अबू हनीफ़ा और हमारे तमाम फ़ुक़हा-ए-किराम (रज़ियल्लाहु अन्हुम) का है।

रहा हाशिये में आपका यह कहना कि हनफ़िया वग़ैरह ने इससे हीला के जायज़ होने पर दलील दी है और सच यह है कि ऐसी जगह नीयत का ऐतबार है।[4]

मैं कहता हूँ, अव्वल तो: यहाँ की ही क्या खुसूसियत (विशेषता) है, हर जगह नीयत का ऐतबार है, इस मायने में कि बुरे इरादे से जो काम किया जाएगा वह मना होगा, हीला तो हीला, अगर बुरी नीयत से नमाज़ पढ़ी जाए तो वह भी हराम है।

"वह नमाज़ जहन्नुम के दरवाज़े की चाबी है, जिसे तू लोगों के दिखावे के लिए लंबा करके पढ़ता है।" (वह नमाज़ दोज़ख की चाबी है जिसे तू लोगों को दिखाने के लिए लंबा करके पढ़े)।

दूसरी बात: अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) सिखा रहे हैं जिसका आपने खुद इकरार किया। समाप्त।

1. अल-मुवत्ता इमाम मुहम्मद, बाबुर रिबा फ़ीमा युकालो व युज़नो, नूर मुहम्मद कारख़ाना तिज़ारत कुतुब कराची, पेज 354।
2. अत-तअलीक़ अल-मुमज्ज़द अला मुवत्ता मुहम्मद, बाबुर रिबा फ़ीमा युकालो व युज़नो, नूर मुहम्मद कारख़ाना तिज़ारत कुतुब कराची, पेज 354।
3. अल-मुवत्ता इमाम मुहम्मद, बाबुर रिबा फ़ीमा युकालो व युज़नो, नूर मुहम्मद कारख़ाना तिज़ारत कुतुब कराची, पेज 354।
4. अत-तअलीक़ अल-मुमज्ज़द अला मुवत्ता मुहम्मद, बाबुर रिबा फ़ीमा युकालो व युज़नो, नूर मुहम्मद कारख़ाना तिज़ारत कुतुब कराची, पेज 354।

جناب من! اسی کا نام تو حیلہ شرعیہ ہے پھر اس سے حکم حلت نہ ہو سکنا کیا معنی، کیا رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم وہ بات بتا رہے ہیں جس سے حلت نہ حاصل ہو حرام کا حرام رہے، والعیاذ باللہ تعالیٰ۔

ثامناً: اس کے متصل امام محمد رضی اللہ تعالیٰ عنہ نے ابو سعید خدری و ابو ہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہما کی وہ حدیث۱ روایت فرمائی جو رسالہ کے ص ۱۹۵ و ۱۹۶ پر گزری اس میں بھی حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے یہی حیلہ تعلیم فرمایا ہے جس پر آپ نے خود حاشیہ لکھا کہ:

اشار الیہ بما یجتنب عن الربا مع حصول المقصود۲ - رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے انہیں ایسی بات کا اشارہ فرمایا جس میں ربا سے بچ جائے اور مطلب ہاتھ آئے۔

سیدنا امام محمد نے یہ حدیثیں روایت کر کے فرمایا:

بہذا کلہ نأخذ وھو قول ابی حنیفہ والعامۃ من فقھائنا۳ - یہ سب باتیں ہماری مختار ہیں اور یہی قول امام اعظم ابو حنیفہ اور ہمارے سب فقہاء کرام رضی اللہ تعالیٰ عنہم کا ہے۔

رہا حاشیہ میں آپ کا فرمانا کہ حنفیہ وغیرہ نے اس سے جواز حیلہ پر استدلال کیا اور حق یہ کہ ایسی جگہ اعتبار نیت کا ہے۴۔

اقول اولاً: یہاں کی کیا تخصیص ہے سبھی جگہ اعتبار نیت کا ہے بایں معنی کہ بدنیت فاسد ارادے سے جو کام کیا جائے گا ممنوع ہوگا، حیلہ تو حیلہ اگر بدنیت سے نماز پڑھے تو وہ بھی حرام ہو،

کلید در دوزخ است آں نماز کہ در چشم مردم گزاری دراز (وہ نماز دوزخ کی چابی ہے جس کو تو لوگوں کے دکھلاوے کیلئے لمبا کر کے پڑھے)

ثانیاً: رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم تعلیم فرما رہے ہیں جس کا خود آپ نے اقرار کیا، تمام

---

۱ الموطأ للامام محمد باب الربو فیما یکال ویوزن نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۳۵۴ ۲ التعلیق الممجد علی موطأ محمد باب الربو فیما یکال ویوزن نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۳۵۴ ۳ الموطأ للامام محمد باب الربو فیما یکال ویوزن نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۳۵۴ ۴ التعلیق الممجد علی موطأ محمد باب الربو فیما یکال ویوزن نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۳۵۴

Fatawa Ridawiyya Volume 17

The Imams of the school of thought are acting upon what Imam Muhammad expressed. Now, if your "Al-Haqq" (The Truth) is consistent with this, then our eyes are brightened and our hearts are gladdened. (Ed: t). But if you wish to build your own separate "one and a half bricks" (isolated opinion) contrary to the instruction of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) and the consensus of the Imams of the school, as is apparent from the text, then congratulations to you alone. In the eyes of the people of truth, it is "Nayar-zad" (not worth even a grain of barley). (Ed: t).

Thirdly: You haven't clarified what intention makes a legal stratagem (hila) permissible and what makes it impermissible. If the intention is that in the sale, the exchange of dirhams is merely nominal—not that selling that type of dates for dirhams is intended, nor is purchasing that type with dirhams, but rather the exchange of two types with each other is desired, and the mention of dirhams in the sale is merely a nominal, fictitious name as a form of talji'ah (forced/simulated contract)—then this is certainly correct. But God forbid, when did the Great Imam (Abu Hanifa), Imam Muhammad, and all the Imams of the school ever declare such a thing permissible? Sir, they were declaring the "legal stratagem" (hila shar'iyyah) permissible, which according to your own admission, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) himself taught. When did this impure act become a "legal stratagem"? Rather, it is an intentional opposition to the Sharia and an attempt to deceive the Knower of the Unseen (Allah) in appearance. Then you chose to build your own "Al-Haqq" in opposition to all the Imams of the school. And if the intention is that even though selling this type for money and buying that type with money is intended, but the driving force behind this action is the purpose that this type leaves our possession and that type enters it—if you call this impermissible, then forgive the shortcoming, this (God forbid) is suggesting a religious correction to the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him). Let alone Abu Hanifa and other Imams, it is obvious that for the achievement of this very purpose, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) taught this method. The Sahih Muslim and Sahih Bukhari Hadith itself was mentioned on pages 195 and 196 that "when you want to purchase, do so like this." Don't just listen to the Hadith, look at your own words; in both places, see the wording that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) taught the method by which one avoids interest (riba) and the objective is achieved. Tell us, what was that objective

whose achievement the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) taught? After this, the quote you mentioned in refutation of the Great Imam, Imam Muhammad, and the Imams of the school from the misguided Ibn al-Qayyim, taken from his heretical teacher Ibn Taymiyyah—every single word of it is delirium or the raving of a madman. You yourself wrote afterwards that there are long discussions here found in detailed books, leaving room for you to say that "I did not keep this quote as accepted." Therefore, we will also not prolong the refutation, as the objective here is a dialogue with you.

1 At-Ta'liq al-Mumajjad 'ala Muwatta al-Imam Muhammad, Chapter on Interest (Riba) regarding what is measured and weighed, Noor Muhammad Karkhana Tijarat Kutub Karachi, p. 375.

मज़हब के आइम्मा (इमाम) उसी पर अमल कर रहे हैं जिसका ज़िक्र इमाम मुहम्मद ने किया है। अब अगर आपका "अल-हक़" इसके अनुकूल है, तो हमारी आँखें रोशन और हमारा दिल खुश है (त)। और अगर रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के इरशाद और आइम्मा-ए-मज़हब के इत्तेफ़ाक़ के खिलाफ आप अपनी "डेढ़ ईंट की अलग मस्जिद" बनाना चाहते हैं, जैसा कि इबारत से ज़ाहिर है, तो वह आपको ही मुबारक रहे। अहल-ए-हक़ के नज़दीक यह "नय्यर-ज़द" (एक जौ के दाने के बराबर भी नहीं) है। (त)

तीसरा: आपने यह स्पष्ट नहीं किया कि कैसी नीयत हो तो हीला (कानूनी उपाय) जायज़ है और कैसी हो तो नाजायज़। अगर यह मक़सद है कि बैअ (खरीद-फरोख्त) में दराहिम का तबादला सिर्फ नाम के लिए हो, न तो खजूर की वह किस्म दराहिम के बदले बेचना मक़सद हो और न ही दराहिम के बदले वह किस्म खरीदना, बल्कि दोनों किस्मों का आपस में तबादला मक़सद हो और दराहिम का ज़िक्र बैअ-ए-तल्जिया (दिखावे का अनुबंध) के तौर पर महज़ एक फ़र्ज़ी नाम हो, तो यह यक़ीनन सही है। मगर माज़अल्लाह, इमाम-ए-आज़म, इमाम मुहम्मद और मज़हब के तमाम आइम्मा ने इसे कब जायज़ कहा था? हज़रत, वे तो उस "हीला-ए-शरई" को जायज़ ठहरा रहे हैं जिसे खुद आपके इक़रार के मुताबिक रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने सिखाया था। यह नापाक हरकत "हीला-ए-शरई" कब हुई? बल्कि यह तो जानबूझकर शरीयत की मुख़ालिफ़त है और ज़ाहिरी तौर पर आलिम-उल-ग़ैब (अल्लाह) को धोखा देना है। फिर आपने तमाम आइम्मा-ए-मज़हब के मुक़ाबले में अपनी "अल-हक़" की अलग इमारत खड़ी कर ली। और अगर यह मक़सद है कि हालांकि इस किस्म को रुपयों से बेचकर उस किस्म को रुपयों से खरीदना ही मक़सद हो, लेकिन इस अमल का कारण यही उद्देश्य हो कि यह किस्म हमारी मिल्कियत से निकल जाए और वह किस्म शामिल हो जाए—अगर आप इसे नाजायज़ कहते हैं, तो माफ़ कीजिएगा, यह (माज़अल्लाह) रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की दीनी इस्लाह (सुधार) करने जैसा है। अबू हनीफा वगैरह आइम्मा तो दूर की बात रहे, ज़ाहिर है कि इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने यह तरीका सिखाया था। खुद सहीह मुस्लिम और सहीह बुखारी की हदीस सफ़हा १९५ और १९६ पर गुज़री कि "जब तू मोल लेना चाहे तो यूँ कर"। हदीस की न सुनिए अपनी ही, दोनों जगह लफ़्ज़ देखिए कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने वह सूरत सिखा दी जिससे रिबा (ब्याज) से बचा जाए और मक़सद हासिल हो जाए। कहिए तो वह क्या मक़सद था जिसकी प्राप्ति रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु

अलैहि वसल्लम) ने सिखाई? इसके बाद जो आपने इमाम-ए-आज़म, इमाम मुहम्मद और आइम्मा-ए-मज़हब के रद्द में गुमराह इब्न-ए-क़य्यिम का एक हवाला उसके बद-मज़हब उस्ताद इब्न-ए-तैमिया से ज़िक्र किया है, उसका एक-एक हर्फ़ बकवास या पागल की बड़बड़ है। आपने खुद इसके बाद इतना लिख दिया कि "यहाँ लंबी बहसें हैं जो विस्तृत किताबों में मिलेंगी", जिससे आपके पास यह कहने की गुंजाइश रही कि "मैंने इस नक़ल (उद्धरण) को स्वीकार्य नहीं रखा"। इसलिए हम भी इसके रद्द को लंबा नहीं खींचेंगे क्योंकि यहाँ मक़सद आपसे संवाद है।

१ अत-तअलीक़ अल-मुमज्जिद अला मुवट्टा अल-इमाम मुहम्मद, बाब-अर-रिबा फ़ीमा युकालो व युज़नो, नूर मुहम्मद कारख़ाना तिज़ारत कुतुब कराची, पृ. ३७५।

ائمہ مذہب اس پر عمل فرما رہے ہیں جس کا امام محمد نے اظہار کیا، اب یہ آپ کی "والحق" اگر اس کے موافق ہے چشم مار روشن دل ما شاد (ہماری آنکھیں روشن اور ہمارا دل خوش ہے۔ت) اور اگر رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے ارشاد اور ائمہ مذہب کے اتفاق کے خلاف کچھ اپنی ڈیڑھ اینٹ کی الگ چننی چاہتے ہیں جیسا کہ ظاہر عبارت ہے تو وہ آپ ہی کو مبارک رہے اہل حق کے نزدیک بجز "نیر زد" (ایک جو کے لائق بھی نہیں۔ت)

ثالثا: آپ نے کچھ کھولی نہیں کہ کیانیت ہو تو حیلہ جائز ہے اور کیا ہو تو ناجائز، اگر یہ مقصود کہ بیع میں مبادلہ دراہم صرف برائے نام ہو، نہ یہ قسم خرما دراہم سے بیچنی مقصود ہو نہ وہ قسم دراہم خریدنی ،بلکہ منظور انہیں دو قسم کا باہم مبادلہ ہو اور ذکر دراہم بیع تلجیہ کے طور پر محض اسم فرضی تو یہ ضرور صحیح ہے، مگر امام اعظم وامام محمد وجملہ ائمہ مذہب نے معاذ اللہ اسے کب جائز کیا تھا، حضرت وہ تو حیلہ شرعیہ کو جائز فرما رہے ہیں جس کی خود آپ کے اقرار سے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے تعلیم دی یہ ناپاک حرکت "حیلہ شرعیہ ہی کب ہوئی" بلکہ قصداً شرع کی مخالفت اور صورۃ عالم الغیب کو دھوکا دینا، پھر آپ نے جملہ ائمہ مذہب کے مقابل اپنی "والحق" کی الگ چنائی کا ہے پر چنی۔ اور اگر یہ مقصود کہ اگرچہ یہ قسم روپیوں سے بیچ کر وہ قسم روپیوں سے خریدنی مقصود ہو مگر اس فعل پر باعث وہی غرض ہو کہ یہ قسم ہماری ملک سے خارج ہو کر وہ قسم داخل ہو جائے اسے ناجائز کہتے ہو تو قصور معاف، یہ معاذاللہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کو اصلاح دینی ہے ابو حنیفہ وغیرہ ائمہ تو درکنار رہے، ظاہر ہے کہ اسی غرض کی تحصیل کے لئے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے یہ طریقہ تعلیم فرمایا، خود حدیث صحیح مسلم و صحیح بخاری سے صفحہ ۱۹۵ اور ۱۹۶ پر گزرا

کہ جب تو مول لینا چاہے تو یوں کر۔ حدیث کی نہ سنئے اپنی ہی، دونوں جگہ لفظ دیکھئے کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے وہ صورت سکھادی جس میں ربا سے بچ جائے اور مقصود حاصل ہو جائے، کہتے تو وہ کیا مقصود تھا جس کا حاصل کرنا رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے تعلیم فرمایا، اس کے بعد جو آپ نے امام اعظم وامام محمد و ائمہ مذہب کے رد میں ابن قیم گمراہ کی ایک نقل اس کے استاذ ابن تیمیہ بد مذہب سے ذکر کی ہے اس کا ایک ایک حرف ہذیان یا مجنون کی بڑ ہے، آپ خود اس کے بعد اتنا لکھ گئے کہ یہاں طویل بحثیں ہیں کہ مبسوط کتابوں میں ملیں گی جس سے آپ کو کہنے کی گنجائش رہی کہ میں نے اس نقل کو مقبول نہ رکھا لہٰذا ہم بھی اس کے رد سے تطویل نہ کریں کہ یہاں تو غرض آپ سے مکالمہ ہے۔

۱ التعلیق الممجد علی مؤطا امام محمد باب الربو فیما یکال ویؤذن نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۳۷۵

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

Leave it as it is, keep it ambiguous, and do not reveal the veil of intention; so much is proven even from your statement that a legal stratagem (Hilah) with a good intention is permissible. My dear sir! Then why this absolute, authoritarian decree here that a ruling of permissibility cannot be given for such a recourse to a stratagem? 1.

His statement: It is in *Tehzeeb al-Iman*. 2.

I say: Respected Maulvi! It is strange that a researcher like you, who is at such a high level that he scrutinizes the Imams of the Mujtahids and extracts their truth and falsehood, falls so low in bringing evidence for Shariah issues that he relies on unknown, worthless, and insignificant people like Zaid and Amr. Sometimes you bring evidence from *Majalis al-Abrar*, sometimes from *Risala Salami*, and descending further, from the *Arba'een* of Miyan Ishaq Dehlvi. Getting even lower, from the *Umdat al-Tahrir* of one of his students, and worst of all, from *Sirat-e-Mustaqim* of Ismail Dehlvi. Among these obscure works must be your *Tehzeeb al-Iman*, about which some associates said: until today we had heard of *Tehzeeb al-Mantiq*, *Tehzeeb al-Kalam*, *Tehzeeb al-Akhlaq*, *Tehzeeb al-Athar*, *Tehzeeb al-Nahw*; we do not know what lack of etiquette (be-tahzeebi) this elder saw in faith (iman) that he wrote its 'tehzeeb' (refining/culture). When you stoop to follow such people while citing evidence, then regarding the issue of currency notes, the Fatwa of Hazrat Maulana Maulvi Muhammad Irshad Hussain Sahib (may Allah's mercy be upon him) was before you. He was superior, more knowledgeable, more virtuous, and more complete in every way than most of those whom you consider authentic. If only you had followed him in this matter, the dispute would have been settled.

Quote: Inma al-Muharram an yaqsad bil-uqud ash-shar'iyya ghair ma shar'aha Allahu lahu fayaseer mukhadia li-deenih kaid ash-shar'ah. 3.	**Quote: Undoubtedly, what is forbidden is that from Shariah contracts, something other than their intended purpose, for which Allah Almighty legislated those contracts, is intended. Because doing so would be a deception of one's religion and a plotting against the Shariah. (T)**

I say: This is entirely in our favor. It restricts that a stratagem is only forbidden when the Shariah purpose of the Shariah contract is not intended. This is exactly the situation where, in a sale, the name of a 'sale of dirhams' is taken without the intention of exchange, merely as a fictitious name. What talk can there be about its prohibition? And when exchange of ownership is actually intended through the sale,

then this is the very Shariah purpose for which the Shariah legislated it. So, based on your own evidence, its prohibition is impossible. Furthermore, this has no relevance to currency notes; those who buy and sell notes certainly want that from the seller's ownership...

1 Majmu'a Fatawa, Kitab al-Buyu', Matba' Yusufi, Lucknow, 1/398 2 Majmu'a Fatawa, Kitab al-Buyu', Matba' Yusufi, Lucknow, 1/398 3 Majmu'a Fatawa, Kitab al-Buyu', Matba' Yusufi, Lucknow, 1/398

फतावा रज़विया (खंड 17)

इसे जैसा है वैसा ही रहने दें, गोल ही रखें और नीयत का पर्दा न खोलें; इतना तो आपके बयान से भी साबित हुआ कि नेक नीयत से हिला (कानूनी युक्ति) हलाल है। जनाब! फिर यहाँ यह पूर्ण, आधिकारिक आदेश कैसा कि ऐसी युक्ति अपनाने से हलाल होने का हुक्म नहीं हो सकता। 1.

कथन: तहज़ीब अल-ईमान में है। 2.

मैं कहता हूँ: मौलवी साहब! अचरज है कि आप जैसा शोधकर्ता जो इतने उच्च स्तर पर हो कि मुजतहिद इमामों की जाँच-परख करे और उनका सत्य-असत्य निकाले, वह शरीअत के मुद्दों के लिए प्रमाण लाने में इतना गिर जाए कि अज्ञात, महत्वहीन और तुच्छ ज़ैद और अम्र जैसे लोगों पर भरोसा करे। कभी आप मजालिस अल-अबरार से प्रमाण लाते हैं, कभी रिसाला सलामी से, और नीचे गिरकर मियाँ इसहाक देहलवी की अरबईन से, कहीं और गिरकर उनके किसी शिष्य की उमदत अल-तहरीर से, और सबसे बुरा इस्माइल देहलवी की सिरात-ए-मुस्तकीम से। उन्हीं अज्ञात रचनाओं में यह आपकी तहज़ीब अल-ईमान होगी जिसके बारे में कुछ साथियों ने कहा: आज तक हमने तहज़ीब अल-मंतिक, तहज़ीब अल-कलाम, तहज़ीब अल-अखलाक़, तहज़ीब अल-आसार, तहज़ीब अल-नह्व सुनी थी, पता नहीं इन बुजुर्ग को ईमान में क्या बदतमीज़ी (बे-तहज़ीबी) दिखी कि उन्होंने इसकी 'तहज़ीब' लिख दी। जब आप प्रमाण देते समय ऐसों का अनुसरण करने तक उतर आते हैं, तो नोटों के मसले में हज़रत मौलाना मौलवी मुहम्मद इरशाद हुसैन साहब (रहमतुल्लाह अलैह) का फतवा आपके सामने था। वह आपके उन अधिकांश प्रमाणिक लोगों से हर तरह से श्रेष्ठ, अधिक ज्ञानी, गुणी और पूर्ण थे। काश आप इस मामले में उनका अनुसरण कर लेते तो झगड़ा खत्म हो जाता।

कथन (अरबी): वास्तव में, जो निषिद्ध है वह यह है कि कोई शरीयत के अनुबंधों से वह उद्देश्य रखे जो अल्लाह ने उनके लिए निर्धारित नहीं किया है, इस प्रकार वह अपने धर्म का धोखेबाज़ और शरीयत के खिलाफ षड्यंत्रकारी बन जाता है। 3.

कथन: निस्संदेह हराम यह है कि शरीयत के अनुबंधों से उस चीज़ का उद्देश्य न होना जिसके लिए अल्लाह तआला ने उन अनुबंधों को लागू किया है। क्योंकि ऐसा करना अपने धर्म से धोखा और उसकी शरीयत से मक्कारी करने वाला होगा। (टी)

मैं कहता हूँ: यह पूरी तरह हमारे पक्ष में है। यह सीमित करता है कि वही युक्ति (हिला) हराम है जिसमें शरई अनुबंध से उसका शरई उद्देश्य अभिप्रेत न हो। यह वही स्थिति हुई कि बिक्री में 'दिरहम

की बिक्री' का नाम बिना विनिमय की नीयत के मात्र एक काल्पनिक नाम के रूप में लिया जाए। इसकी हरामता में क्या बात हो सकती है? और जब बिक्री से वास्तव में स्वामित्व के विनिमय का इरादा किया गया, तो यही वह शरई उद्देश्य है जिसके लिए शरीयत ने इसे लागू किया है। तो आपके इसी प्रमाण के अनुसार इसकी हरामता असंभव है। फिर नोटों के मामले में तो इसका कोई दखल ही नहीं है; नोट खरीदने और बेचने वाले निश्चित रूप से यही चाहते हैं कि बेचने वाले के स्वामित्व से...

1 मजमुआ फतावा, किताब अल-बुयू, मतबा यूसुफी, लखनऊ, 1/398 2 मजमुआ फतावा, किताब अल-बुयू, मतबा यूसुफी, लखनऊ, 1/398 3 मजमुआ फतावा, किताब अल-बुयू, मतबा यूसुफी, लखनऊ, 1/398

تاسگا جانے دیجئے گول ہی رہیں اور نیت کا پردہ نہ کھولیں اتنا تو آپ کے بیان سے بھی ثابت ہوا کہ حیہ نیک نیت سے حلال ہے، جناب من! پھر یہاں یہ مطلق جبروتی حکم کیسا کہ ایسے ارتکاب حیلہ سے حکم حلت نہیں ہوسکتا ۱۔

قولہ: تہذیب الایمان میں ہے ۲۔

اقول: مولوی صاحب! عجب ہے کہ آپ جیسا محقق جو اتنے اعلٰی پائے پر ہو کہ ائمہ مجتہدین کی جانچ پڑتال کرے ان کا حق و باطل نکالے وہ اور مسائل شرعیہ کے لئے سند لانے میں ایسا گرے کہ مجاہیل وبے قدر وبے وقعت زید و عمرو سب سے استناد کرے کہیں آپ مجالس الابرار سے سند لاتے ہیں کہیں رسالہ اسلمی سے، اور اتر کر اربعین میاں اسحق دہلوی سے، کہیں اور گھٹ کر ان کے کسی شاگرد کی عمدۃ التحریر سے، کہیں سب سے بدتر صراط مستقیم اسمعیل دہلوی سے، انہیں مجاہیل میں یہ آپ کی تہذیب الایمان ہوگی جس پر بعض اصحاب نے کہا کہ آج تک تہذیب المنطق، تہذیب الکلام، تہذیب الاخلاق، تہذیب الآثار، تہذیب النحو سنی تھی، معلوم نہیں ان بزرگ کو ایمان میں کیا بے تہذیبی سوجھی کہ اس کی تہذیب لکھی آپ استناد کرتے وقت جب ایسوں کی تقلید تک اتر آتے ہیں تو مسئلہ نوٹ میں حضرت مولانا مولوی محمد ارشاد حسین صاحب رحمۃ اللہ تعالٰی علیہ کا فتوٰی آپ کے سامنے تھا وہ وہ آپ کے ان اکثر مستندین سے ہر طرح اعلٰی واعلم وافضل واکمل تھے کاش اس میں ان کی تقلید فرما لیتے تو جھگڑا چکتا۔

قولہ: انما المحرم ان یقصد بالعقود الشرعیة غیر ماشر عها الله له فیصیر مخادعا لدینه کائد الشرعه ۳۔

قولہ: بے شک حرام یہ ہے کہ عقود شرعیہ سے اس شے کا غیر مقصود ہونا جس کے لئے اللہ تعالی نے ان عقود کو مشروع فرمایا کیونکہ ایسا کرنیوالا اسکے دین سے دھوکا اور اسکی شرع سے مکر کرنیوالا ہوگا۔ (ت)

اقول: یہ بالکل ہمارے موافق ہے وہ حصر کرتا ہے کہ حیلہ وہی حرام ہے جس میں عقد شرعی سے اس کا مقصود شرعی مراد نہ ہو، یہ وہی صورت ہوئی کہ بیچ میں بیچ دراہم کا نام بلا قصد مبادلہ محض بطور اسم فرضی لے اس کی حرمت میں کیا کلام ہے، اور جب بیع سے حقیقۃً مبادلہ ملک کا قصد کیا تو یہی مقصود شرعی ہے جس کے لئے شرع نے اسے مشروع فرمایا تو جب آپ کی اسی سند کی رو سے اس کی حرمت ناممکن۔ پھر نوٹ میں تو اس کو کچھ دخل ہی نہیں، نوٹ بیچنے خریدنے والے یقیناً یہی چاہتے ہیں کہ بائع کی ملک سے۔

۱ مجموعہ فتاوٰی کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنؤ ۱/ ۳۹۸ ۲ مجموعہ فتاوٰی کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنؤ ۱/ ۳۹۸ ۳ مجموعہ فتاوٰی کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنؤ ۱/ ۳۹۸

Fatawa Rizvia Volume 17

The notes depart from the seller and enter the ownership of the buyer, and the rupees depart from the buyer's ownership and enter the ownership of the seller. The Sharia has legislated 'sale' (trade) for this very purpose; so according to the ruling of this statement, its permissibility is mandatory. If it is argued that his intent was to take more in exchange for fewer rupees, but if he took more rupees by giving rupees, it would be interest (usury). That is why he sold the notes for rupees, because when the genus (category of asset) changes, usury is avoided.

I say: Then what sin did he commit? He only intended to avoid sin. If the strategy to avoid sin is also a sin, then where is the escape? Sharia has legislated trade so that one can achieve their objective in a permissible manner while avoiding Sharia prohibitions. This is exactly what he intended—fulfilling a Sharia objective, not opposing it. So where does the prohibition come from?

| Quote: For his purpose is to obtain that which Allah has forbidden through this stratagem, or to drop that which He has made obligatory. End. | Quote: Because through this stratagem his goal is to obtain that thing which Allah Almighty has forbidden or to drop that thing which Allah Almighty has made mandatory. End. (T) |

I say firstly: Does 'Haram' refer to an inherent prohibition (Lazim-ul-Muharramiyah) from which prohibition is never separated, or is it that which has a transient, separable prohibition? In the first case, will he choose this inherent forbidden act, or turn away and flee from it towards a permissible matter? In the first instance, when was it even a stratagem (hila)? It was explicitly falling into the forbidden. Then why did the prohibition of the stratagem become necessary from this? In the second instance, perhaps prohibition would be because he avoided the forbidden and turned towards the permissible. In the second case, he adopts a form in which the transient prohibition is detached and the thing remains purely permissible. Or is it that the transient prohibition remains? The second case is again not a stratagem, and there is no reason for prohibition in the first.

Secondly: Why go far, listen to yourself. Wine is definitively forbidden and is impure like urine with a heavy impurity (najasa ghaliza). For a Muslim, its sale is forbidden, touching it is forbidden, and taking any benefit from it is forbidden. Now suppose a Muslim comes into possession of a thousand jars of wine, for example, he was previously a Christian and now he has become a Muslim. He does not want such a

large amount of wealth to go to waste. He adds salt and turns it all into vinegar. You yourself say that it is permissible and lawful; see in your treatise Nafa'-ul-Mufti:

| Benefitting from the forbidden is not permissible, so said Al-Barjandi | To gain benefit from the forbidden is not permissible, similarly Al-Barjandi |

[1] Majmu'ah Fatawa, Kitab al-Buyu' (Book of Sales), Matba'-e-Yousufi, Lucknow, 1/398

फतावा रज़विया जिल्द सत्रह (17)

नोट निकलकर खरीदार के स्वामित्व में आएं और खरीदार के स्वामित्व से रुपये निकलकर विक्रेता के स्वामित्व में आएं शरीयत ने 'बय' (बिक्री) इसी के लिए लागू की है, तो इसी इबारत के हुक्म से इसकी हलावत (वैधता) वाजिब है। अगर कहिए कि मुराद यह है कि उसने थोड़े रुपयों के बदले ज़्यादा लेने चाहे, मगर रुपये देकर ज़्यादा रुपये लेता तो सूद होता इसी लिए नोट बेचकर रुपये लिए कि जिन्स (श्रेणी) बदल जाने से रिबा (ब्याज) जाता रहे।

अकुल (मैं कहता हूँ): तो क्या गुनाह किया, उसने गुनाह से बचना ही तो चाहा, गुनाह से बचने की तदबीर भी गुनाह हो तो मफ़र (बचाव) किधर? शरीयत ने बय इसी लिए मशरूअ (लागू) फ़रमाई है कि मन्हियात-ए-शरईया (शरई निषेधों) से बचकर अपना मतलब जायज़ तरीक़े से हासिल कर लो, वही उसने चाहा तो मक़सद-ए-शरई की न कि मुख़ालफ़त, फिर हुरमत (प्रतिबंध) किधर से आई।

| कौलहु: फ-इन्ना मक़सूदहु हुसूलुल-लज़ी हर्रमल्लाहु बि-तिलकल-हीलति औ इस्क़ातु मा वजबा अन्तहा। | कौलहु: क्योंकि इस हीले (रणनीति) से उसका मक़सद उस चीज़ को हासिल करना है जिसे अल्लाह तआला ने हराम किया या उस चीज़ को साक़ित (समाप्त) करना है जिसे अल्लाह तआला ने वाजिब किया, अन्तहा। (त) |

अकुल अव्वलन: हराम से मुराद लाज़िम-उल-मुहर्रमिया है जिससे हुरमत कभी जुदा न हो या वह जिसे हुरमत आरिज़ मुन्फ़क (अस्थायी) है। बर-तक़दीर अव्वल इसी लाज़िम-उल-मुहर्रमिया को इख़्तियार करेगा या इससे किसी अम्र-ए-जायज़ की तरफ़ उदुल-ओ-फ़रार (पलटना)? पहली सूरत पर हीला ही कब हुआ, सराहतन हराम में पड़ना हुआ, फिर इससे तहरीम-ए-हीला (हीले का हराम होना) क्यों लाज़िम आई? और दूसरी सूरत में शायद हुरमत इस वजह से होगी कि हराम से क्यों बचा और जायज़ की तरफ़ क्यों उदुल किया। बर-तक़दीर सानी शक्ल को वह इख़्तियार करता है जिसमें वह आरिज़ मुन्फ़क मुन्फ़तक (अलग) हो जाए और शय हलाल-ए-महज़ रह जाए या वह कि आरिज़-ए-हुरमत बाक़ी रहे? सूरत-ए-सानी फिर हीला नहीं और अव्वली पर हुरमत की कोई वजह नहीं।

सानियन: दूर क्यों जाइए खुद अपनी सुनिए, शराब हराम-ए-क़तई और पेशाब की तरह नजिस बह नजासत-ए-ग़लीज़ा है, मुसलमान को इसका बेचना हराम, छूना हराम, इससे किसी तरह का नफ़ा लेना हराम। अब फ़र्ज़ कीजिए कि एक मुसलमान की मिल्क (स्वामित्व) में हज़ार मटके शराब आई मसलन यूँ कि अव्वल नसरानी था अब मुसलमान हो गया, वह नहीं चाहता कि इतना माल-ए-कसीर

ज़ाया हो जाए, उसने नमक डालकर सब को सिरका कर लिया। आप खुद फ़रमाते हैं कि जायज़-ओ-रवा है अपने रिसाला 'नफ़-उल-मुफ़्ती' में देखिए:

| अल-इन्तिफ़ाउ बिल-मुहर्रमि ला यजूज़ु कज़ा क़ालल-बरजन्दि | हराम से नफ़ा हासिल करना जायज़ नहीं, यूँ ही बरजन्दि |

[1] मजमुआ फतावा किताबुल-बुयू मतब-ए-यूसुफ़ी लखनऊ 1/398

نوٹ خارج ہو کر مشتری کی ملک میں آئے اور مشتری کی ملک سے روپے خارج ہو کر بائع کی ملک میں آئیں، شرع نے بیع اسی لئے مشروع کی ہے تو اسی عبارت کے حکم سے اسکی حلت واجب۔ اگر کہئے مراد یہ ہے کہ اس نے تھوڑے روپوں کے بدلے زیادہ لینے چاہے، مگر روپے دے کر زیادہ روپے لیتا تو سود ہوتا اسی لئے نوٹ بیچ کر روپے لئے کہ جنس بدل جانے سے ربا جاتا رہے۔ اقول: تو کیا گناہ کیا، اس نے گناہ سے بچنا ہی تو چاہا، گناہ سے بچنے کی تدبیر بھی گناہ ہو تو مفر کدھر، شرع نے بیع اس لئے مشروع فرمائی ہے کہ منہیات شرعیہ سے بچ کر اپنا مطلب جائز طریقہ سے حاصل کر لو، وہی اس نے چاہا تو مقصدِ شرعی کی نہ کہ مخالفت، پھر حرمت کدھر سے آئی۔

| قولہ فان مقصودہ حصول الذی حرم اللہ بتلك الحیلۃ اواسقاط ماوجبہ انتھی۔ | قولہ کیونکہ اس حیلہ سے اس کا مقصد اس چیز کو حاصل کرنا ہے جس کو اللہ تعالٰی نے حرام کیا یا اس چیز کو ساقط کرنا ہے جس کو اللہ تعالٰی نے واجب کیا، انتہی۔ (ت) |

اقول اولا: حرام مراد لازم المحرمیۃ ہے جس سے حرمت کبھی جدا نہ ہو یا وہ جسے حرمت عارض منفک ہے، بر تقدیر اول اسی لازم المحرمیۃ کو اختیار کرے گا یا اس سے کسی امر جائز کی طرف عدول و فرار پہلے صورت پر حیلہ ہی کب ہوا، صراحتۃً حرام میں پڑنا ہوا، پھر اس سے تحریم حیلہ کیوں لازم آئی، اور دوسری صورت میں شاید حرمت اس وجہ سے ہوگی کہ حرام سے کیوں بچا جائز کی طرف کیوں عدول کیا۔ بر تقدیر ثانی شکل کو وہ اختیار کرتا ہے جس میں وہ عارض منفک منفتک ہو جائے اور شے حلال محض رہ جائے یا وہ کہ عارض حرمت باقی رہے، صورتِ ثانیہ پھر حیلہ نہیں اور اولٰی پر حرمت کی کوئی وجہ نہیں۔ ثانیا: دور کیوں جایئے خود اپنی سنئے،

شراب حرام قطعی اور پیشاب کی طرح نجس بہ نجاست غلیظہ ہے مسلمان کو اس کا بیچنا حرام، چھونا حرام، اس سے کسی طرح کا نفع لینا حرام، اب فرض کیجئے کہ ایک مسلمان کی ملک میں ہزار مٹکے شراب آئی مثلاً یوں کہ اول نصرانی تھا اب مسلمان ہو گیا وہ نہیں چاہتا کہ اتنا مالِ کثیر ضائع ہوجائے، اس نے نمک ڈال کر سب کو سرکہ کر لیا، آپ خود فرماتے ہیں کہ جائز و روا ہے اپنے رسالہ نفع المفتی میں دیکھئے:

| الانتفاع بالمحرم لایجوذ کذاقال البرجندی | حرام سے نفع حاصل کرنا جائز نہیں، یونہی برجندی |

[1] مجموعہ فتاوٰی کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنؤ ۱/۳۹۸

Fatawa Rizvia Volume 17

[Boxed Text] Arabic: "If you say: This is problematic due to dung, for benefit is derived from it in firing. I say: Deriving benefit from the genus through consumption/ destruction is permissible, like pouring out wine and turning wine into vinegar, and this is similar, so it is permissible. End, in brief." Urdu Translation: "I have said, if you say that an objection arises regarding it because of dung, since benefit is obtained from it in burning, then I will say that obtaining benefit from an impurity (najis) by destroying the impurity is permissible, like pouring away wine and making vinegar from wine, and this is like those cases; therefore, it is permissible. End, in brief. (T)"

Look, he wanted to bring God's forbidden (haram) into use here, but since it did not remain forbidden, what harm was there in it? Statement: So even if disparity in [the exchange of] notes is permissible legally (qada'an), it will not be correct in any way religiously (diyanatan) between him and Allah. I say: It is strange that for one who considers paper to be paper and, due to custom, considers it a technical currency (thaman istilahi), and it is certainly known from the pure Sharia that following general terminology is not mandatory for him; if he sells a hundred-rupee note for more or less than rupees, it is not correct in any way before Allah. But the one who, in his assumption, considers paper to be the essence of natural currency (thaman khalqi) and considers it exactly as silver, if he sells this one or two mashas of silver for a seer of raw silver and it's not usury (riba), it remains lawful and pure! Is there any limit to this high-handedness? Anyway, this has been presented before, but what needs to be remembered here is that now the respected Maulvi has completely moved past usury and the suspicion of usury. By saying "furthermore," he had moved past them even in his consideration; now he takes this form where there is no attribute at all in which usury or suspicion of usury exists, otherwise being legally permissible would be impossible. And from this it is clear that he did not keep the bond of identity (ayniyat); otherwise, if there were usury or suspicion of usury, it would have been necessary for it to be forbidden religiously and legally in every way. So if the name of customary identity (ayniyat urfiyyah) is taken, it will be just a name without a named entity and a word without meaning, as its legal ruling and effect are negated. And when it is so, then in reality and Sharia, it remained pure otherness (ghayriyyat mahzah). Now the result itself was determined to be only that one sold goods worth a small amount of money for more with the buyer's consent; tell me, what violation of conscience is in this? Statement: For this reason, in the books of jurisprudence, Bai' Inah and purchasing for less than what was sold, etc. (any thing...

Note: The more correct [version] is this. 12. 1 Nafi' al-Mufti wa al-Sail regarding benefiting from impure things, etc. Mujtabai Press, Delhi, p. 136 2 Majmu'a Fatawa, Kitab al-Buyu' (Book of Sales), Yusufi Press, Lucknow, 1/398

फ़तावा रज़विया खंड १७

[बॉक्स वाला पाठ] अरबी: "यदि आप कहें: यह गोबर के कारण समस्याग्रस्त है, क्योंकि इससे जलाने में लाभ प्राप्त होता है। मैं कहता हूँ: उपभोग/विनाश के माध्यम से श्रेणी से लाभ प्राप्त करना जायज़ है, जैसे शराब बहाना और शराब से सिरका बनाना, और यह वैसा ही है, इसलिए जायज़ है। संक्षेप में समाप्त।" उर्दू अनुवाद: "मैंने कहा है, यदि आप कहें कि गोबर के कारण इस पर आपत्ति होती है, क्योंकि इससे जलाने में लाभ प्राप्त होता है, तो मैं कहूँगा कि नापाक (नजिस) चीज़ को नष्ट करके उससे लाभ प्राप्त करना जायज़ है, जैसे शराब को बहा देना और शराब से सिरका बनाना, और यह उन्हीं स्थितियों जैसा है, इसलिए यह जायज़ है। संक्षेप में (त)"

देखिए, उसने यहाँ ईश्वर द्वारा वर्जित (हराम) को काम में लाना चाहा, लेकिन चूँकि वह हराम नहीं रहा, तो इसमें क्या हर्ज हुआ। कथन: तो यदि बैंक नोटों में अंतर कानूनी रूप से (क़ज़ाअन्) जायज़ भी हो, फिर भी वह अल्लाह और उसके बीच धार्मिक अंतरात्मा (दियानतन्) के मामले में किसी भी तरह सही नहीं होगा। मैं कहता हूँ: यह आश्चर्य की बात है कि जो कागज़ को कागज़ ही माने और लोक-रीति के कारण उसे तकनीकी मुद्रा (थमन इस्तलाही) माने, और पवित्र शरीयत से निश्चित रूप से ज्ञात हुआ कि उस पर सामान्य शब्दावली का पालन अनिवार्य नहीं है; यदि वह सौ के नोट को कम या ज़्यादा रुपयों में बेचे, तो वह अल्लाह के पास किसी तरह सही न हो। और जो अपने अनुमान में कागज़ को प्राकृतिक मुद्रा (थमन ख़ल्की) का सार माने और उसे ठीक चाँदी ही समझे, वह इस माशे दो माशे भर चाँदी को सेर भर कच्ची चाँदी के बदले बेचे और वह सूद (ब्याज) न हो, हलाल और पाक रहे! इस मनमानी की कोई हद है? खैर, यह पहले पेश किया जा चुका है, लेकिन यहाँ याद रखने वाली बात यह है कि अब मौलवी साहब सूद और सूद के संदेह से पूरी तरह गुज़र गए। 'इसके अलावा' कहकर तो उन्होंने उनके लिहाज़ से ही पार कर लिया था; अब यह सूरत लेते हैं कि ऐसा कोई गुण है ही नहीं जिसमें सूद या सूद का संदेह हो, अन्यथा कानूनी रूप से जायज़ होना असंभव था। और इससे स्पष्ट है कि उन्होंने तादात्म्य (ऐनियत) का बंधन नहीं रखा, अन्यथा सूद या सूद का संदेह होने पर दियानतन् और क़ज़ाअन् हर तरह से हराम होना आवश्यक था। तो यदि प्रथागत तादात्म्य (ऐनियत उर्फ़िया) का नाम लिया भी जाए, तो वह केवल बिना नाम वाली वस्तु का नाम और अर्थहीन शब्द होगा, क्योंकि उसका शरीयती आदेश और प्रभाव शून्य है। और जब ऐसा है, तो वास्तविकता और शरीयत में यह शुद्ध भिन्नता (ग़ैय्यत महज़ा) रही। अब निष्कर्ष स्वयं इतना ही ठहरा कि कम रुपयों का माल खरीदार की सहमति से अधिक में बेच दिया; कहिए, इसमें कौन सा धार्मिक विश्वास के विरुद्ध काम है। कथन:

इसी कारण से फ़िक़्ह की किताबों में बै' ईना और बेची गई चीज़ से कम में खरीदना आदि (किसी चीज़...

अह: सही बात यह है। १२। १ नफ़ि' अल-मुफ़्ती वल-साइल, अशुद्ध वस्तुओं से लाभ उठाने के संबंध में, आदि, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, पृ. १३६ २ मजमुआ फ़तावा, किताबुल बुयू' (क्रय-विक्रय की पुस्तक), यूसुफ़ी प्रेस, लखनऊ, १/३९८

पृष्ठ ५४६ / ७१५

[باکس کا متن] عربی: فان قلت یشکل ھذا بالسرقین فانه ینتفع به في الایقاد قلت الانتفاع بالجنس بالاستھلاك جائز کاراقة الخمر و تخلیل الخمر وھذا کذلك فیجوز اھ باختصار۔ اردو ترجمہ: میں کہا ہے اگر تو کہے اس پر گوبر کے سبب سے اشکال وارد ہوتا ہے کیونکہ اس سے جلانے میں نفع حاصل کیا جاتا ہے تو میں کہوں گا کہ نجس سے نفع حاصل کرنا نجس کو ہلاک کرکے جائز ہے جیسے شراب کو بہا دینا اور شراب کو سرکہ بنانا اور یہ انہیں صورتوں جیسی ہے لہٰذا یہ جائز ہے اھ اختصار۔ (ت)

دیکھئے اس نے یہاں حرام خدا کو کام ہی میں لانا چاہا مگر کیوں کہ حرام نہ رہا پھر اس میں کیا حرج ہوا۔ قولہ: پس اگر نوٹ میں تفاضل قضاءً جائز بھی ہو لیکن دیانۃً فیما بینہ وبین اللہ کسی طرح سے درست نہ ہوگا۔ اقول: عجب کہ جو کاغذ کو کاغذ ہی جانے اور بوجہ عرف ثمن اصطلاحی مانے اور شرع مطہر سے یقیناً معلوم ہوا کہ اصطلاح عامہ کی پابندی اس پر لازم نہیں وہ سو کے نوٹ کو روپوں سے کم و بیش پر بیچے تو عند اللہ کسی طرح درست نہ ہو، اور جو اپنے زعم میں کاغذ کو ثمن خلقی کا عین مانے اور اسے بعینہ چاندی سمجھے وہ یہ ماشہ دو ماشہ بھر چاندی سیر کچی چاندی کو بیچے اور سود نہ ہو حلال طیب رہے، اس زبردستی کی کوئی حد ہے، خیر یہ تو پہلے معروض ہو چکا مگر یہاں یہ بات یاد رکھنے کی ہے کہ اب مولوی صاحب ربا و شبہ ربا سے قطعی گزر گئے، "علاوہ ازیں" کہہ کر تو ان کے لحاظ ہی سے گزرے تھے اب یہ صورت لیتے ہیں کہ کوئی ایسا وصف ہے ہی نہیں جس میں ربا یا شبہ ربا ہو ورنہ قضاءً جائز ہونا محال تھا اور اس سے ظاہر کہ حکم عینیت کا تسمہ لگا نہ رکھا ورنہ ربا یا شبہ ربا ہو کر دیانۃً، قضاءً ہر طرح حرام ہو نا لازم تھا تو عینیت عرفیہ کا اگر نام لیا بھی جائے محض اسم بے مسمیٰ و لفظ بے معنی

ہوگا کہ اس کا حکم واثر شرعی منتفی ہے اور جب ایسا ہے تو حقیقۃً وشرعاً غیریت محضہ رہی اب خود ہی حاصل اسی قدر ٹھہرا دیا کہ کم روپیوں کا مال برضائے خریدار زیادہ کو بیچ لیا، کہئے اس میں کون سا خلافِ دیانت ہے۔ قولہ: اسی وجہ سے کتب فقہ میں بیع عینہ اور شراء باقل مما باع وغیرہ ذلک (کسی چیز

عہ :الاصوب بہ ۱۲۔ 1 نفع المفتی والسائل مایتعلق بالانتفاع بالاشیاء النجسة الخ مطبع مجتبائی، دہلی ص ۱۳۶ 2 مجموعہ فتاویٰ کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنؤ ۳۹۸/۱

Fatawa Razawiyya Volume 17

...purchasing it for less than what it was sold for, etc. (T) prohibition of which is mentioned. ^1

I say firstly: Praise be to Allah! Now you are about to reach the conclusion; yes, this is like Bai' 'Inah. Then what have our noble Imams ruled regarding Bai' 'Inah? Is it forbidden, impermissible, Haram, or Makruh-e-Tahrimi? By no means, never; this is purely wrong and false. Rather, it is permissible, Halal, allowed, and correct. The utmost difference of opinion in this is whether it is contrary to what is better (Khilaf-e-Aula) or not. Our Imam-e-Azam (Abu Hanifa) considers it permissible without any dislike. Imam Abu Yusuf himself considers it rewarding and commendable. Imam Muhammad, for the sake of caution, considers it only contrary to what is better. All these discussions have passed in the treatise on pages 169, 170, 171, 172 to 176, 180, 181, rather 162 to 166. Now, staying firm on your own admission, speak up: selling a hundred-rupee note for two hundred is permissible and allowed according to Imam-e-Azam, rewarding and virtuous according to Imam Abu Yusuf, and only contrary to what is better according to Imam Muhammad.

Secondly: That "contrary to what is better" was also because at that time Muslims considered interest as filth/pig; they fled from its very shadow. So there was a fear that by making a permissible habit of it, they might exceed limits, as mentioned on pages 169, 170, 171 etc. Now that open interest has become prevalent among Muslims, they seek it eagerly and do not even blink an eye, let alone feel ashamed. So, telling them a permissible way to achieve their objective and escape the punishment of Allah, the One, the Subduer, is the essence of well-wishing for Muslims. And raising baseless objections against it is clear ill-will towards Muslims. Just a bit of justice is required, as the truth is evident from your own admission. Praise be to Allah, Lord of the worlds.

Thirdly: "Buying back what was sold for less than the selling price is, upon investigation, profit from what is not guaranteed" (Purchasing something for less than what it was sold for is forbidden upon investigation because it involves taking profit on something for which one has not become a guarantor. T). It is forbidden for this reason, i.e., taking profit on something that has not come under one's guarantee, as the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) forbade it. It is evident that as long as the price is not paid, it remains under the guarantee of the seller; if it is destroyed, its consequence will not fall on the buyer.

And therefore here, Dirham and Dinar are of the same genus as in 'Al-Durr' etc. (As is in Al-Durr etc. T), whereas in the chapter of Riba (interest), they are two distinct genera as in all books (As is in all books. T). Yes, if the first and second price are of the same genus, then there is a suspicion of Riba.

1 Majmua Fatawa Kitab al-Buyu' Matba' Yusufi Lucknow 1/398

फतावा रज़विया खंड सत्रह (17)

...उसे उस कीमत से कम पर खरीदना जितने पर बेचा गया है आदि। त) की मनाही का उल्लेख है। ^1

मैं पहले कहता हूँ: अल्हम्दुलिल्लाह! अब तो आप किनारे पर आ गए हैं, जी हाँ, यह बै-इना के समान है। फिर हमारे इमामों ने बै-इना के बारे में क्या फैसला दिया है? क्या यह वर्जित, नाजायज़, हराम या मकरूह-ए-तहरीमी है? हरगिज़ नहीं, यह सरासर गलत और निराधार है। बल्कि यह जायज़, हलाल, वैध और सही है। इसमें अधिक से अधिक मतभेद यह है कि यह 'खिलाफ़-ए-औला' (बेहतर के विरुद्ध) है या नहीं। हमारे इमाम-ए-आज़म बिना किसी नापसंदगी के इसे जायज़ मानते हैं। इमाम अबू यूसुफ़ स्वयं इसे सवाब और मुस्तहब (पसंदीदा) मानते हैं। इमाम मुहम्मद केवल सावधानी के लिए इसे 'खिलाफ़-ए-औला' ठहराते हैं। ये सभी चर्चाएँ इस शोध पत्र में पृष्ठ 169, 170, 171, 172 से 176, 180, 181 बल्कि 162 से 166 तक गुज़र चुकी हैं। अब अपनी ही बात पर कायम रहते हुए कहिए कि सौ रुपये का नोट दो सौ में बेचना इमाम-ए-आज़म के नज़दीक जायज़ और मुबाह है, इमाम अबू यूसुफ़ के नज़दीक अज़्र और सवाब है, और इमाम मुहम्मद के नज़दीक सिर्फ'खिलाफ़-ए-औला' है।

दूसरा: वह 'खिलाफ़-ए-औला' भी इसलिए था क्योंकि उस समय तक मुसलमान सूद (ब्याज) को सूअर (गंदगी) समझते थे और उसकी छाया से भी भागते थे। इसलिए डर था कि कहीं जायज़ आदत डालने से वे आगे न बढ़ जाएँ, जैसा कि पृष्ठ 169, 170, 171 आदि पर वर्णन गुज़रा। अब जबकि खुल्लम-खुल्ला सूद मुसलमानों में प्रचलित हो गया है, वे इसके पीछे भागते हैं और शर्मिंदा होना तो दूर, आँख तक नहीं झपकाते। तो उन्हें एक जायज़ बात बताना जिससे उनका मक़सद पूरा हो जाए और वे अल्लाह, जो एक और क़हार (ज़बरदस्त) है, के अज़ाब से बचें, यही मुसलमानों की सच्ची खैरख्वाही (भलाई) है। और इसमें बिना वजह कमियाँ निकालना मुसलमानों की स्पष्ट बदख्वाही है। ज़रा इंसाफ़ की ज़रूरत है, क्योंकि आपकी अपनी बात से ही सच सामने आ गया है। और सारी प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो तमाम जहानों का रब है।

तीसरा: "खरीदे हुए माल को बेचने वाली कीमत से कम पर फिर से खरीदना असल में उस चीज़ पर मुनाफ़ा कमाना है जिसकी गारंटी नहीं ली गई है" (किसी चीज़ को उस कीमत से कम पर खरीदना जितने पर बेचा गया है, शोध के अनुसार इसलिए हराम है क्योंकि इसमें उस चीज़ पर लाभ लेना है

जिसकी वह ज़मानत (गारंटी) नहीं बना। त) इसके कारण हराम है, यानी उस चीज़ पर लाभ लेना जो अपनी ज़मानत में नहीं आई, क्योंकि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने इससे मना फ़रमाया है। ज़ाहिर है कि जब तक कीमत अदा नहीं हुई, वह विक्रेता की ज़मानत पर ही बाकी है; अगर वह नष्ट हो जाए तो उसका प्रभाव खरीदार पर नहीं पड़ेगा। और इसलिए यहाँ दिरहम और दीनार एक ही श्रेणी के हैं जैसा कि 'दुर्र' आदि में है (जैसा कि दुर्र वगैरह में है। त), जबकि सूद के अध्याय में ये दो अलग श्रेणियाँ हैं जैसा कि सभी पुस्तकों में है (जैसा कि सभी किताबों में है। त)। हाँ, यदि पहली और दूसरी कीमत एक ही श्रेणी की हो, तो सूद का संदेह होता है।

1 मजमुआ फतावा किताबुल बुयूअ, मतबा यूसुफी लखनऊ 1/398

کو اس سے کم پر خریدنا جتنے پر بیچا ہے وغیرہ ذلک۔ ت) کی ممانعت مذکور ہے۔ ۱۸

اقول اولا: الحمد للہ! اب تو آپ کنارے پر آ گیا چاہتے ہیں، جی ہاں یہ بیع عینہ کے مثل ہے پھر بیع عینہ کو ہمارے ائمہ کرام نے کیا ٹھہرایا ہے، کیا ممنوع، ناجائز، حرام، مکروہ تحریمی۔ حاشا ہر گز نہیں، یہ محض غلط و باطل ہے بلکہ جائز، حلال، روا، درست غایت درجہ اس میں اختلاف ہوا کہ خلاف اولٰی بھی ہے یا نہیں، ہمارے امام اعظم بلا کراہت مانتے ہیں، امام ابو یوسف خود ثواب و مستحب جانتے ہیں، امام محمد احتیاط کیلئے صرف خلاف اولٰی ٹھہراتے، یہ تمام مباحث رسالہ میں صفحہ ۱۶۹، ۱۷۰، ۱۷۱، ۱۷۲ تا ۱۷۶، ۱۸۰، ۱۸۱ بلکہ ۱۶۲ تا ۱۶۶ میں گزرے، اب تو اپنے ہی اقرار پر قائم رہ کر بول اٹھئے کہ سو کا نوٹ دو سو کو بیچنا امام اعظم کے نزدیک جائز و مباح، امام ابو یوسف کے نزدیک اجر و ثواب، امام محمد کے نزدیک صرف خلاف اولٰی۔

ثانیا: وہ خلاف اولٰی بھی اس لئے تھا کہ اس وقت تک مسلمان سود کو سور سمجھتے تھے اس کے سایہ سے بھاگتے تھے تو اس امر کی جائز عادت ڈالنے سے اندیشہ تھا کہ مبادا آگے بڑھ جائیں جیسا کہ اس کا بیان صفحہ ۱۶۹، ۱۷۰، ۱۷۱ وغیرہما پر گزرا، اب کہ علانیہ سود مسلمانوں میں رائج ہو گیا جیتا لگتے ہیں اور شرمانا درکنار آنکھ تک نہیں جھپکاتے، تو انہیں ایک جائز بات بتانا جس سے ان کا مقصود حاصل ہو اور اللہ واحد قہار کے عذاب سے بچیں عین خیر خواہی مسلمین ہے اور اس میں ناحق کے شاخسانے نکالنا مسلمانوں کی صریح بد خواہی، ذرا انصاف درکار ہے کہ خود آپ کے اقرار سے صبح آشکار ہے، والحمد للہ رب العلمین۔

ثالثا: شراء ماباع باقل مما باع عندالتحقیق ربح مالم یضمن (کسی چیز کو اس سے کم پر خریدنا جتنے پر بیچا ہے تحقیق کی رو سے اس لئے حرام ہے کہ اس میں اس چیز پر نفع لینا ہے جس کا ضامن نہیں بنا۔ ت) کے سبب حرام ہے یعنی جو چیز اپنی ضمان میں نہ آئی اس پر نفع لینا کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم نے اس سے منع فرمایا، ظاہر ہے کہ قیمت جب تک ادانہ ہوئی خود بائع کی ضمان پر باقی ہے ہلاک ہو جائے تو اس کی جائے مشتری پر اس کا اثر نہ ہو، ولہٰذا یہاں درہم و دینار ایک جنس ہیں کما فی الدر وغیرہ (جیسا کہ در و غیرہ میں ہے۔ ت) حالانکہ باب ربا میں دو جنس ہیں کما فی جمیع الکتب (جیسا کہ تمام کتابوں میں ہے۔ ت) ہاں ثمن اول و ثانی ایک ہی جنس ہو تو شبہ ربا بھی ہے۔

1 مجموعہ فتاوٰی کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنو ۱/ ۳۹۸

Fatawa Ridawiyya (Volume 17)

Some have explained this issue saying that he sold it for a thousand and the price was not yet received; it was possible that due to a defect it would be returned and the price not obtained. Now that he bought it himself for five hundred, the possibility of cancellation disappeared, so by giving five hundred he secured his thousand. Thus, a suspicion of usury remained. Regardless, what connection do these reasons have here? You are saying this perforce for the same reason. It is in Hidayah:

Arabic	Urdu Translation
Whoever buys a slave girl for a thousand Dirhams, cash or credit, takes possession of her, then sells her back to the seller for five hundred before paying the first price, the second sale is not permissible. Because the price has not entered his liability. When the sold item reaches him and a set-off occurs, he is left with a surplus of five hundred, and that is without consideration.	A person bought a slave girl for a thousand Dirhams cash or credit and took possession of her, then before paying the first price, he sold the same slave girl back to the seller for five hundred Dirhams. So the second sale will not be valid because the price has not yet entered the seller's liability. Thus, when the sold item reaches him again and five hundred Dirhams are accounted for in exchange, the remaining five hundred Dirhams are left as extra for him, and they are without consideration. (T)

In Fath al-Qadir it is:

Arabic	Urdu Translation
What is understood from the meaning of the prohibition is that he profited from what was not in his liability, and the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) prohibited profiting from what one does not bear liability for. This is because the price does not enter the liability before possession.	What is understood from the meaning of the prohibition is that he took profit on something which was not in his liability, and the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) forbade profit on something which is not in one's liability. And this is because before possession, the price does not enter into the seller's liability. (T)

In the same [book] it is:

Arabic	Urdu Translation
And this is better than the discourse of Qadhi Khan regarding the consideration of the suspicion [of usury] in that the thousand...	This is better than that discourse of Qadhi Khan which he made considering the suspicion of usury, in this way...

1. Al-Hidayah, Kitab al-Buyu', Bab al-Bay' al-Fasid, Matba' Mujtabai Delhi, 3/20.
2. Fath al-Qadir, Kitab al-Buyu', Bab al-Bay' al-Fasid, Maktaba Nooriya Ridawiyya Sukkur, 6/71.

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

कुछ ने इसी से मसले की तालील (व्याख्या) की, इस तरह कि उसने हज़ार को बेची और अभी क़ीमत वसूल न हुई थी; मुमकिन था कि ऐब के सबब वापस होकर समन (क़ीमत) न मिले। अब कि ख़ुद उसने पांच सौ को ख़रीद ली, एहतमाल-ए-सुक़ूत साक़ित हो गया तो उसने पांच सौ देकर अपने वो हज़ार पक्के कर लिए। यूँ शुबहा-ए-रिबा (ब्याज का संदेह) आया। बहरहाल इन वुजूह (कारणों) को यहाँ से क्या अलाक़ा? आप ख़्वाही न-ख़्वाही इसी वजह से कह रहे हैं, हिदाया में है:

अरबी

मन इश्तरा जारियत-म बि-अल्फ़ दिरहमिन हालतन औ नसी'अतन फ़-क़बज़हा सुम्मा बा'अहा मिनल बाई'इ बि-ख़मसि मि'अतिन क़बला अन यनक़ुदस समनल अव्वल ला यजूज़ुल बय'उस सानी, लि-अन्नस समना लम यदख़ुल फ़ी ज़मानिही फ़-इज़ा वसला इलयहिल मबी'उ व-वक़'अतिल मुक़ासातु बक़ियालहू फ़ज़्लु ख़मसि मि'अतिन व-ज़ालिका बिला इवज़िन -1-

उर्दू अनुवाद

जिस शख़्स ने हज़ार दिरहम नक़द या उधार के बदले लौंडी ख़रीदी और उस पर क़ब्ज़ा कर लिया, फिर पहले समन (क़ीमत) की अदायगी से क़ब्ल वही लौंडी पाँच सौ दिरहम के बदले बाए (विक्रेता) के हाथ फ़रोख़्त कर दी, तो दूसरी बय (बिक्री) जाइज़ न होगी क्योंकि समन अभी तक बाए की ज़मान (ज़िम्मेदारी) में दाख़िल नहीं हुए। तो जब मबीअ (बेची हुई चीज़) दोबारा उसके पास पहुँच गई और पाँच सौ दिरहम उसके बदले में हो गए तो बाक़ी पाँच सौ दिरहम उसके ज़ायद बच गए और वह बिला इवज़ (बिना किसी बदले के) हैं। (त)

फ़त्ह-उल-क़दीर में है:

अरबी

अल्लज़ी अक़ला मिन मा'अनन नहयि अन्नहुस्तरबहा मा लैसा फ़ी ज़मानिही व नहय रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम अन रबिह मा-लम युज़मन व हाज़ा लि-अन्नस समना ला यदख़ुलु फ़ी ज़मानिही क़बलल क़ब्ज़ 2-

उर्दू अनुवाद

वह जो नही (निषेध) के मानी से समझा गया है कि उसने उस चीज़ पर नफ़ा लिया जो उसकी ज़मान (ज़िम्मेदारी) में नहीं और नबी करीम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने उस चीज़ पर नफ़ा से मना फ़रमाया जो उसके ज़मान में न हो और यह इसलिए है कि क़ब्ज़ा से पहले समन बाए की ज़मान में दाख़िल नहीं होता। (त)

इसी में है:

अरबी	उर्दू अनुवाद
व हाज़ा अहसनु मिन तक़रीर-ए-क़ाज़ी खां एतिबारश शुबहाति बि-अन्नल अल्फ़	यह क़ाज़ी ख़ां की इस तक़रीर से बेहतर है जो शुबहा-ए-रिबा का एतिबार करते हुए उन्होंने की बा-ईं तौर

1 अल-हिदाया किताबुल बुयूअ बाबुल बय'इल फ़ासिद मतबा मुज्तबाई देहली 3/ 20 2 फ़त्ह-उल-क़दीर किताबुल बुयूअ बाबुल बय'इल फ़ासिद मकताबा नूरिया रज़विया सुक्खर 6/ 71

पृष्ठ 548 का 715

بعض نے اسی سے مسئلہ کی تعلیل کی، یوں کہ اس نے ہزار کو بیچی اور ابھی قیمت وصول نہ ہوئی ممکن تھا کہ عیب کے سبب واپس ہو کر ثمن نہ ملے اب کہ خود اس نے پانچ سو کو خرید لی، احتمال سقوط ساقط ہو گیا تو اس نے پانچ سو دے کر اپنے وہ ہزار پکے کر لئے یوں شبہ رہا آیا، بہر حال ان وجوہ کو یہاں سے کیا علاقہ آپ خواہی نخواہی اسی وجہ سے کہہ رہے ہیں، ہدایہ میں ہے:

عربی

من اشتری جاریة بألف درهم حالة او نسیئة فقبضها ثم باعها من البائع بخمسمائة قبل ان ینقد الثمن الاول لا یجوز البیع الثانی، لان الثمن لم یدخل فی ضمانه فاذا وصل الیه المبیع و وقعت المقاصة بقی له فضل خمس مائة وذلك بلا عوض -1-

اردو ترجمہ

جس شخص نے ہزار درہم نقد یا ادھار کے بدلے لونڈی خریدی اور اس پر قبضہ کرلیا پھر پہلے ثمن کی ادائیگی سے قبل وہی لونڈی پانچ سو درہم کے بدلے بائع کے ہاتھ فروخت کردی، تو دوسری بیع جائز نہ ہوگی کیونکہ ثمن ابھی تک بائع کی ضمان میں داخل نہیں ہوئے تو جب مبیع دوبارہ اس کے پاس پہنچ گیا اور پانچ سو درہم اس کے بدلے میں ہوگئے تو باقی پانچ سو درہم اس کے زائد بچ گئے اور وہ بلا عوض ہیں۔ (ت)

فتح القدیر میں ہے:

عربی	اردو ترجمہ
الذی عقل من معنی النھی انه استربح مالیس فی ضمانه و نھی رسول الله صلی الله تعالی علیه وسلم عن ربح مالم یضمن وھذا لان الثمن لا یدخل فی ضمانه قبل القبض 2۔	وہ جو نہی کے معنی سے سمجھا گیا ہے کہ اس نے اس چیز پر نفع لیا جو اس کی ضمان میں نہیں اور نبی کریم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے اس چیز پر نفع سے منع فرمایا جو اس کے ضمان میں نہ ہو اور یہ اس لئے ہے کہ قبضہ سے پہلے ثمن بائع کی ضمان میں داخل نہیں ہوتا۔ (ت)

اسی میں ہے:

عربی	اردو ترجمہ
وھذا احسن من تقریر قاضی خاں اعتبار الشبھة بان الالف	یہ قاضی خاں کی اس تقریر سے بہتر ہے جو شبہ ربا کا اعتبار کرتے ہوئے انہوں نے کی بایں طور

1 الھدایه کتاب البیوع باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۳/ ۲۰ 2 فتح القدیر کتاب البیوع باب البیع الفاسد مکتبه نوریه رضویه سکھر ۶ / ۷۱

Fatawa Ridawiyya (Volume 17)

[Table Header] [Arabic Text]: It is the first price on the verge of falling due to the possibility that the buyer finds a defect in it and returns it, thus the price falls for the buyer. And through the second sale, security from it occurs, so the seller in the second contract becomes a buyer of a thousand for five hundred. End. [1] [Urdu Text]: That one thousand dirhams, which was the initial price, could have been dropped based on the possibility that the buyer might find a defect in this slave girl and return her, in which case the price would be dropped from the buyer. Due to the second sale, the fear of dropping was removed, so in this way, the seller in the second contract became the one who purchased one thousand in exchange for five hundred dirhams. End. (T)

Fourthly: Moving past the agreed-upon reason, take another reason, and even disregarding its non-applicability here, it is still of no benefit to you. Because the cause for prohibition based on this reason is the suspicion of usury (riba). You are moving down from usury and the suspicion of usury to derive prohibition from a third reason. So, where there is a suspicion of usury, how can you rely on it?

Fifthly: By saying "for this very reason," you are stating that the cause for the ruling in both issues is the same. Then it was mandatory that the ruling should also be the same. Is "purchasing back what was sold for less than its sale price" (buying an item back for less than what it was sold for - T) also only forbidden religiously (diyanatan) but permissible legally (qada'an)? Then understand.

Sixthly: You must have heard that this purchase for a lesser price is undoubtedly permissible after the price has been paid. For example, Zaid sold an item to Amr for one thousand rupees. Amr paid the amount. Then Zaid bought the same item back from Amr for five hundred. Thus, the item returned and five hundred were saved for free. This is permissible and lawful. It is stated in Durr-e-Mukhtar:

[Table Footer] [Arabic Text]: The purchase of what he sold for less before the payment of the price is invalid (fasid), and it is permissible after the payment. [2] Abridged from Al-Multaqat. [Urdu Text]: Buying back one's own sold item for less than the first price is not permissible before the payment of the price, and if it is after the payment, it is permissible. Abridged from Al-Multaqat. (T)

Based on your reasoning, what difference did it make whether the price was paid or not? The objective of gaining more by giving less money is present in any case. My

dear Molvi Saheb! The difficulty is that in the momentum of your research, you are unaware of Hanafi jurisprudence; otherwise, such things would not remain hidden from a researcher like you.

[Footnotes] 1. Fath al-Qadir, Kitab al-Buyu, Bab al-Bay' al-Fasid, Maktaba Nooria Razvia, Sukkur, 6/73. 2. Durr-e-Mukhtar, Kitab al-Buyu, Bab al-Bay' al-Fasid, Matba' Mujtabai, Delhi, 2/26.

फ़तावा रज़विया (खण्ड १७)

[तालिका शीर्षक] [अरबी पाठ]: यह वह पहला मूल्य है जो गिरने के कगार पर है क्योंकि संभावना है कि खरीदार को इसमें कोई दोष मिल जाए और वह उसे वापस कर दे, जिससे खरीदार के लिए मूल्य गिर जाता है। और दूसरी बिक्री के माध्यम से, इससे सुरक्षा हो जाती है, इसलिए दूसरे अनुबंध में विक्रेता पाँच सौ के बदले एक हजार का खरीदार बन जाता है। समाप्त। [१] [उर्दू पाठ]: कि एक हजार दिरहम जो पहला मूल्य था, वह इस संभावना के आधार पर गिर सकता था कि खरीदार इस दासी में कोई दोष पाकर उसे वापस कर दे, तो इस तरह खरीदार से मूल्य गिर जाता और दूसरी बिक्री के कारण गिरने का डर खत्म हो गया, तो इस तरह दूसरे अनुबंध के साथ विक्रेता पाँच सौ दिरहम के बदले एक हजार खरीदने वाला हुआ। समाप्त। (त)

चौथा: सहमत कारण से आगे बढ़कर दूसरा कारण लीजिये और यहाँ उसके लागू न होने को भी नज़रअंदाज़ कर दीजिये, तब भी यह आपके लिए लाभदायक नहीं है। क्योंकि इस कारण पर निषेध (हुरमत) की वजह सूद (रिबा) का संदेह है। आप सूद और सूद के संदेह से उतरकर तीसरे कारण से निषेध ले रहे हैं, तो जहाँ सूद का संदेह है, वहाँ उस पर निर्भर कैसे कर सकते हैं।

पाँचवाँ: आप "इसी कारण से" कहकर दोनों मसलों में हुक्म का कारण एक बता रहे हैं, तो अनिवार्य था कि हुक्म भी एक ही होता। क्या "शरा मा बाअ बिल अक़ल्ल मिम्मा बाअ" (किसी चीज़ को उससे कम पर खरीदना जितने पर बेचा है - त) भी केवल धार्मिक (दयानतन) रूप से हराम है और कानूनी (क़ज़ान) रूप से जायज़? तो समझें।

छठा: आपने सुना होगा कि कम मूल्य पर यह खरीदारी मूल्य भुगतान के बाद निःसंदेह जायज़ है। उदाहरण के लिए, ज़ैद ने एक चीज़ अम्र को एक हजार रुपये में बेची। अम्र ने रुपये अदा कर दिए। फिर ज़ैद ने वही चीज़ अम्र से पाँच सौ में खरीद ली, जिससे चीज़ वापस आ गई और पाँच सौ मुफ्त बच रहे। यह जायज़ और हलाल है। 'दुर्र-ए-मुख़्तार' में है:

[तालिका पादलेख] [अरबी पाठ]: अपनी बेची हुई वस्तु को मूल्य भुगतान से पहले कम में खरीदना फ़ासिद (अमान्य) है, और भुगतान के बाद जायज़ है। [२] अल-मुल्तक़त से संक्षेपित। [उर्दू पाठ]: अपनी ही बेची हुई चीज़ को पहले मूल्य से कम के बदले खरीदना, मूल्य भुगतान से पहले जायज़ नहीं है और अगर भुगतान के बाद हो तो जायज़ है। अल-मुल्तक़त से संक्षेपित। (त)

आपकी दलील के अनुसार मूल्य भुगतान होने या न होने से क्या फर्क पड़ गया? कम रुपये देकर ज़्यादा हासिल करने का मक़सद तो हर हाल में मौजूद है। मौलवी साहब! मुश्किल यह है कि आप अपनी शोध के जोश में हनफ़ी फ़िक़्ह (न्यायशास्त्र) से बेखबर हैं, वरना आप जैसे शोधकर्ता पर ऐसी बातें छिपी न रहतीं।

[पाद लेख] १. फ़तह अल-क़दीर, किताबुल बुयू, बाबुल बैयुल फ़ासिद, मकतबा नूरिया रज़विया, सक्खर, ६/७३। २. दुर्र-ए-मुख़्तार, किताबुल बुयू, बाबुल बैयुल फ़ासिद, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, २/२६।

पृष्ठ ५४९ / ७१५

فتاوٰی رضویہ (جلد ہفد ہم ۱۷)

وھو الثمن الاول علی شرف السقوط لاحتمال ان یجد المشتری بھا عیبا فیردہ فیسقط الثمن عن المشتری وبالبیع الثانی یقع الامن عنہ فیکون البائع بالعقد الثانی مشتریا الفا بخمسمائۃ انتھی۔ ۱۸ کہ ہزار درہم جو کہ ثمن اول تھا وہ ساقط ہوسکتا تھا اس احتمال کی بنا پر مشتری اس لونڈی میں کوئی عیب پا کر واپس کر دیتا تو اس طرح مشتری سے ثمن ساقط ہو جاتا اور بیع ثانی کی وجہ سے سقوط کا خوف جاتا رہا تو اس طرح بائع عقد ثانی کے ساتھ پانچ سو درہم کے عوض ہزار کو خریدنے والا ہوا۔ انتہٰی۔ (ت)

رابعاً: وجہ متفق سے گزر کر دوسری ہی وجہ لیجئے اور یہاں اس کے عدم جریان سے بھی قطع نظر کیجئے جب بھی آپ کو مفید نہیں کہ اس وجہ پر علت حرمت شبہ ربا ہے آپ ربا و شبہ ربا سے اتر کر تیسری وجہ سے تحریم لے رہے ہیں تو جہاں شبہ ربا ہے اس سے اس پر استناد کیونکر کرسکتے ہیں۔

خامساً: آپ "اسی وجہ سے" کہہ کر دونوں مسئلوں میں علت حکم ایک بتا رہے ہیں تو واجب تھا کہ حکم بھی ایک ہوتا۔ کیا شراء ما باع باقل مما باع (کسی چیز کو اس سے کم پر خریدنا جتنے پر بیچا ہے ۔ت) بھی صرف دیانۃً حرام ہے قضاءً جائز، فافھم

سادساً: آپ نے سنا ہو کہ یہ شراء باقل قیمت ادا ہونے کے بعد بلا شبہ جائز ہے مثلاً ایک چیز زید نے عمرو کے ہاتھ ہزار روپے کو بیچی عمرو نے روپے ادا کر دئے پھر زید نے وہی چیز عمرو سے پانچ سو کو خرید لی کہ چیز کی چیز واپس آگئی اور پانچ سو مفت بچ رہے یہ جائز وحلال ہے۔ درمختار میں ہے:

فسد شراء ما باع بالاقل قبل نقد الثمن و جاز بعد النقد [2]8 اھ ملتقطا اپنی ہی فروخت کی ہوئی چیز پہلے ثمن سے کم کے بدلے خریدنا ادائیگی ثمن سے پہلے ہو تو جائز نہیں اور اگر ادائیگی کے بعد ہو تو جائز ہے۔ اھ ملتقطا (ت)

آپ کی وجہ پر قیمت ادا ہونے نہ ہونے سے کیا فرق ہو گیا کم روپے دے کر زیادہ حاصل کرنے کا مقصود بہر حال موجود، مولوی صاحب! مشکل یہ ہے کہ آپ اپنی تحقیق کے زور میں فقہ حنفی سے بیخبر ہیں ورنہ آپ جیسے محقق پر ایسی باتیں مخفی نہ رہتیں۔

[1]8 فتح القدیر کتاب البیوع باب البیع الفاسد مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۷۳ [2]8 درمختار کتاب البیوع باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۲۶

Fatawa Razawiyyah Volume 17

Qawl: And there are many hadiths in this chapter which prove the prohibition of such ruses (legal stratagems).

Aqool First: There are many hadiths in this chapter which prove the permissibility of such ruses; two or rather three hadiths were mentioned on pages 165 and 166 of the treatise, and one hadith from Al-Muwatta was mentioned here.

Second: The Quranic verse itself is a witness to its permissibility, which was recited on pages 189 and 190. It is stated in Fatawa al-Dhakhira and Fatawa al-Hindiyyah:

Arabic Text	**Urdu Translation**
The basis for the permissibility of this type of legal stratagem (hila) is the word of Allah Almighty: "And take in your hand a bundle of rushes and strike with it and do not break your oath." This is the teaching of a way out for Prophet Ayyub (Job)—peace be upon him and upon our Prophet—regarding his oath that he would strike his wife with a hundred sticks. Most of the Mashayikh (scholars) are of the view that its ruling is not abrogated, and this is the correct view in the [Hanafi] school of law.	The basis for the permissibility of such legal stratagems is the command of Allah Almighty: "Take a bundle in your hand and strike with it and do not break your oath." Prophet Ayyub (peace be upon him and our Prophet) had sworn regarding his holy wife that he would strike her with a hundred sticks; Allah Almighty taught this method of fulfilling the oath so that the oath is completed and no pain is caused. Scholars state that the ruling of this verse is not abrogated and this is the correct Hanafi view.

Qawl: If there is a doubt that since a banknote is not natural currency (thaman khalqi), how can its ruling be identical? The answer is that because it is conventionally (urfan) considered as the essence of natural currency and all the objectives of natural currency are associated with it, therefore, in the chapter of excess (tafadhul), it will be given the same consideration, especially in matters of piety (diyanat), as it is related to objectives even if they are hidden.

Aqool First: These "since" and "because" have already been dealt with; if the first statement was correct, then this doubt is already dispelled there.

---

1 Majmu'a Fatawa Kitab al-Buyu', Matba' Yusufi Lucknow 1/398 2 Fatawa Hindiyyah Kitab al-Hiyal Chapter 1, Nurani Kutub Khana Peshawar 6/390 3 Majmu'a Fatawa Kitab al-Buyu', Matba' Yusufi Lucknow 1/398

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

कथन: और इस विषय में कई हदीसें आती हैं जिनसे ऐसे हलों (कानूनी तरकीबों) की हरामियत साबित होती है।

मैं कहता हूँ पहला: इस विषय में कई हदीसें आती हैं जिनसे ऐसे हलों की हलालियत साबित होती है; दो या तीन हदीसें इस रिसाले (लेख) के पेज 165, 166 में गुज़र चुकी हैं और मुअत्ता (Muwatta) की एक हदीस यहाँ ज़िक्र की गई है।

दूसरा: स्वयं पवित्र आयत इसके जायज़ होने की गवाह है जिसकी तिलावत पेज 189, 190 पर हुई। फ़तावा ज़ख़ीरा और फ़तावा हिंदिया में है:

अरबी पाठ

इस तरह के हलों (कानूनी तरकीबों) के जायज़ होने का आधार अल्लाह तआला का यह इरशाद है: "और अपने हाथ में झाड़ू लेकर मारो और क़सम न तोड़ो।" हज़रत अय्यूब अलैहिस्सलाम ने जो अपनी पवित्र पत्नी के बारे में सौ लकड़ियाँ मारने की क़सम खाई थी, अल्लाह तआला ने उस क़सम को पूरा करने का यह तरीक़ा सिखाया ताकि क़सम भी पूरी हो जाए और उन्हें तकलीफ़ भी न हो। और मशाइख़ (विद्वान) फ़रमाते हैं कि इस आयत का हुक्म मन्सूख़ (निरस्त) नहीं है और यही सही हनफ़ी मज़हब है।

उर्दू अनुवाद

इस तरह के हलों (कानूनी तरकीबों) के जायज़ होने का आधार अल्लाह तआला का यह इरशाद है: "और अपने हाथ में झाड़ू लेकर मारो और क़सम न तोड़ो।" हज़रत अय्यूब अलैहिस्सलाम ने जो अपनी पवित्र पत्नी के बारे में सौ लकड़ियाँ मारने की क़सम खाई थी, अल्लाह तआला ने उस क़सम को पूरा करने का यह तरीक़ा सिखाया ताकि क़सम भी पूरी हो जाए और उन्हें तकलीफ़ भी न हो। और मशाइख़ (विद्वान) फ़रमाते हैं कि इस आयत का हुक्म मन्सूख़ (निरस्त) नहीं है और यही सही हनफ़ी मज़हब है।

कथन: अगर यह संदेह हो कि चूँकि नोट प्राकृतिक मुद्रा (समने ख़लक़ी) नहीं है, तो इसका हुक्म हूबहू वैसा कैसे हो सकता है? तो इसका जवाब यह है कि चूँकि यह रिवाज (उर्फ़) में ऐन प्राकृतिक मुद्रा ही माना जाता है और प्राकृतिक मुद्रा के तमाम मक़सद इसके साथ जुड़े हुए हैं, इसलिए विनिमय में अधिकता (तफ़ाज़ुल) के मामले में इसी का एतबार (विचार) होगा, ख़ासकर दयानत (धार्मिकता) के लिहाज़ से, क्योंकि यह मक़सदों से ताल्लुक रखती है चाहे वे मक़सद छिपे हुए ही हों।

मैं कहता हूँ पहला: ये "चूँकि" और "चूँकि" पहले गुज़र चुके हैं, अगर पिछला बयान सही था तो यह संदेह वहीं दूर हो गया।

---

1 मजमूआ फ़तावा किताबुल बुयूअ मताबे यूसुफ़ी लखनऊ 1/398 2 फ़तावा हिंदिया किताबुल हियल पहला अध्याय नूरानी कुतुब खाना पेशावर 6/390 3 मजमूआ फ़तावा किताबुल बुयूअ मताबे यूसुफ़ी लखनऊ 1/398

قولہ: اور احادیث اس باب میں بکثرت وارد ہیں جن سے حرمت ایسے حیل کی ثابت ہوتی ہے۔ اقول اولاً: احادیث اس باب میں بکثرت وارد ہیں جن سے حلت ایسے حیل کی ثابت ہوتی ہے دو بلکہ تین حدیثیں رسالہ کے صفحہ ۱۶۵، ۱۶۶ میں گزریں اور ایک حدیث مؤطا یہاں مذکور ہوئی۔ ثانیاً: خود آیۂ کریمہ جواز پر شاہد ہے کہ صفحہ ۱۸۹، ۱۹۰ پر تلاوت ہوئی، فتاویٰ ذخیرہ، فتاویٰ ہندیہ میں ہے:

| الاصل فی جواز ہذا النوع من الحیل قول اللہ تعالی وخذ بیدك ضغثاً فاضرب بہ ولا تحنث وہذا تعلیم المخرج لایوب النبی علیہ وعلی نبینا الصلوٰۃ والسلام عن یمینہ التی حلف لیضربن امرأتہ مائۃ عود وعامۃ المشایخ علی ان حکمہا لیس بمنسوخ و ہو الصحیح من المذہب۔ | اس طرح کے حیلے جائز ہونے کی اصل اللہ عزوجل کا یہ ارشاد ہے کہ اپنے ہاتھ میں ایک جھاڑو لے کر مارو اور قسم نہ توڑو، حضرت ایوب نبی اللہ علی نبینا وعلیہ الصلوٰۃ والسلام نے جو اپنی زوجہ مقدسہ کی نسبت قسم کھائی تھی کہ سو لکڑیاں ماریں گے یہ اللہ عزوجل نے اس قسم سے عہدہ برآئی کا طریقہ تعلیم فرمایا کہ قسم بھی پوری ہو جائے اور ایذا بھی نہ پہنچے اور مشائخ کرام فرماتے ہیں کہ اس آیت کا حکم منسوخ نہیں اور یہی صحیح مذہب حنفی ہے۔ |

قولہ: اگر یہ شبہ ہو کہ نوٹ ہرگاہ ثمن خلقی نہیں ہے پس حکم اس کا بعینہ کیونکر ہو سکتا ہے تو جواب اس کا یہ ہے کہ چونکہ عرفاً وہ عین ثمن خلقی سمجھا گیا اور تمام مقاصد ثمن خلقی کے اس کے ساتھ متعلق ہوئے لاجرم باب تفاضل میں اسی کا اعتبار ہوگا لاسیما دیانۃ فانہا متعلقۃ بالمقاصد وان کانت خفیۃ (خصوصاً دیانت کے اعتبار سے کیونکہ یہ مقاصد سے تعلق رکھتی ہے اگرچہ وہ

(مقاصد) پوشیدہ ہوں۔ ت) اقول اولاً: یہ ہرگاہ اور چونکہ سرگاہ میں گزر چکیں اگر پہلا بیان صحیح تھا تو یہ شبہ وہیں دفع

---

1 مجموعہ فتاوی کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنؤ ۱ / ۳۹۸ 2 فتاوی ہندیہ کتاب الحیل الفصل الاول نورانی کتب خانہ پشاور ۶ / ۳۹۰ 3 مجموعہ فتاوی کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنؤ ۱ / ۳۹۸

Volume 17 Fatawa-e-Razvia

It has been done. Then, what was the context of "if this doubt persists" and if it was wrong, why is the same answer given now? Why has it become correct now? The matter is that, at the end of the day, this is the only doubt you have. You keep repeating it over and over so that the meaning is correct and the text becomes weightier. Yes, the word "all purposes" (tamam maqasid) has been added here, which has been clearly refuted above, and the clarification of the doubt has been done in the most perfect manner. It has also been explained that fine, if you consider this in the chapter of excess (tafadhul), then consider excess in quantity (tafadhul fil-qadar) as prohibited (haram), and consider your own noble self as one who makes interest (sood) permissible (halal). But you, sir, are in your own tune and do not listen to anyone.

Secondly: Yes, one "lasayyima" (especially) has been increased here, meaning when all purposes of price (thaman) are related to the note, and in religious integrity (diyanat), the focus is only on the purposes, even if they are hidden, and not on the form. Then the difference between paper and silver will not be seen from the form. In terms of purposes, both are natural prices (thaman khalqi); this will be considered, and prohibition (hurmat) will be mandatory.

I say: Rightly so. Then how did one Ashrafi for one Rupee become permissible? Those are not just purposes, but in reality, they are natural prices (thaman khalqi), and in purposes as well, no difference is understood between fifteen rupees and one pound.

Thirdly: Let me solve this. You did not understand the difference between Shari'ah purposes (maqasid shar'iyyah) and human motives (aghradh insaniyyah). Shari'ah purposes are those upon which the validity and invalidity, permissibility and prohibition depend. And human motives are the results that they think they will achieve. Purposes change with different contracts, and results often remain the same in contrasting contracts. For example, Zaid gifts his undivided half-share of a house to his equal partner and gives up possession so that the entire house remains in the partner's possession and use; or he sells it to him and waives the price. In both cases, the result is the same; human motive does not distinguish between them. But the difference in Shari'ah purpose is severe: the first case is invalid (fasid) and prohibited (haram), and the second is correct (sahih) and permissible (halal). Similarly, if someone wants to take fifteen for ten, now whether he sells ten rupees for fifteen

rupees or for one sovereign, his motive is achieved in both ways without difference. But Shari'ah purposes are so different that the first form is interest (sood), usury (riba), a major sin (gunah-e-kabira), absolutely prohibited (haram qat'i) leading to hellfire, and the second form is right, correct, permissible, allowed, beyond objection, without denial. If human motives are related to the note just like the natural price (thaman khalqi) without difference, then thinking this implies unity in Shari'ah rulings and purposes is such severe ignorance. You will not be grateful for how many brilliant gems my pen imparts to your heart. Be just; a single point is sufficient and ample cure for all your hard work. Praise be to Allah.

हो चुका, फिर "अगर यह संदेह हो" का स्थान क्या था और यदि वह गलत था, तो अब वही उत्तर क्यों दिया गया है? अब वह सही क्यों हो गया? बात वही है कि अंततः आपके पास यही एक संदेह है। आप इसे बार-बार दोहराते हैं ताकि अर्थ सही रहे और पाठ भारी हो जाए। हाँ, यहाँ "तमाम मक़ासिद" (सभी उद्देश्य) शब्द जोड़ा गया है, जिसका स्पष्ट खंडन ऊपर हो चुका है और संदेह का निवारण भी उत्तम तरीके से कर दिया गया है। यह भी समझा दिया गया है कि बहुत अच्छा, यदि आप "तफ़ाज़ुल" (अधिकता) के अध्याय में इसी का विचार करते हैं, तो मात्रा में अधिकता (तफ़ाज़ुल फ़िल-क़द्र) को हराम मानें और स्वयं को सूद हलाल करने वाला समझें। लेकिन आप तो अपनी ही धुन में हैं, किसी की सुनते ही नहीं।

दूसरा: हाँ, यहाँ एक "ला-सिय्यमा" (विशेष रूप से) और बढ़ा दिया गया है, यानी जब नोट से क़ीमत (थमन) के सभी उद्देश्य संबंधित हैं और दयानत (धार्मिक निष्ठा) में दृष्टि केवल उद्देश्यों पर ही है, चाहे वे छिपे हुए हों, न कि स्वरूप पर। तब काग़ज़ और चांदी का अंतर स्वरूप से नहीं देखा जाएगा। उद्देश्यों में दोनों "थमन ख़ल्की" (प्राकृतिक मूल्य) हैं, इसी पर विचार होगा और हुरमत (निषेध) अनिवार्य होगी।

मैं कहता हूँ (अक़ूलु): ठीक है, फिर एक अशर्फ़ी के बदले एक रुपया कैसे हलाल हो गया? वे तो न केवल उद्देश्यों में बल्कि वास्तविकता में "थमन ख़ल्की" हैं, और उद्देश्यों में भी पंद्रह रुपये और एक पाउंड में कोई अंतर नहीं समझा जाता।

तीसरा: मैं समाधान करूँ। आपने शरीयत के उद्देश्यों (मक़ासिद-ए-शरिया) और मानवीय उद्देश्यों (अग़्रज़-ए-इंसानिया) के बीच का अंतर नहीं समझा। शरीयत के उद्देश्य वे हैं जिन पर वैधता और अवैधता, हलाल और हराम निर्भर है। और मानवीय उद्देश्य वे परिणाम हैं जो उनके अनुसार उन्हें प्राप्त हों। विभिन्न अनुबंधों (अक़ूद) के साथ उद्देश्य बदल जाते हैं और परिणाम अक्सर भिन्न अनुबंधों में एक समान रहते हैं। उदाहरण के लिए, ज़ैद अपने घर का आधा अविभाजित हिस्सा अपने बराबर के साथी को बिना किसी विभाजन के उपहार (हिबा) कर दे और अपना कब्ज़ा छोड़ दे ताकि पूरा घर साथी के कब्ज़े और उपयोग में रहे; या उसे बेच दे और क़ीमत माफ कर दे। दोनों स्थितियों में परिणाम एक ही है; मानवीय उद्देश्य उनमें अंतर नहीं करता। लेकिन शरीयत के उद्देश्य में भारी अंतर है कि पहली स्थिति फ़ासिद (अवैध) और हराम है, और दूसरी सही और हलाल। इसी तरह, यदि कोई

व्यक्ति दस के बदले पंद्रह लेना चाहता है, अब चाहे वह दस रुपयों को पंद्रह रुपयों के बदले बेचे या एक सॉवरेन (सोने का सिक्का) के बदले, उसका उद्देश्य दोनों तरह से बिना किसी अंतर के पूरा हो जाता है। लेकिन शरीयत के उद्देश्य इतने भिन्न हैं कि पहली स्थिति सूद, रिबा, गुनाह-ए-कबीरा, पूर्णतः हराम और नर्क में ले जाने वाली है, और दूसरी स्थिति सही, हलाल, वैध, निर्विवाद और बिना किसी इनकार के है। यदि नोट से मानवीय उद्देश्य उसी तरह बिना किसी अंतर के जुड़े हों जैसे "थमन ख़ल्की" (प्राकृतिक मूल्य) से, तो इससे शरीयत के आदेशों और उद्देश्यों में एकता समझ लेना कितनी बड़ी मूर्खता है। आप एहसान तो मानेंगे नहीं कि मेरी कलम आपके हृदय पर कैसे-कैसे अनमोल मोती बरसा रही है। न्याय करें, तो एक ही बिंदु आपकी सारी मेहनत का पर्याप्त और संपूर्ण समाधान है। अल्लाह के लिए सारी प्रशंसा है।

ہو چکا، پھر "اگر یہ شبہ ہو" کا محل کیا اور غلط تھا تو اب تو وہی جواب دیا ہے اب کیوں صحیح ہو گیا بات وہی ہے کہ لے دے کر ایک یہی شبہ آپ کے ہاتھ میں ہے بار بار بتکرار اس کا اعادہ فرماتے ہیں کہ معنی تو سہی عبارت تو وزنی ہو جائے، ہاں یہاں تمام مقاصد کا لفظ زائد فرمایا ہے جس کا صاف ابطال اوپر گزرا اور کشف شبہ بھی بروجہ اتم کر دیا گیا اور یہ بھی سمجھا دیا گیا کہ بہت اچھا باب تفاضل میں اسی کا اعتبار کیجئے تو تفاضل فی القدر حرام مانئے اور خود اپنی ذات گرامی کو سود حلال کرنے والی جانئے مگر جناب تو اپنی ایک دھن میں کسی کی سنتے ہیں نہیں۔

ثانیا: ہاں ایک لاسیما یہاں اور بڑھائی ہے یعنی جب نوٹ سے تمام مقاصد ثمن متعلق ہیں اور دیانت میں نظر مقاصد ہی پر ہے اگرچہ خفی ہوں نہ صورت پر تو کاغذ اور چاندی کا فرق صورت سے نہ دیکھا جائیگا مقاصد میں دونوں ثمن خلقی ہیں اس پر نظر ہوگی اور حرمت لازم۔

اقول: بجا ہے پھر ایک اشرفی کو ایک روپیہ کیسے حلال ہو گیا وہ تو نہ صرف مقاصد بلکہ اصل حقیقت میں ثمن خلقی ہیں اور مقاصد میں بھی پندرہ روپے اور ایک پونڈ میں کچھ فرق نہیں سمجھا جاتا۔

ثالثا: حل کروں آپ مقاصد شرعیہ واغراض انسانیہ میں فرق نہ سمجھے، مقاصد شرع وہ ہیں جن پر صحت و فساد حلت وحرمت کا مدار ہے اور اغراض انسانیہ وہ نتائج کہ انکے نزدیک انہیں حاصل ہوں مقاصد باختلاف عقود مختلف ہو جاتے ہیں اور نتائج بارہا عقود متباینہ میں متحد رہتے ہیں مثلاً زید اپنا نصف مکان قابلِ قسمت بلا تقسیم اپنے شریک مساوی کو ہبہ کر کے اپنا قبضہ اٹھائے کہ سارا مکان قبض و تصرف شریک میں رہے یا اس کے ہاتھ بیع کر ثمن اس کو معاف کردے دونوں

صورتوں میں نتیجہ واحد ہے انسانی غرض ان میں فرق نہیں کرتی مگر مقصد شرعی کا اختلاف شدید ہے کہ پہلی صورت فاسد وحرام اور دوسری صحیح و حلال، یونہی اگر کوئی شخص دس کے پندرہ لینا چاہے اب دس روپوں کو خواہ پندرہ روپوں کے عوض بیچے خواہ ایک ساورن کے بدلے ، اس کی غرض دونوں طرح بلا تفاوت حاصل ہے مگر مقاصد شرعیہ اتنے مختلف ہیں کہ صورت اولیٰ سود، ربا، گناہ کبیرہ، حرام قطعی موجب دخول نار، اور دوسری شکل درست، صحیح، حلال، روا، بے اعتراض، بلا انکار، نوٹ سے اگر اغراض انسانیہ ثمن خلقی کی طرح بلا تفاوت متعلق ہوں تو اس سے احکام و مقاصد شرعیہ میں اتحاد سمجھ لینا کیسی سخت نادانی ہے، احسان تو نہ مانئے گا کہ کیسے کیسے جواہر زواہر میرا قلم جناب کے قلب پر القاء کرتا ہے انصاف کیجئے تو ایک ہی نکتہ آپ کی ساری عرق ریزی کا علاج کافی و وافی ہے للہ الحمد۔

Fatawa Razawiyyah (Volume 17)

Fourthly: Look a little more at the truth of justice, you are a perfectionist in understanding purposes and nurturing honesty. In the Fatwa No. 479 of the same second volume, which is written in the summary on the left: "Purchasing goods from non-believers in such a way that if one pays cash, they give the full fixed price, and if they pay after one, two, or three months, they will have to pay three rupees per hundred per month more than that fixed price. This is actually a statement of the price of the goods. If one buys for cash, for example, they pay a price of one hundred rupees, and if they pay after one or two or three months, the price is one hundred and three or one hundred and six or one hundred and nine. Therefore, this contract is permissible for the buyer, and there is no religious objection for the buyer in increasing the price by three rupees per hundred every month. If the buyer pays the price during the said period, the seller has the choice whether to accept it or to accept it at the specified time, because its return from the side of the seller will be towards a reduction in part of the price and from the side of the buyer towards a reduction in the period, and there is no religious objection in both of these. The answer is correct, and Allah knows best. Written by Muhammad Abdul Hai, may he be forgiven." Please say, what is the purpose of increasing three rupees per hundred every month other than interest? Especially from non-believers who never break a piece without interest, and taking and giving interest are both absolutely forbidden; the Messenger of Allah, peace and blessings of Allah be upon him, cursed both and said they are all equal. What did you understand and make it halal, and without hesitation joined "The answer is correct"? Then there is a clear statement from the noble Imams that although it is permissible to take a price higher than cash in credit sales, "And the period is met by a portion of the price," but one thing must be final: selling in such a way that it was sold at such a price in cash, and in the case of such a period at such a price, is forbidden and invalid. It is in Fath al-Qadir:

[Box Section] Arabic: Labudda an yakuna al-ajalu ma'luman lianna jahaltahu tufdi ilal munaza'ati fit tasallumi wat tasleemi wa 'ala kulli dhalika in'aqada al-ijma' wa ammal butlanu fima idha qala ba'tuka bi alfin halan wa bi alfayni ila sanatin falijahalatis thaman. Translation: It is necessary that the period be known because its ignorance leads to disputes in receipt and delivery, and upon all of that, consensus has been established. As for the invalidity in the case where one said: "I sold it to you for a

thousand cash and for two thousand for a year," it is because of the ignorance of the price. (T)

1. Majmu'ah Fatawa Kitab al-Buyu', Mujtabai Press Delhi, 1/394-395.
2. Fath al-Qadir Kitab al-Buyu', Maktaba Nooriya Razviya Sukkur, 5/468-469.

फ़तावा रज़विया (खण्ड १७)

चौथा: न्याय की सच्चाई पर थोड़ा और गौर करें, आप उद्देश्यों को समझने और ईमानदारी को पोषित करने में पूर्णतावादी हैं। इसी दूसरे खंड के फतवा संख्या 479 में, जो बाईं ओर सारांश में लिखा है: "काफिरों से माल खरीदना इस तरह कि यदि कोई नकद भुगतान करता है, तो वे पूरी निश्चित कीमत देते हैं, और यदि वे एक, दो या तीन महीने के बाद भुगतान करते हैं, तो उन्हें उस निश्चित कीमत से प्रति माह प्रति सौ तीन रुपये अधिक देने होंगे। यह वास्तव में माल की दर का बयान है। यदि कोई नकद खरीदता है, उदाहरण के लिए, वे सौ रुपये की कीमत देते हैं, और यदि वे एक या दो या तीन महीने के बाद भुगतान करते हैं, तो कीमत एक सौ तीन या एक सौ छह या एक सौ नौ है। इसलिए, यह अनुबंध खरीदार के लिए जायज़ है, और खरीदार के लिए हर महीने प्रति सौ तीन रुपये की कीमत बढ़ाने में कोई धार्मिक आपत्ति नहीं है। यदि खरीदार उक्त अवधि के दौरान कीमत का भुगतान करता है, तो विक्रेता के पास विकल्प है कि वह इसे स्वीकार करे या निर्दिष्ट समय पर स्वीकार करे, क्योंकि विक्रेता की ओर से इसका लाभ कीमत के एक हिस्से में कमी की ओर होगा और खरीदार की ओर से अवधि में कमी की ओर होगा, और इन दोनों में कोई धार्मिक आपत्ति नहीं है। उत्तर सही है, और अल्लाह बेहतर जानता है। मुहम्मद अब्दुल हई द्वारा लिखित, उन्हें क्षमा किया जाए।" कृपया कहें, हर महीने प्रति सौ तीन रुपये बढ़ाने का उद्देश्य ब्याज के अलावा और क्या है? विशेष रूप से काफिरों से जो बिना ब्याज के कभी एक टुकड़ा नहीं तोड़ते, और ब्याज लेना और देना दोनों पूरी तरह से हराम हैं; अल्लाह के रसूल, उन पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो, ने दोनों पर लानत भेजी और कहा कि वे सब बराबर हैं। आपने क्या समझकर इसे हलाल कर दिया और बिना किसी हिचकिचाहट के "उत्तर सही है" जोड़ दिया? फिर महान इमामों का स्पष्ट बयान है कि हालांकि ऋण बिक्री में नकद से अधिक कीमत लेना जायज़ है, "और अवधि कीमत के एक हिस्से से मिलती है," लेकिन एक बात अंतिम होनी चाहिए: इस तरह से बेचना कि नकद में इतने पर बेचा गया और ऐसी अवधि के मामले में इतने पर, हराम और अमान्य है। फ़तह अल-क़दीर में है:

[बॉक्स अनुभाग] अरबी: ला बुद्दा अन यकूला अल-अजलु मा'लूमन लिअन्ना जहालतहु तुफ़्दी इलल मुनाज़अति फ़ित तसल्लुमि वत तस्लीमि व अला कुल्लि ज़ालिका इन'अक़दा अल-इज्मा' व अम्मल बुतलानु फ़ीमा इज़ा काला बा'तुका बि अल्फ़िन हालन व बि अल्फ़यनि इला सनतिन फ़लिजहालतिस थमन। अनुवाद: अवधि का ज्ञात होना आवश्यक है क्योंकि इसकी अज्ञानता लेने और देने में विवाद का कारण बनती है; इस सब पर महान इमामों की आम सहमति स्थापित है। जहाँ तक उस स्थिति

की अमान्यता का सवाल है जहाँ किसी ने कहा "मैंने यह चीज़ आपको एक हज़ार नकद और एक साल के उधार पर दो हज़ार में बेची", तो यह कीमत की अज्ञानता के कारण (अमान्य) है। (त)

1. मजमूआ फतावा किताब अल-ब्यू, मुजतबाई प्रेस दिल्ली, 1/394-395।
2. फतह अल-कादिर किताब अल-ब्यू, मकतबा नूरिया रजविया सुक्कुर, 5/468-469।

पृष्ठ 552 का 715

رابعاً: ایک ذرا اور بھی انصاف کی سچی آپ تو کمال مقاصد شناسی دیانت پرور ہیں۔ اسی جلد دوم کے فتوی نمبر ۴۷۹ میں جو بائیں خلاصہ تحریر ہے "خرید کرنا مال کفار سے بایں طور کہ نقد روپیہ ادا کرے تو پوری قیمت معینہ دے اور بعد ایک یادو یا تین مہینے کے ادا کرے تو فی سیکڑا تین روپے فی ماہ زیادہ اس قیمت معینہ سے دینا ہو گا۔ یہ فی الحقیقت بیان ہے نرخ مال کا بھی نقد خریدے تو مثلاً سو روپے قیمت دے اور بعد ایک یا دو ماہ یا سہ ماہ کے ادا کرے تو قیمت ایک سو تین یا چھ سو نو دے پس یہ عقد حق خریدار میں جائز ہے اور زیادت ثمن کی فی سیکڑا تین روپے ہر ماہ میں اس میں بھی خریدار کو شرعاً کوئی قباحت نہیں اور در میان میعاد مذکورہ کے قیمت ادا کرے تو بائع کو اختیار ہے چاہے لے چاہے علی المیعاد لے، اس واسطے کہ رجوع اس کا جانب بائع سے طرف حط بعض قیمت کے اور جانب خریدار سے طرف حط اجل کے ہو گا اور ان دونوں میں شرعاً کوئی قباحت نہیں ،صح الجواب واللہ اعلم۔ حررہ محمد عبدالحی عفی عنہ، ذرا فرمائے تو یہ تین روپے سیکڑا ہر مہینے پیچھے بڑھانے کا مقصد سوا سود کے کیا ہے خصوصاً وہ بھی کفار کی طرف سے جو بغیر سود کبھی ٹکڑا نہیں توڑتے اور سود کا لینا دینا دونوں قطعی حرام ہیں دونوں پر رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے لعنت فرمائی ہے اور فرمایا وہ سب برابر ہیں اسے آپ نے کیا سمجھ کر حلال کر دیا اور بلا دغدغہ صح الجواب جڑ دیا، پھر ائمہ کرام کی صاف تصریح ہے کہ اگر چہ قرضوں بیچنے میں نقد سے قیمت زائد لینا جائز ہے " والاجل یقابلہ قسط من الثمن" مگر ایک بات قطع ہونا لازم، اس طور پر بیچ کہ بحال نقد اتنے پر بیچی اور بصورت فلاں میعاد اتنے پر یہ حرام و فاسد ہے، فتح القدیر میں ہے :

[باکس سیکشن] لا بد ان یکون الاجل معلوماً لان جھالتہ تفضی الی المنازعۃ فی التسلم والتسلیم وعلی کل ذلك انعقد الاجماع واما البطلان فیما اذا قال بعتکہ بالف حالا وبالفین الی سنۃ فلجھالۃ الثمن۔ میعاد کا معلوم ہونا ضروری ہے کیونکہ اس کی جہالت لینے اور دینے میں جھگڑے کا سبب بنتی ہے اس تمام پر ائمہ کرام کا اجماع منعقد ہے، رہا اس صورت کا بطلان کہ کسی نے کہا میں یہ چیز تیرے ہاتھ نقد ایک ہزار کی اور ایک سال کے ادھار پر دو ہزار کی فروخت کی تو یہ جہالت ثمن کی وجہ سے (باطل) ہے۔ (ت)

1 مجموعہ فتاوی کتاب البیوع مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۳۹۵-۳۹۴ 2 فتح القدیر کتاب البیوع مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۵/ ۴۶۸-۴۶۹

Fatawa Ridawiyya (Volume 17)

Regardless of that, there is uncertainty in the time period (ajal) itself, which is in itself a corrupting factor (mufsid), even if there were no uncertainty between cash and credit. Here, there are only two corrupting clauses, but in this case, there are three: if paid in one month the price is this, in two [months] this, and in three [months] this. It is stated in Fatawa Khulasa and Fatawa 'Alamgiri:

[Box Start] رجل باع على انه بالنقد بكذا وبالنسيئہ بكذا اوالى شهر بكذا والى شهرين بكذا الم يجز۔ (A person sold something saying: For cash it is this much, and for credit it is this much, or for a one-month credit it is this much and for a two-month credit it is this much; this sale is not permissible.) (T) [Box End]

It is strange how you have declared various kinds of forbidden (haram) acts as lawful (halal). Furthermore, to consider the acceptance of the price before the due date as a reduction of some part of the price by the seller is quite strange. The price was fixed for a shorter period, then it was reduced? Moreover, giving the seller the option not to accept if the buyer pays within three months until the full period passes so the belly of interest (usury) is filled, is the most strange of all. The time period is purely the right of the debtor. It is explicitly stated in the books of the Imams that if a debtor pays the debt before the due date, the creditor must be compelled to accept it. It is stated in al-Ashbah:

[Box Start] الدين المؤجل اذا قضاہ قبل حلول الاجل يجبر الطالب على تسليمه لان الاجل حق المديون فله ان يسقطه هكذا ذكر الزيلعي في الكفالة وهى ايضاً فى الخانية والنهاية۔ (If a deferred debt is paid before its due date, the creditor [seeker] is compelled to receive it because the deferment is the right of the debtor, and he has the right to waive it. This is how al-Zayla'i mentioned it in [the chapter on] Suretyship (Kafala), and it is also in al-Khaniya and al-Nihaya.) (T) [Box End]

Anyway, these four were parenthetical remarks. Now speak of the news of understanding objectives. Such a slip from a conforming scholar (muqallid) is certainly surprising. But for that precious researcher of an ijtihad-level who claims to evaluate the statements of Imam al-A'zam, how severe a sample of the Day of Judgment is such rigid imitation (taqlid) of one of his contemporary muqallids! And there is no power nor might except with Allah, the Most High, the Supreme. (There is no power to avoid sin and no strength to do good except through the grace of Allah Almighty). His view could only be that Maulana 'Alam 'Ali Sahib Muradabadi, by clear error, [called] the paternal uncle of the foster child...

1. Fatawa Hindiyya, Book of Sales, Chapter 10, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/136.
2. Al-Ashbah wa al-Naza'ir, The Second Art, Book of Debts, Idara al-Qur'an Karachi, 2/38. Page 553 of 715

फतावा रज़विया (जिल्द 17)

फिर इससे भी कतई नज़र हो तो खुद मुद्दत (अजल) में अनिश्चितता है, यह खुद बिगाड़ने वाला (मुफ़्सिद) है, चाहे नकद और उधार की अनिश्चितता न हो। यहाँ तो केवल दो ही सूरतें बिगाड़ने वाली हैं, लेकिन यहाँ तो तीन हैं: कि एक महीने में दे तो कीमत इतनी, दो में इतनी और तीन में इतनी। फतावा खुलासा और फतावा आलमगीरी में है:

[बॉक्स प्रारंभ] رجل باع على انه بالنقد بكذا وبالنسيئة بكذا اوالى شهر بكذا والى شهرين بكذا الم يجز۔ (एक व्यक्ति ने कोई चीज़ इस तरह बेची कि नकद इतने की और उधार इतने की, या एक महीने के उधार पर इतने की और दो महीने के उधार पर इतने की, तो यह बेचना जायज़ नहीं हुआ।) (त) [बॉक्स समाप्त]

अजब है कि आपने हराम दर हराम तरह-तरह के हराम को कैसे हलाल कर दिया। फिर तयशुदा मुद्दत के बीच कीमत स्वीकार कर लेने को बेचने वाले की तरफ से कुछ कीमत की छूट करार देना कितना अजीब है। कम मुद्दत पर इतनी ही कीमत तय हुई थी, उसने कम किया? फिर अगर खरीदार तीन महीने के अंदर रुपये दे तो बेचने वाले को अधिकार देना कि स्वीकार न करे जब तक पूरी मुद्दत गुज़र कर सूद (ब्याज) का पेट पूरा न भर जाए, सबसे अधिक अजीब है। मुद्दत तो शुद्ध रूप से खरीदार (कर्ज़दार) का अधिकार है। इमामों की किताबों में स्पष्ट है कि यदि कर्ज़दार मुद्दत से पहले कर्ज़ अदा करे, तो कर्ज़ देने वाले को उसे स्वीकार करने पर मजबूर किया जाएगा। अश्बाह में है:

[बॉक्स प्रारंभ] الدين المؤجل اذا قضاه قبل حلول الاجل يجبر الطالب على تسليمه لان الاجل حق المديون فله ان يسقطه هكذا ذكر الزيلعي في الك الة وهى ايضاً فى الخانية والنهاية۔ (अगर कर्ज़दार मुद्दती कर्ज़ को मुद्दत पूरी होने से पहले अदा करे, तो कर्ज़ देने वाले को इसे वसूल करने पर मजबूर किया जाएगा क्योंकि मुद्दत तो कर्ज़दार का हक़ है और उसे अधिकार है कि वह इसे खत्म कर दे। ज़ैलेई ने बाब अल-कफ़ाला में इसी तरह उल्लेख किया है, और यह खानिया और निहाया में भी है।) (त) [बॉक्स समाप्त]

खैर, ये चार तो दरमियानी बातें (जुमला मुअतरिज़ा) थीं, अब ज़रा उद्देश्यों को समझने की खबरें कहें। एक मुक़ल्लिद आलिम से भी ऐसी चूक ज़रूर आश्चर्यजनक है। मगर वह कीमती तहकीक़ात करने वाले इब्तिहाद के दर्जे के मोहक़्क़िक जो इमाम-ए-आज़म के कथनों को परखने का दावा रखे, उससे अपने एक समकालीन मुक़ल्लिद की ऐसी जड़ नकल (ताक्लीद) कैसा भयानक प्रलय का नमूना है!

और कोई ताक़त और कोई कुव्वत नहीं है सिवाय अल्लाह बुलंद व बरतर के। (गुनाह से बचने और नेकी करने की ताक़त नहीं है सिवाय अल्लाह तआला की तौफीक के।) उसकी नज़र यही हो सकती है कि मौलवी आलम अली साहब मुरादाबादी ने सरासर गलती से दूध के चचा को...

---

1. फतावा हिन्दिया, किताब अल-बुयू, बाब 10, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 136/3
2. अल-अश्बाह व अन-नज़ाइर, अल-फ़न्न अस-सानी, किताब अल-मुदायनात, इदारा अल-कुरआन कराची, 38/2 पेज 553 का 715

پھر اس سے بھی قطع نظر ہو تو خود اجل میں تردید ہے یہ خود مفسد ہے اگرچہ نقد واجل کی تردید نہ ہو اور صرف دو ہی شقیں مفسد ہیں یہاں تو تین ہیں کہ ایک مہینہ میں دے تو قیمت اور دو میں یہ اور تین میں یہ۔ فتاوی خلاصہ وفتاوی عالمگیری میں ہے:

رجل باع علی انه بالنقد بکذا وبالنسیئہ بکذا اوالی شهر بکذا والی شهرین بکذا الم یجز۔ ایک شخص نے کوئی چیز یوں بیچی کہ نقد اتنے کی اور ادھار اتنے کی، یا ایک ماہ کے ادھار پر اتنے کی اور دو ماہ کے ادھار پر اتنے کی، تو یہ بیع جائز نہ ہوئی (ت)

عجب کہ آپ نے حرام در حرام طرح طرح حرام کو کیسے حلال کردیا، پھر بین المیعاد ثمن قبول کرلینے کو بائع کی طرف سے بعض ثمن کا حط قرار دینا کس قدر عجیب ہے کم میعاد پر اتنا ہی ثمن ٹھہرا تھا اس نے کم کیا گیا، پھر اگر مشتری تین مہینے کے اندر روپیہ دے تو بائع کو اختیار دینا کہ قبول نہ کرے جب تک پوری میعاد گزر کر سود کا پیٹ پورا نہ بھر جائے سب سے عجیب تر ہے میعاد تو خالص حق مشتری ہے، کتب ائمہ میں تصریح ہے کہ مدیون میعاد سے پہلے دین ادا کرے تو دائن کو جبر قبول کرنا ہوگا، اشباہ میں ہے:

الدین المؤجل اذا قضاہ قبل حلول الاجل یجبر الطالب علی تسلیمه لان الاجل حق المدیون فله ان یسقطه هکذا ذکر الزیلعي في الکفالة وهی ایضاً فی الخانیة والنهایة۔ اگر مقروض میعادی قرض کو میعاد پوری ہونے سے قبل ادا کرے تو قرض دہندہ کو اس کے وصول کرنے پر مجبور کیا جائے گا کیونکہ میعاد تو مقروض کا حق ہے اور اس کو اختیار ہے کہ وہ اس کو ساقط کردے، زیلعی نے باب الکفالہ میں یونہی ذکر کیا، اور یہ خانیہ اور نہایہ میں بھی ہے۔ (ت)

خیر یہ چار تو جملہ معترضہ تھے، اب ذرا مقاصد شناسی کی خبریں کہئے، ایک مقلد عالم سے بھی ایسی لغزش ضرور تعجب خیز ہے مگر وہ گرانمایہ اجتہاد پایہ محقق کہ امام اعظم کے ارشادات پر کھنے کا ادعا رکھے، اس سے ایک اپنے معاصر مقلد کی ایسی جامد تقلید کیسا سخت نمونہ قیامت ہے، ولا حول ولا قوۃ الا باللہ العلی العظیم (گناہ سے بچنے اور نیکی کرنے کی طاقت نہیں سوائے اللہ تعالیٰ کی توفیق کے۔ت) اس کی نظر یہی ہو سکتی ہے کہ مولوی عالم علی صاحب مرادآبادی نے براہِ خطاء صریح دودھ کے چچا کو

---

1 فتاویٰ ہندیہ کتاب البیوع الباب العاشر نورانی کتب خانہ پشاور ۳/۱۳۶ 2 الاشباہ والنظائر الفن الثانی کتاب المداینات ادارۃ القرآن کراچی ۲/۳۸ Page 553 of 715

Fatawa Razawiyya Volume 17

...[they] wrote that the niece is lawful. Well, they wrote it, and now the fatwa reached Delhi. The leader of the non-conformists (Ghayr Muqallids), Maulvi Nazir Hussain Sahib, also boldly wrote 'Al-Jawab Sahih' (the answer is correct) and affixed his seal on it, and had all his followers and subordinates do the same. When the fatwa came here, this humble servant (the author) gave a ruling of prohibition (tahreem). Some students then questioned the 'Mujtahid' sahib (Maulvi Nazir Hussain). Now the eyes of all the non-conformists finally opened; they woke up from their slumber. The 'Mujtahid' sahib was shown hadiths from Bukhari and Muslim, and he then wrote a second fatwa of prohibition, offering an excuse for the first fatwa that was worse than the sin itself, stating:

“Before this, regarding the fatwa of Maulvi Alam Ali Sahib, they had written about its lawfulness; trusting them, I affixed my seal after a cursory glance.” (1) Explanation (T): Before this, Maulvi Muhammad Alam Sahib, who had written that it was lawful, trusting him, a seal was affixed after a cursory glance.

An excuse of a 'cursory glance' in matters of lawful and unlawful, especially regarding marital issues (furooj), is an open admission of one's explicit dishonesty and severe audacity and boldness towards the fire of Hell. It is mentioned in the Hadith that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

"The most audacious among you in giving fatwas is the most audacious towards the Fire." (2) Translation (T): Those among you who are most bold in giving fatwas are the most bold towards the fire of Hell.

Well, this [audacity] is inherent to non-conformity (Ghayr Muqallidiyat), but "relying on them" has completely shattered the illusion of his 'ijtihad'. Glory be to Allah! A claim to being a 'Mujtahid', yet such reliance and trust on a lowly follower in matters of lawful and unlawful. And look at the subtlety of "this was done" (karda shud) - what an embarrassed passive voice, as if he himself didn't seal it, but someone else did. Thus Allah shows His signs and gives a taste of the consequence of opposing the Imams. We ask Allah for forgiveness and well-being (T).

Statement: Remaining is [the reference from] Fath al-Qadir: "If one sells a piece of paper for a thousand [dirhams], it is permissible" (3) End. (T: If someone sold a paper for a thousand dirhams, it is permissible. End.) I say: It is not the 'end' there; after that, it also says "and it is not disliked" (4) (T: And it is not disliked), and my own...

1. Fatawa Naziriyya
2. Sunan ad-Darimi, Chapter: On Fatwas and the severity therein, Nashr as-Sunnah Multan, 1/53
3. Majmu'a Fatawa, Kitab al-Buyu', Matba' Yusufi Lucknow, 1/398
4. Fath al-Qadir, Kitab al-Kafala, Maktaba Nooriya Razawiyya Sukkur, 6/322

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

...भतीजी को हलाल लिख दिया, खैर वे तो लिख गए अब फ़तवा दिल्ली पहुँचा, ग़ैर-मुक़ल्लिदों के इमाम मौलवी नज़ीर हुसैन साहब ने भी बेधड़क 'अल-जवाब सहीह' लिखकर उस पर मुहर लगा दी और अपने तमाम अनुयायियों से भी लगवाई। फ़तवा यहाँ आया तो इस फ़क़ीर ने हराम होने का हुक्म दिया। कुछ छात्रों ने 'मुजतहिद' साहब से पूछताछ की। अब ग़ैर-मुक़ल्लिदों की आँखें खुलीं, वे नींद से जागे। मुजतहिद साहब को बुख़ारी और मुस्लिम की हदीसें समझाकर दिखाई गईं, तो उन्होंने हराम होने पर दूसरा फ़तवा लिखा और पहले फ़तवा के लिए ऐसा बहाना पेश किया जो गुनाह से भी बदतर था:

"इससे पहले मौलवी आलम अली साहब के फ़तवे में उसकी हलालियत लिखी थी, उन पर भरोसा करते हुए मैंने सरसरी नज़र डालकर अपनी मुहर लगा दी थी।" (1) व्याख्या (त): इससे पहले मौलवी मोहम्मद आलम साहब, जिन्होंने हलाल लिख दिया था, उन पर भरोसा करते हुए सरसरी नज़र से मुहर लगा दी गई।

हलाल और हराम के मामलों में, विशेष रूप से वैवाहिक संबंधों (फ़ुरूज) के मामले में 'सरसरी नज़र' का बहाना देना अपनी स्पष्ट बेईमानी और जहन्नुम की आग के प्रति घोर धृष्टता और निर्भीकता का खुला स्वीकार है। हदीस में है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

"तुममें से जो फ़तवा देने में सबसे अधिक साहसी है, वह आग के प्रति सबसे अधिक साहसी है।" (2) अनुवाद (त): तुममें से जो फ़तवा देने में अधिक बेबाक (निडर) हैं, वे जहन्नुम की आग पर अधिक बेबाक हैं।

खैर, यह तो ग़ैर-मुक़ल्लिदियत के लिए अनिवार्य है, लेकिन "उन पर भरोसा करते हुए" ने उनके इजतिहाद की पूरी धज्जी उड़ा दी। सुभान अल्लाह! मुजतहिद होने का दावा और हलाल-ओ-हराम के मामले में एक मामूली मुक़ल्लिद पर यह भरोसा और निर्भरता! और इस "किया गया" (करदा शुद) के अंदाज़ को देखें, कैसा शर्मिंदा 'पैसिव वॉयस' है, मानो उन्होंने खुद मुहर नहीं लगाई बल्कि किसी और ने लगा दी। अल्लाह इस तरह अपनी निशानियाँ दिखाता है और इमामों के विरोध का मज़ा चखाता है। हम अल्लाह से माफ़ी और सलामती माँगते हैं (त)।

कथन: बाकी रहा 'फ़तह अल-क़दीर' का यह कि "यदि कोई कागज़ का टुकड़ा एक हज़ार [दिरहम] में बेचे तो जायज़ है" (3) इति (समाप्त)। (त: अगर किसी ने एक कागज़ हज़ार दरहम पर बेचा तो जायज़ है। इति।) मैं कहता हूँ: यह वहाँ समाप्त नहीं होता; इसके बाद "और यह मकरूह (नापसंद) नहीं है" (4) भी है, और मेरा अपना...

---

1. फ़तावा नज़ीरिया
2. सुनन अद-दारिमी, अध्याय: फ़तवा और उसमें सख्ती के बारे में, नश्रुस सुन्ना मुल्तान, 1/53
3. मजमुआ फ़तावा, किताब अल-बुयू, मतबा यूसुफ़ी लखनऊ, 1/398
4. फ़तह अल-क़दीर, किताब अल-कफ़ाला, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 6/322

بھتیجی حلال لکھ دی، خیر وہ تو لکھ گئے اب فتوی پہنچا دہلی، امام غیر مقلدان مولوی نذیر حسین صاحب نے بھی بے دھڑک الجواب صحیح لکھ کر اس پر مہر چپکا دی اور اپنے اہالی موالی سب کی لگوادیں، فتوی یہاں آیا فقیر نے تحریم کا حکم دیا اور بعض طلبہ نے مجتہد صاحب کی مزاج پرسی کی، اب غیر مقلدوں کے کل فی الکل کی آنکھیں کھلیں سونے سے جاگے، مجتہد جی کو بخاری و مسلم کی حدیثیں سمجھائے سے سوجھیں اور دوسرا فتوی حرمت پر لکھا اور پہلے فتوی کا یہ عذر بدتر از گناہ پیش کیا کہ:

قبل ازیں بر فتوائے مولوی عالم علی صاحب کی در حلت آں نوشتہ بودند، بر اعتماد ایشاں بنظر سرسری مہر من کردہ باشد۔ (۱) قبل ازیں مولوی محمد عالم صاحب جنھوں نے حلت لکھ دی تھی ان پر اعتماد کرتے ہوئے سرسری نظر سے مہر لگادی گئی۔(ت)

حلال و حرام خصوصا معاملہ فروج میں نظر سرسری کا عذر اپنی کیسی صریح بددیانتی اور آتش جہنم پر سخت جرات و بیباکی کا کھلا اقرار ہے، حدیث میں ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

اجرؤکم علی الفتیا اجرؤکم علی النار (۲) تم میں سے جو فتوی میں زیادہ بیباک ہیں وہ جہنم کی آگ پر زیادہ بیباک ہیں(ت)

خیر یہ تو غیر مقلدی کے لئے لازم بین ہے "مگر بر اعتماد ایشاں" نے ان کے اجتہاد کی پوری قیامت توڑ دی اے سبحان اللہ! مجتہدی کا دعوٰی اور ایک ادنی سے ادنی مقلد پر حلال و حرام میں یہ تکیہ بھروسا، اور اس کردہ شد کے لطف کو تو دیکھئے کیا شرمایا ہوا صیغہ مجہول ہے گویا

انھوں نے خود اس پر مہر نہ کی کوئی اور کرگیا، اللہ یوں اپنی نشانیاں دکھاتا اور ائمہ کے مقابلہ کا مزہ چکھاتا ہے نسأل اللہ العفو والعافیۃ (ہم اللہ تعالیٰ سے معافی اور عافیت مانگتے ہیں۔ت)

قولہ: باقی رہا فتح القدیر کا لو باع کاغذۃ بالف یجوز (۳) انتھی (اگر کسی نے ایک کاغذ ہزار درہم پر بیچا تو جائز ہے انتھی۔ ت) اقول: انتی نہیں اس کے بعد ولا یکرہ (۴) (اور مکروہ نہیں ہے۔ ت) بھی ہے اور خود میرا

---

۱ فتاوی نذیریہ ۲ سنن الدارمی باب الفتیا وما فیہ من الشدۃ نشر السنۃ ملتان ۱ / ۵۳ ۳ مجموعہ فتاوی کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنؤ ۱ / ۳۹۸ ۴ فتح القدیر کتاب الکفالۃ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۳۲۲

Fatawa-e-Razawiyya Volume Seventeen (17)

The fatwa is before you, in which it is also narrated, i.e., "Selling a piece of paper for a thousand rupees is so permissible that there is absolutely no dislike (karahat) in it." Do not hide it behind a veil; this is a very useful thing. If this "La Yukrahu" (It is not disliked) seems disliked to you, then the stature of a researcher was such that you should have quoted it and then refuted it. After all, Imam Ibn al-Humam and the noble scholars with him who clearly stated this "La Yukrahu" were not greater than the Imam of Imams, Imam-e-Azam. Since this was not possible and quoting it was unpleasant, you should have written "ila Akhirihi" (to the end). Even if not that, you could have written up to "Yajuzu" (It is permissible) and left it at that, so that at least the accusation of hiding the obvious would not arise. Intihi (the opponent) made a false statement in a place of suspicion; this was far from your dignity. His statement: So, what is meant by it is not this paper considered as essentially valuable by nature, because its existence was not in those times, rather it refers to plain paper. I say firstly: Essentiality (Ainiyat) has been brought home many times; leave that excuse aside. Now tell us, what is the reason for the difference between a banknote and this piece of paper? A plain piece of paper can be sold for a thousand rupees, but if the word and numeral 'five' are written on it, selling it for more than five becomes forbidden? It was printed in a very unlucky hour that as soon as it was printed, nine hundred and ninety-five flew away. Secondly: Let the powerful refutations of 'essentiality' be; you yourself have completely moved past them in your recent decline. Kindly let us hear your discourse on the difference based on this recent estimation of yours. Yes, you declared selling plain paper for a thousand as permissible; now tell us, what kind of paper is impermissible? Thirdly: Pure justice is that the scholars mentioned 'paper' in absolute terms, which includes plain, handwritten, and printed notes, whether currency notes or not. This 'plainness' is your own addition, and to exclude a new specific instance from an absolute ruling just because it is new is completely against the principles of jurisprudence (fiqh). Thousands of new events occur and will continue to occur until the Day of Judgment; their rulings are derived from the general statements of the noble Imams. No one can say that because these things did not exist in those times, they were not intended by them and are thus not under the ruling. Fourthly: Listen, sir! For the crime that it's not even worth two paise, you didn't consider the poor banknote worthy of an intentional sale, but rather stated that selling the hundred rupees themselves was the objective. Now, this plain piece of paper, which isn't even worth a

farthing (dhela, chhedam), how did it start selling for a thousand rupees? Which rupees will be brought here whose sale he intends to make the objective? A researching scholar.

1 Majmu'a Fatawa, Kitab al-Buyu', Matba' Yusufi, Lucknow, 1/398. Page 555 of 715

फतावा-ए-रज़विया जिल्द सत्रह (17)

फ़तवा आपके सामने है, इसमें यह भी नक़ल किया गया है, यानी "काग़ज़ का एक टुकड़ा हज़ार रुपये में बेचना इस कदर जायज़ है कि इसमें बिल्कुल भी कराहत (नापसंदगी) नहीं है।" इसे ओझल न रखें; यह बहुत काम की चीज़ है। अगर आपको यह "ला युकराहु" (नापसंद नहीं है) मकरूह लगता है, तो एक शोधकर्ता की गरिमा यह थी कि आप इसे नक़ल करते और फिर इसका खंडन करते। आख़िरकार, इमाम इब्न अल-हुमाम और उनके साथ के वे विद्वान जिन्होंने इस "ला युकराहु" को स्पष्ट रूप से कहा, वे इमामों के इमाम, इमाम-ए-आज़म से बड़े तो नहीं थे। चूंकि यह मुमकिन नहीं था और इसे नक़ल करना नागवार था, तो आपने "इला आख़िरीही" (अंत तक) लिख दिया होता। अगर वह भी नहीं, तो कम से कम "यजूज़ु" (जायज़ है) तक लिखकर छोड़ दिया होता, ताकि कम से कम प्रत्यक्ष को छिपाने का आरोप तो न लगता। 'इन्तिही' (विरोधी) ने संदेह के स्थान पर झूठ बोला; यह आपकी गरिमा के विरुद्ध था। उनका कथन: तो इसका मतलब यह काग़ज़ नहीं है जिसे स्वभावतः मूल्यवान समझा जाए, क्योंकि उन समयों में इसका अस्तित्व नहीं था, बल्कि सादा काग़ज़ है। मैं कहता हूँ, पहले: 'ऐनियत' (वस्तुगतता) को तो कई बार साबित किया जा चुका है, उस आड़ को छोड़िये और अब बताइये कि नोट और काग़ज़ के इस टुकड़े में क्या अंतर है? सादा काग़ज़ हज़ार रुपये में बिक सकता है, लेकिन जिस पर 'पाँच' शब्द और अंक लिख दिया जाए, उसे पाँच से ज़्यादा में बेचना हराम हो जाए? वह बहुत ही मनहूस घड़ी में छपा था कि छपते ही नौ सौ पचानवे उड़ गए। दूसरे: 'ऐनियत' के जो ज़ोरदार खंडन हुए हैं उन्हें रहने दें; आप खुद अपनी हालिया गिरावट में उनसे पूरी तरह आगे निकल चुके हैं। कृपया अपने इस हालिया आकलन पर अंतर का तर्क सुना दीजिये। हाँ, सादा काग़ज़ हज़ार में बेचना आपने जायज़ बताया; अब ज़रा बताइये कि किस तरह का काग़ज़ नाजायज़ है? तीसरे: शुद्ध न्याय तो यह है कि विद्वानों ने 'काग़ज़' को सामान्य (मुतलक़) रूप में कहा है, जिसमें सादे, हाथ से लिखे और छपे हुए नोट, चाहे वे मुद्रा नोट हों या न हों, सब शामिल हैं। यह 'सादगी' तो आपकी अपनी बढ़ोतरी है, और किसी नए विशिष्ट उदाहरण को महज़ इसलिए सामान्य हुक्म से बाहर करना कि वह नया है, फ़िक़्ह (न्यायशास्त्र) के सिद्धांतों के बिल्कुल खिलाफ है। हज़ारों नई घटनाएँ होती रहती हैं और क़यामत तक होती रहेंगी; उनके हुक्म इमामों के सामान्य बयानों से ही लिए जाते हैं। कोई यह नहीं कह सकता कि चूँकि ये चीज़ें उस समय नहीं थीं, इसलिए वे उनके इरादे में नहीं थीं और हुक्म के दायरे से बाहर हैं। चौथे: सुनिये तो जनाब! इस अपराध पर कि वह काग़ज़ दो पैसे का भी नहीं है, आपने बेचारे नोट को जानबूझकर बेचने के योग्य नहीं समझा, बल्कि खुद सौ रुपये बेचना

ही उद्देश्य बताया था। अब यह सादा काग़ज़, जो एक पाई (धेला, छदाम) का भी नहीं है, यह कैसे हज़ार रुपये में बिकने लगा? यहाँ कौन से रुपये लाएगा जिन्हें बेचना वह उद्देश्य बनाएगा? एक शोधकर्ता विद्वान।

1 मजमूआ फ़तावा, किताब अल-बुयू, मतबा यूसुफी, लखनऊ, 1/398। पेज 555/715

فتویٰ آپ کے پیش نظر ہے اس میں بھی منقول یعنی "کاغذ کا ایک پرچہ ہزار روپے کو بیچنا ایسا جائز ہے جس میں اصلاً کراہت بھی نہیں" اسے پردہ خفا میں نہ چھپائیے یہ بہت کام کی چیز ہے آپ کو یہ "لا یکرہ" مکروہ لگتا ہے تو محقق کی شان یہ تھی کہ اسے نقل کر کے رد فرماتے، آخر امام ابن ہمام اور ان کے ساتھ کے علمائے کرام جنہوں نے اس لایکرہ کی تصریح فرمائی امام الائمہ امام اعظم سے تو اعظم نہ تھے یہ نہ ہو سکا تھا اور اس کا نقل کرنا نا گوار تھا تو الیٰ آخرہ لکھ دیا ہوتا یہ بھی نہ سہی "یجوز" تک لکھ کے یونہی چھوڑ دیا ہوتا کہ اخفائے ظاہر کا الزام تو نہ آتا انتہی نے تو موضع تہمت میں غلط بیانی کی، یہ جناب کی شان سے بعید واقع ہوئی۔ قولہ : پس مراد اس کی یہ کاغذ نہیں کہ عین ثمنی خلقی سمجھا گیا کیونکہ اس کا وجود ان زمانوں میں نہ تھا بلکہ سادہ کاغذ ۱۔ اقول اولاً : عینیت تو بارہا گھر تک پہنچادی گئی اس کی آڑ تو چھوڑیئے اور اب فرمایئے کہ نوٹ اور اس پرچہ کاغذ میں وجہ فرق کیا ہے سادہ پرچہ تو ہزار روپے کو بک سکے مگر جس پر پانچ روپے کا لفظ و ہندسہ لکھ دیا وہ پانچ سے زیادہ کو بیچنا حرام ہو جائے بڑی منحوس گھڑی سے چھپا پا تھا کہ چھپتے ہی نو سو پچانوے اڑ گئے۔ ثانیاً : عینیت کے جو قاہر رد ہوئے انہیں جانے دیجئے تو آپ خود اپنے تنزل اخیر میں اس سے یکسر گزر چکے ہیں مہربانی فرما کر اپنی اس اخیر تقدیر پر فرق کی تقریر سنادیجئے ، جی ہاں سادہ کاغذ ہزار کو بیچنا جائز بتایا اور کیسا کاغذ ناجائز ہے ذرا بتایئے۔ ثالثاً : صاف انصاف تو یہ ہے کہ علماء نے مطلق کاغذ فرمایا ہے جو سادہ اور لکھے قلمی اور چھپے نوٹ اور غیر نوٹ سب کو شامل ہے یہ سادگی تو آپ کی زیادت ہے اور مطلق کا کوئی مقید نیا پیدا ہو تو صرف اس بنا پر اسے حکم مطلق سے اخراج سراسر خلاف فقاہت ہے ، ہزار ہا حوادث نئے پیدا ہوتے جاتے ہیں، اور تا قیامت ہوتے رہیں

گے، ان کے احکام اطلاقات ائمہ کرام سے لئے جاتے ہیں، اور کوئی نہیں کہہ سکتا کہ یہ چیزیں اس زمانے میں کب تھیں لہذا یہ ان کی مراد وزیر حکم نہیں۔ رابعاً : سنئے تو جناب نے اس جرم پر کہ وہ کاغذ دو پیسہ کا بھی نہیں بیچارے نوٹ کو قصد بیع کے قابل نہ سمجھا بلکہ خود سو روپے بیچنا مقصود بتایا تھا، اب یہ سادہ پرچہ کہ دھیلے چھیلا چھدام کا بھی نہیں یہ کیسے ہزار روپے کو بکنے لگا یہاں کون سے روپے لائے گا جن کا بیچنا مقصود بنائے گا، ایک محقق عالم

Fatawa Razawiyyah (Volume 17)

...while writing, one should at least be mindful of what preceded and what follows, rather than [exhibiting] "Nasi ma qaddamat yadahu" (He forgot what his hands sent forth. - T) on the same page.

Fifthly: Did the gentleman also observe in which discussion Imam Ibn al-Humam said "Yajuzu wa la yukrahu" (It is permissible without any dislike)? It was in the discussion of 'Bay' al-'Inah' (a type of credit sale). Now, where did the prohibition of 'Bay' al-'Inah' go? In just five lines, it became "Nasi ma qaddamat yadahu". Was it for this day that the gentleman omitted "La yukrahu" and wrote "Inti" (ending)? Now say that selling a hundred-rupee note for two hundred is so permissible that there isn't even any dislike in it. I conclude on your "Inti" (ending) that the number of refutations and objections has, by the grace of Allah Almighty, reached one hundred and twenty. Praise be to Allah.

His statement: "Hadha ma sanaha li"[2] (This is what appeared to me. - T)

I say: That is, without any hidden or apparent proof. | I say it is without hidden proof and apparent proof. (T)

His statement: "Wallahu A'lamu bis-sawab wa 'indahu Umm-ul-Kitab"[3] (And Allah knows best what is correct, and with Him is the Mother of the Book. - T)

I say: From "Huwa al-Musawwib" up to here in the entire fatwa, this one sentence is true and correct. Indeed, Allah, the Mighty and Sublime, knows best what is right, and with Him is the Mother of the Book. And in that same Mother of the Book is this pure address by which the permissibility of the aforementioned sale with the mutual consent of the contracting parties is revealed:

"...except it be a trade by mutual consent among you."[4] - O Allah, our Lord! Be pleased with us by Your generosity and grace, and through the mercy of Your beloved Muhammad (peace and blessings of Allah be upon him), and grant us success in a trade that will never perish, O Almighty. | "...but let there be amongst you traffic and trade by mutual goodwill," O Allah, our Lord! Be pleased with us through Your grace and kindness, and for the sake of the benevolence of Your beloved Muhammad (may Allah Almighty send peace and blessings upon him), grant us the grace for such trade which [never fails].

1. Fath al-Qadir, Book of Kifalah, Maktabah Nooriya Razawiyyah Sukkur, 6/326.

2. Majmu'a Fatawa, Book of Sales, Yusufi Press Lucknow, 1/398.
3. Majmu'a Fatawa, Book of Sales, Yusufi Press Lucknow, 1/398.
4. The Holy Quran, 4/29.

फतावा रज़विया (खंड 17)

...लिखते समय कम से कम अपने आगे-पीछे का ध्यान तो रहे, न कि एक ही पन्ने पर "नसी मा कद्दमत यदाहु" (वह भूल गया जो उसके हाथों ने आगे भेजा था। - त) की स्थिति हो।

पाँचवां: क्या साहब ने यह भी गौर किया कि इमाम इब्न अल-हुमाम ने "यजुजु व ला युकरहु"[1] (बिना किसी नापसंदगी के जायज़ है) किस चर्चा में कहा है? वह 'बैअ अल-ईनह' (एक प्रकार की उधार बिक्री) की चर्चा में था। अब वह बैअ अल-ईनह की मनाही कहाँ गई? मात्र पाँच पंक्तियों में "नसी मा कद्दमत यदाहु" हो गया। क्या इसी दिन के लिए साहब ने "ला युकरहु" छोड़कर "इन्ती" (अंत) लिख दी थी? अब तो कह दीजिये कि सौ का नोट दो सौ में बेचना ऐसा जायज़ है जिसमें कोई नापसंदगी भी नहीं। आपकी इसी "इन्ती" पर मैं अंत करता हूँ कि अल्लाह के फज़ल से खंडन और आपत्तियों की संख्या एक सौ बीस तक पहुँच गई है। अल्लाह का शुक्र है।

उनका कथन: "हज़ा मा सनहा ली"[2] (यह वह है जो मुझ पर ज़ाहिर हुआ। - त)

मैं कहता हूँ: यानी बिना किसी छिपे और स्पष्ट प्रमाण के। | मैं कहता हूँ बिना छिपे प्रमाण और स्पष्ट प्रमाण के है। (त)

उनका कथन: "वल्लाहु आलम बिस्सवाब व इन्दहू उम्मुल किताब"[3] (अल्लाह तआला सही बात को खूब जानता है और उसके पास उम्मुल किताब है। - त)

मैं कहता हूँ: "हुवा अल-मुसव्विब" से लेकर यहाँ तक पूरे फतवे में यह एक वाक्य सत्य और उचित है। निस्संदेह अल्लाह अज्ज़वजल सबसे बेहतर जानता है कि क्या सही है, और उसी के पास उम्मुल किताब है। और उसी उम्मुल किताब में यह पवित्र संबोधन है जिससे अनुबंधित पक्षों की आपसी सहमति से उक्त बिक्री की वैधता प्रकट होती है:

"...सिवाय इसके कि वह तुम्हारी आपसी रज़ामंदी से होने वाला व्यापार हो।"[4] - ऐ अल्लाह, हमारे परवरदिगार! अपने फज़ल व करम के सदके और अपने महबूब मुहम्मद (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) की मेहरबानी के तुफैल हमसे राज़ी हो जा और हमें ऐसे व्यापार की तौफीक अता फरमा जो [कभी विफल न हो], ऐ अज़ीज़। | "मगर यह कि हो वह तिजारत तुम्हारी बाहमी रज़ामंदी से," ऐ अल्लाह हमारे परवरदिगार! अपने फ़ज़ल व एहसान के सदके से और अपने महबूब मुहम्मद

सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की मेहरबानी के तुफ़ैल हमसे राज़ी हो जा और हमें ऐसी तिजारत की तौफ़ीक़ अता फरमा जिस [का कभी नुकसान न हो]।

1. फ़तह अल-क़दीर, किताब अल-किफ़ाला, मकतबा नूरिया रज़विया सक्खर, 6/326।
2. मजमुआ फतावा, किताब अल-बुयू, यूसुफी प्रेस लखनऊ, 1/398।
3. मजमुआ फतावा, किताब अल-बुयू, यूसुफी प्रेस लखनऊ, 1/398।
4. अल-कुरआन अल-करीम, 4/29।

पृष्ठ 556 / 715

کو لکھتے وقت خود اپنے آگے پیچھے کا خیال تو رہے، نہ یہ کہ ایک ہی صفحہ میں نسی ماقدمت یداہ (بھول گیا وہ جو اس کے ہاتھوں نے مقدم کیا۔ ت)

خامساً: جناب نے یہ بھی ملاحظہ کیا کہ امام ابن الہمام نے یہ یجوز ولا یکرہ ۱ بلا کراہت جائز ہے کس بحث میں فرمایا ہے۔ بیع عینہ کی بحث میں، اب وہ بیع عینہ کی ممانعت کدھر گئی یہ تو پانچ ہی سطر میں "نسی ما قدمت یداہ" ہو گیا، کیا اسی دن کے لئے جناب نے "لا یکرہ" چھوڑ کر انتی لکھ دی تھی اب تو کہہ دیجئے کہ سو کا نوٹ دو سو کو بیچنا ایسا جائز ہے جس میں کراہت بھی نہیں، آپ کی اسی انتی پر انتہا کروں کہ رد و اعتراض کا عدد بفضلہ تعالٰی ایک سو بیس تک تو پہنچ گیا واللہ الحمد۔

قولہ: ھذا ما سنح لی ۲ (یہ وہ ہے جو مجھ پر ظاہر ہوا۔ت)

اقول: ای من دون دلیل و مایلی لا خفی ولا جلی۔ | میں کہتا ہوں بغیر دلیل خفی اور دلیل جلی ہے۔ (ت)

قولہ: واللہ اعلم بالصواب وعندہ ام الکتاب ۳ (اللہ تعالٰی درست بات کو خوب جانتا ہے اور اس کے پاس ام الکتاب ہے۔ت)

اقول: ھو المصوب سے یہاں تک فتوٰی بھر میں ایک یہ جملہ حق و بجا ہے بیشک اللہ عزوجل اعلم بالصواب ہے اور اسی کے پاس ام الکتاب اور اسی ام الکتاب میں یہ پاک خطاب ہے جس سے بیع مذکور بمرضائے عاقدین کا جواز حجاب ہے،

"إِلَّا أَن تَكُونَ تِجَارَةً عَن تَرَاضٍ مِّنكُمْ" ۴ - اللھم ربنا ارض عنا بکرمک و منك و رأفة حبیبک محمد صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم و وفقنا لتجارة لن تبور یا عزیز۔ | مگر یہ کہ ہو وہ تجارت تمہاری باہمی رضامندی سے ، اے اللہ ہمارے پروردگار ! اپنے فضل واحسان کے صدقے سے اور اپنے محبوب محمد صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی مہربانی کے طفیل ہم سے راضی ہو جا اور ہمیں ایسی تجارت کی توفیق عطا فرما جس

1 فتح القدیر کتاب الکفالة مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶/ ۳۲۶ 2 مجموعہ فتاویٰ کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنؤ ۱/ ۳۹۸ 3 مجموعہ فتاویٰ کتاب البیوع مطبع یوسفی لکھنؤ ۱/ ۳۹۸ 4 القرآن الکریم ۴/ ۲۹

Volume 17 (17) Fatawa Razawiyya

O Forgiving One, Amen! And praise be to Allah, Lord of the worlds, and the best of blessings and the most perfect peace be upon the master of the Messengers, Muhammad, and his family and all his companions. Amen. Glory be to You, O Allah, and with Your praise I bear witness that there is no god but You. I seek Your forgiveness and turn to You in repentance. Glory be to your Lord, the Lord of Might, above what they describe, and peace be upon the messengers, and praise be to Allah, Lord of the worlds.

[May there be no loss, O Mighty One, O Forgiver! Accept our prayer. All praises are for Allah Almighty, Who is the Provider of all the worlds. The best blessings and most complete salutations be upon the leader of the Messengers, Muhammad Mustafa, and on all his progeny and companions. O Allah! Accept our prayer. You are pure, and we praise You alone. I testify that there is no deity worthy of worship but You. I seek forgiveness from You and I repent in Your presence. Your Lord, the Lord of Might, is pure from those attributes which people describe, and peace be upon the messengers, and all praises are for Allah Almighty, Who is the Provider of all the worlds. (T)]

Alhamdulillah! The discourse has reached its conclusion and the research on the issue has reached its peak. It has been thirty years since this question was posed to this poor servant (the author). The issue was entirely new and fresh, and there was fear and apprehension due to my own lack of knowledge. Therefore, the beginning of the answer was started with these words: It is evident that currency notes are such a modern invention that very little time has passed since their introduction. During the time of the juristic authors, they did not exist at all, such that a specific detail (juz'iyyah) could be found explicitly in their discourse. However, as far as I can think at this moment, from a jurisprudential perspective, the permissibility of the situation in question seems apparent, and no reason for impermissibility is visible. The conclusion was on these words: "This is what has become apparent to me, and Allah, Glorified and Exalted, knows best." (T) Then, by the grace of the All-Powerful Lord, Almighty and Majestic, supporting evidences continued to appear consistently.

First Supporter: In Muharram 1324 AH, two noble scholars of Makkah al-Mukarramah, Maulana Abdullah Ahmad Mirdad, the Imam of Masjid al-Haram, and his teacher Maulana Hamid Ahmad Muhammad Jiddaawi (may their honor endure) asked this poor servant about all the jurisprudential issues related to currency notes.

In response, by the grace of the Bestower, Almighty and Majestic, the treatise "Kifl al-Faqih" was written there in less than a day and a half. The first fatwa was the result of a brief moment's consideration; this treatise, by the grace of Allah Almighty, was the result of hours of deep contemplation. As much as I reflected, the same conclusion became clearer, and no doubt stood in the way. This was the first supporter of that initial view.

ऐ माफ़ करने वाले, आमीन! और सब तारीफें अल्लाह के लिए हैं जो तमाम जहानों का पालने वाला है और बेहतरीन दुरूद और कामिल तरीन सलाम हो रसूलों के सरदार मुहम्मद और उन की तमाम आल और असहाब पर। आमीन। ऐ अल्लाह! तू पाक है और हम तेरी ही तारीफ करते हैं, मैं गवाही देता हूँ कि तेरे सिवा कोई इबादत के लायक नहीं, मैं तुझ से माफ़ी चाहता हूँ और तेरी बारगाह में तौबा करता हूँ। तेरा रब इज़्ज़त वाला पाक है उन बातों से जो लोग बयान करते हैं और सलाम हो रसूलों पर और सब तारीफें अल्लाह के लिए हैं जो तमाम जहानों का रब है।

[नुकसान न हो, ऐ इज़्ज़त वाले, ऐ बख्शने वाले! हमारी दुआ स्वीकार कर, सब तारीफें अल्लाह तआला के लिए हैं जो तमाम जहानों का पालनहार है। बेहतरीन दुरूद और सबसे मुकम्मल सलाम हो रसूलों के सरदार मुहम्मद मुस्तफा पर और आपकी तमाम आल और साथियों पर। ऐ अल्लाह! हमारी दुआ स्वीकार कर, तू पाक है और हम तेरी ही तारीफ करते हैं। मैं गवाही देता हूँ कि तेरे सिवा कोई माबूद नहीं, मैं तुझसे माफ़ी माँगता हूँ और तेरी दरगाह में तौबा करता हूँ। तेरा रब, इज़्ज़त का रब, उन गुणों से पाक है जो ये लोग बयान करते हैं, और सलाम हो रसूलों पर, और सब तारीफें अल्लाह तआला के लिए हैं जो तमाम जहानों का पालनहार है। (त)]

अल्हम्दुलिल्लाह! चर्चा अपने अंत तक पहुँच गई और मसले की तहकीकात अपने चरम पर पहुँच गई। इस फ़कीर (लेखक) से यह सवाल पूछे हुए तीस साल बीत चुके हैं। मसला बिल्कुल नया और ताज़ा था और अपनी कम-इल्मी का डर और अंदेशा था, इसलिए जवाब की शुरुआत इन शब्दों से की गई: ज़ाहिर है कि करेंसी नोट एक ऐसी नई चीज़ है जिसे पैदा हुए बहुत कम समय बीता है। फ़िक़्ह (इस्लामी न्यायशास्त्र) के लेखकों के समय में इसका अस्तित्व ही नहीं था कि उनके कलाम में इसका कोई स्पष्ट उल्लेख पाया जाए। लेकिन जहाँ तक अभी सोचा जा सकता है, फ़िक़्ह की नज़र में पूछे गए मामले की अनुमति (जवाज़) ही मालूम होती है, और अनुमति न होने का कोई कारण नज़र नहीं आता। और समापन इन शब्दों पर हुआ: "यह वह है जो मुझ पर ज़ाहिर हुआ और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है।" (त) फिर रब्ब-ए-कदीर अज़्ज़-ओ-जल्ल के फ़ज़ल से इसके समर्थन में प्रमाण लगातार सामने आते रहे:

प्रथम समर्थक: मुहर्रम 1324 हिजरी में मक्का मुकर्रमा के दो प्रतिष्ठित विद्वानों, मौलाना अब्दुल्ला अहमद मीरदाद, इमाम मस्जिद अल-हराम और उनके उस्ताद मौलाना हामिद अहमद मुहम्मद जद्दावी (अल्लाह उनका सम्मान बनाए रखे) ने इस फ़कीर से करेंसी नोट से संबंधित तमाम फ़िक़्ही मसलों के बारे में सवाल किया। इसके जवाब में, रब्ब-ए-वहाब अज़्ज़-ओ-जल्ल के फ़ज़्ल से, डेढ़ दिन से भी कम समय में वहीं 'किफ़्लुल फ़कीह' नामक शोध-पत्र लिख दिया। पहला फतवा एक संक्षिप्त पल के विचार का परिणाम था; यह शोध-पत्र, अल्लाह तआला के फ़ज़्ल से, घंटों के गहन चिंतन का परिणाम था। जितना मैंने विचार किया, वही रंग और निखरता गया और कोई संदेह रास्ते की रुकावट नहीं बना। यह उस प्रारंभिक विचार का पहला समर्थक था।

पृष्ठ 715 का 557

یا غفور أمین والحمد للہ رب العالمین وافضل الصلوٰۃ واکمل السلام علی سید المرسلین محمد و آلہ وصحبہ اجمعین أمین سبحانک اللھم وبحمدک اشھدان لا الہ الاانت استغفرک واتوب الیک سبحن ربک رب العزۃ عما یصفون و سلم علی المرسلین و الحمد للہ رب العالمین۔

میں خسارہ نہ ہو اے عزت والے اے بخشنے والے! ہماری دعا قبول فرما، تمام تعریفیں اللہ تعالٰی کے لئے ہیں جو تمام جہانوں کا پروردگار ہے، بہترین درود اور کامل ترین سلام ہو رسولوں کے سردار محمد مصطفٰی اور آپ کی تمام آل و اصحاب پر اے اللہ ! ہماری دعا قبول فرما، تو پاک ہے اور ہم تیری ہی تعریف کرتے ہیں، میں گواہی دیتا ہوں کہ تیرے سوا کوئی معبود نہیں میں تجھ سے مغفرت طلب کرتا ہوں اور تیری بارگاہ میں توبہ کرتا ہوں، تیرا رب رب العزت پاک ہے ان اوصاف سے جو وہ لوگ بیان کرتے ہیں اور سلام ہو رسولوں پر اور تمام تعریفیں اللہ تعالٰی کے لئے ہیں جو تمام جہانوں کا پروردگار ہے۔ (ت)

الحمد للہ ! کلام اپنے منتہی کو پہنچا اور تحقیق مسئلہ ذروہ اعلٰی کو تیس سال ہوئے کہ اس کا سوال فقیر سے ہوا اور مسئلہ بالکل حادث تازہ اور اپنی بے بضاعتی کا خوف و اندیشہ لہذا آغاز جواب ان لفظوں سے کیا، ظاہر ہے کہ نوٹ ایک ایسی حادث چیز ہے جسے پیدا ہوئے بہت قلیل زمانہ گزرا فقہائے مصنفین کے وقت میں اس کا وجود اصلاً نہ تھا کہ ان کے کلام میں اس کا جزئیہ بالتصریح پایا جائے مگر اس وقت جہاں تک خیال کیا جاتا ہے نظر فقہی میں صورت مسئولہ کا جواز ہی معلوم ہوتا ہے، اور عدم جواز کی کوئی وجہ نظر نہیں آتی اور انتہان لفظوں پر کہ ھذا ماظھر لی واللہ سبحنہ و تعالٰی اعلم (یہ وہ ہے جو میرے لئے ظاہر ہوا اور اللہ سبحانہ و تعالٰی بہتر جانتا ہے۔ ت) پھر بفضل رب قدیر عزجلالہ برابر اس کے مؤیدات ظاہر ہوتے رہے:

مؤید اول: محرم ۱۳۲۴ھ میں مکہ معظمہ کے دو علمائے کرام مولانا عبداللہ احمد میرداد امام مسجد الحرام اور ان کے استاذ مولانا حامد احمد محمد جداوی دوام بالا کرام نے نوٹ کے متعلق جملہ مسائل فقہیہ کا سوال اس فقیر سے کیا جس کے جواب میں بفضل و ہاب عزجلالہ ڈیڑھ دن سے کم میں رسالہ کفل الفقیہ وہیں لکھ دیا، پہلا فتاویٰ ایک خفیف ساعت کی نظر تھا یہ رسالہ بفضلہ تعالٰی پہروں کا خوض کامل جہاں تک غور کیا وہی رنگ کھلتا گیا اور کوئی شک سدِ راہ نہ ہوا، یہ نظر اولین کا پہلا مؤید تھا۔

Page 557 of 715

Fatawa Ridawiyyah Volume 17

Second Confirmation: Before this, the fatwa of Maulvi Lakhnawi had already come under review in print. This treatise also deliberated upon it thoroughly, and an impartial view clearly gave the same ruling. This became a second, stronger confirmation that the opposing argument of a brilliant and intelligent scholar was presented, a complete critique was done, and its lack of effect was revealed.

Third Confirmation: The prominent scholars and great Muftis of Makkah al-Mukarramah reviewed 'Kifl al-Faqih,' had it read to them, took copies, and by the grace of Allah, all praised it in one voice. These included His Excellency Shaykh al-A'immah wa al-Khutaba, the Great Scholar Hazrat Maulana Ahmad Abul Khair Mir Dad Hanafi; the Scholar of Scholars, former Mufti and current Qadi, Allama Maulana Shaykh Salih Kamal Hanafi; Hazrat Maulana, the Librarian of the Haram, the learned Sayyid Ismail Khalil Hanafi; and Hazrat Maulana, the Mufti of the Hanafis, Abdullah Siddiq (may Allah Almighty protect them). This illustrious scholar, who was distinguished in the high office of issuing Hanafi fatwas on behalf of the Sultanate, placed 'Kifl al-Faqih' in the library of the Holy Sanctuary and began studying it himself. I (the humble servant) was also present, but there was no introduction between us; I had not seen him before nor had he seen me. Hazrat Maulana Sayyid Ismail Effendi and his brother Sayyid Mustafa Effendi and others were also present. While studying the treatise, the Hanafi Mufti suddenly struck his knee in great astonishment and said:

[Arabic Boxed Text]: Where was Shaykh Jamal bin Abdullah bin Umar from this explanation or these words, or this meaning?

[Urdu Translation Boxed Text]: Why could Shaykh Jamal bin Abdullah bin Umar not reach this explanation or say words to this effect? (T)

The Grand Mufti of Makkah al-Mukarramah, Maulana Jamal bin Abdullah bin Umar Hanafi (may Allah Almighty have mercy on him), who is the teacher of my teacher in the chains of Hadith and Fiqh, was the Hanafi Mufti in his blessed time. An inquiry was sent to that exalted personality regarding currency notes. In accordance with the dignity of godly scholars, he only wrote: "Knowledge is a trust upon the necks of the scholars, and Allah Almighty knows best." That is, he did not provide a definitive answer. The current Hanafi Mufti alluded to this incident, wondering why the blessed mind of the late scholar did not reach the arguments that the author of this treatise is writing. Hazrat Maulana Sayyid Ismail Effendi introduced me, saying the author of

the treatise is present. The Hanafi Mufti met me with great kindness and honor, and by the grace of Allah Almighty, a session of scholarly discussions continued for a long time. How great confirmations were the praises and acceptance of all these scholars! All praise belongs to Allah, the Lord of all the worlds.

Fourth Confirmation: Now that 'Kifl al-Faqih' has been printed twice with translation, the fatwa of Maulvi Gangohi was noticed. Attention was turned towards it, and at the same time, it was desired that the fatwa of Mr. Lakhnawi should also be reviewed independently. The thought was that the discussions...

दूसरा समर्थन: इससे पहले मौलवी लखनवी साहब का फतवा छपकर विचाराधीन आ चुका था, इस लेख में उस पर भी पूरी तरह विचार किया गया और न्यायपूर्ण दृष्टि ने वही स्पष्ट आदेश दिया। यह दूसरा और अधिक शक्तिशाली समर्थन हुआ कि एक बुद्धिमान विद्वान का विपरीत तर्क सामने रखकर पूरी तरह से समीक्षा की गई और उसका बेअसर होना स्पष्ट हो गया।

तीसरा समर्थन: मक्का मुकर्रमा के प्रतिष्ठित विद्वानों और महान मुफ्ती साहबान ने 'किफ्ल अल-फकीह' का अवलोकन किया, इसे पढ़वाकर सुना, इसकी प्रतियां लीं और अल्लाह के अनुग्रह से सभी ने एक स्वर में इसकी प्रशंसा की। जिनमें हज़रत शेख अल-अइम्मा वल-खुतबा, महान विद्वान हज़रत मौलाना अहमद अबुल खैर मीर दाद हनफी; विद्वानों के विद्वान, पूर्व मुफ्ती और वर्तमान काजी, अल्लामा मौलाना शेख सालेह कमाल हनफी; हज़रत मौलाना, हरम के पुस्तकालयाध्यक्ष, विद्वान सैयद इस्माइल खलील हनफी; और हज़रत मौलाना, हनफी मुफ्ती अब्दुल्ला सिम्मीक (अल्लाह ताला उनकी रक्षा करे) शामिल थे। इन महान विद्वान ने, जो उस समय सल्तनत की ओर से हनफी फतवा जारी करने के उच्च पद पर प्रतिष्ठित थे, हरम शरीफ के पुस्तकालय में 'किफ्ल अल-फकीह' रखवाकर स्वयं अध्ययन करना शुरू किया। मैं (नगण्य दास) भी वहां उपस्थित था, लेकिन उनसे कोई परिचय नहीं था; न मैंने उन्हें पहले देखा था और न उन्होंने मुझे। हज़रत मौलाना सैयद इस्माइल एफेंदी और उनके भाई सैयद मुस्तफा एफेंदी आदि भी मौजूद थे। लेख का अध्ययन करते-करते हनफी मुफ्ती साहब ने अचानक बड़े आश्चर्य के साथ अपने घुटने पर हाथ मारा और कहा:

[अरबी बॉक्स]: शेख जमाल बिन अब्दुल्ला बिन उमर इस विवरण या इन शब्दों या इस अर्थ तक कहाँ थे?

[उर्दू अनुवाद बॉक्स]: शेख जमाल इब्न अब्दुल्ला इब्न उमर इस विवरण तक क्यों नहीं पहुँच सके या इसके समान अर्थ वाले शब्द कहे। (त)

मक्का मुकर्रमा के मुफ्ती-ए-आजम मौलाना जमाल बिन अब्दुल्ला बिन उमर हनफी (रहमतुल्लाह अलैहि), जो हदीस और फिक्ह की सनद में इस फकीर (लेखक) के उस्ताद के उस्ताद हैं, अपने समय में हनफी मुफ्ती थे। उस उच्च पद से नोट (मुद्रा) के बारे में फतवा मांगा गया था। हज़रत ने ईश्वरीय विद्वानों की गरिमा के अनुरूप केवल इतना लिखा: "ज्ञान विद्वानों की गर्दन पर एक अमानत है और अल्लाह ताला बेहतर जानता है।" यानी कोई स्पष्ट उत्तर नहीं दिया। वर्तमान हनफी मुफ्ती ने इसी

घटना की ओर इशारा किया कि हज़रत का धन्य मस्तिष्क उन दलीलों तक क्यों नहीं पहुँचा जो इस लेख का लेखक लिख रहा है। हज़रत मौलाना सैयद इस्माइल एफेंदी ने मेरा परिचय कराया कि लेख के लेखक यहीं मौजूद हैं। हज़रत मुफ्ती हनफी बड़े सम्मान और उदारता से मिले और अल्लाह के अनुग्रह से काफी समय तक विद्वानों की चर्चाओं की बैठक चलती रही। इन सभी विद्वानों की प्रशंसा और स्वीकृति कितने महान समर्थन बने! और सारी प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो सारे संसार का रब है।

चौथा समर्थन: अब जबकि 'किफ्ल अल-फकीह' अनुवाद के साथ दो बार छप चुकी है, मौलवी गंगोही साहब का फतवा नजर में आया। उस पर ध्यान दिया गया और साथ ही चाहा कि मौलवी लखनवी साहब के फतवे पर भी स्वतंत्र रूप से विचार किया जाए। विचार था कि बहस...

مؤید دوم: اس سے پہلے فتوائے مولوی لکھنوی صاحب چھپ کر زیر نظر آچکا تھا، رسالہ میں اس پر بھی خوض تام کیا اور نظر انصاف نے وہی حکم صاف دیا، یہ دوسرا مؤید اقوی ہوا ایک ذکی طباع عالم کی دلیل خلاف آگے رکھ کر تنقیح کامل کی اور اس کی بے اثری ظاہر ہوئی۔

مؤید سوم: مکہ معظمہ کے اجلہ علمائے کرام و مفتیان عظام نے کفل الفقیہ کو ملاحظہ فرمایا پڑھوا کر سنا اس کی نقلیں لیں اور بحمد اللہ سب نے یک زبان مدحیں کیں، جسے حضرت شیخ الائمہ والخطباء کبیر العلماء حضرت مولانا احمد ابوالخیر میر داد حنفی حضرت عالم العلماء مفتی سابق و قاضی حال علامہ مولانا شیخ صالح کمال حنفی، حضرت مولانا حافظ کتب الحرم فاضل سید اسمعیل خلیل حنفی، حضرت مولانا مفتی حنفیہ عبداللہ صدیق حفظہم اللہ تعالٰی، ان فاضل جلیل نے کہ اس وقت یہی جانب سلطانی سے افتائے مذہب حنفی کے عہدہ جلیلہ پر ممتاز تھے، کتب خانہ حرم محترم میں کفل الفقیہ رکھوا دیکھ کر بطور خود مطالعہ فرمانا شروع کیا فقیر بھی حاضر تھا، مگر ان سے کوئی تعارف نہ تھا، نہ اس سے پہلے میں نے ان کو نہ انہوں نے مجھ کو دیکھا، حضرت مولانا سید اسمعیل افندی اور ان کے بھائی سید مصطفٰی افندی وغیرہما بھی تشریف فرما تھے، حضرت مفتی حنفیہ نے رسالہ مطالعہ کرتے کرتے دفعۃً نہایت تعجب کے ساتھ اپنے زانو پر ہاتھ مارا اور فرمایا:

اَینَ کان الشیخ جمال بن عبداللہ بن عمر من ہذا البیان او لفاظ ہذا معناہ۔ شیخ جمال ابن عبداللہ ابن عمر اس بیان تک کیوں نہ پہنچ سکے یا اس کے ہم معنی لفظ کہے۔ (ت)

حضرت مفتی اعظم مکہ معظمہ مولانا جمال بن عبداللہ بن عمر حنفی رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ کہ سند حدیث وفقہ میں اس فقیر کے استاذ الاستاذ ہیں، اور اپنے زمانہ مبارک میں وہی مفتی حنفیہ تھے اس جناب رفیع سے نوٹ کے بارے میں استفتاء ہوا تھا حضرت ممدوح قدس سرہ نے علمائے ربانی کی جو شان ہے اس کے مطابق صرف اتنا تحریر فرمادیا کہ "العلم امانۃ فی اعناق العلماء واللہ تعالیٰ اعلم"۔ علم علماء کی گردنوں میں امانت ہے واللہ تعالیٰ اعلم یعنی کچھ جواب عطا نہ فرمایا، حنفیہ کے مفتی حال نے اس واقعہ کی طرف اشارہ کیا کہ حضرت ممدوح قدس سرہ کا ذہن مبارک ان دلائل کو کیوں نہ پہنچا جو اس رسالہ کا مصنف لکھ رہا ہے، حضرت مولانا سید اسمعیل افندی نے تعریف فرمایا کہ مصنف رسالہ یہ موجود ہے حضرت مفتی حنفیہ نہایت کرم و اکرام سے ملے اور بہت دیر تک بفضلہ تعالیٰ علمی تذکروں کی مجلس گرم رہی، ان تمام حضرات علماء کے مدائح و قبول کیسے مؤید جلیل ہوئے، والحمد للہ رب العالمین۔

مؤید چہارم: اب کہ کفل الفقیہ دو باہ مع ترجمہ چھپا، مولوی گنگوہی صاحب کا فتویٰ نظر پڑا اس کی طرف توجہ کی اور ساتھ ہی چاہا کہ فتوائے جناب مولوی لکھنوی صاحب پر بھی مستقل نظر ہو جائے خیال تھا کہ مباحث

Fatawa Ridawiyya Volume 17 (17)

...they were completed within the year itself, at most six pages would have sufficed, but by the grace of the Almighty, there was a continuous rain of additional subjects, and despite trying to stop the pen, instead of six pages, it became a treatise of three parts (juz), which left no sentence in both opposing discourses unaddressed. This, by the praise of Allah Almighty, became an even stronger and great supporter. Opinions gain maturity when they meet, and there are two forms of this: one is that influential opinions are proven; this is even stronger than the first case, that when opposing efforts fail after sweating in proving the contrary, it becomes clear that, by the praise of Allah Almighty, the issue is truth and the way to opposition is blocked. By the grace of Allah Almighty, this issue received an ample share from both types. In short, as far as one can see, the descent of consecutive supports from the heaven of the grace of Mustafa (peace and blessings of Allah be upon him) is apparent, and all praise is due to Allah. Despite all this, God forbid, the humble servant is not a mujtahid, nor does he hold a candle to the lowest slaves of the leading mujtahids, even to the dust of their shoes. God forbid, he cannot add anything to the divine law based on his deficient intellect. Whatever is in this fatwa and these two treatises is 'Jumd al-Muqall' (the effort of an imitator), i.e., the effort of a destitute needy person to the best of his ability. If it is the truth, it is purely the grace of my Lord and then His noble Beloved (peace and blessings of Allah be upon him), and for His noble countenance is all praise, and by His grace it is hoped that, if the Generous Allah wills, it is surely the truth. The heart-opening blessings of His house and the life-enhancing grace of His Beloved (peace and blessings of Allah be upon him) have bestowed this bounty upon His worthless beggar, otherwise, where is this humble person and where is the writing of this treatise in less than one and a half days? Then, the great scholars of His noble city liked it to this extent; these, by the grace of Allah Almighty, are all signs of acceptance. And if perhaps there is some subtle point in the knowledge of Allah to which neither my sight reached nor that of those scholars of the city of Allah the Sacred, then I turn in repentance to my Lord Almighty and in every matter I hold the belief which is truth in His sight, and I say what my Great Imam, our master Abdullah bin Mas'ud (may Allah be pleased with him) said:

Arabic	**Urdu Translation**
If it is correct, it is from Allah Almighty, and if it is wrong, it is from me and from Satan, and Allah and His	If this is correct, then it is from Allah Almighty, and if it is wrong, then it is from me and from Satan; Allah Almighty and His

Arabic	Urdu Translation
Messenger are free from it.[1] And I say: as our father Adam (upon our Prophet) said	Messenger (peace and blessings of Allah be upon him) are free from it. (T) And I say as our father Adam said

[1] Sunan Abi Dawud, Kitab an-Nikah, Bab fi-man Tazawwaja, Aftab-e-Alam Press Lahore 1/288. Page 559 of 715

...वे वर्षों में ही पूरे हो चुके थे, अधिकतम छह पृष्ठ पर्याप्त होते, लेकिन सर्वशक्तिमान की कृपा से अतिरिक्त विषयों की निरंतर वर्षा हुई और कलम को रोकते-रोकते छह पृष्ठों के स्थान पर यह तीन भागों (जुज़) का एक शोध प्रबंध बन गया, जिसने विरोधी प्रवचनों में कोई वाक्य अनछुआ नहीं छोड़ा। यह, अल्लाह तआला की प्रशंसा से, एक और भी मजबूत और महान समर्थक बन गया। राय मिलने से ज्ञान में परिपक्वता आती है और इसके दो रूप हैं: एक यह कि प्रभावशाली राय सिद्ध हो जाए; यह पहले मामले से भी अधिक प्रबल है कि जब विपरीत सिद्ध करने में पसीना बहाने के बाद विरोधी प्रयास विफल हो जाते हैं, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि, अल्लाह तआला की प्रशंसा से, मामला सत्य है और विरोध का मार्ग बंद है। अल्लाह तआला की कृपा से, इस मुद्दे को दोनों प्रकारों से पर्याप्त हिस्सा मिला। संक्षेप में, जहाँ तक दृष्टि जाती है, मुस्तफा (उन पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो) की कृपा के आकाश से निरंतर समर्थन का उतरना प्रत्यक्ष है, और सारी प्रशंसा अल्लाह के लिए है। इस सबके बावजूद, ईश्वर न करे, यह विनम्र सेवक मुजतहिद नहीं है, न ही वह प्रमुख मुजतहिदों के निम्नतम दासों, यहाँ तक कि उनके जूतों की धूल के बराबर भी योग्यता रखता है। ईश्वर न करे, वह अपनी अल्प बुद्धि के आधार पर ईश्वरीय कानून में कुछ भी जोड़ नहीं सकता। इस फतवे और इन दो शोध प्रबंधों में जो कुछ भी है वह 'जुमद अल-मुक़ल्ल' (एक अनुकरणकर्ता का प्रयास) है, अर्थात एक दरिद्र ज़रूरतमंद व्यक्ति का अपनी पूरी शक्ति से किया गया प्रयास। यदि यह सत्य है, तो यह विशुद्ध रूप से मेरे रब की और फिर उनके महान महबूब (उन पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो) की कृपा है, और उनके महान स्वरूप के लिए ही सारी प्रशंसा है, और उनकी कृपा से आशा है कि, यदि अल्लाह उदार चाहे, तो यह निश्चित रूप से सत्य है। उनके घर के हृदय-स्पर्शी आशीर्वाद और उनके महबूब (उन पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो) की जीवन-वर्धक कृपा ने अपने इस मूल्यहीन भिखारी पर यह उपकार किया है, अन्यथा कहाँ यह विनम्र व्यक्ति और कहाँ डेढ़ दिन से भी कम समय में इस शोध प्रबंध की रचना करना? फिर, उनके महान शहर के महान विद्वानों ने इसे इस हद तक पसंद किया; ये अल्लाह तआला की कृपा से स्वीकार्यता के संकेत हैं। और यदि शायद अल्लाह के ज्ञान में कोई ऐसी सूक्ष्म बात है जिस तक न मेरी दृष्टि पहुँची और न ही अल्लाह के पवित्र शहर के उन विद्वानों की, तो मैं अपने रब की ओर पश्चाताप के साथ झुकता हूँ और हर मामले में उस विश्वास को रखता हूँ जो उसकी दृष्टि में सत्य है, और मैं वही कहता हूँ जो मेरे इमाम-ए-आज़म हमारे स्वामी अब्दुल्ला बिन मसूद (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) ने कहा:

अरबी	उर्दू अनुवाद
यदि यह सही है, तो यह अल्लाह तआला की ओर से है, और यदि यह गलत है, तो यह मेरी ओर से और शैतान की ओर से है, और अल्लाह और उसके रसूल इससे बरी (मुक्त) हैं।[1] और मैं कहता हूँ: जैसा कि हमारे पिता आदम (हमारे नबी पर) ने कहा	अगर यह दुरुस्त है तो अल्लाह तआला की तरफ से और अगर गलत है तो मेरी तरफ से और शैतान की तरफ से है, अल्लाह तआला और उसका रसूल सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम इससे बरी हैं। (त) और मैं कहता हूँ जैसे हमारे बाप आदम ने कहा

[1] सुनन अबू दाऊद, किताब अन-निकाह, बाब फी-मन तज़व्वजा, आफताब-ए-आलम प्रेस लाहौर १/२८८। पेज 559 का 715

توسالے ہی میں تمام ہو چکے ہیں غایت درجہ چھ ورق بس ہوں گے ، مگر فیضِ قدیر سے اضافہ مضامین کی لگاتار بارش ہوئی اور قلم روکتے روکتے چھ ورق کی جگہ تین جزء کارسالہ ہو گیا جس نے دونوں کلام مخالف میں کوئی فقرہ لگانہ رکھا یہ بحمد اللہ تعالٰی اور بھی قوی تر مؤیدِ عظیم ہوا۔ رائیں ملنے سے علم پختگی پاتے ہیں اور اس کی دو صورتیں ہیں ایک یہ کہ ذی رائے اثر ثابت ہوں یہ پہلی صورت سے بھی اقوٰی ہے کہ جب مخالفانہ کوششیں اثبات خلاف میں عرق ریزی کر کے ناکام رہیں واضح ہو جاتا ہے کہ بحمد اللہ تعالٰی مسئلہ حق ہے اور خلاف کی طرف راہ مسدود، بفضلہ تعالٰی اس مسئلہ نے دونوں قسم سے حظ وافی پایا بالجملہ جہاں تک نظر کی جاتی ہے ہے آسمان فیض مصطفٰی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے متواتر تائیدوں کا نزول ظاہر ہے وللہ الحمد، بایں ہمہ حاشا فقیر مجتہد ہے نہ ائمہ مجتہدین کے ادنٰی غلاموں کا پاسنگ ان کی خاک نعل کے برابر بھی منہ نہیں رکھتا۔ نہ معاذ اللہ شرع الٰہی میں اپنی عقل قاصر کے بھروسے پر کچھ بڑھا سکتا۔ اس فتوٰی اور ان دونوں رسالوں میں جو کچھ ہے جُمد المقل ہے یعنی ایک بے نوا محتاج کی اپنی طاقت بھر کوشش، اگر حق ہے تو محض میرے مولا پھر اس کے حبیب اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کا کرم ہے اور اسی کے وجہ کریم کے لئے حمد اور اس کے فضل سے امید ہے کہ ان شاء اللہ الکریم ضرور حق ہے اس کے گھر کی برکات دلکشا اس کے حبیب صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کے کرم جانفزا نے اپنے گدائے بیقدر پر یہ فیضان کئے ہیں ورنہ کہاں یہ عاجز اور کہاں ڈیڑھ دن سے کم میں یہ رسالہ تصنیف کر دینا، پھر اس کے شہر کریم کے اکابر علمائے کرام نے اس درجہ پسند فرمایا یہ بفضلہ عزوجل سب آثار قبول ہیں اور اگر شاید یہاں علم الٰہی میں کوئی دقیقہ ایسا ہے جس تک نہ میری نظر پہنچی نہ ان علمائے کرام بلد اللہ الحرام کی تو میں اپنے رب

عزوجل کی طرف انابت کرتا اور ہر مسئلہ میں اس پر اعتقاد رکھتا ہوں جو اس کے نزدیک حق ہے اور وہ کہتا ہوں جو میرے امام اعظم حضور سیدنا عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ نے فرمایا:

عربی	اردو ترجمہ
فان یك صوابا فمن اللہ تعالیٰ وان یك خطأ فمنی ومن الشیطان واللہ ورسولہ برئیان [1]- واقول: کما قال ابونا آدم علی نبینا	اگر یہ درست ہے تو اللہ تعالیٰ کی طرف سے اور اگر غلط ہے تو میری طرف سے اور شیطان کی طرف سے ہے ، اللہ تعالیٰ اور اس کا رسول صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم اس سے بری ہیں۔ (ت) اور میں کہتا ہوں جیسے ہمارے باپ آدم نے کہا

[1] سنن ابوداؤد کتاب النکاح باب فیمن تزوج آفتاب عالم پریس لاہور ۱/ ۲۸۸ Page 559 of 715

Vol. 17 (17) Fatawa Razawiyya

(May Allah Almighty send the best blessings and peace upon our noble Prophet and Hazrat Adam). O Allah! You know my secret and my manifest (inner and outer), so accept my apology; and You know my need, so grant me my desire; and You know what is in my soul, so forgive my sins. And may Allah Almighty send eternal blessings, barakah, and peace upon our leader and master Muhammad Mustafa, his family, companions, offspring, and group. And the conclusion of our prayer is that all praise belongs to Allah, the Lord of all the worlds. You are pure, O Allah! and with Your praise I testify that there is no god but You; I seek Your forgiveness and turn towards You. The poor (humble) Ahmad Raza Qadri Barkati Barelvi said this, may Allah Almighty forgive him, fulfill his hopes, and set his actions right. And all praise belongs to Allah, and blessings and peace be upon His chosen Prophet (Muhammad, may Allah Almighty send peace and blessings upon him) at the beginning and end of every word. Ameen. (T)

Page 560 of 715

जिल्द 17 (17) फ़तावा रज़विया

(अल्लाह ताला हमारे नबी करीम और हज़रत आदम पर बेहतरीन दुरूद और सलाम नाज़िल फरमाए) ऐ अल्लाह! तू मेरे ज़ाहिर और बातिन को जानता है, इसलिए मेरी माज़रत कबूल फरमा; और तू मेरी हाजत को जानता है, इसलिए मेरी मुराद मुझे अता फरमा; और तू उसे जानता है जो मेरे दिल में है, इसलिए मेरे गुनाह माफ फरमा। और अल्लाह ताला हमारे सरदार और आका मुहम्मद मुस्तफा, आपकी आल, असहाब, औलाद और जमाअत पर हमेशा-हमेशा दुरूद, बरकत और सलाम नाज़िल फरमाए, और हमारी दुआ का खात्मा यह है कि तमाम तारीफें अल्लाह ताला के लिए हैं जो तमाम जहानों का परवरदिगार है। तू पाक है ऐ अल्लाह! और तेरी हम्द के साथ मैं गवाही देता हूँ कि तेरे सिवा कोई इबादत के लायक नहीं, मैं तुझसे मगफिरत तलब करता हूँ और तेरी तरफ रुजू करता हूँ। यह बात फकीर अहमद रज़ा कादरी बरकाती बरेलवी ने कही, अल्लाह ताला उसकी मगफिरत फरमाए और उसकी उम्मीद को पूरा फरमाए और उसके अमल को दुरुस्त रखे, और तमाम तारीफें अल्लाह ताला के लिए हैं और दुरूद व सलाम हो उसके मुंतखब नबी, (मुहम्मद सल्लल्लाहु ताला अलैहि वसल्लम) पर हर कलाम के अव्वल व आखिर में। आमीन। (त)

पृष्ठ 560/715

الکریم وعلیہ افضل الصلوٰۃ والتسلیم اللھم انک تعلم سری وعلانیتی فاقبل معذرتی وتعلم حاجتی فاعطنی سؤلی وتعلم مافی نفسی فاغفر لی ذنوبی وصلی اللہ تعالٰی علٰی سیدنا محمد واٰلہ وصحبہ وابنہ وحزبہ وبارک وسلم ابدا ابدا واٰخر دعوانا ان الحمد للہ رب العلمین سبحنک اللھم وبحمدک اشھدان لا الہ الا انت استغفرک واتوب الیک قال الفقیر احمد رضا القادری البرکاتی البریلوی غفر اللہ تعالٰی لہ وحقق املہ واصلح عملہ والحمد للہ والصلوٰۃ والسلام علی مصطفٰہ اٰخر کل کلام واولہ اٰمین۔

(اللہ تعالیٰ ہمارے نبی کریم اور حضرت آدم پر بہترین درود و سلام نازل فرمائے) اے اللہ! تو میرے ظاہر و باطن کو جانتا ہے پس میری معذرت قبول فرما، اور تو میری حاجت کو جانتا ہے پس میری مراد مجھے عطا فرما، اور تو اس کو جانتا ہے جو میرے دل میں ہے پس میرے گناہ معاف فرما۔ اور اللہ تعالیٰ ہمارے سردار اور آقا محمد مصطفی، آپ کی آل، اصحاب، اولاد اور جماعت پر ہمیشہ ہمیشہ درود، برکت اور سلام نازل فرمائے، اور ہماری دعا کا خاتمہ یہ ہے کہ تمام تعریفیں اللہ تعالیٰ کے لئے ہیں جو تمام جہانوں کا پروردگار ہے تو پاک ہے اے اللہ! اور تیری حمد کے ساتھ میں گواہی دیتا ہوں کہ تیرے سوا کوئی عبادت کے لائق نہیں، میں تجھ سے مغفرت طلب کرتا ہوں اور تیری طرف رجوع کرتا ہوں یہ بات فقیر احمد رضا قادری برکاتی بریلوی نے کہی، اللہ تعالیٰ اس کی مغفرت فرمائے اور اس کی امید کو پورا فرمائے اور اس کے عمل کو درست رکھے، اور تمام تعریفیں اللہ تعالیٰ کے لئے ہیں اور درود و سلام ہو اس کے منتخب نبی، (محمد صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم) پر ہر کلام کے اول و آخر میں، آمین۔ (ت)

Fatawa Razawiyya Volume 17

Chapter of Entitlement (Explanation of Entitlement)

Problem 220: What do the scholars of religion say regarding this matter? Ghulam Hussain died leaving behind his wife Niazan and his sister Bani as heirs, leaving an estate consisting of two houses—one pucca (solidly built) and one katcha (weakly built)—valued at approximately six hundred rupees. A dower (mahr) of one thousand rupees was payable by Ghulam Hussain to Niazi Bibi. Niazi Bibi took possession of both houses against her dower and sold the pucca house for four hundred and fifty rupees to Sheikh Muhammad Wazir. In the sale deed, she followed the custom and wrote herself as the sole owner, possessor, and disposer, handing over possession to the buyer. Afterwards, the seller went for Hajj. In her absence, Bani filed a lawsuit for three-quarters (three-fourths) of the house based on inheritance and obtained a court decree. One-quarter remained with the buyer. Niazi Bibi died after returning from Hajj. The heirs of Niazi Bibi filed a claim for her dower, which was proven. A decree was issued against Bani, resulting in three-quarters of the pucca house and the entire katcha house being auctioned towards the dower. Now, the heirs of Niazi Bibi wish to auction the remaining one-quarter for the rest of the dower. What is the Shariah ruling in this situation? Is the sale made by Niazi Bibi valid or not, and is the claim of the heirs correct or void? And if the three-quarters that were taken from the buyer, as well as this remaining one-quarter, were to be legally removed, is the price the buyer paid to Niazi Bibi refundable or not? State the ruling and be rewarded.

The Answer: In the situation under query, Niazi Bibi, whose dower was more than Ghulam Hussain's total estate, took possession of the entire legacy through dower...

Page 561 of 715

फ़तावा रजविया जिल्द 17

बाब अल-इस्तिहक़ाक़ (अधिकार का बयान)

मसला 220: धर्म के विद्वान इस मामले में क्या फरमाते हैं कि ग़ुलाम हुसैन ने अपनी पत्नी नियाज़ान और बहन बनी को वारिस के रूप में छोड़ा और अपनी विरासत में दो मकान (एक पक्का और एक कच्चा) छोड़ कर वफ़ात पाई, जिनकी कीमत लगभग छह सौ रुपये है। नियाज़ी बीबी का एक हज़ार रुपये मेहर ग़ुलाम हुसैन के ज़िम्मे देना बाकी था। नियाज़ी बीबी ने मेहर के ज़रिए दोनों मकानों पर क़ब्ज़ा कर लिया और पक्का मकान साढ़े चार सौ रुपये के बदले शेख मुहम्मद वज़ीर को बेच दिया और बैनामे में मामूल के मुताबिक खुद को तन्हा मालिक, क़ाबिज़ और मुतसर्रिफ़ लिखा और खरीदार (मुश्तरी) को क़ब्ज़ा दिला दिया। उसके बाद, बेचने वाली हज पर चली गई। उसकी गैर-मौजूदगी में बनी ने विरासत के ज़रिए मकान के तीन-चौथाई (तीन रबा) पर दावा किया और कचहरी से डिक्री हासिल कर ली। एक-चौथाई खरीदार के पास रहा। नियाज़ी बीबी हज से वापस आकर वफ़ात पा गईं। नियाज़ी बीबी के वारिसों ने मेहर का दावा किया जो साबित हो गया। बनी पर डिक्री हुई तो पक्के मकान का तीन-चौथाई और पूरा कच्चा मकान मेहर की अदायगी के लिए नीलाम हो गए। अब नियाज़ी बीबी के वारिस बचे हुए एक-चौथाई को भी मेहर में नीलाम करना चाहते हैं। इस सूरत में शरीयत का क्या हुक्म है? क्या वह बिक्री जो नियाज़ी बीबी ने की थी जायज़ है या नहीं और वारिसों का दावा सही है या बातिल (अमान्य)? और वे तीन-चौथाई जो खरीदार के हाथ से निकल गए और यह बचा हुआ एक-चौथाई भी अगर शरीयत के हुक्म से निकल जाए, तो क्या वह कीमत (थमन) जो खरीदार ने नियाज़ी बीबी को दी थी, वापसी के काबिल है या नहीं? बयान करें और अज्र पाएँ।

अल-जवाब: सूरत-ए-मुस्तफ़्सरा (पूछी गई स्थिति) में नियाज़ी बीबी ने, जिनका मेहर ग़ुलाम हुसैन की कुल मिलकियत से ज़्यादा था, पूरी विरासत पर जो मेहर के ज़रिए...

فتاوٰی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

باب الاستحقاق (استحقاق کا بیان)

مسئلہ ۲۲۰: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ غلام حسین نے زوجہ نیازن اور ہمشیرہ بنی وارث اپنے اور دو مکان ایک پختہ اور ایک خام جن کی قیمت بقدر چھ سو روپے کے ہے ترکہ چھوڑ کر انتقال کیا، نیازی بی بی کا ایک ہزار روپیہ مہر ذمہ غلام حسین واجب الادا تھا۔ نیازی بی بی نے بذریعہ مہر دونوں مکانوں پر قبضہ کیا اور مکان پختہ بعوض ساڑھے چار سو روپیہ کے شیخ محمد وزیر کے ہاتھ بیچ کیا اور بیعنامہ میں حسب معمول صرف اپنا مالک و قابض و متصرف ہونا لکھا اور مشتری کو قبضہ دلا دیا بعدہ، بائعہ حج کو گئی اس کے پیچھے بنی نے بذریعہ وارثت تین ربع کا مکان پر دعوٰی کیا اور کچہری سے ڈگری پائی ایک ربع مشتری کے پاس رہا، نیازی بی بی حج سے واپس آکر انتقال کر گئی وارثان نیازی بی بی نے دعوٰی مہر کیا ثابت ہوا بنی پر ڈگری ہوئی تو تین ربع مکان پختہ اور کل مکان خام مہر میں نیلام ہوگئے اب وارثان نیازی بی بی ایک ربع پر باقی ماندہ کو بھی مہر میں نیلام کر لینا چاہتے ہیں، اس صورت میں شرعا کیا حکم ہے آیا وہ بیع کہ نیازی بی بی نے کی تھی جائز ہے یا نہیں اور دعوٰی وارثان صحیح ہے یا باطل؟ اور تین ربع کہ مشتری سے نکل گئے اور یہ ربع باقی ماندہ بھی اگر بحکم شرع نکل جائے تو آیا وہ ثمن کہ مشتری نے نیازی بی بی کو دیا قابل واپسی ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: صورت مستفسرہ میں نیازی بی بی نے جس کا مہر مال غلام حسین سے زائد تھا کل متروکہ پر جو بذریعہ مہر

Fatawa Razawiyyah, Volume 17

The possession was correct, and according to the legal opinion currently held by the scholars, Niyaz Bibi had become the independent owner of these houses. The sale she conducted to Muhammad Wazir was valid and effective. The claim of inheritance did not reach her sons because the payment of the dower (mahr) takes precedence over the distribution of the estate. Neither could the heirs of Niyaz Bibi claim the dower, as Niyaz Bibi had already received her dower during her lifetime. Ultimately, her possession of the entire legacy was by way of dower. Therefore, there should be no claim for the paid debt, meaning the property should not have been auctioned for the dower. Instead, the ruling was that Niyaz Bibi had received her dower and became the owner of both houses. One house she had sold during her lifetime; the buyer is its full owner. The other house, which remained, is established as the legacy of Niyaz Bibi and should be distributed among her heirs.

Arabic Text

In Shami and Tahtawi, from the commentary on Al-Kanz by Allamah Al-Hamwi, from Imam Allamah Ali Al-Maqdisi, from his grandfather Al-Ashqar, from the commentary on Al-Quduri by Imam Al-Akhsab: "The impermissibility of taking from a different kind was in their time due to their compliance regarding rights. Today's fatwa is on the permissibility of taking when one is able, from whatever property it may be." 1

Urdu Translation (T)

In Shami and Tahtawi, it is narrated from Allamah Hamwi's commentary on Kanz with reference to Imam Allamah Ali Maqdisi; he narrated from his grandfather Ashqar with reference to the commentary of Quduri by Imam Akhsab that the non-permissibility of collecting from a different kind was in the time of the elders because those people were mutually agreeable on rights. Nowadays, the fatwa is on this: that when one is capable of collecting one's own due, let them collect it from whatever property it may be, it is permissible. (T)

And hypothetically, even if this fatwa is not taken as the basis, the estate of Ghulam Husain was not the property of any heir, neither Niyaz Bibi's nor her sons'.

Arabic Text

For a debt that encompasses the whole prevents the ownership of the heir, 2 as mentioned in Al-Ashbah and others.

Urdu Translation (T)

Because a debt covering the entire wealth prevents the heir's ownership, as is mentioned in Ashbah etc. (T)

So the sale that Niyaz Bibi made was of a thing of which she was not the owner, and she took the price from the buyer and used it for herself. In this case, while declaring the sale invalid for the payment of the dower, the property should be taken away from the buyer.

---

1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Hajr, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 5/95.
2. Al-Ashbah wa al-Naza'ir, Third Art, Al-Qawl fi al-Milk, Idarat al-Qur'an wa al-Ulum al-Islamiyyah, Karachi, 2/202.

फ़तावा रज़विया, खंड 17

क़ब्ज़ा सही था और उस धर्ममत पर जिस पर अब विद्वानों का फ़तवा है, नियाज़ बीवी इन मकानों की स्वतंत्र मालिक बन चुकी थीं और वह बिक्री जो उन्होंने मोहम्मद वज़ीर के हाथ की थी, वह सही और प्रभावी थी। बेटों तक विरासत का दावा नहीं पहुँचा क्योंकि मेहर की अदायगी संपत्ति के बँटवारे से पहले आती है। न ही नियाज़ बीवी के वारिस मेहर का दावा कर सकते थे क्योंकि नियाज़ बीवी अपने जीवनकाल में ही अपना मेहर पा चुकी थीं। अंततः पूरी छोड़ी हुई संपत्ति (मतरूका) पर उनका क़ब्ज़ा मेहर के ज़रिए था। तो अब चुकाए गए ऋण का दावा यानी उस संपत्ति की मेहर में नीलामी नहीं होनी चाहिए थी। बल्कि हुक्म यह था कि नियाज़ बीवी अपना मेहर पा चुकी थीं और दोनों मकानों की वही मालिक ठहरीं। एक मकान वह अपने जीवनकाल में बेच चुकी थीं, उसका खरीदार पूरा मालिक है। दूसरा मकान जो बाकी रहा, वह नियाज़ बीवी की विरासत ठहर कर उनके वारिसों में बँट जाना चाहिए।

अरबी पाठ

शामी और तहतावी में अल्लामा हमवी की कंज़ की व्याख्या से इमाम अल्लामा अली मक़्दिसी के हवाले से नक़ल है, उन्होंने अपने दादा अश्क़र से इमाम अख़्सब की क़ुदूरी की व्याख्या के हवाले से उल्लेख किया कि अलग वस्तु से वसूल करने की मनाही पूर्वजों के समय में थी क्योंकि वे लोग आपस में अधिकारों पर सहमत थे। आज कल फ़तवा इस पर है कि जब अपने (हक़) की वसूली पर सक्षम हों, चाहे किसी भी माल से हो, तो वसूल कर लेना जायज़ है। 1

उर्दू अनुवाद (त)

शामी और तहतावी में अल्लामा हमवी की शरह कंज़ से बहवाला इमाम अल्लामा अली मुक़द्दसी मनक़ूल है, उन्होंने अपने दादा अशक़र से बहवाला शरह क़ुदूरी अज़ इमाम अख़्सब ज़िक्र किया कि ख़िलाफ़े जिंस से वसूल करने का अदम जवाज़ मशाईख़ के ज़माना में था क्योंकि वो लोग हुक़ूक़ में बाहम मुत्तफ़िक़ थे आज कल फ़तवा इस पर है कि जब अपने की वसूली पर क़ादिर हो चाहे किसी भी माल से हो तो वसूल कर लेना जाइज़ है। (त)

और मान लीजिए अगर इस फ़तवा को आधार न भी मानें तो गुलाम हुसैन की छोड़ी हुई संपत्ति (मतरूका) किसी वारिस की मिल्कियत न थी, न नियाज़ बीवी की और न ही बेटों की।

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद (त)
क्योंकि पूरी संपत्ति को घेरने वाला कर्ज़ वारिस की मिल्कियत में बाधा है, 2 जैसा कि अश्बाह आदि में है।	क्योंकि तमाम माल का एहाता करने वाला क़र्ज़ वारिस की मिल्कियत से मानय है जैसा कि अश्बाह वग़ैरा में है। (त)

तो वह बिक्री जो नियाज़ बीवी ने की, वह उस चीज़ की बिक्री थी जिसकी वह मालिक नहीं थीं और उन्होंने खरीदार से कीमत लेकर अपने उपयोग में लाई। इस स्थिति में मेहर की अदायगी के लिए बिक्री को नाजायज़ करार देकर संपत्ति खरीदार से निकाल ली जाए।

---

1. रद-उल-मुहतार, किताब अल-हज्र, दार इहया अल-तुरास अल-अरबी, बेरूत, 5/95.
2. अल-अश्बाह व अन-नज़ाइर, तीसरा लेख, अल-क़ौल फ़िल-मिल्क, इदारात अल-क़ुरान व अल-उलूम अल-इस्लामिया, कराची, 2/202.

قبضہ کیا صحیح تھا اور اس مذہب پر جس پر اب علماء کا فتوٰی ہے نیاز بی بی ان مکانوں کی مالک مستقل ہوچکی اور وہ بیع کہ اس نے بدست محمد وزیر کی صحیح و نافذ تھی نہ بنی کو اپنا دعوی وراثت پہنچا تھا کہ ادائے مہر تقسیم ترکہ پر مقدم ہے نہ وارثان نیاز بی بی دعوٰی مہر کر سکتے تھے کہ نیاز بی بی اپنی حیات میں اپنا مہر پاچکی آخر کل متروکہ پر اس کا قبضہ کرلینا بذریعہ مہری تھا تو اب دین ادا شدہ کا دعوی کا یعنی نہ اس جائیداد کا مہر میں نیلام ہونا چاہئے تھا بلکہ حکم یہ تھا کہ نیاز بی بی اپنا مہر پاچکی اور دونوں مکانوں کی وہی مالک ٹھہری ایک مکان وہ اپنی حیات میں بیچ کر چکی وہ تمام مالک مشتری ہے دوسرا مکان خام کہ باقی رہا متروکہ نیاز بی بی ٹھہر کر وارثان نیاز بی بی پر تقسیم ہو جائے۔

عربی عبارت

فی الشامی و الطحطاوی عن شرح الکنز العلامة الحموی عن الامام العلامة علی المقدسی عن جده الاشقر عن شرح القدوری للامام الاخصب ان عدم جواز الاخذ من خلاف الجنس کان فی زمانهم لمطاوعتهم فی الحقوق و الفتوی الیوم علی جواز الاخذ عند القدرة من ای مال کان ۔ 1

اردو ترجمہ

شامی اور طحطاوی میں علامہ حموی کی شرح کنز سے بحوالہ امام علامہ علی مقدسی منقول ہے، انہوں نے اپنے دادا اشقر سے بحوالہ شرح قدوری از امام اخصب ذکر کیا کہ خلاف جنس سے وصول کرنے کا عدم جواز مشائخ کے زمانہ میں تھا کیونکہ وہ لوگ حقوق میں باہم متفق تھے آج کل فتوٰی اس پر ہے کہ جب اپنے کی وصولی پر قادر ہو چاہے کسی بھی مال سے ہو تو وصول کرلینا جائز ہے۔ (ت)

اور بالفرض اگر اس فتویٰ کو ماخوذ نہ رکھیں تو متروکہ غلام حسین کسی وارث کی ملک نہ تھا نہ نیاز بی بی کی نہ بنی کی۔

عربی عبارت	اردو ترجمہ
فان الدین المحیط یمنع ملك الوارث 2 کما فی الاشباہ و غیرہا	کیونکہ تمام مال کا احاطہ کرنے والا قرض وارث کی ملکیت سے مانع ہے جیسا کہ اشباہ وغیرہ میں ہے۔ (ت)

تو بیع کہ نیاز بی بی نے کی اس شے کی بیع تھی جس کی وہ مالک نہ تھی اور ثمن مشتری سے لے کر اپنے تصرف میں لائی اس صورت میں جبکہ ادائے مہر کے لئے بیع کو ناجائز ٹھہرا کر جائیداد مشتری سے نکال لی جائے

---

1 رد المحتار کتاب الحجر داراحیاء التراث العربی بیروت ۵/۹۵ 2 الاشباہ والنظائر الفن الثالث القول فی الملك ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۲۰۲/۲

Fatawa Ridawiyyah Volume (17)

The buyer absolutely has the right to the return of the purchase price. The reason is that if the item sold is taken from him and he pays the price, then that [the price] should not be withheld from him either. Therefore, whatever money was obtained from the dower of Niyaz Bibi, or is available now, first four hundred and fifty should be given to the buyer from it, and what remains should be divided among the heirs of Niyaz Bibi.

| In Al-Khaniyah etc., "Someone bought something and it was taken from his hand [due to a third-party claim], the buyer returns to the seller for the price." [Condensed]. And Allah Almighty knows best. | It is in Khaniyah that if someone bought an item and then a rightful claim was established on that item while in his possession (so it left his possession), the buyer will take back the price from the seller. [Gleanings]. And Allah Almighty knows best. (T) |

Issue 221: From Old City, sent by Syed Farhat Ali Sahib, 10 Ramadan al-Mubarak 1322 AH. What do the scholars of religion and jurists of the firm Sharia say on this issue: A person died leaving a widow, three minor sons, and one minor daughter. Among these heirs, the widow and the daughter, establishing themselves, sold the entire house of the deceased. Now the sons are seeking the return of their legal shares. In the meantime, the buyer has carried out some new construction in the house. If the sons' shares are declared returnable by the court, are they liable to pay for the aforementioned new construction and repair costs according to Sharia, while the sons do not have the capacity to pay the costs, or is the buyer liable to demolish his new building?

The Answer: If it is proven that legally the claimants also have a share in the sale, then after proof of the ruling, division will be carried out. If that new construction which the buyer made falls into the buyer's [own remaining] share, then well and good; otherwise, it will be permissible for the claimants to tell the buyer to demolish his new construction from their land and take it away, and he will not be entitled to receive any building or repair expenses from these claimants. It will also be permissible by mutual consent for the buyer to take the price of the new building from the claimants and leave the building for them. And Allah Almighty knows best.

Issue 222: Sent by Shahzada Miyan from Rampur State, questioned by Ali Bahadur Khan Sahib, 16 Dhu al-Hijjah 1331 AH. What do the scholars of religion say on this issue: Bakr sold a tax-free land consisting of two numbers to Zaid with these words:

"parallel (7 Allah) solid land number (444 with 5), (435 with 12), for four hundred rupees to the hand of Zaid..."

1. Fatawa Qazi Khan, Kitab al-Buyu' (Book of Sales), Section on Entitlement, Nawal Kishore Press, Lucknow, 2/378.

फ़तावा रज़विया जिल्द (17)

खरीदार को निश्चित रूप से खरीद मूल्य की वापसी का अधिकार है। कारण यह है कि यदि बेची गई वस्तु उससे छीन ली जाए और वह मूल्य का भुगतान भी कर दे, तो फिर वह [मूल्य] भी उसे वापस न दिया जाए ऐसा नहीं होना चाहिए। अतः नियाज़ बीबी के महर से जो भी धन प्राप्त हुआ था या अब जो उपलब्ध है, उसमें से पहले साढ़े चार सौ खरीदार को दिए जाएँ, जो शेष बचे उसे नियाज़ बीबी के उत्तराधिकारी आपस में बाँट लें।

| 'अल-ख़ानिया' आदि में है: "किसी ने कोई चीज़ खरीदी और फिर वह उसके हाथ से निकल गई [हक़दारी के कारण], तो खरीदार विक्रेता से कीमत वापस लेगा।" (संक्षिप्त)। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। | 'ख़ानिया' में है कि यदि किसी ने कोई वस्तु खरीदी और फिर उसके कब्ज़े में उस वस्तु पर किसी का अधिकार सिद्ध हो गया (तो वह उसके कब्ज़े से निकल गई), तो खरीदार विक्रेता से कीमत वापस लेगा। [चयनित अंश]। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त) |

मसला 221: पुराने शहर से, सैयद फ़रहत अली साहब द्वारा प्रेषित, 10 रमज़ानुल मुबारक 1322 हिजरी। धर्म के विद्वान और शरीयत के मुफ़्ती इस मसले पर क्या कहते हैं: एक व्यक्ति की मृत्यु हो गई, उसने एक पत्नी, तीन नाबालिग बेटे और एक नाबालिग बेटी छोड़ी। इन उत्तराधिकारियों में से पत्नी और बेटी ने मृतक का पूरा घर अपना बताकर बेच दिया। अब बेटे अपने शरई हिस्से की वापसी की मांग कर रहे हैं। इस बीच, खरीदार ने घर में कुछ नया निर्माण कराया है। यदि अदालत द्वारा बेटों के हिस्से वापसी योग्य घोषित किए जाते हैं, तो क्या वे शरीयत के अनुसार उक्त नए निर्माण और मरम्मत की लागत का भुगतान करने के उत्तरदायी हैं, जबकि बेटों के पास लागत का भुगतान करने की क्षमता नहीं है, या खरीदार इस बात के लिए उत्तरदायी है कि वह अपनी नई इमारत को तोड़ ले जाए?

अल-जवाब (उत्तर): यदि यह सिद्ध हो जाता है कि शरीयत के अनुसार बिक्री में दावेदारों का भी हिस्सा है, तो प्रमाण के बाद बंटवारे का आदेश दिया जाएगा। यदि वह नया निर्माण जो खरीदार ने किया है, खरीदार के अपने [शेष] हिस्से में आता है, तो ठीक है; अन्यथा दावेदारों के लिए यह वैध होगा कि वे खरीदार से कहें कि वह अपनी नई तामीर हमारी ज़मीन से तोड़कर ले जाए, और वह इन दावेदारों से इमारत या मरम्मत का कोई खर्च पाने का हकदार नहीं होगा। आपसी सहमति से यह भी

जायज़ होगा कि खरीदार दावेदारों से नई इमारत की कीमत ले ले और इमारत उनके लिए छोड़ दे। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 222: रामपुर रियासत से शहज़ादा मियाँ द्वारा प्रेषित, अली बहादुर खान साहब द्वारा पूछा गया, 16 ज़िल हिज्जा 1331 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मसले पर क्या कहते हैं: बक्र ने ज़ैद के हाथ 'माफ़ी' (कर-मुक्त) की ज़मीन, जिसमें दो नंबर शामिल हैं, इन शब्दों के साथ बेची कि "समानांतर (7 अल्लाह) पक्की भूमि संख्या (444 साथ में 5), (435 साथ में 12), चार सौ रुपये के बदले ज़ैद के हाथ..."

1. फ़तावा काज़ी खान, किताबुल बुयूअ (बिक्री की किताब), हक़दारी पर अध्याय, नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, 2/378।

पृष्ठ 563 का 715

قطعاً مشتری زرِ ثمن کی واپسی کا استحقاق رکھتا ہے وجہ کیا ہے کہ مبیع بھی اس سے لے لیں اور ثمن ادا کرو وہ بھی واپس نہ دیں پس جو کچھ روپیہ مہر نیاز بی بی سے حاصل ہوا یا اب ہو اس میں سے اول ساڑھے چار سو مشتری کو دیئے جائے، جو بچے وارثانِ نیاز بی بی تقسیم کرلیں۔

| فی الخانیہ وغیرہا اشتری شیئا فاستحسن من یدہ رجع المشتری علی البائع بالثمن ۱ اہ ملتقطا۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ | خانیہ میں ہے کہ کسی نے کوئی شے خریدی پھر اس کے قبضہ میں اس شئی میں استحقاق ثابت ہوگیا (تو وہ اس کے قبضہ سے نکل گئی) تو مشتری بائع سے ثمن واپس لے گا ۱ اہ التقاط واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت) |

مسئلہ ۲۲۱: از شہر کہنہ مرسلہ سید فرحت علی صاحب ۱۰ رمضان المبارک ۱۳۲۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرعِ متین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص فوت ہوا اس نے ایک زوجہ اور تین پسر نابالغ اور ایک دختر نابالغہ چھوڑی تھی منجملہ ان ورثاء کے زوجہ اور دختر نے کل مکان متوفی اپنا قائم کر کے فروخت کردیا، اب پسران اپنے حصہ شرعی کے واپسی کے خواستگار ہیں اس اثناء میں مشتری نے کچھ مکان میں جدید تعمیر کیا اگر حصصِ پسران عدالت سے قابلِ واپسی قرار پائیں تو صرفہ تعمیر و مرمت جدید مذکورہ از روئے شرع ادا کرنے کے سزاوار ہیں جبکہ پسران استطاعت ادائے صرفہ نہیں رکھتے ہیں یا مشتری مستوجب اس امر کا ہے کہ وہ اپنی عمارت جدید توڑ لے جائے۔

الجواب: اگر ثابت ہو کہ شرعاً مدعیوں کا بھی بیع میں حصہ ہے تو بعد ثبوتِ حکم تقسیم کردیں گے اگر وہ جدید تعمیر جو مشتری نے کی خود مشتری کے حصہ میں پڑے فبہا ورنہ مدعیوں کو جائز

ہوگا کہ مشتری سے کہیں اپنی تعمیر جدید ہماری زمین سے توڑ کرلے جاؤ اور وہ کوئی خرچِ عمارت و مرمت ان مدعیوں سے لینے کا مستحق نہ ہوگا اور رضا مندیِ باہمی سے یہ بھی جائز ہوگا کہ مشتری مدعیوں سے عمارت جدید کے دام لے کر عمارت انہیں چھوڑ دے واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۲۲۲: مرسلہ شاہزادہ میاں از ریاست رامپور مسئولہ علی بہادر خاں صاحب ۱۶ ذی الحجہ ۱۳۳۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ بکر نے زید کے ہاتھ ایک زمین معافی کی دو نمبروں پر مشتمل بایں الفاظ بیع کی کہ "موازی (۷ اللہ) پختہ اراضی نمبر ی (۴۴۴ معہ ۵)، (۴۳۵ معہ ۱۲)، بعوض چار سو روپے بدستِ زید

۱ فتاویٰ قاضی خاں کتاب البیوع فصل فی الاستحقاق مطبع نولکشور لکھنؤ ۲ / ۳۷۸

Legal Sale: If any partner or sharer appears, the liability (guarantee) lies with the seller and has no connection with the buyer. Bakr received the full price and handed over possession of the sold item to Zaid. When Zaid sought to register the transfer of ownership (Dakhil-Kharij), the state authority discovered that the seller's actual ownership was only 3 Lallah. He had occupied 14 Biswa extra, which was also entered in his name in the revenue records. He sold the entire aggregate of 17 Lallah, out of which 14 Biswa belongs to the government. Therefore, an order was issued that the piece of land he had encroached upon be removed from his name and confiscated by the state. The Dakhil-Kharij for the remaining 3 Lallah should be in the buyer's name. The order was implemented, and that piece was taken from the buyer's possession, with the Dakhil-Kharij for the remainder being in his name. Now, the buyer wants to reclaim the proportional price of those 14 excluded Biswas from the seller. Does he have this right under Sharia or not? Please explain and be rewarded.

The Answer: If Bakr had sold a piece of land to Zaid stating it was 17 Lallah, and Zaid received all the land that was sold, but upon measurement, it turned out to be 14 Biswa or Bighas less, then Zaid would not have the right to reclaim even a single pie from Bakr.

[Arabic Box Left]: Because measurement is a description in measurable things and has not become the intended object, as if he said: "Every cubit is for so much," then the price does not correspond to it. [Urdu Translation/Explanation]: Because measurement is a quality in the thing being measured, and that area is not the intended object, such as saying it's for so much, then the price is not corresponding to it. (T)

Rather, if the buyer's consent to the reduction was not apparent, he would be given the choice either to accept it for the full price or to return the sold item and take back the price. "Because a desirable quality has been lost to him, so he has the choice." (T)

In Durr-ul-Mukhtar it is stated:

[Arabic Box Right]: If he sells a heap on the condition that it is a hundred qafiz for a hundred dirhams, and it is less or more, the buyer takes the lesser amount for its proportional price if he wishes, or rescinds. Whatever is in excess belongs to the seller. And if he sells something measured by length (al-mazru') on the condition that it is a hundred cubits, for example, the buyer takes the lesser amount for the full

price... [Urdu Translation]: If a heap was sold on the condition that it is a hundred bags for a hundred dirhams, while that heap is less or more than a hundred bags, the buyer has the choice to take the lesser amount for its proportional price or to rescind the sale. Whatever is in excess of the hundred bags belongs to the seller. And if a measured item was sold as before, that for example, it is a hundred yards for a hundred dirhams, then the buyer will have the choice...

बिक्री शरीयत: यदि कोई साझेदार या हिस्सेदार सामने आता है, तो विक्रेता (बाइ) ज़मानत का ज़िम्मेदार है, खरीदार (मुश्तरी) से इसका कोई संबंध नहीं है। "बकर ने पूरी कीमत वसूल कर ली और बेची गई चीज़ पर खरीदार को कब्ज़ा दिला दिया। जब ज़ैद ने दाखिल-खारिज करवाना चाहा, तो राज्य अधिकारी को पता चला कि वास्तव में विक्रेता का स्वामित्व केवल ३ लल्लह (३ Lallah) था। उसने १४ बिस्वा ज़मीन पर अतिरिक्त कब्ज़ा किया हुआ था और तहसील के कागज़ात में भी वह बकर के नाम दर्ज हो गया था। उसने वह पूरा समूह (१७ लल्लह) बेच दिया जिसमें १४ बिस्वा सरकारी ज़मीन है। इसलिए आदेश दिया गया कि उसने ज़मीन का जितना हिस्सा बढ़ाया है उसे उसके नाम से हटाकर सरकारी ज़ब्ती में ले लिया जाए, और शेष (३ लल्लह) का दाखिल-खारिज खरीदार के नाम किया जाए। तदनुसार आदेश का पालन हुआ और उतना टुकड़ा खरीदार के कब्ज़े से हटाकर शेष का दाखिल-खारिज उसके नाम कर दिया गया। अब खरीदार उस १४ बिस्वा बेदखल ज़मीन की आनुपातिक कीमत विक्रेता से वापस लेना चाहता है। क्या शरीयत के अनुसार उसे इसका अधिकार है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।"

जवाब: अगर बकर ने ज़ैद को ज़मीन (१७ लल्लह) बताकर बेची होती और जितनी ज़मीन उसने बेची थी वह ज़ैद को पूरी मिल जाती, लेकिन नापने में वह १४ बिस्वा या बीघा कम निकलती, तो ज़ैद को बकर से एक पाई भी वापस लेने का अधिकार नहीं होता।

[अरबी बॉक्स]: क्योंकि क्षेत्रफल (मसाहत) मापी जाने वाली चीज़ों में एक गुण है और वह स्वयं उद्देश्य नहीं बन जाता, जैसे वह कहे कि प्रत्येक हाथ (ज़रा) इतने का है, तो कीमत उसके अनुरूप नहीं होती। [उर्दू अनुवाद]: क्योंकि नाप (पैमाइश) उस चीज़ में एक गुण है जिसकी पैमाइश की जाती है और वह क्षेत्रफल मुख्य उद्देश्य नहीं होता, जैसे कि यह कहना कि प्रत्येक इतना है, तो कीमत उसके बराबर नहीं होती। (त)

बल्कि, यदि कम मिलने पर खरीदार की सहमति स्पष्ट न होती, तो उसे यह विकल्प दिया जाता कि वह या तो इसे पूरी कीमत पर स्वीकार करे या बेची गई वस्तु लौटाकर अपनी कीमत वापस ले ले। "क्योंकि एक पसंदीदा गुण उससे छिन गया है, इसलिए उसे विकल्प मिलेगा।" (त)

दुर्रे मुख़्तार में है:

[अरबी बॉक्स]: यदि उसने एक ढेर इस शर्त पर बेचा कि वह सौ दिरहम के बदले सौ कफ़िज़ है, और वह कम या अधिक निकला, तो खरीदार यदि चाहे तो कम मात्रा को उसकी आनुपातिक कीमत पर ले ले या रद्द कर दे। जो भी अधिक है वह विक्रेता का है। और यदि उसने मापी जाने वाली चीज़ (मज़रू) को पूर्व उदाहरण की तरह बेचा कि वह सौ हाथ है, उदाहरण के लिए सौ दिरहम के बदले, तो खरीदार को विकल्प होगा... [हिंदी अनुवाद]: अगर एक ढेर इस शर्त पर बेचा गया कि यह सौ बोरी है सौ दिरहम के बदले में, जबकि वह ढेर सौ बोरी से कम या ज़्यादा है, तो खरीदार को अधिकार है कि वह कम मात्रा को उसके हिस्से की कीमत के बदले में ले ले या बिक्री रद्द कर दे। और जो सौ बोरी से अधिक है वह विक्रेता का है। और यदि मापी जाने वाली वस्तु को पहले की तरह बेचा कि यह उदाहरण के तौर पर सौ गज़ है सौ दिरहम के बदले में, तो खरीदार को अधिकार होगा...

पृष्ठ ५६४ / ७१५

بیع شرعی کیا اگر کوئی سہیم و شریک پیدا ہو ضمان ذمہ بائع ہے مشتری سے تعلق نہیں فقط "بکر نے زر ثمن تمام و کمال وصول کر لیا مبیع پر مشتری کو قبضہ کرا دیا جب زید نے داخل خارج چاہا حاکم ریاست کو معلوم ہوا کہ بائع کی ملک واقع میں صرف (۳ للعہ) تھی ۱۴ بسوہ زائد پر اس نے دخل کیا ہے اور کاغذات تحصیل میں بھی اس کا اندراج بنام بکر ہو گیا ہے اور اس نے وہ مجموعہ (۱۷ للعہ) بیچ ڈالی جس میں ۱۴ بسوہ زمین سرکاری ہے لہذا حکم صادر ہوا کہ جتنا قطعہ زمین اس نے بڑھا لیا ہے اس کے نام سے خارج کر کے ضبط سرکار ہو باقی (۳ للعہ) کا داخل خارج بنام مشتری ہو چنانچہ حکم کا عملدرآمد ہوا اور اتنا ٹکڑا قبضہ مشتری سے نکال کر باقی کا داخل خارج اس کے نام ہو گیا اب مشتری اس چودہ بسوہ خارج شدہ کی رسدی قیمت بائع سے واپس لینا چاہتا ہے شرعا اسے اس کا حق ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: اگر بکر ایک زمین (۱۷ للعہ) بتا کر زید کے ہاتھ بیچتا اور وہ زمین جتنی بیچی تھی زید کو تمام و کمال ملتی مگر پیمائش میں ۱۴ بسوہ خواہ بیگھوں کم آئی تو زید کو بکر سے ایک پائی واپس لینے کا اختیار نہ ہوتا۔

[لان المساحة وصف في الممسوح ولم تصر مقصودة كان يقول كل ذراع بكذا فلم يقابلها الثمن] [کیونکہ پیمائش وصف ہے اس چیز میں جس کی پیمائش کی جاتی ہے اور وہ مساحت مقصود نہیں ہوتی جیسے یوں کہے کہ ہر گز اتنے کا ہے تو اس کے مقابل ثمن نہیں ہوتے۔ (ت)]

بلکہ اس پر کم پر مشتری کی رضا ظاہر نہ ہوتی تو اسے یہ اختیار دیا جاتا کہ یا تو اس کو پوری قیمت پر قبول کر یا مبیع پھیر کر ثمن واپس لے [لانہ فات علیہ وصف مرغوب فیہ فیتخیر] (کیونکہ اس پر پسندیدہ وصف فوت ہو گیا ہے لہذا اس کو اختیار ملے گا۔ ت)

در مختار میں ہے:

[ان باع صبرة علی انها مائة قفیز بمائة درهم وهی اقل او اکثر اخذ المشتری الاقل بحصته ان شاء او فسخ وما زاد للبائع، وان باع المذروع علی انه مائة ذراع مثلا اخذ المشتری الاقل بکل] [اگر ڈھیر بیچا اس شرط پر کہ یہ سو بوری ہے سو درہم کے بدلے میں، حالانکہ وہ ڈھیر سو بوری سے کم یا زیادہ ہے تو مشتری کو اختیار ہے کہ کمتر کو اس کے حصے کی قیمت کے بدلے میں لے لے یا بیع کو فسخ کر دے، اور جو سو بوری سے زائد ہے وہ بائع کا ہے، اور اگر مذروع کو مثل سابق بیچا کہ یہ مثال کے طور پر سو گز ہے سو درہم کے بدلے میں تو مشتری کو اختیار ہوگا]

Fatawa Rizvia (Volume 17)

| **Arabic:** *Ath-thamanu watruk wa akhdh al-akthar bila khiyari lil-ba'i' (1).* | **Urdu Translation:** That he takes the lesser amount for the full price or leaves it, and the buyer will take the greater amount; the seller will have no choice in this. (T) |

But here this is not the case; the sold item did not decrease in measurement while remaining fully in possession, but rather a piece of land from the sold item was declared state property and went out of possession. This is a case of *Istihqaq* (right of ownership), and in *Istihqaq*, the buyer definitely has the right to take back from the seller the price equivalent to what went out of his possession due to the claimant's claim. In this regard, fungibles (*mithli*), non-fungibles (*qimi*), measured items (*madhru'*), counted items (*ma'dood*), etc., are all equal. It is stated in *Alamgiri*:

| **Arabic:** *Idha kana al-mushtari shay'an wahidan kath-thawbi al-wahidi wal-'abd fastahaqqa ba'duhu qabl al-qabd aw ba'dahu falil-mushtari al-khiyaru fil-baqi in sha'a akhadhahu bil-hissah wa in sha'a taraka (2) ilkh wa 'azahulil-muhit wa zahirun annath-thawba qimiun madhru'un qala fi radd al-muhtar wa in ba' al-madhru'a kathawbin wa ardin durrun muntaqa (3) aahu qad hakam fi istihqaqi ba'dihi bi akhdhil-baqi bil-hissah.*

Urdu Translation: When the purchased item is a single thing, like a single cloth or a slave, and then ownership (*istihqaq*) is proven in part of it before or after possession, then the buyer has the choice: if he wishes, he takes the remainder in exchange for its proportionate price, and if he wishes, he leaves it, etc. This has been attributed to *Al-Muheet*. It is apparent that cloth is a non-fungible measured item. It is stated in *Radd al-Muhtar* that if measured items are sold, like cloth and land... *Durr al-Muntaqa* etc. Indeed, in the case of *Istihqaq* being proven in a part of it, the ruling has been given to take the rest in exchange for its proportionate price. (T) |

In *Jami' al-Fusulayn* it is stated:

| **Arabic:** *Istahaqqa ba'du al-mabi' falam lau yumayyizu illa bidarrarin kadarin aw karam al-ard wa zawjay khuff wa misra'ay bab.* | **Urdu Translation:** If ownership (*istihqaq*) is proven in part of the sold item (we will see if) it cannot be separated without damage, such as a house, a vineyard, land, a pair of socks, or the two leaves of a door... |

---

1. *Durr al-Mukhtar*, Kitab al-Buyu', Matba' Mujtabai, Delhi, 2/7
2. *Fatawa Hindiyya*, Kitab al-Buyu', Chapter 15, Nurani Kutub Khana, Peshawar, 3/166

3. *Radd al-Muhtar*, Kitab al-Buyu', Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/31

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

| **अरबी:** अथ-थमनु वतुक व अख़्ज़ अल-अकसर बिला ख़ियारि लिल-बाइ' *(1)*। | **उर्दू अनुवाद:** कि वह कम को पूरी कीमत के बदले ले ले या छोड़ दे और अधिक को खरीदार ले लेगा, विक्रेता को इसमें कोई अधिकार प्राप्त नहीं होगा। (त) |

मगर यहाँ यह सूरत नहीं है; बिकी हुई वस्तु पूरी तरह कब्जे में रहकर माप में कम नहीं हुई, बल्कि बिकी हुई वस्तु में से एक टुकड़ा राजकीय संपत्ति घोषित होकर कब्जे से निकल गया। यह 'इस्तेहक़ाक़' (स्वामित्व का अधिकार) की सूरत है और इस्तेहक़ाक़ में खरीदार को निश्चित रूप से उतनी कीमत विक्रेता से वापस लेने का अधिकार होता है जितनी दावेदार के दावे पर उसके कब्जे से निकल गई। इसमें मिस्ली (समान), कीमी (मूल्यवान), मज़रूअ (मापी गई), मदूद (गिनी गई) आदि सब बराबर हैं। आलमगीरी में है:

| **अरबी:** इज़ा कानल मुशतरी शैयन वाहिदन कथ-थौबिल वाहिदि वल-अब्द फस्तहक़्क़ा बाज़ुहु क़ब्ल अल-क़ब्ज़ औ बा'दहु फलिल-मुशतरी अल-ख़ियार फिल-बाक़ी इन शा'अ अख़ज़हु बिल-हिस्सा व इन शा'अ तरका *(2)* इल्ख़ व अज़ाहुलिल-मुहीत व ज़ाहिरुन अन्नथ-थौबा क़ीमीयुन मज़रूअुन क़ाला फ़ी रद अल-मुहतार व इन बा'अल मज़रूअ कथौबिन व अर्दिन दुर्रुन मुंतक़ा *(3)* आहु क़द हकम फ़ी इस्तेहक़ाक़ि बाज़िहि बि अख़्ज़िल-बाक़ी बिल-हिस्सा।

उर्दू अनुवाद: जब खरीदी हुई चीज़ एक हो जैसे एक कपड़ा या गुलाम, फिर कब्जे से पहले या बाद उसके कुछ हिस्से में इस्तेहक़ाक़ साबित हो गया तो खरीदार को अधिकार है चाहे तो बाकी को उसके हिस्से की कीमत के बदले में ले ले और अगर चाहे तो छोड़ दे इल्ख़ (इत्यादि) और इसे मुहीत की ओर संबद्ध किया गया है। और स्पष्ट है कि कपड़ा कीमी मज़रूअ है। रद अल-मुहतार में कहा कि अगर मज़रूअ को बेचा जैसे कपड़ा और ज़मीन... दुर्रुल मुंतक़ा आदि। बेशक इसके कुछ हिस्से में इस्तेहक़ाक़ साबित होने की सूरत में बाकी को उसके हिस्से की कीमत के बदले में लेने का हुक्म दिया गया है। (त) |

जामे' अल-फ़ुसुलैन में है:

| **अरबी:** इस्तहक़्क़ा बाज़ु अल-मबी' फलम लौ युमय्यिज़ु इल्ला बिद्ररिन कदारिन औ करम अल-अर्द व ज़ौजय खुफ़ व मिसराअय बाब। | **उर्दू अनुवाद:** बिकी हुई वस्तु के कुछ हिस्से में इस्तेहक़ाक़

साबित हो गया तो (देखेंगे कि) अगर वह बिना नुकसान के अलग नहीं हो सकता जैसे मकान, अंगूर की बेल, ज़मीन, मोज़ों का जोड़ा और दरवाज़े के दो पल्ले... |

---

1. दुर्रे मुख़्तार, किताबुल बुयूअ़, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 2/7
2. फ़तावा हिन्दिया, किताबुल बुयूअ़, अध्याय 15, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 3/166
3. रद अल-मुहतार, किताबुल बुयूअ़, दार इह्या अत-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 4/31

| **عربی:** الثمن واترك واخذ الاكثر بلا خيار للبائع ۱ ۔ | **اردو:** کہ وہ کمتر کو پورے ثمن کے عوض لے لے یا چھوڑ دے اور اکثر کو مشتری لے لے گا، بائع کو اس میں اختیار حاصل نہ ہو گا۔ (ت) |

مگر یہاں یہ صورت نہیں مبیع بتامہ قبضہ میں رہ کر پیمائش میں کم نہ آئی بلکہ مبیع سے ایک قطعہ ملک ریاست قرار پا کر قبضہ سے نکل گیا، یہ صورت استحقاق کی ہے اور استحقاق میں ضرور مشتری کو اتنے کی قیمت بائع سے واپس لینے کا اختیار ہوتا ہے جتنا مستحق کے دعوے پر اس کے قبضہ سے نکل گیا اور اس میں مثلی و قیمی مذروع و معدود و غیرہ سب برابر ہیں، عالمگیری میں ہے :

| **عربی:** اذا كان المشترى شيئاً واحدا كالثوب الواحد والعبد فاستحق بعضه قبل القبض اوبعده فللمشترى الخيار في الباق ان شاء اخذه بالحصة وان اء ترك ۲ الخ وعزاه للمحيط وظاہر ان الثوب قیمی مذروع قال فی ردالمحتار و ان بع المذروع كثوب وارض در منتقی ۳ اھو قد حكم فی استحقاق بعضہ باخذ الباقی بالحصہ۔

اردو: جب خریدی ہوئی چیز ایک ہو جیسے ایک کپڑا یا غلام، پھر قبضہ سے پہلے یا بعد اس کے بعض میں استحقاق ثابت ہو گیا تو مشتری کو اختیار ہے چاہے تو باقی کو اس کے حصہ کی قیمت کے بدلے میں لے لے اور اگر چاہے تو چھوڑ دے الخ اور اس کو محیط کی طرف منسوب کیا ہے اور ظاہر ہے کہ کپڑا قیمی مذروع ہے، ردالمختار میں کہا کہ اگر مذروع کو بیچا جیسے کپڑا اور زمین درمنتی اھ، بے شک اسکے بعض میں استحقاق ثابت ہونے کی صورت میں باقی کو اس کے حصے کی قیمت کے بدلے میں لینے کا حکم کیا گیا ہے۔ (ت) |

جامع الفصولین میں ہے :

| **عربی:** استحق بعض المبیع فلم لو یمیز الا بضرر کدار او کرم الارض وزوجی خف و مصراعی باب | **اردو:** بعض مبیع میں استحقاق ثابت ہو گیا تو (دیکھیں گے کہ) اگر وہ بلا نقصان جدا نہیں ہو سکتا جیسے مکان، انگور کی بیل، زمین، موزوں کا جوڑا اور ایک |

---

۱ در مختار کتاب البیوع مطبع مجتبائی دہلی ۲/۷ ۲ فتاویٰ ہندیہ کتاب البیوع الباب الخامس عشر نورانی کتب خانہ پشاور ۱۶۶/۳ ۳ ردالمحتار کتاب البیوع داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/۳۱

Fatawa Razawiyya Volume 17

[Arabic Box Left]: ... If it causes a defect in the remaining part, the buyer has an option; otherwise, not. Then, if the reclamation creates a defect in the remaining sold item, the buyer will have an option as passed. If it doesn't create a defect, like in the case of two garments where one is reclaimed, the buyer takes the remaining part for its proportional price without an option. - Multaqata

[Urdu Box Right]: Two panels of a door, in this case, the buyer will have an option, otherwise not. Then, if the reclamation creates a defect in the remaining sold item, the buyer will have an option, as previously mentioned. If it doesn't create a defect, for instance, if out of two pieces of cloth, reclamation is established for one, the buyer will take the remaining one for its share of the price; in this case, he will not have an option. (Muttaqata). (T)

So, in the inquired case, Zaid can take back from Bakr 57 rupees and 11.75 annas (approx.) of the price, i.e., 114/7/9. A very slight amount less, not even half a pie, i.e., 5/4/5 pies. This was the answer to the question, but looking at the sale deed (Bainanama), it is clear that this was an invalid (fasid) sale because invalid conditions are mentioned at its end. For example, if a part of the total land is taken out of the possession of the buyers, the burden of compensation and expenses is on the seller. And the trees standing on the land will be cut and the land cleared by the end of the year 1318 AH, otherwise, the trees will also be considered included in the aforementioned price of the sale, and there will be no claim for the wood of the trees. By mentioning an invalid condition in the deed, the sale will be ruled as invalid (fasid). In Durr al-Mukhtar, it is stated:

[Arabic Box Left]: If it is written in the deed that whatever the buyer spends on it for maintenance or repair is the responsibility of the seller, the sale becomes invalid.

[Urdu Box Right]: If it is written in the sale deed that whatever the buyer spends on the sold item or repairs it, it will be the responsibility of the seller, then the sale will become invalid. (T)

So it is obligatory for both the seller and the buyer to repent. And if no impediment to annulment is found, it is obligatory for them to annul the sale. Zaid should return the land and Bakr should return the full price. If they both do not agree, the ruler/ judge should forcefully annul it. In Durr al-Mukhtar, it is stated:

[Arabic Box Left]: It is obligatory for each of them to annul it.

[Urdu Box Right]: To end the corruption/invalidity, before or after possession...

---

1. Jami' al-Fusulayn, Chapter 16, Islamic Kutub Khana, Karachi, 1/219-220.
2. Durr al-Mukhtar, Book of Sales, Chapter of Invalid Sales, Matba' Mujtabai, Delhi, 2/46.

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

[अरबी बॉक्स]: ...यदि इससे शेष भाग में दोष उत्पन्न होता है, तो खरीदार के पास विकल्प होता है; अन्यथा नहीं। फिर, यदि पुनःप्राप्ति बेची गई वस्तु के शेष हिस्से में दोष पैदा करती है, तो खरीदार के पास विकल्प होगा जैसा कि गुजर चुका है। और यदि वह दोष पैदा नहीं करता है, जैसे कि दो कपड़ों में से एक में दावा सिद्ध हो जाता है, तो खरीदार शेष को बिना किसी विकल्प के उसके आनुपातिक मूल्य पर लेता है। - मुल्तक़ता

[उर्दू बॉक्स]: दरवाजे के दो पल्ले, तो इस स्थिति में खरीदार को विकल्प मिलेगा अन्यथा नहीं। फिर, यदि पुनःप्राप्ति बेची गई वस्तु के शेष हिस्से में दोष पैदा करती है, तो खरीदार के पास विकल्प होगा जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है। और यदि वह दोष पैदा नहीं करता है, जैसे कि दो कपड़ों में से एक में दावा सिद्ध हो जाता है, तो खरीदार शेष को उसकी कीमत के हिस्से के बदले ले लेगा, इस स्थिति में उसे विकल्प नहीं मिलेगा। (मुल्तक़ता)। (त)

अतः पूछी गई स्थिति में ज़ैद, बक्र से कीमत के114/7/9 यानी सत्तावन रुपये पौने बारह आने वापस ले सकता है। एक बहुत ही मामूली राशि कम, जो कि आधे पाई के बराबर भी नहीं है, यानी 5/4/5 पाई। यह सवाल का जवाब था, लेकिन बैनामा (बिक्री विलेख) देखने से यह स्पष्ट हो गया कि यह एक अमान्य (फ़ासिद) बिक्री हुई क्योंकि इसके अंत में अमान्य शर्तें उल्लेखित हैं। उदाहरण के लिए, यदि कुल भूमि का कोई हिस्सा खरीदारों के कब्जे से बाहर निकल जाता है, तो हरजाना और खर्च का बोझ विक्रेता पर होगा। और भूमि पर खड़े पेड़ों को वर्ष 1318 हिजरी के अंत तक काटकर भूमि को साफ कर दिया जाएगा, अन्यथा पेड़ों को भी उपरोक्त बिक्री मूल्य में शामिल माना जाएगा, और पेड़ों की लकड़ी का कोई दावा नहीं रहेगा। विलेख में अमान्य शर्त के उल्लेख से बिक्री पर अमान्यता (फ़साद) का हुक्म होगा, 'दुर्रे मुख्तार' में है:

[अरबी बॉक्स]: यदि विलेख में लिखा गया हो कि खरीदार उस पर रखरखाव या मरम्मत के लिए जो कुछ भी खर्च करता है वह विक्रेता की जिम्मेदारी है, तो बिक्री अमान्य हो जाती है।

[उर्दू बॉक्स]: यदि बैनामे में लिखा गया कि खरीदार बेची गई वस्तु पर जो कुछ खर्च करेगा या उसमें मरम्मत करेगा वह विक्रेता के जिम्मे होगा, तो बिक्री फ़ासिद (अमान्य) हो जाएगी। (त)

तो विक्रेता और खरीदार दोनों पर अनिवार्य (वाजिब) है कि वे तौबा (प्रायश्चیت) करें और यदि निरस्तीकरण में कोई बाधा न पाई जाए, तो अनिवार्य है कि वे बिक्री को रद्द कर दें। ज़ैद ज़मीन वापस

कर दे और बक्र पूरी कीमत लौटा दे। यदि वे दोनों सहमत न हों, तो शासक/न्यायाधीश को जबरन इसे रद्द करना चाहिए। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

[अरबी बॉक्स]: उनमें से प्रत्येक पर इसे रद्द करना अनिवार्य है।

[उर्दू बॉक्स]: फ़साद (अमान्यता) को खत्म करने के लिए कब्जे से पहले या कब्जे...

---

1. जामे अल-फुसूलैन, अध्याय 16, इस्लामी कुतुब खाना, कराची, 1/219-220।
2. दुर्रे मुख्तार, किताबुल बुयू, बाब अल-बय अल-फ़ासिद, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 2/46।

فتاوٰی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

[بائیں خانہ]: وفق یتخیر المشتری والا فلا، ثم لو ورث الاستحقاق عیبا فیما بقی یخیر المشتری کما مر ولو لم یورث عیبا کثوبین استحق احدھما فالمشتری یاخذ الباقی بحصتہ بالا خیار - ملتقطاً 1

[دائیں خانہ]: دروازے کے دو پٹ تو اس صورت میں مشتری کو اختیار ملے گا ورنہ نہیں، پھر اگر استحقاق باقی مبیع میں عیب پیدا کر دے تو مشتری کو اختیار ملے گا جیسا کہ گزر چکا ہے اور اگر وہ عیب پیدا نہ کرے جیسے دو کپڑوں میں سے ایک میں استحقاق ثابت ہوجائے تو مشتری باقی کو اس کے حصے کی قیمت کے بدلے میں لے گا اس صورت میں اس کو اختیار نہیں ملے گا۔ ملتقطا۔ (ت)

پس صورت مستفسرہ میں زید بکر سے ثمن کے ۱۱۴/ ۷/ ۹ یعنی ستاون روپے پونے بارہ آنے واپس لے سکتا ہے ایک خفیف مقدار کم جس کی مقدار نصف پائی تک بھی نہیں یعنی ۵/۴/ ۵ پائی، یہ سوال کا جواب تھا مگر ملاحظہ بیعنامہ سے واضح ہوا کہ یہ بیع فاسدہ واقع ہوئی کہ اس کے آخر میں شرائطِ فاسد مذکور ہیں مثلاً یہ کہ اگر جزوِ کل اراضی قبضہ مشتریان سے نکل جائے تو اس کا بار ہرجہ و خرچہ ذمہ بائع ہے اور جو درخت اراضی میں کھڑے ہیں ان کو آخر سال ۱۳۱۸ھ تک قطع کر کے اراضی مکشوف کر دیں گے ورنہ درخت بھی قیمت مذکور بالا میں بیع منصور ہوں گے اس کے دعوٰی چوب درختان نہ رہے گا، بعینامہ میں شرط فاسد کے ذکر سے بیع پر حکمِ فساد ہوگا، در مختار میں ہے:

[بائیں خانہ]: لو کتب في الصك فما اتفق المشتری فیھا من نفقة اورم فیھا من مرمة فعلی البائع یفسد البیع 2 -

[دائیں خانہ]: اگر بیعنامہ میں لکھا گیا کہ جو کچھ مشتری مبیع پر خرچ کرے گا یا اس میں مرمت کرے گا وہ بائع کے ذمے ہوگا تو بیع فاسد ہو جائے گی۔ (ت)

تو بائع و مشتری دونوں پر واجب ہے کہ توبہ کریں اور اگر موانعِ فسخ سے کوئی مانع نہ پایا گیا ہو تو واجب ہے کہ بیع فسخ کر دیں، زید زمین واپس دے اور بکر پوری قیمت پھیر دے، اگر وہ دونوں نہ مانیں حاکم جبراً فسخ کر دے۔ در مختار میں ہے:

[بائیں خانہ]: یجب علی کل واحد منهما فسخه

[دائیں خانہ]: فساد کو ختم کرنے کے لئے قبضہ سے پہلے یا قبضہ

---

1 جامع الفصولین الفصل السادس عشر اسلامی کتب خانہ کراچی ۱ / ۲۰-۲۱۹ 2 درمختار کتاب البیوع باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۴۶

Fatawa Ridawiyya (Volume 17)

[Arabic Text]: Before or after taking possession, as long as the sold item remains in its original state in the hands of the buyer, it must be annulled due to its invalidity because it is a sin, and thus its removal is mandatory (al-Bahr). If one of them insists on maintaining it and the judge (Qadhi) becomes aware of it, he has the authority to forcefully annul it for both of them as a right of the Sharia (al-Bazzaziyya).

[Urdu Translation]: After [taking possession], as long as the sold item remains in its original state with the buyer, it is mandatory for both the seller and the buyer to annul the invalid sale (bay' fasid) because it is a sin, and therefore its removal is mandatory (al-Bahr). And if one of them persists in maintaining it and the judge is informed of it, he can annul it by force upon both of them for the sake of Sharia rights (al-Bazzaziyya). (T)

After this, if they wish, they can enter into a valid sale (bay' sahih) among themselves at whatever price they agree upon. And Allah Almighty knows best.

---

1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu, Bab al-Bay' al-Fasid, Matba' Mujtabai Delhi, 2/28. Page 567 of 715

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

[अरबी पाठ]: (कब्ज़ा लेने से) पहले या उसके बाद, जब तक बिकी हुई वस्तु खरीदार के पास अपनी स्थिति में मौजूद है, भ्रष्टाचार के कारण इसे समाप्त करना अनिवार्य है क्योंकि यह एक अवज्ञा (पाप) है, अतः इसे हटाना अनिवार्य है (अल-बहर)। और यदि उनमें से कोई एक इसे बनाए रखने पर अड़ा रहे और काजी को इसका ज्ञान हो जाए, तो वह शरीयत के अधिकार के रूप में उन दोनों पर बलपूर्वक इसे रद्द कर सकता है (बज़ाज़िया)।

[उर्दू अनुवाद]: इसके बाद जब तक बिकी हुई चीज़ (मबीअ) खरीदार के पास अपनी मूल स्थिति में मौजूद है, तब तक 'बय फासिद' (अवैध बिक्री) को रद्द करना विक्रेता और खरीदार दोनों पर अनिवार्य है, क्योंकि यह एक गुनाह है, इसलिए इसे दूर करना अनिवार्य है (अल-बहर)। और अगर उनमें से कोई एक इसे बरकरार रखने पर अड़ जाए और काजी (न्यायाधीश) को इसका पता चल जाए, तो वह शरीयत के अधिकार के लिए उन दोनों पर ज़ोर डालते हुए इसे रद्द कर सकता है, बज़ाज़िया। (त)

इसके बाद फिर चाहें तो आपस में सही बिक्री (बय सहीह) कर लें, जितनी कीमत (समन) पर वे राजी हों। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

---

1. दुर्रुल मुख़्तार, किताबुल बुयू, बाबुल बय अल-फासिद, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 2/28। पृष्ठ 567 का 715

قبل القبض اوبعدہ مادام المبیع بحالہ فی ید المشتری اعداماً للفساد لانہ معصیۃ فیجب رفعھا بحر، واذا اصر احدھما علی امساکہ وعلم بہ القاضی فلہ فسخہ جبرا علیھما حقا للشرع، بزازیہ۔ کے بعد جب تک مبیع مشتری کے پاس اپنے حال میں موجود ہے بیع فاسد کو فسخ کرنا بائع اور مشتری میں سے ہر ایک پر واجب ہے کیونکہ یہ معصیت ہے اس لئے اس کو دور کرنا واجب ہے بحر، اور اگر ان میں سے کوئی ایک اس کو برقرار رکھنے پر اصرار کرے اور قاضی کو اس کا علم ہو تو وہ حق شرع کے لئے ان دونوں پر جبر کرتے ہوئے فسخ کر سکتا ہے، بزازیہ۔ (ت) اس کے بعد پھر چاہیں تو آپس میں صحیح بیع کرلیں جتنے ثمن پر تراضی ہو، واللہ تعالٰی اعلم۔

---

1. درمختار کتاب البیوع باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۲۸ Page 567 of 715

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

Chapter of Sale by Advance Payment (Statement on Bay' al-Salam)

Issue 223: From Firozpur, 29 Jumada al-Akhira 1306 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: money for deduction (advance) was paid and it was agreed to receive the grain at the time of harvest. Under what conditions is this permissible? Explain and be rewarded.

The Answer: This is called Bay' al-Salam. It is permissible under twelve conditions. If even one of these is missing, it will be completely impermissible and will become usury (interest): (1) The genus (category) of the item must be stated, for example, wheat, or rice, or ghee, or oil. If a general statement is made, such as saying it will be taken in grain, then it is impermissible. (2) If that genus has multiple varieties, its specific variety must be determined, such as Basmati or Hansraj in rice. If only 'rice' is mentioned, the sale will not be valid. (3) Its quality must be described, for example, superior or inferior, such as 'fardarya' or 'kaseelay' in chickpeas. (4) Its quantity must be specified, for example, so many maunds. This can also be achieved by fixing a rate, i.e., so many 'seer' per rupee, so that by knowing the total number of rupees, the total quantity will be automatically known.

Page 569 of 715

फ़तवा रज़विया (खंड 17)

अध्याय: अग्रिम भुगतान द्वारा बिक्री (बय-ए-सल्लम का बयान)

मसला 223: फ़िरोज़पुर से, 29 जमादि-उल-आखिर 1306 हिजरी। इस मसले में दीन के विद्वान क्या कहते हैं कि कटौती का रुपया पेशगी (अग्रिम) दे दिया गया और फसल आने पर अनाज लेना तय हुआ। यह किन शर्तों के साथ जायज़ है? बयान फरमाएं और सवाब पाएं।

उत्तर: इसे बय-ए-सल्लम कहते हैं। यह बारह शर्तों के साथ जायज़ है, अगर इनमें से एक भी कम होगी तो बिल्कुल नाजायज़ और सूद (ब्याज) हो जाएगा: (1) उस वस्तु की 'जिन्स' (श्रेणी) बता दी जाए, जैसे गेहूँ या चावल या घी या तेल। अगर एक सामान्य बात कही जाए, जैसे अनाज में लेंगे, तो नाजायज़ है। (2) यदि वह जिन्स कई प्रकार की होती है, तो उसकी विशेष किस्म तय कर दी जाए, जैसे चावल में बासमती, हंसराज। अगर सिर्फ'चावल' कहा जाए, तो बिक्री सही नहीं होगी। (3) उसकी गुणवत्ता (सिफत) बता दी जाए, जैसे बढ़िया या घटिया, जैसे चनों में 'फ़र-दरिया' या 'कसीले'। (4) उसकी मात्रा तय कर दी जाए, जैसे इतने मन। और यह बात भाव तय कर देने से भी हासिल हो जाती है, यानी प्रति रुपया इतने सेर, ताकि रुपयों की गिनती मालूम होने से कुल मात्रा खुद ही मालूम हो जाए।

पृष्ठ 569/715

فتاوی رضویہ (جلد ہفتدہم ۱۷)

باب البیع السلم (بیع سلم کا بیان)

مسئلہ ۲۲۳: از فیروز پور ۲۹ جمادی الآخرہ ۱۳۰۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ کٹونی کا روپیہ پیشگی دے دیا اور ناج فصل پر لینا ٹھہرا کن کن شرطوں سے جائز ہے۔ بینوا توجروا

الجواب: اسے بیع سلم کہتے ہیں، یہ بارہ شرطوں سے جائز ہوتی ہے اگر ان میں سے ایک بھی کم ہوگی تو بالکل ناجائز اور سود ہو جائے گی: (۱) اس شئی کی جنس بیان کر دی جائے مثلاً گیہوں یا چاول یا گھی یا تیل، اگر ایک عام بات کہی مثلاً غلہ میں لیں گے تو ناجائز ہے۔ (۲) وہ جنس اگر کئی قسم کی ہوتی ہے تو اس کی قسم معین کر دی جائے جیسے چاول میں باسمتی ہنس راج، اگر نرے چاول کہے بیع صحیح نہ ہوگی۔ (۳) اس کی صفت بیان کر دی جائے مثلاً عمدہ یا ناقص جیسے چنوں میں فردریا کسیلے۔ (۴) اس کی مقدار معین کر دی جائے مثلاً اتنے من، اور یہ بات بھاؤ کاٹ دینے سے بھی حاصل ہو جاتی ہے یعنی فی روپیہ اتنے سیر کہ روپوں کی گنتی معلوم ہونے سے کل مقدار خود معلوم ہو جائے گی۔

صفحہ ۵۶۹ از ۷۱۵

Volume 17 (17) Fatawa Razawiya

And where various types of 'pasiri' (a weight measure) are in use, it is also necessary to specify the 'pasiri', stating how many 'maunds' (another weight measure) of such and such 'pasiri'. Where both 'kachcha' (unrefined/local) and 'pakka' (standard/ refined) maunds are mentioned, their specification is also mandatory. In short, no matter should remain that could lead to a future dispute. (5) A fixed duration should be set, which must not be less than one month. If not specified, for example, "I will take it whenever I want" or "I am going on a journey, I will take it when I return," then it will be impermissible. (6) If the item involves transportation costs for moving it from one place to another, then the destination must also be specified where it is intended to reach. For example, "upon reaching such and such city or such and such village." In this, the seller will have the option to deliver it to any location or neighborhood in that village or city. If a specific house is also designated, then it must be delivered there. (7) The price (thaman) must also be specified, for example, rupees or gold coins (ashrafi). (8) If that price can be of several types, then specify the type as well, for example, Muhammad Shahi ashrafi or English ashrafi. (9) Mention of pure or alloyed should also be made, like Lucknow-made rupee, or English faced (coin), or Jaipur silver, or brick gold. (10) If the price is of a type where against every piece of it there is a piece of the sold item (mabi'), such as gold, silver, rupee, ashrafi, where for example if wheat is one maund for a rupee, then for an eight-anna coin it would be twenty seers, and for a four-anna coin ten seers, then in such a case, specifying the quantity of price is also necessary. For example, so many tolas of silver or this much amount of rupees. And if coins of different weights are in circulation there, as in Hyderabad with Nawabi and English rupees, then the specification of the currency is also required. These ten points are necessary to be mentioned specifically in the contract of offer and acceptance (ijab wa qubul). For example, Zaid says to Amr, "I have bought from you ten maunds of refined rice by Bareilly weight, pure Nasraj, in exchange for one hundred English faced rupees, on a promise of four months from today, to be delivered at Bareilly." He says, "I have sold." Or "I have bought from you four maunds of pure buffalo ghee by Badaun weight, to be delivered at Moradabad, on a promise of two months from today, in exchange for six Muhammad Shahi ashrafis worth twenty rupees each." He says, "I have sold." All these matters should be well understood, as the practice of Bai' Salam (forward sale) is very common among people today. By omitting these oral conditions, they make what is lawful unlawful for themselves and become embroiled in sin against God. (11)

The condition is that the price must be paid in the same sitting (majlis). Otherwise, if after all this conversation they separate without the price being paid, the contract already made will become void and impermissible. Even to the extent that if someone gets up from there and goes home to get the money and...

और जहाँ विभिन्न 'पसेरी' (वजन की एक माप) का प्रचलन हो, वहाँ पसेरी का निर्धारण भी आवश्यक है कि फलां पसेरी से इतने 'मन' (वजन की एक और माप), और जहाँ 'कच्चा' और 'पक्का' दोनों मन बोला जाता हो, वहाँ उसका निर्धारण भी अनिवार्य है। संक्षेप में, कोई ऐसी बात शेष न रहे जिससे भविष्य में झगड़ा उठने की संभावना हो। (5) एक निश्चित अवधि तय कर दी जाए जो एक महीने से कम न हो। यदि निर्धारण नहीं किया गया, उदाहरण के लिए "जब चाहेंगे ले लेंगे" या "यात्रा पर जा रहा हूँ जब लौट कर आऊँगा तो ले लूँगा", तो यह नाजायज़ (अवैध) होगा। (6) यदि वह वस्तु ढुलाई की है जिसके यहाँ से वहाँ ले जाने में खर्च होगा, तो वह स्थान भी निर्धारित किया जाए जहाँ पहुँचना अभीष्ट है। उदाहरण के लिए फलां शहर या फलां गाँव में पहुँचते हुए, इसमें बेचने वाले को अधिकार होगा कि उस गाँव या शहर के जिस स्थान व मोहल्ले में चाहे पहुँचा दे। और यदि मकान भी विशेष कर दिया गया तो वहीं पहुँचाना होगा। (7) 'थमन' (कीमत) का भी निर्धारण हो जाए, उदाहरण के लिए रुपये या अशरफी। (8) यदि वह थमन कई प्रकार का होता है, तो प्रकार भी निर्धारित कर दे, उदाहरण के लिए मुहम्मद शाही अशरफी या अंग्रेजी। (9) खरे-खोटे (शुद्ध-अशुद्ध) का वर्णन भी हो जैसे लखनऊ का रुपया या अंग्रेजी चेहरा-दार (सिक्का) या जयपुर की चाँदी या ईंट का सोना। (10) यदि थमन इस प्रकार का है कि उसके हर टुकड़े के बदले बेची गई वस्तु (मबीअ) का एक टुकड़ा हो, जैसे सोना, चाँदी, रुपया, अशरफी, कि गेहूँ रुपये के मन भर हुए तो अठन्नी के बीस सेर, चवन्नी के दस सेर होंगे, तो ऐसी स्थिति में थमन की मात्रा का निर्धारण भी आवश्यक है, जैसे इतने तोला चाँदी या इतने रुपये। और यदि वहाँ विभिन्न वजन के सिक्के चलते हों जैसे हैदराबाद में नवाबी और अंग्रेजी रुपया, तो वहाँ सिक्के का निर्धारण भी होना चाहिए। ये दस बातें विशेष रूप से ईजाब व क़ुबूल (प्रस्ताव और स्वीकृति) के अनुबंध में वर्णित करना आवश्यक हैं। इसका उदाहरण यह है कि ज़ैद, अम्र से कहे: "मैंने तुझसे बरेली की तौल से दस मन पक्का चावल, नसराज खरे, सौ रुपये अंग्रेजी चेहरा-दार के बदले आज से चार महीने के वादे पर बरेली पहुँचते हुए खरीदे।" वह कहे: "मैंने बेचे।" या "मैंने तुझसे बदायूँ के वजन से चार मन पक्का घी भैंस का शुद्ध आज से दो महीने के वादे पर मुरादाबाद पहुँचता हुआ छह अशरफी मुहम्मद शाही बीस-बीस रुपये वाली के बदले खरीदा।" वह कहे: "मैंने बेचा।" ये सब बातें भली-भांति समझ ली जानी चाहिए क्योंकि लोगों में आजकल बैअ-ए-सल्लम (अग्रिम क्रय) का बहुत रिवाज है। इन ज़बानी शर्तों को छोड़ने से वे हलाल (वैध) को अपने लिए नाहक हराम (अवैध) कर लेते हैं और खुदा के गुनाह में गिरफ्तार होते हैं। (11) शर्त यह है कि

उसी बैठक (मजलिस) में थमन (कीमत) अदा कर दिया जाए, अन्यथा यदि ये सारी बातचीत करके थमन दिए बिना अलग हो गए तो बना-बनाया अनुबंध फासिद (त्रुटिपूर्ण) और नाजायज़ हो जाएगा। यहाँ तक कि यदि वहाँ से उठकर घर में रुपये लेने गया और...

पेज 570 का 715

اور جہاں مختلف پسیروں کا رواج ہو وہاں پسیری کی تعیین بھی ضروری ہے کہ فلاں پسیری سے اتنے من اور جہاں کچا پکا دونوں من بولا جائے وہاں اس کی تعیین بھی لازم ہے غرض کوئی بات وہ نہ رہے جس میں آئندہ جھگڑا اٹھنے کی صورت ہو۔ (۵) میعاد معین کر دی جائے جو ایک مہینہ سے کم نہ ہو اگر تعیین نہ کی مثلاً جب چاہیں گے لے لیں گے یا سفر کو جاتا ہوں جب پلٹ کر آؤں گا لے لوں گا تو نا جائز ہوگا۔ (۶) اگر وہ چیز بار برداری کی ہے جس کے یہاں سے وہاں لے جانے میں خرچ ہوگا تو وہ جگہ بھی معین کی جائے جہاں پہنچنا منظور ہے مثلاً فلاں شہر یا فلاں گاؤں میں پہنچتے ہوئے، اس میں بیچنے والے کو اختیار ہے گا کہ اس گاؤں یا شہر کے جس مقام و محلہ میں چاہے پہنچا دے وار جو مکان بھی خاص کر دیا تو وہی پہنچنا پڑے گا۔ (۷) ثمن کی بھی تعیین ہو جائے مثلاً روپے یا اشرفی۔ (۸) اگر وہ ثمن چند قسم کا ہوتا ہے تو قسم بھی معین کر دے مثلاً اشرفی محمد شاہی یا انگریزی۔ (۹) کھرے کھوٹے کا بیان بھی ہو جیسے لکھنو کار روپیہ یا انگریزی چہرہ دار یا جے پور کی چاندی یا اینٹ کا سونا۔ (۱۰) اگر ثمن اس قسم کا ہے کہ اس کے ہر ٹکڑے کے مقابل شے مبیع کا ٹکڑا ہو تے جیسے سونا، چاندی، روپیہ اشرفی کہ گیہوں روپیہ کے من بھر ہوئے تو اٹھنی کے بیس سیر، چونی کے دس سیر ہوں گے تو ایسی ثمن کی تعیین مقدار بھی ضرور ہے مثلاً اتنے تولہ چاندی یا اس قدر روپے اور اگر وہاں مختلف وزن کے سکے چلتے ہوں جیسے حیدرآباد میں نوابی وانگریزی روپیہ وہاں سکہ کی تعیین بھی چاہئے۔ یہ دسوں باتیں خاص عقد ایجاب و قبول میں بیان کرنی ضروری ہیں، مثال اس کی یہ ہے کہ زید و عمر سے کہے میں نے تجھ سے بریلی کی تول سے دس من پختہ چاول، نسراج کھرے بالعوض سو روپے انگریزی چہرہ دار کے آج سے چار مہینے کے وعدہ پر بریلی پہنچتے ہوئے خریدے، وہ کہے میں

نے بیچے یا میں نے تجھ سے بدایوں کے وزن سے چار من پکا گھی بھینس کا خالص آج سے دو مہینے کے وعدہ پر مراد آباد پہنچتا ہوا بالعوض چھ اشرفی محمد شاہی بیس بیس روپے والی کے خریدا، وہ کہے میں نے بیچا، یہ سب باتیں خوب ٹھال کر لی جائیں کہ لوگوں میں آج کل بیع سلم کا بہت رواج ہے، ان زبانی شرطوں کے ترک سے حلال کو ناحق اپنے لئے حرام کر لیتے اور خدا کے گناہ میں گرفتار ہوتے ہیں۔ (۱۱) شرط یہ کہ اسی جلسہ میں ثمن ادا کر دیا جائے ورنہ اگر یہ ساری گفتگو کر کے ثمن دیئے بغیر متفرق ہو گئے تو بننا بنایا عقد فاسد و ناجائز ہو جائے گا یہاں تک کہ اگر وہاں سے اٹھ کر گھر میں روپے لینے گیا اور

Fatawa Razawiya (Volume 17)

If it becomes hidden from the seller's view, the contract becomes void. (12) The item must be of a type that is available in the market at all times from the day of the contract until the end of the term; otherwise, the contract will be invalid. Therefore, if in an agreement for wheat harvesting, these words are said: "we will take new wheat" and at that time new wheat is not available in the market, then it is invalid and a sin. For this reason, the harvesting of juice (sugarcane juice) which is done during the sugarcane season is prohibited, because juice is not available in the market at that time.

| In Tanwir al-Absar, al-Durr al-Mukhtar, and Radd al-Muhtar, the combined summarized text is: The conditions for the validity of a Salam sale (advance payment sale) are seven, which are mentioned in the contract (this number is general; otherwise, the first four conditions are found in both the capital (price) and the subject of the sale (item), so in detail, they become eight instead of four, al-Bahr). (1) Statement of the genus of the Muslam Fihi (the item), such as wheat or dates. (2) Statement of the species (type), such as whether it was irrigated with canal water or rainwater. It is mentioned in al-Khulasa that for an item that has no distinct species, specifying the species is not a condition. It is mentioned in al-Mi'raj that specifying the species of the capital is a condition when different currencies are in circulation in the city, otherwise not. (3) Statement of the quality of the Muslam Fihi, such as good or inferior. (4) Statement of the quantity of the Muslam Fihi, such as a certain measure. (5) Statement of the term (delivery time), and the minimum term in Salam is one month; the fatwa is based on this. (6) Statement of the amount of capital if the contract depends on the amount of capital, such that the parts of the Muslam Fihi are divided among the parts of the capital (Fath). The form of this division is... | In Tanwir al-Absar, al-Durr al-Mukhtar, and Radd al-Muhtar, the mixed text in brief is: There are seven conditions for the validity of a Salam sale to be mentioned in the contract (this count is general, otherwise the first four conditions exist in both the capital (price) and the Muslam Fihi (item), thus detailed they are eight instead of four, al-Bahr). (1) Description of the genus of Muslam Fihi like wheat or dates. (2) Description of the type like it being irrigated by canal water or rainwater, and it's narrated in al-Khulasa that if there's no specific type, description is not a condition. And in it from al-Mi'raj, describing the type in the capital is a condition if different currencies are current in the city, otherwise not. (3) Description of the quality of Muslam Fihi like good or bad. (4) Description of the quantity of Muslam Fihi like this much by measure. (5)

Description of the term, and the minimum term in Salam is one month; the fatwa is on this. (6) Description of the amount of capital if the contract is related to the amount of capital, in a way that the parts of Muslam Fihi are divided over the parts of capital (Fath). The form of this division is... |

बेचने वाले की नज़र से ओझल हो गई तो अनुबंध अमान्य (फ़ासिद) हो गया। (१२) वह चीज़ इस प्रकार की हो कि अनुबंध के दिन से अवधि की समाप्ति तक हर समय बाज़ार में मिल सके, अन्यथा अनुबंध नाजायज़ होगा। इसीलिए यदि गेहूँ की कटाई के सौदे में ये शब्द कह दिए जाएँ कि "नए गेहूँ लेंगे" और उस समय नया गेहूँ बाज़ार में उपलब्ध नहीं है, तो यह नाजायज़ और गुनाह है। इसी कारण से रस (गन्ने के रस) की कटाई, जो ईखों (गन्नों) के समय की जाती है, हराम हुई क्योंकि उस समय बाज़ार में रस नहीं होता।

| तनवीर अल-अब्सार, दुर-ए-मुख्तार और रद्द अल-मुह्तार में मिश्रित संक्षिप्त इबारत इस प्रकार है कि बैअ-ए-सल्लम (अग्रिम भुगतान बिक्री) के सही होने की वे सात शर्तें हैं जिनका अनुबंध में उल्लेख किया जाना चाहिए (यह संख्या सामान्य है, अन्यथा पहली चार शर्तें रास-उल-माल (कीमत) और मुस्लिम-फ़ीह (वस्तु) दोनों में पाई जाती हैं, तो इस प्रकार विस्तार से ये चार के बजाय आठ हो गईं, बहर)। (१) मुस्लिम-फ़ीह के वंश (जीनस) का वर्णन, जैसे गेहूँ या खजूर। (२) प्रकार (नस्ल) का वर्णन, जैसे कि इसे नहर के पानी से सींचा गया है या बारिश के पानी से। 'खुलासा' से उद्धृत है कि जिसमें कोई प्रकार न हो, उसमें प्रकार का वर्णन शर्त नहीं है। 'मेराज' से उद्धृत है कि रास-उल-माल में प्रकार का वर्णन करना शर्त है जब शहर में विभिन्न मुद्राएँ प्रचलित हों, अन्यथा नहीं। (३) मुस्लिम-फ़ीह की गुणवत्ता का वर्णन, जैसे अच्छी या घटिया। (४) मुस्लिम-फ़ीह की मात्रा का वर्णन, जैसे माप के अनुसार इतनी। (५) अवधि का वर्णन, और सल्लम में न्यूनतम अवधि एक महीना है; इसी पर फ़तवा है। (६) रास-उल-माल की मात्रा का वर्णन यदि अनुबंध का संबंध रास-उल-माल की मात्रा से हो, इस तरह कि मुस्लिम-फ़ीह के भाग रास-उल-माल के भागों पर विभाजित होते हों (फ़तह)। इस विभाजन का रूप यह है... | तनवीरुल अब्सार, दुर्रे मुख्तार और रद्दुल मुहतार में मिश्रित इबारत संक्षेप में इस प्रकार है कि बैअ-ए-सल्लम के सही होने की वह शर्तें सात हैं जिनका अक़्द (अनुबंध) में उल्लेख किया जाना (यह संख्या संक्षेप में है, वरना पहली चार शर्तें रास-उल-माल (क़ीमत) और मुस्लिम-फ़ीह (बिक्री की वस्तु) दोनों में पाई जाती हैं तो इस तरह विस्तार से यह चार के बजाय आठ हुईं, बहर) (१) मुस्लिम-फ़ीह की नस्ल का बयान जैसे गेहूँ या खजूर (२) प्रकार का बयान जैसे नहर के पानी से उसे सींचा गया है या बारिश के पानी से सींचा गया है और इसमें 'खुलासा' से नक़ल है कि जिसमें कोई प्रकार न हो उसमें प्रकार का बयान शर्त नहीं और इसमें 'मेराज' से नक़ल है कि रास-उल-माल में प्रकार का बयान करना शर्त है जब शहर में विभिन्न मुद्राएँ प्रचलित हों, वरना नहीं। (३) मुस्लिम-फ़ीह

के गुण का बयान जैसे उम्दा या घटिया (४) मुस्लिम-फ़ीह की मात्रा का बयान जैसे माप के हिसाब से इतनी (५) अवधि का बयान और सल्लम में कम से कम अवधि एक महीना है इसी पर फ़तवा है। (६) रास-उल-माल की मात्रा का बयान अगर अनुबंध का संबंध रास-उल-माल की मात्रा से हो, इस तरह कि मुस्लिम-फ़ीह के हिस्से रास-उल-माल के हिस्सों पर विभाजित होते हों (फ़तह) इस विभाजन की सूरत यह है |

पृष्ठ 715 का 571

بیچنے والے کی نگاہ سے آڑ ہو گئی عقد فاسد ہو گیا۔ (۱۲) وہ چیز اس قسم کی ہو کہ روزِ عقد سے ختمِ میعاد تک ہر وقت بازار میں مل سکے ورنہ عقد ناجائز ہو گا اسی لئے اگر گیہوں کی کٹوتی میں یہ لفظ کہہ دیئے کہ نئے گیہوں لیں گے اور اس وقت نیا گیہوں بازار میں نہیں تو ناجائز و گناہ ہے اور اسی سبب سے رس کی کٹوتی جو اینکھوں کے وقت کرتے ہیں حرام ہوئی کہ رس اس وقت بازار میں نہیں ہوتا۔

| فی تنویر الابصار والدر المختار ورد المحتار بالتلفیق والاختصار، شرطہ ای شروط صحتہ التی تذکر فی العقد سبعة (اجمالا والافالاربعة الاول منها تشترط فی کل من راس المال والمسلم فیہ ثمانیة بالتفصیل، بحر) بیان جنس کبر او تمر، وبیان نوع کمسقی (ما سقتہ الماء، و فیہ عن الخلاصة لایشترط بیان النوع ما لا نوع لہ وفیہ عن المعراج انما یشترط بیان النوع فی رأس المال اذا کان فی البلد نقود مختلفہ والا فلا) وصفة کجید اوردی، وقد کذا اکیلا، واجل واقلہ شہر بہ یفتٰی، وقدر رأس المال ان تعلق العقد بمقدارہ (بان تنقسم اجزاء السلم فیہ علی اجزاءہ فتح ای بان یقابل النصف | تنویر الابصار، درمختار اور ردالمحتار میں مخلوط عبارت بطور اختصار یوں ہے کہ بیع سلم کے صحیح ہونے کی وہ شرطیں سات ہیں جن کا عقد میں ذکر کیا جانا (یہ تعداد اجمالی ہے ورنہ پہلی چار شرطیں راس المال (ثمن) اور مسلم فیہ (مبیع) دونوں میں پائی جاتی ہیں تو اس طرح تفصیلاً یہ چار کے بجائے آٹھ ہوئیں، بحر) (۱) مسلم فیہ کی جنس کا بیان جیسے گندم یا کھجور (۲) نوع کا بیان جیسے نہری پانی سے اس کو سیراب کیا گیا ہے یا بارش کے پانی سے سیراب ہوئی ہے اور اس میں خلاصہ سے منقول ہے کہ جسمیں کوئی نوع نہ ہو اس میں نوع کا بیان شرط نہیں اور اس میں معراج سے منقول ہے کہ راس المال میں نوع کا بیان کرنا شرط ہے جبکہ شہر میں مختلف نقود

رائج ہوں ورنہ نہیں۔ (۳) مسلم فیہ کی صفت کا بیان جیسے عمدہ یا ناقص (۴) مسلم فیہ کی مقدار کا بیان جیسے کیل کے اعتبار سے اتنی (۵) مدت کا بیان اور سلم میں کم از کم مدت ایک ماہ ہے اسی پر فتویٰ ہے۔ (۶) راس المال کی مقدار کا بیان اگر عقد کا تعلق راس المال کی مقدار سے ہو بایں طور کہ مسلم فیہ کے اجزاء راس المال کے اجزاء پر منقسم ہوتے ہوں (فتح) اس تقسیم کی صورت یہ ہے |

Fatawa Ridawiyya (Volume 17)

...that half of the Muslam-fihi (the object of sale) is in exchange for half of the Ra's-al-mal (the capital/price), and a quarter for a quarter, and so on. This situation can only occur in fungible (mithli) items. (7) Explanation of the place of fulfillment for the Muslam-fihi when it involves transport and labor costs: if a condition is set for delivery within a city, all neighborhoods of that city are equal in this regard. Thus, if the seller delivers it in any neighborhood, he is absolved of responsibility, and the buyer has no right to demand delivery in another neighborhood (Bazzaziya). If a specific house or place is designated, then according to the most correct view, that specific location is mandatory (Fath). Among the remaining conditions is taking possession of the capital (Ra's-al-mal), even if it is a specific object, before the physical separation of the contracting parties. This applies even if they both fall asleep in the meeting place or walk together for a farsakh (league) or more (and then possession is taken). If the buyer (Rabb-us-Salam) enters a house to fetch dirhams such that he disappears from the seller's (Muslam-ilaih) sight, the contract becomes void. If he remains in sight, it is not void. Taking possession of the capital in the meeting place is a condition for the continued validity of the Salam contract, not a condition for its initial formation. Thus, the sale contract is initially formed correctly, and then it becomes void if they separate without possession of the capital being taken. (T)

It is stated therein: A Salam contract is not valid for an unavailable item that is not found in the markets from the time of the contract until the time of fulfillment (the end of the term). (T)

---

1. Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Kitab al-Buyu', Bab al-Salam, Matba' Mujtabai Delhi 2/48; Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Salam, Matba' Mujtabai Delhi 4/206-207.
2. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Salam, Matba' Mujtabai Delhi 2/47.

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

...कि आधा मुस्लम फ़ीह (विक्रय वस्तु) आधे रास-अल-माल (पूँजी/कीमत) के बदले में हो और चौथाई-चौथाई के बदले में हो, इसी तरह यह सिलसिला चलता रहे। यह स्थिति केवल मिस्ली (समान प्रकृति वाली) चीज़ों में ही संभव है। (7) उस स्थान का वर्णन जहाँ मुस्लम फ़ीह पहुँचाना तय हुआ है, जबकि उसमें ढुलाई और मेहनत शामिल हो: यदि किसी शहर में पहुँचाने की शर्त लगाई गई है, तो उस शहर के सभी मोहल्ले इस मामले में बराबर हैं। यदि विक्रेता ने किसी भी मोहल्ले में माल पहुँचा दिया, तो वह दायित्व से मुक्त हो गया और खरीदार को यह अधिकार नहीं है कि वह दूसरे मोहल्ले में पहुँचाने की माँग करे (बज़्ि़या)। और यदि कोई विशेष स्थान तय कर दिया गया है, तो सबसे सही मत के अनुसार वही स्थान निश्चित होगा (फ़तह)। शेष शर्तों में से एक रास-अल-माल (पूँजी) पर क़ब्ज़ा करना है, भले ही वह निश्चित वस्तु हो, अनुबंध करने वालों के शारीरिक रूप से अलग होने से पहले। यह शर्त तब भी लागू होती है जब वे दोनों बैठक में सो गए हों या एक फ़र्सख़ (दूरी का पैमाना) या उससे अधिक साथ चले हों (और फिर क़ब्ज़ा किया हो)। यदि खरीदार (रब्ब-उस-सल्म) दिरहम लेने के लिए घर में इस तरह गया कि वह विक्रेता (मुस्लम-इलैया) की नज़रों से ओझल हो गया, तो अनुबंध रद्द हो गया। यदि वह नज़र आता रहा, तो अनुबंध रद्द नहीं हुआ। बैठक में पूँजी पर क़ब्ज़ा करना सल्म अनुबंध की वैधता बने रहने के लिए शर्त है, न कि उसके शुरू होने की शर्त। अतः अनुबंध सही ढंग से हो जाएगा, फिर पूँजी पर क़ब्ज़ा किए बिना दोनों के अलग होने से वह रद्द हो जाएगा। (त)

उसी में है: ऐसी चीज़ में सल्म अनुबंध सही नहीं है जो अनुबंध के समय से लेकर अधिकार मिलने के समय (अवधि की समाप्ति) तक बाज़ार में उपलब्ध न हो। (त)

---

1. दुर्रे मुख्तार शरह तनवीरुल अबसार, किताबुल बुयूअ, बाबुल सल्म, मतबा मुजतबाई दिल्ली 2/48; रद्दुल मुह्तार, किताबुल बुयूअ, बाबुल सल्म, मतबा मुजतबाई दिल्ली 4/206-207।
2. दुर्रे मुख्तार, किताबुल बुयूअ, बाबुल सल्म, मतबा मुजतबाई दिल्ली 2/47।

पृष्ठ 572/715

بالنصف والربع بالربع وهكذا وذلك انما يكون فی المثلی، والسابع بيان مكان الايفاء للمسلم فيه فيماله حمل ومؤنة شرط الايفاء فی مدينة فكل محلاتها سواء فيه حتی لو اوفاه فی محلة اخری برئ وليس له ان يطالبه فی محلة اخری بزازية ولو عين مكانا تعين فی الاصح فتح، وبقی من الشروط قبض رأس المال ولو عينا قبل الافتراق بأبدانهما وان ناما او سار فرسخا اوا كثر ولو دخل ليخرج الدراهم ان توارى عن المسلم اليه بطل وان بحيث يراه لا وهو شرط بقائه علی الصحة لا شرط انعقاده بوصفها فينعقد صحيحا ثم يبطل بالافتراق بلا قبض[1]۔ کہ نصف مسلم فیہ نصف راس المال کے بدلے میں اور چوتھائی چوتھائی کے بدلے میں ہو اسی طرح یہ سلسلہ چلتا جائے اور یہ صورت صرف مثلی چیزوں میں متفق ہوسکتی ہے، (۷) اس جگہ کا بیان جہاں مسلم فیہ پہنچانا منظور ہے جبکہ مسلم فیہ میں بار برداری اور مشقت ہے، کسی شہر سے پہنچانے کی شرط لگائی تو اس شہر کے تمام محلے اس مسئلہ میں برابر ہیں اگر کسی محلہ میں بائع نے مسلم فیہ کو پہنچا دیا تو بری الذمہ ہو گیا مشتری کو یہ حق حاصل نہیں کہ وہ دوسرے محلہ میں پہنچانے کا مطالبہ کرے (بزازیہ) اور اگر کوئی مکان معین کر دیا تو وہی معین ہوگا اصح مذہب پر (فتح) اور باقی رہا شرطوں میں سے راس المال پر قبضہ کرنا اگر چہ راس المال معین ہو ، اور یہ قبضہ عاقدین کے بدنی طور پر جدا ہونے سے قبل شرط ہے اگر چہ وہ دونوں مجلس میں سو گئے ہوں یا ایک فرسخ یا اس سے کچھ زیادہ اکٹھے چلے گئے ہوں (اس کے بعد قبضہ کیا ہو) اور اگر رب السلم (مشتری) درہم لینے گھر میں اس طرح داخل ہوا کہ مسلم الیہ (بائع) کی نظر سے اوجھل ہو گیا تو عقد باطل ہو گیا اور اگر وہ نظر آتا رہا تو عقد باطل نہیں ہوا اور راس المال پر مجلس میں قبضہ کرنا عقد سلم کے صحت پر باقی رہنے

کی شرط ہے نہ کہ وصف صحت پر اس کے منعقد ہونے کی شرط ہے ، تو بیع کا انعقاد صحیح ہو جائے گا پھر راس المال پر قبضہ کئے بغیر دونوں کے جدا ہونے سے باطل ہو جائے گی۔(ت)

اسی میں ہے: لا یصح فی منقطع لا یوجد فی الأسواق من وقت العقد الی وقت الاستحقاق[2]۔ ایسی چیز میں عقد سلم صحیح نہیں جو وقت عقد سے وقت استحقاق یعنی ختم میعاد تک بازار میں موجود نہ رہے۔(ت)

---

[1] در مختار شرح تنویر الابصار کتاب البیوع باب السلم مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۴۸، ردالمحتار کتاب البیوع باب السلم مطبع مجتبائی دہلی ۴ / ۲۰۶-۲۰۷ [2] در مختار کتاب البیوع باب السلم مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۴۷

Fatawa Razawiyya, Volume 17

It is in the same [book]: "Nor in new wheat before its emergence because it is currently unavailable. And Allah Almighty knows best." A contract of Salam (forward sale) in new wheat before its birth is not valid because it is not available at the present time. (T)

Problem 224: From the Old City, 10th Rabi' al-Thani 1306 AH. What do the scholars of religion say about this matter: If the deduction of wheat, also known as 'badni', is done in such a way that money is paid but the rate is not fixed, instead it is agreed that the harvest rate or, for example, two seers more than that will be taken, is this form permissible or not? Explain and be rewarded. The Answer: It is purely impermissible until a specific quantity is fixed. In Al-Durr al-Mukhtar: "A condition for its validity is the statement of genus and quantity, such as measure." Summary. And Allah Almighty knows best. In Durr al-Mukhtar, it is stated that a condition for the validity of the Salam contract is the specification of the genus and the specification of the quantity, such as being 'this much' according to measurement. Summary. And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 225: From the Old City, 10th Rabi' al-Thani 1306 AH. What do the scholars of religion say about this matter: Is it permissible to purchase sugarcane juice (ras) while the sugarcane is still standing, paying for it in advance? Explain and be rewarded. The Answer: It is purely impermissible as it is a form of Salam sale, and Salam sale is permissible only for those things that are available in the market at all times from the moment of the contract until the due date. Being available in homes is not sufficient, and it is obvious that sugarcane juice is not in the market at that time. It is stated in Al-Hidayah: "Salam is not permissible unless the subject of the Salam (Muslam fihi) is available from the time of the contract until..." As long as the subject of the Salam is not continuously available in the market from the time of the contract until the time of entitlement, the Salam sale [is not valid]. (T)

1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Salam, Matba' Mujtabai Delhi, 2/77
2. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Salam, Matba' Mujtabai Delhi, 2/78 Page 573 of 715

फ़तावा रज़विया, जिल्द 17

इसी में है: "न ही नए गेहूँ में उसके पैदा होने से पहले क्योंकि वह वर्तमान में अनुपलब्ध है - और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।" नए गेहूँ में 'सलाम' का अनुबंध (एग्रीमेंट) उसके पैदा होने से पहले सही नहीं है क्योंकि वह वर्तमान में मौजूद नहीं है। (त)

मसला 224: पुराने शहर से, 10 रबीउल थानी 1306 हिजरी। धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं कि यदि गेहूँ की कटौती जिसे 'बदनी' भी कहते हैं, इस तरह की जाए कि रुपये दे दिए जाएं और भाव तय न किया जाए, बल्कि यह तय हो कि फसल का भाव या उदाहरण के लिए उससे दो सेर अधिक लिया जाएगा, तो क्या यह तरीका जायज़ है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें। उत्तर: यह पूरी तरह से नाजायज़ है जब तक कि मात्रा तय न कर दी जाए। दुर्र-ए-मुख्तार में है: "इसकी वैधता की शर्त इसके लिंग (जीन्स) और मात्रा का वर्णन करना है, जैसे माप।" संक्षेप। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। दुर्र-ए-मुख्तार में है कि सलाम अनुबंध के सही होने की शर्त जीन्स को बयान करना और मात्रा को बयान करना है, जैसे माप के हिसाब से इतनी है। संक्षेप। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 225: पुराने शहर से, 10 रबीउल थानी 1306 हिजरी। धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं कि रस की खरीदारी इस तरह करना कि अभी ईख (गन्ना) खड़ी है और उसे खरीद लिया और रुपया दे दिया, जायज़ है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें। उत्तर: यह पूरी तरह से नाजायज़ है क्योंकि यह 'बै-ए-सलाम' (अग्रिम बिक्री) का मामला है, और बै-ए-सलाम उन्हीं चीजों में जायज़ है जो अनुबंध के समय से लेकर हकदार होने की अवधि तक हर समय बाजार में उपलब्ध हों। घरों में उपलब्ध होना पर्याप्त नहीं है, और यह स्पष्ट है कि रस उस समय बाजार में नहीं होता। हिदाया में है: "सलाम तब तक जायज़ नहीं है जब तक कि 'मुसल्लम फीही' (बिक्री की वस्तु) अनुबंध के समय से लेकर... तक मौजूद न हो।" जब तक 'मुसल्लम फीही' अनुबंध के समय से लेकर हकदार होने के समय तक लगातार बाजार में मौजूद न रहे, बै-ए-सलाम [सही नहीं है]। (त)

1. दुर्र-ए-मुख्तार, किताब अल-बुयू, बाब अस-सलाम, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 2/77
2. दुर्र-ए-मुख्तार, किताब अल-बुयू, बाब अस-सलाम, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 2/78 पृष्ठ 573 का 715

اسی میں ہے: ولا في حنطة حديثة قبل حدوثها لانها منقطعة في الحال - واللہ تعالٰی اعلم۔ عقد سلم نئی گندم میں اسکے پیدا ہونے سے پہلے صحیح نہیں کیونکہ وہ فی الحال موجود نہیں۔(ت)

مسئلہ ۲۲۴: از شہر کہنہ، دہم ربیع الثانی شریف ۱۳۰۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اگر گیہوں کی کٹوتی جسے بدنی بھی کہتے ہیں اس طور پر کریں کہ روپے دے دے اور بھاؤ معین نہ کیا بلکہ یہ ٹھہرا کہ فصل کا بھاؤ یا اس سے مثلاً دو سیر زائد لیں گے تو یہ صورت جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔ الجواب: محض ناجائز ہے جب تک مقدار معین نہ کردی جائے۔ فی الدرالمختار شرط صحتہ بیان جنس وقدر ککذا کیلاً اھ ملخصاً۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ در مختار میں ہے عقد سلم کے صحیح ہونے کی شرط جنس کو بیان کرنا اور مقدار کو بیان کرنا ہے جیسے کیل کے اعتبار سے اتنی ہے اھ تلخیص۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۲۲۵: از شہر کہنہ، دہم ربیع الثانی شریف ۱۳۰۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ رس کی خریداری اس طور پر کہ ابھی ایکھ کھڑی ہے اور اسے خرید لیا اور روپیہ دے دیا، جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔ الجواب: محض ناجائز ہے کہ صورت بیع سلم کی ہے اور بیع سلم انھیں چیزوں میں جائز ہے جو ہنگام عقد سے میعاد استحقاق تک ہر وقت بازار میں موجود ہوں، گھروں میں موجود ہونا کفایت نہیں کرتا اور ظاہر ہے کہ رس اس وقت بازار میں نہیں ہوتا۔ ہدایہ میں ہے: لایجوز المسلم حتی یکون المسلم فیہ موجوداً من حین العقد الٰی۔ جب تک مسلم فیہ وقت عقد سے لیے کر وقت استحقاق تک مسلسل بازار میں موجود نہ رہے بیع سلم (ت)

1 در مختار کتاب البیوع باب السلم مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۷۷ 2 در مختار کتاب البیوع باب السلم مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۷۸ Page 573 of 715

Fatawa Ridawiyya Volume 17

At the time of term expiration[1] - Not permissible. (T) In Radd al-Muhtar: Limit of unavailability (inqita) is that it is not found in the markets, even if it were present in houses. This is stated in al-Tabyin, Shurunbulaliyyah, and similarly in al-Fath, al-Bahr, and al-Nahr[2]. And Allah knows best. Meaning of being unavailable is that the item is not present in the market, even if it's present in the house. This is how it is in Tabyin Shurunbulaliyyah and similar to it in Bahr, Nahr, and Fath. And Allah knows best.

Problem 226: 8 Rajab 1308 AH What do the scholars of religion say regarding this problem: A person gave money to the tenants (asamis) of his own or another's village on a discount and fixed the rate for grain. Now, if due to some earthly or heavenly calamity, grain is not produced, is this person entitled to receive the price according to that fixed rate or not? Explain and you will be rewarded.

The Answer: When, due to lack of production etc., the seller and buyer rescind the same contract, it is permissible for the buyer to take only as much money as he had given. Taking more than that even by one grain is forbidden (haram) and interest (usury). The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: "Do not take except your original [good] or your principal capital[3]" or as the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said. And Allah knows best. Meaning: Either he should take that thing or take back as much money as he gave; he should not take anything besides that, as the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) has said.

Problem 227: 4 Ramadan al-Mubarak What do the scholars of religion say regarding this problem: It was agreed with tenants to give money in advance (badni) and receive 20 thar or 19 thar of high-quality wheat per rupee in a certain month. But production was low at the tenant's place and he could not deliver the said grain. So, is it permissible or impermissible for him (the buyer) to take the monetary value of the grain? Or should the money that was given be taken? And if grain is taken at the fixed time, then whether clean...

[1] Al-Hidayah, Kitab al-Buyu', Bab al-Salam, Matba' Yusufi Lucknow, 2/95 [2] Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Salam, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/205 [3] Durr al-Mukhtar, Bab al-Salam, 2/49 and Tabyin al-Haqa'iq, Bab al-Salam, 2/114 Page 574 of 715

फ़तावा रिज़विया खंड 17

समय समाप्ति पर[1] - जायज़ नहीं। (त) रद्द अल-मुह्तार में है: अनुपलब्धता (इंकिता) की सीमा यह है कि वह बाज़ारों में न मिले, भले ही वह घरों में मौजूद हो। ऐसा ही तबयीन, शुरुनबुलालिया और इसी तरह अल-फ़त्ह, अल-बह्र और अन-नह्र में है[2]। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है। अनुपलब्ध होने का अर्थ यह है कि चीज़ बाज़ार में मौजूद न हो, चाहे वह घर में मौजूद हो। तबयीन शुरुनबुलालीया में इसी तरह है और इसके समान ही बह्र, नह्र और फ़त्ह में है। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

मसला 226: 8 रजब 1308 हिजरी विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि एक व्यक्ति ने अपने या किसी अन्य गाँव के किसानों (असामियों) को छूट पर रुपया दिया और अनाज की दर तय कर ली। अब अगर किसी ज़मीनी या आसमानी आपदा के कारण अनाज पैदा न हो, तो क्या यह व्यक्ति उसी तय दर के हिसाब से कीमत पाने का हकदार है या नहीं? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: जब पैदावार न होने आदि के कारण विक्रेता और खरीदार इसी अनुबंध को रद्द कर दें, तो खरीदार के लिए केवल उतना ही रुपया लेना जायज़ है जितना उसने दिया था। उससे एक दाना भी अधिक लेना हराम और ब्याज है, अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं: "सिवाय अपनी मूल वस्तु या अपनी मूल पूँजी के और कुछ न लो[3]" या जैसा कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है। अर्थात्: या तो वह चीज़ ले ले या जितना रुपया दिया था वह वापस ले ले, उसके अलावा कुछ न ले, जैसा कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया है।

मसला 227: 4 रमज़ानुल मुबारक विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि किसानों को अग्रिम (बदनी) पर रुपया देना और प्रति रुपया 20 थार या 19 थार बढ़िया गेहूँ फलां महीने में लेना तय हुआ। लेकिन किसान के यहाँ पैदावार कम हुई और वह उक्त अनाज अदा न कर सका, तो उसे अनाज की कीमत लेना जायज़ है या नाजायज़। या कि जो रुपया दिया है वही लिया जाए? और अगर अनाज तय समय पर लिया जाए तो क्या साफ़...

[1] अल-हिदाया, किताब अल-बुयू, बाब अस-सलाम, मतबा यूसुफी लखनऊ, 2/95 [2] रद्द अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू, बाब अस-सलाम, दार इह्या अत-तुराथ अल-अरबी बेरूत, 4/205 [3] दुर्र अल-मुख्तार, बाब अस-सलाम, 2/49 और तबयीन अल-हक़ाएक़, बाब अस-सलाम, 2/114 पृष्ठ 715 का 574

حین المحل ۱- جائز نہیں۔ (ت) ردالمختار میں ہے: حد الانقطاع ان لا یوجد فی الاسواق وان کان فی البیوت کذا فی التبیین شرنبلالیہ ومثلہ فی الفتح والبحر والنہر ۲۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ نایاب ہونے کا معنی یہ ہے کہ چیز بازار میں موجود نہ ہو اگرچہ گھر میں موجود ہو تبیین شرنبلالیہ میں یونہی ہے اور اس کی مثل بحر، نہر اور فتح میں ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۲۶: ۸ رجب ۱۳۰۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص نے اپنے یا غیر گاؤں کے اسامیوں کو روپیہ کٹوتی پر دیا اور نرخ کاٹ کر غلہ ٹھیرا لیا اب اگر کسی آفت ارضی یا سماوی کی وجہ سے غلہ نہ پیدا ہو تو یہ شخص اسی نرخ معین کے حساب سے قیمت پانے کا مستحق ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: جب عدم پیداوار وغیرہ کی وجہ سے بائع و مشتری اسی عقد کو فسخ کریں تو مشتری کو صرف اتنا ہی روپیہ لینا جائز ہے جس قدر اس نے دیا تھا اس سے زیادہ ایک حبہ لینا حرام اور سود ہے، رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: لاتاخذ الاسلمک او رأس مالک ۳ او کما قال صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ یعنی ایا تو وہ چیز لے یا جتنا روپیہ دیا تھا وہ واپس کرلے اس کے سوا کچھ نہ لے، جیسا کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا ہے۔

مسئلہ ۲۲۷: ۴ رمضان المبارک کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اسامیان کو بدنی پر روپیہ اور فی روپیہ ۲۰ ثار یا ۱۹ ثار گندم عمدہ ماہ فلاں میں لینے ٹھہرے لیکن اسامی کے یہاں پیداوار کم ہوئی اور غلہ مذکور ادا نہ کر سکا تو اسے زر قیمت غلہ لینا جائز ہے یا نا جائز۔ یا کہ جو روپیہ دیا ہے وہ لیا جائے اور اگر غلہ وقت معینہ پر لیا جائے تو آیا صاف

۱ الہدایہ کتاب البیوع باب السلم مطبع یوسفی لکھنؤ ۲ / ۹۵ ۲ ردالمختار کتاب البیوع باب السلم داراحیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۲۰۵ ۳ درمختار باب السلم ۲ / ۴۹ و تبیین الحقائق باب السلم ۲ /

...should high-quality grain be taken, or just as it is produced? In what manner? And if it remains for the following year, at what rate should the grain be taken? That is, should the wheat for the remaining value be taken according to the aforementioned physical rate, or should the wheat for the remaining money paid be taken according to the physical rate? Please explain, and may you be rewarded.

Answer: The person giving the money has only two choices: either take the amount of grain that was agreed upon, even if it is next year—he has no right to increase the quantity—or, in this situation, take back exactly as much money as he had given, fully according to the calculation. For example, if a hundred rupees were given for fifty maunds of wheat and twenty-five maunds were received, he can take back the remaining fifty rupees. Not a single penny more is permissible (halal). What people do—deducting the price of the remainder based on current market rates and then charging for grain based on those prices at a physical rate—is pure and absolute usury (riba), in fact, usury upon usury.

| In al-Durr al-Mukhtar: If the object of the Salam contract (Muslam fihi) becomes unavailable after it was due, the buyer (Rabb al-Salam) has the choice between waiting for it to become available or rescinding the contract and taking back his capital (Ra's al-Mal)1... It is not permissible for the seller (Muslam ilayh) to dispose of the capital, nor for the buyer to dispose of the object of Salam before taking possession of it, through sale, partnership, murabahah, or tawliyah, even if it is with the person who owes it. If he gifts it back, it constitutes a rescission (Iqalah) if accepted. In al-Sughra, partial rescission of a Salam contract is permissible2 etc. | It is stated in Durr al-Mukhtar that if the object of the Salam contract (Muslam fihi) becomes unavailable after entitlement, the buyer (Rabb al-Salam) shall be given the choice to either wait for its availability or rescind the contract and take back the capital (Ra's al-Mal). And in the same text, it says that before possession, it is not permissible for the seller (Muslam ilayh) to dispose of the capital, nor for the buyer (Rabb al-Salam) to dispose of the object of the Salam contract through sale, partnership, murabahah, and tawliyah, even if these disposals are made with the person who holds the capital or the object. To the extent that if the buyer (Rabb al-Salam) gifts the object back to the seller (Muslam ilayh), it will be considered a rescission (Iqalah), provided the seller (Muslam ilayh) accepts it. And in al-Sughra, it says that partial rescission of a Salam is permissible, etc. (T) |

And he is entitled to receive wheat as it was agreed upon; if the condition was for high quality and clean, he shall take high quality and clean wheat.

| In al-Hindiyyah: If a Salam contract is made for good quality wheat... | It is stated in al-Hindiyyah: If someone made a Salam contract for good quality wheat and... |

1 Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Salam, Matba' Mujtabai Delhi, 2/7 2 Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Salam, 2/48-49

...क्या उत्तम गुणवत्ता वाला अनाज लिया जाना चाहिए, या जैसा वह पैदा हुआ है? किस तरीके से? और यदि यह अगले वर्ष के लिए शेष रह जाता है, तो अनाज किस दर पर लिया जाना चाहिए? यानी, शेष मूल्य के लिए गेहूं ऊपर बताए गए शारीरिक (बाज़ार) दर के अनुसार लिया जाना चाहिए, या शेष भुगतान किए गए पैसे के लिए गेहूं शारीरिक दर के अनुसार लिया जाना चाहिए? कृपया स्पष्ट करें, और आपको पुण्य मिले।

उत्तर: पैसा देने वाले के पास केवल दो ही विकल्प हैं: या तो वह उतना ही अनाज ले जितना तय हुआ था, चाहे वह अगले साल ही क्यों न हो—उसे मात्रा बढ़ाने का कोई अधिकार नहीं है—या, इस स्थिति में, वह उतना ही पैसा वापस ले ले जितना उसने दिया था, पूरी तरह से गणना के अनुसार। उदाहरण के लिए, यदि सौ रुपये पचास मन गेहूं के लिए दिए गए थे और पच्चीस मन प्राप्त हुए, तो वह शेष पचास रुपये वापस ले सकता है। एक पैसा भी अधिक हलाल नहीं है। और लोग जो यह करते हैं कि बाकी बचे हिस्से की कीमत मौजूदा बाजार भाव के अनुसार काटते हैं और फिर उन कीमतों के आधार पर शारीरिक दर पर अनाज का शुल्क लेते हैं—यह शुद्ध और पूर्ण ब्याज (सूद) है, बल्कि ब्याज पर ब्याज है।

| फ़िद्दुर्रिल्-मुख्तार: यदि हक़ मिलने के बाद मुस्लम फ़ीह (सलाम अनुबंध की वस्तु) अनुपलब्ध हो जाए, तो खरीदार (रब्ब अस-सलाम) को इंतज़ार करने या अनुबंध रद्द करने और अपनी पूंजी (रास अल-माल) वापस लेने के बीच विकल्प दिया जाएगा1... पूंजी में मुस्लम इलैह (विक्रेता) के लिए और मुस्लम फ़ीह में रब्ब अस-सलाम के लिए कब्ज़ा करने से पहले बिक्री, साझेदारी, मुराबाहा और तौलिआ जैसे लेन-देन करना जायज़ नहीं है, चाहे वे उसी व्यक्ति के साथ हों जिस पर पूंजी या मुस्लम फ़ीह है। यहाँ तक कि अगर रब्ब अस-सलाम ने मुस्लम इलैह को मुस्लम फ़ीह उपहार में दे दिया, तो यह इक़ाला (अनुबंध रद्द करना) होगा यदि वह स्वीकार कर ले। और सुग़रा में है कि सलाम के कुछ हिस्से का इक़ाला जायज़ है2 आदि। | दुर्र अल-मुख्तार में है कि अगर मुस्लम फ़ीह हक़ मिलने के बाद दुर्लभ हो जाए, तो रब्ब अस-सलाम को विकल्प दिया जाएगा कि या तो इसके उपलब्ध होने का इंतज़ार करे या अनुबंध रद्द करके पूंजी वापस ले ले। और इसी में है कि कब्ज़े से पहले मुस्लम इलैह के लिए पूंजी में और रब्ब अस-सलाम के लिए मुस्लम फ़ीह में बिक्री, साझेदारी, मुराबाहा और तौलिआ जैसे लेन-देन जायज़ नहीं हैं, भले ही ये लेन-देन उसी व्यक्ति के साथ किए जाएं जिस पर पूंजी या मुस्लम फ़ीह है। यहाँ तक कि अगर रब्ब अस-सलाम ने मुस्लम इलैह को मुस्लम फ़ीह उपहार में

दे दिया, तो यह इक़ाला होगा बशर्ते मुस्लम इलैह इसे स्वीकार कर ले। और सुग़रा में है कि सलाम के कुछ हिस्से का इक़ाला जायज़ है, आदि। (त) |

और वह वैसे ही गेहूं लेने का हकदार है जैसा तय हुआ था; अगर शर्त बढ़िया और साफ की थी तो बढ़िया और साफ ही लेगा।

| फ़िल-हिन्दिया: उत्तम गेहूं के लिए सलाम... | हिन्दिया में है कि अगर किसी ने उत्तम गेहूं में सलाम का अनुबंध किया और... |

1 दुर्र अल-मुख्तार, किताब अल-बुयू, बाब अस-सलाम, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 2/7 2 दुर्र अल-मुख्तार, किताब अल-बुयू, बाब अस-सलाम, 2/48-49

کرا کر عمدہ لیا جائے یا جیسا پیدا ہوا ہے کس طور پر اور اگر بحالت باقی آئندہ سال پر غلہ لیا جائے تو کس شرح سے یعنی کہ زرِ قیمت بقیہ غلہ کے گندم بحسابِ بدنی مذکور لئے جائیں یا کہ بقیہ زرِ دادہ کے گندم بحسابِ بدنی لئے جائیں بینوا توجروا الجواب: روپیہ دینے والے کو دو ہی بات کا اختیار ہے چاہے جو غلہ جتنا لینا ٹھہرا ہے اب خواہ آئندہ سال اسی قدر لے کر دانہ بڑھانے کا اختیار نہیں ہے اور چاہے تو اس صورت میں اپنا اتنا ہی روپیہ جس قدر دیا تھا پورا خواہ حساب سے کہ مثلاً سو روپے پچاس من گیہوں پر دئے تھے پچیس من ملے تو باقی پچاس روپے واپس لے ایک کوڑی زیادہ حلال نہیں اور یہ جو کر لیتے ہیں کہ جو باقی رہا اس وقت کے بھاؤ سے اس کے دام کاٹے اور بدنی کے حساب سے ان داموں کا غلہ اس کے ذمہ کر دیا یہ نرا سود قطعی حرام بلکہ سود در سود ہے۔

| فی الدرالمختار لو انقطع بعد الاستحقاق خیر رب السلم بین انتظار وجودہ والفسخ واخذ راس مالہ1 اھ وفیہ لایجوز التصرف للمسلم الیہ في رأس المال و لالرب السلم في المسلم فیہ قبل قبضہ بنحو بیع و شرکۃ و مرابحۃ و تولیۃ ولوممن علیہ حتی لو وھبہ منہ کان اقالۃ اذا قبل وفی الصغری اقالۃ بعض السلم جائزۃ2 الخ۔ | در مختار میں ہے کہ اگر مسلم فیہ استحقاق کے بعد نایاب ہو گئی تو رب السلم کو اختیار دیا جائے گا کہ یا تو اس کے دستیاب ہونے کا انتظار کرے یا عقد فسخ کر کے راس المال واپس لے لے اھ، اور اسی میں ہے قبضہ سے پہلے مسلم الیہ کے لئے راس المال میں اور رب السلم کے لئے مسلم فیہ تصرف جیسے بیع، شرکت، مرابحہ اور تولیہ جائز نہیں اگرچہ یہ تصرف اسی شخص سے کئے جائیں جس پر راس المال یا مسلم فیہ ہے یہاں تک کہ اگر رب السلم نے مسلم

الیہ کو مسلم فیہ ہبہ کر دیا تو یہ اقالہ ہوگا جبکہ مسلم الیہ اسی کو قبول کرے اور صغری میں ہے کہ بعض سلم کا اقالہ جائز ہے الخ (ت) |

اور گیہوں جیسے ٹھہرے تھے ویسے لینے کا مستحق ہے اگر عمدہ صاف کی شرط تو عمدہ صاف ہی لے گا۔

| فی الہندیہ اسلم فی گندم نیکواو | ہندیہ میں ہے اگر کسی نے نیک گندم میں عقدِ سلم کیا اور |

1 درمختار کتاب البیوع باب السلم مطبع مجتبائی دہلی ۲/۷ 2 درمختار کتاب البیوع باب السلم ۲/ ۴۸-۴۹

Fatawa Razvia (Volume 17)

[Arabic Box] If he said 'good' or said 'pure', this is permissible. This is the correct and adopted view, as stated in Al-Ghiyathiyah. And Allah Almighty knows best, and His knowledge, glorified be His majesty, is more complete and perfect. (T)

Problem 228: 1st Muharram al-Haram 1312 AH Question: What do the scholars of religion say regarding this matter: Is the forward sale (Bay' Salam) of bricks permissible or not in a situation where the seller has only acquired land with the intention that after four months, clay will be dug from it to make bricks? Khalid has already paid two hundred rupees at a rate of two rupees per thousand with a promise of four months. Is this situation shariah-compliant or not? Clarify and be rewarded.

Answer: It is permissible provided that the mold is fixed and other conditions of Bay' Salam are met, and it is not stipulated that only the bricks made from that specific soil must be taken.

[Arabic & Urdu Box] Because it is currently unavailable, like the sale of new wheat before its existence. And in Al-Tanwir, it is stated that forward sale (Salam) is permissible for anything whose attributes can be defined and whose quantity can be known, such as items measured by volume, weight, price, or similar countable items like walnuts, eggs, coins, and bricks made from a specific mold. (T) And Allah Almighty knows best.

Problem 229: From Anwla Dispensary, sent by Dr. Sheikh Muhammad Bakhsh, 6th Rabi-ul-Awwal 1312 AH. Question: What do the scholars of religion and jurists of the firm Shariah say about this: The current copper coins (faloos) are sold at a rate of sixteen and a half annas per rupee, i.e., 33 takas. If Zaid gives some amount of rupees to Amr, and from Amr at the rate of sixteen and a half annas per rupee, i.e., 33 takas, without specifying the time in days or months...

1. Fatawa Hindiyyah, Chapter 18, Section 1, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/179.
2. Durr-e-Mukhtar, Book of Sales, Chapter of Salam, Mujtabai Press Delhi, 2/72.

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

[अरबी बॉक्स] यदि 'निक' (अच्छा) कहा गया या 'सरह' (शुद्ध) कहा गया, तो यह जायज़ है। यही सही और अपनाया गया मत है, जैसा कि अल-ग़ियाथिया में है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है, और उसका ज्ञान, उसकी महिमा महान हो, सबसे पूर्ण और सटीक है। (त)

मसला 228: 1 मुहर्रम अल-हराम 1312 हिजरी प्रश्न: धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: ईंटों की अग्रिम बिक्री (बैय-ए-सल्लम) जायज़ है या नहीं, ऐसी स्थिति में जहाँ बेचने वाले ने अभी केवल इस नियत से ज़मीन ली है कि चार महीने बाद उसी से मिट्टी खोदकर ईंट बनाई जाएगी? खालिद ने अभी से दो रुपये प्रति हज़ार की दर तय करके चार महीने के वादे पर दो सौ रुपये उसे दे दिए हैं। क्या यह स्थिति शरीयत के अनुसार जायज़ है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: जायज़ है बशर्ते कि सांचा निश्चित कर दिया गया हो और बैय-ए-सल्लम की अन्य शर्तें पूरी हों, और यह शर्त न रखी गई हो कि केवल उसी मिट्टी से बनी ईंटें ली जाएंगी।

[अरबी और उर्दू बॉक्स] क्योंकि वह वर्तमान में अनुपलब्ध है, जैसे नई गेहूं की बिक्री उसके अस्तित्व में आने से पहले। और अल-तन्वीर में है कि अग्रिम बिक्री (सल्लम) उन चीज़ों में जायज़ है जिनके गुणों को परिभाषित किया जा सके और उनकी मात्रा ज्ञात हो सके, जैसे नापी जाने वाली, तौली जाने वाली, मूल्य वाली, या गिनती वाली समान वस्तुएं जैसे अखरोट, अंडे, पैसे और निश्चित सांचे से बनी पकी हुई ईंटें। (त) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 229: अनवला डिस्पेंसरी से, प्रेषक डॉक्टर शेख मुहम्मद बख्श, 6 रबी-उल-अव्वल 1312 हिजरी। प्रश्न: धर्म के विद्वान और मुफ्ती इस बारे में क्या कहते हैं कि वर्तमान में प्रचलित तांबे के सिक्के(फलूस) साढ़े सोलह आने प्रति रुपया यानी 33 टका की दर से बिकते हैं। यदि ज़ैद कुछ रुपये अम्र को दे, और अम्र से साढ़े सोलह आने प्रति रुपया यानी 33 टका की दर से, बिना दिन या महीने का समय तय किए...

1. फ़तावा हिन्दिया, अध्याय 18, खंड 1, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/179।
2. दुर्रे मुख्तार, किताबुल बुयू, बाबुल सल्लम, मतब-ए-मुजतबाई दिल्ली, 2/72।

पृष्ठ 576 का 715

[Arabic Box] قال نيك او قال سره يجوز هذا هو الصحيح والمأخوذ به كذا في الغياثية اھ واللہ تعالٰی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم۔ کہا گندم نیکو یا کہا سرہ یعنی کھری تو جائز ہے اور یہی صحیح اور مختار ہے، یوں غیاثیہ میں ہے اھ، واللہ تعالٰی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم۔ (ت)

مسئلہ ۲۲۸: غرہ محرم الحرام ۱۳۱۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اینٹوں کی بیع سلم جائز ہے یا نہیں ایسی صورت میں کہ ابھی بیچنے والے نے صرف زمین اس نیت سے لی ہے کہ بعد چار ماہ کے اسی سے مٹی کھود کر اینٹ بنائی جائے گی، خالد نے ابھی سے دو روپیہ ہزار کا نرخ کاٹ کر چار ماہ کے وعدہ پر دو سو روپے اسے دے دیئے یہ صورت شرعاً جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا الجواب: جائز ہے جبکہ سانچہ معین کر دیا گیا ہو اور باقی شرائط بیع سلم متحقق ہوں اور یہ شرط نہ کی گئی ہو کہ اس مٹی سے جو اینٹ بنے گی وہ لی جائے گی۔

[Arabic & Urdu Box] لانه منقطع في الحال كحنطة جديده قبل وجودها وفی التنوير يصح فيما امكن ضبط صفته ومعرفته قدره كمكيل وموزون ومثمن وعددی متقارب كجوز وبيض وفلس و لبن وأجر بملبن معين واللہ تعالٰی اعلم۔ کیونکہ وہ فی الحال نایاب ہے جیسے نئی گندم کی بیع اس کے وجود سے قبل اور تنویر میں ہے کہ جس چیز کی صفت کو ضبط کرنا اور اس کی مقدار کی پہچان ممکن ہو اس میں سلم جائز ہے جیسے کیلی چیز ایسی وزنی چیز جو مبیع ہو اور عددی متقارب اشیاء مثلاً اخروٹ، انڈے، پیسے اور معین سانچے کی بنی ہوئی پکی پکی اینٹیں، (ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۲۹: از آنولہ شفاخانہ مرسلہ شیخ محمد بخش صاحب ڈاکٹر ۶ ربیع الاول شریف ۱۳۱۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس بارہ میں کہ فلوس سکہ رائج الوقت بحساب فی روپیہ ساڑھے سولہ آنہ یعنی تینتیس ۳۳ ٹکہ فروخت ہوتے ہیں اگر زید کسی قدر روپیہ عمرو کو دے اور عمرو سے بحساب فی روپیہ ساڑھے سولہ آنہ یعنی تینتیس ۳۳ ٹکہ بلا تعیین وقت روز یا ماہ کے

۱ فتاویٰ ہندیہ الباب الثامن عشر الفصل الاول نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۱۷۹ ۲ درمختار کتاب البیوع باب السلم مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۷۲

Volume 17 Fatawa Rizwia

Question: If Zaid performs 'Kotri' (a type of deduction or forward contract) and Amr pays back coins gradually, is this deduction of coins Shariah-compliant? And if Amr gives two-anna or four-anna coins along with common coins to Zaid, is it permissible for Zaid to take them? Furthermore, if Amr, with Zaid's permission, sells some of the deducted coins at the current market rate and pays Zaid cash in exchange for those coins, is that permissible or not?

Answer: All three of these scenarios involving the forward sale of coins (i.e., 'Kotri') are impermissible and sinful. A mandatory condition for a Salam contract (forward sale) is that the duration must be specified at the time of the contract. Since the time was not specified here, the sale became prohibited (Haram).

Arabic Text	Urdu Translation
In 'Al-Durr al-Mukhtar', the conditions for its validity mentioned in the contract are: specifying the genus, type, quality, quantity, and period (summary).	In 'Dur al-Mukhtar', the conditions for the validity of a Salam contract mentioned in the contract are: specifying the genus, type, quality, quantity, and period.

Furthermore, it is not permissible to take something else in exchange for the object of the Salam sale. Therefore, one cannot take two-anna, four-anna, or eight-anna coins in exchange for all or some of the coins; rather, only the specific coins must be taken.

Arabic Text	Urdu Translation
Due to the saying of the Prophet (peace and blessings be upon him): 'Do not take except your Muslam (object of contract) or your capital.' This means: the Muslam while the contract exists, and the capital upon its cancellation. Thus, substitution is prohibited. (Dur al-Mukhtar).	Because the Holy Prophet (peace and blessings be upon him) said: 'Do not take anything except your Muslam (the object) or your capital.' This means if the contract remains, take the object of the contract, and if the contract is canceled, take the capital. Thus, taking anything else in exchange is prohibited. (Dur al-Mukhtar).

It is also not permissible to dispose of it (such as by selling) before it comes into one's possession. Therefore, whether Amr has Zaid's permission or not, selling the coins and giving Zaid rupees or anything else in their place is not correct, nor can Zaid accept it.

Arabic Text

In 'Al-Durr al-Mukhtar': It is not permissible for the Muslam-ilaih (seller) to dispose of the capital, nor for the Rabb-us-Salam (buyer) to dispose of the Muslam-fihi.

Urdu Translation

In 'Dur al-Mukhtar', it is stated that before possession, it is not allowed for the seller to dispose of the capital and for the buyer to dispose of the object of the contract.

1. Dur al-Mukhtar, Kitab al-Buyu, Bab al-Salam, Matba' Mujtabai Delhi, 2/48
2. Dur al-Mukhtar, Kitab al-Buyu, Bab al-Salam, Matba' Mujtabai Delhi, 2/49

जिल्द 17 फ़तावा रज़विया

प्रश्न: यदि ज़ैद 'कोटरी' (एक प्रकार की कटौती या भविष्य के अनुबंध) करता है और अम्र धीरे-धीरे सिक्के चुकाता है, तो क्या इस तरह से सिक्कों की कटौती शरीयत के अनुसार सही है? और यदि अम्र सिक्कों के साथ दो-आनी या चौ-आनी ज़ैद को देता है, तो क्या ज़ैद के लिए अम्र से ये लेना जायज़ है? और यदि अम्र, ज़ैद की अनुमति से, कटौती किए गए कुछ सिक्कों को वर्तमान बाज़ार दर पर बेचकर ज़ैद को उन सिक्कों के बदले नकद रुपया देता है, तो क्या यह सही है या नहीं?

उत्तर: सिक्कों की 'बै-ए-सल्लम' (यानी कोटरी) में ये तीनों स्थितियाँ नाजायज़ और गुनाह हैं। बै-ए-सल्लम की एक अनिवार्य शर्त यह भी है कि अनुबंध (अक़्द) के समय अवधि निर्धारित कर दी जाए। चूँकि यहाँ समय का निर्धारण नहीं हुआ, इसलिए यह सौदा हराम हो गया।

अरबी पाठ	**उर्दू अनुवाद**
'अद-दुर्रुल मुख्तार' में इसकी वैधता की शर्तें जो अनुबंध में वर्णित हैं, वे हैं: लिंग (जिंस), प्रकार, गुण, मात्रा और अवधि का विवरण।	'दुर्रे मुख्तार' में है कि सल्लम अनुबंध के सही होने की वे शर्तें जिनका उल्लेख अनुबंध में किया जाता है, ये हैं: जिंस, प्रकार, गुण, मात्रा और अवधि का विवरण।

इसके अलावा, बै-ए-सल्लम जिस चीज़ की हुई है, उसे बदलकर दूसरी चीज़ लेना जायज़ नहीं है। अतः सभी या कुछ सिक्कों के बदले में दो-आनी, चौ-आनी या अठन्नी आदि नहीं ली जा सकती, बल्कि विशेष रूप से वे सिक्के ही लिए जाएँगे।

अरबी पाठ	**उर्दू अनुवाद**
क्योंकि नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का इरशाद है: 'अपने मुस्लिम (अनुबंध की वस्तु) या अपनी पूँजी (रासुल माल) के अलावा कुछ न लो।' इसका अर्थ है: अनुबंध के दौरान वस्तु, और उसके निरस्त होने पर पूँजी। अतः विनिमय निषिद्ध है। (दुर्रे मुख्तार)।	क्योंकि नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का इरशाद है कि अपने 'मुस्लिम' (मुस्लिम फीह) या रासुल माल के सिवा कुछ मत लो। यानी अगर अनुबंध कायम रहे तो 'मुस्लिम फीह' ले, और अगर अनुबंध रद्द हो जाए तो रासुल माल ले ले। अतः बदले में कोई और चीज़ लेना वर्जित है। (दुर्रे मुख्तार)।

यह भी जायज़ नहीं है कि अपने कब्ज़े में आने से पहले उसमें कोई फेरबदल जैसे बिक्री आदि की जाए। अतः अम्र, ज़ैद की अनुमति से या बिना अनुमति के, सिक्के बेचकर उनके बदले रुपये या कोई और चीज़ ज़ैद को देना सही नहीं है, और न ही ज़ैद इसे ले सकता है।

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
'अद-दुर्रुल मुख्तार' में है: 'मुस्लिम इलैह' (विक्रेता) के लिए पूँजी में और 'रब्बुस सल्लम' (क्रेता) के लिए अनुबंध की वस्तु में कब्ज़े से पहले कोई फेरबदल करना जायज़ नहीं है।	'दुर्रे मुख्तार' में है कि कब्ज़े से पहले 'मुस्लिम इलैह' के लिए रासुल माल में और 'रब्बुस सल्लम' के लिए 'मुस्लिम फीह' में अधिकार प्रयोग वर्जित है।

1. दुर्रे मुख्तार, किताबुल बुयू, बाबुल सल्लम, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 2/48
2. दुर्रे मुख्तार, किताबुल बुयू, बाबुल सल्लम, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 2/49

کوٹری کر لے اور عمر و بتدریج فلوس ادا کرے تو کٹوتی فلوس اس صورت سے شرعاً درست ہے یا نہیں اور اگر عمرو فلوس کے ہمراہ دونی یا چونی زید کو دے تو دونی یا چونی ہمراہ فلوس کے عمرو سے لینا جائز ہے یا نہیں اور اگر عمرو باجازت زید کے کسی قدر فلوس کٹوری شدہ بہ نرخ رائج الوقت خود فروخت کر کے زید کو نقد روپیہ بعوض فلوس دے تو درست ہے یا نہیں؟

الجواب: پیسوں کی بیع سلم (یعنی کٹوتی) میں یہ تینوں صورتیں ناجائز و گناہ ہیں، بیع سلم کی ایک ضروری شرط یہ بھی ہے کہ میعاد عقد میں معین کر دی جائے جب یہاں تعین وقت نہ ہوا بیع حرام ہو گئی۔

| فی الدرالمختار شروط صحتہ التی تذکر فی العقد بیان جنس و نوع وصفۃ و قدر و اجل اہ ملخصاً۔ | در مختار میں ہے عقد سلم کے صحیح ہونے کی وہ شرطیں جن کو عقد میں ذکر کیا جاتا ہے یہ ہیں: جنس، نوع، صفت، مقدار اور اجل کا بیان کرنا اہ تلخیص (ت) |

پھر بیع سلم جس چیز کی ہو اسے بدل کر دوسری شے لینی جائز نہیں، تو کل یا بعض پیسوں کے عوض میں دونی چونی اٹھنی وغیرہ نہیں لے سکتا بلکہ خاص پیسے ہی لئے جائیں گے۔

| لقولہ علیہ الصلوٰۃ والسلام لاتاخذ الاسلمک او رأس مالک ای الاسلمک حال قیام العقد اورأس المال عند انفساخہ فامتنع الاستبدال اہ درمختار۔ | کیونکہ نبی کریم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کا ارشاد ہے کہ سوائے اپنے مسلم (مسلم فیہ) یا راس المال کے کچھ مت لے یعنی اگر عقد قائم رہے تو مسلم فیہ اور اگر عقد فسخ ہو جائے تو راس المال لے لے، چنانچہ بدلے میں کوئی اور چیز لینا ممتنع ہو اہ در مختار (ت) |

نہ یہ روا ہے کہ اپنے قبضہ میں آجانے سے پہلے اس میں کوئی تصرف مثل بیع وغیرہ کیا جائے تو عمرو کا باجازت زید خواہ بلا اجازت پیسے بیچ کر روپے وغیرہ ان کے بدلہ کی کوئی شے زید کو دینا درست نہیں نہ زید اسے لے سکتا ہے،

| فی الدرالمختار لا یجوز التصرف للمسلم الیہ فی راس المال ولا لرب السلم | در مختار میں ہے کہ قبضہ سے پہلے مسلم الیہ کے لئے راس المال میں اور رب السلم کے لئے مسلم فیہ |

1 درمختار کتاب البیوع باب السلم مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۴۸ 2 درمختار کتاب البیوع باب السلم مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۴۹

Fatawa Rizvia Volume 17

[Arabic Text]: Regarding the commodity of Salam before taking possession, such as by sale or partnership. Disposing of it, like through sale or partnership, is impermissible. Allah the Almighty knows best. (T)

Issue 230: What do the scholars of religion say regarding this matter: for example, Zaid gave ten rupees to Bakr on the condition that in the upcoming harvest, he will take twenty seers of wheat per rupee. Specifically, Zaid received the wheat at the stipulated harvest. In that specific harvest, wheat was being sold at fifteen seers per rupee (5 maara). So, is it permissible or impermissible for Zaid to receive twenty seers of wheat, which is against the market rate? Explain and you will be rewarded.

The Answer: If Zaid gave these rupees to Bakr as a loan and stipulated the condition that he would take twenty seers of wheat per rupee in the upcoming harvest, then this is impermissible and forbidden (haraam). If he gave the money as the price of wheat, then saying "I will take twenty seers of wheat" did not constitute a sale, it was merely a promise. Now when the wheat is available, if Bakr does not give it at this rate, he has the right to do so; Zaid cannot compel him. If Bakr gives it of his own free will, then it is lawful (halal). And if at that time they made a sale contract for the wheat, where one said "I sold" and the other said "I bought," and all eleven conditions of a Salam sale were met and verified, then it is permissible. Even if he gets ten maunds per rupee more, it is lawful; otherwise, it is forbidden. Allah the Almighty knows best.

Issue 231: From Miranpur Katra, District Shahjahanpur, queried by Muhammad Siddiq Baig Sahib, 25 Muharram 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: five rupees have been given to a tenant, and it has been agreed with him that in the month of Baisakh, he will provide gram at four and a half rupees per maund. What kind of sale is this?

The Answer: This is a form of Salam sale, and there are twelve conditions for it, the details of which are in our Fatawa. If even one of these is missing, it is forbidden; if all are met, it is permissible. And if that tenant is not a Muslim, then there is no harm in whatever agreement is settled with him, as has been mentioned repeatedly. Allah the Almighty knows best.

Footnote: 1. In the original, it is like this; it should be "then also it is lawful". 1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Salam, Matba' Mujtabai, Delhi, 2/48. F: For details, see issue 223 in this volume.

फ़तावा रज़विया खंड 17

[अरबी पाठ]: क़ब्ज़ा लेने से पहले सल्लम की वस्तु में बिक्री या भागीदारी के समान निपटान के बारे में। इसमें बिक्री और भागीदारी जैसा हस्तक्षेप करना नाजायज है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 230: उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि मिसाल के तौर पर ज़ैद ने बक्र को दस रुपये इस शर्त पर दिए कि अगली फ़सल में प्रति रुपया बीस सेर गेहूँ लूँगा। विशेष रूप से ज़ैद ने निर्धारित फ़सल पर गेहूँ प्राप्त किए। उस निश्चित फ़सल में गेहूँ प्रति रुपया पंद्रह सेर (5 मारा) बिक रहे थे। तो ज़ैद को बीस सेर गेहूँ मिलना जो कि बाज़ार भाव के खिलाफ है, क्या यह जायज़ है या नाजायज़? बयान फ़रमाएँ सवाब पाएँ।

जवाब: अगर ये रुपये ज़ैद ने बक्र को कर्ज़ के तौर पर दिए थे और शर्त यह रखी थी कि अगली फ़सल में प्रति रुपया बीस सेर गेहूँ लेंगे, तो यह नाजायज़ और हराम है। और अगर गेहूँ की कीमत तय करके रुपये दिए थे, तो इस कहने से कि बीस सेर गेहूँ लूँगा, बिक्री नहीं हुई बल्कि महज़ वादा हुआ। अब जब गेहूँ उपलब्ध हों, अगर बक्र इस भाव पर न दे तो उसे अधिकार है; ज़ैद ज़बरदस्ती नहीं कर सकता। और अगर बक्र अपनी खुशी से दे तो हलाल है। और अगर उस वक्त गेहूँ की बिक्री का सौदा कर लिया कि उसने कहा "बेचा" और उसने कहा "खरीदा", और अगर बैअ-ए-सल्लम की सभी ग्यारह शर्तें पूरी कर ली गई हैं और वे प्रमाणित हैं, तो जायज़ है। और अगर प्रति रुपया दस मन ज़्यादा भी मिले तो हलाल है, वरना हराम। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 231: मीरानपुर कटरा, जिला शाहजहाँपुर से, प्रेषक मुहम्मद सिद्दीक बेग साहब, 25 मुहर्रम 1339 हिजरी। उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि एक असामी (किरायेदार/किसान) को पाँच रुपये दे दिए गए हैं और उससे यह तय हुआ है कि बैसाख में साढ़े चार रुपये मन चना देंगे। यह बिक्री कैसी है?

जवाब: यह बैअ-ए-सल्लम की एक सूरत है और इसमें बारह शर्तें हैं जिनका विवरण हमारे फ़तावा में है। उनमें से एक भी कम हो तो हराम है, और सब जमा हों तो जायज़ है। और अगर वह असामी मुसलमान नहीं है, तो जो समझौता उससे तय हो जाए उसमें कोई हर्ज नहीं जैसा कि बार-बार गुज़रा है। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

फुटनोट: 1. असल में इसी तरह है; होना चाहिए "तो भी हलाल है"। 1. दुर्रे मुख्तार, किताबुल बुयूअ, बाबुल सल्लम, मतबा मुज्तबाई, दिल्ली, 2/48। फ़: विस्तार के लिए इसी खंड में मसला 223 देखें।

فی المسلم فیہ قبل قبضہ بنحو بیع وشرکۃ ۱۔ میں تصرف جیسے بیع اور شرکت ناجائز ہے واللہ تعالٰی اعلم۔(ت)

مسئلہ ۲۳۰: کیا فرماتے ہیں علمائے دین بیچ اس مسئلہ میں کہ مثلاً زید نے بکر کو دس روپے دیئے اس شرط پر کہ آئندہ فصل میں فی روپیہ بیس سیر گندم لوں گا خصوصی شرط مذکور زید نے فصل مقررہ پر گندم وصول کئے فصل معین میں گندم فی روپیہ (۵) مارا) فروخت ہوتے تھے تو زید کو پندرہ سیر گندم جو کہ خلاف نرخ مل رہے ہیں یہ جائز ہے یا ناجائز؟ بینوا توجروا

الجواب: اگر یہ روپے زید نے بکر کو قرض دئے تھے اور شرط یہ کی کہ آئندہ فصل میں فی روپیہ بیس سیر گیہوں لیں گے تو یہ ناجائز اور حرام ہے اور اگر روپیہ گیہوں کی قیمت قرار دے کردئے تھے تو اس کہنے سے کہ بیس سیر گندم لوں گا بیع نہ ہوئی نرا وعدہ ہوا اب جب گیہوں موجود ہوئے بکر اگر اس بھاؤ پر نہ دے تو اسے اختیار ہے زید جبر نہیں کرسکتا اور اپنی خوشی سے بکر دے تو حلال ہے اور اگر اس وقت گیہوں کی بیع کر لی کہ اس نے کہا بیچے اور اس نے کہا خریدے تو بیع سلم کی سب شرطیں ۱۱ اگر کرلی ہیں اور وہ متحقق ہیں تو جائز ہے اور فی روپیہ دس من زیادہ ملے تو حلال (۱) ہے ورنہ حرام واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۲۳۱: از میرانپور کٹرہ ضلع شاہجہانپور مسئولہ محمد صدیق بیگ صاحب ۲۵ محرم ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک اسامی کو پانچ روپے دے دئے ہیں اور اس سے یہ قرار پایا ہے کہ بیساکھ میں ساڑھے چاروپے من فروچنے دیں گے یہ بیع کیسی ہے؟

الجواب: یہ صورت بیع سلم کی ہے اور اس میں بارہ شرطیں ہیں جن کی تفصیل فتاویٰ میں ہے ان میں سے ایک بھی کم ہو تو حرام ہے اور سب جمع ہوں تو جائز ہے اور اگر وہ آسامی مسلمان نہیں تو جو معاہدہ اس سے ٹھہر جائے حرج نہیں کما مر مراراً۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

عہ: اصل میں اسی طرح ہے ہونا چاہئے "تو بھی حلال ہے" ۱ در مختار کتاب البیوع باب السلم مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۴۸ ف: تفصیل کے لئے جلد ہذا میں مسئلہ ۲۲۳ ملاحظہ ہو۔

Fatawa Razvia Volume (17)

Issue 232: From village Khurd Manuda, Post Office Badusarai, District Barabanki, sent by Safdar Ali Sahib, 6 Rabi-ul-Awwal 1338 AH. What do the scholars of religion say regarding this issue: Is it permissible to give money to someone on the condition that we will take a certain grain at whatever the market rate is during harvest?

The Answer: "We will take a certain grain"—this is just a promise, not a contract. Compliance cannot be forced upon it. He has the choice to return the money and not give the grain. If a sales contract was made, then it is "Bay' Salam" (forward sale); if its twelve conditions are met, it is halal (permissible), otherwise haram (forbidden). To buy or sell at an unknown harvest market rate is absolutely haram because it is "majhool" (uncertain/unknown). And Allah Almighty knows best.

Issue 233: From the city, sent by Shaukat Ali Sahib, 14 Jumada al-Akhirah 1337 AH. What is the ruling of the people of Sharia regarding this issue: Zaid distributes some money to farmers before harvest on the condition that, for example, if wheat or any grain was at a rate of 10 seers per rupee when the money was given, he sets a rate of 12 seers per rupee and gives the money. Now at harvest time, regardless of whether the market rate is more or less than 12 seers, he will take the grain at the rate of 12 seers per rupee. Bakr says that you have taken interest because you fixed more than the current market rate. Please clarify and be rewarded.

The Answer: This is a case of "Bay' Salam". If all its conditions are found, then it is undoubtedly permissible and not interest in any way, even if he fixes ten maunds in place of ten seers. Yes, if there is coercion, it is haram, even if he takes only a seer instead of ten seers. Due to the statement of Allah Almighty: "except that there be [among you] trade by mutual consent." [1] (Meaning: except that it be a trade between you by mutual consent.) And if the sale was made by consent but some condition was missed—for example, the genus, type, quality, or weight of the grain was not specified, or something was settled upon that would not be available in the market at all times from the time of the agreement until the promised time, or an unknown period was set, or the money was not paid in full in that same sitting—then it is certainly haram and interest, even if it was not fixed at a rate higher than the market. And if the essence of buying and selling (e.g., "I bought," "I sold") was not present, for example, he...

[1] Al-Quran al-Karim 4/29 Note: These twelve conditions are listed under issue 223 of this volume. Page 579 of 715

फतावा रज़विया जिल्द (17)

मसहला 232: मौज़ा खुर्द मनूड़ा, डाकख़ाना बदूसराय, ज़िला बाराबंकी से मुर्सला (प्रेषक) सफदर अली साहब, 6 रबी-उल-अव्वल 1338 हिजरी। उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फरमाते हैं कि रुपया इस शर्त पर किसी को देना और माल लेना जाइज़ है कि फसल में जो भाव (निरख़) होगा हम फलां अनाज लेंगे?

अल-जواب (उत्तर): "फलां अनाज लेंगे", यह तो एक वादा है कोई अक़्द (अनुबंध) नहीं है, इसकी पाबंदी पर जबर (ज़बरदस्ती) नहीं हो सकता। उसे इख़्तियार है कि रुपया लौटा दे और अनाज न दे। और अगर अक़्द-ए-बैअ' (बिक्री का अनुबंध) किया तो यह "बैअ' सलम" (अग्रिम भुगतान बिक्री) है, इसकी बारह शर्तें अगर पूरी हैं तो हलाल हैं वरना हराम। और इस तौर पर कि फसल के भाव पर बेचा-खरीदा मुतलक़न (पूर्णतः) हرام है क्योंकि वह मजहूल (अज्ञात/अनिश्चित) है। वल्लाहु तआला आलम।

मसहला 233: शहर से मुर्सला शौक़त अली साहब, 14 जमादी-उल-आख़िर 1337 हिजरी। अहल-ए-शरीअत का इस मसले में क्या हुक्म है कि ज़ैद कुछ रुपया किसान को फसल से पहले इस शर्त पर बाँट देता है, मिसाल के तौर पर जिस वक़्त रुपया दिया उस वक़्त गेंहूँ या कोई अनाज 10 सेर (रुपये का) था और उसने 12 सेर फ़ी रुपया भाव तय करके रुपया दे दिया। अब फसल पर चाहे भाव 12 सेर से कम हो या ज़्यादा, लेकिन वह फ़ी रुपया 12 सेर के हिसाब से अनाज ले लेगा। बक्र कहता है कि तूने सूद (ब्याज) लिया क्योंकि भाव से ज़्यादा तय कर लिया। बयान फरमाएं सवाब पायें।

अल-जواب (उत्तर): यह सूरत "बैअ' सलम" की है, अगर इसके सब शरायत (शर्तें) पाए गए तो बिला-शुबा जाइज़ है और किसी तरह सूद नहीं, चाहे दस सेर की जगह दस मन तय करे। हाँ अगर जबर है तो हराम है, चाहे दस सेर की जगह सेर ही भर ले। अल्लाह तआला के इस इरशाद की वजह से: "इल्ला अं तकूना तिजारतन अन तराज़िम मिन्कुम" [1] (मगर यह कि हो तुम्हारे दरमियान तुम्हारी आपसी रज़ामंदी से तिजारत।) और अगर बैअ' रज़ामंदी से हुई मगर कोई शर्त रह गई, मिसाल के तौर पर अनाज की जिंस या नूअ (किस्म) या सिफ़त या वज़न का तईन (निर्धारण) न हुआ, या वह चीज़ तय हुई जो उस वक़्त से वादे के वक़्त तक हर वक़्त बाज़ार में मौजूद न रहेगी, या मियाद (समय सीमा) मजहूल रखी, या उसी जलसे (बैठक) में रुपया तमाम-ओ-कमाल अदा न कर दिया, तो ज़रूर

हराम और सूद है, चाहे बाज़ार के भाव से कुछ ज़्यादा तय न हुआ हो। और अगर ख़रीद-ओ-फरोख़्त (मैंने ख़रीदा, मैंने बेचा) का मज़मून दरमियान न आया, मिसाल के तौर पर उसने...

---

[1] अल-कुरआन अल-करीम 4/29 नोट: ये बारह शर्तें इसी जिल्द के मसहला 223 के तहत दर्ज हैं।

مسئلہ ۲۳۲: از موضع خورد منوڈاخانہ بدوسرائے ضلع بارہ بنکی مرسلہ صفدر علی صاحب ۶ ربیع الاول ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ روپیہ اس شرط پر کسی کو دینا اور مال لینا جائز ہے کہ فصل میں جو نرخ ہوگا ہم فلاں غلہ لیں گے۔

الجواب: فلاں غلہ لیں گے، یہ تو ایک وعدہ ہے کوئی عقد نہیں ہے اس کی پابندی پر جبر نہیں ہو سکتا اسے اختیار ہے کہ روپیہ پھیر دے اور غلہ نہ دے، اور اگر عقد بیع کیا تو یہ بیع سلم ہے اس کی بارہ شرطیں اگر جمع ہیں حلال ہیں ورنہ حرام، اور اس طور پر کہ فصل کے نرخ پر بیچا خرید مطلقا حرام ہے کہ وہ مجہول ہے واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۳۳: از شہر مرسلہ شوکت علی صاحب ۱۴ جمادی الآخر ۱۳۳۷ھ کیا حکم ہے اہل شریعت کا اس مسئلہ میں کہ زید کچھ روپیہ دہقان کو فصل سے پہلے اس شرط پر تقسیم کر دیتا ہے مثلاً جس وقت روپیہ دیا اس وقت گندم خواہ کوئی غلہ (۱۰؍سیر) کا تھا اور اس نے (۱۲؍سیر) فی روپیہ نرخ ٹھہرا کر روپیہ دے دیا اب فصل پر خواہ کوئی نرخ کم وبیش (۱۲؍سیر) سے ہو لیکن وہ فی روپیہ (۱۲؍سیر) کے حساب سے غلہ لے لے گا۔ بکر کہتا ہے کہ تو نے سود لیا کیونکہ نرخ سے زیادہ ٹھہرا لیا۔ بینوا توجروا۔

الجواب: یہ صورت بیع سلم کی ہے اگر اس کے سب شرائط پائے گئے تو بلاشبہ جائز ہے اور کسی طرح سود نہیں اگرچہ دس سیر کی جگہ دس من قرار دے، ہاں اگر جبر ہے تو حرام ہے اگر دس سیر کی جگہ سیر ہی بھر لے۔ لقولہ تعالٰی "اِلَّآ اَنْ تَكُوْنَ تِجَارَةً عَنْ تَرَاضٍ مِّنْكُمْ" ۱ اللہ تعالٰی کے اس ارشاد کی وجہ سے، مگر یہ کہ ہو تمہارے درمیان تجارت تمہاری باہمی رضامندی سے۔ (ت) اور

اگر بیع رضامندی سے ہوئی مگر کوئی شرط رہ گئی مثلاً غلہ کی جنس یا نوع یا صفت یا وزن کی تعین نہ ہوئی یا وہ چیز ٹھہری جو اس وقت سے وقتِ وعدہ تک ہر وقت بازار میں موجود نہ رہے گی یا میعاد مجہول رکھی یا اسی جلسہ میں روپیہ تمام و کمال ادا نہ کردیا تو ضرور حرام و سود ہے اگرچہ نرخ بازار سے کچھ زیادہ نہ ٹھہرا ہو اور اگر خرید و فروختم (میں نے خریدا میں نے فروخت کیا ۔ت) کا مضمون درمیان نہ آیا مثلاً اس نے

---

۱ القرآن الکریم ۴ /۲۹ ف: یہ بارہ شرطیں جلد ہذا کے مسئلہ ۲۲۳ کے تحت مندرج ہیں۔ صفحہ 579 از 715

Volume 17 Fatawa Razawiyya [...previously stated...] said that he would take fourteen seers for a rupee, and the other said I will give it. This is neither interest nor forbidden (haram), nor is there a need for any condition for it, nor can any demand be made based on it. It depends on his pleasure whether he gives it or not because there was no sale or promise from the beginning. And Allah Almighty knows best.
Question 234 to 235: From Ghattangah Mewband Baghat, District Jorhat, Assam. Questioner: Ubaidullah, 17 Ramadan 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding: (1) Zaid gave Bakr two rupees and [it was agreed] to provide grain at the time of harvesting with a specified weight, for example, twenty seers of paddy per rupee. The current situation is that this is double the market rate at that time. Is this sale legally (sharia-wise) permissible or not? (2) Zaid bought ten bighas of land and gave it to a farmer for cultivation on treasury terms, but he did not receive the treasury payment in cash. Instead, an arrangement was made that for every rupee of treasury payment, he would take paddy worth [specified amount] after the harvest. This also amounts to double the market rate. Is this legally (sharia-wise) permissible or not?

The Answer: (1) This scenario is a 'Salam' sale. If all its conditions are fulfilled, it is permissible; otherwise, it is forbidden (haram). Among these conditions is that the term (period) must be known and should not be less than one month. The "harvest time" is an unknown term because it varies (can be early or late). Therefore, the mentioned scenario is impermissible and forbidden. It is stated in 'Durr-ul-Mukhtar': "A sale up to the time of harvest, threshing, or fruit-picking is not valid because these can be early or late."[1] And Allah Almighty knows best. (T) Performing a sale with the harvest, threshing, or fruit-picking as the term is not correct because there is advancement and delay in them. And Allah Almighty knows best. (T)

(2) This scenario is even more forbidden than the first one. "Because it is a sale of debt for debt (Kali-bil-Kali), and the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) forbade it."[2] And Allah Almighty knows best. (T) Because this is a sale of credit for credit, whereas the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) has forbidden this. And Allah Almighty knows best. (T)

[1] Durr-ul-Mukhtar, Kitab-ul-Buyu', Bab-ul-Bay'-ul-Fasid, Mujtabai Press Delhi, 2/277. [2] Sunan ad-Daraqutni, Hadith 269, Nashr-us-Sunnah Multan, 3/71.

खण्ड 17 फ़तावा रज़विया [...पहले कहा गया...] कहा कि रुपये के चौदह सेर लेंगे, उसने कहा दूँगा, तो यह न सूद है न हराम, न इसके लिए किसी शर्त की ज़रूरत, न उस पर कोई माँग की जा सकती है। यह उसकी खुशी पर निर्भर है कि वह दे या न दे, क्योंकि न तो कोई बिक्री हुई थी और न ही कोई वादा। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। **मसला 234 से 235: घटंगाह म्योबन्द बागात, जिला जोरहाट, असम से। प्रश्नकर्ता: उबैदुल्लाह, 17 रमज़ान 1339 हिजरी।** दीन के विद्वान क्या फरमाते हैं कि: (1) ज़ैद ने बक्र को दो रुपये दिए और कटाई के समय अनाज देने की बात हुई, वजन के निर्धारण के साथ, जैसे कि प्रति रुपया बीस सेर धान। और स्थिति यह है कि उस समय यह बाज़ार भाव से दोगुना होता है। क्या यह बिक्री शरिया के अनुसार जायज़ है या नहीं? (2) ज़ैद ने दस बीघा ज़मीन खरीद कर किसान को खज़ाने (लगान) पर दी, लेकिन खज़ाने का रुपया नकद नहीं लिया। यह समझौता हुआ कि खज़ाने के हर रुपये के बदले कटाई के बाद रुपये के मूल्य का धान लूँगा। अब यह भी बाज़ार भाव से दोगुना होता है। क्या यह शरिया के अनुसार जायज़ है या नहीं?

उत्तर: (1) यह मामला 'सलाम' बिक्री (अग्रिम भुगतान बिक्री) का है। यदि इसकी सभी शर्तें पूरी हों तो जायज़ है, अन्यथा हराम है। इन शर्तों में से एक यह है कि अवधि ज्ञात हो और एक महीने से कम न हो। "कटाई का समय" एक अज्ञात अवधि है क्योंकि यह आगे-पीछे होती रहती है। इसलिए, उक्त स्थिति नाजायज़ और हराम है। 'दुर्रे मुख्तार' में है: "कटाई, गहाई और फल तोड़ने के समय तक की बिक्री सही नहीं है क्योंकि इनमें जल्दी या देरी हो सकती है।"[1] और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त) फसल काटने, गहाने और फल चुनने की अवधि पर बिक्री करना सही नहीं है क्योंकि उनमें आगे-पीछे होने की संभावना रहती है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

(2) यह स्थिति पहली से भी अधिक हराम है। "क्योंकि यह उधार की उधार से बिक्री (काली-बिल-काली) है, और रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने इससे मना फ़रमाया है।"[2] और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त) क्योंकि यह उधार की उधार से बिक्री है, जबकि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने इससे मना फरमाया है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

[1] दुर्रे मुख्तार, किताबुल बुयूअ, बाबुल बैउल फासिद, मुज्तबाई प्रेस दिल्ली, 2/277। [2] सुनन अल-दाराकुतनी, हदीस 269, नश्र-उस-सुन्नाह मुल्तान, 3/71।

पेज 580/715

جلد ہفدہم (۱۷) فتاوٰی رضویہ کہا کہ روپیہ کے چودہ سیر لیں گے اس نے کہا دوں گا تو یہ نہ سود ہے نہ حرام، نہ اس کے لئے کسی وجہ شرط کی حاجت، نہ اسے اس پر مطالبہ پہنچے ، اس کی خوشی پر ہے چاہے دے یا نہ دے کہ یہ سرے سے بیع ہی نہ ہوئی نہ اوعدہ ہوا، واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۳۴ تا ۲۳۵: از گھٹنگاہ میوبند باغات ضلع جور ہاٹ آسام مسئولہ عبید اللہ ۱۷ رمضان ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین کہ: (۱) زید نے بکر کو دو روپے دئے اور غلہ کا دینا بروقت در و زراعت بہ تعیین وزن مثلا فی روپیہ کا بیس سیر دھان، اور حال یہ ہے کہ اس وقت بازار کے نرخ سے دو چند ہوتا ہے اب یہ بیع شرعاً جائز ہے یا نہیں؟ (۲) زید نے دس بیگھہ زمین خرید کر زراعت کار کو خزانہ پر دیا ہے مگر خزانہ کار روپیہ نقد نہیں وصول کیا یہ بندوبست کیا کہ جب خزانہ کا روپیہ کے ہر روپیہ میں بعد درو زراعت میں روپے کر کے دھان لوں گا اب یہ بھی نرخ بازار سے دوچند ہوتا ہے۔ یہ شرعاً جائز ہے یا نہیں؟

الجواب: (۱) یہ صورت بیع سلم کی ہے اگر اس کی سب شرطیں ادا ہولیں جائز ہے ورنہ حرام منجملہ ان شرائط کے میعاد معلوم ہو کہ ایک مہینہ سے کم نہ ہو اور وقت درو میعاد غیر معلوم ہو کہ آگے پیچھے ہوتا رہتا ہے لہٰذا صورت مذکور نا جائز و حرام ہوئی، در مختار میں ہے: لا یصح البیع الی الحصاد والدیاس والقطاف لانہا تتقدم وتتاخر ۱ واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت) فصل کاٹنے ، گاہنے اور پھل چننے کی وجہ میعاد پر بیع کرنا صحیح نہیں کیونکہ ان میں تقدم و تاخر ہوتا رہتا ہے واللہ تعالٰی اعلم (ت)

(۲) یہ صورت پہلی سے بھی زیادہ حرام ہے لانہ بیع الکالئ بالکالئی وقد نہی عنہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم ۲، واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت) کیونکہ یہ ادھار کی ادھار سے بیع ہے حالانکہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے اس سے منع فرمایا ہے، واللہ تعالٰی اعلم (ت)

۱ در مختار کتاب البیوع باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۲۷۷ ۲ سنن الدار قطنی حدیث ۲۶۹ نشر السنہ ملتان ۳ / ۷۱

Fatawa Razawiyyah Volume 17

Problem 236: From the village of Gaggura, Post Office Sundarganj, District Rangpur, sent by Munshi Safiruddin Sahib, 26 Rabi al-Awwal 1336 AH. Zaid took 17 rupees from Bakr on the condition of providing 23 maunds of jute. When the jute season arrived, Bakr did not ask for jute in exchange for the money he gave. At that time, Zaid was unable to provide jute and, with the intention of paying off the debt, he became ready to sell his two oxen. He even sold one ox, the price of which was 50 rupees. Upon hearing about the sale of this ox, Bakr told Zaid, "If you want to sell the ox, give it to me." Then Zaid brought back the ox he had sold for 50 rupees, fixed its price at 45 rupees, and fixed the price of another ox (valued at 45 rupees) at 40 rupees, and gave them to Bakr. Bakr also took a receipt. Additionally, Zaid paid 20 rupees in cash. While Zaid gave two oxen and also paid 20 rupees, the total amounted to 105 rupees. This is more than the original amount of 17 rupees. Now the question is, was this Salam contract valid or not, and what is the ruling on these extra rupees?

Answer: The Salam contract was valid if all conditions were met. However, since he was unable to provide the jute and it was decided to return the money, it was mandatory for Bakr to take back only those (original) rupees. Taking oxen in exchange for them and taking an extra fifteen rupees is haram (forbidden) and interest (usury). The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Do not take anything except what you contracted for (Muslam fih) or your capital (Ra's al-Maal)." And Allah knows best. (T)

Problem 237 & 238: From Kichocha Sharif, sent by Maulana Maulvi Syed Muhammad Sahib Sallamahu, 9 Safar 1336 AH. What do the scholars of religion say regarding the following issues: (1) Zaid gave Bakr one maund of wheat and one anna coin and said, "I am giving you one maund of wheat for free, and in exchange for one anna coin, I will take one maund of average quality (or he said fine quality) wheat from you in such-and-such month." (2) Zaid gave Bakr a cow and said that in such-and-such month I will take two notes of ten rupees each, or twenty rupees...

1 Tabyin al-Haqa'iq, Kitab al-Buyu', Bab al-Salam, Al-Matba'at al-Kubra Bulaq Egypt, 4/11; Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Salam, Matba' Mujtabai Delhi, 2/49. Page 581 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

मसला 236: ग्राम गग्गुरा, डाकखाना सुंदरगंज, जिला रंगपुर से मुंशी सफीरुद्दीन साहब द्वारा प्रेषित, 26 रबी उल अव्वल 1336 हिजरी। ज़ैद ने बक्र से 23 मन पटुआ देने की शर्त पर 17 रुपये लिए। जब पटुआ का मौसम आया, तो बक्र ने अपने दिए हुए रुपयों के बदले पटुआ नहीं माँगा। उस समय ज़ैद पटुआ देने में असमर्थ था और ऋण चुकाने के विचार से अपने दो बैल बेचने को तैयार हो गया। यहाँ तक कि उसने एक बैल बेच दिया जिसकी कीमत 50 रुपये थी। इस बैल की बिक्री की बात सुनकर बक्र ने ज़ैद से कहा, "अगर बैल बेचना है तो वह बैल हमें दे दो।" फिर ज़ैद ने उस 50 रुपये की कीमत वाले बेचे गए बैल को वापस लाकर 45 रुपये कीमत तय की, और एक अन्य बैल (जिसकी कीमत 45 रुपये थी) को 40 रुपये तय करके बक्र को दे दिया। बक्र ने रसीद भी ले ली। इसके अलावा ज़ैद ने 20 रुपये नकद भी दिए। जबकि ज़ैद ने दो बैल दिए और 20 रुपये भी दिए, तो कुल राशि 105 रुपये हो गई। यह मूल राशि 17 रुपये से अधिक है। अब मतलब यह है कि क्या बै'अ-ए-सल्म (अग्रिम भुगतान अनुबंध) सही हुआ या नहीं, और इन अतिरिक्त रुपयों का क्या हुक्म है?

उत्तर: बै'अ-ए-सल्म सही थी यदि सभी शर्तें पूरी की गई थीं। लेकिन जब वह पटुआ देने से असमर्थ हो गया और रुपया वापस देना तय पाया, तो बक्र पर अनिवार्य था कि वह केवल वही (मूल) रुपये वापस ले। उनके बदले बैल लेना और ये हराम पन्द्रह रुपये अधिक लेना हराम और सूद (ब्याज) है। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने फरमाया: "उस चीज़ के अलावा जिसमें तुमने सल्म का अनुबंध किया है (मुस्लम फ़ीह) या अपनी मूल पूँजी (रास अल-माल) के अलावा कुछ न लो।" और अल्लाह बेहतर जानता है। (त)

मसला 237 और 238: किछौछा शरीफ से मौलाना मौलवी सैयद मुहम्मद साहब सल्लमहु द्वारा प्रेषित, 9 सफर 1336 हिजरी। धर्म के विद्वान निम्नलिखित मुद्दों पर क्या कहते हैं: (1) ज़ैद ने बक्र को एक मन गेहूँ और एक आना पैसा देकर कहा कि "मैं तुम्हें एक मन गेहूँ बिना किसी बदले के दे रहा हूँ और एक आना पैसा के बदले फलाँ महीने में तुमसे औसत दर्जे का (या कहा कि उम्दा) एक मन गेहूँ लूँगा।" (2) ज़ैद ने बक्र को एक गाय दी और कहा कि फलाँ महीने में दो नोट दस-दस रुपये के लूँगा या बीस रुपये...

1 तबयीन अल-हकाइक, किताब अल-बुयू, बाब अस-सल्म, अल-मत्बअतुल कुबरा बुलाक मिस्र, 4/11; दुर्रे मुख्तार, किताब अल-बुयू, बाब अस-सल्म, मत्बा मुज्तबाई दिल्ली, 2/49। पृष्ठ 715 में से 581

مسئلہ ۲۳۶: از موضوع گگورہ ڈاکخانہ سندر گنج ضلع رنگپور مرسلہ منشی سفیر الدین صاحب ۲۶ ربیع الاول ۱۳۳۶ھ زید نے بکر کے پاس ۲۳ من پٹوا دینے کی شرط پر (معہ ۱۷) روپے لئے جب موسم پٹوا آیا تو بکر نے اپنے دئے ہوئے روپے کے عوض پٹوا نامانگا اس وقت پٹوا دینے سے مجبور ہوا اور قرض ادا کرنے کے خیال سے اپنے دو بیل فروخت کرنے پر آمادہ ہو گیا یہاں تک کہ ایک بیل کو فروخت کردیا قیمت اس کی پچاس روپے ہوئی اس بیل کی فروخت کی بات بکر نے سنتے ہی زید کو کہا اگر بیل کو فروخت کرنا چاہتے ہو تو وہ بیل ہم کو دو، تب زید نے فروخت کیا ہوا ۵۰ روپے قیمت والا بیل ۴۵ روپے قیمت مقرر کر کے اور دیگر ایک بیل ۴۵ روپے قیمت کیے ہوئے بیل کو ۴۰ روپے مقرر کر کے پہلے خریدار سے واپس لاکر بکر کو دے دیا اور بکر نے رسید بھی لے لی اور زید نے ۲۰ روپے نقد بھی دئے تھے جبکہ زید نے دو بیل دئے اور (عد ۲۰) بھی دئے تو اب مبلغ (صد لہ) روپے ہوئے اصل سے (مہ عد ۱۷) روپے زیادہ ہوتے ہیں اب مطلب یہ ہے کہ بیع سلم صحیح ہوئی یا کہ نہیں اور اس زیادہ روپے کا کیا حکم ہے؟

الجواب: بیع سلم صحیح تھی اگر سب شرائط جمع ہوئے تھے مگر جبکہ وہ پٹوا دینے سے عاجز آیا اور روپیہ واپس دینا قرار پایا تو بکر پر فرض تھا کہ صرف وہی (معہ ۷۰) روپے واپس لے ان کے عوض بیل لئے یہ حرام پندرہ روپے زیادہ لئے یہ حرام اور ناسود۔ قال رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم لا تأخذ | رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا کہ سوائے اس الاسلمک اور رأس مالک ۱- واللہ تعالیٰ اعلم۔ | چیز کے جس میں تو نے عقد سلم کیا (مسلم فیہ) یا سوائے راس المال کے کچھ مت لے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۲۳۷ و ۲۳۸: از کچو چھہ شریف مرسلہ مولانا مولوی سید محمد صاحب سلمہ ۹ صفر ۱۳۳۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین مسائل ذیل میں : (۱) زید نے بکر کو ایک من گیہوں و ایک آنہ پیسہ دے کر کہا کہ ایک من گیہوں تم کو بلا معاوضہ چیزے دیتا ہوں اور ایک آنہ پیسہ کے عوض فلاں مہینہ میں گیہوں اوسط درجہ کا یا کہا کہ عمدہ ایک من ہمیں ٹھائیں لوں گا۔ (۲) زید نے بکر کو ایک گئی دے کر کہاں کہ فلاں مہینہ میں دو نوٹ دس دس روپے کا لوں گا یا بیس روپیہ کے

1 تبیین الحقائق کتاب البیوع باب السلم المطبعة الکبری بولاق مصر ۴ / ۱۱، درمختار کتاب البیوع باب السلم مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۴۹ Page 581 of 715

Volume 17 - Fatawa Razawiyya

...will take money.

(3) Zaid lent ten rupees to Bakr on the condition that he repays it after one year, and gave one paisa coin with the condition that in exchange for it, Bakr pays two rupees after one year. Are these three cases permissible according to Sharia or not? Explain and be rewarded.

The Answer:

(1) Whether giving one maund of wheat is necessary or not, it is essential to fulfill all the conditions of a sale, the details of which are given by way of example in our fatwa. If even one of these conditions is missing, it is prohibited.

[Arabic Quote]: "Because selling something non-existent is not permitted by Sharia. Verily, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) forbade selling what one does not possess."[1] Because this is the sale of a non-existent thing, for which Sharia has not provided permission, and indeed the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) forbade selling what is not present with the seller. (T)

And if all conditions are met, it is permissible even if one buys a thousand maunds of wheat for one paisa.

[Arabic Quote]: "Allah Almighty said: '...except that there be commerce between you by mutual consent.'[2] and the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: 'When the two types differ, then sell as you wish.'[3]" Allah Almighty said: '...except that it be trade amongst you by mutual consent.' And the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: 'When the two exchanged goods are of different types, sell however you wish.' (T)

It is in Radd al-Muhtar:

[Arabic Quote]: "In al-Dhakhira, if one takes bread separately, it is appropriate for the owner of the wheat to sell a ring or a knife to the baker for a thousand pieces of bread."[4] It is in Dhakhira that if a person gives wheat in bulk and wants to take bread in return at different times, the wheat owner should sell a ring or a knife in exchange for a thousand loaves of bread to the one who bakes bread (then the baker to the wheat owner... [truncated]).

[1] Durr al-Mukhtar, Book of Sales, Chapter of Invalid Sales, Mujtabai Press, Delhi, 2/24. [2] Al-Qur'an al-Karim 29/4. [3] Nasb al-Rayah, Book of Sales, Al-Maktaba al-Islamiyya, Riyadh, 4/4. [4] Radd al-Muhtar, Chapter of Riba, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/186.

...पैसे लूंगा।

(3) ज़ैद ने बक्र को दस रुपये कर्ज दिए कि एक साल बाद अदा कर दे, और एक आना पैसा दिया कि उसके बदले में एक साल बाद दो रुपये दे। क्या ये तीनों सूरतें शरीयत के अनुसार जायज़ हैं या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर:

(1) एक मन गेहूं देना न देना कुछ ज़रूरी नहीं, बिक्री की तमाम शर्तों का पूरा होना ज़रूरी है, जिनका विवरण उदाहरण के तौर पर हमारे फतवे में है। उनमें से एक भी कम हो तो हराम (निषिद्ध) है।

[अरबी उद्धरण]: "क्योंकि उस चीज़ को बेचना जो मौजूद नहीं है, शरीयत में जायज़ नहीं है। निश्चित रूप से अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने उस चीज़ को बेचने से मना फरमाया है जो बेचने वाले के पास मौजूद न हो।"[1] क्योंकि यह एक ऐसी वस्तु की बिक्री है जो अस्तित्व में नहीं है, जिसकी अनुमति शरीयत ने नहीं दी है। और वास्तव में अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने उस वस्तु की बिक्री से मना किया है जो विक्रेता के पास मौजूद न हो। (त)

और अगर शर्तें पूरी हों तो जायज़ है, भले ही कोई एक पैसे में एक हज़ार मन गेहूं खरीदे।

[अरबी उद्धरण]: "अल्लाह तआला ने फरमाया: '...सिवाय इसके कि तुम्हारे बीच आपसी सहमति से व्यापार हो।'[2] और अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: 'जब दो प्रकार की वस्तुएं अलग-अलग हों, तो जैसे चाहो बेचो।'[3]" अल्लाह तआला ने फरमाया: 'मगर यह कि तुम्हारे बीच आपसी रज़ामंदी से व्यापार हो।' और अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: 'जब बदलने वाली वस्तुएं अलग-अलग प्रकार की हों, तो जैसे चाहो बेचो।' (त)

रद्द अल-मुह्तार में है:

[अरबी उद्धरण]: "अल-ज़खीरा में है कि यदि कोई रोटी अलग-अलग (किस्तों में) लेता है, तो गेहूं के मालिक को चाहिए कि वह बेकर को एक अंगूठी या चाकू एक हज़ार रोटियों के बदले में बेचे।"[4] ज़खीरा में है कि अगर कोई व्यक्ति इकट्ठा गेहूं देकर उसके बदले में रोटियाँ अलग-अलग समय पर लेना चाहे, तो गेहूं वाले को चाहिए कि वह एक अंगूठी या चाकू एक हज़ार रोटियों के बदले में रोटियां पकाने वाले के हाथ बेच दे (फिर रोटियों वाला गेहूं वाले के.. [अपूर्ण])।

[1] दुर्रे मुख्तार, किताबुल बुयू, बाबुल बय्युल फासिद, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 2/24। [2] अल-कुरान अल-करीम, 29/4। [3] नसबुल राय्या, किताबुल बुयू, अल-मकतबतुल इस्लामिया रियाद, 4/4। [4] रद्दुल मुख्तार, बाबुर् रिबा, दार इहयाउत तुरास अल-अरबी बेरुत, 4/186।

پیسے لوں گا۔

(۳) زید نے بکر کو دس روپیہ قرض دیا کہ بعد ایک سال کے ادا کر دے اور ایک آنہ پیسہ دیا کہ اس کے عوض بعد ایک سال کے دو روپیہ دے، یہ تینوں صورتیں شرعاً جائز ہیں یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب:

(۱) ایک من گیہوں دینا نہ دینا کچھ ضرور نہیں جملہ شرائط بیع کا تحقق ضرور ہے جن کی تفصیل تو تمثیل ہمارے فتوٰی میں ہے ان میں سے ایک بھی کم ہے تو حرام ہے۔

لان بیع معدوم لم یرد الشرع بجوازہ وقد نھی رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم عن بیع مالیس عندہ ۱- | کیونکہ یہ معدوم کی بیع ہے جس کے جواز پر شرع وارد نہیں ہوئی اور تحقیق رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم نے اس چیز کی بیع سے منع فرمایا جو بائع کے پاس موجود نہ ہو۔ (ت)

اور اگر شرائط مجتمع ہوں تو جائز ہے اگر چہ ایک پیسہ کو ہزار من گیہوں خریدے

قال اللہ عزوجل "إِلَّا أَنْ تَكُونَ تِجَارَةً عَنْ تَرَاضٍ مِنْكُمْ" ۲- وقال رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم اذا اختلف النوعان فبیعوا کیف شئتم ۳- | اللہ تعالٰی نے ارشاد فرمایا مگر یہ کہ ہو تمہارے درمیان تجارت باہمی رضامندی سے اور رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم نے فرمایا جب بدلین مختلف نوعوں کے ہوں تو جیسے چاہو بیچو۔ (ت)

رد المحتار میں ہے:

في الذخيرة اذا اخذ الخبز مفرقاً ينبغي ان يبيع صاحب الحنطة خاتما اوسكينا من الخباز بالف من الخبز

٤- | ذخیرہ میں ہے کہ اگر کوئی شخص گندم اکٹھی دے کر اس کے بدلے میں روٹیاں متفرق طور پر لینا چاہے تو گندم والے کو چاہئے کہ وہ انگوٹھی یا چھری ہزار روٹیوں کے بدلے میں روٹیاں پکانے والے کے ہاتھ فروخت کرے (پھر روٹیوں والا گندم والے کے

---

[1] درمختار کتاب البیوع باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۲۴ [2] القرآن الکریم ۲۹/۴ [3] نصب الرایہ کتاب البیوع المکتبة الاسلامیة الریاض ۴/۴ [4] ردالمحتار باب الربودار احیاء التراث العربي بیروت ۴/ ۱۸۶

Fatawa Razawiyyah Volume 17

(Hand over a ring or a knife in exchange for the required quantity of wheat and take the wheat). (T) It is stated in Ghamz al-Uyun wa al-Basair:

[Arabic]: The permissibility of a lender selling to a borrower something worth a small measure for ten dinars is in accordance with legal reasoning, because it is a sale of existing property by the judge's decree. | It is permissible for a lender to sell something worth two rattis to a borrower for ten dinars, as this conforms to legal reasoning, because it is a transaction of one's own existing property as per the judge's decree. (T)

All this is applicable when an actual sale takes place, using words like "Ba'tu, Ishtaraytu, Farokhtam, Kharidam" (I sold, I bought). Saying "I will take, I will give" is not a contract but a promise, and it has no legal effect, as we have explained in our Fatawa. (T) And Allah Almighty knows best.

(2) A 'Salam' sale (forward sale) is permissible for both banknotes and coins, as they are conventional prices, not natural ones. In 'Tanwir al-Absar' and 'Durr al-Mukhtar', chapter on Salam, it says:

[Arabic]: (A Salam contract is valid for things whose quality can be specified and quantity determined, such as measured by volume or weight.) By saying 'muthman' (the commodity sold), dirhams and dinars are excluded because they are prices ('thaman') in which Salam is not permissible. It also includes countable items that are similar (mutaqarib), like walnuts, eggs, and small coins. | A Salam contract is valid for things whose quality can be specified and quantity determined, such as measured (by volume) or weighed items that can be treated as 'muthman' (the commodity sold). This excludes dirhams and dinars because they are 'thaman' (price), in which Salam is not permissible. It also includes countable items that are similar (mutaqarib), like walnuts, eggs, and coins. (T)

The conditions for a Salam sale must be present, and the offer and acceptance must be made. Saying "I will take, I will give" is nothing (not a contract). And Allah Almighty knows best.

(3) Such a sale is forbidden as it becomes a Salam sale of money, which is not permissible as previously mentioned from 'Durr al-Mukhtar'. (As it has just passed with reference to Durr al-Mukhtar. T) And Allah Almighty knows best.

Problem 340: From Kartoli, district Badaun, sent by Maulana Muhammad Raza Khan Sahib, 20 Rabi-ul-Awwal 1336 AH. A Salam sale was settled at the rate of 12 seers of seed per rupee last year with Walid, who is a non-believer. Now Shareef...

---

1 Ghamz al-Uyun wa al-Basair, Al-Fann al-Awwal, section on general custom being reliable, Idara al-Quran Karachi, 1/135 2 Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Kitab al-Buyu', Bab al-Salam, Mujtabai Press Delhi, 2/77 Page 583 of 715

फतावा रज़विया जिल्द 17

(हाथ में अंगूठी या छुरी गेहूं की वांछित मात्रा के बदले में देकर गेहूं ले ले)। (त) 'ग़मज़ुल उयून वल बसाईर' में है:

[अरबी]: ऋणदाता का ऋणी को दस दीनार के बदले एक छोटी मात्रा के बराबर वस्तु बेचना वैध है, क्योंकि यह दलील के अनुरूप है, क्योंकि यह काजी के डिक्री द्वारा मौजूदा संपत्ति की बिक्री है। | क़र्ज़ देने वाले को क़र्ज़ मांगने वाले के हाथ दो रत्ती के बराबर कोई चीज़ दस दीनार के बदले बेचने की अनुमति दलील के अनुसार है क्योंकि यह अपनी मौजूद मिल्कियत का काज़ी के हुक्म से सौदा है। (त)

यह सब उस स्थिति में है जब बिक्री हो, "बेअतु इशतरैतु, फ़रोख़्तम ख़रीदम" (मैंने बेचा मैंने खरीदा) कहें। "लूंगा, दूंगा" अनुबंध (अक़्द) नहीं बल्कि वादा है और इसका कोई कानूनी प्रभाव नहीं है, जैसा कि हमने अपने फतावा में बयान कर दिया है। (त) और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

(2) नोट हों या पैसे, दोनों की 'बय'अ सलम' (अग्रिम बिक्री) जायज़ है क्योंकि ये सांकेतिक मूल्य हैं न कि प्राकृतिक। 'तन्वीरुल अब्सार' व 'दुर्रे मुख़्तार' के'बाबुल सलम' में है:

[अरबी]: (सलाम अनुबंध उस चीज़ में सही है जिसकी विशेषता को निर्धारित करना और उसकी मात्रा को पहचानना संभव हो, जैसे नापी या तोली जाने वाली वस्तुएं।) 'मुसम्मन' कहने से दिरहम और दीनार बाहर हो गए क्योंकि वे 'समन' (कीमत) हैं जिनमें सलम जायज़ नहीं है। इसमें वे गिनती की वस्तुएं भी शामिल हैं जो एक जैसी (मुतकारिब) हों, जैसे अखरोट, अंडे और पैसे। | सलाम अनुबंध उस चीज़ में सही है जिसकी विशेषता को निर्धारित करना और उसकी मात्रा को पहचानना संभव हो, जैसे नापी जाने वाली (किली) चीज़ें और ऐसी वज़नी चीज़ें जो 'मुसम्मन' (बिक्री की वस्तु) बन सकें। इस शर्त से दिरहम और दीनार बाहर हो गए क्योंकि वे 'समन' (कीमत) हैं जिनमें सलम जायज़ नहीं है, और ऐसी चीज़ें जो गिनती में एक जैसी (मुतकारिब) हों जैसे अखरोट, अंडे और पैसे। (त)

सलम बिक्री की शर्तें मौजूद होनी चाहिए और ईजाब व क़बूल (प्रस्ताव और स्वीकृति) होनी चाहिए। "लूंगा, दूंगा" कहना कोई चीज़ (अनुबंध) नहीं है। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

(3) ऐसी बिक्री हराम है क्योंकि यह रुपयों की सलम बिक्री हो गई और वह जायज़ नहीं है जैसा कि अभी 'दुर्रे मुख़्तार' के हवाले से गुज़रा है। (त) और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

मसला 340: करतोली, ज़िला बदायूं से मुरसला जनाब मौलवी मुहम्मद रज़ा ख़ान साहब, 20 रबीउल अव्वल 1336 हिजरी। पिछले साल वलीद से जो काफ़िर है, एक रुपया प्रति 12 सेर बीज के हिसाब से सलम बिक्री तय हुई। अब शरीफ़...

---

1 ग़मज़ुल उयून वल बसाईर, अल-फ़न्नुल अव्वल, सामान्य प्रथा के विश्वसनीय होने का बयान, इदारा अल-क़ुरान कराची, 1/135 2 दुर्रे मुख़्तार शरह तन्वीरुल अब्सार, किताबुल बुयूअ, बाबुल सलम, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 2/77 पेज 583 of 715

ہاتھ انگوٹھی یا چھری گندم کی مطلوبہ مقدار کے عوض بیچ کو گندم لے لے)۔ (ت) غمز العیون والبصائر میں ہے:

جواز بیع المقرض من المستقرض مماسیاوی طسو جابعشرۃ دنانیر فانه علی وفاق الدلیل لانه بیع موجود مملوك له بالقاضی ۱۔ | قرض دینے والے کو قرض مانگنے والے کے ہاتھ دورتی برابر کوئی چیز دس دینار کے عوض فروخت کرنے کا جواز دلیل کے موافق ہے کیونکہ یہ اپنی موجود ملکیت کا قاضی کے حکم سے سودا ہے۔(ت)

یہ سب اس حالت میں ہے کہ بیع ہو "بعت اشتریت فروختم خریدم" (میں نے بیچا میں نے خریدا۔ت) کہیں، لوں گا دوں گا عقد نہیں وعدہ ہے اور اس کے لئے کوئی اثر نہیں کما بیناہ فی فتاونا (جیسا کہ ہم نے اسے اپنے فتاوٰی میں بیان کردیا ہے۔ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

(۲) نوٹ ہوں یا پیسے دونوں کی بیع سلم جائز ہے کہ ثمن اصطلاحی ہیں نہ خلقی، تنویر الابصار ودر مختار باب السلم میں ہے :

(یصح فیما امکن ضبط صفته ومعرفة قدره کمکیل وموزون) خرج بقوله (مثمن) الدراهم والدنانیر لانها اثمان فلم یجز فیها السلم (وعددی متقارب کجوز وبیض وفلس ۲ | عقد سلم اس چیز میں صحیح ہے جس کی صفت کو ضبط کرنا اور اس کی مقدار کو پہچاننا ممکن ہو جیسے کیلی چیز اور ایسی وزنی چیز جو مثمن یعنی مبیع بنے، اس قید سے دراہم و دنانیر خارج ہوگئے کیونکہ وہ ثمن ہیں جن میں بیع سلم جائز نہیں، اور ایسی چیز جو عددی متقارب ہو جیسے اخروٹ، انڈے، اور پیسے (ت)

شرائط بیع سلم موجود ہوں اور ایجاب و قبول ہولوں گا دوں گا کوئی چیز نہیں واللہ تعالٰی اعلم۔

(۳) ایسی بیع حرام ہے کہ یہ روپے کی بیع سلم ہوگئی اور وہ جائز نہیں کما تقدم انفا عن الدر المختار (جیسا کہ ابھی در مختار کے حوالہ سے گزرا ہے۔ت) واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۳۴۰: از کرتولی ضلع بدایوں مرسلہ جناب مولوی محمد رضا خاں صاحب ۲۰ ربیع الاول ۱۳۳۶ھ بیع سلم بحساب فی روپیہ ۱۲ سیر بیج گزشتہ میں ولید سے کہ کافر ہے قرار پائی اب شریف

---

1 غمز العیون البصائر الفن الاول بیان ان المعتبر العرف العام لا الخاص ادارۃ القرآن کراچی ۱/ ۱۳۵

2 درمختار شرح تنویر الابصار کتاب البیوع باب السلم مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۷۷ Page 583 of 715

Fatawa Razawiyyah, Volume 17 (17)

...are present. Amr, whose money it was, is not giving the agreed-upon commodity. If Amr does this: he gifts the quantity of wheat owed by Walid (a non-Muslim) and Zaid (a Muslim) to another person under his ownership, and the person who is liable to pay buys it from Amr and gives it to the person who received the gift, will this be permissible or not?

The Answer: The ruling in Bay' al-Salam (forward sale) is to take the fixed commodity or take back as much money as was given; taking another thing in exchange is prohibited (Haram). Yes, if the seller does not have wheat and the buyer gifts wheat from his own possession to a third party, and then the seller buys it from that third party and gives it to the buyer as per his demand, then it is permissible. And Allah Almighty knows best.

Problem 241: What do the scholars of religion say regarding this matter: A sugar mill owner (Khandsari) bought juice from the tenants of a village at the rate of 25 rupees and paid the money. Then that sugar mill owner sold his purchased juice to the landlord (Zamindar) of that place at the rate of 25 rupees, and there was no profit or loss. Then the landlord tried to find someone to buy his juice, and other sugar mill owners offered up to 28 rupees. When the landlord saw that he could not get more than 28 rupees, he said to his tenants, "You people make jaggery (Gur) from your respective juices and pay me back my money at the rate of 30 rupees." It is known to the seller beforehand that there is a difference in this, but is this agreement of the landlord with the tenants to pay at the rate of 30 rupees permissible or not? Explain with evidence, you will be rewarded by the Magnificent Allah. (T)

The Answer: The first, second, and third—all these sales became impermissible and forbidden (Haram) as they were carried out before the juice existed, as is the custom here. It is stated in the Hadith:

[Arabic Text]: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) prohibited the sale of what is not in one's possession. However, he allowed Bay' al-Salam, and it has conditions, among which is that the commodity (Muslam Fihi) should not be unavailable in the market from the day of the contract until the day of delivery.

[Urdu Translation]: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) prohibited the sale of something that is not present with the seller. The

concession given in Bay' al-Salam has some conditions, one of which is that the Muslam Fihi (the commodity of forward sale) should not be discontinued from the market from the day of the contract until the day of promise (delivery). (T)

1 Durr-e-Mukhtar, Chapter of Invalid Sale, Mujtabai Press, Delhi, 2/24

फतावा रज़विया, जिल्द सत्रह (१७)

...मौजूद हैं। अम्र, जिसका रुपया था, वह तयशुदा जिन्स (वस्तु) नहीं दे रहा। अगर अम्र यह करे कि जितना गेहूँ वलीद (काफ़िर) और ज़ैद (मुस्लिम) के ज़िम्मे है, वह किसी दूसरे व्यक्ति को अपनी मिल्कियत के रूप में हिबा (दान) कर दे और वह व्यक्ति जिस पर अदायगी वाजिब है, अम्र से खरीद कर उस व्यक्ति को दे दे जिसे हिबा किया गया है, तो क्या यह जायज़ होगा या नहीं?

अल-जवाब (उत्तर): बैअ-ए-सल्लम (अग्रिम बिक्री) में हुक्म यह है कि तयशुदा जिन्स ले या जितना रुपया दिया था उतना वापस ले, उसके बदले में कोई दूसरी चीज़ लेना हराम है। हाँ, अगर बेचने वाले (बाइ') के पास गेहूँ नहीं है और खरीदार (मुश्तरी) अपने पास से गेहूँ किसी तीसरे व्यक्ति को हिबा कर दे, फिर बेचने वाला उसी तीसरे व्यक्ति से खरीद कर खरीदार की माँग पूरी करने के लिए उसे दे दे, तो यह जायज़ है। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला २४१: दीन के उलमा इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि एक खंडसारी (चीनी मिल मालिक) ने एक गाँव का रस वहाँ के किसानों से २५ रुपये की दर से खरीदा और रुपया दे दिया। फिर उस खंडसारी ने अपने खरीदे हुए रस को वहीं के ज़मींदार को २५ रुपये के हिसाब से बेच दिया, इसमें न कोई नफ़ा (लाभ) हुआ न नुक़सान। फिर ज़मींदार ने कोशिश की कि कोई मेरा रस खरीद ले और दूसरे खंडसारियों ने २८ रुपये तक की बोली लगाई। जब ज़मींदार ने देखा कि मुझे २८ रुपये से ज़्यादा नहीं मिल रहे, तो उसने अपने किसानों से कहा कि तुम लोग अपने-अपने रस का गुड़ बना लो और मुझे मेरा रुपया ३० रुपये की दर के हिसाब से अदा कर दो। बेचने वाले को पहले से पता है कि इसमें मतभेद है, मगर ज़मींदार का किसानों के साथ यह समझौता कि ३० रुपये के हिसाब से अदायगी की जाए, जायज़ है या नहीं? दलील के साथ बयान करें, अल्लाह तआला के यहाँ अज्र (पुण्य) पाएंगे। (त)

अल-जवाब (उत्तर): पहली, दूसरी और तीसरी—ये सभी बिक्रियां (सौदे) नाजायज़ और हराम हुईं क्योंकि ये रस के मौजूद होने से पहले की गईं, जैसा कि यहाँ रिवाज है। हदीस में है:

[अरबी पाठ]: अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने उस चीज़ की बिक्री से मना फ़रमाया जो बेचने वाले के पास मौजूद न हो। हालांकि उन्होंने 'बैअ-ए-सल्लम' की अनुमति दी है, और इसकी कुछ शर्तें हैं, जिनमें से एक यह है कि 'मुस्लम फ़ीह' (अग्रिम बेची गई वस्तु) अनुबंध के दिन से लेकर वादे (डिलीवरी) के दिन तक बाज़ार में उपलब्ध रहे।

[उर्दू अनुवाद]: अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने उस चीज़ की बिक्री से मना फ़रमाया जो बेचने वाले के पास मौजूद न हो। 'बैअ-ए-सल्लम' में जो छूट दी गई है, उसकी कुछ शर्तें हैं, जिनमें से एक यह है कि 'मुस्लम फ़ीह' अनुबंध वाले दिन से लेकर वादे वाले दिन तक बाज़ार से ग़ायब न हो। (त)

१ दुर्रे मुख्तार, बाब अल-बैअ अल-फ़ासिद, मतबा मुजतबाई, दिल्ली २/२४

पृष्ठ ५८४/७१५

موجودہ ہیں عمرو کو جس کا روپیہ تھا وہ جنس ملے شدہ نہیں دیتا عمر و اگریہ کرے کہ جس قدر گیہوں ولید کافر اور زید مسلمان کے ذمہ چاہئے ہیں کسی دوسرے شخص کو اپنی ملکیت کے ہبہ کر دے اور وہ شخص جس پر واجب الادا ہے عمرو کو خرید کر شخص موہوب لہ کو دے دے یہ جائز ہوگا یا نہیں؟

الجواب: بیع سلم میں حکم ہے کہ جنس قرار یافتہ لے یا جتنا روپیہ دیا تھا واپس لے دوسری چیز عوض میں لینا حرام ہے ہاں اگر بائع کے پاس گیہوں نہیں اور مشتری اپنے پاس سے گیہوں ثالث کو ہبہ کر دے پھر بائع اسی ثالث سے خرید کر مشتری کے مطالبہ میں دے تو جائز ہے واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۲۴۱: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک کھنڈ ساری نے ایک موضع کارس وہاں کے اسامیوں سے ۲۵ روپے کے نرخ سے خریدا اور روپیہ دے دیا پھر اس کھنڈ ساری نے اپنے رس خریدے ہوئے کو وہاں کے زمیندار کے ہاتھ فروخت کردیا ۲۵ روپے کے حساب سے، اور کچھ نفع یا نقصان نہیں ہوا، پھر زمیندار نے کوشش کی کہ میرا رس کوئی شخص خرید لے اور دوسرے کھنڈ ساریوں نے ۲۸ روپے تک لگائے جب زمیندار نے دیکھا کہ مجھ کو ۲۸ روپے سے زائد نہیں ملتا تو اس نے اپنے اسامیوں سے کہا کہ تم لوگ اپنے اپنے رس کا گڑ بنا لو میرا روپیہ ۳۰ روپے کے نرخ حساب سے مجھ کو ادا کر دینا پہلے بائع کو معلوم ہے کہ اس میں اختلاف ہے مگر یہ معاہدہ زمیندار کا اسامیوں سے کہ ۳۰ روپے کے حساب سے ادا کر دینا جائز ہے یا نہیں؟ بینوا بالدلیل توجروا عند الجلیل (دلیل کے ساتھ بیان کریں جلال والے اللہ تعالیٰ کے ہاں اجر دئے جاؤ گے۔ت)

الجواب: پہلی دوسری تیسری یہ سب بیعیں ناجائز و حرام ہوئیں جبکہ رس موجود ہونے سے پہلے عمل میں آئیں جیسا کہ یہاں دستور ہے ، حدیث میں ہے:

نھی رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم عن بیع مالیس عندہ اِمامارخص فی السلم فلہ شرائط منہا عدم انقطاع المسلم فیہ یوم العقد الی یوم الوعد

رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم نے اس چیز کی بیع سے منع فرمایا جو بائع کے پاس موجود نہ ہوں ، بیع سلم میں جو رخصت دی گئی ہے تو اس کے لئے کچھ شرطیں ہیں جن میں سے ایک یہ ہے کہ مسلم فیہ عقد والے دن سے لے کر وعدہ والے دن تک بازار سے منقطع نہ ہو۔(ت)

1 در مختار باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۲۴

Fatawa Rizwiya, Volume 17

And especially the third sale, if it takes place despite this, is impermissible.

[Box Start] Arabic: Because the purchaser of a corrupted (fasid) sale does not become the owner before possession, and even after it, the sin is not removed. And Allah Almighty knows best. Urdu: Because a thing purchased through an invalid sale does not become one's property even by possession, and the sin of it is not removed afterwards. And Allah Almighty knows best. (T) [Box End]

Problem 242: From Pilibhit, Mohalla Bhait, sent by Sher Muhammad son of Sheikh Nadir Husain Sahab, 23rd Jamadi al-Ukhra 1312 AH.

Question: What do the scholars of religion and muftis of the clear Shari'ah say regarding this issue? In current times, there is a custom for selling sugarcane juice (raw sugar) where as soon as the trees (crops) appear in the field, advance money is paid according to the current market rate. Is this permissible through any Shari'i legal device (hila) or not? And if the juice is purchased at the current market rate when the sugarcane is ready, is that permissible or not? And if it's not permissible, is there any Shari'i legal device for the sake of necessity because the custom of the times is very compelling? Please explain and be rewarded.

The Answer: It is not permissible upon the appearance of the crop, nor upon the readiness of the sugarcane. It is also not permissible to contract for next year's juice when current juice is available and being sold. A condition for 'Bai' Salam' (forward sale) is that the item must not disappear from the market at any point from the time of contract until the agreed delivery date. In the first two scenarios, the item is absent from the market at the time of contract; juice hasn't entered the market just because sugarcane is ready, so the condition for validity is not met. In the last scenario, although juice exists at the time of contract, it will not remain available until the delivery date (next year); it will finish in the market after a few days. There is a consensus among all the Imams of our school of thought that all these forms are impermissible and forbidden. The texts, commentaries, and fatwas are full of such writings. We are not allowed to give a fatwa contrary to the school of thought. Yes, if juice has been prepared in some place while the sugarcane is still standing elsewhere, then doing a 'Bai' Salam' for juice with those who haven't extracted it yet is undoubtedly permissible, provided the promised delivery date is so close that this year's juice does not disappear from the market in the meantime. It is stated in Al-Bahr al-Ra'iq and Durr al-Mukhtar:

[Box Start] Arabic: What is written in the document of Salam regarding the phrase "this year's new [crop]" is invalidating for it (the contract), i.e., before the new exists; however, after [it exists], it is valid as is not hidden. 1 Urdu: That which is written in the document of the Salam contract, that "this year's new (wheat)", then this is a corrupting factor for the contract due to the new not being present, but it is correct after it is present. (T) [Box End]

1 Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Salam, Matba' Mujtabai Delhi 2/28, Al-Bahr al-Ra'iq Kitab al-Bay' Bab al-Salam, HM Saeed Company Karachi 6/160.

फ़तावा रज़विया, जिल्द १७

और विशेष रूप से तीसरी बिक्री, यदि इसके बावजूद भी होती है, तो वह नाजायज है।

[बॉक्स प्रारंभ] अरबी: क्योंकि दूषित (फ़ासिद) बिक्री के साथ खरीदी गई चीज़ कब्ज़े से पहले मालिक नहीं बनती, और कब्ज़े के बाद भी उसका गुनाह दूर नहीं होता। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। उर्दू: क्योंकि बै-ए-फ़ासिद के साथ खरीदी हुई चीज़ ममलुक (स्वामित्व वाली) नहीं बनती कब्ज़े से और बाद में भी उसका गुनाह दूर नहीं होता। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त) [बॉक्स समाप्त]

मसला २४२: पीलीभीत, मोहल्ला भैट से, प्रेषक शेर मोहम्मद पुत्र शेख नादिर हुसैन साहब, २३ जमादी-उल-उखरा १३१२ हिजरी।

प्रश्न: धर्म के विद्वान और स्पष्ट शरीयत के मुफ़्ती इस मुद्दे पर क्या कहते हैं कि वर्तमान समय में गन्ने के रस की बिक्री का जैसा रिवाज है कि जैसे ही खेत में फसल दिखाई देने लगती है, उस समय की दर के अनुसार अग्रिम (एडवांस) पैसा दे दिया जाता है। क्या यह किसी शरीई हीले (कानूनी युक्ति) से जायज़ है या नहीं? और अगर गन्ना तैयार होने के समय उस वक्त की दर के अनुसार रस खरीदा जाए, तो भी जायज़ है या नहीं? और अगर जायज़ नहीं है, तो ज़रूरत के लिए कोई शरीई हीला भी है या नहीं क्योंकि ज़माने का रिवाज बहुत मजबूर कर रहा है? वर्णन करें, सवाब पाएं।

जवाब: न फसल के दिखने पर जायज़ है, न गन्ने के तैयार होने पर। और न ही यह जायज़ है कि जब रस उपलब्ध हो जाए और बिकने लगे, तो अगले साल के रस की बिक्री का अनुबंध कर लिया जाए। क्योंकि बै-ए-सलम (अग्रिम बिक्री) में शर्त है कि वह वस्तु अनुबंध के समय से लेकर तयशुदा तारीख तक किसी भी समय बाज़ार से समाप्त न हो। पहली दो स्थितियों में, अनुबंध के समय वस्तु बाज़ार में मौजूद नहीं थी; गन्ने के तैयार होने से रस बाज़ार में नहीं आ गया जिससे वैधता की शर्त पूरी हो। और पिछली स्थिति में, हालांकि अनुबंध के समय रस मौजूद है, लेकिन वह तयशुदा तारीख (अगले साल) तक मौजूद नहीं रहेगा; कुछ दिनों बाद बाज़ार से खत्म हो जाएगा। हमारे मज़हब के सभी इमामों का इन सभी स्थितियों के नाजायज़ और हराम होने पर इजमा (सहमति) है। मूल ग्रंथ, व्याख्याएं और फ़तवे उनके लेखों से भरे हुए हैं। हमें मज़हब के खिलाफ फ़तवा देने की किसी भी तरह अनुमति नहीं है। हाँ, अगर रस कहीं तैयार हो गया है और कहीं अभी ईख खड़ी है, तो ऐसे समय में जिनके पास अभी रस नहीं निकला है, उनसे रस की बै-ए-सलम कर लेना निस्संदेह जायज़ है, बशर्ते वादा इतनी

नज़दीकी अवधि का हो जिसमें इस साल का रस बाज़ार से खत्म न होने पाए। बहर-उर-राइक़ और दुर्र-ए-मुख्तार में है:

[बॉक्स प्रारंभ] अरबी: जो सलम के दस्तावेज़ में लिखा जाता है कि "इस साल का नया [अनाज]", तो यह उसके लिए (अनुबंध के लिए) दूषित करने वाला है, यानी नए के अस्तित्व से पहले; लेकिन उसके [अस्तित्व] के बाद यह सही है जैसा कि छिपा नहीं है। 1 उर्दू: वह जो अक़्द-ए-सलम के दस्तावेज़ में लिखा जाता है कि "इस साल की जदीद (नया गेहूं)", तो यह जदीद के मौजूद होने से पहले अक़्द को फासिद (बिगाड़ने वाला) करने वाला है, लेकिन उसके मौजूद होने के बाद सही है। (त) [बॉक्स समाप्त]

1 दुर्र-ए-मुख्तार, किताब अल-बुयू, बाब अस-सलम, मतबा मुजतबाई दिल्ली 2/28, अल-बहर अल-राइक़ किताब अल-बै बाब अस-सलम, एच एम सईद कंपनी कराची 6/160।

اور خاص تیسری بیع اگر اس کے باوجود پر بھی ہوئی تو نا جائز ہے۔

[Box Start] لان المشتری فاسد الایملك قبل القبض وبعده ایضا لا یرتفع الاثم۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

کیونکہ بیع فاسد کے ساتھ خریدی ہوئی چیز مملوک نہیں بنتی قبضہ سے اور بعد بھی اس کا گناہ مرتفع نہیں ہوتا۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت) [Box End]

مسئلہ ۲۴۲: از پیلی بھیت محلہ بھیت مرسلہ شیر محمد مرسلہ شیخ نادر حسین صاحب ۲۳ جمادی الآخر ۱۳۱۲ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرعِ مبین اس مسئلہ میں کہ فی زمانہ جیسا رواج رس نیشکر کے فروخت کا ہے کہ ادھر کھیت میں درخت نمود ہوئے ادھر اس وقت کے نرخ بموجب پیشگی روپیہ دے دیا آیا کسی حیلہ شرعی سے یہ بات جائز ہے یا نہیں؟ اور اگر وقت تیار ہونے نیشکر کے اس وقت کے نرخ بموجب رس خرید ا جائے تو بھی جائز ہے یا نہیں؟ اور اگر جائز نہیں ہے تو ضرورت کے لئے کوئی حیلہ شرعی بھی ہے یا نہیں کیونکہ زمانہ کا رواج بہت مجبور کر رہا ہے۔ بینوا توجروا

الجواب: نہ درختوں کے نمود پر جائز نہ نیشکر کی تیاری پر جائز نہ یہ جائز کہ جب رس موجود ہو جائے اور بکنے لگے اس آئندہ سال کے رس کی بیع کر لیں کہ بیع سلم میں شرط ہے کہ وہ شے عقد سے وقت قرار داد تک کسی وقت بازار سے منقطع نہ ہو پہلی دو صورتوں میں تو اس وقت عقد منقطع تھا گنے کی تیاری سے رس بازار میں تو نہ آگیا جو شرط جواز متحقق ہو اور پچھلی صورت میں اگرچہ رس وقت عقد موجود ہے مگر وقت قرار داد یعنی آئندہ سال تک موجود نہ رہے

گا چند روز بعد بازار سے ختم ہو جائے گا ہمارے تمام ائمہ مذہب کا ان سب صورتوں کے ناجائز وحرام ہونے پر اجماع ہے متون و شروح وفتاوٰی ان کی تحریر سے مالا مال ہیں ہمیں خلاف مذہب فتوٰی دینے کی کسی طرح اجازت نہیں، ہاں اگر رس کہیں تیار ہو گیا کہیں ابھی ایکھ کھڑی ہے ایسے زمانہ میں جن کے یہاں ہنوز رس نہیں ان سے رس کی بیع سلم کر لینا بلا شبہ جائز ہے جبکہ وعدہ اتنی قریب مدت تک کا کیا جائے جس میں اس سال کا رس بازار میں سے ختم نہ ہونے پائے ، بحر الرائق و درمختار میں ہے:

[Box Start] مایکتب فی وثیقۃ السلم من قولہ جدید عامہ مفسد لہ ای قبل وجود الجدید اما بعد فیصح کمالا یخفی ۱۔ وہ جو عقدِ سلم کے وثیقہ میں لکھا جاتا ہے کہ اس سال کی جدید (گندم) تو یہ جدید کے موجود ہونے سے مفسد عقد ہے لیکن اس کے موجود ہونے کے بعد صحیح ہے۔ (ت) [Box End]

۱ درمختار کتاب البیوع باب السلم مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۲۸ ، بحر الرائق کتاب البیع باب السلم ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۶/ ۱۶۰

Fatawa Razawiyya Volume (17)

And in this state of readiness or non-readiness, the unity of some villages, sub-districts, or districts is also not a condition. Rather, if sugar juice or even sugarcane is not yet ready anywhere in this entire district, and in another district, juice has started being sold, then those where it is still non-existent can also perform a Salam sale (advance payment for future delivery). This is provided that the distance between these two districts is not so great that if their sugarcane is destroyed or some calamity befalls the juice, it would involve extreme hardship to procure and deliver juice from there. For example, if it is currently missing in India but is ready in Egypt or Burma, then a Salam sale for it in India based on such readiness is not permissible. It is mentioned in Durr al-Mukhtar:

If it is discontinued in one region but not in another, it is not permissible in the one where it is discontinued. (1) | If the Muslam fih (the commodity of Salam) is unavailable in one country but not in another, then Salam is not valid where it is unavailable. (T)

It is mentioned in Radd al-Muhtar: *Meaning it is discontinued therein because it cannot be brought except with great hardship, thus resulting in an inability to deliver. Bahr (2). | Meaning in the country where it is unavailable, because it is impossible to bring it from there except with severe hardship, hence the inability to deliver will be mandatory. Bahr. (T)*

All this applies if it is actually a Sharia-compliant contract of sale. Some documents regarding sugar juice seen these days have the following content: (I acknowledge and write that such an amount is payable by me to so-and-so, son of so-and-so; I will pay part of the aforementioned amount from the produce of the 1300 crop, which will be harvested in 1301, at the time the cane is ready, at such-and-such rate by such-and-such month, and I will not use it for my own expenses in any way). It has been heard that general documents are of this nature. If, in fact, the words of sale do not even occur verbally, and neither does he say "I sold the juice to you" nor does the other say "I bought it," but rather this kind of conversation takes place, then it has no relation to a sale at all. This is merely a promise and acknowledgement that the demanded money will be paid in this manner. This form was originally permissible in itself. If someone owes a debt to another and the debtor voluntarily promises that in exchange for it, I will give you such-and-such a thing at such-and-such a rate, then there is no harm in it. When he gives it, the sale will take place at that time in exchange for that debt. In this method, there was no need for a prior agreement or

any condition; it only requires that at the time of giving, it be known to them both that it was given at this price. It is mentioned in the Fatawa of Allamah Khayr al-Din al-Ramli:

(1) Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Salam, Matba' Mujtabai Delhi, 2/71 (2) Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Salam, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/205 Page 586 of 715

और इस तैयारी और ग़ैर-तैयारी में कुछ गाँवों या परगनों या ज़िलों का एक होना भी शर्त नहीं है। बल्कि अगर इस पूरे ज़िले में अभी कहीं रस (गन्ने का रस) या गन्ना भी तैयार नहीं है और दूसरे ज़िले में रस बिकने लगा है, तो जहाँ अभी तक मौजूद नहीं है वहाँ वाले भी 'बैअ-ए-सल्लम' (अग्रिम भुगतान बिक्री) कर सकते हैं, बशर्ते कि उन दोनों ज़िलों में इतनी बड़ी दूरी न हो कि अगर उनके यहाँ की ईख (गन्ना) मारी जाए या रस पर कोई आफ़त आए, तो वहाँ से रस मँगवाकर देने में बहुत भारी मशक्कत हो। जैसे हिन्दुस्तान में अभी अनुपलब्ध है और मिसाल के तौर पर मिस्र या बर्मा में तैयार हो गया, तो ऐसी तैयारी पर हिन्दुस्तान में उसकी 'बैअ-ए-सल्लम' जायज़ नहीं है। 'दुर्रे मुख़्तार' में है:

लव इनक़ता' फ़ी इक़लीमिन दूना आख़र लम यजुज़ फ़िल मुनक़ति'- *(1)* | अगर एक मुल्क में मुस्लिम फ़ीह *(सल्लम की वस्तु)* नायाब है और दूसरे में नहीं है, तो जहाँ नायाब है वहाँ सल्लम जायज़ नहीं। *(त)*

'रद्दुल मुहतार' में है: अय्यिल मुनक़ति' फ़ीहि लि-अन्नहू ला युमकिनु इहज़ारुहू इल्ला बि-मशक्क़तिन अज़ीमतुं फ़य-अजिज़ु अनित तस्लीम, बहर *(2)*। | यानी जिस मुल्क में नायाब है क्योंकि सख़्त मशक्कत के सिवा वहाँ से लाना मुमकिन नहीं, लिहाज़ा सुपुर्दगी से लाचारी लाज़िम आएगी। बहर। *(त)*

यह सब उस सूरत में है कि हकीकत में वह शरीयत के अनुसार खरीद-बिक्री का अनुबंध (अक़द) हो। आज कल रस के बारे में जो दस्तावेज़ें देखने में आईं, उनका मज़मून यह है कि (जो रक़म फलां पुत्र फलां की मेरे ज़िम्मे वाजिबुल अदा (देय) है, मैं इक़रार करता हूँ और लिख देता हूँ कि उक्त रक़म का कुछ हिस्सा इस 1300 फ़सली की खेती से, जिसकी पैदावार 1301 फ़सली में होगी, कोल्हू (बेल) तैयार होने के समय फ़लां दर (रेट) से फ़लां महीने तक अदा करूँगा और अपने ख़र्च में किसी तरह न लाऊँगा)। और सुना गया है कि आम दस्तावेज़ें इसी मज़मून की होती हैं। अगर वास्तव में ज़बानी भी 'बैअ' (बिक्री) के शब्द बीच में नहीं आते, न वह कहता है कि "मैंने रस तुम्हारे हाथ बेचा" और न वह कहता है कि "मैंने खरीदा", बल्कि इसी तरह की बातचीत होती है, तो इसका 'बैअ' से कोई संबंध नहीं है। यह तो एक वादा और इक़रार है कि माँगी गई रक़म इस रास्ते से अदा करूँगा। यह सूरत अपनी जगह मूलतः जायज़ थी। अगर किसी का किसी पर कुछ क़र्ज़ हो और कर्ज़दार अपनी मर्ज़ी से वादा कर ले कि इसके बदले मैं तुझे फ़लां चीज़ इस दर (भाव) से दूँगा, तो इसमें कोई हर्ज नहीं। जिस

वक़्त देगा, उस वक़्त उस क़र्ज़ के बदले में 'बैअ' (बिक्री) हो जाएगी। इस तरीक़े में न पहले से किसी समझौते की ज़रूरत हुई और न कोई शर्त ज़रूरी है; बस इतना चाहिए कि देते वक़्त उन्हें आपस में पता हो कि इस भाव पर दी गई है। अल्लामा ख़ैर उद्दीन रमली के फ़तावा में है:

(1) दुर्रे मुख़्तार, किताबुल बुयूअ, बाबुल सल्लम, मतबअ मुज्तबाई दिल्ली, 2/71 (2) रद्दुल मुहतार, किताबुल बुयूअ, बाबुल सल्लम, दारुल इहया-उत-तुरास अल-अरबी बेरुत, 4/205 पृष्ठ 586 का 715

اور اس تیاری و غیر تیاری میں کچھ گاؤں یا پر گنہ یا ضلع کا اتحاد بھی شرط نہیں بلکہ اگر اس ضلع بھر میں ابھی کہیں رس بلکہ گنا بھی تیار نہیں اور دوسرے ضلع میں رس بکنے لگا ہے تو جہاں ہنوز معدوم ہے وہاں والے بھی بیع سلم کر سکتے ہیں جبکہ ان دونوں ضلعوں میں اتنا بعد عظیم نہ ہو کہ ان کے یہاں کی ایکھ ماری جائے یا رس پر کوئی افت آئے تو وہاں سے رس منگا کر دینے میں سخت شدید مشقت ہو جیسے ہندوستان میں ابھی مفقود ہے اور مثلاً مصر یا بر ہما میں تیار ہو گیا تو ایسی تیاری پر ہندوستان میں اس کی بیع سلم حلال نہیں، در مختار میں ہے:

لو انقطع فی اقلیم دون آخر لم یجز فی المنقطع- ۱ | اگر ایک ملک میں مسلم فیہ نایاب ہے دوسرے میں نہیں ہے تو جہاں نایاب ہے وہاں سلم جائز نہیں۔ (ت)

ردالمحتار میں ہے: ای المنقطع فیہ لانہ لایمکن احضارہ الابمشقة عظیة فیعجز عن التسلیم، بحر ۲۔ | یعنی جس ملک میں نایاب ہے کیونکہ سوائے سخت مشقت کے وہاں سے لانا ممکن نہیں لہٰذا تسلیم سے عجز لازم آئے گا۔ بحر۔ (ت)

یہ سب اس صورت میں ہے کہ واقع میں وہ عقد بیع شرعی ہو بعض دستاویزیں رس کی جو آج کل دیکھنے میں آئیں ان کا مضمون یہ ہے کہ (جو کہ مبلغ اس قدر یا فتنی فلان بن فلاں کے میرے ذمہ واجب الادا ہیں اقرار کرتا ہوں اور لکھے دیتا ہوں کہ بعض مبلغان مذکور کے مال اس کاشت ۱۳۰۰ ف جس کا پیداوار ۱۳۰۱ ف میں ہو گا وقت تیار ہو جانے بیل کے اس نرخ سے فلاں ماہ تک ادا کروں گا اپنے خرچ میں کسی طرح نہ لاؤں گا) اور سنا گیا کہ عام دستاویز اسی مضمون کی ہوتی ہیں اگر فی الواقع زبانی بھی کلمات بیع درمیان نہیں آتے نہ وہ کہتا ہے کہ میں نے رس

تیرے ہاتھ بیچا، نہ یہ کہتا ہے کہ میں نے خریدا بلکہ اسی قسم کی گفتگو ہوتی ہے تو اسے بیع سے اصلاً علاقہ نہیں، یہ تو ایک وعدہ واقرار ہے کہ زر مطالبہ اس راہ سے ادا کروں گا یہ صورت فی نفسہ اصلاً جواز کی تھی، اگر کسی کا کسی پر کچھ قرض آتا ہو اور مدیون برضائے خود وعدہ کر لے کہ اس کے بدلے میں تجھے فلاں چیز اس نرخ سے دوں گا تو اس میں کوئی حرج نہیں جس وقت دے گا اس وقت بعوض اس قرض کے بیع ہو جائے گی اس طریقہ میں نہ پہلے سے کسی قرار داد کی حاجت ہوئی نہ کوئی شرط درکار، فقط اتنا چاہیے کہ دیتے وقت انہیں باہم معلوم ہو کہ اس بھاؤ پر دی گئی، فتاویٰ علامہ خیرالدین رملی میں ہے:

۱ درمختار کتاب البیوع باب السلم مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۷۱ ۲ ردالمختار کتاب البیوع باب السلم داراحیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۲۰۵ Page 586 of 715

Volume 17 - Fatawa Razawiyya

A question was asked regarding a person who took two thousand Qirsh (Turkish currency) as a debt from another and promised to give olive oil in exchange on a specific day at the market rate of that day. When the promised day arrived and the price of olive oil was known, the lender sent for the olive oil from the debtor, and the debtor sent it. Does this constitute a valid sale at the known price of that day or not? And does the debtor have the right to demand the olive oil back? The answer was: Yes, the sale is valid and effective, as stated in Majma' al-Fatawa, al-Qunyah, and al-Mujtaba, attributed to an-Nisab. The late author of Minah al-Ghaffar also issued a fatwa based on this. (Continuing until his statement) The fundamental principle in this is that, according to us, a sale is concluded through mutual exchange (Ta'ati). So understand this, and Allah Almighty knows best. I recall that I wrote a marginal note on this as follows: I say: It was only concluded through Ta'ati because the preceding discussion between them was a promise. However, if it had been a formal contract, it would not have been valid because the conditions for a Salam contract were not met, as is evident. When a contract is not valid, then the Ta'ati based on it is also not permissible, as explicitly stated in al-Bahr, ad-Durr, and others. (T)

[1] Fatawa Khayriyya, Kitab al-Buyu', Bab al-Salam, Dar al-Ma'rifah Beirut, 1/225. Page 587 of 715

उस व्यक्ति के बारे में सवाल किया गया जिसने दूसरे से दो हज़ार किर्श (तुर्की सिक्का) ऋण के रूप में लिए और वादा किया कि वह उसके बदले में किसी विशेष दिन जैतून के तेल के तत्कालीन बाजार भाव पर जैतून का तेल देगा। जब वादे का दिन आया और जैतून के तेल का भाव मालूम था, तो ऋणदाता ने कर्जदार से जैतून का तेल मंगवाया और उसने भेज दिया। क्या यह उस दिन के ज्ञात भाव पर बिक्री मानी जाएगी या नहीं? और क्या कर्जदार को जैतून का तेल वापस मांगने का अधिकार होगा? आपने उत्तर दिया: हाँ, बिक्री प्रभावी हो गई और स्थिति वैसी ही है जैसा कि 'निसाब' के हवाले से मजमा अल-फ़तावा, अल-कुन्या और अल-मुज्तबा में स्पष्ट किया गया है। और इसी पर दिवंगत 'मिनाह अल-गफ़्फ़ार' के लेखक ने फ़तवा दिया। (उनके इस कथन तक कि) और इसमें मूल बात यह है कि हमारे यहाँ 'ता'ती' (पारस्परिक लेनदेन) के माध्यम से बिक्री संपन्न हो जाती है। अतः इसे समझें और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। मुझे याद है कि मैंने इस पर हाशिए में इस प्रकार लिखा: मैं कहता हूँ कि ता'ती से बिक्री केवल इसलिए संपन्न हुई क्योंकि उनके बीच पहले जो बातचीत हुई थी वह एक वादा था। लेकिन अगर वह एक औपचारिक अनुबंध (अक़्द) होता, तो वह सही नहीं होता क्योंकि उसमें 'अक़्द-ए-सल्म' की शर्तें पूरी नहीं होतीं, जैसा कि स्पष्ट है। जब अनुबंध सही नहीं है, तो उस पर आधारित ता'ती भी जायज नहीं है, जैसा कि 'अल-बह्र' और 'अद-दुर्र' आदि में स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है। (त)

[1] फ़तावा खैरिया, किताब अल-बुयू, बाब अस-सल्म, दार अल-मारिफ़ा बेरुत, 1/225. पृष्ठ 715 में से 587

سئل فی رجل استلف من آخر الفی قرش دیناً وعدہ ان یعطیہ بھا زیتاً بالسعر الواقع یوم کذا فلما جاء الیوم الموعود وکان سعر الزیت معلوماً فیہ ارسل یطلبہ منہ فارسل بہ زیتاً ہل یکون بیعاً بالسعر المعلوم یومئذ ام لا یکون بیعاً وللمدیون طلب الزیت (اجاب) نعم یکون بیعاً نافذاً والحال ہذا کما صرح بہ مجمع الفتاویٰ والقنیۃ والمجتبٰی معزیا الی النصاب وقد افتی بذلک المرحوم صاحب منح الغفار (الی قولہ) والاصل فی ذلک ان البیع عندنا یعقد بالتعاطی فافہم واللہ تعالیٰ اعلم۔[1] ورأیتنی کتبت علی ہامشہ مانصہ اقول: انما انعقد بالتعاطی لان الذی جری بینہما من قبل انما کان وعدا اما لوکان ذلک عقداً لما صح لعدم اجتماع شرائط السلم کما لا یخفی واذا لم یصح ذلک لم یجز التعاطی المبنی علیہ کما صرح بہ فی البحر والدر وغیر ہما۔

اس شخص کے بارے میں سوال کیا گیا کہ جس نے دوسرے سے دو ہزار (ترکی سکے) قرش بطور قرض وصول کئے اور وعدہ کیا کہ اس کے بدلے فلاں دن روغنِ زیتون دوں گا اس بھاؤ پر جو اس دن ہوگا، پھر جب وعدے کا دن آگیا اور اس دن زیتون کا بھاؤ معلوم تھا چنانچہ قرض دہندہ نے مدیون سے روغن زیتون مانگ بھیجا اور اس نے روغن زیتون بھیج دیا تو کیا یہ اس دن کے معلوم بھاؤ پر بیع ہوگی یا نہیں ہوگی اور مدیون کو روغن زیتون واپس مانگنے کا حق ہوگا؟ آپ نے جواب دیا ہاں بیع نافذ ہوگئی اور حال یہی ہے جیسا کہ نصاب کی طرف منسوب کرتے ہوئے مجمع الفتاویٰ قنیہ اور مجتبٰی میں اس کی تصریح کی گئی ہے اور تحقیق اسی پر مرحوم صاحب منح الغفار نے فتویٰ دیا، (اس کے اس قول تک کہ) اور اس میں اصل یہ ہے کہ ہمارے نزدیک تعاطی (باہمی لین دین) کے ساتھ بیع منعقد ہوجاتی ہے پس سمجھ اور اللہ تعالیٰ بہتر جانتا ہے اھ مجھے یاد پڑتا ہے کہ میں نے اس پر یوں حاشیہ لکھا میں لکھتا ہوں کہ تعاطی سے صرف اس لئے بیع منعقد

ہوئی کہ جو گفتگو اس سے پہلے ان کے درمیان ہوچکی تھی وہ وعدہ تھا لیکن اگر وہ عقد ہوتا تو صحیح نہ ہوتا کیونکہ اس میں عقدِ سلم کے شرائط جمع نہیں ہیں جیسا کہ پوشیدہ نہیں تو جب عقد صحیح نہیں تو تعاطی بھی جائز نہیں جس کی بناء پر اسی عقد پر ہے جیسا کہ بحر اور در وغیرہ میں اس کی تصریح کی گئی ہے۔(ت)

[1] فتاوٰی خیریہ کتاب البیع باب السلم دار المعرفۃ بیروت ۱/ ۲۲۵ Page 587 of 715

Fatawa Rizwia Volume 17

However, another difficulty arises here. This situation is not such that someone already owed a debt due to a loan etc., for which no other item was agreed to be taken in exchange, and then the debtor voluntarily promised, "I will give this item in exchange for the debt." Here, the money is given specifically so that sugarcane juice (ras) can be obtained in exchange for it, and it is taken on this basis. So, even if it is not a sale, it amounts to gaining benefit through a loan, and that is usury (Riba). In the Hadith, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: "Every loan that draws a benefit is usury." (T)

Now, the essence of this contract is: "I am lending you this much money on the condition that you give me this much sugarcane juice in exchange." Although a loan is not invalidated by a corrupt condition, the condition itself becomes void.

[Table] Left Column (Arabic): As stated in Al-Durr and its text from Al-Khaniyah: A loan is not tied to valid conditions. Therefore, corrupt conditions do not invalidate it, but a condition to return something else is void. Thus, if one borrows broken dirhams on the condition that he returns sound ones, it is void. Similarly, if one lends food on the condition that it be returned in another place, the borrower must return the equivalent of what he received, etc. (2) Right Column (Urdu): Based on what is quoted in Al-Durr and its text from Al-Khaniyah, a loan is not associated with a valid condition, so a corrupt condition does not invalidate the loan, but the condition to return another item becomes void. For instance, if someone borrowed broken dirhams on the condition that they would return sound dirhams, this condition is void. Likewise, if grain was lent on the condition that it would be returned in another city, in this case, it is obligatory for the debtor to return the same kind of thing as they borrowed, etc. (T)

However, such a loan itself is a sin and forbidden.

[Table] Left Column (Arabic): In Al-Durr from Al-Khulasah: Lending with a condition is haraam (forbidden), and the condition is void, such as lending on the condition that a bill of exchange (suftaja) be written to such and such a city. Right Column (Urdu): It is quoted from Al-Khulasah in Al-Durr that giving a loan with a condition is haraam, and the condition is void, such as someone giving a loan on the condition that the debtor (sends it) to such and such a city.

1. Kanz al-Ummal, Hadith 15516, Mu'assasatu ar-Risala Beirut, 6/238

2. Durr-e-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Qard, Matba' Mujtabai Delhi, 2/40 Page 588 of 715

लेकिन यहाँ एक और कठिनाई आती है। यह स्थिति वैसी नहीं है कि पहले से ही ऋण (कर्ज़) आदि के कारण किसी पर कोई देनदारी थी, जिसके बदले में कोई और चीज़ लेने का तय नहीं हुआ था, और फिर ऋणी (कर्ज़दार) ने अपनी मर्ज़ी से वादा किया कि "मैं इस ऋण के बदले यह चीज़ दूँगा।" यहाँ तो वह रुपया इसी उद्देश्य से दिया जाता है ताकि उसके बदले गन्ने का रस प्राप्त किया जा सके और इसी आधार पर लिया जाता है। तो भले ही यह बिक्री (बय) न हो, लेकिन ऋण के माध्यम से लाभ प्राप्त करना हुआ और वह ब्याज (सूद) है। हदीस में है, अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: "हर वह ऋण जो लाभ खींचे, वह ब्याज है।" (त)

अब इस अनुबंध (अक़द) का सार यह हुआ कि "मैं तुझे इतना रुपया ऋण दे रहा हूँ इस शर्त पर कि तू उसके बदले मुझे इतना रस दे।" हालाँकि ऋण किसी भ्रष्ट (फ़ासिद) शर्त से अवैध नहीं होता, बल्कि वह शर्त ही शून्य (बातिल) हो जाती है।

[टेबल] बायां कॉलम (अरबी पाठ): जैसा कि 'अद-दुर्र' और उसके मूल पाठ में 'अल-खनिया' से उद्धृत है: ऋण वैध शर्तों से जुड़ा नहीं होता है। इसलिए भ्रष्ट शर्तें इसे अमान्य नहीं करती हैं, लेकिन किसी अन्य वस्तु को वापस करने की शर्त शून्य हो जाती है। अत; यदि कोई इस शर्त पर टूटे हुए दिरहम उधार लेता है कि वह सही दिरहम वापस करेगा, तो यह शून्य है। इसी प्रकार, यदि कोई इस शर्त पर भोजन उधार देता है कि उसे दूसरे स्थान पर वापस किया जाएगा, तो ऋणी को वही वापस करना होगा जो उसने प्राप्त किया था, इत्यादि। (2) दायां कॉलम (उर्दू अनुवाद): इस आधार पर जो 'दुर्र' और उसके मूल पाठ में 'खनिया' से उद्धृत है कि ऋण वैध शर्त के साथ संबंधित नहीं होता, तो भ्रष्ट शर्त ऋण को शून्य नहीं करती लेकिन दूसरी वस्तु लौटाने की शर्त निरर्थक हो जाती है। उदाहरण के लिए, यदि किसी ने टूटे हुए दिरहम इस शर्त पर उधार लिए कि वह सही दिरहम वापस करेगा, तो यह शर्त शून्य है। और इसी प्रकार यदि किसी को अनाज इस शर्त पर ऋण दिया गया कि वह उसे दूसरे शहर में वापस लौटाएगा, तो इस स्थिति में ऋणी पर अनिवार्य है कि वैसी ही चीज़ वापस लौटाए जैसी उसने ऋण ली थी, इत्यादि। (त)

लेकिन ऐसा ऋण स्वयं एक पाप और वर्जित (हराम) है।

[टेबल] बायां कॉलम (अरबी पाठ): 'अद-दुर्र' में 'अल-खुलासा' से उद्धृत है: शर्त के साथ ऋण देना हराम है और शर्त शून्य है, जैसे इस शर्त पर ऋण देना कि इसे अमुक शहर में लिखा (हुंडी के माध्यम

से भेजा) जाए। दायां कॉलम (उर्दू अनुवाद): 'दुर्र में 'खुलासा' से उद्धृत है कि शर्त लगाकर ऋण देना हराम है और शर्त शून्य (लघ्व) है, जैसे कोई व्यक्ति इस शर्त पर ऋण दे कि ऋणी उसे अमुक शहर की ओर (भेजे)।

1. कंजुल उम्माल, हदीस 15516, मुअस्ससा-अर-रिसाला बेरुत, 6/238
2. दुर्रे मुख्तार, किताबुल बुयूअ, बाबुल क़र्ज़, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 2/40 पृष्ठ 588 / 715

مگر یہاں اور دقت درپیش ہے یہ صورت یوں نہیں کہ پہلے سے بسبب قرض وغیرہ کسی پر کچھ دین آتا تھا جس کے عوض کوئی شے دیگر لینا نہ قرار پایا تھا اس کے بعد مدیون نے بطورِ خود وعدہ کر لیا کہ میں بعوض دین یہ شے دوں گا یہاں تو وہ روپیہ اسی لئے دیا جاتا ہے کہ اس کے عوض رس لیں گے اور اسی بناء پر لیتا ہے تو اگرچہ بیع نہ سہی مگر قرض کے ذریعہ سے نفع حاصل کرنا ہوا اور وہ سود ہے، حدیث میں ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: کل قرض جرمنفعہ فھوربا ۔ (جو قرض نفع کھینچے وہ سود ہے۔) (ت)

اب اس عقد کا حاصل یہ ہوا کہ اتنا روپیہ تجھے قرض دیتا ہوں اس شرط پر کہ تو اس کے عوض مجھے اتنا رس دے قرض اگرچہ شرط فاسد سے فاسد نہیں ہوتا بلکہ وہ شرط ہی باطل ہو جاتی ہے۔

[ٹیبل] بایاں کالم (عربی): علی مافی الدر ومتنہ عن الخانیۃ القرض لایتعلق بالجائز من الشروط فالفاسد منھا لا یبطلہ ولکنہ یلغو شرط رد شیء اخر، فلو استقرض الدراھم المکسورۃ علی ان یؤدی صحیحاً کان باطلا وکذا لو اقرضہ طعاماً بشرط ردہ فی مکان آخر وکان علیہ مثل ما قبض ۲ الخ دایاں کالم (اردو): اس بناء پر جو در اور اس کے متن میں خانیہ سے منقول ہے کہ قرض جائز شرط کے ساتھ متعلق نہیں ہوتا تو فاسد شرط قرض کو باطل نہیں کرتی لیکن دوسری شے لوٹانے کی شرط ہو جاتی ہے چنانچہ اگر کسی نے پھوٹے درہم قرض لئے اس شرط پر کہ صحیح درہم واپس کرے گا تو یہ شرط باطل ہے اور یوں ہی اگر کسی کو اناج قرض دیا اس شرط پر کہ دوسرے شہر میں واپس لوٹائے گا اس صورت میں مقروض پر واجب ہے کہ جیسی چیز اس نے قرض لی تھی ویسی ہی واپس لوٹائے الخ۔ (ت)

مگر ایسا قرض خود ہی معصیت و حرام ہے۔

[ٹیبل] بایاں کالم (عربی): فی الدرعن الخلاصۃ القرض بالشرط حرام والشرط لغو بأن یقرض علی ان یکتب بہ الی بلد کذا دایاں کالم (اردو): در میں خلاصہ سے منقول ہے کہ شرط کر کے قرض دینا حرام ہے اور شرط لغو ہے جیسے کوئی شخص اس شرط پر قرض دے کہ مقروض اس کو فلاں شہر کی طرف (بھیجے)۔

1 کنز العمال حدیث ۱۵۵۱۶ مؤسستہ الرسالۃ بیروت ۶ / ۲۳۸ 2 درمختار کتاب البیوع باب القرض مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۴۰ Page 588 of 715

Fatawa Razawiyya Volume 17

To pay his debt [1] etc. Write it down so that his debt can be paid there. (T)

And even if they do not explicitly state a condition here, however, according to the rule of custom ('urf), the fact that it is conditional is clear and manifest to both the giver and taker of the loan.

"What is established in custom is like what is stipulated in words. In Radd al-Muhtar, at the end of [the chapter on] Hawala, from al-Fath from al-Waqi'at, they said: This is only permissible in the absence of a condition, provided there is no manifest custom regarding it. If it is known that it is done in this way, then it is not [permissible]." [2]

What is established in custom is just as if a condition were imposed in words. In Radd al-Muhtar, at the end of the Chapter on Hawala, it is quoted from Al-Fath with reference to Al-Waqi'at: The jurists have said that at the time of the absence of a condition, this loan is lawful only when there is no manifest custom in it (of writing towards another city). Accordingly, if it is known that he will do so, then it is not lawful. (T)

In short, even in this way, permissibility was not achieved. Yes, its method is that for however much sugarcane juice is to be purchased, he should sell some item of his own to that farmer for that many rupees on a near promise. For example, he says, "I sold this item to you for a hundred rupees on the condition that these rupees will be paid after one hour." He says, "I bought it." There should be no mention of extra juice etc. in these words. Then he hands over that sold item to the possession of the farmer and does not take the price (thaman) from him. When he (the farmer) becomes the possessor, now the farmer sells that same thing back to this seller for a hundred rupees, without setting any deadline for the payment of the price. This person buys it and at that time gives the rupees to the farmer and takes back the sold item. This second sale and the process of paying its rupees should take place before the promised period for which the price was deferred for the farmer in the previous sale. For example, if a promise of one hour was fixed there, then this process should take place before the hour passes, and so on. And it is very necessary that they genuinely intend buying and selling with these two sales, not just in a hypothetical way. Now his item has come back to him and the farmer has received a hundred rupees, and his hundred rupees remain as a debt upon him. When the hour or the agreed-upon period passes, he should demand his debt from the farmer. He (the farmer) says, "I will give your debt in a moment; if I don't, I make a contract that

in exchange for this debt, I will provide this much juice at this rate in such and such month." Afterwards...

1. Durr-ul-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Qard, Mujtabai Press Delhi, 2/40.
2. Radd al-Muhtar, Kitab al-Hawala, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/296.

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

ताकि वह अपना ऋण चुका सके[1] आदि। लिख दो ताकि वहां उसका ऋण चुकाया जा सके। (त)

और यहाँ भले ही वे स्पष्ट रूप से शर्त न रखें, फिर भी रीति-रिवाज ('उर्फ़) के नियम के अनुसार, इसका सशर्त होना ऋण देने और लेने वाले दोनों पर स्पष्ट और प्रकट है।

"जो रीति-रिवाज में स्थापित है वह वैसा ही है जैसे शब्दों में निर्धारित किया गया हो। रद अल-मुहतार में, हवाला के अंत में, अल-फतह से अल-वक़ियात के हवाले से कहा गया है: यह केवल शर्त की अनुपस्थिति में ही जायज़ है, बशर्ते कि इसके बारे में कोई स्पष्ट रीति-रिवाज न हो। यदि यह ज्ञात है कि यह इसी तरह किया जाता है, तो यह [जायज़] नहीं है।" [2]

जो रीति-रिवाज में स्थापित है वह वैसा ही है जैसे शब्दों में शर्त लगाई गई हो। रद अल-मुहतार में बाबुल हवाला के अंत में अल-फतह से वाकियात के हवाले से उद्धृत है: न्यायविदों (फ़ुक़हा) ने कहा है कि शर्त की अनुपस्थिति के समय यह ऋण केवल तब जायज़ है जब इसमें (दूसरे शहर की ओर लिखने का) कोई स्पष्ट रीति-रिवाज न हो। तदनुसार, यदि यह ज्ञात है कि वह ऐसा करेगा, तो यह जायज़ नहीं है। (त)

संक्षेप में, इस तरह भी अनुमति (जवाज़) प्राप्त नहीं हुई। हाँ, इसका तरीका यह है कि जितना गन्ना रस खरीदना हो, उतने रुपयों के बदले वह किसान को अपनी कोई वस्तु कम अवधि के वादे पर बेच दे। उदाहरण के लिए, वह कहे, "मैंने यह वस्तु तुम्हें सौ रुपये में बेची, इस शर्त पर कि ये रुपये एक घंटे के बाद चुकाए जाएंगे।" वह कहे, "मैंने खरीदी।" इन शब्दों में अतिरिक्त रस आदि का कोई उल्लेख नहीं होना चाहिए। फिर वह बेची गई वस्तु उस किसान के कब्ज़े में दे दे और उससे कीमत न ले। जब वह कब्ज़े में ले ले, तो अब किसान वही चीज़ इस विक्रेता को सौ रुपये में बेच दे, और उसमें कीमत चुकाने की कोई समय सीमा तय न करे। यह व्यक्ति उसे खरीद ले और उस समय किसान को रुपये देकर बेची गई वस्तु वापस ले ले। यह दूसरी बिक्री और इसके रुपये चुकाने की प्रक्रिया उस वादे की अवधि से पहले होनी चाहिए जिसके लिए किसान के लिए पिछली बिक्री में कीमत स्थगित की गई थी। उदाहरण के लिए, यदि वहां एक घंटे का वादा तय हुआ था, तो यह प्रक्रिया घंटा बीतने से पहले होनी चाहिए, और इसी प्रकार। और यह बहुत आवश्यक है कि वे इन दोनों बिक्रियों से वास्तव में खरीद-बिक्री का इरादा रखें, केवल काल्पनिक रूप से न हो। अब उसकी चीज़ उसके पास वापस आ गई और किसान को सौ रुपये मिल गए, और उसके सौ रुपये उसके ज़िम्मे ऋण के रूप में रह गए। जब

घंटा या तय की गई समय सीमा बीत जाए, तो वह किसान से अपने इस ऋण की माँग करे। वह (किसान) कहे, "मैं अभी थोड़ी देर में तुम्हारा ऋण चुका दूँगा; यदि नहीं चुका सका, तो मैं अनुबंध करता हूँ कि इस ऋण के बदले अमुक महीने में इस दर पर इतना रस दूँगा।" बाद में...

1. दुर्रे मुख्तार, किताबुल बुयू, बाबुल क़र्ज़, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 2/40।
2. रद अल-मुहतार, किताबुल हवाला, दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी बेरूत, 4/296।

لیوفی دینہ ۱ الخ لکھ دے تاکہ وہاں اس کا قرض ادا کیا جائے۔ (ت)

اور یہاں صراحۃ شرط نہ بھی کریں تاہم بحکمِ عرف اس کا مشروط ہونا قرض دینے لینے والے دونوں پر ظاہر و آشکارہ ہوتا ہے۔

والمھود عرفاً کالمشروط لفظاً في رد المحتار من آخر الحوالۃ عن الفتح عن الواقعات قالوا انما یحل ذلك عند عدم الشرط اذا لم یکن فیه عرف ظاہر فان کان یعرف ان ذلك یفعل کذلك فلا ۲۔

جو عرف میں معہود ہو وہ ایسے ہی ہے جیسے لفظاً شرط لگائی گئی ہو رد المحتار میں باب الحوالہ کے آخر میں فتح سے بحوالہ واقعات منقول ہے فقہاء نے کہا ہے کہ عدمِ شرط کے وقت یہ قرض اس وقت حلال ہے جب اس میں (دوسرے شہر کی طرف لکھنے کا) عرف ظاہر نہ ہو چنانچہ اگر معروف ہے کہ وہ ایسا کرے گا تو حلال نہیں۔ (ت)

غرض یوں بھی جواز حاصل نہ ہوا، ہاں اس کی صورت یہ ہے کہ جس قدر کارس خریدنا ہوا اتنے روپوں کے عوض اپنی کوئی چیز اس کاشتکار کے ہاتھ ایک قریب وعدہ پر بیچے مثلاً کہے میں نے یہ شیئ تیرے ہاتھ سو روپے کو بیچی اس شرط پر کہ یہ روپے ایک گھنٹہ کے بعد ادا کئے جائیں گے وہ کہے میں نے خریدی اس سے زائد کوئی رس وغیرہ کا ان لفظوں میں نہ ہو پھر وہ شیئ مبیع اس کاشتکار کے قبضہ میں دے دے اور اس سے زرِ ثمن نہ لے جب وہ قابض ہو جائے اسی چیز کو اب کاشتکار اس بائع کے ہاتھ سو روپے پر بیع کر دے، اور اس میں کوئی میعاد ادائے ثمن مقرر نہ کرے یہ خریدے اور اس وقت کاشتکار کو روپے دے کر شیئ مبیع لے لے، یہ بیع ثانی اور اس کے روپے ادا کرنے کی کاروائی اس مدتِ وعدہ سے پہلے ہولے جس مدت تک

کاشتکار کے لئے بیع سابق میں ثمن مؤجل کیا ہے مثلاً وہاں ایک گھنٹہ کا وعدہ ٹھہرا تھا تو یہ کاروائی گھنٹہ گزرنے سے پہلے ہولے وعلی ہذا القیاس، اور بہت ضرور ہے کہ ان دونوں بیعوں سے حقیقۃ خرید و فروخت کا قصد کریں، فقط فرضی طور پر نہ ہوں اب اس کی چیز تو اس کے پاس واپس آئی اور کاشتکار کو سو روپے مل گئے اور اس کے سو روپے اس کے ذمہ پر دین رہے، جب گھنٹہ یا میعاد جو قرار پائی تھی گزر جائے یہ اپنے اس دین کا کاشتکار سے مطالبہ کرے وہ کہے گھڑی بھر میں تیرا دین دیتا ہوں اگر نہ دوں گا تو معاہدہ کرتا ہوں کہ اس دین کے عوض فلاں مہینے میں اس نرخ سے اتنارس ادا کروں گا بعدہ اسی

1 در مختار کتاب البیوع باب القرض مطبع مجتبائی دہلی ۲/۴۰ 2 رد المحتار کتاب الحوالہ داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/۲۹۶

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

The agreement's content should be written as is prevalent in Khandsari, the transcription of which has passed above. In this manner, neither did a 'Bay' al-Salam' (forward sale) occur—in which it is conditional for that item to be in the market—nor did a debt occur from which conditional benefit is prohibited. Rather, through a valid sale, a debt became obligatory upon its debtor. Subsequently, regarding this debt, this promise and agreement were established. After the previous sale, the agreement that took place will not be considered a condition of that contract, such that the sale becomes void due to a void condition and sin becomes mandatory.

[Table Content]

(Arabic Text): Because it is not a condition at its root, but rather a renewed promise. It is stated in 'Radd al-Muhtar' citing 'al-Bahr' that if it is mentioned as a promise, the sale will not be void. Its form, as in 'al-Wajiyyah', is as follows: 'Buy [the grapes] until I build the walls.'[1] I say: what is in 'al-Hindiyyah' from 'al-Zahiriyyah' is with the imperative form,[2] meaning 'Buy'. So if this is regarding a promise concurrent [with the contract], then what about one that is separate? This necessitates validity by consensus. Even if it were granted [to be a condition], a subsequent condition is not attached to the original contract according to the two companions. In one narration from him [Imam Abu Hanifa], it is the same, while in another narration from him, it is attached. Both have been authenticated. When authentications differ, you may act upon whichever you wish, especially that which the two companions agree upon with Imam al-A'zam (may Allah be pleased with them all). Radd al-Muhtar.

(Urdu Translation/Explanation): Because this is not a condition at its root, but rather a new promise. Research: In 'Radd al-Muhtar', citing 'al-Bahr', it is stated that if he mentioned it as a promise, the sale would not be void. Its form, as in 'al-Wajiyyah', is that the seller said: 'Buy [the clusters of grapes], I will build the [garden] walls.' I say that in 'al-Hindiyyah', citing 'al-Zahiriyyah', it is with the imperative mood, i.e., 'Ashtar' (Buy). This is about the promise that is concurrent with the contract. If it is separate from it, how can the sale be void? So this establishes the validity of the sale by consensus. And if it is accepted [that it is a condition], then a subsequent condition, according to the two companions (Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad), is not attached to the original contract. One narration from Imam-e-Azam (may Allah be pleased with him) is also the same, and another narration from him is that it is attached. Research shows that both narrations have been authenticated. When

authentications differ, you have the choice to act upon whichever you wish, especially that authentication upon which the two companions also agree with Imam-e-Azam, may Allah be pleased with them all. Radd al-Muhtar.

Footnotes: 1 Radd al-Muhtar, Chapter of Void Sales, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/120. 2 Fatawa Hindiyyah, Book of Sales, Chapter Ten, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/136.

फतावा रज़विया (खंड 17)

समझौते की विषय-वस्तु उसी प्रकार लिखी जाए जैसा कि खंडसारी में प्रचलित है, जिसका विवरण ऊपर बीत चुका है। इस तरह से न तो 'बय-ए-सल्लम' (अग्रिम बिक्री) हुआ - जिसमें उस वस्तु का बाज़ार में होना शर्त होता है - और न ही ऋण हुआ जिससे शर्त के साथ लाभ प्राप्त करना हराम ठहरता। बल्कि एक सही बिक्री के माध्यम से एक ऋण उसके देनदार पर अनिवार्य हो गया। इसके बाद, इस ऋण के संबंध में यह वादा और अनुबंध तय हुआ। पिछली बिक्री के बाद जो यह समझौता हुआ, वह उस अनुबंध की शर्त नहीं माना जाएगा, जिससे शर्त के खराब होने के कारण बिक्री खराब हो जाए और फिर गुनाह लाज़िम आए।

[तालिका सामग्री]

(अरबी पाठ): क्योंकि यह मूल रूप से शर्त ही नहीं है, बल्कि एक नया वादा है। 'रद्दुल मुहतार' में 'अल-बहर' के हवाले से कहा गया है कि यदि इसे वादे के तौर पर ज़िक्र किया जाए तो बिक्री खराब नहीं होगी। इसकी सूरत जैसा कि 'वलवालजीया' में है: 'खरीद लो [अंगूर] जब तक मैं दीवारें न बना लूँ।'[1] मैं कहता हूँ: जो 'हिन्दिया' में 'ज़हीरिया' से उद्धृत है, वह आदेशात्मक रूप में है,[2] यानी 'खरीदो'। तो यदि यह अनुबंध के साथ जुड़े वादे के बारे में है, तो जो अलग है उसके बारे में क्या? यह सर्वसम्मति से वैधता को अनिवार्य करता है। और यदि इसे स्वीकार कर लिया जाए, तो दो साथियों के अनुसार बाद में जोड़ी गई शर्त मूल अनुबंध के साथ नहीं जुड़ती। उनसे [इमाम अबू हनीफा] एक वर्णन इसी तरह है, जबकि उनसे दूसरे वर्णन में है कि वह जुड़ती है। दोनों को सही माना गया है। जब प्रामाणिकताएँ भिन्न हों, तो आपको अधिकार है कि उनमें से जिस पर चाहें अमल करें, विशेष रूप से वह जिस पर दो साथी भी इमाम-ए-आज़म के साथ सहमत हों। रद्दुल मुहतार।

(उर्दू अनुवाद/व्याख्या): क्योंकि यह मूल रूप से शर्त ही नहीं है, बल्कि एक नया वादा है। शोध: 'रद्दुल मुहतार' में 'अल-बहर' के हवाले से कहा गया है कि यदि उसने इसे वादे के तौर पर ज़िक्र किया तो बिक्री खराब नहीं होगी। इसकी सूरत जैसा कि 'वलवालजीया' में है, वह यह है कि विक्रेता ने कहा: 'तुम (अंगूर के गुच्छे) खरीद लो, मैं (बाग की) दीवारें बना दूंगा।' मैं कहता हूँ कि 'हिन्दिया' में 'ज़हीरिया' के हवाले से यह आदेशात्मक रूप में है, यानी 'अश्तर' (तुम खरीदो)। यह उस वादे के बारे में है जो अनुबंध के साथ जुड़ा हो। यदि यह उससे अलग हो, तो बिक्री कैसे खराब हो सकती है? तो यह सर्वसम्मति से बिक्री की वैधता को सिद्ध करता है। और यदि इसे स्वीकार कर लिया जाए [कि यह

शर्त है], तो दो साथियों (इमाम अबू यूसुफ और इमाम मुहम्मद) के अनुसार बाद में जोड़ी गई शर्त मूल अनुबंध के साथ नहीं जुड़ती। इमाम-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) से एक वर्णन इसी तरह है, और उनसे दूसरे वर्णन में है कि वह जुड़ती है। शोध से पता चलता है कि दोनों वर्णनों को प्रामाणिक माना गया है। जब प्रामाणिकताएँ भिन्न हों, तो आपको अधिकार है कि उनमें से जिस पर चाहें अमल करें, विशेष रूप से वह प्रामाणिकता जिस पर दो साथी भी इमाम-ए-आज़म के साथ सहमत हों, अल्लाह उन सब से प्रसन्न हो। रद्दुल मुहतार।

पादलेख: 1 रद्दुल मुहतार, बाब अल-बय अल-फ़ासिद, दार इह्या अल-तुरात अल-अरबी, बेरूत, 4/120। 2 फतावा हिन्दिया, किताब अल-बुयूं, अध्याय दस, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/136।

पृष्ठ 590/715

مضمون کا اقرار نامہ لکھا جائے جیسا کہ کھنڈساری میں رائج ہے جس کی نقل عبارت اوپر گزری اس طور پر نہ تو بیع سلم ہوئی جس میں اس شے کا بازار میں ہو نا مشروط ہوتا نہ قرض ہوا جس سے انتفاع مشروط حرام ٹھہر تابکہ بذریعہ بیع صحیح ایک دین اس کا شکار پر لازم ہوا بعدہ، اس دین کی نسبت یہ وعدہ و معاہدہ قرار پایا بیع سابق کے بعد جو یہ قرار داد ہوئی اس عقد کی شرط نہ ٹھہرے گی کہ بوجہ شرط فاسد بیع فاسد ہو کر پھر گناہ لازم آئے۔

[جدول]

(عربی عبارت): فانه لیس بشرط رأسابل وعد مستأنف و قد قال في رد المحتار ذکر في البحر انه لو اخرجه مخرج الوعد لم یفسد وصورته کما في الولو الجیة قال اشتر حتی ابنی الحوائط 1 اه. قلت والذي في الهندیة عن الظهیریة اشتر بصیغة 2 الامر فاذا کان هذا في الوعد لمقارن فکیف في المفارق فهذا یوجب الصحة اجماعاً و لوسلم فالشرط المتأخر لا یلتحق بأصل العقد عندهما، وفي روایة عنه رضی الله تعالی عنهم وفي اخری له یلتحق وقد صحتا فعند اختلاف التصحیح لك العمل بأیتهما شئت لاسیما ما وافق علیه الصاحبان رضی الله تعالی عن الجمیع قال في رد المحتار قوله ولا بیع بشرط اشار بقوله

(اردو عبارت): کیونکہ یہ سرے سے شرط ہی نہیں بلکہ نیا وعدہ ہے تحقیق، رد المحتار میں بحوالہ بحر فرمایا کہ اگر اس نے بطور وعدہ اس کو ذکر کیا تو بیع فاسد نہ ہوگی اور اس کی صورت جیسا کہ ولوالجیہ میں ہے یوں ہے کہ بائع نے کہا تو (انگور کے خوشے) خریدلے میں (باغ کی) دیواریں بنا دوں گا اھ میں کہتا ہوں کہ ہندیہ میں بحوالہ ظہیریہ امر کے صیغہ کے ساتھ ہے یعنی "اشتر" (تو خرید) یہ اس وعدے کے بارے میں ہے جو عقد سے مقترن ہو اگر اس سے جدا ہو تو

کیسے بیع فاسد ہوسکتی ہے تو یہ صحت بیع کو بالا جماع ثابت کرتی ہے اور اگر تسلیم کرلیا جائے کہ یہ شرط ہے) تو شرط مؤخر صاحبین کے نزدیک اصل عقد کے ساتھ لاحق نہیں ہوتی، اور امام اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے منقول ایک روایت یوں ہی ہے اور ان سے منقول دوسری روایت میں ہے کہ لاحق ہوتی ہے، تحقیق دونوں روایتوں کی تصحیح کی گئی ہے، اور جب تصحیحیں مختلف ہو جائیں تو تجھے اختیار ہے ان میں سے جس پر چاہے عمل کرے خصوصاً وہ تصحیح جس پر صاحبین بھی امام اعظم سے متفق ہوں رضی اللہ تعالیٰ عنہم اجمعین، ردالمحتار

حواشی: 1 رد المحتار باب البیع الفاسد دار احیاء التراث العربي بیروت ۴/ ۱۲۰ 2 فتاویٰ ہندیہ کتاب البیوع الباب العاشر نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۱۳۶

Fatawa Ridawiyya / Volume 17

(Referring to Radd al-Muhtar) It was stated that the author, in his statement "He shall not sell with a condition," pointed through the word 'condition' to the fact that it is necessary for the condition to be concurrent with the contract. This is because if a corrupt (void) condition is attached after the contract, one view is that it becomes part of the contract according to Imam al-A'zam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him), and another view is that it does not, which is the more correct view as stated in Jami' al-Fusulayn, Section 39. However, it is mentioned in al-Asl that it attaches according to Imam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him) even if the attachment occurs after the parties separate from the meeting. The complete discussion is in al-Bahr. I say: This is the second narration from Imam al-A'zam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him), while the validation of the opposing narration—which is the view of the two companions (Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad)—is well-known. This is supported by what the author previously mentioned following al-Hidayah and others, that if someone sells without mentioning the specified periods in the contract and then defers the payment to those terms, the sale is valid because it falls under the ruling of a corrupt condition, as we indicated there. (T)

By this method, another great benefit is expected. The documents written as mentioned are merely promises, wherein the person has no power of compulsion. If he does not provide the produce (ras), the other person can only demand his money back; a claim for the produce does not hold, for there is no judicial compulsion to fulfill a promise, as all jurists have explicitly stated. (As all jurists have explicitly stated on this. -T) And this form that we have recorded, the scholars state that a promise in such a form becomes a binding promise (wa'da lazimah), such that compulsion for its fulfillment is applicable. It is stated in Jami' al-Fusulayn:

1 Radd al-Muhtar, Chapter on Invalid Sales, Topic: Selling with a Corrupt Condition, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/120. Page 591 of 715

फतावा रज़विया / जिल्द सत्रह (17)

(रद अल-मुह्तार का संदर्भ देते हुए) इसमें कहा गया कि लेखक ने अपने कथन "वह शर्त के साथ बिक्री न करे" में 'बशर्ते' शब्द के माध्यम से इस तथ्य की ओर इशारा किया है कि शर्त का अनुबंध (सौदा) के साथ होना अनिवार्य है। इसका कारण यह है कि यदि अनुबंध के बाद कोई दोषपूर्ण (फ़ासिद) शर्त जोड़ी जाती है, तो एक मत यह है कि इमाम-ए-आज़म अबू हनीफ़ा (रज़ियल्लाहु अन्हु) के अनुसार वह अनुबंध का हिस्सा बन जाएगी, और दूसरा मत यह है कि नहीं बनेगी, और यही अधिक सही है जैसा कि जामे अल-फ़ुसूलैन के अध्याय 39 में वर्णित है। हालाँकि, अल-अस्ल में यह उल्लेख है कि इमाम अबू हनीफ़ा (रज़ियल्लाहु अन्हु) के अनुसार यह अनुबंध के साथ जुड़ जाती है, भले ही यह जुड़ाव सभा से अलग होने के बाद ही क्यों न हो। इसकी पूरी चर्चा अल-बह्र में है। मैं कहता हूँ: यह इमाम-ए-आज़म अबू हनीफ़ा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से प्राप्त दूसरी रिवायत है, जबकि इसके विपरीत रिवायत—जो साहिबैन (इमाम अबू यूसुफ़ और इमाम मुहम्मद) का मत है—की प्रामाणिकता ज्ञात है। इसका समर्थन उस बात से होता है जिसे लेखक ने हिदाया आदि का अनुसरण करते हुए पहले उल्लेख किया है, कि यदि किसी ने अनुबंध में निर्दिष्ट अवधियों का उल्लेख किए बिना बिक्री की और फिर भुगतान को उन शर्तों तक टाल दिया, तो बिक्री मान्य है क्योंकि यह दोषपूर्ण शर्त के नियम के अंतर्गत आता है, जैसा कि हमने वहां संकेत दिया था। (त)

इस विधि से एक और महान लाभ की आशा है। बताए गए तरीके से तैयार किए गए दस्तावेज़ केवल वादे मात्र होते हैं, जिनमें व्यक्ति के पास दबाव डालने का कोई अधिकार नहीं होता। यदि वह उपज (रस) नहीं देता है, तो दूसरा व्यक्ति केवल अपना पैसा वापस मांग सकता है; उपज की मांग मान्य नहीं है, क्योंकि वादे को पूरा करने के लिए न्यायिक दबाव नहीं डाला जा सकता, जैसा कि सभी न्यायविदों (फ़ुक़हा) ने स्पष्ट रूप से कहा है। (जैसा कि इस पर सभी न्यायविदों ने स्पष्ट रूप से कहा है। -त) और यह रूप जो हमने लिखा है, विद्वानों का कहना है कि इस रूप में किया गया वादा एक अनिवार्य वादा (वादा लाज़िमा) बन जाता है, जिसे पूरा करने के लिए दबाव डाला जा सकता है। जामे अल-फ़ुसूलैन में लिखा है:

1 रद अल-मुह्तार, दोषपूर्ण बिक्री का अध्याय, विषय: दोषपूर्ण शर्त के साथ बिक्री, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 4/120। पृष्ठ 591 का 715

بشرط الی انه لابد من کونه مقارنا للعقد لان الشرط الفاسد لو التحق بعد العقد قیل یلتحق عند ابي حنیفة وقیل لا وھو الاصح کما في جامع الفصولین فی فصل ۳۹ لکن فی الاصل انه یلتحق عند ابی حنیفة وان کان الالحاق بعد الافتراق عن المجلس وتمامه فی البحر قلت ھذه الروایة الاخری عن ابی حنیفة وقد علمت تصحیح مقابلھا وھی ولھما ویؤیده ما قدمه المصنف تبعا للھدایة وغیرھا من انه لوباع مطلقا عن ھذه الآجال ثم اجل الثمن الیھا صح فإنه فی حکم الشرط الفاسد کما اشرنا الیه ھناك اھ

میں کہا کہ ماتن نے اپنے قول "ولایبیع بالشرط" میں لفظ بشرط سے اس بات کی طرف اشارہ کیا ہے کہ شرط کا عقد کے مقارن ہونا ضروری ہے کیونکہ شرط فاسد اگر عقد کے بعد لگائی گئی تو ایک قول یہ ہے کہ امام اعظم ابو حنیفہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے نزدیک عقد کو لاحق ہوگی اور ایک قول یہ ہے کہ لاحق نہیں ہوگی اور یہی زیادہ صحیح ہے جیسا کہ جامع الفصولین فصل ۳۹ میں ہے لیکن اصل میں ہے کہ امام ابو حنیفہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے نزدیک لاحق ہوگی اگرچہ اس کا الحاق مجلس سے عاقدین کے جدا ہونے کے بعد ہو اور اس کی پوری بحث بحر میں ہے، میں کہتا ہوں یہی امام اعظم ابو حنیفہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ کی دوسری روایت ہے حالانکہ اس کے مقابل روایت کی تصحیح تو معلوم ہو چکا ہے اور وہ صاحبین کا قول ہے اور اس کی تائید کرتا ہے وہ جو ہدایہ وغیرہ کی اتباع میں مصنف پہلے ذکر کر چکے ہیں وہ یہ کہ اگر کسی نے مذکورہ مدتوں کا عقد میں ذکر کئے بغیر بیع کی پھر ثمن کو ان میعادوں کے ساتھ مؤجل کر دیا تو بیع صحیح ہے کیونکہ یہ شرط فاسد کے حکم میں ہے جیسا کہ ہم نے وہاں اس کی طرف اشارہ کر دیا ہے۔ اھ (ت)

اس طریقہ سے ایک اور نفع عظیم کی امید ہے وہ دستاویز جو بطور مذکور لکھی جاتی ہیں نرا وعدہ ہی وعدہ ہوتی ہیں کہ اس شخص کو اس پر جبر کا اصلاً اختیار نہیں ہوتا اگر وہ رس نہ دے تو یہ صرف اپنے روپے کا اس سے تقاضا کر سکتا ہے رس کا مطالبہ نہیں پہنچتا کہ وعدہ کی وفا پر قضاء جبر نہیں کما نصوا علیہ قاطبۃ (جیسا کہ اس پر تمام فقہاء نے نص کی ہے۔ ت) اور یہ صورت جو ہم نے لکھی علماء فرماتے ہیں ایسی شکل کا وعدہ وعدہ لازمہ ہو جاتا ہے کہ اس کے ایفاء پر جبر پہنچتا ہے، جامع الفصولین میں ہے:

۱ رد المحتار باب البیع الفاسد مطلب في البیع بشرط فاسد دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/۱۲۰

Fatawa Razawiyya Volume 17

(Arabic Text)

If a sale is mentioned without any conditions, and then the condition is mentioned in the form of a promise, the sale is valid and the fulfillment of the promise is binding, because promises can sometimes be binding. Therefore, it is made binding for the needs of the people. - 1

(Urdu Translation)

If the seller and buyer mentioned the sale without conditions and then mentioned the condition as a promise, the sale is valid and it is necessary to fulfill the promise because fulfilling a promise is sometimes essential. Therefore, for the need of the people, its fulfillment will be declared necessary. (T)

It is in Fatawa Khayriyya:

(Arabic Text)

Our scholars have clearly stated that if the two (buyer and seller) mentioned the sale without conditions and then mentioned the condition as a promise, the sale is permissible and fulfilling the promise is binding. - 2

(Urdu Translation)

Our scholars have clarified that if the seller and buyer mentioned the sale without conditions, then later mentioned the condition as a promise, the sale is permissible and fulfilling the promise is mandatory. (T)

It is in Durr-e-Mukhtar:

(Arabic Text)

If it [the condition] is after it [the contract] in the form of a deadline/ promise, it is permissible and fulfilling it is binding, because promises can be binding due to the needs of people, and this is the correct view as in al-Kafi and al-Khaniyah. Khusraw confirmed it here, as did the author in the chapter on Coercion (Ikrah) and Ibn al-Malik in the chapter on Rescission (Iqalah), etc. - 3

(Urdu Translation)

If the condition was mentioned after the contract as a promise, the sale is permissible and fulfilling the promise is necessary because the fulfillment of promises is sometimes necessary in view of people's needs, and this is correct as mentioned in Khaniyah and Kafi. Khusraw here, the author in the chapter on Coercion, and Ibn al-Malik in the chapter on Rescission have maintained this. (T)

It is in Bazzaziyya:

(Arabic Text)	(Urdu Translation)
When he says conditionally, by saying: 'If so-and-so does not pay, then I will pay it to you' and the like, it will be a suretyship because it is known that...	If someone is made a guarantor conditionally, in such a way that he said: 'If so-and-so did not pay the debt, I will pay you', or any other similar situation, then this suretyship (Kafalat) is correct.

1. Radd al-Muhtar with reference to Jami' al-Fusulayn, Chapter on Invalid Sales, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/120.
2. Fatawa Khayriyya, Book of Sales, Chapter on Invalid Sales, Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/238.
3. Durr-e-Mukhtar, Book of Sales, Chapter on Money Exchange, Mujtabai Press, Delhi, 2/57, 58.

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

(अरबी पाठ)

यदि बिक्री बिना शर्त की गई और फिर वादे के रूप में शर्त का उल्लेख किया गया, तो बिक्री वैध है और वादे को पूरा करना अनिवार्य है, क्योंकि वादे कभी-कभी अनिवार्य हो सकते हैं। इसलिए, लोगों की आवश्यकता के लिए इसे अनिवार्य बनाया गया है। - 1

(उर्दू अनुवाद)

यदि विक्रेता और खरीदार ने बिना शर्त के बिक्री का उल्लेख किया, फिर वादे के रूप में शर्त का उल्लेख किया, तो बिक्री सही है और वादे को पूरा करना आवश्यक है क्योंकि वादे को पूरा करना कभी-कभी अनिवार्य होता है। इसलिए लोगों की आवश्यकता के लिए इसे पूरा करना अनिवार्य घोषित किया जाएगा। (T)

फ़तावा खैरिया में है:

(अरबी पाठ)

हमारे विद्वानों ने स्पष्ट रूप से कहा है कि यदि उन दोनों (विक्रेता और खरीदार) ने बिना शर्त बिक्री का उल्लेख किया और फिर वादे के रूप में शर्त का उल्लेख किया, तो बिक्री जायज़ है और वादे को पूरा करना अनिवार्य है। - 2

(उर्दू अनुवाद)

हमारे विद्वानों ने स्पष्ट किया है कि यदि विक्रेता और खरीदार ने बिना शर्त बिक्री का उल्लेख किया, फिर बाद में शर्त का उल्लेख वादे के रूप में किया, तो बिक्री जायज़ है और वादे को पूरा करना अनिवार्य है। (T)

दुर्रे मुख़्तार में है:

(अरबी पाठ)

यदि यह [शर्त] अनुबंध के बाद वादे के रूप में है, तो यह जायज़ है और इसे पूरा करना अनिवार्य है, क्योंकि लोगों की आवश्यकताओं के कारण वादे अनिवार्य हो सकते हैं, और अल-काफ़ी और अल-खनिया के अनुसार यही सही विचार है। खुसरो ने यहाँ इसकी पुष्टि की है, जैसा कि लेखक ने इकरा (दबाव) के अध्याय में और इब्न अल-मलिक ने इकाला (रद्दीकरण) के अध्याय में किया है। - 3

(उर्दू अनुवाद)

यदि अनुबंध के बाद शर्त का उल्लेख वादे के रूप में किया गया, तो बिक्री जायज़ है और वादे को पूरा करना आवश्यक है क्योंकि लोगों की आवश्यकता को देखते हुए वादों को पूरा करना कभी अनिवार्य होता है, और यही सही है जैसा कि खानिया और काफ़ी में है। खुसरो ने यहाँ, लेखक ने 'बाब अल-इक़राह' में और इब्न अल-

(अरबी पाठ)	(उर्दू अनुवाद)
	मलिक ने 'बाब अल-इकाला' में इसे बरकरार रखा है। (T)

बज़ाज़िया में है:

(अरबी पाठ)	(उर्दू अनुवाद)
जब वह शर्तिया तौर पर कहता है, यह कहकर: 'यदि अमुक व्यक्ति भुगतान नहीं करता है, तो मैं आपको इसका भुगतान करूँगा' और इसी तरह, तो यह एक ज़मानत (कफ़ालत) होगी क्योंकि यह ज्ञात है कि...	यदि किसी को शर्तिया तौर पर ज़ामिन (गारंटर) बनाया गया, इस तरह कि कहा: 'अगर फलां ने कर्ज का भुगतान नहीं किया, तो मैं तुम्हें भुगतान करूँगा', या इसी तरह की कोई और स्थिति हो, तो यह ज़मानत (कफ़ालत) सही है।

1. रद अल-मुह्तार, जामी अल-फूसूलैन के संदर्भ में, अध्याय: अमान्य बिक्री, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 4/120.
2. फ़तावा खैरिया, पुस्तक: बिक्री, अध्याय: अमान्य बिक्री, दार अल-मआरिफ़ा, बेरूत, 1/238.
3. दुर्रे मुख़्तार, पुस्तक: बिक्री, अध्याय: सर्राफा (एक्सचेंज), मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 2/57, 58.

पृष्ठ 592/715

| لو ذکر البیع بلا شرط ثم ذکر الشرط علی وجه العدة جاز البیع ولزم الوفاء اذ المواعید قد تکون لازمة فیجعل لازما لحاجة الناس - ۱ | اگر بائع اور مشتری نے بغیر شرط کے بیع کا ذکر کیا پھر بطور وعدہ شرط کا ذکر کیا تو بیع صحیح ہے اور وعدہ کو پورا کرنا لازم ہے کیونکہ وعدہ کو پورا کرنا کبھی ضروری ہوتا ہے لہذا لوگوں کی حاجت کے لئے اس کے پورا کرنے کو ضروری قرار دیا جائے گا۔ (ت) |

فتاوٰی خیریہ میں ہے:

| قد صرح علماؤنا بانهما لو ذکرا البیع بلا شرط ثم ذکر الشرط علی وجه العدة جاز البیع ولزم الوفاء بالوعد - ۲ | ہمارے علماء نے اس بات کی تصریح فرمائی کہ اگر بائع اور مشتری نے بیع کو بلا شرط ذکر کیا پھر بعد میں شرط کا ذکر وعدہ کے طور پر کیا تو بیع جائز ہے اور وعدہ کو پورا کرنا لازم ہے۔ (ت) |

درمختار میں ہے:

| لو بعده علی وجه المیعاد جاز ولزم الوفاء به لان المواعید قد تکون لازمة لحاجة الناس وهو الصحیح کما فی الکافی والخانیة واقره خسرو هنا والمصنف فی باب الاکراه وابن المالك فی باب الاقالة الخ - ۳ | اگر عقد کے بعد شرط کا ذکر بطور وعدہ کیا تو بیع جائز ہے اور وعدہ کو پورا کرنا لازم ہے کیونکہ وعدوں کو پورا کرنا لوگوں کی حاجت کے پیش نظر کبھی لازم ہوتا ہے اور یہی صحیح ہے جیسا کہ خانیہ اور کافی میں ہے خسرو نے یہاں مصنف نے باب الاکراہ میں اور بن الملک نے باب الاقالہ میں اس کو برقرار رکھا الخ (ت) |

بزاز یہ میں ہے:

| اذا قال معلقاً بان قال ان لم یؤد فلان فانا ادفعه الیك ونحوه یکون کفالة لما علم ان | اگر کوئی بطور تعلیق ضامن بنایا بائیں صورت کہ کہا اگر فلاں نے قرض کی ادائیگی نہ کی تو میں تجھے ادا کروں گا یا اس جیسی کوئی اور صورت کی تو یہ کفالت درست ہے |

۱ رد المحتار بحوالہ جامع الفصولین باب البیع الفاسد دار احیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۱۲۰ ۲ فتاویٰ خیریہ کتاب البیوع باب البیع الفاسد دار المعرفة بیروت ۱ / ۲۳۸ ۳ درمختار کتاب البیوع باب الصرف مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۵۷، ۵۸

Fatawa Rizvia, Volume 17

[Boxed Section] Arabic Text: Promises that take the form of a condition (ta'liq) become mandatory. For saying 'I will perform Hajj' does not obligate anything, but if one says 'If I enter the house, then I will perform Hajj,' i.e., makes it conditional, then in this case (upon entering the house), Hajj becomes mandatory upon him.[1] Urdu Text: Because you have known that promises become mandatory in the form of a condition. Thus, by someone saying 'I will perform Hajj', nothing becomes mandatory upon him, and if he said 'If I enter the house, I will perform Hajj', meaning conditional, then in this case (from entering the house), Hajj will be mandatory upon him (T).

Muslims should not be lazy in following this exquisite method; there is no expense, no difficulty, and no time wasted. In just two or three verbal words, the complete goal is achieved and sin is removed. They already have documents written; the only addition is that before that, sell something to him on the promise of an hour and hand over possession, then buy it back immediately and pay the money. After the hour passes, take that promise regarding the debt. In this turnaround, neither time nor effort will be spent, nor will any money be expended, and by avoiding disobedience to Allah, lawful wealth will be gained. May Allah Almighty grant the ability, Amen!

Note: These conditions we mentioned—that in the first sale the price should be deferred (mu'ajjal) and in the second immediate (mu'ajjal), and the payment of the price in the second sale should occur before the expiry of the period (e.g., an hour) of the first price, and the second sale should take place after the farmer has taken possession of the sold item—must be kept in mind. Do not consider them excessive or useless. The intention here is for the farmer to receive the money and for his debt to remain outstanding so that the promise can relate to it. If both prices were immediate, then as a hundred rupees became due upon him in the second sale and a hundred rupees were due upon him (from the first), both would offset each other and be cancelled. Similarly, if this second sale and the payment of its price did not take place before the fixed period, then upon the expiry of the period, that debt would become immediate, and both parties would be discharged of their liability. Now that the farmer's debt upon him has become immediate and his debt upon [the other] is still deferred because its period has not yet arrived, and he gave his money and he took it, then his debt will remain established upon him.

[Boxed Section] Arabic Text: In Rad al-Muhtar from al-Hilli from al-Bahr: 'All debts, i.e., other than maintenance (nafaqah), offsetting (taqass) occurs in them automatically at first, provided...' Urdu Text: It is quoted in Rad al-Muhtar from Hilli with reference to Bahr that except for maintenance, all debts can be offset, whether the parties do so themselves or not, provided that on both sides...

[1] Fatawa Bazzaziyya on the margin of Fatawa Hindiyya, Book of Suretyship, Noorani Kutub Khana Peshawar, 6/3. Page 593 of 715

फ़तावा रिज़विया, जिल्द 17

[बॉक्स अनुभाग] अरबी पाठ: वादें जो शर्त (ता'लीक़) का रूप लेते हैं, वे अनिवार्य हो जाते हैं। क्योंकि यह कहना कि 'मैं हज करूँगा' कुछ भी अनिवार्य नहीं करता, लेकिन अगर कोई कहे कि 'अगर मैं घर में प्रवेश करूँगा, तो मैं हज करूँगा,' यानी इसे सशर्त बनाता है, तो इस मामले में (घर में प्रवेश करने पर), उस पर हज अनिवार्य हो जाएगा।[1] उर्दू पाठ: चूंकि आप जान चुके हैं कि वादे शर्त की सूरत में लाज़िम (अनिवार्य) हो जाते हैं। चुनाँचे किसी के यूँ कहने से कि 'मैं हज करूँगा' उस पर कुछ लाज़िम नहीं होता, और अगर यूँ कहा कि 'अगर मैं घर में दाखिल हुआ तो हज करूँगा' यानी ता'लीक़ (शर्त) की, तो इस सूरत में (घर में दाखिल होने से) उस पर हज लाज़िम होगा (त)।

मुसलमान इस उत्तम तरीके को अपनाने में आलस्य न करें; इसमें न कोई खर्च है, न कोई कठिनाई और न ही समय बर्बाद होता है। बस दो-तीन ज़ुबानी शब्दों में पूरा उद्देश्य प्राप्त हो जाता है और गुनाह मिट जाता है। वे दस्तावेज़ तो लिखवाते ही हैं, बस इतना अतिरिक्त है कि उससे पहले एक चीज़ एक घंटे के वादे पर उसके हाथ बेच दें और कब्ज़ा सौंप दें, फिर तुरंत खरीद लें और रुपये दे दें, और घंटा बीतने के बाद ऋण के संबंध में उसका वह वादा ले लें। इस उलट-फेर में न समय और मेहनत लगेगी, न कोई पैसा खर्च होगा और अल्लाह की नाफरमानी से बचकर हलाल माल हाथ आएगा। अल्लाह अज़्वजल तौफीक अता फरमाए, आमीन!

चेतावनी: ये शर्तें जो हमने ज़िक्र कीं—कि पहली बिक्री में कीमत स्थगित (मुअज्जल) हो और दूसरी में नकद (मुअज्जाल), और दूसरी बिक्री की कीमत का भुगतान पहली कीमत की अवधि (जैसे एक घंटा) बीतने से पहले हो जाए, और दूसरी बिक्री किसान द्वारा बेची गई वस्तु पर कब्ज़ा लेने के बाद हो—इन्हें ज़रूर ध्यान में रखें। इन्हें फालतू या बेकार न समझें। यहाँ उद्देश्य यह है कि किसान तक पैसा पहुँच जाए और उसका ऋण उस पर बना रहे ताकि उसके संबंध में वह वादा हो सके। अगर दोनों कीमतें नकद होतीं, तो जैसे दूसरी बिक्री में उस पर सौ रुपये लाज़िम हुए और उसके सौ रुपये उस पर लाज़िम थे, दोनों बराबर होकर कट जाते। इसी तरह, अगर यह दूसरी बिक्री और उसकी कीमत के भुगतान की कार्यवाही निर्धारित अवधि से पहले न होती, तो अवधि बीतने पर वह ऋण नकद हो जाता और दोनों ऋणमुक्त हो जाते। अब जबकि किसान का ऋण उस पर नकद हुआ और उसका ऋण उस पर अभी तक स्थगित है क्योंकि उसकी अवधि नहीं आई, और उसने उसके रुपये दे दिए और उसने ले लिए, तो उसका ऋण उस पर बना रहेगा।

[बॉक्स अनुभाग] अरबी पाठ: रद अल-मुह्तार में अल-हिल्ली से अल-बहर के हवाले से: 'नफ़का (भरण-पोषण) के अलावा अन्य सभी ऋणों में, पहले उनमें स्वतः ही प्रतिपूरक (तकास) हो जाता है, बशर्ते...' उर्दू पाठ: रद अल-मुह्तार में हिल्ली से बहवाला बहर मन्कूल है कि नफ़का के सिवा तमाम कर्जों में अदला-बदला हो सकता है चाहे फरीकैन खुद ऐसा करें या न करें बशर्ते कि दोनों तरफ का...

[1] फ़तावा बज़ाज़िया, फ़तावा हिंदिया के हाशिये पर, किताबुल कफ़ाला, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 6/3। पृष्ठ 715 का 593

[خانہ] عربی عبارت: المواعید باکتساء صور التعلیق تکون لازمۃ فان قولہ ان احج لا یلزم لہ شیئ ولو علق وقال ان دخلت الدار فانا احج یلزم الحج ۱۸- اردو عبارت: کیونکہ تجھے معلوم ہو چکا ہے کہ وعدے تعلیق کی صورت میں لازم ہوتے ہیں چنانچہ کسی کے یوں کہنے سے کہ میں حج کروں گا اس پر کچھ لازم نہیں ہوتا اور اگر یوں کہا کہ اگر میں گھر میں داخل ہوا تو حج کروں گا یعنی تعلیق کی تو اس صورت میں (دخول دار سے) اس پر حج لازم ہوگا (ت)

اہلِ اسلام اس نفیس طریقے کے بجالانے میں کاہلی نہ کریں اس میں نہ کوئی خرچ ہے نہ حرج نہ وقت صرف زبانی دو تین لفظوں میں مطلب کامل مراد حاصل گناہ زائل ، دستاویز تو لکھواتے ہی ہیں صرف اتنا زائد ہے کہ اس سے پہلے ایک چیز اس کے ہاتھ گھنٹہ بھر کے وعدے پر بیچ کر قبضہ میں دے کر فوراً خرید لے اور روپیہ دے دے اور گھنٹہ گزرنے کے بعد دین کی نسبت اس کا وہ وعدہ لے لے، اس الٹ پھیر میں نہ کچھ وقت و محنت ہوگی نہ کوئی پیسہ خرچ ہوگا اور معصیتِ الٰہی سے بچ کر مال حلال ہاتھ آئے گا اللہ عزوجل توفیق بخشے ، آمین!

تنبیہ : یہ قیدیں جو ہم نے ذکر کیں کہ پہلی بیع میں ثمن مؤجل ہو دوسری میں معجل اور دوسری میں بیع اور اس کے ثمن کا ادا کر دینا پہلے ثمن کے میعاد مثلاً گھنٹہ گزرنے سے پیشتر ہو لے اور دوسری بیع کا شتکار کی طرف سے شیئی بیع پر قبضہ کر لینے کے بعد ہو انھیں ضرور ملحوظ رکھیں زائد و بیکار تصور نہ کریں یہاں منظور تو یہ ہے کہ کا شتکار کو روپیہ پہنچ جائے اور اس کا دین اس پر قائم رہے تاکہ اس کی نسبت وہ وعدہ ہو سکے اگر دونوں ثمن معجل ہوتے تو جیسے بیع ثانی میں سو روپے اس پر لازم ہوئے اور اس کے سو روپے اس پر لازم تھے دونوں پر سے برابر ہو کر اتر جاتے، یونہی اگر یہ بیع ثانی اور اس کے ثمن دے دینے کی کاروائی اس میعاد

مقررہ سے پہلے نہ ہو لیتی تو میعاد گزر کر وہ دین پر معجّل ہو جاتا اور دونوں بری الذمہ ہو جاتے اب کہ کاشتکار کا دین اس پر معجّل ہوا اور اس کا دین اس پر ہنوز مؤجل ہے کہ اس کی میعاد نہ آئی اور اس نے اس کے روپے دے دئے اس نے لے لئے تو اس کا دین اس پر قائم رہے گا۔

[خانہ] عربی عبارت: في ردالمحتار عن الحلي عن البحر سائر الديون اى ماسوى النفقة يقع التقاص فيها تقاصاً اولاً بشرط اردو عبارت: ردالمحتار میں حلی سے بحوالہ بحر منقول ہے کہ نفقہ کے سوا تمام قرضوں میں ادلہ بدلہ ہو سکتا ہے چاہے فریقین خود ایسا کریں یا نہ کریں بشرطیکہ دونوں طرف کا

1^8 فتاویٰ بزازیہ علی ہامش فتاویٰ ہندیہ کتاب الکفالہ نورانی کتب خانہ پشاور ۶ / ۳ Page 593 of 715

Fatawa Rizvia, Volume 17

[Table Header] Arabic Text: Equality, so if they differ, as when one of them is good and the other is poor, then the consent of the owner of the good one is necessary [1]. And in Al-Ashbah, it is stated that a person owes a debt of a thousand, so he sold something to his creditor for a thousand deferred, then it became due during his final illness while the debt was still on him, then the set-off (muqassah) occurs [2], etc. It is said in Ghamz al-Uyun that it was restricted to becoming due because if it were not due, the set-off would not occur due to the difference in quality, like good with poor [3].

Urdu Translation: If the debts are equal to each other, and if they are different, for example, on one side it is good and on the other side it is poor, then the consent of the owner of the good one is necessary. It is in Al-Ashbah that a person owes a debt of one thousand rupees, he sold something to the lender in exchange for one thousand rupees on credit, then the credit period expired during the debtor's final illness while the debt was still existing on him. Now this debt will be cancelled as a substitute for the deferred price, etc. It is said in Ghamz al-Uyun that this was restricted to the completion of the term because if the term was not completed, there would be no exchange because the quality is different, as it is in good and poor. (T)

[Body Text] And the necessity for the second sale by the cultivator to be after possession is that if he sells it back to the seller before possession, the sale will be invalid (fasid) and impermissible. In selling to someone else, possession is a condition only for movable items. For example, Amr bought a movable item from Zaid and it had not yet come into his possession when he sold it to Bakr, this sale is invalid. And if he took immovable property and sold it to someone other than the seller before possession, it is permissible. However, even the sale of immovable items to the person from whom they were bought is not permissible before possession, therefore possession is necessary.

[Lower Table Header] Arabic Text: In Ad-Durr al-Mukhtar: The sale of real estate (aqar) whose destruction is not feared is valid before its possession from its seller (connected to possession, not sale, because its sale to its seller before possession is invalid as in movable property) and it is not valid...

Urdu Translation: It is in Durr-e-Mukhtar that it is correct to sell immovable property before taking possession of it from its seller, as long as there is no fear of the

destruction of that property. ('Min Ba'ihi' is related to possession, not to sale, because selling immovable property to its seller before possession is invalid as...

[Footnotes] 1. Radd al-Muhtar 2. Al-Ashbah wa'n-Nazair, Kitab al-Madayanat, Idarat al-Qur'an Karachi, 2/74 3. Ghamz Uyun al-Basair, Kitab al-Madayanat, Idarat al-Qur'an Karachi, 2/74

फतावा रज़विया, खंड 17

[टेबल हेडर] अरबी पाठ: समानता, इसलिए यदि वे भिन्न हों, जैसे कि उनमें से एक अच्छा और दूसरा खराब हो, तो अच्छे वाले के मालिक की सहमति आवश्यक है [1]। और अल-अशबाह में है कि एक व्यक्ति पर एक हज़ार का ऋण है, उसने अपने लेनदार को एक हज़ार में उधार कुछ बेचा, फिर उसके मरज़-उल-मौत (अंतिम बीमारी) के दौरान वह देय हो गया जबकि ऋण अभी भी उस पर था, तो मुकासा (ऋण का मिलान/रद्द होना) होता है [2], इत्यादि। ग़म्ज़ अल-उयून में कहा गया है कि इसे देय होने के साथ प्रतिबंधित किया गया था क्योंकि यदि यह देय नहीं होता, तो गुणवत्ता के अंतर के कारण मुकासा नहीं होता, जैसे अच्छे के साथ खराब [3]।

उर्दू अनुवाद: ऋण आपस में बराबर हों, और यदि वे भिन्न हों, उदाहरण के लिए एक तरफ अच्छा और दूसरी तरफ खराब हो, तो अच्छे वाले की सहमति आवश्यक है। और अशबाह में है कि एक व्यक्ति पर एक हज़ार रुपये ऋण है, उसने ऋणदाता के हाथ एक हज़ार रुपये के बदले कोई चीज़ उधार बेची, फिर कर्जदार के मरज़-उल-मौत में उधार की अवधि पूरी हो गई जबकि अभी तक उस पर ऋण मौजूद है। अब यह ऋण मुअज्जल (विलंबित) मूल्य के बदले रद्द हो जाएगा, इत्यादि। ग़म्ज़ अल-उयून में कहा गया कि इसे अवधि पूरी होने के साथ प्रतिबंधित किया गया है क्योंकि यदि अवधि पूरी नहीं हुई होती तो विनिमय नहीं होता क्योंकि गुणवत्ता भिन्न है जैसा कि अच्छे और खराब में होता है। (त)

[मुख्य पाठ] और काश्तकार (किसान) की ओर से दूसरी बिक्री कब्ज़े (कब्जे) के बाद होने की आवश्यकता यह है कि यदि वह कब्ज़े से पहले विक्रेता को ही बेच देगा, तो बिक्री फासिद (अमान्य) और अवैध होगी। किसी और को बेचने में केवल चल वस्तुओं पर कब्ज़ा शर्त है। उदाहरण के लिए, अम्र ने ज़ैद से कोई चल वस्तु खरीदी और अभी वह उसके कब्ज़े में नहीं आई थी कि उसने उसे बक्र को बेच दिया, यह बिक्री फासिद हुई। और यदि अचल संपत्ति लेकर कब्ज़े से पहले विक्रेता के अलावा किसी और को बेच दी तो जायज़ है। मगर जिससे खरीदी थी, उसके हाथ कब्ज़े से पहले अचल वस्तुओं की बिक्री भी जायज़ नहीं है, इसलिए कब्ज़ा आवश्यक है।

[निचला टेबल हेडर] अरबी पाठ: दुर्र-ए-मुख्तार में है: अचल संपत्ति (अक़ार) जिसकी तबाही का डर न हो, उसे विक्रेता से कब्ज़ा लेने से पहले बेचना वैध है (कब्ज़े से संबंधित, बिक्री से नहीं, क्योंकि कब्ज़े से पहले विक्रेता को बेचना फासिद है जैसा कि चल संपत्ति में होता है) और यह वैध नहीं है...

उर्दू अनुवाद: दुर्र-ए-मुख्तार में है कि अचल संपत्ति को उसके विक्रेता से लेकर अपने कब्ज़े में करने से पहले बेचना सही है जबकि उस संपत्ति के नष्ट होने का डर न हो ('मिन बाईहि' का संबंध कब्ज़े से है, बिक्री से नहीं क्योंकि अचल संपत्ति को कब्ज़े से पहले उसके विक्रेता को बेचना फासिद है जैसा कि...

[पाद टिप्पणियाँ] 1. रद अल-मुख्तार 2. अल-अशबाह वन-नज़ायर, किताब अल-मदायनत, इदारतुल कुरआन कराची, 2/74 3. ग़म्ज़ उयून अल-बसायर, किताब अल-मदायनत, इदारतुल कुरआन कराची, 2/74

التساوی فلو اختلفا کما اذا کان احد ہما جیداً وردیئاً فلا بد من رضا صاحب الجید ۱ وفی الاشباہ علیہ الف قرض فباع من مقرضہ شیئاً بالف مؤجلۃ ثم حلت فی مرضہ وعلیہ دین تقع المقاصۃ ۲ الخ قال فی غمز العیون انما قید بالحلول لانہا لو لم تحل لا تقع المقاصۃ لاختلاف الوصف کالجید مع الردی ۳ ۔

قرض باہم برابر ہو ،اور اگر مختلف ہو مثلاً ایک طرف عمدہ اور دوسری طرف ردی ہو تو عمدہ والے کی رضامندی ضروری ہے، اور اشباہ میں ہے کہ ایک شخص پر ہزار روپے قرض ہے اس نے قرض دہندہ کے ہاتھ کوئی چیز ہزار روپے کے بدلے میں ادھار فروخت کر دی پھر مقروض کے مرض الموت میں ادھار کی مدت پوری ہو گئی درانحالیکہ ابھی تک اس پر قرض موجود ہے تو اب یہ قرض ثمنِ مؤجل کا بدلہ ہو کر اتر جائے گا الخ، غمز العیون میں کہا کہ اس کو مدت کے پورے ہونے کے ساتھ مقید کیا گیا کیونکہ اگر مدت پوری نہ ہوئی توادلہ بدلہ نہ ہوگا کیونکہ وصف مختلف ہے جیسا کہ عمدہ اور ردی میں ہوتا ہے۔ (ت)

اور کاشتکار کی طرف سے بیعِ ثانی بعد قبضہ ہونے کی ضرورت یہ ہے کہ اگر پیش از قبضہ بائع کے ہاتھ بیچ کردے گا تو بیع فاسد و ناجائز ہوگی غیر کے ہاتھ بیچنے میں تو صرف اشیائے منقولہ پر قبضہ شرط ہے مثلاً عمرو نے زید سے کوئی منقول چیز مول لی اور ہنوز اپنے قبضہ میں نہ آئی کہ بکر کے ہاتھ بیچ ڈالی یہ بیع فاسد ہوئی اور جائداد غیر منقولہ لے کر پیش از قبضہ غیر بائع کے ہاتھ بیع کردی تو جائز ہے مگر جس سے مول لی تھی اس کے ہاتھ قبضہ سے پہلے اشیائے غیر منقولہ کی بیع بھی جائز نہیں لہذا قبضہ لازم ہے۔

فی الدرالمختار صح بیع عقار لایخشی ھلاکہ قبل قبضہ من بائعہ (متعلق بقبض لابیع لان بیعہ من بائعہ قبل قبضہ فاسد کما فی المنقول) ولایصح

در مختار میں ہے غیر منقول جائداد کو اس کے بائع سے لے کر اپنے قبضہ میں کرنے سے پہلے فروخت کرنا صحیح ہے جبکہ اس جائداد کی ہلاکت کا خوف نہ ہو (من بائعہ کا تعلق قبضہ کے ساتھ ہے بیع کے ساتھ نہیں کیونکہ غیر منقول کو قبضہ سے پہلے اس کے بائع کے ہاتھ فروخت کرنا فاسد ہے جیسا کہ

۱ ردالمحتار ۲ الاشباہ والنظائر کتاب المداینات ادارۃ القرآن کراچی ۲/ ۷۴ ۳ غمز عیون البصائر کتاب المداینات ادارۃ القرآن کراچی ۲/ ۷۴

Fatawa Razawiya (Volume 17)

It is unanimously agreed that the sale of movable property before taking possession is not valid, even if it is in the hands of its seller, contrary to gifting, lending, pledging, or borrowing that movable property from someone other than its seller, for it is correct according to the most valid opinion. Summarized and augmented from Radd al-Muhtar. And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 243: 29 Shaban 1333 AH Sent by Hafiz Ayaz, Najibabad, District Bijnor, Mohalla Pura. In the month of June, a transaction takes place regarding sugarcane cultivation called 'Kahu Badli', and the rate is fixed on the condition that one rupee or 1/8th less or more is recorded with the mutual consent of both parties as per Shahnagar. The money agreed upon at the time of writing is paid; later, the goods continue to arrive and the money continues to be paid. Finally, at the end, a settlement of the total account takes place. If the mentioned form is permissible, then well and good; otherwise, what is the legal strategy (hila) for its permissibility as it is a common practice?

The Answer: The exchange of sugarcane as it is currently prevalent is purely baseless and impermissible for several reasons. At that time, neither the sugarcane is present nor the juice. A way for its permissibility could be, for example, if one intends to exchange it for one hundred rupees, then do not name it as its purchase and sale. Instead, sell something of yours worth one hundred rupees to him on a promise of a specific period, say for an hour, and give that item into his possession. Before that hour passes, the said person should sell that same item back to the original owner for one hundred rupees in cash, and the original owner should pay him those hundred rupees immediately. Now his item has returned to him and the hundred rupees in cash have reached the other person, and those hundred rupees remain as a debt upon him. When the promised hour passes, he should demand his money. The other person should say, "I will give your rupees in ten minutes; if I don't, then I promise to give juice at this rate in exchange for your rupees." Have the documents written as they are usually written. Now its purchase has become permissible. The research and details of this Sharia strategy (hila) are in our Fatawa. And Allah Almighty knows best.

1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu, Chapter on Disposal of the Sold Item, Mujtabai Press Delhi, 2/73, Radd al-Muhtar Kitab al-Buyu Chapter on Disposal in Sale, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/161.

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

इत्तेफ़ाक़न चल संपत्ति (माल-ए-मनक़ूल) की बिक्री कब्ज़ा करने से पहले, चाहे वह उसके विक्रेता के हाथ में ही क्यों न हो, सर्वसम्मति से वैध नहीं है, इसके विपरीत उस चल संपत्ति को विक्रेता के अलावा किसी अन्य को उपहार देना, ऋण देना, गिरवी रखना या उधार देना सबसे सही मत के अनुसार वैध है। रद्द अल-मुह्तार से संक्षिप्त और संवर्धित। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसाला 243: 29 शाबान 1333 हिजरी प्रेषक: हाफ़िज़ अयाज़, नजीबाबाद, जिला बिजनौर, मोहल्ला पुरा। जून के महीने में गन्ने की खेती पर जो 'कहू बदली' होती है और दर इस शर्त पर तय होती है कि शाहनगर से एक रुपया या (1/8) कम या ज्यादा दोनों पक्षों की सहमति से लिख लिया जाता है, और लिखते समय जो रुपया लेना तय होता है वह दे दिया जाता है, बाकी भविष्य में माल आता रहता है और रुपया जाता रहता है, अंत में कुल माल का हिसाब-किताब हो जाता है। यदि उक्त स्वरूप जायज़ है तो ठीक है, अन्यथा इसकी वैधता के लिए क्या कानूनी उपाय (हीला) है क्योंकि इसका आम प्रचलन है?

उत्तर: गन्ने के बदले जैसा कि प्रचलित है, वह पूरी तरह से निराधार और कई कारणों से नाजायज़ है। उस समय न तो गन्ना मौजूद होता है और न ही रस। इसकी वैधता का यह स्वरूप हो सकता है कि मान लीजिए सौ रुपये के बदले लेनदेन करना है, तो उसकी खरीद-बिक्री का नाम न लें, बल्कि अपनी कोई सौ रुपये की चीज़ उसे एक निश्चित अवधि, जैसे एक घंटे के वादे पर बेचें और वह चीज़ उसके कब्ज़े में दे दें। और अभी वह घंटा न बीतने पाए कि उक्त व्यक्ति वही चीज़ सौ रुपये नकद में मूल मालिक को बेच दे, और वह उसी समय उसे सौ रुपये अदा कर दे। अब उसकी चीज़ उसके पास वापस आ गई और सौ नकद उसे पहुँच गए और उसके सौ रुपये उस पर ऋण (कर्ज़) रह गए। जब वह वादे का घंटा बीत जाए, तो वह अपने रुपयों की मांग करे। वह कहे, "मैं तुम्हारे रुपये दस मिनट में दूँगा, अगर नहीं दूँगा तो वादा करता हूँ कि अपने रुपयों के बदले इस दर से रस दूँगा।" इसके दस्तावेज़ जैसे लिखे जाते हैं, वैसे लिखवा लें। अब इसकी खरीदारी जायज़ हो गई। इस शरीयत के उपाय (हीला) का शोध और विवरण हमारे फ़तावा में है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

---

1. दुर्र-ए-मुख्तार, किताब अल-बुयू, फ़स्ल फ़ित तसर्रुफ़ फ़िल मबी', मुज्तबाई प्रेस दिल्ली, 2/73, रद्द अल-मुह्तार किताब अल-बुयू फ़स्ल फ़ित तसर्रुफ़ फ़िल बेय, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी बेरूत, 4/161

اتفاقاً بیع منقول قبل قبضہ ولو من بائعہ بخلاف ھبتہ واقراضہ ورھنہ واعارتہ من غیر بائعہ فإنہ صحیح علی الاصح ۱ اھ ملخصاً مزیداً من ردالمحتار۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ مال منقول میں ہوتا ہے) اور مال منقول کی بیع قبضہ سے پہلے اگرچہ اس کے بائع کے ہاتھ ہو بالاتفاق صحیح نہیں، بخلاف اس منقول کے غیر بائع کو ہبہ کرنے قرض دینے رہن رکھنے اور عاریت پر دینے کے کہ یہ اصح قول کے مطابق درست ہے۔ اھ تلخیص (مع ردالمحتار سے کچھ اضافہ کے)۔ (ت)

مسئلہ ۲۴۳: ۲۹ شعبان ۱۳۳۳ھ مرسلہ حافظ ایاز نجیب آباد ضلع بجنور محلہ پورہ ماہ جون میں جو زراعت نیشکر پر کہو بدلی ہوتی ہے اور نرخ بال کی یہ شرط قرار داد ہوئی کہ شاہ نگر سے سے ایک روپیہ یا (۱/۸) کم یا زیادہ طرفین کی رضامندی سے تحریر ہو جاتی ہے اور جو روپیہ اس وقت بوقت تحریر لینا ٹھہرتا ہے وہ دے دیا جاتا ہے باقی آئندہ مال آتا رہتا ہے اور روپیہ جاتا رہتا آخر اختتام پر کل مال کا حساب و کتاب ہو جاتا ہے اگر صورت مذکورہ جائز ہے و فیہا ورنہ اس کے جواز کے واسطے کیا حیلہ ہے کیونکہ اس کا عام رواج ہے۔

الجواب: نیشکر کے بدلے جس طرح کہ رائج ہے محض بے اصل و بوجوہ ناجائز ہے اس وقت گنا بھی موجود نہیں ہوتا اور نہ رس، اس کے جواز کی یہ صورت ہو سکتی ہے کہ مثلاً سو روپیہ کے بدلی کرنی منظور ہے تو اس کی خرید و فروخت کا کچھ نام نہ لیں بلکہ اپنی کوئی چیز سو روپے کی اس کے ہاتھ ایک معین مدت مثلاً گھنٹے بھر کے وعدہ پر بیع کریں اور وہ شے اس کے قبضے میں دے دیں اور وہ ابھی گھنٹہ نہ گزرنے پائے کہ شخص مذکور وہی شے سو روپیہ نقد کو مالک اول کے ہاتھ بیع کر دے اور یہ اسی وقت سو روپیہ اس کے ادا کردے اب اس کی چیز اس کے پاس آگئی اور سو نقد اسے پہنچ گئے اور اس کے سو روپیہ اس پر دین رہے جب وہ وعدہ کا گھنٹہ

گزرے یہ اپنے روپیوں کا اسے تقاضا کرے وہ کہے میں تیرے روپے دس منٹ میں دوں گا اگر نہ دوں گا تو وعدہ کرتا ہوں کہ اپنے روپیوں کے عوض اس نرخ سے رس دوں گا اس کے دستاویز جیسے لکھی جاتی ہے لکھالیں اب اس کی خریداری جائز ہوگئی اس حیلہ شرعیہ کی تحقیق و تفصیل ہمارے فتاویٰ میں ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

---

1 درمختار کتاب البیوع فصل فی التصرف فی المبیع مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۷۳، ردالمحتار کتاب البیوع فصل فی التصرف فی البیع داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۶۱

Volume 17, Fatawa Rizvia

Chapter of Istisna' (Description of Istisna' Sales)

Case 244: 12 Rabi al-Akhir 1312 AH Asked by Hafiz Yaqub Khan Sahib: What do the scholars of religion say regarding this matter: A carpenter agreed to provide a dozen chairs of a specific type within a month for the price of [sum left blank]. He also agreed that until your chairs are ready, he will not make products for anyone else or for himself. He stated that if he breaches this promise, he will provide the aforementioned chairs for the price of [token amount, noted as 'Lu’a Ad 1']. Now, the carpenter has breached the promise, meaning he made products for others and provided the chairs after one month. In this situation, is it correct to take the dozen chairs at the promised token price or not?

The Answer: In the situation described, it is not permissible to take those chairs at the [token] price per dozen based on that contract. Instead, it is mandatory to cancel this contract because it has become a Fasid (voidable/corrupt) contract. Committing a Fasid contract is a sin, and removing the sin is obligatory. Yes, if they wish, they can cancel the contract and then buy these chairs under a new contract with mutual consent for whatever price they agree upon. The reason is that getting something made by someone such that they use their own materials to make it for a certain price is called 'Istisna'. This is valid if there is a custom of getting things made this way and if its type, description, condition, measurements, price, etc., are clearly specified such that no uncertainty remains that could lead to future disputes, and in this, no period [text cuts off].

Page 597 of 715

खंड 17, फतावा रज़विया

बाब अल-इस्तिस्ना (इस्तिस्ना बिक्री का बयान)

मसला 244: 12 रबी-उल-आख़िर 1312 हिजरी प्रार्थी हाफ़िज़ याक़ूब ख़ान साहब: क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस मसले में कि एक बढ़ई ने इक़रार किया कि फ़लाँ किस्म की कुर्सियाँ एक दर्जन एक माह के अंदर बक़ीमत मुबलिग़ --- को दूँगा और जब तक तुम्हारी कुर्सियाँ तैयार न करूँ और किसी का अपना माल न बनाऊँगा। अगर वादा खिलाफ़ी करूँ तो कुर्सियाँ मज़कूरा बक़ीमत (लअ अद 1) को दूँगा। पस बढ़ई ने वादा खिलाफ़ी की यानी और किसी का माल बनाया और कुर्सियाँ भी एक माह के बाद दीं। पस इस सूरत में हस्ब इक़रार (लअ अद 1) को दर्जन लेना दुरुस्त है या नहीं?

अल-जवाब: सूरत-ए-मुस्तफ़सिरा में वो कुर्सियाँ इस अक़्द की बिना पर न (लअ अद 1) दर्जन को लेना जाइज़ न बल्कि इस अक़्द का फ़स्ख़ करना वाजिब है कि ये अक़्द फ़ासिद हुआ और अक़्द-ए-फ़ासिद गुनाह है और गुनाह का इज़ाला फ़र्ज़। हाँ अगर चाहें तो अक़्द को फ़स्ख़ करके अब ये कुर्सियाँ ब-अक़्द-ए-जदीद बाहमी रज़ामंदी से जितने को ठहर जाएँ ख़रीद लें। वजह ये है कि किसी से कोई चीज़ इस तरह बनवाना कि वो अपने पास से इतनी क़ीमत को बना दे ये सूरत इस्तिस्ना कहलाती है कि अगर उस चीज़ के यूँ बनवाने का उर्फ़ जारी है और उसकी क़िस्म वसफ़ व हाल व पैमाना व क़ीमत वग़ैरहा की ऐसी साफ़ तसरीह हो गई है कि कोई जहालत आइंदा मुनाज़अत के क़ाबिल न रहे और इसमें कोई मीआद...

पृष्ठ 597/715

جلد ہفدہم (۱۷) فتاویٰ رضویہ

باب الاستصناع (بیع استصناع کا بیان)

مسئلہ ۲۴۴: ۱۲ ربیع الآخر ۱۳۱۲ھ مسئولہ حافظ یعقوب خاں صاحب: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ بڑھی نے اقرار کیا کہ فلاں قسم کی کرسیاں ایک درجن ایک ماہ کے اندر بقیمت مبلغ - کو دوں گا اور جب تک تمھاری کرسیاں تیار نہ کروں اور کسی کا اپنا مال نہ بناؤں گا اگر وعدہ خلافی کروں تو کرسیاں مذکورہ بقیمت (للعہ عد ۱) کو دوں گا، پس بڑھی نے وعدہ خلافی کی یعنی اور کسی کا مال بنایا اور کرسیاں بھی ایک ماہ کے بعد دیں پس اس صورت میں حسب اقرار (للعہ عد ۱) کو درجن لینا درست ہے یا نہیں؟

الجواب: صورت مستفسرہ میں وہ کرسیاں اس عقد کی بنا پر نہ (للعہ عد ۱) درجن کو لینا جائز نہ بلکہ اس عقد کا فسخ کرنا واجب ہے کہ یہ عقد فاسد ہوا اور عقد فاسد گناہ ہے اور گناہ کا ازالہ فرض، ہاں اگر چاہیں تو عقد کو فسخ کرکے اب یہ کرسیاں بعقد جدید باہمی رضامندی سے جتنے کو ٹھہر جائیں خرید لیں، وجہ یہ ہے کہ کسی سے کوئی چیز اس طرح بنوانا کہ وہ اپنے پاس سے اتنی قیمت کو بنادے یہ صورت استصناع کہلاتی ہے کہ اگر اس چیز کے یوں بنوانے کا عرف جاری ہے اور اس کی قسم وصف و حال و پیمانہ و قیمت و غیرہا کی ایسی صاف تصریح ہو گئی ہے کہ کوئی جہالت آئندہ منازعت کے قابل نہ رہے اور اس میں کوئی میعاد

صفحہ ۵۹۷ از ۷۱۵

Fatawa-e-Razvia (Volume 17)

If no mention was made of granting a delay, then this contract is legally permissible in Shariah. In this, the conditions of *bay' al-salam* (forward sale), such as giving the money in advance in that very sitting, or its availability in the market, or being fungible, are not necessarily required. However, when a term of one month or more is set in it, then that contract becomes exactly *bay' al-salam*, and at that point, it is necessary for all conditions of *bay' al-salam* to be met. If even one condition is missing, the contract becomes void (fasid).

[Table content start] (Arabic Column): In *Radd al-Muhtar*, quoting *al-Bada'i'*, among the conditions of *istisna'* (manufacturing contract) is specifying the genus, type, quantity, and quality of the manufactured item, and that it be something commonly practiced among people, and that it not be deferred, otherwise it becomes *salam* [1] etc. In it, the meaning of 'term' (ajal) is what was mentioned earlier, i.e., one month or more [2] etc. In *al-Tahtawi*, the term sometimes is like the term of *salam* by being a month or more, and according to him, it is *salam* without detail [3] etc. In *al-Hindiyya*, if a term is fixed, it becomes *salam* (until it is not permissible except with the conditions of *salam*). This is when the time is mentioned for the purpose of seeking a delay, such as saying 'one month' or similar. But if it is mentioned for the purpose of seeking haste, like saying 'on condition that you finish it tomorrow or the day after', it does not become *salam*. This is also mentioned in *al-Sughra* [4]. End summary.

(Urdu Column): In *Radd al-Muhtar*, quoting *al-Bada'i'*, among the conditions of *istisna'* (manufacturing contract) is to state the genus, type, quality, and quantity of the manufactured item (what is desired to be made), and that the common practice of the people should be in place for it, and that no time limit should be fixed for it; otherwise, it will become a *salam* contract, etc. It also states that 'term' refers to what has been mentioned before, i.e., one month or more, etc. In *Tahtawi*, it is said that sometimes the term is like that of *salam*, i.e., one month or more; in this case, it is considered *salam* without further detail. In *Hindiyya*, it is stated that if a term is fixed, it will be a *salam* contract (which is not permissible without the conditions of *salam*). This applies when the duration is stated for requesting a delay, e.g., mentioning one month or something similar. But if the mention of time is for the purpose of urgency, like saying 'I am giving this to be made on the condition that you finish it by

tomorrow or the day after', then it will not be a *salam* contract. This is mentioned in *al-Sughra*. End summary (T). [Table content end]

1. *Radd al-Muhtar*, Book of Sales, Chapter on Salam, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/212
2. *Radd al-Muhtar*, Book of Sales, Chapter on Salam, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/212
3. *Al-Tahtawi* on *al-Durr al-Mukhtar*, Book of Sales, Chapter on Salam, Dar al-Ma'rifah, Beirut, 3/126
4. *Fatawa Hindiyya*, Chapters of the Nineteenth, regarding Loans, etc., Nurani Kutub Khana, Peshawar, 2/208

फ़तावा-ए-रज़विया (जिल्द 17)

यदि मोहलत (देरी) देने के लिए कोई उल्लेख नहीं किया गया है, तो यह अनुबंध शरीयत में जायज़ है। इसमें 'बै-ए-सलाम' (अग्रिम बिक्री) की शर्तें जैसे कि उसी बैठक में पेशगी पैसा देना, या उसका बाज़ार में मौजूद होना, या उसके समान चीज़ का होना अनिवार्य नहीं है। लेकिन जब इसमें एक महीने या उससे अधिक की अवधि लगा दी जाती है, तो वह अनुबंध बिल्कुल 'बै-ए-सलाम' बन जाता है, और उस समय 'बै-ए-सलाम' की सभी शर्तों का पूरा होना ज़रूरी हो जाता है। यदि एक भी शर्त रह गई, तो अनुबंध फ़ासिद (अमान्य) हो जाएगा।

[तालिका सामग्री प्रारंभ] (अरबी स्तंभ): रद अल-मुह्तार में अल-बदाइ' के हवाले से इस्तिसना' (निर्माण अनुबंध) की शर्तों में से यह है कि मसनूअ (निर्मित वस्तु) की जाति, प्रकार, मात्रा और गुणवत्ता का वर्णन किया जाए, और यह कि इसमें लोगों की प्रथा जारी हो, और इसकी कोई अवधि निश्चित न की जाए, अन्यथा यह 'सलाम' अनुबंध हो जाएगा [1] इत्यादि। इसमें अवधि (अजल) का अर्थ वही है जो पहले उल्लेख किया गया है, यानी एक महीना या उससे अधिक [2] इत्यादि। तह्तावी में है कि अवधि कभी सलाम की अवधि जैसी होती है यानी एक महीना या उससे अधिक, और उनके अनुसार यह बिना किसी विस्तार के'सलाम' है [3] इत्यादि। हिन्दिया में है कि यदि अवधि निश्चित की गई तो यह 'सलाम' अनुबंध होगा (यहाँ तक कि यह सलाम की शर्तों के बिना जायज़ नहीं है)। यह तब है जब अवधि का उल्लेख मोहलत माँगने के तौर पर हो, उदाहरण के लिए एक महीना या इसके समान कहा गया हो। लेकिन यदि अवधि का उल्लेख जल्दबाज़ी के तौर पर हो, जैसे कहा कि 'इस शर्त पर बनवाता हूँ कि कल या परसों इसे पूरा कर दो', तो यह सलाम अनुबंध नहीं होगा। यह 'सुग़रा' में भी है [4]। सारांश समाप्त।

(उर्दू स्तंभ): रद अल-मुह्तार में अल-बदाइ' के हवाले से इस्तिसना' की शर्तों में से यह है कि मसनूअ (जो चीज़ बनवाना वांछित है) की जिंस, नौअ, सिफ़त और मिक़दार को बयान करना और यह कि इसमें लोगों का उर्फ़ जारी हो और यह कि इसकी कोई मीआद (अवधि) मुक़र्रर न की जाए, वरना वह अक़्द-ए-सलाम हो जाएगा इत्यादि। और इसी में है कि मीआद से मुराद वही है जिसका पहले ज़िक्र हो चुका है यानी एक माह या उससे ज़्यादा इत्यादि। तह्तावी में है कि मीआद कभी सलाम की मीआद जैसी होती है यानी एक माह या उससे ज़ायद तो इस सूरत में बग़ैर किसी तफ़्सील के यह सलाम है इत्यादि। हिन्दिया में है कि अगर मीआद मुक़र्रर की तो यह अक़्द-ए-सलाम होगा जो कि सलाम की शर्तों के बग़ैर जायज़ नहीं। यह उस वक़्त है जब बयान-ए-मुद्दत मोहलत तलब करने के

तौर पर हो मिसाल के तौर पर एक माह या इसकी मिस्ल ज़िक्र किया और अगर मुद्दत का बयान तलब-ए-अजलत (जल्दबाज़ी) के तौर पर हो मिसाल के तौर पर कहा तुझ से यह चीज़ इस शर्त पर बनवाता हूँ कि तू कल या परसों इसको बना कर फ़ारिग हो जाएँ तो यह अक़्द-ए-सलाम न होगा, यह सुग़रा में है। सारांश समाप्त (त)। [तालिका सामग्री समाप्त]

1. रद अल-मुह्तार, किताबुल बुयूअ, बाबुल सलाम, दार इहयाउत तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 4/212
2. रद अल-मुह्तार, किताबुल बुयूअ, बाबुल सलाम, दार इहयाउत तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 4/212
3. अत-तह्तावी अलल दुर्रिल मुख़्तार, किताबुल बुयूअ, बाबुल सलाम, दारुल मारिफ़ह, बेरूत, 3/126
4. फ़तावा हिन्दिया, अबवाबुल तास-ए-अशर फ़िल क़र्ज़ इत्यादि, नूरानी कुतुब ख़ाना, पेशावर, 2/208

مہلت دینے کے لئے ذکر نہ کی گئی تو یہ عقد شرعاً جائز ہوتا ہے اور اس میں بیع سلم کی شرطیں مثلاً روپیہ پیشگی اس جلسہ میں دے دینا یا اس کا بازار میں موجود رہنا یا مثلی ہونا کچھ ضرور نہیں ہوتا مگر جب اس میں میعاد ایک مہینہ یا زائد کی لگا دی جائے تو وہ عقد بعینہ بیع سلم ہو جاتا ہے اور اس وقت تمام شرائط بیع سلم کا متحقق ہونا ضروری ہوتا ہے۔ اگر ایک بھی رہ گئی عقد فاسد ہو گیا۔

[جدول کا مواد شروع] (عربی کالم): فی رد المحتار عن البدائع من شروطه بیان جنس المصنوع ونوعه وقدره وصفته وان یکون ممافیہ تعامل وان لا یکون مؤجلا والاکان سلما ۱۸ الخ وفیہ المراد بالاجل ماتقدم وھو شھر فما فوقہ ۲۸ الخ وفی الطحطاوی الاجل تارۃ یکون کاجل السلم بان کان شھرا فازید وھو عندہ سلم من غیر تفصیل ۳۸ الخ، وفی الھندیۃ ان ضرب الاجل صار مسلما (حتی لایجوز الابشرائط السلم) ھذا اذا کان ضرب المدۃ علی وجہ الاستمھال بان قال شھرا وما اشبہ ذلك اما اذا ذکر علی وجہ الاستعجال بان قال علی ان تفرغ منه غدا او بعد غد لایصیر سلما کذا فی الصغری ۴۸ اھ ملخصاً۔

(اردو کالم): ردالمحتار میں بحوالہ بدائع ہے استصناع کی شرطوں میں سے یہ ہے کہ مصنوع (جو چیز بنوانا مطلوب ہے) کی جنس، نوع، صفت اور مقدار کو بیان کرنا اور یہ کہ اس میں لوگوں کا عرف جاری ہو اور یہ کہ اس کی کوئی میعاد مقرر نہ کی جائے ورنہ وہ عقد سلم ہوجائے گا الخ اور اسی میں ہے کہ میعاد سے مراد وہی ہے جس کا پہلے ذکر ہو چکا ہے یعنی ایک ماہ یا اس سے زیادہ الخ، طحطاوی میں ہے کہ میعاد کبھی سلم کی میعاد جیسی ہوتی ہے یعنی ایک ماہ یا اس سے زائد تو اس صورت میں بغیر کسی تفصیل کے یہ سلم ہے الخ، ہندیہ میں ہے کہ اگر میعاد مقرر کی

تو یہ عقد سلم ہوگا جو کہ سلم کی شرطوں کے بغیر جائز نہیں) یہ اس وقت ہے جب بیان مدت مہلت طلب کرنے کے طور پر ہو مثلاً ایک ماہ یا اس کی مثل ذکر کیا اور اگر مدت کا بیان طلب عجلت کے طور پر ہو مثلاً کہا تجھ سے یہ چیز اس شرط پر بنواتا ہوں کہ تو کل یا پرسوں اس کو بنا کر فارغ ہو جائیں تو یہ عقد سلم نہ ہوگا یہ صغری میں ہے اھ تلخیص (ت) [جدول کا مواد ختم]

1 رد المحتار کتاب البیوع باب السلم دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۲۱۲ 2 رد المحتار کتاب البیوع باب السلم دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۲۱۲ 3 الطحطاوی علی الدر المختار کتاب البیوع باب السلم دارالمعرفۃ بیروت ۳/ ۱۲۶ 4 فتاوٰی ہندیہ ابواب التاسع عشر فی القرض الخ نورانی کتب خانہ پشاور ۲/ ۲۰۸

Fatawa-e-Razvia Volume 17

Since the period was one month or more, the contract of sale became 'Salam'. Due to the uncertainty—that for one month it would be thirty [units/price] and for more it would be twenty-four—neither the price would be fixed nor the period, whereas their specification is mandatory in 'Salam'. Therefore, the contract became void (fasid). In fact, upon investigation, 'Istisna' (manufacturing contract) is a sale in every case.

كما نص عليه فى المتون وصححه المحققون من الشراح ففى النقاية الاستصناع باجل سلم تعاملوا فيه او لا، وبلا اجل فيما يتعامل فيه بيع والمبيع العين لا العمل اهـ 1 ومثله فى الاصلاح والملتقى والتنوير وغيرها وفى الهداية الصحيح انه يجوز بيعا لا عدة والمعدوم قد يعتبر موجودا حكما والمعقود عليه العين دون العمل هو الصحيح اهـ مل 2 خصا ونحوه فى الايضاح والدر وغيرهما من الاسفار الغر وقد اوضحنا المقام مع ازالة الاوهام بتوفيق الملك العلام فيما علقناه على رد المحتار-

As it is explicitly stated in the primary texts (Mutun) and validated by the investigative commentators (Muhaqqiq Shariheen). For instance, it says in 'Nuqaya': "Istisna with a fixed term is 'Salam', whether there is a common practice (urf) among people for it or not; and without a fixed term, where there is a common practice, it is a sale, and the subject of sale is the object itself (manufactured item), not the labor." Similar is stated in 'Islah', 'Multaqi', 'Tanwir', etc. In 'Hidaya', the correct view is that it is permissible as a sale, not just as a promise. Sometimes something non-existent is legally considered as existent. The subject of the contract is the physical object, not the labor; this is the correct view. Similar points are mentioned in 'Idah', 'Durr', and other illustrious books. By the grace of Allah, the Sovereign, the All-Knowing, we have clarified this point in our annotations on 'Radd al-Muhtar', removing all doubts. (T)

And a sale can never tolerate such uncertainty in price, that for this much time the price is this and for that much time it is that.

فى الخلاصه رجل باع شيئا على انه بالنقد بكذا وبالنسئة بكذا او الى شهر بكذا او الى شهرين بكذا لم يجز 3-

In 'Khulasa' it is stated: A man sold something on the condition that for cash it is this much, and for credit it is this much, or for one month's credit it is this much, or for two months' credit it is this much—this is not permissible. (T)

1. Mukhtasar al-Wiqaya fi Masa'il al-Hidayah, Kitab al-Buyu', Nur Muhammad Karkhana Tijarat Kutub, Karachi, p. 103.

2. Al-Hidayah, Kitab al-Buyu', Bab al-Salam, Matba' Yusufi, Lucknow, 3/102.
3. Khulasa al-Fatawa, Kitab al-Buyu', Chapter 5, Section 1 regarding price, Maktaba Habibiya, Quetta, 3/60.

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द 17

चूंकि अवधि एक महीना या उससे अधिक थी, इसलिए बिक्री अनुबंध (सलाम) बन गया। अनिश्चितता के कारण—कि एक महीने में तीस [मूल्य/इकाई] होंगे और अधिक में चौबीस—न तो मूल्य तय होगा और न ही अवधि, जबकि 'सलाम' में इनका निर्धारण अनिवार्य है। इसलिए अनुबंध अमान्य (फ़ासिद) हो गया। वास्तव में, जांच करने पर, 'इस्तिस्ना' (निर्माण अनुबंध) हर स्थिति में बिक्री ही है।

जैसा कि मूल ग्रंथों (मुतून) में उल्लेख किया गया है और शोधकर्ता टिप्पणीकारों (मुहक्किक़ शारीहीन) ने इसकी पुष्टि की है। उदाहरण के लिए, 'नुक़ाया' में कहा गया है: "इस्तिस्ना एक निश्चित अवधि के साथ 'सलाम' है, चाहे लोगों में ऐसी प्रथा (उर्फ़) हो या न हो; और बिना निश्चित अवधि के जहां ऐसी प्रथा है, वह बिक्री है और बिक्री की वस्तु स्वयं वस्तु (निर्मित वस्तु) है, न कि श्रम।" इसी प्रकार 'इस्लाह', 'मुल्तक़ी', 'तन्वीर' आदि में भी है। 'हिदाया' में है कि सही विचार यह है कि यह बिक्री के रूप में जायज़ है, न कि केवल एक वादे के रूप में। कभी-कभी अस्तित्वहीन को कानूनी रूप से अस्तित्वमान माना जाता है। अनुबंध की वस्तु भौतिक वस्तु है, न कि श्रम; यही सही है। इसी तरह की बातें 'ईदाह', 'दुर्र' और अन्य प्रसिद्ध पुस्तकों में भी हैं। अल्लाह, संप्रभु, सर्वज्ञ की कृपा से, हमने 'रद्द अल-मुह्तार' पर अपनी टिप्पणियों में इस बिंदु को स्पष्ट किया है और सभी संदेहों को दूर कर दिया है। (T)

كما نص عليه فى المتون وصححه المحققون من الشراح ففى النقاية الاستصناع باجل سلم تعاملوا فيه او لا، وبلا اجل فيما يتعامل فيه بيع والمبيع العين لا العمل اهـ 1 ومثله فى الاصلاح والملتقى والتنوير وغيرها وفى الهداية الصحيح انه يجوز بيعا لا عدة والمعدوم قد يعتبر موجودا حكما والمعقود عليه العين دون العمل هو الصحيح اهـ مل 2 خصا ونحوه فى الايضاح والدر الغر وقد ٢٢وغيرهما من الاسف اوضحنا المقام مع ازالة الاوهام بتوفيق الملك العلام فيما علقناه على رد المحتار-

और बिक्री कभी भी मूल्य में ऐसी अनिश्चितता सहन नहीं कर सकती कि इतने समय के लिए यह मूल्य हो और उतने समय के लिए वह।

'खुलासा' में है: एक व्यक्ति ने कुछ इस शर्त पर बेचा कि नकद के लिए इतना, और उधार के लिए इतना, या एक

فى الخلاصه رجل باع شيئا على انه بالنقد بكذا وبالنسئة بكذا او الى

महीने के उधार पर इतना, या दो महीने के उधार पर इतना —तो यह जायज़ नहीं है। (T)

شهر بكذا او الى شهرين بكذا لم يجز 3-

1. मुख़्तसर अल-विक़ाया फ़ी मसाइल अल-हिदाया, किताब अल-बुयूं, नूर मुहम्मद कारखाना तिज़ारत कुतुब, कराची, पृष्ठ 103।
2. अल-हिदाया, किताब अल-बुयूं, बाब अस-सलाम, मतबा यूसुफ़ी, लखनऊ, 3/102।
3. खुलासा अल-फ़तावा, किताब अल-बुयूं, अध्याय 5, मूल्य के संबंध में पहला खंड, मकतबा हबीबिया, क्वेटा, 3/60।

یہاں کہ میعاد ایک مہینہ یا زائد ہی کی تھی عقدِ بیع سلم ہو گیا اور بوجہ تردید کہ ایک مہینہ میں تیس اور زیادہ میں چوبیس نہ قیمت معین ہو گی نہ مدت، حالانکہ ان کی تعیین سلم میں ضرور ہے لہذا عقد فاسد ہو گیا بلکہ عند التحقیق استصناع ہر حال میں بیع ہی ہے۔

جیسا کہ متون میں اس پر نص کی گئی اور محقق شارحین نے اس کی تصحیح فرمائی، چنانچہ نقایہ میں ہے استصناع میں اگر مدت مقرر کی جائے تو وہ سلم ہو جاتا ہے چاہے لوگوں کا عرف اس میں جاری ہو یا نہ ہو اور بغیر مدت مقرر کرنے کے اگر اس میں عرف جاری ہو وہ بیع ہے اور مبیع عین (مصنوع) ہے نہ کہ عمل اھ اور اصطلاح، ملتقی اور تنویر وغیرہ میں اس کی مثل ہے، ہدایہ میں ہے کہ یہ بطورِ بیع جائز ہے نہ کہ بطورِ وعدہ اور معدوم کو کبھی کبھی حکمی طور پر موجود اعتبار کر لیا جاتا ہے اور معقود علیہ (مبیع) عین ہے نہ کہ عمل، اور یہی صحیح ہے اھ تصحیح، اور اسی کی مثل ہے ایضاح اور در وغیرہ روشن کتابوں میں اور ہم نے اللہ تعالٰی کی توفیق سے ردالمختار پر اپنی تعلیقات میں اس مقام کی وضاحت کرتے ہوئے تمام وہموں کا ازالہ کر دیا ہے۔ (ت)

كما نص عليه فى المتون وصححه المحققون من الشراح ففى النقاية الاستصناع باجل سلم تعاملوا فيه او لا، وبلا اجل فيما يتعامل فيه بيع والمبيع العين لا العمل اهـ 1 ومثله فى الاصلاح والملتقى والتنوير وغيرها وفى الهداية الصحيح انه يجوز بيعا لا عدة والمعدوم قد يعتبر موجودا حكما والمعقود عليه العين دون العمل هو الصحيح اهـ مل 2 خصا ونحوه فى الايضاح والدر وغيرهما من الاسفار الغر وقد اوضحنا المقام مع ازالة الاوهام بتوفيق الملك العلام فيما علقناه على رد المحتار۔

اور بیع ہر گز ایسی جہالت ثمن کا تحمل نہیں کر سکتی کہ اتنی مدت ہو تو یہ قیمت اور اتنی ہو تو وہ

خلاصہ میں ہے ایک شخص نے کسی شئی کی بیع اس طرح کی نقد اتنے کی اور ادھار اتنے کی یا ایک ماہ کے ادھار پر اتنے کی اور دو ماہ کے ادھار پر اتنے کی، تو جائز نہیں۔ (ت)

فی الخلاصہ رجل باع شیئا علی انہ بالنقد بکذا وبالنسئۃ بکذا او الی شھر بکذا او الی شھرین بکذا لم یجز 3-

1 مختصر الوقایۃ فی مسائل الھدایہ کتاب البیع نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۱۰۳ 2 الھدایہ کتاب البیوع باب السلم مطبع یوسفی لکھنو ۳ / ۱۰۲ 3 خلاصہ الفتاوی کتاب البیوع فصل فی خامس الجنس الاول فیما یتعلق بالثمن مکتبہ حبیبیہ کوئٹہ ۳ / ۶۰

Fatawa Rizvia (17)

In Istisna' (contract for manufacturing), even if it is not a month or more, if such a refusal is made, the contract will be void and annulment obligatory. This is what appeared to me, and Allah Almighty knows best. (This is what appeared to me. And Allah Almighty knows best. - T)

Problem 225: A friend of Zaid wrote a request to send him 'Kuhl al-Jawahir' (eye medicine). Zaid bought it on credit from Amr's shop, but returned it after a day or two, thinking that if the friend didn't send the price, he would have to pay. He gave it back to the shop owners and told them the same. The owner of Kuhl al-Jawahir said, 'Sir, I had to feel embarrassed for a small thing, and the price is written on my packet of Kuhl al-Jawahir, they will send you the price, you send them the Kuhl al-Jawahir.' Thus, at the command of the seller, Zaid brought it back and sent it to his friend. The question is, in this case, is the owner of Kuhl al-Jawahir authorized to collect the price from Zaid? Now Zaid has sent it by his command. Explain and you will be rewarded.

Answer: Certainly, he can collect it because the essence of the friend's request, even if it wasn't a formal request where Zaid himself was effectively the buyer, would at most make him an agent (Wakil).

Rights in sales return to the agent, unlike in marriage where the agent is merely a messenger or representative, as jurists have clearly stated in common books. (T)	**"Wal-huququ fil-buyu'i tarji'u ilal-wakili bikhilafun-nikahi falaysa fihi illa mu'abbiran aw safiran kama sarrahu bihi fi 'ammatil-kutub."**

Therefore, the right to collect the price from the agent is certain, and purchasing at his suggestion cannot prevent this.

Because this is an advice, not coercion. So the purchase happened from Zaid with his consent. And Allah Glory be to Him and Almighty knows best, and His knowledge is most complete and most firm. (T)	**"Fa-innahu isharatun la ikraha fal-shira'u innama waqa'a min Zaidin biradhahu wallahu subhanahu wa ta'ala a'lamu wa 'ilmuhu jalla majduhu atammu wa ahkamu."**

तो इस्तिसना (निर्माण अनुबंध) में चाहे वह एक महीना या उससे अधिक न हो, जब ऐसी अस्वीकृति की जाएगी, तो अनुबंध शून्य (फ़ासिद) हो जाएगा और उसे रद्द करना अनिवार्य (वाजिब) होगा। यह वही है जो मेरे लिए स्पष्ट हुआ, और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है। (यह वह है जो मेरे लिए प्रकट हुआ। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। -त)

मसला 225: ज़ैद के एक दोस्त ने फरमाइश लिखी कि मुझे 'कुहलुल जवाहर' (आँखों की दवा) भेज दो। ज़ैद, अम्र की दुकान से उधार खरीद लाया और एक-दो दिन बाद उसे दुकान पर जाकर वापस कर दिया, मन में यह ख्याल था कि शायद वह दोस्त पैसे न भेजे तो मुझे देने पड़ेंगे। उसने दुकान के मालिकों को यह बात बता दी। कुहलुल जवाहर के मालिक ने कहा, 'मियाँ, ज़रा सी बात के लिए शर्मिंदा होना पड़ा, कीमत तो मेरी कुहलुल जवाहर की पुड़िया पर लिखी हुई है, वे तुम्हें कीमत भेज देंगे, तुम उन्हें कुहलुल जवाहर भेज दो।' विक्रेता के कहने पर, ज़ैद ने उसे दोबारा लाकर अपने दोस्त को भेज दिया। सवाल यह है कि इस स्थिति में क्या कुहलुल जवाहर का मालिक ज़ैद से कीमत वसूल करने का हकदार है? अब ज़ैद ने उसके कहने पर भेजा है। स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

जवाब: यकीनन वह वसूल कर सकता है क्योंकि दोस्त की फरमाइश का हासिल अगर फरमाइश न भी हो जिसमें हकीकत में ज़ैद खुद खरीदार ठहरा तो अधिक से अधिक वह एक वकील (प्रतिनिधि) तो है ही।

बिक्री के मामलों में अधिकार वकील की ओर लौटते हैं, निकाह के विपरीत जिसमें वकील केवल एक संदेशवाहक (सफीर) होता है, जैसा कि फुकहा (न्यायविदों) ने आम किताबों में स्पष्ट किया है। (त)

"व-अल हुक़ूक़ फ़िल बुयू'ई तरजी'उ इलल वकीली बिख़िलाफ़ुन निकाही फलैसा फ़ीही इल्ला मुअब्बि रन अव सफ़ीरन कमा सर्रहू बिही फ़ी आम्मातिल कुतुब।"

अतः वकील से कीमत वसूल करने का अधिकार निश्चित है और उसके सुझाव पर खरीदना इसमें बाधक नहीं हो सकता।

क्योंकि यह एक सलाह है, दबाव (इकराह) नहीं। इसलिए ज़ैद से खरीद उसकी सहमति से हुई है। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला सबसे बेहतर जानता है और उसका ज्ञान सबसे पूर्ण और दृढ़ है। (त)

"फ़इन्नहू इशारातुन ला इकराहा फ़ल-शिराउ इन्नमा वक़'अ मिन ज़ैदिन बिरदाहु वल्लाहु सुब्हानहू व तआला आलम व इल्मुहु जल्ला मज्दुहु अतंमु व अहकम।"

تو استصناع میں اگرچہ ایک مہینہ یا اس سے زائد نہ ہو جب ایسی تردید کی جائیگی عقد فاسد ہو گا اور فسخ واجب، ھذا ما ظھر لی، واللہ تعالیٰ اعلم (یہ وہ ہے جو میرے لئے ظاہر ہوا۔ اور اللہ تعالیٰ بہتر جانتا ہے۔ت)

مسئلہ ۲۲۵: زید کے دوست نے فرمائش لکھی کہ مجھ کو کحل الجواہر بھیج دو، زید عمرو کے دکان سے قرض خرید لایا، اور بعد دو ایک روز کے واپس کر دیا، اس کے یہاں جا کر اور خیال دل میں یہ تھا کہ شاید وہ دوست قیمت نہ بھیجے تو مجھ کو دینا ہوگی، غرض اس کے سامنے یعنی مالکانِ دکان کو دے دیا اور یہ اس سے کہا بھی مالک کحل الجواہر نے، میاں ذرا سی بات کے لئے پھر شرمندہ ہونا پڑا ہے، اور قیمت تو میری پڑیا کحل الجواہر پر لکھی ہوئی ہے وہ بھیج دیں گے تم کو قیمت، تم ان کو کحل الجواہر بھیج دو، پس بامرِ بائع دوبارہ زید نے اس کو لا کر بھیج دیا اپنے دوست کے پاس، سوال یہ ہے کہ اس صورت میں مالک کحل الجواہر زید سے قیمت وصول کرنے کا مجاز ہے یا نہیں؟ اب زید نے اس کے امر سے بھیجا ہے۔ بینوا توجروا

الجواب: ضرورت وصول کر سکتا ہے کہ فرمائش دوست کا حاصل اگر فرمائش نہ بھی ہو جس میں حقیقتہً خود زید مشتری ٹھہرے تو غایت درجہ تو وکیل سہی،

والحقوق في البیوع ترجع إلی الوکیل بخلاف النکاح فلیس فیه الا معبرا اوسفیراً کما صرحوا به في عامة الکتب۔

بیوع میں حقوق وکیل کی طرف لوٹتے ہیں، بخلاف نکاح کے کہ اس میں وکیل محض تعبیر کرنے والا سفیر ہوتا ہے، جیسا کہ فقہاء نے عام کتابوں میں اس کی تصریح کردی۔(ت)

تو وکیل سے قیمت وصول کرنے کا یقیناً اختیار ہے اور اس کے کہنے سے خریدنا اس کا مانع نہیں ہو سکتا۔

فانہ اشارۃ لا اکراہ فالشراء انما وقع من زید برضاہ واللہ سبحنہ و تعالٰی اعلم و علمہ جل مجدہ اتم واحکم۔

کیونکہ یہ مشورہ ہے اکراہ نہیں ہے اور زید سے بیع اس کی رضامندی سے ہوئی ہے اور اللہ تعالٰی بہتر جانتا ہے اور اس کا علم اتم و مستحکم ترین ہے۔(ت)

Fatawa Razawiya, Volume 17 (17)

Chapter of Currency Exchange (Explanation of Currency Exchange)

Problem 246: From Shahjahanpur: What do the scholars of religion say regarding this issue: is it permissible to apply a discount (batta) on a note, for example, to buy a hundred (100) rupee note for ninety-nine (99) or not? State the ruling and be rewarded.

The Answer: It is clear that the paper note is a modern invention that emerged only a very short time ago. At the time of the jurist-authors, its existence was non-existent, so a specific legal ruling is not found explicitly in their discourse. However, as far as can be considered at this time, from a jurisprudential (fiqhi) perspective, the permissibility of the questioned case seems apparent, and no reason for impermissibility is visible. It is evident that the cause (illah) for the prohibition of Riba (interest/usury) is 'measure/weight combined with genus'. If both of these are realized, then both excess (fadl) and delay (nasi'ah) are forbidden. If only one is present, then excess is permissible but delay is forbidden. If neither is present, then both are permissible.

[Arabic Box Text]: As mentioned in general books and in 'Tanwir al-Absar', its cause (illah) is measure/weight along with genus. If both are found, excess and credit/delay are forbidden, and if...

[Urdu Translation in Box]: As it is in general books, and in 'Tanwir al-Absar', the cause for the prohibition of excess is 'measure/weight along with genus'. If both of these are present, then excess and credit (delay) [are forbidden].

Page 601 of 715

फ़तावा रजविया, खंड 17 (१७)

बाबुल सर्फ़(मुद्रा विनिमय का विवरण)

समस्या 246: शाहजहांपुर से: इस मसले में धर्म के विद्वान क्या कहते हैं कि नोट पर बट्टा लगाना, उदाहरण के लिए सौ (१००) रुपये के नोट को निन्यानवे (९९) में खरीदना जायज़ है या नहीं? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: स्पष्ट है कि नोट एक ऐसी आधुनिक चीज़ है जिसे उत्पन्न हुए बहुत कम समय बीता है। न्यायविद् लेखकों के समय में इसका अस्तित्व बिल्कुल नहीं था कि उनके वचनों में इसका स्पष्ट विवरण पाया जाए। लेकिन इस समय जहाँ तक विचार किया जाता है, फ़िक़्ही (न्यायशास्त्रीय) दृष्टि में पूछी गई स्थिति की वैधता ही प्रतीत होती है और अवैधता का कोई कारण नज़र नहीं आता। यह स्पष्ट है कि रिबा (ब्याज) के हराम होने का कारण (इल्लत) 'मात्रा (माप/तोल) के साथ प्रकार (जिन्स)' है। यदि ये दोनों मौजूद हों, तो अधिकता (फज़्ल) और उधार (नसीया) दोनों हराम हैं। यदि एक हो, तो अधिकता जायज़ है लेकिन उधार हराम है। और यदि दोनों न हों, तो दोनों हलाल हैं।

[अरबी बॉक्स टेक्स्ट]: जैसा कि सामान्य पुस्तकों में है और 'तनवीर अल-अबसार' में है, इसका कारण मात्रा के साथ प्रकार है। यदि दोनों पाए जाएं तो अधिकता और उधार हराम हैं, और यदि...

[उर्दू अनुवाद बॉक्स में]: जैसा कि आम किताबों में है, और 'तनवीर अल-अबसार' में है कि ज़्यादती के हराम होने का कारण मात्रा के साथ प्रकार (जिन्स) है और ये दोनों मौजूद हों तो ज़्यादती और उधार [दोनों हराम हैं]।

पृष्ठ 715 का 601

باب الصرف (بیع صرف کا بیان)

مسئلہ ۲۴۶: از شاہجہاں پور: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ نوٹ پر بٹہ لگانا مثلاً سو (۱۰۰) روپے کا نوٹ ننانوے (۹۹) کو خریدنا جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: ظاہر ہے کہ نوٹ ایک ایسی حادث چیز ہے جسے پیدا ہوئے بہت قلیل زمانہ گزرا فقہائے مصنفین کے وقت میں اس کا وجود اصلا نہ تھا کہ ان کے کلام میں اس کا جزئیہ بالتصریح پایا جائے مگر اس وقت جہاں تک خیال کیا جاتا ہے نظر فقہی میں صورت مسئولہ کا جواز ہی معلوم ہوتا ہے اور عدم جواز کی کوئی وجہ نظر نہیں آتی پر ظاہر کہ علت تحریم ربا قدر مع الجنس ہے یہ اگر دونوں متحقق ہوں تو فضل و نسیہ دونوں حرام اور ایک ہو تو فضل جائز نسیہ حرام اور دونوں نہ ہوں تو دونوں حلال۔

[Arabic box]: کما فی عامۃ الاسفار و فی تنویر الابصار علتہ القدر مع الجنس فان وجدا حرم الفضل والنساء وان

[Urdu box]: جیسا کہ عام کتابوں میں ہے، اور تنویر الابصار میں ہے کہ زیادتی کے حرام ہونے کی علت قدر مع الجنس ہے اور یہ دونوں موجود ہوں تو زیادتی اور ادھار

Volume 17 Fatawa Razawiyya

[Arabic Box Text]: If both are absent, they are permissible; and if one of them is present, excess is permissible but credit (deferment) is forbidden. (1) [Urdu Box Text]: Both are forbidden, and if one is present, then excess is permissible and credit is forbidden. And if both are absent, then both excess and credit are permissible. (T)

In the matter at hand, it is obvious that both (conditions for riba) are absent and there is a lack of homogeneity because this is paper while that is silver. Also, there is a lack of fixed measure/weight because it is neither measured by volume (makil) nor weight (mauzun). Therefore, according to the established rule, both excess (fadl) and credit (nasiah) should be permissible here. This much suffices as an answer to the problem. However, a person not well-versed in jurisprudence might have a misconception: although in reality, a note is just the name for a piece of printed paper, in custom and convention, it is considered exactly like a rupee. This is why it serves as money everywhere. In transactions, no difference is perceived between giving a hundred-rupee note and a hundred rupees in cash. Generally, it is treated as an exchange of wealth (maliyat). Thus, it is as if those hundred rupees were bought for ninety-nine, and there is no doubt about its prohibition. Therefore, a ruling of prohibition should be given in the questioned case.

I say: For someone who has even a little insight into the noble art of Jurisprudence (Fiqh), dispelling this misconception is very easy. Dealing with a note as 'money' (thaman) does not truly make it thaman, i.e., one of the two precious metals (gold or silver). At most, it becomes a 'technical money' (thaman mustalahah), meaning something that is originally a commodity but has been designated as money by custom and convention, like coins (paisa) or cowries in some parts of India. Since there are no original mediums of exchange other than gold and silver, if people want to treat something else as money, they will inevitably evaluate it in terms of the natural medium of exchange. That is why the value of coins is stated as sixteen annas to a rupee. So, when custom wanted to treat notes as money, it was necessary to refer back to the original medium of exchange for its estimation, and thus it was decided that such-and-such note is for a hundred rupees, another for two hundred, another for a thousand. But this is purely an estimation; it does not necessitate the unity of genus and measure. Just as a rupee does not become the same as sixty-four paisas by the estimation of copper coins (fuloos), similarly, through this agreement, that note does not truly become a hundred rupees or silver. Thus, the realization of the cause of Riba (interest/usury) is not possible, nor are the contracting parties

bound by custom and convention such that they cannot increase or decrease the price they have fixed. They are the masters of their transaction; if they wish, they can sell a hundred-rupee item for one paisa or buy it for a thousand gold coins (Ashrafis). Only mutual consent is required. After all, did we not see that the number of coins in a rupee is always fixed by custom, yet scholars allowed selling eight annas for more than a fifty-paisa coin (athanni). And everyone knows that one gold coin (Ashrafi) is worth many rupees, but the jurists [said] one rupee...

(1) Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Riba, Matba' Mujtabai Delhi, 2/21

खंड 17 फ़तावा रज़विया

[अरबी बॉक्स पाठ]: यदि दोनों अनुपस्थित हैं, तो वे अनुमत हैं; और यदि उनमें से एक उपस्थित है, तो अधिकता अनुमत है लेकिन उधार (स्थगन) निषिद्ध है। (1) [उर्दू बॉक्स पाठ]: दोनों हराम (निषिद्ध) हैं और यदि एक मौजूद हो तो अधिकता हलाल और उधार हराम है। और यदि दोनों अनुपस्थित हों तो अधिकता और उधार दोनों हलाल हैं। (त)

और प्रस्तुत मामले में स्पष्ट है कि दोनों (रिबा की शर्तें) अनुपस्थित हैं और सजातीयता का अभाव है क्योंकि यह कागज है और वह चांदी है। साथ ही, निर्धारित माप/वजन का अभाव है क्योंकि यह न तो मकील (आयतन द्वारा मापा जाने वाला) है और न ही मौज़ून (वजन द्वारा मापा जाने वाला)। इसलिए, स्थापित नियम के अनुसार, यहाँ फ़ज़ल (अधिकता) और नसिया (उधार) दोनों हलाल होने चाहिए। समस्या का उत्तर तो इतने से ही हो गया, लेकिन एक गैर-फकीह (धर्मशास्त्र में कम जानकार) के मन में यह भ्रम पैदा हो सकता है कि हालाँकि वास्तविकता में नोट केवल एक छपे हुए कागज का नाम है, लेकिन प्रथा और प्रचलन में वह मानो बिल्कुल रुपया ही है। इसीलिए वह हर जगह रुपये का काम देता है। लेन-देन में सौ रुपये का नोट देने और सौ रुपये नकद देने में कोई अंतर नहीं माना जाता। आम तौर पर इसके साथ मालियत (धन) का व्यवहार किया जाता है। तो मानो वे सौ रुपये थे जो निन्यानबे में खरीदे गए और इसकी हराम होने में कोई संदेह नहीं है, तो प्रश्नगत मामले में हराम होने का आदेश दिया जाना चाहिए।

मैं कहता हूँ: जिसे न्यायशास्त्र (फिक्ह) की महान कला में थोड़ी भी सूझबूझ प्राप्त है, उसके लिए इस भ्रम का निवारण अत्यंत सरल है। नोट के साथ 'कीमत' (थमन) के रूप में व्यवहार करना उसे वास्तव में 'थमन' यानी 'अहद अल-नक़दैन' (सोना या चांदी) नहीं बना देगा। अधिक से अधिक यह 'पारिभाषिक मूल्य' (थमन मुस्तलहा) ठहरेगा, यानी वह जो मूल प्रकृति में वस्तु (जिंस) है लेकिन प्रथा और प्रचलन ने उन्हें मूल्य (थमन) बना दिया है, जैसे पैसे या भारत के कुछ क्षेत्रों में कौड़ियाँ भी। और चूंकि सोना-चांदी के अलावा कोई मूल मुद्रा नहीं है, इसलिए यदि लोग किसी अन्य वस्तु को मुद्रा बनाना चाहें, तो वे अनिवार्य रूप से प्राकृतिक मुद्रा के संदर्भ में उसका मूल्यांकन करेंगे। इसीलिए पैसों का मूल्य इस तरह बताया जाता है कि रुपये के सोलह आने। तो जब प्रथा के अनुसार नोट को मुद्रा बनाना चाहा गया, तो उसके आकलन में भी मूल मुद्रा की ओर लौटना आवश्यक हुआ और इस तरह यह तय किया गया कि अमुक नोट सौ रुपये का है, अमुक दो सौ का, अमुक हज़ार का। लेकिन यह केवल एक आकलन (तक़दीर) ही है, इससे जाति (जिंस) और माप की समानता कतई आवश्यक

नहीं होती। जैसे तांबे के सिक्कों (फ़ुलूस) के आकलन से चौसठ पैसे रुपये के समान नहीं हो जाते, वैसे ही इस समझौते से वह नोट वास्तव में सौ रुपये या चांदी नहीं बन जाएगा। अत; रिबा (ब्याज) के कारण का सिद्ध होना संभव नहीं है, और न ही अनुबंध करने वाले प्रथा और प्रचलन के पालन के लिए बाध्य हैं कि जो कीमत उन्होंने तय कर दी है वे उससे कम या अधिक न कर सकें। वे अपने लेन-देन के मालिक हैं; यदि वे चाहें तो सौ रुपये की चीज़ एक पैसे में बेचें या एक हज़ार अशर्फ़ियों (सोने के सिक्कों) में खरीदें। केवल आपसी सहमति आवश्यक है। आखिर, क्या हमने नहीं देखा कि एक रुपये में पैसे प्रथा के अनुसार हमेशा निश्चित रहते हैं, फिर भी विद्वानों ने आठ आने (पचास पैसे) को अठन्नी से अधिक के बदले बेचना जायज़ रखा। और सभी जानते हैं कि एक अशरफी कई रुपयों की होती है लेकिन न्यायविदों ने एक रुपये...

(1) दुर्रे मुख्तार, किताबुल बुयूअ, बाबुर रिबा, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 2/21

عدما حلا وان وجد احدھما حل الفضل وحرم النساء (۱) دونوں حرام ہیں اور اگر ایک موجود ہو تو زیادتی حلال اور ادھار حرام ہے اور اگر دونوں معدوم ہوں تو زیادتی اور ادھار دونوں حلال ہیں۔ (ت)

اور ما نحن فیہ میں بالبداہۃ دونوں مفقود و عدم مجانست اس لئے کہ یہ کاغذ ہے وہ چاندی، اور انعدام قدر اس طرح کہ یہ نہ مکیل ہے نہ موزون، پس حسب ضابطہ مقررہ یہاں فضل و نسیہ دونوں حلال ہونا چاہئے، مسئلہ کا جواب تو اسی قدر سے ہو گیا لیکن غیر فقیہ کو اس جگہ یہ وہم گزرتا ہے کہ ہر چند اصل حقیقت میں نوٹ صرف ایک چھپے ہوئے کا نام ہے مگر عرف واصطلاح میں گویا وہ بعینہ روپیہ ہے اسی لئے ہر جگہ روپیہ کا کام دیتا ہے لین دین میں سو روپے کا نوٹ دینے اور سو روپے نقد دینے میں ہرگز تفاوت نہیں سمجھا جاتا عموماً اس کے ساتھ معاملہ ائتمان برتا جاتا ہے تو گویا وہ سو روپے تھے کہ بعض ننانوے کے خریدے گئے اور اس کی حرمت میں کچھ شبہ نہیں تو صورت مسئولہ میں حکم تحریم دیا چاہئے۔ اقول: جسے فن شریف فقہ میں کچھ بھی بصیرت حاصل ہے اس کے نزدیک اس کا وہم کا ازالہ نہایت آسان، نوٹ کے ساتھ تو معاملہ ائتمان برتا جانا اسے حقیقۃً ثمن یعنی احد النقدین نہ کر دے گا غایت یہ کہ ائتمان مصطلحہ سے ٹھہرے یعنی وہ کہ اصل خلقت میں سلع وکالا ہیں مگر عرف و اصطلاح نے انہیں ثمن ٹھہرا لیا ہے جیسے پیسے یا بعض بلادِ ہند میں کوڑیاں بھی، اور از انجا کہ ائتمان اصلیہ سوا زر و سیم کے کچھ نہیں تو اہل عرف اگر غیر ثمن کو ثمن کرنا چاہیں ناچار اس کی تقدیر ائتمان خلقیہ سے کریں گے، اسی لئے پیسوں کی مالیت یو نہی بتائی جاتی ہے کہ روپے کے سولہ آنے پس نوٹ کو جب عرفاً ثمن کرنا چاہا اس کے اندازے میں بھی اصل ثمن کی جانب رجوع ضرور ہوئی اور یوں قرار دیا گیا کہ

فلاں نوٹ سو روپے کا، فلاں دو سو کا، فلاں ہزار کا، مگر یہ صرف تقدیر ہی تقدیر ہے اس سے اتحاد جنس و قدر ہرگز لازم نہیں آتا جیسے اندازہ فلوس سے چونستھ پیسے روپے کا عین نہ ہو گئے یوں ہی اس قرارداد سے وہ نوٹ حقیقۃً سو روپے یا چاندی نہ ہو جائے گا، پس علت ربا کا تحقق ممکن نہیں نہ عاقدین اتباع عرف واصطلاح پر مجبور کہ جو قیمت انہوں نے ٹھہرا دی یہ اس سے کم و بیش نہ کر سکیں یہ اپنے معاملہ کے مختار ہیں چاہیں سو روپے کی چیز ایک پیسے کو بیچیں یا ہزار اشرفی کو خریدیں صرف تراضی درکار ہے، آخر نہ دیکھا کہ ایک روپے کے پیسے بہ تعیین عرف ہمیشہ معین رہتے ہیں مگر علماء نے اٹھنی سے زیادہ کے عوض میں آٹھ آنے بیچنا روا رکھا، اور سب جانتے ہیں کہ ایک اشرفی کئی روپے کی ہوتی ہے لیکن فقہانے ایک روپے

(۱) درمختار کتاب البیوع باب الربو مطبع مجتبائی دہلی ۲/۲۱

Fatawa Razawiya Volume Seventeen (17)

If purchasing one gold coin (Ashrafi) in exchange for it was deemed permissible, then what is the reason? It is the same difference in genus (kind), after which there is no harm in disparity (inequality in amount).

In al-Durr al-Mukhtar: "If someone gives a money changer a large dirham and says: 'Give me in exchange for half of it copper coins (fulus) (with 'half' being the description of half) and [for the other] half (a small silver dirham) minus a habba', it is valid (and the half minus a habba will be against its equivalent and the rest against the copper coins)."[1]

It is stated in Durr-e-Mukhtar that if someone gave a large dirham to a money changer and said, "Give me for half a dirham a small dirham which is one grain (habba) less than half of a large dirham," then this sale is valid. The small dirham, which is one grain less than half of the large one, will be set against its equivalent, and the rest will be set against the small copper coins. (T)

And in the same [book] it is stated:

The sale of two dirhams and one dinar for one dirham and two dinars is valid, due to exchanging [each] kind for a different kind.[2]

The sale of two dirhams and one dinar in exchange for one dirham and two dinars is valid because each genus will be set against a genus different from its own. (T)

When it is legally permissible to this extent, what could be the harm in buying a hundred-rupee note for ninety-nine? For here, neither is the measure unified nor the kind the same. This is the ruling for buying and selling where profit and benefit are legally allowed. However, giving a loan in such a way that one gives ninety-nine rupees and will receive a hundred-rupee note in return will undoubtedly be prohibited.

"For every loan that draws a benefit is usury (riba); both Hadith and Fiqh have spoken of this."[3]

Because any loan that draws a profit is interest (usury). Hadith and Jurisprudence (Fiqh) are explicit on this. (T)

To the extent that scholars deemed bills of exchange (Hundawi) impermissible due to the benefit of avoiding the risk of travel, as they mentioned at the end of the Book of Transfer (Kama zakaruuhu aakhir kitab al-hawala) (as the jurists mentioned it at the end of the Book of Transfer. T). Similarly, depositing money in advance with a grocer

on the condition that they will purchase items from time to time as needed was declared disliked (makruh) solely because of this benefit.

As in "Al-Karahiyyah" in Al-Hidayah and others, shortly before miscellaneous issues.	**As mentioned in Al-Hidayah etc., under the Book of Disliked Acts (Kitab al-Karahiyyah), shortly before miscellaneous issues. (T)**

Even though these two benefits are not wealth, how can an inclination towards value be correct? Certainly, this matter is contrary to the purpose of Sharia (that protection...

---

[1] Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu, Bab al-Sarf, Mujtabai Press, Delhi, 2/57 [2] Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu, Bab al-Sarf, Mujtabai Press, Delhi, 2/55 [3] Kanz al-Ummal, Hadith 15512, Muassasat al-Risalah, Beirut, 6/238

फ़तावा रज़विया जिल्द सत्रहवीं (17)

के बदले एक अशर्फी खरीदना जायज़ ठहराया तो यह वजह क्या है वही इख्तिलाफ़-ए-जिन्स (श्रेणी में अंतर) जिसके बाद तफ़ाज़ुल (मात्रा में असमानता) में कुछ हर्ज नहीं।

'अद-दुर्र अल-मुख्तार' में है: "यदि कोई व्यक्ति किसी सर्राफ़ को एक बड़ा दिरहम देता है और कहता है: 'मुझे इसके आधे के बदले में तांबे के सिक्के(फ़ुलूस) दे दो (आधा शब्द आधे के विवरण के रूप में) और बाकी आधे के बदले (एक छोटा चांदी का दिरहम) एक हब्बा कम', तो यह वैध है (और एक हब्बा कम वाला आधा हिस्सा उसके समान मूल्य के बराबर होगा और बाकी तांबे के सिक्कों के बराबर होगा)।"[1]

'दुर-ए-मुख्तार' में है कि किसी ने सर्राफ़ को एक बड़ा दिरहम देते हुए कहा कि मुझे आधे दिरहम के एवज़ एक छोटा दिरहम जो बड़े दिरहम के आधे से एक हब्बा (अनाज का दाना/वज़न की इकाई) कम हो दे दे, तो यह बैअ (बिक्री) सही है और छोटा दिरहम जो बड़े के आधे से एक हब्बा कम हो वह अपने मिस्ल (समान) के मुक़ाबिल हो जाएगा और बाक़ी पैसों के मुक़ाबिल होगा। (त)

और इसी में है:

दो दिरहम और एक दीनार की बैअ एक दिरहम और दो दीनारों के बदले में सही है, क्योंकि प्रत्येक जिन्स (श्रेणी) को उसके विपरीत जिन्स के मुक़ाबिल रखा जाएगा।[2]

दो दिरहम और एक दीनार की बैअ एक दिरहम और दो दीनारों के बदले में सही है क्योंकि हर जिन्स को अपनी जिन्स के ख़िलाफ़ (दूसरी श्रेणी) के मुक़ाबिल क़रार दिया जाएगा। (त)

जब यहाँ तक शरअन (धार्मिक रूप से) जायज़ रहा तो सौ रुपये का नोट निन्यानवे के एवज़ खरीदने में क्या हर्ज हो सकता है कि यहाँ तो न क़दर मुत्तहिद (समान माप) न जिन्स वाहिद (एक ही श्रेणी), यह हुक्म बैअ-ओ-शिरा (खरीद-बिक्री) का है जहाँ नफ़अ-ओ-इंतिफ़ा (लाभ और लाभ उठाना) शरअन रवा है, अलबत्ता क़र्ज़ इस तरह पर देना कि निन्यानवे रुपये देता हूँ और उनके बदले सौ रुपये का नोट लेगा, बेशक ममनूअ (वर्जित) होगा।

"निश्चित रूप से हर वह ऋण जो लाभ लाता है, वह सूद (ब्याज) है; हदीस और फ़िक़्ह (न्यायशास्त्र) ने इस पर स्पष्ट रूप से कहा है।"[3]

क्योंकि जो क़र्ज़ नफ़अ (लाभ) को खींचे वह सूद (ब्याज) है, हदीस और फ़िक़्ह इस पर नातिक़ (स्पष्ट) हैं। (त)

यहाँ तक कि उलेमा ने तो रास्ते के ख़तरे से बचने के लाभ के कारण हुंडवी (विनिमय बिल) को नाजायज़ ठहराया जैसा कि उन्होंने 'किताब अल-हवाला' के अंत में उल्लेख किया है (जैसा कि फ़ुक़हा ने इसका ज़िक्र 'किताब अल-हवाला' के आख़िर में किया है। त) और इसी तरह परचूनिये (बक़्क़ाल) के पास इस शर्त पर रुपया पेशगी रख देना कि ज़रूरत के अनुसार समय-समय पर चीज़ें खरीदते रहेंगे, सिर्फ इसी नफ़अ की वजह से मकरूह (नापसंद) फ़रमाया।

जैसा कि 'अल-हिदाया' आदि में 'किताब अल-कराहिय्या' के अंतर्गत विविध मसलों से थोड़ा पहले वर्णित है।	**जैसा कि हिदाया वग़ैरह में 'किताब अल-कराहियत' के तहत मसाइल-ए-मुतफ़र्रिका (विविध मुद्दों) से थोड़ा पहले मज़कूर (उल्लिखित) है। (त)**

हालाँकि ये दोनों लाभ कोई माल (संपत्ति) नहीं हैं, तो मालियत (मूल्यवान होने) की ओर झुकाव कैसे सही होगा? बेशक यह मामला शरीयत के उद्देश्य (कि सुरक्षा...)

---

[1] दुर-ए-मुख्तार, किताब अल-बुयू, बाब अल-सर्फ़, मतबा मुज्तबाई, दिल्ली, 2/57 [2] दुर-ए-मुख्तार, किताब अल-बुयू, बाब अल-सर्फ़, मतबा मुज्तबाई, दिल्ली, 2/55 [3] कंज़ अल-उम्माल, हदीस 15512, मुअस्ससत अल-रिसाला, बेरुत, 6/238

کے عوض ایک اشرفی خریدنا جائز ٹھہرایا تو یہ وجہ کیا ہے وہی اختلافِ جنس جس کے بعد تفاضل میں کچھ حرج نہیں۔

فی الدر المختار ومن اعطی صیر فیا در ہما کبیرا فقال اعطنی بہ نصف درہم فلوسا(بالنصف صفة نصف) ونصفا(من الفضة صغیرا) الاحبة صح (ویکون النصف الاحبة بمثلہ ومابقی من الفلوس)[1]

در مختار میں ہے کہ کسی نے صراف کو ایک بڑا درہم دیتے ہوئے کہا کہ مجھے نصف درہم کے عوض ایک چھوٹا درہم جو بڑے درہم کے نصف سے ایک حبہ کم ہو دے دے تو یہ بیع صحیح ہے اور چھوٹا درہم جو بڑے کے نصف سے ایک حبہ کم ہو وہ اپنے مثل کے مقابل ہو جائیگا اور باقی پیسوں کے مقابل ہوگا۔(ت)

اور اسی میں ہے:

صح بیع درہمین ودینار بدرہم ودینارین لصرف الجنس بخلاف جنسہ [2]

دو درہم اور ایک دینار کی بیع ایک درہم اور دو دیناروں کے بدلے میں صحیح ہے کیونکہ ہر جنس کو اپنی جنس کے خلاف کے مقابل قرار دیا جائے گا۔ (ت)

جب یہاں تک شرعاً جائز رہا تو سو روپے کا نوٹ ننانوے کے عوض خریدنے میں کیا حرج ہو سکتا ہے کہ یہاں تو نہ قدر متحد نہ جنس واحد، یہ حکم بیع وشراء کا ہے جہاں نفع و انتفاع شرعاً روا، البتہ قرض اس طرح پر دینا کہ ننانوے روپے دیتا ہوں اور ان کے بدلے سو روپے کا نوٹ لے گا بے شک ممنوع ہوگا۔

فان کل قرض جر منفعة فھو ربو نطق کیونکہ جو قرض نفع کو کھینچے وہ سود ہے حدیث اور بذلك الحدیث و الفقه [3] فقہ اس پر ناطق ہیں (ت)

یہاں تک کہ علما نے تو منفعتِ سقوطِ خطر طریق کے سبب ہنڈوی کو ناجائز ٹھہرایا کما ذکروہ آخر کتاب الحوالۃ(جیسا کہ فقہا نے اس کا ذکر کتاب الحوالہ کے آخر میں کیا ہے۔ت) اور اسی طرح بقال کے پاس اس شرط پر روپیہ پیشگی رکھ دینا کہ حسبِ حاجت وقتاً فوقتاً چیزیں خریدتے رہیں گے صرف اسی نفع کی وجہ سے مکروہ فرمایا

کما فی الکراھیة الھدایة وغیرھا بقبیل مسائل متفرقة. جیسا کہ ہدایہ وغیرہ میں کتاب الکراہیتہ کے تحت مسائل متفرقہ سے تھوڑا پہلے مذکور ہے۔(ت)

حالانکہ یہ منفعتین کوئی مال نہیں تو مالیت میں رجحان کیونکر درست ہو گا بیشک یہ امر مقصدِ شرع کے (کہ صیانت

---

[1] درمختار کتاب البیوع باب الصرف مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۵۷ [2] درمختار کتاب البیوع باب الصرف مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۵۵ [3] کنزالعمال حدیث ۱۵۵۱۲ موسسة الرسالة بیروت ۶/ ۲۳۸

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

...it is the property of people, and that is the reason for the prohibition of Riba (interest/usury) as mentioned in Al-Fath. This is what has become clear to me. And Allah Almighty knows best.

Issue 277: 29 Rajab 1305 AH Sent by: Sheikh Hussain Bakhsh Sahib Razvi Farooqi Khairabadi.

[Persian Question]: What do the noble scholars, the ornamenters of the throne of the clear Sharia and the clerics of the firm religion, say regarding this matter: Zaid brought a dirham to Bakr and said, "Take this dirham and give me coins (filoos)." Bakr gave Zaid some current coins according to the market rate and said, "A few coins are short, come and take them later." Zaid came back later and took the remaining coins. Is this act according to the noble Sharia impermissible or permissible? Are the remaining coins taken later considered Riba or not? Please answer so you may be rewarded, with references to the book, for to Him is the return and resort, and Allah Almighty knows best what is correct.

[Urdu Translation of Question]: What do the noble scholars of the firm religion, who are seated on the throne of Sharia, say regarding this issue: Zaid brought a dirham to Bakr and said, "Take this dirham and give me its change in coins." Bakr gave Zaid the current coins according to the market rate and while giving said, "A few coins are short, come and take them some other time." Accordingly, Zaid came at a later time and took the remaining coins. From the perspective of the noble Sharia, is this act permissible or impermissible? Will the remaining coins taken later be considered interest (sood) or not? Please explain with references from books and receive rewards. The return is to Allah Almighty alone, and He knows best. (T)

Answer: [Persian Answer]: In the sale of coins for dirhams, according to the prevalent school of thought, mutual possession (hand-to-hand exchange) is not a condition; rather, possession from one side only is sufficient. Thus, when Zaid gave the dirham to Bakr, possession from one side was established. Even if Zaid had not taken a single coin at that moment, it would have been permissible. Furthermore, some were taken at that time and some at another, and as long as the coins remained current and did not become obsolete, it remained permissible, and no possibility of Riba was found. It is mentioned in Al-Hindiyya, citing Al-Mabsut: "If a man buys coins for dirhams and pays the price..."

[Urdu Translation of Answer]: According to the prevalent school of thought, in the sale of coins for dirhams, two-sided possession is not a condition, rather possession from just one side is sufficient. Therefore, when Zaid gave the dirham to Bakr, possession was established from one side. Even if Zaid had not taken a single coin at that time, it would still be permissible. However, here some coins were taken at that time and some at another time, and until that second time, those coins were current and had not become obsolete, so this is permissible, and there is no possibility of interest in it. It is mentioned in Hindiyya with reference to Mabsut that a person, in exchange for dirhams...

फ़तावा रज़विया (खण्ड 17)

...लोगों का माल है, और वही रिबा (ब्याज) की हरामियत का कारण है जैसा कि अल-फ़तह में है। यही बात मुझ पर स्पष्ट हुई है। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला 277: 29 रजब 1305 हिजरी प्रेषक: शेख हुसैन बख्श साहब रज़वी फ़ारूक़ी खैराबादी।

[फ़ारसी प्रश्न]: शरीयत-ए-मुबीन के मसनद-आरा और दीन-ए-मतीन के मौलवी इस बारे में क्या कहते हैं कि ज़ैद बक्र के पास एक दिरहम लाया और कहा कि यह दिरहम ले लो और मुझे फ़ुलूस (सिक्के) दे दो। बक्र ने बाज़ार की मौजूदा दर के हिसाब से ज़ैद को सिक्के दिए और कहा कि कुछ सिक्के कम हैं, बाद में आकर ले लेना। ज़ैद बाद में किसी समय आया और बाकी सिक्के ले लिए। शरीयत के अनुसार यह काम जायज़ है या नाजायज़? क्या बाद में लिए गए बाकी सिक्के ब्याज (रिबा) होंगे या नहीं? किताबों के हवाले से जवाब देकर पुण्य प्राप्त करें, और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

[उर्दू अनुवाद प्रश्न]: शरीयत के मसनद पर सुशोभित होने वाले दीने मतीन के उलेमा-ए-किराम इस मसले में क्या इर्शाद फरमाते हैं कि ज़ैद ने बक्र के पास एक दिरहम लाया और कहा कि यह दिरहम ले लो और इसके पैसे दे दो, बक्र ने बाज़ार के भाव के अनुसार ज़ैद को पैसे देते हुए कहा कि कुछ पैसे कम हैं, फिर कभी आकर ले जाना। चुनाँचे ज़ैद बाद में किसी समय आया और बाकी पैसे ले लिए। शरीयत के अनुसार यह काम जायज़ है या नाजायज़? क्या बाद में लिए गए बाकी पैसे सूद (ब्याज) होंगे या नहीं? किताबों के हवाले से बयान फरमाएँ और पुण्य प्राप्त करें। अल्लाह तआला की ओर ही लौटकर जाना है और वही बेहतर जानता है। (त)

उत्तर: [फ़ारसी उत्तर]: दिरहम के बदले सिक्कों की बिक्री में प्रचलित पंथ के अनुसार दोनों पक्षों का कब्ज़ा (तक़ाबज़) शर्त नहीं है, बल्कि एक तरफ का कब्ज़ा ही काफी है। जब ज़ैद ने बक्र को दिरहम दे दिया तो एक तरफ से कब्ज़ा हो गया। अगर ज़ैद उस वक्त एक पैसा भी न लेता तब भी यह जायज़ होता। जबकि यहाँ कुछ पैसे उस वक्त और कुछ बाद में लिए गए, और तब तक वे सिक्के चलन में थे, बेकार नहीं हुए थे, इसलिए यह जायज़ रहा और इसमें ब्याज की कोई संभावना नहीं मिली। हिंदिया में मबसूत के हवाले से दर्ज है कि जब कोई व्यक्ति दिरहम के बदले सिक्के खरीदे और कीमत चुका दे...

[उर्दू अनुवाद उत्तर]: प्रचलित पंथ के अनुसार, दिरहम के बदले पैसों की खरीद-बिक्री में दोनों पक्षों का कब्ज़ा शर्त नहीं है, बल्कि केवल एक पक्ष का कब्ज़ा ही पर्याप्त है। इसलिए जब ज़ैद ने बक्र को

दिरहम दे दिया, तो एक पक्ष से कब्ज़ा सिद्ध हो गया। अगर ज़ैद उस समय एक पैसा भी न लेता तब भी जायज़ था, जबकि यहाँ तो कुछ पैसे उस समय और कुछ दूसरे समय लिए गए, और दूसरे समय तक वे पैसे प्रचलित थे, बेकार नहीं हुए थे। तो यह जायज़ है, और इसमें ब्याज की कोई संभावना नहीं है। हिंदीया में मबसूत के हवाले से उल्लेख है कि एक व्यक्ति ने दिरहम के बदले...

اموالِ ناس ہے اور وہی علتِ تحریم ربا کما فی الفتح (جیسا کہ فتح میں ہے -ت) بالکل خلاف ہے ھذا ما ظھر لی (یہ وہ ہے جو میرے لئے ظاہر ہوا -ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۷۷: ۲۹ رجب ۱۳۰۵ھ مرسلہ شیخ حسین بخش صاحب رضوی فاروقی خیر آبادی

[فارسی سوال]: چہ میفرمایند مسند آرایانِ شرعِ مبین و مولویانِ دینِ متین در بابِ کہ زید یک درم نزدِ بکر آورد و گفت کہ این درم برگیر و فلوس بدہ بکر منجملہ نرخِ فلوسِ رائج الوقت زید را داد گفت کہ فلوسے چند بموجب نرخ کم اند باز آمد برگیرد لطیف ایں عمل نامشروع ست یا جائز و فلوسہائے باقی ماندہ از روئے شرعِ شریف ربا باشد یا نہ؟ بینوا توجروا بحوالہ کتاب والیہ المرجع والمآب واللہ تعالٰی اعلم بالصواب

[اردو ترجمہ سوال]: مسندِ شریعت پر جلوہ افروز ہونے والے دین متین کے علمائے کرام اس مسئلہ میں کیا ارشاد فرماتے ہیں کہ زید ایک درہم بکر کے پاس لایا اور کہا یہ درہم لے لو اور اس کے پیسے دے دو، بکر نے بازار کے نرخ کے مطابق رائج الوقت پیسے زید کو دیتے ہوئے کہا کچھ پیسے کم ہیں پھر کسی وقت آکر لے جانا، چنانچہ زید بعد میں کسی وقت آیا اور باقی پیسے لے لئے شریعتِ لطیفہ کی رو سے یہ عمل جائز ہے یا ناجائز؟ بقیہ پیسے جو بعد میں لئے گئے سود ہونگے یا نہیں؟ بحوالہ کتب بیان فرمائیں اور اجر پائیں، اللہ تعالٰی کی طرف ہی لوٹ کر جانا ہے اور وہی بہتر جانتا ہے۔ (ت)

الجواب: [فارسی جواب]: در بیعِ فلوس بدرہم برمذہبِ رائج تقابض شرط نیست ہمیں قبضہ یک جانب کافیست پس چون زید درہم بہ بکر داد قبضہ از یک طرف متحقق شد، اگر زید آن دم یک پول ہم

نگرفته روا بودے حالانکہ بعض آں وقت و بعض دیگر وقت دیگر گرفت و ہنوز فلس رائج بودہ کاسد نشدہ ہم جائز ماند و پیچ احتمالِ ربا را نیافت فی الھندیۃ عن المبسوط اذا اشتری الرجل فلوسا بدراہم و نقد الثمن

[اردو ترجمہ جواب]: رائج مذہب کے مطابق پیسوں کی درہم کے ساتھ بیع میں دو طرفہ قبضہ شرط نہیں بلکہ صرف ایک طرف کا قبضہ کافی ہے لہذا جب زید نے بکر کو درہم دے دیا تو ایک طرف سے قبضہ متحقق ہو گیا، اگر زید اس وقت ایک پیسہ بھی نہ لیتا تب بھی جائز تھا حالانکہ یہاں تو کچھ پیسے اس وقت اور کچھ دوسرے وقت اس لئے اور دوسرے وقت تک وہ پیسے رائج تھے کھوٹے نہیں ہوئے تو یہ جائز ہے، اور سود کا اس میں کوئی احتمال نہیں، ہندیہ میں مبسوط کے حوالہ سے مذکور ہے کہ ایک شخص نے درہموں کے بدلے

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Table containing text in Arabic and Urdu columns] [Arabic column (Left)]: "And the copper coins were not with the seller; the sale is permissible." (1) And in it, cited from al-Hawi and others: "If someone buys a hundred copper coins for one dirham, takes possession of the dirham, and takes possession of fifty coins, and then the coins become obsolete, the sale becomes void in half. If they did not become obsolete, the sale is not invalid, and the buyer has the right to the remaining coins." (2) End of summary. I have explained this issue in full detail in another fatwa. And Allah Almighty knows best.

[Urdu column (Right)]: ...bought coins and paid the price in cash while the seller did not have the coins at that time, then this sale is permissible. In the same (source), with reference to al-Hawi etc., it is mentioned that if someone bought a hundred coins for one dirham, the seller took possession of the dirham and the buyer took possession of fifty coins, and then the coins became worthless, the sale became invalid for half. If they had not become worthless, the sale would not be invalid, and the buyer would have the right to the remaining coins. End of summary. I have presented this issue with all its details in another fatwa, and Allah Almighty knows best. (T)

Problem 248: From Paksar Anwala, Post Office Rasulpur, District Rae Bareli, inquired by Abdul Wahab, 20 Ramadan 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding this issue: Zaid changed a rupee into coins from Bakr. Bakr took the rupee and gave twelve annas to Zaid at that moment and said, "I don't have four annas right now, I will give them tomorrow or the day after." Is it permissible for Zaid to take the remaining money on the second or third day, or will it be considered usury (riba)? Explain and you shall be rewarded.

The Answer: In the exchange of rupees and copper coins, possession from one side is sufficient. In the described situation, there will be no usury. And Allah Almighty knows best.

Problem 249: From Kanpur, Gorakhpur Shop, sent by Muhammad Ji Sahib, 15 Jumada al-Akhira 1338 AH. What do the scholars of religion say regarding this issue: A current banknote of one hundred rupees. Is it permissible to take change for it with a difference in amount (more or less)? Whether the change is in silver rupees or smaller notes, is it permissible to take a hundred-rupee note against a hundred

rupees in cash, or to take some commission (discount/premium) making it more or less? Explain and you shall be rewarded.

Footnotes: 1. Fatawa Hindiyya, Kitab al-Sarf, Chapter 2, Section 3, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/224 2. Fatawa Hindiyya, Kitab al-Sarf, Chapter 2, Section 3, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/225

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

[अरबी और उर्दू कॉलम वाली तालिका] [अरबी कॉलम (बायां)]: "और विक्रेता के पास तांबे के सिक्के नहीं थे; बिक्री जायज़ है।" (1) और उसी में, अल-हावी और अन्य के हवाले से: "यदि कोई एक दिरहम के बदले सौ सिक्के खरीदता है, दिरहम पर कब्ज़ा कर लेता है और पचास सिक्कों पर कब्ज़ा कर लेता है, फिर सिक्के अप्रचलित हो जाते हैं, तो बिक्री आधे में अमान्य हो जाती है। यदि वे अप्रचलित नहीं हुए, तो बिक्री अमान्य नहीं है, और खरीदार के पास शेष सिक्कों का अधिकार है।" (2) सारांश समाप्त। मैंने इस मसले को दूसरे फ़तवे में पूरी तफ़सील (विस्तार) के साथ बयान किया है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

[उर्दू कॉलम (दायां)]: ...पैसे खरीदे और कीमत नकद अदा कर दी जबकि विक्रेता के पास उस समय पैसे मौजूद नहीं थे, तो यह बिक्री जायज़ है। उसी में 'हावी' आदि के हवाले से ज़िक्र है कि अगर किसी ने एक दिरहम के बदले सौ पैसे खरीदे, विक्रेता ने दिरहम पर कब्ज़ा कर लिया और खरीदार ने पचास पैसों पर कब्ज़ा कर लिया, अब पैसे खोटे (बेकार) हो गए, तो आधे में बिक्री फ़ासिद (अमान्य) हो गई। अगर वे खोटे न होते तो बिक्री फ़ासिद न होती और खरीदार को बाकी पैसे लेने का हक होता। यह सारांश है। इस मसले को मैंने दूसरे फ़तवे में पूरी तफ़सील के साथ पेश किया है, और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 248: पाक्सार अनवाला, डाकखाना रसूलपुर, जिला रायबरेली से, मुस्तौ़ला (पूछने वाले) अब्दुल वहाब, 20 रमज़ान 1339 हिजरी। उलमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि ज़ैद ने बक्र से एक रुपये के पैसे तुड़वाए (भनाए)। बक्र ने रुपया ले लिया और उसी वक्त ज़ैद को बारह आने दे दिए और कहा, "चार आने इस समय नहीं हैं, कल या परसों दे दूँगा।" अब ज़ैद के लिए बाकी पैसा दूसरे या तीसरे दिन लेना जायज़ है या यह रिबा (ब्याज) में आएगा? बयान फ़रमाएं सवाब मिलेगा।

अल-जवाब: रुपये और पैसों के विनिमय (तबादले) में एक तरफ का कब्ज़ा काफ़ी है। बयान की गई सूरत में कोई रिबा नहीं होगा। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 249: कानपुर, गोरखपुर दुकान से, मुरसला (भेजने वाले) मुहम्मद जी साहब, 15 जमादी-उल-आख़िर 1338 हिजरी। उलमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि मौजूदा सौ रुपये का नोट है। क्या उसे कम या ज़्यादा पर भुनाना (खुर्दा लेना) जायज़ है? भुनाने में नकद रुपये हों या छोटे नोट हों,

सौ रुपये नकद के बदले सौ रुपये का नोट लिया जाए या उस पर कुछ बट्टा लेकर कमी-बेशी जायज़ है या नहीं? बयान फ़रमाएं, सवाब मिलेगा।

फुटनोट्स: 1. फतावा हिन्दिया, किताबुस सर्फ़ अल-बाबुल-सानी, अल-फ़सलुल-सालीस, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/224 2. फतावा हिन्दिया, किताबुस सर्फ़ अल-बाबुल-सानी, अल-फ़सलुल-सालीस, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/225

पृष्ठ 605 का 715

فتاویٰ رضویہ (جلد ہفدہم ۱۷)

[عربی اور اردو کالموں پر مشتمل جدول] [عربی کالم (بائیں)]: ولم تکن الفلوس عند البائع بالبیع جائز اھ 1 وفیھا عن الحاوی وغیرہ لو اشتری مائۃ فلس بدرھم فقبض الدرھم وقبض خمسین فلسا فکسدت بطل فی النصف ولو لم تکسد لم یفسد وللمشتری مابقی من الفلوس 2 اھ ملخصاً و ایں مسئلہ را در فتوائے دیگر ہر چہ تمامتر رنگ تفصیل دادہ ام۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

[اردو کالم (دائیں)]: میں پیسے خریدے اور ثمن نقد ادا کردئے جبکہ بائع کے پاس اس وقت پیسے موجود نہیں تھے تو یہ بیع جائز ہے اھ، اسی میں حاوی وغیرہ کے حوالہ سے مذکور ہے کہ اگر کسی نے ایک درہم کے عوض سو پیسے خریدے بائع نے درہم پر قبضہ کرلیا اور مشتری نے پچاس پیسوں پر قبضہ کرلیا اب پیسے کھوٹے ہوگئے تو نصف میں بیع فاسد ہوگئی اگر وہ کھوٹے نہ ہوتے تو بیع فاسد نہ ہوتی اور مشتری کو باقی پیسے لینے کا حق ہوتا اھ ملخص اس مسئلہ کو میں نے دوسرے فتویٰ میں تمام تر تفصیل کا رنگ دیا ہے، اور اللہ تعالیٰ بہتر جانتا ہے۔ (ت)

مسئلہ ۲۴۸: از پکسر انوالہ ڈاکخانہ رسول پور ضلع رائے بریلی مسئولہ عبد الوہاب ۲۰ رمضان ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے بکر سے ایک روپیہ کے پیسے بھنائے بکر نے روپیہ لے کر بارہ آنے اسی وقت زید کو دے دئے اور کہا چار آنے اس وقت نہیں کل یا پرسوں دے دوں گا اب بقیہ پیسہ زید کو دوسرے یا تیسرے دن لینا جائز ہے یا ر با لازم آئے گا۔ بینوا توجروا

الجواب: روپے اور پیسوں کے مبادلہ میں ایک طرف کا قبضہ کافی ہے صورت مسطورہ میں کوئی ربا نہ ہوگا، واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۲۲۹: از کانپور گور کھپور دکان مرسلہ محمد جی صاحب ۱۵ جمادی الآخرہ ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ نوٹ مروجہ مبلغ یک صد روپیہ کا ہے اس کا خوردہ نوٹ لیا جائے کم بیش پر جائز ہے یا نہیں؟ خوردہ میں نقد روپیہ ہو یا چھوٹے نوٹ ہوں سو روپے نقد کے مقابلہ میں سو روپے کا نوٹ لیا جائے یا اس پر کچھ بٹہ لے کر کمی بیشی جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

حواشی: 1 فتاویٰ ہندیہ کتاب الصرف الباب الثانی الفصل الثالث نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۲۴ 2 فتاویٰ ہندیہ کتاب الصرف الباب الثانی الفصل الثالث نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۲۵

Fatawa Razawiyya Volume 17

The Answer It is absolutely permissible to have an increase or decrease in the sale and exchange of currency notes with the mutual consent of both parties, as they are not among ribawi (usurious) goods. However, if a note of one hundred rupees is given as a loan and it is agreed upon that more will be taken back, this is interest and strictly forbidden (Haram). If a detailed explanation of all its issues is required, it is in our treatise 'Kifl al-Faqeeh al-Fahim'. Allah Almighty knows best.

Problem 250: From Gondal, via Qazi Qasim Sahib, sent by Syed Ghulam Mohi-ud-Din Sahib Randeyri, 11 Safar 1338 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Pearl traders buy and sell pearls at a rate of one hundred rupees, and a deal is made at 10% less if payment is made on the spot. Furthermore, if the buyer pays in cash, the deal is settled at 15% less, otherwise, if paid after a month's period, the custom is to take and give at 10% less. Is it permissible to settle such a deal and conduct buying and selling in this manner or not?

The Answer: As long as a matter is determined and concluded with mutual consent, there is no harm. Allah Almighty said: "Except that there be trade amongst you by mutual consent."[1] - Allah Almighty said: Except that it be trade among you by mutual consent. Allah Almighty knows best. (T) And Allah Almighty knows best.

Problem 251: Sent by Alif Khan, Manager of Madrasa Anjuman-e-Islamia Sangor, Kotah State, Rajputana, 23 Safar 1335 AH. What do the scholars of religion and honorable Muftis say in this matter: The money of Madrasa Anjuman-e-Islamia of Sangor town has been accumulated for a long time. No trade etc. is done with it, which could lead to an increase in the money. Therefore, if gold coins (Ashrafis) are purchased with these rupees at a rate that fluctuates at the time, and then these gold coins are sold on credit at a price higher than their current rate, is this practice Shariah-compliant or not? Or, for reassurance, if jewelry is taken as a mortgage along with this practice, then is this method of selling gold coins correct or not? The answer should be given according to the Hanafi school of thought. May the Creator of the world grant a good reward. State the ruling and be rewarded.

[1] The Holy Quran 4/29 Page 606 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

अल-जवाब (उत्तर) नोटों की खरीद-फरोख्त और विनिमय में आपसी सहमति से कमी-बेशी पूर्णतः जायज़ है क्योंकि वे रबीय (सूदी) वस्तुओं में से नहीं हैं। हाँ, अगर सौ रुपये का नोट उधार दिया जाए और यह तय कर लिया जाए कि सौ से ऊपर पैसे लिए जाएंगे, तो यह सूद (ब्याज) और निश्चित रूप से हराम है। यदि इसके सभी मसलों का विवरण आवश्यक हो, तो हमारे शोध-पत्र 'किफ़्ल अल-फ़क़ीह अल-फ़ाहिम' में उपलब्ध है। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 250: गोंडल से, क़ाज़ी क़ासिम साहब के माध्यम से, सैयद गुलाम मोहिउद्दीन साहब रांदेरी द्वारा प्रेषित, 11 सफ़र 1338 हिजरी। धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं कि मोती के व्यापारी मोतियों की खरीद-फरोख्त करते हैं। सौ रुपये की कीमत तय करते समय, यदि भुगतान तुरंत किया जाए, तो 10% की छूट पर सौदा होता है। फिर भी, यदि खरीदार नकद भुगतान करता है, तो सौदा 15% की छूट पर तय होता है, अन्यथा एक महीने की अवधि के बाद भुगतान करने पर वही 10% की छूट लेने-देने का रिवाज है। क्या इस तरह का सौदा तय करना और खरीद-फरोख्त करना जायज़ है या नहीं?

अल-जवाब (उत्तर): जब तक आपसी सहमति से कोई बात तय और संपन्न हो जाए, तो इसमें कोई हर्ज नहीं है। अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "मगर यह कि तुम्हारे बीच आपसी सहमति से व्यापार हो।"[1] - अल्लाह तआला ने फ़रमाया: सिवाय इसके कि तुम्हारे दरमियान बाहमी रजामंदी से तिजारत हो। अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 251: अलिफ़ खान, प्रबंधक मदरसा अंजुमन-ए-इस्लामिया सांगोर, रियासत कोटा, राजपूताना द्वारा प्रेषित, 23 सफ़र 1335 हिजरी। धर्म के विद्वान और सम्मानित मुफ़्ती इस मामले में क्या कहते हैं कि सांगोर कस्बे के मदरसा अंजुमन-ए-इस्लामिया का पैसा लंबे समय से जमा है। इससे कोई व्यापार आदि नहीं किया जाता है, जिससे पैसे में वृद्धि की कोई सूरत हो। इसलिए, यदि इन रुपयों से सोने की अशर्फियां खरीदी जाएं जिनकी दर उस समय घटती-बढ़ती रहती है, और फिर उन अशर्फियों को उस समय की दर से अधिक कीमत पर उधार में बेच दिया जाए, तो क्या यह प्रक्रिया शरीयत के अनुसार सही है या नहीं? या फिर इत्मीनान के लिए इस प्रक्रिया के साथ ज़ेवर गिरवी रख लिया जाए, तो अशर्फियों की बिक्री का यह तरीका सही है या नहीं? जवाब हनफी विचारधारा (मज़हब) के

अनुसार दिया जाए। दुनिया का रचनाकार (अल्लाह) बेहतर बदला अता फरमाएगा। बयान करें और पुण्य (सवाब) पायें।

[1] अल-क़ुरआन अल-करीम 4/29 पेज 606 का 715

الجواب نوٹ کی بیع اور مبادلہ میں کمی بیشی بر ضا مندی فریقین مطلقاً جائز ہے کہ وہ اموال ربویہ سے نہیں۔ ہاں سو روپے کا نوٹ قرض دیا جائے اور یہ ٹھہرا لیا جائے کہ پیسہ اوپر سو لیں گے یہ سود اور حرام قطعی ہے، اور اس کے تمام مسائل کی تفصیل اگر درکار ہو تو ہمارے رسالہ کفل الفقیہ الفاھم میں ہے واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۵۰: از گونڈل معرفت قاضی قاسم صاحب مرسلہ سید غلام محی الدین صاحب راندیری ۱۱ صفر ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ موتی کے بیوپاری موتیوں کی خرید وفروخت کرتے ہیں سو روپیہ اور بروقت قیمت لینے دینے کے فیصدی دس روپے کم کے حساب سے معاملہ طے ہوتا ہے پھر بھی اگر خریدنے والا نقد روپے ادا کرے تو فی صد پندرہ روپے کم سے معاملہ طے ہوتا ہے ورنہ مہینے کی میعاد کے بعد ادا کرے تو وہی فیصدی دس روپے کم لینے دینے کا رواج ہے، آیا اس طرح کا معاملہ طے کرنا اور خرید و فروخت کرنا جائز ہے یا نہیں؟

الجواب: جبکہ باہمی تراضی سے ایک امر متعین منقطع ہو کوئی حرج نہیں قال تعالٰی "اِلَّآ اَنْ تَکُوْنَ تِجَارَۃً عَنْ تَرَاضٍ مِّنْکُمْ"۔ ۱- اللہ تعالٰی نے فرمایا: مگر یہ کہ ہو تمہارے درمیان تجارت باہمی رضامندی سے واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۵۱: مرسلہ الف خاں مہتمم مدرسہ انجمن اسلامیہ سانگور ریاست کوٹہ راجپوتانہ ۲۳ صفر ۱۳۳۵ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیانِ کرام اندریں معاملہ کہ قصبہ سانگور کے مدرسہ انجمن اسلامیہ کا روپیہ عرصہ دراز سے جمع رہتا ہے اس سے کوئی تجارت وغیرہ نہیں ہوتی ہے

کہ جس سے روپے کی افزائش کی صورت ہو، لہٰذا اگر ان روپوں کی اشرفیاں کسی قدر کہ جن کا نرخ اس وقت کمی بیشی ہو جاتا ہے خرید کر ہمراہ روپیہ ان اشرفیوں کا نرخ اس وقت کے حساب سے زیادہ قیمت پر لگا کر ادھار میں بیچ کی جائیں تو یہ عمل شرعاً درست ہے کہ نہیں یا کہ برائے اطمینان اس عمل کے ساتھ زیور رہن لیا جائے تو یہ طریقہ بیع اشرفیوں کا درست تو نہیں ہے جواب بطریق مذہب حنفی دیا جائے، آفریدگار عالم جزائے خیر عنایت فرمائے گا۔ بینواتوجروا

Answer: The situation mentioned in the question is prohibited (Haraam).

Qala Sallallahu 'Alayhi Wa Sallama Illa Ha'a wa Ha'a [1]. | The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Except (it is permissible only) when it is hand to hand, i.e., possession is taken by both parties in the same sitting." (T)

Yes, it is permissible to buy gold coins (Ashrafis) when they are cheap and sell them when they are expensive, or with the permission of the donors, buy notes and sell them on credit for a higher price, provided a contract (aqd) is made in which the price is agreed to be paid after a fixed period. However, if a note is given as a loan with a promise of two months and it is agreed to take extra money on top, that is prohibited (Haraam). As stated in the Hadith:

Kullu Qard-in Jarra Manfa'atan Fahuwa Riba [2]. | Every loan that draws a profit is usury (Riba). (T)

Contrary to a sale (Bay'), where taking profit is permissible.

Qala Allahu Ta'ala "Wa Ahalla Allahu al-Bay'a wa Harrama al-Riba" [3]. | Allah Almighty says: "And Allah has permitted trade and forbidden usury." (T)

The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) says:

Idha Akhtalafa al-Naw'ani fa-Bi'u Kayfa Shi'tum [4]. | When the types are different, then sell as you wish. (T). Its complete detail is in our treatise "Kifl al-Faqih al-Fahim". And Allah Almighty knows best.

Problem 252: From Beeram Nagar, post office Sargadamar, sent by Ghulam Siddiq Sahib, teacher. 10 Shawwal 1322 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid is in the business of selling coins and cowries. To those who pay the price of a rupee at the time of purchase, he gives fifteen and three-quarters (pone sola) 'ganda' of coins. For those who do not pay the price of the rupee at that time but promise a later time, he gives them eleven (yazda) 'ganda' of coins. He does not take into account the duration, the promise, or the variation in rate which might raise suspicions of usury, similar to selling notes. Is this transaction correct or not? Explain and be rewarded.

---

1. Sahih al-Bukhari, Kitab al-Buyu', Bab Bay' al-Sha'ir bi'l-Sha'ir, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/290.

2. Kanz al-Ummal, Hadith 15516, Mu'assasat al-Risala, Beirut, 6/238.
3. Al-Quran al-Karim, 2/275.
4. Nasb al-Raya, Kitab al-Buyu', Al-Maktaba al-Islamiyya, Riyadh, 4/4.

फतवा रज़विया | जिल्द 17 (17)

जवाब: प्रश्न में वर्णित स्थिति हराम (वर्जित) है।

क़ाला सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम इल्ला हाअ व हाअ [1]। | अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "मगर (यह तब जायज़ है) जब हाथ-हाथ हो, यानी उसी बैठक में दोनों तरफ से कब्ज़ा कर लिया जाए।" (त)

हाँ, यह जायज़ है कि अशर्फ़ियाँ सस्ते समय में खरीदी जाएँ और महँगे समय में बेची जाएँ या चंदा देने वालों की अनुमति से नोट खरीदकर उधार पर अधिक में बेचे जाएँ, बशर्ते कि ऐसा अनुबंध (अक़्द) हो जिसमें कीमत एक निश्चित अवधि के बाद देना तय हो। लेकिन अगर ऐसा हो कि नोट दो महीने के वादे पर कर्ज दिया गया और ऊपर से पैसा लेना तय हुआ, तो यह हराम है। हदीस में है:

कुल्लु क़र्ज़-इन जर्रा मन्फ़'अतन फ़हुवा रिबा [2]। | हर वह कर्ज जो लाभ खींचता है, वह सूद (ब्याज) है। (त)

इसके विपरीत 'बय' (बिक्री) में लाभ लेना जायज़ है।

क़ाला अल्लाहु तआला "व अहल्ला अल्लाहु अल-बय-अ व हर्रमर रिबा" [3]। | अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "और अल्लाह ने व्यापार को हलाल किया और सूद को हराम किया।" (त)

हुज़ूर अक़दस (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

इज़ा अख़्तलफ़ल नौ'आनी फ़-बी'ऊ कैफ़ा शिअतुम [4]। | जब किस्में अलग-अलग हों, तो जैसे चाहो बेचो। (त) और इसका पूरा विवरण हमारे रिसाले "किफ़्ल अल-फ़क़ीह अल-फ़ाहिम" में है। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसअला 252: बीरम नगर, डाकखाना सरगदामर, गुलाम सिद्दीक़ साहब मुदर्रिस की ओर से। 10 शव्वाल 1322 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: ज़ैद पैसे-कौड़ी बेचने का पेशा करता है। जो खरीदारी के समय रुपये की कीमत देता है, उसे वह पौने सोलह गंडा पैसे देता है। और जो रुपये की कीमत उसी समय नहीं देते, बल्कि दूसरे समय का वादा करते हैं, उन्हें वह ग्यारह गंडा पैसे देता है। वह समय, वादे और दर की कमी-बेशी का कोई हिसाब नहीं करता जिससे सूद का संदेह हो, जैसे नोट बेचना। क्या यह बिक्री भी सही है या नहीं? बयान करें, पुण्य पाएँ।

1. सही अल-बुखारी, किताबुल बुयूअ, बाब बय-उश-शईर बिश-शईर, कदीमी कुतुब खाना, कराची, 1/290.
2. कन्ज़ुल उम्माल, हदीस 15516, मुअस्ससतुर रिसाला, बेरूत, 6/238.
3. अल-क़ुरआन अल-करीम, 2/275.
4. नसबुर राया, किताबुल बुयूअ, अल-मकतबतुल इस्लामिया, रियाद, 4/4.

فتاوی رضویہ | جلد ہفدہم (۱۷)

الجواب: صورتِ مذکورہ سوال حرام ہے

قال صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم الا ھاء و ھاء ۱۔ | رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا: مگر (یہ اس وقت جائز ہے) جب ہاتھوں ہاتھ ہو یعنی مجلس میں دونوں طرف سے قبضہ کر لیا جائے۔(ت)

ہاں یہ جائز ہے کہ اشرفیاں وقتِ ارزانی خریدیں اور وقتِ گرانی بیچیں یا باجازت اہل چندہ نوٹ خرید کر ادھار زیادہ کو بیچیں مگر عقد ہو جس میں ثمن ایک مدتِ معینہ کے بعد دینا قرار پائے، یہ ہو کہ اس کا نوٹ دو مہینہ کے وعدے پر قرض دیا اور پیسہ اوپر لینا قرار پایا کہ یہ حرام ہے، حدیث میں ہے:

کل قرض جر منفعۃ فھو ربو ۲۔ | جو قرض نفع کھینچے وہ سود ہے۔(ت)

بخلاف بیع کہ اس پر نفع لینا جائز ہے۔

قال اللہ تعالٰی "وَ اَحَلَّ اللّٰہُ الْبَیْعَ وَ حَرَّمَ الرِّبٰوا" ۳۔ | اللہ تعالٰی نے فرمایا: اور اللہ تعالٰی نے بیع کو حلال اور سود کو حرام کیا۔ (ت)

حضورِ اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

اذا اختلف النوعان فبیعوا کیف شئتم ۴۔ | جب نوعیں مختلف ہوں تو جیسے چاہو بیع کرو۔ (ت) اور اس کی کامل تفصیل ہمارے رسالہ "کفل الفقیہ الفاھم" میں ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۵۲: از بیرم نگر ڈاکخانہ سرگدامر سلہ غلام صدیق صاحب مدرس ۱۰ شوال ۱۳۲۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید پیسے کوڑی بیچنے کا پیشہ کرتا ہے جو وقتِ خریداری روپیہ قیمت کا دیتا ہے اس کو پونے سولہ گنڈے پیسے دیتا ہے اور جو روپیہ قیمت کا اسی وقت نہیں دیتے ہیں دوسرے وقت کا وعدہ کرتے ہیں ان کو یازدہ گنڈے پیسے دیتا ہے اور مدت و وعدہ اور کمی بیشی نرخ کا جیسے سود کا شبہ پڑے کچھ حساب نہیں کرتا بطور نوٹ فروشی یہ بیع بھی صحیح ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

---

۱ صحیح البخاری کتاب البیوع باب بیع الشعیر بالشعیر قدیمی کتب خانہ کراچی ۱ / ۲۹۰ ۲ کنز العمال حدیث ۱۵۵۱۶ موسسۃ الرسالہ بیروت ۶ / ۲۳۸ ۳ القرآن الکریم ۲ / ۲۷۵ ۴ نصب الرایہ کتاب البیوع المکتبۃ الاسلامیہ ریاض ۴ / ۲

The Answer: It is permissible without any dislike for a money changer to give fifteen and three-quarter annas to someone providing cash rupees. It is also permissible to give twelve annas in exchange for a rupee to someone who does not provide the money immediately but promises to do so at another time; this is not usury or a forbidden sin. It is merely 'Makruh Tanzihi' (mildly disliked), meaning it's better not to do it, but there is no harm if one does.

In Fath al-Qadir, Radd al-Muhtar, and other books, there is no dislike in it, except that it is contrary to the best practice because it involves turning away from the benevolence of lending. And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 253 to 254: From Budaun, Mohalla Sohta, sent by Mawlawi Hamid Bakhsh Sahib Khan Bahadur, 27th Ramadan al-Mubarak 1322 AH. What do the scholars of religion and muftis of the firm Sharia say regarding this issue: (1) Zaid sold a ten-rupee government note to Bakr for twelve rupees on the condition that Bakr pays twelve rupees within a year, either in installments or as a lump sum. Is this sale valid, and is it not usury? (2) Zaid collected different metal coins worth ten rupees and sold them to Bakr for (one hundred) rupees, and wanted to receive this payment after four months. Is this sale valid or not? Or if he fixed a price for fifteen rupees worth of some type of paper, is that permissible or not?

The Answer: (1) If a note is given as a loan and it is agreed to take even one paisa more, it is absolutely forbidden (haram). Allah Almighty said: "And [He] has forbidden usury" (Allah Almighty said: And Allah has forbidden usury. - T). And if the note is sold in exchange for rupees, and a price less or more than the face value is agreed upon by mutual consent, whether immediate or deferred to a known term, then it is certainly lawful (halal). Allah Almighty said: "But Allah has permitted trade" (Allah Almighty said: And Allah has made trade lawful. - T). Whoever thought that the note is conventionally considered the same as silver...

---

1 Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Sarf, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/244 2 Al-Quran al-Karim, 2/275 3 Al-Quran al-Karim, 2/275

उत्तर (अल-जवाब): सर्राफ़ (मुद्रा विनिमय करने वाला) का नकद रुपया देने वाले को पौने सोलह आने देना बिना किसी नापसंदगी (कराहत) के जायज़ है। और जो रुपया उस समय न दे बल्कि दूसरे समय देने का वादा करे, उसे रुपये के बदले बारह आने देना भी जायज़ है; यह सूद (ब्याज) और हराम गुनाह नहीं है, केवल 'मकरूह तंज़ीही' है यानी बेहतर के खिलाफ है, न करे तो अच्छा है और करे तो कोई हर्ज नहीं।

फ़तह-उल-क़दीर और रद-उल-मुहतार आदि किताबों में उल्लेख है कि इसमें कोई कराहत नहीं है, हालांकि यह बेहतर के खिलाफ है क्योंकि इसमें क़र्ज़ देने के एहसान से मुँह मोड़ना है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 253 से 254: बदायूँ, मोहल्ला सोहता से मौलवी हामिद बख्श साहब खान बहादुर द्वारा प्रेषित, 27 रमज़ानुल मुबारक 1322 हिजरी। धर्म के विद्वान और शरीयत के मुफ्ती इस मसले में क्या कहते हैं कि: (1) ज़ैद ने दस रुपये का सरकारी नोट बक्र के हाथ बारह रुपये में इस शर्त पर बेचा कि बक्र एक साल में बारह रुपये किस्तों में या एकमुश्त अदा कर दे, तो क्या यह बिक्री (बैअ) सही है और सूद तो नहीं है? (2) ज़ैद ने विभिन्न धातुओं के सिक्के दस रुपये के बराबर जमा करके बक्र के हाथ (सौ की संख्या में) रुपये में बेचे और यह रुपया चार महीने बाद लेना चाहा, तो क्या यह बिक्री सही है या नहीं? या पंद्रह रुपये के किसी प्रकार के कागज़ (नोट) को किसी दर पर तय कर लिया, तो वह जायज़ है या नहीं?

उत्तर (अल-जवाब): (1) यदि नोट ऋण (क़र्ज़) के रूप में दिया जाए और एक पैसा भी अधिक लेना तय किया जाए, तो वह निश्चित रूप से हराम है। अल्लाह तआला ने फरमाया: "और [उसने] सूद को हराम कर दिया है।" (अल्लाह तआला ने फ़रमाया: और अल्लाह तआला ने ब्याज को वर्जित कर दिया है। - त)। और यदि नोट को रुपये के बदले बेचा जाए और आपसी सहमति से उसके अंकित मूल्य से कम या अधिक मूल्य तय किया जाए, चाहे वह नकद हो या किसी निश्चित समय के लिए उधार, तो वह निश्चित रूप से हलाल है। अल्लाह तआला ने फरमाया: "लेकिन अल्लाह ने व्यापार को हलाल किया है।" (अल्लाह तआला ने फ़रमाया: और अल्लाह ने व्यापार को वैध कर दिया है। - त)। जिस व्यक्ति ने यह अनुमान लगाया कि नोट प्रथागत रूप से चांदी का समान है, तो...

---

1 रद-उल-मुहतार, किताब अल-बुयू, बाब अस-सर्फ़, दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 4/244 2 अल-क़ुरान अल-करीम, 2/275 3 अल-क़ुरान अल-करीम, 2/275

الجواب: صراف کہ نقد روپیہ دینے والے کو پونے سولہ آنے دے یہ بیع بلا کراہت جائز ہے اور جو روپیہ اس وقت نہ دے دوسرے وقت کا وعدہ کرے اسے روپے کے عوض بارہ آنے دینا بھی جائز ہے، سود و حرام گناہ نہیں، صرف مکروہ تنزیہی یعنی خلاف اولٰی ہے کہ نہ کرے تو بہتر ہے اور کرے تو حرج نہیں۔

فی فتح القدیر وردالمحتار وغیرہما من الاسفار لا کراہۃ فیہ الاخلاف الاولی لمافیہ من الاعراض عن مبرۃ القرض۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ فتح القدیر اور ردالمحتار وغیرہ کتابوں میں مذکور ہے کہ اس میں کراہت نہیں تاہم یہ خلاف اولٰی ہے کیونکہ اس میں یہ قرض دینے کے احسان سے اعراض ہے، اور اللہ تعالٰی بہتر جانتا ہے۔ (ت)

مسئلہ ۲۵۳تا۲۵۴: از بدایوں محلہ سوہتہ مرسلہ مولوی حامد بخش صاحب خان بہادر ۲۷ رمضان المبارک ۱۳۲۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ : (۱) زید نے دس روپیہ کاسرکاری نوٹ بکر کے ہاتھ بارہ روپے میں اس شرط سے بیچا کہ بکر اس کو ایک سال میں بارہ روپیہ باقساط یا کل یکمشت ادا کردے تویہ بیع صحیح ہے اور سود تو نہیں ہے؟ (۲) زید نے مختلف دھات کے سکہ دس روپیہ کے جمع کرکے بکر کے ہاتھ (صد عددا) روپیہ میں بیع کئے اور یہ روپیہ چار ماہ کے بعد لینا چاہا تو یہ بیع صحیح ہے یا نہیں؟ یا اس پندرہ روپیہ کاغذ کسی قسم کا کسی نرخ پر ٹھہرالیا تو وہ جائز ہے یا نہیں؟

الجواب: (۱) نوٹ اگر قرض دیا جائے اور ایک پیسہ زیادہ لینا ٹھہرالیا جائے تو قطعی حرام ہے قال اللہ تعالٰی "وَحَرَّمَ الرِّبٰوا"۔ (اللہ تعالٰی نے فرمایا: اور اللہ تعالٰی نے سود کو حرام کیا ۔ ت) اور اگر نوٹ روپیہ کے عوض بیع کریں اور اس پر جو قیمت مکتوب ہے اس سے کم یا زیادہ برضائے باہمی معجل خواہ مؤجل باجل معلوم ثمن قرار دیں تو ضرور حلال ہے قال اللہ تعالٰی "وَاَحَلَّ اللّٰہُ

الْبَيْعَ". (اللہ تعالٰی نے فرمایا: اور اللہ تعالٰی نے بیع کو حلال کیا۔ت) جس شخص نے یہ گمان کیا کہ نوٹ عرفاً چاندی کا عین ہو رہا ہے تو

---

1 ردالمحتار کتاب البیوع باب الصرف دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/۲۴۴ 2 القرآن الکریم ۲/۲۷۵ 3 القرآن الکریم ۲/۲۷۵

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

Selling a ten-rupee note for twelve is like selling ten rupees for twelve rupees, and it is interest (riba). This is merely due to misunderstanding and ignorance of Sharia rules, driven by delusional dominance. If a note is not of the same genus as silver—and it certainly is not—then what is the meaning of declaring any surplus or deficit as forbidden (haram)? According to the consensus of our noble Imams (may Allah be pleased with them all), in the case of difference in genus, surplus is lawful (halal). And if, for the sake of argument, we wrongly consider it to be the essence of silver, then selling a ten-rupee note for ten would be pure interest and rejected haram. In ribawi assets (subject to interest), Sharia has not considered monetary value, but rather commanded equality in weight and measure. All books clearly state that "the good and the bad are equal" (i.e., high quality and low quality are treated the same). Plain jewelry weighing one masha can have a value of one rupee each. So, would it be lawful according to Sharia to sell a one-masha silver ring for one rupee? Never! In fact, it would definitely be interest. It is mandatory that they be equal in weight without any difference. Thus, even if a note is considered silver, its monetary value—whether ten, hundred, or a thousand rupees—cannot be considered; rather, weight will be the criterion. Put the note on one side and silver on the other in the scale; whatever fraction it weighs, only that much is lawful to sell it for. Taking even one penny more would bring the sin of interest. It is now clear that those who, by considering the note as silver, say a ten-rupee note must be sold for exactly ten, are themselves making interest lawful and teaching the servants of Allah the path of haram. Let it be; for their sake, we have accepted that the note is exactly silver and in exchange for rupees, its monetary value must be equal. Very well, if it is deemed silver, then it cannot be gold, or is it both things at once, or the essence of gold too? Since it is not gold, the note and the gold coin (Ashrafi) are certainly of different genera. And now, surplus is definitely not interest. The specific ruling (juz'iya) for selling two rupees and one Ashrafi in exchange for two Ashrafis and one rupee is explicitly mentioned in books of the school like Durr al-Mukhtar: "Sarfun lil-jinsi ila khilaf al-jins" (Directing the genus towards a different genus). That is, it will be determined that one Ashrafi was sold for one rupee, and two rupees were sold for two Ashrafis. And this is correct because the genus is different. Therefore, selling a ten-rupee note for twelve Ashrafis would not be interest. Now they can judge their own issue: selling a ten-rupee note for twelve rupees is interest, but selling it for twelve Ashrafis is correct and not rejected. In short, all these are meaningless fancies

for which there is no evidence from the pure Sharia. It is a miracle of our noble scholars (may their secrets be sanctified) that they stated this specific ruling hundreds of years before the invention of paper notes. It is stated in Fath al-Qadir:

---

1 Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Sarf, Matba' Mujtabai, Delhi, 2/55

फतावा रज़विया (जिल्द 17)

दस का नोट बारह को बेचना मानो दस रुपये बारह रुपये को बेचना है और यह सूद (ब्याज) है। यह उनकी कोरी अज्ञानता और शरई नियमों से अनभिज्ञता है जो काल्पनिक वर्चस्व के कारण है। यदि नोट चांदी का हम-जिंस (समान प्रजाति) नहीं है—और निश्चित रूप से नहीं है—तो फिर कमी-बेशी को हराम ठहराने का क्या अर्थ? क्योंकि हमारे प्रतिष्ठित इमामों (अल्लाह उन सब से प्रसन्न हो) के सर्वसम्मति (इज्मा) से जिंस अलग होने की स्थिति में अधिकता (तफाजुल) हलाल है। और यदि गलत धारणा के तौर पर इसे चांदी ही मान लिया जाए, तो अब दस का नोट दस को बेचना स्पष्ट सूद और तिरस्कृत हराम होगा। सूद वाली संपत्तियों (अमवाल-ए-रबविया) में शरीयत ने मौद्रिक मूल्य का विचार नहीं किया है, बल्कि वजन और माप में समानता का आदेश दिया है। सभी पुस्तकों में यह स्पष्ट है कि "अच्छी और रद्दी वस्तु बराबर हैं" (यानी उच्च और निम्न गुणवत्ता समान मानी जाती हैं)। एक माशा वजन के सादे गहने का मूल्य एक रुपया होता है। तो क्या शरई तौर पर माशा भर चांदी की अंगूठी एक रुपये में बेचना हलाल होगा? हरगिज़ नहीं, बल्कि यह निश्चित रूप से सूद होगा। अनिवार्य यह है कि वे तौल में बिना किसी अंतर के बराबर हों। तो यदि नोट को चांदी ही मान लिया जाए, तो कभी भी इसका विचार जायज़ नहीं कि इसका मौद्रिक मूल्य दस या सौ या हज़ार रुपये है, बल्कि वजन मान्य होगा। तराजू के एक पलड़े में नोट रखें और दूसरे में चांदी; जितना उसका वजन हो, बस उतना ही बेचना हलाल है और उससे एक पैसा भी अधिक लिया तो सूद का पाप स्पष्ट है। यह साफ हो गया कि नोट को चांदी ठहराकर जो लोग दस का नोट दस ही को बेचना बता रहे हैं, वे अब अपने मुँह से सूद को हलाल कर रहे हैं और अल्लाह के बंदों को हराम का रास्ता सिखा रहे हैं। चलिए, उनकी खातिर हमने मान लिया कि नोट बिल्कुल चांदी है और रुपये से बदलने में इसके मूल्य के बराबर होना आवश्यक है। बहुत अच्छा, जब वह चांदी ठहरा तो सोना तो नहीं हो सकेगा, या वह एक ही चीज़ है या सोने और चांदी दोनों का रूप है? और जब सोना नहीं है, तो नोट और अशर्फी (स्वर्ण मुद्रा) निश्चित रूप से अलग-अलग जिंस हैं। और अब अधिकता निश्चित रूप से सूद नहीं है। दो रुपये और एक अशर्फी को दो अशर्फियों और एक रुपये के बदले बेचने का नियम 'दुर्रे मुख्तार' आदि पंथ की किताबों में वर्णित है: "सरफुन लिल-जिंसी इला खिलाफ अल-जिंस" (जिंस को दूसरी जिंस की ओर फेरते हुए)। यानी यह तय करेंगे कि एक अशर्फी एक रुपये के बदले बेची गई और दो रुपये दो अशर्फियों के बदले बेचे गए। और यह सही है क्योंकि जिंस अलग है। तो दस रुपये का नोट बारह अशर्फियों को बेचना तो सूद न होगा। अब वे स्वयं अपने इस मसले का अंदाज़ा कर सकेंगे कि दस

रुपये का नोट बारह रुपये को बेचना तो सूद है और बारह अशर्फियों को बेचना सही और गैर-मर्दुद (स्वीकार्य)। संक्षेप में, ये सब बेमतलब की बातें हैं जिनका शरीयत-ए-मुतह्हरा (पवित्र शरीयत) से कोई प्रमाण नहीं है। और यह हमारे उलेमा-ए-किराम (प्रतिष्ठित विद्वानों) की करामात है कि नोट के अस्तित्व में आने से सैकड़ों साल पहले उन्होंने इसका समाधान बता दिया था। 'फतह अल-क़दीर' में फरमाया:

---

1 दुर्रे मुख्तार, किताब अल-बुलूअ, बाब अस-सर्फ़ मतबा मुजतबाई दिल्ली, 2/55

دس کا نوٹ بارہ کو بیچنا گویا دس روپے بارہ روپیہ کو بیچنا ہے اور سود ہے یہ اس کی محض نافہمی اور قواعد شرعی سے بیگانگی بہ استیلا ئے وہمی ہے نوٹ اگر چاندی کا ہم جنس نہیں اور قطعاً نہیں جب تو کمی بیشی حرام ٹھہرانا کیا معنی کہ ہمارے ائمہ کرام رضوان اللہ تعالٰی علیہم اجمعین کے اجماع سے اختلاف جنس کی حالت میں تفاضل حلال ہے اور اگر بفرض غلط اسے چاندی کا عین سمجھ لیجئے تو اب دس کا نوٹ دس کو بیچنا عین سود اور حرام مردود ہوگا، اموال ربویہ میں شرع نے مالیت کا لحاظ نہیں فرمایا بلکہ وزن وکیل میں برابری کا حکم دیا ہے تمام کتب میں تصریح ہے کہ جید ہ وردیہ سواء (اس کا عمدہ اور ردی برابر ہیں۔ت) سادہ کاری کا زیور ایک ماشہ وزن کا ایک ایک روپیہ کی مالیت کا ہوتا ہے پھر کیا شرعاً ماشہ بھر چاندی کی انگوٹھی ایک روپے کی بیچنی حلال ہو گی، حاشا بلکہ قطعاً سود ہوگی واجب یہ کہ تول میں بلا تفاوت یکساں ہوں تو نوٹ بھی اگر چاندی ہی کا قرار پا گیا تو ہرگز اس کا لحاظ جائز نہیں کہ مالیت میں دس یا سو یا ہزار روپے کا ہے بلکہ وزن معتبر ہوگا کاٹے میں ایک طرف نوٹ دوسری طرف چاندی رکھئے دونی چونی جو کچھ چڑھے بس اتنے کو بیچنا حلال اور اس سے ایک پیسہ زیادہ لیا اور سود کا وبال تو ظاہر ہوا کہ نوٹ کو چاندی ٹھہرا کر جو لوگ دس کا نوٹ دس ہی کو بیچنا بتارہے ہیں اب اپنے منہ آپ سود کو حلال کرتے اور بندگان خدا کو حرام کا راستہ سکھا رہے ہیں، جانے دیں ان کی خاطر ہم نے تسلیم کر لیا کہ نوٹ بالکل چاندی ہے اور روپے سے بدلنے میں اس کی مالیت ہی کی برابر لازم ہے بہت اچھا، جب وہ چاندی ٹھہر تو سونا تو نہ ہوسکے گا یا ایک ہی چیز یا سونے دونوں کی عین ہے اور جب سونا نہیں تو نوٹ اور اشرفی ضرور مختلف الجنس ہیں اور اب تفاضل یقیناً سود نہیں دو روپے اور ایک اشرفی کو دو اشرفیوں اور ایک روپے کے عوض

بیچنے کا جزئیہ درمختار وغیرہ کتب مذہب میں مصرح ہے صرف للجنس الی خلاف الجنس (جنس کو خلاف جنس کی طرف پھیرتے ہوئے۔ ت) یعنی یہ قرار دینگے کہ ایک اشرفی ایک روپے کو بیچی اور دو روپے دو اشرفیوں کے عوض بیچے گئے اور یہ صحیح ہے کہ جنس مختلف ہے تو دس روپے کا نوٹ بارہ اشرفیوں کو بیچنا تو سود نہ ہوگا اب اپنے اس مسئلہ کا اندازہ خود وہی کر سکیں گے کہ دس روپے کا نوٹ بارہ روپے کو بیچنا تو سود اور بارہ اشرفیوں کو بیچنا صحیح و غیر مردود۔ با لجملہ یہ سب ہوسات بے معنی ہیں جن پر شرعِ مطہر سے اصلاً دلیل نہیں اور ہمارے علمائے کرام قدست اسرار ہم کی کرامت ہے کہ حدوثِ نوٹ سے صد ہا سال پہلے اس کا جزئیہ ارشاد فرما گئے۔ فتح القدیر میں فرمایا:

---

۱ در مختار کتاب البیوع باب الصرف مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۵۵

Fatawa Rizvia, Volume 17

Box Text: Arabic: "If one sells a piece of paper for a thousand, it is permissible and not disliked."[1] Urdu: That is, if someone sells a piece of paper for a thousand rupees, it is permissible, and there is no dislike at all.

Body Text: At that time, where was a piece of paper sold for a thousand? It is this [currency] note that has newly appeared, and scholars gave its ruling hundreds of years ago. This is a summary, and the rest of the details of this issue are in the Fatawa of this humble servant, and this much is sufficient for the fair-minded. And Allah Almighty knows best.

(2) Regarding grain that is not yet taken but agreed upon on promise, the conditions of *Bay' al-Salam* (forward sale) are required, the details and examples of which are all mentioned in the completion of my Fatawa. And if there is neither gold nor silver in these metals, then it is permissible to sell what is worth ten for fifteen rupees on a four-month promise, provided possession is taken on one side. If there is gold or silver involved, then selling on promise is forbidden (*haram*). Yes, giving fifteen rupees in cash in exchange for ten-rupee coins of different metals is correct and is not usury (*riba*).

Box Text: Arabic: "Because as passed, exchanging a genus for a different genus – i.e., there will be in silver what equals it in weight from the dirhams, and for the remainder, the remainder."[2] And Allah Almighty knows best. Urdu: As mentioned previously, one type will be turned towards a different type; that is, in exchange for silver, it will be equal to its weight from the dirhams, and for the rest, it's the rest. And Allah Almighty knows better. (T)

Problem 255: From Old City, sent by Himayatullah Khan Sahib, 29 Rajab 1320 AH. What do the scholars of religion and muftis of the clear Shariah say on this issue: Is it permissible or forbidden to give a ten-rupee note and take twelve rupees in exchange? Explain, and you shall be rewarded.

The Answer: It is permissible in a sale. That is, if a ten-rupee note is sold for twelve or twenty with the consent of the buyer, there is no harm. In *Fath al-Qadir* and *Radd al-Muhtar* etc., which are reliable books, it is stated:

Box Text: Arabic: "If one sells a piece of paper for a thousand, it is permissible and not disliked."[3] Urdu: If a piece of paper is sold for a thousand rupees, it is permissible and there is no dislike in it. (T)

Footnotes: 1. *Fath al-Qadir*, Kitab al-Kafalah, Maktaba Nooria Rezvia, Sukkur, 6/322 2. *Durr al-Mukhtar*, Kitab al-Buyu', Bab al-Sarf, Matba Mujtabai, Delhi, 2/55 3. *Fath al-Qadir*, Kitab al-Kafalah, Maktaba Nooria Rezvia, Sukkur, 6/322

फ़तावा रज़विया, जिल्द 17

बॉक्स टेक्स्ट: अरबी: "यदि कोई कागज़ का टुकड़ा हज़ार में बेचता है, तो यह जायज़ है और मकरूह नहीं है।"[1] उर्दू: यानी अगर किसी ने कागज़ का टुकड़ा हज़ार रुपये में बेचा तो जायज़ है और इसमें बिल्कुल भी कराहत (नापसंदगी) नहीं है।

मुख्य लेख: उस समय कागज़ का टुकड़ा हज़ार में कहाँ बिकता था? यह वही नोट है जो अब वजूद में आया है और उलेमा ने सैकड़ों साल पहले इसका हुक्म बता दिया था। यह संक्षेप में है और इस मसले का बाकी विवरण फ़कीर (इस मुफ़्ती) के फ़तावा में है और न्यायप्रिय लोगों के लिए इतना ही काफी है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

(2) अनाज जो अभी लिया नहीं जाएगा और वादे पर तय कर लिया गया है, उसमें 'बैय-ए-सलाम' (अग्रिम बिक्री) की शर्तें आवश्यक हैं, जिसका पूरा विवरण और उदाहरण फ़कीर के फ़तावा के पूर्ण होने में वर्णित है। और अगर इन धातुओं में सोना-चाँदी दोनों में से कुछ नहीं है, तो दस की मालियत को पंद्रह रुपये में चार महीने के वादे पर बेचना जायज़ है, बशर्ते कि एक तरफ से कब्ज़ा हो जाए। और अगर सोना या चाँदी भी है, तो वादे पर बेचना हराम है। हाँ, पंद्रह रुपये नकद के बदले दस रुपये के विभिन्न धातुओं के सिक्के दे देना सही है और सूद (ब्याज) नहीं है।

बॉक्स टेक्स्ट: अरबी: "जैसा कि गुज़रा कि एक जिन्स (प्रकार) को दूसरे जिन्स की तरफ फेर दिया जाएगा - यानी चाँदी के बदले दिरहमों में से उसके वजन के बराबर होगा और बाकी के बदले बाकी।"[2] और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। उर्दू: जैसा कि गुज़रा कि जिन्स को खिलाफ़-ए-जिन्स (अलग प्रकार) की तरफ फेरा जाएगा, यानी चाँदी के बदले दिरहमों में से उस वज़न के बराबर होगा और बाकी बाकी के बदले, और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 255: शहर-ए-कोहना (पुराना शहर) से, प्रेषक हिमायत उल्लाह खान साहब, 29 रजब 1320 हिजरी। दीन के उलेमा और शरियत-ए-मतीन के मुफ्ती इस मसले में क्या फरमाते हैं कि दस रुपये का नोट देकर उसके बदले में बारह रुपये लेना हलाल है या हराम? बयान फरमाएं, आपको सवाब मिलेगा।

अल-जवाब (उत्तर): बिक्री में हलाल है, यानी दस का नोट बारह या बीस रुपये में खरीदार की रज़ामंदी से बेचे तो कोई हर्ज़ नहीं। फतह अल-कादिर और रद अल-मुहतार वगैरह जैसी विश्वसनीय किताबों में है:

बॉक्स टेक्स्ट: अरबी: "यदि कोई कागज़ का टुकड़ा हज़ार में बेचता है, तो यह जायज़ है और मकरूह नहीं है।"[3] उर्दू: अगर कागज़ का टुकड़ा हज़ार रुपये में बेचा तो जायज़ है और इसमें कोई कराहत नहीं। (त)

पादलेख (Footnotes): 1. फतह अल-कादिर, किताब अल-कफाला, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 6/322 2. दुर्र-ए-मुख़्तार, किताब अल-बुयूँ, बाब अस-सर्फ़, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 2/55 3. फतह अल-कादिर, किताब अल-कफाला, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 6/322

لو باع کاغذۃ بألف یجوز ولایکرہ -[1] یعنی اگر کسی نے کاغذ کا ٹکڑا ہزار روپے کو بیچا جائز ہے اور اصلا کراہت بھی نہیں۔

اس وقت کاغذ کا ٹکڑا ہزار کو بکتا کہاں تھا وہ یہی نوٹ کہ اب حادث ہوا اور علماء نے صدہا سال پیشتر اس کا حکم بتایا، یہ اجمال ہے اور اس مسئلہ کی باقی تفصیل فتاوٰی فقیر میں ہے اور اہل انصاف کو اسی قدر کافی۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

(۲) غلہ کہ ابھی نہ لیا جائے گا اور وعدہ پر ٹھہرالیا گیا اس میں تو بیع سلم کی شرائط درکار ہیں جن کی تفصیل و تمثیل سب بتکمیل فتاوٰی فقیر میں مذکور، اور اگر ان دھاتوں میں سونا چاندی دونوں میں سے کچھ نہیں تو دس کی مالیت کی پندرہ روپے کو چار ماہ کے وعدہ پر بیچنا جائز جبکہ ایک طرف سے قبضہ ہو جائے اور اگر سونا یا چاندی بھی ہے تو وعدہ پر بیچنا حرام، ہاں نقد پندرہ روپے کو دس روپے کے مختلف دھاتوں کے سکے دے دینا صحیح ہے اور سود نہیں۔

لما مر صرف الجنس الی خلاف الجنس - ای فیکون بالفضۃ ما یساویھا وزنا من الدراھم وبالباقی الباقی۔[2] واللہ تعالٰی اعلم۔ جیسا کہ گزرا کہ جنس کو خلاف جنس کی طرف پھیراجائیگا یعنی چاندی کے بدلے درہم میں سے اس وزن کے برابر ہوگا اور باقی باقی کے بدلے، اور اللہ تعالٰی بہتر جانتا ہے۔ (ت)

مسئلہ ۲۵۵: از شہر کہنہ مرسلہ حمایت اللہ خاں صاحب ۲۹ رجب ۱۳۲۰ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ دس روپے کا نوٹ دے کر بارہ روپیہ عوض میں لینا حلال ہے یا حرام؟ بینوا توجروا

الجواب: بیع میں حلال ہے یعنی دس کا نوٹ بارہ یا بیس کو برضائے مشتری بیچے تو کچھ مضائقہ نہیں۔ فتح القدیر و رد المحتار وغیرہ ہما کتب معتمدہ میں ہے:

لو باع کاغذۃ بألف یجوز ولایکرہ -[3] اگر کاغذ کا ٹکڑا ہزار روپے میں بیچا تو جائز ہے اور اس میں کوئی کراہت نہیں۔ (ت)

حواشی: ۱۔ فتح القدیر کتاب الکفالۃ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۳۲۲ ۲۔ درمختار کتاب البیوع باب الصرف مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۵۵ ۳۔ فتح القدیر کتاب الکفالۃ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۳۲۲

Fatawa Ridawiyyah (Volume 17)

And technically, its price being fixed does not prevent the mutual consent of the buyer and seller. Every person has the right to sell their property, which may be worth ten rupees at the general rate, for a hundred rupees with the buyer's consent, or give it for just one paisa.

Allah Almighty said: "Except that there be trade between you by your mutual consent." (1)

Allah the Almighty said: Except that there be trade between you by your mutual consent. (T)

The fact that a bank note is a 'technical price' (thaman mustalah) also does not prevent it, because in the case of a difference in genus (kind), excess (tafadul) is permissible by the consensus of our Imams. The value of a rupee in terms of paise is always fixed by custom; every child knows that a rupee consists of sixteen annas, not fifteen or seventeen. This customary fixation and its being a technical price cannot make a surplus or deficit forbidden for the contracting parties. Scholars have clarified that selling eight annas' worth of paise for more than an 'athanni' (an eight-anna coin) is lawful. It is stated in Durr al-Mukhtar:

Whoever gives a moneychanger a large dirham and says, "Give me for half of it copper coins (fulus) and for the [other] half a dirham less one grain (habba)," it is valid. The half-dirham less one grain will be against its like, and the remainder will be against the copper coins. (2)

Someone gave a moneychanger a large dirham and said, "Give me paise for half a dirham and give me half a dirham which is less by one grain (habba)." The sale is valid. Half a dirham less one grain will be against its equal, and the rest will be against the paise. (T)

Notes and paise are technical prices, while gold and silver are natural prices (thaman khilqi). Everyone knows that one ashrafi (gold coin) is worth several rupees, yet scholars clarify that selling one rupee for one ashrafi is valid. The reason is the same: after a difference in genus, inequality (tafadul) is permissible. It is stated in Durr al-Mukhtar:

It is valid to sell two dirhams and a dinar for two dinars and a dirham, by exchanging one genus with something other than its genus. (3)

It is valid to sell two dirhams and one dinar for two dinars and one dirham, because of diverting each genus to a different genus. (T)

The price of general items is estimated in rupees; this does not make them identical to rupees or the genus of silver. The estimation of ashrafis is also like this: that a certain ashrafi is worth sixteen rupees, another is twenty...

1. Al-Quran al-Karim 29/4
2. Durr al-Mukhtar, Chapter on Exchange (Sarf), Mujtabai Press, Delhi, 1/577
3. Durr al-Mukhtar, Chapter on Exchange (Sarf), Mujtabai Press, Delhi, 55/2

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

और तकनीकी रूप से इसकी कीमत तय होना खरीदार और विक्रेता की आपसी सहमति को नहीं रोकता। हर व्यक्ति को अधिकार है कि वह अपनी संपत्ति, जिसकी सामान्य दर दस रुपये हो, खरीदार की सहमति से सौ रुपये में बेचे या केवल एक पैसे में दे दे।

अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "मगर यह कि तुम्हारे बीच तुम्हारी आपसी रज़ामंदी से व्यापार हो।" (1)

अल्लाह तआला ने फ़रमाया: मगर यह कि तुम्हारे दरमियान तिजारत तुम्हारी बाहमी रज़ामंदी से हो। (त)

नोट का तकनीकी मूल्य (थमन मुस्तलह) होना भी इसमें बाधा नहीं है, क्योंकि हमारे इमामों की सहमति (इज्मा) के अनुसार नस्ल (लिंग) के अंतर के मामले में अधिकता (तफाज़ुल) जायज़ है। रुपये के पैसे की कीमत प्रथा के अनुसार हमेशा निश्चित रहती है; हर बच्चा जानता है कि एक रुपये में सोलह आने होते हैं, न कि पंद्रह या सत्रह। यह प्रथागत निर्धारण और इसका तकनीकी मूल्य होना अनुबंध करने वाले पक्षों के लिए कमी या अधिकता को वर्जित नहीं बना सकता। विद्वानों ने स्पष्ट किया है कि अठन्नी से अधिक के बदले आठ आने के पैसे बेचना हलाल है। दुर्रे मुख़्तार में है:

किसी ने सर्राफ़ को एक बड़ा दिरहम देते हुए कहा कि "आधा दिरहम के पैसे दे दो और आधा दिरहम दे दो जिसमें से एक हब्बा (दाना) कम हो", तो सौदा सही हो गया। एक हब्बा कम आधा दिरहम अपने बराबर के मुकाबले हो जाएगा और बाकी पैसों के मुकाबले होगा। (2)

किसी ने सर्राफ़ को एक बड़ा दिरहम देते हुए कहा कि निस्फ़ दिरहम के पैसे दे दो और निस्फ़ दिरहम दे दो जिस में से एक हब्बा कम तर हो तो बैय (बिक्री) सही हो गई निस्फ़ दिरहम एक हब्बा कम अपनी मिस्ल (बराबर) के मुक़ाबिल हो जाएगा और बाक़ी पैसों के मुक़ाबिल होगा। (त)

नोट और पैसे तो तकनीकी मूल्य हैं, सोना और चाँदी प्राकृतिक मूल्य (थमन ख़ल्की) हैं और हर कोई जानता है कि एक अशरफ़ी कई रुपयों की होती है, फिर भी विद्वान स्पष्ट करते हैं कि एक अशरफ़ी के बदले एक रुपया बेचना सही है। कारण वही है कि नस्ल (लिंग) के अंतर के बाद तफाज़ुल (कमी-बेशी) जायज़ है। दुर्रे मुख़्तार में है:

दो दिरहम और एक दीनार को दो दीनार और एक दिरहम के बदले बेचना सही है, क्योंकि एक नस्ल को दूसरी नस्ल के विपरीत बदला गया है। (3)

दो दिरहमों और एक दीनार को दो दीनारों और एक दिरहम के बदले फ़रोख़्त करना सही है जिन्स को ख़िलाफ़े जिन्स की तरफ़ फेरने की वजह से। (त)

सामान्य वस्तुओं की कीमत का अनुमान रुपयों के साथ ही लगाया जाता है; इससे वे रुपये का हिस्सा या चाँदी की नस्ल नहीं बन जाते। अशरफ़ियों का अनुमान भी ऐसा ही है कि फलां अशरफ़ी सोलह रुपये की है, फलां बीस की...

1. अल-क़ुरान अल-करीम 29/4
2. दुर्रे मुख़्तार, बाबुल सर्फ़, मतबा मुजतबाई देहली, 1/577
3. दुर्रे मुख़्तार, बाबुल सर्फ़, मतबा मुजतबाई देहली, 55/2

पृष्ठ 611 का 715

اور اصطلاحی طور پر اس کی قیمت معین ہونا بائع اور مشتری کی باہمی رضامندی کو نہیں روکتا، ہر شخص کو اختیار ہے کہ اپنا مال جو عام نرخ سے دس روپے کا ہو برضائے مشتری سو روپیہ کو بیچے یا ایک ہی پیسہ کو دے دے۔

قال اللہ تعالٰی "اِلاَّ اَنْ تَکُوْنَ تِجَارَۃً عَنْ تَرَاضٍ مِّنْکُمْ" 1۔

اللہ تعالیٰ نے فرمایا: مگر یہ کہ ہو تمہارے درمیان تجارت تمہاری باہمی رضامندی سے۔(ت)

نوٹ کا ثمن اصطلاحی ہونا بھی اس کا مانع نہیں کہ اختلاف جنس کی حالت میں ہمارے ائمہ کے اجماع سے تفاضل جائز ہے ایک روپے کے پیسے بہ تعین عرف ہمیشہ معین رہتے ہیں ہر بچہ جانتا ہے کہ روپے کے صرف سولہ آنہ آتے ہیں نہ پندرہ نہ سترہ، یہ عرفی تعین اور اس کا ثمن مصطلح ہونا عاقدین پر کمی بیشی حرام نہیں کر سکتا۔ علماء نے تصریح فرمائی کہ اٹھنی سے زیادہ کے عوض آٹھ آنے پیسے بیچنا حلال ہے، در مختار میں ہے :

من اعطٰی صیر فیادرہما کبیرا فقال اعطنی بہ نصف درہم فلوساونصفاً الاحبۃ صح ویکون النصف الاحبۃ بمثلہ وما بقی بالفلوس 2۔

کسی نے صراف کو ایک بڑا درہم دیتے ہوئے کہا کہ نصف درہم کے پیسے دے دو اور نصف درہم دے دو جس میں سے ایک حبہ کم تر ہو تو بیع صحیح ہو گئی نصف درہم ایک حبہ کم اپنی مثل کے مقابل ہو جائے گا اور باقی پیسوں کے مقابل ہوگا۔(ت)

نوٹ اور پیسے تو اصطلاحی ثمن ہیں سونا چاندی ثمن خلقی ہیں اور ہر شخص جانتا ہے کہ ایک اشرفی کئی روپے کی ہوتی ہے، مگر علماء تصریح فرماتے ہیں کہ ایک روپیہ ایک اشرفی کو بیچنا صحیح ہے تو وجہ وہی ہے کہ اختلاف جنس کے بعد تفاضل جائز ہے۔ در مختار میں ہے :

صح بیع درہمین ودینار بدرہم ودینارین بصرف الجنس بخلاف جنسہ 3۔

دو درہموں اور ایک دینار کو دو دیناروں اور ایک درہم کے بدلے فروخت کرنا صحیح ہے جنس کو خلاف جنس کی طرف پھیرنے کی وجہ سے۔ (ت)

عام اشیاء کی قیمت کا اندازہ روپوں ہی کے ساتھ کیا جاتا ہے اس سے وہ روپے کے عین یا چاندی کی جنس نہیں ہو جاتیں اشرفیوں کا اندازہ بھی یونہی ہے کہ فلاں اشرفی سولہ روپے کی فلاں بیس کی فلاں

1 القرآن الکریم ۲۹/۴ 2 درمختار باب الصرف مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۵۷۷ 3 درمختار باب الصرف مطبع مجتبائی دہلی ۵۵/۲

Fatawa Razawiya, Volume 17 (17)

The estimation of twenty-five [paisa] coins is also the same, that sixteen annas make a rupee, and there are sixty-four paisas in it. If these paisas or gold coins (Ashrafi) were considered the very same as silver rupees or of the same genus, how could one Ashrafi for one rupee be permissible? While selling a twenty-rupee Ashrafi for one rupee, or let's say, from the buyer's side selling one rupee for a twenty-five rupee Ashrafi was deemed correct and not ribā (usury), then how would giving a ten-rupee note for twelve [rupees] become ribā? Just as calling it a twenty-five rupee Ashrafi did not turn the Ashrafi into silver, similarly calling it a ten-rupee note will not turn paper into silver (nuqra). It is clearly stated in common books of the religion that the cause of ribā is the unity of measure (qadr) and genus (jins). After this, equality in weight is mandatory; value is not considered at all. For example, if a fine piece of pure silver jewelry, which due to its craftsmanship has become double its weight in price, is sold for silver, it is mandatory that both weights on the scale be equal. If inequality is introduced based on the difference in value, it will be forbidden (haram) and become ribā. Similarly, if fine gold worth twenty-five rupees per tola is sold for poor-quality gold worth ten rupees per tola, it is still mandatory that the weight be exactly the same. They should not consider that its value is two and a half times the other. It is stated in al-Hidayah and Durr al-Mukhtar:

"It is not permissible to sell a good quality item for a poor quality one among things subject to ribā except like for like, because the difference in quality is disregarded."[1]

In ribawi assets, selling fine quality with poor quality is only permissible if they are equal, because here the difference in quality is not valid. (T)

If, for the sake of argument, a note is wrongly understood as the very essence of a rupee in common usage, then we ask: is it necessary for all rulings of a rupee to apply to it according to Sharia as well? If not, then where did ribā come from? Just now, a clear statement was cited from Fath al-Qadir, Durr al-Mukhtar, etc., that selling a piece of paper for a thousand rupees is permissible, and permissible in such a way that there isn't even a trace of dislike (karahat) in it. By God's justice, this is a clear specific ruling (juz'iyya) for the mentioned sale of a note, which the noble scholars wrote hundreds of years before the occurrence of notes. Differentiating based on "terminological price" (thanniyat istilahiya) is pure ignorance, the detailed explanation of which has passed. And if, in your opinion, the rulings of rupees also apply to notes according to Sharia, then the ultimate objection (al-tha'r al-atam) will

fall upon you. The ruling for a rupee was not that if you exchange it for another rupee, you should look at the equality of value; rather, the command was to equalize the weight. So, it should be that those who sell a ten-rupee note for ten [rupees] are committing absolute haram and interest, because on one side there is the weight of a masha, and on the other side ten tolas. Rather, it would be mandatory to place the note in a scale and sell only as much silver as balances it. Thus, those who consider equality in notes as mandatory are themselves, by their own assumption, making interest halal. Let's set that aside too; if the note is the very essence...

[1] Al-Hidayah, Kitab al-Buyu', Bab al-Riba, Matba' Yusufi Lucknow, 3/81

फ़तावा रज़विया, जिल्द 17 (17)

पच्चीस के पैसों का अंदाज़ा भी यही है कि रुपये के सोलह आने चौंसठ पैसे, इससे अगर पैसे या अशर्फी रुपये के ऐन (मूल) या चांदी की जिंस (श्रेणी) हो जाते तो एक अशर्फी एक रुपये के लिए कैसे जायज़ होती? जबकि बीस रुपये की अशर्फी को एक रुपये में बेचना, या यूं कहिए कि खरीदार की तरफ से एक रुपया पच्चीस रुपये की अशर्फी को बेचना सही हुआ और रिबा (ब्याज) न ठहरा, तो दस का नोट बारह को देना कहां से रिबा हो जाएगा? जिस तरह अशर्फी को पच्चीस का कहने से अशर्फी चांदी नहीं हो गई थी, उसी तरह दस का नोट कहने से कागज़ चांदी नहीं बन जाएगा। मज़हब की आम किताबों में स्पष्ट है कि रिबा का कारण क़द्र (माप/तौल) और जिंस की एकता है। इसके बाद वज़न में बराबरी अनिवार्य है, मालियत (मूल्य) का कोई लिहाज़ नहीं। उदाहरण के तौर पर, खरी चांदी का बेहतरीन ज़ेवर, जो अपनी कारीगरी के कारण अपने वज़न से दोगुनी कीमत का हो गया हो, जब चांदी के बदले बेचें तो अनिवार्य है कि तराजू के दोनों पलड़े वज़न में बराबर हों। मालियत के अंतर को देखते हुए कमी-बेशी की तो हराम और रिबा हो जाएगा। इसी तरह, पच्चीस रुपये प्रति तोला वाला उत्तम सोना, दस रुपये प्रति तोला वाले घटिया सोने से बेचें, तब भी अनिवार्य है कि वज़न बिल्कुल एक जैसा हो। वे यह न सोचें कि इसका मूल्य तो उससे ढाई गुना है। हिदाया और दुर्र-ए-मुख्तार में है:

"रिबा वाली चीज़ों में अच्छी गुणवत्ता वाली चीज़ को घटिया के बदले बेचना जायज़ नहीं है, सिवाय इसके कि वे बराबर-बराबर हों, क्योंकि गुणवत्ता में अंतर पर विचार नहीं किया जाता।"[1]

रिबवी संपत्तियों में उत्तम की बिक्री रद्दी के साथ केवल उसी स्थिति में जायज़ है जब वे बराबर-बराबर हों, क्योंकि यहाँ विशेषता (गुण) में अंतर मान्य नहीं है। (त)

अगर नोट को लोक-व्यवहार (उर्फ़) में मान लीजिए गलत तरीके से रुपये का ऐन (मूल) ही समझा जाता हो, तो अब हम पूछते हैं कि क्या शरीअत के अनुसार भी उस पर रुपये के सभी नियम लागू होना ज़रूरी हैं या नहीं? अगर नहीं, तो रिबा कहाँ से आया? अभी फ़तह-उल-क़दीर और दुर्र-ए-मुख्तार आदि से स्पष्ट कथन गुज़रा कि कागज़ का एक टुकड़ा हज़ार रुपये में बेचना जायज़ है, और जायज़ भी ऐसा कि जिसमें नाममात्र की भी कराहत (नापसंदगी) नहीं। खुदा इंसाफ दे, तो यह नोट की उक्त बिक्री का स्पष्ट आंशिक विवरण (जुज़इय्या) है जिसे विद्वानों ने नोटों के चलन से सैकड़ों साल पहले ही लिख दिया था। और "सांकेतिक मूल्य" (थमनियत इस्तलाहिया) के आधार पर अंतर करना सरासर अज्ञानता है, जिसका विस्तृत विवरण गुज़र चुका है। और अगर आपके अनुमान में शरीअत

के अनुसार भी नोट पर रुपये ही के नियम हैं, तो अब आप पर पूर्ण आपत्ति (अल-थार-उल-अतम) होगी। रुपये का नियम यह नहीं था कि दूसरे रुपये से उसे बदलो तो मूल्य की बराबरी देख लो, बल्कि वज़न बराबर करने का हुक्म था। तो चाहिए कि जो लोग दस का नोट दस को बेचें, वह पूर्णतः हराम और ब्याज हो क्योंकि एक तरफ माशा भर वज़न है और दूसरी तरफ दस तोला। बल्कि वाजिब हो कि तराजू में नोट रखकर जितनी चांदी उस पर चढ़े, उसी के बराबर बेचें। तो नोट में बराबरी अनिवार्य समझने वाले खुद ही अपने अनुमान से ब्याज को हलाल कर रहे हैं। इससे भी पूर्णतः नज़रअंदाज़ करें, नोट अगर ऐन...

[1] अल-हिदाया, किताब अल-बुयू, बाब अर-रिबा, मतबा यूसुफी लखनऊ, 3/81

پچیس کی پیوں کا اندازہ بھی یہی ہے کہ روپے کے سولہ آنے چونسٹھ پیسے اس سے اگر پیسے یا اشرفی روپے کے عین یا چاندی کی جنس ہو جاتے تو ایک اشرفی ایک روپیہ کو کیونکر جائز ہوتی جبکہ بیس روپے کی اشرفی ایک روپے کو بیچنا یا یوں کہئے کہ مشتری کی طرف سے ایک روپیہ پچیس روپے کی اشرفی کو بیچنا صحیح ہوا اور ربانہ ٹھہرا تو دس کا نوٹ بارہ کو دینا کہاں سے ربا ہو جائیگا پچیس کے اشرفی کہنے نے جس طرح اشرفی کو چاندی نہ کردیا تھا یو نہی دس کا نوٹ کہنا کاغذ کو نقرہ نہ بنا دے گا۔ عام کتب مذہب میں تصریح ہے کہ علت ربا اتحاد و قدر و جنس ہے اس کے بعد وزن میں برابری فرض ہے مالیت کا کچھ لحاظ نہیں مثلا کھری چاندی کا عمدہ زیور کہ صناعی کے باعث اپنے وزن سے دوچند قیمت کا ہو گیا ہو جب چاندی کے عوض بیچیں تو فرض ہے کہ دونوں کانٹے کے تول برابر ہوں اختلاف مالیت پر نظر کر کے کمی بیشی کی تو حرام اور ربا ہو جائے گا یو نہی عمدہ سونا پچیس روپے تولے والا خراب سونے دس روپے تولے والے سے بیچیں جب بھی فرض ہے کہ وزن بالکل یکساں ہو اس کا خیال نہ کریں گے کہ اس کی مالیت تو اس سے ڈھائی گئی ہے، ہدایہ و درمختار میں ہے:

1۔ لا یجوز بیع الجید بالردئ مما فیہ الربا الا مثلا بمثل لاھدار التفاوت فی الوصف

اموال ربویہ میں عمدہ کی بیع ردی کے ساتھ صرف اسی صورت میں جائز ہے کہ وہ برابر برابر ہوں کیونکہ یہاں وصف میں تفاوت معتبر نہیں (ت)

اگر نوٹ عرف میں بفرض غلط روپے کا عین ہی سمجھا جاتا ہو تو اب ہم پوچھتے ہیں کہ شرعا بھی اس پر روپے کی تمام احکام جاری ہونا ضروری ہے یا نہیں، اگر نہیں تو رہا کدھر سے آیا،

ابھی فتح القدیر و درالمختار و غیر ہا سے تصریح گزری کہ کاغذ کا ایک پر چہ ہزار روپے کو بیچنا جائز ہے اور جائز بھی ایسا جس میں نام کو کراہت تک نہیں، خدا انصاف دے تو یہ نوٹ کی بیع مذکور کا صریح جزئیہ ہے جسے علمائے کرام حدوث نوٹ سے صدہا سال پیشتر تحریر فرما گئے اور ثمنیت اصطلاحیہ سے فرق محض جہالت ہے جس کا بیان مشرح گزرا اور اگر آپ کے زعم میں شرعا بھی نوٹ پر روپے ہی کے احکام ہیں تو اب الثار باتم پر وارد ہوگا روپے کا حکم یہ نہ تھا کہ دوسرے روپے سے اسے بدلو تو مالیت برابر دیکھ لو بلکہ وزن برابر کرنے کا حکم تھا تو چاہئے کہ جو لوگ دس کا نوٹ دس کو بیچیں حرام قطعی اور سود ہو کہ ایک طرف ماشہ بھر وزن ہے اور دوسری طرف دس تولہ بلکہ واجب ہو کہ کانٹے میں نوٹ رکھ کر جتنی چاندی اس پر چڑھے اسی قدر کو بیچیں تو نوٹ میں برابری فرض کرنے والے خود ہی اپنے زعم کے رو سے سود حلال کر رہے ہیں اس سے بھی قطعی نظر سہی نوٹ اگر عین

1 الہدایہ کتاب البیوع باب الربو مطبع یوسفی لکھنو ۳/ ۸۱

Fatawa Razawiya (Volume 17)

...has become, then it will be of rupees, not of ashrafis (gold coins), or will the essence of one thing become both gold and silver? And just now it passed through Dur-e-Mukhtar that the sale of one rupee for one ashrafi is correct and there is no usury (riba) at all. Now that a note is fixed as the essence of a rupee, selling a ten-rupee note for twelve ashrafis will not be usury at all. Now a strange ruling will arise: if you sell a ten-rupee note for twelve rupees, it's interest, but if you take twelve ashrafis for a ten-rupee note, there is no interest at all. In short, the opposition of these people is not based on any Shariah principle but is merely their own groundless imaginations. This was the ruling of sale; however, giving a ten-rupee note as a loan and making a condition that at the time of repayment I will take twelve rupees or some money over ten rupees, this is haraam (forbidden) and interest. It is in the Hadith:

The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Every loan that draws a benefit is interest."	**This was narrated by Al-Harith bin Abi Usama from the Commander of the Faithful, Hazrat Ali (may Allah honor his face). (T)**

And the thought that why was selling for more allowed in trading and why did it become haraam to fix a higher amount after giving a loan, when both are the same - this is a meaningless objection that the disbelievers raised against the pure Shariah and the Great Quran gave its answer:

Allah Almighty says: "They say, 'Trade is just like usury.'"	**"But Allah has permitted trade and forbidden usury."**

This humble person (faqir) could write a whole treatise on the details of these lofty subjects with the help of Allah, but these sentences are enough for a wise and just person. Let Muslims look at them with attention and fairness and refrain from ignorant objections against the people of truth. And the Guide and Guardian of favors is Allah. And Allah knows best.

Issue 256: What do the scholars of religion say in this matter that Zaid sold a valuable note of (10) rupees to Amr for (10) rupees on the condition that he would pay this price in twelve months with monthly installments of one rupee...

---

1 Kanz al-Ummal, Hadith 15516, Mu'assasat ar-Risalah Beirut 6 / 238 2 The Holy Quran 2 / 275

फतावा रज़विया (जिल्द 17)

...हो गया तो रुपये का हुआ, अशर्फी का तो न होगा या एक ही चीज़ सोने और चाँदी दोनों का ऐन (तत्व) हो जाएगी? और अभी दुर-ए-मुख्तार से गुज़रा कि एक रुपये की बैअ (बिक्री) एक अशर्फी से सही है और हरगिज़ रिबा (ब्याज) नहीं। नोट जबकि रुपये का ऐन ठहरा तो दस रुपये का नोट बारह अशर्फ़ियों को बेचना कतई रिबा न होगा। अब ये अजीब हुक्म पैदा होगा कि दस का नोट बारह रुपये को बेचो जब तो सूद और दस के नोट पर बारह अशर्फियाँ ले जाओ तो असलन सूद नहीं। ग़रज़ इन लोगों की मुख़ालिफ़त असलन किसी अस्ल शरई की तरफ़ राजी नहीं महज़ अपने तखैयुलात-ए-बे-सरोपा हैं। ये हुक्म बैअ (बिक्री) का था, अलबत्ता दस का नोट क़र्ज़ देना और ये ठहरा लेना कि अदाए क़र्ज़ के वक़्त बारह रुपये या पैसा ऊपर दस रुपये लूँगा ये हराम और सूद है। हदीस में है:

रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: जो क़र्ज़ नफ़ा (लाभ) खींचे वो सूद है।

इसको हारिस बिन अबु ओसामा ने सैय्यदना अमीरुल मोमिनीन हज़रत अली (कर्रमल्लाहु वजहल करीम) से रिवायत किया। (त)

और ये ख्याल कि बैअ (बिक्री) में ज़्यादा को बेचना क्यों जायज़ हुआ और क़र्ज़ देकर ज़्यादा ठहरा लेना क्यों हराम हुआ जबकि दोनों एक ही से हैं - ये वो मोहमल एतराज़ है जो काफ़िरों ने शरीअत-ए-मुतहहरा पर किया और क़ुरआन-ए-अज़ीम ने इसका जवाब दिया:

अल्लाह तआला ने फ़रमाया: काफ़िर बोले बैअ (बिक्री) तो ऐसी ही है जैसे सूद,

और है ये कि अल्लाह ने हलाल फ़रमाई बैअ और हराम फ़रमाया सूद।

फ़क़ीर इन मज़ामीन-ए-आलिया की तफ़सील में ब-औनह-तआला एक रिसाला लिख सकता है मगर आकिल ज़ी-इंसाफ़ को यही जुमले बस हैं। मुसलमान उन्हें बगौर-ओ-इंसाफ़ देखें और अहल-ए-हक़ पर जाहिलाना एतराज़ से एहतराज़ करें। वल-हादी व वलीयुल अयादी। वल्लाहु तआला आलम।

मसला 256: क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस मसले में कि एक नोट क़ीमती (10) रुपये का ज़ैद ने अम्र के हाथ मबलग़ (10) रुपये को इस शर्त पर बैअ (बेचा) किया कि एक रुपया माहवार क़िस्त करके बारह महीने में इस ज़र-ए-समन (क़ीमत) को...

---

1 कन्ज़ुल उम्माल हदीस 15516 मुअस्ससतुर रिसाला बैरूत 6/238 2 अल-क़ुरआन अल-करीम 2/275

ہوگیا تو روپے کا ہوا اشرفی کا تو نہ ہوگا یا ایک ہی چیز سونے اور چاندی دونوں کا عین ہو جائے گی اور ابھی درمختار سے گزرا کہ ایک روپے کی بیع ایک اشرفی سے صحیح ہے اور ہرگز ربا نہیں۔ نوٹ جبکہ روپے کا عین ٹھہرا تو دس روپے کا نوٹ بارہ اشرفیوں کو بیچنا قطعاً ربانہ ہوگا اب یہ عجیب حکم پیدا ہوگا کہ دس کا نوٹ بارہ روپے کو بیچو جب تو سود اور دس کے نوٹ پر بارہ اشرفیاں لے جاؤ تو اصلاً سود نہیں، غرض ان لوگوں کی مخالفت اصلاً کسی اصل شرعی کی طرف راجع نہیں محض اپنے تخیلات بے سرو پا ہیں یہ حکم بیع کا تھا البتہ دس کا نوٹ قرض دینا اور یہ ٹھہرالینا کہ ادائے قرض کے وقت بارہ روپے یا پیسہ اوپر دس روپے لوں گا یہ حرام اور سود ہے۔ حدیث میں ہے:

قال رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کل قرض جرمنفعۃ فھو ربا۔ ۱

رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا جو قرض نفع کھینچے وہ سود ہے، اس کو حارث بن ابواسامہ نے سیدنا امیر المؤمنین حضرت علی کرم اللہ وجہہ الکریم سے روایت کیا۔ (ت)

رواہ الحارث بن ابی اسامۃ عن امیر المؤمنین علی کرم اللہ تعالٰی وجھہ۔

اور یہ خیال کہ بیع میں زیادہ کو بیچنا کیوں جائز ہوا اور قرض دے کر زیادہ ٹھہرالینا کیوں حرام ہوا تو دونوں ایک ہی سے ہیں یہ وہ مہمل اعتراض ہے کہ کافروں نے شریعت مطہرہ پر کیا اور قرآن عظیم نے اس کا جواب دیا:

قال اللہ تعالیٰ "قَالُوْا اِنَّمَا الْبَیْعُ مِثْلُ اللہ تعالیٰ نے فرمایا: کافر بولے بیع تو ایسے ہی ہے جیسے الرِّبٰوا وَ اَحَلَّ اللہُ الْبَیْعَ وَ حَرَّمَ الرِّبٰوا"۔ سود اور ہے یہ کہ اللہ نے حلال فرمائی بیع اور حرام فرمایا ۲ **سود۔**

فقیر ان مضامین عالیہ کی تفصیل میں بعونہ تعالیٰ ایک رسالہ لکھ سکتا ہے مگر عاقل ذی انصاف کو یہی جملے بس ہیں مسلمان انھیں بغور و انصاف دیکھیں اور اہل حق پر جاہلانہ اعتراض سے احتراز کریں والہادی وولی الایادی۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۲۵۶: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک نوٹ قیمتی (عدا) روپے کا زید نے عمرو کے ہاتھ مبلغ (عدا) روپے کو اس شرط پر بیع کیا کہ ایک روپیہ ماہوار قسط کرکے بارہ مہینہ میں اس زر ثمن کو

---

۱ کنز العمال حدیث ۱۵۵۱۶ مؤسسة الرساله بیروت ۶ / ۲۳۸ ۲ القرآن الکریم ۲ / ۲۷۵

Fatawa Razawiyyah Volume 17

...fulfill what Zaid has fixed with Amr, and for his satisfaction Amr has pledged his house etc. so that if the money is not paid, it can be recovered from it. State the ruling, you will be rewarded.

The Answer: Since in reality both the buyer and seller truly intended a valid Shariah sale, and the contract took place with the true consent of both parties, and the notes were handed over to the buyer in the same sitting, then in case of a difference in kind, the purified Shariah did not prohibit increase or decrease compared to market rates. And where it is a matter of giving a loan and taking more on it, that is certainly usury and haram. Where if this difference is not known, then it is the same matter which has been explicitly stated in the Great Quran itself:

Allah Almighty said: "They say: 'Trade is [just] like usury.' But Allah has permitted trade and has forbidden usury."[1] | Allah Almighty said: The disbelievers said trade is just like usury, while the fact is that Allah has made trade permissible and forbidden usury.

And a mere pledge without possession is nothing in Shariah. Allah Almighty said: "...a pledge with possession [may be taken]."[2] (Allah Almighty said: so a pledge being possessed. - T). And after possession, taking benefit from it is not permissible. For example, it is haram for Zaid to live in this house or to rent it out and take its rent. And Allah Almighty knows best.

Problem 257: From Marehra Mutahra, District Etah, sent by Hazrat Syed Irtiza Hussain Sahab, 12 Rajab 1326 AH. Is selling one Fulus (copper coin) for two Fulus permissible or impermissible? With humble respects.

The Answer: The predominant view is that it is impermissible,

As the absolute researcher (Muhaqqiq al-Mutlaq) established in 'Al-Fath' and was followed by subsequent researchers like Al-Bahr, Al-Nahr, Al-Ghazi, Al-Maqdisi, and Al-Shurunbulali. And in 'Al-Durr al-Mukhtar', it is stated that Imam Muhammad declared all of it haram and this view was authenticated.[3] | Just as the absolute researcher established in 'Al-Fath' and the researchers who came after him maintained it, such as Bahr, Nahr, Ghazi, Maqdisi, and Shurunbulali; and it is in 'Durr-e-Mukhtar' that Imam Muhammad declared all of them haram and this view was declared correct. And Allah Almighty knows best. (T)

And Allah Almighty knows best.

[1] Al-Quran al-Karim 2/275 [2] Al-Quran al-Karim 2/283 [3] Al-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Riba, Mujtabai Press Delhi, 2/41

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

...पूरा कर दे जो ज़ैद ने अम्र से तय किया है और उसकी तसल्ली के लिए अम्र ने अपने मकान वगैरह को बंधक (pledge) बना दिया है कि अगर रुपया अदा न हो तो उससे वसूल किया जा सके। बयान फरमाएं, आपको सवाब मिलेगा।

जवाब: चूंकि वास्तव में क्रेता और विक्रेता दोनों का उद्देश्य शरीयत के अनुसार सही बिक्री था और दोनों पक्षों की सच्ची सहमति से अनुबंध हुआ और नोट उसी बैठक में खरीदार के कब्जे में दे दिए गए, तो लिंग में अंतर होने की स्थिति में पवित्र शरीयत ने बाजार भाव पर कमी या अधिकता को मना नहीं किया है। और जहां कर्ज देना और उस पर अधिक लेना हो, वह निश्चित रूप से ब्याज और हराम है। जहां अगर इस अंतर को न समझें, तो यह वही मामला है जिसे स्वयं महान कुरान में स्पष्ट किया गया है:

अल्लाह तआला ने फरमाया: 'उन्होंने कहा: "व्यापार तो ब्याज की तरह ही है।" लेकिन अल्लाह ने व्यापार को हलाल किया है और ब्याज को हराम कर दिया है।'[1] | अल्लाह तआला ने फरमाया: काफ़िर बोले व्यापार तो ऐसे ही है जैसे ब्याज और बात यह है कि अल्लाह ने हलाल फ़रमाई व्यापार और हराम फ़रमाया ब्याज।

और बिना कब्जे के सिर्फ गिरवी रखना शरीयत में कुछ भी नहीं है। अल्लाह तआला ने फरमाया: '...एक गिरवी जो कब्जे में हो।'[2] (अल्लाह तआला ने फरमाया: सो गिरवी जो कब्जे में लिया गया हो। - त) और कब्जे के बाद उससे लाभ उठाना हलाल नहीं है, उदाहरण के लिए ज़ैद का उस मकान में रहना या उसे किराए पर देकर उसका किराया लेना हराम है। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला 257: मारहरा मुतहरा, जिला एटा से, प्रेषक हज़रत सैयद इर्तज़ा हुसैन साहब, 12 रजब 1326 हिजरी। एक फुलुस (तांबे का सिक्का) को दो फुलुस के बदले बेचना जायज़ है या नाजायज़? ज़्यादा नियाज़ के साथ।

जवाब: सही बात यह है कि यह नाजायज़ है,

जैसा कि 'मुहक्किक अल-मुतलक' ने 'अल-फतह' में इसकी तहक़ीक़ की है और उनके बाद के शोधकर्ताओं जैसे अल-बहर, अल-नहर, अल-ग़ज़ी, अल-मक़दीसी और अल-शुरुनबुलाली ने इसका

समर्थन किया है। और 'अल-दुर्र अल-मुख्तार' में है कि इमाम मुहम्मद ने इसे पूरी तरह हराम बताया और इस राय को सही माना।[3] | जैसा कि मुहक्किक अली अल-इतलाक़ ने 'फ़तह' में इसकी तहक़ीक़ फ़रमाई और बाद में आने वाले मुहक्किकीन ने उसे बरक़रार रखा जैसे बहर, नहर, ग़ज़ी, मक़दीसी और शरुन्बुलाली; और 'दुर्रे मुख़्तार' में है कि इमाम मुहम्मद ने सब को हराम कहा और इस क़ौल को सही करार दिया। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है। (त)

और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

[1] अल-कुरान अल-करीम 2/275 [2] अल-कुरान अल-करीम 2/283 [3] दुर्रे मुख़्तार, किताबुल बुयूअ, बाबुर रिबा, मुज्तबाई प्रेस दिल्ली, 2/41

पृष्ठ 614/715

پورا کردے جو زید نے عمرو سے مقرر کی ہے اور اس کے اطمینان کے لئے عمرو نے اپنے مکان وغیرہ کو مستغرق کر دیا کہ اگر روپیہ نہ ادا ہو تو اس سے وصول کر سکے۔ بینوا توجروا

الجواب: جبکہ حقیقتہ بائع و مشتری دونوں کو فی الواقع بیع صحیح شرعی مقصود ہو اور فریقین کی سچی رضامندی سے عقد واقع ہوا اور نوٹ اسی جلسہ میں مشتری کے قبضہ میں دے دیا جائے تو اختلاف جنس کی حالت میں شرع مطہر نے بازار کے بھاؤ پر کمی بیشی منع نہ کی، اور جہاں قرض دینا اور اس پر زیادہ لینا ہو وہ ضرور سود اور حرام ہے جہاں اگر اس فرق کو نہ جانیں تو یہ وہی امر ہے جس کی خود قرآن عظیم میں تصریح ہے:

قال اللہ تعالی 'قَالُوْا اِنَّمَا الْبَیْعُ مِثْلُ الرِّبٰوا وَاَحَلَّ اللّٰہُ الْبَیْعَ وَحَرَّمَ الرِّبٰوا' ۱ _ | اللہ تعالی نے فرمایا: کافر بولے بیع تو ایسے ہی ہے جیسے سود اور ہے یہ کہ اللہ نے حلال فرمائی بیع اور حرام فرمایا سود۔

اور خالی استغراق بے قبضہ شرعاً کوئی چیز نہیں قال اللہ تعالی 'فَرِھٰنٌ مَّقْبُوْضَۃٌ' ۲ (اللہ تعالی نے فرمایا: پس رہن قبضہ کیا ہوا ۔ت) اور بعد قبضہ اس سے نفع اٹھانا حلال نہیں مثلا زید کو اس مکان میں رہنا یا کرایہ پر دے کر اس کا کرایہ لینا حرام ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۵۷: از مارھرہ مطہرہ ضلع ایٹہ مرسلہ حضرت سید ارتضا حسین صاحب ۱۲رجب ۱۳۲۶ھ

بیع الفلس بالفلسین جائز یا ناجائز؟ زیادہ نیاز

الجواب: راجح یہ کہ ناجائز ہے،

کما حققہ المحقق علی الاطلاق فی الفتح واقرہ علیہ من بعدہ من المحققین کالبحر والنھر والغزی والمقدسی والشرنبلالی وفی الدر المختار حرم الکل محمد وصحح ۳۔ | جیسا کہ محقق علی الاطلاق

نے فتح میں اس کی تحقیق فرمائی اور بعد میں آنے والے محققین نے اس کو برقرار رکھا جیسے بحر، نہر، غزی، مقدسی اور شرنبلالی، اور درمختار میں ہے کہ امام محمد نے سب کو حرام کہا اور اس قول کو صحیح قرار دیا واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت)

واللہ تعالٰی اعلم۔

۱ القرآن الکریم ۲/ ۲۷۵ ۲ القرآن الکریم ۲/ ۲۸۳ ۳ در مختار کتاب البیوع باب الربو مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۴۱

Fatawa-e-Razvia (17)

Problem 275: From the country of Bengal, district Noakhali, place Hatia, from Maulvi Abbas Ali alias Maulvi Abdussalam Sahib, 20 Dhu al-Hijjah 1315 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: is it permissible to give ten rupees and take fifteen rupees' worth of coins? Explain and be rewarded.

Answer: In a sale (trade), it is permissible. Allah the Almighty said, "And Allah has permitted trade."[1] (Allah the Almighty said: And Allah has made trade lawful. -T) In Durr-e-Mukhtar, it is stated:

Arabic Text	Urdu Translation
Valid is the sale of two dirhams and one dinar for one dirham and two dinars by exchanging genus, unlike selling the same genus. Similarly, selling one Kurr (a measure) of wheat and one Kurr of barley for one Kurr of wheat and one Kurr of barley. Likewise, selling eleven dirhams for ten dirhams and one dinar.[2]	Due to changing the genus to a different genus, selling two dirhams and one dinar for two dinars and one dirham is valid, and similar to it is selling one bag of wheat and one bag of barley for two bags of wheat and two bags of barley. Likewise, selling eleven dirhams for ten dirhams and one dinar. (T)

And in a loan, it is forbidden. Allah the Almighty said, "and has forbidden interest."[3] (Allah the Almighty said: and He has forbidden usury. -T) The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

| كل قرض جر منفعۃ فھو ربا[4]۔ | Every loan that draws a profit is usury. (T) |

That is, if ten rupees are sold for two hundred and forty annas (equivalent to 15 rupees), it is lawful. But if ten rupees are given as a loan on the condition that I will take two hundred and forty or even one hundred and sixty-one annas back, then it is forbidden. And Allah Almighty knows best.

---

[1] Al-Quran Al-Karim 2/275 [2] Dur-e-Mukhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Sarf, Matba' Mujtabai Delhi 2/55 [3] Al-Quran Al-Karim 2/275 [4] Kanz al-Ummal, Hadith 15516, Muassasat al-Risala Beirut 6/238

फ़तावा-ए-रज़विया (17)

समस्या 275: बंगाल देश, नोआखाली जिला, हटिया स्थान से, मौलवी अब्बास अली उर्फ मौलवी अब्दुस्सलाम साहब द्वारा, 20 ज़ुल-हिज्जा 1315 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि दस रुपये देकर पंद्रह रुपये के सिक्के लेना जायज़ होगा या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: खरीद-बिक्री (तिज़ारत) में यह जायज़ है। अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "व अहलल लाहुल बय-अ"[1] (अल्लाह तआला ने फ़रमाया: और अल्लाह ने व्यापार को हलाल किया है। -त) 'दुर्रे मुख्तार' में है:

अरबी पाठ

सह्.ह़ बय-अु दिरह़मयनि व दीनारिन बिदिरह़मिन व दीनारयनि बिस़र्फिल जिन्स बख़िलाफ़िल जिन्स व मिस़्लुहु बय-अु कुर्रि बर्रिन व कुर्रि शअ़ीरिन बिकुर्रि बर्रिन व कुर्रि शअ़ीरिन व कज़ा बय-अु अह़द अ़शर दिरह़मन बिअ़शरति दराहिम व दीनार[2]

उर्दू अनुवाद

प्रकार (जिन्स) को दूसरे प्रकार में बदलने के कारण, दो दिरहम और एक दीनार को दो दीनार और एक दिरहम के बदले बेचना सही है। और इसी के समान है एक बोरी गेहूँ और एक बोरी जौ को दो बोरी गेहूँ और दो बोरी जौ के बदले बेचना और इसी तरह ग्यारह दिरहम को दस दिरहम और एक दीनार के बदले बेचना। (त)

और ऋण (क़र्ज़) में यह हराम है। अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "व ह़र्र मर रिबवा"[3] (अल्लाह तआला ने फ़रमाया: और उसने ब्याज को हराम कर दिया। -त) अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

| कुल्लु क़र्ज़िन जर्र मनफ़-अ़तन फ़हुव रिबा[4]। | जो ऋण लाभ खींचे, वह ब्याज है। (त) |

अर्थात्, यदि कोई दस रुपये को दो सौ चालीस आने (15 रुपये के बराबर) में बेचता है, तो यह हलाल है। लेकिन यदि दस रुपये इस शर्त पर क़र्ज़ देता है कि मैं दो सौ चालीस या एक सौ इकसठ ही आने लूँगा, तो यह हराम है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

---

[1] अल-क़ुरान अल-करीम 2/275 [2] दुर्रे मुख्तार, किताब अल-बुयू, बाब अस-सर्फ़, मतबा मुजतबाई दिल्ली 2/55 [3] अल-क़ुरान अल-करीम 2/275 [4] कंजुल उम्माल, हदीस 15516, मुअस्ससतुर रिसाला बेरूत 6/238

فتاوٰی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

مسئلہ ۲۷۵: از ملک بنگال ضلع نواکھالی مقام ہتیامر سلہ مولوی عباس علی عرف مولوی عبدالسلام صاحب ۲۰ ذی الحجہ ۱۳۱۵ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ دس روپے دے کر پندرہ روپے کا پیسہ لینا جائز ہو گا یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: بیع میں جائز ہے قال اللہ تعالٰی "وَاَحَلَّ اللّٰہُ الْبَیْعَ"[1] (اللہ تعالٰی نے فرمایا: اور حلال کیا ہے اللہ تعالٰی نے بیع کو۔ ت) در مختار میں ہے:

| صح بیع درہمین و دینار بدرہم و دینارین بصرف الجنس بخلاف الجنس و مثلہ بیع کُرِّ برٍّ و کُرِّ شعیرٍ بکُرِّ برٍّ و کُرِّ شعیرٍ و کذا بیع احد عشر درہما بعشرۃ دراہم و دینار[2] | جنس کو خلاف جنس کی طرف پھیرنے کی وجہ سے دو درہموں اور ایک دینار کو دو دیناروں اور ایک درہم کے عوض بیچنا صحیح ہے، اور اسی کی مثل ہے ایک بوری گندم اور ایک بوری جو کو دو بوری گندم اور دو بوری جو کے عوض فروخت کرنا اور اسی طرح گیارہ درہموں کو دس درہم اور ایک دینار کے عوض بیچنا۔(ت) |

اور قرض میں حرام قال اللہ تعالٰی وَحَرَّمَ الرِّبٰوا[3] (اللہ تعالٰی نے فرمایا: اور اس نے سود کو حرام کیا۔ ت) رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

| کل قرض جر منفعۃ فھو ربا[4]۔ | جو قرض نفع کھینچے وہ سود ہے۔ (ت) |

یعنی اگر دس روپے دو سو چالیس آنے کو بیچے تو حلال اور اگر دس روپے قرض دے اس شرط پر کہ دوسو چالیس یا ایک سو اکسٹھ ہی آنے لوں گا تو حرام۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

---

[1] القراٰن الکریم ۲/۲۷۵ [2] درمختار کتاب البیوع باب الصرف مطبع مجتبائی دہلی ۲/۵۵ [3] القراٰن الکریم ۲/۲۷۵ [4] کنزالعمال حدیث ۱۵۵۱۶ مؤسسۃ الرسالۃ بیروت ۶/۲۳۸

Fatawa Razawiyya Volume 17

Problem 259: From Maulvi Ihsan Hussain, 23 Sha'ban 1315 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: A person bought notes of fifteen hundred from the court with the intention of trade. He then sold a ten-rupee note on credit for twelve rupees and fixed a monthly payment of one rupee for a year to be collected from the debtor. If he sold two notes of ten rupees each, he fixed a monthly installment of two rupees for a year. A bond was written with the debtor with the condition that if the amount is not paid within the year, it will be recovered through a lawsuit along with expenses from the debtor's property or from his guarantor. Provide an answer, may you be rewarded. Answer: This form is impermissible because a corrupt condition (shart-e-fasid) invalidates the sale. A corrupt sale is haram (forbidden) and must be annulled. The basis of actions is intentions. "And Allah knows the corrupter from the reformer" [Quran 2:220]. An act done with the intention of usury (riba) is certainly a cause for sin. Although selling a loan or debt for more is not free from dislike (karahat), buying and selling currency notes with an increase or decrease is undoubtedly permissible. Detailed explanation is in our Fatawa. And Allah Almighty knows best.

Problem 260: 8 Ramadan-ul-Mubarak 1314 AH. What do the scholars of religion and jurists of the firm Shariah say about this matter: If a current hundred-rupee note is sold to someone for one hundred and twenty rupees, and ten rupees per month are to be collected from the buyer, is this sale permissible or not? Answer: A note is like other saleable items. An owner has the right in a Sharia-compliant sale and purchase to take profit on his property, provided there is consent from the buyer. If a ten-rupee piece of cloth is sold for a hundred rupees with the buyer's consent, there is no harm in it, whether the payment is fixed in cash or through installments. Imam Ibn al-Humam states in Fath al-Qadir, a commentary on al-Hidayah: "If a piece of paper is sold for a thousand [dirhams], it is permissible and not disliked." If a piece of paper was sold in exchange for a thousand dirhams, it is permissible and there is no dislike in it.

---

1. Al-Quran al-Karim 2/220
2. Fath al-Qadir, Kitab al-Kafala, Maktabah Nooriya Razawiya Sukkur, 6/322 Page 616 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

मसला 259: प्रेषक मौलवी एहसान हुसैन, 23 शाबान 1315 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: एक व्यक्ति ने व्यापार की नियत से कचहरी से पंद्रह सौ के नोट खरीदे। फिर उसने दस रुपये का नोट बारह रुपये में उधार बेचा और कर्जदार से एक साल तक प्रति माह एक रुपया लेना तय किया। यदि उसने दस-दस रुपये के दो नोट बेचे, तो एक साल तक प्रति माह दो रुपये की किश्त तय की। कर्जदार से इकरारनामा लिखवाया गया जिसमें यह शर्त रखी गई कि यदि साल भर में भुगतान नहीं किया गया, तो वाद दायर करके खर्च सहित कर्जदार की संपत्ति से या उसके जामिन (गारंटर) से वसूल किया जाएगा। जवाब दें, आपको पुण्य मिलेगा। उत्तर: यह सूरत नाजायज है क्योंकि भ्रष्ट शर्त (शर्ते-फ़ासिद) बिक्री को भ्रष्ट कर देती है। भ्रष्ट बिक्री हराम है और इसे रद्द करना वाजिब है। कार्यों का आधार नीयत पर है। "और अल्लाह बिगाड़ने वाले को संवारने वाले से जानता है" [कुरान 2:220]। जो कार्य सूद (ब्याज) की नीयत से किया जाए, वह निश्चित रूप से पाप का कारण होगा। हालाँकि ऋण को अधिक मूल्य पर बेचना नापसंदगी (कराहत) से खाली नहीं है, लेकिन नोटों की खरीद-फरोख्त में कमी-बेशी निस्संदेह जायज है। इसका विस्तार हमारे फ़तावा में है। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला 260: 8 रमज़ान-उल-मुबारक 1314 हिजरी। धर्म के विद्वान और शरिया के मुफ्ती इस मामले में क्या कहते हैं: यदि वर्तमान में प्रचलित सौ रुपये का एक नोट किसी व्यक्ति को एक सौ बीस रुपये में बेचा जाए और खरीदार से प्रति माह दस रुपये वसूल किए जाएं, तो क्या यह बिक्री जायज है या नाजायज? उत्तर: नोट अन्य बिकने वाली वस्तुओं की तरह एक चीज है। मालिक को अपनी मिल्कियत पर लाभ लेने का अधिकार शरीयत के अनुसार क्रय-विक्रय में है, जबकि खरीदार की सहमति हो। यदि दस रुपये का थान (कपड़ा) खरीदार की सहमति से सौ रुपये में बेचा जाए, तो इसमें कोई हर्ज नहीं है, चाहे वे रुपये नकद तय हों या किश्तों में। इमाम इब्न अल-हुमाम 'फ़तहुल क़दीर शरह हिदाया' में फरमाते हैं: "अगर कागज़ का एक टुकड़ा हज़ार [दिरहम] के बदले बेचा गया, तो जायज़ है और नापसंद नहीं है।" यदि कागज का एक टुकड़ा एक हजार दिरहम के बदले बेचा गया, तो वह जायज है और इसमें कोई कराहत (नापसंदगी) नहीं है।

---

1. अल-कुरान अल-करीम 2/220
2. फ़तहुल क़दीर, किताबुल कफ़ाला, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 6/322 पृष्ठ 616/715

فتاوٰی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

مسئلہ ۲۵۹: مرسلہ مولوی احسان حسین ۲۳ شعبان ۱۳۱۵ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ کسی شخص نے بہ نیت تجارت ہزار پانسو کے نوٹ کچہری سے خرید کر کے دس روپے کا نوٹ بارہ روپے کو قرض فروخت کر کے ایک روپیہ ماہوار سال بھر تک مدیون سے لینا مقرر کیا اور اگر دو نوٹ دس دس روپے کے فروخت کئے تو دو روپے ماہوار قسط ایک سال تک مقرر کیا اور مدیون سے تمسک لکھا کہ شرط کر لیتے ہیں کہ سال بھر میں ادا نہ کرو گے تو نالش کر کے مع خرچہ کے مدیون کی جائداد سے یا اس کے ضامن سے وصول کیا جائے گا۔ بینوا توجروا

الجواب: یہ صورت ناجائز ہے کہ شرط فاسد مفسد بیع ہے اور بیع فاسد حرام و واجب الفسخ اور مدار اعمال کا نیت پر ہے، "وَاللّٰہُ یَعْلَمُ الْمُفْسِدَ مِنَ الْمُصْلِحِ" ۱ (اور اللہ تعالٰی جانتا ہے بگاڑنے والے کو سنوارنے والے سے۔ ت) جو فعل سود کی نیت سے کیا جائے قطعاً موجب گناہ ہو گا اگرچہ فی نفسہ ربانہ اور قرض زیادہ کو بیچنا بھی کراہت سے خالی نہیں اور نوٹ کی خرید و فروخت پر کمی بیشی بلا شبہہ جائز ہے والتفصیل فی فتاونا (اور تفصیل ہمارے فتاوی میں ہے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۲۶۰: ۸ رمضان المعظم ۱۳۱۴ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ نوٹ رائج الوقت سو روپیہ کا ایک سو بیس روپیہ کو کسی شخص کے ہاتھ فروخت کیا جائے اور دس روپے ماہوار مشتری سے وصول کیا جائے تو یہ فروخت جائز ہے یا نا جائز؟

الجواب: نوٹ مثل اور اشیاء فروختنی کے ایک چیز ہے مالک کو اپنی ملک پر نفع لینے بیع و شراء شرعی میں اختیار ہے جبکہ مشتری کی رضامندی ہو دس روپے کا تھان مشتری کی رضامندی سے سو روپے کو بیچے تو کچھ مضائقہ نہیں پھر وہ روپے چاہے نقد ٹھہریں خواہ قسط بندی سے، امام

ابن الہمام فتح القدیر شرح ہدایہ میں فرماتے ہیں: لو باع کاغذا بالف یجوز ولایکرہ ۲۔ اگر کاغذ کا ایک ٹکڑا ہزار درہم کے بدلے میں بیچا تو جائز ہے اور اس میں کراہت نہیں ہے۔ (ت)

۱ القرآن الکریم ۲/ ۲۲۰ ۲ فتح القدیر کتاب الکفالۃ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶/ ۳۲۲ Page of 715 616

Fatawa Razawiyyah Volume 17

Yes, for instance, lending a hundred rupees and stipulating that a note for one hundred and ten rupees will be taken in return, or selling a hundred-rupee note for one hundred and ten, agreeing that this price will be paid gradually at ten rupees per month for two years; these scenarios are definitively interest (usury) and forbidden (haram). It is stated in a Hadith:

[Every loan that draws a benefit is interest. (1) | That loan which draws profit is interest. (T)]

And the thought that why is selling for more in a trade permissible, but taking more back after giving a loan forbidden, as both seem the same? This is a baseless objection that the disbelievers raised against the pure Sharia, and the Great Quran has answered it:

[Allah Almighty says: "They said, 'Trade is just like interest.' But Allah has permitted trade and has forbidden interest." (2) And Allah Almighty knows best. | Allah Almighty says: The disbelievers said trade is just like interest, and the fact is that Allah has made trade lawful and forbidden interest. (T)]

Issue 261: What do the scholars of religion say regarding this matter: A person gave a rupee to a grocer to change into coins. The grocer gave 1/8th and said he would give the remaining 1/8th tomorrow. Is it a sin to leave it like this? Explain and be rewarded.

The Answer: There are varying reports regarding the permissibility of this situation. However, most authoritative works such as Tanwir al-Absar, Durr-e-Mukhtar, Fatawa Bazzaziyya, Mabsut, Muhit, Dhakhirah, Bahr al-Ra'iq, Nahr al-Fa'iq, Fatawa of Allamah Hanuni, Fatawa Hindiyyah, etc., have asserted its permissibility. Thus, it is better to avoid it to be free from disagreement (Khurujan 'an al-khilaf - T). And if one does so, there is no sin, as the majority of scholars lean towards permissibility (Lijunu' 'ammah al-ulama ila al-jawaz - T). It is stated in Tanwir al-Absar:

[If someone sells copper coins (fulus) for their like, or for dirhams, or for dinars, if one of the two parties pays in cash, it is permissible. If they separate without either party taking possession, it is not permissible. (3) End. | If someone sold coins in exchange for their own kind, or in exchange for dirhams or dinars, if one of the two

made cash payment then it is permissible, and if before possession both seller and buyer separated, then it is impermissible. End. (T)]

1. Kanz al-Ummal, Hadith 15516, Mu'assasat al-Risala Beirut, 6/238.
2. Al-Quran al-Karim 2/275.
3. Durr-e-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Kitab al-Buyu', Bab al-Riba, Matba' Mujtabai Delhi, 2/42.

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

हाँ, जैसे कि सौ रुपये ऋण दिए और यह तय कर लिया कि इसके बदले एक सौ दस रुपये का नोट लूँगा या सौ रुपये का नोट एक सौ दस में बेचा और यह तय किया कि यह मूल्य धीरे-धीरे दो साल तक दस रुपये प्रति माह चुकाया जाएगा; ये सूरतें स्पष्ट रूप से सूद (ब्याज) और हराम हैं। हदीस में है:

[कुलु क़र्ज़िन जर्रा मनफ़अतन फ़हुवा रिबा (1) | जो ऋण लाभ खींचे वह सूद है। (त)]

और यह विचार कि व्यापार में अधिक मूल्य पर बेचना क्यों जायज़ हुआ और ऋण देकर अधिक लेना क्यों हराम हुआ, जबकि दोनों एक जैसे हैं? यह वह निरर्थक आपत्ति है जो काफ़िरों ने शरीयत-ए-मुतह्हरा पर उठाई थी और क़ुरआन-ए-अज़ीम ने इसका उत्तर दिया:

[अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "क़ालू इन्नमल बैउ मिस्लुर रिबा व अहललल्लाहुल बैअ व हर्रमर रिबा" (2) वल्लाहु तआला आलम। | अल्लाह तआला ने फ़रमाया: काफ़िर बोले व्यापार तो वैसा ही है जैसे सूद और बात यह है कि अल्लाह तआला ने हलाल फ़रमाया व्यापार को और हराम फ़रमाया सूद को। (त)]

मसला 261: उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि एक व्यक्ति ने एक पंसारी को एक रुपया दिया कि उसके सिक्के दे दे। उसने 1/8 हिस्सा दिया और कहा कि बाकी 1/8 कल दूँगा। क्या इस तरह छोड़ देना गुनाह है या नहीं? बयान फ़रमाएं और सवाब पायें।

उत्तर: इस सूरत के जायज़ होने के बारे में विभिन्न उल्लेख हैं, लेकिन अधिकांश प्रामाणिक ग्रंथों जैसे तनवीरुल अबसार, दुर्रे मुख्तार, फ़तावा बज़ाज़िया, मबसूद, मुहीत, ज़खीरा, बहरुल राइक़, नहरुल फ़ाइक़, फ़तावा अल्लामा हनूनी, फ़तावा हिन्दिया आदि में इसके जायज़ होने पर दृढ़ मत व्यक्त किया गया है। फिर भी, मतभेद से बचने के लिए (खुरूजन अन अल-खिलाफ़ - त) इससे बचना बेहतर है। और यदि कोई ऐसा करता है, तो कोई गुनाह भी नहीं है क्योंकि आम उलेमा का झुकाव इसके जायज़ होने की ओर है (लजुनूए आममतुल उलेमा इलल जवाज़ - त)। तनवीरुल अबसार में है:

[बाअ फ़ुलूसन बि-मिस्लिहा अव बि-दराहिमा अव बि-दनानीरा फ़-इन नक़दा अहदुहुमा जाज़ा व इन तफ़र्रक़ा बिला क़ब्ज़ि अहदिहिमा लम यजुज़ (3) इनतहा। | किसी ने सिक्के अपनी ही जाति के बदले

या दिरहम या दीनार के बदले बेचे, यदि दोनों में से एक ने नकद भुगतान किया तो जायज़ है और यदि कब्ज़े से पहले विक्रेता और खरीदार दोनों अलग हो गए तो नाज़ायज़ है। इनतहा। (त)]

1. कन्ज़ुल उम्माल, हदीस 15516, मुअस्ससतुल रिसाला बेरुत, 6/238.
2. अल-क़ुरआन अल-करीम 2/275.
3. दुर्रे मुख्तार शरह तनवीरुल अबसार, किताबुल बुयू, बाबुर रिबा, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 2/42.

पृष्ठ 617 / 715

ہاں یوں کہ سو روپے قرض دئے اور یہ ٹھہرالیا کہ اس کے عوض ایک سو دس روپے کا نوٹ لوں گا یا سو روپے کا نوٹ ایک سو دس کو بیچا اور قرار داد کیا کہ یہ زرِ ثمن اگر بتدریج دو سال بھر تک دس روپے ماہوار یہ صورتیں قطعی سود وحرام ہیں، حدیث میں ہے:

[کل قرض جر منفعۃ فھو ربا ۱۔ | جو قرض نفع کھینچے وہ سود ہے۔ (ت)]

اور یہ خیال کہ بیع میں زیادہ بیچنا کیوں جائز ہوا اور قرض دے کر زیادہ ٹھہرالینا کیوں حرام ہوا، دونوں ایک ہی سے ہیں، یہ وہ مہمل اعتراض ہے کہ کافروں نے شریعتِ مطہرہ پر کیا اور قرآنِ عظیم نے اس کا جواب دیا:

[قال اللہ تعالٰی "قَالُوْٓا اِنَّمَا الْبَیْعُ مِثْلُ الرِّبٰوا وَ اَحَلَّ اللہُ الْبَیْعَ وَ حَرَّمَ الرِّبٰوا" ۲ واللہ تعالٰی اعلم۔ | اللہ تعالٰی نے فرمایا: کافر بولے بیع تو ایسی ہی ہے جیسے سود اور ہے یہ کہ اللہ تعالٰی نے حلال فرمائی بیع اور حرام فرمایا سود۔ (ت)]

مسئلہ ۲۶۱: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص نے بقال کو ایک روپیہ دیا کہ اس کے پیسے دے دے اس نے ۱/۸ دئے اور کہا کہ ۱/۸ کل دوں گا، یہ چھوڑ دینا گناہ ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: اس صورت کے جواز میں روایات مختلف ہیں لیکن اکثر معتبرات مثل تنویر الابصار و در مختار و فتاوٰی بزازیہ و مبسوط و محیط و ذخیرہ و بحر الرائق و نہر الفائق و فتاوٰی علامہ حانونی و فتاوٰی ہندیہ وغیرہا میں جواز پر جزم فرمایا تو بہتر بچنا ہے خروجاً عن الخلاف (اختلاف سے

نکلنے کے لئے۔ت) اور اگر ایسا کرے تو کچھ گناہ بھی نہیں لجنوع عامۃ العلماء الٰی الجواز (عام علماء کا جواز کی طرف بیان ہونے کی وجہ سے۔ ت) تنویر الابصار میں ہے:

[باع فلو سا بمثلھا او بدراھم او بدنا نیر فان نقد احدھما جاز وان تفرقا بلا قبض احدھما لم یجز ۳ انتھی۔ | کسی نے پیسے فروخت کئے اپنی مثل کے عوض یا درہموں یا دیناروں کے عوض، اگر دونوں میں سے ایک نے نقد ادائیگی کی تو جائز ہے اور اگر قبضہ سے پہلے بائع اور مشتری دونوں جدا ہو گئے تو ناجائز ہے۔ انتہی۔ (ت)]

۱ کنز العمال حدیث ۱۵۵۱۶ مؤسسۃ الرسالۃ بیروت ۶/ ۲۳۸ ۲ القرآن الکریم ۲/ ۲۷۵ ۳ در مختار شرح تنویر الابصار کتاب البیوع باب الربو مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۴۲

Volume 17 Fatawa Razviya

In Fatawa Alamgiri it is mentioned: If a man buys copper coins (fulus) for dirhams and pays the price immediately, but the copper coins were not with the seller at the time, the sale is permissible. Similarly, it is in al-Mabsut. Al-Hasan narrated from Imam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him) that if someone buys copper coins for dirhams while neither the seller has the coins nor the buyer has the dirhams, then if one of them makes the payment and they separate, it is permissible. However, if they separate before either has made a payment, it is not permissible. This is mentioned in al-Muhit. (Summary)

In Radd al-Muhtar it is mentioned: Al-Hanuti was asked about selling gold for copper coins on credit. He replied that it is permissible if possession is taken of one of the two exchanged items. This is based on the reasoning in al-Bazzaziyya that if someone buys a hundred copper coins for a dirham, possession by one side is sufficient. It is stated that the same rule applies if someone sells silver or gold for copper coins, as mentioned in al-Bahr citing al-Muhit. He said: Do not be misled by what is in Fatawa Qari al-Hidaya, stating that selling copper coins for gold or silver on credit is not permissible. I say...

[1] Fatawa Hindiyyah, Book of Currency Exchange, Chapter 2, Section 3, Noorani Kutub Khana Peshawar 3/224 Page 618 of 715

जिल्द 17 फतवा रज़विया

फतवा आलमगिरी में उल्लेख है: यदि कोई व्यक्ति दिरहम के बदले तांबे के सिक्के(फुलुस) खरीदता है और नकद भुगतान करता है, लेकिन सिक्के विक्रेता के पास उस समय उपलब्ध नहीं थे, तो बिक्री जायज़ है। इसी तरह 'अल-मबसूत' में भी है। हसन ने इमाम अबू हनीफ़ा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत की है कि यदि किसी ने दिरहम के बदले सिक्के खरीदे, जबकि न तो विक्रेता के पास सिक्के थे और न ही खरीदार के पास दिरहम, फिर उनमें से किसी एक ने भुगतान कर दिया और वे अलग हो गए, तो यह जायज़ है। और यदि अलग होने तक दोनों में से किसी ने भी भुगतान नहीं किया, तो यह नाज़ायज़ है। 'अल-मुहीत' में ऐसा ही वर्णित है। (संक्षेप)

रद अल-मुह्तार में उल्लेख है: अल-हानुती से सोने के सिक्कों के बदले उधार बिक्री के बारे में पूछा गया। उन्होंने उत्तर दिया कि यदि विनिमय की गई दो वस्तुओं में से एक पर अधिकार कर लिया गया है, तो यह जायज़ है। यह 'अल-बज़ज़िया' के इस तर्क पर आधारित है कि यदि कोई एक दिरहम के बदले सौ सिक्के खरीदता है, तो एक पक्ष द्वारा अधिकार पर्याप्त है। यह कहा गया है कि यदि कोई सिक्कों के बदले सोना या चाँदी बेचता है, तो वही नियम लागू होता है, जैसा कि 'अल-मुहीत' का हवाला देते हुए 'अल-बहर' में वर्णित है। उन्होंने कहा: 'फतवा कारी अल-हिदाया' में जो है उससे भ्रमित न हों, जिसमें कहा गया है कि सोने या चाँदी के बदले सिक्कों की उधार बिक्री नाज़ायज़ है। मैं कहता हूँ...

[1] फतवा हिंदिया, किताब अल-सर्फ़ अध्याय 2, खंड 3, नूरानी कुतुब खाना पेशावर 3/224 पृष्ठ 618 का 715

فتاوٰی عالمگیریہ میں ہے: اذا اشتری الرجل فلوساً بدراہم و نقد الثمن ولم تکن الفلوس عند البائع فالبیع جائز کذا فی المبسوط و روی الحسن عن ابی حنیفۃ اذا اشتری فلوساً بدراہم ولیس عند ھذا فلوس ولا عند الآخر دراہم ثم ان احدہما دفع و تفرقا جاز وان لم ینقد واحد منھما حتی تفرقا لم یجز کذا في المحیط اھ ملخصا۔ اگر کسی نے درہموں کے بدلے پیسے خریدے اور ثمن نقد ادا کر دئے مگر بائع کے پاس اس وقت پیسے موجود نہ تھے تو بیع جائز ہے یونہی مبسوط میں ہے، اور حسن نے امام ابو حنیفہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا کہ اگر کسی نے درہموں کے عوض پیسے خریدے جبکہ نہ اس (بائع) کے پاس پیسے ہیں نہ دوسرے (مشتری) کے پاس درہم ہیں پھر اگر ان میں سے ایک نے ادائیگی کردی اور وہ جدا ہوگئے تو جائز اور اگر جدا ہونے تک دونوں میں سے کسی نے بھی ادائیگی نہ کی تو ناجائز ہے محیط میں یوں مذکور ہے اھ تلخیص۔ (ت)

ردالمحتار میں ہے: سئل الحانوتی عن بیع الذھب بالفلوس نسیئۃ فاجاب بأنہ یجوز اذا قبض احد البدلین لما فی البزازیۃ لو اشتری مائۃ فلس بدرہم یکفي التقابض من احد الجانبین قال ومثلہ لو باع فضۃ او ذھباً بفلوس کما في البحر عن المحیط قال فلا یغتر بما فی فتاوی قاری الھدایۃ من انہ لایجوز بیع الفلوس الی اجل بذھب او فضۃ اھ قلت حانوتی سے سونے کے پیسوں کے عوض ادھار بیع کے بارے میں سوال کیا گیا تو انہوں نے جواب دیا کہ اگر بدلین میں سے ایک پر قبضہ کرلیا گیا ہے تو جائز ہے اس دلیل کی وجہ سے جو بزازیہ میں ہے کہ اگر کسی نے ایک درہم کے عوض سو پیسے خریدے تو صرف ایک طرف سے قبضہ کافی ہے اور اگر کوئی پیسوں کے بدلے سونا یا چاندی بیچے تو اس کا حکم بھی یہی ہے جیسا کہ محیط کے حوالے سے بحر میں مذکور ہے اور فرمایا کہ جو

فتاوٰی قاری الہدایہ میں ہے اس سے دھوکہ مت کھانا یعنی یہ کہ پیسوں کی سونے یا چاندی کے عوض ادھار بیع ناجائز ہے اھ میں کہتا ہوں

[1] فتاوٰی ہندیہ کتاب الصرف الباب الثانی الفصل الثالث نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۲۴ صفحہ 618 از 715

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Arabic Box:] The answer is that whatever is in Fatawa Qari al-Hidaya should be interpreted according to what the text of Al-Jami' al-Saghir indicates regarding the condition of mutual possession (taqabud) on both sides. Therefore, it cannot be objected to with what is in Al-Bazzaziya, which is based on what is in Al-Asl[1], etc. summary.

[Urdu Translation:] The answer is that whatever is in Fatawa Qari al-Hidaya will be interpreted as indicated by the text of Al-Jami', meaning that possession from one side is a condition. Therefore, no objection can be raised based on the statement in Al-Bazzaziya, which is based on the description in Al-Mabsut, etc. Summary (T).

In the same [book] it is stated:

[Arabic Box:] If one sells silver for copper coins (fulus), then possession of one of the two exchanged items is a condition before separation, not both, as mentioned in Al-Bahr citing Al-Dhakhirah. It is quoted in Al-Nahr from Fatawa Qari al-Hidaya that deferring one of them is not valid, then the author of Al-Nahr answered it[2] ...etc. And Allah Almighty knows best.

[Urdu Translation:] If someone sells silver for money (copper coins), then before parting, possession of only one of the two exchanges is a condition; possession of both is not a condition, as mentioned in Al-Bahr with reference to the aforementioned Dhakhirah. It is quoted in Al-Nahr from Fatawa Qari al-Hidaya that making one of the exchanges deferred is not correct. Then the author of Al-Nahr gave an answer to it. etc., and Allah Almighty knows best. (T)

Problem 262: What do the scholars of religion say regarding this issue: Is it permissible to exchange 'double coins' (dubul paisa), which are less in weight, for 'Mansuri coins' and take some shells (cowries) extra, or not?

The Answer: It is impermissible, even if one does not take shells.

[Arabic Box:] As is the school (madhhab) of Imam Muhammad, and it is the preferred view and closest to what is correct, because the cause (illah) of interest (riba), i.e., quantity (qadr) and genus (jins), is established, and an excess (tafadul) is definitely present, and Islamic law has definitely prohibited it. As for what they mentioned regarding the hadith of separation...

[Urdu Translation:] As is the school of Imam Muhammad, and that is the preferred view and closest to the truth because the cause of riba, i.e., quantity and genus, is established in it, and inequality is definitely present, and Sharia has specifically prohibited it. And regarding what the jurists have mentioned about the point of difference, that if a thing...

---

1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Riba, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/184.
2. Radd al-Muhtar, Bab al-Sarf, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/235.

फतवा रज़विया (जिल्द 17)

[अरबी बॉक्स:] उत्तर यह है कि फ़तवा क़ारी अल-हिदाया में जो कुछ भी है, उसे अल-जामी अल-सगीर के पाठ के अनुसार समझा जाना चाहिए, जिसमें दोनों पक्षों पर पारस्परिक कब्ज़ा (तकाबुद) की शर्त का उल्लेख है। इसलिए, अल-बज्जाज़िया में जो कुछ है उससे इस पर आपत्ति नहीं की जा सकती, जो अल-असल[1] में जो कुछ है उस पर आधारित है, आदि। सारांश।

[उर्दू अनुवाद:] जवाब यह है कि फ़तवा क़ारी अल-हिदाया में जो कुछ भी है वह उसी पर आधारित माना जाएगा जिस पर जामी का कलाम दलालत करता है, यानी एक तरफ से कब्ज़ा करना शर्त है। लिहाज़ा इस पर बज़ाज़िया की इस इबारत से एतराज़ नहीं किया जाएगा जो कि मबसूत के बयान पर महमूल है, आदि। सारांश (त)।

इसी में है:

[अरबी बॉक्स:] यदि कोई चांदी को तांबे के सिक्कों (फुलुस) के बदले बेचता है, तो अलग होने से पहले दो विनिमय वस्तुओं में से केवल एक पर कब्ज़ा करना शर्त है, दोनों पर नहीं, जैसा कि अल-ज़खीरा का हवाला देते हुए अल-बहर में उल्लेख किया गया है। अल-नहर में फ़तवा क़ारी अल-हिदाया से उद्धृत किया गया है कि उनमें से एक को स्थगित करना वैध नहीं है, फिर अल-नहर के लेखक ने इसका उत्तर दिया[2] ...आदि। और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है।

[उर्दू अनुवाद:] अगर कोई चांदी को पैसों (तांबे के सिक्कों) के बदले बेचे तो इसमें जुदा होने से पहले दो बदले हुए सामानों (बदलैन) में से सिर्फ एक पर कब्ज़ा शर्त है, दोनों पर कब्ज़ा शर्त नहीं जैसा कि बहर में ब-हवाला ज़खीरा ज़िक्र है, नहर में फ़तवा क़ारी अल-हिदाया से नक़ल है कि बदलैन में से एक को मुअज्जल (उधार) करना सही नहीं, फिर साहब-ए-नहर ने इसका जवाब दिया। आदि, और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 262: इस मसले में दीन के उलेमा क्या फ़रमाते हैं: क्या वज़न में कम 'डबल पैसा' को 'मंसूरी पैसा' से बदलना और ऊपर से कुछ कौड़ियाँ लेना जायज़ है या नहीं?

जवाब: यह नाजायज़ है, भले ही कोई कौड़ियाँ न ले।

[अरबी बॉक्स:] जैसा कि इमाम मुहम्मद का मज़हब है, और वही पसंदीदा दृष्टिकोण और सच्चाई के सबसे करीब है क्योंकि रिबा (ब्याज) का कारण यानी मात्रा (क़द्र) और प्रकार (जिन्स) स्थापित है, और

असमानता (तफ़ादुल) निश्चित रूप से मौजूद है, और शरिया ने निश्चित रूप से इसे प्रतिबंधित किया है। और जहाँ तक उस हदीस का सवाल है जो उन्होंने अलगाव के बारे में ज़िक्र की है...

[उर्दू अनुवाद:] जैसा कि इमाम मुहम्मद का मज़हब है और वही सही और हक़ के करीब तरीन है क्योंकि इसमें इल्लत-ए-रिबा यानी क़द्र व जिन्स मुतहक्कक़ (साबित) है और कतई तौर पर तफ़ादुल (कमी-बेशी) मौजूद है, और इसकी यकीनी हुरमत (मनाही) पर शरअ वारिद है, और वो जो फ़ुक़हा ने फ़र्क़ वाली बात ज़िक्र की है कि अगर कोई चीज़...

---

1. रद्द अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू, बाब अर-रिबा, दार इह्या अत-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 4/184.
2. रद्द अल-मुह्तार, बाब अस-सर्फ़ दार इह्या अत-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 2/235.

فتاوی رضویہ (جلد ہفدہم ۱۷)

والجواب حمل مافی فتاوی قاری الهداية على ما دل عليه كلام الجامع الصغير من اشتراط التقابض في الجانبين فلا يعترض عليه بما في البزازية المحمول على ما فی الاصل[1] الخ اه ملخصا۔

جواب یہ ہے کہ جو جو فتاوی قاری الہدایہ میں ہے وہ اس پر محمول کیا جائے گا جس پر جامع کا کلام دلالت کرتا ہے یعنی ایک طرف سے قبضہ کرنا شرط ہے لہٰذا اس پر بزازیہ کی اس عبارت سے اعتراض نہیں کیا جائے گا جو کہ مبسوط کے بیان پر محمول ہے الخ تلخیص (ت)

اسی میں ہے:

لو باع فضة بفلوس فانه يشترط قبض احد البدلين قبل الافتراق لا قبضهما كما في البحر عن الذخيرة ونقل في النهر عن فتاوی قاری الهداية انه لا يصح تأجيل احدهما ثم اجاب عنه [2] الخ والله تعالی اعلم۔

اگر کوئی چاندی کو پیسوں کے عوض بیچے تو اس میں افتراق سے پہلے بدلین میں سے صرف ایک پر قبضہ شرط ہے دونوں پر قبضہ شرط نہیں جیسا کہ بحر میں بحوالہ ذخیرہ مذکور ہے، نہر میں فتاوی قاری الہدایہ سے منقول ہے کہ بدلین میں سے ایک کو مؤجل کرنا صحیح نہیں ، پھر صاحبِ نہر نے اس کا جواب دیا۔ الخ، اور اللہ تعالٰی بہتر جانتا ہے۔ (ت)

مسئلہ ۲۶۲ : کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ڈبل پیسہ کہ وزن میں کم ہے منصوری پیسے سے بدلنا اور کچھ کوڑیاں اوپر لینا جائز ہے یا نہیں؟

الجواب: ناجائز ہے اگر چہ کوڑیاں بھی نہ لے،

كما هو مذهب الامام محمد وهو الراجح والاقرب الى الصواب لتحقق العلة اعنى القدر والجنس ووجود التفاضل قطعا وورود الشرع بحرمته يقينا واما ما ذكروا من حديث التفرقة

جیسا کہ امام محمد کا مذہب ہے اور وہی راجح اور حق کے قریب ترین کیونکہ اس میں علت ربا یعنی قدر و جنس متحقق ہے اور قطعی طور پر تفاضل موجود ہے، اور اس کی یقینی حرمت پر شرع وارد ہے اور وہ جو فقہاء نے فرق والی بات ذکر کی ہے کہ اگر کوئی چیز

---

1. ردالمختار کتاب البیوع باب الربو داراحیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۱۸۴
2. ردالمختار باب الصرف دار احیاء التراث العربی بیروت ۲/ ۲۳۵

Vol. 17 --- Fatawa Razvia

Arabic Original

Between what enters under the measure, it is not permissible, but when it does not enter, like a handful for two handfuls and one fils for two fils, it is permissible. However, Al-Allama Al-Muhaqqiq Ali al-Itlaq has invalidated this in *Al-Fath*[1] by that which insight leans towards and hearts find peace with. So let him who wishes refer to it. Ash-Shami said: Those after him have narrated his words and affirmed them, such as the author of *Al-Bahr*, *An-Nahr*, *Al-Minah*, *Ash-Shurunbulaliyah*, and *Al-Maqdisi*[2]. (End). Al-Ala'i said: Imam Muhammad declared it all prohibited, and it was authenticated as narrated by Al-Kamal[3]. (End). So understand, and Allah Almighty knows best. (T)

Urdu Translation / Explanation

If it falls under the standard measure, the sale is impermissible. If it does not, such as exchanging one handful for two, or one fils for two, it is permissible. This has been refuted by Al-Allama al-Muhaqqiq Ali al-Itlaq in *Al-Fath*, towards which sights are inclined and hearts find tranquility. Let whoever wishes refer to it. Shami stated that those after him have quoted this statement of his and maintained it, such as the authors of *Al-Bahr*, *Nahr*, *Minah*, *Shurunbulaliyah*, and *Maqdisi* (End). Ala'i said that Imam Muhammad declared all of this prohibited and his view was corrected as Kamal narrated it (End). So understand, and Allah Almighty knows better. (T)

Mas'alah 263 to 265: From Kathiawar, Dhoraji, Mohalla Siyahi Garan, petitioner Haji Isa Khan Muhammad Sahib. 8 Jamadi al-Ula 1330 AH. (1) Zaid sold a currency note for rupees to Amr on a promised date. At the time of payment, Amr brought the note, took rupees from Zaid in exchange for that note and took possession. Then he paid those rupees back to Zaid. Is this permissible or not? (2) Zaid sold a 1000-rupee note to Amr for 1100 rupees on an eight-month credit promise and took a written bond (Tamassuk) from Amr. Then Zaid gave this bond to Bakr, saying "Collect the money." Instead of 1100 rupees, Amr gave a note of 1100 rupees. Is this permissible or not? (3) Zaid said to a broker, "I am selling a thousand-rupee note for eleven hundred, find a buyer for me." The broker [went to] Amr...

---

[1] *Radd al-Muhtar*, Kitab al-Buyu', Bab al-Riba, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/181; *Fath al-Qadir*, Bab al-Riba, Maktaba Nooria Razvia, Sukkur, 6/23-24 [2] *Radd al-Muhtar*, Kitab al-Buyu', Bab al-Riba, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/181 [3] *Durr al-Mukhtar*, Kitab al-Buyu', Bab al-Riba, Matba' Mujtabai, Delhi, 2/41 Page 620 of 715

अरबी मूल

जो माप के अंतर्गत आता है, उसका विनिमय जायज़ नहीं है, और जब वह इसके अंतर्गत नहीं आता, जैसे एक मुट्ठी के बदले दो मुट्ठी और एक फ़ुल्स (तांबे का सिक्का) के बदले दो फ़ुल्स, तो यह जायज़ है। हालाँकि, अल्लामा अल-मुहक्क़िक अली अल-इतलाक़ ने अल-फतह[1] में इसे अमान्य घोषित किया है, जिसकी ओर दृष्टि झुकती है और हृदय शांति पाते हैं। तो जो चाहे उसकी ओर रुजू करे। शामी ने कहा कि उनके बाद वालों ने उनकी इस बात को उद्धृत किया है और इसे बरकरार रखा है, जैसे अल-बहर, अन-नहर, अल-मिनाह, अश-शुरुनबुललियाह और अल-मक़दसी[2] के लेखक। (समाप्त)। अलाई ने कहा: इमाम मुहम्मद ने इन सबको हराम बताया है और इसे सही माना गया जैसा कि कमाल[3] ने उद्धृत किया। (समाप्त)। अतः समझ लें, और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

उर्दू अनुवाद / स्पष्टीकरण

यदि यह मानक माप के अंतर्गत आता है, तो बिक्री नाजायज़ है। यदि नहीं आता, जैसे एक मुट्ठी के बदले दो मुट्ठी, या एक पैसे के बदले दो पैसे, तो यह जायज़ है। अल्लामा मुहक्क़िक अली अल-इतलाक़ ने फतह में इसका खंडन किया है, जिसकी ओर निगाहें झुकती हैं और दिल सुकून पाते हैं। जो चाहे वह उसकी ओर ध्यान दे। शामी ने कहा कि उनके बाद वालों ने उनका यह कथन उद्धृत किया है और उसे स्वीकार किया है, जैसे साहिब-ए-बहर, नहर, मिनाह, शूरुनबुललियाह और मक़दसी (समाप्त)। अलाई ने कहा कि इमाम मुहम्मद ने इस सबको हराम कहा और उनके कथन को ही सही ठहराया गया जैसा कि कमाल ने उद्धृत किया (समाप्त)। अतः समझें, और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला २६३ से २६५: काठियावाड़ धोराजी मोहल्ला सियाही गरां से, मुस्तौ़ला (पूछने वाले) हाजी ईसा खान मोहम्मद साहब। ८ जमादी उल-उला १३३० हिजरी। (१) जैद ने अम्र के हाथ रुपयों के बदले एक नोट एक वादे पर बेचा। भुगतान के समय अम्र नोट लाया और उस नोट के बदले जैद से रुपये लेकर कब्ज़ा कर लिया, फिर वे रुपये जैद को अदा कर दिए। क्या यह जायज़ है या नहीं? (२) जैद ने अम्र के हाथ १००० रुपये का नोट ११०० रुपये में आठ महीने के वादे पर बेचा और अम्र से एक दस्तावेज़ (तमस्सुक) लिखवा लिया। फिर जैद ने यह दस्तावेज़ बक्र को दे दिया कि तुम रुपये वसूल कर लो। अम्र ने ११०० रुपयों के बजाय ११०० का नोट दिया, क्या यह जायज़ है या नहीं? (३) जैद ने दलाल से कहा, "मैं हज़ार का नोट ग्यारह सौ में बेचता हूँ, तुम खरीदार तलाश कर दो।" दलाल अम्र के..

[1] रद अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू, बाब अर-रिबा, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, ४/१८१; फतह अल-क़दीर, बाब अर-रिबा, मकतबा नूरिया रजविया, सुक्कुर, ६/२३-२४ [2] रद अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू, बाब अर-रिबा, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, ४/१८१ [3] दुर्रे मुख्तार, किताब अल-बुयू, बाब अर-रिबा, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, २/४१ पेज ६२०/७१५

| بین ماذادخل تحت المعیار فلا یجوز واما اذالم یدخل کفنة بحفنتین وفلس بفلسین فیجوز فقد زیفه العلامة المحقق علی الاطلاق فی الفتح [1] بما ترکن الیه البصائر و تسکن لدیه الخواطر فلیراجعه من شاء ، قال الشامی وقد نقل من بعده کلامہ ہذا و اقروہ علیہ کصاحب البحر والنهر والمنح والشرنبلالیة والمقدسی ۲ انتہی قال العلائی وحرم الکل محمد و صححه کما نقله الکمال ۳ انتہی فافہم ، واللہ تعالٰی اعلم۔ | معیار کے تحت داخل ہو تو بیع ناجائز اور اگر نہ داخل ہو جیسے ایک مٹھی دو مٹھی کے بدلے میں اور ایک پیسہ دو پیسوں کے بدلے میں تو جائز ہے اس کا رد علامہ محقق علی الاطلاق نے فتح میں کیا ہے جس کی طرف نظریں مائل ہوتی ہیں اور دل سکون پاتے ہیں تو جو چاہے اس کی طرف رجوع کرے، شامی نے کہا کہ اس کے بعد والوں نے اس کا یہ کلام نقل کیا ہے اور انہوں نے اس کو برقرار رکھا ہے جیسے صاحب البحر، نہر، منح، شرنبلالیہ اور مقدسی (انتہی) علائی نے کہا امام محمد نے اس سب کو حرام کہا اور ان کے قول کی تصحیح کی گئی جیسا کہ کمال نے اس کو نقل کیا (انتہی) پس سمجھ، اور اللہ تعالٰی بہتر جانتا ہے۔ (ت) |

مسئلہ ۲۶۳تا۲۶۵: از کاٹھیا واڑ دھوراجی محلہ سیاہی گران مسئولہ حاجی عیسٰی خان محمد صاحب ۸جمادی الاولی ۱۳۳۰ھ (۱) زید نے عمرو کے ہاتھ روپے سے نوٹ ایک وعدہ پر بیچا عمر و بوقت ادا نوٹ لایا اور اس نوٹ کے عوض زید سے روپے لے کر قبضہ کرلیا پھر روپے زید کو ادا کر دئے یہ جائز ہے یا نہیں؟ (۲) زید نے عمرو کے ہاتھ ہزار روپے کا نوٹ گیارہ سو کو آٹھ ماہ کے وعدہ پر بیچا اور عمرو سے تمسک لکھالیا پھر زید نے یہ تمسک بکر کو دے دیا کہ تم روپے وصول کر لو عمرو نے بجائے گیارہ سو روپوں کے گیارہ سو کا نوٹ دیا، یہ جائز ہے یا نہیں؟ (۳)

زید نے دلال سے کہا ہمیں ہزار کا نوٹ گیارہ سو کو بیچتا ہوں تم خریدار تلاش کردو، دلال عمرو کے

---

[1] رد المحتار کتاب البیوع باب الربو دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۸۱ ، فتح القدیر باب الربو مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶/ ۲۳- ۲۴ [2] رد المحتار کتاب البیوع باب الربو دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۸۱ [3] درمختار کتاب البیوع باب الربو مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۴۱ Page 620 of 715

Volume 17, Fatawa Razawiyya

'Amr came to a broker and said, "Buy for me." The broker got a promissory note written from 'Amr, bought a note from Zaid, gave the promissory note, and brought the note to 'Amr. Is this permissible or not?

Answer: (1) It is permissible except in one case: if he brings the same note and sells it for less than the original price, then it is impermissible.

[Table Content]

[Arabic Text - left column]: Because it is buying what he sold for less than what he sold it for. If you say it is a price, and prices are not specific in contracts, so it is not judged that he is selling what he bought. I say the basis there is the application of the contract on the exact item he previously owned, and this is negated when there is no specification. But here, the basis is that the exact owned item returns to him just as it left. It is stated in Al-Tabyin in explaining the issue: Because the price did not enter the seller's liability before possession. So when the exact item of his wealth returned to him with the same attribute it left his possession, and part of the price became a set-off for another part, there remained for him an excess without compensation. This is profit from what is not under liability, and it is prohibited by the primary texts. And it is stated in Al-Fath: This is because the price...

[Urdu Explanation - right column]: Because this is buying one's own sold item at a price lower than what it was sold for. And if you say that it is a price, and prices are not fixed in contracts, therefore the ruling will not be applied that he is selling the same thing he bought. I say that there, the pivot is on directing the contract to the exact same thing of which he was the owner in the previous contract, and that is negated at the time of non-specification. But here the pivot is that his owned item returns to him exactly as it had left his ownership. In Al-Tabyin, the reasoning for this issue was given as: because the price did not enter the seller's guarantee before possession, and when his wealth returned to him exactly with the same quality with which it had left his ownership, and some of the price became a compensation for some, then some surplus remained for him against the other without consideration. So this is a profit on a thing which has not yet come under guarantee, and this is forbidden by text (Nass). In Al-Fath, it is said this ruling is because the price...

Footnote: Tabyin al-Haqa'iq, Chapter of Void Sales, Al-Matba'a al-Kubra, Bulaq, Egypt, 4/54.

जिल्द सत्रह (17), फतावा रज़विया

अम्र एक दलाल के पास आया और कहा, "मेरे लिए खरीद लाओ।" दलाल ने अम्र से एक तमस्सक (प्रोमिसरी नोट) लिखवा लिया और ज़ैद से नोट खरीद कर उसे तमस्सक दे दिया, और नोट लाकर अम्र को दे दिया। क्या यह जायज़ है या नहीं?

अल-जवाब: (1) जायज़ है, लेकिन एक स्थिति में कि वही नोट वापस लाए और पहली कीमत से कम पर बेचे, तो यह नाजायज़ है।

[तालिका सामग्री]

[दायां कॉलम - उर्दू व्याख्या का अनुवाद]: क्योंकि यह अपनी ही बेची हुई चीज़ को उस कीमत से कम पर खरीदना है जिस पर उसने बेची थी। और यदि आप कहें कि वह 'शमन' (कीमत) है और शमन अनुबंधों में निश्चित नहीं होते, इसलिए यह नियम लागू नहीं होगा कि वह वही चीज़ बेच रहा है जो उसने खरीदी थी। मैं कहता हूँ कि वहाँ आधार अनुबंध को ठीक उसी चीज़ पर लागू करने पर है जिसका वह पिछले अनुबंध में मालिक था, और वह अनिश्चितता के समय समाप्त हो जाता है। लेकिन यहाँ आधार इस बात पर है कि उसकी मिल्कियत (स्वामित्व) वाली चीज़ ठीक उसी तरह उसके पास वापस आ जाए जैसे वह उसकी मिल्कियत से बाहर गई थी। 'तबीय्यीन' में इस मसले की व्याख्या इस प्रकार की गई है कि चूँकि शमन कब्ज़े से पहले विक्रेता की ज़मानत (उत्तरदायित्व) में शामिल नहीं होता, और जब उसका माल ठीक उसी गुण के साथ उसके पास वापस आ गया जिसके साथ वह उसकी मिल्कियत से बाहर गया था, और शमन का कुछ हिस्सा दूसरे हिस्से का बदला बन गया, तो उसके लिए दूसरे पर बिना किसी मुआवज़े के कुछ अतिरिक्त बच गया। तो यह उस चीज़ पर लाभ है जो अभी ज़मानत में नहीं आई है, और यह 'नस्' (धार्मिक साक्ष्य) से हराम है। 'फत्ह' में कहा गया है कि यह हुक्म इसलिए है क्योंकि शमन...

पाद-टिप्पणी: तबीय्यीन अल-हकाइक, बाबुल बैअ अल-फासिद, अल-मतबअ अल-कुबरा, बुलाक, मिस्र, 4/54.

पृष्ठ 715 में से 621

پاس آیا عمرو نے دلال سے کہا میرے لئے خرید لاؤ دلال نے عمرو سے تمسک لکھوا لیا اور زید سے نوٹ خرید کر تمسک دے دیا اور نوٹ لا کر عمرو کو دے دیا، یہ جائز ہے یا نہیں؟

الجواب: (۱) جائز ہے مگر ایک صورت میں کہ وہی نوٹ لے کر آئے اور پہلی قیمت سے کم کو بیچے تو یہ ناجائز ہے،

[جدول کی تفصیل]

[بائیں کالم میں عربی عبارت]: لکونه شراء ماباع باقل مما باع فان قلت هو ثمن و الاثمان لاتتعین فی العقود فلا یحکم بانه یبیع ما شری قلت المناط ثمه ایراد العقد علی عین ما ملکه سابقاً وهذا منتف عند عدم التعین اما ههنا فالمناط ان یعود الیه عین مملکه کما خرج قال فی التبیین فی تعلیل المسألة لان الثمن لم یدخل فی ضمان البائع قبل قبضه فاذا عاد الیه عین ماله بالصفة التی خرج من مبلکه وصار بعض الثمن قصاصاً ببعض بقی له علیه فضل بلا عوض فکان ذلک ربح ما لم یضمن وهو حرام بالنص اهـ وقال فی الفتح وهذا لان الثمن

[دائیں کالم میں اس کی وضاحت]: کیونکہ یہ اپنی ہی فروخت کردہ شیئی کو اس قیمت سے کم پر خریدنا ہے جس پر اس نے فروخت کی تھی اور تو کہے کہ وہ ثمن ہے اور ثمن عقود میں متعین نہیں ہوتے چنانچہ یہ حکم نہیں لگایا جائے گا کہ وہ اسی چیز کو بیچ رہا ہے جس کو اس نے خریدا۔ میں کہتا ہوں کہ وہاں دار ومدار عقد کے بعینہ اس چیز پر وارد کرنے پر ہے جس کا وہ سابق عقد میں مالک ہوا اور وہ عدم تعین کے وقت منتفی ہے لیکن یہاں دار ومدار اس پر ہے کہ اس کا مملوک بعینہ اس کے پاس لوٹ آئے جیسے اس کی ملک سے خارج ہوا تھا، تبیین میں اس مسئلہ کی

تعلیل یوں فرمائی کہ چونکہ ثمن قبضہ سے پہلے بائع کی ضمان میں داخل نہیں ہوا اور جب اس کا مال بعینہ اس کے پاس لوٹ آیا اسی صفت کے ساتھ جس کے ساتھ اس کی ملک سے خارج ہوا تھا اور بعض ثمن بعض کا بدلہ ہو گئے تو اس کے لئے دوسرے پر کچھ زیادتی بلا عوض رہ گئی تو یہ نفع ہے اس چیز پر جو ابھی ضمان میں نہیں آئی، اور یہ نص سے حرام ہے اھ، فتح میں کہا یہ حکم اس لئے ہے کہ ثمن

حاشیہ: تبیین الحقائق باب البیع الفاسد المطبعۃ الکبری بولاق مصر ۴ / ۵۴

صفحہ ۶۲۱ از ۷۱۵

Fatawa-e-Razvia Volume 17

[Table Header]

[Left]: Volume 17

[Main Body Text - Columnar Format] [Arabic Text]: It does not enter into his guarantee before possession. So, if the owned property that had left his ownership returns to him exactly as it was, and some of the price remains with him, then it is a profit obtained not upon his guarantee from the side of the one who sold it to him. End of quote. Similar to this is found in all books that provide reasoning. It is known that prices, especially conventional ones, even if they are not specified in contracts, are definitively specified in ownership. Therefore, the trustee has no right to exchange the dirhams of the deposit with dirhams from himself. The return of what he owned exactly as it left is definitively established, and the axis of prohibition revolves around it, as you have known. This is what has become clear to me, and I hope it is correct, God willing. And Allah Almighty knows best.

[Urdu Text]: It does not enter into the seller's guarantee before possession. Then, if the owned property that had departed from his ownership returned to him in its original form, and some part of its price remained with him, then this is such a profit that was obtained on something that was not in his guarantee, and it was obtained from the person to whom he had sold this thing. End of quote. Similar reasoning is present in all books that explain causes. And it is known that the price, especially the conventional price, although not specified in contracts, is definitively specified in ownership. Therefore, one with whom dirhams have been kept as a trust cannot change them from his own side with other dirhams. Thus, the return of the owned property exactly as it had left the ownership is definitively proven, and the axis of prohibition revolves around this, as you already know. This is what has appeared to me, and I hope that, God willing, this will be correct, and Allah Almighty knows best. (T)

(2) It is permissible whether Zaid made Bakr a representative only for collection or made him the owner of that debt and commanded him to take possession. It is mentioned in Ghamz al-Uyun:

[Arabic Text]: It is understood from the branches of 'Al-Waqi'at al-Husamiyah' that the owner of dirhams as a debt has the option to exchange dinars for them and vice

versa. This is apparent and occurs frequently, and it is the issue of selling debt to the debtor.

[Urdu Text]: It is understood from the branches of 'Al-Waqi'at al-Husamiyah' that the one who has lent dirhams has the option to take dinars in exchange for them, and similarly vice versa. This is evident and occurs frequently, and this is the issue of selling the debt to the debtor. (T)

[Footnotes] 1. Fath al-Qadir, Chapter on Invalid Sale, Maktaba Nooriya Razviya, Sukkur, 6/71. 2. Ghamz al-Uyun al-Basair with al-Ashbah wa al-Naza'ir, Third Art, Idara al-Quran wa al-Ulum al-Islamiyyah, Karachi, 2/213.

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द 17

[शीर्षक]

[बाएँ]: जिल्द सत्रह (17)

[मुख्य पाठ] [अरबी पाठ]: वह कब्ज़ा करने से पहले उसकी गारंटी (ज़मानत) में दाखिल नहीं होता। फिर यदि वह मिल्कियत जो उसके स्वामित्व से निकल गई थी, वह हु-ब-हू उसके पास वापस आ जाए और कीमत का कुछ हिस्सा उसके पास रह जाए, तो यह ऐसा लाभ है जो उस चीज़ पर प्राप्त हुआ जो उसकी गारंटी में नहीं थी और उस व्यक्ति की ओर से प्राप्त हुआ जिसने उसे वह चीज़ बेची थी। और इसी तरह अन्य सभी दलीलें पेश करने वाली किताबों में है। यह ज्ञात है कि कीमतें, विशेष रूप से सांकेतिक कीमतें, यद्यपि वे अनुबंधों में निर्धारित नहीं होतीं, लेकिन स्वामित्व में निश्चित रूप से निर्धारित होती हैं। इसलिए, अमानतदार को यह अधिकार नहीं है कि वह अमानत के दिरहमों को अपने पास के दूसरे दिरहमों से बदल दे। जो उसका स्वामित्व था उसका उसी रूप में वापस आना निश्चित रूप से सिद्ध है जैसा वह स्वामित्व से बाहर गया था, और निषेध का आधार इसी पर निर्भर है जैसा कि आप जान चुके हैं। यह वह है जो मेरे सामने स्पष्ट हुआ है और मुझे आशा है कि अल्लाह ने चाहा तो यह सही होगा, और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

[उर्दू पाठ]: कब्ज़ा करने से पहले वह विक्रेता की ज़मानत में दाखिल नहीं होते। फिर उसकी मिल्कियत जो उसके स्वामित्व से ज़ायल (निकल) हुई थी, वह वैसे ही उसकी ओर लौट आई और उसकी कुछ क़ीमत बाकी रही, तो यह ऐसा नफ़ा (लाभ) है जो उस चीज़ पर प्राप्त हुआ जो उसकी ज़मानत में नहीं थी और उस व्यक्ति की ओर से प्राप्त हुआ जिसे उसने वह चीज़ बेची थी। और इसी तरह तमाम दलीलें पेश करने वाली किताबों में है। और यह मालूम है कि समन (कीमत), विशेष रूप से सांकेतिक समन, अगरचे अनुबंधों में निर्धारित नहीं होते मगर मिल्कियत में निश्चित रूप से निर्धारित होते हैं। इसलिए जिसके पास अमानत के तौर पर दिरहम रखे गए हों, वह उन्हें अपने पास से दूसरे दिरहमों से नहीं बदल सकता। चुनांचे मिल्कियत का वापस आना जैसा कि वह मिल्कियत से बाहर गया था, निश्चित रूप से सिद्ध हो गया और ममानियत (निषेध) का आधार इसी पर है जैसा कि आप जान चुके हैं। यह वह है जो मेरे लिए स्पष्ट हुआ और मुझे आशा है कि अल्लाह ने चाहा तो यह सही होगा, और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है। (त)

(2) यह जायज़ है, चाहे ज़ैद ने बक्र को केवल वसूली का वकील (प्रतिनिधि) बनाया हो या उस ऋण का स्वामी बनाकर कब्ज़ा करने का आदेश दिया हो। 'ग़म्ज़ अल-उयून' में है:

[अरबी पाठ]: 'अल-वाक़ियात अल-हुसामिया' की शाखाओं से यह समझ में आता है कि दिरहम के ऋण के स्वामी को यह अधिकार है कि वह उसके बदले में दीनार ले ले और इसके विपरीत भी। यह स्पष्ट है और अक्सर होने वाला है, और यह कर्जदार को ऋण बेचने का मामला है।

[उर्दू पाठ]: 'फ़ुरू-ए-वाक़ियात-ए-हुसामिया' से यह समझ में आता है कि दिरहम के क़र्ज़ वाले को अधिकार है कि वह उसके बदले दीनार ले ले और इसी तरह इसका विपरीत भी। और यह ज़ाहिर और अक्सर होने वाला है और यह ऋण को ऋणी के हाथ बेचने का मसला है। (त)

[पाद टिप्पणियाँ] 1. फ़तह अल-क़दीर, अमान्य बिक्री का अध्याय, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 6/71। 2. ग़म्ज़ अल-उयून अल-बसार मअ अल-अश्बाह व अन-नज़ायर, तीसरी कला, इदारा अल-कुरान व अल-उलूम अल-इस्लामिया, कराची, 2/213।

[पृष्ठ पादलेख] पृष्ठ 715 का 622

لا یدخل في ضمانه قبل القبض فاذا عاد الیه الملك الذی زال عنه بعینه وبقی له بعض الثمن فهو ربح حصل لا علی ضمانه من جهة من باعه[1] اھ ومثله في سائر الکتب المعللة، ومعلوم ان الاثمان لاسیما الاصطلاحیة وان لم تتعین في العقود متعینة في الملك قطعاً فلیس للمودع ان یبدل دراهم الودیعة بدراهم من عنده فعود مأملك کما خرج ثابت قطعاً وعلیه تدور رحی المنع کما علمت هذا ماظهر لی وارجو ان یکون صواباً ان شاء اللہ تعالی، واللہ تعالی اعلم۔ قبضہ سے پہلے بائع کی ضمان میں داخل نہیں ہوتے پھر اس کی مملوک جو اس کی ملکیت سے زائل ہوئی تھی بعینہ اس کی طرف لوٹ آئی اور اس کے بعض ثمن باقی رہے تو یہ ایسا نفع ہے جو اس چیز پر حاصل ہوا جو اس کی ضمان میں نہیں اور اس شخص کی طرف سے حاصل ہوا جس کو اس نے یہ چیز بیچی تھی اھ اور اس کی مثل تمام تعلیل بیان کرنے والی کتابوں میں ہے، اور یہ معلوم ہے کہ ثمن خصوصاً اصطلاحی ثمن اگرچہ عقود میں متعین نہیں ہوتے مگر ملک میں قطعی طور پر متعین ہوتے ہیں لہٰذا جس کے پاس امانت کے طور پر درہم رکھے گئے ہوں وہ ان کو اپنے پاس سے دوسرے درہموں سے بدل نہیں سکتا چنانچہ مملوک کا لوٹ کر آنا جیسا کہ وہ ملک سے خارج ہوا تھا قطعی طور پر ثابت ہو گیا اور ممانعت کی چکی اس پر گھومتی ہے جیسا کہ تو جان چکا ہے یہ وہ ہے جو میرے لئے ظاہر ہوا اور مجھے امید ہے کہ ان شاء اللہ تعالٰی یہ درست ہوگا، اور اللہ تعالٰی بہتر جانتا ہے۔ (ت)

(۲) جائز ہے خواہ زید نے بکر کو صرف وصول کرنے کا وکیل کیا ہو یا اس دین کا مالک کر کے قبضہ کرنے کا حکم دیا ہو، غمز العیون میں ہے :

یفهم من فروع الواقعات الحسامیة ان لصاحب الدراهم الدین استبدال الدنانیر بها وعکسه وهو ظاهر وکثیر الوقوع وهی مسألة بیع الدین من المدیون[2]۔

فروع واقعات حسامیہ سے مفہوم ہوتا ہے دراہم کے قرض والے کو اختیار ہے کہ وہ اس کے بدلے دینار لے لے اور اسی طرح اس کا عکس، اور یہ ظاہر اور کثیر الوقوع ہے اور یہ دین کو مدیون کے ہاتھ بیچنے کا مسئلہ ہے۔ (ت)

[1] فتح القدیر باب البیع الفاسد مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶/۷۱ [2] غمز العیون البصائر مع اشباہ والنظائر الفن الثالث ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۲/ ۲۱۳

Fatawa Razawiya Volume 17

It is stated in Ashbah:

Arabic	Urdu
In Al-Wakala of Al-Waqi'at al-Husamiyah, if one says: "I have gifted you the dirhams owed by so-and-so, take them from him," and he takes dinars instead, it is permissible because the right has passed to the donee, and he owns the right of substitution. (T)	In the chapter of Agency (Al-Wakala) in Waqi'at-e-Husamiyah, it is stated that if someone says to another, "I have gifted you those dirhams which are owed to me by so-and-so, you take possession of them," and he receives dinars in exchange for dirhams, it is permissible because it has become the right of the donee, and therefore he can exchange them. (T)

Furthermore, if Amr adds a hundred-rupee note of his own to the note he bought from Zaid and gives it in exchange for eleven hundred, this is also permissible in both cases. If Zaid had made Bakr the owner of this debt, then it is obvious because "he who sold did not buy, and he who bought did not sell." (T) And if Zaid appointed Bakr as an agent, then according to our Imam of the school of thought (may Allah be pleased with him), it is permissible for a person who has sold something at a certain price, and the price has not yet been paid, to appoint someone as his agent to buy that thing back at a lower price. However, if Bakr were not an agent but merely a messenger—for example, Zaid tells Bakr, "Take this document and tell Amr on my behalf to give my money," and Bakr comes and tells him that Zaid is asking for his money, whereupon Amr sends back the same note he bought from Zaid along with a hundred-rupee note—this would be impermissible for Zaid because it would be as if Zaid himself is buying it. The messenger was just a middleman. This is unlike an agent, as the rights of sale revert to him. So it happened that he bought from Amr and Zaid took from him; a sale mediated in between, making it lawful for Zaid to take. In Ghayat al-Bayan by Allama Itqani, it is quoted from Mukhtasar of Imam Abu al-Hasan Karkhi:

Arabic	Urdu
If the seller appoints an agent to buy it [the sold item] for less than the first price, and he buys it, then the purchase is valid according to Abu Hanifa (may	If the seller appointed an agent to buy the item sold by the seller for less than the original price and he bought it, then this purchase is permissible according to Imam-

Arabic	Urdu
Allah be pleased with him). Abu Yusuf said: The purchase is binding on the agent and not binding on the principal. And Muhammad said: [not binding] on the one who ordered the purchase.	e-Azam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him). Imam Abu Yusuf (may Allah have mercy on him) stated that this purchase will be binding for the agent and not for the principal, and Imam Muhammad (may Allah have mercy on him)...

1. Ashbah wal-Naza'ir, Third Art, Idara-tul-Quran wal-Uloom-ul-Islamiyah, Karachi, 2/213.

फ़तावा रज़विया खंड १७

अशबाह में है:

अरबी

'अल-वाक़ियात अल-हुसामिया' के वकालत अध्याय में है: यदि कोई दूसरे से कहे, "मैंने तुम्हें वे दिरहम दान कर दिए जो मुझ पर फलां के बकाया हैं, तो उनसे उनका कब्ज़ा ले लो," और वह दिरहम के बदले दीनार प्राप्त कर ले, तो यह जायज़ है क्योंकि हक दान प्राप्तकर्ता (मूहूब लहू) का हो गया है, इसलिए वह उसे बदल सकता है। (त)

उर्दू

'वाक़ियात-ए-हुसामिया' के बाब अल-वकालत में है कि यदि किसी ने दूसरे को कहा कि मैंने तुझे वे दिरहम हिबा कर दिए जो मेरे फलां पर हैं तो उन पर कब्ज़ा कर ले, फिर उसने दराहमि के बदले दनानिर वसूल कर लिए तो जायज़ है क्योंकि यह मूहूब लहू का हक़ बन गया है लिहाज़ा वह तब्दील कर सकता है। (त)

इसके अलावा, यदि अम्र ज़ैद से खरीदे हुए नोट में अपना एक सौ रुपये का नोट मिलाकर ग्यारह सौ के बदले दे देता है, तो यह भी दोनों स्थितियों में जायज़ है। यदि ज़ैद ने बक्र को इस ऋण का स्वामी बना दिया था, तब तो स्पष्ट है क्योंकि "जिसने बेचा उसने खरीदा नहीं और जिसने खरीदा उसने बेचा नहीं।" (त) और यदि ज़ैद ने बक्र को वकील बनाया, तो हमारे मज़हब के इमाम (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) के अनुसार यह जायज़ है कि जो चीज़ किसी कीमत पर बेची गई हो और कीमत अभी तक अदा न हुई हो, तो किसी को अपना वकील बनाकर उसके माध्यम से वह चीज़ कम कीमत पर खरीद ले। हाँ, यदि बक्र वकील न होता बल्कि केवल दूत होता, उदाहरण के लिए ज़ैद बक्र से कहता कि यह दस्तावेज़ ले जाओ और अम्र से मेरी ओर से कहो कि मेरा रुपया दे दे, बक्र आकर उससे कहता है कि ज़ैद तुझसे अपना रुपया मांगता है, इस पर अम्र वही नोट जो ज़ैद से खरीदा था सौ का नोट मिलाकर भेज देता तो यह ज़ैद के लिए नाजायज़ होता क्योंकि यह स्वयं ज़ैद का खरीदना होता, दूत तो बीच में केवल एक संदेशवाहक था। वकील के विपरीत, क्योंकि बिक्री के अधिकार उसी की ओर लौटते हैं, तो ऐसा हुआ कि उसने अम्र से खरीदा और ज़ैद ने उससे लिया, बीच में एक बिक्री का माध्यम आ गया इसलिए ज़ैद के लिए लेना हलाल हुआ। अल्लामा इतक़ानी की 'ग़ायतुल बयान' में इमाम अबुल हसन करखी के'मुख़्तसर' से है:

अरबी

यदि विक्रेता ने किसी को वकील बनाया कि वह उसे पहली कीमत से कम पर खरीदे और उसने उसे खरीद लिया, तो इमाम अबू हनीफा (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) के अनुसार यह खरीदारी जायज़ है। इमाम अबू यूसुफ ने कहा: खरीदारी वकील के लिए बाध्यकारी होगी और आदेश देने वाले (आमिर) के लिए नहीं। और इमाम मुहम्मद ने कहा: आदेश देने वाले के लिए...

उर्दू

अगर बाए (विक्रेता) ने वकील बनाया कि वह बाए की फरोख्त (बिक्री) की हुई चीज़ को समन-ए-अव्वल (पहली कीमत) से कम पर खरीदे और उसने खरीद लिया, तो यह खरीदारी इमाम-ए-आज़म अबू हनीफा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु के नज़दीक जायज़ है। इमाम अबू यूसुफ रहमतुल्लाह तआला अलैह ने फ़रमाया कि यह खरीदारी वकील के लिए लाज़िम (अनिवार्य) होगी आमिर के लिए लाज़िम न होगी, और इमाम मुहम्मद रहमतुल्लाह तआला अलैह...

1. अशबाह वन-नज़ायर, फन सालिस, इदारा-तुल-क़ुरआन वल-उलूम-उल-इस्लामिया कराची 2/213.

पृष्ठ 623/715

اشباہ میں ہے:

عربی	اردو
في وكالة الواقعات الحسامية لوقال وهبت منك الدراهم التى على فلان فاقبضها منه فقبض مكانها دنانير جاز لانه صار الحق للموهوب له فيملك الاستبدال	واقعات حسامیہ کے باب الوکالۃ میں ہے کہ اگر کسی نے دوسرے کو کہا میں نے تجھے وہ درہم ہبہ کر دئے جو میرے فلاں پر ہیں تو ان پر قبضہ کرلے، پھر اس نے دراہم کے بدلے دنانیر وصول کر لئے تو جائز ہے کیونکہ یہ موہوب لہ کا حق بن گیا لہذا وہ تبدیل کر سکتا ہے۔ (ت)

نیز یہاں اگر عمرو وہی نوٹ جو زید سے خریدا سو روپے کا نوٹ اپنے پاس سے ملا کر یوں گیارہ سو کے عوض دے تو یہ بھی دونوں صورتوں میں جائز ہے، اگر زید نے بکر کو اس دین کا مالک کر دیا تھا جب تو ظاہر لان من باع لم یشرو من شری لم یبع (کیونکہ جس نے بیچا اس نے خریدا نہیں اور جس نے خریدا اس نے بیچا نہیں۔ت) اور اگر زید نے بکر کو وکیل کیا تو ہمارے امام مذہب رضی اللہ تعالٰی عنہ کے نزدیک جائز ہے کہ جو چیز کسی قیمت کو بیچی اور قیمت ہنوز ادانہ ہوئی ہو کسی کو اپنا وکیل کر کے اس کے ذریعہ سے وہ چیز کم قیمت کو خریدے، ہاں اگر بکر وکیل نہ ہوتا صرف رسول ہوتا مثلاً زید بکر سے کہتا کہ یہ تمسک لے جاؤ اور عمرو سے میری طرف سے کہو کہ میرا روپیہ دے دے بکر آکر اس سے کہتا کہ زید تجھ سے اپنا روپیہ مانگتا ہے اس پر عمرو وہی نوٹ جو زید سے خریدا تھا سو کا نوٹ ملا کر بھیج دیتا تو یہ زید کو ناجائز ہوتا کہ یہ خود زید کا خریدنا ہوتا رسول تو بیچ میں نرا ایلچی تھا بخلاف وکیل کہ حقوقِ بیع اسی کی طرف راجع ہوتے ہیں تو یوں ہوا کہ عمرو سے اس نے خریدا اور اس سے زید نے لیا بیچ

میں ایک بیع کا توسط ہو گیا لہذا زید کو لینا حلال ہوا، غایۃ البیان علامہ اتقانی میں مختصر امام ابوالحسن کرخی سے ہے :

عربی	اردو
ان وکل البائع من یشتریه بأقل من الثمن الاول فاشتراه فالشراء جائز عند ابی حنیفة رضی الله تعالی عنه وقال ابویوسف الشراء لازم للوکیل ولا یلزم الأمر ، وقال محمد لامر بشراء	اگر بائع نے وکیل بنایا کہ وہ بائع کی فروخت کردہ چیز کو ثمنِ اول سے کم پر خریدے اور اس نے خرید لیا تو یہ خریداری امامِ اعظم ابوحنیفہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے نزدیک جائز ہے، امام ابو یوسف رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ نے فرمایا کہ یہ خریداری وکیل کے لئے لازم ہوگی آمر کے لئے لازم نہ ہوگی، اور امام محمد رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ

1 اشباہ والنظائر الفن الثالث ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۲ / ۲۱۳

Fatawa Ridawiyyah (Volume 17)

[Arabic Text]: ...corrupt up to here are the words of al-Karkhi. The reasoning for Muhammad's view is that he commanded him with something which, if he had performed it himself, would be corrupt. The reasoning for Abu Yusuf's view is that there is excessive corruption in the contract because of the evidence of the invalidation of Jihad mentioned in the Hadith, so commissioning a proxy for it is not permissible. For Abu Hanifa (may Allah be pleased with him), the constituent is essentially purchasing from the agent intentionally, just as if he had purchased from someone else. -1

[Urdu Text]: ...said this purchase is corrupt, up to here are al-Karkhi's words. The reason for Imam Muhammad's statement is that he made him an agent for a task which, if he did it himself, would be corrupt. The reason for Imam Abu Yusuf's statement is that there is more corruption in the contract due to the reason that the warning of invalidation of Jihad has come in the Hadith for it, therefore its commissioning (of an agent) is not permissible. And the reason for Imam Abu Hanifa's statement is that the constituent actually buys from the agent, so it will be just as if he bought from some other person. (T)

It is stated in Fatawa Khulasa and Fatawa 'Alamgiriyyah: [Arabic Text]: If he sold and then appointed someone else to buy it for less, it is permissible according to him. -2 [Urdu Text]: If someone sold something then made someone an agent so that he may buy it at a price lower than before, then according to Imam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him) it is permissible. (T)

It is stated in Tabyin al-Haqa'iq: [Arabic Text]: If the agent bought it, it is valid because he did not sell it, nor was it sold for him. And if the agent sold it and then one of them bought it, it is not valid. As for the agent, it is because he sold it; and as for the constituent, it is because it was sold for him. End of summary. -3 [Urdu Text]: If the agent bought it, it is correct because neither did the agent sell that thing nor was it sold for him. And if the agent sold that thing and then one of them bought it (for less than the first price), then it is not correct because the agent himself sold it and for the constituent that thing was sold. End of summary (T)

It is stated in Fath al-Qadir: [Arabic Text]: If the seller's agent bought it for less than the price... [Urdu Text]: If the seller's agent bought it for less than the first price, then...

1. Hashiyah al-Shalabi on Tabyin al-Haqa'iq, citing Mukhtasar al-Karkhi, Chapter on Corrupt Sales, Al-Matba'ah al-Kubra, Bulaq, Egypt, 4/54.
2. Fatawa Hindiyyah, Book of Sales, Chapter Ten, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 3/133.
3. Tabyin al-Haqa'iq, Chapter on Corrupt Sales, Al-Matba'ah al-Kubra, Bulaq, Egypt, 2/55.

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

[अरबी पाठ]: ...यहाँ तक अल-करख़ी के शब्द भ्रष्ट हैं। मुहम्मद के मत का कारण यह है कि उसने उसे ऐसा काम करने का आदेश दिया जिसे यदि वह स्वयं करता तो वह भ्रष्ट होता। अबू यूसुफ के मत का कारण यह है कि अनुबंध में अत्यधिक भ्रष्टाचार है क्योंकि हदीस में जिहाद के अमान्य होने की चेतावनी दी गई है, इसलिए इसके लिए प्रतिनिधि नियुक्त करना जायज़ नहीं है। अबू हनीफ़ा (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) के अनुसार, मौक्किल (प्रमुख) वास्तव में जानबूझकर एजेंट से खरीद रहा है, ठीक वैसे ही जैसे उसने किसी और से खरीदा हो। -1

[उर्दू पाठ]: ...ने फ़रमाया यह ख़रीददारी फ़ासिद (भ्रष्ट) है, यहाँ तक करख़ी के शब्द हैं, इमाम मुहम्मद के क़ौल की वजह यह है कि उसने उस काम का वक़ील बनाया जिसे अगर यह खुद करता तो फ़ासिद होता, इमाम अबू यूसुफ़ के क़ौल की वजह यह है कि अक़्द (अनुबंध) में ज़्यादा फ़साद है इस दलील की वजह से कि इस पर इब्ताल-ए-जिहाद की वईद हदीस में आई है लिहाज़ा इसकी तौकील जायज़ नहीं, और इमाम अबू हनीफ़ा के क़ौल की वजह यह है कि मुवक्किल दरअस्ल वक़ील से ख़रीदता है तो यह ऐसे ही होगा जैसे वह किसी ग़ैर से ख़रीदे। (त)

फ़तावा खुलासा और फ़तावा आलमगीरिया में है: [अरबी पाठ]: यदि उसने बेचा और फिर किसी दूसरे को कम में खरीदने के लिए नियुक्त किया, तो उसके अनुसार यह जायज़ है। -2 [उर्दू पाठ]: अगर किसी ने कोई चीज़ बेची फिर किसी को वक़ील बनाया ताकि वह उसको पहले से कम क़ीमत पर ख़रीदे तो इमाम अबू हनीफ़ा (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) के नज़दीक जायज़ है। (त)

तब्यीनुल हक़ाएक़ में है: [अरबी पाठ]: यदि एजेंट ने इसे खरीदा तो यह वैध है क्योंकि उसने इसे बेचा नहीं है, और न ही यह उसके लिए बेचा गया था। और यदि एजेंट ने इसे बेचा और फिर उनमें से एक ने इसे खरीदा, तो यह वैध नहीं है। जहाँ तक एजेंट का संबंध है, क्योंकि उसने इसे बेचा था; और जहाँ तक प्रमुख का संबंध है, क्योंकि यह उसके लिए बेचा गया था। संक्षेप में। -3 [उर्दू पाठ]: अगर वक़ील ने इसको ख़रीदा तो दुरुस्त है क्योंकि न तो वक़ील ने इस चीज़ को बेचा और न ही उसके लिए बेचा गया, और अगर वक़ील ने इस चीज़ को बेचा फिर इन दोनों में से किसी एक ने इसको (शमन-ए-अव्वल से कम पर) ख़रीदा तो दुरुस्त नहीं क्योंकि वक़ील ने तो खुद इसे बेचा और मुवक्किल के लिए वह चीज़ बेची गई अहतसारन (त)

फ़तहुल क़दीर में है: [अरबी पाठ]: यदि विक्रेता के एजेंट ने क़ीमत से कम पर इसे खरीदा... [उर्दू पाठ]: अगर बाए (विक्रेता) के वक़ील ने शमन-ए-अव्वल से कम पर ख़रीदा तो

---

1. हाशियतुश शलबी अलत तब्यीनिल हक़ाएक़ बहवाला मुख़्तसरुल करख़ी बाबुल बैइल फ़ासिद अलमतबाअतुल कुबरा बुलाई मिस्र 4/54
2. फ़तावा हिन्दिया किताबुल बुयू अलफ़सलुल आशिर नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर 3/133
3. तब्यीनुल हक़ाएक़ बाबुल बैइल फ़ासिद अलमतबाअतुल कुबरा बुलाई मिस्र 2/55

فتاوٰی رضویہ (جلد ہفدہم ۱۷)

[عربی متن]: فاسد الی ھنالفظ الکرخی وجہ قول محمد انہ امرہ بما لو باشرہ بنفسہ یکون فاسدا ووجہ قول ابی یوسف العقد لہ زیادۃ فساد بدلیل ابطال الجھاد فلم یجز التوکیل بہ ولا بی حنیفۃ رضی اللہ تعالٰی عنہ ان الموکل فی المعنی مشتری من الوکیل قاصدا کما اذا اشتری من غیرہ -1

[اردو متن]: نے فرمایا یہ خریداری فاسد ہے، یہاں تک کرخی کے لفظ ہیں، امام محمد کے قول کی وجہ یہ ہے کہ اس نے اس کام کا وکیل بنایا جس کو اگر یہ خود کرتا تو فاسد ہوتا، امام ابو یوسف کے قول کی وجہ یہ ہے کہ عقد میں زیادہ فساد ہے اس دلیل کی وجہ سے کہ اس پر ابطال جہاد کی وعید حدیث میں آئی ہے لہذا اس کی توکیل جائز نہیں، اور امام ابوحنیفہ کے قول کی وجہ یہ ہے کہ مؤکل دراصل وکیل سے خریدتا ہے تو یہ ایسے ہی ہوگا جیسے وہ کسی غیر سے خریدے۔ (ت)

فتاوٰی خلاصہ وفتاوٰی عالمگیریہ میں ہے: [عربی متن]: لو باع ثم وکل اخر حتی یشتری بأقل جاز عندہ -2 [اردو متن]: اگر کسی نے کوئی چیز بیچی پھر کسی کو وکیل بنایا تاکہ وہ اس کو پہلے سے کم قیمت پر خریدے تو امام ابوحنیفہ رضی اللہ تعالٰی عنہ کے نزدیک جائز ہے۔ (ت)

تبیین الحقائق میں ہے: [عربی متن]: لو اشتراہ الوکیل صح لانہ ماباع ولا بیع لہ ولو باع الوکیل ثم اشتراہ احدھما لا یصح اما الوکیل فلانہ باع واما الموکل فلانہ بیع لہ اھ مختصراً -3 [اردو متن]: اگر وکیل نے اس کو خریدا تو درست ہے کیونکہ نہ تو وکیل نے اس چیز کو بیچا اور نہ ہی اس کے لئے بیچا گیا، اور اگر وکیل نے اس چیز کو بیچا پھر ان دونوں میں سے کسی ایک نے اس کو (ثمنِ اول سے کم پر) خریدا تو درست نہیں کیونکہ وکیل نے تو خود اسے بیچا اور موکل کے لئے وہ چیز بیچی گئی اھ اختصاراً (ت)

فتح القدیر میں ہے: [عربی متن]: لواشتری وکیل البائع باقل من الثمن [اردو متن]: اگر بائع کے وکیل نے ثمنِ اول سے کم پر خریدا تو

---

1 حاشیہ الشلبی علی تبیین الحقائق بحوالہ مختصر الکرخی باب البیع الفاسد المطبعۃ الکبری بولاق مصر ۴/۵۴ 2 فتاویٰ ہندیہ کتاب البیوع الفصل العاشر نورانی کتب خانہ پشاور ۳/۱۳۳ 3 تبیین الحقائق باب البیع الفاسد المطبعۃ الکبری بولاق مصر ۲/۵۵

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Left Column - Arabic] The first (opinion) is that it is permissible according to him, contrary to the two (Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad), because according to him, the agent's action occurs for himself[1] etc. I say: In short, the transmission of this issue is widespread and well-known. What occurred in Radd al-Muhtar—that if they bought as agents for the seller, it is not permissible even if they were strangers to him, as in the author's statement "or through his agent"[2]—is a grave oversight that must be avoided. Its origin is that the author said: "The purchase of what he sold by himself or through his agent is invalid"[3] etc. The prepositional phrase was related to "sold" (ba'a) alone, but the Allama (may Allah have mercy on him) imagined its relation to both words "purchase" (shira) and "sold" (ba'a) by way of tanazu' (linguistic conflict), where he said: "His statement 'by himself or his agent' is a point of tanazu' for both 'purchase' and 'sold'"[4] etc. Then he quoted from al-Bahr words that do not hint at his imagination at all, for it only contains the prohibition of the seller's purchase.

[Right Column - Urdu] It is permissible according to Imam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him). This is contrary to the Sahibayn (Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad) because, according to the Imam, the agent's action is considered to be for his own self. I say the summary is that in this matter, the general transmission is with tawatur (succession), and what has occurred in Radd al-Muhtar—that if they became agents for the seller and then bought, it is impermissible even if they are strangers to the seller, as in the author's statement "or through his agent"—is a very large oversight from which it is obligatory to abstain. The reason for this oversight is that the author said: "Buying that thing is invalid which the seller sold by himself or his agent sold" etc. In this phrase, the adverbial phrase (prepositional) was related only to "sold" (ba'a), whereas Allama Shami (may Allah the Almighty have mercy on him) imagined that it relates to both words "sold" and "bought" by way of tanazu'. That is why the Allama said that each of "bought" and "sold" competed for the author's statement "by himself or through his agent" etc. After this, Allama Shami quoted such text from al-Bahr which does not even hold a hint of Allama Shami's imagination because in that, the seller...

---

[1] Fath al-Qadir, Chapter on Invalid Sales, Maktaba Nooria Razvia Sukkur, 6/68 [2] Radd al-Muhtar, Chapter on Invalid Sales, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 3/115 [3] Durr al-

Mukhtar, Chapter on Invalid Sales, Matba Mujtabai Delhi, 3/26 [4] Radd al-Muhtar, Chapter on Invalid Sales, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/114

फ़तावा रज़विया (खण्ड 17)

[बायां कॉलम - अरबी] पहला (मत) उनके अनुसार जायज़ है, उन दोनों (इमाम अबू यूसुफ़ और इमाम मुहम्मद) के विपरीत, क्योंकि उनके अनुसार वकील (एजेंट) का कार्य उसके स्वयं के लिए घटित होता है[1] आदि। मैं कहता हूँ: संक्षेप में, इस मामले का विवरण व्यापक और सुप्रसिद्ध है। रद अल-मुह्तार में जो उल्लेख हुआ है—कि यदि उन्होंने विक्रेता के वकील के रूप में खरीदा, तो यह अनुमेय नहीं है भले ही वे उससे अजनबी हों, जैसा कि लेखक के कथन "या उसके वकील के माध्यम से"[2] में है—यह एक बहुत बड़ी चूक है जिससे बचना चाहिए। इसका कारण यह है कि लेखक ने कहा: "उस चीज़ का खरीदना अमान्य है जिसे उसने स्वयं बेचा या अपने वकील के माध्यम से बेचा"[3] आदि। यहाँ सम्बन्ध केवल "बेचा" (बा'अ) शब्द से था, लेकिन अल्लामा (अल्लाह उन पर रहम करे) ने 'तनाज़ु' (दो क्रियाओं के बीच प्रतिस्पर्धा) के आधार पर इसका सम्बन्ध "खरीदने" (शिरा) और "बेचने" (बा'अ) दोनों शब्दों से मान लिया, जहाँ उन्होंने कहा: "उनका कथन 'स्वयं या उनके वकील' शिरा और बा'अ दोनों के लिए तनाज़ु का विषय है"[4] आदि। फिर उन्होंने अल-बहर से ऐसे शब्द उद्धृत किए जो उनकी कल्पना का संकेत तक नहीं देते, क्योंकि इसमें केवल विक्रेता के खरीदने का निषेध है।

[दायां कॉलम - उर्दू का अनुवाद] इमाम अबू हनीफ़ा (रज़ियल्लाहु अन्हु) के नज़दीक यह जायज़ है। साहिबैन के विपरीत, क्योंकि इमाम साहब के नज़दीक वकील का कार्य उसकी अपनी ज़ात के लिए होता है। मैं कहता हूँ कि सारांश यह है कि इस मसले में आम नक़्ल तवातुर (निरंतरता) के साथ है और जो रद अल-मुह्तार में आया है कि अगर विक्रेता के वकील होकर उन्होंने खरीदा तो नाजायज़ है, भले ही वे विक्रेता से अजनबी हों, जैसा कि लेखक के कथन "और उसके वकील के द्वारा" में है—यह एक बहुत बड़ी चूक (सह्व) है जिससे बचना वाजिब है। इस चूक का कारण यह है कि लेखक ने कहा कि उस चीज़ को खरीदना फ़ासिद (अमान्य) है जिसे विक्रेता ने ख़ुद बेचा या उसके वकील ने बेचा आदि। इस इबारत में ज़र्फ़(पूर्वसर्ग) सिर्फ़"बेचा" (बा'अ) से संबंधित था, जबकि अल्लामा शामी (रहमतुल्लाहि अलैहि) को भ्रम हुआ कि यह 'तनाज़ु' के तौर पर "बेचा" और "खरीद" (शिरा') दोनों शब्दों से संबंधित है। इसीलिए अल्लामा ने फ़रमाया कि शिरा' और बा'अ में से प्रत्येक ने लेखक के कथन "स्वयं या वकील के द्वारा" में तनाज़ु किया आदि। इसके बाद अल्लामा शामी ने बहर से ऐसी इबारत नक़्ल की जो अल्लामा शामी की कल्पना का वहम तक नहीं रखती क्योंकि उसमें तो विक्रेता...

[1] फ़तह अल-क़दीर, बाब अल-बय अल-फ़ासिद, मकतबा नूरया रज़विया सुक्कुर, 6/68 [2] रद अल-मुह्तार, बाब अल-बय अल-फ़ासिद, दार इहया अल-तुरास अल-अरबी बेरुत, 3/115 [3] दुर्र अल-मुख्तार, बाब अल-बय अल-फ़ासिद, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 3/26 [4] रद अल-मुह्तार, बाब अल-बय अल-फ़ासिद, दार इहया अल-तुरास अल-अरबी बेरुत, 4/114

فتاوی رضویہ (جلد ہفدہم ۱۷)

[بایاں کالم - عربی] الاول جاز عنده خلافا لهما لان تصرف الوكيل عنده يقع لنفسه [1] الخ اقول: وبالجملة النقل في المسألة فاش مستفيض فما وقع في ردالمحتار لـواشـتروا بالوكالة عن البائع لايجوز لوكانوا اجانب عنه كما في قول المصنف او بـوكـيـله [2] اهـ سهو عظيم يجب التجنب عنه ومنشأه ان المصنف قال فسد شراء مـاباع بنفسه او بـوكـيـله [3] الخ والظرف كان متعلقاً بباع وحده وتوهم العلامة رحمه الله تعالى تعلقه بكلا لفظي الشراء وباع على سبيل التنازع حيث قال قوله بنفسه او وكيله تنازع فيه كل من شراء وباع الخ [4] ، ثم نقل من البحر كلاماً لا يوهم مـابتخيله اصلا انما فيه منع شراء البائع

[دایاں کالم - اردو] امام ابوحنیفہ رضی اللہ تعالٰی عنہ کے نزدیک جائز ہے۔ بخلاف صاحبین کے کیونکہ امام صاحب کے نزدیک وکیل کا تصرف اپنی ذات کے لئے واقع ہوتا ہے اھ میں کہتا ہوں خلاصہ یہ ہے کہ اس مسئلہ میں نقل عام تواتر کے ساتھ ہے اور جو ردالمحتار میں واقع ہوا ہے کہ اگر بائع کے وکیل ہو کر انہوں نے خریدا تو ناجائز ہے اگرچہ وہ بائع سے اجنبی ہوں ---- جیسا کہ مصنف کے قول "اوبوکیلہ" میں ہے اھ یہ بہت بڑا سہو ہے جس سے بچنا واجب ہے، اس سہو کا منشا یہ ہے کہ مصنف نے کہا اس چیز کو خریدنا فاسد ہے جس کو بائع نے بذات خود بیچا یا اس کے وکیل نے بیچا الخ اس عبارت میں ظرف (جار مجرور) صرف "باع" سے متعلق تھا جبکہ علامہ شامی رحمتہ اللہ تعالیٰ علیہ نے وہم کیا کہ یہ بطور تنازع "باع" اور "شراء" دونوں لفظوں سے متعلق ہے اسی لئے علامہ نے فرمایا کہ شراء اور باع میں سے ہر ایک نے مصنف کے قول "بنفسہ او وکیلہ" میں تنازع کیا الخ اس کے بعد علامہ شامی نے بحر سے ایسا کلام نقل فرمایا جو علامہ شامی کے تخیل کا وہم تک نہیں رکھتا کیونکہ اس میں تو بائع

[1] فتح القدیر باب البیع الفاسد مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶/ ۶۸ [2] ردالمحتار باب البیع الفاسد داراحیاء التراث العربی بیروت ۳/ ۱۱۵ [3] در مختار باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۳/ ۲۶ [4] ردالمحتار باب البیع الفاسد داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۱۴

Fatawa Razawiyya, Volume 17

(Arabic Text)

Whether he sold for himself or for someone else, and whoever sold for him as his agent, and whether the purchase is for himself or for someone else. As for the one who did not sell and for whom no sale was made, there is no prohibition against him from purchasing at all, whether he buys for himself or for someone else, such as the agent of the seller for purchasing. As for what is in Mukhtasar al-Karkhi at the beginning of the mentioned discussion, that it is not permissible for the seller's agent to buy that in the opinion of all of them[1] (summarized). Its meaning is his agent for selling as we have previously stated from at-Tabyin. In it, it says: if a man is authorized to sell someone else's property, he sells it, then the agent wants to buy it for himself or for someone else at a lower price by his order, it is not permissible[2] (summarized). Similar to it is in al-Hindiyyah from al-Muhit. Yes, the 'seller's agent' in the mentioned text of al-Fath means his agent for purchasing. So remain firm and do not waver. And success is only from Allah, and Allah Subhanu wa Ta'ala knows best. (T)

(Urdu Translation/Explanation)

Purchasing has been declared prohibited, whether the seller himself sold it or his agent, and whether the purchase is for himself or for another. But the person who neither sold it himself nor was it sold for him, there is absolutely no mention of prohibiting his purchase in this passage, whether he buys for himself or for another, like a designated agent for purchasing. And what is mentioned in the beginning of the mentioned text in Mukhtasar al-Karkhi, that the purchase by the seller's agent of that thing is impermissible according to the consensus of the jurists, its meaning is the agent who was appointed for selling, as we have already mentioned with reference to Tabyin. In the same, it is stated that if someone made another person an agent for the sale of something and he sold that thing, then the same agent intended to buy that thing for himself or for someone else at his command for a price lower than the first price, then this is impermissible. And similar to it is in Hindiyyah with reference to al-Muhit. In the mentioned text of al-Fath, the 'seller's agent' refers to the agent of the seller whom he had appointed for purchasing. Therefore, remain firm, do not waver, and success is only from Allah Almighty, and Allah Subhanu wa Ta'ala knows best. (T)

(3) It is permissible if 'Amr said 'go and buy it' and he (the agent) bought it from Zaid and took possession of it in that session. In this case, 'Amr's writing of the receipt is

not the purchase itself, but rather so that the broker, after buying from Zaid, can give him this receipt for the satisfaction regarding the money, as mentioned in the question. Yes, if the broker came and told 'Amr, and 'Amr replied 'I have bought it,' meaning the contract of sale and purchase took place there and then, and the receipt was written, then after that the broker took the note from Zaid...

---

[1] Hashiyah ash-Shalabi Tabyin al-Haqaiq, referencing Mukhtasar al-Karkhi, Chapter of Invalid Sale, Al-Tab'at al-Kubra, Egypt, 2/54. [2] Tabyin al-Haqaiq, Chapter of Invalid Sale, Al-Matba'at al-Kubra, Bulaq, Egypt, 2/54.

(अरबी पाठ)

चाहे उसने अपने लिए बेचा हो या किसी और के लिए, और जिसने उसके लिए बेचा वह उसका वकील है, और चाहे खरीदारी अपने लिए हो या किसी और के लिए। लेकिन वह व्यक्ति जिसने न तो स्वयं बेचा और न ही उसके लिए बिक्री की गई, उसके लिए खरीदारी की कोई मनाही नहीं है, चाहे वह अपने लिए खरीदे या किसी और के लिए, जैसे खरीदारी के लिए नियुक्त वकील। और जो संक्षिप्त कर्खी (Mukhtasar al-Karkhi) के शुरू में कहा गया है कि विक्रेता के वकील का उस चीज़ को खरीदना सभी फकीहों की राय में नाजायज़ है[1] (संक्षेप में)। इसका अर्थ वह वकील है जिसे बेचने के लिए नियुक्त किया गया था, जैसा कि हम तबीय्यीन (at-Tabyin) के हवाले से पहले बता चुके हैं। उसी में है कि यदि किसी ने दूसरे को किसी चीज़ को बेचने का वकील बनाया और उसने उसे बेच दिया, फिर वही वकील चाहे कि उस चीज़ को पहले मूल्य से कम मूल्य पर अपने लिए या किसी और के लिए उसके आदेश पर खरीदे, तो यह नाजायज़ है[2] (संक्षेप में)। इसी तरह हिंदिया में अल-मुहीत के हवाले से है। हाँ, अल-फ़तह के पाठ में 'विक्रेता के वकील' का अर्थ खरीदारी के लिए उसका वकील है। अतः अडिग रहें और विचलित न हों। और सफलता

(उर्दू अनुवाद/व्याख्या)

खरीदारी को वर्जित घोषित किया गया है, चाहे विक्रेता ने स्वयं बेचा हो या उसके वकील ने, और चाहे खरीदारी स्वयं के लिए हो या दूसरे के लिए। लेकिन वह व्यक्ति जिसने न तो स्वयं बेचा और न ही उसके लिए बिक्री की गई, इस पाठ में उसकी खरीदारी को वर्जित करने का कोई उल्लेख नहीं है, चाहे वह अपने लिए खरीदे या दूसरे के लिए, जैसे खरीदारी के लिए नियुक्त वकील। और जो उल्लेखित पाठ के आरंभ में मुख्तसर कर्खी में वर्णित है कि विक्रेता के वकील का उस वस्तु को खरीदना सभी न्यायविदों (फकीहों) की सहमति से नाजायज़ है, उसका अर्थ वह वकील है जिसे बेचने के लिए नियुक्त किया गया था, जैसा कि हम तबीय्यीन के संदर्भ में पहले ही उल्लेख कर चुके हैं। उसी में कहा गया है कि यदि किसी ने दूसरे को किसी वस्तु की बिक्री के लिए वकील बनाया और उसने वह वस्तु बेच दी, फिर उसी वकील ने उस वस्तु को उसके आदेश पर अपने लिए या किसी और के लिए पहले मूल्य से कम मूल्य पर खरीदने का इरादा किया, तो यह नाजायज़ है। और इसके समान हिंदिया में अल-मुहीत के संदर्भ में है। अल-फ़तह के उल्लेखित पाठ में 'विक्रेता के वकील' से तात्पर्य विक्रेता का वह वकील है जिसे उसने खरीदारी के लिए नियुक्त किया था। इसलिए, दृढ़ रहें, विचलित न हों, और सफलता

(अरबी पाठ)

केवल अल्लाह की ओर से है, और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है। (त)

(उर्दू अनुवाद/व्याख्या)

केवल सर्वशक्तिमान अल्लाह की ओर से है, और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है। (त)

(3) यह जायज़ है यदि अमर ने कहा 'जाओ और खरीद लाओ' और उसने (वकील ने) ज़ैद से खरीद कर उसी बैठक में कब्ज़ा कर लिया। इस स्थिति में अमर द्वारा रसीद लिखना खरीदारी नहीं है, बल्कि इसलिए है ताकि दलाल, ज़ैद से खरीदने के बाद, पैसों की संतुष्टि के लिए उसे यह रसीद दे सके, जैसा कि प्रश्न में उल्लेखित है। हाँ, यदि दलाल ने आकर अमर को बताया और अमर ने उत्तर दिया 'मैंने खरीद लिया है', अर्थात खरीद और बिक्री का अनुबंध वहीं हो गया और रसीद लिख दी गई, फिर उसके बाद दलाल ने ज़ैद से नोट...

---

[1] हाशिया अल-शलबी तबीय्यीन अल-हक़ाएक़, सन्दर्भ मुख्तसर अल-कर्खी, अमान्य बिक्री का अध्याय, अल-तबात अल-कुबरा, मिस्र, 2/54। [2] तबीय्यीन अल-हक़ाएक़, अमान्य बिक्री का अध्याय, अल-मतबात अल-कुबरा, बुलाक, मिस्र, 2/54।

(عربی عبارت)

سواء باع لنفسه او لغيره و من باع له وكيله وسواء كان شراء لنفسه او لغيره اما الذي لم يبع ولا بيع له فلا تعرض فيه لمنعه من الشراء اصلا سواء شرى لنفسه او لغيره كوكيل البائع بالشراء اما ما في مختصر الكرخي في صدر الكلام المذكور لا يجوز ان يشترى ذلك وكيل البائع في قولهم جميعاً[1] (ملخصاً) فمعناه وكيله بالبيع كما قدمناه عن التبيين وفيه لو وكل رجلا ببيع غيره فباع ثم اراد الوكيل ان يشترى بأقل لنفسه او لغيره بأمره لم يجز[2] اه (ملخصاً) ومثله فى الهندية عن المحيط نعم وكيل البائع في كلام الفتح المذكور بمعنى وكيله بالشراء فتثبت ولا تزل

(اردو ترجمہ و تشریح)

کی خریداری کو ممنوع قرار دیا گیا ہے چاہے بائع نے بذات خود بیچا ہو یا اس کے وکیل نے اور چاہے اپنے لئے خریداری کرے یا غیر کے لئے لیکن وہ شخص جس نے نہ تو خود بیچا نہ ہی اس کے لئے اس چیز کو بیچا گیا اس کی خریداری کی ممانعت سے اس عبارت میں بالکل کوئی تعرض نہیں چاہے وہ اپنے لئے خریدے یا غیر کے لئے جیسے خریداری کے لئے مقرر کردہ وکیل اور وہ جو کلام مذکور کے شروع میں مختصر کرخی میں مذکور ہے کہ بائع کے وکیل کا اس چیز کو خریدنا تمام فقہاء کے قول میں ناجائز ہے اس کا معنی وہ وکیل جس کو بیچ کے لئے مقرر کیا گیا تھا جیسا کہ تبیین کے حوالے سے ہم اس کا ذکر پہلے کر چکے ہیں، اسی میں ہے کہ کسی نے دوسرے کو کسی چیز کی بیع کا وکیل بنایا اور اس نے وہ چیز فروخت کردی پھر اسی وکیل کا ارادہ ہوا کہ اس چیز کو ثمن اول سے کمتر ثمن کے عوض اپنی ذات کے لئے یا کسی اور کے لئے اس کے حکم پر خریدے تو یہ ناجائز ہے اھ اور اس کی مثل ہندیہ میں بحوالہ محیط ہے، فتح کے کلام مذکور میں وکیل بائع سے مراد بائع کا وہ وکیل ہے جس کو خریداری

(عربی عبارت) **(اردو ترجمہ و تشریح)**

وباللہ التوفیق واللہ سبحانہ وتعالی اعلم۔

کے لئے اس نے مقرر کیا چنانچہ ثابت قدم رہ مت ڈگمگا، اور توفیق اللہ تعالی ہی کی طرف سے اور اللہ تعالیٰ سبحانہ و تعالی بہتر جانتا ہے۔ (ت)

(۳) جائز ہے اگر عمرو نے کہا کہ خرید لاؤ اور اس نے زید سے خرید کر اس جلسہ میں قبضہ کرلیا اس صورت میں عمرو کا تمسک لکھ دینا خریداری نہیں بلکہ اس لئے ہے کہ دلال زید سے خریدنے کے بعد روپے کے اطمینان کے لئے یہ تمسک اسے دے دے جیسا کہ سوال میں مذکور ہے ہاں اگر دلال نے آکر عمرو سے کہا اور عمرو نے جواب دیا کہ میں نے خرید لیا یعنی عقد بیع و شراء یہیں ہو لیا اور تمسک لکھ گیا بعدہ دلال نے نوٹ زید سے

---

[1] حاشیہ الشلبی تبیین الحقائق بحوالہ مختصر الکرخی باب بیع الفاسد الطبعۃ الکبریٰ مصر ۲ / ۵۴ [2] تبیین الحقائق باب البیع الفاسد المطبعۃ الکبریٰ بولاق مصر ۲ / ۵۴

Fatawa Ridawiyya Volume 17 (17)

...made it haram (forbidden) and void because possession was taken neither of the notes nor of the rupees during the sale session.

[Arabic]: فکان افتراقا عن دین بدین وقد نھی رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم عن بیع الکالئ بالکالئ [Urdu translation]: So this is a separation of debt for debt, whereas the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) forbade the sale of debt for debt, and Allah knows best. (T)

Question 266: From Banaras, Mohalla Gundi Gurtola, Masjid Bibi Raji Shafakhana. Sent by Hakim Abdul Ghafoor Sahib, 16 Jumada al-Ula 1312 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: is the credit sale of 'Kalabtoon' (gold/silver thread) permissible or not? Outwardly, it seems it would be impermissible because although it contains three components - gold, silver, and silk - since the silver portion is predominant, the mentioned Kalabtoon should be legally ruled as silver. Now, due to the identity of genus, i.e., silver being common to both Kalabtoon and rupees, credit sale should be impermissible. It should also be kept in mind that thousands of God's servants are involved in this business. If the aforementioned sale is indeed impermissible and the people involved are stopped from this transaction, the doors of trade, especially for the cloth merchants of Banaras, will be closed and it will lead to starvation. Clarify based on the Book and you will be rewarded on the Day of Reckoning.

Answer: In Kalabtoon, the gold is merely coloring, and mere coloring has no legal weight when the gold cannot be separated from it by burning.

[Arabic]: فان حتمویہ والتمویہ لا عبرۃ بہ لانہ مستھلك کما صرحوا بہ قاطبۃ وفی کافی الامام الحاکم الشھید اذا اشتری لجاماً مموباً بفضۃ بدرابم اقل مما فیہ او اکثر فھو جائز لان التمویہ [Urdu translation]: Because in this case, it is gold plating, and it has no legal consideration because it is a consumable thing, as all jurists have explicitly stated. It is mentioned in 'Al-Kafi' of Imam Al-Hakim Al-Shahid: If someone buys a bit [for a horse] plated with silver for a few dirhams, whether it's less or more than the silver in it, it is permissible because the plating...

---

[1] Sunan al-Daraqutni, Kitab al-Buyu', Hadith 269, Nashr al-Sunnah Multan, 3/71 Page 627 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द १७ (१७)

...हराम और बातिल कर दिया क्योंकि न तो नोटों पर और न ही रुपयों पर खरीद-बिक्री की बैठक के दौरान कब्ज़ा हुआ।

[अरबी]: فکان افتراقا عن دین بدین وقد نھی رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم عن بیع الکالئ بالکالئ। [उर्दू अनुवाद का हिंदी रूपांतरण]: तो यह ऋण के बदले ऋण की जुदाई हुई, जबकि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने उधार के बदले उधार बेचने से मना फ़रमाया है और अल्लाह बेहतर जानता है। (त)

मसला २६६: बनारस, मोहल्ला गुंडी गरतोला, मस्जिद बीबी राजी शफ़ाखाना से। प्रेषक: हकीम अब्दुल गफूर साहिब, १६ जमादी अल-उला १३१२ हिजरी। दीन के उलेमा इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि 'क़लाबतों' (ज़री) की उधार बिक्री जायज़ है या नहीं। ज़ाहिर तौर पर ऐसा लगता है कि यह नाजायज़ होगी क्योंकि हालाँकि इसमें तीन चीज़ें शामिल हैं यानी सोना, चाँदी और रेशम, लेकिन चूँकि चाँदी का हिस्सा ज़्यादा है, इसलिए उक्त क़लाबतों को कानूनी तौर पर चाँदी माना जाएगा। अब जिन्स की समानता यानी क़लाबतों और रुपयों दोनों में चाँदी होने के कारण उधार बिक्री नाजायज़ होनी चाहिए। यह भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि हज़ारों खुदा के बंदे इस मामले में शामिल हैं। अगर वास्तव में उक्त बिक्री नाजायज़ है और इस काम में लगे लोगों को इस बिक्री से रोक दिया जाए, तो व्यापार के दरवाज़े, विशेष रूप से बनारस के कपड़ा व्यापारियों के लिए, बंद हो जाएंगे और फाकाकशी (भुखमरी) की नौबत आ जाएगी। किताब के अनुसार स्पष्ट करें, आपको हिसाब के दिन इसका अज्र मिलेगा।

जवाब: क़लाबतों में सोने का तो सिर्फ रंग ही रंग है और केवल रंग का कोई एतबार (महत्व) नहीं है जब तक कि जलाने से सोना उसमें से अलग न हो सके।

[अरबी]: فان حتمویہ والتمویہ لا عبرۃ بہ لانہ مستھلك کما صرحوا بہ قاطبۃ وفی کافی الحاکم الشھید اذا اشتری لجاماً مموباً بفضۃ بدرابم اقل مما فیہ او اکثر فھو جائز Imam لان التمویہ [उर्दू अनुवाद का हिंदी रूपांतरण]: क्योंकि इस सूरत में यह सोने का पानी चढ़ाना है और इसका कोई एतबार नहीं है क्योंकि यह हलाक होने वाली (समाप्त होने वाली) चीज़ है जैसा कि तमाम फ़ुक़हा ने इसकी तसरीह (स्पष्टीकरण) की है। इमाम हाकिम शहीद की 'काफ़ी' में ज़िक्र है कि

अगर किसी ने ऐसा लगाम खरीदा जिस पर चाँदी का पानी चढ़ाया गया था, कुछ दरहमों के बदले में जो उस चाँदी से कम या ज़्यादा हों, तो यह जायज़ है क्योंकि पानी चढ़ाना...

---

[1] सुनन अल-दाराकुतनी, किताब अल-बुयू, हदीस २६९, नश्र अल-सुन्नत मुल्तान, ३/७१ पृष्ठ ६२७ का ७१५

لا کردیا تو حرام و باطل ہے کہ جلسہ بیع میں نہ نوٹ پر قبضہ ہوانہ روپوں پر۔ فکان افتراقا عن دین بدین وقد نھی رسول اللہ صلی | تو یہ دین سے دین کے بدلے جدائی ہے حالانکہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم عن بیع الکالئ بالکالئ و اللہ | اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے ادھار کی ادھار کے بدلے بیع سے منع تعالٰی اعلم۔ | فرمایا ہے اور اللہ تعالٰی بہتر جانتا ہے۔ (ت)

مسئلہ ۲۶۶: از بنارس محلہ گنڈی گرتولہ مسجد بی بی راجی شفاخانہ مرسلہ حکیم عبدالغفور صاحب ۱۶ جمادی الاولٰی ۱۳۱۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ کلابتوں کی بیع ادھار جائز ہے یا نہیں۔ بظاہر معلوم ہوتا ہے کہ ناجائز ہوگی کہ گو اس میں تین جزو شریک ہیں یعنی سونا چاندی ریشم لیکن چونکہ حصہ چاندی کا زیادہ ہے لہذا کلابتوں مذکور حکماً چاندی قرار دیا جائے گا اب بوجہ اتحاد جنس یعنی چاندی در میان کلابتوں اور روپیہ کے بیچ ادھار ناجائز ہونا چاہئے، یہ بھی ملحوظ خاطر رہے کہ ہزار ہا بندہ خدا اس معاملہ میں مبتلا ہیں اگر واقعی بیع مرقومہ بالا ناجائز ہے اور اشخاص مرتکب فعل ہذا بیع مذکور سے روک دئے جائیں تو باب تجارت خصوصا اہالیان بنارس پارچہ فروش کا مسدود ہو جائے گا نوبت فاقہ کشی کی پہنچے گی، بینوا بالکتاب تو جروا یوم الحساب۔

الجواب: کلابتوں میں سونے کا تو صرف رنگ ہی رنگ ہے اور نرے رنگ کا کچھ اعتبار نہیں جبکہ جلانے سے سونا اس میں سے جدا نہ ہو سکتا ہے۔ فان حتمویہ والتمویہ لا عبرۃ بہ لانہ مستھلك کما | کیونکہ اس صورت میں یہ سونے کا پانی چڑھانا ہے اور اس کا صرحوا بہ قاطبۃ وفی کافی الامام الحاکم الشھید اذا | کوئی اعتبار نہیں کیونکہ یہ ہلاک ہونے والی چیز ہے جیسا کہ اشتری لجاماً مموہاً بفضۃ بدراہم اقل مما فیہ او | تمام فقہاء نے اس کی تصریح کی ہے امام حاکم

شہید کی کافی میں اکثر فھو جائز لان التمویہ | مذکور ہے اگر کسی نے ایسا لگام خریدا جس پر چاندی کا پانی چڑھا یا گیا تھا کچھ درہموں کے بدلے میں جو اس چاندی سے کم یا زیادہ ہو تو یہ جائز ہے کیونکہ تمویہ...

---

[1] سنن الدارقطنی کتاب البیوع حدیث ۲۶۹ نشر السنہ ملتان ۳ / ۷۱ Page 627 of 715

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Top Right Box - Urdu]: ...which has been silvered or more, then this sale is permissible because the silver used in silvering cannot be separated from the bridle. Do you not see that if someone buys such a house in exchange for a deferred price upon which gold water has been applied [gilded], this sale will be permissible even if the gold used in applying the water is more than the gold of the price? (T)

[Top Left Box - Arabic]: It cannot be extracted. Do you not see that if one buys a house gilded with gold for a deferred price, it is permissible, even if the gold used in the gilding of its ceilings is more than the gold in the price. 1

[Main Body Text - Urdu]: However, the essence of silver itself is definitely present in it, as they are silver and silk or cotton threads twisted together. So, its sale at most is that it was a sale of silver and another thing along with it. This will not exclude it from the ruling of 'Sarf' (currency exchange) when on the other side also there is natural price [currency] i.e., gold or silver or rupees or ashrafis. Thus, in the case of unity of genus where one sells 'Kalabatoon' (silver/gold lace) for rupees or silver, both equality in weight (Tamathul) and mutual possession (Taqabud) are necessary. And in case of difference [of genus] where they exchange for gold or ashrafis, mutual possession of both exchanges will undoubtedly be mandatory. Equality here is such that the silver on the side of the price is more in weight than the silver of those threads which are in the 'Kalabatoon', so that an amount from it corresponds to them and the remainder corresponds to the other thing, silk or cotton. If the silver on the side of price is less than or equal in weight to the silver of this 'Kalabatoon', or if the excess or deficiency is unknown, then the sale is forbidden and void. And mutual possession means that in this session, the buyer takes possession of the 'Kalabatoon' and the seller takes possession of its price. If there is a delay even for a moment from any side, the sale is void and forbidden. It is in Durr-ul-Mukhtar:

[Bottom Left Box - Arabic]: The principle is that whenever currency is sold with something else, like silver-plated (Mufadhdhadh) and gold-embroidered (Muzarkash), for currency of its own genus, it is a condition that the price be more. If it is equal, or less, or unknown, it is void. And if it is for a different genus, only mutual possession (Taqabud) is a condition. 2

[Bottom Right Box - Urdu]: The rule is that when currency is sold mixed with something else, like 'Mufadhdhadh' and 'Muzarkash' (things on which silver or gold leaves have been applied), then if it is sold in exchange for currency of the same

genus as the item being sold, it is a condition for the price to be more. If it is equal, or the price is less than it, or the excess/deficiency is unknown, the sale is void. And if it is sold in exchange for currency of a different genus, then only 'Taqabud' (mutual possession by both parties) is a condition. (T)

1. Radd al-Muhtar, referring to Kafi al-Hakim, Book of Sales, Chapter of Sarf, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/237.
2. Durr al-Mukhtar, Book of Sales, Chapter of Sarf, Mujtabai Press, Delhi, 2/55.

फतवा रज़विया (खण्ड 17)

[शीर्ष दायां बॉक्स - उर्दू]: ...जिसका पानी लगाम पर चढ़ाया गया हो या उससे अधिक हो, तो यह बिक्री जायज़ है क्योंकि पानी चढ़ाने में इस्तेमाल हुई चाँदी लगाम से अलग नहीं हो सकती। क्या आप नहीं देखते कि यदि कोई विलंबित मूल्य (Deferred Price) के बदले ऐसा घर खरीदे जिस पर सोने का पानी चढ़ाया गया है, तो यह बिक्री जायज़ होगी भले ही पानी चढ़ाने में इस्तेमाल हुआ सोना मूल्य के सोने से अधिक हो? (त)

[शीर्ष बायां बॉक्स - अरबी]: इसे अलग नहीं किया जा सकता। क्या आप नहीं देखते कि यदि कोई सोने से मुलम्मा किए हुए घर को विलंबित मूल्य पर खरीदता है, तो यह जायज़ है, भले ही उसकी छतों के मुलम्मे में इस्तेमाल हुआ सोना मूल्य के सोने से अधिक हो। 1

[मुख्य पाठ - उर्दू]: लेकिन चाँदी का अपना अस्तित्व स्वतंत्र रूप से उसमें निश्चित रूप से मौजूद है क्योंकि वे चाँदी और रेशम या सूत के धागे हैं जो एक-दूसरे पर बटे हुए हैं। तो इसकी बिक्री का अधिकतम अर्थ यह है कि चाँदी और उसके साथ एक और चीज़ की बिक्री हुई। यह इसे 'सर्फ़ (मुद्रा विनिमय) के नियम से बाहर नहीं करेगा जबकि दूसरी ओर भी प्राकृतिक मूल्य यानी सोना या चाँदी या रुपया या अशरफी हो। अतः एक ही जाति की स्थिति में, जब रुपए या चाँदी के बदले कलाबत्तून (चाँदी/सोने का काम) बेचें, तो समानता (तमासुल) और आपसी कब्ज़ा (तक़ाबुल) दोनों अनिवार्य होंगे। और भिन्नता की स्थिति में, जब सोने या अशरफी से विनिमय करें, तो बिना किसी संदेह के दोनों तरफ का आपसी कब्ज़ा अनिवार्य होगा। यहाँ समानता इस प्रकार है कि मूल्य की ओर की चाँदी उन धागों की चाँदी से वज़न में अधिक हो जो कलाबत्तून में हैं, ताकि उसमें से एक हिस्सा उनके बराबर हो जाए और शेष हिस्सा दूसरी चीज़ यानी रेशम या सूत के बदले हो जाए। यदि मूल्य की ओर की चाँदी इस कलाबत्तून की चाँदी से वज़न में कम या बराबर है, या कमी-बेशी अज्ञात है, तो बिक्री हराम और बातिल (अमान्य) है। और तक़ाबुल का अर्थ यह है कि उसी बैठक में खरीदार कलाबत्तून ले ले और विक्रेता उसकी कीमत पर कब्ज़ा कर ले। यदि किसी भी ओर से एक क्षण की भी देरी हो, तो बिक्री बातिल और हराम है। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

[नीचे बायां बॉक्स - अरबी]: नियम यह है कि जब भी मुद्रा को किसी अन्य चीज़ के साथ मिलाकर बेचा जाए, जैसे चाँदी चढ़ा हुआ (मुफज़्ज़ज़) और सुनहरे काम वाला (मुज़रकश), उसी जाति की मुद्रा के

बदले, तो मूल्य का अधिक होना शर्त है। यदि वह बराबर हो, या कम हो, या अज्ञात हो, तो वह बातिल है। और यदि वह दूसरी जाति के बदले हो, तो केवल तक़ाबुल शर्त है। 2

[नीचे दायां बॉक्स - उर्दू]: नियम यह है कि जब मुद्रा को किसी और चीज़ के साथ मिलाकर बेचा जाए जैसे मुफज़्ज़ज़ और मुज़रकश (जिन चीज़ों पर सोने या चाँदी के पत्तर चढ़ाए गए हों), तो यदि उसे बेची जाने वाली चीज़ की हम-जिन्स (समान जाति) मुद्रा के बदले बेचा जाए, तो मूल्य का अधिक होना शर्त है। यदि बराबर हो या मूल्य उससे कम हो या कमी-बेशी अज्ञात हो, तो बिक्री बातिल है। और यदि दूसरी जाति की मुद्रा के बदले में बेचा जाए, तो केवल तक़ाबुल (दो तरफा कब्ज़ा) शर्त है। (त)

1. रद अल-मुह्तार, बहवाला काफी अल-हाकिम, किताब अल-बुयू, बाब अस-सर्फ़, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 4/237।
2. दुर्रे मुख्तार, किताब अल-बुयू, बाब अस-सर्फ़, मते-ए-मुज्तबाई, दिल्ली, 2/55।

पृष्ठ 628/715

فتاوٰی رضویہ (جلد ہفدہم ۱۷)

[Top Left Box - Arabic]: لا يخلص الا ترى انه اذا اشترى الدار المموهة بالذهب بثمن مؤجل يجوز ذلك وان كان ما في سقوفها من التمويه بالذهب اكثر من الذهب في الثمن. 1

[Top Right Box - Urdu]: ہوں جس کا پانی لگام پر چڑھایا گیا یا اس سے زیادہ ہوں تو یہ بیع جائز ہے کیونکہ پانی چڑھانے میں مستعمل چاندی لگام سے الگ نہیں ہو سکتی۔ کیا تو نہیں دیکھتا کہ اگر کوئی ثمنِ مؤجل کے بدلے ایسا مکان خریدے جس پر سونے کا پانی چڑھایا گیا ہے تو یہ بیع جائز ہوگی اگرچہ پانی چڑھانے میں مستعمل سونا ثمن کے سونے سے زیادہ ہواہے۔ (ت)

[Middle Section - Urdu]: مگر چاندی کا خود عین مستقل طور پر اس میں قطعاً موجود کہ وہ چاندی اور ریشم یا سوت کے تار ہیں ایک دوسرے پر بٹے ہوئے تو اس کی بیع غایت یہ کہ چاندی اور اس کے ساتھ ایک اور چیز کی بیع ہوئی یہ اسے حکم صرف سے خارج نہ کرے گا جبکہ دوسری جانب بھی ثمن خلقی یعنی سونا یا چاندی یا روپیہ یا اشرفی ہو پس صورتِ اتحادِ جنس کہ روپیہ یا چاندی کے عوض کلابتوں بیچیں تماثل و تقابض دونوں اور بحالتِ اختلاف کہ سونے یا اشرفی سے مبادلہ کریں صرف تقابض بدلین بلا شبہہ لازم ہوگا تماثل یہاں یوں کہ ثمن کی طرف چاندی ان تاروں کی چاندی سے جو کلابتوں میں ہیں وزن میں زیادہ ہوتا کہ اس میں سے ان کے مقابل اور باقی اس دوسری چیز ریشم یا سوت کے مقابل ہوجائے اگر ثمن کی طرف چاندی اس کلابتوں کی چاندی سے وزن میں کم یا برابر ہے یا کمی بیشی معلوم نہیں تو بیع حرام و باطل ہے، اور تقابض یوں کہ اس مجلس میں خریدنے والا کلابتوں اور بیچنے والا اس کی قیمت پر قبضہ کرلے اگر کسی طرف سے ایک لمحہ کے لئے بھی ادھار ہو تو بیع باطل و حرام ہے در مختار میں ہے:

[Bottom Left Box - Arabic]: الاصل انه متی بیع نقد مع غیرہ کمفضض و مزرکش بنقد من جنسہ شرط زیادۃ الثمن فلو مثلہ اواقل اوجھل بطل ولو بغیر جنسہ شرط التقابض فقط 2

[Bottom Right Box - Urdu]: قاعدہ یہ ہے کہ جب نقد کو غیر کے ساتھ ملا کر بیچا جائے جیسے مفضض اور مزرکش (جن چیزوں پر سونے یا چاندی کے پتر چڑھائے گئے ہوں تو اگر نقد مبیع کے ہم جنس نقد کے بدلے بیچا جائے تو ثمن کا زیادہ ہونا شرط ہے اگر برابر ہو یا ثمن اس سے کم ہو یا کمی بیشی مجہول ہو تو بیع باطل ہے اور اگر غیر جنس کے نقد کے بدلے میں بیچا جائے تو فقط تقابض (دو طرفہ قبضہ) شرط ہے۔ (ت)

1. رد المحتار بحوالہ کافی الحاکم کتاب البیوع باب الصرف دار احیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۲۳۷

2. در مختار کتاب البیوع باب الصرف مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۵۵

Fatawa Razawiyya Volume (17)

The door of sustenance can never be closed by following and obeying the commands of Allah (Mighty and Majestic is He), especially when that Kind, Compassionate, and Merciful Lord does not close the door of sustenance even upon severe and heinous disobedience by following the dictates of the self and Satan.

[Persian Couplet]: He sees the sin and maintains the bread (provision). (He sees the sin and despite that, maintains the sustenance. - T)

So why would He close it upon following His generous commands? However, the state of our Muslim brothers is severely regrettable. It is an individual obligation (Fard 'Ayn) upon whoever engages in any work to learn the Sharia rulings related to it so that they do not fall into disobedience to Allah. Our brothers have implemented this principle in worldly laws but abandoned it in divine law. If they file a case worth two rupees, they will consult five lawyers to ensure there are no flaws and that it doesn't violate British law in any way, fearing the case might be lost. But in any religious matter, they feel no need to ask scholars how it is halal, how it is haram, in what form it is correct, or in what way it is invalid. What attention is given? By God, seeking forgiveness! Even a loss of two rupees—no, even two paisas—is felt heavily, but who cares about religion? Here too, out of ignorance, they have taken this great sin upon their heads. If they had knowledge or asked scholars, this business would continue as usual and be purely halal and wholesome. They only need to do this: instead of saying gold, silver, rupees, sovereigns (ashrafis), eight-anna pieces, four-anna pieces, or two-anna pieces in the price, they should name the number of paisas or notes for which they want to sell. For example, if they want to sell 'Kalabatoon' (silver embroidery thread) for a hundred rupees, they should say: "I sold this Kalabatoon to you for one thousand six hundred annas of current copper coins (falus)" or "I sold it in exchange for notes from such-and-such area amounting to a hundred rupees." Now there is no unity of genus that would make similarity (tamathul) a condition. It is obvious that Kalabatoon contains silver, whereas here there are coins or paper. This is not 'Sarf' (currency exchange) where credit (qard) is absolutely prohibited. Paper is not inherently money (thaman) in its original creation. 'Sarf' is only when money created by nature is exchanged for money created by nature; this is only gold or silver and that's it. Yes, since coins (falus) and notes are terminologically money, possession from one side is necessary "lest it result in separating from a debt with a debt" (Kayla yalzamal iftiraqu 'an daynin bi-dayn). Therefore, if someone buys paisas with a rupee, pays the rupee, and the paisas are to

be given later, there is no harm according to the predominant and reliable school of thought. Exactly the same is the case with 'Kalabatoon' and paisas or notes; possession from only one side is sufficient even if there is a debt on the other side. It is stated in Durr al-Mukhtar:

As-Sarfu shar'an bay'uth thamani bith thamani ay ma khuliqa lith thamaniyyati (1) [Sarf, according to Sharia, is the sale of money for money, i.e., what was created for being money.] Sarf in Sharia terminology is the sale of money (thaman) in exchange for money, i.e., that which was created for the purpose of being a medium of exchange. (Summary)

Ends as a summary.

---

1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu' (Book of Sales), Bab al-Sarf (Chapter on Currency Exchange), Mujtabai Press, Delhi, 2/55.

फतावा रज़विया जिल्द (17)

अल्लाह ताला (अज़-व-जल) के अहकाम का पालन और अनुसरण करने से रिज़्क़ (रोज़ी) का दरवाज़ा कभी बंद नहीं हो सकता, जबकि वह करीम, रऊफ़ और रहीम रब्ब नफ़्स और शैतान के हुक्मों की पैरवी करने जैसी अपनी घोर अवज्ञा पर भी रिज़्क़ का दरवाज़ा बंद नहीं करता।

[फ़ारसी काव्य]: गुनाह बीनेद व नाँ बरक़रार मे दारद (वह गुनाह देखता है और इसके बावजूद रोज़ी बरक़रार रखता है। - त)

तो वह अपने करीमाना अहकाम के पालन पर क्यों बंद फरमाएगा? मगर हमारे मुसलमान भाइयों की हालत बहुत अफ़सोसनाक है। जो शख्स जिस काम में हाथ डाले, उस पर फर्ज़-ए-ऐन है कि उसके मुताल्लिक शरीयत के जो अहकाम हैं उन्हें सीख ले ताकि अल्लाह की नाफरमानी में न पड़े। हमारे भाइयों ने यह मसला दुनियावी कानूनों में तो जारी किया लेकिन रब्बानी कानून में छोड़ दिया। अगर दो रुपये का मुक़दमा दायर करेंगे तो पाँच वकीलों से पूछेंगे कि इसमें कोई कमी न रह जाए, किसी तरह अंग्रेज़ी कानून का उल्लंघन न हो कि मुक़दमा हाथ से चला जाए। मगर किसी दीनी काम में उलेमा से पूछने की ज़रा भी ज़रूरत नहीं समझते कि यह कैसे हलाल है, किस तरह हराम है, किस सूरत में सही है और किस तरह फासिद (गलत) है। तवज्जो क्या है? खुदा की पनाह! दो रुपये, बल्कि दो पैसे का नुकसान भारी लगता है, दीन की परवाह किसे है? यहाँ भी अपनी नादानी से यह गुनाह-ए-अज़ीम अपने सर ले लिया है। अगर इल्म रखें या उलेमा से पूछें तो यह कारोबार दस्तूर के मुताबिक वैसे ही चलता रहे और खालिस हलाल और पाकीज़ा हो। बस इतना करें कि कीमत में सोने-चाँदी, रुपये, अशरफ़ी, अठन्नी, चवन्नी, दुअन्नी न कहें बल्कि जितने रुपयों में बेचना हो उतने पैसों या नोटों का नाम लें। मिसाल के तौर पर सौ रुपये का 'क़लाबतून' (चाँदी की कढ़ाई वाला धागा) बेचना है तो यूँ कहें कि मैंने यह क़लाबतून तेरे हाथ एक हज़ार छह सौ आने रायजुल वक़्त पैसों में बेचा या फ़लाँ जगह के सौ रुपये के नोट के बदले में बेचा। अब यहाँ जिन्स (प्रकार) की एकता नहीं है कि समानता (तमासुल) शर्त हो। ज़ाहिर है कि क़लाबतून में चाँदी है और यहाँ पैसे या काग़ज़। यह 'बय-ए-सर्फ़ (मुद्रा विनिमय) नहीं है कि क़र्ज़ बिल्कुल हराम हो। काग़ज़ अपनी बनावट में मूल रूप से 'समन्' (मुद्रा) नहीं है, और सर्फ़ वही है कि पैदाइशी समन को पैदाइशी समन के बदले बेचा जाए, और यह सिर्फ सोना या चाँदी है, बस। हाँ, चूंकि पैसे (फ़लूस) और नोट शब्दावली के अनुसार 'समन' हैं, इसलिए एक तरफ़ से क़ब्ज़ा ज़रूरी है "ताकि क़र्ज़ के बदले में क़र्ज़ से अलग होना लाज़िम न आए" (कीला यलज़मल इफ़्तिराक़ु अन दैनिन बि-दैन)। लिहाज़ा अगर रुपये के पैसे खरीदे, रुपया दे दिया

और पैसे बाद में दिए जाएंगे तो राज़ेह (प्रबल) और मोअतमद (विश्वसनीय) मज़हब में इसमें कोई हर्ज नहीं है। बिलकुल यही हाल क़लाबतून और पैसों या नोटों का है कि सिर्फ एक तरफ से क़ब्ज़ा हो जाना काफी है, चाहे दूसरी तरफ क़र्ज़ ही क्यों न हो। 'दुर्रे मुख़्तार' में है:

अश-सर्फ़ शरअन् बयउत समनि बिस समनि अय मा खुलिक़ा लिस समनियति (1) [शरीयत की शब्दावली में 'सर्फ़ समन के बदले समन की बिक्री है, यानी वह चीज़ जिसे विनिमय का माध्यम (समन) होने के लिए पैदा किया गया है।] (तलखीस/सारांश)

अतः संक्षेप में।

---

1. दुर्रे मुख़्तार, किताबुल बुयूअ, बाबुल सर्फ़ मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 2/55।

احکام الہیہ جل وعلا کے اتباع وامتثال سے ہرگز باب رزق مسدود نہیں ہوسکتا جبکہ وہ رب کریم رؤف رحیم احکام نفس و شیطان کی پیروی اپنی شدید شنیع نافرمانی پر دروازہ رزق بند نہیں کرتا ع

گناہ بیند وناں برقرار میدارد (وہ گناہ دیکھتا ہے اور اس کے باوجود روزی برقرار رکھتا ہے۔ت)

تو اپنے احکام کریمہ کے اتباع پر کیوں بند فرمائے گا؟ مگر ہمارے مسلمان بھائیوں کی حالت سخت قابل افسوس ہے جو شخص جس کام میں ہاتھ ڈالے اس پر فرض عین ہے کہ اس کے متعلق جو احکام شرع ہیں انہیں سیکھ لے تا کہ معصیت الہی میں نہ پڑے ہمارے بھائیوں نے یہ مسئلہ دنیاوی قانونی میں جاری کیا اور قانون ربانی میں چھوڑ دیا اگر کوئی مقدمہ دو روپے کا دائر کریں گے پانچ وکیلوں سے پوچھیں گے کہ اس میں کوئی خامی نہ رہ جائے کسی طرح قانون انگریزی کی مخالفت نہ آئے کہ مقدمہ ہاتھ سے جائے مگر کسی دینی کام میں علماء سے دریافت کرنے کی اصلا حاجت نہیں کہ یہ کیونکر حلال ہے کس طرح حرام کس صورت میں صحیح ، کس طور پر فاسد ، توجہ کیا کہ دو روپے استغفراللہ بلکہ دو پیسے کا نقصان گراں گزرتا ہے دین کی پرواہ کیا ہے ، یہاں بھی اپنی نادانی سے یہ گناہ عظیم سر پر لیا ہے ، اگر علم رکھیں یا علماء سے پوچھیں تو یہ کارخانہ بدستور یوں ہی جاری رہے اور خالص حلال وطیب ہو فقط اتنا کریں کہ قیمت میں سونے چاندی، روپیہ، اشرفی، اٹھنی، چونی، دونی نہ کہیں بلکہ جتنے روپوں کو بیچنا ہو اتنے کے پیسوں یا نوٹ کا نام لیں مثلا سو روپیہ کا کلابتوں بیچنا ہے تو یوں کہے کہ میں نے یہ کلابتوں تیرے ہاتھ ایک ہزار چھ سو آنے فلوس رائجہ الوقت کو بیچا یا بعوض نوٹ احاطہ فلاں رقمی صد روپیہ کے بیع کیا اب نہ اتحاد جنس ہے کہ تماثل شرط ہو ، ظاہر ہے کہ کلابتوں میں چاندی ہے اور یہاں

پیسے یا کاغذ نہ یہ بیع صرف ہے کہ قرضوں مطلقاً حرام ہوتا، بنائے کاغذ اصل آفرینش میں ثمن نہیں اور صرف وہی کہ ثمن خلقی ثمن خلقی سے بیع کی جائے ، یہ صرف سونا یا چاندی ہے و بس ، ہاں ازانجا کہ فلوس و نوٹ اصطلا حاً ثمن ہیں ایک جانب سے قبضہ ضرور ہے کیلا یلزم الافتراق عن دین بدین (تا کہ دین کے بدلے میں دین سے جدا ہونا لازم نہ آئے۔ت) لہٰذا اگر روپیہ کے پیسے خریدے روپیہ دے دیا اور پیسے پھر دئیے جائیں گے تو مذہب راجح و معتمد میں کچھ مضائقہ نہیں بعینہ یہی حال کلابتوں اور پیسوں یا نوٹ کی ہے کہ صرف ایک طرف سے قبضہ ہو جانا کافی اگر چہ دوسری جانب قرض ہو، در مختار میں ہے :

الصرف شرعا بیع الثمن بالثمن ای ماخلق للثمنیة (۱) صرف اصطلاح شرع میں ثمن کے بدلے ثمن کی بیع ہے یعنی جسے ثمنیت کے لئے پیدا کیا گیا ھ تلخیص۔

اھ ملخصاً

---

۱ درمختار کتاب البیوع باب الصرف مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۵۵

Fatawa Razawiya Volume 17

[Arabic Column] In Radd al-Muhtar, citing al-Bahr and al-Dhakhirah, regarding the issue of selling one specific copper coin (fulus) for two specific copper coins, it is mentioned that Imam Muhammad discussed this in the chapter on Al-Sarf (currency exchange) in al-Asl, but did not stipulate mutual possession (taqabud) as a condition. (Some reliable scholars explained this) by saying that mutual possession along with specification is a condition in Al-Sarf, but this transaction is not Al-Sarf, as is narrated from Imam Abu Hanifa, the two companions (Sahibayn), and all of them. I say: Indeed, we have clarified this issue with the success granted by Allah Almighty in our fatwas 'Al-Ataya al-Nabawiyyah fi al-Fatawa al-Radawiyyah' in a manner that is necessary to understand, as it is, by the grace of Allah, very excellent for them. Ibn Abidin said: Al-Hanuti was asked about selling gold for copper coins on credit. He replied that it is permissible provided that one of the two exchanged items is taken into possession, based on the evidence in al-Bazzaziyyah that if someone buys a hundred copper coins for one dirham, possession from one side is sufficient. He also said that if someone sells gold or silver for copper coins, the ruling is the same. This is also narrated in al-Bahr with reference to al-Muhit, etc.

[Urdu Column] And in Radd al-Muhtar, within the issue of selling one specific coin for two specific coins, it is quoted from Bahr and Dhakhirah that certainly Imam Muhammad mentioned this in the chapter of Al-Sarf in the original book (al-Asl) and did not make mutual possession a condition, and the reliable scholars gave the reasoning that mutual possession with specification is a condition in currency exchange (Al-Sarf), whereas this is not currency exchange, as is narrated from Imam Abu Hanifa, his two disciples (Sahibayn), and all of them. I say: Undoubtedly, we have researched this issue in our Fatawa 'Al-Ataya al-Nabawiyyah fi al-Fatawa al-Radawiyyah' in such a way that gaining knowledge of it is essential because, by the grace of Allah, it is excellent for them. Imam Ibn Abidin said that Al-Hanuti was asked about a credit sale of gold for copper coins, to which he replied it is permissible provided one of the two equivalents is possessed, for the reason mentioned in al-Bazzaziyyah that if someone buys a hundred coins for one dirham, possession from one side is enough. He further stated that if someone sells gold or silver for coins, its ruling is similar. It is likewise quoted in al-Bahr with reference to al-Muhit. etc (T)

Then, at the time of taking, it will not be necessary to take specific coins or notes; rather, with the consent of the buyer, rupees for those coins or notes can also be taken.

1 Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Riba, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/184. 2 Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Riba, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/184.

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

[अरबी स्तंभ] रद्दुल मुहतार में अल-बहर और अल-ज़ख़ीरा के हवाले से एक विशिष्ट तांबे के सिक्के (फुलुस) को दो विशिष्ट तांबे के सिक्कों के बदले बेचने के मसले में उल्लेख है कि इमाम मुहम्मद ने इसका ज़िक्र 'अल-अस्ल' के'बाबुल सर्फ़ में किया है लेकिन आपसी कब्ज़े (तकाबुज़) की शर्त नहीं रखी। (कुछ मोतमिद उलेमा ने इसकी वजह यह बताई है) कि ताय्युन (निर्धारण) के साथ तकाबुज़ तो सर्फ़ में शर्त है, जबकि यह सर्फ़ नहीं है, जैसा कि इमाम अबू हनीफा, साहिबैन और उन सभी से रिवायत है। मैं कहता हूँ: निस्संदेह हमने अल्लाह तआला की तौफीक से अपने फ़तावा 'अल-अतया अल-नबविया फिल फ़तावा अल-रज़विया' में इस मसले की तहकीक इस अंदाज़ में कर दी है जिसे समझना ज़रूरी है क्योंकि अल्हम्दुलिल्लाह यह उनके लिए बहुत उम्दा है। इब्ने आबिदीन ने कहा कि अल-हानूती से सोने को सिक्कों के बदले उधार बेचने के बारे में पूछा गया, तो उन्होंने जवाब दिया कि यह जायज़ है बशर्ते कि दोनों बदलों में से किसी एक पर कब्ज़ा कर लिया गया हो, उस दलील की वजह से जो 'बज़ाज़िया' में है कि अगर किसी ने सौ सिक्के एक दिरहम के बदले खरीदे तो एक तरफ से कब्ज़ा काफी है। उन्होंने यह भी कहा कि अगर किसी ने सोने या चांदी को सिक्कों के बदले बेचा तो उसका हुक्म भी वैसा ही है। 'बहर' में 'मुहीत' के हवाले से ऐसा ही मन्कूल (उद्धृत) है। आदि।

[उर्दू स्तंभ] और रद्दुल मुहतार में एक मुअय्यन (विशिष्ट) पैसे को दो मुअय्यन पैसों के एवज़ (बदले) बेचने के मसले के ज़िम्न में बहर और ज़ख़ीरा के हवाले से मन्कूल है कि बेशक इमाम मुहम्मद ने इसे अस्ल के बाबुल सर्फ़ में ज़िक्र किया और तकाबुज़ को शर्त करार नहीं दिया, और मोतमिद मशाइख ने इसकी तअलील (कारण) यूँ बयान की कि ताय्युन के साथ तकाबुज़ तो सर्फ़ में शर्त है हालाँकि यह सर्फ़ नहीं, जैसा कि इसमें इमाम अबू हनीफा, साहिबैन और उन तमाम से मन्कूल है। कुलतु (मैं कहता हूँ) बेशक हमने इस मसले की तहकीक अपने फ़तावा "अल-अतया अल-नबविया फिल फ़तावा अल-रज़विया" में इस अंदाज़ से कर दी है जिस पर वाकफियत हासिल करना मुअय्यन (अनिवार्य) है क्योंकि बहम्दिल्लाह यह उनके लिए बहुत उम्दा है, इमाम इब्ने आबिदीन ने कहा कि हानूती से सोने की पैसों के एवज़ उधार बेय (बिक्री) के बारे में सवाल किया गया तो उन्होंने फ़रमाया कि जायज़ है बशर्ते कि बदलैन (दोनों पक्षों) में से एक पर कब्ज़ा कर लिया गया हो इस दलील की वजह से जो बज़ाज़िया में है कि अगर किसी ने सौ पैसे एक दिरहम के एवज़ खरीदे तो सिर्फ एक तरफ से कब्ज़ा काफी है और फ़रमाया कि अगर किसी ने पैसों के एवज़ सोना या चांदी बेचा तो उसका हुक्म भी ऐसा ही है बहर में मुहीत के हवाले से यूँ ही मन्कूल है। आदि (त)

फिर लेते वक्त यह ज़रूर न होगा कि खास पैसे या नोट ही लें बल्कि ब-रज़ाए मुश्तरी (खरीदार की सहमति से) उन पैसों या नोटों के रुपये भी ले सकते हैं।

---

1 रद्दुल मुहतार, किताबुल बुयूअ, बाबुर रिबा, दार इहयाउत तुरासिल अरबी, बैरुत 4/184 2 रद्दुल मुहतार, किताबुल बुयूअ, बाबुर रिबा, दार इहयाउत तुरासिल अरबी, बैरुत 4/184

[Arabic Column] وفی رد المحتار عن البحر عن الذخیرة فی مسألة بیع فلس بفلسین باعیانهما ان محمداذکر ها صرف الاصل ولم یشترط التقابض (وعلله من اعتمد من المشائخ) بأن التقابض مع التعیین شرط فی الصرف ولیس به کما فیه عنه عنهما عنهم قلت وقد حققنا المسألة بتوفیق الله تعالی فی فتاونا العطایا النبویة فی الفتاوی الرضویة بما یتعین الوقوف علیه فأنه بحمده تعالی نفیس لهم قال ابن عابدین سئل الحانوتي عن بیع الذهب بالفلوس نسیئة فأجاب بانه یجوز اذا قبض احد البدلین لما فی البزازیة لو اشتری مائة فلس بدرهم یکفی التقابض من احد الجانبین قال ومثله مالو باع فضة او ذهباً بفلوس کما في البحر عن المحیط الخ۔

[Urdu Column] اور ردالمحتار میں ایک معین پیسے کی دو معین پیسوں کے عوض بیع کے مسئلہ کے ضمن میں بحوالہ بحر ذخیرہ سے منقول ہے کہ بیشک امام محمد نے اس کو اصل کے باب الصرف میں ذکر کیا اور تقابض کو شرط قرار نہیں دیا، اور معتمد مشائخ نے اس کی تعلیل یوں بیان کی تعیین کے ساتھ تقابض تو صرف میں شرط ہے حالانکہ یہ صرف نہیں، جیسا کہ اس میں امام ابو حنیفہ، صاحبین اور ان تمام سے منقول ہے قلت (میں کہتا ہوں) بے شک ہم نے اس مسئلہ کی تحقیق اپنے فتاوی "العطایا النبویہ فی الفتاوی الرضویہ" میں اس انداز سے کردی ہے جس پر واقفیت حاصل کرنا متعین ہے کیونکہ بحمداللہ یہ ان کے لئے بہت عمدہ ہے ، امام ابن عابدین نے کہا کہ حانوتی سے سونے کی پیسوں کے عوض ادھار بیع کے بارے میں سوال کیا گیا تو انہوں نے فرمایا کہ جائز ہے بشرطیکہ بدلین میں سے ایک پر قبضہ کرلیا گیا ہو اس دلیل کی وجہ سے جو بزازیہ میں ہے کہ اگر کسی نے سو پیسے ایک درہم کے عوض خریدے تو صرف ایک طرف سے

قبضہ کافی ہے اور فرمایا کہ اگر کسی نے پیسوں کے عوض سونا یا چاندی بیچا تو اس کا حکم بھی ایسا ہی ہے بحر میں محیط کے حوالے سے یونہی منقول ہے۔ الخ (ت)

پھر لیتے وقت یہ ضرور نہ ہوگا کہ خاص پیسے یا نوٹ ہی لیں بلکہ برضائے مشتری ان پیسوں یا نوٹوں کے روپے بھی لے سکتے ہیں،

---

1 رد المحتار کتاب البیوع باب الربو دار احیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۱۸۴ 2 رد المحتار کتاب البیوع باب الربو دار احیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۱۸۴

| For it is the sale of a specific item for a debt owed by him, so it is permissible with his consent. You have already learned that it is neither *Sarf* (currency exchange) nor *Salam* (forward sale). In *Durr al-Mukhtar*, it is stated: if someone sells a camel for dirhams or for a load of wheat, he can take something else in exchange for both. The same ruling applies to every debt before possession, such as dower, rent, compensation for destroyed property, the consideration for *Khul'* (divorce at wife's instance), manumission for money, inherited property, and bequeathed property. In summary, disposal in all prices and debts before possession is permissible (according to Ayni), except for *Sarf* and *Salam*, in which taking a price of a different kind is impermissible due to the loss of its condition. | Because it is a sale of a specific item in exchange for that debt which is upon the seller, so it is permissible with his consent, although you have already known that this is not Sarf and Salam. In Durr-e-Mukhtar it is said that if someone sold a camel in exchange for dirhams or in exchange for one sack of wheat, then he can also take some other thing in exchange for both of them, and this same rule is for debt before possession, like dower, wage, compensation for destroyed property, return of Khul', freeing in exchange for wealth, wealth of an heir and that wealth for which a will has been made. The summary is that in all prices and debts, disposal before possession is permissible (Ayni) except for Sarf and Salam that in them taking a price contrary to the genus is impermissible due to its condition being lost. (T) |

Yes, it is necessary that in the same meeting where the rupees are agreed upon in exchange for them, the rupees should be paid in full; otherwise, this compensation—that is, the rupees decided to be given in exchange for paisas or notes—will become impermissible.

| ...due to separation from 'debt for debt'. In *Radd al-Muhtar*, the statement 'it is permissible to take something else in exchange for both' is conditional upon the separation not being 'debt for debt,' as will come in the chapter on loans. And in the chapter of Loans in *Al-Durr*, it says: It is permissible for the borrower to purchase the loan from the lender for possessed dirhams while it still exists. Then, if both separate before taking possession of the said dirhams, the purchase becomes void because it is separation from a debt (*Bazzaziyya*). This should be remembered. | Due to separation from a debt for debt sale, it is in Radd al-Muhtar that the author's statement that it is permissible to take something in exchange for both is conditional upon the condition that there be no separation between the seller and buyer with

the debt, just as it is coming in the chapter of loans. And in the chapter of Loans in Durr it is said that it is permissible for the borrower to buy the loan in exchange for possessed dirhams from the lender if it is present. Then if both of them separate before possession of the said dirhams, then the buying will become void because this is separation from debt. (Bazzaziyya) This |

1. *Durr al-Mukhtar*, Kitab al-Buyu', chapter on disposal in sale, Mujtabai Press Delhi, 2/378-73.
2. *Radd al-Muhtar*, Kitab al-Buyu', chapter on disposal in sale, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/166.
3. *Durr al-Mukhtar*, Kitab al-Buyu', chapter on loans, Mujtabai Press Delhi, 2/39-40.

| क्योंकि यह उस ऋण के बदले में एक वस्तु की बिक्री है जो विक्रेता पर है, इसलिए उसकी सहमति से यह जायज़ है। आप पहले ही जान चुके हैं कि यह न तो सर्फ है और न ही सलम। दुर्र अल-मुख्तार में कहा गया है कि यदि किसी ने दिरहम या एक बोरी गेहूँ के बदले ऊँट बेचा, तो वह उन दोनों के बदले कोई और चीज़ भी ले सकता है। कब्ज़े से पहले हर ऋण का यही नियम है, जैसे मेहर, किराया, नष्ट हुई वस्तु का मुआवज़ा, खुलअ का प्रतिफल, धन के बदले आज़ाद करना, विरासत में मिला माल और वह माल जिसकी वसीयत की गई हो। सारांश यह है कि सभी कीमतों और ऋणों में कब्ज़े से पहले उसका निपटान जायज़ है (ऐनी के अनुसार), सिवाय सर्फ और सलम के, जिनमें अलग प्रकार की कीमत लेना नाजायज़ है क्योंकि उसकी शर्त पूरी नहीं होती। | क्योंकि यह उस ऋण के बदले में एक वस्तु की बिक्री है जो विक्रेता पर है, इसलिए उसकी सहमति से यह जायज़ है, हालाँकि आप पहले ही जान चुके हैं कि यह सर्फ और सलम नहीं है। दुर्र-ए-मुख्तार में कहा गया है कि अगर किसी ने दिरहम के बदले या एक बोरी गेहूँ के बदले ऊँट बेचा तो उन दोनों के बदले कोई और चीज़ भी ले सकता है और यही हुक्म कब्ज़े से पहले कर्ज़ का है, जैसे मेहर, उजरत (मज़दूरी), ज़ाया (नष्ट) शुदा चीज़ का तावान (जुर्माना), खुलअ का बदल, माल के बदले आज़ाद करना, माल-ए-मूरुस (विरासत का माल) और वह माल जिसकी वसीयत की गई हो। ख़ुलासा यह है कि तमाम समनों (कीमतों) और कर्ज़ों में कब्ज़े से पहले तसर्रुफ़ (इस्तेमाल/लेन-देन) जायज़ है (ऐनी) सिवाय सर्फ और सलम के कि उनमें ख़िलाफ़-ए-जिंस समन लेना नाजायज़ है ब-सबब फ़ौत हो जाने उसकी शर्त के। (त) |

हाँ, यह ज़रूरी है कि जिस सभा में उनके बदले रुपये देना तय हो, उसी सभा में पूरे रुपये अदा कर दिए जाएं वर्ना यह मुआवज़ा—यानी पैसों या नोटों के बदले रुपये देना जो तय हुआ है—नाजायज़ हो जाएगा।

| ...ऋण के बदले ऋण की बिक्री से अलग होने के कारण। रद्द अल-मुह्तार में है कि लेखक का यह कहना कि उन दोनों के बदले कोई चीज़ लेना जायज़ है, इस शर्त के साथ है कि ऋण के साथ विक्रेता और खरीदार में जुदाई न हो, जैसा कि ऋण के अध्याय में आ रहा है। और अल-दुर्र के ऋण अध्याय में फ़रमाया: उधार लेने वाले के लिए जायज़ है कि वह उधार देने वाले से कब्ज़े वाले दिरहम के बदले ऋण को खरीदे जबकि वह मौजूद हो। फिर अगर वे दोनों उक्त दिरहम पर कब्ज़ा करने से पहले अलग हो गए, तो खरीद बातिल (अमान्य) हो जाएगी क्योंकि यह ऋण से अलगाव है (बज़ाज़िया)। इसे याद रखना चाहिए। | कर्ज़ के बदले कर्ज़ की बिक्री से जुदा होने की वजह से रद्द-अल-मुह्तार में है

कि मुसन्निफ़ (लेखक) का क़ौल कि इन दोनों के बदले कोई चीज़ लेना जायज़ है मसरूत (शर्तयुक्त) है इस शर्त के साथ कि कर्ज़ के साथ बाएअ (विक्रेता) और मुस्तरी (क्रेता) में जुदाई न हो जैसा कि कर्ज़ के बाब (अध्याय) में आ रहा है और दुर्र के बाबुल क़र्ज़ में फ़रमाया मुस्तक़रज़ (उधार लेने वाला) के लिए जायज़ है कि कर्ज़ देने वाले से दिरहम-ए-मकबूज़ा के एवज कर्ज़ को ख़रीदे अगर कायम हो फिर अगर वो दोनों इन दराहम मज़कूरा पर कब्ज़े से पहले मुतफ़र्रिक़ (अलग) हो गए तो खरीदारी बातिल हो जाएगी क्योंकि यह कर्ज़ से इफ़तराक़ (अलगाव) है। (बज़ाज़िया) इसको |

1. दुर्र अल-मुख्तार, किताब अल-बुयू, बिक्री में निपटान का अध्याय, मुजतबाई प्रेस दिल्ली, २/३७८-७३
2. रद्द अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू, बिक्री में निपटान का अध्याय, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी बेरुत, ४/१६६
3. दुर्र अल-मुख्तार, किताब अल-बुयू, ऋण का अध्याय, मुजतबाई प्रेस दिल्ली, २/३९-४०

पृष्ठ 631 का 715

| فانه بیع عین بدین کان علیه فیجوز برضاه وقد علمت انه لیس بصرف ولا سلم قال في الدرالمختار لوباع ابلا بدراهم اوبکرّ برجاز اخذ بدلهما شیئاً آخر وکذا الحکم في کل دین قبل قبضه کمهر واجرة و ضمان متلف و بدل خلع وعتق بمال و موروث و موصی به و الحاصل جواز التصرف في الاثمان و الدیون کلها قبل قبضهما عینی سوی صرف وسلم فلا یجوز اخذ خلاف جنسه لفوات شرطه ۱ هـ |

کیونکہ عین کی اس دین کے بدلے میں بیع ہے جو بائع پر ہے تو اس کی رضامندی سے جائز ہے حالانکہ تو جان چکا ہے کہ یہ صرف اور سلم نہیں ہے، در مختار میں کہا گیا کہ اگر کسی نے درہموں کے بدلے یا ایک بوری گندم کے بدلے اونٹ بیچا تو ان دونوں کے بدلے کوئی اور شے بھی لے سکتا ہے اور یہی حکم ہے قبضہ سے پہلے دین کا، جیسے مہر، اجرت، ضائع شدہ شیئی کا تاوان، خلع کا بدل، مال کے بدلے آزاد کرنا، مال مورث اور وہ مال جس کی وصیت کی گئی ہو۔ خلاصہ یہ ہے کہ تمام ثمنوں اور دینوں میں قبضہ سے پہلے تصرف جائز ہے (عینی) سوائے صرف اور سلم کے کہ ان میں خلاف جنس ثمن لینا نا جائز ہے بسبب فوت ہو جانے اس کی شرط کے اھ (ت) |

ہاں یہ ضرور ہے کہ جس مجلس میں ان کے عوض روپیہ دینا ٹھہرے اسی مجلس میں تمام و کمال روپیہ ادا کر دیا جائے۔ ورنہ یہ معاوضہ یعنی پیسوں یا نوٹوں کے بدلے جو روپیہ دینا قرار پایا ہے ناجائز ہو جائے گا۔

| للافتراق عن الکالئ بالکالئ فی رد المحتار قوله جاز اخذ بدلهما شیئاً آخر لکن بشرط ان لایکون افتراقاً بدین کما یأتي في القرض ۲ اهـ وقال في قرض الدر)جاز شراء المستقرض القرض ولو قائماً من المقرض بدراهم مقبوضة فلو تفرقا قبل قبضها بطل لانه افتراق عن دین بزازیة ۳ فلیحفظ | دین

کے بدلے دین کی بیع سے جدا ہونے کی وجہ سے ردالمحتار میں ہے کہ مصنف کا قول کہ ان دونوں کے بدلے کوئی شے لینا جائز ہے مشروط ہے اس شرط کے ساتھ کہ دین کے ساتھ بائع اور مشتری میں جدائی نہ ہو جیسا کہ قرض کے باب میں آرہا ہے اھ اور در کے باب القرض میں فرمایا مستقرض کے لئے جائز ہے کہ قرض دہندہ سے درہم مقبوضہ کے عوض قرض کو خریدے اگر قائم ہو پھر اگر وہ دونوں ان دراہم مذکورہ پر قبضہ سے پہلے متفرق ہو گئے تو خریداری باطل ہو جائے گی کیونکہ یہ قرض سے افتراق ہے (بزازیہ) اس کو |

۱ در مختار کتاب البیوع فصل في التصرف في البیع مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۳۷۸-۷۳ ۲ ردالمحتار کتاب البیوع فصل في التصرف في البیع دار احیاء التراث العربي بیروت ۴ / ۱۶۶ ۳ در مختار کتاب البیوع فصل فی القرض مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۳۹-۴۰

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

...should be preserved. (T)

See, the situation remained exactly the same as is common among these sellers; by changing just one word, prohibition (haram) turned into permissibility (halal). This issue should be widely publicized so that Muslims who are needlessly involved in sin can find salvation from disobedience. And success is through Allah. And Allah Almighty knows best.

Issue 267: From Bijnor, around 1300 AH. Sent by Moulvi Ghulam Mustafa Sahib, a student of Hazrat Wal-Aalam (May his secret be sanctified).

What do the scholars of religion say in this matter: Is the sale of circulating copper coins (fulus raija), which are under the ruling of price (thaman), against rupees a 'Bai' Sarf' (currency exchange) or not? And if a rupee was given to a money changer, and he did not have all the coins for that rupee, so he gave what was present and promised the rest, would this sale be valid or not? And since this is a sale of price for price, if it is established as 'Bai' Sarf' due to its definition, will the conditions of 'Bai' Sarf'—which are parity and immediate exchange (taqabud) in the same genus, and immediate exchange in different genera—be found in the case of validity or not? Clarify and you shall be rewarded.

The Answer:

Selling copper coins for dirhams is not 'Sarf', nor do all the rulings of 'Sarf' apply to it.

Indeed, Sarf is the sale of what was created as price for what was created for it, as interpreted in al-Bahr and followed in al-Durr al-Mukhtar, and affirmed by al-Shami and others. It is known that copper coins are not like that; rather, the ruling of prices has occurred to them by convention as long as they are circulating. Otherwise, they are commodities just as they were in their original creation. The lack of it being 'Sarf' was explicitly stated by al-Allama al-Shami from al-Bahr, and the author of al-Bahr from al-Dhakhira from the Shaykhs in the chapter of Riba in Radd al-Muhtar.

Because 'Sarf' is the name for selling an inherent price for an inherent price, as explained in al-Bahr, followed in al-Durr al-Mukhtar, and upheld by al-Shami etc. It is known that coins (paise) are not inherent prices; rather, as long as they are in circulation, the ruling of prices is applied to them by convention, otherwise they are goods/commodities just as they were in their original state. The clarification that it is not 'Bai' Sarf' was made by Allama Shami in the chapter of Riba in Radd al-Muhtar with reference to Bahr, and the author of Bahr narrated it from Mashaikh with reference to Dhakhira. (T)

1. Al-Bahr al-Ra'iq, Kitab al-Sarf, H.M. Saeed Company, Karachi 1/192; Durr al-Mukhtar, Kitab al-Buyu, Mujtabai Press, Delhi 2/55
2. Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu, Bab al-Riba, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut 4/184

फतवा रज़विया (खंड 17)

...सुरक्षित कर लेना चाहिए। (त)

तो देखिए, स्थिति बिल्कुल वैसी ही रही जो इन विक्रेताओं के बीच प्रचलित है; सिर्फ एक शब्द के परिवर्तन से हराम (निषिद्ध) हलाल (वैध) में बदल गया। इस मसले को खूब प्रचारित करना चाहिए ताकि मुसलमान जो अकारण पाप में लिप्त हैं, वे अवज्ञा से मुक्ति पा सकें। और सफलता अल्लाह की ओर से है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 267: बिजनौर से, लगभग 1300 हिजरी के आसपास। मौलवी गुलाम मुस्तफा साहब द्वारा प्रेषित, जो हजरत वाल-आलम (उनकी कब्र पवित्र हो) के छात्र हैं।

धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं: क्या प्रचलित तांबे के सिक्कों (फुलूस रायजा) की बिक्री, जो मूल्य (थमन) के हुक्म में हैं, रुपये के बदले में 'बैअ सर्फ (मुद्रा विनिमय) है या नहीं? और अगर एक सर्राफ को रुपया दिया गया और उसके पास उस रुपये के पूरे पैसे नहीं थे, उसने जो मौजूद थे दे दिए और बाकी का वादा कर लिया, तो क्या यह बिक्री जायज़ होगी या नहीं? और चूँकि यह कीमत के बदले कीमत की बिक्री है, यदि इसे इसकी परिभाषा के कारण 'बैअ सर्फ माना जाता है, तो क्या इसमें 'बैअ सर्फ की शर्तें—जो एक ही नस्ल (जेनस) में समानता और तत्काल विनिमय (तकाबुद) हैं, और विभिन्न नस्लों में तत्काल विनिमय हैं—जायज़ होने की स्थिति में पाई जाएंगी या नहीं? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

जवाब:

तांबे के सिक्कों को दिरहम के बदले बेचना 'सर्फ नहीं है और न ही इसमें 'सर्फ के सभी नियम लागू होते हैं।

वास्तव में, सर्फ उस वस्तु का विक्रय है जो स्वभावतः मूल्य (कीमत) हो उस वस्तु के बदले जो स्वभावतः मूल्य हो, जैसा कि 'अल-बहर' में इसकी व्याख्या की गई है, और 'अल-दुर्रुल मुख्तार' में इसका अनुसरण किया गया है, और शामी आदि ने इसे स्वीकार किया है। यह ज्ञात है कि तांबे के सिक्के ऐसे नहीं हैं; बल्कि उन पर मूल्यों का हुक्म केवल तब तक लागू होता है जब तक वे चलन में हैं। अन्यथा, वे वैसे ही सामान (माल) हैं जैसे वे अपनी मूल रचना में थे। इसके'सर्फ न होने का स्पष्ट उल्लेख अल्लामा शामी ने 'रद्दुल मुहतार' के'बाबुर रिबा' में 'बहर' के हवाले से किया है, और 'बहर' के लेखक ने 'ज़खीरा' के हवाले से इसे मशायख (विद्वानों) से उद्धृत किया है।

क्योंकि 'सर्फ तो स्वभावतः मूल्य (थमन-ए-ख़ल्की) को स्वभावतः मूल्य के बदले बेचने का नाम है जैसा कि इसकी व्याख्या 'बहर' ने की और 'दुर्रे मुख्तार' में उसका अनुसरण किया गया और शामी आदि ने इसे बरकरार रखा। यह सर्वविदित है कि पैसे स्वभावतः मूल्य नहीं हैं, बल्कि जब तक वे चलन में हैं, तब तक उन पर मूल्यों का हुक्म लागू होता है, अन्यथा वे उसी तरह का सामान हैं जैसे वे अपनी मूल रचना में थे। और इसके'बैअ सर्फ न होने का स्पष्टीकरण अल्लामा शामी ने 'रद्दुल मुहतार' के'बाबुर रिबा' में 'बहर' के हवाले से दिया है, और 'बहर' के लेखक ने 'ज़खीरा' के हवाले से मशायख से इसे उद्धृत किया है। (त)

1. अल-बहरर रैक, किताबुस सर्फ, एच. एम. सईद कंपनी, कराची 1/192; दुर्रे मुख्तार, किताबुल बुयू, मतबा मुज्तबाई, दिल्ली 2/55
2. रद्दुल मुहतार, किताबुल बुयू, बाबुर रिबा, दारुल अहयाउत तुरास अल-अरबी, बेरूत 4/184

محفوظ کرلینا چاہئے۔(ت)

تو دیکھئے صورت بعینہا وہی رہی جو ان بائعوں میں جاری ہے صرف ایک لفظ کے تغیر میں حرمت سے حلت ہوگئی اس مسئلہ کو خوب شائع کرنا چاہئے کہ اہل اسلام جو بلا وجہ گناہ میں مبتلا ہیں معصیت سے نجات پائیں، وباللہ التوفیق۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۶۷: از بجنور در حدود ۱۳۰۰ھ مرسلہ مولوی غلام مصطفی صاحب تلمیذ حضرت والاعلام قدس سرہ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ بیع فلوس رائجہ کی جو حکم ثمن میں ہیں بمقابلہ روپیہ کے بیع صرف ہے یا نہیں؟ اور اگر صراف کو روپیہ دیا اس کے پاس کل روپیہ کے پیسے نہ تھے موجود دے دیئے باقی کا وعدہ کردیا تو یہ بیع جائز ہوگی یا نہیں؟ اور جبکہ یہ بیع صرف بسبب صدق تعریف کے کہ بیع الثمن بالثمن ہے قرار دی جائے گی تو اس میں شرائط بیع صرف کے کہ متحد الجنسین میں تماثل اور تقابض اور مختلف الجنسین میں تقابض ہے درصورت جواز کے پائے جائیں گے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب:

بیع الفلوس بالدراہم صرف نہیں نہ اس میں سب احکام صرف جاری۔

کیونکہ صرف تو خلقی ثمن کو خلقی ثمن کے عوض

فان الصرف بیع ما خلق الثمنیة بما خلق لها کما فسره بذلک فی البحر وتبعه فی الدرالمختار ۱ واقره الشامی وغیره ومعلوم ان الفلوس لیست کذا وانما عرض لها حکم الاثمان بالاصطلاح مادامت رائجة والافهی عروض کما فی اصل خلقتها وبعدم کونه صرفاً صرح العلامة الشامی عن البحر وصاحب البحر عن الذخیرة عن المشایخ فی باب الربو من ردالمحتار ۲۔

بیچنے کا نام ہے جیسا کہ اس کی تفسیر بیان کی بحر نے اور در مختار میں اس کی اتباع ہے اور شامی وغیرہ نے اس کو برقرار رکھا اور یہ بات معلوم ہے کہ پیسے ثمن خلقی نہیں انہیں تو جب تک وہ رائج ہیں اصطلاح میں ثمنوں کا حکم عارض ہے ورنہ تو یہ سامان ہیں جیسا کہ اصل خلقت میں تھے اور اسکے بیع صرف نہ ہونے کی تصریح علامہ شامی نے ردالمحتار کے باب الربو میں بحر کے حوالہ سے کی اور صاحب بحر نے بحوالہ ذخیرہ عن مشایخ نقل کیا۔

(ت)

۱ بحر الرائق کتاب الصرف ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/۱۹۲، در مختار کتاب البیوع مطبع مجتبائی دہلی ۲/۵۵ ۲ ردالمحتار کتاب البیوع باب الربو داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/۱۸۴

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

But there is no doubt that when currencies are in circulation for them, then possession by hand on one side is necessary.

[Table Part 1] Left Column (Arabic): Otherwise, it would be a separation of debt for debt, and the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) forbade the sale of debt for debt. 1 Right Column (Urdu): Otherwise, this would be a separation of debt for debt, whereas the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) has forbidden the sale of credit for credit. (T)

[End Table Part 1]

The difference lies in whether this possession is a condition from both sides or is sufficient from only one side. One who considered the original creation said it is not [necessary], so what is the need for mutual possession?

[Table Part 2] Left Column (Arabic): And they are the majority, and Muhammad (Imam Muhammad) stated it in al-Mabsut, and it was relied upon in al-Muhit, al-Hawi, al-Bazzaziyya, al-Bahr al-Ra'iq, al-Nahr al-Fa'iq, Fatawa al-Hanuti, Tanwir al-Absar, al-Durr al-Mukhtar, al-Fatawa al-Hindiyya, and other texts of the school, its commentaries, and its fatwas. This is the gist of Imam al-Isbijabi's words, as quoted by al-Shami from al-Zayn from the Imam. Right Column (Urdu): And they are the majority. Imam Muhammad stated this in al-Mabsut, and it was relied upon in al-Muhit, al-Hawi, al-Bazzaziyya, al-Bahr al-Ra'iq, al-Nahr al-Fa'iq, Fatawa al-Hanuti, Tanwir al-Absar, Durr al-Mukhtar, and Fatawa Hindiyya, etc., in the texts, commentaries, and fatwas of the school. And this is the meaning of Imam Isbijabi's words, as Shami has narrated it with reference to Zayn from the Greatest Imam (Abu Hanifa). (T)

[End Table Part 2]

And the one who considered technical price-value (currency) made mutual possession a condition.

[Table Part 3] Left Column (Arabic): As was decreed by the prominent scholar Qari al-Hidaya, and the noble Umar ibn Nujaym interpreted it in a way that removes it from disagreement. However, the researcher al-Shami contested him, saying it should be understood according to what Imam Muhammad's words in al-Jami' al-Saghir indicate regarding the condition of mutual possession from both sides. All of this is

explained in Radd al-Muhtar. 2 Right Column (Urdu): As a fatwa was given on this by Allama Qari al-Hidaya, and the noble Umar bin Nujaym gave such an interpretation of it that takes it out of the disagreement. And the researcher Shami contested with him saying that it will be understood in this sense which Imam Muhammad's speech in Jami' al-Saghir points to, meaning mutual possession from both sides is a condition. Detailed explanation of all this is in Radd al-Muhtar.

[End Table Part 3]

1 Sunan al-Daraqutni, Kitab al-Buyu', Hadith 269, Nashr al-Sunnah Multan, 3/71. 2 Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu', Bab al-Riba, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/184.

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

मगर इस बात में कोई संदेह नहीं है कि जब उनके लिए सिक्कों का प्रचलन है, तो एक पक्ष द्वारा हाथ से कब्ज़ा करना आवश्यक है।

[तालिका भाग 1] बायाँ कॉलम (अरबी): अन्यथा यह ऋण के बदले ऋण का अलगाव होगा, और नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने ऋण के बदले ऋण की बिक्री से मना फ़रमाया है। 1 दायाँ कॉलम (उर्दू): अन्यथा यह ऋण के बदले ऋण का अलगाव होगा, जबकि रसूल-ए-अक़दस (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने उधार के बदले उधार की बिक्री से मना फ़रमाया है। (त)

[तालिका भाग 1 समाप्त]

मतभेद इसमें है कि क्या यह कब्ज़ा दोनों पक्षों से शर्त है या एक ही पक्ष से पर्याप्त है। जिसने मूल रचना पर विचार किया उसने कहा कि नहीं, फिर परस्पर कब्ज़ा करने की क्या आवश्यकता है?

[तालिका भाग 2] बायाँ कॉलम (अरबी): और वे बहुसंख्यक हैं, और इमाम मुहम्मद ने अल-मबसूत में इसका उल्लेख किया है, और अल-मुहीत, अल-हावी, अल-बज्जाज़िया, अल-बहर अर-राइक, अन-नहर अल-फ़ाइक, फ़तावा अल-हानुती, तनवीर अल-अबसार, अद-दुर अल-मुख्तार, अल-फ़तावा अल-हिन्दिया और पंथ के अन्य ग्रंथों, उनकी व्याख्याओं और उनके फ़तवों में इस पर भरोसा किया गया है। यह इमाम अल-इस्बिजाबी के शब्दों का सार है, जैसा कि अल-शामी ने अज़-ज़ैन से इमाम के हवाले से उद्धृत किया है। दायाँ कॉलम (उर्दू): और वे बहुसंख्यक हैं। इमाम मुहम्मद ने अल-मबसूत में यही उल्लेख फ़रमाया है और इसी पर भरोसा किया गया है: मुहीत, हावी, बज्जाज़िया, अल-बहर अर-राइक, अन-नहर अल-फ़ाइक, फ़तावा हानुती, तनवीर अल-अबसार, दुर-ए-मुख्तार और फ़तावा हिंदिया आदि पंथ के मूल ग्रंथों, व्याख्याओं और फ़तवों में। और यही इमाम इस्बिजाबी के शब्दों का अर्थ है, जैसा कि शामी ने ज़ैन के हवाले से इमाम-ए-आज़म से उद्धृत किया है। (त)

[तालिका भाग 2 समाप्त]

और जिसने तकनीकी मूल्य (प्रचलित मुद्रा) पर विचार किया, उसने परस्पर कब्ज़ा करने को शर्त माना।

[तालिका भाग 3] बायाँ कॉलम (अरबी): जैसा कि अल्लामा क़ारी अल-हिदाया ने फ़तवा दिया और प्रतिष्ठित उमर इब्न नुजैम ने इसकी ऐसी व्याख्या की जो इसे मतभेद से बाहर निकालती है। लेकिन

शोधकर्ता अल-शामी ने यह कहते हुए उनका विरोध किया कि इसे उस अर्थ में लिया जाना चाहिए जिसकी ओर जामे अल-सगीर में इमाम मुहम्मद के शब्द संकेत करते हैं, अर्थात दोनों पक्षों से परस्पर कब्ज़ा शर्त है। यह सब रद्द अल-मुह्तार में विस्तृत है। 2 दायाँ कॉलम (उर्दू): जैसा कि अल्लामा क़ारी अल-हिदाया ने इस पर फ़तवा दिया और प्रतिष्ठित उमर बिन नुजैम ने इसकी ऐसी व्याख्या की जो इसे मतभेद से बाहर निकालती है। और शोधकर्ता शामी ने यह कहते हुए उनसे विवाद किया कि इसे उस अर्थ पर समझा जाएगा जिसकी ओर जामे सगीर में इमाम मुहम्मद के शब्द संकेत करते हैं, अर्थात दोनों पक्षों से परस्पर कब्ज़ा शर्त है। और इन सब का विवरण रद्द अल-मुह्तार में है।

[तालिका भाग 3 समाप्त]

1 सुनन अल-दाराकुतनी, किताब अल-बुयू, हदीस 269, नश्र अल-सुन्ना मुल्तान, 3/71। 2 रद्द अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू, बाब अर-रिबा, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी बेरुत, 4/184।

فتاوٰی رضویہ (جلد ہفدہم (۱۷))

مگر اس قدر میں شک نہیں کہ جب تابعین رواج ان کے لئے حکم اثمان ہے تو احد الجانبین میں قبض بالید ہونا ضروری ہے۔

[جدول حصہ ۱] بایاں کالم (عربی): والالکان افتراقاً عن دین بدین وقد نھی النبی صلی اللہ تعالی علیہ وسلم عن بیع الکائی بالکائی 1۔ دایاں کالم (اردو): ورنہ یہ دین کے بدلے دین سے افتراق ہوگا حالانکہ رسول اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے ادھار کے بدلے ادھار کی بیع سے منع فرمایا ہے۔ (ت)

[جدول حصہ ۱ ختم]

اختلاف اسی میں ہے کہ آیا یہ قبضہ جانبین سے مشروط یا ایک ہی جانب میں کافی جس نے اصل خلقت پر نظر کی کہا صرف نہیں پھر تقابض کی کیا حاجت۔

[جدول حصہ ۲] بایاں کالم (عربی): وھم الاکثرون وعلیہ نص محمد فی المبسوط و اعتمدہ فی المحیط والحاوی والبزازیۃ والبحر الرائق والنھر الفائق وفتاوی الحانوتی وتنویر الابصار و الدر المختار والفتاوی الھندیۃ وغیرھا من متون المذھب وشروحہ و فتاؤہ وھو مفاد کلام الامام الاسبیجابی کما نقلہ الشامی عن الزین عن الامام دایاں کالم (اردو): اور وہ اکثر ہیں اسی پر امام محمد نے مبسوط میں نص فرمائی اور اسی پر اعتماد کیا گیا ہے محیط، حاوی، بزازیہ، البحر الرائق، النہر الفائق، فتاوی حانوتی، تنویر الابصار، درمختار اور فتاوی ہندیہ وغیرہ مذہب کے متون، شروح اور فتاوی میں، اور یہی مفاد ہے امام اسپیجابی کے کلام کا جیسا کہ اس کو شامی نے بحوالہ زین امام اعظم سے نقل کیا ہے۔(ت)

[جدول حصہ ۲ ختم]

اور جس نے ثمنیت مصطلحہ پر لحاظ کیا تقابض شرط ٹھہرایا۔

[جدول حصہ ۳] بایاں کالم (عربی): کما افتی به العلامة قاری الهدایة واوله الفاضل عمر بن نجیم بما یخرجه عن الخلاف ونازعه المحقق الشامی قائلا انه محمول علی مادل علیه کلام الامام محمد فی الجامع الصغیر من اشتراط التقابض من الجانبین وکل ذلک مشرح فی ردالمحتار 2 دایاں کالم (اردو): جیسا کہ اس پر فتوی دیا علامہ قاری الہدایہ نے اور فاضل عمر بن نجیم نے اس کی ایسی تاویل کی جو اس کو خلاف سے نکالتی ہے اور محقق شامی نے یہ کہتے ہوئے اس کے ساتھ منازعت کی کہ اس کو اس معنی پر محمول کیا جائے گا جس پر جامع صغیر میں امام محمد کا کلام دلالت کرتا ہے یعنی دونوں جانبوں سے تقابض شرط ہے اور اس تمام کی تفصیل ردالمحتار

[جدول حصہ ۳ ختم]

1 سنن الدارقطنی کتاب البیوع حدیث ۲۶۹ نشر السنة ملتان ۳ / ۷۱ 2 ردالمحتار کتاب البیوع باب الربوداراحیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۱۸۴

Fatawa Razawiya, Volume 17

[Arabic Column]: ...and other voluminous books. This weak servant (may Allah Almighty forgive him) says that the meaning towards which the virtuous Al-Shami, my master Muhammad bin Amin al-Din Afandi Ibn Abidin (may Allah Almighty have mercy on him), inclined, based on the indication of the text of Al-Jami' al-Saghir regarding that condition, he followed the author of Al-Bahr. And Al-Allama Zayn al-Din relied on what occurred in Al-Dhakhira, as is also mentioned in the Hashiya Shamiya. However, I still have hesitation in this; for indeed, I referred to Al-Jami' and found its text thus: Muhammad from Yaqub from Abu Hanifa (may Allah Almighty be pleased with them) that a man sold two ratls of abdominal fat for one ratl of tail fat, or sold two ratls of meat for one ratl of abdominal fat, or one egg for two eggs, or one walnut for two walnuts, or one fils for two fils, or one date for two dates, hand-to-hand with their specific entities; this is permissible. And this is the view of Abu Yusuf (may Allah Almighty have mercy on him). But Imam Muhammad (may Allah Almighty have mercy on him) said: the sale of one fils for two fils is not permissible, but the sale of one date for two dates is permissible. Here ends his noble speech. May Allah Almighty benefit us with his blessings in this world and the hereafter. Ameen.

[Urdu Column]: ...and in other voluminous books, this weak servant (may Allah Almighty forgive him) says that the meaning towards which Allama Sayyid Muhammad Amin al-Din Afandi Ibn Abidin Shami (may Allah Almighty have mercy on him) inclined, in that he followed the author of Al-Bahr, and Allama Zayn al-Din relied on what occurred in Al-Dhakhira, as is also mentioned in the Hashiya Shamiya. But I still have hesitation in this; indeed, I referred to Jami' Saghir and found its text thus: Muhammad narrated from Yaqub and he from Abu Hanifa (may Allah Almighty be pleased with them) that a person sold two ratls (pounds) of abdominal fat for one ratl of tail fat, or sold two ratls of meat for one ratl of abdominal fat, or one egg for two eggs, or one walnut for two walnuts, or one paisa for two paisas, or one dried date for two dried dates in such a manner that the exchange of all these things was hand-to-hand and these things were specified; then this is a valid sale. And this is the statement of Imam Abu Yusuf (may Allah Almighty have mercy on him), and Imam Muhammad (may Allah Almighty have mercy on him) said that the sale of one paisa for two paisas is impermissible and the sale of one dried date for two dried dates is permissible. The noble discourse of the Imam has ended. May Allah Almighty [benefit] us in this world and the hereafter.

[Footnote]: 1. Al-Jami' al-Saghir, Book of Sales, Chapter on Sales in things measured by volume or weight, Matba' Yusufi, Lucknow, p. 97.

फ़तावा रज़विया, खंड 17

[अरबी कॉलम]: ...और अन्य विशाल पुस्तकों में। यह दुर्बल सेवक (अल्लाह तआला उसे क्षमा करे) कहता है कि जिस अर्थ की ओर गुणी अल-शामी, मेरे स्वामी मुहम्मद बिन अमीन अल-दीन अफ़ंदी इब्न आबिदीन (अल्लाह तआला उन पर रहम करे) झुके, उस शर्त के संबंध में अल-जामि' अल-सग़ीर के पाठ के संकेत के आधार पर, उन्होंने अल-बह्र के लेखक का अनुसरण किया। और अल्लामा ज़ैन अल-दीन ने उस पर भरोसा किया जो अल-ज़खीरा में आया है, जैसा कि हाशिया शामिया में भी उल्लेखित है। हालाँकि, मुझे अभी भी इसमें हिचकिचाहट है; क्योंकि वास्तव में मैंने अल-जामि' का संदर्भ लिया और उसके पाठ को इस प्रकार पाया: मुहम्मद ने याकूब से और उन्होंने अबू हनीफ़ा (अल्लाह तआला उन सभी से प्रसन्न हो) से रिवायत की कि एक व्यक्ति ने पेट की दो रतल चर्बी को एक रतल पूंछ की चर्बी के बदले बेचा, या दो रतल मांस को एक रतल पेट की चर्बी के बदले बेचा, या एक अंडे को दो अंडों के बदले, या एक अखरोट को दो अखरोटों के बदले, या एक फ़िल्स (सिक्का) को दो फ़िल्स के बदले, या एक खजूर को दो खजूरों के बदले, हाथों-हाथ उनकी विशिष्ट संस्थाओं के साथ बेचा; यह जायज़ है। और यही अबू यूसुफ़ (अल्लाह तआला उन पर रहम करे) का विचार है। लेकिन इमाम मुहम्मद (अल्लाह तआला उन पर रहम करे) ने कहा: एक फ़िल्स की दो फ़िल्स के बदले बिक्री जायज़ नहीं है, लेकिन एक खजूर की दो खजूरों के बदले बिक्री जायज़ है। यहाँ उनका पवित्र कलाम समाप्त होता है। अल्लाह तआला हमें दुनिया और आख़िरत में उनके आशीर्वादों से लाभान्वित करे। आमीन।

[उर्दू कॉलम]: ...और अन्य विशाल पुस्तकों में है, यह दुर्बल सेवक (अल्लाह तआला उसे क्षमा करे) कहता है कि जिस अर्थ की ओर अल्लामा सैयद मुहम्मद अमीन अल-दीन अफ़ंदी इब्न आबिदीन शामी (अल्लाह तआला उन पर रहम करे) झुके, उसमें उन्होंने साहब-ए-बह्र का अनुसरण किया, और अल्लामा ज़ैन अल-दीन ने उस पर भरोसा किया जो ज़खीरा में घटित हुआ जैसा कि हाशिया शामिया में भी वर्णित है। लेकिन अभी भी मुझे इसमें झिझक है; वास्तव में मैंने जामि' सग़ीर की ओर रुख किया तो उसके पाठ को इस प्रकार पाया कि मुहम्मद ने याकूब से और उन्होंने अबू हनीफ़ा से रिवायत की (अल्लाह तआला उन सभी से प्रसन्न हो) कि एक व्यक्ति ने पेट की दो रतल चर्बी को एक रतल पूंछ की चर्बी के बदले बेचा, या दो रतल मांस को एक रतल पेट की चर्बी के बदले बेचा, या एक अंडा दो अंडों के बदले, या एक अखरोट दो अखरोटों के बदले, या एक पैसा दो पैसों के बदले, या एक छुआरा दो छुआरों के बदले इस तरह बेचा कि इन सभी चीज़ों का लेन-देन हाथों-हाथ हुआ और

ये चीज़ें निश्चित थीं; तो यह बिक्री है। और यही इमाम अबू यूसुफ़ (अल्लाह तआला उन पर रहम करे) का कथन है, और इमाम मुहम्मद (अल्लाह तआला उन पर रहम करे) ने फ़रमाया कि एक पैसे की बिक्री दो पैसों के बदले नाजायज़ और एक छुआरे की बिक्री दो छुआारों के बदले जायज़ है। इमाम साहब का पवित्र कलाम समाप्त हुआ। अल्लाह तआला हमें दुनिया और आख़िरत [में लाभान्वित करे]...

[पाद टिप्पणी]: 1. अल-जामि' अल-सग़ीर, किताबुल बुयू, बाब अल-बय फ़ीमा युकालो औ यूज़नो, मतबा युसूफ़ी, लखनऊ, पृष्ठ 97.

पृष्ठ 634/715

فتاوی رضویہ، جلد ہفدہم (۱۷)

[عربی کالم]: وغیرہ من الاسفار، قال العبد الضعیف غفر اللہ تعالی لہ وما جنح الیہ الفاضل الشامی سیدی محمد بن امین الدین افندی ابن عابدین رحمۃ اللہ تعالی علیہ من دلالۃ کلام الجامع الصغیر علی ذلك الاشتراط فقد تبع فیہ صاحب البحر والعلامۃ زین الدین عول علی ما وقع فی الذخیرۃ کما ھو ایضا مذکور فی الحاشیۃ الشامیۃ ولکن لی فیہ تأمل بعد فانی راجعت الجامع فوجدت نصہ ھکذا محمد عن یعقوب عن ابی حنیفۃ رضی اللہ تعالی عنھم رجل باع رطلین من شحم البطن برطل من الیۃ او باع رطلین من لحم برطل من شحم البطن او بیضۃ ببیضتین او جوزۃ بجوزتین او فلسا بفلسین او تمرۃ بتمرتین یدا بید باعیانھا یجوز وھو قول ابی یوسف رحمۃ اللہ تعالی علیہ وقال محمد رحمۃ اللہ تعالی علیہ لا یجوز فلس بفلسین ویجوز تمرۃ بتمرتین ۱ انتھی کلامہ الشریف نفعنا اللہ تعالی ببرکاتہ فی الدنیا والاخرۃ آمین۔

[اردو کالم]: وغیرہ ضخیم کتابوں میں ہے، یہ عبدِ ضعیف (اللہ تعالیٰ اس کی مغفرت فرمائے) کہتا ہے کہ جس معنی کی طرف علامہ سید محمد امین الدین آفندی ابن عابدین شامی رحمۃ اللہ تعالیٰ مائل ہوئے اس میں انہوں نے صاحب البحر کی پیروی کی اور علامہ زین الدین نے اس پر اعتماد کیا جو ذخیرہ میں واقع ہوا جیسا کہ حاشیہ شامیہ میں بھی مذکور ہے لیکن ابھی تک مجھے اس میں تامل ہے بیشک میں نے جامع صغیر کی طرف رجوع کیا تو اس کی نص کو یوں پایا کہ محمد نے یعقوب سے اور اس نے ابوحنیفہ سے روایت کیا (رضی اللہ تعالیٰ عنہم) کہ ایک شخص نے دو رطل پیٹ کی چربی ایک رطل الیہ کی چربی کے عوض یا دو رطل گوشت ایک رطل پیٹ کی چربی کے عوض بیچا یا ایک انڈہ دو انڈوں کے عوض یا ایک اخروٹ دو اخروٹوں کے عوض یا ایک پیسہ دو پیسوں کے عوض یا ایک چھوہارا دو چھوہاروں کے عوض فروخت کیا اس طور پر کہ ان تمام

چیزوں کا لین دین ہاتھوں ہاتھ ہوا اور یہ تمام چیزیں معین تھیں تو یہ بیع ہے اور یہی قول امام ابو یوسف رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ کا، اور امام محمد رحمۃ اللہ تعالیٰ نے فرمایا کہ ایک پیسے کی بیع دو پیسوں کے عوض ناجائز اور ایک چھوہارے کی بیع دو چھوہاروں کے عوض جائز ہے، امام صاحب کا کلام شریف ختم ہوا، اللہ تعالیٰ ہمیں دنیا و آخرت

[حاشیہ]: ۱ الجامع الصغیر کتاب البیوع باب البیع فیما یکال اویوزن مطبع یوسفی لکھنؤ ص ۹۷

Volume 17 Fatawa-e-Razviyya

May He grant benefit through its blessings, Ameen. So the point of inference is the statement of Imam [Abu Hanifa], may Allah be pleased with him, "hand to hand" (yad-an bi-yad). However, one who has practiced jurisprudence knows that this phrase is certainly not a clear text (Nass-e-Sareeh) regarding possession by the fingertips. Do you not see that our scholars, may Allah have mercy on them, have interpreted it in the well-known Hadith as "identity" (ainiyat), as stated in Al-Hidayah: the meaning of his (peace and blessings be upon him) statement "hand to hand" is "commodity for commodity" (ain-an bi-ain). This is how it was narrated by Ubadah bin al-Samit, may Allah be pleased with him. End of quote. How could it be otherwise, when our companions (scholars), may Allah be pleased with them, have said that mutual possession (taqabud) is only a condition in currency exchange (sarf), whereas in other things where usury (riba) applies, only specification (ta'ayyun) is considered. If the statement mentioned by us in the text were to be taken as referring to mutual possession, and from it the condition of possession were inferred in the exchange of one paisa for two paisas, then it would also be a condition in the exchange of one date for two dates, one egg for two eggs, and one walnut for two walnuts, because all these issues follow the same context (and thus the ruling would be the same). However, our leading scholars do not subscribe to this view, therefore...

1 Al-Hidayah, Kitab al-Buyu, Bab al-Riba, Matba' Yusufi Lucknow 3/82-83 Page 635 of 715

अल्लाह इसके बरकतों से लाभ प्रदान करे, आमीन। तो अनुमान का बिंदु इमाम साहब (रज़ियल्लाहु अन्हु) का कथन "यदन बि-यद" (हाथों-हाथ) है। लेकिन फ़िक़्ही (न्यायशास्त्र) कौशल रखने वाला जानता है कि निश्चित रूप से यह शब्द उंगलियों के पोरों के साथ कब्ज़ा करने में स्पष्ट पाठ (नस्स-ए-सरेह) नहीं है। क्या आप नहीं देखते कि हमारे विद्वानों (रहिमहमुल्लाह) ने प्रसिद्ध हदीस में इसकी व्याख्या "ऐनियत" (वस्तु के बदले वस्तु) के साथ की है, जैसा कि हिदाया में कहा गया है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के कथन "यदन बि-यद" का अर्थ "ऐनन बि-ऐन" है। इसे हज़रत उबादा बिन सामित (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने इसी प्रकार वर्णित किया है। यह समाप्त हुआ। और यह कैसे हो सकता है जबकि हमारे इमामों (रज़ियल्लाहु अन्हुम) ने कहा है कि आपसी कब्ज़ा तो केवल मुद्रा विनिमय (सर्फ़) में शर्त है, इसके अलावा जिसमें ब्याज (रिबा) लागू होता है वहाँ केवल विनिर्दिष्टता (तअय्युन) मान्य है। यदि हमारे द्वारा वर्णित पाठ में उनके कथन को 'तक़ाबुज़' (पारस्परिक कब्ज़ा) पर आधारित माना जाए और इससे एक पैसे के बदले दो पैसे के विनिमय में तक़ाबुज़ की शर्त होने का अनुमान लगाया जाए, तो फिर एक खजूर के बदले दो, एक अंडे के बदले दो, और एक अखरोट के बदले दो के विनिमय में भी तक़ाबुज़ शर्त होगा क्योंकि इन सभी मुद्दों का संदर्भ एक ही है (इसलिए हुक्म भी एक ही होगा)। जबकि हमारे इमाम इसके कायल नहीं हैं, इसलिए...

1 अल-हिदाया, किताब अल-बुयूँ, बाब अर-रिबा, मतबा यूसुफ़ी लखनऊ 3/82-83 पृष्ठ 715 में से 635

میں اس کی برکات سے نفع عطا فرمائے آمین، تو محل استدلال امام صاحب رضی اللہ تعالٰی عنہ کا قول "یداً بید" (ہاتھ ہاتھ) ہے لیکن فقہی مہارت والا جانتا ہے کہ بیشک یہ لفظ انگلیوں کے پوروں کے ساتھ قبضہ کرنے میں نص صریح نہیں کیا تو نہیں دیکھتا کہ ہمارے علمائے کرام رحمہم اللہ تعالٰی نے حدیث معروف میں اس کی تفسیر عینیت کے ساتھ فرمائی ہے جیسا کہ ہدایہ میں کہا کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کے قول "یداً بید" "عیناً بعین" ہے ، یونہی روایت فرمایا ہے اس کو حضرت عبادہ بن صامت رضی اللہ تعالٰی عنہ نے ، انتہی ، اور یہ کیسے ہو سکتا ہے حالانکہ ائمہ رضی اللہ تعالٰی عنہم نے فرمایا ہے کہ بے شک باہمی قبضہ تو فقط بیع صرف میں شرط ہے اس کے علاوہ جس میں ربا جاری ہوتا ہے وہاں فقط تعین معتبر ہے، اگر ہمای ذکر کردہ عبارت میں اس کے قول کو تقابض (دو طرفہ قبضہ) پر محمول کیا جائے اور اس سے ایک پیسے کی دو پیسوں کے عوض بیع میں تقابض کا شرط ہونا اخذ کیا جائے تو پھر ایک کھجور کی دو کے عوض ، ایک انڈے کی دو کے عوض اور ایک اخروٹ کی دو کے عوض بیع میں بھی تقابض شرط ہوگا کیونکہ ان تمام مسائل کا سیاق ایک ہی ہے (لہذا حکم بھی ایک ہوگا) حالانکہ ہمارے ائمہ کرام اس کے قائل نہیں ہیں لہذا

1 الہدایہ کتاب البیوع باب الربا مطبع یوسفی لکھنؤ ۳/ ۸۲۔۸۳ صفحہ 715 میں سے 635

Volume 17 (17) Fatawa Razawiyya

It is mandatory to interpret this as a condition of specification (Ishtirat-e-Ta'yeen). The statement of the Imam (May Allah be pleased with him) "bi-a'yanihima" (with their specific identities) serves as an explanation for his statement "yadan bi-yadin" (hand-to-hand). Otherwise, this statement would be redundant and unnecessary because specification is already present in possession (taqabuz) along with something extra. Thus, mentioning specification after possession would be of no benefit. This is why, when the author of al-Hidayah quoted this issue from al-Jami' al-Saghir, he omitted the phrase (yadan bi-yadin) and sufficed with mentioning only the specific identity (ayniyyat), saying that he, i.e., Imam Muhammad (May Allah have mercy on him) (al-Binayah by 'Allamah 'Ayni), stated that the sale of one egg for two eggs is permissible, one date for two dates, one walnut for two walnuts, and one specific coin for two specific coins, end. Therefore, in al-Jami' al-Saghir, God willing, there will be no evidence for what these luminaries have stated. Even if there were, it would not be intended given the clear presence of other possibilities. This is in contrast to the text of the "Asl", i.e., "al-Mabsut", which is an explicit text (nass) regarding the non-conditionality of possession (taqabuz), as you will soon see, God willing. Therefore, reliance should be placed on that, and Allah alone is the giver of success. This is what occurred to this humble servant.

1. Al-Binayah fi Sharh al-Hidayah, Kitab al-Buyu', Bab al-Riba, Al-Maktabah al-Imdadiyyah, Makkah al-Mukarramah, 3/154.
2. Al-Hidayah, Kitab al-Buyu', Bab al-Riba, Matba' Yusufi, Lucknow, 3/83.

जिल्द 17 (17) फतावा रज़विया

इसे निर्धारण की शर्त (ishtirat-e-ta'yeen) पर आधारित करना अनिवार्य है और इमाम साहब (रज़ियल्लाहु अन्हु) का कथन "बा'यानहिमा" उनके कथन "यदन बि-यदिन" (हाथों हाथ) की व्याख्या होगी, अन्यथा यह कथन व्यर्थ और अनावश्यक होगा क्योंकि लेनदेन (taqabuz) में निर्धारण कुछ अतिरिक्त के साथ मौजूद होता है, तो फिर (निर्धारण) को लेनदेन के बाद उल्लेख करना लाभहीन होगा। यही कारण है कि जब इमाम साहिब-ए-हिदाया ने इस मसले को जामे' सगीर से उद्धृत किया, तो उन्होंने इसमें से यह शब्द (यदन बि-यदिन) हटा दिया और केवल वस्तुगतता (ayniyyat) के उल्लेख पर संतोष करते हुए कहा कि उन्होंने यानी इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाह अलैहि) ने (बिनाया अल्लामा ऐनी) फरमाया कि एक अंडे की दो अंडों के बदले बिक्री जायज़ है, और एक खजूर की दो खजूरों के बदले, और एक अखरोट की दो अखरोटों के बदले, और एक निश्चित पैसे की दो निश्चित पैसों के बदले, इंतहा (समाप्त)। अतः जामे' सगीर में, इंशाअल्लाह, इस पर कोई प्रमाण नहीं होगा जो इन महानुभावों ने कहा, और यदि हो भी, तो अन्य संभावनाओं के स्पष्ट होने के बावजूद इसका इरादा नहीं किया जाएगा। इसके विपरीत 'अस्ल' यानी 'मब्सूत' की इबारत के, क्योंकि वह लेनदेन (taqabuz) की शर्त न होने पर स्पष्ट प्रमाण (Nass) है, जैसा कि आप शीघ्र ही इंशाअल्लाह देखेंगे। अतः उसी पर भरोसा किया जाना चाहिए और अल्लाह ही सफलता देने वाला है। यह वह है जो इस असमर्थ दास (लेखक) को सूझा।

1. अल-बिनाया फी शरह अल-हिदाया, किताबुल बुयू', बाबुर्-रिबा, अल-मकतबा अल-इमदादिया, मक्का मुकर्रमा, 3/154
2. अल-हिदाया, किताबुल बुयू', बाबुर्-रिबा, मतबा यूसुफ़ी, लखनऊ, 3/83

पृष्ठ 636/715

اس کو اشتراطِ تعیین پر محمول کرنا واجب ہے اور امام صاحب رضی اللہ تعالیٰ عنہ کا قول "باعیانھما" ان کے قول "یداً بید" کی تفسیر ہوگا ورنہ یہ قول لغو اور بلا ضرورت ہوگا کیونکہ تقابض میں تعیین کچھ اضافے سمیت موجود ہے تو پھر اس (تعیین) کو تقابض کے بعد ذکر کرنا فائدہ سے خالی ہوگا، یہی وجہ ہے کہ جب امام صاحب ہدایہ نے اس مسئلہ کو جامعِ صغیر سے نقل کیا تو اس میں سے یہ کلمہ (یداً بید) ساقط کرکے فقط عینیت کے ذکر پر اکتفا کرتے ہوئے کہا کہ انہوں نے یعنی امام محمد رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ (بنایہ علامہ عینی) نے فرمایا کہ جائز ہے بیع ایک انڈے کی دو انڈوں کے عوض اور ایک کھجور، کی دو کھجوروں کے عوض اور ایک اخروٹ کی دو اخروٹوں کے عوض اور ایک معین پیسے کی دو معین پیسوں کے عوض، انتہیٰ، چنانچہ جامع صغیر میں تو ان شاء اللہ اس پر کوئی دلیل نہ ہوگی جو ان بزرگوں نے فرمایا اور اگر ہو بھی تب بھی غیر کا احتمال بین ہوتے ہوئے اس کا ارادہ نہیں کیا جائے گا، بخلاف اصل یعنی مبسوط کی عبارت کے کہ وہ تقابض کے شرط نہ ہونے پر نص ہے جیسا کہ عنقریب ان شاء اللہ تعالیٰ تو دیکھے گا چنانچہ اسی پر اعتماد کرنا چاہئے اور اللہ تعالیٰ ہی مالکِ توفیق ہے یہ وہ ہے جو اس قاصر بندے

1 البناية في شرح الهداية كتاب البيوع باب الربو المكتبة الامداديه مكه مكرمه ۳ / ۱۵۴ 2 الهدايه كتاب البيوع باب الربو مطبع يوسفى لكهنؤ ۳ / ۸۳

[Arabic]: So ponder over it; if you find it to be the truth, then adhere to it, otherwise cast it against the wall. [Urdu]: It has been revealed to you, so contemplate it. If you find it right, it is obligatory for you to act upon it; otherwise, throw it against the wall. (T)

In short, according to the preferred view, in the sale of coins for dirhams and dinars, possession by one party is sufficient. Therefore, in the inquired situation, the sale is valid without hesitation, and the money changer is obligated to provide the remaining money to the buyer.

[Arabic]: In *Al-Mabsut*: If a man buys copper coins for silver dirhams and pays the price, but the coins are not with the seller, the sale is valid. [Urdu]: In *Al-Mabsut*, it is stated that when someone buys coins in exchange for dirhams and pays the price in cash, but the seller does not have the coins at that time, the sale is valid. Similar is mentioned in *Al-Hindiyyah*,

[Arabic]: It is also stated in *Al-Hindiyyah* from *Al-Hawi* and others: If someone buys one hundred coins for one dirham, and the dirham is handed over but the coins are not received until they become obsolete, the sale is not invalidated based on analogy. If fifty coins were received and then they became obsolete, the sale is invalidated for the half. If they had not become obsolete, the sale would not be void, and the buyer would be entitled to take the remaining coins. [Urdu]: It is quoted from *Al-Hawi* etc. that if someone buys one hundred coins for one dirham, the seller took possession of the dirham but the buyer had not yet taken possession of the coins when they became obsolete, then according to analogy, the sale is not invalidated. If fifty coins were received and they became obsolete, the sale is invalidated for the half. If they were not obsolete, the sale would not be void and the buyer would be entitled to the remaining coins.

[Arabic]: In *Al-Tanwir* and its commentary: If someone sells coins for their equivalent, or for dirhams or dinars, and if one of them pays in cash, it is valid. If they separate without either taking possession, it is not permissible. This matter requires more detail than this, and what we have mentioned is sufficient. And Allah knows best. [Urdu]: Summarized from *Tanwir* and its commentary: If someone sells coins for their equivalent or for dirhams or dinars, and if one of the parties makes a cash payment, the sale is valid. If they separate without taking possession, it is invalid. This matter

requires more detail than this, and what we have mentioned is sufficient. And Allah knows best. (T)

---

1. *Al-Mabsut* by Al-Sarakhsi, Book of Sales, Chapter: Sale for Coins, Dar al-Ma'rifah Beirut, Vol. 14, p. 42; *Fatawa Hindiyyah*, Book of Exchange, Chapter 3 regarding the sale of coins, Nurani Kutub Khana Peshawar, 3/225.
2. *Fatawa Hindiyyah*, Book of Exchange, Chapter 3 regarding the sale of coins, Nurani Kutub Khana Peshawar, 3/225.
3. *Durr al-Mukhtar*, Book of Sales, Chapter of Riba (Usury), Matba' Mujtabai Delhi, 2/42.

[अरबी]: तो इस पर विचार करें; यदि आप इसे सत्य पाते हैं, तो इसे अपनाएं अन्यथा इसे दीवार पर दे मारें। [उर्दू]: आप पर प्रकट हुआ, इसमें विचार करें, अगर आप इसे सही पाते हैं तो इस पर अमल करना आप पर अनिवार्य है अन्यथा इसे दीवार पर दे मारें। (त)

संक्षेप में, प्रचलित मत के अनुसार, दिरहम और दीनार के बदले सिक्कों की बिक्री में, एक पक्ष का कब्ज़ा पर्याप्त है। इसलिए, पूछी गई स्थिति में बिक्री बिना किसी संदेह के सही है और सर्राफ़ (मनी चेंजर) को खरीदार को शेष पैसे देना अनिवार्य है।

[अरबी]: अल-मबसुत में है: यदि कोई व्यक्ति दिरहम के बदले सिक्के खरीदता है और नकद मूल्य चुकाता है, लेकिन उस समय विक्रेता के पास सिक्के नहीं हैं, तो बिक्री वैध है। [उर्दू]: मबसुत में है कि जब किसी ने दिरहमों के बदले पैसे खरीदे और नकद भुगतान कर दिया लेकिन विक्रेता के पास उस समय पैसे मौजूद नहीं थे तो बिक्री जायज़ है। हिन्दिया में भी ऐसा ही है,

[अरबी]: इसी तरह हिन्दिया में अल-हावी और अन्य से उद्धृत है: यदि किसी ने एक दिरहम के बदले सौ सिक्के खरीदे, विक्रेता ने दिरहम ले लिया लेकिन खरीदार ने अभी सिक्के नहीं लिए थे कि वे अप्रचलित हो गए, तो सादृश्य (क़यास) के अनुसार बिक्री रद्द नहीं हुई। यदि पचास सिक्कों पर कब्ज़ा कर लिया गया था और फिर वे अप्रचलित हो गए, तो आधे हिस्से में बिक्री रद्द हो गई। यदि वे अप्रचलित नहीं होते, तो बिक्री अमान्य नहीं होती और खरीदार शेष पैसे लेने का हकदार होता। [उर्दू]: इसी में हावी वगैरह से उद्धृत है कि यदि किसी ने एक दिरहम के बदले सौ सिक्के खरीदे, विक्रेता ने दिरहम पर कब्ज़ा कर लिया लेकिन खरीदार ने अभी तक सिक्कों पर कब्ज़ा नहीं किया था कि वे अप्रचलित (खोटे) हो गए, तो कयास (सादृश्य) के अनुसार बिक्री रद्द नहीं हुई। और यदि पचास सिक्कों पर कब्ज़ा किया गया था और वे खोटे हो गए, तो आधे में बिक्री रद्द हो गई। यदि वे खोटे नहीं होते, तो बिक्री अमान्य नहीं होती और खरीदार बाकी पैसे लेने का हकदार होता।

[अरबी]: अत-तन्वीर और उसकी व्याख्या में है: यदि कोई सिक्कों को उनके बराबर के बदले, या दिरहम या दीनार के बदले बेचता है, और यदि उनमें से एक नकद भुगतान कर देता है, तो यह वैध है। यदि वे दोनों कब्ज़ा किए बिना अलग हो जाते हैं, तो यह नाजायज़ है। इस विषय पर इससे अधिक विस्तार की आवश्यकता है, और हमने जो उल्लेख किया है वह पर्याप्त है। और अल्लाह बेहतर जानता है। [उर्दू]: संक्षेप में, तनवीर और उसकी व्याख्या में है कि किसी ने सिक्कों को उनके जैसे

सिक्कों के बदले या दिरहमों के बदले या दीनारों के बदले बेचा, तो यदि दोनों में से एक ने नकद भुगतान कर दिया तो बिक्री जायज़ है और यदि दोनों कब्ज़ा किए बिना अलग हो गए तो नाजायज़ है। इस स्थान का मामला इससे अधिक विस्तार की मांग करता है और जो कुछ हमने उल्लेख किया है वह पर्याप्त है और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

---

1. अल-मबसुत लिस-सरख़सी, किताबुल बुयू, बाबुल् बै' बिल फ़ुलूस, दारुल मारिफ़ा, बेरूत, खंड 14, पृष्ठ 42; फ़तावा हिन्दिया, किताबुस सर्फ़, अध्याय 3, सिक्कों की बिक्री के बारे में, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 3/225।
2. फ़तावा हिन्दिया, किताबुस सर्फ़, अध्याय 3, सिक्कों की बिक्री के बारे में, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 3/225।
3. दुर्रे मुख़्तार, किताबुल बुयू, बाबुर् रिबा, मतब' मुज्तबाई, दिल्ली, 2/42।

فتأمله فان وجدته حقا فعليك به والا فارم به الجدار۔ پر منکشف ہوا اس میں غور کر اگر تو اس کو حق پائے تو عمل کرنا تجھ پر لازم ہے ورنہ اس کو دیوار پر دے مار۔ (ت)

بالجملہ مذہب راجح پر بیع الفلوس بالدراہم والدنانیر میں ایک ہی جانب کا قبضہ کافی، پس صورت مستفسرہ میں بیع بلاتردد صحیح اور صراف پر مشتری کے لئے باقی پیسے لازم،

في المبسوط اذا اشترى الرجل فلوسا بدراهم ونقد الثمن ولم تكن الفلوس عند البائع فالبيع جائز اه ۱ مبسوط میں ہے کہ جب کسی نے درہموں کے عوض پیسے خریدے اور ثمن نقد ادا کردئے مگر بائع کے پاس اس وقت پیسے موجود نہیں تو بیع جائز ہے اھ ہندیہ میں یونہی ہے،

كذا في الهندية و فيها عن الحاوى وغيره لو اشترى مائة فلس بدرهم فقبض الدرهم ولم يقبض الفلوس حتى كسدت لم يبطل البيع قياسا و لو قبض خمسين فلسا فكسدت بطل البيع في النصف ولو لم تكسد لم يفسد وللمشترى مابقى من الفلوس ۲ اه ملتقطا، اسی میں حاوی وغیرہ سے منقول ہے اگر کسی نے ایک درہم کے عوض سو پیسے خریدے، بائع نے درہم پر قبضہ کر لیا مگر مشتری نے ابھی پیسوں پر قبضہ نہیں کیا تھا کہ وہ کھوٹے ہو گئے تو قیاس کی رو سے بیع باطل نہیں ہوئی اور اگر پچاس پیسوں پر قبضہ کیا تھا کہ وہ کھوٹے ہو گئے تو نصف میں بیع باطل ہو گئی اگر وہ کھوٹے نہ ہوتے بیع فاسد نہ ہوتی اور مشتری باقی پیسے لینے کا حقدار ہوتا اھ

وفی التنویر وشرحہ باع فلوسا بمثلها او بدراهم او بدنانير فان نقد احدهما جاز وان تفرقا بلا قبض احدهما لم يجز ۳ اه ومسئلة المقام يستدعى اكثر من هذا و فيما ذكرنا كفاية۔ واللہ تعالی اعلم۔ تلخیص، تنویر اور اس کی شرح میں ہے کہ کسی نے پیسوں کو ان کی مثل کے عوض یا درہموں کے عوض

یا دیناروں کے عوض بیچا پس اگر دونوں میں سے ایک نے نقد ادائیگی کردی تو بیع جائز ہے اور اگر دونوں قبضہ کئے بغیر متفرق ہوگئے تو ناجائز ہے اھ اس مقام کا مسئلہ اس سے زیادہ تفصیل کا تقاضا کرتا ہے اور جو کچھ ہم نے ذکر کیا اس میں کفایت ہے اور اللہ تعالٰی بہتر جانتا ہے۔ (ت)

---

۱ المبسوط للسرخسی کتاب البیوع باب البیع بالفلوس دارالمعرفۃ بیروت الجزء الرابع عشر ص ۴۲، فتاوی ہندیہ کتاب الصرف الفصل الثالث فی بیع الفلوس نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۲۵ ۲ فتاوی ہندیہ کتاب الصرف الفصل الثالث فی بیع الفلوس نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۲۵ ۳ درمختار کتاب البیوع باب الربو مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۴۲

Fatwa-e-Razviya Volume (17)

Problem 268: From Dhoraji, Kathiawar, Khichra Street, asked by Abdul Karim Ibn Qasim, 7 Rabi' al-Thani 1331 AH.

To the noble presence of the esteemed and honorable Mujaddid (Reviver) of the present century, the reason for causing this trouble is that regarding the treatise 'Kifl al-Faqih' published by you, some people have doubts that someone else has published this treatise under Maulana's name. There is a lot of talk about how a currency note can be declared as 'maal' (property/wealth); how can that be? Our trust is in you. Our point is that if 'Kifl al-Faqih' was published by your presence, then please reply in your own hand so that we may act upon it and the doubt is removed. Until your reply arrives, people will continue to argue, and our hearts will remain in doubt. For God's sake, please write a reply soon.

The Answer: The treatise 'Kifl al-Faqih al-Fahim' is indeed the composition of this humble servant (the faqir). In Makkah al-Mukarramah, a scholar from Jeddah questioned me about it, and I composed it there. Many scholars of Makkah al-Mukarramah took copies of it. Then, after my return, I had it printed. Later, Haji Isa Khan Muhammad Sahib had it published along with its translation. In Madina Tayyiba, two prominent Egyptian scholars and teachers at Jamia al-Azhar saw it and requested that copies be sent to them; those copies have been sent. The status of currency notes as 'maal' (property) has been clearly proven in this treatise with brilliant arguments. And Allah Almighty knows best.

Page 638 of 715 I.T. Majlis of Dawat-e-Islami

फ़तावा रज़विया जिल्द (17)

मसाला 268: धोराजी, काठियावाड़, खिचरा स्ट्रीट से, अब्दुल करीम इब्न कासिम द्वारा पूछा गया, 7 रबी-उल-थानी 1331 हिजरी।

आदरणीय और सम्मानित वर्तमान सदी के मुजद्दिद की सेवा में, इस परेशानी का कारण यह है कि आपके द्वारा प्रकाशित किताब 'किफ़लुल फ़क़ीह' के बारे में कुछ लोगों को संदेह है कि यह किताब किसी और ने मौलाना के नाम से छपवा कर प्रकाशित कर दी है। इस बात की बहुत चर्चा हो रही है कि नोट को 'माल' (संपत्ति) कैसे करार दिया जा सकता है, यह कैसे संभव है? हमारा भरोसा आप पर है। हमारा मतलब यह है कि अगर 'किफ़लुल फ़क़ीह' वाकई आपकी ओर से प्रकाशित हुई है, तो आप अपने मुबारक हाथों से हमें जवाब लिखें ताकि हम उस पर अमल कर सकें और शक दूर हो जाए। जब तक आपकी ओर से जवाब नहीं आएगा, तब तक वहां लोग बहस करते रहेंगे और हमारे दिलों में शक बना रहेगा। खुदा के लिए जल्द जवाब लिखें।

जवाब: रिसाला 'किफ़लुल फ़क़ीह अल-फ़ाहिम' इस फ़क़ीर (लेखक) की ही रचना है। मक्का मुअज़्ज़मा में जेद्दा के एक विद्वान ने इस फ़क़ीर से इस बारे में सवाल किया था और फ़क़ीर ने वहीं इसकी रचना की। मक्का मुकर्रमा के कई विद्वानों ने इसकी प्रतियां लीं। फिर वापसी के बाद फ़क़ीर ने इसे छपवाया। बाद में हाजी ईसा खान मोहम्मद साहब ने इसे अनुवाद के साथ छपवाया। मदीना तय्यबा में मिस्र के दो महान विद्वानों और जामिया अज़हर के शिक्षकों ने इसे देखा और फरमाइश की कि इसके नुस्खे (प्रतियां) हमें ज़रूर भेजें, उन्हें भेज दिए गए। नोट का 'माल' होना इस रिसाले में स्पष्ट दलीलों के साथ रौशन (साबित) कर दिया गया है। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

पृष्ठ 638 / 715 आई.टी. मजलिस दावत-ए-इस्लामी

مسئلہ ۲۶۸: از دھوراجی ملک کاٹھیا واڑ کوچہ کھچرا سٹریٹ مسئولہ عبدالکریم ابن قاسم ۷ ربیع الثانی ۱۳۳۱ھ بخدمت شریف جناب مخدوم و مکرم مجد د مائۃ حاضرہ، تکلیف دینے کا باعث یہ ہے کہ جو رسالہ کفل الفقیہ آپ کی جانب سے شائع ہوا ہے اس میں بعض لوگوں کو شک ہے کہ یہ رسالہ مولانا صاحب کے نام سے کسی دوسرے نے چھپوا کر شائع کر دئے ہیں اس بات کا بہت چرچا ہورہا ہے کہ نوٹ کو مال قرار دیا ہے وہ کس طرح سے ہو سکتا ہے، ہمارا اعتماد آپ کے اوپر ہے، مطلب ہمارا یہ ہے کہ اگر حضور کی جانب سے کفل الفقیہ شائع ہوا ہو تو آپ اپنے دست مبارک سے ہم کو جواب دیں تاکہ ان پر عمل کریں اور شک دور ہو جائے اور جب تک آپ کی طرف سے جواب نہیں آئے گا وہاں تک لوگوں کو بحث بھی رہے گی اور ہم لوگوں کے دل پر شک رہے گا تو آپ برائے خدا جلد جواب تحریر کریں۔

الجواب: رسالہ کفل الفقیہ الفاہم فقیر ہی کی تصنیف ہے مکہ معظمہ میں وہاں کے ایک عالم جدہ نے فقیر سے اس کا سوال کیا اور فقیر نے وہیں تصنیف کیا اور متعدد علمائے کرام مکہ مکرمہ نے اس کی نقلیں لیں پھر بعد واپسی فقیر نے اسے طبع کرایا پھر حاجی عیسیٰ خاں محمد صاحب نے مع ترجمہ چھپوایا، مدینہ طیبہ میں مصر کے دو جلیل عالموں مدرسین جامع ازہر نے اسے دیکھا اور فرمائش کی کہ اس کے نسخے ہم کو ضرور بھیج دو، ان کو بھیج دئے گئے، نوٹ کا مال ہونا اس رسالہ میں دلائل ساطعہ سے روشن کر دیا ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

Volume 17 Fatawa-e-Razawiyya

Chapter on Sham Sale (Bay' al-Taljia) (Explanation of sale for show)

Issue 269: What do the scholars of religion and muftis of the firm Shariah say in the asked case: Zaid, for some personal expediency, executed a fictitious sale deed of a house he owned to Amr without receiving the sale price and did not hand over possession of the sold property. Now Amr desires that I gift this same house to Zaid's heirs upon his death. The matter to be inquired about is whether it is legally permissible to gift this same house or not, and if the gift is permissible, under what circumstances can it be taken back and in what situation can it not be taken back. Explain and be rewarded.

The Answer: If it is proven through Amr's confession and admission or through just Shariah evidence that this sale was purely fictitious, which is termed as 'Bay' al-Taljia' (sham sale), then the sale has been legally concluded. Therefore, if the contracting parties validate it, it will be enforced.

[In Arabic]: In Al-Durr al-Mukhtar: It is a concluded sale that is not binding, like a sale with an option, etc. and in Radd al-Muhtar | [In Urdu]: It is stated in Durr al-Mukhtar that it is a concluded sale but not binding, like a sale with an option, etc., and in Radd al-Muhtar.

1. Al-Durr al-Mukhtar, Book of Sales, Chapter of Sarf, Mujtabai Press Delhi, 2/57. Page 639 of 715

जिल्द सत्रहवीं (17) फ़तावा-ए-रज़विया

बाब बै-अत-तल्जिया (छद्म बिक्री का अध्याय) (दिखावे की बिक्री का बयान)

मसला 269: क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन और मुफ़्तियान-ए-शरह मतीन इस मामले में कि ज़ैद ने एक मकान का टुकड़ा जिसका वह मालिक था, अम्र के नाम अपनी किसी ज़रूरत की वजह से बिना क़ीमत लिए फ़र्ज़ी तौर पर बै-नामा (बिक्री पत्र) तस्दीक़ करवा दिया और अपनी बेची हुई चीज़ पर कब्ज़ा नहीं दिया है। अब अम्र की यह ख़्वाहिश है कि मैं इसी मकान को ज़ैद की मौत के बाद उसके वारिसों को हिबा (दान) कर दूँ। दरयाफ़्त करने वाली बात यह है कि क्या इसी मकान को हिबा करना शरीअत के मुताबिक़ जायज़ है या नहीं? और अगर हिबा जायज़ है, तो किन-किन वजहों से वापस लिया जा सकता है और किस सूरत में वापस नहीं लिया जा सकता? बयान करें और सवाब पायें।

अल-जवाब: अगर अम्र के इक़रार और तस्लीम या शरीअत के आदिल गवाहों से यह साबित है कि यह बै (बिक्री) महज़ फ़र्ज़ी तौर पर की गई है जिसे बै-तल्जिया कहते हैं, तो यह बै शरीअत के ऐतबार से मुनअक़िद (संपन्न) हो गई। लिहाज़ा अगर अक़्द करने वाले (दोनों पक्ष) इसे जायज़ कर दें तो यह नाफ़िज़ (लागू) हो जाएगी।

[अरबी में]: दुर्रे मुख़्तार में है कि वह बै मुनअक़िद है लेकिन लाज़िम (अनिवार्य) नहीं है, जैसे ख़ियार (विकल्प) के साथ बै, इत्यादि। और रद्दुल मुहतार में | [उर्दू में]: दुर्रे मुख़्तार में है कि वह बै मुनअक़िद है लेकिन लाज़िम नहीं जैसे ख़ियार के साथ बै आदि, और रद्दुल मुहतार में।

1. दुर्रे मुख़्तार, किताबुल बुयूअ, बाब अस्-सरफ़, मतबा मुजतबाई देहली 2/ 57 पेज 639 ऑफ़ 715

جلد ہفتدہم (۱۷) فتاویٰ رضویہ

باب بیع التلجیہ (دکھاوے کی بیع کا بیان)

مسئلہ ۲۶۹: کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیانِ شرع متین صورتِ مسئولہ میں کہ زید نے ایک قطعہ مکان جس کا وہ مالک تھا بدست عمرو اپنی کسی مصلحت سے بلا وصول زرِ ثمن فرضی طریق سے بیعنامہ تصدیق کرا دیا اور قبضہ اپنا مبیعہ پر نہیں دیا ہے، اور عمرو کی اب یہ خواہش ہے کہ میں اسی مکان کو زید کے فوت ہونے پر اس کے ورثہ کو ہبہ کر دوں، دریافت طلب امر یہ ہے کہ آیا اسی مکان کو ہبہ کرنا شرعاً جائز ہے یا نہیں اور اگر ہبہ جائز ہے تو کن کن وجوہات میں واپس ہو سکتا ہے اور کس صورت سے واپس نہیں ہو سکتا۔ بینوا توجروا

الجواب: عمرو کو اگر اقرار و تسلیم یا بینہ عادلہ شرعیہ سے ثابت ہے کہ یہ بیع محض بطور فرضی کی گئی ہے جسے بیع تلجیہ کہتے ہیں تو بیع شرعاً منعقد ہو گئی ولہذا اگر عاقدین اسے جائز کردیں نافذ ہو جائیگی۔

فی الدر المختار انہ بیع منعقد غیر لازم کالبیع بالخیار الخ وفی ردالمحتار | در مختار میں ہے کہ وہ بیع منعقد ہے مگر لازم نہیں جیسے خیار کے ساتھ بیع الخ، اور ردالمحتار میں

1 درمختار کتاب البیوع باب الصرف مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۵۷ Page 639 of 715

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Arabic Box 1]: If both parties authorized it, it would be valid, but invalidity is not followed by authorization etc. The scholars' statement that it is 'invalid' means it will soon become invalid if authorization is not given, as we have researched in our annotation on Radd al-Muhtar. (T)

But since Zaid died before the authorization, the sale has now become completely void.

[Arabic Box 2]: Because a suspended sale becomes void upon the death of the owner, or even the contractor if he is not the owner, like a meddler (fuduli). Authorization by his heirs after him is not valid. In Durr al-Mukhtar, its ruling is that it accepts authorization while the seller, buyer, and the sold item exist. Similarly, the existence of the owner is also a condition. Therefore, due to the sale becoming void upon his death, authorization by his heir is not valid. (Summary/T)

So, for Amr, who is not the owner, to gift this house to the heirs of Zaid in the name of the owners themselves is completely meaningless. If, for the sake of honesty and integrity or fearing future repercussions for himself or his heirs, he wants the certified sale deed—which was purely fictional—to become ineffective, then even for this, a meaningless gift is not needed. He should announce and bring witnesses, or have an affidavit verified stating that 'I am not the owner of this house, the sale in my name was merely a fictional sale.' This declaration of gift would be even stronger, as there are conditions for a gift. Then, as long as there is no obstacle from the impediments of a gift, there is also the right of revocation. And if he chooses the form of a gift, he should do it in such a way that no Shariah objection remains, and there is no right of revocation in the future, then this...

---

1. Radd al-Muhtar, Book of Sales, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 3/7.
2. Durr al-Mukhtar, Book of Sales, Section on the Meddler, Matba' Mujtabai, Delhi, 2/32.

फतावा रज़विया (खंड 17)

[अरबी बॉक्स 1]: यदि दोनों पक्षों ने इसकी अनुमति दे दी होती तो यह वैध होता, जबकि अमान्य को अनुमति प्राप्त नहीं होती आदि। फ़ुक़हा (विधिवेत्ताओं) का कथन कि वह विक्रय 'बातल' (अमान्य) है, इसका अर्थ यह है कि यदि अनुमति न दी गई तो वह जल्द ही अमान्य हो जाएगा, जैसा कि हमने रद-उल-मुह्तार पर अपनी टिप्पणी में इसकी जांच की है। (त)

लेकिन चूंकि ज़ैद की मृत्यु अनुमति से पहले हो गई, इसलिए अब विक्रय पूरी तरह से अमान्य (बातिल) हो गया है।

[अरबी बॉक्स 2]: क्योंकि निलंबित विक्रय (मवक़ूफ़ बै') मालिक की मृत्यु से अमान्य हो जाता है, बल्कि संविदाकार (आक़िद) की मृत्यु से भी, भले ही वह मालिक न हो, जैसे कि फ़ुज़ूली (अनधिकृत व्यक्ति) की मृत्यु से। और उसकी मृत्यु के बाद उसके वारिसों की अनुमति से विक्रय वैध नहीं होता। 'दुर्र-ए-मुख्तार' में है कि इसका नियम यह है कि यह अनुमति को स्वीकार करता है जब तक कि विक्रेता, खरीदार और बेची गई वस्तु मौजूद हों। इसी तरह मालिक का मौजूद होना भी एक शर्त है। अतः उसकी मृत्यु से विक्रय के अमान्य हो जाने के कारण, उसके वारिस की अनुमति मान्य नहीं है। (त)

अतः अम्र, जो मालिक नहीं है, का इस घर को ज़ैद के वारिसों को मालिकों के नाम पर उपहार (हिबा) में देना पूरी तरह अर्थहीन है। और यदि वह ईमानदारी और अमानत के नाते या भविष्य में स्वयं या अपने वारिसों की बेगुनाही की चिंता में चाहता है कि प्रमाणित बिक्रीनामा (बै'नामा), जो विशुद्ध रूप से काल्पनिक था, प्रभावहीन हो जाए, तो इसके लिए भी इस अर्थहीन उपहार की आवश्यकता नहीं है। उसे घोषणा कर देनी चाहिए और गवाह बना लेने चाहिए, या एक शपथ पत्र प्रमाणित करवा लेना चाहिए कि 'मैं इस घर का मालिक नहीं हूँ, मेरे नाम पर हुई बिक्री केवल एक काल्पनिक बिक्री थी'। यह उपहार की घोषणा और भी सशक्त होगी क्योंकि उपहार के लिए कुछ शर्तें होती हैं। फिर जब तक उपहार की बाधाओं में से कोई बाधा न हो, वापस लेने का अधिकार (इख़्तियार-ए-रुजू') भी होता है। और यदि वह उपहार का तरीका ही चुनता है, तो उसे इस तरह से करना चाहिए कि कोई शरीयत संबंधी आपत्ति न रहे और भविष्य में वापस लेने का अधिकार भी न रहे, तो यह...

---

1. रद-उल-मुह्तार, किताबुल बुयू', दार एह्या अत-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 3/7।

2. दुर-ए-मुख्तार, किताबुल बुयू', फ़ुज़ूली का अध्याय, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 2/32।

पृष्ठ 640/715

انھما لو اجازاہ جاز والباطل لاتلحقہ الاجازۃ ۱ لخ و قولھم باطل ای سیبطل ان لم یجز کما حققناہ فیما علقناہ علی ردالمحتار۔ ہے کہ اگر عاقدین نے اس کی اجازت دے دی تو جائز ہوگی حالانکہ باطل کو اجازت لاحق نہیں ہوتی الخ اور فقہاء کا قول کہ وہ بیع باطل ہے اس کا معنی یہ ہے کہ عنقریب باطل ہو جائے گی اگر اس کی اجازت نہ دی گئی جیسا کہ ہم نے ردالمحتار پر اپنی تعلیق میں اس کی تحقیق کی ہے۔ (ت)

مگر جبکہ قبل اجازت زید نے وفات پائی اب بیع باطل محض ہو گئی۔

فان البیع الموقوف یبطل بموت المالك بل والعاقد و ان لم یکن مالکا کالفضولی ولا تصح اجازۃ ورثتہ بعدہ فی الدرالمختار حکمہ قبول الاجازۃ اذا کان البائع والمشتری والمبیع قائما وکذا یشترط قیام صاحب المتاع ایضا فلا تجوز اجازۃ وارثہ لبطلانہ بموتہ ۲ ۔ (ملخصاً) کیونکہ موقوف بیع مالک کی موت سے باطل ہو جاتی ہے بلکہ عاقد اگرچہ وہ مالک نہ ہو اس کی موت سے بھی باطل ہو جاتی ہے جیسے فضولی کی موت سے، اور اس کی موت کے بعد اس کے وارث کی اجازت سے بیع صحیح نہیں ہوتی، درمختار میں ہے اس کا حکم یہ ہے کہ یہ اجازت کو قبول کرتی ہے جبکہ بائع مشتری اور مبیع قائم ہوں اور اسی طرح مالک کا قائم ہونا بھی شرط ہے چنانچہ اسکی موت سے بیع کے باطل ہو جانے کی وجہ سے اس کے وارث کی اجازت نہیں۔ (ت)

تو عمر و غیر مالک کا اس مکان کو وارثانِ زید خود مالکان کے نام ہبہ کرنا محض بے معنی ہے اور اگر براہِ دیانت و امانت اپنے ورثہ یا آئندہ خود اپنی بریت کے اندیشہ سے چاہتا ہے کہ بیعنامہ مصدقہ جو محض فرضی تھا بے اثر ہو جائے تو اس کے لیے بھی اس ہبہ بے معنی کی ضرورت

نہیں اعلان کر دے اور گواہ کرالے یا اقرار نامہ تصدیق کرادے کہ میں اس مکان کا مالک نہیں میرے نام بیع صرف بیع فرضی تھی یہ اظہارِ ہبہ محکم تر بھی ہو گا کہ ہبہ کے لئے شروط ہیں پھر جب تک موانع ہبہ سے کوئی مانع نہ ہو اختیارِ رجوع بھی ہوتا ہے اور اگر صورت ہبہ ہی اختیار کرے اس کی شکلیں اس طور پر کر دے کہ کوئی شرعی اعتراض نہ رہے نہ آئندہ اختیارِ رجوع ہو تو یہ

---

۱ ردالمحتار کتاب البیوع دار احیاء التراث العربی بیروت ۳/۷ ۲ درمختار کتاب البیوع فصل فی الفضولی مطبع مجتبائی دہلی ۳۲/۲

Fatawa Razawiyya, Volume 17

...is also a way to achieve this laudable purpose.

"Indeed, actions depend upon intentions, and every man shall have but that which he intended." Indeed, actions depend on intentions, and for every person, there is only that which he intended. (T)

Just as that sale was presented as valid and effective in the eyes of the people, similarly, this will appear as a complete and binding gift in the eyes of the people, thus providing protection from fear. And Allah, the Glorified and Exalted, knows best.

Problem 270: What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid, for example, made a fictitious sale of a plot of a house and a portion of a shop to Bakr for a specific reason and ensured full possession for Bakr. The matter to be clarified is whether Bakr, by virtue of this fictitious contract, will legally become the owner of the house and the shop portion or not? Explain and be rewarded.

Answer: In reality, if it is proven through Sharia evidence or Bakr's admission that the sale was fictitious, then Bakr is by no means the owner of the sold item, even if possession was taken with the seller's consent.

"For it is a concluded sale contingent upon the consent of the two contracting parties. In a contingent sale, ownership cannot be acquired through possession, as we have established in our commentary on Rad al-Muhtar. And Allah, the Glorified and Exalted, knows best." Because this sale is concluded but contingent upon the permission of the contracting parties, and in a contingent sale, ownership cannot be obtained through possession, as we have researched and clarified in our commentary on Rad al-Muhtar. And Allah, the Glorified and Exalted, knows best. (T)

---

1. Sahih Bukhari, Chapter: How Revelation Started, Qadeemi Kutub Khana Karachi, 2/1 Page 641 of 715

फ़तावा रज़विया, जिल्द 17

...भी इस प्रशंसनीय उद्देश्य को प्राप्त करने का एक तरीका है।

"निश्चित रूप से कर्म नियतों पर निर्भर हैं, और हर व्यक्ति के लिए वही है जिसकी उसने नियत की।" बेशक, कर्मों का दारोमदार तो नियतों पर है और हर व्यक्ति के लिए वही है जिसकी उसने नियत की। (त)

जिस तरह लोगों की नज़र में वह बिक्री सही और प्रभावी दिखाई गई, उसी तरह लोगों की नज़र में यह पूर्ण और अनिवार्य उपहार के रूप में दिखाई देगा, जिससे डर से सुरक्षा प्राप्त होगी। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला 270: धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं कि ज़ैद ने, उदाहरण के लिए, एक घर का टुकड़ा और एक दुकान का हिस्सा किसी विशेष कारण से बक्र को काल्पनिक बिक्री (फ़र्ज़ी सेल) करके बक्र के लिए पूर्ण कब्ज़ा हासिल करवा दिया। सवाल यह है कि क्या बक्र इस काल्पनिक अनुबंध के कारण कानूनी तौर पर घर और दुकान के हिस्से का मालिक होगा या नहीं? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

जवाब: वास्तव में यदि शरिया साक्ष्य या बक्र के स्वीकारोक्ति से यह साबित हो जाता है कि बिक्री काल्पनिक रूप से की गई थी, तो बक्र किसी भी तरह से बेची गई वस्तु का मालिक नहीं है, भले ही कब्ज़ा विक्रेता की सहमति से लिया गया हो।

"क्योंकि यह एक संपन्न बिक्री है जो दोनों अनुबंध करने वाले पक्षों की अनुमति पर निर्भर है। एक लंबित (मौकूफ़) बिक्री में, कब्ज़े के माध्यम से स्वामित्व प्राप्त नहीं किया जा सकता है, जैसा कि हमने 'रद अल-मुहतार' पर अपनी टिप्पणी में स्थापित किया है। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला सबसे बेहतर जानता है।" क्योंकि यह बिक्री संपन्न (मुनक़िद) है लेकिन अनुबंध करने वालों की अनुमति पर निर्भर है, और लंबित बिक्री में कब्ज़े से स्वामित्व प्राप्त नहीं हो सकता, जैसा कि हमने रद अल-मुहतार पर अपनी टिप्पणी में इसकी जाँच कर दी है। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है। (त)

---

1. सहीह बुखारी, अध्याय: कैसे रहस्योद्घाटन शुरू हुआ, कदीमी कुतुब खाना कराची, 2/1 पेज 641 का 715

بھی ایک صورت اس مقصود محمود کے حصول کی ہے،

وانما الاعمال بالنیات وانما لکل امرئ مانوی ۱ بیشک عملوں کا دار ومدار تو نیتوں پر ہے اور ہر شخص کے لئے وہی ہے جس کی اس نے نیت کی۔ (ت)

جس طرح نظر خلق میں وہ بیع صحیح نافذ ظاہر کی گئی یونہی نظر خلق میں یہ ہبہ تامہ لازمہ ظاہر ہوگا تو اندیشہ سے تحفظ ہوجائے گا، واللہ سبحانہ وتعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۷۰ : کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے مثلاً ایک قطعہ مکان و ایک حصہ دکان بدست بکر کسی وجہ خاص سے بیع فرضی کرکے قبضہ تام واسطے بکر کے حاصل کرا دیا دریافت طلب امر یہ ہے کہ آیا بکر بہ سبب اس عقد فرضی کے مالک مکان و حصہ دکان کا شرعاً ہوگا یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب : فی الواقع اگر بینہ شرعیہ یا اقرار بکر سے ثابت ہے کہ بیع فرضی طور پر کی گئی ہے تو بکر ہرگز مالک مبیع نہیں اگرچہ قبضہ برضائے بائع کیا ہو،

فانه بیع منعقد موقوف علی اجازتهما الموقوف لا یقدر الملك بالقبض کما حققناه فیما علقناه فی رد المحتار، واللہ سبحانہ وتعالٰی اعلم۔ کیونکہ یہ بیع منعقد عاقدین کی اجازت پر موقوف ہے اور موقوف میں قبضہ سے ملکیت حاصل نہیں ہو سکتی جیسا کہ ہم نے رد المحتار پر اپنی تعلیق میں اس کی تحقیق کردی ہے، اور اللہ سبحانہ وتعالٰی بہتر جانتا ہے۔ (ت)

---

۱ صحیح بخاری باب کیف کان بدء الوحی قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/۱ Page 641 of 715

Fatawa Razawiya Volume 17 (17)

Chapter on Sale of Loyalty (Bai' al-Wafa) (Explanation of Bai' al-Wafa)

Problem 72: From Rampur State via Mulla Zarif Bungalow adjacent to the Mosque, sent by Maulvi Muhammad Aleem-ud-Din Sahib Islamabadi, 18 Jumadi al-Akhir 1314 AH.

[Arabic Column]: What is your statement, may Allah your Lord have mercy on you, regarding the permissibility of Bai' al-Wafa and profiting from it? Is it permissible or not? Explain with evidence from the Book, you will be rewarded by the Bestower on the Day of Reckoning. [Urdu Column]: What is your ruling, may Allah Almighty have mercy on you, regarding the permissibility of Bai' al-Wafa and obtaining benefit from it? Is it permissible or not? Explain with reasoning through references from books, you will be rewarded by Allah Almighty, the Great Giver on the Day of Reckoning. (T)

The Answer: [Arabic Column]: This issue has long-reaching implications, numerous opinions, a vast field of discussion, and is difficult to grasp. We have detailed it by the grace of Allah Almighty in some of our writings, and that which is established and... [Urdu Column]: This issue is one with long fringes, many opinions, and extensive debates, and by the grace of Allah Almighty, we have explained it in detail in some of our writings, and that point which is proven in it and...

Page 643 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द सत्रह (17)

बाब बै अल-वफ़ा (बै अल-वफ़ा का विवरण)

मसला 72: रामपुर रियासत से, मुल्ला ज़रीफ़ बंगला, मस्जिद के पास, मौलवी मोहम्मद अलीमुद्दीन साहिब इस्लामाबादी द्वारा प्रेषित, 18 जमादी अल-आख़िर 1314 हिजरी।

[अरबी कॉलम]: आपका क्या कहना है, अल्लाह आपका रब आप पर रहम फ़रमाए, बै अल-वफ़ा के जायज़ होने और उससे फ़ायदा उठाने के बारे में, क्या यह जायज़ है या नहीं? किताब की दलीलों के साथ स्पष्ट करें, हिसाब के दिन वहाब (अता करने वाले) से अज्र पाएंगे। [उर्दू कॉलम]: आपका क्या इर्शाद है, अल्लाह तआला आप पर रहम फ़रमाए, बै अल-वफ़ा के जवाज़ और उससे नफ़ा हासिल करने के बारे में क्या यह जायज़ है या नहीं? किताबों के हवाले से मुदल्लल (दलील के साथ) बयान फ़रमाएं, हिसाब वाले दिन बहुत अता फ़रमाने वाले अल्लाह तआला से अज्र दिए जाओगे। (त)

उत्तर (अल-जवाब): [अरबी कॉलम]: यह मसला लंबी पूंछ (दूरगामी परिणामों) वाला, बहुत सारे कथनों वाला, विस्तृत क्षेत्र वाला और पहुँच से दूर है। हमने अल्लाह तआला की तौफ़ीक़ से अपनी कुछ तहरीरों में इसका विस्तार से वर्णन किया है और वह जो स्थापित हुआ और... [उर्दू कॉलम]: यह मसला लंबे दामनों वाला, बहुत ज़्यादा अक़वाल (कथनों) वाला और वसीअ (व्यापक) मुबाहिस (बहसों) वाला है, और हमने अल्लाह तआला की तौफ़ीक़ से अपनी बाज़ तहरीरों (लेखों) में इसकी तफ़सील बयान कर दी है और वह बात जो इसमें साबित व...

فتاوٰی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

باب بیع الوفاء (بیع وفاء کا بیان)

مسئلہ ۷۲: از ریاست رامپور بزریہ ملا ظریف بنگلہ متصل مسجد مرسلہ مولوی محمد علیم الدین صاحب اسلام آبادی ۱۸ جمادی الآخر ۱۳۱۴ھ

ما قولکم رحمکم اللہ ربکم فی جواز بیع الوفاء و الانتفاع بہ ھل ھو جائز اما لا،بینوا بادلۃ الکتاب توجروامن الوھاب فی یوم الحساب | آپ کا کیا ارشاد ہے اللہ تعالٰی آپ پر رحم فرمائے بیع الوفاء کے جواز اور اس سے نفع حاصل کرنے کے بارے میں کیا یہ جائز ہے یا نہیں ؟ کتابوں کے حوالہ سے مدلل بیان فرمائیں، حساب والے دن بہت عطا فرمانے والے اللہ تعالی سے اجر دئے جاؤ گے۔ (ت)

الجواب: المسئلۃ طویلۃ الاذیال کثیرۃ الاقوال وسیعۃ المجال بعیدۃ المنال وقد فصلنا ھا بتوفیق اللہ تعالی فی بعض تحریراتنا والذی تقرر و | یہ مسئلہ لمبے دامنوں والا، بہت زیادہ اقوال والا اور وسیع مباحث والا ہے، اور ہم نے اللہ تعالٰی کی توفیق سے اپنی بعض تحریروں میں اس کی تفصیل بیان کر دی ہے اور وہ بات جو اس میں ثابت و

Fatawa Ridawiyya (Volume 17)

It is established that 'Bay' al-Wafa' (sale by way of pledge) is a mortgage, nothing more and nothing less, and it does not differ from it in any way. Allama Khair al-Din al-Ramli stated in his Fatawa that the majority of jurists hold it is a mortgage and does not differ from a mortgage in any legal ruling. The Leading Imam said, "I told Imam Abu al-Hasan al-Maturidi that this form of sale has spread among people and contains great corruption, while your fatwa is that it is a mortgage. I also hold this view. Therefore, it is appropriate that we gather the Imams and agree upon this, making it public." He replied, "Today our fatwa is reliable and public among people. So, whoever opposes us should come forward and present their evidence." There are eight opinions regarding it, and the majority of people agree that it is a mortgage. It is also mentioned therein that Bay' al-Wafa' is a mortgage, etc. In 'al-'Uqud al-Durriyya', in the Book of Marriage, the chapter on the guardian, it is stated that Bay' al-Wafa' is equivalent to a mortgage, etc. And in the same work, it says Bay' al-Wafa' is like a mortgage as the jurists have explicitly stated. Then he mentioned texts indicating this. Therefore, it is not permissible for this person who...

1. Fatawa Khayriyya, Book of Sales, Dar al-Ma'rifah Beirut, 1/26 - 225
2. Fatawa Khayriyya, Book of Sales, Dar al-Ma'rifah Beirut, 1/226
3. Al-'Uqud al-Durriyya, Book of Marriage, Arg Bazar Kandahar Afghanistan, 1/18
4. Al-'Uqud al-Durriyya, Book of Mortgage, Arg Bazar Kandahar Afghanistan, 2/254

फतावा रिज़विया (जिल्द 17)

यह सिद्ध है कि 'बय अल-वफ़ा' (वफ़ा की बिक्री) एक गिरवी (रहन) है, इसमें न कुछ अधिक है और न ही किसी चीज़ में इसके विपरीत है। अल्लामा खैर अल-दीन रम्ली ने अपने फतवों में कहा है कि अधिकांश न्यायविदों का मत है कि यह एक गिरवी है और किसी भी कानूनी आदेश में गिरवी से अलग नहीं है। सैय्यद इमाम ने कहा, "मैंने इमाम अबू अल-हसन अल-मातुरीदी से कहा कि यह बिक्री लोगों में फैल गई है और इसमें बड़ा भ्रष्टाचार है, जबकि आपका फतवा है कि यह गिरवी है। मैं भी इसी राय का हूँ। इसलिए, यह उचित है कि हम इमामों को इकट्ठा करें और इस पर सहमत हों, और इसे लोगों के बीच सार्वजनिक करें।" उन्होंने उत्तर दिया, "आज हमारा फतवा विश्वसनीय है और लोगों के बीच सार्वजनिक है। इसलिए, जो कोई भी हमारा विरोध करता है, उसे सामने आना चाहिए और अपना प्रमाण देना चाहिए।" इसके बारे में आठ राय हैं, और अधिकांश लोग सहमत हैं कि यह एक गिरवी है। इसमें यह भी उल्लेख किया गया है कि बय अल-वफ़ा एक गिरवी है, इत्यादि। 'अल-उकूद अल-दुर्रिया' में, निकाह (विवाह) की पुस्तक में, संरक्षक (वली) के अध्याय में कहा गया है कि बय अल-वफ़ा एक गिरवी के समान है, इत्यादि। और उसी में कहा गया है कि बय अल-वफ़ा एक गिरवी की तरह है जैसा कि न्यायविदों ने स्पष्ट रूप से बताया है। फिर उन्होंने इस पर संकेत देने वाले ग्रंथों का उल्लेख किया। अत; इस व्यक्ति के लिए अनुमति नहीं है जो...

1. फतावा खैरिया, बिक्री की किताब, दार अल-मआरिफ बेरुत, 1/26 - 225
2. फतावा खैरिया, बिक्री की किताब, दार अल-मआरिफ बेरुत, 1/226
3. अल-उकूद अल-दुर्रिया, निकाह की किताब, अर्ग बाज़ार कंधार अफ़गानिस्तान, 1/18
4. अल-उकूद अल-दुर्रिया, गिरवी की किताब, अर्ग बाज़ार कंधार अफ़गानिस्तान, 2/254

पृष्ठ 644 का 715

ثابت شدہ ہے یہ ہے کہ بیع الوفاء رہن ہے نہ اس سے کچھ زائد اور نہ ہی کسی شئی میں اس کے مخالف ہے، علامہ خیر الدین رملی نے اپنے فتاوی میں فرمایا کہ اکثر فقہاء اسی پر ہیں کہ یہ رہن ہے اور کسی حکم میں رہن سے جدا نہیں ہے سید امام کا قول ہے کہ میں نے امام ابو الحسن ماتریدی سے کہا کہ یہ بیع لوگوں میں پھیل گئی اور اس میں فساد عظیم ہے جبکہ آپ کا فتوٰی ہے کہ یہ رہن ہے اور میں بھی اسی کا قائل ہوں تو بہتر ہے کہ ہم ائمہ کو جمع کر کے اس پر متفق کریں اور اس کو لوگوں میں ظاہر کریں تو انہوں نے فرمایا کہ آج ہمارا فتوٰی معتبر اور لوگوں میں ظاہر ہے لہذا جو ہماری مخالفت کرے اس کو چاہئے کہ وہ خود کو سامنے لائے اور دلیل قائم کرے بیع الوفاء میں آٹھ اقوال ہیں اور اس کے رہن ہونے پر لوگوں کی اکثریت متفق ہے اھ اور یہ بھی اسی میں ہے کہ بیع الوفاء رہن ہے الخ، عقود الدریۃ کتاب النکاح کے باب الولی میں ہے کہ بیع الوفاء بمنزلہ رہن کے ہے الخ اور اسی میں ہے کہ بیع الوفاء رہن کے بمنزلہ ہے جیسا کہ فقہاء نے اس کی تصریح کی ہے پھر اس میں ایسی نصوص ذکر کی گئی ہیں جو اس کے رہن ہونے پر دلالت کرتی ہیں تو ایسی صورت میں اس...

1 فتاوٰی خیریہ کتاب البیوع دارالمعرفۃ بیروت ۱/۲۶ - ۲۲۵ 2 فتاوٰی خیریہ کتاب البیوع دارالمعرفۃ بیروت ۱/۲۲۶ 3 العقود الدریۃ کتاب النکاح ارگ بازار قندھار افغانستان ۱/۱۸ 4 العقود الدریۃ کتاب الرھن ارگ بازار قندھار افغانستان ۲/۲۵۴

Volume 17 (17) Fatawa-e-Razvia

[Arabic Box]: He is a purchaser in form but a pledgee in essence of benefiting from his purchased mortgaged property unconditionally, as is the current fatwa due to knowledge of the objectives of the people of this time. And it is known legally that what is customary is like what is stipulated, as stated here by Allama Sayyid al-Tahtawi, and then by Allama Sayyid al-Shami in the margins of al-Durr. I have given fatwa based on this, and it is the clear and manifest truth. And Allah knows best.

[Urdu Translation of the Box]: For a person who appears to be a buyer but is in reality a pledgee, it is absolutely not permissible to derive benefit from the purchased pledged item. Knowing the intentions of the people of current times, the fatwa is based on this. It is legally established that what is common practice (urf) is treated as a stipulated condition. As Allama Sayyid al-Tahtawi and then Allama Shami in his commentary on 'Ad-Durr' explained. Indeed, I have given a fatwa on this, and this is the clear and manifest truth. And Allah knows best. (T)

Problem 727: From Mandwa town, Fatehpur district, sent by Hafiz Mohiuddin Sahib, 10 Jamadi al-Ula 1337 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid took some of Amr's property on the condition that when Amr pays Zaid's money back, he will take his property back. Until the money is paid, Zaid pays the government land tax from the property's income. If any money remains after paying the tax, and Zaid uses it for himself, is it permissible for Zaid to take this surplus or not? Will it be considered usury (interest) or not? If it is usury, will the prayers of those people who do not take interest themselves but only pay it to moneylenders be valid behind Zaid?

The Answer: This is a case of 'Bay' al-Wafa' (sale with a right of redemption) and its ruling is like that of a mortgage (pledge). Any benefit derived from it is forbidden (haraam). It is stated in the Hadith: [Arabic]: Every loan that brings a benefit is usury. [Urdu]: A loan that draws a profit is usury. (T) Performing prayer behind such a person is 'Makruh' (disliked), even if the followers (muqtadis) also take or give usury. And Allah Almighty knows best.

Problem 728: From Chhatari State, Madrassah Mahmoodia, Bulandshahr district, sent by Amir Hasan, a student, 14 Rajab 1337 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid sold some of his land or house or shop to Amr...

Kanz al-Ummal Hadith 15516, Muassasat ar-Risalah Beirut 6/238 Page 645 of 715

जिल्द सत्रह (17) फ़तावा-ए-रज़विया

[अरबी बॉक्स]: वह बाह्य रूप से खरीदार है लेकिन अर्थ में गिरवी रखने वाला (मुर्तहिन) है जो गिरवी रखी हुई वस्तु से बिना किसी शर्त के लाभ उठाता है, जैसा कि वर्तमान समय के लोगों के उद्देश्यों के ज्ञान के कारण अभी फतवा है। और यह शरीयत में ज्ञात है कि जो प्रथा (उर्फ़) में ज्ञात हो वह वैसी ही है जैसे वह शर्त में हो, जैसा कि यहाँ अल्लामा सैय्यद तहतावी ने और फिर अल्लामा सैय्यद शामी ने 'अद-दुर्र' के हाशिये में बताया है। मैंने इसी पर फतवा दिया है और यही स्पष्ट और प्रकट सत्य है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

[बॉक्स का उर्दू अनुवाद]: उस व्यक्ति के लिए जो प्रत्यक्ष रूप से खरीदार और वास्तव में मुर्तहिन (गिरवी रखने वाला) है, बिल्कुल जायज़ नहीं है कि वह उस खरीदी हुई गिरवी चीज़ से लाभ प्राप्त करे और अब ज़माने वालों के उद्देश्यों को जानते हुए इसी पर फतवा है, और तहकीक यह बात शरई तौर पर मालूम है कि जो चीज़ उर्फ़(प्रथा) में तयशुदा हो वह वैसी ही होती है जैसे उसकी शर्त लगाई गई हो जैसा कि इस स्थान पर अल्लामा सैय्यद तहतावी ने फिर अल्लामा शामी ने 'दुर' के हाशिये में इसका लाभ दिया और बेशक मैंने इसी पर फतवा दिया और यही वाज़ेह (स्पष्ट) और खुला हक़ है, और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 727: कस्बा मंडवा, जिला फतेहपुर से, प्रेषक हाफ़िज़ मुहीउद्दीन साहब, 10 जमादी-उल-उला 1337 हिजरी। क्या फरमाते हैं उलमा-ए-दीन इस मसले में कि ज़ैद ने अम्र की कुछ जायदाद इस तरह ली कि अम्र जब रुपया ज़ैद का अदा कर दे तो अपनी जायदाद वापस ले ले और जब तक रुपया अदा न हो तब तक ज़ैद उस जायदाद का सरकारी लगान उसी जायदाद से अदा करे और जो रुपया उस जायदाद के सरकारी लगान से बढ़ जाए वह रुपया ज़ैद अपने उपयोग में लाए, तो क्या रुपया बढ़ोतरी का ज़ैद को लेना जायज़ है या नहीं? सूद होगा या नहीं? अगर सूद होगा तो उन लोगों की नमाज़ जो सूद लेते नहीं हैं सिर्फ महाजनों को सूद देते हैं ज़ैद के पीछे होगी या नहीं?

जवाब: यह सूरत 'बै-अल-वफ़ा' की है और इसका हुक्म रहन (गिरवी) की तरह है और इससे जो लाभ प्राप्त हो वह हराम है, हदीस में फ़रमाया गया: [अरबी]: हर वह ऋण जो लाभ खींचे, वह सूद है। [उर्दू]: जो ऋण लाभ खींचे वह सूद है। (त) इसके पीछे नमाज़ मकरूह है चाहे मुक्तदी भी सूद लेने या देने वाले हों। वल्लाहु तआला आलम।

मसला 728: रियासत छत्तारी, मदरसा महमूदिया, जिला बुलंदशहर से, प्रेषक अमीर हसन छात्र, 14 रजब 1337 हिजरी। क्या फरमाते हैं उलमा-ए-दीन इस मसले में कि ज़ैद ने अपनी कोई ज़मीन या मकान या दुकान अम्र के हाथ...

कन्ज़ुल उम्माल हदीस 15516, मुअस्ससतु-र-रिसाला बेरुत 6/238 पेज 645 का 715

ھو مشتر صورۃ مرتھن معنی الانتفاع بمشریہ المرھون مطلقا علی ما ھو الفتوی الان للعلم بمقاصد اھل الزمان وقد علم شرعا ان المعھود عرفا کالمعھود شرطا کما افادہ ھھنا العلامۃ السید الطحطاوی ثم العلامۃ السید الشامی فی حواشی الدر وقد افتیت بہ و ھو الحق الواضح جھارا، واللہ تعالٰی اعلم۔ اس شخص کے لئے جو بظاہر مشتری اور در حقیقت مرتہن ہے بالکل جائز نہیں کہ وہ اس خریدی ہوئی مرتہن شے سے نفع حاصل کرے اور اب اہل زمانہ کے مقاصد کو جانتے ہوئے اسی پر فتوی ہے، اور تحقیق یہ بات شرعا معلوم ہے کہ جو چیز عرف میں طے شدہ ہو وہ ایسے ہی ہوتی ہے جیسے اس کی شرط لگائی گئی ہو جیسا کہ اس مقام پر علامہ سید طحطاوی نے پھر علامہ شامی نے در کے حواشی میں اس کا فائدہ دیا اور بیشک میں نے اسی پر فتوی دیا اور یہی واضح اور کھلا حق ہے، اور اللہ تعالٰی بہتر جانتا ہے۔(ت)

مسئلہ ۷۲۷: از قصبہ منڈوا ضلع فتحپور مرسلہ حافظ محی الدین صاحب ۱۰ جمادی الاولی ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے عمرو کی کچھ جائیداد اس طرح پر لیا کہ عمرو جب روپیہ زید کا ادا کر دے تو اپنی جائیداد واپس لے اور جب تک روپیہ ادا نہ ہو تب تک زید اس جائیداد کا لگان گورنمنٹی اسی جائیداد سے ادا کرے اور جو روپیہ اس جائیداد کا لگان گورنمنٹی سے بڑھے وہ روپیہ زید اپنے تصرف میں لا کر کیا کرے تو روپیہ بڑھتی کا زید کو لینا جائز ہے یا نہیں؟ سود ہوگا یا نہیں؟ اگر سود ہو گا تو ان لوگوں کی نماز جو سود لیتے نہیں ہیں صرف مہاجنوں کو سود دیتے ہیں زید کے پیچھے ہوگی یا نہیں؟ الجواب: یہ صورت بیع بالوفاء کی ہے اور اس کا حکم مثل رہن کے ہے اور اس سے جو منفعت حاصل ہو حرام ہے، حدیث میں فرمایا: کل قرض جر منفعۃ فھو ربوا جو قرض نفع کھینچے وہ سود ہے۔ (ت) اس کے پیچھے نماز

مکروہ ہے اگرچہ مقتدی بھی سود لینے یا دینے والے ہوں۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ مسئلہ ۷۲۸: از ریاست چھتاری مدرسہ محمودیہ ضلع بلند شہر مرسلہ امیر حسن طالب علم ۱۴ رجب ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے اپنی کوئی زمین یا مکان یا دکان عمرو کے ہاتھ

Vol. 17 Fatawa-e-Rizvia

Question: A sale was made for one hundred rupees and a formal sale deed was written. However, before or after the sale deed, a firm promise was taken from the adult buyer: "When I repay your full price, you must return my sold property to me, and until then, you continue to benefit from the sold property." The buyer willingly accepted this. Is this sale valid, and is it permissible for the buyer to benefit from the property until it is returned?

Answer: The Answer: If, in reality, they made an absolute (unconditional) sale and this condition was not considered part of it, and it was just a separate promise made apart from the sale, then the sale is valid and the buyer's enjoyment of it is permissible. Otherwise, the research shows that it is not a sale but a mortgage (pledge), and benefiting from it is forbidden for the buyer. The way for this sale to be valid without any doubt is: if this agreement was made before the contract, then at the time of contracting, they should say, "We have abandoned that previous agreement and are now making an absolute sale." And if this agreement happens after the contract, it should not be in the form of a condition but merely a promise. It is stated in Radd al-Muhtar: "In Jami' al-Fusuulayn as well: If the sale is mentioned without a condition, then the condition is mentioned by way of a promise, the sale is valid."^1 In Jami' al-Fusuulayn, it says that if the sale was mentioned without a condition and then the condition was mentioned as a promise, the sale is valid. (Trans.)

In the same source: "In Jami' al-Fusuulayn as well: If they stipulated a corrupt condition before the contract and then contracted, the contract is not invalidated. I say: it ought to be corrupt if they agreed on basing the contract upon it, as they explicitly stated regarding sham sales (bay' al-hazl), as will come at the end of the [book of] sales. Khayr al-Din al-Ramli was asked about two men who agreed on a sale of loyalty (bay' al-wafa') before its contract, then contracted the sale devoid of the condition, so he answered by saying that it was explicitly stated..." In Jami' al-Fusuulayn, it is also mentioned that if the contracting parties set a corrupt condition before the contract and then performed the contract, the contract will not be void. I say that if both agreed to base the contract on that corrupt condition, then the contract should be corrupt, as the jurists have clarified regarding sham sales, which will appear at the end of the discussion on sales. Allama Khayr al-Din al-Ramli was asked about two persons who settled on the condition of Bay' al-Wafa' (sale of

loyalty) before the contract and then performed the contract without that condition, so he answered...

Footnote: ^1 Radd al-Muhtar, Book of Sales, Topic on Corrupt Conditions, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/120-121. Page 646 of 715

जिल्द 17 फतावा-ए-रिज़विया

प्रश्न: सौ रुपये के बदले में बिक्री की गई और विधिवत विक्रय विलेख (बैनामा) लिख दिया गया। लेकिन विलेख से पहले या बाद में वयस्क खरीदार से यह पक्का वादा लिया गया कि: "जब मैं तुझे तेरा पूरा मूल्य (समस्त राशि) चुका दूँ, तो तू मुझे मेरी बेची हुई वस्तु वापस कर देना और वापसी तक तू उस वस्तु से लाभ उठाता रहना।" खरीदार ने खुशी-खुशी इसे स्वीकार कर लिया। क्या यह बिक्री जायज़ है, और क्या खरीदार के लिए वस्तु के वापस होने तक उससे लाभ उठाना जायज़ है?

उत्तर: जवाब: यदि वास्तव में उन्होंने पूर्ण (अंतिम) बिक्री की है और इसमें यह शर्त शामिल नहीं थी, बल्कि बिक्री से अलग यह केवल एक वादा था, तो बिक्री सही हुई और खरीदार के लिए इससे लाभ उठाना जायज़ है। अन्यथा, शोध यह है कि वह बिक्री नहीं बल्कि गिरवी (रहना) है और खरीदार के लिए इससे लाभ उठाना हराम है। इस बिक्री के बिना किसी संदेह के सही होने की सूरत यह है कि: यदि यह समझौता अनुबंध से पहले हुआ था, तो अनुबंध करते समय वे यह कह लें कि "हम उस समझौते से पीछे हट गए हैं, अब हम अंतिम बिक्री कर रहे हैं।" और यदि अनुबंध के बाद यह समझौता हो, तो शर्त के रूप में न हो बल्कि केवल एक वादा हो। 'रद्दुल मुहतार' में है: "जामे अल-फुसुलैन में भी है: यदि बिक्री का उल्लेख बिना शर्त किया गया, फिर शर्त का उल्लेख वादे के तौर पर किया गया, तो बिक्री जायज़ है।"^1 जामे अल-फुसुलैन में है कि अगर बिक्री का ज़िक्र बिना शर्त किया गया, फिर शर्त को वादे के तौर पर ज़िक्र किया गया तो बिक्री जायज़ है। (त)

इसी में है: "जामे अल-फुसुलैन में यह भी है: यदि उन दोनों ने अनुबंध से पहले कोई भ्रष्ट शर्त लगाई, फिर अनुबंध किया, तो अनुबंध अमान्य नहीं होगा। मैं कहता हूँ कि: भ्रष्ट होना उचित है यदि वे दोनों उस अनुबंध का आधार उसी भ्रष्ट शर्त पर रखने पर सहमत हुए हों, जैसा कि फकीहों ने 'बैअ अल-हज़ल' (दिखावे की बिक्री) के बारे में स्पष्ट किया है, जैसा कि जल्द ही बिक्री की चर्चा के अंत में आएगा। अल्लामा खैरुल दीन अल-रमली से उन दो व्यक्तियों के बारे में पूछा गया जिन्होंने अनुबंध से पहले 'बैअ अल-वफ़ा' की शर्त तय की थी, फिर उस शर्त के बिना अनुबंध किया, तो आपने उत्तर दिया कि स्पष्ट रूप से..." जामे अल-फुसुलैन में यह भी है कि अगर अनुबंध करने वालों ने अनुबंध से पहले कोई भ्रष्ट शर्त लगाई फिर अनुबंध किया तो अनुबंध बातिल (अमान्य) न होगा। मैं कहता हूँ कि अगर वे दोनों अनुबंध की बुनियाद उस भ्रष्ट शर्त पर करने पर सहमत हुए तो अनुबंध फ़ासिद (दूषित) होना चाहिए जैसा कि फकीहों ने बैअ-ए-हज़ल के बारे में तसरीह (स्पष्टीकरण) की है, जैसा कि करीब ही बैअ की बहस के अंत में आएगा। अल्लामा खैरुल दीन रमली से उन दो शख्सों के बारे में सवाल

किया गया जिन्होंने अनुबंध से पहले बैअ-उल-वफ़ा की शर्त ठहराई फिर उस शर्त से खाली अनुबंध किया तो आपने...

फुटनोट: ^1 रद्दुल मुहतार, किताबुल बुयू, मतलब फिल-शर्त अल-फासिद, दार इहया अत-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 4/120-121. पृष्ठ 715 का 646

بعوض سو " روپیے کے فروخت کی اور باقاعدہ بیعنامہ لکھ پڑھ دیا مگر بیعنامہ سے پہلے یا بعد بالغ مشتری سے یہ وعدہ پختہ لے لیا کہ جب میں تجھے تیرا زر ثمن پورا پورا ادا کروں تو تو مجھے میری بیع واپس کردینا اور تا واپسی تو مبیع سے فائدہ اٹھاتے جانا، مشتری نے اس بات کو بطیب خاطر پسند کر لیا تو کیا یہ بیع جائز ہے اور مشتری کو تا واپسی مبیع سے فائدہ اٹھانا جائز ہے یا کیا؟

الجواب: اگر واقع میں انھوں نے بیع قطعی کی ہے اور اس میں یہ شرط ملحوظ نہیں، بیع سے جدا یہ ایک وعدہ ہو لیا تھا بیع صحیح ہوئی اور اس سے انتفاع مشتری کو جائز، ورنہ تحقیق یہ ہے کہ وہ بیع نہیں بلکہ رہن ہے اور مشتری کو اس سے انتفاع حرام، یہ بیع صحیح بلا دغدغہ ہونے کی صورت یہ ہے کہ اگر یہ قرار داد عقد سے پہلے ہوا تھا تو عقد کرتے وقت یہ کہہ لیں کہ ہم اس قرارداد سے باز آئے اب بیع قطعی کرتے ہیں اور اگر عقد کے بعد یہ قرارداد ہو تو بصورت شرط نہ ہو بلکہ صرف ایک وعدہ، ردالمحتار میں ہے: وفي جامع الفصولين ایضا لو ذکر البیع بلا شرط ثم ذکر الشرط علی وجه العدة جاز البیع۔۱۸ جامع الفصولین میں ہے کہ اگر بیع کا ذکر بلا شرط کیا پھر شرط کو بطور وعدہ ذکر کیا تو بیع جائز ہے۔(ت)

اسی میں ہے: في جامع الفصولین ایضا لو شرطا شرطاً فاسدا قبل العقد ثم عقدا لم یبطل العقد اه قلت وینبغی الفساد لو اتفقا علی بناء العقد علیه کما صرحوا به فی بیع الهزل کما سیأتي اخر البیوع وقد سئل الخیر الرملي عن رجلین تواضعا علی بیع الوفاء قبل عقده وعقدا البیع خالیا عن الشرط فأجاب بأنه صرح۔ جامع الفصولین میں یہ بھی ہے کہ اگر عاقدین نے عقد سے پہلے کوئی شرط فاسد لگائی پھر عقد کیا تو عقد باطل نہ ہوگا۔ اھ میں کہتا ہوں کہ اگر وہ دونوں عقد کی بناء اس شرط فاسد پر کرنے

پر متفق ہوئے تو عقد فاسد ہونا چاہئے جیسا کہ فقہاء نے بیع ہزل کے بارے میں تصریح کی ہے جیسا کہ عنقریب بیع کی بحث کے آخر میں آئے گا، علامہ خیر الدین رملی سے ان دو شخصوں کے بارے میں سوال کیا گیا جنہوں نے عقد سے پہلے بیع الوفاء کی شرط ٹھہرائی پھر اس شرط سے خالی عقد کیا تو آپ نے۔

1^8 ردالمحتار کتاب البیوع مطلب فی الشرط الفاسد دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۲۰-۱۲۱

Fatawa Razawiya Volume 17

[Table Content] In 'al-Khulasah', 'al-Fayd', 'at-Tatarkhaniyah' and others, [it is mentioned] that it will be based on what they both agreed upon[1], and Allah the Almighty knows best.

The same answer was given which was clarified in 'Khulasah', 'Faydh', and 'Tatarkhaniyah' etc., meaning this sale will be on the condition they had settled, and Allah the Almighty knows best. (T)

---

[1] Radd al-Muhtar, Kitab al-Buyu, Chapter on Invalid Conditions, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/121. Page 647 of 715

[तालिका सामग्री] 'अल-खुलासा', 'अल-फ़ैज़', 'अत-ततारखानिया' और अन्य में [उल्लेख है] कि यह उसी पर आधारित होगा जिस पर उन दोनों ने सहमति व्यक्त की थी[1], और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

वही जवाब दिया गया जिसकी व्याख्या 'खुलासा', 'फ़ैज़' और 'ततारखानिया' आदि में की गई है, यानी यह बिक्री उसी शर्त पर होगी जो उन्होंने तय की थी, और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

---

[1] रद अल-मुह्तार, किताब अल-बुयू, फासिद शर्तों का बयान, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 4/121। पेज 647 में से 715

[جدول کا مواد] في الخلاصة والفيض والتتار خانية وغيره بأنہ يكون على ماتواضعا 1، واللہ تعالٰی اعلم۔

وہی جواب دیا جس کی تصریح خلاصہ، فیض اور تاتارخانیہ وغیرہ میں کی گئی ہے یعنی یہ بیع اس شرط پر ہوگی جو انھوں نے ٹھہرائی تھی ، اور اللہ تعالٰی بہتر جانتا ہے۔(ت)

---

1 رد المحتار کتاب البیوع مطلب فی الشرط الفاسد دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۲۱ صفحہ 647 از 715

Volume 17 Fatawa Rizvia

Chapter: Miscellaneous Matters of Sale (Miscellaneous Rulings of Sale)

Problem 274: From the village of Devranyan: What do the scholars of religion say regarding the issue of whether charging more than the fixed price for a stamp is considered bribery or not? Explain and be rewarded.

Answer: This is not bribery, but rather taking a profit on one's own purchase. However, the point of discussion is that selling stamps itself does not seem to be free from detestability (dislike). And Allah Almighty knows best.

Problem 275: What do the scholars of religion say in this matter: Hindah sold her property to Zaid, her stepson. After receiving the price, she placed it back with Zaid as a trust. Zaid fixed a monthly allowance along with it. Hindah asked, "Why are you giving me a salary?" He said, "Consider it as the surplus/profit (taufeer) of that property." Hindah replied, "Since I am no longer the owner of it, how can there be a surplus?" He then said, "I am performing this service from my own pocket." Hindah said, "This is conditioned upon a hypothetical cause and is unlawful for me." Is it unlawful or lawful for Hindah to take this money? Explain and be rewarded.

Page 649 of 715

जिल्द 17 फ़तावा रज़विया

अध्याय: विक्रय के विविध मामले (विक्रय के विविध नियम)

मसअला 274: ग्राम देवरनियाँ से: धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि स्टाम्प की निर्धारित कीमत से अधिक लेना रिश्वत है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: यह रिश्वत नहीं है बल्कि अपनी खरीद पर लाभ लेना है, लेकिन चर्चा का विषय यह है कि स्टाम्प बेचना स्वयं ही नापसंदगी (कराहियत) से मुक्त नहीं लगता। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

मसअला 275: धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि हिंदह ने अपनी संपत्ति अपने सौतेले बेटे ज़ैद को बेच दी। कीमत प्राप्त करने के बाद, उसने उसे फिर से ज़ैद के पास अमानत के रूप में रख दिया। ज़ैद ने इसके साथ एक मासिक भत्ता (मुशाहरा) निर्धारित कर दिया। हिंदह ने पूछा, "आप मुझे वेतन क्यों दे रहे हैं?" उसने कहा, "इसे उस संपत्ति का लाभ (तौफीर) समझें।" हिंदह ने उत्तर दिया, "जब मैं इसकी मालिक ही नहीं रही, तो लाभ कैसा?" इस पर उसने कहा, "मैं यह सेवा अपनी जेब से कर रहा हूँ।" हिंदह ने कहा, "यह एक काल्पनिक उद्देश्य के कारण है और मेरे लिए नाजायज है।" क्या हिंदह के लिए यह पैसा लेना नाजायज है या जायज? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

पेज 649 / 715

باب متفرقات البیع (بیع کے متفرق احکام)

مسئلہ ۲۷۴: از موضع دیورنیاں: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ قیمت مقررہ اسٹامپ سے زیادہ لینا رشوت ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: یہ رشوت نہیں بلکہ اپنی خرید پر نفع لینا ہے مگر کلام اس میں ہے اسٹامپ بیچنا خود ہی کراہت سے خالی معلوم نہیں ہوتا۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۲۷۵: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ہندہ نے اپنی جائداد بدست زید اپنے سوتیلے بیٹے کے فروخت کی اور قیمت اس کی وصول پاکر پھر زید کے پاس امانت رکھ دی زید نے معہ ۱- ماہوار مقرر کردی، ہندہ نے کہا کہ مشاہرہ مجھے کیونکر دیتے ہو، کہا اسے آپ اس جائداد کی توفیر تصور فرمائے اس کا جواب ہندہ نے دیا کہ جب اس کی میں مالک نہ رہی تو توفیر کیسی، اس پر کہا کہ میں اپنے پاس سے یہ خدمت کرتا ہوں، ہندہ نے کہا یہ معلل بالفرض ہے اور میرے لئے ناجائز، آیا ہندہ کے لئے یہ رقم لینا ناجائز ہے یا جائز؟ بینوا توجروا

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

The Answer: Taking savings from the price of the sold volumes is explicitly forbidden, which the servant (respondent) himself denies. If it is genuinely given as a service, then taking it is permissible. The sign of its genuineness is that Zaid used to serve the servant to this extent before as well, or if the servant takes back his money now, he continues to serve as before. If it is not so, then saying "I give it as a service" is merely verbal. In fact, in this case, the servant's thought is correct: that he gives it with the intention that the servant should not ask for his large sum and should put it off on this monthly basis for life. Giving with this intention is explicitly forbidden for the giver, and if the servant keeps it by adjusting it in his deposit, there is no harm; otherwise, taking it is also not permissible for him. And Allah the Almighty knows best. Sent by: Moulvi Ehsan Sahib from Masjid Jame, 9 Rajab 1312 AH.

Problem 276: What do the scholars of religion and muftis of the firm Sharia say in this situation: A book merchant wrote in his own hand to another merchant buyer that "if you order a hundred copies of the translated Murtazawi Quran, it will be given at the rate of twelve annas per copy, and the special merchant rate for the Murtazawi Quran has been written to you" (end of text). He signed this card, and his signatures are also present on other cards. When copies of the Quran were ordered from him according to the writing, he flatly denied his writing, saying "I neither wrote nor signed." So, what is the ruling in the Sharia for such a person? Is fulfilling a promise mandatory and obligatory? Can the promised party claim a right of demand? Among merchants, transactions of thousands of rupees occur, and no one deviates from them, and this is a firm agreement between merchants. Clarify and be rewarded.

The Answer: If he actually wrote and signed it, then by denying it, he became a sinner for lying. However, there is no compulsory demand for the fulfillment of a promise. It is stated in Fatawa Khaniya, Fatawa Zahiriyya, Fatawa Alamgiriya, etc.:

- If he fulfills his promise, it is good; otherwise, fulfilling promises is not mandatory on him. And Allah knows best. (T)

And Allah the Almighty knows best.

Footnote: 1 Fatawa Hindiyya, Kitab al-Ijarah, Chapter 7, Noorani Kutub Khana Peshawar, 4/425. Page 650 of 715

उत्तर: बेची गई प्रतियों की कीमत से बचत लेना स्पष्ट रूप से मना है, जिससे स्वयं सेवक (उत्तरदाता) इनकार करता है। यदि यह वास्तव में सेवा के रूप में दिया जाना है, तो इसे लेना जायज़ है। इसकी सच्चाई की निशानी यह है कि ज़ैद इससे पहले भी सेवक की इसी हद तक सेवा करता रहा हो, या यदि सेवक अब अपना पैसा वापस ले ले, तो भी वह पहले की तरह सेवा करता रहे। यदि ऐसा नहीं है, तो उसका यह कहना कि "मैं सेवा के रूप में दे रहा हूँ" केवल मौखिक है। वास्तव में, इस स्थिति में सेवक का विचार सही है कि वह इसी उद्देश्य से देता है कि सेवक अपनी बड़ी राशि न माँगे और जीवन भर इसी मासिक आधार पर इसे टालता रहे। इस नीयत से देना देने वाले के लिए स्पष्ट रूप से नाजायज़ है, और यदि सेवक इसे अपनी अमानत में मुजरा (एडजस्ट) करके लेती रहे तो कोई हर्ज नहीं, अन्यथा उसके लिए इसे लेना भी जायज़ नहीं है। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है। प्रेषक: मौलवी एहसान साहब, मस्जिद जामे से, 9 रजब 1312 हिजरी।

मसला 276: धर्म के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ्ती इस स्थिति में क्या फरमाते हैं: एक पुस्तक व्यापारी ने दूसरे व्यापारी खरीदार को अपने हाथ से यह इबारत लिखी कि "यदि आप मुर्तज़वी कुरान के अनुवाद की सौ प्रतियाँ मांगेंगे, तो प्रति प्रति बारह आने की दर से दी जाएगी, और मुर्तज़वी कुरान की विशेष व्यापारिक दर आपको लिख दी गई है" (इबारत समाप्त)। उसने इस कार्ड पर अपने हस्ताक्षर किए, और अन्य कार्डों पर भी उनके हस्ताक्षर मौजूद हैं। जब उनसे लिखित अनुसार कुरान की प्रतियाँ मांगी गईं, तो उन्होंने अपनी लिखावट से साफ इनकार कर दिया कि "न मैंने लिखा और न ही हस्ताक्षर किए।" तो शरीयत में ऐसे व्यक्ति के लिए क्या हुक्म है? और क्या वादे को पूरा करना अनिवार्य और लाज़िमी है? और क्या वादे वाले को मांग का हक पहुँच सकता है? व्यापारियों के बीच हजारों रुपये का लेनदेन होता है, और इससे कोई नहीं मुकरता, और यह व्यापारियों के बीच एक पक्का समझौता होता है। स्पष्ट करें, पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: यदि वास्तव में उसने लिखा और हस्ताक्षर किए थे, तो इनकार करने से वह झूठ बोलने का गुनहगार हुआ। लेकिन वादे को पूरा करने के लिए जबरन मांग नहीं की जा सकती। फतावा खानिया, फतावा ज़हीरिया और फतावा आलमगीरिया आदि में है:

- और अगर वादा को पूरा करे तो बेहतर है वरना वादों को पूरा करना उस पर लाज़िम नहीं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

पादलेख: 1 फ़तावा हिन्दिया, किताब अल-इजारा, अध्याय 7, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 4/425।
पृष्ठ 715 में से 650

الجواب: جلد ادبعیہ کی توفیر لینی تو صریح ناجائز جس سے بندہ خود انکار کرتی ہے اور بطور خدمت اگر دینا واقعی ہو لینا جائز، اور اس کی واقعیت کی یہ نشانی ہے کہ زید اس سے پہلے بھی بندہ کی اس قدر خدمت کرتا ہو یا اب بندہ اپنا روپیہ واپس لے لے تو بھی بدستور خدمت کرتا رہے اور اگر ایسا نہ ہو تو اس کا یہ کہنا بطور خدمت دیتا ہوں زبانی کہنا ہے بلکہ اس صورت میں بندہ کا خیال صحیح ہے کہ وہ اسی غرض سے دیتا ہے کہ بندہ اپنی یہ رقم کثیر نہ مانگے اور تاحیات بندہ اسی ماہوار پر ٹالے، اس نیت سے دینا دینے والے کو تو صریح ناجائز ، اور بندہ اسے اگر اپنے زرا مانت میں مجرا کر کے لیتی رہے تو مضائقہ نہیں ورنہ اس کا لینا بھی روا نہیں واللہ تعالیٰ اعلم۔ مرسلہ مولوی احسان صاحب از مسجد جامع ۹ رجب ۱۳۱۲ھ مسئلہ ۲۷۶: کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس صورت میں کہ ایک تاجر کتب فروش نے دوسرے تاجر مشتری کو بقلم خود یہ عبارت تحریر کی کہ قرآن مجید مرتضوی مترجم کی اگر آپ سو جلد طلب فرمائیں گے تو بارہ آنے فی جلد کے حساب سے دیا جائے گا اور قرآن شریف مرتضوی کا نرخ تاجرانہ خاص آپ کو لکھا گیا ہے انتہی عبارۃ اور اس کارڈ پر اپنے دستخط کئے علاوہ اس کے اور کارڈوں پر بھی ان کے دستخط موجود ہیں، جب ان سے جلدیں قرآن شریف کی حسب التحریر ان کے طلب کیں تو اپنی تحریر سے صاف انکار کر گئے کہ نہ میں نے لکھا اور نہ دستخط کئے تو آیا شرع شریف میں ایسے شخص کے واسطے کیا حکم ہے، اور ایفائے وعدہ واجب اور لازم ہے یا نہیں؟ اور معہود کو حق مطالبہ پہنچ سکتا ہے یا نہیں؟ اور فیما بین تجاروں کے ہزاروں روپیہ کا تبادلہ ہوا کرتا ہے اور اس سے کوئی منحرف نہیں ہوتا اور یہ فیما بین تجار کے قرار داد واثق ہوتا ہے، بینوا توجروا الجواب: اگر واقع میں اس نے لکھا اور دستخط کئے تھے تو انکار کرنے سے

جھوٹ بولنے کا گنہگار ہوا مگر وفائے وعدہ پر جبری مطالبہ نہیں پہنچتا، فتاوی خانیہ و فتاوی ظہیر یہ وفتاوی عالمگیریہ وغیرہما میں ہے: ان انجز وعدہ کان حسنا والا فلا یلزم الوفاء بالمواعید اور اگر وعدہ کو پورا کرے تو بہتر ہے ورنہ وعدوں کو پورا کرنا اس پر لازم نہیں۔ اور اللہ تعالیٰ بہتر جانتا ہے۔ (ت) واللہ تعالیٰ اعلم۔

1 فتاوی ہندیہ کتاب الاجارہ الباب السابع نورانی کتب خانہ پشاور ۴/ ۴۲۵ Page 650 of 715

Fatawa Razawiya Volume 17

Question 777: From Sarniyan, District Bareilly, sent by Amir Ali Sahib Qadri. 2 Rajab 1331 AH.

Question: Many people, after buying vegetables, argue and take extra.

The Answer: Quarreling is not allowed, and asking for more is also included in "sawal" (solicitation/begging). Yes, if the seller gives more of their own free will and pleasure, then there is no harm. And Allah Almighty knows best.

www.dawateislami.net I.T. Majlis of Dawateislami Page 651 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

मसला 777: सरनियां, ज़िला बरेली से, प्रेषक अमीर अली साहब कादरी। 2 रजब 1331 हिजरी।

प्रश्न: अक्सर लोग सब्ज़ी खरीदने के बाद झगड़ा करके ज़्यादा लेते हैं।

उत्तर: झगड़े की अनुमति नहीं है, और ज़्यादा मांगना भी 'सवाल' (यानी माँगने) में शामिल है। हाँ, अगर बेचने वाला अपनी खुशी से खुद ज़्यादा दे दे तो कोई हर्ज नहीं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

www.dawateislami.net आई.टी. मज्लिस-ए-दावत-ए-इस्लामी पृष्ठ 651/715

مسئلہ ۷۷۷: از سر نیاں ضلع بریلی مرسلہ امیر علی صاحب قادری ۲ رجب ۱۳۳۱ھ

سوال: اکثر لوگ ترکاری خریدنے کے بعد جھگڑا کرکے زیادہ لیتے ہیں۔

الجواب: جھگڑا کی اجازت نہیں، اور زیادہ مانگنا بھی سوال میں داخل ہے، ہاں بطور خود اپنی خوشی سے زیادہ دے دے تو حرج نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم

www.dawateislami.net آئی ٹی مجلسِ دعوتِ اسلامی صفحہ 651 از 715

Volume 17 (17) Fatawa-e-Razawiyya

Book of Guarantee (Kafala) (Description of becoming a guarantor)

Problem 278: What do the scholars of religion say regarding this matter: Amr owes a certain amount of debt to Bakr. Zaid said, "I will pay it." Amr also accepted this. Bakr said, "Amr is absolved from my claim, I will take it from you." In this situation, does Bakr have the right to demand this debt from Zaid or not? Explain and you will be rewarded.

The Answer: In the queried situation, Zaid did not become a guarantor (kafil) for that debt of Bakr's which he promised to pay, if the words used were only to that extent; because this is a mere promise, and a promise without being conditional is not binding. And Bakr saying to him that "Amr is absolved from my claim, I will take it from you," and Zaid remaining silent on this—firstly, silence is not speech; and even if it were, its furthest extent is that Zaid accepted Bakr's statement as if he had said "take it from me." This too is a matter whose essence is a promise that "I will give," and from this much, guarantee (kafala) is not established. It is stated in Al-Alamgiriyyah from Al-Muhit: "When one says, 'Whatever you have against so-and-so, I will give it,' then this is a promise, not a guarantee." If someone says, "Whatever is due to you from so-and-so, I will give it," then this is a promise, not a guarantee. (T)

1. Fatawa Hindiyyah, Book of Kafala, Chapter Two, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/256 Page 653 of 715

जिल्द 17 (17) फ़तावा-ए-रज़विया

किताब अल-कफ़ाला (ज़मानतदार बनने का बयान)

मसला 278: उलेमा-ए-दीन इस मसले के बारे में क्या फ़रमाते हैं कि बक्र का कुछ क़र्ज़ उम्र के ज़िम्मे है। ज़ैद ने कहा, "इसे मैं अदा कर दूँगा।" उम्र ने भी इसे स्वीकार कर लिया। बक्र ने कहा, "उम्र मेरे दावे से मुक्त हुआ, मैं तुझसे लूँगा।" इस स्थिति में क्या बक्र को ज़ैद से इस क़र्ज़ का दावा करने का अधिकार है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य पाएँ।

उत्तर: पूछी गई स्थिति में, ज़ैद बक्र के उस क़र्ज़ का कफ़ील (ज़मानतदार) नहीं हुआ जिसके भुगतान का उसने वादा किया था, यदि शब्द केवल इतने ही थे; क्योंकि यह मात्र एक वादा है, और बिना शर्त के किया गया वादा अनिवार्य (लाज़िम) नहीं होता। और बक्र का उससे यह कहना कि "उम्र मेरे दावे से मुक्त हुआ, मैं तुझसे लूँगा" और ज़ैद का इस पर खामोश रहना—पहली बात तो यह कि खामोशी बोलना नहीं है; और यदि हो भी, तो इसकी पराकाष्ठा यही है कि ज़ैद ने बक्र की बात मान ली जैसे कि उसने कहा हो "मुझसे ले लेना"। यह भी एक ऐसा मामला है जिसका सार यह वादा है कि "मैं दूँगा," और इतनी बात से कफ़ालत (ज़मानत) सिद्ध नहीं होती। आलमगीरिया में 'मुहीत' से उद्धृत है: "जब कोई कहे, 'जो कुछ तुम्हारा फलां पर है, वह मैं दे दूँगा', तो यह एक वादा है, कफ़ालत नहीं।" अगर कहा कि "जो कुछ तुम्हारा फलां पर वाजिब है, वह मैं दूँगा," तो यह वादा है, कफ़ाला नहीं। (त)

1. फ़तावा हिन्दिया, किताब अल-कफ़ाला, बाब-ए-सानी, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/256 पृष्ठ 653 / 715

کتاب الکفالۃ (ضامن بننے کا بیان)

مسئلہ ۲۷۸: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ کسی قدر قرض بکر کا ذمہ عمرو کے ہے، زید نے کہا اسے میں ادا کردوں گا، عمرو نے بھی اسے قبول کر لیا، بکر نے کہا عمرو میرے مطالبہ سے بری ہوا میں تجھ سے لوں گا، اس صورت میں بکر کو زید سے اس قرض کے مطالبہ کا اختیار ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: صورت مستفسرہ میں زید اس قرضہ بکر کا جس کے ادا کا اس نے وعدہ کیا اگر لفظ صرف اس قدر تھے کفیل نہ ہوا کہ یہ مجرد وعدہ ہے اور وعدہ بے تعلیق بشرط لازم نہیں ہوتا، اور بکر کا اس سے کہنا کہ عمرو میرے مطالبہ سے بری ہوا میں تجھ سے لوں گا اور زید کا اس پر سکوت کرنا اول تو سکوت قول نہیں اور ہو بھی تو اس کی غایت اس قدر کہ زید نے قول بکر قبول کیا گویا اس نے کہا تو مجھ سے لینا یہ بھی ایک امر ہے جس کا حاصل وعدہ ہے کہ میں دوں گا اور اس قدر سے کفالت ثابت نہیں ہوتی۔ عالمگیری میں محیط سے ہے: اذا قال "انچہ ترا بر فلان ست من بدہم" فہذا وعد لا کفالۃ ۱۔ اگر کہا جو کچھ تمہارا فلاں پر لازم ہے وہ میں دوں گا تو یہ وعدہ ہے کفالہ نہیں۔ (ت)

۱ فتاوٰی ہندیہ کتاب الکفالۃ الباب الثانی نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۵۶ Page 653 of 715

Fatawa Rizwia (Volume 17)

In the same [work], as quoted in Al-Muheet from the Fatawa of Imam Nasafi:

[Arabic Quote]: "Whoever says to another: 'The debt that so-and-so owes you, I will pay it, I will hand it over to you, I will settle it,' he does not become a guarantor (kafeel) unless he speaks with words that indicate obligation (iltizam), such as saying: 'I am the guarantor,' 'I am responsible,' 'It is obligatory upon me,' or 'It is on my account.' Imam Zahir al-Din Hassan bin Ali al-Marghinani used to say: If he uses these words as a direct, unconditional statement, he will not be a guarantor. But if he uses them conditionally, for example, saying: 'If so-and-so does not pay your debt, then I will fulfill it or I will pay it,' then he will become a guarantor." [Urdu Translation]: Someone said to another: "The debt that so-and-so owes you, I will give it, I will hand it over to you, I will pay it," he will not become a guarantor until he says such a word that denotes obligation, for example, "I am the guarantor," "I am the surety," "It is mandatory upon me," or "It is on my responsibility." Imam Zahir-ud-Din Hassan bin Ali Marghinani used to say that if these words are said as an immediate absolute statement, he will not be a guarantor, but if said conditionally, for example, saying: "If so-and-so does not give your debt, I will pay it or I will give it," then he will become a guarantor. (T)

Similarly, it is in Khazanat al-Muftin, and Al-Bazzaziya stated it firmly:

[Arabic Quote]: "Saying: It is known that when promises take the form of a condition, it becomes necessary to fulfill them. This was quoted in Al-Hamidiyya and upheld in Al-Uqud al-Durriya." [Urdu Translation]: Saying this, it is known that when promises take the form of a condition, it becomes necessary to fulfill them. (Ah) This was quoted in Hamidiyya and maintained in Uqud-e-Durriya. (T)

Yes, if Zaid said, "If he [Amr] does not pay, then I will pay," then Bakr can undoubtedly demand that much money from Zaid. However, Bakr's releasing Amr from the demand would not release Zaid. Of course, if Bakr releases Amr from the debt itself, then the demand against Zaid would also cease to exist.

[Arabic Quote]: "In Al-Durr al-Mukhtar citing Al-Quniya: The creditor demanded the debt from the guarantor, and the guarantor said, 'Wait until the principal debtor arrives.' So [the creditor] said, 'No connection.'" [Urdu Translation]: In Durr-e-Mukhtar, it is narrated from Quniya that the creditor demanded the debt from the

guarantor, so he said, "Be patient until the principal debtor comes." On this, the creditor...

---

1 Fatawa Hindiya, Book of Guarantee, Chapter 2, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/257 2 Fatawa Bazzaziya, on the margins of Fatawa Hindiya, Book of Guarantee, Noorani Kutub Khana Peshawar, 6/3 Page 654 of 715

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

उसी में अल-मुहीत के माध्यम से इमाम नसफ़ी के फ़तावा से उद्धृत है:

[अरबी उद्धरण]: "जो कोई दूसरे से कहता है: 'वह ऋण जो फ़लाँ पर तुम्हारा है, मैं उसे चुका दूँगा, मैं उसे तुम्हें सौंप दूँगा, मैं उसे अदा करूँगा,' वह तब तक ज़मानतदार (कफ़ील) नहीं बनता जब तक कि वह ऐसे शब्दों का प्रयोग न करे जो वचनबद्धता (इल्तिज़ाम) का संकेत देते हों, जैसे कि कहना: 'मैं ज़मानतदार हूँ,' 'मैं ज़िम्मेदार हूँ,' 'यह मुझ पर अनिवार्य है,' या 'यह मेरे ज़िम्मे है।' इमाम ज़हीर अल-दीन हसन बिन अली अल-मर्ग़ीनानी कहते थे: यदि वह इन शब्दों को बिना किसी शर्त के कहता है, तो वह ज़मानतदार नहीं होगा। लेकिन यदि वह इन्हें शर्त के रूप में कहता है, उदाहरण के लिए: 'यदि फ़लाँ तुम्हारा ऋण नहीं चुकाता है, तो मैं उसे चुका दूँगा या मैं दूँगा,' तो वह ज़मानतदार हो जाएगा।" [उर्दू अनुवाद]: किसी ने दूसरे से कहा: "वह ऋण जो फ़लाँ पर तुम्हारा है, वह मैं दूँगा, मैं तुम्हें सौंप दूँगा, मैं अदा करूँगा," वह तब तक कफ़ील (ज़मानतदार) नहीं बनेगा जब तक वह कोई ऐसा शब्द न कहे जो प्रतिबद्धता (इल्तिज़ाम) को दर्शाता हो, जैसे "मैं कफ़ील हूँ," "मैं ज़ामिन हूँ," "मुझ पर लाज़िम है," या "मेरे ज़िम्मे है।" इमाम ज़हीर-उद-दीन हसन बिन अली मरग़ीनानी कहते थे कि यदि ये शब्द बिना शर्त कहे जाएँ तो वह कफ़ील नहीं होगा, और यदि शर्त के तौर पर कहे जाएँ, जैसे यों कहे कि "फ़लाँ पर जो तुम्हारा ऋण है अगर उसने न दिया तो मैं अदा करूँगा या मैं दूँगा," तो वह कफ़ील हो जाएगा। (त)

ऐसा ही 'ख़ज़ानतुल मुफ़्तीन' में है और इसी पर 'बज़्ज़ाज़िया' में दृढ़तापूर्वक कहा गया है:

[अरबी उद्धरण]: "यह कहते हुए: यह विदित है कि जब वादे शर्त का रूप ले लेते हैं, तो उन्हें पूरा करना अनिवार्य हो जाता है। इसे अल-हामिदिया में उद्धृत किया गया और अल-उक़ूद अल-दुर्रिया में इसे बनाए रखा गया।" [उर्दू अनुवाद]: यह कहते हुए, यह बात मालूम है कि वादे जब तालीक़ (शर्त) की सूरत अख्तियार करें तो उनको पूरा करना लाज़िम होता है। इसे 'हामिदिया' में नक़्ल किया और 'उक़ूद दरिया' में बरक़रार रखा। (त)

हाँ, अगर ज़ैद ने यह कहा कि "अगर वह नहीं देगा तो मैं अदा करूँगा", तो निस्संदेह बक्र उस राशि का ज़ैद से मुतालबा (माँग) कर सकता है। और बक्र का अम्र को मुतालबा से बरी (मुक्त) कर देना ज़ैद को बरी नहीं करेगा। हाँ, अगर बक्र अम्र को कर्ज़ से ही बरी कर दे, तो ज़ैद पर भी मुतालबा नहीं रहेगा।

[अरबी उद्धरण]: "दुर्र-ए-मुख्तार में अल-क़ुनिया से उद्धृत है: ऋणदाता ने ज़मानतदार से ऋण की माँग की, तो उसने कहा कि 'धैर्य रखो ताकि मूल ऋणी आ जाए'। तो उसने कहा, 'कोई संबंध नहीं।'" [उर्दू अनुवाद]: 'दुर्र-ए-मुख्तार' में 'क़ुनिया' से मंक़ूल है कि कर्ज़ख़्वाह ने कफ़ील से कर्ज़ का मुतालबा किया तो उसने कहा कि सब्र करो ताकि असील (मूल ऋणी) आ जाए, इस पर कर्ज़ख़्वाह ने...

---

1 फ़तावा हिंदिया, किताबुल कफ़ाला, बाब 2, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 3/257 2 फ़तावा बज़्ज़ाज़िया, फ़तावा हिंदिया के हाशिये पर, किताबुल कफ़ाला, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 6/3 पृष्ठ 654 of 715

اسی میں بنقل محیط فتاوٰی امام نسفی سے ہے:

من قال لغیرہ ان الدین الذی لك علی فلان انا ادفعه الیك انا اسلمه الیك انا اقضیه لا یصیر کفیلا مالم یتکلم بلفظ یدل علی الالتزام نحو قوله کفلت ضمنت علی الی وکان الشیخ الامام ظهیر الدین الحسن بن علی المرغینانی یقول اذا اتی بهذه الالفاظ منجزا لا یکون کفالة واذا اتی بها معلقا بان قال ان لم یؤد فلان مالك علیه فانا اودی فانا ادفع یصیر کفیلا ۱- کسی نے دوسرے سے کہا تیرا وہ قرض جو فلاں پر ہے وہ میں دوں گا، میں تیرے سپرد کروں گا، میں ادا کروں گا، وہ کفیل نہیں بنے گا جب تک کوئی ایسا لفظ نہ کہے جو التزام پر دلالت کرتا ہو مثلاً میں کفیل ہوں میں ضامن ہوں، مجھ پر لازم ہے یا میرے ذمے ہے، امام ظہیر الدین حسن بن علی مرغینانی کہتے تھے اگر یہ الفاظ بطور تنجیز کہے تو کفیل نہ ہوگا اور اگر بطور تعلیق کہے مثلاً یوں کہے کہ تیرا جو دین فلاں پر ہے اگر اس نے نہ دیا تو میں ادا کروں گا یا میں دوں گا، تو کفیل ہو جائے گا۔(ت)

ایسا ہی خزانہ المفتین میں ہے اور اسی پر بزازیہ میں جزم فرمایا:

قائلا لما علم ان المواعید باکتساء صورة التعلیق تکون لازمة ۲ اه و نقله فی الحامدیة واقره فی العقود الدریة۔ یہ کہتے ہوئے، یہ بات معلوم ہے کہ وعدے جب تعلیق کی صورت اختیار کریں تو ان کو پورا کرنا لازم ہوتا ہے اھ اس کو حامدیہ میں نقل کیا اور عقود دریہ میں برقرار رکھا۔(ت)

ہاں اگر زید نے یہ کہا کہ یہ نہ دے تو میں ادا کروں گا تو بلاشبہ بکر اس قدر روپیہ کا زید سے مطالبہ کر سکتا ہے اور بکر کا عمرو کو مطالبہ سے بری کر دینا زید کو بری نہ کر دے گا اگر البتہ عمرو کو قرضہ سے بری کر دیتا تو زید پر بھی مطالبہ نہ رہتا۔

فی الدر المختار من القنیۃ طالب الدائن الکفیل فقال لہ اصبر حتی یجیئ الاصیل فقال لا تعلق در مختار میں قنیہ سے منقول ہے کہ قرض دہندہ نے کفیل سے قرض کا مطالبہ کیا تو اس نے کہا کہ صبر کرو تا کہ اصیل آ جائے اس پر قرض دہندہ نے

---

۱ فتاویٰ ہندیۃ کتاب الکفالۃ الباب الثانی نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۵۷ ۲ فتاویٰ بزازیہ علی ہامش فتاویٰ ہندیۃ کتاب الکفالۃ نورانی کتب خانہ پشاور ۶/ ۳

(Arabic) [The creditor said:] "I have no claim against him [the original debtor]; my claim is only against you." [The question is] Does he [the original debtor] become free of liability? The answer was yes. And it is also said no, and this is the preferred view.[1]

(Urdu) [He] said: I have no connection with him; my connection is with you. In this situation, will the principal [original debtor] be released? The answer given was yes. And one opinion is that he will not be released, and this is the preferred view. (T)

And since at the time of the guarantee, Amr also considered it valid, Zaid can now claim from him to the extent of that amount, even though this guarantee was not made by the order of Amr.

(Arabic) In Durr al-Mukhtar: "If he became a guarantor by his [the debtor's] order, he can claim back from him what he paid. If it was without his order, he cannot claim back unless he [the debtor] permits it in the assembly; then he can claim back." (Imadiyya)[2] And Allah the Almighty knows best.

(Urdu) In Durr al-Mukhtar, it is stated: "If a person becomes a guarantor by the order of the debtor, he can claim back from him. If he becomes a guarantor without his order, he cannot claim back because it was an act of gratuity and favor. However, if the debtor gave permission within the assembly, then he can claim back." (Imadiyya), and Allah the Almighty knows best. (T)

Issue 279: From Rampur State, sent by Munshi Muhammad Wahid Ali Sahib, Peshkar (officer) to the Revenue Officer of the state, 28 Dhu al-Hijjah 1316 AH. The respected and served scholar, the noble and honorable [A'la Hazrat], may his excellence increase. With hundreds of respectful greetings. After hearing about the commendable qualities of the noble Excellency, our master, Hafiz Muhammad Inayatullah Sahib, I intended to present myself and explain my situation. However, "Allah's will prevails over the will of humans," just then an urgent telegram arrived from Lucknow which forced me to cancel my visit at that time. I was compelled to send my trusted associate, Mr. Muhammad Raza Khan, to your noble service for the current necessity. On February 6, 1899, I became a personal guarantor for a person until February 18. The exact words are recorded in the fatwa question. February 18 passed, and the court did not demand the presence of the person for whom I stood guarantee (Makfool-anhu) from me at any time on or within the 18th. Nor did the

plaintiff provide any information to the court during this period. Now, after two and a half months, during the execution of the decree, the plaintiff is demanding money from me. The plaintiff's lawyer is trying to prove that because the word "min" (from) is not mentioned in the guarantee deed, therefore the guarantee remained valid even after February 18. Your Honor! In this era, such words with these restrictions have not been seen in any guarantee deed. According to custom, this intention was purely a guarantee only until February 18.

[1] Durr al-Mukhtar, Book of Guarantee, Mujtabai Press, Delhi, 2/65 [2] Durr al-Mukhtar, Book of Guarantee, Mujtabai Press, Delhi, 2/64

(अरबी) [लेनदार ने कहा:] "मेरा उस पर कोई अधिकार नहीं है; मेरा अधिकार केवल आप पर है।" [प्रश्न:] क्या वह [मूल देनदार] दायित्व से मुक्त हो जाता है? उत्तर 'हाँ' दिया गया। और यह भी कहा गया है 'नहीं', और यही पसंदीदा मत है।[1]

(उर्दू) कहा: मेरा उससे कोई संबंध नहीं है; मेरा संबंध तुम्हारे साथ है। क्या इस स्थिति में असल देनदार बरी हो जाएगा? जवाब दिया गया 'हाँ', और एक कथन यह है कि वह बरी नहीं होगा और यही मुख़्तार (पसंदीदा) है। (त)

और चूँकि ज़मानत के समय अम्र ने भी इसे जायज़ रखा था, तो अब ज़ैद उससे उतनी रकम का मुतालबा कर सकता है, चाहे यह ज़मानत अम्र के आदेश पर न हुई हो।

(अरबी) दुर्रे मुख़्तार में है: "यदि वह उसके [देनदार के] आदेश से ज़मानतदार बना, तो वह उससे वह रकम वापस माँग सकता है जो उसने चुकाई है। यदि यह उसके आदेश के बिना था, तो वह वापस नहीं माँग सकता जब तक कि वह [देनदार] सभा (मजलिस) में इसकी अनुमति न दे दे; फिर वह वापस माँग सकता है।" (इमादिया)[2] और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

(उर्दू) दुर्रे मुख़्तार में है: "अगर देनदार के आदेश से ज़मानतदार बना तो उस पर रुजू (माँग) कर सकता है। और अगर उसके आदेश के बिना ज़मानतदार बना तो रुजू नहीं कर सकता क्योंकि यह उपकार और एहसान की वजह से है। लेकिन जब सभा के अंदर देनदार ने अनुमति दे दी, तो रुजू कर सकता है।" (इमादिया), और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला २७९: रियासत रामपुर से, मुंशी मुहम्मद वाहिद अली साहब, पेशकार हाकिम माल रियासत द्वारा प्रेषित, २८ ज़िलहिज्जा १३१६ हिजरी। माननीय एवं सेवाभावी आलिम, श्रद्धेय एवं आदरणीय [आला हज़रत], जिनकी श्रेष्ठता बढ़े। सैकड़ों आदाब व सलाम के साथ। माननीय मखदूमना जनाब हाफ़िज़ मुहम्मद इनायतुल्लाह साहब से आपकी प्रशंसा सुनकर मन बना कि स्वयं उपस्थित होकर अपना मामला अर्ज करूँ। लेकिन "अल्लाह की इच्छा बंदों की इच्छा पर प्रबल होती है," उसी समय लखनऊ से एक आवश्यक तार आ गया जिसने उस समय उपस्थिति होने से विवश कर दिया। मजबूरीवश अपने विश्वस्त मुहम्मद रज़ा खाँ साहब को वर्तमान आवश्यकता के लिए आपकी सेवा में भेजना पड़ा। ६ फ़रवरी १८९९ को एक व्यक्ति की हाज़िर ज़मानत ली, १८ फ़रवरी तक के लिए,

जिसके शब्द ज्यों के त्यों फ़तवा के प्रश्न में दर्ज हैं। १८ फ़रवरी बीत गई, न तो अदालत ने मक़फ़ूल-अन्हु (जिसकी ज़मानत ली गई) को मुझसे किसी समय १८ तारीख या १८ के भीतर तलब किया, न ही वादी (मुकदमा करने वाला) ने इस अवधि में अदालत को किसी प्रकार की सूचना दी। अब ढाई महीने बाद डिक्री के निष्पादन के समय वादी मुझसे पैसे माँग रहा है और शरीयत के अनुसार वादी का वकील यह साबित करता है कि चूँकि ज़मानत-नामे में शब्द "मिन" (से) दर्ज नहीं है, इसलिए १८ फ़रवरी के बाद भी यह ज़मानत बनी रही। हुज़ूर वाला! इस युग में इन प्रतिबंधों के साथ शब्द कहीं ज़मानत में नहीं देखे गए। रीति-रिवाज के अनुसार यह नीयत विशुद्ध रूप से केवल १८ फ़रवरी तक के लिए ज़मानत थी।

[1] दुर्रे मुख़्तार, किताबुल कफ़ाला, मतबा मुजतबाई दिल्ली २/६५ [2] दुर्रे मुख़्तार, किताबुल कफ़ाला, मतबा मुजतबाई दिल्ली २/६४

पृष्ठ ७१५ का ६५५

لی علیه انما تعلق علیک هل یبرأ اجاب نعم وقیل لا وهو المختار۔[1]

کہا میرا اس سے کوئی تعلق نہیں میرا تعلق تو تیرے ساتھ ہے، کیا اس صورت میں اصیل بری ہو جائے گا جواب دیا ہاں، اور ایک قول یہ ہے کہ بری نہیں ہوگا اور یہی مختار ہے۔(ت)

اور جبکہ وقت کفالت عمرو نے بھی اسے جائز رکھا تو اب زید اس سے اس قدر زر میں رجوع کر سکتا ہے گو یہ کفالت بامر عمرو واقع نہ ہوئی

فی الدر المختار ولو کفل بأمره رجع علیه بما أدی وان بغیره لا یرجع إلا إذا أجاز في المجلس فیرجع عمادیة[2] واللہ تعالی اعلم۔

در مختار میں ہے اگر مدیون کے امر سے کفیل بنا تو اس پر رجوع کرسکتا ہے اور اگر اس کے امر کے بغیر کفیل بنا تو رجوع نہیں کرسکتا تبرع اور احسان کی وجہ سے مگر جب مجلس کے اندر مدیون نے اجازت دے دی تو رجوع کر سکتا ہے عمادیہ، واللہ تعالٰی اعلم۔(ت)

مسئلہ ۲۷۹: از ریاست رام پور مرسلہ منشی محمد واحد علی صاحب پیشکار حاکم مال ریاست ۲۸ ذی الحجہ ۱۳۱۶ھ مطاع و مخدوم عالم جناب معظم و محترم زید افضالہ بصدا دب تسلیم اوصاف حمیدہ جناب عالی مخدومنا جناب حافظ محمد عنایت اللہ صاحب سے سن کر عزم ہوا کہ خود ہی حاضر ہو کر اپنا ماجرا عرض کروں لیکن "ارادۃ اللہ غالبۃ علی ارادۃ العباد" اسی وقت ایک تار ضروری لکھنؤ سے آگیا جس نے اس وقت حاضری سے مجبور کر دیا مجبوراً اپنے معتمد محمد رضا خاں صاحب کو خدمت عالی میں ضرورت حال کے لئے بھیجنا پڑا، ۶ فروری ۱۸۹۹ء کو ایک شخص کی حاضر ضمانت کر لی، ۱۸ فروری تک کے لئے جس کے الفاظ بعینہ سوال فتوی

میں درج ہیں، ۱۸ فروری گزر گئی نہ عدالت نے مکفول عنہ کو مجھ سے کسی وقت ۱۸ یا ۱۸ کے اندر طلب کیا، نہ مدعی نے اس مدت میں کسی قسم کی اطلاع عدالت میں کی، اب ڈھائی مہینے کے بعد ہنگام اجراء ڈگری مدعی مجھ سے روپیہ طلب کرتا ہے اور شر عامدعی کا وکیل یہ ثابت کرتا ہے کہ چونکہ ضمانت نامہ میں لفظ "من" نہیں درج ہے لہذا بعد ۱۸ فروری بھی یہ ضمانت باقی رہی، حضور والا! اس زمانے میں ان قیود کے ساتھ الفاظ کسی جگہ ضمانت میں نہیں دیکھے گئے عرف کے مطابق یہ نیت خالص صرف ۱۸ فروری تک کے لئے ضمانت

[1] در مختار کتاب الکفالة مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۶۵ [2] در مختار کتاب الکفالة مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۶۴

Volume 17 Fatawa Razawiyya

...had a devotion towards the esteemed Hafiz Inayatullah Sahib. I presented my true situation to him. He said that whatever is possible here is being written, but if anyone in India can provide strength to these specific details, it is Molvi Ahmad Raza Khan Sahib. Looking with mercy, there is hope from your benevolent eyes that you will not withhold assistance in my current distress. Your obedient, Muhammad Wahid Ali. The exact wording of the guarantee bond is given below: Muhammad Begum has filed a lawsuit against Syed Muhammad Amir in court, and a bail for attendance is required from him. Therefore, I declare that I am the bail for his attendance until the 18th of February of the current year. On the 18th, the defendant will not flee from the city. If he flees, I am responsible for the plaintiff's claim. 6th February 1899.

The Answer: Respected Munshi Sahib (may your glory increase), after offering the customary sunnah greetings, it is requested: I have reviewed the fatwa. I completely agree in this matter that in the mentioned case, the guarantee of attendance expired on February 18th. Although the answer in 'Zahir al-Riwayah' is contrary to this, but now the custom ('urf) and the objectives of the people are strictly based on this. Following custom is mandatory and necessary. So, in reality, this is not opposition to the Zahir al-Riwayah; rather, if such custom was prevalent during the blessed era of the Imams (may Allah be pleased with them), we are certain that the ruling of Zahir al-Riwayah would definitely have been in accordance with the narration of Imam Abu Yusuf (may Allah be pleased with him). Therefore, the Imams of authentication gave the fatwa based on this narration for the reason that it is more similar to people's custom. This is why the scholars said: "Whoever does not know the people of his time is ignorant." (T)

Allama Muhaqqiq Shami (may Allah have mercy on him) has provided a brilliant and sufficient investigation of this. However, the fact of the matter here is that there are two guarantees: one is 'Kafalat bi-al-Nafs' (bail for the person), which is attendance bail; it is limited until February 18th, and according to this narration and custom, it ended after the 18th. The second is 'Kafalat bi-al-Mal' (surety for property), that if he flees, I am responsible for the plaintiff's claim. In this, if there is a time limit in view of what preceded, it is on the side of the condition: "If he flees by February 18th, I am the guarantor for the money." And suspending a guarantee with such a condition is permissible.

In 'Al-Hidayah': "The principle is that it is valid to suspend it with a suitable condition for it, such as being a condition for the obligation of the right." In 'Hidayah' it is mentioned that it is correct to suspend a guarantee with its appropriate condition, for example, that condition is for the obligation of the right.

1. Durr al-Mukhtar, Chapter of Witr and Nawafl, Mujtabai Press, Delhi, 1/99. Page 656 of 715

जिल्द 17 फ़तावा रज़विया

...मेरी श्रद्धा माननीय हाफ़िज़ इनायतुल्लाह साहब के प्रति है। मैंने उन्हें अपनी सच्ची स्थिति बताई। उन्होंने कहा कि यहाँ जो संभव है वह लिखा जा रहा है, लेकिन यदि भारत में कोई इन विवरणों (जुज़इयात) को शक्ति प्रदान कर सकता है, तो वे जनाब मौलवी अहमद रज़ा खाँ साहब हैं। आपकी दयालु दृष्टि से आशा है कि मेरी इस समय की परेशानी में आप सहायता देने में संकोच नहीं करेंगे। आज्ञाकारी मोहम्मद वाहिद अली। गारंटी बांड (ज़मानत नामा) की इबारत ज्यों की त्यों नीचे दी गई है: मोहम्मदी बेगम ने सैयद मोहम्मद अमीर के खिलाफ अदालत में मुकदमा दायर किया है और उनसे हाजिरी की जमानत माँगी गई है। इसलिए मैं घोषणा करता हूँ कि मैं इस वर्ष के18 फरवरी तक हाजिरी का ज़मानतदार (ज़ामिन) हूँ। 18 तारीख को प्रतिवादी शहर से नहीं भागेगा। यदि वह भाग गया, तो मैं वादी के दावे का ज़िम्मेदार हूँ। 6 फरवरी 1899 ई.

उत्तर: आदरणीय मुंशी साहब (आपका सम्मान बढ़े), सुन्नत के अनुसार अभिवादन के बाद निवेदन है: फ़कीर की नज़र से फतवा गुज़रा, मैं इस मामले में पूरी तरह सहमत हूँ कि वर्णित स्थिति में उपस्थिति की गारंटी 18 फरवरी को समाप्त हो गई। हालाँकि 'ज़ाहिर अल-रिवायत' में उत्तर इसके विपरीत है, लेकिन अब लोगों का चलन (उर्फ़) और उद्देश्य निश्चित रूप से इसी पर आधारित है, और चलन का पालन करना अनिवार्य है। अतः वास्तव में यह 'ज़ाहिर' का विरोध नहीं है, बल्कि यदि इमामों (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) के धन्य युग में ऐसा चलन प्रचलित होता, तो हमें यकीन है कि 'ज़ाहिर अल-रिवायत' का आदेश निश्चित रूप से इमाम अबू यूसुफ (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) के वर्णन के अनुसार होता। इसीलिए तस्हीह (सत्यापन) के इमामों ने इसी वजह से इस रिवायत पर फतवा दिया कि यह लोगों के चलन के अधिक समान (अशबह) है। इसीलिए विद्वानों ने कहा है: "जो अपने समय के लोगों को नहीं जानता, वह अज्ञानी है।" (त)

अल्लामा मुहाक़िक शामी (अल्लाह उन पर दया करे) ने इसकी शानदार और पर्याप्त जाँच की है। लेकिन यहाँ वास्तविकता यह है कि दो ज़मानतें हैं: एक 'कफ़ालत बिल नफ़्स' यानी उपस्थिति की ज़मानत, वह 18 फरवरी तक सीमित है और इस रिवायत व चलन के अनुसार 18 के बाद समाप्त हो गई। दूसरी 'कफ़ालत बिल माल' कि यदि वह भाग गया तो मैं वादी के दावे का ज़िम्मेदार हूँ। इसमें यदि समय सीमा पूर्व की दृष्टि से है, तो वह शर्त के पक्ष में है कि "यदि 18 फरवरी तक भाग गया तो मैं धन का ज़ामिन हूँ" और ऐसी शर्त के साथ ज़मानत को जोड़ना (तअ़लीक़) जायज़ है।

'अल-हिदाया' में है: "मूल सिद्धांत यह है कि इसे एक उपयुक्त शर्त के साथ जोड़ना वैध है, जैसे कि वह अधिकार की अनिवार्यता के लिए एक शर्त हो।" 'हिदाया' में उल्लेख है कि ज़मानत को उसकी उचित शर्त के साथ जोड़ना सही है, उदाहरण के लिए वह शर्त हक़ के वाजिब होने के लिए हो।

1. दुर्र अल-मुख़्तार, बाबू अल-वित्र व अल-नवाफ़िल, मतबा मुजतबाई दिल्ली 99/1 पृष्ठ 656/715

کی تھی مخدومی جناب حافظ عنایت اللہ صاحب کی خدمت میں ارادت ہے میں نے سچی کیفیت اپنی عرض کی فرمایا کہ جو کچھ یہاں ممکن ہے لکھا جاتا ہے لیکن ہندوستان میں اگر کوئی قوت ان جزئیات کی کرسکتا ہے تو جناب مولوی احمد رضا خاں صاحب ہیں، بنظر رحم حضور کی چشم کرم سے امید ہے کہ میری اس وقت کی پریشانی میں جو امداد ہو دریغ نہ فرمائیں گے تابعدار محمد واحد علی عبارت ضمانت نامہ بعینہ درج ذیل ہے جو کہ محمدی بیگم نے دعوی ال مآصہ عہ ابنام سید محمد امیر دائر عدالت کیا ہے اور ان سے ضمانت حاضری طلب ہے لہذا اقرار کرتا ہوں کہ ۱۸ فروری سنہ حال تک کا حاضر ضامن ہوں ۱۸ تاریخ مدعا علیہ شہر سے نہیں بھاگیں گے اگر بھاگ گئے تو مطالبہ مدعیہ کا میں ذمہ دار ہوں۔ ۶ فروری ۱۸۹۹ء الجواب: مکرمی محترمی منشی صاحب زید مجدہم بعد ادائے مراسم سنت ملتمس، فتوی نظر فقیر سے گزرا میں اس امر میں یکسر متفق ہوں کہ صورت مذکورہ میں ضمانت حاضری ۱۸ فروری تک منتہی ہو گئی اگرچہ جواب ظاہر الروایۃ اس کے خلاف ہے مگر اب عرف و مقاصد ناس قطعاً اسی پر حاکم اور اتباع عرف واجب لازم، تو یہ حقیقتۃً مخالفت ظاہر نہیں بلکہ زمان برکت نشان حضرات ائمہ رضی اللہ تعالیٰ عنہم میں عرف دائر و سائریوں ہوتا تو ہم جزم کرتے ہیں کہ حکم ظاہر الروایۃ ضرور مطابق روایت امام ابو یوسف رضی اللہ تعالیٰ عنہ ہوتا لہذا ائمہ تصحیح نے اس روایت پر اسی وجہ سے فتوی دیا ہے کہ وہ اشبہ بعرف ناس ہے، اسی لئے علماء نے فرمایا: من لم یعرف اہل زمانہ فھو جاہل ۱- جو اہل زمانہ کو نہیں جانتا وہ جاہل ہے۔ (ت)

علامہ محقق شامی رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ نے اس کی تحقیق بروجہ شانی و کافی فرمادی ہے مگر یہاں حقیقت امر یہ ہے کہ دو کفالتیں ہیں، ایک کفالۃ بالنفس یعنی حاضری ضامنی، وہ ۱۸ فروری

تک موقت ہے اور اس روایت و عرف کی رو سے بعد ۱۸ کے ختم ہوگئی، دوسری کفالت بالمال کہ اگر بھاگ گئے تو مطالبہ مدعیہ کا میں ذمہ دار ہوں اس میں اگر توقیت بنظر ما سبق ہے تو جانب شرط میں ہے اگر ۱۸ فروری تک بھاگ گئے تو مال کا ضامن میں ہوں اور کفالت کی ایسی شرط کے ساتھ تعلیق جائز ہے۔ فی الھدایۃ الاصل انہ یصح تعلیقھا بشرط ملائم ھدایہ میں مذکور ہے کہ کفالت کو اس کی مناسب شرط کے ساتھ معلق کرنا صحیح ہے مثلاً وہ شرط وجوب حق لھا مثل ان یکون شرطا لوجوب

۱ درمختار باب الوتر والنوافل مطبع مجتبائی دہلی ۹۹/۱ Page 656 of 715

Fatawa Rizvia Volume (17)

Al-Haqq kaqawlihi idhastaqha al-mabee'u aw limakan al-istifaa' mithla qawlihi idha qadima Zaydun wahuwa makfulun 'anhu aw lita'adhdhuri al-istifaa' mithla qawlihi idha ghaaba min al-baldah. [Translation of Arabic text:] For instance, saying when the right to the sold item is established, or the condition is for the possibility of recovery, like saying "when Zayd returns" where Zayd is the person for whom the guarantee is given, or the condition is for the impossibility of recovery, like saying "when he disappears from the city." (T)

And the gentleman who brought your kind letter, from his statement it was learned that the defendant fled within the period. If this is true, then the condition has been met. Therefore, if the demand meant 'wealth' then in this case, in my (the faqir's) view, the payment of wealth has become mandatory, even if the personal guarantee (kafalat al-nafs) ceases after February 18th. Although originally it was the same, and the financial guarantee (kafalat bil-maal) was subordinate to it and for its emphasis, since the wealth became mandatory due to the fulfillment of the condition, now the way out is either to pay it or for the claimant to grant a waiver or forgiveness.

Fi al-Bazzaziyyah: Kafala binafsihi 'ala anna al-makfula 'anhu idha ghaaba fal-maalu 'alayhi faghaaba al-makfulu 'anhum thumma raja'a wasallamahu ila al-dayn la yabru'u lianna al-maala bihulool al-mashroot lazimahu fala yabru'u bil-adaa' aw al-ibraa' - Wallahu Ta'ala A'lam. [Translation of Arabic text:] It is stated in Al-Bazzaziyyah that if someone becomes a personal guarantor on the condition that if the person guaranteed disappears, then the wealth (debt) is upon him (the guarantor). Subsequently, the person guaranteed disappeared, then returned, and the guarantor handed him over to the creditor, even then he will not be absolved. This is because the wealth became mandatory upon him due to the fulfillment of the condition, so now he will not be absolved without payment or waiver from the owner of the right. And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 280: From Rampur State, near Moti Masjid, sent by Munshi Wahid Ali Sahib, Clerk at the Revenue Department, 1st Muharram al-Haram 1317 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Hindah filed a lawsuit for justice against Zayd in the civil court. The judge, for investigation purposes, demanded a bail for appearance (haziri zamini) from Zayd. Khalid on February 6, 1899, submitted a bail bond with these words...

1 Al-Hidaya, Book of Guarantee, Yusifi Press Lucknow, 3/118. 2 Fatawa Bazzaziyyah on the margin of Fatawa Hindiyyah, Book of Guarantee, Noorani Kutub Khana Peshawar, 6/8.

फ़तावा रज़विया जिल्द (17)

अल-हक़्क़ कक़ौलिहि इज़स्तक़ह अल-मबी'उ औ लिमकान अल-इस्तिफ़ा' मिस्ल क़ौलिहि इज़ क़दिम ज़ैदुन वहुवा मक़फ़ूलुन 'अन्हु औ लिता'अज्जुरि अल-इस्तिफ़ा' मिस्ल क़ौलिहि इज़ ग़ाबा मिन अल-बल्दा। [अरबी पाठ का अनुवाद:] जैसे उसका यह कहना कि जब बेची गई वस्तु (मबी') में अधिकार सिद्ध हो जाए, या वह शर्त वसूली की संभावना के लिए हो, जैसे उसका यह कहना कि जब ज़ैद आ जाए जबकि वह ज़ैद ही मक़फ़ूल अन्ह (वह व्यक्ति जिसकी ज़मानत दी गई है) हो, या वह शर्त वसूली की कठिनाई के लिए हो जैसे उसका कहना कि वह शहर से गायब हो गया। (त)

और यह साहब जो आपका कृपा-पत्र लाए, उनके बयान से पता चला कि प्रतिवादी निर्धारित अवधि के भीतर ही फ़रार हो गया। यदि यह सच है, तो शर्त पूरी हो गई है। अतः यदि माँग से तात्पर्य 'धन' (ज़र) था, तो इस स्थिति में फ़क़ीर के नज़दीक माल (धन) देना अनिवार्य हो गया, भले ही 18 फ़रवरी के बाद व्यक्तिगत ज़मानत (कफ़ालत नफ़्स) समाप्त हो जाए। यद्यपि मूल रूप से यही था और वित्तीय ज़मानत (कफ़ालत बिल-माल) उसके अधीन और पुष्टि के लिए थी, क्योंकि शर्त पूरी होने के कारण माल अनिवार्य हो गया है, तो अब इसका समाधान या तो उसका भुगतान करना है या ऋणदाता की ओर से माफ़ी और छूट है।

फ़िल बज़ाज़ियाह: कफ़ला बिनाफ़्सिहि 'अला अन्नल मक़फ़ूला 'अन्हु इज़ा ग़ाबा फ़ल-मालु 'अलयहि फ़ग़ाबा अल-मक़फ़ूलु 'अन्हुम सुम्मा रज'आ वसल्लमहू इलल दैनी ला यब्रो'उ लिअन्नल माला बिहूलूलिल मशरूती लज़िमहू फ़ला यब्रो'उ बिल अदाई औल इबराई - वल्लाहु त'आला आलम। [अरबी पाठ का अनुवाद:] बज़ाज़िया में है कि यदि कोई व्यक्ति इस शर्त पर व्यक्तिगत ज़मानत (कफ़ील बिन-नफ़्स) बना कि यदि मक़फ़ूल अन्ह (जिसकी ज़मानत दी गई है) गायब हो गया तो माल (क़र्ज़) उस (कफ़ील) के ज़िम्मे है। बाद में मक़फ़ूल अन्ह गायब हो गया, फिर वापस आ गया और कफ़ील ने उसे ऋणदाता के हवाले कर दिया, तब भी वह बरी नहीं होगा क्योंकि शर्त पूरी होने से माल उस पर अनिवार्य हो गया है, तो अब अदायगी या हक़दार की ओर से माफ़ी के बिना वह बरी नहीं होगा। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 280: रियासत रामपुर, मोती मस्जिद के पास से, मुंशी वाहिद अली साहब, पेशकार महकमा माल, 1 मुहर्रमुल हराम 1317 हिजरी द्वारा प्रेषित। उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि

हिंदा ने ज़ैद पर दीवानी अदालत में इंसाफ़ का दावा किया। हाकिम ने जांच के उद्देश्य से ज़ैद से हाज़िरी ज़मानत माँगी। खालिद ने 6 फ़रवरी 1899 को ज़मानत नामा इन शब्दों के साथ दिया...

---

1 अल-हिदाया, किताबुल कफ़ाला, मतबा यूसुफ़ी लखनऊ, 3/118। 2 फ़तावा बज़ाज़िया, फ़तावा हिंदिया के हाशिए पर, किताबुल कफ़ाला, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 6/8।

الحق کقولہ اذا استحق المبیع اولا مکان الاستیفاء مثل قولہ اذا قدم زید وھو مکفول عنہ اولتعذر الاستیفاء مثل قولہ اذا غاب من البلدۃ 1 - کے لئے ہو جیسے اسکا کہنا کہ جب مبیع میں استحقاق ثابت ہو جائے یا وہ شرط وصولی کے امکان کے لئے ہو جیسے اس کا کہنا کہ جب زید آجائے جبکہ وہ زید ہی مکفول عنہ ہو یا وہ شرط وصولی کے تعذر کے لئے ہو جیسے اس کا کہنا کہ وہ شہر سے غائب ہو گیا۔ (ت)

اور یہ صاحب جو آپ کا لطف نامہ لائے ان کے بیان سے معلوم ہوا کہ مدعا علیہ مدت کے اندر ہی فرار ہو گئے اگر یہ حق ہے تو شرط متحقق ہوئی، پس اگر مطالبہ سے مراد زرد علوی تھا تو اس صورت میں فقیر کے نزدیک مال لازم ہو گیا اگرچہ بعد ۱۸ فروری کے کفالت نفس زائل ہو جائے اگر چہ یہاں اصل وہی تھی اور کفالت بالمال اس کی تابع و تاکید تھی کہ جب بوجہ وجودِ شرط مال لازم ہو گیا تو اب اس کی سبیل ادا ہونا ہے یا طالب کی طرف سے معافی و گریچ

فی البزازیۃ کفل بنفسہ علی ان المکفول عنہ اذا غاب فالمال علیہ فغاب المکفول عنھم ثم رجع وسلمہ الی الدین لایبرأ لان المال بحلول المشروط لزمہ فلا یبرأ بالاداء او الابراء 2 واللہ تعالی اعلم۔ بزازیہ میں ہے کہ اگر کوئی شخص کفیل بالنفس بنا اس شرط پر کہ اگر مکفول عنہ غائب ہو گیا تو مال اس (کفیل) کے ذمے ہے بعد ازاں مکفول عنہ غائب ہو گیا پھر لوٹ آیا اور کفیل نے اس کو دائن کے حوالہ کر دیا تب بھی بری نہ ہو گا کیونکہ مشروط کے پائے جانے سے مال اس پر لازم ہو گیا تو اب ادائیگی یا صاحبِ حق کی طرف سے معافی کے بغیر بری نہ ہوگا۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۲۸۰: از ریاست رامپور متصل موتی مسجد مرسلہ منشی واحد علی صاحب پیشکار محکمہ مال غرہ محرم الحرام ۱۳۱۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ہندہ نے زید پر محکمہ دیوانی میں الہ نامہ عدل کی نالش کی، حاکم نے بغرض امتحان زید سے حاضری ضامنی طلب کی، خالد نے ۶ فروری ۱۸۹۹ء کو ضمانت نامہ بایں عبارت

---

1 الهداية كتاب الكفالة مطبع يوسفى لكهنئو ۳ / ۱۱۸ 2 فتاوى بزازيه على هامش فتاوىٰ ہندیہ كتاب الكفالة نورانى كتب خانہ پشاور ۶ / ۸

Fatawa-e-Razviyya Volume 17

It was written that Muhammadi Begum filed a lawsuit for Almasah against her son, Syed Muhammad Amir, in court, and a guarantee for his appearance was sought from him. Therefore, I (Khalid) declare that I am his surety for appearance until 18th February of the current year. Until the 18th, the defendant will not flee the city; if he does, I will be responsible for the plaintiff's claim. Therefore, this guarantee of appearance is written as a proof. Dated 6th February 1899. However, when Khalid stood as surety for Zaid and wrote the said deed of guarantee, neither the plaintiff was present, nor her lawyer or representative, nor was the civil judge present. Khalid wrote the deed of guarantee in the presence of Zaid (the principal). The registrar, following regulations, wrote that the declarant personally confirmed the identity of the marginal witnesses. It was ordered that the supervisor hand over the defendant to the surety for appearance. On 6th February 1899, the supervisor recorded that Munshi Wahid Ali Sahab, after getting the guarantee verified, left for the revenue department. The defendant also left the court after the guarantee was filed. Therefore, I am unable to execute the handover. On 6th February 1899, an order was written to include it in the case file. In February 1899, no acceptance was made by the plaintiff, nor was she informed of this guarantee. Neither the plaintiff nor the judge called for the defendant from the surety until 18th February, nor was any objection raised. On 18th February, the judge declared the plaintiff's claim incomplete due to insufficient stamps and required the completion of stamps. When the defendant saw that 18th February, the intended end of Khalid's guarantee, had passed and the guarantee had ended, and no demand had been made until then, he considered himself free from the bond of guarantee and fled the city. After a long time, when the plaintiff realized she had no control over the defendant, she started proceedings against Khalid under the pretext of guarantee. Now, from the plaintiff's side, it is emphasized on this declaration that the guarantee deed only mentions the end date "until 18th February I am the surety," without mentioning the start date like "from now" or "from today" or "from such-and-such date until the 18th I am the surety." In such a situation, the apparent narration (Zahir al-Riwayah) is that the guarantee will not end on that date but he is a surety forever after that; therefore, we have the right to claim from him. In the fatwa the plaintiff got written, she also mentioned as a precautionary measure that the defendant fled before 18th February, whereas until then there was no mention of it in court, nor is there any proof of flight before the 18th. In fact, the higher judge in an order after the 18th wrote about Zaid's flight

occurring "now". Therefore, the question is presented to the scholars of religion: in this situation, after 18th February, does the plaintiff have a right to demand the defendant's appearance or the claim amount from Khalid? Provide a ruling and be rewarded.

The Answer: O Allah, guide to the truth and what is right. In the queried situation, the guarantee for the person (Kafalat bin-Nafs) ceases after 18th February, and the demand for financial guarantee (Kafalat bil-Maal) from Khalid is also baseless and void. The detailed explanation of the matter is that guarantees are of two types...

लिखा गया कि जो कि मोहम्मदी बेगम ने अलमासा का दावा अपने बेटे सैयद मोहम्मद अमीर के खिलाफ अदालत में दायर किया है और उनसे हाजिरी की जमानत मांगी गई है, इसलिए मैं इकरार करता हूँ कि 18 फरवरी इस साल तक मैं उनका हाज़िर ज़ामिन हूँ। 18 तारीख तक प्रतिवादी (मुदआ अलैहि) शहर से नहीं भागेंगे; अगर भाग गए तो वादिनी (मुदइया) के दावे का मैं ज़िम्मेदार हूँ। अत; यह हाज़िर ज़ामिनी लिख दी ताकि सनद रहे। तारीख 6 फरवरी 1899 ई.। मगर जिस वक्त खालिद ने जैद की जमानत दी और उक्त कफ़ालत नामा (ज़मानतनामा) लिखा, उस वक्त न तो वादिनी मौजूद थी, न ही उसका कोई वकील या पैरोकार, और न ही दीवानी जज मौजूद थे। खालिद ने जैद (मक्फूल अन्हु) की मौजूदगी में कफ़ालत नामा लिखा जिस पर रजिस्ट्रार ने नियम के अनुसार लिख दिया कि घोषणाकर्ता ने स्वयं हाशिया के गवाहों की पहचान की पुष्टि की। आदेश हुआ कि नाज़िर (अदालती अधिकारी) प्रतिवादी को हाज़िर ज़ामिन के सुपुर्द करें। 6 फरवरी 1899 ई. को नाज़िर ने यह कैफियत लिखी कि मुंशी वाहिद अली साहब जमानत की पुष्टि कराकर राजस्व विभाग चले गए। प्रतिवादी भी जमानत दाखिल होने के बाद अदालत से चला गया। अतः सुपुर्दगी की तामील से मजबूर हूँ। 6 फरवरी 1899 ई. को इस पर आदेश लिखा गया कि इसे मिसल (फ़ाइल) में शामिल किया जाए। फरवरी 1899 ई. में इसके अलावा न तो वादिनी की ओर से कोई स्वीकृति हुई और न ही उसे इस ज़मानत की कोई सूचना दी गई। न तो वादिनी और न ही जज ने 18 फरवरी तक प्रतिवादी को ज़ामिन से तलब किया और न ही कोई एतराज़ हुआ। 18 फरवरी को जज ने स्टांप की कमी के कारण वादिनी के दावे को अधूरा करार दिया और स्टांप पूरा करने को कहा। जब प्रतिवादी ने देखा कि 18 फरवरी, जो खालिद की ज़मानत की मंशा थी, गुजर गई और ज़मानत खत्म हो गई, और उस वक्त तक कोई मांग नहीं हुई, तो उसने खुद को ज़मानत की कैद से आज़ाद पाकर शहर से फरार हो गया। काफी समय बाद जब वादिनी ने देखा कि प्रतिवादी पर काबू नहीं रहा, तो ज़मानत के बहाने खालिद से जवाबदेही शुरू की। अब वादिनी की तरफ से इस इकरार पर ज़ोर दिया जाता है कि ज़मानतनामा में सिर्फ मुद्दत के अंत का जिक्र है कि "18 फरवरी तक मैं ज़ामिन हूँ", मुद्दत की शुरुआत का नाम नहीं कि "अब से" या "आज से" या "अमुक तारीख से 18 तक मैं ज़ामिन हूँ"। ऐसी स्थिति में ज़ाहिर-उर-रिवायत यह है कि ज़मानत उस तारीख पर समाप्त नहीं होगी बल्कि उसके बाद हमेशा के लिए ज़ामिन है, इसलिए हमें उससे मांग करने का अधिकार है। वादिनी ने जो फ़तवा लिखवाया उसमें एहतियातन यह भी ज़िक्र किया कि प्रतिवादी 18 फरवरी से पहले फरार हो गया, जबकि उस समय

तक कचहरी में इसका कोई ज़िक्र नहीं था और न ही 18 से पहले फरार होने का कोई सबूत है। बल्कि बड़े जज ने 18 के बाद एक आदेश में ज़ैद के बारे में "अब फरार होना" लिखा है। अतः उलमा-ए-दीन की सेवा में निवेदन है कि इस स्थिति में 18 फरवरी के बाद वादिनी को खालिद पर प्रतिवादी की हाज़िर ज़ामिनी या दावे की रकम का हक पहुँचता है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य पायें।

जवाब: ऐ अल्लाह! सत्य और सही मार्ग की ओर मार्गदर्शन कर। पूछी गई स्थिति में, 18 फरवरी के बाद कफ़ालत बिन-नफ़्स (व्यक्तिगत ज़मानत) भी समाप्त हो जाती है और खालिद से कफ़ालत बिल-माल (वित्तीय ज़मानत) की मांग भी निराधार और बातिल (अमान्य) है। शोध का विषय यह है कि कफ़ालत दो प्रकार की होती है...

لکھ دیا جو کہ محمدی بیگم نے دعویٰ الماصہ عہ ا کا بنا سید محمد امیر دائر عدالت کیا ہے اور ان سے ضمانت حاضری طلب ہے، لہذا اقرار کرتا ہوں کہ ۱۸ فروری سنہ حال تک میں ان کا حاضر ضامن ہوں ۱۸ تاریخ تک مد عاعلیہ شہر سے نہیں بھاگیں گے اگر بھاگ گئے تو مطالبہ مد عیہ کا میں ذمہ دار ہوں، بنابراں یہ حاضر ضامنی لکھ دی کہ سند ہو، المرقوم ۶ فروری ۱۸۹۹ء مگر جس وقت خالد نے زید کی ضمانت حاضر کی اور کفالت نامہ مذکور لکھا اور اس وقت نہ مدعیہ موجود تھی نہ اس کا کوئی وکیل نہ پیروکار بلکہ حاکم دیوانی بھی نہ تھے، خالد نے بمواجہ زید مکفول عنہ کفالت نامہ لکھا جس پر سرشتہ دار نے بہ حکم ضابطہ لکھ دیا کہ مقر نے بحاضری خود اصالۃً شناخت گواہان حاشیہ تصدیق کی حکم ہوا کہ ناظر مد عاعلیہ کو سپرد حاضر ضامن کریں ۶ فروری ۱۸۹۹ء اس پر ناظر نے یہ کیفیت لکھی کہ منشی واحد علی صاحب ضمانت تصدیق کرا کر محکمہ مال میں چلے گئے مد عاعلیہ بھی بعد داخل ہو جانے ضمانت کے عدالت سے چلا گیا لہذا تعمیل سپردگی سے معذور ہوں ۶ فروری ۱۸۹۹ء اس پر حکم لکھا گیا کہ شامل مسل ہو، فروری ۱۸۹۹ء اس کے سوا نہ کوئی قبول منجانب مد عیہ واقع ہوا نہ اسے کوئی اطلاع اس کفالت کی دی گئی نہ ۱۸ فروری تک مدعیہ خواہ حاکم کسی نے مد عاعلیہ کو کفیل سے طلب کیا نہ اس سے کچھ تعرض واقع ہوا، ۱۸ فروری کو حاکم نے مد عیہ سے بوجھ کمی اسٹامپ دعویٰ نامکمل قرار دے کر تکمیل اسٹامپ چاہی۔ جب مد عاعلیہ نے دیکھا کہ ۱۸ فروری خالد کے منشائے کفالت تھی گزر گئی اور ضمانت ختم ہو گئی اور اس وقت تک کوئی مطالبہ نہ ہوا اپنے نفس کو قید ضمانت سے فارغ پاکر شہر سے فرار کیا ایک مدت کے بعد جب مد عیہ نے دیکھا کہ مد عاعلیہ پر قابو نہ رہا بحیلہ کفالت خالد سے مواخذہ شروع کیا اب مد عیہ کی طرف سے اس اقرار پر زور دیا جاتا ہے کہ

ضمانت نامہ میں صرف انتہائے مدت کا ذکر ۱۸ فروری تک میں ضامن ہوں ابتدائے مدت کا نام نہیں کہ اب سے یا آج سے یا فلاں تاریخ سے ۱۸ تک میں ضامن ہوں ایسی صورت میں ظاہر الروایۃ یہ ہے کہ ضمانت اس تاریخ پر منتہی نہ ہوگی بلکہ اس کے بعد ہمیشہ کے لئے ضامن ہے لہذا ہمیں اس سے مطالبہ کرنا پہنچتا ہے مد عیہ نے جو فتویٰ لکھوایا اس میں بطور تقدم بالحفظ یہ بھی ذکر کیا ہے کہ مد عاعلیہ ۱۸ فروری سے پہلے فرار ہو گئے حالانکہ اس وقت تک کچہری میں اس کا کوئی ذکر نہ کیا نہ ہر گز ۱۸ سے پہلے فرار کا کوئی ثبوت ہے بلکہ حاکم بالا نے ۱۸ کے بعد ایک حکم میں زید کی نسبت اب فرار ہو نالکھا ہے پس علمائے دین کی خدمت میں استفسار ہے کہ اس صورت میں بعد ۱۸ فروری کے مد عیہ کو خالد پر حاضر ضامنی مد عاعلیہ کا یا زر دعویٰ کا مطالبہ پہنچتا ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: اللھم ھدایۃ الحق والصواب صورت مستفسرہ میں کفالت بالنفس بھی بعد ۱۸ فروری کے زائل اور کفالت بالمال کا خالد سے مطالبہ بھی بے اصل و باطل، تحقیق مقام یہ کہ کفالت دو ہیں

Fatawa Razawiya (Volume 17)

(1) Kafalat bi'l-nafs, meaning personal guarantee for presence, which is the actual benefit and purpose intended in this guarantee deed. (2) Kafalat bi'l-mal, meaning financial guarantee, which if derived from these words: "if the defendant does not flee the city by the 18th, I am responsible for the plaintiff's claim." We shall discuss both guarantees here in a scholarly manner so that the ruling of the Shariah becomes clear with the help of Allah Almighty, and success is from Allah. The claim of Kafalat bi'l-mal by Hind against Khalid is not established at all for several reasons: Reason 1: Khalid did not write that if Zaid flees, I am responsible for Hind's debt or property or the amount of the lawsuit or this much money. Rather, he became responsible for the 'mutalaba' (claim/demand), and the difference between 'mutalaba' and 'dayn' (debt) is obvious. It is stated in Al-Bazzaziyyah: "Kafalah in linguistic terms means joining. And that can sometimes be in the claim/demand (mutalaba), not in the original debt (asl al-dayn), as is the case with an agent (wakil) alongside the principal (muwakkil); the debt belongs to the principal while the claim/demand belongs to the agent." The literal meaning of 'mutalaba' is seeking and demanding; it was coined for this in the original Arabic language, and in Persian and Urdu as well, it is widely and commonly used in this literal sense. Although in Urdu, it is metaphorically used for property/wealth that is subject to a claim, the literal meaning is certainly well-known and famous, such that even an ignorant person would not suspect otherwise. It has been proven in Usul al-Fiqh that according to our Imam al-A'zam (may Allah be pleased with him) generally, and in such instances by the consensus of the noble Imams, the literal meaning takes precedence over the metaphorical. As long as the original meaning is possible, interpreting it metaphorically is not permissible. Thus, the summary of Khalid's statement is only that if they flee the city by the 18th, I am responsible for the seeking and demanding (of them) for the plaintiff. This has nothing to do with financial guarantee (kafalat-e-mal); rather, it is only a promise to demand. Khalid should demand from Zaid, not that if it's not obtained from Zaid, Khalid should pay from his own pocket. In Al-Hindiyyah from Al-Muhit, reporting from Nawadir Ibn Sama'ah from Imam Muhammad (may Allah be pleased with him): "In Al-Hindiyyah, with reference to Al-Muhit, this statement of Imam Muhammad (may Allah be pleased with him) is

mentioned from Nawadir Ibn Sama'ah that a person has some property due from another..."

1. Fatawa Bazzaziyyah on the margin of Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Kafalah, Noorani Kutub Khana Peshawar, 2/6. Page 659 of 715

फ़तावा रज़विया (खण्ड 17)

(1) कफ़ालत बिल-नफ़्स यानी व्यक्ति की उपस्थिति की ज़मानत, जो इस ज़मानत-नामे का वास्तविक लाभ और उद्देश्य है। (2) कफ़ालत बिल-माल यानी धन की ज़मानत, जो यदि इन शब्दों से निकाली जाए कि "यदि प्रतिवादी 18 तारीख तक शहर से नहीं भागेंगे, तो मैं वादी के दावे का ज़िम्मेदार हूँ।" हम यहाँ दोनों कफ़ालतों पर शोधपूर्ण चर्चा करेंगे ताकि अल्लाह तआला की सहायता से शरीयत का हुक्म स्पष्ट हो जाए और सफलता अल्लाह ही की ओर से है। हिंद का खालिद पर कफ़ालत बिल-माल का दावा कई कारणों से बिल्कुल नहीं पहुँचता: कारण 1: खालिद ने यह नहीं लिखा कि अगर ज़ैद भाग जाए तो मैं हिंद के ऋण (कर्ज़) या धन या दावे की राशि या इतने रुपयों का ज़िम्मेदार हूँ, बल्कि उसने 'मुतालबा' (मांग/दावा) की ज़िम्मेदारी ली है और मुतालबा और 'दैन' (ऋण) में अंतर स्पष्ट है। बज़ाज़िया में फ़रमाया गया है: "कफ़ालत का भाषाई अर्थ मिलाना है। और वह कभी मुतालबा (मांग) में होता है न कि मूल ऋण (अस्ल अद-दैन) में, जैसा कि मुवक्किल के साथ वकील के मामले में होता है; ऋण मुवक्किल का होता है और मुतालबा वकील का।" (त) और मुतालबा के वास्तविक अर्थ 'मांग' और 'तकाज़ा' हैं, जिसके लिए इसे मूल अरबी भाषा में बनाया गया है, और फ़ारसी और उर्दू में भी इसी वास्तविक अर्थ में यह आम बोलचाल में प्रसिद्ध और प्रचलित है। यद्यपि उर्दू में आलंकारिक रूप से (मज़ाज़न) इसका प्रयोग उस धन के लिए भी होता है जिसकी मांग की जा सके लेकिन वास्तविक अर्थ निश्चित रूप से ज्ञात और प्रसिद्ध है, जिसके बारे में किसी अज्ञानी को भी संदेह नहीं हो सकता। और उसूल-ए-फ़िक़्ह में यह प्रमाणित हो चुका है कि हमारे इमाम-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) के नज़दीक सामान्य रूप से और ऐसी जगह पर सभी प्रतिष्ठित इमामों की सहमति से, अलंकार के ऊपर वास्तविकता को प्राथमिकता देना अनिवार्य है। जब तक मूल अर्थ बन सके अलंकार पर आधारित अर्थ लेना उचित नहीं है। तो खालिद के कथन का सार केवल इतना हुआ कि यदि वे 18 तारीख तक शहर से भाग गए, तो मैं वादी के लिए उनसे मांग और तकाज़ा करने का ज़िम्मेदार हूँ। इसका धन की ज़मानत (कफ़ालत-ए-माल) से कोई संबंध नहीं है, बल्कि यह केवल तकाज़ा करने का वादा है। खालिद को चाहिए कि ज़ैद से तकाज़ा करे, न कि यह कि अगर ज़ैद से न मिले तो खालिद अपने पास से दे। अल-हिंदिया में अल-मुहीत के हवाले से नवादिर इब्न समाआह में इमाम मुहम्मद (रज़ियल्लाहु

अन्हु) से उद्धृत है: "हिंदिया में मुहीत के हवाले से नवादिर इब्न समाआह में इमाम मुहम्मद (रज़ियल्लाहु अन्हु) का यह कथन वर्णित है कि एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति पर कुछ धन..."

1. फ़तावा बज़ाज़िया, फ़तावा हिंदिया के हाशिए पर, किताबुल कफ़ालत, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 2/6। पृष्ठ 715 का 659

(۱) کفالت بالنفس یعنی حاضر ضامنی جو اس کفالت نامہ کا اصل مفاد و مقصود مراد ہے۔ (۲) کفالت بالمال یعنی مال ضامنی جو اگر مستفاد ہو تو ان لفظوں سے کہ ۱۸ تک مدعا علیہ شہر سے نہ بھاگیں گے مطالبہ مدعیہ کا میں ذمہ دار ہوں ہم یہاں دونوں کفالتوں پر کلام محققانہ کریں کہ بطور بعونہ تعالٰی حکم شرع واضح ہو وباللہ التوفیق۔ کفالت بالمال کا مطالبہ ہندہ کو خالد پر اصلا نہیں پہنچتا بوجوہ: وجہ اول: خالد نے یہ نہ لکھا کہ اگر زید بھاگ جائے تو ہندہ کے دین یا مال یا زر دعوٰی یا اس قدر روپے کا میں ذمہ دار ہوں بلکہ مطالبہ کا ذمہ دار ہوا اور مطالبہ و دین میں فرق بدیہی ہے۔ بزازیہ میں فرمایا: الکفالۃ فی اللغۃ الضم وذلک قد یکون فی المطالبۃ لافی اصل الدین کما فی الوکیل مع الموکل الدین للمؤکل و المطالبۃ للوکیل ۱۔ کفالہ لغت میں ملانے کو کہتے ہیں اور وہ کبھی مطالبہ میں ہوتا ہے اصل دین میں نہیں ہوتا جیسے مؤکل کے ساتھ وکیل کہ دین مؤکل کے لئے ہے اور مطالبہ وکیل کے لئے۔ (ت) اور مطالبہ کے معنی حقیقی طلب و تقاضا اصل زبان عربی میں بھی اسی لئے وضع ہے اور فارسی واردو میں بھی اس معنی حقیقی پر عام محاورات میں علی وجہ الاشتہار دائر و سائر، اگر چہ اردو میں مجازاً آتے ہوئے مال کو بھی کہتے ہوں، مطالبہ یعنی مال قابل مطالبہ مگر معنی حقیقی یقیناً معروف و مشہور ہیں جن کی نسبت کسی جاہل کو بھی ہجر کا وہم تک نہیں ہو سکتا اور اصول فقہ میں مبرہن ہو چکا کہ ہمارے امام اعظم رضی اللہ تعالٰی عنہ کے نزدیک مطلقاً اور ایسی جگہ باتفاق ائمہ کرام حقیقت مجاز پر واجب التقدیم ہے جب تک معنی اصلی بنیں مجاز پر حمل جائز نہیں تو حاصل کلام خالد صرف اس قدر ہوا کہ وہ ۱۸ تک شہر سے بھاگ گئے تو مدعیہ کے لئے ان سے طلب و تقاضے کا میں ذمہ دار ہوں اسے کفالت مال سے کچھ تعلق نہیں بلکہ صرف تقاضے کا وعدہ ہے خالد کو چاہئے زید سے تقاضا کرے نہ یہ

کہ زید سے نہ ملے تو خالد اپنے پاس سے دے۔ فی الہندیۃ عن المحیط نوادر ابن سماعۃ عن الامام محمد رضی اللہ تعالٰی عنہ رجل لہ علی رجل ہندیۃ میں محیط کے حوالہ سے نوادر ابن سماعہ میں منقول امام محمد رضی اللہ تعالٰی عنہ کا یہ قول مذکور ہے کہ ایک شخص کا دوسرے کے ذمے کچھ مال

۱ فتاوٰی بزازیہ علی ہامش فتاوٰی ہندیہ کتاب الکفالۃ نورانی کتب خانہ پشاور ۲/۶ Page 659 of 715

Fatawa Razawiya Volume 17 (17)

[Table] Left Column (Arabic Text): "A man said to a creditor: 'I guarantee to you what so-and-so owes; I will collect it from him and pay it to you.' It was said: This is not a guarantee for the money to be paid from himself; rather, this means he will demand it from the debtor and pay it to the creditor. People's speech follows this meaning. End. Similar to it is in Al-Khulasa and others. - 1"

Right Column (Urdu Explanation): "There was a debt, a third person said to the creditor: 'Whatever debt you have on so-and-so, I am a guarantor for you for that, I will collect it from him and give it to you.' Imam Muhammad (may Allah be pleased with him) said: Guarantee of the property will not be binding on him such that he gives it from himself, rather he will demand from the debtor and give to the creditor, and people's speech is based on these meanings. End. And in Al-Khulasa etc. it is similar to this. (T)"

Imam Shams al-A'imma al-Kardari says in Al-Wajiz:

[Table] Left Column (Arabic Text): "He said to the creditor: 'I guarantee to you what so-and-so owes, that I will collect it from him and pay it to you.' This is not a suretyship (Kafala). Its meaning is that he will demand it for him and pay it to him when he collects it from him. People's speech follows this meaning. End. - 2"

Right Column (Urdu Explanation): "A person said to the creditor: 'Whatever debt you have on so-and-so, I am a guarantor for you that I will collect it from him and give it to you,' so this is not Kafala (suretyship). Rather, its meaning is that he will demand from the debtor and when he collects from him, he will give it to the creditor, and this is the meaning of people's speech. End. (T)"

Also in it and in Fatawa Anquruwiyyah etc. it is stated:

[Table] Left Column (Arabic/Persian Text): "A man said to the owner of the property: 'I have guaranteed and accepted to sell his garden and give this money to you.' Or he said: 'I guarantee that I will take the money from his estate and fulfill it to you.' The suretyship is not valid. However, if he guarantees to sell his own property and pay this amount, it is valid and he shall be compelled to sell and pay the amount. - 3"

Right Column (Urdu Explanation): "A person said to the owner of the wealth: 'I am a guarantor and I accept this matter that I will sell the garden of the debtor and give this wealth to you,' or said: 'I will take the wealth from his estate and give it to you,'

then the Kafala (suretyship) is not correct. And if he became a guarantor in this manner that he will sell his own wealth and give the amount of the debt to the creditor, then the Kafala is correct, accordingly he will be forced to sell the wealth and give the amount of the debt to the seeker. (T)"

Footnotes: 1. Fatawa Hindiyyah, Book of Kafala, Chapter Two, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/257. 2. Fatawa Bazzaziyyah on the margin of Hindiyyah, Book of Kafala, Chapter Two, Noorani Kutub Khana Peshawar, 6/8. 3. Fatawa Bazzaziyyah on the margin of Hindiyyah, Book of Kafala, Chapter Two, Noorani Kutub Khana Peshawar, 6/14-15.

फ़तावा रज़विया जिल्द 17 (17)

[तालिका] बायाँ कॉलम (अरबी पाठ): "एक आदमी ने एक लेनदार से कहा: 'मैं तुम्हारे लिए उस ऋण का ज़ामिन हूँ जो फलां पर है; मैं इसे उससे वसूल करूँगा और तुम्हें दे दूँगा।' यह कहा गया: यह खुद से धन भुगतान करने की गारंटी नहीं है; बल्कि, इसका अर्थ यह है कि वह देनदार से इसकी मांग करेगा और इसे लेनदार को देगा। लोगों की बातचीत इसी अर्थ का अनुसरण करती है। अंत। अल-खुलासा और अन्य में भी इसी तरह है। - 1"

दायाँ कॉलम (उर्दू व्याख्या): "एक ऋण था, एक तीसरे व्यक्ति ने ऋणदाता से कहा: 'जो तुम्हारा फलां पर ऋण है, मैं तुम्हारे लिए उसका ज़ामिन (गारंटर) हूँ, मैं उससे वसूल करूँगा और तुम्हें दे दूँगा।' इमाम मुहम्मद (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने फरमाया: इस पर माल का ज़मान (गारंटी) लाज़िम नहीं होगा कि वह अपने पास से दे, बल्कि वह देनदार (मदियून) से मांगकर ऋणदाता (तालिब) को देगा, और लोगों की बातचीत इन्हीं अर्थों पर आधारित होती है। 'अंत'। और 'खुलासा' आदि में भी इसी तरह है। (त)"

इमाम शम्स अल-अइम्मा करदरी 'वजीज़' में फरमाते हैं:

[तालिका] बायाँ कॉलम (अरबी पाठ): "उसने ऋणदाता से कहा: 'मैं तुम्हारे लिए उस ऋण की गारंटी देता हूँ जो फलां पर है, कि मैं इसे उससे वसूल करूँगा और तुम्हें भुगतान करूँगा।' यह कफाला (ज़मानत) नहीं है। इसका अर्थ यह है कि वह उसके लिए इसकी मांग करेगा और जब वह उससे वसूल कर लेगा तो उसे भुगतान करेगा। लोगों की बातचीत इसी अर्थ का अनुसरण करती है। अंत। - 2"

दायाँ कॉलम (उर्दू व्याख्या): "किसी व्यक्ति ने ऋणदाता से कहा: 'जो तुम्हारा फलां पर ऋण है, मैं तुम्हारे लिए उसका ज़ामिन हूँ कि उससे वसूल करके तुम्हें दूँगा', तो यह 'कफाला' (ज़मानत) नहीं है, बल्कि इसका अर्थ यह है कि वह देनदार से मांग करेगा और जब उससे वसूल कर लेगा तो ऋणदाता को दे देगा, और लोगों की बातचीत का यही मतलब होता है। 'अंत'। (त)"

इसके अलावा इसमें और फ़तावा अनक़ुरुविया आदि में है:

[तालिका] बायाँ कॉलम (अरबी/फारसी पाठ): "एक आदमी ने संपत्ति के मालिक से कहा: 'मैंने उसके बगीचे को बेचने और यह पैसा आपको देने की गारंटी दी है और स्वीकार किया है।' या उसने कहा: 'मैं गारंटी देता हूँ कि मैं उसकी संपत्ति से पैसा लूँगा और आपको चुका दूँगा।' यह कफाला मान्य नहीं

है। हालांकि, यदि वह अपनी संपत्ति बेचने और इस राशि का भुगतान करने की गारंटी देता है, तो यह मान्य है और उसे बेचने और राशि का भुगतान करने के लिए मजबूर किया जाएगा। - 3"

दायाँ कॉलम (उर्दू व्याख्या): "किसी व्यक्ति ने धन के स्वामी (साहिब-ए-माल) से कहा: 'मैं ज़ामिन हूँ और मैं इस बात को स्वीकार करता हूँ कि मैं देनदार के बाग़ को बेचूँगा और यह धन तुम्हें दूँगा,' या यूँ कहा कि 'मैं उसके विरासत (तरका) से धन लेकर तुमको दूँगा,' तो कफाला सही नहीं है। और अगर वह इस तरह ज़ामिन बना कि वह अपना माल बेचकर ऋण की राशि ऋणदाता को देगा, तो कफाला सही है, इसलिए उसे माल बेचने और ऋण की राशि ऋणदाता को देने पर मजबूर किया जाएगा। (त)"

पाद टिप्पणियाँ: 1. फ़तावा हिंदिया, किताबुल कफाला, बाब-ए-सानी, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/257 2. फ़तावा बज़ाज़िया, हाशिए-ए-हिंदिया पर, किताबुल कफाला, बाब-ए-सानी, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 6/8 3. फ़तावा बज़ाज़िया, हाशिए-ए-हिंदिया पर, किताबुल कफाला, बाब-ए-सानी, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 6/14-15

Left Column [Table]: مال فقال رجل للطالب ضمنت لك ما على فلان انا اقبضه منه و ادفعه اليك قال ليس على هذا ضمان المال ان يدفعه من عنده انما هذا على ان يتقاضاه و يدفعه اليه و على هذا معانی کلام الناس اه و نحوه في الخلاصة و غیرها- Right Column 1: قرض تھا، ایک تیسرے شخص نے طالب قرض سے کہا جو تمہارا فلاں پر قرض ہے میں تیرے لئے اس کا ضامن ہوں ، میں اس سے وصول کروں گا اور تجھے دے دوں گا، امام محمد رضی اللہ تعالٰی عنہ نے فرمایا اس پر مال کا ضمان لازم نہ ہوگا کہ اپنے پاس سے دے بلکہ یہ مدیون سے طلب کر کے طالب کو دے گا اور انہی معانی پر لوگوں کا کلام جاری ہے اہ اور خلاصہ وغیرہ میں اسی کی مثل ہے۔ (ت) امام شمس الائمہ کردری وجیز میں فرماتے ہیں: Left Column [Table]: قال للطالب ضمنت لك ما على فلان ان اقبضه منه و ادفعه اليك ليس بكفالة ومعناه ان يتقاضاه له و يدفع اليه اذا قبضه منه على هذا معانی کلام الناس اه - Right Column 2: کسی شخص نے طالب دین سے کہا جو تیرا فلاں پر قرض ہے میں تیرے لئے اس کا ضامن ہوں کہ اس سے وصول کر کے تجھے دوں گا تو یہ کفالہ نہیں بلکہ اس کا معنی یہ ہے کہ وہ مدیون سے مطالبہ کرے گا اور جب اس سے وصول کر لے گا تو طالب قرض کو دے دے گا اور یہی مطلب ہوتا ہے لوگوں کے کلام کا اہ (ت) نیز اس میں اور فتاوٰی انقرویہ وغیرہ میں ہے: Left Column [Table]: قال رجل لصاحب المال من ضمان کردم و پذیرفتم که باغ ویرا فروشم و این مال بتو دهم او قال ضمنت ان اخذ المال من ترکته واوفیک لا تصح الكفالة وان ضمن على ان يبيع مال نفسه و يوفيه هذا المقدار صح و يجبر على البيع وقضاء المقدار- Right Column 3: کسی شخص نے صاحب مال سے کہا میں ضامن ہوں اور میں اس بات کو قبول کرتا ہوں کہ میں مدیون کے باغ کو فروخت کروں گا اور یہ مال تجھے دوں گا، یا یوں

کہا کہ میں اس کے ترکہ سے مال لے کر تجھ کو دوں گا، تو کفالہ صحیح نہیں اور اگر وہ ضامن بنا اس طور پر کہ اپنا مال بیچ کر قرض کی مقدار طالب قرض کو دے گا تو کفالہ صحیح ہے چنانچہ اس کو مال بیچنے اور قرض کی مقدار طالب کو دینے پر مجبور کیا جائے گا۔ (ت)

[Footnotes] 1 فتاوٰی ہندیہ کتاب الکفالۃ الباب الثانی نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۵۷ 2 فتاوٰی بزازیہ علی ہامش ہندیہ کتاب الکفالۃ الباب الثانی نورانی کتب خانہ پشاور ۶/ ۸ 3 فتاوٰی بزازیہ علی ہامش ہندیہ کتاب الکفالۃ الباب الثانی نورانی کتب خانہ پشاور ۶/ ۱۵- ۱۴

Fatawa Rizvia (Volume 17)

Second Reason: If, for the sake of argument, the agreed-upon ruling, whether interpreted literally or metaphorically, is taken to mean that this financial guarantee was contingent upon absconding until the 18th. Since no flight was established during this period, there is no case for the liability of the money. This is because suspending a guarantee on such a condition is valid, and "when the condition fails, the thing contingent upon it also fails" is a clear and general principle. (T)

Third Reason: Suppose also that 'demand' refers to the money itself, and the flight occurred before the 18th. In that case, the plaintiff herself, through her own statement and admission, considers the financial guarantee to be absolutely void. She has no right to demand payment based on her own settled points. On her part, the Zahir-al-Riwayah (established narration) is emphasized here, and the flight was shown before the 18th. According to the majority of esteemed Imams, the meaning of Zahir-al-Riwayah is that when the start of said period is not mentioned and only the end is specified, then the guarantee will be established after that time and will remain until clearance is attained. There will be no guarantee from the day of admission until that time. In short, in Zahir-al-Riwayah, in such a place, 'until' (tuk) means 'after'. 'I am the guarantor until 18th February' means the guarantee will start after the 18th. It is stated in Fatawa Khaniya, Zahiriya, and Khazanat al-Muftiyeen:

Arabic	Urdu Translation
When a guarantee is made for a term, he only becomes a guarantor after the expiration of the term.[1]	When a guarantee is set for a certain period, he will become a guarantor after the passing of that period. (T)

In Sirajiya, it is stated:

Arabic	Urdu Translation
If one guarantees the person of another for a month, he becomes a guarantor after the month; this is the most correct view.[2]	If someone becomes a personal guarantor for someone for a month, he will become a guarantor after the month has passed, and that is the correct view. (T)

In Khaniya, it is stated:

Arabic	Urdu Translation
A man guaranteed the person of another man for three days. It is	If a person becomes a personal guarantor for another for three days, it is mentioned in

Arabic	Urdu Translation
mentioned in 'Al-Asl' that he becomes a guarantor after the three days. The jurist Abu Ja'far said he becomes a guarantor immediately, and said the mention of three days is for delaying the demand for three days.	'Al-Asl' that he will become a guarantor after the three days have passed. And the jurist Abu Ja'far said that he will become a guarantor immediately, and the mention of three days is for delaying the demand for three days, and according to jurist Abu Ja'far...

[1] Khazanat al-Muftiyeen, Book of Guarantee, Chapter Two, Manuscript 2/59. [2] Fatawa Sirajiya, Book of Guarantee, Chapter Two, Nawal Kishore Lucknow, p. 129.

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

दूसरा कारण: मान लें कि यदि सहमत नियम को लाक्षणिक अर्थ में भी लिया जाए, तो यह वित्तीय गारंटी 18 तारीख तक भागने पर निर्भर थी। जब इस अवधि के दौरान कोई पलायन सिद्ध नहीं हुआ, तो धन की देयता का कोई मामला नहीं बनता। क्योंकि ऐसी शर्त पर गारंटी का निलंबन मान्य है, और "जब शर्त विफल हो जाती है, तो उस पर निर्भर चीज़ भी विफल हो जाती है" एक स्पष्ट और सामान्य सिद्धांत है। (त)

तीसरा कारण: यह भी मान लें कि 'मांग' का तात्पर्य धन से ही था और पलायन 18 से पहले हुआ, तो वादी स्वयं अपने बयान और स्वीकारोक्ति से वित्तीय गारंटी को पूरी तरह शून्य मान रही है। उसे अपनी ही तयशुदा बातों से धन की मांग करने का कोई अधिकार नहीं है। उसकी ओर से यहाँ 'ज़ाहिर-अल-रिवायाह' (प्रमाणित वर्णन) पर ज़ोर दिया जा रहा है और पलायन 18 से पहले दिखाया गया है। प्रतिष्ठित इमामों के बहुमत के अनुसार, ज़ाहिर-अल-रिवायाह का अर्थ यह है कि जब उक्त अवधि की शुरुआत का उल्लेख न हो और केवल अंत का उल्लेख हो, तो गारंटी उस समय के बाद स्थापित होगी और मुक्ति प्राप्त होने तक हमेशा बनी रहेगी। स्वीकृति के दिन से उस समय तक मूल रूप से कोई गारंटी नहीं होगी। संक्षेप में, ज़ाहिर-अल-रिवायाह में ऐसी जगह 'तक' का अर्थ 'बाद' है। 'मैं 18 फरवरी तक ज़मानती हूँ' का अर्थ है कि ज़मानत 18 के बाद शुरू होगी। फ़तावा खानिया, ज़हीरिया और खज़ानतुल मुफ़्तीन में है:

अरबी	उर्दू अनुवाद
जब ज़मानत एक निश्चित अवधि के लिए की जाती है, तो वह केवल उस अवधि की समाप्ति के बाद ही ज़मानती बनता है।[1]	जब ज़मानत किसी अवधि तक निर्धारित की जाए, तो वह उस अवधि के बीतने के बाद ज़मानती बनेगा। (त)

सिराजिया में है:

अरबी	उर्दू अनुवाद
यदि कोई व्यक्ति एक महीने के लिए दूसरे के व्यक्तित्व की ज़मानत लेता है, तो वह एक महीने के बाद ज़मानती बन जाता है; यही सबसे सही विचार है।[2]	यदि एक महीने तक किसी का ज़मानती (कफ़ील नफ़्स) बना, तो महीने के बीतने के बाद ज़मानती बनेगा और वही सही है। (त)

खानिया में है:

अरबी	उर्दू अनुवाद
एक व्यक्ति ने तीन दिनों के लिए दूसरे व्यक्ति के व्यक्तित्व की ज़मानत ली। 'अल-अस्ल' में उल्लेख है कि वह तीन दिनों के बाद ज़मानती बन जाता है। फ़कीह अबू जाफ़र ने कहा कि वह तुरंत ज़मानती बन जाएगा, और कहा कि तीन दिनों का उल्लेख तीन दिनों तक मांग को टालने के लिए है।	एक व्यक्ति दूसरे के नफ़्स (व्यक्तित्व) का तीन दिन तक ज़मानती हुआ, तो 'अस्ल' में उल्लेख है कि तीन दिन बीतने के बाद ज़मानती बनेगा, और फ़कीह अबू जाफ़र ने कहा कि तत्काल ज़मानती बन जाएगा, और तीन दिनों का उल्लेख तीन दिन तक मांग की देरी के लिए है, और फ़कीह अबू जाफ़र के अनुसार...

[1] खज़ानतुल मुफ़्तीन, किताबुल कफ़ालाह, बाब-ए-सानी, हस्तलिखित प्रति 2/59 [2] फ़तावा सिराजिया, किताबुल कफ़ालाह, बाब-ए-सानी, नवल किशोर लखनऊ, पृ. 129

पृष्ठ 661/715

وجہ دوم: اگر بالفرض حکم متفق علیہ خواہ ہی معنی مجازی پر حمل کیجئے تو یہ کفالت بالمال ۱۸ تک بھاگنے پر معلق تھی جب اس مدت میں فرار ثابت نہیں تو لزوم مال کی کوئی صورت نہیں کہ تعلیق کفالت کی ایسی شرط پر صحیح ہے اور اذا فات الشرط فات المشروط اصل کلی صریح (جب شرط فوت ہو جائے تو مشروط بھی فوت ہو جاتا ہے، یہ واضح کلیہ ہے۔ت)

وجہ سوم: یہ بھی فرض کیجئے کہ مطالبہ سے مراد مال ہی تھا اور فرار ۱۸ سے پہلے ہی ہوا تو مدعیہ خود اپنے بیان و تسلیم سے کفالت بالمال کو باطل محض مان رہی ہے اسے اپنی ہی قرارداد باتوں سے مطالبہ مال کا کوئی استحقاق نہیں اس کی جانب سے یہاں عمل ظاہر الروایۃ پر زور دیا جاتا ہے اور ۱۸ سے پہلے فرار ظاہر کیا گیا جمہور ائمہ کرام کے نزدیک ظاہر الروایۃ کے یہ معنی ہیں کہ جب ابتدائے مدت مذکور نہ ہو صرف انتہا کا ذکر آئے تو کفالت اس وقت کے بعد محقق ہو کر تاحصول برات ہمیشہ رہے گی اور روز اقرار سے اس وقت تک اصلاً کفالت نہ ہوگی بالجملہ ظاہر الروایۃ میں ایسی جگہ (تک) بمعنی بعد کے ہے ۱۸ فروری تک ضامن ہوں یعنی ۱۸ کے بعد ضمانت شروع ہو گی، فتاوٰی خانیہ و ظہیریہ و خزانۃ المفتین میں ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
الکفالۃ متی جعلت الی اجل فانما یصیر کفیلا بعد انقضاء الاجل ۱۔	کفالت جب کسی مدت تک ٹھہرائی جائے تو اس مدت کے گزرنے کے بعد کفیل بنے گا۔ (ت)

سراجیہ میں ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
کفل بنفسه الی شهر یصیر کفیلا بعد شهر هو الاصح ۲۔	اگر ایک ماہ تک کسی کا کفیل نفس بنا تو ماہ کے گزرنے کے بعد کفیل بنے گا اور وہی صحیح ہے (ت)۔

خانیہ میں ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
رجل کفل بنفس رجل الی ثلثة ایام ذکر فی الاصل انه یصیر کفیلا بعد الایام الثلثة وقال الفقیه ابو جعفر یصیر کفیلا فی الحال قال وذکر الایام الثلثة لتاخیر المطالبة الی ثلثة ایام۔	ایک شخص دوسرے کے نفس کا تین دن تک ضامن ہوا تو اصل میں مذکور ہے کہ تین دن گزرنے کے بعد کفیل بنے گا، اور فقیہ ابو جعفر نے کہا کہ فی الحال کفیل بن جائے گا اور ایامِ ثلاثہ کا ذکر تین دن تک مطالبہ کی تاخیر کے لئے ہے اور فقیہ ابو جعفر کے...

۱ خزانۃ المفتین کتاب الکفالۃ الباب الثانی قلمی نسخہ ۲/ ۵۹ ۲ فتاوٰی سراجیہ کتاب الکفالۃ الباب الثانی نولکشور لکھنؤ، ص ۱۲۹

Fatawa Razawiyya Volume 17

(Arabic) Other scholars took the literal meaning of the book and said that he does not become a guarantor immediately. And if three days pass before the person is surrendered, he becomes a permanent guarantor and is not released from the guarantee until he surrenders [the person]. Summary.

(Urdu) Besides, some other scholars have adopted the literal wording of the book and said he will not become a guarantor immediately. Then, when three days have passed and he could not hand over that person to the claimant (beneficiary) for whom he had stood guarantee, he will now become a guarantor forever. And as long as he does not hand over that person to the claimant, he will not be released from the guarantee. Summary (T).

Allamah Anqarwi narrated this in his collection and regarding "and other scholars took the apparent meaning of the book" (And other scholars besides them chose the apparent meaning of the book. - T), he wrote: "In Sirajiyyah, and it is the most correct view and fatwa is given upon it; similarly in the sixth volume of Tatar-Khaniyah and also in At-Tatimmah." And in Sirajiyyah it is [stated] that the same is the most correct and fatwa is given on it; it is the same in Tatar-Khaniyah and Tatimmah. (T) It is in Wajiz-e-Kardari:

(Arabic) He stood as guarantor for one month, he [the claimant] demanded from him after a month, and he becomes a guarantor immediately, and the fatwa is given on this. Summary.

(Urdu) He became a guarantor for up to one month; so after one month [the claimant] can demand from him, and he becomes a guarantor immediately and fatwa is given on this. Summary (T).

In Jami' al-Fasulayn at the end of the thirtieth chapter, it is mentioned:

(Arabic) If he wants to stand as a guarantor for the person but does not want to become a [binding] guarantor, the legal device (hila) according to the apparent narration is to say: "I stand as guarantor for his person for a month, on the condition that I am absolved after that."

(Urdu) If someone wants to become a guarantor for someone's person in such a way that in reality he does not become a guarantor, then according to Zahir al-Riwayah, the legal stratagem for it is that he should say: "I become a guarantor for his person for one month on the condition that afterwards I will be free from it."

1. Fatawa Qazikhan, Kitab al-Kafalah, Nawal Kishore Lucknow 3 / 583.
2. Fatawa Anqarwiyya, Kitab al-Kafalah, Dar al-Isha'at al-Arabiyyah Afghanistan 1 / 317.
3. Annotations of Anqarwiyya, Fatawa Anqarwiyya, Kitab al-Kafalah, Dar al-Isha'at al-Arabiyyah Afghanistan 1 / 317.
4. Fatawa Bazzaziyyah on the margin of Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Kafalah, Section on Wordings, Noorani Kutub Khana Peshawar 6 / 4.

(अरबी) अन्य उलेमाओं (विद्वानों) ने किताब के शाब्दिक अर्थ को ग्रहण किया और कहा कि वह तुरंत ज़मानतदार नहीं बनता। और यदि व्यक्ति को सौंपने से पहले तीन दिन बीत जाते हैं, तो वह हमेशा के लिए ज़मानतदार बन जाता है और जब तक वह व्यक्ति को नहीं सौंपता, ज़मानत से मुक्त नहीं होता। (संक्षेप में)

(उर्दू) इसके अलावा, कुछ अन्य विद्वानों ने किताब के प्रकट अर्थ को अपनाया और कहा कि वह तुरंत ज़मानतदार नहीं बनेगा। फिर जब तीन दिन बीत गए और वह उस व्यक्ति को मकफ़ूल लहू (जिसके लिए ज़मानत दी गई) के हवाले न कर सका जिसका वह ज़मानतदार बना था, तो अब वह हमेशा के लिए ज़मानतदार बन जाएगा। और जब तक वह उस व्यक्ति को मकफ़ूल लहू के हवाले नहीं करेगा, वह ज़मानत से बाहर नहीं होगा। (संक्षेप में - अनु.)

अल्लामा अनक़रवी ने अपने संग्रह में इसे उद्धृत किया है और "वगैरहु मिन अल-मशाइख अख़ज़ु बि-ज़ाहिर अल-किताब" (और उनके अलावा अन्य मशाइख ने किताब के ज़ाहिरी अर्थ को अपनाया - अनु.) के बारे में लिखा है: "सिराजिया में है कि यही सबसे सही विचार है और इसी पर फ़तवा दिया जाता है; इसी तरह तातार-खानिआ के छठे खंड में और अत-ततिममह में भी है।" सिराजिया में है कि वही सबसे सही है और उसी पर फ़तवा दिया जाता है, तातार-खानिआ और ततिममह में भी ऐसा ही है। (अनु.) वजीज़-ए-करदरी में है:

(अरबी) उसने एक महीने तक की ज़मानत ली, उसने (दावेदार ने) एक महीने बाद उससे मांग की, और वह तुरंत ज़मानतदार बन जाता है और इसी पर फ़तवा है। (संक्षेप में)

(उर्दू) एक महीने तक ज़मानतदार बना तो एक महीने बाद उससे मांग करे और वह तुरंत ज़मानतदार बन जाता है और इसी पर फ़तवा दिया जाता है। (संक्षेप में - अनु.)

जामि अल-फ़सुलैन के तीसवें अध्याय के अंत में है:

(अरबी) यदि वह व्यक्ति की ज़मानत लेना चाहता है लेकिन (स्थायी रूप से) ज़मानतदार नहीं बनना चाहता, तो ज़ाहिर अल-रिवायत के अनुसार इसके लिए कानूनी युक्ति (हीला) यह है कि वह कहे: "मैं एक महीने तक उसके व्यक्ति के लिए ज़मानतदार बनता हूँ, इस शर्त पर कि उसके बाद मैं इससे बरी हो जाऊँगा।"

(उर्दू) अगर कोई चाहे कि दूसरे का ज़मानत-ब-नफ़्स (व्यक्तिगत ज़मानतदार) इस तरह बने कि वास्तव में ज़मानतदार न बने, तो ज़ाहिर अल-रिवायत पर इसके लिए युक्ति यह है कि वह इस प्रकार कहे: "मैं उसके नफ़्स (व्यक्ति) का एक महीने तक ज़मानतदार बनता हूँ इस शर्त पर कि बाद में मैं इससे बरी हो जाऊँगा।"

1. फ़तावा क़ाज़ीखान, किताब अल-कफ़ाला, नवल किशोर लखनऊ 3 / 583.
2. फ़तावा अनक़रवीया, किताब अल-कफ़ाला, दार अल-इशाअत अल-अरबिया अफ़गानिस्तान 1 / 317.
3. हवाशी अनक़रवीया, फ़तावा अनक़रवीया, किताब अल-कफ़ाला, दार अल-इशाअत अल-अरबिया अफ़गानिस्तान 1 / 317.
4. फ़तावा बज़ाज़िया, फ़तावा हिंदीया के हाशिए पर, किताब अल-कफ़ाला, नौउन फ़ी अलफ़ाज़, नूरानी कुतुब खाना पेशावर 6 / 4.

وغیرہ من المشائخ اخذوا بظاھر الکتاب وقالوا لا یصیر کفیلا فی الحال واذا مضت الایام الثلثۃ قبل تسلیم النفس یصیر کفیلا ابدا لا یخرج عن الکفالۃ ما لم یسلم اھ مختصرا

علاوہ بعض دوسرے مشائخ نے ظاہر کتاب کو اختیار کیا اور کہا فی الحال کفیل نہیں بنے گا پھر جب تین دن گزر گئے اور وہ مکفول لہ کے حوالے اس شخص کو نہ کر سکا جس کا ضامن بنا تھا تو اب ہمیشہ کے لئے کفیل بن جائے گا اور جب تک اس شخص کو مکفول لہ کے حوالہ نہ کرے گا کفالت سے خارج نہ ہوگا اھ مختصرا (ت)

علامہ انقروی نے اپنے مجموعہ میں اسے نقل فرما کر وغیرہ من المشائخ اخذوا بظاھر الکتاب ۲ (اور اس کے علاوہ دیگر مشائخ نے ظاہر کتاب کو اختیار کیا۔ ت) یہ تحریر فرمایا: في السراجیۃ وھو الاصح و بہ یفتی کذا في السادس من التاتارخانیۃ وکذا فی التتمۃ ۳ ۔ اور سراجیہ میں ہے کہ وہی اصح ہے اور اسی پر فتوی دیا جاتا ہے تاتار خانیہ اور تتمہ میں یوں ہی ہے۔ (ت) وجیز کردری میں ہے:

کفل الی شھر طالبہ بعد شھر ویصیر کفیلا في الحال وبہ یفتی ۴ اھ ملتقطا

ایک ماہ تک کفیل بنا تو ایک ماہ کے بعد اس کا مطالبہ کرے اور فی الحال وہ کفیل بن جائے گا اور اسی پر فتوٰی دیا جاتا ہے اھ التقط (ت)

جامع الفصولین اواخر فصل ثلثین میں ہے:

لوارادان یکفل بنفسه ولا یصیر **اگر کوئی چاہے کہ دوسرے کا کفیل بالنفس اس طرح بنے کہ در**

کفیلا فالحیلة علی ظاهر الروایة **حقیقت کفیل نہ بنے تو ظاہر الروایة پر اس کا حیلہ یہ ہے کہ**

ان یقول کفلت بنفسه الی شهر **یوں کہے میں اس کے نفس کا ایک ماہ تک کفیل بنتا ہوں اس**

علی ان ابرأه بعده **شرط پر کہ بعد میں اس سے بری ہو جاؤں گا**

۱ فتاویٰ قاضیخان کتاب الکفالة نولکشور لکھنؤ ۳ / ۵۸۳ ۲ فتاویٰ انقرویہ کتاب الکفالة دارالاشاعة العربیة افغانستان ۱ / ۳۱۷ ۳ حواشی انقرویہ فتاویٰ انقرویہ کتاب الکفالة دارالاشاعة العربیة افغانستان ۱ / ۳۱۷ ۴ فتاویٰ بزازیہ علی ہامش فتاویٰ ہندیہ کتاب الکفالة نوع فی الفاظ نورانی کتب خانہ پشاور ۶ / ۴

Fatawa Razawiyya (17)

فلا يصير كفيلا اصلا للحال في الظاهر اذ فيه يصير كفيلا بعده فلما شرط ان يبرأ بعده بطل اصلا۔ 1

So he will not become a guarantor immediately at all because according to the manifest narration (Zahir al-Riwayah), he was to become a guarantor after one month, but when the condition was set that after one month he would be absolved, then the guarantee became void in principle. (T)

In the margin of Anqarawi, it is written:

وهذا الحيلة انما تمشى على ما قال عامة المشائخ انه لا يصير كفيلا فى الحال وهو ظاهر الرواية على ما قاله ابو جعفر 2۔

And this legal stratagem only works according to what the generality of the sheikhs said, that he does not become a guarantor in the present, and it is the manifest narration as stated by Imam Abu Ja'far. (T)

And it is evident that the original objective here was 'Kafala bin Nafs' (guarantee for the person's presence), which was required and recorded. Khalid wrote requesting a guarantee for attendance, therefore 'I am the guarantor for presence.' The order was written for the supervisor to hand over the defendant to the guarantor for presence. The mention of 'Kafala bil Maal' (guarantee for the property/debt) occurred merely as a consequence for the purpose of authentication and emphasis of the original 'Kafala bin Nafs,' and the subordinate cannot precede the principal, as in Al-Durr al-Mukhtar, not in the state of the absence of the principal. Therefore, in such a case, when the guarantor is absolved from the intended guarantee, i.e., guarantee for the person, he is also absolved from the subordinate guarantee, i.e., guarantee for the property. In Al-Durr al-Mukhtar, it says:

ان قال ان لم أت به غدا فهو ضامن لما عليه من المال فلم يواف به مع قدرته عليه ضمن المال لانه علق الكفالة بالمال بشرط متعارف فصح ولا يبرؤ

If he said, 'If I do not bring him tomorrow, then I am a guarantor for the money he owes,' and he did not bring him despite having the power to do so, he becomes a guarantor for the money because he linked the guarantee for property to a commonly recognized condition, so it is valid and he is not absolved.

In [Urdu]: If he said, 'If I do not bring him tomorrow, then I will be the guarantor for the property he owes.'

ان قال ان لم أت به غدا فهو ضامن لما عليه من المال فلم يواف به مع قدرته عليه ضمن المال لانه علق الكفالة بالمال بشرط متعارف فصح ولا يبرؤ	**If he said, 'If I do not bring him tomorrow, then I am a guarantor for the money he owes,' and he did not bring him despite having the power to do so, he becomes a guarantor for the money because he linked the guarantee for property to a commonly recognized condition, so it is valid and he is not absolved.** Now, despite having the power, if he did not produce the required person, the guarantor will be liable for that property because he linked the guarantee for property with a condition that is recognized among people.

Note: In the original, there is a blank space and in my opinion, it is Al-Durr al-Mukhtar here. (T)

1 Jami' al-Fusulayn, Chapter 30, Islami Kutub Khana Karachi, 6/27. 2 Hawashi Fatawa Anqarawi, Book of Guarantee, Dar al-Isha'at al-Arabiyyah Kandahar Afghanistan, 1/317.

फतवा-ए-रजविया (17)

فلا يصير كفيلا اصلا للحال في الظاهر اذ فيه يصير كفيلا بعده فلما شرط ان يبرأ بعده بطل اصلا۔ 1	**तो वह बिल्कुल वर्तमान में ज़मानतदार नहीं बनेगा क्योंकि ज़ाहिर-अल-रिवाया के अनुसार एक महीने के बाद उसे ज़मानतदार बनना था, लेकिन जब यह शर्त लगाई गई कि एक महीने बाद वह इससे बरी हो जाएगा, तो ज़मानत मूलतः अमान्य हो गई। (त)**

हाशिये-ए-अनक़रवी में है:

وهذا الحيلة انما تمشى على ما قال عامة المشائخ انه لا يصير كفيلا فى الحال وهو ظاهر الرواية على ما قاله ابو جعفر 2۔	**और यह युक्ति इस आधार पर चलती है कि जो आम मशायख़ ने कहा कि वह वर्तमान में ज़मानतदार नहीं होगा और यही ज़ाहिर-अल-रिवाया है, जैसा कि इमाम अबू जाफ़र ने कहा। (त)**

और ज़ाहिर है कि यहाँ असल मक़सद 'कफ़ालत बिन नफ़्स' (उपस्थिति की ज़मानत) थी, वही वांछित थी और वही लिखी गई थी। खालिद ने लिखा कि उनसे उपस्थिति की ज़मानत मांगी जाए, इसलिए 'मैं उपस्थिति का ज़ामिन हूँ'। आदेश लिखा गया कि नज़िर प्रतिवादी को उपस्थिति ज़ामिन के सुपुर्द करे। 'कफ़ालत बिल माल' (धन की ज़मानत) का ज़िक्र केवल मूल 'कफ़ालत बिन नफ़्स' के प्रमाणीकरण और पुष्टि के उद्देश्य से अधीनस्थ के रूप में हुआ था, और अधीनस्थ प्रधान से आगे नहीं बढ़ सकता जैसा कि अल-दुर्र अल-मुख़्तार में है, प्रधान की अनुपस्थिति की स्थिति में नहीं। इसलिए ऐसी स्थिति में जब ज़ामिन अभीष्ट ज़मानत यानी नफ़्स की ज़मानत से बरी हो जाए, तो वह अधीनस्थ ज़मानत यानी माल की ज़मानत से भी बरी हो जाता है। अल-दुर्र अल-मुख़्तार में है:

ان قال ان لم أت به غدا فهو ضامن لما عليه من المال فلم يواف به مع قدرته عليه ضمن المال لانه علق الكفالة بالمال بشرط متعارف فصح ولا يبرؤ

अगर उसने कहा: 'अगर मैं उसे कल नहीं लाया, तो वह जो माल उस पर बकाया है, उसका मैं ज़ामिन हूँ,' और अपनी सामर्थ्य के बावजूद वह उसे नहीं लाया, तो वह माल का ज़ामिन होगा क्योंकि उसने माल की ज़मानत को एक ऐसी शर्त के साथ जोड़ा जो लोगों में प्रचलित है, इसलिए यह सही है और वह बरी नहीं होगा।

अगर कहा कि 'अगर मैं उसको कल न ले कर आया तो उस पर जो माल है मैं उसका ज़ामिन हूँगा।' अब सामर्थ्य के बावजूद उसने वांछित व्यक्ति को उपस्थित नहीं किया तो ज़ामिन उस माल का ज़िम्मेदार होगा क्योंकि उसने माल की ज़मानत को ऐसी शर्त के साथ जोड़ा जो लोगों में प्रचलित है।

नोट: मूल प्रति में रिक्त स्थान है और मेरे विचार में यहाँ 'अल-दुर्र अल-मुख़्तार' है। (त)

1 जामे अल-फुसुलैन, अध्याय 30, इस्लामी कुतुब खाना कराची, 6/27. 2 हवाशी फतवा-ए-अनक़रवी, ज़मानत की किताब, दारुल इशाअत अल-अरबिया कंधार अफ़गानिस्तान, 1/317.

पृष्ठ 663/715

فتاوی رضویہ (۱۷)

فلا یصیر کفیلا اصلا للحال في الظاهر اذ فیه یصیر کفیلا بعده فلما شرط ان یبرأ بعده بطل اصلا۔ 1

تو وہ بالکل فی الحال ہی کفیل نہ بنے گا کیونکہ ظاہر الروایہ کے مطابق ایک ماہ کے بعد اس نے کفیل بننا تھا مگر جب یہ شرط لگائی کہ ایک ماہ بعد اس سے بری ہو جائیگا تو کفالت اصلا باطل ہو گئی۔ (ت)

ہامش انقروی میں ہے:

وھذا الحیلة انما تمشی علی ما قال عامة المشائخ انه لا یصیر کفیلا فی الحال وھو ظاھر الروایة علی ما قاله ابو جعفر 2۔

اور یہ حیلہ اس بنیاد پر جاری ہے کہ جو عام مشائخ نے کہا وہ فی الحال کفیل نہ ہو گا اور یہی ظاہر الروایہ ہے، جیسا کہ امام ابو جعفر نے کہا۔ (ت)

اور پر ظاہر کہ یہاں اصل مقصود کفالۃ بالنفس تھی وہی مطلوب تھی وہی مکتوب ہوئی، خالد نے لکھا ان سے ضمانت حاضری طلب ہے لہٰذا میں حاضر ضامن ہوں، حکم لکھا گیا ناظر مد عاعلیہ کو سپرد حاضر ضامن کریں کفالت بالمال کا ذکر محض تبعا بغرض توثیق و تاکید اصل کفالت بالنفس واقع ہوا اور تابع متبوع پر مقدم نہیں ہو سکتا کما فی الدر المختار عہ نہ بحال عدم متبوع موجود ہو لہٰذا ایسی صورت میں جب کفیل کفالت مقصودہ یعنی کفالت بالنفس سے بری ہو کفالت تابعہ یعنی کفالت بالمال سے بری ہو جاتا ہے، در مختار میں ہے:

ان قال ان لم أت به غدا فهو ضامن لما عليه من المال فلم يواف به مع قدرته عليه ضمن المال لانه علق الكفالة بالمال بشرط متعارف فصح ولا يبرؤ

اگر اس نے کہا: 'اگر میں اسے کل نہ لایا، تو جو مال اس پر ہے اس کا میں ضامن ہوں'، پس قدرت کے باوجود وہ اسے نہ لایا تو وہ مال کا ضامن ہوگا کیونکہ اس نے مال کی کفالت کو ایک متعارف شرط کے ساتھ معلق کیا ہے پس یہ صحیح ہے اور وہ بری نہیں ہوگا۔

اگر کہا کہ اگر میں اس کو کل نہ لے کر آیا تو اس پر جو مال ہے میں اس کا ضامن ہوں گا اب قدرت کے باوجود اس نے مطلوب کو حاضر نہ کیا تو کفیل اس مال کا ضامن ہوگا کیونکہ اس نے کفالت بالمال کو ایسی شرط کے ساتھ معلق کیا جو لوگوں میں متعارف ہے۔

عہ: فی الاصل بیاض واظنہ الدر المختار ۱۲۔ (اصل میں بیاض ہے اور میرے گمان میں یہاں در مختار ہے ۱۲۔ ت)

1 جامع الفصولین الفصل الثلاثون اسلامی کتب خانہ کراچی ۶/۲۷ 2 حواشی فتاوٰی انقروی کتاب الکفالۃ دارالاشاعۃ العربیہ قندہار افغانستان ۱/۳۱۷

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

[Section 1] Arabic: Regarding person-guarantee (Kafala bi al-Nafs), since there is no contradiction between them, if he was released from it and failed to produce the person, the payment of money does not become obligatory due to the loss of its condition. End of summary. (1) Urdu: It is a known practice, so it is correct. He will not be absolved of the person-guarantee because there is no contradiction between the two. If the claimant released him from the person-guarantee even though he did not produce the required person, then because the condition is now unfulfilled, the money is no longer obligatory upon him. End of summary. (T)

[Section 2] In Radd al-Muhtar, it is stated: Arabic: Its condition is the continuation of the personal guarantee. (2) Urdu: Its condition is that the personal guarantee remains in effect. (T)

According to Zahir al-Riwayah (established legal reports), until February 18th, there was neither personal guarantee nor monetary guarantee. Therefore, regarding an escape that occurred before the guarantee was established, imposing a monetary liability is purely an impossible notion.

Fourth Reason: Even if we lower our stance and assume, for the sake of argument, that the monetary guarantee here is an independent, non-subordinate guarantee, such that even if the personal guarantee was established after the 18th according to Zahir al-Riwayah, the monetary guarantee existed first, and if an escape occurred during its validity, why would it not cause a monetary liability? However, this thought is more flawed and void than the first one. In the decreed (Mufta-bihi) view of our Imam Azam (Abu Hanifa) and the Third Imam (Muhammad al-Shaybani), may Allah be pleased with them, both offer (ijab) and acceptance (qabul) are pillars of the guarantee (Kafala). If the beneficiary (Makful-lahu) is not present at the session of offer and acceptance is not found in that same session, the guarantee is completely void and ineffective. Even if the beneficiary receives news afterward and accepts it, it is still not useful at all. In 'Khulasa', citing 'Mabsut' of Imam Muhammad, it is said:

[Section 3] Arabic: If a man stands surety for another while the beneficiary (Makful-lahu) is absent, it is void. Abu Yusuf later said it is permissible. (3) Urdu: If someone becomes a guarantor for another while the beneficiary is absent, this guarantee is void, but Imam Abu Yusuf stated in his second view that it is permissible. (T)

In Quduri and Hidaya, it is stated: Arabic: A guarantee is not valid except with the acceptance of the beneficiary. Urdu: A guarantee is not valid without acceptance by the beneficiary within the session.

[Footnotes] 1. Durr al-Mukhtar, Book of Kafala, Mujtabai Press, Delhi, 2/21 2. Radd al-Muhtar, Book of Kafala, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/259 3. Khulasat al-Fatawa, Book of Kafala, Another category, Habibi Press, Quetta, 4/165

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

[अनुभाग 1] अरबी: व्यक्तिगत जमानत (कफ़ाला बिन-नफ़्स) के बारे में, क्योंकि उनके बीच कोई विरोधाभास नहीं है; यदि उसे इससे मुक्त कर दिया गया और वह व्यक्ति को पेश करने में विफल रहा, तो शर्त समाप्त होने के कारण धन का भुगतान अनिवार्य नहीं होता। संक्षेप में। (1) उर्दू: यह एक प्रचलित प्रथा है, इसलिए यह सही है। वह व्यक्तिगत जमानत से मुक्त नहीं होगा क्योंकि इन दोनों के बीच कोई विरोधाभास नहीं है। यदि दावेदार ने उसे व्यक्तिगत जमानत से मुक्त कर दिया, हालाँकि उसने वांछित व्यक्ति को पेश नहीं किया, तो अब शर्त पूरी न होने के कारण धन उसके ज़िम्मे अनिवार्य नहीं रहा। संक्षेप में। (त)

[अनुभाग 2] रद्दुल मुख्तार में लिखा है: अरबी: इसकी शर्त व्यक्तिगत जमानत का बने रहना है। (2) उर्दू: इसकी शर्त यह है कि व्यक्तिगत जमानत बनी रहे। (त)

ज़ाहिर-अर-रवायत (स्थापित कानूनी विवरणों) के अनुसार, 18 फरवरी तक न तो व्यक्तिगत जमानत थी और न ही धन की जमानत। इसलिए, उस पलायन के बारे में जो जमानत प्राप्त होने से पहले हुआ हो, धन का दायित्व थोपना महज एक असंभव विचार है।

चौथा कारण: इससे भी नीचे उतरें और मान लें कि यहाँ धन की जमानत एक स्वतंत्र, अधीनस्थ नहीं रहने वाली जमानत है, ताकि भले ही ज़ाहिर-अर-रवायत के अनुसार व्यक्तिगत जमानत 18 के बाद पुख्ता हुई हो, धन की जमानत पहले से थी और उसके सबूत की स्थिति में पलायन हुआ, तो वह धन का कारण क्यों नहीं बनेगा? लेकिन यह विचार पहले विचार से भी अधिक त्रुटिपूर्ण और शून्य है। हमारे इमाम-ए-आज़म और तीसरे इमाम (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) के मुफ्ता-बिही (जिस पर फतवा दिया गया है) मज़हब में, ईजाब (प्रस्ताव) और क़ुबूल (स्वीकृति) दोनों जमानत (कफ़ाला) के स्तंभ हैं। यदि कफ़ील-लहु (लाभार्थी) प्रस्ताव की सभा में उपस्थित न हो और उसी सभा में स्वीकृति न मिले, तो जमानत पूरी तरह से शून्य और प्रभावहीन हो जाती है। इसके बाद यदि कफ़ील-लहु को सूचना मिले और वह इसे स्वीकार भी कर ले, तब भी यह बिल्कुल उपयोगी नहीं है। इमाम मुहम्मद की 'मबसूत' से 'खुलासा' में कहा गया है:

[अनुभाग 3] अरबी: यदि कोई पुरुष दूसरे के लिए ज़मानत दे और लाभार्थी (मकफ़ूल-लहु) अनुपस्थित हो, तो वह शून्य है। अबू यूसुफ ने बाद में कहा कि यह जायज़ है। (3) उर्दू: यदि कोई

व्यक्ति दूसरे के लिए ज़मानतदार बना जबकि लाभार्थी अनुपस्थित है, तो यह ज़मानत शून्य है, लेकिन इमाम अबू यूसुफ ने अपनी दूसरी राय में फ़रमाया कि वह जायज़ है। (त)

क़ुदूरी और हिदाया में लिखा है: अरबी: ज़मानत लाभार्थी की स्वीकृति के बिना मान्य नहीं होती। उर्दू: कफ़ील-लहु की सभा में स्वीकृति के बिना जमानत सही नहीं है।

[पाद टिप्पणियाँ] 1. दुर्रुल मुख्तार, किताबुल कफ़ाला, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 2/21 2. रद्दुल मुख्तार, किताबुल कफ़ाला, दार एहयाउत तुरास अल-अरबी, बेरूत, 4/259 3. खुलासातुल फ़तावा, किताबुल कफ़ाला, जिंस-ए-आखिर, मकतबा हबीबिया, क्वेटा, 4/165

[حصہ ۱] عربی: عن کفالة النفس لعدم التنافي فلو ابرأه عنها فلم یواف به لم یجب المال لفقد شرطه اھ باختصار ۱ اردو: متعارف ہے ، تو یہ صحیح ہے ، اور وہ کفالت نفس سے بھی بری نہ ہوگا کیونکہ ان دونوں میں کوئی منافات نہیں اگر طالب نے اس کو کفالت نفس سے بری کر دیا حالانکہ اس نے مطلوب کو حاضر نہیں کیا ، تو اب شرط فوت ہو جانے کی وجہ سے مال اس کے ذمہ واجب نہ رہا اھ اختصار۔ (ت)

[حصہ ۲] ردالمحتار میں ہے: عربی: شرطه هو بقاء الکفالة بالنفس ۲۔ اردو: اس کی شرط یہ ہے کہ کفالت نفس باقی رہے ۔ (ت)

تو ظاہر الروایۃ کے لحاظ سے ۱۸ فروری تک نہ کفالت بالنفس تھی نہ بالمال ، تو اس فرار پر کہ حصول کفالت سے پہلے واقع ہوا ہو الزام مال محض خیال محال۔

وجہ چہارم : اس سے بھی تنزل کیجئے اور بفرض غلط یہ بھی مان لیجئے کہ یہاں کفالت بالمال کفالت مستقلہ غیر تابعہ ہے تو کفالت بالنفس بنظر ظاہر الروایۃ گو بعد ۱۸ کے محقق ہو کفالت بالمال اول تھی اور وہ اس کے حال ثبوت میں فرار واقع ہوا تو کیوں نہ موجب مال ہوگا مگر یہ خیال خیال اول سے زیادہ فاسد و باطل ہے ، ہمارے امام اعظم و امام ثالث رضی اللہ تعالٰی عنہما کے مذہب مفتی بہ میں ایجاب و قبول دونوں رکن کفالت ہیں اگر مکفول لہ مجلس ایجاب میں حاضر نہ ہو اور اسی مجلس میں قبول نہ پایا جائے کفالت باطل محض وبے اثر ہوتی ہے کہ اس کے بعد اگر مکفول لہ کو خبر پہنچے اور وہ قبول بھی کر لے جب بھی اصلاً مفید نہیں ، مبسوط امام محمد سے خلاصہ میں ہے :

[حصہ ۳] عربی: اذا کفل رجل لرجل والمکفول لہ غائب فھو باطل وقال ابویوسف اخرا ھو جائز ۳۔

اردو: اگر کوئی شخص دوسرے کے لئے کفیل بنا درانحالیکہ مکفول لہ غائب ہے تو یہ کفالت باطل ہے اور امام ابو یوسف نے دوسرے قول میں فرمایا کہ وہ جائز ہے ۔ (ت)

قدوری و ہدایہ میں ہے: عربی: لا تصح الکفالۃ الا بقبول المکفول لہ اردو: مکفول لہ کے مجلس میں قبول کے بغیر کفالت صحیح نہیں۔

[حواشی] ۱ در مختار کتاب الکفالہ مطبع مجتبائی دہلی ۲/۲۱ ۲ ردالمحتار کتاب الکفالہ داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/۲۵۹ ۳ خلاصۃ الفتاوی کتاب الکفالہ جنس آخر مکتبہ حبیبیہ کوئٹہ ۴/۱۶۵

Fatawa Razawiyya, Volume 17

- In the session (Al-Majlis)[1]: It is not valid. (T)
- In Bazaziyah: If the person for whom the guarantee is given (makful lahu) is absent, then it (the guarantee) is void, contrary to the opinion of the second Imam (Imam Abu Yusuf)[2]. (T)
- In Jami-ul-Fusulayn and Anqarawiyyah: Guarantee is not valid without the acceptance of the seeker (talib)[3]. (T)
- In Tanwir: Guarantee is not valid without the acceptance of the seeker in the session of the contract[4]. (T)

In Minah al-Ghaffar, from Imam Tartusi: "The Fatwa is based on the statement of both (Imams)"[5]. (The Fatwa is according to the opinion of the two sides/Imams. T). In Radd al-Muhtar it says: And Sheikh Qasim chose it, as he narrated its selection from the people of preference (ahl al-tarjih) like al-Mahbubi, al-Nasafi, and others, and Khairuddin al-Ramli affirmed it. The apparent meaning of al-Hidayah also indicates its preference because the author of al-Hidayah deferred the evidence of both sides, and the primary texts (Mutun) are based on it, etc. It is established that when there is a difference in Fatwa, recourse must be had to the opinion of Imam al-A'zam (Imam Abu Hanifa), may Allah be pleased with him[6].

Footnotes: 1. Al-Hidayah, Book of Guarantee, Yusufi Press, Lucknow, 3/121. 2. Fatawa Bazaziyah, margin of Fatawa Hindiyyah, Book of Guarantee, Another type, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 6/6. 3. Fatawa Anqarawiyyah, Book of Guarantee, Dar al-Isha'at al-Arabiyyah, Kandahar, Afghanistan, 1/317. 4. Durr al-Mukhtar, Commentary on Tanwir al-Absar, Book of Guarantee, Mujtabai Press, Delhi, 2/63. 5. Durr al-Mukhtar with reference to Tartusi, Book of Guarantee, Mujtabai Press, Delhi, 2/63. 6. Radd al-Muhtar, Book of Guarantee, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/229.

फ़तावा रज़विया, सत्रहवीं जिल्द (१७)

- सभा में (अल-मजालिस)[1]: सही नहीं होती। (त)
- बज़ाज़िया में है: जब मकफ़ूल लहू (जिसके लिए गारंटी दी गई हो) अनुपस्थित हो, तो कफ़ालत (गारंटी) बातिल (अमान्य) है। इसके विपरीत इमाम सानी (अबू यूसुफ) के।[2] (त)
- जामिउल फुसूलैन और अनक़रवीया में है: तालिब (प्राप्तकर्ता) की स्वीकृति के बिना कफ़ालत सही नहीं है।[3] (त)
- तनवीर में है: अनुबंध की सभा में तालिब की स्वीकृति के बिना कफ़ालत सही नहीं है।[4] (त)

मिन्ह अल-ग़फ़्फ़ार में इमाम तरतूसी से है: फतवा दोनों (इमामों) के कथन पर है।[5] (फतवा तरफ़ैन के कथन पर है। त) रद-उल-मुहतार में है: और शेख़ कासिम ने इसे चुना क्योंकि उन्होंने अहले-तरजीह (वरीयता देने वाले विद्वानों) जैसे महबूबी और नसफ़ी आदि से इसका पसंदीदा होना उद्धृत किया है, और खैरउद्दीन रमली ने इसे बरकरार रखा। हिदाया के ज़ाहिर से भी इसकी वरीयता मालूम होती है, क्योंकि हिदाया के लेखक ने तरफ़ैन (दोनों पक्षों) की दलील को बाद में रखा है और इसी पर मूल पाठ (मुतून) आधारित हैं, आदि। और यह बात सर्वसम्मत है कि जब फतवा में मतभेद हो, तो इमाम आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) की ओर रुजू किया जाएगा।[6]

पादलेख (Footnotes): 1. अल-हिदाया, किताब अल-कफ़ाला, मतबा यूसुफ़ी, लखनऊ, ३/१२१ 2. फ़तावा बज़ाज़िया, हाशिय्या फ़तावा हिन्दिया, किताब अल-कफ़ाला, नौ-ए-आखर, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, ६/६ 3. फ़तावा अनक़रवीया, किताब अल-कफ़ाला, दार अल-इशा'अत अल-अरबिया, कंधार, अफ़गानिस्तान, १/३१७ 4. दुर्र अल-मुख़्तार, शरह तनवीर अल-अबसार, किताब अल-कफ़ाला, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, २/६३ 5. दुर्र अल-मुख़्तार, बहवाला तरतूसी, किताब अल-कफ़ाला, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, २/६३ 6. रद अल-मुहतार, किताब अल-कफ़ाला, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, ४/२२९

पेज ६६५ ऑफ़ ७१५

- فی المجلس[1]: صحیح نہیں ہوتی۔ (ت)
- بزازیہ میں ہے: اذا کان المکفول لہ غائبا فہی باطلۃ خلافا للثانی[2]۔ جب مکفول لہ غائب ہو تو کفالت باطل ہے۔ بخلاف امام ثانی (ابو یوسف) کے۔ (ت)
- جامع الفصولین وانقرویہ میں ہے: لاتصح الکفالۃ بلا قبول الطالب[3]۔ طالب کے قبول کے بغیر کفالت صحیح نہیں۔ (ت)
- تنویر میں ہے: لاتصح(الکفالۃ) بلا قبول الطالب فی مجلس العقد[4]۔ مجلسِ عقد میں طالب کے قبول کے بغیر کفالت صحیح نہیں۔ (ت)

منح الغفار میں امام طرطوسی سے ہے: الفتوی علی قولہما[5] (فتوٰی طرفین کے قول پر ہے۔ ت) ردالمحتار میں ہے: واختارہ الشیخ قاسم حیث نقل اختیار ذلک عن اھل الترجیح کالمحبوبی والنسفی وغیرہما و اقرہ الرملی وظاہر الھدایۃ ترجیحہ لتأخیرہ دلیلھما و علیہ المتون[6] اھ ومن المتقرر ان الفتوی متی اختلف وجب المصیر الی قول الامام اور شیخ قاسم نے اس کو اختیار کیا کیونکہ انہوں نے اہل ترجیح سے اس کا مختار ہونا نقل کیا جیسے محبوبی اور نسفی وغیرہ اور خیر الدین رملی نے اس کو برقرار رکھا۔ اور ظاہرِ ہدایہ سے بھی اس کی ترجیح معلوم ہوتی ہے، کیونکہ صاحبِ ہدایہ نے طرفین کی دلیل کو مؤخر کیا اور اسی پر متون وارد ہیں الخ اور یہ بات مسلم ہے کہ فتوٰی میں جب اختلاف ہو تو امام اعظم رضی اللہ تعالٰی عنہ (کی طرف رجوع کیا جائے گا)۔

حواشی: 1. الھدایہ کتاب الکفالۃ مطبع یوسفی لکھنؤ ۳ / ۱۲۱ 2. فتاوٰی بزازیہ علی ہامش فتاوٰی ہندیہ کتاب الکفالۃ نوع آخر نورانی کتب خانہ پشاور ۶ / ۶ 3. فتاوٰی انقرویہ کتاب الکفالۃ دار اشاعۃ

العربیہ قندہار افغانستان ۱ / ۳۱۷ 4. درمختار شرح تنویر الابصار کتاب الکفالۃ مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۶۳ 5. درمختار بحوالہ طرطوسی کتاب الکفالۃ مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۶۳ 6. ردالمحتار کتاب الکفالۃ دار احیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۲۲۹

Fatawa Rizwia (Volume 17)

As long as the disagreement is not due to a change in times, and the original texts are prioritized over others, preference is given based on two reasons. It is not an act of knowledge to turn away from the preferred opinion to a less preferred one, as has already been explained in its appropriate place. (T) [This means] it is necessary to refer back to their statement as long as the disagreement is not due to a change in times, and it is also accepted that original texts take precedence over non-original ones, so it gained preference for two reasons. Moving from the preferred to the less preferred is not knowledge, as clarified in its place. (T)

In Sirajiyya it is: If one says to a group, "Be witnesses that I am a surety for so-and-so for the person of so-and-so," while the person for whom surety is given is present and the claimant is absent, then the surety (kafala) is void. However, if a person accepts it on behalf of the claimant, it will depend on his approval. (T)

In Hindiyya from Muheet it is: Its pillar is proposal and acceptance according to Abu Hanifa and Muhammad, and this was the first opinion of Abu Yusuf (may Allah have mercy on him). Thus, surety is not complete with the surety provider alone, whether he stands surety for property or a person, unless there is acceptance by the claimant or an outsider on his behalf in the session of the contract. However, if neither of these occurred, it does not depend on anything beyond the session. Even if news reached the claimant and he accepted, it would not be valid. (Summarized) (T)

Here, surety for the person was accepted although by the deputy judge, for whom if a guarantee for appearance is taken from Hinda's side...

---

1. Fatawa Sirajiyya, Book of Suretyship, Naval Kishore Lucknow, p. 12.
2. Fatawa Hindiyya, Book of Suretyship, Chapter One, Nurani Kutub Khana Peshawar, 3/252.

फ़तावा रिज़विया (जिल्द 17)

जब तक मतभेद समय का मतभेद न हो, और मूल पाठ दूसरों पर प्राथमिकता रखते हों, तो दो कारणों से वरीयता दी जाती है। पसंदीदा से कम पसंदीदा की ओर मुड़ना ज्ञान की बात नहीं है, जैसा कि इसके स्थान पर स्पष्ट किया गया है। (त) [अर्थात] उनके कथन की ओर लौटना अनिवार्य है जब तक कि मतभेद समय के मतभेद के कारण न हो, और यह भी स्वीकार्य है कि मूल ग्रंथ गैर-मूल ग्रंथों पर प्रधानता रखते हैं, इसलिए इसे दो कारणों से वरीयता मिली। पसंदीदा से कम पसंदीदा की ओर जाना ज्ञान नहीं है, जैसा कि अपने स्थान पर स्पष्ट हो चुका है। (त)

सिराजिया में है: यदि कोई किसी समूह से कहे, "गवाह बनो कि मैं अमुक के लिए अमुक के व्यक्ति का ज़मानती (कफ़ील) हूँ," जबकि वह व्यक्ति जिसके लिए ज़मानत दी जा रही है मौजूद हो और दावेदार अनुपस्थित हो, तो ज़मानत (कफ़ाला) अमान्य है। यदि किसी ने दावेदार की ओर से स्वीकार कर लिया, तो यह उसकी स्वीकृति पर निर्भर करेगा। (त)

हिन्दिया में मुहीत से है: इमाम आज़म अबू हनीफा और इमाम मुहम्मद (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) के निकट कफ़ाला का स्तंभ प्रस्ताव और स्वीकृति है, और इमाम अबू यूसुफ (अलैहिर्रहमा) का पहला मत भी यही है। यहाँ तक कि अकेले ज़मानती से कफ़ाला पूरा नहीं होता, चाहे वह माल की ज़मानत हो या व्यक्ति की, जब तक कि अनुबंध की सभा में मकफूल लहु (दावेदार) या उसकी ओर से कोई अजनबी स्वीकार न कर ले। और यदि इनमें से किसी की ओर से स्वीकृति नहीं पाई गई, तो कफ़ाला सभा के बाहर पर निर्भर नहीं होगा, यहाँ तक कि यदि दावेदार तक समाचार पहुँचा और उसने स्वीकार कर लिया, तो भी वह सही नहीं होगा। (संक्षिप्त) (त)

यहाँ नफ़्स की कफ़ालत अगरचे डिप्टी जज ने स्वीकार कर ली, जिसके लिए अगर हिंदा की ओर से हाज़िर-ज़ामनी ली जाए...

---

1. फ़तावा सिराजिया, किताबुल कफ़ाला, नवल किशोर लखनऊ, पृ. 12.
2. फ़तावा हिन्दिया, किताबुल कफ़ाला, अध्याय 1, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/252.

पृष्ठ 666 का 715

مالم یکن الاختلاف اختلاف الزمان و ان المتون مقدمة علی غیرھا فترجح من وجھین ولیس من العلم العدول عن الراجح الی المرجوح کما قد تبین في محلہ کے قول کے طرف رجوع لازم ہوتا ہے جبکہ وہ اختلاف اختلاف زمانہ کی وجہ سے نہ ہو، اور یہ بات بھی مسلم ہے کہ متون غیر متون پر مقدم ہیں تو دو وجہوں سے اس کو ترجیح ہوگئی اور راجح سے مرجوح کی طرف عدول کرنا علم نہیں جیسا کہ اپنے محل میں واضح ہوچکا ہے۔ (ت)

سراجیہ میں ہے: اذا قال لقوم اشھدوا انی کفیل فلان بنفس فلان والمکفول بہ حاضر و الطالب غائب فالکفالة باطلة فان قبل انسان عنہ توقف علی اجازتہ ۔[1] جب کسی نے قوم سے کہا کہ گواہ ہو جاؤ میں فلاں کے لئے فلاں کے نفس کا کفیل ہوں درانحالیکہ مکفول بہ حاضر اور مکفول لہ غائب ہو تو کفالہ باطل ہے اگر کسی شخص نے مکفول لہ کی طرف سے قبول کیا تو اس کی اجازت پر موقوف ہوگا۔ (ت)

ہندیہ میں محیط سے ہے: رکنھا الایجاب والقبول عند ابي حنیفة و محمد وہو قول ابي یوسف اولا حتی ان الکفالة لا تتم بالکفیل وحدہ سواء کفل بالمال او بالنفس مالم یوجد قبول المکفول لہ او قبول الاجنبی عنہ في المجلس العقد امّا اذا لم یوجد شيء من ذلك فلا تقف علی ماوراء المجلس حتی لو بلغ الطالب فقبل لم تصح[2] اھ مختصرا کفالہ کا رکن امام اعظم ابوحنیفہ اور امام محمد رضی اللہ تعالٰی عنہما کے نزدیک ایجاب و قبول ہے اور امام ابویوسف علیہ الرحمۃ کا پہلا قول بھی یہی ہے یہاں تک کہ اکیلے کفیل سے کفالہ تام نہیں ہوتا چاہے مال کا کفیل ہے یا نفس کا جب تک کہ مجلس عقد میں مکفول لہ یا اس کی طرف سے کوئی اجنبی شخص قبول نہ کرے اور جب ان دونوں میں سے کسی

کی طرف سے قبول نہ پایا گیا تو کفالہ مجلس سے خارج پر موقوف نہ ہوگا یہاں تک کہ اگر طالب (مکفول لہ) کو اس کی خبر پہنچی اور اس نے قبول کرلیا تو صحیح نہ ہوگا اھ اختصار (ت)

یہاں کفالت بالنفس اگرچہ نائب حاکم نے قبول کرلی جس کے لئے اگر جانب ہندہ سے حاضر ضامنی لینے

---

1 فتاوٰی سراجیہ کتاب الکفالہ نولکشور لکھنؤ ص ۱۲ 2 فتاوٰی ہندیہ کتاب الکفالہ الباب الاول نورانی کتب خانہ پشاور ۲۵۲/۳

If the agency is proven, then it occurred effectively; otherwise, it remained dependent on the permission of Hindah. However, in the session of the contract, the acceptance of the financial guarantee (Kafalat bil-Maal) did not originate from anyone at all, and it was considered an independent agreement that the personal guarantee (Kafalat bin-Nafs) was settled from... (Note: In the original, it is as follows, and I think that it cannot be obtained within the context of personal guarantee). Consequently, the financial guarantee became absolutely void, and there remained no way for the obligation of payment. In short, research and investigation show that in every way, the financial guarantee remained prohibited and rejected here. The portion of apparent observations regarding the personal guarantee is such that, although the manifest narrative (Zahir al-Riwayah) is that, the narration of Imam Abu Yusuf (may Allah be pleased with him) is more in accordance with custom. And since it is mandatory to interpret the speech of the speaker according to their custom, this is the preferred view, and giving judgment and Fatwa upon it is appropriate. In 'Khulasah' and 'Anqarawiyyah', it is stated:

Arabic Text	Urdu Translation
The saying of Abu Yusuf is more similar to the custom of the people.	The saying of Imam Abu Yusuf (may Allah have mercy on him) is more suitable to custom. (T)

In 'Tatimma', 'Sughra', and 'Anqarawiyyah', it is stated:

Arabic Text	Urdu Translation
It is more similar to our custom, and we issue a Fatwa that when the mentioned period expires, the judge should release him from the guarantee.	It is more suitable to our custom, and we issue a Fatwa that when the mentioned period passes, the judge should remove him from the guarantee. (T)

In 'Zakhira', it is stated:

Arabic Text	Urdu Translation
He said: The most noble Judge, Imam Abu Ali al-Nasafi, used to say that the saying of Abu Yusuf is more similar to the custom of people when they provide a guarantee for a period; they	Judge Imam al-Ajal Abu Ali al-Nasafi used to say that Imam Abu Yusuf's saying is more suitable to the custom of people because when people become a guarantor for a certain period, they understand from

Arabic Text	Urdu Translation
understand by specifying the period that they will be demanded within the period, not after it, etc.	that statement of period that a demand will be made from them within the period, not after it, etc. (T)

In 'Khaniyyah', it is stated:

Arabic Text	Urdu Translation
Shams al-Aimmah al-Halwani said regarding the saying of Abu Yusuf that the guarantor is demanded for the delivery of the person in...	Shams al-Aimmah Halwani said that this saying of Imam Abu Yusuf (may Allah have mercy on him) that the demand for the delivery of the person from the guarantor is for three days...

Note: In the original text, it is like this, and I think it means that it cannot be obtained within the context of a personal guarantee.

---

1. Fatawa Anqarawiyyah, Kitab al-Kafalah, Dar al-Isha'at al-Arabiyyah, Qandahar, Afghanistan, 1/317
2. Footnotes of Fatawa Anqarawiyyah, Kitab al-Kafalah, Dar al-Isha'at al-Arabiyyah, Qandahar, Afghanistan, 1/317
3. Radd al-Muhtar with reference to Zakhira, Kitab al-Kafalah, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/255

फतावा रिज़विया (खंड 17)

यदि वकालत (एजेंसी) सिद्ध हो जाए, तो यह प्रभावी रूप से घटित हुई, अन्यथा यह हिन्दा की अनुमति पर निर्भर रही। लेकिन अनुबंध की सभा में, वित्तीय गारंटी (कफ़ालत बिल-माल) की स्वीकृति मूलतः किसी से नहीं हुई, और इसे एक स्वतंत्र समझौता माना गया कि व्यक्तिगत गारंटी (कफ़ालत बिन-नफ़्स) तय हुई... (नोट: मूल में ऐसा ही है, और मेरा मानना है कि व्यक्तिगत गारंटी के संदर्भ में इसे प्राप्त नहीं किया जा सकता)। फलस्वरूप, वित्तीय गारंटी पूरी तरह से शून्य हो गई और भुगतान के दायित्व का कोई आधार नहीं रहा। संक्षेप में, शोध और जाँच से पता चलता है कि यहाँ हर तरह से वित्तीय गारंटी प्रतिबंधित और खारिज रही। व्यक्तिगत गारंटी के संबंध में प्रत्यक्ष टिप्पणियों का हिस्सा ऐसा है कि, यद्यपि 'ज़ाहिर अल-रिवायत' (प्रसिद्ध वर्णन) वह है, लेकिन इमाम अबू यूसुफ (रज़ियल्लाहु अन्हु) का वर्णन प्रथा (उर्फ़) के अधिक अनुकूल है। और चूंकि बोलने वाले के शब्दों को उसकी प्रथा के अनुसार समझना अनिवार्य है, इसलिए यही मत पसंदीदा है, और इसी पर निर्णय और फतवा देना उचित है। 'खुलासा' और 'अनक़रविया' में उल्लेख है:

अरबी पाठ	**उर्दू अनुवाद**
अबू यूसुफ का कथन लोगों की प्रथा के अधिक समान है।	इमाम अबू यूसुफ (रहमतुल्लाह अलैह) का कथन प्रथा के अधिक उपयुक्त है। (T)

'ततिम्मा', 'सुग़रा' और 'अनक़रविया' में उल्लेख है:

अरबी पाठ	**उर्दू अनुवाद**
यह हमारी प्रथा के अधिक समान है, और हम फतवा देते हैं कि जब उल्लेखित अवधि समाप्त हो जाए, तो न्यायाधीश उसे गारंटी से मुक्त कर दे।	वह हमारी प्रथा के अधिक उपयुक्त है, और हम फतवा देते हैं कि जब उक्त अवधि बीत जाए, तो काज़ी उसे कफ़ाला (गारंटी) से बाहर कर दे। (T)

'ज़ख़ीरा' में उल्लेख है:

अरबी पाठ	**उर्दू अनुवाद**
कहा: सबसे महान न्यायाधीश इमाम अबू अली अल-नस्फ़ी कहा करते थे कि अबू यूसुफ का कथन लोगों की प्रथा के अधिक समान है जब	काज़ी इमाम अल-अजल अबू अली अल-नस्फ़ी फ़रमाते थे कि इमाम अबू यूसुफ़ का कथन लोगों की प्रथा के अधिक उपयुक्त है क्योंकि लोग जब किसी

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
वे एक अवधि के लिए गारंटी देते हैं; वे अवधि तय करने से यह समझते हैं कि उनसे अवधि के भीतर मांग की जाएगी, उसके बाद नहीं, आदि।	अवधि तक कफ़ील (जामिन) बनें, तो वे बयान-ए-मुद्दत (अवधि के उल्लेख) से ही समझते हैं कि मुद्दत के भीतर ही उनसे मुतालबा (मांग) किया जाएगा न कि उसके बाद आदि। (T)

'खनिया' में उल्लेख है:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
शम्स अल-आइम्मा अल-हलवानी ने इमाम अबू यूसुफ के इस कथन के बारे में कहा कि कफ़ील से व्यक्ति की सुपुर्दगी की मांग तीन दिन...	शम्स अल-आइम्मा हलवानी ने कहा इमाम अबू यूसुफ (रहमतुल्लाह अलैह) का यह कथन कि कफ़ील से तस्लीम-ए-नफ़्स (व्यक्ति की सुपुर्दगी) का मुतालबा तीन दिन का...

नोट: मूल प्रति में इसी तरह है, और मेरा विचार है कि कफ़ालत बिन-नफ़्स के संदर्भ में इसे प्राप्त नहीं किया जा सकता।

---

1. फतावा अनक़रविया, किताब अल-कफ़ाला, दार अल-इशाअत अल-अरबिया, कंधार, अफगानिस्तान, 1/317
2. फतावा अनक़रविया के हाशिए, किताब अल-कफ़ाला, दार अल-इशाअत अल-अरबिया, कंधार, अफगानिस्तान, 1/317
3. रद्द अल-मुह्तार, ज़ख़ीरा के हवाले से, किताब अल-कफ़ाला, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 4/255

पृष्ठ 667/715

کی توکیل ثابت ہو تو نافذ واقع ہوئی ورنہ اجازت ہندہ پر موقوف رہی مگر مجلس عقد میں کفالت بالمال کا قبول اصلاً کسی سے واقع نہ ہوا اور اسے قرار دیا مستقلہ کہ طے کفالت بالنفس من۔ (عہ)۔۔۔ لاجرم کفالت مال باطل محض ہوگئی اور کسی وجہ پر ایجاب مال کی صورت نہ رہی بالجملہ تحقیقاً والزلفاً ہر طرح یہاں کفالت بالمال ممنوع ومدفوع ہی رہی کفالت بالنفس یہاں انظارِ ظاہرہ کا حصہ اس قدر کہ اگرچہ ظاہر الروایہ وہ ہے مگر روایت امام ابویوسف رضی اللہ تعالٰی عنہ اوفوق بالعرف ہے اور کلام کا عرفِ متکلم پر حمل واجب تو یہی مرجح ہے اور اسی پر حکم وافتا مناسب، خلاصہ وانقرویہ میں ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
قول ابی یوسف اشبہ بعرف الناس ۱۔	امام ابویوسف رحمۃ اللہ تعالٰی کا قول عرف کے زیادہ مناسب ہے۔ (ت)

تتمہ وصغرٰی وانقرویہ میں ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
ہوا شبہ بعرفنا و نفتی انہ اذا مضت المدۃ المذکورہ فالقاضی یخرجہ عن الکفالۃ ۲۔	وہ ہمارے عرف کے زیادہ مناسب ہے اور ہم فتوٰی دیتے ہیں کہ جب مدت مذکورہ گزر جائے تو قاضی اس کو کفالہ سے خارج کردے۔ (ت)

ذخیرہ میں ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
قال وکان القاضی الامام اجل ابو علی النسفی یقول قول ابی یوسف اشبہ بعرف الناس اذا کفلوا الی مدۃ یفہمون بضرب المدۃ انہم یطالبون فی المدۃ لا بعدھا ۳ الخ	قاضی امام الاجل ابو علی النسفی فرماتے تھے کہ امام ابویوسف کا قول لوگوں کے عرف کے زیادہ مناسب ہے کیونکہ لوگ جب کسی مدت تک کفیل بنیں تو وہ بیانِ مدت سے ہی سمجھتے ہیں کہ مدت کے اندر ان سے مطالبہ کیا جائے گا نہ کہ اس کے بعد الخ۔ (ت)

خانیہ میں ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
قال شمس الائمۃ الحلوانی فی قول ابی یوسف انہ یطالب الکفیل بتسلیم النفس فی	شمس الائمہ حلوانی نے کہا امام ابویوسف رحمۃ اللہ علیہ کا یہ قول کہ کفیل سے تسلیمِ نفس کا مطالبہ تین دن کا

عہ: فی الاصل ھکذا واظنہ کہ کفالت بالنفس کے ضمن میں حاصل نہیں ہوسکتی۔

---

۱ فتاوٰی انقرویہ کتاب الکفالۃ داراشاعۃ العربیہ قندہار افغانستان ۱/ ۳۱۷ ۲ حواشی فتاوٰی انقرویہ کتاب الکفالۃ داراشاعۃ العربیہ قندہار افغانستان ۱/ ۳۱۷ ۳ ردالمحتار بحوالہ ذخیرہ کتاب الکفالۃ داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۲۵۵

Fatawa Rizvia Volume 17

[Arabic]: Three days, and no demand shall be made after that, which is more appropriate according to the custom of the people.[1] (T)

In the same [source] it is stated: [Arabic]: Shams al-A'immah al-Halwani said: The judge, Imam Ustadh Abu Ali al-Nasafi, used to say that Shaykh Imam Abu Bakr Muhammad ibn al-Fadl liked this narration and would say: If someone said in Persian, 'I accepted (paziriftam) the body (tan) of so-and-so for ten days,' he would immediately become a surety (kafeel), and when the period expires after ten days, he would no longer remain a surety. And if he said, 'I accepted the body of so-and-so for ten days [as a period],' he would remain a surety for those ten days as well. Some scholars said if someone said, 'I accepted the body of so-and-so for ten days,' then ten days passed and he did not hand over the person sought to the seeker, the surety should take the matter to the judge so that he may release him from the suretyship. Shaykh al-Imam al-Ajall Zahir al-Din used to give fatwa on this, and it is also narrated from my grandfather; may Allah Almighty have mercy on them all.[2] (T)

In Radd al-Muhtar, it is stated: [Arabic]: I say: In our time, there should be no difference between these three cases (i.e., if he says 'one month').

Footnotes: [1] Fatawa Qadi Khan, Kitab al-Kafalah, Nawal Kishore Lucknow, 3/583 [2] Fatawa Qadi Khan, Kitab al-Kafalah, Nawal Kishore Lucknow, 3/584

Page 668 of 715

फतावा रजविया जिल्द 17

[अरबी]: तीन दिन, और उसके बाद कोई मांग नहीं की जाएगी, जो लोगों की प्रथा के अनुसार अधिक उचित है।[1] (त)

इसी में है: [अरबी]: शम्स अल-आइम्मा अल-हलवानी ने कहा: न्यायाधीश इमाम उस्ताद अबू अली अल-नसफी कहा करते थे कि शेख इमाम अबू बक्र मुहम्मद बिन अल-फजल इस रिवायत को पसंद करते थे और कहते थे कि अगर किसी ने फारसी में कहा कि 'मैंने दस दिनों तक फलां के शरीर को स्वीकार किया' तो वह तुरंत जामिन (कफ़ील) बन जाएगा और जब दस दिनों के बाद अवधि बीत जाएगी, तो वह जामिन के रूप में नहीं रहेगा। और अगर उसने कहा कि 'मैंने दस दिनों के लिए फलां के शरीर को स्वीकार किया' तो वह उन दस दिनों के लिए भी जामिन रहेगा। और कुछ विद्वानों ने कहा कि अगर किसी ने कहा कि 'मैंने दस दिनों तक फलां के शरीर को स्वीकार किया' फिर दस दिन बीत गए और उसने वांछित व्यक्ति को मांगने वाले के हवाले नहीं किया, तो जामिन मामले को काजी (न्यायाधीश) के पास ले जाएगा ताकि वह उसे जामिन की जिम्मेदारी से मुक्त कर दे। शेख इमाम अजल जहीर उद्दीन इसी पर फतवा देते थे और मेरे दादा से भी यही वर्णित है; अल्लाह ताला उन सब पर रहम फरमाए।[2] (त)

रद्द अल-मुह्तार में है: [अरबी]: मैं कहता हूँ: हमारे समय में इन तीनों स्थितियों में कोई अंतर नहीं होना चाहिए (यानी अगर वह एक महीना कहे)।

फुटनोट्स: [1] फतावा काजी खान, किताब अल-कफाला, नवल किशोर लखनऊ, 3/583 [2] फतावा काजी खान, किताब अल-कफाला, नवल किशोर लखनऊ, 3/584

पृष्ठ 668/715

الایام الثلاثۃ ولا یطالب بعدھا شبہ بعرف الناس[1]۔ اندر کیا جائے گا بعد میں نہیں لوگوں کے عرف کے زیادہ مناسب ہے۔ (ت)

اسی میں ہے: قال شمس الائمۃ الحلوانی کان القاضی الامام الاستاذ ابو علی النسفی یقول کان الشیخ الامام ابوبکر محمد بن الفضل یعجبہ ھذہ الروایۃ وکان یقول لو قال بالفارسیۃ پذیرفتم تن فلاں را تا دہ روز یصیر کفیلا فی الحال واذا مضت المدۃ لا یبقی کفیلا ولو قال پذیرفتم تن فلاں را دہ روز یصیر کفیلا بعد عشرۃ ایام، وبعض المشائخ قالوا اذا قال پذیرفتم تن فلاں را تا دہ روز ولم یسلم حتی مضت عشرۃ ایام یرفع الکفیل الامر الی القاضی حتی یخرجہ عن الکفالۃ وبہ کان یفتی الشیخ الامام الاجل ظھیرا لدین ویحکی ذلك عن جدی رحمھم اللہ تعالٰی [2]۔ شمس الائمہ حلوانی نے فرمایا قاضی امام استاذ ابو علی نسفی فرمایا کرتے تھے کہ شیخ امام ابو بکر محمد بن فضل اس روایت کو پسند کرتے اور کہتے تھے کہ اگر کسی نے فارسی میں کہا کہ میں نے دس روز تک فلاں کے بدن کو قبول کیا تو وہ فی الحال کفیل بن جائے گا اور جب مدت گزر جائے گی تو دس دن کے بعد وہ بطور کفیل باقی نہ رہے گا، اور اگر کہا کہ میں نے دس روز فلاں کے بدن کو قبول کیا تو وہ دس دن کے بھی کفیل رہے گا، اور بعض مشائخ نے کہا اگر کسی نے یوں کہا کہ میں نے فلاں کے بدن کو دس دن تک قبول کیا پھر دس دن گزر گئے اور اس نے مطلوب کو طالب کے حوالہ نہ کیا تو اب کفیل یہ مطالبہ قاضی کے پاس لے جائے گا تا کہ وہ اس کو کفالت سے خارج کر دے، اسی پر شیخ امام اجل ظہیر الدین فتوٰی دیتے تھے اور میرے جدا مجد سے بھی یہی منقول ہے اللہ تعالٰی اب سب پر رحم فرمائے۔ (ت)

ردالمحتار میں ہے: قلت وینبغی عدم الفرق بین الصور الثلث فی زماننا (ای ما اذا قال شہرا) میں کہتا ہوں ہمارے زمانے میں ان تینوں صورتوں میں فرق نہیں ہونا چاہئے (یعنی اگر کہے ایک مہینہ)

۱ فتاویٰ قاضی خان کتاب الکفالۃ نولکشور لکھنؤ ۳/ ۵۸۳ ۲ فتاویٰ قاضی خان کتاب الکفالۃ نولکشور لکھنؤ ۳/ ۵۸۴

Fatawa-e-Razvia Volume (17)

(Arabic side): (...or for a month, or from today until a month) as is the opinion of Abu Yusuf and Al-Hasan, because people today do not intend by this except to limit the suretyship (Kafala) by a period, and that there is no suretyship after it. It has already been mentioned that the basis for the wording of Kafala is on custom and habit; for example, the word 'indi' (with me) is for trust (Amanah), but in custom, with the context of debt, it has become for Kafala. And they said that the speech of every contracting party, vower, swearer, and donor of waqf is interpreted according to their custom, whether it aligns with the linguistic custom or not, etc.

(Urdu side): (...or for a month or from today until a month), as per the statement of Imam Abu Yusuf and [Imam] Hasan, because nowadays people intend nothing by it except to time-limit the suretyship (Kafala) to that period, and that after this period there is no suretyship. It has already been researched and established that the words of suretyship (Kafala) depend on custom ('urf) and habit ('aadah). Indeed, the word 'indi' (with me) is for trust (Amanah), but in custom, along with the context of debt, it has come to mean suretyship. And the jurists have said that the speech of every contracting party, vower, oath-taker, and endower shall be interpreted according to their custom, whether his custom conforms to the linguistic meaning or not, etc. (T)

And I say: The reality of the matter is that Zahir al-Riwayah (the standard established narration) has absolutely no relation to these incidents. In these cases, without a doubt, fatwa and judgment are obligatory upon the narration of Imam Abu Yusuf, and going against it is purely invalid. After all, there is a consensus (ijma') on the point that an 'offer' (Ijab) is a fundamental pillar (rukn) of suretyship. When, according to custom, being a surety for ten days or until a certain date definitely and certainly means and intends that the suretyship is timed up to that point and not thereafter, then certainly the surety never offered anything but a limited and timed suretyship. Now, if we consider the suretyship to remain after that time and limit, it would be a suretyship for which no offer was ever made. Any contract without its fundamental pillar being established is invalid by consensus. Thus, Zahir al-Riwayah has no relation to our prevalent custom, and ruling upon it here would be entirely contrary to the objectives of Shari'ah and an injustice. Hence, the researcher scholar stated:

(Arabic side): What Imam al-Nasafi mentioned is based on the fact that the aforementioned Zahir al-Riwayah applies only where there is no custom, because

there is no reason to judge the contracting parties with something they did not intend. Is this not a judgment contrary to...

(Urdu side): What Imam Nasafi mentioned is based on the fact that the mentioned Zahir al-Riwayah is applicable where there is no custom, because there is no reason for a ruling against the intention of the contracting parties. Therefore, this [is against] the Zahir al-Riwayah of...

1 Radd al-Muhtar, Kitab al-Kafala, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/255. Page 669 of 715

फतावा-ए-रजविया जिल्द (17)

(अरबी पक्ष): (...या एक महीने के लिए, या आज से एक महीने तक) जैसा कि अबू यूसुफ और अल-हसन की राय है, क्योंकि आज लोग इससे सिर्फ मुद्दत (अवधि) के साथ जमानत (कफाला) को सीमित करने का इरादा रखते हैं, और इसके बाद कोई जमानत नहीं है। यह पहले ही बताया जा चुका है कि कफाला के शब्दों का आधार प्रथा और रीति-रिवाज पर है; उदाहरण के लिए, शब्द 'इंदी' (मेरे पास) अमानत के लिए है, लेकिन प्रथा में, कर्ज के संदर्भ के साथ, यह कफाला के लिए हो गया है। और उन्होंने कहा कि हर अनुबंध करने वाले, मन्नत मानने वाले, कसम खाने वाले और वक्फ करने वाले की बात उनके रिवाज के अनुसार मानी जाएगी, चाहे उसका रिवाज भाषाई रिवाज के अनुरूप हो या नहीं, आदि।

(उर्दू पक्ष): (...या एक महीने तक या आज से एक महीने तक), जैसा कि इमाम अबू यूसुफ और [इमाम] हसन का कथन है, क्योंकि आजकल लोग इससे कफाला की मुद्दत तय करने के अलावा कुछ और इरादा नहीं करते, और यह कि इस मुद्दत के बाद कफाला नहीं है। और शोध से यह सिद्ध हो चुका है कि कफाला के शब्दों का दारोमदार उर्फ(प्रथा) और आदत पर है। बेशक शब्द 'इंदी' अमानत के लिए है लेकिन उर्फ में कर्ज के संदर्भ के साथ कफाला के लिए हो गया। और फुकहा (विधिवेत्ताओं) ने कहा है कि हर अक्द (अनुबंध) करने वाले, नज़्र (मन्नत) मानने वाले, कसम खाने वाले और वक्फ करने वाले की बात उसके उर्फ पर महमूल (लागू) होगी, चाहे उसका उर्फ लुगत (शब्दकोश) के मुवाफिक हो या न हो, आदि। (त)

और मैं कहता हूँ: हकीकत यह है कि जाहिर-उर-रिवाया का इन वाकयात से कोई ताल्लुक नहीं है। इनमें बिना किसी शक के इमाम अबू यूसुफ की रिवायत पर ही फतवा और हुक्म वाजिब है और इसके खिलाफ महज बातिल (अमान्य) है। आखिर इस बात पर इजमा (सर्वसम्मति) है कि इजाब (प्रस्ताव) कफाला का रुकन (अनिवार्य अंग) है। जब उर्फ में निश्चित रूप से दस दिनों तक या फलां तारीख तक कफील (जमानतदार) होने से यही अर्थ और उद्देश्य होता है कि कफाला उस वक्त तक मुवक्कता (सीमित) है और उसके बाद कफाला नहीं है, तो यकीनन कफील ने कभी भी महदूद (सीमित) और मुवक्कता कफाला के अलावा इजाब नहीं किया। अब अगर उस वक्त और हद के बाद भी कफाला बाकी मानें, तो यह वह कफाला होगा जिसका इजाब कभी हुआ ही नहीं। और कोई भी अक्द अपने रुकन के बिना मुहक्कक (सिद्ध) होना इजमा के अनुसार बातिल है। तो जाहिर-उर-

रिवाया का हमारे प्रचलित उर्फ से कोई ताल्लुक नहीं है और यहाँ इस पर हुक्म देना सरासर शरीयत के मकासिद के खिलाफ और जुल्म होगा। इसलिए अल्लामा मोहकिक ने फरमाया:

(अरबी पक्ष): इमाम अल-नसफी ने जो उल्लेख किया है वह इस तथ्य पर आधारित है कि उपर्युक्त जाहिर-उर-रिवाया केवल वहीं लागू होता है जहाँ कोई प्रथा न हो, क्योंकि अनुबंध करने वाले पक्षों पर उनके इरादे के खिलाफ निर्णय देने का कोई कारण नहीं है। क्या यह इसके विपरीत निर्णय नहीं है...

(उर्दू पक्ष): इमाम नसफी ने जो जिक्र फरमाया वह इस बात पर मबनी (आधारित) है कि मजकूर जाहिर-उर-रिवाया वहां है जहां कोई उर्फ न हो क्योंकि मुताकिदीन (अनुबंध करने वालों) पर उनके मक्सूद (उद्देश्य) के खिलाफ हुक्म की कोई वजह नहीं है, लिहाजा यह जाहिर-उर-रिवाया के..

1 रद्द-उल-मुहतार, किताब अल-कफाला, दार एहया अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 2/255. पेज 669/715

(عربی پہلو): اولٰی شھر او من الیوم الی شھر) کما ھو قول ابی یوسف و الحسن لان الناس الیوم لایقصدون بذلک الا توقیت الکفالۃ بالمدۃ وانہ لا کفالۃ بعدھا وقد تقدم ان مبنی الفاظ الکفالۃ علی العرف والعادۃ ان لفظ عندی للامانۃ وصار في العرف للکفالۃ بقرینۃ الدین وقالوا ان کلام کل عاقد وناذر وحالف وواقف یحمل علی عرفہ سواء وافق عرف اللغۃ اولا الخ 1

(اردو پہلو): یا ایک مہینے تک یا آج سے ایک مہینے تک) جیسا کہ امام ابو یوسف اور حسن کا قول ہے کیونکہ آج کل لوگ اس سے سوائے کفالت کی توقیت بالمدۃ کے کچھ ارادہ نہیں کرتے اور یہ کہ اس مدت کے بعد کفالہ نہیں اور تحقیق گزر چکا ہے کہ کفالہ کے الفاظ کا دارومدار عرف اور عادت پر ہے۔ بیشک لفظ "عندی" امانت کے لئے ہے مگر عرف میں دین کے قرینہ کے ساتھ کفالہ کے لئے ہو گیا، اور فقہاء نے کہا کہ ہر عقد کرنے والے، نذر ماننے والے، قسم کھانے والے اور وقف کرنے والے کا کلام اس کے عرف پر محمول ہوگا چاہے اس کا عرف لغت کے موافق ہو یا نہ ہو الخ (ت)

وانا اقول: (اور میں کہتا ہوں) حقیقت امر یہ ہے کہ ظاہر الروایۃ کو ان واقعات سے اصلا تعلق نہیں ان میں بلاشبہ روایت امام ابی یوسف ہی پر افتاء و حکم واجب ہے اور اس کا خلاف محض باطل، آخر اس قدر پر تو اجماع ہے کہ ایجاب رکن کفالت ہے اور جب عرف میں قطعاً یقیناً دس روز تک یا فلاں تاریخ تک کفیل ہونے سے یہی معنی مقصود مراد مفہوم و مفاد ہوتے ہیں کہ کفالت اس وقت تک موقت کی جاتی ہے اس کے بعد کفالت نہیں تو بالیقین کفیل نے ہر گز ایجاب نہ کیا مگر کفالت موقتہ محدود کا، اب اگر بعد اس وقت وحد کے کفالت باقی مانیں تو یہ وہ کفالت ہے جس کا ایجاب ہر گز نہ ہوا، اور کوئی عقد بے اپنے رکن کے محقق ہونا بالاجماع باطل ہے تو ظاہر الروایۃ کو

ہمارے عرف دائر سائر سے اصلا تعلق نہیں اور یہاں اس پر حکم سراسر مقاصد شرع سے جدا و ظلم ہوگا، ولہذا علامہ محقق نے فرمایا:

(عربی پہلو): ماذكره الامام النسفي مبنى على ان المذكور ظاهر الرواية انما هو حيث لاعرف اذ لا وجه للحكم على المتعاقدين بمالم يقصد أفليس قضاء بخلاف

(اردو پہلو): امام نسفی نے جو ذکر فرمایا وہ اس بات پر مبنی ہے کہ مذکور ظاہر الروایۃ وہاں ہے جہاں کوئی عرف نہ ہو کیونکہ متعاقدین پر ان کے مقصود کے خلاف حکم کی کوئی وجہ نہیں چنانچہ یہ ظاہر الروایۃ کے

1 ردالمحتار كتاب الكفالة داراحياء التراث العربى بيروت ٢/ ٢٥٥ Page 669 of 715

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

| Zahir al-Riwayah[1] | It was not against the judicial decree. (T) |

So in the questioned scenario, the definitive ruling is that after February 18, the guarantee (Kafalah) no longer remained. In short, in this matter, the correct advice is that the personal guarantee (Kafalah bi al-Nafs) definitely and certainly ended on February 18, and demanding it after that is oppression. Taking the word 'demand' (mutaliba) to imply a financial guarantee (Kafalah bi al-Mal) is entirely without evidence, even if absconding were proven before February 18. If there is no proof of that, then there is absolutely no possibility of interpreting 'demand for money' even in a metaphorical sense. In short, in the questioned scenario, the personal guarantee is certainly abolished, and the ruling for Khalid to demand money is also void; this is the judicial ruling (hukm-e-qada). As for religious integrity (diyanat), if Khalid actually meant money by 'demand', and this was the intended meaning, and the condition of absconding before the 18th was met, and Zaid's debt to the lender was valid, then in the sight of Allah, Khalid is liable for the money even if the judge cannot rule so for the aforementioned reasons. He should fear Allah and not resort to unjust excuses and pretexts. If even one of these three conditions is missing, then in the sight of Allah, he is also free from that financial demand. This is the research, and Allah is the Master of success, and He, Glory be to Him and Most High, knows best. (This is the research, and Allah Almighty is the Master of guidance and He, Glory be to Him and Most High, knows better. -T)

Mas'ala 281: From Rampur, aforementioned place, 7 Rabi' al-Awwal Sharif 1317 AH. What do the scholars of religion say regarding this issue: Zaid became a personal guarantor (kafeel bi al-nafs) for Umar, the debtor, towards Hindah, the creditor, for a specified period. According to common understanding and the intended meaning among people, the end of this period was established as the termination of the guarantee. Within this guarantee, Zaid also said that if the debtor flees the city before this period ends, then I am responsible for the claimant's demand. Now that the period has passed and the personal guarantee has ended, has the financial guarantee (Kafalah bi al-Mal) mentioned within it also terminated with its ending, or does it remain? Explain and be rewarded.

The Answer: Yes, in the questioned scenario, as soon as the personal guarantee ended, the financial guarantee also ended, because it was purely subordinate to it for

its emphasis and confirmation. When the original (personal guarantee) no longer exists, this (financial guarantee) also ceases to exist.

| How and why? Indeed, the termination of a time-bound [guarantee] due to the passage of time is a termination in every respect, like an exoneration; thus, it applies to both the principal and the subsidiary. | How would the financial guarantee not end, whereas the termination of a time-bound guarantee due to the passage of time is its termination in every aspect, just like being exonerated. Therefore, it... |

[1] Radd al-Muhtar, Kitab al-Kafalah, Matlab fi al-Kafalah al-Muwaqqatah, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 2/255.

फतावा रज़विया (खण्ड 17)

| ज़ाहिर अर-रिवाया[1] | अदालती फैसले के खिलाफ नहीं हुई। (त) |

अतः प्रश्नगत स्थिति में निश्चित निर्णय यही है कि 18 फरवरी के बाद ज़मानत (कफ़ालत) नहीं रही। संक्षेप में, इस मसले में सही मशविरा यही है कि व्यक्तिगत ज़मानत (कफ़ालत बिल-नफ़्स) तो 18 फरवरी को निश्चित रूप से समाप्त हो गई और उसके बाद मांग करना ज़ुल्म है। शब्द 'मुतालिबा' (मांग) से वित्तीय ज़मानत (कफ़ालत बिल-माल) का अर्थ लेना पूरी तरह से निराधार है, भले ही 18 फरवरी से पहले फरार होना सिद्ध ही क्यों न हो जाए। और अगर उसका कोई सबूत न हो, तो धन की मांग का अर्थ आभासी (मजाज़ी) तौर पर भी लेने की कोई संभावना नहीं है। संक्षेप में, प्रश्नगत स्थिति में व्यक्तिगत ज़मानत निश्चित रूप से समाप्त हो गई है और खालिद पर धन की मांग का आदेश भी अमान्य है, यह अदालती आदेश (हुक्म-ए-क़ज़ा) है। जहाँ तक धार्मिक ईमानदारी (दियानत) की बात है, यदि वास्तव में खालिद ने मांग से धन मुराद लिया था और यही अर्थ समझा गया था, और 18 तारीख से पहले फरार होने की शर्त पूरी हो गई थी और ज़ैद पर ऋण देने वाले का ऋण सही था, तो अल्लाह के नज़दीक खालिद पर धन अनिवार्य हो चुका है, भले ही काज़ी (न्यायाधीश) उपर्युक्त कारणों से आदेश न दे सके। उसे अल्लाह से डरना चाहिए और अनुचित बहानों और हीलों का सहारा नहीं लेना चाहिए। और यदि इन तीन बातों में से एक भी मौजूद नहीं है, तो अल्लाह के नज़दीक भी वह उस धन की मांग से बरी है। यही शोध है और अल्लाह सफलता का मालिक है और वह पवित्र और सर्वोच्च अल्लाह ही बेहतर जानता है। (यही शोध है और अल्लाह तआला तौफीक का मालिक है और वह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है। -त)

मसला 281: रामपुर, उक्त स्थान से, 7 रबी-उल-अव्वल शरीफ 1317 हिजरी। धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं: ज़ैद, हन्दा (लेनदार) के लिए एक निश्चित अवधि तक उमर (कर्ज़दार) का व्यक्तिगत ज़मानतदार (कफ़ील बिल-नफ़्स) बना। लोगों में प्रचलित समझ और इच्छित अर्थ के अनुसार, इस अवधि का समाप्त होना ज़मानत की समाप्ति माना गया। इस ज़मानत के अंतर्गत ज़ैद ने यह भी कहा था कि यदि कर्ज़दार इस अवधि तक शहर से भाग जाए, तो मैं दावेदार की मांग का ज़िम्मेदार हूँ। अब जबकि अवधि बीत चुकी है और व्यक्तिगत ज़मानत समाप्त हो गई है, तो क्या वह वित्तीय ज़मानत (कफ़ालत बिल-माल) भी, जो इसके अंतर्गत उल्लेख की गई थी, इसके समाप्त होने के साथ समाप्त हो गई या वह बनी रहेगी? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

अल-जवाब: हाँ, प्रश्नगत स्थिति में व्यक्तिगत ज़मानत के समाप्त होते ही वित्तीय ज़मानत भी समाप्त हो गई, क्योंकि यह केवल उसकी ताकीद और पुष्टि के लिए उसके पूर्णतः अधीन थी। जब मूल (व्यक्तिगत ज़मानत) ही नहीं रही, तो यह भी नहीं रही।

| क्यों और कैसे? वास्तव में समय बीतने के कारण समयबद्ध [ज़मानत] का समाप्त होना हर तरह से समाप्ति है, जैसे कि दोषमुक्ति (इब्रा); अतः यह मूल और शाखा दोनों पर लागू होता है। | वित्तीय ज़मानत समाप्त क्यों नहीं होगी, जबकि समय बीतने के कारण समयबद्ध ज़मानत का समाप्त होना हर दृष्टि से उसका समाप्त होना है, जैसे कि बरी कर देना। इसलिए वह... |

[1] रद-उल-मुहतार, किताब अल-कफ़ाला, मतलब फी अल-कफ़ाला अल-मुअक़्क़ता, दार इहया अत-तुरास अल-अरबी बैरुत, 2/255.

| ظاہر الروایۃ[1] | خلافِ قضاء نہ ہوئی۔ (ت) |

پس صورت مستفسرہ میں قطعاً حکم یہی ہے کہ ۱۸ فروری کے بعد کفالت نہ رہی، بالجملہ اسی مسئلہ میں حقِ ناصح یہ ہے کہ کفالت بالنفس تو ۱۸ فروری کو جزماً حتماً ختم ہوگئی اور اس کے بعد مطالبہ ظلم ہے اور لفظِ مطالبہ سے کفالت بالمال کا ایجاب محض بے دلیل ہے اگرچہ ۱۸ فروری سے پہلے فرار ثابت بھی ہو اور اگر اس کا ثبوت نہ ہو جب تو مطالبہ مال کا معنی مجازی پر بھی اصلاً احتمال ہی نہیں، غرض صورت مستفسرہ میں کفالت بالنفس یقیناً زائل اور خالد پر مطالبہ مال کا بھی حکم باطل یہ حکمِ قضا ہے، رہی دیانت اگر فی الواقع خالد نے مطالبہ سے مال مراد لیا، اور یہی مقصود مفہوم ہوا اور ۱۸ سے پہلے فرار کی شرط محقق ہوئی اور دہندہ کا زید پر دین دین صحیح تھا تو عنداللہ خالد پر مال لازم آچکا اگرچہ قاضی بوجہ مذکورہ حکم نہیں کرسکتا اللہ سے ڈرے اور بیجا حیلہ وعذر نہ کرے اور اگر ان تینوں امر سے ایک بھی منتفی ہو تو عنداللہ بھی وہ مطالبہ مال سے بری ہے، ہذا ھو التحقیق واللہ ولی التوفیق و ھو سبحانہ و تعالٰی اعلم (یہ ہی تحقیق ہے اور اللہ تعالٰی مالکِ توفیق ہے اور وہ سبحانہ و تعالٰی بہتر جانتا ہے۔ت)

مسئلہ ۲۸۱: از رام پور مقام مذکور ۷ ربیع الاول شریف ۱۳۱۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید ہندہ دائنہ کے لئے ایک مدت معہودہ تک عمر ومدیون کا کفیل بالنفس ہوا اور حسب تعارف و معنی مقصود و مفہوم بین الناس اس مدت کے گزرنے تک انتہائے کفالت قرار پایا زید نے اس کفالت کے ضمن میں یہ بھی کہا تھا کہ اگر مدیون اس مدت تک شہر سے بھاگ جائے تو میں مطالبہ مدعیہ کا ذمہ دار ہوں ، اب کہ مدت گزر گئی اور کفالت بالنفس ختم ہوچکی تو آیا وہ

کفالت بالمال بھی جو اس کے ضمن میں ذکر کی تھی اس کے ختم سے منتہی ہوگئی یا وہ باقی رہے گی بینوا توجروا

الجواب: ہاں صورت مستفسرہ میں کفالت بالنفس کے ختم ہوتے ہی کفالت بالمال بھی ختم ہوگئی کہ یہ اسی کی تاکید و توثیق کے لئے اس کی تابع محض تھی جب اصل نہ رہی یہ بھی نہ رہی۔

| کیف وان زوال الموقتۃ بمرور الوقت زوال من کل وجہ کالابراء فیعمل فی الاصل والفرع | کیسے کفالت بالمال ختم نہ ہوگی حالانکہ وقت گزرنے کے سبب سے کفالت موقتہ کا زوال ہر لحاظ سے اس کا زوال ہوتا ہے جیسے کہ بری کرنا لہٰذا وہ |

[1] ردالمحتار کتاب الکفالۃ مطلب فی الکفالۃ الموقتۃ داراحیاء التراث العربی بیروت ۲/ ۲۵۵

صفحہ 715 میں سے 670

Fatawa Rizwia - Volume 17

...altogether, unlike the death of the person sought (matlub), due to the absence of a provision for annulment (fasakh), as explained in Al-Fath and others. It will apply to both the primary and the secondary [obligations]. This is unlike the death of the person sought, because its provision is not for annulment, as described in Al-Fath and others. (T)

In Durr-ul-Mukhtar and Radd-ul-Muhtar: If he (the claimant) absolved him from it (suretyship of person) and he did not produce him, then the payment of money is not obligatory due to the absence of its condition, which is the continuation of the suretyship of person. If the seeker (claimant) absolved the guarantor (kafil) from the suretyship of the person (kafalat-un-nafs) and he did not make the payment, then it will not be obligatory for the guarantor to pay the money because its condition, i.e., the continuation of the suretyship of person, has ceased to exist. (T)

In the marginal notes of Al-Hidayah (Hawashi-e-Hidaya): When the suretyship of person (kafalat-un-nafs) lapses, it is necessary that the suretyship of property (kafalat-ul-mal) resulting from it also lapses, because it is like a reinforcement for it and not the primary objective. Therefore, if the seeker absolves the guarantor from the suretyship of person before the expiration of the period, the suretyship of property becomes void. When the suretyship of person is dropped, then the suretyship of property which is dependent on it must also be dropped because it is a reinforcement of the suretyship of person and not the primary objective. This is the reason why if, before the expiry of the period, the seeker absolves the guarantor from the suretyship of person, then the suretyship of property will become void. And Allah, the Exalted, knows best. (T)

And Allah, Glorified and Exalted, knows best.

Problem 282: From Rampur State, queried by Haji Nausha Ali, Shaid Ali, and Chhannu, 28th Rabi' al-Akhir 1334 AH. (Zaid), a decree-holder, had (Amr) arrested in the process of executing the decree. Bakr, Khalid, Hamed, and Omar became personal guarantors for the appearance of the debtor (Amr) in court without a specified date. A bail bond was written with the conditions that on whatever date the court calls for the debtor (Amr), the guarantors will present him. If they do not present him, they will pay the amount of the decree owed by the said debtor. The aforementioned bail bond, after completion, was included in the case file, and the debtor was handed over to the three guarantors.

1. Durr-ul-Mukhtar, Kitab al-Kafala, Mujtabai Press, Delhi, 2/161; Radd-ul-Muhtar, Kitab al-Kafala, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/259.
2. Hawashi-e-Hidaya, Kitab al-Kafala, Yusufi Press, Lucknow, 3/115.

फतावा रज़विया - जिल्द 17

...समग्र रूप से, मतलूब (जिसकी मांग की गई हो) की मृत्यु के विपरीत, निरस्तीकरण (फ़सख़) के प्रावधान की अनुपस्थिति के कारण, जैसा कि अल-फतह और अन्य में समझाया गया है। यह मूल और शाखा दोनों पर लागू होगा। यह मतलूब की मृत्यु के विपरीत है क्योंकि उसका प्रावधान निरस्तीकरण के लिए नहीं है, जैसा कि फतह आदि में वर्णित है। (त)

दुर्र-ए-मुख्तार और रद-उल-मुहतार में है: यदि उसने (दावेदार ने) उसे इससे (व्यक्तिगत ज़मानत से) मुक्त कर दिया और उसने उसे पेश नहीं किया, तो धन का भुगतान अनिवार्य नहीं है क्योंकि इसकी शर्त का अभाव है, जो कि व्यक्तिगत ज़मानत की निरंतरता है। यदि तलब करने वाले (दावेदार) ने ज़ामिन (कफील) को व्यक्तिगत ज़मानत (कफ़ालत-ए-नफ़्स) से मुक्त कर दिया और उसने भुगतान नहीं किया, तो ज़ामिन के लिए धन देना अनिवार्य नहीं होगा क्योंकि इसकी शर्त, यानी व्यक्तिगत ज़मानत का बने रहना, समाप्त हो गई है। (त)

हवाशी हिदाया में है: जब व्यक्तिगत ज़मानत (कफ़ालत-ए-नफ़्स) समाप्त हो जाती है, तो यह आवश्यक है कि उससे उत्पन्न होने वाली संपत्ति की ज़मानत (कफ़ालत-उल-माल) भी समाप्त हो जाए, क्योंकि यह उसके लिए एक सुदृढीकरण की तरह है और मुख्य उद्देश्य नहीं है। इसलिए, यदि तलब करने वाला अवधि समाप्त होने से पहले ज़ामिन को व्यक्तिगत ज़मानत से मुक्त कर देता है, तो संपत्ति की ज़मानत शून्य हो जाती है। जब कफ़ालत-ए-नफ़्स (व्यक्तिगत ज़मानत) साक़ित (समाप्त) हो जाए, तो उस पर आधारित होने वाली कफ़ालत-ए-माल (संपत्ति की ज़मानत) का साक़ित होना वाजिब है क्योंकि वह कफ़ालत-ए-नफ़्स की ताकीद (पुष्टि) है, मक़सूद (मूल उद्देश्य) नहीं। यही कारण है कि यदि अवधि समाप्त होने से पहले तलब करने वाले ने कफील को कफ़ालत-ए-नफ़्स से बरी कर दिया, तो कफ़ालत-ए-माल बातिल (अमान्य) हो जाएगी। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है। (त)

और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है।

मसला 282: रियासत रामपुर से, प्रेषक हाजी नौशा अली, शैद अली और छन्नू, 28 रबी-उल-आख़िर 1334 हिजरी। (ज़ैद) डिक्री-धारक ने डिक्री जारी करने की प्रक्रिया में (अम्र) को गिरफ्तार करवाया। बक्र, खालिद, हामिद और उमर, कर्जदार (अम्र) की बिना किसी निश्चित तारीख के अदालत में पेशी के लिए व्यक्तिगत ज़मानतदार बने। ज़मानतनामा इन शर्तों के साथ लिखा गया कि जिस तारीख को

अदालत कर्जदार (अम्र) को तलब करेगी, ज़मानतदार उसे पेश करेंगे। यदि वे उसे पेश नहीं करेंगे, तो उक्त कर्जदार के ज़िम्मे वाली डिक्री की राशि का भुगतान करेंगे। उक्त ज़मानतनामा पूरा होने के बाद केस फाइल में शामिल कर दिया गया और कर्जदार को तीनों ज़मानतदारों के हवाले कर दिया गया।

---

1. दुर्र-ए-मुख्तार, किताब अल-कफ़ाला, मुज्तबाई प्रेस, दिल्ली, 2/161; रद-उल-मुहतार, किताब अल-कफ़ाला, दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 4/259।
2. हवाशी हिदाया, किताब अल-कफ़ाला, यूसुफी प्रेस, लखनऊ, 3/115।

पृष्ठ 671 का 715

جمیعا بخلاف موت المطلوب لعدم وضعه للفسخ کما بینه فی الفتح وغیرہ۔ اصل وفروع دونوں میں عمل کرے گا۔ بخلاف مطلوب کی موت کے کیونکہ اس کی وضع فسخ کے لئے نہیں ہے جیسا کہ فتح وغیرہ میں اس کو بیان کیا ہے۔ (ت)

درمختار و ردالمحتار میں ہے: لو ابراہ عنها فلم یواف به ولم یجب المال لفقد شرطه و هو بقاء الکفالة بالنفس ۱۔ اگر طالب نے کفیل کو کفالت نفس سے بری کردیا اور اس نے ادائیگی نہیں کی تو کفیل پر مال دینا واجب نہ ہوگا کیونکہ اس کی شرط یعنی کفالت نفس کی بقاء فوت ہوگئی ہے۔ (ت)

حواشی ہدایہ میں ہے: الکفالة بالنفس اذا سقطت وجب ان یسقط ما یترتب علیها من الکفالة بالمال لکونها کالتاکید لها ولیست بمقصودة و لهذا لو ابرأ الکفیل الطالب عن الکفالة بالنفس قبل انقضاء المدة بطلت الکفالة بالمال ۲۔ جب کفالت بالنفس ساقط ہو جائے تو اس پر مرتب ہونے والی کفالت بالمال کا ساقط ہونا واجب ہے کیونکہ وہ تو کفالت نفس کی تاکید ہے مقصود نہیں، یہی وجہ ہے کہ اگر مدت گزرنے سے پہلے طالب نے کفیل کو کفالت نفس سے بری کردیا کفالت بالمال باطل ہوجائے گی، واللہ سبحانہ وتعالٰی اعلم۔ (ت) واللہ سبحانہ وتعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۸۲: از ریاست رامپور مسئولہ حاجی نوشہ علی و شید علی و چھنو ۲۸ ربیع الآخر ۱۳۳۴ھ (زید) ڈگری دار نے بصیغہ اجراء ڈگری (عمرو) اپنے کو گرفتار کرایا بکر و خالد و حامد عمر و مدیون کی حاضری عدالت کے بلا تعین تاریخ حاضر ضامن ہوئے اور ضمانت نامہ بایں شرائط لکھا گیا کہ جس تاریخ کو عدالت (عمرو) مدیون کو طلب کرے گی ضامنان اس کو حاضر کریں

گے اگر نہ حاضر کریں گے تو زر ڈگری ذمگی مدیون مذکور ادا کریں گے ضمانت نامہ مذکورہ بعد تکمیل شامل مسل ہو کر مدیون سپرد ضامنان کیا گیا بہر سہ ضامنان

---

۱ درمختار کتاب الکفالۃ مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۱۶۱، ردالمحتار کتاب الکفالۃ داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۲۵۹ ۲ حواشی ہدایہ کتاب الکفالۃ مطبع یوسفی لکھنو ۳/ ۱۱۵

They had gone far away from the limits of the mentioned court, i.e., their residences, for their respective needs. In their absence, an order was issued by the court stating that the judgment debtor should be produced in court within one week from the date of receipt of this notice. This order was affixed to the houses of the guarantors due to their absence; the said order was not served personally on any guarantor. After the expiry of the one-week period mentioned in the said order, the decree-holder applied to the court stating that the guarantors did not produce the debtor in court within the prescribed period. Therefore, according to the condition mentioned in the bail bond, fulfillment of the decree should be carried out through the guarantors, and the decree amount should be collected through attachment and auction of the guarantors' property. In support of the guarantors' failure to produce the debtor, statements from several persons were recorded in court who testified under oath that on the date of execution of the warrant issued by the court, they had seen the guarantors in the same city which is their residence. Based on this testimony, an order for the attachment of the property of one of the guarantors was issued by the court, and the attachment was carried out according to the rules. On the second day after the attachment, all three guarantors produced the debtor in court and excused themselves regarding the non-production of the debtor within the period mentioned in the court's execution order, stating that they, the guarantors, were not present at their residences in this city but had gone far away. Due to this, they did not receive notice of the issuance of the court order. They returned on the day of attachment and came to know about the issuance of the court order from the act of attachment. Immediately upon learning of it, they produced the debtor in court the very next day. No delay occurred on the part of the guarantors after knowledge of the demand for the debtor. To support their excuse for being away from the city, i.e., from their residences, and being present at other places, all three guarantors filed affidavits in court. The court, after taking over the produced debtor from the guarantors, sent him to civil jail and discharged the guarantors from personal bail (zamanat-bi-al-nafs) but maintained the liability for monetary bail (zamanat-bi-al-maal) against the guarantee.

Therefore, the question to be resolved is: when at the time of bail by the court or in the bail bond, no specific date for the production of the debtor was fixed, and the court's execution order through which the production of the debtor was demanded from the guarantors was not served personally on the guarantors, and in that same

court execution order, no specific date was fixed for the debtor's appearance, rather the words of the said order were (produce the debtor in court within one week from the date of receipt of this notice), and against these proceedings, the guarantors, through affidavits, show and prove their absence from their residences and presence at other distant places during the date of issuance of the court warrant and within that one-week period prescribed for the debtor's appearance. Can the liability of monetary bail legally still be imposed and maintained on the guarantors under these circumstances, while the debtor was also produced in court immediately upon knowledge of the court's demand and he is in civil jail?

फ़तावा रज़विया, जिल्द 17

वे अपनी-अपनी ज़रूरतों के लिए उक्त अदालत की सीमाओं, यानी अपने निवास स्थानों से बहुत दूर चले गए थे। उनकी अनुपस्थिति में, अदालत से एक आदेश इस आशय का जारी किया गया कि इस सूचना की प्राप्ति की तारीख से एक सप्ताह के भीतर ऋणी (मदयुन) को अदालत में पेश किया जाए। यह आदेश ज़मानतदारों की अनुपस्थिति के कारण उनके घरों पर चस्पा किया गया; उक्त आदेश की तामील किसी भी ज़मानतदार पर व्यक्तिगत रूप से नहीं हुई। उक्त आदेश में वर्णित एक सप्ताह की अवधि बीत जाने पर, डिक्री-धारक ने अदालत में आवेदन किया कि ज़मानतदारों ने निर्धारित अवधि के भीतर ऋणी को अदालत में पेश नहीं किया है। इसलिए ज़मानतनामा में उल्लिखित शर्त के अनुसार डिक्री का निष्पादन ज़मानतदारों से कराया जाए और ज़मानतदारों की संपत्ति की कुर्की और नीलामी के माध्यम से डिक्री की राशि वसूल की जाए। ज़मानतदारों द्वारा ऋणी को पेश न करने के समर्थन में अदालत में कई व्यक्तियों के बयान दर्ज कराए गए, जिन्होंने शपथपूर्वक बयान दिया कि अदालत द्वारा जारी वारंट के निष्पादन की तारीख पर उन्होंने ज़मानतदारों को उसी शहर में देखा था जहाँ उनका निवास है। इस गवाही के मद्देनज़र अदालत से एक ज़मानतदार की संपत्ति की कुर्की का आदेश जारी हुआ और नियम के अनुसार कुर्की की गई। कुर्की के दूसरे दिन तीनों ज़मानतदारों ने ऋणी को अदालत में पेश किया और अदालत के निष्पादन आदेश में वर्णित अवधि के भीतर ऋणी को पेश न करने के संबंध में यह बहाना बनाया कि हम ज़मानतदार इस शहर में अपने निवास स्थानों पर मौजूद नहीं थे बल्कि अपने घरों से बहुत दूर चले गए थे। इस वजह से हमें अदालत के आदेश के जारी होने की सूचना नहीं मिली। हम कुर्की के दिन वापस आए और कुर्की की कार्रवाई से अदालत के आदेश के जारी होने का पता चला। जैसे ही पता चला, अगले ही दिन ऋणी को तुरंत अदालत में पेश कर दिया। ऋणी की मांग का ज्ञान होने के बाद ज़मानतदारों की ओर से कोई देरी नहीं हुई। शहर से बाहर होने, यानी अपने निवास स्थानों से अनुपस्थित होने और अन्य स्थानों पर मौजूद होने के अपने बहाने के समर्थन में तीनों ज़मानतदारों ने अदालत में हलफ़नामे दाखिल किए। अदालत ने ज़मानतदारों से पेश किए गए ऋणी को लेकर दीवानी जेल भेज दिया और ज़मानतदारों को व्यक्तिगत ज़मानत (ज़मानत-बिन-नफ़्स) से मुक्त कर दिया, लेकिन वित्तीय ज़मानत (ज़मानत-बिल-माल) की जवाबदेही ज़मानत पर बनाए रखी।

अतः समाधान के योग्य प्रश्न यह है कि जब अदालत की ओर से ज़मानत के समय या ज़मानतनामा में ऋणी की पेशी की कोई तारीख निश्चित और तय नहीं की गई थी, और अदालत का वह निष्पादन

आदेश जिसके माध्यम से ज़मानतदारों से ऋणी की मांग की गई थी, ज़मानतदारों पर व्यक्तिगत रूप से तामील नहीं हुआ था, और उसी अदालत के निष्पादन आदेश में भी ऋणी की उपस्थिति के लिए कोई तारीख निश्चित और तय नहीं की गई थी, बल्कि उक्त आदेश के ये शब्द थे (इस आदेश की सूचना मिलने की तारीख से एक सप्ताह के भीतर ऋणी को अदालत में पेश करें), और इन कार्रवाइयों के मुकाबले ज़मानतदार हलफ़नामों के माध्यम से अदालत के वारंट के जारी होने की तारीख और उस एक सप्ताह की अवधि के दौरान, जो ऋणी की उपस्थिति के संबंध में निर्धारित थी, अपने निवास स्थानों से अपनी अनुपस्थिति और दूर स्थित अन्य स्थानों पर अपनी मौजूदगी को प्रदर्शित और प्रमाणित करते हैं, तो क्या इन परिस्थितियों की उपस्थिति में भी ज़मानतदारों पर वित्तीय ज़मानत (ज़मानत-बिल-माल) की जवाबदेही शरीयत के अनुसार लागू और कायम रह सकती है, जबकि ऋणी को भी अदालत की मांग का पता चलते ही पेश कर दिया गया और वह दीवानी जेल में है?

اپنی اپنی ضرورتوں سے حدود عدالت مذکور یعنی اپنے مسکنوں سے باہر دور دراز چلے گئے ان کی عدم موجودگی میں عدالت سے ایک حکم اس مضمون کا جاری ہوا کہ تاریخ اطلاع یابی حکم ہذا سے ایک ہفتہ کے اندر مدیون کو حاضر عدالت کریں، یہ حکم بوجہ عدم موجودگی ضامنان ان کے مکانوں پر آویزاں ہوا ہے کسی ضامن کی ذات پر حکم مذکور کی تعمیل نہیں ہوئی ہے میعاد ہفتہ مندرجہ حکم مذکور گزر جانے پر ڈگری دار نے عدالت سے درخواست کی ہے کہ ضامنان نے مدیون کو میعاد مقررہ عدالت کے اندر نہیں حاضر کیا ہے پس بموجب شرط مندرجہ ضمانت نامہ ڈگری کا ایفاء ضامنان سے کرایا جائے اور بذریعہ قرقی و نیلامی جائداد ضامنان زر ڈگری وصول کرایا جائے اور ضامنان کے قصور نہ حاضر کرنے مدیون کی تائید میں چند اشخاص کے بیانات عدالت میں کرائے ہیں جنہوں نے بحلف بیان کیا ہے کہ تاریخ تعمیل حکمنامہ مجریہ عدالت پر ہم نے ضامنان کو اسی شہر میں جوان کا مسکن ہے دیکھا ہے اس شہادت کے پیش نظر ہونے پر عدالت سے حکم قرقی مال احد الضامن جاری ہوا ہے اور قرقی حسب قاعدہ عمل میں آئی ہے قرقی سے دوسرے روز ہر سہ ضامنان نے مدیون کو حاضر عدالت کیا ہے اور میعاد مندرجہ حکم مجریہ عدالت کے اندر نہ حاضر کرنے مدیون کی نسبت یہ عذر کیا ہے کہ ہم ضامنان اپنے مسکنوں پر اس شہر میں موجود نہیں تھے بلکہ اپنے مسکنوں سے باہر دور دراز گئے ہوئے تھے اس وجہ سے ہم کو اطلاع اجراء حکم عدالت کی نہیں ہوئی بہ یوم قرقی واپس آئے ہیں اور فعل قرقی سے علم اجراء حکم عدالت کا ہوا ہے کہ بہ مجرد علم دوسرے ہی روز مدیون کو فورا عدالت میں حاضر کر دیا ہے علم طلبی مدیون کے بعد کوئی توقف منجانب ضامنان وقوع میں نہیں آیا ہے اور اپنے عذر عدم موجودگی شہر یعنی بہ مساکن خود با موجودگی مقامات دیگر کی تائید میں ہر

سہ ضامنان نے حلف نامہ جات اقراری خود با عدالت میں داخل کئے ہیں کہ عدالت نے مدیون حاضر کردہ کو ضامنان سے لے کر جیل خانہ دیوانی میں بھیج کر ضمانت بالنفس سے تو ضامنان کو بری کر دیا ہے مگر ضمانت بالمال کا مواخذہ ضمان پر قائم رکھا ہے

پس سوال قابل تصفیہ یہ ہے کہ جبکہ عدالت سے ضمانت کے وقت یا ضمانت نامہ میں کوئی تاریخ حاضری مدیون کی معین و مقرر نہیں ہوئی تھی اور حکم مجریہ عدالت جس کے ذریعہ سے طلبی مدیون کی ضامنان سے ہوئی ہے ضامنان کی ذات پر تعمیل نہیں ہوا ہے اور اسی حکم مجریہ عدالت میں بھی حاضری مدیون کے لئے کوئی تاریخ معین و مقرر نہیں کی گئی ہے بلکہ حکم مذکور کے یہ الفاظ ہیں (تاریخ اطلاع یابی حکم ہذا سے ایک ہفتہ کے اندر مدیون کو حاضر عدالت کرو) اور ان کاروائیات کے مقابلہ میں ضامنان بذریعہ حلف نامجات تاریخ اجراء حکمنامہ عدالت اور اس میعاد ایک ہفتہ کے اندر جو اس میں نسبت حاضری مدیون مقرر تھی اپنی عدم موجودگی بمسکنائے خود با موجودگی بمقامات دیگر جو بفاصلہ واقع ہیں ظاہر و ثابت کرتے ہیں تو کیا ان حالات کی موجودگی میں بھی ضامنان پر مواخذہ ضمانت بالمال کا شرعا عائد و قائم رہ سکتا ہے درحالیکہ مدیون کو بھی بمجرد علم طلبی عدالت حاضر کر دیا اور وہ جیل خانہ دیوانی

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

...has also been sent and is serving his sentence, or that under the aforementioned circumstances, the legal responsibility for the financial guarantee on the guarantors no longer remains according to Sharia and they can be exonerated.

Answer: The Dar-ul-Ifta, relying on the petitioner's statement, officially requested copies of the witnesses' testimonies, which were presented on the 13th of Jamadi al-Ula. There are seven witnesses, one of whom is Hindu; his testimony is fundamentally not admissible against Muslims, so debating it is futile. The summary of the remaining six is as follows: (1) Guman Khan, peon: The deponent stated that on December 18, he pasted three notices at the house of Sheikh Chhunnu Sheida Ali and Nosha Khan because the deponent learned from the witnesses that the guarantors were not in the city and had gone into hiding after learning about the notices. At the time of inquiry, the women of the guarantors' household said that the guarantors were not at home and had gone somewhere. (2) Jalan Khan, witness to service of notice: About 18 or 19 days ago on January 4, the deponent was going to his fields; Sheida Ali and Nosha Khan were standing at Chhunnu Khan's house. The deponent went to the forest, and when he returned from there, at that time Guman Khan pasted the court papers at Chhunnu Khan's house. The deponent does not know the parentage of Chhunnu Khan and Sheida Ali but recognizes them both. In response to a court question, he stated that at the time the papers were pasted, Sheida Ali had taken the buffalo to the forest and regarding Chhunnu Khan, he heard that he had gone to Babu's place. (3) Chhamman, witness to service of notice: About twenty-nine days ago, on a Friday, the deponent was standing outside his house at around 10 or 11 AM. Sheida Ali and Chhunnu, sons of Chhattan, were standing near their house talking. A little later on the same day, Guman Khan was pasting two papers on the house of the aforementioned Sheida Ali and Chhunnu. At that time, Sheida Ali had taken the buffalo to the forest and Chhunnu had gone somewhere. (4) Sharafuddin: About 19 days ago, Chhunnu Khan and Sheida Ali Khan, sons of Chhattan Khan, and Nosha, son of Bannan Khan, were sitting by the well where Chhunnu Khan and Sheida Ali Khan's house is, and they were standing and talking; the deponent only saw this much. (5) Lallan Khan: About 19 days ago, Guman Khan was standing near Mahbub Jan's mosque with a summons. There were several other people too. The aforementioned person said he is pasting it at Naushad Khan's house. The aforementioned person called out at the house of Nosha Khan, son of

Bannan Khan, asking where Nosha Khan was. A girl came out of the house and said he is either at Babu Ji's place...

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

...में भी भेज दिया गया है और जेल काट रहा है, या यह कि उपरोक्त परिस्थिति में ज़मानतदारों पर धन की ज़मानत का दायित्व शरीयत के अनुसार बना नहीं रहता और वे मुक्त हो सकते हैं।

उत्तर: दारुल इफ्ता ने प्रार्थी के बयान पर भरोसा करते हुए गवाहों के बयानों की प्रतियों की आधिकारिक मांग की, जिन्हें 13 जमादी-उल-उला को पेश किया गया। वे सात गवाह हैं, जिनमें से एक हिंदू है; उसकी गवाही मुसलमानों के खिलाफ मौलिक रूप से स्वीकार्य नहीं है, इसलिए उस पर बहस करना व्यर्थ है। शेष छह का सारांश इस प्रकार है: (1) गुमन खां, चपरासी: बयानकर्ता ने कहा कि 18 दिसंबर को उसने शेख छन्नू शैदा अली और नोशा खां के घर पर तीन नोटिस चिपकाए क्योंकि बयानकर्ता को गवाहों से पता चला कि ज़मानतदार शहर में नहीं हैं और नोटिस की खबर मिलने के बाद वे भूमिगत हो गए हैं। पूछताछ के समय ज़मानतदारों की महिलाओं ने कहा था कि ज़मानतदार घर पर नहीं हैं और कहीं चले गए हैं। (2) जलन खां, नोटिस तामील का गवाह: लगभग 18 या 19 दिन पहले 4 जनवरी को बयानकर्ता अपने खेतों पर जा रहा था; छन्नू खां के घर पर शैदा अली और नोशा खां खड़े थे। बयानकर्ता जंगल चला गया, फिर जब वहाँ से लौटा, तो उस समय गुमन खां ने कचहरी के कागज़ात छन्नू खां के घर पर चिपका दिए। बयानकर्ता छन्नू खां और शैदा अली के पिता का नाम नहीं जानता, लेकिन उन दोनों को पहचानता है। कचहरी के सवाल के जवाब में उसने बयान दिया कि जिस समय कागज़ चिपकाए गए, उस समय शैदा अली भैंस लेकर जंगल गया था और छन्नू खां के बारे में सुना कि वे बाबू के यहाँ गए हैं। (3) छम्मन, नोटिस तामील का गवाह: लगभग उनतीस दिन पहले, शुक्रवार के दिन बयानकर्ता सुबह 10, 11 बजे के आसपास अपने घर के बाहर खड़ा था। छट्टन के पुत्र शैदा अली और छन्नू अपने घर के पास खड़े बातें कर रहे थे। थोड़ी देर बाद उसी दिन गुमन खां उपरोक्त शैदा अली और छन्नू के घर पर दो कागज़ चिपका रहे थे। उस समय शैदा अली भैंस लेकर जंगल गया था और छन्नू कहीं गया था। (4) शरफुद्दीन: लगभग 19 दिन पहले, छट्टन खां के पुत्र छन्नू खां और शैदा अली खां, और बन्नन खां का पुत्र नोशा कुएँ के पास बैठे थे जहाँ छन्नू खां और शैदा अली खां का घर है, वे खड़े होकर बातें कर रहे थे; बयानकर्ता ने बस इतना ही देखा। (5) लल्लन खां: लगभग 19 दिन पहले, गुमन खां समन लेकर महबूब जान की मस्जिद के पास खड़े थे। और भी कई आदमी थे। उपरोक्त व्यक्ति ने कहा कि वह नौशाद खां के घर पर चिपका रहा हूँ। उपरोक्त व्यक्ति ने बन्नन खां के पुत्र नोशा खां के घर पर आवाज़ दी कि नोशा खां कहाँ हैं। घर में से एक लड़की निकली उसने कहा या तो बाबू जी के यहाँ...

میں بھی بھیج دیا گیا ہے اور قید بھگت رہا ہے یا یہ کہ بحالتِ مذکورہ بالا ضامنان پر مواخذہ ضمانت بالمال کا شرعاً قائم و باقی نہیں رہ سکتا ہے اور وہ سبکدوش ہو سکتے ہیں۔

الجواب: دارالافتاء نے بیان سائل پر اکتفاء کر کے اظہارات گواہان کی نقول باضابطہ طلب کیں جو سال ۱۳ جمادی الاولٰی کو حاضر لایا وہ سات گواہ ہیں جن میں ایک ہندو ہے اس کی شہادت تو مسلمانوں پر اصلاً مسموع نہیں لہٰذا اس سے بحث فضول ہے باقی چھ کا خلاصہ یہ ہے: (۱) گمن خاں چپراسی مظہر نے بتاریخ ۱۸ دسمبر تین قطعہ نوٹس بمکان شیخ چھنو شیدا علی و نوشہ خاں چسپاں کر دئے اس لئے کہ گواہان کی زبانی مظہر کو معلوم ہوا کہ ضامن شہر میں نہیں نوٹس کی خبر معلوم کر کے روپوش ہو گئے ہیں۔ ہنگام دریافت عورت ضامنان نے کہا تھا کہ ضامنان گھر میں نہیں کہیں چلے گئے ہیں۔ (۲) جلن خاں گواہ تعمیل نوٹس ۴ جنوری عرصہ ۱۸ یا ۱۹ دن کا ہوا مظہر اپنے کھیتوں پر جارہا تھا چھنو خاں کے مکان پر شیدا علی نوشہ خاں کھڑے تھے مظہر جنگل کو چلا گیا پھر جس وقت ادھر سے لوٹ کر آیا اس وقت گمن خاں نے کاغذ کچہری کے چھنو خاں کے مکان پر وہ لگا دئے مظہر چھنو خاں اور شیدا علی کی ولدیت نہیں جانتا ان دونوں کو پہچانتا ہے بجواب سوال کچہری بیان کیا جس وقت کاغذ چسپاں ہوئے ہیں اس وقت شیدا علی جنگل کو بھینس لے کر گیا تھا اور چھنو خاں کی نسبت سنا کہ بابو کے یہاں گئے ہیں (۳) چھمن گواہ تعمیل نوٹس کوئی انتیس دن کا عرصہ ہوا جمعہ کے روز مظہر اپنے گھر کے باہر کھڑا تھا وقت دن کے ۱۰، ۱۱ بجے کا تھا شیدا علی و چھنو پسران چھٹن اپنے گھر کے پاس کھڑے باتیں کر رہے ہیں، تھوڑی دیر کے بعد اسی روز گمن خاں شیدا علی و چھنو مذکور کے مکان پر دو کاغذ لگا رہے تھے اس وقت شیدا علی جنگل کو بھینس لے گیا تھا اور چھنو کہیں گیا تھا۔ (۴) شرف

الدین، عرصہ کوئی ۱۹ دن کا ہوا چھنو خاں شیدا علی خاں پسران چھٹن خاں نوشہ ولد بنن خاں بیٹھے کنوین کے پاس جہاں چھنو خاں و شیدا علی خاں کا مکان ہے کھڑے باتیں کر رہے تھے بس مظہر نے اتنا ہی دیکھا۔ (۵) لڈن خاں، کوئی ۱۹ دن ہوئے گمن خاں سمن لئے محبوب جان کی مسجد کے پاس کھڑے تھے اور بھی کئی آدمی تھے مذکور ہی نے کہا نوشد خاں کے گھر پر چسپاں کرتا ہوں مذکور ہی نے نوشہ خاں ولد بنن خان کے گھر پر آواز دی کہ نوشہ خاں کہاں ہیں گھر میں سے ایک لڑکی نکلی اس نے کہا یا تو بابوجی کے یہاں

Fatawa Rizvia (Volume 17)

...might have gone or to the fort, the aforementioned person pasted the summons at Nosha Khan's house, the witness left. (6) Amjad Hussain, a peon with the summons, was wandering near Mahbub Jan's mosque 19 days ago on a Friday. He came to know that Nosha Khan had gone to the fort; the aforementioned person pasted the summons at Nosha Khan's house, the witness left. The witness does not know Nosha Khan's parentage, though he recognizes him. All these testimonies are purely insufficient for many reasons. First: The peon says the summons were pasted on 18th December, and Chhamman and Amjad Hussain say Friday. December 18th was a Saturday, not Friday. Second: These testimonies were given on 4th January. According to the peon's statement, seventeen days had passed since the summons were pasted. Amjad Hussain says 19 days. Ladan and Sharafuddin say some 19 days. In the formal copy of Chhamman's statement, it clearly says twenty-nine days. Jalan Khan says 18 or 19. Even so, at least that same Friday must fall. Third: In testimony regarding an absent person, stating the parentage is unanimously necessary, and in the school of our Great Imam (may Allah be pleased with him), stating the grandfather's name is also essential when parentage alone is not enough for identification, and this is correct. It is in Al-Alamgiri: "Testimony regarding the deceased or the absent requires witnesses to name the deceased or the absent along with their father's and grandfather's names. According to Imam Abu Yusuf's opinion, mentioning only the father is sufficient; it is so mentioned in Al-Dhakhira. But the correct view is that attribution to the grandfather is necessary, as stated in Al-Bahr al-Ra'iq." (Trans.) Here, far from stating parentage, concerning the relation of Jalan Khan, Chhannu, and Shaida Ali, Amjad Hussain Khan denies even knowing the parentage of Nosha Khan. Nor were the famous accused brought before them for identification. Such vague testimony is deficient and defective. Fourth: The peon says he learned from the witnesses' verbal accounts that the guarantors are in the city; this is hearsay and is not among the exceptions where testimony by hearsay is acceptable.

---

1 Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Shahadat, Chapter 3, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/459 Page 674 of 715

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

...गये होंगे या क़िले को, उक्त व्यक्ति ने सम्मन नोशा खाँ के घर पर चस्पा कर दिया, गवाह चला गया। (६) अमजद हुसैन, चपरासी सम्मन लेकर महबूब जान की मस्जिद के पास १९ दिन पहले शुक्रवार के दिन घूम रहे थे। उसे पता चला कि नोशा खाँ क़िले गये हैं; उक्त व्यक्ति ने नोशा खाँ के मकान पर सम्मन चस्पा कर दिया, गवाह चला गया। गवाह नोशा खाँ की वल्दियत (पिता का नाम) नहीं जानता, उन्हें पहचानता है। ये तमाम गवाहियां कई कारणों से नितांत अपर्याप्त हैं। प्रथम: चपरासी १८ दिसंबर को सम्मन चस्पा करना बताता है और छम्मन और अमजद हुसैन शुक्रवार को। १८ दिसंबर को शनिवार था न कि शुक्रवार। द्वितीय: ये गवाहियां ४ जनवरी को हुईं। चपरासी के बयान के अनुसार सम्मन चस्पा किए हुए सत्रह दिन हुए थे। अमजद हुसैन १९ दिन कहता है। लडन और शरफुद्दीन कोई १९ दिन, और छम्मन के बयान की आधिकारिक प्रति में स्पष्ट रूप से उनतीस दिन लिखे हैं। जलन खाँ १८ या १९ कहता है, इस प्रकार भी कम से कम वही शुक्रवार का दिन पड़ता है। तृतीय: अनुपस्थित व्यक्ति के विरुद्ध गवाही में वल्दियत का बयान सर्वसम्मति से आवश्यक है और हमारे इमाम-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) के मज़हब में तो दादा का नाम भी ज़रूरी है जब सिर्फ वल्दियत पहचान के लिए काफ़ी न हो, और यही सही है। आलमगीरी में है: "मृत या अनुपस्थित पर गवाही के लिए ज़रूरी है कि गवाह मृत और अनुपस्थित का नाम, उनके पिता का नाम और उनके दादा का नाम ज़िक्र करें और इमाम अबू यूसुफ के कौल (कथन) पर सिर्फ बाप का ज़िक्र काफ़ी है, ज़ख़ीरा में यूँ ही ज़िक्र है और सही यह है कि दादा की तरफ निस्बत (सम्बन्ध) करना ज़रूरी है, इसी तरह बहरुल राइक़ में है।" (अनु.) यहाँ वल्दियत के बयान को दरकिनार करते हुए, जलन खाँ, छन्नू और शैदा अली के सम्बन्ध में, अमजद हुसैन खाँ नोशा खाँ की वल्दियत जानने से ही इनकार करता है। न ही मशहूर अभियुक्तों को उनके सामने लाकर शिनाख्त कराई गई, ऐसी अज्ञात गवाही अधूरी और दोषपूर्ण है। चतुर्थ: चपरासी कहता है गवाहों की ज़बानी मालूम हुआ कि ज़मानतदार शहर में हैं, यह सुनी-सुनाई बात है और उन अपवादों में से नहीं है जिनमें ऐसी गवाही स्वीकार्य है।

---

१ फ़तावा हिंदिया, किताबुश शहादत, अध्याय ३, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, ३/४५9 पृष्ठ ६७४/७१५

گئے ہوں گے یا قلعہ کو، مذکورہ نے سمن نوشہ خاں کے گھر پر چسپاں کر دیا مظہر چلا گیا (۶) امجد حسین، چپراسی سمن لئے محبوب جان کی مسجد کے پاس ۱۹ روز ہوئے جمعہ کے دن پھر رہے تھے نوشہ خاں کو معلوم ہوا کہ قلعہ کو گئے ہیں مذکورہ نے نوشہ خاں کے مکان پر سمن چسپاں کر دیا، مظہر چلا گیا۔ مظہر نوشہ خاں کی ولدیت نہیں جانتا ان کو پہنچانتا ہے، یہ تمام شہادتیں بوجوہ کثیرہ محض ناکافی ہیں۔ اول: چپراسی ۱۸ دسمبر کو سمن چسپاں کرنا بتاتا ہے اور چھمن اور امجد حسین جمعہ کے دن ۱۸ دسمبر کو شنبہ تھا نہ کہ جمعہ۔ ثانی: یہ شہادتیں چوتھی جنوری کو ہوئیں، حسب بیان چپراسی آویزانی سمن کو اس وقت تک سترہ دن ہوئے تھے، امجد حسین ۱۹ دن کہتا ہے لڈن اور شرف الدین کوئی ۱۹ دن، اور اظہار چھمن کے باضابطہ نقل میں صاف انتیس دن لکھے ہیں، جلن خاں ۱۸ یا ۱۹ کہتا ہے، یوں بھی کم از کم وہی جمعہ کا دن پڑتا ہے۔ ثالث: شہادت علی الغائب میں بیانِ ولدیت بالاتفاق لازم ہے اور ہمارے امام اعظم رضی اللہ تعالٰی عنہ کے مذہب میں تو بیان جد بھی ضرور ہے جبکہ صرف ولدیت موجب معرفت نہ ہو، اور یہی صحیح ہے۔ عالمگیری میں ہے: یحتاج في الشهادة على البيت او الغائب الى تسمية | میت اور غائب پر گواہی کے لئے ضروری ہے کہ گواہ میت اور الشهود اسم الميت والغائب وابيهما وجدهما وعلى قول | غائب کا نام ان کے باپ کا نام اور ان کے دادا کا نام ذکر کریں اور ابی یوسف ذکر الاب یکفی کذا في الذخيرة والصحيح | امام ابو یوسف کے قول پر صرف باپ کا ذکر کافی ہے ذخیرہ میں ان النسبة الى الجد لابد منه كذا فى البحر الرائق1۔ | یوں مذکور ہے اور صحیح یہ ہے کہ دادا کی طرف نسبت کرنا ضروری ہے، یونہی بحر الرائق میں ہے۔ (ت) یہاں بیان ولدیت در کنار جلن خاں، چھنو و شیدا علی کی نسبت، امجد حسین خاں نوشہ خاں کی نسبت ولدیت جاننے ہی سے

منکر ہے، نہ مشہور علیہم کو ان کے سامنے لاکر شناخت کرائی گئی ایسی مجہول گواہی ناقص و مختل ہے۔ رابع: چپراسی کہتا ہے گواہان کی زبانی معلوم ہوا کہ ضامن شہر میں ہیں یہ سماعی بیان ہے اور ان مستثنیات میں نہیں جن میں شہادت بالتسامع مقبول ہے۔

---

1 فتاویٰ ہندیہ کتاب الشہادت الباب الثالث نورانی کتب خانہ پشاور ۴۵۹/۳ Page 674 of 715

Fifth: That too is unknown; which witness, from whose mouth? Sixth: It says the female guarantors said this; how did the peon know that those speaking were the female guarantors? Seventh: The statement of the women that the guarantors are not in town is not contradictory; they might not be at home, they might have gone somewhere, it's true in every way. Eighth: Jalan's statement regarding Chhannu Khan going to Babu's place is hearsay. Ninth: That too is unknown. Tenth: Ladan Khan is narrating the statement of a girl. Eleventh: That too is unknown, and apparently, she is also a minor. Twelfth: Amjad Hussain's statement is also hearsay. Thirteenth: Unknown; it was known about Nosha Khan, how was it known and from whom? Fourteenth: Sharafuddin's statement is completely empty; it only reveals that some guarantors were in the city on December 16th. Fifteenth: In these six testimonies, there are twenty flaws: four in the peon's statement (4, 5, 6, 7), four in Jalan Khan's statement (2, 3, 8, 9), two in Chhamman's statement (2, 4), two in Sharafuddin's statement (14, 2), three in Ladan Khan's statement (11, 10, 2), and five in Amjad Hussain's statement (13, 12, 3, 2, 1).

Setting all these aside, not a single testimony supports the claim. All the testimonies presented in support of the peon's hearsay and unknown statement are alien and unrelated to the claim. The claim is that the guarantors saw the notice or were informed of its content and did not produce the debtor within seven days of the notice so that the demand for the property would fall on them according to the conditions. Which word in the testimonies confirms this? Being in the city two days before on December 16th, as per Sharafuddin's statement, or staying in the city one day before on Friday, as per Chhamman and Amjad Hussain's statements, does not even necessitate being in the city on that very day. The rest amounts to this: before the notice arrived, on that day, the guarantors were seen in the city. When the notice arrived and was pasted on the house, at that time Shaida Ali took the buffalo to the forest, Chhannu Khan was heard to have gone to Babu's place, and it was known that Nosha Khan had gone to the fort. Is there any word more than this in the testimonies? In this, the original objective, i.e., the return of the guarantors from the forest, or from Babu's place, or from the fort to their homes and the content...

फतावा रज़विया खंड 17

पाँचवाँ: वह भी अज्ञात है, कौन गवाह किसकी ज़बानी? छठा: वह कहता है कि महिला ज़ामिनों ने कहा था; चपरासी ने कैसे जाना कि ये कहने वाली महिला ज़ामिन ही हैं? सातवाँ: औरतों का यह कहना कि ज़ामिन शहर में नहीं हैं, इसके क्या प्रतिकूल है; वे घर में नहीं हैं, कहीं चले गए हैं, यह हर तरह से सच है। आठवाँ: जलन का बयान कि छन्नू खान बाबू के यहाँ गए हैं, सुनी-सुनाई (समाई) बात है। नौवाँ: वह भी अज्ञात है। दसवाँ: लडन खान एक लड़की के बयान का वर्णन कर रहा है। ग्यारहवाँ: वह भी अज्ञात है, बल्कि स्पष्ट रूप से वह नाबालिग भी है। बारहवाँ: अमजद हुसैन का बयान भी सुनी-सुनाई बात है। तेरहवाँ: अज्ञात; नौशा खान के बारे में मालूम हुआ, कैसे मालूम हुआ और किससे मालूम हुआ? चौदहवाँ: शरफुद्दीन का बयान बिलकुल खाली है; इससे केवल इतना निकलता है कि कोई ज़ामिन 16 दिसंबर को शहर में थे। पंद्रहवाँ: इन छह गवाहियों में ये बीस दोष हैं: चपरासी के बयान में चार यानी 4, 5, 6, 7; जलन खान के बयान में चार यानी 2, 3, 8, 9; छम्मन के बयान में दो यानी 2, 4; शरफुद्दीन के बयान में दो यानी 14, 2; लडन खान के बयान में तीन यानी 11, 10, 2; और अमजद हुसैन के बयान में पाँच यानी 13, 12, 3, 2, 1।

इन सबको दरकिनार करते हुए, इनमें एक भी गवाही दावे के पक्ष में नहीं है। चपरासी के सुनी-सुनाई और अज्ञात बयान के समर्थन में जितनी गवाहियाँ गुजरीं, वे सब दावे के लिए अजनबी और असंबद्ध हैं। दावा यह है कि ज़ामिनों ने नोटिस देखा या नोटिस की विषय-वस्तु की जानकारी पाई और सूचना मिलने के सात दिनों के भीतर देनदार को पेश नहीं किया ताकि शर्तों के अनुसार माल की मांग उन पर लागू हो जाए। गवाहियों में इसका कौन सा शब्द है? दो दिन पहले 16 दिसंबर को शहर में होना जो शरफुद्दीन के बयान में है, या एक दिन पहले जुमे के दिन शहर में रहना जो छम्मन और अमजद हुसैन के बयान में है, इससे तो खुद उस दिन भी शहर में होना अनिवार्य नहीं होता। बाकी निष्कर्ष इतना ही है कि नोटिस आने से पहले उस दिन ज़ामिन शहर में देखे गए। जब नोटिस आया और घर पर चिपकाया गया, उस समय शैदा अली जंगल में भैंस ले गया था, छन्नू खान के बारे में सुना गया कि वे बाबू के यहाँ गए हैं, नौशा खान के बारे में पता चला कि वे किले गए हैं। क्या गवाहियों में इनसे अधिक कोई शब्द है? इसमें असल उद्देश्य यानी जंगल या बाबू के पास से या किले से ज़ामिनों का लौटकर घर आना और विषय-वस्तु...

خامس: وہ بھی مجہول، کون گواہ کس کی زبانی سادس: کہتا ہے کہ عورات ضامنان نے کہا تھا چپراسی نے کیونکر جانا کہ یہ کہنے والیاں عورات ضامنان ہیں سابع: عورات کا کہنا ضامنوں کے شہر میں نہ ہونے کے کیا منافی، گھر میں نہیں کہیں چلے گئے ہر طرح صادق ہے۔ ثامن: جلن کا بیان کہ چھنو خاں کی نسبت کہ بابو کے یہاں گئے ہیں سماعی ہے تاسع: وہ بھی مجہول عاشر: لڈن خان ایک لڑکی کے بیان کا حاکی ہے حادی عشر: وہ بھی مجہول بلکہ بظاہر نابالغہ بھی ثانی عشر: امجد حسین کا بیان بھی سماعی ہے ثالث عشر: مجہول، نوشہ خاں کا معلوم ہوا کیونکر معلوم ہوا کس سے معلوم ہوا رابع عشر: شرف الدین کا بیان محض خالی ہے اس سے صرف اتنا نکلتا ہے کہ کوئی ۱۶ دسمبر کو ضامن شہر میں تھے خامس عشر: ان چھ گواہیوں میں یہ بیس نقص ہیں، چپراسی کے بیان میں چار یعنی ۴، ۵، ۶، ۷، جلن خاں کے بیان میں چار ۲، ۳، ۸، ۹۔ چھمن کے بیان میں دو ۲، ۴، شرف الدین کے بیان میں دو ۱۴، ۲۔ لڈن خان کے بیان میں تین ۱۱، ۱۰، ۲۔ امجد حسین کے بیان میں پانچ ۱۳، ۱۲، ۳، ۲، ۱۔

ان سب سے قطع نظر کر کے ان میں ایک شہادت بھی موافق دعوٰی نہیں، سماعی و مجہول بیان چپراسی کی تائید میں جتنی گواہیاں گزریں سب مدعا کے اجنبی و بے علاقہ ہیں، مدعا یہ ہے کہ ضامنوں نے نوٹس دیکھا یا مضمون نوٹس پر اطلاع پائی اور وقت اطلاع سے سات دن کے اندر مدیون کو حاضر نہ کیا تاکہ حسب شرائط مطالبہ مال ان پر عائد ہو شہادتوں میں اس کا کون ساحرف ہے، دو دن پہلے ۱۶ دسمبر کو شہر میں ہونا جو بیان شرف الدین میں ہے یا ایک دن پہلے روز جمعہ کو شہر میں رہنا جو بیان چھمن و امجد حسین میں ہے اس سے تو خود اس دن بھی شہر میں ہونا لازم نہیں آتا باقی حاصل اس قدر کہ نوٹس آنے سے پہلے اس دن ضامن شہر میں دیکھے

گئے جب نوٹس آئے اور مکان پر چسپاں ہوئے اس وقت شیداعلی جنگل کو بھینس لے گیا چھنو خان کو سنا کہ بابو کے یہاں گئے ہیں، نوشہ خاں کو معلوم ہوا کہ قلعہ کو گئے ہیں ان سے زیادہ کوئی حرف بھی شہادتوں میں ہے اس میں اصل مقصود یعنی جنگل یا بابو کے پاس یا قلعہ سے ضامنوں کے لوٹ کر مکان پر آنے اور مضمون

Fatawa Razawiya Volume 17

Where is the testimony regarding the notice being received? Does the fact that the notice was posted in a forest, etc., necessarily mean they had to return and find out the contents? Is it not possible that at that very time, the guarantors were out; they met Channo Khan Babu while leaving, Nausha Khan went to the fort, Sheida Ali went to the forest to hand over a buffalo to someone, and after finishing these tasks, they went ahead to wherever they were headed, and returned on the day they claimed to have arrived? Does it not happen thousands of times that a person stops somewhere in the city while leaving? Since this is certainly possible and there is not a single word against it in the testimonies, how can the testimonies be considered in accord with the claim? Therefore, they must be rejected. "Testimony is accepted if it matches the claim, otherwise not." (T). If it is argued that although their return and knowledge of the content, which is the objective, is not proven by testimony, it seems apparent that this is what happened; well, a claim is not proven by "what seems likely." Even if we accept it as apparent, there is a continuous jurisprudential rule: "The apparent (Az-Zahir) is valid as evidence for defense, not for establishing a right (Istihqaq)." (T). Then on what basis can it be made evidence for establishing a claim to property? Undoubtedly, the Sharia ruling is that in the aforementioned case, the guarantors are absolutely absolved of both personal guarantee and financial guarantee. And Allah Almighty knows best.

Issue 283 to 286: From the State of Rampur, sent by Mir Syed Anwar Hussain Sahib through Mirza Nazar Beg, former Deputy Tehsildar of Bareilly, 9th Rabi al-Akhir 1326 AH.

What do the scholars of religion and the muftis of the firm Shariah say regarding this issue: (1) Suretyship with property (Kafalat bil-Maal), i.e., if a person pledges their house for someone else's debt, is this suretyship permissible according to Sharia or not? (2) A lawsuit based on suretyship with property, i.e., on the basis that the surety pledged their house for another's debt; is it legally maintainable in Sharia or not? (3) Zaid took a contract for some property, and Amr, without any request or wish from Zaid, pledged his house as security. In this case, is Amr entitled to receive the amount from Zaid or not? That is, will this guarantee of the amount be considered a donation and favor, or what? (4) When the surety, i.e., the guarantor, pays the money to the creditor in a manner different from what was stated in the deed of suretyship, are they entitled to recover the mentioned amount from the debtor or not? The situation of suretyship is that Zaid took a village on lease.

फ़तावा रज़विया, खंड 17

नोटिस की सूचना मिलने पर गवाही कहाँ है? क्या नोटिस का जंगल आदि में लगाया जाना अनिवार्य रूप से यह आवश्यक बनाता है कि वे वापस आएं और विषय की जानकारी प्राप्त करें? क्या यह संभव नहीं है कि उसी समय ज़मानत देने वाले (ضامن) बाहर जाने वाले हों; जाते समय छन्नू खान बाबू से मिले, नौशा खान किले में गया, शैदा अली जंगल में किसी को भैंस सौंपने गया, और इन कामों से फ़ारिग होकर वैसे ही बाहर चले गए जहाँ जहाँ जाना था, और उसी दिन वापस आए जिस दिन उन्होंने अपना आना बताया? क्या हज़ारों बार ऐसा नहीं होता कि आदमी शहर से निकलते समय शहर में कहीं रुकता हुआ जाए? और जब यह निश्चित रूप से संभव है और गवाहियों में इसके खिलाफ कोई शब्द नहीं है, तो गवाही दावे के अनुकूल कैसे हुई? इसलिए ये गवाहियाँ अस्वीकार्य (वाजिब-उर-रद) हैं। "गवाही तभी स्वीकार की जाएगी जब वह दावे के अनुकूल हो, अन्यथा नहीं।" (त)। यदि यह कहा जाए कि यद्यपि उस दिन उनकी वापसी और विषय की सूचना, जो कि मुख्य उद्देश्य है, गवाही से सिद्ध नहीं है, लेकिन ज़ाहिर तो यही है कि ऐसा ही हुआ होगा; तो "ऐसा हुआ होगा" से दावा सिद्ध नहीं होता। और अगर इसके ज़ाहिर होने को तस्लीम भी कर लें, तो निरंतर फ़िक़ही नियम है कि "ज़ाहिर (प्रतीत होना) बचाव के लिए दलील है, हक़ जताने (इस्तेहक़ाक़) के लिए नहीं।" (त)। फिर किस आधार पर इसे संपत्ति के अधिकार की दलील बनाया जा सकता है? निःसंदेह शरीयत का हुक्म यही है कि उक्त स्थिति में ज़मानत देने वाले (ज़ामिनीन) जान की ज़मानत (ज़मानत नफ़्स) और माल की ज़मानत (ज़मानत माल) दोनों से पूरी तरह मुक्त हैं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 283 से 286: रियासत रामपुर से, प्रेषक मीर सैयद अनवार हुसैन साहब द्वारा मिर्ज़ा नज़र बेग पूर्व नायब तहसीलदार बरेली, 9 रबी-उल-आख़िर 1326 हिजरी।

धर्म के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ़्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि: (1) माल के साथ ज़मानत (कफ़ालत बिल-माल), यानी कोई व्यक्ति किसी के ऋण के बदले में अपना घर गिरवी (मकफ़ूल) रखे, तो क्या यह कफ़ालत शरीयत की दृष्टि से जायज़ है या नहीं? (2) माल की कफ़ालत के आधार पर मुक़दमा, यानी इस आधार पर कि कफ़ील (ज़मानतदार) ने अपना घर दूसरे के ऋण के बदले गिरवी रखा है, क्या शरीयत की दृष्टि से सुनवाई के योग्य है या नहीं? (3) ज़ैद ने किसी संपत्ति का ठेका लिया और अम्र ने बिना ज़ैद के कहे या इच्छा के अपना घर ज़मानत (कफ़ालत) में दे दिया, तो इस स्थिति में क्या अम्र ज़ैद से वह रक़म पाने का हक़दार है या नहीं? यानी रक़म की इस ज़मानत को

दान और अहसान समझा जाएगा या क्या? (4) जब कफ़ील यानी ज़मानतदार, कफ़ालत-नामे में वर्णित अनुबंध के विरुद्ध किसी अन्य तरीके से लेनदार (दाइन) को रुपया चुकाता है, तो क्या वह ऋणी (मदयन) से उक्त रक़म लेने का हक़दार है या नहीं? कफ़ालत की स्थिति यह है कि ज़ैद ने एक गाँव पट्टे (मुस्ताजरी) पर लिया।

نوٹس پر اطلاع ہونے پر شہادت کہاں ہے کیا قبل آویزانی نوٹس جنگل وغیرہ میں ہونا اسے وجوبا مستلزم ہے کہ پلٹ کر بھی آئیں اور مضمون پر اطلاع پائیں کیا ممکن نہیں کہ وہی وقت ضامنوں کے باہر جانے کا ہو، جاتے وقت چھنوں خان بابو سے ملا، نوشہ خاں قلعہ میں گیا، شیدا علی جنگل میں بھینس کسی کو سپرد کرنے گیا، اور ان کاموں سے فارغ ہو کر ویسے ہی باہر جہاں جہاں جانا تھا چلے گئے اور اس روز واپس آئے جس دن وہ اپنا آنا بتاتے ہیں، کیا ہزار بار ایسا نہیں ہوتا کہ آدمی شہر سے جاتے وقت شہر میں کہیں ہوتا جائے، اور جب یہ یقینا ممکن ہے اور شہادتوں میں اس کے خلاف کوئی حرف نہیں تو شہادت موافق دعوی کب ہوئیں لہذا واجب الرد ہیں، الشھادۃ ان وافقت الدعوی قبلت والالا (شہادت اگر دعوی کے موافق ہو تو قبول کی جائے گی ورنہ نہیں ۔ ت) اگر یہ کہئے کہ اگرچہ اس دن ان کی واپسی واطلاع مضمون جو مدعا ہے شہادت سے ثابت نہیں مگر ظاہر تو ہے کہ ایسا ہی ہوا ہو، ہوا ہو سے دعوی ثابت نہیں ہوتا اور اگر اس کا ظاہر ہونا تسلیم بھی کر لیں تو قاعدہ مستمرہ فقہیہ ہے کہ الظاھر یصلح حجۃ للدفع لا للاستحقاق (ظاہر دفاع کے لئے حجت ہے نہ استحقاق کے لئے ۔ ت) پھر کس بنا پر اسے استحقاق مال کی حجت بنا سکتے ہیں لاجرم حکم شرعی یہی ہے کہ ضامنین صورت مذکورہ میں ضمانت نفس وضمانت مال دونوں سے مطلقاً بری ہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۸۳تا۲۸۶: از ریاست رام پور مرسلہ میر سید انوار حسین صاحب بذریعہ مرزا نظر بیگ سابق نائب تحصیلدار بریلی ۹ ربیع الآخر ۱۳۲۶ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ : (۱) کفالت بالمال یعنی کوئی شخص کسی کے مطالبہ میں اپنا مکان مکفول کرے تو یہ کفالت شرعاً جائز ہے یا نہیں ؟ (۲) نالش

بربنائے کفالت بالمال یعنی اس بناء پر کہ کفیل نے اپنا مکان دوسرے کے مطالبہ میں مکفول کیا تو شرعاً قابل سماعت ہے یا نہیں ؟ (۳) زید نے ٹھیکہ کسی حقیت کا لیا اور عمرو نے بلا استدعا خواہش زید کے اپنا مکان کفالت میں دے دیا تو اس صورت میں عمرو مستحق پانے رقم کا زید سے ہے یا نہیں یعنی اس رقم کی ضمانت تبرع اور احسان سمجھی جائے گی یا کیا ؟ (۴) جب کفیل یعنی ضامن خلاف معاہدہ مندرجہ کفالت نامہ کے دیگر نہج پر روپیہ دائن کو ادا کرے تو وہ مستحق لینے رقم مذکور کا مدیون سے ہے یا نہیں ؟ صورت کفالت یہ ہے کہ زید نے ایک موضع مستاجری میں لیا۔

Fatawa Razawiyyah Volume 17

And 'Amr made his house liable for security, and it was written in the deed of security that if any land revenue money remains due from Zaid and he fails to pay, the owner of the locality (village/estate) may realize it by auctioning the pledged property, and I will have no objection to the auctioning of the pledged property. Something remained due from Zaid. When the owner of the locality intended to conduct the auction according to the condition mentioned in the security deed, 'Amr, the owner of the house, did not allow his house to be auctioned against the condition mentioned in the security deed; rather, 'Amr paid the remaining liability of Zaid to the owner of the locality before the auction. Therefore, the payment of this money occurred contrary to the document of security. Explain [the ruling], and you shall be rewarded.

The Answer:

(1) Suretyship for wealth (Kafalat bil-Maal) is certainly permissible, but legally its meaning is that whatever financial demand exists against Zaid is taken upon himself by 'Amr, such that the demand for a single debt is now against both 'Amr and Bakr (the debtor). In *An-Nuqayah* it is stated:

Suretyship (Al-Kafalah) is either for the person, and it is contracted by saying "I am a surety for his person" or "upon me" or "to me". Or it is for wealth, and it is valid even if the object of suretyship is unknown, provided the debt itself is valid. For example, by saying "I am a surety for whatever [debt] you have against him" or "for whatever [liability] may reach you in this sale." (Abridged)

Suretyship is either for the person, and it is contracted with these words: "I have become a surety for his person" or "it is upon my responsibility". Or it is suretyship for wealth, and this is valid despite the object of suretyship being unknown, while the debt is valid. For example, saying: "Whatever wealth of yours is due from so-and-so" or "Whatever you receive in this sale, I am the guarantor for it." (Abridged)

This modern and newly invented method prevalent in the world, where a house, shop, land, or property is "submerged" (made liable/pledged) against someone's demand, whether it's against oneself or another, so that they may realize their demand from it, and they call this property "Makfool" (pledged) or "Mustaghraq" (submerged). Even though the property remains in the possession of the owner, from

that time they consider the owner prohibited from transfer-related actions like sale and gift, and if he does so, they consider it void, and they claim the creditor has the right to take it back. All of this is sheer innovation and invention in the Sharia, and a false and rejected desire. Legally, no right of the creditor ever attaches to this property, nor can the owner be prohibited from selling or gifting it. For the authentication of debt, the Pure Sharia has prescribed only two contracts: Suretyship (Kafalah) and Pledge (Rahn). That this is not a Rahn is obvious, because Rahn...

---

1 Mukhtasar al-Wiqayah fi Masa'il al-Hidayah (al-Nuqayah), Kitab al-Kafalah, Nur Muhammad Karkhana Tijarat Kutub, Karachi, p. 123-124.

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

और 'अम्र ने अपना घर ज़मानत में मस्तग़रक (शामिल) कर दिया और ज़मानत नामे में यह लिखा कि अगर ज़ैद के ज़िम्मे मालगुज़ारी का रुपया बाक़ी रह जाए और वह अदा न करे, तो मौज़ा (इलाक़े) का मालिक ज़मानत वाली जायदाद को नीलाम करके अपना मतालबा (मांग) वसूल कर ले, मुझे ज़मानत वाली जायदाद के नीलाम में कोई आपत्ति नहीं होगी। ज़ैद के ज़िम्मे कुछ बाक़ी रहा। जब मौज़ा के मालिक ने ज़मानत नामे में दर्ज शर्त के अनुसार नीलाम करने का इरादा किया, तो घर के मालिक 'अम्र ने ज़मानत में दर्ज शर्त के ख़िलाफ़ अपना घर नीलाम नहीं होने दिया, बल्कि ज़ैद की बाक़ी ज़िम्मेदारी 'अम्र ने नीलाम से पहले ही मौज़ा के मालिक को अदा कर दी। इस वजह से इस रुपये की अदायगी ज़मानत के दस्तावेज़ के ख़िलाफ़ हुई। बयान फ़रमाएं और सवाब पाएं।

जवाब:

(1) कफ़ालत बिल-माल (धन की ज़मानत) तो निश्चित रूप से जायज़ है, लेकिन शरीअत में इसका अर्थ यह है कि ज़ैद का जो वित्तीय मतालबा हुआ, 'अम्र उसे अपने ज़िम्मे ले ले, इस तरह कि एक माल का मतालबा 'अम्र और बक्र (ज़ैद) दोनों के ज़िम्मे हो जाए। 'नक़ाया' में है:

कफ़ालत (ज़मानत) या तो व्यक्ति (नफ़्स) की होती है, और यह इन शब्दों से संपन्न होती है: "मैं उसके नफ़्स का कफ़ील बना हूँ" या "मुझ पर है" या "मेरी ओर है"। या यह माल की होती है, और यह मक़फ़ूल (जिस चीज़ की ज़मानत दी जाए) के अज्ञात होने के बावजूद सही हो जाती है, बशर्ते कि ऋण सही हो। जैसे कि कहे: "मैं उसका ज़मानतदार हूँ जो तुम्हारा उस पर बकाया है" या "जो कुछ तुम्हें इस बिक्री में प्राप्त होगा।" (संक्षिप्त)

कफ़ालत या तो नफ़्स की होती है और वह इन लफ़्ज़ों से मुनअक़िद होती है कि "मैं इसके नफ़्स का कफ़ील बना हूँ" या "वो मेरे ज़िम्मे" या कफ़ालत माल की होती है और ये माल-ए-मक़फ़ूल के मजहूल होने के बावजूद सही हो जाती है जबकि दैन (ऋण) सही हो मसलन यूँ कहे कि "जो तेरा माल फ़लां पर है या जो तुझे इस बैअ (बिक्री) में हासिल होगा मैं इसका ज़ामिन हूँ।" (मुल्तक़तन)

यह आधुनिक और नया तरीक़ा जो दुनिया में प्रचलित है कि कोई घर, दुकान, ज़मीन, जायदाद किसी के मतालबा में, चाहे वह अपने ऊपर हो या दूसरे पर, 'मस्तग़रक' (शामिल/गिरवी) कर देते हैं ताकि वह उससे अपना मतालबा वसूल कर सके और उस जायदाद को 'मक़फ़ूल' या 'मस्तग़रक' कहते हैं।

हालाँकि जायदाद मालिक के ही क़ब्ज़े में रहती है, उस समय से मालिक को इसमें बिक्री और दान (हिबा) जैसे हस्तांतरण कार्यों से प्रतिबंधित मानते हैं, और यदि वह ऐसा करे तो उसे बातिल (अवैध) समझते हैं और लेनदार को उसे वापस लेने का अधिकार बताते हैं। यह सब शरीअत में केवल बिदअत (नया अविष्कार) और मनगढ़ंत बात है और बातिल व अस्वीकार्य इच्छा है। शरीअत के अनुसार लेनदार का कोई अधिकार कभी भी इस जायदाद से नहीं जुड़ता, न ही मालिक को इस बिक्री और दान से रोका जा सकता है। पाकीज़ा शरीअत ने ऋण की पुष्टि के लिए केवल दो अनुबंध रखे हैं: कफ़ालत (ज़मानत) और रहन (गिरवी)। इसका रहन न होना तो प्रत्यक्ष है क्योंकि रहन...

---

1 मुख़्तसर अल-विक़ाया फ़ी मसाइल अल-हिदाया (अल-नक़ाया), किताब अल-कफ़ाला, नूर मुहम्मद कारख़ाना तिज़ारत कुतुब, कराची, पृ. 123-124.

اور عمرو نے اپنا مکان ضمانت میں مستغرق کرادیا اور ضمانت نامہ میں یہ لکھا کہ اگر زید کے ذمہ روپیہ باقی مالگزاری کا رہ جائے اور وہ ادانہ کرے تو جائداد مکفولہ سے نیلام جائداد مالک موضع وصول کرلے مجھ کو نیلام جائداد مکفولہ میں کوئی عذر نہ ہوگا زید کے ذمہ کچھ باقی رہے مالک موضع نے بموجب شرط مندرجہ ضمانت نامہ نیلام کرنے کا قصد کیا تو عمرو مالک مکان نے اپنے مکان کو خلاف شرط مندرجہ ضمانت کے نیلام نہ ہونے دیا بلکہ باقیماندہ ذمگی زید عمرو نے قبل نیلام مالک موضع کو دے دیا اس وجہ سے اس روپیہ کا دینا خلاف دستاویز ضمانت کے وقوع میں آیا۔ بینوا توجروا

الجواب:

(۱) کفالت بالمال تو یقینا جائز ہے مگر شرعاً اس کے معنی یہ ہیں کہ زید کا جو مطالبہ مالی عمرو پر ہوا اسے اپنے ذمہ پر لے یوں کہ ایک مال کا مطالبہ عمرو و بکر دونوں کے ذمہ پر ہو، نقایہ میں ہے:

الکفالۃ اما بالنفس و ینعقد بکفلت بنفسہ او علی او الی و اما بالمال فتصح و ان جھل المکفول بہ اذ صح دینہ نحو کفلت بما لك علیه او بما یدرکك في ھذا البیع 1(ملتقطاً)

کفالت یا تو نفس کی ہوتی ہے اور وہ ان لفظوں سے منعقد ہوتی ہے کہ میں اس کے نفس کا کفیل بنا ہوں یا وہ میرے ذمے یا کفالت مال کی ہوتی ہے اور یہ مال مکفول کے مجہول ہونے کے باوجود صحیح ہو جاتی ہے جبکہ دین صحیح ہو مثلاً یوں کہے کہ جو تیرا مال فلاں پر ہے یا جو تجھے اس بیع میں حاصل ہوگا میں اس کا ضامن ہوں۔ (ملتقطاً) (ت)

یہ جدید و محدث طریقہ کہ جہاں میں رائج ہے کہ کوئی مکان دکان زمین جائداد کسی کے مطالبہ میں کہ اپنے اوپر یا دوسرے پر ہو مستغرق کرتے ہیں کہ وہ اس سے اپنا مطالبہ وصول کرے، اور اس جائداد کو مکفول یا مستغرق کہتے ہیں اور بانکہ جائداد قبضہ مالک ہی میں رہتی ہے اس وقت سے مالک کو اس میں تصرفات انتقالیہ بیع و ہبہ سے ممنوع جانتے ہیں اور اگر کرے تو باطل سمجھتے اور دائن کو اس کے واپس لینے کا اختیار بتاتے ہیں یہ سب محض بدعت و اختراع فی الشریعہ و ہوس باطل و مردود ہے شرعاً اس جائداد سے کوئی حق دائن کا کسی وقت متعلق نہیں ہوتا، نہ مالک اس بیع و ہبہ سے ممنوع ہو سکتا ہے شرع مطہر نے توثیق دین کے لئے صرف دو عقد رکھے ہیں، کفالت و رہن، اس کا رہن نہ ہونا تو بدیہی کہ رہن

---

1 مختصر الوقایہ فی مسائل الہدایہ (النقایہ) کتاب الکفالۃ نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۱۲۳-۲۴

Fatawa Razawiya (Volume 17)

The condition for a pledge (Rahn) is possession by the mortgagee; a pledge without possession is nothing. Allah the Almighty says: "...then a pledge in hand..."[1] (Allah the Almighty has said: then let there be a pledge taken into possession). It is stated in Bada'i by Imam Malik-ul-Ulama:

Arabic	Urdu
Allah the Exalted described the pledge as being possessed, which requires possession to be a condition in it to safeguard His word from being contrary to the fact. Also, because it is a contract of gratuitous gift for the present, it does not provide the legal effect by itself, like other gratuitous acts. Even if they contracted on the condition that the pledge remains in the hands of its owner, the pledge is not valid. So much so that if it is destroyed in his hands, the debt is not dropped. And if the mortgagee intends to take it from his hands to keep it as a held pledge, he does not have the authority to do so.[2]	Allah subhanahu wa ta'ala described the pledge (Rahn) along with being possessed, so this necessitates that possession be a condition in the pledge so that Allah the Almighty's word remains protected from being against reality. And also because this is a gratuitous act and favor, therefore, like other gratuitous acts, it will not be effective by itself. And if both of them contract on the condition that the pledge remains in the possession of the owner, the pledge will not be valid, to the extent that if it is destroyed in the possession of the owner, the debt will not be dropped. And if the mortgagee intends to take it from the owner's possession and keep it confined as a pledge, he does not have the authority to do so. (T)

These people themselves do not call it a pledge nor consider it a pledge; instead, they call it a guarantee (Kafalat). And its being a guarantee is even more void than its being established as a pledge. A guarantee without a guarantor is impossible, and in this invented contract, the property itself becomes the guarantor, not the owner of the property. Often, the owner of the property creates these encumbrances for debts that are upon him, and no person can be his own guarantor for it to be considered a guarantee.

Arabic	Urdu
Joining one liability to another as in Bada'i, al-Hidayah, and general books.	Joining one liability with another liability as is in Bada'i, Hidaya, and common books. (T)

Where are the two liabilities here that one should be joined with the other? Therefore, it is in Sharh Jami' al-Saghir by Sheikh al-Islam Ali al-Isbijabi, then Fasul al-Ustruchi, then Fatawa al-Alamgiri:

Arabic	Urdu
When the debtor says to the creditor, if I do not meet you...	When the debtor says to the creditor that if I... to myself tomorrow

1. The Holy Quran 2/283
2. Bada'i al-Sana'i, Book of Rahn, Chapter: Regarding conditions etc., HM Saeed Company Karachi, 6/135
3. Al-Hidayah, Book of Kafalah, Matba' Yusufi Lucknow, 3/112

फ़तवा रज़विया (खंड 17)

गिरवी (रहन) की शर्त यह है कि वह गिरवी रखने वाले (मुर्तहिन) के कब्जे में हो। बिना कब्जे के कोई चीज़ गिरवी नहीं होती। अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "तो रहन कब्ज़ा किया हुआ हो"[1] (अल्लाह तआला ने फ़रमाया: तो गिरवी चीज़ कब्जे में हो)। इमाम मलिक-उल-उलेमा की 'बदाइ' में है:

अरबी

अल्लाह सुब्हानहु व तआला ने रहन को कब्जे में होने के साथ वर्णित किया है, तो यह इस बात की माँग करता है कि रहन में कब्जा शर्त हो ताकि अल्लाह तआला की बात वास्तविकता के विरुद्ध होने से सुरक्षित रहे। और इसलिए भी कि यह वर्तमान के लिए एक स्वैच्छिक दान (तबर्रुअ) का अनुबंध है, इसलिए यह अन्य स्वैच्छिक दानों की तरह अपने आप में कानूनी प्रभाव नहीं देता। और यदि वे दोनों इस शर्त पर अनुबंध करें कि रहन मालिक के कब्जे में रहेगा, तो रहन मान्य नहीं होगा, यहाँ तक कि यदि वह मालिक के कब्जे में नष्ट हो गया, तो ऋण माफ नहीं होगा। और यदि मुर्तहिन (गिरवी लेने वाला) यह इरादा करे कि वह उसे मालिक के कब्जे से लेकर गिरवी के रूप में अपने पास रखे, तो उसे ऐसा करने का अधिकार नहीं है।[2]

उर्दू

अल्लाह सुब्हानहु व तआला ने रहन को मक़बूज़ (कब्जे में) होने के साथ मौसूफ़ फ़रमाया तो यह इस बात का मुक़्तज़ी है कि क़ब्ज़ा रहन में शर्त हो ताकि अल्लाह तआला की ख़बर ख़िलाफ़-ए-वाक़े होने से महफ़ूज़ रहे। और इसलिए भी कि यह तबर्रुअ और एहसान है, लिहाज़ा बाक़ी तबर्रुआत की तरह यह ख़ुद मुफ़ीद-ए-हुक्म न होगा। और अगर वो दोनों इस शर्त पर अक़्द करें कि रहन मालिक के क़ब्ज़े में रहेगा तो रहन जाइज़ न होगा यहाँ तक कि अगर वो मालिक के क़ब्ज़े में हलाक हो गया तो दैन (क़र्ज़) साक़ित न होगा। और अगर मुर्तहिन इरादा करे कि वो उस को मालिक के क़ब्ज़े से ले कर बतोर-ए-रहन महबूस रखे तो उस को ऐसा करने का इख़्तियार नहीं। (त)

ये लोग खुद भी इसे न रहन कहते हैं और न रहन समझते हैं, बल्कि इसे ज़मानत (कफ़ालत) कहते हैं। और इसका ज़मानत होना, रहन होने से भी अधिक बातिल (अमान्य) है। बिना ज़मानतदार (कफ़ील) के ज़मानत असंभव है, और इस आविष्कृत अनुबंध में संपत्ति स्वयं ज़मानतदार ठहरती है, न कि संपत्ति का मालिक। अक्सर संपत्ति का मालिक उन ऋणों के लिए ये बोझ (इस्तग़राक़ात) डालता है जो स्वयं उस पर हैं, और कोई भी व्यक्ति अपना स्वयं का कफ़ील नहीं हो सकता कि वह कफ़ालत (ज़मानत) कहलाए।

अरबी	उर्दू
एक दायित्व को दूसरे दायित्व के साथ जोड़ना, जैसा कि बदाइ, हिदाया और आम किताबों में है।	एक ज़िम्मे (दायित्व) को दूसरे ज़िम्मे के साथ मिलाना जैसा कि बदाइ, हिदाया और आम किताबों में है। (त)

यहाँ दो दायित्व कहाँ हैं जो एक-दूसरे से जुड़ें? इसलिए, शैख-उल-इस्लाम अली अल-इस्बिजाबी की 'शरह जामि अल-सग़ीर', फिर 'फ़सूल अल-उस्तरुशी', फिर 'फ़तावा आलमगीरी' में है:

अरबी	उर्दू
जब ऋणी लेनदार से कहे कि यदि मैं तुम्हें न मिलूँ...	जब मतलूब (ऋणी) तालिब (लेनदार) से कहे कि अगर मैं कल अपने आप को...

1. अल-कुरान अल-करीम 2/283
2. बदाइ अस-सनई, किताब अल-रहन, अध्याय: शर्तों के बारे में आदि, एचएम सईद कंपनी कराची, 6/135
3. अल-हिदाया, किताब अल-कफ़ाला, मतबा युसूफ़ी लखनऊ, 3/112

کی شرط قبضہ مرتہن ہے رہن بے قبضہ کوئی شے نہیں قال اللہ تعالی "فرِہٰنٌ مَّقْبُوْضَۃٌ"[1] (اللہ تعالی نے فرمایا: تو رہن قبضہ کیا ہوا ت) بدائع امام ملک العلماء میں ہے:

| وصف سبحانہ و تعالی الرہن بکونہ مقبوضۃ فیقتضی ان یکون القبض شرطا فیہ صیانۃ لخبرہ تعالٰی عن الخلف ولانہ عقد تبرع للحال فلا یفید الحکم بنفسہ کسائر التبرعات ولو تعاقد علی ان یکون الرہن فی ید صاحبہ لا یجوز الرہن حتی لو ھلک فی یدہ ولا یسقط الدین ولو اراد المرتہن ان یقبضہ من یدہ لیحبسہ رہنا لیس لہ ذلک[2] ۔ | اللہ سبحانہ و تعالی نے رھن کو مقبوض ہونے کے ساتھ موصوف فرمایا تو یہ اس بات کا مقتضی ہے کہ قبضہ رھن میں شرط ہو تاکہ اللہ تعالی کی خبر خلاف واقع ہونے محفوظ رہے اور اس لئے بھی کہ یہ تبرع واحسان ہے لہٰذا باقی تبرعات کی طرح یہ خود مفید حکم نہ ہوگا، اور اگر وہ دونوں اس شرط پر عقد کرے کہ رہن مالک قبضہ میں رہے گا تو رہن جائز نہ ہو گا یہاں تک کہ اگر وہ مالک کے قبضہ میں ہلاک ہو گیا تو دین ساقط نہ ہو گا، اور اگر مرتہن ارادہ کرے کہ وہ اس کو مالک کے قبضہ سے لے کر بطور رہن محبوس رکھے تو اس کو ایسا کرنے کا اختیار نہیں۔ (ت) |

یہ لوگ خود بھی اسے نہ رہن کہتے ہیں نہ رہن سمجھتے بلکہ کفالت اور اس کا کفالت ہونا رہن ٹھہرنے سے بھی باطل تر ہے کفالت بے کفیل محال اور س عقد مخترع میں نفس جائیداد کفیل ٹھہرتی ہے نہ مالک جائیداد اکثر یہ استغراقات صاحب جائدادان دیون میں کرتا ہے جو خود اس پر ہیں اور کوئی شخص خود اپنا کفیل نہیں ہو سکتا کہ کفالت ہے۔

| ضم الذمة الی الذمة کما فی البدائع والہدایة وعامة الکتب۔ | ایک ذمہ کو دوسرے ذمہ کے ساتھ ملانا جیسا کہ بدائع، ہدایہ اور عام کتابوں میں ہے۔ (ت) |

یہاں دو ذمہ کہاں ہیں کہ ایک دوسرے سے ضم ہو، ولہذا شرح جامع الصغیر لشیخ الاسلام علی الاسیجابی پھر فصول استر وشی پھر فتاوی عالمگیری میں ہے:

| اذا قال المطلوب للطالب ان لم اوافک | جب مطلوب طالب سے کہے کہ اگر میں کل اپنے آپ کو |

[1] القرآن الکریم ۲/۲۸۳ [2] بدائع الصنائع کتاب الرہن فصل اما الشرائط الخ ایم سعید کمپنی کراچی ۶/۱۳۵ [3] الہدایہ کتاب الکفالة مطبع یوسفی لکھنئو ۳/۱۱۲

Fatawa-e-Razviya, Volume 17

(Arabic) Bi al-nafsi wa al-raqabati lahuma 'ahdun1.	**Fakhr al-Islam interpreted this to mean: the person or the property for which there is a covenant. (T)**

If being responsible for property is impossible, then the guarantee (kafalah) is void and must be annulled. The innovators call it 'makful' (guaranteed object); this is also their invention, otherwise, it would also be a guarantor (kafil) according to their way, as we explained, and also... There are five elements here: the guarantor (kafil), the guaranteed object (makful), the principal debtor (makful 'anhu), the creditor (makful lahu), and the subject matter of the guarantee (makful bihi). The 'makful bihi' in the sense of the guaranteed content is the responsibility of the guarantor, as just mentioned from the books of the school of law. (As it has just passed with reference to the books of the school of law. T). And in the guarantee of debts, the one from whom the guarantee is taken is the debtor, the one for whom the guarantee is taken is the creditor, and the guaranteed object is that debt. In 'Durr al-Mukhtar' it is stated:

(Arabic) Al-da'inu makfulun wa al-madyunu makfulun 'anhu wa al-nafsu aw al-malu makfulun bihi wa man lazamat-hu al-mutalabatu kafilun2.	**The creditor is called 'makful lahu', the debtor is 'makful 'anhu', the person or property is 'makful bihi', and the one upon whom the demand is incumbent is called the guarantor (kafil). (T)**

It is evident that property is neither a debt, nor a creditor, nor a debtor, nor that legal attribute which a human being possesses as a responsible person. Therefore, it is none of the last four. Necessarily, it must be the guarantor (kafil), and this is false and impossible. If one says that we will consider the owner of the property as the guarantor, and the property is for added assurance so that the creditor may recover from it.

I say, firstly: This is obviously wrong. Mostly, the involvement (of the property owner) is in the debts of the debtor. How can he be called his own guarantor, as mentioned before. (As passed earlier. T).

Secondly: In these involvements, the demand is written against the property itself; the property owner does not engage his own responsibility with it. There is not a single word by which his person becomes responsible. How then can he be a

guarantor? In 'Jami' al-Fusulayn', then 'Bahr al-Ra'iq', and 'Fatawa Zahiriya', then 'Khizanat al-Muftin', and 'Fatawa Nasafi', then 'Muhit', then 'Hindiyya', it is stated:

(Arabic) Qala daynuka al-ladhi 'ala fulanin ana adfa'uhu ilayka ana usallimuhu ilayka ana aqbiduhu la yasiru kafilan ma lam yatakallam	**Someone said to another: "The debt that such-and-such person owes you, I will pay it to you, I will hand it over to you, I will collect it," then by these words...**

1 Radd al-Muhtar, Kitab al-Kafalah, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/249 2 Durr al-Mukhtar, Kitab al-Kafalah, Matba' Mujtabai, Delhi, 2/59

फतवा-ए-रज़विया, जिल्द 17

(अरबी) बिन नफ़्सि वर रक़बाति लहुमा अहदुन1।	**फ़ख़्र अल-इस्लाम ने इसकी व्याख्या इस प्रकार की है कि वह व्यक्ति या वह संपत्ति जिसके लिए प्रतिज्ञा है। (त)**

तो संपत्ति का जिम्मेदार होना असंभव है तो ज़मानत (कफ़ालत) व्यर्थ और निरस्त करने योग्य है। आविष्कारक इसे 'मकफ़ूल' कहते हैं, यह भी उनका आविष्कार है; अन्यथा, वे भी उनके तरीके से ज़मानतदार (कफ़ील) हैं जैसा कि हमने स्पष्ट किया है और भी... यहाँ पाँच चीजें हैं: ज़मानतदार (कफ़ील), ज़मानत की गई चीज़ (मकफ़ूल), मूल ऋणी (मकफ़ूल अन्हु), लेनदार (मकफ़ूल लहु), और ज़मानत का विषय (मकफ़ूल बिही)। 'मकफ़ूल बिही' ज़मानत की गई सामग्री के अर्थ में ज़मानतदार की ज़िम्मेदारी है, जैसा कि अभी मज़हब की किताबों के हवाले से गुज़रा है। (जैसा कि अभी मज़हब की किताबों के हवाले से गुज़रा है। त)। और ऋणों की ज़मानत में, जिससे ज़मानत ली जाती है वह ऋणी है, जिसके लिए ज़मानत ली जाती है वह लेनदार है, और ज़मानत की गई चीज़ वह ऋण है। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

(अरबी) अद-दाइनु मकफ़ूलुन वल-मद्यूनु मकफ़ूलुन अन्हु वन-नफ़्सु अविल-मालु मकफ़ूलुन बिही वमन लज़मत-हूल मुतालबातु कफ़ीलुन2।	**लेनदार को मकफ़ूल लहु, ऋणी को मकफ़ूल अन्हु, व्यक्ति या माल को मकफ़ूल बिही और जिस पर माँग वाजिब हो उसे कफ़ील (ज़मानतदार) कहते हैं। (त)**

यह स्पष्ट है कि संपत्ति न तो ऋण है, न लेनदार, न ऋणी, और न ही वह शरीयत का गुण जो एक उत्तरदायी व्यक्ति के लिए होता है। अतः वह अंतिम चार में से कुछ भी नहीं है। लाजिमी तौर पर वह कफ़ील है, और यह बातिल (अवैध) और नामुमकिन है। अगर कहें कि हम संपत्ति के मालिक को कफ़ील मानेंगे और संपत्ति लेनदार के इत्मीनान के लिए है ताकि वह उससे वसूल कर सके।

मैं कहता हूँ, प्रथम: यह स्पष्ट रूप से गलत है। अक्सर संपत्ति के मालिक का लगाव ऋणी के ऋणों में होता है, उसे अपना कफ़ील कैसे कहा जा सकता है, जैसा कि पहले गुज़रा। (जैसा पहले गुज़रा। त)।

द्वितीय: इन लगावों में मांग संपत्ति पर ही लिखी जाती है, संपत्ति का मालिक अपनी जात को इसमें व्यस्त नहीं करता। कोई भी शब्द ऐसा नहीं होता जिससे उसकी जात जिम्मेदार हो, तो वह कफ़ील कैसे हो सकता है? जामेउल फ़सुलैन, फिर बहरुर राइक और फ़तावा ज़हीरिया, फिर ख़ज़ानतुल मुफ़्तीन और फ़तावा नसफ़ी, फिर मुहीत, फिर हिंदीया में है:

(अरबी) क़ाला दैनुकल लज़ी अला फ़ुलानिन अना अदफ़अुहु इलयका अना उसल्लिमुहु इलयका अना अक़बिज़ुहु ला यसीरु कफ़ीलुन मा लम यतकल्लम	**किसी ने दूसरे से कहा: "तेरा जो फ़लां पर ऋण है, वह मैं तुझे दूँगा, मैं तेरे हवाले करूँगा, मैं उसे वसूल करूँगा," तो इन शब्दों से...**

1 रद्दुल मुहतार, किताबुल कफ़ाला, दार इहया अत-तुरास अल-अरबी, बेरूत, 4/249 2 दुर्रे मुख्तार, किताबुल कफ़ाला, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 2/59

بالنفس والرقبة لهما عهد1 ۔ **فخر الاسلام نے اس کی تفسیر یوں کی کہ وہ نفس یا وہ رقبہ جس کے لئے عہد ہے۔ (ت)**

تو جائیداد کا ذمہ دار ہونا محال تو کفالت لغو و واجب الابطال، مخترعین اسے مکفول کہتے ہیں یہ بھی ان کا اختراع ہے ورنہ وہ بھی ان کے طور پر کفیل ہے کما بینا وایضاً -------- یہاں پانچ چیزیں ہیں، کفیل، مکفول، مکفول عنہ، مکفول لہ، مکفول بہ، مکفول بمعنی مضمون بہ تو ذمہ کفیل ہے کما تقدم آنفا من کتب المذہب (جیسا کہ مذہب کی کتب کے حوالہ سے ابھی گزرا ہے۔ ت) اور کفالت دیون میں مکفول منہ مدیون مکفول لہ دائن مکفول بہ وہ دین، در مختار میں ہے:

الدائن مکفول والمدیون مکفول عنه والنفس او المال مکفول به ومن لزمته المطالبة کفیل2 ۔ **دائن کو مکفول لہ، مدیون کو مکفول عنہ، نفس یا مال کو مکفول بہ اور جس پر مطالبہ لازم ہے اس کو کفیل کہتے ہیں۔ (ت)**

ظاہر ہے کہ جائیداد نہ دین ہے نہ دائن نہ مدیون نہ وہ وصف شرعی کہ انسان مکلف کے لئے ہوتا ہے تو وہ اخیر کے چاروں سے کچھ نہیں، لاجرم کفیل ہے، اور یہ باطل و مستحیل ہے، اگر کہیں کہ ہم صاحب جائیداد کو کفیل مانیں گے اور جائیداد زیادت اطمینان کے لئے ہے کہ دائن اس سے وصول کرے۔

اقول اولاً: یہ بداہتہً غلط ہے غالب استغراق صاحب جائیداد مدیون کے دیون میں ہوتے ہیں اسے کیونکر اپنا کفیل کہا جا سکتا ہے کما تقدم (جیسے پہلے گزرا۔ ت)

ثانیاً: ان استغراقوں میں جائیداد ہی پر مطالبہ لکھا جاتا ہے، صاحب جائیداد اپنا ذمہ اس سے مشغول نہیں کرتا، کوئی حرف ایسا نہیں ہوتا جس سے اس کی ذات ذمہ دار ہو، تو وہ کفیل کیونکر ہو سکتا ہے جامع الفصولین پھر بحر الرائق اور فتاوٰی ظہیریہ پھر خزانہ المفتین اور فتاوٰی نسفی پھر محیط پھر ہندیہ میں ہے:

قال دینك الذی علی فلان انا ادفعه الیك انا اسلمه الیك انا اقبضه لا یصیر کفیلا مالم یتکلم

کسی نے دوسرے کو کہا کہ تیرا جو فلاں پر دین ہے وہ میں تجھے دوں گا، میں تیرے حوالے کروں گا، میں اس کو وصول کروں گا، تو ان الفاظ کے

1 ردالمحتار کتاب الکفالة داراحیاء التراث العربی بیروت ۴۴۹/۴ 2 درمختار کتاب الکفالة مطبع مجتبائی دہلی ۵۹/۲

Fatawa Razawiyyah Volume (17)

With a word indicating commitment	**He will not be a guarantor as long as he does not utter such a word which indicates commitment. (T)**

Thirdly: Even the belief and objective of those very people, who dedicate property for their own or another's debt, and the creditor, having obtained a decree, wants to have him imprisoned for the claim, they will never be heard. And the same answer will be given: that the property is responsible, his person is not responsible. It is clearly stated that he is not the guarantor, but the property is the guarantor. Only the person who is personally responsible can be a guarantor.

Fourthly: Supposing he were to say, "Your debt is upon Amr, I am its guarantor, I am responsible, and I dedicate this property for it," even then the property would undoubtedly remain free. The responsibility of the guarantor would be engaged, and no one could stop him from selling or gifting the property, because restriction on disposal is not a requirement of guarantee (as we have clarified in our fatwa). In fact, the honorable jurists clearly state that even if he guaranteed on the condition that "I will pay the guarantee amount from the price of this house of mine," even then the house is free and its sale is not mandatory. It is in Wajeez Imam Kardari, then Bahr al-Ra'iq, and Fatawa Dhakhira, then in Alamgiriyyah:

Guaranteed a thousand on the condition that he pays it from the price of the house; so if he does not sell it, there is no liability on the guarantor and it is not mandatory for him to sell the house.	**A person became a guarantor for a thousand rupees on the condition that he would pay the thousand rupees from the price of that house, then he did not sell that house, so liability is not mandatory on the guarantor nor is it mandatory for him to sell the house. (T)**

In short, this guarantee and dedication are entirely drowned in invalidity, void, ineffective, and against the truth. No claim whatsoever can be established on this property from them. And if no word was spoken to make his person responsible, as is mostly the case, then both his person and the property are free. And Allah Almighty knows best.

(2) It is not at all worthy of being heard. We have investigated in the answer to the first question that this guarantee is purely invalid; so a claim based on an invalid

foundation is also invalid, and a false claim is not heard, nor is a response mandatory upon the defendant.

---

1 Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Kafalah, Chapter Two, Nurani Kutub Khana Peshawar, 3/257 2 Bahr al-Ra'iq, Kitab al-Kafalah, Chapter Two, H.M. Saeed Company Karachi, 6/218

फतावा रज़विया जिल्द (17)

ऐसे शब्द के साथ जो प्रतिबद्धता का संकेत दे **वह तब तक ज़मानतदार (कफ़ील) नहीं होगा जब तक कि वह ऐसा कोई शब्द न बोले जो प्रतिबद्धता (इल्तिज़ाम) पर संकेत करता हो। (त)**

तीसरा: स्वयं उन लोगों की मान्यता और उद्देश्य भी यही है, जो व्यक्ति अपने या पराए ऋण में संपत्ति को समर्पित (इस्तग़राक़) कर देता है और ऋणदाता डिक्री पाकर मांग के मामले में उसे जेल भेजना चाहता है, तो उसे बिल्कुल नहीं सुना जाएगा। और यही उत्तर दिया जाएगा कि संपत्ति उत्तरदायी है, उसका व्यक्तित्व उत्तरदायी नहीं है। स्पष्ट रूप से कहा गया है कि वह ज़मानतदार नहीं है, बल्कि संपत्ति ज़मानतदार है। उत्तरदायी व्यक्ति ही ज़मानतदार होता है।

चौथा: मान लीजिए कि यदि वह इस प्रकार कहता कि "तुम्हारा ऋण अम्र पर है, मैं उसका ज़मानतदार हूँ, मैं ज़िम्मेदार हूँ और यह संपत्ति इसमें समर्पित करता हूँ," तब भी संपत्ति निस्संदेह स्वतंत्र रहती। ज़मानतदार की ज़िम्मेदारी लगी रहती और कोई भी उसे संपत्ति बेचने या दान करने से नहीं रोक सकता था, क्योंकि उपयोग पर प्रतिबंध ज़मानत की आवश्यकता नहीं है (जैसा कि हमने अपने फ़तवे में स्पष्ट कर दिया है)। बल्कि सम्मानित न्यायविद (फ़ुक़हा) स्पष्ट करते हैं कि यदि उसने स्वयं इस शर्त पर ज़मानत दी कि "मैं अपने इस घर की कीमत से ज़मानत की राशि का भुगतान करूँगा," तब भी घर स्वतंत्र है और इसे बेचना अनिवार्य नहीं है। यह वजीज़ इमाम करदरी, फिर बहर अल-रायिक और फतावा ज़खीरा, फिर आलमगीरिया में है:

एक हज़ार की ज़मानत दी इस शर्त पर कि वह उन्हें घर की कीमत से अदा करेगा; तो यदि वह उसे नहीं बेचता है, तो ज़मानतदार पर कोई दायित्व नहीं है और घर बेचना उसके लिए अनिवार्य नहीं है। **कोई व्यक्ति इस शर्त पर एक हज़ार रुपये का ज़मानतदार बना कि वह उस घर की कीमत से एक हज़ार रुपये अदा करेगा, फिर उसने वह घर नहीं बेचा तो ज़मानतदार पर दायित्व अनिवार्य नहीं है और न ही घर को बेचना उस पर अनिवार्य है। (त)**

संक्षेप में, यह ज़मानत और समर्पण पूरी तरह से अमान्यता में डूबे हुए, शून्य, निष्प्रभावी और सत्य के विरुद्ध हैं। उनसे इस संपत्ति पर कोई भी दावा बिल्कुल स्थापित नहीं हो सकता। और यदि उसने

अपने व्यक्तित्व को उत्तरदायी बनाने का कोई शब्द नहीं कहा है, जैसा कि अक्सर होता है, तो उसका व्यक्तित्व और संपत्ति दोनों स्वतंत्र हैं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

(2) यह बिल्कुल भी सुनवाई के योग्य नहीं है। हमने पहले प्रश्न के उत्तर में शोध किया है कि यह ज़मानत पूरी तरह से शून्य है; इसलिए शून्य आधार पर दावा भी शून्य है, और झूठा दावा नहीं सुना जाता, न ही प्रतिवादी पर उसका उत्तर अनिवार्य है।

---

1 फतावा हिंदिया, किताब अल-कफाला, अध्याय दो, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/ 257 2 बहर अल-रायिक, किताब अल-कफाला, अध्याय दो, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 6/ 218

بلفظ یدل علی الالتزام ساتھ وہ کفیل نہ ہوگا جب تک کوئی ایسا لفظ نہ بولے جو التزام پر دلالت کرتا ہو۔ (ت) 1-

ثالاً: خود ان لوگوں کا مزعوم بھی یہی مقصود بھی یہی، جو شخص اپنے خواہ پرائے دین میں جائداد کا استغراق کر دے اور دائن ڈگری پا کر مطالبہ میں اسے حبس کرانا چاہے ہرگز نہ سنیں گے، اور یہی جواب دیا جائے گا کہ جائداد ذمہ دار ہے، اس کی ذات ذمہ دار نہیں صاف تصریح ہوئی کہ وہ کفیل نہیں جائداد کفیل ہے ذمہ دار ہی کفیل ہوتا ہے۔

رابعاً: بالفرض اگر یوں ہی کہتا کہ تیرا دین عمرو پر آتا ہے اس کا میں کفیل ہوں میں ضامن ہوں میں ذمہ دار ہوں اور یہ جائداد اس میں مستغرق کرتا ہوں جب بھی جائداد بلا شبہ آزاد رہتی کفیل کا ذمہ مشغول ہوتا اور اسے جائداد کے بیع و ہبہ سے کوئی نہ روک سکتا، کہ حجر عن التصرف مقتضائے کفالت نہیں (جیسا کہ ہم نے اپنے فتوٰی میں اس کی وضاحت کر دی ہے۔ت) بلکہ فقہائے کرام تصریح فرماتے ہیں کہ اگر خود اس شرط پر کہ کفالت کی کہ اپنے اس مکان کی قیمت سے زر کفالت ادا کروں گا جب بھی مکان آزاد ہے اور اس کا بیچنا کچھ لازم نہیں، وجیز امام کردری پھر بحر الرائق اور فتاوٰی ذخیرہ پھر عالمگیریہ میں ہے:

ضمن الفا علی ان یؤدیھما من ثمن الدار بذہ فلو یبیعا لا علی الکفیل ولا یلزمہ بیع الدار 2- کوئی شخص ہزار روپے کا ضامن بنا اس شرط پر کہ وہ اس گھر کے ثمن سے ہزار روپے ادا کرے گا پھر اس نے وہ گھر فروخت کیا تو کفیل پر ضمان لازم نہیں اور نہ ہی گھر کو فروخت کرنا اس پر لازم ہے۔ (ت)

بالجملہ یہ کفالت و استغراق سراسر بطلان میں مستغرق و باطل و بے اثر وخلافِ حق ہیں ان سے اس جائداد پر کوئی مطالبہ اصلا قائم نہیں ہوسکتا، اور اگر اپنی ذات کو ذمہ دار بنانے کا کوئی لفظ نہ کہا ہو جیسا کہ اکثر یہی ہے تو اس کی ذات وجائداد دونوں آزاد۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

(۲) ہرگز قابلِ سماعت نہیں ہم جواب سوال اول میں تحقیق کر آئے کہ یہ کفالت باطل محض تو باطل بنیاد پر دعویٰ بھی باطل اور دعویٰ باطلہ مسموع نہیں، نہ مدعاعلیہ پر اس کا جواب واجب،

---

1 فتاویٰ ہندیہ کتاب الکفالہ الباب الثانی نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۵۷ 2 بحر الرائق کتاب الکفالہ الباب الثانی ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۶/ ۲۱۸

Fatawa Razawiya Volume (17)

In Durr al-Mukhtar, it is stated:

| (The judge asks the defendant) about the lawsuit and says that so-and-so has made such-and-such a claim against you, so what do you say (after its validity, and otherwise) if not issued correctly, (no) he does not ask because answering is not obligatory for him. And Allah knows best. | The judge will question the defendant about the claim and say that this person has filed this claim against you, so what do you say about it? Provided that the claim is valid, and if the claim is not filed correctly, the judge will not ask, because providing an answer is not obligatory for the defendant. And Allah Almighty knows best. (T) |

(3) We have already established that this is not a guarantee (kafalah) at all, but purely void. A valid guarantee, when it occurs voluntarily without the permission of the person being guaranteed (makful 'anhu), and neither did they initially ask for the guarantee nor did they give consent before the creditor's (da'in) acceptance in that session—even if they expressed consent after a change of session, or in the same session but after the beneficiary (makful lahu) had already consented—in all these cases, it is purely a gratuitous act (tabarru'). The guarantor (kafeel) has absolutely no right to recover the paid amount from the original debtor (aseel). It is stated in Radd al-Muhtar:

| If he stands as a guarantor by order of the debtor (matlub) on the condition of saying "on my behalf" or "on the basis that it is upon me", then he (the guarantor) may return to him (the debtor) for what he guaranteed, even if he paid something inferior. But if it was without his order, he does not return due to his voluntary act, unless he (the debtor) authorized it in the session, then he returns. [Al-'Imadiyya] (Abridged) | If he became a guarantor by the order of the debtor, provided the debtor said, "Be a guarantor on my behalf" or on the condition that "it is mandatory for me to pay", then the guarantor shall return to the debtor regarding the debt paid, even if he paid something of lesser quality than what was guaranteed. (Meaning) And if he became a guarantor without the debtor's order, he shall not return (to recover from the debtor), because this is a voluntary act and a favor from his side. But if the debtor gave him permission for the guarantee within the same session, then he can return (to recover). (Al-'Imadiyya) (Abridged). (T) |

In Radd al-Muhtar, it is stated:

| i.e., before the claimant's (talib) acceptance. If he stood as a guarantor in the presence of both without his order, and he (the debtor) consented... | That is, before the claimant's acceptance (the debtor gave permission). If both of them (the claimant and... |

1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Da'wa, Mujtabai Press, Delhi, 2/116
2. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Kafalah, Mujtabai Press, Delhi, 2/64

फ़तावा रज़विया जिल्द (17)

दुर-ए-मुख्तार में है:

| (न्यायाधीश प्रतिवादी से) दावे के बारे में पूछता है और कहता है कि अमुक व्यक्ति ने आप पर ऐसा दावा किया है, तो आप क्या कहते हैं (उसकी वैधता के बाद, अन्यथा) यदि सही ढंग से जारी न हुआ हो, (नहीं) वह नहीं पूछता क्योंकि जवाब देना उस पर वाजिब नहीं है। और अल्लाह बेहतर जानता है। | न्यायाधीश प्रतिवादी से दावे के बारे में सवाल करेगा और कहेगा कि इस शख्स ने तुम पर यह दावा किया है तो तुम इसके बारे में क्या कहते हो? बशर्ते कि दावा सही हो और अगर दावा सही तौर पर दायर न हो तो क़ाज़ी सवाल नहीं करेगा क्योंकि उसका जवाब देना प्रतिवादी पर वाजिब नहीं, और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त) |

(3) हम साबित कर आए कि यह कफ़ालत (ज़मानत) ही नहीं महज़ बातिल है। कफ़ालत-ए-सहीहा जबकि बे-इज़्न-ए-मक़फ़ूल अन्हु (जिसकी ज़मानत ली गई) ब-तौर-ए-खुद हो, न अव्वल उसने इससे कफ़ालत को कहा न इसी मज्लिस में दाइन (लेनदार) के क़ुबूल से पहले उस पर रज़ा दी। अगरचे बाद-ए-तब्दील-ए-मज्लिस इज़हार-ए-रज़ा किया या मज्लिस ही में मगर मक़फ़ूल लहू (लेनदार) पहले रज़ा दे चुका तो इन सब सूरतों में वह तबर्रअ (स्वैच्छिक कार्य) महज़ है और कफ़ील (ज़मानतदार) को असील (मूल देनदार) से रक़म-ए-अदा कर्दा लेने का अस्लन इस्तिहक़ाक़ नहीं। रद-उल-मुह्तार में है:

| अगर उसने ऋणी (मतलूब) के हुक्म से ज़मानत ली, इस शर्त के साथ कि वह कहे "मेरी तरफ से" या "इस बिना पर कि वह मुझ पर है", तो वह ज़मानत दी गई चीज़ के लिए उस पर रुजू करेगा, चाहे उसने कमतर अदा किया हो। और अगर उसके हुक्म के बिना हो, तो वह रुजू नहीं करेगा क्योंकि यह उसका एहसान है, सिवाय इसके कि उसने मज्लिस में इजाज़त दी हो, तो वह रुजू करेगा। [अल-इमादिया] (मुख़्तसर) | अगर मतलूब (ऋणी) के अम्र (आदेश) से कफ़ील बना बशर्ते कि मतलूब ने कहा हो कि तू मेरी तरफ से ज़ामिन बन या इस शर्त पर कि वह मुझ पर लाज़िम-उल-अदा है, तो अदा कर्दा दीन (क़र्ज़) के बारे में मतलूब, मतलूब की तरफ रुजू करेगा चाहे उसने मक़फ़ूल बिही से बदतर अदा किया हो (यानी)। और अगर मतलूब के अम्र के बग़ैर कफ़ील बना हो तो रुजू नहीं करेगा, क्योंकि यह उसकी तरफ से तबर्रअ और एहसान है, मगर जब मज्लिस के अंदर ही मतलूब ने उसको कफ़ालत की इजाज़त दे दी हो तो रुजू कर सकता है, (इमादिया) (मुख़्तसर)। (त) |

रद-उल-मुह्तार में है:

| यानी तालिब (लेनदार) के क़ुबूल करने से पहले। पस अगर उसने उन दोनों की मौजूदगी में बग़ैर उसके हुक्म के ज़मानत ली और वह राज़ी हो गया... | यानी तालिब के क़ुबूल करने से पहले (मतलूब ने इजाज़त दी हो) अगर वह दोनों (तालिब व... |

1. दुर-ए-मुख्तार, किताब-उद-दावा, मतबा-ए-मुजतबाई, दिल्ली 2/116
2. दुर-ए-मुख्तार, किताब-उल-कफ़ाला, मतबा-ए-मुजतबाई, दिल्ली 2/64

पृष्ठ 682/715

در مختار میں ہے:

| (یسأل القاضي المدعی علیه) عن الدعوی فیقول انه ادعی علیك کذا فما ذا تقول (بعد صحتها و الا) تصدر صحیحة (لا) یسأل لعدم وجوب جوابه ۱ واللہ تعالی اعلم۔ | قاضی مدعا علیہ سے دعوی کے بارے میں سوال کرے گا اور کہے گا کہ اس شخص نے تجھ پر یہ دعوی کیا ہے تو اس کے بارے میں کیا کہتا ہے بشرطیکہ دعوی صحیح ہو اور اگر دعوی صحیح طور پر دائر نہ ہو تو قاضی سوال نہیں کریگا کیونکہ اس کا جواب دینا مدعا علیہ پر واجب نہیں، اور اللہ تعالیٰ بہتر جانتا ہے۔ (ت) |

(۳) ہم ثابت کر آئے کہ یہ کفالت ہی نہیں محض باطل ہے کفالت صحیحہ جبکہ بے اذن مکفول عنہ بطور خود ہو نہ اول اس نے اس سے کفالت کو کہا نہ اسی مجلس میں دائن کے قبول سے پہلے اس پر رضا دی اگرچہ بعد تبدیل مجلس اظہارِ رضا کیا یا مجلس ہی میں مگر مکفول لہ پہلے رضا دے چکا تو ان سب صورتوں میں وہ تبرع محض ہے اور کفیل کو اصیل سے رقم ادا کردہ لینے کا اصلاً استحقاق نہیں ، ردالمحتار میں ہے :

| لوکفل بأمر المطلوب بشرط قوله عنی او علی انه علی رجع علیه بما ضمن وان ادی اأردأ عینی وان بغیره لا یرجع لتبرعه الا اذا اجاز في المجلس فیرجع عمادیة ۲ (ملتقطاً) | اگر مطلوب کے امر سے کفیل بنا بشرطیکہ مطلوب نے کہا ہو کہ تو میری طرف سے ضامن بن یا اس شرط پر کہ وہ مجھ پر لازم الادا ہے تو ادا کردہ دین کے بارے میں مطلوب مطلوب کی طرف رجوع کرے گا اگرچہ اس نے مکفول بہ سے بدتر ادا کیا ہو (یعنی) اور اگر مطلوب کے امر کے بغیر کفیل بنا ہو تو رجوع

نہیں کرے گا، کیونکہ یہ اس کی طرف سے تبرع واحسان ہے ، مگر جب مجلس کے اندر ہی مطلوب نے اس کو کفالت کی اجازت دے دی ہو تو رجوع کرسکتا ہے، (عمادیہ) (ملتقطاً)۔ (ت) |

ردالمحتار میں ہے:

| ای قبل قبول الطالب فلو کفل بحضرتھما بلا امرہ فرضی | یعنی طالب کے قبول کرنے سے پہلے (مطلوب نے اجازت دی ہو) اگر وہ دونوں (طالب و |

1 درمختار کتاب الدعوی مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۱۱۶ 2 درمختار کتاب الکفالۃ مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۶۴

Fatawa Razawiya, Volume 17

[Box 1] Arabic: Al-matlub awwalan raja'a wa law radia al-talib awwalan li-iltimam al-aqd bihi fala yataghayyaru Qahistani 'an al-Khaniyah wa qad minha aydan 'an al-Siraj - 1. Urdu: In the presence of the debtor (matlub), if one becomes a guarantor (kafeel) without the debtor's order, and then the debtor first expresses consent, the guarantor can turn back to him. However, if the creditor (talib) first expresses consent, the guarantor cannot turn back because the contract is completed with the creditor's consent and now no change is possible (Qahistani referring to Khaniya). We have already mentioned this with reference to Siraj. (T)

I say: (I say) In our view, upon investigation, this detail is also based on the opinion of the two Masters (Imam Abu Hanifa and Imam Muhammad) who consider suretyship incomplete without the creditor's acceptance. According to the fatwa-issued opinion, since suretyship is completed by the guarantor's statement alone even without the creditor's consent, the debtor's subsequent permission will not follow. However, after the completion of the contract, if it occurred voluntarily, it will no longer change. It is stated in Alamgiriyah:

[Box 2] Arabic: Al-kafalah ruknuha al-ijab wa al-qabul 'inda Abi Hanifa wa Muhammad wa huwa qawl Abi Yusuf awwalan thumma raja'a wa qala tatimmu bi-al-kafeel wahdahu kadha fi al-Muhit. Wa rida al-talib laysa bi-shart 'indahu wa huwa al-asahh kadha fi al-Kafi wa huwa al-azhar kadha fi Fath al-Qadir wa fi al-Bazzaziyah wa 'alayhi al-fatwa kadha fi al-Nahr al-Faiq, wa hakadha fi al-Bahr al-Raiq - 2. Urdu: The pillar of suretyship, according to the two Masters, is offer and acceptance, and this was also Imam Abu Yusuf's first opinion. Then he retracted it and said it is completed by the guarantor alone, as mentioned in Al-Muhit. And the creditor's consent is not a condition according to him, and that is the more correct view (Al-Kafi) and the more manifest view (Fath al-Qadir), and it is stated in Al-Bazzaziya that the fatwa is based on this. Similarly, it is in An-Nahr al-Faiq and Al-Bahr ar-Raiq. (T)

Thus, it is proven that only that suretyship necessitates recourse which occurs after the order and command of the debtor. Therefore, all texts and general commentaries have based their reasoning only on the order and did not pay attention to the mentioned detail; rather, it is stated in the texts of Multaqa and Ghurar:

1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Kafala, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 3/272.

2. Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Kafala, Chapter 1, Nurani Kutub Khana Peshawar, 3/252.

फ़तावा रज़विया, खंड 17

[बॉक्स 1] अरबी: अल-मतलूब अव्वलन रजअ व लौ रज़िय अल-तालिब अव्वलन लि-इल्तिमाम अल-अक़द बिही फ़ला यतग़य्यरु क़हस्तानी 'अन अल-ख़ानिया व क़द मिन्हा अयज़न 'अन अल-सिराज - 1. उर्दू: ऋणी (मतलूब) की उपस्थिति में उसके आदेश के बिना ज़मानतदार (कफ़ील) बनने पर, यदि ऋणी पहले सहमति व्यक्त करता है, तो ज़मानतदार उसकी ओर वापस आ सकता है। लेकिन यदि लेनदार (तालिब) पहले सहमति व्यक्त करता है, तो वापस नहीं आया जा सकता क्योंकि लेनदार की सहमति से अनुबंध (अक़द) पूरा हो गया है और अब इसमें कोई परिवर्तन नहीं हो सकता (क़हस्तानी ब-हवाला ख़ानिया)। हम सिराज के हवाले से भी इसका उल्लेख पहले कर चुके हैं। (त)

मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) हमारे पास, शोध के अनुसार, यह विवरण भी दोनों इमामों (इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम मुहम्मद) के मत पर आधारित है कि वे लेनदार की स्वीकृति के बिना ज़मानत को अपूर्ण मानते हैं। मुफ़्ता-बिह (जिस पर फ़तवा हो) मत के अनुसार, जबकि ज़मानत केवल ज़मानतदार के कथन से ही पूर्ण हो जाती है, भले ही लेनदार की सहमति न हो, तो ऋणी की बाद की अनुमति लागू नहीं होगी। लेकिन अनुबंध के पूर्ण होने के बाद, यदि वह स्वेच्छा से हुआ है, तो अब वह नहीं बदलेगा। आलमगीरिया में है:

[बॉक्स 2] अरबी: अल-कफ़ाला रुकनुहा अल-ईजाब व अल-क़बूल 'इंदा अबी हनीफ़ा व मुहम्मद व हुवा क़ौल अबी यूसुफ़ अव्वलन थुम्मा रजअ व क़ाला ततिम्मु बि-अल-कफ़ील वहदहु कज़ा फ़ि अल-मुहीत। व रिज़ा अल-तालिब लैसा बि-शर्त 'इंदहु व हुवा अल-असह् कज़ा फ़ि अल-काफ़ी व हुवा अल-अज़हर कज़ा फ़ि फ़तह अल-क़दीर व फ़ि अल-बज़्ज़ाज़िया व 'अलैहि अल-फ़तवा कज़ा फ़ि अल-नहर अल-फ़ाइक़, व हकाज़ा फ़ि अल-बह्र अल-रईक़ - 2. उर्दू: दोनों इमामों के अनुसार ज़मानत का स्तंभ ईजाब और क़बूल (प्रस्ताव और स्वीकृति) है, और इमाम अबू यूसुफ़ का पहला मत भी यही था। फिर उन्होंने इससे हटते हुए कहा कि ज़मानत अकेले ज़मानतदार से ही पूर्ण हो जाती है, जैसा कि अल-मुहीत में है। और इमाम अबू यूसुफ़ के अनुसार लेनदार की सहमति शर्त नहीं है, और यही अधिक सही है (अल-काफ़ी) और यही अधिक स्पष्ट है (फ़तह अल-क़दीर), और अल-बज़्ज़ाज़िया में है कि इसी पर फ़तवा है। इसी तरह अन-नहर अल-फ़ाइक़ और अल-बह्र अर-रईक़ में भी है। (त)

तो यह सिद्ध हुआ कि केवल वही ज़मानत वापसी का कारण बनती है जो ऋणी के आदेश और निर्देश के बाद हो। इसलिए सभी मूल ग्रंथों और सामान्य व्याख्याओं ने केवल आदेश पर आधारित बात की है और उक्त विवरण की ओर ध्यान नहीं दिया; बल्कि मुल्तका और ग़ुरर के मूल पाठ में कहा गया है:

1. रद अल-मुह्तार, किताब अल-कफ़ाला, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी बेरुत, 3/272.
2. फ़तावा हिंदिया, किताब अल-कफ़ाला, अध्याय 1, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 3/252.

पृष्ठ 715 का 683

فتاوی رضویہ، جلد ہفدہم (۱۷)

[باکس 1] عربی: المطلوب اولاً رجع ولو رضی الطالب اولا لالتتمام العقد به فلا یتغیر قهستاني عن الخانیة وقد منها ایضا عن السراج۔1 اردو: مطلوب) کی موجودگی میں بلا امر مطلوب کفیل بنا پھر مطلوب نے پہلے رضامندی ظاہر کردی تو کفیل اس کی طرف رجوع کر سکتا ہے اور اگر طالب نے پہلے رضامندی ظاہر کردی تو رجوع نہیں کرسکتا کیونکہ طالب کی رضامندی کے ساتھ عقد تمام ہو گیا اب اس میں تبدیلی نہیں ہوسکتی (قہستانی بحوالہ خانیہ) ہم سراج کے حوالے سے بھی اس کا ذکر پہلے کر چکے ہیں۔ (ت)

اقول: (میں کہتا ہوں) ہمارے نزدیک یہ تفصیل بھی عندالتحقیق قول طرفین پر مبنی ہے کہ کفالت بے قبول طالب ناتمام مانتے ہیں قول مفتی بہ پر جبکہ کفالت صرف قول کفیل سے تمام ہوجاتی ہے اگرچہ طالب کی رضانہ ہو تو مطلوب کی اجازت لاحقہ نہ ہوگی مگر بعد تمام عقد اور وہ تبرعا واقع ہو لیا تو اب متغیر نہ ہوگا۔ عالمگیر یہ میں ہے:

[باکس 2] عربی: الکفالة رکنها الایجاب والقبول عند ابی حنیفة ومحمد وهو قول ابی یوسف اولاً ثم رجع وقال تتم بالکفیل وحده کذا في المحیط ورضا الطالب لیس بشرط عنده وهو الاصح کذا في الکافی وهو الاظهر کذا في فتح القدیر وفي البزازیة وعلیه الفتوی کذا في النهر الفائق، وهکذا في البحرالرائق2۔ اردو: کفالت کا رکن طرفین کے نزدیک ایجاب و قبول ہے اور امام ابو یوسف کا پہلا قول بھی یہی ہے پھر آپ نے اس سے رجوع کرتے ہوئے کہا کہ اکیلے کفیل سے ہی کفالت تمام ہو جاتی ہے یونہی محیط میں ہے، اور طالب کی رضامندی شرط نہیں ہے، امام ابو یوسف کے نزدیک اور وہی اصح ہے (کافی) اور ہی اظہر ہے (فتح القدیر) اور بزازیہ میں ہے کہ اس پر فتوی ہے، اسی طرح النہر الفائق اور البحر الرائق میں ہے۔ (ت)

تو ثابت ہوا کہ صرف وہی کفالت موجب رجوع ہوتی ہے جو امر و حکم مدیون کے بعد ہو لہذا جملہ متون و عامہ شروح نے صرف امر پر بنائے کار رکھی اور تفصیل مذکور کی طرف توجہ نہ فرمائی بلکہ متن ملتقٰی و غرر میں فرمایا:

1 رد المحتار کتاب الکفالۃ دار احیاء التراث العربی بیروت ۳/ ۲۷۲ 2 فتاوٰی ہندیہ کتاب الکفالۃ الباب الاول نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۵۲

Fatawa Razawiyya (17)

[Arabic Box 1: If someone stands as a guarantor without the debtor's command, he cannot claim reimbursement from him, even if the debtor permits it after knowing about it. This statement, by its absolute nature, includes both cases: whether knowledge was acquired within the meeting or afterwards. (T)]

[Urdu Text in Box 1: If someone stands as a guarantor without the debtor's command, he cannot claim reimbursement from him, even if the debtor permits it after knowing about it. This statement, by its absolute nature, includes both cases: whether knowledge was acquired within the meeting or afterwards. (T)]

It is stated in Imam Nasafi's Al-Kafi:

[Arabic Box 2: Like when he stood as a guarantor without his command and then he (the debtor) permitted it. Because the guarantee became binding and effective upon him while it was non-reimbursable, so it will not transform into something reimbursable. (T)]

[Urdu Text in Box 2: This ruling applies to standing as a guarantor without the debtor's command and the debtor permitting it later, because the guarantee became binding and effective in a state where it was non-reimbursable. Therefore, it will not transform into something reimbursable. (T)]

Similarly, it is mentioned in 'Ghayah' within 'Durar', and rather it is also in the Fatawa of Imam Qadi Khan himself:

[Arabic Box 3: A man stood as a monetary guarantor for another man without his command, then the one guaranteed (the debtor) approved the guarantee. If the guarantor pays anything, he shall not claim it from the debtor. (T)]

[Urdu Text in Box 3: A person became a monetary guarantor for another without his command; subsequently, the debtor (mukful 'anhu) approved the guarantee. If the guarantor pays the debt on his behalf, he will not seek reimbursement from the debtor. (T)]

In any case, this is the ruling for an actual guarantee. Here, legally, there is no guarantee; these are some meaningless and void words named 'guarantee' and 'immersion' (estaghraq). Even if Zaid had commanded it here, Amr's claim against Zaid for this amount would not hold. For instance, if Zaid had commanded the guarantee by saying, "Become my guarantor for the claim that so-and-so has against

me," or "Take responsibility for me," and then he (the person being addressed) made this house 'immersed' (pledged), without using any word of commitment by which his person would become responsible. Then it is clear that this was not by his command, as he commanded a guarantee, and this is not a guarantee. Even if Zaid himself had told him to 'immerse' (pledge) the house, then this is giving a void ruling, of paying off a debt on his own behalf, whose containment (tadamun) gives the guarantor under command the right to recover from the debtor. It is stated in Al-Hidayah:

---

1 Ghurar al-Ahkam, Matn al-Durar al-Hukkam, Kitab al-Kafalah, Ahmad Kamil Press, Egypt, 2/302. 2 Al-Bahr al-Raiq, Kitab al-Kafalah, H.M. Saeed Company, Karachi, 6/224. 3 Fatawa Qadi Khan, Kitab al-Kafalah, Nawal Kishore, Lucknow, 3/587.

फतावा रजविया (17)

[अरबी बॉक्स 1: यदि कोई ऋणी की आज्ञा के बिना ज़मानतदार बनता है, तो वह उससे (ऋणी से) धन वापसी की मांग नहीं कर सकता, चाहे ऋणी को पता चलने पर उसने ज़मानत की अनुमति दे दी हो। यह कथन अपनी व्यापकता के कारण दोनों स्थितियों को शामिल करता है: चाहे जानकारी सभा के भीतर हुई हो या उसके बाद। (त)]

[उर्दू पाठ बॉक्स 1 में: यदि कोई ऋणी की आज्ञा के बिना ज़मानतदार बनता है, तो वह उससे (ऋणी से) धन वापसी की मांग नहीं कर सकता, चाहे ऋणी को पता चलने पर उसने ज़मानत की अनुमति दे दी हो। यह कथन अपनी व्यापकता के कारण दोनों स्थितियों को शामिल करता है: चाहे जानकारी सभा के भीतर हुई हो या उसके बाद। (त)]

इमाम नसफ़ी की 'अल-काफ़ी' में उल्लेख है:

[अरबी बॉक्स 2: जैसे कि जब उसने उसकी आज्ञा के बिना ज़मानत दी और फिर उसने (ऋणी ने) अनुमति दे दी। क्योंकि ज़मानत उस पर अनिवार्य और प्रभावी हो चुकी थी जबकि वह गैर-वापसी योग्य थी, इसलिए यह वापसी योग्य नहीं बनेगी। (त)]

[उर्दू पाठ बॉक्स 2 में: यह नियम ऋणी के आदेश के बिना ज़मानतदार बनने और बाद में ऋणी द्वारा अनुमति दिए जाने पर लागू होता है, क्योंकि ज़मानत उस स्थिति में अनिवार्य और प्रभावी हो गई थी जब वह वापसी योग्य नहीं थी। इसलिए अब यह वापसी योग्य होने की स्थिति में नहीं बदलेगी। (त)]

इसी तरह 'दुरर' में 'ग़ाया' से है, बल्कि स्वयं इमाम काज़ी ख़ां के फतावा में है:

[अरबी बॉक्स 3: एक व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति के लिए उसकी आज्ञा के बिना धन की ज़मानत दे देता है, फिर जिसके लिए ज़मानत दी गई (ऋणी) उसने ज़मानत को स्वीकार कर लिया। यदि ज़मानतदार कुछ भुगतान करता है, तो वह ऋणी से उसकी मांग नहीं करेगा। (त)]

[उर्दू पाठ बॉक्स 3 में: एक व्यक्ति ऋणी के आदेश के बिना उसके लिए धन का ज़मानतदार बना, फिर मकफ़ूल अन्हु (ऋणी) ने ज़मानत की अनुमति दे दी। यदि ज़मानतदार ने उसकी ओर से ऋण चुका दिया, तो वह मकफ़ूल अन्हु से धन वापसी की मांग नहीं करेगा। (त)]

बहरहाल, यह वास्तविक ज़मानत का नियम है। यहाँ कानूनी तौर पर कोई ज़मानत नहीं है; ये कुछ निरर्थक और शून्य शब्द हैं जिनका नाम 'ज़मानत' और 'इस्तिग्राक़' (मग्न होना/गिरवी) रखा गया है।

यहाँ यदि ज़ैद का आदेश भी होता, तो भी अम्र का ज़ैद पर इस राशि का दावा नहीं पहुँचता। उदाहरण के लिए, यदि ज़ैद ने ज़मानत का आदेश दिया था कि "मुझ पर अमुक का जो दावा है उसमें मेरे ज़मानतदार बन जाओ" या "मेरी ज़िम्मेदारी ले लो", और उसने (संबोधित व्यक्ति ने) इस मकान को 'इस्तिग्राक़' (गिरवी) कर दिया, और प्रतिबद्धता का कोई शब्द नहीं कहा जिससे उसका अपना व्यक्तित्व उत्तरदायी हो। तो यह स्पष्ट है कि यह उसके आदेश से नहीं था क्योंकि उसने ज़मानत का आदेश दिया था और यह ज़मानत नहीं है। और यदि स्वयं ज़ैद ने ही उससे मकान को 'इस्तिग्राक़' करने को कहा था, तो यह एक शून्य आदेश देना है, अपनी ओर से ऋण चुकाने का, जिसके निहित होने (तदमुन) के कारण आदेश के तहत ज़मानतदार को ऋणी से वसूल करने का अधिकार मिलता है। हिदाया में है:

---

1 ग़ुरर अल-अहकाम, मतन अल-दुरर अल-हुक्काम, किताब अल-कफ़ालाह, अहमद कामिल प्रेस, मिस्र, 2/302। 2 अल-बहر अल-राइक़, किताब अल-कफ़ालाह, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 6/224। 3 फतावा काज़ी ख़ां, किताब अल-कफ़ालाह, नवल किशोर, लखनऊ, 3/587।

पृष्ठ 684 का 715

[عربی ڈبہ ۱: وان کفل بلا امرہ لایرجع علیہ وان جازھا بعد العلم اھ وھذا باطلاقہ یشمل العلم فی المجلس و بعدہ۔]

[اردو متن ڈبہ ۱ میں: اگر کوئی حکمِ مطلوب کے بغیر کفیل بنا تو وہ مطلوب کی طرف رجوع نہیں کرسکتا اگرچہ مطلوب نے علم ہونے پر کفالت کی اجازت دے دی ہو اھ یہ عبارت اپنے اطلاق کے ساتھ دونوں صورتوں کو شامل ہے یعنی مجلس کے اندر علم ہوا ہو یا بعد میں۔ (ت)]

کافی امام نسفی میں ہے:

[عربی ڈبہ ۲: مثل ما اذا اکفل بغیر امرہ ثم اجازھا لان الکفالۃ لزمتہ و نفذت علیہ غیر موجبۃ للرجوع فلا تنقلب موجبۃ لہ۔]

[اردو متن ڈبہ ۲ میں: یہ حکم مطلوب کے بغیر کفیل بننے اور بعد میں مطلوب کے اجازت دینے کو شامل ہے کیونکہ کفالت اس حال میں لازم و نافذ ہوچکی ہے کہ وہ غیر موجبِ رجوع ہے لہذا اب موجبِ رجوع ہونے کی طرف منقلب نہیں ہوگی۔ (ت)]

اسی طرح دررمیں غایۃ سے ہے بلکہ خود فتاوٰی امام قاضی خاں میں ہے:

[عربی ڈبہ ۳: رجل کفل عن رجل بمال بغیر امرہ ثم اجاز المکفول عنہ الکفالۃ فادی الکفیل شیئا لا یرجع علی المکفول عنہ۔]

[اردو متن ڈبہ ۳ میں: ایک شخص بغیر حکمِ مطلوب کے اس کی طرف سے کفیل بالمال بنا پھر مکفول عنہ یعنی مطلوب نے کفالت کی اجازت دے دی اور کفیل نے اس کی طرف سے قرض ادا کردیا تو مکفول عنہ کی طرف رجوع نہیں کریگا۔ (ت)]

بہر حال یہ حکم کفالت واقعیہ کا ہے یہاں کہ شرعاً کفالت نہیں کچھ مہمل و باطل لفظ ہیں جن کا نام کفالت و استغراق رکھا ہے یہاں اگر زید کا امر بھی ہوتا عمرو کو زید پر اس رقم کا دعویٰ نہ پہنچتا کہ اگر زید نے کفالت کا امر کیا تھا مثلاً فلاں کا جو مطالبہ مجھ پر ہے اس میں میرا کفیل ہو جایا اس میں میری ضمانت کرلے، اور اسی نے یہ مکان مستغرق کردیا کوئی لفظ التزام کا جس سے اس کی ذات ذمہ دار ہو نہ کہا جب تو ظاہر ہے کہ یہ اس نے یہ مکان مستغرق کردیا کوئی التزام کا جس سے اس کی ذات ذمہ دار ہوں نہ کہا جب تو ظاہر ہے کہ یہ اس کے امر سے نہیں کہ اس نے کفالت کا امر کیا تھا اور یہ کفالت نہیں، اور اگر خود زید نے اس سے استغراق مکان ہی کو کہا تھا تو یہ ایک باطل کا حکم دینا کہ اپنی طرف سے قضائے دین کا جس کے تضمن کے سبب کفالت بالامر کے سبب کفیل کو مکفول عنہ سے وصول کرنے کا اختیار ملتا ہے۔ ہدایہ میں ہے:

---

1 غرر الاحکام متن الدرر الحکام کتاب الکفالۃ مطبعہ احمد کامل مصر ۲/ ۳۰۲ 2 بحر الرائق کتاب الکفالۃ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۶/ ۲۲۴ 3 فتاویٰ قاضیخاں کتاب الکفالۃ نولکشور لکھنؤ ۳/ ۵۸۷

Fatawa Razawiyyah Volume (17)

Arabic Text	Urdu Translation
If someone becomes a guarantor (Kafil) by the order of the debtor (Makful 'anhu), he can reclaim what he paid from him because he paid the debtor's debt by his command[1]. (T)	If someone becomes a guarantor at the request of the debtor, he can reclaim it from him because he paid the debtor's debt by his order. (T)

In such a case, the guarantor has the right to reclaim the amount paid from the creditor (Makful lahu/Da'in) as he made the payment considering himself a guarantor, and this notion was false.

Arabic Text	Urdu Translation
Whoever pays something thinking it is due from him, while it was not due, has the right to reclaim it, as mentioned in Al-Uqud al-Durriyah and others. (T)	If someone gave something to another person thinking that it was mandatory for him to give it, whereas it was not mandatory, he has the right to reclaim it, as mentioned in Al-Uqud al-Durriyah etc. (T)

The debtor does not have any claim over it. It is stated in Fatawa Qazi Khan and Fatawa Hindiyyah:

Arabic Text	Urdu Translation
A man said to another who is not his partner: "Pay a thousand dirhams [to someone]." The person who was ordered to pay cannot reclaim it from the person who ordered it, but he can reclaim it from the recipient (Qabidh), because he did not pay him on a basis that allows the payment[3]. And Allah Almighty knows best. (T)	A man said to another, who is not his partner, pay one thousand rupees to so-and-so, and he paid it; he cannot reclaim it from the commander (Aamir). However, he can reclaim it from the recipient (Qabidh) because the person ordered did not give him the thousand rupees for a reason that would make the giving permissible. And Allah Almighty knows best. (T)

(4) If this guarantee (Kafalat) were valid and permissible and occurred by the order of the debtor (Makful 'anhu), then in the aforementioned case, 'Amr would certainly be able to reclaim that amount from Zaid and would not let it be auctioned. Paying the money is not against the purpose of the guarantee, but rather it is its very requirement. Guarantee is for the assurance of debt, which is achieved, not for the

auctioning of the guarantor's property. In a pledge (Rahn), the right of the pawnee (Murtahin) is attached to the specific item, and therefore he remains prior to all other creditors. The purpose of the pledge is that if the debt is not recovered from the pledgor (Rahin), it should be recovered from its value. Then if the term of the debt...

---

1. Al-Hidayah, Kitab al-Kafalah, Matba' Yusufi Lucknow, 3/119
2. Al-Uqud al-Durriyah, Kitab al-Shirkah, 1/91, and Kitab al-Waqf, 1/227, and Kitab al-Madaniyat, 2/249, Arg Bazar Kandahar Afghanistan
3. Fatawa Qazi Khan, Kitab al-Kafalah, Fasl fi al-Kafalah bi al-Maal, Matba' Yusufi Lucknow, 3/589 Page 685 of 715

अरबी इबारत

अगर कोई मक़फ़ूल अन्हु के हुक्म से ज़ामिन (कफ़ील) बना, तो उसने जो अदा किया वह उससे वापस ले सकता है क्योंकि उसने मक़फ़ूल अन्हु का क़र्ज़ उसी के हुक्म से अदा किया है[1]। (त)

उर्दू अनुवाद

अगर कोई मक़फ़ूल अन्हु के हुक्म से कफ़ील (ज़ामिन) बना तो उसकी तरफ़ रुजू कर सकता है (वापस ले सकता है) क्योंकि उसने मक़फ़ूल अन्हु का क़र्ज़ उसके हुक्म से अदा किया। (त)

ऐसे मामले में कफ़ील को मक़फ़ूल लहू यानी दाइन (क़र्ज़ देने वाले) से अपनी दी हुई रक़म वापस लेने का अख्तियार होता है क्योंकि उसने अपने आप को कफ़ील समझ कर अदायगी की और यह ख़्याल ग़लत था।

अरबी इबारत

जिसने कोई चीज़ यह समझते हुए दी कि वह उस पर लाज़िम (अनिवार्य) है, जबकि वह उस पर लाज़िम न थी, तो उसे उसे वापस लेने का हक़ है, जैसा कि अक़ूद-उद-दुर्रिया वग़ैरह में है। (त)

उर्दू अनुवाद

अगर किसी ने दूसरे को यह समझते हुए कोई चीज़ दी कि वह देना उस पर लाज़िम है जबकि वह लाज़िम न थी, तो उसको वापस लेने का हक़ है जैसा कि अक़ूद-उद-दुर्रिया वग़ैरह में है। (त)

मदियून (क़र्ज़दार) पर इसका कोई दावा नहीं बनता। फ़तावा क़ाज़ी ख़ां और फ़तावा हिन्दिया में है:

अरबी इबारत

एक आदमी ने दूसरे से कहा, जो उसका साझीदार नहीं है: "एक हज़ार दिरहम अदा कर दो।" जिस शख्स को हुक्म दिया गया वह हुक्म देने वाले (आमिर) से वापस नहीं ले सकता, लेकिन वह लेने वाले (क़ाबिज़) से वापस ले सकता है क्योंकि उसने उसे ऐसी वजह से नहीं दिया जिससे देना जाइज़ हो[3]। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

उर्दू अनुवाद

एक शख्स ने दूसरे को, जो उसका शरीक (साझीदार) नहीं है, कहा कि फलां को एक हज़ार रुपये दे दो और उसने दे दिए, तो वह हुक्म देने वाले (आमिर) की तरफ रुजू नहीं कर सकता, अलबत्ता क़ाबिज़ (पाने वाले) की तरफ रुजू कर सकता है क्योंकि मामूर (जिसे हुक्म दिया गया) ने उसको ऐसी वजह से हज़ार रुपये नहीं दिए जिस वजह से देने जाइज़ हों। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

(4) अगर यह कफ़ालत (ज़मानत) सही और जाइज़ होती और मक़फ़ूल अन्हु के हुक्म से होती, तो ज़िक्र की गई सूरत में 'अम्रो ज़रूर वह रक़म ज़ैद से वापस ले सकता और नीलाम न होने देता। और

रुपया अदा कर देना कफ़ालत के मक़सद के खिलाफ नहीं है, बल्कि यही उसका मक़सद है। कफ़ालत क़र्ज़ की तौथीक़ (पुष्टि/सुरक्षा) के लिए होती है, वह हासिल है, न कि कफ़ील की जायदाद नीलाम करने के लिए। गिरवी (रहन) में तो मुर्तहिन (जिसके पास गिरवी रखी गई) का हक़ उस चीज़ से जुड़ा होता है, और इसीलिए वह तमाम अन्य लेनदारों (दाइनों) पर मुक़द्दम (प्राथमिक) रहता है। और रहन (गिरवी) से मक़सद यही है कि अगर राहिन (गिरवी रखने वाले) से क़र्ज़ वसूल न हो तो उसकी क़ीमत से वसूल हो जाए। फिर अगर क़र्ज़ की मीआद (अवधि)...

---

1. अल-हिदाया, किताबुल कफ़ाला, मतबअ युसुफ़ी लखनऊ, 3/119
2. अल-अक़ूद-उद-दुर्रिया, किताबुश शिरका, 1/91, और किताबुल वक्फ़, 1/227, और किताबुल मदानीयात, 2/249, अर्क बाज़ार कंदहार अफ़गानिस्तान
3. फ़तावा क़ाज़ी ख़ान, किताबुल कफ़ाला, फ़स्ल फ़िल कफ़ाला बिल माल, मतबअ युसुफ़ी लखनऊ, 3/589 पेज 685 ऑफ़ 715

عربی عبارت	اردو ترجمہ
ان کفل بامرہ رجع بما ادی علیہ لانہ قضی دینہ بامرہ[1]۔	اگر کوئی مکفول عنہ کے امر سے کفیل بنا تو اس کی طرف رجوع کر سکتا ہے کیونکہ اس نے مکفول عنہ کا قرض اس کے حکم سے ادا کیا۔ (ت)

ایسے امر میں کفیل کو مکفول لہ یعنی دائن سے اپنی دی ہوئی رقم واپس لینے کا اختیار ہوتا ہے کہ اس نے اپنے آپ کو کفیل سمجھ کر ادائیگی کی اور یہ خیال باطل تھا۔

عربی عبارت	اردو ترجمہ
ومن دفع شیئاً ظاناً انہ علیہ ولم یکن علیہ کان لہ ان یسترده کما دینا فی العقود الدریۃ وغیرھا۔	اگر کسی نے دوسرے کو یہ سمجھتے ہوئے کوئی شے دی کہ وہ اس پر لازم ہے حالانکہ وہ لازم نہ تھی تو اس کو واپس لینے کا حق ہے جیسا کہ عقود الدریہ وغیرہ میں ہے۔ (ت)

مدیون پر اس کو کوئی دعوی نہیں پہنچتا، فتاوی قاضی خاں و فتاوی ہندیہ میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
رجل قال لغیرہ ولیس بخلط لہ ادفع لایرجع الف درہم فدفع المامور لایرجع بہ علی الامر لکن یرجع بہ علی القابض لانہ لم یدفع الیہ علی وجہ یجوز دفعہ [3] واللہ تعالٰی اعلم۔	ایک شخص نے دوسرے کو جو اس کا شریک نہیں ہے کہا کہ فلاں کو ہزار روپے دے دو اور اس نے دے دئے تو آمر کی طرف رجوع نہیں کر سکتا البتہ قابض کی طرف رجوع کر سکتا ہے کیونکہ مامور نے اس کو ایسی وجہ سے ہزار روپے

عربی عبارت **اردو ترجمہ**

نہیں دئے جس وجہ سے دینے جائز ہوں اور اللہ تعالیٰ بہتر جانتا ہے۔ (ت)

(۴) اگر یہ کفالت صحیح و جائز ہوتی اور بامر مکفول عنہ وقوع پاتی تو صورت مذکورہ میں ضرور عمرو اس رقم کو زید سے واپس لے سکتا ہے نیلام نہ ہونے دیتا، اور روپیہ ادا کر دینا کوئی خلاف قضیہ کفالت نہیں بلکہ عین اس کا مقتضا ہے کفالت توثیق دین کے لئے ہوتی ہے وہ حاصل ہے نہ کہ نیلام جائیداد کفیل کے لئے، رہن کے تو عین سے حق مرتہن متعلق ہوتا ہے، ولہذا اس میں اور سب دائنوں پر مقدم رہتا ہے اور رہن سے غرض یہی ہے کہ راہن سے دین وصول نہ ہو تو اس کی قیمت سے وصول ہو جائے پھر اگر دین کی میعاد

---

1 الھدایہ کتاب الکفالہ مطبع یوسفی لکھنؤ ۳/ ۱۱۹ 2 العقود الدریۃ کتاب الشرکۃ ۱/ ۹۱ وکتاب الوقف ۱/ ۲۲۷ وکتاب المدانیات ۲/ ۲۴۹ ارگ بازار قندہار افغانستان 3 فتاوی قاضی خان کتاب الکفالۃ فصل فی الکفالۃ بالمال مطبع یوسفی لکھنؤ ۳/ ۵۸۹ Page 685 of 715

...passes away and the pledgee wishes to sell it, the pledger can undoubtedly redeem the pledge by paying the debt. Why would the guarantor be prohibited? However, we have already stated that this is neither a guarantee nor does Zaid have any claim against Amr in this matter, so there is no need for further discussion. And Allah Almighty knows best.

Issue 287: From the city of Bareilly, sent by Hafiz Huzoor Ahmad Khan Munsarim, resident of Rampur State, currently in Bareilly.

Case: On Zaid's request, Amr guaranteed his tenancy (Mustajiri) with his property and got it formally verified. In the first year, Zaid maliciously did not pay the government money and applied for the auction of the guaranteed property. Amr was forced to pay the guarantee amount (according to his share) into the government treasury to release the guaranteed property from auction. Amr then filed a suit in the civil court against Zaid for the recovery of the paid guarantee amount based on the certified guarantee deed and government receipt. The defendant Zaid objects that financial guarantee (Kafalat bil Maal) is Sharia-wise impermissible. According to Section 79 of the Hamidia Law enforced in the state, any person who guarantees a government demand in the revenue department and pays the money to the government has the right to file a claim against the original tenant to recover their deposited money. Can such a guarantee deed be considered valid according to Sharia against the enforced law and state practices? And for the judge of the time to decide against the command of the Sultan of the age, according to the narration in Durr-e-Mukhtar:

[Boxed Text] Left: And if the Sultan commands not to hear a lawsuit, the lawsuit shall not be heard, etc. Right: If the Sultan orders the non-hearing of a claim, then the claim will not be heard, etc. (T) Is it prohibited?

The Answer: Financial guarantee (Kafalat bil Maal) is undoubtedly Sharia-wise permissible. The defendant's excuse is void. Even the guarantee of illegitimate demands is valid. Therefore, the Sharia-wise impermissibility of the current rural tenancy does not prevent the validity of the guarantee. It is stated in Durr-e-Mukhtar:

[Table Text] Left Column: Guarantee of land tax (kharaj) is valid, as are the 'nawaib' (taxes imposed by rulers) even if they are an unjust right, such as the levies of our time; for they are like debts in terms of demand, rather they are above them until they are taken... Right Column: It is valid to guarantee land taxes and similarly

'nawaib' (wealth designated by rulers) even if those 'nawaib' are unjust. Like the royal oppressions of our time, because these are like debts in demand, rather they are more than that...

1. Durr-e-Mukhtar, Kitab al-Qada, Section on Imprisonment, Mujtabai Press Delhi 2/81

...बीत जाए और गिरवी रखने वाला (मुर्तहिन) उसे बेचना चाहे, तो गिरवी रखने वाला (राहिन) कर्ज चुकाकर बिना किसी संदेह के गिरवी छुड़ा सकता है। ज़मानतदार (कफ़ील) क्यों वर्जित होगा? लेकिन हम पहले ही बता चुके हैं कि न तो यह ज़मानत है और न ही यहाँ ज़ैद पर अम्र का कोई दावा बनता है, इसलिए इस पर बहस की कोई आवश्यकता नहीं है। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला २८७: शहर बरेली से, हाफिज़ हुज़ूर अहमद खान मुंसरिम, निवासी रियासत रामपुर, वर्तमान में बरेली द्वारा भेजा गया।

विवरण: ज़ैद के अनुरोध पर, अम्र ने अपनी संपत्ति के साथ उसकी किरायेदारी (मुस्ताजरी) की ज़मानत दी और इसे औपचारिक रूप से सत्यापित कराया। पहले साल में ज़ैद ने दुर्भावना से सरकारी पैसा नहीं दिया और ज़मानती संपत्ति की नीलामी के लिए आवेदन कर दिया। अम्र को मजबूर होकर ज़मानत की राशि सरकारी खजाने में जमा करनी पड़ी ताकि अपनी संपत्ति को नीलामी से छुड़ा सके। अम्र ने ज़मानत नामा और सरकारी रसीद के आधार पर ज़ैद के खिलाफ दीवानी अदालत में भुगतान की गई राशि के लिए मामला दर्ज किया। प्रतिवादी ज़ैद का तर्क है कि वित्तीय ज़मानत (कफ़ालत बिल माल) शरीयत में वर्जित है। राज्य में लागू हामिदिया कानून की धारा ७९ के अनुसार, जो व्यक्ति राजस्व विभाग में सरकारी मांग की ज़मानत देता है और सरकार को पैसा जमा करता है, उसे मूल किरायेदार पर दावा करने और अपनी जमा राशि वापस पाने का अधिकार है। क्या ऐसा ज़मानत नामा शरीयत के अनुसार जायज़ हो सकता है? और समय के काज़ी के लिए सुल्तान-ए-वक़्त के आदेश के खिलाफ फैसला करना, 'दुर्र-ए-मुख्तार' के वर्णन के अनुसार:

[बॉक्स टेक्स्ट] बाएँ और यदि सुल्तान मुक़दमा न सुनने का आदेश दे, तो मुक़दमा नहीं सुना जाएगा, इत्यादि। दाएँ यदि सुल्तान किसी मुक़दमे को न सुनने का आदेश दे, तो वह मुक़दमा नहीं सुना जाएगा, इत्यादि। (त) क्या यह वर्जित है?

जवाब: वित्तीय ज़मानत (कफ़ालत बिल माल) निस्संदेह शरीयत के अनुसार जायज़ है। प्रतिवादी का बहाना व्यर्थ है। यहाँ तक कि नाजायज़ मांगों की ज़मानत भी सही है, तो मौजूदा ग्रामीण किरायेदारी का शरीयत में वर्जित होना ज़मानत की वैधता में बाधक नहीं है। 'दुर्र-ए-मुख्तार' में लिखा है:

[टेबल टेक्स्ट] बायाँ कॉलम: खराज (भूमि कर) की ज़मानत सही है और इसी तरह 'नवाइब' (शासकों द्वारा लगाए गए कर) की भी, भले ही वे एक अन्यायपूर्ण अधिकार हों, जैसे हमारे समय के लेवी; क्योंकि वे मांग के मामले में ऋण के समान हैं, बल्कि उससे भी बढ़कर हैं जब तक कि वे ले नहीं ली जातीं... दायाँ कॉलम: सही है ज़मानत खराज का और इसी तरह नवाइब (शासकों की तरफ से मुकर्रर किया गया माल) का, चाहे वह नवाइब नाहक हो। जैसे हमारे ज़माने के मज़ालिम सुल्तानी, क्योंकि ये मुतालबा में दियून (ऋण) की तरह हैं बल्कि उससे भी ज़्यादा...

1. दुर्र-ए-मुख्तार, किताब अल-क़ज़ा, कैद से संबंधित अध्याय, मुजतबाई प्रेस दिल्ली २/ ८१

पृष्ठ ६८६ का ७१५

گزر جائے اور مر تہم اس کی بیع چاہے راہن بادائے دین بلا شک فک رہن کراسکتا ہے کفیل کیوں ممنوع ہوگا مگر ہم بیان کر آئے کہ نہ یہ کفالت ہے نہ یہاں زید پر عمرو کو کسی قسم کا دعوٰی پہنچتا ہے تو اس سے بحث کی حاجت نہ رہی واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۸۷: از شہر بریلی مرسلہ حافظ حضور احمد خاں منصرم نقل ساکن ریاست رام پور وارد حال بریلی کہ زید کی درخواست پر عمرو نے اس کی ضمانت مستاجری اپنی جائداد سے کرکے باضابطہ تصدیق کرادی زید نے پہلے سال میں بدنیتی سے سرکاری روپیہ ادا نہیں کیا اور جائداد مکفولہ کے نیلام کے درخواست دے دی عمرو نے مجبور ہو کر بقدر داری منجملہ (الہ ما مل ۰۲) زر ضمانت کہ بموجب پر تہ (ماسہ عد) داخل سرکار کرکے جائداد مکفولہ اپنے نیلام سے واگذاشت کرالی اور عمرو کے نام عدالت دیونی میں زر ضمانت ادا کردہ (صمالہ ۱) کی بربنائے ضمانت نامہ مصدقہ وداخلہ سرکاری کی نالش رجوع کردی زید مدعاعلیہ کو یہ عذر ہے کہ کفالت بالمال شرعاً ناجائز ہے اور حکم دفعہ ۷۹ آئیں حامدیہ قانون مجریہ اور عملدرآمد ریاست یہ ہے کہ صیغہ مال میں جو شخص مطالبہ سرکاری کی ضمانت کر کے روپیہ سرکار میں داخل کرے اس کو اصل مستاجر پر دعوٰی رجوع کرکے زر مدخلہ اپنا وصول کرانے کا اختیار حاصل ہے پس ایسے حکم قانون مجریہ اور عمل درآمد ریاست کے مقابلہ میں وہ ضمانت نامہ شرعاً جائز ہوسکتا ہے یا کیا؟ اور قاضی وقت حکم سلطان العصر کے خلاف تجویز فرمانے میں بموجب روایت در مختار:

ولو امر السلطان بعدم سماع الدعوی فلا تسمع الدعوی الخ | اگر سلطان دعوٰی کی عدم سماعت کا حکم دے تو دعوٰی نہیں سنا جائے گا الخ۔ (ت) ممنوع ہے کیا؟

الجواب: کفالت بالمال بلاشبہ شرعاً جائز ہے مدعاعلیہ کا عذر باطل ہے یہاں تک کہ ناجائز مطالبوں کی کفالت صحیح ہے تو مستاجری رائجہ دیہات کا شرعاً ناجائز ہونا صحت کفالت کا مانع نہیں، درمختار میں ہے:

صح ضمان الخراج وکذا النوائب ولو بغی حق کجبایات زماننا فانها فی المطالبة کالدیون بل فوقها حتی لواخذت | صحیح ہے ضمان اخراج کا اور اسی طرح نوائب (حکام کی طرف سے مقررہ کردہ اموال) کا اگرچہ وہ نوائب ناحق ہو۔ جیسے ہمارے زمانے کے مظالم سلطانی، کیونکہ یہ مطالبہ میں دیون کی مثل ہیں بلکہ اس سے

1 درمختار کتاب القضاء فصل فی الحبس مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۸۱

Fatawa Rizvia Volume 17 (17)

[Arabic]: From the farmer, he has the right to recourse to the owner of the land, and upon this is the fatwa. 1 ...are above, to the extent that if such properties are forcibly taken from the farmer, he can refer back to the landowner, and this is the ruling (fatwa). (T)

And since the guarantee was by the order of the one sought (the debtor), as in the case of the question, undoubtedly the guarantor (kafeel) has the authority to collect from the original debtor (asil). It is stated in Tanwir al-Absar:

[Arabic]: If he stood as guarantor by his (debtor's) order, he returns for what he paid. If it was without his order, no. And the guarantor does not demand the money before he pays it on his behalf. 2 (Condensed) If someone became a guarantor by the order of the debtor, he can refer back to the debtor after paying the debt. If he became a guarantor without his order, he cannot refer back. And before paying the debt on behalf of the debtor, the guarantor cannot make a demand from him. (Condensed). (T)

And this is the meaning of the legal text quoted in the question, that he has the authority to sue the tenant and collect the amount entered. Thus, the original purpose of the question regarding the difference between Shariah ruling and law is negated here. And Allah Almighty knows best.

Problem 288: From Moradabad, Mohalla Kasrol, near Maulshri Mosque, sent by Maulvi Hafiz al-Rashid Sahib, 24 Sha'ban 1326 AH. What do the scholars of Islam say regarding this matter: In the State of Rampur, the order of the ruler of the time is that in the villages under government tenancy, whatever property is pledged in guarantee (Makfool) cannot be sold, mortgaged, or gifted. Zaid wrote a deed of gift (hiba nama) for his property which was pledged in guarantee. He gave possession to the recipient (mauhoob-lahu) and recorded in the gift deed that any demand arising on the gifted property would be the responsibility of the recipient. The government accepted this gift deed on the condition that the property remains pledged as before. So, was this gift valid or not? And did that property or the recipient become responsible for that demand? Clarify and you shall be rewarded.

Answer: The gift (hiba) became valid, effective, and complete. "Its issuance was from those qualified for it, in its proper place, and it was completed by the attachment of possession." (Because it was issued by one eligible to gift, regarding a place eligible

for a gift, and became complete with the subsequent possession. T). And that guarantee (kafala) cannot be an obstacle to it because the guarantee of property is essentially nothing until the property is given in possession of the debt against an existing debt. Therefore, property which people nowadays call 'Makfool' or 'Mustaghraq' (encumbered) is, according to Shariah, purely free.

1 Durr al-Mukhtar, Kitab al-Kafala, Matba' Mujtabai, Delhi, 2/66 2 Radd al-Muhtar Sharh Tanwir al-Absar, Kitab al-Kafala, Matba' Mujtabai, Delhi, 2/64 Page 687 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द 17 (17)

[अरबी]: किसान की ओर से, उसे भूमि के मालिक के पास वापस जाने का अधिकार है, और इसी पर फ़तवा है। 1 ...ऊपर हैं, यहाँ तक कि यदि किसान से ऐसी संपत्ति जबरन ली जाती है, तो वह भूमि मालिक की ओर वापस आ सकता है और इसी पर फ़तवा है। (त)

और चूंकि ज़मानत (कफ़ालत) मांगे गए व्यक्ति के आदेश पर थी, जैसा कि प्रश्न की स्थिति में है, तो निस्संदेह ज़मानतदार (कफ़ील) को मूल देनदार (असील) से वसूल करने का अधिकार है। तनवीरुल अबसार में है:

[अरबी]: यदि उसने उसके(देनदार के) आदेश से ज़मानत दी, तो उसने जो भुगतान किया है उसके लिए वह वापस आता है। यदि उसके आदेश के बिना था, तो नहीं। और ज़मानतदार उसकी ओर से भुगतान करने से पहले धन की मांग नहीं करता। 2 (संक्षिप्त) यदि कोई देनदार के आदेश से ज़मानतदार बना, तो वह कर्ज अदा करने के बाद देनदार की ओर वापस आ सकता है। और यदि उसके आदेश के बिना ज़मानतदार बना, तो वह वापस नहीं आ सकता। और देनदार की ओर से कर्ज अदा करने से पहले ज़मानतदार उससे मांग नहीं कर सकता। (संक्षिप्त)। (त)

और सवाल में उद्धृत कानून के पाठ का यही अर्थ है कि उसे किरायेदार पर दावा करके दर्ज की गई राशि वसूल करने का अधिकार है। इस प्रकार, शरीयत के आदेश और कानून के बीच अंतर के बारे में सवाल का मूल उद्देश्य यहाँ समाप्त हो जाता है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसाला 288: मुरादाबाद से, मोहल्ला कसरोल, मौलश्री मस्जिद के पास, प्रेषक मौलवी हफीज़ुर रशीद साहब, 24 शाबान 1326 हिजरी। विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं: रामपुर राज्य के क्षेत्र में समय के शासक का आदेश है कि सरकारी किरायेदारी वाले गाँवों में जो संपत्ति ज़मानत में दी गई हो, उसे बेचा, गिरवी या दान (हिबा) नहीं किया जा सकता। ज़ैद ने अपनी उस संपत्ति का हिबा नामा (दान पत्र) लिख दिया जो ज़मानत में थी, और जिसे दान दिया गया (मौहूब लहू) उसे कब्ज़ा दे दिया। हिबा नामा में यह लिख दिया कि दान की गई संपत्ति पर जो भी मांग निकलेगी, उसकी ज़िम्मेदारी दान लेने वाले की होगी। सरकार ने इस शर्त पर कि संपत्ति पहले की तरह ज़मानत में रहेगी, इस हिबा नामा को मंज़ूर कर लिया। तो क्या यह हिबा जायज़ रहा या नहीं? और क्या वह संपत्ति या दान लेने वाला उस मांग के ज़िम्मेदार हुए या नहीं? बयान करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: हिबा जायज़ और प्रभावी हो गया और पूरा हो गया। "उसका जारी होना उसके योग्य लोगों से, उसके उचित स्थान पर हुआ और कब्ज़ा होने के साथ वह पूरा हो गया।" (क्योंकि वह हिबा के पात्र व्यक्ति द्वारा हिबा के उचित स्थान पर जारी किया गया था और कब्ज़ा होने के साथ पूरा हो गया। त)। और वह ज़मानत (कफ़ालत) उसके लिए बाधा नहीं हो सकती क्योंकि संपत्ति की ज़मानत असल में कुछ भी नहीं है जब तक कि संपत्ति को मौजूदा ऋण के बदले ऋण के कब्ज़े में न दे दिया जाए। इसलिए, जिस संपत्ति को लोग आज कल 'मकफ़ूल' या 'मुस्तग़रक़' (भारग्रस्त) कहते हैं, वह शरीयत के अनुसार पूरी तरह स्वतंत्र होती है।

1 दुर्रे मुख़्तार, किताबुल कफ़ाला, मतबा मुज्तबाई, दिल्ली, 2/66 2 रद्दे मुहतार शरह तनवीरुल अबसार, किताबुल कफ़ाला, मतबा मुज्तबाई, दिल्ली, 2/64 पृष्ठ 687/715

من الاکار فلہ الرجوع علی مالک الارض و علیہ الفتوٰی ۱ فوق ہیں یہاں تک کہ اگر کاشتکار سے ایسے اموال جبراً لئے جائیں تو وہ مالکِ زمین کی طرف رجوع کر سکتا ہے اور اسی پر فتوٰی ہے۔ (ت)

اور کفالت جبکہ بامرِ مطلوب ہو جیسا صورتِ سوال میں ہے تو بلا شبہ کفیل کو اصیل سے وصول کرنے کا اختیار ہے تنویر الابصار میں ہے:

لوکفل بامرہ رجع بما ادی وان بغیرہ لاولا یطالب کفیل بمال قبل ان یؤدی عنہ ۲ (ملتقط) اگر کوئی مطلوب کے حکم سے کفیل بنا تو قرض ادا کرکے مطلوب کی طرف رجوع کر سکتا ہے اور اگر اس کے حکم کے بغیر کفیل بنا تو رجوع نہیں کرسکتا اور مطلوب کی طرف سے قرض ادا کرنے سے پہلے کفیل اس سے مطالبہ نہیں کرسکتا۔ (ملتقط)۔ (ت)

اور یہی مطلب اس قانون کی عبارت منقولہ سوال کا ہے کہ اس کو مستاجر پر دعوٰی کر کے زمرمد خلہ وصول کرنے کا اختیار ہے تو اصل منشا سوال کہ حکمِ شرع و قانون کا اختلاف ہے یہاں منتفی ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۲۸۸: از مرادآباد محلہ کسرول متصل مسجد مولسری مرسلہ مولوی حفظ الرشید صاحب ۲۴ شعبان ۱۳۲۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے کرام اس مسئلہ میں کہ علاقہ ریاست پور میں حاکم وقت کا یہ حکم ہے کہ جو دیہات مستاجری سرکاری میں جائداد ضمانت میں مکفول کرے اسے بیع ورہن وہبہ نہیں کرسکتا زید نے اپنی جائداد کا جو ضمانت میں مکفول تھی ہبہ نامہ لکھ دیا اور قبضہ موہوب لہ کا کرایہ دیا اور ہبہ نامہ میں یہ لکھ دیا کہ جائداد موہوبہ پر جو مطالبہ برآمد ہو ذمہ

موہوب لہ رہے سرکار نے بمنظوری اس امر کے کہ جائداد بدستور مکفول رہے اس ہبہ نامہ کو منظور کرلیا تو یہ ہبہ جائز رہا یا نہیں اور وہ جائداد یا موہوب لہ اس مطالبہ کے ذمہ دار ہوئے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: ہبہ جائز و نافذ تمام ہو گیا الصدور ھا عن اھلھا فی محلھا وقد تمت بلحق القبض (کیونکہ وہ ہبہ کے اہل سے ہبہ کے محل میں صادر ہوا اور قبضہ لاحق ہونے کے ساتھ وہ تمام ہو گیا۔ ت) اور وہ کفالت اس کے لئے مانع نہیں ہو سکتی کہ جائداد کی کفالت اصلاً کوئی چیز نہیں جب تک جائداد کسی دین موجود کے مقابل قبضہِ دین میں نہ دی جائے تو جائداد جسے لوگ آج کل مکفول یا مستغرق کہتے ہیں شرعاً آزاد محض ہوتی ہے۔

۱ درمختار کتاب الکفالہ مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۶۶ ۲ رد مختار شرح تنویر الابصار کتاب الکفالہ مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۶۴ Page 687 of 715

Fatawa Razawiyya Volume 17

The owner has full authority of disposal in it. Furthermore, the condition stipulated in the deed of gift (Hiba Nama) that any claim arising on the gifted property shall be the responsibility of the donee (Mohub Lahu) is clearly a void condition. However, a gift does not become void due to a corrupt condition; rather, the condition itself remains void and ineffective. The donee's acceptance of this gift does not bind him to this corrupt condition, nor does his acceptance in any way constitute an acceptance of suretyship (Kafalat) on its own. Therefore, in the inquired case, the gift is absolutely valid and complete, and both the gifted property and the person of the donee are free and exempt from the state's claim. The correct position is that the meaning of Kafalat (suretyship) in Shariah is to join one's own responsibility with someone else's responsibility regarding a debt, as is the opinion of some, or regarding a claim, as is the most correct opinion. It is stated in Al-Hidayah, Al-Hindiyyah, etc.:

Arabic Text

It is said that it [suretyship] is the joining of one's responsibility to another's responsibility in a claim, and it is said regarding the debt, and the first is more correct [1]. End of quote. I say, what is meant is general, whether the claim is present, as upon a debtor, or expected, as in the guarantee of title (Darak) and others. Thus, in Al-Hindiyyah, from Muhit al-Sarakhsi: If a person says to another, 'Whatever you sell to so-and-so is upon me,' it is permissible because he attributed the suretyship to a cause, which is the transaction. Suretyship attributed to a future time is permissible because of the practice of people in that regard [2]. End of quote. And in it [Al-Hindiyyah] from Al-Kafi: It is valid to condition suretyship on terms, such as saying,

Urdu Translation

One opinion is that suretyship (Kafalat) in debt is joining one's responsibility with another's responsibility, and another opinion is that it is joining one's responsibility with another's responsibility in a claim, and the first opinion is more correct. End of quote. I say, what is meant by 'claim' is general, whether it is present, like on a debtor, or expected, like in the guarantee of title (Daman-e-Darak), etc. In Hindiyyah, referring to Muhit-e-Sarkhasi, it is mentioned that if someone says to another person, 'Whatever you sell to so-and-so, I am responsible for it,' then it is permissible because this is an attribution of Kafalat to the cause of obligation, which is the transaction. And Kafalat attributed to a future time is permissible because people's dealings are current in this manner. End of quote. And in the same [book], it is quoted from Al-Kafi that it is valid to condition Kafalat with

Arabic Text	Urdu Translation
'Whatever you sell to so-and-so is upon me,' and 'Whatever becomes due to you from him is upon me,' and 'Whatever so-and-so usurps from you is upon me [3].'	terms, for example, saying, 'Whatever sale you conduct with so-and-so is binding on me,' 'Whatever right of yours is proven against him is binding on me,' and 'Whatever so-and-so has usurped from you is binding on me.' (T)

[1] Fatawa Hindiyya, Kitab al-Kafala, Chapter 1, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/252

[2] Fatawa Hindiyya, Kitab al-Kafala, Chapter 2, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/256

[3] Fatawa Hindiyya, Kitab al-Kafala, Section 5, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/271

मालिक को इसमें हर प्रकार के अधिकार प्राप्त होते हैं। फिर हिबा नामा (दान पत्र) में जो यह शर्त लगाई गई कि दान की गई संपत्ति पर जो भी दावा निकलेगा उसकी जिम्मेदारी दान पाने वाले (मोहूब लह) पर होगी, यह स्पष्ट रूप से एक अवैध शर्त है। लेकिन एक अवैध शर्त के कारण दान अवैध नहीं हो जाता, बल्कि वह शर्त स्वयं अवैध और निष्प्रभावी रहती है। दान पाने वाले द्वारा इस दान को स्वीकार करना उसे इस अवैध शर्त का पाबंद नहीं बनाता, न ही उसकी यह स्वीकृति किसी भी तरह से स्वतः जमानत (कफ़ालत) की स्वीकृति का प्रभाव रखती है। अतः पूछी गई स्थिति में दान पूरी तरह से सही और पूर्ण है, और दान की गई संपत्ति और दान पाने वाला व्यक्ति दोनों ही रियासत के दावे से मुक्त और स्वतंत्र हैं। सही बात यह है कि शरीयत में कफ़ालत (ज़मानत) का अर्थ ऋण में किसी की ज़िम्मेदारी के साथ अपनी ज़िम्मेदारी मिलाना है, जैसा कि कुछ लोगों का मत है, या दावे में जैसा कि सबसे सही मत है। हिदाया और हिंदिया आदि में लिखा है:

अरबी पाठ

कहा गया है कि यह [ज़मानत] किसी दावे में एक ज़िम्मेदारी को दूसरी ज़िम्मेदारी के साथ जोड़ना है, और यह ऋण के संबंध में भी कहा गया है, और पहला अधिक सही है [1]। समाप्त। मैं कहता हूँ, इसका अर्थ सामान्य है, चाहे दावा वर्तमान हो, जैसे कि ऋणी पर, या अपेक्षित हो, जैसे कि स्वामित्व की गारंटी (दरक) आदि में। अतः अल-हिंदिया में मुहीत अल-सरख़सी के हवाले से है: यदि कोई व्यक्ति दूसरे से कहे, 'जो कुछ तुम फलां को बेचोगे वह मुझ पर लाज़िम है,' तो यह जायज़ है क्योंकि उसने कफ़ालत को एक कारण से जोड़ा है, जो कि व्यापार है। भविष्य के किसी समय के लिए की गई कफ़ालत जायज़ है क्योंकि इस संबंध में लोगों का व्यवहार प्रचलित है [2]। समाप्त। और उसी [अल-हिंदिया] में अल-काफ़ी से उद्धृत है:

उर्दू अनुवाद

एक मत यह है कि ऋण में कफ़ालत ज़िम्मेदारी को ज़िम्मेदारी के साथ मिलाना है, और एक मत यह है कि दावे में ज़िम्मेदारी को ज़िम्मेदारी के साथ मिलाना है, और पहला मत अधिक सही है। समाप्त। मैं कहता हूँ कि दावे से अभिप्राय सामान्य है, चाहे वह वर्तमान हो जैसे ऋणी पर, या संभावित हो जैसे ज़मानत-ए-दरक आदि में। हिंदिया में मुहीत-ए-सरख़सी के हवाले से है कि यदि कोई किसी दूसरे व्यक्ति से कहे कि 'जो तुम फ़लां को बेचोगे वह मुझ पर अनिवार्य है,' तो यह जायज़ है क्योंकि यह कफ़ालत को दायित्व के कारण यानी व्यापार से जोड़ना है। और वह कफ़ालत जिसे भविष्य के किसी समय से जोड़ा जाए, जायज़ है क्योंकि इसमें लोगों का व्यवहार प्रचलित है। समाप्त। और इसी में अल-काफ़ी से

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
शर्तों के साथ कफ़ालत को जोड़ना सही है, जैसे कि कहना, 'जो तुम फलां के साथ व्यापार करोगे वह मुझ पर लाज़िम है,' और 'उस पर जो तुम्हारा हक साबित हो वह मुझ पर लाज़िम है,' और 'जो फलां ने तुमसे छीना (ग़सब किया) वह मुझ पर लाज़िम है [3]।'	उद्धृत है कि कफ़ालत को शर्तों के साथ जोड़ना सही है जैसे कहा कि 'जो तुम फ़लां के साथ बिक्री करो वह मुझ पर अनिवार्य है' और 'तुम्हारा जो अधिकार उस पर सिद्ध हो वह मुझ पर अनिवार्य है' और 'जो फ़लां ने तुमसे छीना वह मुझ पर अनिवार्य है।' (त)

[1] फ़तावा हिंदिया, किताब अल-कफ़ाला, अध्याय 1, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/252 [2] फ़तावा हिंदिया, किताब अल-कफ़ाला, अध्याय 2, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/256 [3] फ़तावा हिंदिया, किताब अल-कफ़ाला, खंड 5, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/271

مالک کو اس میں ہر گونہ تصرف کا اختیار ہوتا ہے پھر ہبہ نامہ میں جو یہ شرط لگائی کہ جائیداد موہوبہ پر جو مطالبہ برآمد ہو ذمہ موہوب لہ رہے ظاہر ہے کہ شرط باطل ہے مگر شرط فاسد سے ہبہ فاسد نہیں ہوتا بلکہ خود وہ شرط باطل و بے اثر رہتی ہے اور موہوب لہ کا اس ہبہ کو قبول کرنا اسے اس شرط فاسد کا پابند نہیں کرتا نہ اس کا یہ قبول کسی طرح بطور خود قبولِ کفالت کا اثر رکھتا ہے پس صورت مستفسرہ میں ہبہ قطعاً صحیح و تمام ہے اور جائیداد موہوبہ اور ذات موہوب لہ دونوں مطالبہ ریاست بری و آزاد ، تو صحیح مقام یہ ہے کہ شرح میں کفالت کے معنی ہیں کسی کے ذمہ سے اپنا ذمہ ملا دینا دین میں جیسے بعض کا قول ہے یا مطالبہ میں جیسا کہ قول اصح ہے ، ہدایہ و ہندیہ وغیرہما میں ہے :

عربی عبارت	**اردو ترجمہ**
قيل هي ضم الذمة الى الذمة في المطالبة و قيل في الدين و الاول اصح انتهى، اقول والمراد اعم عن مطالبة حاضرة كما على مديون او متوقعة كما في ضمان الدرك وغيره ففي الهندية عن محيط السرخسى لو قال لرجل مابايعت فلاناً فهو على جاز لانه اضاف الكفالة الى سبب وهو مبايعة والكفالة المضافة الى وقت في	ایک قول یہ ہے کہ کفالت دین میں ذمہ کو ذمہ کے ساتھ ملانا ہے اور ایک قول یہ ہے کہ وہ مطالبہ میں ذمہ کو ذمہ کے ساتھ ملانا ہے اور قول اول زیادہ صحیح ہے انتہی میں کہتا ہوں مطالبہ سے مراد عام ہے چاہے حاضر ہو جیسے مدیون پر یا متوقع ہو جیسے ضمان درک وغیرہ میں، ہندیہ میں محیط سرخسی کے حوالے سے ہے کہ اگر کسی نے دوسرے شخص سے کہا جو تم فلاں پر بیچوں وہ مجھ پر لازم ہے تو یہ جائز ہے کیونکہ یہ کفالہ کی سبب وجوب یعنی مبایعت کی طرف اضافت ہے اور وہ کفالہ جس کو مستقبل

عربی عبارت	اردو ترجمہ
المستقبل جائزة لتعامل الناس في ذلك [2] اهـ وفيها عن الكافي يصح تعليق الكفالة بالشروط كما لو قال ما بايعت فلاناً فعلي وما ذاب لك عليه فعلى وما غصبك فلان فعلى [3]۔	کے کسی وقت کی طرف منسوب کیا جائے جائز ہوتا ہے اس لئے کہ اس میں لوگوں کا تعامل جاری ہے اھ، اور اسی میں کافی سے منقول ہے کہ کفالہ کو شروط کے ساتھ معلق کرنا صحیح ہے جیسے کہا کہ جو تم فلاں کے ساتھ بیع کرو وہ مجھ پر لازم ہے اور تیرا جو حق اس پر ثابت ہو وہ مجھ پر لازم ہے اور جو فلاں نے تجھ سے غصب کیا وہ مجھ پر لازم ہے۔ (ت)

[1] فتاوٰی ہندیہ کتاب الکفالۃ الباب الاول نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۵۲ [2] فتاوٰی ہندیہ کتاب الکفالۃ الباب الثانی نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۵۶ [3] فتاوٰی ہندیہ کتاب الکفالۃ الفصل الخامس نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۷۱

Fatawa Rizvia (Volume 17)

And it is clear that property itself is not a responsible entity, so for Amr to make his property a security or collateral for Zaid's debt is meaningless. Does Amr himself become a guarantor for that claim or not? If not, then what responsibility has been joined with Zaid's responsibility? And if yes, then the claim is against Amr, not against the property. Therefore, if the guarantor's entire property is destroyed, the guarantor is not relieved of the claim; when he acquires wealth, the claim will be possible. This is contrary to a pledge (Rahn), where the right of the pledgee (murtahin) becomes attached to the specific pledged item (marhoon), so much so that if the pledged item is destroyed while in his possession, the debt is extinguished to the extent of its value. This goes as far as that if on the day of taking possession, the value of the pledged item was equal to or more than the debt, and the pledged item is lost while with him, the entire debt is waived. It is stated in Al-Zakhira and Al-Hindiya:

When the pledged item is destroyed in the hands of the pledgee (murtahin) or in the hands of a neutral party (adl), one looks at its value on the day of possession and at the debt. If its value was equal to the debt, the debt is extinguished by its destruction. If its value was more than the debt, the debt is extinguished, and for the excess, he is an 'amin' (trustee). If its value was less than the debt, the debt is extinguished to the extent of the value of the pledge, and the pledgee returns to the pledgor (rahin) for the remainder of the debt. (T)

If the pledged item is destroyed in the possession of the pledgee or in the possession of a neutral person, then the value of that item and the loan will be examined at the time of possession. If the value of that item is equal to the loan, the loan will be extinguished. If the value is more, then the loan will be extinguished, and the pledgee will be a trustee for the excess. If the value is less than the loan, it will be extinguished equal to the value of the pledge, and for the remaining loan, the pledgee will return to the pledgor. (T)

However, this is in the state where that item is given into the possession of the creditor, and the debt is existing and established, not imaginary or expected.

Allah Almighty says: "Then a pledge in hand"

(Allah Almighty said: Then a pledge taken in possession. T)

It is in Al-Kafi and Al-Hindiya:

A pledge is not valid except for an obligatory debt, whether outwardly and inwardly or only outwardly. As for a non-existent debt, it is not valid.

A pledge is not correct except against an obligatory debt, whether it be apparent or hidden, but it is not correct against an imaginary debt. (T)

1. Fatawa Hindiya, Kitab al-Rahn, Chapter 3, Noorani Kutub Khana Peshawar, 5/447.
2. Al-Quran al-Kareem 2/283.
3. Fatawa Hindiya, Kitab al-Rahn, Chapter 1, Noorani Kutub Khana Peshawar, 5/431.

और यह स्पष्ट है कि संपत्ति स्वयं कोई उत्तरदायी सत्ता नहीं है, इसलिए ज़ैद के ऋण के लिए अम्र द्वारा अपनी संपत्ति को ज़मानत या गिरवी बनाना अर्थहीन है। क्या अम्र स्वयं उस दावे का गारंटर बनता है या नहीं? यदि नहीं, तो ज़ैद की ज़िम्मेदारी के साथ कौन सी ज़िम्मेदारी जोड़ी गई है? और यदि हाँ, तो दावा अम्र के विरुद्ध है, न कि संपत्ति के विरुद्ध। इसलिए, यदि गारंटर की पूरी संपत्ति नष्ट हो जाती है, तो गारंटर दावे से मुक्त नहीं होता है; जब वह धन प्राप्त करेगा, तो दावा संभव होगा। यह गिरवी (रह्न) के विपरीत है, जहाँ गिरवी रखने वाले (मुर्तहिन) का अधिकार विशेष गिरवी रखी वस्तु (मरहून) से जुड़ जाता है, यहाँ तक कि यदि गिरवी रखी वस्तु उसके पास नष्ट हो जाती है, तो उसका मूल्य ऋण के बराबर माफ़ हो जाता है। यह यहाँ तक है कि यदि कब्ज़ा लेने के दिन गिरवी रखी वस्तु का मूल्य ऋण के बराबर या उससे अधिक था, और गिरवी रखी वस्तु उसके पास खो गई, तो पूरा ऋण समाप्त हो गया। अज़-ज़खीरा और अल-हिंदिया में है:

जब गिरवी रखी वस्तु मुर्तहिन के हाथ में या किसी निष्पक्ष व्यक्ति (अदल) के हाथ में नष्ट हो जाती है, तो कब्ज़ा करने के दिन उसके मूल्य और ऋण पर विचार किया जाता है। यदि उसका मूल्य ऋण के बराबर था, तो उसके नष्ट होने से ऋण समाप्त हो जाता है। यदि उसका मूल्य ऋण से अधिक था, तो ऋण समाप्त हो जाता है और अतिरिक्त के लिए वह 'अमीन' (ट्रस्टी) होता है। यदि उसका मूल्य ऋण से कम था, तो गिरवी के मूल्य की सीमा तक ऋण समाप्त हो जाता है, और मुर्तहिन शेष ऋण के लिए राहिन (गिरवी रखने वाले) के पास लौटता है। (त)

अगर मरहून शय मुर्तहिन के कब्ज़े में हलाक हो गई या आदिल के कब्ज़े में हलाक हो गई तो कब्ज़ा करने वाले के पास उस शय की कीमत और कर्ज़ को देखा जाएगा। अगर उस शय की कीमत कर्ज़ की मिसाल है तो कर्ज़ साकित हो जाएगा और अगर कीमत ज़्यादा है तो कर्ज़ साकित हो जाएगा, जो ज़ायद है उसमें मुर्तहिन अमीन होगा, और कीमत कर्ज़ से कम है तो मरहून की कीमत के बराबर साकित हो जाएगा और बाकी कर्ज़ के सिलसिले में मुर्तहिन राहिन की तरफ रुजू करेगा। (त)

हालाँकि, यह उस स्थिति में है जब वह वस्तु लेनदार के कब्ज़े में दे दी जाए, और ऋण मौजूद और स्थापित हो, न कि काल्पनिक या अपेक्षित।

अल्लाह सर्वशक्तिमान कहता है: "तो गिरवी कब्ज़े में ली हुई"

(अल्लाह सर्वशक्तिमान ने कहा: तो रहन कब्ज़ा किया हुआ। त)

अल-काफ़ी और अल-हिंदिया में है:

गिरवी तब तक मान्य नहीं है जब तक कि ऋण अनिवार्य न हो, चाहे वह बाहरी और आंतरिक रूप से हो या केवल बाहरी रूप से। जहाँ तक गैर-मौजूद ऋण का सवाल है, यह मान्य नहीं है।

नहीं सही है रहन मगर दीन वाज़िब के बदले में, चाहे ज़ाहिर हो या बातिन लेकिन दीन मोहूम के बदले में सही नहीं। (त)

1. फ़तावा हिंदिया, किताब अल-रहन, अध्याय 3, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 5/447.
2. अल-कुरान अल-करीम 2/283.
3. फ़तावा हिंदिया, किताब अल-रहन, अध्याय 1, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 5/431.

पृष्ठ 689/715

اور ظاہر ہے کہ جائیداد کوئی صاحب ذمہ نہیں تو زید پر کے مطالبہ میں عمرو کا اپنی جائیداد کو مکفول یا مستغرق کردینا بے معنی ہے عمرو خود اس مطالبہ کا کفیل بنتا ہے یا نہیں، اور اگر نہیں تو وہ کون سازمہ ہے کہ ذمہ زید کے ساتھ ضم ہوا اور اگر ہاں تو مطالبہ ذمہ عمرو پر ہوا نہ کہ جائیداد پر ولہٰذا اگر کفیل کی کلی جائیداد تلف ہو جائے کفیل مطالبہ سے بری نہیں ہوتا جب اس کے پاس مال آئے گا مطالبہ ممکن ہوگا، بخلاف رہن اس میں حق مرتہن خاص شے مرہون سے متعلق ہو جاتا ہے حتی کہ اگر مرہون اس کے پاس ہلاک ہو جائے تو بقدراس کی قیمت کے دین ساقط ہو جاتا ہے یہاں تک کہ اگر روزِ قبضہ مرتہن مرہون دین کے برابر یا اس سے اکثر تھی اور شے مرہون اس کے پاس تلف ہوگئی تو کل دین جاتا رہا، ذخیرہ وہندیہ میں ہے:

اذا ھلک المرھون فی ید المرتھن او فی ید العدل ینظر الی قیمتہ یوم القبض والی الدین فان کانت قیمتہ مثل الدین سقط الدین بھلاکہ وان کانت قیمتہ اکثر من الدین سقط الدین وھو فی الفضل امین وان کانت قیمتہ اقل من من الدین سقط من الدین قدر قیمۃ الرھن ویرجع المرتھن علی الراھن بفضل الدین (ت)

اگر مرہون شے مرتہن کے قبضہ میں ہلاک ہوگئی یا عادل کے قبضہ میں ہلاک ہوگئی تو قبضہ والے دن اس شے کی قیمت اور قرض کو دیکھا جائے گا اگر اس شے کی قیمت قرض کی مثل ہے تو قرض ساقط ہو جائے گا اور اگر قیمت زیادہ ہے تو قرض ساقط ہو جائے گا جو زائد ہے اس میں مرتہن امین ہوگا، اور قیمت قرض سے کم ہے مرہون کی قیمت کے برابر ساقط ہو جائے گا اور باقی قرض کے سلسلہ میں مرتہن راہن کی طرف رجوع کرے گا۔(ت)

مگر یہ اس حالت میں ہے کہ وہ شے دائن کے قبضہ میں دے دی جائے اور دین موجود و متحقق ہو نہ کہ موہوم و متوقع،

قال اللہ تعالٰی "فَرِهَانٌ مَّقْبُوضَةٌ" (اللہ تعالٰی نے فرمایا: تو رہن قبضہ کیا ہوا۔ت)

کافی و ہندیہ میں ہے:

لا یصح الرھن الا بدین واجب ظاھرا وباطنا او ظاھرا فاما بدین معدوم فلا یصح ۔

نہیں صحیح ہے رہن مگر دین واجب کے بدلے میں، چاہے ظاہر ہو یا باطن لیکن دین موہوم کے بدلے میں صحیح نہیں۔(ت)

1 فتاوٰی ہندیہ کتاب الرہن الباب الثالث نورانی کتب خانہ پشاور ۵ / ۴۴۷ 2 القرآن الکریم ۲ / ۲۸۳

3 فتاوٰی ہندیہ کتاب الرہن الباب الاول نورانی کتب خانہ پشاور ۵ / ۴۳۱

Fatawa Razawiyya Volume 17

In this fabricated guarantee and encumbrance where the property is not given into his possession and many times no debt actually exists at the time, because the property could be detained in his favor. Its outcome would be that they compel and prevent the guarantor from exercising ownership over his owned property, even though he himself is not even a debtor; in fact, in many places, the debt does not even exist originally. And legally even a debtor himself, and that too one whose debts encumber and encompass all his properties, is not prohibited from any owner-like disposal in his own property. So much so that according to our Imam-e-Azam (Radi Allahu Ta'ala Anhu), if a creditor files a lawsuit (stating that this person is destroying his property, so the ruler should prevent him from disposal) and the judge accepts their lawsuit and issues a final prohibitory order, even then he will not be prohibited fundamentally. The property he gifts will be gifted, if he sells it will be sold, if he endows (waqf) it will be endowed. The creditors who have been given the right of lien and pursuit should seek remedy through those methods. His disposals, which arise from his legal capacity, cannot be stopped by anyone's prevention. And according to the Sahibayn (Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad), although he can be prohibited from some disposals only in his existing property when the debt encompasses his assets, but when? When, after the lawsuit of the creditors, the judge issues a decree for his prohibition and notification of this decree reaches him as well. Before that, by consensus, even he is not prohibited in any way. It is stated in al-Muhit and al-Alamgiriyya:

[Table Content]

[Arabic Section]: Al-Hajru bisababi al-dayni an yarkaba al-rajulu duyunan tastaghriqu amwalahu aw tazidu 'ala mawalihi fa talaba al-ghurama'u min al-qadi an yahjura 'alayhi hatta la yahaba malahu wa la yatasaddaqa bihi wa la yuqirra bihi li-gharimin akhar fal-qadi yahjuru 'alayhi 'indahu-ma, wa 'inda Abi Hanifata la yahjuru 'alayhi wa la ya'malu hajruhu hatta tasihha minhu hadhihi al-tasarrufatu kadha fil-Muhiti, wa yasihhu hadha al-hajru 'indahu-ma wa in kana al-madyunu gha'iban wa lakin yushtartu 'ilmuhu.

[Urdu Section Translation]: Prohibition due to debt is such that a person has incurred so many debts that they encompass all his assets or exceed them, and the creditors demand from the judge that he place a restriction on him so that he does not gift his property, nor give it in charity, nor acknowledge it for any other creditor. According to

the Sahibayn, the judge will impose a restriction on him, whereas according to Imam Abu Hanifa, he will not impose a restriction, nor will the restriction be effective, to the extent that his aforementioned disposals will be valid. According to the Sahibayn, this restriction on him will be correct even if the debtor on whom the restriction was placed is absent, provided that after the restriction [he is informed]...

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

इस मनगढ़ंत गारंटी और बोझ (encumbrance) में जहाँ संपत्ति उसके कब्ज़े में नहीं दी जाती और अक्सर कोई ऋण वास्तव में मौजूद भी नहीं होता, क्योंकि संपत्ति उसके अधिकार में रोकी जा सकती है। इसका परिणाम यह होगा कि वे ज़मानतदार (कफ़ील) को उसकी अपनी संपत्ति में मालिकाना अधिकार के उपयोग से मजबूर और प्रतिबंधित कर दें, जबकि वह स्वयं ऋणी (कर्ज़दार) भी नहीं है; वास्तव में, कई जगहों पर ऋण का मूल रूप से कोई अस्तित्व ही नहीं होता। और कानूनी रूप से एक ऋणी भी, और वह भी ऐसा जिसके ऋण उसकी सभी संपत्तियों को घेरे हुए हों, अपनी संपत्ति में किसी भी मालिकाना निपटान से प्रतिबंधित नहीं है। यहाँ तक कि हमारे इमाम-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) के अनुसार, यदि कोई लेनदार मुकदमा दायर करता है (यह कहते हुए कि यह व्यक्ति अपनी संपत्ति नष्ट कर रहा है, इसलिए शासक उसे निपटान से रोक दे) और न्यायाधीश उनके मुकदमे को स्वीकार कर ले और अंतिम निषेधात्मक आदेश जारी कर दे, तब भी वह मौलिक रूप से प्रतिबंधित नहीं होगा। वह जो संपत्ति उपहार (हिबा) देगा वह उपहार हो जाएगी, यदि वह उसे बेचेगा तो वह बिक जाएगी, यदि वह उसे वक्फ (बंदोबस्ती) करेगा तो वह वक्फ हो जाएगी। लेनदारों को जिन्हें धारणाधिकार (lien) और पीछा करने का अधिकार दिया गया है, वे उन तरीकों के माध्यम से उपाय खोजें। उसके निपटान, जो उसकी कानूनी क्षमता से उत्पन्न होते हैं, किसी के रोकने से नहीं रुकेंगे। और साहिबैन (इमाम अबू यूसुफ और इमाम मुहम्मद) के अनुसार, हालांकि वह अपनी मौजूदा संपत्ति में केवल कुछ निपटानों से प्रतिबंधित हो सकता है जब ऋण उसकी संपत्ति को घेर ले, लेकिन कब? जब लेनदारों के मुकदमे के बाद न्यायाधीश उसके प्रतिबंध के लिए डिक्री जारी करे और इस डिक्री की सूचना भी उस तक पहुँच जाए। उससे पहले, सर्वसम्मति से, वह भी किसी भी तरह से प्रतिबंधित नहीं है। अल-मुहीत और अल-आलमगीरिया में कहा गया है:

[तालिका सामग्री]

[अरबी अनुभाग]: अल-हज्रु बि-सबब अल-दैन अन यरकब अल-रजुलु दुयूनन तस्तग़र्रिकु अमवा-लहू अव तज़ीदु 'अला मवा-लिही फ़-तलब-अल-ग़ुरमाउ मिन अल-काज़ी अन यहजुरा 'अलैहि हत्ता ला य-हबा मा-लहू व ला य-तसद्दका बिही व ला युकिर्रा बिही लि-ग़रीमिन आख़र फ़ल-काज़ी यहजुरु 'अलैहि 'इन्दहु-मा, व 'इन्द अबी हनीफ़ता ला यहजुरु 'अलैहि व ला यअ्-मलु हजरुहू हत्ता तसिह्हा मिन्हु हाज़िही अत-तसर्रुफ़ातु कज़ा फ़िल-मुहीति, व यसिहहु हाज़ा अल-हज्रु 'इन्दहु-मा व इन कान अल-मदयूनु ग़ाइबन व लाकिन युश्तरतु 'इल्मुहु।

[उर्दू अनुभाग अनुवाद]: ऋण के कारण निपटान से रोक देना इस तरह है कि किसी व्यक्ति पर इतने ऋण हो गए जो उसके तमाम अमवाल (संपत्तियों) को घेरे हुए हों या उससे ज़्यादा हो गए और ऋणदाताओं ने काज़ी (न्यायाधीश) से मुतालबा (मांग) किया कि वह उस पर पाबंदी लगाए ताकि वह अपने माल को न तो हिबा (उपहार) करे, न उसे सदक़ा (दान) करे और न ही उसके बारे में किसी और ऋणदाता का इकरार (स्वीकार) करे, तो साहिबैन के नज़दीक काज़ी उस पर पाबंदी आयद (लागू) कर देगा जबकि इमाम अबू हनीफ़ा के नज़दीक पाबंदी आयद नहीं करेगा और न उस पर पाबंदी नाफ़िज़ (प्रभावी) होगी यहाँ तक कि उसके निपटान मज़्कूरा (उल्लेखित) सही होंगे और साहिबैन के नज़दीक उस पर यह पाबंदी सही होगी अगरचे (भले ही) वह मदयून (ऋणी) जिस पर पाबंदी लगाई गई ग़ायब हो बशर्ते कि पाबंदी के बाद उसको...

اس کفالت واستغراق مخترع میں کہ جائدا داس کے قبضہ میں نہیں دی جاتی اور بارہا کوئی دین بالفعل موجود بھی نہیں ہوتا جائداد کیونکہ اس کے حق میں محبوس ہو سکتی ہے۔ اس کا حاصل تو یہ ہوگا کہ کفیل کو اس کے اس مال مملوک میں تصرفات مالکانہ سے مجبور و ممنوع کردیں حالانکہ خود وہ مدیون بھی نہیں بلکہ بہت جگہ ابھی دین کا اصلاً وجود ہی نہیں اور شرعاً خود مدیون بھی، اور وہ بھی ایسا کہ دیون اس کے تمام املاک کو مستغرق و محیط ہوں اپنی ملک میں کسی تصرف مالکانہ سے ممنوع نہیں ہوتا حتی کہ ہمارے امام اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے نزدیک تو اگر قرض خواہ نالشی ہو (کہ یہ اپنی جائداد تلف کئے ڈالتا ہے حاکم اسے تصرفات سے روک دے) اور قاضی ان کی نالش قبول کر کے ممانعت کا حکم قطعی صادر کردے جب بھی وہ اصلاً ممنوع نہ ہوگا جس مال کو ہبہ کرے گا ہبہ ہو جائے گا بیع کرے گا بک جائے گا، وقف کرے گا وقف ہوجائے گا، قرضخواہوں کو جو حق حبس و ملازمت کا دیا گیا وہ اپنے ان طریقوں سے چارہ جوئی کریں اس کے تصرفات کہ اس کی اہلیت سے ناشی ہیں کسی کے روکے نہ رکیں گے، اور صاحبین کے نزدیک اگرچہ وہ صرف اپنے مال موجود میں بعض تصرفات سے ممنوع ہو سکتا ہے جبکہ دین اس کے اموال کو محیط ہوجائے مگر کب؟ جبکہ بعد نالش قرضخواہان قاضی اس کے ممنوع ہونے کی قضا کر دے اور اسے اس قضا کی اطلاع بھی پہنچ جائے اس سے قبل بالاجماع وہ بھی کسی طرح سے ممنوع نہیں۔ محیط و عالمگیری میں ہے :

| الحجر بسبب الدین ان یرکب الرجل دیون تستغرق اموالہ او تزید علی موالہ فطلب الغرماء من القاضی ان یحجر علیہ حتی لایہب مالہ ولا یتصدق بہ ولا یقر بہ لغریم آخر فالقاضی یحجر علی عند ھما، وعند ابی حنیفۃ لا یحجر علیہ ولا یعمل حجرہ حتی تصح منہ ھذا التصرفات کذا فی المحیط،

ویصح هذا الحجر عند هما وان کان المدیون غائب ولکن یشترط علمہ | قرض کی وجہ سے تصرفات سے روک دینا اس طرح ہے کہ کسی شخص پر اتنے قرض ہو گئے جو اس کے تمام اموال کو محیط ہو گئے یا اس سے زیادہ ہو گئے اور قرضخواہوں نے قاضی سے مطالبہ کیا کہ وہ اس پر پابندی لگائے تاکہ وہ اپنے مال کو نہ تو ہبہ کرے، نہ اس کو صدقہ کرے اور نہ ہی اس کے بارے میں کسی اور قرض خواہ کا اقرار کرے تو صاحبین کے نزدیک قاضی اس پر پابندی عائد کر دے گا جبکہ امام ابو حنیفہ کے نزدیک پابندی عائد نہیں کرے گا اور نہ اس پر پابندی نافذ ہو گی یہاں تک کہ اس کے تصرفات مذکورہ صحیح ہوں گے اور صاحبین کے نزدیک اس پر یہ پابندی صحیح ہوگی اگرچہ وہ مدیون جس پر پابندی لگائی گئی غائب ہو بشرطیکہ پابندی کے بعد اس کو |

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

| The interdicted person (al-mahjur) after the interdiction; so much so that every transaction he performed after the interdiction but before knowing about it is valid according to the two companions [Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad].[1] | Even after the restriction, until knowledge of the restriction is obtained, any transaction performed after the restriction but before having knowledge of it would be valid according to the two Sahabayn (companions). (Translator) |

In Fatawa Qazi Khan, it is stated: | One is only restricted [from transactions] after the judgment, not before it.[2] | Indeed, a debtor will be restricted from transactions only after the Qazi's (judge's) decision, not before it. (Translator) |

Far from the debt being comprehensive, this person is not even a debtor himself; rather, there is no debt at all yet, neither a lawsuit nor a decree. Deeming his transactions in his property as improper is purely void, baseless, and meaningless. Moreover, this discussion applied to a case where there was or would be a claim against Zaid, and Amr had guaranteed his property. Here, the situation is even more remarkable: it is Zaid's own affair, and he himself is guaranteeing his own property. What other liability has been joined with his own liability? Such invented notions can never be worthy of consideration according to the Pure Shariah. One should understand this issue well, as this new form of guarantee (kifalat) has become very common nowadays, although it is merely a legal invention with no trace in the Pure Shariah. Thus, it is clear that Zaid's gifting of that property to another was absolutely valid and effective, and being 'guaranteed' could not have any effect on it. As for the condition in the gift deed that any claim arising against the gifted property shall be the responsibility of the donee (mauhub-lah): Firstly: This is a corrupt (fasid) condition because it is neither a requirement of the gift contract—which becomes binding on its own without condition—nor is it suitable for it, as it would emphasize the consequence of the gift, i.e., the ownership of the donee, and it contains benefit for one of the contracting parties, namely the donor (wahib). Such a condition is corrupt, and a gift is not invalidated by a corrupt condition; rather, the condition itself becomes void. In Durr al-Mukhtar, it is stated:

| The comprehensive principle regarding the corruption of a contract is a condition which the contract does not necessitate, nor is it suitable for it, and it contains benefit for one of them, etc.[3] | The general rule regarding the corruption of a contract is that it is such a condition which the contract does not demand, nor is it

suitable for the contract, and it contains benefit for one of the contracting parties, etc. (Translator) |

In Radd al-Muhtar, it is stated:

---

[1] Fatawa Hindiyya, Kitab al-Hajr, Chapter 3, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 5/21 [2] Fatawa Qazi Khan, Kitab al-Hajr, Nawal Kishore Press, Lucknow, 4/918 [3] Durr al-Mukhtar, Chapter of Corrupt Sale, Mujtabai Press, Delhi, 2/27

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

| पाबंदी के बाद पाबंद व्यक्ति; यहाँ तक कि पाबंदी के बाद और उसके बारे में जानने से पहले उसने जो भी लेन-देन किया, वह दो साथियों (इमामों) के अनुसार सही है।[1] | पाबंदी का ज्ञान हो जाए, यहाँ तक कि पाबंदी के बाद उसका ज्ञान होने से पहले जो लेन-देन उसने किया वह साहबैन के नज़दीक सही होगा। (अनुवादक) |

फ़तावा क़ाज़ीख़ान में है: | निश्चय ही पाबंदी [लेन-देन से] फ़ैसले के बाद होती है, उससे पहले नहीं।[2] | बेशक देनदार क़ाज़ी के फ़ैसले के बाद ही लेन-देन से पाबंद होगा, उससे पहले नहीं। (अनुवादक) |

यहाँ ऋण का व्यापक होना तो दूर की बात है, यह व्यक्ति स्वयं देनदार भी नहीं है, बल्कि अभी तक सिरे से ऋण ही नहीं है, न कोई दावा है न कोई फ़ैसला। और अपनी संपत्ति में उसके लेन-देन को अनुचित बताना, यह पूरी तरह से शून्य, निराधार और अर्थहीन है। फिर यह बात तो तब थी जब ज़ैद पर कोई माँग होती या होने वाली होती, और अम्र ने अपनी संपत्ति को ज़मानत (मकफ़ूल) में दिया होता। यहाँ तो और भी अजीब बात है कि मामला खुद ज़ैद ही का है और वह खुद ही अपनी संपत्ति को ज़मानत (मकफ़ूल) कर रहा है। यहाँ उसके दायित्व के साथ कौन सा दूसरा दायित्व जोड़ा गया है? ऐसी मनगढ़ंत बातें शुद्ध शरीयत के नज़दीक बिलकुल ध्यान देने योग्य नहीं हो सकतीं। इस मसले को अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि आज कल यह नए तरह की ज़मानत (किफ़ालत) बहुत प्रचलित हो गई है, हालाँकि यह केवल क़ानूनी ईजाद है, शुद्ध शरीयत में इसका कहीं निशान नहीं है। अतः यह स्पष्ट हुआ कि ज़ैद का वह संपत्ति किसी दूसरे को हिबा (दान) कर देना पूरी तरह सही और प्रभावी था, और ज़मानत (मकफ़ूल) होने से उस पर बिलकुल कोई असर नहीं पड़ सकता था। रही बात हिबा-नामे की उस शर्त की कि दान की गई संपत्ति पर जो माँग निकलेगी वह लेने वाले (मौहूब-लह) की ज़िम्मेदारी होगी: प्रथम: यह शर्त फ़ासिद (दूषित) है क्योंकि यह न तो हिबा के अनुबंध की माँग है —जो बिना शर्त ही अनिवार्य हो जाता है—और न ही इसके अनुकूल है कि हिबा के परिणाम यानी लेने वाले (मौहूब-लह) के स्वामित्व की पुष्टि करे, और इसमें अनुबंध करने वालों में से एक यानी देने वाले (वाहिब) का लाभ है। ऐसी शर्त फ़ासिद होती है, और हिबा फ़ासिद शर्त से फ़ासिद नहीं होता बल्कि वह शर्त ही स्वयं शून्य हो जाती है। दुर्रे मुख़्तार में है:

| अनुबंध के फ़ासिद होने का व्यापक सिद्धांत वह शर्त है जिसकी अनुबंध माँग नहीं करता और न ही वह उसके अनुकूल है, और उसमें उनमें से किसी एक का लाभ है, इत्यादि।[3] | अनुबंध के फ़ासिद होने में सामान्य नियम यह है कि वह शर्त ऐसी हो जिसकी माँग अनुबंध नहीं करता और न ही वह अनुबंध के अनुकूल है, और उसमें अनुबंध करने वालों में से किसी का लाभ हो, इत्यादि। (अनुवादक) |

रद-उल-मुह्तार में है:

---

[1] फ़तावा हिंदिया, किताब-उल-हज्र, अध्याय 3, नूरानी कुतुब ख़ाना, पेशावर, 5/21 [2] फ़तावा क़ाज़ीख़ान, किताब-उल-हज्र, मतबा नवल किशोर, लखनऊ, 4/918 [3] दुर्रे मुख़्तार, बाब-उल-बय-उल-फ़ासिद, मतबा मुज्तबाई, दिल्ली, 2/27

| المحجور علیه بعد الحجر حتی ان کل تصرف باشره بعد الحجر قبل العلم به یکون صحیحا عندهما 1 | پابندی کا علم ہو جائے یہاں تک پابندی کے بعد اس کا علم ہونے سے پہلے جو تصرف اس نے کیا وہ صاحبین کے نزدیک صحیح ہوگا۔ (ت) |

فتاوٰی قاضیخان میں ہے: | انما یحجر بعد الحکم لا قبله 2 | بیشک مدیون قاضی کے فیصلے کے بعد ہی تصرفات سے پابند ہوگا اس سے پہلے نہیں۔ (ت) |

یہاں دین محیط ہونا درکنار یہ شخص خود مدیون بھی نہیں بلکہ ہنوز سرے سے دین ہی نہیں، نہ نالش نہ قضا، اور اپنی جائداد میں اس کے تصرفات ناروا، یہ محض باطل وبے اصل وبے معنی ہے پھر یہ کلام بھی اس صورت میں تھا کہ زید پر مطالبہ ہو یا ہوگا، اور عمرو نے اپنی جائداد مکفول کی یہاں تو اس پھر بھی طرہ یہ ہے کہ خود زید ہی کا معاملہ اور وہ آپ ہی اپنی جائداد مکفول کر رہا ہے یہاں کون سا دوسرا ذمہ اس کے ذمہ کے ساتھ ملایا گیا ایسی مخترع باتیں شرع مطہر کے نزدیک اصلاً قابل التفات نہیں ہو سکتی، اس مسئلہ کو خوب سمجھ لینا چاہئے، کہ آج کل یہ نئی وضع کی کفالت بہت شائع ہوگئی ہے حالانکہ وہ صرف ایجاد قانون ہے شرع مطہر میں اس کا کہیں نشان نہیں، پس روشن ہوا کہ زید کا وہ جائداد دوسرے کو ہبہ کر دینا قطعاً صحیح و نافذ تھا اور مکفول ہونے سے اس پر اصلاً کوئی اثر نہ آ سکتا تھا، رہی ہبہ نامہ کی وہ شرط کہ جائداد موہوبہ پر جو مطالبہ برآمد ہو ذمہ موہوب لہ رہے، اولاً: شرط فاسد ہے کہ نہ مقتضائے عقد ہبہ ہے کہ بلا شرط خود لازم ہو جاتی ہے نہ اس کے ملائم ہے کہ موجب ہبہ یعنی ملک موہوب لہ کی تاکید کرتی اور اس میں احد العاقدین یعنی واہب کا نفع ہے، ایسی شرط فاسد ہوتی ہے اور ہبہ شرط فاسد سے فاسد نہیں ہوتا بلکہ وہ شرط ہی خود باطل ہو جاتی ہے۔ در مختار میں ہے:

| الاصل الجامع فی فساد العقد شرط لا یقتضیه العقد ولا یلائمه وفیه نفع لاحدهما الخ 3 | فساد عقد میں قاعدہ کلیہ یہ ہے کہ وہ شرط ایسی ہو جس کا تقاضہ عقد نہیں کرتا اور نہ ہی وہ عقد کے ملائم ہے اور اس میں عاقدین میں سے کسی کا نفع ہو الخ (ت) |

ردالمحتار میں ہے:

---

1 فتاوی ہندیہ کتاب الحجر الباب الثالث نورانی کتب خانہ پشاور ۵/۲۱ 2 فتاوی قاضی خاں کتاب الحجر مطبع نولکشور لکھنو ۴/ ۹۱۸ 3 درمختار باب البیع الفاسد مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۲۷

Fatawa Razawiyya (Vol. 17)

Arabic Text	Urdu Translation
In 'Al-Bahr', it is stated that the meaning of a condition being requisite for a contract is that the condition is such that it becomes mandatory along with the contract even without being explicitly stated. And the meaning of it being compatible is that it reinforces the implication of the contract. Similarly, it is mentioned in 'Al-Dhakhira'.	In 'Bahr', it was said that the meaning of a condition being requisite for a contract is that the condition is such that even without setting the condition, it is mandatory with the contract, and the meaning of it being compatible is that it confirms the implication of the contract; similarly, it is in 'Dhakhira'. (T)

In 'Tanweer al-Absar', 'Durr al-Mukhtar', and 'Radd al-Muhtar', it is stated:

| Contracts that are valid and do not become void due to a corrupt condition, but rather the condition itself becomes void, include loans, gifts (Hiba), and charity (Sadaqa), etc. | That which is correct and does not become void with a corrupt condition, but the condition itself becomes redundant, is a loan, gift, and charity. etc. (T) |

In 'Alamgiri', it is stated:

| Gifts, charity, and Mukataba (contracts for slave emancipation) become valid with both customary and non-customary conditions, while the condition itself becomes void. | Gifts, charity, and writing become correct with customary and non-customary conditions and the condition becomes void. (T) |

The recipient's acceptance of this deed of gift will not bind them to the condition; otherwise, the condition would not be void but effective, whereas it was actually void and futile. In 'Sharh Isijabi', 'Fatawa Tatar Khaniya', and 'Fatawa Alamgiriyyah', it is stated:

| If a person gives a gift or charity to another on the condition that the recipient returns a third, a fourth, or some part of it, then the gift is valid, but the recipient is not required to return anything to the donor, nor give anything in exchange for it. | Someone gifted something to another person or gave charity on the condition that he would return a third part or fourth part or some part of it to him, then the gift is

permissible and the recipient will not return it to the donor nor will he give any thing in exchange for it. (T) |

1. Radd al-Muhtar, Chapter on Corrupt Sales, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/121.
2. Radd al-Muhtar, Chapter on Salam, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/228; Durr al-Mukhtar, Commentary on Tanweer al-Absar, Chapter on Miscellaneous Issues, Mujtabai Press, Delhi, 2/.
3. Fatawa Hindiyya, Book of Gifts, Chapter 8, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 4/396.
4. Fatawa Hindiyya, Book of Gifts, Chapter 8, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 4/396.

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
'अल-बहर' में कहा गया है कि अनुबंध के लिए एक शर्त के अपेक्षित होने का अर्थ यह है कि वह शर्त ऐसी हो जो बिना उल्लेख किए ही अनुबंध के साथ अनिवार्य हो जाए। और इसके संगत होने का अर्थ यह है कि यह अनुबंध के प्रभाव की पुष्टि करती है। इसी तरह 'अल-ज़ख़ीरा' में भी है।	'बहर' में कहा गया कि शर्त के अनुबंध के लिए आवश्यक होने का अर्थ यह है कि वह शर्त ऐसी हो जो शर्त लगाए बिना ही अनुबंध के साथ अनिवार्य हो, और इसके अनुकूल होने का अर्थ यह है कि वह अनुबंध के प्रभाव की पुष्टि करे, इसी प्रकार 'ज़ख़ीरा' में है। (त)

'तन्वीर अल-अबसार', 'दुर्रे मुख्तार' और 'रद्द अल-मुह्तार' में है:

| वे अनुबंध जो सही होते हैं और एक दोषपूर्ण शर्त के कारण रद्द नहीं होते, बल्कि शर्त स्वयं शून्य हो जाती है, उनमें ऋण, उपहार (हिबा) और दान (सदक़ा) आदि शामिल हैं। | वह जो सही होती है और दूषित शर्त के साथ अमान्य नहीं होती, बल्कि शर्त स्वयं व्यर्थ हो जाती है, वह ऋण, उपहार और दान है। आदि (त) |

'आलमगीरी' में है:

| उपहार, दान और मुकातबा (दास मुक्ति अनुबंध) प्रचलित और अप्रचलित दोनों शर्तों के साथ वैध हो जाते हैं, और शर्त शून्य हो जाती है। | उपहार, दान और लिखावट (मुकातबा) प्रचलित और अप्रचलित शर्तों के साथ सही हो जाते हैं और शर्त अमान्य हो जाती है। (त) |

उपहार प्राप्तकर्ता द्वारा इस उपहार विलेख को स्वीकार करने से वह उस शर्त के लिए बाध्य नहीं होगा; अन्यथा, शर्त शून्य नहीं बल्कि प्रभावी मानी जाएगी, जबकि वह वास्तव में शून्य और व्यर्थ थी। 'शराह इसीजाबी', 'फ़तावा तातार ख़ानिया' और 'फ़तावा आलमगीरिया' में उल्लेख है:

| यदि कोई व्यक्ति किसी दूसरे को उपहार या दान इस शर्त पर देता है कि वह उसका तीसरा हिस्सा, चौथा हिस्सा या कुछ हिस्सा वापस कर देगा, तो उपहार वैध है और प्राप्तकर्ता दाता को कुछ भी वापस करने या उसके बदले में कुछ देने के लिए बाध्य नहीं है। | किसी व्यक्ति ने दूसरे को कोई चीज़ उपहार में दी या दान दिया इस शर्त पर कि वह उसका तीसरा हिस्सा या चौथा हिस्सा या कुछ हिस्सा

उसे लौटा देगा, तो उपहार जायज़ है और उपहार प्राप्त करने वाला दाता को वापस नहीं लौटाएगा और न ही उसके बदले कोई चीज़ देगा। (त) |

1. रद्द अल-मुह्तार, दोषपूर्ण बिक्री का अध्याय, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 4/121।
2. रद्द अल-मुह्तार, सलम का अध्याय, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 4/228; दुर्रे मुख्तार शराह तन्वीर अल-अबसार, विविध विषयों का अध्याय, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 2/।
3. फ़तावा हिंदिया, उपहारों की पुस्तक, आठवां अध्याय, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 4/396।
4. फ़तावा हिंदिया, उपहारों की पुस्तक, आठवां अध्याय, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 4/396।

عربی عبارت **اردو ترجمہ**

قال فی البحر معنی کون الشرط یقتضیه العقد ان یجب بالعقد من غیر شرط و معنی کونه ملائما ان یؤکد موجب العقد کذا فی الذخیرۃ۔

بحر میں کہا کہ شرط کے مقتضائے عقد ہونے کا معنی یہ ہے کہ وہ شرط ایسی ہو کہ شرط لگائے بغیر ہی عقد کے ساتھ واجب ہو اور اس کے ملائم ہونے کا معنی یہ ہے کہ وہ موجب عقد کی تاکید کرے ، یوں ہی ذخیرہ میں ہے۔(ت)

تنویر الابصار ودر مختار وردالمحتار میں ہے:

| مایصح ولایبطل بالشرط الفاسد و یلغو الشرط القرض والهبة والصدقة الخ۔ | وہ جو صحیح ہوتی ہے اور شرط فاسد کے ساتھ باطل نہیں ہوتی بلکہ خود شرط لغو ہو جاتی ہے وہ قرض، ہبہ اور صدقہ ہے۔ الخ۔ (ت) |

عالمگیری میں ہے:

| الهبه والصدقة والکتابةبشرط متعارف وغیر متعارف یصح ویبطل الشرط | ہبہ، صدقہ اور کتابت شرط متعارف اور غیر متعارف کے ساتھ صحیح ہو جاتے ہیں اور شرط باطل ہو جاتی ہے۔ (ت) |

موہوب لہ کا اس ہبہ نامہ کو قبول کرنا اس شرط کا پابند نہ کرے گا ورنہ شرط باطل نہ ہوئی بلکہ موثر ٹھہری حالانکہ باطل ولغو تھی ، شرح اسیجابی وفتاوی تاتار خانیہ وفتاوی عالمگیرہ میں ہے:

| رجل وهب لرجل هبة اوتصدق علیه بصدقة علی ان یرد علی ثلثها او ربعها او بعضها فالهبة جائزة ولایرد علیه ولایعوضه بشیئ۔ | کسی شخص نے دوسرے کو کوئی چیز ہبہ کی یا صدقہ دیا اس

شرط پر کہ وہ اس کا تیسرا حصہ یا چوتھا حصہ یا بعض حصہ اس کو لوٹا دے گا تو ہبہ جائز ہے اور موہوب لہ واہب کو واپس نہیں لوٹائے گا اور نہ ہی اسکے عوض کوئی شے دے گا۔ (ت) |

1 ردالمحتار باب البیع الفاسد داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۲۱ 2 ردالمحتار باب السلم داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۲۲۸، در مختار شرح تنویر الابصار باب المتفرقات مطبع مجتبائی دہلی ۲/ 3 فتاوی ہندیہ کتاب الھبہ الباب الثامن نورانی کتب خانہ پشاور ۴/ ۳۹۶ 4 فتاوی ہندیہ کتاب الھبہ الباب الثامن نورانی کتب خانہ پشاور ۴/ ۳۹۶

Thirdly: Aside from all this, what condition did he accept by signing the deed of gift acceptance? It was to take responsibility for any claim arising on the property. We have already proven that in such a case, no claim can possibly arise on the property. Thus, he accepted an impossible thing. Even apart from the deed of acceptance, if he had independently accepted such a meaningless and void matter, it would still be void, because something void does not become a right just because someone accepts it. Therefore, in the queried case, both his person and his property are completely free from such a void claim. In fact, even if we assume that he (not that void claim arising on the property, but) had personally accepted the claim arising against the donor (not against the gifted property but against himself), and that too not in the deed of gift acceptance but independently, even then in the mentioned case, that guarantee would remain purely void and ineffective. Although we might consider a guarantee for such a claim as valid, this claim is often purely void even from that lessee, because the system of rural leasing as it is practiced—where land remains under the tenancy of cultivators and the surplus is given as lease rent—is a piece of absolute falsehood, the clear explanation of whose invalidity is in our Fatawa. It is stated in Fatawa Khayriyya:

[Arabic Text Box]: "When a lease is made for the purpose of consuming the essence [of things] intentionally, it is void. Thus, the mentioned lease contract, since it is not for benefiting from the land through cultivation and the like, but for taking the proceeds from the fixed land tax (Kharaj-e-Muawazzaf) and crop-sharing (Muqasama) and whatever [tax] in struck dirhams is on the trees, it is void by the consensus of our Imams. And the void has no ruling, according to the agreement of our scholars."

Translation: When a lease is made for the purpose of intentionally consuming the essence [of things], it is void. Therefore, the mentioned lease, as it was not based on deriving benefit from the land through cultivation, but rather on receiving the yield obtained from both types of land tax, namely Muwazzaf and Muqasama, and on taking its rent in the form of prevalent dirhams on some trees, is void by the consensus of our Imams, and our scholars are agreed that something void has no legal standing. (T)

So, whatever the amount of yield is in any given year, the full right belongs to the owner. If more is obtained, the lessee has no share in it, and if there is a shortfall, it is not at all for the lessee to make it up from his own pocket. And these guarantees are

set for that very time when the full fixed amount is not recovered from the lessee. If the lessee did not consume it himself but there was an actual shortfall, then taking the full amount from him is prohibited and the claim is void. However, since a claim is inevitable and legally...

---

[1] Fatawa Khayriyya, Kitab al-Ijarah, Dar al-Ma'rifah, Beirut, 2/135-3 Page 693 of 715

फ़तावा रज़विया (खण्ड 17)

तीसरे: इस सबसे हटकर, उसने उपहार स्वीकृति पत्र (हिबा नामा) स्वीकार करके किस शर्त को स्वीकार किया है? वह यह कि संपत्ति पर होने वाले किसी भी दावे की जिम्मेदारी अपने ऊपर लेना। और हम सब यह साबित कर चुके हैं कि ऐसी स्थिति में संपत्ति पर कोई दावा पैदा ही नहीं हो सकता, तो उसने एक असंभव बात को स्वीकार किया। स्वीकृति पत्र से अलग, अगर वह अपनी ओर से ऐसी व्यर्थ और शून्य बात को स्वीकार करता, तब भी वह शून्य ही होती, क्योंकि किसी के स्वीकार कर लेने से कोई शून्य चीज़ अधिकार (हक़) नहीं बन जाती। अतः पूछी गई स्थिति में उसकी स्वयं की हस्ती और उसकी संपत्ति दोनों ऐसे शून्य दावे से पूरी तरह मुक्त हैं। बल्कि, अगर हम यह मान लें कि उसने (वह शून्य दावा नहीं जो संपत्ति पर पैदा हो, बल्कि) उस दावे को जो दाता (वाहिब) पर निकले (उपहार में दी गई संपत्ति के ज़िम्मे नहीं बल्कि) स्वयं अपने ज़िम्मे (स्वीकृति पत्र में नहीं बल्कि) स्वतंत्र रूप से स्वीकार किया होता, तब भी उल्लेखित स्थिति में वह ज़मानत (कफ़ालत) बिल्कुल शून्य और निष्प्रभावी रहती। यद्यपि हम ऐसे दावे की ज़मानत को वैध मान लें, फिर भी यह दावा उस पट्टेदार (मुस्ताजिर) से भी अक्सर पूरी तरह शून्य आधार पर होता है, क्योंकि देहातों का ठेका (पट्टा) जिस तरह प्रचलित है—कि ज़मीन बटाईदारों (मज़ारिआन) के पास रहती है और पट्टे में अतिरिक्त लाभ दिया जाता है—वह पूरी तरह शून्य है, जिसकी अमान्यता का स्पष्ट विवरण हमारे फ़तावा में मौजूद है। 'फ़तावा खैरिया' में है:

[अरबी पाठ]: "जब पट्टा जानबूझकर मूल वस्तुओं (ऐयान) के उपभोग के लिए किया जाए, तो वह शून्य होता है। इसलिए, उक्त पट्टा अनुबंध, क्योंकि वह खेती आदि के माध्यम से ज़मीन से लाभ उठाने के लिए नहीं है, बल्कि निर्धारित भूमि कर (खराज-ए-मुवज्ज़फ़) और फसल साझा (मुकासमा) से प्राप्त उपज लेने और पेड़ों पर लगे सिक्कों (दरहमों) के रूप में उसके लगान लेने पर आधारित है, तो यह हमारे इमामों की सहमति (इज्मा) से शून्य है। और हमारे विद्वानों की सर्वसम्मति के अनुसार शून्य का कोई नियम नहीं है।"

अनुवाद: जब पट्टा मूल वस्तुओं (ऐयान) को जानबूझकर समाप्त करने पर आधारित हो, तो वह शून्य होता है। अतः उक्त पट्टा जब खेती से लाभ उठाने पर आधारित नहीं हुआ, बल्कि लगान के दोनों प्रकारों यानी मुवज्ज़फ़ और मुकासमा से प्राप्त होने वाली उपज लेने और कुछ पेड़ों पर प्रचलित दरहमों के रूप में उसका किराया लेने पर आधारित हुआ है, तो यह हमारे इमामों की सहमति से शून्य है और हमारे विद्वान इस पर सहमत हैं कि शून्य का कोई नियम नहीं है। (त)

तो जिस वर्ष जितनी उपज हो, उतना ही पूरा हक मालिक का है। यदि अधिक प्राप्त हो तो पट्टेदार का उसमें कोई पैसा नहीं, और यदि कमी हो जाए तो पट्टेदार को उसे अपने घर से पूरा नहीं करना है। और ये ज़मानतें उसी समय के लिए रखी जाती हैं जब पट्टेदार से पूरी निर्धारित राशि प्राप्त न हो। यदि पट्टेदार ने खुद उसे नहीं खाया बल्कि वास्तव में कमी हुई, तो उससे पूरी राशि लेना हराम है और दावा शून्य है। लेकिन, चूंकि दावा अवश्य होता है, और कानूनी तौर पर...

---

[1] फ़तावा खैरिया, किताबुल इजारा, दारुल मारिफ़ा, बेरूत, 2/135-3 पृष्ठ 715 का 693

ثالثاً: اس سب سے قطع نظر ہو تو اس نے قبول ہبہ نامہ سے کیا شرط قبول کی ہے وہ مطالبہ کہ جائداد پر برآمد ہوا اپنے ذمہ لینا اور ہم سب ثابت کر آئے کہ ایسی صورت میں جائداد پر کوئی مطالبہ برآمد ہو ہی نہیں سکتا تو اس نے ایک امر محال کو قبول کیا قبول نامہ سے جدا اگر بطور خود وہ ایسی مہمل و باطل بات کو قبول کرتا تو باطل ہی ہوتا کہ باطل کسی کے قبول کئے سے حق نہیں ہو جاتا تو صورت مستفسرہ میں اس کی ذات و جائداد دونوں ایسے مطالبہ باطلہ سے قطعاً بری ہیں کہ بلکہ اگر فرض کرلیں کہ اس نے (نہ وہ مطالبہ باطلہ کہ جائداد پر برآمد ہو بلکہ) خود وہ مطالبہ کہ واہب پر نکلے (نہ جائداد موہوبہ کے ذمہ باطلہ پر بلکہ) خود اپنے ذمہ پر (نہ قبول ہبہ نامہ میں بلکہ) خود مستقل طور پر قبول کیا ہوتا جب بھی صورت مذکورہ میں وہ کفالت محض باطل وبے اثر رہتی ، ہم اگر چہ ایسے مطالبہ کی کفالت جائز مانیں حالانکہ یہ مطالبہ اس مستاجر سے بھی بارہا محض باطل طور پر ہوتا ہے اس لئے کہ دیہات کا ٹھیکہ جس طرح رائج ہے کہ زمین اجارہ مزارعان میں رہتی ہے اور توفیر ٹھیکہ میں دی جاتی ہے قطعہ باطل محض ہے جس کے بطلان کا روشن بیان ہمارے فتاویٰ میں ہے۔ فتاویٰ خیریہ میں ہے:

الاجارۃ اذا وقعت علی استھلاك الاعیان قصدا وقعت باطلۃ فعقد الاجارۃ المذکورۃ حیث لم یقع علی الانتفاع بالارض بالزرع ونحوہ بل علی اخذ المتحصل من الخراج الموظف والمقاسمۃ وما علی الاشجار من الدراھم المضروبۃ فھو باطل باجماع ائمتنا والباطول لا حکم لہ باطباق علمائنا ۱۔

اجارہ جب اعیان کو قصداً ہلاک کرنے پر واقع ہو تو وہ باطل واقع ہوتا ہے چنانچہ اجارہ مذکورہ جب کھیتی سے انتفاع پر واقع نہیں ہوا بلکہ اخراج کی دونوں نوعوں یعنی موظف و مقاسمۃ سے حاصل ہونے والی پیداوار لینے اور کچھ درختوں پر ہے بصورت رائج درہموں کے اس کی اجرت

لینے پر واقع ہوا ہے اور یہ ہمارے ائمہ کے اجماع سے باطل ہے اور ہمارے علماء اس پر متفق ہیں کہ باطل کا کوئی حکم نہیں۔ (ت)

تو جس سال جس قدر نشست ہو اسی قدر تمام و کمال حق مالک ہے زیادہ حاصل ہو تو مستاجر کا اس میں کوئی پیسہ نہیں اور کمی پڑے تو مستاجر پر ہرگز اپنے گھر سے اس کا پورا کرنا نہیں اور یہ کفالتیں اسی وقت کے لئے رکھی جاتی ہے جب مستاجر سے پوری رقم مقررہ شدہ وصول نہ ہوا گر مستاجر خود نہ کھا گیا بلکہ فی الواقع کمی ہوئی تو اس سے پوری رقم لینی حرام ہے اور مطالبہ باطل ، مگر از انجا کہ مطالبہ ضرور ہوتا ہے ، اور قانونی طور

---

۱ فتاوٰی خیریہ کتاب الاجارۃ دارالمعرفۃ بیروت ۲/۳_۱۳۵ صفحہ 715 کا 693

Fatawa Rizvia Volume 17

...if pressure is applied to him and it is obtained by force through a court, then there is scope for its guarantee (Kafalat). It is stated in Fatawa Alamgiri:

Arabic Text

What is not a right, such as the fixed duties in our time upon the tailor, the dyer, and others for the Sultan daily or monthly, is indeed oppression. The scholars differed regarding the validity of a guarantee for it, as in *Fath al-Qadir*. The fatwa is upon its validity, as in *Sharh al-Wiqayah*. Among those who incline towards validity is Sheikh al-Islam Ali al-Bazdawi, as in *Al-Hidayah*. Al-Nasafi, Shams al-Aimmah, and Qadi Khan said similar to the statement of Fakhr al-Islam because, in terms of the validity of the demand, it is above all other debts. The consideration in the chapter of guarantee is the demand, because it was legislated for its commitment. For this reason, we said that whoever undertakes the distribution of these calamities (taxes) with justice will be rewarded, even if the one taking them is an oppressor. Thus it is in *Mi'raj al-Dirayah*.

Urdu Translation

That which is unjust, like the daily or monthly taxes fixed for the king in our time upon tailors, dyers, etc., is oppression. Our scholars differ regarding the validity of their guarantee (Kafalat). It is mentioned in *Fath al-Qadir* that the fatwa is on its validity. It is similarly in *Sharh al-Wiqayah*. Among those who incline towards validity is Sheikh al-Islam Ali al-Bazdawi. Similarly, in *Al-Hidayah*, Al-Nasafi, Shams al-Aimmah, and Qadi Khan have expressed views similar to Fakhr al-Islam's because the focus on demand in this case is superior to all other debts. In the chapter of Kafalat, the demand is considered because Kafalat is legislated for its commitment. That is why we said that whoever prepares for the fair distribution of these taxes will be rewarded, even if the collector is an oppressor. Thus it is in *Mi'raj al-Dirayah*. (T)

So, the guarantee for this ambiguous demand, which is sometimes valid and sometimes void, will be valid all the more. However, in the school of our Imam Azam (may Allah be pleased with him), both offer (Ijab) and acceptance (Qabul) are pillars of Kafalat. A person does not become a guarantor merely by his promise and commitment to the demand until the creditor (Makful-lahu) accepts it. This acceptance can be done by the creditor himself or by someone else on his behalf, even if unauthorized (fuzuli). Therefore, if acceptance is not found in that session (Majlis), the Kafalat becomes void. Afterwards, even if the creditor accepts it a

hundred times outside the session, it is of no use. The fatwa here is different, and when fatwas differ, it is mandatory to act upon the opinion of the Imam.

---

[1] Fatawa Hindiyya, Kitab al-Kafalat, Miscellaneous Issues, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/291

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

...उस पर दबाव डाला जाता है और कचहरी के ज़रिए ज़बरदस्ती हासिल कर लिया जाता है, तो उसकी कफ़ालत (गारंटी) की गुंजाइश है। फ़तावा आलमगीरी में है:

अरबी पाठ

जो हक़ नहीं है, जैसे हमारे समय में सुल्तान के लिए दर्जी, रंगसाज़ और अन्य लोगों पर दैनिक या मासिक निर्धारित शुल्क, वास्तव में ज़ुल्म है। इसके लिए कफ़ालत की वैधता के बारे में विद्वानों में मतभेद है, जैसा कि फ़तह अल-क़दीर में है। फ़तवा इसकी वैधता पर है, जैसा कि शरह अल-वक़ाया में है। वैधता की ओर झुकने वालों में शेख़ अल-इस्लाम अली अल-बज़दवी हैं, जैसा कि अल-हिदाया में है। अन-नसफ़ी, शम्स अल-अइम्मा और क़ाज़ी खान ने फ़ख़्र अल-इस्लाम के कथन के समान ही कहा है क्योंकि माँग की वैधता के संबंध में यह अन्य सभी ऋणों से ऊपर है। कफ़ालत के अध्याय में विचार माँग का है, क्योंकि इसे इसकी प्रतिबद्धता के लिए बनाया गया था। इसी कारण हमने कहा कि जो कोई इन आपदाओं (टैक्सों) के न्यायोचित वितरण का कार्य करेगा उसे पुण्य मिलेगा, भले ही उन्हें लेने वाला अत्याचारी हो। मेराज अद-दिराया में ऐसा ही है।

उर्दू अनुवाद

वह जो नाहक है जैसे हमारे ज़माने में बादशाह के लिए दर्ज़ी और रंगसाज़ वगैरह पर यौमिया (दैनिक) माहवारी मुक़र्रर करदा टैक्स, यह ज़ुल्म है। उनकी कफ़ालत सही होने के बारे में हमारे मशायख़ में इख्तिलाफ़ (मतभेद) है। फ़तह अल-क़दीर में यूँ ही है और फ़तवा सही होने पर है। शरह वक़ाया में यूँ ही है और सेहत (वैधता) की तरफ़ रुझान करने वालों में से शेख़ुल इस्लाम अली अल-बज़दवी हैं। यूँ ही हिदाया में से नसफ़ी, शम्सुल अइम्मा और क़ाज़ी खां ने फ़ख़्रे इस्लाम के क़ौल की मिसाल कहा क्योंकि यह तवज्जो मुतालबा (माँग) में तमाम द्यून (ऋणों) से फ़ौक़ (ऊपर) है और कफ़ाला के बाब में एतबार मुतालबा का है क्योंकि यह इसके इल्तिज़ाम (प्रतिबद्धता) के लिए मशरू (निर्धारित) हुआ। इसी वास्ते हमने कहा कि जो कोई इन टैक्सों की आदलाना (न्यायपूर्ण) तक़्सीम (बँटवारे) के लिए कमरबस्ता हुआ माजूर (पुण्य का पात्र) होगा अगरचे लेने वाला उनको लेने में ज़ालिम हो। मेराज अद-दिराया में यूँ ही है। (त)

तो इस मुतालबा-ए-मुश्तबा (संदिग्ध माँग) की, जो कभी सही कभी बातिल (अमान्य) तौर पर होती है, कफ़ालत बदरजा-ए-औला सही होगी। लेकिन हमारे इमाम-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) के मज़हब में ईजाब और क़बूल दोनों रुक्न (स्तम्भ) हैं कफ़ालत में। तन्हा कफ़ील के क़बूल व इल्तिज़ाम-ए-मुतालबा से वह कफ़ील नहीं हो जाता जब तक उसके साथ मकफ़ूल लहु (जिसके हक़ में गारंटी दी

गई) का उसे क़बूल करना भी न हो, ख़्वाह वह ख़ुद क़बूल करे या उसकी तरफ़ से दूसरा अगरचे फ़ुज़ूली (अनाधिकृत व्यक्ति)। लिहाज़ा अगर उस मजलिस (बैठक) में क़बूल न पाया जाए तो कफ़ालत बातिल हो जाती है, फिर मजलिस के बाद अगर मकफ़ूल लहु सौ बार क़बूल करे, कुछ मुफ़ीद (फायदेमंद) नहीं। फ़तवा यहाँ मुख़्तलिफ़ है और फ़तवा जब मुख़्तलिफ़ हो तो क़ौल-ए-इमाम पर अमल वाजिब है।

---

[1] फ़तावा हिन्दिया, किताबुल कफ़ाला, मसाइल शत्ता, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 3/291

سے اس پر جبر پہنچتا ہے اور بزور کچہری حاصل کر لیتے ہیں تو اس کی کفالت کی گنجائش ہے۔

فتاوٰی عالمگیری میں ہے:

عربی عبارت

ماليس بحق كالجبايا ت الموظفة في زماننا علي الخياط والصباغ وغيرهما للسلطان في كل يوم او شهر فانما ظلم ، اختلف المشائخ في صحة الكفالة بها كذا في فتح القدير. والفتوي على الصحة كذا في شرح الوقايه. وممن يميل الى الصحة الشيخ الامام علي البزدوى كذا في الهداية. وقال النسفي وشمس الائمه قاضيخان مثل قول فخر الاسلام لانها في حق توجه المطالبة فوق سائر الديون والعبرة في باب الكفالة للمطالبة لانها شرعت لالتزامها ولهذا قلنا ان من قام بتوزيع هذه النوائب بالقسط يؤجر وان كان الأخذ في الاخذ ظالما كذا في المعراج الدراية۔

اردو ترجمہ

وہ جو ناحق ہے جیسے ہمارے زمانے میں بادشاہ کے لئے درزی اور رنگساز وغیرہ پر یومیہ ماہانہ مقرر کردہ ٹیکس یہ ظلم ہے ، ان کی کفالت صحیح ہونے کے بارے میں ہمارے مشائخ میں اختلاف ہے ، فتح القدیر میں یوں ہی ہے اور فتوی صحیح ہونے پر ہے ، شرح وقایہ میں یو نہی ہے اور صحت کی طرف میلان کرنے والوں میں سے شیخ الاسلام علی البزدوی ہیں یونہی ہدایہ میں سے نسفی ، شمس الائمہ اور قاضی خاں نے فخر الاسلام کے قول کی مثل کہا کیونکہ یہ توجہ مطالبہ میں تمام دیون سے فوق ہے اور کفالہ کے باب میں اعتبار مطالبہ کا ہے کیونکہ یہ اس کے التزام کے لئے مشروع ہوا اسی واسطے ہم نے کہا کہ جو کوئی ان ٹیکسوں کی عادلانہ تقسیم کے لئے کمر بستہ ہوا ماجور ہوگا اگر چہ لینے والا ان کو لینے میں ظالم ہو معراج الدرا یہ میں یوں ہی ہے۔ (ت)

تو اس مطالبہ مشتبہ کی جو کبھی صحیح کبھی باطل طور پر ہوتا ہے کفالت بدرجہ اولیٰ صحیح ہوگی لیکن ہمارے امام اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے مذہب میں ایجاب و قبول دونوں رکن کفالت میں تنہا کفیل کے قبول و التزام مطالبہ سے وہ کفیل نہیں ہو جاتا جب تک اس کے ساتھ مکفول لہ کا اسے قبول کرنا بھی نہ ہو خواہ وہ خود قبول کرے یا اس کی طرف سے دوسرا اگرچہ فضولی ، و لہذا اگر اس مجلس میں قبول نہ پایا جائے تو کفالت باطل ہو جاتی ہے پھر بعد مجلس اگر مکفول لہ سو بار قبول کرے کچھ مفید نہیں۔ فتوی یہاں مختلف ہے اور فتوی جب مختلف ہو تو قول امام پر عمل واجب،

---

[1] فتاوی ہندیہ کتاب الکفالۃ مسائل شتی نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۹۱

As stated in al-Bahr al-Ra'iq, al-Khayriyya, and others, and we have already explained it in the Book of Marriage in our Fatawa. (T)

In Muhit al-Hindiya it is stated:

[Arabic Section]: As for its pillar, it is offer and acceptance according to Abu Hanifa and Muhammad (may Allah have mercy on them), and this is the first opinion of Abu Yusuf (may Allah have mercy on him). Thus, suretyship (kafala) is not complete with the surety alone, whether it is for wealth or person, unless there is acceptance by the creditor (makful lahu) or acceptance by a third party (ajnabi) on his behalf in the session of the contract, or a statement by the creditor or a third party on his behalf. However, if none of this exists, then it does not remain pending after the session. Even if the news reaches the claimant and he accepts, it will not be valid.[1]

[Urdu Section]: According to Imam Abu Hanifa and Imam Muhammad (may Allah have mercy on them), the pillar of suretyship (kafala) is offer and acceptance, and this was also the first opinion of Imam Abu Yusuf (may Allah have mercy on him). Thus, suretyship cannot be completed by the surety alone, whether he guarantees wealth or person, until acceptance or a statement is found from the creditor or an outsider on his behalf. If none of these are found, it will not be suspended beyond the session. Even if the news reaches the claimant and he accepts it, the suretyship will not be valid. (T)

In Minah al-Ghaffar, it is from Imam Tartusi: The fatwa is based on the opinion of both [Abu Hanifa and Muhammad].[2] (The fatwa is on the statement of both parties. T). In Radd al-Muhtar, it says:

[Arabic Section]: In al-Durar and al-Bazzaziyya, the fatwa is given according to the second [Abu Yusuf's] opinion, and in Anfa' al-Wasa'il and others, the fatwa is on the opinion of both parties.[3]

[Urdu Section]: In Durar and Bazzaziyya, it is stated that the fatwa is given according to the second Imam's (Abu Yusuf's) opinion, and in Anfa' al-Wasa'il and others, it is stated that the fatwa is based on the opinion of both parties. (T)

It is clear that at the time of accepting the gift (Hiba) or receiving the gift deed, there was no one on behalf of the chief to accept it, and the words of the gift deed cannot

be its offer because it mentions the void demand for the guarantee of property and not the demand for the guarantee of the donor.

---

[1] Fatawa Hindiyya, Book of Kafala, Chapter One, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 3/252. [2] Durr al-Mukhtar citing al-Tartusi, Book of Kafala, Matba Mujtabai, Delhi, 2/63. [3] Radd al-Muhtar, Book of Kafala, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/251.

फतावा रज़विया | खंड सत्रह (१७)

जैसा कि अल-बहर अल-राइक़, अल-खैरिया और अन्य में उल्लेख है, और हमने इसे पहले ही अपने फतावा की निकाह की किताब में स्पष्ट कर दिया है। (त)

मुहीत अल-हिन्दिया में है:

[अरबी भाग]: जहां तक इसके स्तंभ का सवाल है, इमाम अबू हनीफा और इमाम मुहम्मद (अल्लाह उन पर रहम करे) के अनुसार यह प्रस्ताव और स्वीकृति है, और यही इमाम अबू यूसुफ (अल्लाह उन पर रहम करे) की पहली राय है। इस प्रकार, अकेले प्रतिभू (कफील) के साथ जमानत (कफाला) पूरी नहीं होती है, चाहे वह धन के लिए हो या व्यक्ति के लिए, जब तक कि अनुबंध के सत्र में लेनदार (मकफूल लहू) द्वारा स्वीकृति या उसकी ओर से किसी तीसरे पक्ष (अजनबी) द्वारा स्वीकृति न हो, या लेनदार या उसकी ओर से किसी तीसरे पक्ष द्वारा कोई बयान न हो। हालांकि, अगर इसमें से कुछ भी मौजूद नहीं है, तो यह सत्र के बाद लंबित नहीं रहता है। भले ही खबर दावेदार तक पहुंचे और वह इसे स्वीकार कर ले, यह मान्य नहीं होगा।[1]

[उर्दू भाग]: इमाम अबू हनीफा और इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाह अलैहिमा) के अनुसार कफाला (जमानत) का स्तंभ ईजाब (प्रस्ताव) और कुबूल (स्वीकृति) है और इमाम अबू यूसुफ (रहमतुल्लाह अलैहि) का पहला कथन भी यही है कि अकेले कफील (प्रतिभू) से कफाला तब तक पूरा नहीं होना चाहिए जब तक कि मकफूल लहू (लेनदार) या उसकी ओर से किसी अजनबी व्यक्ति द्वारा स्वीकृति या संबोधन न पाया जाए, चाहे वह धन की कफाला हो या प्राण की। यदि इनमें से कुछ भी नहीं पाया गया, तो यह सत्र के बाद लंबित नहीं होगा। यहाँ तक कि यदि दावेदार तक खबर पहुँची और उसने इसे स्वीकार कर लिया, तो भी कफाला सही नहीं होगा। (त)

मिनाह अल-ग़फ़्फ़ार में इमाम तरतुसी से है: फतवा दोनों (अबू हनीफा और मुहम्मद) की राय पर आधारित है।[2] (फतवा दोनों पक्षों के कथन पर है। त)। रद्द अल-मुह्तार में है:

[अरबी भाग]: अल-दुरर और अल-बज़्ज़िया में, फतवा दूसरी (अबू यूसुफ की) राय के अनुसार दिया गया है, और अनफ़ा अल-वसाईल और अन्य में, फतवा दोनों पक्षों की राय पर है।[3]

[उर्दू भाग]: दुरर और बज़्ज़िया में है कि इमाम-ए-सानी (अबू यूसुफ) के कथन पर फतवा दिया जाता है और अनफ़ा अल-वसाईल आदि में है कि फतवा दोनों पक्षों के कथन पर है। (त)

स्पष्ट है कि हिबा (उपहार) स्वीकार करने या हिबा-नामा (उपहार विलेख) प्राप्त करने के समय रईस की ओर से कोई स्वीकार करने वाला नहीं था और हिबा-नामा के शब्द उसके ईजाब (प्रस्ताव) नहीं हो सकते क्योंकि इसमें संपत्ति की जिम्मेदारी की बातिल (शून्य) माँग का उल्लेख है न कि वाहिब (दाता) की जिम्मेदारी की माँग का।

---

[1] फतावा हिन्दिया, किताब अल-कफाला, अध्याय एक, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 3/252। [2] दुर्र अल-मुख्तार अल-तरतुसी का हवाला देते हुए, किताब अल-कफाला, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 2/63। [3] रद्द अल-मुह्तार, किताब अल-कफाला, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 4/251।

पृष्ठ ६९५/७१५

کما نص علیه فی البحر الرائق والخیریة وغیرها و قدبیناه في النکاح من فتاؤنا جیسا کہ بحر الرائق اور خیریہ وغیرہ میں ہے اور ہم اس کو اپنے فتاوٰی کی کتاب النکاح میں بیان کر چکے ہیں۔ (ت)

محیط ہندیہ میں ہے:

اما رکنها فالا یجا ب والقبول عند ابی حنیفة و محمد رحمهما الله تعالی وهو قول ابی یوسف رحمه الله تعالی اولا حتی ان الکفالة لا تتم بالکفیل وحده سواء کفل بالمال او بالنفس مالم یوجد قبول المکفول له او قبول اجنبی عنه فی مجلس العقد او خطاب المکفول له او خطاب اجنبی عنه اما اذا لم یوجد شیئ من ذلك فانها لا تقف علی ماوراء المجلس حتی لو بلغ الطالب فقبل لم تصح- 1 | امام ابو حنیفہ و امام محمد رحمۃ اللہ تعالٰی علیہما کے نزدیک کفالہ کا رکن ایجاب و قبول ہے اور امام ابویوسف رحمہ اللہ تعالٰی کا پہلا قول بھی یہاں تک اکیلے کفیل سے کفالہ تام نہیں ہونا چاہئے وہ مال کی کفالت کرے یا نفس کی جب تک مکفول لہ یا اس کی جانب سے کسی اجنبی شخص کا قبول یا خطاب نہ پایا جائے اگر ان میں سے کچھ بھی نہ پایا گیا تو یہ ماورائے مجلس پر موقوف نہ ہوگا یہاں تک کہ اگر طالب تک خبر پہنچی اور اس نے قبول کرلیا تو کفالہ صحیح نہ ہوگا۔ (ت)

منح الغفار میں امام طرطوسی سے ہے: الفتوی علی قولهما 2(فتوٰی طرفین کے قول پر ہے۔ت)

ردالمحتار میں ہے:

درر اور بزازیہ میں ہے کہ امام ثانی (ابویوسف) کے قول پر فتوٰی دیا جاتا ہے اور انفع الوسائل وغیرہ میں ہے کہ فتوٰی طرفین کے قول پر ہے۔ (ت) | فی الدرر و البزازیة وبقول الثانی یفتی و فی انفع الوسائل وغیره الفتوی علی قولهما- 3

ظاہر ہے کہ قبول ہبہ یا اخذ ہبہ نامہ کے وقت رئیس کی طرف سے کوئی قبول کرنے والا نہ تھا اور ہبہ نامہ کے لفظ اس کے ایجاب نہیں ہو سکتے کہ اس میں مطالبہ باطلہ ذمنگی جائیداد کا ذکر ہے نہ کہ مطالبہ ذمنگی واہب کا۔

---

1 فتاویٰ ہندیہ کتاب الکفالہ الباب الاول نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۵۲ 2 درمختار بحوالہ الطرطوسی کتاب الکفالہ مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۶۳ 3 ردالمحتار کتاب الکفالہ داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۲۵۱

Volume 17 - Fatawa Razawiya

And suppose that at that time, an offer or acceptance of this valid guarantee was made from the side of the state, or by some stranger, then an element of guarantee from a meddler (fuzuli) has been found. The guarantee is concluded but depends on the approval of the state. It is stated in Muhit and Hindiyyah:

[Arabic Boxed Text] "A stranger says to another, 'Guarantee the person of so-and-so or the property for so-and-so for so-and-so,' and that other person says, 'I have become a guarantor,' the guarantee is valid. It remains dependent on the approval of the creditor (makful lahu) after the session. The guarantor has the right to withdraw from the guarantee before the absent person approves his guarantee." [Urdu translation of boxed text]: A stranger said to someone else, "Be a guarantor for the person of so-and-so or for the property of so-and-so for so-and-so," and that other person says, "I have become a guarantor," then the guarantee (kafala) will be correct and will remain dependent on the permission of the creditor (makful lahu) after the assembly. And the guarantor will have the option to exclude himself from the guarantee before the creditor gives permission for the guarantee. (T)

However, the state was not informed of this valid matter, nor was it approved by them. Instead, approval was given for the same invalid matter that the property should remain guaranteed as before. Therefore, this guarantee remained ineffective. Thus should be the investigation, and Allah the Exalted is the Bestower of Success. (So it should be investigated and Allah Almighty alone is the Master of success. T). And Allah Almighty knows best.

Problem 289: Sent by Syed Maqbool Isa Sahib, Sadat Nau Mahalla, from Jaora State, Malwa region, 1327 AH.

What do the scholars of the religion say in this matter that a Muslim man, who follows the Muhammadi Shariah, whose name is Jumma, married Musammat daughter of Pyari on Shari'a dower with his own consent. He declared that besides the maintenance and food for his wife, I, Jumma, will also take responsibility for the food and drink expenses of my mother-in-law, because of her poverty. If I do not provide for my mother-in-law's (Musammat Pyari) food and drink expenses in the house, then Khuda Bakhsh, whose signature is on this agreement as guarantor, will pay. Now that the situation for providing food and drink for Musammat Pyari has occurred, Jumma and his guarantor are essentially confessors according to the content of the document, but they are making excuses and delaying the provision of

food and drink expenses. Accordingly, a copy of the document is also sent for the observation of the noble Muftis. Please grant a reply in light of the Hadiths. Explain and you will be rewarded.

1. Fatawa Hindiyyah, Book of Kafala (Guarantee), Chapter 1, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/252.

जिल्द 17 - फतावा रजविया

और मान लीजिए कि उस समय रियासत की ओर से इस वैध ज़मानत (कफ़ालत) का प्रस्ताव या स्वीकृति हुई, या किसी अजनबी व्यक्ति ने की, तो अब फ़ुज़ूली (बिन बुलाए सहायक) की ओर से ज़मानत का एक तत्व पाया गया। कफ़ालत संपन्न हो गई लेकिन रियासत की अनुमति पर निर्भर रही। मुहीत और हिन्दिया में है:

[अरबी बॉक्स] "यदि कोई अजनबी दूसरे से कहे, 'अमुक व्यक्ति की ज़ात या अमुक के लिए अमुक के माल की ज़मानत दे दो,' और वह दूसरा कहे, 'मैंने ज़मानत दे दी,' तो ज़मानत सही है। यह सभा के बाद ऋणदाता (मकफ़ूल लहू) की अनुमति पर निर्भर रहेगी। ज़ामिन (कफ़ील) को अधिकार है कि वह अनुपस्थित व्यक्ति द्वारा ज़मानत स्वीकार करने से पहले स्वयं को ज़मानत से बाहर कर ले।" [बॉक्स का उर्दू अनुवाद]: एक अजनबी ने दूसरे से कहा कि तू फलां के नफ़्स (व्यक्ति) का या फलां के लिए फलां के माल का कफ़ील (ज़ामिन) बन जा और वह दूसरा कहे कि मैं कफ़ील बन गया तो कफ़ाला सही होगा और मजलِس (सभा) के बाद मकफ़ूल लहू (लेनदार) की इजाज़त पर मौक़ूफ़ (निर्भर) रहेगा और कफ़ील को अधिकार होगा कि मकफ़ूल लहू के कफ़ाला की इजाज़त देने से पहले खुद को कफ़ाला से ख़ारिज (अलग) कर ले। (त)

लेकिन रियासत को इस जायज़ (वैध) बात की सूचना नहीं दी गई और न ही उनकी ओर से इसकी मंजूरी हुई, बल्कि उसी बातिल (अमान्य) बात की मंजूरी हुई कि संपत्ति पूर्ववत ज़मानत में रहे। फिर यह कफ़ालत बेअसर रही। इसी प्रकार शोध होना चाहिए और अल्लाह सुब्हानहू ही तौफ़ीक़ देने वाला है (ऐसा ही शोध होना चाहिए और अल्लाह तआला ही तौफ़ीक़ का मालिक है। त)। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसला 289: प्रेषक: सैयद मक़बूल ईसा साहब, सादात नौ महल्ला, रियासत जावरा, मुल्क मालवा। 1327 हिजरी।

क्या फरमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस मसले में कि एक मुस्लिम व्यक्ति, जो शरीअत-ए-मुहम्मदी का पालन करता है, जिसका नाम जुम्मा है, उसने मुसमात (बेटी प्यारी) से शरीअत के मेहर पर अपनी रज़ामंदी से निकाह किया और इकरार किया कि अपनी पत्नी के खान-पान और गुज़ारे के अलावा मैं अपनी सास (खुशदामन) को भी, उनकी तंगहाली के कारण, खाने-पीने का खर्च अपने ज़िम्मे लूंगा। और अगर घर में सास यानी मुसमात प्यारी को खाने-पीने का खर्च न दूँ तो खुदा बख्श ज़ामिन

(ज़मानतदार), जिसके इस इकरारनामे पर दस्तखत हैं, वह देगा। अब मुसमात प्यारी के खाने-पीने का समय आ गया है तो जुम्मा और उसका ज़ामिन दस्तावेज़ की विषय-वस्तु के अनुसार इकरार कर चुके हैं, लेकिन खाने-पीने का खर्च देने में टाल-मटोल कर रहे हैं। तदनुसार, दस्तावेज़ की नकल भी मुफ़्तियान-ए-किराम के अवलोकन हेतु भेजी जा रही है। अहादीस की रोशनी में जवाब इनायत फरमाएं। बयान करें और सवाब पाएं।

1. फतावा हिन्दिया, किताबुल कफ़ाला, बाब अव्वल, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/252।

اور اگر فرض کیجئے کہ جانب ریاست سے اس وقت اس کفالتِ جائز ہ کا ایجاب یا قبول ہوا ہو خواہ کسی شخص اجنبی نے کیا تو اب ایک رکن کفالت جانب فضولی سے پایا گیا کفالت منعقد ہو کر اجازت ریاست پر موقوف رہی، محیط وہند یہ میں ہے:

قال اجنبی لغیرہ اکفل بنفس فلان او بمال عن فلان لفلان فیقول ذلک الغیر کفلت تصح الکفالۃ و تقف علی ماوراء المجلس علی اجازۃ المکفول لہ و للکفیل ان یخرج عن الکفالۃ قبل ان یجیز الغائب کفالتہ 1

-

اجنبی نے غیر سے کہا کہ تو فلان کے نفس کا یا فلاں کے لئے فلاں کے مال کا کفیل بن جاؤں اور وہ غیر کہے کہ میں کفیل بن گیا تو کفالہ صحیح ہوگا اور مجلس کے بعد مکفول لہ کی اجازت پر موقوف رہے گا اور کفیل کو اختیار ہوگا کہ مکفول لہ کے کفالہ کی اجازت دینے سے پہلے خود کو کفالہ سے خارج کرلے۔ (ت)

مگر ریاست کو اس امر جائز کی اطلاع نہ دی گئی نہ اس کی جانب سے اس کی منظوری ہوئی بلکہ منظوری اسی امر باطل کی ہوئی کہ جائداد بدستور مکفول رہے پھر یہ کفالت بے اثر رہی، ھکذا ینبغی التحقیق واللہ سبحانہ ولی التوفیق (یونہی تحقیق چاہئے اور اللہ تعالٰی ہی توفیق کا مالک ہے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۸۹: مرسلہ سید مقبول عیسٰی صاحب سادات نو محلہ از ریاست جاورہ ملک مالوہ ۱۳۲۷ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص مسلمان جو تابع شریعت محمدی ہے جس کا نام جمعہ ہے اس نے مسماۃ بنت پیاری سے مہر شرعی پر عقد برضامندیِ خود بہ اقرار کہ

علاوہ نان و نفقہ زوجہ کے میں جمعہ اپنی خوشدامن کو بھی بوجہ عسرت خوردونوش کے تکلیف ہو گی تو میں ان کے خوردونوش کا صرفہ بھی اپنے ذمہ لوں گا اور گھر میں صرفِ خوردونوش خوشدامن یعنی مسماۃ پیاری کا نہ دوں تو خدا بخش ضامن جس کے اقرار نامہ ہذا پر دستخط ہیں دے گا اب مسماۃ پیاری کو خوردونوش واقعہ ہوئے تو جمعہ اور اس کا ضامن بالا صالہ مضمون دستاویز سے اقراری ہیں مگر صرفہ خوردونوش دینے سے حجت و حیلہ حوالہ کرتے ہیں، چنانچہ نقل دستاویز بھی بنا پر ملاحظہ مفتیانِ کرام ارسال ہے از روئے احادیث جواب مرحمت فرمایا جائے۔ بینوا توجروا

۱ فتاوٰی ہندیہ کتاب الکفالۃ الباب الاول نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۵۲

Volume 17 Fatawa Razawiyya

The Answer: Legally, the maintenance of the beloved (wife) was not the responsibility of Jum'ah. His writing that if his mother-in-law ever faced difficulty in food and drink, he would provide for her from his own pocket was merely a promise of benevolence, and benevolence cannot be compelled.

Indeed, the jurists have explicitly stated unanimously that there is no compulsion on the one who does a voluntary act of kindness. Allah Almighty said, "There is no way (of blame) against the doers of good." [1] Verification: All jurists have clarified that no compulsion will be placed upon the one who does a favor. And Allah Almighty said: "There is no ground (of complaint) against those who do good." (T)

And when it was not obligatory upon Jum'ah himself, then the guarantee given by Khuda Bakhsh, who signed the agreement saying, "According to the agreement written by Jum'ah, I, Khuda Bakhsh, am the guarantor, and I accept this guarantee," also became null and void and ineffective. For when there is no demand on the original party, what demand can there be on the guarantor?

As stated in Radd al-Muhtar from Al-Bahr from Al-Bada'i: "As for the conditions of the guaranteed obligation (makful bihi), the first is that it must be an obligation on the original party, etc." [2] As quoted in Radd al-Muhtar from Al-Bahr with reference to Al-Bada'i, among the conditions for the guaranteed obligation is that it should be subject to guarantee on the original party, etc. (T)

In Durr al-Mukhtar it is stated: "The condition for guarantee (kafalah) in debt is that it be a valid (sahih) debt, not a weak one, like the payment for manumission (kitabah). Therefore, what is not a debt at all is, by priority of reason, not valid for guarantee." An-Nahr [3] The condition for kafalah in debt is that the debt be valid and not weak, like the replacement for kitabah; and that which is not a debt at all, its guarantee is by priority of reason not valid. Nahr (T)

However, it is better for Jum'ah that if there is no valid excuse, he should fulfill his promise, for fulfilling a promise is among the noble traits of character. (Because fulfilling a promise is among the highest of noble morals. -T) And Allah Almighty knows best.

Problem 290: From Rampur state, sent by Syed Muhammad Anwar Hussain, ancient resident of town Kundarki, currently residing in Rampur state, 25 Jumadi al-Ula 1327 AH. In the name of Allah, the Most Beneficent, the Most Merciful. To the presence of

the most holy, great researcher and scholar, the virtuous one of Bareilly, may their grace be lofty.

---

1. Al-Quran Al-Karim 9/91
2. Radd al-Muhtar, Kitab al-Kafalah, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut 4/251
3. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Kafalah, Matba Mujtabai Delhi 2/59

जिल्द सत्रह (17) फ़तावा रज़विया

उत्तर: क़ानूनी तौर पर जुमा की ज़िम्मेदारी में प्यारी (पत्नी) का भरण-पोषण (नफ़क़ा) वाजिब नहीं था। उसका यह लिख देना कि अगर मेरी सास को कभी खाने-पीने की तकलीफ़ होगी तो उनके खाने-पीने का भी मैं अपनी तरफ़ से दूँगा, केवल एक एहसान का वादा था और एहसान पर ज़बरदस्ती नहीं की जा सकती।

फ़ुक़हा (विधिवेत्ताओं) ने स्पष्ट रूप से सर्वसम्मति से कहा है कि स्वेच्छा से उपकार करने वाले पर कोई ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं है। अल्लाह तआला ने फ़रमाया, "भलाई करने वालों पर कोई रास्ता (इल्ज़ाम का) नहीं है।" [1] तर्क तमाम फ़ुक़हा ने इसकी स्पष्टता की है कि एहसान करने वाले पर कोई ज़बरदस्ती नहीं होगी। और अल्लाह तआला ने फ़रमाया: एहसान करने वालों पर कोई रास्ता नहीं है। (त)

और जब वह स्वयं जुमा पर वाजिब नहीं था, तो ख़ुदा बख़्श जिसने ज़मानत दी और इक़रारनामे पर दस्तख़त किए कि "जुमा के लिखे हुए इक़रारनामे के अनुसार मैं ख़ुदा बख़्श ज़ामिन हूँ, मुझे यह ज़मानत मंज़ूर है," यह ज़मानत भी पूरी तरह से शून्य और बेअसर हो गई। क्योंकि जब मूल व्यक्ति पर ही कोई माँग नहीं है, तो ज़ामिन (गारंटर) पर क्या माँग होगी?

जैसा कि रद्दुल मुहतार में अल-बहर से अल-बदाइ' के हवाले से है: "जहाँ तक ज़मानत दी गई चीज़ (मकफ़ुल बिही) की शर्तों का संबंध है, पहली शर्त यह है कि वह मूल पक्ष पर ज़मानत योग्य हो, इत्यादि।" [2] जैसा कि रद्दुल मुहतार में अल-बहर से अल-बदाइ' के हवाले से उद्धृत है कि मकफ़ुल बिही की शर्तों में पहली यह है कि वह मूल पर ज़मानत के क़ाबिल हो। इत्यादि (त)

दुर्रे मुख़्तार में है: "क़र्ज़ में कफ़ाला (ज़मानत) की शर्त यह है कि वह क़र्ज़ सही (वैध) हो, कमज़ोर न हो जैसे किताबत का बदला। इसलिए जो क़र्ज़ ही नहीं है, वह प्राथमिकता के साथ ज़मानत के लिए सही नहीं है।" अन-नहर [3] क़र्ज़ में कफ़ाला की शर्त यह है कि वह क़र्ज़ सही हो, कमज़ोर न हो जैसे बदल-ए-किताबत; और जो क़र्ज़ ही नहीं, उसकी कफ़ालत प्राथमिकता के आधार पर सही नहीं है। नहर (त)

बहरहाल, जुमा के हक़ में बेहतर यह है कि अगर कोई उचित कारण न हो तो वह अपना वादा पूरा करे, क्योंकि वादे को पूरा करना उच्च नैतिक गुणों में से है। (चूँकि वादे को पूरा करना महान उदार आचरण में से है। -त) और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसला 290: रियासत रामपुर से, प्रेषक सैयद मोहम्मद अनवर हुसैन, प्राचीन निवासी कस्बा कुंदरकी, हाल निवासी रियासत रामपुर, 25 जमादी-उल-उला 1327 हिजरी। बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम। हज़रत अक़दस अल्लामा मुहक़्क़िक़ ओ फ़हामा, फ़ाज़िल-ए-बरेलवी, अल्लाह उनके फ़ैज़ को बुलंद करे।

---

1. अल-क़ुरआन अल-करीम 9/91
2. रद्दुल मुहतार, किताबुल कफ़ाला, दार इहया अत-तुरास अल-अरबी बैरुत 4/251
3. दुर्रे मुख़्तार, किताबुल कफ़ाला, मतब-ए-मुज्तबाई दिल्ली 2/59

الجواب: پیاری کا نفقہ شرعاً ذمہ جمعہ واجب نہ تھا اور اس کا یہ لکھ دینا کہ اگر میری خوشدامن کو کبھی خوردونوش کی تکلیف ہو گی تو ان کے خوردونوش کا بھی صرف میں اپنے پاس سے دوں گا محض ایک احسان کا وعدہ تھا اور احسان پر جبر نہیں پہنچتا۔

فقد صرحوا قاطبۃ ان لا جبر علی المتبرع و قال اللہ تعالٰی "مَا عَلَی الْمُحْسِنِیْنَ مِنْ سَبِیْلٍ" ط ۱۔ تحقیق تمام فقہاء نے اس کی تصریح کی کہ احسان کرنے والے پر کوئی جبر نہیں ہوگا اور اللہ تعالی نے فرمایا: احسان کرنے والوں پر کوئی راہ نہیں۔ (ت)

اور وہ جب خود جمعہ پر واجب نہ تھا تو خدا بخش جس نے ضمانت کی اور اقرار نامہ پریوں دستخط کئے کہ بموجب اقرار نامہ نوشتہ جمعہ جی میں خدا بخش ضامن ہوں مجھ کو یہ ضمانت منظور ہے یہ ضمانت بھی محض باطل و بے اثر ہوئی کہ جب اصل ہی پر مطالبہ نہیں ضامن پر کیا ہوگا۔

کما ھوا فی ردالمحتار عن البحر عن البدائع اما شرائط المکفول بہ فالاول ان یکون مضمونا علی الاصل الخ ۲۔ جیسا کہ ردالمحتار میں بحر سے بحوالہ بدائع منقول ہے کہ مکفول بہ کی شرطوں میں سے پہلی یہ کہ وہ اصل پر قابل ضمان ہو۔ الخ (ت)

در مختار میں ہے: شرطھا فی الدین کونہ صحیحا لا ضعیفا کبدل کتابۃ فمالیس دینا بالاولی نہر ۳۔ دین میں کفالہ کی شرط یہ ہے کہ وہ دین صحیح ہو ضعیف نہ ہو جیسے بدل کتابت اور جو دین ہی نہیں اسکی کفالت بدرجہ اولی صحیح نہیں نہر (ت)

البتہ جمعہ کے حق میں اولی یہ ہے کہ اگر کوئی عذر صحیح نہ ہو تو اپنا وعدہ پورا کرے فان الوفاء من مکارم الاخلاق (کیونکہ وعدہ کو پورا کرنا اعلی اخلاق کریمانہ میں سے ہے۔ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۹۰: از ریاست رام پور مرسلہ سید محمد انوار حسین متوطن قدیم قصبہ کندر کی حال مقیم ریاست رام پور ۲۵ جمادی الاولٰی ۱۳۲۷ھ بسم اللہ الرحمن الرحیم، بحضرت اقدس علامہ محقق و فہامہ مدقوفاضل بریلی فیضہم العالی

---

۱ القرآن الکریم ۹/۹۱ ۲ ردالمحتار کتاب الکفالۃ داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۲۵۱ ۳ درمختار کتاب الکفالۃ مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۵۹

Fatawa Razawiyya Volume 17

To all Muslims, Peace be upon you. With great respect, I submit to your presence that you had granted three fatwas regarding the attachment (liens) of property, which were presented in the Civil Court of Rampur State. Based on these, the honorable Mufti of the Civil Court of Rampur State issued a decree in favor of the defendant, referencing your fatwas, and proposed: (This case is filed on the basis of a lease guarantee, that the plaintiff had pledged his property in the lease of the defendant. Therefore, first and foremost, the resolution of this matter is necessary. The defendant has presented some fatwas of Mr. Maulvi Ahmad Raza Khan Sahib Barelvi. The learned Barelvi has proven that such financial guarantee, which is under discussion in this case, is Sharia-wise illegitimate. On behalf of the plaintiff, no Sharia-based argument or state order was presented in refutation. The court considered the Sharia issues and found the fatwa presented by the defendant to be correct and worthy of compliance. In such a situation, when the aforementioned guarantee is also not permissible, the money deposited by the plaintiff with the government on account of the said guarantee cannot Sharia-wise be a debt of the defendant, and Section 79 of the Hamidiya Law is not beneficial to the plaintiff but rather irrelevant to the case.) Lakshmi Narayan, the unsuccessful plaintiff, being dissatisfied with the proposal of the Civil Mufti, filed an appeal. In the appellate court, he presented a fatwa from your presence in support, claiming that such a guarantee is Sharia-wise permissible. By writing several incorrect facts in his query, he obtained a fatwa from you. The matters recorded in the said query which are contrary to the facts are as follows:

(1) It is written regarding Section 79 of the Hamidiya Constitution that any person who, in the revenue department, guarantees a government demand and deposits the money into the treasury, has the right to file a claim against the original lessee to recover his deposited amount. This is not the content of Section 79 of the Hamidiya Constitution at all; rather, the said section is subject to Sections 77 and 78. The intent of Section 77 is that when any property is pledged by a lessee, the owner of the property has the right to file an objection within a period of fifteen days. And once the attachment is approved, then according to the intent of Section 79, after the approval of the guarantee, any person's objection regarding the attachment by filing a lawsuit will not be maintainable in any court. However, against the land revenue, the objector may legally file a suit for damages in the civil court according to the procedure. The summary of which is that if a lessee pledges someone's property

without their consent, the property owner cannot sue for release after approval, but can sue for damages. This is not the case here because the property owner himself had his property pledged, as the Mufti Sahib has written that Section 79 of the Hamidiya Constitution is not relevant.

(2) The petitioner also wrote in his query that 'Amr' gave a guarantee with his property, which implies that Amr stood as a guarantor, whereas Amr did not give a guarantee but had his property pledged via a guarantee deed (Kafalat Nama).

तमाम मुसलमानों पर सलाम हो। अत्यंत विनम्रतापूर्वक, मैं आपकी सेवा में निवेदन करता हूँ कि आपने संपत्ति की कुर्की (इस्तिग़राक़) के संबंध में तीन फ़तवे प्रदान किए थे, जो रामपुर राज्य के दीवानी न्यायालय में प्रस्तुत किए गए थे। उन्हीं के आधार पर रामपुर राज्य के दीवानी न्यायालय के माननीय मुफ़्ती साहब ने आपके फ़तवों का हवाला देते हुए प्रतिवादी के पक्ष में डिक्री जारी की और यह प्रस्ताव दिया (यह मामला पट्टे की जमानत के आधार पर दायर किया गया है, कि वादी ने प्रतिवादी के पट्टे में अपनी संपत्ति गिरवी रखी थी। इसलिए, सबसे पहले इस मामले का निपटारा आवश्यक है। प्रतिवादी ने माननीय मौलवी अहमद रज़ा खान साहब बरेलवी के कुछ फ़तवे पेश किए हैं। विद्वान बरेलवी ने यह साबित किया है कि ऐसी वित्तीय जमानत, जो इस मामले में विचाराधीन है, शरीयत के अनुसार नाजायज़ है। वादी की ओर से इनके खंडन में कोई शरीय दलील या राज्य का आदेश प्रस्तुत नहीं किया गया। न्यायालय ने शरीय मसलों पर विचार किया और प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत फ़तवे को सही और पालन के योग्य पाया। अतः ऐसी स्थिति में, जब उक्त जमानत भी जायज़ नहीं है, तो वादी ने उक्त जमानत के कारण जो रुपया सरकारी खजाने में जमा किया है, वह शरीयत की दृष्टि से प्रतिवादी पर ऋण नहीं हो सकता और हामिदिया कानून की धारा 79 वादी के लिए लाभदायक नहीं है, बल्कि मामले की स्थिति से असंगत है)। असफल वादी लक्ष्मी नारायण ने दीवानी मुफ़्ती साहब के प्रस्ताव से असंतुष्ट होकर अपील दायर की और अपील न्यायालय में आपके द्वारा प्रदान किया गया एक फ़तवा इस समर्थन में पेश किया कि ऐसी जमानत शरीयत के अनुसार जायज़ है। अपने प्रश्न में कई गलत तथ्य लिखकर उन्होंने आपसे फ़तवा प्राप्त किया। उक्त प्रश्न में दर्ज वे बातें जो तथ्यों के विपरीत हैं, निम्नलिखित हैं:

(१) हामिदिया संविधान की धारा 79 के विषय में यह लिखा गया है कि राजस्व विभाग में जो व्यक्ति सरकारी मांग की जमानत देकर रुपया सरकारी खजाने में जमा करता है, उसे मूल पट्टेदार पर दावा करके अपनी जमा राशि वसूल करने का अधिकार प्राप्त है। हामिदिया संविधान की धारा 79 का यह विषय बिल्कुल नहीं है, बल्कि उक्त धारा 77 और 78 के अधीन है। धारा 77 की मंशा यह है कि जब कोई पट्टेदार किसी संपत्ति को गिरवी रखता है, तो संपत्ति के स्वामी को पंद्रह दिनों की अवधि के भीतर आपत्ति दर्ज करने का अधिकार प्राप्त होता है। और जब कुर्की (इस्तिग़राक़) स्वीकृत हो जाती है, तो धारा 79 की मंशा के अनुसार, जमानत की स्वीकृति के बाद, कुर्की के संबंध में किसी भी व्यक्ति की आपत्ति किसी भी न्यायालय में वाद दायर करने पर विचारणीय नहीं होगी। हाँ, मालगुज़ारी

के विरुद्ध आपत्ति करने वाला दीवानी न्यायालय में नियमानुसार क्षतिपूर्ति का दावा कर सकता है। जिसका सारांश यह है कि यदि कोई पट्टेदार किसी व्यक्ति की संपत्ति को उसकी सहमति के बिना स्वयं गिरवी रख देता है, तो संपत्ति का स्वामी स्वीकृति के बाद कुर्की हटाने का वाद नहीं कर सकता, बल्कि क्षतिपूर्ति का वाद कर सकता है। यहाँ मामला ऐसा नहीं है क्योंकि संपत्ति के स्वामी ने स्वयं अपनी संपत्ति गिरवी रखवाई है, जैसा कि मुफ़्ती साहब ने लिखा है कि हामिदिया संविधान की धारा 79 संबंधित नहीं है।

(२) याचिकाकर्ता ने अपने प्रश्न में यह भी लिखा है कि 'अम्र' ने अपनी संपत्ति से जमानत दी, जिसका अर्थ यह होता है कि अम्र ने स्वयं जमानत दी, जबकि अम्र ने जमानत नहीं दी है, बल्कि अपनी संपत्ति को जमानत-नामे (कफ़ालत नामा) के माध्यम से गिरवी रखवाया है।

पृष्ठ 698 का 715

علی کافتہ المسلمین، السلام علیکم، بصد ادب حضور والا میں عرض پرداز ہوں کہ حضور نے تین فتوے متعلق استغراق جائداد عطا فرمائے جو عدالت دیوانی ریاست رام پور میں پیش کئے گئے جن کی بنیاد پر جناب مفتی صاحب عدالت دیوانی ریاست رام پور نے بحوالہ فتوؤں حضور کے ڈگری بحق مدعا علیہ کے صادر فرمائی اور یہ تجویز فرمایا (یہ مقدمہ بربنائے کفالت مستاجری دائر ہے کہ مدعی نے مدعا علیہ کی مستاجری میں اپنی جائداد مکفول کی تھی لہذا سب سے پہلے اس امر کا انفصال ضروری ہے مدعا علیہ نے جناب مولوی احمد رضا خاں صاحب بریلوی کے چند فتوے پیش کئے ہیں فاضل بریلوی نے اس امر کو ثابت کیا ہے کہ ایسی کفالت بالمال جو اس مقدمہ میں زیر بحث ہے شرعاً ناجائز ہے منجانب مدعی ان کی تردید میں کوئی شرعی استدلال یا حکم ریاست پیش نہیں کیا، عدالت نے مسائل شرعیہ پر غور کیا تو فتوٰی پیش کردہ مدعا علیہ صحیح ولائق پابندی ہیں پس ایسی حالت میں جبکہ کفالت مذکورہ بھی جائز نہیں تو مدعی نے جو روپیہ بوجہ کفالت مذکور داخل سرکار کیا ہے اس کا دین دار مدعا علیہ شرعاً نہیں ہو سکتا اور دفعہ ۷۹، قانون حامدیہ مفید مدعی نہیں ہے بلکہ صورت مقدمہ سے غیر متعلق ہے) لچھمی نرائن مدعی ناکامیاب نے بنا راضی تجویز مفتی صاحب دیوانی اپیل دائر کیا اور عدالت اپیل میں ایک فتوٰی حضور والا کا اس تائید میں پیش کیا کہ ایسی کفالت شرعاً جائز ہے اور اپنے سوال میں چند واقعات غیر صحیح تحریر کر کے جناب والا سے فتوٰی حاصل کیا سوال مذکور میں جو امور خلاف واقعہ درج کئے ہیں وہ حسب ذیل ہیں :

(۱) دفعہ ۷۹ آئین حامدیہ کا یہ مضمون تحریر کیا ہے کہ صیغہ مال میں جو شخص مطالبہ سرکاری کی ضمانت کر کے روپیہ سرکار میں داخل کرے اس کو اس اصل مستاجر پر دعوٰی

رجوع کر کے زر مداخلہ اپنا وصول کرنے کا اختیار حاصل ہے یہ مضمون دفعہ ۷۹ آئین حامدی کا ہر گز نہیں ہے بلکہ دفعہ مذکور تابع دفعہ ۷۷ ، ۷۸ کے ہے، دفعہ ۷۷ کا منشا یہ ہے کہ جب کوئی جائداد مستاجر مکفول کرے تو مالک جائداد کو حق عذرداری مابین میعاد پندرہ روز حاصل ہے اور جب استغراق منظور ہو جائے تو حسب منشا دفعہ ۷۹ بعد منظوری ضمانت کے استغراق کی نسبت کسی شخص کی عذرداری بارجاع نالش کسی عدالت میں قابل سماعت نہ ہو گی البتہ بمقابلہ مالگزاری کے عذر دار مجازی دعویٰ ہرجہ کا عدالت دیوانی میں حسب ضابطہ ہو سکتا ہے جس کا خلاصہ یہ ہے کہ اگر مستاجر کسی شخص کی جائداد بلا اسکی مرضی کے خود مکفول کر دے تو مالک جائداد بعد منظوری واگذاشت کی نالش نہیں کر سکتا بلکہ ہرجہ کی نالش کر سکتا ہے یہاں ایسا نہیں ہے کیونکہ مالک جائداد نے خود اپنی جائداد مکفول کرائی ہے جیسا کہ مفتی صاحب نے تحریر فرمایا ہے کہ دفعہ ۷۹ آئین حامدیہ متعلق نہیں۔

(۲) سائل نے اپنے سوال میں یہ بھی تحریر کیا ہے کہ عمرو نے ضمانت اپنی جائداد سے کی جس کا مفہوم ہوتا ہے کہ عمرو نے ضمانت کی حالانکہ عمرو نے ضمانت نہیں کی ہے بلکہ اپنی جائداد کو مکفول کرایا ہے کفالت نامہ

Fatawa Razawiya Volume 17

...the copy of which is included in this petition, from which it is clear that Amr has not provided a guarantee, but has rather pledged the property as security. (3) The third point in the question falsely presents that Zaid's excuse is that financial suretyship (Kafalat bil-Maal) is prohibited by Sharia. This is not my (the defendant's) excuse at all. Rather, my excuse is that pledging property for any claim is permissible by Sharia, meaning that involving the entire property in a guarantee is permissible by Sharia. (4) The fourth point in the question also incorrectly states that Amr guaranteed Zaid's leasehold upon Zaid's request with his own property. This event is entirely false; the Mufti has not declared this event proven. Based on this incorrect and inconsistent question, Your Presence (the Mufti) decreed that financial suretyship is prohibited by Sharia. Therefore, Your Excellence! I am presenting the copies of all three fatwas, which are on plain paper, the copy of the decision of the Civil Mufti, the copy of the final fatwa obtained through the formal court, the copy of the agreement of suretyship, and the laws of 'Aeen-e-Hamidiya' along with this petition to the exalted court. I am hopeful that Your Presence will review all three previous fatwas and the subsequent fatwa, as well as the decision of the Civil Mufti, the copy of the agreement of suretyship, and Sections 77 to 79 of the mentioned law, and decree whether the three previous fatwas presented by Anwar Hussain (defendant) align with the plaintiff's lawsuit, or if the final fatwa presented by Pachi Narain (plaintiff) pertains to the case. Is the defendant's excuse acceptable by Sharia, or the plaintiff's? Beyond limits of respect.

Answer: The Dar-ul-Ifta is not a Dar-ul-Qaza (court of justice); investigations of facts do not happen here. Answers are given based on the form of the question. The last question was presented by Ahmad Khan Rampuri, a court employee in Bareilly, an officer of copies (who stated based on this current question and the review of the Mufti's proposal and other documents submitted by the petitioner that it was a question from the Hindu plaintiff, related to the same case for which several questions were presented in the Dar-ul-Ifta by Munshi Sayyid Anwar Hussain Rampuri through Mirza Nazir Baig, former Deputy Tehsildar of Bareilly, and were answered on 9 Rabi-ul-Akhir 1336 AH). In that question, it was stated that Zaid requested Amr for a guarantee, and Amr gave the guarantee upon his request, and Zaid claims financial suretyship is prohibited; what is the ruling on this? The answer was that financial suretyship is certainly valid. When the guarantor becomes a surety at the request of the principal debtor (Makful 'anhu), he can undoubtedly demand

the payment of the money. The two words "with his property" in the question were superfluous. When Amr became a surety at Zaid's request, meaning he joined his liability with Zaid's, the guarantee was completed, whether it was done with cash, property, or just verbally. All three methods are prevalent, and the essence is the joining of liabilities...

...की प्रति इस याचिका में शामिल है, जिसके अवलोकन से यह स्पष्ट है कि अम्र ने ज़मानत नहीं दी है, बल्कि संपत्ति को बंधक (मकफ़ूल) कराया है। (3) प्रश्न का तीसरा विषय गलत तरीके से यह दर्शाता है कि ज़ैद का यह बहाना है कि माल की ज़मानत (कफ़ालत बिल-माल) शरिया में अवैध है। यह मुझ प्रतिवादी का बहाना कतई नहीं है, बल्कि मेरा बहाना यह है कि किसी दावे के संबंध में संपत्ति को बंधक बनाना शरिया में जायज़ है, अर्थात ज़मानत में संपत्ति को शामिल करना शरिया में जायज़ है। (4) प्रश्न का चौथा विषय भी गलत दर्ज किया गया है कि ज़ैद के अनुरोध पर अम्र ने अपनी संपत्ति से उसकी लीज़ की ज़मानत ली। यह घटना बिल्कुल गलत है, मुफ्ती साहब ने इस घटना को प्रमाणित नहीं माना है। इस गलत और असंगत प्रश्न के आधार पर हुज़ूर ने यह निर्णय दिया कि माल की ज़मानत शरिया में अवैध है। इसलिए, हे महामहिम! मैं तीनों फ़तवों की प्रतियाँ, जो सादे कागज़ पर हैं, दीवानी मुफ्ती साहब के फैसले की प्रति, अंतिम फ़तवे की प्रति जो विधिवत अदालत से प्राप्त की गई है, ज़मानत के इकरारनामे की प्रति और 'आइन-ए-हामीदिया' के कानून को इस याचिका के साथ आपके दरबार में प्रस्तुत कर रहा हूँ। मुझे आशा है कि हुज़ूर तीनों पिछले फ़तवों और बाद के फ़तवे पर पुनर्विचार करेंगे और दीवानी मुफ्ती साहब के फैसले, ज़मानत के इकरारनामे की प्रति और उक्त कानून की धारा 77 से 79 का अवलोकन करके आदेश देंगे कि क्या अनवर हुसैन (प्रतिवादी) द्वारा प्रस्तुत तीनों पिछले फ़तवे वादी के मुकदमे के अनुरूप हैं, या पची नारायण (वादी) द्वारा प्रस्तुत अंतिम फ़तवा मुकदमे से संबंधित है। और क्या प्रतिवादी का बहाना शरिया के अनुसार स्वीकार्य है या वादी का? आदर की सीमाओं से परे।

उत्तर: दारुल इफ्ता दारुल कज़ा नहीं है, यहाँ तथ्यों की जाँच नहीं होती, प्रश्न के स्वरूप पर उत्तर दिया जाता है। पिछला प्रश्न अहमद खान रामपुरी, बरेली कचहरी के कर्मचारी, नकल प्रबंधक ने प्रस्तुत किया था (जिन्होंने इस वर्तमान प्रश्न और मुफ्ती साहब के प्रस्ताव तथा याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत अन्य कागजात के अवलोकन के आधार पर बताया कि यह हिंदू वादी का प्रश्न था और उसी मुकदमे से संबंधित था जिसके बारे में मुंशी सैयद अनवर हुसैन रामपुरी ने मिर्जा नजीर बेग साहब, पूर्व नायब तहसीलदार बरेली के माध्यम से दारुल इफ्ता में कई प्रश्न प्रस्तुत किए थे और 9 रबी-उल-आखिर 1336 हिजरी को उनके उत्तर दिए गए थे)। उसमें यह था कि ज़ैद ने अम्र से ज़मानत का अनुरोध किया और अम्र ने उसके अनुरोध पर उसकी ज़मानत ली, और ज़ैद माल की ज़मानत को अवैध कहता है; इसमें क्या हुक्म है? उसका उत्तर यही था कि माल की ज़मानत निश्चित रूप से सही है और

जब ज़मानतदार (कफ़ील) ऋणी (मकफ़ूल अन्हु) के अनुरोध पर ज़मानत लेता है, तो वह निस्संदेह भुगतान की मांग कर सकता है। प्रश्न में "अपनी संपत्ति से" ये दो शब्द व्यर्थ थे क्योंकि जब अम्र ज़ैद के अनुरोध पर ज़मानतदार बना, यानी उसने अपनी ज़िम्मेदारी ज़ैद के साथ जोड़ दी, तो ज़मानत पूरी हो गई, चाहे वह नकद राशि से हो या संपत्ति से या केवल मौखिक रूप से। तीनों तरीके प्रचलित हैं, और मूल बात ज़िम्मेदारियों का जुड़ना है...

पृष्ठ 699 का 715

کی نقل شاملِ عرضداشت ہذا ہے اس کے ملاحظہ سے واضح ہے کہ عمر و نے ضمانت نہیں کی ہے بلکہ جائداد کو مکفول کرایا ہے، (۳) تیسرا مضمون سوال میں یہ غلط ظاہر کیا ہے کہ زید کا یہ عذر ہے کہ کفالت بالمال شرعاً ناجائز ہے مجھ مدعا علیہ کا ہر گز عذر نہیں ہے بلکہ میرا عذر یہ ہے کہ کسی مطالبہ کی بابت جائداد کو مکفول کرانا شرعاً جائز ہے یعنی ضمانت میں جائداد کا استغراق کرانا شرعاً جائز ہے۔ (۴) چوتھا مضمون سوال میں یہ بھی خلاف درج کیا ہے کہ زید کی درخواست پر عمرو نے اس کی ضمانت مستاجری اپنی جائداد سے کی، یہ واقعہ بالکل غلط ہے، مفتی صاحب نے اس واقعہ کو ثابت شدہ نہیں قرار دیا ہے اس غلط اور غیر مطابق سوال کی بنیاد پر حضور نے یہ تجویز فرمایا ہے کہ کفالت بالمال شرعاً ناجائز ہے لہذا حضور والا! میں نقول ہرسہ فتویٰ حضور جو سادہ کاغذ پر ہے اور نقل فیصلہ جناب مفتی صاحب دیوانی اور نقلِ فتویٰ آخر جو باضابطہ عدالت سے حاصل کیا گیا ہے اور نقل اقرار نامہ کفالت اور قانونِ آئینِ حامدیہ معطوفہ عرضداشت ہذا درگاہ والا میں پیش کر کے امیدوار ہوں کہ حضور ہر سہ فتویٰ سابق و فتویٰ مابعد نظرِ ثانی فرما کر اور فیصلہ مفتی صاحب دیوانی اور نقلِ اقرار نامہ کفالت و دفعہ ۷۷ لغایت ۷۹ قانونِ مذکور ملاحظہ فرما کر ارشاد فرمائیں کہ ہر سہ فتاویٰ سابق پیش کردہ انوار حسین مدعا علیہ مطابق نالشِ مدعی ہیں یا فتویٰ آخر پیش کردہ پچھی نرائن مدعی متعلق مقدمہ ہے اور عذر مدعا علیہ کا شرعاً قابلِ منظوری ہے یا عذر مدعی کا؟ زیادہ حدِ ادب الجواب: دارالافتاء دارالقضاء نہیں یہاں کوئی تحقیقِ واقعہ نہیں ہوتی، صورتِ سوال پر جواب دیا جاتا ہے، سوال اخیر کے حضور احمد خاں رامپوری ملازم کچہری بریلی منصرِم نقل نے پیش کیا (جسے اس سوالِ حال و ملاحظہ تجویز مفتی صاحب و دیگر کاغذاتِ مدخلہ سائل نے بتایا کہ ہندو مدعی کا سوال تھا اور

اسی مقدمہ سے متعلق جس کی نسبت کئی سوال منشی سید انوار حسین مدعی رامپوری نے بوساطت مرزا نظیر بیگ صاحب سابق نائب تحصیلدار بریلی دارالافتاء میں پیش کئے اور ۹ ربیع الآخر ۱۳۳۶ھ کو جواب دئے گئے تھے) اس میں یہ تھا کہ زید و عمرو سے درخواست ضمانت کی اور عمرو نے اس کی درخواست پر اس کی ضمانت کی اور زید کفالت بالمال کو ناجائز کہتا ہے اس میں حکم کیا ہے، اس کا جواب یہی تھا کہ کفالت بالمال یقیناً صحیح ہے اور جبکہ کفیل حسبِ درخواست مکفول عنہ ضامن ہوا تو بلا شبہ مطالبہِ زرادہ کردہ کر سکتا ہے اپنی جائداد سے دو لفظ سوال میں فضول تھے کہ جب عمرو زید کی درخواست پر ضامن ہوا یعنی اپنا ذمہ زید سے ضم کیا ضمانت مکمل ہو گئی خواہ زرِ نقد سے کی ہو یا جائداد سے یا صرف زبانی، تینوں طریقے رائج ہیں، اور اصل وہی ضمِ ذمہ ہے اس کے Page 699 of 715

Fatawa Razawiyya Volume 17

...afterwards, there is no need to deposit cash or property, nor does their absence affect the guarantee in any way, as these are extra, unrelated matters. The Hindu claimant presented an individual Muslim as the petitioner and gave no indication that the question pertains to a case for which a fatwa has already been issued by the Dar-ul-Ifta regarding the previous year. Nor were the previous questions and the claimant's question presented as a detailed identical situation, which would have shown that both relate to the same dispute. The scholars have instructed us that if a contract is mentioned in a question, it should be assumed to be valid and answered accordingly. In Wajeez Imam Kardari, it is stated:

If a question is asked regarding its validity, a fatwa of validity should be given, assuming all conditions are met, because an absolute statement is taken in its perfect sense, free from any impediments to validity. (T)

If a question is asked regarding the validity of any contract, a fatwa of its validity will be given assuming all conditions are met, because an absolute statement is taken as such a perfection that is free from impediments to validity. (T)

If such a difference exists between two questions, it is necessary for the answers to differ, the responsibility for which lies with the person who presented an ambiguous or incorrect question. In Fatawa Khairiyyah, regarding a similar difference in questions where Allama Ramli was asked once in one way and then again differently, he stated:

There is no doubt that the Mufti gives a fatwa only based on the information provided to him by the petitioner. (T)

There is no doubt in this that the Mufti gives a fatwa only on what the news of the petitioner conveys to him. (T)

Furthermore, in a similar occurrence, he stated:

The first question did not mention to us that the lease (ijarah) was based on the consumption of harvest or similar tangible goods. Our question was about lease in general, so it was understood as the ownership of benefits, and we divided the rulings into valid and void.

In the first question, it was not mentioned to us that the lease is dependent on obtaining produce or its similar goods, but rather the question was about an

absolute lease, so it turned towards the ownership of benefits and we divided the rules into two types, namely valid and invalid.

1. Fatawa Khairiyyah citing Al-Bazzaziyyah, Book of Conciliation, Dar al-Ma'rifah Beirut 2/103; Fatawa Bazzaziyyah on the margins of Fatawa Hindiyyah, Book of Conciliation, Chapter 6, Noorani Kutub Khana Peshawar 6/51-52.
2. Fatawa Khairiyyah, Book of Agency, Dar al-Ma'rifah Beirut 2/39.

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

...बाद में न नकद राशि जमा करने की आवश्यकता है न संपत्ति की, और न ही उनके न होने से ज़मानत में कोई बाधा आती है क्योंकि ये अतिरिक्त और असंबद्ध मामले हैं। हिंदू वादी ने एक मुस्लिम व्यक्ति को याचिकाकर्ता के रूप में प्रस्तुत किया और यह संकेत नहीं दिया कि प्रश्न उस मामले से संबंधित है जिसके बारे में पिछले वर्ष दार-उल-इफ़्ता से फ़तवा जारी किया जा चुका है। न ही पिछले प्रश्नों और वादी के प्रश्न को एक विस्तृत और समान स्थिति के रूप में बताया गया, जिससे यह पता चलता कि दोनों एक ही विवाद से संबंधित हैं। विद्वानों ने हमें आदेश दिया है कि यदि किसी अनुबंध का प्रश्न में उल्लेख हो, तो उसे वैध मानकर उत्तर दिया जाए। वजीज़ इमाम करदरी में है:

यदि किसी अनुबंध की वैधता के बारे में प्रश्न किया जाए, तो सभी शर्तों के पूरा होने का अनुमान लगाते हुए इसकी वैधता का फ़तवा दिया जाएगा क्योंकि एक पूर्ण कथन को उसकी पूर्णता पर माना जाता है जो वैधता की बाधाओं से मुक्त हो। (त)

अगर किसी अनुबंध की सेहत (वैधता) से संबंधित सवाल किया जाए तो तमाम शर्तों के पाए जाने पर महमूल (आधारित) करते हुए उसकी सेहत का फ़तवा दिया जाएगा क्योंकि मुतलक़ (निरपेक्ष) को ऐसे कमाल पर महमूल किया जाता है जो मवानए सेहत (वैधता की बाधाओं) से खाली हो। (त)

दो प्रश्नों में ऐसा अंतर होने पर उत्तरों का भिन्न होना आवश्यक है, जिसकी ज़िम्मेदारी उस व्यक्ति पर है जिसने अस्पष्ट या गलत प्रश्न प्रस्तुत किया। फ़तावा खैरिया में प्रश्नों के इसी तरह के अंतर के बारे में, जहाँ अल्लामा रमली से एक बार एक तरह से और दूसरी बार उसके विपरीत प्रश्न किया गया, उन्होंने फ़रमाया:

इसमें कोई संदेह नहीं है कि मुफ़्ती उसी पर फ़तवा देता है जो जानकारी याचिकाकर्ता उसके पास पहुँचाता है। (त)

इसमें कोई शक नहीं है कि मुफ्ती उसी पर फतवा देता है जो खबर साइल (याचिकाकर्ता) उसके पास पहुंचाए। (त)

इसके अलावा, इसी तरह की एक घटना में उन्होंने फ़रमाया:

पहले प्रश्न में हमें यह नहीं बताया गया था कि पट्टा (इजारा) फसल की उपज या इसी तरह की वस्तुओं की प्राप्ति पर आधारित था, बल्कि सामान्य पट्टे के बारे में प्रश्न किया गया था, इसलिए इसे लाभ के

स्वामित्व के रूप में समझा गया और हमने आदेशों को दो श्रेणियों, यानी सही और गलत में विभाजित किया।

पहले सवाल में हमारे लिये इस बात का ज़िक्र नहीं किया गया था कि इजारा (पट्टा) अख़राज (उपज) या उसकी मिस्ली अयान (समान वस्तुओं) के हासिल होने पर मौक़ूफ़ है बल्कि इजारा-ए-मुतलक़ा के बारे में सवाल किया था तो वो तमलुक-ए-मनफ़अत (लाभ के स्वामित्व) की तरफ लौटा और हमने अहकाम (नियमों) को दो किस्मों यानी सही और फ़ासिद (अमान्य) पर तक़्सीम (विभाजित) किया।

1. फ़तावा खैरिया हवाला अल-बज़ाज़िया, किताबुस सुल्ह, दारुल मारिफ़ा बेरुत 2/103; फ़तावा बज़ाज़िया, फ़तावा हिंदिया के हाशिए पर, किताबुस सुल्ह, छठा अध्याय, नूरानी कुतुब खाना पेशावर 6/51-52।
2. फ़तावा खैरिया, किताबुल वकाला, दारुल मारिफ़ा बेरुत 2/39।

पृष्ठ 700 का 715

بعد نہ زرِ نقد داخل کرنے کی ضرورت نہ جائداد کی ضرورت نہ ان کے ہونے سے ضمانت میں کوئی خلل کہ یہ ایک امر زائد غیر متعلق ہیں، ہند و مدعی نے سائل ایک مسلمان کو ٹھہرایا اور اصلاً پتہ نہ دیا کہ سوال اس مقدمہ سے متعلق ہے کہ سالِ گزشتہ کی نسبت دار الافتاء سے فتوی جا چکا ہے نہ سوالاتِ سابقہ و سوال مدعی میں مفصل صورت واقعہ یکساں بتائی گئی تھی جس سے دونوں کا خصومت واحدہ سے تعلق ظاہر ہوتا اور علمائے کرام نے ہمیں حکم دیا ہے کہ جس عقد کا سوال ذکر ہو اسے صحت پر محمول کر کے جواب دیا جائے، وجیز امام کردری میں ہے:

لو سئل عن صحتہ یفتی بصحتہ حملا علی استیفاء الشرائط اذ المطلق یحمل علی الکمال الخالی عن موانع الصحۃ۱۔

اگر کسی عقد کی صحت سے متعلق سوال کیا جائے تو تمام شرائط کے پائے جانے پر محمول کرتے ہوئے اس کی صحت کا فتوی دیا جائے گا کیونکہ مطلق کو ایسے کمال پر محمول کیا جاتا ہے جو موانع صحت سے خالی ہو۔ (ت)

دو سوالوں میں ایسا اختلاف ہونے سے جواب مختلف ہو جانا لازم ہے جس کی ذمہ داری اس پر ہے جس نے سوال مجمل یا غلط پیش کیا، فتاوی خیریہ میں ایسے ہی اختلافِ سوال کے بارے میں کہ علامہ رملی سے ایک بار سوال ایک طور پر ہوا دوبارہ اس کے خلاف تھا ارشاد فرمایا:

لاشك فی ان المفتی انما یفتی بما الیہ السائل ینہی۲۔

اس میں کوئی شک نہیں کہ مفتی اسی پر فتوی دیتا ہے جو خبر سائل اس کے پاس پہنچائے۔ (ت)

نیز دوبارہ ایسے ہی واقعہ میں فرمایا:

السوال الاول لم يذكر لنا فيہ ان الاجارة وقعت على تناول الخراج ونحوہ من الاعيان و مسئلتنا فيہ عن الاجارة مطلقا فانصرفت الى تملك المنفعة وقسمنا الاحكام على الصحيحة والفاسدة

پہلے سوال میں ہمارے لئے اس بات کا ذکر نہیں کیا گیا تھا کہ اجارہ اخراج یا اس کی مثلی اعیان کے حصول پر موقوف ہے بلکہ اجارہ مطلقہ کے بارے میں سوال کیا تھا تو وہ تملک منفعت کی طرف لوٹا اور ہم نے احکام کو دو قسموں یعنی صحیح اور فاسد پر تقسیم کیا۔

١ فتاوى خيريہ بحوالہ البزازيہ كتاب الصلح دارالمعرفة بيروت ٢ / ١٠٣، فتاوى بزازيہ على ہامش فتاوى ہنديہ كتاب الصلح الفصل السادس نورانى كتب خانہ پشاور ۶ / ۵۲-۵۱ ٢ فتاوى خيريہ كتاب الوكالة دارالمعرفة بيروت ٢ / ٣٩

Fatawa Rizvia Volume 17

[Table Row 1] Arabic: As for the reality that it occurred upon the destruction of specific assets, it is invalid.[1] Urdu: But when it occurred on the destruction of assets, it is invalid. (T)

In its third instance, it is stated: [Table Row 2] Arabic: The answer may vary with the difference of the subject presented to the muftis, so there is no objection to the respondent in the answer.[2] Urdu: Sometimes, due to the difference in the subject presented by the questioners, the fatwa (answer) becomes different, therefore no objection is raised against the respondent (Mufti) regarding this answer. (T)

In its fourth instance, it is stated: [Table Row 3] Arabic: A fatwa was sought in this incident regarding a subject different from the question, so the answer differed because of that; hence, one should not imagine a contradiction in the fatwas.[3] Urdu: Indeed, in this incident, the fatwa was requested in a form different from the subject mentioned in the question, which is why the answer was different; therefore, a contradiction in the fatwa process should not be imagined. (T)

The gist of all these noble instructions is that the earlier questions were asked in one way while the later questions were contrary to them, hence the answers were different, as a Mufti will only issue a fatwa based on what is presented before him. From this, one should not imagine any contradiction in the fatwas. Yes, if it were known at that time that this claimant's question relates to that previous case of questions in which he had stated the facts incorrectly, then an answer would never have been given. For when the Mufti realizes that the question is contrary to the facts, the ruling is that he should not answer. It is stated in 'Uqud al-Durriyyah':

[Table Row 4] Arabic: When the Mufti knows the truth of the matter, it is appropriate for him not to write for the questioner so that he does not become a helper for him in falsehood.[4] Urdu: When the Mufti becomes aware of the reality of the matter, he should not write a fatwa for the (false) questioner, so that he does not assist him in falsehood. (T)

Observation of the proposed surety bond reveals that the claimant's question is pure falsehood and deception; in it, the guarantee of his property...

---

1. Fatawa Khayriyyah, Kitab al-Ijarah, Dar al-Ma'rifah, Beirut, 2/ 136
2. Fatawa Khayriyyah, Kitab al-Ijarah, Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/ 159

3. Fatawa Khayriyyah, Kitab al-Ijarah, Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/ 183
4. Al-Uqud al-Durriyyah, Fawaid fi Adab al-Mufti, before Kitab al-Taharah, Arg Bazar, Kandahar, Afghanistan, 1/ 3

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

[तालिका पंक्ति 1] अरबी: जहाँ तक वास्तविकता का प्रश्न है कि यह विशिष्ट संपत्तियों के विनाश पर घटित हुआ, तो वह अमान्य है।[1] उर्दू: लेकिन जब वह संपत्तियों के विनाश पर घटित हुआ है तो वह बातिल (अमान्य) है। (त)

इसी के एक तीसरे वाकये में है: [तालिका पंक्ति 2] अरबी: कभी मुफ़्तियों के सामने प्रस्तुत विषय की भिन्नता के कारण उत्तर भिन्न हो जाता है, अतः उत्तर में उत्तर देने वाले पर कोई आपत्ति नहीं है।[2] उर्दू: कभी फतवा पूछने वालों को प्रस्तुत विषय में अंतर की वजह से जवाब अलग हो जाता है, इसलिए इस जवाब में मुजीब (उत्तर देने वाले) पर कोई ऐतराज नहीं होता। (त)

इसी में एक चौथे वाकये पर है: [तालिका पंक्ति 3] अरबी: इस घटना में सवाल में उल्लेखित विषय से अलग सूरत में फतवा मांगा गया था, अतः उसके कारण जवाब बदल गया, इसलिए इसमें फतवों के विरोधाभास का भ्रम न किया जाए।[3] उर्दू: तहकीक (जांच) इसी हादसे में सवाल में उल्लेखित मौज़ू (विषय) से अलग सूरत में फ़तवा पूछा गया था लिहाज़ा इसी सबब से जवाब मुख्तलिफ़ (अलग) हुआ, चुनांचे इसमें इफ़्ता (फ़तवा देने) के मुआरज़ा (विरोध) का वहम न किया जाए। (त)

इन सब इरशाद शरीफ़ का हासिल यह है कि पहले और तरह सवाल किये गये थे, पिछले सवाल उनके ख़िलाफ़ थे लिहाज़ा जवाब मुख्तलिफ़ हुए कि मुफ़्ती उसी पर फ़तवा देगा जो उसके सामने पेश किया जायेगा। इससे कोई फ़तवों में तआरुज़ (विरोध) का वहम न करे। हाँ अगर उसी वक्त मालूम होता कि यह सवाल मुद्दई इस मुक़द्दमा सवालात साबिका (पिछले) से मुताल्लिक़ है जिसमें उसने सूरते वाकया गलत लिखी है तो हरगिज़ जवाब न दिया जाता कि जब मुफ़्ती को सवाल का ख़िलाफ़े वाकया होना मालूम हो जाये तो हुक्म है कि जवाब न दे। 'उक़ूद अद-दुरिया' में है:

[तालिका पंक्ति 4] अरबी: जब मुफ़्ती को मामले की हकीकत मालूम हो तो उसके लिए उचित है कि वह सवाल करने वाले के लिए न लिखे ताकि वह बातिल (असत्य) पर उसका मददगार न हो।[4] उर्दू: जब मुफ़्ती को मामले की हक़ीक़त मालूम हो तो उसको चाहिए कि वह (झूठे) साइल (सवाल करने वाले) के लिए फ़तवा न लिखे ताकि वह बातिल पर उसका मददगार न हो। (त)

मुलाहज़ा कफ़ालत नामा तज्वीज़ से ज़ाहिर है कि सवाल मुद्दई महज़ ग़लत और फ़रेब है इसमें ज़मानत अपनी जायदाद...

1. फ़तावा खैरिया, किताब अल-इजारह, दार अल-मआरिफ़ा बेरूत, 2/ 136
2. फ़तावा खैरिया, किताब अल-इजारह, दार अल-मआरिफ़ा बेरूत, 1/ 159
3. फ़तावा खैरिया, किताब अल-इजारह, दार अल-मआरिफ़ा बेरूत, 1/ 183
4. अल-उक़ूद अद-दुरिया, फ़वाइद फ़ी आदाब अल-मुफ्ती, किताब अल-तहारह से पहले, अर्ग बाज़ार कंधार अफ़गानिस्तान, 1/ 3

पृष्ठ 701 का 715

فتاوٰی رضویہ جلد بفتدہم (۱۷)

[جدول ۱] عربی: اما حیث کان الواقع انها علی اتلاف الاعیان فهی باطلة ۱۔ اردو: مگر جب وہ اعیان کے اتلاف پر واقع ہوا ہے تو وہ باطل ہے۔(ت)

اسی کے ایک تیسرے واقعہ میں ہے: [جدول ۲] عربی: قد یختلف الجواب باختلاف الموضوع المرفوع لاهل الفتوی فلا اعتراض علی المجیب فی الجواب ۲۔ اردو: کبھی فتوی پوچھنے والوں کو موضوع مرفوع میں اختلاف کی وجہ سے جواب مختلف ہو جاتا ہے اس لئے اس جواب میں مجیب پر کوئی اعتراض نہیں ہوتا۔(ت)

اسی میں ایک چوتھے واقعہ پر ہے۔ [جدول ۳] عربی: قد استفتي في هذه الحادثة بما هو مختلف الموضوع في السوال فاختلف الجواب بسبب ذلك فلا یتوهم معارضة الافتاء فیه ۳۔ اردو: تحقیق اسی حادثہ میں سوال میں مذکور موضوع سے مختلف صورت میں فتوی پوچھا گیا تھا لہٰذا اسی سبب سے جواب مختلف ہوا چنانچہ اس میں افتاء کے معارضہ کا وہم نہ کیا جائے۔(ت)

ان سب ارشا د شریفہ کا حاصل یہ ہے کہ پہلے اور طرح سوال کئے گئے تھے پچھلے سوال ان کی خلاف تھے لہٰذا جواب مختلف ہوئے کہ مفتی اسی پر فتوی دے گا جو اس کے سامنے پیش کیا جائے گا اس سے کوئی فتووں میں تعارض کا وہم نہ کرے، ہاں اگر اسی وقت معلوم ہوتا کہ یہ سوال مدعی اس مقدمہ سوالات سابقہ سے متعلق ہے جس میں اس نے صورت واقعہ غلط لکھی ہے تو ہر گز جواب نہ دیا جاتا کہ جب مفتی کو سوال کا خلاف واقع ہونا معلوم ہو جائے تو حکم ہے کہ جواب نہ دے۔ عقود الدریہ میں ہے:

[جدول ۴] عربی: اذا علم المفتی حقیقة الامر ینبغی له ان لا یکتب للسائل لئلا یکون معینا له علی الباطل ۴۔ اردو: جب مفتی کو معاملہ کی حقیت معلوم ہو تو اس کو چاہئے کہ وہ (جھوٹے) سائل کے لئے فتوی نہ لکھے تاکہ وہ باطل پر اس کا مدد گار نہ ہو۔(ت)

ملاحظہ کفالت نامہ تجویز سے ظاہر ہے کہ سوال مدعی محض غلط وفریب ہے اس میں ضمانت اپنی جائداد

---

۱ فتاوٰی خیر یہ کتاب الاجارۃ دار المعرفۃ بیروت ۲/ ۱۳۶ ۲ فتاوٰی خیر یہ کتاب الاجارۃ دار المعرفۃ بیروت ۱/ ۱۵۹ ۳ فتاوٰی خیر یہ کتاب الاجارۃ دار المعرفۃ بیروت ۱/ ۱۸۳ ۴ العقود الدریۃ فوائد فی آداب المفتی قبل کتاب الطھارۃ ارگ بازار قندہار افغانستان ۱/ ۳

Fatawa Razawiya, Volume 17

The meaning of doing so is not that 'Amr became a guarantor and presented his property to increase trust, the ruling for which was that since the guarantee was upon Zaid's request, it undoubtedly became valid, because mentioning the property not being there is irrelevant. Rather, the meaning is that you did not give a guarantee, meaning you did not involve your own responsibility, but instead made the property itself the guarantor; this is absolutely and completely void, as clarified in the previous answers. The claimant asked about 'Kafalat-bil-maal' (guarantee of wealth), the answer to which was definitely that it is correct. Now, from the observation of the documents, it has become apparent that his statement is misleading; here, the situation was not 'Kafalat-bil-maal' in the sense understood by the servants of Shariah, meaning 'Makfool-bih' is the thing whose demand the guarantor took upon himself. Instead, here it was 'Kafalat-ul-maal' with an attribution to the subject, meaning the property and assets themselves become the guarantor for some demand; this is absolutely void, while the former is definitely valid. Therefore, the fatwa that the claimant obtained through misrepresentations does not relate to the case at all. The relevant matters for the case are those previous fatwas entered by the defendant, and the claimant's excuse is pure falsehood, while the defendant's excuse is correct and worthy of acceptance. And Allah the Almighty knows best.

ऐसा करने का अर्थ यह नहीं है कि 'अम्र' ज़मानतदार (गारंटर) बन गया और विश्वास बढ़ाने के लिए अपनी संपत्ति पेश की, जिसका हुक्म यह था कि चूंकि ज़मानत ज़ैद के अनुरोध पर थी, इसलिए वह निस्संदेह सही हो गई, क्योंकि संपत्ति का उल्लेख न होना निरर्थक है। बल्कि अर्थ यह है कि आपने ज़मानत नहीं दी, यानी अपनी ज़िम्मेदारी शामिल नहीं की, बल्कि खुद संपत्ति को ही ज़मानतदार बना दिया; यह पूरी तरह से और कतई तौर पर बातिल (अमान्य) है, जैसा कि पिछले उत्तरों में स्पष्ट किया जा चुका है। वादी ने 'कफ़ालत-बिल-माल' (धन की ज़मानत) के बारे में पूछा, जिसका उत्तर निश्चित रूप से यही था कि यह सही है। अब, दस्तावेज़ों के अवलोकन से यह स्पष्ट हो गया है कि उसका बयान भ्रामक है; यहाँ मामले की स्थिति 'कफ़ालत-बिल-माल' की नहीं थी, जिसे शरीयत के सेवक समझते हैं, जिसका अर्थ है 'मकफ़ूल-बिह' यानी वह चीज़ जिसकी माँग ज़मानतदार ने अपने ऊपर ली है। बल्कि यहाँ 'कफ़ालत-उल-माल' कर्ता (فاعل) के संबंध में थी, यानी खुद माल और संपत्ति किसी माँग की ज़मानतदार हो जाए; यह कतई तौर पर बातिल (अमान्य) है, जबकि वह (पिछली स्थिति) निश्चित रूप से सही है। इसलिए, वादी ने जो फ़तवा गलत बयानी से प्राप्त किया है, उसका इस मामले से कोई संबंध नहीं है। मामले से संबंधित वही पिछले फ़तवे हैं जो प्रतिवादी द्वारा पेश किए गए हैं, और वादी का बहाना सरासर गलत है, जबकि प्रतिवादी का बहाना सही और स्वीकार करने योग्य है। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

سے کرنے کے یہ معنی نہیں کہ عمر وضامن ہوا اور زیادت وثوق کو اپنی جائداد پیش کی جس کا حکم وہ تھا کہ ضمانت جب زید کی درخواست پر ہے بلا شبہ صحیح ہو گئی کہ ذکر جائداد نہ ہونا فضولی ہے بلکہ یہ معنی ہے کہ آپ ضمانت نہ کی جوابنا ذمہ مشغول نہ کیا خود نفس جائداد کو کفیل بنایا یہ قطعاً باطل محض ہے جیسا کہ جوابات سابقہ میں روشن کر دیا گیا مدعی نے کفالت بالمال کو پوچھا اس کا جواب قطعاً یہی تھا کہ صحیح ہے، اب ملاحظہ کاغذات سے ظاہر ہوا کہ اس کی غلط بیانی ہے یہاں صورت واقعہ کفالت بالمال نہ تھی جسے شرع میں کفالت بالمال کہتے ہیں اور اس سے جو معنی خادمان شرع سمجھتے ہیں کہ مکفول بہ ہو یعنی وہ چیز جس کا مطالبہ کفیل نے اپنے ذمہ لیا بلکہ یہاں کفالت المال باضافت الی الفاعل تھی یعنی خود مال و جائداد کسی مطالبہ کی کفیل ہو یہ قطعاً باطل ہے اور وہ قطعاً صحیح، لاجرم فتوی کہ مدعی نے غلط بیانیوں سے حاصل کیا ہرگز متعلق مقدمہ نہیں، متعلق مقدمہ وہی فتاوی سابقہ مدخلہ مدعاعلیہ ہیں اور عذر مدعی باطل محض اور عذر مدعاعلیہ صحیح و واجب القبول۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

Fatawa Rizvia Volume (17)

Kitab al-Hawala (Statement of Assignment)

Problem 291: From Khairabad, District Sitapur, Mohalla Mian Sarai, Ancient Arabic School, sent by Syed Fakhrul Hasan, early Ramadan al-Mubarak 1327 AH. What do the scholars of religion say in this matter: that a person named Zaid is of the Sunni and Hanafi school of thought and holds the belief according to his community regarding the prohibition and illegality of usurious transactions and all proceedings related to interest matters. By chance of time, a necessity compelled Zaid to such an extent that despite his belief in the prohibition of usurious transactions, Zaid borrowed a sum of five thousand rupees at a monthly interest rate of 12% from a moneylender named Manoo Singh. Due to Zaid's need, the said moneylender had a condition written in the document that the money is given on a promise of one and a half years, and interest must be paid semi-annually. In case of non-payment of semi-annual interest, that interest amount will be included in the principal, and interest on interest (compound interest) will have to be paid. If Zaid wishes to return the principal within one and a half years, interest for the full one and a half years will be charged. One month after the execution of the document, Zaid obtained enough money that by paying five thousand rupees principal and six hundred eighty-nine rupees and one anna as interest for one and a half years, totaling (5689/1/-) in principal and interest, he took back the document from Manoo Singh the moneylender. However, Zaid is faced with this distress that the moneylender's money remained with me for only one month, the interest for which is only (43/12/-), but instead of that, by paying (5689/1/-), he had to bear a loss of (5645/5/-). Zaid has his...

फ़तावा रिज़विया जिल्द (17)

किताब अल-हवाला (हवाला का बयान)

मसला 291: खैराबाद, जिला सीतापुर, मोहल्ला मियां सराय, प्राचीन अरबी मदरसा, प्रेषक सैयद फखरुल हसन, रमज़ान अल-मुबारक 1327 हिजरी की शुरुआत। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: कि ज़ैद नाम का एक व्यक्ति सुन्नी और हनफ़ी मज़हब का है और सूद (ब्याज) के लेन-देन और सूद से संबंधित सभी कार्रवाइयों के हराम और नाजायज़ होने के बारे में अपनी मिल्लत (समुदाय) के अनुसार विश्वास रखता है। समय के संयोग से एक आवश्यकता ने ज़ैद को इस कदर मजबूर कर दिया कि सूद के लेन-देन की हुरमत (निषेध) के बावजूद, ज़ैद ने मनू सिंह नामक महाजन से 12 प्रतिशत मासिक ब्याज पर पाँच हज़ार रुपये उधार लिए। ज़ैद की ज़रूरत के कारण, उक्त महाजन ने दस्तावेज़ में यह शर्त लिखवाई कि पैसा डेढ़ साल के वादे पर दिया जा रहा है और छमाही ब्याज देना होगा। छमाही ब्याज न देने की स्थिति में, वह ब्याज की राशि मूलधन में शामिल हो जाएगी और सूद दर सूद (चक्रवृद्धि ब्याज) देना होगा। यदि ज़ैद डेढ़ साल के भीतर मूलधन देना चाहेगा, तो पूरे डेढ़ साल का ब्याज लिया जाएगा। दस्तावेज़ लिखने के एक महीने बाद ज़ैद को इतना पैसा मिल गया कि पाँच हज़ार रुपये मूलधन और छह सौ नवासी रुपये एक आना डेढ़ साल का कुल ब्याज, कुल (5689/1/-) मूल और सूद देकर मनू सिंह महाजन से दस्तावेज़ वापस ले लिया। लेकिन ज़ैद को यह परेशानी है कि महाजन का पैसा मेरे पास केवल एक महीने रहा, जिसका ब्याज केवल (43/12/-) होता है, उसके बजाय (5689/1/-) देकर (5645/5/-) का नुकसान उठाना पड़ा। ज़ैद ने अपनी...

पृष्ठ 703 का 715

فتاویٰ رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

کتاب الحوالہ (حوالہ کا بیان)

مسئلہ ۲۹۱: از خیر آباد ضلع سیتا پور محلہ میانسرائے مدرسہ عربی قدیم مرسلہ سید فخر الحسن صاحب اوائل رمضان المبارک ۱۳۲۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ مسمیٰ زید سنی و حنفی المذہب ہے اور نسبت حرام و ناجائز ہونے لین دین سودی و جملہ کاروائی متعلقہ معاملہ سود کے اپنے ملت کے موافق عقیدہ رکھتا ہے کہ اتفاق زمانہ سے ایک ضرورت نے زید کو ایسا مجبور کیا کہ باوجود عقیدت و حرمت معاملہ سودی مبلغ پانچ ہزار روپیہ بحساب ۱۲ فیصدی ماہواری سود زید نے مسمیٰ منوسنگھ مہاجن سے قرض لئے بوجہ حاجتمندی زید کے مہاجن مذکور نے دستاویز میں یہ شرط تحریر کرائی کہ ڈیڑھ سال کے وعدہ پر روپیہ دیا جاتا ہے ششماہی وار سود ادا کرنا ہوگا بصورت عدم ادائے ششماہی وہ زر سود شامل اصل ہو کر سود در سود دینا پڑے گا اگر زید اندر ڈیڑھ سال زر اصل دینا چاہے گا تو سود پورے ڈیڑھ سال کا لیا جاوے گا تحریر دستاویز کے ایک ماہ بعد زید کو اس قدر روپیہ مل گیا کہ پانچ ہزار روپیہ زر اصل و چھ سو نواسی روپیہ ایک آنہ زر سود ڈیڑھ سال جملہ (۵۶۸۹/۱/-) اصل و سود دے کر منوسنگھ مہاجن سے دستاویز واپس لے لے مگر زید کو یہ پریشانی لاحق ہے کہ مہاجن کا روپیہ صرف ایک ماہ میرے پاس رہا ہے جس کا سود صرف (۴۳/۱۲/-) ہوتے ہیں بجائے اس کے (۵۶۸۹/۱/-) دے کر (۵۶۴۵/۵/-) کا تاوان اٹھانا پڑتا ہے زید نے اپنی

Fatawa Razawiyya Volume 17

The condition of distress was explained to a person named Mahmood from the Sayyid community and Badri Parshad Khatri, a moneylender. Mahmood suggested that for now, this money should be used for contracting or trade, and after the expiry of the remaining period of one year and five months as mentioned in the document, the chain of contracting etc. should be disconnected and the debt of Manosingh, the moneylender, should be paid off and the document retrieved. It is hoped that through contracting or trade, a profit greater than the amount of loss (1205 rupees) will be achieved. The person named Badri Parshad Mahajan suggests that in establishing a chain of contracting or trade, there is a possibility of both profit and loss. In the case of loss, there is a fear of losing the existing property, which is the apparent means. Therefore, if the Sharia permits, give me the principal amount of five thousand and (with 104) the monthly interest, total (sum with 10), which is currently payable by you, and have the debt transferred to me. Now Manosingh will be my responsibility. I am a person in the moneylending profession; the amount (sum with 104) that I receive from you, I will invest it in interest-bearing loans and in a short period, complete the full amount (annual sum) and pay Manosingh and retrieve the document. This is such a strategy through which you will be relieved of the debt and there will be no loss to your existing property. Instead, in this artifice, the benefit will be that you will be protected from whatever amount (approx 1012) of interest liability you would have fallen into. Apparently, the advice of Badri Parshad seems appropriate and leads to religious and worldly benefits. Therefore, an opinion is sought: Is it permissible for a person named Zaid, according to the Hanafite school and the illustrious Sharia, to act upon the advice of Badri Parshad? Or in this case, besides the liability of paying interest, will he also be guilty of taking interest? A detailed answer with references to the books of the Hanafite school should be recorded soon, as there is an urgent need to find out about this matter. Also, instruction should be given that if Zaid gets only two thousand rupees and according to Badri Parshad's advice, the debt of two thousand rupees is transferred to Badri Parshad, will the ruling be the same as for the transfer of the entire debt, or will there be some other ruling besides this?

The Answer: The opinion of getting the debt transferred is absolutely good. Zaid should give five thousand thirty-eight to the other Hindu with the intention of a pure loan. For whatever amount he gives above five thousand, he should not have the intention of interest for the first Hindu. Then, by telling the first Hindu, he should

have his debt transferred to the second one, and he should take legal precautions in this so as not to be deceived. In this way, Zaid will be completely saved from giving interest. The forty or fifty rupees extra that will go will be as if the loan was given and lost or left with the debtor; it will not be counted as giving interest. As for the second Hindu lending that money on interest, that is his action; in fact, it is not even his action alone until someone takes a loan from him, so the blame for that does not lie with Zaid.

परेशानी की स्थिति सैय्यद समुदाय के महमूद और बद्री प्रसाद खत्री महाजन को बताई गई। महमूद ने सलाह दी कि फिलहाल इस राशि से ठेकेदारी या व्यापार किया जाए और दस्तावेज़ में उल्लिखित एक वर्ष पाँच माह की शेष अवधि बीतने के बाद ठेकेदारी आदि का सिलसिला समाप्त कर दिया जाए और महाजन मानसिंह का ऋण चुकाकर दस्तावेज़ वापस ले लिया जाए। आशा है कि ठेकेदारी या व्यापार के माध्यम से नुकसान की राशि (1205 रुपये) से अधिक लाभ प्राप्त होगा। बद्री प्रसाद महाजन यह मशवरा देते हैं कि ठेकेदारी या व्यापार का सिलसिला शुरू करने में लाभ और हानि दोनों की संभावना है। हानि की स्थिति में वर्तमान संपत्ति, जो कि दृश्य साधन है, के नष्ट होने का डर है। अतः यदि शरीयत अनुमति दे, तो मूल राशि पाँच हजार और (104 के साथ) एक माह का ब्याज, कुल (10 के साथ) जो वर्तमान में आपके द्वारा देय है, मुझे देकर ऋण का हस्तांतरण मुझ पर करा दीजिये। अब मानसिंह मेरी जिम्मेदारी होगी। मैं महाजनी पेशे का व्यक्ति हूँ; जो राशि (104 के साथ) मुझे आपसे मिलेगी, उसे मैं ब्याज पर ऋण में लगाकर थोड़े समय में कुल राशि (वार्षिक योग) पूरी करके मानसिंह को दे दूँगा और दस्तावेज़ वापस ले लूँगा। यह एक ऐसी युक्ति है जिससे आप ऋण से मुक्त भी हो जाएँगे और वर्तमान संपत्ति का भी कोई नुकसान नहीं होगा, बल्कि इस बहाने में यह लाभ होगा कि आप जितनी राशि (लगभग 1012) के ब्याज के उत्तरदायित्व में फँसते, उससे सुरक्षित रहेंगे। स्पष्ट रूप से बद्री प्रसाद का मशवरा उचित और धार्मिक एवं सांसारिक लाभ का कारण प्रतीत होता है। अतः यह राय मांगी जाती है कि क्या हनफ़ी पंथ और प्रतापी शरीयत के अनुसार ज़ैद के लिए बद्री प्रसाद के मशवरे पर अमल करना जायज़ है? या इस स्थिति में ब्याज देने के उत्तरदायित्व के अलावा ब्याज खाने के उत्तरदायित्व में भी फँसना होगा? इसका विस्तृत उत्तर हनफ़ी पंथ की पुस्तकों के संदर्भ के साथ शीघ्र लिखा जाए क्योंकि इस मामले को जानने की बहुत सख्त ज़रूरत है। साथ ही यह भी निर्देश दिया जाए कि यदि ज़ैद को केवल दो हजार रुपये मिलें और बद्री प्रसाद के मशवरे के अनुसार दो हजार रुपये के ऋण का हस्तांतरण बद्री प्रसाद पर कर दिया जाए, तो इस स्थिति में भी वही आदेश होगा जो पूरे ऋण के हस्तांतरण पर होगा या इसके अलावा कोई दूसरा आदेश होगा?

उत्तर: ऋण हस्तांतरित कराने की राय बिल्कुल अच्छी है। ज़ैद उस दूसरे हिंदू को विशुद्ध ऋण की नियत से पाँच हजार अड़तीस दे। पाँच हजार से जितना अधिक देता है, उसमें पहले हिंदू के ब्याज की नियत न करे। फिर पहले हिंदू से कहकर उसका ऋण दूसरे पर हस्तांतरित करा दे, और इसमें कानूनी सावधानी बरत ले ताकि धोखा न हो। इस तरह ज़ैद ब्याज देने से पूरी तरह बच जाएगा। जो

चालीस-पचास रुपये अधिक जाएँगे, वह ऐसे होंगे जैसे ऋण दिया था और डूब गया या ऋणी पर छोड़ दिया गया; इसे ब्याज देना नहीं माना जाएगा। रही बात कि वह दूसरा हिंदू उस पैसे को ब्याज पर चलाएगा, यह उसका कार्य है; बल्कि अकेले उसका भी कार्य नहीं है जब तक कि कोई उससे ऋण न ले, इसलिए उसका आरोप ज़ैद पर नहीं है।

पृष्ठ ७०४/७१५

پریشانی کی کیفیت مسمیان محمود قوم سید و بدری پرشاد کھتری مہاجن سے بیان کی، مسمیٰ محمود نے یہ صلاح دی کہ بالفعل اس روپیہ سے ٹھیکہ داری یا تجارت کی جائے اور بعد انقضائے ایک سال و پانچ ماہ بقیہ مدت مندرجہ دستاویز سلسلہ ٹھیکہ داری وغیرہ منقطع کر کے اور منوسنگھ مہاجن کا قرضہ ادا کر کے دستاویز واپس کر لی جائے امید ہے کہ ٹھیکہ داری یا تجارت کے ذریعہ سے مقدار تاوان (۱۲۰۵ روپے) سے زائد منفعت حاصل ہو جائے گی مسمی بدری پرشاد مہاجن یہ مشورہ دیتا ہے کہ سلسلہ ٹھیکہ داری یا تجارت قائم کرنے میں احتمال نفع و نقصان دونوں قسم کا ہے نقصان کی صورت میں جائداد موجود کے جو ظاہری ذریعہ ہے تلف ہو جانے کا اندیشہ ہے پس اگر شریعت اجازت دے تو مبلغ پانچ ہزار زر اصل اور (معہ ۱۰۴) زر سود یکماہہ جملہ (صمہ معہ ۱۰) جو اس وقت آپ کے واجب الادا ہیں مجھ کو دے کر قرضہ کی اتروائی مجھ پر کرادیجیے اب منوسنگھ میرے ذمہ عائد ہو جائے گا میں شخص مہاجنی پیشہ ہوں مبلغ (صمہ معہ ۱۰۴) جو آپ سے ملیں گے اس کو سودی قرضہ میں لگا کر تھوڑے عرصہ میں کل روپیہ (صمہ سالانہ) پورا کر کے اور منوسنگھ کو دے کر دستاویز واپس کرلوں گا یہ ایسی تدبیر ہے جس سے آپ کو قرضہ سے سبکدوشی بھی ہو جائے گی اور جائداد موجودہ کا بھی کچھ نقصان نہ ہو گا بلکہ اس حیلہ میں یہ نفع ہو گا کہ آپ جس قدر دینے (سما ۱۰۱۲) زر سود کے مواخذہ میں مبتلا ہوتے اس سے محفوظ رہیں گے بظاہر مشورت مسمی بدری پرشاد مناسب اور موجب منفعت دینی و دنیوی معلوم ہوتی ہے لہذا استصواب ہے کہ مسمی زید کو بروئے ملت حنفیہ و شریعت غرا مشورہ بدری پرشاد پر عمل کر نا جائز ہے یا اس صورت میں علاوہ مواخذہ سود دینے کے مواخذہ سود خوری مبتلا ہونا ہو گا، جواب تفصیلی بحوالہ کتب ملت حنفیہ بہت جلد ارقام فرمایا جائے کہ اس

مسئلہ کے دریافت ہونے کی سخت ضرورت درپیش ہے نیز یہ بھی ہدایت فرمایا جائے کہ اگر زید کو صرف دو ہزار روپیہ مل جائے اور موافق مشورہ بدری پرشاد کے بقدر مبلغ دو ہزار روپیہ کے قرضہ کی اترائی بدری پرشاد پر کر دی جائے تو اس صورت میں وہی حکم ہو گا جو کل قرضہ کی اترائی میں ہو گا یا اس کے علاوہ کچھ دوسرا حکم ہو گا؟

الجواب: قرض تحویل کرا دینے کی رائے بالکل خیر ہے زید اس دوسرے ہندو کو پانچ ہزار اڑتیس خالص قرض کی نیت سے دے پانچ ہزار سے جتنا زیادہ دیتا ہے اس میں پہلے ہندو کے سود کی نیت نہ کرے پھر پہلے ہندو سے کہہ کر اس کا قرضہ دوسرے پر اتروا دے اور اس میں قانونی احتیاط کر لے کہ دھوکا نہ پائے یوں بالکل سود دینے سے زید بچ جائے گا چالیس پچاس روپیہ جو زیادہ جائے گا وہ یوں ہوگا کہ قرض دیا تھا اور مارا گیا یا قرض دار پر چھوڑ دیا سود دینے میں محسوب نہ ہو گا۔ رہا یہ کہ وہ دوسرا ہندو اس روپے کو سود پر چلائے گا یہ اس کا فعل ہے بلکہ تنہا اس کا بھی فعل نہیں جب تک اسے کوئی قرض لینے والا نہ لے تو اس کا الزام زید پر نہیں

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

...can come. Allah Almighty said: "And no bearer of burdens will bear the burden of another." (Quran 6:164)[1] Allah Almighty has said: No soul bearing a burden shall carry the burden of another. (Trans.)

In Al-Hidayah, it is stated: "Verily, the sin lies in the action of the lessee, and he is a free agent therein; thus, the attribution (of sin) to him (the lessor) is severed."[2] Indeed, the sin arises from the act of the lessee, and he is an independent agent (it is not disliked); therefore, its connection to the owner of the house is severed. (Trans.)

Similarly, if one can do so with some part of the debt, even if it is only a portion, then to whatever extent one can avoid sin or save wealth from being spent on something forbidden, taking such measures is obligatory. And Allah Almighty knows best.

Problem 292: From Khairabad, the aforementioned place, sent by Mawlavi Syed Fakhrul Hasan Sahab, 19 Shawwal 1327 AH. If a sanctuary is seen in Sharia for the inability of helplessness, it is only the blessed essence of holy lofty attributes. Therefore, despite the delay and lack of opportunity, I am forced to trouble you and humbly seek forgiveness. I had sent a request for a fatwa (Istifta) attached to this petition to your exalted presence. Due to the delay in receiving an answer, its copy was also sent to Rampur. After receiving the ruling on the matter from your high presence, the petitioner was guided on measures to arrange the money, but: Look at the fate, where the lasso broke, Just two or four hands away, when it reached the edge of the roof. Before the arrangement for the full amount could be completed, a reply contrary to your noble command was received from Rampur. It is not necessary for me to state that even in matters of goodness and reform, some whispers and human-faced Satans and obstacles do arise. The thoughts of the person involved in the matter were so changed by the responses from Rampur that he says, "Until I see categorical proofs and solid arguments in refutation of Rampur according to the Hanafi school, I cannot accept the permissibility of the transfer in any way." There is no choice for a humble person like me except to seek refuge in your high personality. Therefore, [here is] a copy of the responses sent by the scholars of Rampur.

---

1 The Holy Quran 6/164 2 Al-Hidayah, Book of Al-Karahiya, Section on Sale, Yusufi Press, Lucknow, 4/470. Page 705 of 715

फ़तावा रज़विया (खंड 17)

...आ सकता है। अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "व ला तज़िरु वाज़िरतुं विज़रा उखरा" (और कोई बोझ उठाने वाला दूसरे का बोझ नहीं उठाएगा।)[1] अल्लाह तआला ने फरमाया: कोई बोझ उठाने वाली जान दूसरे का बोझ नहीं उठाएगी। (अनु.)

हिदाया में है: "इन्नमल मासियतु बि-फ़िलिल मुस्ताजिर व हुवा मुख्तारुन फ़ीहि फ़-कुतिअत निस्बतुहु अन्हु"[2] बेशक गुनाह तो किरायेदार (मुस्ताजिर) के कर्म से है और वह स्वतंत्र (मुख्तार) है (मकरूह नहीं), इसलिए इसका संबंध मकान मालिक से कट गया। (अनु.)

इसी तरह, यदि कोई ऋण के कुछ हिस्से के साथ ऐसा कर सके तो कुछ ही सही, क्योंकि जितना पाप से बचा जा सके या जितना धन हराम में देने से सुरक्षित रह सके उस हद तक उपाय करना अनिवार्य (वाजिब) है। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला 292: खैरआबाद, उक्त स्थान से, प्रेषित मौलवी सैयद फखरुल हसन साहब, 19 शव्वाल 1327 हिजरी। यदि शरीयत में लाचारी की अक्षमता के लिए कोई पनाहगाह नज़र आती है, तो वह केवल पवित्र श्रेष्ठ गुणों वाली धन्य हस्ती ही है। अतः देरी और अवसर की कमी के बावजूद, परेशान करने के लिए मजबूर होकर बहुत ही अदब से माफी का तलबगार हूँ। इस अर्जी के साथ संलग्न इस्तिफ़्ता (फतवे की मांग) आपकी पवित्र उपस्थिति में भेजी गई थी। जवाब मिलने में देरी के कारण इसकी एक प्रति रामपुर भी भेजी गई थी। आपके दरबार से पूछे गए प्रश्न का हुक्म पाकर प्रार्थी को धन की व्यवस्था करने के उपाय का निर्देश दिया गया था कि: किस्मत को देखिये कि कहाँ टूटी जा कमन्द दो-चार हाथ जबकि लब-ए-बाम रह गया पूरे रुपये की व्यवस्था अभी हो भी नहीं पाई थी कि रामपुर से आपके हुक्म के खिलाफ जवाब मिला। यह बात मुझे बताने की आवश्यकता नहीं है कि अच्छे और सुधार के कार्यों में भी कुछ शैतानी वसवसे और इंसानी सूरत वाले शैतान और बाधाएं आ जाती हैं। मामले से जुड़े व्यक्ति के विचार रामपुर के जवाबों से इस कदर बदल गए कि वह कहता है कि "जब तक मैं रामपुर के खंडन में हनफी पंथ के अनुसार स्पष्ट प्रमाण और ठोस दलीलें नहीं देखूँगा, तब तक मैं किसी भी तरह से हस्तांतरण (तहवील) की वैधता को स्वीकार नहीं कर सकता।" मुझ जैसे अज्ञानी के पास सिवाय इसके कि आपकी शरण चाहूँ, कोई और चारा नहीं है। अतः रामपुर के विद्वानों द्वारा भेजे गए जवाबों की नकल [प्रस्तुत है]।

---

1 अल-क़ुरान अल-करीम 6/164 2 अल-हिदाया, किताब अल-कराहीया, फ़स्ल फ़ी अल-बय, मतबा यूसुफ़ी लखनऊ, 4/470। पेज 715 में से 705

آسکتا ہے، قال تعالٰی "وَلَا تَزِرُ وَازِرَةٌ وِزْرَ أُخْرٰی" 1- اللہ تعالٰی نے فرمایا: کوئی بوجھ اٹھانے والا نفس دوسرے کا بوجھ نہیں اٹھائے گا۔ (ت)

ہدایہ میں ہے: انما المعصیۃ بفعل المستاجر وھو مختار فیہ فقطع نسبتہ عنہ 2- بیشک گناہ تو مستاجر کے فعل سے ہے اور وہ مختار ہے (مکر وہ نہیں) لہذا اس کی نسبت مالک مکان سے منقطع ہوگئی۔ (ت)

یوں ہی اگر بعض قرض کے ساتھ ایسا کر سکے تو بعض ہی سے سہی کہ جتنی معصیت سے بچے یا جتنا مال حرام میں دینے سے محفوظ رہ سکے اس قدر کی تدبیر واجب ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۹۲: از خیرآباد مقام مذکور مرسلہ مولوی سید فخر الحسن صاحب ۱۹ شوال ۱۳۲۷ھ

شریعت بے استعدادی کو مجبوری میں جائے پناہ اگر نظر آتی ہے تو صرف ذات بابرکات قدسی صفات عالی ہے لہذا باوجود توقف عدم الفرصتی تکلیف دہی والا پر مجبور ہو کر نہایت ادب سے معافی کا مترصد ہوں استفتاء منسلک عریضہ ہذا والا حضور اقدس میں بھیجا تھا دیر رسی جواب کی وجہ سے اس کی نقل رامپور بھی بھیجی تھی پیشگاہ والا سے جو از صورت مسئولہ کا حکم پا کر سائل کو ہدایت تدبیر فراہمی روپیہ کی گئی تھی کہ قسمت کو دیکھئے کہ کہاں ٹوٹی جا کمند دوچار ہاتھ جبکہ لب بام رہ گیا پورے روپے کی تدبیر نہ ہونے پائی تھی کہ رامپور سے جواب خلاف حکم والا ملا، یہ امر میرے عرض کرنے کا محتاج نہیں ہے کہ امور خیر واصلاح کار میں بھی کچھ وساوس وابلیس آدم رو ومانع پیش آتے ہیں صاحب معاملہ کے خیالات وجوابات رامپور سے ایسے تبدیل کئے گئے کہ وہ کہتا ہے کہ جب تک رامپور کی تردید میں براہین قاطعہ ودلائل

مستحکم از روئے ملت حنفیہ نہ دیکھوں گا کسی طرح جواز تحویل کو تسلیم نہیں کر سکتا مجھ ہیچمدان کو بجز اس کے کہ ذات بندگان عالی سے پناہ چاہوں کوئی چارہ کار نہیں ہے لہذا نقل جوابات مرسلہ علمائے رامپور

---

1 القرآن الکریم ۶ / ۱۶۴ 2 الھدایۃ کتاب الکراہیۃ فصل فی البیع مطبع یوسفی لکھنؤ ۴ / ۴۷۰

Fatawa Razvia Volume (17)

Sending this for service, I request that the humble servant be relieved from this distress as soon as possible. I have come to your door seeking refuge with humility and need, so that your threshold becomes the fulfiller of my needs. (T) What more can I submit besides the desire to attain the kissing of your feet? This humble petition is from Fakhr-ul-Hasan (may he be forgiven) from Khairabad, 19 Shawwal 1327 AH. (Answer from the scholars of the state of Rampur) The Answer: And Allah, glory be to Him, is the Granter of success for truth and correctness. (Allah, glory be to Him and exalted is He, is the One Who grants the ability for truth and correctness. T) In such a situation, it is unlawful and forbidden for Zaid to act upon the advice of Badri Prasad according to the Hanafi school. Indeed, in this case, besides being liable for giving interest, he is also involved in the liability of consuming interest. The detail is that Zaid giving the amount of (Samma Ma'a 102) to Badri Prasad to pay off Munnu Singh's debt effectively means that Zaid lends the amount (Samma Ma'a 102) to Badri Prasad on the condition that he pays Zaid's debt of (Samma Sailah Lahu 11) to Munnu Singh on behalf of Zaid, retrieves the document, and transfers Munnu Singh's debt onto Badri Prasad. It is stated in Tanwir al-Absar regarding the definition of Hawala (debt transfer): "It is the transfer of a debt from the responsibility of the transferor (al-Muhil) to the responsibility of the transferee (al-Muhal alayh)." End. (1) In the explanation of Hawala in Tanwir al-Absar, it is said that it is to transfer the debt from the debtor's responsibility to the transferee's responsibility. End. (T) So, Badri Prasad taking (Samma Ma'a 102) and paying (Sami'a 1012) after adding (Samma Sailah Lahu) is Zaid paying interest of (Sayah 1012), because this (Sami'a 1012) which Badri Prasad will pay to Munno Singh on behalf of Zaid, this amount is not proven in exchange for any wealth, so it must necessarily be a profit on the rupees lent by Zaid (Samma Ma'a 102). In Al-Ashbah: "Every loan that draws a benefit is forbidden." End. Durr al-Mukhtar (2). It is stated in Ashbah that the loan which draws profit is interest. End. (Durr al-Mukhtar) In Jawahir al-Fatawa: "If it is conditional, it becomes a loan in which there is benefit." In Jawahir al-Fatawa it is said that if it is conditional, then it will be such a loan in which there was profit and...

(1) Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Kitab al-Hawala, Matba' Mujtabai Delhi, 1/296 (2) Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Fasl fi al-Qard, Matba' Mujtabai Delhi, 2/544 Page 706 of 715

फतावा रज़विया, खंड (17)

सेवा में भेजते हुए निवेदन है कि जितनी जल्दी संभव हो सके, इस अधम को इस संकट से मुक्ति दिलाएँ। मैं विनम्रता और आवश्यकता के साथ आपकी चौखट पर शरण माँगने आया हूँ, ताकि आपकी चौखट मेरी आवश्यकताओं को पूरा करने वाली बन जाए। (त) चरण स्पर्श प्राप्त करने की अभिलाषा के अलावा और क्या अर्ज़ करूँ्यह विनम्र याचिका फख़्र-उल-हसन (उसे क्षमा किया जाए) की ओर से, खैराबाद से, 19 शव्वाल 1327 हिजरी। (रामपुर राज्य के विद्वानों का उत्तर) उत्तर: और अल्लाह, वह महिमामय है, सत्य और शुद्धता के लिए सफलता प्रदान करने वाला है। (अल्लाह, महिमामय और सर्वोच्च, सत्य और शुद्धता की क्षमता प्रदान करने वाला है। त) ऐसी स्थिति में, ज़ैद के लिए हनफ़ी पंथ के अनुसार बद्री प्रसाद की सलाह पर अमल करना नाजायज़ और हराम है। वास्तव में, इस मामले में, ब्याज देने के दंड के अलावा, वह ब्याज खाने के दंड में भी लिप्त है। विवरण यह है कि ज़ैद द्वारा बद्री प्रसाद को (सम्मा माअ 102) की राशि देकर मुन्नू सिंह के ऋण को चुकाने का अर्थ स्पष्ट रूप से यह है कि ज़ैद (सम्मा माअ 102) की राशि बद्री प्रसाद को इस शर्त पर उधार देता है कि वह ज़ैद की ओर से मुन्नू सिंह को (सम्मा साइला लहू 11) की ऋण राशि का भुगतान करेगा, दस्तावेज़ वापस ले लेगा और मुन्नू सिंह के ऋण को बद्री प्रसाद के नाम हस्तांतरित कर देगा। तनवीर अल-अबसार में हवाला (ऋण हस्तांतरण) की परिभाषा में कहा गया है: "यह ऋण को मुहील (हस्तांतरणकर्ता) के दायित्व से मुहाल अलैह (हस्तांतरी) के दायित्व में स्थानांतरित करना है।" समाप्त। (1) तनवीर अल-अबसार में हवाला की व्याख्या में कहा गया है कि यह ऋण को ऋणी के दायित्व से हस्तांतरी के दायित्व में स्थानांतरित करना है। समाप्त। (त) तो बद्री प्रसाद का (सम्मा माअ 102) लेना और (समिअ 1012) को बढ़ाकर (सम्मा साइला लहू) का भुगतान करना, ज़ैद के लिए (सायह 1012) का ब्याज देना है, क्योंकि यह (समिअ 1012) जो बद्री प्रसाद ज़ैद की ओर से मुन्नू सिंह को देगा, यह राशि किसी संपत्ति के बदले में सिद्ध नहीं हुई है, इसलिए यह अनिवार्य रूप से ज़ैद द्वारा उधार दिए गए (सम्मा माअ 102) रुपयों का लाभ होगा। अल-अशबाह में है: "प्रत्येक ऋण जो लाभ खींचता है, वह हराम (वर्जित) है।" समाप्त। दुर्रे मुख्तार। (2) अशबाह में है कि जो ऋण लाभ खींचे वह सूद (ब्याज) है। समाप्त। (दुर्रे मुख्तार) जवाहिर अल-फतावा में है: "यदि यह शर्तबद्ध हो, तो यह ऐसा ऋण बन जाता है जिसमें लाभ हो।" जवाहिर अल-फतावा में है कि यदि वह शर्तबद्ध हो तो ऐसा ऋण होगा जिसमें लाभ हुआ हो और...

(1) दुर्रे मुख्तार शरह तनवीर अल-अबसार, किताबुल हवाला, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/296 (2) दुर्रे मुख्तार शरह तनवीर अल-अबसार, फसल फिल क़र्ज़, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 2/544 पेज 706/715

ارسال خدمت کر کے گزارش ہے کہ جس قدر جلد ممکن ہو کمترین کو اس ضغط سے نجات دیجئے۔ پناہ جو بدرت آمدم بعجز و نیاز کہ آستان تو حاجت روائے من باشد (پناہ ڈھونڈتے ہوئے بعجز و نیاز کے ساتھ تیرے دروازے پر آیا ہوں تاکہ تیرا آستانہ میرا حاجت روا بن جائے۔ت) زیادہ بجز تمنائے حصول قدمبوسی کے کیا عرض کروں، عریضہ ادب کمترین فخر الحسن عفاعنہ از خیرآباد ۱۹ شوال ۱۳۲۷ھ (جواب علمائے ریاست رامپور) الجواب: واللہ سبحنہ موفق للصداق والصواب (اللہ سبحانہ و تعالٰی سچائی اور درستگی توفیق عطا فرمانے والا ہے۔ت) ایسی صورت میں زید کو بروئے ملت حنفیہ مشورہ بدری پر شاد عمل ناجائز و حرام ہے بیشک اس صورت میں علاوہ مواخذہ سود دینے سے مواخذہ سود خوری میں مبتلا ہونا ہے، تفصیل یہ ہے کہ زید کا مبلغ (صمہ معہ ۱۰۲) بدری پر شاد کو دے کے منوسنگھ کے قرضہ کی اترائی بدری پر شاد پر کر دینے کے معنی بظاہر یہ ہیں کہ زید مبلغ (صمہ معہ ۱۰۲) بدری پر شاد کو اس شرط پر قرض دے کہ وہ منوسنگھ والے قرض مبلغ (صمہ سالعہ لہ ۱۱) ذمگی زید کو زید کی طرف سے ادا کر کے دستاویز واپس لے لے اور منو سنگھ کے دین کو بدری پر شاد پر حوالہ کر دے، قال في تنویر الابصار في تفسیر الحوالة ھی نقل الدین من ذمة المحیل الی ذمة المحتال علیه (۱) انتھی۔ تنویر الابصار میں حوالہ کی تفسیر میں کہا کہ وہ دین کو محیل کے ذمہ سے محیل علیہ کے ذمہ کی طرف منتقل کرنا ہے انتھی۔ (ت) تو بدری پر شاد کا (صمہ معہ ۱۰۲) لے کے اور (سامعہ ۱۰۱۲) بڑھا کے (صمہ سالعہ لہ) ادا کرنا زید کو (سایہ ۱۰۱۲) سود دینا ہے کیونکہ یہ (سامعہ ۱۰۱۲) جو بدری پر شاد زید کی طرف سے منور سنگھ کو ادا کرے گا یہ رقم کسی مال کے عوض میں ثابت نہیں ہوئی تو بالضرور زید کے (صمہ معہ ۱۰۲) قرض دئے ہوئے روپیوں کا نفع ہوگا، وفی الاشباہ

كل قرض جر نفعاً حرام انتهى درمختار (۲) اشباہ میں ہے کہ جو قرض نفع کھینچے وہ سود ہے انتهى (درمختار) في جواهر الفتاوى اذا كان مشروطاً صار قرضا فيه منفعة جواہر الفتاویٰ میں ہے کہ اگر وہ مشروط ہو تو ایسا قرض ہو گا جس میں نفع ہوا اور

(۱) درمختار شرح تنوير الابصار كتاب الحوالہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۲۹۶ (۲) درمختار شرح تنوير الابصار فصل فی القرض مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۵۴۴ Page 706 of 715

Fatawa Rizvia, Volume 17

“And that is usury (Riba).” Ended (Shami) 1. It is stated in Al-Kifayah: “In Shari'ah, Riba refers to an excess of wealth for which there is no counter-value in a mutual exchange of one wealth for another.” 2 Ended. It is interest. Ended (Shami). In Kifayah, it is said: In Shari'ah, interest refers to that financial excess for which there is no counter-value, while it occurs in financial exchanges. Ended (T). And in this case, the liability for paying interest is evident because (item 11) the amount that will reach Mannu Singh from Zaid is interest. Zaid accepted it as a debt upon himself and transferred it to Badri Prasad. The point is that Zaid did not pay it himself but had it paid. And since, in the event of only two thousand being unloaded, according to the mentioned condition, Badri Prasad will pay the interest amount of two thousand from his own side, the reason for impermissibility in this case is the same as in the first case. Therefore, both this and that are impermissible. This is the form of the answer, and Allah the Almighty knows best the correct way. Answered by Faqih-ud-Deen, may he be forgiven.

The one who answered was correct. Muhammad Muizzullah, teacher at Madrasa Aliya, Rampur.

That is so. Muhammad Munawwar Ali (Seal)

That is so. Muhammad Inayatullah, may he be forgiven.

The answer is correct and the opinion is sound, and Allah the Almighty knows best. Muhammad Lutfullah (Seal)

The answer is the answer, and Allah Glorified knows the correct way better. Abul Afzal Muhammad Fazal-ul-Haq.

Undoubtedly, both mentioned forms are impermissible, that's all. Hidayatullah Khan son of Hafiz Inayatullah Khan.

Request for Fatwa: Let it not be hidden from the justice-tempered consciences of the masters of the illustrious Shari'ah that two contradictory answers were received for one question. That is, the gentlemen of the Dar-ul-Ifta Ahl-e-Sunnat-o-Jamaat, Bareilly, gave a decree of permissibility for the questioned case and, considering it an act for the better, declared this matter binding for action. On the other hand, the scholar gentlemen of Rampur declared this same binding matter as impermissible and forbidden. The greater trouble is that no solution was provided for the need for

which the fatwa was requested, even though, according to the principle “Religion is easy,” the door of ease has been opened for the followers of the Islamic nation. Now it has become extremely necessary that, out of the two answers, one be proven wrong and its errors [be corrected] with decisive proofs.

1. Rad al-Muhtar, Chapter on Loans, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 3/174.
2. Al-Kifayah with Fath al-Qadir, Chapter on Riba, Maktaba Nooria Rizwia, Sukkur, 6/17. Page 707 of 715

फतावा रिज़विया, जिल्द 17

"और वह ब्याज (रिबा) है।" समाप्त (शामी) 1. अल-किफाया में कहा गया है: "शरीयत में, रिबा का अर्थ है धन की वह अधिकता जिसके बदले में धन के बदले धन के विनिमय में कोई प्रतिफल न हो।" 2 समाप्त। वह ब्याज है। समाप्त (शामी)। किफाया में कहा गया है: शरीयत में ब्याज उस वित्तीय अधिकता को कहते हैं जिसके बदले कोई प्रतिफल न हो, जबकि यह वित्तीय विनिमय में हो। समाप्त (त) और इस मामले में, ब्याज देने की जिम्मेदारी स्पष्ट है क्योंकि (मद 11) जो राशि ज़ैद की ओर से मन्नू सिंह को मिलेगी, वह ब्याज है। ज़ैद ने इसे अपने ऊपर ऋण के रूप में स्वीकार किया और बद्री प्रसाद को हस्तांतरित कर दिया। बात यह है कि ज़ैद ने इसे स्वयं नहीं दिया बल्कि दिलवाया। और चूंकि, केवल दो हजार की उतराई की स्थिति में, उक्त शर्त के अनुसार बद्री प्रसाद अपनी ओर से दो हजार की ब्याज राशि का भुगतान करेगा, इसलिए इस मामले में अनुमति न होने का वही कारण है जो पहले मामले में था। इसलिए, यह और वे दोनों नाजायज़ हैं। यह उत्तर का स्वरूप है, और अल्लाह तआला ही सही बात बेहतर जानता है। उत्तरदाता: फकीह-उद-दीन, अल्लाह उन्हें क्षमा करे।

जिसने उत्तर दिया वह सही था। मुहम्मद मुइज़ुल्लाह, शिक्षक मदरसा आलिया, रामपुर।

वैसा ही है। मुहम्मद मुनव्वर अली (मोहर)

वैसा ही है। मुहम्मद इनायतउल्ला, अल्लाह उन्हें क्षमा करे।

उत्तर सही है और राय दुरुस्त है, और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। मुहम्मद लुत्फ़ुल्लाह (मोहर)

उत्तर ही उत्तर है, और अल्लाह सुभानहु तआला सही बात बेहतर जानता है। अबुल अफ़ज़ाल मुहम्मद फ़ज़ल-उल-हक़।

निस्संदेह, उक्त दोनों स्थितियां नाजायज़ हैं, बस। हिदायतउल्ला खान पुत्र हाफिज़ इनायतउल्ला खान।

इस्तिफ़्ता (फतवा के लिए अनुरोध): शरीयत के न्यायप्रिय विद्वानों के मन से यह बात छिपी न रहे कि एक ही सवाल के दो विरोधाभासी जवाब प्राप्त हुए हैं। यानी, दारुल इफ्ता अहले सुन्नत-व-जमाअत, बरेली के हज़रत ने पूछी गई स्थिति की अनुमति का हुक्म देकर और इसे नेक काम मानकर इस मामले को अमल के योग्य बताया। और रामपुर के विद्वान हज़रात ने इसी अमल के योग्य मामले को नाजायज़ और हराम लिखा है। बड़ी मुसीबत यह है कि जिस ज़रूरत के लिए इस्तिफ़्ता किया गया था, उसका कोई हल नहीं बताया गया, जबकि 'दीन आसान है' के सिद्धांत के अनुसार इस्लाम के मानने

वालों के लिए आसानी का दरवाजा खोल दिया गया है। अब यह अत्यंत आवश्यक हो गया है कि दोनों उत्तरों में से एक को गलत साबित किया जाए और उसकी गलतियों को ठोस प्रमाणों के साथ [सुधारा जाए]।

1. रद अल-मुह्तार, ऋण का अध्याय, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 3/174।
2. अल-किफाया साथ में फतह अल-कादिर, रिबा का अध्याय, मकतबा नूरिया रिज़विया, सक्खर, 6/17। पृष्ठ 715 में से 707

وہو ربا انتھی شامی ۱، قال فی الکفایۃ الربو فی الشرع عبارۃ عن فضل مال لا یقابلہ عوض فی معاوضۃ مال بمال ۲ انتھی۔ وہ سود ہے انتھی (شامی)، کفایہ میں کہا سود شرع میں اس مالی زیادتی کو کہتے ہیں جس کے مقابل کوئی عوض نہ ہو جبکہ یہ مالی معاوضات میں ہو انتھی (ت) اور اس صورت میں سود دینے کا مواخذہ تو ظاہر ہے کیونکہ (سالہ ۱۱) جو منجانب زید منوسنگھ کو پہنچیں گے یہ رقم سود ہے جو زید نے اپنے ذمہ دین تسلیم کرکے بدری پرشاد پر حوالہ کئے، غایت یہ ہے کہ زید نے خود نہیں دیئے دلوائے اور چونکہ برتقدیر صرف دو ہزار کی اترائی کے موافق شرط مذکور بقدر دو ہزار کے سود بھی بدری پرشاد اپنے پاس سے ادا کرے گا تو اس صورت میں وہی وجہ عدم جواز کی ہے جو پہلی صورت میں تھی لہٰذا یہ اور وہ دونوں ناجائز ہیں، ھذہ صورۃ الجواب واللہ تعالٰی اعلم بالصواب۔ المجیب فقیہ الدین عفا عنہ

اصاب من اجاب محمد معز اللہ مدرس مدرسہ عالیہ رامپور

ذلک کذلک محمد منور علی (مہر)

ذلک کذلک محمد عنایت اللہ عفی عنہ

الجواب صحیح والرای نجیح واللہ تعالٰی اعلم محمد لطف اللہ مہر

الجواب الجواب واللہ سبحانہ اعلم بالصواب ابو الافضال محمد فضل حق

بیشک صورت مذکورہ میں دونوں صورتیں ناجائز ہیں فقط ہدایت اللہ خاں ولد حافظ عنایت اللہ خاں

استفتاء: برضمیر معدلت پیرائے ارباب شریعت غرا مخفی مباد کہ ایک سوال کے دو جواب متضاد موصول ہوئے یعنی حضرات دارالافتاء اہل سنت و جماعت بریلی نے جواز صورت مسئولہ کا حکم دے کر بنظر عمل بالخیر ہونے کے اس امر کو واجب العمل فرمایا اور حضرات علمائے رامپور نے اس امر واجب العمل کو ناجائز و حرام تحریر فرمایا ہے زیادہ مصیبت یہ ہے کہ جس ضرورت کے واسطے استفتاء کیا گیا تھا اس کا کچھ چارہ کار نہیں بتلایا حالانکہ بفحوائے الدین یسر پیرو ملت اسلام کے واسطے آسانی کا دروازہ کھول دیا گیا ہے اب نہایت ضرور ہوا کہ منجملہ ہر دو جوابات کے ایک جواب غلط ہو کر اس کی غلطیاں براہین قاطعہ

1 ردالمحتار فصل فی القرض دار احیاء التراث العربی بیروت ۳ / ۱۷۴ 2 الکفایۃ مع فتح القدیر باب الربائی مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۶ / ۱۷ Page 707 of 715

Fatawa Razawiyya Volume 17

...be established from [evidence] and after the truth is established, instructions for its implementation should be given. Explain and you shall be rewarded.

The Answer:

O Allah, guidance to the truth and correctness. In the presence of the respected Maulana, Mr. Molvi Syed Muhammad Fakhrul Hasan, may Allah Almighty honor you. Peace be upon you and the mercy of Allah and His blessings.

The kind letter has arrived at this time. The residents of Darul Ifta in the gathering at Ara Shahabad, in the session of Madrasa Faiz-ul-Ghuraba, are ready to depart. An immediate concise reply is requested so that there is no burden of waiting, and a Muslim who is avoiding the calamity of interest, lest in delay the matter slips from his hands. If necessary, Insha'Allah Ta'ala, more details will be provided. And with Allah is success.

Maulana, you sent the question there in haste. Had this answer been written and sent, it was expected that those gentlemen's sight would not have slipped. Slip of vision by itself is not far-fetched, but after knowing the truth, opposition is not suspected except for one who chooses obstinacy and worships his carnal desires. (T). The basic misunderstanding of those gentlemen is that even after this referral (Hawala), they consider Zaid to be the debtor, and they are assuming that the other Hindu who will pay is paying on behalf of Zaid, as they write 'paying Zaid's debt of Badri Prashad Manu Singh on behalf of Zaid and taking back the document', and also they write 'this (amount 1012) Badri Prashad will pay Manu Singh on behalf of Zaid', and also they write '(item 11) will reach Manu Singh from Zaid'. The source of all their thoughts, rather the gist of the entire writing, is this same false assumption, and it is not correct at all. In Hawala (which is called transfer of debt), the original debtor (who is called Muhil) becomes free from the debt. The debt no longer remains on him, it transfers to the other person who took the debt upon himself towards the creditor (who is called Muhtal Alayh). The Muhtal Alayh does not pay that debt on behalf of the Muhil, but pays his own debt to the creditor, who is called Muhtal and Muhtal Lahu. It is in Tanwir al-Absar:

Al-Hawala is the transfer of debt from the responsibility of the Muhil to the responsibility of the Muhtal Alayh[1].

Hawala is the name for transferring the debt from the responsibility of the Muhil to the responsibility of the Muhtal Alayh. (T)

Nahr al-Haqa'iq then in Alamgiriya it is: This is the correct [view][2]

[1] Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Kitab al-Hawala, Matba Mujtabai Delhi, 2/69

[2] Fatawa Hindiyya with reference to Al-Nahr al-Faiq, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/295

फतावा रज़विया जिल्द 17

...से साबित की जाएँ और हक बात कायम हो जाने के बाद उस पर अमल करने की हिदायत दी जाए। बयान फरमाएं सवाब मिलेगा।

जवाब:

ऐ अल्लाह, हक और दुरुस्तगी की हिदायत दे। मोहतरम मौलाना जनाब मौलवी सैयद मोहम्मद फखरुल हसन साहब की खिदमत में, अल्लाह ताला आपको इज़्ज़त दे। अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाही व बरकातुह।

इनायत नामा इस वक्त मौसूल हुआ। दारुल इफ्ता के अहल-ए-मजलिस आरा शाहबाद में मदरसा फैज़-उल-गुरबा के जलसे में रवाना होने के लिए तैयार हैं। सरसरी जवाब फौरन गुज़ारिश है ताकि इंतज़ार की ज़हमत न हो, और एक मुसलमान जो सूद की बला से बच रहा है, कहीं ऐसा न हो कि ताकीर (देरी) की वजह से मामला हाथ से निकल जाए। अगर ज़रूरत हुई तो इंशा अल्लाह ताला और तफसील कर दी जाएगी। और अल्लाह ही तौफीक देने वाला है।

मौलाना, आपने जल्दबाज़ी में सवाल वहां भेजा। अगर यह जवाब लिखकर भेजा जाता तो उम्मीद थी कि उन साहबों की नज़र न चूकती। खुद से नज़र का चूक जाना दूर की बात नहीं, मगर हक बात जान लेने के बाद मुखालफत का गुमान नहीं होता, सिवाय उस शख्स के जो हठधर्मी अपनाए और अपनी नफ्सानी ख्वाहिशात की पूजा करे। (त)। उन साहबों की बुनियादी गलती यह है कि इस हवाले (हवाला) के बाद भी वे ज़ैद ही को कर्ज़दार समझ रहे हैं, और वे यह समझ रहे हैं कि वह दूसरा हिंदू जो अदा करेगा, वह ज़ैद की तरफ से अदा कर रहा है, क्योंकि वे लिखते हैं 'बदरी प्रसाद मनु सिंह वाले कर्ज़ की ज़िम्मेदारी ज़ैद को ज़ैद की तरफ से अदा करके दस्तावेज़ वापस ले' और यह भी लिखते हैं 'यह (रकम 1012) बदरी प्रसाद ज़ैद की तरफ से मनु सिंह को अदा करेगा' और यह भी लिखते हैं '(मद 11) ज़ैद की जानिब से मनु सिंह को पहुंचेंगे'। उनके तमाम खयालात का मंबा (स्त्रोत) बल्कि पूरी तहरीर का हासिल यही गलतफहमी है, और यह ज़रा भी सही नहीं है। हवाला में (जिसे कर्ज़ का उतारना कहते हैं) असल कर्ज़दार (जिसे 'मुहिल' कहते हैं) कर्ज़ से बरी हो जाता है। कर्ज़ अब उस पर नहीं रहता, बल्कि उस दूसरे शख्स पर हो जाता है जिसने अपने ऊपर का कर्ज़ लेनदार (जिसे 'मुहताल अलैह' कहते हैं) को देना स्वीकार कर लिया है। 'मुहताल अलैह' वह कर्ज़ 'मुहिल' की

तरफ से अदा नहीं करता, बल्कि लेनदार को अपना कर्ज़ देता है जिसे 'मुहताल' और 'मुहताल लहू' कहते हैं। तनवीरुल अबसार में है:

अल-हवालतु नक्लुद्दीन मिन ज़िमतिल मुहिल इल ज़िमतिल मुहताल अलैह 1	**हवाला, मुहिल के ज़िम्मे से कर्ज़ को मुहताल अलैह के ज़िम्मे की तरफ मुंतकिल (स्थानांतरित) करने का नाम है। (त)**

नहरुल हकैक फिर आलमगीरिया में है: यही सही है 2

1 दुर्रे मुख्तार शरह तनवीरुल अबसार, किताबुल हवाला, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 2/69 2 फतावा हिंदिया बहवाला अन-नहरुल फाईक, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/295

سے ثابت کی جائیں اور بعد قائم ہو جانے امر حق کے اس کی تعمیل کی ہدایت فرمائی جائے۔ بینوا توجروا۔

الجواب:

اللھم ھدایۃ الحق والصواب، بملاحظہ مولانا المکرم جناب مولوی سید محمد فخر الحسن صاحب اکرمکم اللہ تعالیٰ السلام علیکم ورحمۃ اللہ وبرکاتہ،

نوازش نامہ اس وقت تشریف لایا اہالی دارالافتاء بزم آرہ شاہ آباد جلسہ مدرسہ فیض الغربا بپاربکاب ہیں اجمالی جواب فوری گزارش ہے کہ تکلیف انتظار بھی نہ ہو اور ایک مسلمان کہ سود کی بلا سے بچتا ہے مبادا تاخیر میں وہ معاملہ ہاتھ سے نکل جائے اگر ضرورت ہوگی ان شاء اللہ تعالیٰ اور تفصیل کردی جائے گی وباللہ التوفیق۔

مولانا آپ نے بنظرِ عجت سوال وہاں ارسال فرمایا اگر یہ جواب لکھ کر بھیجتے تو مامول تھا کہ ان صاحبوں کی نظر لغزش نہ کرتی بطور خود زلت نظر بعید نہیں مگر بعدِ علم بالحق مخالفت مظنون نہیں ہوتی الامن عَنَدٍ وھوَاہُ عَبَدَ (سوائے اس شخص کے جو عناد اختیار کرے اور اپنی نفسانی خواہش کی پرستش کرے۔ت) ان صاحبوں کا ٹرمنشاء غلط یہ ہے کہ بعد اس حوالہ کے بھی زید ہی کو مدیون سمجھے ہوئے ہیں اور وہ دوسرا ہندو جو ادا کرے گا اسے زید کی طرف سے ادا کرنا گمان کر رہے ہیں کہ لکھتے ہیں بدری پر شاد منوسنگھ والے قرضہ ذمگی زید کو زید کی طرف سے ادا کر کے دستاویز واپس لے نیز لکھتے ہیں یہ (سامہ ۱۰۱۲) بدری پر شاد زید کی طرف سے منوسنگھ کو ادا کرے گا نیز لکھتے ہیں (سالعہ ۱۱) منجانب زید منوسنگھ کو پہنچیں گے ان

کے سارے خیالات کا منبع بلکہ سراپا تحریر کا محصل یہی زعم ہے اور وہ اصلاً صحیح نہیں حوالہ میں (جسے قرضہ کی اترائی کہتے ہیں) اصل مدیون (جسے محیل کہتے ہیں) دین سے بری ہو جاتا ہے دین اس پر نہیں رہتا اس دوسرے پر ہو جاتا ہے جس نے اپنے اوپر کا دین دائن کو (جسے محتال علیہ کہتے ہیں) محتال علیہ وہ دین محیل کی طرف سے ادا نہیں کرتا بلکہ خود اپنے اوپر کا دین دائن کو جسے محتال و محتال لہ کہتے ہیں دیتا ہے۔ تنویر الابصار میں ہے:

الحوالة نقل الدين من ذمة المحيل الى ذمة المحتال عليه ۱۔

حوالہ محیل کے ذمہ سے دین کو محتال علیہ کے ذمہ کی طرف منتقل کرنے کا نام ہے۔ (ت)

نہر الحقائق پھر عالمگیریہ میں ہے: هو الصحيح ۲

۱ درمختار شرح تنویر الابصار کتاب الحوالة مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۶۹ ۲ فتاوٰی ہندیہ بحوالہ النہر الفائق نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۹۵

Fatawa Rizwia Volume 17

In Tanwir it is: - [Arabic]: The original debtor (Muheel) is freed from the debt upon acceptance (by the new debtor). - [Urdu]: After acceptance by the debt-payer (Muhtal Alayh), the original debtor is freed from the debt. (T)

In Fath al-Qadir and Durr-ul-Mukhtar it is: - [Arabic]: Does a valid debt transfer (Hawala) cause exoneration? Yes. - [Urdu]: Does a valid debt transfer cause exoneration? The answer is yes. (T)

In Muhit-e-Sarkhasi and Fatawa Alamgiri it is: - [Arabic]: Among its rulings is the exoneration of the original debtor from the debt. - [Urdu]: One of the rulings of debt transfer (Hawala) is that the original debtor becomes free from the debt. (T)

To the extent that if the creditor now gifts or forgives the debt to the original debtor, it is void, because what debt remains on him that he should be gifted or forgiven? And if he forgives the debt-payer, it will be forgiven. In Fatawa Zahiriyya and Fatawa Hindiya it is: - [Arabic]: If the creditor releases the original debtor from the debt or gifts it to him, it is not valid; the fatwa is based on this. - [Urdu]: If the creditor (Muhtal) releases the original debtor (Muheel) from the debt (transferred to the new debtor) or gifts the debt to him, it is not valid; the fatwa is on this. (T)

In Radd al-Muhtar it is: - [Arabic]: There is consensus that if the creditor releases the debt-payer from the debt or gifts it to him, it is valid, and if he releases the original debtor or gifts it to him, it is not valid. - [Urdu]: There is consensus on this that if the creditor (Muhtal) releases the debt-payer (Muhtal Alayh) from the debt or gifts the debt to him, it is valid. And if he released the original debtor (Muheel) or gifted the debt to him, it is not valid. (T)

1. Durr-ul-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Kitab al-Hawala, Matba Mujtabai, Delhi, 3/69.
2. Durr-ul-Mukhtar with reference to Fath al-Qadir, Kitab al-Hawala, Matba Mujtabai, Delhi, 3/69.
3. Fatawa Hindiya with reference to Muhit al-Sarkhasi, Kitab al-Hawala, Bab al-Awwal, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 3/269.
4. Fatawa Hindiya with reference to al-Zahiriyya, Kitab al-Hawala, Bab al-Awwal, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 2/296.
5. Radd al-Muhtar, Kitab al-Hawala, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/288.

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

तन्वीर में है: - [अरबी]: ऋणदाता द्वारा स्वीकार किए जाने पर मूल ऋणी ऋण से मुक्त हो जाता है। - [उर्दू]: ऋण चुकाने वाले (मुहताल अलैहि) की स्वीकृति के बाद मूल ऋणी (मुहील) ऋण से मुक्त हो जाता है। (त)

फ़तहुल् क़दीर और दुर्रे मुख़्तार में है: - [अरबी]: क्या सही ऋण हस्तांतरण ऋणमुक्ति का कारण है? उत्तर है हाँ। - [उर्दू]: क्या सही ऋण हस्तांतरण (हवाला) से ऋणमुक्ति होती है, जवाब हाँ है। (त)

मुहीत-ए-सरख़्सी और फ़तावा आलमगीरिया में है: - [अरबी]: इसके नियमों में से एक मूल ऋणी की ऋणमुक्ति है। - [उर्दू]: ऋण हस्तांतरण (हवाला) के नियमों में से एक यह है कि मूल ऋणी ऋण से मुक्त हो जाता है। (त)

यहाँ तक कि अब यदि लेनदार (दाइन) मूल ऋणी को ऋण उपहार में दे दे या माफ कर दे तो यह अमान्य है, क्योंकि जो ऋण उस पर रहा ही नहीं उसके उपहार या माफी का क्या अर्थ? और यदि वह ऋण चुकाने वाले (मुहताल अलैहि) को माफ कर दे तो वह माफ हो जाएगा। फ़तावा ज़हीरिया और फ़तावा हिन्दिया में है: - [अरबी]: यदि लेनदार मूल ऋणी को ऋण से मुक्त करता है या उसे उपहार देता है, तो यह सही नहीं है; इसी पर फ़तवा है। - [उर्दू]: यदि लेनदार (मुहताल) मूल ऋणी (मुहील) को (हस्तांतरित किए गए) ऋण से मुक्त करे या उसे ऋण उपहार में दे, तो यह मान्य नहीं है, इसी पर फ़तवा है। (त)

रद्दुल मुहतार में है: - [अरबी]: इस बात पर सर्वसम्मति है कि यदि लेनदार ऋण चुकाने वाले (मुहताल अलैहि) को ऋण से मुक्त कर दे या उसे उपहार दे दे, तो यह मान्य है, और यदि वह मूल ऋणी (मुहील) को मुक्त करे या उसे उपहार दे, तो यह मान्य नहीं है। - [उर्दू]: इस पर सर्वसम्मति है कि यदि लेनदार, ऋण चुकाने वाले को ऋण से मुक्त कर दे या उसे ऋण उपहार में दे, तो यह मान्य है। और यदि उसने मूल ऋणी को मुक्त किया या उसे ऋण उपहार में दिया, तो वह मान्य नहीं है। (त)

1. दुर्रे मुख़्तार शरह तन्वीरुल अबसार, किताबुल हवाला, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 3/69.
2. दुर्रे मुख़्तार हवाला फ़तहुल् क़दीर, किताबुल हवाला, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 3/69.
3. फ़तावा हिन्दिया हवाला मुहीतल सरख़्सी, किताबुल हवाला, बाब अल-अव्वल, नूरानी कुतुब ख़ाना, पेशावर, 3/269.

4. फ़तावा हिन्दिया हवाला अज़-ज़हीरिया, किताबुल हवाला, बाब अल-अव्वल, नूरानी कुतुब ख़ाना, पेशावर, 2/296.
5. रद्दुल मुहतार, किताबुल हवाला, दार इहया अत-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 2/288.

فتاوٰی رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

تنویر میں ہے: برئ المحیل من الدین بالقبول[1] - | محتال علیہ کی طرف سے قبول کے بعد محیل قرض سے بری ہوجاتا ہے۔ (ت)

فتح القدیر و در مختار میں ہے: ھل توجب البرأۃ من الدین المصحح نعم[2] - | کیا حوالہ دین صحیح سے براءت کا موجب ہے، جواب ہاں۔ (ت)

محیطِ سرخسی و فتاوٰی عالمگیریہ میں ہے: اما احکامہا فمنہا برأۃ المحیل عن الدین[3] - | حوالہ کے احکام میں سے ایک یہ ہے کہ محیل قرض سے بری ہوجاتا ہے۔ (ت)

یہاں تک کہ اب اگر دائن اصل مدیون کو دین بخش دے یا معاف کرے تو باطل ہے کہ جو دین اس پر رہا ہی نہیں اس کی بخشش یا معافی کیا معنی، اور اگر محتال علیہ کو معاف کردے معاف ہوجائے گا۔ فتاوٰی ظہیریہ و فتاوٰی ہندیہ میں ہے: فلوا برأ المحتال المحیل عن الدین او وھبہ لہ لا یصح علیہ الفتوی[4] - | اگر محتال محیل کو محتال علیہ قرض سے بری کرے یا قرض اس کو ہبہ کرے تو صحیح نہیں، اسی پر فتوٰی ہے (ت)

رد المحتار میں ہے: اجماع علی ان المحتال لو ابرأ المحتال علیہ من الدین او وھبہ منہ صح ولو ابرأ المحیل او وھبہ لم یصح۔[5] | اس پر اجماع ہے کہ اگر محتال، محتال علیہ کو قرض سے بری کردے یا اس کو قرض ہبہ کردے تو صحیح ہے اور اگر محیل کو بری کیا یا اس کو قرض ہبہ کیا تو صحیح نہیں۔ (ت)

1 در مختار شرح تنویر الابصار کتاب الحوالہ مطبع مجتبائی دہلی ۳/ ۶۹ 2 در مختار بحوالہ فتح القدیر کتاب الحوالہ مطبع مجتبائی دہلی ۳/ ۶۹ 3 فتاوٰی ہندیہ بحوالہ محیط السرخسی کتاب الحوالہ

الباب الاول نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۲۶۹ 4 فتاویٰ ہندیہ بحوالہ الظہیریہ کتاب الحوالہ الباب الاول نورانی کتب خانہ پشاور ۲/ ۲۹۶ 5 رد المحتار کتاب الحوالہ داراحیاء التراث العربی بیروت ۲/ ۲۸۸

Fatawa Razawiyya (Volume 17)

Therefore, if the original debtor now places something as a pledge (Rahn) with the creditor in exchange for this settled debt, it is not valid because the debt no longer remains with him; for what exchange would he keep this pledge? It is stated in Kafi Sharh Wafi and then in Alamgiri:

If one transfers his debt [to someone else] and then gives a pledge, it is not valid. (T)	**If the transferor (Muhil) transferred the debt to someone and then kept something as a pledge with the creditor, it is not valid. (T)**

And if a pledge was already held by the creditor for that debt, it would be taken back from the creditor as soon as the transfer (Hawala) occurs, because the debt no longer remains with him. In Muhit of Imam Shams al-A'immah al-Sarakhsi, then in Hindiya, it is stated:

When the pledgor transfers the pledgee's debt to someone else, he can now take back the pledge. (T)	**When the pledgor (Rahin) has transferred the pledgee's (Murtahin) debt to someone else, he can now take back the pledge. (T)**

After the transfer (Hawala), the creditor essentially has no right to demand his debt from the original debtor. However, if the transferee (Muhtal alayh) denies the transfer and takes an oath, and neither the transferor (Muhil) nor the recipient of the transfer (Muhtal) have witnesses, or if the transferee dies insolvent leaving no property, cash, or outstanding debt, and no one is a guarantor for him, then only in this case does the transfer become void and the debt returns to the original debtor. The meaning of 'returning' itself implies that the debt was not on him before this. In Tabyin al-Haqa'iq Sharh Kanz al-Daqa'iq by Imam al-Zayla'i, it is stated:

The transferee does not refer back to the transferor unless his right is lost. When it is lost, the debt returns to the responsibility of the transferor. According to Imam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him), loss occurs in one of two cases: either the transferee denies the transfer and takes an oath while the transferor and the recipient of the transfer have no witnesses, or the transferee dies insolvent, leaving no assets, no debts due to him, and no guarantor. (Summary)

The recipient of the transfer (Muhtal) cannot return to the transferor (Muhil) unless his right is destroyed. In the case of destruction, the debt returns to the responsibility of the transferor. According to Imam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him), there are two forms of destruction: either the transferee (Muhtal alayh) denies the transfer and takes an oath while the transferor and the recipient of the transfer have no witnesses, or the transferee dies insolvent, leaving no property, no debt, and no guarantor. (T)

---

1. Fatawa Hindiya, citing al-Kafi, Book of Hawala, Chapter 1, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/296.
2. Fatawa Hindiya, citing Muhit al-Sarakhsi, Book of Hawala, Chapter 1, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/296.
3. Tabyin al-Haqa'iq, Book of Hawala, al-Matba’ah al-Kubra al-Amiriyya Bulaq Egypt, 4/172-173. Page 710 of 715

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

इसलिए, यदि मूल ऋणी अब इस चुकाए गए ऋण के बदले ऋणदाता के पास कोई चीज़ गिरवी (रहन) रखता है, तो यह सही नहीं है क्योंकि ऋण अब उस पर रहा ही नहीं; वह किस विनिमय के बदले यह गिरवी रखेगा? 'काफ़ी शरह वाफ़ी' और फिर 'आलमगीरी' में है:

यदि ऋण अंतरणकर्ता ने ऋण को स्थानांतरित कर दिया और फिर गिरवी रखा, तो यह वैध नहीं है। (1)

यदि मुहील (ऋण अंतरणकर्ता) ने ऋण को किसी और पर स्थानांतरित (हवाला) कर दिया, फिर ऋणदाता के पास कुछ गिरवी रखा, तो यह सही नहीं है। (त)

और यदि उस ऋण के बदले पहले से ही ऋणदाता के पास कोई गिरवी रखी हुई थी, तो स्थानांतरण (हवाला) होते ही वह ऋणदाता से वापस ले ली जाएगी, क्योंकि अब ऋण उस पर नहीं रहा। इमाम शम्स अल-अइम्मा अल-सरखसी के'मुहीत' और फिर 'हिन्दिया' में है:

जब गिरवी रखने वाला गिरवी रखने वाले के ऋण को किसी और पर स्थानांतरित कर देता है, तो वह गिरवी वापस ले लेता है। (2)

जब राहिन (गिरवी रखने वाला) ने मुर्तहिन (जिसके पास गिरवी रखी गई) का ऋण किसी और पर स्थानांतरित कर दिया, तो अब वह गिरवी वापस ले सकता है। (त)

स्थानांतरण के बाद, ऋणदाता को मूल रूप से मूल ऋणी से अपने ऋण की मांग करने का कोई अधिकार नहीं रहता। हाँ, यदि वह व्यक्ति जिस पर ऋण स्थानांतरित किया गया है (मुहताल अलैह), स्थानांतरण से मुकर जाए और कसम खा ले, और ऋण अंतरणकर्ता (मुहील) एवं ऋण प्राप्तकर्ता (मुहताल) के पास कोई गवाह न हो, या यदि वह व्यक्ति दिवालिया होकर मर जाए और कोई संपत्ति, नकदी या बकाया ऋण न छोड़े, और उसका कोई जामिन (गारंटर) न हो, तो केवल इसी स्थिति में स्थानांतरण अमान्य होकर ऋण फिर से मूल ऋणी पर वापस आ जाता है। 'वापस आने' का अर्थ ही यह है कि इससे पहले उस पर ऋण नहीं रहा था। इमाम अल-ज़ैलाई की 'तबयीन अल-हक़ाएक शरह कंज़ अद-दक़ाएक' में है:

ऋण प्राप्तकर्ता तब तक ऋण अंतरणकर्ता की ओर नहीं लौटता जब तक कि उसका अधिकार नष्ट न हो जाए। जब अधिकार नष्ट हो जाता है, तो ऋण अंतरणकर्ता के उत्तरदायित्व की ओर लौट आता है। इमाम अबू हनीफ़ा (रज़ियल्लाहु अन्हु) के अनुसार, नष्ट होने की दो स्थितियाँ हैं: या तो ऋण स्थानांतरित व्यक्ति स्थानांतरण का खंडन करे और शपथ ले जबकि मुहील और मुहताल के पास कोई प्रमाण न हो, या वह दिवालिया होकर मर जाए कि न कोई संपत्ति छोड़े, न ऋण और न ही कोई गारंटर। (3) - (संक्षेप में)

मुहताल, मुहील की ओर तब तक वापस नहीं आ सकता जब तक कि उसका अधिकार नष्ट न हो जाए। नष्ट होने की स्थिति में ऋण मुहील की जिम्मेदारी की ओर लौट आता है। इमाम अबू हनीफ़ा (रज़ियल्लाहु अन्हु) के अनुसार नष्ट होने की दो सूरतें हैं: या तो मुहताल अलैह स्थानांतरण का इनकार करे और कसम खा जाए जबकि मुहील और मुहताल लह के पास गवाह न हों, या मुहताल अलैह दिवालिया होकर मर जाए, न कोई संपत्ति छोड़े, न ऋण और न ही कोई जामिन। (त)

---

1. फ़तावा हिन्दिया, संदर्भ 'अल-काफ़ी', किताबुल हवाला, अध्याय 1, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/296।
2. फ़तावा हिन्दिया, संदर्भ 'मुहीत अल-सरखसी', किताबुल हवाला, अध्याय 1, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/296।
3. तबयीन अल-हक़ाएक, किताबुल हवाला, अल-मत्बा अल-कुबरा अल-अमीरिया बुलाक़ मिस्र, 4/172-173। पृष्ठ 710 का 715

ولہذا اب اگر اصل مدیون اس اترے ہوئے دِین کے بدلے کوئی چیز دائن کے پاس رہن رکھے صحیح نہیں کہ دِین اس پر رہا ہی نہیں یہ رہن کا ہے کے عوض رکھتا ہے، کافی شرح وافی پھر عالمگیریہ میں ہے:

لو احال بدینه فرهن لا یصح (1) **اگر محیل نے قرض پر کسی کا حوالہ کر دیا پھر دائن کے پاس کچھ رہن رکھا تو صحیح نہیں۔ (ت)**

اور اگر پہلے سے اس دِین کے بدلے کوئی رہن دائن کے پاس رکھا ہوا تھا حوالہ ہوتے ہی دائن سے واپس لے لے گا کہ اب دِین اس پر نہ رہا محیط امام شمس الائمہ سرخسی پھر ہندیہ میں ہے:

اذا احال الراهن المرتهن بالدین علی غیره یسترد الرهن (2) **جب راہن نے مرتہن کا قرض کسی اور پر حوالہ کر دیا تو اب رہن واپس لے سکتا ہے۔ (ت)**

حوالہ کے بعد دائن کو اصلاً اختیار نہیں رہتا کہ اصل مدیون سے اپنے دِین کا مطالبہ کرے، ہاں اگر محتال علیہ حوالہ ہونے سے مکر جائے اور قسم کھالے اور محیل و محتال کسی کے پاس گواہ نہ ہوں یا محتال علیہ مفلس مر جائے کہ جائداد یامال نقد یا قرض نہ چھوڑے، نہ کوئی اس کی طرف سے ضامن ہو تو صرف اس صورت میں حوالہ باطل ہو کر دِین پھر اصل مدیون پر عود کرتا ہے، عود کرنے کے معنی ہی خود یہ ہیں کہ اس سے پہلے اس پر دِین نہ رہا تھا، تبیین الحقائق شرح کنز الدقائق للامام الزیلعی میں ہے:

لم يرجع المحتال على المحيل الا ان يتوى حقه فاذا توى عليه عاد الدين الى ذمة المحيل والتوى عند ابى حنيفة رضي الله تعالى عنه احد الامرين اما ان يجحد المحتال عليه الحوالة ويخلف ولا بينة للمحيل وللمحتال له او يموت مفلسا بان لم يترك مالا عينا لا دينا ولا كفيلا (3) . (ملخصاً)

محتال محیل کی طرف رجوع نہیں کر سکتا مگر اس وقت کر سکتا ہے جب اس کا حق ہلاک ہو جائے، ہلاک کی صورت میں دِین محیل کے ذمہ کی طرف لوٹ آتا ہے، اور ہلاک کی امام ابو حنیفہ رضی اللہ تعالی عنہ کے نزدیک دو صورتیں ہیں یا یہ کہ محتال علیہ حوالہ کا انکار کرے اور قسم کھا جائے جبکہ محیل اور محتال لہ کے پاس گواہ نہ ہوں یا محتال علیہ مفلس ہو کر مر جائے نہ کوئی عین چھوڑے نہ دِین اور نہ ہی کوئی کفیل۔ (ت)

---

1 فتاوٰی ہندیہ بحوالہ الکافی کتاب الحوالہ الباب الاول نورانی کتب خانہ پشاور ۳ / ۲۹۶ 2 فتاوٰی ہندیہ بحوالہ محیط السرخسی کتاب الحوالہ الباب الاول نورانی کتب خانہ پشاور ۳ / ۲۹۶ 3 تبیین الحقائق کتاب الحوالہ المطبعۃ الکبرٰی الامیریہ بولاق مصر ۴ / ۷۳-۱۷۲

Fatawa Razawiya (Volume 17)

It is stated in 'Tanwir al-Absar' and 'Durr al-Mukhtar': The creditor (muhtal) cannot refer back to the original debtor (muhil) except in the case of loss (tawi). Loss occurs in one of two ways: either the transferee (muhal 'alayh) denies the debt transfer and takes an oath while the creditor has no proof, or the transferee dies bankrupt without leaving behind any tangible assets, debts owed to him, or a guarantor. The two disciples (Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad) said that loss is established in these two cases as well as when a judge declares him bankrupt. (T)

It is stated in 'Radd al-Muhtar': What is apparent from the speech of the jurists in the primary texts (mutun) and commentaries (shuruh) is the validation of Imam Abu Hanifa's view. Allamah Qasim has narrated the validation of the Imam's view. I have not seen anyone who validated the view of the two disciples. (T)

After these explicit statements, validations, and the phrase "it is correct and the fatwa is based on it," to then assume that Badri Prashad will pay on behalf of Zaid and that the interest will be given to Manu Singh on behalf of Zaid is a gross error. Subhan Allah! When he is no longer the debtor nor is there any claim against him, and he is neither paying nor can the creditor take from him now, then on what basis is he considered the one paying interest? It is even more peculiar that the text of 'Tanwir al-Absar' itself was quoted, stating that the transfer occupies the debt on his responsibility, or that he will pay on behalf of someone who does not owe the debt. In this situation, labeling Zaid as a usurer is even stranger. Even if, for the sake of argument, it were an error, it would only be what these gentlemen themselves admitted: that Zaid did not pay himself but had it paid, not that, God forbid, he took interest himself. I have already presented the details; if necessary, I will report again. For a just person, this much is sufficient. Success is through Allah, and Allah, glorified and exalted, knows best.

1. Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Book of Hawala, Mujtabai Press Delhi, 3/29
2. Radd al-Muhtar, Book of Hawala, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/293

फ़तावा रज़विया (जिल्द 17)

'तनवीरुल अबसार' और 'दुर्रे मुख्तार' में है: ऋणदाता (मुहताल) मूल देनदार (मुहील) की ओर वापस नहीं जा सकता सिवाय हलाकत (तवी) की स्थिति में। हलाकत दो में से एक बात से होती है: या तो वह व्यक्ति जिसे ऋण हस्तांतरित किया गया है (मुहताल अलैह) हस्तांतरण से इनकार कर दे और शपथ ले ले, और ऋणदाता के पास कोई गवाह न हो, या वह व्यक्ति (मुहताल अलैह) कंगाल होकर मर जाए और कोई संपत्ति, ऋण या गारंटर न छोड़े। साहिबैन (इमाम अबू यूसुफ और इमाम मुहम्मद) ने कहा कि इन दो स्थितियों से भी हलाकत सिद्ध होती है और न्यायाधीश द्वारा उसे कंगाल घोषित करने से भी। (त)

'रद अल-मुहतार' में है: मतून और शुरूह में फकीहों के कलाम से इमाम अबू हनीफा के कथन का सही होना स्पष्ट है, और अल्लामा कासिम ने इमाम साहब के कथन की पुष्टि को नकल किया है। मैंने किसी को नहीं देखा जिसने साहिबैन के कथन की पुष्टि की हो। (त)

इन स्पष्ट उल्लेखों और पुष्टियों के बाद, और 'यही सही है और इसी पर फतवा है' के बाद, फिर यह गुमान करना कि बद्री प्रसाद ज़ैद की तरफ से अदा करेगा और वह सूद ज़ैद की तरफ से मनु सिंह को दिया जाएगा, कैसी घोर गलती है! सुब्हान अल्लाह! जब न वह देनदार रहा और न उस पर कोई दावा रहा, न वह दे रहा है और न ऋणदाता अब उससे ले सकता है, तो फिर वह किस आधार पर सूद देने वाला ठहरा? विडंबना यह है कि 'तनवीरुल अबसार' की इबारत खुद नकल की गई कि हस्तांतरण उसके जिम्मे के ऋण को घेर लेता है, या वह उसकी तरफ से अदा करेगा जिसके जिम्मे ऋण नहीं है। इस स्थिति में ज़ैद को सूदखोर ठहराना और भी अजीब है। यदि मान भी लिया जाए, तो अधिक से अधिक वही होता जिसका खुद इन साहबों ने स्वीकार किया कि ज़ैद ने खुद नहीं दिए बल्कि दिलवाए, न कि यह कि माज़ अल्लाह उसने खुद सूद लिया। विस्तार से पहले ही निवेदन कर चुका हूँ; यदि आवश्यकता हुई तो फिर अर्ज करूँगा। न्यायप्रिय व्यक्ति के लिए इतना ही पर्याप्त है। सफलता अल्लाह की ओर से है और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

1. दुर्रे मुख्तार शरह तनवीरुल अबसार, किताबुल हवालह, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 3/29
2. रद अल-मुहतार, किताबुल हवालह, दार इहया अत-तुराथ अल-अरबी बैरूत, 4/293

पृष्ठ 711 का 715

تنویر الابصار و در مختار میں ہے : لا یرجع المحتال علی المحیل الا بالتوی و ھو بأحد أمرین ان یجحد المحال علیه الحوالة ویحلف ولا بینة له او یموت مفلسا بغیر عین ودین و کفیل وقالا بھما و بان فلسه الحاکم ۱۔ ہلاکت کی صورت کے علاوہ محتال محیل کی طرف رجوع نہیں کر سکتا اور ہلاکت دو میں سے ایک امر کے ساتھ ہوتی ہے یا محتال علیہ حوالہ کا انکار کر کے قسم کھا جائے اور محتال کے پاس گواہ نہ ہوں یا محتال علیہ مفلس ہو کر مر جائے اور کوئی عین، دین یا کفیل نہ چھوڑے، اور صاحبین نے کہا ان دو صورتوں سے بھی اور ہلاکت متحقق ہوتی اور حاکم کے اس (محتال علیہ) کو مفلس قرار دینے سے بھی۔ (ت)

ردالمحتار میں ہے: ظاھر کلامھم متونا وشروحاً تصحیح قول الامام و نقل تصحیحه العلامة قاسم و لم ار من صحح قولھما ۲۔ متون وشروح میں فقہاء کے کلام سے ظاہر امام ابوحنیفہ کے قول کی تصحیح ہے اور علامہ قاسم نے امام صاحب کے قول کی تصحیح کو نقل کیا، میں نے کسی کو نہیں دیکھا جس نے صاحبین کے قول کی تصحیح کی ہو (ت)

ان تصریحات و تصحیحات و ھو الصحیح و علیہ الفتوٰی (وہی صحیح ہے اور اسی پر فتوٰی ہے۔ت) کے بعد پھر یہ گمان کرنا کہ بدری پرشاد زید کی طرف سے ادا کرے گا وہ سود زید کی طرف سے منو سنگھ کو دیا جائے گا کیسی فاحش غلطی ہے، سبحان اللہ! جب نہ یہ مدیون رہا نہ اس پر مطالبہ ، نہ یہ دیتا ہے نہ دائن اب اس سے لے سکتا ہے تو یہ سود دینے والا کس حساب سے ٹھہرا، طرفہ یہ کہ تنویر الابصار کی عبارت خود نقل کی کہ حوالہ اس کے ذمہ دین سے مشغول ہے یا اس کی طرف سے ادا کرے گا جس کے ذمہ پر دین نہیں اور اس صورت میں زید کو سود خور ٹھہرانا اور بھی عجیب تر ہے، بفرض غلط ہوتا تو اتنا ہوتا جس کا خود ان صاحبوں نے اعتراف کیا کہ زید

نے خود نہیں دئیے دلوائے ، نہ یہ کہ معاذ اللہ اس نے خود سود لیا، تفصیل کے لئے عرض کر چکا ہوں کہ ضرورت ہوئی تو پھر گزارش ہوگی ، ذی انصاف کے لئے اسی قدر کافی ہے وباللہ التوفیق واللہ سبحانہ و تعالٰی اعلم۔

1 درمختار شرح تنویرالابصار کتاب الحوالہ مطبع مجتبائی دہلی ۳/ ۲۹ 2 ردالمحتار کتاب الحوالہ داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۲۹۳

Fatawa Razawiya Volume 17

Matter 293 to 297: From Kathiawar, requested by Haji Isa Khan Mohammad Sahib, 8 Jumadi al-Ula 1330 AH.

(1) Zaid said to Amr, "I have money due from Bakr. Collect it and keep it with you, and you have the authority to use it as you wish. I will take it from you when I need it." Is this permissible or not?

(2) Zaid sold a thousand-rupee note to Amr for twelve hundred on a four-month promise and took a written bond. Then Zaid bought an eleven-hundred-rupee note from Bakr for twelve hundred and said, "Amr owes me twelve hundred, collect it from him." For assurance, he gave the bond that Amr had written to Bakr. Is this permissible or not?

(3) Zaid sold a thousand-rupee note to Amr for eleven hundred on promise, with the condition that he takes a hundred rupees in cash now and the remaining thousand on the due date, and took a written bond for a thousand. Then Zaid bought a thousand-rupee note from Bakr for ten hundred and fifty, paid fifty immediately, and assigned the thousand due from Amr to Bakr. For assurance, he gave Amr's written bond to Bakr. Is this permissible or not?

(4) What is the definition of Hundi (bill of exchange)?

(5) Since Hundi is forbidden, is there any religiously permissible way possible so that the purpose of Hundi can be achieved through it?

The Answer:

(1) It is permissible because it is appointing an agent for possession and authorizing a loan. (t) And Allah Almighty knows best.

(2) It is permissible because it is a transfer of debt (Hawala) and setting a portion of the price against time, both of which are permissible as stated in Fath al-Qadir. (t) And Allah Almighty knows best. Because this is a transfer and there is a portion of the price against the time, and all this is permissible as it is in Fath al-Qadir. (t) And Allah Almighty knows best.

(3) It is permissible. This is the same as the previous case; the only difference is that in this one, some of the price is immediate and the rest is deferred, whereas in the

previous one, all was deferred. Given differences in kind and quantity, all of this is permissible. And Allah Almighty knows best.

(4) Zaid deposits some money with Amr as a loan on the condition that this money be paid to a certain person in a certain city, or that I receive it myself in a certain city. This is called Hundi. It is impermissible and a sin, and any increase or decrease that sometimes occurs, called 'Mati', is absolutely forbidden Riba (usury), and by giving it as a loan...

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

मसला 293 से 297: काठियावाड़ से, मसअला पूछने वाले हाजी ईसा खां मुहम्मद साहिब, 8 जमादी अल-उला 1330 हिजरी।

(1) ज़ैद ने अम्र से कहा, "बक्र पर मेरे रुपये बकाया हैं, तुम उन्हें वसूल कर लो और अपने पास जमा करो और तुम्हें इसमें तसर्रूफ (उपयोग) करने का अधिकार है, जब मुझे ज़रूरत होगी मैं ले लूँगा।" क्या यह जायज़ है या नहीं?

(2) ज़ैद ने अम्र के हाथ एक हज़ार का नोट बारह सौ में चार महीने के वादे पर बेचा और एक दस्तावेज़ (तमस्सुक) लिखवा ली। फिर ज़ैद ने बक्र से ग्यारह सौ का नोट बारह सौ में खरीदा और कहा कि अम्र पर मेरे बारह सौ बकाया हैं, तुम उनसे वसूल कर लो, और तसल्ली के लिए वह दस्तावेज़ जो अम्र ने लिखी थी, बक्र को दे दी। क्या यह जायज़ है या नहीं?

(3) ज़ैद ने एक हज़ार का नोट ग्यारह सौ में अम्र को वादे पर बेचा और यह शर्त लगा दी कि सौ रुपये नकद अभी लूँगा और बाकी एक हज़ार मुद्दत (तय समय) पर, और एक हज़ार की दस्तावेज़ लिखवा ली। फिर ज़ैद ने बक्र से एक हज़ार का नोट साढ़े दस सौ (1050) में खरीदा, पचास रुपये तुरंत अदा कर दिए और अम्र पर बकाया एक हज़ार का हवाला बक्र को दे दिया, और तसल्ली के लिए वही अम्र की लिखी हुई दस्तावेज़ बक्र को दे दी। क्या यह जायज़ है या नहीं?

(4) हुंडी (Hundi) की परिभाषा क्या है?

(5) चूँकि हुंडी हराम है, क्या कोई ऐसी सूरत शरीयत के अनुसार मुमकिन है कि जायज़ तौर पर हुंडी का मक़सद उससे हासिल हो जाए?

जवाब:

(1) जायज़ है, क्योंकि यह कब्ज़ (अधिकार) के लिए वकील बनाना और कर्ज़ देना है। (त) और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

(2) जायज़ है, क्योंकि यह 'हवाला' (ऋण हस्तांतरण) है और कीमत का कुछ हिस्सा समय (अजल) के बदले में है, और यह सब जायज़ है जैसा कि 'फ़तह अल-कदीर' में है। (त) और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है। क्योंकि यह हवाला है और समय के बदले कीमत का कुछ हिस्सा है और यह सब जायज़ है जैसा कि फ़तह अल-कदीर में है। (त) और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

(3) जायज़ है, यह वही पिछली सूरत है, बस इतना फर्क है कि इसमें कुछ कीमत नकद (मुअज्जल) है और बाकी उधार (मुअज्जल), और उसमें पूरी उधार थी। जिंस और कद्र (मात्रा) के अंतर के साथ यह सब जायज़ है। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

(4) ज़ैद अम्र के पास कुछ रुपया कर्ज़ के तौर पर इस शर्त पर जमा करे कि यह रुपया फलां शहर में फलां व्यक्ति को अदा किया जाए या यह कि मैं खुद फलां शहर में पाऊँ इसका नाम 'हुंडी' है। यह नाजायज़ और गुनाह है, और इस पर जो कभी-कभार कमी या ज़्यादती होती है जिसे 'मती' कहते हैं, वह रिबा (ब्याज) है जो कतई हराम है और कर्ज़ के तौर पर देने से...

فتاویٰ رضویہ جلد ہفدہم (۱۷)

مسئلہ ۲۹۳ تا ۲۹۷: از کاٹھیا واڑ مسئولہ حاجی عیسیٰ خاں محمد صاحب ۸ جمادی الاولیٰ ۱۳۳۰ھ

(۱) زید نے عمرو سے کہا میرے بکر پر روپے آتے ہیں تم وصول کرکے اپنے پاس جمع اور تصرف کا تمہیں اس میں اختیار ہے جب مجھے ضرورت ہوگی لے لوں گا، یہ جائز ہے یا نہیں؟

(۲) زید نے عمرو کے ہاتھ ہزار کا نوٹ بارہ سو کو چار مہینے کے وعدہ پر بیچا اور تمسک لکھالیا پھر زید نے بکر سے گیارہ سو کا نوٹ بارہ سو کو خریدا اور کہہ دیا کہ عمرو پر میرے بارہ سو آتے ہیں وصول کرلو اور اطمینان کے لئے وہ تمسک کہ عمرو نے لکھاتھا بکر کو دے دیا، یہ جائز ہے یا نہیں؟

(۳) زید نے ہزار کا نوٹ گیارہ سو کو عمرو کے ہاتھ وعدہ پر بیچا اور یہ شرط کرلی کہ سو روپے نقد ابھی لوں گا اور باقی ہزار روپے میعاد پر اور ہزار کا تمسک لکھالیا پھر زید نے بکر سے ہزار کا نوٹ ساڑھے دس سو کو خرید اور پچاس فوراً ادا کردیئے اور ہزار کا عمرو پر حوالہ کردیا اور اطمینان کے لئے وہی عمرو کا لکھا ہوا تمسک بکر کو دے دیا، یہ جائز ہے یا نہیں؟

(۴) ہنڈی کی کیا تعریف ہے؟

(۵) جبکہ ہنڈی حرام ہے تو کوئی صورت شرعاً ایسی ممکن ہے کہ جائز طور پر ہنڈی کا مطلب اس سے حاصل ہو جائے۔

الجواب:

(۱) جائز ہے فانہ توکیل بالقبض وتسویغ للقرض (کیونکہ یہ قبض کے لئے وکیل بنانا اور قرض دینا ہے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

(۲) جائز ہے، لانہ حوالۃ ومقابلۃ الاجل بقسط من الثمن والکل یجوز کما فی فتح القدیر۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ کیونکہ یہ حوالہ ہے اور اجل کے مقابلہ میں ثمن کا کچھ حصہ ہے اور یہ سب جائز ہے جیسا کہ فتح القدیر میں ہے۔(ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

(۳) جائز ہے، یہ وہی صورت سابقہ ہے فقط اتنا فرق ہے کہ اس میں بعض ثمن معجّل اور باقی مؤجل ہے اور اس میں کل مؤجل اور بحال اختلاف جنس و قدریہ سب جائز ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

(۴) زید عمرو کے پاس کچھ روپیہ بطور قرض اس شرط پر جمع کرے کہ یہ روپیہ فلاں شہر میں فلاں شخص کو ادا کیا جائے یا یہ کہ میں خود فلاں شہر میں پاؤں، اس کا نام ہنڈی ہے، یہ ناجائز و گناہ ہے اور اس پر جو بعض وقت کمی بیشی ہوتی ہے جسے متی کہتے ہیں وہ ربا سود حرام قطعی ہے اور بطور قرض دینے سے

This does not mean that it is given by stating it's a loan. Rather, when the situation is such that if this money were lost, stolen, or disappeared in any way from Umar's possession without his fault, and Zaid still recovers his money from him, then this itself is called a loan. Even if the word 'loan' was not used at the time of giving, and it was called 'depositing' (which also includes 'amanat' or trust), it is generally understood here that Amr will be considered responsible for this money in every way. If it is lost in any way, it will not be accepted without compensation. Thus, it is known that it is not a trust but a loan. If it were a trust, nothing would have been taken from him if the money were lost without his fault. Furthermore, depositing it here and taking its equivalent at another place is itself the essence of a loan. A trust is returned in its original form, not its equivalent. Since this became a loan and Zaid gets the benefit that if he sent the money with someone to that city or took it with him, there was a risk of it being lost on the way, and by giving it as a loan to Amr, this risk was eliminated, this is a benefit that Zaid gained by giving a loan. And whatever profit or benefit the lender gets on a loan, that is all usury and strictly forbidden (haram). It is stated in the Hadith that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

"Every loan that brings a benefit is Riba (usury)."[1] - Any benefit obtained from a loan is interest.

Therefore, Hundi (a traditional money transfer system) became impermissible. It is stated in Radd al-Muhtar:

Arabic	**Urdu**
Its form is that he gives some wealth as a loan to a merchant so that he gives it to his friend. He only gives it as a loan and not as a trust, so that he may benefit by avoiding the dangers of the path. It is also said that it is to lend to a person so that the borrower pays it back in a city that the lender desires, so that he may benefit by avoiding the dangers of the path. (Kifayah)[2]	The situation is that a person gives some wealth to a merchant as a loan so that he can give it to his friend; undoubtedly, he gives this wealth to him not as a trust but as a loan and benefits from the elimination of the risks of the path. And in one saying, its situation is that he gives a loan to someone so that the debtor returns the same loan to the lender in the city where he wants to receive it, so by this, he takes the benefit of avoiding the risk of the road. (Kifayah). (T)

(5) Yes, it is possible that he does not give money but a note, and does not give a loan but performs a sale on the condition that the buyer refers the price to such-and-such merchant of such-and-such city, so that we ourselves or through our representative receive it there...

---

[1] Kanz al-Ummal, Hadith 15516, Chapter on Appurtenance of the Book of Debt, Muassasah ar-Risalah Beirut, 6/238 [2] Radd al-Muhtar, Book of Hawala, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/295

इसका मतलब यह नहीं है कि इसे कर्ज कहकर दिया जाता है। बल्कि जब मामला ऐसा हो कि यदि यह रुपया उमर के पास से उसकी बिना किसी गलती के खो जाए, चोरी हो जाए, या किसी भी तरह से चला जाए, और फिर भी ज़ैद उससे अपना रुपया वसूल कर ले, तो इसी को कर्ज कहा जाता है। भले ही देते समय 'कर्ज' शब्द का प्रयोग न किया गया हो, 'जमा करना' कहा गया हो (जो अमानत को भी शामिल करता है), लेकिन यहाँ आम तौर पर यही है कि उम्र को हर तरह से इस रुपये का देनदार समझा जाएगा। यदि किसी भी तरह से नुकसान हो, तो बिना हर्जाना लिए नहीं माना जाएगा। तो मालूम हुआ कि यह अमानत नहीं बल्कि कर्ज है। यदि यह अमानत होती, तो बिना उसकी गलती के रुपया जाने पर उससे कुछ नहीं लिया जाता। इसके अलावा, यहाँ जमा करना और दूसरी जगह उसका बदला लेना, यह स्वयं कर्ज का हासिल है। अमानत तो मूल रूप में ही वापस ली जाती है, न कि उसका बदला। चूंकि यह कर्ज देना हुआ और ज़ैद को इसमें यह लाभ मिलता है कि यदि वह रुपया किसी के साथ उस शहर भेजता या अपने साथ ले जाता, तो रास्ते में खो जाने का डर था, और उम्र को कर्ज के रूप में देने से यह डर खत्म हो गया, तो यह एक लाभ है जो ज़ैद ने कर्ज देकर प्राप्त किया। और कर्ज देने वाले को कर्ज पर जो भी लाभ या फायदा प्राप्त हो, वह सब सूद (ब्याज) और हराम है। हदीस में है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

"हर वह कर्ज जो लाभ लाए, वह सूद है।"[1] - कर्ज से जो फायदा हासिल किया जाए वह सूद है।

इसलिए हुंडी नाजायज़ हुई। रद अल-मुह्तार में है:

अरबी	**उर्दू अनुवाद**
इसकी सूरत यह है कि कोई व्यक्ति किसी व्यापारी को कर्ज के रूप में कुछ माल दे ताकि वह उसे उसके दोस्त को दे दे। वह इसे कर्ज के रूप में देता है न कि अमानत के रूप में, ताकि वह रास्ते के खतरों से बचने का लाभ उठा सके। और यह भी कहा गया है कि यह किसी व्यक्ति को कर्ज देना है ताकि कर्जदार उसे उस शहर में वापस करे जिसे कर्जदाता चाहता है, ताकि	इसकी सूरत यह है कि कोई व्यक्ति व्यापारी को कुछ माल कर्ज दे ताकि वही उसके दोस्त को दे दे तो निस्संदेह यह माल उसको बतौर अमानत नहीं बल्कि बतौर कर्ज देता है और इससे रास्ते के खतरे के खात्मे का लाभ उठाता है, और एक कथन में इसकी सूरत यह है कि किसी को कर्ज दे ताकि कर्जदार वही कर्ज उस शहर में कर्ज देने वाले को वापस करे जिस शहर में वह लेना चाहता है तो

अरबी	उर्दू अनुवाद
वह रास्ते के खतरे से बचने का लाभ उठा सके। (किफाया)[2]	इससे वह रास्ते के खतरे के खात्मे का फायदा उठाता है। (किफाया)। (त)

(५) हाँ मुमकिन है रुपया न दे बल्कि नोट और कर्ज न दे बल्कि बिक्री करे इस शर्त पर कि खरीदार उसकी कीमत का हवाला फलां शहर के फलां व्यापारी पर कर दे कि हम खुद या अपने किसी वकील के माध्यम से वहां वसूल...

---

[1] कंज़ अल-उम्माल हदीस 15516, ऋण की पुस्तक के परिशिष्ट पर अध्याय, मुअस्ससतुत रिसाला बेरूत 6 / 238 [2] रद अल-मुह्तार किताबुल हवाला, दार इहयाउत तुरास अल-अरबी बेरूत 4 / 295

یہ مراد نہیں کہ قرض کہہ کر دے بلکہ جب معاملہ یوں ہوا کہ اگر یہ روپیہ عمر کے پاس سے بے اس کے قصور کے گم جائے چوری ہو جائے کسی طرح جاتا رہے جب بھی زید اپنا روپیہ اس سے بھروا لے تو اسی کا نام قرض ہے اگرچہ دیتے وقت قرض کا لفظ نہ کہا ہو جمع کرنا کہا ہو جو امانت کو بھی شامل ہے اور یہاں عام طور پر یہی ہے کہ عمرو کو ہر طرح اس روپے کا دیندار جانیں گے اور کسی طرح ضائع ہو بے تاوان لئے نہ مانیں گے تو معلوم ہوا کہ امانت نہیں بلکہ قرض ہے امانت ہوتی تو بے اس کے قصور کے اگر روپیہ جاتا رہتا تو اس سے کچھ نہ لیا جاتا معہذا یہاں جمع کرنا اور دوسری جگہ اس کا عوض لینا یہ خود ہی حاصل قرض ہے امانت تو بعینہا واپس لی جاتی ہے نہ اس کا عوض، اور جب یہ قرض دینا ہوا اور زید اس میں یہ فائدہ پاتا ہے کہ اگر روپیہ کسی کے ہاتھ اس شہر کو بھیجتا یا اپنے ساتھ لے جاتا تو راستے میں جاتے رہنے کا اندیشہ تھا عمرو کو بطور قرض دینے سے یہ اندیشہ جاتا رہا تو یہ ایک نفع ہے کہ زید نے قرض دے کر حاصل کیا اور قرض دینے والے کو قرض پر جو نفع جو فائدہ حاصل ہو وہ سب سود اور نزاحرام ہے۔ حدیث میں ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

کل قرض جر منفعة فهو رباً۔[1] - قرض سے جو فائدہ حاصل کیا جائے وہ سود ہے۔

لہذا ہنڈی ناجائز ہوئی۔ ردالمختار میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
صورتها ان یدفع الی تاجر مالا اس کی صورت یہ ہے کہ کوئی شخص تاجر کو کچھ مال قرض قرضا لیدفعه الی دیقه و انما یدفعه	دے تاکہ وہی اس کے دوست کو دے دے تو بلا شبہ یہ مال اس

عربی عبارت	اردو ترجمہ
قرضا لا امانة ليستفيد به سقوط خطر الطريق وقيل هي ان يقرض انسانا ليقضيه المستقرض فی بلد يريده المقرض ليستفيد به سقوط خطر الطريق كفاية۔[2]	کو بطور امانت نہیں بلکہ بطور قرض دیتا ہے اور اس سے راستہ کے خطرہ کے سقوط کا فائدہ اٹھاتا ہے، اور ایک قول میں اس کی صورت یہ ہے کہ کسی کو قرض دے تاکہ مقروض وہی قرض اس شہر میں قرض دہندہ کو واپس کرے جس شہر میں وہ لینا چاہتا ہے تو اس سے وہ راستہ کے خطرہ کے سقوط کا فائدہ اٹھاتا ہے۔ (کفایہ)۔ (ت)

(۵) ہاں ممکن ہے روپیہ نہ دے بلکہ نوٹ اور قرض نہ دے بلکہ بیچ کرے اس شرط پر کہ خریدار اس کی قیمت کا حوالہ فلاں شہر کے فلاں تاجر پر کر دے کہ ہم خود یا اپنے کسی وکیل کے ذریعہ سے وہاں وصول

---

1 کنز العمال حدیث ۱۵۵۱۶ فصل فی لواحق کتاب الدین موسسۃ الرسالہ بیروت ۶ / ۲۳۸ 2 رد المحتار کتاب الحوالہ داراحیاء التراث العربی بیروت ۴ / ۲۹۵

Fatawa Rizvia Volume 17

...do this; it is permissible, and the purpose is fully achieved. Now, an increase or decrease is also allowed; sell a hundred-rupee note for ninety-nine or for one hundred and one. As we have established in Kifl al-Faqih (as we have researched it in Kifl al-Faqih - T). It is mentioned in Dur-ul-Mukhtar:

Arabic Text	Urdu Translation/Explanation
If one sells on the condition that he (the seller) will refer his creditor to the buyer for the price, the sale is void. But if he sells on the condition that the buyer will refer the price to another person, it is valid because it is a suitable condition, like the condition of quality, unlike the first case.[1]	If someone sold something on the condition that in exchange for the price, the seller would refer any of his creditors to the buyer, the sale is void. And if the sale was made on the condition that the buyer would refer the payment of the price to another person, it is permissible because this condition is appropriate and suitable for the contract, just like a condition of quality, unlike the first case. (T)

It is stated in Radd-ul-Muhtar: His saying "because it is a suitable condition" is because it confirms the implication of the contract, as transfer (Hawala) is usually made to wealthy and better payers, so it became like the condition of quality. Durar.[2]

The author's statement that surely this condition is suitable for the contract is because it reinforces the implication of the contract since transfer (Hawala) is generally made to wealthy individuals and those who pay better; hence, it becomes like a condition of quality. Durar (T).

Yes, selling on the condition that "you give me its price in such-and-such city" is impermissible. It is stated in Radd-ul-Muhtar:

Arabic Text	Urdu Translation/Explanation
And from it (i.e., the corrupt conditions of sale) is that the price be paid in another city, or the seller gifts him a certain amount from it, unlike if he reduces a certain amount from its price, because the reduction is joined to what was before the contract. Bahr, end, summarized.[3]	Among the corrupt conditions that invalidate a sale is the condition that the buyer pays the price in another city, or the seller gifts a portion of the price to the buyer. This is contrary to the case where the seller reduces a portion from the price, because reduction relates back to the period

Arabic Text	Urdu Translation/Explanation
	before the contract. Bahr, end, summarized (T)

[1] Dur-ul-Mukhtar, Kitab al-Hawala, Matba' Mujtabai, Delhi, 12/70 [2] Radd-ul-Muhtar, Kitab al-Hawala, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/95-294 [3] Radd-ul-Muhtar, Bab al-Bay' al-Fasid, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 2/121

फ़तावा रज़विया जिल्द 17

...कर लें यह जायज़ है और मतलब पूरा हासिल है और अब कमी बेशी भी रवा है सौ का नोट निन्यानवे को बेचें ख़्वाह एक सौ एक को। जैसा कि इसकी तहक़ीक़ हमने किफ़्ल अल-फ़क़ीह में कर दी है (त)। दुर्रे मुख़्तार में है:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद/व्याख्या
यदि कोई इस शर्त पर बेचे कि वह (विक्रेता) मूल्य के लिए अपने लेनदार को खरीदार के पास भेजेगा, तो बिक्री शून्य है। लेकिन यदि वह इस शर्त पर बेचे कि खरीदार मूल्य का भुगतान किसी अन्य व्यक्ति को करेगा, तो यह वैध है क्योंकि यह एक उपयुक्त शर्त है, जैसे कि गुणवत्ता की शर्त, पहली स्थिति के विपरीत।[1]	अगर किसी ने कोई चीज़ इस शर्त पर फ़रोख़्त की कि समन (कीमत) के बदले में बाए' (विक्रेता) अपने किसी क़र्ज़ख़्वाह का हवाला मुश्तरी (खरीदार) पर करेगा तो बेअ (बिक्री) बातिल (शून्य) है। और अगर इस शर्त पर बेअ की कि मुश्तरी समन का हवाला किसी और शख़्स पर करेगा तो जायज़ है क्योंकि यह शर्त अक़्द (अनुबंध) के मुनासिब व मुलाईम (अनुकूल) है जैसे कि जूदत (गुणवत्ता) की शर्त, बखिलाफ़ पहली सूरत के। (त)

रद्दुल मुहतार में है: उनका कथन "क्योंकि यह एक उपयुक्त शर्त है" इसलिए है क्योंकि यह अनुबंध के निहितार्थ की पुष्टि करती है, क्योंकि हस्तांतरण (हवाला) आमतौर पर धनी और बेहतर भुगतान करने वालों पर किया जाता है, इसलिए यह गुणवत्ता की शर्त की तरह हो गया। दुरर।[2]

मातिन (लेखक) का क़ौल कि बेशक यह शर्त अक़्द के मुलाईम है, इसकी वजह यह है कि यह मूजिबे अक़्द को पक्का करती है क्योंकि हवाला आमतौर पर साहिबे सर्वत (धनी) और बेहतर अदायगी करने वालों पर किया जाता है, तो यह शर्ते जूदत की मिस्ल (तरह) हो गया, दुरर। (त)

हाँ, इस शर्त पर बेचना कि "तुम इसकी क़ीमत फलां शहर में मुझे देना", यह नाजायज़ है। रद्दुल मुहतार में है:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद/व्याख्या
और इसी में से (अर्थात बिक्री की भ्रष्ट शर्तों में से) यह है कि मूल्य का भुगतान दूसरे शहर में किया जाए, या विक्रेता उसे उसमें से कुछ	बेअ को फासिद (भ्रष्ट) करने वाली शरूते फासिदा में से यह है कि शर्त लगाई जाए कि मुश्तरी किसी दूसरे शहर में समन अदा करेगा या बाए' समन में से इतने

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद/व्याख्या
उपहार दे दे, इसके विपरीत यदि वह मूल्य में से कुछ कम कर देता है, क्योंकि कमी अनुबंध से पहले की स्थिति से जुड़ जाती है। बहर, इति, संक्षेप में।[3]	मुश्तरी को हिबा (उपहार) करेगा। बखिलाफ़ इसके कि बाए' समन से इतने घटाएगा क्योंकि घटाना अक़्द के माक़ब्ल (पहले) को लाहिक़ होता है, बहर इति मुख़्तसरन (त)

[1] दुर्रे मुख़्तार, किताब अल-हवाला, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 12/70 [2] रद्दुल मुहतार, किताब अल-हवाला, दार इहया अल-तुरास अल-अरबी बैरुत, 4/95-294 [3] रद्दुल मुहतार, बाब अल-बेअ अल-फासिद, दार इहया अल-तुरास अल-अरबी बैरुत, 2/121

کرلیں یہ جائز ہے اور مطلب پورا حاصل ہے اور اب کمی بیشی بھی روا ہے سو کا نوٹ ننانوے کو بیچیں خواہ ایک سو ایک کو۔ کما حققناہ فی کفل الفقیہ (جیسا کہ اس کی تحقیق ہم نے کفل الفقیہ میں کردی ہے ت) درمختار میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ و تشریح
باع بشرط ان یحیل علی المشتری بالثمن غریماله ای للبائع بطل ولو باع بشرط ان یحتال بالثمن صح لانه شرط ملائم کشرط الجودة بخلاف الاول۔[1]	اگر کسی نے کوئی چیز اس شرط پر فروخت کی ثمن کے بدلے میں بائع اپنے کسی قرضخواہ کا حوالہ مشتری پر کرے گا تو بیع باطل ہے اور اگر اس شرط پر بیع کی مشتری ثمن کا حوالہ کسی اور شخص پر کرے گا تو جائز ہے کیونکہ یہ شرط عقد کے مناسب و ملائم ہے جیسے کہ جودت کی شرط، بخلاف پہلی صورت کے۔ (ت)

ردالمحتار میں ہے: قوله لانه شرط ملائم لانه یؤکد موجب العقد اذا الحوالة فی العادة تکون علی الاملاء والاحسن قضاء فصار کشرط الجودة درر۔[2]

ماتن کا قول کہ بیشک یہ شرط عقد کے ملائم ہے، اس کی وجہ یہ ہے کہ یہ موجبِ عقد کو پکا کرتی ہے کیونکہ حوالہ عام طور پر صاحبِ ثروت اور بہتر ادائیگی کرنے والوں پر کیا جاتا ہے، تو یہ شرطِ جودت کی مثل ہو گیا، درر۔ (ت)

ہاں اس شرط پر بیچنا کہ تو اس کی قیمت فلاں شہر میں مجھے دینا، یہ ناجائز ہے۔ ردالمحتار میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ و تشریح
ومنہ (ای الشروط الفاسدۃ للبیع) ان یدفع الثمن فی بلد آخر او یھب البائع منہ کذا بخلاف ان یحط من ثمنہ کذا، لان الحط ملحق بما قبل العقد بحر اھ مختصراً۔[3]	بیع کو فاسد کرنے والی شروط فاسدہ میں سے یہ ہے کہ شرط لگائی جائے کہ مشتری کسی دوسرے شہر میں ثمن ادا کرے گا یا بائع ثمن میں سے اتنے مشتری کو ہبہ کرے گا۔ بخلاف اس کے کہ بائع ثمن سے اتنے گھٹائے گا کیونکہ گھٹانا عقد کے ماقبل کو لاحق ہوتا ہے، بحراھ مختصراً (ت)

[1] درمختار کتاب الحوالہ مطبع مجتبائی دہلی ۱۲/ ۷۰ [2] ردالمحتار کتاب الحوالہ داراحیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۹۵-۲۹۴ [3] ردالمحتار باب بیع الفاسد داراحیاء التراث العربی بیروت ۲/ ۱۲۱

Fatawa Razawiyya Volume (17)

This difference should be well remembered so that even if there is an error, it does not lead to something forbidden. And Allah Almighty knows best, and His knowledge, glorified be His Majesty, is most perfect.

Problem 298: From Chittorgarh, Udaipur region, Rajputana, submitted by Abdul Karim Sahib, 16th Rabi-ul-Awwal Sharif, 1334 AH, Saturday.

Zaid deposited five hundred rupees with Bakr for the purpose of sending them to Salim in Bombay via a hundi (bill of exchange). Bakr sent the hundi to Salim in Bombay, and Salim received it. Salim took this hundi to Khalid, a money-lender (sahukar), and asked for the money against the hundi. Khalid, the money-lender, refused to pay the money, so Salim returned the aforementioned hundi. There was also a delay of fifteen days in its return. It is a rule among money-lenders that for as many days as it takes for a hundi to be returned, a penalty (damages) for those days is given to the depositor. So, is it permissible to take this penalty or not? If it is not permissible, Zaid will suffer a great loss because a non-Muslim merchant will definitely take the penalty from a Muslim merchant according to his own religion, while the Muslim would refrain from it. It is not possible for all Muslims to abandon trade; trade is established by the Book (Quran) and Sunnah. Moreover, all scholars and wise people of Islam are currently urging Muslims to engage in trade. If this aforementioned penalty is held as impermissible, Muslims will face a double loss: firstly by paying it, and secondly by not receiving it. That is all.

The Answer: Hundi itself is inherently impermissible. It is stated in the texts: "As-Sufanjatu Haramun" (Hundi is forbidden. - T [Translator's note]). It is in the Hadith: "Every loan that draws a benefit is usury (Riba)."[1] (T). Furthermore, the penalty on it is a second impermissible thing. However, if this practice is purely with non-believers, such that there is no involvement of a Muslim in that shop, either directly or indirectly, then not with the intention of this invalid contract, but with the intention that as they take from Muslims, it is obtained from non-Muslims without deceit, then there is no harm in taking it. And Allah Almighty knows best.

Note: The seventeenth volume concludes with the Book of Transfer (Kitab al-Hawala). The eighteenth volume will begin with the Book of Testimony (Kitab al-Shahada).

[1] Kanz al-Ummal, chapter on the supplements of the Book of Debt, Hadith 15516, Mu'assasat al-Risala, Beirut, 6/238. Page 715 of 715

फ़तावा रज़विया जिल्द (17)

यह अंतर अच्छी तरह याद रखना चाहिए कि गलती हो तो भी हराम (वर्जित कार्य) में पड़ना न हो जाए। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है, और उसका ज्ञान, उसकी महिमा बुलंद हो, सबसे पूर्ण है।

मसला 298: चित्तौड़गढ़ क्षेत्र, उदयपुर राजपूताना से, प्रेषक अब्दुल करीम साहब, 16 रबी-उल-अव्वल शरीफ़ 1334 हिजरी, शनिवार।

ज़ैद ने बक्र के पास पाँच सौ रुपये इस उद्देश्य से जमा किए कि हुंडी के माध्यम से वे बम्बई में सालिम के नाम पहुँच जाएँ। बक्र ने हुंडी सालिम को बम्बई भेज दी और सालिम को मिल भी गई। सालिम उस हुंडी को खालिद साहूकार के पास ले गया और कहा कि इस हुंडी के रुपये दे दीजिए। खालिद साहूकार ने रुपये देने से इनकार कर दिया, इसलिए सालिम ने उक्त हुंडी वापस कर दी और वापस आने में पंद्रह दिन की देरी भी हुई। साहूकारों का नियम है कि जितने दिनों में हुंडी वापस आती है, उतने दिनों का हर्जाना (जुर्माना) जमाकर्ता को दिया जाता है। तो क्या इस पर हर्जाना लेना जायज़ है या नहीं? अगर जायज़ नहीं है, तो ज़ैद को बहुत नुकसान होगा क्योंकि काफ़िर (गैर-मुस्लिम) व्यापारी अपने धर्म के अनुसार मुस्लिम व्यापारी से हर्जाना ज़रूर लेगा और मुस्लिम इससे बचेगा। ऐसा हो नहीं सकता कि सभी मुसलमान व्यापार छोड़ दें; व्यापार तो किताब और सुन्नत से साबित है। इसके अलावा, सभी विद्वान और बुद्धिमान मुसलमान इस समय मुसलमानों को व्यापार करने पर ज़ोर दे रहे हैं। यदि उक्त हर्जाना नाजायज़ रखा जाएगा, तो मुसलमानों को दोहरा नुकसान होगा: एक तो देने की वजह से और दूसरा न लेने की वजह से। बस इतना ही।

अल-जवाब: हुंडी अपने आप में ही नाजायज़ है। ग्रंथों में वर्णित है: "अस-सुफ़न्जतु हराम" (हुंडी हराम है। - अनु.)। हदीस में है: "हर वह ऋण जो लाभ खींचता है, वह सूद (ब्याज) है।"[1] (अनु.)। और फिर उस पर जुर्माना दूसरी नाजायज़ चीज़ है। लेकिन अगर यह अमल केवल काफ़िरों (गैर-मुस्लिमों) के साथ है, कि उस दुकान में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से किसी मुसलमान की कोई हिस्सेदारी नहीं है, तो इस फ़ासिद (अमान्य) अनुबंध की नीयत से नहीं, बल्कि इसी नीयत से कि जैसे ये मुसलमानों से लेते हैं, वैसे ही गैर-मुस्लिम से बिना धोखे के मिलता है, तो लेने में कोई हर्ज नहीं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

नोट: सत्रहवीं जिल्द 'किताब अल-हवाला' (ऋण हस्तांतरण की पुस्तक) पर समाप्त हुई, अठारहवीं जिल्द 'किताब अश-शहादत' (गवाही की पुस्तक) से शुरू होगी।

[1] कंज़ अल-उम्माल, ऋण की पुस्तक के पूरक खंड, हदीस 15516, मुअस्ससत अर-रिसाला, बेरूत, 6/238। पृष्ठ 715 / 715

یہ فرق خوب یاد رہے کہ غلطی ہو کہ حرام میں وقوع نہ ہو جائے واللہ تعالیٰ اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم۔

مسئلہ ۲۹۸: از چتوڑ گڑھ علاقہ اودے پور راجپوتانہ، مسئولہ عبدالکریم صاحب ۱۶ ربیع الاول شریف ۱۳۳۴ھ شنبہ

زید نے پانچ سو روپے بکر کے پاس اس غرض سے جمع کئے کہ بذریعہ ہنڈی کے سالم کے نام بمبئی پہنچ جائے اور بکر نے ہنڈی کو سالم کے پاس بمبئی روانہ بھی کر دیا اور سالم کو مل بھی گیا اور سالم اس ہنڈی کو خالد ساہوکار کے پاس لے گیا اور کہا کہ اس ہنڈی کے روپے دیجئے، خالد ساہوکار نے روپے دینے سے انکار کیا لہٰذا سالم نے ہنڈی مذکور کو واپس کیا اور واپس آنے میں پندرہ یوم کی دیر بھی ہوئی، اور ساہوکاروں کا قاعدہ ہے کہ جتنے روز میں ہنڈی واپس آتی ہے اتنے روز کا ہرجانہ جمع کنندہ کو دیا جاتا ہے تو آیا اس پر ہرجانہ لینا جائز ہے یا نہیں؟ اگر جائز نہیں ہے تو زید کو بہت نقصان پہنچے گا کیونکہ کافر تاجر مسلمان تاجر سے اپنے مذہب کے موافق ہرجانہ ضرور لے گا اور مسلمان اس سے باز رہے گا، اور ایسا ہو نہیں سکتا کہ تمام مسلمان تجارت کو چھوڑ دیں، تجارت تو کتاب و سنت سے ثابت ہے، علاوہ اس کے تمام علماء و دانشمند اہل اسلام اس وقت مسلمانوں کو تجارت کرنے پر زور دے رہے ہیں تو اگر یہ ہرجانہ مذکور ناجائز ہے رکھا جائے گا تو مسلمانوں کو دوطرفہ نقصان ہوگا ایک تو دینے کی وجہ سے اور دوسرے نہ لینے کی وجہ سے فقط

الجواب: ہنڈی سرے سے خود ہی ناجائز ہے متون میں السفنجۃ حرام (ہنڈی حرام ہے۔ ت) حدیث میں ہے: کل قرض جر منفعۃ فھو ربا۱ (جو قرض نفع حاصل کرے وہ سود ہے۔ ت) اور پھر اس پر جرمانہ دوسرا ناجائز ہے مگر یہ عمل اگر محض کفار سے ہے کہ اس دکان میں اصالۃً یا بالواسطہ کسی مسلمان کی شرکت نہیں تو نہ بنیت اس عقد فاسد کے بلکہ اسی نیت سے کیہ یہی مسلمان سے لیتے ہیں اور غیر مسلم کا بلا غدر ملتا ہے لینے میں حرج نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

نوٹ: سترہویں جلد کتاب الحوالہ پر ختم ہوئی، اٹھارھویں جلد کا آغاز کتاب الشہادۃ سے ہوگا۔

۱کنز العمال فصل فی لواحق کتاب الدین حدیث ۱۵۵۱۶ موسسۃ الرسالہ بیروت ۶ / ۲۳۸